July To September 2017
E- Journal, Volume III, Issue XIX
U.G.C. Journal no. 64728

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 4.710 (2016)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
(U.G.C. Approved Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका/Index 02
02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 12/13
03. निर्णायक मण्डल 14
04. भारत में जनजातियों की समस्याएँ एवं सुझाव (डॉ. कल्पना कोठारी) 16
05. Class Consciousness In *Waiting For Lefty* by Clifford Odets (Disha Sharma) 19
06. Critical Analysis of GST in India (Dr. Rakhi Saxena) 22
07. Relevance of Cloud and Big Data (Neha Mathur) 26
08. Chemical Looping Combustion for CO2 Capture (Vinay Mathur) 29
09. मध्यप्रदेश में गेहूँ उपज से संबंधित समस्यायें एवं सुझाव (डॉ. अभिलाषा श्रीवास्तव) 32
10. ग्रामीण महिलाओं की वास्तविक स्थिति (राजनीतिक क्षेत्र में) (डॉ. गरिमा पारीक) 35
11. बाल अपराध के कारण व समाधान (डॉ. गरिमा पारीक) 37
12. Study Of Customer Satisfaction In Organized Retail Sector (Dr.Shweta Mathur, Dr. Shiv Kumar Shrivastava) 39
13. हिन्दी साहित्य में डॉ. रामविलास शर्मा का योगदान (डॉ. मधु विजय) 43
14. आर्य चिंतन का इतिहास (डॉ. मधु विजय) 45
15. महिला सशक्तिकरण एवं म.प्र.कि. योजनायें (डॉ.रितु गुप्ता) 47
16. आदिवासी एवं सामान्य वर्ग की महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी का एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. मंजु शर्मा, सुनीता अगलेचा) 49
17. विश्व मानवाधिकार और भारतीय महिलायें (डॉ.रितु गुप्ता) 51
18. अतीत और वर्तमान मे मीडिया : महिला, दलित एवं अल्पसंख्यक (रमेश चन्द मीना) 53
19. An Analytical Study Of Investment Pattern Of Selected Public And Private Sector Life Insurance Companies In India (Dr. Shraddha Mittal) 56
20. भारतीय संस्कृति में अग्निपुराण के काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का अध्ययन (डॉ. वन्दना वर्मा) 60
21. अग्निपुराण के काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. वन्दना वर्मा) 62
22. कश्मीर समस्या : कारण एवं निवारण (डॉ. नेहा चौहान) 64
23. मध्यप्रदेश में औषधीय फसलों की विपणन व्यवस्था मंदसौर एवं नीमच जिले के संदर्भ में (मोनिका वर्मा) 69
24. फास्ट फूड को ग्रहण किये जाने समय व स्थान के आधार पर अध्ययन (डॉ. रीना मालवीय) 71
25. मध्यप्रदेश एवं अविभाजित मन्दसौर जिले में असगंध एवं ईसबगोल के विपणन की समस्याएँ एवं समाधान के सुझाव (मोनिका वर्मा) 73
26. संदर्भित बाल साहित्य में देशकाल, परिस्थितियों का चित्रण (डॉ. रेखा रानी सिंह) 76
27. शासकीय व अशासकीय विद्यालयों कें किशोर-किशोरियों में प्रचलित फास्टफूड विषय पर अध्ययन (डॉ. रीना मालवीय) 78
28. बाल साहित्य में बाल मनोविज्ञान एवं सामाजिक चेतना की गवेषणा एवं अध्ययन पद्धति (डॉ. रेखा रानी सिंह) 81
29. समकालीन कहानीकार निर्मल वर्मा (डॉ.वन्दना नामदेव) 83
30. हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव में तुलनात्मक अध्ययन करना (डॉ. राजेश साकोरीकर, मंजुला कौशिव) 85

31. Venture Capital Investment Strategies For Artificial Kidney DNA RNA Repair And Stem Cells Along With Organ Cloning - Associated Medical Socio-Economical Cum Financial Sector Reforms (Dr. Vinay Kumar Verma) 87
32. Religious Aspect of Donne's Personality (Dr. Anjali Jain) 89
33. Valuation Of National Monetary Policy In Favor Of Higher Education (Dr. Vinay Kumar Verma) 92
34. मंदसौर जिले में मुल्य वृर्द्धित कर के राजस्व की स्थिति (डॉ. टीना बाफना) 93
35. दलित साहित्य में मानव अधिकारों का यथार्थ (डॉ. संतोष रानी) 95
36. भारतीय समाज में दलित साहित्य और राजनीतिक मुद्दे (डॉ. संतोष रानी) 98
37. सिंधिया सेना के संगठन में डिबॉयन का योगदान (राजेश मन्दोरिया) 101
38. पानीपत के तृतीय युद्ध (1761 ई.) का मालवा पर प्रभाव (राजेश मन्दोरिया) 104
39. भारतीय सामाजिक परिवेश में महिलाओं की स्थिति (महिला सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य में)(डॉ. अंजू जगधारी) 107
40. इन्दौर सिटीबस का संचालन एवं प्रबंध (परिचय, प्रबंध, स्थापना और उद्देश्य)(डॉ. धीरज शर्मा) 109
41. इन्दौर नगर में संचाचित अटल सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लिमिटेड का आय का विश्लेषणात्मक विवरण (डॉ. धीरज शर्मा) 112
42. ग्रामीण आर्थिक विकास का संभावित प्रमुख स्त्रोत मत्स्य पालन (कमल बैरागी) 114
43. मुगलकाल में भारत में उपलब्ध पुष्पों का ऐतिहासिक विश्लेषण (डॉ. भावना तिवारी) 117
44. गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार के अवसरों में वृद्धि (मत्स्य उत्पादन के सन्दर्भ में) (कमल बैरागी) 121
45. प्राचीन भारतीय राजनय - युद्ध एवं युद्ध के नियम (डॉ. नवीन सक्सेना) 124
46. दक्षिण एशियाई सहयोग संगठन (सार्क) प्रमुख उपलब्धियॉ एवं वर्तमान परिदृश्य (डॉ. रेखा साहू) 126
47. आचार्य कौटिल्य (चाणक्य) के कूटनीतिक सिद्धांत और समकालीन अंतर्राष्ट्रीय संबंध-एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. नवीन सक्सेना) 128
48. पश्चिम निमाड़ में सांस्कृतिक पर्यटन : गायत्री धाम जामली के विशेष संदर्भ में (डॉ. पंकज कुमार कानूनगो) 130
49. दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के आदिवासी विपणन केन्द्रों का स्थानिक वितरण (डॉ. सुनिता गुप्ता) 137
50. पश्चिम निमाड़ (मध्यपदेश) में पर्यटन के नवीन आयाम : देजला - देवाड़ा जलाशय के विशेष संदर्भ में (डॉ. पंकज कुमार कानूनगो) 141
51. दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के आदिवासी विपणन केन्द्रों का ग्रामीण विकास एवं नियोजन (डॉ. सुनिता गुप्ता) 146
52. उच्च शिक्षा पर वैश्वीकरण का प्रभाव (डॉ. टीना बाफना) 148
53. मानवाधिकारो की वर्तमान स्थिति और महिलाए-प्रमुख वैधानिक प्रावधान (डॉ. भारती लुनावत) 150
54. मूल्य वर्ध्दित कर एवं जी.एस.टी. में कर चोरी की प्रवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. कविता चंदानी) 151
55. जीवन बीमा निगम एवं एस.बी.आई. की आजीवन बीमा योजना का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सविता अग्रवाल) 153
56. मानवाधिकार संरक्षण-भारतीय एवं अन्तराष्ट्रीय प्रयास (डॉ. भारती लुनावत) 156
57. साठ के दशक में मध्यमवर्गीय जिंदगी के शाश्वत यथार्थ की प्रनीति (डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार) 158
58. आध्यात्मिक प्रगति की यात्रा के विभिन्न सोपानों से 'सतयुग की वापसी' (डॉ. पिंकी मिश्रा) 160
59. भारत शासन द्वारा किसान ऋण माफी योजना -2008 के पुर्व मध्यप्रदेश मे ऋण मुक्ति सम्बन्धी किए गये वेधानिक प्रयास (सारिका जौहर) 163
60. किसान कर्ज माफी/ राहत योजना 2008 एक अध्ययन, निष्कर्ष, सुझाव एवं मुल्यांकन म.प्र. के सन्दर्भ में (सारिका जौहर) 165
61. A Study of Priorty Sector Lendings for Public Sector Banks of India (Dr. Shweta Singh) 167
62. प्रतापगढ़ की थेवा कला (लक्ष्मण लाल कुम्हार) 171

63. मानव अधिवासों का बदलता प्रतिरूप : डेलुओं की ढाणी (बाड़मेर, राजस्थान) का एक भौगोलिक विश्लेषण 173
(जस राज)

64. आधुनिक शिक्षा पद्धति एवं व्यक्तित्व विकास (डॉ. बीना शुक्ला) 176

65. Goods & Service Tax- Impact on Common Man (Dr. Seema Baldua, CA Ankur Bansal) 179

66. विकेन्द्रीकरण के लाभ एवं चुनौतियां (डॉ. बीना शुक्ला) 182

67. Hybridity & Alienation in the works of Ruskin Bond (Dr. Shailendra Kumar Chourasia) 184

68. The Dilemma of Identity in the works of Ruskin Bond (Dr. Shailendra Kumar Chourasia) 187

69. भारत में सार्वजनिक ग्रंथालय अधिनियम – उत्तर प्रदेश सार्वजनिक ग्रंथालय अधिनियम: एक समीक्षात्मक 190
अध्ययन (सुनील गुजराती, आशीष द्विवेदी)

70. आदिवासियों की आदिम परम्पराएं और वर्त्तमान में उसका बदलता स्वरुप : डूंगरपुर जिले का विशेष अध्ययन 192
(भरत लाल केरावत)

71. मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र का बदलता राजनीतिक परिदृश्य (डॉ. अनुराग आर्य) 194

72. Rajasthan Falls Short In Female Literacy (1981-2011) (Dr. Namrata Nalwaya) 196

73. नायक–नायिका के निमाड़ी लोक गीत (डॉ. सीमा गाड़गे) 202

74. चुनाव सुधार (डॉ. अनुराग आर्य) 205

75. निमाड़ के महानायक : संत सिंगाजी (डॉ. सीमा गाड़गे) 207

76. आधुनिक मालवी काव्य की प्रासंगिकता (डॉ. शैफाली मलिक) 209

77. निमाड़ के प्रचलित लोरी एवं भजन (डॉ. सीमा गाड़गे) 211

78. श्री हरीश निगम द्वारा मालवी कविता का स्वतंत्र मूल्यांकन (डॉ. शैफाली मलिक) 214

79. श्रावण माह में गाये जाने वाले निमाड़ी लोकगीत (डॉ. सीमा गाड़गे) 216

80. Inclusive Growth & Economic Change (Dr. Bhavana Nahar) 218

81. Impact Of Organized Retailers On Unorganized Retailers - A Study 220
(Milind Bapna, Dr. Deepa Joshi)

82. सरदार सरोवर परियोजना और जन आंदोलन (डॉ. प्रीतिबाला राठौर) 224

83. सरदार सरोवर परियोजना के पर्यावरणीय प्रभाव का अध्ययन (डॉ. प्रीतिबाला राठौर) 226

84. पर्यटन एवं होटल सेवा क्षेत्र पर जीएसटी का प्रभाव (डॉ. सोनिया शर्मा) 229

85. रीतिकालीन ऐतिहासिक कविया करणीदान और उनका सूरज प्रकाश (सुरेन्द्र शक्तावत) 233

86. देश का ईंट–भट्टा उद्योग–समस्याएं एवं सुझाव (डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति) 236

87. म.प्र. के पर्यटन विकास में पर्यटन मंत्रालय की योजनाओं का योगदान (डॉ. सोनिया शर्मा) 239

88. वचनिका राठौड़ रतनसिंघ जी महेश दासोतरी का ऐतिहासिक पक्ष (सुरेन्द्र शक्तावत) 243

89. ईंट–भट्टा उद्योग की आधुनिक तकनीक (डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति) 245

90. 20वीं शताब्दी में डूँगरपुर राज्य के महारावलों का शिक्षा में योगदान (निमेश कुमार चौबीसा) 251

91. Pattern of wasteland in TSP area of southern Rajasthan (Dr. Namrata Nalwaya) 254

92. इन्दौर विकास प्राधिकरण की अधोसंरचनात्मक योजनाऐं – समस्याऐं व सुझाव (डॉ. विनीता पाराशर) 257

93. मतदान व्यवहार : एक विश्लेषण (डॉ. सीमा श्रीमाल) 260

94. 1857 का स्वतंत्रता संग्राम और निमाड़ (डॉ. मधुसूदन चौबे) 262

95. अहिल्याबाई होल्कर के विशेष संदर्भ में मराठा काल में निमाड़ की स्थिति (डॉ. मधुसूदन चौबे) 264

96. दिल्ली सल्तनत एवं मुगलकालीन निमाड़ (डॉ. मधुसूदन चौबे) 266

97. निमाड -एक भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक अध्ययन (डॉ. मधुसूदन चौबे) 268

98. महाकाव्यकालीन निमाड़ (डॉ. मधुसूदन चौबे) 271

99. अजमेर के चौहानों की राजनैतिक उपलब्धियां (डॉ. बनवारी लाल यादव) 272

100. The Portrayal of Nature in the poems of Wordsworth and Pant 276
(Dr. Kranti Vatsa,Hirdesh Shrivastava)

101. बागपत जनपद के प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन 281
(डॉ. महेश कुमार मुछाल, कविता अग्रवाल)

102. मुगलकाल की चित्रकला में शारीरिक भाव-भंमिगाओं की प्रासंगिक विशेषता (डॉ. सचिन सैनी) 285

103. Emergence of Political Parties in Central Province and Berar (Dr. Nilesh Sharma) 288

104. भारतीय स्टेट बैंक द्वारा वर्तमान में प्रचलित इंटरनेट बैंकिंग सेवाओं की उपयोगिता एवं उनके हानिकारक 291
प्रभावों का अध्ययन (वरूणेन्द्र मिश्रा)

105. Library Services In Colleges Of Education Of Madhya Pradesh : An Evaluation 294
(Dr. Amit Kumar Patidar)

106. To Study The NPA of Development of Financial Institutions (Private Banks) 301
(Pooja Yadav, Dr.Sanjaykant Bharadwaj)

107. उच्च शिक्षा स्तर पर लैपटाप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन व आत्मसम्बोध का 304
तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सुनील कुमार, डॉ. लवलता सिद्धू)

108. भारतीय समाज के परिपेक्ष्य में : स्त्री रचनाकार कुमारी बासन्ती (रामजय नाईक) 306

109. लोक जीवन और पर्यावरण का भौगोलिक अध्ययन (डॉ. हीरालाल चौधरी, डॉ. आर. पी. सिंह) 307

110. मालती जोशी और उनकी बाल कहानियाँ (डॉ. कविता रेलवानी) 309

111. मन्नू भंडारी की कहानियों में संवाद-योजना (डॉ. रजनी रेलवानी) 312

112. मालती जोशी के कहानी साहित्य में मध्यमवर्गीय नारी पात्रों के विविध रूप (डॉ. कविता रेलवानी) 315

113. नारी मन की प्रवक्ता मालती जोशी (डॉ. रजनी रेलवानी) 318

114. Bitcoin: Growth and Working (Dr. Neetu Agarwal, Dr. Sanjay Chaudhary) 321

115. बेनीसागर (सुनयना बोयपाई) 324

116. छिंदवाड़ा जिले की प्रमख जागीरे और उनकी व्यवस्था : एक ऐतिहासिक अध्ययन 1854-1876 तक 325
(माया साहू, डॉ. पी.ए. भाटिया)

117. पश्चिमी निमाड़ की भौगोलिक एंव ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (डॉ. शरमा बघेल) 328

118. संचार व्यवस्था का भील जनजाति पर प्रभाव (डॉ. शरमा बघेल) 330

119. कृषि का आधुनिकीकरण एवं पर्यावरण पर प्रभाव (नरसिंहपुर जिले के सन्दर्भ में) (ब्रजेश कुमार डेहरिया, डॉ. भुनेश्वर टेम्भरे) 332

120. भूमण्डलीकरण एवं हिन्दी साहित्य की विधाऐं - हिन्दी साहित्य में विभिन्न विधाओं का विकास (डॉ. नीलम राणा) 335

121. A Study On Adoption Of Mobile Banking – A Select Case Of Rajasthan (Dr. Ganpat Joshi) 340

122. Data Centre or Cloud for Dynamic Storage: In Modern Perspective 344
(Vikas Kumar Choudhary, Dr. Sanjay Chaudhary)

123. आधुनिक काल और महादेवी वर्मा (गायत्री मेहरा) 344

124. मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन (2004-2005) में अनुसुचित जाति की सहभागिता (डॉ. अमृतलाल परमार) 346

125. स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन का सागर संभाग के शैक्षिक युवावर्ग पर प्रभाव - 348
एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. मोनिषा मिश्रा)

126. अनुसंधान में शोध प्रविधि की भूमिका और प्रासंगिकता (डॉ. अजय तिवारी) 354
127. मध्यकालीन मालवा के क्षेत्रीय इतिहास लेखन में डॉ. श्यामसुन्दर निगम की भूमिका (शांता मण्डलोई) 359
128. मध्यप्रदेश के निमाड़ में पर्यटन उद्योग की सम्भावनाऐं (डॉ. सुनील मोरे) 361
129. भारतीय समाज में नैतिक मूल्य (डॉ. मनोरमा सिंह) 363
130. डॉ. भीमराव अम्बेडकर के चिन्तन में सामाजिक न्याय (डॉ. नवीन कुमार, पुष्पा साकेत) 365
131. किशोर और किशोरियों के मध्य आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियों तथा अवसाद का तुलनात्मक अध्ययन 367
(खरगोन जिले के आदिवासी-गैर आदिवासी समुदाय के संबंध में)(डॉ. मंजु पाटनी, दीपिका सेठे)
132. भारत में महिला उद्यमिताओं का अस्तित्व (डॉ. मुमुक्षा जैन) 369
133. ‘Role-Playing’ As An Effective English Teaching Technique : A Study (Dr. Uttam.B. Parekar) 372
134. An Analytical study of Non Performing assets in State Bank of India 376
(Amrita Soni, Dr. Ashish Pathak)
135. Performance Analysis of Pre and Post-Merger & Acquisition of SBI & Associate Bank 379
(with Special Reference to State Bank of Saurashtra) (Dr. Mahesh Gupta, Prof. Jaikishan Sahu)
136. गैर निष्पादित सम्पत्ति का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (डॉ. प्रियंका श्रीवास्तव) 383
137. पर्यावरण जागरूकता के प्रति माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का अध्ययन (जीतेन्द्र बैरागी, डॉ. महेश कुमार तिवारी) 385
138. बुन्देलखण्ड की फाग परम्परा (धनीराम अहिरवार) 390
139. ग्रामीण समाज में जातीय संरचना (छीमक गॉव के विशेष संदर्भ में) (करन सिंह) 392
140. शैक्षणिक वातावरण, सामाजिक और राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन (डॉ. मनोरमा सिंह) 395
141. भारत में मुस्लिम तलाकशुदा महिलाओं की स्थिति: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (शुभम ओझा, डॉ. बी. एल. जोशी) 397
142. लोक नाच फुम्मनी ते कलाकार रतन लाल डोगरा (शिव कुमार खजूरिया) 400
143. डोगरी लोक-गीतें च झलकदे संस्कृति दे प्रतीक : पर्व-ध्यार (डॉ. प्रीति रचना) 402
144. महुआ माजी के उपन्यास ‘मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ’ में आदिवासी (जनजाति) चित्रण (अखिलेश कुमार) 405
145. विधानसभा निर्वाचनों में इन्दौर के मजदूर संघ (1952-1980)(शेफाली राजवाल) 407
146. इस्लाम धर्म कि कर प्रणाली की व्याख्या तथा समाज को संदेश (बेनज़ीर पटेल) 409
147. प्रदेश के विकास में उत्तर-प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड की भूमिका (डॉ. राकेश कुमार) 411
148. नागपुरी भाषा के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान (कोरनेलियुस मिंज) 413
149. An Analysis of Assorted Factors Influencing Score of Elementary & Middle Level 415
School Students in Science Subject (Sarika Manthanwar)
150. छिन्दवाड़ा जिले में कृषकों द्वारा लिए गए ऋणों की स्थिति (जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा के संदर्भ में) 419
(डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा, सपना पाण्डे)
151. Consumer behavior towards Domestic versus Nondomestic brand footwear in India 421
(Dr. Manish Jain)
152. सामाजिक-न्याय एवं पाश्चात्य चिन्तन परम्परा (महेश कुमार रचियता) 425
153. The Emergence of New Woman in Tagore’s The Home and the World (Sunita Ahuja) 428
154. Synthesis and Characterization of Zero Valent Iron Nanoparticles (Dr. Shikha Yadav) 431
155. Universal Basic Income: A Radical New Vision (Dr. P.K. Sirothia) 434
156. अकबर कालीन सूबा इलाहाबाद में हिन्दू-मुस्लिम शिक्षा (डॉ. नीलम सोनी) 437
157. Physical Effects on Women Using Ordinary Salt and Rock Salt (Dr. Shikha Yadav) 440

158. भारतीय दर्शन में आचार मीमांसा (देवदास साकेत) 443
159. सोलंकी कालिन वास्तुकला जल संसाधनों के विशेष संदर्भ में (डॉ. मनोज दाधीच, कल्पेश कुमार पी. चौधरी) 445
160. महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर स्व सहायता समूह का प्रभाव (धार जिले के संदर्भ में एक अध्ययन) 448
(संजीव कुमार व्यास, डॉ. विजय ग्रेवाल)
161. उच्च माध्यमिक स्तर के बालक-बालिकाओं के जीवन पर कौशल शिक्षा का प्रभाव (डॉ. बी. के. गुप्ता) 451
162. पूर्ण अद्वैत योग की अवधारणा (योग से अद्वैत योग की ओर संक्रमण) (डॉ. दिनेश कुमार कौशल) 454
163. महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि में नारी के विविध रुप (डॉ. पंकज कुमार सिंह) 456
164. English for specific purposes ; course design for engineering students in National 458
Capital Region (Dr. Omprakash Upadhyay)
165. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी और दाम्पत्य सम्बन्ध (डॉ. अभयवीर) 461
166. महिला श्रमिकों की स्थिति (प्रीती रवि, डॉ. ए. के. पाण्डे) 464
167. अनुसूचित जनजाति बैगा पिछड़ापन का कारण एवं विकास के नाम से मुकुट लगाना (डॉ. एस.पी. पाण्डेय, बैजनाथ) 466
168. महिलाओं द्वारा पुरूषों की भाँति अपराध करने के कारणों का सैद्धान्तिक अध्ययन (गुंजन पारिख) 469
169. कृषि उत्पादन में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग से मृदा उर्वरता पर प्रभाव - जनपद इटावा (रामरतन) 473
170. हरिवंश राय बच्चन के काव्य में राष्ट्रीय चेतना (कमलसिंह भूरिया, डॉ. शहजाद कुरैशी) 476
171. शिक्षा के निजीकरण से अनुसूचित जातियों के शैक्षणिक विकास व विद्यालयी वातावरण में आने वाली कठिनाईयों 478
का अध्ययन (म.प्र. क़े इन्दौर जिले के इन्दौर तहसील के अमन नगर के विशेष संदर्भ में) (ज्योति सौलंकी)
172. सेन्ट्रल म.प्र. ग्रामीण बैंक की विभिन्न ऋण योजनाओं का महत्व (डॉ. आर.के. पाटिल, तृप्ति शुक्ला सराफ) 481
173. Mahadji Shinde and North India (Prof. Dr. Sheela K. Umale (Chaple), Dr. Shital R. Kadam) 484
174. New Trends In History- With Special Reference To Tourism (Prof. Dr. Ashok N. Bhorjar) 487
175. उदयपुरवाटी में जल स्वावलम्बन अभियान की वस्तु स्थिति (डॉ. जयदेव प्रसाद शर्मा) 489
176. Impact of Climate Change on Biodiversity in Uttarakhand (Dr. SumanLata Pandey) 493
177. डॉ. देवराज के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन (डॉ. रोली श्रीवास्तव) 495
178. An Analytical Study Of Social Business Unitwith Reference To Indian Economy 497
(Dr. D.N. Khadse)
179. Right to Education: Issues and challenges (Yatindra Kumar Jha) 500
180. पर्यावरण संरक्षण में उच्चतम न्यायालय की भूमिका का अध्ययन (डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल) 505
181. चंद्रकान्त देवताले के काव्य में परिवार विमर्श की रचना का संवेदना पक्ष (प्रो. मुकेश भार्गव) 507
182. छत्तीसगढ़ राज्य की गैर औषधीय लघु वनोपज के व्यापार का एक अध्ययन (आंवला के विशेष संदर्भ में) (राकेश कुमार गुप्ता) . 509
183. An Interesting Story of Earth's Magnetic Field and Earth's History (Dr. Anjleli Garg) 513
184. Impact of internet banking on customer satisfaction and business performance: 517
a study of Bank of India (Niket Shukla)
185. Quality of Life and Health Outcomes (Kapil Bala Panchal) 521
186. वागड में लिपि का विकास (नीता चौबीसा, डॉ. अजात शत्रु सिंह राणावत, डॉ. करुणा जोशी) 525
187. Capital Markets and its Challenges with special reference to 'Reforms in the Capital Markets ... 529
in India' (Dr. Suresh Shrawan Patil)
188. डॉ. रामकुमार वर्मा और खड़ी बोली काव्य भाषा (झेलम झेंडे) 534
189. लघु एवं कुटीर उद्योगो का विश्लेषणात्मक अध्ययन (मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले के विशेष संदर्भ में) (माया पिण्डोलिया) 536

190. आरक्षण के जनक शाहू छत्रपति (अमिता वानखेड़े) 538
191. Uphill Battle of Human Rights and Democracy (Rachna Mathur) 539
192. The Phenological Pattern in *Calligonumpolygonoides*Linn., (Polygonaceae) 542
(M. Kumar, R.P. Ahrodia)
193. सर्वशिक्षा अभियान व राजस्थान : एक परिचय (डॉ. मीनाक्षी मिश्रा) 546
194. Kamala Das and the Conflict within the Self (Dr. Mamta Gupta) 549
195. ब्रज की सांगीतिक परम्परा (डॉ. इला मालवीय) 553
196. A Study on Quality of Work Life and HR Practices in Public Sector Undertaking : 555
A Case Study of BHEL(Jyoti Pachori, Mohammad Sajid)
197. प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थी व स्वच्छता अभियान (डॉ. डी.पी. सिंह. डॉ. शालिनी बिस्सू) 560
198. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में योग-शक्ति-महाशक्ति (डॉ.सन्ध्या श्रीवास्तव) 563
199. महात्मा गांधी का शैक्षिक दर्शन : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में (डॉ. मधुरिमा वर्मा) 566
200. नागपुरी लोकगीतों में अलंकार (सुमन कुमार, डॉ. नाफर अली) 569
201. सतत कृषि विकास में जैविक कृषि की भूमिका का अध्ययन (डॉ. सुरेश श्रवण पाटील) 572
202. Internet and ICT Initiativeses in Rural Madhya Pradesh (Dr. Krishnakant Sharma) 576
203. बिलासपुर जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का स्थितिगत अध्ययन (राकेश कुमार गिरि) 581
204. Occupational Structure of Population in the City of Saharsa (Dr. Birendra Prasad Yadav) 585
205. Illness Perception and Diabetes Self-Care Behaviour of People(Dr. Ranvijay Kumar) 587
206. ग्रामीण विकास में पंचायतीराज संस्थाओं का योगदान (डॉ. तहसीलदार तमोली) 589
207. भारतीय पंचायतीराज व्यवस्था का इतिहास और विकास : एक अवलोकन (अखिलेश कुमार) 591
208. भारत में जाति, सामाजिक संरचना और ग्रामीण समुदाय : एक विवेचना (सत्येन्द्र सिंह) 595
209. भारतीय समाज में सामाजिक न्याय : लोहिया विचारधारा के संदर्भ में (डॉ. नलिनी) 599
210. फिलिस्तीन-इजराइल विवाद : हमास के विशेष संदर्भ में (अख्तर हुसैन) 602
211. वैश्वीकरण के दौर मे भारतीय दलित समाज के निहितार्थ (डॉ. रामसूरत हरिजन) 605
212. A study of Intelligence and Achievement in Music Dimensions of Students with 608
Respect to the Expenditure & incurred in various types of schools (Dr. Sunita Shrimali)
213. भारतेन्दु की युग दृष्टि एवं उनका व्यक्तित्व (संजीव मिश्र) 612
214. A Study of Customer Opinion towards Cellular Services With special reference to 614
the Youth of Bilaspur City (C.G.) (Dr. K.L.Tandekar, Shaikh Tasleem Ahmad)
215. छ.ग. राज्य अंत्यावसायी सहकारी वित्त एवं विकास निगम की आर्थिक योजना का क्रियान्वयन 617
(लक्षित वर्ग के लिए) (राजनांदगांव जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. के.एल.टाण्डेकर, डॉ. मुन्नालाल नंदेश्वर)
216. ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य तथा देशी रियासतें (डॉ. सुनीता मीना) 619
217. जनजातीय विकास के सांस्कृतिक आयाम (संदीप कुमार सिंह) 622
218. जनजातीय वर्ग की सामाजिक विकास : एक भौगोलिक अध्ययन (संदीप कुमार सिंह) 624
219. पर्यावरण संरक्षण एवं मानवाधिकार (डॉ. हनुमान प्रसाद मीना) 626
220. Sustainable Development Through Extension Education (Hemant Mandloi) 630
221. इंटरनेट और हिन्दी भाषा का विकास (प्रो. रफी मोहम्मद शेख) 632
222. Concepts of Human Rights (Mr. Bijay Kumar Yadav,Dr. Gurpreet Singh) 635

223. An Empirical Study of Corporate Social Responsibility in India 637
(Shraddha Udeniya, Dr. S.S. Mourya)

224. कामकाजी महिलाओं का यौन उत्पीड़न (डॉ. सुरेन्द्र कुमार, डॉ. अजय कुमार) 641

225. डिण्डौरी जिले के अपवाह तंत्र का भौगोलिक अध्ययन (किशोर कुमार श्याम) 645

226. जनजातीय समुदाय में उनकी सांस्कृतिक परम्परा का भौगोलिक अध्ययन (संदीप कुमार सिंह) 647

227. A Study on Selected Ratios on Reliance Industries Limited 649
(Dr. Sanjeev Kumar Bansal, Dr. Pankaj Kukkar)

228. 3-6 वर्ष में व्यक्तित्व विकास पर पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन 652
(श्रीमती धर्मिष्ठा शेरवाल शर्मा)

229. Role of Local Self Government in the Protection of Environment 654
(Mohd Ashraf, Sabeen Ahmad Sofi)

230. महिला सशक्तिकरण हेतु राज्य सरकार द्वारा संचालित योजनाओं का प्रभाव (जयश्री चड़ार) 657

231. समाजवाद और सर्वोदय आंदोलन में जय प्रकाश नारायण की भूमिका (डॉ. अजय कुमार त्रिपाठी) 659

232. A Review on the Biomedical Waste Management in Hospitals in India: An Approach 661
Towards Clean Environment (Dinesh Chandra Sharma, Rajesh Gupta, Romila Karnawat)

233. राजस्थानी हरजसों में लोक जीवन एवं लोक संस्कृति (डॉ. विनीता कौशिक) 665

234. Protection of Human Rights : Legal Position of Indian Scenario (Firoz Ansari) 667

235. A Study of Achievement Motivation at Senior Secondary Students of Uttar Pradesh 671
Madarsa Board (Mohammed Iqbal Yusuf Ansari, Dr. Naseem Ahmad)

236. गुणवत्तायुक्त प्राथमिक शिक्षा : चुनौतियाँ एवं वर्तमान परिदृश्य (डॉ. मोहम्मद नूर आलम अंसारी) 674

237. Green Marketing: A Study of Consumers' Buying Behaviour in Relation to Green Products 676
(Dr. Alka Awasthi, Anita Vishwakarma)

238. Financial Inclusion: A SWOT Analysis in Context of India 682
(Dr. Sanjeev Kumar Bansal, Bharti Bahen Bacheta, Priyanka Garg)

239. Human Resource Management Defence Initiative Preparing and Development (Saurabh Dubey) .. 686

240. Relationship of Estimated Breeding Values of Various Traits Obtained by Both 688
(Si And Blup) Method in White Leghorn Strain 'B' Flock (Bhagat Singh)

241. Study of Genetic and Phenotypic Correlation Between Different Economic Traits in 691
White Leghorn Strain 'B' Flock (Bhagat Singh)

242. Analysis of the Second Question Paper of Education Subject of UGC-NET on the Basis of 695
Certain Selected Criteria (Sandesh Acharya)

243. हिन्दी-उर्दू विवाद और परिणाम! (डॉ. रचना बिमल) 698

244. पर्यावरण संरक्षण में सामूहिक सहभागिता की भूमिका (डॉ. हरिचरण मीना) 703

245. Study Effect on Attenuation Coefficients with Two Scatters (M.D. Sharma) 707

244. Synthesis & Characterization of some 1, 5 – Benzothiazepines Derivatives by using 709
Mango Juice as a Green Catalyst (Mr. Dilip D. Anuse)

245. शक्ति-संतुलन की स्थापना के विभिन्न प्रकार (डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा) 713

246. पर्यावरणीय अवक्रमण के बहुआयामी प्रभाव (डॉ. कौशलेन्द्र सिंह) 715

247. युद्ध का अर्थ -ऐतिहासिक द्वन्द्व (डॉ. गिरीश शर्मा, डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा) 717

248. जलवायु प्रदूषण की समस्या भारतीय भू-स्थिति के संदर्भ में (डॉ. कौशलेन्द्र सिंह) 719

249. भारत में घटता लिंग अनुपात- एक समकालिक अध्ययन (डॉ. अशोक कुमार त्यागी) 721

250. भारत में आंतरिक सुरक्षा समस्यायें (डॉ. रितेश सिंगारे) 724
251. Social Value Addition and Education System : A Need of a change in Teaching Style (Dr. Sanjay Patni) 726
252. Make In India : Analyze the Prospects for growth sectors (Dr. Nilesh Gangwal) 729
253. A Study of Employee's Job Satisfaction and Performance: With Special Reference to Indore Sahakari Dugdh Sangh, Indore (Kuldeep Agnihotri) 733
254. Service Marketing and Emerging Trends (Dr. Manoj Jain) 736
255. Concerns and Confronts in Entrepreneurship (Dr. Sanjay Bhavsar) 738
256. पूर्व मध्ययुगीन मालवा के परमार एवं उनकी शाखायें तथा वंशावली (गुलाबराव डोंगरे, डॉ. श्रीमती विजेता चौबे) ... 740
257. Study of physicochemical parameters of water from Ransai dam, Uran, Navi Mumbai, Dist. Raigad, Maharashtra (Aamod N. Thakkar) 742
258. Marketing Mix Needed For Indian Rural Markets (Dr. Sanjay Sharma, Dr. Vimal Sharma) 744
259. रीवा जिले के विद्यालयीन प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ के योगदान के संदर्भ में प्रधानाध्यपकों की प्रतिक्रिया का अध्ययन (डॉ. लुभवानी त्रिपाठी) 747
260. Effects of Green Marketing on Consumer Buying Behavior (Dr. Abhishek Raizada) 750
261. An Analysis of Monetary Policy Changes in Relation to Money Supply (Dr. Mukesh Chauhan) ... 754
262. उज्जैन जिले के आर्थिक विकास में धार्मिक पर्यटन का योगदान (खुशबू परिहार) 757
263. स्त्री शिक्षा : भूमण्डलीय शोषण से सुरक्षा (डॉ. संजय सक्सेना) 759
264. Prevalence of Protein-Energy Malnutrition in Pre-School Children in Slums of Varanasi City (Parvati Singh) 761
265. Human Rights as the Natural Rights (Dr. Aditya Kumar Singh) 765
266. Social and Economic Status of Textile Workers in Unorganized Powerloom Sector of Uttar Pradesh (Dr. Arvind Prakash) 767
267. धार जिले में स्थापित आदिम जाति सेवा सहकारी संस्था मर्यादित 'बैंक का ग्रामीण विकास में अध्ययन' (डॉ. अजय वाघे, नानुराम नर्गेश) 771
268. Problem Regarding Increasing Urbanisation (In Respect of Moradabad District) (Ankit Kumar) 774
269. Birds Diversity of Panje- Funde Wetland, Uran, Navi Mumbai West Coast of India (Aamod N.Thakkar) 778
270. Biochemical Analysis of Protein and Lipid from Table Eggs (Rahul B. Patil) 783
271. सिंचाई के लिये उज्जैन जिले में बढ़ती भू-जल एवं सतही जल पर निर्भरता का विश्लेषण (पूजा राठौर) 786
272. FluorideContamination of Water in India and its Impact on Public Health (Dr. Shobha Gupta) 788
273. Ways of Value Inculcation in Education: Some Suggestions (Dr. Mani Bansal) 792
274. अभिज्ञान शाकुन्तलम् में अश्रु वर्णन- एक चिन्तन (डॉ. रुचि गुप्ता) 794
275. छिन्दवाड़ा जिले में जल संसाधनों की स्थिति (जिन्सा रानी मरकाम) 796
276. भारतीय रंगमंच की दृष्टि से संस्कृत नाट्यशास्त्रम् अभिनय एवं पटकथा (डॉ. उषा नागर) 799
277. दलित समाज के प्रमुख मुद्दे एवं समस्याएं (डॉ. जयराम बैरवा) 803
278. Identification and Biocontrol Strategies to Inhibit the Incidence of Leaf Spot Pathogen *Xanthomonaspisi*in Pea Seeds (Ashwani Kumar Verma, Ashok Nagar) 806
279. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी एवं ग्रामीण शिक्षको के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सतीश पाल सिंह) 808
280. भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण: सिद्धान्त और व्यवहार (डॉ. वंदना शर्मा) 812

281. Azaphospholes : A Review (Dinesh Chandra Sharma) 816
282. प्रौद्योगिकी विकास एवं पर्यावरण प्रदूषण: समस्या और समाधान (डॉ.राजेन्द्र प्रसाद) 820
283. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, वैश्वीकरण एवं क्षेत्रीयकरण (डॉ. भरत लाल मीणा) 822
284. Functionalization of Different Metal Based Graphene Nanocomposites (Mukesh Kumar Mehta) 825
285. वर्तमान संदर्भ में नेपाल की नीतियाँ (जितेन्द्र कुमार मालवीय) 828
286. Power System Security Event Classification Using Probabilistic Fuzzy Decision Tree 829
(Sonali R. Nandanwar, N. P. Patidar)
287. प्रबंध में अवित्तीय अभिप्रेरणा की भूमिका (डॉ. इन्दु अरोडा) 834
288. T.S. Eliot's Use of the Upanishad (Dr.Shiraz Ahmed) 837
289. प्रपंच/संस्था किसे कहते हैं? (डॉ. हजारी लाल मौर्य) 840
290. Globalization and the Webs of Power (Dr. Neeraja Sharma) 842
291. नारी- अस्मिता : कुछ पहलू (डॉ. अनुपमा सक्सेना) 847
292. The Representation Of Race And Ethnicity In Contemporary English Literature 848
(Dr. Panchali Sharma)
293. गोदान से पूर्व एवं पश्चात्वर्ती भारतीय समाज का व्यापक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. कविता आचार्य) 852
294. याज्ञवल्क्य स्मृति में प्रशासनिक व्यवस्था (डॉ. कुलकिरण गढ़वाल) 856
295. Sustainable Agriculture: Cultivating A Resilient and Regenerative Food System 859
(Dr. Anjul Singh)
296. High Tech Agrotechniques For Early Fruiting In Aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*) 866
(Rajendra Singh)
297. The Influence of Culture and Traditions on Indian Society (Dr. Sandhya Jaipal) 868
298. Mirza Galib: A Poet of All Times (Dr. Arshad Siraj) 872
299. Deep Learning in Action: A Comprehensive Study of Convolutional Neural Networks for 876
Facial Emotion Recognition (Dr. Sachin S Agrawal, Prof. Sohel Bhura, Prof. Pravin R. Satav)
300. Impact of Information and Communication Technology on Agricultural Sector 880
(Dr. Govind Prakash Acharya)

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर.................. फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय........ परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन................. प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी.............. सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम .... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे .... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़............. अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................ प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित........... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....पूर्व प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ....पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर(म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....पूर्व प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड..............संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल...........अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा............. प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन.............प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(24) प्रो. डॉ. नव्वरलाल गुप्ता ....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत

(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता...........प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

(27) प्रो.डॉ. तपन चौरे .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल, अर्थशास्त्र, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

*** विज्ञान संकाय ***

गणित:- .... (1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता, संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह, अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्ज्ैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा, एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी, शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) डॉ. कंचन डींगरा, शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी, शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) डॉ. एच.जी. वरूधकर, आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... (1) अनुराग झँवेरी, बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

*** वाणिज्य संकाय ***

वाणिज्य :-...................... (1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन, शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

*** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ***

प्रबंध :- .... (1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी , पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा , राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

*** विधि संकाय ***

विधि:- .... (1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा, प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

*** कला संकाय ***

अर्थशास्त्र:- .... (1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका, श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:-...................... (1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव, शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्रः- .... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दीः- .... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजीः- .... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृतः- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहासः- .... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोलः- .... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञानः- .... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकलाः- .... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीतः- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

**** गृह विज्ञान संकाय ****

आहार एवं पोषण विज्ञानः- .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकासः- .... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंधः- ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

**** शिक्षा संकाय ****

शिक्षा............................ **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

**** आर्किटेक्चर संकाय ****

आर्किटेक्चर .... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

**** शारीरिक शिक्षा संकाय ****

शारीरिक शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. जोगिंदर सिंह,** पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

**** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ****

ग्रन्थालय विज्ञान .... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारत में जनजातियों की समस्याएँ एवं सुझाव

डॉ. कल्पना कोठारी *

प्रस्तावना – जनजाति, आदिवासी, आदिम जाति एवं वनवासी जैसे अनेक पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग अंग्रेजी शब्द ट्राइब्स के भारतीय हिन्दी अनुवाद के रुप में होता है। भारतीय संदर्भ में जनजाति के साथ–साथ अनुसूचित जनजाति शब्द का प्रयोग भारतीय समाज की एक अन्य विशेषता है। सामान्यत: किसी भी सूचीबद्ध श्रृंखला को अनुसूचित कहा जाता है किन्तु जब यह शब्द भारतीय जनजातियों के लिए प्रयुक्त होता है तब यह जनजातियों के संवैधानिक संरक्षण से संबंधित होता है।

आदिवासियों की उपस्थिति और उसके महत्व का पहला परिचय, भारतीय समाज में आजादी के पूर्व हो चुका था। विशेष रुप से बिहार में संथाल, उराव और मुण्डा विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध जनजाति आन्दोलन भारतीय जनजातियों की सजगता व्यक्त कर रहे थे।

जनजाति इम्पीरियल गजेटियर में जनजातियों को परिभाषित करते हुऐ लिखा गया है कि 'एक आदिम जाति परिवारों का वह समूह है जिसका एक सामान्य नाम होता है जिसके सदस्य एक सामान्य भाषा बोलते है एक सामान्य क्षेत्र में रहते हैं, या स्वयं को उस क्षेत्र से संबंधित मानते हैं। सामान्यत: ये समूह अन्तर्विवाही होते हैं।'

रेमण्ड फर्थ ने लिखा है 'जनजाति एक ही सांस्कृतिक श्रृंखला का मानव समूह है जो साधारणत: एक ही भूखंड़ पर रहता है, एक भाषा तथा एक प्रकार की परम्पराओं का पालन करता है, एक ही सरकार के प्रति उत्तरदायी होता है।'

जनजातियों की प्रमुख विशेषताओं में यह परिवारों का एक समूह है, इनकी सामान्य भाषा, सामान्य संस्कृति, सुनिश्चित भू–भाग, अन्तर्विवाही समूह, सुरक्षात्मक संगठन, राजनैति संगठन, नाम एवं इतिहास होता है।

भारत में जनजातियों की समस्या प्रमुख रुप से सांस्कृतिक तथा आर्थिक है, लेकिन साथ ही उन्हें अंषत: सामाजिक, अंशत:राजनैतिक, अंशत: मानवतावादी भी कहा जा सकता है जो व्यक्ति जनजातियों की समस्याओं को हिन्दूकरण का परिणाम मानते है, उनका कथन है कि जनजातियों को एक स्वतंत्र पर्यावरण देकर ही उनकी समस्याओं को हल किया जा सकता है। यह कथन भी उपयुक्त नहीं है कि तथा कथित आदिवासी समस्या ग्रामीण भारत की ही एक व्यापक समस्या है और ग्रामीण क्षेत्रों के लिये बनायी गयी योजनाओं से ही जनजातियों की समस्याओं का समाधान हो जायेगा। वास्तविकता यह है कि भारत में जनजातियों समाज की समस्याओं के कारण ग्रामीण जीवन की समस्याओं से बिलकुल भिन्न है इस प्रकार यह आवष्यक हो जाता है कि इन समस्याओं का समाधान भी एक पृथक ढंग़ से किया जाना चाहिए। विकास के प्रयत्नों में हमें यह नहीं भूलना चाहिए की जनजातीय समाज की कुछ सांस्कृतिक विशेषताओं को प्रभावपूर्ण बनाये रखकर ही जनजातियों की समस्याओं का वास्तविक हल ढूंढ़ा जा सकता है। प्राथमिकता के दृष्टिकोण से जनजातीय समाज में तीन समस्याएँ अधिक महत्वपूर्ण है और जनजातियाँ स्वयं भी इन समस्याओं के प्रति जागरुक होती जा रही हैं।

भारत वर्ष में 6 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या वन्य जातियों की है। ये वन्य जातियॉ सम्पूर्ण भारत वर्ष में फैली हुई हैं। भारत वर्ष में अनेक प्रदेश तो ऐसे है जिसमें 20 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या वन्य जातियों की है। भारत वर्ष सदियों से गुलामी के बाद 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र हुआ। इससे पहले की जो शासन पद्धति भी, उसमें इन वन्य जातियों की समस्याओं की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। स्वतंत्रता के बाद भारत वर्ष के सामने अनेक समस्याएं अपने विकट रुप में उपस्थित हुई। आज देश को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। अनेक गंभीर समस्याओं में वन्य जातियों की समस्या मौलिक है तथा अत्यंत ही भीषण है। इनकी समस्याओं के अनेक कारण है। दुर्गम निवास स्थान, शोषण, इसाई मिषनरी, शासन व्यवस्था ऐसे अनेक कारण है।

भारतीय जनजाति प्राय: एकाकी क्षेत्र में निवास करती हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद चौथे दशक में भी जनजातीय क्षेत्रवासी संचार माध्यमों की कमी के कारण अलगाव की जिंदगी जी रहे हैं। इस अलगाव में इन्हें विकास रुपी सोपान के सबसे नीचे वाली सतह पर रोका गया है। फलत: वे अभी भी जत्थों एवं कबीलों के रुप में ही रह रही है। सामाजिक निर्योग्याताओं से ग्रस्त एकाकी जीवन बिताने वाले जनजातियों की अपनी पृथक समस्याऐं है। सम्पूर्ण भारतीय जनजातियां वर्तमान समय में संक्रमण के कठिन दौर से गुजर रही हैं। अनेक जनजातियां यथा: अण्डमानी, कौरवा, बिरहोर, टोडा की जनसंख्या तो गंभीर रुप से कम हो रही हैं जो इन जनजातियों के समाप्त होने संबंधी पूर्व सूचना दे रही हैं। जनजातियों पर अंग्रेजो द्धारा थोपी गयी नयी कानून व्यवस्था ने इनके विनाश की लंबी प्रक्रिया का प्रारंभ कर दिया था। वर्तमान भारत में नई भू–राजस्व नीतियों एवं भू–अधिकार एवं भू–व्यवस्था के प्रभाव, प्रतिबंधक वन नीतियां, समान दीवानी एवं फौजदारी कानून ने इनके समक्ष विभिन्न सामाजिक, आर्थिक समस्याओं को लाकर खड़ा किया है। जनजातियों में समस्याओं ने कुल मिलाकर अपना विकराल स्वरुप धारण कर लिया है। ये प्रमुख समस्याऐं इस प्रकार है:–

1. आवास समस्या – वन्य जातियों की दूसरी बड़ी समस्या मकान की है। मकान घांस–फूस और लकड़ी के बने होते है। स्वास्थ्य की दृष्टि से ये मकान अत्यन्त हानिकारक होते है। मकान छोटे होने के कारण परिवार के सदस्यों के साथ इनके यहां पलने वाले जानवर भी साथ ही रहते है। मकानों में समुचित हवा एवं रोशनी का अभावा होता है। एक ही कमरे में सारा जीवन गुजर जाता है। गंदगी भी पर्याप्त मात्रा में होती है।

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला बड़वानी (म.प्र.) भारत

2 आर्थिक समस्याए :

1. परिवर्तनशील कृषि की समस्या
2. बेगार की समस्या
3. वन सम्बन्धी अधिनियमों से उत्पन्न समस्याऐ
4. बेकारी की समस्या
5. श्रम विभाजन में असमानता की समस्या
6. ऋणग्रस्तता
7. वन और जमीन से जनजामियों के अधिकार का हनन
8. पुरानी कृषि परम्परा से उत्पन्न कम अनाज जो जीवनयापन हेतु पर्याप्त नहीं है।
9. अज्ञानता एवं निरक्षरता
10. विवाह, मृत्यु, मेला तथा त्योहार पर आय से अधिक खर्च करने की प्रवृति।
11. जाति बहिष्कार सम्बन्धी पंचायतों निर्णय द्धारा लगाये गये आर्थिक दण्ड इत्यादि।

उपर्यक्त वर्णित कारणों से जनजातियों को हमेशा ही आर्थिक तंगी रहती हैं। फलत: ये सूदखोरों द्धारा शोषित किए जाते है। इस ऋणग्रस्तता का जनजातियों पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ा है:

1. सूदखोरों द्धारा इनके श्रम शक्ति का दोहन और इनकी स्वतन्त्रता का हनन।
2. ऋण न चुका पाने की स्थिति में सूदखोरों द्धारा इनकी जमीन का अधिग्रहण।
3. कन्या विक्रय एवं वेश्यावृति।
4. नाजायज शारीरिक सम्बन्धों से उत्पन्न गुप्त रोग। जोनसार बावर के कोलटा ऋणग्रस्तता के कारण उपर्युक्त वर्णित प्रभाव के कारण अभिषप्त जीवन जी रहे हैं।
5. वंशानुगत व्यवसाय का ह्रास-औद्योगिकरण से एक समस्या यह भी उत्पन्न हो गई है कि जनजाति सदस्य अपने पैतृक व्यवसायों को भूलने लगे हैं जिससे भी उनकी आर्थिक स्थिति अत्यधिक शोचनीय हो गई हैं।
6. औद्योगिक व्यवसायों में लगे श्रमिकों की अस्थाई प्रकृति- उद्योगों के कुप्रभावों के कारण जनजातीय श्रमिक स्थायी रुप से नगरों में नहीं रुकते। शहर में गंदी बस्तियों में छोटे-छोटे तंग मकानों में रहने के कारण व कारखानों में खराब कार्य करने की दशाएँ होने के कारण ये लोग शहरी जीवन से शीघ्र ऊब जाते है और परिवर्तन की इच्छा से अपनी बस्तियों में पुन: चले जाते हैं। इस आये दिन के आने जाने के कारण भी इन लोगों की आर्थिक स्थिति खराब है।

3. सामाजिक समस्याएँ :

1. अनैतिकता की समस्या
2. बाल विवाह की समस्या
3. कन्या मूल्य की समस्या
4. युवा-गृहों का पतन

4. सांस्कृतिक समस्याएँ :

1. भाषा सम्बन्धी समस्या
2. जनजातीय कला-कौशल के विघटन की समस्या
3. सांस्कृतिक विभिन्नता की समस्या

5. धार्मिक समस्याएँ - जनजातियों में धर्म को बहुत आदर की दृष्टि से देखा जाता है। धर्म के भय से वे नाना प्रकार के अनैतिक कार्यों को करने से अपने को रोके रखते है। ईसाइयों के सम्पर्क में आने वाली जनजातियों के बहुत से सदस्य ईसाई बन गये और हिन्दू धर्म के सम्पर्क में आने से अनेक सदस्यों ने हिन्दू धर्म अपना लिया। इससे यह देखा गया कि एक ही जनजाति में दो धर्मो का प्रचार हुआ-एक तो वे जो हिन्दू अथवा ईसाई हो गये और दूसरे वे जिन्होंने धर्म परिवर्तन नहीं किया। इस प्रकार उनमें अब धार्मिक आन्दोलन होने लगे हैं। अपेन धर्म के प्रति उदासीनता का भाव तथा आस्था में कमी आयी है जो उनके लिए समस्या बन गई हैं। विभिन्न धर्मान्दोलनों तथा भगत आन्दोलन के कारण उनमें पवित्र एवं अपवित्र की समस्या पनपी है। उनके परम्परागत पुंजारियों का प्रभाव क्षीण पड़ता जा रहा है जो उनकी धार्मिक एकता पर संकट की तरह उपस्थित हो गया है। इस प्रकार जनजातियों में एक प्रकार से धार्मिक विघटन की समस्या उत्पन्न हो गयी हैं।

धर्म जो सामाजिक नियंत्रण का कार्य करता था उसकी भिन्नता हो जाने से सामुदायिक एकता और संगठन तो टूटने लगे ही है साथ ही साथ पारिवारिक तनाव, भेदभाव और विघटन की प्रक्रिया का प्रारम्भ हो चुका है। नये धर्मो में विश्वास और संस्कार की प्राप्ति तो उन्हें हुई लेकिन इससे उत्पन्न समस्याओं के समाधान के साधन उपलब्ध नहीं हो पाये। परिणामत: उनमें असंतोष की भावना का अभ्युदय हुआ। राजस्थान के भगत आन्दोलन ने भीलों की दो श्रेणियों भगत और अभगत दो भागों में विभाजित कर दिया है।

6. शिक्षा संबंधी समस्याएँ - जनजातियों की सम्पूर्ण समस्याओं का मुख्य आधार उनका अशिक्षित होना है। अशिक्षित होने के कारण वे अंधविश्वासी है और जादू टोने पर विश्वास करते हैं और उनमें खूब पैसे लुटाते है। ईसाई मिशनरियों ने उनको शिक्षित करने लिए संस्थाऐं खोली हैं। किन्तु दुर्भाग्यवश इन शिक्षा संस्थानों का मुख्य उद्देश्य ईसाई धर्म की शिक्षा देकर उन्हें ईसाई बनाना है।

अनेक जनजातीय गाँवों की स्थिति पर दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि किसी-किसी में तो एक भी साक्षर नहीं है। पूरी जनजातीय जनसंख्या का दशमांश भी साक्षरता प्राप्त नहीं कर पाया है। ऐसी हालत में बाहरी लोग आसानी से उनका शोषण कर रहे है और वे निरुपाय से पड़े है। निरक्षरता की स्थिति के कारण अनेक कानूनी दांवपेचों को नहीं समझ पाना उनके दुर्भाग्य का कारण बन गया है और इसी से उन्हें अपनी जमीन से भी हाथ धोना पड़ रहा है।

कुछ जनजातियों में शिक्षा का प्रसार हुआ है। लेकिन इससे समस्या का समाधान कम और बढ़ावा ज्यादा दिया है। इन समाजों के छोटे बच्चे भी कामकाजी सदस्य होते हैं। उनके स्कूल चले जाने से छोटे-छोटे गृह कार्य, पशु चारण आदि कौन करे, यह एक समस्या बन गई है। जो युवक पढ-लिख कर तैयार होते हैं उन्हें अपनी संस्कृति से दुराव होने लगा है। वे दूसरी संस्कृतियों की अन्धाधुन्ध नकल करने लगे हैं। परिणामत: अपने परम्परागत पेषे से भी विमुख होते जा रहे हैं। नई शिक्षा के कारण जनजातीय में शिक्षित और अशिक्षित वर्ग के मध्य मतभेद प्रारम्भ हो गया है। निष्कर्ष यह है कि अशिक्षा के कारण शोषण एवं शिक्षा के कारण निज संस्कृति से दुराव जैसी समस्याएँ प्रकट हो गयी हैं।

वन्यजातीय समस्याओं का निराकरण हेतू सुझाव - उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि वन्यजातियों का जीवन अनेक प्रकार की समस्याओं से घिरा हुआ है। इन गम्भीर समस्याओं के समाधान या निराकरण के लिए निम्न सुझावा दिये जा सकते है:-

1. आवास समस्या संबंधी सुझाव - इंदिरा आवास सुविधा एवं आवास

व्यवस्था को सुधारने हेतू ऋण सुविधा आसान ब्याज पर उपलब्ध करवाने की व्यवस्था हो।

2- शिक्षा संबंधी सुझाव – वन्यजातियों की समस्याओं का मूल कारण अशिक्षा है। इसलिए वन्यजातियों में शिक्षा से सम्बन्धित अग्रांकित सुझावा दिए जा सकते हैं:

(अ) वन्यजातियों के लिए शिक्षा अनिवार्य कर दी जानी चाहिए।

(आ) ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे वन्यजाति के व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करने को आकर्षित हो।

(इ) प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(ई) वन्यजातियों में शिक्षा के प्रसार के लिए शिक्षा का माध्यम वन्यजातियों की भाषा को बनाया जाना चाहिए।

(उ) वन्यजातियों को जो शिक्षा प्रदान की जाय, उसका आधार व्यावसायिक हो। दस्तकारी तथा अन्य व्यवसाय सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। ऐसा करने से वन्यजातियों को बेरोजगारी की समस्या से बचाया जा सकता है।

(ऊ) शिक्षा के साथ ही वन्यजातियों के मनोरंजन की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। मनोरंजन का आधार वन्यजातीय लोक नृत्य, संगीत आदि होना चाहिए।

(ए) वन्यजायिों की शिक्षा के लिये विद्यालय हों, उनमें व्यवसाय से सम्बन्धित व्यावहारिक प्रशिक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(ऐ) ऐसे अध्यापकों को राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कार देने की व्यवस्था की जानी चाहिए, जिन्होंने वन्यजातीय क्षेत्रों में शिक्षा के प्रचार और प्रसार में महत्वपूर्ण कार्य किया हो।

3 आर्थिक सुझाव – वन्य जातियों की दूसरी समस्या आर्थिक जीवन से सम्बन्धित है। इस सम्बन्ध में वन्यजातियों के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित निम्न सुझाव दिए जा सकते हैं–

(अ) वन्यजातियों को पर्याप्त जमीन दी जानी चाहिए, जिस पर वे अच्छी तरह से कृषि कर सकें।

(आ)ऐसे प्रयास किए जाने चाहिए जिससे झूम खेती की प्रथा समाप्त हो जाए। इसका कारण यह है कि झूम खेती से जंगलों को काटना पड़ता है, जिससे राष्ट्रीय हानि होती हैं।

(इ) वन्यजातियों को भूमि देना ही पर्याप्त नहीं होगा, अपितु उन्हें खेती के लिए औजार, उत्तम बीज, खाद और अच्छी नस्ल के पशु देने की व्यवस्था भी की जानी चाहिए।

(ई) वन्यजातियों को कृषि से सम्बन्धित आधुनिक प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए, ताकि वे कृषि से अच्छी पैदावार प्राप्त कर सकें।

(उ) ऐसे प्रयास किए जाने चाहिए जिससे वन्यजातियों में घरेलू उद्योग-धन्धों का विकास किया जा सके।

(ऊ) वन्यजातियों को गृह उद्योगों से सम्बन्धित आधुनिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

(ए) जो श्रमिक औद्योगिक क्षेत्रों में काम कर रहे हैं, उनके लिये आवास, कार्य दशाएँ, कार्य के घन्टे आदि के प्रति उचित ध्यान दिया जाना चाहिए।

(ऐ) वन्यजातीय क्षेत्रों में सहकारी समितियों का विकास किया जाना चाहिए।

(ओ)वन्यजातीय पुरुषों और महिलाओं को शासकीय नौकरी दिलाने के प्रयास किये जाने चाहिए।

(औ) साहूकारों और महाजनों पर इस प्रकार के प्रतिबन्ध लगाये जाने चाहिए जिससे वे वन्यजातियों का आर्थिक शोषण न कर सकें।

4. समाजिक सुझाव – वन्यजातियों की समस्याओं के समाधान से सम्बन्धित तीसरा सुझावा उनके सामाजिक जीवन से है। इस सम्बन्ध में निम्न सुझाव दिए जा सकते है:

(अ) वन्यजातियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने से यौन अनैतिकता की समस्या पर रोक लगाई जा सकती हैं।

(आ)कानून का निर्माण करके बाल-विवाह और कन्या मूल्य पर रोक लगा दी जानी चाहिए। साथ ही जो व्यक्ति ऐसा करें, उनके लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(इ) युवागृह वन्यजातीय युवकों और के लिए शिक्षा के साधन होते हैं। अतः युवागृहों को नष्ट होने से बचाया जाए और उनका पुनरुत्थान किया जाए।

(ई) वन्यजातियों के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए निम्न उपाय किये जाने चाहिये:

1. वन्यजातीय युवकों और युवतियों को कम्पाउंडर और दाई का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
2. वन्यजातियों में ऐसी जागरुकता का विकास करना चाहिए, जिससे वे भोजन में पौष्टिक तत्वों के प्रयोग के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें।
3. वन्यजातियों के लिए चलते-फिरते औषधालयों की व्यवस्था करनी चाहिए।
4. ग्राम पंचायतों, स्कूलों, युवागृहों आदि में प्राथमिक चिकित्सा बाक्स के रखे जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।
5. ऐसे प्रयास करने चाहिए जिससे वन्यजातियों में अंग्रेजी दवाइयों पर आस्था पैदा हो सके।
6. ऐसे प्रयास किए जाने चाहिए जिससे वन्यजातियों में व्याप्त धार्मिक कट्टरता समाप्त हो जाए,
7. वन्यजातीय समस्याओं के समाधान के लिए जो भी कार्यक्रम अपनाएँ जायें वे वन्यजातीय भाषा में हो साथ ही उसका आधार वन्यजातीय संस्कृति हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Class Consciousness In *Waiting For Lefty* by Clifford Odets

Disha Sharma *

Abstract - As expectant of a member of Communist Party, the playwright Clifford Odets, came up in 1935 with his significant piece of work *Waiting for Lefty,* that sparkled the hope that first light by Karl Marx, the return of power to the workers. The play emanates different characters but with single idea at the center that talks of shifted paradigm of power and its functioning in controlling the one section of society that is —the workers.And how this section struggles in maintaining the consciousness that is the building foundation of the expected upcoming revolution leading to an equal distribution of power on economic basis.The present research paper thus resolves to pick out this class consciousness in the characters by administering the concept of Class Consciousness by its main thinker, Karl Marx.
Keywords - Karl Marx, power, workers, Class consciousness.

Introduction - Class consciousness as a term itself has never been used by the main thinker to whom the ideology is linked. A political theory instead, related to Marxism,talks about an awareness generated in an individual regarding his status in the social order of class on the basis of economy. The concept got into existence since German theorist, Karl Marx worked on the prevailing set of classes: the working class (proletraits), the middle class and the capitalists (bourgeoisie). In Karl Marx terminology the terms "class in itself" and "class for itself" prevailed which states that when the working class becomes aware of sharing the ill deeds of capitalists with one another, they form a "class in itself" while when they feel oppressed together as a social class opposed to the bourgeoisie they form a "class for itself" hence becoming the proletrait.

The play, Waiting for Lefty, is divided into five parts, seven vignettes and black outs. The dialogues between different characters reveal their oppression, a sense of consciousness and the prevalent ideology that needs a change. The play opens with the union leader Harry Fatt addressing a meeting of the committee on a stage that is open to the audience of the workers, and tries to convince them against strike when he says, "

Fatt.All we workers got a good man behind us now - the man in the White House is the one I'm referrin' to. That's why the times ain't ripe for a strike" (197)

His speech gets intervened by different voices that do not even agree to his terms and he retorted by calling them 'Reds' a slang used for Communists. The predicament of the times is that no one liked to be called by the word. This becomes conspicuous when Joe started his speech and clearly asserted that he does not belong to 'reds.' It was only with the introduction of character Edna that the philosophy of Marx finds a platform to dwell on. Edna's frustration on Joe for his incapability of earning much and his low wages spurred her to invoke some sense of the society's working or to be précised the bourgeoisie's practices, when she says,"

Edna. - your boss is making suckers outa you boys every minute. Yes, and suckers out of all the wives and the poor innocent kids who'll grow up with crooked spines and sick bones…My God, Joe - the world is supposed to be for all of us." (201)

Edna being aware of her poverty pushes Joe to take a stand for himself and for his family. Because, for the working class to overcome the prevailing conditions of poverty it becomes necessary to analyze that their labour is not paid justifiably and hence assimilate a sense of belonging that they are not alone bearing the harsh circumstances but other alike them are also exploited equally and it is only then something could turn to their favour. But Joe's concern for Edna's speech as everyone knows, "…one man can not make a strike". For Joe to take a stand even for his personal reasons against the big businesses can never be achieved alone, even if he aspires to become a leader.

Leadership cannot work efficiently if the seeds of class consciousness are not sprouted into the minds of a particular class and that too, the class consciousness needs to be generated spontaneously. And if class consciousness is in question it goes by the unmatchable words of Wilhelm Reich when he says, "But if a certain psychical situation in the masses exists, and has to be brought into harmony with the highly developed consciousness of the revolutionary leadership in order to create the subjective preconditions for a social revolution, then it is all the more essential to find an answer to the question:

* Mphil Scholar, University Of Jammu (Jammu) INDIA

What is class consciousness? To put it concretely, there are two kinds of class consciousness, that of the leadership and that of the masses, and the two have to be brought into harmony with one another. The leadership has no task more urgent, besides that of acquiring a precise understanding of the objective historical process, than to understand:what are the progressive desires, ideas and thoughts which are latent in people of different social strata, occupations, age groups and sexes, and (b) what are the desires, fears, thoughtsand ideas ("traditional bonds") which prevent the progressive desires, ideas, etc., from developing.The content of the revolutionary leader's class consciousness is not of a personal kind — when personal interests (ambition, etc.) are present, they inhibit his activity. The class consciousness of the masses, on the other hand (we are not speaking of the negligibly small minority of consciously revolutionary workers), is entirely personal.

To which Edna discerns, "… I don't say one man! I say a hundred, a thousand, a whole million, I say. But start in your own union. Get those hack boys together! Sweep out those racketeers like a pile of dirt! Stand up like men and fight for the crying kids and wives."(204) Edna's persistent intrusion for Joe to rebel against the capitalists is authenticated in unification of workers as,

In the formation of a class with radical chains… a sphere of society having a universal character because of its universal suffering…a sphere in short, that is complete loss of humanity and can only redeem itself through the total redemption of humanity. This dissolution of society as a particular class is the proletariat. (Marx a very short intro in phonr,p 172-3/29)

The playwright's disposition was to incur the working class to stand for itself and asserts that if this class believes in seizing the power from the capitalists, all it has to do is to stand firm in number and revolt, as Edna's threat at the domestic level helped her to achieve what she wanted.

In the second part, 'Lab Assistant Episode', the two binary classes are shown. One, working class in the character of Miller and the other Fayette, an industrialist. The dialogues between both of them are significant in propagating the true ideology of the upper class of taking benefits from the working class. Fayette's demanding sobriety from the workers and that too from the trained ones does reveal how the powerful forces shapes a man according to their vested interests. The usage of word 'trained' signifies that the ruling class ideology is being practiced over and over again to set this divisoned strata of society where the working class has to move according to the whippers of the industries. Fayette's attitude showcases some of the traits of bourgeoisie as in when he responded to Miller's suggestion of reports of progress coming directly from Dr. Brenner, he says, "I do not ask you"(206). The people from lower strata have not been chance of presenting their opinions rather they just have to obey. No liberty of speaking to the authority is given, when most of the times when Fayette speaks to Miller, he responded in only utterances. These dialogues expose a philosophy of which Lukacs in History and Class Consciousness;…the rule of the bourgeoisie can only be the rule of a minority. Its hegemony is exercised not merely by a minority but in the interest of that minority, so the need to deceive the other classes and to ensure their class consciousness remains amorphous is inescapable for a bourgeois regime.(69)

The other trait which these bourgeoisie has that, for the upper class to rule constantly, it becomes necessary to provide an increased wages or some facilities to sustain for longer keeping the working class engrossed in the temporary happiness of hiked wages and this is what Fayette exactly does with Miller when he denies Fayette's proposal of raised salary for spying Dr. Brenner, he raised the money by 20, 30, 40 and when ultimately Miller rejects his proposal, he asked him of its consequences.

What these big businesses do with the workers can be called as externalizing their works from their bodies. Miller have served in Fayette's industry for so long and what he received at the other end of the day is the grief over the loss of his brother's life who died in one of the manufacturing of products from this industry. This becomes relevant to, as is written in Marx a very short introduction, "

The more the worker exerts himself, the more powerful becomes the alien objective world which he fashions against himself, the poorer he and his inner world becomes, the less there is that belongs to him… The worker puts his life into the object; then it no longer belongs to him but to the object…The externalization of the worker in his product means not only that his work becomes an object, an external existence, but also that it exists outside him, independently, alien, an autonomous power, opposed to him. The life he has given to the object confronts him as hostile and alien.(34)

In the third part, 'The Young Hack and the Girl', this couple, Sid and Florence are also aware of their poverty, but simultaneously Florence delude herself with the fantasies to prevent class consciousness, whereas, Sid confirms to his consciousness and says, "

SID. Keeping us in the dark about what is wrong with us in the money sense. They got the power and mean to be damn sure they keep it They know if they give in just an inch, all the dogs like us will be down on them together. (211)

Sid has a true connection with Florence, but at the same time he is aware of his financial conditions. Being a taxi driver, he earns 5-6 dollars a week, which is not sufficient for two people to live on. He is tormented at the sight of his unfulfilling love that at one hand wants Florence as his wife but equally aware of his position in the society. He has that much needed consciousness in him not an able outlet to its solution. According to Marx, "

If his activity is a torment for him, it must provide pleasure and enjoyment for someone else [...]. If therefore he regards the product of his labour, his objectified labour, as an alien, hostile and powerful object which is independent of him, then his relationship to that object is such that

another man - alien, hostile, powerful and independent of him - is its master. If he relates to his own activity an unfree activity, then he relates to it as activity in the service, under the rule, coercion and yoke of another man.(pp331)

In fifth part, 'Interne Episode', Odets went out to unveil the cruel nature of society, by introducing the character, Benjamin. Odets made clear that money is far a more important signifier of identity than race, so far as, Benjamin, is fired from the hospital because the hospital faced deficits and he being both the Jewish and a good doctor at its profession, is expelled forthwith. To his surprise, the Jewish members on the board did not save him for they were wealthy and still cared more about the financial bottom line. But only at the end, with the speech of Agate, the whole audience gets motivated to revolt and stand for themselves. Even when physically handled by the gunman and Fatt, he managed to deliver his word. And confirms at the end that if they are considered reds, they have no objection to it and takes their salutes too, falling flat on the face of the industrialists. Odets ended the play with Agate's inspiring and motivating speech of generating Class Consciousness, when he says, "WE'RE STORMBIRDS OF THE WORKING-CLASS. WORKERS OF THE WORLD ... OUR BONES AND BLOOD!"(224)

Conclusion - The play features what goes beneath the working and fabrication of Class Consciousness. Each character is presented with either possessing this class consciousness or provoking this into the other character. Odets's play is optimistic in bringing a classless society and presented a realistic version of evolving ideology that ultimately leads to the upside down distribution of power.

References :-

1. *Early Writings*, K. Marx, Penguin,1975
2. *Five Contemporary American Play*. Ed. By William H. Hildreth. Harper and Brothers: New York.1939
4. Lukacs, Georg. *History and Class Consciousness*. Trans. By. Rodney Livingstone. The MIT Press: Cambridge.
5. Reich, Wilhelm. *What is Class Consciousness*? 1934.
6. Singer, Peter. *Marx: A Very Short Introduction*. Oxford University Press.2000.

****

Critical Analysis of GST in India

Dr. Rakhi Saxena *

Abstract - The introduction of Goods and Services Tax (GST) would be a very significant step in the field of indirect tax reforms in India. By amalgamating a large number of Central and State taxes into a single tax, it would mitigate cascading or double taxation in a major way and pave the way for a common national market. The GST will create a common Indian market, improve tax compliance and governance, and boost investment and growth; it is also a bold new experiment in the governance of India's cooperative federalism. From the consumer point of view, the biggest advantage would be in terms of a reduction in the overall tax burden on goods, which is currently estimated to be around 25%-30%. Introduction of GST would also make Indian products competitive in the domestic and international markets. Studies show that this would have a boosting impact on economic growth.
Keywords - GST ,Economic Growth.

Introduction - every value addition. The GST will replace various taxes on goods and services levied by the central government and states by a single tax on value added. It will thus reduce tax cascading, facilitate a common national market, encourage voluntary tax compliance, reduce tax collection costs, support investment and improve competitiveness. All taxpayer services, such as registration, returns and payments will be available online, which would make compliance easy and transparent. The GST reform is intended to be revenue neutral although it may affect the allocation of revenue both across states and between states and the central government. However, the central government has committed to compensate states fully for any loss in revenue they suffer in the five years following the implementation of the GST. Designing the GST The GST Council has been constituted, with a two-thirds vote share for the states. A four-rate structure has been proposed: 6% on essential items; two standard rates at 12% and 18%; and a higher rate of 26% on luxury goods. A tax over and above 28% will be imposed on some luxury, sin and demerit goods (including sodas, tobacco and luxury cars). There will be about 100 items exempted (mainly food). Petroleum products, alcohol, electricity and real estate are excluded.

Objective of the study :

1. To study about the concept & historical background of GST in India.
2. To analyze about the advantage & challenges for implementing of GST in India.

Research Methodology - This paper is based on past literature from respective journals, annual reports, newspapers and magazines covering wide collection of academic & government literature on Goods and Service Tax in India.

Definition of GST - "GST is a tax on goods and services with value addition at each stage having comprehensive and continuous chain of set of benefits from the producer's / service provider's point up to the retailers level where only the final consumer should bear the tax."

Historical background of GST - GST was first recommended by Kelkar Task Force on implementation of Fiscal Reforms and Budget Management Act 2004 but the First Discussion Paper on Goods and Services Tax in India was presented by the Empowered Committee of State Finance Ministers dtd. Nov.10th, 2009. In 2011, the Constitution (115th Amendment) Bill, 2011 was introduced in Parliament to enable the levy of GST. However, the Bill lapsed with the dissolution of the 15th Lok Sabha. Subsequently, in December 2014, the Constitution (122nd Amendment) Bill, 2014 was introduced in Lok Sabha. The Bill was passed by Lok Sabha in May 2015 and referred to a Select Committee of Rajya Sabha for examination.

Government is endeavoring to roll out GST by 1st July, 2017, by achieving consensus on all the issues relating thereto. It is geared to attain July 1 deadline for implementation of GST across India.GST is a path breaking indirect tax reform which will create a common national market by dismantling inter-State trade barriers. GST has subsumed multiple indirect taxes like excise duty, service tax, VAT, CST, luxury tax, entertainment tax, entry tax, etc.

Concept of GST in India - The concept of GST was visualized for the first time in 1999. On 8 August 2016, the Constitutional Amendment Bill for roll out of GST was passed by the Parliament, followed by ratification of the bill by more than 15 states and enactment of the bill in early September.

The GST Council consisting of representatives from the Central as well as state Government, met on twenty

***Asst. Prof. , Deptt. of Commerce & Management, Career College, BHEL, Bhopal (M.P.) INDIA**

three occasions and cleared –

1. GST laws,
2. GST Rules,
3. Tax rate structure including Compensation Cess,
4. Classification of goods and services into different rate slabs,
5. Exemptions,
6. Thresholds,
7. Tax administration

On 12 April 2017, the Central Government enacted four GST Bills:

1. Central GST (CGST)
2. Integrated GST (IGST)
3. Union Territory GST (UTGST)
4. Bill to Compensate States

In a short span of time, all the states (excluding Jammu and Kashmir) approved their State GST (SGST) laws. Union territories with legislature, i.e., Delhi & Puducherry, have adopted SGST Act and the balance 5 Union territories without legislatures have adopted UTGST Act. There are 3 taxes applicable under GST: CGST, SGST & IGST.

- **CGST -** Collected by the Central Government on an intra-state sale (Eg: Within Maharashtra)
- **SGST** - Collected by the State Government on an intra-state sale (Eg: Within Maharashtra)
- **IGST -** Collected by the Central Government for inter-state sale (Eg: Maharashtra to Tamil Nadu)

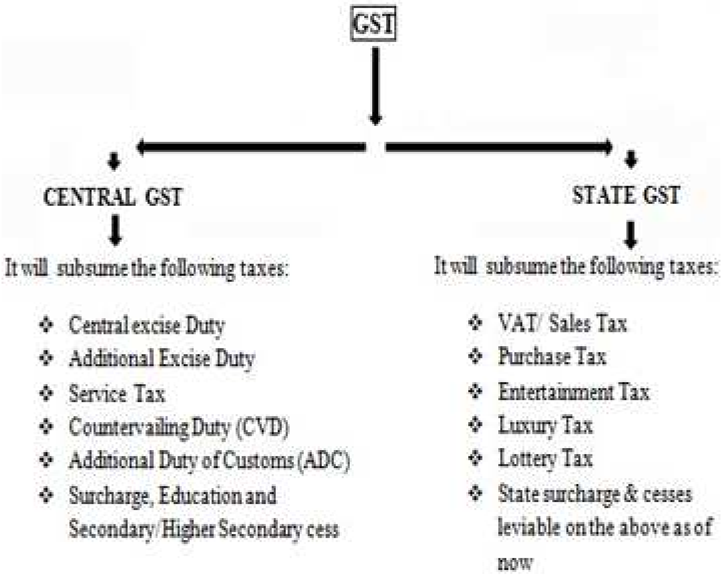

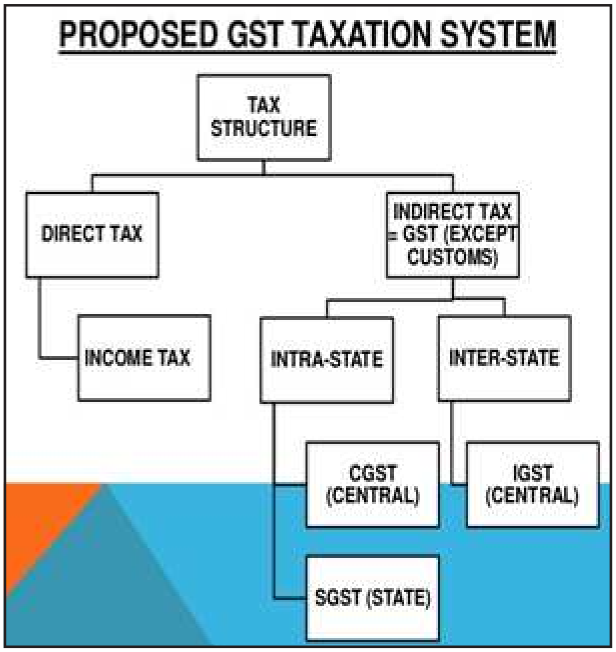

GST rules for Taxpayers - The government has notified GST rules, tax rates on goods and services, exemption list and categories of services on which reverse charge is applicable. Till 31 March 2018, all registered persons have to file monthly return in form GSTR3B (containing summary of outward and inward supplies) by 20th of succeeding month. The due dates for filing form GSTR-1 (containing invoice wise details of outward supplies) are as follows:

For taxpayers having the annual aggregate turnover upto INR 1.5 crore:

Period	Dates
Jul- Sep 2017	31 Dec 2017
Oct- Dec 2017	15 Feb 2018
Jan- Mar 2018	30 April 2018

For taxpayers having the annual aggregate turnover more than INR 1.5 crore:

Period	Dates
Jul- Oct 2017	31 Dec 2017
Nov 2017	10 Jan 2018
Dec 2017	10 Feb 2018
Jan 2018	10 Mar 2018
Feb 2018	10 Apr 2018
Mar 2018	10 May 2018

The time period for filing Form GSTR-2 and GSTR-3 for the period July 2017 to March 2018 would be worked out by a Committee of Officers and hence the same is not required to be filed till such time.

Objectives of Implementing GST in India

1. One Country – One Tax
2. Consumption based tax instead of Manufacturing
3. Uniform GST Registration, payment and Input tax Credit
4. To eliminate the cascading effect of Indirect taxes on single transaction
5. Subsume all indirect taxes at Centre and State Level under
6. Reduce tax evasion and corruption
7. Increase productivity
8. Increase Tax to GDP Ratio and revenue surplus
9. Increase Compliance
10. Reducing economic distortions

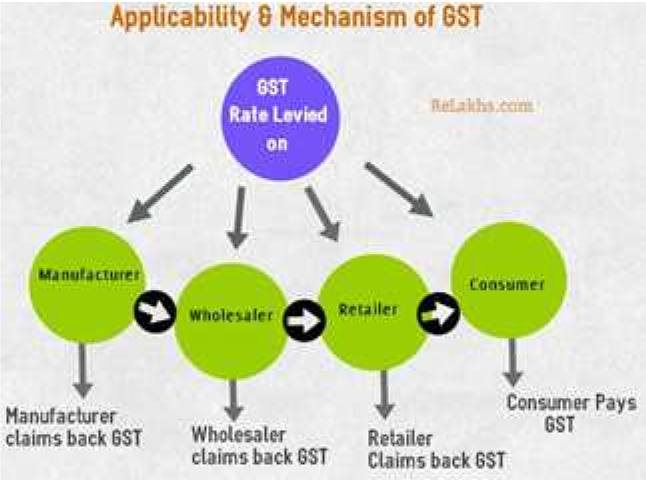

Advantages of GST - CBEC has released few advantages which would accrue to Citizens, Trade/Industry and the Central/State Government with the introduction of GST. The advantages to the Citizens are listed as:

1. Simpler tax system.
2. Reduction in prices of goods and services due to elimination of cascading.
3. Uniform prices throughout the country.
4. Transparency in taxation system.
5. Increase in employment opportunities.

The advantages accruing to the Trade/ industry are listed as:

1. Reduction in multiplicity of taxes.
2. Mitigation of cascading/double taxation.
3. More efficient neutralization of taxes especially for exports.
4. Development of common national market.
5. Simpler tax regime-fewer rates and exemptions.

The advantages accruing to the Central/State Government are listed as:

1. A unified common national market to boost Foreign Investment and "Make in India" campaign.
2. Boost to export/manufacturing activity, generation of more employment, leading to reduced poverty and increased GDP growth.
3. Improving the overall investment climate in the country which will benefit the development of states.
4. Uniform SGST and IGST rates to reduce the incentive for tax evasion.
5. Reduction in compliance costs as no requirement of multiple records keeping.

Main Features of the GST Act (1/4)

1. All transactions and processes only through electronic mode – Non-intrusive administration PAN Based Registration
2. Registration only if turnover more than Rs. 20 lac
3. Option of Voluntary Registrationq Deemed Registration in three working days
4. Input Tax Credit available on taxes paid on all
5. Automatic generation of returns
6. GST Practitioners for assisting filing of returns
7. GSTN and GST Suvidha Providers (GSPs) to provide technology based assistance .Tax can be deposited by internet banking, NEFT / RTGS, Debit/ credit card
8. Refund to be granted within 60 days
9. Provisional release of 90% refund to exporters within 7 days
10. Interest payable if refund not sanctioned in time
11. Refund to be directly credited to bank accounts
12. Comprehensive transitional provisions for smooth transition of existing tax payers to GST regime Special procedures for job work

The present GST Tax System has certain flaws that thereby weakness the movement thus started and proves to be a shockwave for the disturbed economy:

1. Online System of Submission of Tax - GST system is *totally dependent on the online submission of taxes* which in result overburdens the online system of the Ministry Of Corporate Affairs and the online infrastructure existing is not very sound, so the problem of hanging and website crashes occurs repeatedly which makes tax filing more adverse than before.

2. Problem of Tax Evasion - Due to the implementation

of the present GST system in the country it also increases the problem of *tax evasion* which results in huge loss in the economic condition of the country due to the following provision existing in the **Bill** which states that business entity with an annual turnover less than Rs. 20 lakhs is given exemptions under GST registration. The above provision provided in the bill is the biggest loophole which can increase the problem of tax evasion and can be explained by a simple ***example*** — If a businessman owns a firm or company with an annual turnover of 80 lakhs and falls under the taxpaying category according to the norms of the GST but rather paying taxes he divides his business into 4 firms of 20-20 lakhs and make his wife, son, daughter and himself director of the following four firms and by showing the business into four parts with an annual turnover of rupees 20 lakhs he is not entitled to pay GST but originally these four firms were only in the papers and he saves his firm which has annual turnover of 80 lakh rupees to pay GST and this is how people will do tax evasion in many forms and thus, will result in huge economic loss to our country.

3. Problems for Small Unorganized Wholesalers - While unorganized cash based small wholesalers were still recovering from the impacts of last year's demonetization, GST has further added to their losses. Small shopkeepers and even dealers are now preferring to buy their daily grocery supplies from GST compliant wholesale chains like Walmart and Metro cash. It may slightly increase the prices of your daily needs, but the biggest impact will be in the unorganized sector that will have to start maintaining proper GST compliant bills and invoices if they wish to survive in the post-GST regime.

4. Shopkeepers Struggling with Creating Invoices and Filing Returns - Small shopkeepers are mainly struggling in creating different invoices for goods with different GST rates. The confusion is about whether they should make different bills for such products or mention separate tax information in the same bill. Since they have so many types of items with different GST categories, it is almost impossible to maintain separate invoices.

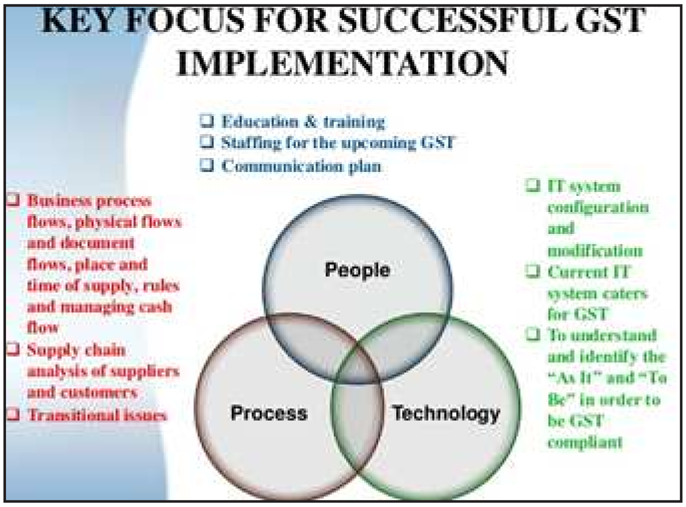

Conclusion - The government is trying to reduce the burden of compliance for businesses by relaxing the return filing requirements for the first two months post implementation. Also, the provisions of TCS on e-commerce and registration for online sellers have also been relaxed for the time being. Change is definitely never easy. The government is trying to smoothen the road to GST. It is important to take a leaf from global economies that have implemented GST before us, and who overcame the teething troubles to experience the advantages of having a unified tax system and easy input credits.

Once GST is implemented, most of the current challenges of this move will be a story of the past. India will become a single market where goods can move freely and there will lesser compliances to deal with for businesses.

References :-

1. Atkinson, A.B. (1977) "Optimal Taxation and the Direct Versus Indirect Tax Controversy" Canadian Journal of Economics, VollO, pp 590-606.
2. Bahanon, C.E. and Lott. T.N.V. (1984), "Specific Taxes, Product Quality and Rate Revenue Analysis", Public Finance Quarterly, Vol. 12, No.4 October.
3. Break, G. (1954), "Excise Tax Burdens and Benefits", American Economic Review, pp.577-594
4. Khan,M.A , and Shadab N, Goods and Service Tax (GST) in India: Prospect for states
5. Ministers, T.E., (2009) First discussion paper on good and service tax of India,
6. Vasanthagopal, R., (2011), "GST in India: A Big Leap in the Indirect Taxation System", International Journal of Trade, Economics and Finance, Vol. 2, No. 2, April 2011.
7. Ehtisham Ahamad and Satya Poddar(2009), "Goods and Service Tax Reforms and Intergovernmental Consideration in India", "Asia Research Center",LSE,2009.
8. Girish Garg, (2014),"Basic Concepts and Features of Good and Service Tax in India".
9. Nitin Kumar (2014), "Goods and Service Tax in India-A Way Forward", "Global Journal of Multidisciplinary Studies", Vol 3, Issue6, May 2014.
10. Pinki, Supriya Kamna, Richa Verma(2014), "Good and Service Tax – Panacea For Indirect Tax System In India", "Tactful Management Research Journal",Vol2, Issue 10, July2014
11. Rupa R,GST in India an overview,Vol-2,Issue-3,Feb2017
12. Sharma Kunal Challenges and shortcomings of GST in India
13. Gondavale Mangesh (Dy Commissioner of Sales Tax)Awareness Campaign & GST UPDATE
14. Report of central board of excise & custome

Websites:

1. https://www.gst.gov.in/
2. http://www.gstn.org/
3. http://tutorial.gst.gov.in

****

Relevance of Cloud and Big Data

Neha Mathur *

Abstract - Organizations and people are becoming more data driven than ever before. An ocean of data is only useful if one can identify correlations, tell a story and improve business effectiveness. Businesses have to move at rapid speed but they have to know how to move. Big Data Analytics help identify the right moves to make. Big Data and Cloud computing are technologies that are top of mind of all IT professionals across the globe. Together these are converging to reshape the global business landscape. Big data and Cloud Computing is a compelling combination. Cloud is a trend in technology and Big data is an inevitable phenomenon of the rapid data deluge in IT. Cloud computing is the best structure to support big data projects. This paper describes how cloud and big data technologies offer cloud-based big data analytics. It relates the characteristics (V's) of Big Data to the properties of cloud to conclude that cloud is an enabler for advanced analytics with Big Data.
Keywords - Big Data, Cloud, Analytics, Volume, Variety, Velocity, Value**.**

Introduction - Big Data refers to technologies and initiatives that involve data that is too diverse, fast-changing or massive for conventional technologies, skills and infrastructure to address efficiently.

Cloud computing provides dynamically scalable, on-demand virtualized resources as a service over the Internet from anywhere on anytime. It has the potential to enhance business agility and productivity at reduced cost with greater efficiency.

Big data analytics is the process of examining and analyzing big data to uncover hidden patterns, unknown correlations, market trends, customer preferences and other useful business information.

Cloud changes how users interact with big data and analytics. Companies using cloud services grow and innovate at their own pace because they do not have to worry about creating some underlying capability. Cloud combined with big data and analytics can enrich outcomes for business, society and individuals. Cloud helps leading companies to use data competitively. Cloud facilities business agility and enhances productivity.

It makes sense that IT organizations should look to cloud computing as the structure to support their big data projects. Cloud computing offers a cost-effective way to support big data technologies and the advanced analytics applications that can drive business value.

Related technologies

Big Data - Big data is an all encompassing term for any collection of data sets so large or complex that it becomes difficult to process them using traditional data processing applications. "Big data is high-volume, high-velocity, and/ or high-variety information assets that require new forms of processing to enable enhanced decision making, insight discovery and process intimation" – Gartner IT Glossary, 2012 [1] IDC defined it: "Big data technologies describe a new generation of technologies and architectures designed to economically extract value from very large volumes of a wide variety of data, by enabling high-velocity capture, discovery, and/or analysis." [2]

Characteristics of Big Data :

1. Volume: Volume refers to the vast amount of data generated. The data deluge has resulted in a spontaneous, instantaneous and almost constant exchange of data.
2. Velocity: In this context, the speed at which the data is generated and processed to meet the demands and challenges that lie in the path of growth and development.
3. Variety: The type and nature of the data. This helps people who analyze it to effectively use the resulting insight. Big data is about any attribute that challenges the constraints of a system capability or business need (size being one of them). The real value of big data is in the insights it produces when analyzed which create competitive advantage and increase revenue.

Cloud Computing - Cloud computing is service-oriented utility computing model that has revolutionized IT industry. Cloud Computing Definition issued by the U.S. National Institute of Standards and Technology (NIST) September, 2011. It starts with:

"Cloud computing is a model for enabling ubiquitous, convenient, on-demand network access to a shared pool of configurable computing resources (e.g., networks, servers, storage, applications, and services) that can be rapidly provisioned and released with minimal management effort or service provider interaction. This cloud model is

*Department of Computer Science, M.B.M Engineering College, Jodhpur (Raj.) INDIA

composed of five essential characteristics, three service models, and four deployment models. "[3]

Cloud computing offers enterprises and users high scalability, high availability, and high reliability. It can improve resource utilization efficiency and can reduce the cost of business information construction, investment, and maintenance.

Relevance Of Cloud With Big Data - Big Data is characterised by the 4V's – Volume, Velocity, Variety and Value. In this section, we will examine each V and see how cloud supports big data. Table I shows the problems of big data and how cloud provides solution to them.

1) Volume - Big data is born out of the sheer volume of data generated. Volume refers to the vast amount of data generated every second. This huge data deluge is greatly accelerated by the growth of scientific data and has been lead by the positive social and economic changes in our society. The order of data been generated have grown from Gigabytes (GB) to Terabytes (TB), Petabytes (PB) and now reaching Zettabytes (ZB). Large volume of data needs large storage and computing resources. Moreover, Linear Scaling and Dynamic Scheduling problems arise due to large volume.

Cloud caters this issue of big data by providing Infrastructure as a Service. Infrastructure as a Service (IaaS) is a form of cloud computing that provides virtualized computing resources over the Internet. In terms of data storage, a distributed and scalable architecture needs to be adopted. In respect to data processing, a distributed architecture also needs to be adopted. In the computing field, the allocation of resources and tasks is actually a task scheduling problem. Due to the diversity of users' QoS requirements and the changing status of resources, finding the appropriate resources for distributed data processing is a dynamic scheduling. [5]

2) Velocity - Velocity refers to the speed at which new data is generated and the speed at which data moves around. The velocity of data generation, processing, and analysis continues to accelerate. There are three reasons: the real-time nature of data creation, the demands from combining streaming data with business processes, and decision making processes. The velocity of data processing needs to be high, and processing capacity shifts from batch processing to stream processing. There is a "one-second rule" in the industry referring to a standard for the processing of big data, which shows the capability of big data processing and the essential difference between it and traditional data mining. Traditional relational database management systems (RDBMS) generally use centralized storage and processing methods instead of a distributed architecture. But when facing ever-growing data volume and dynamic data usage scenarios, this centralized approach is becoming a bottleneck, especially for its limited speed of response. Because of its dependence on centralized data storage and indexing for tasks such as importing and exporting large amounts of data, statistical analysis, retrieval, and queries, its performance declines sharply as data volume grows, in addition to the statistics and query scenarios that require real-time responses. [5].

The solution to this speed issue lies in Cloud Computing. Distributed and parallel algorithms are implemented. Clustering techniques support to achieve near real time computing results. In traditional frameworks, data is moved from storage to compute resource. But in Cloud framework, the data is staged in data/compute nodes of clusters or large-scale data centres. The computations move to the data in order to perform the data processing.

3) Variety - Variety refers to the different types of data we can now use. In the past we focused on structured data that neatly fits into tables or relational databases such as financial data. In fact, 80 percent of the world's data is now unstructured. With big data technology we can now harness differed types of data including messages, social media conversations, photos, sensor data, video or voice recordings and bring them together with more traditional, structured data. There is heterogeneity in the type of data. The formats of this data are usually not fixed; it will be difficult to respond to changing needs if we adopt structured storage models. So we need to use various modes of data processing and storage and to integrate structured and unstructured data storage to process this data, whose types, sources, and structures are different.

Table 1 (See in next page)

Cloud supports heterogeneity. Data from multiple sources can be stored and processed. Since cloud uses new types of distributed file systems and NoSQL database architecture to adapt to large amounts of data and changing structures.

Value - Value is the 4th V of Big Data. Value refers to the ability to turn data into value. Because of the enlarging scale, big data's value density per unit of data is constantly reducing, however, the overall value of the data is increasing. By processing big data and discovering its potential commercial value, enormous commercial profits can be made. Traditional data mining algorithms are relatively complex, data size is moderate and convergence is slow. In big data, the quantity of data is massive and the processes of data storage, data cleaning, and extraction, transformation, loading, deal with the requirements and challenges of massive volume, which suggests the use of distributed and parallel processing models. For actual gain from data mining, one needs to guarantee the authenticity and completeness of the data. The cost and benefit of mining need to be considered.

Cloud provides distributed and parallel processing models. A combination of real-time computation and large quantities of offline processing in the cloud can meet the demand of near real time results.

Conclution - Big Data and cloud computing go hand-in-hand. Both Cloud and Big Data is about delivering value to enterprise by lowering the cost of ownership. Big data is fuelled by the properties of Cloud: Scalability, Affordability,

Extensibility and Agility.

The characteristics of big data - Volume, Velocity, Variety and Value pose challenges. Cloud enables Big Data to crunch this 4V problem. Large volume demands large storage and computing resources.The development of cloud computing provides solutions for the storage (volume) and processing of big data. The distributed storage technology based on cloud computing allows effective management of big data. The parallel computing capacity of cloud computing can improve the efficiency of acquiring and analyzing big data. The speed (Velocity)problem is handled by cloud by sending the compute resource to the data rather than sending data to compute resource. Distributed file system and NoSQL database architecture enables cloud to store and process heterogeneous data (Variety). Distributed and Parallel architectures facilitate value mining and near real time results. Thus, Big Data problems need to be solved by Cloud computing technology, while big data can also promote the practical use and implementation of Cloud computing technology. There is a complementary relationship between them.

References :-

1. Douglas, L.The Importance of 'Big Data': A Definition. Gartner , 2001
2. Gantz, J. and E. Reinsel. Extracting Value from Chaos, IDC's Digital Universe Study, sponsored by EMC. 2010
3. NIST, "The NIST Definition of Cloud Computing," Special Publication 800-145 National Institute for Standards and Technology http://csrc.nist.gov/publications/nistpubs/800-145/SP800-145.pdf. 2011
4. Coulouris, G., Dollimore J.; Kindberg T; Blair G. Distributed Systems: Concepts and Design (5th Edition). Boston: Addison-Wesley. ISBN 0-132-14301-1.2011.
5. Big Data Technologies and cloud Computing. Optimized Cloud Resource Management and Scheduling. Elsiver Inc., pp 17-87, http://dx.doi.org/10.1016/B978-0-12-801476-9.00002-1, Last Retrieved on 15-Dec-2017

Table I: Problems of Big data and their Solutions in Cloud

Attribute	BIG DATA Problem	CLOUD Solution
Volume	● Linear scaling problems ● Dynamic scheduling problems	● A distributed and scalable architecture ● Infrastructure as a Service(IaaS)
Velocity ·	● Import and export problems ● Statistical analysis problems ● Query and retrieval problems ● Real-time response problems	● Distributed and Parallel Algorithms· ● Clustering Techniques
Variety	● Multisource problems ● Heterogeneity problems ● The original system's infrastructure problems	● Distributed File System ● NoSQL Database Architecture
Value	● Data analysis and mining ● Actual benefit from data mining	● Near Real-Time performance ● Distributed and Parallel Processing Models ● Cost effectiveness

****

Chemical Looping Combustion for CO2 Capture

Vinay Mathur *

Abstract - The discussion of CO2 output has risen to the forefront of many people's minds in the world. Therefore, separation and sequestration of CO2 has become an important topic as well.Chemical looping combustion has proven to be the most prominent technology with its inherent advantages in the separation of CO2 in the fossil fuel combustion process. Metal oxides used as an oxygen carrier plays key role in the CLC process. Recent studies show that the Ni, Fe and Cu based metal oxides have high reactivity and high thermal stability over the repeated reduction and oxidation cycles.

***Keywords: -** Chemical Looping Combustion, Oxygen Carrier, Combustion, CO2 Capture.*

Introduction - Since the Industrial Revolution in the 1700's, the use of fossil fuels and deforestation has increased the atmospheric carbon dioxide levels in the atmosphere. In 2005, the atmospheric concentration off CO_2 was 35% higher than the level before the Industrial Revolution according to Environmental Protection Agency. Carbon dioxide is a greenhouse gas which absorbs and emits radiation back onto the earth. This re-emission has caused the average temperature of the earth to increase by 1.0 to 1.7 degrees Fahrenheit. This increase in temperature is commonly known as "Global warming".

This change in temperature causes expansion of ocean water and widespread melting of snow and ice which leads to rising sea levels. Rising sea levels will have many adverse effects on weather conditions and geographical conditions. These effects include loss of wetlands and increased salinity in rivers to increased flooding. Because of the potential for damage due to global warming caused by an imbalance in greenhouse gases, much emphasis has been put into motion slow or stops the carbon dioxide emissions from human resources.

In the developing countries, the economic growth results in a rapid increase in the demand for energy supplied by fossil fuels, while the developed countries have not yet found the means for sustainability decreasing their use of these fuels. In the future it is not unlikely that radical measures to decrease carbon dioxide emissions will be demanded. Therefore, various options need to be investigated.

Considering all the problems, it is generally accepted that the reduction of greenhouse gases which contribute the global warming effect is necessary. There are some possible approaches to decrease the CO_2 emissions. They are:

i) To increase the efficiency in the conversion and use of energy.
ii) Enhancing the use of renewable energy sources, such as biomass, solar and wind power.
iii) Separation and sequestration of CO_2 from combustion process.

Until the recent years the main attention is focused on the use of first two alternative sources in decreasing the CO_2 emissions. Because mainly the alternative energy sources have an advantageof not generating CO_2 i.e. net CO_2 emissions are zero. However, in this current stage alternative energy technologies cannot fully replace the existing fossil fuel based power generation. Thus, the power generation with fossil fuel combustion process with effective CO_2 capture is going to become a main contributor to the energy supply in the future. In the current stage, 85 percent of the world energy demand is supplied by the fossil fuels.

CO_2 capturing technologies - Currently, there are number of processes available to capture CO_2 from the fossil fuel combustion process. Some of the processes are described below.

Pre combustion process - In this process the carbon in the fuel is separated, or removed, before the combustion process. Instead of burning coal or natural gas in a combustion plant, the fuel can be converted to hydrogen and CO_2 prior to combustion. The CO_2 can then be captured and stored, while the hydrogen is combusted to produce power.

Post-combustion process - In post-combustion process, CO_2 is separated from the flue gas environment containing NOx, SO_2 with different approaches like chemical absorption, such as Monoethanolamine (MEA) absorption, selective adsorption on a solid adsorbent, such as Zeolites.

Oxy-fuel combustion process - This process utilizes pure oxygen obtained from the cryogenic unit, where nitrogen is separated from air. Oxy-fuel combustion with CO_2 capture is very similar to post-combustion CO_2 capture. The main difference is that the combustion is carried out with pure oxygen instead of air. As a result the flue gas contains mainly CO_2 and water vapor, which can be easily separated. The

*Research Scholar, MBM Engg. College, Jodhpur (Raj.) INDIA

challenge is that it is expensive to produce pure oxygen.

All the above techniques have large energy penalty and high costs for separation of carbon dioxide from the rest of flue gas components, resulting in a significant decrease of the overall combustion efficiency and as a result in a price increase of the energy because of the cost for carbon dioxide capture. Considering all these factors Ishida et al. in 1987 introduced a new promising technology called Chemical Looping Combustion (CLC), in the process of capturing CO_2 emissions from fuel combustion and the process utilizes metal oxide as an oxygen carrier, which supplies the stoichiometric oxygen for the combustion. This CLC process is initially proposed in power generation stations to increase thermal efficiency but later this CLC technology was identified as having inherent advantages for CO_2 separations from fossil fuel combustion process with high potential and minimum energy losses.

Chemical Looping Combustion (CLC) - Chemical-looping combustion (CLC) is a combustion technique where the greenhouse gas CO2 is inherently separated during combustion. In chemical looping, there is no direct contact between air and fuel. The chemical looping process utilizes oxygen from metal oxide oxygen carrier for fuel combustion. In combustion applications, the products of chemical looping are CO2 and H2O. Thus, once the steam is condensed, a relatively pure stream of CO2 is produced ready for sequestration. The production of a sequestration ready CO2 stream does not require any additional separation units and there is no energy penalty or reduction in power plant efficiency. The CLC uses a solid oxygen carrier to transfer the oxygen from the air to the fuel. The advantage with the technique compared to normal combustion is that carbon dioxide and water are inherently separated from the other components of the flue gas, namely, nitrogen and unreacted oxygen, and thus no extra energy is needed for carbon dioxide separation. The CLC system is composed of two reactors, an air and a fuel reactor, as shown in Fig 1.

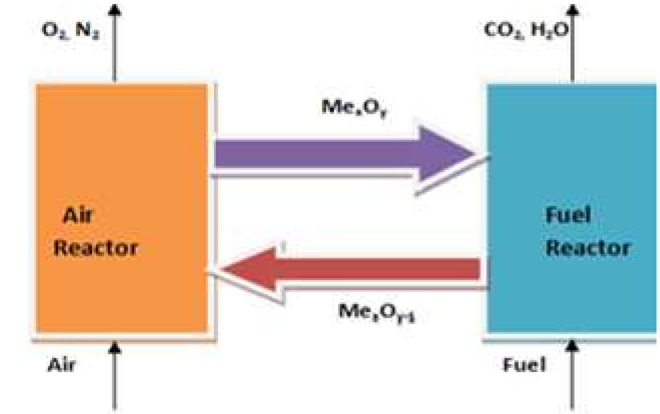

Fig. 1 Chemical Looping Combustion - In CLC, the solid oxygen carrier is circulated between the air and fuel reactors. The fuel is fed into the reactor where it is oxidized by the lattice oxygen carriers according to

$$(2n+m)\ Me_{x--}O_y + C_nH_{2m} \longrightarrow (2n+m)\ Me_xO_{y-1} + m\ H_2O + nCO_2$$

Where MexOy is the fully oxidized oxygen carrier and MxO-y-1 is the oxygen carrier in reduced form which could be a metal or a metal oxide with lower oxygen content. The exit stream from the fuel reactor contains only CO2 and water vapor. The pure CO2 can be readily recovered by condensing water vapor, eliminating the need of an additional energy for CO2 separation. The water free CO2 can be sequestrated or used for other purpose.

Once fuel oxidation completed the reduced metal oxide MexOy-1 is transported to the air reactor where it is reoxidized according the reaction

$$Me_xO_{y-1} + \tfrac{1}{2} O_2 \quad Me_xO_y \longrightarrow$$

The flue gas stream from the air reactor will have a high temperature and contain N2 and some unreacted O2. This stream could be expanded through a gas turbine to produce electricity. After energy recovered, these gases can be released to the atmosphere with minimum negative environmental impact. The reaction between the fuel and oxygen in the fuel reactor may be endothermic as well as exothermic, depending on the metal oxide used, while the reaction in the air reactor is always exothermic. Since air and fuel go through two separated reactors and combustion takes place without a flame, NOx formation should be avoided. From the point of view of environmental friendly characterizations, CLC has attracted wide attention and extensive investigation in the past a few years. The main advantage of CLC over conventional technologies is that direct contact between air and fuel is avoided. Therefore, CO---2- is obtained without nitrogen dilution, avoiding costly equipment and energy consumption for separation of gases.

Oxygen Carriers - When the CLC was firstly proposed by Richter and Knoche, selection of the oxygen carrier was considered as one of the most important components of the CLC process. The oxygen carrier particles are a cornerstone in the CLC technique. Briefly, important criteria for a good oxygen carrier are the following:

(i) High reactivity with fuel and air;
(ii) Low fragmentation and attrition, as well as low tendency for agglomeration;
(iii) Low production cost and environmentally benign;
(iv) Be fluidizable and stable under repeated reduction/ oxidation cycles at high temperature.

A number of different transition-state metals and their corresponding oxides have been investigated in literature as possible candidates: Cu, Cd, Ni, Mn, Fe, and Co. Generally, these metal oxides are combined with an inert which acts as a porous support providing a higher surface area for reaction, as a binder for increasing the mechanical strength and attrition resistance, and additionally, as an ion conductor enhancing the ion permeability in the solid particles. However, Al2O3, SiO2, TiO2, ZrO2, NiAl2O4, and MgAl2O4 are usually used as the inert binder which was proven to have the ability to increase the reactivity, durability, and fluidizability of the oxygen carrier particles. The inert materials are believed to enhance positive properties among which the most important are to maintain the pore structure

inside the particle and inhibit migration of the metals, which could lead to sintering of oxygen carrier particles.

References :-

1. Hossain, M.M.; De Lasa, H.I.; Chemical-looping combustion (CLC) for inherent CO2 separations—a review, Chemical Engineering Science, 2008, 63, 4434 – 4435.
2. Rubel, A.; Liu, K.; Neathry, J.; Taulbee, D.; Oxygen Carriers for chemical looping combustion of solid fuels, Fuel, 2009,88,876-884
3. Lyngfelt, A.; Johansson, M.; Mattisson, T.; Chemical Looping Combustion- status of development, Chalmers university of Technology, 2008
4. Fang, H.; Haibin, L.; Zengli, Z.; Advancements in Development of Chemical-Looping Combustion: A Review, International Journal of Chemical Engineering, 2009
5. Jin, H.; Ishida, M.; Reactivity study on natural gas fueled chemical looping combustion by a fixed bed reactor, Ind. Eng. Chem. Res.,41,2002,4004-4007

****

मध्यप्रदेश में गेहूँ उपज से संबंधित समस्यायें एवं सुझाव

डॉ. अभिलाषा श्रीवास्तव *

शोध सारांश – भारतीय संदर्भ में कृषि अर्थव्यवस्था की आधार स्तम्भ है। भारत की 70% जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। मध्यप्रदेश में कृषि क्षेत्र तथा उत्पादन की दृष्टि से गेहूँ मध्यप्रदेश की दूसरी महत्वपूर्ण फसल है। मध्यप्रदेश में गेहूँ के उत्पादन में कई समस्यायें देखने को मिलती है, जैसे- अनिश्चित मौसम, सिंचाई की समस्या, बुवाई की समस्या, खरपतवार की समस्या आदि। इस शोध पत्र में म.प्र. में गेहूँ उपज से संबंधित समस्याओं एवं उन समस्याओं को दूर करके किस तरह गेहूँ का उत्पादन बढ़ाया जाये इसका विवेचन किया गया है।

शब्द कुंजी – कृषि, गेहूँ उपज।

प्रस्तावना – भारत में कृषि आर्थिक कार्यकलापों का सबसे बड़ा क्षेत्र है। यह न केवल खाद्यान्न व कच्चा माल उपलब्ध कराती है, वरन् जनसंख्या के बडे भाग को नियोजन भी प्रदान करती है, सबसे बड़ा क्षेत्र होने के कारण राष्ट्रीय आय मे विकास और परिवर्तन कृषि आय पर आधारित होते है इसी कारण से कृषि के विकास के लिये पूँजी प्रदान करना होती है और राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिये पूँजी का निर्माण करना होता है। मूलभूत उत्पादन के निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित कर आधार ढांचा और उद्योगो के विकास के लिये पूंजीगत सामग्री आयात की जा सकती है, इसलिये स्थिर और सक्षम अर्थव्यवस्था हेतु कृषि का विकास हमारी तीक्ष्ण आवश्यकता है। कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका इस बात से प्रकट होती है कि कृषि क्षेत्र की स्थिति राष्ट्र की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को किस प्रकार ग्रहण करती है। जनसंख्या का 80% ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है और श्रमशक्ति का 72% अपनी जीविका हेतु कृषि पर आधारित है।

मध्यप्रदेश में गेहूँ उपज – कृषि क्षेत्र तथा उत्पादन की दृष्टि से गेहूँ मध्यप्रदेश की दूसरी महत्वपूर्ण फसल है। रबी की फसलों का सबसे अधिक क्षेत्र गेहूँ के अन्तर्गत है। 2010-11 के आंकड़ों के अनुसार मध्यप्रदेश में 3834.3 हजार हेक्टेयर कृषि भूमि पर गेहूँ की खेती होती है। 2014 हजार हेक्टेयर प्रदेश में सिंचाई के द्वारा गेहूँ होता है, गेहूँ के अन्तर्गत भूमि की निरन्तर वृद्धि हुई है।

भारत की गेहूँ की एक पेटी उत्तर-पश्चिम दककन पठार में है, पश्चिमी मध्यप्रदेश उसी का भाग है, मध्यप्रदेश के इस भाग में औसत वर्षा 75-127 से.मी. तक होती है। जहां वर्षा इससे कम होती है, गेहूँ का उत्पादन कम होता है। भारत के अन्य भागों के समान यहां गेहूँ अक्टूबर-नवम्बर में बोया जाता है। मध्यप्रदेश में गेहूँ के मध्यक्षेत्र में काली मिट्टी पाई जाती है। जो कि गेहूँ की उपज के लिये काफी अच्छी होती है। इस मिट्टी में नाइट्रोजन की कमी एक समस्या है। रासायनिक खादों के उपयोग से अब इसको पूरा किया जाता है। उत्तारी मध्यप्रदेश में जलोढ़ ढोमट मिट्टी पर भी गेहूँ होता है, विशेष रूप से जहाँ समतल भाग है। तथा सिंचाई की सुविधा है। सिंचाई की सुविधा से पश्चिमी मध्यप्रदेश के उन भागों में भी गेहूँ हो सकता है, जहाँ अभी ज्वार अथवा अन्य छोटे अनाज होता है। यही कारण है कि पिछले दशक में गेहूँ के उत्पादन में वृद्धि हुई है, और सिंचित प्रदेशों में गेहूँ की उन्नत किस्में प्रचलित हो गई हैं।

मध्यप्रदेश के कुछ महत्वपूर्ण उत्पादक जिलों के आंकड़े निम्नलिखित तालिका में दर्शाये जा रहे हैं :-

म.प्र. में गेहूँ के अन्तर्गत भूमि हेक्टेयर में उत्पादन हजार टन में -

जिला	भूमि हेक्टेयर में	उत्पादकता टन में
जबलपुर	166.4	167.9
सागर	240.6	239.5
दमोह	94.0	95.6
टीकमगढ़	97.7	236.0
छतरपुर	122.4	198.9
रीवा	155.2	185.1
सतना	103.1	205.2
इन्दौर	84.8	218.5
रतलाम	45.8	98.4
उज्जैन	97.8	309.8
मन्दसौर	63.1	194.0
देवास	71.7	138.9
शाजापुर	98.1	157.0
धार	86.8	182.0
ग्वालियर	96.3	178.8
शिवपुरी	113.1	216.2
गुना	182.2	171.9
भोपाल	72.4	104.6
सीहोर	116.0	201.2
रायसेन	163.1	237.4
विदिशा	226.7	227.5
होशंगाबाद	165.3	261.2

श्रोत :-म.प्र. भू-अभिलेख कृषि सांख्यिकी

* (वाणिज्य) शासकीय विजयाराजे स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

उद्देश्य :

1. म.प्र. में गेहूँ उपज की समस्याओं का पता लगाना।
2. म.प्र. में गेहूँ उपज से संबंधित समस्याओं को दूर करना।

परिकल्पनाएँ :

1. आर्थिक समस्यायें गेहूँ के उत्पादन को प्रभावित करती है।
2. भोपाल संभाग में गेहूँ उपज के उत्पादन की अनुकूल स्थिति है।

शोध पद्धति – उपरोक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए निम्नांकित शोध प्रक्रिया को अपनाया गया है। इस शोध पत्र के अध्ययन की विधि सैद्धांतिक है। इस विधि में द्वितीयक आंकड़ों से सूचना एकत्र की गयी है।

संकलन शोध प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण चरण है प्रस्तुत शोध पत्र में कृषि उपज मंडियों से संबंधित विभिन्न अधिनियमों, नियमों, पत्र पत्रिकाओं एवं कई बेबसाइट से समंको को संग्रहित कर उनका उपयोग किया गया है।

राष्ट्र तथा प्रदेश में गेहूँ उत्पादन :

	क्षेत्रफल(मि.हे.)	उत्पादन मि.टन	उत्पादकता
भारत	29.7	93.5	31.5
मध्यप्रदेश	5.3	13.3	5.3
प्रदेश की भागीदारी	18%	14%	18%

मध्यप्रदेश में गेहूँ उत्पादकता से संबंधित समस्यायें

(अ) असिंचित/ सीमित सिंचाई क्षेत्रों से संबंधित

विगत सात वर्षो का तापक्रम औसत विवरण निम्न है।

निम्न तापक्रम में वृद्धि 2-30 से

उच्च तापक्रम में वृद्धि 3-50 से

1. नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक तापक्रम में अधिक उतार-चढ़ाव।
2. वास्तविक उच्च ताप प्रतिरोधी किस्मों का अभाव जो बदलते परिवेश में सामंजस्य कर सके।
3. अंकुरण के समय नमी का क्षरण तथा दाना भरते समय उच्च तापक्रम
4. असिंचित क्षेत्रों में रूट राट (जड़ सड़न) की समस्या।
5. सोयाबीन - गेहूँ फसल प्रणाली में असिंचित/अर्धसिंचित गेहूँ की देरी से बोवाई (प्रचलित किस्में लम्बी अवधि की है।)।
6. प्रचलित किस्मों की कम 'जल उपयोग' तथा 'पोषक तत्व उपयोग' क्षमता।

(ब) सिंचित क्षेत्रों से संबंधित

1. रबी मौसम में ठण्ड की अवधि कम।
2. अनिश्चित मौसम।
3. कल्ले निकलने के समय तथा परागण के समय तापक्रम में वृद्धि जिससे समय से पूर्व फसल में परिवक्वता आती है।
4. परिणाम स्वरूप दानों का भराव कम।
5. उच्च तापक्रम के कारण भूमि से वाष्पन अधिक जिससे सिंचाई की संख्या तथा सिंचाई के पानी की मात्रा में वृद्धि।
6. कमाण्ड क्षेत्रों में भी समय पर सिंचाई के लिए पानी की अनुपलब्धता।
7. सिंचित क्षेत्रों में डशशरिसश तथा जल भराव की समस्या।
8. बहु फसल प्रणाली के कारण देरी से बुवाई का अधिक रकबा।

प्रदेश में गेहूँ की काष्त का बदलता स्वरूप

(अ) पूर्व के वर्षो में असिंचित रकवा अधिक

1. अब पूर्ण रूप से असिंचित रकबे में उल्लेखनीय कमी।
2. संचित नमी में खेती लगभग समाप्त।
3. स्प्रिंकलर सिंचाई पद्धति ने इस परिदृश्य को बदला।
4. लगभग पूरे प्रदेश में कम से कम एक सिंचाई का उपयोग अत: पूर्णत: असिंचित रकबा लगभग समाप्त।

(ब) सिंचित गेहूँ क्षेत्र में वास्तविक परिदृष्टि में सीमित सिंचाई उपलब्धता

1. सिंचित शब्द से आभास होता है कि 5-6 सिंचाई की उपलब्धता है।
2. वास्तविक रूप में पूरे प्रदेश में 5-6 सिंचाई अनुपलब्धता।
3. यहाँ तक कि समय से बोये गये गेहूँ में भी अधिकांश क्षेत्रों में मात्र 3 सिंचाई उपलब्धता।
4. देरी से बुवाई की स्थिति में मात्र दो सिंचाई उपलब्धता।

उत्पादन तकनीक

1. ग्रीष्मकालीन जुताई।
2. तीन वर्षो में एक बार गहरी जुताई।
3. काली भारी मिट्टी को भुरभुरा बनाना कठिन।
4. रोटावेटर का प्रयोग उपयुक्त डिस्क हैरो का भी प्रयोग उपयुक्त बुवाई का उचित समय।
5. असिंचित: मध्य अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक।
6. अर्धसिंचित: नवम्बर माह का प्रथम पखवाड़ा।
7. सिंचित (समय से) : नवम्बर माह का द्वितीय पखवाड़ा।
8. सिंचित (देरी से) : दिसंबर माह का द्वितीय सप्ताह से।

मध्यप्रदेश में गेहूँ अधिक उत्पादन के लिए आवश्यक सुझाव :

खरपतवार नियंत्रण – खरपतवारों द्वारा 25-35 प्रतिशत तक उपज में कमी की संभावना बनी रहती है। यह कमी फसल में खरपतवारों की सघनता पर निर्भर करती है उत्पादन में कमी के अलावा फसल को दिये गये पोषक तत्व, जल, प्रकाश एवं स्थान आदि का उपयोग खरपतवार के पौधों के स्वयं के द्वारा करने के कारण होती है। गेहूँ में नींदाँ नियंत्रण उपायों को मुख्यत: तीन विधियों से किया जा सकता है।

गेहूँ की फसल में होने वाले खरपतवार मुख्यत: दो भागों में बांटे जाते हैं।

1. चौड़ी पत्ती-बथुआ, सेंजी, दूधी, जंगली पालक अकरी, जंगली मटर, कृष्णनील, सत्यानाशी हिरनखुरी, आदि।
2. सकरी पत्ती- मोथा, कांस, जंगली जई, चिंरैया बाजरा एवं अन्य घासें।

रासायनिक विधि – रासायनिक विधि से नींदा तक को प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि इससे समय की बचत होती है। रूप से भी लाभप्रद रहता है। इस विधि से नींदा नियंत्रण निम्न प्रकार करते हैं –

नींदानाशक	खरपतवार	दर/हे.	प्रयोग का समय
पेण्डीमिथेलीन	संकरी एवं चौड़ी	1.0 किग्रा.	बुवाई के तुरन्त बाद
सल्फोसल्फूरान	संकरी एवं चौड़ी	33.5 ग्रा.	बुवाई के 35 दिन तक
मेट्रीब्यूजिन	संकरी एवं चौड़ी	250 ग्रा.	बुवाई के 35 दिन तक
2,4-डी	चौड़ी पत्तियाँ	0.4-0.5 किग्रा.	बुवाई के 35 दिन तक
आइसोप्रोपयूरान	संकर पत्तियाँ	750 ग्रा.	बुवाई के 20 दिन तक
आइसोप्रोपयूरान +2,4-डी	चौड़ी पत्तियाँ एवं संकरी पत्तियाँ	750 ग्रा. +750 ग्रा.	बुवाई के 35 दिन तक

गेहूँ के विपुल उत्पादन के लिए मुख्य आवश्यक बातें :

1. मिट्टी की जांच के बाद उर्वरकों को प्रयोग करें। संतुलित मात्रा में समय पर उर्वरक दें। उर्वरकों का सही प्लेसमेंट उत्पादन बढ़ाने में एवं उर्वरक उपयोग क्षमता बढ़ाने में योगदान देता है। उर्वरकों को बीज से 2-3 सेमी नीचे डाले। कार्बनिक एवं जैविक स्त्रोतों का भरपूर उपयोग करें

जिससे मृदा स्वास्थ्य एवं उत्पादकता बढ़ती है।

2. बीजदर अनुशंसित मात्रा में उपयोग करें। क्षेत्र विशेष के अनुसार शुद्ध, स्वस्थ्य, कीट एवं रोग रोधी किस्मों का चयन करें। समय पर बोनी करें। बीज एवं खाद एक साथ मिलाकर बोनी न करें। देर से बुवाई की अवस्था में संसाधन प्रबंधन तकनीक जैसे-जीरो टिलेज का प्रयोग करें। यथासंभव बुवाई लाइनों में करें क्रासिंग न करें। पौध संख्या अनुशंसा से ज्यादा न करें।
3. खरपतवार नियंत्रक उपाय समय पर करें। खरपतवारनाशी दवाओं का इस्तेमाल करते समय ध्यान दें कि फसल में नीदाओं की सघनता एवं नीदाओं के प्रकार के हिसाब से रसायन का चयन करें। खरपतवार नाशी दवा का उपयोग मृदा में पर्याप्त नमी होने की दशा में सही मात्रा एवं घोल का इस्तेमाल करें।
4. गेहूँ में सिंचाई मिट्टी का प्रकार सिंचाई साधन, सिंचाई उपकरण को ध्यान में रखकर क्रान्तिक अवस्थाओं पर सिंचाई देवे।
5. कीट एवं रोग नियंत्रक उपाय समय पर करें।
6. गेहूँ फसल की कटाई उपरांत नरवई खेतों में न जलायें, नरवई जलाने से खेतों की मृदा में उपलब्ध लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं का ह्रास होता है। नरवई की आग से लोगों के घरों में भी आग लगती है। एवं जन व पशुधन हानि की भी संभावना रहती है। गेहूँ की फसल कटाई उपरांत खेतों में समुचित नमी की दशा में रोटावेटर चलाने से नरवई कटकर मिट्टी में मिल जाती है जो कि मृदा के लिए लाभदायक भी है।
7. आज के समय में रसायनों के असंयमित प्रयोग से खेती की उत्पादन लागत बढ़ रही है। आवश्यकता है कि इस उत्पादन लागत को कम किया जाये। उत्पादन लागत को कम करने का सस्ता एवं प्रभावी तरीका है संबंधित प्रबंधन उपायों को अपनाना।
8. मौसम के परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग के कारण धरती के बढ़ते तापमान एवं अनिश्चितता के कारण दिन प्रतिदिन कीड़े एवं बीमारियों की समस्या फसलों में बढ़ रही है। इनके प्रभावी प्रबंधन हेतु समन्वित उपायों को अपनाना नितांत आवश्यक है।
9. खेती में उत्पादन प्राप्त करने के लिये समय पर कुशल प्रबंधन एवं सही निर्णय आवश्यक है कई बार किसान भाई खरपतवार नियंत्रक उपायों को देर से अपनाते हैं जिसके कारण खरपतवार फसल की क्रांतिक अवस्था निकल जाती है एवं खरपतवार के पौधे मजबूत हो जाते हैं। फिर उनका नियंत्रण रसायनों से भी मुश्किल होता है।
10. कठिया गेहूँ में आइसोप्रोट्यूरान की मात्रा घटाकर 0.5 मिग्रा. सक्रिय तत्व/हे. कर दें। तथा 3-4 दिन बाद स्प्रे करें।
11. रेतीली जमीन में खरपतवार नाशियों का प्रयोग न करें।

उपसंहार – कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश के आर्थिक विकास के लिये कृषि का विकास अनिवार्य है। कृषि क्षेत्र तथा उत्पादन की दृष्टि से गेहूँ मध्यप्रदेश की दूसरी महत्वपूर्ण फसल है। प्रदेश के गेहूँ उत्पादन में कठिया किस्मों का 8 से 10 प्रतिशत योगदान है। प्रदेश में गेहूँ से अधिक उत्पादन मिट्टी का परीक्षण अवश्य करायें। जहाँ तक हो सके स्प्रिंकलर का उपयोग करें। उपरोक्त अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि म.प्र. का गेहूँ देश में गुणवत्ता में सर्वेश्रेष्ठ है। अभी तक प्रोटीन की मात्रा बढ़ाने का प्रयास किया गया है। गेहूँ उत्पादन में आने वाली समस्याओं के समाधान से गेहूँ उपज का उत्पादन और अधिक बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान परिस्थितियों में कृषि क्षेत्र में कम हो रहे सरकारी संरक्षण को पुनः स्थापित करने की जरूरत है।

भूमि सुधार के बिना संसाधनों के समुचित उपयोग और उन्नति सम्भव नहीं है। सरकार पड़त भूमि को निजी क्षेत्र को सौंप रही है। इसके बजाये किसानों और भूमिहीनों को छांटकर उन्हें भूमि विकास में मदद की जानी चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. दैनिक नवभारत, भोपाल
2. कृषक जगत मासिक, भोपाल
3. नई दुनिया दैनिक पत्र, इन्दौर
4. म0प्र0 सांख्यिकी संक्षेप, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय म.प्र.
5. मामोरिया एवं जैन - भारत का आर्थिक विकास
6. विष्णुदत्ता नागर - आर्थिक विकास से सिद्धान्त एवं समस्यायें।
7. अग्रवाल एन.एल. - भारतीय कृषि का अर्थतन्त्र।
8. शोध प्रबन्ध (गेहूँ का विपणन व्यवहार) - अभिलाषा श्रीवास्तव
9. म.प्र.भू-अभिलेख कृषि सांख्यिकी।

****

ग्रामीण महिलाओं की वास्तविक स्थिति (राजनीतिक क्षेत्र में)

डॉ. गरिमा पारीक *

प्रस्तावना – भारत विश्व में जगत गुरू कहलाता था, यहां के संस्कार, सभ्यता, संस्कृति व विज्ञान विश्व में अद्वितीय स्थान रखते थे। जिसका मूल कारण स्त्री–पुरूषों की समान शिक्षा–दीक्षा व जागरूकता थी। वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति बहुत ही श्रेष्ठता से परिपूर्ण थी तभी तो हमारे राष्ट्र में गार्गी, मैत्री, घोषा, मदालसा अलापा जैसी श्रेष्ठ महान नारियों ने धरित्री को अपने ज्ञान से सुशोभित व धन्य किया था।

महिलाएं अनादि काल से सम्पूर्ण विश्व में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रही है। नर–नारी के कंधे से कंधा मिलाकर ही समस्त संसार की प्रगति में अपना योगदान दिया है। इन दोनों में छोटे–बडे का तो कभी कोई विवाद ही उपन्न नहीं हूआ। किन्तु दुर्भायवश कालान्तर में सारी दुनिया की नारियों को पुरूषों द्वारा किये गये दोयम दर्जे के व्यवहार को सहन करना पड़ा था। इस व्यवहार के लिए अनेक परिस्थितियां उत्तरदायी थी।

हजारों वर्षो के संघर्ष के बाद विचार वेत्ताओं व मनिषियों के प्रयत्न स्वरूप नारी मुक्ति व सशक्तिकरण की ओजस्वी धारणा पुन: अस्तित्व में आई। भारतीय स्त्री भी इस उद्घोष से जागृत हुई। वास्तव में पुरूष समाज को यह नितान्त रूप से समझना भी चाहिए कि स्वस्थ, शिक्षित, सक्षम, सुयोग्य, और कुशल नारी व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि सभी क्षेत्रों में उपयोगी सिद्ध हो सकती है। उसकी गतिविधियां यदि चूल्हे तक, बच्चे पैदा करने और घर की चौकीदारी भर करने तक ही सीमित न रहने दी जाय, उसे विकसित होने दिया जाय, तो मानव जाति की सर्वतोमुखी प्रगति में भारी सहयोग मिल सकता है।

नारी का पिछड़ापन आधी जनसंख्या के प्रगति–पथ में भंयकर अवरोध उत्पन्न करने वाली समस्या है। संसार की आबादी का आधा भाग नारी–वर्ग का है। उस पर छाया हुआ पिछड़ापन संसार के विकास क्रम में कितनी बाधा उत्पन्न करता है, उसे थोड़ी–सी विचार बुद्धि का उपयोग करके सहज ही जाना जा सकता है। पिछड़ा मनुष्य अपनी मौलिक क्षमता को विकसित नहीं कर पाता। दुबर्लता के कारण उसके लिए उन सम्पदाओं और विभूतियों को उपलब्ध कर सकना सम्भव नहीं होता जो इस संसार में हर मनुष्य के लिए प्रचुर परिणाम में विद्यमान है।

भारतीय नारी का पिछड़ापन एक तरह का है। संसार के अन्यान्य भागों में दूसरी तरह का। नारी की विशेषता के कारण शारीरिक बलिष्ठता और उपार्जन क्षमता में न्यूनता आनी स्वाभाविक है। इसे उसकी दुर्बलता समझाा गया और दुर्बलों के साथ बलवानों द्वारा जो मत्स्य न्याय अपनाया जाता है, वैसा ही व्यवहार नारी के साथ किया गया। भारत में प्रतिबन्धित और पददलित स्थिति में उसे रखा और दूसरे दर्जे का नागरिक माना जाता है। मानव मात्र के लिए जिन मौलिक अधिकारों की विश्व विवेक ने घोषणा की है, उससे भारतीय नारी प्राय: वंचित ही हैं। नर के लिए जो सुविधाएं और परम्पराएं है, वे नारी के लिए कहां हैं, उसे स्वेच्छा से नहीं विवशता से अपनी जिन्दगी जीनी पड़ती है। स्वेच्छा सहयोग से एक–दूसरे के लिए बडे से बड़ा त्याग बलिदान करें, एक दूसरे के लिए समर्पित रहें, यह सराहनीय है, किन्तु बाधित बनाकर मनुष्य–मनुष्य का अपने स्वार्थ साधन के लिए उपयोग करें, यह मानवी अधिकार का अपहरण हैं। नैतिक एवं सामाजिक मर्यादाओं में क्या नर, क्या नारी सभी को प्रतिबन्धित रहना चाहिए, किन्तु स्वार्थ के लिए एक वर्ग दूसरे वर्ग का दमन एवं शोषण करे यह अनुचित हैं। यही अधिकाशं भारतीय ग्रामीण नारियों के साथ हो रहा है।

भारत गांवों का देश है। आधी आबादी मातृ शक्ति है। उनमें से 70 प्रतिशत महिलाएं गांवों में निवास करती हैं। ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा की स्थिति भी बहुत ही नाजुक है। गांवों में मात्र 40 प्रतिशत महिलाएं ही शिक्षित है। संविधान ने नारियों को पुरूषों के बराबर अधिकार प्रदान किये है। राजनीतिक क्षेत्र में तो महिलाओं ने राष्ट्र के सर्वोच्च शक्तिशाली पदों को सुशोभित किया है और आज भी वे सक्रिय है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी महिलाएं गांवों की राजनीति में अत्यधिक जागरूक नजर आती है। वे पंच है, सरपंच है, अन्य उच्च पदों पर आसीन है। पर वस्तुस्थिति जो दिखाई देती है, वह नहीं है। पर्दे के पीछे की सत्यता कुछ ओर ही है।

समस्या – गांवों की राजनीति में पद महिलाओं के पास है, पर यर्थाथ में उसे संचालित पुरूष ही करते है। यह एक विकट व हास्यास्प्रद लोक तांत्रिक स्थिति है। जो मतदाताओं व संवैधानिक व्यवस्था का मजाक उड़ाती है। लोकतन्त्र की मजबुती व सुदृढ ग्रामीण भारत के उत्थान के लिए महिलाओं की सोच में और पुरूषोचित मानसिकता में परिवर्तन करना आज एक महती समस्या हैं।

उद्देश्य :

1. ग्रामीण जनता को जागरूक करना।
2. महिलाओं को उनके अधिकारों से अवगत करवाना।
3. महिला प्रतिनिधियों को उनकी जिम्मेदारी को समझना।
4. पद की गरिमा को प्रत्येक महिला समझे।
5. ग्रामीण महिलाओं को वास्तविक अर्थो में शिक्षित करना।
6. लोकतंत्र की मजबुती हेतु महिलाओं को शिक्षित करना।
7. महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक पारिवारिक व राजनीतिक स्थिति में सुधार लाना।
8. पुरूष सोच में आमूल–चूक परिवर्तन लाना।

राजस्थान सहित भारत के अधिकांश गांवों में महिला सशक्तिकरण दिखाई तो देता है, किन्तु वास्तविकता, कागजों, आंकड़ों व प्रदर्श में है।

* प्राचार्या (राजनीति विज्ञान) बाबा श्याम ऋषि संस्कृति पी.जी. महाविद्यालय, खाटूश्यामजी, सीकर (राज.) भारत

जमीनी हकीकत तो कुछ अलग ही है। आश्चर्य का विषय यह है कि अधिकांश पढ़ी-लिखी महिलाएं भी अपने निर्णय स्वयं नहीं ले पाती। वे स्नातक या स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षित जरूर है पर अपने राजनीतिक सोच व अधिकारों से हकदम उदासीन है, गांवों में किसे मत देना है यह परिवार के मुखिया तय करते है। पंच या सरपंच की सीट महिला आरक्षित है, तो पति के आदेशानुसार पत्नी को आरक्षित सीट हेतु उम्मीदवार बना दिया जाता है। और वह घूघंट निकालकर मतदाताओं से अपने पति व ससुर के लिए वोट मांगती है। जो महिला प्रत्याशी विजयी होती है, उसके बारे में नहीं बल्कि उसके पति की जीत के चर्चे होते है और पुरूष भी सत्ता का जमकर उपयोग करता है नारी हस्ताक्षर करने वाली मोहर बन जाती है। सार्वजनिक कार्यक्रम या पंचायत में भी वह अपने पति को भेजकर अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेती है। पंचायत में व सार्वजनिक कार्यक्रमों में, संरपच पति को सरपंच प्रतिनिधि कहकर सम्मान दिया जाता है। उसके हर वक्तव्य व घोषणा को पंच या सरपंच की स्वाभाविक इच्छा मानी जाती है। कागजों में पंच-सरपंच कोई ओर है और पद का कामकाज कोई ओर कर रहा है। क्या यह लोकतंत्र का मजाक नहीं हैं। आजादी के 70 साल बाद भी अगर महिला अपने राजनीतिक अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति जागरूक न होकर केवल मोहरा भर बनी रहेगी तो हम कैसे प्रगतिशील समाज व राष्ट्र की बात करते हैं।

यद्यपि कुछ महिला पदाधिकारी गांवों में अपवाद स्वरूप ऐसी भी है, जो अपनी शानदार राजनीतिक शक्ति के बल पर फैसले लेती है और उन्हें लागु करके अपने गांवों को आधुनकि, भ्रष्टाचार से मुक्त विकास का मॉडल बनाती है। पर ऐसी महिलाएं उँट के मुंह में जीरे के समान है, अर्थात् बहुत कम संख्या में हैं।

लोकतन्त्र जनता का होता है, जनता द्धारा होता है, जनता के लिए होता है। न कि पदारूढ़ जन सेवक स्त्रियों के पतियों के उपभोग के लिए होता है। 21वीं सदी के भारत के ग्रामीण समाज को भी अब स्वयं में परिवर्तन करना होगा। नारियों को भी स्वयं के पद व प्रतिष्ठा के अनुसार कार्य करना होगा। यह समस्या बहुत गंभीर है कि महिलाएं कानूनन व संवैधानिक ढ़ंग से प्राप्त पद को भी बड़ी दानशीलता से पतियों को दान कर देती ताकि पांच साल तक पुण्य प्राप्ती हो सके। हमारा देश दुनियां का सबसे बड़ा लोकतन्त्र है। भारत के मतदाता के फैसले पर तो संसार भी आश्चर्यचकित होता है। जहां पड़ौसी राष्ट्र की जनता लोकतन्त्र की बयार में सांस लेकर स्वस्थ होना चाहती है, जनतान्त्रिक मूल्यों की जड़ो को हरा रखने के लिए संघर्ष शील है, किन्तु कभी सेना, कभी आंतकवादी, कभी रूढ़ मान्यताएं व नेताओं के निहित स्वार्थ वहां पर लोकतन्त्र को फलने-फूलने नहीं देते है।

हम जनता के घर भारत में रहते है। यह हमारा सौभाग्य है। हमें जनतांत्रिक मूल्यों के प्रति अगाध श्रद्धा भी रखनी होगी और स्त्री-पुरूष की असमानता वाली छद्म व घृणित सामाजिक सोच को तिलांजलि देनी होगी। संसद सिर्फ कानून बना सकती है, हमारी आत्मा व मन में परिवर्तन नहीं कर सकती है। सभ्य राष्ट्र के सभ्य नागरिको को अपनी सोच व व्यवहार में बदलाव लाना ही होगा। ग्रामीण भारत ही असली भारत है। हमारे 29 राज्य व केन्द्र शसित प्रदेश यहीं पर सही रूप में अवस्थित है। गांव सशक्त व समर्थ बने, यह हमारे सभी महापुरूषों का स्वप्न व प्रयत्न था। नारी शक्ति बराबर का योगदान प्रदान करने तो गांवों की सशक्तता में कोई संदेह भी नहीं है।

जहां संसार बदल रहा है, मेरा देश बदल रहा है। वहां अधिकाशं गांवों की इस पद अधिकार स्थानान्तरण की प्रक्रिया को भी बदलना पड़ेगा अर्थात् इसे रोकना पड़ेगा।

संवैधानिक दृष्टि से जिसे जो पद मिला है, उसे ही ईमानदारी से उस पद की जिम्मेदारी का वहन करना होगा। क्योंकि न सिर्फ अपने पद का पालन स्वयं न करना एक नैतिक अपराध है अपितु यह एक कानूनन अपराध भी है। अतः इस तथ्य से पुरूषों व महिलाओं दोनों को अवगत होना होगा।

सुझाव :

1. सरकार को जन-जागरूकता उत्पन्न करने हेतु एक महाअभियान चलाना होगा। जिससे महिला पदाधिकारियों को उनके पद व महत्व से अवगत करवायाजा सकें।
2. मतदाताओं को भी यह समझाना होगा, कि जिसे वोट देकर विजयी बनाया जाता है, उसे ही कार्य करना चाहिये अन्यथा ऐसे प्रत्याशी जो अपने कर्तव्यों हेतु परावलम्बी है, उसे अमूल्य मत नहीं देना चाहिए।
3. ऐसी पदारूढ़ महिला जो अपने पद के अधिकार पुरूषों को प्रदान करती है, उनके खिलाफ कानूनन जांच होनी चाहिए, एवं सत्यता पाई जाने पर उन्हें पद से मुक्त करना चाहिए।
4. सरपंच प्रतिनिधि पति को कानून द्धारा दण्डित किया जाना चाहिए।
5. सरकार द्धारा भारत में महिलाओं द्धारा किये जा रहे, राजनीतिक कार्यो की जानकारी प्रदर्शनी, लघु फिल्म व अन्य साधनों द्धारा ग्रामीणों को दी जानी चाएिये। ताकि पदासीन महिलाएं व ग्रामीण जनता प्रेरणा ग्रहण कर सके। वह अपनी अधिकारों व कर्तव्यों का समुचित निर्वहन कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शेल्डे, हरिदास रामजी : नारी उत्पीड़न समस्या एवं समाधान, शीतल ऑफसेट, जयपुर 2008
2. जोशी, रामशरण : मीडिया और बाजारवाद, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2002
3. शर्मा, वीरेन्द्र प्रकाश : भारत में सामाजिक परिवर्तन, पंचशील प्रकाशन, जयपुर 1999
4. पाण्डे, मृणाल :परिध पर स्त्री, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली 2002
5. शर्मा, भगवती देवी : नारी श्रंगारिकता नहीं, पवित्रता है, युग निर्माण योजना, गायत्री तपो भूमि, मथुरा 1995
6. शर्मा, श्रीराम : महिला जागृति अभियान, युग निर्माण योजना, गायत्री तपो भूमि, मथुरा 1998
7. बोहरा, आशा :भारतीय नारी दशा-दिशा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, 1999
8. रानी, आशु : महिला विकास कार्यक्रम, विश्व भारती पब्लिकेशनस् नई दिल्ली 2008

****

बाल अपराध के कारण व समाधान

डॉ. गरिमा पारीक *

प्रस्तावना - बच्चों के व्यक्तित्व की सर्वागींण उन्नति के लिए उचित वातावरण और आवश्यक परिस्थितियाँ पैदा करना माता-पिता का सर्वोच्च कर्त्तव्य है, क्योंकि बच्चों में जन्म से ही कुछ गुण-अवगुण विद्यमान होते है, जिनके लिए उचित परिस्थितियाँ न मिलने पर उनके व्यक्तित्व में गलत छाप भी पड़ सकती है और उसी के अनुसार उनका व्यक्तित्व ढलता जाता है।

बालश्रम और बाल अपराध में अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है ये दोंनो एक ही सिक्के के दो पहलू है। बालक जब परिवार से उपेक्षित हो जाता है तब वह बालश्रम करने के लिए विवश हो जाता है। जिस संगति, वातावरण एवं परिस्थितियों में रहकर वह कार्य करता है। उसका प्रत्यक्ष प्रभाव उसके व्यक्तित्व निर्माण पर पड़ता है। बालक जब कठोर परिश्रम के पश्चात् भी कम मजदूरी व मालिक के अत्यधिक ताने सुनता है, उससे जब बहुत ज्यादा काम लिया जाता है, जिसे शोषण कहना अधिक उचित होगा, तब बालक अधिक दु:खी हो जाता है । वह समाज में अन्य बच्चो को एशो आराम से पलता देखता है, तब शोषित बाल मन में कुण्ठा जागृत हो जाती है। वह कम समय में अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने हेतु छोटे-छोटे अपराधो का सहारा लेता है। धिरे धिरे उसे इन अपराधों को करने में आनन्द आने लगता है और वैसे ही अपराधी बच्चों को वह अपना मित्र बना लेता है। वे सब मिलकर नये नये तरीके ढूंढकर अपराध करते है । एक दिन यह बालक बड़े अपराध भी बड़ी कुशलता से कर बैठते है। कम समय में अधिक लाभ प्राप्त करने और परिवार वालों के प्रोत्साहन मिलने के कारण बच्चे निडर होकर बड़े से बड़ा अपराध करने से भी नहीं चूकतें है। किसी न किसी दिन वे पुलिस द्वारा पकड़े जाते है

बाल अपराध के कारण:

1. शारीरिक स्थिति
2. मनोवैज्ञानिक कारण
3. आचरण (चरित्र और व्यवहार)
4. गन्दी व गलत आदतें
5. पर्यावरण (पारिवारिक वातावरण)
6. टेलिविजन व अश्लील फिल्में
7. अश्लील साहित्य
8. नैतिक शिक्षा का अभाव
9. कामुकता युक्त फैशन (साज-सज्जा)
10. अत्यधिक गरीबी
11. विद्यालयों की नीरस शिक्षा प्रणाली
12. आत्महीनता की भावना
13. माता-पिता द्वारा तिरस्कार
14. वंशानुगत स्थिति

कानूनी दृष्टिकोण से बाल अपराध 8 वर्ष से अधिक तथा 16 वर्ष से कम आयु के बालको द्वारा किया गया कानून विरोधी कार्य है जिसे कानूनी कार्यवाही के लिए बाल न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया जाता है।

बाल न्याय अधिनियम 1986 (संशोधित 2000) के अनुसार 16 वर्ष तक की आयु के लड़को एवं 18 वर्ष तक की आयु की लड़कियो के अपराध करने पर बाल अपराधी की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है। बाल अपराध की अधिकतम आयु सीमा अलग- अलग राज्यों में अलग - अलग है।

बाल अपराध सिर्फ भारत वर्ष की ही घातक समस्या नहीं है अपितु इस बिमारी से सम्पूर्ण विश्व ग्रसित है। आज का बालक कल का नागरिक होता है। प्रत्येक पीढ़ी का यह नैतिक व राष्ट्रीय दायित्व होता है कि वह अपनी भावी पीढ़ी को सुसंस्कारित व सभ्य बनाए ताकि राष्ट्र व विश्व का भविष्य सुरक्षित रह सके। बाल अपराधियों की बढ़ती संख्या से समस्त विश्व के संवेदनशील जन चिन्तित है। भारत में बाल अपराधियों को सुधारने व इन अपराधों को रोकने हेतु दो प्रकार के उपायों को अपनाया गया है-

- **विधिक उपाय -** 1986 में बाल न्याय अधिनियम पारित किया गया, जिसमें सारे देश में एक समान बाल अधिनियम लागू कर दिया गया । इस अधिनियम द्वारा उपेक्षित बालको तथा बाल अपराधियों को दूसरे अपराधियों के साथ जेल में रखने पर रोक लगा दी गई, उपेक्षित बालकों को बाल गृहों में रखा जायेगा । उन्हें बाल कल्याण बोर्ड के समक्ष उपस्थित किया जायेगा, बाल अपराधियों को बाल न्यायालय के सामने लाया जायेगा ।

बाल न्यायालय - बाल न्यायालय भारत के सभी प्रान्तों में है। बाल न्यायालय के वातावरण का निर्माण इस प्रकार से किया जाता है कि बाल अपराधी के मन में डर का भाव न रहें। वह स्नेहसिक्त वातावरण में अपराध करने का कानण व अपराध के कृत्य पर भयरहित होकर बोल सके ।
ज्योंहि कोई बालक अपराध करता है तो उसे रिमाण्ड में भेजा जाता है और 24 घण्टे के अन्दर-अन्दर उसे बाल न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया जाता है। उस व्यक्ति को भी बुलाया जाता है, जिसके प्रति बच्चे ने अपराध कारित किया है ।

सुनवाई के पश्चात् बाल अपराधी को चेतावनी देकर, जुर्माना लगाकर अथवा माता-पिता-संरक्षक से बॉण्ड भरवाकर उन्हें बालक सौंप दिया जाता है या उसे परिवीक्षा पर छोड़ दिया जाता है या किसी सुधारालय में भेज दिय जाता है।

- **सुधारालय -** सुधारात्मक संस्थाओं में बाल अपराधियों को नियत समय तक रखकर आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है :

1. सम्प्रेक्षण गृह

* प्राचार्या (राजनीति विज्ञान) बाबा श्याम ऋषि संस्कृति पी.जी. महाविद्यालय, खाटूश्यामजी, सीकर (राज.) भारत

2. सुधारात्मक विद्यालय
3. परिवीक्षा सेवाएँ
4. विशेष गृह
5. बाल सुधार गृह

यद्यपि सभी शासकीय व अशासकीय संस्थाएँ बाल अपराधियों को अपराध के घृणित वतावरण से निकालकर राष्ट्र की मुख्य धारा में सम्मानपूर्ण ढंग से जीवन यापन करवाने व शिक्षा प्रदान कर, बाल अपराध को समूल नष्ट करना चाहती है। फिर भी परिवार,समाज,राष्ट्र और यहां तक कि विश्व को भी जागरूक रहकर बच्चों के भौतिक पोषण के साथ–साथ भावनात्मक पोषण भी करना होगा।

बाल अपराध के समाधान हेतु सुझाव :

1. बालको को वरीयता दी जाये।
2. बालको सम्बन्धी भेदभाव को समाप्त करना।
3. हर बच्चे की देखभाल हो।
4. प्रत्येक बालक को शिक्षित करना अनिवार्य हो।
5. बच्चो को हानि व शोषण से संरक्षण प्राप्त हो।
6. बच्चों की बातो को अभिभावक ध्यान पूर्वक सुने व उनकी भागीदारी सुनिश्चित करें।
7. बालको का चारित्रिक विकास सद्गुणो से हो।
8. बच्चों को प्रताड़ना नहीं, प्रेरणा की जरूरत।
9. बालको हेतु सत्साहित्य जुटाया जायें।
10. प्रेरणा दायक फिल्मों व धारावाहिको का निर्माण।
11. बालको को श्रमशीलता की शिक्षा दी जायें।
12. सफाई व सादगी से रहना सिखाया जायें।
13. समय का सदुपयोग व उदारतापूर्ण आचरण के गुण दिये जाये।
14. शिष्टाचार और सज्जनता का आचरण करना सिखाया जायें।
15. बाल संस्कार केन्द्रो की स्थापना की जाये।

बच्चों के व्यक्तित्व के सर्वतोमुखी विकास के लिए अभिभावको का बच्चों के प्रति भावनात्मक आदान–प्रदान तो होना ही चाहिए। इसके साथ ही सरकार को भी बाल अपराध को रोकने के लिए और भी सशक्त कदम उठाने चाहिए। परिवार,समाज व देश की सरकार तीनों मिलकर संयुक्त प्रयास करेंगे तो निसंदेह इस राष्ट्र में से बाल श्रम व बाल अपराध जैसी गम्भीर स्थिति सदैव के लिए विदा हो जायेगी। स्वस्थ सुयोग्य सन्तति से देश और विश्व की उन्नति सम्भव होती है, मानवता का नव निर्माण होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नाटाणी,प्रकाश नारायण – महिला एवं बाल विकास नूतन आयाम, माया प्रकाशन मंदिर,जयपुर 2004
2. शेण्डे,हरिदास रामजी (सुदर्शन) – बाल श्रम,अपराध एवं समाधान, साहित्यागार,जयपुर 2007
3. शर्मा,श्रीराम – बालको का भावनात्मक निर्माण, युग निर्माण योजना,गायत्री तपोभूमि मथुरा 2004
4. शर्मा,लीलापत – बालनीति शतक, युग निर्माण योजना,गायत्री तपोभूमि मथुरा 2003
5. कुशवाह,अलका – कच्ची उम्र में मजदूरी का बोझ, योजना 1995
6. बघेल.एस.– अपराध शास्त्र, विवेक प्रकाशन, दिल्ली 1995
7. https://hi.m.wikipedia.org/w

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Study Of Customer Satisfaction In Organized Retail Sector

Dr.Shweta Mathur* Dr. Shiv Kumar Shrivastava**

Abstract - The aim of the study is to know consumers' satisfaction in organized retail sector. Organized retailing is the process of sailing different goods under one roof in a fixed location. The objective of the study is to known customer satisfaction in organized retail sector and to know the factors that influence selection of organized and unorganized retail sector by customers along with the profile of customers of organized retail sector. The study shows positive relationship between organized retail sector and customer satisfaction at different levels. The study suggests that the organized retail sector must capture customers with lower income groups and these stores must e placed at convenient locations where every customer can reach easily and prices must be economic for every grade of customer.
Key words - customers satisfaction, organized retail sector.

Introduction - The organized retail is the process of selling goods or merchandise all under one roof in a fixed location such as a departmental store, hypermarket, supermarket or even a convenience store.

The Indian retail sector is highly fragmented, consisting predominantly of small, independent, owner-managed shops. During the last six years, India has witnessed an impressive boom in retail, registering an annual growth in value of 9.3 per cent. This market has been attracting substantial investments from organized companies wishing to grab their share of the pie. To increase their market penetration, retailers have been focusing their strategy on two critical success factors: reach and consumer experience. Reach refers to the number of consumers having a convenient access to the retailers' selling point. To increase it, retailers are getting closer to the consumers by expanding their distribution network. Consumer experience refers to the relationship between consumer and organization, it is important to business because customers who have a positive experience are more likely to become repeat customers and loyal customers of the business.

Some of the factors which have contributed to the growth of organized retail in India are: increase in purchasing power of Indians, rapid urbanization, increase in the number of working women, large number of working young population.

Customer satisfaction is affected by many factors, among them two factors are main, they are:-

1. Human factors
2. Product factors

Factors affecting Customer satisfaction

Human Factors

- response
- service
- commitment adherence
- complaint management system
- customers importance
- orientation
- attitude
- customer friendly features
- quality
- trouble free operation

Product Factors

- Performance
- efficiency
- technology
- maintenance requirement
- life span
- price
- appearance

Review Of Literature :

1. Bebko (2000) customer satisfaction occurs when the value and customer service provided through a retailing experience meet or exceed consumer expectations. If the expectations of value and customer service are not met, the consumer will be dissatisfied.
2. Jackson (1999), suggests that retailers should always keep in mind that customers expectations move continuously upward and that only satisfied customers are likely to remain loyal in long run.
3. Ramanthan and Hari (2011)[found that the current retailing revolution has provided an impetus from modern retailing, companies in competitive environments are entering into the market directly to ensure exclusive

*Faculty (Commerce) V.R.G. Girls P.G. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA
** Prof. & Head (Commerce) V.R.G. Girls P.G. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

assortment for their products and services. chairs stores coming up to meet the needs of the manufactures which do not fall into the above categories is also an impact of this.

Objectives :

1. To know the customer satisfaction in organized retail sector.
2. To study the factors influencing organized sector.
3. To know the benefits of organized sector.

Hypothesis :

1. There is no significant relationship between customers' satisfaction and retail sector.
2. There is no significant between factors influencing organized retail customers and section of organized retail market
3. There is significant relationship between income earned by consumer and selection of retail market.

Research Methodology - The study focuses on extensive study of primary data collected through questionnaire survey method to collect information from customers and secondary of data collected from various books, national and International journals, Government reports, publications from various websites on various aspects of retail sector.

TABLE 1 : DESCRIPTIVE STATISTICS

	Mean	Std. Deviation	Analysis N
Knowledge	1.4200	.49604	100
Location	1.4400	.49889	100
Timings	2.7200	.56995	100
Atmosphere	2.5200	1.38155	100
Selection	2.8600	1.08265	100
Prices	1.3800	.48783	100
Satisfaction	1.4000	.49237	100
Pricing	1.4800	.50212	100

TABLE 3 : KMO AND BARTLETT'S TEST

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of . Sampling Adequacy.	419
Approx. Chi-Square Bartlett's Test of Sphericity	104.001
df	28
Sig.	.000

TABLE 4: COMMUNALITIES

	Initial	Extraction
Knowledge	1.000	.241
Location	1.000	.635
Timings	1.000	.631
Atmosphere	1.000	.504
Selection	1.000	.566
Prices	1.000	.555
Satisfaction	1.000	.770
Pricing	1.000	.653

Extraction Method: Principal Component Analysis.

TABLE 6: COMPONENT MATRIX[A]

	Component		
	1	2	3
Knowledge	-.381	.231	-.206
Location	.519	.057	.602
Timings	.607	-.270	-.436
Atmosphere	-.120	.627	.310
Selection	.156	-.257	.690
Prices	.126	-.734	.002
Satisfaction	.700	.466	-.250
Pricing	.797	.130	-.028

Extraction Method: Principal Component Analysis.

Analysis & Discussion - Table 1 of descriptive analysis shows that the most important variable that influences customer satisfaction is 'section' means respondents believe that in organized retail stores goods selection of products are available.

Table 2 of the study shows correlation matrix. A correlation matrix is a rectangular array of numbers which gives the correlation coefficients between a single variable and every other variable. The correlation coefficients between a variable and itself is always 1, hence the principal diagonal are the same. With respect to correlation matrix if any pair variables has a value less than 0.5 will not be considered. According to our table, pricing and satisfaction one highly correlated having value .523 which is more than 0.5.

Next table from the output is communalities, which shows how much of the variance in the variables has been accounted for by the extracted factors. The communality value which should be more than 0.5 to be considered for further analysis else these variables are to be removed from further steps factor analysis. Mere we can see in table that 70% of variance in 'satisfaction' is accounted for while 50% of the variance in atmosphere of the product is accounted for.

Table 5 of the study shows extracted suns of squared loadings, the first factor accounts for 24.550% of variable the second 17.022% of variance the third for 15.369% of variance. All the remaining factors are not significant as they are less than 1.

Table 6 shows the extracted values of each item under three variables out of eight factors. The higher the absolute value of the loadings, the more than factor contributes to the variable. Here, we will neglect the loading which are less than 0.5. KMO and Bartlett's Test is shown in Table 2, this test measures the strength of relationship among the variables. KMO measures the sampling adequacy which should be close to 0.5 for a satisfactory factor analysis to proceed. Here, we can see that KMO measure is .419, which is slightly low but close to 0.5, Bartlett's test is another indication of the strength of the relationship among variables. However the Bartlett's test is highly significant. Thus, the reliability of factors increased.

Results :

H1: There is no significant relationship between customer

satisfaction and organized retail sector.

The study shows that there is positive relationship between customer satisfaction and organized retail sector. As shown in table 3, all the eight variables are included and satisfaction is having value more among all i.e. .770 which shows positive relation with organized retail sector.

Hence, the hypothesis is rejected.

H2: There is no significant relationship between factors influencing organized retail customers and selection of organized retail market.

The study shows that there is positive relationship between factors influencing organized retail customers and selection of organized retail market. All the factors are correlated which can be seen in table 2.

Hence, the hypothesis is rejected.

H3: There is significant relationship between income earned by consumers and selection of retail market.

The study shows that there is significant relationship between income earned by consumers and selection of retail market. By the data collected it is clear that income effects the selection of type of retail market Higher income earning consumers opted for organized retail market, whereas, lower earners opted for unorganized retail market.

Hence, hypothesis is proved as it is.

Suggestions :

1. Organized retail sector must capture customers with lower income grades as they are more attracted towards unorganized retail market.
2. Prices at organized retail stores must be economical so that customers can purchase effective from there.
3. Like unorganized retail stores, organized retail stores must also be placed conveniently to every prospective customer.

Conclusion - It is observed from the study that consumers' satisfaction in organized retail sector is positive. Consumers are aware of organized retail sector and they feel them some how convenient for shopping as they get all the things under one roof. At the same time they find the decor & atmosphere of organized retail stores appealing and believe that they get good selection of products there. Although they are not much satisfied with the prices and location of organized stores but overall customers of unorganized retail sector are satisfied.

References :-

1. Gupta M.K. (2011). Customer Perception In Indian Retail Industry, the International Journal of Economics and Business study, Vol. 1 Issue 1, 2011.
2. Gupta S.L. (2007)] a case study on trends in Retailing Industry in India – A case study on shopping malls. BVIMR- Management Edge Journal of Bharti Vidhypeeth University.
3. Kucak, s. Unit (2005), "Impact of consumer confidence on Purchase Behavior in an emerging market", Journal of International consumer marketing, 18(1/2), 73-92.
4. Ramanathan V. & Hari K. (2011). A study on consumer perception about organized vs. unorganized retailers at Kanchipuran, Tamil Nader. India Journal of Marketing. Dec. 2011, P. 11-23.

TABLE 2: CORRELATION MATRIX

		Knowledge	Location	Timings	Atmosphere	Selection	Prices	Satisfaction	Pricing
Correlation	Knowledge	1.000	-.183	-.151	.061	-.077	-.082	-.116	-.088
	Location	-.183	1.000	.082	.046	.227	-.030	.099	.358
	Timings	-.151	.082	1.000	-.224	-.031	.169	.331	.263
	Atmosphere	.061	.046	-.224	1.000	-.032	-.146	.077	-.014
	Selection	-.077	.227	-.031	-.032	1.000	.102	-.008	.013
	Prices	-.082	-.030	.169	-.146	.102	1.000	-.219	.155
	Satisfaction	-.116	.099	.331	.077	-.008	-.219	1.000	.523
	Pricing	-.088	.358	.263	-.014	.013	.155	.523	1.000
Sig. (1-tailed)	Knowledge		.034	.066	.272	.222	.209	.126	.193
	Location	.034		.207	.326	.011	.384	.164	.000
	Timings	.066	.207		.013	.378	.047	.000	.004
	Atmosphere	.272	.326	.013		.376	.073	.223	.445
	Selection	.222	.011	.378	.376		.157	.470	.447
	Prices	.209	.384	.047	.073	.157		.014	.062
	Satisfaction	.126	.164	.000	.223	.470	.014		.000
	Pricing	.193	.000	.004	.445	.447	.062	.000	

TABLE 5: TOTAL VARIANCE EXPLAINED

Component	Initial Eigenvalues			Extraction Sums of Squared Loadings		
	Total	% of Variance	Cumulative %	Total	% of Variance	Cumulative %
1	1.964	24.550	24.550	1.964	24.550	24.550
2	1.362	17.022	41.572	1.362	17.022	41.572
3	1.230	15.369	56.941	1.230	15.369	56.941
4	.931	11.635	68.576			
5	.868	10.853	79.430			
6	.757	9.467	88.896			
7	.618	7.719	96.615			
8	.271	3.385	100.000			

Extraction Method: Principal Component Analysis.

****

हिन्दी साहित्य में डॉ. रामविलास शर्मा का योगदान

डॉ. मधु विजय *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र में डॉ. रामविलास शर्मा जी का हिन्दी साहित्य में योगदान का अध्ययन किया गया है। साहित्यकार यथार्थ साहित्य में समाज को चित्रित ही नहीं करता अपितु उसे अभिलाषित रूप में गढ़ता भी है। डॉ. राविलास शर्मा ने मार्क्सवादी दृष्टि से साहित्य को परिभाषित किया रामविलास जी का योगदान आलोचना के लिए जितना महत्वपूर्ण है उससे कहीं अधिक, भाषा-चिन्तन और सांस्कृतिक आलोचना तथा दूसरे ज्ञानात्मक अनुशासनों के लिये हैं। रामविलास शर्मा के चिन्तन और लेखन का भूदृष्य वैविध्यपूर्ण और विस्तृत रहा है। सोन्दर्यशास्त्र सहित्येतिहास और आलोचना के आधारभूत प्रश्नों का सामना करते हुये उन्होंने भाषाशास्त्र, प्राचीन एवं मध्यकालीन इतिहास और शासकीय आन्दोलन के विषय मे कई मौलिक सिद्धान्त एवं मान्यताऐं प्रस्तुत की हैं। डॉ. रामविलास शर्मा आधुनिक काल के साहित्य के आलोचक थे। उन्होने प्रेमचन्द, भारतेन्दु, निराला, रामचन्द्र शुक्ल और महावीर प्रसाद द्विवेदी पर आलोचनात्मक पुस्तकें लिखी हैं। डॉ. रामविलास शर्मा की मान्यता है कि 'चित्र के चमकीले रंग और पारर्वभूमि की गहरी काली रेखाएं दोनो ही यथार्त जीवन मे उत्पन्न होते है।' अपनी मान्यताओं और सिद्धान्तों के आधार पर डॉ. रामविलास शर्मा को 'शिखर पुरूष' कहा जाता है।

प्रस्तावना – रामविलास शर्मा जी ने हिन्दी लेखकों की तीन पीढियों को प्रभावित किया है। किसी भी प्रतिभा के लिए ऐसा कर पाना उसके महत्व को असाधरण सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है। उनका लेखन-काल पर्याप्त विस्तृत रहा है। वे निरन्तर लिखते रहे। और लोग उन पर निरन्तर लिखते रहे। रामविलास शर्मा हिन्दी जगत में प्रखर मार्क्सवादी समीक्षक और विचारक के रूप में प्रख्यात रहे है। डॉ. रामविलास शर्मा आधुनिक काल के साहित्य के आलोचक थे। उन्होंने प्रेमचन्द, भारतेन्दु, निराला, रामचन्द्र शुक्ल और महावीर प्रसाद द्विवेदी पर आलोचनात्मक पुस्तकें लिखकर आधुनिककालीन हिन्दी साहित्य की प्रगतिशील धारा का उद्घाटन किया है। हिन्दी की व्यवहारिक आलोचना को उनकी यह सबसे बड़ी देन है। मार्क्सवादी आलोचक के रूप में डॉ. रामविलास शर्मा ने साहित्य से सम्बन्धित अनेक गम्भीर प्रश्नों का सामना किया और उनके संबंध में अपना गम्भीर चिन्तन प्रस्तुत किया । प्रगति -विरोधी विचारक प्राय: जनता को अषिक्षित भीड़ की संज्ञा देकर साहित्य को उससे ऊपर की चीज बतलाते है। डॉ. शर्मा ने कहा- 'जनता और कला में कोई बैर नहीं है। बैर भावना उन लोगों के मन में उठती है जिनके लिए जनता एक कल्पना है।' [1]

डॉ. शर्मा ने ध्वंसात्मक शैली में प्रचुर मात्रा में आलोचना लिखी है । लेकिन उनकी ध्वसांत्मक आलोचना भी सृजनात्मक है, क्योकि वह केवल ध्वंस नहीं करती, निर्माण भी करती है। डॉ. रामविलास जी ने प्रगतिशील साहित्यिक परम्परा की व्याख्या की है और बतलाया है कि यह परम्परा जितनी जातीय है, उतनी ही राष्ट्रीय भी। डॉ. रामविलास शर्मा एक प्रतिबद्ध ही नहीं एक पक्षधर आलोचक थे हिन्दी-साहित्य को उनकी सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने साहित्य में शुक्ल जी के भौतिकवादी दृष्टिकोण को वैज्ञानिक रूप में विकसित कर उसे सामाजिक परिवर्तन के एक सांस्कृतिक अस्त्र के रूप में और अधिक कारगर बना दिया। रामविलास शर्मा की मान्यता है कि 'कविता हृदय की भाषा है। उसको समझने के लिए अधिक आवश्यकता भावुकता की है, न कि फिलासफी की उसका रस लेने के लिए भावों को सभ्य बनाना चाहिए।'[2]

सोवियत साहित्य व वर्ग-दृष्टि के प्रभाव में साहित्य को सामाजिक संरचना के रूप में व्याख्याचित करने की जो नई दृष्टि रामविलास शर्मा ने हिन्दी आलोचना को दी, वह उनका महत्वपूर्ण योगदान है। आधुनिक कक्षा-आलोचना में रामविलास शर्मा का सबसे बड़ा योगदान प्रेमचन्द, निराला व वृन्दावनलाल वर्मा के कथा-साहित्य के माध्यम से यथार्थवादी की प्रतिष्ठा है। कुछ बुद्धिजीवी हिन्दी साहित्य की परम्परा को डेढ़ सौ सालों से ज्यादा की नहीं मानते किन्तु रामविलास शर्मा हिन्दी-साहित्य को हिन्दी जाति से सम्बद्ध करते हुए हिन्दी के विकास को हिन्दी जाति के विकास से जोड़ते है। यह महत्वपूर्ण है कि रामविलास शर्मा ने हिन्दी जाति के अस्तित्व और अस्मिता की व्यापक खोज की। रामविलास शर्मा ऋग्वेद को भारतीय संस्कृति का मूल स्त्रोंत मानते है। यह विश्व की प्राचीनतम रचना है। रामविलास जी स्वीकार करते हैं कि रिग्वेद में व्यक्तिगत सम्पत्ति की स्थापना हो गई है किन्तु मनुष्य अभी भी अपने उत्पादन के साधन का स्वामी है। सौन्दर्य की कसौटी है मनुष्य का व्यवहार लेकिन सौन्दर्य को सही रूप से समझने की आवश्कता है। डॉ. शर्मा के शब्दों में 'सभी बस्तुओं के गुण-एक से नहीं होते इस लिए सौन्दर्य भी एक-सा नहीं होता कुछ वस्तुऐं, सबसे अधिक इन्द्रियों को रूचती है, कुछ हृदय को कुछ मस्तिष्क को। वस्तुगत सौन्दर्य इन्द्रियबोध तक सीमित है। ललित कलाओं में इन्द्रियबोध, भावना और विचार इन तीनों की एकता दिखाई देती है । स्थापत्य, शिल्प और चित्रकला में इन्द्रियबोध की प्रधानता रहती है। संगीत में भावना की और साहित्य में विचारों की लेकिन इन्द्रियबोध भावना और विचार की एकता सभी में मौजूद है।'[3]

साहित्य में स्थापित्य का अर्थ वस्तुत: व्यापकता होता है। व्यापकता का अर्थ है एक युग के साहित्य का अपने युग की सीमा का अतिक्रमण कर दूसरे युगों में भी उपयोगी बने रहना। डॉ. शर्मा ने जैसे मार्क्सवादी दृष्टि से

* अतिथि विद्वान (हिंदी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहगढ (म.प्र.) भारत

साहित्य को परिभाषित किया, बहुत पहले उन्होंने यह घोषित कर दिया था कि 'मेरा उन लोगों से मतभेद है जो साहित्य को समाज हित या अहित से परे मानकर केवल रूप की प्रशंसा करके उसकी आलोचना की इति कर देते है।'

रामविलास शर्मा के चिन्तन और लेखन का भूदृष्य काफी वैविध्यपूर्ण और विस्तृत रहा है। सौन्दर्य शास्त्र साहित्येतिहास और आलोचना के कतिपय आधारभूत प्रश्नों से जूझते हुए उन्होंने भाषाशास्त्र, प्राचीन एवं मध्यकालीन इतिहास और राष्ट्रीय आन्दोलन के दौर के विषय में कई मौलिक सिद्धान्त एवं मान्यताऐं प्रस्तुत की है। मार्क्सवादी समालोचक से एक मार्क्सवादी चिन्तक के रूप में संक्रमण करते हुए उन्होंने पूँजीवाद के राजनीतिक अर्थशास्त्र और समाजवादी की प्रकृति एवं समस्याओं के विषय में काफी कुछ लिखा और कहा है।

निष्कर्षत: कह सकते है कि हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में डॉ. रामविलास शर्मा ने उल्लेखनीय योगदान दिया। अपनी मान्यताओं एवं सिद्धान्तों के आधार पर डॉ. रामविलास शर्मा को 'शिखर पुरूष' कहा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'हिन्दी आलोचना का विकास' -नन्दकिशोर नवल:-प्र0-336
2. वही पृष्ठ-336
3. 'आजकल' - अंक अप्रैल 2000, प्र0-6
4. ऋग्वेद से लेकर नवजागरण तक-विष्णुचन्द्र शर्मा प्र0-42
5. 'रामविलास जी का संस्कृति विमर्ष' : भारतेन्दु मिश्र, वसुधा-पृष्ठ-435

****

आर्य चिंतन का इतिहास

डॉ. मधु विजय *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र आर्य चिंतन का इतिहास से सम्बंधित है। आर्य बाहर से आये या नहीं आये यह मान्यता भाषा-विज्ञान की है। अधिकतर इतिहासकारों ने इस मान्यता को स्वीकार कर लिया कि-आर्य बाहर से आए। जबकि ऐतिहासिक तथ्यों से इसका निर्णय नहीं हो सका डॉ. रामविलास शर्मा जी की मान्यता है कि 'आर्य' कही बाहर से नहीं आए थे। आर्य और द्रविड़ भाषाओं का विकास साथ-साथ हुआ है, एवं आर्य द्रविड़ ही नहीं, मुंडा भाषा परिवार के सभ्यता को मोहन जोदडो तथा हडप्पा से अधिक विकसित बताया है एवं उन्हें उद्योग धन्धों का विकास कर्ता भी माना है। अग्नि का आविष्कारक बताकर रामविलास जी ने आर्यो की सभ्यता को सर्वाधिक प्राचीन एवं विश्व की पहली सभ्यता बताई है। सभ्यता का जितना विस्तार 18 वी सदी से लेकर अब तक हुआ है। वह अग्नि के आविष्कार के सामने समस्त मानव संस्कृति के विकास को देखते हुए क्षुद्र है।

प्रस्तावना – रामविलास जी की मान्यता है कि आर्य कही बाहर से नहीं आए थे। आर्य और द्रविड़ भाषाओं का विकास साथ-साथ हुआ है, और आर्य और द्रविड ही नहीं, मुंडा भाषा परिवार के शब्द भी ग्रीक में मिलते है। रामविलास जी के अनुसार, अगर यह कहा जाता रहा है कि आर्य आक्रमणकारी थे तो यह भी बहुत पहले से कहा जाता रहा है कि आर्य बाहर से नहीं आए थे डॉ. शर्मा कहते है-

इग्लैंड के पुरातत्वज्ञ मि. मार्शल थे, जिन्होंने सिंधु घाटी की सभ्यता की खोज की है और 1935 के आसपास उन्होंने काफी खुदाई का काम किया। उनके एक अंग्रेज सहयोगी थे जो लिपि विशेषज्ञ थे। उन्होंने यह साबित किया है ब्राम्ही लिपि का विकास इंडस वैली की लिपि यानी हड़प्पा लिपि से हुआ।

रामविलास जी ने भाषा परिवारों तथा भाषा विज्ञान पर जो काम किया है, उसके लिए उनकी ख्याति है। अपने इस कार्य के दौरान उन्हें ये प्रमाण भी मिले कि आर्य भारत के मूल निवासी थे।

मार्क्स ने स्वयं भारत को भाषाओं और धर्मो का स्त्रोत कहा था। आर्य लोग भारत में बाहर से आए, यह बात बराबर डेढ़ सौ साल से कही जा रही है। लकिन मार्क्स ने कहा था, भारत वह देश है जो हमारी भाषाओं, हमारे धर्मो का स्त्रोत है। मार्क्स के समय तक ऐसे विद्धान थे जो मानते थे कि आर्य को प्रभावित किया। मार्क्स के बाद उन्नीसवी सदी के अंत में, जैसे-जैसे ब्रिटिश साम्राज्य मजबूत हुआ और उसकी जगह फिर अमरीकी साम्राज्य आया, इस सिद्धान्त का जोरो से प्रचार किया गया।

आर्यो को धुमन्तु और बर्बर कहते हुए भारत की उन्नत द्रविड सभ्यता का विनाश करने वाला माना जाता है। डॉ. रामविलास शर्मा कहते है कि- 'विडंबना यह है कि जो लोग उत्तर भारत में खेती का विकास कर रहे थे' उन्हें कोसंबी ने उसका विनाशक मान लिया है। वैदिक जन प्रस्तर युग छोड़कर लौह युग में प्रवेष कर रहे थे। इन्द्र का संबंध यदि कृषि से है तो अग्नि का संबंध उद्योग धन्धें से है। अग्नि का आविष्कार विश्व संस्कृति को भारत की सबसे बड़ी देन है। अनेक कवि या तो स्वयं कुशल कारीगर थे या वे कारीगरों के काम से अच्छी तरह परिचित थे। जर्मन कबीलों पर रोमन सेनाओं ने विजय प्राप्त की थी, वैसी ही स्थिति इन लेखकों ने भारत पर आरोपित की है। जर्मन इस समय कबीलों में संगठित थे। कविताओं, कारिगरों और किसानों का यह समाज स्थिर नहीं है गतिशील है।

डॉ. रामविलास शर्मा आर्यो की सभ्यता को मोहन जोदडो तथा हड़प्पा से अधिक विकसित बताते हुए उन्हें उद्योग धन्धों का विकासकर्ता मानते है। वे आर्यो को अग्नि का आविष्कारक मानते है, जो अग्नि जलाकर सन्तान उत्पन्न करने के उद्देश्य से यज्ञ करते थे।

विश्वविख्यात इतिहासकार डी.डी. कोसाम्बी ने हड़पा निवासियों द्वारा नदियों का जल को रोकने के लए अस्थायी बांध का जिक्र किया है, जिसके किनारे की भूमि पर पानी फैल जाने से खेती उपजाऊ हो जाती थी। इस बांध- व्यवस्था को ध्वस्थ करके आर्यो ने सारे प्रदेश में कृषि का नाश कर दिया था। कोसाम्बी के इस मत का खंडन करते हुए रामविलास शर्मा ऋग्वेद से कृषि सम्बंधित लक्ष्य पेश कर रहे है।

विडम्बना यह है कि, जो लोग उत्तर भारत में खेती का विकास कर रहे थे, उन्हें कोसाम्बी ने उसका विनाशक मान लिया है। खेती के जितने प्रमाण ऋग्वेद में है, उनकों उन्होंने एक तरफ हटा दिया है। हड़प्पा सभ्यता ऋग्वेद से पहले है, आर्यो ने आकर उसका विनाश किया, यह आत्मगत कल्पना उन्होंने तथ्यों पर आरोपित कर दी है।

अग्नि का आविष्कारक बताकर रामविलास जी आर्यो की सभ्यता को सर्वाधिक प्राचीन तथा विश्व की पहली सभ्यता बनाना चाहते है। डॉ. रामविलास शर्मा ने ऋग्वेद का एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लिखा हैं- ऋग्वेद में एक जुआरी जुआ खेलता है, पछताता है, फिर भी खेलता है। कवि उससे कहता है कृषि कृषक। वह उससे गाय चराने के लिए नहीं कहता, लूटमार करने के लिए नहीं कहता, खेती करने के लिए कहता है। मानना चाहिए कि खेती आम लोगों का धन्धा होगा तभी उसने जुआरी से ऐसा कहा।

प्राचीन महाकव्यों जैसे यूनान के कवि होमर का इलियड और ओडिसी, मध्य एशियाई का मानस आदि को देखें तो इनसे आर्य संस्कृति तथा आर्यो के धुमन्तू जीवन का पता चलता है। साथ ही भाषा की दृष्टि से अनेक शब्द

* अतिथि विद्वान (हिंदी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहगढ (म.प्र.) भारत

ऐसे है जो इन सारे ग्रन्थों मे समान रूप से एक ही अर्थ वाले है। इनमें समान संस्कृति या कर्मकांड की भी जानकारी मिलती है जैसे अग्नि पूजा, पशु बलि, मुर्दो को दफनाने की प्रथा जो बाद में भारत में जलाने के रूप में बदल गई आदि शामिल है। आर्यो के सन्दर्भ में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जब भारत में आर्यो का आवागमन शुरू हुआ था। भारत में आर्य संस्कृति आन्द्रोनोवा की कार्बन कापी लगती हे जिसमें सारे कर्मकांड शामिल है। यहां सर्वाधिक उल्लेखनीय बात यह है कि आन्द्रोनोवा संस्कृति पुरूष प्रधान थी और जब वे लोग भारत में आए तो यहां के मूल मातृसत्तात्मक समाज को उन्होंने पितृसत्तात्मक समाज में बदल दिया। यही कारण है कि दोनों क्षेत्रों के महाकाव्यों में वर्णित नायक-नायकिओं की भूमिका में अत्यन्त समानता है। रूस के प्रसिद्ध जलवायु वैज्ञानिक खजानोव ने खोज की है कि दो हजार वर्ष ई.पू. मध्य-एशिया में कड़ाके की ठंड पड़ी, जिससे बचने के लिए आर्यजन जान बचाकर भागे और अपेक्षाकृत गर्म क्षेत्र भारत में आकर बस गए।

लोकमान्य तिलक ने भी लिखा है कि आर्य बाहर से पहाड़ पार करके भारत आए थे, क्योंकि पहाड़ों पर देवों का निवास होता है। रामविलास शर्मा ने आर्यो को भारतीय मूल में गौरवान्वित किया है।

अम्बेडकर ने लिखा है आर्य जुआडियों की एक नस्ल थे। आर्य सभ्यता के शुरूआती दौर में जुआ एक विज्ञान के रूप में इस हद तक विकसित हो चुका था कि उन्होंने कई तकनीकि शब्दावलियों का आविष्कार किया। हिन्दुओं ने चार युगों के रूप में कृत, नेत्रा, द्वापर तथा कलि नाम के शब्दों का प्रयोग किया था, जिनमें उनके ऐतिहासिक काल विभक्त किए जाते है। वास्तविकता यह है कि जुआ खेलते समय आर्यजन इन शब्दों का प्रयोग मूलरूप से पांसे के लिए करते थे। सबसे भाग्यशाली पासा कृत तथा अभागा पांसा कलि कहलाता था। त्रेता तथा द्वापर इन दोनों के बीच समझे जाते थे। बादशाहत तथा पत्नियों तक को जुआ के दांव पर लगा दिया जाता था राजा नल जुआ के दांव पर अपना राज्य हार गया था। पांडवों ने उससे भी आगे बढ़कर अपने राज्य तथा पत्नी द्रोपती, दोनों को ही दांव पर लगा दिया तथा वे दोनों को हार गए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रश्नों और आपत्तियो के बीच राचंद तिवारी, पृष्ठ-67
2. 'साम्राज्यवाद और सांप्रदायिकता विरोध सही रास्ता': वेद प्रकाश, वसुधा, पृष्ठ-219
3. वही, पृष्ठ-220
4. भारत को फिर से खोजते हुए : शंभुनाथ, पृष्ठ-144
5. रामविलास शर्मा का प्रच्छन्न हिन्दुत्व : तुलसीराम, पृष्ठ-147
6. वही, पृष्ठ-147
7. भारत को फिर से खोजते हुए : शंभुनाथ, पृष्ठ-139

****

महिला सशक्तिकरण एवं म.प्र.कि. योजनायें

डॉ.रितु गुप्ता *

प्रस्तावना – संपूर्ण भारतीय समाज में लगभग आधी आबादी स्त्रियों की है किन्तु स्त्रियों के पास वास्तविक सम्मान नहीं है। आदिकाल से लेकर आज तक पुरूषों ने स्त्री पर दासत्व ही लादा है। जबकि अतीत साक्षी है। प्रत्येक युग में नारी ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन किया है। वह अपने विशिष्ट गुणों के कारण कठोर सामाजिक प्रतिबंधों के चलते विपरित परिस्थितियों में भी अपना रास्ता खोजकर आगे बढती जा रही है। भारत में सन् 2001 में 'महिला सशक्तिकरण वर्ष' मनाने के बाद से निरंतर महिला बाल विकास पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

म.प्र.सरकार द्वारा महिला सशक्तिकरण को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुये महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक रूप से सशक्त बनाने की पहल की गयी है। प्रदेश में महिलाओं और बालिकाओं के लिये नये कार्यक्रमों , योजनाओं और नवाचारों को अपनाया गया है। अब म.प्र. की पहचान ऐसे प्रदेश के रूप में बन गयी है। जहॉ बेटियों को बोझ नहीं बल्कि वरदान माना जाता है। पहली बार प्रदेश सरकार ने स्त्री जीवन की हर पडाव पर मददगार योजनायें बनायी है जो निम्न हैं :-

1. **मंगल दिवस का आयोजन –** आंगनवाडी केन्द्रों के प्रति जन सामान्य को आर्कषित करने, सामूदायिक सहभागिता बढाने तथा आंगनवाडी की सेवाओं को लोकप्रिय बनाने के लिये पुरक पोषण आहार व्यवस्था में परिवर्तन के साथ साथ कुछ नवीन गतिविधियों जैसे 'मंगल दिवस' के रूप में प्रारंभ की गयी है। इन गतिविधियों के अंतर्गत आंगनवाडी केन्द्रों पर माह के प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ मंगलवार को क्रमश: निम्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

1. गोद भराई कार्यक्रम,
2. अन्न प्राशन कार्यक्रम,
3. जन्म दिवस कार्यक्रम,
4. किशोरी बालिका दिवस

2. **जननी सुरक्षा योजना –** 01 अप्रैल 2005 से म.प्र. में निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार की महिलाओं के लिये जननी सुरक्षा योजना प्रारंभ की गयी। यह योजना मातृ मृत्यु दर व शिशु मृत्यु दर पर अंकुश लगाकर गर्भवती महिलाओं के हितार्थ लागू की गयी है इस योजना का लाभ 19 वर्षो से अधिक वर्षो की महिलाओं को पहले दो जीवित बच्चों के समय प्राप्त हो सकेगा ।

3. **उषा किरण योजना –** महिलाओं एवं बच्चों को घरेलु हिंसा से बचाने के लिये 'महिला संरक्षण अधिनियम 2005' के तहत राज्य सरकार द्वारा उषा किरण योजना चलाई जा रही है इसके तहत पीड़ित महिलाओं को विधिक एवं कानूनी सहायता, पुनर्वास प्रशिक्षण अल्पकालीन आवास, चिकित्सकीय सहायता, पुलिस सहायता, 24 घन्टे हेल्पलाईन आदि सेवायें उपलब्ध करवायी जा रही है।

4. **लाड़ली लक्ष्मी योजना –** बालिकाओं के जन्म के प्रति सकारात्मक सोच उनकी अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य, लिंग अनुपात में सुधार, संपूर्ण विकास एवं अच्छे भविष्य की आधारशिला रखने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश में लाडली लक्ष्मी योजना 01 अप्रैल 2007 से लागू की गयी है योजना के तहत बालिकाओं को 1,18,000/- का बचत पत्र जारी किया जाता है तथा बालिका के कक्षा 6वीं में प्रवेश पर 2000/- रूपये 9वीं में 4000/- रूपये तथा 11वीं एवं 12वीं में 6000-6000 हजार रूपये दिये जाने का प्रावधान है तथा बालिका को 21 वर्ष के उपरांत एक लाख से अधिक की राशि प्रदान की जायेगी।

5. **कन्यादान योजना 2006 –** हर वर्ग के जरूरत मंद माता पिता को उनकी बिटिया के हाथ पीले करने के लिये म.प्र. सरकार कन्यादान योजना के माध्यम से आर्थिक सहयोग दे रही है। इस योजना के तहत विवाह योग्य कन्या के लिये रूपये 12000/- और सामूहिक विवाह आयोजित करने वाले व्यक्ति अथवा संस्था को 3000/- हजार रूपये प्रतिकन्या विवाह के मान से शासन द्वारा सहायता राशि उपलब्ध करवायी जाती है।

6. **तेजस्विनी योजना –** मध्यप्रदेश में महिलाओं के हित में क्रियान्वित किये जा रहे तेजस्विनी ग्रामीण महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम के तहत लगभग 12000 महिला एवं स्वयं सहायता समूहों का गठन किया जा चुका है। सरकार द्वारा समय समय पर इन स्व-सहायता समूहों को प्रशिक्षण दिया जाता है।

7. **प्रोजेक्ट में मुस्कान –** महिलाओं एवं बच्चों में कुपोषण मातृ मृत्युदर, शिशु मुत्युदर व ऐनिमिया की कमी को कम करने के उद्देश्य से प्रदेश के सभी जिलों की 36 प्रतिशत परियोजनाओं में मुस्कान के अंतर्गत विशाल स्वास्थ्य जॉच का उपचार शिविर आयोजित किये जा रहे हैं इन स्वास्थ्य शिविरों में 0 से 6 वर्ष के सभी बच्चों, किशोरी बालिकाओं, गर्भवती व धात्री माताओं का स्त्री रोग, शिशु रोग, दंत रोग व नेत्र रोग चिकित्सकों द्वारा परीक्षण किये जाने की व्यवस्था की गयी है।

8. **बेटी बचाओ अभियान –** मध्यप्रदेश में बेटी बचाओ अभियान को बड़े धूम-धाम से प्रारंभ किया गया। प्रदेश में लगातार कम हो रही बेटियों की संख्या एवं कन्या भ्रुण हत्या के लिये हमारे समाज में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व ऐतिहासिक कारणों का पता लगाने व इस समस्या के समाधान हेतु शासन इस योजना के तहत निरंतर प्रयास कर रही है। शासन के नियम के तहत अब बच्चों के जन्म व मृत्यु की सूचना तुरंत दी जाती है। उसी तरह गर्भपात होते ही सूचना सक्षम अधिकारी को दी जाती है ताकि

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

अवैध गर्भपात रोके जा सकें। बेटी बचाओं अभियान प्रदेश में ही नहीं संपूर्ण राष्ट्र में बेटी एवं बालिओं के लिये सराहनीय कदम साबित हुआ है।

मध्यप्रदेश सरकार ने पिछले कुछ वर्षो की अवधि में महिला सशक्तिकरण विशेष ध्यान देकर उसे अपनी प्राथमिकताओं में शामिल रखा है। प्रदेश की महिलायें एवं बालिकायें निरंतर प्रगति करें, इसलिये सभी क्षेत्रों में नये-नये कार्यक्रमों व योजनाओं के अलावा नवाचारों को भी अपनाया गया है। प्रदेश में लाड़ली लक्ष्मी योजना, उषाकिरण, जननी सुरक्षा, कन्यादान, तेजस्विनी, प्रोजेक्ट मुस्कान एवं बेटी बचाओं अभियान आदि चलायें हैं ताकि प्रदेश की नई तस्वीर उभर कर सामने आये साथ ही महिलाओं के सर्वागीण विकास हेतु विकास कार्यक्रमों के निर्माण, नियमन तथा क्रियान्वयन में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिये तभी हम सच्चे अर्थो में महिला सशक्तिकरण की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शासकीय कन्या महाविद्यालय खरगोन, कार्यस्थल प्रशिक्षण प्रतिवेदन
2. म.प्र.एक सम्पूर्ण अध्ययन
3. संकलन 'बुकलेट' राष्ट्रीय बालिका दिवस पर म.प्र. महिला बाल विकास द्वारा
   प्रकाशित
4. दैनिक भास्कर
5. प्रतियोगिता दर्पण

****

आदिवासी एवं सामान्य वर्ग की महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी का एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. मंजु शर्मा * सुनीता अगलेचा **

शोध सारांश – नवजात शिशु जन्म के पश्चात लगभग दो या तीन घन्टे बाद अल्प प्रयास के द्वारा मॉ का दूध प्राप्त करने का प्रयत्न करता हैं किन्तु मॉ द्वारा उचित स्तनपान की प्रक्रिया न अपनाने से दूध की उपलब्धता होने पर भी शिशु उससे वंचित रह जाता हैं। शोध अध्ययन के उद्देश्य : आदिवासी एवं सामान्य वर्ग की शिक्षित व अशिक्षित महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी का अध्ययन करना।उपकल्पना: आदिवासी एवं सामान्यवर्ग की शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी का में सार्थक अंतर नहीं होगा। निदर्शन विधि : प्रस्तुत अध्ययन में बडवानी जिले के प्रत्येक विकासखण्ड से धात्री महिलाओं को न्यादर्श के रूप में सम्मिलित किया गया हैं। अध्ययन हेतु कुल 420 महिलाएं जिसमें से 210 आदिवासी वर्ग की महिलाएं ओर 210 सामान्य वर्ग की महिलाए (105 अशिक्षित महिलाएं एवं 105 शिक्षित महिलाएं) । का चयन दैव निदर्शन विधि एवं उदेश्यपूर्ण पद्धति द्वारा किया गया हैं। उपकरण: आदिवासी एवं सामान्य वर्ग कि महिलाओं में स्तनपान की प्रवृति का अध्ययन करने हेतु स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया हैं। सांख्यिकीय विधि: संकलित तथ्यों का सांख्यिकिय विश्लेषण करने हेतु काई वर्ग एवं प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया हैं। निष्कर्ष : तथ्यों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता हैं कि आदिवासी एवं सामान्यवर्ग की शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी में सार्थक अंतर पाया गया हैं।

प्रस्तावना – नवजात शिशु जन्म के पश्चात लगभग दो या तीन घन्टे बाद अल्प प्रयास के द्वारा मॉ का दूध प्राप्त करने का प्रयत्न करता हैं किन्तु मॉ द्वारा उचित स्तनपान की प्रक्रिया न अपनाने से दूध की उपलब्धता होने पर भी शिशु उससे वंचित रह जाता हैं। जैसे सामाजिक कुप्रथाओं, अवांछित मान्यताओं एवं भ्रांतियों के चलते अनेक बार परिवार की बुजुर्ग महिलाओं द्वारा आरम्भिक अवस्था में मॉ के दुध के स्थान पर शहद, गुड का पानी, गंगाजल आदि वैकल्पिक पदार्थ देने का सुझाव दिया जाता हैं किन्तु मॉ के दुध का कोई खाद्य पदार्थ विकल्प नही हो सकता हैं। मॉ के स्तन में प्रसव पश्चात कोलस्ट्रम उत्पन्न होता हैं जो शिशु की पोषणिक आवश्यकताओं की समुचित पूर्ति करता हैं किन्तु उसके रंग एवं बाहरी स्वरूप को देखकर उसे बच्चे के लिए व्यर्थ पदार्थ मान लिया जाता हैं। इस स्थिति में इस धारणा को दूर करने हेतु महिलाओं में पर्याप्त जाग्रति के प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – आदिवासी एवं सामान्य वर्ग की शिक्षित व अशिक्षित महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी का अध्ययन करना।

उपकल्पना – आदिवासी एवं सामान्यवर्ग की शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी में सार्थक अंतर नहीं होगा।

निदर्शन विधि – प्रस्तुत अध्ययन में बडवानी जिले के प्रत्येक विकासखण्ड से तीन तीन गॉव में रहने वाली धात्री महिलाओं को न्यादर्श के रूप में सम्मिलित किया गया हैं। अध्ययन हेतु कुल 420 महिलाएं जिसमें से 210 आदिवासी वर्ग की महिलाएं (105 अशिक्षित महिलाएं एवं 105 शिक्षित महिलाएं) ओर 210 सामान्य वर्ग की महिलाए (105 अशिक्षित महिलाएं एवं 105 शिक्षित महिलाएं) । का चयन दैव निदर्शन विधि एवं उदेश्यपूर्ण पद्धति द्वारा किया गया हैं।

उपकरण – आदिवासी एवं सामान्य वर्ग कि महिलाओं में स्तनपान की प्रवृति का अध्ययन करने हेतु स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया हैं।

सांख्यिकीय विधि – संकलित तथ्यों का सांख्यिकिय विश्लेषण करने हेतु काई वर्ग एवं प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया हैं।

तालिका क्र. 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

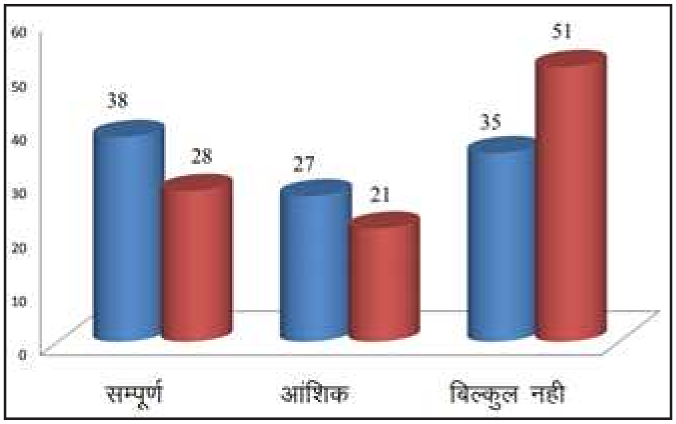

तथ्यों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता हैं कि होता हैं कि X^{2cal} का मान 11.92 प्राप्त हुआ हैं जो कि Df =2 (0.05 सार्थकता के स्तर पर) के मान 5.991 से अधिक पाया गया हैं। अत: शून्य उपकल्पना अस्वीकार की जाती हैं। अर्थात आदिवासी एवं सामान्य वर्ग की शिक्षित एवं अशिक्षित

*प्राध्यापक (गृह-विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत
** पी. एच. डी. शोधार्थी (गृह-विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत

महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी में सार्थक अंतर पाया गया हैं।

निष्कर्ष – शोध अध्ययन से यह निष्कर्ष : निकलता हैं कि आदिवासी एवं सामान्य वर्ग कि शिक्षित व अशिक्षित महिलाओं के मध्य अन्तर पाया गया हैं। आदिवासी वर्ग की 80 प्रतिशत अशिक्षित महिलाओं को स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी नही हैं वही सामान्य वर्ग व आदिवासी वर्ग की शिक्षित महिलाएं इन योजनाओं के प्रति सजग पायी गयी हैं।एवं अधिकतर शिक्षित महिलाएं ही स्तनपान संबंधी कार्यक्रमों में 7ाग लेती हैं विशेष कर सामान्य वर्ग की शिक्षित महिलाएं ही इस ओर ज्यादा जागरूक हैं। आदिवासी वर्ग की केवल 17 प्रतिशत अशिक्षित महिलाएं इन कार्यक्रमों में 7ाग लेती हैं जो की बहुत कम हैं। जहॉ सामान्य वर्ग की 5२ प्रतिशत शिक्षित महिलाएं इन कार्यक्रमों में 7ाग लेती हैं वहीं इस ओर ज्यादा जागरूकता लाने की आवश्यकता हैं। अगस्त माह में चलने वाले स्तनपान सप्ताह की जानकारी वि7िन्न वर्गो में अलग अलग पायी गयी है। जहॉ सामान्य वर्ग की 57 प्रतिशत शिक्षित महिलाओ को इसकी जानकारी हैं तो आदिवासी वर्ग की 32 प्रतिशत महिलाओं को इसकी जानकारी है। जबकि आदिवासी वर्ग की केवल 21 प्रतिशत अशिक्षित महिलाओं को ही इसकी जानकारी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

420
1 अग्रवाल सरला बंसल डॉ अविनाश, शिशु स्वास्थ्य , श्याम प्रकाशन जयपुर, 2008
2 कपिल एच. के., अनुसंधान विधियां, एच पी भार्गव बुक हाउस, आगरा, 2012
3 एस. विवेक अधिश, शिशु एवं बच्चों की आहार पूर्ति परामर्श, बी. पी. 33 पीतमपुरा हाउस, मेरठ, 2005
4 ससेना मनीषा, झाबुआ जिले की भील आदिवासी महिलाओं में शिशु की पोशण संबंधी आदतें, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 1999
5 मॉ का दूध शिशु का प्रथम टीकाकरण, हिन्दी मासिक पत्रिका, इन्दौर 2011
6 विश्व स्तनपान सप्ताह 1 से 7 अगस्त महिला एवं बाल विकास विभाग धार, म. प्र., 2003

Internet Sites :-

1. breast feeding promotion network of india (BPNI)
2. shanti ghos breast feeling talk
3. unicef repart for breast feeding
4. www. linkages project org.
5. birth inifiation of breast feeding and the first seven days after birth.
6. www.researchlink.com

तालिका क्र. 1 – आदिवासी एवं सामान्यवर्ग की शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं में स्तनपान संबंधी योजनाओं की जानकारी में सार्थक अंतर नहीं होगा।

		सामान्य वर्ग			आदिवासी वर्ग			
क्रं.	जानकारी	शिक्षित महिलाएँ : संख्या	अशिक्षित महिलाएँ : संख्या	योग	शिक्षित महिलाएँ : संख्या	अशिक्षित महिलाएँ : संख्या	योग	महायोग
1	सम्पूर्ण	40	36	38	30	25	28	33
2	आंशिक	29	26	27	24	18	21	24
3	बिल्कुल नही	31	38	35	46	57	51	43
	योग	100 **N=**105	100 **N=**105	100 **N=**210	100 **N=**105	100 **N=**105	100 **N=**210	100 **N=**420

****

विश्व मानवाधिकार और भारतीय महिलायें

डॉ.रितु गुप्ता *

प्रस्तावना - विश्व की उत्पादिका पोषिका शक्ति सम्पन्न गृहस्थ की मूल संचालिक महिलाओं की कार्यकुशलता सदाचरण, सुशिक्षा एवं बुद्धिमता पर विश्व मानव समाज का स्वरूप आधृत होता है। उच्च गुणों से संबंधित नारियों के समूह से परिवार ग्राम, राष्ट्र और विश्व भी समुन्नत हो सकता है। ऐसे में नारी जाति के सुशिक्षित एवं सुंसकृत होने के प्रयास पर विशेष बल देने की जरूरत है। महिलाओं के उपेक्षित जीवन मूल्यों के परिणाम स्वरूप ही विश्व मानव समाज में बुराईयों को पनपने का अवसर मिल रहा है। विश्व मानवता की दुर्दिन अवस्था को स्वीकार करते हुये तथा उसे चुनौतीपूर्ण ढंग से लेते हुये विश्व शांति एवं समृद्ध संस्थापना के पक्षधर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा महिलाओं के सर्वजीवन मूल्यों के उत्थानार्थ तमाम कार्यक्रम शुरू किये गये हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रमुख अंग आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृति परिषद द्वारा इस दिशा में अनेक कार्य किये जा रहे हैं। महिलाओं के संदर्भ में विश्व मानव अधिकार की व्यवस्थायें इसी अंग के द्वारा कियान्वित की जा रही हैं संयुक्त राष्ट्र संघ की चार्टर के प्रस्तावना में कहा गया है कि 'हम संयुक्त राष्ट्र संघ के लोग .... मूलभूत मानव अधिकार में मानव की गरिमा और महत्व में तथा स्त्री-पुरूष के समान अधिकारों में आस्था व्यक्त करते हैं ...'इस प्रकार चार्टर में महिलाओं की समानता के अधिकार की घोषणा की गयी है। मानवाधिकारों के सर्वभौमिक घोषणा पत्र 1948 के कई अनुच्छेढों में महिला अधिकारों का उल्लेख मिलता है जिनमें प्रमुख निम्नवत् हैं।

अनुच्छेद - 2 के अनुसार - प्रत्येक व्यक्ति इस घोषणा पत्र में वर्णित सभी अधिकारों व स्वतंत्राओं का हकदार है इसमें मूलवंश, वर्ग, लिंग, धर्म, राजनीति, राष्ट्रीयता, सामाजिक उदभव, संपत्ति, जन्म या अन्य परिस्थिति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद-16-(1) के अनुसार - वयस्क पुरूषों और स्त्रियों को मूलवंश, राष्ट्रीयता या धर्म के कारण किसी सीमा के बिना विवाह करने और कुटुम्ब स्थापित करने का अधिकार है।

अनुच्छेद-23 (2) के अनुसार - प्रत्येक व्यक्ति को किसी भेदभाव के बिना समान कार्य के लिये समान वेतन का अधिकार है।

अनुच्छेद-26-(1) के अनुसार - प्रत्येक व्यक्ति को शिक्ष का अधिकार प्राप्त है जो कम से कम प्रारंभिक और मौलिक अवस्था में नि:शुल्क होगी।

इस प्रकार भेदभाव रहित सिद्धांतों की सृजनता भी विश्व मानव अधिकार के 10 दिसम्बर 1948 के घोषणा पत्र का परम उद्देश्य है। मेक्सिको में आयोजित प्रथम विश्व सम्मेलन में महिलाओं के विकास तथा शांति पर बल दिया गया। द्वितीय तथा तृतीय सम्मेलनों में तीन प्रमुख विषय शिक्षा, नियोजन तथा स्वास्थ विषयों पर महिलाओं की उन्नति के लिये 2000 तक 'निरोबी अग्रिममुखी रचना कौशल' के नाम से चतुर्थ विश्व सम्मेलन आयोजित किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ था महिलाओं के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार का जो प्रारूप तैयार किया उसमें इन सम्मेलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन 1945 से 1995 तक महिलाओं के लिये अनेक प्रयास किये गये, वे महिलाओं की अंतराष्ट्रीय मानव अधिकार के समर्थन में आधार स्तम्भ स्वरूप हैं। महासभा द्वारा 1949 में व्यक्तियों के अवैध व्यापार पर रोक लगायी गयी। महिलाओं के लिये संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा संघ विकास निधि बनाई गयी है। जो महिलाओं के विकास कार्य के लिये व्यय करती है।

1975 को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अंर्तराष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया था ताकि संपूर्ण विश्व में महिला उत्थान और विकास के प्रति चेतना जगाई जा सके। संयुक्त राष्ट्र संघ का सबसे बडा अंतराष्ट्रीय मानवाधिकार सम्मेलन जो आस्ट्रिया की राजधानी वियाना में सम्पन्न हुआ था जिसमें महिलाओं और बच्चों को सार्वभौमिक मानवाधिकार का अभिन्न अंग माना गया तथा महिलाओं के मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयासों को तेज करने का सभी देशों से अव्हान किया गया।

भारत सदैव से ही महिला अधिकारों का पक्षधर रहा है। भारतीय संविधान के निर्माता भारत में महिलाओं की स्थिति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित थे। इसके साथ ही राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के परिणाम स्वरूप भारतीय संविधान निर्माताओं ने महिलाओं को समानता का अधिकार प्रदान करने का निश्चय किया। संविधान की अभूतपूर्व देन थी कि जिन महिला अधिकारों के लिये महिलाओं को सतत सघर्षरत् रहना पडा वे अधिकार भारतीय महिलाओं संविधान लागू होने के साथ ही प्राप्त हो गये।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद- 14 में महिलाओं को 'विधि के समक्ष समानता' का प्रावधान रखा गया है।

अनुच्छेद 15 (3) यह उपबधित करता है कि कोई भी बात राज्य को स्त्री एवं बालकों के लिये विशेष उपबंध बनाने से नहीं रोक सकती है।

अनुच्छेद 23 एवं 24 में महिलाओं एवं बालिकाओं को शोषण के विरूद्ध अधिकारी प्रदान किया गया है।

इस तरह भारतीय सविधान द्वारा महिलाओं और स्त्रियों के लिये संविधान निर्माण के समय से ही अधिकारों की व्यवस्था की गयी है।

भारतीय संविधान द्वारा महिलाओं के लिये अनेक कानून बनाये गये हैं जैसे- स्त्री तथा लड़की अनैतिक व्यापार दमन अधिनियम 1986, कर्मचारी राज्य अधिनियम 1948 हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 भारतीय तलाक

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

अधिनियम 1869, बाल विवाह अधिकार अधिनियम 1929, परिवार न्यायालय अधिनियम 1984, अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956, घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 एवं निर्भया अधिनियम आदि बनाये गये हैं। ताकि महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित एव संरक्षित किया जा सके।

वर्तमान समय में संयुक्त राष्ट्र संघ एवं भारत द्वारा मानवतावादी, बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों से अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की उन्नति एवं उनके सम्मान को संरक्षित एवं सवंर्धित करने के प्रयास पर बल देने के लिये अव्हान किया जा रहा है। विश्व मानव समाज के प्रत्येक सदस्य को चाहे वह नर हो या नारी सम्मानपूर्वक जीने का हक है। ये वे मानव अधिकार हैं जो सभी मानव को मनुष्य होने के आधार पर मिलना चाहिये। देश व राज्य स्तर पर इनका उल्लेख मौलिक अधिकारों के रूप में हैं जो कि आज्ञापक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. परीक्षा मंथन
2. प्रतियोगिता दर्पण
3. पाण्डे जयनारायण 'भारत का संविधान'
4. व्होरा आशारानी 'भारतीय नारी की दिशा' नेशनल पब्लिसिंग हाउस नई दिल्ली
5. दैनिक भास्कर,
6. नई दुनिया

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

अतीत और वर्तमान मे मीडिया : महिला, दलित एवं अल्पसंख्यक

रमेश चन्द मीना *

प्रस्तावना - प्राचीन काल मे ही सामाजिक परिवेश में कुछ विसंगतिया जन्म ले चुकी थी जिनका नकारात्मक प्रभाव सामाजिक व्यवस्था को अनवरत रूप से दूषित करता आ रहा है। बौद्धिक विकास के साथ-साथ सामाजिक स्वरूप में तो परिवर्तन आता गया परन्तु लिंग, जाति एवं सामुदायिक विभेदीकरण जैसी समस्याएं पनपने लगी। समाज का स्तरीकरण होता गया ओर समाज में उच्च एवं निम्न वर्गो का उद्‌भव हुआ। प्रारम्भ में ये वर्ग अस्थाई रूप से बनते थे और अधिक शक्तिशाली वर्ग अपने आपको उच्च कोटि का मानते हुये कमजोर एवं शक्तिहीन वर्ग का शोषण करता था। महिलाओं और पुरूषों के मध्य लैगिंक असमानता का उद्‌भव भी शारीरिक बल के आधार पर शक्तिशाली होने को परिलक्षित करता है। परिवार के स्वरूप में प्राचीन काल से वर्तमान समय तक पुरूष प्रधान व्यवस्था बनी हुई है। वैश्विक स्तर पर अनेक धार्मिक सम्प्रदाय बने हुये है। जिनका उद्‌भव अलग-अलग क्षेत्रों की संस्कृति के अनुसार हुआ है। भूमण्डलीकरण के दौर में विभिन्न क्षेत्रों की संस्कृतियों का समावेश होने लगा ओर सामप्रदायिक विभेदीकरण के कारण बहुसंख्यक व अल्पसंख्यक समुदायों का उद्‌भव हुआ। बहुसंख्यक समुदायों में अल्प संख्यक समुदायों के प्रति द्धेष पैदा होने लगा जो वर्तमान समय में भी एक ज्वलंत समस्या बनी हुई है। मीडिया जगत सत्ता एवं प्रजा के मध्य एक सामांजस्य पूर्ण कड़ी का कार्य करता है। विवश एवं कमजोर वर्गो को राष्ट्रीय धारा में लाने हेतु मीडिया जगत के प्रयास सराहनीय है। अपने सम्पादकीय लेखों के माध्यम से साम्प्रदायिक सौहार्द बढ़ाने हेतु किए जा रहे प्रयास मीडिया जगत की सकारात्मक सोच को परिलक्षित करता है। मीडिया जगत अपनी बढ़ती हुई भागीदारी के कारण जनतंत्र में चौथे स्तम्भ के रूप में अपने आपको प्रदर्शित कर रहा है। प्रतिस्पर्धात्मक दौड़ में समाचार पत्रों की गुणवत्ताा में नियमित रूप से सुधार हुआ है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जनतंत्र की सुनिश्चितता हेतु विभिन्न निकायों की स्थापना में मीडिया जगत का अहम योगदान रहा है। महिलाओ की सुरक्षा का मुद्दा उठाकर बनाये गये नये कानूनों के गठन में मीडिया जगत के प्रयास उल्लेखनीय हैं। दलितों एवं अल्प संख्यको के साथ होने वाले अत्याचारों को प्रभावी रूप से प्रकाशित किये जाने से सत्ता का ध्यान इनकी समस्याओं की ओर आकर्षित किया जाता रहा है। परन्तु जनकल्याणकारी कार्यो के साथ - साथ मीडिया जगत के नकारात्मक विकार भी बढ़ते जा रहे हैं जिनके परिणाम स्वरूप मीडिया जगत अपनी स्थापना के उद्देश्य से विचलित होता हुआ नजर आ रहा है।

भारतीय उपमहाद्धीप का ऐतिहासिक परिदृष्य -वैदिक काल में समाज में वर्ण व्यवस्था प्रचलित थी जिसके अनुसार सामाजिक स्वरूप ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्य एवं शूद्र वर्गो में विभक्त था। समाज का यह वर्गीकरण राजतंत्र की व्यवस्था के अनुसार था जो सामाजिक असमानता को व्यक्त करता है। परन्तु यह व्यवस्था पूर्णतया स्थाई नही थी और व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार समाज के किसी भी वर्ग में स्थान प्राप्त करने के लिए स्वतंत्र था। जिसका ऋगवेद मे स्पष्ट उल्लेख मिलता है। किसी भी वर्ग के व्यक्ति द्धारा वेद, उपनिषद आदि में विद्धता हासिल करने पर ब्राह्मण के रूप में तथा युद्ध एवं पराक्रम के माध्यम से क्षत्रिय के रूप में और व्यापारिक कार्यों में निपुणता हांसिल करने पर वैष्य वर्ग में स्थान प्राप्त किया जा सकता था। इन तीनों वर्गो में स्थान प्राप्त करने में असमर्थ व्यक्ति शूद्र वर्ग की श्रेणी में आते थे जो अन्य तीनों वर्गो की सेवा करने का दायित्व सम्भालते थे। अत: यह कहना उचित होगा कि वैदिक काल की सामाजिक व्यवस्था में राजतंत्र के साथ-साथ जनतंत्र का भी समावेश था जिसके माध्यम से व्यक्ति को अपनी योग्यतानुसार सामाजिक पद प्राप्त करने की स्वतंत्रता थी। वैदिक काल मे महिलाओं की सामाजिक स्थिति पुरूषों की तुलना में उच्च थी। महिलाओं के प्रति विषेश सम्मान के कारण इन्हें दैवीय स्वरूप प्राप्त था। धार्मिक स्वरूप में एकरूपता थी और सम्पूर्ण समुदाय मातृदेवी की आरधना करते थे। मानव द्धारा निर्मित सभ्यता एवं संस्कृति के विकास की चरम अवस्था वैदिक काल में प्रतीत होती थी।

बीसवीं सदी में मीडिया जगत का योगदान - उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दशक से ही राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मीडिया की सक्रियता का प्रभाव दिखायी देने लग गया था। सम्पूर्ण भारतवर्ष में चल रहे राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय आन्दोलनों के प्रचार - प्रसार के माध्यम से मीडिया अपनी पहचान बना चुका था। राष्ट्रीय आन्दोलनों के साथ-साथ विभिन्न समाज सुधारकों द्धारा महिलाओं की स्थिति सुधारने हेतु प्रयास किये गये महिलाओं को सम्मान दिलाने एवं समाज में व्याप्त विभिन्न कुप्रथाओं जैसे सतीप्रथा, दहेजप्रथा आदि के उन्मुलन में समाचार पत्रों एवं प्रचलित पत्र-पत्रिकाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा था। इसी प्रकार विधवा विवाह एवं दहेज निरोधक अधिनियम को लागू करवाने में किये गये प्रयास अविस्मरणीय है। महिलाओं की समस्याओं के समाधान हेतु राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय महिला आयोग एवं राज्य स्तर पर राज्य महिला आयोगों की स्थापना में मीडिया जगत का योगदान रहा। महिलाओं पर किये जाने वाले अत्याचारों से मुक्ति दिलाने हेतु इन आयोगों की स्थापना की गई। महिलाओं हेतु महिला स्वयं सहायता समुह एवं महिला सहकारिता के माध्यम से महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में मीडिया जगत का अनवरत सहयोग रहा है। महिलाओं को राजनैतिक अधिकार प्रदान करने हेतु राज्य स्तर पर महिलाओं को पंचायतीराज एवं शहरी निकायों में आरक्षण दिलाने में समाचार जगत का उल्लेखनीय योगदान रहा है। सार्वजनिक क्षेत्र की विभिन्न सेवाओं में महिलाओ को आरक्षण प्रदान कर के इनकी भागीदारी सुनिश्चित करने में मीडिया जगत द्धारा समय समय

* व्याख्याता (वनस्पति शास्त्र) राजकीय स्नातकोत्तार महाविद्यालय थानागाजी, अलवर (राज.) भारत

पर प्रयास किये जाते रहे है।

दलित वर्गों के उत्थान हेतु विभिन्न समाज सुधाराको के प्रयास समाचार पत्रों के माध्यम से ही सफल हो पाये थे। डॉ. भीमराव अम्बेड़कर के प्रयासों से समाज के पिछड़े वर्गो को राष्ट्रीय धारा में लाने हेतु की गई पहल के साक्षी बनकर समाचार पत्रों ने उनके कार्य को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग प्रदान किया। दलित एवं पिछड़े वर्गो को राष्ट्रीय स्तर पर राजनैतिक एवं सार्वजनिक सेवाओं में प्रदान किये गये आरक्षण के माध्यम से इन वर्गो की विभिन्न क्षेत्रों में भागीदारी बढ़ाने हेतु संविधान में किये गये उपबंध डॉ. भीमराव अम्बेड़कर द्वारा विकसित राष्ट्र के निर्माण हेतु की गई दूरगामी पहल को परिलक्षित करते है। दलितों के मानवाधिकारों के हनन को रोकने हेतु समय समय पर जन चेतना लाने का प्रयास किया जाता रहा है। समाज में प्राचीन काल से प्रचलित विभिन्न कुरीतियों जैसे ऊंच-नीच, छुआ-छूत आदि के उन्मूलन में समाज सुधारकों द्वारा किये गये प्रयासों का प्रकाशन करके इन समस्याओं के उन्मूलन में समाचार पत्रों द्वारा महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया गया। जिनके फलस्वरूप जनतंत्र के संविधान में इनके अधिकारों के संरक्षण हेतु विशेष उपबन्ध किये गये। दलितों की समस्याओं के उचित निराकरण हेतु राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर आयोगो की स्थापना में मीडिया जगत का महत्वपूर्ण सहयोग रहा है।

अल्प संख्यको के हितों को ध्यान में रखते हुये संविधान में भारत को धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया गया है जिससे विभिन्न धर्मो के मतावलम्बी अपने धार्मिक स्वरूप को सुरक्षित रख सके। भारत की स्वतंत्रता के समय अल्पसंख्यको की कुल जनसंख्या लगभग 17 प्रतिषत थी जिसमें मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध एवं पारसी समुदाय सम्मिलित थे इन सभी समुदायों के हितों के संरक्षण हेतु समाचार जगत द्वारा इनकी समस्याओं के प्रति समाचार पत्रों के माध्यम से सत्ता का ध्यान आकृष्ट किया जाता रहा है। जिसके कारण विभिन्न क्षेत्रों में इनकी भागीदारी सुनिश्चित की गई। विभिन्न स्वार्थो से प्रेरित साम्प्रदायिक दंगों का मीडिया जगत द्वारा इनके पीछे निहित स्वार्थ को सामने लाया जाता रहा है। जिससे इस प्रकार की समस्याओं का समाधान सम्भव हो सके और इस प्रकार की घटनाओं की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए आवश्यक सम्भव प्रयास किये गये।

वर्तमान में मीडिया के प्रयासरत कार्य - बीसवीं सदी से ही मीडिया की सभी क्षेत्रों में बढ़ती हुई सक्रियता परिलक्षित होने लग चुकी थी। जनतंत्र में मीडिया जगत की भागीदारी सम्पूर्ण सार्वजनिक कार्य प्रणाली को पारदर्शी बनाती है। वर्तमान समय में मीडिया जगत आवश्यक एवं अविकल्पी उपक्रम बन गया जिसके बिना सत्ता एवं प्रजा के मध्य सामंजस्य स्थापित नहीं किया जा सकता है। महिलाओं के प्रति सरकार के उत्तारदायित्वों की पालना हेतु मीडिया जगत द्वारा किये गये प्रयास सराहनीय है। महिला सशक्तिकरण के माध्यम से महिलाओं के प्रति विभिन्न क्षेत्रों में सत्ता की जवाब देही सुनिष्चित की जा रही है। महिलाओं की सुरक्षा की समस्या वर्तमान समय की एक ज्वलंत समस्या है। विगत 16 दिसम्बर की दिल्ली की घटना ने तो दरिंदगी की सभी हदे पार कर दी थी। मीडिया जगत ने सम्पूर्ण राष्ट्रीय स्तर पर इस घटना के प्रति सभी को आगे आने के लिए आव्हान्वित किया था। जिसके परिणाम स्वरूप इस घटना के प्रति सम्पूर्ण देश में सभी जगह विरोध प्रदर्शित किया गया तथा समाचार जगत की सक्रिय भागीदारी के द्वारा दिल्ली की दामिनी को न्याय मिल पाया। महिलाओं की सुरक्षा के प्रति गम्भीर होकर केन्द्र सरकार द्वारा आवश्यक एवं जरूरी संवैधानिक उपाय किये गये। परन्तु अभी भी हजारों दामिनी अपने लिए न्याय की प्रतीक्षा कर रही है। महिलाओं की वर्तमान स्थिति के लिए राजनीतिक स्वार्थ के साथ-साथ न्यायपालिका की धीमी कार्य प्रणाली अप्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार है। न्यायपालिका के सुस्त रवैये के कारण आपराधिक मामलों के निस्तारण में वर्षो तक का समय लग जाता है। जिसके कारण आपराधिक कृत्य करने वालों का मनोबल बढ़ता है।

वर्तमान समय में दलित वर्ग की भागीदारी समस्त क्षेत्रों मे बढ़ाने हेतु सरकार द्वारा अपेक्षित प्रयास किये जा रहे है। दलितों हेतु संविधान में किये गये उपबन्धों के माध्यम से इनकी सामाजिक स्थिति में अपेक्षित सुधार हुआ है। परन्तु दलित समुदाय भी दो वर्गो में विभेदित होता हुआ दिखाई दे रहा है। जिसमें समुदाय का उच्च वर्ग जो सार्वजनिक सेवाओं एवं राजनीतिक क्षेत्र में अपनी पकड़ बना चुका है वह सत्ता द्वारा प्रदत्ता समस्त सुविधाओं का लाभ प्राप्त कर रहा है। परन्तु दूसरी ओर समुदाय का निम्न वर्ग जो आज भी सत्ता द्वारा प्रदत्ता लाभों से वंचित है। इन की राजनीतिक, शैक्षिक एवं सार्वजनिक क्षेत्र में दयनीय स्थिति है। मीडिया जगत द्वारा समय - समय पर इनके साथ होने वाले अन्यायों को प्रदर्शित किया जाता रहा है। ग्रामीण परिवेषों में आज भी दलित वर्गो का जमीदारों द्वारा शोषण किया जा रहा है आर्थिक सहयोग के बहाने इस वर्ग का सूदखोरो, व्यापारियों एवं मुनाफाखोरो द्वारा शोषण किया जाता है। मीडिया जगत द्वारा हाल ही में मध्य प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में बन्धुआं मजदूरी के रूप में कार्यरत मजदूरों का जिक्र किया गया है। परिस्थितियों के हालातों से मजबूर इनके बच्चों की पीठ पर स्कूल बस्ते के स्थान पर आजीविका चलाने का बोरा लाद दिया जाता है। समाचार पत्रों में कचरे में से थैली बीनते हुये बच्चों, बुजर्गो एवं बेरोजगार व्यस्कों की तस्वीरों को प्रस्तुत किया जाता है तो सत्ता पक्ष द्वारा इनके उत्थान हेतु चलाये जा रहे कार्य क्रमों की पोल सामने आ जाती है।

अल्पसंख्यको के कुछ समुदायों की जनसंख्या की प्रतिशत में विगत कुछ समय से गिरावट आ रही है। जिसका प्रमुख कारण इनके प्रति की जाने वाली उपेक्षित प्रवृत्ति है राजनीतिक स्वार्थ के कारण इन वर्गो को उपेक्षित करके बड़े समुदायों के मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित किया जाता है। इनकी लुप्त होती जा रही संस्कृति के प्रति मीडिया जगत के द्वारा घ्यान आकर्षित किया जाता रहा है। इनके प्रति अन्य समुदायों द्वारा किये जाने वाले अन्याय को नियमित रूप से दृष्टि पटल पर लाया जाता रहा है। हाल ही में जैन समुदाय को अल्प संख्यक का संवैधानिक दर्जा प्रदान करके इनके प्रति सत्ता द्वारा अपनी सहानुभूति प्रकट की हैं। अपने हितों के प्रति उपेक्षित व्यवहार के कारण इन समुदाय की विचारधार में राष्ट्रविरोधी गतिविधियां पनपती है। राष्ट्रीस स्तर पर विभिन्न राष्ट्रविरोधी संघटनों को उद्‌भव इनके प्रति किये गये उपेक्षित व्यवहार का ही परिणाम है। मीडिया जगत द्वारा इनकी वास्तवी समस्याओं के प्रति सत्ता का ध्यान आकर्षित किया जाता है। जिनमें से कुछ समस्याओं का समाधान हेतु सम्भव प्रयास किये जाते है। समाचार जगत द्वारा अल्पसंख्यकों के धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्रियाकलापों को प्रकाशित करके इनसे अवगत कराने का प्रयास किया जाता रहा है। इनके धार्मिक महत्व को बढ़ावा दिये जाने का प्रयास भी मीडिया जगत द्वारा नियमित रूप से जारी है।

जनतंत्र के अन्तर्गत जनसाधारण के हितों को ध्यान में रखते हुये नित नये राष्ट्रव्यापी निर्णय लिए जाते है। मीडिया जगत के द्वारा अपनी विकसित संचार प्रणाली के माध्यम से राष्ट्रीय गतिविधियों को द्रुतगति से प्रसारित एवं प्रकाशित करके जनसामान्य के दृष्टि पटल पर लाया जाता है।

निष्कर्ष - इस प्रकार यह कहना ही उचित होगा की जनतंत्र में चौथे स्तम्भ

के रूप में पहचान बना चुके मीडिया जगत के बिना जन कल्याणकारी गतिविधियाँ सफलतापूर्वक संचालित नहीं की जा सकती है। विभिन्न गतिविधियों में पारदर्शिता लाने एवं सम्बन्धित निकाय की जवाबदेही सुनिष्चित करना मीडिया जगत के बिना सम्भव नहीं है। राजनीति से लेकर औद्योगिक, वैज्ञानिक, व्यापारिक आदि क्षेत्रों की गतिविधियों के प्रचार प्रसार का समाचार जगत प्रबल माध्यम बन चुका है परन्तु मीडिया जगत का होता हुआ व्यापारीकरण इसके नकारत्मक प़क्ष को उजागर करता है। विभिन्न अवसरों पर समाचार पत्रों के लेखों पर राजनीतिक लाभ प्राप्त करने की लालसा स्पष्ट झलकती हुई नजर आती है। विज्ञापनों का बढ़ता हुआ प्रचलन मीडिया जगत को अपने लक्ष्य से विचलित कर रहा है। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए क्रियाशील रहने हेतु पूर्ण निष्ठा एवं शत-प्रतिशत ईमानदारी के साथ कार्य करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पुष्पा मैत्रेयी, त्यागी रविन्द्र नाथ – व्यंग्य समय
2. जैन सुनिता– सीधी कलम सधे ना
3. मिश्रा प्रताप नारायण – रचनावली 4
4. भटनागर राजेन्द्र मोहन – डॉ. अम्बेडकर जीवन मर्म
5. बच्छोतिया हीरालाल – विद्राहिणी शबरी
6. खुरान गुरूदीप – रोशनी में छिपे अंधेरे
7. सिंह भगवान – भारत तब से अब तक
8. कमलेश्वर – गर्दिश के दिन
9. शर्मा रामविलास – भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश
10. पाण्डेय शम्भूनाथ – वे जो प्रेरणा स्त्रोत है
11. काम्बले बेबी – जीवन हमारा
12. कुलश्रेष्ठ कल्पना – उस सदी की बात
13. सचदेव पद्मा – अक्खर कुंड
14. चन्द्रिकेश जगदीश – झूठ नहीं बोलता इतिहास
15. शर्मा चन्द्रिका प्रसाद – सप्त आदर्श महिलाऐं
16. कपूर मस्तराम – विपथगामी
17. बलराम – बीसवीं सदी की लघुकथाएँ
18. वशिष्ठ सुदर्शन – हिमालय गाथा-3 (जनजाति संस्कृति)

****

An Analytical Study Of Investment Pattern Of Selected Public And Private Sector Life Insurance Companies In India

Dr. Shraddha Mittal *

Abstract - With the fast growing globalization, liberalization and surge of economic activities in the past few years, the conceptual process and way of risk management has undergone a sea change across the financial and business world. The Insurance which has become very vibrant in the last few years particularly since the opening up of industry is no exception. Investment operations are not to be considered as incidental but crucial to the business of insurance. Insurance companies take three types of risk namely underwriting risk (pricing); leverage risk (premium to surplus) and investment risk (choice of assets for investment). Insurers are required to generate reserves for claims that might arise and over a period a large corpus of funds is built up. It is important that insurance companies invest these funds judiciously with the combined objectives of liquidity, maximization of yield and safety as the returns on investments of life funds influence the premium rates and bonuses of life insurance business.
Keywords - Investment Pattern, Investment strategies, Fund Management etc.

Introduction - With the Indian President's formal assent on the Insurance Regulatory and Development Authority Bill 1999 passed by both the houses of parliament in the winter session, a new chapter began in India's one of the biggest capital formation sector i.e. Insurance sector No doubt all life insurance companies in India have to comply with the strict regulations laid out by Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDA) but despite the genuine differences in opinion, ideology or otherwise on insurance privatization now that the IRDA itself pointed out the need to review the specified pattern of investment of funds by the insurance companies. The new investment strategies have to be drawn up to increase the yields on its investments because companies are finding difficult to match its long term liabilities as current interest rates have been falling for the last couple of years and it has been forced to close down a few guaranteed high return policies as many securities does not justify investment criteria of safety, yield, liquidity and marketability. Thus in order to continue the growth, match international standards and outline possible investment trends and challenges in drastically transformed nationalized to liberalized insurance market there is a constant need to address the key issues like: -

How do people and insurance companies invest? How insurance companies have designed there investment patterns over a period of time? Is there a pattern which may emerge for the way insurance companies may invest in the markets? Is there pattern of investment correct to work in favor of investors? What factors explain their investment decisions, activities, or function etc.?

Thus the curiosity to know about these mentioned issues regarding Fund management in insurance companies is the weighing trend for new investment avenues in financial markets. The insurance companies mainly have income generation by underwriting commission and premium. It then invests the internal and surplus funds either in capital formation or in investment as per Insurance Act .In fact, returns on investment influence the premium rates and bonuses and investment income will continue to be an important component of insurance company profit. Thus Investment returns, particularly in emerging markets are directly related to regulatory control and management of investment decision and plan. These study is an attempt to indicate how the growing trends and specific shifts in premium generation and the investment patterns of Indian Life Insurance companies over the years both at aggregate and disaggregate level of major insurance companies group including selected public and private Life insurance players like LIC, HDFC, ICICI Prudential, Birla Sun Life, SBI Life etc.

Review Of Literature - Oyejide and Soyode (1976) investigated the patterns, growth and problems of insurance company's investments in Nigeria. The objective of the work was "to look at the insurance companies in general and the life insurance companies in particular as investors noting their characteristics, and their potentials in the Nigeria capital market.

Palande PS, Shah R.S. Linawat M.L (2003) provides an overview of vast opportunities for Indian insurance

* Faculty (Commerce) Pt. S. N. S. P. G. College, Shahdol (M.P.) INDIA

Market and also highlights the compelling need for quality and cost effective investment pattern in Indian insurance Market.

Jelena Koèoviæ,Tatjana ;Rakonjac Antiæ,and Marija Jovovi ,December (2011) discuss the impact of the global financial crisis on the scale and structure of investment portfolios of insurance companies, with respect to their difference compared to other types of financial institution, which derives from the specific nature of insurance activities.

Objectives :

1. To examine the existing investment patterns, methods, exposure limit and fund avenues in which selected Life insurance companies invest their funds in India.
2. To undertake a comparative and analytical study of selected public and private Life Insurance Companies with regard to their investment and portfolio management practices.
3. To review the scope for modification of market mechanism and investment asset management in Life insurance Sector.

Hypothesis - The main hypothesis of the study is as follows :

1. There is no significant relationship between investment portfolio performance and Fund management of selected Life Insurance public and Private Companies as far their selection of investment avenues is concerned.
2. There is no significant relationship between growth rate in investment assets and investment yield of selected Life Insurance public and Private Companies.

Research Methodology - The study is done on insurance companies in India specifically of total 24 life insurance companies including both public and private players being discussed on the basis of 6 sample companies which includes the only public sector co. (i.e. LIC) and top 5 ranking private sector co. (ie ICICI prudential life, Bajaj Allianz, SBI life, HDFC Life, Birla sun life) operating in India as per the survey report of RNCOS 2015-16.The non-probability purposive technique of sampling is used and the criteria for selection of sample unit for the study was company's growth position, market size, trends in business premium, volume of profit in both public and private sector insurance companies. The study mainly reveals the assessment of investment pattern; investment strategies and various investment avenues, future investment plans etc opted by selected companies.

Limitation Of Study :

1. The study is an attempt to evaluate the contribution and investment pattern performance analysis of life insurance sector only and does not show what the Non-life sector is worth of to Indian Insurance industry.
2. The scope of study is limited and discloses only trends in investment avenues ignoring the other presumptions affecting the long term portfolio and investment performance.
3. The study analyses only selected Indian life insurance companies on the basis of their past performance and selected analytical tools.

Investment Pattern Regulation And Management - The regulation of investment of insurance companies needs to focus on :

1. Solvency requirements
2. Asset valuation regulation
3. Minimum percentage of the fund to be invested in certain asset categories.
4. Restriction on the maximum amount of investment in certain classes of assets.
5. Restriction on the percentage of funds that can be invested in any one company/industry.
6. Treating some assets as inadmissible for valuation purposes.

Factors To Be Considered For Investment Pattern Decision And Practices - The pattern of investment for insurance companies and pension funds is primarily influenced by the nature of the liabilities- whether they are denominated in real or nominal terms. It is also important to match assets and liabilities in terms of currency. The "typical" liability profile of insurance companies and pension funds is as follows.

Table 1 & 2 (see in next page)

Conclusion - The study underlined that there is need to take a critical look at the investment function and decisions of these companies or the industry as a whole .Also companies should redefine long-term securities, for high-yield, even risky, industrial ordinary stocks; and its non need for marketable short-term securities. It has been hypothesized that the overall investment decision of the insurance Industry is a positive function of their level of funds mobilization (represented by total premiums), capital base, rate of economic growth, and rate of return on Government treasury Investments, level of investment in the previous years and profitability of operations. The inclusion of the rates on Government treasury investment is predicted on the fact that much of insurance funds are restricted by law from being plunged into Government securities in the money market. The approach here in this study, however is to relax investment provisions instead of reducing the minimum requirements which would encourage active participation in insurance business, discourage the insurers from thriving on illegality and possibility of making secrete. The analysis concluded by noting the great variation in the asset holdings of life insurance companies, owing to the need to match assets with the maturity structure of their liabilities. Also, investments in the previous periods though positively related, is not a significant vector in current investment decisions. Hence the study provides clear indication for the urgent need for healthy portfolio management practices along with managerial re-orientation starting from the point of Business policy and strategy.

Measures To Realize Growth Potentials Of Life Insurance Sector With Regard To Investment

Management - While the macro-economic backdrop remains favorable to growth, there are still major hurdles to overcome in order for India to realize the growth potential :

1. On the regulatory side, there are outstanding issues concerning solvency regulations, further liberalizing of investment rules, caps on foreign equity shareholdings as well as the enforcement of price tariffs in the life insurance sector.
2. Existing rules and guidelines prohibit insurance companies and pension funds from investing in private limited companies, which needs to be scrapped or modified.
3. Insurance companies and pension funds should be allowed to invest in derivatives, in both equities and bonds. This is essential for hedging their exposure in the cash market. Each of the regulators should evolve a roadmap with a definite time-frame and clearly.

References :-

1. "Some Issues Concern in Privatization and Regulation of Insurance Sector " by Bedi,S.K; Paper presented in National Conference on Privatization of Insurance Sector: Corporate Challenges and Strategies, Rohtak. Nov. 5, 2001.
2. Jain M.K., Determination of Capital required in a Life Insurance Business, The Chartered Accountant, Sept. 2001.
3. Meder, R.C., Changes in the Global Insurance Market by R.C.Meder, ICFAI Reader, Hyderabad May 2001.
4. "Investment Trends" by Naidu, G. Kuara Swamy, Portfolios Maganizer: ICFAI ,Hyderabad, March 2003

Table 1 : Factors to be considered for Investment Pattern Decision and Practices -

Growth rate in gross premiums written	Consider:Past and current growth rates in gross premiums written; Past and current inflation; Past and current real growth rates in gross premiums written; Expected inflation; Current inflation predicts growth in premiums written because it is measured using end-of-period prices while each period's premiums written reflect average prices during the period;
Gross premiums written	= (1 + growth rate in gross premiums written) × prior year gross **premiums written**
Ceded premium ratio	= Premiums ceded to reinsurers / gross premiums written Consider: Past and current ceded premium ratios; Trends in the availability and cost of reinsurance; Capital position (excess capital alleviates the need to reinsure); Business line and geographic area mix (some lines and geographic areas—such as homeowners insurance in Florida—are prone to catastrophe losses);
Retention ratio	= 1 - ceded premiums ratio
Net premiums written	= Gross premiums written × retention ratio
Unearned premiums	= (1 + growth rate in gross premiums written) × prior year unearned premiums
Prepaid reinsurance premiums	= Ceded premium ratio × unearned premiums
Net premiums earned	= Net premiums written - change in unearned premium + change in prepaid reinsurance premium
Investment yield	Consider: Past and current investment yield; Past and current interest rate term structures; Past and current investment yield spread over benchmark rates (Treasuries, corporate bonds, municipal bonds); Past, current and projected portfolio composition (fixed income versus equities, fixed versus floating interest, Treasuries/agency/corporate/MBS/municipalities, maturity, credit rating, etc.);
Growth rate in investment assets	Consider: Past and current growth in investment assets;Past, current and projected growth in net premiums written; Past, current and projected investment yield (to the extent that investment income is reinvested in the portfolio);
Investment assets	= (1 + growth rate in investment assets) × prior year investment assets
Net investment income	= Investment yield × prior year investment assets
Net realized gains ratio	**=** Net realized gains (losses) / prior year investment assets Consider: Past and current net realized gains ratios; Past and current ratios of net unrealized gains (losses) at the end of the year to investment

	assets; Past, current and projected portfolio turnover; Notes: Comparing (1) with the prior year value of (2) should help in predicting the rate at which unrealized gains and losses are circulated into income; Forecasts of net realized gains should be based on the estimate form (a) and the current net position of unrealized gains (losses);
Net realized gains (losses)	= Net realized gains ratio × prior year investment assets

Table 2 : Regulation for minimum or maximum % of investments under specifies category of investments

No	Type of Investment	Percentage to funds as under Regulation 4(a)
(i)	Central Government Securities	Not less than 25%
(ii)	Central Government Securities, State Government Securities or Other Approved Securities above.	Not less than 50% (incl (i)
(iii)	Central Government Securities, State Government Securities or Other	Not exceeding 50%
(iv)	Approved Securities Not less than 50% (incl (i)above)	Not exceeding15%
(v)	Investment in housing and infrastructure by way of subscription or purchase of: A. Investment in Housing a. Bonds / debentures of HUDCO and National Housing Bank b. Bonds / debentures of Housing Finance Companies either duly accredited by National Housing Banks, for house building activities, or duly guaranteed by Government or carrying current rating of not less than 'AA' by a credit rating agencyregistered under SEBI (Credit Rating Agencies) Regulations, 1999 c. Asset Backed Securities with underlying housing loans, satisfying the norms specifiedin the guidelines issued under these regulations from time to time. B. Investment in Infrastructure (Explanation: Subscription or purchase of Bonds / Debentures, Equity and AssetBacked Securities with underlying infrastructure assets would qualify for the purposeof this requirement. 'Infrastructure facility' shall have the meaning as given in Regulation 2 (h) as amended from time to time	Total Investment in housing and infrastructure (i.e.,) investment in categories (i), (ii), (iii) and(iv) above taken together shall not be less than 15% of the fundunder Regulation 4(a)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारतीय संस्कृति में अग्निपुराण के काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का अध्ययन

डॉ. वन्दना वर्मा *

प्रस्तावना – भारत की संस्कृति अद्भूत और महान है जो कि विश्व बंधुत्व की भावनाओं को लिए हुए अनेकता में एकता की अमिट छाप प्रस्तुत करती है। भारतीय संस्कृति की आभा में पुराणिक झलक बसी हुई हैं। पुराण भारतीय संस्कृति के मेरुदण्ड है। पुराण वैदिक साहित्य एवं लोकिक साहित्य के संधिकाल को रेखांकित करते है। कोई भी व्यक्ति इस कथन की सत्यता से इनकार नही कर सकता कि पुरण भारतीय संस्कृति के प्राण है। वेदों ने भारतीय संस्कृति को सुद्दढ़ बनाया है। भारतीय दर्शन कि सुरसरी इनसे प्रभावित हुई है। भारतीय जीवन के लोक व्यवहार, लोकाचार, जीवन–शैली तथा दैनिक व्यवहार के स्वरुप को पुराणो ने आकार दिया है। पुराण साहित्य अत्यन्त विशाल विस्तृत और गहन है। पुराणों में गाथाएँ है, कथाएँ है। सृष्टि की रचना और प्रलय की प्रक्रिया के सम्बन्ध मे भी अद्भुत विचार है। **'एक विद्वान के अनुसार पुराण कथा सागर है, लोकरंजक कथाओं के अनन्त भण्डार है।'** पुराणो की संख्या अठारह है, पुराणो के साथ ही उपपुराण एंव अतिपुराण भी माने गये है। परन्तु भारतीय इतिहास एंव संस्कृति अठारह पुराण डॉ. रामकृष्ण सिंधी का दिग्दर्शन कराने वाले महत्वपूर्ण ग्रन्थ मुल अठारह पुरण ही है।

मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं व चतुष्टयम।
अनापलिङ्कुस्कानि पुराणानि प्रचक्षते।। 2

इस पद्य के अनुसार 6 म 9 नाम वाले दो पराण है। अर्थात् मत्स्य और मार्कण्डेय, भ नाम वाले भी दो पुराण है। भविष्य और भागवत, ब नाम वाले तीन पुराण है। ब्रहमाण्ड, ब्रहमवैवर्त तथा ब्रहम व नाम वाचक चार पुराण है। वराह, वामन विष्णु और वायु इसके अतिरिक्त अग्नि नारद, पद्म, लिङग, गरुड, कुर्म और स्कन्द इन पुराणो के क्रम के विषय मे–मत मतान्तर है। सबसे प्रचीन पुराण कौन है। इसका निर्णय पुराणों की काल निर्णा के समय स्पष्ट हो सकेगा।

पुराण का अर्थ महत्व – पुराण हमारी संस्कृति के महत्वपूर्ण आधार है, पुराण शब्द का वास्तिक अर्थ प्रचीन या पुराना है। अत: पुराणों में प्राचिन कथानक् वंशावली इतिहास, भूगोल, ज्ञान–विज्ञान आदि से भी प्रचीन तत्वो का समावेश है अत: इसे पुराण नाम दिया गया है। पुराण शब्द की अनेक निरुक्तियाँ दी गई है।

पुराणं आख्यानम् पुराणम्।
यस्मात् पुरा हि अनित इदं पुराणम्।। 3
जगत: प्रागवस्थामुनक्रम्य सर्ग।
प्रतिपादकं वाक्य जांत पुराणम्।। 4
पुरार्थेशु आनयाति पुराणम्। 5
पुरापरम्परां वक्ति पुराणंतेनवैस्मृतम्। 6
विश्वस्रष्टेरितिहास: पुराणंम्। 7

इन सारी व्युत्वत्तियों का तात्पर्य यह है, कि पुराण वह है, जो प्रचीन समय मे भी सजीव या तथा जिसमे संसार कि उत्पत्ति और विकास क्रम के बोध का विवेचन प्राप्त होता हैं अथवा जिनमे पूर्वतत्वो का वर्णन प्राप्त होता है, जैसे पुरुष और प्रकृति के चिन्तन मे संलग्न ज्ञान को पुराण कहते है, अथवा प्रचीन परम्परा के प्रतिपादक ग्रन्थो को पुराण कहते है, अथवा विष्वरचना के इतिहास को पुराण कहते है, ये सभी परिभाषाएँ पुराण की विषय–वस्तु, उसका स्वरुप एवं निहित ज्ञान को स्पष्ट करती है। प्रतिपाद्य विषयो कि दृष्टि से पुराणों मे भी इनका लक्षण किया गया है। जैसे विष्णु पुराण का अभिमत है, कि–

सर्गष्च प्रतिसर्गश्च वंशोमन्वन्तराणी च।
वंशाऽनुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्।।

इससे स्पष्ट हैं, कि पुराणो मे सर्ग अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति, प्रतिसर्ग अर्थात प्रलय या सृष्टि का पुन: प्रादुर्भाव, वंश अर्थात देवताओ और ऋषियो की वंशावलियाँ मन्वन्तर अर्थात मनु एवं उनके समय प्रमुख घटनाओ का चित्रण वंशाऽनुचरितं का अर्थ है। सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओ के जीवन चरित का वर्णन भी इसमे प्राप्त होता है। इसी के समान भागवत पुराण मे भी पुराणो के लक्षण अथवा विषय वस्तु का प्रतिपादन किया गया है, अर्थात इसमें पुराणो के दशलक्षण माने गये है। (पद्य) श्रीमद्भागवत पुराण के अनुसार विष्वसर्ग विसर्म, वृत्ति, रक्षा, मन्वन्तर, वंश, वंशाऽनुचारित, संख्या (प्रलय) हेतु और उपाश्रय।

इस प्रकार पुराणो के इन लक्षणो से ज्ञात होता है, कि पुराणो सृष्टि में उत्पत्ति की प्रक्रिया, जीवन और पदार्थो की उत्पत्ति का क्रम जीवन प्रणाली को बनाऐं रखने के लिए परमशक्ति की अवतारलीलोओ का वर्णन प्राप्त होता है। इसके साथ काल, युग के परिवर्तन सम्बन्धी वर्णन, विभिन्न राजाओं के उत्थान–पतन उनकी वंश परम्पराएँ, उनके कार्य कलाप का विवरण पुराणों मे प्राप्त होता है।

पुराणो को जीवन व्यवहार के सिन्धु की उपमा दी जाती है। भारतीय–लोकजीवन की धडकंन कहाँ जाता है, क्योंकि वर्तमान युग मे भारत वर्ष मे धर्म, संस्कृति, रीति–रिवाज उपासना पद्धतियाँ जो कुछ भी प्रचलीत है, वह पुराणों कि देन है। पुराणों के आख्यात एवं उपाख्यान लोक जीवन मे रचे बसे हुए है, इसलिए अनेक प्रसिद्ध भारतीय विद्वान वर्तमान युग को परिभाषित करने के लिए पौराणिक युग अथवा पौराणिक धर्म कहते है। क्योंकि पुराणो में जीवन का प्रेय एवं श्रेय धर्म–अधर्म, बन्धन मोक्ष लोक परलोक स्वर्ग नर्क सुमार्ग–कुमार्ग सभी प्राप्त होता है। भारतीय संस्कृति की दृष्टि से पुराण भारत के सम्रग जीवन को प्रभावित करते है। सनातन धर्म के ये प्राणभुत् तत्व है। वेदों के तुल्य इन्हे प्रामाणिक माना गया है। ब्रहमा, विष्णु शिव गणेश तथा सूर्य की उपासना पद्धतियों का प्रामाणिक बोध पुराणों से ही होता है, वैदिक युग मे इन देवताओ का इतना विकास नही हो पाया भारत वर्ष मे कर्मकाण्ड एवं मूर्ति पूजा का जो विस्तृत स्वरुप दिखाई देता है, वह पुराणो कि ही देन है। इसके अतिरिक्त पुराणों मे स्मृति ग्रन्थों के तुल्य वर्णाश्रम–व्यवस्था, के

* सॉई एकेडमी,बड़वानी रोड़, दवाना (म.प्र.) भारत

गुण धर्म संस्कारो का विवेचन, पारिवारिक सम्बन्ध, गुरु शिष्य सम्बन्ध, राजधर्म, आदि का विवेचन प्राप्त होता है। इसलिए पुराणों को भारतीय संस्कृति का मेरुदण्ड कहा जाता है। इसके अतिरिक्त भी पुराणों मे अनेक शास्त्रो का वर्णन मिलता है, जिसमे व्याकरण छन्द ज्योतिष धर्मशास्त्र दर्शन आयुर्वेद शरीर-विज्ञान आदि अनेक महत्पूर्ण शास्त्र है।

अग्निपुराण - अग्नि पुराण को वहिन पुराण भी कहते है। डॉ. हजरा के पास वहनि पुराण का हस्त लिखित स्वरुप उपलब्ध है, जो प्राचीन अग्नि पुराण माना गया है। अग्नि पुराण पौराणिक विष्व कोष कहा जाता है। स्कन्द पुराण के शिव-रहस्य खण्ड का कथन है, कि अग्नि की महिमा का प्रतिवादन, अग्नि पुराण का लक्ष्य है। यह वषिष्ट्य प्रचलित अग्नि पुराणों मे न मिलकर वहिन पुराण मे ही उपलब्ध होता है, जिससे इसकी मौलिकता सिद्ध होती है, यह प्राचीन पुराण है, इसका रचना काल चतुर्थ शताब्दी से अर्वाचीन नही माना जा सकता।

काव्यशास्त्र के सिद्धान्तो का परिचय - अलंग्ङकार शास्त्र का विकास विधिवत्ता आचार्य भरत से ही माना जा सकता है सम्पूर्ण साहित्य शास्त्र को हम दो प्रकार से विभाजित कर सकते है। एक कालखण्ड के आधार पर तथा दुसरे सिद्धान्तो के आधार पर सिद्धान्तो के अंतर्गत अलंग्ङकार सम्प्रदाय, रीति सम्प्रदाय, रस सम्प्रदाय, ध्वनि सम्प्रदाय, वक्रोत्ति सम्प्रदाय तथा औचित्य सम्प्रदाय, अध्ययन की सुविधा के लिये इस शास्त्र के सभी आचार्य किसी न किसी सिद्धान्त से संबंधित किए जा सकते है, परन्तु काल-खण्ड के हिसाब से अथवा विकासक्रम के आधार पर भी इसके चार विभाग किये जाते है, जो इस प्रकार है :

1. **प्रारम्भिक काल (अज्ञात से लेकर भामह तक)**
2. **रचनात्मक काल (भामह से लेकर आनन्दवर्धन तक)**
3. **निर्णयात्मक काल (आनन्दवर्धन से लेकर मम्मट तक)**
4. **व्याख्या काल (मम्मट से लेकर पण्डित राजजगन्नाथ तथा आचार्य विश्वेश्वर तक)**

1. प्रारम्भिक काल - इस काल में मुख्य रूप से भरत और भामह दो आचार्यो को सम्मिलित किया जाता है। इनसे पूर्व भी अज्ञात नामा आचार्य रहे होगें या उनकी कोई रचनाएँ रही होगी। जो कालकवलित हो गई और इस समय उपलब्ध नहीं है, इसलिए भरत का नाट्य शास्त्र इसका मूल ग्रन्थ है। इसमें रस और नाट्य के सुक्ष्म तत्वों का विवेचन बहुत सुन्दर रूप से किया गया है, इसके अतिरिक्त भी अनेक कलाओं का विवेचन भी इनमें प्राप्त होता है। नाट्यशास्त्र का मुल ग्रन्थ कहना ज्यादा उपयुक्त है। अलंग्ङकार शास्त्र की दृष्टि से इसमें कुछ ही वर्णन प्राप्त होते है, जैसे - सोहलवे अध्याय में केवल चार अलंग्ङकार, दशगुण और दश दोशों का विवेचन ही प्राप्त होता है। भरत के बाद मेधावी रूद्र उनके टीकाकार हुए परन्तु उनका कोई ग्रन्थ प्राप्त नहीं होता अत: अलंग्ङकार शास्त्र के प्रथम आचार्य का गौरव पद भामह को ही प्राप्त होता है, उनके ग्रन्थ का नाम काव्यालंग्ङकार है, जो अलंग्ङकार शास्त्र का मुल ग्रन्थ कहा जा सकता है। इसमे उन्होने चार अलंग्ङकारो के स्थान पर 38 स्वतन्त्र अलंग्कङारो का विवेचन किया है तथा काव्य शास्त्रों के अन्य सिद्धान्तो का भी वर्णन किया है।

2. रचनात्मक काल - साहित्यशास्त्र का दुसरा महत्पूर्ण रचनात्मक काल है, जो 600 से 900 विक्रमी संवत् के बीच का है। इस रचनात्मक काल मे साहित्य शास्त्र के मौलिक सिद्धांतो का तथा मौलिक ग्रन्थों का प्रणयन हुआ इसलिए यह काल सबसे महत्पूर्ण माना गया है। जैसे अलंग्ङकार सम्प्रदाय मे भामह के बाद उद्भट और रुद्रट आए तो रिति सम्प्रदाय के प्रवर्तक दण्डी और वामन भी इसी काल मे हुए, प्रसिद्ध रस समप्रदाय के व्याख्याता लोल्लट, शंकुक और भटट्नायक भी इसी काल मे हुए। ध्वनि सिद्धान्त के परमाचार्य एवं संस्थापक आनन्दवर्धन भी इसी युग की देन है। इसलिए इस युग मे काव्यशास्त्र के प्रमुख चार सिद्धान्तो की स्थापनाऐं चुकी थी इसलिए काव्यशास्त्र के इतिहास में यह कालखण्ड महत्पूर्ण है।

3. निर्णयात्मक काल - आनन्दवर्धन से लेकर आचार्य मम्मट तक साहित्यशास्त्र का तीसरा और महत्पूर्ण काल निर्णयात्मकाल है यह काल 800 वि.सं. से लेकर 1000 वि. सं. तक माना गया है। ध्वन्यलोक की प्रसिद्ध टीका लोचन तथा नाट्यशास्त्र की टीका अभिनव भारती के निर्माता अभिनव गुप्त इसी काल मे हुए इनके अतिरिक्त वक्रोकि सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य कुन्तक, व्यक्ति विवेक के आचार्य महिम भट्ट इस युग की उपलब्धियाँ है। महिम भट्ट ध्वनि सिद्धांत के कट्टर विरोधी है, उन्होने ध्वनि के एक-एक भेद का विद्धत्ता पूर्ण खण्डन प्रस्तुत किया है इसलिए उनका व्यक्ति विवेक ध्वनि सिद्धान्त का मुल खण्डन करने वाला एक उच्च कोटि का ग्रन्थ है, इसी प्रकार वक्रोत्ति-जीवित मे भी आचार्य कुन्तक ने अपनी प्रतीभा और उत्कृष्ट मेधा के बान पर वक्रोत्ति सम्प्रदाय का प्रणयन किया है जो काव्य साहित्य मे एक नवीन सम्प्रदाय के रुप स्थापित हुआ है। इसके अतिरिक्त इस काल मे रुद्र भट्ट, भोजराज, धनिक और धनंजय भी इसी काल के उज्जवल रत्न है। इनकी रचनाएँ साहित्य शास्त्र को समृद्ध करती हैं।

4. व्याख्या काल - साहित्य शास्त्र का सबसे महत्पूर्ण समय व्याख्याकाल कहलाता है। इसमे मम्मट से लेकर पण्डित राज जगन्नाथ तथा आचार्य विश्वेश्वर तक को सम्मिलित किया जाता है यह समय 1000 से लेकर 1800 विक्रमी तक माना गया है, अर्थात इसका 800 वर्ष के लगभग है, यह सबसे लम्बा काल है। इसमें अनेक ऐसे आचार्य हुऐ है। जिन्होने अपने सर्वाङ्गपूर्ण रचनाओं से साहित्य को सम्पूर्ण किया है, तथा साहित्य के सम्पूर्ण विषयों को लेकर अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की है, इनमें हेमचन्द्र, विश्वनाथ जयदेव आचार्य मम्मट, पण्डितराज जगन्नाथ तथा आचार्य विश्वेश्वर प्रमुख है, केवल अलंग्ङकारों के विवेचन में भी आचार्यो ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है इसमें रूह्यक तथा अप्पयदीक्षित का नाम उल्लेखनीय है, इसके अतिरिक्त शारदातनय, सिंहभूपाल, भानुदत्ता आदि का कार्य भी प्रशंसनीय है,

इस युग में ध्वनि सम्प्रदाय, रस सम्प्रदाय अलंग्ङकार सम्प्रदाय तथा कवि शिक्षा को प्रचारित करने वाले तथा पृष्ट करने वाले अनेक आचार्य हुये है, जैसे ध्वनि सम्प्रदाय को प्रवर्तित तथा प्रवर्धित करने वालों में आचार्य मम्मट, विश्वनाथ, पण्डितराज जगन्नाथ, हेमचन्द्र, विद्याधर, विद्यानाथ जयदेव तथा अप्पयदीक्षित प्रमुख है। रस सम्प्रदाय के समर्थन में शारदातनय सिंधभूपाल, भानुदत्त और रूप गोस्वामी प्रमुख है। कवि शिक्षा के लिए राजशेखर, क्षेमेन्द्र अरिसिंह, अमरचन्द्र, देवेश्वर आदि प्रमुख है। अंतत: पुराण भारतीय संस्कृति के संरक्षक के रुप में मार्गदर्शक बने हुए हैं। भारतीय संस्कृति में पुराणों का महत्व सदैव बना रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपाध्याय, बलदेव : पुराण विमर्श, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
2. कीथ, संस्कृत साहित्य का इतिहास, मोतीलाल बनारसीदास
3. उपाध्याय, बलदेव : काव्यशास्त्र की उत्पत्ति और विकास, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
4. त्रिपाठी, श्रीकृष्णमणि : अष्टादशपुराण, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
5. मुसलगाँवकर : संस्कृत महाकाव्य की परम्परा, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी

अग्निपुराण के काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. वन्दना वर्मा *

प्रस्तावना – काव्यशास्त्र का प्राचीन नाम अलंङ्कार–शास्त्र है, यह इससे भी सिद्ध होता है, कि प्राचीन आचार्यो के ग्रन्थो के अभिधान मे अलंङ्कार शब्द का प्रयोग हुआ है, जैसे भामद का काव्यालंङ्ार रुद्रट का काव्यालंङ्ार सर्वस्व, वामन का काव्यालंङ्ार सूत्र का वृत्ति आदि भारतीय साहित्य मे अलंङ्कारशास्त्र आज एक सुप्रतिष्ठित शास्त्र है, परन्तु इस शास्त्र का आरम्भ कब हुआ यह निष्चित रुप से नही कहा जा सकता। राजशेखर ने काव्यमीमांसा मे इस शास्त्र की उत्पत्ति के विषय मे कथा का वर्णन किया है, परन्तु वह किसी अन्य अलंङ्कार–शास्त्र के ग्रन्थ मे प्राप्त नही है सम्भव है राजशेखर ने किसी प्राचीन परम्परा का अनुसरण किया हो जो आज उच्छिन्न हो गई है। राजशेखर के अनुसार काव्यमीमांसा का प्रथम उद्देश्य ब्रह्मा मे अपने 64 शिष्यो को दिया था इन्ही से सबसे वन्दनीय शास्त्र–वेता सरस्वती के पुत्र सारस्वतेय थे इन्हे ही ब्रह्मा मे प्रजा के हित के लिए काव्यपुरुष को काव्यविद्या की प्रवर्तना के लिए नियुक्त किया। इन्होने उस विद्या को अठारह अधिकरणो मे लिख कर अठारह शिष्यो को पढ़ाया। गुरु शिष्यो की परम्परा के बाद इस विद्या के बहुल प्रचार के लिए काव्य के अठारह अङ्ग पर आधारित अठारह ग्रन्थो का निर्माण किया है ? आचार्य राजशेखर ने अनेक काव्यशास्त्रीय आचार्यो का उल्लेख किया है, जिनमे सुवर्ण नाभ, चित्राग्ङ्गद, पुलस्त्य, पाराशर उत्ताय, कामदेव, कुबेर, भरत, नन्दीकेष्वर घीवण, उपमन्यु, कुचमार आदि प्रमुख है इनमे से अनेक आचार्यो का उल्लेख वात्स्यायन के काम सुत्र मे भी प्राप्त होता है, परन्तु इस शास्त्र का विधिवत् प्रारम्भ नाट्यशास्त्र के रचियता भरत से ही मानना उचित है। काव्य–शास्त्र के बिच वेदों में भी प्राप्त होते है। यद्यपि वैदिक साहित्य मे अलंङ्कार शास्त्र का कही भी निर्देश नही मिलता न ही वेदाग्ङ्गो मे अलंङ्कार शास्त्र की गणना की गई है। परन्तु इस शास्त्र के मुलभुत अलंङ्कार जैसे उपमा, रुपक, अतिश्योक्ति आदि के सुन्दर उदाहरण वैदिक संहिताओं उपनिषदो मे प्राप्त होते है, अलंङ्कारो मे उपमा तो अत्यन्त प्राचीन है इसका सम्बन्ध कविता के प्रथम आविर्भाव से ही है। आर्यो की प्राचीनतम कविता ऋग्वेद मे उपनिबद्ध है।

साहित्य शास्त्र मे सिद्धांतो का विकास क्रमिक विकास का परिमाण है, आज जितने भी सिंद्धातो प्रचलित है, वे सब क्रमश: एक दुसरे का शोषण करते हुए आगे बढे है, जैसे रस और अलंङ्कार मे से किसे प्रथम माना जाया यह प्रष्न उचित नही है, क्योकि भरत ने रस सिद्धांत का तथा रस सुत्र का विस्तृत विवेचन किया है, इसलिए रस सिद्धान्तो को अनेक आचर्य प्रथम सम्प्रदाय मानते है, इसका कारण साहित्य मे रस की महता भी है, जैसे कौच्चा वध से मशहत हुए महार्थ क्लापिनिक के मुख्य से जो प्रथम श्लोक प्रस्फुटित हुआ वह करुण रंस से परिपूर्ण है, इसलिए नाटय हो अथवा काव्य सब का केन्द्र बिन्दु रस ही होता है। इसके अतिरिक्त सामाजिक या पाठय को संवेदना जनय जो अनुभति होती है, जो आंदन की प्रसि होती है, वह रस ही है इसिलिए साहित्य शास्त्र मे कितने ही है। सिद्धान्त चलन मे आए परन्तु वे रस की अपेक्षा नही कर सके ध्वनि वादी आचार्यो ने सबसे अधिक जोर सोर से अपने सिद्धान्तो का प्रचार प्रसार किया परन्तु उन्होने भी रसध्वनि को प्रमुख माना है, ध्वनि के तीन भेद किये गये है, वस्तु ध्वनि अलंङ्कार ध्वनि तथा रसध्वनि इसमे रस ध्वनि प्रमुख ध्वनि प्रमुख है, इसके अतिरिक्त भाजराज ने भी समस्त वाडणमय को तीन भोगो मे बाटाँ है, स्वभावोक्ति वक्रोति और इसत्रो इससे रसोत्रि ही प्रमुख है, इस प्रकार रंस की अपेक्षा करके कोई काव्य की परिभाषा पूर्ण नही हो सकती है, इसलिए विश्वनाथ कविराज ने कहा है– वाक्यं रसात्मंक काव्यं अर्थात रसात्मक वाक्य है, राजशेखर ने भी आत्मा माना है, अग्नि पुराण मे भी रस ही काव्य का जीवन तत्व माना है।

'वाकृवैदग्ध प्रधनेति इसएवात्र जीनितम।।'

इस प्रकार वामन और ममट ने गुणो को रसश्रित माना है, इस तरह रिति सिद्धान्त भी रस से अलग नही है, आचार्य मम्मट जैसे काव्यशास्त्र के लब्ध प्रतिष्ठत विदवानो ने भी समायोजन करने का प्रयास किया है।

रस और अलंङ्कार – अलंङ्कार मत मानने वाले आचार्यो ने भी रस की पर्याप्त महत्व दिया है, यद्यपि रस को प्राणभुत स्थान न देकर उसे अलंङ्कार के अंतरर्गत माना गया है, जैसे रसवत् प्रये ऊर्जस्वी तथा सहमति अलंङ्कारो के भीतर इस और भाव को अन्तनिविष्ट कर दिया है। भामह जैसे बडे अलंङ्कार वादी आचार्य ने भी इस रस कि महत्ता को स्वीकार किया है, जैसे युक्तलोकस्वभावेन रसैष्टसकलै: प्रथम।।
इसी प्रकार दण्डी भी रस तत्व से परिचित है, उन्होने अंलकार के भीतर आठो रस तथा आठ स्थाई भावो का निर्देष किया है जैसे–

'इह त्वष्टरसायत्ता स्मृतागिरा'

इस प्रकार आगमी आचार्यो ने भी रस और अलंङ्कारो को समान महत्व दिया है, जैसे उद्भट ने भी रसवत् अलंङ्कार के निरुपण के अवसर पर स्थायी भाव संचारी भाव जैसे शब्दो का उल्लेख नही किया है, परन्तु रस को प्रकार माना है, इस प्रकार भामहदण्डी उद्भट एवं रुट्द आचार्य अलंङ्कार वादी होते है, हुए भी रय की महत्ता को स्वीकार करते है।

अलंङ्कार और ध्वनि – अलंङ्कार आचार्यो को प्रतीयमान का भी ज्ञान था यद्यपि वे उसे अलग से न मानकर अलंङ्कारो मे ही समाविष्ट करते थे एकावली के टीका मे मल्लिनाथ भामह प्रभृति आचार्यो का ध्वनि के अभाव का प्रतिपादक आचार्यो माना है, परन्तु यह ठीक नही है, भाहम प्रतीयमान अर्थ से परिचित थें तथा उन्होने ध्वनि गुणीभुतव्यडग जैसे पदो का प्रयोग भी अपने ग्रन्थ मे किया हैं अप्रस्तुत प्रशंसा समासोति और प्रतीयमान अर्थ को समाविष्ट करने का प्रयास किया गया है, जैसे भामह का यह **पर्यायोक्ति अलंङ्कार।**

पर्यायोक्तं यद्वन्न्येप्रकारेणोभिधीमते।
वाच्यवाचकवृत्तिाभ्यां शुन्येनावगत्मा।।

रुदद ने भाव नामक अलंङ्कार की कल्पना इसलिए कि जिससे

* सॉई एकेडमी,बड़वानी रोड़, दवाना (म.प्र.) भारत

प्रतियमान अर्थ की प्रतिती हो सके इसी प्रकार ऊपर पर्यायोक्त मे भी वाच्यवाचक वृति के अतिरिक्त अन्य प्रकार से अभिदित किये गये समग्र अर्थो का ग्रहण भामह को अभीष्ट है, मानना चाहिए रुद्रद प्रकार भी माना है, इसके उदाहरण को अभिनव गुप्त ने लोचन मे उद्‌भुत क्रिया है, तथा यह दिखलाया है, कि इसमे प्रतीयमान अर्थ स्वतन्त्र न होकर उपकारक होने के कारण वाच्य की अपेक्षा गौण है जैसे –

एकाकिनी यदबला तरुणी तथाहं
अस्मिन् गृहे गृहपतिष्च गतोविदेशम
किं याचसे यदिह वासमियं वराकी
स्वश्रर्ममान्धबाधिरा ननु मूढ पान्थ ॥

इस पद्य से यह स्पष्ट है कि अलंग्ङकार वादी आचार्यो रुद्रद भी वयंग अर्थ को स्वीकार करते है, ध्वनिवादी आचार्यो ने भी इसी प्रकार ध्वनि को महत्व देकर भी अलंग्ङकार के वर्णन मे उदासीनता नही दिखाई जैसे मम्मट पण्डितराज आदि ध्वनिवादी आचार्य है। इन्होने अपने ग्रन्थो मे अलंग्ङकारो का विस्तृत निरुपण किया है।

रीति और अलंग्ङकार – अलंग्ङकार सम्प्रदाय की अपेक्षा रीति सम्प्रदाय मे काव्य के स्वरुप का क्रमश: विकास दिखाई देता है, यद्यपि अनेक प्राचीन आचार्य गुण और अलंग्ङकारो को एक समान मानते है, परन्तु वामन से सबसे पहले गुणो अलंग्ङकारो के परस्पर संबध को स्पष्ट किया है, ढोनो के पृथक–पृथक महत्व कि भी निर्देशित किया है, उन्होने काव्य मे अंलकार को अपेक्षा गुणो को महत्पूर्ण माना है, काव्य मे शोभा को उत्पन्य करने वाले धर्म,गुण है, तथा शोभा को बढाने वाले अंलकार कहे जाते है। अंलकार सम्प्रदाय की अपेक्षा गहन दृष्टि वाले थे और उन्होने अंलकारो की सत्ता स्वीकार करते हुए भी गुणो को अधिक महत्व दिया दण्डी ने गुणो का वर्णन किया है, तथा अंलकारो को भी पर्याप्त महत्व दिया है, परन्तु वामन ने सर्वप्रथम शति को काव्य की आत्मा स्वीकार किया है, आगे चलकर ध्वनिवादी आचार्यो ने भी रीति सिद्धान्तो को मान्य किया है, तथा ध्वनि के साथ उसका सामान्यजस्य बिठाने की कोशिश की है।

रीति और वक्रोक्ति – रीति को एक नई दिशा मे ले जाना का श्रम आचार्य कुन्तक को भी है, इन्होने रीति का कवि के स्वभाव के साथ सम्बसद्धवान कर रीतियो का नामकरण अपनी उर्वर कल्पना से नवीन आधारो पर किया है, जिसमे वैंदर्भी को सुकुमार मार्ग गौडी को विचित्र मार्ग तथा पांचाली को मध्यम मार्ग माना है, इन रीतियो के चार नये गुणो की भी कल्पना कि है, इस प्रकार कुन्तक ने वक्रृति मार्ग को काव्य काव्य कि आत्मा मानने के साथ ही रीति मार्ग को भी आगे बढाया है, उनकी विश्लेषण तथा विवेचन शक्ति बडी धार्मिक है, उनका ग्रन्थ मौलिक विचारो का भण्डार है, अनेक ध्वनि वादी आचार्यो ने भी वक्रोक्ति की महत्ता को स्वीकार कर ध्वनि के भीतर इस समाविष्ट करने का प्रयास किया है, कुन्तक ऐसे अकेले आचार्य थे जिन्होने वक्रोक्ति काव्य की आत्मा मानने का आग्रह किया यद्यपि वक्रोतृि किसी न किसी रुप मे भरत भामह दण्डी रुद्रद वामन आदि आचार्यो की परम्परा से चली आ रही है, थी पर जाता है, जिन्होने अपनी पुरी विद्धत्ता और प्रतिभा ओत प्रोत होकर ग्रन्थ का प्रणमय किया।

ध्वनि एवं अन्य सम्प्रदाय – काव्यशास्त्र मे ध्वनि सम्प्रदाय को सबसे महत्पूर्ण माना गया है, आचार्य आनन्दवर्घन ने उसके इतने व्यापक स्वरुप का वर्णन किया है, कि उसमे सभी सिद्धान्तो का समावेष हो जाये जैसे ध्वनि मत रस का ही विस्तृत स्वरुप प्रतीत होता है, रस कभी वाच्य नही हो सकता मुख्यावृत्तिा के द्धारा भी वह प्रकट नही हो वह व्यंजनावृत्ति से ही प्रकट हो सकता है, नाटक मुख्य अभिप्राय रस उन्मीलन ही है, इसलिए ध्वनिवादी आचर्यो ने रस ध्वनि को महत्पूर्ण माना है। इस रस के भीतर नवरसो के अतिरिक्त भावामांस भावसबलता, भावसंधी आदि कि भी गणना होती है। इसलिए रस के व्यापक स्वरुप को ध्वनि मे समायोजित करने कोशिश की है। इसके अतिरिक्त अलंग्ङकार ध्वनि वह होती है, जहाँ अभिव्यन्त किया नया पदार्थ इतिवृत्तात्मक न होकर कल्पना प्रसुत अन्य शब्दो मे प्रकट की जाने पर अंलकार का रुप धारण करता है। इस प्रकार वाच्यार्य कि भी महत्वपूर्ण भूमिका है, वाच्यार्य की नींव पर ही प्रतीयमान अर्थ का भवन टिका हुआ है, इसी प्रकार ध्वनिवादियो ने अंलकारो को भी महत्पूर्ण माना है।

तीसरा भेद वस्तु ध्वनि कहलाता है, वस्तु ध्वनि का आशय विषय वस्तु है, कभी–कभी किसी एक पद्य मे पुरी तरह से रस कि प्रतीति नही होती इसलिए किसी मुक्तक मे ध्वनि वाच्या न होकर व्यंग होती है, परन्तु वाच्य पर आश्रित होती है, इसलिए वह वस्तु ध्वनि भी प्रधान हो जाती है, ध्वनिवादियों ने गुणो और अलंकारो को भी प्रतिष्ठत करने का कार्य किया उन्होने गुणो और अलंकारो की भी प्रतिष्ट करने का कार्य किया उन्होने गुणो को काव्य का नित्य धर्म माना है, और अंलकारो को अनित्य धर्म माना है, इस प्रकार उन्होने गुणो का रसाश्रित माना है। यह कहकर रीतिवादी आचार्यो की महत्ता को उन्होने स्वीकार किया है। इस प्रकार ध्वनिवादी आचार्यो ने सभी सिद्धान्तो का समावेश अपने संप्रदाय मे समन्वित करने प्रयास किया है।

पंद्रहवी शताब्दी के बाद प्राय: यह प्रवृत्ति दिखाई देती है, जिसमे काव्यशास्त्र के समस्त सिद्धान्तो का समावेषशएक साथ एक ग्रन्थ मे करने के प्रयास हुए है, जिनमे आचार्यो मम्मट का काव्यप्रकाश विश्वनाथ कविराज का साहित्य दर्पण और पण्डित राज ग्रन्थनाथ का रंस गंगाधर महत्पूर्ण है, इन सब मे सम्यक विवेचन प्राप्त होता है, इसलिए कोई भी काव्य का सिद्धान्त किसी भी मत कि उपेक्षा करके नही चल सकता, काव्य शास्त्र के समग्र स्वरुप के लिए रस अंलकार रीति (गुण) ध्वनि वक्रोक्ति और औचित्य सभी का समन्वय आवश्यक है, सभी मिलकर काव्य का पूर्ण स्वरुप विकसित करते है, काव्यशास्त्र कि सम्पूर्णता इस सभी में है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उपाध्याय, बलदेव : भारतीय काव्य साहित्यशास्त्र 1, 2, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
2. मम्मटाचार्य : काव्यप्रकाशन, ज्ञान मण्डल वाराणसी
3. उपाध्याय, बलदेव : काव्यशास्त्र की उत्पत्ति और विकास, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
4. काणे, पी. वी. : संस्कृत काव्याशास्त्र का इतिहास
5. उपाध्याय, बलदेव : भारतीय साहित्यशास्त्र, नंदकिशोर एण्ड संस

****

कश्मीर समस्या : कारण एवं निवारण

डॉ. नेहा चौहान *

शोध का सारांश एवं उद्देश्य – कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। इस राज्य का हमारे देश में विधिवत विलय हुआ था परन्तु पाकिस्तान ने भारत पर 5 बार आक्रमण किया और कश्मीर को छिनने का प्रयास किया। परन्तु वह हर बार असफल रहा। कारगिल युद्ध में पाकिस्तान को सबक सिखाया परन्तु वह कश्मीर को हथियाने का प्रयास अपनी आतंकवादी गतिविधियों जैसे हत्या, विस्फोट, आदि के जरिए से कर रहा है। धारा 370 जो कश्मीर को विशेष दर्जा प्रदान करती है, का भरपूर लाभ उठा रहा है। वैसे कश्मीर समस्या को अंतर्राष्ट्रीय दर्जा दिया जा चुका है। अत: प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य कश्मीर समस्या का अध्ययन कर इस समस्या को दूर करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत करना है।

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीय समंकों पर आधारित है। द्वितीय समंकों का संकलन पत्र-पत्रिकाओं, पाठ्यपुस्तकों एवं इंटरनेट के माध्यम से किया गया है।

कश्मीर की समस्या दोनों देशों के बीच एक ऐसे ज्वालामुखी की तरह है जो समय-समय पर लावा उगलती है। अलाप माईकल के अनुसार 'कश्मीर समस्या अनिवार्यत: भूमि या पानी की समस्या नहीं है। यह लोगों की भावना और प्रतिष्ठा की समस्या है।' कश्मीर की समस्या भारत और पाक के सम्बन्धों के बीच उलझी हुई समस्या है।

कश्मीर की स्थिति कुछ विशेष प्रकार की थी। भारत द्वारा कश्मीर की सुरक्षा के निर्णय के कारण और उधर पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारियों को सहायता देने की नीति के कारण कश्मीर दोनों राष्ट्रों के बीच युद्ध का क्षेत्र बन गया। सैद्धान्तिक रूप से 1947 से लेकर कश्मीर समस्या भारत तथा पाक के सम्बन्धों में बाधक बनी हुई है। सन् 1965 में इसके कारण युद्ध हुआ। सन् 1966 की ताशकन्द बैठक तथा 1972 की शिमला वार्ता भी कश्मीर समस्या के सम्बन्ध में दोनों देशों द्वारा अपनाई गई, फिर भी यह समस्या सुलझ नहीं सकी।

सन् 1947 से लेकर भारत तथा पाक के सम्बन्धों की समीक्षा तभी पूर्ण हो सकेगी जब हम दोनों देशों के बीच कश्मीर समस्या के संघर्ष की समीक्षा करेंगे।

जम्मू तथा कश्मीर भारत संघ का राज्य है जिसका क्षेत्रफल २6023 वर्ग किलोमीटर है। इसमें कश्मीर की घाटी जम्मू तथा लद्दाख का क्षेत्र पहाड़ी जिले तथा कबायली क्षेत्र शामिल हैं। नगर राज्य की वास्तविक स्थिति के अंतर्गत जम्मू घाटी लद्दाख भारत में है। '15 अगस्त 1947 को जब ब्रिटिश सरकार की प्रमुखता समाप्त हुई, तब कश्मीर स्वतंत्र राज्य बन गया। विभाजन के तीन दिन पहले 12 अगस्त 1947 को भारत पाक के साथ एक यथास्थिति समझौता किया।'

भारत-पाकिस्तान समस्या का अवलोकन करें तो हमें इतिहास को देखना होगा, जब जम्मू-कश्मीर नरेश सर हरीसिंह ने अपने तत्कालन प्रधानमंत्री पंडित काक की सलाह से भारत व पाकिस्तान दोनों की सरकारों के साथ यथास्थिति करने की पहल की। किन्तु यह समझौता में कहीं भी कस्टम्स, यातायात, डाक, तार, खाद्य और इसी तरह के विषयों से संबंधित था। इसमें रक्षा और विदेशी सम्बन्धों की बात नहीं थी।

यद्यपि पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर रियासत के बीच यथास्थिति को बनाये रखने के लिये समझौता हो गया था, तथापि उनके पारस्परिक सम्बन्धों में तनाव जारी रहा जिसमें जम्मू-कश्मीर सरकार ने भारत सरकार से शिकायत की थी कि -'पाकिस्तानी अधिकारियों ने खाद्य सामग्री, पेट्रोल तथा अन्य आवश्यक पदार्थों का प्रदाय रोक दिया था तथा कश्मीर और पाकिस्तान के बीच लोगों के स्वतंत्र आवागमन में भी बाधा उत्पन्न करना शुरू कर दिया था।' इस स्थिति में जम्मू- कश्मीर सरकार ने भारत से 5000 गैलन पेट्रोल की माँग की। भारत सरकार ने श्रीनगर से यातायात पूरी तरह ठप्प न हो जाए, इसलिए 500 गैलन पेट्रोल की तत्कालीन सहायता उसे दी थी।

कश्मीर समझौता पाक द्वारा एक दिखावा था। पाक के लिए ऐसा सोचना कल्पना से परे था कि कश्मीर एक मुस्लिम देश का हिस्सा न बने। परिणामस्वरूप उसने कश्मीर पर कबायली आक्रमण करवा दिया। अक्टूबर 1947 में सशक्त कबायलियों ने कश्मीर पर आक्रमण करना शुरू किया। 15 अगस्त 1947 में लगभग 5000 आक्रमणकारियों ने कश्मीर के अन्दर खुले हुए किले को घेरना शुरू किया।

सितम्बर 1947 के अन्त तक स्थिति में तेजी से परिवर्तन हो चुका था। पाकिस्तानी सीमा से सशस्त्र घुसपैठ हो रही थी। यह घुसपैठ जम्मू- कश्मीर क्षेत्र में आकर लोगों को नुकसान पहुँचाने थे और वापस चले जाते थे। जम्मू- कश्मीर की सीमा जो कि पाकिस्तान से लगी हुई थी, लगभग 450 मील तक फैली हुई थी और इस तरह रियासती फौज इस विस्तृत क्षेत्र में फैलकर इस प्रकार के घुसपैठ को रोकने की चेश्टा कर रही थी। पाकिस्तान सरकार यथास्थिति समझौते की शर्तों पर कोई ध्यान नहीं दे रही थी। 28 सितम्बर 1947 को सैकड़ों सशस्त्र व्यक्तियों ने कश्मीर राज्य की सेना की एक टुकड़ी 'चक हरका' पर आक्रमण किया। इसी तरह 30 सितम्बर को सैकड़ों सशस्पठानों ने युद्ध की सी स्थिति में थिरकोट में प्रवेश किया व फिर राज्य के अन्दर आये। इस स्थिति में जम्मू- कश्मीर सरकार ने पाकिस्तान सरकार को 3 अक्टूबर 1947 को तार द्वारा इन सभी घुसपैठों एवं आक्रमणों के विरूद्ध अपना विरोध प्रकट किया। परनतु इसका परिणाम यह हुआ कि 4 अक्टूबर से इस प्रकार की कार्यवाही सम्पूर्ण सीमा क्षेत्र में होने लगी। 10 अक्टूबर को पाकिस्तानी सेना की दो टुकड़ियों ने जिनके पीछे सशस्त्र सेना थी, जम्मू के एक गाँव में आक्रमण किया।

* सहायक प्राध्यापक, इन्दौर इंस्टीट्यूट ऑफ लॉ, राऊ, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भारत सरकार की रक्षा समिति से इस प्रश्न पर लम्बी चर्चा हुई। अन्त में यह निर्णय लिया गया कि 'जम्मू और कश्मीर रियासत के विलीनीकरण को स्वीकार किया जाये। इस विलयन के साथ यह शर्तें रखी गई कि जब राज्य में कानून और व्यवस्था कायम हो जाए तब वहाँ विलयन के प्रश्न पर जनता की राय जानने के लिए एक जनमत संग्रह कराया जाएगा। यह भी निर्णय लिया गया कि अगले दिन 27 अक्टूबर को भारतीय फौज की 2 बटालियनें कश्मीर भेजी जायें। इस निर्णय को शेख अब्दुला जो उस समय दिल्ली में ही थे का भी समर्थन प्राप्त था। शेख अब्दुला उस समय में ऑल जम्मू एण्ड कश्मीर नेशनल कान्फ्रेंस की तरफ से भारत सरकार पर दबाव डाल रहे थे कि जम्मू कश्मीर राज्य को तत्काल सैनिक सहायता दी जाए ताकि वहाँ के कबाईली आक्रमणकारियों के आक्रमण को रोका जा सके।

रक्षा समिति के इस निर्णय की सूचना लार्ड माउण्टबैटन को तथा फौज की तीनों शाखाओं के प्रमुखों को दी गई। भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माउण्ट बैठन ने एक पत्र द्वारा 'जम्मू- कश्मीर रियासत के भारत में विलीनीकरण की स्वीकृति तथा राज्य में कानून और व्यवस्था पुन: स्थापित हो जाने के बाद वहाँ जनमत संग्रह कराने के निर्णय की सूचना जम्मू- कश्मीर के नरेश महाराज हरीसिंह को भेज दी।'

1 जनवरी 1948 को युद्ध विराम के लिए लम्बी सहमति हो गई। 'युद्ध विराम रेखा निर्धारित हो जाने पर पाक के हाथ में कश्मीर का 32,000 वर्गमील क्षेत्रफल रह गया। इसकी जनसंख्या 1 लाख थी। पाक ने इस क्षेत्र को आजाद कश्मीर कहा। युद्ध विराम रेखा के इस पार भारत के अधिकार में 53,000 वर्गमील क्षेत्र था जिसकी संख्या 33 लाख थी।

6 जनवरी 1948 को कश्मीर की संविधान सभा ने एक प्रस्ताव पास कर जम्मू कश्मीर राज्य का विलय भारत में होने की पुष्टि कर दी। भारत सरकार ने एक प्रस्ताव पास कर जम्मू कश्मीर राज्य का विलय भारत में होने की पुष्टि कर दी।

इस पूर्ण विवरण से यही स्पष्ट होता है कि जम्मू- कश्मीर रियासत विलयन के मामले में भारत सरकार ने किसी प्रकार की शक्ति का प्रयोग नहीं किया। रियासत का विलयन वहाँ के नरेश की इच्छा के अनुसार काफी सोच विचार कर किया गया। परन्तु पाकिस्तान सरकार इसे मान्यता न देकर कश्मीर को फौजी बल द्वारा हथियाना चाहती थी। भारत-पाक के बीच हुए युद्ध की विस्तृत चर्चा इस प्रकार है -

भारत-पाक युद्ध 1947-48 - जैसा कि पहले बताया जा चुका है, भारत सरकार ने जम्मू कश्मीर नरेश की सैनिक सहायता की माँग पर यह निर्णय लिया था कि जब तक कश्मीर का भारत से कोई राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित नहीं हो जाता, तब तक कोई सहायता नहीं दी जा सकेगी, तद्नुसार जम्मू- कश्मीर नरेश द्वारा 26 अक्टूबर 1947 को विलयन पत्रक (Instrument of Accession) पर हस्ताक्षर करने तथा भारत सरकार द्वारा उसको स्वीकार कर लेने के बाद तत्काल निर्णय लिया गया कि कश्मीर की जो वैधानिक रूप से भारत का एक अंग बन गया है, आक्रमणकारियों से रक्षा की जाए।

1. कश्मीर में भारतीय फौज का प्रवेश - 27 अक्टूबर को प्रात: एक सिक्ख बटालियन ले. कर्नल दीवान रणजीतराय के नेतृत्व में श्रीनगर के लिए रवाना हुई। उसे निर्देश दिया गया था कि यदि श्रीनगर हवाई अड्डा आक्रमणकारियों के नियंत्रण में आ चुका हो तो वे लौटकर जम्मू में उतरें, परन्तु उसी दिन 10 बजकर 30 मिनिट में भारत सरकार को एक वायरलेस सन्देश प्राप्त हुआ कि भारतीय सेना श्रीनगर हवाई अड्डे में कुशलतापूर्वक उतर गई है। उस समय आक्रमणकारी बारामूला के पास थे। अत: भारतीय फौज ने बारामूला पहुँचकर आक्रमणकारियों का मुकाबला करने का निर्णय लिया। सेना के आवागमन की बख्शी द्वारा गुलाम मोहम्मद द्वारा व्यवस्था की गई, बख्शी गुलाम मोहम्मद उस समय नेशनल कान्फ्रेंस के नम्बर दो नेता थे। भारतीय ले. कर्नल दीवान रणजीत राय ने वहाँ पहुँचकर पाया कि आक्रमणकरी संगठित थे तथा लाईट व मीडियम मशीनगनों व मॉर्टर्स (Mortars) से लैस थे। उनका निर्देशन करने वाले कमाण्डर नवीन युद्ध शैली से परिचित थे। भारतीय लेफ्टिनेंट कर्नल राय ने बड़े साहस तथा सूझबूझ के साथ उनसे लोहा लिया परन्तु उन्हें यह आभास हुआ कि आक्रमणकारियों की संख्या और शक्ति उनके पास उपलब्ध युद्ध सामग्री से अधिक और अच्छी है, अत: तत्काल निर्णय लिया गया कि बारामूला-श्रीनगर मार्ग में श्रीनगर से 17 मील दूर स्थित पाटन पर मोर्चाबन्दी की जाए और बारामूला से पीछे हटा जाए। इस निर्णय के क्रियान्वयन के दौरान श्री राय युद्धभूमि में ही शहीद हो गए परन्तु उनकी सूझबूझ तथा इस निर्णय ने आक्रमणकारियों का श्रीनगर में प्रवेश का मार्ग पूरी तरह रोक दिया।

2. पाकिस्तान की प्रतिक्रिया - इस बीच लाहौर में राजनीतिक क्षेत्र में बड़ी बेचैनी थी। कायदे आजम जिन्ना के निजी सचिव खुर्शीद अहमद उस समय श्रीनगर में थे। भारतीय फौज के वहाँ पहुँचते ही उन्हें गिरफतार कर लिया गया तथा उन्हें वापस पाकिस्तान भेज दिया।

जिस समय जिन्ना साहब ने यह सुना कि 'भारत सरकार ने जम्मू तथा कश्मीर का भारत में विलयन स्वीकार कर लिया है भारतीय फौजें हवाई मार्ग से श्रीनगर में प्रवेश कर गई हैं, उन्होंने एक्टिंग कमाण्डर इन चीफ पाकिस्तान आर्मी जनरल ग्रेसी (Army General Gracy) को पाकिस्तान फौज को कश्मीर तत्काल भेजने का आदेश दिया।11 जनरल ग्रेसी ने इस आदेश का पालन करने में असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा कि जब तक सुप्रीम कमाण्डर फील्ड मार्शल अकिनलेक की स्वीकृति नहीं मिल जाती, ऐसा नहीं किया जा सकता। फील्ड मार्शल अकिनलेख 28 अक्टूबर को प्रात: लाहौर पहुँचे, वहाँ पहुँचकर उन्होंने जिन्ना को समझाया कि, यदि पाकिसतानी सेना कश्मीर में प्रवेश करती है तो ऐसी स्थिति में पाकिस्तानी सेना में कार्यरत ब्रिटिश अधिकारियों को तत्काल अलग करना होगा, क्योंकि कश्मीर अब वैधानिक दृष्टि से भारत का अंग है। इस परिस्थिति में जिन्ना साहब को अपना आदेश रद्द करना पड़ा। जिन्ना साहब ने अकिनलेक के माध्यम से लार्ड माउण्डबैटन व पं. जवाहरलाल नेहरू को जम्मू-कश्मीर समस्या पर विचार करने हेतु लाहौर आने का निमंत्रण भिजवाया।

3. लाहौर कान्फ्रेंस - भारतीय नेताओं ने इस प्रश्न पर काफी मतभेद थे कि 'लाहौर जाया जाए या नहीं' लार्ड माउण्टबैटन और पंडित नेहरू सम्मेलन में भाग लेने के पक्ष में थे और सरदार वल्लभभाई पटेल उसके विरोध में थे। इसी बीच पंडित नेहरू के अस्वस्थ हो जाने से लार्ड माउण्टबैठन को अकेले ही लाहौर जाना पड़ा। लाहौर जाने के पूर्व उन्होंने गाँधीजी से भेंट की जिसमें गाँधीजी ने भारत सरकार की सैनिक कार्यवाही का पूर्ण समर्थन किया।

30 अक्टूबर 1947 को जबकि लार्ड माउण्टबैठन लाहौर जाने की तैयारी कर रहे थे, उसी दिन पाकिस्तान सरकार ने एक वक्तव्य प्रसारित कर कहा कि 'कश्मीर का भारत में विलयन एक धोखा है तथा बलपूर्वक कराया गया है। अत: उसे मान्य नहीं किया जा सकता है।'

1 नवम्बर 1947 को लार्ड माउण्टबैटन ने लाहौर पहुँचने पर जिन्ना ने उक्त बात को दोहराया लेकिन माउण्टबैटन ने कहा कि 'हिंसात्मक वातावरण कबाइली आक्रमणकारियों के द्वारा उत्पन्न किया गया है जिसके लिए

पाकिस्तान उत्तरदायी है न कि भारत। जिन्ना साहब लड़ाई बन्द करने के लिए तैयार थे, बशर्ते दोनों पक्षों की सेनायें कश्मीर से हट जायें। जब लार्ड माउण्टबैटन ने जिन्ना साहब से पूछा की कबाईलियों की कश्मीर से बाहर वापसी की जिम्मेदारी कौन लेगा ? तो उन्होंने कहा कि वे उनकी 24 घटे के अन्दर वापसी की गारंटी ले सकते हैं। मिस्टर जिन्ना की इस बात पर लार्ड माउण्टबैटन चकित रह गये। यह इस बात को स्पष्ट कर देता है कि –'वास्तव में कबाइली आक्रमण के पीछे पाकिस्तान सरकार का हाथ था।' लाहौर वार्ता के दौरान मिस्टर जिन्ना ने जनमत के प्रश्न पर भी आपत्ति प्रस्तुत करते हुए कहा कि 'कश्मीर में भारतीय फौज के रहते हुए लोग स्वतंत्रतापूर्वक अपना मत नहीं व्यक्त कर सकते। इस पर लार्ड माउण्टबैटन ने सुझाव दिया कि जनमत संग्रह संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्देशन और देखरेख में आवश्यक वातावरण बनाकर कराया जा सकता है।'

इस पर जिन्ना ने कहा कि 'वहाँ जनमत संग्रह सिर्फ वे तथा माउण्टबैटन दोनों मिलकर करा सकते हैं।' इस पर लार्ड माउण्टबैटन ने कहा कि ऐसा करने का उनके पास अधिकार नहीं है। वार्तालाप के अन्त में लार्ड माउण्टबैटन के अनुसार जिन्ना निराशा से भरे हुए थे और कह रहे थे कि 'भारत पाकिस्तान के जन्मकाल में ही उसका गला घोंट देना चाहता है।' इस तरह वार्ता में कोई निर्णय नहीं लिया जा सका था।

4. गिलगित में बगावत तथा पाकिस्तान का नियंत्रण – इसी बीच जम्मू–कश्मीर राज्य में नेशनल कान्फ्रेंस के नेतृत्व में अंतरिम आपातकालीन सरकार का गठन हो चुका था। भारतीय फौजें और अधिक संख्या में कबाईली आक्रमणकारियों से लोहा लेने पहुँच चुकी थी। 31 अक्टूबर की रात्रि गवर्नर के निवास को गिलगित स्काउट्स द्वारा घेर लिया गया। गिलगित स्काउट्स पाकिस्तान के पक्षधर थे। 1 नवम्बर 1947 को गवर्नर को बन्दी बना लिया गया तथा गिलगितत में आक्रमणकारियों द्वारा प्रान्तीय सरकार की स्थापना कर दी गई। 4 नवम्बर की गिलगित स्काउट्स के ब्रिटिश कमांडेण्ट मिस्टर ब्राउन ने स्काउट्स बैठक में एक समारोह का आयोजन कर पाकिस्तानी झण्डे को फहरा दिया। नवम्बर के तीसरे सप्ताह में पाकिस्तान ने गिलगित में एक पोलिटिकल एजेन्ट की नियुक्ति कर दी। इस तरह गिलगित क्षेत्र में पाकिस्तान का पूर्ण नियंत्रण हो गया।

बारामूला, उरी, तंगमार्ग, गुलमर्ग की कबाईलियों से मुक्ति – इस बीच एक तरफ भारत सरकार अपनी सैनिक कार्यवाही को उचित बताती रही और दूसरी ओर पाकिस्तान उसे अनैतिक और गैर–कानूनी ठहराता रहा। 3 नवम्बर को सरदार वल्लभभाई पटेल तथा सरदार बलदेवसिंह ने श्रीनगर की यात्रा की और वहाँ से वापस आकर तत्काल 4 नवम्बर को निर्णय लिया कि 'कश्मीर में एक नये डिवीजनल हेड क्वार्टर की स्थापना की जाए। तद्नुसार मेजर जनरल बलवन्तसिंह के कमाण्ड में एक नये डिवीजन को भेजा गया। इस कमाण्ड को निर्देश दिया गया कि वह अपना पूरा ध्यान बारामूला को वापस लेने में लगाये क्योंकि वहाँ से पुनः कश्मीर घाटी पर आक्रामक पहुँच सकते हैं। मेजर जनरल बलवन्तसिंह 5 नवम्बर को श्रीनगर गये और तीन दिनों ही के अन्दर उन्होंने अपने मिशन पर कामयाबी हासिल की। 8 नवम्बर 1948 को बारामूला पर भारतीय नियंत्रण स्थापित हो गया।

8 नवम्बर को लार्ड माउण्टबैटन के प्रयासों से भारत पाकिस्तान की ज्वाईंट डिफेन्स कौन्सिल की बैठक दिल्ली में आयोजित की गई थी। माउण्टबैटन का प्रयास था कि 'जिन्ना तथा लियाकत अली इसमें शरीक हों परन्तु पाकिस्तान की तरफ से अब्दुल रब निशार तथा मोहम्मद अली आये। पं. नेहरू भी इस बैठक में उपस्थित थे। बाद में पं. नेहरू ने अब्दुल रब निशार से कश्मीर समस्या पर बातचीत की परन्तु उसका कोई स्पष्ट परिणाम नहीं निकला।

पहले ये मसला सुरक्षा परिषद में गया जब वहाँ इस समस्या का समाधान नहीं हुआ, तब सुरक्षा परिषद ने इस समस्या का समाधान करने के लिए 5 राष्ट्रों चेकोस्लोवाकिया, अर्जेन्टीना, अमेरिका, कोलम्बिया और बेल्जिमय को सदस्य नियुक्त कर मौके पर स्थिति का अवलोकन करके समझौता कराने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र आयोग की नियुक्ति की।

संयुक्त राष्ट्र आयोग ने जून 1948 को अपना काम शुरू किया। 3 अगस्त 1948 को अपना पहला प्रस्ताव पेश कर दिया। इस प्रस्ताव को भारत ने स्वीकार किया परन्तु पाक ने अस्वीकार किया। 1 जनवरी 1948 को नए प्रस्ताव जारी किए। इस प्रस्ताव को दोनों ने स्वीकार किया। 1 जनवरी 1949 को युद्ध विराम स्वीकार कर लिया।

सुरक्षा परिषद ने 5 जनवरी 1949 को एक प्रस्ताव पारित किया जिसके अंतर्गत जनमत संग्रह करवाया जावेगा। जम्मू कश्मीर की सरकार की देखरेख के अन्तर्गत मत संग्रह कराया जायेगा। राज्य की सुरक्षा करने के लिए भारत की सेना को अधिकार को सुनिश्चितता प्रदान की जायेगी। कश्मीर से पाकिस्तानी सेनाओं तथा इसके तत्वों को निकाला जाएगा, परन्तु राष्ट्र संघ के यह सभी मत अभी तक कोई सुनिश्चित हल नहीं निकाल पाए हैं और यह समस्या आज भी पूर्ववत है।

धारा 370 के विशेष प्रावधान – भारत सरकार ने भारतीय संविधान में संशोधन कर 14 मई 1954 को अनुच्छेद 370 के अन्तर्गत कश्मीर को विशेष दर्जा दे दिया, जो भारत सरकार की बहुत बड़ी भूल मानी जाती है। धारा 370 के बारे में जगमोहन जी ने कहा है 'धारा 370 इस स्वर्ग रूपी राज्य में केवल शोषकों को समृद्ध करने का ही साधन है। यह गरीबों को लूटता है। यह मृगतृष्णा की तरह उन्हें भ्रम में डालता है। यह 1 सत्ताधारी कुलीनों की जेबें भरता है। नये सुलतानों के अहम् को बढ़ाता है।'24 संक्षेप में यह एक ऐसे भू क्षेत्र की रचना करता है जहाँ न्याय नहीं है और जो अपरिपक्वताओं तथा अन्तर्विरोधों से भरा है। यह धारा धोखे, दुहरेपन और जनोत्तेजना की राजनीति को बढ़ावा देता है। विघटन के बीजाणुओं का प्रजनन करता है। दो राष्ट्र धारणा की हानिकारक विरासत को जीवित रखने में सहयोग देता है। एक भारत के विचार और कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के महान सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण की हत्या करता है। घाटी में यह एक हिंसात्मक और सशक्त उथल–पुथल का कारण हो सकता है। यह एक ऐसे भूचाल का केन्द्र है, जिसका कम्पन पूरे देश को हिला देगा, उसके परिणामों की हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

समय के साथ–साथ धारा 370 सत्ताधारी राजकुलीनों और अफसरशाही, व्यापारियों, न्यायप्रणाली तथा वकीलों के हाथों शोषण का साधन बन चुका है। इससे एक दुष्चक्र स्थापित हो गया है फिर क्या कारण था कि इतनी बुराईयों के बावजूद भी धारा 370 को क्यों अपनाया गया ? वे क्या परिस्थितियाँ थीं, जिनके कारण धारा 370 को हमारे संविधान में लाया गया ? इसकी विषय वस्तु क्या है ? और समय के साथ–साथ इसका स्वरूप बिगड़ा तो क्यों ?

24 अक्टूबर 1947 को जब पाकिस्तानी फौजों ने आजाद कश्मीर सेना के नाम से कश्मीर पर हमला बोला तो महाराज हरीसिंह ने भारत सरकार से मदद मांगी। 26 अक्टूबर 1947 को उन्होंने विलय संधि की। इसके अधीन उन्होंने सुरक्षा, विदेशी मामले और संचार केन्द्रीय सरकार के सुपुर्द कर दिये। इस 'इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ एक्सेशन' का स्वरूप बिल्कुल वैसा ही था,

जैसा कि दूसरे रियासती राज्यों के प्रमुखों ने भारत सरकार से किया था। भारतीय सरकार की जिद पर यह निर्णय लिया गया कि राज्य अधिमिलन का अंतिम निर्णय जम्मू और कश्मीर की संविधान सभा में लिया जायेगा। इस अंतराल में यानी 'इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ एक्सेशन' के लागू होने से राज्य की संविधानी सभा में इस पर विचार विमर्श होने तक भारतीय संविधान में कुछ अंतरिम नियम तो बनाने ही थे और धारा 370 जोड़कर ऐसा किया गया।

धारा 370 का सार तत्व यह है कि 'जम्मू-कश्मीर के संबंध में रक्षा, विदेशी मामलों और संचार के साथ-साथ केन्द्रीय संसद, केन्द्रीय तथा सम्मिलित सूचियों के संदर्भ में राज्य सहमति पर ही कानून बना सकती है। इससे जम्मू कश्मीर राज्य को एक विशेष स्तर मिल जाता है। जहाँ एक ओर केन्द्रीय संसद को अन्य राज्यों के संदर्भ में कानून बनाने के लिए निर्बाध अधिकार है, वहीं जम्मू-कश्मीर के लिए कानून राज्य सरकार सहमति पर ही बनाया जा सकता है।

धारा 370 जो कि परिशिष्ट 3 में दी गई है, से स्पष्ट हो जाता है कि यह स्वभाव से ही अल्पकालिक है। जम्मू-कश्मीर की संवैधानिक सभा ने फरवरी 1956 में राज्य के संघ के सम्मिलन की अभिपुष्टि कर दी थी। इस अभिपुष्टि के साथ ही राज्य का भारत में सम्मिलन का मुद्दा सुलझ गया था, लेकिन रक्षा, विदेशी मामलों और संचार के अतिरिक्त अन्य मामलों में संसद के अधिकार क्षेत्र के मुद्दे को लचीला ही छोड़ दिया गया। राज्य सरकार की सहमति से राष्ट्रपति भारतीय संविधान के नियम जम्मू-कश्मीर पर भी लागू कर सकते थे।

राज्य का अपना संविधान है जो कि धारा 370 की एक दुर्भाग्यपूर्ण गौण उपज है। भारतीय संघ के किसी और राज्य का अलग संविधान नहीं है। अन्य राज्यों का एक ही स्वरूप है, जो भारतीय संविधान के भाग 4 के अनुसार रचा गया है।

जम्मू-कश्मीर संविधान की व्यवस्था अनेक समस्याँ पैदा करती हैं - विशेषकर सम्पत्ति रखने, नागरिकता पाने और राज्य में बसने के अधिकार के संदर्भ में। भारत के नागरिक स्वत: ही जम्मू-कश्मीर के नागरिक बन जाते हैं। उन्हें राज्य में बसने का भी कोई संवैधानिक अधिकार नहीं है। भारत का संविधान केवल एक नागरिकता को मान्यता देता है लेकिन जम्मू-कश्मीर के नागरिक के दुहरा लाभ उठाते हैं। भारत के नागरिक के रूप में और दूसरा जम्मू-कश्मीर के नागरिक के रूप में जो लोग जम्मू-कश्मीर राज्य के नागरिक नहीं है, उन्हें राज्य में अनेक कमियों का सामना करना पड़ता है। वे राज्य में कोई भी संपत्ति नहीं रख सकते। उन्हें राज्य की संसद, स्थानीय समस्याओं, पंचायतों या सहकारी समितियों वगैरह के चुनाव में मतदान को कोई अधिकार नहीं होता। इससे भी ज्यादा अन्यायपूर्ण यह है कि यदि जम्मू-कश्मीर राज्य की कोई महिला किसी अन्य राज्य के नागरिक से विवाह कर लेती है तो वह जम्मू-कश्मीर में अपनी सारी संपत्ति खो देगी, यहाँ तक कि वह अपने माता-पिता की पैतृक संपत्ति का अधिकार भी खो बैठेगी। संविधान की यह व्यवस्था कानूनी और संवैधानिक रूप से पुरानी और समयानुकूल नहीं है जो लोग जम्मू-कश्मीर पर शासन करते हैं और जो भारतीय नीति रचयिता 370 तथा राज्य संविधान की आड़ में सब कुछ होने देते हैं, उनका रूख क्या है ? एक व्यक्ति जो भारतीय नागरिक है और जम्मू कश्मीर का स्थायी निवासी/नागरिक है, भारतीय करदाताओं के ही पैसे से स्थापित कॉलेज में सिर्फ इसलिए प्रवेश नहीं पा सकता क्योंकि उसने एक भारतीय नागरिक से ही शादी की है ? इससे अधिक अन्यायपूर्ण, अतार्कित बात क्या हो सकती है ? पाकिस्तानी विस्थापितों, संबंधी मामला अन्याय का एक और ज्वलन्त उदाहरण है, विभाजन के दौरान, पश्चिमी पाकिस्तान से कुछ परिवार यहाँ आकर बस गये। अब ये इस राज्य में लगभग चार दशकों से हैं, लेकिन वे बदकिस्मत लोग, जिन्हें परिस्थितिवश जगह बदलने के लिए मजबूर होना पड़ा, इन्हें मूलभूत मानवीय अधिकार भी नहीं दिये गये। उन्हें, उनके बच्चों, उनके बच्चों के बच्चों को भी जम्मू-कश्मीर राज्य की नागरिकता हांसिल करने का कोई अधिकार नहीं है। राज्य चुनाव, नगर पालका या पंचायत चुनावों में भी वे भाग नहीं ले सकते। यहाँ तक कि वे राज्य सरकार या उसकी एजेन्सियों से उधार भी नहीं ले सकते। युवा लड़के, लड़कियों को राज्य के मेडिकल, इन्जीनियरिंग या कृषि कॉलेजों में प्रवेश भी नहीं मिल सकता।

क्या यह दु:खद नहीं है कि सब कुछ हमारे देश के ही एक हिस्से में हो रहा है-उस देश में जो सदा अपने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक न्याय का दम भरता रहा है, उस देश में ऐसा हो रहा है, जो दक्षिणी अफ्रीकियों और फिलीस्तीनियों के मानवीय अधिकारों पर चार-चार आँसू रोता रहा है ? यहाँ मूल प्रश्न कितने लोग इसमें शामिल हैं - इसका नहीं है। यहाँ सवाल कुछ लाभों के लिए तुष्टीकरण की राजनीति के खेल और स्वार्थपरायणता की वेदी पर सहानुभूति और कर्त्तव्यों के बलिदान का है।

धारा 370 के दावेदार अक्सर यह तर्क देते हैं कि 'संविधान में इसे रखना राज्य की स्वायत्ता के लिए जरूरी है, लेकिन इस स्वायत्ता का धारा से क्या लेना-देना है ? जब अन्य राज्य केन्द्र से और स्वायत्ता की मांग करते हैं तो उनका मतलब एक अलग पहचान से नहीं होता। वे वाकई सत्ता का विकेन्द्रीकरण चाहते हैं ताकि प्रशासनिक और विकास कार्य जल्दी हो सकें और सार्वजनिक सेवा का स्तर अच्छा हो सके। लेकिन जम्मू-कश्मीर में धारा 370 को 1953 से किये गये अवमिश्रण को खत्म कर जस का तस रखने की मांग एक विभिन्न उद्देश्य से उपजी है। यह मांग मुख्य धारा से अलग रहने, अलग साम्राज्य स्थापित करने, अलग झण्डा फहराने, मुख्यमंत्री के स्थान पर प्रधानमंत्री और गवर्नर के स्थान पर सदर-ए-रियासत रखने तथा और अधिक सत्ता हासिल करने की कुशल नीति से उपजी है। यह जनता के हित के लिए, शान्ति या प्रगति हासिल करने या अनेकता में सांस्कृतिक एकता लाने के लिए नहीं बल्कि 'नये कुलीनों' और 'नये शेखों' की स्वार्थ पूर्ति के लिए है।

पूर्वी यूरोप में स्वायत्तता की जो ताजा हवा हाल में ही चल रही है उसे कुछ क्षेत्रों में स्वायत्ता देने के तर्क की तरह इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन यह तर्क हमारे सामाजिक और आर्थिक विकास की अवस्था का ध्यान नहीं रखता। गरीबी, पिछड़ापन, अशिक्षा, कट्टरपंथवाद की समस्याओं को सुलझाने से पहे स्वायत्ता के बारे में सोचना, घोड़ो के आगे छकड़े को रखने के समान होगा। नकल करके हमें अपना विनाश नहीं करना चाहिए। हमारे 'युद्ध नेता' के स्वतंत्रता और मानवीय विकास को ऊँचे सिद्धान्तों से प्रेरित नहीं होंगे बल्कि एक सकुचित विचारधारा से प्रेरित होंगे तथा चारों ओर दु:ख और खून बहा देंगे। विदेशी विचारधारा से प्रेरित हो उठाये गये स्वायत्ता के ये झूठे विचार हमारे देश में विपत्ति का कारण बनेंगे और समाज को विभाजित कर देंगे।

जो लोग जम्मू-कश्मीर की स्वायत्ता की बात करते हैं, वे इस राज्य के विशाल और भिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप को भूल जाते हैं। जम्मू के लोगों के सपने अलग हैं, उनका गठबन्धन एक विधान, एक प्रधान से है। उनकी संस्कृति और व्यक्तित्व विशेष है। पूँछ और राजौरी के मुसलमानों में अलग गुण और विशेषताएँ पाई जाती हैं। हिमाचल प्रदेश की सीमा के पास

रहने वाले लोगों की स्थिति भी यही है। गुर्जर और बकरवाल भी एक विशेष समूह है। लद्दाख तो पूरी तरह से अलग है।

यदि धारा 370 को बनाये रखा जाता है और स्वायत्ता पर जरूरत से ज्यादा जोर दिया जाता है तो कश्मीरियों की हुकूमत का सामना करने के लिए राज्य का हर क्षेत्र, हर सांस्कृतिक इकाई धारा 370 के समकक्ष या फिर 'स्वायत्ता' की मांग करने लगेगी। दावे तथा प्रतिदावे अनन्त होंगे और राज्य की अवस्था और भी तार-तार हो जायेगी।

समाधान एवं निष्कर्ष – उचित तो यह है कि भारतीय सरकार को कश्मीर से धारा 370 को समाप्त कर देना चाहिए। यह सत्य है कि जिस समय धारा 30 का प्रावधान कश्मीर के लिए किया गया था, उस समय उसकी प्रासंगिकता हो सकती थी। परन्तु अब यह धारा 370 कश्मीरियों और भारत के अन्य प्रान्तवासियों के आपस में सम्मिलन एवं घुलने-मिलने में बाधक सिद्ध हो रही है। कश्मीरी लोग भारत के अन्य प्रान्तवासियों के साथ तथा भारत के अन्य प्रान्तवासी कश्मीरियों के साथ अभी तक भावात्मक और अन्य रूपों में सम्मिलित नहीं हो पाने का एक ही कारण है कि धारा 370 ने कश्मीरियों और भारत के अन्य प्रान्तवासियों के बीच एक दीवार या एक खाई बनाकर दोनों के बीच कुछ दूरियाँ बनाये रखी हैं। भारत के अन्य प्रान्तवासी अपने आपको कश्मीर से एवं कश्मीरी भारत के अन्य प्रान्तों से अपने आपको अलग पाते हैं। अतः इन दूरियों का फायदा उठाने का प्रयास पाक-कश्मीरियों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर जनमत संग्रह की मांग करके सहानुभूति प्राप्त करने के प्रयास करता है। जनमत संग्रह करवाकर वहाँ की जनता की सहानुभूति अगर पाक के साथ हुई तो कश्मीर का पाक में विलय हो जायेगा। पाक की यही भावना पाक को बार-बार कश्मीर को हड़पने के लिए प्रयास करने को विवश कर रही है। पाक येन-केन प्रकारेण धर्म की आड़ में कश्मीर की जनता को अपने साथ करने की फिराक में है। दूसरी ओर पाक अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर हमेशा जनमतसंग्रह की मांग करता ही रहा है। यह सब एक ही राजनीति का हिस्सा है। जूनागढ़ और हैदराबाद रियासत की समस्या के जल्दी सुलझा लिये जाने में वहाँ की बहुसंख्यक हिंदू जनता की भी भूमिका रही है। दूसरी तरफ कश्मीर में बहुसंख्यक मुस्लिम आबादी होने के कारण पाक की उम्मीद वहां की मुस्लिम जनता पर टिकी हुई हैं। यही एक ऐसा बिन्दु है जो पाक को बार-बार कश्मीर को हड़पने के प्रयास को प्रेरित करता रहा है। हांलाकि कश्मीर में पाक की दाल नहीं गल पाने में कश्मीर की सूफी संस्कृति का भी बड़ा योगदान रहा है।

कश्मीर समस्या के समाधान हेतु प्रथम प्रयास यह होना चाहिए कि पाकिस्तान कश्मीर घाटी में आतंकवादी गतिविधियों को बढ़ावा देना बन्द करे तथा दोनों देश वास्तविक नियंत्रण रेखा को अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा मानने तथा शिमला समझौते की भावना के अनुरूप यथास्थिति को स्वीकार करने को सहमत हों।

कश्मीर घाटी के जनसंख्या चरित्र को बदलना यह प्रयोग भी दुनिया में कई देशों ने किया है। तिब्बत पर स्थायी कब्जे के लिए चीन यही कर रहा है। चीन के अन्य भागों से लाकर इतने चीनी यहां बसा दिये गये हैं कि तिब्बती अल्पसंख्यक हो गये हैं। ऐसे ही हमें भी पूरे भारत के हिंदूओं को नाममात्र के मूल्य पर खेतीहर जमीनें देकर घाटी में बसा देना चाहिए। पूर्व सैनिकों के साथ ही ऐसे लोगों को वहां भेजा जाए। जो स्वभाव से जुझारू और शस्त्र प्रेमी होते हैं। सिक्ख, जाट, गुर्जर आदि ऐसे ही कौमें हैं। ऐसे 10 लाख परिवार यदि घाटी में पहुंच जाएं तो वे स्वयं ही अलगाववादियों से निपट लेंगे।

वर्तमान समय में भारत-पाक संबंध जिस प्रकार के हैं, उससे निकट भविष्य में कश्मीर समस्या का स्थायी समाधान मृग तृष्णा के समान ही दिखाई दे रहा है। सी.टी.बी.टी. व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि के मुद्दे पर भी पाकिस्तान यही कह रहा है कि भारत के हस्ताक्षर करने के बाद ही वह इस संधि पर हस्ताक्षर करेगा। भारत ने इसे भेदभावपूर्ण तथा सार्वभौमिक परमाणु निःशस्त्रीकरण के समयबद्ध कार्यक्रम से जुड़ी नहीं होने का आरोप लगाकर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया है।

पाक ने कश्मीर को हथियाने के लिए अपने सारे हथकण्डे अपना लिये हैं। पाकिस्तान चाहता है कि विश्व मंच पर कश्मीर के मसले में तीसरे देश की मध्यस्थता हो, परन्तु भारत इसका विरोधी है, क्योंकि वह मानता है कि दोनों देशों की द्विपक्षीय वार्तालाप द्वारा ही सभी आपसी मुद्दों और समस्याओं को सुलझाया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. फड़िया बी.एल. 'अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति' साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
2 Bains J.S., "India's International Disputes – A Legal Study", Asia Publishing House, 1962
3 Menon V.P. "The Transfer of Power in India" Orient Longman's Ltd. 196í
4 Quoted from "White Paper on Jammu and Kashmir", Govt. of India
5 Nayar Kuldip, "Distant Neighbours : A Tale of the Subcontinent" Vikas Publishing Hose Pvt. Ltd.
6 जगमोहन, भूतपूर्व राज्यपाल, 'कश्मीर दहकते अंगारे' एलाइड पब्लिशर्स लि. नईदिल्ली 1993
7. https://www.wikipedia.org/
8. www.google.com
9. नईदुनिया दैनिक समाचार पत्र

****

मध्यप्रदेश में औषधीय फसलों की विपणन व्यवस्था मंदसौर एवं नीमच जिले के संदर्भ में

मोनिका वर्मा *

प्रस्तावना – मेरे शोध अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य मध्यप्रदेश में औषधीय फसलों की विपणन व्यवस्था मंदसौर एवं नीमच जिले के संदर्भ में ही है। इस दृष्टि से औषधीय फसलों का बाज़ार ढाँचा, व्यापार मात्रा और मूल्यों के विस्तार का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है।

वर्तमान में औषधीय फसलों का बाज़ार विभिन्न कारणों से देश एवं प्रदेश में असंगठित है। यदि औषधीय पौधों का प्रयोग सावधानी एवं बुद्धिमानी से किया जाये तो यह चलता-फिरता एवं सस्ती दवाओं का एक महत्वपूर्ण बाज़ार है। वर्तमान में 95 प्रतिशत औषधीय पौधों का संग्रहण असंगठित रूप में होता है। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि औषधीय पौधों की कृषि देश एवं प्रदेश में बहुत कम मात्रा में एवं कुछ ही स्थानों पर सीमित कृषकों द्वारा की जाती है। इसके लिये दवाई कम्पनियों की अप्रभावी, अपूर्ण, अनौपचारिक एवं अवसरवादी बाज़ार नीतियाँ उत्तरदायी है। भारत एवं मध्यप्रदेश में बहुत बड़े पैमाने पर, गोपनीय तौर पर मुख्य रूप से असंगठित तरीके से औषधीय फसलों का बाज़ार फैला हुआ है। जिसको संगठित करने हेतु एक सुनिश्चित नीति एवं योजना की आवश्यकता है।

इसी प्रकार राष्ट्रीय व प्रादेशिक स्तर पर अलग-अलग औषधीय पौधों की खेती एवं उनके उत्पादन के सांख्यिकी आंकड़े उपलब्ध नहीं है। डी.के. वैद एवं जी.एस. गोराया द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण कर केवल छ: औषधीय पौधों (ईसबगोल, सेना, जोजोबा, हीना, अश्वगंधा एवं मिल्क थिस्टल (Milk Thistle) की खेती, क्षेत्रफल एवं उत्पादन की जानकारी कृषकों से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर एकत्रित की गई, जिसके अनुसार देश में इन छ: औषधीय पौधों की खेती 1,18,000 हेक्टेयर में होकर 1,21,400 मीट्रिक टन का उत्पादन हो रहा है।[1]

मध्यप्रदेश में विभिन्न प्रकार के औषधीय पौधों जैसे सफेद मूसली, अश्वगंधा, ईसबगोल, अजवाइन, अफीम, लेमनग्रास, तारामीरा, तम्बाकू, जट्रोफा आदि की खेती प्रदेश के विभिन्न जिलों में होती है। **ईसबगोल की खेती-** जबलपुर, मन्दसौर व नीमच जिलों में, **असगंध की खेती-** जबलपुर, कटनी, उमरिया, धार, मन्दसौर, नीमच व राजगढ़ जिले में, सफेद मूसली की खेती- उमरिया, इन्दौर, धार, खण्डवा, बेतुल जिले में, लेमनग्राम की खेती- जबलपुर, इन्दौर, रतलाम, बेतुल जिले में, तम्बाकू की खेती- छतरपुर जिले में, अफीम की खेती- मन्दसौर व नीमच जिले में तथा जट्रोफा की खेती- जबलपुर, मन्दसौर, नीमच, रतलाम, भोपाल, राजगढ़ एवं होशंगाबाद जिले में प्रमुख रूप से होती है।

यद्यपि इन फसलों के विपणन में कुछ समस्याएँ अवश्य है मगर समय के साथ-साथ इनका हल भी ज्यादा मुश्किल नहीं होगा। औषधीय पौधों के प्रशिक्षण के साथ ही इनके विपणन के क्षेत्र में उद्यमिता विकास केन्द्र (सेडमेप) उल्लेखनीय भूमिका अदा कर रहा है। शासन के अन्य विभाग भी इस दिशा में अपने-अपने स्तर के अनुरूप पर्याप्त कार्य कर रहे हैं ताकि न केवल इन फसलों का उत्पादन बढ़े अपितु उत्पादित वस्तुओं को एक अच्छा बाज़ार भी सुलभ हो सके।[2]

मन्दसौर व नीमच जिले में औषधीय फसलों की विपणन व्यवस्था – देश एवं प्रदेश की तरह ही अविभाजित मन्दसौर जिले में औषधीय फसलों की विपणन व्यवस्था संतोषजनक नहीं है। फसल तैयार होकर ग्रेडिंग व पैकिंग की प्रक्रिया से गुजरती है। पैकिंग के पश्चात् फसल बाज़ार में विक्रय योग्य हो जाती है। जिले में चयनित औषधीय फसलों के चुने हुए लाइसेंसधारी क्रेता-विक्रेता हैं जो जिले की मण्डियों में जाकर कृषकों की फसलों को खरीदते हैं एवं कृषक अपनी फसल को मण्डी में ले जाकर समय-समय पर बेचते हैं। परिवहन हेतु यातायात के साधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। कृषकों के पास निजी या शासकीय स्तर पर भण्डारण सुविधा न होने से उन्हें अपनी फसल का विक्रय तुरन्त करना पड़ता है, फलस्वरूप वे अधिकतम विक्रय मूल्य पाने से वंचित रहते हैं।

आधुनिक कृषि में उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उनके विपणन का प्रबन्ध होना आवश्यक है। समस्त कृषकों को व्यापारिक रीति-नीतियों की पर्याप्त जानकारी नहीं होती है और वे अपनी फसल का अधिकांश भाग गाँवों में ही विक्रय कर देते हैं।

आधुनिक कृषि तकनीक एवं वैज्ञानिक विकास की भांति बाज़ार सुविधाएँ कृषि लागत एवं कृषक को कृषि विकास के लिये प्रेरित करती है। यदि कृषि उपज से प्राप्त होने वाला प्रतिफल निश्चित होगा तो कृषक निश्चित ही अतिरिक्त कृषि निवेश के लिये तत्पर होगा। साथ ही इस प्रकार कृषि उत्पादन में कृषक द्वारा निवेशित राशि बहुत कुछ उपज की बिक्री से प्राप्त राशि, बाज़ार सुविधाओं एवं विपणन व्यवस्था पर निर्भर करती है। अविभाजित मन्दसौर जिले में कृषि उपज के विपणन की व्यवस्थाओं और सुविधाओं का विगत वर्षो में पर्याप्त विकास हुआ है।

विपणन की दृष्टि से जिले में मन्दसौर, सुवासरा, शामगढ़, भानपुरा, पिपलिया, नारायणगढ़, नीमच, मनासा एवं जावद में नियमित कृषि उपज मण्डियाँ कार्यरत है।[3] इनमें से मन्दसौर, नीमच, मनासा व नारायणगढ़ मण्डियों में ही औषधीय फसलों का विक्रय होता है। इसके अतिरिक्त जिले में 28 गाँवों में नियमित रूप से साप्ताहिक हाट बाज़ार भी लगते हैं। जिले में प्रत्येक तहसील स्तर पर राज्य भण्डार गृह निगम द्वारा कृषि उपज के संग्रहण की सुविधाएँ भी उपलब्ध है। गत कुछ वर्षो में जिले में कई निजी भण्डार गृहों

* पीजीटी कॉमर्स, केन्द्रीय विद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

तथा सोया चौपाल जैसे विपणन केन्द्रों की स्थापना हुई है। जहाँ तक औषधीय फसलों की विपणन व्यवस्था का प्रश्न है, जिले में नारायणगढ़ मण्डी में ईसबगोल की फसल का विपणन प्रमुखता से, किन्तु मण्डी में न होकर मण्डी के बाहर होता है इसका प्रमुख कारण वेट की दर अधिक होना पाया गया है तथा नीमच, मनासा व मन्दसौर मण्डी में असगंध व ईसबगोल का विपणन मुख्य रूप से होता है। साथ ही आसपास के क्षेत्रों व राजस्थान से भी असगंध एवं ईसबगोल के विक्रय हेतु कृषक अपना उत्पाद विक्रय करने हेतु आते हैं। प्रदेश में नारायणगढ़ मंडी में ईसबगोल का सर्वाधिक विक्रय मूल्य कृषक को मिलता है। जिले के मल्हारगढ़ तहसील के नारायणगढ़, पिपलिया मण्डी, बूढ़ा तथा मनासा सहित अन्य क्षेत्रों में 7,000 हेक्टेयर क्षेत्र में लगभग 9,000 किसान ईसबगोल का उत्पादन करते हैं और लगभग एक लाख क्विंटल ईसबगोल यहाँ से सीधे गुजरात की ऊँझा मण्डी चला जाता है।[4] इस प्रकार आयुर्वेदिक व अन्य औषधियों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले ईसबगोल के प्रसंस्करण इकाई की सुविधा के अभाव में किसानों को यहाँ उचित दाम नहीं मिल पाते हैं। इसी प्रकार नीमच जिला अश्वगंधा की खेती के लिये देश ही नहीं विदेश में भी पहचान बनाये हुए है। इस सबके बावजूद जिले में अश्वगंधा के पाउडर तैयार करने का प्लान्ट नहीं है जिसका विभिन्न बीमारियों में गोलियों व केपसूल के रूप में उपयोग किया जाता है। जिले के किसानों को अश्वगंधा की खेती का पर्याप्त लाभ तभी मिल सकता है जब वे आयुर्वेदिक कम्पनियों को एवं विदेशों में स्वयं बेचे। मनासा व नीमच की मण्डियों में जो स्थानीय बाज़ार है, में असगंध मात्र 12,000 रूपये प्रति क्विंटल तक बिक रही है वहीं विदेशों में इसके भाव 80,000. रूपये प्रति क्विंटल तक है।[5]

अन्य महत्वपूर्ण तथ्य :

1. अश्वगंधा का सीधे विदेशों से व्यापार करने वाले हनुमान प्रसाद दरक, रामकुंवर दरक व कन्हैया दरक के अनुसार विदेशों में मनासा की अश्वगंधा की बड़ी माँग है। इन्टरनेट के जरिये सम्पर्क साधकर व्यापारी मनासा से अमेरिका, आस्ट्रेलिया, श्रीलंका सहित कई देशों को अश्वगंधा पहुँचा रहे हैं।
2. विथेनिन और विथफेरीन नामक तत्व दुनिया भर में केवल मनासा में होने वाली अश्वगंधा में प्रचुरता से पाये जाते हैं। इसके अलावा 38 तत्व इसमें पाये जाते हैं।
3. ग्राम अल्हेड़, मनासा हांसपुर, डांगरी, शेषपुर, हथुनिया, रातीतलाई, बावड़ा, पिपल्या रावजी, बांगरेल और उचेड़ आदि गाँवों में अश्वगंधा की खेती होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वेद डी.के. एंउ गोराया जी.एस.एक्सक्लूसिव समरी (मार्केट सिनेरिया ऑफ मेडिसिनल प्लांटस पेज-13
2. औषधि पौधों का उज्जवल भविष्य-त्रिवेदी विश्वपति-उद्यमिता।
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका-जिला सांख्यिकी कार्यालय मंदसौर व नीमच वर्ष 2009
4. दैनिक नई दुनिया-26 फरवरी 2010
5. देनिक भास्कर-दिनांक 23 जनवरी 2011 पेज-4
6. दैनिक भास्कर दिनांक 23 जनवरी 2011 पेज-4

****

फास्ट फूड को ग्रहण किये जाने समय व स्थान के आधार पर अध्ययन

डॉ. रीना मालवीय *

शोध सारांश – किशोर चाहे वह किसी भी आय वर्ग के अंतर्गत आता है वह अपनी आय के अनुसार संतुलित आहार ग्रहण कर सकता है। आर्य वर्ग समूह के साथ जाति धर्म को भी ध्यान में रखकर किशोर अपने आहार में परिवर्तन कर संतुलित आहार प्राप्त कर सकता है। यद्यपि प्रत्येक परिवार की अपनी भोजन पद्धति होती है परंतु किशोरों में सहपाठियों तथा पड़ोसियों के भोजन का बालक की भोजन संबंधी आदतों पर विशेष प्रभाव पड़ता है। पारिवारिक भोजन के अतिरिक्त उसके टिफिन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। पराठा, दाल, सोयाबर्फी, सोयाबीन का हलवा आदि का विशेष प्रयोग किया जाना चाहिए। घरों में कस्टर्ड, पुडिंग, फ्रुड सलाद, आइसक्रीम, छैना, खीर, एग स्कॉच आदि के द्वारा पौषणिक आवश्यकताओं की काफी हद तक संतुष्टि की जा सकती है।

प्रस्तावना – भारत और अन्य विकासशील देशों के शालेय बालकों और किशोरों के आहार सर्वेक्षण किये गये है उसमें यह ज्ञात हुआ है कि इनके आहार में कैलोरी प्रोटीन विटामिन ए राइबोफ्लेबिन फोलिक एसिड और आयरन की कमी रहती है इन बालकों में फोलिक एसिड और आयरन की कमी के कारण से होने वाले एनीमिया के चिन्ह और लक्षण स्पष्ट दिखाई देते है विकासशील देशों में यह बीमारी व्यापक रूप से पाई जाती है। अत: किशोरावस्था में आहार की संतुलितता पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। जहां उच्च आय वर्ग में मांसल पदार्थ दूध तथा दूध से बने पदार्थ अण्डा मछली मेवे आदि दिये जा सकते है वही दूध और प्राणिज खाद्य पदार्थो की मात्रा मध्यम आय वर्ग समूह में स्थान पाती है जबकि निम्न आय वर्ग में अनाज मूंगफली तथा हरी पत्तेदार सब्जियों की पर्याप्तता होती है।

फास्ट फूड का प्रभाव बच्चों में अधिकता से पाया जाता है नूडल्स बर्गर, पिज्जा, व पेटिस जैसे फास्ट फूड और अस्वास्थ्यकर नाष्ते के प्रति दीवानगी बच्चों को मोटापे का षिकार बना रही है। ऐसी नीसन कंपनी के सर्वेक्षण के अनुसार देश के पांच महानगरों में स्कूल जाने वाली उम्र के लगभग 75 फीसदी बच्चों में फास्ट फूड और अस्वास्थ्यकर नाश्ते की आदत पाई गई। आहार विशेषज्ञ डॉ. मीना मेहता के अनुसार किसी व्यक्ति की स्वस्थ्य जीवन शैली का पता लगाने का सबसे अच्छा वक्त शाम के पांच बजे से आठ बजे तक का होता है। इस दौरान लोगों को सबसे तेज भूख लगती है। तब उन्हें जो कुछ भी सामने दिखता है वे खा लेते है, फास्ट फूड की आदत उन बच्चों में भी सर्वाधिक देखी गई है जिनके माता-पिता दोनों कामकाजी होते है, तथा इन्हें घर पर भोजन बनाने का वक्त नही मिलता है और बच्चे अपनी भूख मिटाने के लिये बाहर के भोजन पर निर्भर हो जाते है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. फास्ट फूड के उपयोग पर विज्ञापनों के प्रभाव को ज्ञात करना।
2. किशोर-किशोरियों में प्रचलित फास्ट फूड की रूचियों को जानना।

उपकल्पना :

1. फास्ट फूड के प्रति आकर्षण
2. फास्ट फूड के विज्ञापन इनके प्रयोग पर सकारात्मक प्रभाव।

अध्ययन पद्धति – दैव निदर्शन के आधार पर चयन किया गया।

अध्ययन क्षेत्र एवं सीमाएं :

1. शोध कार्य हेतु होशंगाबाद जिले के 2 शहर लिये गये है।
2. होशंगाबाद जिले के कुल 2 स्कूल का चयन किया गया है।
3. होशंगाबाद जिले के 2 शहर से 25-25 किशोर-किशोरियों को ही तथ्यों में लिया गया है।

निष्कर्ष : 'चाय के समय फास्ट फूड लेना पंसद'

सारणी – 1

क्रं.	विवरण	शासकीय		अशासकीय			
		किशोर	किशोरियां	किशोर	किशोरियां	कुल संख्या	प्रतिशत
1	हां	58	44	60	55	217	72.34
2	नही	17	31	15	20	83	27.66
	कुल	75	75	75	75	25	100

स्रोत :- स्वयं अनुसंधान

स्कूल के बाद कोचिंग व खेलकूद के बाद किशोर-किशोरियां द्वारा घर पर शाम को चाय के समय कुछ नाश्ता या फास्ट फूड का सेवन किया जाता है उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित 25 किशोर-किशोरियों चाय के समय फास्ट फूड की सहमति में हां का 72.34 प्रतिशत है तथा नही का 27.66 प्रतिशत है अत: हम कह सकते है कि अधिकांश किशोर-किशोरियां चाय के समय फास्ट फूड लेना पसंद करते है।

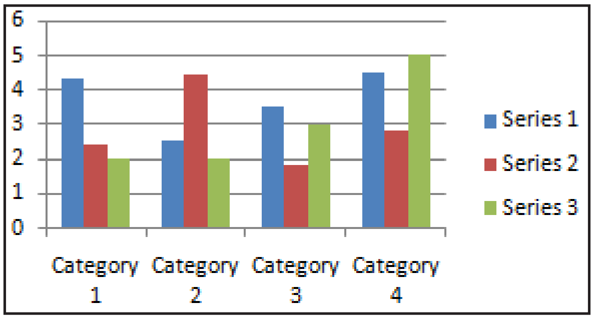

* शासकीय गृह विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

सारणी – 2 : चाय के समय अधिक पसंद किये जाने वाले फास्ट फूड

कुल संख्या – 25

क्रं.	विवरण	शासकीय		अशासकीय			
		किशोर	किशोरियां	किशोर	किशोरियां	कुल संख्या	प्रतिशत
1	मेगी		39	36	33	145	48.36
2	चिप्स	22	18	21	19	80	26.66
3	पास्ता	01	02	05	03	11	03.66
4	समोसा	15	16	13	20	64	21.33
	कुल	75	75	75	75	25	99.98

स्त्रोत :– स्वयं अनुसंधान

अधिकांश किशोर –किशोरियां द्वारा शाम को चाय के समय सिर्फ फास्ट फूड का सेवन करना अधिक पसंद करते है। उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित 25 किशोर–किशोरियों चाय के समय अधिक पसंद किये जाने वाले फास्ट फूड में मेगी का 48.35 प्रतिशत, चिप्स का 26.66 प्रतिशत, 21.33 समोसा व पास्ता 3.66 प्रतिशत है अत: हम कह सकते है कि अधिकांश किशोर किशोरियां चाय के समय लिया जाने वाला फास्ट फूड मे मेगी की संख्या का प्रतिशत सर्वाधिक है।

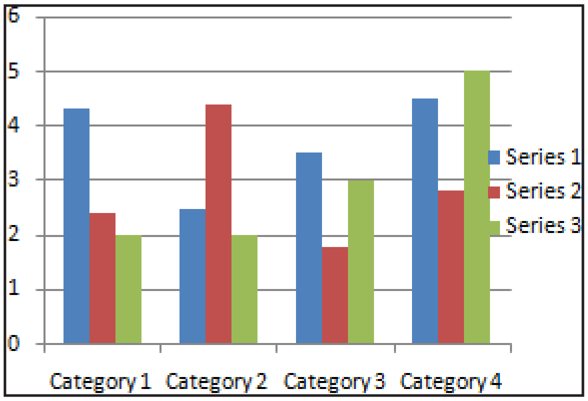

निष्कर्ष :

1. शोध में यह पाया गया कि किशोर वर्ग द्वारा सप्ताह में एक बार अधिक मात्रा में चीज पिज्जा व आलू चिप्स का लगातार सेवन करते है।
2. किशोर–किशोरियां अपने सहपाठियों के साथ फास्ट फूड कार्नर पर रेडी टू ईट फूड को अधिक पसंद करते है। ये विज्ञापन से प्रभावित होकर इन खाद्य पदार्थो की तरफ आकर्षित होते है।

सारांश – आज का अधिकांश किशोर वर्ग अपनी प्यास बुझाने के लिये पानी और फलों के जूस के स्थान पर बाजार मे उपलब्ध कोल्ड ड्रिंक का सेवन करते है। ये बाजार में उपलब्ध कोका–कोला, पेप्सी, मीरिंडा आदि पेय पदार्थो का चलन विज्ञापन के आधार पर देखते हुये अधिक उपयोग करते है।

अधिकांश किशोर–किशोरियां अपना अधिकतर समय फास्ट फूड कार्नर पर व्यतीत करते है, और इन जल्दी तैयार होने वाले रेडी टू ईट खाद्य पदार्थो का उपयोग अधिक मात्रा में करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Jackal john A & Keith A Sculled Fast food :- Road side Restaurants in the Automobile age Baltimore johns Hopkins University press – 1999
2. Anita FP Clinical Nutrition & Dietetics 4th edition oxford University Press New Delhi. 1999
3. डॉ. वृन्दा सिंह, आहार विज्ञान पंचषील प्रकाषन, जयपुर 2006

****

मध्यप्रदेश एवं अविभाजित मन्दसौर जिले में असगंध एवं ईसबगोल के विपणन की समस्याएँ एवं समाधान के सुझाव

मोनिका वर्मा *

प्रस्तावना - शोध अध्ययन का उद्देश्य मध्यप्रदेश में औषधीय फसलों के विपणन का नीमच व मन्दसौर जिले के संदर्भ में अध्ययन करना रहा है तथा इस हेतु चुनी गई औषधीय फसलों असगंध एवं ईसबगोल के विपणन क्षेत्र को ही अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। अत: यह भी आवश्यक हो जाता है कि मध्यप्रदेश में औषधीय फसलों की विपणन समस्याओं के अध्ययन के साथ-साथ अविभाजित मन्दसौर जिले में उत्पादित असगंध एवं ईसबगोल औषधीय फसलों के विपणन की समस्याओं को भी इसमें समाहित किया जाये। इस दृष्टि से शोध अध्ययन के दौरान जो समस्याएँ सामने आई वे निम्नलिखित हैं:

A- असगंध के विपणन से सम्बन्धित समस्याएँ- भारत में उत्पादित औषधीय फसलों में असगंध एक विशेष औषधीय फसल के रूप में जानी जाती है। देश में मध्यप्रदेश के अविभाजित मन्दसौर जिले में ही कुल असगंध उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत भाग उत्पादित होता है। इस प्रकार प्रदेश एवं जिले में असगंध के विपणन से सम्बन्धित प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित है:

I. वर्गीकरण एवं मानकीकरण का अभाव- अन्य फसलों की तरह प्रदेश एवं जिले में असगंध के उत्पादन के पश्चात् उसके वर्गीकरण एवं मानकीकरण की सुविधा का पूर्णत: अभाव पाया जाता है जिससे कृषकों को अपने उत्पाद का पर्याप्त मूल्य नहीं मिलता है। क्रेता व्यापारियों द्वारा मण्डी से क्रय कर स्वयं अपने स्तर पर असगंध की ग्रेडिंग कर विक्रय की जाती है और उन्हें निर्यात कर अधिकतम लाभ प्राप्त किया जाता है।

II. भण्डारण सुविधा का अभाव- चूंकि मध्यप्रदेश एवं जिले में अलग-अलग स्थानों पर भिन्न-भिन्न कृषकों द्वारा असगंध का सीमित क्षेत्र में ही उत्पादन किया जाता है जिसके कारण संग्रह योग्य अधिक अतिरेक उनके पास नहीं होता है एवं प्रसंस्करण एवं मानकीकरण न होने से उन्हें अपनी फसल को तुरंत विक्रय भी करना पड़ता है। फिर भी जिले में स्थानीय स्तर पर भण्डारण सुविधाओं का अभाव पाया जाता है जिसके कारण यदि कोई कृषक असगंध का भण्डारण करना चाहे तो भी नहीं कर पाता है। फलस्वरूप कृषक को संग्रहण के पश्चात् प्राप्त अधिक मूल्य का लाभ नहीं मिल पाता है।

III. स्थानीय बाज़ार/गाँवों में विक्रय- जैसा ऊपर बताया गया है कि दूरस्थ गाँवों में असगंध का उत्पादन छोटे-छोटे कृषकों द्वारा किया जाता है जिनके पास स्वयं के यातायात के साधन नहीं होते हैं तथा उनकी आर्थिक दशा भी ठीक नहीं होती है। अत: वह स्थानीय दलालों या कमीशन एजेन्ट को ही असगंध का विक्रय कर देते हैं क्योंकि उत्पादक स्थल से मण्डी तक का स्थान अधिक दूर होता है और परिवहन लागत भी अधिक आती है जबकि औषधीय फसलों का क्रय कोई भी व्यक्ति या व्यापारी बिना लायसेंस के नहीं कर सकता है तथा गाँवों में इस प्रकार के क्रेताओं का पूर्णत: अभाव होता है इससे कृषकों को अपनी उपज का अधिकतम मूल्य प्राप्त नहीं हो रहा है।

IV. न्यूनतम मूल्य का निर्धारण नहीं- अन्य औषधीय फसलों की भाँति प्रदेश एवं जिले में ही नहीं अपितु पूरे भारत वर्ष में असगंध के न्यूनतम मूल्यों का निर्धारण सरकार द्वारा सम्भव नहीं हो सका है। परिणाम स्वरूप क्रेताओं द्वारा निर्धारित न्यूनतम मूल्य पर ही कृषकों को असगंध का विक्रय करना पड़ता है तथा वे अधिकतम मूल्य प्राप्त करने से वंचित रहते हैं।

V. असगंध उत्पादक कृषकों में संगठन का अभाव- जैसा की पूर्व में बताया गया है प्रदेश ही नहीं अपितु राष्ट्रीय स्तर पर भी औषधीय उत्पादक कृषकों का संगठन स्थापित नहीं है। यही स्थिति जिले के असगंध उत्पादक कृषकों की भी है। चूंकि अधिकांश कृषक अलग-अलग स्थानों के एवं अधिक दूरी पर रहते हैं जिनके कारण वे आपस में नहीं मिल पाते हैं और अभी तक संगठित नहीं हो पाये हैं। फलस्वरूप उन्हें संगठन लाभ नहीं मिल पाया है।

VI. उत्पादन क्षेत्र में कमी- यद्यपि असगंध अधिक मूल्य वाली मंहगी औषधीय फसल है फिर भी इसकी माँग की तुलना में इसके उत्पादन क्षेत्र में वृद्धि नहीं हो पाई है। इसका कारण दूसरी फसलों की तुलना में एक तो यह अधिक समय में उत्पादित होती है साथ ही सरकार द्वारा कोई विशेष प्रोत्साहन योजना अभी तक लागू नहीं की गई है जिससे यदि किसी कारण वर्ष में फसल बिगड़ जाये तो उन्हें न्यूनतम मूल्य प्राप्त हो सके। फलस्वरूप धीरे-धीरे असगंध के उत्पादन के प्रति जिले के कृषकों का आकर्षण कम होता जा रहा है। इसका प्रमाण यह है कि जिले में वर्ष 2006.07 में असगंध का रकबा 3०062 हेक्टेयर था जो घटकर वर्ष 2009.10 में 1०367 हेक्टेयर ही रह गया है।

VII. अन्य समस्याएँ- उक्त समस्याओं के अतिरिक्त प्रदेश एवं जिले में असगंध के विपणन की अन्य समस्याएँ भी हैं जैसे- आज भी इसका बाज़ार संगठित नहीं है, लगभग 40 प्रतिशत असगंध का विक्रय मण्डी के बाहर होता है, गिने चुने लायसेंसधारी व्यापारियों का होना, जिनका पूरे बाज़ार पर एकाधिकार रहता है, जिससे कृषकों को अधिकतम मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है। इसी प्रकार जिले में असगंध के प्रसंस्करण की शासकीय स्तर पर एक भी इकाई नहीं है जबकि प्रदेश में असगंध का अधिकांश उत्पादन इसी जिले में होता है। इसका लाभ भी कृषकों को न मिलकर व्यापारियों के खाते में जाता है, आदि।

B- ईसबगोल के विपणन से सम्बन्धित समस्याएँ - ईसबगोल एक महत्वपूर्ण औषधीय फसल है। भारत इसका सर्वाधिक उत्पादक एवं निर्यातक देश है तथा वर्तमान में हमारे देश से निर्यात होने वाली औषधीय फसलों में

* पीजीटी कॉमर्स, केन्द्रीय विद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

प्रमुख स्थान ईसबगोल का ही है। मध्यप्रदेश के अविभाजित मन्दसौर जिले में वर्तमान में लगभग 1000 टन ईसबगोल का उत्पादन एवं विक्रय होता है। प्रदेश एवं जिले में ईसबगोल औषधीय फसल के विपणन की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित है:

I. **असंगठित बाज़ार होना–** प्रदेश एवं जिले में ईसबगोल का जितना उत्पादन होता है उसका मात्र 20 से 25 प्रतिशत ही मण्डियों में विक्रय हेतु आता है। शेष उत्पादन मण्डियों के बाहर स्थानीय बाज़ारों या गाँवों में ही या उत्पादित स्थल से ही क्रेताओं एवं उनके एजेन्टों या दवा निर्माता कम्पनियों के प्रतिनिधियों द्वारा दलालों के माध्यम से क्रय कर लिया जाता है और वहीं से देश के प्रमुख बाज़ारों में विक्रय हेतु चोरी–छिपे भेज दिया जाता है। परिणाम स्वरूप कृषकों को मण्डियों से भी कम मूल्य पर अपनी उपज का विक्रय करना पड़ता है और पर्याप्त लाभ भी नहीं मिल पाता है।

II. **भण्डारण सुविधा का न होना–** प्रदेश एवं जिले में ईसबगोल का इतना अधिक उत्पादन होने के बावजूद, अलग से कोई भण्डारण सुविधा शासकीय तौर पर उपलब्ध नहीं है। कृषक या तो अपने निजी मकानों में या किराये के अन्य भण्डार गृहों में संग्रहित करने को बाध्य हैं जहाँ संग्रहण लागत भी अधिक आती है तथा उसका पर्याप्त लाभ भी समय पर नहीं मिल पाता है।

III. **वर्गीकरण एवं मानकीकरण की सुविधा नहीं–** चूंकि आज भी प्रदेश में अधिकांश कृषक अशिक्षित हैं जिससे वर्गीकरण एवं मानकीकरण का उसे ज्ञान भी नहीं है। साथ ही प्रदेश व जिले में ईसबगोल के वर्गीकरण एवं मानकीकरण की सुविधा उपलब्ध न होने से वह इसका लाभ भी नहीं उठा पाता है। फलस्वरूप जैसे ही फसल पक कर तैयार होती है उसे वह विक्रय हेतु बाज़ार में ले जाता है और प्रचलित मूल्यों पर ही उसका विक्रय कर देता है जिससे कृषक को अपनी उपज का पर्याप्त लाभ नहीं मिलता है।

IV. **प्रसंस्करण, पैकेजिंग एवं संवेष्ठन सुविधा का अभाव–** शोध के दौरान पर भी पाया गया है कि भण्डारण सुविधा के साथ–साथ प्रदेश एवं जिले में ईसबगोल के प्रसंस्करण, पैकेजिंग एवं संवेष्ठन की सुविधा भी इसके उत्पादकों को उपलबध नहीं है। जिससे ईसबगोल के बीजों का प्रसंस्करण कर उससे ईसबगोल की भूसी अलग कर, उसका पैकंजिंग एवं संवेष्ठन करके अधिक मूल्य पर विक्रय कर अधिक लाभ कमाने का अवसर प्रदेश एवं जिले के कृषकों को नहीं मिल पा रहा है। 26 फरवरी 2010 दैनिक नईदुनिया में छपी खबर के अनुसार मन्दसौर जिले की पिपलिया मण्डी में एक करोड़ रूपये की लागत से आई.सी.डी.पी. योजना के तहत सहकारिता के आधार पर ईसबगोल प्रोसेसिंग प्लाण्ट स्थापित करने की योजना बनाई गई और 60 लाख रूपये की तुरन्त स्वीकृति भी दे दी गई थी किन्तु आज तक यह योजना भी अधूरी है।

साथ ही वर्तमान में नीमच के पास जावद रोड़ पर ओसवाल कं. का ईसबगोल के बीजों से भूसी बनाने का जो प्लाण्ट स्थापित हुआ है उसका लाभ सीधे कृषकों न मिलते हुए प्लाण्ट मालिक को ही हो रहा है। वह स्वयं कृषकों या व्यापारियों से कच्चा माल क्रय करता है और निजी प्लाण्ट में भूसी तैयार कर देश के विभिन्न भागों में बेचकर अधिकाधिक लाभ प्राप्त करता है।

V. **न्यूनतम विक्रय मूल्य का निर्धारण नहीं–** प्रदेश में औषधीय उत्पादक किसानों के असंगठित होने से उनका औषधीय फसल ईसबगोल का मूल्य निर्धारण हेतु सरकार पर कोई दबाव नहीं बन पाता है जिससे आज तक ईसबगोल के न्यूनतम मूल्यों का भी निर्धारण शासकीय स्तर पर सरकार नहीं कर पाई है। यद्यपि सरकार द्वारा शराज्य स्तरीय औषधीय पादप बोर्ड का गठन कर रखा है परन्तु बोर्ड भी इस ओर ध्यान नहीं दे रहा है जिससे कृषकों को प्रचलित मूल्यों पर ही ईसबगोल का विक्रय कर अधिकतम लाभ से वंचित होना पड़ रहा है।

VI. **औषधीय मण्डी का अभाव–** किसानों को सही दाम मिले इस उद्देश्य से यद्यपि प्रदेश सरकार द्वारा इस समस्या की ओर ध्यान दिया गया है और वर्ष 2009 में नीमच में लगभग 25 हेक्टेयर क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की औषधीय मण्डी स्थापित करने की घोषणा की गई थी जो आज तक क्रियान्वित नहीं हो पाई। अभी तक स्थान का चयन भी नहीं हो पाया। इस प्रकार प्रदेश एवं जिला स्तर पर अभी तक एक भी औषधीय मण्डी कार्यरत नहीं है। परिणाम स्वरूप औषधीय कृषकों को अधिकतम मूल्य दिलाने की सरकार की मंशा भी पूरी नहीं हुई है और न ही कृषकों को उसका लाभ मिल रहा है।

VII. **अन्य समस्याएँ–** इस प्रकार उपर्युक्त प्रमुख समस्याओं के अतिरिक्त ऐसी अन्य प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष समस्याएँ जैसे– मध्यस्थों का अधिक हस्तक्षेप, अधिक कमीशन, भुगतान में देरी, अनावश्यक कटौतियाँ, बाज़ार से दूरी आदि भी है जिनके कारण प्रदेश एवं जिले के ईसबगोल उत्पादक कृषकों को अपनी उपज का अधिकतम लाभ अभी तक प्राप्त नहीं हो पाया है। सरकार को समस्याओं के समाधान पर अविलम्ब ध्यान देना चाहिये।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि खाद्यान्न एवं अन्य व्यावसायिक फसलों की भांति मध्यप्रदेश में प्रादेशिक एवं जिला स्तर पर औषधीय फसलों की जो प्रमुख समस्याएँ हैं लगभग वही समस्याएँ असगंध एवं ईसबगोल फसलों से सम्बन्धित है। जैसे– भण्डारण सुविधा का अभाव, पैकेजिंग एवं संवेष्ठन सुविधा का अभाव, उत्पाद के ग्रेडिंग, प्रसंस्करण एवं मानकीकरण का अभाव, न्यूनतम मूल्य निर्धारण का अभाव, भुगतान में देरी, किसानों में संगठन का अभाव, औषधीय फसलों का असंगठित बाज़ार, औषधीय मण्डी का अभाव, माकेंटिंग के उपयुक्त माध्यमों का अभाव, मण्डी सम्बन्धी समस्याएँ आदि। इन्हें दूर किया जाना चाहिये।

असगंध एवं ईसबगोल के विपणन सम्बन्धी समस्याओं के हल हेतु सुझाव – मध्यप्रदेश एवं अविभाजित मन्दसौर जिले में उत्पादित औषधीय फसल असगंध एवं ईसबगोल के विपणन की समस्याएँ लगभग समान है। अत: इन फसलों की समस्याओं के हल हेतु निम्नांकित सुझाव प्रस्तुत है :

1) **वर्गीकरण एवं मानकीकरण की सुविधा उपलब्ध कराना–** चूंकि प्रर्देश एवं जिले में असगंध एवं ईसबगोल की फसलों के वर्गीकरण एवं मानकीकरण की सुविधा का अभाव है। अत: कृषकों को उनकी उपज का पर्याप्त मूल्य दिलाने हेतु इन दोनों फसलों के वर्गीकरण एवं मानकीकरण की सुविधाएँ स्थानीय स्तर पर ही उपलब्ध कराई जाये ताकि उसके अनुसार कृषकों को अपनी उपज का अधिकतम मूल्य व लाभ प्राप्त हो सके।

2) **भण्डारण सुविधा–** असगंध एवं ईसबगोल ऐसी व्यावसायिक फसलें हैं जिनकी कीमत अन्य फसलों की तुलना में बहुत अधिक है किन्तु अलग से इनकी भण्डारण की सुविधा उपलबध न होने से कृषकों को फसल तैयार होते ही बाज़ार में विक्रय हेतु ले जाना पड़ता है। इस असुविधा से कृषकों को निजात दिलाने हेतु औषधीय फसलों हेतु सस्ती व उचित भण्डारण सुविधाएँ उपलब्ध कराना चाहिये ताकि विलम्बान्तर का लाभ मिल सके और अधिकतम कीमत एवं लाभ किसानों को प्राप्त हो सके।

3) **न्यूनतम मूल्यों का निर्धारण करना–** असगंध एवं ईसबगोल ऐसी औषधीय फसलें हैं जिनकी माँग विश्व व्यापी है। अत: सरकार द्वारा इनके

कृषकों को राष्ट्रीय ही नहीं अपितु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाभ प्रदान करने हेतु न्यूनतम मूल्यों का निर्धारण करना आवश्यक है। जब तक इन फसलों का न्यूनतम मूल्य निर्धारण नहीं होगा, कृषक के स्थान पर व्यापारी या मध्यस्थों की चाँदी होती रहेगी।

4) असगंध एवं ईसबगोल उत्पादक कृषकों का संगठन स्थापित करना– संगठन के अभाव में उक्त दोनों महत्वपूर्ण फसलों के कृषकों में एकजुटता व आपस में मेल–मिलाप न होने से अलग–अलग स्थान या प्रदेश स्तर पर भी मूल्यों में विषमता पाई जाती है। इस विसंगति को दूर करने हेतु सरकार को चाहिये कि अलग–अलग प्रदेशों के औषधीय उत्पादक कृषकों के प्रतिनिधियों को एकत्रित कर इनका राष्ट्रीय स्तर पर संगठन बनाया जाये ताकि कृषक अपनी विपणन सम्बन्धी अन्य समस्याओं के समाधान के लिये भी अपना पक्ष सरकार के सम्मुख समय पर प्रस्तुत कर ध्यान आकर्षित कर सके तथा भविष्य में उन्हें अपने संगठित होने का लाभ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी मिल सके।

5) प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना करना– असगंध से पाउडर बनाकर उनको गोली, केप्सूल या पाउडर के स्वरूप में विक्रय करने हेतु प्रोसेसिंग प्लाण्ट की अविलम्ब स्थापना की जानी चाहिये क्योंकि पूरे प्रदेश में सर्वाधिक असगंध की फसल इसी अविभाजित मन्दसौर जिले में होती है। इसी प्रकार ईसबगोल के बीजों से उसकी भूसी बनाकर अलग–अलग वजनों के पैक करके उसे विक्रय करने हेतु भी ईसबगोल प्लाण्ट की स्थापना की जाना चाहिये ताकि जिले के कृषकों को सीधा–सीधा अधिकतम लाभ अपनी फसलों से प्राप्त हो सके। इससे कृषक आर्थिक रूप से और अधिक समृद्ध होगा तथा अधिक उत्पादन करने के लिये प्रेरित भी होगा।

6) अन्य सुझाव– असंगठित बाज़ार व्यवस्था को समाप्त करना, अधिकतम कृषकों या व्यापारियों को निर्यात लायसेंस देना, औषधीय मण्डी की स्थापना करना, मध्यस्थों का हस्तक्षेप समाप्त करना, पैकेजिंग एवं संवेष्ठन की सुविधाएँ उपलब्ध कराना, मण्डी सम्बन्धी अन्य समस्याओं का समाधान करना, करों में कमी करना, निर्यात प्रक्रिया को सरल बनाना, आदि।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विश्लेषण इस बात की ओर इशारा करता है कि भारतीय कृषि क्षेत्र की एक अन्य बड़ी समस्या कृषि उपज के विपणन या बिक्री की है। कृषि उत्पादन एवं किसानों की आय में वृद्धि लाने और इस प्रकार देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिये कृषि विपणन की समस्या का विश्लेषण और समाधान बहुत आवश्यक है। कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार के लिये उठाए गये कदम, कृषि विपणन के सुधार और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं और यह कहा जा सकता है कि देश के भीतर इसके लिये प्रयास किये जा रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्य को संगठित करके और आगे बढ़ाया जाये, विशेष रूप से वर्तमान समय में जबकि विश्व अर्थव्यवस्था के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था जुड़ गई है। विश्व बाज़ार से भरभूर लाभ उठाने के लिये विपणन के क्षेत्र में सुधार करना और भी आवश्यक हो गया है क्योंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ की जनसंख्या किसी न किसी प्रकार से कृषि से जुड़ी होने के कारण कृषि विपणन में सुधार से केवल किसानों को ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज को लाभ प्राप्त होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पुरोहित डॉ.एस.एस. 'औषधि एवं सुगन्धित पौधे, एग्रो बायस (इण्डिया) चापासनी रोड जोधपुर 2004।
2. रोजगार और निर्माण।
3. उघमिता।
4. विजय राजेन्द्र कुमार मंदसौर जिले में गेहूँ और ज्वार के विपणन का तुलनात्मक अध्ययन अप्रकाशित पी एच–डी थीसिस 1994।
5. मार्केटिंग ऑफ मेडिसनल प्लान्टस डेवलपिंग इन्फोर्नेशन सिस्टम मार्केट नेटवर्क एण्ड पालिसी फ्रेमववर्क (इन्वेस्टीगेटर्स–यादव, एम.विजय कुमार, सीवीआरएस एण्ड एम.मिश्रा, स्पान्सर्ड बाय आईआईएफएम)
6. मार्केटिंग ऑफ मेडिसिनल प्लान्टस– 'चैलेन्जेस ऑफ स्ट्रेटेजिस', डॉ.जे.सी.कोमाराय रीडर, डिपार्टमेंट ऑफ इकॉनामिक्स बनारस हिन्दु यूनिवर्सिटी वाराणसी।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

संदर्भित बाल साहित्य में देशकाल, परिस्थितियों का चित्रण

डॉ. रेखा रानी सिंह *

शोध सारांश – इस अध्याय के अंतर्गत बाल साहित्य में देशकाल और विभिन्न परिस्थितियों का चित्रण है। यह संसार एक घर है। जहाँ प्रतिपल कुछ न कुछ घटता रहता है। ये घटनायें बालकों के मन को भी प्रभावित करती रहती है। हमारे मन के अंदर भी प्रतिपल कुछ न कुछ घटता ही रहता है। हमारा चेतन और अचेतन मन दोनों ही हमारे घर, परिवेश, समाज , शहर, प्रांत, देश , विश्व में जो कुछ अच्छा बुरा होता है उससे बच्चा प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। इन विभिन्न घटनाओं को कहानी के माध्यम से चित्रित कर बालकों को समझाने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना – बाल कथा साहित्य हिन्दी साहित्य की एक अनुपम धरोहर है। बाल साहित्य में वर्णित कथा, कहानियों तथा कविताओं में समय समय पर परिस्थितियों के अनुसार बच्चों का मार्गदर्शन किया है। कविता व कहानी पढ़ने से बच्चों को मिलने वाले विविधतापूर्ण आनंद का प्रभाव दूरगामी होता है। वीरता भरे गीत जहाँ उनमें रोमांच का भाव जगाते है, वहीं परियों का सुमधुर संगीत उनके कानों में गूंजता रहता है, अधूरी कही हुई कहानियां उनमें नये नये सपनों को जन्म देती है। इन सबको बच्चे बहुत पंसद करते है। हिन्दी में बच्चों के लिये कविताएं आरंभ में परम्परागत लोरियां, खेलगीतों तक ही सीमित थी तथा कहानियों, कथाओं में उपदेशात्मक तथा नीतिपरक बातों का समावेश था, किंतु सन् 1900 ई. में बच्चों के लिये पृथक कविताएं व कहानियों लिखने की ओर ध्यान दिया गया। तब इस बात को अधिक महत्वपूर्ण समझा गया कि बच्चों के लिये कविताएं, कहानियाँ लिखनी है।

बालगीत साहित्य की परम्परा का जो बीज महाकवि सूरदासजी ने अनजाने में ही बोया था, आज वह पल्लवित एवं पुष्पित होकर बाल संसार को अपनी सुगंध से महका रहा है। आज बालकों के बहुमुखी व्यक्तित्व के विकास के लिये बालगीतों व बाल कविताओं की रचना की जा रही है जिनके माध्यम से बालक खेल-खेल में गुनगुनाते हुए ही अनौपचारिक रुप से शिक्षाएं प्राप्त कर सकते है।

बाल साहित्य में मौहल्ले, ग्राम एवं नगरों का चित्रण – आज से कुछ दशक पूर्व कहानियां बस कही और सुनी जाती थी। पुराणों की धार्मिक कथाएं, लोक कथाएं, राजा रानी की कहानियां, जासूसी काहनियाँ सुनाकर बच्चों को धर्मनीति के साथ जीवन जीने की शिक्षा प्रदान की जाती थी। उस समय शिक्षा का इतना विस्तार नहीं हुआ था इसलिये लोग भोले भाले व सज्जन प्रवृत्ति के थे। वे बुराईयों से डरते थे इसलिये उसमें फरेबी और बुरी नियत वाले लोगों का अंत बुरा होता था। इस तरह की कहानियां बालमन पर एक अमिट छाप छोड़ जाती थीं। इन कहानियों से बच्चों को शिक्षा भी मिलती थी। उस समय पर खेल, गीतों और उत्सव गानों के रुप में बड़ों और बच्चों का मनोरंजन भी करते थे। डॉ.रामगोपाल वर्मा द्वारा बच्चों के मनोरंजन के लिये लिखा गया निम्न हास्य बाल गीत ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यन्त लोकप्रिय हुआ था :-

एक शरारती मेंढ़क एक दिन, घुसा पजामें में झट से।
मैं भी उछलूं, वह भी उछले, लगा बहस करने मुझसे।।
मेंढ़क चिपक पजामें से, बस करता था आराम।
वह क्या जानें कैसे मेरी, निकल रही थी जान।।

गाँव – भारत के गांव आकार में छोटे होते है। इनका भौगोलिक क्षेत्रफल नगरों की तुलना में बहुत छोटा होता है। ग्रामीण लोग पूर्णरुप से तथा प्रत्यक्ष रुप से प्रकृति पर निर्भर होते है। उनका मुख्य व्यवसाय कृषि तथा पशुपालन होता है। इन कार्य के लिये अधिक मेहनत तथा अधिक सदस्यों की आवश्यकता होती है। इसलिये ग्रामीण बच्चे भी अपने माता पिता के साथ इसी कार्य में लगे रहते है। कभी कभी ग्रामीण गरीब माता पिता अपने बच्चों को शिक्षा दिलाने के लिए अपने किसी संबंधी के घर भेज देते है। संबंधी भी उन बच्चों को बोझ समझने लगते है।

ग्रामीण समुदाय के अधिकांश बच्चे अधिकांश अशिक्षित है। अशिक्षित होने के कारण वे माता पिता की तरह भाग्यवादी तथा रुढ़िवादी होते हैं। अशिक्षा के कारण वे बीमारियों के बारे में अनभिज्ञ होते है और जादू-टोना, झाड-फूँक आदि में अंधविश्वास रखते है। अज्ञानता के कारण ही वे पिछड़ा जीवन व्यतीत करते हैं। उनके विचार, आदर्श मानसिकता, विश्वास, धारणाएँ, व्यवहार एक से होते है। सामाजिक चेतना जनमत, धर्म एवं पूजा-पाठ में एकरुपता दृष्टिगोचर होती है। गाँव के कुछ धनी लोग सीधे सादे लोगों को बेवकूफ बनाने में लगे रहते है।

नगरीय जीवन – गाँव की तरह नगर भी प्राचीन काल से विद्यमान है। थियोडोरसन ने नगरों को परिभाषित करते हुए लिखा है कि – नगर एक ऐसा समुदाय है जिसमें उच्च शिक्षा घनत्व, गैर कृषि व्यवसायों की प्रमुखता, श्रम विभाजन की जटिलता, उच्च श्रेणियों का विशेषीकरण और स्थानीय सरकार की अनौपचारिक व्यवस्था पाई जाती है। हेमराज भट्ट ने में बर्तन माजूंगा नामक कहानी में शहा की जीवन शैली का वर्णन किया है। इस कहानी मे तीन धर्म के तीनों शिक्षकों को एक ही कमरे में रखकर व उनके प्रतिदिन के क्रियाकलपो का वर्णन कर बच्चों को यह प्रेरणा देने का प्रयास किया है कि कोई भी कार्य छोटा या बड़ा नही होता। नगरीय समुदायों की विशेषता जनसंख्या की विभिन्नता, अवैयक्तिक एवं द्वैतीयक संबंधों का प्रचलन तथा औपचारिक सामाजिक नियंत्रण पर निर्भरता आदि है। नगरों में मुख्यत: जनसंख्या का आधिक्य पाया जाता है। जनसंख्या आधिक्य के कारण नगरों में बेरोजगारी, आवास, गरीबी, अपराध आदि की समस्याएं दृष्टिगोचर होती है।

* वरिष्ठ प्राध्यापक (हिन्दी) महारानी लक्ष्मीबाई शा.क.मा.वि., नीमच नगर, नीमच (म.प्र.) भारत

बाल साहित्य में सामाजिक भूगोल – यह संसार एक घट है। यहां प्रतिपल कुछ न कुछ घटता ही रहता है। ये घटनाएं हमारे जीवन को प्रभावित करती है। हमारा चेतन और अचेतन मन दोनों ही हमारे घर परिवेश, समाज, शहर, प्रांत, देश, विश्व में जो कुछ अच्छा बुरा होता है उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहता है। इन घटनाओं का अच्छा बुरा प्रभाव बालक के मन पर भी पड़ता है। बच्चे के चारों ओर का वातावरण उसको प्रभावित किए रहता है और जैसा वातावरण एक बालक को मिलता है उसी वातावरण के अनुसार वह उसमें ढ़लता चला जाता है। एक बाल साहित्यकार की संवेदनाएं समय की धड़कन को अपने में समेट लेती हैं और कहानी के माध्यम से उन्हीं संवेदनाओं को बालकों तक पहुँचाता है। होनहार बिरवान के होत चिकने पात नामक कहानी डॉ. सुरेश पंत की ऐसी ही कहानी है जिसमें राजा के द्वारा एक व्यक्ति की संवेदनाओ को ठेस पहुंचती है।

एक दिन चाणक्य का महानंद राजा के दरबार में बहुत अपमान हुआ। उसी दिन उन्होंने राजा के राज्य को नष्ट करने का प्रण किया। एक दिन जब वह एक मार्ग से गुजर रहे थे तो उन्होनें खेल खेलते हुए बालकों के झुंड में एक अत्यन्त गरीब बालक को देखा जो बालकों का राजा बना हुआ था। वह किसी को दण्ड व किसी को पुरस्कार दे रहा था। चाणक्य को उस बालक में अनोखी प्रतिभा दिखाई दी। उन्होनें उस बच्चे की मां से उस बच्चे को अच्छी शिक्षा दिलाने के लिये कहा व राजा के दरबार में भेज दिया। जब बच्चा दरबार में आया तो उसने एक ऐसी पहेली को बिना छुए शेर को लोहे की सलाखों से पिघला कर पिंजरे को खाली कर दिया। यही बच्चा बड़ा होकर चाणक्य की सहायता से सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य बना।

बाल कहानियों में लोक उपादान – कहानयिां व लोककथा मानव जाति की परम्परा का अनमोल खजाना है। हजारो वर्षो के अनुभव इसमें संग्रहित है। जब शिक्षा की सुविधाएं न थीं तो यही कथाएं नई पीढ़ि को शिक्षा देती और जीवन के कठिन सफर के लिये तैयार करती थीं। इन कथाओं की परम्परा आज भी वैसी ही चली आ रही है। ये कथाएं बच्चों के प्रति वृद्धजनों का स्नेह प्रकट करने के साथ साथ शिक्षा भी देती है और मनोरंजन भी करती है। ये कथाएं पुरानी पीढ़ी को नई पीढ़ी से मिलाती है। लोक कथाएं, लोकगीत, विभिन्न प्रकार की कहानियां व कविताएं समाज में कुछ इस प्रकार प्रचलित हो गई है कि यह कहना कठिन हैं कि कोई कथा कहाँ से कहाँ पहुँची है। ये कहानियाँ व कथाएं कई प्रकार की होती हैं। सर्वप्रथम देव कथाएं है जिनमें देवता सत्पुरुषों पर कृपा करते थे।

हे भगवान ! मेरी जान बचाओं नामक बालगीत में वर्तमान समय में भी एक बच्चा भगवान से प्रार्थना करता हुआ कहता है कि –

हाय ! विद्यालय हमको जाना, पड़े रोज यह कष्ट उठाया।
क्यों भगवान मम्मी मेरी न्यारी, भोर जगाया कष्ट दे भारी।।

बाल साहित्य में राजनैतिक भूगोल – बाल साहित्य में राजनैतिक भूगोल भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत एक प्रजातांत्रिक देश है जिसमें लोकतंत्र प्रणाली प्रचलित है। लोकतंत्र में शासन जनता का, जनता के द्वारा व जनता के लिये होता है। इनमें अनेक राजनैतिक दल होते है जो जनता के द्वारा चुनकर आते हैं। इन दलों का प्रमुख प्रधानमंत्री के रुप में शपथ ग्रहण करके देश की बागडोर संभालते है। भिन्न भिन्न राजनैतिक दलों के अपने अपने मूल्य तथा मानदण्ड होते हैं जिनके अनुसार उनके सदस्यों का व्यवहार निर्देशित एवं नियंत्रित होता है। प्रत्येक दल यह चाहता है कि उसे ही जनता के अधिक से अधिक वोट प्राप्त हों जिससे उसी के दल की सरकार बन पाये एवं सत्ता उन्हीं लोगों के हाथ में हो। टूटे पुल नामक कहानी में ल्यूसन रॉसन ने राजनीति के कारण बच्चों के जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का वर्णन किया है। जनता का फैसला नामक एकांकी में राजीव आचार्य व संदीप मदान में आधुनिक राजनीति का चित्रण किया है।

बाल साहित्य में जीवन प्रतीक – मानव जाति युगों–युगों से सदकर्मो में विश्वास करती चली आ रही है। बालक भी हमारे वातावरण की ऊपज ही होते है। वे वैसे ही कार्य करते है जैसे संस्कार वे विरासत में प्राप्त करते है। लेकिन कुछ स्थानों पर बालक अपनी सूझबूझ और साहस का परिचय देते हैं तथा सभी को आश्चर्यचकित कर देते हैं। ये घटनायें उनके जीवन प्रतीक के रुप में अमर हो जाती है। मेरी अभिलाषा है—– नामक कविता में द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी ने एक बच्चे के मन की अभिलाषा का वर्णन किया है – सूरज सा चमकूँ मैं, चंदा सा चमकू मैं, नभ जैसा निर्मल हूँ, शशि जैसा शीतल हूँ, धरती सा सहनशील, पर्वत सा अविचल हूँ इन पंक्तियों के माध्यम से कवि ने बच्चों में महानता के गुण जागृत करने का प्रयास किया है।

बाल साहित्य में जागरण एवं विद्रोह – भारत वीरों की भूमि है। यहाँ अने वीरों ने देश भक्ति के लिये अपने प्राणों का बलिदान किया है। यहाँ देश भक्ति और राष्ट्रीयता का भाव ही सर्वोच्च गौरव का विषय माना जाता है। यही कारण है कि मातृभूमि पर प्राण न्यौछावर करने वाले बलिदानियों को स्वतंत्रता संग्राम में सदैव प्रेरणा स्त्रोत समझा जाता है। चाहे इंकलाब जिंदाबाद का नारा हो, चाहे महाराणा प्रताप, शिवाजी और लाला लाजपतराय व सरदार भगतसिंह के नाम हों, ये सभी हमारे स्वंतत्रता सेनानियों के लिये आदर्श बने रहे है और मातृभूमि पर तन मन धन न्यौछावर करने की शिक्षा देते रहे है। गाँधी का आव्हान नामक बालगीत में कवि ने कहा है –

हिन्दुस्तान हमारा है, हम हैं इसकी संतान।
इसकी रक्षा की खातिर, हम दे देंगें निज जान।।
हिन्दुस्तान महान हमारा हिन्दुस्तान महान।
हिन्दु और मुसलमान ने मिलकरी शमशीर उठाई।।
भारत के कोने कोने में थी बढ़ चली लड़ाई।
दिल्ली के दक्षिण में फैला नाहर का आव्हान।।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्याय में देश काल और परिस्थितियों का बाल साहित्य के माध्यम से चित्रण करने का प्रयास है। इस अध्याय में विशेष रुप से लोकउपादान, जीवन प्रतीक और बच्चों में उपजने वाले विद्रोह को रेखांकित किया गया है। कहानियों में लोकउपादानों के माध्यम से सामाजिक जीवन की झलक दिखाई गई है, वहीं दूसरी ओर बच्चों का कल्पना संसार रुपांकित हुआ है। इस अध्याय में पहेलियों, कहानियों एवं बालगीतों के माध्यम से ग्रामीण और शहरी जीवन पड़ताल की कोशिश की है वहीं बालगीतों के माध्यम से परिस्थितियों का भी चित्रण किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

शासकीय व अशासकीय विद्यालयों कें किशोर-किशोरियों में प्रचलित फास्टफूड विषय पर अध्ययन

डॉ. रीना मालवीय *

शोध सारांश – किशोरावस्था जीवन की एक नाजुक अवस्था है। जहां बालक का झुकाव जिस दिषा में हो जाता है वह उसी दिशा में आगे बढ़ता है, इस समय बालक में कर्तव्यों, जिम्मेदारियों विशेष अधिकारो, सामाजिक संबंधों में बहुत परिवर्तन आ जाते है। ऐसी स्थिति में स्वयं के माता-पिता सभी साथियों और अन्य के प्रति दृष्टिकोण को बदलना अनिवार्य हो जाता है। किशोरावस्था वास्तव में वह अवस्था है जब बालक बालिकाओं में शारीरिक परिपक्वता के साथ-साथ मानसिक, संवेगिक और सामाजिक देखी जाती है।

प्रस्तावना – एक बालक बाल्यावस्था की दहलीज समाप्त कर वह किशोरावस्था में कब प्रवेश करता है इसका मान भी नही होता परंतु वृद्धि की तीव्रता सांवेगिक तथा मानसिक परिवतर्तन वरबस बालक के किशोर रूप परिवर्तन की ओर ध्यान आकृष्ट करते है, किशोरावस्था में भूख में वृद्धि होती है साथ ही उनकी पोषक संबंधी आवष्यकताएं भी बढ़ जाती है। उनमें संवेगात्मक परिवर्तन भी आते है इस समय में यदि पोषक तत्वों का अभाव होता है तो इससे उनकी अस्थियों पर अधिक असर पड़ता है तथा वे नाटे रह जाते है।

किशोरों को अपने शरीर के वनज के प्रति अनावश्यक सजगता उत्पन्न हो जाती है जिससे कभी-कभी उनका भोजन संतुलित नही पाता है लड़कों की रूचि व्यापम खेल आदि के प्रति बढ़ती है जबकि लड़कियां अपने वजन को कम करने के लिये डायटिंग करने लगती है सामाजिक अपरिपक्वता के कारण भी किशोरों में संवेगात्मक तनाव विद्यमान रहता है स्कूल या कॉलेज में काम से भी वे शके रहते है घर में भी माता-पिता के कारण उत्पन्न तनावयुक्त व्यवहार से तथा आर्थिक परतंत्रता या निर्भरता के कारण चिन्तित रहते है। जिससे उनकी भूख कम हो जाती है। आधुनिक जीवन शैली ने मनुष्य को प्रकृति से दूर कर दिया है तथा स्वास्थ्य एवं फिटनेस आज के समय में चर्चा का एक बड़ा विषय बन चुका है यह हमारे खान पान दिनचर्या व शारीरिक गतिविधियों पर निर्भर करता है पहले के समय में मनुष्य अपनी जीविका के लिये कई शारीरिक श्रम करता था किन्तु वर्तमान समय में हर चीज आधुनिक हो गई हे जिसकी वजह से शारीरिक गतिविधियां कम हो गई है हर वो काम जो पहले मनुष्य स्वयं करते थे आज मशीनों से होने लगा है इससे हमारे समय की तो बचत होती है किन्तु खानपान गलत होने के साथ गतिविधि भी कम हो जाये तो बीमारियां जकड़ने लगती है जैसे मोटापा, डायबिटीज, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, जोड़ो का दर्द आदि। इस जीवन शैली का प्रभाव सभी पर समान रूप से पड़ रहा है। खास तौर पर युवा पीढी पर इसका असर अधिक है। काम का बोझ इतना बढ़ गया है कि घर पर खाना बनाने का समय ही नही है इसी कारण पेट भरने के लिये वे फटाफट खड़े-खडे फास्ट फूड कोल्ड ड्रिंक आदि ले लेते है।

अध्ययन का उद्देश्य :-

1. किशोर किशोरियों में प्रचलित फास्ट फूड की आदतों को जानना।
2. किशोर किशोरियों में प्रचलित फास्ट फूड की रूचियों को जानना।
3. फास्ट फूड के उपयोग पर विज्ञापनों के प्रभाव को ज्ञात करना।

अध्ययन क्षेत्र एवं सीमाएं :-

1. शोध कार्य हेतु हाशंगाबाद जिले के 2 शहर लिये गये है।
2. होशंगाबाद जिले के कुल 2 स्कूल का चयन किया गया है।
3. होशंगाबाद जिले के 2 शहर से 25-25 किशोर-किशोरियों को ही तथ्यों में लिया गया है।

अध्ययन की तकनीक – सहसंबंध, प्रमाप विचलन

सारणी -1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

वर्तमान युग आधुनिक है व प्रत्येक व्यक्ति इस आधुनिकता की दौड़ में शामिल है चाहे वह किसी भी आयु का क्यों ना हो। किशोर वर्ग इन्ही आधुनिक खाद्य पदार्थ को अपनाते है जो फास्ट फूड यानि जल्दी तैयार होने वाला भोजन कहलाता है ये खाद्य पदार्थ नवीन होने के कारण किशोर वर्ग में ये लोकप्रिय व अधिक पसंद या रूचि कारक होता है। उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि किशोर किशोरियों द्वारा फास्ट फूड पसंद में हां का 94.66 प्रतिशत है, तथा नही का 5.33 प्रतिशत है अत: हम कह सकते है कि फास्ट फूड पसंद करने वाले किशोर किशोरियों की संख्या का प्रतिशत सर्वोधिक है।

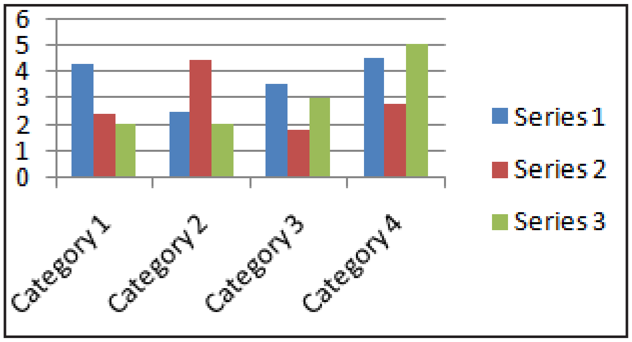

सारणी -2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

आधुनिक फास्ट फूड के मुख्य रूप से दो प्रकार होते है भारतीय व पाष्चात्य। किशोर वर्ग की रूचि भारतीय व पाष्चात्य फास्ट फूडस् में पाई जाती है वे बाजार में उपलब्ध सभी फास्ट फूडस का उपयोग करते है चाहे वह भारतीय हो या फिर पाष्चात्य। उपरोंक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि किशोर किशोरियों

* शासकीय गृह विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

द्वारा अधिक पसंद किया जाने वाला पाष्चात्य फास्ट फूड का 39.66 प्रतिशत है व भारतीय फास्ट फूड का 27 प्रतिशत तथा दोनों प्रकार के फास्ट फूड पसंद करने वालों का 33.33 प्रतिशत है। अतः हम कह सकते है कि पाष्चात्य फास्ट फूड की संख्या का प्रतिशत सर्वाधिक है।

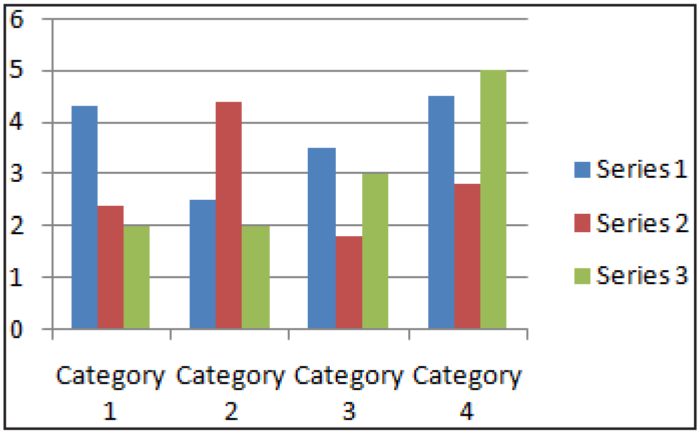

सारणी - 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

जिस प्रकार फास्ट फूड के दो प्रकार होते है उसी प्रकार इसमें भी विविधता पाई जाती है किशोर किशोरियों द्वारा शाकाहारी व मांसाहारी फास्ट फूड को भी पसंद किया जाता है। उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि किशोर किशोरियों द्वारा अधिक पसंद किया जाने वाला शाकाहारी फास्ट फूड का 68.33 प्रतिशत है दोनों प्रकार के फास्ट फूड का 25.66 प्रतिशत मांसाहारी फास्ट फूड का 6 प्रतिशत है अतः हम कह सकते है कि प्रस्तुत अध्ययन में शाकाहारी फास्ट फूड की संख्या का प्रतिशत सर्वाधिक है।

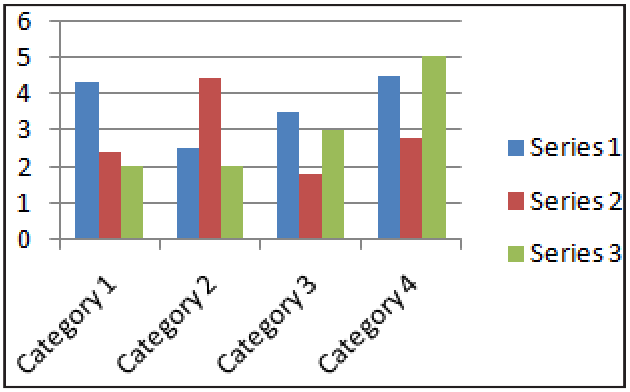

निष्कर्ष :

1. सर्वेक्षित किशोर-किशोरियों से उनके द्वारा ग्रहण किये जाने वाले सुबह के समय नाष्ते का सेवन आवष्यक रूप से ग्रहण करते है।
2. सर्वेक्षित किशोर-किशोरियों में विद्यार्थियों को उनकी पसंद/रूचि जानने पर पाया कि अधिकांश किशोर-किशोरियां फास्ट फूड को अधिक पसंद करते है।
3. सर्वेक्षित निष्कर्ष में पाया गया कि पाष्चात्य फास्ट फूड को पसंद करने वाले किशोर-किशोरियों का प्रतिशत अधिक पाया गया है।

सारांश - वर्तमान समय में आधुनिक जीवन शैली का प्रभाव किशोर-किशोरियों पर समान रूप से पाया है। इसलिये उनका आधुनिक खाद्य-पदार्थ फास्ट फूड के प्रति आकर्षण दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है, जहां किशोर अपने मित्र मंडली के साथ इन तुरंत तैयार होने वाले फास्ट फूड को खाना पसंद करते है वही किशोरियां अपने वनज को कम करने के लिये इन फास्ट फूड को खाना पसंद करती है क्योंकि उनका मानना है कि वे जितना कम खायेंगी उनका वनज प्रबंधन संतुलित रहेगा। किंतु किशोर वर्ग इस बात को मानने के लिये तैयार नही होते है। कि जिस फास्ट फूड का सेवन वे लगातार कर रहे है। उनमें पोषणीय पदार्थो का अभाव रहता है साथ ही इनमें अधिक मात्रा मे वसा व उच्च स्तर की उर्जा पाई जाती है। जिससे उनमें मोटापा, हृदय रोग, व तनाव जैसी भयानक बीमारियों का कारण हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रो. नारायण सुधा-आहार विज्ञान रिसर्च पब्लिकेषन्स, जयपुर 1997
2. Jackal john A & Keith A Sculled Fast food :- Road side Restaurants in the Automobile age Baltimore johns Hopkins University press - 1999

सारणी -1 : किशोर किशोरियों द्वारा पसंद/रूचि फास्ट फूड

क्रं.	विवरण	शासकीय		अशासकीय			
		किशोर	किशोरियां	किशोर	किशोरियां	कुल संख्या	प्रतिशत
1	पंसद	69	68	74	73	284	94.66
2	ना पसंद	06	07	01	02	16	05.33
	कुल	75	75	75	75	25	100

स्त्रोत :- स्वयं अनुसंधान

सारणी –2 : किशोर किशोरियों द्वारा अधिक पसंद किये जाने वाला फास्ट फूड

क्रं.	विवरण	शासकीय		अशासकीय			
		किशोर	किशोरियां	किशोर	किशोरियां	कुल संख्या	प्रतिशत
1	भारतीय	45	30	01	05	81	27
2	पाश्चात्य	10	15	54	40	119	39.33
3	दोनों	75	75	75	75	25	99.99

स्त्रोत :– स्वयं अनुसंधान

सारणी –3 : किशोर किशोरियों द्वारा पसंद/रूचि फास्ट फूड का प्रकार

क्रं.	विवरण	शासकीय		अशासकीय			
		किशोर	किशोरियां	किशोर	किशोरियां	कुल संख्या	प्रतिशत
1	शाकाहारी		50	43	54	205	68.33
2	मांसाहारी	07	05	05	01	18	6
3	दोनों	75	75	75	75	25	99.99

स्त्रोत :– स्वयं अनुसंधान

****

बाल साहित्य में बाल मनोविज्ञान एवं सामाजिक चेतना की गवेषणा एवं अध्ययन पद्धति

डॉ. रेखा रानी सिंह *

शोध सारांश – बाल मनोविज्ञान में गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक के मनुष्य के मानसिक विकास का अध्ययन किया जाता है। जहाँ सामान्य मनोविज्ञान प्रौढ़ व्यक्तियों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन करता और उनको वैज्ञानिक ढंग से समझने की चेष्टा करता है, वहाँ बाल मनोविज्ञान बालकों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन करता है और उन्हें समझघने का प्रयत्प करता है। इस अध्याय के अंतर्गत बालकोंको समझाने तथा सामाजिक चेतना का विकास करने के लिये विभिन्न बाल साहित्यकारों की कथा–कहानियों व उनकी मनोवैज्ञानिक समीक्षा का आश्रय लिया गया है।

प्रस्तावना – बाल मनोविज्ञान एक नवीनतम विधा है। यह मनोविज्ञान की वह शाखा है जिससे मनुष्य के मानसिक विकास का अध्ययन किया जाता है। बाल मनोविज्ञान में बालकों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन किया जाता है। और उन्हें समझाने का प्रयत्न भी किया गया है। बालकों के शारीरिक और मानसिक विकास का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन पिछले कई दशकों से हो रहा है। बाल मनोविज्ञान का प्रांरभिक अध्ययन फ्रांस में हुआ।

आधुनिक मनोविज्ञान का भी बालकों के जीवन में बड़ा महत्व है जिससे यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य जाति का भविष्य नवयुवकों पर नहीं अपितु बालकों पर निर्भर है। यदि मनुष्य जाति इस दुनिया को स्वर्ग बनाना चाहती है तो उसे अपने बालकों के जीवन को उच्च स्तर तक विकसित करना होगा। बाल जीवन ही नई सभ्यता का आधार है। यही उसकी सामग्री है, यही उसके विकास का नियम है। यही उसकी सफलता की कुंजी है।

बाल मनोविज्ञान एक नवीनतम विधा है। यह मनोविज्ञान की वह शाखा है जिससे मनुष्य के मानसिक विकास का अध्ययन किया जाता है। बाल मनोविज्ञन बालकों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन करता है और उन्हें समझाने का प्रयत्न भी करता है।

बालकों के शारीरिक और मानसिक विकास का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन पिछले कई दशक से ही हो रहा है। बाल मनोविज्ञान का प्रांरभिक अध्ययन फ्रांस में हुआ। आधुनिक मनोविज्ञान का भी बालकों के जीवन में बड़ा महत्व है जिससे यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य जाति का भविष्य नवयुवकों पर नहीं अपितु बालकों पर निर्भर है। यदि मनुष्य जाति इस दुनिया को स्वर्ग बनाना चाहती है तो उसे अपने बालकों के जीवन को उच्च स्तर तक विकसित करना होगा। बाल जीवन ही नई सभ्यता का आधार है। यही उसकी सामग्री है यही उसके विकास का नियम है। यही उसकी सफलता की कुंजी है।

बाल साहित्य में मनोविज्ञान व सामाजिक चेतना की अवधारणा – मनोविज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जिसके अंतर्गत बालक के मन व उसमें होने वाले परिवर्तन को उचित तरीके से समझा जा सकता है। किस अवस्था में बच्चे के अंदर क्या परिवर्तन आता है तथा इस अवस्था में वह किस उचित–अनुचित दिशा की ओर कदम बढ़ा सकता है। यह मनोविज्ञान के अंतर्गत जाना जाता है। बाल साहित्य में मनोविज्ञान का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

बालक के मानसिक स्वास्थ्य के लिये, उसके मानसिक रोग निवारण के लिये तथा उसके मनोविकास के लिये बाल मनोविज्ञान आवश्यक है। बालकों के पालन पोषण के लिये हर माता–पिता को मनोविज्ञान की शिक्षा दी जानी चाहिये। जिस प्रकार किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये अनुभव और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है उसी प्रकार बालक के पालन पोषण का भार आने से पूर्व बाल मनोविज्ञान के प्रशिक्षण की आवश्यकता को आवश्यक बना देना चाहिए। अज्ञानी व अनुभवहीन माता–पिता बालक के मानसिक गठन को विकृत बना सकते है। बहुत से ऐसे कार्य जैसे– खाना खाना, बाजार जाना, पढ़ने बैठना आदि को बच्चा पसन्द नहीं करता है और माता पिता या बड़े भाई–बहनों के कहने पर भी वह ये कार्य करने का तैयार नहीं होता है तो ऐसे में बड़े लोग बच्चे को कोई लालच देकर या डराकर ये काम करा लेते है। उस समय तो उनका उद्देश्य पूरा हो जाता है लेकिन धीरे धीरे बच्चा इन बातों का अभ्यस्त हो जाता है।

यहाँ ऐसे ही बाल मनोभाव की एक लघु कहानी की चर्चा की जा रही है – तनु के माता–पिता उससे हमेशा कक्षा में प्रथम आने की आशा लगाते थे। उन्होंने तनु से प्रथम आने पर नई साईकिल दिलाने का वायदा किया था। तनु भी एक प्रतिभावान छात्र था, लेकिन सत्र के अंत में पंकज नामक मेधावी छात्र के प्रवेश लेने के कारण तनु एक नंबर से द्वितीय स्थान प्राप्त करता है। इस कारण वह कक्षा में व घर दोनों स्थानों पर निराश रहने लगा, उसकी माँ व शिक्षक के पूछने पर भी वह उन्हें कुछ नहीं बताता, लेकिन शिक्षक ने तनु के मनोभाव को समझकर उसकी माँ को समझाया कि परीक्षा के नंबर से बच्चे की प्रतिभा नहीं आँकनी चाहिए। इस तरह से माता–पिता को बच्चे की वास्तविक समस्या समझ में आयी और वे उसके लिये नयी साईकिल उसी दिन ले आये।

यदि माता–पिता को अपना उत्तरदायित्व ठीक तरह से निभाना है तो उन्हें यह सत्य स्वीकार करना चाहिये कि बालक भी बड़ो की तरह ही दु:ख व अपमान महसूस करता हैं अत: उसके शारीरिक–मानसिक विकास के लिये अनुकुल वातवारण की आवश्यकता है। बालक के मनोविकास में घर के सभी सदस्यों का सदाचारी होना बहुत आवश्यक है क्योंकि बालक में अनुकरण की प्रवृत्ति होती है और वह जैसा घर के सदस्यों का व्यवहार देखता है वैसा ही व्यवहार करने का प्रयत्न करता है। बालक के मनोविकास में खेलों का भी बहुत महत्व है। विभिन्न आयु में बालक को विभिन्न प्रकार के

* वरिष्ठ प्राध्यापक (हिन्दी) महारानी लक्ष्मीबाई शा.क.मा.वि., नीमच नगर, नीमच (म.प्र.) भारत

खिलौनें देकर उनका विकास करना चाहिये।

बाल साहित्य में सामाजिक चेतना – बाल साहित्य हिन्दी साहित्य का एक उपेक्षित पहलू रहा है। आज बालकों के व्यवहार, स्वभाव तथा समस्याओं को जानने के प्रति मनोवैज्ञानिकों तथा समाजशास्त्रियों ने अपने अपने दृष्टिकोण से बालकों में रुचि ली है। भारत में ही नहीं अपितु संसार के सभी देशों में शिक्षा का उद्देश्य धार्मिक या व्यक्तिगत व सामाजिक सुरक्षा था। ऐसी शिक्षा में बालक की रुचियों तथा आवश्यकताओं का कोई महत्व नहीं था। बालकों को तथा तरुणों को कठोर अनुशासन में रखा जाता था। उन्हें वही शिक्षा दी जाती थी जो उन्हें देश की सुरक्षा के लिए सदैव तत्पर रखें।

उस समय ऐसी धारणा थी कि बालक जन्म से भ्रष्ट तथा अनैतिक होता है जिसे कठिन अनुशासन द्वारा ही नैतिक और समाजोपयोगी बनाया जा सकता है। आज बच्चे के मानसिक विकास को अधिक प्रगतिशील बनाने के लिये प्रयत्न किये जा रहे है। ऐसा अनुभव किया गया है कि कभी कभी भरसरक प्रयत्न करने के उपरांत भी कुछ छात्र अपेक्षित शैक्षिक प्रगति करने में असफल रहते है। ऐसी परिस्थिति में कई कारण हो सकते है जिनमें से कुछ का संबंध बालकों के अभिवृद्धि और विकास से हो सकता है। लेकिन माता–पिता उचित शिक्षा देकर वह स्वयं भी वैसा बनकर अपने बच्चों में सुधार ला सकते है जैसे –

घोंसले की तलाश – इस कहानी के माध्यम से लेखक ने आलसी व्यक्तियों की जिन्दगी का वर्णन किया है। एक गांव के एक धनी व्यक्ति के एक खेत में बहुत दिनों से हल न चलने के कारण उसमें बहुत से जंगली पौधे व झाड़–झकाड़ उग जाते थे। उन्हीं झाडियों के बीच बहुत से पक्षी अपने घोंसले बना कर रहते थे। एक दिन मालिक आया और अपने पुत्रों से कहने लगा कि कल सभी नौकरों को खेत की सफाई के लिये भेजों, हम यहाँ पर गेहूँ बोयेंगे। यह सुनकर सभी पक्षी डर गये, क्योंकि अभी उनके बच्चे बहुत छोटे थे। यह देखकर बूढ़ा तीतर बोला डरो मत। यह मालिक और इसके नौकर बहुत आलसी है। कुछ दिन बाद वह मालिक आकर बोला कि कल सभी रिश्तेदारों को हमारी सहायता के लिये बुलाओं। वह हमारा खेत साफ करने में मदद अवश्य करेंगे। यह सुनकर बूढ़ा तीतर बोला डरो मत, इसने किसी रिश्तेदार की मदद नहीं की है तो इसकी मदद वे क्यों करेंगे ? यह सुनकर पक्षी बहुत प्रसन्न हुए और ऐसा ही हुआ। लेकिन कुछ दिन बाद वह मालिक फिर आया खेत को देखकर बोला कि कल मैं स्वयं अपने बेटों के साथ आकर इस खेत की सफाई करुगाँ। यह सुनकर पक्षियों को अधिक चिंता नहीं हुई। इस बार उस बूढ़े तीतर ने सभी पक्षियों को समझाया कि इस बार यह व्यक्ति जरुर आयेगा क्योंकि इसने स्वयं काम करने का निश्चय किया है। अब हमारे बच्चे भी बड़े हो गये है। अब हमें दूसरे घोंसले की तलाश में उड़ जाना चाहिये। अपने बच्चों सहित नये घोंसले की तलाश में उड़ गये। तभी उन्हें खेत का मालिक अपने बेटों सहित फावड़ा, कुल्हाड़ी लेकर खेत की ओर अते दिखा।

यौवनारम्भकाल में बालकों में अनेक परिवर्तन देखने को मिलते है। यह परिवर्तन सभी बालकों को समान रुप से प्रभावित नहीं करते है परंतु इस काल में बालकों में कुछ अभिवृद्धि तथा व्यवहार संबंधी परिवर्तन काफी सामान्य होते है। इस काल के बालकों में मानसिक तनाव साधारणतः कई रुपों में देखने को मिला है, जैसे भावुकता, एकांत में रहने की इच्छा, चिड़ाचिड़ापन, स्वतंत्रता प्रदर्शन, अत्यधिक संवेदनशीलता, दूसरों पर आलोचनात्मक प्रहार की प्रवृत्ति आदि।

बाल साहित्य में समस्याओं का चयन – बाल साहित्य बच्चों के मनोविज्ञान को दृष्टि में रखकर लिखा गया है। मनोविज्ञान के अंतर्गत ही बच्चों की समस्याओं का चयन किया गया है जिससे इन समस्याओं को दूर कर बालकों को सुसमायोजित बनाया जा सके। समाज में बालकों के जीवन में कुछ समस्याएं ऐसी है जो अनजाने में ही आ जाती हैं जिनकी ओर माता–पिता व शिक्षक का ध्यान भी शीघ्रता से नहीं जाता है और जब बालक की उस समस्या की ओर माता–पिता व शिक्षक का ध्यान जाता है तब बालक के अंदर वह समस्या काफी मात्रा में पनप चुकी होती है। कुछ समस्याएं जो बालक के अंदर उत्पन्न हो सकती है, वे निम्न है :–

1. असामान्य बालक
2. समस्यात्मक बालक
3. शिशुओं द्वारा बिस्तर में मूत्र–त्याग
4. अंगूठा चूसना
5. चोरी करना – कुछ बच्चे

अनुसंधान योग्य समस्याओं के लक्षण – साधारण व्यक्ति के लिये यह एक आश्चर्यजनक बात होगी कि जिन समस्याओं को हम समस्या समझते है वह वास्तव में समस्या होती ही नही। मान की यह प्रवृत्ति है कि जब किसी कार्य में वह असफल होता है तो या तो असफलता को अपने व्यक्तित्व में समा लेता है या फिर ऐसा मार्ग ढूडता है जिससे कि वह अपने मन को सात्वना दे सके। एक मार्ग है अपने व्यक्तित्व को पीछे हटा लेना। हटाने वाले व्यक्ति या तो भीतर ही भीतर कुढ़ते रहते है या किसी अन्य व्यक्ति पर अपना क्रोध प्रकट करते है।

सामाजिक चेतना की गवेषणा एवं काल सीमाएँ – सामाजिक प्रतिक्रिया तब होती है जब एक व्यक्ति दूसरे से मिलता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों को प्रभावित करता है और बदले में स्वयं भी उनसे प्रभावित होता है। व्यक्ति किसी समूह के प्रति भी प्रतिक्रिया कर सकता है। जब कोई व्यक्ति लोगों के समूह से मिलता है जो इससे उसके व्यवहार पर प्रभाव पड़ता है। इसके प्रतिपक्ष में कई लोगों का समूह भी किसी अकेले व्यक्ति के प्रति प्रतिक्रिया करता है, उदाहरण के लिये समूह अपने नेता के प्रति प्रतिक्रिया करता है।

बाल साहित्य का रचना संसार – प्राथमिक से माध्यमिक और माध्यमिक से उच्चतर माध्यमिक सोपान पर कदम रखता बालक बहुत से शारीरिक मानसिक परिवर्तनों से भी गुजरता है। इसी अवस्था में बहुत कुछ जान लेने का भाव उसमें होता है। इस बात को दृष्टिगत रख किशोर मन की जिज्ञासा शांत करने हेतु विभिन्न बाल साहित्यकारों की सामग्री का चयन किया गया है। वर्तमान युग में बालगीत, बाल कविता, बाल कहानी व बालकथा का धूमधाम से प्रचार प्रसार हुआ। इन रचनाओं में चित्रों को भी स्थान दिया गया। रामनरेश त्रिपाठी स्वर्ण सहोदर, मूलचंद श्रीवात्री, श्री नाथसिंह, आरसी प्रसाद सिंह व राजा चौरसिया ने बच्चों के अनुकुल रचनाएं लिखी। राज चौरसिया की कविता 'बच्चे' की कुछ पंक्तियां यहां वर्णित है –

कच्चे घड़े समान हैं बच्चे, फूलों सी मुस्कान है बच्चे।
ये भी सब कुछ सह लेते हैं, सहनशील इंसान है बच्चे।।

निष्कर्ष – बालक के जीवन में कौन कौन सी समस्याएं आ सकती है और उन समस्याओ के लक्षण क्या होते है ? इन सबका भी इस अध्याय में विस्तार से वर्णन किया गया है तथा उन समस्याओं से निपटने अर्थात उन्हें दूर करने के उपाय भी खोजने का प्रयास किया गया है। बाल साहित्य के विभिन्न साहित्यकारों के व्यक्तिक संदर्भ तथा उसका रचना संसार भी वर्णित किया गया है। इन साहित्यकारों में प्रमुख है– पदमा चौंगवकर, विष्णुप्रभाकर, हरिकृष्ण देवसेर, उषाराज सक्सेना, अब्दुल बिस्मिल्ला खां, अवधेश कुमार आदि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

समकालीन कहानीकार निर्मल वर्मा

डॉ.वन्दना नामदेव*

प्रस्तावना – निर्मलवर्मा ने अपनी कहानियों की कथावस्तु समकालीन जीवन को बनाया है। इसलिये उनकी कथावस्तु का आधार समकालीन जीवन है। वर्माजी ने अपनी कहानियों में समकालीन जीवन की विशेष परिस्थिति तथा विशेष समस्याओं को उठाया है। अकेलापन उनकी सभी कहानियों में है। लेकिन प्रत्येक कहानी में अकेलेपन के कारण अलग–अलग है।

कहानियों के कथानक विशिष्ट परिस्थिति के कथानक है। पात्र कुछ अपने स्वभव व कुछ परिस्थितियों के कारण अकेले पड़ते जाते है। इन्द्रनाथ मदान अकेलेपन के बोध के बारे में लिखते है– 'इसमें अकेलेपन का जो बोध है वह मध्यकालीन और छायावादी अकेलेपन के बोध से भिन्न है। मध्यकालीन बोध के अनुसार मानव आत्मिक स्तर पर अकेला है। रोमांटिक बोध की दृष्टि से वह व्यैक्तिक स्तर पर अकेला है। लेकिन कहानियों की आधुनिकता के अनुसार वह नियति के स्तर पर अकेला है।'[1]

निर्मलवर्मा अपने समय से काफी प्रभावित है। इसलिये उनकी कहानियों में अकेलापन, अजनबीपन, संत्रास, शून्यता, प्रतिबद्धता, विघटन, मानव अस्तित्व के संदर्भ कई बार उठते हैं।

निर्मलवर्मा के रचन संसार के सभी पात्र अकेलेपन की अवसादपूर्ण स्थिति के बीच घिरे हुये हैं।

एक खास तरह का रीतापन, उदासीनता, तटस्थता और उसी से जन्मा अकेलापन वे उससे बाहर निकलना चाहते है, पर निकल नहीं पाते। ऐसा प्रतीत होता है कि अकेलेपन को भोगते–भोगते ही उनकी पूरी जिंदगी निकल जायेगी। पात्रों का अकेलापन निर्मलवर्मा द्वारा उन पर थोपा हुआ नहीं है, बल्कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महानगरीय वातावरण ही ऐसा बन गया कि व्यक्ति चाहते हुये भी स्वयं को दूसरे से जोड़ नहीं पाता है। यह अकेलापन जीवन का अकेलापन है।

निर्मलवर्मा यह बताना चाहते है कि वर्तमान में मनुष्य के लिये एक दूसरे का साथ पाना महत्वपूर्ण है। किसका साथ है ? यह गौण होता जा रहा है। मुख्य प्रश्न साथ देने वाले की अंर्तरंगता का है। उसकी सहानुभूति और उसके सहारे का है।

'निर्मलवर्मा के पात्र अपने में सीमित हैं। उन्हें बाहरी भागदौड़ आपा–धापी आकर्षित नहीं करती। उनके लिये राजनैतिक सामाजिक स्थितियां भी महत्वहीन है। ये पात्र अपने में सीमित अकेले और अपनी ही संवेदनाओं में बंधे हुये है। वस्तुत: चरित्र के लिये जो दृढ़ता अपेक्षित होती है वह इनमें नही है। लेकिन इतना है कि निर्मलवर्मा ने पात्रों की बारीकी को पकड़ा है। वैसे भी चरित्र की सफलता या असफलता शिल्प विधि पर निर्भर नहीं करती वह तो कहानीकार की दृष्टि पकड़ और प्रवाह पर निर्भर करती है।'[2]

यह तो रही इनकी कहानियों की वस्तुस्थिति जिससे प्रकट होता है कि इनकी कहानियों का आधार मनगढ़त नही है जो उन्होने देश–विदेश मे स्वयं अवलोकन किया, अनुभव किया उसी को कथारूप में जनसामान्य को बताया है। जैसा कि निर्मलवर्मा यथार्थवादी है। अर्थात वह जो देखते हैं या भोगते हैं उसी को अपने लेखन में कहानी, उपन्यास या निबंध रूप में देते है।

'अजनबी संबंधो और अकेलेपन की गाथा आज के जीवन की तेजी और व्यस्तता में अपने को एडजस्ट न कर पाने और सामाजिक जीवन के सामान्य प्रवाह से अलग कर जाने के फलस्वरूप ही अधिक है।'[3]

विशेष तौर पर महानगरीय क्षेत्रों में व्यक्तिवादी चिंतन के कारण अकेलापन बढ़ता जा रहा है। मनुष्य के जीवन में इतनी अधिक समस्यायें पैदा हो गई कि उसका जीवन निराश और अजनबीपन क पर्याय हो गया है। इस प्रकार वातावरण के माध्यम से भी निर्मलवर्मा ने इस समस्या को अभिव्यक्त किया है। आधुनिक जीवन की यही विडम्बना है कि व्यक्ति अकेला नहीं होते हुये भी अकेला है। निर्मलवर्मा इसी अकेलेपन को बड़ी खूबसूरती के साथ उभारते है, और माध्यम के रूप में परिवेश का सहारा लेते है।

निर्मलवर्मा अपनी कहानियों में आधुनिकता एवं अस्तित्व के उपकरणों के लिये विदेशी एवं महानगरीय परिवेश को चुनते है। ऐसा परिवेश चुनकर निर्मलवर्मा स्त्री–पुरूष संबंधो में आयी स्वच्छन्दता का अधिक स्वतंत्रता पूर्वक चित्रण कर सके है।

निर्मलजी की कहानियों में कारूणिता की विशेषता रही हैं। इसी कारण उन्हें कभी संवेदनशील कभी अतीतजीवी कभी भावुक और जिंदगी के को पहचाने वाला कथाकार कहा है।

लंदन की एक रात निर्मलवर्मा की पहली ऐसी कहानी है। जिस कहानी में निर्मलवर्मा ने केवल अपनी कहानी का परिवेश परिवर्तित किया बल्कि पहली बार अमूर्त समस्याओं का परित्याग कर एक मूर्त समस्या को कहानी का विषय बनाया हैं। कहानी की सांकेतिकता उसकी अर्थवत्ता को एक साथ कई स्तरों पर प्रतिध्वनित करती है। डॉ. इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में–इस कहानी में लंदन की एक रात है। या लंदन के एक पव की पीने की रात है। या पीने के बाद की डर कीएक रात है। या आतंक के भूख की एक रात है। या बेकारी की रंगभेद के अहसास की एक रात है।

इसके पात्र लंदन में सुरक्षा की खोज में आते हैं। लेकिन वे यहॉ अपने को और अधिक असुरक्षित पाते है।'[4]

उपरोक्त उदाहरण में वर्माजी ने कहानी घटना के माध्यम से अपने युग में होने वाली सत्य घटनाओं से अवगत कराया है। निर्मलवर्मा की दूसरी चर्चित कहानी डेढ़ इंच ऊपर है। 'इस कहानी के माध्यम से इन्होने अपनी

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शा. महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.) भारत

मौलिक अंर्तदृष्टि के द्वारा पीने की एक शाम को पाशचात्य जीवन बोध में निहित पतन को चित्र में परिवर्तित कर दिया है। निर्मलवर्मा इस कहानी के माध्यम से किसी स्थान विशेष के एक व्यक्ति की कहानी नहीं कहना चाहते बल्कि एक मनुष्य जीवन की बिडम्बना को एक धनीभूत क्षण में उद्घाटित करते है।'[5]

समकालीन कहानीकारों में आधुनिकता बोध अत्यधिक पाया जाता है। निर्मलजी हिन्दी साहित्य में आधुनिकता बोध के अर्धवय व्यक्तियों में से एक माने जाते है। वे उन संपूर्ण अंधविश्वासों एवं फार्मूलों का विरोध करते है। जिन्हें हमने आधुनिकता के नाम पर अपनाया और ओढ़ लिया है। पश्चिम के अंधानुक्रम के उपक्रम में अपने अतीत से पूरी तरह कट गये है। निर्मल वर्मा उन गतिविधियों का उल्लेख करते है। जो हमने आधुनिक होने और बनने के नाम पर की है तथा इन गतिविधियों से मुक्त होने का संकेत वे अपनी कहानियों में दे रहे है।

इस प्रकार संपूर्ण विवरण से स्पष्ट होता है कि निर्मलवर्मा की प्रत्येक क्षैत्र पर गहन दृष्टि थी। उन्होंने बिना किसी लाग लपेट के अपने युग के कृत्यों को अपने सृजन के माध्यम से हम तक पहुँचाने का कार्य किया है। जिसका अध्ययन चिंतन करके आज के पाठक वर्ग, बुद्धिजीवी वर्ग, को चिंतन मनन करने के नये विषय मिलेंगे और अधूरे कार्य पूरे हो सकेगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी उपन्यास एक नयी दृष्टि इंद्रनाथ मदान पृष्ठ 81
2. आंचलिकता और हिन्दी उपन्यास डॉ.नगीनाजैन पृष्ठ 40
3. द्वितीय महायुद्धद्योत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ.लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय पृष्ठ 26
4. हिन्दी उपन्यास – लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय पृष्ठ 137
5. भारतीय साहित्य के निर्माता निर्मलवर्मा – कृष्णदत्त पालीवाल पृ.30

****

हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव में तुलनात्मक अध्ययन करना

डॉ. राजेश साकोरीकर * मंजुला कौशिव **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। शोध के लिये देवास जिले के अशासकीय एवं शासकीय विद्यालय के 200-200 कुल 400 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया है। प्रदत्तों के संकलन के लिये शोधार्थी द्वारा शैक्षिक उपलब्धि के लिये पूर्व कक्षा के प्राप्त किये प्राप्तांकों के प्रतिशत एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के लिये स्वनिर्मित मापनी का प्रयोग किया गया। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ की देवास जिले के हाई स्कूल स्तर के अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों का शैक्षिक उपलब्धि का स्तर, शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के स्तर से अधिक रहा। अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों पर शैक्षिक उपलब्धि पर योग का प्रभाव और शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग का प्रभाव दोनों ही समान दिखाई दिया।

प्रस्तावना – आधुनिक युग में जहाँ व्यक्ति के दिन – प्रतिदिन के जीवन में वैयक्तिक भिन्नताएँ दृष्टिगोचर हो रही है वहाँ समस्त मनोवैज्ञानिक परीक्षणों विशेष रूप से उपलब्धि परीक्षणें का अपना विशेष महत्व है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण की श्रंखला में अत्यधिक रूप से प्रयोग में आने वाले उपलब्धि परीक्षण हमारे शैक्षिण जीवन में अत्यंत सहायक होते हैं। विद्यार्थियों, अध्यापकों, शिक्षण विधियों, पाठ्यक्रम या शिक्षा के किसी भी पहलु का मापन केवल उपलब्धि परीक्षणों के द्वारा ही संभव होता हैं आज विश्व में विभिन्न स्तरों – प्राइमरी, जुनियर, हाईस्कुल, कॉलेज, विश्वविद्यालय आदि पर विभिन्न भ्राँति के उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जा रहा है। इसके अभाव में शैक्षिक विकास की प्रक्रिया पूर्णतया असम्भव है। इनका प्रयोग केवल शैक्षिक – परिरिस्थितियों तक ही सीमित नहीं होता बल्कि उद्योग, व्यवसाय, सेना, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में भी इनका व्यापक प्रयोग किया जाता है।

योग का प्रभाव आज विश्व के मानव मस्तिष्क पर पड चुका है। यद्यपि कहीं-कहीं इसके वास्तविक स्वरूप को लेकर भी कई प्रकार की अज्ञानताएं है, जिनका निराकरण समय रहते हमारे द्वारा किया जाना अंत्यन्त आवश्यक है। व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिष्कार हो अथवा परिवार, समाज, राष्ट्र का सुधार हो, व्यक्ति की शैक्षिक उपलब्धि के साथ-साथ योग भी सदा ही इसमें आगे रहा है।

शैक्षिक उपलब्धि – शैक्षिक उपलब्धि पर विद्यालय के वातावरण अनुशासन आदि का प्रभाव पड़ता हैं। जिस विद्यालय में उत्तेजन तथा उत्प्रेरणा का वातावरण होता है, वहाँ के बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि अधिक होती है। जिस विद्यालय में ऐसे वातावरण का अभाव होता हैं, वहाँ के बच्चों में यह उपलब्धि कम होती हैं।

योग – योग का सामान्य अर्थ है जुडना, मिलना युक्त होना या एकत्र करना। योग शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के युजिर धातु से हुई है। जिसका अर्थ है सम्मिलित होना अथवा एक होना। इस एकीकरण का आश्य जीवात्मा तथा परमात्मा का एकीकरण अथवा मनुष्य के व्यक्तित्व के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक पक्षों के एकीकरण से है। अत: आत्मा का परमात्मा में लीन हो जाना अथवा किसी भी जीव का ईश्वर में मिल जाना योग कहलाता है।

औचित्य – शासकीय विद्यालय एवं अशासकीय विद्यालय शिक्षा प्रदान करने वाली दो महत्वूर्ण संस्थाएं हैं। लेकिन इनके विद्यालय के विद्यार्थियों के वातावरण एवं शिक्षण में कई असमानताये हैं, जैसे उनका रहन-सहन, पारिवारिक स्थितियॉ एवं विद्यालय परिवेश इत्यादिं संस्थाओं में पढने वाले विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि में एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव पर क्या समानतायें या असमानतायें हैं इस बात को ध्यान में रखते हुये शोधार्थी द्वारा उक्त क्षेत्र में शोध कार्य करने का निर्णय लिया।

समस्या कथन – हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव में तुलनात्मक अध्ययन करना

उद्देश्य

अध्ययन के निम्न उद्देश्य थे-

1. हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांकों का तुलनात्मक अध्ययन करना
2. हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के माध्य फलांकों कां तुलनात्मक अध्ययन करना

परिकल्पनाऍं – अध्ययन की निम्न परिकल्पनाऍं थी :

1. हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांकों में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।
2. हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के माध्य फलांकों में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

शोध प्रविधि –

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए शोधार्थी द्वारा न्यादर्श के रूप में देवास जिले के शसकीय विद्यालय एवं अशासकीय हाई स्कूल स्तर के कुल

* प्राध्यापक, पी.जी.बी.टी. कालेज, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शौंधार्थी, पैसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

400 विद्यार्थियों का सोद्देश्य न्यादर्श विधि से चयन किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत शासकीय एवं अशासकीय हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव से संबंधित प्रदत्त एकत्रित किये गये। इन प्रदत्तों के संकलन के लिये शोधार्थी द्वारा शैक्षिक उपलब्धि के लिये पूर्व कक्षा के उर्तीण प्राप्तांकों के प्रतिशत को लिया गया है। एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के लिये स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। जिसमें 20 प्रश्नों का समावेश शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के लिये किया गया।

प्रदत्तो का संकलन – शोधार्थी द्वारा प्रदत्तों के संकलन हेतु प्राचार्यो से अनुमति प्राप्त कर शासकीय एवं निजी हाई सकूल स्तर के 11 वीं कक्षा के विद्याथियों से सोहार्द्रपूर्ण वातावरण में शैक्षिक उपलब्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव कीं मापनी भरवायी गई।

प्रदत्तो का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन में परिकल्पनाओं के परीक्षण हेतु संकलित प्रदत्तो का विश्लेषण **स्वतंत्र *t* टेस्ट** द्वारा किया गया।

परिणाम एवं विवेचना :

तालिका 1 से पता चलता है कि देवास जिले के शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि का माध्य 29.02 एवं प्रमाणिक विचलन 4.65 है, एवं अशासकीय विद्याालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि का माध्य 29.91 एवं प्रमाणिक विचलन 3.87 है, तथा *t* का मान 2.08 है, जा ***df = 398*** सार्थकता के स्तर 0.05 पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना 'हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांको में सार्थक अन्तर नहीं होगा' निरस्त की जाती है। निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांकों में सार्थक अंतर होगा। अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांकों का मान 29.91 हैं, जो शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांको के मान 29.02 से सार्थक रूप से ज्यादा है। अर्थात् अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि, शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि की तुलना में अधिक है। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में शैक्षिक उपलब्धि शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाई गई।

निष्कर्ष – ऐसा इसलिये हो सकता है कि शासकीय विद्यालय में शैक्षिक वातावरण का अभाव पाया जाता है। वहॉ के शिक्षकों को कक्षा कार्य के अतिरिक्त भी कई कार्य करने पढतें है, जबकि अशासकीय विद्यालय में शिक्षकों को केवल कक्षा कार्य ही करना पडता है, उन्हे कोई अतिरिक्त कार्य नहीं दिया जाता। और उन्हे कई अन्य सुविधायें भी दी जाती है जैसे प्रोजेक्टर, स्मार्ट क्लास आदि, जबकि शासकीय विद्यालय में इन सभी का अभाव पाया जाता है। इसलिये हो सकता है कि अशासकीय विद्यालय का शैक्षिक स्तर शासकीय विद्यालय के शैक्षिक स्तर से ज्यादा हो सकता है।

तालिका 2 से पता चलता है कि देवास जिले के शासकीय विद्यलय के विद्याार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव का माध्य 29.08 एवं प्रमाणिक विचलन 4.67 है, एवं अशासकीय विद्याालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव का माध्य 29.84 एवं प्रमाणिक विचलन 3.84 है, तथा का मान 1.77 है, जो है जो कि सार्थकता के किसी भी स्तर पर सार्थक नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना 'हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के माध्य फलांको में सार्थक अन्तर नहीं होगा' स्वीकृत की जाती है। निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के माध्य फलांकों में सार्थक अंतर नहीं होगा। अर्थात् अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों क शैक्षिक उपलब्धि पर योग का प्रभाव एवं शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग का प्रभाव दोनों ही समान है।

निष्कर्ष – शासकीय विद्यालय एवं अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियो पर उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर योग का कोई भी प्रभाव नहीं पडता है।

शैक्षिक निहितार्थ – शासकीय विद्यालय एवं अशासकीय विद्यालय दोनों ही की शैक्षिक उपलब्धि अलग-अलग पाई गई पर दोनों पर ही उनकी उपलब्धियों पर योग के प्रभाव मे कोई अंतर नहीं दिखाई दिया। इसलिये शासकीय विद्यालयों को चाहिये कि वे अपने विद्यालय के विद्यालय के विद्यार्थियों पर उचित रूप से ध्यान देवें और उनके माता-पिता को भी समय-समय पर उनके बच्चों की कमियों को बताकर दोनों आपस में ही इसे दूर करने का प्रयास करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर रे, साधना (2004) प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अशासकीय विद्यालयों में नामांकन पर पडने वाले प्रभावों का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन (खण्डवा के संदर्भ में) एम.एड.लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर
2. कुलश्रेष्ठ (2005), एम.पी. शिक्षा मनोविज्ञान आर.लाल बुक डिपो मेरठ।
3. ओसवाल(2006), जी,:प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, प्रथम संस्करण, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
4. www.Shodhganga.com

तालिका 1 हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के माध्य फलांकों का सारांश

विद्यार्थी	N	M	SD	`t'value	Df	Inference	Level of Sig.
शासकीय विद्यालय	200	29.02	4.65	2.08	398	Significant	.05
अशासकीय विद्यालय	200	29.91	3.87				

तालिका 2 हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर योग के प्रभाव के माध्य फलांकों का सारांश

विद्यार्थी	N	M	SD	`t'value	Df	Inference
शासकीय विद्यालय	200	29.08	4.67	1.77	395	NotSignificant
अशासकीय विद्यालय	200	29.84	3.86			

Venture Capital Investment Strategies For Artificial Kidney DNA RNA Repair And Stem Cells Along With Organ Cloning - Associated Medical Socio-Economical Cum Financial Sector Reforms

Dr. Vinay Kumar Verma *

Introduction - Product: ARTIFICIAL KIDNEY etc. Business Area: India widely and then global level Product Delivery: Absolute Free to the Patient, Product Availability: In all possible District Hospitals firstly then the nearest hospitals of the Patient., Project Cost : Not Exactly Specified, **ANGEL INVESTOR-VCF-OPC FACILITY IS OM SEBI & MCA** Project Site : https://sites.google.com/site/recommendation201213/hot-news-1/artificialkidney Project Description: **VENTURE CAPITAL INVESTMENT STRATEGIES**

The collection of the documents and papers from the owner of the device and searching the out put of the device from the public in general, because this kidney is being already installed on the various animals and some humans for the device trial purposes. And the device should be applied for the Production rights before the Patent Holder cum Owner or this Patented Product in an extreme rapid manner. The production will be out source to the companies on the China Manufacturing HUB and under the extreme tight & strict confidentially prepared agreement, which will be renewable on the yearly basis and electronically daily basis digitally required to be signed. The device production cost in optimum less manner should be implemented, and extreme less profit margin to the producer company such as 4 % should be for reserve purposes. The International Stock exchanges should pass a resolution for the donation or duty free donation to this company must be applied for , and implemented. The Concept of Freeware:- Per Capita Income of the Nation, Per Citizen Capital & Asset + Liability is the value of a citizen, and hence a citizen is mandatorily required to be given such take care of the health of the Super Most Important Citizen(either BPL or Extreme BPL or above the BPL or HNW Individual) In this respect the government should a national citizens finance portal having details about the national and state wise stake holdings of a common man and his citizens rights, liabilities and obligations in this respect. Further the governments should reduce the black money policy paralysis from each and every step of the governance of the federal structure and social structure and universal structures of the humanity and beyond the humanities due to Principal of absolute liability of the Principal of absolute accountable government and federalism of the human easement rights, liabilities and obligations for opportunities and fare global local and universal code of conduct of the humanities for various hidden benefits over 50 % black money and 5000000000 % white Production Possibilities, beyond the expectation of the common human being. Further the government should act for the Compulsory health Insurance as the Jan Dhan & 100000.00 for Life Insurance is schemed by the our honorable government, similarly the government should act for the health of the states and nation, & for every public in general under the concept of the “Principal of Accountable Good & Efficient Government”. This may compulsorily insured firstly the every MP, MLA, Mayors & secondly the head of the Panchayets and every member in Municipal Council then, the all employees of the Union and state Governments, and lastly the every citizen who hold the UID (Aadhar) And UID should be included every person of the Indian Union with new comers in India, where as foreign new comers should have the social security number otherwise NRI UID or outsider’s people’s UID must be generated with the reasonable source information of that person]. Gender equality sense is applicable here 100% for Males, Females & Common or Natural Gender are entitled for the same amount of insurance and health insurance. This will create the government revenue, because the TDS concept should/will be implemented for the premium of this policies in case of salaried persons from government and non government and corporate employees with min max or average premium of RS/- 2,000.00/-, 5,000.00/-,10,000.00/- per annum. And this scheme is optional who have taken the health insurance from the market already. Here the proportion of the private sector insurance companies should be not hurted as 1000% new insurance policies holders will be increased in the Indian Insurance Market. The tax benefits may/must be continued with the same finance act and income tax act

*(Department Of Commerce) Shaheed Padmadhar Singh Govt. Auto. P.G. Collage, Satna (M.P.) INDIA

with the reference to Section 80. And for the BPLs the government should promote the voluntarily ITR Filing after 18 years of the age and should be compulsory file free of cost easily with self assessment online which shows citizens contribution towards the nation building who already paid a lot of indirect tax to the government and all contributed for nation building wither BPL or Non BPL. The Grant from IBRF, IMF, and WTO's promotional products should be adopted with global donation policies matters. The National government should sign nation wise MOU for this NGO and for availing the profit under the scheme first time going to install in the world and by India and also in India.

The kidney and diabetes etc. Diseases protected packed food & vegetable production and distribution at home delivery world wide. This concept should be adopted by the registered g-NGO.(to be registered under the gg constitution and nationwide constitutions) global corporate governance code draft is pending Before the International law commission United Nation. VCSSGOC.webs.com is crucially working on this by decades.

References :-

1. Personal Survey.

****

Religious Aspect of Donne's Personality

Dr. Anjali Jain *

Abstract - Donne had a split personality; he was torn by strong inner passions and pulls. In the early period of his life he is at the nadir of disbelief. In the later, he is at the Zenith of exaltation. He praises the variety and mutability in life. He champions the fickleness and the variableness of life, of nature and of his own character. There in his poetry frequently secure a logical pattern of the debate between the body and the soul. He tended to dispose of all his knowledge around the concept of the contrast between matter and spirit, to see anything organize into the logical pattern of conflict and antithesis. In his own words,"As virtuous men pass mildly away, and whisper to their souls to go, whilst some of their sad friends do say, the breath goes now, and some say no., and the earth, and no mans wit can well direct him where to look for it".

Introduction - John Donne is a poet of departure from the tradition of Elizabethan era. He began to write about 1592. Donne was essentially a religious man, though he moved from one denomination to another. His spirit of rational faith continued throughout his life. Donne's temperament was essentially religious. He has been acclaimed as one of the greatest religious poets. A great number of the religious poets of the 17th century were influenced by him.

The central theme of Donne's poetry was his own intense personal moods, as a lover, as a friend and as a preacher. Donne is one of the few poets whose conversational passages ring with the authority of time and rhetoric is lively with the feeling of immediacy. With the kindling of imagination, passion and thought, there is the expression of the passionately apprehended realities of life, often in a turbid, tumultuous manner. He had no coherent system of philosophy. His philosophy records the reaction of his restless and acute mind to the intense experience of the moment. He derived inspirations from the new philosophy and scholasticism. He says:-

"And new Philosophy calls all in doubt,
The element of fire is quite put out;
The Sun is lost, and th'earth and no man's wit.
Can well direct him where to look for it."
(Donne)

He felt that it is not enough for a man to have the knowledge of Socrates, Aristotle; 'for if you know as much as Socrates you know nothing and St.Paul found that to be all knowledge, is to know Christ.' There is always an antithesis, in Donne, between natural and divine knowledge; the former is inexact, while the later is clear. Donne's pre-occupation with mortality and death fills his poetry with a macabre element. He decries death-

"Death be not proud."

This poem also suggests the allusion to the Christian myth of the 'Resurrection'. According to the Christian belief, on the Day of Judgment at God's command the souls will be resurrected and they will again enter their respective bodies. The poet makes use of apparent similarities, scientific and psychological facts, religious myths and theological and intensely personal. The complex of the poem lends itself to define the passionate, consummate feeling of love. It has a philosophy of love; but it is a picture of love's consummate passion involving both soul and body.

The group of Holy Sonnets includes nineteen sacred sonnets. The problem as to when the various sonnets were written is a complex, largely theological one, but it seems likely that many of them belong to that period of doubt and intense thinking about his religion, which preceded Donne's entry into the Church. "A few of the poems, indeed, by their occasional roughness of metre and phraseology, seem almost as if they were written before La Corona; but the years 1609-17 are probably the likeliest for the majority". Donne's greatness as a religious poet lies in his truthfulness, in his having left in his Holy sonnets a personal record of a brilliant mind struggling towards God.

The poet resigns himself to God. He was first made by God and he was made for Him.

As due by many titles I resigne
Myselfe to thee, O God, first I was made
By thee, and for thee………
(Donne)

In another sonnet, the poet laments for his life is lost in sin and soul is black with it. Now he is sick and the sickness is the call of Death.

Oh my blacke Soule ! Now thou are summoned
By sickness, deaths herald, and champion.
(Donne)

*Guest Faculty (English) Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.) INDIA

The following lines of a Holy Sonnet reminds us of Macbeth's philosophic utterance on the death of Lady Macbeth when Donne defines death.

This is my player last scene, hear heavens appoint
My pilgrimages last mile; and my race
Idly, yet quickly runne, hath this last pace,
My spans last inch, my minutes last point,
(Donne)

Undoubted his masterpiece is "Death be not proud'. The poet claims that there is no need to fear of death. It is rather a way out to the eternal life for death causes end of body on the one hand and liberation of soul on the other.

One short sleep past, we wake eternally,
And death shall be no more. Death thou shalt die.
(Donne)

There are fifteen later divine and religious poems which Donne composed during the later part of his life. The best of these are : 'Good Friday' and 'A Hymn To Christ'.

(i) Good Friday, 1963, Riding Westward - Donne composed it on April 2, 1613 on Good Friday when he was going to meet his friend Edward Herbert. Donne reflects upon sin and redemption. He compares a man's soul to a sphere and his devotion to God to 'The Intelligence' which controls the motion.

Let mans Soule be a spheare, and then, in this
The Intelligence that moves, devotion is.
(Donne)

(ii) A Hymne To Christ, At the Authors Last Going Into Germany - It was composed in May 1619 when Donne was going to Germany with Lord Doncaster on a diplomatic mission. He does not fear death and hopes that the eternal darkness of death will release him from earthly troubles and enable his to see the face of God.

"To see God only, I goe out of sight :
And to scape stormy days, I chuse.
An everlasting night."
(Donne)

(iii) The Hymn to, my God, in my sicknesse - It was composed by Donne just before his death. The central image of the poem is of the as a "flat map", before it is pasted on the globe, the west and east lie close together. No doubts, west is the place associated with Christ and resurrection.

"What shall my West hurt me? As West and East
In all flatt Maps (and I am one) are one'
So death doth touch the Resurrection."
(Donne)

(iv) A Hymne, to God the Father - The poem is a kind of confession of his sins. With his confessions he also seeks forgiveness for them. The poet wants that the light of Christ's mercy should fall on him at his death.

"Wilt thou forgive that sinne which I did shunne
A yeare,or two:but wallowed in,a score?
When thou hast done ,Thou hast not done,"
(Donne)

Donne was not a religious poet in the sense in which poets like Herbert and Milton. Herbert was on a whole a religious poet. A through 'n through religious poet, who did not write secular or love-poems in the manner of Donne. Milton was the master of epic style. Herbert he was purely religious poet. Donne stands opposite to the epic poet in all respects. The crucial difference between the two poets is whereas Milton is grand; Donne is human, touchingly human. Mrs Simpson says Mysticism is an integral part of Donne's thought. Donne's mysticism cannot be isolated from the rest of his thought; for his whole philosophy is that of a Christian mystic.(Simpson,pp-88).*Walton* in his 'Lives' compared Donne's life to St.Augustine -"Now the English Church has gained a second St. Austin, for I think none was so like him before his conversion; none so like St.Ambrose after it." (Walton, 1817 pp-90-91)

Donne stresses a religion in the true sense. He expresses himself on those things at which all religions agree. The religion which gives such passion to his poems to religion in its most primary and fundamental sense what Donne asks for is purgation, purification, illumination a directing of heart. In his religious poems what he longs for is to exchange the complexity of a personality for singleness and simplicity of soul. As he is aware of the fact that God shed his love on the simple souls-sinless souls. Knowing the reason he plea to god to make his soul white with his blood.

Like other Christian mystics his poetry also contains the language and reference of the Bible. As Christianity is a revealed religion, contained in the scriptures and the experience of Christian souls; the Christian poet can not voyage alone. Donne appears for the first time in poetry a passionate attachment to those catholic elements in Anglican and from Donne and his disciples inherited it.

John Donne was a language master of cumulative effects critics who have studied his prose and poetry in isolation often tend to forget that they are the product of a unified personality. The complex web of Donne's thinking should not be dissociated from the conflict of theological speculation in time. To communicate his thought and experiences with passionate convection, Donne gave considerable attention to the meaning of words and one of his prose merits is the solicitude to define terms and ensure understanding.

The essence of Donne's literary personality is invention and the commonest made of it is conceit. Donne was in no sense a philosopher his strength lay in a daring exploration of words and rhythms. The disciplined idiosyncrasy of ideas was skilfully adapted to the cultivated style of Jacobean naturalism. There is a great similarity of thought and treatment between the love poems and holy sonnets though the theme is different; the spirit behind the two categories of poems is the same.

Donne in his early poetic life, mostly written poems of love whereas in later he was a true preacher of God like St.

Augustine. . He satirizes religious conflict of Roman Catholics and Protestant in his age. His concern towards religion can be compared to with attitude of Milton in Lycidas a generation later. His irreverence is directed against confusion and corruption in it which leave the truly religious spirit in a state of uncertainity.

"As among
Lechrous humors,there is one that judges
No wenches wholesome, but course country drudges."
(Donne).

Donne, whose society was filled with new philosophy, he expressed his thoughts through them. He used the images from those contemporary topics of the era that is of navigation, astronomy, theology. He moved over the path of illumination, divine compassion for divine grace. He contemplates to gain the company of Almighty. The strong faith that, God is the ultimate creator of this world and he can be achieved through sincere devotion. A devotee can achieve his Master by 'loving Him and only loving Him'. He states that God is the creator of this world; he runs this universe. God is all and all is in God this concept is the key thought of Donne's mystical philosophy. Done says 'Salvation' can only be gained by the mercy of God. It is the theme which he treated with a wealth of learning and imagination. He knew how the light of reason goes out, leaving a man helpless in matters of faith and how God damps the understanding and darkens the intellect. He knew that the greatest affliction comes when, God workout upon the spirit itself and damps that, that he casts a sooty cloud upon the understanding and darkens that. They considered everyday as the 'Day of Judgement' for it retards the growth of man in goodness and sanctification.

He has seen God in every image; even they secular images for the exhibition of the relation of Ultimate with them. At some instances God is the creator and forerunner of this world, on others He is the Judge to give the judgment of the deeds of man. Somewhere, He is the Savoir, friend, Master. He also used the imagery of Lover-beloved and Husband-wife to show their devotion.

The ultimate truth, the creator of the commanding force behind all that is seen in the universe is perceived and explained through metaphors and similes. The indefinable, unknown and unidentifiable has to be brought to a perceivable arena and this is possible through easily intelligible words. But ambiguity has its own romance. The object of love has to be one that evokes emotions to the extreme. The qualities of the worldly beloved (man or woman) in flesh and blood are magnified in such a way that they can be sublimated and applied to someone who is too remote to reach. The relationship between the lover and the beloved is through pure unobstructed and selfless love, and, to achieve union with the beloved, the lover has to devote himself to a state where his very existence melts into the object of his love. The object of the all-consuming love may be anyone from a human being to God.

Donne, Like the mystics in all ages believed that the problem of the knowledge of God could not be solved through reason intellect and philosophy and that the comprehension of reality could only be attained after a prolonged exercise of 'sense and spirit' resulting in illumination.

References :-

1. A.G. George , Studies in Poetry, Heinemann New Delhi, London, 1971 P-48
2. Douglas Bush, English Literature in the Earlier Seventeenth Century 1600-1660 ed. Oxford Clarendon Press 1962, p. 243
3. Horstmann, 2002, p93
4. Izaack Walton, Lives, ed.by T.Zouch, 1817 pp.90-91
5. Simpson, A Study of the Prose Works of John Donne pp-88.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Valuation Of National Monetary Policy In Favor Of Higher Education

Dr. Vinay Kumar Verma *

Introduction - After 1991 various issues are observed in the respect of Economy and Intellectual Human Resources of "Union Of India", for the point of view of educational and HDI enhancing infrastructure and policy installation.

1. Increased Literacy Rate
2. Increased Women Education Rate
3. Increased Computer Literacy
4. Increased Financial Literacy
5. Increased Legal Literacy
6. Increasing Aviation education Literacy

Need More and More attempts for Human Ethical and Essence Literacy up to 100% of mass and society.

Challenges "Union Of India" -Economy (Professional and Higher Education and Researches)

1. Decreasing Value of INR and higher education Cost
2. Non Reduced Fiscal Deficit up to real targeted level at 0 and HRD of Scholars HR Efficiencies .
3. Continuous Decreasing value of money may hurt the future of "The Economy of Union India" and its forthcoming generation and students.
4. Making PPC Of United Indian Economy -Current PPC multiplied by (Decreased Value and units of money or currency of India)
5. Having a Developing economy and 2nd largest manpower with different ethical fields in affectionately and united manner.

a. Increasing slum and poverty and which will the future target of the 2nd or 3rd next central and state government

Remedy "Union Of India" - Economy Corporate Studies and Higher Educational Appliance on:

1. Microfinance Researches + Due Diligence + Strategic Alliance + Corporate Social Responsibility

a. In PSUs and State Government Undertakings

b. In private and public limed organizations and LLP.

2. Making Supernormal Profit Strategy on the basis of

a. By registering more and more Patents and Trademarks

b. By making and promoting more Software Companies

i. Making more IT parks (5-20 new IT parks are the need of the Union Of India)

ii. Making more STP parks (5-20 new Software Technology Park are the need of the Union Of India)

iii. Making more EPZ (5-20 new EPZ are the need of the Union Of India)

iv. Making more STP parks (5-20 new Software Technology Park are the need of the Union Of India) Making PPC Of United Indian Economy -Current PPC multiplied by (Decreased Value and units of money or currency of India)

v. An organization is the need of India, Which will lead any business sector and pay attention regarding global industrial protection and responsibility in favor of the Indian and rest of Indian societies, India Can lead a particular Global Industrial Lead Role and can be provided protection by WTO, IBRD, IMF and other country and state wise regulatory and responsibility doers. Likewise(CHARTERED UNITED INTERNATIONAL AVIATION INDUSTRIAL FINANCIAL RECONSTRUCTION FUND TRUST INC.)

3. By making more liaison offices and kiosks connectivity's of the - Patent, Trademark, Copyright , Registrar of companies' MCA Facilitation Centers, SEBI District Offices, ETC.
4. By Enhancing the Capital And Credit market of India related Study

a. As NCFM is conducting various courses

b. NISM

References :-

1. Personal Survey.

*(Department Of Commerce) Shaheed Padmadhar Singh Govt. Auto. P.G. Collage, Satna (M.P.) INDIA

मंदसौर जिले में मुल्य वृर्द्धित कर के राजस्व की स्थिति

डॉ. टीना बाफना *

प्रस्तावना - मध्यप्रदेश में वर्ष 1997-98 से ही आंशिक रुप से मूल्य वृर्द्धित कर का क्रियान्वयन किया जा चुका था। 17 फरवरी 1997 को वर्ष 1997-98 के लिए राज्य का बजट प्रस्तुत करते हुए मध्यप्रदेश के तात्कालीन वित्तमंत्री के द्वारा एक करोड से अधिक के वार्षिक टर्न ओवर वाले व्यापारियो पर मूल्य वृद्धित कर आरोपित करने की घोषणा की थी। उसके पश्चात निर्धारित सीमा को कम किया जाता रहा। 1 अप्रैल 1999 से मूल्य वृर्द्धित कर आरोपित करने की इस सीमा को 50 लाख रुपए और वर्ष 2002-2003 से 10 लाख रुपए कर दिया गया। पूर्णरुप से मूल्यवृर्द्धित कर की तिथि 1 अप्रैल 2005 कर दी गई। इस बीच केंद्र सरकार द्वारा देश के विभिन्न राज्यो में विक्रय कर अथवा वाणिज्यिक कर के स्थान पर मुल्यवृर्द्धित कर अपनाए जाने हेतु सतत् प्रयत्न किए जा रहे थे। केंद्रीय सरकार के प्रयासो के फलस्वरुप 1 अप्रैल 2005 से देश के अधिकांश राज्यो द्वारा मूल्यवृर्द्धित कर प्रणाली लागु कर दी गई। मध्यप्रदेश सहित देश के 6 बडे राज्यो में यह कर 1 अप्रैल 2006 से प्रारंभ किया गया। मूल्यवृर्द्धित कर एक अप्रत्यक्ष कर है इस रुप में कि कर को ऐसे किसी से एकत्र किया जाता है जो कर पुरा खर्च नही उठाता।

अध्ययन क्षेत्र - मंदसौर जिला मध्यप्रदेश के उत्तर पश्चिम भाग में स्थित है। जिले का विस्तार 23 डिग्री 45'53'' से 24 डिग्री 45'40'' उत्तरी अक्षांश तथा 74 डिग्री 52'52'' से 75 डिग्री 55'34'' पूर्वी देशान्तर के मध्य है। जिले का भौगौलिक क्षेत्रफल 5,517 वर्ग किलोमीटर है जो म.प्र. के कुल क्षेत्रफल का 1.78 प्रतिशत है। मंदसौर जिले की उत्तरी सीमा पर नीमच जिला एवं दक्षिणी सीमा पर रतलाम जिला स्थित है। जबकि पश्चिम की ओर राजस्थान का प्रतापगढ एवं पूर्व की ओर कोटा एवं झालावाड़ जिले स्थित है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. मूल्यवृर्द्धित कर आधारित कर प्रणाली लागु होने के पश्चात राज्य सरकारो को प्राप्त होने वाले राजस्व व उस पर हुई प्रभावो को जानना।
2. मूल्यवृर्द्धित कर प्रणाली से प्राप्त राजस्व से समाज के विभिन्न वर्गो पर हुए प्रभावो को जानना।
3. मूल्यवृर्द्धित कर प्रणाली से प्राप्त राजस्व से सरकार एवं विभागो की कर प्रशासन की स्थिति जानना।
4. मूल्यवृर्द्धित कर प्रणाली से प्राप्त राजस्व से जिले की वास्तविक प्रगति को जानना व आम नागरिक के जीवन पर प्रभाव जानना।
5. मूल्यवृर्द्धित कर प्रणाली से प्राप्त राजस्व से करदाताओ पर हुए प्रभावो को जानना।

शोध प्रविधियां - प्रस्तुत शोधपत्र हेतु प्राथमिक व द्वितीयक दोनो प्रकार के समंको एवं सूचनाओ का प्रयोग किया गया है। सरकार को प्राप्त राजस्व में हुए परिवर्तनो का विश्लेषण विभिन्न सांख्यिकी प्रविधियो के आधार पर किया गया है। जैसे प्रश्नावली, समान्तर माध्य, औसत व प्रतिशत। आकड़ो को प्रदर्शित करने के लिए ग्राफ, पाईचार्ट, सारणीयो का उपयोग किया गया है ताकि विश्लेषात्मक व तुलनात्मक अध्ययन को सरतलता से समझा जा सके।

प्रशासनिक व्यवस्था - विभिन्न प्रावधानो मध्यप्रदेश मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम 2002, मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम 2004, केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम 1956, मध्यप्रदेश कर अधिनियम 1976, मध्यप्रदेश वृत्तिकर अधिनियम 1995 तथा मध्यप्रदेश लक्जरी कर अधिनियम 1988 आदि को लागु करने के लिए मध्यप्रदेश सरकार द्वारा वाणिज्यिक कर विभाग का गठन किया गया है। मुख्यालय इंदौर एवं मुख्य चार क्षैत्र (इंदौर, भोपाल, जबलपु तथा ग्वालियर) है। प्रत्येक क्षैत्र का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी होता है।

उपर्युक्त ढांचे के अतिरिक्त मध्यप्रदेश में मूल्यवृर्द्धित कर लागू किए जाने के बाद बिना किसी व्यवधान के राजस्व प्राप्ति में निरंतर वृद्धि परिलक्षित हो रही थी।

राज्य व मंदसौर जिले में मूल्यवृर्द्धित कर संग्रहण:- मध्यप्रदेश में मूल्यवृर्द्धित कर लागू होने के पश्चात से ही कर संग्रहण अर्थात सरकार को राजस्व की प्राप्ति में निरंतर वृद्धि हो रही है। तुलना करने पर यह वाणिज्यकर के संग्रहण से कई अधिक है। मूल्यवृर्द्धित कर के संग्रहण की प्रवृत्ति का अध्ययन निम्न तालिका से अधिक स्पष्ट किया जा सकता है:-

तालिका-01 : वाणिज्यक कर एवं मुल्यवृर्द्धित कर के संग्रहण की तुलना

S.	Year	Total Revenue of State Govt.	Mpct/Vat Collection in crore	% Of Total Revenue
1	2003-04	3952.25	2916.73	73.79
2	2004-05	4599.22	3365.60	73.17
3	2005-06	5302.93	3951.43	74.55
4	2006-07	6242.94	4763.63	76.30
5	2007-08	7268.94	5603.87	77.09
6	2008-09	7136.97	5707	-

(स्त्रोत- जिला वाणिज्यिक कर कार्यालय)

उपर्युक्त तालिका 01 से स्पष्ट है कि:- राज्य सरकार को करो से प्राप्त होने वाले राजस्व का लगभग दो तिहाई भाग केवल 1 अप्रैल 2006 के पूर्व वाणिज्यिक कर से और इस तिथि के बाद मूल्यवृर्द्धित कर से प्राप्त हो रहा है। जो कि कुल राजस्व का 76 प्रतिशत लगभग है।

निम्नलिखित तालिका में मंदसौर जिले में मूल्यवृर्द्धित कर के संग्रहण

* L.II.327, किटियानी कालोनी, मंदसौर (म.प्र.) भारत

को स्पष्ट देखा जा सकता है:-

तालिका नं. 02 : vat collection in mandsaur district

Year	Circle I	Circle II	Total	% Increase
2003-04	243.04	514.10	757014	-
2004-05	300.86	562.39	863.25	1401
2005-06	298.29	621.92	920.21	6.59
2006-07	442.82	1046.86	1489.68	61.88
2007-08	480.44	1256.02	1745.46	17.17
2008-09	406.74	993.31	1400.05	19.79
2009-10	414.12	1013.17	1428.00	21.79
2010-11	426.54	1043.56	1470.84	24.35
2011-12	437.20	1069.63	1507.59	26.95

(स्त्रोत:- जिला वाणिज्यिक कर कार्यालय मंदसौर)

वर्ष 2008-09 में जिले में राजस्व संग्रहण मे लगभग 20 प्रतिशत की कमी परिलक्षित हुई है। मुख्य कारण सोयाबीन को वेट से मुक्त कर दिया है और सोयाबीन जिले की प्रमुख फसल है। फिर भी जिले में मूल्यवृर्द्धित कर से आय क्रमश: 2009-10 से लगातार बढती ही जा रही थी।

व्यवसायियो का पंजीयन - मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम की धारा 17 के अंतर्गत व्यवसायियो के पंजीयन संबंधित प्रावधान यह है कि वाणिज्यिक कर अधिनियम में पंजीयन व्यवसायी को कोई नवीन आवेदन पत्र प्रस्तुत नही करना होगा। जिनका टर्नओवर 5 लाख से अधिक है उन पर मूल्यवृर्द्धित कर की देयता आती है। मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम में पंजीयन होने वाले व्यवसायियो के इनपुट टेक्स रिबेट की पात्रता रहेगी। मूल्यवृर्द्धित कर में ऐसे व्यवसायी जिसके द्वारा पंजीयन प्राप्त नही किया गया है, इनपुट टेक्स रिबेट की पात्रता नही होगी। जिले में मूल्यवृर्द्धित कर लागु होने के पूर्व तक पंजीयन व्यवसायियो की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही थी किंतु इसके पश्चात जिले में कुल पंजीयन व्यवसायियो की सख्ंया में कमी देखी गई है मुख्य कारण यह है कि व्यापारियो पर मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम के अंतर्गत कर दायित्व नही आ रहा है। 2008-09 में जिले में व्यवसायियो की पंजीयन संख्या 2.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

कर दायित्व - मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम 2006 की धारा 5(3) में करदाताओ के कर दायित्व की स्थिति का वर्णन किया गया है प्रथमवर्ष में कर का दायित्व उसी आवर्त पर होगा जो उल्लेखित न्यूनतम निश्चित राशि से अधिक होगा। यदि कोई व्यापारी इस अधिनियम के अंतर्गत एक बार कर चुकाने के लिए उत्तरदायी हो जाता है तो उस समय तक उत्तरदायी रहेगा तब तक उसकी दो लगातार वर्षो तक आवर्त 5 लाख रुपए से अधिक न हो, तत्पश्चात निर्धारित की जाने वाली अवधि तक भी उसका कर दायित्व बना रहेगा और उसका आवर्त 5 लाख रुपए से अधिक हो जाता है तो ऐसा व्यापारी इस अधिनियम के अंतर्गत कर देने के लिए पुन: उत्तरदायी हो जाएगा।

कर दायित्व का निर्धारण एवं कर लगाना - मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत व्यापारी पर कर दायित्व निर्धारण करने के लिए आयुक्त द्वारा आवश्यक कार्यवाही की जाएगी और ऐसी कार्यवाही आरंभ होने की तिथि से बारह माह में कर दायित्व का निर्धारण करना होगा। मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम की अनुसूची में कर योग्य मालो का उल्लेख किया गया है। किसी व्यापारी द्वारा निर्धारित अवधि में इस अनुसूची में उल्लेखित मालो के कर योग्य आर्वत पर उसी अनुसूची के कालम में दी गई दरो से कर लगाया जाता है।

क्रय कर लगाना - मूल्यवृर्द्धित कर अधिनियम के अंतर्गत प्रत्येक ऐसा व्यापारी जो अपने व्यवसाय के अंतर्गत अनुसूची में उल्लेखित माल पंजीकृत व्यापारी के अतिरिक्त अन्य किसी व्यापारी से खरीदता है जिसने धारा 11 के अंतर्गत कम्पोजिशन का विकल्प लिया है तो वह उस माल के क्रयमूल्य पर चुकाने हेतु उत्तरदायी होगा।

कर की दरे - मूल्यवृर्द्धित कर की दरे 4 प्रतिशत एवं 12.5 प्रतिशत इसके अतिरिक्त कुछ वस्तुओ को कर मुक्त वस्तुओ की सूची मे भी रखा गया है तथा कुछ चुनिंदा मदो पर एक प्रतिशत की विशिष्ट दर से भी मूल्यवृर्द्धित कर आरोपित करते है जैसे सोना, मूल्यवान पत्थर।

कर का प्रशमन - यदि कोई पंजीकृत व्यापारी मध्यप्रदेश राज्य की सीमा में किसी अन्य पंजीकृत व्यापारी (धारा 9) से अनुसूची 2 में वर्णित माल क्रय करता है तथा उसका आर्वत 40 लाख से कम है तो एक मुश्त कर दायित्व के निर्वाह के लिए विकल्प का चयन कर सकता है कर प्रशमन हेतु विकल्प प्राप्त व्यापारी मूल्यवृर्द्धित कर चुकाने के लिए उत्तरदायी नही होता है और उसे आगतकर की सुविधा भी प्राप्त नही होती है। कर प्रशमन का विकल्प प्राप्त व्यापारी को अपना तिमाही रिटर्न प्रारुप 5 में दाखिल करना है।

निष्कर्ष - मूल्यवृर्द्धित कर लागु होने के पश्चात कर संग्रहण में वृद्धि हुई है जो वाणिज्यिक कर की तुलना में कई अधिक है। प्राप्त राजस्व की स्थिति, पंजीयन व्यवसायियो की स्थिति कर अपवंचन तथा कर उत्पादकता संबंधी सभी दृष्टि से मूल्यवृर्द्धित कर वाणिज्यिक कर की तुलना में श्रेष्ठ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Indirec tax, VS Datty,Taxman publica (p)l+d
2. अप्रत्यक्ष कर, श्रीपाल सकलेचा, सतीश प्रिंटर्स, इंदौर
3. Accounting Standards, D.S. Rawat, Taxman Allied delhi
4. Value added tax, B.V. Mahajan, Tax law house indore
5. राजस्व, डॉ.जे.सी. पंत, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा
6. अप्रत्यक्ष कर, अग्रवाल, गुप्ता, रमेश बुक डिपो, जयपुर

****

दलित साहित्य में मानव अधिकारों का यथार्थ

डॉ. संतोष रानी *

प्रस्तावना – साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। चूँकि व्यक्ति या लेखक भी उसी समाज का एक अभिन्न अंग होता है। इसलिए किसी भी व्यक्ति विशेष के साहित्य को सूक्ष्मता से जानने के लिए उसकी जीवन-शैली को जानना अत्यंत आवश्यक है। अनेक लेखकों ने अपने जीवन के विभिन्न अनुभवों और समाज की प्रत्येक छोटी-बड़ी घटना का गहरी सूक्ष्मता के साथ अवलोकन किया और उसे मनोवैज्ञानिक और यथार्थ के धरातल पर विश्लेषण करते हुए अपने साहित्य में प्रस्तुत किया। उनके अपने अनुभवों की ही यह पूंजी हमारे समक्ष साहित्य के रूप में साक्षात होती है। उदाहरण के लिए जैसे प्रेमचन्द के साहित्य में स्वतन्त्रता को पाने की देशवासियों की ललक दृष्टिगत होती है और वे उस स्वतंत्र भारत की कल्पना करते समय अधिकार, उन्हें सुविधा सम्पन्न तथा शोषण करने वाले उच्च वर्गों के चंगुल से मुक्ति दिलाने और उनके अधिकारों के प्रबल पक्षधर प्रतीत होते हैं। उनका सम्पूर्ण साहित्य में मानव अधिकारों के लिए दलित, शोषित, निम्न वर्गों का निरंतर संघर्ष परिलक्षित होता है।किसी व्यक्ति के साहित्य को यदि बारीकी से समझना हो, तो प्रथमत: समग्रता से उसके सम्पूर्ण साहित्य पर दृष्टि डालनी चाहिए और साथ ही साथ उसकी जीवन यात्रा का भी उचित अध्ययन करना चाहिए।

शब्द कुंजी – दलित साहित्य, दलित उत्पीड़न, मानवाधिकार, मानवीय आत्मसम्मान, सामाजिक व्यवस्था ।

दलित साहित्य दलित प्रतिबद्धता की अभिव्यक्ति है। जब 'दलित' शब्द साहित्य से जुड़ता है तो एक ऐसी साहित्यिक धारा की ओर संकेत करता है जो मानवीय सरोकार और संवेदनाओं की यथार्थवादी अभिव्यक्ति बनता है। यह एक ऐसा साहित्य है, जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा और शोषण के विरुद्ध साहित्यिक अभिव्यक्ति दी है। साहित्यकार कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं होता, बल्कि वह अपने अस्तित्व के लिए पूर्ण रूप से समाज के ऊपर निर्भर करता है। समाज से अलग उसका कोई अस्तित्व ही नहीं होता, दलित साहित्य की मूल भावना यही है। इसलिए यह सामाजिक प्रतिबद्धता का साहित्य है। दलित चिंतकों की यह प्रतिबद्धता मानवतावाद और समाजिकता के प्रति न्याय है।

वास्तव में 'दलित' शब्द का अर्थ जाति-बोधक नहीं, बल्कि समूह की अभिव्यंजना देता है। सामान्य अर्थो में दलित वह है जो भारतीय समाज व्यवस्था में अस्पृश्य माना गया, बेगार करते, कम मूल्य पर श्रम करते श्रमिक, बंधुआ मजदूर, जिसका आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक शोषण हुआ है वह दलित की परिधि में आता है। दलित चेतना का अर्थ इस प्रश्न के साथ जुड़ा है कि 'मैं कौन हूँ।' 'मेरी पहचान क्या है?' दलित साहित्य केवल दलितों के अधिकार एवं मूल्यों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक संदर्भों के साथ जुड़कर समूचे समाज की अस्मिता और मूल्यों की पहचान बनता है। दलित साहित्य मुक्ति आन्दोलन का एक हिस्सा है। शब्द की आग से ऊर्जा ग्रहण करके, दलित रचनाकारों ने अपने आंदोलन को गहरे सरोकारों से जोड़ा है। इसीलिए दलित साहित्य का केन्द्र बिन्दु मानव है। सुप्रसिद्ध दलित साहित्यकार बाबूराम बागूल का मानना है कि-मनुष्य की मुक्ति को स्वीकार करने वाला, मनुष्य को महान बनाने वाला, वंश, वर्ण और जाति श्रेष्ठत्व का प्रबल विरोध करने वाला दलित साहित्य ही हो सकता है। दलित साहित्य का मूल स्वर 'विद्रोह चेतना' का वह क्रांतिकारी उभार है, जिसमें दलित-विमर्श की शुरूआत होती है।

डॉ. गंगाधर पानतावणे दलित साहित्य को व्याख्यायित करते हुए कहते हैं-'दलित साहित्य समाज का दर्पण है, जो हमने देखा, अनुभव किया, भोगा, जाना, समझा उसका अंकन उत्कटता पूर्वक किया। दलित्व का निर्मूलन हमारे साहित्य का हथियार है। इसीलिए सर्वव्यापी क्रांति का आह्वान करना चाहिए।'

रमणिका गुप्ता का मानना है कि-'दलित साहित्य कहीं भी और किसी भी रूप में भी मनुष्य पर अत्याचार व शोषण का विरोध करता है। यह साहित्य समाज को मनुष्य के हित में बदलने का पक्षधर साहित्य है। एक नये मानवीय समाज के निर्माण का पक्षधर है, जिसमें रंग, वर्ण, जाति, लिंग या सामाजिक सत्ता के आधार पर मनुष्यों के बीच भेद-भाव न हो। साहित्य, शोषण पर आधारित व्यवस्था का विरोधी है और सच्ची मानव समता पर आधारित व्यवस्था के निर्माण के प्रति प्रतिबद्ध है।'

दलित साहित्य और मानव अधिकार – दलित साहित्य से तात्पर्य दलित जीवन और उसकी समस्याओं पर लेखन को केन्द्र में रखकर हुए साहित्यिक आंदोलन से है, जिसका सूत्रपात दलित पैंथर से माना जा सकता है। दलितों को हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निम्न स्थान पर होने के कारण न्याय, शिक्षा, समानता तथा स्वतंत्रता आदि मौलिक अधिकारों से भी वंचित रखा गया है। उन्हें अपने ही धर्म में अछूत या अस्पृश्य माना गया है। दलित साहित्य की शुरूआत मराठी से मानी जाती है, जहां दलित पैंथर आंदोलन के दौरान बड़ी संख्या में दलित जातियों से आए रचनाकारों ने आम जनता तक अपनी भावनाओं, पीड़ाओं, दुखों-दर्दों को लेखों, कविताओं, निबन्धों, जीवनियों, कटाक्षों, व्यंग्यों, व्यथाओं आदि के माध्यम से पहुंचाया।

दलित साहित्य की अवधारणा को लेकर लंबा विवाद चला। यह सवाल दलित साहित्य में प्रमुखता से छाया रहा कि दलित साहित्य कौन लिख सकता है? यानी स्वानुभूति ही प्रामाणिक होगी या सहानुभूति को भी स्थान मिलेगा। प्रमुख दलित साहित्यकारों ने कहा चूंकि सवर्णो ने दलितों की पीड़ा को भोगा नहीं, इसलिए वे दलित साहित्य नहीं लिख सकते। यद्धपि यह मत ज्यादा दिनों तक टिका नहीं, परन्तु आरंभ में यह विवाद का मुद्दा बना रहा। यह प्रश्न मराठी की तुलना में हिंदी में अधिक उठा। अंत में इस बात पर ध्यान

*एम.फिल., पी.एच.डी., कनिष्ठ प्राधयापिका, राजकीय कन्या वरिष्ठ माधयमिक विद्यालय मदीना (रोहतक) भारत

केन्द्रित किया गया कि दलित साहित्य अस्सी और नब्बे के दशक में उभरा एक साहित्यिक आंदोलन है, जिसमें प्रमुखता से दलित समाज में पैदा हुए रचनाकारों ने हिस्सा लिया और इसे अलग धारा मनवाने के लिए संघर्ष किया गया।

यद्यपि साहित्य में दलित वर्ग की उपस्थिति बौद्ध काल से सम्मिलित रही है किंतु एक लक्षित मानवाधिकार आंदोलन के रूप में दलित साहित्य मुख्यत: बीसवीं सदी की देन है। रवीन्द्र प्रभात ने अपने उपन्यास यताकि बचा रहे लोकतन्त्र में दलितों की सामाजिक स्थिति की वृहद चर्चा की है। वहीं डॉ.एन.सिंह ने अपनीं पुस्तक 'दलित साहित्य के प्रतिमान' में हिन्दी दलित साहित्य के इतिहास को बहुत ही विस्तार से लिखा है।

साहित्य के सदंर्भ में मानव अधिकार – किसी भी मनुष्य के एक मनुष्य होने के नाते क्या अधिकार होने चाहिए और उन अधिकारों की रक्षा कैसे की जाए, यह सवाल जितना बड़ा है, उतना ही कठिन भी। इस सवाल पर चर्चा दुनिया भर में हुई है। बहुसंख्यक देशों में मानवाधिकार आयोग बने हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद राष्ट्र संघ कायह दूसरा मुख्य क्षेत्र है, जिसके लिए राष्ट्र संघ द्वारा भिन्न-भिन्न संधिया और सम्मेलन भी हुए तथा तब से लेकर आज तक मानवाधिकार को एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में देखा जा रहा है। उन देशों में जहां गुलामी, भेदभाव और सामुदायिक उत्पीड़न के अवशेष बचे हैं या बड़े पैमाने पर सरकारी उत्पीड़न है और असहमति की आवाजों को दबा दिया जाता हैं, वहां मानवाधिकार आंदोलन से जुड़े लोग अधिक तत्परता से सक्रिय हैं और उनमें तेजी से वृद्धि हुई है।

आज मानवाधिकार आंदोलन एक ठोस अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था का रूप ले चुका है जबकि दुनिया भर में मानवाधिकारों का हनन पहले से बढ़ा है। मानवाधिकार के प्रश्न पर प्रशासनिक सक्रियता और मानवाधिकार आयोग का सहयोग बहुत निम्न स्तर पर है। यहां सिर्फ आश्वासन और सांत्वना-भरी बातें ही की जाती हैं। इसलिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग में हजारों मामले वर्षों तक पड़े रहते हैं और सुनवाई चलती रहती है। कुछ गैर-सरकारी मानवाधिकार संगठन भी हैं, जो आवाज उठाते हैं, परन्तु ये भी विदेशों से पैसे बटोरकर इस आंदोलन को आतिशबाजी में बदलते हैं।

मानवाधिकार हनन में कितनी व्यापकता आई है या आज के समय में मानवाधिकार कितने सुरक्षित हैं, यह मामला इस बात पर निर्भर करता है कि मानवाधिकारों की व्याख्या कैसे की गई है। इसके अंतर्गत खाद्य-सुरक्षा, स्वास्थ्य और शिक्षा के अधिकार अब तक नहीं आ सके हैं। किसानों का उनकी कृषि-भूमि पर जब तक वे चाहे अपना दखल रखने का अधिकार, आदिवासियों के उनके जल, जंगल और जमीन का अधिकार या किसी समुदाय को अपने परंपरागत तरीके से जीने का अधिकार मानवाधिकार, के अंतर्गत आ सकता है या नहीं ? किसी की गोली से मरने का अधिकार, जीने का अधिकार मानवाधिकार का सबसे बड़ा मुद्दा है। युद्ध के संहार से बचने का मानवाधिकार क्यों न हो ? कन्या-भ्रूणों की हत्या हो रही है, उनको मानवाधिकार कौन देगा ? दरअसल सामंती क्रूरताओं के पक्ष में तरह-तरह से दलीलें दी जाती रही हैं। आमतौर पर दलित, पिछड़े और गरीब लोगों के क्षेत्रों में ही मानवाधिकारों का हनन होता है।

वैश्वीकरण के युग में मानवाधिकार का एक जरूरी मुद्दा विकास के अधिकार से संबंधित है। यह मुद्दा मानवाधिकारों में शामिल क्यों नहीं किया जाता?एक विकसित सभ्यता में किसी गांव, पहाड़, रेगिस्तान या जनजातीय क्षेत्र को पिछड़ा नहीं रखा जाना चाहिए। वर्तमान में संचार-क्रांतियां भी असहमति की आवाजों को मार्ग नहीं दिखा रही हैं, जो मानवाधिकारों का हनन है। धार्मिक और राजनीतिक क्रूरताओं के अलावा बाजार की तानाशाही के कारण भी मानव अधिकारों का हनन हो रहा है। बाजार की नैतिकता एक ही चीज जानती है कि व्यापार कैसे बढ़े और अधिक से अधिक मुनाफा हो। ऐसी चीजों के कारण मानवाधिकार की व्याख्या में विस्तार लाने की आवश्यकता है।

हम जानते हैं कि वैश्विक मानवाधिकारों को लेकर चिंता के साथ पिछले दो-तीन दशकों में सांस्कृतिक बहुलता या 'बहुसांस्कृतिकता' को भी व्यापक स्वीकृति मिली है। विकसित देशों और उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं, दोनों जगह बहुसांस्कृतिकता के पक्ष में अक्सर बोला जाता है। यह अलग बात है कि कुछ पश्चिमी देशों में यदि सिख पगड़ी पहनता है या मुस्लिम औरत बुर्का पहनती है तो इसे निषिद्ध ठहरा दिया जाता है। पश्चिमी देशों में अपनी ही संस्कृति को श्रेष्ठ समझने की आदत है, जबकि वहां भी नस्लीय दंगे हो रहे हैं, हिंसा बढ़ रही है। पश्चिमी दुनिया में मानवाधिकारों पर इस तरह बात होती है कि यहां ऐसी कोई समस्या न हो, मानवाधिकार के लिए संघर्ष के इलाके सिर्फ एशियाई देश हों। पश्चिमी देश मानवाधिकार, स्वतंत्रता और गरिमा पा चुके हैं और दूसरे देश इनसे वंचित हैं। यह धारणा बना ली गई है कि पश्चिमी देश सदा से उदारवादी हैं और गैर-पश्चिमी देश सदा से कट्टर हैं। यह नहीं देखा जाता कि गैर-पश्चिमी देशों में जो सामुदायिक खाइयां और कट्टरता है, वह साम्राज्यवादी निर्मिति है। सिर्फ मानवाधिकार का प्रश्न उठाकर इस समस्या का समाधान नहीं हो सकता।इसके लिए पश्चिमी सोच और रणनीति में बुनियादी सुधार की आवश्यकता है। यह सोचना काफी नहीं है कि गैर-पश्चिमी देशों को अंग्रेजी राज में जिस तरह 'सभ्यता' दी जा रही थी, उसी तरह अब इन्हें 'मानवाधिकार' की आवश्यकताहै।

हम जानते हैं कि स्वतंत्रता, भाईचारा और न्याय सिर्फ पश्चिमी चीजें हैं। इनके आधार विश्व के सभी महान धर्मो में है। 'महाभारत' में कहा गया है, 'दूसरे के साथ ऐसा कुछ न करो, जो अगर तुम्हारे साथ हो तो तुम्हारा नुकसान हो' ऐसे कथन हिंदू, ईरानी, बौद्ध, ईसाई, चीनी, इस्लामी, सिख हर परम्परा में हैं। इसका अर्थ है कि मानवाधिकार का एक सार्वभौम रूप हो चाहिए। जिस तरह आधुनिकता की एक सामान्य या साझा संस्कृति हो सकती है। मानवाधिकार का मतलब सिर्फ व्यक्ति की निजी स्वतंत्रता के क्षेत्रों का विस्तार भर नहीं है। इसके कुछ सामाजिक पहलू भी हैं, क्योंकि मानवाधिकार का मतलब राष्ट्रीय-सामाजिक जिम्मेदारियों से मुक्त होना नहीं है। मानवाधिकार का अर्थ स्वेच्छाचारिता नहीं है, बल्कि न्याय का अधिकार है। वैश्वीकरण के इस युग में भी मानवजाति सर्वाधिक खंड-खंड हो रही है। क्योंकि न तो अब 'मानवीय आत्मसम्मान' और 'मनुष्यता' पर कहीं सामूहिक रूप से जोर दिया जाता है और न ही अब 'आर्थिक शोषण' जैसे शब्दों के विषय में कोई चर्चा होती है। कुछ मुद्दे हमारे सोच के हाशिए पर चले गए हैं। ऐसी स्थिति में मानवाधिकार को 'विकास' के साथ-साथ 'परम्परा' के संदर्भ में भी देखना चाहिए।

निष्कर्ष – अत: उपरोक्त वर्णन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि समय-समय पर दलित साहित्य में मानव अधिकारों का वर्णन होता रहा है और साहित्य एक मात्र ऐसा साधन है जिसके माध्यम से मानव अधिकार के आंदोलन को और अग्नि प्रदान की जा सकती है। यद्धपि साहित्य के कारण समाज में एक हद तक काफी बदलाव तो आया है, परन्तु दलित उत्पीड़न और हत्याओं, बलात्कारों, और बहिष्कार की अनगिनत घटनाएं अभी भी

घटती चली जा रही हैं। दलित उत्पीड़न और हत्या के मामले में 2015 के वर्ष में मध्यकालीन बर्बरता कीछवि दिखाई दे रही है। ऐसी ही एक घटना राजस्थान के डांगावास में दलित संहार की है। इस घटना में पांच लोगों को जाट समुदाय के लोगों द्वारा बर्बर तरीके से मौत के घाट उतार दिया गया और 11 लोगों को गंभीर रूप से घायल कर दिया गया। इस घटना पर विस्तृत रिपोर्ट स्वतंत्र पत्रकार भंवर मेघवंशी ने प्रकाशित करके, इस घटना की मुख्य सच्चाई को सबके सामने लाने का सराहनीय प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वाल्मीकि,ओमप्रकाश (2013) दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ, दिल्ली- राधाकृष्ण प्रकाशन।
2. द्विवेदी, महावीर प्रसाद. सितम्बर 1914, सरस्वती, भाग 15, खंड 2, पृष्ठ सं. 512-513. www-hindisamay-com
3. महिश्वर, हेमलता, 2015, नील,नीले रंग के, दिल्ली; शिल्पायन प्रकाशन।
4. भारती, भारती, 2015, रुखसाना का घर, दिल्ली; स्वराज प्रकाशन।
5. रानी, रजत 'मीनू', 2015, पिता भी होते हैं माँ, दिल्ली; वाणी प्रकाशन।
6. घोष, असंग, 2015, समय को इतिहास लिखने दो, दिल्ली; शिल्पायन प्रकाशन।
7. आर्य, संतराम, 2014, दर्द की भाषा, दिल्ली; बेधड़क प्रकाशन।
8. — 2015, अमन के रास्ते, दिल्ली; बेधड़क प्रकाशन।
9. टेकचंद, 2015, मोर का पंख तथा अन्य कहानियां, दिल्ली; वाणी प्रकाशन ।
10. सांभरिया, रत्नकुमार, 2015, एयरगन का घोड़ा, नई दिल्ली; अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
11. चौहान, दलपत, 2015, ठण्डा खून, दिल्ली; शिल्पायन प्रकाशन।
12. टाकभौरे, सुशीला, 2015, तुम्हे बदलना ही होगा, दिल्ली; सामायिक प्रकाशन।
13. तिवारी, बजरंग बिहारी, 2015, दलित साहित्य एक अंतर्यात्रा, गाजियाबाद, नवारुण प्रकाशन।

****

भारतीय समाज में दलित साहित्य और राजनीतिक मुद्दे

डॉ. संतोष रानी *

प्रस्तावना – दलित का अर्थ पहले पीड़ित, शोषित, दबा हुआ, खिन्न, उदास, टुकड़ा, खंडित, तोड़ना, कुचलना, दला हुआ, पीसा हुआ, मसला हुआ, रौंदा हुआ, विनष्ट हुआ करता था, परन्तु अब अनुसूचित जाति को दलित बताया जाता है। अब दलित शब्द पूर्णत: जाति विशेष को बोला जाने लगा है।दलित शब्द हजारों वर्षों तक अस्पृश्य या अछूत समझी जाने वाली उन शोषित जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयुक्त होता रहा, जो हिंदू धर्म शास्त्रों द्वारा हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले (चौथे) स्थान पर स्थित हैं और बौद्ध ग्रन्थ में पाँचवे स्थान पर हैं। संवैधानिक भाषा में इन्हें ही अनुसूचित जाति कहा गया है। भारतीय जनगणणा 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या में लगभग 16.6 प्रतिशत या 20.14 करोड़ आबादी दलितों की है। आज अधिकांश हिंदू दलित बौद्ध धर्म की ओर आकर्षित हुए हैं और हो रहे हैं, क्योंकि बौद्ध बनने से हिंदू दलितों का विकास हुआ है।

विशिष्ट शब्द – भारतीय समाज, दलित आंदोलन, दलित राजनीति, दलित साहित्य, भारतीय संविधान।

दलित का अर्थ एवं अवधारणा – दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ है– दलन किया हुआ। इसके अर्न्तगत वह प्रत्येक व्यक्तिसम्मिलित होता है जिसका शोषण–उत्पीड़न हुआ है। रामचंद्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ लिखा है– मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ और विनष्ट किया हुआ। पिछले छह–सात दशकों में यदलितशब्द का अर्थ काफी बदल गया है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के आंदोलन के बाद यह शब्द हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले स्थान पर स्थित हजारों वर्षों से अस्पृश्य समझी जाने वाली सभी जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयोग होता है। अब दलित पद अस्पृश्य समझी जाने वाली जातियों की आंदोलनधर्मिता का परिचायक बन गया है। भारतीय संविधान में इन जातियों को अनुसूचित जाति के नाम से जाना जाता है। भारतीय समाज में वाल्मीकि या भंगी को सबसे नीची जाति समझा जाता रहा है और उसका पारंपरिक पेशा मानव मल की सफाई करना रहा है। परन्तु आज के समय में इस स्थिति में बहुत परिवर्तत आया है।

भारत में दलित राजनीति – भारत में दलित आंदोलन की शुरूआत ज्योतिराव गोविंदराव फुले के नेतृत्व में हुई। ज्योतिबा जाति से माली थे और समाज के ऐसे तबके से संबध रखते थे, जिन्हें उच्च जाति के समान अधिकार प्राप्त नहीं थे। इसके बावजूद ज्योतिबा फूले ने हमेशा ही तथाकथित 'नीची' जाति के लोगों के अधिकारों की पैरवी की। भारतीय समाज में ज्योतिबा द्वारा सबसे दलित वर्ग की शिक्षा का प्रयास किया गया था। ज्योतिबा ही वो पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने दलितों के अधिकारों के साथ–साथ दलितों की शिक्षा की भी पैरवी की। इसके साथ ही ज्योतिबा ने महिलाओं की शिक्षा के लिए सराहनीय कदम उठाए। भारतीय इतिहास में ज्योतिबा ही वो पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने दलितों की शिक्षा के लिए न केवल विद्यालय की वकालत की, बल्कि सबसे पहले दलित विद्यालय की भी स्थापना की। ज्योतिबा ने भारतीय समाज में दलितों को एक ऐसा पथ दिखाया था, जिसपर आगे चलकर दलित समाज और अन्य समाज के लोगों ने दलितों के अधिकारों की कई लड़ाइयां लड़ी। यूं तो ज्योतिबा ने भारत में दलित आंदोलनों का सूत्रपात किया था,परन्तु इसे समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का काम बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर ने किया। इसके अतिरिक्त दलित आंदोलन के सम्बंध में बौद्ध धर्म ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ईसा पूर्व 600 ईसवी में बौद्ध धर्म ने ही हिंदू समाज के निचले तबकों के अधिकारों के लिए आवाज उठाई। भगवान गौतम बुद्ध ने इसके साथ ही बौद्ध धर्म के माध्यम से एक सामाजिक और राजनीतिक क्रांति लाने की पहल भी की। इसे राजनीतिक क्रांति कहना इसलिए आवश्यक है, क्योंकि उस समय सत्ता पर धर्म का आधिपत्य था और समाज की दिशा धर्म के द्वारा ही तय की जाती थी। ऐसे में समाज के निचले तबके को क्रांति की जो दिशा भगवान बुद्ध ने दिखाई वह आज भी प्रासांगिक है। भारत में चार्वाक के बाद भगवान बुद्ध ही पहले ऐसे शख्स थे, जिन्होंने ब्राह्मणवाद, जातिवाद और अंधविश्वास के खिलाफ न केवल आवाज उठाई,बल्कि एक दर्शन भी दिया ताकि समाज के लोग बौद्धिक दासता की जंजीरों से मुक्त हो सकें।

यदि समाज के निचले तबकों के आंदोलनों का आदिकाल से इतिहास देखा जाए तो चार्वाक को नकारना भी संभव नहीं होगा। यद्यपि चार्वाक पर कई तरह के आरोप लगाए जाते हैं। इसके बावजूद चार्वाक वो पहला शख्स था, जिसने लोगों को भगवान के भय से मुक्त होना सिखाया। भारतीय दर्शन में चार्वाक ने ही बिना धर्म और ईश्वर के सुख की कल्पना की। इस दृष्टि से देखने पर चार्वाक भी दलितों की आवाज उठाता नजर आता है। इसके अतिरिक्त जब दलितों के अधिकारों को कानूनी जामा पहनाने के लिए भारत रत्न बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर ने लड़ाई शुरू की तब हमारा देश भारत ब्रिटिश उपनिवेश की श्रेणी में आता था। लोगों के लिए ये दासता का समय रहा, परन्तु दलितों के लिए कई मायनों में स्वर्णकाल था।

आज दलितों को भारत में जो भी अधिकार मिले हैं उसकी पृष्ठभूमि इसी शासन की देन थी। यूरोप में हुए पुनर्जागरण और ज्ञानोदय आंदोलनों के बाद मानवीय मूल्यों का प्रभाव बढ़ गया। यही मानवीय मूल्य यूरोप की क्रांति के आदर्श बने। इन आदर्शों के द्वारा ही यूरोप में एक ऐसे समाज की रचना की गई, जिसमें मानवीय मूल्यों को प्राथमिकता दी गई, परन्तु औद्योगिकीकरण के चलते इन मूल्यों की जगह सबसे पहले पूंजी ने भी यूरोप में ली। लेकिन इसके बावजूद यूरोप में ही सबसे पहले मानवीय अधिकारों को कानूनी मान्यता दी गई। इसका सीधा असर भारत पर पड़ा। इसका सीधा प्रभाव भारत के संविधान में भी देखा जा सकता है। भारतीय

*एम.फिल., पी.एच.डी., कनिष्ठ प्राधयापिका, राजकीय कन्या वरिष्ठ माधयमिक विद्यालय मदीना (रोहतक) भारत

संविधान की प्रस्तावना से लेकर सभी अनुच्छेद इन्हीं मानवीय अधिकारों की रक्षा करते नजर आते हैं। भारत में दलितों की कानूनी लड़ाई सबसे पहले सशक्त रूप में डॉ. अम्बेडकर ने लड़ी। डॉ अम्बेडकर दलित समाज के प्रणेता हैं। बाबा साहब अंबेडकर ने सबसे पहले देश में दलितों के लिए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों की पैरवी की और उन्होंने भारतीय समाज के तत्कालीन स्वरूप का विरोध और समाज के सबसे पिछडे और तिरस्कृत लोगों के अधिकारों की बात की। राजनीतिक और सामाजिक हर रूप में इसका विरोध स्वाभाविक था। यहां तक कि महात्मा गांधी भी इन मांगों के विरोध में कूद पड़े। बाबा साहब ने मांग की कि दलितों को अलग प्रतिनिधित्व (पृथक निर्वाचिका) मिलना चाहिए, जो दलित राजनीति में आज तक की सबसे सशक्त और प्रबल मांग थी।

समाज की ही तरह साहित्य भी गतिशील होता है। साहित्य समाज में हो रहे परिवर्तन का साक्षी होता है। हमारा देश जितना विविधधर्मी है उसी के अनुरूप दलित साहित्य में भी विविधता है। दलित साहित्य की विकास यात्रा को एक नई ऊँचाई मिल रही है। इसके ऐतिहासिक विकासक्रम पर अगर हम ध्यान केंद्रित करें तो पता चलेगा कि इसकी निरंतरता में बहुत कुछ नया जुड़ा है। इसका क्षेत्र कई मायनों में विस्तृत हुआ है। इसने एक तरफ जहां अपना भौगोलिक विस्तार करके, अखिल भारतीय स्वरुप ग्रहण कर लिया है वहीं,दूसरी ओर इसमें विधिगत समृद्धि के साथ-साथ कलात्मक ऊँचाई भी आई है। विषय वस्तु के भी स्तर पर इसमें उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। लेखकों का अनुपात विविध सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाला हुआ है। दलित साहित्य लेखन में दलित महिलाओं की भागीदारी ने न केवल दलित साहित्य के स्वरूप को प्रभावित किया है, बल्कि पूरे भारतीय साहित्य के स्वर को उसने एक नयी दिशा दी है। दलित साहित्य में पहली पीढ़ी के लेखक बहुत हद तक गैर अकादमिक संस्थानों से जुड़े हुए थे, परन्तु अब जो नया परिवर्तन हुआ है, उसमें अकादमिक जगत से जुड़े हुए दलित लेखकों का खासा हस्तक्षेप हुआ है। हमें इस पर भी विचार करना चाहिए कि अकादमिक जगत की पृष्ठभूमि वाले लेखकों के आने से दलित साहित्य के स्वरुप पर क्या असर पड़ा है? इसने कला के स्तर पर, विषयवस्तु के स्तर पर और दिशा के स्तर पर क्या प्रभाव डाला है?

हिंदी दलित साहित्य ने मोटेतौर पर लगभग छः दशकों की अपनी यात्रा पूरी की है। यह इक्कीसवीं सदी का द्वितीय दशक है जब हम अपने देश के बारे में यह कह सकते हैं कि इसने भी सामाजिक लोकतंत्र का एक स्तर पा लिया है। दलित साहित्य के उभार से सामाजिक लोकतंत्र के इस स्तर की भी पुष्टि होती है। लेकिन अभी भी हमारे समाज को पूर्ण लोकतंत्र हासिल करना बाकी है। सांस्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर जो विविधता इस सदी ने देखी है उसमें दलित साहित्य का बहुत योगदान है। इन महत्वपूर्ण बदलावों के बाद भीऐसा लगता है कि सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्र में अभी भी बदलावों की प्रक्रिया अपना पूर्ण स्वरूप ग्रहण नहीं कर पाई है। अभी भी हमारा समाज मध्युगीन बर्बरता के दिनों को अपने सीने से चिपकाये हुए है। समाज में दमन की प्रक्रिया अपने विभिन्न रूपों में जारी है। परंपरागत सामंती ब्राह्मणवादी दमन पद्धति ने कई रूप धर लिए हैं। हिंदी दलित साहित्य के आरंभिक अभिव्यक्तियों में इन रूपों की पहचान नहीं थी। इसलिए उसके खिलाफ कोई विद्रोह भी नहीं था। विद्रोह था तो जातिव्यवस्था और इसको बनाये रखने वाली विचारपद्धति ब्राह्मणवाद के खिलाफ। लेकिन जैसे-जैसे समाज में साक्षरता बढ़ी है और दलित समुदाय के लोगों का दखल अकादमिक और इससे इतर महत्वपूर्ण ज्ञान की जगहों पर हुआ है। वैसे-वैसे दमन के सूक्ष्म और जटिल रूपों की भी पहचान तेज हुई है। यहाँ तक कि दलित साहित्य ने अपने भीतर की कमियों और सीमाओं का रेखांकन भी करना शुरू किया है। यह एक अच्छा संकेत माना जा सकता है क्योंकि जो समाज, व्यक्ति या देश की आलोचना के साथ-साथ आत्मालोचना को स्वीकार नहीं करता, उसके भीतर का बदलाव बहुत टिकाऊ और दीर्घजीवी नहीं हो सकता। इसके विकास की संभावना अवरुद्ध हो जाती है, परन्तु सुखद बात यह है कि बदलावधर्मी दलित साहित्य की ताजी अभिव्यक्तियों में आलोचना-आत्मालोचना का संतुलन बनता दिख रहा है। आलोचना की जगह आलोचनात्मक संवाद ने ले ली है। ज्ञानमीमांसा के इकहरेपन ने इसकी बहुयामिकता को स्वीकार करना शुरू कर दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संक्षिप्त शब्द सागर -रामचंद्र वर्मा (संपादक), नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, नवम संस्करण, 1987, पृष्ठ 468
2. भारतीय दलित आंदोलन; एक संक्षिप्त इतिहास, लेखक: मोहनदास नैमिशराय, बुक्स फॉर चेन्ज
3. ताकि बचा रहे लोकतन्त्र, लेखक - रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक-हिन्द युग्म, 1, जिया सराय, हौज खास, नई दिल्ली-110016, भारत, वर्ष-2011,
4. दलित साहित्य के प्रतिमान; डॉ0 एन. सिंह, प्रकाशक: वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली -110002, संस्करण; 2012
5. दलित विमर्श की भूमिका, पेज नं.87-91
6. सं. राजकिशोर-आज के प्रश्न (18) दलित राजनीति की समस्याएं, लेख- दलित मुक्ति के रास्ते- राकेश कुमार, वाणी प्रकाशन 2012, पेज नं.145
7. दलित वीरांगनाएं एवं मुक्ति की चाह, पेज नं.178
8. दलित राजनीति की समस्याएं, उद्धृत, लेख-प्रफुल्ल कोलख्यान-दलित राजनीति की समस्याएं, पेज नं. 34
9. वही, पेज नं. 34
10. वही, पेज नं. 146
11. संजीव चंदन, स्त्रीकाल, दलित स्त्रीवाद पर केन्द्रित, अंक-9, सितम्बर, 2013 पेज नं. 65वही, पेज नं. 79

दलित साहित्य और राजनीतिक मुद्दों से सम्बंधित विभिन्न ऑकड़े

50 प्रतिशत से अधिक गॉवों में दलित मुद्दे	45 से 50 प्रतिशत गॉवोंमें दलित मुद्दे	गांवों में से 30 से 40 प्रतिशत गॉवों में दलित मुद्दे	25 से 30 प्रतिशत गॉवोंमें दलित मुद्दे
भोजन की साझेदारी के विरुद्ध निषेध	पानी की सुविधा पर प्रतिबंध	कृषि श्रमिकों के रूप में काम करने पर प्रतिबंध	पुलिस थाने में प्रवेश पर प्रतिबंध
पूजा के स्थानों में प्रवेश पर प्रतिबंध	विवाह समारोह पर प्रतिबंध	स्थानीय बाजारों में चीजों को नहीं बेच सकते हैं	बढ़ई की सेवाओं पर प्रतिबंध
अन्य महिलाओं द्धारा दलित महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार	सह संचालकों के साथ दूध बेचने की अनुमति नहीं है	स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के भ्रमण पर प्रतिबंध	सार्वजनिक वितरण की दुकान में प्रवेश पर प्रतिबंध
गैर-दलित घर में प्रवेश पर प्रतिबंध	नाई और लॉन्डरी सेवाओं पर प्रतिबंध	होटल में बैठने के लिए अलग स्थान	रेस्तरां या होटल में प्रतिबंध
	उच्च जाति के व्यक्तियों के द्धारा महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार	सिंचाई सुविधाओं की पहुंच पर प्रतिबंध	उच्च जाति के व्यक्ति के सामने खड़े होने के लिए मजबूर होना
		होटल में अलग बर्तन	
		पुलिस स्टेशन में भेदभावपूर्ण व्यवहार	
		स्वयं सहायता समूह में पृथक बैठना	

गांव के 20 से 25 प्रतिशत गॉवों में दलित मुद्दे	गांवों में से 15 से 20 प्रतिशत गॉवो में दलित मुद्दे	10 से 15 प्रतिशत गांवों में दलित मुद्दें	10 प्रतिशत से कम गांवोंमें दलित मुद्दे
उच्च जाति और निम्न जाति के लोगों में एक समान काम करने पर दलितों को कम वेतन दर का भुगतान करना	डाकघर में भेदभावपूर्ण व्यवहार	पंचायत में प्रवेश से इनकार	सार्वजनिक परिवहन में प्रवेश मना करना
सड़क पर त्योहारों पर जूलूस निकालने पर प्रतिबंध	नए या उज्ज्वल कपड़े पहनने पर प्रतिबंध	गहरे रंग के कपड़े और ऐनक पहनने पर रोक	मतदान केंद्र पर अलग समय निर्धारित
चिट्ठियों की होम डिलीवरी पर रोक	दुकानों व लेन-देन के समान को छूने पर प्रतिबंध	सार्वजनिक परिवहन में कोई सीट नहीं और अंतिम प्रवेश दिया जाता है।	निजी क्लिनिक में भेदभावपूर्ण उपचार
स्कूलों में अलग बैठने की सुविधा	सार्वजनिक सड़क पर रोक	मतदान केंद्र में अलग-अलग लाइनें	विवाह में उच्च जाति के लोगों से आशीर्वाद पाने के लिए मजबूर करना
निजी स्वास्थ्य क्लिनिक में प्रवेश पर प्रतिबंध	प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में प्रवेश से वंचित	मतदान बूथ में जाने पर प्रतिबंध	विवाह के लिए उच्च जाति के लोगों से आज्ञा लेना
दर्जी द्धारा कपड़े सिलने के लिए माप लेने से इन्कार	सार्वजनिक रूप से छतरियों का उपयोग करने की अनुमति नहीं है	सार्वजनिक सड़कों पर चप्पलों का उपयोग नहीं किया जा सकता	सार्वजनिक सड़क पर साईकिल का उपयोग नहीं कर सकते
स्कूलों में अलग-अलग पेयजल			सिनेमा हॉल में प्रवेश निषेध
चराई या मछली पकड़ने के मैदान पर रोक			

****

सिंधिया सेना के संगठन में डिबॉयन का योगदान

राजेश मन्दोरिया *

प्रस्तावना – मराठा सेना की परम्परागत छापामार युद्ध प्रणाली के प्रासंगिक न रह जाने पर महादजी सिंधिया ने अपनी सेना को यूरोपीय ढंग पर प्रशिक्षित करने का विचार किया। डिबॉयन नामक फ्रांसीसी अधिकारी को सिंधिया सेना में शामिल करने के बाद सिंधिया सेना में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जिनका शोधपरक विवेचन प्रस्तुत आलेख में किया गया है।

सबसे पहले नई सेना के गठन की तैयारी करने के लिए सबसे पहली खोज अफसर या सरदार की होती है। इस विषय में महादजी सिंधिया बडे ही भाग्यशाली निकले। उन्होंने इस हेतु जिस व्यक्ति को अपना सेनानायक चुना, उसकी प्रशंसा मुक्तकण्ठ से सभी सरदारों ने की। इस सेनानायक का नाम था कि डि बॉयन। डि बॉयन का जन्म इटली के उत्तर सेवाय प्रान्त में हुआ था।[1] इसने बचपन से ही सेना में काम करने का विचार कर लिया था। पहले डिबॉयन ने फ्रांस में नौकरी की और वहां पांच वर्ष रहा। इन पाँच वर्षो में इसने सेना से सम्बंधित ज्ञान को अच्छी तरह से सीख लिया था। परन्तु उस नौकरी से इसे संतोष न हुआ। अत: फ्रांस की नौकरी छोड रूस में जाकर कर ली। उस समय रूस और तुर्की में युद्ध हो रहा था। अत: उस लडाई से इसका सैनिक अनुभव और बढा। युद्ध समाप्त होने पर इसने वह भी नौकरी छोड दी।[2] उन दिनों यूरोप में भारत की प्रशांसा को तो इसने सुन ही रखा था, जिससे वह भारत की ओर आकर्षित हुआ। रास्ते में यह कुछ दिन मिस्त्र में रूका और वहां एक अंग्रेज से परिचय हुआ जिसने इसे कुछ परिचय पत्र दिये। इन परिचय पत्रों के आधार पर भारत में मद्रास के गवर्नर मिस्टर रम्बोल्ड से भेंट हुई। उसने डिबॉयन को एक देशी पल्टन में नियुक्त कर दिया। जिसमें यह मैसूर युद्ध प्रणाली का अच्छा अनुभव हो गया।[3] किन्तु मिस्टर रम्बोल्ड के चले जाने पर लार्ड मैकार्टनी मद्रास का नया गवर्नर बनकर आया। इससे डिबॉयन का मेल न खाया। इससे डिबायन का विचार फिर रूस जाने का हुआ। रास्ते में यह कलकत्ता रूका। मौकार्टनी ने इसे वारेन हेस्टिंग्ज के नाम परिचय पत्र दिया था।[4]

वारेन हेस्टिंग्ज ने डिबॉयन का अच्छा सत्कार किया और इसे कई अंग्रेज अधिकारियों और देशी नरेशों के नाम परिचय पत्र दिये ।इन परिचय पत्रों से डिबॉयन को बडी सहायता मिली। लखनउ नवाब ने इसका अच्छा स्वागत किया और बहुत सी भेंट दी। लखनउ से दिल्ली गये, पर यह यात्रा पूरी न हुई। रास्ते में सिंधिया का पडाव पडता था। वहां ये अंग्रेजी राजदूत मिस्टर एण्डर्सन के निमंत्रण से गया। पर सिंधिया को इनके विषय में संदेह हो गया, इसलिए चुपके से इसका सामान चुरवा लिया गया और सब तो लौटा दिया गया पर इसके कागज पत्र इसे फिर देखने को न मिले।[5] उन्हीं दिनों महादजी ग्वालियर किले को जो पानीपत के युद्ध के बाद हुई गडबडी में गोहद के सरदार लोकेन्द्रसिंह व्दारा हथिया लिया गया, घेर रखा था।[6] डिबॉयन ने लोकेन्द्रसिंह से पत्र व्यवहार किय, जिसमें लिखा था कि यदि मुझे एक लाख रूपये दिये जायें तो मैं यमुना पार से सैना की दो पलटनें लाकर सिंधिया के पडाव पर अचानक छापा मारूंगा और इसको ग्वालियर के सामने से हट जाने को विवश कर दूंगा।[7] लोकेन्द्रसिंह को डिबॉयन की इस बात पर विश्वास नहीं था, इसलिए उसने प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। किन्तु यह बात महादजी सिंधिया को पहुंचा दी, जिससे महादजी घबरा जायें और ग्वालियर को मोर्चा छोडकर चला जाये। महादजी को डिबॉयन पर संदेह तो पहले से ही था, इस बात से और बढ गया।[8]

इधर निराश होकर डिबॉयन ने जयपुर को महाराजा प्रतापसिंह के पास आवेदन भेजा। प्रतापसिंह ने आवेदन स्वीकार कर लिया और उसके प्रबंध का कार्य होने लगा। इसी बीच हेस्टिंग्ज ने डिबॉयन को कलकत्ता बुला लिया और जब तक ये लौटकर आये तब तक प्रतापसिंह ने अपना विचार बदल लिया और 10,000 रूपया देकर बिदा कर दिया। इन्हीं दिनों महादजी बुन्देलखण्ड में एक सेना भेजने वाले थे।[9] डिबायन भी दो जगहों से निराश हो चुका था। अत: कुछ सोच विचार कर उसने महादजी सिंधिया के ही पास आवेदन भेजा। महादजी ने आवेदन स्वीकार कर लिया और दोनों के मध्य 1784 ई. में एक समझौता (करार) हुआ, जिसके अनुसार दो पलटनें (बटालियन) प्रस्तुत करना तय हुआ।[10] प्रत्येक बटालियन में 850 सैनिक जो अस्त्र-शस्त्र, भेष-भूषा में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की तरह बहादुर हों। वेतन के रूप में महादजी ने डिबॉयन को 1000 रूपये मासिक व प्रत्येक सिपाही को 8 रूपये मासिक देना तय हुआ।[11]

इस करार में यह भी तय हुआ कि 'हम अंग्रजों के विरूद्ध नहीं लडेंगे'। नरसिंह चिंतामण केलकर के अनुसार 'महादजी ने यह कैसे मंजूर किया, यह आश्चर्य की बात है।'[12] डिबॉयन ने सिपाहियों को 8 रूप्ये में से 5 रूपये दिये और इस प्रकार 3 रूपये प्रति सिपाही बचाकर अधिकारियों को वेतन के रूप में दिये। अधिकारी कई जाति के यूरोपियन थे और इनको वेतन बहुत देना पडता था। अधिकारियों के अतिरिक्त सिपाही भी एकत्र करना था, शस्त्र संग्रह करना था, तोपें ढालनी थीं। फिर भी डिबॉयन ने पांच महीने में ही 6000 तिलंगाना, 1000 नाजिब, 1000 रोहिला, 400 मेवाती, 800 घुडसवार, 3 बेटरिंग बन्दूकें (तोपें), 10 छोटी तोपें, 2 मोराटार्स आदि से सुसज्जित सेना तैयार कर ली।[13]

स. सैनिक तंत्र एक दृष्टि में

पैदल सेना

		रूपये मासिक वेतन प्रत्येक
1	केप्टन	-
1	लेफ्टिनेंट	-

* अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

1	एडज्यूटेन्ट (सूबेदार)	35
8	जमादार	20
1	रिसालदार मेजर	10.8
32	नयक	8.8
2	कॉलर बेरियर्स	12
22	बैंड	12 प्रत्येक
416	सिपाही	05 प्रत्येक

484

तोपखाना

1	सरजेन्ट मेजर (यूरोपियन)	60
5	गनर्स (तोपची-यूरोपियन)	8
1	जमादार	30
1	हवलदार	15
5	नायक	9
5	सरंगस (बैलगाडी सरजेन्ट)	9
5	टिन्डाल्स (पार्क सरजेन्ट)	6.8
35	ग्लेंदाज (नेटिव गनर्स)	6 से 8
35	खलासी (गोला बारूद देने वाले)	4 से 5
52	गाडीवान	4 से 6
145		

घुडसवार सेना

1	रिसालदार	40
1	नायब रिसालदार	30
4	जमादार	18
4	दफादरस	12
64	घुडसवार	12
1	ड्रमर	77
35	गनर्स (गेलोपट गन)	8

इसके अतिरिक्त डिबॉयन द्वारा तैयार की गई सेना में विशेष प्रशिक्षित 75 लडाई में भिडंत करने वाले घोडे, दो रेजीमेन्ट अति उत्साही घुडसवारों की थी। इस प्रकार पूर्णरूप से तैयार एक बटालियन (ब्रिगेड) जिसकी संख्या 9000 थी और इस पर कुल खर्च 56000 मासिक व्यय के रूप में आता था।[14]

जबकि यही सेना चम्बल के पार युद्ध क्षेत्र में होगी तब इसका खर्च 84000 रूपये आता था। 50 प्रतिशत खर्च अन्य कार्यो हेतु देना होता था।[15] डिबॉयन की सेना में जो यूरोपियन अधिकारी थे वे इस प्रकार थे तथा उनका खर्च इस प्रकार था -

	रूपये	चम्बल के उस पार रूपये
कर्नल	3000	4500
लेफ्टिनेट कर्नल	2000	3000
मेजर	1200	1800
केप्टन	400	600
लेफ्टिनेंट केप्टन	300	450
लेफ्टिनेंट	200	300
इनसिंगन्स	150	225

कर्नल, लेफ्टिनेन्ट कर्नल व मेजर को 100 रूप्ये टेबल एलाउंस के रूप में देना तय हुआ।[16] इस तरह डिबॉयन की सेवा से सिंधिया की सेना को प्रशिक्षित और अनुशासनबद्ध कर दिया गया। इस सेना से महादजी की सैनिक शक्ति काफी बढ गई। अब इस सेना में 18000 नियमित, 6000 अनियमित पैदल सिपाही और 2000 अनियमित व 600 फारसी घुडसवार सेना और 200 तोपें थीं। इस सेना का प्रधान नायक आप्पा खण्डेराव व उपनायक डिबॉयन को बनाया गया। बुन्देलखण्ड की लडाईयों और विशेषत: कालिंजर के किले की लडाई में इस सेना ने बहुत ही वीरतापूर्ण कार्य कर सिंधिया की खोई प्रतिष्ठा को पुन: कायम कर दिया।[17]

ऐसी सेना के बल पर महादजी सिंधिया दिल्ली में रूहेलाओं और शाह आलम के बीच चल रहे भीषण षडयंत्रों में कूद पडा। महादजी ने शाह आलम का पक्ष लिया और उसे प्रतिस्पर्धी पक्षों के पंच के रूप में आमंत्रित किया गया। वह अक्टूबर 1784 ई. में फतेहपुर सीकरी में मुगल बादशाह से मिला और वहां से दिल्ली चल पडा। कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए बादशाह ने महादजी को वकील-ए-मुतलक या पूर्णाधिकारी अमात्य की सारी शक्तियां सौंप दीं।[18] फलस्वरूप महादजी सिंधिया मुगल दरबार की राजनीति में उलझ गया। इसी पद पर कार्य करते हुए महादजी सिंधिया को जयपुर से मुगल दरबार को देय वार्षिक कर की बकाया राशि वसूल करने के मामले में उसको जयपुर, जोधपुर के शासकों से उलझना पडा। इसी सिलसिले में महादजी ने जून-जुलाई 1787 ई. में जयपुर के विरूद्ध सैनिक अभियान किया और जयपुर, जोधपुर और हमदानी की सम्मिलित सेनाओं से लालसोट के पास तुगा के मैदान में बडा घमासान युद्ध हुआ।

इस बीच बादशाह शाह आलम की मुसीबतें और भी बढ गई। निर्दयी गुलाम कादिर ने बादशाह को गिरफ्तार कर लिया और उस पर अमानुशिक अत्याचार किये और अन्त में अभागे बादशाह की आंखें फोड दी।[19] महादजी ने दिल्ली की ओर कूच किया और शाह आलम को मुक्त करने और बडी धूमधाम से उसे पुन: प्रतिष्ठित करने में सफलता पाई।[20] लालसोट के मैदान में महादजी ने अपनी सेना की तैयारियां जिस तरह से की थीं उस पर भी थोडा बहुत लिखना आवश्यक जान पडता है क्योंकि आगे की आधार सामग्री इसी युद्ध से निकलती है। महादजी ने सेना की दक्षिणी कमान अंग्रेज अधिकारी लेस्टिनों की अधीन रखी और डिबॉयन की सेना को आयें ओर रखा और बीच में मुगलों की 25 पलटनें रखीं और स्वयं महादजी ने घुडसवारों की सेना को अपने पास रखा। युद्ध आरंभ होने के थोडे ही देर बाद मुहम्मद बेग मारा गया, पर ईस्माइल बेग उसके सिपाहियों को लेकर आगे बढा। उसके तीव्र व प्रचण्ड आक्रमण ने लेस्टिनों को पीछे खदेड दिया पर महादजी ने उसे संभाल लिया।[21] दाहिनी और दस हजार राठौडों की जोधपुर सेना ने डिबॉयन की पल्टन व तोपों ने आग उगलना शुरू कर दिया और बहुत से राठौड मारे गये और शेष पीछे हट गये। किन्तु इसी अवसर पर मुगल सेना ने धोखा दे दिया। इनको डिबॉयन के साथ आगे बढना चाहिये था पर ये जहां के तहां खडे रहे। जीत हाथ में आकर निकल गई। इतना ही नहीं दूसरे दिन मुगल इस्माइल बेग से जा मिले और अपने साथ 80 तोपें भी लेते गये। अब जीत तो दूर, अपनी रक्षा का प्रष्न आकर उपस्थित हो गया। और अन्तत: 31 जुलाई 1787 ई. को उसको युद्ध मैदान से पलायन करना पडा।[22]

अब यहां पर इतना ही कहना पर्याप्त है कि इन सब लडाईयों में डिबॉयन और उसके सैनिकों ने बडी बहादुरी दिखाई और सबमें विजय प्राप्त की।[23] दिल्ली के झगडों के शान्त होने पर भी कुछ समय तक डिबॉयन महादजी के साथ ही रहा किन्तु वह सन्तुष्ट नहीं था क्योंकि उसके अधीन बहुत कम सेना रह गई थी और दूसरा यह कि नाम के लिए कोई और ही सेनापति बना दिया जाता था। इसलिए उसने महादजी से यह प्रार्थना की कि मेरे अधीन

10,000 सैनिकों की संख्या कर दी जाये। कई कारणों से उस समय यह प्रस्ताव महादजी द्वारा स्वीकार नहीं किया गया। इस पर डिबॉयन नौकरी छोडकर चला गया। नौकरी छोडकर डिबॉयन लखनउ चला गया और व्यापार में लग गया। किन्तु डिबॉयन का मन मस्तिष्क सिपाही का था वह अधिक दिनों तक व्याार में न रह सका। ईधर महादजी मस्तिष्क सिपाही का था वह अधिक दिनों तक व्यापार में न रह सका। इधर महादजी को भी सेना में उसकी कमी खल रही थी। अत: महादजी ने उसे पुन: बुला लिया और मथुरा में दोनों की भेंट हुई।[24]

पुन: हुए इकरारनामे के अनुसार यह निष्चित हुआ कि 10,000 सैनिकों की तेरह पलटनें रखी जाए और इस सेना में 500 सवार और शेष पैदल सिपाही थे। 60 तोपें रखी जाए। कुल मिलाकर 12,000 हजार सैनिक थे। डिबॉयन का वेतन 4,000 रूपये मासिक कर दिया गया किन्तु बाद में महादजी ने 16 लाख रूपये की जागीर फौज के व्यय के लिए देकर उसे आत्मनिर्भर बना दिया।[25]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जोधपुर राज्य का इतिहास, 2 पृ.747, महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.73।
2. ग्लेग, वारेन हेस्टिंग्ज, भाग 2 पृ.310
3. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.74
4. वरेन हेस्टिंग्ज, भाग 2, पृ.310-11
5. सरदेसाई, मराठी रियासत (मराठी में), उत्तर विभाग 2, पृ.50-51 मालवा में युगान्तर, पृ.302, 308
6. सरदेसाई, मराठी रियासत उत्तर विभाग 2, पृ.53
7. मराठी रियासत वही, पृ.53-54, महादजी सिंधिया, पृ.57 न्यू हिस्ट्री ऑफ दि मराठाज, भाग 3 पृ.140-41
8. महाराजा महादजी सिंध्यिा, पृ.75, मालवा में युगान्तर, पृ.310
9. महादजी सिंधिया, पृ.75
10. सरदेसाई, मराठी रियासत, उत्तर विभाग 2, पृ.58 ग्वालियर स्टेट गजेटियर, भाग 1 पृ.111
11. नरसिंह चिंतामण केलकर, मराठे व इंग्रज (उत्तरार्ध) पृ.58
12. ग्वालियर स्टेट गजेटियर, भाग 1 पृ.113
13. ग्वालियर स्टेट गजेटियर, भाग 1 पृ.113-14
14. ग्वालियर स्टेट गजेटियर, भाग 1 पृ.114
15. ग्वालियर स्टेट गजेटियर, भाग 1 पृ. 114
16. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.75-76
17. अखबारात-इ-दरबार-इ-मुअल्ला, पृ.48 पूना रेसीडेंसी भाग 1 पत्र 137 मराठी रियासत, वही. पृ.63-64
18. महाराजा महादजी सिंधिया पृ.41-42, 78, मराठा रियासत वही 64, न्यू हिस्ट्री ऑफ दि मराठाज, भाग 3 पृ. 152-53
19. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.42, मराठी रियाससत, पृ.65
20. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.45 मराठी रियासत, सरदेसाई पृ.65-66
21. अखबारात-इ-दरबार-इ-मुअल्ला, पृ.48, पूना रेसीडेंसी भाग 1 पत्र 137, जोधपुर राज्य का इतिहास, ओझा 2 पृ. 731-35
22. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.76-779 न्यू हिस्ट्री ऑफ दि मराठाज, सरदेसाई भाग 3 पृ.154-56
23. महाराजा महादजी सिंधिया पृ.77, मराठी रियासत, सरदेसाई वही, पृ.119
24. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.77-78
25. केलकर, मराठे व इंग्रज (उत्तरार्ध) पृ.58

****

पानीपत के तृतीय युद्ध (1761 ई.) का मालवा पर प्रभाव

राजेश मन्दोरिया *

प्रस्तावना - मुगल सम्राट औरंगजेब की मृत्यु (1707 ई.) के बाद मुगल साम्राज्य के विघटन की गति तीव्र हो गई। मालवा में मराठों की छापेमारी 1699 से जारी थी। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मराठा शक्ति सम्पूर्ण भारत में अपना सिक्का जमाए हुए थी लेकिन पानीपत के तृतीय युद्ध 1761 से मराठों को जो क्षति हुई उसमें मराठों की उत्तर भारत को नियंत्रण में लेने की महत्वाकांक्षा पर पानी फेर दिया। पेशवा द्वारा अपना ध्यान पूना में केन्द्रित करने के कारण मालवा के मराठा सेनानायकों ने यहां पर लगभग स्वतंत्र रियासतों की स्थापना को अंजाम दिया। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं परिस्थितियों का विवेचन किया गया है।

14 जनवरी 1761 ई. को अहमदशाह अब्दाली ने पानीपत के तृतीय युद्ध में मराठों को बहुत ही बूरी तरह हराया। बडे-बडे सेनापतियों में अकेले गायकवाड और मल्हारराव होल्कर ही उस महान विपत्ति में से किसी तरह बच निकला।[1] जनवरी 1761 ई. में पेशवा मालवा में आ चुका था और 24 जनवरी तक वह भेलसा में ही था, वहीं दिल्ली के एक व्यापारी का लिखा हुआ पत्र मिला जिसके द्वारा पेशवा को पानीपत के युद्ध में मराठों की भयंकर हार का पता लगा। इस घटना की सूचना जिन शब्दों में पेशवा के पास भेजी गई थी वे ऐसे सारगर्भित हैं कि उनको उद्धत करना यहां आवष्यक है - 'दो मोती गल गये, सत्ताईस सुनहरे मुहर खो गये। चांदी और तांबे का कोई परिमाण नहीं कहा जा सकता।' अर्थात भाउ और विश्वासराव दोनों मोती थे। सत्ताईस बडे सरदार मुहर थे और साधारण सरदार और सिपाही चांदी और तांबा थे।[2] 7 फरवरी 1761 ई. तक पेशवा भेलसा में ही रूका रहा और वहां से सीहोर एवं सिरोंज होता हुआ वह सिरोंज से 62 किमी दूर स्थित उत्तर में पछार नामक स्थान पर ठहरा और यही आशा लगाये हुए कि भाउ एवं अन्य मराठा सेनापतियों तथा सरदारों के बच निकलने की अफवाहें सत्य साबित हो जायें।[3]

पेशवा के पास इसी समय जयपुर के माधोसिंह का पत्र आया, जिसमें पेशवा को बूंदी आने के लिए लिखा था। माधोसिंह का प्रस्ताव था कि दोनों मिलकर पुन: अब्दाली पर चढाई करें। माधोसिंह इस समय दुविधा में फंसा था, क्योंकि अब्दाली ने माधोसिंह तथा अन्य राजपूत राजाओं को दिल्ली बुलाया था कि वहां उपस्थित होकर अब्दाली को निष्चित राशि दें किन्तु पानीपत के तृतीय युद्ध में जयपुर के माधोसिंह ने मराठों की सहायता नहीं की थी एवं पेशवा इस समय माधोसिंह से बहुत चिढा हुआ था। पेशवा ने माधोसिंह को सहायता न करने के लिए बहुत ही फटकारा और यह लिख भेजा कि यदि अब्दाली मालवा की ओर बढेगा तो वह स्वयं नर्मदा को पार कर दक्षिण को लौट जायेगा।[4] कुछ ही दिनों बाद पानीपत के युद्ध से बच निकले हुए सैनिक पेशवा से मिले और उन्होंने पेशवा से दक्षिण लौट जाने के लिए समझाया और 22 मार्च 1761 ई. को पेशवा मालवा को अपने हाल पर छोडकर चलता बना।[5]

इस समय मालवा की अवस्था कीन के निम्नलिखित शब्दों से स्पष्ट प्रतीत होती है -

'क्षीण साम्राज्य का (मराठों का) हृदय अब प्राय: नि:शब्द हो गया था। वर्तमान काल में किसी देश (प्रान्त) की ऐसी अधोगति नहीं हुई है। वह (मालवा) धीरे-धीरे नष्ट हो रहा था, शीघ्र ही उसका पूर्णनाश हो गया। न तो समाज में कोई ऐसा अंग बच रहा था जो विदेशियों के आक्रमण (अब्दाली का मालवा पर आक्रमण) को रोकता, न कोई विदेशियों के चले जाने पर देश की दशा सुधारने वाला बच गया था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि हम चील-कौवों की लडाई देख रहे हैं, पर ऐसे बडे और प्रसिद्ध देश को उनके सामने उपहार रूप से ऐसी नि:सहाय और नि:चेष्ट दशा में देखकर दु:ख होता है।'

मराठों की पराजय का मालवा पर प्रभाव - पानीपत के युद्ध में मराठों की पराजय होने से मालवा में मराठों की सत्ता तथा उनके आधिपत्य को बहुत ही भीषण धक्का लगा।[6] मालवा के स्थानीय राजा और जमींदार जिन्हें मराठों ने निकाल बाहर किया था या जिनको मराठों ने अपनी शक्तिशाली सेनाओं द्वारा दबा दिया था वे सब अब मराठों की हार का विवरण सुनकर उत्साहित हो उठे, विद्रोह करने लगे और अब मराठों को मालवा में से निकाल बाहर करने की बातचीत करने लगे। दो आब, बुंदेलखण्ड, राजपूताना आदि सभी जगह इसी प्रकार की स्थिति थी। मराठा साम्राज्य के लिए यह सबसे अधिक संकट की घडी थी। उनके सैन्य व राजनीतिक दायित्व पहले के मुकाबले कहीं अधिक थे। संभाजी की मृत्यु के समय नवोदित मराठा साम्राज्य को सिर्फ मुगलों की ही शक्ति का मुकाबला करना था, किन्तु अब उनको एक विषाल साम्राज्य की रक्षा और चारों ओर के शत्रुओं का मुकाबला करना था।[8]

लगभग तीन महीनों से ज्यादा समय तक मालवा में मराठों की स्थिति बहुत ही डांवाडोल रही। उनकी महान सेनाओं का पानीपत में पूर्ण संहार हो चुका था। जो सैनिक युद्ध क्षेत्र से बच निकले थे उन पर अब भी आतंक छाया हुआ था। असंगठित तथा सरदारों के बिना वे कुछ भी न कर सकते थे। मराठों को आर्थिक संकट सता रहा था। रूपया उनके पास न था। यशवंतराव पंवार तथा सिंधिया के घरानों की जागीरें जब्त कर पेशवा ने कुछ धन प्राप्त करने का प्रयत्न किया। किन्तु इससे भी लाभ होने के बजाए हानि ही हुई। मराठों में आपस में असंतोष फैल गया और मालवा में पेशवा की शक्ति और अधिक दयनीय हो गई। मालवा और राजपूतानों के राजपूतों के लिए यह एक बहुत ही सुअवसर था, किन्तु उनमें न तो एकता ही स्थापित हो सकती

* अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

थी और न उनमें कोई ऐसा महान व्यक्ति ही था जो सब राजपूतों का नेता बनकर उस परिस्थिति से लाभ उठा सके। जयपुर के माधोसिंह में भी इस प्रकार के बडे उद्योग को उठाने एवं उसे सफलतापूर्वक सम्पादन करने की योग्यता न थी।[9]

मालवा की कमान होलकर को दी जाना – तत्कालीन परिस्थितियों पर समग्र रूप से विचार कर पेशवा ने मल्हारराव होल्कर को मालवा के ही नहीं बल्कि सारे उत्तरी भारत के भी सर्वाधिकार दे दिये और इस कठिनाई के समय उस अनुभवी, वयोवृद्ध सेनापति ने अपनी पूर्ण कार्यकुशलता दिखलाई। निरंतर परिश्रम एवं पूर्ण उत्साह तथा साहस के साथ उसने परिस्थिति का सामना किया और मालवा में मराठों के सभी विरोधियों को दबाने में लग गया।[10]

हुआ यूं कि पानीपत से लौटने पर मल्हारराव ने कुछ काल तक ग्वालियर में आराम किया और वहीं भाउ की सेना के बचे हुए सैनिकों को एकत्रित कर उन्हें लेकर वह इन्दौर गया। इन्दौर पहुंचकर उसने देखा कि केवल राजपूत ही विद्रोही नहीं हैं बल्कि मराठों का प्रान्तीय शासन भी बहुत कुछ विश्रृंखलित हो गया था क्योंकि इस बीच कई छोटे–छोटे पदाधिकारी भी उच्च सेनापतियों की आा मानने को तैयार न थे।[11]

अत: सबसे पहले मल्हारराव होलकर ने राजपूत एवं अन्य जातियों के विद्रोहियों को दबाकर मराठों की सत्ता पुन: स्थापित करने का दृढ निश्चय किया। रामपुरा इस समय होलकर की जागीर में था, उस परगने के पुराने चन्द्रावत शासक इस समय सुअवसर पाकर रामपुरा पर पुन: अधिकार कर बैठे थे। मल्हारराव होलकर ने निष्चय किया, किन्तु उसके रामपुरा पहुंचने से पहले ही संताजी वाघ के सहकारी एवं महन्तपुर के कमाविसदार कृष्णाजी तानदेव ने रामपुरा पर आक्रमण कर चन्द्रावतों को हरा दिया तथा रामपुरा को पुन: मराठों के अधिकार में कर लिया। चन्द्रावतों का दीवान पकडा गया और उनके कोई 400 आदमी मारे गये।[12]

कृष्णाजी तानदेव की इस विजय के बाद तीसरे दिन होलकर हाडोती की ओर बढा और गुहूखेडी होता हुआ गागुर्नी में कोटा महाराव के अभयसिंह राठौड नामक किसी सरदार ने मराठों को निकाल बाहर किया था। मल्हारराव होलकर 15–20 दिन तक गागुर्नी का घेरा डाला रहा। इस बीच होलकर ने इन्दौर से अपनी बडी बडी तोपें मंगवाई और जहां तक वे न आ पहुंची, होलकर किले पर अधिकार न कर सका। जून 1761 ई. के प्रारंभ में गागुर्नी का किला होलकर के अधिकार में आ गया। पानीपत के युद्ध के बाद होलकर की मालवा में यह पहली विजय थी। इस सफलता से मराठों का आतंक पुन: मालवा में स्थापित हो गया और मालवा के उत्तरी पष्चिमी भाग में उनका वही खोया हुआ सम्मान पुन: मिल गया।[13]

होलकर का पूर्वी मालवा में संघर्ष – मालवा की उत्तरी सीमा पर स्थित गोहद एवं उसके पडोसी प्रदेशों में स्थित विट्ठल शिवदेव पुन: मराठों की सत्ता स्थापित करने का प्रयत्न कर रहा था।[14] अहीरवाडा और उधर के अन्य प्रदेशों में स्थिति बहुत अच्छी न थी, एवं पेशवा को उधर ध्यान देना पडा। अत: इस प्रदेश के विद्रोहों को दबाने के लिए पेशवा ने गोपालराव और जानोजी भौंसले को भेजा। मई 1761 ई. तक गोपालराव ने सब ही विद्रोहों को दबाकर उस प्रदेश में शान्ति स्थापित कर दी थी। इसके बाद वह सिरोंज होता हुआ सागर चला गया। किन्तु ज्यों ही गोपालराव ने मालवा छोडा अहीरों ने पुन: विद्रोह किया और वे नए नए किले बनवाने लगे। बरसात शुरू हो गई थी। कुरवाई का शासक इज्जत खां तथा खींची भी अहीरों से जा मिले थे एवं बरसात खत्म होने तक उस प्रदेश में कुछ भी छेडछाड करना मराठों ने अपने हित में न समझा।[15]

तथापि इस बीच मराठों ने नरसिंहगढ पर अपना अधिकार अधिक सुदृढ बना लिया था। यहां पर विसाजीपन्त जो एक मुगल कर्मचारी था उसे इस क्षेत्र का भौगोलिक अनुभव व प्रभाव बहुत था, मराठों ने उसके साथ बहुत अच्छा सम्बंध बना लिया था। नवम्बर 1761 ई. में मल्हारराव होल्कर कोटा के पास रूका था, उसी समय अहीरवाडा में नियुक्त मराठों ने होलकर को पत्र भेजा कि व सहायतार्थ इस प्रदेश में चला आवे। मल्हारराव होलकर सांगानेर तक बढता चला गया, किन्तु मांगरोल के युद्ध में जो घाव होलकर को लगा था उसके पक जाने से होलकर को वहीं से लौटाना पडा। दिसम्बर 1761 में नारोशंकर ने अपने पुत्र[16] विष्वासराव को सिरोंज भेजा कि वह वहां जाकर इज्जत खां और गोविन्द कल्याण से मिले और उनके साथ मित्रता कर उनकी ही सहायता से झांसी को अपने अधिकार में कर ले। पेशवा ने गोविन्द कल्याण को आशा लिख भेजी कि वह सिरोंज और अहीरवाडा के मामलों को अपने हाथ में लें तथा वहां के जमीदारों को समझा–बुझाकर संतुष्ट करे और उस प्रदेश के सब थानों को अपने अधिकार में कर उस परगने पर शासन करे। भेलसा का किला भोपाल के नवाब ने पुन: जीत लिया था, उस किले को जीतकर अपने अधिकार में लाने के लिए भी पेशवा ने गोविन्द कल्याण को लिख दिया था।[17]

मराठों के विरूद्ध माधोसिंह का षडयंत्र – पानीपत के युद्ध में मराठों की डूबी नाव को मालवा के किनारे पर आने से पूर्व ही माधोसिंह डूबा देना चाहता था, इसके लिए बैठा – बैठा षडयंत्र रच रहा था। 14 मई 1761 ई. को वह रतलाम गया और वहां मध्य मालवा के राजपूत राज्यों तथा सीतामउ, सैलाना, रतलाम, झाबुआ, अमझेरा आदि से सहायता प्राप्त कर उसने भरसक प्रयत्न किया। बूंदी–कोटा के शासक, खींची राजा एवं अन्य कई राजाओं ने माधोसिंह को सहायता देने का वचन दिया और इस बीच कई राजा उससे जा मिले।[18]

मल्हारराव होलकर आंख मूंदकर सारा दृष्य देख रहा था, कुछ करता इससे पहले बरसात शुरू हो गई। अक्टूबर 1761 ई. के पिछले दिनों में मल्हारराव होलकर ने माधोसिंह पर चढाई की, किन्तु इन्हीं दिनों होलकर को पेशवा ने पूना बुला लिया गया। होलकर ने माधोसिंह के विरूद्ध अपनी सेना भेजकर पुना जाने का निश्चय भी किया, किन्तु बाद में विवष होकर उसे पूना जाने का विचार छोडना पडा। अत: सम्पूर्ण परिस्थितियों पर कूटनीति पूर्ण विचार कर होलकर को इन्दौर से रवाना होकर जयपुर की सेना का सामना करने के लिये कोटा की ओर जाना पडा। 29 नवम्बर 1761 ई. को मांगरोल नामक स्थान पर युद्ध हुआ, जिसमें माधोसिंह की पूर्ण पराजय हुई। इस युद्ध में कोटा के महाराव ने मराठों का पलडा भारी होते देख माधोसिंह का साथ छोड मराठों के साथ जाकर खडा हो गया। मल्हारराव होलकर की इस विजय का मालवा पर अच्छा प्रभाव पडा और मराठों का विरोध करने के लिए किसी भी प्रकार का गुट बनने की कोई संभावना न रही, मराठों का दबदबा मालवा पर पुन: छा गया।[19]

मालवा की राजनीति में मराठों का पुन: जीवन संचार होते देख पेशवा ने मालवा में कई कई नियुक्तियां कीं। मल्हारराव होलकर को बहुत सी नई नई जागीरें मिलीं। विट्ठलदेवराव को सरंजामदार बना दिया गया। बहिरो पन्त को भी सरंजाम मिला, और केदारजी तथा मानाजी सिंधिया को जनकोजी सिंधिया का उत्तराधिकारी मानकर जनकोजी की जागीर एवं जमीन उन दोनों को दे दी गई।

उपसंहार – पानीपत के तृतीय युद्ध के बाद मालवा में उत्पन्न हुई प्रतिकूल

परिस्थितियों पर मल्हारराव होल्कर द्वारा प्रभावी नियंत्रण स्थापित किया गया। यहीं से मालवा में स्वतंत्र होल्कर एवं सिंधिया रियासतों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ, क्योंकि इस समय मुगल साम्राज्य का मालवा पर नियंत्रण समाप्त हो चुका था जबकि पेशवा पूना के मामलों में व्यस्त हो गया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वाकया-ए-होलकर के अनुसार पराजय सम्मुख जानकर होलकर अपनी सेना के साथ रणक्षेत्र से निकलकर सुरक्षित जाट प्रदेश की ओर चला गया पृ.10 ब. इसी प्रकार सूर्यमल्ल मिश्र, वंश भास्कर पृ.3696 पर लिखता है।
2. महाराजा महादजी सिंधिया, पृ.17
3. पेशवा दफ्तर, भाग 21 पत्र 204, भाग पत्र 260-272 मराठाच इतिहासांची साधने, भाग 6 पत्र 415, 416 दी फाल ऑफ दी मुगल एम्पायर, भाग 2 पृ. 359-60, ऐतिहासिक लेख संग्रह, भाग 1 पत्र 26, 28
4. मराठाच इतिहासांची साधने, भाग 6 पत्र 415, 416 दी फाल ऑफ दी मुगल एम्पायर, भाग 2 पृ. 359-60
5. ऐतिहासिक लेख संग्रह, भाग 1 पत्र 26, 28, पेशवा दफ्तर, भाग 21 पत्र 204
6. महाराजा सिंधिया पृ.11 दी फाल ऑफ दी मुगल एम्पायर, पृ.357-61 पेशवा दफ्तर भाग 2 पत्र 142, 143 भाग 29 पत्र 6-21 ए मेमायर ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया, भाग 1 पृ.53-54, 67
7. अब्दाली के आक्रमण का वृत्तांत सुनकर मालवा के कमाविसदारों में तो बहुत आतंक छा गया। मराठाचें इतिहासांची साधने, भाग 1 पत्र 176
8. पेशवा दफ्तर भाग 2 पत्र 118 शिन्देशाही इतिहासांची साधने भाग 2 पत्र 10, 11
9. आगामी विपत्तियों के कई अनिष्ट सूचक संकेत दिखाई पड रहे थे। इस बात की पूरी आशंका थी कि यदि कोई प्रयत्न नहीं किया गया तो मालवा भी मराठों के हाथ से निकल जावेगा-पेशवा दफ्तर, भाग 29 पत्र 109
10. पेशवा दफ्तर, भाग 27 पत्र 268 भाग 29 पत्र 10
12. पेशवा दफ्तर, भाग 27 पत्र 268 भाग 29 पत्र 10
13. पेशवा दफ्तर, भाग 27 पत्र 271, शिन्देशाही इतिहासांची साधने, भाग 2 पत्र 64
14. पेशवा दफ्तर, भाग 27 पत्र 271, मल्हारराव होल्कर जब गागुर्नी में ठहरा था तब रघुनाथ राव का अधिक सेना भेजने के लिए लिख भेजा था - पेशवा दफ्तर, 27 पत्र 2687, सिलेक्शन्स फ्राम पेशवा दफ्तर भाग 3 पत्र 72
15. पेशवा दफ्तर भाग 27 पत्र 270, 272
16. राजगढ के खींची चौहानों ने मल्हारराव होलकर का आक्रमण टालने हेतु अपने पंच उसके पास भेजे सिलेक्शन्स काम पेशवा दफ्तर हिन्दी पृ. 148 पत्र 90
17. विश्वासराव नारेशंकर का भतीजा था।
18. पेशवा दफ्तर, भग 29 पत्र 12, 22, 30, 43 मराठाच इतिहासांची साधने, भाग 3 पत्र 296
19. शिन्देशाही इतिहासांची साधने, भाग 1 पत्र 266, 267 भाग 2 पत्र 65, हिस्टारिकल सिलेक्शन फ्राम दि बडोढा स्टेट रेकार्डस, भाग 1 पत्र 81
20. पेशवा दफ्तर, भाग 27 पत्र 276 भाग 29 पत्र 20, 22 फाल ऑफ दी मुगल एम्पायर, भाग 2 पृ.506, 509

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारतीय सामाजिक परिवेश में महिलाओं की स्थिति(महिला सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य में)

डॉ. अंजू जगधारी *

प्रस्तावना – 'महिलाओं की स्थिति सुधार लाए बिना दुनिया का कल्याण संभव नहीं है। एक पंख से चिड़िया उड़ान नहीं भर सकती'
– स्वामी विवेकानन्द

बाधाएं रास्ता रोकती हैं, उन्हें हटा लिया जाए तो गति को पंख लग जाते हैं। सशक्तिकरण का मामला भी कुछ ऐसा ही है। हमारी एतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक कुप्रथाओं का दंश हमारी महिलाओं के अधिसंख्य भाग को आज भी झेलना पड़ रहा है। इसे रोकना नितांत आवश्यक है। महिला सषक्तिकरण का मुद्दा जो काफी समय से उपेक्षित रहा है, अंततः सरकार का ध्यान आकर्षित करने में सफल हुआ है।

हमारे देश में महिलाओं के प्रति आदिकाल से बड़ा ही सम्मान और आदर का भाव रहा है। उन्हें देवी और शक्ति की उपमा दी गई है। वह परिवार में स्नेहमयी दुलारी बहन है, तो माता के रूप में ममतामयी और वात्सल्य की प्रतिमूति। धर्मपत्नी के रूप में पति की अनुगामिनी, सहचरी, सहयोगी और मार्गदर्शिका। सही अर्थों में वह परिवार की धूूरी है। जैसा कि कहा गया है– **'नारी धरती जैसा फर्ज निभाती है और अपने अंक में समुद्र जैसी ममता समेटे आकाष हो जाती है।'**

महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने के लिए सर्वप्रथम उन्हें विकास के बारे में जागृत करना होगा, सदियों से होती आ रही बालिकाओं की उपेक्षा और उनके प्रति भेदभाव एक दिन में तो बदला नहीं जा सकता लेकिन सभ्य समाज के सहयोग से देश भर में उनकी शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाने की योजनाएं यदि सावधानीपूर्वक बनाई जाएं तो महिलाओं का सषक्तिकरण अवश्य ही संभव है।

आज की महिलाऐं प्रत्येक क्षेत्र में अपना वर्चस्व दिखा रही हैं। सामाजिक, आर्थिक, व्यावसायिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक आदि सभी क्षेत्रों में उपलब्धियाँ बढ़ी हैं। आज वे किसी भी सम–सामयिक विषय पर किसी भी व्यक्ति के साथ सफलतापूर्वक चर्चा कर सकती हैं। आज उसने अपनी संकीर्ण मानसिकता को त्यागकर अपने में आत्मविश्वास पैदा कर लिया है। आज महिलाएं अपने दोहरे रूप को भी सफलतापूर्वक अंजाम दे रही है। एक तरफ वह कैरियर वूमेन का खिताब हासिल किए हुए है, तो दूसरी ओर होममेकर के रूप में घर गृहस्थी की तमाम जिम्मेदारियों का सफलतापूर्वक निर्वाह कर रही है। नारी जाति को संघर्ष करना ही है, पर यह संघर्ष पुरूषों के विरूद्ध नहीं, बल्कि उन्हें अपने ही अर्थहीन मूल्यों, मान्यताओं, कुरीतियों, कुरिवाजों और अपनी ही दुर्बलताओं के साथ लड़ना है

प्रकृति ने नारी को सौन्दर्य के साथ–साथ बुद्धि भी दी है। अतः इसका उपयोग रचनात्मक कार्यों में किया जाना चाहिए। समाज में आ रहे बदलाव चाहे आर्थिक हो, राजनैतिक हो, सामाजिक हो या फिर आम इंसान का विभिन्न बातों पर बदलता नजरिया, यह सब कुछ सीधे तौर पर न सही मगर किसी न किसी रूप में हमारे जीवन को प्रभावित तो करता ही है। फिर अगर हम ही इन बदलावों से स्वयं को उदासीन बनाए रहेंगे तो अपने लिए मनचाही सामाजिक परिस्थितियों की कामना कैसे कर पाऐंगे, जबकि नए समाज के निर्माण में हम महिलाएं किसी भी स्तर पर भागीदारी करने की इच्छुक ही नहीं रहेंगी ? अतः हमें स्वयं को अपने लिए निर्मित्त वृत्त से बाहर निकलना होगा और उस दुनिया से जुड़ना होगा जिसका हम और आप जीवंत हिस्सा हैं। इससे हमें मानसिक संतुष्टि तो मिलेगी ही और सबको अपनी बौद्धिक प्रखरता से प्रभावित करने में भी सफल रहेंगे।

आज नारी और पुरूष के बीच सरकारी घोषणाओं में कानूनी अधिकारों की दृष्टि से स्त्री को पुरूष के बराबर अधिकार प्राप्त हैं, फिर भी व्यवहार की तलहटी पर स्त्री को पुरूष के बराबर खड़ा रहने और बैठने का अधिकार कहाँ है ? स्त्री मजदूर को पुरूष मजदूर की अपेक्षा कम वेतन मिलता है। प्रत्येक क्षेत्र में जबकि पुरूषों की योग्यता का आकलन उसके व्यक्तिगत गुणों के आधार पर होता है, वहीं स्त्री का आकलन जातीयता के आधार पर होता है। महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना चाहिए।

भारत में यह महसूस किया जा चुका है कि बिना शिक्षा के स्त्रियों का सषक्तिकरण संभव नहीं है। दक्षिणी राज्यों में काफी हद तक इसे अपनाया है जबकि उत्तरी राज्य अभी इस मामले में पीछे हैं। लेकिन देशभर में बालिकाओं का शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाने के लिए सरकार की तरफ से जागरूक प्रयास किए जा रहे हैं। एक कहावत है–**'अगर लड़की को पढ़ाओगे तो एक परिवार शिक्षित होगा।'**

इस प्रकार महिलाओं का विकास और कल्याण एक संवेदनशील एवं प्रगतिषील समाज की स्थापना के लिए एक मूलभूत आवश्यकता है। प्रदेश में महिलाओं एवं बच्चों के समुचित विकास के लिए अनुकूल वातावरण बनाना प्रदेश सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता है। महिलाएँ हमारी अर्थव्यवस्था की एक जरूरी उत्पादक शक्ति और संसाधन हैं, विकास में उनकी भूमिका सर्वोगीण सामाजिक और आर्थिक विकास से जुड़ी हुई है। अतः उन्हें इसी भूमिका के अनुरूप कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए विभिन्न विभाग विभिन्न विकासात्मक और कल्याणकारी योजनाएं संचालित कर रहे हैं।

उदारीकरण और वैष्वीकरण के दौर में जब समूची पारिवारिक एवं सामाजिक संरचना बदल रही है, नए मूल्य मानक स्थापित हो रहे हैं तो पुराने मूल्य टूट रहे हैं। ऐसे दौर में महिलाओं को सोचना है कि वे किस तरह समाज की एक सार्थक इकाई के रूप में प्रस्तुत हों। एक परिपूर्ण नारी के लिए जरूरी है कि वह बने बनाए रास्तों पर ही न चले बल्कि नए रास्तों को भी ईजाद करे, लेकिन नए रास्ते पर किसे साथ लेकर चलना है और किसे छोड़ देना है, यह

* अतिथि विद्वान(अर्थशास्त्र) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

विवेक अवश्य रखे।

नई सहस्त्राबदी में महिलाओं के सम्पूर्ण विकास के लिए सभी ओर प्रयास जारी हैं। जहॉ राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं को सुरक्षा और सम्मान देने के लिए प्रयास किए गए हैं वहीं प्रदेश में महिलाओं के कल्याण के लिए अनेक योजनाएं बनाई गई हैं।

यद्धपि सरकार एवं विधायका ने सब तरफ महिलाओं को जागरूक बनाने के प्रयास किए हैं, परंतु आज भी अधिकांश महिलाएं अपने अधिकारों के बारे अनभिज्ञ है, साथ ही कानून कीं जानकारी के अभाव के कारण आज भी महिलाएं शोषित एवं प्रताड़ित है

महिला सशक्त हो, अपनी गरिमा एवं सम्मान की रक्षा कर सके, उनका मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं शारीरिक विकास हो, इस सबके लिए उन्है उनकी भलाई के लिए चलाई जा रही योजनाओं एवं उनके हक में बनाए गए कानूनों की जानकारी होना आवष्यक है।

अंतत: कह सकते हैं कि आज के इस विकासशील युग में जहौं प्रत्येक क्षेत्र में तीव्र गति से विकास हो रहा है वहाँ नारी सशक्तिकरण अत्यंत आवष्यक है तथा सशक्तिकरण में परिवार व समाज की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। आज **'नारी मुक्ति'** की जगह **'नारी शक्ति'** की आवश्यकता है साथ ही आवश्यकता है स्वत्व को पहचानने की और परंपरागतव छवि को तोड़ने की, तभी महिला सशक्तिकरण संभव हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना पत्रिका : अगस्त 2001, नई दिल्ली,
2. चित्रगुप्त बंधु : कायस्थ महासभा पत्रिका, मई 2001 अंक 4,6
3. बंसल नारायण : भारतीय नारी, नई दिल्ली, इण्डियन बुक कम्पनी, 1984
4. मार्कण्डेय पुराण : दुर्गा सरस्वती, नई दिल्ली, त्रिभुवन बनारसी दास पृष्ठ, क्रमांक-116
5. त्रिपाठी चन्द्रबाली : भारतीय समाज में नारी आदर्ष का विकास, वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1967

****

इन्दौर सिटीबस का संचालन एवं प्रबंध (परिचय, प्रबंध, स्थापना और उद्देश्य)

डॉ. धीरज शर्मा *

भारत में सिटी बस – सिटी बस का सबसे प्राचीन उदाहरण भारत में मुंबई में देखने को मिलता है। बॉम्बे ट्राम वे कंपनी लि. की स्थापना 1873 में की गई। तत्कालीन बॉम्बे म्युनिसिपल कार्पोरेशन और ट्राम वे कंपनी के बीच इस संबंध में समझौता हुआ। बॉम्बे ट्राम एक्ट, 1874 बनाया गया। जिसके अंतर्गत कंपनी को शहर में ट्राम वे सेवा का लायसेंस दिया गया। इसमें 02 प्रकार की ट्रामा कार चलाई गई। पहले वह जो, एक घोड़े के द्वारा चलाई जाती थी और दूसरी वह जो, दो घोड़ों द्वारा चलाई जाती थी।

1905, में बॉम्बे इलेक्ट्रिक सप्लाई व ट्राम वे कंपनी लि. द्वारा बॉम्बे ट्राम वे कंपनी को खरीदा गया। जिसके परिणामस्वरूप 1907 में बिजलीचलित ट्रामा कार का प्रयोग पहली बार किया गया। सितंबर, 1920 में ट्रैफिक की समस्याओं को हल करने के लिए डबल डेकर ट्रामा का चलन आरंभ हुआ।

मुंबई बस सेवा –15 जुलाई, 1926 को मुंबई में पहली बार ट्रामा कार के स्थान पर बस का प्रयोग किया गया। पहली बस अफगान चर्च और को-फोर्ड मार्केट के बीच चलाई गई। मुंबईवासियों ने इस बस संचालन को उत्साहपूर्वक लिया। यद्यपिइ न बसों को परिवहन का मुख्य साधन बनाने में थोड़ा समय लगा।

डबल डेकर (दो मंजिला) बस का प्रयोग सर्वप्रथम 1937 में किया गया। ताकि ट्रैफिक को सुविधाजनक बनाया जा सके।

07, अगस्त 1947 करे मुंबई महानगर पालिका निगम ने बसों के संचालन अधिकार बॉम्बे इलेक्ट्रिक सप्लाई और ट्रामा वे कंपनी लि. से प्राप्त किये और इस हेतु कंपनी को मुंबई महानगर पालिका निगम ने अधिग्रहित किया। तथा इससे नये नाम बीईएस एंड टी कंपनी लि. के नाम से जाना गया।

जब बेस्ट ने कंपनी का अधिग्रहण 1947 में किया, तब कंपनी की 242 बसें 23 मार्ग पर चल रही थीं। 2 लाख 38 हज़ार यात्रियों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती थी।

वर्तमान में 3,380 बसें मुंबई में चल रहीं हैं, जो 335 मार्गो पर चल रहीं है। कुछ मार्गो पर वातानुकूलित बसें चल रहीं हैं। 19 नवंबर, 2004 को पहली बार स्मार्ट कार्ड का प्रयोग किराये के बदले में किया गया। बेस्ट की 230 से ज्यादा बसें सीएनजी बसें हैं, जो वातावरण में अनुकूल हैं। 18 अगस्त, 2005 को पहली बार बेस्ट ने विकलांगों के लिए विशेष लोफ-फ्लोवर बस आरंभ की थी।

चेन्नई में बस सेवा – चेन्नई (मद्रास) तमिलनाडू में भी सिटी बस का संचालन किया जाता है। यह संचालन मेट्रो पोलिटन ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन लि. जिससे पूर्व में पल्लवन ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन के नाम से भी जाना जाता था। यह सेवा 01 जनवरी, 1972 को आरंभ हुई थी। जिसमें उस समय 1029 बसें थीं। जिसका संचालन उस समय पल्लवन ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन लि. द्वारा किया जाता था। सन् 1994 में इसका नाम बदल कर मेट्रो पोलिटन कार्पोरेशन लि. किया गया। वर्तमान मे इसके 25 डिपो हैं और 3260 बसें हैं।

बैंगलोर में बस सेवा – 1961 में मैसूर स्टेट रोड़ कार्पोरेशन एक विशेष अधिनियम के अतर्गत बनाया गया था।

1993 में इसे 02 भागों में बांटा गया था। नॉर्थ और साउथ। 15 अगस्त, 1947 को बैंगलोर मेट्रो पोलिटन ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन के साथ ही सिटी बस सेवा का संचालन इस संस्था के द्वारा किया जाने लगा। वर्तमान में बैंगलोर में बैगलोर मेट्रो पोलिटन ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन द्वारा 5593 बसें चलाई जा रही हैं। कुल 74,474 ट्रिप प्रतिदिन लगाई जाती है। 04 प्रकार से बसों को बांटा गया है। सिटी बस, सब-अर्बन, पुष्पक और गोल्ड जिसमें अलग-अगल पास पद्धति रखी गई है। सिटी बस में पास 420/- में वहीं गोल्ड का पास 1750/- में बनता है।

हैदराबाद में बस सेवाएं – हैदराबाद में बसों का संचालन आंध्रप्रदेश स्टेट रोड़ ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन लि. द्वारा किया जाता है। यहां पर 4000 से अधिक बसें संचालित हो रहीं है। ये तीन प्रकार की बस सर्विसेस हैं। 1. सामान्य बस सर्विसेस 2. वीरा बस सर्विसेस 3. मेट्रो एक्सप्रेस। वीरा और मेट्रो एक्सप्रेस के बीच ज्यादा स्टाफ नहीं हैं। तथा ये लग्ज़री बसें संचालित कर रहे हैं। आगे के दरवाजे से महिलाओं और पीछे के दरवाजे से पुरूष के आगमन की व्यवस्था होती है। आगे की सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित होती हैं। शेष सीटें पुरूषों के लिए होती है।

आंध्रप्रदेश स्टेट रोड़ ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन की स्थापना सन् 1932 में हुई थी और ये ना केवल हैदराबाद सिटी बस बल्कि संपूर्ण आंध्रप्रदेश मे बसों का संचालनकर्ता है। इस प्रकार पुणे और कोयंबटूर में सिटी बस का संचालन किया जाता है। कोयंबटूर में यह सेवा पूर्णत: निजी हाथों में है।

दिल्ली में बस सेवा – दिल्ली में दिल्ली ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन सिटी बस का संचालनकर्ता है। जो दिल्ली जैसे बड़े शहर को एक स्थान से दूसरे स्थान तक जोड़ता है। ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन के कुल 34 डिपो हैं। इसमें 27,818 कर्मचारी कार्य कर रहें हैं। ये बस सर्विस दिल्ली में 1948 में आरंभ की गई थी। उस समय दिल्ली ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन का नाम गवालियर और उत्तर भारत ट्रांसपोर्ट कंपनी लि. था।

1976 में राज्य परिवहन निगम ने 29 मार्ग निर्धारित किए।जहां इन बसों का संचालन किया जाना था तथा कुल 37 बसों का संचालन किया

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

गया। जो धीरे-धीरे कम होती चली गई।

वर्ष	बसों की संख्या
1976-77	37
1977-82	22
1982-83	21
1983-84	21
1984-85	22
1985-86	19
1986-87	16
1987-88	19
1988-89	17
1989-90	19
1990-91	16

विद्यार्थियों के लिए पास की सुविधा थी। 07 रूपसे प्रतिमाह में पास बनवाकर किसी भी बस से किसी भी स्थान की यात्रा विद्यार्थी कर सकते थे। प्रत्येक मार्ग को 4 से 8 क्षेत्रों में विभाजित किया गया और न्यूनतम किराया 50 पैसे निर्धारित किया गया। किराया वसूलने की तीन पद्धिति इस समय सुझाई गयी।

1. क्षेत्रीय पद्धति
2. समान्तर पद्धति (समान दूरी सिद्धांत)
3. सूंडाकार पद्धति

1. क्षेत्रीय पद्धति - इसमें किराया वसूल करने हेतु 4 से 8 क्षेत्र विभाजित किये गये। और प्रत्येक क्षेत्र किराया 50 पैसे की इकाई मे माना गया।

2. समान्तर दूरी सिद्धांत - इस पद्धति के अंतर्गत किराये की दर प्रति किलोमीटर एक सी होती है। तथा दूरी के अनुसार उसे प्रति किलोमीटर की दर से गुणा किया जाता हैं। यह दर यातायात के सिद्धांतों से विपरीत है। क्योंकि इस पद्धति में दूर जाने वाले और नज़दीक में जाने वाले सभी व्यक्तियों से समान किराया लिया जाता है। जबकि यातायात के सिद्धांत के अनुसार दूरी की यात्रा करने वालों के साथ उदारता होनी चाहिए। किंतु निकटवर्ती यात्रा करने वाले के साथ अन्याय नहीं होना चाहिए।

3. सूंडाकार पद्धति - जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जाती है। इस पद्धति में किराया घटता जाता है। इस पद्धति का प्रयोग पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए किया जाता है।

उपरोक्त में क्षेत्रीय पद्धति का प्रयोग इन्दौर में किया गया। इन्दौर नगर में बस सेवा के संचालन के डिपो स्थापित किये गये थे। प्रारंभ में यह डिपो जिन्सी क्षेत्र में था। जो बाद में नंदा नगर कर दिया गया। इस प्रकार स्पष्ट है कि इन्दौर पूर्ववर्ती बस सेवा जिसका संचालन म.प्र. राज्य परिवहन निगर नंदा नगर व जिन्सी डिपो के माध्यम से करता था। जनता के लिए सुविधाजनक थी। किंतु कर्मचारियों के मनमानेपन से सरकार की बेरूखी और जनता के समर्थन के अभाव में यह सेवा 1991 में बंद कर दी गई। इसके पश्चात सरकार ने किसी भी बस सेवा का संचालन 2005 तक नहीं किया। सरकार ने टैम्पो, नगरसेवा और आटो रिक्षा के भरोसे समस्त यात्री परिवहन को छोड़ दिया था। जिसके दुष्परिणाम धीरे-धीरे दिखाई देने लगे। अत: 2005 में सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना की गई थी।

सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना - लगातार बढ़ती जनसंख्या और शहर के बढ़ते दायरे को देखते हुए एक नये यात्री परिवहन की आवश्यकता महसूस की गई। जो सिटीबस के रूप में नगर निगम इन्दौर और इन्दौर विकास प्राधिकरण के संयुक्त प्रयास से हमारे सामने आई। इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट लि. की स्थापना प्रबंध पूंजी और संगठन संबंधी महत्वपूर्ण बातें निम्न हैं :-

सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना 01 दिसंबर, 2005 को प्रा. लि. कंपनी के रूप में की गई। इन्दौर नगर निगम और इन्दोर विकास प्राधिकरण के संयुक्त प्रयास से स्थापित किया जा सका। यह मॉडल कम विनियोग और अधिक प्रतिफल को आधार मानकर बनाया गया। कंपनी ने अपनी पहली बस 26, जनवरी 2006 को प्रारंभ की। प्रारंभ में 37 बसों के माध्यम से कार्य आरंभ किया गया। धीरे-धीरे 80 बसें संचालित की जाने लगी। वर्तमान में 112 बसें संचालित हो रहीं हैं। इसके लिये नगर निगम ने 40 स्टॉप भी बनाए हैं। जिसमें जीपीएस सिस्टम भी स्थापित किया गया। इन्दौर में इसकी स्थापना के पश्चात भोपाल, गवालियर, जबलपुर, जयपुर, उदयपुर, जालंधर और कोटा के प्रशासन ने सराहा और अपने शहर में भी ऐसी प्रणालि लागू करने की ईच्छा ज़ाहिर की। इस सफलता से अभिभूत होकर इन्दौर प्रशासन और नगर निगम 868 करोड़ के बस रैपिड ट्रांसिट सिस्टम पर कार्य कर रहा है। जिसमें बसों के पृथक रोड़ की व्यवस्था की जा चुकी है।

इन्दौर हमेशा से ही म.प्र. की वाणिज्यिक राजधानी रही है। इसके अतिरिक्त यह धीरे-धीरे शिक्षा का मुख्य केंद्र बनता जा रहा है। अत: नगर का विकास तेजी से बढ़ रहा हैं। यहां 3,30,000 से अधिक मज़दूर हैं। जो इन्दौर शहर के दूरी वाले क्षेत्रों में कार्य करते हैं। जिनके लिए सुविधाजनक बसों की व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव की गई। जिसे ध्यान में रखकर यह बस व्यवस्था लागू की गई।

इन्दौर की परिवहन स्थिति (01 दिसंबर 2005)

1. 7,32,893 वाहन रजिस्टर्ड हैं।
2. यात्री परिवहन में 550 प्रायवेट मिनि बसें 01 दिसंबर, 2005 के पूर्व संचालित थीं और लगभग 500 टैम्पो संचालित थे।
3. लगभग 284000 यात्री इन्दौर शहर में आते हैं और इन्दौर शहर से बाहर जाते हैं।
4. इसमें ऑफिस व्यापार और शिक्षा संबंधी 76 प्रतिशत लोग होते हैं।
5. 71 प्रतिशत रोड़ की चौड़ाई और लंबाई इतनी है कि स्पीड 20 किलोमीटर/घंटा या कम रखनी होती है।
6. सामान्यत: एक नागरिक औसतन 600/- प्रतिमाह वाहनों पर खर्च करता है।
7. कुल 2270000 ट्रिप प्रतिदिन परिवहन के साधन लगाते हैं।
8. ट्रिप में 51 प्रतिशत हिस्सा निजी वाहनों का है जबकि लोक परिवाहन का हिस्सा 16.04 प्रतिशत है।

उपरोक्त कारणों से एक ऐसी बस व्यवस्था संचालित करने की आवश्यकता अनुभव हुई जो स्थानीय यात्रियों की दृष्टि से निम्नलिखित लुभावन स्वरूप से उपर्युक्त हों :-

1. सस्ती हो।
2. सुगम हो।
3. सुविधाजनक हो।
4. प्रभावशाली हो।
5. प्रदूषण से मुक्त हो।

इसे ही ध्यान में रखकर इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. को आरंभ किया गया।

वर्ल्ड बैंक की सिफारिश के अनुसार शहर की आबादी लगातार बढ़ती जा रही है। अत: इन शहरों में ऐसी प्रणालि की आवश्यकता है। जिसमें 30 प्रतिशत सरकारी विनियोग हो और 70 प्रतिशत प्रायवेट भागीदारी हो। इसे आधार मानते हुए पीपीपी मॉडल बनाया गया। पीपीपी अर्थात् पब्लिक प्रायवेट पार्टनरशिप योजना । इस योजना को इन्दौर में कलेक्टर और इन्दौर मजिस्ट्रेट ने आगे बढ़ाया। विवके अग्रवाल जो कि तात्कालीन कलेक्टर थे, उन्होंने इस प्रणालि की समीक्षा की तथा इसके लिए उन्होंने विशेष प्रयुक्त वाहन स्थानीय प्रशासन प्रायवेट ऑपरेटर और अन्य साधनों को अपनाने इस मॉडल में शामिल किया। अत: भारतीय कंपनी अधिनियम 1956, के आधीन् इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना की गई। इसका रजिस्टर्ड ऑफिस 30, रेसिडेंसी एरिया में स्थित है।

स्थापना के उद्देष्य :-इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थाना का मुख्य कारण इन्दौर की भविष्य की लोक परिवहन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना हैं। इसके अतिरिक्त इसकी स्थापना के उद्देश्य निम्नलिखित हैं। :-

1. इन्दौर नगर के नागरिको के लिए वृहद और आवश्यकता अनुरूप यात्री परिवहन की व्यवस्था करना।
2. यात्री यातायात समस्या को हल करना तथा यातायात के भार को विभिन्न यात्री परिवहन व्यवस्था में बांटना।
3. एक ऐसी वित्तीय मॉडल बनाना जो न केवल जनता के लिए बल्कि सरकार के लिए भी लाभदायक हो। साथ ही साथ इस मॉडल से कंपनी और प्रायवेट ऑपरेटर को भी लाभ पहुंचे।
4. एक ऐसी यात्री परिवहन व्यवस्था स्थापित करना जो कुशल हो विश्वास योग्य हो, और सस्ती श्रेष्ठतम सेवाएं अपने ग्राहक को दे सकें।
5. एक ऐसी यात्री परिवहन व्यवस्था स्थापित करना जो इन्दौर के गौरव के नाम से जानी जा सके।
6. नवीन तकनीक से युक्त यात्री परिवहन व्यवस्था आरंभ करना।
7. एक ऐसी यात्री परिवहन व्यवस्था स्थापित करना जो कि पर्यावरण को प्रदूषित ना होने दे।
8. एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करना जिसे सामान्य जनता निजी वाहनों के स्थान पर लोक परिवहन के साधनों का प्रयोग करें। ताकि प्रदूषण कम हो सके।

स्थापित वाहन और परिचय - इन्दौर सिटी बस की स्थापना के समय केवल टाटा की स्टार बस (सिटीबस) को ही प्रारंभ किया गया था। बाद में सिटी बस के साथ-साथ मैट्रो टैक्सी का आरंभ किया गया।

टाटा स्टार बस का संचालन ऑपरेटर या कॉंट्रेक्टर के लिए सुविधाजनक और लाभदायक है यह एक लो-फ्लोवर बस है। जिसमें दो दरवाजें हैं। यह बस महिलाओं, बच्चों और बुजुर्गों को ध्यान में रखकर बनाई गई है। बस अत्यंत सुंविधाजनक और आकर्षक लगती है। जिसका मुख्य कारण इसके 1200 एमएम के दरवाज़े हैं। इसका फ्लोर पूर्णत: साफ सुथरा धो सकने योग्य है। और ऐसा है जिस पर फिसलन न हो। इसकी सीटें आरामदायक हैं और उंची हैं। जो व्यक्ति को खिड़की के समकक्ष रखती हैं।रात्रिकालीन सेवाओं के लिए इसमें सीएफएल भी लगाई गई हैं। तथा इस गाड़ी की खिड़कियां बड़ी-बड़ी हैं, जो कि इसे वृहद हवादार बनाती हैं।

यात्री परिवहन सेवा की स्थापना के साथ ही सुविधाओं की स्थापना की गई। जिसमें अत्याधुनिक जीपीएस सुविधा है। ये एक ऑनलाईन बस ट्रैकिंग सिस्टम है। जिसमें पैसेंजर इन्फॉरमेशन सिस्टम भी शामिल है। इसके माध्यम से बस की लोकेशन की जानकारी सीधे कंट्रोल रूम को प्राप्त होती है। जिससे वह, यह जानकारी ग्राहकों तक जीपीएस सुविधा से पहुंचा सकता है।

जीपीएस सुविधा की स्थापना के लाभ :

1. ग्राहकों के समय की बचत।
2. विलंब या देरी से बचना।
3. बस के मायलेज की जानकारी लेना।
4. बस संचालन के तरीके और यत्र-तत्र बस रोकने की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना।
5. बस संचालन में असुविधा जैसे पेट्रोल, डीज़ल, टायर ऑईल या अन्य तकनीकी समस्या से बचना।

इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. का प्रबंध - इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना इन्दौर नगर निगम और इन्दौर विकास प्राधिकरण के द्वारा की गई। अत: इसका प्रबंध भी इन्हीं के द्वारा किया जा रहा है। इस संबंध में संगठनात्मक स्वरूप निम्न प्रकार हैं(01 दिसंबर, 2005 तक) :-

क्र.	आईसीटीएसएल में पदनाम	कार्यालय
1	चेअर पर्सन	महापौर इन्दौर नगर निगम
2	वाईस चेअर पर्सन	चेअर मैन इन्दौर विकास प्राधिकरण
3	विशेष निर्देशक	कलेक्टर इन्दौर
4	बोर्ड मेंबर	कमिश्नर इन्दौर नगर निगम
5	बोर्ड मेंटर	मुख्य कार्यकारी निर्देशक इन्दौर विकास प्राधिकरण
6	मुख्य कार्यकारी अधिकारी	संयुक्त कलेक्टर इन्दौर

स्त्रोत :-इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. कार्यालय इन्दौर।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक भारत में परिवहन, के. पी. भटनागर।
2. दैनिक भास्कर इन्दौर।
3. जिला सांख्यिकीय पुस्तक इन्दौर।
4. आधुनिक परिवहन, डॉ. शिवध्यानसिंह चौहान।
5. www.citybusindore.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

इन्दौर नगर में संचाचित अटल सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लिमिटेड का आय का विश्लेषणात्मक विवरण

डॉ. धीरज शर्मा *

प्रस्तावना – यात्री परिवहन व्यवस्था पूरे देश में ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व में एम महत्वपूर्ण व्यवस्था है। बिना इसके व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान तक आ-जा नहीं सकता। अपने गन्तव्य तक पहुचने में ये परिवहन साधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

नगरों में सस्ते कुशल और पर्याप्त मात्रा में यातायात सुविधा की बहुत आवष्यकता होती है। यदि शहरों में यातायात एवं संदेश वाहन के साधनों का अभाव हो तो नगरीय जीवन पूर्णत: अस्त व्यस्त हो जाएगा। बडे-बड़े नगरों में उद्योग धंधे प्राय: शहर से दूर स्थापित होते हैं तथा श्रमजीवियों को जल, प्रकाश एवं मकान आदि सुविधा के कारण कारखानों व कंपनियों से दूर स्थित क्षेत्रों में रहना पड़ता है। अत: नगरीय जीवन के विकेंद्रीयकरण में जो कि स्वस्थ्य और अन्य सामाजिक दृष्टिकोण से बहुत जरूरी है। उन्नत यातायात की महत्वपूर्ण व्यवस्था है।

सड़क परिवहन व्यापार वाणिज्य कृषि से संबंधित साधनों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की सहायता से है। (कैमर किम विलियम)

इन्दौर नगर में परिवहन की स्थिति – इन्दौर में प्रतिवर्ग किलोमीटर लगभग 7464 लोग रहते हैं। इन्दौर का क्षेत्रफल 214 वर्ग किलोमीटर है। इन्दौर रेल्वे व हवाई यातायात से भी जुडा है एवं पांच राष्ट्रीय राजमार्गों से जुडा हुआ है।

राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या –

59 मुंबई-आगरा
59-ए, इन्दौर-अहमदाबाद
17-ए, इन्दौर-बैतूल
27 भोपाल से संबंधित

इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना इन्दौर नगर में 1976 में सरकार ने मां नगरी बस सेवा आरंभ की। इसके पूर्व भी महानगरी बस सेवा संचालित हुई है किंतु उनकी संख्या अत्यंत कम थी।

वर्ष	बस संख्या
1957-62	15
1962-67	14
1967-72	16

1976 में यह सेवा 29 मार्गो में संचालित होती थी। जिसमें 16 मार्गो पर आर्थिक नुकसान के कारण इसे बंद कर दिया गया। 1998 आते-आते सभी मार्गो पर यह सेवा बंद कर दी गई। 1976 में कुल 37 बसें संचालित होती थी। जिसका किराया न्यूनतम था।

इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की स्थापना पीपीपी मॉडल पर 01 दिसंबर 2005 को की गई। इसकी प्रारंभिक पूंजी 25 लाख रूपये थी। जो कि 2.5 लाख समता अंषों में विभाजित है। 01 अंश का मूल्य 10 रूपये है। यह पूंजी इन्दौर नगर निगम और इन्दौर विकास प्राधिकरण द्वारा संयुक्त रूप से लगाई गई है।

इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. का संगठन:-

म.प्र. राज्य सरकार परिवहन विभाग भोपाल
(नियमककर्ता)

इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि.
(संगठन योजना प्रबंध व नियंत्रक)

सरकारी व्यवस्था
1. अधोसंरचना विकास
2. सडक मार्ग
3. मरम्मत और सुधार
4. शिकायत निवारण

निजी व्यवस्था

राशि संबंधी
1. किराया संग्रह
2. स्मार्ट कार्ड
3. जी. जे. एस.
4. विज्ञापन
5. यात्री पास प्रबंध

संचालन संबंधी
1. बस संचालन
2. कर्मचारी प्रबंध
3. मरम्मत व सुधार

इस प्रकार सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. का प्रबंध संगठन पीपीपी मॉडल पर है। अर्थात् Public Private Patnership Model जिसमें मुख्य भूमिका में राज्य सरकार का परिवहन विभाग है। उसके पश्चात सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. और अंत में प्रायवेट बस ऑपरेटर और निजी संस्था हैं।

इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की आय – एक ट्रांसपोर्ट कंपनी की मुख्य आय किराये से होती है। किंतु पीपीपी मॉडल होने से अटल इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की मुख्य आय निम्न है :-

1. **विज्ञापन से आय :-** वर्तमान में इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट लि. की आय का 20 प्रतिशत विज्ञापन से होने वाली आय है। कुल विज्ञापन आय का 60 प्रतिशत ऑपरेटरों को और 40 प्रतिशत कंपनियों को प्राप्त होता है। 2005-06 तथा 2006-07 तक 40 प्रतिशत आय मानी गई किंतु 2007-08 से व्यवस्था बदल कर 100 प्रतिशत आय मानी गई तथा ऑपरेटर को दिए जाने वाले 60 को व्यय माना गया।
2. **अन्य आय (पास की आय) –** पास की आय भी सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. की महत्वपूर्ण आय है। पास की आय का 80 प्रतिशत आपरेटर को दिया जाता है और 20 प्रतिशत कंपनी के पास रहता है।

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

2005-06 और 2006-07 तक संबंधित आय को ही लेखे में शामिल किया गया। किंतु 2007-08 से 100 प्रतिशत आय मानकर शेष 80 प्रतिशत व्यय माना गया जो ऑपरेटरों को भुगतान किया गया।

3. प्रीमियम की आय – इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. द्धारा अपनी सेवाओं हेतु प्रतिमाह प्रीमियम की राषि प्राप्त की जाती है। सामान्यत: यह आय किराए के बदले प्राप्त होती है। क्योंकि किराया पूर्णरूपेण ऑपरेटर को प्राप्त होता है। अत: प्रति बस एक निश्चित राशि जो लगभग 03 लाख रूपये प्रतिमाह है, कंपनी प्राप्त करती है।

4. होर्डिंग के किराये की आय – कंपनी के पास अपने स्वामित्व में जो स्थल हैं, उन पर होर्डिंग लगाकर कंपनी आय प्राप्त करती है। जो कि कंपनी की आय का मुख्य स्थिर साधन है।

5. परामर्श की आय – यह आय एक अस्थिर आय है। जो किसी वर्ष दर्शायी गई है और किसी वर्ष नहीं।

6. टेंडर कार्य के विक्रय से आय – कंपनी समय-समय पर टेंडर जारी करती है। जिनके फार्म के विक्रय से कंपनी को महत्वपूर्ण आय होती है।

7. सावधि जमा पर ब्याज की आय – कंपनी अपनी आय का कुछ भाग सावधि जमा में रखती है। जिस पर कंपनी को ब्याज प्राप्त होता है।

आय का प्रतिशतवार विवरण(सामान्य लगभग)

1.	विज्ञापन आय	35 प्रतिशत
2.	प्रीमियम आय	20 प्रतिशत
3.	पास की आय	30 प्रतिशत
4.	परामर्श की आय	02 प्रतिशत
5.	होर्डिंग किराये की आय	02 प्रतिशत
6.	टेंडर फार्म की आय	03 प्रतिशत
7.	सावधि जमा पर ब्याज की आय	08 प्रतिशत
	कुल	**100 प्रतिशत**

निष्कर्ष – उपरोक्त से स्पष्ट है कि अटल इन्दौर सिटी ट्रांसपोर्ट सर्विस लि. जो कि 2005 में स्थापित हुआ, प्रारंभ में इसका प्रशासन कलेक्टर और अपर कलेक्टर के आधीन था। किंतु बाद में यह नगर निगम के आधीन हो गया। संचालनकर्ताओं में अनेक प्रशासनिक अधिकारी अभी भी शामिल हैं। कंपनी की आय के विविध साधन हैं, जिसमें पास की आय, विज्ञापन की आय और प्रीमियम की आय मुख्य है तथा दिन-प्रतिदिन उत्तरोत्तर वृद्धि कर रही है तथा कंपनी का भविष्य अच्छा कहा जा सकता है। पूर्णरूपेण सरकारी प्रारूप ना होने से हानि की संभावना भी बहुत कम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नई दुनिया इन्दौर
2. दैनिक भास्कर इन्दौर
3. www.citybus.indore.com/about.aspx
4. रोड़ ट्रांसपोर्ट इन इंडिया – वी.रामानधा
5. केंद्रीय सड़क परिवहन निगम अधिनियम, 1950
6. जिला सांख्यिकीय पुस्तक इन्दौर

****

ग्रामीण आर्थिक विकास का संभावित प्रमुख स्त्रोत मत्स्य पालन

कमल बैरागी *

प्रस्तावना – भारत में आर्थिक संसाधनों की दृष्टि से पर्याप्त भण्डार हैं। आवश्यकता हैं इसकी संभावनाओं को मूर्तरूप देने की भारत जैसे देश का आर्थिक विकास पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर निर्भर हैं। भारत में ग्रामीण क्षेत्र में 72 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती हैं, और कृषि से संबंद्ध हैं, आज कृषि कार्य में अधिक लागत में कम लाभ मिल पाता हैं, ऐसे में मत्स्य पालन को ग्रामीण किसान या गैर किसान वर्ग को जोड़कर देश का आर्थिक विकास में भागीधारी तीव्र गति से बढ़ाई जा सकती हैं। मत्स्य पालन व्यवसाय को कृषि के प्राथमिक श्रेत्र के व्यवसाय में सबसे अधिक, कम मेहनत, कम लागत एवं अधिक आय प्रदान करने वाला व्यवसया माना गया हैं।

भारत जैसे विकासशील देश में ग्रामीण आर्थिक विकास में मत्स्य पालन व्यवसाय की अपार सम्भावनाऐं विद्यमान हैं। मत्स्य पालन व्यवसाय कम लागत में अधिक आय देने वाला हैं, जो भारतीय ग्रामीण जनता के अनुकुल हैं। आज हमारे देश में बेरोजगारी की भयानक स्थिति हैं, देश के उच्च शिक्षा प्राप्त युवक जैसे–इंजीनियर, एम.बी.ए., पी.एच.डी. धारक एवं अन्य डिग्री धारी बेंरोजगारी की मार झेल रहे है अगर ये युवक मत्स्य पालन व्यवसाय को ग्रामीण क्षेत्र में विकसित कर तो देश में रोजगार बढ़ाने के साथ ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को 'उत्तम भोजन, उत्तम आय' प्रदान कर सकते जो भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अनुकुल होगा।

मत्स्यपालन उद्योग से सहायक उद्योगों का विकास – देश में मत्स्य पालन व्यवसाय विकास से इस उद्योग पर आधारित उद्योग का तीव्र गति से आर्थिक विकास होगा। जैसे– जाल निर्माण उद्योग, नाव निर्माण उद्योग नायलोन निर्माण उद्योग, बर्फ की फैक्ट्रीयां, तार, रस्सा उद्योग एवं अन्य आदि उद्योग भी मत्स्य पालन व्यवसाय से लाभान्वित हो रहे हैं। देश की बेरोजगारी का प्रतिशत मत्स्य पालन एवं सहायक उद्योगों के द्धारा कम किया जा सकता हैं। रोजगार मूलक होने के कारण इस उद्योग के माध्यम से देश की पिछड़ी अवस्था में एक सीमा तक सुधार किया जा सकता हैं। आज हमारे देश में कृषि व्यवसाय अधिक लागत एवं कम लाभ का व्यवसाय सिद्ध हो रहा, अन्य सभी उद्योगों कि आय,लाभ की तुलना में ग्रामीण क्षेत्र में मत्स्य पालन जैसे महत्वपूर्ण उद्योगों को प्रेत्साहन देना होगा तभी ग्रामीण सामाजिक स्तर का सुधारा होगा। देश में सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए निर्धन, बेरोजगार अशिक्षित लोगों की आर्थिक स्थिति सुद्दढ़ करने पर विशेष ध्यान देना होगा। इसके लिए मत्स्य पालन व्यवसाय को उच्च तकनीकि से करने की जानकारी प्रदान करनी चाहिए, जिससे मत्स्य उत्पादन में कई गुना वृद्धि होगी जिससे देश की जनता को रोजगार के साथ उच्च जीवन स्तर मिलेगा, ग्रामीण क्षेत्र के आर्थिक विकास को बल मिलेगा।

मत्स्य पालन उद्योग के आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र मे प्रभाव – मत्स्य पालन उद्योग आर्थिक विकास में प्रमुख योगदान दे सकता हैं इसके कई प्रकार के व्यवसायिक आर्थिक एवं सामाजिक लाभ हो सकते हैं। मत्स्य की आर्थिक उपयोगिता कृषि व्यवसाय के बाद द्धितीय स्थान पर हैं। मछली पालन में अल्पसमय एवं अलप श्रम के द्धारा अधिक उपलब्धि प्राप्त की जा सकती हैं। मत्स्य पालन मानव जीवन को अनेक तरीकों से प्रभावित एवं लाभान्वित करता हैं। हमारे देश में करोड़ो आदमी भुखमरी एवं कोषण से पीड़ित हैं। मत्स्य उन सभी लोगों के साथ देश के शेष लोगों की खाद्य समस्या एवं सन्तुलित आहार में हाथ बटाती हैं। मत्स्य मानव जीवन में अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण हैं इससे संबंधित प्रमुख स्त्रोत इस प्रकार हैं –

मत्स्य मनुष्य के आहार के रूप में – मत्स्य आहार में शेष अन्य पशुओं की अपेक्षा अधिक पोषक तत्व होते हैं इसमें प्रोटीन खनिज प्रदार्थ की प्रचुर मात्रा पाई जाती हैं। कुपोषण की समस्या को मत्स्य पालन खाद्य उत्पादन कार्यक्रम आयोजित करके समाप्त किया जा सकता हैं। मत्स्य में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन विटामिन ए,डी,सी तथा कई तरह के खनिज तत्व विशेष रूप से पाए जाते हैं मानव के लिए मत्स्य अधिक सन्तुलित एवं सस्ता खाद्य पदार्थ होता हैं जो सामाजिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

मत्स्य पशु आहार के रूप में – भारत में करोड़ो पशु आहार से मत्स्य आटा सबसे महत्वपूर्ण माना जाता हैं क्योंकि यह अन्य पोष्टिक आहार पदार्थ की तुलना में सबसे सस्ता साधन माना जाता हैं। केनरी प्राप्त मत्स्य के छोटे–छोटे टुकड़े या मत्स्य जो मनुष्यों के लिए उपयोग के योग्य नहीं आते उन्हें सुखाकर मिल में पीस दिया जाता हैं, जिसे मत्स्य आटा के नाम से जाना जाता हैं। भारत के कई प्रान्तों में मत्स्य आटे का उत्पादन कर आय में वृद्धि की जाती हैं। आटे में 60 प्रतिशत केल्शियम,फास्फेट पाया जाता हैं जो पशु आहार के लिए सबसे लाभाकारी माना जाता हैं।

मत्स्य तेल – मत्स्य तेल को महत्वपूर्ण माना जाता हैं ये औषधीगुणों से भरपूर होता हैं। मत्स्य तेल में विटामिन–ए और कुछ सीमा तक विटामिन–डी और सी के प्राकृतिक स्त्रोतों में से एक हैं। मत्स्य तेल की मांग विश्वव्यापी हैं। ये तेल स्वस्थ्य अस्थियों, शिशुओं और बच्चों की वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण माना गया। खाद्य तेल मार्जटीन, नकली मक्खन, वसा प्रतिस्थायी साबुन, रोगन पेंट और वार्निशों के निर्माण में मत्स्य तेल व्यापक रूप से प्रयुक्त किया जाता हैं।

मत्स्य चमड़ा – शार्क एवं रे जैसी अनेक मछली की त्वचा से चमकदार और चिकने पदार्थ तैयार किए जाते हैं। जैसे महिलाओं के जूते, बटुए,सुटकेस में प्रयोग किया जाता हैं जो व्यवसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) श्री हर्कचन्द चौरड़िया महाविद्यालय,भानपुरा, जिला – मन्दसौर (म.प्र.) भारत

मत्स्य पंख – शार्क के पंख चीन को निर्यात किए जाते हैं जहाँ इनसे जूस तैयार किया जाता हैं।

कृत्रिम मोती का निर्माण – मत्स्य शल्कों से चाँदी जैसी परत को खुरचकर कृतिम मोती का निर्माण किया जाता हैं, जिसकी विदेशों में बहुत मांग होती हैं।

मत्स्य खाद्य – मत्स्य खाद्य भारतीय कृषि के लिए वरदान साबित हो सकता हैं, जो मछलियां खाने योग्य नहीं होती हैं उनके खाद्य तैयार किया जाता हैं। खराब या आधिक्य मछली को धूप में सूखाकर पीस लिया जाता हैं और खाद तैयार हो जाता हैं इसमें नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की प्रचुर मात्रा पाई जाती हैं जिससे कृषि उत्पादन तीव्र गति से बढ़ेगा। देश विदेशों मत्स्य सजावट एवं अमोद, प्रमोद के खेल के रूप में भी बिक्री कर करोड़ो की आय प्राप्त की जा सकती हैं।

वास्तव में भारत में लाखों लोग मत्स्य उद्योग से जुड़े हुये हैं क्योंकि मछली उत्तम एवं सन्तुलित भोजन का बहुत बड़ा स्त्रोत हैं। हमारे देश में कई लोग अनेक प्रकार के कार्य करने में लगे हुये हैं जैसे प्रशीतन,संरक्षण डिब्बाबंदी, मछली उत्पाद सह उत्पाद आदि। इस व्यवसाय से जुड़कर आज भारत की गरीबी एवं बेरोजगारी दूर की जा सकती हैं।

मध्यप्रदेश में मत्स्यपालन क्षेत्र में रोजगार एवं आय की स्थिति – म.प्र. मत्स्योद्योग अपने महत्वपूर्ण दायित्व पूर्ण करने हेतु सतत् प्रयासरत रहा हैं। म.प्र. राज्य भारत में मत्स्य पालन क्षेत्र में वर्ष दर प्रगति कर रहा हैं। प्रदेश में 3.44 लाख हेक्टेयर जलक्षेत्र उपलब्ध हैं जिसमें से 3.36 लाख हेक्टेयर जलक्षेत्र मछली पालन के अन्तर्गत लाया गया। साथ ही मछुआरों को आर्थिक सहायता के रूप में 687.66 लाख रूपये का ऋण एवं 222.19 लाख रूपये अनुदान के रूप में वितरित किए गए। 2012 में मत्स्य पालन उत्पादन कार्य हेतु सरकार द्वारा रोजगार सृजन हेतु 167 लाख मानव दिवस के रूप में रोजगार का सृजन किया। मत्स्य पालन व्यवसाय ने प्रदेश में रोजगार के क्षेत्र में मत्स्यबीज उत्पादन, मत्स्य पैंकिग परिवहन, मत्स्याखेत, मत्स्य विक्रय, मत्स्याखत उपकरण, मत्स्यपालन निर्माण समूह सदस्यों, समिति सदस्य के रूप में, मत्स्य पालन चौकीदारों एवं अन्य कार्य में वर्ष 2012 में 104346 पुरूष एवं 21564 महिलाऐं कार्यरत हैं।

विश्व समुद्री खाद्य व्यापार में झींगों और चिंगटों के निर्यात संबंधी टन भार में भारत का स्थान पहला समुद्री मत्स्य की में विकास शील देशों में दूसरा तथा विश्व में सांतवां स्थान हैं। लगभग साठ देश भारत के 200000 वर्ग कि.मी. में फैले अपेक्षाकृत साफ और प्रदूषण रहित पानी में भरपूर मिलने वाले समुद्री खाद्य की आपूर्ति पर निर्भर हैं। इसके अलावा समुद्र में मत्स्य पालन क्षेत्र में लाख लोगों के लिए रोजगार के रासते खोल दिए हैं। हजारों मछुआरों और उनके परिवार मत्स्य उद्योग से लाभान्वित हुए हैं उनकी आय बढ़ी एवं सामाजिक-आर्थिक स्थिति सुधरी हैं।

मत्स्य पालन सह आय के अन्य स्त्रोत – किसान या समाज का युवा मत्स्यपालन के साथ-साथ सह आय के स्त्रोत से अपनी आय दुगुना कर सकता हैं। मत्स्य पालन के साथ-साथ अन्य उत्पादक जीवों का पालन किया जा सकता हैं जिससे मत्स्य उत्पादन में होने वाले व्यय की पूर्ति की जा सके तथा अन्य जीवों से उत्सर्जित व्यर्थ पदार्थों का उपयोग मत्स्य पालन के लिए हो सके। मत्स्यपालन के साथ अन्य सहायक कार्य में मछलीपालन सह बत्तख पालन, मत्स्यपालन सह मुर्गीपालन, मत्स्यपालन सह सिंघाड़ा पालन, मत्स्यपालन सह झींगापालन, मत्स्यपालन सह अन्य पशु-पक्षी पालन कर युवा अपनी आय के अनेक स्त्रोत बना लेता हैं। वर्तमान समय में सरकार इन कार्य के लिए अनुदान देती हैं। जिससे देश में रोजगार एवं विदेशी मुद्रा का अर्जन होगा। जो देश एवं समाज के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इन सह कार्यो के माध्यम से गांव की करोड़ो जनता बेकार पड़े संसाधनों का उपयोग कर देश की भयानक बेरोजगारी को कम करने में अपनी अहम भूमिका निभा सकता हैं और इनकी भारत में सबसे अधिक संसाधन एवं अनुकुलता हैं, यहॉ के युवाओं को मत्स्य पालन तथा सह कार्यों में रूचि दिखाकर देश,समाज एवं स्वयं का आर्थिक विकास करना होगा।

निष्कर्ष – मत्स्यपालन एक महत्वपूर्ण ग्रामीण स्व-रोजगार के रूप में देश में लोकप्रिय बनता जा रहा हैं, जिसका प्रमुख कारण हमारे देश में भू-क्षेत्रफल का एक बड़ा भाग ऐसा हैं जो नदियों, समुद्र व अन्य जल के स्त्रोतों से ढका हुआ हैं। यहॉ मत्स्य पालन एवं सह कार्य को बढ़ावा देकर युवावर्ग अन्य व्यवसाय की तुलना में अच्छी आय प्राप्त किया जा सकती हैं। वास्तव में भारतीय अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय हैं जिसमें रोजगार की अपार संभावनाऐं विद्यमान हैं, ग्रामीण पृष्ठ भूमि से जुड़े हुए लोगों में आमतौर पर आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग, मध्यम वर्ग के लोग इसे व्यवसाय से जुड़कर अपने जीवन स्तर को उच्च बना सकते हैं। जिसके लिए शासन सतत् प्रयासरत हैं। शासन द्वारा मत्स्य पालन हेतु सरकार जनता को सब्सिडी, प्रशिक्षण, बीमा, कल्याणकारी योजना का लाभ देती हैं। इस व्यवसाय में आज 20 लाख से अधिक लोगों के रोजगार का अनुमान हैं और ये बढ़ता ही जा रहा हैं। युवावर्ग मत्स्य पालन विभाग एवं जिला उद्योग केन्द्र से ओर अधिक जानकारी प्राप्त कर इस व्यवसाय को अपनाये क्योंकि इस व्यवसाय का भविष्य उज्जवल हैं देश-विदेश की 60 प्रतिशत जनता मछली खाना पंसद करते हैं। अन्त में हम कह सकते हैं कि मत्स्य पालन व्यवसाय भारतीय अर्थव्यवस्था, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए वरदान सिद्ध हो सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मछली पालन विभाग मत्स्योद्योग संचनालय भोपाल।
2. पंचायत, जनपद पंचायत कार्यालय।
3. ग्रामीण स्वास्थ्य समिति प्रशिक्षण पुस्तिका।
4. योजना नई दिल्ली सूचना एवं प्रकाशन विभाग 2002।
5. भारतीय अर्थव्यवस्था पुस्तिका।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

मुगलकाल में भारत में उपलब्ध पुष्पों का ऐतिहासिक विश्लेषण

डॉ. भावना तिवारी *

प्रस्तावना – प्राकृतिक परिवेश की इतनी महत्ता के बावजूद इस संबंध में संगठित और सूक्ष्म जानकारी उपलब्ध नहीं है। भारत में इस्लाम के आगमन के पूर्व विधिवत इतिहास लेखन की परंपरा नहीं थी। भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना के पश्चात जो इतिहास लेखन हुआ उसमें राजनीतिक घटनाक्रमों को ही तरजीह की गई। उनके लेखन में ऐसे विवरण यदा-कदा ही संयोगवश आए हैं।

समकालीन स्त्रोतों से हमें पुष्पों एवं अन्य वनस्पतियों के नाम मिलते हैं। पुष्प सजावट एवं मनभावन के साथ-साथ सुगंधियाँ बनाने के भी काम आते थे।

सम्पूर्ण देश की भौगोलिक भिन्नता के अनुरूप भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न फूल पाए जाते थे। कुछ ऐसे पुष्प थे जो सर्वत्र पाए जाते थे। 'आइन-ए-अकबरी' में अबुल फ़ज़ल विभिन्न पुष्पों की सूची देता है। और इत्र या सुगंधियों को बनाने की विधियाँ तथा उनसे संबंधित पुष्पों और वनस्पतियों का विवरण देता है। पुष्पों के बहार आने की ऋतुओं की भी जानकारी देता है।

उद्देष्य

- मुगलकाल के पर्यावरण और आज के पर्यावरण का तुलनात्मक अध्न।
- वनस्पति एवं पुष्पों की महत्ता।

समय एवं क्षेत्र – इस शोध पत्र का क्षेत्र मुगलकाल में उत्तर भारत की पर्यावरणीय चेतना को जानना है।

षोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्धितीयक स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है।

मुगलकाल में भारत में उपलब्ध पुष्पों का वर्णन

अबुल फ़ज़ल मधुर सुगंध वाले निम्न पुष्पों की सूची देता है-

1. सेवन्ती :- सफेद रंग ; पूरे वर्ष खिलते हैं और खास तौर पर बारिश के पश्चात् खिलते हैं।
2. मोलसरी :- सफेद रंग के ; बारिश में खिलते हैं।
3. चमेली :- सफेद , पीले और नीले ; बारिश में और कुछ शीत ऋतु में खिलते हैं।
4. रेबेल :- पीले और सफेद ; ग्रीष्म ऋतु के अंत में और बारिश की शुरूआत में।
5. मोगरा:- पीला ; गरमी में (वह मोगरे को सफेद नही बल्कि पीले रंग की श्रेणी में रखता है।)
6. चम्पा :- पीला ; पूरे वर्ष खिलता है- खास तौर पर उन दिनों जब सूर्य मीन और मेश के मध्य रहता है।
7. केतकी :-इसकी ऊपरी पत्तियाँ हरी होती हैं अंदर की पत्तियाँ पीलापन लिये सफेद होती हैं; यह तेज गर्मियों वाले मौसम में खिलता हैं।
8. कूजा :- सफेद होता हैं ; गर्मियों में खिलता हैं।
9. पादल :- भूरा ; गर्मियों में खिलता हैं।
10. जूही :- पीला और सफेद चमेली के समान ; बारिश में खिलता है।
11. निवारी :- सफेद ; बसंत में।
12. नरगिस :- सफेद ; बसंत में।
13. केवड़ा :- सिंह राशि से तुला के मध्य जब सूर्य होता है।
14. चाल्ता:-
15. गुलाल :- बसंत में
16. तसबीह गुलाल :- सफेद ; शीत ऋतु में।
17. सिंगरहार :- छोटी सफेद पत्तियाँ होती हैं ; ग्रीष्म में खिलता हैं।
18. बैगनीं :- रंग भी बैगनीं ; ग्रीष्म ऋतु में।
19. कर्ण :- सफेद ; बसंत में।
20. कपूर बेल :-
21. गुल-ए-जाफरान :- नीले रंग का शरद ऋतु में।

ऐसे फूल जो सौदर्य के लिये जाने जाते हैं:-

22. गुल-ए-आफताब : पीला
23. गुल-ए-कंबल : सफेद और नीले भी ; वर्षा ऋतु में।
24. ज़ाफरी : सुनहरा पीला या नारंगी या हरे रंग के ; वर्षा ऋतु में।
25. गुड़हल : भिन्न रंगों में लाल, पीला, नारंगी, सफेद ; वर्षा ऋतु में।
27. रतन मंजनी : गहरा लाल । यह चमेली से छोटा है ; पूरे वर्ष खिलता है।
28. केसू : ग्रीष्म ऋतु में खिलता है।
29. सेम्बल : गहरा लाल ; बसंत ऋतु में खिलता है।
30. रतनमाल : पीले ; बसंत ऋतु में ।
31. सोनज़र्द : पीला ; बसंत में ।
32. गुल-ए-मालती :
33. कर्ण फूल : सुनहरा लाल
34. कारिल : बसंत में।
35. कनेर : लाल और सफेद ।
36. कदम : बाहरी हिस्सा हरा ; मध्य में पीले रेशे ; अंदर का हिस्सा सफेद बसंत में खिलते हैं।
37. नाग-केसर : बसंत में ।
38. सूरपन : सफेद इस पर मध्य में लाल और पीली धारियाँ ; बारिश में खिलता है।

* विभागाध्यक्ष (इतिहास विभाग) नवयुग कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

39. सीरी खांडी : अंदर पीलापन लिये सफेद बाहर लाल ; बसंत में खिलता है।
40. जैत : अंदर से पीला ; बाहर से काला पन लिये सुर्ख ; बारिश में खिलता है।
41. चम्पला : सफेद , नारंगी के गुच्छों के समान ; बसंत में खिलता है।
42. लाही : यह मीन राशि में खिलता है।
43. गुल-ए-करौंदा : सफेद यह चमेली से छोटा होता है और बारिश में खिलता है।
44. धनंतर : नीलोफर जैसा होता है, बारिश में खिलता है।
45. गुल-ए-हिना :
46. दुपहरिया : सुर्ख लाल और सफेद ; पूरे वर्ष भर खिलता है।
47. बहुन चम्पा : शफ़तालू (आडू) रंग का (Peach)
48. सुदर्शन : पीला यह नीलोफर से मिलता जुलता है किन्तु उससे छोटा होता है।
49. कांगलाई : इसके दो प्रकार होते है लाल और सफेद।
50. शीर्ष : पीला हरा, इसमें पुंकेसर ही पुंकेसर होते हैं और वसंत में खिलता है।
51. सान : पीले रंग का होता है और बारिश में खिलता है।

बाबर भी अपनी आत्मकथा में लिखता है कि 'हिन्दुस्तान में फूल बहुत तरह के हैं। एक जासून है (जासवंत या गुड़हल) जिसे कज़हल कहते हैं। फूल का रंग अनार के फूल से भी और खुला होता है। लाल गुलाब के फूल जितना बड़ा होता है, पर कली गुलाब की तरह नहीं खिलती। पहले थोड़ी सी पंखुड़ियाँ खुलती है उनके बीच दिल जैसी चीज निकली होती है इससे एक ही फूल दो जैसा दिखता है। यह एक अनोखी बात है। डाल पर लगा फूल बहार तो अच्छी देता है, पर टिकता नहीं। एक ही दिन में मुरझा जाता हैं। खिलता तो साल भर है पर चौमासे में बड़ी बहुतायत रहती है। सुगंध नहीं है। ' वैसे ही कनेर के बारे में लिखता है 'यह सफेद भी होता है और लाल भी। आडू के फूल-सा पांच पंखुडियों का है पर चौदह पंद्रह फूल इकटठा गुच्छो में यों खिलते हैं कि दूर से लगता है मानो एक ही बड़ा-सा फूल हो। पेड़ का फेर गुलबन (पाटल गुल्म) से बड़ा होता है, ऊँचा भी। लाल कनेर में भीनी-भीनी सी बहुत अच्छी हल्की महक होती है। यह भी साल भर खिलता है, पर चौमासे में फूलों से लद जाता है।' बाबर भारत विवरण में लिखता हैं - 'केवड़े की महक मन को मोह लेती है। मुश्क है, पर मुष्क सा सूखा नही, तर है। मुष्कतर कहिए। मगर सूरत अजब सी है। फूल कोई डेढ़-दो कारीश लंबा और पत्ते गरौके से रीढ़वाले होते है। नए पत्ते कली जैसे सटे रहते हैं। बाहरी पत्ते कँटीले हरे होते हैं और भीतर को नरम से नरम और सफेद पड़ते जाते हैं। इन कली से सटे पत्तों की पंखुडियो में छिपी दिल की तरह की एक गुल्ली पला करती है। केवड़े की जो मोहनी महक है वह इसी से है। नया पौधा नरसली (एक प्रकार की बांस) की झाड़ी सरीखा होता है। तना जैसी संरचना बेढ़गीं बनावट की होती है जड़े नंगी होती है। वह लिखता है यहॉ यासमन भी है (जास्मिन) सफेद को चंपा कहते है। हमारे यासमन से बड़ा है, महक तो उससे भी बढ़ी-चढ़ी है।

जहाँगीर भी अपने परदादा की तरह निसर्ग का अत्यन्त प्रेमी था। इस कारण वह जब जहाँ जाता था उस स्थान के प्राकृतिक परिदृष्य को बड़ी सूक्ष्मता से निहारता भी था और उसे अपनी लेखनी से शब्दो में उतारता भी था।

उसने 'तुजक-ए-जहांगीरी' या 'जहांगीरनामा' में भारत के पुष्पों की जानकारी भी स्थान-स्थान पर दी है। वह लिखता है पूरी दुनिया में बेहतरीन सुगंधित फूल भारत में ही पाए जाते है। यहाँ कुछ ऐसे फूल होते हैं जिनकी तुलना दुनिया में और कहीं के फूलों से नहीं हो सकती है। ऐसे फूलों में सबसे पहला नाम है चंपा का, जिसकी सुगंध अत्यंत मधुर है, इसका रंग पीलापन लिए सफेद होता है और आकार कुछ-कुछ केसर के फूल की भांति होता है। इसका वृक्ष बड़ा और समानुपातिक होता है। इसका एक वृक्ष भी जब बहार पर होता है तब पूरी बगिया को महका देता है। चंपा को भी पीछे छोड़ दे ऐसा फूल है 'केवड़ा' इसकी गंध इतनी तीव्र होती है कि बस कस्तूरी की महक ही इससे तीव्र होती है। इसी तरह एक पुष्प है 'राईबेल' (संभवत: बेला का जिक्र है) इसकी महक चमेली जैसी होती हैं, इसके पुष्प दोहरेया तीहरे परतदार होते है।

इसी प्रकार वह 'मौलश्री' की भी बड़ी प्रशंसा करता है। वह लिखता है इसका पेड़ भी बड़ा अच्छा दिखता है और महक बड़ी रूचिकर होती है। वह केतकी के लिए लिखता है कि यह केवड़े की भाँति ही होता है किन्तु उसके जैसा कँटिदार नहीं होता। इसके अलावा केतकी पीलापन लिए होती है और केवड़ा सफेद केवड़े के साथ-साथ केतकी और चमेली से खुशबू के लिए इत्र बनाया जाता है और सुगंधित तेल भी।

ऐसे अनेक पुष्प है जिनका जिक्र वह स्थान-स्थान पर करता है। जहाँगीर कमल के लिए लिखता है - 'हिन्दी भाषा में लोग इसे 'कुमुदिनी' कहते है । यह तीन रंगों में पाया जाता है सफेद, नीला और लाल। मैनें नीले और सफेद कमल तो देखे हैं किन्तु लाल कमल मैंने पहली बार गुजरात की यात्रा के दौरान सहारा नामक स्थान पर पड़ाव के समय एक तालाब में देखा। सचमुच यह लाजवाब था।'

कमल के बारे में जहाँगीर आगे लिखता है कि कंवल, कुमुदिनी की अपेक्षा बड़ा होता है और यह लाल रंग का होता है। वह लिखता है कि कश्मीर में उसमें सहस्त्र दल वाला कमल देखा था, यह दिन में पूरा खिलता है और रात को कली बन जाता है। जबकि कुमुदिनी दिन में कली होती है और रात को पूरा खि जाती है।

वह कमल और भौंरे के संबंध में रोचक विवरण देता है और कहता है कि 'भौंरे अक्सर इन फूलों पर मंडराते हैं और अक्सर जब फूल सूरज ढलते ही बंद हो जाता है तो भौंरा भी उसमें बंद हो जाते है। जब सूरज उगने के साथ फूल खिलता है तो भौरा मकरंद चूस कर पुन: पुष्प से बाहर आ जाता है । वह लिखता है कि, भौंरे और कमल के इस संबंध पर हिन्दुस्तान के कवि बहुत कुछ लिखते हैं और तानसेन जो अपने काल का बेजोड़ गायक है वह ऐसे गीतों को गाता है। ऐसे ही भक्कर के जंगल के संस्मरण लिखते हुए जहाँगीर बताता है। पूरा जंगल सफेद और गंधहीन फूलों से अच्छादित था। मैं टीला से भक्कर नदी के किनारे-किनारे आया नदी के बहते पानी में ओलिएंडर (Oleander) के फूल जो पीच के रंग के थे, पूरे शबाव पर थे। नदी के किनारे इतने पेड़ थे कि पैदल, सैनिकों और घुड़सवार सैनिकों को कहा गया कि वह इन फूलों के गुच्छों को अपने सिर पर धारण करें। और जो ऐसा नहीं कर रहा था। उसकी पगड़ी उतार ली गई थी। इस तरह बडी ही शानदार फूलों की चादर तैयार हो गयी थी।

इसी तरह वह लिखता है कि जब वह हातया में ठहरा हुआ था, उस समय यहाँ के मार्ग पर पलाश के वृक्षों पर बहार छाई हुई थी। यह भी हिन्दुस्तान के जंगलों का एक विशिष्ट फूल है। इसमें गंध नहीं होती किन्तु इसका रंग चटख नारंगी होता है। इस पुष्प का आधार काला होता है और फूल का आकार बड़े गुलाब के पुष्प की तरह होता है। यह इतना सुंदर होता है कि आप इससे निगाह नहीं हटा पाते।

जब वह सुरखाब में ठहरा हुआ था तब उसने वहाँ बालतू (Oak or Chestnut) के कई वृक्ष देखे थे। इस वृक्ष की लकड़ी ईधन के रूप इस्तेमाल होती है। इसी तरह इसी यात्रा के दौरान खुर्द काबुल (छोटा काबुल) में जब पड़ाव डला था तब वहाँ जिगरी गांव के मुखिया दौलत ने कुछ अनोखे फूल लाए थे जो मैंने अपने जीवन में पहले कभी नहीं देखे थे।

इस काल में जिन फूलों से और अन्य वनस्पतियों से इत्र बनाया जाता था उनकी सूचना भी आइन-ए-अकबरी से प्राप्त होती है। अबुलफ़ज़ल लिखता है कि- 'शहँशाह को इत्र का बड़ा शौक है और वह इस कार्य में संलग्न विभाग को बड़ा प्रोत्साहित करते है।' सुगंधित फूलों और अन्य वनस्पतियों से तेल निकाला जाता था जो बालों और त्वचा पर लगाने के लिए इस्तेमाल किया जाता था। इसके अलावा अगरबत्तियाँ आदि में इस्तेमाल होता था। अबुलफ़ज़ल चंदन, जाफरान (केसर) गुलाब जल, चमेली, बहार, बद-ए-मश्क के तेल, अम्बर लोभान, कपूर, बर्ग-ए-मज (गुजरात से लाया जाता था) गुगल अलक, गेहला, इकनामी, जुरूमबाद, नफा-ए-मश्क, कस्तुरी, अगर, छुवा (अलॉय की लकड़ी) आदि।

अबुल फ़ज़ल कपूर के बारे में लिखता है, कि 'इसके वृक्ष हिमालय की तराई में प्राप्त होते हैं। पेड़ इतने बड़े होते हैं कि एक ही पेड़ के तले कई सौ सैनिक विश्राम कर सकते हैं। कपूर वृक्ष के तने और शाखाओं से एकत्र किया जाता है। अगार वृक्ष की जड़ से मिलता है। मध्य भारत में इसके वृक्ष बहुतायत में पाये जाते है। छुआ Aloe वृक्ष के लकड़ी से प्राप्त किया जाता है। चंदन के वृक्ष के लिए अबुलफ़ज़ल लिखता है कि यह चीन का वृक्ष है जिसे भारत में सफलतापूर्वक उगाया गया है। यह सफेद लाल और पीला होता है।

गूगल

गूगल के लिये वह लिखता है कि 'यह पौध हिन्दुस्तान में बहुत ही आम पाया जाता है।'

अबुल फ़ज़ल अपने ग्रंथ में स्वयं लिखता है, कि वह कुछ सुंदर पुष्पों के बारे में भी लिखना चाहता है। इनका पर्याप्त विवरण उसने दिया है।

भिन्न-भिन्न पुष्पों के बारे में जो विस्तार से वर्णन उसने किया है वह निम्नानुसार है:-

1. सेवंती - यह गुल-ए-सुर्ख से मिलता है किन्तु उससे छोटा होता है। इसके मध्य में सुनहरे पुंकेसर होते हैं और इसमें चार से छः पंखुडियाँ होती हैं। यह गुजरात और दक्खन में पाया जाता है।

2. चमेली - यह दो प्रकार की होती है एक राय चमेली जिसमें पांच से छः पंखुडियाँ होती हैं, जिसमें बाहर लाल रंग होता है मुख्य चमेली थोड़ी छोटी होती है और इसके ऊपर लाल धारी होती है। इसका तना डेढ़ या दो गज ऊँचा होता है और ज़मीन पर फैलता है। इसमें छोटी-बड़ी शाखाएँ होती है। इसमें पहले ही साल से फूल आने लगते हैं।

3. रायबेल - यह चमेली से मिलता-जुलता है। इसकी कई किस्में होती हैं जिनमें एकल और दोहरे होते हैं। इसमें पाँच पंखुडियाँ आमतौर पर मिलती हैं। इसकी एक-एक पँखुडी अलग पुष्प की झलक देती है। इसका तना एक गज लंबा होता है। इसकी पत्तियाँ नींबू की भाँति दिखती हैं हालांकि यह उससे कुछ छोटी और मुलायम होती है।

4. मुंगरा - यह रायबेल से मिलता-जुलता होता है। यह बड़ा होता है किन्तु इसकी सुगंध उतनी अच्छी नहीं होती। इसमें सौ से ज्यादा पंखुडियाँ होती हैं। इसका पौधा वृक्ष जैसा हो जाता है।

5. चंपा - इसका फूल कोण के आकार का होता है और अंगुली के बराबर होता है। इसमें दस पंखुडियाँ होती है जो एक दूसरे के ऊपर होती हैं। इसमें कई पुंकेसर होते हैं। वृक्ष बड़ा ही सुंदर दिखता है और इसका तना और पत्तियाँ सुपारी के वृक्ष की भाँति होता है यह सात वर्ष के पश्चात बहार पर आता है।

6. केतकी - यह तकली जैसा होता है और एक गज का चौड़ाई हिस्से जितना बड़ा होता है। इसमें दस से बारह पंखुडियाँ होती हैं। इसकी गंध बड़ी कोमल और खुशबू वाली होती है। इसमें छः से सात साल में फूल आते है।

7. केवड़ा - यह केतकी से ही मिलता-जुलता है किन्तु उससे दुगना बड़ा होता है। इसकी पत्तियाँ काँटेदार होती हैं। चूंकि वे अलग-अलग जगह उगती हैं इस कारण वे एक समान नहीं होती। पुष्प के मध्य में एक छोटी शाख होती है जिसमें सुनहरे रेशे होते हैं। 'फूल तब भी महकता है जब वह छिन्न-भिन्न हो जाता है। ....पेड़ की ऊँचाई करीब चार गज़ होती है। पत्तियाँ मक्के की पत्तियों की भाँति होती हैं। इसमें चार वर्ष पश्चात् फूल उगते हैं। मुख्यतः पौधा दक्खन, गुजरात, मालवा और बिहार में उगता है।

8. चाल्ता - यह बड़े ट्यूलिप से मिलता-जुलता है। इसमें अठारह पंखुडियाँ होती हैं जिसमें छः हरी ऊपर , दूसरी छः इसमें कुछ लाल, कुछ हरी, कुछ धूसर पीली और छः सफेद होती हैं। पुष्प के मध्य में करीब दो सौ छोटी-पीली पत्तियाँ होती हैं। फूल खिलने के पश्चात् करीब पांच छः दिनों तक (तोड़ने के पश्चात्) ताज़ा रहता है। जब फूल मुरझा जाता है तब इसे पका कर खाया जाता है। वृक्ष अनार के वृक्ष से मिलता जुलता है और पत्तियाँ नीबू की जैसी होती हैं। यह सात वर्षो बाद बहार पर आता है।

9. तसबीह गुलाल - इसकी खुशबू भीनी-भीनी होती है। इसकी पत्तियों का आकार खंजर की तरह होता है। पेड़ का तना दो गज ऊँचा होता है। यह चार वर्षो के पष्चात् बहार पर आता है। इसके फूलों की माला बनाते हैं जो हफ्ते भर तक ताजी रहती है।

10. भोलश्री - यह चमेली से छोटा होता है। इसकी पंखुडियाँ दाँतेदार होती हैं। जब ये सूखती हैं तब ज्यादा खुशबू देती हैं। इसका वृक्ष अखरोट से मिलता-जुलता है इस पर दसवें वर्ष में बहार आती है।

11. सिंगारहार - इसके फूल लौंग जैसे होते हैं और इनमें नारंगी रंग की डण्डी होती है। इसके पुंकेसर खसखस के दानों के समान होते हैं। पेड़ अनार के समान दिखता है और पत्तियाँ आडू के वृक्ष के समान होती हैं। इसमें पांच साल बाद फूल आते हैं।

12. कूजा - यह गुल-ए-सुर्ख जैसा दिखाई देता है , पर इसकी पत्तियाँ और पेड़ थोड़ा बड़ा होता है। इसमें पांच से लेकर सौ तक पंखुडियाँ होती हैं और सुनहरे रंग के पुंकेसर मध्य में होते हैं।

13. पादल - इसमें पांच छः लंबी पत्तियाँ होती है। इसमें अच्छी सुगंध और स्वाद होता है। यह बारहवें वर्ष में फूल देता है।

14. जूही - इसकी पत्तियाँ छोटी होती हैं। यह बेल वृक्षों से लिपट जाती है। इसमें तीन वर्ष पश्चात पुष्प खिलते हैं।

15. निवारी - यह सादी रायबेल जैसी दिखती है, किन्तु पत्तियाँ बड़ी होती हैं। इसमें आम तौर पर इतने फूल लगते हैं कि पत्तियाँ नजर नहीं आती। इसमें पहले ही साल फूल खिल जाते हैं।

16. कपूर बेल - इसमें पाँच पंखुडियाँ होती है और यह केसर के फूल की तरह दिखते हैं। यह फूल यूरोप के देशों से शहँशाह के (अकबर) काल में ही मँगवाया गया है।

17. जाफरान (केसर) - अबुल फ़ज़ल इसका विवरण फूलों की सूची के साथ ही देता है। वह लिखता है कि-'उर्दीबिहिष्त के महिने में केसर के बीज बड़े ही जतन से बोये जाते हैं। इसके बाद खेत को बारिश के पानी से सींचते हैं। केसर के बीज लहसुन की गाँठों जैसे दिखते हैं। फूल अबन के महिने में

खिलते हैं। पेड़ गज़ के तिहाई हिस्से जितना होता है। पर मिटटी की किस्म पर निर्भर करता है कि यह कभी दो तिहाई जमीन के नीचे और कभी-कभी दो तिहाई जमीन के ऊपर होता हैं। फूल तने के सबसे ऊपरी हिस्से में होता है। फूल में छः पत्तियाँ और छः पुंकेसर होते हैं। तीन पत्तियॉ नीले रंग की होती हैं और अन्य तीन पत्तियों को घेरे रहती है। पुंकेसर भी इसी तरह से होते हैं तीन पीले रंग के बाहर के घेरे में और तीन लाल रंग के अंदर के घेरे में रहते हैं। अंदर के घेरे वाले तीन पुंकेसर से ही केसर प्राप्त होती है। लोग बेईमानी से बाहरी घेरे के तीन पीले पुंकेसरों को भी केसर के रूप में मिला देते है।

एक बार में गाँठ बोने पर छः वर्ष तक फूल मिलते हैं, बशर्ते मिट्टी को प्रति वर्ष मुलायम करते रहें। पहले दो वर्ष फूल जरा छितरे आते हैं बाद में तीसरे वर्ष से पुष्प बिल्कुल सही आकार ले लेते है। छठवें वर्ष के पश्चात् गाँठों को निकाल लेना चाहिये वरना वे गल जाती हैं। इन्ही गाँठों को ये लोग दुबारा कुछ समय बाद, दूसरी जमीन पर बो देते हैं। और पहले वाली जमीन को पाँच साल के लिए बिना बुआई के छोड़ देते हैं।

अबुल फ़ज़ल लिखता है कि 'केसर मुख्यत: पानपुर से आता हैं जो मराराज जिले में है। यहाँ बारह कोस तक केसर के खेत फैले हुए हैं इसी तरह पारसपुर परगने में इंद्रलोक के करीब से भी केसर आता है।'

1. सूरजमुखी (आफताबी) – यह बड़ा चौड़ा और गोलाकार पुष्प है। इसमें कई पत्तियाँ होती हैं। यह सदैव अपना मुँह सूरज की ओर रखता है। इसका तना तीन गज लंबा होता है।

2. कंवल : यह दो प्रकार के होते हैं। इनमें से एक तो तब खिलता है तब सूर्योदय होता है और शाम होते ही बंद हो जाता है। इसमें छः से अधिक पत्तियाँ होती हैं। इसके पुंकेसर पीले होते हैं। पुष्प के मध्य में एक नलीदार संरचना होती है जिसमें ऊपर का हिस्सा आधार की तरह होता है और इसी में बीज होते हैं। कंवल का दूसरा प्रकार रात में खिलता है और चांद की तरफ अपना मुँह रखता है और बंद भी नहीं होता।

3. जाफरी – यह सुंदर सा गोल फूल होता है और सदाबर्ग से बड़ा होता है। इसकी एक किस्म में पाँच पंखुडियाँ और दूसरी में सौ पंखुडियाँ होती हैं। सहस्त्र दल वाला पुष्प दो माह से भी ज्यादा समय तक ताजा रहता है। इसका पेड़ इंसान जितना बड़ा होता है और पत्तियाँ बल्ले जितनी बड़ी और कटी-फटी होती हैं। इसमें दो माह में पुष्प आते हैं।

4. गुड़हल – इसमें कई पत्तियाँ होती हैं। इसका तना दो गज या उससे भी ऊँचा होता है और दो वर्ष में बहार पर आता है। इसकी पत्तियाँ शहतूत जैसी दिखती हैं।

5. रतनमंजन – इसमें चार पत्तियाँ होती हैं और यह चमेली से छोटा होता है। इसका वृक्ष और पत्तियाँ रायबेल जैसी होती है। इसमें दो वर्ष में फूल आते हैं।

6. केसू – उसमें बाघ के पंजे के आकार की पाँच पत्तियाँ होती हैं। इसके मध्य में पीला जीभ के आकार का पुंकेसर होता है। वृक्ष बहुत बड़ा होता है। घास के मैदानों में अक्सर यह वृक्ष मिलता है जब उसमें फूल खिलते हैं तब ऐसा लगता है मानों शोले दहक रहे हों।

7. कनेर – इसमें वर्ष में लंबे समय तक फूल खिले रहते हैं। यह सुंदर दिखता है पर विशैला होता है। इसमें पाँच पंखुडियों वाला पुष्प होता है। शाखाएँ पुष्पों से लदी रहती है। इसका वृक्ष दो गज बड़ा हो जाता है। पहले की वर्ष में इसमें पुष्प खिलते हैं।

8. कदंब– यह तमगे की तरह होता है, पत्तियाँ अखरोट जैसी दिखती हैं।

9. नाग केसर – यह गुल-ए-सुर्ख जैसा दिखता है। इसमें पाँच पंखुडियाँ होती हैं। इसमें ढेर से पुंकेसर होते हैं। यह भी अखरोट जैसा दिखता है और सात वर्षो में बहार पर आता है।

10. सुरपान – यह तिल्ली के फूल जैसा होता है और इसमें बीच में पीले रंग का पुंकेसर होता है। इसका तना मेहंदी के पेड़ से मिलता है।

11. श्रीखंडी – यह चमेली जैसा होता है किन्तु इससे थोड़ा छोटा होता है। यह दो वर्षो में खिलता है।

12. मेंहदी – इसमें चार पंखुडियाँ होती हैं। इसके भिन्न-भिन्न पौधो में भिन्न-भिन्न रंगो के फूल खिलते हैं।

13. दुपहरिया – यह गोल और छोटा पुष्प होता है। यह सदाबहार के पुष्प जैसा दिखता है। यह दिन में खिलता है । इसका तना दो गज लंबा होता है।

14. भूण चंपा – इसका पुष्प निलोफर जैसा दिखता है और इसमें पाँच पंखुडियाँ होती है। इसका तना एक बित्ता लंबा होता है। यह ऐसी जगहों पर उगता है जहाँ समय-समय पर पानी भरा होता है। कभी-कभी फूल पानी के उपर ऊगता है।

15. सुदर्शन – यह रायबेल से मिलता-जुलता है और इसमें अंदर पीले रेषे नुमा संरचना रहती है।

16. सेनबॉल – इसमें पाँच पंखुडियाँ होती हैं, इनमें प्रत्येक दस अंगुल लंबी और तीन अंगुल चौड़ी होती है।

17. रतनमाला – यह गोल और छोटी होती है इसका रस, उबाल कर नीले थोथे या तूतिया के साथ मिलाकर इसमें मुसफ़र मिलाते हैं तो कपड़ा रंगने के लिए बढ़िया रंग तैयार होता है। इसमें मक्खन तिल्ली का तेल मिलाकर इसकी जड़ के साथ मिलाया जाता है तो बैंगनी रंग तैयार होता है।

18. सोन ज़र्द – यह चमेली जैसा होता है किन्तु इससे थोड़ा बड़ा होता है और इसमें पाँच से छः पत्तियाँ होती है। इसमें दो वर्ष पश्चात फूल खिलता है।

19. मालती – यह चमेली जैसा होता है और उससे कुछ छोटा होता है। इसके मध्य में खसखस के दानों जैसे पुंकेसर होते हैं। इसमें लगभग दो वर्षो में फूल आते हैं।

20. कारील – इसमें तीन छोटे दल होते हैं। यह बड़े भव्य तरीके से खिलता है और बड़ा अच्छा लगता है। इसके पुष्प को उबाल कर खाते हैं और कुछ लोग अचार बनाते हैं।

21. जैत – यह बड़ा वृक्ष बन जाता है और इसकी पत्तियाँ इमली के पेड़ जैसी होती है।

22. चंपला – इसके पेड़ की पत्तियाँ अखरोट जैसी होती हैं। इसमें दो वर्ष बाद फूल आते हैं। पेड़ की छाल को उबालने से लाल रंग बन जाता है। अधिकांश यह पेड़ पहाड़ियों पर उगता है। इसकी लकड़ी बड़ी ज्योति देते हुए जलती है।

23. लाही – इसका तना डेढ़ गज लंबा होता है। पुष्प उगने से पहले जो पत्तियाँ ऊगती हैं, उनसे व्यंजन बनाया जाता है। जिसे रोटी के साथ खाते हैं। जब ऊँटों को इसकी पत्तियाँ खिलाई जाती हैं तो वे मोटे हो जाते हैं और अनियंत्रित भी।

24. करौंदे का पुष्प जूही से मिलता है।

25. धनंतर – यह निलोफर से मिलता-जुलता है और बहुत सुंदर दिखता है यह एक बेल होती है।

26. सिरस में रेषम जैसे धागे होते हैं और तुर्रे जैसे दिखते हैं। इसकी महक दूर-दूर तक फैलती है। यह वृक्षों का सरताज है बावजूद इसके की हिन्दूबड़ और पीपल को पूजते हैं। इसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है और लकड़ी भवन निर्माण में इस्तेमाल होती है।

27. कंगलाई – इसमें पाँच पंखुडियाँ होती हैं, प्रत्येक चार अंगुल लंबी होती है। फूल बड़ा सुंदर दिखता है एक शाख पर एक ही फूल खिलता है।

पौधे की पत्तियाँ चिनार से मिलता-जुलती हैं। पेड़ की छाल से मजबूत रस्सियाँ बनती हैं। इस पौधे की एक किस्म ऐसी होती हैं जिसमें कपास के वृक्ष की तरह फूल लगते हैं इसे पटसन कहते हैं इससे बड़ी मुलायम रस्सी तैयार होती है।

अबुल फ़ज़ल लिखता है कि 'इस देश के समस्त फूलों का वर्णन करना मेरे लिए कठिन भी है, और मुझे कई के बारे में जानकारी भी नही है। मैंने उनमें से कुछ का ही वर्णन किया है। ....इस देश के वृक्षों के फूलों, फलों, कलियों, पत्तियों, जड़ों आदि का खाने, औषधियाँ बनाने में जो उपयोग किया जाता है उसका वर्णन करना असंभव है। ....यहाँ ईरान और तूरान से लाए गए कई पुष्पों की प्रजातियाँ उपलब्ध हैं। जैसे:- गुल-ए-सुर्ख़ (नर्गिस), यास्मीन-ए-काबुल(बैंगनी) सुसान, रैहान, रसना, जेबा, शाहकीक, ताज-ए-खुसरो, कलघा, नाफरमान और खातमी आदि।'

भारत के धर्मशास्त्रों का हवाला देते हुए वह लिखता है कि 'यदि इस देश में एक व्यक्ति को प्रत्येक वृक्ष या पौधे से एक ही पत्ती तोड़ने को कहा जाए तो उसे अठारह बार अर्थात आज के संदर्भ में 96 मन पत्तियाँ मिलेंगी। इसी तरह उसी ग्रंथ के अनुसार पौधे या वृक्षों की आयु 48 मिनट से दस हजार वर्ष होती है। पेड़ों की ऊँचाई हजार योजन से अधिक नहीं होती।................ इस तरह अबुलफ़ज़ल स्पष्ट कहता है कि भारत की वानस्पतिक विविधता अनंत थी। और उसके बारे में वर्णन कर पाना नामुमकिन है।

निष्कर्ष – भारत के अद्भुत प्राकृतिक, साँस्कृतिक और ऐतिहासिक वैविध्य के कारण सदैव ही दुनिया भर के लोग अचंभित और आकर्षित होते रहे हैं। अबुलफ़ज़ल के आधिकारिक ऐतिहासिक ग्रंथ 'आइन-ए-अकबरी' में शासक की रसोई, इत्रखाने, भारत की प्राकृतिक दशा आदि के विवरण से हमें भारत की वानस्पतिक विविधता की जानकारी मिलती है। बाबर भी भारत में जितने समय रहा उसने यहाँ के फल सब्जियों के स्वाद और पुष्पों आदि बहुत खूब विवरण दिया है।

भारत की भौगोलिक विविधता और विस्तार के कारण, ही यह संभव था कि प्रत्येक किस्म की जलवायु और मिट्टी में पनपने वाले पेड़ पौधे, पुष्प, फल, अनाज, जड़ी-बूटियां और अन्य वनस्पतियाँ उपलब्ध थी। इतनी वानस्पतिक विविधता शायद ही विश्व के किसी अन्य देश में पाई जाती है। मुगलकाल की इस वानस्पतिक संपदा का विवरण विदेशी यात्री भी देते हैं। समय, प्राकृतिक बदलावों प्रदूषण और इंसानी बदनीयत से इस संपदा को बड़ी हानि पहुँचाई है इस कारण वन क्षेत्र सिमट गए हैं और कई प्रजातियों के पुष्प, पेड़, फल, वनस्पतियाँ अब उपलब्ध नहीं हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फज़ल अबुल : आइन-ए-अकबरी भाग-ख अनु. ब्लॉकमन , पृ0 81
2. बाबर जहीरूद्दीन : बाबरनामा अनु. नवलपुरी युगजीत, पृ0 331
3. जहाँगीर : जहाँगीरनामा भाग-ख अनु. रोजर्स अलेक्जेण्डर, पृ0 5
4. जहाँगीर : जहाँगीरनामा भाग-खख अनु. रोजर्स अलेक्जेण्डर, पृ0 412
5. जहाँगीर : जहाँगीरनामा भाग-ख अनु. रोजर्स अलेक्जेण्डर, पृ0 104
6. फज़ल अबुल : आइन-ए-अकबरी भाग-ख अनु. ब्लॉकमन, पृ0 79
7. फज़ल अबुल : आइन-ए-अकबरी भाग-ख अनु. ब्लॉकमन, पृ0 88
8. फज़ल अबुल : आइन-ए-अकबरी भाग-ख अनु. ब्लॉकमन पृ0 91
9. फज़ल अबुल :आइन-ए-अकबरी भाग-ख अनु. ब्लॉकमन पृ0 238-239

****

गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार के अवसरों में वृद्धि (मत्स्य उत्पादन के सन्दर्भ में)

कमल बैरागी *

प्रस्तावना – भारत देश में बढ़ती बेरोजगारी एवं खाद्यन की समस्या, पोष्टिक खाद्यन की बढ़ती कीमतों और वैश्विक स्तर पर आपूर्ति की बिगड़ती स्थिति के कारण देश में खाद्यान संकट अपने चरम पर पहुंच गया हैं। देश में पोष्टिक खाद्यान एवं रोजगार की समस्या सरकार की पहुंच से दूर होती जा रही हैं। भारतीय कृषि में भी पैदावार में कोई विशेष वृद्धि नहीं हो रही हैं, जिससे देश की बढ़ती भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए मत्स्य पालन पोष्टिक खाद्यान एवं बढ़ती बेरोजगारी को कम करने में रामबाण का कार्य करेगा। इस जलकृषि में किसान कम लागत में अधिक उत्पादन एवं आय कमा सकता हैं।

भारत जैसे विकासशील देश में ग्रामीण आर्थिक विकास में मत्स्य पालन व्यवसाय की अपार सम्भावनाऐं विद्यमान हैं। मत्स्य पालन व्यवसाय कम लागत में अधिक आय देने वाला हैं, जो भारतीय ग्रामीण जनता के अनुकुल हैं। आज हमारे देश में बेरोजगारी की भयानक स्थिति हैं, देश के उच्च शिक्षा प्राप्त युवक जैसे–इंजीनियर, एम.बी.ए., पी.एच.डी. धारक एवं अन्य डिग्री धारी बेंरोजगारी की मार झेल रहे है अगर ये युवक मत्स्य पालन व्यवसाय को ग्रामीण क्षेत्र में विकसित कर तो देश में रोजगार बढ़ाने के साथ ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को 'उत्तम भोजन, उत्तम आय' प्रदान कर सकते जो भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अनुकुल होगा।

भारतीय अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन उद्योग – भारतीय अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय हैं जिससे पोष्टिक खाद्यन एवं राजेगार को बढ़ाने की अपार सम्भावना विद्यमान हैं। वर्तमान समय में जल कृषि (मत्स्य पालन) एक आकर्षक लाभप्रद समृद्ध तथा धनोपार्जक व्यवसायी के रूप में उभर कर आ रहा हैं। हर स्तर का व्यवसायी इससे पूंजी लगाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकता हैं। पहले लोग इसे एक प्रतिष्ठित व्यवसाय नहीं मानते थे पर आज स्थिति पूरी तरह बदल गई हैं। यह मछली पालन व्यवसाय ग्रामीण लोगों के लोगों को पैसा, प्रतिष्ठा, लोकप्रियता, रोजगर, एवं साथ ही पोष्टिक भोजन की प्रधान कर रहा हैं। खाद्योत्पादन के एक महत्वपूर्ण स्त्रोत के रूप में आज जल में मछलियां ही नहीं बल्कि विभिन्न प्रकार के लाभदायक जल–जीव पाले जाने लगे हैं। इस दृष्टि से वर्तमान समय में जल वृद्धि का विशेष महत्व हैं।

भारत में जल कृषि के लिए उपलब्ध विविध संसाधन जल,वायु जलक्षेत्र वातावरण अधिक उपर्युक्त तथा उत्पादन में वृद्धि दायक हैं। भारत में जलकृषि मछलीपालन का भविष्य उज्जवल हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि मत्स्य उत्पादन खाद्यान समस्या को हल करने के साथ ही इस क्षेत्र में रोजगार के अवसर प्रदान करने आय के साधन बढ़ाने तथा निर्यात बढ़ाने की असीमित क्षमता हैं। साथ ही आने वाले समय में देश की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करने में जल कृषि का योगदान अति महत्वपूर्ण हो जायेगा। आज के समय में मत्स्य पालन परम्परागत लघु उद्योग के स्तर पर उभर कर जल कृषि उद्योग ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में पूरी तरह छा जाने की क्षमता रखता हैं।

मत्स्य पालन उद्योग का आर्थिक महत्व – मत्स्य की आर्थिक उपयोगिता कृषि व्यवसाय के बाद द्वितीय स्थान पर हैं। मछली पालन में अल्प समय में एवं अल्प श्रम के द्वारा अधिक उपलब्धि प्राप्त की जा सकती हैं। मत्स्य पालन मानव जीवन को अनेक तरीकों से प्रभावित एवं लाभान्वित करता हैं। हमारे देश में करोड़ो आदमी मजदूरी एवं कुपोषण से पीड़ित हैं। मत्स्य की उन सभी लोगों के साथ देश के शेष लोगों की खाद्य समस्या एवं सन्तुलित आहार में हाथ बटाती हैं। हमारे देश में मत्स्य उद्योग को प्रोत्साहन देना होगा तभी ग्रामीण क्षेत्र के निर्धनों का आर्थिक एवं सामाजिक स्तर सुधारा जा सकेगा। देश में आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए निर्धनताा, बेरोजगारी एवं अप्रशिक्षित लोगों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने पर विशेष ध्यान देना होगा। मत्स्य पालन स्व–रोजगार उपलब्ध कराने की महत्वपूर्ण भूमिका पूरा करता हैं, जिससे देश के कमजोर लोगों के आर्थिक विकास पर विशेष प्रभाव पड़ेगा जैसे मत्स्य मनुष्य के आहार के रूप में मत्स्य आहार में शेष पशुओं की तुलना में अधिक पोषक तत्व होते हैं इसमें प्रोटीन खनिज पदार्थ की प्रचूर मात्रा पाई जाती हैं। कुपोषण की समस्या को मत्स्य पालन खाद्य उत्पादन कार्यक्रम आयोजित करके समाप्त किया जा सकता हैं क्योंकि इसके द्वारा अधिक सन्तुलित एवं ससता खाद्य प्राप्त होता हैं। मत्स्य में प्रचूर मात्रा में प्रोटीन विटामिन ए.डी.सी. तथा कई तरह के खनिज तत्व विशेष रूप से पाए जाते हैं। मत्स्य खाद्यान से व्यक्ति को कम लागत में अधिक पोषण एवं पोष्टिता प्राप्त होती हैं जिससे व्यक्ति को आर्थिक लाभ प्राप्त होगा। मत्स्य पशु आहार के रूप में भारत के कई प्रान्तों में जैस महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, तमिलनाडु, बंगाल, केरल आदि में मत्स्य आटे का उत्पादन किया जाता हैं। इस आटे में 60 प्रतिशत प्रोटीन और अधिक मात्रा में कैल्शियम फास्फेट पाया जाता हैं, जो व्यक्ति एवं पशुओं के लिए आर्थिक दृष्टिकोण से लाभकारी हैं। मत्स्य खादें जो मछलियां खाने योग्य नहीं होती हैं उनसे खाद् तैयार किया जाता हैं। इसमें नाइट्रोजन और फास्फोरस की प्रचूर मात्रा पाई जाती हैं। मत्स्य खाद् में 8,9 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा फास्फेट होते हैं जो मिट्टी में मिलाने पर फसल के लिए अधिक उपयोगी होता हैं। मत्स्य चमड़ा आर्थिक दृष्टि से मत्स्य चमड़ा से कई पदार्थ बनाये जाते हैं, जैसे–जूते, बटुए,सूटकेस बनाई जाती हैं। मत्स्य पंख शार्क के पंख चीन को निर्यात किए जाते हैं जहॉ इनसे जूस तैयार किया जाता हैं। सजावट के लिए विभिन्न रंग की सुन्दर मछलियों की अनेक जातियों को शीशे के जारों में तालाबों और झीलों में सुन्दरता के

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) श्री हर्कचन्द चौरड़िया महाविद्यालय,भानपुरा, जिला – मन्दसौर (म.प्र.) भारत

कारण रखते हैं। इस प्रकार की मछलियों को पालकर उन्हें अच्छे मूल्य पर बेचकर आर्थिक रूप से सक्षम एवं अपनी आजीविका चलाते हैं। साथ मत्स्य के द्वारा कृतिम मोती का निर्माण करके भी धनोपार्जन किया जाता हैं

मत्स्य पालन के व्यवसायिक लाभ – वास्तव में मत्स्य पालन व्यवसाय भारतीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास में प्रमुख योगदान दे सकता हैं। इसके कई व्यवसायिक फायदे हैं :

1. इससे विदेशी मुद्रा की बचत होगी एवं स्वदेशी खाद्यान से आत्मनिर्भरता बढ़ेगी।
2. इसका उपयोग देश-विदेश में औषधि के रूप में किया जाता हैं।
3. ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रोजगार का तीव्गति से सृजन होगा।
4. अनुपजाऊ एवं बेकार भूमि की उपयोगी सिद्ध होगी किसान को लाभ होगा।
5. पशु खली पावडर में महत्वपूर्ण हैं मत्स्य।

मत्स्य तेल एवं सह उत्पादन का व्यापक निर्यात्।

मत्स्य उत्पादन विधि एवं विशिष्ट प्रक्रिया – जिस प्रकार मानव के शरीर में हड्डी का स्थान प्रमुख हैं उसी प्रकार मत्स्य उत्पादन में इसकी उत्पादन विधि महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। मत्स्य उत्पादन की विधि भली-भॉतीं अध्ययन कर लेने वाला व्यक्ति इस विषय की 50 प्रतिशत से अधिक जानकारी प्राप्त कर लेता हैं। कोई भी रोजगार तीन बातों पर निर्भर करता हैं- मेहनत,पूंजी और जानकारी। यही बात मछली पालन में भी लागू होती हैं, अन्य कृषि उत्पादन की तरह इसकी उत्पादन विधि समान नहीं होती हैं। इसके लिए उत्पादन की विशेष तकनीकि का ध्यान रखना चाहिए एवं सूक्ष्म एवं पृथक-पृथक कार्य का विशेष अध्ययन करना चाहिए। जैसे –

मछली का चयन – मत्स्य पालन के लिए सबसे पहले हम मछली चयन जीरो का चयन पर विशेष ध्यान रखना चाहिए, भारत में रोहू, कतला, मृगल, कॉमन सार्प, सिल्वर कार्प, ग्रास कार्य इनमें रोहू कतला और नैनी मृगल सिल्वर कार्प,ग्रास कार्प में मछलियां तेजी से बढ़ती हैं। मत्स्य पालन हेतु महीनावार काम बंटवारा या वर्ष भर किये गये मत्स्य पालन प्रक्रिया :

1. मार्च – मछली पालन योजना, जमीन का चुनाव, मिट्टी परीक्षण, पूंजी के लिए बैंक में आवेदन।
2. अप्रैल – बैंक में खाता खोलना, तालाब खुदाई का कार्य शुरू करना।
3. मई – तालाब में पानी भरने की व्यवस्था तटबंध पर घास लगाना।
4. जून – तालाब के तल में चूना डालना, गोबर का घोल डालना, पुराने तालाब का पानी डालना, जीरा की व्यवस्था करना एवं तीसरे दिन से भोजन देना शुरू करना।
5. जुलाई – तालाब में नियमित भोजन डालना।
6. अगस्त – समय-समय पर गोबर एवं चूना डालना।
7. सितम्बर – कभी भी पानी की कमी नहीं होने देना, तालाब में डेढ़ मीटर पानी से उपर रहे।
8. अक्टूबर – पानी में काई एवं पानी की जांच कराते रहना।
9. नवम्बर – तालाब में पानी की गहराई पर ध्यान रखना।
10. दिसम्बर – पानी कम हो तो तुरन्त पानी डालना।
11. जनवरी – एक निश्चित अनुपात में मछली निकालना और बिक्री करना। मत्स्य पालन में मछली के रोग का विशेष ध्यान रखना हैं, अगर मछली अलग-अलग रहे तो रोग को पहचान कर उपचार किया जाये।

हम 40 मीटर x 25 मीटर 0.1 हेक्टेयर तालाब का अध्ययन कर सकते हैं –

जीरों की प्रजाति	प्रतिशत	घनत्व हेक्टेयर	फ्राई की आवश्यकता
रोहू	1.5	20000	300
कतला	1.0	-	200
मृगल	1.0	-	200
ग्रास कार्प	2.0	-	400
सिल्वर कार्प	2.0	-	400
कॉमन कार्प	2.5	-	500
		योग	**2000**

मछली का जीरा हैचरी से ही क्रय करना चाहिए, जीरा क्रय करने के 24-36 घण्टे के अन्दर तालाब में सही एवं धीरे-धीरे डालना चाहिए, जिससे इनकी मृत्यु न हो और समय-समय पर इनके पोषक तत्व का ध्यान रखना चाहिए।

मत्स्य पालन व्यवसाय विकास में शासन के प्रयास – भारत में मत्स्य उत्पादन विकास एवं मछुओं के विकास के लिए केन्द्र एवं राज्य पोषित कल्याणकारी योजनाऐंक ा संचालन किया गया हैं। जिनके माध्यम से इस व्यवसाय का व्यापक विकास देखने में मिला।

भारत में 6100 किलोमीटर लम्बी तट रेखा, अनेक सदावाहिनी नदियां तथा 1.6 लाख हेक्टेयर मग्नतट और 100 फैदम गहराई वाला समुद्र निकल होने तथा समुद्रीय कटानों और खाड़ियॉ दलदली क्षेत्रों एवं नदियों के चौड़े मुहानों में मछलियों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए पर्याप्त सम्भावनाऐं हैं जिसका उपयोग किया जाना चाहिए। इसी प्रकार दामोदर घाती, भाखड़ा नांगल, चाल, हिराकुण्ड, कोती नदी पेटियों के जनाओं के अन्तर्गत की मछलियों का उत्पादन बढ़ाया जा सकता हैं। पिछले कुछ वर्षो में मछली पकड़ने के व्यवसाय को उन्नत करने के लिए केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा कई प्रयत्न किये जा रहे हैं। इस व्यवसाय की उन्नति के लिए केन्द्र सरकार के द्वारा निम्न कार्य किये जा रहे हैं।

1. मछली पकड़ने के लिए नए प्रकार की मोटर नावों को लिया गया हैं।
2. मछुओं को मछली पकड़ने के अच्छे तरीके सीखाने के लिए सतपाती महाराष्ट्र कोजन बैरावल और तुतुकेड़ी तमिलनाडु आदि स्थानों पर प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किए गए।
3. इस प्रकार मछली पकड़ने और उनकी बिक्री के लिए विशेष प्रबंध किए गए हैं।
4. मछली को सुरक्षित रखने के लिए शीत भण्डार सरकार द्वारा स्थापित किए।
5. मछली को नए साधनों की खोज के लिए भारत सरकार के द्वारा मछली अनुसंधान शालाऐं स्थापित की गई हैं जिसके अन्तर्गत मछलियों का उत्पादन बढ़ाने अच्छी नस्ल की मछली के पालन संबंधी अनुसंधान किए गए हैं।
6. मछुओं की दशा सुधारने के लिए सहकारी समितियां स्थापित की गई हैं जिनका कार्य अपने सदस्यों की पकड़ी गई मछलियों को बेचना और मछुओं को आर्थिक सहायता देना हैं।

सरकार द्वारा मत्स्यद्योग विकास के साथ-साथ मछुआ,अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोगों को तकनीकी जानकारी तथा आर्थिक सहायता प्रदान करने एवं उनके कल्याण हेतु कई योजनाऐं संचालित हो रही हैं, जिसमें से प्रमुख इस प्रकार हैं मत्सयबीज उत्पादन, मछुआ

सहकारिता, मत्स्य पालन प्रसार, शिक्षण और प्रशिक्षण, शिक्षण प्रशिक्षण– मछुआरों का अध्ययन, जलाशयों एवं नदियों में मत्स्यद्योग का विकास, अनुसंधान, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, फिशर क्रेडित कार्ड योजना, मछुआ आवास योजना, मछुआ दुर्घटना बीमा योजना, बचत सहराहत योजना, जनशक्ति बीमा योजना, डेफर्ड वेजेस योजना, जलदीप योजना, अन्तदर्शीय कृषक विकास अभिकरण आदि योजनों के माध्यम से राज्य एवं केन्द्र सरकार मछुवारों को आगे बढ़ाने का सतत प्रयास कर रही हैं, जिससे देश में रोजगार वृद्धि होगी एवं सामान्य जनता भी इस योजनाओं को जानकर इस व्यवसाय में रूचि दिखायेंगें। इस व्यवसाय के बारे में किसी ने कहा '**मछली पालन का व्यवसाय उत्तम भोजन, उत्तम आय**'।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मछली पालन विभाग मत्स्योद्योग संचनालय भोपाल।
2. पंचायत, जनपद पंचायत कार्यालय।
3. ग्रामीण स्वास्थ्य समिति प्रशिक्षण पुस्तिका।
4. योजना नई दिल्ली सूचना एवं प्रकाशन विभाग 2002।
5. भारतीय अर्थव्यवस्था पुस्तिका।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

प्राचीन भारतीय राजनय - युद्ध एवं युद्ध के नियम

डॉ. नवीन सक्सेना *

शोध सारांश - प्राचीन भारतीय चिंतकों, महर्षियों, विद्वानों एवं राजनीतिज्ञों ने राजनीति के उपायों में दंड को तथा षड़गुण नीति में विग्रह को स्थान दिया है। प्राचीन भारत में शासन व्यवस्था में युद्ध एक निरंतर प्रक्रिया थी जिसमें प्रत्येक राज्य किसी न किसी रूप में उलझा रहता था। यद्यपि वर्तमान युग में युद्ध को अन्तर्राष्ट्रीयता तथा विश्व शांति की दृष्टि से एक खतरनाक विचार माना जाता है किन्तु फिर भी यह अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का एक नग्न सत्य है। विश्व का इतहास साक्षी है कि सदैव शक्तिशाली शासकों ने कमजोर शासकों पर आधिपत्य स्थापित करके स्वयं को शक्तिशाली बनाया। इस दृष्टि से युद्ध की स्थिति को पूर्णत: समाप्त करना सम्भव नहीं है तथापि इस संघर्षपूर्ण स्थिति को कम करने के उपाय अवश्य बताये जा सकते है। प्रस्तुत शोध आलेख प्राचीन भारतीय राजनय व्यवस्था में युद्ध एवं उसके प्रकार तथा युद्ध के सैद्धातिक एवं व्यवहारिक नियमों का विवेचन करता है।

प्रस्तावना - प्राचीन भारतीय चिंतक बाह्य चुनौतियों से उत्पन्न होने वाले परिणामों से भलीभांति परिचित थे। वे युद्ध की विभीषिका से भी परिचित थे। इसलिए युद्ध को उन्होंने अंतिम उपाय के रूप में स्वीकार किया तथा युद्ध की भयंकरता तथा राजाओं की विध्वंसकारी प्रवृत्ति को नियंत्रित करने की दृष्टि से उन्होंने युद्ध के नियमों, उद्देश्यों, रणनीति की विस्तृत रूप से व्यवस्था दी। प्रस्तुत शोध पत्र में एतिहासिक पद्धति का प्रयोग करते हुए द्वितीय स्त्रोतों से शोध सामग्री प्राप्त करते हुए तथा प्राचीन भारतीय ग्रंथों से सामग्री का संयोजन किया गया है। प्राचीन भारत में युद्ध को यान की संज्ञा दी जाती थी जिसका अर्थ होता है अभियान। अर्थात जब एक शासक दूसरे शासक पर आक्रमण करता है तो उसे यान कहा जाता है। आचार्य शुक्र के अनुसार 'शत्रु को पराजित कर उसका दमन करने का कार्य युद्ध या विग्रह कहलाता है।' आचार्य कामदंक का मत है, 'युद्ध में दोनों पक्ष एक-दूसरे को क्षति पहुंचाने के लक्ष्य की ओर प्रवृत्ता हो जाते है' आचार्य कोटिल्य ने विग्रह को परिभाषित करते हुए इसे अपकारों विग्रह कहा है अर्थात शत्रु का अपकार करना ही विग्रह है।'

आधुनिक युग के विद्वानों ने भी युद्ध को परिभाषित किया है। लारेन्स के अनुसार 'युद्ध राज्यों अथवा जातियों के बीच सरकारी शक्ति का किया गया संघर्ष है जिसका उद्देश्य शांतिपूर्ण सम्बंधों को समाप्त करके उसके स्थान पर शत्रुता की स्थापना करना।' इसी प्रकार हॉल ने इसका स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखा है 'जब दो राज्यों के बीच मतभेद इतने बढ़ जाते है कि दोनों पक्ष बल प्रयोग का अवलम्बन करते हैं तो दोनों में युद्ध का सम्बंध स्थापित हो जाता है।' प्रोफेसर ओपन हाइम का मत है कि युद्ध का उद्देश्य है कि एक पक्ष दूसरे को हरा दे तथा फिर उससे बलपूर्वक शर्ते मनवा ले।'

प्राचीन भारत के महान चिंतकों ने युद्ध में नैतिकता को उच्चतम स्थान प्रदान किया। युद्धरत पक्षों द्वारा निर्धारित नियमों, आदर्शों एवं मानदण्डों के अनुरूप आचरण करने की अपेक्षा की जाती थी। नियमों के उल्लंघनकर्ता को दण्डित भी किया जाता था तथा उसे विधर्मी तथा पापी कहा जाता था। देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार एक शासक के लिए धर्म युद्ध तथा कूट युद्ध दोनों के ही प्रयोग को उचित माना जाता था किन्तु किसी भी प्रकार का युद्ध करते समय शासक को युद्ध क्षेत्र में निर्धारित नियमों का पालन अवश्य करना पड़ता था। मुख्य रूप से प्राचीन भारत में किये जाने वाले युद्धों में निम्नलिखित नियमों का प्रचलन था -

1. एक शासक को सदैव अपने प्रतिद्वन्दी शासक के साथ युद्ध करना चाहिए, किसी अन्य सैनिक के साथ युद्ध नहीं करना चाहिए।
2. प्राय: दोनों पक्षों की सेनाओं के प्रत्येक सैनिक को एक दिन में एक ही सैनिक से युद्ध करना चाहिए। विरोधी सैनिक के घायल हो जाने पर अथवा मारे जाने पर अन्य सैनिकों से युद्ध नहीं करना चाहिए अपितू युद्ध वहीं रोक देना चाहिए।
3. युद्ध में घायल नि:शस्त्र एवं निहत्थे व्यक्ति पर वार नहीं करना चाहिए। बूढ़े, बच्चे, स्त्रियाँ, असहाय व्यक्तियों, अपंग व्यक्तियों पर आक्रमण न किया जाये।
4. युद्ध में सदैव पक्ष एवं विपक्ष द्वारा सूचना देकर युद्ध आरंभ किया जाये। कभी भी किसी भी पक्ष की सेना पर धोखे से आक्रमण नहीं किया जाये साथ ही दो सैनिक यदि आपस में युद्ध कर रहे हो तब किसी तीसरे सैनिक द्वारा उनमें से किसी एक पर वार नहीं किया जाना चाहिए।
5. युद्ध में शत्रु सेना की शक्ति के भय से यदि कोई सैनिक युद्ध क्षेत्र को छोड़कर भाग जाये तब उसका पीछा करके उस पर हमला नहीं करना चाहिए।
6. भोजन करते हुए, सोते हुए या मादक पदार्थों के सेवन में लीन एवं नशे में धून्त सैनिकों पर आक्रमण नहीं करना करना चाहिए।
7. ऐसे घातक अस्त्र जो विष से भरे हो अथवा जिनके प्रयोग से सम्पूर्ण शरीर में विशेष प्रकार की भयानक पीड़ा उत्पन्न होती हो, उनका प्रयोग न किया जाये।
8. जिस सैनिक का शस्त्र टूट गया हो, वाहन नष्ट हो गया हो उस पर भी अस्त्र नहीं चलना चाहिए।
9. मोक्ष मार्ग का अवलम्बन करने वाले साधु, भोजन करने वाले सैनिक, सोते या थके सैनिक भी अवध्य माने जाने चाहिए।

* राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

10. मनु के अनुसार जिसका वाहन नष्ट हो गया हो, नपुसंक हो, हाथ जोड़े खड़ा हो, जिसके बाल खुले हो, शरणागत हो, सोया हुआ हो, कवचविहिन हो, आयुध नष्ट हो गए हो या शोकाकुल हो। ऐसे शत्रु को रणक्षेत्र में नहीं मारना चाहिए।

इस प्रकार युद्ध के खतरों को कम करने के लिए तथा कम से कम विनाश के लिए प्राचीन विद्धानों ने युद्ध क्षेत्र में प्रयुक्त किये जाने वाले युद्ध के नियमों का निर्माण किया तथापि अनेक उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि कई शासकों द्धारा युद्ध क्षेत्रों में इन नियमों का उल्लंघन भी किया जाता था। महाभारत में कौरव सेना द्धारा निहत्ते अभिमन्यु का वध तथा अर्जुन द्धारा कर्ण का वध और शोकाकुल द्रोणाचार्य का पाण्डवों द्धारा वध अनुचित था। किंतु उल्लेखनीय है कि आचार्य कोटिल्य ने व्यवहारिक उपाय बताते हुए असमान लोगों के बीच भी युद्ध को उचित बताया है साथ ही शत्रु सेना के सेनापति को मारने पर प्रोत्साहन की व्यवस्था भी की है।

प्राचीन भारत में युद्ध के नियमों में ही युद्धबंदियों के साथ उदार व्यवहार तथा विजित राजा का पराजित राजा के साथ व्यवहार को भी वर्णित किया गया है। युद्ध के नियमों की अवहेलना सामाजिक, नैतिक तथा धार्मिक अपराध था।

प्राचीन भारतीय चिंतकों ने युद्ध में न्यूनतम हिंसा तथा जन सम्पत्ति एवं विनाश को कम करने की दृष्टि से युद्ध के अनेक नियमों का न केवल निर्माण किया अपितु उनके अनुकूल आचरण भी किया। निष्कर्षत: प्राचीन भारतीय युद्ध नियम वर्तमान युद्ध के अंतर्राष्ट्रीय नियमों (जेनेवा तथा हेग कन्वेशन) से किसी प्रकार कम नहीं थे साथ ही यह भी निष्कर्ष निकलता है कि प्राचीन भारत में युद्ध के नियमों का निर्माण किया गया किंतु इसमें संदेह है कि इनका पूर्णत: पालन किया जाता था।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अंतर्राष्ट्रीय कानून, बाबूलाल फड़िया - पृष्ठ 312
2. हाल - इण्टरनेशनल लॉ अष्टम संस्करण - पृष्ठ 8
3. ओपन हाइम - इण्टरनेशनल लॉ - पृष्ठ 200
4. डॉ. काणे - धर्मशास्त्र का इतिहास, द्धितीय भाग - पृष्ठ 684
5. एल.एल चटर्जी, इण्टरनेशनल लॉ एण्ड इन्टर स्टेट रिलेशंस इन एनशिएण्ट इंडिया - पृष्ठ 120
6. महाभारत - शांति पर्व 95/1
7. मनु स्मृति - 7, 91-93
8. मनोरमा जोहरी - पोलिटिक्स एण्ड एथिक्स इन एनशिएण्ट इंडिया - 1968

****

दक्षिण एशियाई सहयोग संगठन (सार्क) प्रमुख उपलब्धियॉ एवं वर्तमान परिदृश्य

डॉ. रेखा साहू *

शोध सारांश – 7-8 दिसंबर 1985 को ढाका मे हुए अपने प्रथम शिखर सम्मेलन से लेकर 26-27 नवम्बर 2014 को काठमाण्डू में हुए, शिखर सम्मेलन तक सार्क ने एक लम्बी दूरी तय की है। यद्यपि यह सम्मेलन आसियान एवं अन्य क्षेत्रीय संगठनों की तुलना मे बहुत ही धीमी गति वाला संगठन रहा है तथा हाल ही मे पाकिस्तान मे प्रस्तावित 19 वे सार्क सम्मेलन के स्थगित होने के कारण जहॉ इसकी प्रासंगिकता पर ही प्रश्न चिन्ह लगा है। वही दूसरी और सार्क के पिछले सम्मेलन 2007 नई दिल्ली, 2008 कोलंबो, 2010 थिम्पू भूटान 2011 आडू सिटी मालद्वीब ओर 2014 का काठमाण्डू सम्मेलन सफलता के उद्देश्य से उल्लेखनीय है। जहॉ एक ओर जनवरी 2006 मे साफ्टा जिसकी स्थापना के पश्चात इसके प्रावधानो को वर्ष दर वर्ष प्राप्त करने का प्रयास किया गया वहीं दूसरी और उक्त संगठन की अंदरूनी कलह ओर द्वेष एवं पारस्परिक विवाद, इसके निर्णय एवं उपलब्धियों पर प्रश्न भी खडा करते है।प्रस्तुत शोध पत्र सार्क सम्मेलनो मे प्राप्त की गई उपलब्धियों एवं लिये गये निर्णयो के आलोक मे सार्क की भूमिका एवं प्रासंगिकता का अध्ययन करता हैं। साथ ही यह सार्क के मार्ग में आने वाली बाधाओं एवं उन विवादो को दूर करने संबंधी कुछ संक्षिप्त सुझाव भी उल्लिखित करता है।

शोध व्याख्या – दक्षिण एशियाई क्षैत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) दक्षिण एशियाई देशो का संगठन हे जिसकी स्थापना 1985 में की गई यह संगठन सामूहिक आत्मनिर्भरता पर जोर देते हुए आर्थिक, तकनीकि, सामाजिक, ओर सांस्कृतिक विकास के लिए वचनबद्ध है। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका ओर मालद्धीप इसके सदस्य देश है। 14 वे शिखर सम्मेलन 2007 के दोरान अफगानिस्तान सार्क का 8 वॉ सदस्य बनाया गया है। यह संगठन लगभग 1.5 बिलियन लोगो का प्रतिनिधित्व करता है। जो विश्व की जनसंख्या का 22% है। सार्क संगठन में पर्यविक्षक राष्ट्र का दर्जा प्राप्त 9 देश है- चीन, सोवियत संघ, ईरान , दक्षिण कोरिया, मॉरिशस, म्यांमार और अमेरिका। उक्त संगठन का मुख्यालय काठमांडू में है और इसके चार्टर मे 10 धाराएँ है। यद्यपि भारत पाकिस्तान के हाल ही मे उपजे तनाव के कारण 3 नवंबर 2016 का प्रस्तावित सार्क सम्मेलन स्थागित किया जा चुका है, किन्तु सार्क द्धारा पिछले सम्मेलनो में लिये गये निर्णय और उपलब्धियॉ भी महत्वपूर्ण है और इस संगठन की आवश्यकता और महत्व को प्रतिपादित करती है।

प्रमुख शिखर सम्मेलन और उपलब्धियॉं – 1985,1986 एवं 1987 में आयोजित शिखर सम्मेलन जहॉ सार्क की ओपचारिक संरचना से सम्बन्धित रहे, वही इस संगठन ने सदस्य देशों के मध्य धीरे-धीरे विश्वास अर्जित करना प्रारंभ किया तथा आपसी वाद-विवादो से परे व्यापारिक, तकनीक, पर्यटन और पर्यावरणीय सहयोग हेतु सदस्य देशो को प्रेरित किया।1993 मे सातवे शिखर सम्मेलन ढॉका मे आयोजित किया गया जिसमें, वरीयता व्यापार व्यवस्था पर सहमति बन पाई और सार्क के सदस्यो ने व्यापार को उदार बनाने पर जोर दिया। 1995 मे नई दिल्ली मे आयोजित आठवे सम्मेलन मे सार्क देशो ने अपने क्षेत्र मे गरीबी निवारण पर विशेष ध्यान दिया और 1995 को दक्षेस गरीबी वर्ष ओर वर्ष 1996 को दक्षेस निरक्षरता उन्मूलन वर्ष घोषित किया गया। वहीं SAFTA को स्वीकृति भी प्रदान की गयी तथा दक्षिण एशिया विकास कोष (SADF) के गठन का निर्णय हुआ।2002 में काठमाण्डू में आयोजित 11 वें सम्मेलन मे जहाँ आतकंवाद का मुद्दा हावी हुआ वही 12 वे सम्मेलन इस्लामाबाद में गरीबी उन्मूलन हेंतु साझाकोष व दो सूत्री सामाजिक चार्टर के निर्माण पर बल दिया गया।

2005 में आयोजित 13 वे सम्मेलन, ढॉका में सदस्य देशो के तीव्र आर्थिक विकास और सामाजिक उन्नति के प्रयास किये गये। दोहरे करों को समाप्त करने, वीजा नीति उदार बनाने और SAFTA को 2006 तक लागू करने की प्रतिबद्धता की गयी।14 वॉ शिखर सम्मेलन नई दिल्ली भी अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है, जिसके अन्तर्गत प्रथम बार पर्यविक्षक राष्ट्र अमेरिका, जापान, चीन, दक्षिण कोरिया और यूरोपीय संघ शामिल हुए। 8 सूत्री घोषणा पत्र के अंतर्गत गरीबी, आतंकवाद व संगठित अपराधो को सामूहिक खतरा मानते हुए संकल्प लिया गया, साथ ही 2008 को अच्छे शासन का वर्ष घोषित करते हुए दक्षेस विश्वविद्यालय का प्रस्ताव महत्वपूर्ण उपलब्धि रहीं। कोलम्बो में आयोजित सम्मेलन 2008 की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि आठ सदस्य राष्ट्रो का शामिल होना रही, साथ ही सम्मेलन के समापन पर 41 सूत्रीय घोषणा पत्र के माध्यम से सदस्य देशो के नागरीको के कल्याण के लिये सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विकास के लिये विशेष बल दिया गया।

16 वॉ सम्मेलन 2010 थिम्पू के आयोजित किया गया। यह सार्क का रजत जयंती वर्ष था जिसकी थीम रखी गयी।Towards a green and happy South Asia उक्त सम्मेलन मे आस्ट्रेलिया और म्यांमार ने प्रथम बार पर्यविक्षक के रूप मे भाग लिया तथा अंत:क्षैत्रीय सम्पर्क पर विशेष ध्यान के केन्द्रित किया गया।2011 मे मालद्धीव के आडूसिटी मे आयोजित शिखर सम्मेलन 'Building Bridges' की थीम पर केन्द्रित था। 20 बिंदूओ के जारी घोषणा-पत्र में क्षैत्रीय रेल समझौता, क्षैत्रीय ट्रॉसपोर्ट समझौता, महिला सशक्तिकरण आदि उपलब्धियॉ उल्लेखनीय रही।तीन वर्ष पश्चात् आयोजित 18 वे शिखर सम्मेलन के नेपाल के सुशील कोइराला की अध्यक्षता मे महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये। Deep Integration for peace

* अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

and Prosperity थीम पर आयोजित यह सम्मेलन 8 सदस्य देश व 9 पर्यविक्षक राष्ट्रो का सफल सम्मेलन था। भारत द्वारा तात्कालिक वीजा व 3 से 5 वर्ष हेतु व्यापार वीजा की घोषणा इसकी महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। दो महत्वपूर्ण समझौते प्रथम दक्षेस क्षेत्रीय रेल समझौता और मोटर वाहन समझोते पर यद्यपि हस्ताक्षर नही हो सके, किन्तु उर्जा समझोता सदस्यो की महत्वपूर्ण उपलब्धि रहा। सन् 2016 को दक्षेस सांस्कृतिक विरासत वर्ष घोषित किया गया।

सार्क की सफलताऍं व समस्याऍं – सार्क का 19 वॉ शिखर सम्मेलन यद्यपि अनिश्चितता के भंवर मे है, किन्तु फिर भी उक्त संगठन ने धीरे–धीरे ही सही महत्वपूर्ण उपलब्धियॉ अर्जित की है। जहॉ एक और सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक समस्याओ ओर उनके निवारण के उपायो पर बल दिया गया है,वही संचार, शिक्षा, कृषि, पर्यावरण जैसे मुद्दो पर भी सार्क की उपलब्धियॉ विशेष है।आतंकवाद की समस्या पर समस्त सदस्य राष्ट्रो ने सदैव चिन्ता जाहिर की है साथ ही नशीले पदार्थो की तस्करी पर प्रतिबन्ध लगाने की प्रतिबद्धता जाहिर की हे। सार्क क्षैत्रीय योजना कोष, सार्क विकास फण्ड दक्षिण एशियाई समिति SAPTA और SAFTA के द्वारा उदार व्यापार नीतियो, आपराधिक मामलो में पारस्परिक सहायता, नि:शस्त्रीकरण तथा दक्षेस विश्वविद्यालय की उपलब्धियॉ भी उल्लेखनीय है। विश्व के अन्य संगठनो का समायोजन भी दक्षेस की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

सार्क गरीब व अविकसित राष्ट्रो का संगठन है। संघर्ष और सहयोग सार्क की प्रकृति मे है। सार्क देशो के बीच परस्पर विरोधी राष्ट्रीय हितो के परिणामस्वरूप अत्यधिक मतभेद है। इसके अतिरिक्त सार्क के मार्ग मे अनेक संस्थागत तथा कार्यात्मक बाधाऍं है।

1. दक्षिण एशिया की अपनी कोई प्रथक पहचान नहीं है। पाकिस्तान स्वयं को इस्लामिक मध्यपूर्व का राष्ट्र मानता है। नेपाल कभी चीन की ओर देखता है तो कभी भारत की और । श्रीलंका भी आसियान की सदस्यता का इच्छुक रहा है।
2. दक्षेस देशो में सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक विविधता है। इसमे 3 इस्लामिक , 2 बौद्धय , एक हिन्दू ;अब धर्म निरपेक्षद्ध और भारत । इनके दृष्टिकोण और नीतियॉ एक दूसरे के विरोधी है।
3. दक्षेस देशों में भारत आकार, जनसंख्या और शक्ति की दृष्टि से बडे भाई की स्थिति रखता है। जिससे छोटे देशो की आशंका और अविश्वास की संभावना निरन्तर बनी रहती है।
4. दक्षेस देशो के मध्य आपस में कई विवाद है। भारत और पाकिस्तान तनाव के कारण तो सम्मेलन के स्थगित होने की ही स्थिति में निर्मित हो गयी है।
5. सार्क के शिखर सम्मेलन में प्रत्येक राष्ट्र का भाग लेना अनिवार्य है। एक भी सदस्य की असमर्थता के परिणामस्वरूप सार्क सम्मेलन आयोजित नही किया जा सकता। कई बार इस कारण देशो के मध्य बैठक और वार्ताऍं प्रभावित हुई है।
6. सार्क के देश विकासशील देशों की श्रेणी में आते है। आर्थिक विकास की दृष्टि से इनमे विभिन्नताऍं है। इन देशो के व्यापारिक संबंध कमोवेश उपनिवेश वादी ढांचे द्वारा ही संचालित हो रहे है।
7. सार्क देशो के मध्य व्यापार समझौते तो है। किन्तु भुगतान सुविधा के अभाव ,यातायात तथा संचार साधनो की कमी सार्क देशो के मध्य में बाधा है।
8. जनसंख्या वृद्धि , भ्रष्टाचार , गरीबी के दुष्चक्र और पर्यावरण के गिरते स्तर के कारण ये देश अन्तराष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक विकास का लाभ उठाने मे असमर्थ रहे है।
9. मादक द्रव्य और आतंकवाद जैसे विश्वस्तरीय खतरों का केन्द्र सार्क देशों में स्थित है। अत: सार्क की क्षमता अधिकतर इनसे निपटने में ही समाप्त हो रही है।
10. सार्क देशो मे प्रथक–प्रथक शासन प्रणालियों के कारण पूर्व से ही विद्यमान समस्याऍं और गंभीर हो गयी है।
11. सार्क देशो की अर्थव्यवस्था परस्पर पूरक होने की बजाय प्रतिस्पर्धी अधिक है। भारत और बांग्लादेश जूट उत्पादन, भारत और श्रीलंका चाय उत्पादन और भारत और पाकिस्तान चावल और शक्कर तथा पाकिस्तान और श्रीलंका सूती वस्त्र में अंतराष्ट्रीय व्यापार में परस्पर प्रतिस्पर्धी है।
12. दक्षिण एशिया में घरेलू तनाव अनेक बार अंतर्राज्यीय तनाव में परिवर्तित होकर सार्क को प्रभावित कर रहे है।

वास्तव में चिन्ता का प्रमुख कारण आतंकवादी घटनाओ को पाकिस्तान द्वारा परोक्ष समर्थन दिया जाना और भारत–पाकिस्तान के मध्य निरन्तर तनाव है जो दक्षेस को प्रभावित कर रहे है। साथ ही सदस्य देशों द्वारा दी जा रही उदार नीतियो का लाभ लेने के पश्चात् भी भारत की और से व्यर्थ की आशंकाओ एवं भय व प्रतिस्पर्धा की भावना इस संगठन की प्रगति मे बाधक है। निश्चित ही सदस्य देशो के पारस्परिक विवाद शीघ्र हल होंगे और यह संगठन पुन: प्रगति मार्ग पर आगे बढ़ सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और समसामयिक मुद्दे – डॉ . रामदेव भारद्वाज
2. अंतर्राष्ट्रीय राजनीति – खन्ना वी . एन .
3. अंतर्राष्ट्रीय राजनीति – डॉ . बी . एल . फड़ियॉ
4. भारत के विदेश नीति – हरीश कुमार खत्री
5. अंतर्राष्ट्रीय संगठन – डॉ . प्रभु दत्त शर्मा

****

आचार्य कौटिल्य (चाणक्य) के कूटनीतिक सिद्धांत और समकालीन अंतर्राष्ट्रीय संबंध-एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. नवीन सक्सेना *

शोध सारांश - लगभग 2500 वर्ष पूर्व ही महान कूटनीतिज्ञ एवं सिद्धांतकार आचार्य विष्णुगुप्त ;कौटिल्य अथवा चाणक्य के द्वारा रचित सिद्धांत सामयिक विश्व और समकालीन अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में सदृश्य होते है। कौटिल्य द्वारा यथार्थवादी अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का जीवन्त चित्रण उनकी प्रसिद्ध कृति 'अर्थशास्त्र' मे वर्णित है। उक्त विचार आज भी वर्तमान राजनय ;कूटनीति एवं विदेशनीति का प्रकाश स्तम्भ कहलाते हैं। कौटिल्य द्वारा मण्डल सिद्धांत ,षढगुण नीतिचार्तुपाय , दौत्य (दूत) व्यवस्था, सन्धि व्यवस्था, गुप्तचर व्यवस्था पर जो रोचक और यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है, वह हजारो वर्षो बाद आज भी अंतर्राष्ट्रीय संबंधो मे प्रासंगिक है। वास्तव मे विश्व राजनीति में आज विश्व की महाशक्तियॉ एवं सम्प्रभु राज्य वैसा ही आचरण करते प्रतीत होते हे, जिस प्रकार का वर्णन हजारो वर्ष पूर्व कौटिल्य द्वारा वर्णित किये गये है। उक्त संदर्भ मे यह आलेख कौटिल्य द्वारा रचित सिद्धांतो और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति मे उनके प्रभाव और उपयोगिता की तुलना का संक्षिप्त प्रयास हैं ।

शोध- व्याख्या - कौटिल्य की प्रसिद्ध रचना 'अर्थशास्त्र' का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग वह है, जिसके अंतर्गत वह यथार्थवाद के आधार पर अन्तर्राज्य संबंधो का वर्णन करता है। शक्तिशाली और कमजोर राज्य के अधिकार और कर्तव्य, षढ़गा नीति , सन्धि व्यवस्था, दूत व्यवस्था, मण्डल सिद्धांत आदि के वर्णन द्वारा कौटिल्य ने ऐसे यथार्थ अंतर्राष्ट्रीय संबंधो का वर्णन किया है। जो पाश्चात्य राजनीतिक सिद्धांतकारों द्वारा भी नही सोचे गये है। इसी तथ्य से यह बात भी प्रमाणित होती है, कि भारत को असभ्य सपेरो और लुटेरो का देश मानने वालो को वास्तव मे हमारी साहित्यिक , सांस्कृतिक विरासत का ज्ञान ही नही है, क्योंकि कौटिल्य द्वारा वर्णित ये नियम ना केवल मोर्य और गुप्त साम्राज्य के पथ-प्रदर्शक बने हे, बल्कि लगभग 2500 वर्ष पश्चात् भी समकालीन अंतर्राष्टीय राजनीति और संबंधो मे भी इन्ही यथार्थवादी नियमो का पालन राष्ट्रराज्य करते नजर आते है।कौटिल्य ने अंतर्राज्यीय सम्बन्धों के बारे मे नवीन और मौलिक सिद्धांतो का प्रतिपादन किया है। भारती मुकर्जी ने अपनी पुस्तक 'kautilya's concept of Displomacy' मे 'अर्थशास्त्र' को अंतर्राज्य सम्बन्धो पर महानतम ग्रंथ माना है। अपने अंतर्राज्य सम्बन्धों कर्ान करते समय कौटिल्य ने 'मण्डल सिद्धांत' षडगुण-नीति, राजदूत-व्यवस्था, सन्धि-व्यवस्था और गुप्तचर के कार्य और भूमिका आदि का नियमन किया है

कौटिल्य का यथार्थवादी चिन्तन - मण्डल सिद्धांत कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित महत्वपूर्ण कूटनीतिक सिद्धांत है। कौटिल्य ने मुख्य राज्य के आस-पास स्थित भौगोलिक क्षेत्रो तथा वहॉ स्थित राष्ट्रों को मण्डल कहा है।मुख्य राज्य सहित 12 राज्यो का समुदाय 'मडल' होता है, जिसमे राष्ट्र की अवस्थिति के अनुसार अरि- राज्य 'शत्रुराज्य', मित्र- राज्य, अरि-मित्र, मित्र-मित्र राज्य, मध्यस्थ राज्य और उदासीन राज्य की श्रेणी मे बॉटा गया है।ये राज्य है- विजिगिशु (मुख्य राज्य0, मित्र राज्य (मुख्य राज्य की सीमा पर उपस्थित राज्य), मित्र राज्य (अरि से लगा राज्य), पाष्णिग्राह (सीमा पर पिछे लगा शत्रु) आक्रन्दसार (पिछे की और मित्र), मध्यम राज्य (मुख्य राज्य और शत्रु के मध्य) उदासीन राज्य आदि श्रेयॉ आज भी अंतराष्ट्रीय राजनीति और संबंधो में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

अर्थशास्त्र मे कौटिल्य ने **षढगुण नीति** राज्यों को पारस्परिक संबंधो मे अपनाने का वर्णन किया हैं। ये छः नीतियॉ है- सन्धि, विग्रह (विरोध), आसन (चुप होकर बैठ जाना) यान (चढाई करना जब शत्रु कमजोर हो), द्वैधीभाव (दोहरी नीतिद्ध)और समाश्रय (शक्तिशाली राज्य का आश्रय लेना) ।ये विशिष्ट नीतिया विशिष्ट समय ओर परिस्थिति अनुसार प्रयोग की जाती है। और समकालीन राष्ट्र -राज्य भी इनका समयानुसार प्रयोग करते है।

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की विषयवस्तु **राजदूत व्यवस्था** से संबंधित रही है। कौटिल्य ने दौत्य सम्बन्ध (राजनय या कूटनीति) का यथार्थ वादी और विवेकपूर्ण वर्णन किया है। निसृष्टार्थ (सर्वनिर्णय समर्थ दूत) परिमितार्थ (सिमित निर्णय शक्ति समर्थ) शासनहर (केवल वार्ता शक्ति समर्थ दूत) के रूप मे कौटिल्य ने दूतो की श्रेणियॉ बताई है, साथ ही दूत के कार्य व भूमिका और उन्हे प्राप्त होने वाले विशिष्ट लाभ और विशेषाधिकारों का वर्णन किया है।

कौटिल्य का यथार्थवादी विश्लेषण **गुप्तचर व्यवस्था** के अंतर्गत दिखायी देता है। कौटिल्य द्वारा गुंप्तचरी के जो प्रकार एवं उपाय अर्थशास्त्र के अधिकरणों में बताये है, वे पूर्णतः यथार्थवादी है, और अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में जीवन्त है। यद्यपि गुप्तचरी व्यवस्था वर्तमान मे प्रतिबन्धित है, किन्तु जिस प्रकार राष्ट्र राज्यों द्वारा आज भी दूसरे राष्ट्रो के भेद जानने हेतु व कमजोर करने हेतु इसका प्रयोग किया जाता है, उनका पथ प्रदर्शक कौटिल्य ही है। कापटिक (भेष बदलकर रहने वाले जासूस) उदास्थित (बुद्धिमान और चतुर जासूस) गृहपतिक (किसान और गृहस्थद्ध वैदहिक) व्यापारीद्ध तापस (तपस्वी वेश धारण करने वाला) सन्त्री (राजभक्त) तीक्ष्ण (वीर जासूस) रसद गुप्तचर (कूट जासूस) और भिक्षुकी (विधवा ब्राह्मणी अथवा दासी) आदि। उक्त गुप्तचरी के प्रकारो का प्रयोग यदा-कदा राष्ट्र राज्यों द्वारा किया गया है।

अपने उक्त यथार्थवादी सिद्धांतो में कौटिल्य द्वारा नैतिक-अनैतिक का

* राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

भेद नही किया गया है, क्योकि वास्तव मे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध केवल कोरी नैतिकता के आधार पर ही संचालित नही होते । और यह तथ्य कौटिल्य के समय से लेकर आज तक प्रासंगिक बना हुआ हे।

समकालीन अन्तराष्ट्रीय राजनीतिक और कौटिल्य का यथार्थवादी चिंतन।

उक्त संदर्भ मे निम्न निष्कर्षो द्वारा ये तथ्य प्रमाणित किये जा सकते है।

1. साम,दाम , दण्ड और भेद नामक **चातुर्पाय** का वर्णन अर्थशास्त्र मे किया गया है। यह उपाय हमारे सार्वजनिक व्यवहारिक जीवन मे नित् प्रतिदिन दिखायी देते है।, अंतर्राष्ट्रीय संबन्ध इन चातुर्पायो द्वारा ही संचालित होते है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति मे युद्ध ओर संघर्ष को टालने हेतु सर्वप्रथम शांतिपूर्ण उपायों को अपनाने का आग्रह किया है जिनमे संराधन ,वार्ता, शांतीपूर्ण समझौता आदि प्रमुख है। जो साम अर्थात वार्ता और दाम अर्थात कुछ अंश आदि देकर समझौतो से संबंधित है। वही दूसरी और विवादो के निपटारे के बाध्य कारी उपाय भी है, जिनमे युद्ध से पूर्व नाकाबंदी, सैन्य कार्यवाही, आर्थिक प्रतिबंध आदि का सहारा लिया जाता है। वास्तव मे वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय संबंध इन्ही चार उपायो द्वारा संचालित प्रतीत होते है।
2. कौटिल्य के महत्वपूर्ण सिद्धांत **षढगुण नीति** के रूप में प्रचालित है। सन्धि, विग्रह, आसन, यान , द्वैधीभाव और समाश्रय नामक ये छः सिद्धांत राष्ट्रो के मध्य कूटनीति के मूल सिद्धांत है। प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् सन्धिया और परमाणु हथियारों और पर्यावरण सुरक्षा हेतु की जा रही संधिया वास्तव मे उसी प्रकार की है, जैसा अर्थशास्त्र मे वर्णित हे। शत्रु को कमजोर करने हेतु दोहरी नीतियों का ही सहारा लिया जाता है, और भारत जैसा गुटनिरपेक्ष राष्ट्र भी समाश्रय का सहारा लेकर रूस जैसे शक्तिशाली देश के साथ 1971 मे सन्धि करता है, और पाकिस्तान अमरीका और चीन के सहयोग से भारत के साथ विग्रह का प्रयास करता है।
3. कौटिल्य ने अपनी अर्थशास्त्र मे गुप्तचरी के प्रकार उसके कार्य और भूमिका का व्यवहारिक अध्ययन किया है। उसके द्वारा वर्णित गुप्तचर के प्रकार वे ही है जिस प्रकार के गुप्तचर सामयिक राष्ट्र प्रयोग करते है।यद्यपि आज अंतर्राष्ट्रीय कानून मे गुप्तचर कार्य प्रतिबंधित है, फिर भी कई उदाहरण एसे सामने आये है, जब जासूसो के पकडे ज़ाने के कारण देशों के मध्य संबंध प्रभावित हुए है। शीतयुद्ध के दौर मे अमरीका – सेवियत संघ द्वारा जासूसो के माध्यम से ही स्वयं को सशक्त करने का प्रयास किया गया। RAW,ISI,MOSAD,MI3 आदि एजेन्सीयॉ गुप्तचरी उपायो को ही प्रभावहीन करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है।
4. कौटिल्य का मण्डल सिद्धांत राष्टो के भौगोलिक क्षेत्र और उस आधार पर उनकी प्रकृति को निरूपित करने वाला सिद्धांत है। एक राज्य के आस – पास एवं दूर के भौगोलिक क्षेत्र अनुसार शत्रु राज्य एवं मित्र राज्य का किया गया वर्गीकरण आज भी अंतर्राष्ट्रीय राजनीति मे प्रासंगिक है। अधिकांश देशो के ठीक सीमा से लगा राज्य अरि राज्य (शत्रु राज्य) होता है, और शत्रु राज्य का मित्र हमारा भी शत्रु होगा, और अरि का शत्रु राज्य हमारा भी मित्र होगा, यह तथ्य सर्वविदित है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधो में अरि, मित्र, अरि –मित्र, मित्र–मित्र, उदासीन और मध्यम राज्य का यह वर्गीकरण आज भी प्रसंगिक है।
5. कोटिल्य द्वारा दूत व्यवस्था और **दौत्य संबंधो** का सटीक वर्णन किया गया है। राजदूतो के कार्य और भूमिका अंतर्राष्ट्रीय संबंधो मे कौटिल्य के इन सिद्धांतो से ही निरूपित होते हे। निसृष्टार्थ परिमितार्थ और शासनहर नामक श्रैणियों के राजदूतो के समान ही अधिकार सम्पन्न, सीमित अधिकार क्षैत्र वाले राजदूत वर्तमान राजनय मे महत्वपूर्ण है।

वास्तव मे अर्थशास्त्र यथार्थवादी राजनीति पर लिखा गया सुन्दर ग्रंथ है। अर्थशास्त्र के सबसे महत्वपूर्ण भाग अंतर्राज्यीय संबंधो के बारे मे है। कौटिल्य ने सम्भवतः विश्व मे सर्वप्रथम अंतर्राज्यीय सम्बन्धों के महत्व का प्रतिपादन किया है, ओर उन सम्बन्धों के निर्धारण के सिद्धांत बताए है। ये सिद्धांत निश्चित ही समसामयिक अंतर्राष्ट्रीय संबंधो हेतु मार्गदर्शक सिद्ध हुए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्थशास्त्र– अधिकरण 9,12 ,13 – कौटिल्य
2. प्राचीन संस्कृत साहित्य का इतिहास – मैसमूलर
3. कौटिल्यास कॉन्सेप्ट ऑफ डिप्लोमेसी – डॉ . भारती मुकर्जी
4. प्राचीन भारतीय दर्शन एवं संस्थाऐं – डॉ . भास्कर अनन्त सैलेतौरे
5. भारतीय विदेश नीति – डॉ . वेद प्रताप वेदिक
6. विश्व सभ्यता के इतिहास की प्रथम श्रंखला– पार्ट 1
7. प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक – ओ . पी नागपाल , अमृत नाखरे

****

पश्चिम निमाड़ में सांस्कृतिक पर्यटन : गायत्री धाम जामली के विशेष संदर्भ में

डॉ. पंकज कुमार कानूनगो *

प्रस्तावना – भारत एक ऐसा देश है जहाँ की अतुल्य संस्कृति और प्राचीन विरासत उसे विश्व के महानतम राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा कर देती है। यहाँ की प्राकृतिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत, अलौकिक, सौन्दर्य, अनुपम रीति – रिवाज और गाथाएँ सदियों से जनमानस को अपनी ओकर आकर्षित कर रही है। किन्तु इसे भाग्य की विडम्बना कहे या हमारा दुर्भाग्य कि आज भी हम इस अतुल्य संपदा के बावजूद उतना विकास नहीं कर पाए है जितना कि अन्य राष्ट्रों ने किया है।

अन्य देशों की तुलना में भारतीय पर्यटन कई मायनों में अदभुत है। यहाँ पर नदियों और पत्थरों की पूजा होती है, पर्वतों पर देवताओं का वास है, यहाँ वृक्षों के विवाह होते हैं और पशु – पक्षी तथा वन्य जीव देवी – देवताओं के वाहन हैं। इस प्रकार भारतीय पर्यटन न केवल पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है बल्कि इसी से अनेक क्षेत्रों का विकास भी हुआ है।

सांस्कृतिक दृष्टि से भी पश्चिम निमाड़ अत्यंत समृद्ध रहा है। पश्चिम निमाड़ मध्यप्रदेश की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का केन्द्र स्थल रहा है। पश्चिम निमाड़ का नाम लेते ही उस भू-भाग का स्मरण हो जाता है, जिसके हृदय में नर्मदा रूपी अमृत-सरिता का प्रवाह है। जहाँ विन्ध्याचल और सतपुड़ा सजग प्रहरी के रूप में जिसकी रखवाली में तत्पर है। सुदूर अतीत में जब नदियों के किनारों पर सभ्यता के चरण बढ़ रहे थे और ग्रामों तथा नगरों का विकास नदियों की घाटियों में हो रहा था, उस समय पश्चिम निमाड़ में नर्मदा नदी के तटों पर उसकी घाटियों में सुसंस्कृत, सुसमृद्ध नगर महेष्वर, निमावर, मांधाता, आदि विकसित हो रहे थें। नर्मदा घाटी प्रदेश में बसा यह क्षेत्र आदिकाल से ही संस्कृति प्रधान रहा है। प्रस्तुत शोध के माध्यम से सांस्कृतिक पर्यटन के रूप में उभरते हुए नवीन क्षेत्र गायत्री धाम जामली की विशेषताओं और वहाँ पर पर्यटन की संभावनाओं को तलाषने का प्रयास किया गया है।

शोध की उपयोगिता – संस्कृति किसी भी क्षेत्र का एक अभिन्न हिस्सा होती है। किसी क्षेत्र विशेष के रहन सहन, पहनावे, रीति रिवाज, प्रथाएँ, वहाँ की आस्था, और उस क्षेत्र विशेष की स्थानीय संस्कृति पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। यहीं कारण है कि प्रतिवर्ष हजारों पर्यटक संस्कृतियों के अवलोकन के लिए विभिन्न स्थलों की यात्राएँ करते हैं। प्रस्तुत शोध ऐसे ही इस क्षेत्र के सांस्कृतिक पर्यटन के प्रमुख केन्द्र को वर्णित करता है और अपनी विशेषताओं से जनमानस को आकर्षित करने की क्षमता रखता है। सांस्कृतिक पर्यटन हमारी संस्कृति को बचाने में बहुत उपयोगी है और यही उपयोगिता सांस्कृतिक पर्यटन का महत्वपूर्ण उद्देश्य भी है। इस शोध के माध्यम से पश्चिम निमाड़ में सांस्कृतिक पर्यटन की संभावनाओं को उजागर करने और पर्यटन के माध्यम से इस क्षेत्र को वैश्विक परिदृष्य पर उभारने का प्रयास किया गया है।

विधितंत्र – पश्चिम निमाड़ के पर्यटन केन्द्रों का भौगोलिक अध्ययन करने हेतु प्राथमिक और द्वितीयक दोनों ही प्रकार के समंकों और तथ्यों का संकलन किया गया है। द्वितीयक समंक वर्ष 2001 की जनगणना और जिला सांख्यिकी पुस्तिका वर्ष 2006 पर आधारित है। प्राथमिक समंकों और तथ्यों का संकलन क्षेत्र सर्वेक्षण के द्वारा किया गया है। यथा स्थान पत्र-पत्रिकाओं, इंटरनेट, शासकीय प्रलेखों, जिला गजेटियर संदर्भित पुस्तकों आदि के माध्यम से प्राप्त सूचनाओं के द्वारा भी द्वितीयक समंकों हेतु जानकारी प्राप्त की गई हैं।

समंकों के संकलन उपरांत उनका सारणीयन और विश्लेषण किया गया एवं इसी आधार पर पर्यटन क्षेत्र का अध्ययन किया गया है। संबंधित विषय का गहन अध्ययन, विस्तृत सर्वेक्षण पर आधारित है। आवश्यकता-नुसार छाया चित्रों का प्रयोग किया गया है।

गायत्री धाम जामली :

स्थिति और विन्यास – पश्चिम निमाड़ के बड़वानी जिले का यह भी एक अत्यंत महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और जनजागृति केन्द्र है। गायत्री धाम प्राचीन भारतीय संस्कृति पर आधारित एक जनजागृति केन्द्र है जिसका उद्देश्य भारतीय संस्कृति के अनुरूप सभ्य मानव, सभ्य समाज और समृद्ध राष्ट्र बनाना है। यह एक ऐसा स्थान है जहाँ पर प्राचीन भारतीय संस्कृति के सभी मापदंडों का समागम दिखाई देता है।

गायत्री धाम बड़वानी जिले की सेंधवा तहसील के एक छोटे से ग्राम जामली में स्थित है। गायत्री धाम मुंबई आगरा राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 03 पर तहसील मुख्यालय से लगभग 7 किमी. दूर उत्तर दिषा की ओर $21^{0}45'$ उत्तरी अक्षांष और $75^{0}10'$ पूर्वी देशांतर पर स्थित है। इस क्षेत्र के भ्रमण हेतु यहाँ पर मुंबई आगरा राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित प्रमुख नगरों इंदौर, धामनोद, खलघाट ठीकरी, जुलवानिया से होकर पहुँचा जा सकता है। महाराष्ट्र की ओर से आने वाले पर्यटक सेंधवा होकर यहाँ पहुँच सकते हैं। राजमार्ग पर स्थित होने के कारण यहाँ आने के नियमित बस सेवाएँ सारे दिन उपलब्ध रहती है।

बड़वानी, खरगोन, इंदौर की तरफ से आने वाले पर्यटकों को व्हाया जुलवानिया होकर आना चाहिए। जुलवानिया से यह क्षेत्र लगभग 16 किमी दक्षिण में स्थित है। सतपुड़ा के सुंदर पठार पर बीस एकड़ क्षेत्र में फैला यह धाम वर्तमान में हजारों लोगों की आस्था, शिक्षा, संस्कार, स्वास्थ्य, व्यसनमुक्ति, स्वालंबन, जैविक कृषि, आत्म जागरण एवं साधना स्थली का जीवंत तीर्थ बन गया है।

* एम.ए., पीएच.डी.

सांस्कृतिक महत्व का इतिहास एवं विशेषताएँ – अखिल विश्व गायत्री परिवार की युग निर्माण योजना के संकल्प से प्रेरित होकर विश्व भर में अनेक सांस्कृतिक एवं जनजागृति केन्द्रों की स्थापना की जा रही है। इन केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य भटकती मानव संस्कृति को सही मार्ग पर लाना और भारतीय संस्कृति की रक्षा करना है। शांतिकुंज हरिद्वार की प्रेरणा से इसी प्रयास में देशभर में अनेक शक्तिपीठों की स्थापना की गई। इसी श्रृंखला में वर्ष 1982 में सेंधवा के किले के अंदर भी एक गायत्री शक्तिपीठ स्थपित किया गया। इन शक्तिपीठों की गतिविधियाँ मात्र कर्मकाण्डों तक ही सीमित नहीं थी अपितु यहाँ से विभिन्न जनजागृति गतिविधियों का संचालन कार्य प्रारंभ हुआ। व्यसनमुक्त समाज और निर्मल तथा सभ्य भारत वर्ष की धारणा लिए इन शक्तिपीठों की गतिविधियां दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। किन्तु इनके प्रयासों को पूर्णता की ओर ले जाने का संकल्प बिरले लोगों ने ही उठाया। इसी वस्तु को ध्यान में रखकर गायत्री शक्तिपीठ के परिव्राजक पं. मेवालाल पाटीदार ने सेंधवा से 7 किमी दूर स्थित ग्राम जामली की इस पावन भूमि को इस कार्य हेतु चुना और 4 फरवरी 1995 को बसंत पंचमी के पावन पर्व पर गायत्री धाम अस्तित्व में आया।

प्रारंभ में यह क्षेत्र विरान था किन्तु अथक प्रयासों और बहुजन हिताय – बहुजन सुताय की भावना से इस क्षेत्र ने दिन दुनी और रात चौगुनी प्रगति की। भारतीय संस्कृति को सहेजने के इस कार्य में अनेक लोगों ने सहयोग प्रदान किया और उनके सहायोग का ही यह परिणाम है कि आज 20 एकड़ भूमि में फैला यह आश्रम गायत्री धाम बनकर अनेक महत्वपूर्ण गतिविधियों के संचालन का प्रमुख केन्द्र बनकर पर्याप्त ख्याति अर्जित कर रहा है। एक गाय के सहारे निर्मित हुआ यह आश्रम आज हजारों लोगों की आस्था का केन्द्र बन चुका है। इस केन्द्र का लोकार्पण 16 अप्रेल 2003 को देव संस्कृति विश्वविद्यालय, शांतिकुंज हरिद्वार के कुलाधिपति डॉ. प्रणव पण्ड्या एवं गायत्री परिवार की प्रमुख आदरणीय शैल दीदी के पावन कर कमलों से संपन्न हुआ। वर्तमान में यहाँ से कई प्रकार की गतिविधियों का संचालन होता है, जो कि यहाँ की विशेषताएँ भी है।

गायत्री धाम के विशेष आकर्षण – इस पावन भूमि में चरण रखते ही चित्त शांत हो जाता है और प्राकृतिक सुषमा के मध्य वह अलौकिक शांति प्राप्त करता है। प्रवेश करते ही भव्य स्वागत द्वार सभी आगंतुकों का चित्त आल्हादित कर देता है। कुछ और दूरी पर चलने पर दाये हाथ की तरफ गायत्री परिवार के प्रणेता पं. श्रीराम शर्मा आचार्य और वंदनीय माताजी श्रीमती भगवती देवी शर्मा की पावन स्मारक के रूप में निर्मित दो भव्य छत्रियाँ सजल श्रद्धा और प्रखर प्रज्ञा के रूप में आत्मिक शांति का संदेश देती हुई दिखाई देती है। यहाँ पर इन्हीं गुरूसत्ता के पावन चरण चिन्ह विद्यमान है। पर्यटक इनके दर्शन करके अभिभूत हो जाते हैं। तदुपरांत क्षेत्र के प्रमुख आकर्षणों का सूक्ष्म अवलोकन करते हैं।

1. **आयुर्वेद चिकित्सालय –** गुरूसत्ता की पावन स्मारिका के सम्मुख ही एक आयुर्वेद चिकित्सालय है, जहाँ पर आयुर्वेदिक चिकित्सा के साथ–साथ औषधियाँ भी प्रदान की जाती है। यहीं से इस क्षेत्र में स्वालंबन से निर्मित आयुर्वेदिक औषधियों का विक्रय भी किया जाता है।

2. **भोजन शाला –** आयुर्वेद चिकित्सालय से कुछ ही दूरी पर दायी और भोजनशाला है और उसी के समीप पाकशाला भी निर्मित है, जहाँ पर आश्रमवासियों और आगंतुकों के लिए भोजन की व्यवस्था होती है।

3. **साधना कुंज –** भोजन शाला से आगे बायी और हरियाली से आच्छादित साधना कुंज है, जहाँ पर सूर्योदय और सूर्यास्त की गोधुली बेला में नाद योग किया जाता है एवं पश्चात साधना की जाती है।

4. **औषधि वाटिका –** साधना कुंज से कुछ ही दूरी पर एक रमणीय औषधि वाटिका भी है जहाँ पर कई प्रकार की औषधियों का रोपण किया गया है, इसी के निकट एक विश्राम वाटिका भी है जहाँ पर पर्यटक बैठकर असीम आनंद प्राप्त करते हैं।

5. **पिरामिड –** भारतीय संस्कृति में पिरामिड चिकित्सा को ब्रह्मांडीय उर्जा के संग्रहण का स्रोत माना गया है। पिरामिड का उपयोग नकारात्मक उर्जा को सकारात्मक उर्जा में बदल देता है और अस्वस्थ्य मन को स्फूर्ति प्रदान करता है। इसी पिरामिड चिकित्सा को आधार मानकर यहाँ पर एक पिरामिड का निर्माण भी वास्तु अनुरूप किया गया है जिसका उपयोग चिकित्सा कार्य में किया जाता है।

6. **एकलव्य गुरूकूल –** ऋषियों के देश में गुरूकूल परंपरा से ही व्यक्ति के सर्वांगीण विकास को अंगीकार किया जाता रहा है और यह सब सात्विक आहार विहार एवं संयमित जीवन से ही संभव है। प्रतिभावान, अभावग्रस्त छात्रों के सर्वांगीण विकास हेतु शिक्षा, संस्कार, स्वावलंबन से युक्त कक्षा पहली से आठवीं तक का एक विद्यालय भी यहाँ पर संचालित है जो कि एकलव्य गुरूकूल के नाम से जाना जाता है। यहाँ पर प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति के अनुरूप अध्यापन कार्य कराया जाता है। इन बच्चों को अध्ययन के साथ – साथ कर्मकाण्ड और भारतीय संस्कृति की शिक्षा भी प्रदान की जाती है। इसी गुरूकूल में विद्यार्थियों की आवास व्यवस्था भी है। इसके निकट आश्रम कार्यकर्ताओं का आवास स्थल भी है।

7. **प्राणदीप कुंज –** औषधि वाटिका के निकट एक बहुत ही सुंदर वास्तु संरचना दृष्टिगोचर होती है, जो चारों ओर से पुष्पलताओं और हरितिमा से आच्छादित है, इसे प्राणदीप कुंज कहते हैं। पर्यटक इस प्राणदीप कुंज की वास्तु संरचना देखकर मंत्रमुगध हो जाते हैं। यहाँ पर वेदमाता गायत्री की मनोहारी प्रतिमा और पूज्य गुरूदेव की तपस्थली मथुरा से लाई गई ज्योत से प्रज्जवलित एक अखण्ड गौघृत दीपक है जो कि यहाँ पर निरंतर प्रज्जवलित रहता है। इसके सान्निध्य में साधकगण सूर्य उदय से सूर्यास्त तक नित्य गायत्री महामंत्र का अखण्ड जप एवं सूर्योदय और सूर्यास्त के समय नित्य अग्निहोत्र करते हैं।

प्राणदीप कुंज के पीछे एक छोटा सा तालाब भी है। वर्षाकाल में पहाड़ी से गिरने वाला झरना इस तालाब में पानी संग्रहित करने का काम करता है। उस समय इस स्थान का सौंदर्य अत्यंत ही मनोहारी लगता है और वातावरण में एक दिव्यता का अनुभव होता है।

8. **प्राकृतिक चिकित्सालय –** प्राणदीप कुंज के निकट ही प्राकृतिक चिकित्सालय भी है जहाँ पर प्राकृतिक विधि से विभिन्न रोगों का उपचार किया जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा जीवन जीने की पद्धति सिखाती है। इसमें शरीर शुद्धिकरण के द्वारा विजातीय द्रव्यों को शरीर से बाहर निकाला जाता है। यहाँ पर एनीमा, सूर्य वाष्प, स्टीम बाथ, स्पाइनल टब बाथ, कटि स्नान, सर्वांग पंचगव्य, केप, मिट्टी, घृतकुमारी लेप एवं सूर्य आकाष, पृथ्वी, वायु, जल जैसे प्रत्यक्ष शरीर निर्माण करने वाले पंचतत्वों से उपचार किया जाता है। इसी के साथ पिरामिड चिकित्सा, उपवास, यज्ञ थैरेपी, वनस्पति चिकित्सा एवं ध्यान योग चिकित्सा भी दी जाती है।

9. **यज्ञ एवं संस्कार शाला –** प्राकृतिक चिकित्सालय के सामने एक मनोहारी यज्ञ एवं संस्कारशाला है। यहाँ पर विभिन्न यज्ञ एवं कर्म तथा संस्कार कर्म सम्पन्न होते हैं। इसके अलावा यज्ञ के माध्यम से वैज्ञानिक शोध भी होते हैं।

10. ऋषि कुंज (साधना कुटिया) – गायत्री धाम में प्रतिमाह 20 से 30 तारीख में वर्षभर 10 दिवसीय शरीर शुद्धि साधना शिविर का आयोजन किया जाता है। इसके अलावा यहाँ पर चंद्रायण व्रत शिविर का भी आयोजन होता है। इस हेतु यहाँ 24 घास–फूस से निर्मित प्राकृतिक साधना कुटियाँ निर्मित की गई है, जिन्हें ऋषि कुंज कहा जाता है। ये अत्यंत ही मनोहारी है। इनमें बैठकर साधकगण साधना करते हैं। इन कुटियाओं के निकट ही साधकों के आवास हेतु शिविरार्थी आवास स्थल निर्मित है जिसके सम्मुख निर्मित वाटिका भी देखने योग्य हैं। साधकों के द्वारा प्राणायाम, योग आदि क्रियाएँ भी की जाती है। शिविरार्थी आवास स्थल को महामृत्युंजय कुंज कहा जाता है।

11. सप्त गौ प्रदिक्षणा यंत्र – साधना कुटियाओं के आगे ही सप्त गौ प्रदिक्षणा यंत्र निर्मित है। यह एक उत्तम वास्तु यंत्र माना जाता है। इस यंत्र में सात कोण हैं, जिनमें सात पृथक–पृथक रंगों की गायों को खड़े कर मध्य भाग में अग्निहोत्र किया जाता है एवं व्याधिग्रस्त लोगों को इसकी प्रदिक्षणा कराई जाती है, जिससे अनेक व्याधियाँ दूर होती है। इस यंत्र का सिद्धांत सूर्य और उसकी सप्तरंगी सात किरणों पर आधारित है। इसका वास्तु और चिकित्सा प्रणाली प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक प्रणाली पर आधारित है।

12. गायत्री मंत्र तपांषदान शक्ति स्तंभ – शिविरार्थी आवास स्थल के सम्मुख ही यह शक्ति स्तंभ मौजुद है, इस स्तंभ के नीचे निर्मित एक कक्ष में दो करोड़ चालीस लाख हस्तलिखित गायत्री महामंत्र का संग्रह है, जिसे 108 गाँवों के दस हजार लोगों के द्वारा लिखा गया है। इस स्तंभ का अनावरण 21 अक्टूबर 2002 को शरद पूर्णिमा के दिन किया गया था।

13. पंचगव्य आयुर्वेद शोध संस्थान – यह गौविज्ञान से गौ रक्षा के महाभियान हेतु निर्मित पंचगव्य आयुर्वेद शोध का केन्द्र है। यहाँ पर पंचगव्य से रोग निवारण हेतु औषधियाँ तैयार की जाती है साथ ही यज्ञ चिकित्सा से अग्नि होत्र के द्वारा मिर्गी का उपचार प्रति पूर्णिमा को किया जाता है। यहाँ पर नवीन औषधियों पर शोध भी किया जाता है। यहाँ पर आधुनिक यंत्रों के प्रयोग से अर्क निर्माण भी किया जाता है।

14. कामधेनु कुंज (गौशाला) – यहाँ पर वृहद गौशाला भी है। इस सुव्यवस्थित गौशाला में 119 गायें रखी गई है। सभी गायें सुंदर देशी नस्ल की है। इनके पंचगव्य से औषधि निर्माण एवं गौमूत्र चिकित्सा की जाती है।

15. अन्य आकर्षण – यहाँ पर गौ अपशिष्टसे कीटनाशक, गोबर खाद, केंचुआ खाद भी बनाई जाती है। खाद निर्माण शाला भी देखने लायक है। इसके अलावा आयुर्वेदिक, सौंदर्य प्रसाधन वस्तुएँ और पौष्टिक स्वास्थ्य वर्द्धक वस्तुओं का भी यहाँ पर उत्पादन होता है।

पर्यटकों के आकर्षण हेतु यहाँ पर स्वीमिंग पुल और कुछ वन्य प्राणी भी है, जिनका प्राकृतिक वातावरण में स्वच्छंद विचरण करना मनोहारी प्रतीत होता है।

यहाँ पर एक गोकुल कुंज भी है जो कि स्वालंबन एवं आदर्ष ग्राम प्रषिक्षण सत्रों का प्रशिक्षण भवन है।

इसके अलावा यहाँ पर कन्याओं हेतु एक गुरूकूल की स्थापना भी की जा चुकी है जिसमें बालिकाओं हेतु रहन सहन और शिक्षा की उत्तम व्यवस्था संचालित है।

गायत्री धाम में आयोजित होने वाले शिविर – यहाँ पर प्रतिवर्ष विविध उद्देश्यों की पूर्ति हेतु शिविरों का आयोजन होता है, जिनका विवरण निम्नानुसार है :–

क. प्रतिमाह 20 से 30 तारीख में 10 दिवसीय शरीर शुद्धि प्राकृतिक चिकित्सा शिविर का आयोजन

ख. दोनों नवरात्री में 9 दिवसीय गायत्री लघु अनुष्ठान शिविर का आयोजन होता है।

ग. प्रतिवर्ष गुरूपूर्णिमा से रक्षा बंधन तक पापनाशक चंद्रायण व्रत और सवा लाख मंत्र जप अनुष्ठान शिविर का आयोजन होता है।

घ. साधकों, विद्यार्थियों, दंपत्तियों के 3 दिवसीय व्यक्तित्व विकास शिविर (कुटि प्रवेश साधना) वर्ष में मार्च, अप्रेल, मई और जून माह में आयोजित किये जाते हैं।

ड़. प्रतिमाह की 25 तारीख को शंख प्रक्षालन शिविर का आयोजन होता है।

इस प्रकार यह क्षेत्र सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, प्राकृतिक और सनातन संस्कृति का अद्भुत संगम है। गायत्री धाम के द्वारा स्वयं की वेबसाईट भी जारी की गई, जिसके माध्यम से देख – विदेश के लोग यहाँ पर संचालित होने वाली गतिविधियों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस क्षेत्र के उद्भव से व्यसन मुक्ति और जनजागृति के क्षेत्र में अद्भुत क्रांति का अभ्युदय हुआ है। पर्यटन के रूप में विकसित करने पर इस क्षेत्र को और भी सुविधाएँ प्राप्त हो सकती है और अनेक लोग यहाँ की गतिविधियों से लाभान्वित हो सकते हैं।

विशेष आयोजन – सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र होने के कारण यहाँ पर वर्ष भर विशेष आयोजन होते रहते हैं। इन आयोजनों में हजारों लोग षिरकत करते हैं। यहाँ पर बसंत पंचमी (फरवरी माह), गायत्री जयंती (जून माह) एवं गुरू पूर्णिमा (जुन–जुलाई माह) के दौरान पंचकुण्डीय गायत्री यज्ञ एवं दीक्षा संस्कार आयोजित होते हैं। इन पर्वो पर आयोजित उत्सव अत्यंत गरिमामय और आकर्षक होते हैं।

नवरात्रों के दौरान भी यहाँ पर विशेष कर्मकाण्डों का आयोजन होता है और ध्यान शिविर का भी आयोजन होता है। यहाँ का विशेष आकर्षण का उत्सव शरद पूर्णिमा (अक्टूबर माह) होता है। इस दौरान दिन भर विशेष आयोजन होते हैं, जिसमें हजारों लोग सम्मिलित होते हैं। रात्री को सांस्कृतिक आयोजन और आध्यात्मिक चर्चा उपरांत रात्री के 12 बजे चंद्रमा की शीतल छाया में देशी गाय के शुद्ध दूध से निर्मित खीर के प्रसाद का वितरण किया जाता है। साथ ही सिर्फ इसी दिन अस्थमा के (श्वास रोगियों) मरीजों हेतु विशेष दवा तैयार की जाती है और उसे गाय के दूध के साथ मरीजों को पृथक से सेवन कराया जाता है।
यहाँ के उत्सव अत्यंत शालीन और गरिमामय तथा ज्ञानवर्द्धक होते हैं।

पर्यटक व्यवहार, संचरण एवं प्रतिरूप – गायत्री धाम अपने आप में अनेक विशेषताओं को धारण किये हुए है। इतनी विशेषताओं भरा सांस्कृतिक केन्द्र शायद ही कहीं और दृष्टिगोचर होता है। इसी कारण से यहाँ आने वाले पर्यटकों का व्यवहार भी भिन्न – भिन्न होता है, जो उनके उद्देश्यों को प्रभावित करता है। यहाँ पर प्रतिवर्ष 1.5 लाख लोग आते हैं जिनमें से 30 प्रतिशत लोग भ्रमण हेतु, 26 प्रतिशत धार्मिक आस्था के कारण, 04 प्रतिशत लोग मन्नत उतारने, 35 प्रतिशत लोग स्वास्थ्य लाभ और 5 प्रतिशत लोग अन्य कार्यो हेतु आते हैं। यहाँ पर बाजार उपलब्ध न होने से विपणन क्रिया हेतु कोई नहीं आता किन्तु स्थानीय स्तर पर निर्मित सामग्री का विक्रय यहाँ पर होता है। चूँकि स्वास्थ्य लाभ के अंतर्गत यहाँ निर्मित वस्तु आती है अत: स्थानीय बाजार उपलब्ध ना होने से इन वस्तुओं के विक्रय को स्वास्थ्य लाभ में सम्मिलित किया गया है। यहाँ पर सर्वाधिक संख्या महिला पर्यटकों की रहती है किन्तु पुरूष भी महिलाओं की संख्या के समकक्ष ही यहाँ पर

आते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र होने से यहाँ पर स्वास्थ्य लाभ के उद्देश्य से सर्वाधिक पर्यटक आते हैं।

तालिका 1 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सामान्य माह के दौरान 60 प्रतिशत अंतर्क्षेत्रीय, 15 प्रतिशत अंतरप्रदेशीय और 25 प्रतिशत अंतर्देशीय पर्यटक यहाँ पर आते हैं। विशिष्ट माह के समय विशेषकर जुलाई से सितंबर के दौरान यहाँ पर लगभग 40 प्रतिशत अंतर्क्षेत्रीय, 35 प्रतिशत अंतरप्रदेशीय और 25 प्रतिशत के लगभग अंतर्देशीय पर्यटक यहाँ पर आते हैं। विशेष अवसरों पर उत्सवों के दौरान 27 प्रतिशत अंर्तक्षेत्रीय पर्यटक, 38 प्रतिशत अंतप्रदिशीय और 35 प्रतिशत के लगभग अंतर्देशीय पर्यटक आते हैं। सामान्य माह को छोड़कर अन्य अवसरों और माहों में महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों से अधिक रहता है। यहाँ पर आने वाले अंतर्देशीय पर्यटकों में सर्वाधिक महाराष्ट्र के पर्यटक रहते हैं।

तालिका 2 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

भ्रमण हेतु अनुकूल समय - इस स्थान का भ्रमण वर्ष पर्यंत किया जा सकता है। पर्वो के दौरान भ्रमण करना विशेष अच्छा रहता क्योंकि उस समय यहाँ होने वाली सांस्कृतिक गतिविधियों का परिचय हो जाता है। विशेषकर शरद पूर्णिमा उत्सव (अक्टूबर) के समय आना यहाँ का अविस्मरणीय क्षण बन जाता है। इसके अलावा जिन्हें पर्व पर आना संभव ना हो वे वर्षाकाल के समय आकर यहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक गतिविधियों का लुत्फ उठा सकते हैं।

क्षेत्र पर उपलब्ध आधारभूत सुविधाएँ - चूँकि यह क्षेत्र आबादी से दूर ग्रामीण परिवेष में स्थित है अत: यहाँ पर अपेक्षाकृत कम ही सुविधाएँ उपलब्ध है। परिवहन की दृष्टि से यहाँ पर आने के लिए सड़क परिवहन की उत्तम व्यवस्था उपलब्ध है किन्तु वायु और रेल परिवहन इंदौर में ही स्थित है।

पर्यटकों के आवास हेतु, उनके भोजन, पेयजल, भ्रमण हेतु जानकार आदि की समुचित व्यवस्था यहाँ पर उपलब्ध है जो स्वयं संस्थान के द्वारा उपलब्ध रहती है। टूरिस्ट लाज, होटल, शासकीय गेस्ट हाउस निकट ही सेंधवा में स्थित है।

यहाँ पर संस्था का ही चिकित्सालय उपलब्ध है, शासकीय चिकित्सालय सेंधवा में है। दूरभाष मोबाइल सेवा यहाँ उपलब्ध है। यहाँ पर कोई दैनिक या साप्ताहिक बाजार उपलब्ध नहीं होने के कारण यहाँ के उत्पादों को उचित बाजार विक्रय हेतु नहीं मिल पाता है। बैंक एवं एटीएम तथा अन्य आवष्यक सुविधाएँ निकट ही तहसील मुख्यालय सेंधवा पर उपलब्ध है।

इस प्रकार यह क्षेत्र अत्यंत ही महत्वपूर्ण सांस्कृतिक पर्यटन का केन्द्र बन सकता है। चूँकि यह राजमार्ग पर स्थित है और तहसील मुख्यालय से अत्यंत निकट है अत: यदि इस क्षेत्र को पर्यटन के रूप में विकसित किया जाये तो निश्चित ही इन सब सुविधाओं का इसे फायदा मिलेगा। वर्तमान में इसका क्रियान्वयन निजी ट्रस्ट के हाथों में है। यदि शासकीय सुविधाएँ भी यहाँ पर प्राप्त हो जाए तो निश्चित ही यह पश्चिम निमाड़ के विकास और ग्रामीण उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

तालिका 3 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष - आधुनिक मानवीय सभ्यता का जन्म ही संस्कारों से हुआ है। संस्कारविहीन व्यक्ति सब कुछ हो सकता है किन्तु एक आदर्श इंसान कदापि नहीं। भारतीय समाज की तो नींव ही संस्कारों से जन्मी है। संस्कार से संस्कृति जन्म लेती है। प्रत्येक संस्कृति स्वयं में अनुठे रिवाजों और मान्यताओं को समेटे हुए है और यहीं रिवाज और प्रथाएँ, पर्व मेले, उत्सव आदि के रूप में हमें दृष्टिगोचर होती है।

सांस्कृतिक पर्यटन इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि लुप्त होती संस्कृतियों और प्रथाओं को इसी के माध्यम से संरक्षण प्रदान किया जा सकता है। विभिन्न पर्व, उत्सवों, मेलों आदि का अपना विशेष महत्व और आकर्षण होता है। यहीं सांस्कृतिक क्षेत्रों का आकर्षण पर्यटन की संभावनाओं को जन्म दे सकता है।

सांस्कृतिक पर्यावरण भी पर्यावरण का एक अंग है। कुछ विद्वान इसे मानव निर्मित पर्यावरण (भौतिक पर्यावरण) से भी जोड़ते हैं क्योंकि संस्कृतियाँ भी मानव की ही देन है। किन्तु कुछ विद्वानों ने इसे संस्कारों की पाठशाला मानकर पृथक स्वरूप देने का भी प्रयास किया है। आधार जो भी हो किन्तु एक बात निश्चित है कि संस्कृति भी पर्यावरण का ही एक अंग है क्योंकि यह भी पर्यावरण के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सांस्कृतिक पर्यटन के क्षेत्र में गायत्री धाम एक अनूठा क्षेत्र है, क्योंकि यहाँ पर आस्था के साथ - साथ भारतीय सनातन संस्कृति का संगम भी दिखाई देता है। प्राकृतिक चिकित्सा के नित नवीन अनुसंधान एवं शिक्षा, जन जागृति और संस्कृति के प्रसार के केन्द्र रूप में आज यह क्षेत्र पर्यटन के क्षेत्र में उभरकर सामने आ रहा है। इस क्षेत्र को पर्यटन की दृष्टि से विकसित करने पर न केवल इस क्षेत्र को अत्याधुनिक सुविधाओं का लाभ मिलेगा, वरन यहाँ के विकास के साथ-साथ हमारी सांस्कृतिक विरासतें और सनातन संस्कृति को बचाये रखने में योगदान भी प्राप्त होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Robinson, H.A. : “Geography of Tourism” Mackdonald and Evans, London, 1996
2. Singh, Shalini : “Cultural Tourism and Heritage Management” Rawat Publication, Jaipur, 1994
3. दासगुप्ता, पापिया : 'पर्यटन एक अध्ययन' म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
4. नेगी, डॉ. जगमोहन : 'पर्यटन एवं यात्रा के सिद्धांत' तक्षशिला प्रकाशन, नईदिल्ली, 2004
5. सिंह, सुमन्त : 'मध्यप्रदेश में पर्यटन' और सिंह, बी.पी. आदित्य पब्लिशर्स, बीना (म.प्र.) 2000
6. 'निमाड़ दिग्दर्शन', जनार्दन, प्रकाशन बड़ा सराफा, इंदौर - 1976
7. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला - बड़वानी, 2006
8. 'निमाड़ स्तवन' (आस्था के जगमगाते दीप) - विविधा खरगोन - 2004
9 दैनिक भास्कर, समाचार पत्र
10 जिला गजेटियर, पश्चिम निमाड़ 1973

तालिका 1 – पर्यटक व्यवहार

पर्यटक	पर्यटन का उद्देश्य ओर पर्यटकों की संख्या (प्रतिशत में)						महायोग
	भ्रमण	विपणन	धार्मिक आस्था	मन्नत उतारना	स्वास्थ्य लाभ	अन्य	
स्त्री	12	—	15	03	20	02	52
पुरूष	18	—	11	01	15	03	48
योग	30	—	26	04	35	05	100

स्त्रोत : क्षेत्र सर्वेक्षण

तालिका 2 –पर्यटक संचरण प्रतिरूप

पर्यटक स्वरूप	पर्यटकों की संख्या (प्रतिशत में)								
	सामान्य माह			विशिष्ट माह			विशेष अवसर		
	स्त्री	पुरूष	योग	स्त्री	पुरूष	योग	स्त्री	पुरूष	योग
अन्तर्क्षेत्रीय पर्यटक	25	35	60	30	10	40	14	13	27
अन्तर्प्रदेशीय पर्यटक	07	08	15	15	20	35	23	15	38
अन्तर्देशीय पर्यटक	15	10	25	12	13	25	18	17	35
विदेश पर्यटक	—	—	—	—	—	—	—	—	—
महायोग	47	53	100	57	43	100	55	45	100

स्त्रोत : क्षेत्र सर्वेक्षण

तालिका 3 –पर्यटन केन्द्र पर उपलब्ध आधारभूत सुविधाएँ

सुविधा का प्रकार	पर्यटन केन्द्र से निकटतम दूरी (किमी में)					
		0–5	6–10	11–15	16–20	21 से अधिक
परिवहन	सड़क परिवहन	✻				
	रेल परिवहन					✻
	वायु परिवहन					✻
आवास	धर्मशाला (सराय)	✻				
	टूरिस्ट लाज		✻			
	हॉटल		✻			
	शासकीय गेस्ट हाउस		✻			
चिकित्सा सुविधाएँ	निजी चिकित्सालय	✻				
	शासकीय चिकित्सालय		✻			
संचार सुविधाएँ	डाकघर		✻			
	सार्वजनिक दूरभाष केन्द्र	✻				
	इंटरनेट	✻				
विपणन सुविधाएँ	बाजार		✻			
	बैंक		✻			
	ए.टी.एम.		✻			
अन्य सुविधाएँ	पेयजल	✻				
	भोजनालय	✻				
	सुलभ काम्प्लेक्स	✻				
	टूरिस्ट गाइड	✻				
	अन्य	✻				

नोट : ✻ चिन्ह सुविधा की निकटतम उपलब्धता को दर्शाता है।

स्त्रोत : क्षेत्र सर्वेक्षण

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

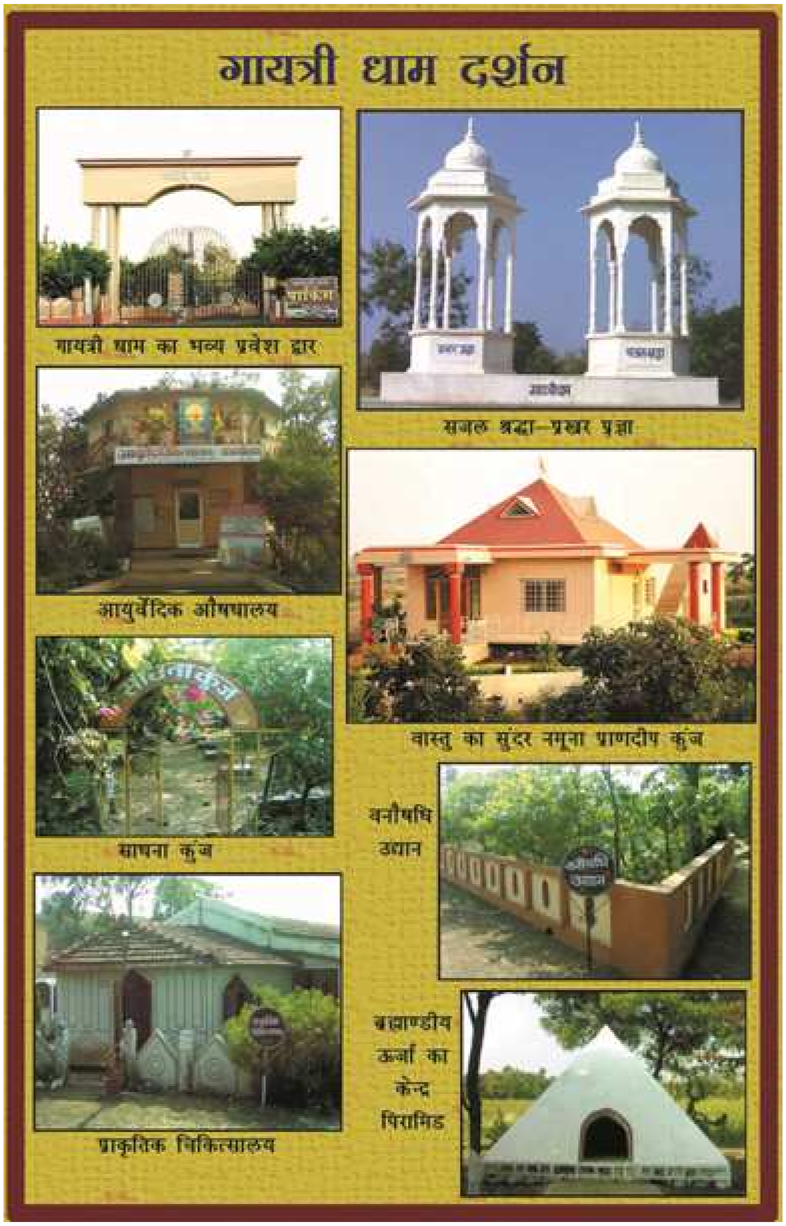

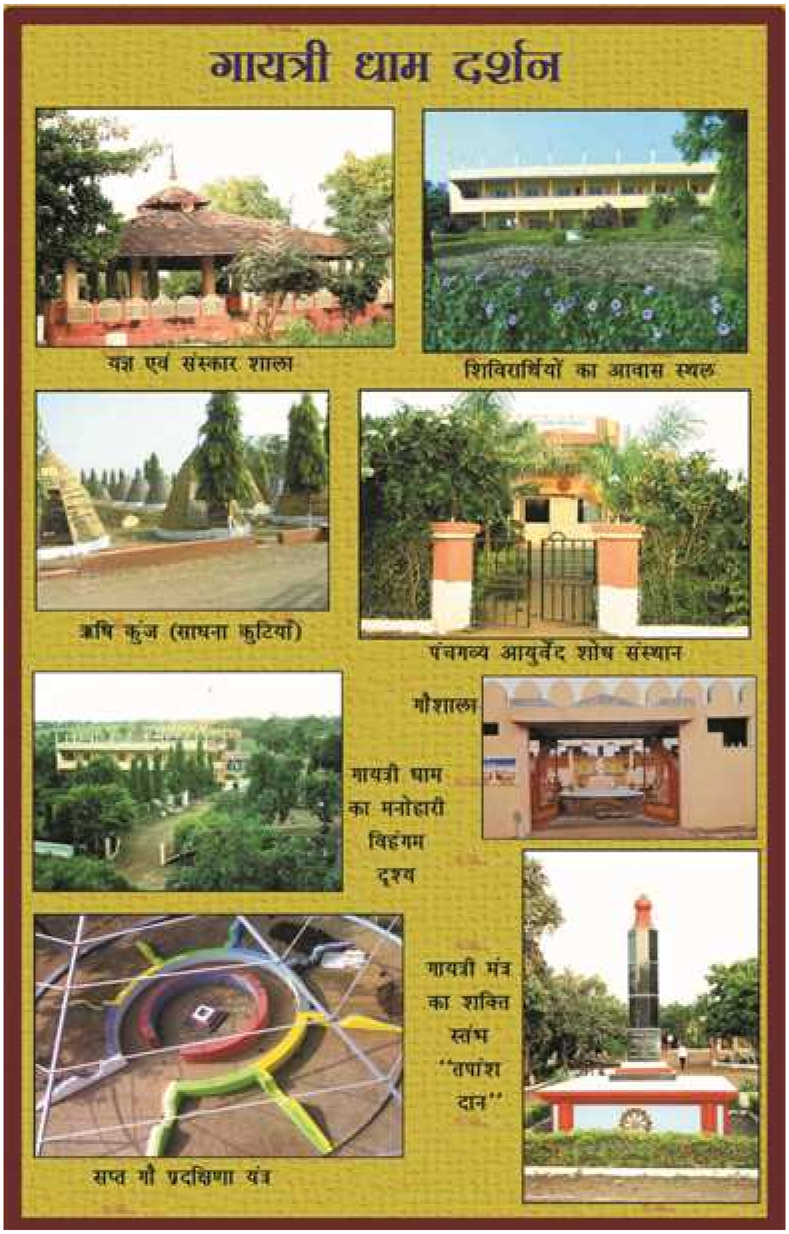
गायत्री धाम दर्शन
यज्ञ एवं संस्कार शाला
शिविरार्थियों का आवास स्थल
ऋषि कुंज (साधना कुटियाँ)
पंचगव्य आयुर्वेद शोध संस्थान
गौशाला
गायत्री धाम का मनोहारी विहंगम दृश्य
गायत्री मंत्र का शक्ति स्तंभ "तपांश दान"
सप्त गौ प्रदक्षिणा यंत्र

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के आदिवासी विपणन केन्द्रों का स्थानिक वितरण

डॉ. सुनिता गुप्ता *

प्रस्तावना – विपणन केन्द्र किसी भी ग्रामीण क्षेत्र की वह नियमित घटना होती है, जो बहुपक्षीय होती है, इन्हें आर्थिक क्रियाओं का केन्द्र या वस्तुओं के आदान प्रदान का केन्द्र मानना उसके महत्व को कम आँकना है। इस आदिवासी परिवेश में विपणन केन्द्र इन आदिवासियों के आर्थिक, समाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन पर स्पष्ट रूप से प्रभाव डालते हैं। यहाँ पर आदिवासियों द्वारा अपने विचारों, सांस्कृतिक कार्यो, रीति रिवाजों, समस्याओं आदि का भी आदान प्रदान होता है। अत: आदिवासियों की जीवन शैली पर इन विपणन केन्द्रों का महत्वपूर्ण प्रभाव देखा गया है।

अध्ययन क्षेत्र – मध्यप्रदेश का दक्षिण पश्चिम भाग जो भारत की पश्चिमी आदिवासी पट्टी के संसाधन विरल केन्द्र का प्रतिनिधित्व करता है, अध्ययन का केन्द्र है। इसकी 88 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या आदिवासी है। इसका अक्षांशीय विस्तार $21^{0}81'$ उत्तर से $23^{0}33'$ उत्तर तथा देशान्तरीय विस्तार $73^{0}30'$ पूर्व से $77^{0}13'$ पूर्व तक है। अध्ययन क्षेत्र का क्षेत्रफल 23988.91 वर्ग कि.मी. है। वर्ष 2001 की जनगणना अनुसार यहाँ 5244336 व्यक्ति निवास करते हैं। प्रशासनिक दृष्टिकोण से दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश में रतलाम जिले की सैलाना एवं बाजना तहसीलें, झाबुआ जिला, धार जिले की सरदारपुर, कुक्षी, गंधवानी, मनावर, धार और धरमपुरी तहसीलें, बड़वानी जिला, खरगोन जिले की सेगाँवा, भगवानपुरा, भीकनगाँव, एवं झिरन्या तहसीलें, खण्डवा जिले की नेपानगर और हरसूद तहसीलें सम्मिलित है।

विधितंत्र – दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश में क्षेत्र तथा जिला स्तर पर आवर्ती विपणन केन्द्रों का वितरण प्रतिरूप को स्पष्ट करने के लिये निकटतम पड़ोसी बिन्दु विश्लेषण विधि, आवर्ती विपणन केन्द्र संबंध – क्षेत्रफल, जनसंख्या एवं आबाद ग्राम के माध्यम से करने का प्रयास किया गया है।

दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश में क्षेत्र तथा जिला स्तर पर आवर्ती विपणन केन्द्रों का वितरण प्रतिरूप को स्पष्ट करने के लिये क्लार्क एवं इवान्स की बहुप्रचलित निकटतम पड़ोसी बिन्दु विष्लेषण विधि का प्रयोग किया गया है। इस विधि का प्रयोग यह ज्ञात करने के उददे्ष्य से किया गया है कि आवर्ती विपणन केन्द्रों का वितरण प्रतिरूप समरूप (Uniform) तथा पूँजीभूत (Clustered) प्रतिरूपों से कितान विचलित होता है। सर्वप्रथम क्षेत्र में वितरित सभी आवर्ती विपणन केन्द्रों का उनके निकटतम आवर्ती विपणन केन्द्रों से सीधी रेखओं द्वारा जोड़ दिया गया है, तत्पश्चात निकटतम केन्द्रों की पारस्परिक दूरी ज्ञात की गई है, इसके आधार पर आवर्ती विपणन केन्द्रों की वास्तविक माध्य दूरी तथा अपेक्षित माध्य दूरी परिलक्षित की गई। यादृच्छिकता से विचलन का माप प्राप्त करने के लिये वास्तविक माध्य दूरी तथा अपेक्षित माध्य दूरी का अनुपात निकाला गया है। उक्त मापों को ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त विधि के अनुसार निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया गया है।

1. $$Rn = \frac{ro}{re}$$

जिसमें Rn वह मान है जो यादृच्छिकता से विचलन की मात्रा को निकटतम बिन्दु से दूरी के परिप्रेक्ष्य में दर्शाता है।

ro = यथार्थ औसत दूरी जो दिषा का ध्यान दिये बिना सीधी नापी गई है।

re = अपेक्षित औसत दूरी

2. $$Rn = \frac{\sum r}{N}$$

यहाँ $\sum r$ = निकटतम पड़ोसी दूरियों का योग

N = कुल आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या

3. $$Re = \frac{1}{2\sqrt{\frac{N}{A}}}$$

यहाँ N = कुल आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या

N = कुल क्षेत्रफल

उपरोक्त सूत्र के आधार पर प्राप्त परिणामों से स्पष्ट है कि Rn मूल्य छ: जिलों में 1.242 से 1.703 के मध्य है। खण्डवा, खरगोन, बड़वानी, धार झाबुआ और रतलाम जिले के Rn मूल्य क्रमष: 1.703, 1.474, 1.456, 1.320, 1.242 एवं 1.687 है। खरगोन, बड़वानी, धार झाबुआ जिलों के आवर्ती विपणन केन्द्रों के Rn मूल्य यादृच्छिकता के समीप है किन्तु खण्डवा और रतलाम जिलों के आवर्ती विपणन केन्दों का वितरण प्रतिरूप समरूता (Uniform) के लगभग है, यदि सम्पूर्ण क्षेत्र की दृष्टि से आवर्ती विपणन केन्दों के वितरण प्रतिरूप का विश्लेषण किया जाय तो ठ्मूल्य (1.368) यादृच्छिकता से निकटता को दर्शाता है।

आवर्ती विपणन केन्द्र : सम्बन्ध – विपणन केन्द्रों की संख्या एवं वितरण को प्रभावित करने वाले तीन महत्वपूर्ण कारक है – क्षेत्रफल, जनसंख्या एवं आबाद ग्राम। उपरोक्त तीनों कारकों के आधार पर अध्ययन क्षेत्र के आवर्ती विपणन केन्द्रों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है जो निम्नानुसार है।

तालिका क्र. 1 से स्पष्ट है कि संख्या के दृष्टिकोण से सर्वाधिक आवर्ती विपणन केन्द्र धार तहसील में (9) तथा सबसे कम सेगाँवा, निवाली और

* एम.ए., एम.फिल., पीएच.डी.

बजाना तहसीलों में (1) केन्द्र है। दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश में आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या की दृष्टि से औसत 3.14 है $x+1\sigma$ वर्ग के अंतर्गत क्षेत्र की राजपुर तहसील एवं $x+2\sigma$ वर्ग में सेंधवा, सरदारपुर, कुक्षी तहसील तथा $x+3\sigma$ वर्ग में धार तहसील है। $x-1\sigma$ जोबट, रानापुर, झाबुआ, बाजना, सेगाँवा, निवाली, गंधवानी और थांदला तहसील सम्मिलित है। $x-2\sigma$ वर्ग में भाबरा, मेघनगर, नेपानगर, झिरन्या, पानसेमल तथा सैलाना तहसीलें आती है। $x-3\sigma$ वर्ग में मनावर, अलीराजपुर, हरसूद, भगवानपुरा, भीकनगाँव, धरमपुरी, पेटलावद, ठीकरी और बड़वानी तहसीलें सम्मिलित है। आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या उपभोक्ता की क्रय क्षमता पर आधारित है। दैनिक विपणन केन्द्रों की संख्या कम होने पर भी विपणन केन्द्रों का विकास भली प्रकार से होता है। (चित्र क्र. 1)

क्षेत्र आवर्ती बाजार अनुपात – दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश में प्रति 100 वर्ग किलोमीटर में आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या 0.366 है। सर्वाधिक सेंधवा तहसील में 0.865 एवं न्यूनतम झाबुआ तहसील में 0.095 है। इस संबंध में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि धार तहसील में सर्वाधिक आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या होने के उपरान्त भी उसका स्थान क्षेत्र आवर्ती बाजार अनुपात में दसवाँ है।

अध्ययन क्षेत्र में $x+1\sigma$ वर्ग में भाबरा, धरमपुरी, भगवानपुरा, पानसेमल, राजपुर, ठीकरी तथा सरदारपुर तहसीलें आती है। $x+2\sigma$ वर्ग में सेंधवा तहसील सम्मिलित है। $x-1\sigma$ वर्ग में अलीराजपुर, जोबट, बाजना, हरसूद, गंधवानी और थांदला तहसील सम्मिलित है। झाबुआ तहसील $x-2\sigma$ वर्ग में, रानापुर, निवाली, सेगाँवा, झिरन्या और भीकनगाँव तहसील $x-3\sigma$ वर्ग में आती है। $x-4\sigma$ वर्ग में मेघनगर, कुक्षी, पेटलावद, नेपानगर, बड़वानी, सैलाना, मनावर और धार तहसीलें सम्मिलित है। (चित्र क्र. 2)

जनसंख्या आवर्ती बाजार अनुपात – प्रति 10000 जनसंख्या पर आवर्ती केन्द्रों की संख्या की दृष्टि से औसत 0.167 है। जनसंख्या की दृष्टि से धार तहसील का स्थान क्षेत्र में प्रथम है किन्तु आवर्ती बाजार की संख्या की दृष्टि से सरदारपुर तहसील प्रथम एवं ठीकरी तहसील द्वितीय स्थान पर है। प्रकीर्णन विश्लेषण $x+1\sigma$ वर्ग में सैलाना, भाबरा, पेटलावद, धार, सेंधवा, धरमपुरी, कुक्षी, भीकनगाँव तहसीलें तथा $x+2\sigma$ वर्ग में हरसूद, जोबट तहसीलें, $x-2\sigma$ वर्ग में भगवानपुरा, राजपुर, और ठीकरी तहसीलें सम्मिलित है। सरदारपुर तहसील $x+3\sigma$ वर्ग में सम्मिलित है। $x-1\sigma$ वर्ग में हरसूद, जोबट तहसीलें, $x-2\sigma$ वर्ग में जोबट, गंधवानी, बाजना और थांदला तहसीलें आती है। अलीराजपुर, बड़वानी, निवाली, मनावर, पानसेमल, नेपानगर, रानापुर, सेगाँवा, झिरन्या और मेघनगर तहसीलें $x-3\sigma$ वर्ग में आती है।(चित्र क्र. 3)

आबाद ग्राम : आवर्ती बाजार अनुपात – दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश में प्रति 100 आबाद ग्राम पर आवर्ती विपणन केन्द्रों की औसत संख्या 1.894 है। आबाद ग्राम आवर्ती बाजार अनुपात के दृष्टिकोण से प्रथम स्थान पर राजपुर तहसील है, क्योंकि यहाँ आबाद ग्राम कम (98) तथा विपणन केन्द्र (5) है। सेंधवा तहसील का स्थान द्वितीय है। यहाँ (7) विपणन केन्द्र तथा 153 आबाद ग्राम है इसके विपरित धार तहसील में आवर्ती बाजारों की संख्या (9) एवं आबाद ग्राम 437 क्षेत्र में सर्वाधिक होने के कारण आबाद ग्राम आवर्ती के दृष्टिकोण से बारहवे स्थान पर है। (तालिका 1)

आवर्ती ग्राम आवर्ती बाजार अनुपात के दृष्टिकोण से $x+1\sigma$ वर्ग में धरमपुरी, भगवानपुरा, सरदारपुर तहसीलें एवं $x+2\sigma$ वर्ग में भाबरा, राजपुर, ठीकरी और सेंधवा तहसीलें सम्मिलित है। $x-1\sigma$ वर्ग में जोबट, हरसूद, गंधवानी, थांदला, कुक्षी और सैलाना तहसीलें तथा $x-2\sigma$ वर्ग में झाबुआ और बाजना तहसीलें सम्मिलित है। मेघनगर, पेटलावद, नेपानगर, बड़वानी, अलीराजपुर, निवाली, राजपुर और मनावर तहसीलें $x-3\sigma$ वर्ग में आती है। (चित्र क्र. 4)

निष्कर्ष – अध्ययन क्षेत्र के आवर्ती विपणन केन्द्रों का वितरण प्रतिरूप (Rn मूल्य 1.368) यादृच्छिकता से निकटता को दर्शाता है।

अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी मध्यवर्ती भाग में विपणन केन्द्रों का वितरण प्राय: समान है। यहाँ नर्मदा घाटी में समतल भूमि, मानसूनी जलवायु, उपजाउ वाली मिट्टी पायी जाती है। क्षेत्र के पूर्वी भाग में विपणन केन्द्रों का वितरण प्रतिरूप प्रकीर्ण है, क्योंकि यह क्षेत्र वनाच्छादित एवं पहाड़ी भाग है अत: यहाँ जनसंख्या एवं परिवहन के साधनों की न्यूनता है। क्षेत्र के पश्चिम भाग में वर्षा की अत्यधिक कमी, पहाड़ी तीव्र भूमि कटाव, क्षीण कृषि व्यवस्था का प्रभाव विपणन केन्दों के वितरण पर पड़ता है।

References :-

1. Ukwu, U.I. (1969), “Markets in Iboland in Hodder”, B.W. and Ukwu, U.I.(eds) Markets in West Africa, Ibadan, Ibadan University.
2. Christaller, W.(1966), “Central Places in Southern German”, Translated by C.W. Baskin, Prentice Hall Inc. Englewood Cliffs, New Jersey.
3. Berry, B.J.L. (1967), “Geography of Market Centres and Retail Distribution”. Englewood Cliffs, New Jersy.
4. Skinner, G.W. (1964), “Marketing and Social Structure in Rural China” Journal of Asian Studies 24. pp. 195-288.
5. Hanneson, B. (1974), “Periodic Markets & Central Places in the Chinquinquira Ubate Area University”, Microfilms, Ann, Arbor, Michigan.
6. Fagerlund, V.G. & Smith, R.H.T. (1970), “A preliminary map of market Periodicities in Ghana” Journal of Developing Areas, 4PP 334-48

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

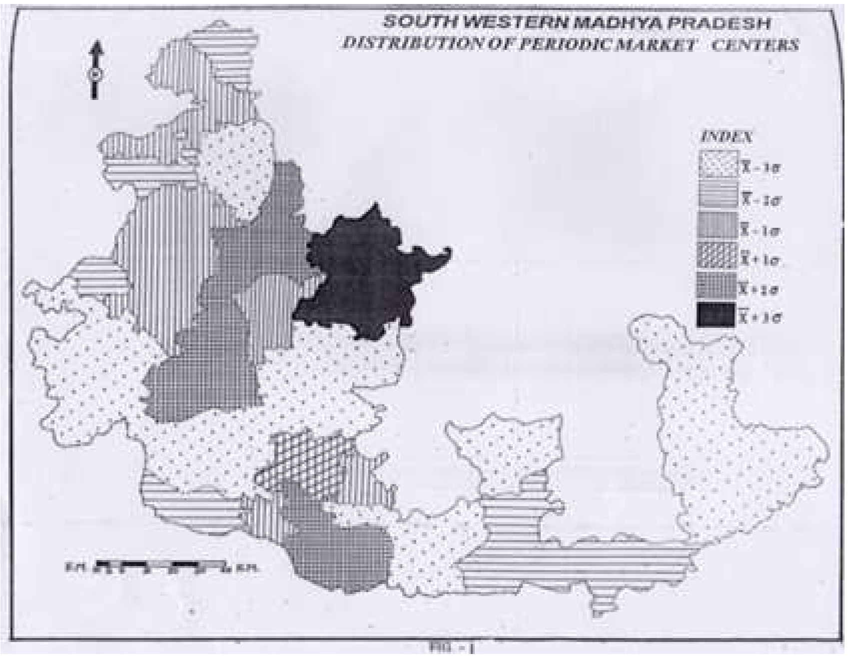

FIG. - 1

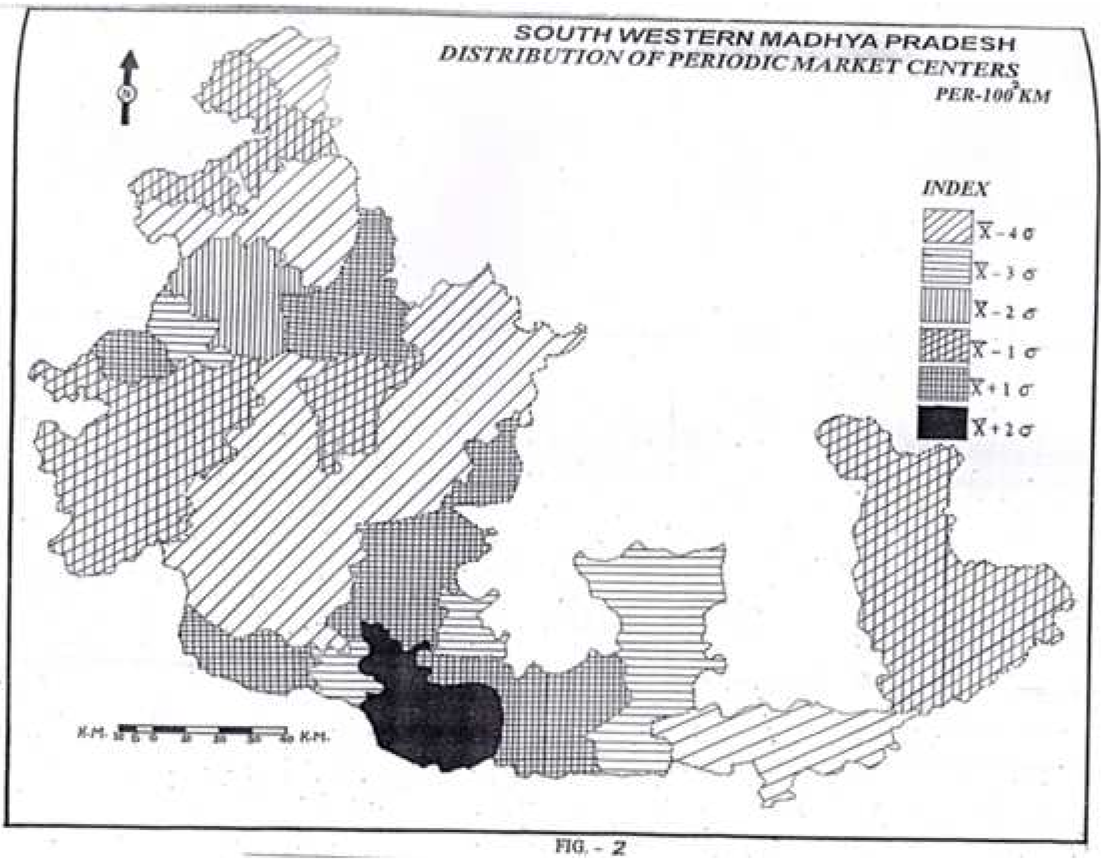

FIG. - 2

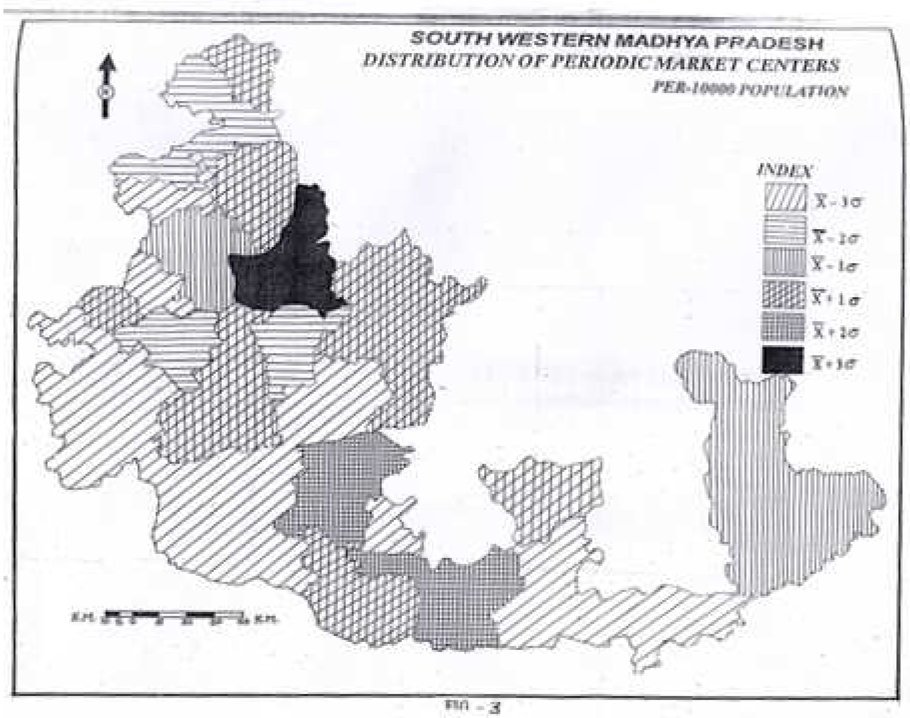
SOUTH WESTERN MADHYA PRADESH
DISTRIBUTION OF PERIODIC MARKET CENTERS
PER-10000 POPULATION
INDEX
$\bar{X}-3\sigma$
$\bar{X}-2\sigma$
$\bar{X}-1\sigma$
$\bar{X}+1\sigma$
$\bar{X}+2\sigma$
$\bar{X}+3\sigma$

FIG - 3

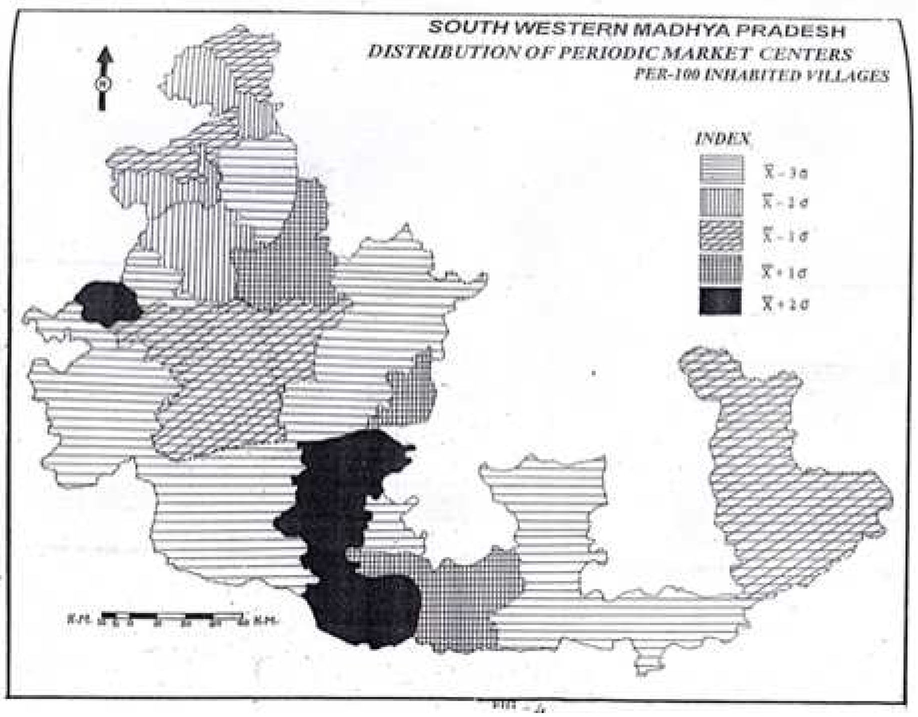
SOUTH WESTERN MADHYA PRADESH
DISTRIBUTION OF PERIODIC MARKET CENTERS
PER-100 INHABITED VILLAGES
INDEX
$\bar{X}-3\sigma$
$\bar{X}-2\sigma$
$\bar{X}-1\sigma$
$\bar{X}+1\sigma$
$\bar{X}+2\sigma$

FIG - 4

****

पश्चिम निमाड़ (मध्यपदेश) में पर्यटन के नवीन आयाम : देजला - देवाड़ा जलाशय के विशेष संदर्भ में

डॉ. पंकज कुमार कानूनगो *

प्रस्तावना - आजकल पर्यटन का व्यापार विशाल हो गया है, क्योंकि लोगों में पर्यटन के प्रति रूचि बढ़ी है। आज विश्व के अनेक क्षेत्र केवल पर्यटन के द्वारा ही अपनी विकास गाथा लिख पाए हैं। पर्यटन में सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय विकास की भी अपार संभावनाएँ है। आज देश में विकास की सारी प्रक्रियाएँ कृषि एवं उद्योगों के ही चारों ओर केन्द्रित है ऐसे में पर्यटन, विकास को नवीन आयाम प्रदान कर सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम उक्त पहलुओं के अलावा अन्य आर्थिक क्रियाओं को भी अपने विकास क्रम में जोड़ें। इसमें पर्यटन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, क्योंकि यह उद्योग अनेक संभावनाओं से जुड़ा है।

पश्चिम निमाड़ में प्राकृतिक पर्यटन की संभावनाओं को उजागर कर उन्हें पर्यटन के क्षेत्र के रूप में विकसित करने पर ना केवल इन प्राकृतिक संपदाओं को संरक्षण प्राप्त होगा अपितु पर्यटन के रूप में यहाँ रोजगार के अनेक अवसर भी उपलब्ध हो जाएँगे और उनसे प्राप्त आय निश्चित ही इस क्षेत्र के विकास में एक अहम भूमिका अदा करेगी। प्रस्तुत शोध में पश्चिम निमाड़ के खरगोन जिले के देजला - देवाड़ा जलाशय का संपूर्ण भ्रमण कर प्राकृतिक पर्यटन की दृष्टि से विवरण प्रस्तुत किया गया है, जहाँ की प्राकृतिक सुषमा पर्यटन की दृष्टि से इस क्षेत्र में विकास के नवीन आयाम प्रस्तुत कर सकती है।

शोध की उपयोगिता - पर्यटन किसी क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, क्योंकि इसका सीधा प्रभाव वहाँ के समाज, संस्कृति, शिक्षा, उद्योग और आर्थिक क्षेत्र पर पड़ता है। वास्तव में पर्यटन का संबंध केवल पर्यटक और विकास से ही नहीं है अपितु इसका प्रभाव प्राकृतिक वातावरण के साथ - साथ आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण पर भी पड़ता है। अत: यह आवष्यक है कि किसी भी क्षेत्र में पर्यटन का विकास नियोजित ढंग से किया जाये जिससे पर्यटन का पर्यावरण, समाज, संस्कृति तथा अर्थव्यवस्था से सामंजस्य बन सके और प्रतिकूल प्रभाव न्यूनतम हो।

आज जहाँ देश के अनेक स्थान पर्यटन के कारण विकसित हुए हैं, वहीं पश्चिम निमाड़ उचित पर्यटन नियोजन के अभाव में पिछड़ा हुआ है। यहाँ पर अनेक प्राकृतिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासतें है जो उचित संरक्षण के अभाव में अपना अस्तित्व खो रही है। यदि इन क्षेत्रों का पर्यटन के माध्यम से विकास किया जाये तो इनका पिछड़ापन दूर होगा तथा हमारी धरोहरों और पर्यावरण को भी संरक्षण प्राप्त होगा साथ ही आर्थिक विकास को पर्यटन से बढ़ावा मिलेगा। इन्हीं सब कारणों से प्रस्तुत शोध की उपयोगिता बढ़ जाती है।

विधितंत्र - पश्चिम निमाड़ के पर्यटन केन्द्रों का भौगोलिक अध्ययन करने हेतु प्राथमिक और द्वितीयक दोनों ही प्रकार के समंकों और तथ्यों का संकलन किया गया है। द्वितीयक समंक वर्ष 2001 की जनगणना और जिला सांख्यिकी पुस्तिका वर्ष 2006 पर आधारित है। प्राथमिक समंकों और तथ्यों का संकलन क्षेत्र सर्वेक्षण के द्वारा किया गया है। यथा स्थान, पत्र-पत्रिकाओं, इंटरनेट, शासकीय प्रलेखों, जिला गजेटियर, संदर्भित पुस्तकों आदि के माध्यम से प्राप्त सूचनाओं के द्वारा भी द्वितीयक समंकों हेतु जानकारी प्राप्त की गई है।

समंकों के संकलन उपरांत उनका सारणीयन और विष्लेषण किया गया है एवं इसी आधार पर पर्यटन क्षेत्र का अध्ययन किया गया। संबंधित विषय का गहन अध्ययन, विस्तृत सर्वेक्षण पर आधारित है। आवश्यकतानुसार छायाचित्रों का प्रयोग किया गया है।

देजला - देवाड़ा जलाशय :

स्थिति और विन्यास - देजला और देवाड़ा जलाशय वस्तुत: दो ग्रामों देजला और देवाड़ा के मध्य बाँध बनाकर कुंदा नदी के जल को रोककर बनाया गया एक वृहत तालाब है। यह विशाल जलाशय खरगोन जिले की भगवानपुरा तहसील से 4 किमी दक्षिण में देजला और देवाड़ा नामक स्थान पर निर्मित है। यह क्षेत्र जिला मुख्यालय खरगोन से लगभग 40 किमी की दूरी पर भगवानपुरा तहसील में $21^0 36'$ उत्तरी अक्षांश एवं $75^0 37'$ पूर्वी देशांतर पर समुद्र सतह से लगभग 1206 फीट की उँचाई पर स्थित है। इस विषालतम जलाशय पर जिला खरगोन से होकर भगवानपुरा होते हुए पहुँचा जा सकता है। आवागमन हेतु बस सुविधा उपलब्ध है।

इस विषाल परियोजना का निर्माण वर्ष 1982 से 1988 के दौरान पूर्ण हुआ है। इस दौरान इससे देजला, देवाड़ा, चाँदपुर और गोपालपुरा ग्राम प्रभावित हुए। चूँकि इस परियोजना के तहत देजला और देवाड़ा नामक ग्रामों के मध्य जलसंग्रहण हेतु बाँध का निर्माण किया गया था अत: इसी कारण इसे देजला देवाड़ा जलाशय के नाम से जाना जाता है।

वर्ष 2001 की जनसंख्या के अनुसार संपूर्ण तहसील की कुल जनसंख्या 148579 व्यक्ति एवं लिंगानुपात दर 983 है। कुल जनसंख्या में से अनुसूचित जनजाति की संख्या सर्वाधिक 81.83 प्रतिशत है। वर्ष 2001 की जनगणना अनुसार यहाँ पर साक्षरता का प्रतिशत मात्र 36.60 प्रतिशत ही है। जनसंख्या का घनत्व 191 प्रतिवर्ग किमी. है। इस क्षेत्र की 30.82 प्रतिशत जनसंख्या कृषिगत कार्यो में संलग्न है।

इस जलाशय की विशालता के कारण यहाँ पर प्राकृतिक पर्यटन की अपार संभावना है। नौकायन, जलविहार, और प्रवासी पक्षियों की सुंदरता के कारण यह क्षेत्र पर्यटन का प्रमुख केन्द्र बन सकता है।

प्राकृतिक और स्थानीय विशेषताएँ - देजला - देवाड़ा जलाशय की प्राकृतिक सुषमा यहाँ की विशाल जलराशि और उसको घेरे हुए खूबसूरत

* एम.ए., पीएच.डी.

पहाड़ियों के कारण है। इस विषाल राषि का सौंदर्य तब और भी बढ़ जाता है जब वर्षाकाल के समय यह जलाशय पूर्ण रूप से भर जाता है। जल के अपने उच्चतम स्तर पर पहुँच जाने पर बांध के अतिरिक्त गेट खोल दिए जाते हैं, जिनसे झरने के समान बहता हुआ पानी अत्यंत ही मनोहारी दृष्य प्रस्तुत करता है। वर्षाकाल के दौरान पहाड़ियों के हरे-भरे हो जाने से यहाँ का सौंदर्य और भी निखर जाता है। इस समय यह जलाशय एक झील की भाँति दृष्टिगोचर होता है। इस स्थान का पर्यटन की संभावना हेतु चयन करने का एक कारण यहाँ की यही झीलनुमा विशेषता भी है। भारत में अनके क्षेत्रों में पर्यटन के रूप में झील की भूमिका भी अहम रही है चाहे व भोपाल का विशाल झील क्षेत्र हो या काष्मीर की सुंदर डल झील का विहार।

प्रशासन के द्धारा इस विषाल जलराशि का प्रयोग अभी तक केवल पेयजल व्यवस्था, सिंचाई और मत्स्य पालन के लिए ही किया जा रहा है। यदि पर्यटन के रूप में भी यहाँ पर व्यापक इंतजाम किया जाए तो निश्चित तौर पर यह क्षेत्र पर्यटकों को आकर्षित करेगा और प्रवासी पक्षियों का भी संरक्षण करेगा।

इस क्षेत्र में पर्यटन संबंधी अन्य आकर्षण जैसे बगीचा, झुलाघर, नौकायान, फूड स्पॉट आदि की व्यवस्था करके पर्यटकों को लुभाया जा सकता है। यद्यपि यहाँ पर नौकाविहार की सुविधा उपलब्ध है किन्तु वह केवल मत्स्याखेट के लिए ही प्रयोग में लाई जाती है। ऐसे में जलविहार के संसाधनों का विकास भी अतिआवश्यक है। प्रवासी पक्षियों के आवास, भोजन और सुरक्षा की व्यवस्था करके भी यहाँ पर प्रवासी पक्षियों को आकर्षित किया जा सकता है। घाना अभ्यारण्य की भाँति ही यह क्षेत्र भी पक्षी विहार का प्रमुख केन्द्र बन सकता है। दुर्लभ प्रजाती के पक्षियों का आकर्षण भी निष्चित तौर पर यहाँ पर्यटकों को आकर्षित करेगा।

जलाशय के चारों ओर नग्न पहाड़ियों को वृक्षारोपण से पुन: हरा - भरा कर इस क्षेत्र को और भी आकर्षित किया जा सकता है। इस जगह सुविधाओं और भव्य आकर्षण की कमी के बावजूद प्रकृति प्रेमी यहाँ पर नौकाविहार हेतु आते हैं। तरंगित जलाशय की लहरों में अस्त होते सूर्य के साथ जलविहार करना एक अद्‌भुत आनंद प्रदान करता है। प्रकृति की यहीं सुंदरता पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए पर्याप्त है।

देजला देवाड़ा जलाशय परियोजना की अन्य विशेषताएँ - यह जलाशय मध्यप्रदेश के सिंचाई विभाग के द्धारा निर्मित कराया गया है। बाँध का निर्माण 1 मार्च 1982 से प्रारंभ होकर 31 दिसंबर 1988 को पूर्ण हुआ। यह बाँध कुंदा नदी पर निर्मित किया गया है। वर्तमान में इस बाँध से भगवानपुरा और खरगोन तहसील लाभान्वित है। देजला - देवाड़ा जलाशय का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है :-

1.	जल ग्रहण क्षेत्र	835.40 वर्ग किमी
2.	बाँध का शीर्ष स्थल	387.20 मीटर
3.	अधिकतम जलाशय सतह	885.20 मीटर
4.	पूर्ण जलाशय सतह	383.20 मीटर
5.	निस्तार जलाशय सतह	369.56 मीटर
6.	पूर्ण संग्रह क्षमता	56.85 मिलीयन घन मीटर
7.	प्रदाय संग्रह क्षमता	50.2 मिलीयन घन मीटर
8.	बाँध की कुल लम्बाई	
	: मुख्य बाँध	16.40 मीटर
	: उप बॉध	210 मीटर
9.	स्पील की लम्बाई	390 मीटर
10.	मुख्य नहर की लम्बाई	26.22 किमी
11.	शाखा नहर की लम्बाई	79.11 किमी
12.	कुल जलमग्न क्षेत्र	625.37 हेक्टेयर
13.	कुल सिंचित क्षेत्र	9000 हेक्टेयर
14.	बाँध की उँचाई	35.20 मीटर
15.	डूब से प्रभावित गाँव	देजला, देवाड़ा, चाँदपुरा, गोपालपुरा
16.	रूपांकित सिंचाई क्षमता	9000 हेक्टेयर
17.	वार्षिक सिंचाई क्षमता	12150 हेक्टेयर

स्रोत : जलसंसाधन विभाग खरगोन

इस प्रकार यह क्षेत्र पर्यटन की संभावनाओं को तो अपने में संजोए हुए है किन्तु इन संभावनाओं को मूर्त रूप बगैर अन्य सुविधाओं के विकास और प्रषासनिक सहयोग के नहीं दिया जा सकता है। अत: इस क्षेत्र के और अधिक विकास एवं पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए यहाँ पर पर्यटन विकास आवश्यक है। इस क्षेत्र को पर्यटन के रूप में विकसित करने से न केवल पर्यटन संबंधी व्यवसाय को बढ़ावा मिलेगा वरन प्रवासी एवं लुप्त होती हुई दुर्लभ पक्षियों की प्रजाती को भी संरक्षण प्राप्त होगा।

वनस्पति एवं वन्य जीवन - चूँकि इस क्षेत्र के आसपास जंगल आदि नहीं होने से यहाँ पर वन्य वनस्पतियाँ बहुत अल्प मात्रा में है। वनों के अभाव के कारण यहाँ पर वन्य जीव जंतु नही पाए जाते हैं। कुछ वर्षो पूर्व तक यहाँ पर जलाशय के चारों ओर घिरी पहाड़ियों पर सीमित मात्र में जंगल हुआ करते थे किन्तु अब उनके स्थान पर केवल पलाश, बबूल एवं अन्य कांटेदार वनस्पतियाँ ही दिखाई देती है। पूर्व में लोमड़ी, हिरण, खरगोष जैसे छोटे-मोटे वन्य प्राणी भी यहाँ पाए जाते थे किन्तु वनों के ह्रास एवं वन्य जीवों के षिकार के कारण अब इनका सर्वथा अभाव है। अब सिर्फ शीतकाल के दौरान प्रजनन हेतु प्रवासी पक्षी यहाँ पर आते हैं किन्तु वनस्पति और भोजन की न्यूनता के कारण इनकी संख्या में भी कमी आई है।

पर्यटक व्यवहार, संचरण एवं प्रतिरूप - पर्यटक केन्द्रों पर पर्यटकों का व्यवहार विभिन्न उद्देश्यों को निरूपित करता है। देजला - देवाड़ा जलाशय पर प्रतिवर्ष लगभग 115000 लोग पर्यटन हेतु आते हैं। उनका व्यवहारगत उद्देश्य विभिन्न प्रकार का होता है। यहाँ 59 प्रतिशत पर्यटक इस विषाल जलाशय का भ्रमण करने हेतु आते हैं 13 प्रतिशत पर्यटकों का उद्देश्य यहाँ विपणन करना होता है। विपणन के रूप में वे यहाँ से मछलियाँ खरीदते हैं। स्वास्थ्य लाभ के उद्देश्य से लोग यहॉ पर नहीं आते हैं।19 प्रतिशत लोग यहाँ पर रोमांच के लिए आते हैं, इसमें वे यहाँ रोमांच के लिए जलक्रीड़ा एवं जल विहार भी करते हैं। कुछ पर्यटक नौकाविहार के साथ मत्स्याखेट का भी आनंद लेते हैं। 9 प्रतिशत लोग अन्य उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पर्यटन करते हैं।

तालिका 1 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

यहाँ पर विभिन्न प्रकार के पर्यटकों का संचरण वर्ष भर होता रहता है उनका प्रतिरूप भी काफी विस्तृत होता है। यहाँ पर वर्षाकाल में सर्वाधिक पर्यटक भ्रमण हेतु आते हैं। शीत ऋतु में प्रवासी पक्षियों के आगमन के समय भी यहाँ अच्छी खासी संख्या में पर्यटकों का आगमन होता है। विशेष अवसरों में यहाँ नन्हेश्वर महादेव नाम से प्रसिद्ध एक स्थान है जो कि महर्षि मार्कण्डेय की तपस्थली भी है। यहाँ पर प्रतिवर्ष शिवरात्री के दौरान लगने वाले मेले के अवसर पर अनेक दर्शनार्थी आते हैं, जिनमें से अनेक प्रकृति प्रेमी भी इस जलाशय को देखने भी आते हैं।

वर्षाकाल के दौरान यहाँ की जलराशि में वृद्धि हो जाने से बाँध के गेट

से बहने वाला जल रमणीय दृष्य उपस्थित करता है, जिसको निहारने और नौकाविहार करने अनेक पर्यटक आते हैं। शीतकाल में आने वाले प्रवासी पक्षी और गुलाबी ठंड का मीठा एहसास भी पर्यटकों को आकर्षित करता है, जिससे इस दौरान भी पर्यटक अधिक आते हैं। विशेष अवसरों पर महिला पर्यटक अधिक आती है।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

भ्रमण हेतु अनुकूल समय – देजला – देवाड़ा जलाशय जब पूर्ण रूप से भरा हो, तब इसके रोमांच व सौंदर्य का पर्यटन वर्ष भर किया जा सकता है, किन्तु वर्षाकाल और शीत–बसंत ऋतु के दौरान यहाँ का पर्यटन परम आनंदमयी रहता है। वर्षा की रिमझिम फुहारों में यहाँ से जल का प्रवाह देखना अद्‌भुत आनंद देता है। वर्षा के तुरंत बाद जब यह जलाशय अपनी पूर्ण क्षमता को प्राप्त कर जाता है, तो यहाँ गोधूली बेला में नौकाविहार का आनंद अद्‌भुत होता है।

पर्यटन केन्द्र पर उपलब्ध आधारभूत सुविधाएँ – देजला–देवाड़ा जलाशय एक आदर्ष पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित हो सकता है। यहाँ पर आवष्यक मूलभूत सुविधाएँ तहसील मुख्यालय के निकट होने से सहज ही सुलभ हो जाती है। परिवहन की दृष्टि से यहाँ पर आने के लिए सड़क परिवहन की सुविधा उपलब्ध है। रेल और वायु परिवहन यहाँ से काफी दूर स्थित है। आवास सुविधा की दृष्टि से यहाँ से निकट ही धर्मशाला (सराय) और शासकीय गेस्ट हाउस की व्यवस्था उपलब्ध है। किन्तु टूरिस्ट लाज और होटल जिला मुख्यालय पर ही ठहरने हेतु उपलब्ध है।

तालिका 3 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

चूँकि यहाँ पर अधिकांष सुविधाएँ समीप ही उपलब्ध है अत: इस क्षेत्र में अन्य पर्यटकों के आकर्षण की वस्तुएँ जैसे बगीचा, बोटिंग, फूड स्पॉट, झूलाघर, आदि भी उपलब्ध करा दी जाए तो निश्चित ही यह क्षेत्र पर्यटन के रूप में शीघ्र विकास कर सकता है, जिसका प्रभाव इस क्षेत्र के आर्थिक विकास पर भी प्रत्यक्ष रूप से पड़ेगा। प्राकृतिक पर्यटन के रूप में विकसित होने से इस क्षेत्र में पर्यटकों की आवाजाही से विकास के अनेक द्वार खुल सकते हैं।

निष्कर्ष – प्रकृति ने आरंभ से ही मानव समुदाय को असीम उपहार सौंपे हैं किन्तु मानव सम्प्रदाय ने अपने स्वार्थ के वषीभूत होकर इन प्राकृतिक उपहारों का अत्यधिक असुरक्षित दोहन करना प्रारंभ कर दिया है, जिसके परिणाम स्वरूप ग्लोबल वार्मिंग एवं अन्य प्राकृतिक आपदाओं का हमें सामना करना पड़ रहा है। नष्ट होते प्राकृतिक संसाधनों से प्रकृति प्रेमी भी चिंचित है। शायद इसी वजह से इको टूरिज्म का जन्म हुआ है, क्योंकि इसके माध्यम से नष्ट होते प्राकृतिक पर्यावरण को काफी हद तक कम किया जा सकता है। झरने, तालाब, सरोवर, वनस्पति, वन्य जीव–जंतु आदि हमारी प्राकृतिक संपदाएँ है और पर्यावरण के घटक भी। बढ़ते प्रदूषण और अनियोजित दोहन से हमारी लुप्त होती इन प्राकृतिक संपदाओं का पुनर्उद्धार पर्यटन के माध्यम से किया जा सकता है।

इस क्षेत्र की विशाल जलराशि और प्राकृतिक सौंदर्य प्रवासी पक्षियों को भी अपनी ओर आकर्षित करता है। दुर्लभ प्रजाति के पक्षियों को देखना अपने आप में एक अभूतपूर्व आनंद प्रदान करता है। वर्षाकाल के दौरान जब ये जलाशय अपने पूर्ण भराव स्थल को प्राप्त कर लेता है तब यहाँ पर पर्यटन अपने चरम पर होता है। शासन द्वारा यहाँ की विशाल जलराशि का उपयोग सिंचाई और पेयजल के अलावा नौकायान और जल विहार हेतु किया जा सकता है, जिससे निष्चित ही इस क्षेत्र में पर्यटन को बढ़ावा मिलेगा। प्रवासी पक्षियों का आगमन, दुर्लभ प्रजातियों के संरक्षण और पर्यटन के विकास के लिए यह क्षेत्र असीम संभावनाएँ रखता है। अत: यह क्षेत्र पर्यटन के माध्यम से अपनी उन्नति और विकास के नवीन आयाम का सृजन करने में समर्थ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Chandra, R.H. : “Hill Tourism : Planning and Development” Kanishka Publishers, New Delhi, 1998
2. Hunter, C & : “Tourism and the Environment : A sustainable Relationship” Green, H. Routledge, London, 1995
3. Robinson, H.A. : “Geography of Tourism” Mackdonald and Evans, London, 1996
4. दासगुप्ता, पापिया : ‘पर्यटन एक अध्ययन’ म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
5. नेगी, डॉ. जगमोहन : ‘पर्यटन एवं यात्रा के सिद्धांत’ तक्षशिला प्रकाशन, नईदिल्ली, 2004
6. सिंह, सुमन्त : ‘मध्यप्रदेश में पर्यटन‘
   और सिंह, बी.पी. आदित्य पब्लिशर्स, बीना (म.प्र.) 2000
7. दैनिक भास्कर एवं दैनिक जागरण, समाचार पत्र
8. जिला गजेटियर, पश्चिम निमाड़ 1973
9. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला – खरगोन, 2006
10 भारत की जनगणना, म.प्र. राज्य–2001

तालिका 1 – पर्यटक व्यवहार

पर्यटक	पर्यटन का उद्देश्य ओर पर्यटकों की संख्या (प्रतिशत में)					महायोग
	भ्रमण	विपणन	स्वास्थ लाभ	रोमांच	अन्य	
स्त्री	23	05	—	07	04	39
पुरूष	36	08	—	12	05	61
योग	59	13	—	19	09	100

स्रोत : क्षेत्र सर्वेक्षण

तालिका 2 – पर्यटक संचरण प्रतिरूप

पर्यटक स्वरूप	पर्यटकों की संख्या (प्रतिशत में)											
	ग्रीष्मकाल			वर्षाकाल			शीतकाल			विशेष अवसर		
	स्त्री	पुरूष	योग	स्त्री	पुरूष	योग	स्त्री	पुरूष	योग	स्त्री	पुरूष	योग
अन्तर्क्षेत्रीय पर्यटक	25	23	48	27	30	57	24	28	52	33	28	61
अन्तप्रदेशीय पर्यटक	17	15	32	12	20	32	13	18	31	12	15	27
अन्तर्देशीय पर्यटक	07	13	20	05	06	11	07	10	17	03	09	12
विदेश पर्यटक	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
महायोग	49	51	100	44	56	100	44	56	100	48	52	100

स्रोत : क्षेत्र सर्वेक्षण

तालिका 3 –पर्यटन केन्द्र पर उपलब्ध आधारभूत सुविधाएँ

सुविधा का प्रकार	पर्यटन केन्द्र से निकटतम दूरी (किमी में)					
		0-5	6-10	11-15	16-20	21 से अधिक
परिवहन	सड़क परिवहन	✼				
	रेल परिवहन					✼
	वायु परिवहन					✼
आवास	धर्मशाला (सराय)	✼				
	टूरिस्ट लाज					✼
	हॉटल					✼
	शासकीय गेस्ट हाउस		✼			
चिकित्सा सुविधाएँ	निजी चिकित्सालय	✼				
	शासकीय चिकित्सालय	✼				
संचार सुविधाएँ	डाकघर	✼				
	सार्वजनिक दूरभाष केन्द्र	✼				
	इंटरनेट	✼				
विपणन सुविधाएँ	बाजार	✼				
	बैंक	✼				
	ए.टी.एम.		✼			
अन्य सुविधाएँ	पेयजल	✼				
	भोजनालय	✼				
	सुलभ काम्प्लेक्स		✼			
	टूरिस्ट गाइड	-	-	-	-	-
	अन्य	✼				

नोट : ✼ चिन्ह सुविधा की निकटतम उपलब्धता को दर्शाता है।

स्रोत : क्षेत्र सर्वेक्षण

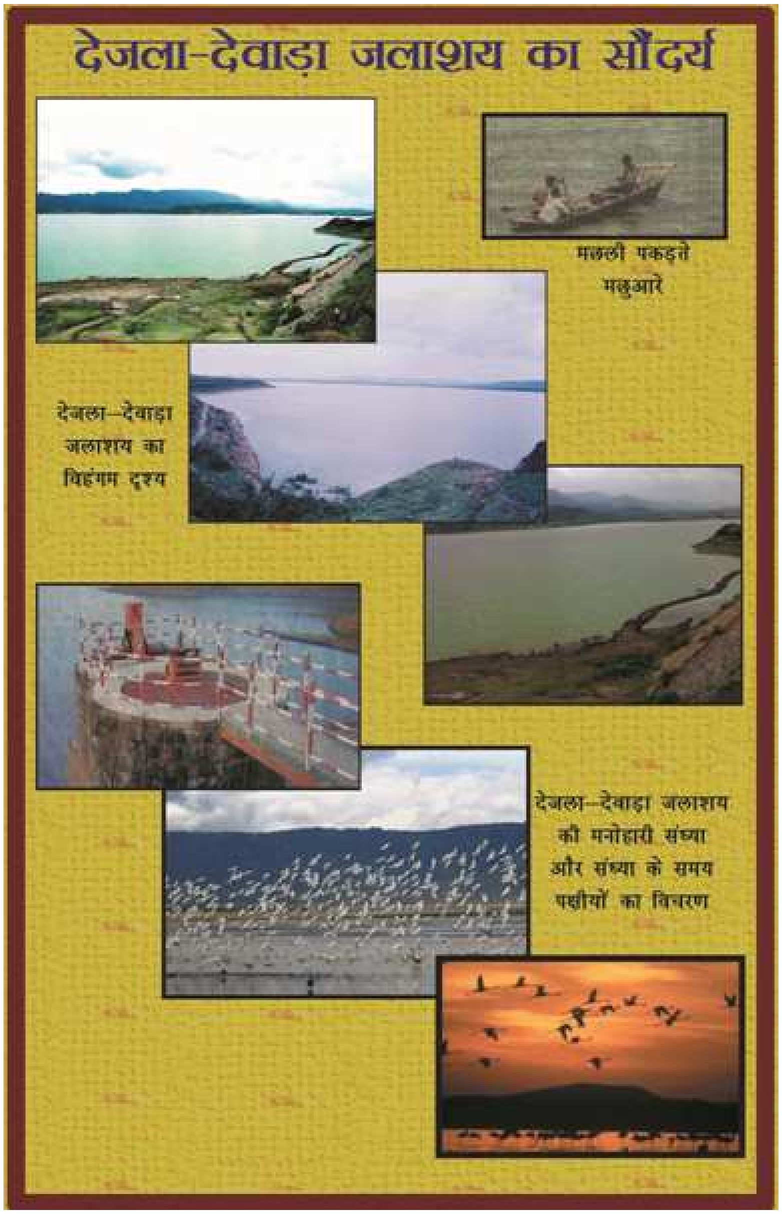
देजला-देवाड़ा जलाशय का सौंदर्य
मछली पकड़ते मछुआरे
देजला–देवाड़ा जलाशय का विहंगम दृश्य
देजला–देवाड़ा जलाशय की मनोहारी संध्या और संध्या के समय पक्षीयों का विचरण

****

दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के आदिवासी विपणन केन्द्रों का ग्रामीण विकास एवं नियोजन

डॉ. सुनिता गुप्ता *

प्रस्तावना – विपणन केन्द्र किसी भी ग्रामीण क्षेत्र की वह नियमित घटना होती है, जो बहुपक्षीय होती है और जिसके प्रत्येक पक्ष के कई आयाम होते हैं। इन्हें आर्थिक क्रियाओं का केन्द्र या वस्तुओं के आदान प्रदान का केन्द्र मानना उसके महत्व को कम आंकना है।

यदि वह ग्रामीण क्षेत्र आदिवासी क्षेत्र हो तो विपणन केन्द्र का महत्व और भी बढ़ जाता है। आदिवासी क्षेत्र में आदिवासियों के जीवन का प्रत्येक पहलू विपणन केन्द्रों से संबंधित होता है। इस आदिवासी परिवेश में विपणन केन्द्र इन आदिवासियों को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन पर स्पष्ट रूप से प्रभाव डालते हैं। यहाँ पर आदिवासियों की जीवन शैली पर इन विपणन केन्द्रों का महत्वपूर्ण प्रभाव देखा गया है। ये विपणन केन्द्र का आदिवासी क्षेत्रों में नियमित समयान्तराल पर आयोजित होते हैं। इस दृष्टि से इन केन्द्रों का महत्व अधिक बढ़ जाता है।

विपणन केन्द्रों के अपने अध्ययन में विभिन्न विद्वानों ने इन्हें विसरण केन्द्र भी माना है। विभिन्न सूचनाओं, विचारों, चिन्तन, रीतियों, पद्धतियों और पदार्थो आदि का वितरण इन केन्द्रों द्धारा सुगमता से इनके पृष्ठ प्रदेश में हो जाता है।

कृषि की क्षीण अवस्था के कारण जनसंख्या का बहुसंख्यक भाग बेरोजगार ही रहता है। यह जनशक्ति जो अकुशल भी है, के उपयोग के लिए विपणन केन्द्र और उसके प्रभाव क्षेत्र का उपयोग किया जा सकता है। अत: प्रत्येक विपणन केन्द्र की जनशक्ति के रोजगार हेतु वहाँ उपलब्ध संसाधनों का उपयोग कर रोजगार के अवसर बढ़ाये जा सकते हैं, जिससे क्षेत्र का सम्पूर्ण एवं संतुलित विकास किया जा सके।

आदिवासी क्षेत्र में विपणन केन्द्र विपणन भूमिका का आचरण करने के अतिरिक्त यह सामाजिक कार्यकलापों की नाभि भी है। विपणन केन्द्र ग्रामों के समीप सम्बन्धों के मिलन स्थान भी है। लोग इन केन्द्रों में वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना के उद्देश्य के लिए भी आते हैं, अध्ययन क्षेत्र में 'भगोरिया' त्यौहार के दौरान इन केन्द्रों में आदिवासियों की सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्रियाकलाप अपने चरम बिन्दु पर होते हैं।

अध्ययन क्षेत्र – मध्यप्रदेश का दक्षिण पश्चिम भाग जो भारत की पश्चिमी आदिवासी पट्टी के संसाधन विरल केन्द्र का प्रधिनिधित्व करता है, अध्ययन का केन्द्र है। इसकी 88 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासी है। इसका अक्षांशीय विस्तार 21°81' उत्तर से 23°33' उत्तर तथा देशान्तरीय विस्तार 73°30' पूर्व से 77°13' पूर्व तक है। अध्ययन क्षेत्र का क्षेत्रफल 23988.91 वर्ग कि.मी. है। प्रस्तुत अध्ययन में दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के खण्डवा, खरगोन, बड़वानी, धार, झाबुआ और रतलाम जिलों को सम्मिलित किया गया है।

विधि तंत्र – दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के आवर्ती वितरण केन्द्रों का गहन अध्ययन विस्तृत सर्वेक्षण कार्य विश्लेषण एवं व्याख्या पर आधारित है।

आदिवासी विपणन केन्द्र, ग्रामीण विकास तथा नियोजन – अध्ययन क्षेत्र ग्रामीण बहुल जनसंख्या क्षेत्र है। ग्रामीण जनसंख्या की दैनिक आवष्यकता पूर्ति हेतु आवर्ती विपणन केन्द्रों की महती भूमिका है। ग्रामीण क्षेत्रों में ये विपणन केन्द्र तृतीयक क्रियाकलापों के केन्द्र कहलाते हैं। विकास का अर्थ होता है कि सर्वप्रथम क्षेत्र के निवासियों की प्राथमिक आवष्यकताएँ पूर्ण की जावे। चूँकि क्षेत्र के निवासी अधिकांशत: निर्धन वर्ग के हैं अत: विकास का प्रारम्भ निम्न स्तर से करना ही उचित है।

सामाजिक आर्थिक विकास में विपणन केन्द्रो की भूमिका :

1. कृषि संबंधी अनुसंधानों के प्रसारण केन्द्र – आवर्ती विपणन केन्दों पर मात्र क्रय विक्रय ही नहीं होता है अपितु नवीन अनुसंधानों, खोजों का प्रसरण भी होता है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। अत: कृषि संबंधी उर्वरकों, बीजों, यंत्रों आदि के बारे में जानकारी इन केन्द्रों पर मिलती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इन वस्तुओं का प्रचार इन केन्द्रों के माध्यम से ही होता है। विशेषकर जिन क्षेत्रों में दैनिक विपणन केन्द्रों का अधिक विकास नहीं होता वहाँ आवर्ती विपणन केन्द्र ही इन सुविधाओं को उपलब्ध करवाते हैं।

2. ग्रामीण सुविधाओं का केन्द्रीकरण – विपणन केन्द्रों पर विनिमय कार्य के अतिरिक्त कई प्रकार की सुविधायें एवं सेवायें भी केन्द्रित होती है। अत: उनका महत्व आर्थिक ही नहीं होता वरन सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक भी हो जाता है। सुविधाएँ एवं सेवाएँ उनकी पदानुक्रमीय व्यवस्था के अनुरूप होती है अर्थात उच्च कोटि के केन्द्रों पर विभिन्न प्रकार की एवं उच्च स्तर की सुविधाएँ प्राप्त होती है। आवर्ती विपणन केन्द्रों पर उपभोक्ता विनिमय के साथ – साथ कुछ महत्वपूर्ण सुविधाएँ जैसे डाकघर, चिकित्सालय ,समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, सहकारी एवं व्यावसायिक बैंक, पुलिस थाना, शिक्षा संबंधी सेवाएँ इत्यादि भी प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त सभी विपणन केन्द्र नाई, मोची, दर्जी, कृषि उपकरणों की मरम्मत करने वाले इत्यादि सेवाएँ भी प्रदान करते हैं। इस प्रकार इन सेवाओं के माध्यम से क्षेत्र के सामाजिक आर्थिक संबंध सुदृढ़ किये जाते हैं।

3. वस्तु प्रवाह एवं मूल्य संरचना के नियन्त्रक – वस्तु प्रवाह उत्पादक क्षेत्रों से खपत क्षेत्रों की ओर होता है। इस प्रकार कृषि उत्पाद ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों की ओर तथा तैयार माल ग्रामों की ओर प्रवाहित होता है। आवर्ती विपणन केन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों से उत्पादनों को एकत्रित करते हैं तथ अपने समीपवर्ती क्षेत्रों में पुन: वितरित भी कर देते हैं। ग्रामीण व्यापारी, कृषकों से उनके उत्पाद को क्रय करके बड़े नगरों में अधिक लाभ प्राप्ति की आषा में

* एम.ए., एम.फिल., पीएच.डी.

विक्रय भी कर देते हैं।

इन केन्द्रों पर कृषक स्वयं उपभोक्ता वस्तुएँ विक्रय करता है जिससे मध्यस्थ के अभाव में वस्तुएँ सस्ती पड़ती है और उत्पादक को भी अधिक लाभ प्राप्त होता है। इसके विपरित बड़े नगरों में वस्तु का मूल्य क्रमश: बढ़ता जाता है क्योंकि परिवहन लागत, मध्यस्थ एवं व्यापारी का लाभ भी सम्मिलित रहता है। अत: प्रत्यक्ष रूप से उत्पादक एवं उपभोक्ता के मिलने पर मध्यस्थ कड़ियों के समाप्त होने से उत्पादक का लाभांश बढ़ जाता है एवं ग्रामीण लोगों का स्तर भी सुधर सकता है।

4. विपणन पद्धतियों के जनक – उत्पादक कृषक सदैव अपने उत्पादन का अधिकतम मूल्य प्राप्त करना चाहता है और उपभोक्ता एवं व्यापारी वस्तुओं के न्यूनतम मूल्य पर प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रकार विपणन पद्धतियों का जन्म होता है। कम उत्पादन एवं तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति हेतु विपणन केन्द्रों पर कृषक अपने उत्पादन का विक्रय करते हैं, जबकि वे अपने उत्पादन का कम ही मूल्य प्राप्त करते हैं। उत्पादन की कम मात्रा तथा यातायात के साधनों के अभाव में भ्रमणषील व्यापारियों को सस्ती दर पर अपने उत्पादन बेच देते हैं। इस प्रकार व्यापारी उत्पादन का अधिक मूल्य नगरों में बेचकर प्राप्त करते हैं।

5. ग्रामीण विकास के संदर्भ में आवर्ती विपणन केन्द्रों का स्थानिक कालिक समाकलन – ग्रामीण विकास के संबंध में विपणन क्रियाओं पर आधारित नीति निर्धारण हेतु यह आवश्यक है कि आवर्ती विपणन केन्द्र सप्ताह के प्रत्येक दिवस को भिन्न – भिन्न स्थानों पर आयोजित किये जाते है। एवं एक दूसरे के समीप स्थित आवर्ती विपणन केन्द्रों के मध्य बाजार दिवसों की कालिक दूरी पर्याप्त हो, इससे आवर्ती विपणन केन्द्रों के मध्य प्रतिस्पर्धा न्यूनतम होगी।

6. नवीन आवर्ती विपणन केन्द्रों की स्थापना – अध्ययन क्षेत्र के विपणन केन्द्रों के पदानुक्रम से ज्ञात होता है कि प्रथम कोटि के अंतर्गत क्षेत्र का एक भी विपणन केन्द्र सम्मिलित नहीं है। अत: उच्च स्तर का आवर्ती विपणन केन्द्र आवष्यक है ताकि वे एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर सके तथा विकास सम्भव हो सके। इस प्रकार आवर्ती विपणन केन्द्रों के पदानुक्रम का एक व्यवस्थित पिरामिड बनेगा जिससे विकास निचले स्तर से प्रारम्भ होकर उच्च स्तर की ओर होगा तथा विषमताएँ कम होगी। इस प्रकार का पिरामिड आवर्ती विपणन केन्द्रों को उच्च स्तरीय राष्ट्रीय आर्थिक तन्त्र से जोड़ेगा, जिससे समन्वित ग्रामीण विकास को बल प्राप्त होगा।

विपणन संबंधी नियमों की आवष्यकता – विश्व के अधिकांश भागों में स्थानीय अधिकारियों द्वारा ही विपणन स्थलों पर नियम एवं आदेशों का पालन करवाया जाता है। यह नियम एवं आदेश दुकानों के टेक्स एवं लायसेंस संबंधी होते हैं। इन अधिकारियों द्वारा कीमतों पर नियंत्रण, उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार, उचित भार एवं मापन संबंधी आवश्कताओं का ध्यान भी रखा जाता है ताकि स्तरहीन वस्तुओं के अधिक मूल्य न लिये जा सके। गाँव के सरपंच, दबाव बनाकर वस्तुओं को कम मूल्य पर क्रय करते देखे जा सकते हैं।

अध्ययन क्षेत्र में बाजार फीस के रूप में आय ग्राम पंचायत, नगर पालिका, नगर पंचायत वसूल करती हैं, किन्तु आवर्ती विपणन केन्द्रों पर कुछ प्राथमिक सुविधाएँ प्रदान करना भी आवष्यक है जैसे – वर्षा, गर्मी एवं शीत से सुरक्षा हेतु पक्के एवं छायादार चबुतरे बनाना आवश्यक है। साथ ही विपणन स्थल के समीप ही पेयजल एवं शौचालय की सुविधाएँ भी आवश्यक है। ग्रामीण विक्रेताओं को उनके उत्पाद का मूल्य प्राप्त हो तथा इन्हें सहकारी साख संस्था द्वारा पूँजी भी प्रदान की जाये, इस दिषा में प्रयास आवष्यक है तभी ग्रामीण क्षेत्र का सही विकास सम्भव हो पायेगा।

बाजार केन्द्रों में सहायक सेवाओं की उपलब्धता – आवर्ती बाजार में ग्रामीण विकास की दृष्टि से सहायक सेवाओं की सुलभता जैसे डाकघर, यातायात एवं संचार सुविधाएँ सहकारी संस्थाएँ इत्यादि। अधिकांश केन्द्रों में ये सभी सुविधायें उपलब्ध है। साथ ही समन्वित ग्रामीण विकास हेतु लघु उद्योगों की स्थापना की जाये, जिसमें कृषि आधारित उद्योग दाल मिल, खांडसारी मिल, तेल पेरना इत्यादि जिससे ग्रामीण बेरोजगारी को सीमित किया जा सकता है।

विपणन संबंधी सूचनाओं का विस्तार – आवर्ती विपणन केन्द्रों पर सूचना जाल का प्रचार प्रसार किया जा सके जिससे कृषकों को मूल्य, वस्तुओं की उपलब्धता तथा मण्डी जैसी व्यवस्था के प्रति जागरूक किया जाय ताकि क्षेत्र का सही विकास सम्भव हो सके। कृषकों को प्रषिक्षण एवं षिक्षा दी जानी चाहिए जिससे विपणन संबंधी सूचनाएँ प्राप्त करना सरल होगा।

अन्य सुविधाएँ – आवर्ती विपणन केन्द्रों पर स्थानीय लोगों के अतिरिक्त चारों ओर की जनसंख्या भी विपणन क्रिया हेतु सम्मिलित होती है, अत: इन केन्द्रों के माध्यम से परिवार नियोजन, स्वास्थ्य शिविर, चल क्लिनिक, चल सिनेमा, कृषि विस्तार संबंधी कार्यकर्ता, स्वास्थ्य एवं सफाई के संबंध में वृत्तचित्र दिखाना, सरकार द्वारा ऋण वित सेवाओं का सरल भाषा में प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए। इस प्रक्रिया द्वारा यह लाभ होगा कि गतिशील समूह द्वारा उस विशिष्ट दिवस को वांछित वस्तुएँ एवं सेवायें उपलबध की जा सकेगी। इस प्रकार की क्रियाओं से साप्ताहिक विपणन केन्द्र दैनिक केन्द्र में परिवर्तित होगा।

निष्कर्ष –आवर्ती विपणन केन्द्र ही ग्रामीण अंचलों में सामाजिक आर्थिक विकास के साधन है, इन्हीं के माध्यम से वस्तुओं एवं सेवाओं की प्राप्त होती है, जिससे ग्रमीण जनता को लाभ मिलता है।

References :-

1. Bromlay, Ray(1987) : “Periodic Markets and Rural Development Policy : Contribution to Indian Geography, Vol IX”
   Rural Geography, Editor H.N. Mishra, PP 203
2. Shrivastava, V.K. : Commercial Activities and Rural Development in South Asia
   A Geographical Study, New Delhi
3. Trivedi, Venu (1977) : विपणन भूगोल, युनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर
4. Udhavram (1982) : Periodic Markets and Rural Development in Lower Ganga Ghagra Doad”. Ph.D. Thesis, Unpublished.
5. Wanmali, Sudhir (1987) : “Periodic Markets, periodic Marketing and Rural Development in India. contribution to Indian Geography Xth Rural Geography.”
   Editor H.N. Mishra, Heritage Publishers, New Delhi.

****

उच्च शिक्षा पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ. टीना बाफना *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण वर्तमान विश्व को प्रभावित करने वाली ऐसी व्यवस्था है जिसके प्रभाव से कोई भी देश अछूता नहीं है। वैश्वीकरण ने राष्ट्रों और व्यक्तियों को समग्र रूप से उनके सभी क्षेत्रों में जाकर प्रभावित किया है। यद्यपि वैश्वीकरण का कोई मूर्तरूप तो नहीं है, पर इसे व्यवस्थाओं पर पड़ने वाले प्रभावों के आधार पर समझा और अनुभव किया जा सकता है। वैश्वीकरण, बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ, तकनीकी और सूचना क्रांति, इंटरनेट आदि ने विश्व के वर्तमान परिदृष्य को पूरी तरह बदल दिया है। इन सबने समय को सुकोड दिया है, भूगोल को छोटा किया है, परिणामत: देशों की राष्ट्रीय सीमाएँ अर्थहीन होती जा रही हैं। नाईट एण्ड डि विट (Knight and De Wit) का विचार बहुत सीमा तक सही है कि वैश्वीकरण एक ऐसा प्रवाह है जो तकनीक, ज्ञान, अर्थतंत्र, मूल्यों और विचारों को राष्ट्रों की सीमाओं को ध्वस्त करते हुए चारों ओर फैला रहा है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप विभिन्न देशों की शिक्षा में जो बदलाव आया है, उस पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। वस्तुत: वैश्वीकरण ने बाजारवाद को प्रोत्साहित किया है, इसके कारण बाजारवाद सभी क्षेत्रों में और सभी मान्यताओं पर हावी हो रहा है। शिक्षा भी इससे अछूती नहीं है। भारतीय विचार से शिक्षा एक पवित्र कार्य और संस्कार है जिसे बाजार में बेचा या खरीदा नहीं जाता, पर आज शिक्षा व्यापार हो गई है, उसे खरीदा और बेचा जा रहा है। बाजार के साथ शिक्षा के जुड़ने के परिणामस्वरूप शिक्षा, शिक्षा पद्धति और शिक्षा व्यवस्था में मुख्यत: चार प्रकार के बदलाव देखने में आ रहे हैं।

एक – वर्तमान में शिक्षा में पूरा जोर तकनीकी और प्रौद्योगिकी शिक्षा पर दिया जा रहा है। वर्तमान में पूरा विकास ही तकनीक पर आधारित है। परिणामत: देशों में व्यापक स्तर पर तकनीकी और प्रौद्योगिकी के संस्थान खोले जा रहे हैं। ये संस्थान बाजार की जरूरतों को पूरा करते हैं। तकनीकी विकास मानव मूल्यों की चिंता नहीं करता, इस कारण जो समस्याएँ सम्मुख आ रही हैं, उन पर विचार करने की आवष्यकता है।

दूसरा– दसवीं कक्षा के बाद भाषा, साहित्य, समाज विज्ञान, इतिहास आदि का अध्ययन उपेक्षित हुआ है, क्योंकि बाजार में इनको कोई स्थान नहीं है। साहित्य, संगीत, कला की उपेक्षा के कारण मनुष्य का ज्ञान पक्ष तो विकसित हो रहा है, पर उसका भावपक्ष उतना विकसित नहीं हो पा रहा है। इसी प्रकार, आज का तकनीकी शिक्षा से युक्त व्यक्ति अपनी परम्परा, संस्कृति, सभ्यता और इतिहास से कट रहा है। उसमें सामाजिक बोध और देश की मिट्टी से जुड़ने की लालसा कम हो रही है। अपना कैरियर और अपनी मौजमस्ती यही उसके लिए प्रथम है।

तीसरा प्रभाव यह है कि मातृभाषा की उपेक्षा और अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ रहा है। विश्व बाजार में देश भाषाओं का कोई महत्व नहीं है। अधिकांशत: बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अमेरिका और ब्रिटेन की है। अंग्रेजी को महत्व ही नहीं देती, अपितु अंग्रेजी के विस्तार में सहायक भी हैं। देशज भाषाओं की उपयोगिता क्षेत्र विशेष तक सीमित है, अत: उस भाषा का उपयोग उस क्षेत्र की सीमा में होने वाले व्यापार के लिए किया जाता है।

चौथा प्रभाव यह हुआ है कि आज सभी देशों में परम्पराएँ और मूल्य शिथिल पड़ रहे हैं। वैश्वीकरण के युग में तकनीकी और संचार क्रांति ने पूरे परिदृष्य को और व्यक्ति के जीवन को बदल दिया है। आज वर्जनाओं को स्वीकार करने का नहीं, अपितु उन्हें तोड़ने का वातावरण बन रहा है। रेव पार्टियाँ और पब कल्चर शिक्षित और विकसित समाज की पहिचान बन रहे हैं। महाविद्यालयों में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का स्वरूप परिवर्तित हो रहा है। अपसंस्कृति को ही संस्कृति माना जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप छात्रों को मनोविज्ञान बदल रहा है। युवाओं में सैक्स के प्रति खुला आकर्षण, हिंसक प्रवृत्ति में वृद्धि, नकारात्मक सोच, स्वयं के भौतिक विकास की लालसा बढ़ रही है और सामाजिक सोच कम हो रहा है।

वैश्वीकरण के कारण विद्यालयों में जो परिदृष्य विकसित हो रहा है वह छात्रों में प्रतियोगिता, प्रतिस्पर्धा और स्वयं कैरियर को बनाने की चिंता को बढ़ावा देने वाला है। यह स्वस्थ्य समाज रचना में सहायक नहीं है, इसके विपरीत यह सामाजिक विषमता, शोषण, उत्पीड़न और समाज में गैरबराबरी और असहयोग की वृत्ति को विकसित करने वाला है। यह जीने के अर्थ को ही बदल रहा है।

जे.कृष्णमूर्ति कहते हैं, 'आप देख सकते हैं कि जिसे आप जीना कहते हैं, वह नौकरी पा लेने, बच्चे पैदा करने, परिवार का पालन–पोषण करने, समाचार–पत्रों एवं पत्रिकाओं को पढ़ने, बढ़–चढ़ कर बातें कर सकने और कुषलतापूर्वक वाद–विवाद कर सकने तक ही सीमित होता है।'

विश्व में जिस मुकाम पर हम खड़े हैं, उसे देखते हुए स्पष्ट है कि वैश्वीकरण के प्रभाव से पूरी तरह बच तो नहीं सकते, पर वैश्वीकरण के प्रभाव को कम करने के लिए शिक्षा नीति में परिवर्तन करने के संबंध में विचार करने की आवश्यकता है। ऐसा परिवर्तन जो छात्रों में मूल्य को स्थापित करने में, समाजबोध को विकसित करने में और देश के प्रति हमारे लगाव को मजबूत करने में सहायक हो।

उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ – उच्च शिक्षा के समक्ष एक महत्वपूर्ण चुनौती है सही पाठ्यक्रम का चुनाव। क्योंकि पाठ्यक्रम उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक है। वर्तमान पाठ्यक्रम सैद्धांतिक ज्यादा है और इनका प्रायोगिक व व्यावहारिक पक्ष कमजोर है। पाठ्यक्रम परिवर्तन

* शोधार्थी, राजीव गाँधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

पर गहन चिंतन मनन आवश्यक है।

शोध कार्यो की गुणवत्ता पर भी गंभीर प्रश्न चिन्ह लग रहा है। उनकी उत्कृष्टता समाप्त हो रही है। हजारों की संख्या में प्रस्तुत हो रहे शोध प्रबंध गुणवत्ता विहीन हो रहे हैं। हमें यह देखना होगा कि शोध कार्यों की उपयोगिता, उत्कृष्टता एवं व्यावहारिक उपयोगिता बनी रही।

शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार भी उच्च शिक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती है। शिक्षा को भ्रष्टाचार के चंगुल से निकालकर ही उच्च शिक्षा की गुणवत्ता पाई जा सकती है।

यह एक कुट सत्य है कि विद्यार्थियों का स्तर भी निरन्तर गिरता जा रहा है। भीड़ तो बढ़ रही है लेकिन गुणात्मकता कम हो रही है।

उच्च शिक्षा को अधिक प्रतिस्पर्धी, गुणवत्तामूलक एवं अद्यतन बनाए रखने के लिए नवाचारी विधियों का प्रयोग बढ़ाने की आवश्यकता है। आज भी हमारे देश में जी.डी.पी. का बहुत कम भाग शिक्षा में व्यय होता है, उसको बढ़ाने की आवश्यकता है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो देश के लगभग सभी उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा वित्तीय संसाधनों में लगातार कमी महसूस की जा रही है।

उच्च शिक्षा गुणवत्तापरक बने, प्रगतिशील समाज के निर्माण में सहायक हो, इस हेतु निरंतर चिंतन मनन की आवश्यकता है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य छात्र के व्यतिंव का संपूर्ण विकास करने के साथ-साथ उसका चारित्रिक निर्माण उसके व्यक्तित्व में धर्म निरपेक्षता, नैतिकता, समर्पण, सेवाभावना, राष्ट्रभक्ति, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का विकास हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

मानवाधिकारो की वर्तमान स्थिति और महिलाए-प्रमुख वैधानिक प्रावधान

डॉ. भारती लुनावत *

शोध सारांश – मानवाधिकार वे न्यूनतम अधिकार है जो प्रत्यैक व्यक्ति को चाहे वह स्त्री हो या पुरूष प्राप्त होने चाहिए क्योकि वह मानव परिवार का एक सदस्य है मानवाधिकार मुल अधिकारो कि भाति ही ऐसे अधिकार है जिनके बिना मनुष्य जीवित एंव सुरक्षित नही रह सकता है तथा यह अधिकार मनुष्य की गरीमा बनायो रखने के लिये अतिआवश्यक है। यह चिंता का विषय है कि महिला अधिकारिता वास्तिविक रूप मे आज भी वह स्थान नही पा रही है। जिसकी वह अधिकारिणी रही हैं। पिछले दो दशको मे हुए आर्थिक विकास के बावजुद महिलाओं के तुलनात्मक रूप से वंतित होने की समस्या निदान नही हो पाया है। उक्त आलोक मे यह उलेखनीय है कि वर्तमान मे संविधान मे कई ऐसे संरक्षण कानून जोडे जा रहे है एवं उच्चतम न्यायालय के कई आदेश कामकाजी एवं घरेलु महिलाओं के जीवन एवं गरिमा संबंधित मानवाधिकारो से सीधे जुडे है। उक्त शोध पत्र महिलाओं के मानवाधिकारों को संरक्षित करने वाले ऐसे प्रमुख सवैधानिक प्रावधानो की संक्षिप्त जानकारी का प्रयास है।

प्रस्तावना – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात महिलाओं की गरिमा प्रतिष्ठा और सामाजिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिये कई प्रकार के कानून अस्तित्व मे आये परन्तु इनकी स्थिति मे अपेक्षित सुधार प्रतिक्षित है संविधान निर्माताओं ने देश के सामाजिक ढाचे मे महिलाओं को उचित एवं बराबरी का स्थान दिलाने का भरसक प्रयास किया जिसे संविधान के विभिन्न प्रावधानो मे मूर्तरूप दिया गया है अनु.14 मे समानता के अधिकार का प्रावधान है वही अनु.15(3) स्त्रीयो और बालको के लिये विषेष उपबंध निर्मित करने के लिये राज्य को अधिकृत करता है अनु.39(क) और (घ)में राज्य को पुरूष और स्त्री समस्त नागरिको के लिए समान वेतन के निर्धारण का निर्देश है। अनु.51(क) का पांचवा बिंदु यह निर्धारित करता है कि सभी मनुष्य ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के विरूद्ध हो ।

स्वतंत्रता के पूर्व राममोहनराय,दयानंद सरस्वती,ईश्वरचंद विद्यासागर जैसे समाज सुधारकों ने महिलाओं के मुद्दे उठाये जिनमे सती प्रथा,विधवा विवाह,बाल विवाह एवं महिला शिक्षा जैसे विषय शामिल थे। इस संबंध में कई कानूनों को निर्माण कर महिला अधिकारों को सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।

1. अनु.15-3 में महिलाओं को विशेष उपायों द्वारा संरक्षण प्रदान किया गया।
2. अनु.39-ए के अनुसार स्त्री और पुरूष दोनों को रोजगार की समानता का प्रावधान किया गया।
3. 73 वे और 74 वे संविधान संषोधन 1976 द्वारा महिलाओं को पंचायतों में एक तिहाई स्थानों के आरक्षण का प्रावधान किया गया।वर्तमान में कई राज्य सरकारों द्वारा इसे बढ़ाकर 50 प्रति. कर दिया गया ।
4. उच्चत्तम न्यायालय में संविधान के अनु. 14,15,16,19-1 और 21 के अंतर्गत देश के नागरिकों को प्राप्त मूल अधिकार किन्नरों के भी पक्ष में विस्तारित करते हुए निर्णय दिया है।
5. सरकार ने 1970 के दशक को महिला कल्याण दशक एवं 1980 के दषक को महिला विकास दशक और 1990 के दशक को महिला सषक्तिकरण दषक के रूप में घोषित किया।
6. उच्चत्तम न्यायालय ने कामकाजी महिलाओं का उत्पीड़न रोकने के लिए वर्ष 1997 में दिषा निर्देश जारी किये -विशाखा केस।
7. 2005 में घरेलू हिंसा निवारण विधेयक का भी निर्माण किया गया।
8. 1987 में सरकार ने सती निरोधक कानून पारित किया जो रूपकुवंर सती केस राजस्थान के विरूद्ध जनआंदोलन की परिणिति था।
9. 1986 में शाहबानों केस में उच्चत्तम न्यायालय ने यह निर्णण दिया कि मुस्लिम महिलाओं को भी अपने पति से गुजारा भत्ता प्राप्त करने का अधिकार है।
10. 1990 के पश्चात न्यायालय ने घरेलु हिंसा, हानिकारक गर्भ निरोधक तकनीक, महिलाओं की स्वास्थ्य नीति आदि को दृष्टिगत रखते हुए अपने निर्णय किये है।

इस प्रकार कई संवैधानिक कानून एवं न्यायालीन आदेश महिला मानवाधिकारों के संदर्भ में सामने आये है किन्तु वर्तमान में भी महिलाओं के प्रति अपराध थमते नजर नहीं आ रहे है। महिलाओं के पारिवारिक और सामाजिक स्थिति उनके आर्थिक रूप से सशक्त और स्वतंत्र रहने पर ही स्तरीय हो सकती है। जहां एक ओर पंच और सरपंच के रूप में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ा हैं वहीं वर्तमान समय में स्वरोजगार के क्षेत्र में भी उन्हें स्वतंत्रता प्राप्त हुई, किन्तु अभी भी आधी आबादी को उनका वास्तविक हक मिलना शेष है क्योंकि 16 वी लोकसभी के आंकड़े बताते है कि कुल महिलाएं केवल 61 है जो सांसद के रूप में चुनी गई। निष्कर्षत: महिलाओं के लिए कानून एवं निर्देशों का अभाव नहीं है आवश्यकता है इन अधिकारों को ईमानदारी से लागू किया जाना तभी महिलाओं के मानवाधिकारों की पूर्ण सुरक्षा आष्वस्त हो सकेगी।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.जय जयराम उपाध्याय-मानवाधिकार।
2. मानवाधिकार सिद्धांत एवं व्यहवार-डॉ.जीपी नेमा,शर्मा
3. फडिया एवं जैन भारतीय शासन एवं राजनीति।
4. मानवाधिकार ईयर बुक-2011 प्रवीण एच पारिख।
5. मानवाधिकार आंदोलन-एक अध्ययन:डॉ.श्रीमति रमा शर्मा।
6. मानवाधिकार एवं पिछडा वर्ग-एस.सी.लाम्बा।

* (राजनीति विज्ञान) शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

मूल्य वर्ध्दित कर एवं जी.एस.टी. में कर चोरी की प्रवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. कविता चंदानी *

शोध सारांश – मध्यप्रदेश में वेट 1 अप्रैल 2006 से प्रभावी ढंग से लागू किया गया था। राज्य सरकार को इस कर से उल्लेखनीय आय भी प्राप्त हुई। परन्तु इस व्यवस्था में कर एवं कर की दरें दोनों अलग-अलग होती थी। साथ ही इसमें कुछ दोष एवं त्रुटियां विद्यमान थी जिसके कारण सामान्य करदाता को परेशानी आती थी। इस प्रणाली के जटिल एवं दोहरे करारोपण के कारण कर चोरी को प्रोत्साहन मिलता था। इसलिए वेट की संरचना में परिवर्तन एवं एकल कर प्रणाली की आवश्यकता वर्षो से महसूस की जा रही थी ताकि कर चोरी को रोककर राजस्व में वृध्दि की जा सकें। इस समस्या के समाधान के रूप में जी.एस.टी. को एक कर प्रणाली के रूप में अपनाया गया।

प्रस्तावना – म.प्र. सरकार के वित्तीय स्त्रोतों में मूल्य वृध्दि कर (वेट) का महत्वपूर्ण स्थान था। कुल राजस्व को लगभग 79 प्रतिशत इस कर से प्राप्त होता था परन्तु इसके जटिल प्रावधानों व कर की दरों की भिन्नता जैसे कई कारणों से करदाता में कर चोरी की प्रवृत्ति बढ़ी थी। वेट के अंतर्गत व्यापारियों द्वारा बिना बिल के विक्रय कर, गलत रिकॉर्ड एवं बहीखाते रखकर कर चोरी का प्रयास किया जाता था जिसको रोकने के लिए सरकार द्वारा सभी संभागों में उड़नदस्ते व जांच चौकियां स्थापित की गई थी। अधिकारियों व निरीक्षकों को व्यापारियों की लेखा पुस्तकों की जांच एवं कर वसूली की कार्यवाही से संबंधित अधिकार दिये गए। यद्यपि कर एंटी इवेनिंग विंग द्वारा वर्ष 2009-10 में छापों की संख्या 406 से वर्ष 2010-11 में 300 हो गई फिर भी कर चोरी को पूरी तरह रोका नहीं जा सका।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – वेट के स्थान पर जी.एस.टी. के क्रियान्वयन से कर चोरी के प्रयास कम हुए हैं या नहीं यही मेरे अध्ययन का उद्देश्य है।

शोध परिकल्पना – जी.एस.टी. के क्रियान्वयन से वेट की जटिलता के कारण होने वाली कर चोरी के प्रयासों में कमी आई है।

शोध प्रविधि –प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर आधारित है। कर से सम्बन्धित प्रावधान तथा अन्य समंक व सूचनाएं आदि द्वितीयक समंक है। प्राथमिक समंक के रूप में न्यादर्श की दैव निदर्शन प्रणाली का अनुसरण करते हुए व्यापारियों एवं अधिकारियों से सर्वेक्षण किया गया है व सूचनाओं को एकत्र किया गया है व निष्कर्ष निकाले गये हैं।

कर चोरी के कारण – सामान्यत: कर चोरी से आशय क्रय विक्रय का सही हिसाब किताब नहीं रखना या उनका लेखा हिसाबी पुस्तकों में नहीं करना है जिससे कर दायित्व उत्पन्न ही ना हो या वास्तविकता से कम प्रकट हो। मूल्य वर्द्धितकर में विक्रय के प्रत्येक स्तर पर कर लगता था अत: विक्रेता प्रथम विक्रय पर ही बिना बिल के विक्रय करता था ताकि किसी भी स्तर पर कर का भुगतान न करना पड़े और इस प्रकार वेट से कर चोरी को बढ़ावा मिला अर्थात् कर के भार को कम करने के लिए व्यापारी कर चोरी के चक्रव्यूह से चाहकर भी मुक्त नहीं हो पा रहा था।

कर चोरी के प्रमुख कारण इस प्रकार थे –

1. **मानसिक दबाव –** यह मनोविज्ञान है कि जिस कार्य के लिये मानव को निषिध्द किया जावे वह उसे करने के लिए आंतरिक रूप से प्रेरित होता है। व्यापारी वर्ग अधिक लाभ अर्जन करने के दृष्टिकोण से व्यापार करता है। ग्राहकों से वसूल किया गया कर यद्यपि शासकीय धरोहर होता है, परन्तु व्यापारी वर्ग इसे अपना मान लेता है। अत: वेट का भुगतान करने में उस पर मानसिक दबाव पड़ता था कि वह अपनी आय में से भुगतान कर रहा है। इससे कर चोरी को प्रोत्साहन मिलता था।
2. **सामाजिक प्रभाव –** कई व्यापार अपना व्यवसाय ईमानदारी से कर चुकाकर करते हैं परन्तु यदि विक्रेता से व्यापारी को बिल नहीं मिलते हैं या संपूर्ण क्रय राशि का बिल नहीं मिलते है तो वह विक्रय का सही बिल जारी नहीं कर सकता है जिससे कर चोरी को प्रोत्साहन मिलता हों।
3. **रिबेट संबंधी प्रावधानों में त्रुटियां :-** एक प्रमुख समस्या रिबेट सम्बन्धी प्रावधानों का जटिल होना था। यदि किसी व्यापारी ने पंजीकृत व्यापारी से माल खरीदकर बेचा है तो उसे इनपुट टैक्स रिबेट की पात्रता होती थी, लेकिन यदि व्यापारी का पंजीयन रिबेट मिलने की अवधि से पूर्व किसी कारणवश निरस्त हो जाता था तो विभाग द्वारा यह रिबेट नहीं दी जाती थी। जबकि करदाता व्यापारी के पास उचित बिल उपलब्ध होते थे। अत: व्यापारी कर चोरी करते थे।
4. **कर की दरों में असमानता –** वेट अधिनियम से अलग-अलग राज्यों में वस्तुओं की दरें असमान थी जिससे अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होती थी। इसके अतिरिक्त कुछ वस्तुओं पर एक ही वित्तीय वर्ष में कर की दरें कई बार परिवर्तित होती थी, जैसे-पेट्रोल। व्यापारी एक राज्य में जिस दर पर कर चुका कर माल खरीदता था उसी वस्तु पर दूसरे राज्य में कर की दर अधिक होने से कर का भार अनावश्यक रूप से बढ़ जाता था। इसलिए व्यापारी कर चोरी करते थे।
5. **दोषपूर्ण कर नीति –** वेट अधिनियम के कानूनी प्रावधानों व नियमों में कई प्रकार की खामियाँ और विसंगतियां थी जिससे कि व्यापारी को प्रक्रिया व नियमों को समझने में कठिनाई होती थी। जिससे कर दोरी को बल मिलता है।

* एम.के.एच.एस.गुजराती कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

6. **उचित कार्यवाही न होना** – व्यवसायी द्वारा कर चोरी संदिग्ध होने पर निर्धारित कार्यवाही के पश्चात् कर चोरी की राशि का 3 या 5 गुना शास्ति आरोपित करने का प्रावधान है परन्तु व्यवसाई को अनिवार्य रूप से कारावास का कोई प्रावधान नहीं है अत: व्यवसायी कर चोरी करते थे।

7. **पूर्ण हिसाब किताब न रखना** – कर चोरी पकड़े जाने के डर से व्यवसायी अपना पूर्ण हिसाब किताब नहीं रखते थे। कच्चे कागज बनाकर लेनदेन का हिसाब बनाकर बाद में नष्ट कर देते थे।

8. **कम कीमत के बिल जारी करना** – व्यवसायी माल की वास्तविक कीमत से कम कीमत के बिल जारी कर अंतर की राशि अलग से प्राप्त कर कर चोरी करते थे।

9. **विक्रय से भिन्न वस्तु की बिक्री दर्शाना** – कर की दरों में अंतर होने से वास्तव में विक्रय की जा रही वस्तु के स्थान पर दूसरी वस्तु के बिल बनाकर व्यापारियों द्वारा कर चोरी की जाती थी।

नवीन कर प्रणाली – माल एवं सेवा कर – जी.एस.टी. एक अप्रत्यक्ष कर है। वस्तुओं और सेवाओं पर लगने वाले अधिकतर करों को जी.एस.टी. के अन्तर्गत लाया गया है। इसके तहत् वस्तुओं और सेवाओं पर एक समान दर से अंतिम उपभोग बिन्दु पर कर लगाया जावेगा। पूर्व कर व्यवस्था में जब किसी वस्तु का उत्पादन होता था तो उस पर उत्पादन शुल्क लगता था। जब उसे कोई बेचता था तो वेट देना पड़ता था, परन्तु जी.एस.टी. लागू हाने पर उसे सिर्फ एक कर देना होगा – जी.एस.टी.। यह देशभर में एक समान होगा।

जी.एस.टी. के दो घटक हैं। एक केन्द्र द्वारा लगाया गया केन्द्रीय जी.एस.टी. या सी.जी.एस.टी. और दूसरा राज्य द्वारा लगाया गया एस.जी.एस.टी. होता है। इनसे सम्बन्धित कानूनों में वसूली के लिये समान प्रक्रिया निर्धारित की गई है जिसका प्रबन्धन केन्द्र और राज्य दोनों को सौंपा गया है।

जी.एस.टी. से कर चोरी के प्रयासों में कमी आएगी क्योंकि इस व्यवस्था से व्यापारियों को अनेक लाभ होंगे जैसे :-

1. **समान कर प्रणाली** – वेट अधिनियम के अंतर्गत माल एवं सेवाओं पर विभिन्न दरों से कर लगाए जाते थे। किसी राज्य में एक वस्तु विशेष पर ऊँची दर से कर लगता था तो उसी वस्तु पर अन्य राज्य में कम दर से कर लगता था कर की दरों की असमानता का यह दोष जी.एस.टी. लागू होने के बाद दूर हो गया है। अब संपूर्ण भारत पर माल विशेष पर एक जैसा कर लगेगा।

2. **कासकैडिंग की समाप्ति** – पूर्व कर व्यवस्था में विक्रय के प्रत्येक स्तर पर कर लगाया जाता था, इससे पुन: करारोपण की स्थिति होती थी जिससे जनता पर कर का भार बढ़ जाता था। जी.एस.टी. लगने से करों की बारंबारता को दूर कर दिया गया है।

3. **शासकीय राजस्व में वृद्धि** – प्रत्येक व्यवहार में बढ़े हुए मूल्य पर सरकार को कर मिलता है इससे राज्सव में वृध्दि होती है। सरकार को निरंतर आय प्राप्त होती रहती है। जी.एस.टी. लागू होने से कर चोरी पर रोक लगेगी क्योंकि माल एवं सेवा के विभिन्न चरणों में एक साथ चोरी संभव नहीं होती। जी.एस.टी. के अंतर्गत हिसाब किताब रखने, रिटर्न फाईल करने का ऐसा मेकेनिज्म तैयार किया गया है कि किसी स्तर पर की गई गड़बड़ी, हेरा फेरी या छुपाने की कोशिश तुरंत पकड़ में आ जाएगी।

4. **सही लेखा–जोखा** – जी.एस.टी. की एक विशेषता यह है कि इसमें प्रत्येक व्यापारी अपने व्यवसाय का सही एवं पूरा–पूरा हिसाब रखेगा ताकि वह पूर्व में भुगतान किए गए करों पर छूट की मांग कर सकता है।

5. **छोटे व्यापारियों को लाभ** – जी.एस.टी. में छोटे व्यापारियों को राहत दी गई है। विक्रय सीमा 10 लाख से बढ़ाकर 20 लाख कर दी गई है। जिससे कई छोटे व्यापारी कर दायित्व से मुक्त हो गए है।

6. **स्वत: कर निर्धारण** – जीएसटी प्रणाली में कर निर्धारण की प्रक्रिया में स्वत: कर निर्धारण को अपनाया गया है अर्थात् व्यापारी द्वारा जो विवरणी प्रस्तुत की जाएगी उसे विभाग मान्य करेगा और करदाता को कर विभाग के चक्कर नहीं काटने पड़ेंगे।

7. **अंतर्राज्यीय व्यापार में आसानी** – जी.एस.टी. से अंतर्राज्यीय व्यापार आसान हो जाएगा। फॉर्म सी का झंझट समाप्त हो गया है। इससे व्यापारियों के साथ साथ उपभोक्ता को लाभ होगा।

8. **समान व्यापारिक अवसर** – जी.एस.टी. लागू होने के कारण अब प्रत्येक राज्य के व्यापारी व उत्पादक को समान व्यापारिक अवसर मिलेंगे। पूरे देश में समान दरों के कारण विभिन्न राज्यों के बीच अनावश्यक प्रतिस्पर्धा समाप्त होगी।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन से स्पष्ट है कि जी.एस.टी. कर व्यवस्था लागू करने से सरकार के राजस्व में वृध्दि होगी। साथ ही निश्चित रूप से कर की चोरी भी कम होगी क्योंकि व्यापारियों को पूर्व कर व्यवस्था से कर की दर एवं गणना संबंधी जो भी कठिनाईयां थी वे दूर होंगी जिससे कर चोरी के प्रयासों में कमी आएगी। जी.एस.टी. से देश की अर्थव्यवस्था को नई दिशा मिलेगी। भविष्य में इससे और भी सकारात्मक परिणाम प्राप्त होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

(अ) पुस्तकें :-

1. मध्यप्रदेश वाणिज्यिक कर : प्रो. श्रीपाल सकलेचा
2. माल एवं सेवा कर : टैक्समेन
3. मध्यप्रदेश वाणिज्यिक कर : डॉ. मेहरा एवं गोयल
4. सार्वजनिक वित : अवध किशोर सक्सेना

(ब) प्रतिवेदन व प्रलेख :

1. मध्यप्रदेश में वेट (कुछ प्रश्न उत्तर) : आयुक्त, वाणिज्यिक कर म.प्र.
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका: कार्यालय जिलाधीश

(स) समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ :

1. नईदुनिया
2. दैनिक भास्कर
3. टाईम्स ऑफ इंडिया
4. प्रतियोगिता दर्पण

(द) वेबसाईट :

1. www.mptax.net
2. www.mptax.org.

****

जीवन बीमा निगम एवं एस.बी.आई. की आजीवन बीमा योजना का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सविता अग्रवाल *

शोध सारांश – वर्तमान जीवन में जितनी अधिक अनिश्चितताएं एवं जोखिमें बढ़ती जा रही है, बीमा का महत्व भी उतना ही अधिक होता जा रहा है। समाज के सभी वर्गों के लिए बीमा की सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से उपयोगिता है बीमा जोखिमों व अनिश्चितताओं से उबरने का एक आसान तरीका है बीमा के द्वारा जोखिमों का विभाजन किया जा सकता है परन्तु यह भी अति आवश्यक है कि सही बीमा योजना का चुनाव किया जाए। प्रस्तुत शोध पत्र में पॉलिसीधारकों को लाभप्रद योजना के चुनाव हेतु तुलनात्मक अध्ययन किया गया।

प्रस्तावना – वर्तमान में प्रत्येक व्यक्ति प्रात:काल से रात्रि तक धनार्जन क्रिया में जुटा है। इस प्रक्रिया में प्रत्येक व्यक्ति का जीवन तथा उससे जुड़े कार्य जोखिमों से घिरे हुए है बीमा इन सभी जोखिमों से सुरक्षा पाने तथा अनिश्चितताओं से मुक्ति दिलाने का कार्य करता है। किसी भी व्यक्ति या संगठन की होने वाली वित्तीय हानि की भरपाई बीमा करता है हम कह सकते है कि जीवन बीमा अपनाने से व्यक्ति की जिम्मेदारियाँ बीमा कंपनी पर आ जाती है।

वर्तमान में अनेक बीमा योजनाएं उपलब्ध है ऐसी स्थिति में यह निर्णय लेना थोड़ा मुश्किल है कि सर्वश्रेष्ठ बीमा योजना कौन सी है उचित बीमा योजना का चुनाव प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का अहम् निर्णय है। इस हेतु बीमा योजनाओं का तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है।

यद्यपि विनियोग बीमा का प्रमुख कार्य नहीं है फिर भी बीमें से विनियोग का लाभ मिलने लगा है। बीमा द्वारा व्यक्ति अपने भविष्य की आवयश्यकताओं को पूरा करने की योजना बना सकता है। बीमा से बचत की प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहन मिलता है किसी भी व्यक्ति की कितनी भी आय क्यों न हो, एक सामान्य व्यक्ति को बचत करने में अनेक कठिनाईयाँ आ जाती है किन्तु जीवन बीमा एक ऐसा साधन है जिसमें बचत आसानी से होती है। व्यक्ति को बैंक में जमा धन पर केवल मूलधन व ब्याज प्राप्त होता है किन्तु बीमा की दिशा में जोखिमों का बीमा तो होता है साथ ही जमा प्रीमियम व बोनस राशि भी मिलती है।

शोध समीक्षा – जीवन बीमा की अवधारणा अत्यधिक प्राचीन है। 1956 के पहले कई भारतीय व विदेशी कंपनियां कार्यरत् थी। जीवन बीमा निगम की स्थापना 1 सितम्बर 1956 में हुई थी।

राम मोहन राय (1940) अर्थशास्त्र विभाग, यूनिवर्सिटी ऑफ बॉम्बे, मुम्बई, “The History and development of Life Insurance in India and studies of the problems of the life insurance.” इस अध्ययन के माध्यम से जीवन बीमा निगम की समस्याओं व इसके विकास को दर्शाया गया है।

टी.एस.मन (1986) डिपार्टमेंट ऑफ लॉ, विक्रम यूनिवर्सिटी, “Law relating to life insurance in India” इस अध्ययन में जीवन बीमा निगम की कानूनी व्यवस्था पर आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है।

लक्ष्मण प्रसाद गुप्त (1987) अर्थशास्त्र विभाग, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, "Life Insurance Business in M.P.” इस अध्ययन में जीवन बीमा निगम के व्यवसाय के प्रसार के संदर्भ में बताया है।

विजय जैन (1986) वाणिज्य विभाग, बरकतुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, “Critical study of the Life insurance Business from 1956 to 1981 of Indore division.” इस अध्ययन में जीवन बीमा निगम का व्यवसाय संपादन पिछले 25 वर्षो के आधार पर किया गया है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोधपत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही प्रकार के समंकों एवं सूचनाओं पर आधारित है। तथ्यों के संग्रहण हेतु प्राथमिक समंकों के अंतर्गत विभिन्न जीवन बीमा कंपनियों के एजेन्ट्स का साक्षात्कार लिया गया जिसके माध्यम से कंपनी के विभिन्न उत्पादों की जानकारियाँ प्राप्त की गई।

द्वितीय समंकों के अंतर्गत विभिन्न जीवन बीमा कंपनियों द्वारा प्रकाशित साहित्य, उनकी वार्षिक रिपोर्ट, बीमा उत्पादों के ब्रोशर्स, संस्थानों के सर्वेक्षणों, शोधार्थियों द्वारा समय समय पर किये गए कार्यों तथा प्रलेखों से जानकारियाँ एकत्रित की गई। इसके अतिरिक्त विभिन्न वेब साइट से भी जानकारियाँ ली। तुलनात्मक अध्ययन हेतु प्रीमियम, पूर्णावधि लाभ, अवधि आदि तत्वों को आधार बनाया गया।

शोध क्षेत्र एवं सीमाएं – शोध पत्र बीमा के संदर्भ में है, बीमा के अनेक प्रकारों में से शोध हेतु जीवन बीमा का चयन किया, इसके अंतर्गत आजीवन बीमा योजनाओं को चुना गया तथा जीवन बीमा निगम व एस.बी.आई. की योजना का तुलनात्मक अध्ययन द्वारा लाभप्रदता जानने का प्रयास किया गया।

परिकल्पना – जीवन बीमा निगम की आजीवन बीमा पॉलिसियाँ निजी कंपनियों (एसबीआई) की तुलना में अधिक लाभप्रद है।

विभिन्न प्रकार की जीवन बीमा पॉलिसियों में आजीवन बीमा एक ऐसी पॉलिसी है जिसमें बीमित व्यक्ति को जीवन भर प्रीमियम भरते ही रहना है। दूसरे शब्दों में मृत्यु के पश्चात् ही उत्तराधिकारी को बीमाधन बोनस राशि के साथ मिलता है। इस प्रकार आजीवन बीमा पत्र बीमित के जीवनकाल या वृध्दावस्था का सहारा नहीं बनता है बल्कि उसके आश्रितों या उत्तराधिकारियों के लिए आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करता है।

* एम.के.एच.एस.गुजराती कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

आजीवन बीमा पत्र निम्नलिखित दशाओं में उपयोगी हो सकते है:

अ. जब बीमित को अपने आश्रितों की आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करनी हो।

ब. जब बीमित को अपनी मृत्यू उपरान्त दायित्वों की व्यवस्था करनी हो।

स. जब बीमित की आय वृध्दावस्था में भी बनी रहने की सम्भवना हो।

तालिका 1 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका केअध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि निम्न दृष्टिकोण पर जीवन बीमा निगम की आजीवन बीमा पॉलिसी, एस.बी.आई. की तुलना में अधिक लाभदायक है।

1) न्यूनतम प्रवेश आयु– जीवन बीमा निगम में 0 वर्ष की आयु से पॉलिसी क्रय की जा सकती है जबकि एस.बी.आई. की दशा में यह 18 वर्ष है।

2) विद्यमानता हित लाभ – जीवन बीमा निगम में विद्यमानता हित लाभ उपलब्ध है परन्तु एस.बी.आई. की दशा में नहीं।

3) प्रीमियम राशि – जीवन बीमा निगम की प्रीमियम राशि एस.बी.आई. की तुलना में कम है।

निष्कर्ष – तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते है कि जीवन बीमा निगम की आजीवन बीमा पॉलिसी एस.बी.आई. की तुलना में अधिक लाभप्रद है।

सुझाव :

1. अध्ययन के व्दारा यह ज्ञात हुआ कि विभिन्न लाभ रहित योजनाओं की प्रीमियम राशि में बहुत अंतर है। यह अंतर लगभग 50 प्रतिशत से 60 प्रतिशत तक का है ।लाभ रहित पॉलिसियों में लगभग सभी प्रदत्त लाभ एक जैसे ही प्रदान किये जाते हैं तो फिर इन सभी कंपनियों की प्रीमियम राशि में इतना अंतर क्यों है इस संबंध में आई.आर.डी.ए. व्दारा विचार किया जाना चाहिए तथा प्रीमियम राशि के संबंध में आवश्यक दिशा निर्देश दिये जाने चाहिए।
2. बीमा कंपनियों व्दारा बीमाधारक को वहनीयता या सुवाहता विकल्प उपलब्ध करवाना चाहिए। यदि कोई बीमाधारक किसी कंपनी के उत्पाद से संतुष्ट न हो तो यह स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वह उसे उसकी विद्यमान दशा के साथ किसी ओर कंपनी में जा सकें तथा अपनी पॉलिसी चालू रख सके।
3. उपभोक्ताओं को बीमा उत्पाद क्रय करने से पूर्व एजेण्ट से योजनाओं को पूर्णत: समझ लेना चाहिए उन्हें एजेण्ट को अपना उद्देश्य भी स्पष्ट करना चाहिए। यह सब तभी संभव है जबकि उपभेक्ता एजेण्ट को पर्याप्त समय दे क्योंकि पर्याप्त समय के अभाव में एजेण्ट अपनी बात पूर्णत: स्पष्ट नहीं कर पाएगा।
4. पॉलिसी में एकल प्रीमियम भुगतान की दशा में एकल प्रीमियम के रूप में अधिक धनराशि देय होती है। पॉलिसीधरक के बीच एकल प्रीमियम राशि को बैंक में एफ.डी. करें तथा बयाज से वार्षिक प्रीमियम का भुगतान करें तो पॉलिसीधारक को अच्छा लाभ होगा। आई.आर.डी.ए. व्दारा एकल प्रीमियम राशि संबंधी आवश्यक दिशा निर्देश दिये जाने चाहिए।
5. लाभ सहित पॉलिसियों पर बीमा कंपनियों व्दारा उच्च प्रीमियम दरें लगाई जाती है इन प्रीमियम दरों को कम किया जाना चाहिए।
6. पॉलिसी धारकों को लाभ सहित योजनाएं लेने के स्थान पर लाभ रहित योजनाएं लेना चाहिए। लाभ रहित योजनाओं की प्रीमियम राशि कम होती है। अत: कुछ राशि पीपीएफ खातें में विनियोजित की जा सकती है। इस प्रकार बीमा सुरक्षा तथा अधिक लाभार्जन दोनों प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

पुस्तकें एवं अध्ययन सामग्री :

1. बीमा के तत्व– डॉ. आर.एल. नौलखा, रमेश बुक डिपो, जयपुर।
2. बीमा विधि– डॉ. सुरेन्द्र यादव, यूनिवर्सिटी बुक हाऊस, (प्रो.) लि., जयपुर।
3. बीमा के तत्व– डॉ. बालचन्द्र श्रीवास्तव, साहित्य भवन, पब्लिकेशन्स (बंसल पब्लिशिंग हाउस, आगरा)
4. रिसर्च मैथ्डोलॉजी– डॉ. आर.एन. त्रिवेदी तथा डॉ. डी.पी. शुक्ला, कॉलेज बुल डिपो, जयपुर
5. रिसर्च मैथ्डोलॉजी–डॉ.बी.एम. जैन, (रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर)
6. Life Insurance Vol II-ICFAI
7. Statistical Methods- एस.पी. गुप्ता, एस. चंद एण्ड सन्स
8. Marketing of Life Insurance Services: वी. अप्पी रेड्डी, प्रिंटवेल पब्लिशर्स डिस्ट्रीव्यूटर्स, जयपुर
9. भारतीय जीवन बीमा निगम की Zenith's Ready Reckoner, जेनिथ पब्लिकेशन्स
10. Research Methodology & Techniques- सी.आर.कोठारी, वेली, ईस्टर्न लिमिटेड

पत्रिकाएँ, जर्नल, पीरियडीकल्स तथा समाचार पत्र :

1. आई.आर. डी.ए. जर्नल
2. Insurance Chronicle –ICEFAI
3. Business Today
4. The Vision: The Jounal of Business Perspective
5. The economic Times Daily
6. Business Standard- Daily

रिपोर्ट :

1. World Bank Report: India at a glance
2. IRDA की वार्षिक रिपोर्ट
3. भारतीय जीवन बीमा निगम की वार्षिक रिपोर्ट
4. निजी जीवन बीमा कंपनियों की वार्षिक रिपोर्ट

वेब साइट्स :

1. http://www.thehindubusinessline.com
2. http://www.irdaindia.com
3. http://www.maxnewyorklife.com
4. http://www.licindia.in
5. http://www.sbilife.co.in
6. http://www.bimadeals.com

तालिका 1 – आजीवन बीमा पॉलिसियों की तुलना

तुलना का आधार	**भारतीय जीवन बीमा निगम**	**एस.बी.आई. लाईफ इन्श्योरेंस**
पॉलिसी का नाम	जीवन तरंग	शुभ निवेश
न्यूनतम प्रवेश आयु	इस पॉलिसी की न्यूनतम प्रवेश आयु 0 वर्ष है।	इस पॉलिसी की न्यूनतम प्रवेश आयु 18 वर्ष है।
अधिकतम प्रवेश आयु	इस पॉलिसी की अधिकतम प्रवेश आयु 60 वर्ष है।	इस पॉलिसी की अध्किातम प्रवेश अयु 60 वर्ष है।
प्रीमियम देय विधि	इस पॉलिसी में नियमित प्रीमियम भुगतान एवं एकल प्रीमियम भुगतान दोनों विधियों द्वारा प्रीमियम दी जा सकती है।	इस पॉलिसी में नियमित प्रीमियम भुगतान एवं एकल प्रीमियम भुगतान दोनों विधियों द्वारा प्रीमियम भुगतान किया जा सकता है।
संरक्षण की अधिकतम आयु	इस पॉलिसी के अंतर्गत बीमित की आयु 100 वर्ष होने तक उसे संरक्षण प्रदान किया जाता है।	इस पॉलिसी के अंतर्गत यदि आजीवन बीमा विकल्प चुना है तो बीमित को 100 वर्ष की आयु तक संरक्षण प्रदान किया जाता है।
न्यूनतम बीमाधन	पॉलिसी का न्यूनतम बीमाधन 1,00,000 रू. है।	पॉलिसी का न्यूनतम बीमा धन 75,000रू. है।
अधिकतम बीमाधन	पॉलिसी में अधिकतम बीमाधन की कोई सीमा नहीं है।	पॉलिसी में अधिकतम बीमा धन की कोई सीमा नहीं है।
न्यूनतम प्रीमियम	पॉलिसी की न्यूनतम प्रीमियम 10वर्षीय प्लान–10,910रू. 15 वर्षीय प्लान – 7,140 रू. 20 वर्षीय प्लान – 5,150 रू.	पॉलिसी की न्यूनतम प्रीमियम एकलप्रीमियम की दशा में (न्यूनतम बीमा धन पर आधारित नियमित प्रीमियम की दशा में 6,000/– रू. वार्षिक
पूर्णावधि लाभ	बीमाधारक की 100 वर्ष आयु पूर्ण करने वाली वर्षगांठ पर बीमाधन +सहभागिता हित लाभ देय होगा	बीमाधारक को 100 वर्ष पूर्ण करने पर बीमाधन देय होगा।
विद्यमानता हित लाभ	(1) चयनित अवधि पूरी होने पर निहित बोनस का भुगतान किया जाता है। (2) बीमाधन का 5.5 प्रतिशत चयनित अवधि के एक वर्ष पश्चात् प्रति वर्ष देय है।	कोई विद्यमानता हित लाभ देय नहीं है।
जोखिम सुरक्षा (मृत्यू लाभ)	(1)चयनित अवधि में मृत्यु होने पर –बीमाधन+बोनस देय होगा (2)चयनित अवधि के पश्चात् मृत्यु होने पर – बीमाधन+सहभागिता हितलाभ देय है। (3) जोखिम प्रारंभ होने से पूर्व मृत्यु होने पर – सभी देय प्रीमियम की वापसी	आजीवन बंढोबस्ती विकल्प चुनने पर (1) चयनित अवधि में मृत्यु होने पर – बीमाधन+घोषित बोनस(2) चयनित अवधि के पश्चात् तथा 100 वर्ष की अवधिके मध्य मृत्यु होने पर –(अ) मूल बीमा धन (ब) विलंबित पूर्णावधि भुगतान विकल्प लिया है तो उसकी शेष राशि।
ऋण सुविधा	इस पॉलिसी के अंतर्गत ऋण सुविधा उपलब्ध है।	इस पॉलिसी के अंतर्गत ऋण सुविधा उपलब्ध है।
अभ्यर्पण पॉलिसी	अभ्यर्पण की अनुमति है	पॉलिसी अभ्यर्पण की अनुमति है।
प्रीमियम राशि	यदि 2,00,000 रू. की पॉलिसी हो, तथा बीमित की प्रवेश के समय आयु 30 वर्ष है तो वार्षिक प्रीमियम: 10,044 रू. वार्षिक होगी (यह प्रीमियम 20 वर्षीय पॉलिसी अवधि के लिए है)	यदि 2,00,000 रू: की पॉलिसी है तथा बीमित की प्रवेश के समय आयु 30 वर्ष है तो वार्षिक प्रीमियम –11,892 . रू होगी (यह प्रीमियम 20 वर्षीय पॉलिसी अवधि के लिए है)
विशेष विकल्प	पॉलिसी में कोई विशेष विकल्प उपलब्ध नहीं है।	पॉलिसी में तीन विशेष विकल्प उपलब्ध है। (1) बन्दोबस्ती आश्वासन(2) आजीवन बन्दोबस्ती (3) विलम्बित पूर्णावधि भुगतान
राईडर विकल्प	पॉलिसी के अंतर्गत तीन राईडर विकल्प उपलब्ध है:– (1) गंभीर बीमारी विकल्प (2) टर्म राईडर विकल्प (3) प्रीमियम अधित्याग लाभ	पॉलिसी में तीन राईडर उपलब्ध हैं (1) दुर्घटना मृत्यु लाभ विकल्प (2) अधिमान टर्म राईडर विकल्प(3) दुर्घटना विकलांगता विकल्प

****

मानवाधिकार संरक्षण-भारतीय एवं अन्तराष्ट्रीय प्रयास

डॉ. भारती लुनावत *

प्रस्तावना - राजनीति विज्ञान के दर्शन मे मानवाधिकार एक ज्वलन्त एवं सामयिक विषय सदैव रहा है तथा संयुक्त राष्ट्र के सार्वभौमिक मानव अधिकार घोषणा पत्र के पश्चात् तो इस विषय पर जो चर्चा एवं विवाद प्रस्तुत हुए है, उनसे इस विषय की प्रासंगिकता प्रतिष्ठित हो गई है,किन्तु यह भी सत्य है,कि संयुक्त राष्ट्र संघ मानवाधिकार आयोग एवं विभिन्न राष्ट्रों की सरकारों के 50 वर्षो के प्रयासों के बावजूद मानवाधिकारों का हनन जारी है, और केवल संविधान, कानुनों एंव मानवाधिकार आयोगों के माध्यम से ही इस हनन को नही रोका जा सकता है।

अधिकार सामाजिक जीवन की वह परिस्थितियाँ है, जिसके बिना आम तौर पर कोई व्यक्ति सर्वोत्तम रूप पाने की आशा नही कर सकता। वर्तमान समय में विश्व मे आतंकवादी एवं विनाशकारी घटनाओं के बढ़ने के काण विष्व समुदाय के सामने जो सबसे प्रमुख समस्या आकर खड़ी होती है, वह व्यक्तियों के अपने अधिकारों के सरंक्षण की समस्या है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा घोषित मानवाधिकार दशक (1994-2004) में यदि मानवाधिकार की स्थिति पर विचार करें तो अत्यन्त भयावह तस्वीर सामने आती है।

मानवाधिकारों का घोषणापत्र केवल अधिकारों की सूची ही नहीं है, बल्कि यह मानव आदर्शो का प्रतिबिम्ब है। अन्तराष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों को लागू करने हेतु संयुक्त राष्ट्र अभिकरणों व सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मानवाधिकार की रक्षा के लिये संयुक्त राष्ट्र एवं इसके विभिन्न अभिकरणों तथा विभन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के प्रयासों का प्रतिफल निम्न रूप में सामने आया है।

1. 1952 संयुक्त राष्ट्र द्वारा महिलाओं के राजनीतिक अधिकरों पर कन्वेन्शन की स्वीकृति।
2. 1954 युरोपीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना।
3. 1959 महासभा द्वारा बाल अधिकारों की घोषणा,कुपोषण एवं बालश्रम के विरूद्ध कदम अठाने का आग्रह।
4. 1961 एमनेस्टी इंटरनेशनल की स्थापना।
5. 1974 नवीन अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना हेतु विश्व के नागरिकों के भागीदारी को सुनिश्चित करना।
6. दिसम्बर 1975 विकलांग व्यक्तिओ के अधिकारों की घोषणा।
7. नवम्बर 1976 नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए मानवाधिकार समिति की स्थापना।
8. 1994 से 2004 का दशक मानवाधिकार शिक्षा दशक घोषित।
9. संयुक्त राष्ट्र द्वारा विभिन्न समयान्तरालों मे पारित कन्वेशन्स।

मानवाधिकार संरक्षण हेतु एमनेस्टी इंटरनेशनल तथा हयुमन वॉच जैसी संस्थाओं ने अपनी प्रभावी भूमिका निभाते हुए कई देशों में हो रहे मानवाधिकार हनन के प्रकरणों को दुनिया के समक्ष रखा है। हयुमन वॉच 2014-2015 की दक्षिण एशिया संबंधी रिपोर्ट इस क्षेत्र में आतंकवाद की बढ़ती घटनाओं और मानवाधिकार के गिरते ग्राफ को रेखांकित करती है। एमनेस्टी इंटरनेशनल और मानवाधिकार आयोग की 2014-2015 की रिपोर्ट एषिया और अफ्रीका के नवोदित देशों मे भूखमरी,अकाल,गरीबी और मानव तस्करी के विभिन्न मामलों को प्रकट करती है।

मानवाधिकार संरक्षण हेतु भारतीय प्रयास भी सराहनीय रहे है।समाज सुधारकों,धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं,विभिन्न अभिकरणों, सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों की स्थापना एवं भूमिका,मानवाधिकार को लागू करने की रही है। आधुनिक भारत में मानव गरिमा को स्थापित करने वाले विभिन्न प्रयासों, परिस्थितियों और विभिन्न कानूनों पर निम्न रूप से प्रकाश डाला जा सकता है-

1. 1829 सती प्रथा का अन्त किया जाना।
2. ब्रह्म समाज एवं आर्य समाज द्वारा समाज सुधर के प्रयास।
3. 1947 में भारत द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त किया जाना।
4. 1950 मे संप्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य की स्थापना।
5. 1952 मे पारित क्रिमीनल ट्राईब्स एक्ट।
6. 1955 में हिन्दु महिलाओं के अधिकार।
7. 1958 का आर्म्ड फोर्सेस एक्ट।
8. 1989 अनुसूचित जाति व जनजाति संरक्षण कानून।
9. 1993 पंचायत राज संस्थाओं की स्थापना।
10. 1993 राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन।
11. 2005 सूचना के अधिकार का लागू होना।
12. 2005 नरेगा का उदय।
13. 2011 मे प्रस्तावित खाद्य सुरक्षा कानून एवं महिलास आरक्षण बिल।
14. 2011 में प्रस्तावित न्यायीक सुरक्षा बिल।
15. 2016 मे लोकपाल विधेयक का पारित होना।

निर्धनता, बेरोजगारी,जनसंख्या विस्फोट,महिला उत्पीडन, बालश्रम, अशिक्षा,अशुद्ध पेयजल,महिला अत्याचार,राजनीतिक अपराधीकरण, क्षैत्रवाद, संप्रदायवाद और भ्रष्टाचार के कारण भारत में मानवधिकार स्थापना की मंजिल अभी दूर है। यद्यपि सुनियोजित आर्थिक,सामाजिक एवं राजनीतिक विकास,प्रशासनिक उत्तरदायित्व और आम जनता की सहभागिता से यह मार्ग तय किया जा सकता है।

* (राजनीति विज्ञान विभाग) शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय रतलाम, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फडिया एवं जैन: भारतीय शासन एवं राजनीति पृष्ठ-92
2. मनवाधिकार व भारतीय लोकतंत्र:पुनीत कुमार कैलाश पुस्तक सदन पृष्ठ-233
3. 2014-2015 वर्ल्ड रिपोर्ट-हुमन राईट्स वॉच।
4. इंडिया टूडे आलेख:मानवाधिकार अल्लंघन अब भी लगातार है। जनवरी 2012
5. प्रतियोगिता दर्पण मई 2014-भारतीय परिपेक्ष्य मे मानवाधिकार।
6. डॉ.एच.ओ.अग्रवाल-मानवाधिकार।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

साठ के दशक में मध्यमवर्गीय जिंदगी के शाश्वत यथार्थ की प्रनीति

डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार *

प्रस्तावना – शहरीकरण व आधुनिकता के बढ़ते प्रभाव का असर मध्यमवर्ग पर सबसे अधिक दिशाई देता है। यही वर्ग है जो आधुनिकता क पीछे अंधी दौड़ में दौड़कर अपने को गर्त में डालता है। हमारे उपभोग प्रधान अर्थतंत्र में मध्यमवर्ग बुरी तरह से जकड़ा हुआ है। आज मध्यमवर्ग न केवल राष्ट्र समाज अपितु पारिवारिक सिंगतियों से त्रस्त स्थितियों को भोग रहा है। उसके समक्ष जीवन का यथार्थ उपस्थित है जिसे केवल स्वीकार करना उसकी नियती है।

स्वतंत्रता के पश्चात् बढ़ते हुए औद्योगीकरण, वैज्ञानिक प्रगति व पूंजीवादी व्यवस्था ने मध्यमवर्गीय व्यक्ति के मानसपटल पर गहरा आघात किया है। मध्यवर्ग की इस दारूण स्थिति को व्यक्त करते हुए डॉ. अतुलवीर अरोड़ा लिखते है–'सन् साठ के बाद संबंधों के बदलते हुए यथार्थ की अनगिनत विशिष्ठ मुद्राएँ ग्राम, शहर तथा महानगर के त्रिस्तरीय विस्तार में मुखरित होने लगती है जिसमें पुरूष अधिकाधिक भावनाहीन और जड़ होता गया है'।

साठोत्तरी कहानियों में व्यक्त मध्यमवर्ग ही एक ऐसा वर्ग था, जो गिरते हुए मूल्यों का शिकार बन रहा था वही मूल्य जो उसकी धरोहर थे, समाप्त होते चले गए। यह मूल्य चाहे नैनिकता के हों, या मानवीय संबंधों को लेकर सभी स्थितियों में इनके पतन को देखा जा सकता है। मानवीय मूल्यों के समाप्त होने व संबंधों में अजनबीपन को इसके पूर्व नई कहानियों में भी 'चीफ की दावत' कहानी माँ तथा उषाप्रियंवदा की वापसी कहानी के गजाधर बाबू के माध्यम से देखा जा सकता है जो संबंध कभी मध्यमवर्ग में प्रगाढ़ व स्नेहासिक्त हुआ करते थे, आज उनके खोखलेपन को कहानियों में देखा जा सकता है। ज्ञानरंजन ने अपनी कहानी 'संबंध' में इसी मध्यमवर्ग में पनप रहे संबंधों को व्यक्त किया है – 'मैंने सोचा उधर दरवाजे की तरफ नहीं देखूंगा, पिछली बार बहुत परिश्रम करके और साहस से मैंनें माँ की आंखों में देखा था, वे आंखों इस तरह की थी जैसे खाल से चाकू को चीर दिया हो और लहु समाप्त होकर लपलपाती सफेदी में बदल गया हो'।

इसी तरह मध्यमवर्गीय मानसिकता जो पाश्चात्य संस्कृति की चमक-दमक में इतना अधिक रच बस गई है जिसका परिणाम उसके प्रगाढ़ संबंधों तक पहुंच चुका है। उसके लिए माँ–बाप आउट डेटेड हो चुके हैं। वह अपनी पद प्रतिष्ठा के लिए नैतिक–अनैतिकता के बंधनों को पूर्णत: समाप्त कर देता है। उसके लिए ऐशोआराम की जिंदगी बसर करना या उच्चवर्ग की होड़ करना, पाश्चात्य संस्कृति का ग्रहण करना ही उसका मुख्य ध्येय होता है। इसी मानसिकता को ध्यान में रखते हुए की 'चीफ की दावत' की कहानी को प्रस्तुत किया है।

आज हम मानव को जातिवाद की संकीर्ण तुला पर नहीं, बल्कि उससे भी अधिक संकीर्ण मानसिकता के लिए अर्थतंत्र की तुला पर तौलते हैं। समाज को आज इसी वर्ग भेज के आधार पर बांटा जा रहा है। मध्यमवर्गीय जीवन में व्यापप्त आर्थिक विषमता ही जीवन की भयावहता का महत्वपूर्ण कारण होता जा रहा है। जीवन के इसी यथार्थ को अभिव्यक्त करती कहानी फेंस के इधर उधर है। फेंस इन विषमताओं की सीमा रेखा है, जो पहले पड़ोसी के रहने पर लांघी जाती थी, अब नहीं लांघी जाती – 'यह उतनी आसान फेंस है कि हम सायकल से बिना उतरे करें रास्तों से खिलवाड़ करते जा सकते है। पहले जाते भी थे अब नहीं जाते क्योंकि हमारे पड़ोसियों के लिए फेंस कभी न लांघने वाला अर्थ देती है'। लेखक द्वारा कहानी में कई बार आर्थक विन्नता को बनाते का प्रयास किया गया है – 'रात को अधिकतर उनके बीच वाले कमरे में रौशनी जलती है जिसमें मुखर्जी अपने पूरे परिवार को लेकर सोता है'। इस काहनी में अनेक शब्दों 'कड़वा करोंदा' 'सूखी नागफनी' आदि शब्दों के माध्यम से लेखक गरीबी, चिंताओं की ओर संकेत कर रहा है।

साठोत्तरी कहानीकारों ने जीवन को मध्यमवर्गीय जीवन के यथार्थ रूप में जी कर समाज के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस समय की कहानियाँ मध्यवर्गीय जीवन के आर्थिक पक्ष को प्रस्तुत करती है। किस तरह से अर्थपरक घटनाएँ न केवल जीवन अपितु संबंधों तक को त्याग देती है। संबंधों की इसी उदासीनता व विमुखता को सूर्यकांत नागर की कहानी 'भोगा हुआ यथार्थ' में प्रीति द्वारा प्रकट किया गया है। लेकखक द्वारा कहानी में चरित्रों के वैचारिक द्वंद्व व अनुभूति की गर्माहट को प्रस्तुत किया गया है। कहानी की नायिका को चरित्र बहुत प्रभावित करता है। वह अपनी विवाहित पुत्री प्रीति की अपने प्रति उपेक्षा से निराश व क्लांत होती है। एक बार इच्छा हुई कि कुसुम का भ्रम तोड़ दूं कहूं आज सारी दुनिया स्वार्थ पर टीकी है। क्यों व्यथर्स में आस लगाये बैठी हो। तुमने प्रीति के लिए जो किया वह तुम्हारा ममत्व व कर्तव्य था उसका मोल क्यों चाहती हो। किले की वापसी की अपेक्षा में पुण्याई धुमिल होती है.....'फिर यह क्यों भूलती हों कि आजकल गैस ब्लेक में पच्चीस सौ में बिक रही है। बारह पन्द्रह सौ का मुनाफा कोई भला क्यों छोड़ेगा। पर कुसुम के रिसते घाव पर नमक छिड़कने को साहस न हुआ'।

साठोत्तरी कहानियों में मध्यमवर्गीय जीवन की स्थितियों को सबसे अधिक दयनीय बताया गया है क्योंकि वह सढ़ी गली परम्पराओं की ओट में अपनी इज्जत की मोह से जकड़ा हुआ इस जिन्दगी से भाग जाना चाहता है लेकिन वह चाहकर भी भाग नहीं पाता। आज का यथार्थ केवल मध्यमवर्गीय

* एम.के.एच.एस.गुजराती कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

आर्थिक स्थिति को ही व्यक्त नहीं करता अपितु मध्यमवर्गीय पात्र उसकी स्थितियों उसकी आशाओं-आकांक्षाओं को भी व्यक्त करता है। बदलती हुई परिस्थितियों व परेशानियों से भरी जिंदगी में मनुष्य अपनी सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जीवन पर्यन्त संघर्ष करता रहाता है। इसी यथार्थ को व्यक्त करती हुई विजय मोहनसिंह की कहानी 'एक बंगला बने न्यारा' जिसमें लेखक ने साधारण से मनुष्य को जीवन जीते हुए अपनी आकांक्षओं को पूर्णता न दे पाने की छटपटाहट को व्यक्त किया है। जो अपने सपनों के साथ इस उम्मीद पर जीवन को जीता है कि उसका अपना घर होगा। एक बंगले का आकांक्षी मनुष्य संघर्षरत होकर भी जीवन में अपने उस छोटे से सपने को पूरा नहीं कर पाता। पारिवारिक जीवन से संत्रस्त व शासन तंत्र से संत्रस्त व्यक्ति अपने जीवन के सपने में सिमटकर रह जाता है। उसे इस मूलभूत आवश्यकता को पूरा करेन हेतु विभिन्न त्याग करने पड़ते हैं। कंटीले तारों वाला खेल सिमटकर खलियान रह गया है। अत: सोचता हूं खलियान की जमीन बेचकर एक प्लॉट खरीद लूं दो तीन सालों में इसी प्लॉट को आधा बेचकर एक छोटा सो घर बनाया जा सकता है।

ज्ञानरंजन की कहानी 'घंटा' (1) में इन्हीं मध्यमवर्गीय जीवन की विडम्बनाओं से युक्त तथा आर्थिक विन्नता से घिरे सामान्य जीवन को न जीकर उसकी बुराईयों, भटकाव व कुंठा में जीते व्यक्ति को व्यक्त किया गया है। 'घंटा' कहानी का नायक लालच के कारण जीवन के भटकाव को महसूस करता है। स्वस्थ दिखाई देने वाले समाज में किसतनी अस्वस्थ मानसिकताएं है, भ्रष्टता तथा अनैतिकता व्याप्त है, इसी यथार्थ को व्यक्त करने का प्रयास 'घंटा' कहानी के पात्र कुंदन सरकार के माध्यम से किया गया है। नौकरी न पाना भी मध्यमवर्गीय जीवन की एक बहुत बड़ विडम्बना है जिसे साठोत्तरी कहानीकारों द्वारा काहनियों में व्यकत किया गया है। इसी संबंध में 'महेन्द्र का भाई' कहानी भी नौकरी न मिल पाने के कारण मध्यमवर्गीय व्यक्ति के जीवन में होने वाली छटपटाहट को तथा विवशता को व्यक्त करती है, गजेन्द्र के बड़े भाई महेन्द्र ने तीन साला बेकार रहकर आत्महत्या कर ली। गजेन्द्र पढ़ रहा ळे गजेन्द्र को नौकरी की चिंता अभी से आतंकित किए हुए है। इसके अतिरिक्त मध्यमवर्गीय जीवन की आर्थिक विपन्नता को व्यकत करती कहानियाँ 'बंद गली का आखरी मकान' कहानी संग्रह की 'ट्यूशन', 'परखनली', 'छोटा होता आदमी' आदि कहानियों में मध्यमवर्गीय जीवन को व्यक्त किया गया है।

मध्यमवर्गीय आर्थिक विषमताओं, अभावों से जीवन पर्यन्त जूझता रहता है। उसकी ऊँची- ऊँची महत्वकांक्षएँ प्राय: आर्थिक अक्षमता के कारण सपना सिध्द होती है। योग्यता होते हुए भी आकांक्षओं को पूरा न कर पाना व्यक्ति को मानसिक रूप से क्षत-विक्षत कर देता है। उसमें कुंठा, घूटन की प्रवृत्तियां बढ़ती दिखाई देती है। अमरकांत की कहानी 'डिप्टीकलेक्टरी' मध्यमवर्ग के इसी सपनों को टूटने की कहानी है, जो अपनी सक्षमता से अधिक बच्चों की पढ़ाई पर पैसा खर्च करता है किन्तु दूषित व्यवस्थओं के सामने उसकी महत्वचकांक्षाएँ धूमिल हो जाती है।

इस प्रकार औद्योगिक पूंजीपति समाज में दो वर्ग उच्च और निम्नवर्ग उभरकर सामने आया जिसे मध्यमवर्ग कहा गया। जिसने उच्च और निम्नवर्ग से कहीं अधिक सामाजिक जीवन की कष्टपूर्ण योतनाओं को झेला। युग की विकृतियों से मध्यवर्ग टूटता, झुलसता, जूझता हुआ समाज व व्यवस्थाओं से अपने आपकों संभलता हुआ आज भी जूझ रहा है। सबसे अधिक मध्यमवर्ग को ही विसंगतियों से घिरा हुआ पाया गया।

जिंदगी के संकटों को भेगता व्यक्ति जिंदगी से पूर्णत: कटा हुआ नहीं है, वह अनेक दुख तथा यातनाओं को भोगकर भी जीना चाहता है किन्तु जीवन को जीना इतना सरल नहीं है वह अपने संत्रास व अकेलेपन को भुलाकर जीवन को खुशी-खुशी जीने के कई बहाने ढूंढने लगता है किन्तु एक समय ऐसा आता है, बेवजह इन सभी बाह्य आडम्बरों से परे आंतरिक चेतना को जाग्रत कर, उन सभी यथार्थ स्थितियों का सामना करने के लिए तथा उनको प्रत्यक्ष आत्मसात करने का हौसला जुटा लेता है। वह जीवन के शाश्वत यथार्थ की भूमि पर खड़ा होकर जीवन को जीता है। इसी संबंध में अमरकांत की कहानी 'दोपहर का भोजन', 'जिंदगी और जोंक' तथा रविन्द्र कालिया की कहानी 'कखग' आदि कहानियां जिनमें यथार्थ की प्रस्तुति की गई है। 'जिंदगी और जोंक' कहानी दुर्दमनीय मानव की कहानी है। इसी तरह अमरकांत की एक और कहानी 'दोपहर का भोजन' अभाव से युक्त जिंदगी को ढोते रहने के अभाव में जीवन जीने की कहानी है। सिद्धेश्वरी के तीनों बेटे और पति आथिक दरिद्रता के अभिशाप को झेल रहे है तथा एक दूसरे से आर्थिक विपन्नता को छुपाकर रखना चाहते है।। विजयमोहनसिंह की कहानी 'एक बंगला बने न्यारा' में भी मध्यम वर्ग की स्थिति को व्यक्त किया गया है।

साठोत्तरी कहानी में ये संपूर्ण बोध अपने यथार्थ रूप में अभिव्यक्त हुए है। इस युग का कहानीकार बदलती हुई दुनिया का बोध समानान्तर रूप से करता रहा है तथा समाज से उपजे विविध बोधों को उद्घटित कर जनता के समक्ष लाने का प्रयास किया है। अत: समाज में मध्यम वर्ग ही एक ऐसा वर्ग रहा, जो अपनी पारम्परिकता के मोह को छोड़ नहीं पाया। अपनी सड़ी-गली परम्पराओं की ओट में अपने इज्जत के मोह से जकड़ा, नवीन स्थितियों को आत्मसात करने में अपने आपको अशक्त महसूस करता दिखाई देता है।साठोत्तरी कहानियों का यथार्थ न केवल मध्यमवर्गीय आर्थिक स्थितियों के रूप में व्यकत हुआ है अपितु उसके संघर्ष आकांक्षओं व स्थितियों को भी व्यक्त करता है। मध्यम वर्ग आर्थक विषमताओं से जीवन पर्यन्त जूझता रहता है। उसकी ऊँची ऊँची महत्वाकांक्षाएं, प्राय: सपना सिद्ध होती दिखाई देती हैं। इन्हीं स्थितियों को साठोत्तरी कहानियों द्वारा व्यक्त किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

आध्यात्मिक प्रगति की यात्रा के विभिन्न सोपानों से 'सतयुग की वापसी'

डॉ. पिंकी मिश्रा *

प्रस्तावना – आधुनिक युग प्रगति का युग हैं। वर्तमान में हजारों प्रकार के ऐसे उपकरणों का अन्वेषण किया जा रहा हैं, जो एक आश्चर्यजनक परिवर्तन के रूप में हमें दिखाई दे रहा हैं। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई इस उन्नति ने निश्चित ही हमारे देश को धन और साधन सम्पन्न बना दिया हैं। इतनी उन्नति और सफलता प्राप्त करने के बाद भी यदि हम अपनी प्रगति यात्रा का सिलसिलेवार अध्ययन करे तो यह प्रतीत होता हैं, कि हम अभी भी निम्न श्रेणी में ही विचरण कर रहे हैं। यह एक ऐसा प्रश्न हैं जो हमें बार-बार कारण की खोज करने के लिए विवश कर रहा हैं। जब हमारे देश में प्राकृतिक संसाधन भी प्रचुर मात्रा में हैं, मनुष्य व श्रम का भी कोई अभाव नहीं हैं, तो आखिर ऐसी क्या कमी हैं ? जो हमारी प्रगति में बाधक हैं और हमें वर्तमान स्थिती से ऊँचे नही उठने दे रही है ?

वैज्ञानिक प्रगति पाश्चात्य देशों की विराजत नहीं हैं। भारत में किसी भी समय इसकी पराकाष्ठा तक पहुँचना बहुत आसान था। तथ्य पूर्णतः सत्य है, कि यदि कठोर परिश्रम और ज्ञान का उचित समावेश हो तो हर प्रकार की भौतिक सुख-सुविधाओं को प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा धार्मिक द्दष्टि से भी न्यायोचित हैं। हमारा इतिहास यह बताता हैं, कि जब हमारे देश में अध्यात्म और धर्म तत्व का जागरण पूर्णता की स्थिति में था, उन दिनों हम भौतिक दृष्टि से भी पाश्चात्य देशों से कहीं आगे थे, क्योंकि अध्यात्म के बिना हम किसी तरह की समृद्धि प्राप्त नही कर सकते। आज मनुष्य का जीवन इतना अस्त-व्यस्त हो चुका है, कि उसे नैतिक मूल्यों व सिद्धांतो का अनुसरण करने का भी समय ही नही हैं। मानव जीवन की विपुल इच्छाओं और लालसाओं में मनुष्य इस तरह फॅंस गया हैं, कि वह आत्म रहस्य जानने के लिए तत्पर नही हैं। अपने आपको अंधेरे कुएँ में धकेल कर आज मानव अपने जीवन का उपहास कर रहा हैं, उसे यह स्मरण करने की जरूरत हैं कि जिस आत्मज्ञान से शक्तियों को प्रकाश मिलता हैं, उससे ही आध्यात्मिक बल भी उन्नत होता हैं। इस स्थिति में पहुँचकर ही मानव जीवन का लक्ष्य पूरा होता हैं। श्रीराम शर्मा जी ने सम्पूर्ण संसार में अध्यात्म की ज्योत इसलिए प्रज्वलित की, ताकि हम जितना भी विकास करे वह आध्यात्मिक और भौतिक दोनों क्षेत्रों में हो। अपने साहित्य में, अपने कार्यक्रमों में, अनुष्ठानों व गोष्ठियों में गुरूदेव आचार्य श्रीराम शर्मा सदैव इस बात पर बल देते रहें, कि आध्यात्म ज्ञान का एक महत्वपूर्ण अध्याय अंधकार में पड़ा हैं तथा उसे बाहर निकालने की परम आवश्यकता हैं, क्योकि उसके बिना विकास की प्रक्रिया पूर्ण नही हो सकती। जीवन में बिना अध्यात्म के न तो किसी प्रकार के आनन्द की अनुभूति होती हैं और न ही चरम लक्ष्य की ओर बढ़ा जा सकता हैं।

परमपूज्य गुरूदेव आचार्य श्रीराम शर्मा ने आध्यात्मिक प्रगति की यात्रा का प्रथम सोपान जिसे माना है – वह हैं मनुष्य के हद्‌य में जिज्ञासा का भाव। क्योंकि जिज्ञासा ही ज्ञान की जननी हैं, विकास का बहुत बड़ा आधार हैं, एक ज्ञान शक्ति हैं। कहते हैं – जो व्यक्ति जिज्ञासु होता है वह प्रयत्नशील भी होता है, और जब व्यक्ति किसी क्षेत्र में प्रयत्न करता हैं तो विकास का द्धार भी स्वतः खुलने लगता हैं। मैं कौन हूँ ? मेरा अवतरण धरती पर किस उद्‌देश्य से हुआ हैं ? अध्यात्म क्या हैं ? अध्यात्म से क्या लाभ है ? यह विराट विश्व क्या हैं ? इसका संचालन कौन करता हैं ? ऐसे अनेक प्रश्न हैं, जिनका उत्तर खोजने से मनुष्य स्वयं का आध्यात्मिक विकास करने की दिषा में अपना पहला कदम आगे बढ़ा सकता हैं। आज मनुष्य जिस अवस्था में पहुँचा हैं, उसका सम्पूर्ण श्रेय उसकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को ही जाता है और यह जिज्ञासा की ही प्रेरणा हैं कि आज मनुष्य के ज्ञान का भंडार इतना विशाल हुआ हैं।

आज यदि मनुष्य की जिज्ञासा की वृत्ति कुंठित अथवा तिरोहित हो जायेगी तो उसके ज्ञान को प्राप्त करने की लालसा भी स्वतः समाप्त हो जायेगी। जिज्ञासा ही मनुष्य को उसके लक्ष्य की प्रति आकर्षित करती हैं और जब तक हम किसी वस्तु के प्रति हद्‌य से आकर्षित नहीं होते, तब तक उसका सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना संभव नहीं हो पाता। जिस वस्तु में रूचि होती हैं, उसके समस्त पहलुओं पर हमारा मन, हमारी कल्पनाएँ, गहरे सागर में गोते लगाकर हमें समस्त जानकारियाँ उपलब्ध कराती हैं। ठीक उसी प्रकार यदि हम यह निश्चय कर लें कि भौतिक समृद्धि प्राप्त करना हमारे जीवन का परम् लक्ष्य हैं, तो साधनों के अभाव में भी अध्यात्म का फल पुष्पित और पल्लवित हो जाता हैं।

आध्यात्मिक प्रगति की यात्रा में दूसरा चरण हैं- विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्नषील रहना। विद्या ही मनुष्य को लौकिक बन्धनों से मुक्त करती हैं। इसलिए कहा गया है 'विद्या ददाति विनयम्' अर्थात् विद्या विनय प्रदान करती हैं।

दु:ख, क्लेश, पीड़ा तक तक ही हमें सताती है, जब तक हमें आत्म-स्वरूप का ज्ञान नहीं होता। लेकिन जब हमें यह ज्ञान प्राप्त हो जाता हैं तो सम्पूर्ण जीवन प्रकाशमय हो जाता हैं। मनुष्य के मूल्यांकन की कसौटी धन सत्ता एवं सौन्दर्य नहीं हैं। विद्या और विवेक से ही मनुष्य के व्यक्तित्व की परख होती हैं और यही विद्या और विवेक रूपी सप्रवृत्ति उसे अध्यात्म के रास्ते की ओर अग्रसर करती हैं। विद्या ही आध्यात्मिक एवं भौतिक विकास का संबंध एवं आधार बनती हैं। यदि किसी मनुष्य की आर्थिक स्थिति विपरीत भी हो, तब भी ज्ञान की आराधना तो की जा सकती है। संसार में विद्या से बड़ा कोई धन नहीं हैं। यदि हम हर उम्र में विद्या की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) एम.के.एच.एस.गुजराती कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रहते हैं, तो इसका तात्पर्य यह हैं, कि हम बुद्धिमान हैं। शास्त्रों में भी कहा गया है :

गतेऽसि वयसि गाह्य विद्या सर्ववात्मना बुधै:।
यद्यपि स्यात्र फलदा सुलभा सान्यजन्मनि।।

अर्थात हे मनुष्यों ! उम्र बीत जाने पर भी यदि विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्नषील रहते हो तो तुम निश्चय ही बुद्धिमान हो। विद्या इस जीवन में फलवती न हुई तो भी दूसरे जन्मों में वह आपके लिए सुलभ बन जायेगी। लेकिन ये हमारे देश की विडम्बना हैं, कि हम अपना आध्यात्मिक विकास तो करना चाहते हैं, लेकिन हम आध्यात्मिक आवश्यकताओं को भूल चुके हैं, जबकि विद्या ही आत्मकल्याण का साधन है। आज कथित वर्गो ने विद्या को अर्थोपार्जन का माध्यम बनाकर पंगु कर दिया हैं, यही कारण हैं कि हम नैतिक, आत्मिक, आध्यात्मिक आदि क्षेत्रों में पिछड़ गयें हैं। यही सब उपलब्धियाँ हमें मिल सकती हैं, बस आवश्यकता है तो इस बात की, कि ज्ञान को उचित प्रतिष्ठा दी जाए। उसके लिए सर्वस्व न्यौछावर करने की भावना को व्यवहारिक जीवन में स्वीकार किया जायें।

आध्यात्मिक विकास की यात्रा में तीसरी महत्वपूर्ण भूमिका है - स्वाध्याय जीवन यापन की। क्योंकि स्वाध्याय में मनुष्य का अन्त:करण पवित्र हो जाता हैं तथा मन का मस्तिष्क ईष्वर की अराधना की ओर प्रवृत्त हो जाता हैं। ऐसी आध्यात्मिक अनुभूतियों का प्रस्फुटन स्वाध्याय के द्वारा ही होता हैं। आसन व ध्यान करना, जप-तप करना, व्रत उपवास रखना, दान दक्षिणा देना, धार्मिक साहित्य का पठन-पाठन करना, नियमित पूजन-अर्चना करना ही सच्चा धर्म नही हैं। ये समस्त गतिविधियों से निषचित रूप से बुद्धि, षुद्ध और आचरण परिष्कृत होता हैं लेकिन आध्यात्मिक प्रगति के लिए स्वाध्याय का अमृतपान करना आवश्यक हैं। क्योंकि स्वाध्याय से हमें मार्गदर्शन मिलता हैं, कठिनाईयों का सामना करने की प्रेरणा मिलती हैं, और यही हमें आध्यात्मिक विकास की ओर ले जाता हैं। ऋग्वेद में कहा गया है कि, - 'मात्र एक किरण सब कुछ प्रगट कर देती हैं, मात्र एक सत्य विशाल अस्तित्व में रूपान्तरित हो उठता हैं'। ठीक इसी प्रकार अध्यात्मरूपी महासागर के वक्ष पर स्वाध्याय रूपी फल पुष्पित और पल्लवित होता हैं। स्वाध्याय में ध्यान और चिंतन, मनन का समावेश होता हैं। इस संदर्भ में स्वामी दयानंद सरस्वती जी कहते हैं कि, - 'ध्यान स्वंय की खोज हैं, अपने आन्तरिक जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित करना ही ध्यान हैं। ध्यान से हम स्वचेतना का विकास कर सकते हैं तथा अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण रख सकते हैं'। जब हमारे मन के भीतर उठने वाली कल्पनाओं से हम दिग्भ्रमित नहीं होते, जब बाहरी जगत की ध्वनियाँ हमारे मन को विचलित नहीं कर पाती तो यह अवस्था 'ध्यान' की अवस्था होती है और इस अवस्था में हम लौकिक जगत से परे एक ऐसे बिन्दु पर सहज रूप से पहुँच जाते हैं, जहाँ मन वस्तुपरक तथा विषयपरक अनुभूतियों से ऊपर उठ जाता हैं। यह प्रक्रिया भी आध्यात्मिक वातावरण निर्मित करती हैं और ईष्वरीय परमसत्ता का अनुभव कराती हैं। यह जरूरी नहीं हैं, कि हमें इस उच्च अवस्था का अनुभव प्रांरभिक अवस्था में ही हो जाय। उसके लिए निष्चित ही दीर्घकाल तक नियमित अभ्यास एवं एकाग्रता की आवष्यकता होती हैं।

इस यात्रा के दौरान हमें अनेक आश्चर्यजनक बातें सीखने को मिलेगी। हम अपनी चेतना तथा व्यक्तित्व के विकास का अनुभव करने लगते हैं। जैसे-जैसे हमारी आंतरिक व्यक्तित्व की परतें खुलती जाती हैं, वैसे-वैसे हमारी क्षमताओं को भी विकास की ऊँचाईयाँ मिलती जाती हैं। कहने का अभिप्राय यह हैं, कि 'ध्यान' के माध्यम से हम भौतिक लाभों के अतिरिक्त अनेक व्यवहारजन्य त्रुटियों से छुटकारा प्राप्त कर सकते हैं। ध्यान की अवस्था में मस्तिष्क की ओर प्राण शक्ति का अतिरिक्त प्रवाह होता हैं, जिससे मानसिक क्षमताओं में आश्चर्यजनक सुधार होता हैं। इससे स्मरण शक्ति तथा विषय को समझने की क्षमता विकसित होती हैं, बस यही कारण है कि नियमित अभ्यास द्वारा स्वास्थ्य तथा प्रसन्नता का अनुभव किया जा सकता हैं। ध्यान से विचारों में अधिक स्पष्टता, चित्त में शान्ति, विश्राम तथा सजगता देखने को मिलती हैं तथा सृजनात्मक अभिव्यक्ति, प्रेरणा एवं अपने भीतर अतिरिक्त शक्ति का अनुभव होता हैं। इन सबके अलावा ध्यान का अभ्यास करने से हम अपने शरीर, मन तथा मस्तिष्क का वांछित दिषा में आवश्यकतानुसार प्रयोग कर सकते हैं। इसलिए विश्व का हर देश 'ध्यान' में अधिकाधिक रूचि ले रहा हैं।

भारत भूमि देव भूमि हैं, संस्कारों की भूमि हैं। इस भूमि पर बड़े-बड़े संत महात्माओं ने जन्म लिया हैं। हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति, हमारे रीति-रिवाज सभी विश्व विख्यात हैं। विकास की दृष्टि भी हम पीढ़ी दर पीढ़ी सफलता के आयामों को तय कर रहे हैं। ये बेहद गौरव का विषय हैं, कि इन दिनों मनुष्य अपनी बुद्धि, क्षमता, श्रम आदि का लगातार उपयोग करते हुए अनेकानेक सुविधाएँ अर्जित कर रहा हैं वह निरंतर प्रगति करता जा रहा हैं। निश्चित तौर पर मनुष्य का प्रगति दिषा में लगातार आगे बढ़ना उचित हैं, लेकिन हम विकास की अंधी दौड़ में इतने मदमस्त हो गये हैं कि अपने मानवीय व नैतिक संस्कारों से भी नाता तोड़ चुके हैं। पश्चिमी ताकते हमें खोखला करने का सतत प्रयास कर रही हैं। इस प्रगति का यदि हम मूल्यांकन करें तो यह निष्कर्ष निकलता है कि दया, ममता, स्नेह और संवेदना का स्त्रोत जहाँ सूख चुका हो, वहाँ सतयुगी वातावरण समाप्त हो जाता हैं और जहाँ मनुष्य की संवेदना जाग्रत अवस्था में सतयुगी होती है वहाँ सतयुगी वातावरण निर्मित हो जाता हैं। परमपूज्य आचार्य गुरूदेव श्रीराम शर्मा ने सतयुग की वापसी के लिए अनेक धार्मिक अनुष्ठानों की पूर्णाहुति तो की ही, साथ ही भारतीय जनमानस को भी यह प्रेरणा भी दी कि उज्जवल भविष्य सुनिश्चित करने के लिए हमें जनता की भावनाओं को उत्कृष्ट व आदर्षपूर्ण बनाने की आवश्यकता हैं। आचार्य जी देश में तेजी से हो रही प्रगति के खिलाफ नहीं थे, पर जिस प्रकार वर्तमान में प्रगति हुई है - उससे हमने क्या पाया हैं ? यह विचार करने योग्य तथ्य हैं। विलासिता के युग में अस्त-व्यस्त होता जीवन, एकांकी परिवार का बढ़ता महत्व, वैचारिक उत्तेजना, तनावपूर्ण दिनचर्या, अनिश्चित खान-पान ने हमारे दैनिक जीवन पर इतनी नकारात्मक छाप छोड़ी हैं, कि मनुष्य की औसत आयु का ग्राफ भी घटता जा रहा हैं। भीतरी जीवन की शक्ति की दुर्बलता घटोत्तरी एवं विकृति को यदि दुर्बलता-क्षीणता, रूग्णता का प्रमुख कारण ठहराया जाऐं, तो उचित प्रतीत होगा। आज अस्वस्थता सबसे बड़ी समस्या बन गई हैं, जिसके कारण मनुष्य जीवित रहते हुए अर्द्ध-मृतक जैसा हो जाता हैं। शरीर भले ही देखने में स्वस्थ प्रतीत होता हैं, लेकिन भीतर से निर्जिव निस्तेज, असमर्थ और असक्षम हो जाता हैं। जीवन शरीर और मन तक ही सीमित नहीं होता, उसमें हमें अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिए और सफलता प्राप्त करने के लिए अनेक मुश्किलों का सामना करना पड़ता हैं। ऐसे में यदि शरीर ही स्वस्थ नहीं होगा तो मन कैसे स्वस्थ होगा ? अस्वस्थता के कुछ प्रमुख कारण प्रदूषण, युद्धोंन्माद, दूषित खाद्य, अपराधों की वृद्धि आदि भी हैं। उस पर आर्थिक विपन्नता ने मनुष्य को महाप्रलय की स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया हैं। ऐसे में सतयुग की वापसी के लिए आवश्यकता इस बात कि हैं, कि आत्मभाव सुविस्तृत होता चला जाए। समाज का प्रत्येक प्राणी सब को अपने परिवार का सदस्य

मान कर नैतिक मूल्यों को आत्मसात करें, सहयोग के आधार पर उत्थान और सृजन हो तो सर्वत्र कल्याण का वातावरण निर्मित हो जाएगा।

आचार्य श्रीराम शर्मा जी ने इस संदर्भ में बहुत अच्छा कहा हैं– 'बड़प्पन को कमाना ही पर्याप्त नहीं होता उसे सुस्थिर रखने और सदुपयोग द्धारा लाभान्वित होने के लिए समझदारी, सतर्कता और सूझबूझ चाहिए'। भाव संवदेनाओं से भरे–पूरे व्यक्ति ही उस रीति–नीति को समझते हैं, जिसके आधार पर संपदाओं का सदुपयोग करते बन पड़ता है। अपने समय के लोग इन्हीं भाव संवेदताओं का महत्व भूल बैठे और उन्हें गिराते व गंवाते चले जाते है। यही कारण है, जो वे अपनी उपलब्धियों को भी विपत्तियों में परिणत करके रख देते हैं।

हर कोई भौतिक विषयों में आनन्द लेने जाता हैं जितना भी संभव होता है, उतना भौतिक ज्ञान एकत्रित करता हैं। कोई रसायन शास्त्री, भौतिक शास्त्री, राजनैतिक या कलाकार इत्यादि बनता है। हर कोई किसी ना किसी विषय में कुछ ना कुछ जानता है, और साधारणतया इसी को ज्ञान कहते हैं, परन्तु जैसे ही हम यह शरीर छोड़ते हैं, हमारा समस्त ज्ञान भी समाप्त जाता है। पिछले जन्म में कोई व्यक्ति महान ज्ञानी हो सकता हैं, परन्तु इस जीवन में उसे फिर से विद्यालय जाना होता हैं। प्रारम्भ से लिखना, पढ़ना तथा सीखना होता है। पिछले जन्म में हमने जो भी ज्ञान प्राप्त किया था, उसे हम इस जन्म में भूल जाते हैं। वास्तविकता यह हैं कि हम परम ज्ञान खोज रहे हैं, परन्तु वह इस भौतिक शरीर से नहीं पाया जा सकता। हम सब इन शरीरों से आनन्द खोज रहे हैं, परन्तु शारीरिक ज्ञान ही वास्तविक आनन्द नहीं है, यह एक आड़म्बर मात्र हैं। हमें सतयुग की वापसी के लिए समझना चाहिए, कि यदि हम इस आडम्बरी आनन्द में लगे रहे तो हम अपने सनातन आनन्द के स्तर को पाने योग्य नहीं रह पायेंगे। उदाहरण के लिए बीमार व्यक्ति को स्वादिष्ट खाना भी स्वादहीन लगता हैं। जब तक हम इस भौतिक शारीरिक जीवन की बीमारी से ठीक नहीें होंगें तब तक अलौकिक जीवन के मीठेपन का स्वाद भी नहीं लिया जा सकता हैं। वास्तव में वह हमें स्वाद में कड़वा लगेगा और फिर सांसारिक जीवन के आनन्द को बढ़ाने से हमारी बीमारी दिन–प्रतिदिन भी बढ़ती ही जायेगी। यदि हम वास्तव में सांसारिक जीवन के दुखों से मुक्ति पाना चाहते है, तो हमें शरीर की आवश्यकताएँ एवं आनन्द कम करने होंगें। वास्तव में सांसारिक आनन्द, आनन्द हैं ही नहीं। वास्तविक आनन्द तो कभी समाप्त ही नहीं होता हैं। जब इस तरह के भाव हमारी अंतरात्मा में समाहित हो जायेगें। तब तक हम जहाँ भी विचरण करेगें, वहीं पर सतयुगी वातावरण निर्मित हो जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति – 1980
2. सतयुग की वापसी – 1988
3. अध्यात्मवादी भौतिकता अपनाई जाये – 1989
4. समस्त समस्याओं का हल –अध्यात्म – 1989
5. अध्यात्म मंडलों की स्थापना – कल्पवृक्ष का आरोपण – 1990

****

भारत शासन द्वारा किसान ऋण माफी योजना -2008 के पुर्व मध्यप्रदेश मे ऋण मुक्ति सम्बन्धी किए गये वेधानिक प्रयास

सारिका जौहर *

प्रस्तावना - भारत एक कृषि प्रधान देश है यहॉ के 78 % ग्रामीणो का कृषि व कृषि आधारो व्यवसाय प्रमुख दुकान धंधा है यह ग्रामीण वर्ग अशिक्षा दुकान कृषि तकनीक के अभाव खाद बीज के अभाव मानसुन का समय पर न आना बहुत आना जेसे विभिन्न कारणो से ग्रामीण कृषक आर्थिक रूप से सम्पन्न नही हे अत कृषि आवश्यकता व सामाजिक आवश्यकता हेतु कर्ज होता हे समय पर चुकता न कर पाने की वजह से ऋण ग्रस्त रहता है!

ऋण के प्रकार - प्रमुख रूप से दो प्रकार के ऋण होते है?

1. **असस्थापन ऋण -** ये ऋण सामान्यत साहुकार व्यापारी कमीशन एजेण्ट मित्र रिश्तेदार तथा भुसस्थापक द्वारा प्रदान किए जाते हे? ये ऋण उच्च ब्याज दर व जमानत के वस्तु बंधक के रूप मे रखकर देते हे यह बहुत आसानी से बिक जाता हे कर्ज वापस न करने की दशा मे बधक रखी बस्तु हडप ली जाती है असंस्था ऋणदाता की नीती शोषण की होती है?

2. **संस्थापन ऋण -** सहकारी ऋण समितियों भुमि विकास बैक वाणिज्यिक बैक शाशकीय ऋण मे ऐसी सस्थाए हे जिनकी ब्याज दर कम होती हे परन्तु इनका प्रमुख दोष ऋण की कागजी ओपचारिकता व समय पर प्राप्त नही होता है?

सस्थागत सस्थाओ का विकास स्वतन्त्रता प्राप्ति पश्चात हुआ हे इसके पुर्व असस्थागत ऋण का प्रतिशत 92.7% इस वर्षिय आर्थिक सर्वेषण 1351 के अनुसार व 73% संस्थागत था 1981 के आर्थिक सर्वेषण मे सस्थागत ऋण 64% व असस्थागत 36% रहा है?

भारत सरकार के प्रयास - असस्थागत से संस्थागत ऋण बढाने मे भारत सरकार के प्रमुख प्रयास निम्न है?

(i) 1954 मे भारतीय ऋण सर्वेषण समिति की रिपोर्ट
(ii) 1966 मे कृषि ऋण समीक्षा समिति की अनुशंशाए
(ii) 1969 मे बेंको का राष्टीकरण भारत सरकार द्वारा
(iv) भारत सरकार द्वारा बहु एजेन्सी ऋण प्रणली का बिकास
(v) भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास बैक की स्थापना
(vi) 1982 मे नाबार्ड की स्थापना
(vii) 1992 की आर्थिक उदार नीति से ऋण प्रवाह का बढाना

आदि कदमों ने सेंस्थागत ऋणो का प्रतिशत असंस्थागत ऋणो की तुलना मे काफी अधिक करने मे योगदान दिया

म.प्र. सरकार के प्रयास 7 असंस्थगत ऋणों के चंगुल से दिलाने में म.प्र. में हुए वैधानिक प्रयास प्रकरख रूप से 5 है।

1 म.प्र. साहुकारी अधिनियम 1934 :- इस अधिनियम में 14 धाराए है।

धारा-1 इस धारा के अधिनियम के लागू होने का दिनांक व नाम है

धारा-2 इसके लागू होने वाले शब्दों जैसे - अधिकोष, समवय, सहकारी समिति, न्यायालय, सहूकार, ब्याज, ऋण, राजिस्ट्रीर रजिस्ट्रीकर्ता प्राधिकारी को परिभाषित किया है।

धारा-3 साहूकार द्वारा लेखों का रखा जाना व विवरणों को ऋणी को प्रदान करने के विवरणों को निर्देश है।

धारा-4 लेखा प्रतियों के प्रमाणीकरण हेते निर्देश है।

धारा-5 साहूकार द्वारा प्रदत लेखों की ऋणी स्वीकरार कने हेतु बाध्य नहीं होगा इस बाबद निर्देश है।ऋण बाबद न्यायालयीन प्रक्रिया का विवरण है।

धारा-6 ऋण ीुगतान की पावती से संबंधित है।

धारा-7 ऋण बावद न्यायालयीन प्रक्रिया का विवरसण है

धारा-8,9,10 में ब्याज को सीमित करने की न्यायलय की शक्ति का वर्णन है।

धारा -11 ऋण के भुगतान को किश्तों में करने कि न्यायालय की शक्ति का उवलेख है।
साथ ही साहूकारों के रजिस्ट्रेशन व रजिस्ट्रीकरण प्रमाण पत्र करने, दपंजीयन शुल्क, करोबारों का क्षेत्र, बगैर प्रकरण पत्र कारोबार करने की वर्जना, नियामों के उलनंघन पर शक्ति का विवरण हो।

धारा- 12 राज्य शासन को नियम में संशोधन की शक्ति का प्रावधान हो

धारा-13,14 में उन क्षेत्रों का विरण है जहाँ यह नियम लागू नहीं होगा।

(2) **मध्यप्रदेश साहूकारगण नियम संवत 2009 सवतं1952 -**यह अधिनियम म.प्र. में 19/08/1952 से लागू माना जावेगा। मूलत: यह साहूकारों के पंजीयकरण, कारोबारी क्षेत्र, पंजीकरण प्रमााण पत्र उसका नियम, नवीकरण, अवधि, अवधि समारती पश्चात साहूकारी कार्य करने संबंधि शास्ती आदि के बारे में है। इसमें प्रारूप क्र.- क,ख,ग, घ,उ, है। ये क्रमश: रजिस्ट्रीकरण आवेदन, प्रमाण पत्र, साहूकारों का रजिस्टर, नवीनीकरण आवेदन तथा देनछार के लेखा विवरण हेतु नियत है।

(3) **मध्यप्रदेश ग्रामीण ऋण विकली तथा ऋण स्थगन अधिनियम 1975 -** पूर्ण अधिनियम 15/10/1982 को निरस्त करते हुए राष्ट्रपति की अनुमति दिनांक 21/01/1983 द्वारा म.प्र. राजपत्र में 22/01/1983 में प्रकाशित हुआ। इसके कृषि भुमि, सिविल न्यायालय के अधीन विभिन न्यायालय सहकारी सोसायटी, ऋण भूमिहीन कृषक, स्थानीय प्राधिकरी, सीमान्त किसान, अनुसूचित सदस्य अनुसूचित जब जाति सदस्य, ग्रामीण क्षेत्र,ग्रामीण शिकपी छोटा किसान, आदि सुपरिभाषित कर अधिनियम लागू होने/ न लागू होने की प्रक्रिया का वर्णन हैं

(4) **म.प्र. के कमजोर वर्गो के कृषि भूमि धारको को उधार देने वालों**

* 25 भगत सिंह मार्ग, मनावर, जिला - धार (म.प्र.) भारत

के भूमि संबंधि कुचको से परिगाण तथा मुक्ति अधिनियम 1976 – कृषि भूमि धारकों को कृषक ऋण ग्रस्तना से मुक्ति दिलाकर उनहें आर्थिक रूप से बेहतर बनाने हेतु वयह अधिनियम म.प्र. राजपत्र में 31/01/1977 में प्रकाशित हुआ तथा 01/01/1971 से लागू हुआ

धारा –1 अधिनियम का नाम व लागू होने का दिनांक बतलाती है।

धारा–2 इसमें नियत दिन, संहिता, सामाज के कमजोर वर्गो के कृषिभूमि धारकों का ऋण देने वाले, मूलधन उधार के प्रतिशित संव्यवहार के तरीके सुपरिभाषित है।

धारा–3 इस अधिनिपयम का अन्य विधियों पर अध्यारोही प्रभाव का वर्णण है।

धारा–4 इसमें उधार के समस्त वर्जित संव्यवहार इस अधिनियम के तहत संरक्षित तथा अनुतोश योग्य होंगे।

धारा–5 संरक्षित व अनुतोष योग्य आवेदन प्रक्रिया स्पष्ट की गई है।

धारा–6 इसमें उपखंड अधिकारी व्दारा प्रकरण की जाँच कार्यो का विवरण दिया गया है जोसे– मूलधन, ब्याज, वर्जित संव्यवहार, सुनवाई तिथि, स्थान, जाँच का परिणम आदि है।

धारा–7 इसमें धारा 6 के परिणामों के आधार पर उपखंड अधिकरी आदेश जपी करता है जैसे– बंधक भूमि विक्रय निरस्त कराना, कब्जा वापस दिलाना आदि।

धारा–8 धारा 7 के आदेश के खिलाफ अपील करने की प्रक्रिया इसमें है।

धारा–9 इस धारा में उपखंड अधिकारी के आदेश के खिलाफ अपील यदि कलेक्टर कार्यलय में खारिज होती है तो उपखंड अधिकारी का आदेश ही अंतिम आदेश होगा तथा सिकी न्यायालय में प्रनरीक्षण हेतु अमाश्य होगा।

धारा –10 कोई भी विधि व्यवसायी प्रकरण से जुड़ा होने पर पेरवी नहीं कर सकता।

धारा –11 इसमें यदि प्रकरण पूर्व से सिकी न्यायालय या उपखंड अधिकारी से जुडा ऋण हो तो भी इस अधिनियम के तहत हल किया जावेगा।

धारा–12,13 में उधार देने वाले के वर्जित व्यवहार पर उपखंड अधिकारी के निर्णय पर किसी प्रकार की न्यायीक कार्रवाई पर प्रतिबंध हे।

धारा –14 इस अधिनियम को सिविल न्यायालय में चुनौती देना वर्जित है।

धारा–15 भूमि का अंतरणा जो उधार के वर्जित संव्यवहार के तहत आता है। इस धारा धारा अकृत व शुन्य मानी जावेगा।

धारा–16,17,18 इनमें अधिनिचयम की कठिनाई दूर करने की शक्ति, की गई कार्रवाई का रंक्षणा व नियम बनाने संबधि प्रक्रियाओं का वर्णन है। इस अधिनियम का आपातकाल में बहुत उपयोग हुआ है।

(5) **म.प्र. सामाज के कमजोर वर्गो के कृषि भूमिद धारकों को उधार देने वाले के भूमि हड़पने संबंधी कुचक्रो के परिणम तथा मुक्ति नियम –1978** – म.प्र राजपत्र में दिनां 12:05:1978 को प्रकाशित ये 8 नियम 1976 के नियमों की कमियों को दूर करते है।

नियम–1 नियम का नाम व प्रभावी की दिनांक दर्शाता है।

नियम–2 अधिनियम 1976 की धारा (3) का परिवर्तित रूप हो।

नियम–3 धारा–5 के अधीन उपखंड अधिकारी को आवेदन करने का अधिकार कृषको 31/01/1984 तक दिया है।

नियम–4 धारा–7 की उपधारा (2) के अधीन भूमि अंवरण की तारीख से पूर्ववर्ती 3 वर्षो में बेची गई भूमि की कीमत या उसी प्रकार की भूमि की विक्रय कीमत का औसत ज्ञात करने हेतु है।

निमय–5 उपखंड अधिकारी बंधक वस्तु की जानकारी 15 दिन में माँगने का अधिकार हेतु।

नियम–6 उपखंड अधिकारी पटवारी से भूमि जानकारी के साथ शुद्ध आय के आकलन बाबत है।

नियम –7 उपरोक्त जानकारी के पश्चात उपखंड अधिकारी प्रकरण संबधी आदेश जारी करने हेतु है?

नियम –8 अपील सबधी अधिकारी हेतु हैं।

परिणाम – म.प्र. सरकार के (1 साहुकारी अधिनियम 1934 साहुकार गण नियम 1952 ग्रामीण ऋण विमुकी तथा ऋण स्थगन अधिनियम 1975 भुमिसंबधी कचको के परिणाम तथा मुक्ति अधिनियम 1976 1978 से असस्थागत ऋण कम होते गये साथ ही भारत सरकार के विभिन्न कदमो का प्रभाव भी दस वर्षीय आर्थिके सर्वेषण मे स्पष्ट सबकता हे आर्थिक सर्वेषण 1991 मे सस्थागत ऋण 64% व असस्थागत ऋण हो गया जो 1951 मे सस्थागत ऋण व असस्थागत ऋण था 40 बर्षो के राज्य व केन्द्र सरकार की योजना का नतीजा हे कि असस्थागत ऋण घट कर रह गया इसी क्रम मे 1992 की आर्थिक प्रवाहे नीति मे कृषक प्रवाह बढाया गया व आर्थिक सर्वेषण 2004–05 मे पुन: यह पता चला की ऋण योजना संस्थागत जो हो रही हे पर समाप्त नही हुई नही हे किसान आत्महत्या कर रहे हे सरकार ने 2004–06 मे कृषि ऋण खानो को पुन: सरचित व पुन: अनुसुचित कर किसानो की ऋण गणना को कम करने के प्रयास मे किसान कर्ज माफी राहत योजना –2008 के माध्यम से श्रीमान बधु व अन्य कृषको की ऋण मुक्तता कम करने को प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र भु राजस्व संहिता 1970 एस. के. वाधवा का हाउस पुराने हाईकोर्ट के गेट के पास, ग्वालियर।
2. भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था कृषि व्यवस्था प्रकृति एव समस्याए श्रीधर पाडेंण्य इडोबाजी पब्लिशर, पटना 1992।
3. भारत की अर्थनीति नये आयाम को चक्रवती रंगराजन भुतपुर्व गर्वनर आर बी आई राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट दिल्ली 2602 ।
4. भारतीय अर्थव्यवस्था सप्रदत्त एवॅ के बी सुन्दरम एस चॉद एण्ड कम्पनी लिमिटेड रामनगर, नई दिल्ली 2006 ।
5. मसिक एव वार्षिक पत्र पत्रिकाए।

i. कुरूक्षेत्र पत्रिका ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
ii. रिजर्व बैक ऑफ इडिया बुलेटिन, नई दिल्ली।

****

किसान कर्ज माफी / राहत योजना 2008 एक अध्ययन, निष्कर्ष, सुझाव एवं मुल्यांकन म.प्र. के सन्दर्भ में

सारिका जौहर *

प्रस्तावना – किसानों के असंस्थागत ऋण को विभिन्न प्रयासों से संस्थागत में बदलने के भागीरथी 40 वर्षीय प्रयासों के पश्चात् दस वर्षीय आर्थिक सर्वेक्षण 2004-05 में पुन: यह पाया कि किसानों की ऋण ग्रस्तता कम नहीं हुई है व वे आत्महत्या कर रहे है, ऋणग्रस्तता कम करने हेतु 2004 व 2006 में कृषि ऋण खातों को पुन: संरचित व पुन: अनुसूचित कर 2008 में किसान कर्ज माफी/राहत योजना -2008 लागू की।

कर्जमाफी/राहत योजना 2008 – 1 मार्च 2008 से 30 जून 2009 तक लागू थी। 6-6 माह के दो चरणों में 30 जून 2010 तक इसे लागू रखा गया।

पात्र कृषक :-

सीमान्त	लघु या मध्यम	अन्य किसान
(i) 2.5 एकड़ भूमि मालिक, बटाईदार या किराये पर कृषि करने वाले	5 एकड़ भूमि मालिक बटाईदार या किराये पर कृषि करने वाले	5 एकड़ से अधिक भूमि मालिक 5000 से अधिक कर्ज हों

(ii) 50000 से कम कर्ज हो व रकबा कुछ भी हो

विभिन्न ऋण

(i) अल्पावधि उत्पादन ऋण- 18 माह अवधि तक चुकाना होता है।

(ii) निवेश ऋण- दीर्ध अवधि ऋण है। कुआं खोदने, ट्रैक्टर खरीदने, अन्य महँगे कृषि उपकरणों हेतु दिया जाता है।

(iii) कृषि कार्य कलापों हेतु ऋण- दीर्घावधि ऋण है। मुर्गी पालन, कुक्कुट पालन,मछली पालन आदि कार्यो हेतु दिया जाता है।

ऋण माफी- लघु व सीमांत किसानों पर ही लागू होगी। ऐसी ऋण किश्ते जो 29 फरवरी 2008 तक ओवर-ड्यु है, माफ होगी बाकी नही।

ऋण राहत-अन्य बड़े किसानों को (O.T.S) के तहत ऋण राहत प्राप्त होगी। पात्र राशि के 25% या अधिकतम 20000 रू. तक राहत दी जावेगी। शेष 75% राशि तीन किश्तों में 30 सितम्बर 08, 31 मार्च 09 व 30 जून 2009 तक भरने पर। इस कृषकों को पुन: ऋण लेने की पात्रता भी दी गई।

ब्याज- ऋण दाता संस्थाए 29 फरवरी 2008 के बाद की अवधि पर कोई ब्याज नहीं लगायेगी किन्तु अन्य किसानों के प्रकरणों में 30 जून 2009 के पश्चात ब्याज लगा सकती है व किश्ते चुकाने में जो चुक करता है, तो राहत के लिये अपात्र होगा।

परिवेदना अधिकारी- हर ऋण दाता संस्था का राज्य स्तर पर यह अधिकारी होगा। असंतुष्ट कृषकों के प्रकरणों की सुनवाई करेगा। इसका निर्णय अंतिम होगा।

अनुवर्तन- योजना के प्रचार प्रसार की जबावदारी ऋण दाता संस्थाओं की है। इसकी राज्य स्तर पर भी सात सदस्यीय समिति गठित की गयी है।

समकों का संग्रहण –

(i) 30 प्रश्नों की प्रश्नावली बनाकर मध्यप्रदेश के लगभग 22 जिलों से प्राप्त समको का विश्लेषण किया है।

(ii) ऋण दाता संस्थाओं जैसे सहकारी संस्थाओं, सहकारी बैंको, राष्ट्रीयकृत बैंकों, ग्रामीण क्षेत्रीय बैंकों व निजि बैंकों से भी समंक प्राप्त किये है।

निष्कर्ष-

(1) म.प्र. के पात्र कृषकों के समंक निम्न प्राप्त हुए-संख्या (करोड़ में राशि)

ऋण माफी हेतु प्रस्तावित कृषक -	12,86,786-	2134.56
ऋण राहत हेतु प्रस्तावित कृषक -	5,47,523-	1015.85
कुल प्रस्तावित कृषक -	18,34,309-	3150.40

(2) अल्प अवधि ऋण -	**कृषक संख्या**	**(करोड़ में राशि)**
उत्पादन ऋण हेतु प्रस्तावित -	13,67,270-	1996.46
निवेश ऋण हेतु प्रस्तावित -	1,08,404-	198.20
कृषि कार्यो हेतु प्रस्तावित -	3,58,635-	955.74
कुल-	18,34,309-	3150.40

यह निष्कर्ष है कि अल्पावधि उत्पादन ऋण > निवेश ऋण > कृषि कार्यो हेतु ऋण

(3) **अंतिम रूप से यह पाया गया कि**

	कृषक संख्या	(करोड़ में राशि)
अल्प अवधि उत्पादन ऋण -	12,13,692-	1650.90
निवेश ऋण -	2,86,359-	560.55
कृषि कार्यो हेतु ऋण-	1,21,319-	66.71
कुल	16,21,550-	2278.16

(4) 2,12,759 कृषक 872.24 करोड़ का ऋण देने से वंचित रहे।

(5) ऋण दाता संस्थाओं के नाम	**कृषक संख्या**	**(करोड़ में राशि)**
(i) सहकारी साख संस्थाओं से -	12,62,952-	1685.57
(ii) ग्रामीण क्षेत्रीय बैंकों से -	1,30,332-	262.70
(iii) राष्ट्रीय कृत बैंको से -	4,37,576-	1195.89
(iv) निजि बैंको से -	3,479 -	6.94

* 25 भगत सिंह मार्ग, मनावर, जिला - धार (म.प्र.) भारत

(6) ऋण दाता संस्थाओं के नाम		कृषक संख्या	(करोड़ में राशि)
(i) सहकारी साख संस्थाओं से	-	12,44,058-	1423.05
(ii) ग्रामीण क्षेत्रीय बैंकों से	-	1,39,026-	186.09
(iii) राष्ट्रीय कृत बैंको से	-	2,37,034-	667.87
(iv) निजि बैंको से	-	1,432 -	1.84

बिन्दु क्र. 5 व 6 में प्रस्तावित कृषकों की संख्या 1621550 व राशि 3150.4 करोड़ के बदले 2,12,759 कृषक 872.24 करोड़ की राशि पाने से वंचित रहे।

ऋण देने में संस्थाओं का योगदान निम्न प्रकार रहा -

साख सहकारी संस्थाऐं > राष्ट्रीयकृत बैंक > ग्रामीण क्षेत्रीय बैंक > निजि बैंक कृषकों का रूझान निम्न प्रकार रहा -

सीमान्त व लधु कृषकों का - सहकारी संस्थाओं की तरफ

बड़े किसानों का - राष्ट्रीयकृत बैंक कर तरफ

7. प्रश्नावली द्धारा प्राप्त समंको व संस्थाओं द्धारा प्राप्त समंको के आधार पर यह निष्कर्ष है कि दोनों में सीमान्त व लघु कृषकों ने ऋण अधिक लिया है व अन्य कृषकों ने कम।
8. ऋण प्राथमिकता दोनों ही प्रकार के समंकों में अल्पावधि उत्पादन ऋण, निवेश ऋण व कृषि कार्य कलाप रहे।
9. ईमानदारी से ऋण भुगतान करने वाले कृषकों को लाभ नही मिला।
10. बड़े कृषकों को अधिक लाभ हुआ।

सुझाव-संस्थाओं को ऐसी व्यवस्था करना होगा कि,

1. ऋण अदा न करने वाले को दंड, ईमानदार को प्रोत्साहन देना होगा।
2. ऋण दाता संस्थाओं को कम ब्याज दर ऋण की गुणवत्ता, ऋण अदायगी की सुनिश्चित प्रक्रिया विकसित करना होगी।
3. ऋण दाता सस्थाओं को खुद की ऑडिट पर निगरानी रखना होगी।

योजना का मुल्यांकन :

1. कृषको का दृष्टीकोण- 31.03% कृषकों ने योजना का स्वागत किया। 33.04% कृषकों ने नाराजगी जाहिर की। 10.43% कृषकों ने कोई राय व्यक्त नही की।
2. बैंक की दृष्टीकोण- ईमानदार भुगतान कर्ता को भी प्रोत्साहन देना चाहिए था अन्यथा ऋण न भुगतान करने की प्रवृति भविष्य में बढ़ेगी।
3. आर्थिक व सामाजिक दृष्टिकोण - इस योजना में म.प्र. के 16,21,550 कृषकों को 2278.16 करोड़ का लाभ हुआ है। इसके समाज का यह तबका मुख्यधारा से जुड़ा है। इस योजना में ईमानदारों को भी प्रोत्साहन देना था।

कुल मिलाकर योजना का सकारात्मक पक्ष नकारात्मक से भारी है। यह कृषकों के सामाजिक, आर्थिक उत्थान, वर्ग संधर्ष की रोकथाम, आपराधिक गतिविधियों की रोकथाम , सामाजिक गतिविधियों की समरसता को बढ़ावा देने वाली योजना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कृषि ऋण माफी / राहत योजना - 2008 म प्र राज्य सहकारी बैक मर्यादित ,प्रधान कार्यालय न्यु मार्केट, तात्या टोपे नगर, भोपाल रिपोर्ट।
2. कृषि ऋण माफी / राहत योजना 2008 म प्र राज्य सहकारी एव ग्रामीण विकास बैक मर्यादित ,8 अरेरा हिल्स, पुरानी जेल रोड, पोस्ट बेग नं 18, भोपाल 462004 रिपोर्ट
3. एस. एल. बी. सी. रिपोर्ट सेन्ट्रल बैक ऑफ इंडिया, 9 अरेरा हिल्स भोपाल।
4. State bank of Indore – e – cisculars, Deptt; Agriculture, SI No, 141/08-09, Ciscular No, Agri/13/ 08-09, 07/07/ 2008

(ii) Deptt. Agriculture, circulare no, Agri/No/12/2008, 26/ 06/2008

(iii) Deptt. Agriculture, circulare No, Agri /29/2007-08, 07/ 03/2008

(iv) Deptt. Agriculture, SI No. 145/14/08-09,07/07/2008

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

A Study of Priorty Sector Lendings for Public Sector Banks of India

Dr. Shweta Singh*

Abstract - A bank is an institution which accepts deposits from the public as well as lends money to the public. From the definition itself it is clear that one of the primary functions of a bank is lending of money. Banks were assigned a special role in the economic development of the country besides ensuring the growth of the financial sector. The present peice of Research work is on performance of public sector banks in priorty sector advances in India. The paper also throw light on the problems or issues which arise due to priorty sector advances and also suggest some strategies to sought out these issues.
Key Words - priorty sector advances, issues, recovery, strategies.

Introduction - Banks are not merely purveyors of money : they are also cataytic agents in accelerating the tempo of development of different sectors of the economy. In a developing economy which is starved of capital, certain sectors and sections of the society, need special and priority attention in the matter of funds availability. Banks in India have been called upon to perform this functions and they have evolved special schemes and regulations for the development of credit to sectors that deserve primary care and attention.

The priorty sectors is imprtant from the point of view of development of the country. It is the sector which should get adequate credit. The developmant of the country is depends on the development of priority sector gets less credit compare to non-priority sector.

The working group appointed by the Reserve Bank of India and the Chairmanship of Dr. K.S. Krishnaswamy in 1980 came to the conclusion that a new direction to the Banks was needed so thats the advances under the Priorty Sectors were given more and more to the comparatively weaker and more under Privileged Sections of the society. The group also evolved the concept of the weaker sections with in two main segments under priorty sectors mainly agriculture and small scale industries.

Banks were assigned a special role in the economic development of the country besides ensuring the growth of the financial sector. The banking regulator, the Reserve Bank of India has hence prescribed that a portion of bank lending should be for Developmental activities which it calles the Priorty Sector.

Priorty Sector Comprises –

(i) Agriculture
(ii) Micro, Small and Medium Enterprises
(iii) Export Credit
(iv) Education
(v) Housing
(vi) Social Infrastructure
(vii) Renewable Energy
(viii) Others

The target and sub-target set under priorty sector lending for domestic and foreign banks operating in India are furnished **table 1 (see in last page)**

ANBC or credit equivalent of off-balance sheet exposures (as defined by department of banking operations and development of Reserve Bank of India from time to time) denotes the outstanding as on March 31 of the previous year.

The concept of Priorty sector was totally absent in the loan profolio of Commercial Banks prior to independence and even the primary sector like agriculture was not financed by the commercial banks who confined their loan activities to big business houses and industries only. Prior to nationalisation the advances for agriculture as on 30th June 1969 stood at Rs. 162 crores only. Similarly advances to small scale insudtries stood at Rs. 257 crores constituting 11 percent of the total advances. Even though the funds with the banks belonged to the public a very insignificant proportion of the people belonging to the weaker sections of the community were deriving any advantages from the banking industry because the banks were shy in financing the priorty sectors.

Priorty Sector Advances Prior to Nationalisation by Public Sector Banks

Priorty Sectors	No. of Acco. unts in Lakh	Amount outstand Rs. in Crores
(1) Agriculture off which	1.7	162(5.4)
(A) Direct	1.6	40 (1.3)
(B) Indirect	0.1	122 (4.0)

*Assistant Professor (Commerce) S.S. Memorial Mahavidyalaya Sutiyani Mod, Takha, Etawah (U.P.) INDIA

(2) Small Enterprises	0.5	257 (8.5)
(3) Other Priorty Sector	0.4	22 (0.7)
Total Priorty Sector Advances	2.6	441 (14.6)
Net Bank Credit	-	3016

Figures in brakets represent percentages to Net Bank Credit

Their was a phenomenal growth of priorty sector adances in the post-nationalisation period. The total priorty sector advances went up from Rs. 441 crores in June 1969 to Rs. 1,04,094 crores in June 1999. The percentage growth during the above period was from 15 percent to 39.2 percent. The total priorty sector advanced as on 30 June 2002 stood at Rs. 1,71,484 which is went up to Rs. 6,10,450 crores in June 2008. The percentage growth during the above period was from 43.5 percent to 44.7 percent. The total priorty sector advances as on 30 June 2009 and 30 June 2010 respectively stood at Rs. 72,00,834 and 8,64,564 constituting 42.5% and 41.6% of the total advances. As on end March 2016 PSBs achivement of priorty sector is 39.3%.

The banking system has changed from commercial loans treory landing to social oriented economic development theory. The rational approach in credit disbursal and rendering services that are needed by the people is the main thrust. Social banking primarily aims at meeting national objectives namely :

(a) Extending banking facilities to unbanked and under-banked centres in rural areas.

(b) Financing of priorty sectors in order to improve the economic life of the poverty-stricken people.

priorty sector has considerable potential economic importance but is sluggish due to lack of financial aid and other needed services.

The sum-up proper assessment pertaining to credit absorption of the priorty sectors is pertinent so that credit provided for this sector does not remain idle, but may be fully and productively utilised. Therefore a need has arisen for preparing credit plans carefully dovetailed with the above nation-economic objectives.

Share of PSLs in total Advances of Public Sector Banks

Year	Total Public Sector Advances	Priorty Sector Advances of PSBs	% Share of Priorty Sector Advances
2002	473951	171483	36.2
2003	536429	203097	37.9
2004	616569	244454	39.6
2005	817344	310729	38.0
2006	1075073	409791	38.1
2007	1374327	521180	37.9
2008	1722068	608962	35.4
2009	2094025	719767	34.4
2010	2511454	864954	34.4
2011	3052063	1028616	33.7
2012	3561759	1130000	31.7

Performance of total Priorty Sector, Agriculture Sector and Weaker Section under National Goal in Public Sector Banks

Year	Total Priorty Sector	Agriculture Sector	Weaker Section
2001	43.7	15.6	7.21
2002	43.1	15.8	7.3
2003	42.5	15.3	6.7
2004	43.6	15.0	7.4
2005	43.2	15.6	8.8
2006	43.1	15.1	7.6
2007	39.6	15.5	7.1
2008	44.6	17.4	9.3
2009	42.5	17.5	9.8
2010	41.1	17.7	9.9
2011	41.3	16.6	9.8
2012	37.4	15.8	9.7
2013	36.3	15.0	9.8
2014	40.0	N.A.	N.A.
2015	N.A.	N.A.	N.A.
2016	39.0	N.A.	N.A.
2017	39.5	18.3	11.4

Conclusion - Hence it can be concluded that the percentage share of priorty sector advances in public sector banks advances declined from 2001 to 2017. The public sectors banks in India were not able to achive the national target for priorty sector (40% of NBC / ANBC).

It may be re-emphasised that the priorty sector need special attention and treatment because most of prospective beneficiaries under the priorty sector have no resources-base and are more or less without the requisite purchasing power to enable them to acquire the various inputs and even the income generating assets. Hence the need for a sound, effective and continous credit delivery system for the priorty sector.

Issues & Challanges - The main operational problems, in regard to disbursements and recoveries of priorty sector advances may be finally summarised as under :

1. Lack of branches in rural areas.
2. Political interfairance
3. The subsidy component of the loans advances under IRDP was not released quickly despite the clear-cut instructions of the government and the reserve bank of India.
4. Legal dificulties.

The major deficiencies are as follows –

1. The banks are problem of high level of overdues. These overdues have clogged the process of credit recycling since they have substaintially reduced the capacity of banks to grant loans. Mounting overdues result in increasing the transaction cort for effective recovery.
2. There are considerable regional disparities in the distribution of credit by banks.
3. In addition to above problems many banks suffer from poor management and lack of enthusiasm and dedication among staff members resulting in a great

deal of inefficiency and poor services to customers.

4. Opening the large numbers of branches in rural areas which do not have adequate business potentian, rise in establishment expenses affects the profitability of banks adversely.
5. The commercial banks have found sanctioning and monitaring a large number of small advances in their rural branches. Time consuming and manpower intensive and consequently a high cost proposition supervision of rural advances has come to be Neglected. The staff in rural branches lack sufficient motivation to work in rural areas for various reasons.
6. The fast increasing in banks credit to rural areas after nationalization has created strains in the system due to rapid expantion and diversification one of the problems of such rapid expansion has been the deteriration in quality of scheme preparation, particularly under the anti-poverty programmes. Deterioration in the quality of lending is also due to heavy work load of day to day housekeeping, without commensurate increase in the supporting staff.

Two major problems are casing great concern to Indian bankers in respect of bank lending to priorty sector. The first such problem in high volume of overdues and the other is the ever increasing cost of supervision.

Suggestions :

Agricultural Advances - Following are the suggestions for having a thorough control on agricultural advances :

1. Advances of formers living in far of villages from the location of bank, are to be discouraged as they enable difficulties in control of such loans.
2. The details of the scheme are to be explained fully to the farmers, many of whom are illiterate. Advantages of repaying the loans in time are to be stressed.
3. The whole requirement of the borrower are to be assessed carefully and should be financed fully.
4. Technical feasibility regarding suitability of land, availability of water and proper types of fertiliser, seeds, inputs etc. are to be assessed before making the loans.
5. Loan documents are to be executed in the presence of suitable witnesses in order to avoid causes of impersonation.
6. Documents are to be executed jointly from all the persons who owns the land which is mortgaged to the bank.
7. In case of advances to illiterate borrowers / illiterate guarantors, the prescribed certificate, to the effect that they have signed the documents after contents have been explained to them and they have understood the transaction, should be obtained and kept on record.
8. Pre-sanction inspections are necessary to verify the purposes and need of loans.
9. Instalment for repayment of loan are to be properly fixed keeping harvest time in view.
10. In advances, for purchase of seeds, fertilizers etc. amount should be paid directly to the suppliers.
11. It should be ensured that loan amount is not mis-utilised.

Small Scale Industries - The following suggestions may be made in order to extend loans to Small Scale Industries –

1. The whole requirement of the small scale industries are to be worked out and should be made clear to the borrower as to his stake and bank finance in clear out terms. Finance should be in accordance with business cycle the small scale industries any anticipate.
2. All the requirements of the small scale industries are to be visualised and should be financed in the same spirit.
3. Clear cut decisions should be given frankly.
4. The bank should not yield before unnecessary pressure brought by borrowers directly or indirectly.
5. The bank should avoid old and traditional methods of lending criteria but should adopt themselves to the new methods, tools, technology and culture for the new types of loans which are developmental in nature.

Self Employed – Following may be suggested in connection with self employed persons :

1. The projects taken up by the borrowers should be no modest scale but not an ambitious scale right at the beginning. Once it starts, it can grow into bigger scale, where banker will help to a greater extent than what it did in its initial stage.
2. The borrowers should be frank and consult the banker whenever he feels any difficulty and should not conceal any facts.
3. The banker and borrower should build up ‘Friendly’ relationship rather than ‘Lender borrower’ relationship.
4. Efforts should be made to give bank loans to deserving cases only so than money is utilised properly.
5. After taking into consideration, the facts of each case, efforts should be made to develop good relations and better understanding between banker and borrower, so that lending may become easy and smooth (for the purpose for which it is given).

General Suggestions :

1. The bank should educated the persons on various credit schemes. so that a considerable sections of people who are illiterate and unware of these facilities may take advantage.
2. Banks shouid survey periodically about the schemes they have adoped, their application, results and experiences they have gained and take steps. For correction of the situations and modification of schemes basing on recommendations of the survey.

References :–

1. www.rbi.co.in
2. Report on Trends and progress of Banking 2015-16
3. Report on Trends and progress of Banking 2016-17
4. Annual report of RBI.
5. Priorty sector lending – Targets and classification, RBI / 2015-16 / 53.
6. Economic Survey – Govt. of India Publications.

Categories	Domestic Scheduled Commercial Banks and Foreign banks with 20 branches and above	Foreign banks with less than 20 branches
Total Priorty Sector	40% of adjusted net bank credit or credit equivalent amount of off-balance sheet exposure, whichever is higher.Foreign banks with 20 branches and above have to achieve the total priorty sector target within a maximum period of five years starting from 1 April, 2013 and ending on March 31, 2018 as per the action plans submitted by them and approved by RBI.	40% of adjusted net bank credit or credit equivalent amount of off-balance sheet exposure, whichever is higher to be achieved in a phased manner by 2020
Agriculture	18% of ANBC or credit equivalent amount of off-balance sheet exposure, whichever is higher.Within the 18% target for agriculture, a target of 8% of ANBC or credit equivalent amount of off-balance sheet exposure, whichever is higher is prescribed for small and marginal farmers to be achieved in a phased manner i.e. 7% by March 2016 and 8% by March 2017.Foreign Banks with 20 branches and above to achieve the agriculture target within a maximum period of five years starting from Apr. 1, 2013 and ending on March 31, 2018 as per action plans submitted by them and approved by RBI. The sub-targets for small and marginal would be made applicable post 2018 after a review in 2017.	Not Applicable
Micro Enterprises	7.5% of ANBC or credit equivalent amount of off-balance sheet exposure, whichever is higher to be achieved in a phased manner i.e. 7% by March 2016 and 7.5% by March 2017.The Sub-target of Micro Enterprises for foreign banks with 20 branches and above would be made applicable post 2018 after a review in 2017.	Not Applicable
Advances to Weaker Sections	10% of ANBC or credit equivalent amount of off-balance sheet exposure, whichever is higher.Foreign banks with 20 branches and above have to achieve the weaker section target with in a maximum period of five years starting from Apr. 1, 2013 and ending on March 31, 2018 as per the action plans submitted by them and approved by RBI.	Not Applicable

****

प्रतापगढ़ की थेवा कला

लक्ष्मण लाल कुम्हार *

प्रस्तावना - सुविख्यात इतिहासकार महामहोपाध्याय पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा (1863-1947) के अनुसार प्रतापगढ़ का सूर्यवंशीय राजपरिवार मेवाड़ के गुहिल वंश की सिसोदिया शाखा से सम्बद्ध रहा है। इनकी उपाधि महारावत है।[1] महाराणा कुम्भा (1433-1468 ईस्वी) का अपने छोटे भाई क्षेमसिंह या क्षेमकर्ण से उनका संपत्ति संबंधी जागीरी प्रदान करने के संदर्भ में कोई पारिवारिक विवाद कुछ इतना बढ़ा कि नाराज़ महाराणा कुम्भा ने उन्हें अपने राज्य चित्तौड़गढ़ से निर्वासित कर दिया। उनका परिवार मेवाड़ के दक्षिणी पर्वतीय इलाकों में कुछ समय तक तो लगभग विस्थापित सा रहा, बाद में क्षेमकर्ण ने 1437 ईस्वी में मेवाड़ के दक्षिणी भू-भाग को तलवार के बल पर जीत कर अपना नया राज्य स्थापित किया।[2] क्षेमकर्ण के पुत्र और महाराणा कुम्भा के भतीजे सूरजमल ने 1514 ईस्वी में बड़ीसादड़ी को अपना स्थाई ठिकाना बनाते हुए नए क्षेत्र का विस्तार किया।[3] बाद में सूरजमल के प्रपौत्र और बाघसिंह के पौत्र महारावत रावसिंह का पुत्र विक्रमसिंह (बीका) ने ई. 1560 में देवलिया को अपनी नई राजधानी बनाया।[4] यहाँ भील भामरिया का राज्य था, उसे हरा कर देवगढ़ क्षेत्र को अपने कब्जे में लिया व भामरिया की पत्नी देवी मीणा के नाम पर देवलिया बसाया।[5] बाद में बीका के वंशज महारावत प्रतापसिंह ने 1699 ई. (महाराणा प्रताप नहीं) में देवगढ़ से थोड़ी दूर अपने नाम पर एक नया नगर 'प्रतापगढ़' बसाया। जो कि 24^0 ½' उत्तरी अक्षांश व 74^0.47' पूर्वी देशान्तर पर स्थित है।[6]

विश्व की अनेक शिल्प कलाओं में से 'थेवा कला' लगभग 18वीं सदी के आसपास की मानी जाती है। प्रतापगढ़ के राज परिवार में इस कला का प्रादुर्भाव हुआ। स्व. नाथूलाल 'सोनावाळा' को इस शिल्प कला का प्रणेता तथा जनक माना जाता है। प्रतापगढ़ के राजसोनी परिवार में यह कला नाथूजी की शेष पीढ़ियों से चली आ रही है।[7] इस कला को प्रतापगढ़ रियासत के राजा-महाराजाओं ने परखा एवं पहचाना तथा कला व कलाकारों की कद्र की। उन्होंने इस कला का प्रचार-प्रसार किया तथा कलाकारों को संरक्षण दिया।[8] अध्ययन से एक बात जो उभर कर आई, वह यह कि प्रतापगढ़ बहुत छोटी सी रियासत थी और इसके तत्कालीन शासक दूरदर्शी थे। सैन्य ताकत का बहुत बड़ा जमावड़ा तो इनके पास था नहीं, परन्तु अन्य निकटवर्ती रजवाड़ों, रईसों तथा अंग्रेजों मेहमानों को आकर्षित करने के लिए तथा इनके यहाँ ब्रिटिश सेवा में तैनात अनुग्रह वाले अधिकारियों को सकारात्मक संबंध स्थापित करने के दृष्टिकोण से प्रतापगढ़ के शासकों ने कला और संस्कृति के प्रतीकों के उपहार का सहारा लिया और ऐसी कला को संरक्षित किया जो अन्य जगह नहीं पाई जाती है। इसके कारण उनके राज्य में शांति का वातावरण रहा और विदेशी ताकतों की दखलंदाजी का दंश कम हुआ। प्रतापगढ़ के महाराजा ने राजसोनी परिवार के सदस्यों को राजकीय सम्मान स्वरूप जागीर और डोली भी प्रदान की। यह डोली इनके वैवाहिक कार्यक्रमों में प्रयुक्त होती थी। प्रतापगढ़ के एक नहीं कई राजाओं व सामन्तों ने थेवा कला के प्रोत्साहन हेतु भारी योगदान दिया। अधिकांश राजा-महाराजाओं ने अपने विदेशी मेहमानों को थेवा-कला की उत्कृष्ट कलात्मक वस्तुएँ उपहार में देकर खुश करने में कोई कसर नहीं रखी। परिणामस्वरूप विदेशी लोगों ने भी इस कला की कलात्मक कलाकृतियाँ अपने यहाँ रखने में पहल की।[9]

यह कला लगभग 400 वर्ष से भी अधिक पुरानी है। राजसोनी परिवार के पूर्वज नाथूजी इसके जनक थे। नाथूजी इकलौते एक हनुरमंद रहे जिसे इस कला के मर्म की जानकारी थी। शताब्दियों पूर्व मालवा से नाथूजी देवगढ़ (कांठल) आ बसे थे। कुछ का मानना है कि बैनाथिया गोत्र के ये लोग अधिकतर अजमेर और आसपास में रहते हैं, संभव है नाथूजी देवगढ़ (कांठल) यहाँ से आये हों। देवगढ़ तब प्रतापगढ़ रियासत की राजधानी हुआ करती थी।[10]

मुगल कालीन साम्राज्य में लगभग 400 वर्ष पूर्व प्रतापगढ़ के राजपूती शासन काल की थेवा शिल्प ने अंगड़ाई ली। सामन्ती युग में तब कला और संस्कृति का उभार था और इस शिल्प कला का चलन सामन्ती परिवारों तक था। विशेष रूप से प्रतापगढ़ के शासक महारावत सावंतसिंह (1775 ई.) ने इसे राज्य संरक्षण दिया और शिल्प निर्मित करने वाले परिवार को तीन सौ बीघा जमीन बसाड़, नीनोर, चूपना और बोर्दिया आदि ग्राम में जागीर स्वरूप दी और 'राजसोनी' का खिताब भी दिया। इस तरह इस कला को रियासत से प्रोत्साहन मिलता रहा। इस कला को प्रोत्साहित करने में महारावत उदयसिंह (1864-1890) तथा महारावत रघुनाथ सिंह (1890-1920) एवं रामसिंह का उल्लेख मिलता है। इन राजाओं ने अपने कई विदेशी मेहमानों को थेवा कला के नमूने भेंट किए, जिससे विदेशी आर्डर मिला करते थे।[11]

थेवा का अर्थ है किसी धातु पर खोदना। यह काम सोने पर किया जाता है। यह कहा जा सकता है कि रंगीन काँच पर सोने की अत्यन्त बारीक कमनीय चित्रकारी का नाम है 'थेवा' कला। यह काँच पर सुनहरे रूपांकन की अत्यन्त प्रभावशाली तथा भव्य प्रीतिरंजक शिल्प कारीगरी है। एक तरह से यह काँच पर सुनहरी पेंटिंग है जिसे 23 केरेट सोने के पत्तर पर टांकला नामक एक विशेष कलम से उकेरा जाता है और इसे कुशलतापूर्वक बहुरंगी काँच पर मढ़ दिया जाता है। जब दोनों पदार्थ सोना और काँच परस्पर जुड़ कर एकमेक व एकजीव हो जाते हैं तो थेवा कृति बन जाती है।12 काँच की जगमग को और अधिक प्रभावशाली तथा उम्दा बनाये रखने के लिए इसे एक खास प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है जिससे कि काँच में समाहित सोने का कार्य उभार देने लगे और देखने वाले के मन को छू ले। इस प्रकार शिल्प का प्रत्येक नमूना पारदर्शी काँच का हो जाता है और उस पर माणिक, पन्ना तथा नीलम जैसा

* शोधार्थी (इतिहास) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रभाव दिखलाई पड़ता है। इस कला को उकेरने में बेल्जियम के विशेष प्रकार के काँच इस्तेमाल होते हैं। इस तरह कहा जा सकता है कि विभिन्न रंगों के काँच पर सोने का लालित्यपूर्ण सूक्ष्म चित्रांकन थेवा शिल्प कहलाता है।[12]

काँच पर सोने की सूक्ष्म चित्रकारी ही इस कला का मौलिक आकर्षण है, जिसे काँच और कंचन का करिश्मा कहा जा सकता है। सर्वप्रथम सोने की बारीक चद्दर पर सूक्ष्म चित्रांकन अणु-अणु में एक नई नक्काशी के साथ किया जाता है। यह काँच नीला, लाल या हरा होता है। कलाकार को सबसे पहले चित्रकला में पारंगत होना होता है। चित्रकारी की नींव पर ही थेवा कला जन्म लेती है। रंगीन काँच पर सोने का अत्यन्त महीन काम, बारीक चित्रकारी और उत्कृष्ट नक्काशी वाली इन शिल्प कृतियों की रचना जटिल, कठिन तथा श्रम साध्य है। इस कमनीय और मनभावन कला को 'थेवा कला' के नाम से जाना जाता है। 'थेवा' कला में काँच पर सोने का बारीक चित्रांकन ललित कला के साथ-साथ काँच पर सुन्दर चित्रण परंपरागत चित्रण की झलक लिए होता है।[14]

इस शिल्प में लाल एवं पीले काँच पर सोने की सुनहरी चमक देखते ही बनती है। फूल-पत्ती, राधा-कृष्ण तथा इतिहास और प्रकृति से जुड़े अनेक प्रतीक जब काँच और कंचन जड़ाऊ नक्काशी के बीच दिखाई देते हैं तो आँखे चौंधिया जाती है। पारंपरिक चित्रों में प्राकृतिक सौन्दर्य, हाथी, घोड़े, शेर, शिकार, फूल, पत्ती, राधा-कृष्ण तथा इतिहास और प्रकृति से जुड़े सैंकड़ों विषय, युद्ध, सवारी, पौराणिक गाथाएँ, लीलाएँ, प्रेम-प्रसंग तथा ढ़ोलामारु को चित्रांकित किया जाता है तो दर्शक यही सोच कर दंग रह जाते हैं कि आखिर काँच के भीतर सोने की यह कारीगरी की कैसे जाती है। सोना बेशकीमती होता है पर जब थेवा कलाकारों की अंगुलियों से और निखरता है तो अनमोल हो जाता है।[15]

इस शिल्प के अन्तर्गत छोटी-सी अंगूठी से लेकर लीलाओं की बड़ी प्लेटें, शृंगार बॉक्स, दर्पण, कंघा केस, सिन्दूर बॉक्स, छोटी-बड़ी डिब्बियाँ, गुलदस्ते, फोटो फ्रेम, एश-ट्रे, इत्रदान, सिगरेटकेस, टाई पिन कफलिंग, बटन, पेण्डल, पायल, पाजेब, बिछिया, गले का हार, मंगलसूत्र, इत्रदान, बटन, घड़ी की चैन, तश्तरी, छोटी-बड़ी डिब्बियाँ, पेण्डल आदि जब सोने और काँच की जड़ाऊ नक्काशी के बीच दिखाई देते हैं, तो एकबारगी आँखे चकाचौंध हो जाती है। थेवा की कृतियाँ देखने के बाद महसूस होता है कि यह कार्य सुई से पहाड़ खोदने या सोने से खुशबू निकालने जैसी उपमाओं से युक्त है। थेवा शिल्प को हाथ में लेते ही सोने की मोहक दीप्ति सकून तथा सुवास देती लगती है। बड़ी चीज़े अग्रिम ऑर्डर से बनाई जाती है, शेष सामान्य जेवर आदि तो रोजमर्रा बनते चलते हैं। डिजाइन चीजों के आधार पर तय किए जाते हैं। प्लेट्स या फूलदान में व्यापक और विविध परिवेश चुने जा सकते हैं। थेवा कलाकारों ने विभिन्न उपादानों में रासलीला के विभिन्न दृश्यों, महाराणा प्रताप के जीवन चरित्र और शिकार की पूरी प्रक्रिया को अपनी कला से सजीव किया है।[16]

थेवा कला के लिए यह भी कहा जाता है कि काँच में कोई विशेष प्रकार का चमकदार पदार्थ मिला दिया जाता है जिसकी चमक काँच के परिवेश में जस की तस प्रभावी बनी रहती है। यह तथ्य सही नहीं है। कुछ सर्वेक्षकों ने थेवा कार्य की संकल्पना एनामलिंग पर ही स्थापित की किन्तु यह भी पूर्ण रूप से ठीक नहीं है। यह भ्रम निर्मूल है कि थेवा कार्य तामचीनी-एनामलिंग कार्य जैसा है। वर्षो से राजसोनी परिवार ने इस असाधारण कला को संजोये रखा व उपयोगितापूर्ण बनाया तथा नयनाभिराम स्वर्ण अलंकरणों एवं सजावटी सामग्री का निर्माण किया। इस शिल्प जगत में पीढ़ियों से राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित 1969 ई. रामप्रसाद राजसोनी, 1970 ई. शंकर लाल राजसोनी, 1972 ई. वेणीराम राजसोनी, 1982 ई. रामनिवास राजसोनी आदि परम्परागत बेमिसाल अलंकरण एवं सजावटी उत्पाद की रचना होती चली आ रही है।[17]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ. 43, हिन्दी साहित्य मंदिर, जोधपुर, 2000 ई.
2. वही, पृ. 47-49
3. वही, पृ. 61
4. वही, पृ. 96
5. वही, पृ. 96-97
6. प्रधान संपादक कोठारी गुलाब, पत्रिका इयर बुक 2016, पृ. 779, राजस्थान पत्रिका प्रा. लिमिडेट, जयपुर।
7. वही, पृ. 781, थेवा शिल्प कला, पृ. 13 पश्चिम क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र उदयपुर।
8. प्रधान संपादक, सिंह रोहित कुमार, संदर्भिका राजस्थान सुजस, पृ. 874, (सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग राजस्थान, जयपुर) डोमिनियन लॉ डिपो, जयपुर, 2008 ई.
9. वही, पृ. 874, थेवा शिल्प कला, पृ. 13
10. थेवा शिल्प कला, पृ. 10
11. गुप्ता, डॉ. मोहनलाल, राजस्थान ज्ञान कोष, पृ. 517-518, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, 2008 ई., थेवा शिल्प कला, पृ. 10
12. वही, पृ. 518, वही, पृ. 15
13. संदर्भिका राजस्थान सुजस, पृ. 874, वही, पृ. 15
14. वही, पृ. 874
15. वही, पृ. 874, ओझा गौरीशंकर हीराचंद, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ. 8, थेवा शिल्प कला, पृ. 15
16. थेवा शिल्प कला, पृ. 15-16
17. संदर्भिका राजस्थान सुजस, पृ. 874, थेवा शिल्प कला, पृ. 16, 37

****

मानव अधिवासों का बदलता प्रतिरूप : डेलुओं की ढाणी (बाड़मेर, राजस्थान) का एक भौगोलिक विश्लेषण

जस राज *

प्रस्तावना – मानव अधिवास मानव के लिए एक व्यवस्थित व संगठित निवास स्थली होती है। अधिवास के अन्तर्गत अधिवासों से सम्बन्धित अन्य तत्व मार्ग व गलियाँ भी सम्मिलित है। भूगोल में मानव अधिवासों का अध्ययन मानव पर्यावरण सम्बन्धों को ज्ञात करने के लिए किया जाता है। 'भूगोल पृथ्वी सतह की विशेषताओं का सही, क्रमबद्ध, तार्किक निरूपण तथा व्याख्या से सम्बन्धित है।' (Perspective on the nature of geography) 1959 हार्टशार्न) मानव पर्यावरण अन्तर्सम्बधों में मानव की छाप सांस्कृतिक भूदृश्यों के रूप में दिखाई देती है। (कार्ल ओ साऊर) 'भूगोल पृथ्वी की सतह व उसके निवासियों का विज्ञान है। (भूगोल शब्दकोष) अत: इस प्रकार मानव अधिवासों का अध्ययन करना भूगोल विषय के लिए कोई नई बात नहीं है।

प्रकृति में प्रत्येक पहलू गत्यात्मक व परिवर्तनशील है ठीक इसी प्रकार मानव अधिवास भी परिवर्तनशील होते है, तथा इनका रूप आधारभूत सुविधाओं के अनुसार धीरे-धीरे तथा तीव्रता के रूप में विकसित होता है। मानव अधिवासों का जो रूप आज हमें दिखाई देता है उन सबकी प्रारम्भिक स्थिति इससे पूर्णतया भिन्न थी। अधिवासों की दिशा व दशा तय करने में कालिक परिस्थितियाँ जिम्मेदार होती है प्रस्तुत शोध में इन परिस्थितियों के साथ एक राजस्व ग्राम डेलुओं की ढाणी (बाड़मेर, राजस्थान) में मानव अधिवासों का बदलते प्रतिरूप पर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध का क्षेत्र राजस्थान राज्य के सुदुर पश्चिम में अवस्थित बाड़मेर जिले के बायतु उपखण्ड के गिड़ा तहसील में राजस्व ग्राम डेलुओं की ढाणी है। जिसका क्षेत्रफल 816 हैक्टेयर है, तथा इसकी अक्षांशीय स्थिति $26^0$9'21''उत्तरी अक्षांष से $26^0$11'5'' उत्तरी अक्षांश है तथा देशान्तरीय स्थिति $71^0$55'13'' पूर्वी देशान्तर से $71^0$56'33'' पूर्वी देशान्तर है। इस ग्राम की जनसंख्या 611 व्यक्ति है, मरूस्थलीय विषम परिस्थितियाँ इस ग्राम के विकास में बाधक है। तापमान गर्मियों में 480 सेल्सियस व औसत वर्षा 40 सेमी है इस प्रकार इस क्षेत्र में दैनिक व वार्षिक तापान्तर भी अधिक है यह ग्राम प्रसिद्ध रामदेवरा धाम से 115 किमी दक्षिण पूर्व में अवस्थित है तथा बाड़मेर जिला मुख्यालय से 110 किमी उत्तर पूर्व में है। इस ग्राम में भौतिक उच्चावचों के रूप में बालू के टीले मुख्य रूप से है।

उदेश्य

1. अध्ययन क्षेत्र में अधिवासों के परिवर्तित प्रतिरूपों का विश्लेषण करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में मानव पर्यावरण सम्बन्धों की व्याख्या प्रस्तुत करना।

विधि तंत्र –डेलुओं की ढ़ाणी के मानव अधिवासों का स्तरीकृत निदर्शन के द्वारा अध्ययन किया गया है।

अधिवास जिनका स्तरीकृत निदर्शन (Stratified Sampling) द्वारा प्राथमिक सर्वे किया गया है

क्र.	जातीय संरचना	कुल अधिवास	स्तरीकृत निदर्शन द्वारा चयनित अधिवास
1.	जाट	78	39
2.	नाई	6	3
3.	राइका	6	3
4	राजपूत	4	2
	कुल	**94**	**47**

आंकड़ो का स्रोत – यह शोध कार्य प्राथमिक सर्वे पर आधारित है जिसमें साक्षात्कार व व्यक्तिगत अवलोकन को उपयोग में लिया गया है।

आंकडो का विश्लेषण – 350 वर्ष पूर्व बसे इस राजस्व ग्राम में वर्तमान में जाट जाति के लोगों का वर्चस्व है इसी जाति ने ही ग्राम को बसाया था (भाट कवियों के अनुसार) तथा वर्तमान में ग्राम में 94 मानव अधिवास है। इस शोध में 47 अधिवासों का (50 प्रतिशत) प्राथमिक सर्वे किया गया है जिससे यह ज्ञात हुआ कि सन् 1997 में यह सभी अधिवास पूर्णत: परम्परागत शैली में निर्मित थे जबकि आज इन 47 अधिवासों में से केवल 6 अधिवास ही पूर्णत परम्परागत शैली से निर्मित है, शेष 37 घर मिश्रित सामग्री से निर्मित है तथा केवल 4 अधिवास पूर्णत: गैर परम्परागत शैली में निर्मित है। इस प्रकार से जो अधिवासीय प्रतिरूपों में परिवर्तन हुआ है इसका प्रमुख कारण आर्थिक सुविधाओं में थोडा सुधार है। हालांकि इस गांव में जीवन के लिए आधारभूत कारक जल की समस्या बनी रहती है। जिसकी पूर्ति टांको, होदो व कुओं से की जाती है।

वर्तमान में अधिवासों के प्रतिरूपों को सर्वाधिक परिवर्तन करने में पड़वों का अहम् योगदान है, इनकी अगर गुणवता देखी जाए तो यह लम्बी समयावधि तक रह सकते है किन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से आरामदायक नही है क्योंकि गर्मियों में इनमें रहने से गर्मी का प्रकोप रहता है जो स्वास्थ्य के लिए कष्टदायक होता है।

वर्ष 2008 में मानव अधिवासों के प्रतिरूपों का सामग्री अनुसार वितरण

सामग्री	जति			
	जाट	नाई	राइका	राजपूत
परम्परागत	4	3	3	0
गैर परम्परागत	0	0	0	0
मिश्रित	35	0	0	2
कुल	39	3	3	2

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

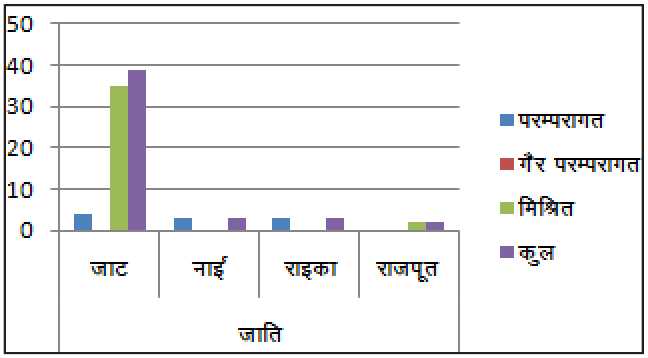

वर्ष 2017 में मानव अधिवासों के प्रतिरूपों का सामग्री अनुसार वितरण

सामग्री	जति			
	जाट	नाई	राइका	राजपूत
परम्परागत	2	2	2	0
गैर परम्परागत	4	0	0	0
मिश्रित	33	1	1	2
कुल	39	3	3	2

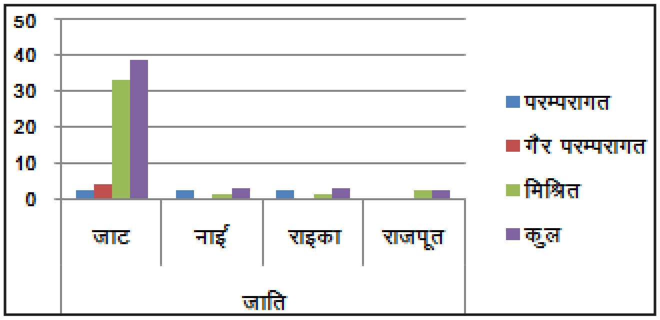

परम्परागत सामग्री से निर्मित आवासों की गुणवता की बात की जाए तो स्वास्थ्य की दृष्टि से तो ठीक है बल्कि इनकी अवधि नहीं होती है इनका प्रत्येक वर्ष नवीनीकरण करना पडता है तथा साथ ही प्रकृति का दोहन भी, जिसमें वनस्पति का दोहन मुख्य है जैसे सेवण, आक, सिणियां, अरणा, फोंग आदि वनस्पतियों को काटकर व इनसे अधिवास निर्मित करना। इनमें से फोग की वनस्पति तो लुप्त हो गई है जिसका प्रमुख कारण लोगों द्वारा इनका उपयोग किया जाना तथा जड़ सहित काटना।

पूर्णत गैर परम्परागत सामग्री से निर्मित केवल 4 घर है जो जाट जाति के लोगों के है इन अधिवासों की गुणवता स्वास्थ्य व लम्बी कालावधि तक बना रहना दोनों ही दृष्टि से ठीक है। लेकिन अभी तक इस प्रकार के अधिवासों की कमी के प्रमुख कारण है। सड़क, आर्थिक स्थिति, जल इत्यादि आधारभूत कारकों की कमी।इन तीनों में से केवल आर्थिक स्थिति को छोड़कर सड़क व जल की समस्याओं को सरकारी योजनाओं द्वारा दूर किया जा सकता है। जल होगा तो कृषि सक्षम होगी अगर कृषि सुद्धढ़ है तो इस गाँव के किसान सुचारू रूप से जीवन यापन करेंगें तथा इस प्रकार आर्थिक स्थिति अच्छी होगी तो अधिवासों का भी विकसित प्रतिरूप बनेगा। भौगोलिक दृष्टि से मरूस्थल में घरों का आकार प्राय: गोलाकार ही होता है विशेषकर ग्रामीण अधिवासों के प्रतिरूपों पर भौगोलिक पहलुओं का प्रभाव स्पष्ट झलकता है जैसे छितरे हुए अधिवास प्रतिरूप, गोलाकार अधिवास प्रतिरूप आदि।

मानव ने अधिवास निर्माण में पर्यावरणीय तत्वों, जैसे क्षेत्र में वनस्पिति का दोहन किया है जिसके कारण मृदा अपरदन बढ़ा है। जल की कमी की पूर्ति के लिए कुओं द्वारा जल का उपयोग अधिक किया जा रहा है जिसके कारण कुओं का भूमिगत जल स्तर नीचे चला गया है और कभी-कभी कुऐं सुख भी जाते है।

निष्कर्ष - गांव डेलुओं की ढ़ाणी में कालानुसार अधिवासों के प्रतिरूपों में परिवर्तन हुआ है परन्तु अभी भी आधारभूत कारकों की कमी है जिसमें जल बहुत ही महत्वपूर्ण कारक है। इन अधिवासों का गाँव के विकास पर सकारात्मक प्रभाव है क्योंकि परम्परागत शैली धीरे-धीरे घटी है जिससे वनस्पति ह्रास रूका है इससे गांव की दिशा व दशा दोनो स्थितियों में सुधार हुआ है। इस प्रकार डेलुओं की ढ़ाणी में अधिवासीय प्रतिरूपों में गैर परम्परागत सामग्री का उपयोग कर अधिवास बनाया जाए तो ग्राम विकसित दिशा की ओर बढ़ेगा इसके पूर्व आधारभूत कारकों (जल, सडक, शिक्षा) में सुधार होना अत्यावश्यक है। जैसे-जैसे कृषि का विकास हुआ है वैसे-वैसे अधिवासों की दशा में सुधार हुआ है। इस प्रकार शैक्षिक गुणवत्ता, जल व सड़क आदि आधारभूत कारको की इस गांव को आवश्यकता है।

शब्दावली

परम्परागत शैली - अधिवास जिसको बनाने में मिट्टी, गोबर, लकडी व घास-फूंस का उपयोग किया गया हैं

गैर परम्परागत शैली - अधिवासों का ऐसा रूप जो पत्थर की पट्टियों, पत्थरों, सीमेन्ट तथा बजरी, ईंट से निर्मित हो।

पड़वा:- जिस अधिवास की छत लोहे के चद्दरों की है तथा दीवारे पट्टियों, ईटों या फिर परम्परागत सामग्री (गोबर, मिट्टी) से निर्मित हो।

टाँका - परम्परागत जल संग्रहण का माध्यम।

होद- जल की बड़ी टंकी जिसमें पाइपलाइनों के माध्यम से जल आता हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Aziz, A.N., (August 2017), Surviving in cairo as a closed file Refugee Socio-Economic & Protection challenges, IIED London, pp. 1-36.
2. Vyas,P.R., (1998), Problems and Prospects of Tribal Settlements a Study of Jhadol-Kotra Area South Arawali, P. XXVII. Pp-24-27.
3. Schumacher, E.F., (1976), Patterned of Human settlements, AMBIO. Vol.5P. 91-97.
4. Sharma, R.C., (1972), Settlement Geography of the Indian Desert, Rajesh Publication Safdarganj Development Hauz Khas New Delhi.
5. R. Hartshorne, (1959), Perspective on the nature of geography, Rand Mcnally
6. Carl Sauer, (1925), the Morphology of landscape, Berkeley, university of California a press

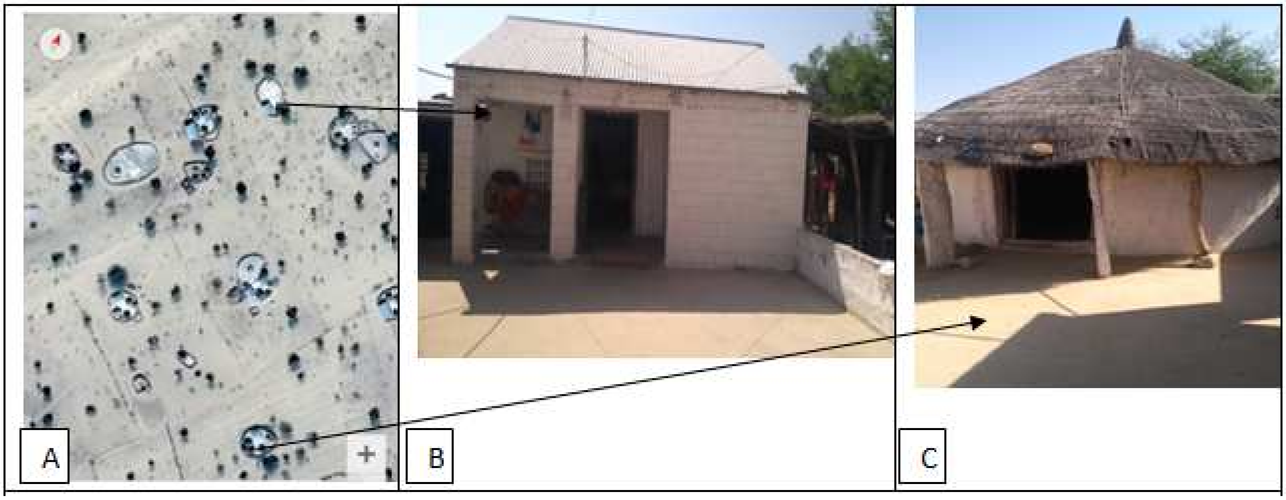

वर्तमान में डेलुओं की ढ़ाणी में मानव अधिवासों का वृताकार प्रतिरूप (Circular Pattern) – A, पड़वा – B, परम्परागत शैली में निर्मित झोपड़ी – C

****

आधुनिक शिक्षा पद्धति एवं व्यक्तित्व विकास

डॉ. बीना शुक्ला *

शब्द कुंजी – शिक्षा, आधुनिक शिक्षा प्रणाली, व्यक्तित्व विकास, चरित्र निर्माण, उदारीकरण, निजीकरण, शिक्षा के तरीके।

प्रस्तावना – अच्छी शिक्षा सभी के लिये जीवन में आगे बढ़ाने और सफलता प्राप्त करने के लये बहुत आवश्यक है। यह आत्मविश्वास विकसित करती है और एक व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में मदद करती हैं। पूरे शिक्षा तंत्र को तीन भागों में बांटा गया है जैसे– प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा और उच्च माध्यमिक शिक्षा। सभी शिक्षा के भाग अपना एक विशेष महत्व और लाभ रखते हैं। शिक्षा विद्यार्थियों को आधार प्रदान करती है जो जीवन भर मदद करती है। किसी भी राष्ट्र अथवा समाज में शिक्षा सामाजिक नियंत्रण व्यक्तित्व निर्माण तथा सामाजिक व आर्थिक प्रगति का मापदण्ड होती है भारत की वर्तमान शिक्षा प्रणाली ब्रिटिश प्रतिरूप पर आधारित है जिसे सन् 1835 ई. में लागू किया गया।

जिस तीव्र गति से भारत के सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक परिदृश्य में बदलाव आ रहा है उसे देखते हुये यह आवश्यक है कि हम देश की शिक्षा प्रणाली की पृष्ठभूमि उद्देश्य, चुनौतियों तथा संकट पर गहन अवलोकन करें।

सन् 1835 ई. में जब वर्तमान प्रणाली की नींव रखी गई थी तब लार्ड मैकाले ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि अंग्रेजी शिक्षा का उद्देश्य भारत में प्रशासन के लिये विचौलियों की भूमिका निभाने तथा सरकारी कार्य के लिये भारत के विशिष्ट लोगों को तैयार करना है।

व्यक्तित्व विकास में शिक्षा का योगदान – शिक्षा ज्ञानवर्धन का साधन है। सांस्कृतिक जीवनका माध्यम है। चरित्र की निर्माता है। जीवनोपार्जन का द्वार है। अपनी क्षमताओं का पूर्ण उपयोग करते हुये जीवन जीने के कला के साथ साथ व्यक्तित्व के विकास का पथ–प्रदर्शन भी है।

मानव विकास का मापदण्ड ज्ञान है। ज्ञान से बुद्धि प्रशिक्षित होती है तथा मस्तिष्क में विचारों का जन्म होता है। यह विचार विवेक जीवन के सभी क्षेत्रों में सफलता का साधन है। शारीरिक हो या मानसिक, आधि हो या व्याधि समस्यायें हो या संकट सभी का समाधान ज्ञान की चाबी से होता है।

ज्ञान प्राप्ति के लिये शिक्षा – ज्ञान प्राप्ति शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। आधुनिक सभ्यता शिक्षा के माध्यम द्वारा ज्ञान प्राप्त करके विकसित हुई है न तो ज्ञान अपने आप में संपूर्ण शिक्षा है, न ही शिक्षा का अंतिम उद्देश्य यह तो शिक्षा का मात्र एक भाग है और एक साधन है।

अत: शिक्षा का उद्देश्य सांस्कृतिक ज्ञान की प्राप्ति होना चाहिये ताकि मानव सभ्य शिष्ट, संयम बने, साहित्य संगीत और कला आदि का विकास कर सके। जीवन को मूल्यवान् बनाकर जीवन स्तर को उंचा उठा सके। साथ ही आने वाली पीढ़ी को सांस्कृतिक धरोहर सौंप सके।

चरित्र के लिये शिक्षा – चरित्र का अर्थ है, वे सब बाते जो आचरण, व्यवहार आदि के रूप में की जाये। प्लूटार्क के अनुसार, चरित्र केवल सुदीर्घकालीन आदत है बाल्मीकी का कथन है, मनुष्य के चरित्र से ही ज्ञान होता है कि वह कुलीन है या अकुलीन वीर है या दंभी, पवित्र है या अपवित्र। चरित्र दो प्रकार का होता है अच्छा और बुरा। सच्चरित्र ही समाज की शोभा है।

इसके निर्माण का दायित्व वहन करती है शिक्षा। गांधी जी के शब्दों में चरित्र शुद्धि ठोस शिक्षा की बुनियाद है। इसलिये डॉ. डी.एन.खोखला का कहना है शिक्षा का उद्देश्य सांवेगिक एवं नैतिक विकास होना चाहिये। एक अच्छा इंजीनियर या डॉक्टर बेकार है, यदि उसमें नैतिकता के गुण नहीं। कारण चरित्रहीन ज्ञानी सिर्फ ज्ञान का भार ढोता है। वास्तविक शिक्षा मानव में निहित सद्गुण एवं पूर्णत्व का विकास करती है।

व्यवसाय के लिये शिक्षा – व्यवसाय का अर्थ है जीवन निर्वह का साधन। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा में इतनी शक्ति होनी चाहिये कि वह अर्थकारी हो अर्थात शिक्षित व्यक्ति की रोजी रोटी की गारंटी ले सके। गांधी जी के शब्दों में, सच्ची शिक्षा बेरोजगारी के विरूद्ध बीमे के रूप में होनी चाहिये।

जीने की कला की शिक्षा – शिक्षा के उपर लिखे चारों उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति, संस्कृति, चरित्र तथा व्यवसाय के लिये एकांगी है, स्वत: सम्पूर्ण नहीं है। जीवन के लिये चाहिये जीने की कला की शिक्षा। शिक्षा जीवनकी जटिल प्रक्रिया और दु:ख, कष्ट, विपत्ति में जीवन को सुखमय बनाने की क्षमता और योग्यता प्रदान करें।

स्पैन्सर शिक्षा में एक व्यापक उद्देश्य अर्थात् संपूर्ण जीवन के सभी पक्ष में संपूर्ण विकास का समर्थन करता है। वह पुस्तकालीयता का खंडन करता है तथा परिवार चलाने, सामाजिक, आर्थिक संबंधों को चलाने तथा भावनात्मक विकास करने वाली क्रियाओं का समर्थन करता है। इन क्रियाओं में सफलता के पश्चात् व्यक्ति आगामी जीवन के लिये तैयार हो जाता है।

व्यक्तित्व विकास के लिये शिक्षा – महादेवी जी की धारणा है कि 'शिक्षा व्यक्तित्व के विकास के लिये भी है और जीवकोपार्जन के लिये भी। अत: उसका उद्देश्य दोहरा हो जाता है। स्वतंत्र भारत का उत्तरदायित्व पूर्ण नागरिक होने के लिये विद्यार्थी वर्ग को चरित्र की आवश्कता थी जो व्यक्तित्व विकास में ही संभव थी जीवकोपार्जन की क्षमता सबका सामाजिक प्राव्य थी। दोनाअंतत: बाह्य लक्ष्यों की उपेक्षा कर देने से शिक्षा एक प्रकार से समय बिताने का साधन हो गई।

यह उपेक्षापूर्ण सत्य तब प्रकट हुआ जब विद्यार्थी ने शिक्षा के सब सोपान पार कर लिये। व्यक्तित्व विकास के लक्ष्य के अभाव ने विद्यार्थी के आचरण को प्रभावित किया और आजीविका के अभाव ने उसे परजीवी बनाकर असामाजिक कर दिया। व्यक्तित्व (Personality) आधुनिक

* संविदा सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

मनोविज्ञान का बहुत ही महत्वपूर्ण एवं प्रमुख विषय है। व्यक्तित्व के अध्ययन के आधार पर व्यक्ति के व्यवहार का पूर्व कथन भी किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति में कुछ विशेष गुण या विशेषतायें होती है जो दूसरे व्यक्ति में नहीं होती। इन्हीं गुणों एवं विशेषताओं के कारण ही प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न होता है व्यक्ति के इन गुणों का समुच्चय ही व्यक्ति का व्यक्तित्व कहलाता है। व्यक्ति एक स्थिर अवस्था न होकर एक गत्थात्मक समष्टि है। जिस पर परिवेश का प्रभाव पड़ता है। इसीकारण से उसमें समय समय पर बदलाव आते हरते हैं व्यक्ति के आचार-विचार व्यवहार और क्रियाओं में व्यक्ति का व्यक्तित्व झलकता है।

चुनौतियां एवं समस्यायें – इस शिक्षा प्रणाली ने उच्च वर्गों को भारत के शेष समाज में पृथक रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ब्रिटिश समाज में बीसवीं सदी तक यह मानना था कि श्रमिक वर्ग के बच्चों को शिक्षित करने का तात्पर्य है। उन्हें जीवन में अपने कार्य के लिये अयोग्य बना देना। ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली ने निर्धन परिवारों के बच्चों के लिये भी इसी नीति का अनुपालन किया। लगभग पिछले दो सौ वर्षों की भारतीय शिक्षा प्रणाली के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह शिक्षा नगर तथा उच्च वर्ग केन्द्रित श्रम तथा बौद्धिक कार्यों से रहित थी। इसकी बुराईयों को सर्वप्रथम गांधी जी ने 1917 ई. में गुजरात एजुकेशन सोसायटी के सम्मेलन में उजागर किया तथा शिक्षा में मातृभाषा के स्थान और हिन्दी के पक्ष को राष्ट्रीय स्तर पर तार्किक ढंग से रखा/स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में शांति निकेतन, काशी विद्यापीठ आदि विद्यालयों में शिक्षा के प्रयोग को प्राथमिकता दी गई।

सन् 1944 ई. में देश में शिक्षा कानून पारित किया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत हमारे संविधान निर्माताओं तथा नीति नियामकों ने राष्ट्र के पुननिर्माण सामाजिक आर्थिक विकास आदि क्षेत्रों में शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया। इस मत की पुष्टि हमें राधा कृष्ण समिति (1949) कोठारी शिक्षा आयोग (1966) तथा नई शिक्षा नीति (1986) से मिलती है। शिक्षा के महत्व को समझते हुये भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिये शिक्षण संस्थाओं व विभिन्न सरकारी अनुष्ठानों आदि में आरक्षण की व्यवस्था की। पिछड़ी जातियों को भी इन सुविधाओं के अंतर्गत लाने का प्रयास किया गया स्वतंत्रता के बाद हमारी साक्षरता दर तथा शिक्षा संस्थाओं की संख्या में नि:संदेह वृद्धि हुई है परन्तु अब भी 40 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निरक्षर है।

दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि स्वतंत्रता के बाद विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा व प्राविधिक शिक्षा का स्तर तो बढ़ा है परन्तु प्राथमिक शिक्षा का आधार दुर्बल होता चला गया। शिक्षा का लक्ष्य राष्ट्रीयता चरित्र निर्माण व मानव संसाधन विकास के स्थान पर मशीनीकरण रहा जिससे चिकित्सकीय तथा उच्च संस्थानों से उत्तीर्ण छात्रों में लगभग 40 प्रतिशत से भी अधिक छात्रों का देश से बाहर पलायन जारी रहा।

देश में प्रौढ़ शिक्षा और साक्षरता के नाम पर लूट-खसोट, प्राथमिक शिक्षा का दुर्बल आधार, उच्च शिक्षण संस्थानों का अपनी सशक्त भूमिका से अलग हटना था अध्यापकों का पेशेवर दृष्टिकोण वर्तमान शिक्षा प्रणाली के लिये एक नया संकट उत्पन्न कर रहा है।

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के नये चेहरे, निजीकरण तथा उदारीकरण की विचारधारा से शिक्षा को भी उत्पाद की दृष्टि से देखा जाने लगा है जिसे बाजार में खरीदा बेचा जाता है। इसके अतिरिक्त उदारीकरण के नाम पर राज्य भी अपने दायित्वों से विमुख हो रहे हैं।

इस प्रकार सामाजिक संरचना से वर्तमान शिक्षा प्रणाली के संबंधों पाठ्यक्रमों का गहन विश्लेषण तथा इसकी मूलभूत दुर्बलताओं का गंभीर रूप से विश्लेषण की चेष्टा न होने के कारण भारत की वर्तमान शिक्षा प्रणाली आज भी संकटों के चक्रव्यूह में घिरी हुई है। प्रत्येक दस वर्षों में पाठ्य पुस्तकें बदल दी जाती है। लेकिन शिक्षा का मूलभूत स्वरूप परिवर्तित कर इसे रोजगारोन्मुखी बनाने की आवश्यकता है। हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली गैर-तकनीकी छात्र छात्राओं की एक ऐसी फौज तैयार कर रही है जो अंततोगत्वा अपने परिवार व समाज पर बोझ बन कर रह जाती है। अत: शिक्षा को राष्ट्र निर्माण व चरित्र निर्माण से जोड़ने की नितांत आवश्यकता है। शिक्षा सीखने की वह प्रक्रिया है,जिसके द्वारा हम अपने जीवन को उंचाई की ओर ले जाते हैं चाहे किसी भी प्रकार की परिस्थितियां हो, शिक्षा के द्वारा उसका हल बहुत आसानी से निकाला जा सकता है। हमारे व्यक्तित्व में सुधार आता है और इससे बौद्धिक क्षमता बढ़ती है यह सामाजिक विकास और आर्थिक उन्नति का आधार है लेकिन क्या हम शिक्षा को सही अर्थों में अपने जीवन के साथ जोड़ कर मानव के उत्थान के रूप में देख पा रहे हैं या फिर शिक्षा सिर्फ पैसा कमाने का साधन ही बनकर रह गई है। सरकार के विधि सदस्य लॉर्ड मैकाले ने अंग्रेजी शिक्षा का समर्थन किया, उनके अनुसार देश में एक ऐसा वर्ग बनाया जाये जिससे शासन ठीक प्रकार से किया जासके। इसके लियेउसने निचलने स्तर में नौकरी के लिये अंग्रेजी भाषा को अपनाने का मार्गबताया। इस प्रकार लार्डविलियन ने 1837 में अंग्रेजी भाषा को सरकारी भाषा घोषित कर दिया और सरकारी नौकरियों में अंग्रेजी भाषा अनिवार्य कर दी गई।

आज भी अंग्रेजी भाषा को विशेष महत्व दिया जाता है और हम उसके गुलाम बन कर रह गये हैं। अंग्रेजी भाषा को जानना एक अलग बात है लेकिन जब भी कोई चीज हमारी अस्मिता को चोट पहुंचाती है तो वह हमारे लिये घातक है फिर हमारी राष्ट्रभाषा में सभी गुण मौजूद हैं तो हम किसी और भाषा को सर्वोपरि महत्व क्यों दें। हालाकि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964) या कोठारी शिक्षा आयोग के द्वारा शिक्षा नीति में बदलाव देखने को मिला। दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में सामाजिक बदलाव और अपनी मातृभाषा हिन्दी को महत्व दिया गया साथ ही माध्यमिक स्तर पर स्थानीय भाषा को भी प्रोत्साहित किया गया। सबको समान शिक्षा मिले, अमीरी और गरीबी की खाई को कम किया जाये।

आगे चलकर राष्ट्रीय शिक्षा आयोग 1968 का गठन हुआ। जो कोठारी आयोग का ही विस्तार माना जा सकता है। सरकार द्वारा समय-समय पर शिक्षा में सुधार की नीतियाँ तो तैयार की जाती है, लेकिन वास्तविक स्थिति तो कागज के पन्नों तक ही सिमट कर रह गयी है। सरकार द्वारा पूर्ण साक्षरता का दंभ तो भरा जाता है। लेकिन हकीकत क्या है यह सर्वविदित है, सिर्फ नाम लिख लेना ही साक्षरता की श्रेणी में नहीं आना चाहिए। व्यक्तित्व के विकास के साथ इसको जोड़कर परिभाषित किया जा सकता है।

सरकारी स्कूल और पब्लिक स्कूलों में कहीं भी समानता नहीं दिखायी देती। इन संस्थाओं में अमीरी और गरीबी के बीच की खाई स्पष्ट देखी जों सकती है। प्राइवेट स्कूलों की फीस इतनी अधिक हो गयी है कि आम आदमी इसमें कोसों दूर होता जा रहा है। दूसरी तरफ भ्रष्टाचार के चलते सरकारी स्कूलों का विकास नहीं हो पा रहा है।

अध्यापकों की कोठियों और बैंक बैलेन्स से इनको देखा जा सकता है। शिक्षा संस्थान आज व्यसायिक केन्द्र बनकर रह गये हैं।

स्वार्थ और दिखावे में उलझ आज का छात्र पर्यावरण जैसे मुद्दे पर

मूकदर्शक बना रहता है। प्रकृति से लगाव खत्म होता जा रहा है।

इंजीनियरिंग, मेडिकल जैसे संस्थानों में शोषण, आत्महत्या और बलात्कार जैसे वारदातों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है त्याग, तपस्या, आध्यात्मिक मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। स्पष्ट है कि दर्शनशास्त्र, साहित्य, संस्कृत और नैतिकशास्त्र जैसे विषयों के प्रति हीन दृष्टिकोण और व्यवहारिक स्तर में चलन का ना हो पाना। इन विषयों को सरकार द्धारा प्रोत्साहित करके ही इन समस्याओं को दूर किया जा सकता है।

आज पाश्चात्य शिक्षा का अंधानुकरण हो रहा है, वाह्य चमक दमक के सामने हमारी संस्कृति फीकी नजर आती है। जातिवाद के बंधन ने शिक्षा को भी नहीं छोड़ा है। आरक्षण जैसे मुद्दे फिर हावी होने लगे हैं। वोट के खातिर नेताओं को ऐसे मुद्दे उठाने में समय नहीं लगता है।

फिर उसकी आग में सभी जलते हैं। इस मुद्दे पर सरकार समय-समय पर आर्थिक आधार पर आरक्षण की वकालत करती दिखायी तो देती है, लेकिन आज तक इसका हल नहीं निकल पाया। कई राज्यों में तो नकल आम बात हो गयी है। जहाँ पेरेंट्स स्वये बच्चों को नकल करवाने के लिए प्रेरित करते हैं। अनुशासन के आभाव में सामाजिक ढंचा जैसे चरमरा गया है। यदि इनको सख्ती से रोका न गया तो समस्या और गंभीर हो सकती है।

बच्चों को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उनका आंकलन और विश्लेषण करके उनके क्षेत्र का निर्धारण किया जा सकता है। जिस भी विषयों में बच्चों की रूचि हो उस पर उसे पूर्ण निर्णय लेने दें साथ ही घर के माहौल को बिगड़ने न दें। क्योंकि पति-पत्नी के झगड़ों से बच्चों पर इसका बुरा असर पड़ता है। आज के इस एनीमेशन और स्मार्ट एजुकेशन के दौर में योग और अनुशासन के समन्वय से ही शिक्षा के सही अर्थो को पहचाना जा सकता है।

अपनी शिक्षा को आध्यात्मिक और अपनी संस्कृति के साथ जोड़कर ही आधुनिक शिक्षा का विकास किया जा सकता है।

वर्तमान शिक्षा-पद्धति की उपयोगिता (निष्कर्ष) - हमारे देश की शिक्षा पद्धति पर बार-बार सवाल उठाए गये हैं। ब्रिटिश-काल से हमारे देश में जो शिक्षा-पद्धति चली आ रही है, उसमें अनेक सुधारों की आवयकता है। परन्तु वर्तमान शिक्षा पद्धति की अपनी उपयोगिता भी है। इसमें विभिन्न विषयों के अध्ययन से छात्रों को अनेक विषयों का आरम्भिक ज्ञान अवश्य प्राप्त होता है। भारत के गुरूकुल काल में विद्यार्थियों को अधिक विषय नहीं पढ़ाये जाते थे। गुरूकुल से विद्यार्थी विद्धान बनकर तो निकलते थे, परन्तु वे एकाध विषय में ही प्रकांड पंडित होते थे। वर्तमान शिक्षा पद्धति में अनेक विषयों का ज्ञान प्राप्त करके छात्र अपनी रूचि अनुसार अपने भविष्य के मार्ग निर्धारित कर सकते हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति में एक तो छात्रों को विभिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त होता है, जिससे उन्हें अपने विचारों को विस्तार देने का अवसर मिलता है। विभिन्न एवं अंतराष्ट्रीय भाषाओं के द्धारा छात्रों को दूर-दूर तक अपनी प्रतिभा दिखाने का भी अवसर प्राप्त होता है। दूसरे कला, वाणिज्य तथा विज्ञान के विषयों में से छात्र अपनी रूचि एवं योग्यता अनुसार विषयों का चयन करके संबंधित विषयों में महारथ प्राप्त कर सकते हैं। अधिकाधिक विषयों के अध्ययन से छात्रों के लिये अधिक रोजगार के द्धार खुले हैं। बल्कि आधुनिक शिक्षा पद्धति में रोजगारोन्मुख विषयों को सम्मिलित करने से छात्रों को रोजगार का चयन करने में अधिक सुविधा प्राप्त हुई है।

वर्तमान शिक्षा पद्धति में वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर इसे अधिक उपयोगी और सरल बनाने का भी निरंतर प्रयन्त किया जा रहा है। पहले की तुलना में शिक्षा पद्धति में अनेक सुधार भी किये गये हैं। आज रोजगार के विभिन्न क्षेत्रों में कम्प्यूटर एक आवश्यक अंग बन गया है। अन्य व्यवसायिक प्रशिक्षणों के अलावा कम्प्यूटर को भी प्रशिक्षण कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है ताकि अधिकाधिक छात्रों को रोजगार के अवसर प्राप्त हो सकें।

वर्तमान शिक्षा पद्धति के संबंध में ऐसा माना जाता है कि इससे छात्रों को जीवन में विशेष लाभ नहीं होता। उनके पास प्रमाण पत्र तो होते हैं पर योग्यता नहीं होगी। यह सत्य है कि वर्तमान शिक्षा पद्धति अभी सुधार की आवश्यकता है परन्तु यह भी सत्य है कि इसी शिक्षा पद्धति ने हमारे देश को हजारों योग्य डॉक्टर, इंजीनियर, अध्यापक, प्रोफेसर, वैज्ञानिक, लेखक, पत्रकार आदि दिये हैं। वास्तव में यह छात्रों पर अधिक निर्भर करता है कि वे उपलब्ध शिक्षा पद्धति से कितना अधिक निर्भर करता है कि वे उपलब्ध शिक्षा पद्धति से कितना अधिक ग्रहण करने में सक्षम हैं। शिक्षा को बोझ समझने वाले छात्र विषयों को रटकर अथवा नकल के द्धारा केवल उत्तीर्ण होने का प्रयास करते हैं। ऐसे छात्र किसी भी विषय में विशेष ज्ञान अर्जित करने में असफल रहते हैं यही कारण है कि उनके पास प्रमाण पत्र तो होता है परन्तु योग्यता नहीं होती।

वर्तमान शिक्षा पद्धति में अनेक संभावनायें हैं। वैज्ञानिक युग के साथ इन संभावनाओं में वृद्धि ही हुई है। लेकिन छात्रों के लिये आवश्यकता कठोर परिश्रम की है। उन्हें यह नहीं भूलना चाहिये कि कठोर परिश्रम के बिना किसी भी प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं की जा सकती। इसके अतिरिक्त छात्रों को अपनी रूचि एवं प्रतिभा पर ध्यान देने की भी विशेष आवश्यकता है। अरूचि से किये गये कार्य में सफलता की संभावना नगण्य होती है इसलिये छात्रों को अपनी रूचि के अनुसार ही विषयों का चयन करना चाहिये।

इसके साथ उन्हें अपने बौद्धिक स्तर अपनी प्रतिभा का भी आंकलन कर लेना चाहिये' एक छात्र यदि विज्ञान के विषयों में उत्तीर्ण होकर योग्य चिकित्सक बन सकता है, तो यह आवश्यक नहीं कि उसके अन्य सहपाठी भी योग्य चिकत्सक बनने में सफल रहे। संभव है उसके अन्य सहपाठी कला अथवा वाणिज्य के क्षेत्र में विशेष सफलता प्राप्त करके दिखायें।

विद्यार्थियों को वर्तमान शिक्षा पद्धति में ही अपने लिये संभावनाओं की खोज करनी होगी। अपनी प्रतिभा से विद्यार्थी स्वंय अपने लिये उपयोगी मार्ग का चयन कर सकते हैं। यह सत्य है कि कठिन परिश्रम से प्रतिभाओं को उभरने का अवसर अवश्य मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Goods & Service Tax- Impact on Common Man

Dr. Seema Baldua * CA Ankur Bansal **

Abstract - GST implemented on 1st July 2017 with emphasis on amalgamation of a bundle of large number of central and state taxes into a single tax on value addition and to allow set-off of prior stage taxes to mitigate the cascading effects of taxes. It is the biggest indirect tax reform in Indian history and allows free flow of tax credit in intra and inter-state transactions, leading to a more efficient and uniform tax structure. There are basically 5 tax slabs – 0%, 5%, 12%, 18% and 28%, under which the country's goods and services are taxed by the Centre and the State.

In India, the maximum population is of the **middle class** where people either belong to service class, small traders & service providers or the people depend on agriculture for their living. The main issues for common man are always "ROTI, KAPDA, MAKAAN" .In this scenario, the most important question arise is to find out the impact of GST on a common man. There are lots of question in the mind of a common man in these days such as: what new thing they get in GST or is it like old thing in new packing or is there any tax relaxation or benefits for them. Whether GST increases their expenses or price of services they used and many more.

After GST, the single tax provision introduced in the supply chain makes each person eligible to take tax benefit of all the taxes which he already paid and eventually cut the prices down and remove the cascading effect of taxation. Further better tax administration facility in GST removes manipulation in taxes and includes many informal businesses in the main stream. On the other hand it increases the cost of services by raising the tax rate by 3%.

Through this research paper, we are trying to understand the new GST from current taxation system of India and to find out the probable impact of GST on common man. How it is advantageous or disadvantageous for common man.
Key Words - GST, Common Man, GDP, Economy.

Introduction - {ONE NATION, ONE TAX, ONE MARKET} On July'1, 2017 biggest tax reform in India ushered, Goods & Service Tax Act 2017, launched. The launch was marked by a historic midnight (30 June – 1 July) session of both the houses of parliament convened at the Central Hall of the Parliament.

GST is a tax levied on goods and services both, applicable at pan India level. It replace various taxes such as Excise, Vat, entry tax, purchase tax and Service Tax into one single tax and bring uniformity and simplification in tax structure and facilitate seamless movement of goods across states. It is a major switchover in the indirect tax regime which leads to more inclusive growth rate and covers a wide area of taxation with inclusion of many informal business activities in it. After introduction of GST, the tax rate for many commodities changed drastically and it impact common man in both positive and negative manner.

Main objectives of GST are to mitigate the cascading effect of taxation and ensure availability of input credit across the value chain. It harmonized the tax base, laws and administration procedure across the nation with stringent control and transparent procedure and brings the unorganized sector under tax regime and streamlines them with the mainstream. Further it reduces the inflation impact on common man and lead to less corruption environment in real world.

During implementation, major challenges in GST are lack of adaptation and trained staff and requirement of control over tax evasion with minimum complexity in the tax structure. Lack of coordination and consent of all states is another roadblock in its implementation.

In Indian economy, common man is represented by the middle and lower middle class people who are still trying to understand GST and its impact on them. They believe GST law will yield positive results although there may be some teething issues at the implementation stage. With the implementation of GST, the entire nation will charge the same rate for the product in every state. This will help the common man to understand the law appropriately. Further avoidance of cascading effect and evasion of unorganized sector reduce the tax burden from common man and reduces the inflation rate on daily consumables.

For the general public, there is the actual impact of any economy is when the prices of their necessity become affected. For public in large when prices become low for the day to day goods and services which are consumed, the economy is good otherwise if the **inflation rate is higher**, then the public gets unsatisfied with the changes

*Associate Professor (Commerce (ABST) Deptt.) University of Rajasthan, Rajasthan INDIA
** Research Scholar (Commerce (ABST) Deptt.) University of Rajasthan, Rajasthan INDIA

done by the government.

For any government policy, it is important that the satisfaction in public should be there as without satisfaction the policy will not succeed in the same way in which government planned.

Objective Of Study - The main objective of this research paper is

1. To find out the positive impact and advantages of GST on common man.
2. Disadvantages and consequences on common man.

Research Methodology - The paper is based on secondary data collected from the internet and published paper. As per the report published by *Saginfotech* dated Sept'2017, the country man will definitely get benefitted by GST regime in the long run. The report published by 'Fintrakk.com' updated on Nov'2017, under new tax regime, it is too early to come to the conclusion as GST is still an infant. The report published by *Gstax.guru*, find it a good news for people as govt reduces tax rates to a large extend on essential goods and even exempt many from taxation.

Impacts Of Gst On Common Man

{Impact on Common Man}

Tax Rate ↓ Employment ↑ Consumption ↑ Production ↑

Impact of GST on common man can be seen in both positive and negative ways. On one hand reduction in tax rate on essential items and elimination of cascading effect makes the goods cheaper to the consumer, on the other side increase in tax rate on services by 3% and increase in tax rate to 28% on luxury makes these goods and services costlier to the consumer. For example, if a consumer using mobile phone has to pay service tax of 15% on the bill value, which under GST regime increase to 18%, similarly buying jewelry under GST is also increase by 1% tax rate. But on the other hand essential commodities & services like Unpacked food grains, gur, milk, eggs, curd, lassi, unpacked paneer, unbranded natural honey fresh, vegetables, unbranded atta, unbranded maida, unbranded besan, prasad, common salt, contraceptives, raw jute, raw silk, Health, education are taxed with 0% rate or exempted from tax gives support to the common man by reducing their expenses on essentials.

Impact Of GST

1. **Uniform Taxation:** Implementation of GST leads to uniform tax slab all over the nation. Earlier due to difference in tax rates some items are cheaper in one state compare to other states. Now everything cost same in all states.
2. **Better supply chain:** Under GST regime, the removal of check post, tolls, entry taxes etc helps in hustle free movement of goods and services all over the nation.
3. **Transparency in product pricing** – As per the previously existent taxation system, the pricing of every product included a variety of hidden taxes bringing the tax range to 27% to 32%. With the Bill in action, this percentage has dropped considerably making the pricing more transparent.
4. **Uniformity in the computation of taxes** – The taxes like Excise, VAT, Service tax, CST etc, in a bill are now consolidated into a single tax GST helps in making the process of computation easier and uniform.
5. **No double taxation** – The problem of cascading taxation has been eliminated with the implementation of Goods and Services Tax as the consumers are being charged only once for the purchase of any good or service by the government.
6. **Rise in GDP** – As GST will lead to more tax accumulation by the state and center, the GDP of the country is expected to rise by 2% over the next 3 to 5 years. Thus it will help in more development of public infrastructure and better market conditions in the longer run.
7. **Increased demand will lead to increase supply**: As the demand of product increase, the production and supply chain automatically improves. Hence, this will ultimately lead to reduction in cost of production of goods
8. **Discouragement of practices involving Black Money** – The rollout of GST helps in curbing the practices Black Money Economy, possibly leading to more income for the government exchequer. This would eventually lead to a better quality of life and more expenditure on public infrastructure.
9. **Compliance burden:** The number of GST returns that one need to file is 3 monthly returns, this amount to total of (3*12) 36 returns plus 1 annual return. Filing 37 returns in a year. Moreover, this applies to one state, if you have a place of business in different states, you need to register in each state separately and file the respective returns causes lots of trouble to the traders and service providers.

Positive & Negative Impacts Of Gst On Common Man

Positive Impact :

1. **Reduction in MRP of product**: Due to allowance of input of excise duty and taxes paid by the manufactures, the cost of production reduced substantially which leads to reduction in price for the consumers.
2. **Easy access and availability of goods**: As GST eliminate the requirement of toll plazas and check post, it helps in faster and easy availability of goods all over the nation without any hustle.
3. **Reduction in prices due to lower tax rate:** Under GST regime, many essential and consumable items are taxed with lower rate of interest causes reduction in total cost for the consumers. Food prices fall within 0% to 5% tax, thus food prices are not likely to increase. FMCG products (toothpaste, soaps, tissue papers, shampoos, packaged food, pharmaceutical items, coolers, television etc.), are become cheaper.
4. **More disposable income** – As the consumers are paying fewer taxes and low prices on the essential goods, this reform would leave them with more dis-

posable income.

5. **Availability of things all over the nation**: GST removes the trade barriers between the states which help in availability of products of one particular area to all over the nation.
6. **More job opportunities**: As the demand increases for a product, there is a rise in its production which need more labor. Hence the job opportunities increase to a large extent in formal sector.

Negative Impacts :

1. **Inflation in Real Estate**: the tax rate under GST on real estate sector increase to 12% which was 5.5% in earlier indirect tax regime.
2. **Banking, Insurance & Other services**: There is an increase in service tax by 3%. The service tax on banking, insurance and other services was pegged at 15%, which is now replaced by GST of 18%.
3. **Hotels and Air travel exp.**: The taxes on higher tier hotels or luxury hotels are very high (28%) as compare to previous rate (12%). However taxes on lower category hotels are substantially reduced under GST. Similarly taxes on economy class of air ticket are reduced by 1% but taxes on business class are increase by 3%.
4. **Actual benefits are not transferred**: In GST actual benefits are not transferred to the consumer, rather seller increases his profit margin by charging the same MRP and taking input tax benefits of excise.
5. **Increase in inflation:** it is seems that on many goods and services the tax rates are more as compare to previous tax rates. It causes inflation in the economy and increases the pocket expenses of people**.**

Conclusion - Goods and Services Tax is a very noteworthy step in the field of indirect tax reforms in India. By merging a large number of Central and State taxes into a single tax, It removes the effect of double taxation and make taxation overall easy for the industries. For the end customer, the most benefits are in terms of reduction in the overall tax burden on goods and services. GST also makes Indian products competitive in the domestic and international markets.

However at this initial stage, GST is just like an infant, which need many amendments as per the requirement of country man. As of now the answer to the question, impact of GST on the wallet of the common man is difficult to answer. Most of the impacts of GST like exemption on essential consumables, lower tax rate on daily routine goods etc are positive for the common man. However increase on taxes on services by 3% and increase in tax rates up to 28% on both goods and services is an inflation causing factor, which negatively impact the people.

On the other note, GST increase the government tax revenue leads to more development of infrastructure and basic amenities. Further it brings more transparency and strict compliance and helps in reduction in corruption. These all definitely helps the common man in reducing their expense and better life style.

Over all these need more time, coordination and cooperation among the people and govt. to make GST boon for the nation and its economic development.

References :-

1. https://blog.loanbaba.com/7-impacts-of-gst-on-common-man-in-india
2. https://blog.saginfotech.com/gst-impact-on-common-man
3. https://fintrakk.com/gst-what-is-the-impact-of-gst-on-common-man
4. http://www.gstax.guru/impact-gst-common-man-india/972
5. http://www.ijemr.net/DOC/ImpactOfGSTOnCommonMan.pdf
6. http://ijar.org.in/stuff/issues/v4-i9/v4-i9-a008.pdf
7. http://ijrcs.org/wp-content/uploads/201709030.pdf
8. https://www.wishfin.com/gst-impact/gst-impact-on-common-man-taxpayers
9. http://profit.ndtv.com/news/tax/article-gst-rates-on-essential-goods-for-common-man-a-detailed-list-1709068

****

विकेन्द्रीकरण के लाभ एवं चुनौतियां

डॉ. बीना शुक्ला *

प्रस्तावना – आज विश्व स्तर पर विकेन्द्रीकरण की सोच को विशेष महत्व दिया जा रहा है। प्रशासन में आम जन की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था को अपनाना वर्तमान समय की बहुत बडी आवश्यकता है। भारत के संदर्भ में विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था सम्पूर्ण शासन प्रणाली के समुचित संचालन के लिए बहुत जरुरी है। भारत जैसी घनी आबादी वाले बडे देश को ,जिसकी अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रो मे रहती है, एक ही केन्द्र से शासित करना अत्यन्त कठिन है।

अजादी के उपरान्त भारत में प्रजातन्त्रीय शासन प्रणाली लागू की गई है। प्रजातन्त्र को लोगों के लिए, लोगो द्वारा शासन कहा गया है। अगर प्रजातन्त्र का अर्थ 'एक आम आदमी की प्रशासन में सहभागिता है' तो विकेन्द्रीकरण का कानून विकास की प्रथम इकाई के स्तर से ही लागू होना चाहिऐ। किसी भी देश के विकास के लिए यह आवश्यक है कि विकास नीतियां, योजनाएं व कार्यक्रम एक जगह केन्द्रीय स्तर पर ना बनकर शासन की विभिन्न इकाइयों के स्तरों पर किया जाये।

विकेन्द्रीकरण की जब हम बात करते हैं तो उससे तात्पर्य है कि हर स्तर पर कार्या का बंटवारा, उपलब्ध संसाधनों को आवश्यकता व प्राथमिकता के आधार पर उपयोग करने की स्वतंत्रता और साथ ही हर स्तर पर प्रत्येक इकाई को अपने संसाधन जुटाने का भी अधिकार हो। अर्थात कार्यात्मक, वित्तीय एवं प्रषासनिक स्वायतता। विकेन्द्रीकरण का तात्पर्य है कि प्रक्रिया एक जगह से संचालित न होकर विभिन्न स्तरों से संचालित हो।

सामान्य भाषा में, विकेंन्द्रीकरण का अर्थ है कि शासन–सत्ता को एक स्थान पर केन्द्रीत करने के उसे स्थानीय स्तरों पर विभाजित किया जाये, ताकि आम आदमी की सत्ता में भागीदारी सुनिश्चित हो सके वह अपने हितों व आवश्यकताओं के अनुरुप शासन–संचालन में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सके। यही सत्ता के विकेन्द्रीकरण का मूल आधार है अर्थात् आम जनता तक शासन सत्ता की पहुच को सुलभ बनाना ही विकेन्द्रीकरण है यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे सारा कार्य एक जगह से संचालित न होकर अलग अलग जगह व स्तर से संचालित होता है उन कार्यो से संबंधित निर्णय भी उसी स्तर पर लिये जाते है। तथा उनसे जुडी समस्याओं का समाधान भी उसी स्तर पर होता है। जैसे त्रिस्तरीय पंचायतों में निर्णय लेने की प्रक्रिया ग्राम पंचायत स्तर, क्षेत्र पंचायत स्तर एवं जिला पंचायत स्तर से संचालित होती है। विकेन्द्रीकरण को निम्न रुपों मे समझा जा सकता है।

- विकेन्द्रीकरण वह व्यवस्था है जिसमें विभिन्न स्तरों पर सत्ता, अधिकार एवं शक्तियों का बटवारा होता है। अर्थात केन्द्र से लेकर गांव की इकाई तक सत्ता, शक्ति व संसाधनों का बंटवारा। साथ ही हर स्तर अपनी गतिविधियों के लिए स्वयं जवाबदेह होता है।हर इकाई अपनी जगह स्वतन्त्र होते हुए केन्द्र तक एक सूत्र से जुडी रहती है।
- विकेन्द्रीकरण का अर्थ है विकास हेतु नियोजन, क्रियान्वयन एवं कार्यक्रम की निगरानी में स्थानीय लोगों की विभिन्न स्तरों में भागीदारी सुनिश्चित हो। स्थानीय इकाईयों व समुदाय को ज्यादा अधिकार व संसाधनों से युक्त करन ही वास्तविक विकेन्द्रीकरण करना है।
- विकेन्द्रीकरण वह व्यवस्था है जिसमें सत्ता जनता के साथ में हो और सरकार लोगों के विकास के लिए कार्य करें।

विकेन्द्रीकरण कोई नई व्यवस्था नही – सदियों से हमारे देश में विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था किसी न किसी रुप में विद्यमान थी। पुराने समय में अधिकांश राज्य छोटे थे जो जनपद कहलाते थे। राजा इन राज्यों का शासन, प्रशासन–सभा व परिषद की सहायता से चलाता था। स्थानीय पंचायतें, समितियों के रुप में कार्य करती थीं जो गांवों की व्यवस्था सम्बन्धी नियम एवं कानून बनाने व लागू करने के कार्य में सलग्न रहती थीं। इन गांवों से सम्बन्धित निर्णय लेने में राजा हमेशा पंचायतो को बराबर का भागीदार बनाता था। यही व्यवस्था विकेन्द्रीकरण हैं। इतने बडे भारत देश को एक ही केन्द्र से संचालित नही किया जा सकता था अत: राजाओं को विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था लागू करनी पडी। परन्तु धींरे–धींरे यह व्यवस्था कमजोर होती गई। मुस्लिम व ब्रिटिश हुकुमत के समय इस व्यवस्था 29 को अधिक धक्का लगा। स्वतन्त्रता के उपरान्त विकेन्द्रीकरण की सोच को योजना एवं रणनीति निर्माण में शामिल किया गया। समय–समय पर इस बात का विशेष ध्यान रखा गया कि सत्ता केन्द्रित न होकर विकेन्द्रित हो, जिससे विकास कार्यो में जनसहभागिता सुनिश्चित की जा सके। विकेन्द्रीकरण की प्राचीन प्रणाली को देश की शासन व्यवस्था चलाने का आधार बनाया। जिसके अन्तर्गत राज्य सरकारों की शासन प्रणाली को मजबूत बनाया गया। यही नही 73वें एवं 74वें संविधान अधिनियम द्वारा भारत में 1993 से स्थानीय स्तर पर भी विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था को लागू किया गया।

विकेन्दीकरण की अवश्यकता व महत्व – शासन व सत्ता में आज जन की भागीदारी सुशासन की पहली शर्त है। जनता की भागीदारी को सत्ता में सुनिश्चित करने के लिए विकेन्द्रीकरण क व्यवस्था ही एक कारगर उपाय है। विश्व स्तर पर इस तथ्य को माना जा रहा है कि लागों की सक्रिय भागीदारी के बिना किसी भी प्रकार के विकास की कल्पना भी नही की जा सकती। विकेन्द्रकरण व्यवस्था ही ऐसी व्यव्स्था है जो कार्यो के समुचित संचालन व कार्यो को करने में पारदर्शिता, गुणवत्ता एवं जबाबदेही को हर स्तर पर सुनिश्चित करने के रास्ते खोलती है। प्रत्येक स्तर पर लोग अपने अधिकारों एव शक्तियों का सही व संविधान के दायरे में रह कर प्रयोग कर सकें इस के लिए विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता महसूस की गई है इस व्यवस्था में

* संविदा सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

अलग–अलग स्तरों पर लोग अपनी भूमिका एवं जिम्मेदारियों को समझकर उनका निर्वाहन करते है। प्रत्येक सतर पर एक द्वूसरे के सहयोग व उनमें आपसी सामंजस्य से हर स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का, आवश्यकता व प्राथमिकता के आधार पर उपयोग करने की स्वतंत्रता मिलती है साथ ही हर स्तर पर प्रत्येक इकाई को अपने संसाधन स्वयं जुटाने का भी अधिकार व जिम्मेदारी होती है। लेकिन विकेन्द्रीकरण का अर्थ यह नही कि हर कोई अपने–अपने मनमाने ढंग से कार्य करने के लिए स्वतंत्र है। कार्य करने की स्वतंत्रता सुशासन के संचालन के लिए बनाये गये कानूनों के दायरे के अन्दर होती है।

विकेन्द्रीकरण का महत्व इसलिए भी है कि इस व्यवस्था द्वारा सामाजिक न्याय व आर्थिक विकास की योंजनायें लोगों की सम्पूर्ण भागीदारी के साथ स्थानीय स्तर पर ही बनेंगी व स्थानीय स्तर से ही लागे होगी। पहले केन्द्र में योजना बनती थी और वहां से राज्य में आती थी व राज्य द्वारा जिला, ब्लाक व गांव में आती थी। लेकिन भारत में अब नये पंचायती राज में विकेन्द्रीकरण की पूर्ण व्यवस्था की गई है। जिसके अनुसार ग्राम स्तर पर योजना बनेगी व ब्लाफक,जिला, राज्य से होती हुई केन्द्र तक पहुचेगी। योजनाओं का क्रियान्वयन भी ग्राम स्तर पर स्थानीय शासन द्वारा होगा। इस प्रकार विकेन्द्रीकरण के माध्यम से सत्ता व शक्ति एक केन्द्र में न रहकर विभिन्न स्तरों पर विभाजित हो गई है। जिसके माध्यम से स्थानीय व ग्रामीण लोगों को प्रशासन में पूर्ण भागेदारी निभाने का अधिकार प्राप्त हो गया है।

विकेन्द्रीकरण के उपाय – कार्यात्मक स्वायतता–इसका अर्थ है सत्ता के विभिन्न सतरों पर कार्यो का बंटवारा अर्थात हर स्तर अपने अपने स्तर पर कार्यो से सम्बन्धित जिम्मदारियों के लिए जबाब देह होगा।

वित्तीय स्वायतता–इसके अन्तर्गत हर स्तर की इकाई के उपलब्ध संसाधनों को आवश्यकतानुसार खर्च करने व अपने संसाधन स्वयं जुटाने के अधिकार होता है।

प्रशासनिक स्वायतता–प्रशासनिक स्वायतता का अर्थ है स्तर पर आवश्यक प्रशासनिक व्यवस्था हो तथा इससे जुडे अधिकारी/कर्मचारी जनप्रतिनिधियों के प्रति जबाबदेह हों।

विकेन्दीकरण के लाभ – स्थानीय स्तर पर स्थानीय समस्याओं को समझकर उनका समाधान आसानी से किया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने से कार्य तेजी से होंगे। कार्यो के क्रियान्वयन में अनावश्यक बिलम्ब नही होगा। साथ ही विकास कार्यो के लिए उपलब्ध धनराशि का उपयोग स्थानीय स्तर पर स्थानीय लोगो की निगरानी में होगा, इससे पैसे का दुरुपयोग कम होगा।

विकेन्द्रीकरण व्यवस्था से विकास योजनाओं के नियोजन एवं क्रियान्वयन में स्थानीय लोगो की सक्रिय भागेदारी सुनिश्चित होती है। विकास कार्यो की प्राथमिकता स्थानीय लोगो द्वारा स्थायनीय आवश्यकताओ के अनुरुप तय की जायेगी। व विकास कार्यक्रम ऊपर से थोपने के बजाय स्थायनीय स्तर पर तय किये जायेगें।

विकास कार्यो का स्थानीय स्तर पर नियोजन एवं क्रियानवयन किये जाने से उनका प्रभावी निरीक्षण होगा। नियोजन में स्थानीय समुदाय की भागीदारी होने स कार्या के क्रियान्वयन व निगरानी में भी उनकी सक्रिय भागीदारी बढेगी। इससे कार्य समय पर पूरे होंगे तथा उनकी गुणवत्ता में सुधार होगा।

स्थानीय स्तर पर स्थानीय साधनों के उपयोग से अपना कोष विकसित होने व कार्य की लागत भी कम आयेगी।

विकेन्द्रीकृत की सोच स्थानीय स्तर पर लोकतान्त्रिक तरीके सें चयनित सरकार पर जोर देती है एवं यह भी सुनिश्चित करती है कि स्थानीय इकाई को सभी अधिकार शक्तियां व संसाधन प्राप्त हो ताकि वे स्वतंत्र रुप से कार्य कर सकें व अपने क्षेत्र की आवश्यकताओ एवं प्राथमिकताओं के अनुरुप विकास कर सके।

विकेन्द्रीकरण की चुनौतियां – ग्रामीण जनता के विकास के लिए केन्द्र राज्य व राज्य स्थानीय सरकार द्वारा समय–समय पर विकास योजनाओ का निर्माण एवं क्रियान्वयन तो किया जता है लेकिन पंचायती राज की कार्यप्रणाली के क्रियान्वयन मे में चुनौतियों के कारण इन योजनाओ का लाभ उन ग्रामीणो तक नही पहुच पाता जो वास्तव जरुरतमंद है इस चुनौतियों के पीछे प्रशासकीय क्रियान्वयन से संबंधित अभिकरणो से तंत्रो के कारण दिन व दिन वढती जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रतियोगिता दर्पण
2. सार्वजनिक एक लोक वित अर्थषास्त्र
3. www.google.com
4. रोजगार समाचार पत्र

****

Hybridity & Alienation in the works of Ruskin Bond

Dr. Shailendra Kumar Chourasia*

Abstract - The paper examines how one culture accepts, absorbs, adapts, or resists the onset of hybridity. The comparative analysis of culture and society provides a complex picture of contested versions of hybridity. This reveals both the contradictions that sharpen and the overlap that blurs the distinctions between West and East. The paper revisits the culture of Ruskin Bond, not in the usual terms of the influence of west on the East, but as a set of relationships between both of them. This shift in emphasis provides new insights into how the peoples of different culture sought to discover new ways to negotiate the problems of cultural difference.

Introduction - Hybridity and multiculturalism are the two different forms though both are the products of East West encounters. The interaction between two cultures gives an overlapping of ideas and tradition with each other. Hybridity explores the flexibility of thoughts and multidimensional approach to the society. This flexibility trends up into the form of a gradual advancement. Indian culture is supposed to have age long tradition and customs. And this process still is going on so that is has become the most noteworthy example of multicultural ocean. The induction of new culture and its established tradition merged with Indian culture has given acceleration. This acceleration has been turned up into the form of human comfort. Men have sought their own ways to be identified in the society. And this has gripped them a sort of separation or what we may call it as alienation. This alienation is also the product of East West encounter that is plenty in the works of Ruskin Bond. So all these terms are the reflection of East- West encounters and gradual cultural interaction.

The important point to recognize is that cultures are always *retrospective* constructions, meaning that they are consequences of historical process. Bhabha argues throughout *The Location of Culture* the narrative construction of new mixed race that arise from the 'hybrid' interaction. What Bhabha states about the hybridization of two culture is high standards of two cultures.

It is the emergence of the interstices- the overlap and displacement of domains of difference that the inter-subjective and collective experiences of nations, are negotiated…. Terms of cultural engagement, whether antagonistic or affinitive are produced per formatively. The representation of difference must not be hastily read as the reflection of pre- given ethnic or cultural traits set in the fixed tablet of tradition. The social articulation of difference from the minority perspective is a complex, on- going negotiation that seeks to authorize cultural hybridites that emerge in moments of historical transformation. (LC-2).

Cultural hybridity is a medium through which one culture enacts another. The themes, patters & ideologies many a times seem parallel to each other. The writers borne in one country and writing about another inevitably seek pleasance to evoke the universalism of conscious cross-culturalism. Bapshi Shidhwa, Salman Rushide, V.S. Naipul, Amitav Ghose and other eminent writers have elaborated the theme of 'hybridization' in their works. E.M. Foster's *A passage to India* is a monumental study of the clash and reunion between two cultures. Aziz a representative of upper class Indian society fails to set an equilibrium between the Indian cultural values and colonized one. Fielding at Aziz's house while encounters Aziz's wife; Aziz speaks out of his cultural values:

"Of course not, but the word exists and is convenient. All men are my brother, and as soon as one behaves as such he may see my wife" (A Passage to India- 128).

And further he speaks in a conversation to Miss Quested, Aziz admits that Eat and West are two "you keep your religion I mine" (A passage To India - 156)

Ruskin Bond, an offspring writer with the basic tissues of hybridity gives a harmonious blending of East and West in his works. He rejected the superiority of white man and introduced the permanent nature of writing. The nature trails, wild flowers,trees, birds and other nature's wonder became a permanent part of his writing. *His Room on the Roof* portrays of his new learning and affection of Indian culture where he was born. The hybridity of two cultures of East and West has been spelled out clearly in *The Room of the Roof* and nowhere is the resolution so unambiguous and simple. Here the protagonist, Rusty, borne in India, a product of mixed hybridity repairs his conflict of being a British. Soon he concentrates his problem which is or regaining his roots, of belongingness. He concludes that I don't belong to British as my upbringing, sense of values, affections all combine to make me Indian. He finds physically nothing common in him with his countryman. His self-pity arising out of a sense

*P.G.T. (English) Kendriya Vidyalaya No. 1, Indore (M.P.) INDIA

of alienation and rootlessness come out with his character. From the beginning we see the protagonist Rusty learning about diverse Indian ways through his intimacy with Indian soil. Bond having British ancestry couldn't help to keep alone himself very much close to the Indian rituals. The rituats embed and accustomed with strangeness, the western and the acquaintance the, eastern. While he speaks of the European soldiers, the man of colourful fortune, he closely understand the manners morals and values of Europeans and Asians during the period of colonial expansion. The mixed race understanding developed with his senses helped him to interpret such unpredicted, unpolished instincts to portray.

The Theme of alienation also depicts the literature of Ruskin Bond. Alienation is a natural instinct present in every living creatures on the earth.

In a mystical conception while we go through the two great Indian epics, *Ramayana* by Valmiki and *Mahabharata* by Ved Vyas, we see a long chain of alienation. The epic in relation to man present all types of character who suffer from alienation. Being drifted from father and wandering in search of beloved Sita we see a touch of alienation in Rama. Sita being away from Rama herself alienated where . Hanumana waiting for Rama in the dense forest himself is alienated. Laxman younger brother to Rama, alienated himself and his wife Urmila. Sabari, Sugriva and his group, Bharat, and Satrugan are alienated themselves in one kind. On the other hand Ravana, Mandodari (Ravana's wife), Kumbhakarna, all are conflicted of the very purpose of their existence. In the *Mahabharata* charaters like Devabrata, Kunti, Pandvas, Ghatotakachha, Ashwatthama had been alienated is some way. According to the Oxford English Dictionary, alienation means the action of estranging or state of estrangement in feeling or action". The *Encyclopedia Britannica* describes it as:

A term used with various meanings in philosophy, theology, psychology, and social sciences, usually with emphasis on personal powerlessness, meaninglessness, normlessness, cultural estrangement, social isolation, or self estrangement.

Thus alienation can be only from *other* things. It can be from man's own self, it can be intense and minute, no matter what is source or degree, that one fact is that alienation is man's inevitable fate.

Ruskin Bond visualizes the problem of alienation with full aspects in his fiction. He sees this alienation because of the conflict in having intimacy with others. According to him, the meaning of the feeling of loneliness is the loss of significant relations with others and this loss results in social isolationship. He thinks that the decay in creative meaningful relation between man and man and the separation of a man living in the society from the culture of his society cause alienation.

Bond's first novel, *The Room on the Roof* deals with the very life of Anglo- Indian boy Rusty and the incidents that take around him. Living in the custody of his English guardians, Rusty, feels himself alienated. He himself does not know about his parents and always searches them into void. Somi, an Indian Panjabi boy while accompanies him, Rusty finds himself attached with him. Dehra was a place of curiosity to him. The restrictions imposed by Mr. Harrison, his English guardian and mal description of missionary's wife puts him always around fear. But these all fail to freeze his steps as he himself decides to overcome his alienation.

This community why did not move to England always comes or question in his mind. The community consisted mostly of elderly, people, the others had left soon often independence. These few stayed because they were too old to start life again in another country, where there would be no servants and very little sunlight and, though they complained of their lot and criticized the government, they knew their money could buy them their comforts: servants, good food, whisky almost anything- except the dignity they cherished most…. (*The Room on the Roof.* 10).

Being suppressed with loneliness, Rusty determines to search for the bazaar even after the restriction imposed over him. This shows the quest of being identified he was suffering from in the tight custody of his guardians.

In the view of Heidegger man lives in this world in authentic existence; that means existence which is determined in the present, only in terms of impersonal social requirements. Thus man's freedom of decision and choice is interrupted and he feels alienated. In the view of Sartre, a person feels the loss of touch with the inner core of his being and therefore all his actions become empty, flat and devoid of meaning .This search for inner core enforces Rusty to accept invitation for *holi* even because of the fear of his guardians. While Rusty thinks about it.

Holi, the Festival of Colours, the Arrival of spring, the rebirth of The new year, the awakening of love, what were these things to him, they did not concern his life, he could not start a new life, not for one day….and besides, it all sounded very primitive, this throwing of colour and beating drums….(The Room on the Roof-28)

While he escapes from his guardians' custody, Rusty's alienation feels consolation Kishen, Suri and Somi introduce him the affection, love, family manners he has been deserted for.

In *Delhi is not Far* Bond; through the narrator, speaks of his intense desire that shows his suffering and escape of alienation.

A few things reassure me …the desire to love and to be loved. The beauty and ugliness of human body, the intricacy of its design….love takes me to distant, happier places. (Delhi is not far 26).

In the next novel *Delhi is not Far* Bond; through the narrator, speaks of his intense desire that shows his suffering and escape of alienation.

A few things reassure me …the desire to love and to be loved. The beauty and ugliness of human body, the intricacy of its design….love takes me to distant, happier places. (Delhi is not far 26).

Living alone in his house, the narrator brings an orphan boy Suraj and finds his deep affections with him. Kamla, a girl whom the narrator loved is left behind in the ups and downs of life and struggle to become a writer. Finally the narrator moves to Delhi with Suraj.

Bond's entire writing is an out product of his close association with the soil of India and its people. The hybridity has given him a new meaning in this country of diverse and colourful cultures and people. The alienation didn't put him down in fact he made the everyman of the society his family. This is clearly portrayed in the characters and the incidents of his writing.

References :-

1. Bhabha, Homi K. "Introduction: Narrating the Nation." Nation and Narration.Ed. Bhabha. London and New York: Routledge, 1990. 1-7.
2. Our Trees Still Grow in Dehra. New Delhi: Penguin, 1991.
3. The Room on the Roof. London: Andre Deutsch, 1956.
4. Ruskin Bond's Treasury of Stories for Children. New Delhi: Viking, 2000.
5. Scenes from a Writer's Life: A Memoir. New Delhi: Penguin, 1997.
6. Time Stops at Shamli and Other Stories. New Delhi: Penguin, 1989.
7. E.M.Foster."*A passage To India",New Delhi, Penguine,1964 Ed.*
8. *Khorana, Meena. The life and works of Ruskin Bond. Praeger Publishers, Westport. United States.2003*
9. *Soma Banerjee, "Ruskin Bond," in Reference Guide to Short Fiction, ed. by Noille Watson (Detroit: St. James Press, 1994),*
10. *"Delhi Is Not Far." Delhi Is Not Far: The Best of Ruskin Bond. New Delhi: Penguin, 1994.*
11. *The Lamp Is Lit: Leaves from a Journal. New Delhi: Penguin, 1998.*
12. *Time Stops at Shamli and Other Stories. New Delhi: Penguin, 1989.*
13. *Our Trees Still Grow in Dehra. New Delhi: Penguin, 1991.*
14. *Scenes from a Writer's Life: A Memoir. New Delhi: Penguin, 1997.*
15. *"The Room on the Roof" and "Vagrants in the Valley": Two Novels of Adolescence. New Delhi: Penguin, 1993.*
16. *Khorana, Meena. Introduction. The Indian Subcontinent in Literature for Children and Young Adults: An Annotated Bibliography of English-Language Books. Westport, CT: Greenwood, 1991.*

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

The Dilemma of Identity in the works of Ruskin Bond

Dr. Shailendra Kumar Chourasia*

Abstract - There is no foreign in this world. Foreign lies in the very deep of our mind. Bond in his writing portrays that the lack of belonging ness always creates a dilemma before you and you get conflicted. You find yourself in the dilemma of your own identity with society, culture, race, color and language you speak. The cultural boundaries determine who belongs to the one's society and who does not pertain the required emotional safety to the society,the formation of communities, cultural boundaries, and identities varies across contexts. This is influenced by factors including sociopolitical forces, cultural dynamics, and psychological differences of the people. These adaptive patterns are, in turn, reflected in terms of ethnic identification, cultural differences and dilemma of belongingness Ruskin Bond, an offspring begins with the dilemma of his identity and find solace in India, where he was born and brought up.

Introduction - Identity is a state of mind in which someone identifies their character traits that leads to finding out who they are. It proves to them what they do and not that of someone else and helps in finding out their distinction. In other words it's basically who you are and what you define yourself as being. The theme of identity quest is always seen in books of Ruskin Bond. It's useful in helping us understand that his state of mind is full of arduous thoughts about who they are and what they want to be. People can try to modify their identity as much as they want but that can never change. The theme of identity is a very strenuous topic to understand but yet very interesting if understood.

In modernity, identity is often characterized in terms of mutual recognition, as if ones identity depended on recognition from others combined with self- validation of this recognition. Identity still comes from a pre set of roles and norms. Ethnic identity is the sum total of group member feelings about those values, symbols, and common histories that identify them as a distinct group. Development of ethnic identity is important because it helps one to come to terms with their ethnic membership as a prominent reference group and significant part of an individual's overall identity.

The establishment of identity is an important, complex task for all adolescents, and is considered a major developmental task for all adolescents. It is particularly complicated for adolescents belonging to ethnic and minority groups. Ethnic identity of the majority group of individuals is constantly validated and reinforced in a positive manner where as the minority group is constantly ridiculed and punished in a negative manner. What does this say for those adolescents who are the minority and not the majority? It is important to study or research ethnic identity because it provides better knowledge to help one understand striving for a sense of unity and connectivenesss in which the self provides meaning for direction and meaning of ethnic identity .

The term "personal identity" may be used to refer to the result of an identification of self, by self, with respect to other. It is, in other words, a self-identification on the part of the individual. In contrast, "social identity" may be used to refer to the outcome of an identification of self by other. However His books like *Room on the Roof*, *Delhi is not Far* ,*The Time Stops at Shamli* and *The India I Love* are remarkable books that depict the identity theme. They have to deal with people that have an identity that they've tried to alter in order to become more at ease in the society they belong to. In "The Room on the Roof," Rusty a 16-year-old Anglo-Indian boy, finds the diminishing Anglo Indian society in India rather stifling.

In Ruskin Bond's work this is the product of East-West encounters and present different aspects in his writing. Rudyard Kipling is considered as the man to set the path for Bond's writing. Bond is frequently compared to Rudyard Kipling, perhaps because both are the writers who have British descent and wrote in India. While But like Kipling Bond does not Kipling's colonial stance of superiority and the "White man's burden". But Kipling's *The jungle Book*, is different, an allegorical presentation which shows the distinction between "outcasted" and "uncasted" crucial. Toward end of 19th century, England defined less by "Little Englanders" than by notion of a "Greater Britain". There was a shift in national identity among the citizens of the Empire in a state of contradiction which encouraged grander vision of the self and its expansion checked by rival European powers. Kipling quietly rebelled against the particularistic and hierarchical premises of racial typology in *Jungle Book*. Mowgli, is granted a self that is originally free of constraints of parent's caste. Sometimes, he is identified in two way, by ascription (birth) and Group affiliation. He feels himself a product of two heterogeneous

*P.G.T. (English) Kendriya Vidyalaya No. 1, Indore (M.P.) INDIA

culture and fail to decide his position. He is brought up in jungle and to Mowgli animals form a community of tradition. . But, here Mowgli is allowed to grow into manhood without outgrowing his original identity and this makes him more hybrid in Nature.

Bond's work, specially his novels and novellas, and many of his short stories, discuss the dilemma of Identity. His first novel *The Room on the Roof* portrays the dilemma of Identity of Rusty in a world:

The circular journey motif serves as a metaphor for Rusty's passage from childhood to adulthood, from dependency to responsibility, from self-effacement to involvement with others, from exclusivity to cultural hybridity. (Khorana 36-37)

In Dehra Rusty acquires maturity and self-knowledge after leaving personal worries and makes a commitment to his Indian community. This commitment leads him to fulfil his dream of belongingness. This novel beautifully portray the prevailing racial and colonial attitudes of the British through the existential anguish of seventeen-year-old Rusty. Colonized living after independence in India were separate from other local Indian communities. Bond writes in *Room on The roof:*

Mr. John Harrison's house, and the other houses, were all built in an English style, with neat front gardens and name-plates on the gates. The surroundings on the whole were so English that the people often found it difficult to believe that they did live at the foot of the Himalayas, surrounded by India's thickest jungles. India started a mile away, where the bazaar began. (19)

Bond felt that every one in this world needs someone to share and interact his feelings and emotions, views and opinions. Adrift among them, the narrator, Arun, a struggling writer of detective novels in Urdu, waits for inspiration to write a blockbuster. *Delhi is Not Far* story of 3 people (two young men and a young woman) striving to make ends meet in Pipalnagar. Situations slowly bring them together, and each of them enjoy sacrificing the little that they have for the sake of the other. Their suffering amidst poor health and the trifle happiness that they seek from the world, their quest to make it big in the city, such day to day instances are narrated with a tinge of humour. The conversation between the friends is what makes this one special.

"I wonder why God ever bothered to make men, when He had the whole wide beautiful world to himself...Why did He find it necessary to share it with others?"

"There were no inhabitation in my friendship with Suraj. We spoke of bodies as we spoke of minds, and discussed the problems of one as we would discuss those of the other, gor they are really the same." [Delhi is Not Far, PP-31]

In the Room on the Roof drum is a clarion call and rusty cannot ignore it. It sound waves traveling over hills and dales strike against his ear-drum, and rusty in spite of the sore rifts carved on his flesh by Malacca cane the day before, follows the beats like a possessed soul. The dhum-dhum is not an ordinary beat for celebrating the festive of spring, rather it signifies rebirth of Rusty in a world of friends and liberty. He finds himself one of them.

Bond is frequently compared to Rudyard Kipling, perhaps because both are the writers who have British descent and wrote in India. While unlike Kipling, Bond does not Kipling's colonial stance of superiority and the "White man's burden". "*Time stops at Shamli*" is one such story by Ruskin Bond based on an impulse. Ruskin Bond is always a writer who takes his readers into a different world, through the eyes of Rusty, through the lanes and by lanes of Almore, Mussoorie, Ranikhet, Nainital and other hill stations of that region. Bond is of the opinion that everyone of sometime in life travel in the train. Train passes through many stations known and unknown before reaching to the destinations because life has moved ahead and we have moved with time too. The loves enlightens you and rekindle you.Bond finds himself Indian wherever he goes and seeks for belongingness. This sense of belongingness senses him his own personal as well social identity.Personal Identity is a self-identification on the part of the individual. In contrast , "social identity" refers to the outcome of an identification of self by other.This is the magic of Ruskin Bond; he has simple needs and sweet dreams in his eyes. And these are the feelings which are reflected in his characters too.

"Our skin, I thought, is like the leaf of a tree, young and green and shiny. Then it gets darker and heavier, sometimes spotted with disease, sometimes eaten away. Then fading, yellow and red, then falling, crumbling into dust or feeding the flames of fire" [*Time Stops at Shamli* 9] This reminds bonds olden days when he was struggling for his own place. The quest of being identified is clearly come out of the incident.

"Well, he was alone, but at the moment he did not feel very strong. For a moment he thought his father was beside him, that they were together on one of their long walks. Instinctively he put out his hands, expecting his father's warm comforting touch."[*The Funeral, Time Stops at Shamli* 4]

The Room of many colours is the Second story of the book. Bond, the narrator looks India clothed in different colours, people, festivals, trees, words, and insects and so on. In the discussion with his father to confirm his own identity. It seems that Bond was himself trying to resolve his dilemma in this strange world.

All of his stories are memorable about small lives, with all the hallmarks of classic Ruskin Bond prose: nostalgia, charm, underplayed humour and quiet wisdom. Even the dreams here are small: if one ever makes it, all celebrates. These small glimpses gives Bond a feeling of belongingness and make him identical.

You suffer a loss of identity. It is a little frightening too, though the indifferent crowds in ChandniChowk late in evening; you are an alien among the Westernized who frequent the restaurants and shops at Connaught Place; a

stranger amongst one's fellow refuges who have grown prosperous now and live in the flat treeless colonies that have must roomed around the city. It is only when I am near an old tomb or in the garden of a long forgotten king that I become conscious of my identity again." (DINF - 98). The conflict between outsider and insider, between belonging and not belonging is a more striking one. But Bond throughout his writing confirms his identity as Indian. Not by race but with everything he owe. It is a well-known fact that all human beings as well as places are created by One Almighty and it is a fact that He has not drawn any dividing lines. Consequently, it is surprising that people believe in such false notions and confine their own possibilities by building imaginary walls that segregate. Bond seems to recommend to the readers that people need a change in their attitudes and a feeling of belonging to the whole world. It is only through this enlarged vision that they can eliminate the clashes between the minds and can give rise to a new society.

References :-

1. Greenberger, Allen J. *The British Image of India: A Study in the Literature of Imperialism 1880-1960.* London: Oxford UP, 1969.
2. Harris, Judith Rich, and Robert M. Liebert. *The Child: Development from Birth to Adolescence.* Englewood Cliffs, NJ: Prentice, 1984.
3. Harris, Michael T. *Outsiders and Insiders: Perspectives of Third World Culture in British and Post-colonial Fiction.* New York: Lang, 1992.
4. Bhabha, Homi K. "Introduction: Narrating the Nation." Nation and Narration.Ed. Bhabha. London and New York: Routledge, 1990. 1-7.
5. Our Trees Still Grow in Dehra. New Delhi: Penguin, 1991.
6. The Room on the Roof. London: Andre Deutsch, 1956.
7. Ruskin Bond's Treasury of Stories for Children. New Delhi: Viking, 2000.
8. Scenes from a Writer's Life: A Memoir. New Delhi: Penguin, 1997.
9. Time Stops at Shamli and Other Stories. New Delhi: Penguin, 1989.
10. E.M.Foster." *A passage To India",New Delhi, Penguine,1964 Ed.*
11. *Khorana, Meena. The life and works of Ruskin Bond. Praeger Publishers, Westport. United States.2003*
12. *Soma Banerjee, "Ruskin Bond," in Reference Guide to Short Fiction, ed. by Noille Watson (Detroit: St. James Press, 1994),*
13. *"Delhi Is Not Far." Delhi Is Not Far: The Best of Ruskin Bond. New Delhi: Penguin, 1994.*
14. *The Lamp Is Lit: Leaves from a Journal. New Delhi: Penguin, 1998.*
15. *Time Stops at Shamli and Other Stories. New Delhi: Penguin, 1989.*
16. *Our Trees Still Grow in Dehra. New Delhi: Penguin, 1991.*
17. *Scenes from a Writer's Life: A Memoir. New Delhi: Penguin, 1997.*
18. *"The Room on the Roof" and "Vagrants in the Valley": Two Novels of Adolescence. New Delhi: Penguin, 1993.*

****

भारत में सार्वजनिक ग्रंथालय अधिनियम - उत्तर प्रदेश सार्वजनिक ग्रंथालय अधिनियम: एक समीक्षात्मक अध्ययन

सुनील गुजराती * आशीष द्विवेदी **

प्रस्तावना - आधुनिक सार्वजनिक ग्रंथालय का विकास वास्तव में प्रजातंत्र की देन हैं। सार्वजनिक ग्रंथालय प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा दिलाने का सबसे लोकप्रिय साधन होते है जैसा कि इसके नाम से ही विदित होता है सार्वजनिक अथवा सर्व-जनो को सेवा प्रदान करने वाले ग्रंथालय जिसमें बिना किसी जाति, वर्ण, व्यवसाय, लिंग के भेदभाव बिना हर समय स्वतंत्र रूप से जनता के लिए खुले रहते हैं। शिक्षा का प्रसारण एवं जनसामान्य को सुनिश्चित करना प्रत्येक राष्ट्र का कर्त्तव्य हैं। प्रत्येक प्रगतिशील देश में जन ग्रंथालय निरन्तर प्रगति कर रहे है और साक्षरता का प्रसार कर रहे हैं। साथ ही वर्तमान सूचना समाज में जब हम ई-गवर्नेस की बात करते हैं तो सार्वजनिक ग्रंथालयों का स्वरूप सामुदायिक सूचना केन्द्र के रूप में विकसित हो रहा हैं, यहां एक ही छत के नीचे ज्ञान के साथ-साथ कई महत्वपूर्ण सूचनाओं की भी जानकारी मिल सकेगी। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने भी अपनी अनुशंसा में सार्वजनिक ग्रंथालयों को सामुदायिक सूचना केन्द्र के रूप में स्थापित करने की सिफारिश की हैं। वास्तव में जन ग्रंथालय जनता के विष्वविद्यालय हैं जो बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक नागरिक के उपयोग के लिए खुले रहते हैं।

इन ग्रंथालयों की महत्ता को इंगित करने तथा जन सामान्य तक इसकी पहुंच आसान बनाने हेतु देश या राज्य द्वारा सार्वजनिक ग्रंथालय अधिनियम का निर्माण करते है ग्रंथालय अधिनियम एक प्रकार का कानून अथवा विधान होता है जो किसी भी देश या राज्य द्वारा उस क्षेत्र में ग्रंथालय प्रणाली की स्थापना करने के लिए पारित एवं क्रियान्वित किया जाता हैं इस प्रकार ग्रंथालय के संदर्भ में केन्द्रीय या राज्य सरकार के अधीन एक ग्रंथालय प्रणाली की स्थापना और उसके रखरखाव, कार्यो, सेवाओं, अधिकारों तथा प्रबंध को एक वैधानिक रूप दिए जाने को ग्रंथालय अधिनियम कहा जाता हैं।

भारत में अबतक 19 राज्यों में ग्रंथालय अधिनियम पारित हो चुका हैं, 2006 में उत्तर प्रदेश पारित इस अधिनियम की समीक्षात्मक अध्ययन इस प्रकार हैं-

राज्य में नि:शुल्क एवं प्रभावी ग्रामीण और नगरीय ग्रंथालयों की स्थापना, सुदृढ़ीकरण, रखरखाव और विकास हेतु अधिनियम।

प्रथम अध्याय: प्रारंभिकी - इस अध्याय में संक्षिप्त नामावलियों को परिभाषित किया गया हैं। इस पुस्तक के अंतर्गत नवीन साधन जैसे श्रृव्य-दृष्य टेप, फिल्म, फ्लॉफी, सीडी को भी शामिल किया गया हैं।

द्वितीय अध्याय: परामर्शदात्री समितियां- अधिनियम में राज्य ग्रंथालय परिषद का गठन किया गया हैं। 12 सदस्यों वाली परिषद में मंत्री माध्यमिक शिक्षा विभाग अध्यक्ष व विशेष कार्याधिकारी (ग्रंथालय विशेषज्ञ) सदस्य-सचिव व ग्रंथालय विशेषज्ञों के रूप में परिषद में पांच सदस्यों का शामिल किया गया परिषद का स्वरूप परामर्शदात्री होगा व पदेन सदस्यों का कार्यकाल दो वर्षो का होगा।

तृतीय अध्याय: ग्रंथालयों का निदेशक- माध्यमिक शिक्षा विभाग को ही निदेशक बनाया गया हैं जो उचित प्रतीत नहीं होता है वरन् इसके स्थान पर पृथक से स्वतंत्र विभाग का गठन किया जाना चाहिये था। क्षेत्रफल व जनसंख्या की दृष्टि से देश का द्वितीय व प्रथम स्थान होने से क्षेत्रीय ग्रंथालय विभाग का गठन भी आवश्यक हैं।

चतुर्थ अध्याय: सार्वजनिक ग्रंथालय प्रणाली की संरचना- राज्य केन्द्रीय ग्रंथालय व राज्य संदर्भ ग्रंथालय की स्थापना की गई हैं जो क्रमश: इलाहबाद व लखनऊ में होंगे। इसके साथ राज्य में और किस श्रेणी के ग्रंथालय होंगे इसका कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं हैं। क्षेत्रफल व जनसंख्या की दृष्टिगत रखते हुए राज्य केन्द्रीय व राज्य संदर्भ ग्रंथालयों की शाखाओं व इसके नियत्रंण में चल ग्रंथालय की स्थापना की जानी चाहिए थी, इसके साथ ही राज्य में प्रभागीय, जिला, विशिष्ट, नगर, ब्लॉक, ग्रामीण, पंचायत ग्रंथालयों की स्थापना का स्पष्ट प्रावधान किया जाना चाहिए।

पंचम अध्याय: वित्त - किसी प्रकार का ग्रंथालय उपकर व राज्य के बजट से निश्चित धनराशि, विशेष वार्षिक अनुदान देने का कोई प्रावधान नहीं हैं। ग्रंथालय विकास योजना पर होने वाले व्यय की संपूर्ण राशि राज्य के बजट से प्राप्त होगी। जनग्रंथालय प्रणाली की सहायता और विकास हेतु अतिरिक्त वित्तीय संसाधन बढ़ाने की बात कहीं गई हैं परन्तु वह वित्तीय साधन कौन से होंगे स्पष्ट नहीं किया गया।

इसके साथ ही अध्याय छह में मान्यता, सात में रिपोर्ट व आठ में निरीक्षण में विविध प्रावधानों का उल्लेख किया गया हैं।

निष्कर्ष- इस प्रकार उत्तर प्रदेश सार्वजनिक ग्रंथालय अधिनियम में पुस्तक के अंतर्गत व समितियों में ग्रंथालय विशेषज्ञों की संख्या को लेकर इसे बेहतर कहा जा सकता हैं। अधिनियम के उद्देश्य प्राप्ति को ध्यान में रखते हुए राज्य के जनगंथालयों के सर्वांगिण विकास हेतु पृथक से एक स्वतंत्र ग्रंथालय विभाग एवं अलग निदेशक का गठन आवश्यक हैं।

वित्त संबंधी प्रावधान किये गये हैं परंतु किसी भी प्रकार का ग्रंथालय कर नहीं लगाया गया हैं व राज्य के शिक्षा बजट से निश्चित धनराशि देने

* ग्रंथपाल, शा. विधि महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत
** ग्रंथपाल, शा. रा. वि. महाविद्यालय, मनासा (म.प्र.) भारत

का कोई भी प्रावधान नहीं हैं। इसके अतिरिक्त संसाधन बढ़ाने हेतु आय के अन्य स्त्रोतों पर विचार किया गया हैं परन्तु यह स्त्रोत किस प्रकार के होंगे? इसका स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए। केन्द्र, राज्य व अन्य संस्थाओं द्वारा दिये गये अनुदान किस निधि में जमा होंगे? इसे किन प्रयोजनार्थ खर्च किया जाएगा? इस हेतु एक स्वतंत्र ग्रंथालय निधि का निर्माण नहीं करना भी अधिनियम की अस्पष्टता को दर्शाता हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट हैं वित्त व्यवस्था पूरी तरह से सरकार की दया पर आश्रित हैं जो कि उचित प्रतीत नहीं होती हैं। मुद्रणालय एवं ग्रंथ पंजीयन अधिनियम के तहत नि:शुल्क ग्रंथों की प्राप्ति का प्रावधान भी किया जाना चाहिए।

इस प्रकार कहा जा सकता हैं अधिनियम में कुछ ही प्रावधानों को छोड़ अधिकांश महत्वपूर्ण प्रावधानों को अनदेखा किया गया हैं अत: इसे महज औपचारिकता पूर्ति अधिनियम ही कहा जा सकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. त्रिपाठी, एस.एम एवं लाल, सी. (1999): ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान, एस.एस.प्रकाशन, नईदिल्ली, पृष्ठ क्र.141-142.
2. जैन, एम.एल. (1982): पब्लिक लायब्रेरी डेवलोपमेन्ट सोसायटी, राष्ट्रीय सेमिनार, आय.एल.ए.
3. मित्रा, तरूण कुमार. (1982): सोशयल प्रास्पेक्ट ऑफ द पब्लिक लायब्रेरी इन डेवलोपिंग सोसायटी, राष्ट्रीय सेमीनार, आय.एल.ए.
4. गणेशन, सुशीला (1982): पब्लिक लायब्रेरी इन ए डेवलोपिंग सोसायटी, राष्ट्रीय सेमिनार, आय.एल.ए.
5. उत्तर प्रदेश, राजपत्र, 1 सितम्बर 2006 क्रमांक।
6. पाहुजा, एस.एस. (1994): रंगनाथन: एन इनावेटर ऑफ लायब्रेरी लेजिसलेशन, राष्ट्रीय सेमिनार, आय.एल.ए.।

****

आदिवासियों की आदिम परम्पराएं और वर्त्तमान में उसका बदलता स्वरुप : डूंगरपुर जिले का विशेष अध्ययन

भरत लाल केरावत *

प्रस्तावना – आदिवासी लोग अपनी परम्पराओं में इस तरह से जकडे रहते थे कि उन पुरानी परम्पराओं को छोड़ना ही नहीं चाहते थें। उनको अपनी संस्कृति और पुरानी परम्पराओं से बहुत ही लगाव था और आज भी है द्य आदिवासी लोग एकांत प्रिय मानव है। प्रकृति से उसे बहुत ही लगाव है इस लिए आज भी जंगल में ही निवास करते है। आजादी से पहले और आजादी के बाद भी यह आदिवासी जंगल में ही अपना मुकाम बनाना चाहेगा। किसी भी प्रकार के युद्ध से कभी नहीं घबराते है। उसी तरह से अपने समाज में पुरानी परम्पराओं को वो एक प्रकार पूर्वजो द्धारा लिया गया वचन स्वरुप मानते है। इस लिए पुरानी परमपराओं को वो नहीं छोड़ना चाहते है। साथ ही उनमे शिक्षा की कमी की वजह से उन परम्पराओं से जकडे रहते थे। पुस्तकों में लिखा होता था कि आदिवासी सिर पर जानवरों के सिंग लगाता है तीर-कमान रखता है, सिर्फ जंगलों में ही रहते है। आज का आदिवासी हर क्षेत्र में पहुच चुके है, क्योंकि आज का आदिवासी शिक्षित हो चुके है वो जंगलों को छोड़ कर शहरों में रहने लगे है। नई संस्कृति और नई परम्पराओं को अपनाने लगे है। आज का आदिवासी आधुनिक हो चुके है। अपनी संस्कृति में भी बदलाव लाये है। उसे युग के साथ कदम से कदम मिला कर चलने की समझा आ चुकी है।

आदिवासीयों के इस बदलाव के कारण उनके अपने समाज के बुद्धि जीवी लोग चिंतित भी है। क्योंकि आज का आदिवासी इस कदर आधुनिक हो गया है कि उसे लगता है कि परम्पराओं के बंधन में जकडे रहना आधुनिकता नहीं है। अपने बीच दुसरे की दखल बर्दास्त नहीं करते है द्य समाज के प्रति जिम्मेदारी भूलता जा रहे है। इन भटके हुए युवा आधुनिक आदिवासी नागरिकों को समय पर सही रास्ता दिखाना जरूरी हो गया है।

अध्ययन क्षेत्र :– हमारा अध्ययन क्षेत्र डूंगरपुर जिला है। यह आदिवासी बाहुल्य जिला डूंगरपुर राजस्थान के दक्षिणी आँचल में स्थित है, जो 'वागड़' के नाम से जाना जाता है। डूंगरपुर की स्थापना डूंगरीया भील बरंडा के नाम से नामकरण हुआ है। भौगोलिक दृष्टि से यह जिला अरावली की पहाड़ियो की प्राचीन वलित पहाड़ियों में स्थित है इसलिए उसे 'पहाड़ियों की नगरी' के नाम से जाना जाता है। जिले में अजजा की जनसंख्या – 72.63% के लगभग है। यहाँ के आदिवासियों की उपजाति भील, मीणा, डामोर आदि होती है। यहाँ के आदिवासी बहुत भोले और परम्परावादी होते है। पुराने जमाने में काबिले हुआ करते थे उसका एक मुखिया होता था और समयानुसार इसमें भी स्वरुप बदलता गया, काबिले की जगह अब पालों ने ले ली है जिसके मुखिया 'गमेती या मुखी या पालवी या कोटवाल' आदि नामो से जाना जाता है।

पुरानी परम्पराएं :– आदिवासी समाज में आज भी पुरानी परम्पराओं को अपनाया जा रहा है। उसी परम्परा को बनाये रखें हुए है। इन पुरानी परम्पराओं को बदलना ही नहीं चाहते है, वो पुरानी परम्पराएं इस प्रकार से है :-

1. वैवाहिक परम्पराएं :– वैवाहिक कार्यक्रम 15 दिन तक चलता था। जिस दिन से धागा बंधन होता था तब से सारे कुटुम्बी उसी घर पर रहते थे। खाना-पीना इत्यादि वही होता था। सारे कुटुम्बियों को कपडे भी भेट करने पड़ते थे द्यइसमें आदिवासी सबसे ज्यादा फिजूल खर्च करता है। वो फिजूल खर्चा इस प्रकार है। किसी की भी शादी हो लेकिन इसमें भोज के रूप में मांस-मदिरा का आयोजन होना अनिवार्य होता है अगर उसके पास रुपया नहीं है तो कर्जा लेकर भी खर्चा करेगा। अगर वो व्यक्ति शादी में खर्चा नहीं करता है तो उसे समाज से बाहर रखा दिया जाता है। वो व्यक्ति समाज में अपना सम्मान कहीं कम ना हो जाए ये सोच कर मजबुर होकर भोज का आयोजन करता है। शादी में कपडे भेट की परम्परा है, कपडे भेट करना अनिवार्य है।

2. ढूढोत्सव :– संतान उत्पत्ति के पश्चात होली के समय आयोजित किया जाने वाला समारोह होता है। किसी भी आदिवासी व्यक्ति के घर संतान की उत्पत्ति हुयी है तो उसे ढूंढोत्सव का आयोजन करना होता है। जिसमे रिश्तेदारों को आमंत्रित किया जाता जाता है। रिश्तेदार नवजात शिशु या संतान के लिए कपडे और चांदी के जेवर और उसके माता-पिता केलिए कपडे लाते है। मेहमानों के लिए भोज का भी आयोजन होता है, उसमे मांस-मदिरा का आयोजन जरूरी होता है। होली के समय में शिशु के माता-पिता से 'गोट' (भेट स्वरुप रुपया) मांगता है तो वो मना नहीं कर सकता है। वो ही रिश्तेदार मांस-मदिरा का सेवन करने के बाद में आपस में लड़-भीड़ भी जाते है।

3. मृत्यु भोज :– यह परम्पराएं वैसे सभी समाज में होती है। लेकिन आदिवासियों की यह परम्परा बहुत ही अलग है। जिस व्यक्ति के यहाँ किसी की मृत्यु हुई है उस दिन से लेकर सभी कुटुम्बी उसके घर जाकर रहेंगे। उनका मानना है कि परिवार पर संकट आया है ऐसे समय में उस परिवार को अकेला नहीं छोड़ना चाहिए। वो परिवार अपने आप को अकेला नहीं समझे। जब तक 12 वा या 13 वा न हो जाता तब तक कुटुम्बी उसके घर पर ही रहते है। प्रत्येक परिवार अपने घर से बारी-बारी से अपने घर से खाना बना कर ले जाता है और शोक ग्रस्त परिवार को भोजन कराता है। अंतिम में शोक ग्रस्त परिवार को मृत्यु भोज का आयोजन करना होता है। मृत्यु भोज में भी वो मदिरा का सेवन करते है। सारे रिश्तेदारों को भी बुलाया जाता है, यह आयोजन 3 दिवसीय होता है। सारे रिश्तेदार आते है 3 दिन तक यही रहते

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) मोहन लाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

है। इसके बाद सभी अपने-अपने घरों की तरफ प्रस्थान कर जाते है।

आधुनिक परम्पराएं :- वर्त्तमान में आदिवासी समाज में कई परम्पराओं को सुधारा गया है और कई परम्पराओं का उन्मूलन भी कर दिया गया है। इस तरह के बदलाव में युवाओं का ज्यादा योगदान रहा है। शिक्षित युवाओं ने अपने समाज को आधुनिक रूप में ढालने का सहयोग प्रदान किया है। वर्त्तमान में प्रचलित परम्पराएं इस प्रकार से है :-

1. **वैवाहिक परम्पराएं :-** आधुनिकतम रीति के अनुसार शादियाँ होती है तीन दिन में शादी निबटा दी जाती है। शादी में किसी भी प्रकार का मांस-मदिरा का प्रयोग नहीं किया जाता है। अधिकतम आदिवासी ने वर्तमान समय में मांस-मदिरा का सेवन करना छोड़ दिया है। अपने गुरु की परम्परा के अनुसार 'भगत' बन गए है। अर्थात अपने गुरु के आदेशानुसार वो कभी भी मांस-मदिरा का सेवन नहीं करेगे और मांस-मदिरा का सेवन करने वाले से किसी प्रकार का वैवाहिक सम्बन्ध नहीं रखेगा।

2. **ढूंढोत्सव आयोजन :-** वर्त्तमान में भी इसका आयोजन होता है पर इसमें बदलाव कर दिया गया है य इस कार्यक्रम में मांस-मदिरा का सेवन नहीं किया जाता है। मिष्ठान आदि से ही इसका आयोजन होता है। कम समय में ही इसका आयोजन होता है। निकट के रिश्तेदार ही बुलाये जाते है। अल्प समय में कार्यक्रम निबटा दिया जाता है।

3. **शोक-सभा :-** आज के समय में किसी आदिवासी भाई के परिवार में किसी की मृत्यु हो जाती है तो एक दिन की शोक-सभा रखी जाती है। जिसमे शोक-ग्रस्त परिवार को सांत्वना दी जाती है। मृत्यु-भोज का उन्मूलन कर दिया गया है। वैसे भी वर्त्तमान में आदिवासी समाज में 'भगत' बन जाने के बाद किसी के भी यहाँ मृत्यु-भोज का भोजन नहीं करते है।

संरक्षण की आवश्यकता :- हमने दोनो प्रकार की परम्पराओं के बारे अध्ययन करने बाद देखा कि पुरानी परम्परा बहुत ही रूढ़िवादी को दर्शाने वाली थी। उस परम्पराओं से बाहर आना जरुरी था। अगर आदिवासी लोग उसी परम्परा में जकडे रहते तो उनका विकास असंभव था। समय के साथ-साथ बदलाव भी जरूरी होता है। समय रहते आदिवासियों ने अपने में सुधार कार्य भी किया है।

आजादी के बाद से बदलाव होना जारी था वर्मान समय में भी किसी ना किसी प्रकार का बदलाव होता रहता है। आधुनिकता के अनुरूप ही अपने समाज में बदलाव आया गया है। आज के आदिवासी युवा आधुनिकता के चक्कर में बदलाव के एक ऐसे भंवर में फंस गए है कि अपनी पुरानी परम्पारों को ही भूल ही गए। अपने अस्तित्व को ही भूल गए। अपनी पहचान ही मिटाने कगार पर आ गये है। समाज के बुजुर्ग बुद्धि-जीवी और शिक्षित वर्ग चिंतित है कि इस तरह से बदलाव होता ही रहेगा तो एक दी अपने समाज का वजूद ही समाप्त हो जाएगा य अपने समाज का संरक्षण बहुत ही जरुरी हो गया है।

पतन के कारण :- आज का आदिवासी व्यक्ति आधुनिकता के भंवर में फंसा हुआ है। चमक दमक दुनिया में वो भी अपना भविष्य को देखता है। अपने समाज की किसी व्यक्ति को जरा भी चिंता नहीं है। सब अपनी स्वयं की ही फिक्र में लगे हुए है। किसी में वो संस्कार नहीं रहे है कि दुसरे भाइयों की भी मदद करनी चाहिए। किसी के भी पास थोडा सा भी समय दुसरे के लिए नहीं है। पतन के कारण इस प्रकार है :-

1. **आधुनिकता :-** आज का आदिवासी अपने आप को सबसे ज्यादा आधुनिकतम बनाना चाहता है। सबसे अलग दिखने के लिए वो कुछ भी करने के लिए तैयार रहता है। समाज से अपने आपको सबसे ज्यादा दूर रखने लगा है। ग्रामीण परिवेश को छोड़ कर शहरी परिवेश को अपनाने के कारण अपनी संस्कृति से अलगाव। गांवों के आदिवासीयों को अपने से अलग समझाने लगा है।

2. **शहरी परिवेश :-** अपने आप को शहरी परिवेश में ढालना शुरू कर दिया है। अब गांवों की और जाना ही नहीं चाहते है। अपना परिवार शहर में ही बसाने के कारण गांवों का परिवेश में समायोजन होना अट-पटा सा लगने लगता है।

3. **समयाभाव :-** शहरी जीवन व्यतीत करने के बाद उनका जीवन बहुत व्यस्त हो गया है। ऐसे समय में आधुनिक आदिवासी भाई के पास किसी और के लिए समय ही नहीं बचता है। वो अपने में ही व्यस्त रहता है। अपनी संस्कृतिसे दुरी बनने के कारण धीरे-धीरे उसे भूलता जाता है।

उत्थान के सुझाव :

1. आदिवासी समाज को चाहिए कि अपनी पुरानी और वर्त्तमान की परम्पराओं को साथ में लेकर चलना चाहिए।
2. युवाओं को ध्यान में रखते हुए कुछ पुरानी परम्पराओं में सुधार किया जाना चाहिए।
3. शहरी क्षेत्र में रहने वाले आदिवासी भाई को अपने ग्रामीण समाज से जुड़े रहना चाहिए, समय-समय पर अपने समाज की परम्पराओं को अपनाते रहना चाहिए य आने वाली पीढ़ी को भी पता चलेगा।
4. आधुनिकता दिखाने के चक्कर में वो खूब खर्चा कर देता है उसमे समाज की तरफ के रोक होनी चाहिए।
5. गांवों और पालों में रहने वाले आदिवासी भाइयों को भी कुछ सुधार करना चाहिए ताकि समरसता बनी रहे।

निष्कर्ष – सम्पूर्ण अध्ययन करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुचे है कि आदिवासीयों की परम्पराए उनके समाज की पहचान बताती है। कुछ परम्पराए रुढीवादिता को दर्शाती है पर उसमे सुधार कर दिया जाए तो वो भी उपयोगी बन सकती है। परम्पराओं के बिना व्यक्ति बिल्कुल स्वतंत्र हो जाता है। मन-मर्जी से कार्य करेगा। अपनी जिम्मेदारी भी भूलता चला जाएगा। पुरानी परम्परा और नई परम्परा के बीच का रास्ता निकालने पर ही संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. पुरुषोतम छगाणी, संस्कृति, सभ्यता और हमारी लोक संस्कृति, मधुमती, अक्टूबर-नवम्बर, 2014
2. डॉ. महेंद्र भाणावत, आदिवासी लोक, सुभद्रा पब्लिसर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स दिल्ली, संस्करण। 2015
3. भंवर लाल मीणा, 'आदिवासी लोक गीत', अलख प्रकाशन, जयपुर, संस्करण – 2013
4. डॉ. अर्जुन सिंह शेखावत, (संस्कृति की वसीयत), आदिवासी साहित्य, संस्कृति व इतिहास, आदिवासी अकादमी, पाली (राज.) दिव्या प्रकाशन –2009
5. राजेन्द्र कुमार, आदिवासी संस्कृति एवं साहित्य में अभिव्यक्त चेतना, विन्ध्यभारती, (शोध पत्रिका), धातिवारी, 2011

****

मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र का बदलता राजनीतिक परिदृश्य

डॉ. अनुराग आर्य *

प्रस्तावना – लोकतंत्र राजनीतिक परिस्थिति ही नहीं है, वह शासन और जीवन की लोकजयी नैतिक धारणा भी है। लोकतंत्र एक तरीके की जिन्दगी है। आस्था और विश्वास की स्वतंत्रता का दूसरा नाम है – लोकतंत्र। आधुनिक लोकतंत्रीय राज व्यवस्था में जनता शासन में वैयक्तिक रूप से नहीं, अपितु अपने द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से भाग लेती है। प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र में जनता निर्वाचित प्रतिनिधियों को शासन के लिए उत्तरदायी बनाती है।

निर्वाचन जनतंत्र की आत्मा तथा संसदीय प्रजातंत्र के प्राण है। भारतवर्ष में संसदीय शासन व्यवस्था की स्थापना संविधान के किसी अनुच्छेद विशेष में तो नहीं की गई है फिर भी इस व्यवस्था की स्थापना संविधान की प्रस्तावना से प्रेरित है। स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचन लोकतंत्र के अभिन्न अंग है। प्रजातंत्रीय शासन व्यवस्था के सफल संचालन के लिए राज्य में स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचन आवश्यक है।

मतदान व्यवहार – राजनीति विज्ञान में मतदान व्यवहार का अध्ययन एक महत्वपूर्ण अंग है। मतदान व्यवहार का अध्ययन व्यवहारवादी राजनीति की शुरूआत मानी जाती है। राजनीतिक व्यवस्था पर चुनावों के जटिल भूमिका को मतदाताओं के मतदान आचरण के आधार पर ही स्पष्ट करना संभव होने के कारण मतदान आचरण का अध्ययन अत्यधिक लोकप्रिय होने लगा है। मतदान आचरण के अध्ययनों का केन्द्र बिन्दु व प्रमुख उद्देश्य यही जानना रहा है कि मतदाता वोट देते समय किस तत्व से प्रभावित रहता है। वह कौन सी बातें तथा मुद्दे है जो आम मतदाता का अपना मत इधर या उधर देने के लिए प्रेरित करते है।

राज्यों में निर्वाचन आयोग – अखिल भारतीय स्तर पर समस्त चुनाव व्यवस्था का दायित्व चुनाव आयोग पर है। उसी के निर्देशन में प्रत्येक राज्य में मुख्य चुनाव अधिकारी और जिला स्तर पर जिला निर्वाचन अधिकारी चुनावों की व्यवस्था करता है। जिला निर्वाचन अधिकारी अपने जिले के निर्वाचन क्षैत्रों के लिए गणना अधिकारियों व सहायक गणना अधिकारियों को नियुक्त करता है जो फिर अपने क्षेत्र के विविध मतदान केन्द्रों के लिए नियुक्त पीठासीन अधिकारियों और मतदान अधिकारियों की सहायता से मतदान का प्रबंध करते है।

पश्चिमी मध्यप्रदेश में स्थित मन्दसौर विधानसभा क्षैत्र–224 अपनी भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विविधताओं के कारण महत्वपूर्ण क्षेत्र है। 1952 के प्रथम विधानसभा निर्वाचन से ही मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र असितत्व में रहा है। मध्यभारत विधानसभा जिसे ग्वालियर, इन्दौर और मालवा संयुक्त राज्य संघ के साथ मध्य भारत भी लिखा तथा कहा गया, कि विधिवत् उद्घाटन 28 मई 1948 को पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने किया। मध्य भारत में जिन सोलह जिलों का निर्माण किया गया था उनमें मन्दसौर भी एक प्रमुख जिला था।

सारणी 1 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

मदसौर विधानसभा क्षेत्र में प्रथम विधानसभा निर्वाचन के समय से ही वर्तमान तक विधानसभा के निर्वाचन में राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिक दल सक्रिय रहे है।

1957 के द्वितीय विधानसभा निर्वाचन में मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र में कांग्रेस और हिन्दू महासभा प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी दल के रूप में मैदान में थे इस निर्वाचन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के श्री श्यामसुंदर पाटीदार एक बड़े अंतर लेकर विजयी हुए।

1962 के तृतीय विधानसभा निर्वाचन मे मुख्य मुकाबला भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और भारतीय जनसंघ के बीच रहा जिसमें कि जनसंघ ने कांग्रेस को अच्छी टक्कर दी और कांग्रेस की विजय का अंतर काफी सीमा तक कम कर दिया।

1967 के चतुर्थ विधानसभा में मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र में जनसंघ प्रत्याशी श्री मोहनसिंह विजय रहे और कांग्रेस प्रत्याशी श्री श्यामसुंदर पाटीदार को पराजय का मुख देखना पड़ा।

1972 के विधानसभा निर्वाचन में मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र में कांग्रेस पार्टी विजय रही और इस बार जनसंघ को पराजय का सामना करना पड़ा। आपातकाल के बाद 1977 में हुए विधानसभा निर्वाचनों में मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र से जनता पार्टी प्रत्याशी श्री सुन्दरलाल पटवा विजय रहे और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को पराजय का मुख देखना पड़ा।

1980 एवं 1985 के विधानसभा निर्वाचनों में कांग्रेस को विजय प्राप्त हुई और भारतीय जनता पार्टी जो कि जनसंघ का ही परिष्कृत और परिमार्जित स्वरूप था को पराजय सहन करनी पड़ी।

1990 और 1993 के विधानसभा निर्वाचनों में भारतीय जनता पार्टी ने कांग्रेस से 1980 तथा 1985 की पराजय का हिसाब चुकता कर दिया। 1998 में कांग्रेस के नवकृष्ण पाटील विजय हुऐं।

दिसम्बर 2003 से 2013 तक भाजपा के प्रत्याशी विजय हुऐं जिसमें 2003 में श्री ओमप्रकाश पुरोहित व 2008 एवं 2013 में श्री यशपालसिंह सिसौदिया विधायक बनें।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र की राजनीति समय–समय पर बदलती रही है। जहां शुरूआत में हिन्दू महासभा के दल भी शामिल थे जो बाद में जनसंघ एवं भाजपा में परिवर्तित हुऐं। जहां शुरूआती दौर में कांग्रेस का नेतृत्व रहा वहीं आपात काल में भाजपा सक्रिय हुई तथा वहीं वर्तमान में मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र भाजपा का गढ़ कहा

* राजनीति विज्ञान विभाग, शा. महाविद्यालय, सीतामऊ, जिला–मन्दसौर (म.प्र.) भारत

जाने लगा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. असाधारण गजट, भारत सरकार, 30 जून 1951
2. विधानसभा सामान्य निर्वाचन परिणाम, 1951-52, 1957-80, 1985, 1990, 1993
3. असाधारण गजट, भारत सरकार, 20 जनवरी 1994
4. विधानसभा सामान्य निर्वाचन परिणाम, 1998, 2003, 2008, 2013
5. अवस्थी राम कुमार - राजनीति शास्त्र के नये क्षीतिज, द मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया लि., नई दिल्ली 1972
6. त्रिवेदी, आर.एन. एवं राय, एम.पी., भारतीय सरकार एवं राजनीति, कालेज बुक डिपो, जयपुर
7. नेमा, जी.पी. एवं जैन, राजेश - भारत में राज्यों की राजनीति, कालेज बुक डिपो, जयपुर

सारणी 1 - 1957 से वर्तमान तक मन्दसौर विधानसभा क्षेत्र का बदलता राजनीतिक परिदृश्य

सन्	विजेता प्रत्याक्षी	दल	निकटतम प्रमुख प्रतिद्वंदी	दल
1957	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस	श्री भगवानदास जैन	हिन्दू महासभा
1962	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस	श्री बसंतीलाल	जनसंघ
1967	श्री मोहनसिंह	जनसंघ	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस
1972	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस	श्री किशोरसिंह	जनसंघ
1977	श्री सुंदरलाल पटवा	भाजपा	श्री धनसुखलाल भाचावात	कांग्रेस
1980	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	इंदिरा कांग्रेस	श्री मनोहरलाल जैन	भाजपा
1985	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस	श्री मनोहरलाल जैन	भजपा
1990	श्री कैलाश चावला	भाजपा	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस
1993	श्री कैलाश चावला	भाजपा	श्री श्यामसुंदर पाटीदार	कांग्रेस
1998	श्री नवकृष्ण पाटील	कांग्रेस	श्री कैलाश चावला	भाजपा
2003	श्री ओमप्रकाश पुरोहित	भाजपा	श्री नवकृष्ण पाटील	कांग्रेस
2008	श्री यशपालसिंह सिसौदिया	भाजपा	श्री महेन्द्रसिंह गुर्जर	कांग्रेस
2013	श्री यशपालसिंह सिसौदिया	भाजपा	श्री महेन्द्रसिंह गुर्जर	कांग्रेस

****

Rajasthan Falls Short In Female Literacy (1981-2011)

Dr. Namrata Nalwaya *

Abstract - The Present paper is an attempt to analyse patterns of Literacy (Sex and residence-wise) in Rajasthan. The entire study is based on secondary sources of data collected from the Census of Rajasthan.

The potential for women's literacy to reshape the developing world remains an untapped developmental resources. Population is a resource like other resources for every country but it required investment made in the form of education, training and medical care to become 'human capital'. In fact, human capital is the stock of skill and productive knowledge embodied in them. Thus, human capital formation is one of the most important steps taking to get overall development of the nation. Raising literacy rate is preparing base for the human capital formation. To raise the level of literacy and education among the people and especially disadvantaged or marginalized groups of people those who are lagged behind still, government has made many efforts in the way of provide constitutional provisions, implemented plans & policies, and investing huge amount from time to time. Due launched various Schemes & programmes, level of literacy in all spheres, has improved over the period of time but not as desired level, where rural-urban as well as male-female literacy gap exists at wide level. On the basis of secondary data, this paper is aims to analyze the growth of literacy rate by residence, gender and region in Rajasthan. The paper is basically analytical and descriptive in nature.

Introduction - Education, formal as well as informal, is one of the important agents of social change, particularly among the females, by exposing them to outside world, widening their horizon and providing with information about many matters relevant to life. It's effective role in bringing about socio-economic development and change in all societies including the basic aspect of literacy among the depressed, poor and majority of tribal communities is essential to take advantages of all round development schemes, socio-economic development and expansion of education, thus get closely interlinked and an inevitable element of interdependent processes. To raise the level of literacy and education among the people and especially disadvantaged groups of people those who are lagged behind still, government has made many efforts in the way of provide constitutional provisions, implemented plans & policies, and investing huge amount from time to time. We can see the result as growth in rate of literacy and educational attainment. Though, in spite of several programmes of elementary education and literacy enhancement such as National Literacy Mission (NLM), Total Literacy Campaign (TLC), Sarva Shiksha Abhiyan (SSA), Operation Blackboard and so many others launched by the government, overall literacy rate has improved but not raised to the desired level.

India is known as country of villages where more than seventy per cent population has been living in rural areas. The rural areas characterized by low level of per capita income, low level of literacy & education, high population pressure on agriculture, traditional production methods and socially divided in several cast cleavages, bounded by irrelevant traditions, male dominant families as well as societies etc. By and large, these characteristics are due to lack of literacy and education. Rural areas, marginalized or backward groups of the society and females have been isolated from literacy, education, knowledge and awareness. Hence, rural -urban as well as male-female literacy gap is still exists after more than half of a decade of independence. The present paper is trying to evaluate these fractions in the Rajasthan state.

Data And Methodology - The paper is mainly based on the secondary data, which gained from the various documents of the Census of India – 2001 and 2011. For deeply discussion data also obtained from the Provisional Population Totals - Rajasthan. Data received from various sources first and then combined it in different groups and tables according to the requirements of the study.

Objectives :

The objectives of this paper are as follows:

1. To overall evaluation of the literacy rates of Rajasthan and compare it with national average.
2. To examine growth in literacy of Rajasthan.
3. To discuss the disparities exists by gender.
4. To find out variations in rate of literacy within the state by analyzing district-wise condition of male-female as well as rural-urban literacy rates.

Analysis And Discussion

Literacy in Rajasthan and its adjoining States –

*Udaipur, (Rajasthan) INDIA

Rajasthan and its adjoining states of Punjab, Haryana, Uttar Pradesh, Madhya Pradesh and Gujarat cover most of the Western India. **Table I** reveals that Rajasthan state has lowest percentage in all types of literacy in comparison to all these states and India as a whole. The overall literacy of 67.06 per cent in 2011 in the state was conspicuously low, against a maximum of 79.31 per cent for Gujarat and 74.04 per cent for India.

In respect of male and female literacy, Rajasthan's proportion of 80.51 and 52.66 per cent respectively sounds low against 87.23 and 70.73 per cent for Gujarat, 82.14 and 65.46 per cent for India.

However, Rajasthan's female literacy proportion of only 52.66 per cent and 46.25 per cent in total and rural and 71.53 per cent in urban areas is still far from being satisfactory, reflecting literacy backwardness of the state in general and rural areas in particular. Refer the below table for details.

Table 1 (see in last page)

After independence, raising literacy and education was also one of the crucial challenge (though it was not prime object due to exists vast poverty, demolished economy & small-cottage industries, low level of productivity and employability etc. And thereafter, so many efforts have been made by the government in the way of formulated & implemented various schemes/programmes as earlier mentioned. As a result, the Indian literacy rate grew with more than six-fold from at the end of British rule in 1947 by 12 per cent to 74.04 per cent in 2011, though it is not so much and not as desired level, the target 85 per cent set by the Planning Commission of India to be achieved by 2011-12. If we compare the data, as showing in **Table 2**, we find that the Rajasthan still more than 7 per cent below than the nation's average level of literacy (as well as near about 27 per cent less than the highest literate state – Kerala). The picture clearly shows the backwardness of the state in literacy point of view. Notwithstanding, literacy rate has been increased from 8.50 per cent in 1951 to 67.06 per cent in 2011. However, the highest growth in literacy rate of Rajasthan is recorded in the decade of 1991-2001 at every level likewise with total by residence as well as by gender also. The decadal change in literacy rates as total was 21.9 per cent where by residence, it was 25 per cent in rural areas & 10.9 per cent in urban areas, and by gender it was 20.7 per cent in among males & 23.4 per cent among females.

Table 2 : Growth in Literacy rates in Rajasthan and in India from 1981 to 2011 (in per cent)

State/Nation	1981	1991	2001	2011
India	**43.57**	**52.21**	**64.84**	**74.04**
Rajasthan	30.11	38.55	60.41	67.06

Sources: Census of India and Provisional Population Totals- Rajasthan.

At the same time, if we consider the growth in literacy by gender in Rajasthan, we can see from **Table 3** that the literacy rate among females was only 14 per cent in 1981 which grows up to 52.7 per cent in 2011 whereas literacy of males increased to 80.5 per cent in 2011 from 44.8 per cent in 1981.

Furthermore, it has came in the front of, the gap in literacy rates among males-females has overall shrinken over the period of time (from 30.7 per cent in 1981 to 27.8 per cent in 2011). Though it has been decreasing from the year 1991 by 34.6 per cent but before that, it was continuously increased. However, the data shows optimistic picture after the 1991, but male-female as such as urban-rural literacy gap is the big and crucial challenge for the state as the nation also.

Table 3 : Literacy rates by Gender and Male-Female gap in Rajasthan from 1981 to 2011

Literacy	1981	1991	2001	2011
Female	14.1	20.4	43.9	52.7
Male	44.8	55	75.7	80.5
Male-Female gap	30.7	34.6	31.8	27.8

Sources: Census of India and Provisional Population Totals- Rajasthan.

District-wise Literacy: Now, let us discuss the data present in **Table 4**, which show district-wise literacy rates in Rajasthan. Kota is the most literate district in the state, with 77.48 per cent literate persons (it was also top ranked in 2001), followed closely by Jaipur district with 76.44 per cent literacy rate (from fourth to second from last decade), while Jhunjhunun district slightly sliding down after the decade, from second position in 2001 to third in 2011, with 74.72 per cent literate persons. Jalore is in the bottom in Rajasthan with lowest 55.58 per cent literacy rate where its neighbouring district Sirohi is just close to it in literacy point of view also with second smallest per cent of literacy, only 56.02 per cent.

Table 4 (see in last page)

The highest growth in literacy is recorded in Dungarpur district at 12.21 per cent while lowest is in Jhunjhunun at 1.68 per cent excepting two districts (Barmer & Churu) which have negative change (1.5 & 0.13 respectively). Although 6 districts – Dungarpur (12.21), Bhilwara (12.0), Banswara (11.66), Tonk (10.49), Jodhpur (10.42) and Dhaulpur (10.01) of literacy has been raised by more than 10 per cent in last decade (means at least 1 per cent average growth annually). Not a single district has touched the target (85 per cent) set by the Planning Commission of India to be achieved by 2011-12.

District-wise Male-female as well as Rural-urban Literacy Rates: By residence, district wise picture of literacy shows that the rural areas of the state are far behind than the urban areas. None of the urban area of the any district is below than 70 per cent literacy rate while in rural areas, only two districts – Jhunjhunun and Sikar have more than 70 per cent literate persons, and most of the districts, almost half of the total (17 districts), are concentrated between 55 to 65 per cent literacy rates. Sirohi is the only district where rural literacy rate is less than 50 per cent, though it is very close to 50 per cent (49.77 per cent). At the same time, in

urban areas of Rajasthan, most of the districts (22) are concentrated between 75 to 85 per cent in literacy point of view. As data provided by the Provisional Population Totals – Rajasthan (Census of India - 2011) available in separated form in **Table 5**, shows that Udaipur has highest literate persons while Jalore is lowest one in literacy rate in urban areas. Only 4 districts in rural areas and 5 districts in urban areas crossed the national average level of corresponding literacy rate as such as these five districts have also touched the national target of literacy rate in urban area.

Table 5 (see in last page)

Now we take sex-wise literacy rates in Rajasthan as total and as rural-urban. By gender, Jhunjhunun district has most literate males as total as in rural areas while Udaipur has highest male literates (94.45 per cent) in urban areas. All 33 districts have more than 70 per cent literate males as total while in urban areas more than 80 per cent males are literates in allover Rajasthan but in rural areas situation is poor than the urban areas and Sirohi has smallest percentage (65.86 per cent) of literacy among males.

In general, there is very poor condition of literacy among females in rural area of Rajasthan, a lot 19 districts are below than 45 per cent, of which 5 districts are far below and have even less than 40 per cent literacy rate. Although, average level of literacy among females as total as rural areas' are very low, 52.66 per cent and 46.25 per cent respectively.

Table 1: Literacy in Rajasthan and its Adjoining States, 2011 (Figs are in percentage)

India/State	Literacy Rate (Person)			Literacy Rate (Males)			Literacy Rate (Female)		
	Total	Rural	Urban	Total	Rural	Urban	Total	Rural	Urban
INDIA	**74.04**	**68.91**	**84.98**	**82.14**	**78.57**	**89.67**	**65.46**	**58.75**	**79.92**
RAJASTHAN	67.06	62.34	80.73	80.51	77.49	89.16	52.66	46.25	71.53
PUNJAB	76.68	72.45	83.70	81.48	77.92	87.28	71.34	66.47	79.62
HARYANA	76.64	72.74	83.83	85.38	83.20	89.37	66.77	60.97	77.51
UTTAR PRADESH	69.72	67.55	77.01	79.24	78.48	81.75	59.26	55.61	71.68
MADHYA PRADESH	70.63	65.29	84.09	80.53	76.64	90.24	60.02	53.20	77.39
GUJARAT	79.31	73.00	87.58	87.23	83.10	92.44	70.73	62.41	82.08

Sources: Census of India - various documents.

Table 4: District-wise Literacy rates and change in last decade in Rajasthan

Sr. No	Name of the District	2001	2011	Change %	Sr. No	Name of the District	2001	2011	Change %
1	Ganganagar	64.74	70.25	5.51	18	Jalore	46.49	55.58	9.09
2	Hanumangarh	63.05	68.37	5.32	19	Sirohi	53.94	56.02	2.08
3	Bikaner	57.36	65.92	8.56	20	Pali	54.39	63.23	8.84
4	Churu	67.59	67.46	(0.13)	21	Ajmer	64.68	70.46	5.78
5	Jhunjhunun	73.04	74.72	1.68	22	Tonk	51.97	62.46	10.49
6	Alwar	61.74	71.68	9.94	23	Bundi	55.57	62.31	6.74
7	Bharatpur	63.58	71.16	7.58	24	Bhilwara	50.71	62.71	12
8	Dhaulpur	60.13	70.14	10.01	25	Rajsamand	55.73	63.93	8.2
9	Karauli	63.40	67.34	3.94	26	Dungarpur	48.57	60.78	12.21
10	Sawai Madhopur	56.67	66.19	9.52	27	Banswara	45.54	57.20	11.66
11	Dausa	61.81	69.17	7.36	28	Chittaurgarh	53.99	62.51	8.52
12	Jaipur	69.90	76.44	6.54	29	Kota	73.52	77.48	3.96
13	Sikar	70.47	72.98	2.51	30	Baran	59.50	67.38	7.88
14	Nagaur	57.28	64.08	6.8	31	Jhalawar	57.32	62.13	4.81
15	Jodhpur	56.67	67.09	10.42	32	Udaipur	59.77	62.74	2.97
16	Jaisalmer	50.97	58.04	7.07	33	Pratapgarh*	48.25	56.30	8.05
17	Barmer	58.99	57.49	(1.5)		Rajasthan	60.41	67.06	6.65

Sources: Census of India and Provisional Population Totals- Rajasthan.

Table 5: District-wise Literacy rates by Residence as well as by Gender in Rajasthan (2011)

Sr. No	Name of the District	Rural	Urban	Male			Female		
				Rural	Urban	Total	Rural	Urban	Total
1	Ganganagar	66.76	79.43	76.7	86.19	79.33	55.65	71.78	60.07
2	Hanumangarh	65.79	78.78	77.02	86.06	78.82	53.48	70.76	56.91
3	Bikaner	58.95	78.65	71.72	86.39	76.9	44.81	70.12	53.77
4	Churu	64.98	73.63	78.06	84.66	79.95	51.13	62	54.25
5	Jhunjhunun	73.95	77.33	87.71	88.46	87.88	59.86	65.54	61.15
6	Alwar	68.83	84.25	83.46	92.16	85.08	52.69	75.22	56.78
7	Bharatpur	68.87	80.19	84.68	89.75	85.7	50.85	69.43	54.63
8	Dhaulpur	69.2	73.64	82.55	82.42	82.53	53.23	63.51	55.45
9	Karauli	66.15	73.93	82.5	85.6	82.96	47.05	60.79	49.18
10	Sawai Madhopur	62.68	79.96	80.62	91.06	82.72	42.65	67.8	47.8
11	Dausa	67.43	81.04	83.46	91.98	84.54	49.85	69.14	52.33
12	Jaipur	68.43	83.48	83.63	90.43	87.27	52.07	75.82	64.63
13	Sikar	71.83	76.64	86.44	87.38	86.66	56.75	65.26	58.76
14	Nagaur	62.16	72.11	77.78	83.56	78.9	45.92	60.03	48.63
15	Jodhpur	59.79	80.23	76.32	87.81	80.46	41.99	71.85	52.57
16	Jaisalmer	54.61	78.91	70.47	88.43	73.09	36.06	66.81	40.23
17	Barmer	55.72	79.52	70.87	90.28	72.32	38.92	67.45	41.03
18	Jalore	54.05	71.97	70.52	85.54	71.83	37.03	57.32	38.73
19	Sirohi	49.77	79.24	65.86	89.91	71.09	33.02	67.41	40.12
20	Pali	59.21	76.78	75.02	88.3	78.16	43.74	64.55	48.35
21	Ajmer	60.22	85.05	78.05	92.17	83.93	41.87	77.48	56.42
22	Tonk	58.86	74.78	76.63	84.03	78.27	40.14	65.54	46.01
23	Bundi	58.13	78.67	73.47	88.51	76.52	41.56	68.16	47
24	Bhilwara	57.17	82.63	73.12	91.2	77.16	41.08	73.4	47.93
25	Rajsamand	60.23	82.71	76.98	92.01	79.52	43.77	72.95	48.44
26	Dungarpur	58.95	85.79	73.28	93	74.66	44.75	78.29	46.98

27	Banswara	54.78	86.58	68.98	92.68	70.8	40.47	80.28	43.47
28	Chittaurgarh	57.63	83.6	74.39	91.96	77.74	40.68	74.8	46.98
29	Kota	69.54	82.61	83.79	90.06	87.63	54.23	74.28	66.32
30	Baran	64.29	78.86	79.21	88.74	81.23	48.24	68.25	52.48
31	Jhalawar	58.24	81.82	73.73	90.23	76.47	42.01	72.84	47.02
32	Udaipur	55.85	88.45	70.84	94.45	75.91	40.46	82.02	49.1
33	Pratapgarh*	53.5	85.46	67.9	93.1	70.13	39.05	77.61	42.4
	Rajasthan	62.34	80.73	77.49	89.16	80.51	46.25	71.53	52.66
	India	68.91	84.98	78.57	89.67	82.14	58.75	79.92	65.46

Sources: Census of India and Provisional Population Total Rajasthan.

Conclusions - Conclusions drawn from the study are as follows:

It may be concluded that despite considerable progress in education during recent years, particularly since Independence, Rajasthan's female population is still one of the least literate in India. It is no doubt a tragic state of affairs that this past legacy in the state of Rajasthan still persists. Even in the modern times, education is being looked upon by many mainly from the point of view of occupation necessity. It seems that the denial of equal social status to females; and the continuing prejudice (though reducing now) against their taking up professional employment, especially in villages, have worked as deterrents to female education as a whole in Rajasthan state.

Level of literacy has been increased over the period of time in Rajasthan but still below than the nation's average level. The highest growth in literacy rates at every level has seen in the decade1991-2001. Urban-rural gap in literacy has been narrowed overall while male-female literacy gap has widen over the period of time, though after 1991 it has shrinking but before that, it was spread over. Moreover, literacy gap, by residence as well as by gender, has still exists in allover state and districts also.

Udaipur is at the top in male-female literacy rates in urban areas with 94.45 and 82.02 per cent respectively, while Jhunjhunun is first in male-female literacy rates in rural areas with 87.71 and 59.86 per cent respectively. At the same time, Sirohi is lowest one in level of literacy in rural areas as total, males' and females' also with respectively 49.77, 65.86 & 33.02 per cent.

The state Rajasthan has performed very poor in front of literacy while male-female gap is widenly seen. So, Government should take appropriate action to improve the condition especially the rural women's.

References :-

1. G. Psacharopoulos, G Education and Development: A Review, The World Bank Observer,13(1), 1988, pp 99-116.
2. M. Chatterji, Tertiary Education and Economic Growth, Regional Studies, 32(4), 1998, pp.349-354.
3. M. I. Ansari, and S K Singh, Public Spending on Education and Economic Growth in India: Evidence from VAR Modeling, Indian Journal of Applied Economics, 6(2), 1997, pp.43-64.
4. P. Duraisamy, Changes in Return to Education in India, 1983-94: By Gender, Age-Cohort and Location, Economics of Education Review, 21(6), 2002, pp 609-622.
5. P V Dutta, Return to Education: New Evidence for India, Education Economics, 14(4), 2006, pp.431-51.
6. T W Schultz, Reflections on Investment in Man, Journal of Political Economy, 70, 1960, pp. S2-S3.
7. Debraj, Ray, Development economics (Oxford University Press, 2008).
8. Ballara, M. (1992). Women and Literacy. Atlantic Highlands, NJ: Zed Books.
9. Debraj, Ray, Development economics (Oxford University Press, 2008).

****

नायक-नायिका के निमाड़ी लोक गीत

डॉ. सीमा गाड़गे *

प्रस्तावना - लोकगीतों का जन्म मानव-जीवन के साथ ही हुआ है और जैसे-जैसे मानव-जीवन का विकास होता गया, वैसे-वैसे उसके विकास के विभिन्न स्तरों और उन स्तरों से संबंधित भावनाओं को व्यक्त करने वाले गीत भी बनते गये। नायक-नायिका के गीतों के अन्तर्गत पारिवारिक, सामाजिक आर्थिक, व्यक्तिगत एवं धार्मिक स्थिति पर प्रकाश डालने वाले गीत आते हैं। इन गीतों के साथ-साथ पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन के पारस्परिक व्यववहार को व्यक्त करने वाले लोकगीत बने।

प्रेम के उद्दीपन में प्रकृति का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। प्रकृति ने सिर्फ उद्दीपन रूप में बल्कि आलम्बन के रूप में भी प्रेमी हृदयों को आन्दोलित करती है। अन्य विविधताओं की तरह भारत वर्ष ऋतुओं की विविधताओं का देश है। यहाँ प्रकृति प्रतिपल नवल श्रृंगार करती है। बदलते हुए वातावरण के साथ प्राकृतिक सौन्दर्य के उपादान बदलते रहते हैं। महाकवि वाल्मीक से लेकर वर्तमान काव्य तक में भारत के प्राकृतिक परिवेश का बड़ा ही मोहक और मादक वर्णन मिलता है।[1]

प्रकृति की गोद में पला लोकजीवन तो प्रकृति के प्रतिपल परिवर्तित नूतन साज श्रृंगार को न सिर्फ देखता है महसूस करता है बल्कि उसके साथ हर क्षण तादात्म्य ही रखता है। निमाड़ में नायक-नायिका के गीतों की प्रचुरता है। यहां नायक-नायिका को लेकर सभी प्रकार के गीत मिल सकते है। इसमें पति-पत्नी, सास-बहू, ननंद-भाभी एवं नारी के सभी रूपों को लेकर गी गाये जाते हैं। इन गीतों में बड़ी ही मधुरता रहती हैं और सुनने में भी बड़े ही मन-मोहक लगते हैं।

(1)

अंजर खंजर को म्हारो सासरो,
माय मक सरम आव।।
पयला जो आण म्हारा ससराजी आया।
आसा बढ़ी गया निमड़ा की छाव म वो माय,
मक सरम आव।।
गयरो ओको छावलो न गयरी वोकी निम्बोल्ई
न कड़वा म्हारा ससरा जी का बोलना
माय मक सरम आव।।
दूसरा जो आण म्हारी सासुजी आय
न बढी गयी मिर्चि ली छाव म माय
मक सरम आव।
गयरो वोको छावलो न गयरी ओकी मिर्चि
न कड़वा म्हारी सासुजी का बोलना,
माय मक सरम आव।।
तीसरा जो आण म्हारा स्वामी जी आया,
न बढ़ी गया साठा की छाव म वो माय,
गयरो वोको छावलो न गयरो वोको साठो
न मिठ्ठा म्हारा स्वामी जी का बोलना
हाऊ तो म्हारा सासरा जाऊगा।[2]

निमाड़ में जब लड़की की शादी होती है तो उसे शादी के बाद तुरन्त ससुराल नहीं भेजा जाता हैं। शादी के कुछ समय बाद उसका 'आणा' (गोना) लगाया जाता है। जब गोने में लड़की को लेने उसके सास ससुर आते हैं तो वह ससुराल जाने से मना कर देती है लेकिन जब उसके उसे लेने आते हैं तो वह ससुराल जाने से मना कर देती है लेकिन जब उसके स्वामी उसे लेने आते हैं तो वह तुरन्त ससुराल जाने के लिए तैयार हो जाती है।

(2)

प्रभुजी अब घर आओ श्याम, सरस राधे बनी।
अदला बदला गाजिया, कारी काठ कमाण राग मलार सुनाको।
प्रभु मेरो लगियो मास असाड़।
येजी लगियो मास असाड़ घुराऊ दिसा गाजिया।
येजी शीतल चले पवन, दवासा दाजिया।
ये जी मीठड़ा बोलऽ भाहर दमके दामनी।
प्रभुजी अब घर आओ श्याम, सरस राधे बनी।[3]

प्रस्तुत गीत में एक निमाड़ी नारी की वेदना इस प्रकार व्यक्त हुई है। हमारे समाज में परम्परागत पत्नी, पति को अपना सर्वस्व स्वीकार करती आई है। पत्नी, पति की सेवा में जीवन को त्यागना अपना परम कर्तव्य समझती है। पत्नी को अपने घर में कितना कष्ट भी क्यों न हो, उसका पति कितना पतीत क्यों न हो और उसके व्यवहार से उसका जीवन नारकीय क्यों न बनता जा रहा हो किन्तु वह उसके अहित की भी कल्पना नहीं करती। उसका कुछ क्षण का वियोग भी उसकी चिंता का कारण बन जाता है और उसका हृदय पति दर्शन को व्याकुल हो उठता है।

(3)

पियर की वाट-वाट तीस लग रे,
साहिबा कुवों खोदाड़, हाऊ तो म्हारा पियर जाऊंगा।
पियर ली वाट-वाट भूख लग रे साहिबा
होटल खोलाड़ हाऊ तो म्हारा पियर जाऊँगा।।[4]

इस गीत में नायिका अपने नायक से उसके मायके जाने के लिऐ कहती है लेकिन मायके जाते समय रास्ते में उसे भूख-प्यास तथा धूप लगती है अत: वह अपने पति से कुएँ, होटल एवं छाते की मांग करती है ताकि वह आसानी से मायके जा सके।

(4)

काई कऊँ दिल की बात सई न म्हारा करम की कयणी

* पूर्व सहायक प्राध्यापक, आर पी एल माहेश्वरी कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

ओ जीजी न म्हारा करम नही कयणी।।
सात बरस की परणी मुआ न मक छोटी सी आणी।।
चौक-1
आरे पयला जो आणा आई वो सई न होण जरा नई,
ओ समझी ओ जीणी न होण जरा नई समझी।।
सरी सांझ सी जिमी चूटी न हाऊ तो सासु भेल सुती।।
चौक-2
आरे दूसरा जो आण आई सई न होण जरा-जरा समझी
ओ जीजी न होण जरा जरा समझी।।
गुल का हो कारण मदन पिलाव न करती बलजोरी।।
चौक-3
तीसरा जो आणा आई सई न होण हुई गई चतुर स्याणी,
ओ जीजी न होण हुई गई चतुर स्याणी।।
आरे सभी बात न क समझण लागी न आई गो,
डोला प पाणी हो जीजी न होणी।।
चौक-4
आरे चौथा जो आण आई वो सई न म्हारा पेट म दुकतो,
घर को स्वामी हार भटक इनी दायण का भावतो।।
आरे चार पैसा को कयड़ो बुलायो, न तल्यो पल्या घी म।
मैं बंदी न जरा नी खायी आन डाटियों रूकड़ा म।।
चौक-5
आरे घर को स्वामी कय वो रांड तु रड बुड़ापा म,
तु बंदी न जरा नी खायी न डाटियो रूकड़ा म।[5]

इस गीत में एक गाँव की लड़की की शादी बचपन में ही कर दी जाती है। तब से लेकर एक बच्चे को जन्म देने तक की बात वह अपनी सखियों से कर रही है तथा अपने पति के बारे में उनको बताती है कि उसे ससुराल में किन-किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा है।

(5)

व्हांसी देवी गवरल नीरसी,
आगऽ आईन पणिहारा खऽ पूछ, बताओ म्हारो मायव्यो।
हम काई जाण वो देवी गवरल,
आगऽ जाईन, गुवालया खडऽपूछ, उ बताव तुम्हारो मायको।
धेनु चरावत हो भाई गऊधन्या,
देखी म्हारी पियर री वाट हम रोष भरया संचारियाजी। हम काई जाणो
केल खजूर का बन भरया जी व्हा छे थारी गवरल नार
आगऽ जाइन देखी गवरल नार।
धाबियेर बोल्यो जी हीनी सोह गवरल नार
हम हसत विणसियाजी।।[6]

यौवन के मतवाले दिनों में पति-पत्नी का प्रेम-कलह भी बड़ा आनंददायक होता है। एक का रूठना, दूसरे का मनाना, मानकर फिर रूठ जाना बड़ा आनन्नदमय होता है। रूठी हुई पत्नी घर से निकलकर जब अपने मायके की राह पर निकलती है, तब मार्ग में वह परिहारे से अपने मायके का रास्ता पूछती है तो वह कहता है हे देवी! मुझे तुम्हारे मायके का रास्ता नही मालूम है। तुम आगे जाकर गाय चरानेवाले से पूछ लेना, वह तुम्हें बतलायेगा। वह आगे बढ़ती है एवं आगे जाकर ग्वाले से पूछती है, ग्वाला उसे हाल हाँकते किसान से और किसान उसे सूत कातती वृद्धा से पिता के घर का पता पूछने को कहता है। तब वृद्धा उसे उत्तर देती है सामने जो केले खजूर के वृक्षों से भरा वन दिखाई दे रहा है, वही तुम्हारी मायका है। बेटी तुम वही चली जाओ। पत्नी के मायके चले जाने पर पति को होश ठिकाने आ जाते है। वह नही जानताा था कि उसके छोटे से परिहास का इतना बुरा परिणाम होगा।

वह पत्नी की खोज में घर से निकलता है। रास्ते में वह भी सभी से पूछता है। वृद्धा के बतलाये अनुसार वहाँ जाता है और अपनी पत्नी से मिलता है। वह पत्नी से कहता है, 'प्रिये! तुम्हारे माथे पर टीकी बहुत सुन्दर लगेगी। मैंने तुमसे मजाक किया था और तुम नाराज होकर घर से चली गई।'

(6)

नी जाती माय हाऊ सासर,
मक सासु लड़ग न म्हारो ससरो लड़ग,
नी जाती माय हाऊ सासर,
मक सासु लड़ग।।[7]

इस गीत में लड़की अपने माता-पिता के कह रही है कि माँ मुझे ससुराल नहीं जाना है क्योंकि यदि में वह गई तो मेरे सास और ससुर मुझसे लड़ाई करेंगे।

(7)

एड़िया धणी रे म्हारा पागल धणी।
एक नजर देख स्वामी म्हारा रे भणी।।
थारा जो माय बाप न वाटा पाड़या।
फुटली परात करी म्हारा रे भणी।।
एक नजर देख स्वामी म्हारा रे भणी।।
थारा जो वाट मन पाणी धरयो,
नाहाव्ण को कऊं तो देख डाबरा भणी।।
एक नजर देख स्वामी म्हारा रे भाणी।।[8]

इस गीत में पत्नी अपने पति के भोलेपन से बहुत परेशान है क्योंकि उससे वह जो भी कहती है, पति उसका उल्टा ही करता है। यह गीत हास-परिहास वाला है।

(8)

तु न असी कसी प्रेम जाल न्हाकी म्हारा पतिदेव,
पियर की ममता छोड़ाई रे।
राम-लक्ष्मण सरी का म्हारा भाई छोड़ाया न,
सीता सरी नी म्हारी भोजई रे।।
तुन असी कसी प्रेमजाल नहाकी म्हारा पतिदेव,
पियर की ममता छोड़ाई रे।।[9]

इस गीत में पत्नी अपने पति से कहती है कि जब से मेरी शादी तुम्हारे साथ हुई है, तब से पता नहीं, तुमने मुझ पर क्या जादू कर दिया है कि मैं अपने पिहर वालों, माता-पिता, भाई-बहन, भाभी सभी को भुल गई हूँ।

लोकगीत जीवन का दर्पण है। लोक में जो कुछ घट रहा है, परिवार में सभी कुछ मधुर नहीं होता, कुछ कटु, कुछ तिक्त यानि कि खट्टे-मीटे अनुभवों के सामंजस्य का नाम ही परिवार है। परिवार के सदस्यों के आपसी मधुर संबंधों को जितनी गहन संवेदना के साथ लोकगीतों में स्थान मिला है वही पति-पत्नी, सास-बहु, ननद-भाभी आदि के मध्य मनपते कटु यथार्थ को भी लोकगीतकारों ने भली प्रकार उकेरा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मलोकगीत और भारतीय संस्कृति की झलक : लीलावती बंसल : पृ. 219
2. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती भागवती दवाने, ग्राम-धरमपुरी

3. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी
4. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी
5. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री किशोर कुमार गाड़गे, बड़वानी
6. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती मंजुला आवस्या, चिकल्दा
7. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी
8. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी
9. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : दयाबाई सावले, ग्राम–वरूड़

****

चुनाव सुधार

डॉ. अनुराग आर्य *

प्रस्तावना – लोकतंत्र के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए एवं इसकी समृद्धी के लिए चुनाव एक अतिआवश्यक घटक है। या यूं कहें कि चुनाव एवं लोकतंत्र एक दूसरे का पूरक है। अर्थात् जहां लोकतांत्रिक व्यवस्था होगी वहां नियमित अंतराल पर चुनाव का होना स्वभाविक है। यह वह साधन है जिसके द्वारा लोगों के अपने राजनीतिक वातावरण के प्रति अभिवृत्ति, मूल्य एवं विश्वास झलकते है। चुनाव एक ऐसी केन्द्रीय प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने लोकप्रतिनिधि का चुनाव करते है एवं उस पर नियंत्रण रखते है। यह लोगों को समय-समय पर सरकार में अपने विश्वास को व्यक्त करने का या उसमें परिवर्तन लाने का अवसर प्रदान करता है। इस रूप में चुनाव एक ऐसा माध्यम है जो कि व्यक्ति की सम्प्रभुता को स्थापित करता है। भारत जो कि विश्व का सबसे बड़ा एवं एक सफल लोकतांत्रिक व्यवस्था का उदाहरण पेश करता है, के संदर्भ में भी चुनाव की अहम भूमिका है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने इस संदर्भ में कई प्रावधान किए है जिसमें से प्रमुख है अनुच्छेद 324 एवं अनुच्छेद 326 1 अनुच्छेद 324 के तहत स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव आयोग का वर्णन है एवं अनुच्छेद 326 के तहत व्यस्क मताधिकार का वर्णन है। भारतीय लोकतंत्र जो कि कई विविधताओं तथा सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक से युक्त है एवं जहाँ 700 मिलियन मतदाता तथा एक मिलियन पोलिंग केन्द्र है, वहां चुनाव एक महापर्व के समान है और ऐसे में चुनाव संचालन कठिन कार्य जरूर है। साथ ही स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव करवाना लोकतंत्र के सामने एक चुनौती भी है।

भारत के संदर्भ में चुनाव की विधिवत शुरूआत 1952 से देखते है। 1967 तक हमारी चुनावी व्यवस्था मोटे तौर पर दोषरहित थी। पर उसके बाद इसके स्तर पर गिरावट आनी शुरू हुयी एवं तब से चुनाव सुधार एक गंभीर मुद्दे के रूप में सबके सामने आया। हालांकि पहले भी कई कुरीतियां, जिसमें ऊंची जाति का वर्चस्व प्रमुख है, विद्यमान थी एवं अशिक्षा, गरीबी एवं सूचना तक पहुंच का अभाव आदि सफल चुनाव प्रक्रिया में बाधक थे। पर समय के साथ-साथ चुनाव के दौरान हिंसा, राजनीतिक, अपराधीकरण मतदान केन्द्र की लूट, प्रशासन का गलत इस्तेमाल, सरकारी धन का दुरूपयोग आदि ने चुनाव के सफल संचालन पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया। आज संसद में वोट के बदले नोट की राजनीति, दल-बदल की समस्या, प्रश्न पूछने के लिए धन की मांग, अपराधियों का बड़े पैमाने पर चुनकर व्यवस्थापिका तक पहुंचना आदि समस्या का मूल कारण एक सशक्त एवं प्रभावी चुनाव व्यवस्था की कमी को दर्शाता है। आजादी के छ: दशक के दौरान हुए चुनाव ने कई मुद्दो को हमारे सामने लाया है जिसके कारण चुनाव सुधार आवश्यक हो गया है। इस संदर्भ में संसद ने कई कानून लाए, कोड ऑफ कंडक्ट के रूप में चुनाव आयोग ने प्रयास किए एवं कई कार्यकारी आदेश दिए गए ताकि स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव कराए जा सके।

आज कई छोटे-छोटे दल उभर आए। इन दलों में कई तो सिर्फ पंजीकृत है और चुनाव में प्रत्यक्ष रूप से सक्रिय तो नहीं होते पर परोक्ष रूप से गलत माध्यमों का प्रयोग कर राजनीतिक वातावरण को दूषित करते हैं कई छोटे-छोटे दल तो चुनाव में कुछ सीटे हासिल कर सरकार के स्थायित्व पर ही खतरा बन जाते है। ऐसे दल सरकार बनाने एवं बचाने में जोड़-तोड़ कर राजनीति, पैसों का खेल, दल-बदल जैसी घटना देखने को मिलती है। इसके लिए इनके बेतरतीब वृद्धि पर लगाम लगाने का समय आ गया है आज सुधार की आवश्यकता इसलिए भी और ज्यादा हो गयी है कि आजादी के चौसठ साल बीत जाने के बाद भी कई ग्रामीण तबका ऐसा है जिन तक चुनाव के लाभ नहीं पहुंच पाए है ऐसे में उन लोगों को वो अधिकार चुनाव के माध्यम से दिलाना है। अब तो विदेशों में रहने वाले अप्रवासी भारतीयों के लिए भी मतदान में भाग लेने की बात चल रही है। ऐसे में चुनाव-सुधार आवश्यक है।

सुधार संबंधी विचारणीय मुद्दे:

फर्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट-सिस्टम – भारत में चुनाव सुधार के विषय के संबंध में यह मुद्दा काफी महत्व का केन्द्रबिन्दु बना है। आज भारत में मशरूम की तरह कई छोटे-छोटे दल उभर कर सामने आए है। इन क्षेत्रीय दलों के कारण प्रत्येक सीटों पर खासकर राज्य स्तरीय चुनाव पर उम्मीदवारों की संख्या काफी ज्यादा हो जाती है। ऐसे में हमें इसके कई उदाहरण मिलते है जहां उम्मीदवारों की जीत का अंतर 100 मतों से भी कम हो जाता है। इसके साथ ही आज उम्मीदवार मात्र 30-35 प्रतिशत मतों को प्राप्त कर जीत हासिल कर रहे हैं। तो क्या ऐसे में यह कहा जा सकता है यह जीत मतदाताओं की बहुमत का प्रतीक है? इन कमियों को दूर करने के लिए फर्स्ट-पास्ट-द पोस्ट-सिस्टम की जगह द्वि-चरणीय चुनाव प्रक्रिया अपनाने की बात की जा रही है। ऐसे में द्वितीय चरण में वैसे दो उम्मीदवार भाग लेंगे जो पहले चरण में सबसे ज्यादा मत प्राप्त किए है। द्वितीय चरण मे जो उम्मीदवार सबसे ज्यादा मत प्राप्त करेगा जो कि 51 प्रतिशत से अधिक होगा, वही विजय घोषित होगा।

अन्य सुझाव :-

1. मतपत्रों की बजाय इलेक्ट्रानिक मतदान मशीन द्वारा मतदान।
2. स्वैच्छिक मतदान के बजाय अनिवार्य मतदान।
3. किसी को मत नहीं (नोटा) का विकल्प।
4. चुने हुए प्रतिनिधियों को हटाने या बुलाने की व्यवस्था।
5. मतगणना की सही विधि का विकास।
6. स्त्रियों एवं निर्बल समूहों के लिए सीटों का आरक्षण।

* राजनीति विज्ञान विभाग, शा. महाविद्यालय, सीतामऊ, जिला-मन्दसौर (म.प्र.) भारत

7. निष्पक्ष निर्वाचन आयोग का सम्यक गठन।
8. चुनाव खर्चों का निर्धारण एवं उस पर नियंत्रण।
9. चुनाव प्राचार एवं आदर्श चुनाव आचार संहिता का कड़ाई से पालन।
10. घूस देकर, शराब पिलाकर या जबरदस्ती मत डलवाने के विरूद्ध नियंत्रण।
11. अवैध मतदान पर रोक
12. आदर्श निर्वाचन केन्द्र बनवाकर।

चुनाव सुधार संबंधी अभी तक के प्रयास – चुनाव सुधार संबंधी प्रयास काफी पहले से किए जा रहे थे। चुनाव आयोग ने 1970 में विधि मंत्रालय को चुनाव सुधार से सम्बंधित अपना पहल विस्तृत प्रस्ताव प्रारूप सहित भेजा था। 1975 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, जनसंघ, अन्नाद्रमुक आदि दलों की संयुक्त समिति ने अनेक सुझाव दिए। जय प्रकश नारायण ने प्रसिद्ध न्यायविद बीएम तारकुंडे की अध्यक्षता में चुनाव सुधार पर विचार के लिए एक कमेटी गठित की। 1977 में पूर्व के सभी सुधारों से संबंधित प्रस्तावों की समीक्षा कर 22 अक्टूंबर, 1977 को एक समग्र प्रतिवेदन भारत सरकार को भेजा गया। 1982 में फिर से तत्कालीन मुख्य चुनाव आयुक्त एस.एल. शकधर ने पूर्व के सभी सुझावों की समीक्षा के बाद एक नया पस्ताव भारत सरकार को भेजा। इसके बाद भी 1990 के दशक में कई कमिटियों का गठन किया गया। इनमें से प्रमुख है चुनाव सुधार पर गोस्वामी कमेटी 1970, वोहरा कमेटी 1993, चुनाव के राज्य फंडिं ग के सम्बंध में इंद्रजीत गुप्ता कमेटी 1998, चुनाव कानून संबंधी लॉ कमीशन रिपोर्ट 1999।

वर्ष 2004 में चुनाव आयोग ने एक विस्तृत रिपोर्ट सुधार संबंधित सरकार को भेजा है। इस पर विधि मंत्रालय एक कमेटी के माध्यम से इन परामर्शो को लागू करने में लगी हुई है। कुछ पर तो सहमति बन गई है एवं कुछ आज भी लंबित पड़े हुए है। वर्ष 2008 के प्रशासनिक सुधार आयोग के रिपोर्ट में भी इस सम्बंध में कुछ सुझाव दिए गए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. चुनाव सुधार पर विधि आयोग की दूसरी रिपोर्ट, 2015
2. अग्रवाल, मनोज – चुनाव सुधार, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
3. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 324 (1)
4. नेमा, जी.पी. एवं जैन, राजेश – भारत में राज्यों की राजनीति, कालेज बुक डिपो, जयपुर 2004

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

निमाड़ के महानायक : संत सिंगाजी

डॉ. सीमा गाड़गे *

प्रस्तावना – संत सम्प्रदाय विश्व सम्प्रदाय है और उसका धर्म विश्व धर्म है। इस विश्व धर्म का मूलाधार हैद्द हृदय की पवित्रता। सन्तों ने भारतीय जन मानस के साथ-साथ विश्व की जनता को समय-समय पर मार्ग दिखाया। सामाजिक विखंडन और मनुष्य के दु:ख भरे दिनों में संतों की वाणियों ने औषधि का कार्य किया है। वह ज्ञान-विज्ञान की दौड़ में सबसे पहले स्वयं को पहचानता है फिर अपने आसपास के संसार को जानता है तथा अन्त में दुनिया को समझ कर जीवन के उद्देश्य तक पहुँचता है। वह अपनी जीवन यात्रा के अनुभवों के माध्यम से जमाने को सचेत करता है। उसके अनुभव जब मनुष्य के कल्याण और जीव उत्थान की प्रक्रिया को शब्द देते हैं। तब उसके जन-जन के गले का हार बन जाते हैं। वह जो गाता है, भजन हो जाता है। सन्त समय को शब्द देता है। मनुष्य को उसकी औकात बताते हुए उसे ऊपर और ऊपर उठने की राह बताता है।

'सिंगाजी' लोक जीवन में स्थान – निमाड़ी लोक साहित्य के निर्माण में यदि संत सिंगा नहीं होते तो निमाड़ी भाषा इतनी परिष्कृत जनमन में नहीं होगी, निमाड़ की संस्कृति इतनी सहिष्णु नहीं होती और निमाड़ के आध्यात्मिकता की ऐसी अमिट छाप नहीं होती। सिंगा ने निमाड़ को जितना दिया है उतना और किसी ने नहीं। उन्होंने निमाड़ी भाषा में ग्यारह सौ आध्यात्मिक भजनों का निर्माण कर न सिर्फ निमाड़ी भाषा, वरन् समस्त निमाड़ को गौरवान्वित किया है। आप निमाड़ के किसी भी गाँव में चले जाइये वहाँ आप सूर और तुलसी के पदों की तरह सन्त सिंगा के पद प्रचलित पायेंगे। निमाड़ में कोई ऐसा गाँव नहीं मिलेगा जहाँ भजन मंडली नहीं हो और कोई ऐसी भजन मंडली नहीं मिलेगी जिसे सिंगा के भजन याद न हो। मानो सिंगा के भजनों के बिना यहाँ का सारा संगीत अधूरा है। सिंगाजी उनके लिये महज एक संत या कवि नहीं वरन् एक पहुँचे हुए पुरूष और अलौकिक व्यक्ति थे।

अपने इस सन्त कवि पर यहाँ की जनता की कुछ ऐसी असीम श्रद्धा रही है कि भले ही सूर और तुलसी के नाम पर कोई ग्राम नहीं बसे हो, मेले नहीं लगते हो, लेकिन सिंग की समाधि पर उनकी निर्वाण तिथि के अवसर पर निमाड़ का सबसे बड़ा मेला लगता है और उनकी समाधि के पास जो गाँव बसा है वह सिंगाजी के ही नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध है। किसी भी सन्त या लोक कवि के चरणों में जनता की इसे बढ़कर और कौन-सी श्रद्धांजलि हो सकती है।

यद्यपि अभी तक उनके साहित्य का कोई व्यवस्थित प्रकाशन नहीं हो सका है लेकिन खुशी की बात है कि इस दिशा में शोध कार्य जारी है।[1]

संत सिंगाजी महाराज के लोकगीत – नर्मदा उपत्यका के कृषि प्रधान जीवन में संत सिंगाजी का वर्चस्व किसी भी अन्य संत या लोक कवि की अपेक्षा कहीं अधिक है। उत्तर भरत की संत परंपरा के निखरे हुए सूत्रों में सिंगा ने अपने स्वर मिलाये और वे निमाड़ में बिखर कर गूँजने लगे। उनके पदों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि सिंगा में अपने पूर्ववर्ती संतों का प्रभाव विद्यमान है। जीवन में साधना होते हुए भी वे लोक से भिन्न न थे इसीलिए नर्मदा उपत्यका निमाड़ के ही नहीं दूर-दूर के जन-जन को अपनी भक्ति और वैराग्य से वे विमोहित कर सकने में सफल हुए। आज भी –

सिंगा बड़ा अवलिया पीर
जिसको सुमरे राव अमीर।।

कहकर लोग उन्हें याद करते हैं। सिंगा उनके लिए एक आलौकिक पुरूष है। यदि पशु खो जाये या उन पर कोई आपत्ति या बीमारी आज आए तो कृषकगण सिंगा की मनौती करके उनकी अलौकिकता के प्रति अपनी आस्था व्यक्त करते हैं। गजर, भरूड़, गवली, मेघवाली, पाटीदार आदि नर्मदा उपत्यका की कृषक जातियाँ सिंगा की सौगंध को भगवान् के बराबर मानती है। दलू भगत (दलूदास या दलाजी) की छाप वाले कोई गीतों में उनके कुछ विलक्षण कार्यो का उल्लेख मिलता है। दलूजी सिंगाजी के पौत्र थे। उनके लिए सिंगाजी अवतारी पुरूष थे वे ईश्वर के बराबर थे।[2]

दलूदास मंडलेश्वर (निमाड़) के निकट 'लेपा' ग्राम में रहा करते थे। मालव लोक साहित्य परिषद् के 'निमाड़ संस्कृति पर्यविक्षण' दल ने दलू दास के अनेक भजन एकत्र किए हैं। उनमें से सिंगाजी का परिचय देने वाले गीतों को नीचे दिया जा रहा है।

बाबा सिंगाजी जात को गवली।
देवा भोल बजाये पाया पावली।।
बाबा सिंगाजी नी नाना मोटा आगणा।
बाबा घर आयो तिन घर पावधा।
बाबा अन धन लक्ष्मी भोत फली।
सेवा भोत कर वकी घरवाल्य।
बाबा अपनी हांसी के फेर लियों।
बाबा राम नाक कर लेवाली।
बाबा दलूपति जाकी बिनती।
देवा शरणा लनगी पाली।।[3]

इस गीत से यह प्रकट होता है कि सिंगाजी जाति के गवली थे। वह एक साधारण परिवार से उत्पन्न हुए। उनके पैदा होने से अन्न धन की वृद्धि हुई। उनकी घरवाली बहुत सेवा करती थी पर सिंगा ने अपने जीवन के आनन्द से विमुख होकर रामनाम में अपना चित्त लगा दिया।

सिंगाजी के संबंध में कतिपया किवंदन्तियाँ उल्लेखनीय है :

1. ***जन्म संबंधी* –** सिंगाजी का जन्म कंडे थापते समय हुआ था। उनकी माता के पास उस समय नाल काटने के लिए कोई धारदार वस्तु नहीं थी, तो उन्होंने वहाँ पड़े दो पत्थरों से नाल काट दी। तभी से पत्थर खजुरी में पड़े हुए

* पूर्व सहायक प्राध्यापक, आर पी एल माहेश्वरी कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

हैं और आज भी पूज्य माने जाते हैं।

2. औलिया पीर से भेंट – कहते हैं कि एक औलिया पीर खानदेश में रहा करते थे उन्हें सिंगाजी से भेंट करने की इच्छा हुई। इधर सिंगाजी भी उनसे मिलना चाहते थे। औलिया पीर ने सूखी जमीन पर नदी की धारा बहा दी। सिंगाजी ने भी चमत्कार दिखाए उन्होंने नदी की रेत में सफेद 'गार' को फोड़कर चावल बनाए और कुँवारी केडी पर हाथ रखकर दूध निकाला तथा कटोर भर कर औलिया को पिलाया।

पाँच वर्ष की अवस्था में पिता की मृत्यु हो जाने पर सिंगाजी अपने ढोरों को लेकर हरसूद में आ बसे। वहाँ रहते हुए 21 वर्ष की अवस्था में भामगढ़ के राव रावल साहब के यहाँ 1 रूपये मासिक पर नौकर हो गये। एक दिन हरसूद से डाक लेकर वे भागगढ़ लौट रहे कि मार्ग में उन्हें ब्रह्मामगिरी के शिष्य मनरंगीर को यह गाते हुए सुना –

समझी लेवो रे मन, अंत न होय कोई अपना।
यही माया का फंदा म नर आन भुलाया।।

इन पंक्तियों का सिंगा पर बहुत असर हुआ और उन्होंने भामगढ़ आकर नौकरी छोड़ दी। मनरंगीर को अपना गुरू मानकर वे आध्यात्मिक जिज्ञासा को लिए हुए पीपल्या की ओर चले गये। वही तुलसीदास से भेंट हुई।

3. सफेद मकड़ी का रहस्य – कृष्ण जन्माष्टमी का दिन था। कृष्ण का जन्म रात्रि के ठीक 12 बजे होता है। गुरू मनरंगीर को नींद आने लगी तो अपने प्रिय शिष्य सिंग को कहा कि हमें रात्रि में उस समय जगा देना जब सफैद मकड़ी भगवान के समीप दिखाई पड़े। सिंगाजी भावुक थे। सफेद मकड़ी के प्रकट होने पर उन्होंने भगवान की आरती उतार दी, यह सोच कर की सोते हुए गुरू को उठा कर व्यर्थ कष्ट क्यों दिया जाए। जब गुरू की नींद खुली तो सिंगाजी की इस चेष्टा पर वे क्रुद्ध हुए और कहा – 'जा दुष्ट, जीते जी फिर मुँह न दिखाना।' सिंगाजी को इससे हृदय पर भारी चोट लगी और उन्होंने शरीर त्याग करने का निश्चय किया। अपने निवास स्थान पीपल्या में आकर कुछ मास रहे। तत्पश्चात् श्रावण की पूर्णिमा को संवत् 1616 ई. में सिपराड नदी के तीर पर उन्होंने जीवित समाधि ग्रहण कर ली।

क्रोधनल काँ से आयो, दुष्ट म्हन क्रोलानल कॉ से आयो।
म्हन हाथ को हिरो गवायो, दुष्ट म्कान हाथ को वन गँवायो।।

जन्म – सिंगाजी साहित्य शोधक मंडल के मतानुसवार संत सिंगाजी का जन्म संवत 1568 में मिती वैशाख सुदी 11 गुरूवार को पुष्य नक्षत्र में, 8 बजे दिन को बड़वानी स्टेट (अब मध्यप्रदेश) में खजूरी ग्राम में हुआ। संवत 1581–82 में आपके पिता अपना समस्त सामान लेकर, जिसमें 300 भैंसें भी थीं, निमाड़ में हरसूद नामक गाँव में आकर रहने लगे।

संवत 1598 में सिंगाजी ने भामगढ़ (खंडवा) के राव रावल साहब के यहाँ पर एक रूपया माहवार पर चिट्ठी लाने और ले जाने की नौकरी कर ली। नौकरी छोड़ने के समय उन्हें तीन रूपये माहवार मिलता था। इसी बीच मनरंगी स्वामी का एक भजन सुनकर आपको वैराग्य हो गया और आप नौकरी छोड़कर अपनी आध्यात्मिक साधना में तल्लीन हो गये।

यही आपके भजनों के निर्माण का काल भी है। अंत में संवत 1616 में श्रावण बदी 9 के दिन आपने समाधि ले ली। इस तरह आपकी आयु 40 वर्ष ठहरती है।

सिंगाजी की परचरी ग्रंथ के अंतिम पृष्ठ पर लिखा मिला है कि संवत 1648 के साल में स्वामी की देह छूटी मिती सरावण सदी 9 । शायद उसी आधार पर श्री कृष्णलाल हंस ने भी सिंगा की निधन तिथि 1648 मानी है। इससे उनकी आयु 90 वर्ष ठहरती हैं। लेकिन उनके संपूर्ण जीवन वृत्त पर विचार करने से यह बात उचित नहीं जँचती। अभी तक प्राप्त सामग्री के अुनसार इतना तो स्पष्ट है कि संवत 1568 में उनका जन्म हुआ था।

पाँच वर्ष की अवस्था में वे अपने पिता के साथ हरसूद आये और 22 वर्ष की अवस्था में उन्होंने भामगढ़ के राव साहब के यहाँ एक रूपये माह वार पर नौकरी की। नौकरी छोड़ने के समय उन्हें तीन रूपये मिलते थे। यदि एक रूपया वर्ष पर तरक्की मानी जाये तो उनके द्वारा तीन वर्ष तक नौकरी करना सिद्ध होता है। इस तरह 25 वर्ष के उम्र में उन्हें वैराग्य हो गया होगा।

उनके समाधिस्थ होने के संबंध में भी यह प्रसिद्ध है कि एक बार जब जन्माष्टमी के दिन उनके गुरू मनरंगीर स्वामी को नींद आने लगी तो उन्होंने सिंगा को बुला कर कहा कि मैं तो सोता हूँ, तुम मुझे जन्म के समय जगा देना। जब जन्म का अवसर आया तो सिंगाजी ने सोचा कि भगवान क्या रोज–रोज थोड़े जन्म लेते हैं। फिर मैं गुरू को क्यों त्रास दूँ, मैं ही क्यों न आरती कर दूँ। ऐसा सोचकर उन्होंने आरती कर दी।

लेकिन जब गुरू की नींद खुली तो बहुत नाराज हुए और उन्होंने क्रोध में सिंगाजी से कह दिया कि 'जा दुष्ट, मुझे मारा मुँह दिखाना।'

सिंगा को यह बात तीर–सी लगी लेकिन उन्होंने गुरू की बात को वरदान की तरह स्वीकार कर 11 मास बाद संवत 1616 की श्रावण सदी 9 को स्वैच्छा से समाधि ले ली।

कहते हैं मृत्यु के बाद जब मनरंगीर स्वामी उनके घर आये तो रास्ते में सिंगाजी उनसे मिले थे और इस तरह गुरू ने जो कहा था कि 'मरा मुँह दिखाना' सो उन्होंने गुरू के वचनों को पूरा कर दिखाया था। इस घटना से सिंगा के जैसे प्रखर स्वभाव, तेजस्वी स्वरूप और फक्कड़ तबियत का पता चलता है। वह 90 वर्ष की अवस्था में उचित नहीं जँचता वरन् एक 40 वर्ष के नौजवान के अनुकूल ही जँचता है। रही परचरी के संवत की बात, सो उसमें यह संवत अलग से ग्रंथ के अंतिम पृष्ठ पर लिखा है। परचरी से कथानक में या अन्य ग्रंथों में इसका कोई जिक्र नहीं आया है।

अतएव जब तक इस संबंध में कोई प्रामाणिक तथ्य नहीं मिलते तब तक हमें सिंगाजी साहित्य शोधक मंडल का निर्णय ही उचित जँचता है और उनकी आयु 40 वर्ष ही सही प्रतीत होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लोक साहित्य समग्र : पं. रामनारायण उपाध्याय : पुष्ठ 137.
2. संत सिंगाजी : सिंगाजी साहित्य, शोधक मंडल, खंडवा, 1936 : पृष्ठ 21.
3. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : तिरमख अखर, ग्राम, घोट्या

****

आधुनिक मालवी काव्य की प्रासंगिकता

डॉ. शैफाली मलिक *

प्रस्तावना - किसी भी देश की समृद्धता केवल आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से ही पर्याप्त नहीं होती है। वह राष्ट्र तभी आदर्श एवं सार्थक है जब उसका साहित्यक रूप भी समृद्धशाली है। साहित्य अपने परिपक्व रूप में तभी आता है जब उसका संबंध अपने क्षेत्र की मिट्टी, परिवेश और जनजीवन से हो। क्षेत्रिय भाषा का साहित्य अपनी आंचलिक बोली की खुशबू से अधिक संपृक्त हाता है बानिसपद विशिष्ट साहित्य के।

अपने क्षेत्र की माटी की भीनी-भीनी खुशबू को मालवी रचनाकारों ने अपनी रचना में शाश्वत अभिव्यक्ति दी है। लोक बोली में रचित काव्य में अपने समय समाज और जीवन की जीवंत और मौलिक प्रतिध्वनि सुनाई देती है। मालवी काव्य में जन-जन का प्रतिबिम्ब परिलक्षित होता है। क्षेत्रिय भाषा का महत्वपूर्ण आधार उसकी लोक संस्कृति की परम्परा होती है। लोक का क्षेत्र विस्तृत और व्यापक होता है वह धर्म, जाति और समूह की मानव निर्मित सीमाओं से परे होता है।

आधुनिक मालवी कविता को अभिव्यक्त करने का सबसे सरल और सहज माध्यम उका अपना 'लोक साहित्य' ही है। जिसमें मालव लोक संस्कृति और जीवन के चित्रों को प्रस्तुत किया है। अनेकों मालवी रचनाकारों ने लोक-जीवन का नरवाशिख वर्णन अपनी रचनाओं में किया है। जिसमें मालवा एवं मालवी के अनछूए पहलुओं को दर्शाने का प्रयास किया है और सहजता से जन-साधारण को समझ में आ जाता है। मालवा युगों की कथाओं और कहानियों को समाहित करने वाला भारत के ह्रदय में बसने वाला 'इत चम्बल उत बेतना' क्षेत्र है।

'मालवा का पठार' वैसे तो भौगोलिक सीमा रेखा से अपने आप सुषोभित है किन्तु राजनैतिक उठा पटक और ऐतिहासिक दृष्यक्रम समय-समय पर सीमा रेखाओं को घटाते-बढ़ाते रहे हैं। मालवी की शस्य श्यामल माटी के संबंध में महिमा बखान करती हुई। 'डग-डग' रोटी और पग-पग नीर की बात भी सर्वविदित है परन्तु 'गहन-गंभीर' की उक्ति मालवा के लोक मानस के यथार्थ रूप को प्रस्तुत करती है। मालवा में बोली जाने वाली मालवी लोकाभिव्यक्तियों और शब्दावली के दृष्टिकोण से बहुत ही समृद्ध है। विशिष्ट साहित्य सृजन की परम्परा मालवी साहित्य में दृष्टिगोचर होती है जो माधुर्यपूर्ण, सम्पन्न एवं संस्कारित है।

आधुनिक मालवी कविता के सृजन का प्रांरभ डॉ. चिन्तामणी उपाध्याय सुखराज रचित 'ललिता देवी का विवाह' और 'रूकमणी मंगल' के साथ माना जाता है। मालवी पद्य को नया आयाम, आधार स्तंभ देने वाले 'श्री पन्नालाल नायाब का नाम अग्रण्य है। मालवी पद्य की नवीन विशेषताओं को लाने का आधारभूत कार्य आनंदराव दुबे एवं समालोचक पद्मभूषण पं. सूर्यनारायण व्यास, डॉ. श्याम परमार को है। आधुनिक काल में हरीश निगम, मदन मोहन व्यास, नरहरि पटेल, बाल कवि बैरागी, गिरिवरसिंह भंवर, पुखराज पाण्डे आदि ने अपनी मालवी रचनाओं के माध्यम से राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना का शंखनाद फूंका है जिसकी छाप जन-मानस के ह्रदय पर दिखाई देती है।

आधुनिक मालवी रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में कविता कामिनी का श्रृंगार भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों से किया है जिसमें प्राकृतिक चित्रण वीर का ओजभाव, हास्य-व्यंग्य का पुट है एवं सामाजिक, राजनैतिक चेतना के गौरव-गीत भी शामिल हैं। जिन्हें समय-समय पर भाव-भंगिमा के साथ अभिव्यक्त किया है और उनका सूक्ष्म मूल्यांकन भी किया है।

महाकवि कालीदास ने मालवाधिपति सम्राट विक्रमादित्य के दिव्य-चरित्र के साथ ही मालवा का वर्णन अपनी कृतियों में भाव-विभोर रूप से किया है। महाकवि कालीदास की परम्परा को मालवी रचनाकारों ने बखूबी निभाया है और राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय विषयों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है।

आधुनिक मालवी काव्य अपनी भाषा, शैली प्रतीक, अलंकार और शब्द भण्डार से सक्षम है। 'मालवीय' शब्दावली और लोकाभिव्यक्तियों की दृष्टि से भी अत्यन्त समृद्ध है। मालवी के सुप्रसिद्ध कवि हरीश निगम कहते हैं -

जितनी सीधी, उतनी मीठी, प्यारी यां की बोली रे।
हिन्दी का निर्मल तन पे, चमके जैसे चोली रे।

डॉ. चिन्तामणी उपाध्याय ने अपने भाषाशास्त्रीय अध्ययन में मालवी की चार उपबोलियों - रागड़ी, सोंधवाड़ी, उमठवाड़ी और निमाड़ी का उल्लेख किया है। जो समृद्ध एवं मालवी भी है। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध जो हिन्दी का आधुनिक काल माना गया है। इस समय तक समूचे देश में मालवी कवि अपने कवि-सम्मेलनों के मंचों पर छाए रहे। उन्होंने अपने समय, समाज और जीवन के रंगों को प्रस्तुत किया जो आज भी प्रासंगिक है।

चिन्तन प्रधान कवित भगवती लाल राजपुरोहित अपनी रचनों में कहते हैं -

'बिन उज्जैनी सिपरा सूनी, बिन सिपरा सूनी उज्जैन
महाकाल बिन दोई सूना, इन बिन सूना मालव नैन।'

बाल कवि बैरागी जी की 'बादरवा आईग्या' कविता का एक उदाहरण प्रस्तुत है -

धरती ने धरती की जाया को गोढी
घर-घर बंटावे पतासा ई बादरा राव रंग रावरे
मेहनत का रंग में हगरा रंबईइया,
बादरवा अईग्या।

इस तरह से मालवी कवियों ने सु-समृद्ध मालवी काव्य की सुगंध यत्र-तत्र फैलाई है परन्तु फिर भी जिन ऊँचाईयों को आधुनिक मालवी कविता को छूना चाहिए वह शेष है। या यूं कहें कि जितना प्रचार-प्रसार होना चाहिए

* B-603, स्काई हाईटस, नवलखा स्क्वायर, इन्दौर (म.प्र.) भारत

उसमें कहीं कमी है। फिर भी मालवा की सांस्कृतिक परम्परा पतित, पावनी सुरसंरिता 'माँ गँगा' की धवल धारा के समान निरन्तर प्रवाहमान है जिसका सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्व है।

आधुनिक मालवी काव्य का, मालवी रचनाकारों ने इतना सरल विज्ञान बना दिया है जिससे मालव लोक संस्कृति और लोक जीवन की यथार्थ जांच सहज रूप से भी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिरना सांवली – हरीश निगम, निकुंज प्रकाशन, उज्जैन, 1982,
2. गजरो (कविता संग्रह) – मोहन सोनी एवं डॉ. शिव चौरासिया, मालवा लोक साहित्य परिषद, उज्जैन, 1998।
3. मोती वेराणा – भावसार बां
4. झुमको – नरहरि पटेल, दिशा कम्यूनिकेशन, इन्दौर, 2000।
5. चटक म्हारा चम्पा – बाल कवि बैरागी, निकुंज प्रकाशन, उज्जैन, 1983।
6. त्रिवेणी – जगन्नाथ विश्व।

****

निमाड़ के प्रचलित लोरी एवं भजन

डॉ. सीमा गाड़गे *

प्रस्तावना – मानव जीवन के बचपन का सम सबसे सुन्दर और नैसर्गिक है जो चिंताओं से मुक्त, मौज-मस्ती, हँसने-हँसाने, खेलने-खाने, नाचने-गाने आदि शरारतों से पूर्ण होता है। इस सम के भोलेपन में की गई क्रीड़ाएँ उसके जीवन की अनमोल धरोहर है।

निमाड़ में बाल उम्र के विविध लोकगीत पाए जाते हैं। लोरी शिशु मन को आल्हादित करती है तो डेडरा और अन्य क्रीड़ाओं के गीत उसके बाल मन में जीवन की उमंग भरते हैं। गोगा साला पर्व उन्मुक्तता को प्रदर्शित करता है तो संझा किशोर अवस्था की स्थितियों को रेखांकित करता है। जहाँ बाल और यौवन का सहज-सुलभ संघर्ष उनके गीत और क्रीड़ाओं में दृष्टिगोचर होता हैं। पं. रामनारायण उपाध्याय नर्मदांचल की बालकोपयोगी मनोरंजक लोककथाएँ 'मुर्गे का ब्याह' की भूमिका में कहते हैं, 'जाने क्यों मनुष्य में बचपन से ही वार्ताएँ सुनने की अद्‌भूत रूचि रही है। सांझ होते ही बच्चे माँ के नजदीक घिर आते और वार्ता सुनाने की जिद्द करने लगते हैं। जब तक वार्ता चलती रहती है, वे उसमें तल्लीनता से दिलचस्पी लेते और बीच-बीच में 'हुँकारे' से अपनी स्वीकृति प्रकट करते रहते हैं। कभी-कभी अजीबो-गरीब प्रश्न करते और उसके समाप्त होते ही दूसरी सुनाने की जिद्द करने लगते हैं।'

उन्हें अपनी ही तरह चंचल पक्षियों और हाथी-शेर आदि के माध्यम से कही गई वार्ताएँ विशेष पसंद रही हैं। वास्तव में लोक-कथाएँ ही समस्त साहित्य कथाओं की धात्री रही हैं। इनका उद्देश्य उपदेश देना ही नहीं वरन् बालकों के मन में नई-नई बातों को खोजकर नया ज्ञान अर्जित करने की जिज्ञासा उत्पन्न करना है।

निमाड़ में इन लोकगीतों के पीछे विविध लोक-कथाएं और किंवदंतियाँ प्रचलित है जिसका सीधा संबंध बाल मनोविज्ञान से है।

लोरी – लोरी का संबंध शिशु और माँ के नैसर्गिक वात्सल्य प्रेम से है। लापेरी माँ और शिशु की विश्व प्रसिद्ध पहचान है। निमाड़ में इसे 'हलुर' शब्द से पहचाना जाता है। हलुर के माध्यम से माँ अपने शिशु के मन की बेचैनी, उदासी और पीड़ाओं को हरती है और उसे नया उत्साह, नींद इत्यादि देती है। अबोध बालक का सहज मन की बेचैनी, उदासी और पीड़ाओं को हरती है और उसे नया उत्साह, नींद इत्यादि देती है। अबोध बालक का सहज मन भी लोरी की चाहत रखता है। डॉ. विभा शुक्ला लोरी को विवेचित करते हुए कहती हैं कि जब बच्चा रोता है, मचलता है और सोने का समय हो जाने पर भी नहीं सोता है तो माँ अपने बेटे को मीठी नींद सुलाने के लिए लोरियाँ गाती हैं। इन गीतों में कहीं-कहीं आध्यात्म और ज्ञान संबंधी गम्भीर अर्थ देखने को मिलते हैं किन्तु सामान्यतया इनमें केवल तुकबन्दी ही होती है।

निमाड़ी में बच्चों के गीतों का भी अभाव नहीं है। बच्चा अपने मन का राजा होता है। वह अनेक प्रकार की कल्पनाएँ करता है। शिशु गीतों में उन्हें आनंदात्मक तथा मधुर बनाने के लिए ऐसे शब्दों का उपयोग किया जाता है जिनका कोई अर्थ नहीं होता।

घर की बूढ़ी दादी अथवा माता छोटे बच्चों को पालने पर सुलाकर गीत गाती है जिन्हें 'लोरी' या 'पालने के गीत' कहा जाता है। इनमें प्रयुक्त शब्दों का कोई अर्थ नहीं होता। निमाड़ में कुछ लोरियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। ये लोरियाँ इस प्रकार है :-

(1)

हात रे भाई रे,
नानाकी माँय पाणी खऽ गई।
घर म कुतर कोंडी गई,
कुतरा भूकसे होलई पर।
नानो म्हारों सोवसे होलई पर,
आवो चिड़ी बाई करू थारो याव।
कथली मूदड़ो, न जुरूंग को हार।
हात रे भाई। 1
झालर की टोपी थारी मासी लागव।।
सोइजा बाला सोइजा नानु आवग,
झालर की टोपी थारी नानी लावग।।
सोइजा नाना सोइजा फुओं आवग,
झालर की टोपी पारी बुआ लावग।।
सोइजा नाना सोयजा काको आवग
झालर की टोपी थारी काकी लावग।।[2]

(2)

सोइजा नाना बाला गोदण वाला आवसे,
गोदण वाला आवसे गोंदी न लई जासे।।
सोइजा नाना बाला पिचकारी वाला आवसे,
पिचकारी वाला आवसे पिचकारी लगई जासे।
सोइजा नानां बाला गोदण वाला आवसे।।
सोइजा नाना बाला पकड़न वाला आवसे
पकड़न वाला आवसे पकड़ी न लई जासे,
सोयजा नाना बाला बांधण वाला आवसे।
बांधन वाला आवसे बांधी न लई जासे।।
सोइजा नाना बाला गोदण वाला आवसे।।[3]

इस गीत में माता अपने बच्चे को पालने मे सुला रही है तथा बच्चा सोता नहीं है तो माता उसे तरह-तरह की बातों से डराती है और सोने के लिए कहती है।

* पूर्व सहायक प्राध्यापक, आर पी एल माहेश्वरी कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

(3)

सोइजा नाना सोइजा मामु आवग,
झालर की टोपी थारी मामी लागव।।
सोइजा नाना सोइजा मावसो आवग,
झालर की टोपी थारी मासी लावग।
सोइजा बाला सोइजा नानु आवग,
झालर की टोपी थारी नानी लावग।।
सोइजा नाना सोइजा फओं आवग,
झालर की टोपी पारी बुआ लावग।।
सोइजा नाना सोयजा काको आवग
झालर की टोपी थारी काकी लावग।[4]

इस प्रकार माता अपने बच्चे को सुलाने के लिए उसे तरह-तरह से लुभाती है और उसे सुलाने की कोशिश करती है।

(4)

घुंघरो को भुली आय वो नणद बाई।।
ऐना बाला न मांडीयो ते हाट वो नणद बाई।
घुंघरो का भुली आय वो नणद बाई।।
इच्छा पूर का इच्छझ्झ न आवली की कावली।।
आसी लिक्खी म टिकी लगई आयवो नणद बाई।।
घुंघरों का भुली आय वो नणद बाई।।
आगरा को घाघरो न गुजरात की चोली,
आसी बम्बई म साड़ी ओड़ी आय वो नणद बाई।।
घुंघरालो का भुली आय वो नणद बाई।।[5]

यह गीत लोरी से थोड़ा अलग है इस गीत में भाभी अपनी ननद से कहती है कि मेरा बच्चा आपसे खेलने के लिए झुनझुने की हठ कर रहा है लेकिन आप सभी चीजें तो पहन ओढ़ के आई हैं लेकिन मेरे बच्चों का झुनझुना कहाँ भूल के आ गयी है।

(5)

सुक-मुक लकड़ी का झुला बनाया,
उसमें लाल सुलाया रे।
सोयजा रे बाला सोयजा गोदण वाला आया।।
सुक-मुक लकड़ी का झुला बनाया,
उसमें लाल सुलाया रे।
सोयजा रे बाला सोयजा गोदण वाला आया।।
जेठ हमारो भैयस्या धुवंतो न,
जेठाणी ने लाल रूलाया रे।
सुठ-मुक लकड़ी का झुला बनाया,
उसमें लाल सुलाया रे।।[6]

(6)

चार पहिया पर खेल म्हारो ललना।
लेवो-लेवो सासुबाई म्हारो ललना।
तुमक दादी कयग म्हारो ललना।।
चार पहिया पर खेल म्हारो ललना।
लेवो-लेवो नणद बाई म्हारो ललना।
तुमको बुआ कयेगा म्हारो ललना।।
चार पहिया पर खेल म्हारा ललना।।[7]

इस गीत में बच्चे की माता उसकी बुआ तथा दादी को खिलने के लिए कहती है। इस प्रकार निमाड़ में लोरियों का प्रचलन बहुत अधिक है और इन्हीं मधुर लोरियों के साथ बच्चे का लालन-पालन किया जाता है। ये लोरियाँ निमाड़ के प्रत्येक घर में सुनने को मिल जाती हैं। बच्चे के पैदा होने पर घर परिवार में बहुत खुशी होती है। उसे भी कहीं अधिक खुशी दादा-दादी, चाचा-चाची, नाना-नानी, मामा-मामी सभी को होती है और इसी खुशी के साथ उसका लालन पालन किया जाता है।

भजन – भारत धर्मपरायण देश है। यदि हम यह कहें इस देश की जनता का जीवन निर्माण धार्मिक तत्वों के आधार पर ही हुआ है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस देश में वैदिक काल से आज तक के लोक-जीवन के इतिहासा में इनकी धार्मिक परम्पराएँ, धार्मिक भावनाएँ, धार्मिक प्रवृत्तियाँ भरी पड़ी है।

निमाड़ में भजन गाने की प्रथा भी प्रचलित है। जब भी किसी के घर में कोई शुभ कार्य किया जाता है तो भजन मंडली को बुलाकर रात भर भजन गाये जाते हैं। ये भजन प्रत्येक देवी-देवता के हो सकते हैं। कुछ भजन इस प्रकार है :-

(7)

उठो भोले नयन खोलो,
भिखरी द्वार प आयल छे।।
भोला का दरवाजा एक अंधो पुकार
नयन दी देव चली जाय,
भिखारी द्वार पर आयल छे।।
भोला का दरवाजा एक कन्या पुकार
वर दी देव चली जाय,
भिखारी द्वार पर आयल छे।।
उठो भोले नयन खोलो,
भिखारी द्वार पर आयल छे।।
भिखारी का दरवाजा एक कोड़ी पुकार,
काया दी देव चली जाय,
भिखारी द्वार पर आयल है।।[8]

भगवान शिव मंगल के देवता हैं। शिव का अर्थ ही मंगलकारी है। यद्यपि पौराणिक ग्रंथों में शिव को संहार के देवता के रूप में स्थान दिया गया है लेकिन लोकजीवन में उनकी प्रतिष्ठा देवाधिदेव महादेव के रूप में है। वे महादेव जो भोले भण्डारी हैं औघड़ दानी हैं, सभी भूलों को जरा-सी विनती करने पर क्षमा कर देते हैं और फल फूल, मेवा, मिष्ठानों की तो बात छोड़िये। समाज के लिए प्रायः त्याज्य माने जाने वाले आक, धतूरा, भाँग, घास-पात, राख-धुल जो कुछ भक्त के पास हो, श्रद्धा सहित चढ़ देने मात्र से प्रसन्न हो जाते हैं। देवाधिदेव महादेव से बड़ा और उनसे अधिक सरल देवता लोकमान्य में कोई दूसरा नहीं है। लोक-जीवन में देवी पार्वती और भगवान शिव की गाथाएँ बड़ी ही श्रद्धा और भक्ति के साथ गायी जाती हैं।

(8)

मंदिर का सामन मकान रे,
राम थारो दर्शन नी पाव।
दर्शन नी पाव मक् परसन नी हुआ,
अंजनी को पुत्र हनुमान रे।
राम थारो दर्शन नी पाव।।
पयलो पहन म्हारो दलन को आयो,
गाला म भूली भगवान रे,
राम थारो दर्शन नी पाव।।

दूसरो पहर म्हारो पाणी को आयो।
बेड़ा म भूली भगवान रे,
राम थारो दर्शन नी पांव।।
तीसरो पहन म्हारो रोटी को आयो,
रोटी म भूली भगवान रे,
राम थारो दर्शन नी पाव।।
चौथे पहन म्हारो जिमण को आयो,
खाणा म भूली भगवान रे,
राम थारो दर्शन नी पाव।[9]

अयोध्या के युवराज और शक्ति में रावण का मद-मर्दन करने वाले श्री राम प्रेम के अधीन होते ही अपने अस्तित्व को बिल्कुल भूल ही जाते हैं। शबरी की कुटिया में फूस के आसन पर बैठे श्रीराम उसके प्रेम में इतना भाव-विभोर हो जाते हैं कि वह अपने अराध्य को मीठे बेर देने की चाह में पहले बेरों को खुद चखती है और उसके मीठा होने पर श्रीराम को देती है। उधर राम हैं कि वे यह बिल्कुल ही भूल जाते हैं कि उन्हें झूठे बेर खिलने वाली शबरी जंगल की भीलनी है। वहां न तो राम अयोध्या के राजकुमार हैं और न शबरी भीलनी है। वहां हैं तो बस प्रेम आत्मीयता, समपर्ण, एकनिष्ठता, अन्यन्यता यादि कि भक्ति और भक्त वत्सलता।

(9)

ओ श्याम छोटो सो मंदिर बणाऊंग।
गुड़ का रद्दा देवाडुग,
ओ श्याम छोटी सो मंदिर बणाऊंगा।
माखन को गिलावो मेवाडुग,
वो श्याम छोटो सो मंदिर बणाऊंग।।
दूध को पातो फेराऊग,
ओ श्याम छोटो सो मंदिर बणाऊग।।
घी को दीपक लगाऊग,
ओ श्याम छोटो सो मंदिर बणाऊंगा।।[10]

निमाड़ में कृष्ण की भक्ति से संबंधित गीतों की प्रचुरता है। कृष्ण बड़े ही विचित्र चरित्र के हैं। वे कभी माँ का दूध पीते-पीते पूतना जैसी राक्षसी का वध कर देतें हैं। कभी ग्वालों के साथ खेलते-खेलते भयंकर कालिया-नाग को नाथ देते हैं। वे ग्वालों के साथ सखा हैं, गोवियों के रसिया हैं, हाथी जब दर्द में भयंकर रक्षा की गुहार करता है तो मगर से उसकी प्राण रक्षा करते हैं और मीरा जब विरह में व्याकुल होकर कान्हा-कान्हा कहती है, तो बँसी बजाते हुए मधुर-मधुर मुस्काते हुए आ विराजते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री पदमलालजी गोयल, खरगोन
2. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री पदमलालजी गोयल, खरगोन
3 प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री पदमलालजी गोयल, खरगोन
4. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री पदमलालजी गोयल, खरगोन
5. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री श्यामलालजी उपाध्याय, चन्दावड़
6. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती नर्मदाबाई, ग्राम-मोरगढ़ी
7. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती नर्मदाबाई, ग्राम-मोरगढ़ी
8. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी
9. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी
10. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्रीमती लता सोलंकी, बड़वानी

****

श्री हरीश निगम द्वारा मालवी कविता का स्वतंत्र मूल्यांकन

डॉ. शैफाली मलिक *

प्रस्तावना – स्वर्गीय श्री हरीश निगम जी ने मालवी भाषा के साहित्य को मंच से उभार कर उसे अक्षरों में परिवर्तित करने का सर्वोच्च कार्य किया है। आधुनिक मालवी कविता के इतिहास मे हरीश निगम एक मील के पत्थर माने जाते हैं। यह यथार्थ है कि हरीश निगम ने जो कुछ रचता है वह अद्धितीय है। मालवी के नवीन प्रयोगों के वह 'प्रथम कवि' हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में संवादमय अभिव्यक्ति दी है। उनके काव्य में अपने समय की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक परिवेश की झलक दिखती है।

आधुनिक मालवी कविता का आरंभ डॉ. चिन्तामणी उपाध्याय सुखराज रचित 'ललिता देवी का विवाह' और 'रूकमणी मंगल से' माना जाता है। इस काल के प्रमुख रचनाकार हरीश निगम, मदनमोहन व्यास, नरहरि पटेल, बाल कवि बैरागी, जगन्नाथ विश्व आदि ने अपनी मालवी रचनाओं से जन मानस के पटल पर गहरी छाप छोड़ी है।

हरीश निगम मालवी कविता के लगभग प्रारंभ से अद्यतन युग तक के कवि रहे हैं। मालवी लोक साहित्य की प्रत्येक विधा के परिवर्तन के उतार-चढ़ाव के निगम साक्षी है। निगम मूलत: कवि है परन्तु उनकी कलम गद्य पर भी पर्याप्त चली है। इनके गीतों में सामायिक जीवन जी झनकार सुनाई देती है। साथ ही शाश्वत आँसू के हास-भाव भी नजर आते हैं। श्री निगम बहुआयामी प्रतिभा से पूर्ण व्यक्ति थे। उनकी रचनाओं से हमें विभिन्न विषयों की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

हरीशजी के काव्य की प्रमुख भाषा मालवी है जिसका सशक्त प्रयोग उन्होंने अपनी रचनाओं में किया है। सीमित शब्दों में बहुत कुछ कहने की सामर्थ्य रखते थे जैसे –

'धरती ने चन्द्रमा पे पालकी उतारी
आँसुडा से आँख धोवे चाँदनी बिचारी।'

आजीवन पतझड़ को झेलने वाले हरीश निगम के जीवन का अधिकांश हिस्सा आर्थिक अभावों में ही गुजरा। आदमी और जिंदगी को एक-दूसरे के पूरक मानते हुए कहते हैं कि –

'कल्पना जगत में घूमकर देखा तो यह देखा
जिंदगी एक प्रष्न और मौत उसका जवाब है।'

जीवन को नदी के समान सतत प्रवाह बानने वाले कवि निगम अंतिम साँस तक जीवन में व्यस्त रहे। अपने जीवन के रचनात्मक दृष्टिकोण के साथ काव्य के प्रति भी अपना दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए काव्य की परिभाषा दी है – 'काव्य लोगों का, लोगों के लिए व लोगों की भाषा में लिखा गया, लोगों के ही सुख-दुख व भावनाओं का अक्स होता है जिसे वह साहित्य रूपी दर्पण में देखकर भावनात्मक रूप में उससे जुड़ता है।'
इसी दृष्टि को केन्द्र में रख कर हरीशजी ने लिखा है –

'केवल नाट्य ही कवि का कर्म होना चाहिए
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।'

वर्तमान माहौल को देखकर प्रतीत होता है कि कवि अपने उद्देश्य से भटक रहे हैं। निगमजी का मानना था कि कवि का काव्य काल्पनिक नहीं बल्कि वास्तविकता से संबंधित होना चाहिए। निगमजी का सम्पूर्ण साहित्य मानवीय चेतना का उद्गार है। उनके काव्य में कलम कसाई बनकर नहीं चली, बल्कि देश भक्ति, रीति-रिवाज, प्राचीन अमूल्य संस्कृति, गरीबी, गाँव की चहल कदमी आदि के दर्शन होते हैं।

'जिनकी चिंता म्हारो मनवो, सुबे शाम करतो थो
जिनका मन में भाव अनूठा, हिरदा से भरती थो।'

उनका मन में म्हारा वस्ते काली बदली छाई से

'बखत बावली आइ रे।'

हरीश निगम एक व्यक्तित्व नहीं है यद्यपि एक संस्था है। साथ ही लाखों-करोड़ों दिल्लों में बसने वाली भावनाओं के जादूगर है। उनकी कविताओं का जादू मालीपुरा से लेकर लाल-किले से होता हुआ नेपाल तक फैल चुका है उन्होंने लगभग 500 कविताएं लिखी हैं। जिसमें कुछ तो संग्रहित रूप से प्रकाषित एवं अप्रकाषित हैं।

'कुसुम-कुंज' में ये स्वर साधक, युगद्दष्टा श्रम, विकास-योजना और परिवर्तन के गीत गाते हैं –

'सागर बांध्यों, सरिता बांधो, खाल खोदरा बांधों रे
परवत तोड़ो हिम्मत जोडो टूटा मन के साधो रे।'

मालवी के गौरव को बढ़ाने के साथ ही राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत करने के लिए समुदाय को भावनात्मक गति प्रदान की है। 'हरियालो आंचल' के माध्यम से सम्पूर्ण मध्यप्रदेश की तीर्थ यात्रा करवा देते हैं –

'दिल्ली तो देखीली राणी म्हारा सांते चाल वो
भारत माता का हिरदा मे जड़यो रतन सो मालवो।'

मालवा की मनोहारी कविताएं अपना स्वतंत्र स्थान रखती है। उनकी काव्य-कृति, 'हरियाली-आंचल' को मालवा की 'प्रथम पर्यटन पुस्तक' मानी जा सकती है।

'हिरना-सांवली' काव्य संग्रह में हरीशजी के रचना वैभव एवं कवित कौषल का सफल रूप प्रस्तुत हुआ है।' मालवा का मौसम, त्यौहार, लोक परम्परा आदि संस्कारों से पली बड़ी हिरना सांवली विरह ताप में श्यामल हो जाती है और अपना नाम सार्थक करती है। प्रकृति का मानवीकरण उनकी रचनाओं में यत्र-तत्र दिखाई देता है –

'सूखा के सांतें लड़के भागीग्यो दूर उन्हालो
लीलो साफो पेरी के लो आइग्यो सुझर सियालो।'

निगमजी की कविताओं में ग्रामीण अंचल जन-जीवन के गीतों का भी समागम है।

* B-603, स्काई हाईटस, नवलखा स्क्वायर, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सच्ची कविता वही है जो वक्त के बंधनों में बंधकर भी उससे मुक्त होने की क्षमता रखती है। निगमजी मालवी के प्रतिनिधि कवि है उनकी कविताओं में समय बीतने के बाद भी उनका मर्म बचा हुआ है, उनकी प्रासंगिकता बढ़ती जा रही है।

'पेलां साहब मिसरा था, लम्बा चौड़ा थिसरा था।
सुबाव उनको जालम है, आपने कई नी मालम है।'

निगम ने 'अपरंच' की पातियां एंव कविताएं लोक सौन्दर्य शास्त्र के अनुरूप काव्य-रूढ़ियों के समर्थ उपयोगिता का साक्ष्य देती है।

90 का शतक आते-आते मालवी एवं उपबोलियों के गद्य और निबंधों में विभिन्न विषयों का समावेष हुआ। नईदुनिया के 'थोड़ी-धणी' स्तंभ में कवि हरीश निगम के व्यक्तित्व और कृतित्व पर अक्सर चर्चा हुई है। निगम ने कई रचनाओं का मालवी अनुवाद किया है जैसे -

1. 'स्वप्न वासव दत्ता' का 'सपना में रानी' नामक शीर्षक में
2. 'मृच्छकटिकम' का 'गारा की गाड़ी' में
3. 'रामचरितमानस' का 'लोकमानस राम' में।
4. राजा भर्तृहरि पर केन्द्रित नाटक का मालवी लोक शैली में।
5. प्रौढ़ शिक्षा पर लिखी गई चार पुस्तकों का मालवीय अनुवाद।

हरीश निगम एक कवि ही नहीं थे बल्कि एक संपादक भी थे उन्होंने भिन्न पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया - खिलते फूल, सांदीपनि, सांझी, संत समागम, कालिदास, पग-पग नीर आदि। साथ ही पूंजी, लोक साहित्य के आयाम, नानी की कहानी, लोकमानस राम, निर्गुणी लोक गीतों का संग्रह नामक पुस्तकों का भी संपादन किया है।

फिल्म डिविजन आफ इण्डिया ने निगम की रचना 'हरियालो आंचल' पर वृत्त चित्र 'मालवा' शीर्षक से 1963 में बनाया।

इस तरह अन्य कई क्षेत्रों में उन्होंने अपना परचम फहराया है। वह एक व्यक्ति नहीं बल्कि एक संस्था नजर आते है। उन्हें अनेकों सम्मान में नवाजा गया है। मालवी भाषा और उसके साहित्य में आपका विशिष्ट स्थान रखने वाले हरीश निगम सम्पूर्ण मालवा क्षेत्र के लिए प्रेरणादायक है। अपनी अथक साधना से उन्होंने मालवा को ही नहीं बल्कि भारत देश को भी गौरवान्वित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिरना सांवली - हरीश निगम, निकुंज प्रकाशन, उज्जैन, 1982।
2. हरियालो आंचल - हरीश निगम, निकुंज प्रकाशन, उज्जैन, 1961।
3. कुसुम कुंज - हरीश निगम, निकुंज प्रकाशन, उज्जैन, 1958।
4. अपरंच - हरीश निगम, मध्यप्रदेश लेकख संघ, 2002।
5. लोक संस्कृति के आयाम संपादक - हरीश निगम, कालीदास प्रकाशन, उज्जैन, 1982।

****

श्रावण माह में गाये जाने वाले निमाड़ी लोकगीत

डॉ. सीमा गाड़गे *

प्रस्तावना – प्रेम के उद्दीपन में प्रकृति का बड़ा की महत्वपूर्ण स्थान है। प्रकृति न सिर्फ उद्दीपन रूप में बल्कि आलम्बन के रूप में भी प्रेमी हृदयों को आन्दोलित करती है। अन्य विविधताओं की तरह भारतवर्ष ऋतुओं की विविधताओं का देश है। यहाँ प्रकृति प्रतिपल नवल श्रृँगार करती है। बदलते हुए वातावरण के साथ प्राकृतिक सौन्दर्य के उपादान बदलते रहते हैं। महाकवि वाल्मीकि से लेकर वर्तमान काव्य तक में भारत के प्राकृतिक परिवेश का बड़ा ही मोहक और मादक वर्णन मिलता है।

प्रकृति की गोद में पला लोकजीवन तो प्रकृति के प्रतिपल परिवतर्तित नूतन साज– श्रृँगार को न सिर्फ देखता है, महसूस करता है बल्कि उसके साथ हर–क्षण तादात्म्य ही रखता है। इसलिए लोक–गीतों में ऋतुओं के अनुसार उड़ते मनोभावों का ब़ा ही सुन्दर और सजीव वर्णन मिलता है।[1]

मानव और प्रकृति का घनिष्ठ सम्बन्ध उसके जन्म से है। मानव ने अपने जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में प्रकृति के महत्व को भलीभाँति पहचान लियार था। प्रकृति अनन्य भक्त हो गया और उसे विभिन्न रूप में पूजता आया है। विश्व के समस्त धर्मो में प्रकृति को ही ईश्वर रूप मानकर उसकी आराधना करने का विधान है।

निमाड़ में भी प्रकृति–पूजन की व्यवस्था है जिसे धार्मिक रूप दिया गया है। विभिन्न पर्वो, उत्सवों और धार्मिक कार्यक्रमों में में प्रकृति और उसके उपादानों को अत्याधिक महत्व दिया जाता है। महिलाएँ कृषि उत्पादन, विभिन्न पर्व, व्रत, उपवास इत्यादि के अवसरों पर प्रकृति के उपादान पशु– पक्षी, वृक्ष, नदी, तालाब आदि की पूजा करती हैं और तत्संबंधी लोकगीतों को गाती हैं। आम, जामुन, पीपल, बड़, नीम, नींबू, केला आदि के वृक्षों का धार्मिक कार्यो में विशेष महत्व है। इनकी पत्तियाँ, लकड़ी फल, फूल इत्यादि को विभिन्न धार्मिक कार्यो में समय–समय पर उपयोग में लिया जाता है। पुष्प प्रदान करने वाले पौधों में गुलाब, कमल, गेंदा, मोगरा, रजनीगंधा, चमेली आदि का भी पूजन की दृष्टि से बड़ा महत्व है। सूर्य, चंद्र, तारे, ग्रह, नक्षत्र, आकाश, पृथ्वी, नदी तालाब, कुआँ आदि को भी प्रकृति–पूजा में महत्व दिया गया है। इन प्रकृति–पर्यावरण के उपादानों के लोकगीत निमाड़ में मिलते हैं। जिन्हें स्त्री–पुरूष समान रूप से धार्मिक पर्व के समय महत्व देते हैं। स्त्रियाँ, होली, दीपावली, रक्षाबंधन, गणगौर, संजा, श्रावण माह के विभिन्न व्रत, उत्सव, संजा, श्रावण माह के विभिन्न व्रत, उत्सव, सोमवती अमावस्या कथा, यज्ञ, हवन इत्यादि के समय वृक्षों की परिक्रमा, पुष्प–पूत्ती का प्रयोग, यज्ञ अग्नि के लिए लकड़ी का प्रयोग करती हैं और तत्सम्बन्धी गीत गाती हैं।

सामाजिक उत्सवों यथा विविध संस्कारों जन्म, विवाह, नामकरण इत्यादि में भी पर्यावरण प्रकृति का महत्व है। इन अवसरों पर भी स्त्रियों द्वारा गाए जाने वाले लोकगीतों में प्रकृति का महत्व प्रकट होता है। यहाँ कतिपय निमाड़ लोकगीत बिना किसी भूमिका के प्रस्तुत हैं।

'ऋतु वर्णन' कवियों को सदैव प्रिय रहा है। हिन्दी भाषा के प्राचीन कवियों में एक भी ऐसा कवि नहीं हैं, जिसने ऋतु वर्णन के बिना अपना काव्य पूर्ण अनुभव किया हो। ऋतु संबंधी कुछ गीत निमाड़ी भाषा में भी हैं, जिनकी अज्ञात लोक कवियों ने बहुत ही सुन्दरता से काव्य रूप में रचना की है।

सावन के लोकगीत – सावन का महीना वर्षा ऋतु के चरम उत्कर्ष का महीना है। सावन में प्रकृति की छटा किसी नवोढ़ा मुग्धा नायिका से कम नहीं खिलती। घुमड़–घुमड़ कर आते काले कजरारे मेघ, सीरी सीरी पुरवइया झर–झर झरती फहारों से नहाये–धोये पेड़ पौधों के चिकने पात ओरों चारों ओर छाई हरियाली लगता है जैसे धरती के दिल का प्यार उमड़ पड़ रहा है। मिट्टी, पत्थर, पेड़–पौधे (निर्जीव–सजीव) सबके सब जैसे प्यार में सराबोर हैं। फिर मानव के प्रेम–पगे हृदय की तो बात की क्या है जो इतने संवेदनों के बाद शान्त रह सके।

बरखा बहार का पूरा–पूरा आनन्द लेने के लिए गोरियाँ अम्बुआ की डार पर रेशम का झूला डालती उस पर पटली लगाती है। झूले की रस्सी में और लम्बी रस्सा बाँधी जाती है जिससे दूसरी सखियाँ झूले को झूटे (आलोड़न) दे सकें। मतवारे छैल–छबीले नौजवान यूँ ही झूले पर चढ़ जाते हैं और लम्बी–लम्बी पींगे बढ़ाने लगते हैं।

बागों में कूकती कोयलिया की सुओं–सुओं और पपिहे की पीऊ–पीऊ की प्रेम–पुकार के मध्य झूले। हरियाली तीजे सावन मास का अनूठा पर्व हैं। आषाढ़ महीने में शुरू हुई बरखा की फुहारों से धरती का हरा भरा होना शुरू हो जाता है और हरियाली तीजे आते–आते समूची प्रकृति धानी चूनर ओढ़ लेती है। तीजों के दिन झूला–झूलने के लिए साज–श्रृंगार करके गाँव भर की लड़कियाँ बाग में इकट्ठी होती हैं।[2]

गोरी महीनो सावण का।
मनसूबा सब सहेलिन का,
झूला नाखूँ रे सयना।
पिया संग झूलूं मेरी जान।
साजनी तिसरी महिनी।
गोरी महिनो भादो ना।
पूर चढ़यो सब नादियन–मऽ।
म्हारा पिया की खबरा पूछूँ।
यह बैरन भई रस्ता–मऽ।
साजनी को चौथे महिना।
गौरी महिनो कुवांर ना।
धान पक्या सब जमिदन ना।
मोरी जान काल–घर कमंती।

* पूर्व सहायक प्राध्यापक, आर पी एल माहेश्वरी कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

सरद गई कलगी पाणी-मऽ।
चमक रही बिजली बादल मऽ।[3]

इस गीत में नायिका सावन तथा वर्षा के महिने में होने वाले कष्ट का वर्णन करती है तथा अपनी पीड़ा अपनी सखियों को बताती हैं।

सावन के मनभावन मास के आगमन होते ही गाँव-गाँव में वृक्षों की शाखाओं से झूले बाँध दिये जाते हैं और झूलों के झोंटे के साथ ही मधुर गीत गाये जाते है। कहीं कजली कहीं विरहा और कहीं नव दम्पति के स्नेह से पूर्ण गीत श्रोताओं के हृदय को आनन्दित कर देते हैं।

सावन में नव-वधू अपने मायके जाकर झूला झूलने का आनन्द लेती है अत: एक गीत में कोई बहन नीम के वृक्ष में निबौरी (फूल) को देखकर सावन के आगमन का अनुमान कर अपने पीहर जाकर भाइयों से मिलने के लिए उतावली हो जाती है। वह कहते है बड़े भैया! सावन का महीना आ गया, तुम्हेकं कैसे नींद आ रही है? तुम्हारी छोटी बहन अपनी ससुराल में झूर (सूख) रही है और तुम निश्चिन्त होकर सो रहे हो? इस पर भाई उत्तर देती है, 'बहन! मैं तुम्हें झूरने नहीं दूँगा। आकर माये ले आऊँगा।'[3]

लीम-मऽ लियो लई लागी, सरावण महीनो आयो जी।
मारा हो मीठा भाई, तुम-खऽ नींद कसी आवऽ जी।।1।।
थारी तो छोठी बहिण, सासरा मऽ झूर जी।
झूर ते-खऽ झुरवा देओ, हम नी झुरवा देवीजी।।2।।[4]

इस गीत में भाई और बहन का प्रेम कितना अकृत्रिम तथा स्वाभाविक है। एक अन्य गीत में भाइयों द्वारा अपनी बहन के लिए अनेक प्रान्तों से वस्त्र, आभूषण आदि सामग्री लाने का उल्लेख पाया जाता है।

सावन को महिनो पाणी बाबो कर जोर।
आरे घर का रे भितड़ा पड़ गया न घुसी गया चोर।
नही मिलयो चांदी न नही मिल्यों सोनो।
पितल को बड़ी गयो बड़ा रे भाव।
अरे कुम्हार घर का माटला कई फोटीमत जाजो।
आरे घर का भितड़ा पड़ी गया न घुसी गया चोर
साव ना मिल धाइकी न नई मिल धन्धों,
बालक न का पेट कसा भरा पानी बाबा,
सावण को महिनो पाणी बाबो कर जारे,
घर का रे भितड़ा पड़ी गया न घुसी गया चोर।[5]

इस गीत में जब सावन का महिना आता है तो पानी काफी जोरों से गिरता है जिसके कारण घर की मिट्टी की बनी सारी दीवारें टूट गई हैं। जिसके कारण घर में चोर घुस गये हैं लेकिन घर में चोरों को कुछ भी नहीं मिलता है। इस निमाड़ की गरीबी को भी दिखाया गया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोकगीत और भारतीय संस्कृति की झलक : लीलावती बंसत : पृष्ठ 219
2. लोकगीत और भारतीय संस्कृति की झलक : लीलावती बंसल : पृष्ठ 220
3. निमाड़ और उसका साहित्य : डॉ. कृष्णलाल हंस : पृष्ठ 422
4. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री रामेश्वरजी भालसे, ग्राम-वरूड़ टांडा (खरगोन)
5. प्रत्यक्ष भेंटवार्ता : श्री रामेश्वरजी भालसे, ग्राम-वरूड़ टांडा (खरगोन)

****

Inclusive Growth & Economic Change

Dr. Bhavana Nahar *

Abstract - Improving global growth prospects are likely to provide some impetus to the domestic growth. However, with an increasing wave of de-globalisation, it is not clear as to what extent exports from India and investment flows to India can be boosted by the brighter global growth outlook. The Government of India has focused on providing an increasingly investor-friendly policy environment, guided by the principles of facilitation, transparency and responsiveness. Improving global growth prospects are likely to provide some impetus to the domestic growth. This paper elaborates the need to build Inclusive India and emphasizes why it is imperative to focus on inclusive growth now. It also highlights some of the reasons why efforts to build an Inclusive India in the past have had only limited success and what can be done better in the future so that inclusive growth is realized.

Introduction - The Indian economy, which has over the last six decades passed through various phases of growth, is now all set to enter an altogether different orbit: one marked by a high rate of expansion, combined with 'inclusive growth.' Inclusive economic growth focus of current economic policies and planning. India registered a robust growth of 7.1 percent in 2016-17, despite the demonetisation high denomination currencies that is expected to bring about substantive medium to long-term economic benefits.

However, with an increasing wave of de-globalisation, it is not clear as to what extent exports from India and investment flows to India can be boosted by the brighter global growth outlook. Rapid and sustained poverty reduction requires inclusive growth that allows people to contribute to and benefit from economic growth. The inclusive growth approach takes a longer term perspective as the focus is on productive rather than on direct income redistribution, as a means of increasing incomes for excluded groups.

Need Of Inclusive Growth - Inclusive growth is necessary for sustainable development and equitable distribution of wealth and prosperity. Since independence, significant improvement in India's economic and social development made the nation to grow strongly in the 21stcentury .Improving global growth prospects are likely to provide some impetus to the domestic growth. However, with an increasing wave of de-globalisation, it is not clear as to what extent exports from India and investment flows to India can be boosted by the brighter global growth outlook. India is the 7th largest country by area. Yet, India is far away from the development of the neighborhood nation, i.e., China. The exclusion in terms of low agriculture growth, low quality employment growth, low human development, rural-urban divides, gender and socialite qualities, and regional disparities etc. are the problems for the nation. Reducing of poverty and other disparities and rising of economic growth are the key objectives of the nation through inclusive growth.Achievement of 9% of GDP growth for country as a whole is one of the boosting factor which gives the importance to the Inclusive growth in India.

Elements Of Inclusive Growth

1. Poverty Reduction
2. Employment generation and Increase in quantity & quality of employment.
3. Agriculture Development
4. Industrial Development
5. Social Sector Development
6. Reduction in regional disparities
7. Protecting the environment.
8. Equal distribution of income

Improved Macro-Economic Stability - During the last three years, macroeconomic stability in India improved in terms of the following:

1. The fiscal situation of India has become comfortable, with fiscal deficit as a ratio of GDP steadily declining from 4.5 per cent in 2013-14. Fiscal deficit of the Government of India as a ratio of GDP was 4.1 per cent in 2014-15, 3.9 per cent in 2015-16 and 3.5 per cent for 2016-17 (Revised Estimate). The fiscal deficit is budgeted to be 3.2 per cent of GDP in 2017-18.
2. The decisive steps taken by the government helped the economy to get out from inflationary spiral to relatively stable prices. Headline inflation based on Consumer Price Index (Combined) averaged 5.9 per cent and 4.9 per cent in 2014-15 and 2015-16 respectively as compared to 9.5 per cent in 2013-14. CPI inflation for 2016-17 (provisional) averaged 4.5 per-cent

Inclusive Growth In India - Inclusive growth is a major priority for the GoI, in particular improving the condition of the rural poor, and providing them access to basic

*Asst. Professor (Commerce) Shri Jain Diwakar College, Indore (M.P.) INDIA

infrastructure and employment. To this end, the GoI is undertaking a number of measures with the aim of bringing 100 million households out of poverty by 2019. For this, schemes are in place for building houses, improving road connectivity, providing access to digital services, and providing employment.

Industrial Zone - India is tenth in the world in factory output. Manufacturing sector in addition to mining, quarrying, electricity and gas together account for 27.6% of the GDP and employment 17% of the total workforce. In recent years, Indian cities have continued to liberalise, but excessive and burdensome business regulations remain a problem in some cities, like Kochi and Kolkata. It has since handled the change by squeezing costs, revamping management, focusing on designing new products and relying on low labour costs and technology.

Services - India is fifteenth in services output. Service industry employ English-speaking Indian workers on the supply side and on the demand side, has increased demand from foreign consumers interested in India's service exports or those looking to outsource their operations. India's IT industry, despite contributing significantly to its balance of payments, accounts for only about 1% of the total GDP or 1/50th of the total services.

Conclusion - India seems to be improving its economic growth. The growth rate of GSDP in the last few years has been 7 to 8% per annum. There is a need to have a broad based and inclusive growth to benefit all sections of the society. We have discussed challenges in most important elements of inclusive growth: agriculture, poverty and employment, social sector and, regional. There are strong social, economic and political reasons for achieving broader and inclusive growth. Socially, lack of inclusive growth leads to unrest among many people. Nonetheless, it should be possible to draw some general conclusions regarding the major sources of pro-poor growth.

References :-

1. Barro, R. 2000: "Inequality and Growth in a Panel of Countries." Journal of Economic Growth5
2. Commission on Growth and Development (2008) : Growth Report: Strategies for Sustained Growth and Inclusive Development , the World Bank.
3. Dev, S.Mahendra (2006), "Inclusive Growth in India: Performance, Issues and Challenges", First Dr. P.R. Dubashi Lecture,2006 , Gokhale Institute of Politics and Economics, November 29, 2007
4. Mehta, A., Shepherd, A., Bide, S., Shah, A. and Kumar, A. (2011) India Chronic Poverty Report: Towards solutions and new compacts in a dynamic context. New Delhi: Indian Institute of Public Administration/CPRC.
5. Loayza, N. and Raddatz, C. (2010) 'The composition of growth matters for poverty reduction', Journal of Development Economics 93: 137-151.
6. Nayyar, Deepak (2006), " Economic growth in Independent India: Lumbering Elephant or Running Tiger?, Economic and Political Weeky, April 15, 2006
7. Panda, M. (2013), "Macroeconomic Overview: The Growth Story", in Dev, S. Mahendra (ed.2013), India Development Report 2012-13, Oxford University Press, New Delhi
8. Panagariya, Arvind (2004): 'Growth and Reforms during 1980s and 1990s', Economic and Political Weekly, Vol 39, No 25, pp 2581-94.

****

Impact Of Organized Retailers On Unorganized Retailers - A Study

Milind Bapna * **Dr. Deepa Joshi** **

Abstract - In this era of Retailing, service sector is playing an incredible role in global business especially Indian retail, it is occupying central position. In this retail boom, employment opportunities has abnormally increased and globalization, localization and retailing prospects are rising. Because of this, organized retailers opened their malls in towns and villages. For research purpose the city of Indore was selected as it covers both organized and unorganized retail. The research intention is to know the impact of organized retailers on unorganized retailers. For this study, a questionnaire is prepared and adopted simple random sampling method, the sample size is 200. The frequency and cross tabs statistical tool is used for analysis. The major finding is that there is a significant impact of organized retailers on unorganized retailers. The major recommendation is that Government should protect small shops and developed backend infrastructure for unorganized retailers. All stake holders give safety net to these kinds of shops
Keywords: Retailing, Organized retailers, unorganized retailers.

Introduction - Now Retailing has created an urban sprawl and a rootless middle- class, conversely globalization hails also uprooted rural communities on its extending margins, coaxing them into petty and large service traders. Retailing has warmed its way into the cities not just through malls and coffee cafes or multiplexes. Due to changes in global matrix of economy, retailing is at its boom, dazzling malls setup and markets adopted this colorful business. Due to retail market job creation is very huge in many parts of the world particularly in India. In break-neck competition retail system is the most important factor for job statistics. India is now becoming a hub for service industry and manufacturing setups and also Government is giving top priority to this sector for employment. India is entering into rectangle and triangle relations, new trade areas and global business leaders eyeing on Indian market especially in retail sector. According to Mr Thomas Verghees, chairman CII'S, the Indian retail sector is estimated to be worth about $ 500 billion. In Indian market, organized retailers are spreading and occupied central position in economy. Organized retailers has opened new era, now capitalism, socialism and communalism are disappeared and liberalization, privatization, globalization, finanicalization, culturalization and localization are rising and creating good romance in retailing sector. Researchers says the Indian retail market is estimated to grow from the current US $330 billion to US$ 427 billion by 2010 and US$ 627 billion by 2015. It will contribute 10 per cent over GDP and it is the largest sector for employment after agriculture. Retail market is very frenzy and niche.

Importance of R's (Retail) - In India before 2004, moms and pops struggled for Rs 4,000 a month, now mom is at home and enjoying LED and pop is ready to travel more than three hours for shopping and son is a driving ADI car and making commission more than 5 lakhs in a month. This is the power of retailing sector. R is creating wonders, opened new ways, new bedrocks dazzling markets and breakthrough innovation. Retail philosophy is Right-product, Right-person, Right-place, Right-time, Right-price and Right-service. Retailers are providing array products and services in changed scenario. The major function of the retail is low price and high value and enjoyment.

What is retail, the sales of goods and services in small quantities directly to the consumers. Who are retailers, a company or an organization that purchases products from individuals or companies with the intent to resell those goods and services to the ultimate or final consumer. Retailers are at the end of the supply chain.

Classification of retailing :

1. Departmental stores
2. Shopping malls
3. Hyper markets
4. Super markets
5. Franchise
6. Retail chains.

Share of organized and unorganized retailer in Indian market - The Indian retail industry is divide into two one is organized and second one is unorganized. Organized retailers means those who are licensed and registered for commercial tax and income tax and unorganized retailers

* ILVA Commerce & Science College, Indore (M.P.) INDIA
** Shri Vaishnav Institute of Management, Indore (M.P.) INDIA

means traditional formats for example mom and pop shops, small grocery shops, general stores etc. In 2004 organized retail is 3 percent, unorganized retail is 91 per cent. In 2010 organized retail is 9 per cent and unorganized retail is 91 per cent. Organized retail sector mainly covers grocery, apparels and ready to eat food. Impact of scratch card generation, organized retail sector percentage is increasing i.e. 9 per cent.

Change the paradigms of retailing in India due to entry of organized malls. Indian unorganized retail system has rich history. India has been called nation of shopkeepers, it is open secret and known to everyone at the world level. Huge number of retailers, which totaled over 12 million players and nearly 90 per cent, is small family business. It is unorganized, un-networked and individually very small. Shops have 500 sq ft or less and limited stock. The small shops offered 50-100 items. The unorganized retail arena is very different and opportunities and services are incredible. This business is not new for us, it is in our blood in terms of shop and shopkeepers.

All over India organized retailers outlets are spreading like anything in metros, mini metros, urban, semi urban, rural and even in remotest and unbanked villages also. So unorganized retail outlook is dire and unorganized retailers are on the edge of crisis. Organized retailers are riding on unorganized retailers in un ethical way. Basically unorganized retail business is family based. Hyper markets, super markets, convenience stores, specialty stores bombard the consumers mind and consumers are in enigma stage. At the same time unorganized retailers are in confusion and they don't know what to do.

Objectives of the Study :

1. To study the awareness of organized retailers among unorganized retailers.
2. To analyze the advantageous and disadvantageous of organized retailing sector.
3. To know the interest of unorganized retailers about on organized retailers.
4. To offer suggestions to improve the unorganized retailers.

Hypothesis - There is awareness among the unorganized retailers about organized retailers. There is
a significant influence on unorganized retailers.

Methodology - This study is descriptive and analytical. Both primary data and secondary data used in this study. Primary data collected from the unorganized retailers (Kirana, pan, beedi, vegetable vendors and fruit vendors). Own administered questionnaire was prepared and issued to unorganized retailers for the purpose of collecting primary data. With the help of SPSS (Statistical Package for Social Sciences) analyze the data.

Sampling Design - The present study covers the unorganized retailers in Indore. The researcher adopted simple random sampling method for selecting the sample 200 for study. For the analysis purpose, I used frequency and bar charts statistical tools.

Analysis and Interpretation
Frequency Analysis:
Frequency Tables

Table 1

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid Yes	182	91.0	91.0	91.0
No	18	9.0	9.0	9.0
Total	200	100.0	100.0	

Source: Primary Data

Table 1 shows 182 unorganized retailers have awareness out of 200 and 91.0 per cent have awareness on organized retails.

Table 2

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid Yes	182	91.0	91.0	91.0
No	18	9.0	9.0	9.0
Total	200	100.0	100.0	

Table 2 shows 182 unorganized retailers have well known about big organized retailers out of 200 and 91.0 per cent well known about big retailers.

Table 3

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid Yes	123	61.5	61.5	61.5
No	77	38.5	38.5	100
Total	2000	100.0	100.0	

Source: Primary Data

Table 3 shows 123 unorganized retailer noticed advantages of organized retailers and 61.5 per cent have noticed regarding advantageous of organized retailers.

Table 4

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid Yes	185	92.5	92.5	92.5
No	15	7.5	7.5	100
Total	200	100.0	100.0	

Source: Primary data

Table 4 Shows 185 unorganized retailers noticed disadvantageous of organized retailers and 92.5 per cent noticed disadvantageous of organized retailers.

Table 5

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid Yes	25	12.5	12.5	12.5
No	175	87.5	87.5	100
Total	200	100.0	100.0	

Source: Primary Data

Table 5 shows 175 unorganized retailers do not want welcome the organized retailers and 87.5 per cent opposed the organized retailers

Table 6

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid Yes	25	12.5	12.5	12.5
No	175	87.5	87.5	100
Total	200	100.0	100.0	

Source: Primary Data

Table 6 shows 175 unorganized retailers do not want joined n the hands of organized retailers and 87.5 per cent opposed the organized retailers.

Respondents are well awareness about the retailing sector, organized retailers and their marketing practices. Hence, the research study hypothesis is correct.

Implication of the Study - This research can be useful for unorganized retailers. This research will help various unorganized retailers for their business position and to strengthen unorganized retailers.

Suggestions - "Retailers need to target customer with the right deal at the right time".

1. A comprehensive strategy is needed to enhance unorganized retailers.
2. Government should facilitate without disturbing the existing unorganized retailing and small retailers.
3. Big retail malls created newer type of retail i.e. Neighborhood markets so need to control them.
4. Small and unorganized retailers unable to understand government polices so government should educate and create awareness among the unorganized retailers.
5. Retailers should focus on Affinity. It is very important in globalized market and also focus on local culture and local customer and understands their need.
6. To develop back-end infrastructure
7. The emerging exploitative unorganized retailer's community in India should aware of organized retailers.
8. Need to build value chain.
9. To adopt ITK (Indigenous Technical Knowledge)
10. Younger generation should understand implications of Government policies and organized retailer's practices.
11. To formulate unorganized retailers centric policies.
12. Many traditional retailers not adopt new marketing strategies and tools. Should pay attention on them.

Conclusion - Retailing sector is a Niche market. In emerging economic, unorganized retailers are the worst strugglers and facing different conflicts ,governments should boost up the unorganized retailers. Unorganized retailers are also major contributors to the economy so government should take care of both category of retailers. the development of organized retail and unorganized retail is the necessity for India. Growth rate is also an important factor to considerl. This growth is jobless and it is not inclusive growth. and no impact of Aamm Admi. Need re-look on unorganized retailers. In India, very shortly may be raised "occupy organized retail" like OWS (occupy Wall Street), we are 99, you are 1, we are going to be replaced this with the slogan of we are 91 and you are 9. Already signals are sending some of the state governments and some of the political parties now we want to protect the small and tiny shops.

References :-

Text Books:

1. Arun Kumar, N Meenakshi., 2002, Marketing Management, Vikas publishing House, New Delhi.
2. James R. Ogden Denise T. Ogden, Integrated Retail Management Indian Adaption, Published by Biztantra, New Delhi.
3. R.P.C.S. Rajaram., Consumer Protection and globalization, Volume No 1 issue 1 January 2010, SNMS Publishing House, Chennai.
4. Tapan K Pandan., 2007, Marketing management text and Cases, Excel Books, New Delhi.
5. Tapan K Pandan., 2007, marketing in the new global order, Excels book, New Delhi.
6. Kotler, Armostrong, 2005, Principals of Marketing Management, Person Education,New Delhi.
7. VS Ramaswamy, S Namakumari, Marketing Management , Macmillan India ltd, New Delhi.

Journals:

1. Marketing Master Mind June 2010
2. International journal of Marketing and Trade Policy, January 2010.
3. International journal of Marketing, January 2009 and May 2010.
4. Economic Political weekly August-September 2010.

Web references:

1. www.the.inforshop.com
2. www. ijrc.org.in.
3. www. thehindubusinessline.comtodays-paper/tp-marketing.
4. www.organised agri-food retailing in India, January 2011, NABARD, Mumbai, India,

FrequenciesStatistics

	Do YouHave Awareness on Organized Retailers	Do YouKnow TheBig Organized Retailers	Do YouKnow TheAdvanta-ges ofOrgan-ized Retailers	Do YouKnow TheDisadva-ntages Of Organized Retailers	Do YouWelcome TheOrganized RetailSector	Do YouWant Joinin the Hands Of Organized Retail Sector
N Valid	200	200	200	200	200	200
Missing	0	0	0	0	0	0

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

सरदार सरोवर परियोजना और जन आंदोलन

डॉ. प्रीतिबाला राठौर *

प्रस्तावना – आधुनिक भारत के निर्माण में अधोसंरचना विकास एक महत्वपूर्ण आयाम है साथ ही उतना ही महत्वपूर्ण आयाम वैचारिक आधुनिकीकरण भी है जिसकी फलश्रुति जन आंदोलनों के माध्यम से व्यक्त होती है। दोनों ही पक्ष संतुलित समांतर होकर भारत के विकास के दिशानिर्धारक होते हैं। बड़े बांध इस चर्चा की केंद्रीय विषयवस्तु होकर आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। बांधों को आधुनिक भारत की नींव ठीक ही कहा गया है।

प्राकृतिक संसाधनों के अधिकाधिक नियंत्रित और संतुलित उपयोग, जिसमें 'जल वितरण' और 'ऊर्जा उत्पादन' जैसे पहलू प्रमुख रहे, को लेकर नर्मदा बेसिन में योजना की शुरुआत 1946 में ही हो चुकी थी। प्रारंभिक अन्वेषण के उपरांत 5 अप्रैल 1961 में ही इसकी नींव प्रथम प्रधानमंत्री **स्व. श्री पंडित जवाहरलाल नेहरू** द्वारा रखी गयी। वर्तमान में लोकतंत्र के बहुआयामी प्रसार ने हर बात के मूल्यांकन आकलन की कसौटी जनता को अधिकाधिक हस्तांतरित की है। यही वजह रही कि सरदार सरोवर जैसी सकारात्मक, जन हितैषी परियोजनाओं को भी बार-बार लोकतांत्रिक अधिकारों की आड़ में विरोध कर बाधित किया गया। इस अध्ययन में सरदार सरोवर परियोजना और जन आंदोलन से उपजे संघर्ष और मतभेदों के विभिन्न पक्षों की अंतर्क्रिया को विश्लेषित किया गया है।

परियोजना विरोध के कारण – सरदार सरोवर परियोजना प्रारम्भ से ही विवादास्पद रही। वर्ष 1961 में शिलान्यास के साथ ही विवादों का भी प्रादुर्भाव हुआ। प्रारम्भ में बॉध की ऊँचाई 162 फीट थी। जिसे बढ़ाकर 500 फीट करने का प्रस्ताव लाया गया जिससे साझी राज्यों के बीच मतभेद उत्पन्न हुए। मध्यप्रदेश बांध की इतनी अधिक ऊँचाई से सहमत नहीं था। मतभेदों ने इतना तुल पकड़ा कि केन्द्र सरकार को मध्यस्तता करनी पड़ी और उसने अन्तर्राज्यीय नदी जल विवाद अधिनियम 1956 के अन्तर्गत न्यायाधिकरण (NWDT) का गठन किया। इस न्यायाधिकरण ने अपने अवार्ड में बांध की ऊँचाई 455 फीट निर्धारित की। बांध की ऊँचाई को लेकर राज्यों के बीच मतभेद 1993-94 तक बने रहे।

वास्तव में विवाद ऊँचाई के अतिरिक्त अन्य विभिन्न कारणों यथा-वृहद् मात्रा में विस्थापन, अनुचित पुनर्वास, पर्यावरणीय हानि, कृषि भूमि की डूब, भ्रष्टाचार आदि को आधार रख कर 80 के दशक से ही सामने आने लगे थे। वर्ष 1987 में निर्माण कार्य प्रारम्भ होते ही विवादों ने विरोध का रुप ले लिया। इन विरोधो ने 1987 में एक आंदोलन खडा कर दिया। जिसे '**नर्मदा बचाओ आंदोलन**' के नाम से जाना जाता हैं।

अध्ययन में निम्नलिखित कारण सामने आते हैं। जिनकी वजह से परियोजना का विरोध किया जा रहा हैं:-

1. परियोजना के विरोध का सबसे मुख्य कारण डूब प्रभावितों का पुनर्वास उचित प्रकार से नहीं किया जा रहा। बांध विरोधियों का तो यहां तक मानना है, कि प्रभावितों का पुनर्वास असंभव हैं। उनके अनुसार पुनर्वास, पुनर्वास नीति के अनुसार नहीं किया जा रहा हैं। पुनर्वास स्थलों पर आवश्यक सुविधाओं की कमीं हैं। पुनर्वास स्थल विकसित न होने के कारण प्रभावित, पुनर्वास स्थलों पर नहीं जाते। जो प्रभावित पुनर्वास स्थलों पर रह रहे हैं। उन्हें भी महत्वपूर्ण सुविधाएँ उपलब्ध नहीं करवाई जा रही। पुनर्वास स्थलों पर विद्युत, जल, विद्यालय, दैनिक प्रयोग की आवश्यक वस्तुएँ तक उपलब्ध नहीं करवायी गई हैं। अनेक डूब प्रभावितों को उनके मूल गांव से कई किलोमीटर दुर पुनर्वास स्थल वितरित किया हैं तो कई विस्थापितों को कृषि भूमि पुनर्वास स्थल से इतनी दुर प्रदान की गई हैं, कि वे कृषि कार्य इस स्थान पर रह कर नहीं कर सकते। इस प्रकार कई मुलभूत आवश्यकताओं की कमियों की वजह से आंदोलन को और बढ़ावा मिला।
2. बांध निर्माण के विरोध का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण कारण पर्यावरणीय विनाश हैं। परियोजना की डूब में हजारों हेक्टेयर वन भूमि व उपजाऊ कृषि भूमि हैं। हजारों हेक्टेयर वन भूमि डूब जाने से इन वनों पर आश्रित वन्य जीवों व आदिवासी जन जातियों का विनाश हुआ हैं। करोडों रुपए मूल्य की लकड़ी व ओषधियॉ जलमग्न हो जायेगी। वनों के जल मग्न हो जाने से परिस्थितिकी में बदलाव स्वभाविक हैं। परियोजना का लगभग 90% जल ग्रहण क्षेत्र मध्यप्रदेश हैं जिस पर विकास कार्य नहीं किए गए। वनों के कटने व जल संग्रहण क्षेत्र के विकसित न होने से मिट्टी का कटाव अधिक होगा जिससे नदी में गाद भराव की मात्रा बढ़ जाएगी जो बांध के जीवनकाल जलाशय में जल की मात्रा दोनों को प्रभावित करेगी। अधिक गाद भराव से बांध की संरचना की सुरक्षा पर ही सवाल खडा होता है। वहीं जलाशय में जल की मात्रा से कमी आ जायेगी जिससे परियोजना के लाभों को प्राप्त करने का तो सवाल ही नहीं उत्पन्न होता।

इसके अतिरिक्त नदी के किनारों पर किए जाने वाले मछली पालन पर भी बुरा प्रभाव पडेगा। कई दुर्लभ प्रजाति की मछलियॉ की तो अभी ही विलुप्त हो चुकी हैं। गाद भराव के कारण किनारों पर मछली पकडना मुश्किल हो गया हैं। जिसका बुरा प्रभाव मछुवारों की आजीविका पर भी पडा है। परियोजना का निर्माण भूकंप की दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्र में किया गया हैं। नर्मदा घाटी में निर्मित विशालकाय बांधों की श्रृंखला भूकम्पों को बढावा देगी। इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है, कि यदि भूकम्प के कारण बांध की दीवार में रिसाव हो या दीवार ढह

* 6 बी. एन. रांझी जबलपुर (म.प्र.) भारत

जाए तो कितनी जान व माल की हानि संभावित हैं। परियोजना से होने वाली पर्यावरणीय क्षति की क्षतिपूर्ति कभी संभव नहीं हैं।

3. परियोजना के विरोध का कारण परियोजना के डिजाइन को लेकर भी हैं। अलोचकों का मानना हैं कि परियोजना का प्रारंभिक विश्लेषण ही गलत हैं। सन् 1979 में जारी न्यायाधिकरण का निर्णय अधुरे अध्ययनों पर आधारित हैं। न्यायाधिकरण द्वारा नर्मदा नदी में उपलब्ध जल की मात्रा का गलत अनुमान लगाया गया हैं। न्यायाधिकरण की गणना के अनुसार 75% निर्भरता पर उपलब्ध जल की मात्रा 28 मि. ए. फी. रहेगी जबकि एन. बी ए. का मानना हैं कि नर्मदा जल की उपलब्ध मात्रा 23 मि. ए. फी. ही रहेगी। इस प्रकार यदि आवश्यक जल की पूर्ति ही बांध के लिए न हो पाए तो बांध से होने वाले लाभ की मात्र कल्पना ही की जा सकती हैं।
4. परियोजना के लाभों को बहुत बढा-चढ़ाकर दर्शाया गया हैं। जिन लाभों का सरकार अनुमान लगा रही हैं वास्तव में वे लाभ कभी होंगे ही नहीं। पीने का पानी कभी सुखाग्रस्त इलाकों तक पहुँच ही नहीं पाएगा। सिचाई लाभ मात्र कोरी कल्पना साबित होंगे। एसा इसलिए क्योंकि नर्मदा नदी में उपलब्ध जल की मात्रा कभी उस अनुमानित जल को प्राप्त ही नहीं करेगी जिसका अनुमान परियोजना के लिए लगाया गया हैं।
5. बांध के विरोध का एक अन्य मुख्य कारण आर्थिक पहलू को लेकर रहा है। आलोचकों का मनना हैं कि परियोजना आर्थिक रुप से लाभदायक नही हैं। परियोजना की लागत में पर्यावरणीय, स्वास्थ संबंधित, जलग्रहण क्षेत्र का विकास आदि की लागतों को शामिल नहीं किया गया। यदि इन्हें भी लागत में जोड़ दिया जाए तो परियोजना का आर्थिक दिवालियापन साफ नजर आता हैं।
6. डूब व पुनर्वास की संपूर्ण प्रक्रिया काफी लम्बी व जटिल हैं। सम्पूर्ण प्रक्रिया के पूर्ण होने में लम्बा समय लग जाना हैं व कागजी कार्य प्रक्रिया को और बोझिल बना देता हैं।
7. प्रभावितों व सरकार के बीच सम्प्रेषण की कमीं हैं। विस्थापित अपने लिए बनाई गयी नीतियों, योजनाओं व सुविधाओं की जानकारी ही नहीं रखते।
8. परियोजना का राजनीतिकरण किया जा रहा हैं।
9. पुनर्वास व मुआवजा भूगतान में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर हैं। प्रभावितों का कम शिक्षित होना या अशिक्षित होना भ्रष्टाचार का मूल कारण रहा। मध्यस्थो ने भ्रष्टाचार को बढाने का कार्य किया।
10. भू-जल स्तर में वृद्धि के अनुमान सत्य नहीं हैं।
11. परियोजना का लाभ सक्षम लोगों को ही होगा। गरीब, अशिक्षित व पिछडी जाति के लोगों को सर्वाधिक हानि होगी। उनका जीवन-स्तर निम्न हो जाएगा।
12. संपूर्ण नर्मदा घाटी अपने आप में समृद्ध इतिहास समाहित किए हुए हैं। इन पुरावशेषों के अतिरिक्त प्रचीन एतिहासिक इमारतें, छत्रियॉं, मंदिर, मस्जिद व घाट डूब में हैं जिनसे लोगों की आस्थाऍं जुडी हैं। आस्था के ये केन्द्र मिट्टी व पत्थर का निर्माण मात्र नहीं हैं यहॉं के रहवासियों के जीवन का अन्ग हैं। पुरातत्व महत्व के इन अवशेषों का जलमग्न हो जाना एक समृद्धशाली इतिहास को समाप्त कर देगा।
13. सरदार सरोवर परियोजना से '**वृहद मात्रा में विस्थापन**' के कारण सर्वाधिक विरोध हुआ। परियोजना की डूब से तीन राज्यों के लाखों सामान्य जन प्रभावित होंगे। परियोजना से सर्वाधिक आबादी मध्यप्रदेश की प्रभावित होगी। पूर्ण जलाशय स्तर पर प्रदेश के लगभग 40000 परिवार प्रभावित होंगे। उनके कृषि भूमि, जमीन, घर, रोजगार सब छिन जायेगा।

निदान – जन आंदोलन से उपजे मतभेदों और विरोध के निराकरण के लिये निम्नलिखित उपाय किये जाने कमोबेश सार्थक होगा।

1. स्कूली शिक्षा में ही बांधों के महत्व को स्थापित किया जाए।
2. सकारात्मक पहलुओं का अधिकाधिक प्रचार प्रसार हो।
3. दो या अधिक राज्यों के बीच के राजनैतिक वैषम्य या विरोध को इस बीच नहीं लाया जाए।
4. लाभों के वितरण का तंत्र निष्पक्ष हो।
5. लाभ वितरण पारदर्शी और समतामूलक ढंग से किया जाए।
6. आंदोलनकर्ताओं की वाजिब मांगों के जनता के समक्ष ही निराकरण के प्रयास हों यह प्रयास गुटबन्दी के शिकार न हों।
7. नवाजिब मांगों को जनता के ही जागरूक तबके के माध्यम से खारिज किया जाए।
8. भूमि का मुआवजा एक मुश्त देने के बजाय उसे स्थाई निधियों से प्रस्थापित किया जाए या रोजगार देकर उन्नत किया जाए।
9. लाभ निर्धारण और वितरण का तंत्र लोक संवेदी हो तथा उसके सलाहकार मंडल में लाभ ग्राहियों के पक्षकार भी शामिल हों।

लाभ/उपयोगिता – तीन राज्यों की 21.285 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई उपलब्ध करवा कर SSP की सार्थकता सिद्ध होती है। इसके अतिरिक्त लगभग 10000 गावो 150 शहरों को पेयजल उपलब्ध कराना, 1450 MW विद्युत उत्पादन, 1600 करोड़ का अतिरिक्त वार्षिक कृषि उत्पादन, सामाजिक- आर्थिक लाभ, लगभग 400 करोड़ के लगभग पेयजल उपलब्धता, अतिवृष्टि जैसी विषम परिस्थितियों में वर्तमान में लगभग 30000 हेक्टेयर क्षेत्र में सफल रूप से बाढ़ नियंत्रण, वन्य जीवन संरक्षण, मत्स्यपालन, मनोरंजन, जल, कृषि व औद्योगिक विकास, कंजर्व फारेस्ट का संरक्षण इत्यादि ऐसे बहुमूल्य पहलू हैं जिसके चलते SSP के लाभ का आकलन केवल आर्थिक आधार पर नहीं किया जा सकता है। PIM (participatory irrigation management) एक अभिनव लक्षण है जिसने लाभ के वितरण को सामुदायिक भावना से जोड़कर लाभ के आकलन के मापदंडों को ही बदल दिया।

निष्कर्ष – बड़े बांधों ने स्वतंत्रता के उपरांत विकास को गति के नए आयाम दिए। 30 बांधो की श्रृंखला की सरदार सरोवर परियोजना इसकी एक महत्वपूर्ण कड़ी है। जन आन्दोलन के कारण ही अपने प्रारम्भ में सन 1961 से 17-09-2017 में लोकार्पण तक इसकी लागत का आकलन रुपये में करना कठिन है। केवल आर्थिक लागत ही लगभग 10000% से ज्यादा बढ़ी। जनता और शासन के समय व संसाधनों की बर्बादी, जनांदोलनों का विकृत होता रूप, नई परियोजनाओं की संकल्पना के उत्साह में कमीं, राजनीतिक स्वेच्छाचारिता, जनहानि इत्यादि जैसी कई अप्रत्यक्ष किन्तु आधारभूत हानियां भी साथ ही होती रहीं।

सरदार सरोवर परियोजना को अपने आरंभ से ही विरोधों का सामना करना पड़ा। जन आंदोलनों के 80 के दशक में शुरू होने के बहुत पहले ही मध्य प्रदेश और गुजरात के मध्य विभिन्न लाभों में अंशधारिता को लेकर विवाद रहें। यह विवाद कभी राजनैतिक, कभी क्षेत्रीय कभी जातीय मतभेदों को आधार बनाकर चलें। मतभेदों के निपटारे के लिए 1964 में बने खोसला

आयोग के निष्कर्षों पर भी जब सहमति नहीं बनी तब केंद्र सरकार ने 1969 में NWDT (Narmda Water Dispute Tribunal) गठित किया। वृहत बांध परियोजनाओं में तमाम पहलू जुड़े होने से कुछ न कुछ विरोध होना स्वाभाविक भी है। भौगोलिक, आर्थिक, पारिस्थितिकीय, पर्यावरणीय, के साथ साथ परंपरागत, सामाजिक, सांस्कृतिक पक्ष भी जन आंदोलनों को प्रेरित करते हैं। अधिकांश जन आंदोलनों के पीछे पारिस्थितिकीय पर्यावरणीय कारण होते हुए भी जब इन आधारों पर आंदोलनों को अधिक समर्थन नहीं मिला तब इनके नेतृत्वकर्ताओं ने आंदोलन को आक्रामक बनाने, अधिक समर्थन जुटाने के लिए कई मर्तबा उक्त वैज्ञानिक वजहों के स्थान पर जातीय, सांस्कृतिक, रूढ़िगत कारणों को केंद्र में ला खड़ा किया। अंधविश्वास का प्रचार, लोक भावना को अपने पक्ष में उद्वेलित करने के लिए किया गया। वस्तुत: यही वे कारण होते हैं जिनका दशकों तक सर्वस्वीकार्य समाधान नहीं निकल पाता और इस पूरे प्रक्रम में परियोजना की लागत अतार्किक रूप से बढ़ जाती है जो आंदोलनकर्ताओं के पक्ष में परियोजना की अप्रासंगिकता के सशक्त तर्क को स्थापित करती है। यही वजह रही कि विश्व बैंक भी शुरुआत में फंडिंग के बाद 1994 में इससे पीछे हट गई। इस संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि लंबे समय तक अनसुलझे रहे राजनीतिक क्षेत्रीय मतभेदों ने किसी न किसी स्तर पर जन आंदोलनों को प्रोत्साहित किया हो।

जो विभिन्न पक्ष इससे प्रभावित होते हैं उनके अपने कारण, अपनी अपनी मांगे, प्रतिक्रियाएं, समाधान होते हैं। इन सब पर सहमति न बन पाना ही विरोध का मूल कारण होता है। यह भी स्थापित तथ्य है, कि सबका समाधान संतुष्टिपूर्ण ढंग से नहीं किया जा सकता फिर भी एक सामान्य न्यूनतम स्तर तक सभी विरोधों को सुना जाकर उनका विश्लेषण जनहित के मापदंड पर किया जाना श्रेयस्कर होता है। आंदोलनों का विरोध जब तक वैज्ञानिक और आर्थिक आधारों पर न होकर विचारधारा और राजनीतिक हितबद्धता के आधार पर किया जाता रहेगा तब तक यही स्थिति रहनी है। इनके समाधान आर्थिक कम विचारधारात्मक अधिक हैं। इसी दिशा में किये गए प्रयास सार्थक होंगे।

References :-

1. Supreme Court Decision 2000 Naramada Bachao Andolan, Barwani
2. Supreme Court Decision 2005 Naramada Bachao Andolan, Barwani
3. NBA V/S UOINaramada Bachao Andolan, Barwani
4. SSP: No Canceling Tomorrow CA critique of the Report of the Independent Review Mission Sardar Sarovar Naramada Nigam Limited Gandhi Nagar Gujarat

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

सरदार सरोवर परियोजना के पर्यावरणीय प्रभाव का अध्ययन

डॉ. प्रीतिबाला राठौर *

प्रस्तावना – भारत की पांचवी सबसे बड़ी नदी 'नर्मदा' मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात राज्यों में 1312 किलोमीटर का सफर तय कर खम्बात की खाड़ी में गिरती है। इसका 87% भाग मध्यप्रदेश में है जिस कारण यह मध्यप्रदेश की जीवन रेखा है। नदी का वार्षिक जल बहाव लगभग 40700 मिलियन क्यूबिक मीटर है किन्तु इसका 5% ही प्रयोग हो पाता है शेष 95% भाग बिना किसी उत्पादक कार्य में प्रयुक्त हुए बह जाता है। इसी बात को केंद्रित कर इस परियोजना की परिकल्पना की गई जिससे व्यर्थ ही बह जाने वाली इतनी व्यापक जल राशि का जनहित में उपयोग सुनिश्चित हो सके।

तीन राज्यों में बहने के कारण पानी के इस्तेमाल को लेकर राज्यों में प्रारम्भ से ही विवाद रहा। इसे निपटाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा 1969 में एक न्यायाधिकरण छथउद्ध (Narmada Water Dispute Tribunal) का गठन किया गया जिसने 1979 में तीनों राज्यों के बीच जल का बंटवारा इस प्रकार निर्धारित किया।

मध्यप्रदेश के लिए	–	**8.25** MAF
गुजरात के लिए	–	**9.00** MAF
राजस्थान के लिए	–	**0.50** MAF
महाराष्ट्र के लिए	–	**0.25** MAF

(स्रोत– 2005–06 नर्मदा नियंत्रण प्राधिकरण के वार्षिक प्रतिवेदन)

साथ ही यह भी निर्धारित किया कि प्रत्येक राज्य अपने हिस्से के जल का प्रयोग 2025 तक कर सकेगा, इसके पश्चात इस वितरण पर पुनर्विचार होगा।

नर्मदा घाटी विकास परियोजना – मध्यप्रदेश सरकार द्वारा नर्मदा बेसिन में नर्मदा घाटी को समृद्ध करने के लिए महत्वाकांक्षी परियोजना नामश: 'नर्मदा घाटी विकास परियोजना' का संचालन किया जा रहा है। इसमें मध्यप्रदेश को प्राप्त 18.25 MAF जल का उपयोग उत्पादक कार्यों में किया जाएगा। इस हेतु नर्मदा व इसकी सहायक नदियों पर 30 वृहद, 135 मध्यम व 3000 छोटे बांध बनाये जाएंगे। वर्तमान में कुछ प्रोजेक्ट पूर्ण हो चुके हैं वहीं कुछ निर्माणाधीन हैं।

योजना के पूर्ण होने पर 2755 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई क्षमता निर्मित हो सकेगी साथ ही 2600 MW विद्युत का उत्पादन हो सकेगा। बाढ़ व सूखे जैसी प्राकृतिक आपदाओं से बचा जा सकेगा। कृषि उत्पादन में 85 लाख टन वृद्धि संभावित है। इन सबके सम्मिलित प्रभाव स्वरूप शुद्ध घरेलू उत्पाद में 2000 करोड़ की वृद्धि होने के अनुमान हैं। उक्त समस्त गतिविधियों से रोजगार के भी अवसर सहज ही बढ़ेंगे।

सरदार सरोवर परियोजना – सरदार सरोवर परियोजना नर्मदा घाटी विकास परियोजना का एक महत्तवपूर्ण अंग है। सरदार सरोवर बांध की नींव अप्रैल 1961 में जवाहर लाल नेहरू द्वारा रखी गयी। तमाम राजनैतिक, सामाजिक और जातीय स्थानीय विवादों के चलते यह 2017 में पूर्ण हो पायी। 17 सितंबर 2017 को माननीय प्रधानमंत्री द्वारा इसका लोकार्पण किया गया।

सरदार सरोवर बांध (एक नजर में)

World`s largest concrete gravity dam

Length of main dam - **1210.02** meter
Maximum height above - **163** meter
deepest foundation level
Present height of dam (**17.9.17**) - **138.68** meter
Spill way -
Number of gates - **30** No.
Capacity - **30** lack cusecs
Length of reservoir - **214** km
Catchment area - **88000** km square
Power generation - **1450**MW (**57%** for MP)
(RBPH- **200×6=1200** MW, CHPH- **50×5=250** MW)

सरदार सरोवर परियोजना का पर्यावरणीय प्रभाव – सरदार सरोवर परियोजना से मध्यप्रदेश के पर्यावरण पर गहरा प्रभाव दृष्टिगोचर होगा। एक ओर जहां बांध में हजारों हेक्टेयर कृषि व वन भूमि डूब जाएगी, 40000 परिवार (मध्यप्रदेश) विस्थापित होंगे वहीं इसके दूसरे सकारात्मक पहलू यह भी हैं कि इससे जो जलाशय निर्मित होगा उसका क्षेत्रफल 214 KM होगा जिसकी जलग्रहण क्षमता 7.7MAF होना अनुमानित हैं। इस जलाशय का 60% भाग राज्य में है। एक आकलन के अनुसार राज्य के पास इतना जल होगा कि राज्य की 1.80 करोड़ एकड़ भूमि को 1 फीट तक जल से भरा जा सके। इतने वृहद जलाशय व बैक वाटर से कई सकारात्मक प्रभाव व परिणाम उभर कर आएंगे।

परियोजना से संबंधित जलग्रहण क्षेत्र उपचार के लगभग 70 % कार्य राज्य द्वारा किये गए है। परियोजना के लिए कुल 125725 हेक्टेयर क्षेत्र में ये उपचार कार्य किये गए।

चरण दो के 139 उप जल ग्रहण क्षेत्रों की 318118 हेक्टेयर भूमि पर उपचार कार्य पूर्ण कर लिए गए। इन उपचार कार्यों के कारण उल्लेखनीय पर्यावरणीय लाभ होंगे।

विविध लाभ :

1. परियोजना अंतर्गत निर्मित 214 km लंबे जलाश्य का 60% भाग व इसके अतिरिक्त बैक वाटर के रूप में कई स्थानों पर जल एकत्रित होगा जोकि निश्चित रूप से भूजल स्तर में वृद्धि करेगा।

* 6 बी. एन. रांझी जबलपुर (म.प्र.) भारत

2. नर्मदा किनारे के गांवों में जल स्तर वृद्धि होने से कुएं, हैंड पंप नलकूप चार्ज हो जायेंगे।
3. भूजल स्तर बढ़ने से सॉइल प्रोफाइल में भी सुधार होगा जो न केवल कृषि भूमि को फायदा पहुचायेगा अपितु पारिस्थिकी में भी सकारात्मक प्रभाव डालेगा।
4. परियोजना से बढ़े हुए जल स्तर से कुओं, हैंड पंम्पो के माध्यम से सिंचाई की जा सकेगी। वृहद जलाशय व मध्यप्रदेश को प्राप्त 1.80 करोड़ फुट जल की मात्रा से लघु सिंचाई योजनाएं संचालित की जा सकेंगी जिससे कृषि व कृषि आधारित उद्योगों का विकास होगा।
5. नौवहन होने से पर्यटन की व्यापक संभावनाएं बढ़ेंगी। इस हेतु पृथक से योजना बनाकर इसे एक स्थायी उद्योग के रूप में विकसित किया जा सकता है।
6. कालांतर में जलीय और पारिस्थितिकीय अंतर्किया का अध्ययन कर उसी अनुरूप जल अभयारण्य का विकास किया जा सकता है। विविध वन्य जीवों के संचरण से नवीन पारिस्थिकीय विकास होगा
7. स्थानीय स्तर पर तापमान में कमी परिलक्षित होना भी संभावित है।
8. परियोजना के वृहद जलाशय में बड़ी मात्रा में मत्स्यपालन किया जा सकेगा। जलाशय में विभिन्न प्रजातियों की मछलियों को प्रजनन के द्वारा उत्पादित किया जा सकेगा। परियोजना से राज्य को कुल 10000 हेक्टेयर क्षेत्र मत्स्य पालन हेतु उपलब्ध होगा। एक अनुमान के अनुसार जलाशय में 3.50 लाख टन मत्स्य उत्पादन किया जा सकेगा।
9. जलीय खेती और जल से जुड़े अन्य व्यासयों व्यापारों का प्रसार निश्चित ही स्थानीय विकास को प्रोन्नत करेगा।
10. अधिक जल की आवश्यकता वाले उद्योगों की एक पूरी श्रृंखला का भी इस क्षेत्र में विकास का मार्ग इस परियोजना से प्रशस्त होगा।
11. जल प्रसंस्करण इकाईयां, जल आखेटन, जल परीक्षण प्रयोगशालाएं इत्यादि के विकास की भी प्रचुर संभावनाएं हैं।
12. परियोजना की डूब में आई प्रत्येक हेक्टेयर वन भूमि के बदले एक हेक्टेयर गैर वन भूमि पर क्षतिपूर्ति वनीकरण व प्रभावित भूमि की चार गुना भूमि पर पुनर्वनीकरण किया गया है। अब तक कुल 8737 हेक्टेयर क्षेत्र में वनीकरण किया गया। जो डूब में गई 2731 हेक्टेयर से काफी अधिक है। पुनर्वनीकरण एवं 125725 हेक्टेयर क्षेत्र में किये गए जल ग्रहण उपचार कार्यो से वनोपज और चारागाह में वृद्धि होगी। अनेक प्रकार की वनोपज– बीड़ी पत्ता ,बांस, इमारती लकड़ी, सागौन, साल, लाख, औषधियां आदि प्राप्त होंगी साथ ही इन पर आधारित लघु उद्योग भी खोले जा सकेंगे जो बडी मात्रा में रोजगार उपलब्ध कराएंगे।
13. विस्थापित हुए परिवारों को पृथक से जमीन और मुआवजे के साथ साथ आकलन अनुसार रोजगार भी उपलब्ध कराया गया है। परियोजना के संचालन में भी रोजगार हेतु विस्थापितों को प्राथमिकता दी गयी है।
14. भूकंप की आशंका को दृष्टिगोचर रखते हुए सुरक्षार्थ 9 स्टेशन स्थापित किये गए हैं। जो अनवरत भूकंप की आशंका को आकलित मूल्यांकित करते हुए किसी भी आशंका की पूर्वसूचना और अग्रिम तैयारी को सुनिश्चित करते हैं।

निष्कर्ष – तमाम पर्यावरणीय प्रभावों का मूल्यांकन निरपेक्ष रूप से केवल पर्यावरणीय परिवर्तनों के संदर्भ में किया जाना उचित नहीं होगा। एक समग्र आकलन मूल्यांकन प्रक्रिया में उक्त परियोजना से होने वाले सामाजिक आर्थिक लाभों के संदर्भ में ही पर्यावरणीय प्रभावों का मूल्यांकन किया जाना उचित है। आर्थिक विकास से उपजा सामाजिक विकास मानव विकास सूचकांक को निश्चित रूप से बढ़ाने वाला है। जो इस क्षेत्र के लिए अपरिहार्य भी है। विभिन्न पर्यावरणीय आशंकाओं के निराकरण के उपाय व उपकरण स्थापित किये गए है। इस संबंध में समस्त संभावित विकल्पों के प्रावधान हैं। अत: किंचित नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों के परिप्रेक्ष्य में सरदार सरोवर परियोजना से होने वाले विविध पर्यावरणीय और सामाजिक आर्थिक विकास के लाभ के नवीन स्तरों से मध्यप्रदेश के आमजन को होने वाले असीम लाभों से वंचित नहीं किया जा सकता यह तथ्य इसकी अनिवार्यता को सुदृढ़ ढंग से स्थापित करते हैं। परियोजना निश्चित ही मध्यप्रदेश के मानव विकास सूचकांक को राष्ट्रीय स्तर पर रेखांकित करने वाली साबित होगी।

References :-

1. Report of five member Committee on SSP Ministry of water resources
2. SSP on River Narmada Sardar Sarovar Naramada Nigam Limited Gandhi Nagar Gujarat
3. Facts : SSP Sardar Sarovar Naramada Nigam Limited Gandhi Nagar Gujarat
4. The Report of the Naramada water dispute Tribunal with its Decision (1978) GOI & NWDTDepartment of Irrigation New Delhi118 Palika Bhawan
5. Drinking water from SSP S.M. Pai, New Delhi
6. The Heart Land Says it all Madhya Pradesh Govt. of Madhya Prades

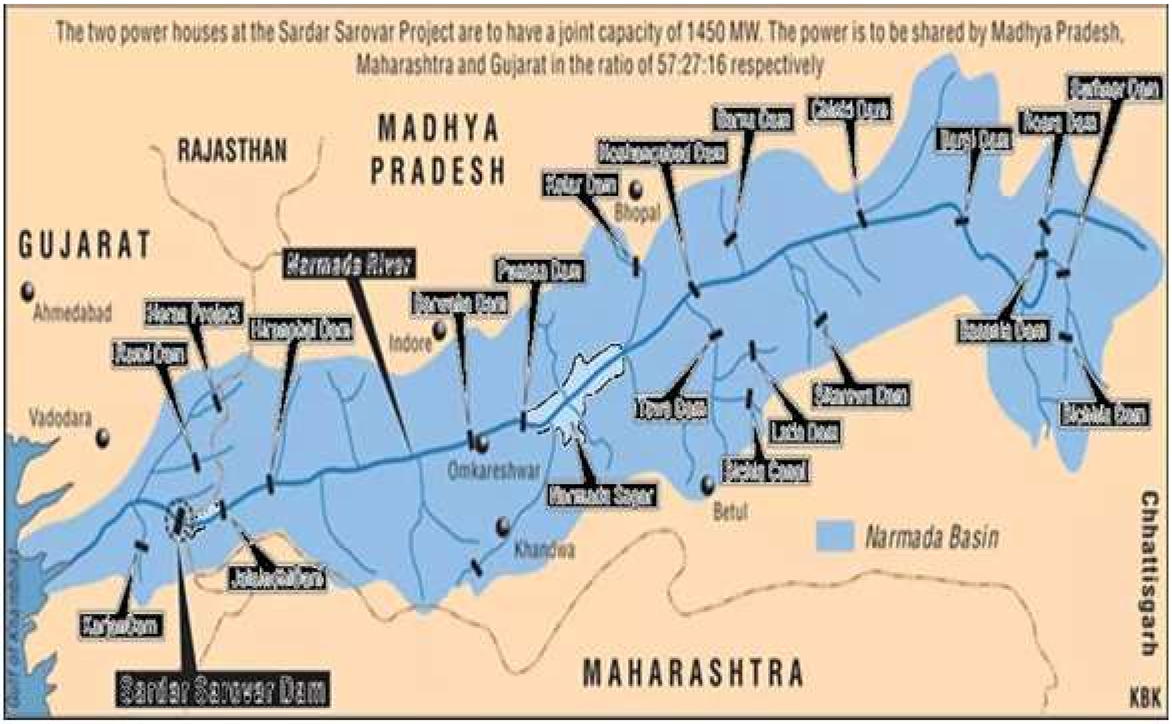
The two power houses at the Sardar Sarovar Project are to have a joint capacity of 1450 MW. The power is to be shared by Madhya Pradesh, Maharashtra and Gujarat in the ratio of 57:27:16 respectively
RAJASTHAN
MADHYA PRADESH
GUJARAT
Ahmedabad
Vadodara
Indore
Bhopal
Omkareshwar
Khandwa
Betul
Narmada River
Punasa Dam
Kolar Dam
Narmada Sagar
Sardar Sarovar Dam
Narmada Basin
Chhattisgarh
MAHARASHTRA
KBK

****

पर्यटन एवं होटल सेवा क्षेत्र पर जीएसटी का प्रभाव

डॉ. सोनिया शर्मा *

प्रस्तावना - यदि होटल नहीं तो पर्यटन नहीं, इस तरह होटल उद्योग को पर्यटन उद्योग का आवश्यक अंग माना जाता है। पर्यटन विस्तार ने होटल उद्योग का अवश्यम्भावी विकास किया है। आधुनिक होटल उद्योग बहुत अधिक जटिल हो गया है तथा यह परिष्कृत एवं व्यवस्थित प्रोद्योगिकी से युक्त बन गया है।

नवीं पंचवर्षीय योजना में पर्यटन का औद्योगीकरण किया गया था। डॉ. नेगी लिखते हैं 'पर्यटक उद्योग के कई एवं विविध घटकों में होटल सबसे महत्वपूर्ण घटक है।' होटल पर्यटन उद्योग का सशक्त एवं आवश्यक अंग है। होटल संसाधनों के पर्याप्त विकास के बिना समस्त जलवायु संबंधी गुण तथा समस्त सहायक एवं मनोरंजन की सुविधाएं पर्यटक व्यापार को बनाये रखने में पर्याप्त नहीं होगें।

पर्यटन के विस्तार से होटल उद्योग का अवश्यसंभावी विकास होगा। होटल उद्योग पर्यटन उद्योग से इतनी घनिष्ठता से जुडा है कि यह पर्यटन से होने वाली विदेशी विनिमय से आय के लगभग 50% आय हेतु उत्तरदायित्व होता है।

जहां तक अप्रत्यक्ष रोजगार का प्रश्न है होटल उद्योग से कई रोजगार के मार्ग जुडे हैं जैसे खाद्य सामग्री की आपूर्ति, विभिन्न प्रकार की यांत्रिक मदें, रसोई घर से एअर कंडीशनर तक, लाउन्ड्री के उपकरण , कम्प्यूटर फर्नीचर, कटलरी, क्राकरी आदि। होटल उद्योग का क्षेत्रीय एवं ग्रामीण विकास पर सीधा प्रभाव पडता है। इस उद्योग ने कुटीर उद्योगों को विभिन्न रंगों में प्रोत्साहित किया है। जैसे - पर्दे, गलीचे, हस्तकला, मिट्टी कला आदि।

जी.एस.टी. का पर्यटन एवं होटल सेवा पर प्रभाव को समझने से पूर्व जी.एस.टी. का परिचय एवं अवधाराणा को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

जी.एस.टी. - सरकार राजस्व उगाही के लिए अनेक प्रकार के कर लगाती है। आमतौर पर इन सारे करों को दो वर्गो में बाँटा जा सकता है - प्रत्यक्ष कर एवं अप्रत्यक्ष कर। जहां प्रत्यक्ष कर मुख्यतौर पर आय एवं सम्पति में लगाया जाता है, जैसे आयकर,कंपनी कर, सम्पति कर, वहीं अप्रत्यक्ष कर वस्तुओं एवं सेवाओं के खरीदी-ब्रिकी आदि।

जी.एस.टी. भारत के कर ढ़ाचें में सुधार योग्य आमूल चूल परिवर्तन है। वस्तु एवं सेवा कर एक अप्रत्यक्ष कर कानून है। जी.एस.टी. एक एकीकृत कर है, जो वस्तुओं और सेवाओं दोनों पर लगेगा। जी.एस.टी. लागू होने से पूरा देश, एकीकृत बाजार में तब्दील हो गया है और ज्यादातर अप्रत्यक्ष कर यथा-केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, सेवा कर, वैट, मनोरंजन, विलासिता, लॉटरी टैक्स आदि जी.एस.टी. में समाहित हो गये है। इससे पूरे भारत में एक ही प्रकार का अप्रत्यक्ष कर लगेगा।

जी.एस.टी. क्यों जरूरी था ? - भारत का पूर्व कर ढ़ाचा बहुत ही जटिल था। भारतीय संविधान के अनुसार मुख्य रूप से वस्तुओं की बिक्री पर कर लगाने का अधिकार राज्य सरकार और वस्तुओं के उत्पादन व सेवाओं पर कर लगाने का अधिकार केंद्र सरकार के पास था। इस कारण देश में अलग-अलग तरह के कर लागू थे, जिससे देश की पूर्व कर व्यवस्था बहुत ही जटिल थी। कंपनियों और छोटे व्यवसायों के लिये विभिन्न प्रकार के कर कानून का पालन करना मुश्किल होता था।

टैक्स पर टैक्स की व्यवस्था समाप्त - अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था में कर-भार अंतिम उपभोक्ता को वहन करना पड़ता है, लेकिन कर का संग्रहण व्यवसायियों द्वारा किया जाता है। व्यवसायी को खरीदे गये माल पर चुकाये गये कर की क्रेडिट मिलती है, जिसका उपयोग वह अपने कर के भुगतान में कर सकता है। इस व्यवस्था से कर केवल मूल्य संवर्धन पर ही लगता है। व्यवसायी उपभोक्ता से कर संग्रहित करता है और उसमें से अपनी इनपुट क्रेडिट को घटाकर बाकी कर सरकार को जमा करवाते हैं।

लेकिन वर्तमान व्यवस्था में भारत में केन्द्र सरकार द्वारा उत्पाद शुल्क और राज्य सरकार द्वारा बिक्री कर लगाया जाता था। इस कारण व्यवसायी को उत्पाद शुल्क और सेवा कर के भुगतान में बिक्री कर की इनपुट क्रेडिट का उपयोग नहीं कर सकता था। बिक्री कर के भुगतान में सेवा कर और उत्पाद शुल्क की क्रेडिट का उपयोग नहीं कर सकता है। इस कारण पूर्व व्यवस्था में टैक्स पर टैक्स लग जाता था, जिससे वस्तुओं और सेवाओं की कीमत बढ़ जाती थी।

जी.एस.टी. लागू होने से पूरे देश में एक ही प्रकार का अप्रत्यक्ष कर हो गया है, जिससे व्यवसायियों को खरीदी गई वस्तुओं और सेवाओं पर चुकाये गये जी.एस.टी. की पूरी क्रेडिट मिल जायेगी। जिसका उपयोग बेची गई वस्तुओं और सेवाओं पर लगे जी.एस.टी. के भुगतान में कर सकेगा। इससे टैक्स पर टैक्स लगाने वाली व्यवस्था समाप्त हो गई है। जिससे लागत में कमी आ गई है।

जी.एस.टी. की अवधारणा - सरकार द्वारा 01 जुलाई 2017 को लागू की गई नई अप्रत्यक्ष कर प्रणाली 'वस्तु एवं सेवाकर' की मूल अवधारणा है- 'एक देश, एक बाजार, एक कर'। इस अवधारणा को हम इन बिंदुओं के अनुसार अध्ययन कर सकते हैं :-

1. जी.एस.टी. से बहुतायत या दोहरे कराधान की समस्या का समाधान बड़े पैमाने पर हो जायेगा और एक समान राष्ट्रीय का मार्ग प्रशस्त होगा।
2. उपभोक्ता की दृष्टि से इसका बड़ा फायदा यह होगा, कि वस्तुओं पर उन्हें अपेक्षाकृत कम कर अदा करना पड़ेगा, जो वर्तमान में लगभग 25 से 30 प्रतिशत होने का अनुमान है।

* धाम मोहल्ला, पन्ना (म.प्र.) भारत

3. जी.एस.टी. के लागू होने से भारतीय उत्पाद घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धी बन जायेंगे।
4. जी.एस.टी. आर्थिक विकास की गति को बढ़ाने में मददगार साबित होगी।
5. जी.एस.टी. पारदर्शी होने के कारण देश में आसानी से लागू किया जा सकेगा।

वन नेशन वन टैक्स वन मार्केट की अवधारणा रहेगी।

भारत की अप्रत्यक्ष कर संरचना में सुधार करने हेतु जी.एस.टी. एक उपभोग आधारित कर है अर्थात् यह कर उस राज्य के द्वारा वसूल किया जाएगा जहा वस्तुओं व सेवाओं का उपभोग किया जाएगा ना कि उस राज्य के द्वारा जहा यह वस्तु एवं सेवाए निर्मित होगी। जीएटी के अन्तर्गत अलग -अलग वस्तुओं एवं सेवाओं पर अलग -अलग दर लागू होगी।

जी.एस.टी. के मुख्य सिद्धान्त (विशेषतायें) – वस्तुओं के उत्पादन अथवा वस्तुओं की बिक्री या सेवाओं के प्रावधान पर कर लगाने की मौजूदा अवधारणा के बजाय वस्तुओं या सेवाओं की 'आपूर्ति' पर जी.एस.टी. लगाया गया है।

मूल स्थान आधारित कराधान के वर्तमान सिद्धान्त के बजाय गन्तव्य स्थित् उपभोग कराधान के सिद्धान्त के आधार पर जी.एस.टी. लगाया गया है।

यह एक दोहरा जी.एस.टी. होगा, जिसके तहत केन्द्र एवं राज्य एक साथ समान आधार पर इसे लगायेंगे। केन्द्र द्वारा लेगाये जाने वाले जी.एस.टी. को सी.जी.एस.टी. कहा जायेगा और राज्यों (विधायिका वाले केन्द्र शासित प्रदेशों सहित) द्वारा लगाये जाने वाले जी.एस.टी. को एस.जी.एस.टी. कहा जायेगा। वहीं बिना विधायिका वाले केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा लगाये जाने वाले जी.एस.टी. को केन्द्र शासित प्रदेश जी.एस.टी. यू.टी.जी.एस.टी. कहा जायेगा।

वस्तुओं एवं सेवाओं की अंर्तराज्य आपूर्ति पर एकीकृत जी.एस.टी. लगाया जायेगा। इसका संग्रहण केन्द्र करेगा, ताकि क्रेडिट से जुड़ी श्रृंखला में कोई व्यवधान न आ सके।

वस्तुओं के आयात को अंर्तराज्य आपूर्ति माना जायेगा और इस पर आई.जी.एस.टी. लगेगा।

जी.एस.टी. निम्नलिखित करों का स्थान लेगा, जिन्हें वर्तमान में केन्द्र द्वारा लगाया एवं वसूला जाता है:-

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, उत्पाद शुल्क (औषधीय एवं प्रसाधन उत्पाद),अतिरिक्त उत्पाद शुल्क (वस्त्र एवं वस्त्र उत्पाद)अतिरिक्त सीमा शुल्क (इसे आमतौर पर सी.वी.डी. के रूप में जाना जाता है) तथा जिन्हें वर्तमान राज्य द्वारा लगाये एवं वसूले जाते हैं:-

राज्य वैट,केन्द्रीय बिक्री कर, खरीद कर विलासिता, करप्रवेश कर (सभी तरह के)मनोरंजन कर (स्थानीय निकायों द्वारा लगाये जाने वाले कर को छोड़कर)विज्ञापनों पर करलाटरियों, सट्टेबाजी एवं जुए पर लगने वाले करराज्यों के उपकर और अधिभार जो वस्तु अथवा सेवाओं की आपूर्ति से संबंधित हैं।

पॉच विशेष पेट्रोलियम उत्पादों (कच्चा तेल, पेट्रोल, डीजल, विमान ईंधन तथा प्राकृतिक गैस) पर जी.एस.टी. उस तारीख से लगाया जायेगा, जिसकी सिफारिश जी.एस.टी. परिषद् करेगी।

जी.एस.टी. का व्यवसायों पर प्रभाव – वर्तमान में व्यवसायों को अलग-अलग प्रकार के अप्रत्यक्ष करों का भुगतान करना पड़ता है। जैसे वस्तुओं के उत्पादन करने पर उत्पाद शुल्क, ट्रेडिंग करने पर सेल्स टैक्स, सेवा प्रदान करने पर सर्विस टैक्स आदि। इससे व्यवसायों को विभिन्न प्रकार के कर कानूनों की पालना करनी पड़ी है, जो कि बहुत मुश्किल एवं जटिल कार्य है। लेकिन जी.एस.टी. के लागू होने से उन्हें केवल एक ही प्रकार अप्रत्यक्ष कानून का पालन करना पड़ता है, जिससे भारत में व्यवसाय में सरलता आ रही है।

पूर्व में व्यवसायी, उत्पादन शुल्क व सेवा कर के भुगतान में बिक्री कर की इनपुट क्रेडिट का उपयोग नहीं कर सकता था और बिक्री कर के भुगतान में सेवा कर और उत्पाद शुल्क की क्रेडिट का उपभोग नहीं कर सकता था। इस कारण वस्तुआं ओर सेवाओं की लागत बढ़ जाती थी। लेकिन जी.एस.टी. लागू होने से व्यवसायियों को सभी प्रकार की खरीदी गई वस्तुओं और सेवाओं पर चुकाये गये जी.एस.टी. की पूरी क्रेडिट मिल गई है, जिसका उपयोग वह बेची गई वस्तुओं ओर सेवाओं पर लगे जी.एस.टी. के भुगतान में कर सकता है। इससे लागत में कमी आई है।

ऐसा कहा जा रहा है, कि जी.एस.टी. आने से व्यवसाय करना आसान हो रहा है। लेकिन शुरूआती वर्षो में व्यवसायों को मुश्किलों का सामना करना करना पड़ सकता है। उदाहरण के लिये जी.एस.टी. में प्रत्येक महीने में तीन अलग-अलग तरह के रिटर्न फाइल करने पड़ेंगे।

वर्तमान में विभिन्न प्रकार के अप्रत्यक्ष करों में छूट की सीमा अलग-अलग है। मुख्य रूप से सेल्स टैक्स में थ्रेसहोल्ड लिमिट 5 लाख, सर्विस टैक्स में 10 लाख और उत्पाद शुल्क में 1.5 करोड़ है। जी.एस.टी. आने से सभी प्रकार के व्यवसायों के लिये एक ही प्रकार की छूट की सीमा रखी गई है।

केन्द्र और राज्य सरकों के लिये सरल और आसान प्रशासन– केन्द्र और राज्य स्तर पर बहुआयामी अप्रत्यक्ष करों को जी.एस.टी. लागू करके हटाया जा रहा है। मजबूत सूचना प्रोद्योगिकी प्रणाली पर आधारित जी.एस.टी. केन्द्र और राज्यों द्वारा अभी तक लगाये गये सभी अन्य प्रत्यक्ष करों की तुलना में प्रशासनिक नजरिये से बहुत सरल और आसानर होगा।

कदाचार पर बेहतर नियंत्रण– मजबूत सूचना प्रोद्योककिी बुनियादी ढ़ाचे के कारण जी.एस.टी. से बहतर कर अनुपालन परिणाम प्राप्त होंगे। मूल्य संवर्धन की श्रृंखला में एक चरण से दूसरे चरण में इनपुट कर क्रेडिट कर सुगत हस्तांतरण जी.एस.टी. के स्वरूप में एक अंत: निर्मित तंत्र है, जिससे व्यापारियों को कर अनुपालन का प्रोत्साहन दिया जायेगा।

अधिक राजस्व निपुणता– जी.एस.टी. से सरकार के कर राजस्व की वसूली लागत में कमी आने की उम्मीद है। इसलिये इससे उच्च राजस्व को निपुणता को बढ़ावा मिलेगा।

जी.एस.टी. के तहत 'मेक इन इंडिया' को बढ़ावा दिये जाने से बड़े स्तर पर रोजगार बढ़ने की संभावनायें जताई जा रही हैं। निश्चित रूप से यह सयुवाओं और समाज को एक बड़े अवसाद से निकालने वाला सिद्ध होगा। यह उन्हें बेकार की सोच और चिंता से दूर कर पथभ्रष्ट होने से रोकेगी। इससे वे अपने व समान के लिये कुछ बेहतर करने की सोच रखेंगे। जी.एस.टी. के अंतर्गत सभी को एक यूनिट नंबर देने का प्रवधान है, जिससे वे बड़ी आसानी से कर चुका सकते हैं, इससे न केवल टैक्स देना आसान हागा, बल्कि कर चोरी करना भी सम्भव नहीं होगा।

मूल तौर पर सभी वस्तुओं एवं सेवाओं पर कर की दर :-

0 प्रतिशत, 5 प्रतिशत ,12 प्रतिशत, 18 प्रतिशत, 28 प्रतिशत की दर से जीएस्टी लगायी जाएगी। विशेष रूप से वैभव की वस्तुओं पर 28 प्रतिशत

कर की दर लागू होगी।

नए जी.एस.टी. रेट्स को लेकर पर्यटन व्यावसायियो के जेहन में चिन्ता छा गई है भारत आना अब सैलानियों के लिए और महगा हो गया है। जी.एस.टी. की नई टैक्स दरों के मुताबिक कोई भी होटल जो 5000/- रूपये कमरे के लिए किराया लेता है जिस पर 12 प्रतिशत से 18 प्रतिशत फीसदी टैक्स लगता था अब उस पर 28 प्रतिशत टैक्स भरना होगा। एयर कंडीशन वाले रेस्टोरेंट और बार को भी 28 प्रतिशत की दर से टैक्स देना होगा। गैर वातानुकूलित रेस्टोरेंट के खाने पर 12 फीसदी की जी.एस.टी. दर लागू होगी।

वातानुकूलित रेस्टोरेंट के खाने के बिल पर टर्नओवर के हिसाब से जी.एस.टी. लागू होगा। 50 लाख पर या उससे कम टर्न ओवर वाले वातानुकूलित रेस्त्रा के खाने के बिल पर 5 फीसदी जबकि 50 लाख रूपय से अधिक टर्न ओवर वाले रेस्त्रा के खाने के बिल पर 12 फीसदी की दर से जी.एस.टी. देना होगा।

इसी प्रकार शराब के लाइसेंस वाले रेस्त्रा पर 18 फीसदी तथा फाइव स्टार रेस्त्रा में खाने पर 28 फीसदी की दस से जीएएटी लागू होगा।

होटल व्यावसाय व लाजिंग के लिए जी.एस.टी. की दर निम्नानुसार है :-

GST Rates for Hotels Based on Room Tarriff

S.	Tarriff per Night	GST Rate
1.	<INR 1000	No Tax
2.	INR 1000 to 2500	12%
3.	INR 2500 to 7500	18%
4.	>7500	28%

अभी तक 1000/- रूपये कमरे के किराये वाले होटल के बिल पर 15 फीसदी सर्विस टैक्स लगता था परन्तु केवल किराये के 40 फीसदी पर लगने को प्रभावी पर मात्र 9 फीसदी बनती थी। जी.एस.टी. के तहत अब केवल 5 फीसदी टैक्स लगेगा।इस तरह छोटे होटलो व उनमें ठहरने वालो को जी.एस.टी. से काफी फायदा होगा। जबकि बडे होटल व उनमें ठहरने वाले नुकसान में रहेंगे।

जी.एस.टी. के संदर्भ में यदि हवाई किराये की बात करें तो इकॉनोमी क्लास के लिए यह तो सस्ता हो गया हैं। पहले जहाँ इकॉनोमी क्लास पर 6 प्रतिशत टैक्स लगता था जी.एस.टी. में वह घटकर 5 प्रतिशत रह गया है। लेकिन जो पर्यटक बिजनेस क्लास में यात्रा करते हैं उनके लिए हवाई सफर थोडा महँगा हो गया है। बिजनेस क्लास की यात्रा पर पहले जहां 9 प्रतिशत टैक्स लगता था वह जी.एस.टी. में बढकर 12 प्रतिशत हो गया है। इससे भी पर्यटन में असर पडेगा।

वस्तु एवं सेवा कर की चुनौतियॉ - जी.एस.टी. एक मूल्य वर्धित कर है, जो कि विनिर्माताओं से लेकर उपभोक्ताओं तक वस्तुओं और सेवाओं की आपूर्ति पर एकल कर है। वस्तु एवं सेवा कर भारत की सबसे महत्पूर्ण अप्रत्यक्ष कर सुधार योजना है, जिसका उद्देश्य राज्यों के वित्तीय बाधाओं का दूर करके एक समान बाजार को बांधकर रखना है। जी.एस.टी. विसंगतियों को दूर करके प्रशासन को अत्यंत सरल बना रहा है।

जी.एस.टी. को लेकर सबसे बड़ी समस्या इंटरनेट कनेक्टिविटी की है। जी.एस.टी. के तहत सारी प्रक्रिया ऑनलाईन हो गई है और जम्मू-कश्मीर में इंटरनेट कनेक्टिविटी की स्थिति अच्छी नहीं है। सुरक्षा की दृष्टि से आये दिन इंटरनेट सेवा बाधित रहती है। इससे भी अधिक परेशानी छोटे कस्बों व ग्रामीण क्षेत्रों के व्यापारियों को होती है, जहॉ इंटरनेट की सुविधा सीमित है। सबसे बड़ी समस्या साफ्टवेयर को लेकर है, राज्य में हजारों दुकानदार हैं, जो नई टैक्स प्रणाली के तहत पहली बार कम्प्यूटर का इस्तेमाल कर रहे हैं। यहॉ साफ्टवेयर अपडेट करने में समय लग सकता है। व्यापारियों को इनपुट क्रेडिट तभी मिलेगा, जब उनके द्वारा दी गई जानकारी उनके विक्रेता द्वारा दी जानकारी से मेल खायेगी। अगर इससे अंतर पाया जायेगा, तो परेशानी होगी। कम्प्यूटर में एंटी गलती होने की संभावना रहेगी, जिससे व्यापारियों का इनपुट टैक्स क्रेडिट रूक जायेगा। साफ्टवेयर में तकनीकी खराबी होने की प्राय: मुसीबत बनी रहेगी। साल में 37 रिटर्न जी.एस.टी. के तहत हर व्यापारी को भरने होंगी, जो एक चुनौतीपूर्ण काम है, जबकि जी.एस.टी. लागू होने के पूर्व व्यापारी साल में पांच रिटर्न ही भरता था। सरकार का जी.एस.टी. के माध्सयम से कर चोरी को रोकना मुख्य उद्देश्य अधिकमत करदाओं को ऑनलाईन कर प्रणाली से जोड़ना है,व सभी के लिये कर प्रणली को सरल व सुगत बनाना है। शासन की नीतियों में कर प्रणाली जन कल्याण के उद्देश्य से बनाई गई व्यवस्था है, जिसके बिना राज्यहित अथवा राष्ट्र के विकायस की कल्पनरा नहीं की जा सकती है। इसका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति विशेष को आत्मशक्ति का ज्ञान कराते हुये अपने नैतिक कार्यो तथा कर्तव्यों के प्रति उन्मुख करना, उसके पालन हेतु सर्वथा उपयुक्त तथा सरल बनाना है।

जी.एस.टी की कम दरें, हमारे चालू खाता घाटे में कमी के लिए योगदान देगी और जीडीपी में बढ़ोतरी करेगी जिससे घरेलू पर्यटकों के साथ-साथ विदेशी पर्यटाकों को भी भारत अधिक आकर्षित करेगा जिससे पर्यटन प्रेरित रोजगार को बढावा मिलेगा।

लेकिन जी.एस.टी. की बढी उच्च दरों के कारण, विदेशी पर्यटक भारत को छोडकर एशिया भर में अपनी यात्रा की योजना बना सकते हैं।

जी.एस.टी. पर होटल व्यवसाय एवं पर्यटन उद्योग के प्रतिष्ठित व्यक्तियों के विचार : एफ.एच.आर.ए.आई. (फेडरेशन ऑफ होटेलस एंड रेस्टोरेंटस एसोसिऐशन ऑफ इंडिया) के वाइस प्रेसिडेंट श्री गिरिश ओबेरॉय के अनुसार 'फाइव स्टार होटेलस के लिए 28 प्रतिशत जी.एस.टी. एवं शराब पर 18 प्रतिशत जी.एस.टी. की उच्च दरें इस क्षेत्र के लिए ताबूत में अंतिम कील होगी , कोई भी विदेशी टूरिस्ट भारत को छोडकर एशिया के अन्य देश में घूमना चाहेगा'।

होटल एवं रेस्टोरेंट एसोसिऐशन ऑफ वेर्स्टन इंडिया (एच.आर.ए.डब्ल्यू.आई.) के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री भारत मलकानी के अनुसार 'भारतीय आतिथ्य और पर्यटन के लिए सबसे बडी बाधाओं में से एक है अंतर्राष्ट्रीय कर संरचना , सरकार को एहसास होना चाहिए म्यांमार, थाईलैंड, सिंगापुर और इंडोनेशिया में लेवी कर 5 से 10 प्रतिशत ही है।'

होटल एवं रेस्टोरेंट एसोसिऐशन ऑफ वेर्स्टन इंडिया (एच.आर.ए.डब्ल्यू.आई.) के वर्तमान प्रेसीडेंट श्री दिलीप दतवानी के अनुसार 'जी.एस.टी. की उच्च दरें व्यवहार्य नहीं है इससे विदेशी पर्यटक भारत को छोडकर अन्य देश की ओर रूख करेगा।'

होटल सेवा क्षेत्र में जी.एस.टी. को पूर्ण रूप से विकसित करने के लिए सबसे जरूरी है कि ऑनलाइन बिलिंग किया जाना चाहिए जिससे पूर्ण रूप से पारदर्शिता बनी रहे इसके लिए हर व्यावसायी को जी.एस.टी. का साफ्टवेयर अपडेट करते रहना होगा जिससे पूरे देश में कर की चोरी को रोका जा सकता है इसको लागू होने मे थोडा समय जरूर लगेगा लेकिन भविष्य में कर की चोरी को रोका जा सकता है।

जी.एस.टी. पर्यटन उधोग के लिए कही खुशी कही गम लेकर आया है इससे छोटे होटल व रेस्टोरेंट को तो लाभ होगा परन्तु बडे होटल व रेस्टोरेंट

को टैक्स की मार से जूझना पडेगा। आम पर्यटक के लिए जी.एस.टी. राहतकारी होगा जबकि समृद्ध वर्ग को ज्यादा खर्च करना पडेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अभिनव कमल रैना एवं डॉ भुराराम सारण - पर्यटन एवं होटल उद्योग प्रबंध सिद्धांत एवं व्यवहार।
2. अग्रवाल डॉ.जी.के., अप्रत्यक्ष कर, रामप्रसाद एण्ट सन्स भोपाल।
3. पन्त, डॉ.जे.सी., राजस्व, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा 2016-17।
4. पत्रिका समाचार पत्र, जबलपुर संस्करण, दिनांक 24.02.2018।
5. www.gstavdharna.in
6. www.gstsindhant.in
7. https://www.voyagersworld.in/content/gst-travel-and-tourism
8. http://blog.numberz.in/2017/06/05/gst-impact-hospitality-tourism-industry/ .
9. http://carajput.com/learn/post.php?page=gst-impact-on-tourism-industry
10. http://www.thehindu.com/news/cities/mumbai/gst-makes-india-inhospitable-says-tourism-sector/article18511558.ecc
11. https://yourstory.com/read/93b2ad82b6-impact-of-gst-on-the-t
12. https://www.hellotravel.com/stories/impact-of-gst-on-travel-industry
13. https://cleartax.in/s/impact-of-gst-hospitality-industry
14. https://www.ibef.org/industry/indian-tourism-and-hospitality-industry-analysis-presentation
15. https://www.ibef.org/industry/tourism-hospitality-india.aspx

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

रीतिकालीन ऐतिहासिक कविया करणीदान और उनका सूरज प्रकाश

सुरेन्द्र शक्तावत *

प्रस्तावना – राजस्थान के वीर रस के महान् कवि करणीदान अपने युग के उद्‌भट विद्वान थे। इनके जीवन पर वीर विनोद के प्रणेता राजस्थान के सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्यामलदास दधवाड़िया ने प्रकाश डालते हुए इन्हें शूलवाड़ा गाँव का निवासी माना है।[1] कर्नल जेम्स रॉड ने इनका जन्मस्थान कन्नौज माना है।[2] चारणों की बही में कवि के वंशजों ने उनका जन्मस्थान आमेर रियासत का डोंगरी ग्राम बताया है। यह डोंगरी ग्राम कवि के पूर्वज कविया श्री डूँगरसी को मिर्जा राजा मानसिंह ने दान दिया था। कवि के पिता का नाम विजयराम एवं माता का नाम इतियाबाई था। इनके पिता विजयराम भी श्रेष्ठ कवि व मान्य व्यक्ति थे। करणीदान जन्मजात बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे।

आगे चलकर वे खंगारोतो के सेवा नामक ठिकाने में आए। वहाँ के ठाकुर सुलताण सिंह ने इनकी कविता पर प्रसन्न होकर रथ, घोड़े और नौकर भेंट में दिए। वहाँ से चलकर ये आमेर आए। इन्होंने संस्कृत प्राकृत आदि ग्रन्थों का अध्ययन किया। वहाँ से चलकर शाहपुरा नरेश उम्मेदसिंह जी के दरबार में आए। उम्मेदसिंह जी ने इनकी कविता से प्रभावित होकर लाख पसाव दिए। करणीदान जी लम्बे समय तक उदयपुर भी रहे। महाराणा संग्राम सिंह एवं महाराणा जगत सिंह ने इनका काफी सम्मान किया। महाराणाओं की प्रशंसा में इन्होंने कविता लिखे। उदयपुर में ही जोधपुर महाराजा अभयसिंह जी ने इनकी प्रतिभा देखकर जोधपुर के लिए महाराणा से करणीदान की माँग की। शाहपुरा नरेश व उदयपुर महाराणा ने इन्हें जोधपुर भेज दिया। कविया करणीदान का अधिकांश जीवन जोधपुर में ही बीता। यहीं उन्होंने अपनी प्रतिभा, राजनैतिक सूझबूझ एवं शौर्य से खूब ख्याति अर्जित की। कर्नल जेम्स रॉड ने अपने राजस्थान के इतिहास में उनके विषय में लिखा –'करणीदान कविया जिस प्रकार से पहली श्रेणी के कवि थे, उसी प्रकार चतुर राजनीतिज्ञ, योद्धा और प्रकाण्ड पण्डित थे। प्रत्येक स्थिति में वह अपनी चतुरता का प्रमाण दिखाया करते थे। मारवाड़ के विग्रह के समय प्रत्येक राजनीतिक घटना में उन्होंने प्रशंसनीय भूमिका अदा की।'

जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के साथ कविराजा ने अनेक युद्धों में सक्रिय भाग लिया एवं अहमदाबाद युद्ध के पश्चात् अपना प्रसिद्ध काव्य 'सूरज प्रकाश' लिखा। उनके जोधपुर प्रवास का एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी महत्तवपूर्ण घटनाओं का परिचय मिलता है। स्पष्टवादिता इनमें कूट-कूट कर भरी थी। इन्होंने जयपुर व जोधपुर महाराजा के राज-परिवारों की कलंकित गाथा की निन्दा, उन्हीं के सम्मुख स्पष्ट शब्दों में की थी —

जयपुर और जोधाण पत दोनू थाप उथाप।
कुरम मारियो डीकरो कमधज मारियो बाप।।[3]

जोधपुर की गद्दी पर महाराजा रामसिंह बैठे। उनके पुत्र बख्त सिंह ने राजा रामसिंह की हत्या कर दी व गद्दी पर बैठ गया। इस घटना पर कवि ने आक्रोश व्यक्त करते हुए कहा —

बखता बखत बाहिरा क्यूं मार्‌यो अजमाल।
हिंदवाणी को शेवरो तुरकाणी को काल।।
प्रथम तात मारियो माता जीवती जलाई।
असी च्यार आदमी हत्या जारी पण आई।।
कर गह्यो इकलास वेग जैसिंग बुलायो।
मिट धम मरजाद भरम गाठ रो गमायो।।
कवियाणां हूतं केवा करै धरा उदक लेवण करी।
बखता जलम पाया पछै किसी बात आछी करी।।[4]

अर्थात् – हे बखतसिंह ! तूने जन्म लेकर कौनसा अच्छा कार्य किया है ? सर्वप्रथम तो अपने पिता की हत्या की एवं माता को जीवित जला दिया। अजीत सिंह को मारने के कारण, उनके पीछे सती होने वाली चौरासी स्त्रियों की हत्या का तू भागी है। तूने जयसिंह से गहरी मित्रता कायम कर उसे जोधपुर पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया। धर्म की मर्यादा छोड़कर तूने अपनी समस्त प्रतिष्ठा भी खो दी। कवियों से तू शत्रुता रखता है और तेरे राज्य में पृथ्वी निरन्तर प्यासी रहती है।

बख्तसिंह के जोधपुर पर अधिकार हो जाने पर अन्य चारणों एवं पुरोहितों के साथ ही कविया करणीदान की जागीर का गाँव आलावास भी जब्त कर लिया। करणीदान को बहुत विरक्ति हुई और जोधपुर छोड़कर एकान्तवास हेतु रवाना हो गए। किसनगढ़ दरबार बहादुर सिंह जी इन्हें ससम्मान किसनगढ़ ले आए। दरबार ने इनको कैवाणिया गाँव जागीर में बख्श दिया। संवत् 1824 में शाहपुरा नरेश दरबार उम्मेद सिंह जी ने मरहठों के विरुद्ध उज्जैन (क्षिप्रा) के युद्ध में मेवाड़ी सेना का नेतृत्व किया। उम्मेद सिंह इस युद्ध में अत्यन्त वीरता से लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। करणीदान जी को जब उनके रण-कौशल एवं वीरगति पाने का समाचार मिला, तब उन्होंने एक गीत की रचना की-

खागधारा चापंड़ै जोम रचायो उजेण खेत।
मेक भारथेम उमेद नचायो महेश।।

कविया करणीदान का अन्तिम समय किसनगढ़ में ही बीता। उनकी मृत्यु संवत् 1838 के बाद कभी हुई क्योंकि संवत् 1838 में किसनगढ़ दरबार की मृत्यु के समय ये जीवित थे।

कविया करणीदान अपने समय के उत्यष्ट कवि थे। जोधपुर महाराजा अभय सिंह ने कविराजा की प्रशंसा में निम्नलिखित दोहा कहा था —

दूजा चारण देसरा सह पौसाक समान।
तुररो बीसोतर तणो कवियो करणीदान।।

* नीमच (म.प्र.) भारत

नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ के संग्रह में करणीदान से सम्बद्ध यह दोहा उपलब्ध है —

करनीदान सुजान कवि पख उजल पितमात।
तुम अमली के कहत हो, हो कदली के पात।।

गुजराती के प्रसिद्ध लेखक झवेरचन्द मेघाणी लिखते हैं कि –'शूरवीरना विरदगाणार कायशे ने रणशौर्य थी रोमांचित करणार, टूटती टेक ने टकावी जाणवार, पापी ने पण मोंडमोंड पापी कहणार शरणागत ने संहारवा मां राजरोषनी पण खेवना कणनार, अने गाजजवो अमारी धर्म पालनार, छता जरूरत पड़े तो जुट्टे पण चढ़नार स्वामी ने खातर शस्त्रों धरी ने संग्राम मां उतरणार वीर चारण करणीदान नूं दृष्टान्त राजपूताना नी तवारीख मा घणू उज्ज्वल छे।'[5]

परवर्ती कवियों में यह दोहा काफी प्रचलित है —

अभमल सिरखा राजवी, शेर जिसा उमराव।
हुवा न कोई होवसी, करण जिसा कवराज।।

सूरज प्रकाश – सूरज प्रकाश राजस्थानी भाषा का 7500 छन्दों में लिखा हुआ प्रबन्ध काव्य है। इस यति में जोधपुर के महाराजा अभय सिंह के जीवन की मुख्य घटनाओं का विशेषत: उनके युद्धों का विशद वर्णन है। प्रसंगवश कवि ने पौराणिक आधार पर राठौड़ वंश का वर्णन भी किया है।

प्रथम प्रकरण में मंगलाचरण के अन्तर्गत गणेश, सरस्वती, शिव, सूर्य और विष्णु की स्तुति की गई है। तदनन्तर ग्रन्थ के नामकरण पर प्रकाश डाला है। चूँकि राठौड़ सूर्यवंशी हैं, अत: सूर्यवंशी राजा इक्ष्वाकु से राठौड़ों की वंशावली प्रारम्भ की गई है। राजा दशरथ तक नामोल्लेख कर संक्षिप्त राम–कथा तत्पश्चात् कुश से लेकर पुंज तक का वर्णन इस प्रकरण में किया है।

द्वितीय प्रकरण में पुंज के तेरह पुत्रों व उनसे सम्बद्ध घटनाओं व वंशों का वर्णन करते हुए जयचन्द तक का उल्लेख है। जयचन्द ने अटक पार करके आठ मुसलमान बादशाहों को चुनौती दी थी। घमासान युद्ध हुआ। जयचन्द विजयी हुआ, उसने आठों बादशाहों को बंदी बनाया। राजा जयचन्द के पुत्र वरदायी सेन से फिर वंशावली का प्रारम्भ कर सीहा, आसथान, धूहड़ रायपाल रणमल्ल के जीवन की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख किया है। रणमल्ल बड़ा पराक्रमी था। मेवाड़ जाकर उसने अपने भानजे राणा कुम्भा के विद्रोहियों का काम तमाम करके उसे गद्दी पर बिठाया। राव जोधा रणमल्ल का पुत्र था। जोधा ने अपने रण–कौशल से राणा कुम्भा को संधि के लिए मजबूर कर दिया। राणा कुम्भा के साथ संधि के बाद राव जोधा ने वि.सं. 1515 की ज्येष्ठ सुदी एकादशी को चिड़ियाटूँक पर जोधपुर दुर्ग की नींव डाली और उसके नीचे नगर बसाया –

पनरैसे समत पनरोतड़ै सुदी जेठ ग्यारस सनढ़।
अवगाढ़ जोध रचिथौ इसौ गाढ़पूर जोधाण गढ़।।[6]

राव जोधा का उत्ताराधिकारी राव सूजा हुआ। सूजा का ज्येष्ठ पुत्र बाघा उसके जीवनकाल में ही स्वर्गवासी हो गया – अत: राव गागा जोधपुर का गद्दी पर बैठा। राव गागा के पश्चात् राव मालदेव जोधपुर का स्वामी हुआ। वह बड़ा प्रतापी शासक था। उसने एक–एक करके कई स्थानों की विजय प्राप्त की व मारवाड़ राज्य की सुव्यवस्थित स्थापना की। मालदेव के पश्चात् उदयसिंह व सूरसिंह शासक बने। इसी सूरसिंह का सूरज प्रकाश में विस्तृत वर्णन है। सूरसिंह ने गुजरात के उपद्रवियों का दमन किया एवं दक्षिण के वीर चम्पू को परास्त किया। जहाँगीर सूरसिंह का बहुत आदर करता था। उसने जालौर का परगना महाराज कुमार गजसिंह को देकर सिरोही के राव व मेवाड़ महाराणा को अधीन करने का आदेश दिया—

सीरोही धर सहर थोम अरबद्ध थुजाया।
दलेमांण देवड़ाँ लूटि डंडिपाथ लगाया।
धोकले राण मेवाड़ धर 'करण' साह चाकर कियौ।
गजसिंघ सिंघ सूराँ गरू इम तारागढ़ आवियौ।।[7]

चतुर्थ प्रकरण के प्रारम्भ में महाराजा गजसिंह के राज्यारोहण के साथ उनकी दक्षिण में खिड़कीगढ़, गोलकुण्डा, आसेर, सतारा आदि को विजय करने का उल्लेख है। मेवाड़ पर विजय हासिल करने पर बादशाह बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने कई जागीरें प्रदान कीं। राव अमरसिंह गजसिंह के ज्येष्ठ पुत्र थे। बादशाह ने इन्हें राव की उपाधि के साथ नागौर की जागीर दी थी। शाहजहाँ के दरबार में अमरसिंह की झड़प सलावत खाँ से हुई, जहाँ उनके साले अर्जुन गौड़ ने धोखे से इन्हें मार डाला। महाराजा गजसिंह के बाद जसवन्त सिंह मारवाड़ के स्वामी बने। जसवन्त सिंह ने दक्षिण अभियान में औरंगजेब की सहायता की, किन्तु औरंगजेब ने उनको बार–बार बदलते हुए अलग–अलग परगनों का सूबेदार बनाते हुए काबुल भेज दिया, उसी अभियान में जमरूद में छ: वर्ष बिताए और वहीं उनकी मृत्यु हुई —

इमदत खग बहु करि अचड़ सुख करि राज समाज।
परम हंस मिलियौ पवित्र राजहंस जसराज।।[8]

महाराजा जसवन्त सिंह के देहावसान के पश्चात् उनकी दो रानियों से अजीत सिंह और दलथंभण उत्पन्न हुए। दलथंभण का थोड़े ही समय में देहान्त हो गया। बादशाह औरंगजेब ने राजकुमार व रानियों को दिल्ली बुलवा लिया एवं मारवाड़ पर अधिकार करने के लिए फौजें भेज दीं। दिल्ली में उसने राठौड़ सरदारों को राजकुमार अजीत सिंह को हवाले करने के अनेक प्रलोभन दिए किन्तु राठौड़ इस प्रलोभन में न आए। मुगल सेना से घिरे वीरवर दुर्गादास के नेतृत्व में स्वाभिमानी राठौड़ों ने राजकुमार को गुप्त रूप से मारवाड़ भेज दिया। रानियों की इज्जत बचाने हेतु उन्हें काट कर यमुना में बहा दिया व लड़ते–भिड़ते मारवाड़ आ गए। औरंगजेब ने राव अमर सिंह के पौत्र इन्द्र सिंह को मारवाड़ का पट्टा लिखकर मारवाड़ में दुर्गादास व अजीत को पकड़ने भेजा। अनेक आक्रमणों के आद अन्तत: औरंगजेब का कब्जा जोधपुर पर हो गया, पर अजीत सिंह पकड़ में नहीं आया। गुप्त रूप से दुर्गादास के संरक्षण में अजीत सिंह का लालन–पालन होता रहा। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् युवा महाराजा अजीत सिंह ने जोधपुर पर आक्रमण कर अपने पैतृक राज्य पर अधिकार कर लिया। अट्ठाईस वर्ष बाद अजीत सिंह मारवाड़ का स्वामी बना। उसने गंगाजल छिड़क कर राजधानी को शुद्ध कराया तब राज–सिंहासन पर बैठा। औरंगजेब के उत्ताराधिकारी बहादुर शाह को मजबूरन अजीत सिंह से मेड़ता में संधि करनी पड़ी। बादशाह ने दक्षिण की अशान्ति दबाने के लिए राजा जयसिंह और अजीत सिंह को साथ लिया। पीछे धोखे से उसने सेना भेजकर जोधपुर पर अधिकार कर लिया। महाराजा अजीत सिंह को जब यह ज्ञात हुआ तो उसने बादशाह का साथ छोड़ दिया व जयसिंह एवं दुर्गादास के साथ उदयपुर जाकर महाराणा अमरसिंह से मिले। मेवाड़ी फौज को साथ लेकर जोधपुर पर पुन: कब्जा कर लिया, वहाँ से आगे बढ़ते हुए डीडवाना, साँभर और आमेर को जीत लिया। इस प्रकार जयसिंह पुन: आमेर का राजा बना।

छठे प्रकरण में फर्रूखसियर के समय में महाराजा अजीत सिंह की राजनैतिक स्थिति दिल्ली दरबार में सुदृढ़ थी। जब सैयद बन्धुओं और फर्रूखसियर के बीच मनमुटाव हुआ। महाराजा भी अपने सरदारों सहित दिल्ली पहुँचे। दिल्ली में प्रवेश के समय उन्हें अपनी माताओं एवं उन बलिदानी राठौड़ वीरों का स्मरण हो आया जिन्होंने अपने शिशु–स्वामी को बचाने के

लिए प्राणोत्सर्ग कर दिए थे। उनके मन में मुगलों के विरुद्ध प्रतिशोध की भावना भड़क उठी, किन्तु उस समय शान्त रहे। दिल्ली में उनके व सैयद बन्धुओं के बीच यह संधि हो गई कि बादशाह के हटने के बाद हिन्दुओं पर जजिया कर न लगाया जाएगा और उनकी धार्मिक उपासना में किसी प्रकार की बाधा न पहुँचाई जाएगी। सैयदों ने बादशाह को गिरतार कर मार डाला। सैयद बन्धुओं और महाराजा अजीत सिंह ने महल लूटकर परस्पर बाँट लिया। अजीत सिंह की मृत्यु के समय महाराज कुमार अभय सिंह दिल्ली में थे।

सप्तम प्रकरण में उल्लेखित है कि बादशाह मुहम्मद शाह ने दिल्ली में महाराज कुमार अभय सिंह का स्वयं राज्याभिषेक किया। उसे बहुमूल्य वस्तुएँ भेंट कीं तथा नागौर के शासन की सनद दी। मारवाड़ में अभय सिंह का भव्य स्वागत हुआ। गुजरात में सर बुलन्द खाँ ने विद्रोह कर दिया था, उसे दबाने के लिए बादशाह ने अभय सिंह को जिम्मेदारी दी। अजमेर तथा गुजरात की सनद के साथ विभिन्न अस्त्र-शस्त्र और इकतीस लाख रुपये देकर रवाना किया। अभय सिंह अपने भाई बख्त सिंह के साथ अहमदाबाद की ओर रवाना हुए। सर बुलन्द खाँ ने भी अपनी तैयारियाँ पूरी कर रखी थीं। कवि ने महाराजा अभय सिंह द्वारा किए गए इस युद्ध का विशद वर्णन किया है। कवि युद्ध में स्वयं उपस्थित था - अत: उसने राठौड़वाहिनी के श्रेष्ठ वीरों का युद्ध-वर्णन यथार्थ रूप में किया है। तत्पश्चात् चौहानों, सोनगरों, कछवाहों, देवड़ों, मागरियों, राजपूतों, पुरोहितों, चारणों, ब्राह्मणों, भण्डारियों द्वारा किए गए युद्ध का वर्णन है।

बड़ी फौज इण विध विहद वरण कही विस्तार।[9]
इण आगल अधराज रो समहर बरणत सार।।

अधराज अथवा राजाधिराज बख्तसिंह का युद्ध-वर्णन कवि ने कुछ विस्तार से किया है। तत्पश्चात् कवि बख्तसिंह की सेना के राजपूत, चाँपावत, शेखावत आदि के युद्ध का वर्णन करता है। फिर कवि ने सर बुलन्द खाँ की सेना की क्षति का वर्णन किया है। सर बुलन्द खाँ ने अपनी हार को निश्चित मानकर महाराजा अभयसिंह से संधि कर ली। उनको आत्म-समर्पण कर वह आगरा चला गया। फिर युद्ध जीतने के उपलक्ष में होने वाले आनन्द-उत्सव का कवि ने वर्णन किया है तथा महाराजा अभय सिंह के शासन की प्रशंसा की है। ग्रन्थ के अन्त में कवि ने सूरज प्रकाश का रचना-काल (वर्ष, मास, तिथि, वार सहित), रचना में लगी अवधि और ग्रन्थ का परिमाण तथा छन्दों की कुल संख्या भी दे दी है —

सत्रैसे समत सत्यासिये बिजे दसमी सनिजीत।
बदि कातिक गुण वरणियो दसमी वार अदीत।।
वणियो गुण इक वरस विच उकति अरथ अणपार।
छन्द अनुष्टुप करिउ जन, सत पंच सात हजार।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कविराजा श्यामलदास -वीर विनोद भाग-2- पृ. 966.
2. कर्नल जेम्स टॉड — एनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज़ ऑफ राजस्थान- भाग-2- पृ. 170.
3. मरूभारती- वर्ष 6 अंक 3
4. रामकृष्ण दुग्गड़ -कविया करणीदान और सूरज प्रकाश- पृ. 31.
5. झवेरमल मेधाणी -चारणो अने चारणी साहित्य- पृ. 10.
6. करणीदान -सूरज प्रकाश- भाग 1 पृ. 251.
7. कविया करणीदान - सूरज प्रकाश भाग 1 पृ. 297.
8. वही भाग 2 पृ. 24.
9. रामकृष्ण दुग्गड़ - कविया करणीदान और सूरज प्रकाश- पृ. 60.

****

देश का ईंट–भ ट्टा उद्योग–समस्याएं एवं सुझाव

डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति *

शोध सारांश – देश में साधारण ईंट–भट्टा उद्योग का आर्थिक विकास एवं रोजगार को बनाये रखना तथाआवास व रोजगार उपलब्ध कराने के लक्ष्य को सकारात्मकता प्रदान करता है। इसलिए हमने इस साधारण ईंट–भट्टा उद्योग की समस्या व सुझाव का अध्ययन किया है।

प्रस्तावना – ईंट–भट्टा उद्योग खनिज (मिट्टी) पर आधारित एक महत्वपूर्ण उद्योग है, जिसका अस्तित्व बुनियादी सुविधाओं के ढांचा प्रदान करने तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों के साथ देश के आवास व्यवस्था के विकास के लिए आवश्यक है। आज हमारे देश में ईंट–भट्टा उद्योग जहाँ एक ओर लाखों व्यक्तियों को रोजगार प्रदान कर रहा है, वहीं दूसरी और 'सबको छत' उपलब्ध कराने के राष्ट्रीय मिशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। अर्थात् ईंट–भट्टा उद्योग राष्ट्रीय अधोसंरचना का आधार स्तंभ है। दो किसी भी देश के आर्थिक व सामाजिक स्वर रूप को प्रकट करता है। यद्यपि हाल ही के कुछ वर्षों एवं चालू वर्ष में ईंट पकाने से होने वाले धूएं (प्रदूषण) के कारण देश के ईंट–भट्टा उद्योग को कुछ झटका लगा है। लेकिन देश में कच्चे माल क प्रचूर सम्भावनाओं, उपलब्ध श्रम शक्ति और भारी आंतरिक (बाजार) मांग की उपलब्धता के कारण इसके उज्ज्वल भविष्य की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता।

भारत में ईंट–भट्टा उद्योग परम्परागत तकनीक से असंगठित क्षेत्र में अशिक्षित समुदाय के हाथों में स्व रोजगार के उद्देश्य से संचालित है। केन्द्र एवं राज्य शासन के किसी भी विभाग के पास ईंट–भट्टा उद्योग के संबंध में कोई प्रमाणित जानकारी उपलब्ध नहीं है। फिर भी गैर सरकारी संगठन एवं ब्रिक्स एण्ड टाईल्स न्यूस 1995 के अनुसार देश में 30 हजार से 50 हजार ईंट–भट्टों की इकाईयां संचालित है, जो प्रतिवर्ष 50 मिलियन ईंटों का उत्पादन कर स्थानीय स्तर पर निर्माण उद्योग (आवास निर्माण) की आवश्यकता की पूर्ति करते है। आज देश एवं म.प्र. में ईंट–भट्टा उद्योग इकाईयों की संख्या क्रमश: दो लाख एवं 20 हजार होने का अनुमान है। देश में ईंट–भट्टा उद्योग से करीब 30–35 लाख लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से रोजगार प्राप्त है। देश की कुळ ऊर्जा खपज का 27 प्रतिशत हिस्सा एवं 7.3 से 10 मिलियन टन जैविक ऊर्जा (गोबर) की खपत ईंट–भट्टा उद्योग में ईंटों की पकाई पर खर्च होती है एवं इसी उद्योग में सबसे ज्यादा मिट्टी की खपत होती है।

प्राचीनकाल मोहन जोदडो, हड़प्पा सभ्यताओं से आधुनिक काल तक के भवन निर्माताओं द्वारा 'ईंट' की उपयोग के लिए चुने जाने के कारण इसमें मौजूद कुछ विशेषताएं है। जो आधुनिक भवन निर्माण में भी उपयोगी सिद्ध है। 'ईंट' लोचदार गारे (मिट्टी) को सांचे के माध्यम से प्रदान की गई एक आयतकार आकृति है। जो मजबूत, टिकाऊ तथा प्राकृतिक अभिकर्ताओं (जैसे–धुप, ठंड, वायु, वर्षा इत्यादि) द्वारा पड़ने वाले अपशय प्रभाव को काफी हद तक सहने वाली होती है। अर्थात् मिट्टी की ईंट से निर्मित मकान सभी मौसम में वातानुकूलि त होता है। एक शोध में पाया गया है कि वे सीमेन्ट, फ्लाईऐस व अन्य रसायानिक सामग्री के द्वारा निर्मित ई टों के मकान में रहने से मानव को कई बीमारियों का सामना करना पड़ता है। जबकि मिट्टी की ईंटों से बने मकानों में ऐसी कोई समस्या नहीं आती है। तथा मिट्टी की ईंट की उम्र 10000 साथ से भी अधिक है तथा सीमेन्ट की ईंटों की उम्र 30–40 वर्ष होती है।

ईंट उत्पादन में मिट्टी आधार भूत कच्चा माल है जिसका देश व म.प्र. के अधिकांश भागों में पर्याप्त भंडार उपलब्ध है। भारत में मुख्यत: जलोढ मिट्टी, काली मिट्टी, लाल तथा पीली मिट्टी पाई जाती है। परन्तु मध्यप्रदेश भारत के दक्षिणी पठार का भू–भाग है जहां अवशिष्ट मिट्टी मिलती है। जिसमें काली, साधारण काली, दोमट, लाल तथा पीली मिट्टी प्रमुख है। ईंट उत्पादन में सभी प्रकार की मिट्टी का प्रयोग किया जाता है तथा इन विभिन्न मिट्टी मिश्रण के अनुपात का ज्ञान इन्हें पैतृक व्यवसायिक गुण के कारण प्राप्त रहता है।

वर्तमान परिदृश्य में ईंट–भट्टा उद्योग– वर्तमान स्थिति में अधिकांश ईंट–भट्टा उद्योग कुटीर उद्योग के रुप में जाति विशेष के हाथों में स्वयं के लिये रोजगार की व्यवस्था करने के उद्देश्य से श्रम प्रधान तकनीक द्वारा देश में संचालित है। इन उद्योगों में उत्पादन कार्य वर्ष में 5 से 6 माह होता है जो पठारी क्षेत्रों में प्रतिदिन प्रति इकाई (प्रतिघोल) तीन से चार हजार ईंटों का उत्पादन करती है। जिसमें 6 से 10 श्रमिक प्रतिदिन की खपत होती है। तथा स्थायी (भूमि भवन को छोड़कर) एवं कार्यशील पूंजी के रूप में क्रमश : 5 से 10 लाख रुपये तक का विनियोग होता है जो ब्रिकी क्षमता एवं ई ट–भट्टे के आकार के अनुसार परिवर्तनशील है। फिर भी प्रति श्रमिक पूँजी विनियोजन 50 हजार से एक लाख रुपये का होता ही है। ईंट–भट्टे के इस छोटे आकार को साधारण ईंट–भट्टा (उश्ररर्ीी) के नाम से जाना जाता है।

ईंट–भट्टा उद्योग को जब आम आदमी संचालित अवस्था में देखता है तो उसके मन में यह बात छाप छोड़ देती है कि ईंट–भट्टा उद्यमी तो मिट्टी का पैसा बनाते है। परन्तु यदि ईंट–भट्टा उद्योग के आर्थिक पहलु (लागत) पर नजर डाले तो स्थिति विपरीत नजर आती है। अग्र ईंटों के निर्माण में प्रयुक्त विभिन्न सामग्रियों एवं श्रम का मूल्य आंका गया है। वैसे देश एवं प्रदेश के विभिन्न भागों में ईंटों की उत्पादन लागत एवं ईंटों का मूल्य अलग–अलग होता है। फिर भी म.प्र. के नीमच जिले के साधारण ई ट भट्टे को लेकर ये लागत गणना टेबल ईंटों को लेकर की है–

* स्कीम नं. 21, मकान नं. 10,ग्वालटोली, नीमच (म.प्र.) भारत

क्र.	सामग्री	प्रति हजार टेबल ईंटों की लागत
1.	स्थायी लागत	175
2.	परिवर्तनशील लागत	
	(अ) सामग्री	1433
	(ब) श्रम	1713
	(स) अन्य लागत	244
3.	उत्पादन में सामान्य एवं	356
	असामान्य हानि (10 प्रति.)	3921

वर्तमान में देश के कुछ राज्य व जिले को छोड़कर प्रति हजार ईंटों की कीमत 4000–4200 रुपये है। जिसके हिसाब से 79–279 रुपये प्रति हजार ईंटों पर लगभग लाभ प्राप्त करते हैं, जिससे उद्यमी को प्रति वर्ष 5 से 6 लाख ईंटों के वार्षिक उत्पादन पर 56 से 279 हजार रुपये तक वार्षिक लाभ प्राप्त होता है। परन्तु यदि ईंट कम पकी या ज्यादा पकी या आकस्मिक वर्षा से कच्ची ईंटें गलकर नष्ट हो गयी तो भट्टा उद्यमी को लाभ के स्थान पर हानि भी उठानी पड़ती है।

समस्याएं – केन्द्र एवं राज्य सरकार की पिछली 69 वर्षों की सारी योजनाएं ईंट–भट्टा उद्योग को उपेक्षित कर बनाई गयी है। तथा केन्द्र व राज्य शासन ने गत वित्तीय वर्ष 2017 में भी ईंट–भट्टे के विकास का कोई प्रॉवधान नहीं किया है। ईंट–भट्टा उद्योग आज शासन के वांछित प्रोत्साहन के बिना अनेक प्रकार की समस्याओं से जुझ रहा है। जिनमें प्रमुख समस्याएं निम्न है –

- सरकार द्वारा मिट्टी खनन संबंधी लीज (रायल्टी) के नियमों में बार–बार किया जाना वाला परिवर्तन व शहर से दूर ईंट–भट्टा स्थापित करने की गाइड लाईन से स्थायित्व का अभाव।
- कच्ची ईंटों को पकाने के दौरान होने वाले धुएं से पर्यावरण संबंधी अनेक उपजी समस्याएँ व प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की जटिल नियमों का पालन करना पड़ता है।
- ईंट–भट्टा उद्योग के उद्यमियों से वन विभाग, श्रम विभाग, यातायात विभाग, खनिज विभाग, विद्युत विभाग, राजस्व विभाग, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड कुछ तो भी कानून बताकर आए दिन चालान करते रहते है।
- देश में अधिकांश ईंट–भट्टों द्वारा ईंट–उत्पादन के लिये पुरानी अविकसित 'श्रम प्रधान' तकनीक का प्रयोग किया जाना व शासन के आर्थिक सहयोग का अभाव होना।
- प्रत्येक शहर के प्रत्येक 'मास्टर प्लान' में ईंट–भट्टा उद्योग को शहर से दूर स्थानान्तिरत करने की योजना प्रस्तावित करने की समस्या।
- देश के ईंट–भट्टा उद्योग में संगठित विपणन एवं प्रबंध व्यवस्था का अभाव है। उद्योग असंगठित है।
- पुरानी तकनीकी से उत्पादित ईंटों में गुणवत्ता एवं उत्तम किस्म का अभाव पाया जाना।
- देश में ईंट उत्पादन की आधुनिक तकनीक की जानकारी एवं प्रशिक्षण व्यवस्था का अभाव होना। तथा शासन के कौशल विकास योजना द्वारा इस उद्योग पर ध्यान न देना।
- ईंट–भट्टा उद्योग मिट्टी पर आधारित एक मौसमी एवं कच्चा उद्योग है, जिस कारण बैंकों द्वारा इन उद्योगों को ऋण उपलब्ध नहीं कराया जाता जिससे इन उद्योगों में वित्तीय संकट बना रहता है। बीमा कंपनी कच्ची ईंटों का बीमा नहीं करती है।
- देश में परम्परागत 'श्रम प्रधान तकनीक' द्वारा ईंटों का उत्पादन किये जाने से लागत अधिक एवं लाभ कम होना। ये उद्योग रुग्ण (बीमा) अवस्था को प्राप्त है।
- देश में केन्द्रीय माटी कला बोर्ड का अभाव होना व कई राज्यों में गठित माटी कला बोर्ड को 'आथिक शक्ति' प्रदान न करना।
- मिट्टी की ईंटों के अतिरिक्त जो अन्य सामग्री जैसे सीमेन्ट, फ्लाई ऐस, प्लास्टर या अन्य रासायनिक सामग्री के मिश्रण से जो ईं ट बन रही रही है व उनका उपयोग मकान निर्माण में किया जा रहा है। उसके शीघ्रकालीन दुष्प्रभाव से जनता को अनभिज्ञ रखना, आदि।

सुझाव –

- देश में ईंट–भट्टा उद्योग कुटीर /लघु पैमाने पर असंगठित क्षेत्र में संचालित है, अत: सरकार को इन उद्योगों का विकास एवं सुधार करने हेतु इन्हें संगठित करना चाहिए।
- राष्ट्रीय विकास परिषद व नीति आयोग को 'ईंट–भट्टा उद्योग' के विकास एवं अनुसंधान के लिए बजट में अलग से राशि आबंटित करने का प्रॉवधान लाना चाहिए।
- ईंट–भट्टा उद्योग में ईंट उत्पादन के दौरान आकस्मिक वर्षा से जो कच्ची ईंटें गलकर नष्ट हो जाती है, इस हानि से बचाव हेतु देश में 'ईंट–भट्टा उद्योग बीमा योजना' लागू करना चाहिए। एस.डी.एम. जो राजस्व नियम 6 (4) के अनुसार जो क्षतिपूर्ति देते है उन्हें जिले में प्रचलित मजदूरी दर के मान से ईंटों की गिनती के नुकसान के अनुपात में क्षतिपूर्ति राशि देना चाहिए।
- देश के प्रत्येक जिले के जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों एवं जिला ग्रामोद्योग केन्द्रों पर ईंट–भट्टा उद्योग की आधुनिक तकनीक की प्रमाणित जानकारी एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था शासन द्वारा उपलब्ध करना चाहिए।
- ईंट–भट्टा उद्योग के लिए 'मिट्टी' आधारभूत कच्चा माल है। अत: मिट्टी खनन संबंधी नियमों का सरलीकरण कर इन्हें स्थायित्व प्रदान करना चाहिए।
- ईंट–भट्टा उद्योग बाहुल्य शहरों में मिट्टी वाले क्षेत्र को 'ब्रिक्स इण्डस्ट्रीज फील्ड' शहर की विकास योजना में आवश्यक सुविधाओं के साथ प्रस्तावित कर घोषित करना चाहिए।
- केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 2022 तक प्रत्येक परिवार को पक्का मकान उपलब्ध कराने की घोषणा के बाद भी मिट्टी की ईंटों के निर्माण में ईंट–भट्टा उद्योग के विकास हेतु केन्द्र व राज्य शासन ने कोई योजना या नीति प्रत्यक्ष रूप से नहीं बनाई है।
- देश में कोयला शक्ति (ईंधन) की बचत एवं प्रदूषण को नियंत्रित करने हेतु शासन को सस्ती आधुनिक तकनीक उपलब्ध कराना चाहिए, व योंकि वर्तमान में आधुनिक भट्टा स्थापित करने की लागत (भूमि भवन को छोड़कर) करीब 30 से 50 लाख रुपये है, जो हमारे देश के गरीब ईंट–भट्टा उद्यमियों की क्षमता से बाहर है।
- ईंट–भट्टा उद्योग स्थापित करने हेतु जिला व्यापार एवं कुटीर उद्योग केन्द्र एवं जिला खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग को मार्जिन राशि योजना की क्षमता 30 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत तक करना चाहिए तथा वित्त उपलब्ध कराने हेतु सरल एवं शिथिल नियमों को व्यवहार में लाना चाहिए। जिसमें बीमार ईंट–भट्टा उद्योग को 'जीवनदान' मिल सकें।
- शासन के पास ईंट–भट्टा उद्योग से संबंधित सभी संगत सूचनाओं का

अभाव है। अत: आवश्यक है कि शासन या शासन की एजेंसी के पास जिले/ प्रदेश में चल रहे पंजीकृत व अपंजीकृत ईंट-भट्टा उद्योग की अद्यतन जानकारी उपलब्ध हो, ताकि शासन, जन एवं जनप्रतिनिधि इसके महत्वपूर्ण पहलुओं से अवगत हो सके एवं रोजगार को महत्व दे सकें।

- संगठित ईंट-भट्टा संस्थाओं को कन्ट्रोल रेट पर कोयला उपलब्ध कराना चाहिए।
- देश में ईंट-भट्टा उद्योग अधिकांश श्रम प्रधान तकनीक द्वारा संचालित है तथा देश में बाहुल्य जनसंख्या वाले देश में रोजगार में वृद्धि हेतु तथा राष्ट्रीय लक्ष्य प्रत्येक परिवार को पक्का 'मकान' व 'शौचालाय' उपलब्ध करवाने हेतु भी ईंट-भट्टा उद्योग को शासन का महत्व प्रदान करना चाहिए।
- शासन को ईंट-भट्टा उद्योग के विकास हेतु विभिन्न विभागों द्वारा जो कुछ तो भी कानून बताकर ईंट-भट्टे वालो से जो अवैध वसूली करते है उन पर रोक लगाना चाहिए। जो 'भ्रष्टाचार' मुक्त भारत के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु आवश्यक है ।

यदि संबंधित हितग्राही एवं योजनकार नीति आयोग उक्त समस्याओं एवं सुझावों पर ध्यान देती है तो देश व प्रदेश में निश्चित रूप से रोजगार की गारंटी में वृद्धि होगी तथा शासन को प्रत्येक परिवार को 'मकान' व 'शौचालाय' व रोजगार देने का लक्ष्य पूरा हो सकेगा ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

समाचार-
1. ब्रिक्स एवं टाईल्स न्यून सन् 1995
2. दैनिक ललकार, नीमच पृ.क्र. 2, दिनांक 10 नवम्बर 2003
3. नई विधा, नीमच पृ.क्र. 2 दिनांक 22.9.2003, पृ. क्र. 4 दिनांक 3.11.2003
4. जन चिंगारी, पृ.क्र. 4 दिनांक 23.10.2003
5. मालवा टूडे, पृ.क्र. 3 दिनांक 7.6.2015

शोध पुस्तक -
1. ई ट-भट्टा उद्योग (आर्थिक एवं सामाजिक विश्लेषण म. प्र. के विशेष संदर्भ में) प्रकाशन वर्ष 2012 पृ.क्र. 40, 41, 52, 195, 276, 354

संस्थाएं-
1. केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्था रुड़की (उ.प्र.)
2. कुम्हार ई ट-भट्टा व्यवसायिक समिति, नीमच (म.प्र.)
3. म.प्र. ब्रिक्स मेन्यूफेक्चरिंग एसोसिएसन, इन्दौर (म.प्र.)
4. श्री दक्ष वेलफेयर एण्ड चेरिटेबल सोसायटी, होशियापुर पंजाब
5. अमृत माटी इंडिया ट्रस्ट, जयपुर (राज.)
6. अखिल भारतीय प्रजापति होरोज आर्गनाइजेशन हिसार, (हरियाणा)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

म.प्र. के पर्यटन विकास में पर्यटन मंत्रालय की योजनाओं का योगदान

डॉ. सोनिया शर्मा *

प्रस्तावना – पर्यटन एक बहुआयामी, गतिशील एवं मौसमी क्रिया है जिसका दायरा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय है तथा इसकी विषयवस्तु (पर्यटक) मानव है जिसके विचार, आदतें, आवश्यकता, अभिरुचियाँ एवं अभिवृत्तियाँ बदलती रहती हैं, जिसका उद्देश्य शिक्षा, शान्ति, सद्‌भाव, मनोरंजन एवं आनन्द की अनुभूति प्राप्त करना है, इसकी सांगठनिक संरचना एवं व्यावसायिक भूमिका है, इसका सम्बंध सरकार व्यावसायिक संगठनों, यातायात सेवा संगठनों, होटलों, पर्यटन आवास श्रृंखलाओं, एजेन्टों, यात्रा संचालकों, सहयोगियों एवं सहायक सेवाओं से है। वर्तमान में यह विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाली महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया (उद्योग) है एवं अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति सद्‌भाव, भाईचारा एवं अन्तर्राष्ट्री सोहार्द्र बढ़ाने वाली क्रिया है।[1]

मध्यप्रदेश पर्यटन स्थलों की दृष्टि से समृद्ध है। प्रदेश में ऐसे बहुत से पर्यटन स्थल हैं जिनके द्वारा प्रदेश को पर्याप्त आय हो सकती है।
राज्य के पर्यटक आकर्षण स्थलों को मुख्य रूप से चार भागों में वर्गीकृत किया गया है:-

तालिका 1

ऐतिहासिक व पुरातात्विक	प्राकृतिक सौन्दर्य के परिपूर्ण	धार्मिक पर्यटन स्थल	वन्य प्राणी स्थल
खजुराहो	भेड़ाधाट	चित्रकूट	बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान
सांची	पचमढ़ी	उज्जैन	माधव राष्ट्रीय उद्यान
माण्डू		मैहर	पन्ना राष्ट्रीय उद्यान
ग्वालियर		अमरकंटक	पेंच राष्ट्रीय उद्यान
ओरछा		ओंकारेश्वर	संजय राष्ट्रीय उद्यान
भोपाल (नगर के ऐतिहासिक स्थल)		महेश्वर	सतपुड़ा राष्ट्रीय उद्यान
इन्दौर		पन्ना	वन विहार राष्ट्रीय उद्यान (भोपाल)
विदिशा		सलकनपुर	जीवाष्म राष्ट्रीय उद्यान कान्हा राष्ट्रीय उद्यान

पर्यटन मंत्रालय द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं पर एक दृष्टि
पर्यटन उद्योग में विविध प्रकार के पैमाने पर रोजगार सृजित करने की क्षमता है। भारत सरकार के पर्यटन मंत्रालय द्वारा पर्यटन अवसंरचना का संवर्धन करना, इनवांउड पर्यटन में वृद्धि के लिए सुविधाजनक वीजा प्रणाली एक पूर्वापाय है। पर्यटन मंत्रालय द्वारा ई-पर्यटक वीजा, ई व्यापार वीजा और ई चिकित्सा वीजा उपलब्ध कराये जा रहे हैं। विश्व के 161 देशों के नागरिकों के लिए ई-वीजा सुविधा का विस्तार किया गया है। घरेलू और अंतराष्ट्रीय पर्यटकों को योगा और पर्यटन से संबंधित जानकारी प्रदान करने के लिए और भारत में यात्रा के समय सलाह के साथ उनकी सहायता के लिए टोल फ्री बहुभाषीय पर्यटक इंफोलाईन हिन्दी व अंग्रेजी भाषा सहित 10 अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं में पर्यटन मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही है। यह सेवा टोल फ्री नंबर-1800111363 पर अथवा लघुकोड नंबर-1363 पर उपलब्ध है।म

- पर्यटन में मौसम का पहलू एक चुनौती है। पर्यटन मंत्रालय ने देश के निश उत्पदों की पहचान विविधतापूर्ण बनाने में क्रूज , रोमांचकारी क्रीडा, चिकित्सा, निरोगता, गोल्फ, पोलो, बैठक सम्मेलन और प्रदर्शनी, इको पर्यटन, फिल्म पर्यटन शामिल है। पर्यटन में संवर्धन के लिए सरकार ने अनेक पहलें की है वर्ष 2016-17 में इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल मीडिया में एक अंतराष्ट्रीय अभियान वैश्विक रूप में लांच किया गया। मंत्रालय ने सी0एन0एन0, बी0बी0सी0, डिस्कवरी, टी0एल0सी, यूरो न्यूज, सी0एन0बी0सी0, ट्रेवल चैनल, सी0बी0एस0 (यू0एस0ए), ताबी (जापान) सहित अग्रणी टेलीविजन चैनलों के साथ-साथ गूगल पर अपना अभियान आरम्भ किया है।
- बड़े निवेशों को आकर्षित करने के लिये वर्ष 2016 में नई दिल्ली में एक अतुल्य भारत पर्यटन इनवेस्टर्स समिति आयोजित की गई।
- पर्यटन मंत्रालय हमारे देश में लोगों की सांस्कृतिक और पाककला की विविधता प्रदर्शित करने राष्ट्रीय एकता को संवर्धित करने के उद्देश्य से भारत पर्व आयोजित करता है।
- वार्षिक अंतराट्रीय पर्यटन मार्ट द्वारा भी इस क्षेत्र को बढ़ावा दिया जा रहा है। जिससे अन्य व्यक्तियों के अलावा वैश्विक खरीददार उपस्थित् हुये।
- पर्यटन अवसंरचना के सृजन के लिये पर्यटन मंत्रालय की दो बड़ी प्लान योजनायें यथा स्वदेश दर्शन थीम, क्षेत्रिय परिपथों का एकीकृत विकास और ऐतिहासिक स्थलों और विरासत शहरों सहित देश में पर्यटन अवसंरचना के विकास के लिये तीर्थस्थल जीर्णोद्धार और आध्यात्मिक संवर्धन अभियान है।
- स्वदेश दर्शन योजना का विजन पर्यटकों के अनुभवों को समृद्ध करने और रोजगार के अवसरों को बढ़ाने के लिये स्टॉक होल्डरों की आवश्यकताओं और सरोकारों पर फोकस करने के लिये प्रयासों में

* धाम मोहल्ला, पन्ना (म.प्र.) भारत

तालमेल कायम करने के द्वारा एकीकृत तरीके से उच्च पर्यटक मूल्य, प्रतिस्पर्धा एवं सततता के सिद्धान्त थीम आधारित पर्यटक परिपथों का विकास करना है। इस योजना के अंतर्गत 13 थीम आधारित परिपथों की पहचान की है। इसी प्रकार प्रसाद पर्यटन योजना के अंतर्गत भारत सरकार ने देश में 25 महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों की पहचान की है ये स्थल हैं - अमरावती (आंध्रप्रदेश) अमृतसर(पंजाब), अजमेर(राजस्थान), अयोध्या(उत्तरप्रदेश) , बद्रीनाथ (उत्तराखंड), द्वारका (गुजरात),देवधर(झारखंड),बेलूर(पश्चिम बंगाल), गया(बिहार), गुरूवायुर(केरल) हजरतबल (जम्मू और कश्मीर), कामाख्या(असम),कांचीपुरम(तमिलनाडू), कटरा(जम्मू और कश्मीर), केदारनाथ (उत्तराखंड), मथुरा(उत्तरप्रदेश), पटना (बिहार),पुरी (ओडिसा), श्रीसेलम(आंध्रप्रदेश),सोमनाथ (गुजरात), तिरूपति(आंध्रप्रदेश), त्रयंबकेश्वर(महाराष्ट्र), ओमकारेश्वर (मध्यप्रदेश),वाराणसी(उत्तरप्रदेश) और वेल्लकनी(तमिलनाडू)

- पर्यटन मंत्रालय ने ई-वीजा पर भारत आने वाले पर्यटकों के लिये प्री लोडेड सिम कार्ड प्रदान करने की पहल की है। इसकी शुरूआत भारत संचार निगम लिमिटेड के सहयोग से 15 फरवरी, 2017 को हुई है। इस पहल के अंतर्गत भारत संचार निगम, ई-वीजा पर भारत आने वाले पर्यटकों को सिमकार्ड प्रदान करेगा। इस पहल का उद्देश्य भारत प्रवास के दौरान विदेशी पर्यटकों को परिवार एवं मित्रों से जोड़े रखने के साथ-साथ पर्यटन मंत्रालय की बहुभाषी टोल फ्री हेल्पलाईन से किसी भी दुर्घटना इत्यादि के समय सम्पर्क करने का माध्यम प्रदान करना है।

मध्यप्रदेश में पर्यटन की असीम संभावनाओं को देखते हुए मध्यप्रदेश सरकार जागरूक है। मध्यप्रदेश पर्यटन विकास के मामले में उन अग्रणी राज्यों में शामिल हो जायेगा जहॉ सर्वाधिक पर्यटक जाना पसन्द करते हैं। वैसे भी मध्यप्रदेश अपनी बेजोड़ ऐतिहासिक और पुरातात्विक धरोहर, वन संपदा एवं प्राकृतिक सुन्दरता के कारण पर्यटन नक्शे पर तेजी से उभरा है। विगत वर्षो की अपेक्षा पर्यटकों की संख्या में काफी इजाफा हुआ है। वर्ष 2009 से 2013 तक 5 वर्षो में प्रदेश में पर्यटक आगमन में 172 प्रतिशत की वृद्धि हुई एवं इसी अवधि में विदेशी पर्यटकों की संख्या में 39 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। राज्य में नये पर्यटन जोन चिन्हित किये गये है, जिनमें इंदिरा सागर, गॉधी सागर, वाणसागर, खजुराहो, दतिया, ओरछा, सांची, माण्डू, तवानगर, चित्रकूट, तामिया, पातालकोट, सलकनपुर, पन्ना, चोरल, महेश्वर और अमरकंटक शामिल हैं। धार्मिक सांस्कृति पर्यटन को बढावा देने के लिए राज्य सराकार ने अमरकंटक मैहर, चित्रकूट, ओरछा, उज्जैन, ओंकारेश्वर, महेश्वर, पन्ना, दतिया, मुलताई, सलकनपुर, मंडला को पवित्र शहर घोषित किया है। इन स्थलों के विकास की विशेष कार्ययोजना बनाई गई है। परंतु खजुराहो जो कि विदेशी पर्यटकों के आगमन के हिसाब से मध्यप्रदेश में अव्वल स्थान पर हैं। वहां पर सरकार द्वारा विदेशी सैलानियों को आकर्षित करने के लिए विशेष प्रयास किये जा रहे हैं लाइट एंड साउंड सो, नौका बिहार, खजुराहो नृत्य महोत्सव, आदि। घरेलू पर्यटकों के आगमन में भारत में म0प्र0 का वर्ष 2015 में शीर्ष 10 राज्यों में सातवां स्थान था। भारत सरकार एवं मध्य प्रदेश सरकार की नीतियों के प्रचार-प्रसार के कारण वर्ष 2016 में घरेलू पर्यटकों के आगमन में प्रदेश चौथे स्थान पर आ गया है। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है, कि भारत सरकार व मध्य प्रदेश पर्यटन विभाग के प्रचार-प्रसार व नीतियों से पर्यटन उद्योग भली-भांति फला-फूला है।

भोपाल में पर्यटकों के लिए सैर-सपाटा संचालित है। यहॉ का आकर्षण पर्यटकों को सर्वाधिक पसंद आता है। ऋषिकेश की भॉति यहॉ भी उसी प्रकार का झूला बनाया गया है। पर्यटक इसी झूले के ऊपर से सैर-सपाटा का आनन्द लेते हैं।

मध्यप्रदेश ईको पर्यटन विकास बोर्ड के माध्यम से केरवा जंगल कैम्प , समर्धा जंगल कैम्प, कठौतिया जंगल कैम्प, रूखड़ जंगल कैम्प, भीलादेव ईको पार्क सहित अन्य स्थलों पर गतिविधियॉ संचालित हैं। हाल ही में ईको पर्यटन बोर्ड और देश के निजी इन्वेस्टर्स के साथ बैठक हुई। इसमें निजी इन्वेस्टर्स ने वाइल्ड लाइफ टूरिज्म एरिया बनाने के लिय कई महत्वपूर्ण उपायों पर विचार विमर्श किया जा रहा है। रातापानी अभयारण्य भी पर्यटकों की खास पसंद बन चुका है। भोपाल से पचमढी की ओर जाने वाले मार्ग पर सोहागपुर के निकट स्थित मढई में भी पर्यटकों की संख्या बढने लगी है। देशी विदेशी सैलानियों को मढई के जंगल को सौन्दर्य लुभाने लगा है। मध्यप्रदेश राज्य पर्यटन विकास निगम द्वारा नेशनल पार्क भ्रमण के लिये 6 नई जंगल बस सेवा आरम्भ की गई है, जिसमें पेंच में 01 बाधवगढ में 2 एवं कान्हा नेशनल पार्क में 03 बसें संचालित की जा रही हैं।

निगम द्वारा संचालित कारवान सुविधा को भी पर्यटक काफी पसन्द करते हैं। बताया जाता है, कि मध्यप्रदेश पहला राज्य है जो आने वाले पर्यटकों को यह सुविधा प्रदान करता है। हाल ही में पर्यटन मंत्रालय और नेशनल काउंसिल फॉर होटल मैनेजमेंट एंड केटरिंग टेक्नोलॉजी की ओर से आतिथ्य शिक्षा में उत्कृष्ट कार्य एवं विशिष्टता के लिये मध्यप्रदेश पर्यटन को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया गया है। यह पुरस्कार वर्ष 2012-13 के लिये हुनर से रोजगार प्रशिक्षण के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य के लिये मिला है। प्रदेश में पर्यटन को बढावा देने के लिए पर्यटन केबिनेट का गठन किया गया है। प्रदेश में टूरिज्म बोर्ड का भी गठन किया गया है । पर्यटन केबिनेट के अनुमोदन से पर्यटन क्षेत्र में निजी निवेश को बढावा देने के लिए पर्यटन नीति 2012 एवं 2014 अस्तित्व में थी परन्तु नीति में संशोधन कर नयी पर्यटन नीति 2016 जारी की गई है। इससे पर्यटन क्षेत्र में निवेशको के लिए अनुकूल बनाया गया है। पर्यटन क्षेत्र में निजी भागीदारी सुनिश्चित की जा रही है। पर्यटन परियोजनाओं की स्थापना के लिए लगभग 500 हेक्टेयर का लैण्ड बैंक स्थापित किया गया है। निजी निवेशकों को हैरिटेज परिसम्मपत्तियों और मार्ग सुविधा केन्द्रों के निर्वतन की सुविधा मुहैया कराने के लिए पूजीगत अनुदान भी दिया जा रहा है। वर्ष 2016-17 में 09 निवेशकों को भूमि आवंटित की जा चुकी है। जिस पर तकरीबन 250 करोड की राशि के निवेश से पर्यटन की परियोजनाए स्थापित होगी। पर्यटन परियोजनाओ में पहले 13 गतिविधिया शामिल थी अब 18 गतिविधिया शामिल है। इसमें हेल्थ फार्मर्स/वेलनेस सेंटर, म्यूजियम, एम्पोरियम, थीम पार्क, एडवेंचर स्पोर्टस, फिल्म स्टूडियो/शूटिंग अधोसंरचना, लाईट एण्ड साउण्ड शो/लेजर शो, कैरेवान एवं क्रूज टूरिज्म आदि नए क्षेत्र शामिल किये गये है। पूर्व में प्रचलित पर्यटन नीति में चयनित स्थलों पर अनुदान के स्थान पर अब पूरे देश में स्थापित परियोजनाओं को अनुदान की पात्रता में शामिल किया गया है। जल पर्यटन को बढावा देने के उद्देश्य से 15 वाटर बॉडी अधिसूचित की गई हैं। इसमें लैण्डअलोकेशन की प्रकिया को पूरी तरह पारदर्शी बनाया गया है। वर्ष 2016-17 में प्रदेश में वाइल्ड लाइफ सर्किट के लिए 92 करोड 21 लाख रूपये हेरिटेज सर्किट के लिए 99 करोड 77 लाख तथा बुद्धिस्ट सर्किट के लिए 74 करोड 94 लाख रूपये स्वीकृत किये गये है।

आध्यात्मिक पर्यटन को विकसित करने की दिशा में राज्य सरकार ने अनूठी पहल की है। कंबोडिया के अकारेवाट मंदिर समूह, श्रीलंका में सीता माता मंदिर दर्शन, चीन में कैलाश मानसरोवर यात्रा पर जाने वाले तीर्थ यांत्रियों के लिये सरकार द्वारा अनुदान देने का प्रावधान किया गया। कैलाश मानसरोवर यात्रा पर जाने वाले तीर्थ यात्रियों के लिए सराकर द्वारा अनुदान देने का प्रावधान किया गया है। कैलाश मानसरोवर की यात्रा पर प्रति यात्री अनुदान 30 हजार रूपये तक अनुदान राशि का प्रावधान है।

भारत सरकार एवं मध्य प्रदेश सरकार द्वारा पर्यटन के क्षेत्र में क्रियान्वित की जा रही अनेक योजनाओं पर व्यय होने से प्रदेश में आने वाले देशी एवं विदेशी पर्यटकों के आगमन के विशलेषण करने पर स्पष्ट प्रतीत होता हैं कि वर्ष 2012 में जहां कुल देशी पर्यटकों की संख्या 53197209 थी अगले 05 वर्षो में बढ कर वर्ष 2016 में 150490339 हो गई है इससे दर्शित होता है कि मध्यप्रदेश ने घरेलू पर्यटन क्षेत्र में विकास किया है लेकिन विदेशी पर्यटको की स्थिति का जायजा लिया जाए तो दर्शित होता है कि वर्ष 2016 में विदेशी पर्यटक की संख्या 363195 का आगमन हुआ है पिछले वर्षो की तुलना में वर्ष 2016 में विदेशी पर्यटको की संख्या में कमी आई है वर्ष 2015 मे जहा 421365 पर्यटको का आगमन हुआ वही वर्ष 2016 में विदेशी पर्यटको की संख्या में 13.8 प्रतिशत की कमी आई है। जिसे सारणी से स्पष्ट किया गया है।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

भारत सरकार द्वारा पर्यटन के क्षेत्र में क्रियान्वित की जा रही अनेक योजनाओं पर व्यय से प्रदेश में आने वाले देशी एवं विदेशी पर्यटकों के आगमन के विशलेषण करने पर स्पष्ट प्रतीत होता हैं कि योजनओं पर अत्याधिक व्यय होने के बावजूद भी मध्यप्रदेश राज्य में आने वाले विदेशी पर्यटको की संख्या देश के 10 राज्य/संघ राज्य क्षेत्रो में हिस्सेदारी का प्रतिशत ना के बराबर है। जिसको हम इस सारणी से स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं:–

तालिका 3 – 2016 में विदेशी पर्यटक यात्रा में शीर्ष 10 राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों की हिस्सेदारी

रैंक	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक आगमन संख्या	प्रतिशत (%) हिस्सा
1	तमिलनाडू	4721978	19.1
2	महाराष्ट्र	4670048	18.9
3	उत्तरप्रदेश	3156812	12.8
4	दिल्ली	2520083	10.2
5	पश्चिम बंगाल	1528700	6.2
6	राजस्थान	1513729	6.1
7	केरल	1038419	4.2
8	बिहार	1010531	4.1
9	गोवा	680683	2.8
10	पंजाब	659736	2.7
	शीर्ष 10 राज्यों का योग	21500719	87
	मध्यप्रदेश	363195	1.5
	अन्य	3207012	13
	कुल	24707732	100

मौजूदा आजीविका स्रोतों में और वृद्धि करने के लिए एक व्यवस्था विकसित करने की आवश्यकता है, जो विकास नियोजन के प्रारंभिक दौर से ही महसूस की जा रही थी। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर मेरे द्वारा भारत के पर्यटन उद्योग में रोजगार सृजित करनें एवं पर्यटकों की संख्या बढाने हेतु शासन द्वारा चलाई जा रही विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनओं की समीक्षा की जाना एवं उनमें आवश्यक सुधारात्मक कदम उठाये जाना आवश्यक है। भारत शासन के द्वारा अनेक योजनाओं के निर्मित एवं प्रचलित होने के बावजूद प्रदेश में देश के अन्य राज्यों की तुलना में पर्यटन की स्थिति अपेक्षित सुधार क्यों नहीं हो पा रहा है। वे क्या कारण है जिनके चलते शासन की योजनाऐं तथा विभिन्न कार्यक्रम पूर्ण सफल नहीं हो पा रहे हैं एवं इन कारणों का समाधान किस प्रकार किया जा सकता है जिससे प्रदेश में पर्यटन की स्थिति अन्य राज्यों की तुलना में बेहतर हो सके।

इसके लिये सुधारात्क कदम उठाये जाने चाहिए, जिससे मध्यप्रदेश भारत में ही नहीं अपितु अन्तराष्ट्रीय स्तर पर भी अपना स्थान बना सके।

1. पर्यटन क्षेत्र में पब्लिक प्रायवेट पार्टनरशिप (PPP) पर आधारित पर्यटक परियोजनाओं का समुचित विकास हो।
2. निजी निवेश को आकर्षित करने के लिए स्पष्ट पारदर्शी तथा मानक प्रक्रिया को स्थापित किया जाना चाहिए।
3. अधोसंरचना यथा सड़क, पेयजल, उर्जा स्वच्छता परिवहन तथा ठोस अपशिष्ठ प्रबंधन का निरंतर प्रोन्नयन किया जाना चाहिए।
4. स्थानीय निकायों को पर्यटन के प्रति संवेदनशील बनाकर उनकी सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए।
5. मेले स्थानीय व्यंजन संस्कृति वेशभूषा उत्पाद, कला, हस्तकला तथा विरासत के विपणन के लिये ग्रामीण पर्यटन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
6. पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए प्रदेश के विभिन्न शहरों को सड़क मार्ग बस सेवा तथा वायु सेवा से जोडने हेतु प्रभावी उपाय किये जाने एवं निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
7. स्थानीय प्रशासन के सहयोग तथा प्रक्रियाओं के सरलीकरण से साहसिक पर्यटन के लिये आवश्यक व्यवस्थायें स्थापित की जाना चाहिए।
8. निजी निवेश से हेरिटेज होटल की स्थापना को बढ़ावा देने के लिये अनुदान रियायते दी जानी चाहिए।
9. मार्ग सुविधा केन्द्रों का विकास किया जाना चाहिए प्रदेश में स्थित राष्ट्रीय राजमार्गो राज्य मार्गो एवं अन्य प्रमुख मार्गो पर योजना बनाकर लगभग 40 से 50 किमी की दूरी पर उच्च स्तरीय पर्यटक सुविधाओं का विकास पर्यटन विभाग द्वारा जारी मार्ग सुविधा केन्द्रो की स्थापना की जाना चाहिए।
10. मध्यप्रदेश पर्यटन उत्पादों के विपणन एवं विज्ञापन तथा ब्रांडिग के लिये राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक बाजारो तक पहुच बनाने हेतु प्रयास किया जाना चाहिए।
11. नये पर्यटन उत्पाद विकसित करने में गैर सरकारी संस्थाओं व्यावसायिक संस्थानों एवं विशेषज्ञों का सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।
12. डिजीटल एवं सोशल मीडिया प्लेटफार्म सहित संचार के सभी माध्यमों का विपणन, प्रचार एवं ब्रांडिंग में योजना बनाकर उपयोग किया जाना चाहिए।
13. निजी ट्रांसपोर्ट आपरेटर्स को पर्यटन क्षेत्रों से सम्बद्ध करते हुए गुणवत्ता

पूर्ण परिवहन सेवाए उपलब्ध कराने हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

निष्कर्षत: यह कथन मिथ्या नहीं होगा, कि मध्य-प्रदेश सरकार द्वारा इतनी योजनाओं और उनके क्रियान्वयन हेतु अपेक्षित राशि व्यय किये जाने के बावजूद भी प्रदेश को विदेशी पर्यटकों के आगमन एवं आकर्षण का केन्द्र बनाने वाला नतीजा कुछ स्तर पर न्यून चढ़ाव के अपवाद को छोड़कर ढ़ाक के तीन पात वाला ही दर्शित होता है। क्योंकि प्रदेश वर्तमान दशा में शीर्ष 10 राज्यों की सूॅची में विदेशी पर्यटकों के आगमन एवं आकर्षण का केन्द्र नहीं बन सका है। बावजूद इसके मध्य प्रदेश ऐतिहासिक व पुरातात्विक धरोहरों से युक्त, प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण, विश्व प्रसिद्ध धार्मिक स्थलों का गढ़ एवं राष्ट्रीय उद्यानों में समूचे देश में महत्वपूर्ण एकांकी स्थान रखता है।

अत: मध्य प्रदेश को पर्यटन का केन्द्र बनाने के लिये उपरोक्तानुसार दिये गये सुझावों को अंगीकार करना होगा। जिससे हमारा प्रदेश भारत वर्ष में ही नहीं, अपितु वैश्विक स्तर पर पर्यटन में अपना लोहा मनवाने में सफल हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पर्यटन एंव होटल उधोग प्रवन्घ सिद्धान्त एंव व्यवहार , डॉ अभिनव कमल रैना एंव डॅा भुराराम सारण पृ 10
2. http://tourism.gov.in/market-research-and-statistics
3. http://pib.nic.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=137204
4. http://mpstdc.com/

तालिका 2

वर्ष 2012		वर्ष 2013		वर्ष 2014		वर्ष 2015		वर्ष 2016	
देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी
53197209	275930	63110709	280333	63614525	316195	77975738	421365	150490339	363195

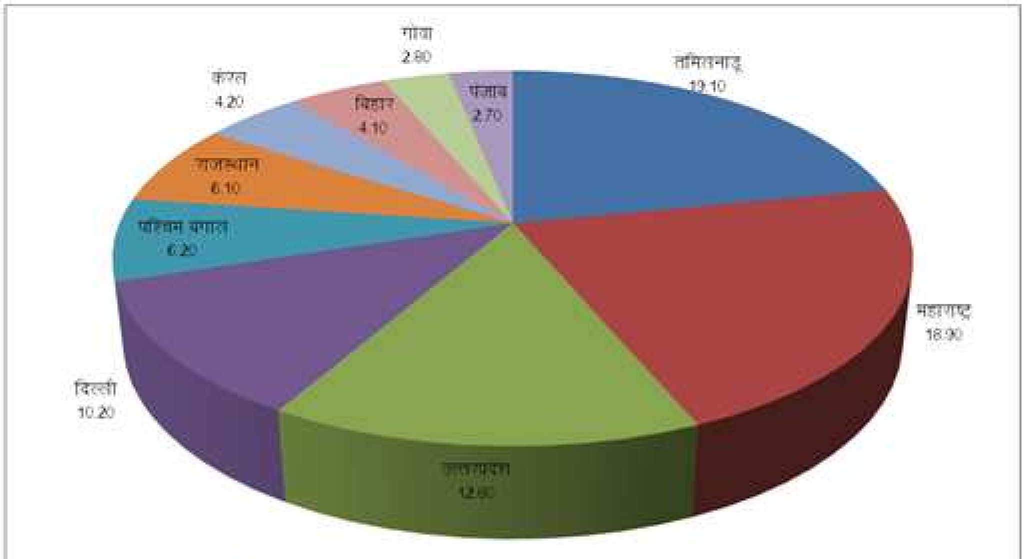

पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार से प्राप्त आंकड़े।

****

वचनिका राठौड़ रतनसिंघ जी महेश दासोतरी का ऐतिहासिक पक्ष

सुरेन्द्र शक्तावत *

प्रस्तावना – 'वचनिका राठौड़ रतनसिंघ जी महेश दासोतरी' के रचयिता जगा खिड़िया रतना जी चारण के पुत्र थे। डॉ. टैसीटरी ने बिलाड़ा (मारवाड़) के समीप रामासनी गाँव के निवासी चारणों के एक भाट राव से खिड़िया जगा का वंशवृक्ष प्राप्त किया जिसके अनुसार जगा के देवो नाम का भाई एवं दासो तथा कल्याण दास नामक दो पुत्र थे। सेमलखेड़ा के चारणों किसना व मानसिंह ने डॉ. टैसीटरी को यह भी बताया कि उज्जैन युद्ध के पूर्व जगा खिड़िया महाराजा जसवन्त सिंह की सेवा में रहता था तथा मारवाड़ में साकड़ा नामक गाँव उसे या उसके पूर्वजों को मिला था। जब बादशाह शाहजहाँ ने औरंगजेब इत्यादि विद्रोही शाहजादों का दमन करने हेतु महाराजा जसवन्त सिंह को शाही सेनापति नियुक्त कर मालवा भेजा तो खिड़िया जगा भी इस मुहीम में उनके साथ था। जब योद्धागण युद्ध की तैयारी करने लगे तो खिड़िया जगा भी अन्यान्य योद्धाओं की भाँति शस्त्र व कवचादि युद्धोपकरण धारण करने को उद्यत हो गया। इस पर रतन सिंह ने यह कहते हुए उसे युद्ध से विरत कर दिया कि वह उसके ज्येष्ठ पुत्र रामसिंह की शरण में चला जाए ताकि जीवित रहकर युद्ध की इस घटना को अपने काव्य में अमर कर दे।[1]

सेमलखेड़ा चारणों में प्रचलित जनश्रुति के अनुसार उज्जैन-युद्ध के पश्चात् रतन सिंह के उत्तराधिकारी रामसिंह ने जग्गा को रतलाम परगने के अन्तर्गत आलनिया और डेरी नामक दो गाँव बख्शीश में दिए जो संवत् 1960 तक कवि के वंशजों के अधिकार में रहे। खिड़िया जग्गा की रचनाओं में उसकी एकमात्र प्रतिनिधि रचना 'वचनिका राठौड़ रतनसिंघ जी महेश दासोतरी' है जो डिंगल साहित्य की अत्यन्त प्रौढ़ व महत्तवपूर्ण रचना है। इसका चरित्र नायक भूतपूर्व रतलाम राज्य का संस्थापक वीरवर राठौड़ रतन सिंह है जो धरमाट के युद्ध में विद्रोही शाहजादों, औरंगजेब व मुराद के विरुद्ध महाराजा जसवन्त सिंह के अधीन भेजी गई शाही सेना की ओर से वीरतापूर्वक लड़ता हुआ काम आया। रतन सिंह ने उस युद्ध में ऐसा पराक्रम दिखाया तथा स्वामी-भक्ति का ऐसा अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया कि उसका नाम इतिहास में सदा के लिए अमर हो गया। खिड़िया जगा सहित अनेक चारण कवियों ने उसके इस अनुपम शौर्य और त्याग पर रीझ कर उसे काव्य व गीतों का उपजीव्य बना दिया। उसके वीरोचित व्यक्तित्व से प्रेरित हो, डिंगल कवियों ने उसकी प्रशंसा में एक से बढ़कर एक गीत लिखे। वचनिका राठौड़ रतनसिंह पर रचित इस काव्यमाला का, काव्य कला की दृष्टि से सर्वोत्यष्ट है तो ऐतिहासिक दृष्टि से सुमेरू है।

वचनिका की रचना-तिथि के बारे में ग्रन्थ में कहीं कोई उल्लेख नहीं है और न ही कोई बहिर्साक्ष्य इस सम्बन्ध में उपलब्ध है। ऐसी स्थिति में अनुमान यही है कि धरमाट युद्ध के तत्काल पश्चात् नहीं तो बहुत शीघ्र ही कवि ने ग्रन्थ रचना का कार्य आरम्भ कर दिया। डॉ. टैसीटरी वचनिका का रचना-काल सन् 1660 के आसपास मानते हैं।

धरमाट का युद्ध शाहजादों का उत्ताराधिकार युद्ध था जो वैशाख 'ष्ण नवमी शुक्रवार संवत् 1715 तदनुसार 16 अप्रैल, 1658 के दिन हुआ था। इस युद्ध में बादशाह शाहजहाँ की ओर से जोधपुर नरेश महाराजा जसवन्त सिंह के नेतृत्व में सहस्रों राजपूत वीर दिल्ली के सिंहासन के लिए आकुल विद्रोही शाहजादों, औरंगजेब व मुराद की विशाल संयुक्त वाहिनी को रोकने के असफल प्रयास में मात्र स्वामी-भक्ति से प्रेरित हो शत्रु सेना पर टूट पड़े तथा वीरतापूर्वक लड़ते हुए तिल-तिल कर कट मरे थे। उस युद्ध में यद्यपि जसवन्त सिंह को पराजय का मुँह देखना पड़ा तथापि उसके राजपूत योद्धाओं ने जिस अप्रतिम शौर्य और अनुकरणीय स्वामी-भक्ति का परिचय दिया, वह इतिहास के पृष्ठों पर अंकित है। युद्ध के रंगमंच पर उस दिन स्वामी-भक्ति और कृतघ्नता के उभय दृश्य एकसाथ घटित हुए। नियति का कैसा क्रूर व्यंग्य था कि जहाँ एक ओर बादशाह शाहजहाँ के परम विश्वस्त अनेक सजातीय मुसलमान सैनिक और सेनानायक प्रलोभन के वशीभूत हो, अपने स्वामी के प्रति निपट यतघ्नता का प्रदर्शन करते हुए प्रच्छन्न रूप से शाहजादों से जा मिले, वहीं दूसरी ओर वे राजपूत वीर अपने धन, धाम, राज्य, परिवार आदि सबका मोह त्याग कर केवल मात्र अपने सेवक-धर्म का पालन करने के लिए कर्त्तव्य की वेदी पर उत्सर्ग हो गए। इन राजपूत वीरों का नायक रतलाम नरेश राठौड़ रतन सिंह ने अपने अनुपम शौर्य एवं स्वामी-भक्ति का उज्ज्वल कीर्तिमान स्थापित किया जिस पर प्रत्येक राजपूत को गर्व है। इस वचनिका में उसी वीर का कीर्ति-स्तवन है –

पड़ियो जदे प्रिसण रिण पाड़े
तण काईं करि घणी तन।
सिर कंठ बांधि कहे इम संकर
रुंडमाल सुघरी रतन।।

कवि ने ग्रन्थारम्भ की पारम्परिक परिपाटी – मंगलाचरण के साथ अपने काव्य का आरम्भ किया है; तदनन्तर रतन सिंह के वंश का परिचय दे, वह शाहजादों के विद्रोह के विरुद्ध जसवन्त सिंह के सैन्य अभियान का वर्णन करने लगता है। इसी समय रतन सिंह भी अपनी विशाल सेना व कवि समुदाय सहित उज्जैन में उससे आ मिलता है। उधर शाहजादे, औरंगजेब और मुराद भी अपनी विशाल संयुक्त वाहिनी के साथ उज्जैन की ओर बढ़ने लगते हैं। औरंगजेब ने जसवन्त सिंह के पास फरमान भेज कहलवाया कि 'राजा हमारा रास्ता मत रोको, हमें बादशाह तक जाने दो। हम दिल्ली में बादशाह की कदमबोसी कर लौट जाएँगे।' उत्तर में जसवन्त सिंह ने कहलाया 'मुझे बादशाह ने आपका रास्ता रोकने भेजा है, फिर आपको कैसे जाने दूँ ?' युद्ध को अवश्यम्भावी जानकर जसवन्त सिंह, बल्लू और गोवर्द्धन जैसे महाशूरवीरों तथा योद्धाओं में श्रेष्ठ राठौड़ रतन सिंह आदि को बुलाकर उनसे राय ली। सभी ने एक स्वर से राठौड़ रतन सिंह से ही इस सम्बन्ध में

* नीमच (म.प्र.) भारत

सलाह लेने का प्रस्ताव रखा। तदनन्तर सभी योद्धाओं ने आसन्न युद्ध के लिए व्यूह-विधान किया। सेना के गोल, हरावल व चंदावल आदि विविध पक्षों में योद्धाओं की नियुक्ति की गई। स्वयं जसवन्त सिंह गोल (मध्य) में उपस्थित हुआ। तदनन्तर वीरोन्मेश से परिपूर्ण जसवन्त सिंह ने योद्धाओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि 'दोनों शाहजादे खड्ग धारण करके युद्ध के लिए उत्तोजित हो रहे हैं। आज हम भी भयंकर युद्ध करेंगे।' जसवन्त सिंह के यह वचन सुनकर रतन सिंह ने निवेदन किया कि 'महाराज, आप वंश के दीपक हैं, आप चिरायु हों। यह युद्ध-भार आप मुझे सौंपकर स्वयं राज-लक्ष्मी का उपभोग करें। राठौड़ वंश का प्रतिनिधि मैं यहाँ मौजूद हूँ।' यह कहकर रतन सिंह ने अपने स्वामी जसवन्त सिंह से मानों स्वर्ग के लिए विदा ली।

तदनन्तर रतन सिंह ने उज्जैन में विप्रों को दान दिया, मन्दिरों में देव-दर्शन कर यज्ञ कराया और विशाल सहभोज दिया। इसके बाद रतन सिंह का दरबार लगा जिसमें साहिब खान, राठौड़, सांचोरा, चौहान अमरदास, भगवानदास, बारहठ जसराज आदि योद्धा उपस्थित थे। सबने अगले दिन युद्ध में प्राणोत्सर्ग करने का संकल्प लिया।

दूसरे दिन दोनों सेनाएँ आमने-सामने हुईं। अश्वों पर आरूढ़ योद्धा प्राणों की तनिक भी चिन्ता किए बिना युद्धाग्नि में कूद पड़े। अनेक योद्धा सिर कटने पर भी लड़ते रहे, तोपें व बन्दूकें चलने लगी, योद्धागण कबूतर की भाँति भूमि पर लोटने लगे। तलवारों से उनके अंग-प्रत्यंग कटने लगे। सूर्य और राहू के समान क्रमश: महाराजा जसवन्त सिंह और औरंगजेब भिड़ गए। इस प्रकार तीन प्रहर तक दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध होता रहा। प्रचण्ड तप और तेज के धनी औरंगजेब का मुकाबला करना महाराजा जसवन्त सिंह के बस का ही काम था। युद्ध की परिस्थितियाँ प्रतिकूल होती देखकर स्वामी-भक्त राठौड़ वीरों ने मंत्रणा की - 'ठाकुरों युद्ध के रूप में शतरंज का खेल जमा है, राजा की रक्षा करो, राजा की रक्षा से ही बाजी रहेगी। जसवन्त सिंह को रण-क्षेत्र से निकालो।' फलत: घोड़े की बाग पकड़कर जसवन्त सिंह रण-क्षेत्र से चला गया तथा युद्ध का भार रतन सिंह ने सम्भाला।

तदनन्तर अपने स्वामी-धर्म का पालन करने के महद् उद्देश्य से उस वीर राजा रतन ने सेनापति के सभी चिह्न धारण कर लिए। हिन्दुस्तान की बादशाहत की लाज उसकी भुजाओं पर आश्रित हो गई। राठौड़, सिसौदिया, हाड़ा, चौहान - सभी छत्तीस वंशों के क्षत्रिय वीर शामिल थे। राठौड़ रतन सिंह के सारे ही योद्धा एक-एक कर कट मरे तो भी वह वीर अकेला ही लड़ता रहा। अपने धराशायी वीरों के बीच राजा रतन ऐसा शोभित हो रहा था जैसे वन्य-वृक्षावली के बीच विशालकाय पर्वत। अनेक शत्रु-सैनिक मिलकर रतन सिंह पर टूट पड़े। राजा रतन क्रुद्ध हो शत्रु-सेना को विलोड़ित करते हुए उसका संहार कर रहा था। यवन-योद्धा कुलाँचें खा-खाकर भूमि पर गिर रहे थे। क्षत-विक्षत अंगों से रक्त के फव्वारे छूट रहे थे। अप्रतिम वीरता से लड़ता हुआ रतन साक्षात् महाकाल बन चुका था, उसके शरीर में तीन सौ बाण और छब्बीस भाले लगे थे। अस्सी घाव शरीर में लगने के बाद वह क्षत-विक्षत, जर्जर शरीर वीर योद्धा लड़ते-लड़ते धराशायी हो गया और इसके साथ ही युद्ध का अन्त हो गया।

तदनन्तर राजा रतन के अंग-प्रत्यंग चुनकर बाणों व भालों के दण्डों से उसका वीरोचित दाह-संस्कार किया गया। कवि कहता है इस समय ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने प्रकट होकर उससे वैकुण्ठ चलने का अनुरोध किया - वचनिका का यह अंश कल्पना-शक्ति का उत्यष्ट प्रदर्शन करता है। रतनपुर का निर्माण, अप्सराओं का आगमन आदि इसके उदाहरण हैं।

उज्जैन में राजा रतन सिंह के वीरगति प्राप्त करने की खबर सतियों के कानों में पड़ी। तत्काल राजा रतन की चारों रानियाँ कछवाही अतिरूपदे, देवड़ीरयण सुखदे, कछवाही गुणरूपदे तथा कछवाही सुखरूपदे एवं उसकी तीन खवासनें गंगाजल से स्नान कर, सोलह श्रृंगार से सज्जित हो सती-धर्म का पालन करती हुई, द्रव्य व नारियल उछालती हुई अश्वों पर सवार होकर महासरोवर की पाल पर आ गईं। वहाँ चिताग्नि प्रज्ज्वलित करा अग्नि-स्नान करके अक्षय कीर्ति प्राप्त की। इस प्रकार संवत् 1715 की वैशाख बदी नवमी को उज्जैन में हुए महासंग्राम का खिड़िया जगा ने अपने काव्य में अतीव सरस वर्णन किया है।

धरमाट का युद्ध इतिहास प्रसिद्ध उत्ताराधिकार युद्ध हुआ। राजस्थानी इतिहास ग्रन्थों में भी इसका वर्णन है। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार चोरनारायणा नामक गाँव में जसवन्त सिंह और दोनों शाहजादों ने अपना पड़ाव डाला। ख्यात के इस उल्लेख की पुष्टि 'बिन्है रासोय से भी होती है —

निमथै चौरनारायणो जसवन्त डेरा जाय।
उगन्ते दिन दीखसी लगसी सीसो लाय।।[2]

वंश भास्कर में यह युद्ध 'अवन्तीपुरी रै पाँच कोस रे प्रमाण' होना लिखा है,[3] जिससे भी विदित होता है कि यह युद्ध चौरनारायण नामक स्थान पर ही हुआ था। प्रसिद्ध इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार के अनुसार जसवन्त सिंह ने उज्जैन से दक्षिण-पश्चिम में कोई चौदह मील दूर गम्भीर नदी के पूर्वी तट पर धरमाट नामक गाँव के पास अपना पड़ाव डाला था।[4] राजस्थानी इतिहास ग्रन्थों 'मारवाड़ रा परगना री विगत', 'जोधपुर हुकमतरी बही आदि के साक्ष्यों के आधार पर यह युद्ध गम्भीर नदी के पूर्वी तट से एक मील की दूरी पर स्थित चोरनारायणा गाँव के पश्चिमवर्ती मैदान में हुआ था। बाद में विजयी औरंगजेब ने अपनी विजय की स्मृति में चोरनारायणा का नाम बदलकर फतेहाबाद रख दिया जो सम्प्रति इसी नाम से विख्यात है। खिड़िया जगा यह वचनिका राजस्थानी वीर काव्य परम्परा की एक महत्तवपूर्ण कृति है। इतिहास की दृष्टि से यह प्राथमिक कोटि की प्रामाणिक एवं विश्वसनीय आधार-ग्रन्थ के रूप में समादृत हुई है। इसमें वर्णित ऐतिहासिक सामग्री इतनी तथ्यात्मक है कि सर जदुनाथ सरकार जैसे इतिहासकारों को अपने इतिहास-ग्रन्थों में संशोधन करना पड़ा। वचनिका शब्द राजस्थानी साहित्य में मुख्यत: गद्य-पद्य मिश्रित एक विशिष्ट काव्य शैली या काव्य विधा के अर्थ में व्यवहृत हुआ है। यह वचनिका चम्पू काव्य का प्रतिनिधित्व करते हुए साहित्यिक सौष्ठव भी रखती है। जगा खिड़िया की यह यति मध्यकालीन इतिहास की अनेक उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने में सहायक हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वचनिका -सं. डॉ. टैसीटरी (भूमिका- पृ. 3)
2. कवि महेश - बिन्है रासो- पृ. 28. (सं. - सौभाग्य सिंह शेखावत)
3. सूर्यमल्ल मिश्रण (वंश भास्कर, पृ. 167)
4. डॉ. जदुनाथ सरकार - औरंगजेब- पृ. 349.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

ईंट–भट्टा उद्योग की आधुनिक तकनीक

डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति *

प्रस्तावना – किसी भी कार्य को वैज्ञानिक विधि द्धारा ज्ञान, संसाधन एवं प्रौद्योगिकी का पूर्ण प्रयोग कर उत्पादन करना आधुनिक तकनीक कहलाता है। इसमें उपलब्ध साधनों का समुचित उपयोग होने के कारण मितव्यीयता आती है तथा उत्पादित तकनीक द्धारा विशिष्टकरण एवं श्रम विभाजन का लाभ मिलता है। हमारे देश में ईंट निर्माण के क्षेत्र में उत्तरप्रदेश के रुड़की स्थित 'भवन निर्माण अनुसंधान केन्द्र' में संगमरमर के चूरे, सीमेन्ट के अन्य पत्थर की धूल से तथा 'नेशनल थर्मल पॉवर कार्पोरेशन' (एन.टी.सी.पी.) ने विद्युत संयंत्रों की राख से एवं 'हैदराबाद इण्डस्ट्रीज लिमिटेड, पूणेय में प्लास्टर ऑफ पेरिस, सीमेन्ट व अन्य रसायन के मिश्रण से ई ंट निर्माण किया जाता है, वह तकनीक पूर्ण रूप से आधुनिक है तथा इसमें मशीनों, यंत्रों व शक्ति का पूर्ण उपयोग होता है तथा सभी कार्य शक्ति चलित मशीनों द्धारा संचालित किया जाता है। एक वैज्ञानिक शोध में पाया गया है कि उक्त ईंटे का प्रयोग मानव आवास में किये जाने से कई प्रकार के रोग होते है।

मिट्टी की बनी ईंटों का उपयोग ही प्रत्येक ऋतु (मौसम) में वातानुकूलित है। मिट्टी की ईंटों के उ त्पादन पर ही ध्यान देना होगा।

हमारे देश में मिट्टी के माध्यम से बनाई जाने वाली ईं टों के निर्माण में आज तक कोई मशीन, यंत्र या वैज्ञानिक तकनीक का प्रयोग नहीं हुआ है। केवल कच्चा माल (मसाला) ईंट एवं मिट्टी आदि ढोने के लिये ट्रेक्टर, ट्रक का प्रयोग होता है तथा पानी निकालने के लिए विद्युत पम्प एवं डीजल पम्प का प्रयोग होता है। आज भी ईंट–भट्टा उद्योग के विभिन्न कार्य जैसे– मिट्टी का घोल बनाना, लोचदार गारा तैयार करना, ईंटों को साँचे के माध्यम से रुप प्रदान करना तथा कच्ची ईंटों को भट्टी एवं चिमनी में पकाने हेतु जमाना आदि कार्यों में पूर्ण रूप से मानवीय श्रम शक्ति का ही प्रयोग होता है। चिमनी के माध्यम से ईंट पकाने का तकनीक वैसे तो आधुनिक तकनीक है लेकिन यह तकनीक भी परम्परागत तकनीक का सुधार हुआ रुप ही है। जो पूर्ण रूप से मानवीय शक्ति पर ही आधारित है।

फिर भी वैज्ञानिक दृष्टि से आदर्श मिट्टी मिश्रण अनुपात निम्न है जो केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्था रुढ़की (उ.प्र.) के वैज्ञानिक परिक्षणों पर आधारित है–

20 से 30 प्रतिशत चिकनी मिट्टी (मैदे के समान बारीक)

40 से 60 प्रतिशत तक सिल्ट (आटे के समान बारीक)

25 से 38 प्रतिशत तक आयतन सीमा (वैल्युमेटरिक श्रिंकेज)

ईंट ढलाई की हस्तचलित मशीन – केन्द्रीय इमारत (भवन) अनुसंधान संस्था, रुड़की (उ.प्र.) द्धारा एक ऐसी मशीन बनाई गयी है जो कि हाथों द्धारा चलायी जाती है। इस मशीन से लगातार काम किया जा सकता है। यह मशीन सुदृढ़ और मजबूत होती है। इस मशीन द्धारा एक समय में चार ईंट ढाली जाती है। मशीन चलाने के लिए चार आदमियों की आवश्यकता होती है जिनमें से दो 'हैंडल' को फेरने का काम करते है, एक साँचे को भरता है तथा एक ढली हुई ई ंट को हटाकर सुखाता है। इस मशीन द्धारा ईंट निर्माण की प्रक्रिया भी पूर्ण रूप से श्रम प्रदान है तथा इस मशीन से श्रम लागत अधिक आती है परन्तु ईंट अधिक सफाई से एवं मजबूत बनती है। (फोटो क्रमांक 01)

ईंट बनाने (ढालने) की मशीन– परम्परागत तकनीक से हस्तचलित सांचे, हस्तचलित मशीन, हस्तचलित सांचे से युक्त मेज की तुलना में अच्छी एवं मजबूत ईंट ढालने के लिए Technology and Action for Roral Advancement (TARA) नई दिल्ली ने एक शक्ति चलित मशीन का निर्माण किया है, जो 25 से 20 बिजली की मोटर या डीजल इंजिन से चलती है इस मशीन से मिट्टी, आंतरित ईंधन एवं नमीयुक्त गारे को भरा जाता है और वह गारा ईंटों को निर्धारित लंबाई एवं चौड़ाई से बनी डाई के द्धारा अपने आप निकलता है इस लंबाई, चौड़ाई से बने लंबे रूप पर ईंटों की मोटाई के हिसाब से एक हैंडल के माध्यम से जिसमें ईंटों की मोटाई के अनुसार बारीक पतले तार कसे हुए होते है, उससे काटकर ईंटों को अलग–अलग रुप दिया जाता है। इस मशीन से बनी ईंट में ट्रेड मार्क या कटे हुए निशान नहीं आते हैं। इस मशीन के माध्यम से जिसे BRICK EXITRUDE MACHINE कहते है, द्धारा एक पाली में 10,000 ईंटे मानक साईज में बनाई जा सकती है तथा प्रतिदिन तीन पाली के हिसाब से 30,000 ईंटों का उत्पादन एक दिन में करती है। इस मशीन द्धारा ईंट ढालने का कार्य उस स्थान पर संभव है जहां मिट्टी का घोल तैयार नहीं किया जाता है अर्थात् इस मशीन द्धारा ईंटों को ढालने का काम देश के उ स हिस्सों में संभव है जहां का मिट्टी का घोल तैयार नहीं कर सीधी मिट्टी को भिगोकर ईंट निर्माण का कार्य करते है। जैसे– हरियाणा, दिल्ली, पंजाब, जयपुर, उदयपुर, राजस्थान आदि। वर्तमान में तारा संस्था द्धारा इस मशीन में स्थायी पूँजी विनियोग लगभग 4–5 लाख रुपये है।

ईंट बनाने (ढालने) की विद्युत मशीन– ईंट ढालने की NIBO-MERADO SOFT-MUD MOLDING MACHINE जिसे इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक श्री किन्सलें ने सन् 1813 में बनाई थी। इस मशीन द्धारा विकासशील देशों में ईंटों का उत्पादन किया जाता है। जिसे भारत में राष्ट्रीय निर्माण (भवन) संगठन नई दिल्ली MERADO एवं लुधियाना पंजाब ने मिलकर सन् 1985 में इस तकनीक से मशीन बनाकर ईंट बनाना प्रारंभ किया। जिसमें ईंट ढालने के काम में मानवीय श्रम की बचत सम्भावित है। यह मशीन शक्ति चलित है। उक्त ईंट बनाने की मशीन का उपयोग अभी भारत में कम ही है। (फोटो क्रमांक 02 एवं 03)

* स्कीम नं. 21, मकान नं. 10, ग्वालटोली, नीमच (म.प्र.) भारत

(सृष्टि) धरती ब्रिक्स मशीन– सृष्टि ब्रिक्स मशीन मिट्टी की ईंट बनाने के लिए बनाई गई है। इस मशीन के द्धारा मिट्टी की मजबूत ईंटें ढाली जा सकती है। यह मशीन की लागत 3 से 4 लाख रुपये के मध्य होती है जिसमें मार्का वाला एल्युमिनियम के 20 साँचे साथ में आता है। जो मशीन के माध्यम से ईंटों को ढालने का काम करती हैं, जिसमें मानवीय श्रम कम लगता है। इस मशीन द्धारा मध्यप्रदेश के विकसित (इन्दौर जैसे) जिलों में कुछ स्थानों पर ईंट बनाते हुए देखा जा सकता है। (फोटो क्रमांक 04)

मशीन की उपयोगिता– मशीन प्रति घंटा 2000–2500 ईंटें आपके मार्का के साथ बना सकती है। मशीन चलाने के लिए कुशल थपेरों की आवश्यकता नहीं है। हाथ से ईंट बनाने की तुलना में कम मजदूर लगते हैं। मशीन में मिट्टी की अच्छी मिलावट होने के कारण ईंट की गुणवत्ता अच्छी रहती है। ईंट आपके नाप के हिसाब से बनती है। मशीन चलने के लिये 5 हार्स पॉवर, 3 फेस, 7 1 1/2 H.P. डीजल इंजन/ट्रेक्टर/विद्युत मोटर, तीनों में से एक स्वेच्छिक शक्ति चलित साधन कर सकते है।

मशीन की विशेषताएँ– मशीन के प्लेट एवं सतह का डिजाईन मिट्टी को उचित मिलावट प्रदान करता है। मशीन के मिक्सर, थ्रेशर एवं साँचों को चलाने के लिये एक ही मोटर का उपयोग होता है। मशीन का विशेष लीवर सिस्टम प्लेटफार्म पर उचित दिशा प्रदान करता है। मशीन का मजबूत चेसिस सिस्टम लंबे समय तक मशीन को उपयोगी बनाए रखता है। स्टील का साँचा लंबे समय तक चलता है एवं ईंट की गुणवत्ता अच्छी रहती है।

अतिरिक्त उपकरण– मशीन में मिट्टी डालने के लिए रोलर कन्वेर रहता है। साँचो को ले जाने के लिए ट्राली।

ईंट पकाने की आधुनिक तकनीक– चिमनी की भट्टी (BTK) –साधारण या खुली भट्टी की अपेक्षा चिमनी की भट्टी में अधिक ईंटों की पकाई की जा सकती है। इसमें ईंट पकाने पर साधारण या खुली भट्टी की तुलना में 10 से 15 प्रतिशत तक ईंधन की बचत होती है। प्रदूषण (धुऐं) के लिए कम से कम 10 मीटर व अधिकतम 15 मीटर ऊँची चिमनी (वर्गाकार लोहे का पोल) के माध्यम से धुऐं को वायुमंडल में छोड़ दिया जाता है। इस विधि में सभी जीवधारी धुऐं के कु–प्रभाव से बच जाते हैं। यह विधि साधारण या खुली भट्टी का कुछ सुधरा हुआ रुप है। इस चिमनी का भट्टा या भट्टी (BTK) के नाम से जाना जाता है। (फोटो क्रमांक 05)

ईंटों की पकाई– सूखी हुई कच्ची ईंटों को पकाने के लिए भट्टी के अन्दर एक निश्चित क्रम में भरने का काम बेलदार करते हैं ये मासिक वेतन पर कार्य करते है। भट्टी के अन्दर कच्ची ईंटों को जाली के रूप में एक के ऊपर एक खड़ी रखी जाती है। इस प्रकार भट्टी की ऊपरी सतह पर पहुंचते–पहुंचते इनमें अनेक गड्ढे से बन जाते है। जब भट्टी पूरी तरह भर जाती है तो इन गड्ढों को छोड़कर शेष भाग पर आड़ी ईंट रखकर विशेष प्रकार की राख (ईंटों की राख) जिसे 'रापिश' कहते है। द्धारा अच्छी तरह ढाक दिया जाता है। अब भट्टी में प्रवेश करने के जो दो दरवाजे शेष होते है, उनमें भी ईंटें भरकर गारे का लेप (लिपन) कर दिया जाता है। कुल मिलाकर भट्टी में हवा जाने के लिए सतह के वे गड्ढे ही शेष रह जाते हैं जिन्हें भराई के (ईंटें जमाते) समय जानबूझकर छोड़ा जाता है।

जब ईंटों को पकाने की प्रक्रिया शुरु होती है, जो कर्मचारी ईंटें पकाने का काम करते हैं, उन्हें 'जलइया' कहते है। एक भट्टे पर जलइयों की संख्या 6 से 12 तक होती है। चौबीस घंटे की अपनी ड्यूटी को जलइए तीन पालियों में बांटकर आठ–आठ घंटे काम करते है ये माहवारी वेतन अथवा ठेके पर काम करते है। भट्टे के अन्दर आग छोड़ने के लिए लकड़ी और स्टीम कोल की आवश्यकता पड़ती है। एक बार आग पकड़ने के बाद भट्टी की ऊपरी सतह में छूटे हुए गड्ढों के जरिए 'जलइए' (ईंट पकाने या कोयला डालने वाले व्यक्ति) आवश्यकतानुसार लगातार कोयला झोकते रहते है। धुआँ निकालने के लिए इस्पात की बड़ी चिमनियों को भट्टी के ऊपरी सतह पर गड्ढों के ऊपर लगाया जाता है। इसमें भट्टी में से निकलने वाला धुआं वायुमंडल में काफी ऊपर जाकर निकलता है। एक स्थान की ईंट पक जाने पर रस्सी के सहारे बंधी चिमनी को आगे खिसका दिया जाता है और फिर अगली ईंटें पकाई जाती है। ईंटों को पकाने का यह क्रम लगातार चलता रहता है। एक और जलइए कच्ची ईंटों को पकाते रहते है और दूसरी ओर बेलदार पकी हुई ईंटों को बाहर निकालने का काम भी करते रहते है, तथा कच्ची ईंटों को पकाने हेतु जमाते रहते है। पकी हुई ईंटों को बाहर निकालने एवं कच्ची ईंटों को अन्दर जमाने के लिए भट्टी की बाहरी दीवारी में बने नजदीकी द्धारा (दरवाजे) को खोल दिया जाता है।

भट्टी में कोयला झोकना–यदि भट्टी में अधिक कोयला झोक दिया है तो ताप की तेजी से ईंटें सुकड़ती है और छत भी थोड़ी नीचे बैठने लगती है। कोयला झोकते समय इस बात का बराबर ख्याल रखना चाहिए कि छत जहां–जहां से नीचे न बैठे जाए। जहां ताप बहुत तेज होता है वहां छत नीचे को बैठ जाती है। ताप को कम करने के लिए छित्र में ढक्कन लगाकर बंद कर देना चाहिए। ताप की कमी के कारण छत कई जगह ऊंची रह जाती है। ऐसीअवस्था में उस स्थान से एक ढक्कन निकाल देते है। ढक्कन निकालने से छत में हुए छिद्र के कारण छत के ऊंचे स्थान को अधिक ताप मिलेगा। इस प्रकार जलइए भट्टी की छत को समतल रखने की पूरी कोशिश करते रहते है।

आधुनिक भट्टी (वर्टीकल शॉफ्ट) (VSBK)– ईंट पकाने में साधारण भट्टी/चिमनी भट्टी से भी अच्छी विधि का विकास 'डिवेलपमेन्ट' अल्टरनेटिव्स ने किया है जिसमें ईंटों की पकायी लागत कम एवं प्रदूषण में भी कमी की है। डिवेलपमेन्ट अल्टरनेटिव्स ने दो प्रशिक्षण एवं उत्पादन केन्द्रों की स्थापना की है। इनमें से एक 'टारा निर्माण' दिल्ली से गुड़गांव रोड पर है और दूसरा 'टारा ग्राम' उत्तरप्रदेश सीमा पर झांसी के निकट म.प्र. में ओरछा में है जो 'स्विस एजेन्सी फार डिवेलपमेन्ट एण्ड कार्परेशन' के साथ मिलकर चीनी विशेषज्ञों से सम्पर्क कर रहा है ताकि भारत में 'वर्टीकल शॉफ्ट' ईंटों को बढ़ावा दिया जा सके जो चीन में काफी लोकप्रिय है। उक्त संगठन स्थानीय उद्यमियों के सहयोग से देश के विभिन्न भागों में ऐसे 45 ईंट भट्टों की स्थापना पहले ही कर चुका है। म.प्र. में 14 ईंट–भट्टे इस तकनीक से ईंट पकाने का काम कर रहे हैं। इस प्रौद्योगिक का क्षेत्र परीक्षण पूरा होने और इसे पूरी मान्यता दिए जाने के बाद देश भर में वाणिज्यिक आधार पर इसका विस्तार किया जाएगा।

'वर्टीकल शॉफ्ट' ईंट–भट्टों में करीब 200 कच्ची ईंटों के 10–12 'बैच' होते हैं जो चौबीस घंटों के चक्र में ऊपर से नीचे घूमते है। 'बैच' जब नीचे की तरफ आते हैं तो ईंटें एक अग्नि–क्षेत्र से गुजरते हुए पक जाती है। जब ईंटों का सबसे नीचे का बैच, जो शॉफ्ट में लोहे की ग्रिल पर टिका होता है, निकाल लिया जाता है, पूरा चट्टा नीचे आ जाता है और कच्ची ईंटों का दूसरा बैच ऊपर चला जाता है। इस तरह ऊपर के 'बैच' में रखी ईंटों को भी ऊष्मा मिलती रहती है जिससे ऊर्जा खपत में कमी आती है और प्रदूषण भी कम एवं नियंत्रित रहता है और ईंटों की लागत में करीब 20 प्रतिशत की बचत होती है।

वर्टीकल शॉफ्ट में ईंट पकाने के लिए प्रत्येक 'बैच' में ईंटों के चार थर जमाऐं जाते है। प्रथम थर में आड़ी ईटे, द्धितीय थर में खड़ी ईंटें, तृतीय थर में

आड़ी ईंटे एवं चौथे थर में खड़ी ईंटें जमाते है। चौथे थर ईंट जमाते समय ईंटों के बीच–बीच में कुछ खाली जगह छोड़ी जाती है। जिसमें कोयला भरा जाता है। (फोटो क्रमांक 06)

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 के अध्ययन से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में VSBK,BTK एवं CLAMP क्रमश: 30–36 हजार, 25–40 हजार एवं 3.4.–4.5 हजार ईंटों का उत्पादन प्रतिदिन है तथा सबसे ज्यादा पूँजी तडइघ में एवं सबसे कम CLAMP में लगती है। प्रति लाख ईंटों की पकाई में कोयले का उपयोग भी तडइघ में सबसे कम, इससे अधिक इढघ में एवं सबसे अधिक कोयले का प्रयोग उङअचझ में होता है। उत्तम प्रकार की ईंटें भी सबसे ज्यादा तडइघ में, इससे कम इढघ में एवं सबसे कम CLAMP की पकायी में प्राप्त होती है। अर्थात् VSBK,BTK एवं CLAMP में क्रमश : 84 प्रतिशत, 70 प्रतिशत एवं 60 प्रतिशत ईंटें उत्तम प्रकार की पकती है शेष ईंटें सामान्य से कम या सामान्य से अधिक पकती है। भूमि उपयोग की दृष्टि से भी VSBK में सबसे कम भूमि का प्रयोग होता है। हम कह सकते है कि पूँजी को छोड़कर सभी दृष्टि से VSBK विधि को उत्तम विधि है। इस विधि का भविष्य उज्ज्वल है अगले एक दो वर्षो में इस विधि द्वारा ईंटों का उत्पादन इन्दौर एवं उदयपुर आदि शहरों में प्रारंभ हो जाएगा।

शॉफ्ट साईजद्धितीय जिसकी उत्पादन क्षमता प्रतिदिन 8000 ईंटें पकाने की है, तडइघ की निर्माण लागत 5 से 5.5 लाख रुपये आती है तथा जिसके निर्माण में लगभग 45 दिन का समय लगता है। शॉफ्ट विधि में 4000, 8000, 12000 एवं 13500 ईंट प्रतिदिन तक पकाने हेतु निर्धारित Shaft Size का निर्माण करवाया जा सकता है।

वर्तमान में देश के ईंट–भट्टा उद्यमी तडइघ स्थापित करने में संकोच व्यक्त कर रहे है। क्यों कि यह तकनीक अधिक महंगी होने के कारण प्लान्ट के रख–रखाव पर व्यय, प्लान्ट का ह्रास एवं विनियोजित पूँजी पर ब्याज आदि उद्यमी को प्राप्त नहीं होती है। साथ ही तकनीक में अभी भी चिमनी से निकलने वाले कार्बन को रोकने के लिए कुछ सुधार की आवश्यकता है। ताकि सुधार होने पर वायुमंडल में केवल गैस का प्रभाव ही रहेगा, कार्बन का नहीं।

पक्की ईंटों की उत्तमता तथा मजबूती की जाँच

ईंटों की मजबूती की जाँच निम्न प्रकार से करेंगे–

1. ईंटों की चपटी सतह भिड़ाने (बजाने) से उत्पन्न हुई ध्वनि से ईंटों की उत्तमता की जांच की जाती है। यदि यह ध्वनि धातु के बजने से उत्पन्न ध्वनि धातु के बजने से उत्पन्न ध्वनि जैसी हो तो यह निश्चित है कि यह ई टें उत्तम प्रकार की है। यदि यह ध्वनि मंदी हो तो ईंटें उत्तम प्रकार की नहीं है तथा यह ठीक प्रकार पक भी नहीं पाई। इस विधि को ध्वनि जांच विधि के नाम से जाना जाता है।
2. पानी में डालकर भी ईंटों की मजबूती की परख की जाती है। इसके लिए ईंटें पानी में 24 घंटे तक रहने दीजिये, फिर इन ईटों को निकालकर इनकी जाँच कीजिए जो ईंटें पानी में डालने से मुलायम हो जाएं, उन्हें तोड़कर फिर पानी में डाल देंगे और फिर उनकी मुलायमियत की जांच करेंगे।

   अच्छी ईंटें, जबकि उन्हें 24 घंटे पानी में डूबोया जाये, अपने वजन का 1/8 से 1/6 (12.5 से 16.6 प्रतिशत) से अधिक पानी नहीं सोखती है। यदि इससे अधिक पानी सोखती है तो वह ईंट पकी नहीं है, उसमें मिट्टी का स्वरूप ज्यादा है इसलिए वह अधिक पानी सोखती है। इस विधि को पानी जांच विधि कहते है।
3. नमने की ईंटों पर 4 इंच (10 सेन्टीमीटर) की ऊँचा ई से लकड़ी का गट्टा (आयताकार टुकड़ा, ईंट की साईज का) गिराकर भी उनकी मजबूती की जांच की जाती है। लकड़ी के गट्टे को भिन्न–भिन्न ऊंचाई से गिराकर ईंटों की असाधारण मजबूती की भी जांच की जाती है। अच्छी ईंट की सहन शक्ति कम से कम 1000 पाउण्ड प्रति वर्ग इंच (70 किलोग्राम से.मी.वर्ग) होनी चाहिए।
4. नमूने की ईंट को समतल ठोस जमीन पर एक मीटर ऊंचाई से ईंटों की चपटी सतह से गिराने पर यदि ईंट नहीं टूटती है तो वह ईंट भी मजबूत एवं अच्छी होती है।
5. जो ईंटें उपयुक्त जांच में सबसे अच्छी जंचे उनके बनाने की पूर्ण विधि ध्यान में रख लेते है। जिससे भविष्य में अधिक ईटों के उत्पादन के लिए ठीक यही तरीका अपनाते है जिससे ईंटों की किस्म, गुणवत्ता एवं उत्तमता में किस प्रकार की कमी न आवे।

देश में ईंट–भट्टा उद्योग विकेन्द्रीकृत अवस्था में संचालित है। जो सभी छोटे–बड़े शहरों में, कस्बों में, शहर से बाहर या नदी–नालों के किनारे ईंट–निर्माण करते देखा जा सकता है। जो विकेन्द्रीत अर्थव्यवस्था को सिंचित कर रोजगार के उद्देश्य व प्रत्येक परिवार को 'आवास' उपलब्ध करवाने के राष्ट्रीय लक्ष्य में अपनी भूमिका निभा रहा है। यदि शासन (केन्द्र व राज्य) इन ई ट–भट्टा उद्योग को आर्थिक रूप से पौषित करती है तो देश में औसत रूप से विकेन्द्रीत अवस्था में उद्योग, कौशल, रोजगार व आवास निर्माण के कार्यों में वृद्धि होगी एवं बैंकों द्वारा दिया गया धन डूबेगा नहीं। इसकी तुलना में केन्द्रित उद्योगों को जो सुविधा शासन देती है उसके रोजगार व आर्थिक विकास इनकी तुलना में कम होता है तथा वित्त या बैंकों द्वारा दिया का ऋण डूब जाता है। या कंपनी के संचालक देश छोड़कर भाग जाते है। यदि शासन देश के छोटे–छोटे ईंट भट्टा उद्योग को आधुनिक तकनीक से पोषित करने हेतु 'नीति आयोग' कोई योजना बनाती है तो देश की अर्थव्यवस्था को गति प्राप्त होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

समाचार–

1. ब्रिक्स एवं टाईल्स न्यून सन् 1995
2. दैनिक ललकार, नीमच पृ.क्र. 2, दिनांक 10 नवम्बर 2003
3. नई विधा, नीमच पृ.क्र. 2 दिनांक 22.9.2003, पृ. क्र. 4 दिनांक 3.11.2003
4. जन चिंगारी, पृ.क्र. 4 दिनांक 23.10.2003
5. मालवा टूडे, पृ.क्र. 3 दिनांक 7.6.2015

शोध पुस्तक–

1. ई ट–भट्टा उद्योग (आर्थिक एवं सामाजिक विश्लेषण म. प्र. के विशेष संदर्भ में) प्रकाशन वर्ष 2012 पृ.क्र. 40, 41, 52, 195, 276, 354

संस्थाएं–

1. केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्था रुड़की (उ.प्र.)
2. कुम्हार ई ट–भट्टा व्यवसायिक समिति, नीमच (म.प्र.)
3. म.प्र. ब्रिक्स मेन्यूफेक्चरिंग एसोसिएसन, इन्दौर (म.प्र.)
4. केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्था, रुड़की (उ.प्र.)
5. Technology and Action for Roral Advancement (TARA)

नई दिल्ली

6. टारा ग्राम, ओरछा (म.प्र.) झांसी के पास

7. टारा निर्माण गुड़गांव रोड, दिल्ली

तालिका 1 – वर्टीकल शॉफ्ट विधि द्धारा भारत में स्थापित ईंट–भट्टों की इकाईयाँ

Category	M.P.	U.P.	Maharahstra	Orissa/Tamilnado	Total
Privarely owned and managed	12	2	7	1	22
IndiaBrick project funded	-	-	-	3	03
Salf-replicated and privately owed	02	-	-	4	06
Total	**14**	**2**	**7**	**8**	**31**

स्तोत्र– Tata Engrgy Research Institvte, New Delhi

तालिका 2 – मध्यप्रदेश में स्थापित वर्टीकल शॉफ्ट, स्थाई चिमनी एवं साधारण भट्टी (परम्परागत) का तुलनात्मक अध्ययन

No.	Data/information	VSBK	BTK	CLAMP
1.	System description	6-Shaft VSBK with each shaft of 1 m x 2m		Simple kiln
2.	Production Capacity (bricks per day)	30,000 to 36,000 4500		3500 to
3.	Investment for kiln construction (materials, wages, consultancy)	Rs. 20 Lakh		3 Lakh
4.	Coalconsumption (per lakh bricks) {GCV of colal=5000 kcal/kg}	10 to 11 tonne		16-18 tonne
5.	Quality of bricks Class -1	80-84 %		55 %
	Class -2	8-10 %		20 %
	Class -3	-		10 %
	Broken Bricks	8-10 %		15 %
6.	Lad requirments for	400 to 500 Sq.m		7000 Sq.F.

स्तोत्र– Tata Engrgy Research Institvte, New Delhi

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

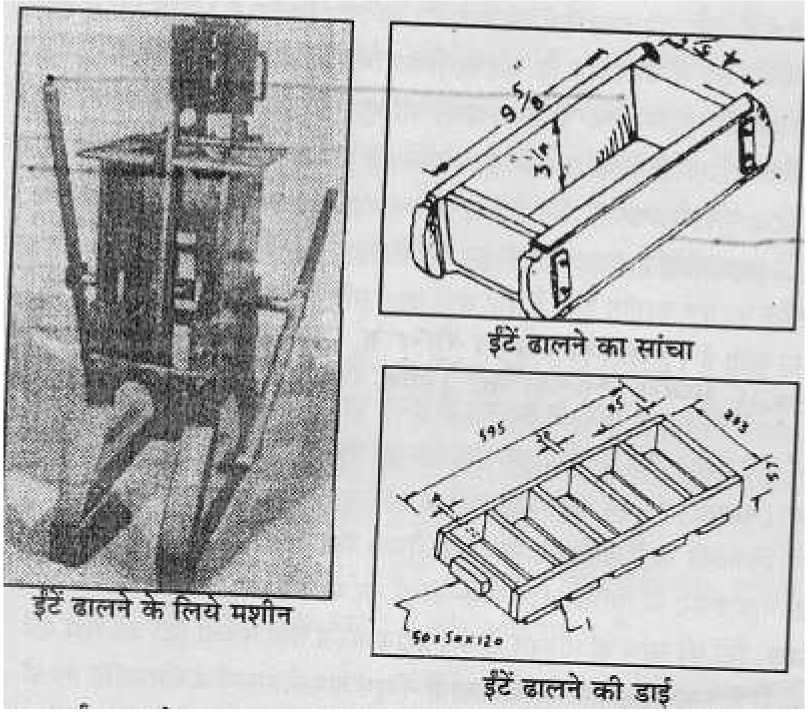

(फोटो क्रमांक 01)

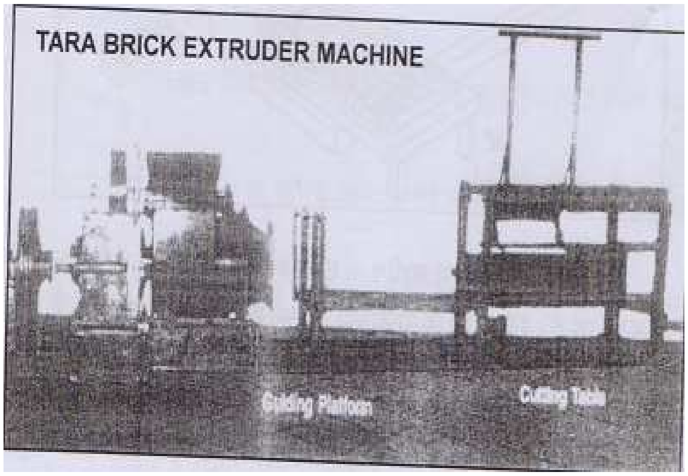

(फोटो क्रमांक 02)

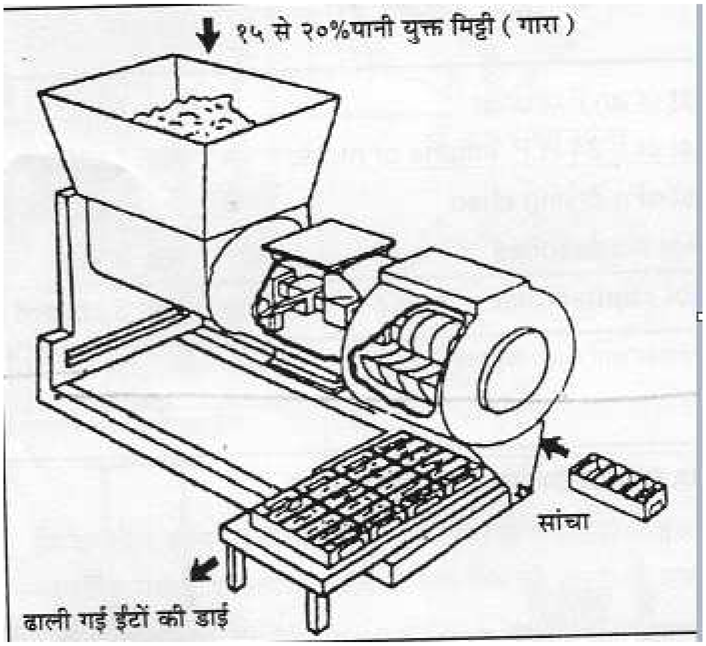

(फोटो क्रमांक 03)

(फोटो क्रमांक 04)

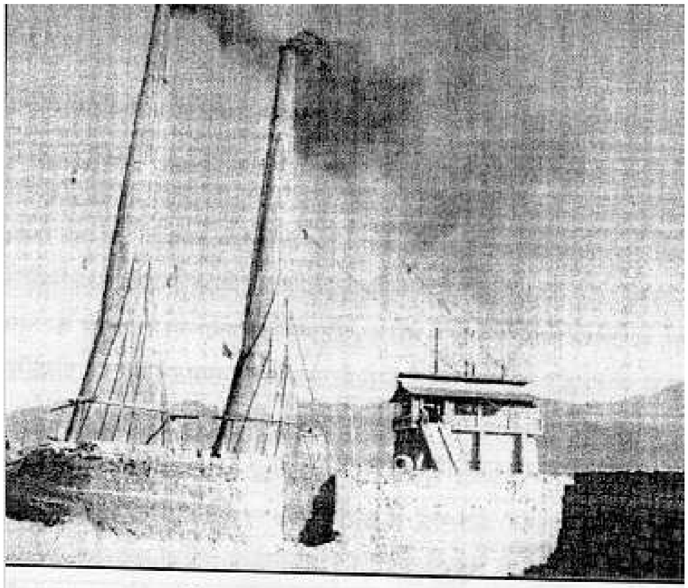

चिमनी भट्टे की बाहरी संरचना का चित्र

(फोटो क्रमांक 05)

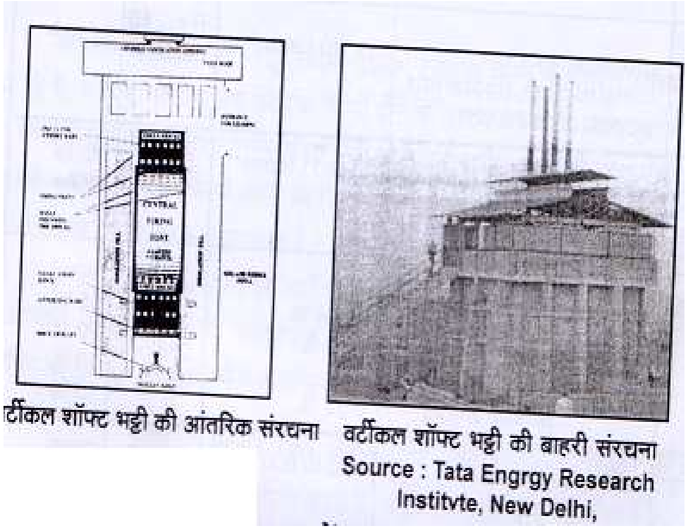

(फोटो क्रमांक 06)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

20वीं शताब्दी में डूँगरपुर राज्य के महारावलों का शिक्षा में योगदान

निमेश कुमार चौबीसा *

प्रस्तावना – राजाओं के प्ररिप्रेक्ष्य में जब भी इतिहास को देखा जाता है युद्ध, विलासिता, वैभव, बैगारी, अत्याचार, वर्ण-व्यवस्था के समर्थक जैसे पूर्वाग्रह सामने आ जाते है। लोकतन्त्र के पैरोकार राजशाही को कभी भी मान्यता नहीं देते है। वे स्वप्न में भी नहीं चाहते है कि राजाओं जैसी शासन प्रणाली फिर से भोगनी पड़े। इतिहास में राजाओं के समय समाज में तरक्की के साथ-साथ मूलभूत परिवर्तन एवं नवाचार भी हुए थे। इन सभी तथ्यों का विधिवत प्रकाशन ना होने से कभी सकारात्मक तथ्य आमजन के सामने नहीं आ पाए। प्रस्तुत शोध लेख में डूँगरपुर राज्य में 20वीं शताब्दी में कालक्रम के अनुसार महारावलों के शिक्षा के प्रति योगदान के बारे में तथ्यात्मक जानकारी दी गयी है और यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि उस समय राज्य में शिक्षा का अधिकार प्रत्येक आमजन को था चाहे वो किसी भी वर्ण एवं जाति से सम्बन्ध रखता हो।

महारावल उदयसिंह का शिक्षा में योगदान – महारावल उदयसिंह को सिंहासन पर बैठने के बाद सन् 1881 ई. में पहली बार राजपूताने में मनुष्य गणना का कार्य आरम्भ हुआ और अंग्रेज सरकार की इच्छानुसार महारावल ने भी डूँगरपुर में मनुष्य गणना का कार्य आरम्भ कराया। डूँगरपुर राज्य विशेषत: पहाड़ी प्रदेश है, जहाँ अधिक संख्या में भील बसते है। वहाँ मनुष्य गणना का यह पहला अवसर था। यह गणना राज्य में शिक्षा के विकास के लिए एक आधार बनी जिससे यह स्पष्ट अनुमान हो गया था कि जनसंख्या के अनुसार कितने विद्यालयों की स्थापना करनी है।

डूँगरपुर में अब तक बालकों का पठन-पाठन प्राचीन शैली पर होता था और जनता अपने बालकों को पंडितों, यतियों आदि के यहाँ भेज आवश्यक शिक्षा दिलाती थी। यह शिक्षा आधुनिक समय के हिसाब से पर्याप्त नहीं थी, क्योंकि उनको साधारण पढ़ने-लिखने तथा महाजनी हिसाब आदि के अतिरिक्त दूसरा कोई ज्ञान नहीं हो पाता था। इसलिए महारावल उदयसिंह ने 1893 ई. में राज्य में एक पाठशाला स्थापित की जहाँ प्रारम्भिक (प्राइमरी) शिक्षा दिये जाने की व्यवस्था हुई।

महारावल विजय सिंह (1898ई. से 1918ई.) – उदयसिंह के देहांत पर उनके पौत्र विजयसिंह सन् 1898 ई. में डूँगरपुर की गद्दी पर बैठे। महारावल विजय सिंह डूँगरपुर राज्य के शैक्षणिक विकास हेतु दूरदर्शिता रखते थे। उनका मानना था कि समय के साथ-साथ शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार करने से राज्य की जनता को बेहतर कार्मिक और सुशिक्षित नागरिक मिल सकेंगे।म

राज्य में 1898-99 ई. में 88 विद्यार्थी वर्ष के अंत तक डूँगरपुर के विद्यालय में पंजिकृत थे। सागवाड़ा, गलियाकोट और साबला में प्रारम्भिक विद्यालयों में शिक्षण कार्य प्रारम्भ हो चुका था। डूँगरपुर कस्बे और आस-पास के प्रत्येक गाँवों में विद्यालय खोल दिए गए थे जिनमें विद्यार्थियों की दैनिक उपस्थिति औसत 627 हो चुकी थी। आम जनता में ऐसा विश्वास जाग उठा था कि उनके बालकों के लिए महारावल के द्वारा सबसे बेहतर एवं आधुनिक शिक्षा के इंतजाम किए जा रहे है। महारावल के प्रयासों से भील बालकों ने भी विद्यालयों में प्रवेश लेना प्रारम्भ कर दिया था।म

1901 की जनगणना में राज्य में दो बड़े कस्बे और 630 गाँव थे। डूँगरपुर की जनसंख्याँ 6000 एवं सागवाड़ा की 4000 थी। कुल डूँगरपुर राज्य की जनसंख्याँ 100103 में से 56081 हिन्दू, 33887 जनजाति, 4271 मुस्लिमों में से 2565 शिया तथा 1706 सून्नी, जैन 5860 थे। उस समय राज्य की पूरी जनसंख्या में से 3286 शिक्षित जनसंख्या थी।म

1902 में डूँगरपुर के विद्यालय में 139 विद्यार्थी पंजीकृत थे जिसमें से 5 अंग्रेजी, 11 उर्दू, 3 संस्कृत का अध्ययन कर रहे थे इनमें से शेष वार्नाकुलर में शिक्षारत थे। दैनिक उपस्थिति का औसत 85.59 था और प्रत्येक विद्यार्थी पर शिक्षण शुल्क 6 आना 5 पाई आता था।म

1907 ई. में पाडवा ग्राम में नया विद्यालय प्रारम्भ किया गया और साथ ही 12 और नए विद्यालय और खोल दिए जिसमें से 11 ग्रामीण विद्यालय प्राथमिक स्तर के शेष एक सेकेण्डरी स्तर का था जिसमें अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू तथा संस्कृत भाषा का अध्यापन होता था। 1907 ई. में राज्य के शिक्षा विभाग में इंस्पेक्टर पद पर महारावल द्वारा रामचद्र दुबे जैसे विद्धान को नियत किया गया। महारावल ने आपके मार्फत शिक्षा के मद से उस समय 4336 रूपये निवेश किए गए।म

1913 ई. में डूँगरपुर राज्य में शिक्षा के महकमें को नवीन रूप दिया गया इसे अब दफ्तर तालिम कहा जाने लगा था। राज्य के बाहर से अब प्रशिक्षित अध्यापकों को भी आमन्त्रित किया जाने लगा जो कि स्थानीय अध्यापकों की तुलना में अधिक शिक्षित और अनुभवी तथा प्रभावी थे।म महारावल चाहते थे की किसी भी तरह से राज्य में शिक्षा की गुणवत्ता का स्तर वैश्विक हो जाए।

1915 ई. में डूँगरपुर राज्य के इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल ने तत्कालीन प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें यह जिक्र किया गया है कि महारावल विजय सिंह के हुकुम से भीलवाड़ा के निवासी बाबू कन्हैया लाल माथुर को पिन्हे स्कूल का हैड मास्टर बनाया गया और उन्होने शिक्षा की बेहतरी के लिए कई कार्य किए।

1917 ई. में राजपूत बोर्डींग स्कूल को पिन्हे स्कूल से जोड़ दिया गया जिससे उन जागीरदार और टाँकेदार के बालकों को शैक्षणिक लाभ होने लगा जो मेंयो कॉलेज अजमेर की फीस दे सकने में सक्षम नहीं थे।म

1918 ई. में राजपूताना मिडिल स्कूल बोर्ड के स्टेण्डर्ड पर पिन्हे स्कूल में सभी विषयों में अंग्रेजी और हिन्दी माध्यम में शिक्षण हो रहा था। दो मेघावी

* शोधार्थी, इतिहास एवं संस्कृति विभाग, जनार्दन राय नागर, राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड -टू-बी) विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) भारत

छात्र ईलाहाबाद विश्वविद्यालय में मेट्रीकुलेशन परीक्षा हेतु अध्ययन करने अजमेर हाई स्कूल से स्कॉलर बन कर गए। देवेन्द्र कन्या विद्यालय में सभी विषयों में अंग्रेजी और हिन्दी माध्यम में उच्च प्राथमिक स्तर के अध्ययन के साथ-साथ सिलाई और एम्बरोयड्री का प्रशिक्षण भी दिया जाने लगा था। महारावल विजयसिंह ने शिक्षा अर्जन में प्राचीनकाल से प्रभावी वर्ण व्यवस्था को कभी महत्व नहीं दिया राज्य में शिक्षा लेने का अधिकार सभी को बराबर था। शिक्षण कार्य के प्रशासन, प्रबन्धन एवं पर्यवेक्षण हेतु सदैव इन्होनें प्रशिक्षित और विद्वान व्यक्तियों को जिम्मेदार बनाया जिससे राज्य में शैक्षणिक उन्नाति निरन्तर रहे।म

महारावल लक्ष्मण सिंह (1918 ई.से 1989ई.) – महारावल लक्ष्मण सिंह का जम्म 7 मार्च 1908 ई. को हुआ था और 15 नवम्बर 1918 ई. को 11 वर्ष की आयु में उनका राजतिलक हुआ। महारावल विजयसिंह की वसीहत के अनुसार राज्य का प्रबन्धन दक्षिणी राजस्थान के पॉलिटिकल ऐजेन्ट मेजर डी.एम. के निरीक्षण में कौंसिल के द्वारा होने लगा। सन् 1919 ई. में महाविद्यालय शिक्षा प्राप्त करने के लिए अजमेर मेयो कॉलेज में भर्ती हुए। 16 फरवरी 1928 ई. के बाद महारावल शिक्षापूर्ण कर राज्य को लौटे और शासन अधिकार अपने हाथों में लिया।म

1928 ई. में पंडित रामचन्द्र शर्मा शिक्षा विभाग के प्रमुख एवं पिन्हे स्कूल के हैड मास्टर के पद पर कार्यरत थे। इस वर्ष दो नए विद्यालयों का शुभारम्भ किया गया और भीलों के बालकों की शिक्षा हेतु पाल सालेज में एक विद्यालय की स्थापना की। इस वर्ष 5 मेघावी छात्र हाई स्कूल की परीक्षा में बैठे। राज्य का शिक्षा विभाग सभी विद्यालयों को युनाइटेड प्रोविंस बोर्ड के स्तर पर सशक्त करने में लगा था।म

1935 ई. में मुसाहिब आला शिक्षा विभाग के अधीक्षक एवं हाई स्कूल के हैड मास्टर थे। इस वर्ष एक अनुदानित विद्यालय जेठाना में और दो जागीर विद्यालय पुंजपुर और सीमलवाड़ा में शुरू किए गए। 1935 ई. में हाई स्कूल में 560 बालकों का दाखिला हुआ जो कि पिछले वर्ष की तुलना में 9 ज्यादा था। धार्मिक शिक्षकों द्वारा नैतिक शिक्षा का पाठ बालकों को सिखाया जा रहा था। स्काउट में बालकों का प्रदर्शन अच्छा था और इस वर्ष ऑल इंडिया स्काउट मेले में राज्य के बालकों ने भाग लिया और सभी कार्यो में सफलता अर्जीत करी। एक निजी छात्रावास पंडित भोगीलाल पंड्या ने प्रारम्भ किया इस हेतु महारावल द्वारा पिन्हे स्कूल का एक अध्यापक और मुफासिल स्कूल का एक भवन उनके सुपुर्द कर दिया। बालकों के खेल हेतु उदयविहार बाग नियत था और इसके पास ही दो विद्यालयी मैदान 150 से 200 विद्यार्थियों हेतु काफ़ी थे। देवेन्द्र कन्या विद्यालय में इस वर्ष नयी प्राध्यापिका ने कार्य संभालते ही 102 बालिकाओं को प्रवेश दिलवाया। राज्य के सभी विद्यालयों में 1822 बालक एवं 160 बालिकाएँ अध्ययनरत थी। बालकों की दैनिक उपस्थिति का औसत 1356 और बालिकाओं का 112 था। राज्य में शिक्षा की मद के 25585 रूपये में से 23747 खर्च किया गया। जनसंख्या के अनुसार प्रति व्यक्ति औसत 2 आना खर्च किया गया।म

1940 ई. तक डूँगरपुर राज्य में सभी प्रकार के विद्यालयों की संख्या 65 हो चुकी थी। 1940 ई. तक डूँगरपुर में वयस्कों हेतु 2 और सागवाड़ा में 10 रात्री विद्यालय प्रारम्भ कर दिए गए। राज्य के सभी प्रकार के विद्यालयों में 4339 बालक एवं 247 बालिकाएँ अध्ययनरत थी। बालकों की दैनिक उपस्थिति का औसत 1840 और बालिकाओं का 177 था। जनसंख्या के अनुसार अध्ययनरत बालकों का प्रतिशत 1.9 और बालिकाओं का .1 था। 300 रूपये एक मुश्त हरीजन विद्यालयों के विकास हेतु दिया जाता था।म

1945 ई. में चौधरी कृणानन्द एम.ए. राज्य की शिक्षा व्यवस्था और महारावल स्कूल के हैड मास्टर का काम देख रहे थे। वे राज्य में 24 दिनों तक निरीक्षण के दौरे पर रहते थे। महारावल के प्रयासों से इस तक समय राज्य में विद्यालयों की संख्या जनसंख्या के अनुसार बढ़ती गयी। राज्य में 1945 ई. तक 84 विद्यालयों में 4663 विद्यार्थी पंजीकृत थे और इनकी दैनिक उपस्थिति का प्रतिशत 67 प्रतिशत था। इस वर्ष शिक्षा के मद में 41789.14.0 रूपये खर्च किए गए। 31 विद्यार्थियों को हायर एजुकेशन के लिए कुल 4423 रूपये वजीफा दिया गया। महारावल हाई स्कूल को विशारद परीक्षा हेतु केन्द्र बनाया गया जिसकी मान्यता ईलाहाबाद के हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा दी गयी थी। इस परीक्षा में राज्य के विद्यार्थियों ने संतोषजनक प्रदर्शन किया। नैतिक और धार्मिक शिक्षा कक्षा 6 से 9 तक के विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य थी और इसका तय पाठ्यक्रम भी था। उस समय हॉकी, फुटबाल और क्रिकेट हेतु लक्ष्मण मैदान उपलब्ध था। हाई स्कूल में एक पुस्तकालय की व्यवस्था थी इस वर्ष छात्रों को 1071 पुस्तकें इश्यु की गयी। इसी वर्ष निजी विद्यालयों की संख्या 1099 पहुँच चुकी थी।म

महारावल लक्ष्मण सिंह स्वयं उच्च शिक्षित थे और राज्य की जनता को भी शिक्षा के उच्च शिखर तक पहुँचाने का लक्ष्य रखा एवं उसे पूरा भी किया। आपका डूँगरपुर राज्य में शिक्षा के विकास के स्तर को बढ़ाने में बड़ा योगदान रहा। प्रभावी शिक्षा नीति, कुशल प्रशसकों की नियुक्ति, निरन्तर पर्यवेक्षण और मूल्याँकन तथा शिक्षा के प्रतिवेदनों पर स्वयं रूची लेकर वे आगामी कार्य योजना को अंजाम देते थे। उपलब्ध साहित्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 1901 ई. से 1947 ई. तक राजशाही ने डूँगरपुर राज्य में किसी भी जाति से शिक्षा ग्रहण करने के अधिकार का हनन नहीं किया। सभी जातियों को शिक्षा लेने का पूर्ण अवसर दिया जाता था और समता तथा समानता का समाजीकरण किया जाता था।

उपसंहार – डूँगरपुर का परिचय जनजाति क्षेत्र से होता है जो कि इस क्षेत्र में निवासित अन्य समुदायों के इतिहास को उभर कर नहीं आने देता। आजादी से पूर्व महारावलों ने अपनी जनता के लिए शिक्षा हेतु उत्ताम प्रबन्ध किए। जनसंख्या के अनुसार विद्यालयों की उपलब्धता, वजीफे, प्रौत्साहन, खेल, स्काउट जैसे कार्य उस समय सभी वर्गो के बालकों हेतु समान थे। उस समय सभी समुदायों को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। भीलों के लिए ग्रामीण स्कूल की व्यवस्था और कम आय वर्ग के लिए मुफासिल स्कूल का प्रबन्ध उस समय के महारावलों की समता और समानता वाली शिक्षा नीति को दर्शाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रिपोर्ट ऑन द पॉलिटिकल एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ राजपूताना स्टेट्स फोर 1898-99 के पृष्ठ संख्या 21 के बिन्दू क्रमांक 36
2. रिपोर्ट ऑन द पॉलिटिकल एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ राजपूताना स्टेट्स फोर 1898-99
3. रिपोर्ट ऑन द लेण्ड रेवेन्यु सेटलमेन्ट ऑफ डूँगरपुर स्टेट राजपूताना इन 31 मार्च 1904-1905
4. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट फोर द इयर ऐन्डिग 31 मार्च 1902, पृष्ठ 13
5. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, राजपूताना, फोर द इयर ऐन्डिग 30 सितम्बर 1907, पृष्ठ 11, अध्याय 7, बिन्दू संख्या 32
6. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1912-13, पृष्ठ

17-19
7. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1916-17, पृष्ठ 25-26
8. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1917-18, पृष्ठ 28-29
9. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा,(वि.स.1963), राजपुताने का इतिहास ,जिल्द तीसरी, भाग
10. पहला, डूँगरपुर राज्य का इतिहास, वैदिक यन्त्रालय अजमेर, पृ.195-96
11. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1927-28,पृष्ठ 22-24
12. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1934-35,पृष्ठ 22-24
13. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1939-40, पृष्ठ 35,36,37
14. रिपोर्ट ऑन द एडमिनीस्ट्रेशन ऑफ डूँगरपुर स्टेट, 1944-45, पृष्ठ 35-37

****

Pattern of wasteland in TSP area of southern Rajasthan

Dr. Namrata Nalwaya*

Abstract - In the absence of any agreed definition of waste land the term waste land has been defined in many ways Literally, waste land means land not used for any purpose or land incapable of habitation or cultivation producing little or no vegetation, barren or desert producing little or nothing. However, National Waste Land Development Board [NWDB] provided the following standardized definition of waste land, "waste land is defined as that land which is degraded and is presently lying unutilized except as current fallow due to different constraints."It is recognised that waste lands could be considered as those lands which are unutilised, partially utilized or mismanaged. These lands could fall under state occupation, private occupation or notified forest areas.

On the basis of primary data, this paper aims to analyse the total waste land in the TSP Area and was carried out to understand the problem from different angles and aspects.

Introduction - Waste land includes those types of land which is now unutilised for many years but had been used earlier. Yadav[1987] has also diagnosed and defined waste land as "those lands which are unculturable of presently lying unutilized but have been used previously, which are giving very low return of its economic potential of whose soil has lost its fertility status." In the TSP Region it is more than in the state i e 33.32 percent of waste land out of the total land.

Different organizations have categorised waste land differently, giving rise to non-uniformity of data base. Waste land have been divided into two broad classes i.e. culturable & unculturable.

Culturable waste land is that "land which is capable or has the potential for the development of agriculture, pasture and afforestation. Unculturable waste land is "land which is barren and cannot be put to any productive use such as agriculture or forest cover".

Data And Methodology - The paper is mainly based on the primary data, which is gained from the field survey. For deeply discussion, data also has been obtained from the concerned village office. Data received from various sources first and then combined in different groups according to the requirements of the study. Analysis of land usage has been done category wise for the year 1980-2011.

Objectives - The present study is undertaken keeping in view the following objectives:

1. To ascertain the physical and cultural personality of the research area.
2. To evaluate the distribution and characteristics of waste land between 1980-2011.
3. To identify the factors which are responsible for increase or decrease of the waste land.
4. To suggest developmental strategies and planning of optimum utilisation of waste land for different non agricultural uses.

Analysis And Discussion

Location of the study area - The tribal sub-plan region of Southern Rajasthan is located between 23°3' and 24°55' N latitude and 72°30' and 75°E longitude in southern p art of Rajasthan. It extends for nearly 210 kms in north south and 240 kms in east west direction and covers about 2380591 sq kms of area. Tribal sub plan (TSP) area comprises of 19 tehsils and 4364 villages. For our study we have taken Banswara and Dungarpur as one whole district, while 7 tehsils Jhadol, Kherwara, Kotra, Sarada, Salumber, Dhariyawad, Girwa of Udaipur district, 2 tehsils of chittorgarh district (Pratapgarh, Arnod) and only 1 tehsil of sirohi district (Abu road).To its north-west lies Abu road tehsil Kotra, Pratapgarh tehsil and Arnod tehsil surrounded the TSP area in the east and Girwa tehsil in the north. The tribal area of Gujarat lies in the south-west and it faces tribal area of Madhya Pradesh in the south east, so the TSP area faces two states i.e. Gujarat and Madhya Pradesh.

Factors affecting the distributional pattern of waste land - The above-discussed pattern of wastelands may be analysed in relation to various environmental, technological, economic and institutional factors which from the very beginning have been influencing the use of the land by man in the region.

Factors like relief, soils, rainfall, quality and depth of underground water, human (including pressure of population, education, agricultural labour) and economical factors (availability of finance, size of holdings, distribution of seeds, fertilizers insecticides) are responsible for waste land.

Total waste land - Waste land is defined as "that land which is degraded and is presently lying unutilised except as

* Udaipur, (Rajasthan) INDIA

current fallows due to different constraints". It is recognised that waste lands could be considered as those lands which are unutilised, partially utilized or mismanaged. These lands could fall under state occupation, private occupation or notified forest areas.

As per the Table 1 in the year 1980, there was 39.49 per cent of total waste land in the TSP region more than half comprising of only barren and uncultivable land with 23.03 per cent others being permanent pasture with 6.74 per cent, culturable waste with 6.46 per cent and old fallow with 3.26 per cent.

Table 1: TSP Region Waste Land (in per cent)

S.	Category	1980 -81	1990 -91	2000 -01	2010 -11
1.	Barren & uncultivable land	23.03	18.66	18.78	16.5
2.	Permanent pasture & grazing land	6.44	5.82	4.91	3.85
3.	Culturable waste	6.46	6.01	6.2	5.95
4.	Old Fallow	3.26	4.23	5.36	7.02
	Total waste land	**39.49**	**34.72**	**35.25**	**33.32**

The table also shows the uneven distribution of waste land in the TSP area in the year 1990 also. There was a decreasing trend of barren and uncultivable land from 1980 with 18.66 per cent of total wasteland. Here permanent pasture, culturable waste and old fallow contributed 5.82 per cent, 6.00 per cent and 4.23 per cent respectively. There was also marginal decrease of waste land with 34.72 per cent of the total TSP area.

In the year 2001, total waste land in the TSP area was 35.25 per cent of total land. There was a slight decrease of waste land during this year. The increase was mainly due to increase in old fallow. Barren and uncultivable land contributed 18.78 per cent.

The latest data was collected in the year 2010-11 according to it 16.50 per cent of the total land of the TSP region while permanent pasture, culturable waste and old fallow were 3.85, 5.95 and 7.02 per cent of the total land of the TSP area. The total waste land which includes barren and uncultivable land, permanent pasture, culturable waste and old fallows is 33.32 per cent of the total TSP area.

Table 2: Waste Land Pattern in TSP Region (2000-01) (in per cent)

S.	Tehsil	Waste land (% of total reporting area)					Total Waste land
		Barren & uncu -ltivable land	Culturable land				
			Perma -nent pasture and grazing land	Cultu- rable waste	Old Fallow	Total	
1	Ghatol	16.9	1.1	3.4	6.55	11.05	27.95
2	Garhi	16.83	0.73	12.6	12.2	25.53	42.36
3	Banswara	20.83	0.64	2.65	9.65	12.94	33.77
4	Bagidora	12.21	5.07	4.66	7.18	16.91	29.12
5	Kushalgarh	8.98	7.13	1.35	4.63	13.11	22.09
6	Dungarpur	28.37	7.44	7.93	9.66	25.03	53.4
7	Aspur	18.4	11.35	6.6	7.42	25.37	43.77
8	Sagwara	19.07	12.92	6.56	13.2	32.68	51.75
9	Simalwara	12.75	6.57	4.95	4.63	16.15	28.9
10	Jhadol	19	3.28	2.55	3.15	8.98	27.98
11	Kherwara	28.35	7.58	6.3	7.22	21.1	49.45
12	Kotra	16.42	2.3	2.87	1.1	6.27	22.69
13	Sarada	13.19	2.93	6.43	4.03	13.39	26.58
14	Salumber	51.84	5.7	8.3	4.92	18.92	70.76
15	Dhariyawad	20.06	8.86	9.49	3.07	21.42	41.48
16	Girwa	38.43	7.73	9.99	4.92	22.64	61.07
17	Pratapgarh	1	5.32	14.4	1.76	21.48	22.48
18	Arnod	1.83	5.42	11.93	1.89	19.24	21.07
19	Abu road	9.63	2.13	1.33	1.7	5.16	14.79
TSP region (2001)		**18.78**	**4.91**	**6.20**	**5.36**	**16.47**	**35.25**
TSP region (2011)		**16.5**	**3.85**	**5.95**	**7.02**	**16.82**	**33.32**

Conclusions - The total waste land in TSP region accounts for more than 33.32 per cent of total land. It includes barren and uncultivable of 16.50 per cent, pasture land 3.85 per cent, culturable waste 5.95 per cent and old fallow 7.02 per cent.

The category includes rocky/stony wastes, dissected and rugged plateau, gravelly piedmont, barren lands, strip lands along transportation lines, mine dumps, etc. which are not suitable for growing crops and can be reclaimed with great difficulty and at high cost, hence, an uneconomic proposition. However, these lands are fairly suited for development into good pasture lands and for social and agro- forestry.

Maximum portion of barren land is located in Banswara, Dungarpur and Udaipur districts and in the Udaipur district Salumber tehsil recorded with 51.84 per cent has maximum barren land, while Arnod and Pratapgarh tehsils have minimum portion.

A permanent pasture is found maximum in Aspur and Sagwara tehsils, while it is lowest in Banswara. The possibility of reducing pasture land should be properly studied and must be converted into forest land.

Arnod, Pratapgarh and Garhi tehsils have maximum portion of culturable waste land, while it is the lowest in Jhadol, Kushalgarh and Abu road culturable waste land can be reduced from 6.4 per cent and may be converted for raising crops.

Old fallow land has maximum highest portion in Sagwara tehsil. These lands are easily reclamable for cultivation but are not being cultivated due to some constraints. If and when reclaimed, these will help to produce food grains, pulses, oil seeds, etc. to meet the growing and varied demands.

Reclamation of Waste Land - The basic things needed for developing waste land are irrigation facilities, electricity and pucca road. Some villages is located very near the tehsil head quarter, it has convergence facilities. Government has developed tank in the village for irrigation purpose. As farmers are not acquainted with the latest

method of farming so there is a need to train them.

Government must provide electricity to the village so they may use machinery in agricultural activities. Government should encourage farmer by providing subsidy on seeds, fertilizer and subsidized loan for buying tractors on long repaying terms. Yet more necessary is farmers motivation and dedication toward utilising wasteland.

References :-

1. District statistical abstract: Banswara, Chittorgarh, Dungarpur, Sirohi and Udaipur, 1981, 1991, 2001 & 2011.
2. Gupta N.L. (1966): Land utilisation in Udaipur plateau, Ph.D. Thesis.
3. Khan, M.Z.A (1986): Wasteland in Chabbra tehsil, Kotra District, Rajasthan.
4. Bomb, P.R (1965): Agricultural geography of Udaipur Basin, M.A. Dissertation, Udaipur University.
5. Goojar, K.S (1984): Waste-land utilisation in Udaipur Basin.
6. Jain Anita (1983): Waste land utilisation in Udaipur district, Ph.D. Thesis, Sukhadia University.
7. Kothari, Anita (1983): Water Resource of Udaipur Basin, M.A. Dissertation, Sukhadia University.
8. Singh Abha Lakshmi (1977): The Distribution and utilisation of uncultivated land in Koil Tehsil, Geog. Rev. Ind. XXXIX (3): 206-211.
9. District Census Hand Book, Udaipur District, Census of India, 1981, 1991, 2001 & 2011.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

इन्दौर विकास प्राधिकरण की अधोसंरचनात्मक योजनाऐं - समस्याऐं व सुझाव

डॉ. विनीता पाराशर *

शोध सारांश - किसी भी शहर को विकास के मार्ग पर अग्रणी रहने के लिये सुदृढ़ अधोसंरचना का होना अनिवार्य होता है। अधोसंरचना के विकास में प्राधिकरण द्वारा किये गये प्रयास सराहनीय तो है परन्तु पर्याप्त नहीं है। अभी भी अनेकोनेक क्षेत्र जैसे- आपदा प्रबंधन, जल प्रबंधन, आदि में अपर्याप्त सुविधाऐं है। शहरी सड़कों व फ्लायओवरों का निर्माण तो हो रहा है परन्तु उन पर व्यय की गई राशि के अनुपात में गुणवत्ता नहीं है। राजनैतिक प्रभाव के कारण चौराहों व रोटरी के निर्माण पर आवश्यकता से अधिक व्यय हो रहा है जबकि अति आवश्यक क्षेत्र अछूते रह जाते हैं। आम आदमी की आवास समस्या के समाधान के लिये भी प्रयास तो किये जा रहे हैं, परन्तु जनसंख्या के अनुपात में यह भी बहुत कम है। अधोसंरचनात्मक योजनाओं में और गति तथा नियोजित की आवश्यकता है। व्यावसायिक गतिविधियाँ अनुचित नहीं है परन्तु यहाँ भी यह ध्यान रखने योग्य है कि सभी वर्गों के लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए योजना कार्य किया जावें।

प्रस्तावना - मालवांचल में बसा इन्दौर, बेहतर जलवायु, उद्यमशीलता और नियोजित विकास के लिए जाना जाता है। बीसवीं शताब्दी की शुरूआत में जब इन्दौर महामारी की चपेट में आया तो इसे साफ-सुथरा और विकसित बनाने के लिए मास्टर प्लान बनाने का विचार हुआ। महाराजा के आमंत्रण पर सर पीट्रिस गीडिस इन्दौर आए और सन् 1918 में पहला मास्टर प्लान बना। उसके तत्काल बाद 1924 में नगर सुधार न्यास बनाया गया जो 1976 के बाद से इन्दौर विकास प्राधिकरण के रूप में काम कर रहा है। इन्दौर विकास प्राधिकरण द्वारा समय-समय पर विभिन्न योजनाओं का निष्पादन किया गया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इन्दौर में सभी प्रकार की योजनाओं द्वारा चहुमुँखी विकास का प्रयास किया जा रहा है।प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य इन्दौर विकास प्राधिकरण की अधोसंरचनात्मक योजनाओं के माध्यम से निष्कर्ष ज्ञात करना एवं संभावित सुझाव प्रस्तुत करना है।

उद्देश्य - प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य इन्दौर विकास प्राधिकरण की अधोसंरचनात्मक का योजनाओं का आलोचनात्मक अध्ययन करना है। अध्ययन के माध्यम से निष्कर्ष ज्ञात करना एवं संभावित सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध की परिकल्पना - इन्दौर शहर के अधोसंरचनात्मक विकास में इन्दौर विकास प्राधिकरण की महत्वपूर्ण भूमिका है। इन्दौर शहर को महानगर बनाने की दिशा में इन्दौर विकास प्राधिकरण द्वारा किये जा रहे प्रयास पर्याप्त हैं।

अध्ययन का क्षेत्र व सीमाऐं - इन्दौर विकास प्राधिकरण का कार्य क्षेत्र इन्दौर जिले का शहरी क्षेत्र है, अत: अन्य ग्रामीण आदि क्षेत्रों को शोध में स्थान नहीं दिया गया है। उपलब्ध द्वितीय समंकों के अतिरिक्त प्राथमिक समंकों हेतु प्रश्नावली के आधार पर शहरी नागरिकों की राय भी शोध में सम्मिलित की जा रही है।

शहरी अधोसंरचना का विकास - गत वर्षों में प्राधिकरण ने शहरी विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। किसी भी शहर को विकास के मार्ग पर अग्रणी रहने के लिये सुदृढ़ अधोसंरचना का होना अनिवार्य होता है। इसी दिशा में प्राधिकरण का कार्य सराहनीय है। शहरी अधोसंरचना का विकास करने का प्राधिकरण ने पूर्ण प्रयास किया है। विकास राशि का सर्वाधिक व्यय भी अधोसंरचनात्मक योजनाओं पर ही किया गया है। सड़कें, फ्लायओवर, पुल के निर्माण के साथ ही साथ शिक्षा, प्रशासन एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के विकास में भी योगदान दिया है। मध्यप्रदेश शासन की नई आवास नीति का अनुसरण करते हुए प्राधिकरण ने आवासीय योजनाओं का क्रियान्वयन भी किया है। शहर को झुग्गी मुक्त बनाने में वेम्बे योजना के अंतर्गत आवास निर्माण, निम्न आय वर्ग को कम मूल्य पर लॉटरी द्वारा भूखण्डों का आवंटन सराहनीय कार्य है। अन्य वर्गों को आवास सुविधा देने के उद्देश्य से आधुनिक टाऊनशीप का निर्माण कार्य भी प्राधिकरण द्वारा किया जा रहा है।

प्राधिकरण द्वारा विकसित की गई आवासीय योजनाओं में सभी आय वर्ग के लिये भूखण्डों की उपलब्धता, प्राधिकरण की विकास की प्रतिबद्धता को प्रकट करती है। परन्तु वेम्बे योजना के अंतर्गत निर्मित भवनों को छोड़कर अन्य निर्मित भवन सभी आय वर्गों की पहुँच में नहीं है। प्राधिकरण द्वारा भूखण्ड आवंटन के लिये अपनाई गई लॉटरी पद्धति भी सराहनीय तो है परन्तु उसमें भी सुधार की पर्याप्त संभावनाऐं है। नई आवासीय योजनाऐं टाऊनशीप की तर्ज पर तैयार की जा रही है, जो शहर को महानगरीय स्वरूप तो प्रदान करेगी परन्तु आम आदमी की आवास समस्या का निराकरण नहीं कर पायेगी। आवासीय योजनाओं में विस्थापन भी एक बड़ी समस्या है। इस दिशा में स्थायी समाधान आवश्यक है।

प्राधिकरण स्ववित्तीय निकाय है, अनुदान व सहायता के अतिरिक्त अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अतिरिक्त आय आवश्यक है। प्राधिकरण सम्पत्ति विक्रय से आय प्राप्त करता है, किराये व लीज तथा ब्याज से आय प्राप्त करता है। विभिन्न वाणिज्यिक योजनाओं का विकास कर वाणिज्यिक भवनों व भूखण्डों का विक्रय भी करता है। वाणिज्यिक भवनों व भूखण्डों का विक्रय निश्चित ही आवासीय भूखण्डों व भवनों से अधिक मूल्य पर किया जाता है इससे भूमि के मूल्यों को नियंत्रित रखने में कठिनाई होती है।

* पूर्व विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) आई. पी. एस. एकड्मी, इन्दौर (म.प्र.) भारत

समस्याऐं व सुझाव – मध्यभारत का महत्वपूर्ण शहर तथा प्रदेश की औद्योगिक राजधानी होने के बाद भी इन्दौर में मूलभूत सुविधाओं की कमी है।

- विश्व पटल पर जहाँ शंघाई जैसे शहर तुलना का आधार है, **इन्दौर अभी बहुत पीछे है, विशेष तौर पर अधोसंरचना के मामले में।** इन्दौर विकास प्राधिकरण को अपना लक्ष्य ऊँचा रखकर विकास के प्रयास करने होंगे।
- **शहर में जनसंख्या वृद्धि को ध्यान में रखते हुए अधोसंरचना विकसित करनी होगी।**
- शहर में **मेट्रो ट्रेन** लाने की दिशा में इन्दौर विकास प्राधिकरण प्रयास करें।
- **सडकों की मरम्मत व रखरखाव के लिये अपनी अतिरिक्त निधि का प्रयोग करें।**
- बढ़ती हुई जनसंख्या में अधिकतर आबादी निम्न आय वर्ग की है, अत: इस वर्ग को आवास सुविधा दिलाने के लिये **विशेष आवास निम्न दरों पर उपलब्ध कराये जाये।**
- **छोटी व तंग बस्तियों का पुर्नसुधार** किया जाये।
- शहर के सभी क्षेत्रों विशेषकर मध्य भाग में पार्किंग बढ़ी समस्या है, जिससे यातायात भी बाधित होता है। अत: **मल्टी लेबल पार्किंग स्थलों का निर्माण** शीघ्र करवाकर इनके रखरखाव की व्यवस्था इन्दौर विकास प्राधिकरण को स्वयं लेनी चाहिये।
- **औद्योगिक** क्षेत्रों **में अधोसंरचना के विकास** की जिम्मेदारी स्वयं के हाथों में लेकर इन्दौर विकास प्राधिकरण शहर को दोहरी सौगात दे सकता है। एक तो उद्योगों के विकास के साथ शहर का विकास होगा तथा दूसरा प्रदूषण, कचरा, अवशिष्ट आदि समस्याओं को नियंत्रित कर सकता है।
- शहर में सार्वजनिक मनोरंजन के साधन भी अपर्याप्त है। शहर के बाहरी क्षेत्रों में **मनोरंजन स्थलों का निर्माण** किया जा सकता है। ऐसा करने से इन्दौर विकास प्राधिकरण को आर्थिक लाभ होगा।
- इन्दौर विकास प्राधिकरण योजनाऐं विकसित कर उन्हें अन्य स्थानीय संस्थाओं को हस्तांतरित कर देता है। अत: उन **योजनाओं में** इन्दौर विकास प्राधिकरण **का हस्तक्षेप समाप्त हो जाता है।** जिसके कारण बाद में उत्पन्न समस्याओं के लिये इन्दौर विकास प्राधिकरण जिम्मेदार नहीं रहताअ अत: इस हेतु **एक विशेष सर्वेक्षण प्रणाली का विकास किया जाना चाहिये जो इस बात का ध्यान रखे कि योजना अपने उद्देश्यानुसार ही है**, जैसे आवासीय भवनों व प्लाटों का व्यावसायिक व अन्य उपयोग न हो। निम्न आय वर्ग को आवंटित भवनों व प्लाटों को स्वयं उपयोग कर रहे हो, पार्क, स्कूल, अस्पताल आदि सुविधा का योजनानुसार ही विकस हो रहा है।
- **योजनाऐं निर्धारित अवधि में पूर्ण नहीं हो पाती क्योंकि –**
- निर्धारित अवधि में टेण्डर नहीं हो पाते हैं।
- ठेकेदार या निर्माण कंपनियाँ कार्य अधूरा छोड़ देती हैं।
- योजना निर्धारित बजट राशि में पूर्ण नहीं हो पाती, अत: अतिरिक्त राशि के लिये कार्य रूक जाता है।
- योजनाओं के पूर्व निर्धारित उद्देश्य परिवर्तित हो जाते हैं।

उपरोक्त समस्याओं के संभावित कारण हैं – राजनैतिक हस्तक्षेप, भूमि अधिग्रहण सम्बन्धी नियमों व निपटारे की जटिलता, अधिनियम के जटिल प्रावधान, ठेकेदार व कंपनी के विरूद्ध कार्यवाही न होना या कार्यवाही में देरी होना।

- इन्दौर विकास प्राधिकरण के पास **ऋण प्राप्त करने तथ पुनर्भुगतान करने में सक्षम है तो वह ऐसा करके शहर के विकास को और तेजी व गति प्रदान कर सकता है।**
- बिना बिकी सम्पत्तियाँ भी इन्दौर विकास प्राधिकरण की समस्या में से एक है। इसके लिये दो प्रमुख तत्व जिम्मेदार है। एक तो वैश्विक मंदी तथा दूसरा इन्दौर विकास प्राधिकरण की नीतियाँ। गतवर्षो में लाटरी द्वारा प्लाटों का विक्रय किया गया है, ऐसा करने से जो प्लाट मालिक प्रारम्भिक राशि या अन्य का भुगतान नहीं कर सकें, वे विक्रय निरस्त हो गये। **अत: प्लाट बिना बिके ही रह गये।** ऐसे प्लाटों के विक्रय के लिये पुन: निविदा व अन्य कार्यवाही होने तक ये **गैर–निष्पादक सम्पत्ति** रह जाती है।

  इन्दौर विकास प्राधिकरण द्वारा आवासीय व व्यावसायिक योजनाओं का विकास तथा जनता को सीधे विक्रय करने का प्रारम्भिक उद्देश्य शोषण से मुक्ति तथा उचित मूल्य पर प्लाट तथा भवन उपलब्ध कराना था, परन्तु कालान्तर में इन्दौर विकास प्राधिकरण भी स्ववित्त प्राप्ति हेतु विभिन्न श्रेणियों में अलग–अलग मूल्य पर प्लाट विक्रय करने लगा। ऐसा करने से **बड़े आवासीय तथा व्यावसायिक भूखण्ड महंगे बेचे गये।** जिसके दो हानिकारक प्रभाव हो रहें, एक तो कुछ प्लाट बिना बिके ही रह गये दूसरा इन्दौर विकास प्राधिकरण द्वारा अधिक मूल्य पर विक्रय करने से उस क्षेत्र विशेष में भूमि के दाम बढ़ गये। अत: इन्दौर विकास प्राधिकरण भूमि **के दामों को नियंत्रित करने में असफल रहा।**

  अत: प्राधिकरण की ऐसी बिना बिकी सम्पत्ति के तुरंत निपटारे हेतु प्रावधान करना चाहिये। बड़ी सम्पत्तियों एवं व्यावसायिक सम्पत्तियों के मूल्य निर्धारित करते समय भी इनके प्रभावों को ध्यान में रखना चाहिये।
- सौंदर्यीकरण किसी भी शहर को आकर्षक बना सकता है। विकास प्राधिकरण होने के नाते इन्दौर विकास प्राधिकरण ही इसके लिये जिम्मेदार भी है। परन्तु शहर की मूलभूत आवश्यकताओं से ऊपर चौराहों व रोटरी के सौंदर्यीकरण पर धन तथा समय का व्यय उचित नहीं है। प्राधिकरण को सर्वप्रथम सभी क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाओं के विकास पर ध्यान देना चाहिये। **सौंदर्यीकरण के लिये भी प्राकृतिक सौंदर्य को बढ़ाना ही प्राथमिकता होनी चाहिये न कि कृत्रिम साधनों का प्रयोग करना चाहिये।**
- लीज रेंट का निर्धारण बाजार के उतार–चढ़ाव पर आधारित होना चाहिए। तात्पर्य यह है कि भूमि के मूल्य को नियंत्रित करने में प्राधिकरण महती भूमिका का निर्वाह कर सकता है।

निष्कर्ष – अधोसंरचना के विकास में प्राधिकरण द्वारा किये गये प्रयास सराहनीय तो है परन्तु पर्याप्त नहीं है। अभी भी अनेकोनेक क्षेत्र जैसे– आपदा प्रबंधन, जल प्रबंधन, कचरा प्रबंधन आदि में अपर्याप्त सुविधाऐं है। शहरी सड़कों व फ्लायओवरों का निर्माण तो हो रहा है परन्तु उन पर व्यय की गई राशि के अनुपात में गुणवत्ता नहीं है। राजनैतिक प्रभाव के कारण चौराहों व रोटरी के निर्माण पर आवश्यकता से अधिक व्यय हो रहा है जबकि अति आवश्यक क्षेत्र अछूते रह जाते हैं। आम आदमी की आवास समस्या के समाधान के लिये भी प्रयास तो किये जा रहे हैं, परन्तु जनसंख्या के अनुपात

में यह भी बहुत कम है। आवास योजनाओं में और गति तथा नियोजित करने की आवश्यकता है। व्यावसायिक गतिविधियाँ अनुचित नहीं है परन्तु यहाँ भी यह ध्यान रखने योग्य है कि सभी वर्गों के लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए योजना कार्य किया जावें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नगर विकास विधि संहिता - भीमसेन खेत्रपाल
2. नगर विकास विधि संहिता - संजय चराटे
3. नगर विकास विधि संहिता - मदनलाल जिंदल
4. भू-राजस्व संहिता - एस. के. जैन
5. भू-राजस्व संहिता - राधेश्याम द्विवेदी
6. भू-राजस्व संहिता - चंदनाथ झा
7. मध्यप्रदेश नगर पालिक निगम - संजय चराटे
8. मध्यप्रदेश नगर पालिक निगम - भीमसेन खेत्रपाल
9. मध्यप्रदेश नगर पालिक निगम - मदनलाल जिंदल
10. विकास - इन्दौर विकास प्राधिकरण
11. समाचार-पत्र -
    - दैनिक भास्कर
    - नईदुनिया
    - राज एक्सप्रेस
    - पत्रिका
12. www.ida.org.com
13. www.jnnurm.com
14. www.town&countryplanningofindia.com

****

मतदान व्यवहार : एक विश्लेषण

डॉ. सीमा श्रीमाल *

मतदान व्यवहार – लोकतंत्र सहमति पर आधारित ऐसी सहकारी व्यवस्था है, जिसका अस्तित्व निर्वाचन की निष्पक्षता पर आधारित है। संविधान सभा के सामने यह समस्या थी कि प्रजातंत्र की सफलता के लिए कैसे निर्वाचन तंत्र को अपना जाये ? नेहरू भारत की जनता में अटूट विश्वास रखते थे उन्होंने संविधान सभा के सामने एक भावभरा भाषण दिया कि 'यदि भारत के संविधान में बालिग मताधिकार की व्यवस्था नहीं होगी तो सम्भवत: हमारा राष्ट्रीय आन्दोलन व स्वतंत्रता मूल्यहीन बन जायेंगे।'

भारत में लोकतंत्र अब तक कैसे चल रहा है, और यहाँ की व्यवस्था क्यों नहीं टूटी ? यह बात पश्चिमी विचारकों के लिए पहेली रही है। 'भारत में लोकतंत्र की प्रारम्भिक सफलता का श्रेय पाश्चात्य विद्धानों ने पहले नौकरशाही के फौलादी ढाँचे, नेहरू के चमत्कारी व्यक्तित्व व कांग्रेस दल को दिया।' किन्तु इन विचारकों को विश्वास था कि इन सबके ढह जाने या किसी वजह से कमजोर हो जाने जैसे कि चीनी आक्रमण, केन्द्र–राज्य सम्बन्ध विवाद, पाकिस्तान से युद्ध में पराजय या आर्थिक मोर्चे पर विफलता से भारत में लोकतंत्र समाप्त हो सकता है। अनेक पश्चिमी समाचार पत्रों ने तो यहां तक भविष्यवाणी कर दी थी कि सम्भवत: चौथे चुनाव भारत में आखिरी चुनाव होंगे।

समय के साथ पश्चिमी विचारकों के मन में भारत की लोकतंत्रीय व्यवस्था के प्रति संदेशा दूर हो गया और आज भारत ने केवल एशिया का बल्कि सम्पूर्ण विश्व का सबसे बड़ा प्रजातंत्रीय राष्ट्र माना जाता है। आज सभी यह स्वीकारते हैं कि भारत में अधिकांशत: तटस्था व सुव्यवस्थित चुनाव हुए हैं। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में मतदाता का चुनाव व्यवहार कौतूहल पैदा करता है। कुछ प्रश्न राजनीतिशास्त्रियों व सामान्यजनों में सामान्य रूप से जिज्ञासा पैदा करते है। जैसे कि, चुनाव व्यवस्था का मतदाता पर क्या प्रभाव पड़ा ? मतदाताओं का कैसा व्यवहार रहा ? क्या विगत चुनावों एवं लोकतांत्रिक संस्थाओं के क्रियाकलापों से आम मतदाता की राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि हुई है ? क्या मतदाता के व्यवहार से नेहरू की अपेक्षाएँ पूरी हुई हैं ? इन संदर्भो में भारत के प्रसंग में अनेक पश्चिमी भारतीय शोधकर्ताओं ने अध्ययन किये है जैसे वी. एन. सिरसीकर ने पूना के संदर्भ में अध्ययन किया। इसके अलावा रजनी कोठारी, मोरिस जोन्स, डॉ. इकबाल नारायण, रामाश्रय राय, नारमन डी पामर, रूडोल्फ व माईनर वीनर ने काफी गहराई से मतदान व्यवहार का अध्ययन किया है।

द्धितीय विश्वयुद्ध के बाद पूरे विश्व में शोधकर्ताओं का ध्यान मतदान व्यवहार के गहन विश्लेषण पर गया।

मतदान व्यवहार का अर्थ – मतदान व्यवहार से हमारा अभिप्राय है कि मतदाता अपना मत देते समय कौन–कौन से कारणों अथवा स्थितियों से प्रभावित होता है। मतदाता की मतदान के प्रति निर्णयकारी क्षमता को परिवर्तित या प्रभावित करने वाले तत्व ही मतदान व्यवहार कहलाते है। साधारण शब्दों में मतदान व्यवहार का अर्थ है कि मतदाता अपने मत का प्रयोग क्यों करते है और किस प्रकार करते है ? मतदान व्यवहार में प्रथम तो अध्ययन किया जाता है कि मतदाता को मतदान करने के लिए कौन से तत्व प्रेरित करते है ? दूसरे इस बात का अध्ययन किया जाता है कि मतदाता को कौन से तत्व निरूत्साहित करते हैं तथा तीसरे मतदान व्यवहार में भी अध्ययन किया जाता है कि किन तत्वों से प्रभावित होकर मतदाता किसी विशेष राजनीतिक दल और किसी विशेष उम्मीदवार को मत देता है।

मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाल मुख्य तत्व निम्न हैं –

1. प्रारम्भ से ही जातिवाद मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण तत्व रहा है। प्रत्येक दल किसी भी चुनाव क्षेत्र में प्रत्याशी मनोनीत करते समय जातिगत गणित का अवश्य विश्लेषण करते हैं। ऐसा माना जाता है कि चुनाव में जातियाँ अपनी पसंद के जातिगत उम्मीदवार को समूह में मत देती है।
2. साक्षरता का स्तर, समुदाय का प्रकार, धर्म आदि ने मतदान व्यवहार को प्रभावित किया है। भारतीय समाज में ग्रामीणों की संख्या अधिक होने से उनमें साक्षरता का स्तर कम है जो मतों की संख्या को प्रभावित करता है। धर्म के नाम पर साम्प्रदायिक भावना उकसायी जाती है जिससे व्यक्तिगत व्यवहार और फलस्वरूप मतदान व्यवहार प्रभावित होता है।
3. राजनीतिक स्थिरता की आकांक्षा मतदान व्यवहार को कहाँ तक प्रभावित करती है इसका भी पांचवें लोकसभा चुनाव और 1972 के चुनाव थे।
4. विचारधारा कार्यक्रम और नीति मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण तत्व रहे हैं। कांग्रेस के पक्ष में मतदान होने का एक मुख्य कारण यह रहा है कि अन्य दलों के मुकाबले वह जनता के सामने अधिक आकर्षक, प्रभावी और कल्याणकारी कार्यक्रम प्रस्तुत कर सकी है।
5. मतदान व्यवहार को देश की आथिक स्थिति ने काफी प्रभावित किया है। 1967 के चुनावों में कांग्रेस के विरोध में मतदान इसलिए हुआ कि जनता की आर्थिक कठिनाईयाँ बहुत बढ़ गई थीं, किन्तु जब 1971 के चुनावों से पूर्व श्रीमती गांधी ने आर्थिक स्थिति सुधारने पर अपना ध्यान केन्द्रित किया तो मतदान पुन: कांग्रेस के पक्ष में हुआ।
6. 1971 के पांचवें लोकसभा चुनावों से पूर्व सामंतशाही व्यवस्था ने मतदान व्यवहार को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया। स्वतंत्र पार्टी तेजी से उभरीं, क्योंकि जागीरदारों, भूतपूर्व राजाओं आदि को अच्छा समर्थन मिला।

* सहायक प्राध्यापक, जवाहरलाल नेहरू विधि महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

7. क्षेत्रवाद की प्रवत्ति मतदान व्यवहार को सदा से प्रभावित करती रही है। 1967 में पंजाब के अकाली और मद्रास में द्रमुक की विजय इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं । 1971 के चुनावों में क्षेत्रीयतावाद की भावना ने मतदान व्यवहार को विशेष प्रभावित नहीं किया।
8. भाषा सम्बन्धी विवादों ने भी समय-समय पर मतदान व्यवहार को प्रभावित किया है। तमिलनाडु में मुख्यत: हिन्दी विरोधी प्रकार के कारण द्रमुक को 1967 में विधानसभा में स्पष्ट बहुमत प्राप्त हो गया।
9. साम्प्रदायिकता की भावना, विदेशी धन, चुनाव प्रचार, उम्मीदवारों द्वारा नोट देकर वोट खरीदने की शक्ति आदि तत्व भी मतदान व्यवहार को किसी ने किसी सीमा तक प्रभावित करते हैं ।
10. राजनीति जागरणा भी मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण तत्व है । इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध मतदान व्यवहार से देखा जाता है । अधिक मात्रा में राजनीतिक दष्टिकोणा से जागत नागरिक अपने मतों का सदुपयोग बेहतर रूप से करते हैं । राजनीति में कम रूचि रखने वाले या राजनीति का कम ज्ञान रखने वाला मतदाता या तो मत से उदासीन रहते हैं या अपने मत का दुरूपयोग करते हैं ।

भारतीय मतदान व्यवहार सम्बन्धी उपर्युक्त प्रवत्तियाँ पूरे देश में आमतौर पर पायी जाती हैं । लेकिन भारतीय मतदाताओं के व्यवहार की प्रकति एक राज्य से दूसरे राज्य में या एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बहुत भिन्न भी देखी गई है। कहीं जाति का बोलबाला है तो कहीं जाति एकदम गौण है। कहीं धर्म के आधार पर मतदान होता है तो कहीं स्थानीय या राष्ट्रीय समस्याओं के आधार पर । कहने का तात्पर्य यह है कि राज्य और क्षेत्र में मतदाताओं की सामाजिक और आर्थिक प्रकति और उनके राजनीति जागरण तथा मतदान क्षमता में विश्वास के अनुसार मतदान व्यवहार में अंतर पड़ जाता है।

मतदान व्यवहार का इतिहास – मतदान व्यवहार एवं इससे जुड़े प्रश्नों पर वैचारिक ढंग से सोच विचार का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। मतदान व्यवहार का अध्ययन बीसवीं सदी की ही एक प्रक्रिया है। सर्वप्रथम फ्रांस में 1913 में मतदान व्यवहार का अध्ययन किया गया। इसके बाद अमेरीका में दो विश्व युद्धों के बीच काल में और ब्रिटेन में महायुद्ध के बाद मतदान व्यवहार का अध्ययन किया गया। भारतीय परिप्रेक्ष्य में इस दिशा में अध्ययन की शुरूआत 1954 में माइनर वीनर ने की थी, तब से आज तक अनेक लघु एवं वृहत् अध्ययन हो चुके हैं। इन अध्ययनों के परिणामस्वरूप राजनीतिशास्त्र की विषय वस्तु एवं अध्ययन पद्धति में आधारभूत परिवर्तन हुए हैं। आजकल इन्द्रियानुभविक शोध पर जेर है यह मानते हुए भी कि नवीन परिवर्तन आवश्यक एवं अवश्यम्भावी हैं, मैं पुरातन को पूर्णतः नकारने की पक्षधर नहीं हूँ। कोई भी शोध प्रयास एकांगी नहीं हो सकता। इन्द्रियानुभविक अनुभव पर आधारित नवीन शोध में भी इस दिशा में पूर्वकाल में हुए अनुसंधानों, पद्धतियों के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है, ताकि भूतकाल में की गई गलतियों से बचा जा सके, व उनकी कठिनाईयों एवं निष्कर्षों के परिप्रेक्ष्य में अपने विषय की आवश्यकताओं को परिभाषित किया जाए। वस्तुतः आज के युग में ज्ञान को विषय की सीमाओं में बांधा नहीं जा सकता। अतः अंतर्शास्त्रीय अध्ययनों की आवश्यकता है। इन्द्रियानुभविक शोध इस दिशा में एक कारगर कदम है। विकास चाहे राजनीतिक हो या सामाजिक या आर्थिक, अलग-थलग जाना, समझा एवं आंका नहीं जा सकता। यह अफसोस की बात है कि भारत में पिछले कुछ वर्षों में हुए इन्द्रियानुभविक शोध की सबसे बड़ी कमी उसका एकांगी होना है। सैम्यल आई. एल्डरसवैल्ड, जिन्होंने भारत की जनता के राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन किया है, उनका भी यही मत है। राजनीतिक व्यवहार सामाजिक बदलाव का कारक है एवं उसकी सीमाओं को तय करता है। सामाजिक बदलाव का राजनीतिक संदर्भ अति महत्वपूर्ण है। वास्तव में किसी भी समाज के विभिन्न घटकों में हो रहे परिवर्तनों को विकासमूलक दृष्टिकोण से ऐतिहासिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिये तभी हम, लोगों की वस्तुनिष्ठ परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक व्यवहार से जुड़ी आवश्यकताओं एवं उसके प्रभावों का ज्ञान कर सकेंगे, वह हम समुचित दिशाओं में लक्ष्य निर्धारण व लक्ष्य प्राप्ति के प्रयत्नों में समन्वय स्थापित कर सकेंगे।

मतदान व्यवहार की विशेषताएँ –मतदान व्यवहार के अध्ययन के उपरांत हम मतदान व्यवहार की कुछ विशेषताएँ बता सकते है। जैसे

1. मतदान व्यवहार अत्यधिक अनिश्चित आचरण है। एक क्षेत्र का मतदान व्यवहार दूसरे क्षेत्र के मतदान व्यवहार से भिन्न होता है। अत: एक क्षेत्र के मतदान व्यवहार के आधार पर इस सम्बन्ध में किसी प्रकार के सामान्य निष्कर्ष निकालना संभव नहीं होता।
2. मतदान व्यवहार लोकतंत्र में आधारभूत तत्व है। इसी से लोकतंत्र की वास्तविकता या औपचारिकता निर्धारित होती है।
3. मतदान व्यवहार लम्बे समय तक अनुमान का विषय रहा था किन्तु अब मतदान व्यवहार के व्यवस्थित अध्ययन शुरू हुए है। इनका अध्ययन करने में वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाया जाता है।
4. मतदान व्यवहार के अध्ययनों के आधार पर निर्वाचन परिणामों का पूर्वानुमान लगाया जाता है।
5. मतदान व्यवहार पर मुख्यत: तीन प्रकार
   (1) सामाजिक स्तर
   (2) दल के प्रति निष्ठा
   (3) मुद्दों से सम्बन्धित तत्व प्रभाव डालते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. नई दुनिया इन्दौर,
2. संविधान और संसद गणतंत्र के 50 नेशनल पब्लिशिंग हाउ़स, नई दिल्ली 1979
3. भारत का संविधान अनुच्छेद 324
4. रजनी कोठारी, भारत में राजनीति
5. कम्प्यूटर इंटरनेट पर उपलब्ध विषय से सम्बन्धी जानकारी

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

1857 का स्वतंत्रता संग्राम और निमाड़

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना - भारत के इतिहास में 1857 के वर्ष का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यह अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र क्रांति की शुरुआत का वर्ष था। मेरठ से प्रारंभ होकर क्रांति देश के विभिन्न भागों में व्याप्त हो गई। निमाड़ भी इससे अछूता नहीं रहा। यहां भीमा नायक सहित अनेक योद्धाओं ने अंग्रेजों को कड़ी टक्कर दी। क्रांति के राष्ट्रीय नायकों में सम्मिलित तात्या टोपे का आगमन भी निमाड़ में हुआ। प्रस्तुत शोधपत्र में 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में निमाड़ की भूमिका का विवेचन किया जा रहा है।

भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना - मुगल साम्राज्य के विघटन एवं अंग्रेजी राज्य की स्थापना से भारत में आधुनिक काल का सूत्रपात माना जाता है। उल्लेखनीय है कि सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दियों में व्यावसायिक उद्धेश्यों से यूरोपीय जातियों का भारतं आगमन उनके लिये सफलतम प्रमाणित हुआ। यूरोपियनों की अकूत उद्यमिता एवं माँग तथा पूर्ति जैसे आर्थिक सिद्धान्तों से विज्ञता के कारण उन्हें भारतीय व्यापार से आशातीत लाभ अर्जित हुआ। भारत आने वाले पुर्तगाली, डच, अंग्रेज, फ्रांसीसी आदि यूरोपीय मूलत: साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के थे, अत: समय के साथ भारत में राजनीतिक सत्ता स्थापित करने की स्वाभाविक महत्वाकांक्षा उनमें उत्पन्न हुई, जिसे वे अपनी कूटनीतिक योग्यताओं, अपेक्षाकृत उन्नत सामरिक संसाधनों एवं रणप्रणालियों, भारतीय सत्ताधीशों की दुर्बलताओं और उनमें समन्वयशीलता के अभाव जैसे अनेक कारणों से पूर्ण करने में सफल हुये। सोनचिरैया भारत को अपने-अपने पिंजरों में परिरूद्ध करने के लिये यूरोपीय शक्तियों ने परस्पर भी प्रबल संघर्ष किया, जिसमें अन्तत: अंग्रेज इक्कीस प्रमाणित हुये। अंग्रेजों ने प्लासी (1757 ई.) से पंजाब (1856 ई.) तक के सामरिक एवं कूटनीतिक उपक्रमों द्धारा भारत को यूनियन जेक के अधीन कर लिया।

1857 की क्रांति और निमाड़ की भूमिका - सन् 1757 से 1857 ईसवी तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत में राजनीतिक जाजम बिछाई, सत्ता संस्थापन प्रारम्भ कर उसे प्रसारित एवं दृढ़ किया। अनेक भारतीय राज्य अंग्रेजों के समक्ष स्वयं समर्पित हो गये, कुछ ने क्षणिक और बहुत कम ने अंग्रेजों का दीर्घ, किन्तु विफल प्रतिरोध किया। अंग्रेजों ने अपने आर्थिक एवं राजनीतिक लाभ के लिए अनीति और शोषण का सहारा लिया। देश का प्रत्येक वर्ग अंग्रेजों की ज्यादतियों और अन्याय से त्रस्त था। इसका आक्रोष का प्रस्फुटन 29 मार्च, 1857 में बेरकपुर की छावनी में मंगल पाण्डे के माध्यम से हुआ। 10 मई, 1857 को मेरठ में सैनिकों ने बगावत कर दी। 11 मई, 1857 को मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर ने क्रांति का केन्द्रीय नेतृत्व स्वीकार कर लिया।

अंग्रेजी प्रभुत्व के विरुद्ध सन् 1857 ई. में भारत के कई भागों में सशस्त्र बगावत हुई। निमाड़ भी इससे अछूता नहीं रहा। निमाड़ के योद्धा भीमा नायक ने अंग्रेजों से संघर्ष किया था। क्रान्ति की सबसे महत्वपूर्ण घटना प्रसिद्ध क्रांतिकारी तात्याटोपे (रामचन्द्र येवलेकर) का निमाड़ आगमन था। अक्टूबर 1858 में दक्षिण भारत पहुँचने के प्रयास में उन्होंने सतपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ तथा नर्मदा नदी पार की। अगले माह नवम्बर 1858 में ताप्ति घाटी के रास्ते पूर्वी निमाड़ के खण्डवा पहुँचे। यहाँ उन्होंने पाया कि सभी दिशाओं में उनके सारे मार्ग अंग्रेजों द्धारा अवरुद्ध कर दिये गये थे। खानदेश में ह्यूरोज तात्या के आने का रास्ता देख रहा था। गुजरात का रास्ता जनरल राबर्ट्स ने रोक रखा था। दक्षिण में बरार की ओर से ब्रिटिश सेना उनका लगातार पीछा कर रही थी। इस समय तात्या के पास गोला-बारूद, तोपें, रसद या बड़ी सेना नहीं था। वित्तीय साधनों का भी अभाव था। विकट परिस्थितियाँ देखकर उन्होंने सेना को कहीं भी आश्रय लेने की अनुमति दी थी। किन्तु उनके विश्वस्त साथियों ने उन्हें छोड़कर कहीं भी जाने से इन्कार कर दिया। अपने सैनिक साथियों का जोश देखकर उन्होंने असीरगढ़ पर आक्रमण किया। असीरगढ़ की दृढ़ सुरक्षा व्यवस्था के कारण उसे कब्जे में लेना सम्भव नहीं हुआ। फलत: वे वापस खण्डवा लौट आये। खरगोन के होलकर की सेना के फील्ड आर्टिलरी के कैप्टन शेख समीर ने 24 नवम्बर, 1858 को इन्दौर पत्र लिखकर खरगोन के क्रान्तिकारियों के कृत्यों का विस्तार किया।

तात्या टोपे के पास 7000 सैनिक थे, जिन्होंने खरगोन पर कब्जा कर रखा था। खरगोन बाजार को लूटने के बाद वे अपने साथ सैनिक साजोसामान और कुछ सैनिकों तथा उनके अधिकारियों को भी बन्दी बनाकर अपने साथ ले गये। 20 नवम्बर, 1858 को वे ऊन के लिये रवाना हुये। यह दल ऊन से जुलवानिया और वहाँ से 25 नवम्बर को राजपुर पहुँचा। रास्ते में उन्होंने टेलिग्राफ के तार काट दिये, जिससे अंग्रेजों को सूचनाओं के आदान-प्रदान में भारी रुकावटें पैदा हुईं। राजपुर में उन्होंने थानेदार देवीसिंह को गिरफ्तार कर लिया। बड़वानी पहुँचकर उन्होंने राजा को बन्दी बना लिया और उनसे नर्मदा पार करने का रास्ता पूछा। पर्वतीय रास्ते तथा नर्मदा को यहाँ से पार करना कठिन है, ऐसी जानकारी मिलने के बाद तात्या ने राजा को छोड़ दिया। राजा ने ब्रिटिश सेना को तात्या के आने का समाचार पहुँचाने का भी प्रयास किया, किन्तु विद्रोहियों ने समाचार वाहकों को बीच में ही पकड़ लिया था। विद्रोहियों ने बड़वानी को लूटने की भी योजना बनाई, लेकिन इसी बीच राजपुर से ब्रिटिश सेना के बड़वानी की ओर कूच करने के समाचार पाकर तात्या अपने दल सहित भीलखेड़ा पहुँचा। 'नर्मदा नदी पार करवाने में भीमा का अपूर्व योगदान रहा। कहते हैं यहीं पर तात्या ने भीमा को रक्त तिलक कर तलवार भेंट की थी।' खाज्या नायक अपने 4000 अनुयायी

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

के साथ तात्या टोपे से जा मिला। इसमें भील सरदार भीमा और मालसिन भी सम्मिलित थे। उन पर मेजर जनरल सदरलैंड ने राजपुर से आक्रमण किया। एक दूसरी लड़ाई धाबा बावड़ी में हुई। इसके बाद भीमा को पकड़ लिया गया और उसे देश निकाला दे दिया गया।

1857 के विप्लव के अन्तर्गत मण्डलेश्वर पर दो वर्षों तक विद्रोहियों का कब्जा रहा। होल्कर और सिंधिया की सहायता से ब्रिटिश सरकार ने तात्या टोपे के आक्रमण तथा अन्य क्रान्तिकारी गतिविधियों को नाकाम कर दिया। 1860 ई. तक सम्पूर्ण क्षेत्र अंग्रेजों के हाथ आ गया। अंग्रेजों ने होल्कर के सहयोग के एवज में सन् 1861 ई. में निमाड़ का पश्चिमी प्रदेश पुरस्कारस्वरूप होल्कर को प्रदान कर दिया। शेष निमाड़ की शासन व्यवस्था अंग्रेजों के हाथ में रही। होल्कर और अंग्रेजों की सम्मिलित व्यवस्था 14 अगस्त, 1947 तक रही।

उपसंहार – जहिर है कि 1857 में निमाड़ में अंग्रेजों को बड़ी चुनौती मिली। भीमा नायक दस वर्षों तक अंग्रेजों से मुकाबला करते रहे। विश्वासघात के कारण वे 1867 में पकड़े गये और 29 दिसम्बर, 1876 को अण्डमान–निकोबार द्वीप समूह में कालापानी की सजा भुगतते हुए उनका देहावसान हुआ। यद्यपि 1857 का संग्राम स्वतंत्रता प्राप्ति के लक्ष्य में सफल नहीं रहा, लेकिन इसके अनेक तात्कालिक और दूरगामी परिणाम हुए। ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन समाप्त हो गया और भारत प्रत्यक्षत: ब्रिटिश क्राउन के अधीन कर लिया गया। यह परिवर्तन महारानी विक्टोरिया की प्रसिद्ध घोषणा के माध्यम से हुआ। सन् 1858 से 1947 ईसवी तक भारत ताज द्वारा शासित रहा।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

अहिल्याबाई होल्कर के विशेष संदर्भ में मराठा काल में निमाड़ की स्थिति

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – शिवाजी (सन् 1627 से 1680 ईसवी) के नेतृत्व में न केवल मराठों का राजनीतिक शक्ति के रूप में उदय हुआ, अपितु विस्तार भी बड़ी तेजी से हुआ। शिवाजी के उपरांत अष्टप्रधान के प्रमुख पेशवा के हाथों में सत्ता के सूत्र आने लगे। कई योग्य और महत्वाकांक्षी पेशवा हुए, जिन्होंने शिवाजी के कार्य को और आगे बढ़ाया। निमाड़ क्षेत्र में मराठों का वर्चस्व दीर्घकाल तक रहा। अहिल्याबाई होल्कर ने अपनी नीतियों और कार्यों से जनकल्याण के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित किये और आज भी वे एक देवी की तरह पूजनीया हैं। पस्तुत शोधपत्र में निमाड़ क्षेत्र में मराठों के आगमन, विस्तार और प्रभाव की विवेचना की गई है।

अहिल्या बाई के पूर्व का काल – सत्रहवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षो में मराठों ने निमाड़ क्षेत्र में जत्थों के साथ प्रवेश किया, जिनका उद्देश्य मुख्य रूप से चौथ तथा सरदेशमुखी वसूल करना और लूटपाट कर तबाही मचाना था। इस भयंकर आक्रमण से पीड़ित होकर ग्राम अधिकारियों ने लिखित रूप में यह करार किया कि वे आगामी वर्षो में प्रचूर मात्रा में रकम का भुगतान करेंगे। मराठों द्वारा पहला आक्रमण कृष्ण सावंत के नेतृत्व में नवम्बर 1699 ई. में किया गया था, जिसने धमानी के आसपास का क्षेत्र लूट लिया था।

बाजीराव प्रथम प्रारम्भ से ही उत्तर भारत में प्रभुता स्थापित करने के लिये पूर्वोपाय के रूप में मालवा पर अधिकार करना आवश्यक समझता था। दिसम्बर 1723 ई. में पेशवा ने ऊदाजी पंवार, मल्हारराव होल्कर एवं राणोजी सिंधिया को चिमाजी अप्पा के नेतृत्व में मालवा में प्रवेश के लिये भेजा। इसने अझमेरा के युद्ध में शाही सेना को करारी मात दी। इस विजय का मालवा के भाग्य पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा।

सन् 1720 ई. में आसफजाह निजामुलमुल्क ने दक्षिण हैदराबाद में अपना राज्य स्थापित किया और बुरहानपुर तथा असीरगढ़ को भी अपने अधिकार में करना चाहा। परिणामस्वरूप निजाम और मराठों में युद्ध हुआ। सन् 1740 ई. की संधि के अनुसार आज का पूर्ण निमाड़ क्षेत्र पेशवा को जागीर के रूप में मिल गया। सन् 1751 ई. में पेशवा ने रामचन्द्र बल्लाल भुरकुटे को इस प्रदेश का सूबेदार बना दिया, जैसा कि बालाजी पेशवा द्वारा उन्हें दी गई सनद से जान पड़ता है।

सन् 1772 में पेशवाओं ने निमाड़ को होल्कर, सिंधिया और पंवार राजाओं में विभाजित कर दिया था। लेकिन अंग्रेजों ने इसे तीनों मराठा राजाओं से छीन लिया। अंग्रेजों ने क्षेत्रफल में कटनी-छटनी कर प्रांत निमाड़ की स्थान पर जिला निमाड़ बना दिया।

सन् 1741 ई. से मालवा के इतिहास में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। इससे मराठों तथा मुगलों के बीच संघर्ष का अन्त हो गया और मराठा मालवा के एक छत्र शासक बन बैठे । निजाम के बड़े पुत्र गाजीउद्दीन ने पेशवा से प्राप्त सहायता के बदले 1752 ई. में पेशवा को निमाड़ का दक्षिणी भाग सौंप दिया और सन् 1755 ई. तक सम्पूर्ण निमाड़ मराठों के हाथों में चला गया।

पेशवा बालाजी बाजीराव ने सन् 1751 ई. में रामचंद्र भुसकूटे को निमाड़ का सूबेदार नियुक्त किया। निमाड़ क्षेत्र में भीलों द्वारा गलत ढंग से खेती की जाती थी, जिससे वनों को क्षति पहुंचती थी। भुसकूटे ने कठोर कदम उठाकर उपद्रवी भीलों को परास्त कर दिया। विद्रोहियों को खरगोन लाया गया और उन्हें अच्छे व्यवहार के लिये प्रतिभूति देने का आदेश दिया गया। जिन विद्रोहियों ने आदेश का पालन किया उन्हें पहनने के लिये विशेष कंठा (कालर) दिया गया और जिन्होंने आदेश का पालन नहीं किया, उनका षिरच्छेद खरगोन के चबूतरे पर कर दिय गया। वह खम्भा, जिससे अपराधियों को बांधा गया था और वह कुल्हाड़ी जिसके द्वारा विद्रोहियों के सिर काटे गये थे अभी भी विद्यमान है और विधि तथा व्यवस्था के प्रतीकस्वरूप दषहरे के दिन उसकी पूजा की जाती है। भुसकूटे ने शान्ति तथा व्यवस्था बनाये रखने और उजाड़ क्षेत्र में कृषि प्रारम्भ करने का भरसक प्रयास किया। भुसकूटे ने बीजागढ़ के पास फैले वनों को साफ करवा दिया और कृषकों को वहां बसने के लिये प्रोत्साहित किया। भुसकूटे को बीजागढ़ तथा हंडिया सरकार ने 'सर मण्डलोई' की उपाधि से विभूषित किया। सरकार बीजागढ़ में उस समय 32 महाल थे, जिनमें से सेंधवा और नागलवाड़ी पेशवा द्वारा होल्कर को जागीर के रूप में दिये गये थे तथा शेष पेशवा, बड़वानी और धार के सामन्तों के पास थे।

अहिल्याबाई होल्कर का काल – मल्हारराव होल्कर की सन् 1766 ई. में मृत्यु हो गई थी। चूंकि उसके एक पुत्र खंडेराव की पहले ही मृत्यु हो चुकी थी, अत: उसका पौत्र भालेराव उत्तराधिकारी बना। किन्तु वह भी अधिक दिनों तक जीवित नहीं रह सका। मार्च 1767 ई. में उसकी मृत्यु के पश्चात् अहिल्याबाई ने राज्य की बागडौर सम्भाली।

अहिल्याबाई का जन्म महाराष्ट्र के औरंगाबाद के चौड़ी नामक ग्राम में मनकोजी शिन्दे के घर 1725 ई. में हुआ था। 10 वर्ष की अल्पायु में उनका विवाह होल्कर वंश के संस्थापक मल्हारराव के पुत्र खण्डेराव के साथ हुआ। 29 वर्ष की अवस्था में उनके पति का देहावसान हो गया।

'अहिल्याबाई का प्रशासनिक तन्त्र अत्युत्तम था। वे स्वयं देर रात तक दरबार में बैठकर राजकीय कार्यो को निपटाती थीं। अधीनस्थ अधिकारियों के प्रति उनका व्यवहार अति नम्र था। अमीर-गरीब सभी को एक समान न्याय सुलभ था।'[1] उचित समय व अल्प खर्च पर न्याय दिलाने हेतु उन्होंने जगह-जगह पर न्यायालय स्थापित किये थे। अन्तिम निर्णय वे स्वयं करती थीं। निर्णय करते समय सत्य के प्रतीक रूप में स्वर्ण निर्मित शिवलिंग धारण

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

करती थीं। अर्थव्यवस्था सुदृढ़ थी। लगान वसूली की दृष्टि से उन्होंने अपने राज्य को तीन भागों में विभक्त किया था। कृषि व वाणिज्य को बढ़ावा मिला। महेश्वर के साड़ी उद्योग ने अत्यधिक प्रगति की।

वे धर्मिक रूप से सहिष्णु थीं। हिन्दू धर्म की उपासिका होने के बावजूद भी वे मुस्लिम धर्म के प्रति अत्युदार थीं। उन्होंने महेश्वर में मुसलमानों को बसाया तथा मस्जिदों के निर्माण हेतु धन भी दिया।

अहिल्या बाई का चित्र – सांस्कृतिक कार्यों को भी उन्होंने उदार संरक्षण दिया। कन्याकुमारी से हिमालय तक और द्वारिका से पुरी तक अनेकानेक मन्दिर, घाट, तालाब, बावड़ियाँ, दान संस्थाएँ, धर्मशालाएँ, कुएँ, भोजनालय, दानशालाएँ आदि खुलवाईं। काशी का प्रसिद्ध विश्वनाथ मन्दिर, महेश्वर के प्रसिद्ध मन्दिर व घाट उनकी स्थापत्य कला के श्रेष्ठ नमूने हैं। साहित्यिक क्षेत्र में कविवर मोपंत, खुशालीराम,अनंत फंदी उनके दरबारी रत्न थे। अनंत फंदी महान गायक भी थे। वे बड़ी निपुणता से लावणी गाते थे।

उनके पास अपने राज्य की रक्षा हेतु एक अनुशासनबद्ध सेना थी, जिसका सेनापतित्व तुकोजीराव होलकर प्रथम के नेतृत्व में था। उन्होंने अपने स्वयं के सेनापतित्व में 500 महिलाओं की एक सैन्य टुकड़ी का भी गठन किया था। सेना में ज्वाला नामक विशाल तोप शमिल थी। उनकी सेना एक फ्रांसीसी सेनाधिकारी दादुरनेक द्वारा यूरोपीय पद्धति पर प्रशिक्षित की गई थी।

13 अगस्त, 1795 को अहिल्याबाई का महेश्वर के किले में निधन हुआ। उन्होंने होल्कर के इलाकों पर 30 वर्षो तक अद्वितीय योग्यता और बुद्धिमानी के साथ अपने सुयोग्य सेनापति तुकोजीराव की सहायता से शासन किया। उनके उपरांत निमाड़ से मराठों का प्रभाव कम होता गया।

उपसंहार – इसमें कोई संदेह नहीं कि मराठों ने प्रतिकूल परिस्थितियों में भारत की राजनीति में अपना स्थान बनाया और कई उतार–चढ़ावों के बावजूद उसे लंबे समय तक प्रभावी रूप से कायम रखा। यह उपलब्धि तब और बड़ी हो जाती है, जब नहीं के बराबर साधनों के साथ विकास यात्रा प्रारंभ करते हुए उपलब्धियों के चरमोत्कर्ष को स्पर्श किया हो। ऐसा ही मराठों ने कर दिखाया। शिवाजी महाराज ने शून्य से साम्राज्य का निर्माण किया था। निमाड़ में भी मराठों का वर्चस्व रहा। अहिल्याबाई होल्कर ने राजनीति के शुद्ध और सात्विक सूत्रों का प्रतिपादन तथा अनुसरण किया एवं जन–जन की पूज्या हो गईं।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

दिल्ली सल्तनत एवं मुगलकालीन निमाड़

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – 'सन् 1206 से 1526 तक के तीन सौ बीस वर्षीय भारतीय कालखण्ड को मोटे तौर पर दिल्ली सल्तनत और 1526 से 1857 तक के 331 वर्षीय अवधि को मुगल साम्राज्य के काल के नाम से जाना जाता है। हालांकि मुगलों का राज्य 1707 तक बहुत प्रभावशाली रहा। इसके बाद निरंतर विघटन का षिकार होते-होते आखिरी दौर में नाममात्र का रह गया।'[1] मुगल साम्राज्य के पतन के समानांतर भारत में मराठों और अंग्रेजों जैसी यूरोपीय ताकतों ने वर्चस्व स्थापित करना प्रारंभ कर दिया था। प्रस्तुत शोधपत्र में इस बात की विवेचना की जा रही है कि दिल्ली सल्तनत और मुगल काल में निमाड़ की राजनीतिक सत्ता की क्या स्थिति रही।

'भारत में मध्यकालीन इतिहास में मुख्यत: दिल्ली सल्तनत, मुगल साम्राज्य एवं मराठा राज्य रहे। कुछ क्षेत्रों में राजपूत तथा अन्य भी प्रभावी रहे। मध्यकाल में सत्ता की केन्द्रीय धूरी इस्लाम के अनुयायी रहे।'[2] मुहम्मद-बिन-कासिम, महमूद गजनवी और मोहम्मद गौरी के नेतृत्व में समय-समय पर आक्रमणकारी के रूप में मुसलमान भारत में प्रविष्ट हुये। प्रारम्भिक अभियानकर्ता धन-सम्पदा समेटकर लौट गये। मोहम्मद गौरी की मृत्यु के बाद सन् 1206 ई. में कुतुबुद्दीन ऐबक एवं अन्य सेनापतियों ने भारत के विभिन्न हिस्सों को केन्द्र बनाकर शासन प्रारम्भ किया।

दिल्ली सल्तनत और निमाड़ – पश्चिम निमाड़ पर प्रथम मुस्लिम आक्रमण सन् 1296 ई. में अलाउद्दीन खिलजी ने देवगिरी से लौटते हुए खानदेश पर किया था। खानदेश पर उस समय राजपूत सरदार का अधिकार था। संभवत: वह असीरगढ़ का चौहान शासक रायचंद था। सन् 1311 ई. में मलिक काफूर खरगोन में रुका था। बटियागढ़ के सम्वत् 1367 विक्रमी के शिलालेख से ज्ञात होता है कि यहाँ पर अलाउद्दीन खिलजी का शासन था। रसेल ने लिखा है कि अलाउद्दीन ने सारे राज-परिवार की हत्या कर दी। उनमें से केवल एक बालक बचा, जो चित्तौड़ भाग गया। बाद में उसके वंशजों ने पुन: यहाँ अधिकार किया।

अलाउद्दीन खिलजी की मृत्यु के बाद गयासुद्दीन तुगलक यहाँ का सुल्तान बना। बटियागढ़ के हिजरी सन् 725 (ईसवी सन् 1324) के फारसी लेख से भी यह प्रमाणित होता है। फिरोजशाह तुगलक के समय निमाड़ का इलाका खानदेश का हिस्सा था। तुगलक वंश के समय मुसलमानी भारत कई स्वतंत्र राज्यों में विभक्त हो गया था। इन्हीं प्रान्तीय राज्यों में निमाड़ भी एक था।

चौदहवीं शताब्दी में खेड़ला (बैतूल) के गोंड राजा ने इस भाग पर आक्रमण किया अेर कई वर्ष तक युद्ध कर चौहानों को पराजित किया। सन् 1423 ई. में होशंगाबाद में खेड़ला के किले पर अधिकार करने के पश्चात् निमाड़ प्रदेश भी जीता और वहां राज्य करने लगा।

फारूखी वंश का शासन – खानदेश के सिपहसालार मलिक राजा फारूखी ने सन् 1370 ई. में खुद को तुगलक साम्राज्य से स्वतंत्र घोषित कर दिया और फारूखी सल्तनल की स्थापना की। निमाड़ पर सन् 1370 ई. से 1600 ई. तक की 230 वर्षों की लम्बी अवधि तक फारूखी वंश का शासन रहा। सन् 1370 ई. में मलिक राजा फारूखी ने ताप्ती के कछार में अपना अधिकार कर वहां शासन किया। उसके पुत्र नासिर खां (सन् 1399 से 1437 ई) को गुजरात के सुल्तान ने खान की उपाधि से सम्मानित किया। यही कारण है कि नासिर खां के शासित मुल्क को खानदेश कहा गया। नासिर खां ने इतिहास प्रसिद्ध असीरगढ़ के किले को एक हिन्दू किलेदार से प्राप्त कर लिया था। तत्पष्चात् उसने ताप्ती नदी के किनारे प्रसिद्ध फकीर जेबुद्दीन के नाम से जैनाबाद और दौलताबाद के प्रसिद्ध सन्त बुरहानुद्दीन के नाम से बुरहानपुर नगर बसाया। बुरहानपुर फारूखी शासकों की राजधानी थी।म

मुगल साम्राज्य और निमाड़ – 21 अप्रैल, 1526 को पानीपत के प्रथम युद्ध में जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर ने इब्राहिम लोदी को परास्त कर दिल्ली सल्तनत का अन्त किया तथा भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की। उसके उत्तराधिकारी हुमायूँ के समय 15 वर्षों तक मुगल सत्ता का सूर्य अस्त रहा। भारत में मुगल साम्राज्य की पुनर्स्थापना के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में हुमायूँ सफल रहा। बाद में अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब आदि ने मुगल साम्राज्य का विस्तार किया।

जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर (1556-1605 ई.) के काल में निमाड़ में मुगल सत्ता का प्रसार प्रारम्भ हुआ। 'फारूखी वंश के राजा अली खान ने 16वीं सदी के अन्तिम भाग में मुगल बादषाह अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली।'[3] फारूखी वंश के अन्तिम शासक बहादुरषाह को अकबर ने माण्डव के युद्ध में पराजित कर असीरगढ़ के किले पर अधिकार कर लिया। अकबर के शासनकाल में निमाड़ का अधिकांश भाग खानदेश में मिल गया था। अकबर ने निमाड़ को मालवा सूबे में मिला लिया। इसके अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र बीजागढ़, हंडिया और माण्डू की तीन सरकारों के बीच विभाजित कर दिया गया। जिले का एक बड़ा भाग बीजागढ़ सरकार के अधीन था। बुरहानपुर मुगल शासकों जैसे अकबर, जहांगीर, शाहजहां आदि का गढ़ रहा है। 1631 में शाहजहां की पत्नी मुमताज महल का निधन निमाड़ के बुरहानपुर में ही हुआ। सन् 1684 ई. में औरंगजेब ने असीरगढ़ में मुकाम किया था। औरंगजेब के शासनकाल में निमाड़ का अधिकांश भाग औरंगाबाद सूबे में शामिल था। औरंगजेब के पतन के बाद उसके अयोग्य उत्तराधिकारी मुगल राज्य को सुदृढ़ नहीं रख सके तथा भारत के कई अन्य क्षेत्रों की तरह निमाड़ से भी मुगल प्रभाव का सूर्य क्रमश: अस्त होने लगा।

उपसंहार – अलाउद्दीन खिलजी से लेकर औरंगजेब तक निमाड़ में मुस्लिम

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

सत्ता का निरंतर प्रसार हुआ। इस अवधि में केन्द्रीय मुस्लिम राजनीतिक सत्ता के कमजोर होने के दौरान निमाड़ में फारूखी वंश के माध्यम से स्वतंत्र मुस्लिम राज्य भी कायम हुआ। मराठों का प्रभुत्व बढ़ने पर निमाड़ क्षेत्र से मुगलों की सत्ता क्षीण हुई। दिल्ली सल्तनत और मुगलकाल में निमाड़ पर मुस्लिम सत्ता स्थापित होने से यहां की सभ्यता और संस्कृति पर भी प्रभाव पड़ा तथा सामासिक संस्कृति का उदय और विकास हुआ।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

निमाड -एक भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक अध्ययन

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – निमाड़ क्षेत्र ऐतिहासिक, पुरातात्विक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से सदैव महत्वपूर्ण रहा है। आर्थिक पिछड़ापन दूर करने के लिए अभी दीर्घ प्रयासों की आवश्यकता है। राजनीति के क्षेत्र में भी यहां के नेतृत्वकर्ता प्रादेशिक और राष्ट्रीय स्तर पर अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराते रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में भारत के मध्यप्रदेश में स्थित निमाड़ क्षेत्र की विषिष्टताओं का एक अध्ययन अभिव्यक्त किया जा रहा है।

निमाड़ संज्ञा का आविर्भाव – संज्ञा 'निमाड़' आविर्भाव के परिप्रेक्ष्य में विवादास्पद है। कई मतमतान्तर इस सम्बन्ध में प्रचलित हैं। प्राचीन काल में यह क्षेत्र 'अनूप' के नाम से जाना जाता था। रूद्रदमन की गिरनार प्रशस्ति में आकरावति एवं अनूप का साथ-साथ उल्लेख है। सिद्धराज जयसिंह की उज्जयनि प्रशस्ति में 'अनूपप्रदेश' का नाम आया है। आक्रांता महमूद गजनवी के साथ ग्यारहवीं शताब्दी में भारत आने वाले अरब यात्री 'अलबरूनी ने अपने यात्रा वर्णन में इस प्रदेश का नाम 'निमाड़-प्रान्त लिखा है।' [1] निमाड़ के नामकरण के संदर्भ में मुख्यत: निम्नांकित मत प्रचलित हैं-

प्रथम – फारसी भाषा के शब्द 'नीम' से निमाड़ बना है। फारसी में 'नीम' का अर्थ 'आधा होता है। चूंकि इस भू-भाग ने नर्मदा नदी का आधा भाग अपने अंचल में छिपा रखा है, इसलिये इसे निमाड़ कहते हैं।

द्वितीय – निमाड़ विंध्याचल और सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों की तलहटी में नर्मदा के किनारे स्थित है। यह मालवा के पठार की तुलना में निचला भू-भाग है। मालवा से निमाड़ की ओर आने पर निरन्तर नीचे की ओर उतरना पड़ता है। इस तरह निम्नगामी होने से इसका नाम 'निमानी' और उससे बदलकर 'निमारी और 'निमाड़ी हो गया।

'निमाड़ी शब्द का संधि विच्छेद करने पर ज्ञात होता है कि 'नि' का अर्थ नीची और 'माड़ी का अर्थ माँ की गोद होता है। चूँकि यह धरती माता के निम्नांचल में बसा हुआ है, अत: इसका नाम निमाड़ पड़ा।'[2]

तृतीय– यह उत्तर भारत और दक्षिण भारत का संधि स्थल होने के कारण आर्य और अनार्यो की मिश्रित भूमि रही होगी तथा इसी कारण इसका नाम 'निमार्य (निम्न+आर्य) पड़ा होगा। समय के साथ निमार्य अपना रूप बदलते हुए 'निमार और 'निमाड़' हो गया।

चतुर्थ– इस क्षेत्र में 'नीम के वृक्षों की बहुतायत है, इसलिये इसको 'नीमवाड अर्थात् नीम का प्रदेश कहा गया है।'[3] यह सत्य है कि यहाँ नीम के वृक्ष बड़ी संख्या में विद्यमान हैं, किन्तु नीम के वन इतने सघन नहीं हैं कि वे इस क्षेत्र की पहचान का प्रमुख आधार बन जाएँ।

उपर्युक्त मतों की विवेचना करने पर निम्नवाड़ से निमाड़ होना अधिक उचित प्रतीत होता

भौगोलिक स्थिति – मध्यप्रदेश के दक्षिण-पष्चिम भाग में इन्दौर संभाग में स्थित निमाड़ एक स्वतंत्र भौगोलिक उप प्रदेश है। 'आयताकार निमाड़ 21°5' उत्तरी अक्षांश से 22°38' उत्तरी अक्षांश तक तथा 74°2' पूर्वी देशान्तर से 77° 13' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।'[4] '1 नवम्बर, 1956 को नये मध्यप्रदेश के निर्माण के समय निमाड़ को दो भागों में विभक्त किया गया- 1. पश्चिमी निमाड़ एवं 2. पूर्वी निमाड़।'[5] खरगोन को पश्चिमी निमाड़ का एवं खण्डवा को पूर्वी निमाड़ का जिला मुख्यालय बनाया गया। वर्तमान में निमाड़ क्षेत्र में बड़वानी, खरगोन, खण्डवा एवं बुरहानपुर जिले सम्मिलित हैं।

निमाड़ के उत्तर में विन्ध्याचल और दक्षिण में सतपुड़ा पर्वत स्थित हैं। इन दोनों पर्वतों के मध्य में निमाड़ी भू-भाग बसा हुआ है। सतपुड़ा की कुल सात शाखाएँ हैं। निमाड़ के मध्य भाग तक सतपुड़ा की एक शाखा फैली हुई है, जिसका सर्वोच्च षिखर ताजुद्दीन कहलाता है। इस शिखर पर मुस्लिम सन्त ताजुद्दीन की समाधि बनी हुई है। सतपुड़ा की श्रेणियाँ लघु और विशाल रूप में उत्तरी-पश्चिम भाग की ओर बढ़ती गई एवं विन्ध्य की एक श्रेणी उत्तर-पष्चिम की ओर बढ़ गई है।

भाषा-भाषी प्रान्तों की दृष्टि से इसके उत्तर में मालवा, दक्षिण में खानदेश, पूर्व में होशंगाबाद और सुदूर पश्चिम में गुजरात राज्य को इसकी सीमाएँ स्पर्श करती हैं। इस भूभाग के उत्तर में वर्तमान मध्यप्रदेश के धार, इन्दौर और देवास जिले, दक्षिण में महाराष्ट्र के बुलढाना और विदर्भ जिले तथा पश्चिम में मध्यप्रदेश के हरदा और बैतूल जिले एवं महाराष्ट्र का जलगाँव जिला स्थत हैं।

घाटी के मध्यवर्ती भाग में पष्चिम निमाड़ बसा हुआ है। इसकी अधिकांश सीमा का निर्धारण नर्मदा नदी के द्वारा होता है।

भौगोलिक रूप से इस क्षेत्र के तीन प्राकृतिक विभाग हैं। मध्य में नर्मदा नदी के समानान्तर नर्मदा घाटी के सुस्पष्ट कटिबन्ध है। दक्षिणी तथा पश्चिमी सीमा पर सतपुड़ा पर्वत तथा उत्तर-पूर्व में उत्तरी सीमा की ओर विन्ध्य का सँकरा कटिबन्ध है।

सांस्कृतिक स्थिति – निमाड़ के मूल निवासियों में भील, भिलाले, गोंड, कोरकू, राठ्या आदि जन-जातियाँ प्रमुख हैं। इसके अलावा ब्राह्मण, राजपूत, अहीर, जैन, अग्रवाल, श्रीमाली आदि सामान्य जातियाँ हैं। निमाड़ी जनता की अपनी पहचान रही है। यहाँ का आदमी अपने सादगीपूर्ण जीवन की तरह सामान्य वस्त्रों से दूर से पहचाना जा सकता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से निमाड़ अत्यन्त समृद्ध है। सुदूर अतीत में जब नदियों के किनारों पर सभ्यता के चरण बढ़ रहे थे और ग्रामों तथा नगरों का विकास नदियों की घाटियों में हो रहा था, उस समय निमाड़ में नर्मदा नदी के तटों पर उसकी घाटियों में सुसंस्कृत एवं सुसमृद्ध नगर महेश्वर, निमावर, मांधाता आदि विकसित हो रहे थे। पुरातत्ववेत्ता श्री हंसमुखलाल धीरजलाल

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

सांकलिया ने नर्मदा घाटी सभ्यता को ढाई लाख वर्ष से भी अधिक प्राचीन बताया है।

यहाँ के आचार-विचार, रहन-सहन और वेषभूषा में अपेक्षाकृत पुराने संस्कार कुछ अधिक ही पाये जाते हैं। पुराने मन्दिरों, मूर्तियों, तालाबों तथा अन्य स्मारकों के साथ-साथ पुराने मेले, त्यौहार, पर्व आदि का भी यहाँ विशेष प्रचार है। उनमें यहाँ के सांस्कृतिक स्वरूप को विशेष संरक्षण और संवर्धन मिला है।

निमाड़ में व्रत और त्यौहारों की भी एक व्यापक परम्परा है। तीर्थस्थलों का बाहुल्य है। प्राचीनकाल से ही यह क्षेत्र वैष्णव, शैव, बौद्ध और जैन धर्मो का गढ़ रहा है। इस क्षेत्र पर निर्गुण भक्ति परम्परा का प्रभाव इतना गहरा है कि सन्त सिंगाजी निमाड़ी बोली के कबीर कहे जा सकते हैं।

यहाँ के लोक साहित्य में लोक गीत, लोक कथा और लोक गाथाओं का विशाल भण्डार पड़ा है, जिनमें निमाड़ के लोकजीवन का रहन-सहन, आचार-व्यवहार, रीति-रिवाज, धार्मिक धारणाएँ, सामाजिक मान्यताएँ, अनुष्ठान, संस्कार और आस्था के असंख्य रूप अभिव्यक्त हुए हैं। नर्मदा के बालू रेतमय कछारों और सतपुड़ा की पर्वत श्रृंखलाओं तक बसे हुए निमाड़ी संस्कृति की सहज अभिव्यक्ति इनमें देखी जा सकती है।

धार्मिक स्थिति – निमाड़ एक बहुधर्मी क्षेत्र है। यहाँ हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि सभी निवास करते हैं। इस अंचल में राम, कृष्ण और शिव की उपासना समान रूप से की जाती है। एक ओर जहाँ भगवान राम का आदर्श सार्वजनिक रूप से समुचे गाँव को प्रेरणा देने की क्षमता रखता है, वहीं दूसरी ओर भगवान कृष्ण का बाल स्वरूप पारिवारिक जीवन के अधिक नजदीक पड़ता है। यहाँ हर एक बड़े गाँव में रामलीला का आयोजन होता रहा है। कृष्णाष्टमी पर रास का आनंद देखने योग्य होता है। भगवान शिव के मन्दिर और उनमें प्राचीनता की जानी-पहचानी गंध यहाँ के वातावरण को दीप नैवेद्य व अगरबत्ती से सुगन्धित बनाती है। खण्डवा के रामेश्वर का संबंध रामायण काल से और ओंकारेश्वर के ज्योतिर्लिंग का साम्य द्वादश ज्योतिर्लिंग से पाया जाता है। जनमानस में यह विश्वास है कि हनुमान के बिना गाँव नहीं बसाया जा सकता है, अत: प्रत्येक गाँव में हनुमान का एक न एक मन्दिर दिखाई देता है, जिसमें हनुमान की दक्षिणाभिमुख प्रतिमा स्थापित की जाती है।

निमाड़ प्राचीन काल से जैन उपासना का भी केन्द्र रहा है। सन् 1132 ई. से 1263 ई. तक यहाँ जैन धर्म का विशेष प्रभाव पाया जाता है। उस युग की अनेक मूर्तियाँ नक्काषीदार खम्बे और तराशे हुए पाषाण खण्ड यत्र-तत्र बिखरे हैं। यहाँ के मन्दिरों में 13 वीं सदी तक की मूर्तियाँ स्थापित हैं। खण्डवा के पद्यकुण्ड में कुछ नक्काशीदार शिलाखण्ड पाये गये हैं, जिन पर सम्वत् 1185 अंकित है। उक्त षिलाखण्डों पर कुछ मूर्तियों के नाम भी लिखे हैं। कनिंघम का मत है कि ये मूलत: जैन मन्दिर की होनी चाहिये क्योंकि इन पर जो तिथि अंकित है वही तिथि जैन तीर्थंकर आदिनाथ की प्रतिमा पर भी अंकित है। उक्त मूर्ति खण्डवा के जैन मन्दिर में स्थापित है। ओंकारेश्वर के निकट पंध्या नामक गाँव के पास सिद्धवर कूट नामक जैनियों का प्रसिद्ध तीर्थ है। पहले यह जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था, लेकिन सन् 1883 ई. में इसका आधुनिक ढंग से पुनर्निर्माण किया गया। यहाँ की मूर्तियों पर भी तेरहवीं सदी तक की तिथियाँ खुदी हुई हैं।

आर्थिक स्थिति – आर्थिक क्षेत्र में उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमण्डलीकरण की नवीन नीतियों का अधिक प्रभाव निमाड़ क्षेत्र पर अभी तक विशेष दृष्टिगोचर नहीं होता है। बहुसंख्यक निमाड़ी आबादी की आर्थिक गतिविधियाँ एवं आजीविका के स्रोत परम्परागत हैं। खेती और पशुपालन यहाँ के मुख्य व्यवसाय हैं। यहाँ पर रबी और खरीफ की फसलें ली जाती हैं। खरीफ फसलों में कपास, ज्वार तथा मूँगफली सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं और वे कुल कृषि क्षेत्रफल के 70 प्रतिशत से भी अधिक में बोई जाती है। वर्षा पर आश्रित अपेक्षाकृत कम महत्व की अन्य फसलें बाजरा, मक्की, कोदो, कुटकी आदि हैं। इस क्षेत्र की सबसे महत्वपूर्ण रबी की फसलें गेहूँ और चना हैं।

सर्वेक्षण में पाया गया कि कृषि की दृष्टि से निमाड़ पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। यहाँ की धरातलीय विषमता, मानसूनी जलवायु पर निर्भरता, अविकसित तकनीक एवं आधुनिक कृषि यंत्रों एवं उपकरणों के अभाव में कृषि को वांछित सफलता नहीं मिल पा रही है। कृषि उपयोगी भूमि कम है, जो फसलों के उत्पादन को प्रभावित करती है। पर्वतीय तथा पठारी भागों में तीव्र ढालान के कारण या तो मिट्टी की पतली तह मिलती है या कंकरीली-पथरीली मिट्टी। क्षेत्र में अधिकांशत: ऐसी फसलें बोई जाती हैं, जो शुष्क जलवायु से भी अनुकूलन कर लेती हैं। नर्मदा परियोजना से सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार हुआ है। इससे कृषि विकास को दिशा मिली है। पालतू जानवरों में गाय, भैंस और बकरी दूध आदि के लिये तथा बैल खेती के लिये पाले जाते हैं। क्षेत्र में दूधारू पशुओं का पालन मुख्य रूप से यादव समाज के व्यक्तियों द्वारा किया जा रहा है।

अनेक व्यक्ति सर्वत्र प्रचलित व्यापारिक-व्यावसायिक क्रियाओं के माध्यम से अपनी आजीविका का निर्वाह कर रहे हैं। दैनिक उपयोग-उपभोग की वस्तुओं की दुकानें बड़ी संख्या में क्षेत्र में संचालित की जा रही हैं। चिकित्सा, शिक्षा, बीमा, बैंकिंग, परिवहन, वकालात जैसी सेवाओं में संलग्न होकर भी जीवन-यापन किया जा रहा है।निमाड़ में कॉटन इण्डस्ट्री उन्नत अवस्था में है। सेन्धवा नगर इसका प्रमुख केन्द्र है। अन्य शहरों एवं कस्बों में जिनिंग फैक्ट्रियाँ विद्यमान हैं। दूसरे उद्योगों की दृष्टि से स्थिति निराशाजनक है। निमाड़ मध्यप्रदेश की पिछड़ी औद्योगिक पट्टी में सम्मिलित है।

उपसंहार – इस तरह मध्यप्रदेश के भौगोलिक मानचित्र में निमाड़ की विशिष्ट स्थिति है। अधिक उष्णता एवं न्यून वर्षा से उत्पन्न असन्तुलन ने मानव, पशु एवं वनस्पति सभी को प्रतिकूलत: प्रभावित किया है। खनिज संसाधन एवं उद्योगों के अभाव के कारण अपेक्षित आर्थिक प्रगति नहीं हो पाई है। चार जिलों के माध्यम से संयोजित प्रशासनिक व्यवस्था चुस्त है। क्षेत्र में सुरक्षा एवं कानून की स्थिति अच्छी है। यहाँ विद्यालयीन एवं महाविद्यालयीन शिक्षा की समुचित व्यवस्था है। लोक संस्कृति के संबंध में निमाड़ की पूरे राज्य में पृथक पहचान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Sachou's Albaruni's India (1880), Vol. 1, Page - 203
2. निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, लेखक – रामनारायण उपाध्याय, प्रकाशक – विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर, संस्करण – 1980, पृष्ठ-15
3. निमाड़ी और उसका साहित्य, लेखक – डॉ. कृष्णलाल हंस, प्रकाशक – हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण्य – 1956, पृष्ठ – 02
4. मध्यप्रदशे – एक भौगोलिक अध्ययन, लेखिका – डॉ. प्रमीला कुमार, प्रकाशक – मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, संस्करण – 2002, पृष्ठ – 41
5. मध्यप्रदेश – विस्तृत अध्ययन, लेखक – पूर्णेन्दु कुमार, प्रकाशक – अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्राइवेट लिमिटेड, मेरठ, संस्करण – 2008, पृष्ठ – 86

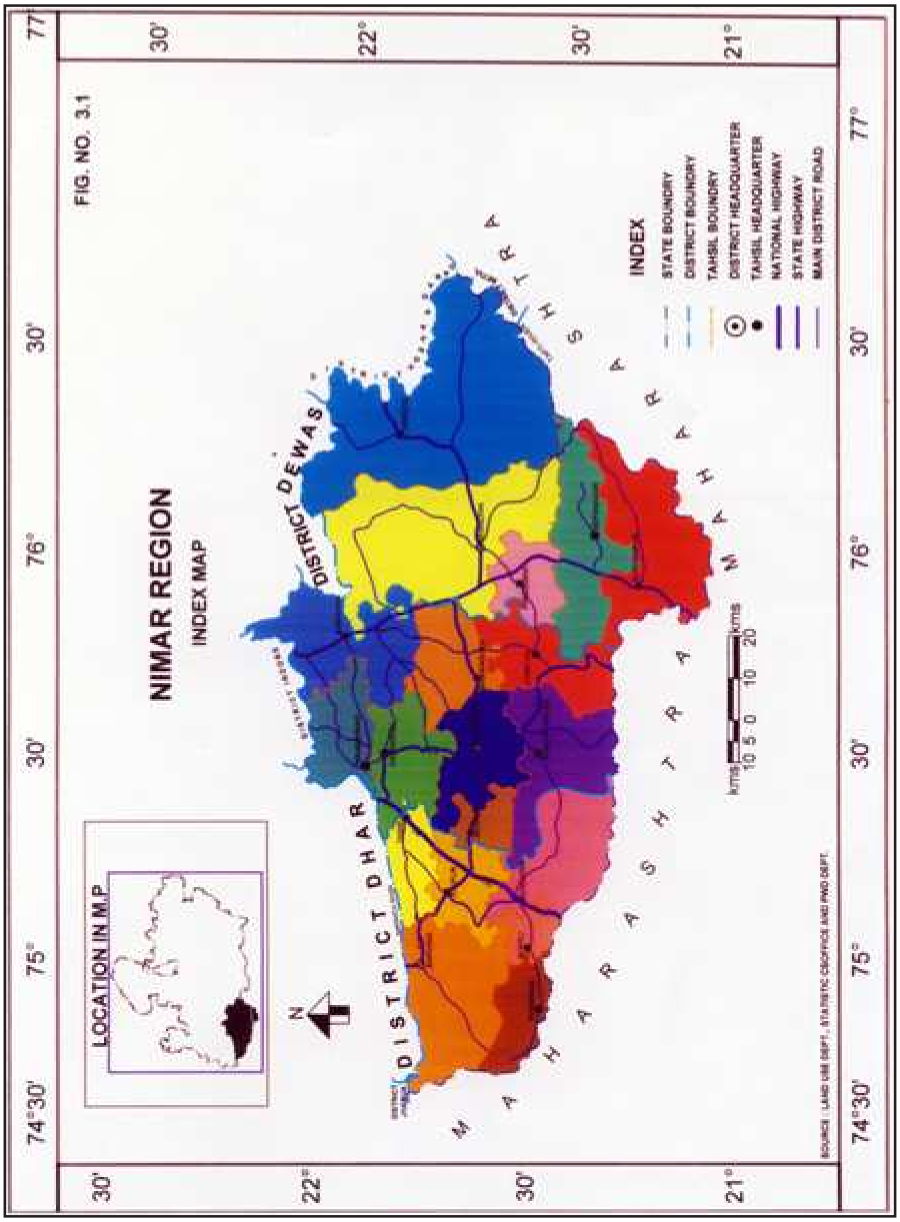
FIG. NO. 3.1
NIMAR REGION
INDEX MAP
LOCATION IN M.P
DISTRICT DEWAS
DISTRICT DHAR
MAHARASHTRA
INDEX
STATE BOUNDRY
DISTRICT BOUNDRY
TAHSIL BOUNDRY
DISTRICT HEADQUARTER
TAHSIL HEADQUARTER
NATIONAL HIGHWAY
STATE HIGHWAY
MAIN DISTRICT ROAD
kms 10 5 0 10 20 kms
74°30'
75°
76°
77°
22°
21°
30'

****

महाकाव्यकालीन निमाड़

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – निमाड़ का इतिहास पुरातनता, अविस्मरणीय कृत्यों, शौर्यपूर्ण उपलब्धियों तथा राजवंशों के उत्थान-पतन की घटनाओं से परिपूर्ण रहा है। प्रागैतिहासिक काल से लगाकर अर्वाचीन काल तक के देश के इतिहास में निमाड़ की सजीव उपस्थिति रही है। निमाड़ में महेश्वर जैसे स्थल रहे, तो महिष्मन्त, सहस्त्रार्जुन, मण्डन मिश्र, सिंगाजी, अहिल्या बाई, भीमानायक सदृश महान व्यक्तित्व भी हुये हैं। रामायण एवं महाभारत के काल को महाकाव्य काल के नाम से जाना जाता है। इस दौरान निमाड़ की स्थिति का उल्लेख इस शोधपत्र में किया जा रहा है।

रामायण एवं महाभारत के वर्णनों में महाकाव्य काल में निमाड़ भू-भाग में भी महत्वपूर्ण राजसत्ता होने का उल्लेख है।

रामायणकालीन निमाड़ – सुदूर रामायण काल में ईसवी पूर्व 1600 में यहाँ पर महिष्मती (आधुनिक महेश्वर) को राजधानी बनाकर एक सशक्त राज्य स्थापित था। आख्यान के अनुसार अयोध्या के इक्ष्वाकुओं के वंश में मान्धाता चक्रवर्ती सम्राट हुआ। ऐलवंश की राजकुमारी बिंदुमती से उसके तीन पुत्र पुरुकुत्स, अम्बरीष और मुचकुन्द तथा एक पुत्री कावेरी हुई। पुरुकुत्स ने मध्यप्रदेश में मध्यभारत क्षेत्र में बसे नाग राजाओं को मौनेय गंधर्वों के विरुद्ध सहायता देकर विजयी बनाया तथा नाग राजा की कन्या नर्मदा से विवाह किया। उसके भाई मुचकुन्द ने पारियात्र और ऋक्ष पर्वत के प्रदेश को जीतकर नर्मदा के किनारे एक दुर्ग का निर्माण करवाया। हैहय राजा महिष्मन्त ने मुचकुन्द को पराजित करके उससे यह गढ़ छीन लिया था। महिष्मन्त ने इस नगर तथा गढ़ का नाम महिष्मती रखा। खरगोन जिले में स्थित महेश्वर की पहचान प्राचीन महिष्मती के रूप में की गई है।

महिष्मन्त के वंश में कृतवीर्य हुआ, जिसके राज्य काल में विशाल हैहेय साम्राज्य की स्थापना हुई। कृतवीर्य के वंश में अर्जुन हुआ। इसको कार्तवीर्य, सहस्त्रार्जुन एवं सहस्त्रबाहु भी कहा जाता है। यह सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में फैले विशाल हैहय साम्राज्य का उत्तराधिकारी बना। यह महान चक्रवर्ती सम्राट था। इसकी हजार भुजाएँ बताई गई हैं, जो वास्तव में इसकी अपार सैन्य शक्ति का प्रतीक है। अनुश्रुतियों के अनुसार उसने समस्त पृथ्वी को जीता था और अनेक यज्ञ किये थे।

महिष्मती को हैहयवंशीय राजा सहस्त्रार्जुन की राजधानी होने का गौरव प्राप्त था। वाल्मीकि रामायण में हैहयवंशीय सहस्त्रार्जुन को महिष्मती नगर का राजा महाविजयी अर्जुन लिखा है। महाबली रावण को सहस्त्रार्जुन ने महेष्वर में पराजित किया था। 'सहस्त्रार्जुन ने जहाँ अपने सहस्त्रों हाथों से नर्मदा को रोका था, वह महेश्वर के निकट आज भी 'सहस्त्रधारा' के रूप में विख्यात है।'[1] यहीं सहस्त्रार्जुन और रावण में युद्ध हुआ था, ऐसा उल्लेख वाल्मीकि रामायण में मिलता है। वाल्मीकि ने लिखा है कि लंका विजय के बाद राजगद्दी पर बैठे भगवान रामचन्द्र ने ऋषि अगस्त्य से रावण के अत्याचारों की पूर्व कथा सुनकर पूछा-

'भगवन राक्षस: कूरो यदापृभृति मेदिनीम। पर्यटत् किं तदा लोका: शून्या आसन द्विजोसतम।।[2]

अर्थात् भगवन द्विजश्रेष्ठ जब क्रूर निशाचर रावण पृथ्वी पर विजय करता हुआ घूम रहा था, उस समय क्या यहाँ के सभी लोग शौर्य सम्बंधी गुणों से शून्य ही थे।

तब अगस्त्य ने उत्तर दिया कि नहीं पृथ्वी वीरों से शून्य नहीं थी। महिष्मती के राजा अर्जुन और रावण के बीच युद्ध हुआ, जिसमें रावण को अर्जुन ने बन्दी बना लिया था-

सतु बाहुसहस्त्रेण बलादग्ह्य दषाननम्।बबन्ध बलवाना राजा बलि नारायणो यथा।।[3]

अर्थात् जैसे पूर्व काल में भगवान नारायण ने बलि को बांधा था, उसी तरह बलवान राजा अर्जुन ने दशानन को बलपूर्वक पकड़कर अपने हाथों द्वारा उसे मजबूत रस्सों में बांध दिया।

रघुवंश के इन्दूमति-स्वयंवर में उपस्थित राजाओं में अनूप देश की राजधानी रेवा अर्थात् नर्मदा के तट पर स्थित महिष्मती का होना बताया गया है।

महाभारतकालीन निमाड़ – महाभारत युग में कौरव-पाण्डवों का प्रभाव निमाड़ के धरमपुरी, सिरवेल, कसरावद, महेश्वर, बड़वानी आदि क्षेत्रों में व्याप्त था। महाभारत काल में युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के प्रसंग में चेदीवंश के राजा शिशुपाल की राजधानी महिष्मती में होना बताया गया है।

महाभारत में कई स्थानों पर आये वर्णनों से निमाड़ की महत्ता का पता चलता है। सभा पर्व के अनुसार महिष्मती एक प्राचीन नगरी थी, जो राजा नील की राजधानी थी। राजा नील महाभारत के युद्ध में कौरव पक्ष की ओर से पाण्डवों के विरुद्ध सम्मिलित हुआ था। 'दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने इस नगरी पर आक्रमण करके राजा नील को परास्त किया था।'[4]

महाभारत के जुए में हारे हुए नल द्वारा दमयंति के साथ वन पहुंचने पर नल ने दमयंति को अपने मायके जाने का आग्रह करते हुए जो तीन मार्ग बताये थे, उनमें से एक निमाड़ में से होकर गया था।

महाभारत युद्ध के पश्चात् परीक्षित भारतवर्ष के सम्राट बने एवं उनके बाद जनमेजय ने राज्य किया। इस समय निमाड़ अवन्ति राज्य का हिस्सा था।

उपसंहार – कई इतिहासकार रामायण और महाभारत को कवियों की कल्पनाओं से सृजित महाकाव्य मात्र मानते हैं और इस बात में विश्वास नहीं रखते हैं कि ऐसा कोई दौर यथार्थ में हुआ था। जबकि अनेक इतिहासकार इन युगों को मान्यता देते हैं। भारत में अनेक स्थानों पर रामायण और महाभारत में वर्णित परिस्थितियों से साम्य रखते दृष्टांत आज भी विद्यमान हैं। ऐसे में महाकाव्य युग की ऐतिहासिकता को सीधे सीधे खारिज करना उचित नहीं है। प्रस्तुत शोध पत्र से प्रमाणित होता है कि रामायण और महाभारत काल की घटनाओं का साक्षी और सहभागी निमाड़ क्षेत्र भी रहा है।

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

अजमेर के चौहानों की राजनैतिक उपलब्धियां

डॉ. बनवारी लाल यादव *

प्रस्तावना – अजमेर तथा पुष्कर के आस-पास की पहाडियाँ भारत की सबसे प्राचीन पहाडियां हैं। खेड़ा तथा कडेरी से मानव सभ्यता के ऊषा काल के मानव अवशेष प्राप्त हुए हैं। सिन्धु घाटी सभ्यता में बाट के रूप में शीशे तथा सफेद-काले अभ्रक के टुकड़े प्रयुक्त होते थे। वे इन्हीं पहाडियों से ले जाये जाते थे। मेगालिथिक एवं नॉन मेगालिथिक पॉलिशयुक्त लाल व काले उपकरण भी इस क्षेत्र में प्राप्त हुए हैं। चित्र युक्त सलेटी उपकरणों की भी उपस्थिति इस जिले में पाई गई है। अजमेर से 58 किलोमीटर दूर बारली गांव के भीलोत माता मंदिर से अशोक (132 ई.पू. से 72 9 ई.पू.) से भी पहले की ब्राह्मी लिपि का एक शिलालेख प्राप्त हुआ है।[1]

पुष्कर से बैक्ट्रियन, यूनानी, शक क्षत्रप तथा गुप्त शासकों के सोने व चांदी के सिक्के तथा ताम्बे के गधैया सिक्के बड़ी संख्या में प्राप्त हुए हैं।[2]

छठी सदी में उदीयमान शाकम्भरी के चौहान अपने उत्कट स्वदेश प्रेम, अदम्य शौर्य और प्रबल पराक्रम से उन्होने श्लाधनीय उत्सर्ग किये, वह भारतीय राष्ट्रीय इतिहास के पन्नों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। बलिदानों की लम्बी श्रृंखला स्थापित करने का गौरव प्राप्त करने वाले इस क्षत्रिय राजवंश की उत्पत्ति के संबंध में अनेकों मत स्थापित है। पृथ्वीराज चौहान तृतीय के मित्र तथा दरबारी कवि चन्द्रवरदायी और जयानक अपने ग्रन्थों क्रमश: पृथ्वीराज रासो तथा पृथ्वीराज विजय में चाहमान का जन्म स्थल आबू और पुष्कर बताते है।[3] चन्द्रवरदायी के रासो का समर्थन जोधराज ने हम्मीर रासो,[4] सूर्यमल्ल मिश्रण ने वंश भास्कर[5] तथा मुंहणोत नैणसी[6] ने अपनी ख्यात में किया। इन लेखकों का मानना है कि चौहान वंश के आदि पुरूष चाहमान, आबू में सम्पन्न किये गये यज्ञ-कुण्ड से प्रकट हुए थे, अत: ये अग्निवंशी कहलाये। कर्नल जेम्स टॉड, विन्सेन्ट ए. स्मिथ तथा विलियम क्रुक ने चौहानों का सम्बन्ध सीथियन नामक विदेशी जाति से माना है।[7] डी. आर. भण्डारकर के अनुसार इनका रक्त संबंध मध्य एशिया में निवास करने वाली 'खजर' नामक जाति से है, जो पुरोहित वर्ग से संबंधित थे।[8] डॉ दशरथ शर्मा ने बिजौलिया शिलालेख व न्यामतखाँ 'जान' की क्यामखाँरासो के आधार पर चौहानों की उत्पति पुरोहित वर्ग से मानी है। मि. जैक्सन नामक विदेशी इतिहासकार ने तथाकथित चार अग्निवंशीय राजपुतों की उत्पति विदेशी गूजरों से मानी है।[9] वि.स.1234 के बड़ल्यावापी शिलालेख (लोक सं.2) से ज्ञात होता है कि चाहमान के पिता का नाम विरोचन था।[10] पृथ्वीराज विजय महाकाव्य व उसकी दीपिका में जोनराज स्पष्ट उल्लेख करते है कि चाहमान ने अपने लघुभ्राता धनंजय, जो उनके प्रधान सेनापति भी थे, के सहयोग से म्लेच्छों का उन्मूलन कर नवीन राज्य की स्थापना की थी।[11] चौहान राजस्थान में पांचाल की राजधानी अहिछत्रपुर से आये। ओझाजी ने अहिछत्रपुर नागौर को ही माना है इससे बाद के भी लेखकों ने नागौर को ही अहिछत्रपुर मान लिया। डॉ. दशरथ शर्मा इस मान्यता को सही नहीं मानते हैं। दूसरा तर्क उनका यह है कि नागौर जैनों का तीर्थ स्थान है परन्तु किसी भी जैन ग्रन्थ में नागौर के लिए अहिछत्रपुर नहीं लिखा है। पृथ्वीराज विजय में दिया है कि चौहानों की राजधानी अहिछत्रपुर सांभर से पूर्व में थी तथा एक दिन में वहाँ पहुँच सकते थे। नागौर सांभर से उत्तर-पश्चिम में है इसलिये वह अहिछत्रपुर नहीं हो सकता यह अहिछत्रपुर चौहानों के प्रारम्भिक देश अनन्त में हर्ष के समीप कहीं होगा।[12] उत्तर प्रदेश के अहिछत्रपुर से आकर राजस्थान में जो राज्य कायम किया वहां भी उन्होंने पुरानी राजधानी के नाम पर ही अहिछत्रपुर बसाया ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं। चौहान पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़े हैं। ये उत्तर-प्रदेश में पांचाल की राजधानी अहिछत्रपुर से पश्चिम की ओर बढ़े उत्तर-प्रदेश में मुज्जफराबाद से समीप पर्वत पर शाकम्भरी देवी का मन्दिर है। वहाँ की यह मान्यता है कि उस देवी को चौहान अपने साथ ले गये। यह प्रदेश शेखावाटी का इलाका है। यहाँ इनका इष्ट देव हर्षनाथ था। इस अनन्त प्रदेश में उन्होंने अपनी कुलदेवी शाकम्भरी का मन्दिर बनवाया। अब भी शाकम्भरी का एक मन्दिर शेखावटी में मौजूद है। वहां भी उन्होंने शाकम्भरी देवी का मन्दिर बनाया।[13] अनन्त प्रदेश से पश्चिम की तरफ बढ़कर वासुदेव ने सांभर पर अधिकार कर उसे अपनी राजधानी बनाया। यह उसने परमारों से विजय किया था। 'प्रबन्ध कोश' में वासुदेव का समय वि. 608 ई. 551 दिया है। चौहान वस्तुत: प्राचीन अहिछत्रपुर (नागौर) के शासक थे। उसकी पीढ़ी का वासुदेव चौहान साम्भर का अधिपति बना। कुछ विद्धान यह भी कहते हैं कि वासुदेव को उसके मित्र विद्याधर ने सांभर झील भेंट स्वरूप दी थी।[14] इस प्रकार शाकम्भरी के मंदिरों से चौहान के पूर्व से पश्चिम का बढ़ना प्रमाणित होता है। प्रबंध कोष के अनुसार इस चौहान वंश में 37 राजा हुए थे व 31वीं पीढ़ी में पृथ्वीराज तृतीय (उत्तर भारत का अंतिम हिन्दू सम्राट) हुआ था और हम्मीर देव अंतिम चौहान राजा था। इन्हीं चौहानों का साम्राज्य सपादलक्ष कहलाया जिसमें साम्भर से लेकर नागौर व जांगल प्रदेश तक के एक लाख बीस हजार गांव सम्मिलित थे। शाकम्भरी, साम्भर का ही प्राचीन नाम है।[15] साम्भर, मैदान में होने से सुरक्षित स्थान नहीं था इसलिए अजयराज (अजयपाल) ने विचार किया कि हुण शत्रुओं के निरन्तर आक्रमणों से रक्षा के लिए पहाड़ों में सुरक्षित स्थान होना चाहिए। इस विचार से उसने आडाबला (अरावली) श्रृंखला की एक उंची पर्वत की चोटी पर किला बनवाया तथा उसकी घाटी में नगर बसाया ताकि वहां शत्रु को आसानी से रोका जा सके। उसने नगर का नाम अजयमेरू दिया जो आगे चलकर अजमेर कहलाने लगा।[16] अजमेर की स्थापना 'प्रबंध कोष' के अनुसार, अजयराज प्रथम या अजयपाल ने छठी सदी के अन्तिम समय से लेकर सातवीं सदी के प्रारम्भिक काल में किसी वक्त की थी। उसी ने बीठली पहाड़ी

* राज. उ. मा. वि., कराडी, जि. पाली (राजस्थान) भारत

पर सैन्य चौकी स्थापित की जहाँ कालान्तर में अजयमेरू दुर्ग (तारागढ़) का निर्माण हुआ। अजयपाल को ही अजयपाल चकवा या चक्री भी कहा जाता था। वह प्रथम चौहान राजा (साम्भर) वासुदेव का पौत्र था। उधर 'पृथ्वीविजय' काव्य रचना में उल्लेख मिलता है कि अजमेर नगर को अजयराज चौहान द्वितीय ने 1113 ई. में बसाया था। जबकि 'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार राजा अर्णोराज चौहान ने इस नगर का पुननिर्माण कराया था। ब्रितानी विद्धान हेबर का मानना है कि यह नगर कई बार बसाया गया और कई बार उजाड़ थी। इस नगर और यहाँ के पहाड़ी दुर्ग तारागढ़ के सामरिक एवं राजनीतिक महत्व को व्यक्त करते हुए इतिहासकार कर्नल टॉड ने इस दुर्ग को 'राजस्थान की चाबी' कहा। इसी तरह हैबर के अनुसार-तारागढ़ को थोडे से परिवर्तन के सहारे विश्व का दूसरा 'जिब्राल्टर' बनाया जा सकता था।[17] अजयराज बड़ा ताकतवर व वीर हुआ जो धनुषविद्या में पारंगत था तथा जिसने दुश्मनों को परास्त किया और जनता के धन और जीवन की रक्षा की। वृद्धावस्था में उसने राज्य अपने पुत्र विग्रहराज को देकर जंगल में तपस्या करने को चला गया था। बहुत से विद्धान् पृथ्वीराज विजय के आधार पर अजमेर नगर को बसाने वाला आनाजी का पिता अजयदेव (1110-1135 ए.डी.) को मानते हैं। परन्तु प्रबन्ध कोष में अजयमेरू अजयराज का बसाया हुआ माना हैं। इसी प्रकार कई जैन साधुओं की छतरियाँ अजमेर में हैं जिनमें सबसे प्राचीन छतरी हेमराज की है, वह वि. 817 ई. 760 की है। इसी प्रकार कुछ अन्य छतरियों में भी लेख वि. 905 ई. 845, वि.911 ई. 854, वि. 928 ई. 871, वि. 973 ई. 916 और वि. 1027 ई. 970 के हैं। हम्मीर महाकाव्य में भी अजमेर को बसाने वाला चौहानों का चौथा शासक अजयपाल को ही माना है। ऊपर के शिलालेखों व ग्रन्थों को देखते हुए यह मानना पडेगा कि अजयमेरू का बसाने वाल अजयराज ही था। क्योंकि अजयदेव से करीब साढ़े तीन सौ वर्ष पहले की जैन छतरियों में लेख हैं। इस प्रकार साढे तीन सौ वर्ष पहले से लेकर करीब सवा सौ वर्ष पहले की छतरियों का होना निर्विवाद रूप से सिद्ध करता है कि अजयमेरू अजयदेव से काफी पहले से बसा हुआ था। चौहानों के प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि विग्रहराज के पुत्र और चन्द्राराज के छोटे भाई गोपेन्द्रराज के काल में चौहानों पर अरबों ने आक्रमण किया। इस सेना का संचालक सुल्तान बेग वारिस को बन्दी बनाकर चौहान शासक गोपेन्द्रराज के सम्मुख पेश किया। अब हमें यह देखना है कि अरबों का यह आक्रमण किसकी आज्ञा से और किस समय हुआ। सिन्ध के अरब सूबेदारों में सुल्तान बेग वारिस नाम का कोई सूबेदार नहीं मिलता है। इसलिए हमें यह मानना पडेगा कि यह सिन्ध का सूबेदार नहीं था, परन्तु उनका कोई सेनापति ही था। जिसने कि उसकी आज्ञा से राजपूताने पर आक्रमण किया था। अरबों से ये युद्ध एक शासक से हुये या दो-तीन पीढ़ियों तक चले इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है। ऐसा उल्लेख मिलता है कि चौहानों ने अरब सेनाओं के मुकाबले बहुत बलिदान किए हैं, अन्तिम युद्ध जो कि बड़ा भयंकर था, में चौहान बहुत बड़ी संख्या में जुझार हुए। चौहानों के पराजित हो जाने पर साम्भर में स्त्रियों ने जौहर किया। अरबों ने नगर को लूटा और विध्वंस कर दिया।

अरब आक्रमणों के विरूद्ध देश तथा धर्म की रक्षा के लिए भीनमाल नरेश प्रतिहार नागभट्ट और चित्तौड़ के बापारावल ने जो संयुक्त मोर्चा बनाया था, उस मोर्चे में चौहान भी शामिल थे। इसमें उन्हें बड़ी सफलता मिली थी, इसके बाद प्रतिहारों ने कन्नौज पर अधिकार कर उसे एक साम्राज्य का रूप दिया, तब चौहानों ने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। जब वत्सराज प्रतिहार ने बंगाल के शासक धर्मपाल पर चढ़ाई की, तब प्रतिहारों के सेनापति के रूप में अजमेर के चौहान शासक दुर्लभराज ने बंगाल सेना को पराजित किया था। इसके बाद प्रतिहार सम्राट नागभट्ट द्वितीय के दरबार में चौहान राजा गुवक या गोविन्द राजा का सामन्त के रूप में बड़ा सम्मान था। इसी शासक ने अपने वंश के आराध्य देव हर्ष महादेव का मंदिर अनन्त प्रदेश (वर्तमान शेखावटी जिला सीकर) में बनवाया था, जिसका शिलालेख चौहान इतिहास के लिए अपने आप में बड़ा ही महत्तवपूर्ण है। इसके पौत्र गुवक द्वितीय का भी प्रतिहार राज्य में अच्छा प्रभाव था। इसकी बहिन कलावती का विवाह प्रतिहार सम्राट भोज प्रथम से हुआ था। इसके पुत्र चन्दनराज की रानी रुद्राणी ने पवित्र तीर्थ पुष्कर झील (सरोवर) के तट पर एक हजार शिवलिंगों की स्थापना प्राणप्रतिष्ठा के साथ की थीं। कुछ पुस्त (पीढ़ी) पश्चात् सिंहराज हुआ जो काफी ताकतवर हो गया था, ने तोमर शासक सलबन को परास्त करके उसे कैद कर लिया था। तथा अनेक सरदार व सामन्तों को भी कैद कर लिया था, तब सम्राट रघुवंशी प्रतिहार को स्वयं उन्हें कैद से छुड़वाने के लिए सिंहराज के पास आना पड़ा था। इसके छोटे भाई लक्ष्मण ने नाडौल का राज्य कायम किया था। इसने गुजरात पर आक्रमण कर वहां के शासक मूलराज चालुक्य को पराजित किया था इसके पास बड़ी शक्तिशाली सेना थी, इसने अपनी विजय पताका दक्षिण रेवानदी (नर्मदा) तक फहराई थी।[18] इनमें विग्रहराज द्वितीय (973 ई.) ने चौहानों की प्रतिष्ठा बढ़ाई, उसने गिरते हुए प्रतिहार साम्राज्य को मातहाती छोड़ दी और वह स्वतन्त्र हो गया था। साम्राज्य का विस्तार किया तथा सैन्य शक्ति और अधिक सुदृढ़ की। उसने गुजरात के चालुक्य राजा मूलदेव को हराने का भी करिश्मा किया। अजयराज ने चौहान साम्राज्य की राजधानी का गौरव अजमेर को दिया, पहले सपादलक्ष (चौहान साम्राज्य) की राजधानी साम्भर थी। अजयराज ने ही अजयमेरू दुर्ग बनवाया अथवा उसका निर्माण कार्य पूर्ण कराया। उसने मुस्लिम आक्रमणों से अपने साम्राज्य को सुरक्षित किया और अपनी रानी सोमल देवी के नाम पर सिक्के ढलवाये। उसने अपने साम्राज्य का विस्तार मथुरा से लेकर मध्य देश के 'दुधई' स्थान तक किया। इसी तरह विग्रहराज तृतीय भी प्रतापी राजा था। उसका विवाह परमार राजकुमारी राजीमती के साथ सम्पन्न हुआ था। तदन्तर अर्णोराज (आना जी, सन् 1133-1151) ने चौहान साम्राज्य की कीर्ति में चार चांद लगाये। उसने यामिनी सुल्तान को अजमेर में बुरी तरह पराजित किया और युद्ध स्थल को पवित्र करने के लिए वहाँ की खुदाई कराई, पूर्वी सीमा पर चन्द्रभागा नदी पर बाँध बनवाया और यही स्थान आनासागर झील के नाम से विख्यात हुआ। उसने मालवा को जीता, गुजरात के राजा सिद्धराज जयसिंह को पराजित किया और चौहान साम्राज्य का विस्तार सिंधु व सरस्वती नदियों के तट तक किया। गुजरात के राजा कुमारपाल के साथ उसे एक निर्णायक युद्ध में पराजित होना पड़ा। अर्णोराज मे अजयपाल घाटी में एक शिवमंदिर बनवाया। आनाजी का पुत्र विग्रहराज (1150-641 ए.डी.) जिसे बीसलदेव के नाम से इतिहास में जाना जाता हैं, इस वंश का सबसे अधिक वीर, योग्य सेनानायक महान् विजेता, विद्धान, आश्रयदाता एवं उत्ताम कवि तथा इतिहासकार माना गया है। इसने चौहानों के राज्य को दक्षिण में नर्मदा तक फैलाया, उत्तर में हांसी (हरियाणा, तथा दिल्ली पर प्रभुत्व जमाया था। उत्तर में हिमालय तक राज्य विस्तार करने पर सपालदक्ष का चौहान राज्य एक बड़े साम्राज्य के रूप में परिवर्तित हो गया। दिल्ली तक बढ़ जाने से पंजाब में गजनी खानदान के अमीर खुसरोशाह से मुकाबला स्वाभाविक था। दिल्ली में स्थित फिरोजशाह की लाट के लेख (1163 ए.डी.) से पता चलता है कि बीसलदेव ने गजनी को परास्त कर पीछे धकेल दिया। बीसलदेव के दरबार में अनेक बड़े विद्धान

थे, वह स्वयं भी संस्कृत का विद्वान् तथा कवि था, उसने हरकेली नाटक लिखा, इस नाटक की कुछ ही शिलायें उपलब्ध हुई हैं। इसने चौहानों का इतिहास भी लिखवाया। इसकी भी कुछ शिलायें मिली हैं।[19] बीसलदेव के पश्चात् उसका पुत्र अमरगांगेय देव गद्दी पर बैठा था जिसे बीसलदेव के बड़े भाई जगदेव के पुत्र ने परास्त कर दिया और स्वयं राजा बन बैठा। इसके देहान्त के पश्चात मन्त्रियों ने बीसलदेव के छोटे भाई सोमेश्वर को गद्दी पर बिठा दिया था। बीसलदेव का छोटा पुत्र नागार्जुन ने पिता की मृत्यु के पश्चात् राज्य प्राप्त करने के लिए विद्रोह कर दिया और अजमेर दुर्ग पर कब्जा लिया, जिसे बाद में पृथ्वीराज ने परास्त कर दुर्ग अपने अधिकार में ले लिया। बीसलदेव का भाई सोमश्वर भी अपने पिता की तरह शूरवीर योद्धा व प्रतापी हुआ। इसकी रानी कर्पूरी देवी से दो पुत्र पृथ्वीराज (ज्येष्ठ) (जन्म 1166 ए.डी.) व हरिराज (कनिष्ठ) उत्पन्न हुए। हरिराज पृथ्वीराज से एक छोटा था, दोनों भाईयों का जन्म गुजरात में हुआ था। गद्दीनसीन होने से पूर्व सोमेश्वर प्रारम्भ से ही गुजरात (पाटन) में अपने नाना जयसिंह सिद्धराज के पास रहता था, नाना की मृत्यु के बाद कुमारपाल के पास रहने लगा। पृथ्वीराज द्वितीय की नि:सन्तान मृत्यु होने पर 1169 ए.डी. में मन्त्रियों ने सोमेश्वर को गुजरात से लाकर चौहान सम्राट बना दिया था। सामेश्वर गुजरात से अपने साथ में नागरवंशी, स्कन्ध, बामन और सोढ़ को लाया था, कदाचित ये मन्त्री या उच्चाधिकारी थे। रानी कर्पूरी देवी ने इन सभी को सम्मानपूर्वक रखा।[20] अन्तत: सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज चौहान तृतीय ने 1179 से 1192 ई. तक अजमेर और चौहान राजवंश को गौरवान्वित किया। उसने भण्डानकों, चन्देलों और गहड़वालों के विरुद्ध युद्धों में विजय प्राप्त की। गुजरात के चालुक्य नरेश भीमदेव के साथ भी उसका जोरदार युद्ध हुआ किन्तु उक्त युद्ध का परिणाम विवादग्रस्त है। फिर तराईन के प्रथम युद्ध (1191) में उसने मौहम्मद गौरी को जोरदार शिकस्त दी तथा उसे प्राण बचाकर रण क्षेत्र से भागने दिया। किन्तु अगले ही वर्ष (1192) तराईन के ही मैदान में मुहम्मद गौरी अपनी विशाल सेना लेकर तराइन के मैदान में आ डटा किन्तु शीघ्र ही उसे अनुमान हो गया कि वह सैन्य बल पर पृथ्वीराज को परास्त नहीं कर सकेगा। अत: उसने छल-बल से काम लिया। उसने पृथ्वीराज के पास संदेश भिजवाया कि वह (पृथ्वीराज) अपना राज्य गौरी को सौंप दे। पृथ्वीराज ने उत्तर में कहा कि या तो गौरी अपने देश लौट जाये अन्यथा उसकी (गौरी की) मृत्यु निश्चित है।[21] इस पर गौरी ने कहलवाया कि वह युद्ध के लिए नहीं सन्धि के लिए आया है अत: सन्धि की शर्तें भिजवाई जाये। इस प्रकार गौरी ने पृथ्वीराज को अनावश्यक रूप से उलझाये रखा और पृथ्वीराज के एक सेनापति सोमेश्वर को अपनी ओर मिला लिया। सोमेश्वर से गौरी को पृथ्वीराज की सेना का भेद मिल गया। अन्त में गौरी ने पृथ्वीराज से कहलवाया कि वह वापिस गजनी जा रहा है और रात में उसने मशालें जलवाकर अपनी सेना को गजनी की दिशा में रवाना कर दिया शुत्र दल को विदा हुआ जानकर हिन्दू सैनिक आराम से सो गये।[22]

पहले से निर्धारित षडय़न्त्र को क्रियान्वित करके पृथ्वीराज को पकड़ लिया गया और अजमेर अथवा गौर ले जाया गया। वहाँ उसकी आंखें फोड़ दी गई। पृथ्वीराज का बाल सखा और दरबारी कवि चन्द बरदाई भी उसके साथ था। उसने पृथ्वीराज की मृत्यु निश्चित जानकर शत्रु का विनाश का कार्यक्रम बनाया।[23]

कवि चन्द बरदाई ने गौरी से निवेदन किया कि आंखें फूट जाने पर भी राजा पृथ्वीराज शब्दभेदी निशाना साधा कर लक्ष्य वेधा सकता है। इस मनोरंजक दृश्य को देखने के लिए गौरी ने एक विशाल आयोजन किया। एक ऊंचे मंच पर बैठकर उसने अंधो पृथ्वीराज को लक्ष्य वेधाने का आदेश दिया। जैसे ही गौरी के अनुचर ने लक्ष्य पर शब्द उत्पन्न किया, कवि चन्दबरदाई ने यह दोहा पढ़ा-

चार बांस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमाण,
ता ऊपर सुल्तान है मत चूके चौहान।[24]

गौरी की स्थिति का आकलन करके पृथ्वीराज ने तीर छोड़ा जो गौरी कण्ठ में जाकर लगा और उसी क्षण उसके प्राण पंखेरू उड़ गये। शत्रु का विनाश हुआ जानकर और उसके सैनिकों के हाथों में पड़कर अपमानजनक मृत्यु से बचने के लिए कवि चन्दबरदाई ने अपनी कटार राजा पृथ्वीराज के पेट में भौंक दी और अगले ही क्षण उसने वह कटार अपने पेट में भौंक ली। चौहानों की शक्ति नष्ट हो गई। इतिहास ने भारत भूमि पर गुलामी का पहला अधयाय लिखा।[25] इस प्रकार हम देखते है कि अजमेर के चौहान राजवंष में अपनी राजनैतिक उपलब्धियों के द्वारा भारत के इतिहास को प्रभावित किया तथा राजपूताना को आज भी इन्ही की वजह से भारत के इतिहास में पढा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा षिव, अजमेर इतिहास और पर्यटन, अभिनव प्रकाषन, जयपुर, 2016, पृ. 57
2. चौहान विंध्यराज, चौहान राजवंष के उदभव का वृहत इतिहास, राजस्थानी ग्रंथाकार, जोधपुर, 2001, पृ. 55
3. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, द्वितीय संस्करण आदि पर्व, पृष्ठ 35-53
4. हम्मीर रासो, जोधराज, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृष्ठ 8-14
5. वंश भास्कर, सूर्यमल्ल मिश्रण, प्रथम भाग, दशम मयूख, पृष्ठ 87-95
6. नैणसी री ख्यात, मुंहणोत, भाग प्रथम, पृष्ठ 123
7. चौहान सरित्सागर, बिन्ध्यराज चौहान, प्रथम खण्ड, 2001, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर
8. इन्डियन एन्टिक्वैरी, भाग 40, पृष्ठ 24-25
9. बाम्बे गजेटीयर, खण्ड प्रथम, भाग 1, पृष्ठ 468
10. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, पृष्ठ 108, शोध पत्रिका, सितम्बर-दिसम्बर 1956, पृष्ठ 19, मरूभारती, अंक 2-3, सन् 1955, पृष्ठ 2-3, एपिग्रैफिया इण्डिका, खण्ड 2, पृष्ठ 303
11. पृथ्वीराज विजय, जयानक, द्वादस सर्ग का 70वां श्लोंक, पृष्ठ 312, श्लोक 63-64, पृष्ठ 49
12. प्रबन्ध कोष, मुनि जिनविजय, सिंघी जैन ग्रंथमाला, अहमदाबाद पृ. 32-33, एपिग्राफिया इण्डिका, Vol-II, p. 121, एपिग्राफिया इण्डिका, Vol-XXVI, p. 103
13. सम्राट् पृथ्वीराज चौहान, देवीसिंह मंडावा, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007, पृ. 34-39, इन्डियन एन्टिक्वैरी, ददतख, पृष्ठ 159
14. अजमेर : जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, मोहनलाल गुप्ता, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004, पृ. 55-56
15. पृथ्वीराज रासो, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृष्ठ 387
16. अजमेर इतिहास और पर्यटन, शिव शर्मा, शब्द साधना, अजमेर, 2009, पृ. 18
17. अजमेर : जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, मोहनलाल गुप्ता, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004, पृ. 53-54

18. अजमेर इतिहास और पर्यटन, शिव शर्मा, शब्द साधना, अजमेर, 2009, पृ. 18-22, इन्डियन एन्टिक्वैरी, ददतख, पृष्ठ 162-163, Vol-XII, p. 159, एपिग्राफिया इण्डिका, Vol-II, p. 121-122, सुक्ति 13, Vol-XI, p. 157,
19. पृथ्वीराज रासो, चन्द्रबरदायी, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृष्ठ 387
20. अजमेर इतिहास और पर्यटन, शिव शर्मा, शब्द साधना, अजमेर, 2009, पृ. 23, इन्डियन एन्टिक्वैरी, दद, पृ. 20-25, Vol-XIX, p. 216-219, एपिग्राफिया इण्डिका, Vol-XXVI, p. 102,
21. अजमेर : जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, मोहनलाल गुप्ता, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004, पृ. 53-54, वरदा, Vol-VIII, No. – 4, P. 6-7, इन्डियन एन्टिक्वैरी, XIX, पृ. 218, एपिग्राफिया इण्डिका, Vol-XXVI, p. 102,
22. पुरातन प्रबन्ध संग्रह, मुनि जिनविजय, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, अहमदाबाद, पृ. 75-76 रेवर्टी, मिनहाजुज सिराज कृत, तबकाते नासिरी, कलकत्ता, 1881, पृ. 468
23. इण्डियन आर्कियोलोजी एण्ड ए रिव्यू, राहुल पब्लिशिग हाउस, नई दिल्ली, 1958-59, पृ 42
24. सोमानी आर. वी, पूर्वोक्त, पृ. 76-77
25. मन्डावा देवीसिंह, सम्राट पृथ्वीराज चौहान, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2007, पृ. 901

****

The Portrayal of Nature in the poems of Wordsworth and Pant

Dr. Kranti Vatsa * Hirdesh Shrivastava **

Abstract - The purpose of this paper is to explore different aspectsWilliam Wordsworth and Sumitra Nandan Pant have taken to portray their poerty. Both artist beautified nature and portrayed it in the poetic forms. Before we consider the position which both the poets maintains as a poet, let us see, first, in what light both regard poets and poet's responsibilities. Although endowed with greater sensibilities, a greater understanding, and "a more comprehensive soul" ,(Lyrical Ballads, p. 237) than the average person, what 'is a poet, after all, but a man whose realm is manklnd,-"a man speaklng to men" (Lyrical Ballads,~ p. 237).

Introduction - Though William Wordsworth's love of nature and Sumitra Nandan Pant's devotion to nature are considered to be milestones in English and Hindi literatures respectively.

The present essay aims at addressing five main questions: I. What is nature and its poetic importance. II. What occasioned the writing of Pant and Wordsworth, what prompted Wordsworth and Pant to write these similar nature poems in different languages? III. What was impact to create poems on nature like masterpieces supposed to serve and whether were successful? IV. Relevance and Justification to Criticism V. Comparative study and contrast in the light of the points stated above.

Nature inspires to create literature. Nature may be mother, father, guardian, brother friend, lover and also companion. The quality of nature is not only spiritual but also poetic, artistic and literary Nature hides a lot of secret, miracle and power in itself It is often seen that a person directly connected with nature may be strong and Powerful .Nature is the chief source of energy in all living creature. That's why, the inspiration of nature to create literature is generally highly appreciable and the work derived from the inspiration of nature is generally up to the mark .In the primitive age, when human culture came to know to create literature and artistic work, it was the nature what was the part of artistic creation. Men gradually developed but nature was always the chief source of their inspiration in all ages. The portrayal of nature in all artistic work is beyond the limit of age, period,country, person, language and geographical distance and differences .We find nature in the world of literature more than what we visualize it in our tension us and routine life. That's why; all artistic works and literature makes a man relax whenever he feels distress tension and hallucination. Nature works like remedy and medicine of a lot of problems.

It is portrayal of natural that such an intention should be overcome by a striking illustration of the fact that, under stress of depression of modern world, failure of career and suffering of unrecognized lovers or art finds their regard for it more unshaken than ever. When literature as the picturization to feeling and imagination is strenuously rivalled by other forms of expression, especially by the modern industry of prose fiction; at a time when journalism, criticism, science more than all, not only excite interest, but afford activity and subsistence to original writers; at a time, moreover, when taste is fostered by the wealth of those to whose luxury the architect, the artist, and the musician, rather than the poet, are ready to minister; it seemed to me notable and suggestive that at such a time, though many think of poetry as the voice of the past, a few should still consider it a voice of the future also, and that there should be found what I may call practical idealists, to discover one need of our most liberal schools, and to do this much to relieve it.

This is why we still study and enjoy of poetry. It became an intimate part of men's and women's cultures. It became an evolutionary asset, possession, of mankind. And even today we still feel, many of us, the sensations of communion and romance and love or strong feeling which lead us to yet create more and more poetry. Poetry is not only the heritage of mankind — poetry is the music of the heart, the language of the soul, the expression of the parts we do not see in humans. And it is not only male possessed — women are part of it, too. Even children form part of our poetry. Poetry is for everyone

Above all, it is the disposal of human feeling and imagination towards the nature what makes poetry very attractive and tentative. Scientifically it is proved that a man

*Asst. Professor (English) M.V.A.M., Bhopal (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

beyond the nature definitely is a sufferer.

William Wordsworth is highly considered as a nature poet. A number of Indian poets also found there poetic destination in nature. Sumitra Nandan pant is considered as a great Indian nature poet. In my critical opinion, comparative study of Wordsworth and pant as a poet of nature will definitely create height of artistic work

De Quency rightly says "Wordsworth had his passion for nature, fixed in his blood . It was necessity of his being, like that of a mulberry leaf to the silkworm and through his commerce with Nature did he live and breathe"

Wordsworth is variously called the" harbinder of nature "the "priest of nature "and the "worshipper of nature" for he was the poet of nature par excellence and his chief originality is to be found in his poetry of natur.e

There are so many poets in Hindi who have written about nature. But on the top of all, there is Sumitranandan Pant. He is known as "Prakriti ka sukumar kavi" which translates to "mild poet of the nature". I may consider him equivalent to William Wordsworth who wrote poems on nature using a fictitious character Lucy and known as Poet of nature.

William Wordsworth helped found the Romantic movement in English literature with the strong presentation of Nature. He also wrote "I Wandered Lonely as a Cloud."along with a number of poems to show his love of nature. He wasBorn in England in 1770, poet William Wordsworth worked with Samuel Taylor Coleridge on Lyrical Ballads (1798). The collection, which contained Wordsworth's "Tintern Abbey," introduced Romanticism to English poetry. Wordsworth also showed his affinity for nature with the famous poem "I Wandered Lonely as a Cloud." He became England's poet laureate in 1843, a role he held until his death in 1850.

The pain of his early life started from beginning.Poet William Wordsworth was born on April 7, 1770, in Cockermouth, Cumberland, England. He lost his mother.Wordsworth's mother died when he was 7, and he was an orphan at 13.struggling in life, Wordsworth started writing artistically and depicted nature in his literature so beautifully that he was glory of his age.

Sumitranandan Pant was born on 20th May, 1900 at Kausani village of Bhageshwar, in the hills of Kumaon, Uttrakhand, as Gosain Dutt. Unfortunately, his mother died within few hours of giving birth to him. He was raised by his grandmother and was the smallest of all his seven siblings.At the age of seven, when majority of children learn how to read and write; a little child from the hills wrote poetries, and grew up to become one of India's finest and renowned poet cum writer. This boy was Sumitranandan Pant, also known as a great poet of nature.

Start reading Pant. Read will definitely fall in love with his writing. Nature runs in his poetry as, blood runs in human body.Nature is spontaneous outcome in these lines

फैली खेतों में दूर तलक
मख़मल की कोमल हरियाली,
लिपटीं जिससे रवि की किरणें
चाँदी की सी उजली जाली !
तिनकों के हरे हरे तन पर
हिल हरित रुधिर है रहा झलक,
श्यामल भू तल पर झुका हुआ
नभ का चिर निर्मल नील फलक।
रोमांचित-सी लगती वसुधा
आयी जौ गेहूँ में बाली,
अरहर सनई की सोने की
किंकिणियाँ हैं शोभाशाली।
उड़ती भीनी तैलाक्त गन्ध,
फूली सरसों पीली-पीली,
लो, हरित धरा से झाँक रही
नीलम की कलि, तीसी नीली।

(ग्राम श्री, सुमित्रानंदन पंत)

In the preface, Wordsworth explains the purpose and character of the new poetry collected in the Lyrical Ballads, considering it a successful endeavor in correcting the artificiality of Neoclassic poetic diction. A change in subject matter parallels the simplification of form. Nature and man in his relationship to nature are the worthiest poetic themes. Poetry should deal with simple pleasures and sorrows, and it should show man in his natural surroundings. As he stated in his preface,:

The principal object, then, proposed in these Poems was to choose incidents and situations from common life, and to relate or describe them, throughout, as far as was possible in a selection of language really used by men, and, at the same time, to throw over them a certain coloring of imagination, whereby ordinary things should be presented to the mind in an unusual aspect; and, further and above all, to make these incidents and situations interesting by tracing in them, truly though not ostentatiously, the primary laws of our nature:

(Preface to the Second Edition of Lyrical Ballads.)[1]

Wordsworth's doctrine of nature, as it is expressed in

the "Preface" and in his poetry, is rather complex. One might, however, make the following generalizations: Outward nature is the sourceof poetic and moral inspiration. It is grasped most effectively by the child, whose senses are not yet dulled The young adult retains much of the original and pure experience and augments it with book learning. The ultimate goal is a return to nature, which will answer the more difficult questions and prove human knowledge right or wrong, "The laws of nature are applicable to problems of society as well as to the passions of the individual. From the basic concept of the supremacy of nature, Wordswortharrives at the doctrine that all things should bear a close resemblance to nature. In the "Preface," he applies this doctrine to poetry.

Obviously, the influence of the nature philosophy of the eighteenth century is not negligible. J,W. Beach[2] and N.P. Stallknecht[3] made conclusive studies of the various philosophic trends assimilated by Wordsworth. Professor Beach traces influences from d'Holbach, Bayle, Hartley, and Locke in Wordsworth's writings. Especially important to Wordsworth was Rousseau's association theory and his doctrine of the natural goodness of man. Shaftesbury's idea of the harmony of the universe may have been the basis for Wordsworth's search for order and design in nature. Professor Stallknecht points out that Spinoza's theory of intuition has its parallels in Wordsworth's works. Thus, it is fairly obvious that the poet was somewhat less than original in his doctrine. It is, however, significant that he popularised these theories during the Romantic Period.

Linguistic beauty, art and pictorial presentation of nature,same as Wordsworth - Pant identified himself as nature poet and accepted that Wordsworth inspired him.

Embracing form of Nature like wordsworth - Nature as embracing form has been used in the poetry of Pant. He adopted Synthetic, analytic, real and pictorial method to display his feeling in frame of nature. Pant indicated object and also natural surroundings of selected object was given place in poems. Pant also depicted nature in different methodology where he displayed original facts with real name and rustic language what easy to understand by common man. Pant has depicted nature in embracing form in many poems by using synthetic and analytic approach. We can exemplify -

सुरपति के हम ही हैं अनुचर
जगतप्राण के भी सहचर;
मेघदूत की सजल कल्पना,
चतक के चिर जीवनधर।

(बादल, सुमित्रानंदन)

Evocative form of Pant's nature poems - Nature stimulates and awakes the feelings of humanity and human emotions with spontaneous overflow of feelings. Nature stimulates ecstasy of a man and fills him with love, affection and happiness. Inspite of happiness, nature also gives pain, sarrow and lament. Pant displayed the both-happiness and sarrow to frame nature in his poetry. A critic Neeraj explains that two aspects- happiness and sarrow which beautifully and artistically Pant fused in his literature. Here I would like to quote –

पंत में इन ढोनों रूपों में ही प्रकृति का चित्रण हुआ है। 'गुंजन' की विचरती गृह वन मल 'समीर' 'आज रहने ढो' यह काज प्रभृति रचनाओं में प्रकृति का सुखद उद्दीपन रूप में चित्रण हुआ है। विचरती गृह वन मल समीर में मल समीर उस पर केशर–शर से प्रहार करता है जिससे उसका ह्द हुलसित एवं प्राण पुलकित हो जाते हैं। सुगंधित और गुंजित कुंजों में आलिंगनबद्ध छाया और आलोक भी उसको प्रेम करने विवश कर देते हैं।

Ornamental form of nature in Pant's poetry like Wordsworth - As for as the question of linguistic and artistic beauty is concerned, Pant's literature can never discourage us. He used decorative and ornamental language in his literature when he depicted nature. Lotus is for Pant face of his beloved. Pisces is compared by him with eye of beloved. Honey bee is compared with darling and beautiful weird alcove. Pant utilized all tools and instruments of nature when he depicted nature.

घने लहरे रेशम से बाल,
मलिन्दों से उलझी गुंजार;
मृणालों से मृदु तार,
मेघ से संध्या का श्रृंगार;
वारि से ऊर्म्मि उभार;
मिले हैं इन्हें विविध उपहार
तरूण तम से विस्तार।

(गुंजन–नारीरूप)

Directive form of nature, depicted by Pant - "Nature is a teacher. Man respects nature since the beginning of human civilization. The great literature of **Rigveda** identifies nature as god and goddess. In **Rigveda** of Sanskrit, Usha, Sandhya, Agni, Varun, Vayu and all aspects of nature are treated as god."[4] Pant has admitted nature as directive means of life. Pant symbolized drop of water as mortal as life of a man. Pant describe -

क्षुब्ध जल शिखरों को जब वात,
सिंधु में मथकर फेनाकार;
बुलबुलों का व्याकुल संसार
बना विथुरा देती अज्ञात,
उठा तब लहरों से कर कौन
न जाने मुझे बलाता मौन!

(मौन निमंत्रण)

Mysterious form of nature of Wordsworth is key note in the poetry of Pant - Chayavad represents a way of mysterious presentation of nature. Pant has accepted nature as the part of mysterious power of god. Neeraj describes about mysterious form of nature presented in the poetry of Pant.

तरल जलनिधि का हरित विलास,शांत, नील आकाश का विस्तार,चंचल लहरियों का लास और अचल तारागणों के पलकों का हास – सब उसी ईश्वरीय सत्ता के असीम उल्लास के विविध रूप प्रतीत होते हैं। स्तब्ध ज्योत्सना में इंगित करते हुए नक्षत्र मानों उस का रहस्य जानने का मौन निमंत्रण देते हैं।

We find that mysterious form of nature is key note in the poetry of **Pant.** We can review "Khadyot" ("Firefly"), which shows signs of development in Pant's personal concept ofMysterious form of nature.

''खद्योत''
अँधियाली घाटी में सहसा
हरित स्फुलिंग सदृश फूटा वह
वह उड़ता दीपक निशीथ का
तारा सा आकर टूटा वह!
(May, 1935)

"Khadyot" ("Firefly") is a late Chayavad poem and excellent example of mystrical form of nature. It treats a similar topic to "Aj Sisu ke kavi's." However here the subject of poetic inspiration has evolved into a concern with illumination. Here also the firefly is used to represent a gift of awakening; but the term atma is used here for 'soul,' and the firefly is equated with the soul in the two stanzas. An image from the natural world is again used to describe the human essence. But the use of the word âtmâ indicates Pant's movement out of the insular depictions of the individual that are characteristic of his Chayavad poems and into a period of personal spiritual questing, which culminated in his attachment to Sri Aurobindo during the 1940s.

Pant used "humanization" of nature and microcosm like Wordsworth - Pant also humanized nature in his poetry. Pant's collections of poetry from 1926 (Pallav, "New Leaves") and 1932 (Gunjan, "Humming") exemplify the intensity of identification with nature that defines Pant as a Chayavad poet. "Maun Nimantra" ("Silent Invitation"), written in 1923 and published in Pallav, positions the individual without any reference to human society and depicts numerous forces and creatures—all imbued with consciousness—crowded together in a natural world that overflows with life and energy. The individual human consciousness emerges highlighted from this tapestry of living things and variegated consciousnesses but is nonetheless only another element in the greater whole of nature. The poem queries, who impels life? That is, what is the hidden personality or force that constitutes consciousness? The Indian traditional concept of the microcosm of the self which echoes the macrocosm of brahman, the unperceivable cosmic self, is also evident with humanization of nature. Moun Nimantran was written by Pant in November 1932. Moun NImantran is excellent example of humanization of nature with macrocosm.

मौन निमंत्रण
स्तब्ध ज्योत्सना से जब संसार
चकित रहता शिशु सा नादान।
विश्व के पलकों पर सुकुमार
विचरते हैं जब स्वप्न अजान;
(November, 1923)

Allegory taken from nature by Pant as Wordsworth did
When Pant could not say in words, he used symbols, metaphor and allegory to depict his emotion. Neeraj describes about Pant art of allegory and metaphor.

प्रतीकों के लिए मनुष्य सबसे अधिक प्रकृति का ही ऋणी है। उसने उषा को आशा का, ज्योति का, निशा को निराशा और वेदना का, फूल को सुकुमारता व सौन्दर्य का, शूल को दुख एवं पीड़ा का प्रतीक बनाया है। प्रतीकों की इस परम्परा में पंत ने नवीन अध्याय जोड़ा है। उनके प्रतीक बहुत प्राणवान है। यथा:

देखूँ सबके उर की डाली,
किसने रे क्या क्या चुने फूल,
जग के छवि उपवन के अकूल,
इसमें कलि, किसलय, कुसुम, शूल।

Contrast - Pant& Wordsworth as poet of nature are same but they are basically original in their approach. Originality brings contrast spontaneously. The portrait of woman is subject matter of contrast in the both poets. Wordsworth emphasizes on passionate portrait of woman but Pant considers woman as mother of the world (Jagat Janni). Pant raises the struggle of freedom but Wordsworth has no need to express his freedom thoughts for any national movement.

Conclusion - The poets generally live in a world of charm, magic and fantasy but nature is the chief and real source of all charm and magic. That's why William Wordsworth in England and Sumitra Nandan Pant in India were highly influenced by the beauty of nature. The beauty and eternal ecstasy are the spontaneous out-come of nature.

That's why, the two mother-less boys from different periods and different countries took nature as their guide of life and made colorful not only their life but also they left a lesson in their poetry how human beings can find colors of joy, eternality and knowledge through nature.

Both poets proved themselves as mile-stone in melodious journey of love, poetry and spiritual knowledge. Nature is matter of deep observation in the poetry of both poets.

Works cited

1. Blunden, E., Nature in English Poetry, The Hogarth Press, London, 1949, p.89.)
2. Pope, Alexander, The Poetical Works of Alexander Pope (Including His Translation of Homer): To Which is Prefixed the Life of Author by Dr. Johnson, J.J Woodword, 1830, p, 58 3- Willey, B., The Eighteenth Century Background, Chatto and Windus, p.27
3. Wordsworth, William, George Mallaby, Wordsworth, Cambridge University Press, Oct, 2014, p. 108
4. Brett, R.L, A.R. Jones, Lyrical Ballads: William Wordsworth and Samuel Taylor Coleridge, Methun & Co LTD, London, 1963, p.199
5. Wordsworth, Jonathan, M.H. Abrams, and Stephen Gill, William Wordsworth: The Prelude, 1799, 1805, 1850, W.W. Norton & Company, New York, London, 2002, p. 482
6. Wordsworth, William, The Collected Poems of William Wordsworth, Wordsworth Editions, 1994, p.651

7. Sumitra Nandan Pant, Kavya Aur Darshan, by Gopaldas, Neeraj & Sudha Saxsena, 1963, Aatmaram & Suns, Delhi-6, P.No. 96.
8. Sumitra Nandan Pant, Kavya Aur Darshan, by Gopaldas, Neeraj & Sudha Saxsena, 1963, Aatmaram & Suns, Delhi-6, P.No. 94
9. J.W. Beach, The Concept of Nature in Nineteenth Century English Poetry, New York, Macraillan, 1936, Chapters IV, V, VI.
10. N. P. Stallknecht, Strange Seas of Thought, Bloorrington, Indiana University Press, 1958.
11. William Wordsworth, The Poetical Works, ed. Thomas Hutchinson, Ernest de Selincourt, London, Oxford University Press, 1939, P. 935 (All other quotations from Wordsworth works are taken from this edition.)
12. J.W. Beach, The Concept of Nature in Nineteenth Century English Poetry, New York, Macraillan, 1936, Chapters IV, V, VI.
13. N. P. Stallknecht, Strange Seas of Thought, Bloorrington, Indiana University Press, 1958.
14. Rigveda written in about 1500BC. By anonymous consider in India as holy literature.
15. Sumitra Nandan Pant, Kavya Aur Darshan, by Gopaldas, Neeraj& Sudha Saxsena, 1963, Aatmaram & Suns, Delhi-6, P.No. 94
16. Sumitra Nandan Pant, Kavya Aur Darshan, by Gopaldas, Neeraj& Sudha Saxsena, 1963, Aatmaram & Suns, Delhi-6, P.No. 96.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

बागपत जनपद के प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन

डॉ. महेश कुमार मुछाल * कविता अग्रवाल**

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध अध्ययन में बागपत जनपद के प्राथमिक विद्यालयी शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया। न्यादर्श के रूप में प्राथमिक स्तर के 60 ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श चयन विधि के आधार पर किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में महिला एवं पुरुष शिक्षक-शिक्षिकाओं की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता अध्ययन में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया, जबकि ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर पाया गया।

प्रस्तावना – किसी भी राष्ट्र के विकास व समृद्धि को जानना है तो शिक्षा के आधार पर जाना जा सकता है क्योंकि शिक्षा समाज में नैतिक, सामाजिक सांस्कृतिक और राजनैतिक विकास में सहायक होती है तथा नागरिक को वह आधार प्रदान करती है जिसके आधार पर अपने जीवन के लक्ष्य को या सपनों के महल को तैयार कर सकता है अर्थात शिक्षा सर्वागीण विकास करती है शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिससे देश प्रगति कर सकता है। इसलिए प्रत्येक बालक को शिक्षा की अच्छी व्यवस्था हो ताकि आने वाली पीढी समाज को नई दिशा प्रदान कर सके। शिक्षा व्यवस्था का आधार बालक अध्यापक और पाठ्यचर्या एवं विषयवस्तु है। बालक या विद्यार्थी देश के विकास हेतु बीज है जिनमें फलों से भरे वृक्ष बनने की सम्भावनाएं छिपी है इन बीजों की देखभाल और पोषण की व्यवस्था इस प्रकार की हो कि देश का और समाज साथ ही राष्ट्र का भविष्य उन्नत हो सके। इस भविष्य गामी महत्वपूर्ण कार्य को पूर्ण करने की जिम्मेदारी शिक्षा के द्वारा ही सम्पन्न हो सकती है।

इसी महत्व को स्वीकारते हुए भारत सरकार द्वारा हर व्यक्ति को साक्षर ही नही अपितु उच्च शिक्षा देकर स्वावलम्बी बनाना चाहती है इसीलिए सरकार की ओर से ऐसा कानून लागू किया गया जिससे हर बच्चा कानूनन शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी हो गया है। इससे हर राज्य की सरकारे अब हर बच्चे को शिक्षित करने के लिए विवश होगी। अर्थात शिक्षा के नाम पर किसी प्रकार की कोई कोताही नही होगी। 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के लक्ष्य हेतु 1 अप्रैल 2010 से जम्मू कश्मीर को छोडकर सम्पूर्ण देश में शिक्षा का अधिकार अधिनियम कानून को शत प्रतिशत लागू कर दिया।

शिक्षा अधिकार अधिनियम का सम्बन्ध बालक अभिभावक अध्यापक एवं प्रबन्ध समिति से है। इस अधिनियम का क्रियान्वयन शासन तथा शासन से जुडे लोग में मुख्यत अध्यापक वर्ग तथा समाज के प्रत्येक वर्ग के बालक बालिका से सम्बन्धित है इसलिए में शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता एवं अभिवृत्ति पर कोई शोध अध्ययन हुए है। वे निम्नानुसार है-

शर्मा एवं अन्य (2012) ने बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों एवं कार्यरत शिक्षकों में शिक्षा का अधिकार अधिनियम की जागरूकता का अध्ययन किया अध्ययन का उद्देश्य बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों एवं कार्यरत शिक्षकों में शिक्षा अधिकार अधिनियम के सम्बन्ध में जागरूकता एवं दृष्टिकोण का अध्ययन करना था। न्यादर्श रूप में जबलपुर शहर के बी0एड0 कालेज के 50 पुरूष एवं 50 महिला प्रशिक्षणार्थियों को लिया साथ ही शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के 50 पुरूष एवं 50 महिला अध्यापकों को लिया गया निष्कर्ष रूप में पाया कि बी0एड0 पुरूष एवं शासकीय अशासकीय विद्यालय के पुरूष शिक्षकों की शिक्षा अधिकार अधिनियम की जागरूकता में सार्थक अंतर है। जबकि बी0एड0 महिला एवं शा0 अशासकीय महिला अध्यापिकाओं की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर नही है। पुरूष बी0एड0 एवं शासकीय/अशासकीय पुरूष अध्यापकों के शिक्षा अधिकार के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक नही अंतर है इसी प्रकार दोनों समूहों महिला बी0एड0 एवं शासकीय/आासकीय महिला अध्यापिकाओं के शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रति दृष्टिकोण में कोई अन्तर नही है।

वर्मा (2014) ने शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रति अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया अध्ययन का उद्देश्य अग्रलिखित है।

1. अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. अल्पसंख्यक पुरूष एवं महिला अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
3. बहुसंख्यक पुरूष एवं महिला अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

निष्कर्ष रूप में पाया कि- अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक अभिभावकों की अभिवृत्ति में सार्थक अंतर है। इसी प्रकार द्वितीय एवं तृतीय उद्देश्य में भी पाया कि सार्थक अन्तर है। अर्थात शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रति अल्प संख्यक एवं बहु संख्यक वर्ग के लोगों में समानता नही है।

भारद्वाज (2011) ने शिक्षा का अधिकार अधिनियम विभिन्न वर्गो की जागरूकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य शिक्षक वर्ग एवं अभिभावक वर्ग की शिक्षा के अधिकार अधिनियम के प्रति

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षक प्रशिक्षण विभाग) दिगम्बर जैन कॉलेज, बडौत (उ.प्र.) भारत
** एसिस्टेन्ट प्रोफेसर (शिक्षक प्रशिक्षण विभाग) दिगम्बर जैन कॉलेज, बडौत (उ.प्र.) भारत

जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन करना था। अध्ययन में निष्कर्ष रूप में पाया कि शिक्षक वर्ग और अभिभावक वर्ग की शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नही होता हैं अर्थात दोनों वर्ग शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रति सकारात्मक जानकारी रखते है। अध्ययन के परिणामों के आधार पर यह भी निष्कर्ष निकलता है। कि शिक्षण वर्ग और व्यवसायिक वर्ग शिक्षक वर्ग एवं बौद्धिक वर्ग और शिक्षक वर्ग एवं छात्र वर्ग की शिक्षा के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता में भी कोई सार्थक अन्तर नही है। इसी प्रकार अभिभावक वर्ग और व्यावसायिक वर्ग, अभिभावक वर्ग और बौद्धिक वर्ग तथा अभिभावक वर्ग और छात्र वर्ग की शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता में भी कोई सार्थक अन्तर नही पाया गया है।

मलिक, एवं अन्य (2013) ने शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता का अध्ययन विषय पर अपना शोध कार्य किया। शोध का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना था। अध्ययन में निष्कर्ष रूप में पाया कि शहरी क्षेत्र के पुरूष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षा का अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नही है। अध्ययन में यह भी पाया कि ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षा का अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता में भी कोई सार्थक अन्तर नही होता है।

घोटे प्रशांत एवं अन्य (2013) ने शिक्षा अधिकार अधिनियम की मध्य भारत के शिक्षकों की जागरूकता पर अध्ययन किया जिसमें 35 से कम एवं अधिक आयु के शिक्षक एवं एकांकी एवं संयुक्त परिवार तथा अखबार पढने की आदत रोजाना एवं कभी-कभी इन शिक्षकों के तुलनात्मक अध्ययन में सार्थक अन्तर पाया साथ ही साथ शैक्षिक योग्यता एम0ए0/एम0एस0सी0 एवं व्यावसायिक योग्यता डिप्लोमा/बी0एड0 किए अध्यापकों के समूह में कोई अंतर नही पाया गया। इसी अध्ययन में लिंग महिला पुरूष, वैवाहिक स्थिति, ग्रामीण नगरीय स्टेट एवं सी0बी0एस0ई0 बोर्ड सरकारी एवं प्रायनेट स्कूल हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम पर कोई सार्थक अन्तर नही पाया गया।

शिन्दे (2014) ने अध्यापक एवं अभिभावकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया अध्ययन में पाया कि अध्यापक एवं अभिभावकों की जागरूकता में कोई सार्क अन्तर नही पाया गया इस आधार पर कह सकते है कि अध्यापकों के समान ही अभिभावकों में भी शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता पायी गयी।

निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि शिक्षा के अधिकार के प्रति बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक वर्ग की अभिवृत्ति अलग-अलग वर्ग शिक्षक एवं अभिभावकों की जागरूकता पर अध्ययन हुए है। ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र के शिक्षकों की जागरूकता पर अध्ययन नही हुआ इसलिए प्रस्तुत शोध की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

समस्या कथन

बागपत जनपद के प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन

अध्ययन के उद्देश्य-

1. ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण पुरूष अध्यापक एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
3. ग्रामीण महिला शिक्षिकाओं एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
4. ग्रामीण पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
5. नगरीय महिला शिक्षिका एवं नगरीय पुरूष शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।

परिकल्पना

1. ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नही है।
2. ग्रामीण पुरूष अध्यापक एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नही है।
3. ग्रामीण महिला शिक्षिकाओं एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नही है।
4. ग्रामीण पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नही है।
5. नगरीय महिला शिक्षिका एवं नगरीय पुरूष शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नही है।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध कार्य में विवरणात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत सर्वेक्षण प्रकार के अनुसंधान का प्रयोग किया। सर्वेक्षण विधि किसी सामाजिक अथवा शैक्षिक स्थिति या समस्या समाधान अथवा जनसंख्या के परिभाषित उद्देश्यों हेतु वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित रूप में विश्लेषण की एक पद्धति है। जो वर्तमान स्थिति तथा समस्या का अध्ययन करने के साथ-साथ भविष्य के लिए सुझाव प्रदान करती है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श - प्रस्तुत अध्ययन की जनसंख्या के रूप में बागपत जनपद के प्राथमिक स्तर के सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों को लिया गया न्यादर्श चयन हेतु याद्दच्छिक न्यादर्श विधि का प्रयोग कर किया गया है।

उपकरण - शिक्षा का अधिकार जागरूकता मापन के लिए शोधकर्ता द्वारा स्व निर्मित मापनी का प्रयोग किया गया इस मापनी में 50 कथन थे जिसमें सही एवं गलत के रूप में कथनों पर जानकारी प्राप्त की गयी।

तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्या - शोध के उद्देश्यानुसार शिक्षा का अधिकार जागरूकता मापनी पर प्राप्त आंकडों के आधार सकारात्मक एवं नकारात्मक कथनों पर 1 एवं 0 तथा 0 एवं 1 तथा अंक प्रदान कर तथ्यों विश्लेषित किया।

प्रदत्तों का विश्लेषण - तथ्यों का विश्लेषण करने के मध्यमान प्रमाण विचलन एवं टी परीक्षण तालिका द्वारा दो समूहों के माध्यों की तुलना को प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 1 ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	t अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण अध्यापक	30	40.66	5.15	0.188	सार्थक नही
नगरीय अध्यापक	30	41.13	12.52		

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि परिगणित टी अनुपात का मान 0.188 है जो कि 58 के स्वतंत्रता के अंश 0.05 स्तर पर सारणी के 2.00 से कम है। अत: शून्य परिकल्पना ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नही है को

स्वीकृत किया जाता है। इस आधार पर निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि ग्रामीण एवं नगरीय स्तर पर प्राथमिक विद्यालयों में महिला एवं पुरूष शिक्षकों की नियुक्ति के समय योग्यता समान होती है। साथ ही साथ प्रत्येक अध्यापक आज तकनीकी साधनों इन्टरनेट मोबाइल आदि के प्रयोग से जानकारी अद्यतन रखते है। एवं प्रशिक्षण में दोनों स्तर के अध्यापकों के समान पाठ्यचर्या होती है। इस लिए शिक्षा अधिकार के प्रति दोनों वर्ग के शिक्षकों की जागरूकता लगभग समान पायी जाती है।

तालिका 2 ग्रामीण पुरूष अध्यापक एवं नगरीय शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	t अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण पुरूष अध्यापक	15	40.67	2.38	4.23	0.01 स्तर पर सार्थक
नगरीय पुरूष शिक्षक	15	44.33	2.35		

तालिका क्रमांक 2 दर्शाती है कि परिगणित टी अनुपात का मान 4.23 है जो कि स्वतंत्रता के अंश 0.01 स्तर पर सारणी के मान 2.76 से अधिक है अत: शून्य परिकल्पना ग्रामीण पुरूष अध्यापकों एवं नगरीय पुरूष अध्यापकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमान में कोई सार्थक अंतर नही है को अस्वीकृत किया जाता है। इस आधार पर कह सकते है ग्रामीण एवं नगरीय अध्यापकों की शिक्षा के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर पाया गया इसके लिए कई कारण हो सकते है। नगरीय अध्यापकों शहर में काम कम होता है तथा ग्रामीण शिक्षकों को निजी कार्य अधिक होते है इसलिए वे अपनी जानकारी को नगरीय शिक्षकों की अपेक्षा अधिक मात्रा में नही बढा पाते है इस कारण दोनों में सार्थक अंतर प्रतीत होता है।

तालिका 3- ग्रामीण महिला शिक्षिकाओं एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमानों की तुलना दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	t अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण महिला शिक्षिका	15	41.53	3.9	0.48	किसी भी स्तर पर सार्थक नही
नगरीय महिला शिक्षिका	15	42.4	5.70		

तालिका क्रमांक 3 दर्शाती है कि परिगणित टी अनुपात का मान 0.48 है जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 के 0.05 स्तर पर सारणी के मान 2.00 से कम है अत: शून्य परिकल्पना ग्रामीण शिक्षिकाओं एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं के शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमान में कोई सार्थक अंतर नही है को स्वीकृत किया जाता है। इस आधार पर कह सकते है ग्रामीण शिक्षिकाओं एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर नही है।

तालिका 4-ग्रामीण पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमानों की तुलना दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	t अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण पुरूष शिक्षक	15	40.33	9.6	0.71	सार्थक नही
नगरीय महिला शिक्षिका	15	42.4	5.50		

तालिका क्रमांक 4 दर्शाती है कि परिगणित टी अनुपात का मान 0.71 है जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 के 0.05 स्तर पर सारणी के मान 2.00 से कम है अत: शून्य परिकल्पना ग्रामीण पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं के शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमान में कोई सार्थक अंतर नही है को स्वीकृत किया जाता है। इस आधार पर कह सकते है ग्रामीण पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर नही है।

तालिका 5-नगरीय महिला शिक्षिका एवं नगरीय पुरूष शिक्षकों की शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमानों की तुलना दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	t अनुपात	सार्थकता स्तर
नगरीय महिला शिक्षिका	15	42.4	5.70	1.49	सार्थक नही
नगरीय पुरूष	15	44.33	2.35		

तालिका क्रमांक 5 दर्शाती है कि परिगणित टी अनुपात का मान 1.49 है जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 के 0.05 स्तर पर सारणी के मान 2.00 से कम है अत: शून्य परिकल्पना नगरीय महिला शिक्षिका एवं नगरीय पुरुष शिक्षकों के शिक्षा के अधिकार के प्रति जागरूकता के मध्यमान में कोई सार्थक अंतर नही है को स्वीकृत किया जाता है। इस आधार पर कह सकते है नगरीय महिला शिक्षिका एवं नगरीय पुरुष शिक्षकों की शिक्षा के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर नही है।

परिणाम एवं निष्कर्ष

1. ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षकों (महिला + पुरूष) की शिक्षा अधिकार की जागरूकता की तुलना में टी अनुपात 0.188 प्राप्त हुआ इसके आधार पर शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत किया गया इस आधार पर निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि प्राथमिक स्तर के ग्रामीण एवं नगरीय शिक्षक जिसमें महिला एवं पुरूष अध्यापक दोनों ही शामिल थे इनकी शिक्षा अधिक के प्रति जागरूकता समान है साथ ही सकारात्मक इस आधार पर कहा जा सकता है कि ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों कार्यरत होने से पूर्व शिक्षा एवं प्रशिक्षण समान होता है साथ पाठ्यचर्या भी समान है इसलिए दोनों समूहों की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता समान पायी गयी है।
2. प्राथमिक स्तर के ग्रामीण एवं नगरीय पुरूष शिक्षकों की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता की तुलना में टी अनुपात का मान 4.23 पाया गया जो तालिका के मान से अधिक है। इस आधारपर शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है निष्कर्ष में पाया गया कि ग्रामीण एवं पुरूष अध्यापकों की शिक्षा के अकिार के प्रति जागरूकता में अंतर पाया गया इस आधार पर कहा जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षक नगरीय शिक्षकों की अपेक्षा कुछ कम जानकारी रखते है इसका मुख्य कारण ग्रामीण परिवेश में नगरों के समान सुविधाऐं जैसे साइबर कैफे आदि का अभाव होगा।
3. प्राथमिक स्तर की ग्रामीण एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता की तुलना में टी अनुपात का मान से बहुत कम है इस आधार पर निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि ग्रामीण एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता में अंतर नही है

इसका कारण यह हो सकता है कि महिला शिक्षिकाएं नगरीय क्षेत्र में वास करती हो तथा कार्यरत ग्रामीण विद्यालय में हो इसलिए ग्रामीण एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता में अंतर नही पाया गया अर्थात दोनों क्षेत्र की शिक्षिकाएं समान जागरूकता रखती है।

4. ग्रामीण पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता की तुलना में टी अनुपात 0.71 प्राप्त हुआ इस आधार पर शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत किया गया निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि प्राथमिक स्तर के पुरूष शिक्षक एवं नगरीय महिला शिक्षिकाओं का शिक्षा एवं प्रशिक्षण एक समान ही प्राप्त हुआ है इसलिए दोनों क्षेत्र के शिक्षक शिक्षिकाओं की जागरूकता में समानता पायी गयी है।

5. ग्रामीण महिला शिक्षकाओं एवं नगरीय पुरूष शिक्षकों की शिक्षा अधिकार के प्रति जागरूकता की तुलना में टी अनुपात का मान 1.49 प्राप्त हुआ इस आधार पर शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत किया गया तथा निष्कर्ष रूप में कहा सकता है कि दोनों ही क्षेत्रों के शिक्षिकाओं एवं शिक्षकों को समान प्रशिक्षण मिला है। साथ ही निवास स्थान भी इस समानता के प्रति जिम्मेदार कारक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा ब्रजेश कुमार (2014) नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रति अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन भारतीय आधुनिक शिक्षा वर्ष 34 अंक 4 अप्रैल 2014 पेज नं0 5-12
2. शर्मा एवं अन्य (2012) बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों एवं कार्यरत शिक्षकों में शिक्षा अधिकार अधिनियम के सम्बन्ध में जागरूकता का अध्ययन रिसर्च लिंक वर्ष 11 अंक 10 दिसम्बर 2012 पेजन नं0-10610
3. रावण कर नेत्रा (2012) शिक्षा का औचित्य एवं क्रियान्वयन रिसर्च लिंग वर्ष-11 अंक 10 दिसम्बर 2012 पेज नं0 104-105
4. भारद्धाज ऋतु (2011) शिक्षा का अधिकार अधिनियम विभिन्न वर्गो की जागरूकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन भारतीय आधुनिक शिक्षा वर्ष 31 अंक 4 अप्रैल 2011 पेज नं0-95-101
5. सिंह प्रदीप कुमार (2011) शिक्षा का अधिकार एक विश्लेषण भारतीय आधुनिक शिक्षा अंक वर्ष 32 अंक 2 अक्टूबर 2011 पेज 86-92
6. शर्मा उषा (2013) शिक्षा का अधिकार और शिक्षक की भूमिका भारतीय आधुनिक शिक्षा अंक वर्ष जौलाई 2013 पेज नं0-38-44
7. रायजादा रमाकर (2012) शिक्षा का अधिकार और स्कूली शिक्षा की जन उपलब्धता स्वीकार्यता एवं सामंजस्यता भारतीय आधुनिक शिक्षा अंक वर्ष 32 अंक 3 जनवरी 2012 पंज नं0-47-64
8. मुछाल महेश कुमार (2014) शिक्षा का अधिकार कानून एक विश्लेषण विद्या जर्नल आफ क्रियेटिव थिंकिंग वर्ष 2 नम्बर 1 अप्रैल सित. 2014 पेजन नं0-67-71
9. थोटे प्रशांत एवं अन्य (2013) राइट टू एज्यूकेशन एक्ट: एन फलिसिस के शिक्षकों आफ टीचर्स एवेयरनेस इन सेन्ट्रल इंडिया इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च वाल्यूम अंक 3 पेज नं0-184-187
10. यशवला नीतू (2015) राइट टू एज्यूकेशन (आरटीई) ए क्रिटीकल एपरीशल इन्टर नेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च वर्ष 2 अंक 1 जनवरी 2015
11. शिन्देलक्ष्मण (2014) शिक्षा का अधिकार अधिनियम के प्रति बालकों एवं शिक्षकों की जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन शब्द ब्रम्ह वर्ष 2 अंक 3 पृष्ठ 42-45

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

मुगलकाल की चित्रकला में शारीरिक भाव-भंगिमाओं की प्रासंगिक विशेषता

डॉ. सचिन सैनी *

प्रस्तावना – मुगलकाल की चित्रकला पर शारीरिक भाव-भंगिमाओं एवं प्रासंगिक विशेषताओं के दृष्टिगत विचार करें तो पाते हैं कि- 'ईरानी शैली में मानवकृत्तियों के चेहरे प्राय: गोल तथा पौने दो चश्म बनाये गए हैं, जिनमें छोटी आँखें, पतली-लम्बी नाक तथा पतले अधर वाले छोटे मुख-विवर का चित्रण किया गया है। चेहरे गोलाईयुक्त हैं और उनमें गठनशीलता का अभाव है, अत: फूले-फले कपील तथा गोल चिबुक दिखाई पड़ती है। चेहरे एक ही वक्राकार से बनाये हैं।'[1] साथ ही – 'स्त्री तथा पुरूष आकृतियों में रूप का अंतर दर्शाने के लिये केश-विन्यास, बालों तथा दाड़ी-मूछों आदि से पृथकता दर्शायी गई है अन्यथा उनकी शारीरिक रचना में भेद नहीं दर्शाया गया है।'[2]

चित्र– अकबर हाथी पर नाव से बने पुल को पार करते हुए, मुगलकाल की चित्रकला 1561-

मुगलकालीन चित्रकला व्यक्ति-चित्रों के लिए भी ख्यात है – 'अकबर को व्यक्ति-चित्रों या शाबीदों का बहुत शौक था। उसने अपने तथा अपने दरबारियों के व्यक्ति-चित्र बनवाये। इस प्रकार राज्य के विशिष्ट और महान व्यक्तियों और पूर्व-पुरुषों के चित्रों का एक बड़ा मुरक्का (एलबम) उसने तैयार कराया।'[3] पोथी चित्रों के अतिरिक्त अकबर के समय में बादशाह विदूषकों, दरबारियों, संतों, साधुओं आदि की शबीहां तैयार की गईं। अब्बुलफज़ल ने लिखा कि, जो लोग मर गये थे उनको इन चित्रों से नवीन जीवन और जीहवित लोगों को अमरत्व प्राप्त हो गया।'[4]अकबरकालीन चित्र-शैली की यह विशेषता है कि-'चित्रतल पर वास्तु, पहाड़ों, वृक्षों तथा मानवाकृतियों की प्राय: भीड़-भाड़ देखी जा सकती है। वास्तु में खण्डों को चित्र-तल पर इस प्रकार व्यवस्थित किया गया है कि घटना की लमिबाई को सहजता से प्रकट किया जा सके। इससे चित्र-सौन्दर्य निखरा है, व अन्तराल में नीरसता व्याप्त नहीं हो पाई।[5]

मुगलकाल में व्यक्ति-चित्रों की सुदीर्घ परम्परा रही है। अकबरकालीन व्यक्ति-चित्रों के सम्बन्ध में विशेषज्ञ अभिमत है जो यह बताता है कलाकार की तूलिका से अभिव्यक्त चित्र की 'शारीरिक भाषा' का उपयोग समाजिक-राजनीतिक हित में भी किया गया है। 'उसने अपना व्यक्ति-चित्र भारतीय परम्परा के अनुसार तिलक धारण करते हुए तथा माला लिये हुए चित्रित कराया था जिससे उसकी प्रजा देवरूप में समझ उसकी पूजा करे।'[6]

अकबरकालीन व्यक्तिचित्रों को तीन भागों में बांटा जा सकता है। लघुमाप के आरंभिक व्यक्तिचित्र, झरोखादर्शन के व्यक्ति-चित्र तथा पूर्णकद के व्यक्तिचित्र।.....तीसरे प्रकार के पूर्णकद अकेले खड़े व्यक्तिचित्र हैं। यही व्यक्तिचित्र मुगलकालीन अकबर के समय के व्यक्तिचित्र हैं। जिनमें व्यक्तिचित्र के सभी गुण, आकार रेखांकन, भावाभिव्यक्ति, सादृश्य अंकन, वस्त्राभूषण, रंग-योजना, परिवेश चित्रण तथा शैली निर्धारण की दृष्टि से संसार के कला-इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।[7]

चित्र– रसिकप्रिया पांडुलिपि, मुगलकाल की चित्रकला, 17th-century

मुगल परम्परा में जहांगीर को भी चित्रों के पारखी होने की बात मिलती

* स्कॉलर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (नई दिल्ली) भारत

है। जहांगीरनामा में वह लिखता है – 'मेरी चित्र के प्रति रुचि और पहचान यहाँ तक बढ़ गयी है कि प्राचीन एवं नवीन उस्तादों में जिस किसी का काम मेरे सामने आता है, मैं उसका नाम सुने बिना ही झट से उसे पहचान लेता हूँ कि यह अमुक उस्ताद का बनाया हुआ है। यदि एक चित्र में कई चेहरे हो और एक चेहरा अलग-अलग चित्रकार का बनाया हुआ तो भी मैं जान सकता हूं कि कौन-सा चेहरा किसने बनाया है, और यदि एक ही चेहरे में आँख किसी की भवें किसी की बनाई हुई हो तो भी मैं पहचान लूँगा कि बनाने वाले कौन है?'[8] जहांगीरकालीन व्यक्तिचित्रों में प्रयुक्त 'शारीरिक भाषा' की बात करें तो यह माना गया है कि जहांगीर ने भी अपने उद्देश्य को साधने के लिए चित्रकला की 'शारीरिक भाषा' को माध्यम बनाया। 'वह अपने व्यक्ति-चित्रों में संसार का सर्वश्रेष्ठ देवोपम गुणों से युक्त व्यक्ति प्रमाणित करना चाहता था। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने अपने व्यक्ति-चित्रों में आभामण्डल को चित्रित कराया। पृथ्वी के गोले पर खड़े होकर तीर-कमान से मलिक अम्बर के विनाश के प्रतीकात्मक चित्रण में अपना व्यक्ति-चित्र बनवाया।.....अत: उसका उद्देश्य अपने आप को विश्व-वंदनीय प्रमाणित करने का था अत: इस काल के व्यक्ति-चित्रों में भावात्मकता का समावेश उसे उसकी मौलिकता से हटा ले गया। फिर भी इस युग में व्यक्ति-अंकन में आंतरिक चरित्र-अंकन और कलात्मकता में इतनी पूर्णता आ गई थी कि वह अपने सर्वोच्च शिखर पर आसीन हो चुकी थी।'[9]

इस काल की चित्रकला में चेहरों की बनावट को पूर्ववर्ती काल से तनिक भिन्नता दी गई है – 'इस काल में चेहरे प्राय: एक चश्म बनते थे जबकि अकबर काल में डेढ़-चश्मी चेहरे भी बहुत बने हैं। एक चश्म चेहरे में उसके प्रत्यंगों अर्थात् ललाट, नाक, ओठ और ठुड्डी की सीमान्त रेखा बन जाती है। परदाज उत्कृष्ट लगाया गया है। जहाँगीर की मुखाकृति के चारो ओर दिव्य प्रकाश का वृत्त देने की परम्परा चल पड़ी थी। यह भारतीय प्रभाव के कारण हुआ। मुखाकृतियाँ शहंशाह के अलावा दरबारियों, कवियों, संगीतज्ञो, कलाकारों, नौकरों, शिकारियों, ज्योतिषियों तथा शिल्पियों आदि की भी बनती थी। स्त्रियों की भी मुखाकृतियों बनती थी।'[10] इस काल में फुटकर चित्रों की भी प्रथा रही- 'जहाँगीर ने अपने मनोरंजन के अतिरिक्त दया, सहृदयता, मैत्री, क्रोध आदि के संतोषार्थ भी चित्रों का निर्माण कराया जिसका उल्लेख उसने अपनी आत्मकथा में स्वयं किया है। जहाँगीर ने लिखा है कि – विशनदास ने मेरे भाई यशाहअब्बास की ऐसी सच्ची शबीह लगाई कि मैंने जब उसे शाह के सेवकों को दिखाया तो वे मान गए।'[11]

जहांगीर के काल में चित्रों में समूह-चित्रों और शिकार आदि के चित्रण में आनुपातिक 'शारीरिक भाषा' के आकार-प्रकार प्रभावशाली है। मानव व मानवेतर आकृतियों का परिप्रेक्ष्य उल्लेखनीय है- 'ग्रुप में कई मानव आकृतियाँ भी चित्रित की गयी है। एक अन्य व्यक्ति ने शिकार किया हुआ हिरन कन्धों पर लाद रखा है। अन्य आकृतियों की अपेक्षा सम्राट की आकृतियों में चेहरे के भावों को अत्यधिक प्रभावशाली तथा वास्तविक रूप में चित्रित किया है। पशु, पक्षी चित्रण तथा पहाड़ो के ऊँचाई में प्रस्पेक्टिव का प्रयोग किया है।'[12]

विद्वानों ने माना है कि- 'शाहजहाँ कालीन पशुओं से सम्बन्धित चित्र अकबर तथा जहाँगीर के चित्रों की अपेक्षा अधिक परिपक्वता लिए हुए एवं भीड़ भाड़ युक्त दशाये गये है शिकार का उतेजनापूर्ण दृश्य तथा प्रत्येक व्यक्ति के चहरे पर घबराहट एवं भय के भाव स्वत: ही देखे जा सकते हैं।'[13] इतना ही नहीं पक्षियों के हाव-भाव दर्शाने में भी बड़ी कुशलता का उपयोग किया गया है। 'मनोवैज्ञानिक रूप से उनमें मनोभावों का जो भावपूर्ण चित्रण किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। इन चित्रों में तुर्की चिड़िया, बाज पक्षी, सारस, जेवरा तथा साज पक्षी इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।[14]

शाहजहांकालीन चित्रांकन में शारीरिक संरचना में गठन का लोच घटने लगता है। – 'शाहजहाँ-कालीन चित्रों में विशेष रूप से रेखांकन बेजान और शिथिल पड़ने लगता है तथा हाथ, पैर और शरीर की भंगिमाओं से जकड़ और कठोरता आने लगती है।'[15] अन्य विद्वान का विश्लेषण है कि इस काल में – 'चित्रों में बहादुर सम्राट की आकृति को मध्य में चित्रित किया है। अधिकांश चित्रों में घोड़े पर सवार या खड़े हुए चित्रित किये गये हैं। प्रकृति के सूक्ष्म चित्रण के साथ पशुओं के चेहरे की भाव भंगिमाएँ तथा शिकार का उत्तेजना पूर्ण वातावरण चित्रित किया गया है।'[16] इस काल के बारे में यह भी उल्लेखनीय हो जाता है कि – 'केवल मुगल सम्राटों के मिथ्या अभिमान के कारण ही मुखाकृति चित्रण का विकास नहीं हुआ बल्कि व्यक्तिगत रूप से भी इन सम्राटों ने मुखाकृति चित्रण में दिलचस्पी दिखाई। साधारणत: सभी मुखाकृति चित्र बहुत उत्तम नहीं हैं परन्तु मुगल शासकों के चित्र उत्तम हैं। राजसी पुरुषों के मुख के चारों और एक सुनहरा प्रभा मंडल अंकित किया गया है, जिससे उनका उच्च पद तथा वैभव स्पष्ट हो जाता है। कभी-कभी एक ही चित्र में कई पीढ़ियों के बादशाहों को भी एक साथ बैठा बनाया गया है, यद्यपि एक ही प्रकार के चित्र कालक्रम तथा ऐतिहासिक दृष्टिकोण से ठीक नहीं है। अधिकांश चित्रों में अकेली खड़ी हुई आकृतियाँ ही छविचित्रों में बनायी गई हैं।'[17] इस प्रकार हम पाते हैं कि मुगल चित्रों का विषय दरबारी शान-शौकत, बादशाहों की रुचियां, शबीह आदि रहा है। धार्मिक चित्रण, नायक-नायिका भेद, राग-रागिनी व जन-जीवन के विषयों को प्राय: मुगल चित्रकला में स्थान नहीं मिला।[18]

मुगल काल में एक चश्मी चेहरों के अंकन की एक सामान्य परिपाटी बन गई थी, क्योंकि मुगल चितेरों को चेहरे की साफ लिखाई के लिए एक चश्म चेहरा अधिक सुविधाजनक लगा।[19] हालांकि फरहा दीबा का मानना है कि- 'मुगल चित्र कला में यथावत एवं वास्तविक चित्रण पर विशेष बल दिया गया। मुगल चित्रकार आकृति में चेहरे को भिन्न-भिन्न प्रकार से बनाते थे। जिनमें डेढ़ चश्म चेहरे, सवा चश्म चेहरे, एक चश्म ...... चेहरा आदि।'[20]

शारीरिक हाव-भाव को बादशाह के चरित्र-चित्रण का माध्यम बनाने में इस काल के चित्रकार ने काफी हद तक सफलता हासिल की है। इसलिए यह माना गया है कि- 'मुगल चित्रों में मोती जैसी चमक ही नहीं दिखाई पड़ती वरन् चित्र के व्यक्ति का चरित्र ही लिख दिया गया है। चित्रकारों को मानव प्रकृति का ज्ञान था। व्यक्ति के चरित्र या स्वभाव का इतनी सफलता से अंकन किया है कि जैसे चित्रकार ने चित्र के व्यक्ति के हृदय में झाँककर ही देख लिया हो। यह हो सकता है कि समसामयिक इतिहासकारों तथा लेखकों ने बादशाह को खुश करने के लिये उसके विषय में बढ़ा-चढ़ाकर लिख दिया हो, परन्तु चित्रकार ने निडर होकर अपनी अभिव्यक्ति की है। उसने अचेतन रूप से ही व्यक्ति के कृत्यों के अनुसार ही उसको रूप और आकार प्रदान कर सुंदर, क्रूर, निर्दयी, दयालू, सच्चा, झूठा, निर्बल या सशक्त बनाया है। हाथों की बनावट तथा आँख से चित्र के भाव प्रकट हो जाते हैं।'[21]

समग्र रूप से विशेषज्ञों का मत है कि मुगल काल में विभिन्न मुद्राओं के अंकन, 'शारीरिक भाषा' के प्रयोग और अंग-भंगिमाओं में यथार्थता के साथ सजीवता और कलात्मक गुणवत्ता का ध्यान रखने का प्रयास चित्रकार ने किया है। – 'हस्त-मुद्रायें और अंग-भंगिमाओं की दृष्टि से मुगल चित्रों में यथार्थता का अधिक समावेश है। हस्तमुद्राओं में सजीवता और भावभिव्यक्ति की क्षमता है। हस्तमुद्राओं तथा अंग-भंगिमाओं से चित्रकार ने चित्र की योजना में एक नाटकीयता उत्पन्न कर दी है। मुगल व्यक्ति-चित्रों में आकृति

अधिकांश खड़ी मुद्रा में बनायी गई हैं। सामान्यता खड़ी, बैठी, झुकी, सलाम या मुजरा आदि करती अनेक प्रकार की अंग-भंगिमाओं में मानवकृतियों को चित्रांकित किया गया है। हाथों, उंगलियों तथा पैरों आदि की बनावट सुंदर और सजीव है। मुगल दरबार में यूरोपियन कला का प्रभाव बढ़ रहा था परन्तु फिर भी मुगल कला अपना निजी अस्तित्व बनाए रही और उसने अपनी आलंकारिक योजना, संगत रंगों की शीतलता तथा सुमधुर कोमलता, सीमारेखा, के साथ गोलाई, उभार या डौल की विशेषता को न जाने दिया। अन्ततः पाश्चात्य प्रभाव मुगल कला की गति को न मोड़ सका।'[22] प्रख्यात विद्वान रायकृष्ण दास के अनुसार - 'विकसित मुगल शैली मुख्यतः शबीह की कला है जिसमें चित्रकारों को सूरत के साथ-साथ सीरत दिखाने में सफलता मिली है।'[23]

सारांश के रूप में हम पाते हैं कि मुगलकाल भले ही राज्याश्रय और व्यक्तिचित्र केन्द्रित रहा हो परन्तु चित्रकार की अपनी विशेषताओं से इस काल का व्यक्ति-निरूपण विशिष्ट बन गया है। अकबर, जहांगीर, शाहजहां आदि के काल तक यद्यपि ये निरूपण बदलाव पाते गये किंतु शारीरिक संरचना की अभिव्यक्ति का मूल बरकरार रहा। जो मानव और मानवेतर दोनों प्राणियों के चित्रण में देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर,भारतीय चित्रकला का इतिहास,पृष्ठ-121,11वां,संस्करण,बरेली,प्रकाश बुक डिपो,2006.
2. वही,
3. वही, पृष्ठ-141.
4. वही, पृष्ठ-143.
5. अग्रवाल,आर.ए.,कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-131,मेरठ,इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस,1984.
6. द्विवेदी, डॉ. प्रेमशंकर, भारतीय चित्रकला के विविध आयाम, पृष्ठ-76, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स,2007.
7. द्विवेदी, डॉ. प्रेमशंकर, भारतीय चित्रकला के विविध आयाम, पृष्ठ-77, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स,2007.
8. अग्रवाल,आर.ए.,कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-133,मेरठ,इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस,1984
9. द्ववेदी, डॉ. प्रेमशंकर, भारतीय चित्रकला के विविध आयाम, पृष्ठ-79, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2007
10. अग्रवाल,आर.ए.,कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-135,मेरठ,इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस,1984
11. वर्मा,डॉ.अविनाश बहादुर,भारतीय चित्रकला का इतिहास,पृष्ठ-145,146,11वां,संस्करण,बरेली,प्रकाश बुक डिपो, 2006
12. दीबा, डॉ. फरहा, मुगल चित्रकला, पृष्ठ-13, दिल्ली, स्वाति पब्लिकेशन्स, 2012.
13. वही, पृष्ठ-15.
14. वही, पृष्ठ-20.
15. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर व अन्य, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-154, 11वां संस्करण, बरेली, प्रकाश बुक डिपो, वर्ष-2006
16. दीबा, डॉ. फरहा, मुगल चित्रकला, पृष्ठ-12-13, दिल्ली, स्वाति पब्लिकेशन्स, 2012
17. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर व अन्य, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-159, 11वां संस्करण, बरेली, प्रकाश बुक डिपो, वर्ष-2006
18. अग्रवाल, आर. ए., कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-135, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1984
19. अग्रवाल, आर. ए., कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-139, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1984
20. दीबा, डॉ. फरहा, मुगल चित्रकला, पृष्ठ-32, दिल्ली, स्वाति पब्लिकेशन्स, 2012
21. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-160, 11वां सं, बरेली, प्रकाा बुक डिपो, 2006
22. वही, पृष्ठ-166.
23. द्ववेदी, डॉ. प्रेमशंकर, भारतीय चित्रकला के विविध आयाम, पृष्ठ-94, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2007म वही, पृष्ठ-166.

****

Emergence of Political Parties in Central Province and Berar

Dr. Nilesh Sharma *

Introduction - The central province and Berar had played an important role in shaping the poltical status of the country. The formation of this province took place in two steps. In the first step, the central province was formed while in the next step, Berar was added with central province. The central Province was established in 1861 by including the Sagar-Narmada territory and Nagpur which was seized by the company rule. These both territories were established as a "non regulation" state under the chief commissioner. According to the act of 1861 the constituencies which Central province would be comprised of were Nagpur, Chanda, Bhandara, Chhindwara, Wardha, Balaghat, Bilaspur, Raipur, Durg, Sagar, Damoh, Jabalpur, Mandla, Seoni, Narsinghpur, Betul and Hoshangabad. Nimar was included in the province in 1864. In 1905, Berar was also included in the province. In this way, Central Province and Berar was formed in 1903. During the revolution of 1857, many socialist and voluntary organizations and groups were established influenced by nationalist sentiments. Some of them were Hitkarini sabha, Vidhya-prasarak sabha, Bal Bodhini sabha, Anjuman-Islamia-Bardhini sabha etc.

Regional impact of the Indian national congress - When Indian National Congress was established in 1885, it had an immediate effect on Central province and Berar. Indian National congress being the first political organization was very instrumental in the political activities of the country.Indian national congress was the most important among all the political organizations of the country. Its branches were distributed all over India. It was a central committee with 350 members. It elected the executive council for one year under which, various sub-councils were present. There was a constant increment in the members from Central province and Berar in the congress sessions that were held to solve the political issues every year. This influenced the polity of central province and Berar. As a result, the units of congress were established in Central province and Berar and congress committees were formed on the state level. Eventually, the congress units were organized on regional, district and rural levels as well.

The effect of establishment of congress committees in Central province and Berar was that the representatives from this province consistently participated in all the annual congress sessions. Every year, the number of such representatives increased gradually. In 1888, the merchants of Nagpur and Berar assembled to protest against the tax on clothes and symbolized the swadeshi andolan inspite of it not being much significant by that time. In order to encourage the national movements, a newspaper named as Berar Samachar Patra was also launched in 1864. As a consequence of arousal of nationalistic sentiments in Berar, the seventh congress session in 1891 was held at Nagpur and the thirteenth congress session in 1867 was held at Amravati. In the Lucknow congress session of 1899, central province and Berar got the right to send 3-3 delegates each in which Bapurao dada Khidke, Bhaghirath Prasad, H.V Kelkar, Devrai Vinayak, M.V. Joshi and G.S Khaparde were elected. In 1900 Lahore session, Bapa Rudrawada, Krishnarao Vamanrao, G. Govind whereas from Berar M.V. Joshi, Devrai Vinayak and Bapurao Khike were the delegates. In 1901 Calcutta session, R.N. Mudholkar was appointed as secretary and remained on that position for years.

After the formation of Central Province and Berar in 1903 and visit of Lokmanya Tilak in 1904, the situation of the province got heated up. By the year 1906 the agitation in congress against the British rule got intensified and in the Surat session of 1907, congress was divided into two groups namely 'Naram Dal' and 'Garam Dal'. This separation also affected Central Province and Berar where the leaders from Naram Dal were Gangadhar Rao Chitnavis, RN Mudholkar and Moropantji Joshi. In the Garam dal, the staunch supporter of Tilak, Dadasahab Khaperde, B.S Munje and Madhavshridhar were the leaders. This is how the province became a political centre of both ideologies. After the Marley-Minto reforms of 1909, the demand of granting Central province and Berar a status of a complete province was put ahead at Lahore session. The political activities took a pace after the release of Lokmanya Tilak from confinement in 1914. After the beginning of Home-rule league, its divisions were established at Jabalpur in 1915 and at Nagpur by Tilak in 1916.

People like Dr. Harisingh Gaur, Pt. Ravishankar Shukla, Dr. E Raghvendra Rao, G.P Deshmukh, Madhavrao Sapre, Balwant Anand Bhinde, Balwant Vasudev Ane, Vishnu Dutt Shukla, P.R. Deshmukh, B.S Munjaje, Damodar Rao

*Guest Faculty (History) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

Shrikhande, Keshav Baliram etc. had contributed a lot in the advancement of Home-rule league. In the year 1919, Vishnu Dutt Shukla, Madhavrao Sapre and Makhnalal Chaturvedi with their combined efforts, launched a weekly journal named 'Patrika' which gave a voice to the people of that region. This journal set new records in the field of journalism. As a result of passing of 1919 act, the status of Central Province and Berar was changed from being a commissioner-ruled state to a complete province. The Montagu-Chelmsford reforms crushed the hopes of people of India. Rowlett act and Jallianwala massacre created a sense of strong agitation among the people. In the 1920 congress session of Nagpur, apart from approaval of Gandhiji's non-cooperation movement, the constitution of congress was also modified.

This modification of constitution also had an impact on the constitution of Central Province and Berar. As a consequence of constitutional changes, Central Province and Berar also formed its committees and sub committees. State and district congress committees were established. On the basis of language, Central Province and Berar was divided into three parts, 'Hindustani', 'Marathi' and 'Berar'. The headquarters of Hindustani congress committee was at Jabalpur, which consisted of 14 districts namely, Jabalpur, Mandla, Sagar, Damoh, Seoni, Balaghta, Narsighpur, Chhindwada, Hoshangabad, Betul, Nimar, Raipur, Bilaspur and Durg. Marathi committee had its headquarters at Nagpur which had the districts of Nagpur, Chanda, Wardha and Bhandara. The Berar congress committee which had its headquarters at Amravatai had 4 districts namely, Amravati, Akola, Yavatmal and Buldhana. All the three committees had individual presidents. The president of Hindustani madhyaprantiye congress committee was Dr. E Raghvendrarao, secretary was Seth Govind Das. The president of Marathi central province committee was Dr. B.S Munje and Berar committee president was M.S. Ane.

National movements in Central Province and Berar - In 1920, when Gandhiji called out for non-cooperation movement, the province totally dedicated itself to the movement. Some notable people who took an active part in the movement from Hindustani committee were, Seth Govind Das, Pt Ravishankar Shukla, Pt. Dwarka Prasad Mishra, Makhanlal Chaturvedi, Dr. E Raghvendra Rao, Hari Singh Gaur. From Marathi Madhya prant, Dr. B.S Munje, Gangadhar Rao Chitnavis, Sir Moropant Joshi, Seth Jamnalal Bajaj, Balwant Rao Deshmukh. From Berar, M.S. Ane, Vir Vamanrao Joshi, Brajlal Biyani and Dada Saheb Sahastrabudhe. Under the non-cooperation movement and Boycott movement, Seth Govind Das and Dr. E Raghvendra Rao resigned from the posts of lawyers. In 1919, under the Dual governance act, states were run under the ministry and cabinet which were given very limited powers.

For the very first time, in 1920, after the commencement of Dual governance, a common election was announced which was boycotted by the congress while welcomed by the moderate group. People did not take any interest in voting. No candidate came forward from the representative regions. Only one candidate represented 26 regions out of 43 and thus was elected without opposition because of which, the moderates were the only party in the legislative assembly. The other small parties did not have any definite programs and so the moderates were the only prime party the aim of which was to cooperate with the British government. In the year 1923, the Swaraj Dal was established. Its objective was to enter the legislature and paralyze the dual governance system. The Swaraj Dal was also established in Central Province and Berar after which the elections of legislative assembly were held. As a result, out of 54 seats, Swaraj Dal achieved 41 seats.

Dr. B.S. Munje was appointed as the leader of Swaraj Dal. But after the Swaraj Dal refused to form a cabinet, the governor of the province, Frank Sly appointed the moderate members, M.S. Chitnavis and Hifazat Ali as the ministers. Swaraj Dal always attempted to dissolve the dual governance by policies like presenting the no-confidence motion bill against the cabinet, rejecting the budget, deduction in the salaries of ministers etc. During the second world war in1939, the British government involved India in the war without consulting in the congress. This was strongly opposed and the cabinet resigned from the congress in October 1939. As a consequence, the ministry of Central province and Berar also gave its resignation on November 8, 1939. When Gandhiji began the satyagrah, the first person to join it was Vinoba Bhave. For the purpose of this movement, the volunteers were enlisted in the Central Province and Berar as well. To prepare the volunteers for this movement, 'Satyagrahi training camps' were set up. Numerous people from the province got themselves arrested and made this movement a success.

In 1942, Gandhiji initiated the quit India movement and raised the slogan of 'do or die'. This was the final attempt to get rid of the British dominance in the country. The British government triggered numerous acts to suppress this movement which got a strong reaction against it and congress was blamed for it. As a symbol of protest, Gandhiji went on a 21 day fast. On the 6th day of this fasting, three chief members of viceroy council, H.P. Modi, M.R. Sarkar and M.L. Ane resigned from the council membership against the policies of government. Constituent assembly was formed under the cabinet mission of 1947 in which, 17 representatives from central province took part and made the state proud. Muslim league created hurdles and demanded a separate state. Finally, after the passing of the independence bill on 14 August 1947, India gained independence and a status of a sovereign state. In the central province and Berar, the chief minister, Pt. Ravishankar Shukla hoisted the tricolor on the famous Sitaburdi fort in Nagpur on the next day.

Conclusion - The historical accounts presented above shows that the Central Province and Berar played an essential role in the political activities in the country and has had a major contribution in the national freedom

struggles and movements. The numerous people who took an active and significant part in establishing the political parties in the region were very much influential in driving the people of region towards the awareness of national plight under the British regime. The launching of various journals was also instrumental in awakening the sense of independence and self importance among the people in general. Not only Central Province and Berar was geographically in the centre of the nation but was also a centre of political importance. The province always maintained its relevance in the national politics by being coherent with the situations that prevailed in the country and thus it proved to be neck and neck with the entire nation in its struggles, movements and thus the achievements.

References :-

1. Baker, David, E.U., "Changing Political Leadership in an Indian Province: The Central Provinces and Berar, 1919-1939", Oxford University Press, Calcutta, 1979, Pg. 125-131.
2. Ibid, Pg 144.
3. Ibid, Pg. 179-182.
4. Sen, S.N., "History of the Freedom Movement in India (1857-1947)", New Age International, New Delhi, 1997, Pg. 68-73.
5. Ibid, Pg. 172-175.
6. Tomlinson, B.R., "The Indian National Congress and the Raj, 1929-1942", Macmillan Press Ltd., Madras, 1976, Pg. 91-92.
7. Pateriya, Raghaw Raman, "Provincial Legislatures and National Movement: A Study in Interaction in Central Provinces and Berar, 1921-37", Northern Book Centre, 1991, Pg. 54-60.
8. Ibid, Pg. 109-111.
9. Ibid, Pg. 155-157.
10. Government of Central Provinces and Berar, "Through Freedom Towards Peace & Progress: Being a Review of what Government Strove for and Achieved During These Shaping Years 1946 to 1949, Pg. 97.

****

भारतीय स्टेट बैंक द्वारा वर्तमान में प्रचलित इंटरनेट बैंकिंग सेवाओं की उपयोगिता एवं उनके हानिकारक प्रभावों का अध्ययन

वरूणेन्द्र मिश्रा *

शोध सारांश – पिछले दशक में प्रौद्योगिकी ने बैंकिंग क्षेत्र का ढ़ाचा ही पूरी तरह बदल दिया है। कोर बैंकिंग, एटीएम, इंटरनेट बैंकिंग, फोन बैंकिंग, मोबाईल बैंकिंग, क्रेडिट कार्ड, डेबिट कार्ड आदि ने बैंकिंग को अधिक सुगम एवं सुविधाजनक बनाया है। एनईएफटी, आरटीजीएस, चैक ट्रनजैक्शन आदि ने न केवल बैंकिंग क्षेत्र में क्रांति ला दी है, बल्कि बैंकिंग के ढ़ाचे की नींव का पत्थर साबित हुआ है। बैंकिंग द्वारा दी जा रही वर्तमान सुविधाओं से धन के अंतरण में लगने वाले समय में कमी आई है वहीं बैंकिंग सेवाओं की सरल व सरस सुविधाओं का फायदा भी ग्राहकों को आसानी से मिल रहा है। वर्तमान में इंटरनेट बैंकिंग अपने ग्राहकों को लुभाने में किसी भी प्रकार की कसर नहीं छोड़ रहा है। जहाँ न केवल ग्राहकों को घर बैठे बैंकिंग सुविधाओं का लाभ प्राप्त हो रहा है वही फिजूल समय की बर्बादी को रोक सकते है। इंटरनेट बैंकिन ने समय की बाध्यताओं को समाप्त कर दिया है। अब बैंक 24x7x365 के आधार पर अपनी बहुत सी सेवाओं को बैंक एक ही स्थान से ग्राहकों को उपलब्ध करा सकते है। जिसमें ऑनलाईन ऋण के लिए आवेदन, नए खाता खोलने लिए, रिटेल लोन फैक्टरी, नगदी निकासी के लिए एटीएम आदि की मूलभूत सुविधाएं बैंकों ने अपने ग्राहको के लिए प्रदान की है। एसएमई लोन फैक्टरी की स्थापना बहुत से नवोन्मेषी कदम हैं जिन्होंने ऋण स्वीकृति एवं वितरण में लगने वाले समय को कम किया है।

जैसे कि किसी राष्ट्र को भविष्य उसकी युवा पीढ़ी होती है उसी प्रकार बैंकों का भविष्य भी इन युवा ग्राहकों पर ही निर्भर रहता है। जब हम नई पीढ़ी की बात करते है तो बरबर हमारा ध्यान इस बात की ओर जाता है कि हम बैंक के द्वारा दी जा रही सुविधाओं का लाभ किस प्रकार से प्राप्त करे रहे है? क्या ग्राहक बैंक की शाखा में आकर बैंकिंग की सुविधाओं का लाभ लेना चाहता है या घर बैठे इंटरनेट बैंकिंग चाहता है जिसमें एटीएम, इंटरनेट बैंकिंग, फोन बैंकिंग, क्रेडिट या डेबिट कार्ड आदि से 24x7x365 ऑनलाईन बैंकिंग करना पसंद करता है।

प्रस्तावना – भारतीय बैंकिंग प्रणाली अपने अनूठे भौगोलिक, सामजिक और आर्थिक विशेषताओं के कारण आज विष्व के अन्य देशों में प्रचलित प्रणालियों से काफी अलग है। भारत में बड़ी आबादी होने के कारण देश के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न संस्कृतियां और आय के साधन अलग-अलग है। भारत देश जो अपनी संस्कृति के कारण विश्व में अपनी अलग छाप छोड़ी है वहीं भारत में बैंकिंग प्रणाली ने अपने ग्राहकों को भी मिलने वाली लगभग सभी मूलभूत सुविधाओं से परिचय करवाया है। भारत में रिवर्ज बैंक, जो कि भारत में बैंकों का बैंक कहलाता है, के अंतर्गत आने वाले सभी शासकीय, अषासकीय बैंकों का संचालन रिजर्व बैंक के निर्देषों द्वारा किया जाता है।

वहीं अगर हम भारतीय स्टेट बैंक के बारे में बात की जाए तो भारत में भारतीय स्टेट बैंक का प्रार्दुभाव 18 वीं शताब्दी में जनरल बैंक ऑफ इंडिया और बैंक ऑफ हिंदुस्तान, जो 1786 में शुरू हुए थे, जो दोनों अब समाप्त हो चुके है। भारत में अस्तित्व में जो सबसे पुराना बैंक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया है, जो जून 1806 में बैंक ऑफ कलकत्ता में प्रारंभ हुआ था। और लगभग तुरंत बैंक ऑफ बंगाल बन गया था। यह तीन प्रेसीडेंसी बैंकों में से एक था, दूसरे दो बैंक ऑफ बंबई और बैंक ऑफ मद्रास थे, जिनकी स्थाना ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के चार्टर के तहत हुई थी। कई वर्षो तक प्रेसीडेंसी बैंक ने अर्ध-केंद्रिय बैंकों के रूप में काम किया। भारत में इंपीरियल बैंक के गठन के लिए तीन बैंकों को 1921 में विलय कर दिया गया, जो भारत की आजादी के बाद भारतीय स्टेट बैंक नाम से जाना जाने लगा।

अध्ययन – अध्ययन में भारतीय स्टेट बैंक के द्वारा वर्तमान में प्रचलित नवीन पद्धतियों की कार्यप्रणाली का अध्ययन कर एवं उसकी उपयोगिता जिसमें सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों उपयोगिता की तुलना कर इस स्थिति का अध्ययन करना है कि वर्तमान में प्रचलित नवीन पद्धतियाँ स्टेट बैंक के ग्राहकों के लिए कितनी उपयोगी सिद्ध हो रही है। इस अध्ययन के दौरान डाटा का संकलन द्वितीय संमकों के आधार पर किया गया है।

उद्देश्य

1. भारतीय स्टेट बैंक वर्तमान में प्रचलित नवीन पद्धतियों का ग्राहकों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।
2. भारतीय स्टेट बैंक की वर्तमान में प्रचलित नवीन पद्धतियाँ का सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभावों का अध्ययन करना।
3. भारतीय स्टेट बैंक की ई बैंकिंग सेवा से भविष्य में होने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

सीमाएं – संबंधित अध्ययन का क्षेत्र और सीमा सीमित है एवं अध्ययन के लिए चयनित अवधि सीमित है।

सामान्य परिदृष्य – इंटरनेट आज के समय में जीवन की एक ऐसी हकीकत बन चुकी है जिससे मानव जीवन के हर पहलू की जबरदस्त रूप से प्रभावित किया है और अपनी अमिट छाप छोड़ी है। इसलिए यह कोई आश्चर्य का विषय नहीं है कि बैंकिंग का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा हैं। इंटरनेट के माध्यम से की जा रही बैंकिंग को ऑनलाईन बैंकिंग भी कहा जाता है। पर एक सवाल हमेशा ही उपयोगकर्ताओं के जेहन में कौंधता रहता है कि 'पर्सनल टच' वाली बैंकिंग की सुविधा में ऑनलाईन बैंकिंग कितनी सुरक्षित हैं? इस संदर्भ में सबसे पहले इंटरनेट से जीवन में आइ सहूलियतों को समझना होगा। आप सब इस बात से सहमत होंगे कि इंटरनेट ने हमारा जीवन बहोत

* शोधार्थी (वाणिज्य) शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, भोपाल, (म.प्र.) भारत

आसान बना दिया हैं। इंटरनेट का एक नाम यानि गूगल ने ही हमारी कितनी समस्याओं को सुलझाने के लिए काफी है।

आज के समय में हम घर बैठे ऑनलाईन शार्पिंग का फायदा ले सकते है और घर बैठे हम अपने मनपसंद की चीजों को प्राप्त कर सकते है। बैंकिंग क्षेत्र में तो इंटरनेट ने ऐसी क्रांति ला दी है कि अब बैंक ग्राहकों के लिए 365 दिन 24 घंटे उपलब्ध रहते हैं। ईंट-गारे की शाखा भले ही अपने निर्धारित समय पर बंद हो जाती है पर वर्चुअल दुनिया में बैंकिंग का करोबार हमेशा चालू रहता है। ऑनलाईन बैंकिंग की सुरक्षा के बारे में भी इतनी बातें सुन रखी है कि हमें डरना भी लाजिमी है। कोई भी व्यक्ति अपनी मेहनत की कमाई को लुटवा नहीं सकता तथा इस बात से भी नकारा नहीं जा सकता कि ऑनलाईन बैंकिंग के उपयोग से यात्रा संबंधी टिकटों की बुकिंग, ऑनलाईन खरीददारी, रूपये हस्तातंरण, ऋण की सुविधा का लाभ, बिल भुगतान आदि इसके इसके उपयोग ग्राहक को उसके धन एवं समय की बर्बादी से बचाने में काफी सहयोग करता है।

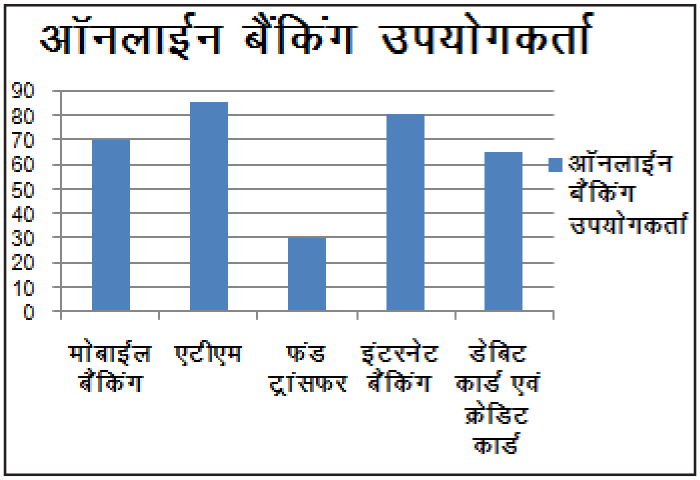

ग्राफ 1.1 (स्रोत: एसबीआई वार्षिक रिपोर्ट)

जैसा कि ग्राफ में प्रदर्शित किया गया है कि ऑनलाईन बैंकिंग सुविधा का लाभ लेने वाले ग्राहकों को दर्शाया गया है।

ऑनलाईन बैंकिंग पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन – जैसे कि हर सिक्के के दो पहलू होते है ठीक उसी तरह ऑनलाईन बैंकिंग के भी दो पहलू है। जो इससे फायदे हैं वहीं कुछ नुकसान भी है। इसक साथ सबसे बड़ी समस्या विश्वास को लेकर है। आम ग्राहक को आज भी इसका मिजाज समझ नहीं आ रहा है। उन्हें ये डर सताता रहता है कि अंतरित की गई निधि सही जगह पहुंचेगी भी या नहीं और इसका कोई रिकार्ड भी नहीं रहता है। पर इसके जवाब में लोग कहते है कि लेन देन का प्रिंट आउट ले सकते है। ग्राहकों के इसी डर के मद्देनजर बैंकों ने इस तरह के लेनदेन के लिए ट्यूटोरियल सुविधा भी अपनी साईट में दी है ताकि लोग ऑनलाईन बैंकिंग से दूरी बनाए हुए हैं। ऐसे ग्राहकों को इस ओर आकृष्ट कर पाना बैंकों के लिए चुनौती है। ऑनलाईन बैंकिंग में होने वाले कपट की इतनी खबरे रोज आती है कि आम ग्राहक इससे दूरी रखने में ही अपनी समझदारी समझता है।

सुरक्षा संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए उठाये गये कदम – अगर आप ऑनलाईन सुविधा का लाभ ले रहे हैं तो यह अवश्य देख लें आपका बैंक उच्च-स्तरीय एनक्रिप्शन का उपयोग कर रहा है। अब सवाल यह उठता है कि एनक्रिप्शन क्या है? एनक्रिप्शन वह प्रक्रिया है जो डॉटा को इस रूप में प्रस्तुत करती है जिससे इसे केवल वहीं उपयोगकर्ता पढ़ सकता है या इसका प्रयोग कर सकता है जिसके पास संबंधित 'की' होती है। इसी का एक उदाहरण यह है कि 128-बिट मानक वाले एनक्रिप्शन से सूचना चुराना लगभग असंभव है।

जब भी बैंक की साईट पर ऑनलाईन लेनदेन किया जाए तो यह देख लेना चाहिए कि साईट का पता http:// से शुरू हो रहा हो एवं पैडलाक दिखाई दे रहा हो।

ऑनलाईन सुरक्षा के कुछ टिप्स ऐसे हैं जिनका ध्यान सभी उपयोगकर्ताओं का रखना चाहिए। अपनी सभी जानकारी सुरक्षित रखें अगर कोई मेल, टैक्ट मैसेज आदि के माध्यम से आपका बैंकिंग पासवर्ड मांगे तो कभी न दे। यहां तक की बैंक का स्टाफ तक अगर आपसे आपका पासवर्ड पूछे तब भी भूलकर भी न दें। जब भी आप ऑनलाईन सेशन के बाद वेबसाईट छोड़ रहे हो तो बिना लागआउट किए साइन बंद मत करें। इसके अलावा कुछ और टिप्स ये भी है:-

1. अपने बैंकिंग लेनदेन के लिए कभी भी किसी भी इंटरनेट कैफे के जरिये सार्वजनिक टर्मिनल का उपयोग न करे।
2. जहां कहीं भी वायरलेस कनेक्शन का उपयोग किया जा रहा हो वहा पर डॉटा हैक होने की संभावना बहुत अधिक होती है। अगर कभी ऐसे कनेक्शन से बैंकिंग लेनदेन करना हो तो इसक सुरक्षा व्यवस्था से संतुष्टि होने के बाद ही यह काम करना चाहिए।
3. एंटीवायसर एंव स्पाईवेयर प्रोग्राम को आद्यतन रखना चाहिए और नियमित रूप से स्कैनिंग करते रहना चाहिए।
4. बैंकिंग वेबसाईट को कभी भी किसी लिंक से न खोलें। सदैव पते को एड्रेस बार में ही टाईप करें।
5. जब आप किसी भी बैंकिंग साईट में लॉग इन हों तो किसी अन्य साईट को न खोलें।
6. अपने कम्प्यूटर साफ्वेयर को नियमित रूप से अपडेट करते रहना चाहिए।

इसके उपरांत भी यदि आपके खाते के किसी ऑनलाईन फिचर में यदि कोई दिक्कत हो रही हो तो आप अपने बैंक से तुरंत संपर्क कर उस समस्या का हल जानने का प्रयत्न करना चाहिए।

सुरक्षित ऑनलाई बैंकिंग प्रणाली का लाभ – इंटरनेट बैंकिंग सुरक्षा से संबंधित सभी प्रश्न इस बात की ओर संकेत करते है कि भुगताने करने वाला और पाने वाला का लेनदेन कैसे सुरक्षित रह सकता है। अब जब मोबाईल बैंकिंग गति पकड़ रही है तब आवश्यक है कि एसएमएस, यूएसएसडी (अनस्ट्रक्चर्ड सप्लीमेंट्री सर्विसेज डॉटा), ब्राउजर- बेस्ट एक्सचेंज तथा डाउनलोडेबिन, क्लांइट बेस्ट एप्लीकेशन आदि विभिन्न प्रकार के कम्यूनिकेशन चैनल सुरक्षित रहें।

एसएमएस हेतु एक्सचेंज का प्रयोग करने वाले बैंक को चाहिए कि वह हायपर ट्रांसफर प्रोटोकाल सिक्योर (एचटीटीपीएस) का वही प्रोटोकॉल का उपयोग करे जो ऑनलाईन बैंकिंग में प्रयोग में लाया जाता है। अतिरिक्त सुरक्षा हेतु वर्चुअल प्रायवेट नेटवर्क (वीपीएन) का प्रयोग किया जा सकता है। सभी एसएमएस में जीएसएम एनक्रिप्शन का प्रयोग किया जाए। यदि मोबाईल ऑपरेटर से जुड़ने के लिए एग्रीगेटर का प्रयोग किया जा रहा है तो डॉटा की सुरक्षा के लिए समुचित नियंत्रण प्रणाली होनी चाहिए। संदेशों को रिकॉर्ड रखना विनियामक है अत: एग्रीगेटर में सभी संदेशों को इन्क्रिप्ट करने की सुविधा होनी चाहिए।

उपयोगकर्ता/ग्राहक हेतु सुरक्षा – सुरक्षा को सबसे का कठोर स्तर ग्राहक से ही शुरू होता है। ग्राहक को उसके मोबाईल उपकरण की सुरक्षा से संबंधित

नीतियों को समझना बेहद मुश्किल होता है। वित्तीय संस्थानों को लिए यह तो और भी दुरूह है कि ग्राहक को इस बात के लिए राजी किया जाए कि वह प्रमाणन में सहयोग करे या अपने मोबाईल में रिमोट वाइन ऑप्शन डलवा ले। इसलिए ग्राहक के लिए आवश्यक है कि वह अपने मोबाईल फोन में किसी भी प्रकार का संवेदनशील डाटा न रखे।

निष्कर्ष – आज तकनीकी इतनी उन्नत हो गई है कि सिर्फ बैंकिंग ही नहीं अपितु जीवन के हर रूप में इसने अपना आधिपत्य जमा दिया है। इंटरनेट तो वह जादू की पुडियां है जिसने पूरे संसार को एक छोटे से गांव मे तब्दील कर दिया है। बैंकिंग को आज तकनीकी ने इतना आसान और सुगम बना दिया है कि शाखाओं पर लगने वाली कतारे शीघ्र ही गुजरे जमाने की बात रह जाएगी। यदि तकनीकी का उपयोग सुरक्षा के साथ किया जाए तो नि:संदेह ही इसके लाभ आम ग्राहक के साथ–साथ बैंकों को भी मिलेंगे। जहां ग्राहकों को त्वरित सेवा मिलेगी। वहीं बैंकों को लागत भी कम आएगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Annual Reports of State Bank of India 2015-16-17
2. www.livemint.com › Industry › Financial Services
3. https://en.wikipedia.org
4. https://www.rbi.org.in/
5. https://economictimes.indiatimes.com › Industry › Banking/Finance › Banking/internet banking
6. https://www.sbi.co.in
7. www.google.coms
8. hhttp://www.thehindubusinessline.com/money-and-banking/merger-of-associate-banks-with-sbi-may-not-be-seamless-for-customers/article9604979.ece
9. Banking seminar of reserve bank of india (15feb2012)

****

Library Services In Colleges Of Education Of Madhya Pradesh : An Evaluation

Dr. Amit Kumar Patidar *

Abstract - Provides a list of colleges of education and their affiliation to the universities. Also gives their status as government / university / private. Studies staff, furniture and A.V. aids available. Studies their building and budget of libraries other aspects such as library committee, circulation, number of books issued etc. have been studied concludes with revival of these colleges by providing ore staff and funds.

Introduction - The aims and objectives of teachers are to develop the maximum personality of students. The training of education makes a person competent to do the moral duties. The trained teachers help to increases the knowledge in the society. Teachers need to be well trained and prepared to deal with extremely diverse classrooms of mostly first generation learners.

Once venerated as "gurus" and the sole repositories of knowledge. They are the most important factor in delivering quality education. No education system in the world has excelled without making a significant investment in building a cadre of quality teachers. Yet, teacher education in India is a weak link in the education system.

September 5th is celebrated as Teachers day in India, marking the birthday of the second President of the country, Dr. Sarvepalli Radhakrishnan, both a teacher and a distinguished scholar.

The libraries are backbone of any teaching / learning process. They are integral part of any institution engaged in preparing of teachers of the future in the college of education.

My research is based on the research topic 'Madhya Pradesh Ke shiksha Mahavidhyalaon me Granthalaya Sevayen : Ek Samikshatmak Adhyayan' has bee awarded Ph.D. degree in library and information science from Vikram University, Ujjain.

Research Methodology - The questioner was sent to colleges of education libraries, Personal visits to libraries were also made to collect data.

Area Of Research - The 36 colleges of education running B. Ed. and M. Ed. Courses have been selected. The list provides universities and affiliated colleges of education selected in the study :

Table 1 & 2 (see in last page)

The Summary of responses by types of colleges of Education

Sr.	Details of colleges	Question -er sent	Received	Not received
1	Government	11	10	1
2	University Depart -ment	3	2	1
3	Un-aided (Private)	15	13	2
4	Government Finan -cial Aided	7	3	4
	Total	**36**	**28**	**08**
5	B. Ed.	36	28	08
6	M. Ed.	12	09	03
7	Universities of affiliation	10	10	0

1. In all there were 36 colleges of education.
2. There were 11 government colleges,
3. There were 3 university departments,
4. There were 7 government aided colleges.
5. There were 15 un-aided (Private) and
6. 36 colleges have B. Ed. Courses.
7. 12 colleges have M. Ed. (Post Graduation) courses also.
8. These 36 colleges were affiliated with 10 different universities.

Response :

1. 28 colleges responded out of the 36 colleges.
2. 10 out of the 11 government colleges.
3. 2 out of the 3 university departments.
4. 3 out of the 7 colleges government aided
5. 13 out of the 15 private colleges responded and returned the questioner.

Library Staff :

Table 3 (see in last page)

The details of available total library staff in the all 28 college of education as following:

1. 17 (61%) colleges of education libraries have librarian.
2. 11(39%) colleges of education libraries librarian posts

***Associate Professor & Head (Library and Information Science and Librarian) Sri Aurobindo Institute of Library and Information Science, Sri Aurobindo Institute of Medical Science and P. G. Institute (SAIMS&PGI) Indore (M.P.) INDIA**

were vacant.
3. 7 Professors were incharge of the libraries.
4. 4 assistant librarians were incharge of library
5. 8 assistant librarians had post of asst. librarian along with librarian only. Total 12 assistant librarians' posts were available.
6. 54 others library staff was also working in the college libraries.
7. In all 89 professionals were working the 28 selected libraries.

Library Staff Members Academic And Professional Qualifications :

1. 1 librarian has Ph. D. and 1 M. Phill degree.
2. 12 librarians have M. Lib. qualifications.
3. 6 asst. librarians have M. Lib. qualifications.
4. 1 library has appointed non qualified person as librarian.

Library Building :

Tabel 4 (see in last page)

1. 18 (64%) colleges of education have separate library buildings.
2. 24 (86%) colleges of education libraries have separate stack rooms.
3. 24 (86%) colleges of education libraries have separate reading rooms.
4. 24 (86%) colleges of education libraries have separate periodical sections.
5. 15 (54%) colleges of education libraries have a separate librarians rooms.

Library Furniture

Table 5 (see in last page)

1. 20 (71%) libraries have furniture as per the requirement.
2. 19 (68%) libraries have catalogue cabinet.
3. 20 (71%) libraries have periodical display racks.
4. 26 (93%) libraries have notice boards.

Audio Visual Aids In Library

Table 6 (see in last page)

1. 20 (71%) libraries have audio visual aids as per the requirement.
2. 10 (36%) libraries have radios.
3. 15 (54%) libraries have televisions.
4. 10 (36%) libraries have VCR/VCPs.
5. 12 (43%) libraries have computes.
6. 11 (39%) libraries have slide projectors.
7. 10 (36%) libraries have over head projectors (OHP).

Library Grant

Table 7 (see in last page)

1. 15 (54%) libraries have received financial grants. 13 (46%) libraries have not received any grant.
2. 15 (54%) libraries received grant from UGC.
3. 5 (18%) libraries received grant from NCERT.
4. 8 (29%) libraries received grant from state government.
5. 10 (36%) libraries received grant from others.

Library Budget Allocation :

Table 8 (see in last page)

Libraries short grants as follows :

1. 40% - 80% budget on books.
2. 100% - 20% budget on periodical/ magazines.
3. 5% - 15% budget on furniture by the libraries
4. 9 libraries have not responded on this question.

Library Committee

Table 9 (see in last page)

1. 16 (57%) libraries have the library committee.
2. 13 (54%) libraries have book selection process through library committee.
3. 16 (57%) libraries have written off policy.

Library Classification And Schemes

Table 10 : The status of classification and schemes ::

Sr.	Response	Yes / No	Classification Scheme COLON / DDC
1	Total YES	23	CC = 9
2	Total NO	5	DDC = 14

CC = COLON Classification, DDC : Dewey Decimal Classification

1. 23 (82%) libraries have classification of books.
2. 9 (32%) libraries have adopted Colon Classification.
3. 14 (50%) libraries have adopted DDC Classification.
4. 5 libraries did not have any classification.

Library Books Cataloguing And Schemes

Table 11 : The status of Cataloguing and schemes used :

	Details	Response Yes / No	CCC	AACR	Computer
Sr.	Response	Yes	Yes	Yes	Yes
1	Total YES	18	7	10	1
2	Total NO	08	7	10	1

CCC = Classified Catalogue Code,
AACR : Anglo American Cataloguing Rules

1. 18 (64%) libraries have cataloguing of books. 10 (36%) libraries did not have catalogue.
2. 7 (25%) libraries have used CCC cataloguing scheme.
3. 10 (36%) libraries have used AACR cataloguing scheme.
4. 1 (4%) library has used computer for cataloguing.

Library Books Circulation And Methods

Table 12 : Library Books Circulation and Methods

Sr.	Details	BROWN	NE-WARK	REGI-STER	COMP-UTER
1	Response	8	6	13	1

1. 8 (29%) libraries have used Browne system.
2. 6 (21%) libraries have used Newark system.
3. 13 (46%) libraries have used register system.
4. 1 (4%) library has used computer.

Issue Of Books

Table 13 (see in last page)

1. Most libraries provide books to teachers as per requirement.
2. There were very few research scholars most libraries have not responded.
3. For M. Ed. 3—4 books were allowed for issue.
4. For B. Ed. 2—3 books were allowed for issue and for other staff 2—3 books were allowed.

Library Working Hours :

Table 14 : The Library working hours :

Sr.	Abbrev -iation	Open	Close	Total Working Hours
1	DEC	10 .00 A.M.	5.00 P.M.	7.00
2	GCEB-1	10.30 A.M.	4.30 P.M.	6.00
3	GCEB-2	10.30 A.M.	05.00 P.M.	6.30
4	GCEC	10.30 A.M.	05.00 P.M.	6.30
5	GCED	10.00 A.M.	05.00 P.M.	7.00
6	GCEJ	10.30 A.M.	05.30 P.M.	7.00
7	GCEK	10.30 A.M.	05.30 P.M.	7.00
8	GCER-1	10.00 A.M.	05.00 P.M.	7.00
9	GCER-2	11.00 A.M.	04.30P.M.	5.30
10	GCEU	10.30 A.M.	05.30 P.M.	7.00
11	HWCEJ	11.30 A.M.	04.30 P.M.	5.30
12	IEI	09.00 A.M.	05.30 P.M.	8.00
13	IPWTTCI	09.00 A.M.	03.00 P.M.	6.00
14	JEMN	12.00 A.M.	04.00 P.M.	4.00
15	JLNSEMG	11.00 A.M.	04.00 P.M.	5.00
16	KCCK	08.00 A.M.	04.00 P.M.	8.00
17	KMB	08.00 A.M.	04.00 P.M.	8.00
18	KMJ	08.00 A.M.	02.00 P.M.	6.00
19	KNMMS	10.00 A.M.	04.00 P.M.	6.00
20	LMPSMB	08.00 A.M.	01.00 P.M.	5.00
21	LTCEU	11.30 A.M.	05.30 P.M.	6.00
22	NESCEH	11.00 A.M.	04.00 P.M.	5.00
23	RCTER	10.00 A.M.	03.00 P.M.	5.00
24	RGCB	10.00 A.M.	05.00 P.M.	7.00
25	RGVETCG	10.00 A.M.	03.00 P.M.	5.00
26	SCSEB	08.00 A.M.	02.00 P.M.	6.00
27	SESEJ	10.30 A.M.	07.30 P.M.	9.00
28	SVPCR	08.00 A.M.	04.00 P.M.	8.00

1. 8 Libraries work 4 to 6 hours per day.
2. 15 Libraries work 6 to 7 hours per day.
3. 5 Libraries work 8 to 9 hours per day.
4. The maximum college libraries have open 10.30 A.M. to 5.00 PM.
5. Few libraries open early in morning. None after 5.30 pm

Open Access System :

Table 15 : Open access system facility service

Sr.	Details	Response Yes / No
1	Total Yes	11
2	Total No	17

1. 11 (39%) libraries have open access system.
2. 17 (61%) libraries do not have the open access system.

Library Stock Verification :

Table 16 : Stock Verification :

Sr.	Details	Response Yes / No	One Year	Two year	Three year	Other
1	Total YES	27	22	0	3	2
2	Total No	1				

1. 27 (96%) libraries verify the Stock..
2. 22 (79%) libraries verify stock every year.
3. 3 (11%) libraries verify stock in every 3 years.
4. 2 (7%) libraries verify irregulars.
5. 1 (4%) library had not verified stock so for.

Conclusion - With the above discussions it is evident that libraries of college of education need revival. They require more staff so that better library services can be provided. The libraries should be provided more staff and funds.

References :-

1. Audunson, R. et al (2003) The complete librarian- an outdated species? LIS between profession and discipline. New library world 104 (11), 195-202.
2. A report, 1964-66, Indian commission: p271.
3. Aurora, G. L. (2002) Teachers and their teaching, Ravi Books, National Council for Teacher Education (NCTE).1998.
4. Brine, A. & J. Feather (2003) Building a skills portfolio for the information professional. New library world, 104 (11/12), 455-463.
5. Dhiman, Anil K. and Sinha, Suresh C. 2002. Different types of academic libraries in academic libraries. New Delhi : Ess Ess. P.52-53
6. Singh, L. C. (1990) Teacher education in India : a resource, Delhi, NCERT.
7. UGC (INDIA) : University and college library report of the library committee. New Delhi. 1965.

Table 1 : List of the Universities and Response

Sr.	Name of University	Establishment year	Colleges of education	Response received	Response not Received
1	Avdesh Pratap Singh University, Rewa	1968	2	2	0
2	Barkatulah University, Bhopal	1970	8	5	3
3	Devi Ahilya University, Indore	1964	3	3	0
4	Dr. Hari Singh Gour University, Sagar	1946	2	1	1
5	Guru Ghansidas University, Bilaspur	1983	2	2	0
6	Jiwaji University, Gwalior	1964	2	1	1
7	Mahatma Gandhi Chitrakut Gramodaya University, Chitrakut	1991	1	1	0
8	Pandit RaviShankar University, Raipur	1964	4	3	1
9	Rani Durgavati University, Jabalpur	1957	7	5	2
10	Vikram University, Ujjain	1957	5	5	0
	Total		36	28	8

Table 2 : List of the colleges of education and their response and courses :

Sr.	Name of College	Abbreviation	Establishment year	Managed by Yes / No	Response	B. Ed.	M. Ed.
1	CAREER COLLEGE, BHOPAL	CCB	1970	Un-aided (Private)	No	Yes	No
2	DEPARTMENT OF EDUCATION, CHITRAKUT	DEC	1991	University Department	Yes	Yes	No
3	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, BILASPUR	GCEB-1	1955	Government	Yes	Yes	Yes
4	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, BHOPAL	GCEB-2	1956	Government	Yes	Yes	Yes
5	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, CHATTARPUR	GCEC	1961	Government	Yes	Yes	No
6	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, DEWAS	GCED	1949	Government	Yes	Yes	No
7	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, GWALIOR	GCEG	0	Government	No	yes	Yes
8	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, JABALPUR	GCEJ	1889	Government	Yes	Yes	Yes
9	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, KHANDWA	GCEK	1956	Government	Yes	Yes	Yes
10	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, RAIPUR	GCER-1	1956	Government	Yes	Yes	Yes
11	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, REWA	GCER-2	1956(1958)	Government	Yes	Yes	Yes
12	GOVT. COLLEGE OF EDUCATION, UJJAIN	GCEU 1	955	Government	Yes	Yes	Yes
13	NAVBAG WOMENS COLLEGE (EDUCATION DEPARTMENT), JABALPUR	HWC(ED)J	1974	Government Financial Aided	No	Yes	Yes
14	HITKARNI WOMENS COLLEGE OF EDUCATION, JABALPUR	HWCEJ	1969	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
15	INSTITUTE OF EDUCATION (CENTRE OF EXELENCY), INDORE	IEI	1964	University Department	Yes	Yes	Yes
16	ISHAQUE PATEL WOMENS TEACHER TRAINING COLLEGE, INDORE	IPWTTCI	1998	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
17	JAIN EDUCATION MAHAVIDHYALAYA, MANDSAUR	JEMN	1973	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
18	JAWAHAR LAL NEHRU SMRITY EDUCAITON MAHAVIDHYALAYA, GANJBASODA	JLNSEMG	1989	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
19	KORBA CITY COLLEGE, KORBA	KCCK	1997	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
20	KALYAN MAHAVIDYALAYA, BHILAI	KMB	1963 (1962)	Government Financial Aided	Yes	Yes	No
21	KESARWANI MAHAVIDYALAYA, JABALPUR	KMJ	1964	Government Financial Aided	Yes	Yes	No
22	KAMLA NEHRU MAHILA MAHAVIDYALAYA, SATNA	KNMMS	1971	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
23	LATE MUKEEM PATEL SHIKSHAN MAHAVIDHYALAYA, BALAGHAT	LMPSMB	1995	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
24	LOKMANYA TILAK COLLEGE OF EDUCATION, UJJAIN	LTCEU	1971	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
25	NAVYUG ARTS & COMMERCE COLLEGE, JABALPUR	NACCJ	1962	Government Financial Aided	No	Yes	No
26	NARMDA EDUCATION SOCIETY COLLEGE OF EDUCATION, HOSHANGABAD	NESCEH	1971	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
27	PANDIT HARISHANAKAR SHUKLA MEMORIAL MAHAVIDHYALAYA, RAIPUR	PHSMMR	1995	Un-aided (Private)	No	Yes	No
28	RAVINDRA COLLEGE, BHOPAL	RCB	1967	Government Financial Aided	No	Yes	No

29	ROYAL COLLEGE OF TEACHERS EDUCATION, RATLAM	RCTER	1999(1986)	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
30	RAJEEV GANDHI COLLEGE, BHOPAL	RGCB	1994	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
31	RAJEEV GANDHI VOCATIONAL EDUCATION & TRAINING COLLEGE, GWALIOR	RGVETCG	1995	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
32	SAFIA COLLEGE OF SCIENCE & EDUCATION, BHOPAL	SCSEB	1972	Government Financial Aided	Yes	Yes	No
33	STATE INSTITUTE OF SCIENCE EDUCATION JABALPUR	SESEJ	1968(1966)	Government	Yes	Yes	Yes
34	SHIRI SATYA SAI COLLEGE FOR WOMEN, BHOPAL	SSSCWB	1974	Government Financial Aided	No	Yes	No
35	ST. VINCENT PALLOTI COLLEGE, RAIPUR	SVPCR	1995(1998)	Un-aided (Private)	Yes	Yes	No
36	UNIVERSITY COLLEGE OF EDUCAITION, SAGAR	UCES	1962	University Department	No	Yes	Yes

Table 3 : Availability of library staff in the libraries :

Sr.	Response	Librarian post	Librarian	Asst. Librarian	Other	Total
1	Total	Available = 17	17 Librarian	8 Asst. Librarians	54	89
2	Total	Vacant = 11	7 Incharge	4 Asst. Librarians are Incharge		

Tabel 4 : Library Building :

	Details	Separate Building	Stack	Reading Room	Periodical Room	Librarian Room	Others
Sr.	Response	Yes / No	Yes / No	Yes / No	Yes / No	Yes / No	Yes / No
1	Total YES	18	24	24	24	15	2
2	Total NO	10	4	4	4	13	2

Table 5 : Library furniture :

	Details	Library Furniture as per requirement Satisfactory	Catalogue Cabinet	Periodical Display	Notice Board
Sr.	Response	Yes / No	Yes / No	Yes / No	Yes / No
1	Total YES	20	19	20	26
2	Total NO	8	9	8	2

Table 6 : Audio Visuals (A.V.) Aids in library

	Details	A. V. Aids	RADIO	TELEVISION	VCR/VCP	COMPUTER	SLIDE P.	OHP	OTHERS
Sr.	Response	Yes / No	Yes	Yes	Yes	Yes	Yes	Yes	Yes
1	Total YES	20	10	15	10	12	11	10	2
2	Total NO	8							

Table 7 : Library grant :

	Details	RESPONSE	UGC	NCERT	STATE GOVERNMENT	OTHERS
Sr.	Response	Yes / No	Yes	Yes	Yes	Yes
1	Total YES	15	15	5	8	10
2	Total NO	13				

Table 8 : The status of library budget expenditure allocation in percentage given :

		BOOKS	JOURNALS / MAGAZINES	FURNITURE	OTHERS
Sr.	Abbreviation	No	Yes	Yes	Yes
1	DEC	60%	10%	10%	20%
2	GCEB-1	40%	20%	10%	30%
3	GCEB-2	60%	15%	15%	10%
4	GCEC	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
5	GCED	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
6	GCEJ	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
7	GCEK	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
8	GCER-1	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
9	GCER-2	70%	10%	10%	10%
10	GCEU	60%	20%	10%	10%
11	HWCEJ	50%	10%	40%	0%
12	IEI	40%	20%	10%	30%
13	IPWTTCI	60%	20%	10%	10%
14	JEMN	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
15	JLNSEMG	70%	15%	10%	5%
16	KCCK	45%	30%	5%	20%
17	KMB	80%	10%	5%	5%
18	KMJ	70%	10%	10%	10%
19	KNMMS	60%	10%	10%	20%
20	LMPSMB	50%	15%	15%	20%
21	LTCEU	80%	10%	5%	5%
22	NESCEH	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
23	RCTER	50%	20%	20%	10%
24	RGCB	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
25	RGVETCG	40%	30%	15%	15%
26	SCSEB	N.R.	N.R.	N.R.	N.R.
27	SESEJ	80%	10%	10%	0%
28	SVPCR	70%	15%	5%	10%

N. R. = Not Respond

Table 9 : Library committee :

	Details	Response	Book Selection	Purchasing	Books written off	Planning and manage and other work
Sr.	Response	Yes / No	Yes	Yes	Yes	Yes
1	Total YES	16	13	15	16	13
2	Total NO	12				

Table 13 : Issue of Books :

Sr.	Abbreviation	Teachers	Researcher	M. Ed. Users	B. Ed. User	Others staff
1	DEC	8	6	N. R.	2	N.R.
2	GCEB-1	A. P. R.	0	5	A.P.R.	N.R.
3	GCEB-2	A. P. R.	4	4	2	N.R.
4	GCEC	8	N.R.	N. R.	4	N.R.
5	GCED	A. P. R.	N.R.	N. R.	8	N.R.
6	GCEJ	10	N.R.	6	2	N.R.
7	GCEK	2	2	2	2	N.R.
8	GCER-1	N. R.	N.R.	N. R.	N.R.	N.R.
9	GCER-2	3	N.R.	10	8	N.R.
10	GCEU	A. P. R.	N.R.	10	3	N.R.
11	HWCEJ	15—20	N.R.	N. R.	4	N.R.
12	IEI	25	N.R.	3	2	N.R.
13	IPWTTCI	A. P. R.	N.R.	N. R.	2	N.R.
14	JEMN	10	N.R.	N. R.	2	N.R.
15	JLNSEMG	6	N.R.	N. R.	2	2
16	KCCK	A. P. R.	N.R.	N. R.	2	N.R.
17	KMB	A. P. R.	15	N. R.	2	1
18	KMJ	10	4	N. R.	2	N.R.
19	KNMMS	8	N.R.	N. R.	4	N.R.
20	LMPSMB	A. P. R.	N.R.	N. R.	3	N.R.
21	LTCEU	20	5	N. R.	3	4
22	NESCEH	10	N.R.	N. R.	2	N.R.
23	RCTER	A. P. R.	N.R.	N. R.	A.P.R.	N.R.
24	RGCB	4	N.R.	4	2	2
25	RGVETCG	5	N.R.	N. R.	2	N.R.
26	SCSEB	A. P. R.	N.R.	N. R.	2	N.R.
27	SESEJ	6	4	4	2	3
28	SVPCR	N. R.	N.R.	N. R.	N.R.	N.R.

A.P.R. = AS PER REQUIREMENT N. R. = NOT RESPONSE

****

To Study The NPA of Development of Financial Institutions (Private Banks)

Pooja Yadav * Dr.Sanjaykant Bharadwaj **

Introduction - Development finance institutions (DFI) is an mediator space between public & private investment, 'facilitating international capital flows' in the words of the Chief Executive of CDC, Britain's DFI. Different aid agencies during their focus on profitable investment & operations according to market rules, DFIs share a familiar focus on encouragement of economic growth & constant development. Mission lies in servicing the investment shortfalls of developing countries & bridging the gap between commercial investment & state development aid. DFI provide a broad range of financial services in developing countries, such as loans or guarantees to investors and entrepreneurs, equity participation in firms or investment funds and financing for public infrastructure projects. DFI develop projects in industrial fields or in countries where commercial banks are restrained about investing lacking some form of official collateral. DFIs are also dynamic in financing small & medium-size enterprises, sustaining micro loans to companies, frequently viewed as too risky by private sources of financing. Advantage of this approach is that DFI regularly find themselves with first-mover advantage in markets with tough growth potential.

Need of the Study: The banks not only accept the deposits of the people however also provide them credit facilities for their growth. Indian banking sector developing the business and service sectors, but recently the banks are facing the problem of credit risk. It is also found that many general people & business people borrow from the banks but due to some genuine or other reasons are not able to repay back the amount drawn to the banks. Money which is not pay back to the banks is known as the non performing assets. Many banks are facing the problem of NPAs which stops the development of business of the banks. Due to NPAs the income of the banks is reduced and the banks have to make the large number of the provisions that would curtail the profit of the banks and due to that the financial performance of the banks would not show good results. The main objective behind this study is to know how private sector banks are operating their business & how NPAs play its role to the operations of the private sector.

Research Methodology - The present study is pragmatic in nature mainly based on survey method, tool selected & used in this study is measures of central tendency. For this study three bank samples have been selected i.e. HDFC Bank, Axis Bank, ICICI Bank, Yes Bank & Kotak Mahindra Bank. Data are collected from both primary and secondary data. Data consists of Questionnaire & Annual Reports, Websites of Banks and Reserve Bank of India, Published and unpublished documents etc. The main primary objective of study is that to find the position of the NPAs level of the private banks.

The Data were collected from the following sources:

* Annual reports of Audit Report of Private Bank. *Official Records of Co-operative Bank Limited *Official publications of Banks and RBI *Web sites.

Research is as vigorous; hard-working & methodical process of investigation aimed at discovering, interpreting and revising facts, rational examination produces a greater considerate of events, behaviors or theories & makes practical relevance through laws & theories. In other words we can say, the purpose of research is to discover answers to the questions through the application of scientific procedures. The main aim of research is to find out the fact which is hidden & which has not been discovered as yet.

Causes Of Increasing NPA's :

1. At the time of collection of primary data the researcher has interacted with some of the borrower who has taken the loan from banks and other financial institutions. The respondents have spoke about the problems which they are facing for taking the loan or for borrowing the money. They said the government is constantly saying that we are simplifying the procedure but the fact is that still the procedure is too complicated and banks are demanding lots many documents. Some time it becomes so difficult for a borrower to arrange such papers.
2. When the researcher asked about the repayment of loan amount they seem so reluctant about the repayment. Surprisingly they are not aware with the concept of nonperforming assets.
3. One more thing the researcher has observed during the study that they are borrowing money beyond their

*Ressearch Scholar (Management) Swami Vivekanand University, Sagar (M.P.) INDIA
** Associate Professor (Management) Swami Vivekanand University, Sagar (M.P.) INDIA

capacity. Simultaneously they are not having proper financial planning.

4. During interacting with borrower it is observed that most of the borrowers are not aware with the stringent recovery norms.
5. Some of the borrowers are also found misleader by the middle man.

The Financial institutions sector has been facing the severe problems of the rising NPA's. the problems of NPA's is more in public sector banks when compared to private sector banks & foreign banks, the NPAs in PSB are increasing due to external as well as internal factors.

Gross NPA of private banks during last five years - For private banks, Yes Bank is the best performer followed by HDFC Bank, Axis Bank, Kotak Mahindra Bank and ICICI Bank. Whereas public banks face a fast ascends in their NPAs, private banks have been able to counter the bad loans & stayed stable.

TABLE: 01 (see in nnext page)

Gross NPA percentage of private banks during last five years - NPAs of Yes Bank and HDFC Bank have remained stable during the last five years where as ICICI Bank and Axis Bank has seen a significant rise in the share of their bad loans.

Figure: 01

Gross NPA % of Private Banks

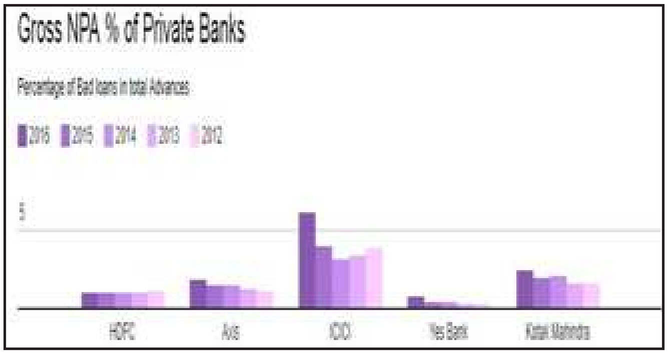

Securitization & Reconstruction of Financial Assets & Enforcement of Security Interest (SARFAESI) Act 2002 was enacted by the government to decrease NPAs. Act gives authority to financial institutions to auction properties (residential/commercial) to recover from the bad loans. However RBI needs to propose more solutions to put a hold on the rising NPA.

Conclusion :

1. Comparison of NPA of banks.
2. Private banks high rate of NPA is shown by compared to advances & the high percentage of NPA compared to Net Profit of last five year value.
3. NPA level of these banks compared to All India level of NPA.
4. NPA level variation directly affects the net profit of the banks.
5. Purpose wise NPA showing constant level.
6. NPA is directly affected the cash flow level.

Suggestions :

1. Private Bank must reduce the NPA level through identifying prompt customers to lent advances.
2. Find out a way to avoid Non-Performing Assets.
3. Find out ways to maximum utilization of NPAS.
4. Advances must be given only to prompt customers only.
5. Branch managers have proper training to avoid NPA and NPA generation.
6. These banks should prepare a loan recovery policy and strategies for reducing NPAs.
7. Co-operative bank has the high NPA level. So they should create special recovery cells as head office/ Zonal office/ regional office levels identify critical branches for recovery.
8. All sectors should Fix targets of recovery and draw time-bound action programmer that reduce NPA level.
9. When any advance led to NPA there should conduct a discussion between NPA holder and Bank representative and to make feasible solutions for both parties.
10. Some customers can repay the amount although they purposely didn't pay that, identify that kind of customers & recovery the amount.

References :-

1. Alok Majumdar, NPAs : Recovery Blues, Treasury Management (Dec.2000) pp. 46-49.
2. Special Report: NPAs Grossly Mis-understood, Business India (Feb. 1999) pp. 60-62.
3. M.Y. Khan, How to Tackle Credit Defaults, Business Line (Feb. 2000) pp 6.
4. Some Aspects & Issues relating to NPAs in Commercial Banks, RBI : Study, RBI Publications (July 1999).
5. Banking Annual-1998-99, Business Standard (Nov.1998).
6. Pramita Mukherjee, Dealing with NPAs: Lessons from International Experiences, ICRA bulletin – Money & Finance, (Jan-Mar. 2003), pp. 64 – 69.
7. Nacheket Mor & Bhavana Sharma, Rooting out NPAs, sept. 2002, ICICI researchcenter.org.
8. N.a. "ICICI Bank Yearly Results, ICICI Bank Financial Statement & Accounts." Moneycontrol.com. n.d. Web. 23 Jan. 2018. <http://www.moneycontrol.com/ financials/icicibank/results/yearly/ICI02>

TABLE: 01
PRIVATE BANKS
Gross NPA of private banks during last five years

Figures in Rs Crores

Year	Assets	HDFC	AXIS	ICICI	YES	Kotak Mahindra
Year 2016	Advances	464,593.96	338,773.72	435,263.94	98,209.93	118,665.3
	Gross NPA	4,392.83	6,087.51	26,221.25	748.96	2,838.11
Year 2015	Advances	365,495.03	281,083.03	387,522.07	75,549.82	66,160.71
	Gross NPA	3,438.38	4,110.19	15,094.69	313.40	1,237.23
Year 2014	Advances	303,000.03	230,066.76	338,702.65	55,632.96	53,027.63
	Gross NPA	2,989.28	3,146.41	10,505.84	174.93	1,059.44
Year 2013	Advances	239,720	196,965.96	290,249.44	46,999.57	48,468.98
	Gross NPA	2,334.64	2,393.42	9,607.75	94.32	758.11
Year 2012	Advances	195,420	169,759.54	253,727.66	37,988.64	39,079.23
	Gross NPA	1,999.39	1,806.30	9,475.33	83.86	614.19

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

उच्च शिक्षा स्तर पर लैपटाप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन व आत्मसम्बोध का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सुनील कुमार * डॉ. लवलता सिद्धू **

प्रस्तावना - आज दुनिया के जो देश समृद्ध व शक्तिशाली हैं वे शिक्षा से ही सुसज्जित हैं या कहा जाये कि वे शिक्षा के बल पर ही आगे बड़ रहे हैं। आज अगर हम समाज में इज्जत व सम्मान चाहते हैं तो विद्यार्थियों की अच्छी शिक्षा पर बल देना होगा। हमारी अगली सदी का सुप्रभात तभी सुहावना होगा, जब विद्यार्थियों को उपयुक्त शिक्षा प्रदान की जायेगी, तभी वे अपने कानूनी अधिकारों के प्रति सजग और जागरूक हो सकेंगे। रोजगार प्राप्त कर आत्मनिर्भर बन सकेंगे।

मानव समाज में स्वयं को स्थापित करने के लिए समायोजन व आत्म-सम्बोध अनिवार्य तत्व है। समाज में व्यक्ति की समुचित भागीदारी के लिए अनिवार्य है कि सामाजिक समस्याओं का समाधान समुचित तरीके से करे और समाज में अपने आप को स्थापित करे।

आत्म-सम्बोध - मनुष्य के व्यक्तित्व विकास पर जो प्रभाव पड़ते हैं, उन्हीं प्रभावों के मध्य व्यक्ति में अपनी आत्मा का विचार स्पष्ट हो जाता है क्योंकि व्यक्तित्व व चरित्र दोनों ही व्यक्ति की अपनी आत्म-सम्बोधी अवधारणा पर निर्भर होते हैं। एक व्यक्ति जिस प्रकार से अपना प्रत्यक्षीकरण करता है अथवा जिस ढंग से अपने को देखता है उसे ही उस व्यक्ति का आत्मसम्बोध कहते हैं।

Combs and Snygg के अनुसार, 'एक व्यक्ति जो सोचता है तथा जो व्यवहार करता है वह उसके आत्म-सम्बोध पर अत्यधिक निर्भर करता है।'

समायोजन - समायोजन व्यक्ति के विभिन्न क्षेत्रों में व्यवहार के संतुलन पर जोर देता है।

शैफर के अनुसार, 'समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक ओर प्राणी अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा दूसरी ओर उन स्थितियों के प्रति तालमेल बैठाने का प्रयास करता है जो कि उसकी आवश्यकताओं को प्रभावित करती है।'

शोध के उद्देश्य :

1. लैपटॉप प्राप्त विद्यार्थियों के आत्म-सम्बोध व समायोजन का अध्ययन करना।
2. लैपटॉप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन व आत्म-सम्बोध का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना - उच्च शिक्षा स्तर पर लैपटॉप वितरण का सामान्य व पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के आत्म-सम्बोध व समायोजन में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध की परिसीमा - प्रस्तुत शोध अध्ययन में लैपटॉप प्राप्त विद्यार्थियों के आत्म-सम्बोध व समायोजन स्तर का अध्ययन किया गया है।

शोध विधि - प्रस्तुत शोध समस्या के अध्ययन हेतू शोध की विवरणात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श - प्रस्तुत अध्ययन की जनसंख्या के रूप में मुजफ्फरनगर जनपद में स्थित समस्त डिग्री कॉलेजों के लैपटॉप प्राप्त विद्यार्थियों को चुना गया है। जिनकी संख्या 100 रखी गयी है। जिसमें 50 सामान्य वर्ग एवं 50 पिछडा वर्ग के लैपटॉप प्राप्त विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चुना गया है।

आँकड़ों का संकलन व सारणीयन - अनुसंधानकर्ता ने लैपटॉप पर विद्यार्थियों के घर-घर व कॉलेज जाकर आँकड़े एकत्रित किए तत्पश्चात् उनका अंकन किया गया। सर्वेक्षण द्वारा एकत्रित संमकों को शोध उद्देश्यों के आधार पर तालिकाबद्ध किया गया। विद्यार्थियों के समायोजन व आत्म-सम्बोध संमकों को नियमावली में दिए गए मानक के आधार पर घटकवार निम्न तथा उच्च समूहों में विभाजित कर उनके सम्मुख संबंधित विद्यार्थियों के समायोजन व आत्म-सम्बोध प्राप्तांकों को लिया गया-

तालिका नं. 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 1 से विदित होता है कि लैपटॉप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़े वर्ग का समायोजन मध्यमान क्रमश: 29.12 व 27.91 प्राप्त हुआ है तथा आत्म-सम्बोध 16.91 व 15.57 प्राप्त हुआ है। मध्यमान प्राप्त करने के पश्चात् दोनों समूहों के समायोजन एवं आत्म-सम्बोध का प्रामाणिक विचलन, सामान्य वर्ग व पिछड़ा वर्ग लैपटॉप प्राप्त विद्यार्थियों का क्रमश: 9.63 व 7.83 तथा 15.63 व 20.67 प्राप्त हुआ है। सामान्य वर्ग व पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन व आत्म-सम्बोध का प्रामाणिक विचलन निकालने के बाद दोनों समूहों के मध्यमान की सार्थकता के लिए टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया जिसका मान क्रमश: समोयजन 1.784 एवं आत्म-सम्बोध 1.256 प्राप्त हुआ है जो कि 58 स्वतंत्रता के अंश एवं 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थक पाया गया। इसलिए शून्य परिकल्पना उच्च शिक्षा स्तर पर लैपटॉप वितरण का सामान्य वर्ग व पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन व आत्म-सम्बोध में कोई सार्थक अंतर नहीं है, को स्वीकृत किया जाता है। इस आधार पर कह सकते है कि लैपटॉप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन एवं आत्म-सम्बोध में कोई सार्थक

* भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद (डाक्टरोत्तर अध्येतातृति, छात्रवृत्ति) शिक्षा विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ (उ.प्र.) भारत
** एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ (उ.प्र.) भारत

अंतर नहीं है।

परिणाम – प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट हो जाता है कि सामान्य वर्ग व पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के समायोजन और आत्म–सम्बोध में कोई सार्थक अंतर नहीं है। दोनों ही समूहों के विद्यार्थियों का सार्थक स्तर समान पाया गया है। उनके समायोजन और आत्म–सम्बोध में किसी प्रकार की भिन्नता नहीं पायी गयी है।

निष्कर्ष – तालिका नं. 1 में प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सामान्य वर्ग एवं पिछड़ा वर्ग लैपटॉप प्राप्त विद्यार्थियों के समायोजन तथा आत्म–सम्बोध में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अत: परिकल्पना संख्या 1 स्वीकृत होती है।

सुझाव – निष्कर्ष के आधार पर देखा गया है कि लैपटॉप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों में सार्थक अंतर नहीं है। फिर भी सामान्य वर्ग की अपेक्षा पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों को वे सुविधायें नहीं मिल पाती जो सामान्य वर्ग के विद्यार्थियों को मिल जाती हैं। जिससे विद्यार्थी आने वाले समय में अपने समायोजन एवं आत्म–सम्बोध स्तर को बनाये रखने में समर्थ रह सके।

पिछड़े वर्ग के विद्यार्थी के अभिभावक भी इतने जागरूक नहीं होते जो अपने विद्यार्थियों को सही तरह से मार्गदर्शक कर सके। ऐसी स्थिति में उन योजनाओं को प्रोत्साहन देना चाहिए जिनके द्वारा विद्यार्थियों के अभिभावक प्रशंसक बन सके व अपने बच्चों को शिक्षित करने में बढ़–चढकर भाग ले सके। इस क्षेत्र में लैपटाप वितरण का किया जाना अवश्य ही एक सराहनीय प्रयास था। जिसको अपनाया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अरलेयस एल. साभोई: 'चतुर्थ स्तरीय लड़कों और लड़कियों को पढने की समझ के अंकों पर रूचि, उपलब्धि और आत्म–सम्बोध के स्तरों का प्रभाव सारांश' भाग 1.37, संख्या 10, पृष्ठ 6378 ए (अप्रैल 1977)।
2. राय पारसनाथ अनुसंधान परिचय प्रकाशन लक्ष्मीनारायण अग्रवाल अस्पताल रोड, आगरा–3, सप्तम संस्करण।
3. अग्रवाल वाई. सी. (2002): स्टेटिस्टिकल मैथड्स कान्सेप्ट्स, एप्लीकेशन एण्ड कम्पयूनिकेशन नई दिल्ली स्टर्लिंग पब्लिशर्स (प्रा. लि.)।
4. अग्रवाल, जे. सी. (1998): एसेन्शियलस ऑफ साईकोलॉजी, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस।
5. अस्थाना विपिन (1977): 'मनोविज्ञानी शोध विधियां' प्रकाशक: विनोद पुस्तक मंदिर कार्यालय, रांगेय राघव, आगरा–2

तालिका नं. 1 : लैपटॉप प्राप्त सामान्य वर्ग व पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों का आत्म–सम्बोध व समायोजन स्तरक्रम

			समायोजन		आत्म–सम्बोध		
सं.	वर्ग	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मान
1.	सामान्य वर्ग	50	29.12	9.63	–	–	1.784***
2.	पिछड़ा वर्ग	50	27.81	7.81	–	–	
3.	सामान्य वर्ग	50	–	–	16.91	15.63	1.256***
4.	पिछड़ा वर्ग	50	–	–	15.57	20.67	

***सार्थक नहीं

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारतीय समाज के परिपेक्ष्य में : स्त्री रचनाकार कुमारी बासन्ती

रामजय नाईक *

प्रस्तावना – भारतीय समाज समावेशी समाज है। यह समाज एक अति प्राचीन समाज है। यह समाज बहुत निरंतर –प्रगतिशील समाज है। भारतीय समाज संयुक्त परिवारों का समकृशण है। कोई भी समाज इसके तत्व संस्कार पर आधारित होती है। यह चरित्र पर आधारित समाज है। यह समाज उद्देश्य पर आधारित है। यह देश – प्रेम का समाज है। यह मनुष्य के प्रति प्रेम भाव का समाज है। इसके अलावे समाज मातृभाव का है।

इस भारतीय समाज को बनाने में नारी, उसकी कविता का महत्वपूर्ण योगदान है। नारी संवेदना, माया, ममता, प्रेम, वात्सल्य, क्षमा, त्याग, प्रेरणा, और सर्मपण की मूर्ति है। ये सृजन की आत्मा हैं, सृष्टि की प्रतिमूर्ति है। जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता का वास होता है। यह समाज की रीढ़ है। शिक्षित नारी समाज को आगे बढ़ाती है, और उसका मार्गदर्शक भी होते हैं। एक नारी के शिक्षित होने पर पूरे समाज शिक्षित होता है। आज देश, समाज, जाति, विश्श्व, मानवता का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, संस्कृति, वैज्ञानिक और जो भी विकास हुआ है, उसमें नारियों का भी आधा हिस्सा है। इसलिए नारी को अटल बिहारी वाजपेयी आधी दुनिया कहे हैं। जहाँ की नारी उन्नतशील होगी, वह देश और समाज विकसित और आत्मनिर्भर बनेगा। इसलिए मानवता के सर्वांगिण विकास में नारियों का भरपूर हाथ है और रहेगा।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक संकलन के आधार पर शोध सामाग्री का अध्ययन किया गया है। इसके साथ इस शोध पत्र में साक्षात्कार पद्धति के द्वारा **भारतीय समाज के परिपेक्ष्य में : स्त्री रचनाकार कुमारी बासन्ती** का अध्ययन किया गया है। इन तथ्यों की अधिकतम पुष्टि साक्षात्कार के माध्यम से किया गया है। नारी की दशा और दिशा पर प्रकाश डालने वाली विदुशी कुमारी बासन्ती से साक्षात्कार लिया गया है।

उद्देश्य :

1. नारी के प्रति समान अधिकारों की आवश्यकता है।
2. नारी को समाज में पुरूषों के समान दर्जा दिया जाना चाहिए।
3. समाज की नीव को सुदृढ़ करने में नारी का स्मर्णिय योगदान है।
4. नारी के बिना समाज की कोई कल्पना नहीं की जा सकती है।
5. नारी पर होने वाली हिंसा को कम करने में प्रशासन को कठोर निर्णय लेना चाहिए।

समस्या :

1. नारी शोषण की विकराल रूप लेता जा रहा है।
2. दहेज प्रताणना आज चरम सीमा पर है।
3. नारी हिंसा का ताण्डव आये दिन होती है।
4. नारी को शिक्षा से आज भी वंचित है।
5. नारी के प्रति प्रशासन की उदासीनता।

समाधान – कविता –नारियाँ सृष्टि की सर्वाधिक संवेदनशील शक्तियाँ हैं। वो प्रेम, वात्सल्य, प्रतिभा, प्रज्ञा, और रचनात्मक सृजन की प्रतिमूर्तियाँ हैं। वैदिक काल से लेकर अब तक नारियाँ बड़ी – बड़ी हस्तियाँ हुई हैं। नवनिर्माण, शक्ति, प्रेरणा, और मातृत्व के क्षेत्र में, जिनमें – मैत्रयी, गार्गी, लोपामुद्रा, अनुसइया, अरूंधती आदि। आज के युग में भी हिन्दी – उर्दू साहित्यकार में प्राचीनकाल से लेकर अबतक बहुत –सी सृजनशील प्रतिभाएँ या कवित्रियों का प्रार्दुभाव हुआ है। जिनमें – मीरा, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, संगीत के क्षेत्र में– गिरजा देवी, (बनारस) कृष्णा सोबती, अमता प्रीतम, मनु भण्डारी आदि का नाम प्रसिध्द है।

भारत राज्यों का देश है। जिसमें झारखण्ड राज्य, इस देश का 28 वाँ राज्य है, जिसे रत्नगर्भा के नाम से भी जाना जाता है। इस राज्य की धरती बड़ी ही धन्य है। यहाँ की मिट्टी की सुगन्ध बड़ी आकर्षक और बड़ी ही मनमोहक होती है। यहाँ की प्रकृति की हवा जो एक दुसरे के मन को मोह लेती है। इस पावन धरती पर न जाने कितने हजारों– हजार महावीरों और एक– से– बढ़कर एक कवि, लेखक, एवं महापुरूषों ने जन्म लिए, जिन्होंने जन्म लेते ही उनमें राष्ट्रीयता की भवना, समाज के प्रति सेवा की भवना जाग उठती है। इसी बीच हमारे मातृभूमि के एक महान कवियत्री डॉ. कुमारी वासन्ती के नाम बड़ी ही आदर्श एवं गर्व के साथ लिया जाता है।

निष्कर्षत: ये एक ऐसे कवि हैं जिनकी कविता लेखन में महत्वपूर्ण योगदान है। ये कविता के अलावे कहानी, गीत, नाटक, और शब्दकोश के क्षेत्र में भी इनका नाम प्रसिद्ध है। इनका जीवन– नारी शिक्षा, कविता, कहानी, प्रेरणा, संस्कार, समाजसेवा, दलित समाज को आगे बढाने में संवेदनशीलता और नारी सशक्तिकरण करने में एक आकाशदीप है। इनकी कविता, कहानियों में दुर्बल, दलित, पतित, दरिद्र, बंचित, भाग्यहीन कहे जाने वाले, समाज का साहसपूर्ण आगे बढ़नेवाले, और जीवन की जिजीविशा के लिए संर्घशरत, युद्धीरत, नारियों का संजिदा और ज्वलंत चित्रण हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. साक्षात्कार– **डॉ. कुमारी बासन्ती,** (पूर्व विभागाध्यक्ष) जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, राँची विश्वविद्यालय राँची (झारखण्ड)

* सहायक प्रध्यापक (नागपुरी) जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग कार्तिक उराँव महाविद्यालय, गुमला (झारखण्ड) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

लोक जीवन और पर्यावरण का भौगोलिक अध्ययन

डॉ. हीरालाल चौधरी * डॉ. आर. पी. सिंह **

प्रस्तावना – लोक जीवन में पर्यावरण का भौगोलिक योगदान है। पर्यावरण के संरक्षण के कारण मानव आज साँस ले पा रहा है। ऐसी अनेक स्थितियों के कारण मानव का जीवन सुचारू रूप से चल रहा है। मानव का विकास लोक जीवन की अनेक परम्पराओं और प्रथाओं से प्रारम्भ होता है। जहाँ मानव समाज का एक औचित्य पूर्ण संखलन भौगोलिक स्थिति को प्रदान किया जाता है। जहाँ सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परम्पराओं का परिणाम दिखाई देता है। विभिन्न स्थितियों के परिणाम स्वरूप मानव का विकास लोक प्रथाओं और परम्पराओं पर निर्भर करता है। यहाँ की प्राकृतिक का स्वरूप सम्पन्न धरती ने जहाँ एक तरफ वीर महापुरूषों को जन्म दिया वहीं दूसरी ओर इस प्रकृति में मानव को जीवन देकर उसे भोजन और पानी भी उपलब्ध करवाया है। इन्हीं तथ्यों के आधार पर मानव समाज का प्रत्येक वर्ग किसी न किसी रूप में पर्यावरण के संरक्षण की भूमिका निभाता है। जहाँ पर दूसरा पक्ष आता है। कुछ तो ऐसे लोग है जो पर्यावरण को नष्ट कर रहे हैं। ऐसी अनेक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानव का जीवन बड़ा ही दुभर होता जा रहा है। ऐसी विचार शैली के मनोरंजक परिदृश्य का परिणाम ढूढ़ने के लिए पर्यावरण की ओर व्यक्ति पलायन कर जाता है। जैसे पर्यटन एक प्रकार का पर्यावरण के नवीन सौन्दर्य के दृष्य को देखने का प्रमुख मार्ग कहा जा सकता है। जहाँ मानव की अनेक विसंगतियों का परिणाम ही समाज और परिवार की परिवारिक दशाओं पर निर्भर करता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर शोध पत्र का निर्माण किया गया है। इसके साथ–साथ विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है। शोध पुष्टि के लिए यथा उचित स्थान पर सन्दर्भित किया गया है। सन्दर्भ हेतु पत्र–पत्रिकाओं और जर्नल का भी प्रयोग किया गया है।

समस्या :

1. लोक जीवन में मानव ने स्वयं के कार्य को दूसरों के हाथों में सौपना अनौचित्यपूर्ण हैं।
2. पर्यावरण की विकट समस्या है।
3. पौधों की अधाधुन्ध कटाई से पर्यावरण असंतुलित होता जा रहा है।
4. फैक्ट्रीयों से निकलने वाले हानिकारक गैसों से भी पर्यावरण का संतुलन विगड़ रहा है।
5. एसी. फ्रिज से निकलने वाली गैसें मानव संरक्षण को हानि पहुँचा रहे हैं।

उद्देश्य :

1. लोक जीवन में पर्यावरण के महत्व का अध्ययन करना।
2. पर्यावरण के संरक्षण के प्रति लोगों को जागरूकता का अध्ययन करना।
3. पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए वृक्षारोपण करना।
4. वृक्षों की कटाई पर रोक लगाना।
5. पर्यावरण के सुरक्षा से मानव का जीवन अधिक सुरक्षित है।

समाधान – पर्यावरण वास्तव में मानव जीवन का संरक्षक है। जहाँ व्यक्ति की जीवनदायिनी आक्सीजन प्राप्त होती है। इसका लोक जीवन व्यक्ति संस्कृति के मूल्यों की विधि को आत्मसात करता है। इन्हीं सांस्कृतिक परम्पराओं के कारण मानव का विकास संभव हो सका है। ऐसी मान्यताओं ने मानव को जीवन जीने के लिए ललायित कर दिया हैं। ऐसी अनेक विसंगतियों के परिणामस्वरूप मानव का विचार और ऐतिहासिक परिदृष्य मनुष्य के लिए अधिक उपयुक्त होता जा रहा है।

इस पर्यावरणीय संस्कृति और समाज की अनेक विषमाताओं के परिणाम स्वरूप संस्कृति और समाज का परिणाम होता है। जहाँ ऐसी मनवीय समझ का परिणाम ही विसंगतियों से भरा है। भारतीय संस्कृति के परिणाम स्वरूप मानव जीवन का औचित्य भी दिखाई देता है। उस स्थिति में मानवीय संवेदना का परिणाम है। लोक संस्कृति के जीवन में पर्यावरण जीवन संरक्षक होते हुए भी मानवीय आधार का संरक्षक है। मानव विकास का औचित्य के स्वरूप का विचार ही दिया जा सकता है। इस स्थिति में भौगोलिक परिणाम व्यवस्थित होता जा रहा है। पर्यावरणीय लोक नृत्य और संस्कृति का परिणाम मूल्यों पर निर्भर कर सकता है। उसी प्रकार विचार और विमर्श करने की प्रेरणा दी जाती है।

लोक गीत – संस्कारों की विचार धारा का परिणाम ही मानव जीवन की विचारधारा का परिणाम है। इन्हीं रीति–रिवाजों का लोक नीति और पर्यावरण की संगतता का परिणाम ही मानवीय जीवन में जीने का परिणाम होता है।

1. संस्कारों रीति–रिवाजों के आधार पर गीत, विवाह, कजली, सोहर आदि का मौसम के अनुसार गीतों का गायन होता है।
2. पर्यावरण का ग्रामीण जन समुदाय में कई संस्कार होते हैं। जहाँ आदिम जातियों के पिछड़ी हुई जातियों के विशेष अधिकारों और संस्कारों का परिणाम ही महत्वपूर्ण होता है। इन्हीं परिणामों के आधार पर विशेष अविकसित होने के कारण मानव की विचारशीलता का व्यवहार मौसम के अनुसार संस्कारों का निवर्हन करते हैं।
3. पर्यावरण संरक्षण के विशेष स्वरूपों का परिणाम भी दिखाई देता है।
4. ग्रामीण व्यक्तियों के गीत कार्य के अनुसार गाये जाते है। रोपाई के समय कजली गीत गाये जाते हैं। गीतों का स्त्री–पुरूष दोनों मिलकर आनन्द उठाते है। इससे यह निश्चित होता है की भारतीय संस्कृति की पहचान पर्यावरण की स्वच्छता पर निर्भर करती है। यहाँ व्यक्ति

* (भूगोल) ग्राम सुआ, पोस्ट मढ़ी, तहसील अमरपाटन, जिला सतना (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तार संजय गाँधी स्मृति महाविद्यालय, सीधी (म.प्र.) भारत

वृक्षारोपण पर भी अधिक महत्व देता है। जिसकी मानवीय दृष्टि समाज और राष्ट्र के लिए एक विचार पैदा करती है। क्योंकि इनके जीवन में कार्य के प्रति समर्पण और खुशी-ठिठोली के साथ कार्य को करते रहने से मनोवैज्ञानिक तौर पर थकान और हतोउत्साहित नहीं होते हैं। एक-दूसरे के कार्य करने के साथ-साथ कार्य करने में सक्षम हो जाते हैं। जहाँ समाज इनकों कोशो दूर रखना चाहता है।

मानव जीवन में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक के गीत गाये जाते हैं। क्योंकि लोक जीवन में व्यक्ति के जीवन का आधार लोक परम्पराऐं और कथाऐं रही हैं। इन्हीं गीतों के आधार पर लोकगीत सभी अवसरों पर गाते हैं। संस्कार-गीत, देवी-देवताओं के लिए देने वाले नेवाले का प्रयोग होता है। गीत पर्व-त्यौहारों पर गीतों का स्वर सुनाई देता है। ऋतुओं के हिसाब से भी गीतों का समन्वय होत है। उन्हीं परिणामों के आधार पर आदिवासियों के विविध आयामों के प्रवृत्ति की ओर चले जाते हैं। जीवन चर्या के गीत, नृत्यगान होता है। इसी आधार पर गीतों का औचित्य होकर लोकगाथा पर आधारित स्वर सुनाई देता है।

इन गीतों के माध्यम से लोक जीवन की सम्पूर्ण सांस्कृतिक क्रिया-कलाप सम्पन्न होता है। जबकि पर्यावरण संरक्षण इन सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर मानव का मूल कर्तव्य है। क्योंकि इसके बिना जीवन का पहलू अछूता मालुम पड़ता है। ऐसी विचारधारा को प्रवाहित करने के लिए प्रशासन को भी कदम उठाना चाहिए।

1. वनवासी लोकनृत्य
2. अन्य जातियों के लोकनृत्य

वनवासी लोकनृत्यों में लोकनृत्य के रूप में दादर, झुमकिया, बरैइया लोक नृत्य प्रचलित है। यह लोक नृत्य करमा राजा के साथ-साथ करमा रानी को प्रसन्न किया जाता है। वहाँ उस गाँव के लोग इक्ठठा होकर करमा गीता का प्रारम्भ करते हैं। जिनमें पुरूष और महिलाऐं बराबर होती है। नृत्य के दौरान दोनों एक-दूसरे के अगूठा का स्पर्श करते हैं।

पर्यावरण संरक्षण मानव के लिए चुनौती बन कर खड़ा हो रहा है। ऐसी अनेक विसंगतियों को निपटाने के लिए वृक्षा रोपण अति आवश्यक पहलू है। ऐसी वैचारिक मान्यता से पैदा होने वाले बच्चों में तृष्ण और घृणा के रूप मे देखा जाता है। ऐसी अनेक मान्यताओं के परिणाम स्वरूप मानव का जीवन का एक पहलू व्यवहारिक दृष्टि से पर्यावरण को संरक्षण की ओर प्रेरित करती है। यही कारण है कि आज भौगोलिक रूप से ग्रामीण समुदाय में वृक्षों का पर्यावरण से निकटता बनी हुई है। ऐसे अनेकों उदाहरण है जहाँ प्रत्येक वर्ष वो पौधों को लगाते हैं। वहीं पैधे हवा, छाव, वर्षा ऋतु से बचाने में सहायक सिद्ध होते हैं। यह मानवीय जीवन का सबसे बड़ा उदाहरण गाँवों में जाकर देखा जा सकता है।

निष्कर्षतः वृक्ष पुत्र की तरह श्रेष्ठ सदा सुखी रखने वाला है। इससे मानव के जीवन में अनेक विसंगतियों को खत्म कर स्वच्छ पर्यावरण और श्वांस के लिए पौधों से प्रत्येक जीव को प्राप्त होती है। पंक्षीयों को आसरा भी वृक्ष है। जिसे इन वृक्षों को आज मानव अधाधुन्ध कटाई में लगा हुआ है। ऐसी अनेक घटनाओं का कारण मानव की विचारधारा कैसी हो गयी है। यह पता नहीं चल पा रहा है। यह आधुनिक युगीन मानव स्वयं के पास कितने भी पैसे आ जायें। चहे किसी भी मार्ग से हो उसे हड़पना चाहता है। न जाने कितने किमती पौधों को मानव में उजाड़ फेका हैं। यह ही सबसे बड़ा विनाश पर्यावरण को विषैला बना दिया है। इस प्रकार मानव कल्याण होने वाले तत्वों को मानव जीवन में अपनाना अधिक श्रेष्ठ कदम होगा। इसी में जीवन रक्षा का महत्वपूर्ण योगदान क्षिपा हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ताज रावत, ***प्राकृतिक पर्यटन विकास एवं बदलाव,*** आकाशदीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 37
2. के.एस. ढोरियाल, ***पर्यटन विकास एवं प्रभाव***, आशा बुक्स, सोनिया विहार, दिल्ली, 2010, पृष्ठ 65
3. सिंह, भोपाल, ***पर्यावरण शिक्षा एवं पर्यावरण संरक्षण,*** आर्य बुक डिपो, करोलबाग, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ 70
4. तिवारी, डॉ. गोविन्द, ***शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार***, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1985, पृष्ठ 58

****

मालती जोशी और उनकी बाल कहानियाँ

डॉ. कविता रेलवानी *

प्रस्तावना – बाल-साहित्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन व समृद्ध है। पुरातन काल में माताएँ अपने रूठे बच्चों को मनाने, रोते बच्चों को हँसाने हेतु तरह-तरह के जतन किया करती थी। कदाचित वहीं से बाल-साहित्य के अंतर्गत आने वाली बाल-कहानियों, बाल-कविताओं व बाल-गीतों की परम्परा का बीजोवपन हुआ है। प्रारंभ में दादी-नानी अपने बच्चों को तरह-तरह की कहानियाँ सुनाया करती थी। इन्हें सुरक्षित रखने के कोई साधन उपलब्ध नहीं थे। ये कहानियाँ, गीत, कविताएँ मौखिक ही एक-दूसरे तक हस्तान्तरित होती थी। आगे चलकर आधुनिक उपकरणों के अविष्कार से इसे संरक्षित किया जाने लगा।

'बाल-साहित्य वह साहित्य है जो बच्चों के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर इस तरह से सृजित किया जाए कि बच्चे न केवल उसे पढ़ने में रूचि ले बल्कि उससे कुछ ग्रहण भी करें। इसके लिए परमावश्यक है कि बाल-साहित्य बच्चों के धरातल तक उतरकर, उनके मनोभावों तथा रूचियों को ध्यान में रखकर, मनोरंजक शैली में ज्ञानवर्धक रूप में लिखा गया हो।'[1] प्राचीन समय में पंचतंत्र, हितोपदेश, अमर कथाएँ व अकबर बीरबल के किस्से जैसे बाल-साहित्य का सृजन हुआ यह परम्परा अनवरत जारी है।

बाल-साहित्य अत्यन्त सरल समझी जाने वाली एक कठिन साहित्यिक विधा है। वैसे तो बच्चों के लिए कुछ लिखना सरल लगता है परन्तु वास्तव में बाल-मन को समझते हुए उनके अनुकूल साहित्यिक रचना करना अत्यंत कठिन कार्य है। कई रचनाकारों ने बाल-साहित्य लेखन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। आधुनिक हिन्दी साहित्य की प्रतिष्ठित रचनाकार मालती जोशी ने भी बाल-साहित्य के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा और विशेषज्ञता का परिचय देते हुए कीर्तिमान कायम किए है।

मालती जोशी ने कई बाल-साहित्य की रचनाएँ की है। इनमें स्नेह के स्वर सच्चा सिंगार, सी आई डी नंबर 000, परीक्षा और पुरस्कार, रिश्वत एक प्यारी सी दादी की घड़ी आदि है।

मालती जोशी की 'स्नेह के स्वर' शीर्षक बाल-कहानी के केन्द्र में किशोर नायक पवन है। जो अपने घर के वातावरण और विशेष रूप से अपनी बहन छाया के उत्तरदायित्व से असंतुष्ट रहता है। पवन के किशोर हृदय में छोटी-छोटी अभिलाषाओं के पूर्ण न हो पाने का दुख छाया रहता है। पवन की इस मानसिकता का आभास निम्नांकित पंक्तियों के द्वारा हो सकता है-'पवन हायर सेकण्डरी पास हुआ पर मिठाई नहीं बटी क्योंकि छाया अस्पताल में थी। उसके कॉलेज की ट्रिप बैंगलोर गई पर वह नहीं जा सकता, क्योंकि छाया का ऑपरेशन था। मौसी की शादी पर माँ नहीं गई क्योंकि छाया को अकेली नहीं छोड़ सकती थी। इस साल नए स्वेटर नहीं बने क्योंकि छाया की बीमारी में बहुत खर्च हो रहा था। नन्हें गगन का जन्मदिन भी नहीं मनाया जा सका।'[2]

पवन अपनी और छाया की पढ़ाई की उपेक्षा करके कवि सम्मेलन सुनने के लिए घर से चला जाता है। पवन अपने मित्र भूषण के घर पहुँचता है, परन्तु भूषण उसके साथ कवि-सम्मेलन में जाने से इसलिए मना कर देता है क्योंकि वह अपनी दीदी को घर में अकेले नहीं छोड़ सकता है। पवन भी कवि-सम्मेलन में नहीं जाता है और भूषण के आग्रह पर कुछ समय उसके घर पर ही बिताता है। इस अवधि में भूषण के घर का वातावरण तथा भूषण और उसकी दीदी के संबंधों की पारस्परिकता को देखकर पवन के मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है और घर आकर वह अपनी बहन छाया के प्रति स्नेहशील हो जाता है।

मालती जोशी की 'एक बीमारी का इलाज' शीर्षक कहानी में केंद्रीय पात्र के रूप में चीकू नाम का संवेदनशील बाल पात्र विद्यमान है। चीकू तीसरी कक्षा में ही पढ़ता है परन्तु उसके मन में बड़ा आत्मविश्वास है। चीकू जब अपने समवयस्क मित्र सचिन के घर जाता है तो देखता है कि सचिन की छोटी बहन तीन दिन से ज्वर से ग्रस्त है। शामली को किसी अच्छे डॉ.क्टर को दिखाना आवश्यक हो जाता है और इसी सन्दर्भ में डॉ.राकेश का उल्लेख होता है। डॉ. राकेश की लालची प्रवृत्ति के कारण उन्हें राक्षस कहा जाता है। डॉ.राकेश के बारे में यह सब सुनकर चीकू तुरन्त डॉ.राकेश के बंगले पर जा पहुचता है। डॉ.राकेश चीकू के प्रिय अंकल थे और उसके मन में उनकी आदर्श छवि बनी हुई थी। चीकू डॉ.राकेश से शामली को देखने चलने के लिए तीव्र आग्रह करता है और उनकी फीस स्वयं देने की बात करता है। भावावेश में चीकू डॉ.अंकल के सामने जैसे दर्पण रख देता है चीकू कहता है 'आप चलेंगे न, अंकल। जो लोग आपकों राक्षस कहते है तो मुझसे सहा नहीं जाता आप इतने अच्छे जो है।'[3]

मालती जोशी की 'सच्चा सिंगार' शीर्षक बाल कथा के केंद्रीय चरित्र के रूप में किशोरी सुमति का व्यक्तित्व सामने आता है। सुमति 11 वीं कक्षा की मेधावी परिश्रमी और प्रतिभाशाली छात्रा है। सुमति के विद्यालय में दसवीं कक्षा द्वारा ग्यारहवीं कक्षाओं की छात्राओं का विदाई समारोह आयोजित किया जाता है। इस अवसर पर सभी लड़कियाँ नए और सुन्दर परिधान पहनकर विद्यालय आती है। परन्तु अपनी फ्राक नहीं सिल पाने के कारण सुमति को यूनिफार्म में ही स्कूल आना पड़ता है। जिसके कारण उसका मन बुझा-बुझा सा रहता है। विदाई समारोह में सुमति को जो कुछ सुनने को मिलता है उसके कारण उसके मन का अवसाद समाप्त हो जाता है। सुमति के चरित्र की ओर ये पंक्तियाँ संकेत करती है- 'विदाई समारोह बड़ा ही भावपूर्ण

* पुष्प निवास, गली नं 1 स्टेशन रोड़, रतलाम (म.प्र.) भारत

रहा, दसवीं की छात्राओं ने बड़े ही भावपूर्ण भाषण दिए। सुमति नहीं जानती थी कि सब लोग उसे इतना चाहते है इतनी इज्जत करते है। करीब-करीब प्रत्येक भाषण में उसका उल्लेख था, किसी ने उसे विद्यालय की महादेवी वर्मा, किसी ने सरोजनी नायडू तो किसी ने लता मंगेश्कर का खिताब दे दिया था, वह तो संकोच से गड़-सी गई थी।'[4]

दसवीं की छात्राओं के विचारों को सुनकर सुमति को गुणों की महत्ता की प्रत्यक्ष अनुभूति होती है। सुमति प्रेरक मानस का आभास उसकी इन पंक्तियों से होता है - 'मनुष्य की असली शोभा उसके गहनों-कपड़ों से नहीं होती, बल्कि उसके गुणों से होती है। लोग कपडों की तारीफ करते है और भूल जाते है पर गुणी व्यक्ति को लोग हमेशा-हमेशा याद रखते है।'[5]

मालती जोशी की बाल कहानी 'वह लड़की' की कोशी, कुशाग्र बुद्धि की छात्रा है। आठवीं की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने के पश्चात् आगे की पढ़ाई लिए वह मामा के साथ शहर आ जाती है। शहर के बड़े स्कूल के नये वातावरण में कोशी अथवा कौशल्या सहमी-गहमी रहती है। स्कूल की अन्य छात्राओं द्धारा उपहास का पात्र बनने के कारण कोशी अथवा कौशल्या दुखी रहती है। कौशल्या की भेंट एक बीमार लड़की मृणाल से होती है हमेशा बीमार रहने वाली मृणाल, कौशल्या के लिए तो प्रेरणा का स्त्रोत बन जाती है मृणाल की प्रेरणा से कौशल्या अपनी आत्महीनता से उबरकर विद्यालय की सभी गतिविधियों में भाग लेने लगती है। 'वह लड़की' कहानी की दोनों बाल पात्राएँ कौशल्या और मृणाल अपनी संवेदनशीलता और सहनशीलता के कारण उल्लेखनीय है।

मालती जोशी की 'सी आई डी नं 000' शीर्षक बाल कहानी के केन्द्र में नन्ही बच्ची चित्रा है। चित्रा ने अभी स्कूल जाना आरंभ ही किया था परन्तु उसका मन असीम उत्सुकता से भरा हुआ है। वह बात-बात पर प्रश्न करके अपनी माँ को हैरान करती रहती है। वह अपने आस-पास के परिवेश का अत्यन्त सूक्ष्मतापूर्ण अवलोकन करती है। घर में किसी भी प्रकार का झूठ चित्रा से छुप नहीं पाता है। एक दिन चित्रा के पापा यह बताकर कि वे रेल्वे स्टेशन जाने के बाद अपने कार्यालय पहुँचेगें, घर से चले जाते है। कुछ देर पश्चात् चित्रा के पापा ने भेजा है यह बतलाते हुए दो व्यक्ति धोखाधड़ी की नियत से चित्रा के घर आ जाते है। नन्हीं चित्रा अपनी मम्मी को यह याद दिलाती है कि रेल्वे स्टेशन और सर्किट होकर कार्यालय पहुँचने वाले थे अत: वे इतनी जल्दी कार्यालय पहुँचकर किसी को कैसे भेज सकते है। इस प्रकार चित्रा की समझदारी से वे लोग केवल रेडियों ले जाने में सफल होते है, किन्तु नगद राशि बच जाती है पुलिस द्धारा पूछे जाने पर चित्रा की समझदारी स्मरण शक्ति और गहन अवलोकन का आभास इन पंक्तियों से होता है 'चित्रा के बिना झिझक सब प्रश्नों के उत्तर दे दिए। गाड़ी का रंग और नम्बर तो उसने बताया ही साथ ही यह भी कि ड्राइवर गंजा था।'

उसने 'शर्मा अंकल' के बारे में बताया कि उनकी पेन्ट काली थी शर्ट सफेद चटखाते जूते, मनोज चाचा जैसे थे, सिगरेट का पैकेट अष्ठाना अंकल के समान था। बहुआ गहरे भूरे रंग का था, जिस पर ताजमहल बना हुआ था। उनका एक दाँत सोने की तरह चमक रहा था। आँखे बोलते समय मिची-मिची हो जाती थी। सामने के बालों में एक गुच्छा सफेद बालों का था वह तिवारी अंकल से ज्यादा ठिंगने थे।'[6]

मालती जोशी की 'परीक्षा और पुरस्कार' शीर्षक कहानी की बाल नायिका ज्योति के रूप में एक प्रेरक चरित्र की प्रस्तुती हुई है। इस कहानी में ज्योति की मम्मी बीमार हो जाती है तो ज्योति घर के सब दायित्व को बड़े गंभीरता और परिश्रम के साथ वहन करती है। इसका प्रतिकूल प्रभाव ज्योति की पढ़ाई पर पड़ता है। प्रतिवर्ष प्रथम आने वाली ज्योति इस वर्ष कक्षा में तीसरे स्थान पर आ जाती है। जिसके कारण उसका मन उदास हो जाता हैं। ज्योति के पापा उसे 'रिस्ट वॉच' का उपहार देते है, और उसे वास्तविक स्थिति का भान कराते है। बात कथा की अंतिम पंक्तियों में पापा के शब्दों में ज्योति के व्यक्तित्व का आभास मिलता है -'बेटा, स्कूल में तो तू हर साल अव्वल आती है पर इस साल भगवान ने हमारी कितनी कठिन परीक्षा ली थी उसमें भी तू हम सबके आगे निकल गई है। इसलिए अपना पुराना वादा आज पूरा कर रहा हूँ।'

'ज्योति को लगा वह सचमुच पहले नम्बर पर पास हुई है।'[7]

मालती जोशी की 'बाल कथा' 'मेहमान की वापसी' के केन्द्र में अजय का बाल चरित है। जो अल्सेशियन कुत्ते जॉली के सम्मोहन में बंध जाता है। इस कहानी में राय अंकल महीने भर के लिए बाहर जाते है तो अपने अल्सेशियन कुत्ता जॉली अजय के घर पर छोड़ जाते है। अजय को पहले तो कुत्ते से भय लगता है और वह उसे एक अनचाही बला के रूप में देखता है परन्तु शीघ्र ही अजय की कुत्ते से मित्रता हो जाती है। अजय और कुत्ते जॉली के मध्य की स्नेहपूर्ण पारस्परिकता निरन्तर प्रगाढ़ होती जाती है महीने भर पश्चात् राय दम्पत्ति के लौटने पर कुत्ता जॉली बड़ी स्नेहपूर्ण विकलता के साथ उनसे लिपट जाता है। जॉली बड़ी प्रसन्नतापूर्वक राय दम्पत्ति के साथ चला जाता है अजय जॉली को दोषी मानता है। अजय की सोच इन पंक्तियों में देखी जा सकती है- 'खाक जानता है प्यार की कीमत' अजय ने सोचा, 'कितना प्यार किया था मैंने उसे अपने दोस्त, अपनी पढ़ाई, अपना खाना-पीना सब कुछ भूल गया था मैं पर उसे क्या अंकल-आंटी को देखते ही सब भूल गया होगा।'[8]

'मेहमान की वापसी' कहानी का अजय कुत्ते जॉली को बेवफा समझता है परन्तु उधर जॉली के चले जाने से घर के वातावरण में सूनापन आ जाता है अजय अपनी रूलाई रोककर बिस्तर में लेटा रहता है तभी राय अंकल की वापसी होती है। और वे कुछ कहें इसके पहले की कुत्ता जॉली बड़े प्यार से अजय के पैरों में लिपट जाता है और अजय की सारी शिकायते आसूंओं में बह जाती है। अजय के रूप में एक स्नेहशील ओर संवेदनशील बाल चरित्र की प्रस्तुती हुई है।

मालती जोशी की 'रिश्वत एक प्यारी सी' शीर्षक कहानी के केन्द्र में नन्हीं बच्ची रेणु का भोला और निष्पाप चरित्र है। रेणु के माता-पिता एक शादी में कलकत्ता जाते है और उनके लौटते हुए रेल दुर्घटना की सूचना मिलती है। घर के सभी लोग दुख और सदमें में भगवान की मन्नत मांगते है, और प्रार्थनाएं करते हैं। दादी के कहने से रेणु के भोले मन में यह बात बैठ जाती है कि घर के सदस्यों द्धारा किए गए पाप और बूरे कामों का दण्ड मम्मी-पापा को मिल रहा है। वह भगवान के समक्ष अपने द्धारा की गई गलतियों का प्रायश्चित करती है और भविष्य में अच्छी लड़की बनने की प्रतिज्ञा करती है। कहानी के अंत में रेणु के माता-पिता सकुशल लौट आते है। रेणु को मन ही मन लगता है कि भगवान ने उसकी बात सुन ली। रेणु के बाल-चरित्र को यह पंक्तियाँ आलेकित करती है-'पापा......'पापा के गले में हाथ डालकर उसने धीरे से कहा 'मन्नत की तो हमें याद ही नहीं रही पापा! हमनें तो सिर्फ ठाकुरजी से अपनी गलतियों की माफी मांगी थीं और.....और अच्छी लड़की बनने का वादा किया था पापा यमेरी बच्ची उसकी जरूरत ही क्या थी। सबसे प्यारी रिश्वत तो तूने ही उसे दी, तेरी मम्मी ठीक कहती है पता नहीं किसके पुण्य हमें लौटाकर लाए है। क्या पापा वे तेरे ही पुण्य हो।'[9]

मालती जोशी की 'एक कर्ज एक अदायगी' शीर्षक कहानी के केन्द्र में

किशोरी रामकुँवर का परिश्रमी और संवेदनशील चरित्र प्रस्तुत हुआ है। रामकुँवर गाँव से पढ़ने के लिए शहर में आती है और छात्रावास में रहती है। छात्रावास में रामकुँवर के सब पैसे चोरी चले जाते है। रामकुँवर इतनी निर्धन है कि घर से दुबारा पैसे भी नहीं मँगवा सकती। रामकुँवर की सहायता करने के लिए प्राचार्य सब बच्चों और शिक्षकों से जुर्माने के नाम पर चन्दा एकत्रित करती है। परीक्षा के समय छात्रावास में संक्रमण बीमारियाँ फैल जाती है। रामकुँवर अपनी पढ़ाई की चिंता छोड़कर बीमार लड़कियों की सेवा करना चाहती है। प्राचार्य की आज्ञा से रामकुँवर को कक्षा की अन्य लड़कियों की पढ़ाई में सहायता करने का काम मिल जाता है। रामकुँवर बड़े उत्साह और समर्पण के साथ अपनी बीमार सहपाठियों की सेवा में जुट जाती है। अपनी परीक्षाएँ समाप्त हो जाने के पश्चात भी रामकुँवर छात्रावास में रूकी रहती है तथा दूसरी लड़कियों के सहयोग के साथ छात्रावास से सभी कामों को परिश्रम और लगन से किया करती है। रामकुँवर अपनी समर्पित सेवा के माध्यम से वास्तव में उस ऋण की कुछ पूर्ति करना चाहती है जो सभी छात्राओं का जुर्माने के रूप में उसके लिए वसूला गया था।

मालती जोशी की बाल कथा 'दादी की घड़ी' के केन्द्र में परिवार का सबसे नन्हा सदस्य दीपू है। दीपू के रूप में एक अत्यन्त भोले बालक का चरित्र प्रस्तुत हुआ है। दीपू को दूसरे दिन सुबह पिकनिक पर जाना है और अलार्म घड़ी नहीं मिलने के कारण वह चिंतित हो जाता है कि नींद कैसे खुलेगी। दादी द्वारा दीपू को बताया जाता है कि तकिये को समय बताकर सोने पर अवश्य ही नींद खुल जाती है। दादी की बात पर भोले दीपू को पक्का विश्वास हो जाता है। उसका तनाव दूर हो जाता है। वह तकिये को कहकर सो जाता है। सुबह पाँच बजे उठ जाता है और यही समझता है कि तकिये ने उसे जगा दिया तब दादी द्वारा दीपू को इस वास्तविकता का बोध कराया जाता है कि वास्तव में अपनी आत्म शक्ति के कारण ही हम निश्चित समय पर जाग सकते है।

मालती जोशी की 'रंग बदलते खरबूजे' शीर्षक कहानी बाल-कथा में दो भाई अतुल और असीम के मनौवैज्ञानिक चरित्र प्रस्तुत हुए है। घर के बाहर अतुल और असीम सक्रिय, लोकप्रिय और प्रतिभावान छात्र के रूप में सामने आते है परन्तु घर में असीम और अतुल लगातार झगड़ते रहते है। उनकी पारस्परिक कलह के कारण घर का वातावरण विषम हो जाता है। वे दोनों भाई अतिथियों के सम्मान की भी चिन्ता नहीं करते है। और उनके सामने ही परस्पर मारपीट करने लगते है। असीम और अतुल को रास्ते पर लाने के लिए उनके माता-पिता पारस्परिक कलह का स्वांग भरते है। घर में माता-पिता के कलह के कारण अतुल और असीम के मित्र घर आना बंद कर देते है। माता-पिता के कलह से परेशान होने पर अतुल और असीम को अपनी गलती का अहसास हो जाता है।

मालती जोशी की बालकथा 'बैचेन' में शीर्षक के अनुरूप ही एक बैचेन किशोर रवि का चरित्र है। इस कहानी में रवि के स्कूटर से एक नन्हीं बच्ची फ्लारी से टकरा जाती है। रवि दुर्घटना स्थल पर रूके बगैर ही निकल जाता है परन्तु उसका मन अशांत हो जाता है और वह अपराध बोध से ग्रस्त हो जाता है। रवि की बैचेनी का आभास उसकी माँ को हो जाता है। रवि की मम्मी किसी प्रकार दुर्घटना का सूत्र भी खोज लेती है तथा अस्पताल में बच्ची फ्लारी को भी खोज लेती है। दुर्घटना का उस व्यक्ति से संपर्क होने और उसके कुशलतापूर्वक समाचार से रवि का सन्ताप समाप्त हो जाता है। गलत काम करने में बैचेनी का अनुभव होने की गुणवत्ता ही रवि के चरित्र को प्रभावी बनाता है।

मालती जोशी की बाल-कथाओं में बाल और किशोर वय के विभिन्न चरित्र प्रस्तुत हुए है जिसमें भोलापन, सहजता, संवेदनशीलता, स्नेहशीलता, सदाशयता और उत्साह आदि का समावेश हुआ है। उनकी कहानियों में बाल-मन की स्नेहशीलता का विस्तार मूक पशुओं तक में भी देखा जा सकता है। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से बालकों का ज्ञानवर्धक व मार्गदर्शन किया है। उनकी कहानियाँ बच्चों के लिए शिक्षाप्रद एवं प्रेरणादायी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शकुन्तला वर्मा - बाल साहित्य की संक्षिप्त रूपरेखा, पृ.33
2. मालती जोशी - स्नेह के स्वर, पृ.5
3. मालती जोशी - स्नेह के स्वर, पृ.27
4. मालती जोशी - सच्चा सिंगार, पृ.8
5. मालती जोशी - सच्चा सिंगार, पृ.10
6. मालती जोशी - सी.आई.डी नं 000, पृ.
7. मालती जोशी - परीक्षा और पुरस्कार, पृ.14
8. मालती जोशी - परीक्षा और पुरस्कार, पृ.14
9. मालती जोशी - रिश्वत एक प्यारी-सी, पृ.13

****

मन्नू भंडारी की कहानियों में संवाद-योजना

डॉ. रजनी रेलवानी *

प्रस्तावना - कहानी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व संवाद या कथोपकथन होता है। संवाद कहानी की कथानक रूपी देह में रक्त के प्रवांह की भांति होते है। संवाद कहानी में कहीं भावात्मक होता है,तो कहीं सामान्य विशेष विश्लेषणात्मक अथवा वस्तुपरक होते है। कभी संवाद व्यक्ति के मन की परतें खोलते है तो कभी सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित करते है। कभी कहानी के संक्षिप्त संवाद में गागर में सागर दिखता है तो कभी लम्बे संवाद में भावो की सरिता प्रवाहित होती है।

कहानी में कथावस्तु चरित्र परिवेश और उदेश्य की भी अलग-अलग विधियाँ होती है। कथावस्तु के विस्तार मे योगदान देने वाले संवाद, चरित्र-चित्रण में उपादेय संवाद, परिवेश का परिचय देने वाले संवाद, कहानी के उदेश्य को उजागर करने वाले संवाद होते है।

कथावस्तु को संवाद गतिशील बनाते है। कथावस्तु की एकरस्ता को तोड़ने और उसे सजीव बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। संवाद पात्रों के चरित्र को उजागर करने में महत्वपूर्ण होते है। जैसा मनुष्य का मन होता है वैसा ही उसकी वाणी होती है अर्थात पात्रो के संवाद वास्तव में उनके चरित्र का दर्पण होते है। पात्रों की मनोवृत्ति के माध्यम से उनके चरित्र के संबंध मे संवाद सहज ही टिप्पणी कर देते है। परिवेश का परिचय दे सकने की क्षमता को कहानी के संवाद की महत्वपूर्ण विशेषता माना जाता है। संवाद परिवेश चित्रण का सशक्त माध्यम होते है। कहानी के घटनास्थल के गली, मोहल्ले, गाँव, शहर और देश का परिचय कहानी के संवाद में मिल सकता है। कहानी के संवाद केवल परिवेश का परिचय ही प्रस्तुत नहीं करते अपितु उसे जीवन्त बना देते है। कहानी के उद्देश्य को उजागर करने की क्षमता भी संवाद की महत्वपूर्ण विशेषता है। अनेक बार कहानी के किसी पात्र के संवाद के माध्यम से कहानी का मूल उद्देश्य सहज ही व्यक्त हो जाता है। कहानी के संवाद जीवन्त और प्रामाणिक तभी हो पाते है, जब वे पात्रानुकूल होते है। पात्र विशेष का जैसा व्यक्तित्व और मानसिक परिवेश होता है, उसके संवाद भी उसके अनुकूल होते है। संवाद के वर्ग, सम्प्रदाय और धर्म आदि के अनुकूल होते है तभी प्रभावी बन पाते है। पात्रानुकूलता वास्तव में कहानी के संवाद की ऐसी विशेषता है, जिसके महत्व को कम करके नहीं देखा जा सकता।

मन्नू भंडारी की प्रतिनिधि कहानियों मे कथावस्तु में विस्तार देने वाले, चरित्र-चित्रण को महत्वपूर्ण बनाने वाले एवं कहानी के उद्देश्य को उजागर करने वाले संवाद स्पष्ट रूप से देखे जा सकते है।

मन्नू भंडारी की 'ईसा के घर इंसान' शीर्षक कहानी को संवाद-प्रधान कहा जा सकता है। संवादों के माध्यम से इस कहानी में कथावस्तु को गति मिलती है। परिवेश चित्रण में संवाद सहायक है। आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई 'ईसा के घर इंसान' कहानी की नायिका का संवाद कथानक के परिवेश की ओर अर्थपूर्ण संकेत करता है - 'मुझे तो यह जगह बहुत पसंद है। पहाड़ियों से घिरा हुआ यह शहर और एकान्त में बसा यह कॉलेज। जिधर नजर दौडा़ओं हरा-भरा ही दिखाई देता है।'[1] परिवेश की इस रम्यता के साथ ही अगले संवाद में ही जेल के उल्लेख के माध्यम से उस परिवेश की यंत्रण की ओर चित्रण हुआ है, जिसका संकेत नायिका के इस संवाद में विद्यमान है - 'पर एक बात मेरी समझ में नहीं आई। यह कॉलेज जेल के सामने क्यों बनाया? फाटक से निकलते ही जेल के दर्शन होते है तो लगता है, सबेरे-सबेरे मानो खाली घड़ा देख लिया है, मन न जाने कैसा-कैसा हो उठता है।'[2]

चर्च के रहस्यमय वातावरण के भीतर चलने वाले कुचक्र को 'ईसा के घर इंसान' कहानी में संवाद के माध्यम से ही उजागर कराने का प्रयास किया गया है। सिस्टर एंजिला का यह प्रलाप पूर्ण संवाद उल्लेखनीय है- 'देखो कितनी सुंदर साड़ी पहन रखी है इसने। फिर हम क्यों अच्छे कपड़े नहीं पहने? हम इंसान नहीं है? मैं नहीं रहूँगी यहाँ, मैं कभी नहीं रहूंगी। देखो मेरे रूप को।'[3] सिस्टर एंजिला के उमंगों से भरे और विद्रोही चरित्र का परिचय इस संवाद से मिलता है- 'मैं अपनी जिन्दगी को, अपने इस रूप को चर्च की दीवारों के बीच नष्ट नहीं होने दूँगी। मैं जिंदा रहना चाहती हूँ, आदमी की तरह जिंदा रहना चाहती हूँ।'[4]

'ईसा के घर इंसान' का चरमोंत्कर्ष भी सिस्टर लूसी के संवाद में ही निर्मित हुआ है। लूसी का संवाद चर्च के वातावरण पर से रहस्य का परदा उठाता हुआ सा लगता है - 'एंजिला चली गई। फादर कुछ नहीं कर सके। उनकी खुद की तबियत नहीं खराब हो रही है। सवेरे तो हम लोग भी वहाँ गए थे। कमरे में तो जाने नहीं दिया हमें, पर बाहर से फादर हमको देख रहा था। फादर हम सब पर भी बड़ा रौब जमाया करते थे, एंजिला ने उनका नशा डाउन कर दिया। (फिर दोनों हाथ की मुट्ठियाँ भींच कर उसने मन के छलकते आनंद पर जैसे काबू पा लिया) एंजिला को सुधार नहीं सके, अपनी इस असफलता का गम उन्हें बुरी तरह साल रहा है, आत्मग्लानि से बार-बार उनकी आँखों में आँसू आ रहे है। मदर बड़ी परेशान और दुखी है, उन्हें बहुत तसल्ली दे रही है। बार-बार ईसामसीह से उनकी शान्ति के लिए प्रार्थना भी कर रही है। और एक बड़ी ही व्यंगात्मक मुस्कुराहट उसके होंठो पर फैल गई।'[5]

'जीती बाजी की हार' कहानी में मुरला और आशा के पारस्परिक संवाद में ही चरमोंत्कर्ष निर्मित होता है। मुरला और आशा के मध्य शर्त लगी थी कि मुरला भी घर-गृहस्थी के बगैर नहीं रह पाएगी। मुरला वास्तव में अविवाहित ही रहती है तथा उच्च अधिकारी के रूप में स्वतंत्र जीवन जीती है। वर्षो के

* एम-ख, 95 स्टेडियम ग्राउण्ड नंदा नगर, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अंतराल से जब मुरला और आशा की भेंट होती है और उनके पारस्परिक संवाद में ही कहानी अपने चरमोंत्कर्ष पर पहुँच कर उद्देश्य की प्राप्ति करती है। मुरला और आशा का संवाद निम्नानुसार है–

मुरला ने हंसते हुए कहा – 'देख हार गई ना।' पर उसके स्वर में विजय का उल्लास न था। 'अच्छा जा, छोड़ा – मुझे कुछ नहीं चाहिए।' आशा ने कहा – 'नहीं, नहीं। तुझे माँगना ही होगा। जो चाहे सो माँग ले।' मुरला एक क्षण को खामोश रही, फिर बोली – 'अच्छा माँग लू, इनकार तो नहीं करोगी।'

आशा हँसी – 'अरे माँग ले ना। बहुत बड़ा दिल पाया है, फिर तू तो यों भी कुछ मांग ले तो मना न करूं, और अभी तो हार कर बैठी हूँ, किस मुँह से मना करूंगी।'

मुरला ने पास बैठी हुई आशा की सबसे छोटी लड़की को पास खींच कर प्यार करते हुए कहा 'तो अपनी यह बिटिया मुझे दे दें।'[6]

उक्त संवाद में मुरला का अंतिम वाक्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। 'तो अपनी यह बिटिया मुझे दे दें', इस वाक्य में मुरला के चरित्र की अपूर्णता और वात्सल्य की ललक उजागर होती है। यही संवाद कहानी का अंतिम वाक्य है। मुरला का संवाद कहानी का अंतिम वाक्य है। मुरला का संवाद कहानी को चरमोंत्कर्ष पर ले जाकर पूर्णता प्रदान करता है।

मन्नू भंडारी की 'एक कमजोर लड़की की कहानी' में संवादों का विस्तार देखा जा सकता है। रूपा और पिताजी के संवाद से कहानी का आरंभ होता है। इस कहानी में कथावस्तु का विस्तार रूपा और ललित के पारस्परिक संवाद के माध्यम से होता है। रूपा और ललित के संवाद, इन दोनों पात्रों के चरित्र को भी उजागर करते है। संवाद के द्धारा ही यह तथ्य सामने आता है कि कहानी की नायिका रूपा वास्तव में दुर्बल व्यक्तित्व वाली लड़की है। पिताजी हो अथवा ललित, रूपा उनकी बातों के समक्ष अन्तत: समर्पण कर ही देती है। ललित विदेश चला जाता है और रूपा का विवाह प्रौढ़ वकील से हो जाता है। ललित पुन: आकर रूपा से मिलता है और भाग चलने के लिए जिद करता है। रूपा नहीं चाहते हुए भी अपने चरित्र की मर्यादा लांघकर ललित के साथ भाग जाने को तैयार हो जाती है। यह प्रसंग कहानी का चरमोंत्कर्ष है। नायिका घर छोड़कर जाने के लिए तैयार है और उसके पति घर लौटते ही विलम्ब का कारण बतलाते है। पति के संवाद रूपा के निर्णय को एक झटके में बदल देते है। वह घर छोड़कर जाने का विचार त्याग देती है। कहानी को पूर्णता प्रदान करने वाले संवाद निम्नानुसार हैं–

उसने पूछा – 'बड़ी देर कर दी आज आपने?' उसका स्वर काँप रहा था।

'आज एक बड़ा पुराना मित्र मिल गया, उसी से बातें करने में देरी हो गई।'

अपने आप को स्वाभाविक बनाए रखने के लिए रूपा जल्दी–जल्दी खाना परोसने लगी। उसका हाथ काँप रहा था और वकील साहब बोले चले जा रहे थे– 'बड़ी मुसीबत में था बेचारा। उसकी स्त्री अपने किसी आशिक के साथ भाग गई।' रूपा का चेहरा फक्, उसका हाथ जहाँ का तहाँ रूक गया। 'मुझसे सलाह लेना चाहते थे कि क्या किया जाए। मैंने साफ कह दिया, कानूनी कार्यवाही करो पर उनका कहना था कि पढ़ी–लिखी लड़की है, कानून के जोर से उसे अपना नहीं बनाया जा सकता।'

कपड़े बदलने का काम खत्म करके वकील साहब कुर्सी पर आ डटे थे। रूपा के पैर बुरी तरह लड़खड़ा रहे थे और वकील साहब अपनी ही धुन में बोले जा रहे थे – 'मैंने तो साफ कह दिया, पढ़ी–लिखी हो तो सर पर बिठाओ। पढ़ी–लिखी है, पढ़ी–लिखी है अरे पढ़ी–लिखी तो तुम भी हो, भागने की बात को दूर रही, दो साल हो गए, मुझे कभी याद नहीं पड़ता कि तुमने आँख उठाकर किसी पुरूष से बात की हो। यह भी कोई बात हुई भला।'[7] 'वकील साहब के उक्त संवाद में रूपा के प्रति उनके मन में असीम विश्वास की अभिव्यक्ति हुई है, जिसे सुनकर रूपा का घर छोड़कर जाने का निर्णय पलभर में तिरोहित हो जाता है उसकी आँख से प्रायश्चित के आँसू बहने लगते है। इस प्रकार वकील साहब के संवाद कहानी के उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होते है।

संवाद के अनेक रूप और स्तर होते है। व्यक्ति विशेष के साथ संवाद के स्वरूप और स्तर में भी भिन्नता आ जाती है। पत्नी से जो संवाद संभव नहीं हो पाता है, वह मित्र के साथ सहज ही हो जाता है। मन्नू भंडारी की 'हार' कहानी में पति और पत्नी राजनैतिक प्रतिद्धन्द्वी हैं परंतु पति की मनोदशा उसके संवाद के द्धारा सामने आ जाती है – 'पता नहीं क्या तुम दो–तीन दिन से बड़े खिन्न दिखाई देते हो। अरे मुझसे शर्त बदलो, जीत तुम्हारी निश्चित है।' मित्र ने कहा–'इसी का तो गम है भाई, मेरी जीत की संभावना हीं मुझे खिन्न बनाए दे रही है। सोचता हूँ मैं हार भी गया तो उस लज्जा को सह लूँगा। पुरूष हूँ और सहने का आदी। पर जीत गया तो दीपा का क्या होगा ? तुम देखते हो पगली हो गई है इसके पीछे। वह हार का धक्का बर्दाश्त नहीं कर सकेगी और सच पूछो तो इसीलिए चाहता हूँ कि मैं हार जाऊँ।' बडे ह़ताश और बुझे हुए स्वर में शेखर ने कहा।

'क्या पागलों जैसे बातें कर रहे हो। उनको जब तुम्हारी कोई चिन्ता नहीं, तो तुम क्यों उनकी चिंता से यों गमगीन हुए बैठे हो ? तुम्हारी निन्दा करने में वह पागलपन की सीमा तक उतर आई थी, यह भी याद है ?'

'मुझे उसके इस पागलपन से ही तो प्यार है शर्मा। जब देखता हूँ कि लड़कियाँ भावुकता को परे रखकर किसी बात पर यों खुले दिमाग से सोच सकती है तो भारत के सुनहले भविष्य की तस्वीर आँखों में उतर आती है।'[8]

नारी के मन के रहस्य को नारी ही अधिक अच्छी तरह समझ सकती है और पारस्परिक संवाद की अंतरंगता में हृदय के रहस्य से परदा भी उठ जाता है। मन्नू भंडारी की 'एक बार और' शीर्षक कहानी में बिन्नी और सुषमा के संवाद नारी–मन का दर्पण बन जाते है। मन में मचलते भंवर को संवाद की सहजता में व्यक्त करने की विशेषता यहाँ देखी जा सकती है–

कुंज का पत्र पाकर जब उसने अपने जाने की बात कहीं थी, तो सुषी विस्मित–सी उसे देखती रह गई थी। रात में सोते समय केवल इतना ही कहा था–'पहले का जाना तो तब भी समझ में आता था बिन्नी, पर अब ? जो आदमी बार–बार वायदा करके मुकर जाए, उससे क्या आशा करती है तू ?' 'आशा ? क्या हमेशा कुछ पाने की आशा से ही संबंध रखा जाता है।' कहकर ही बिन्नी को लगा था कि वह सुषमा को समझा रही है या अपने मन को ? 'सम्बन्ध ?' सुषमा के स्वर में वितृष्णा भरी खीज उभर आई। 'तू अभी भी समझती है कि तू उसे प्यार करती है या कि वह प्यार है जिसके जोर से तु खिंची हुई चली जाती है? क्यों अपने को धोखा दे रही है बिन्नी ? अब तेरे संबंध का आधार प्यार नहीं – प्रेस्टीज है, कुचला हुआ आत्म–सम्मान। तुझे कुंज नहीं मिला, तो तू अपने को बर्बाद करके भी यह संभव नहीं होने देगी कि वह मधु को मिले।'

बिन्नी भीतर तक तिलमिला उठी। मन हुआ चीखकर सुषमा को चुप कर दे, पर वह भिचे गले से केवल इतना ही कह सकी। 'तू –चुप हो जा सुषमा।'[9]

मन्नू भंडारी की 'दीवार, बच्चे और बरसात' शीर्षक कहानी संवाद प्रधान है। अपने पति के दुर्व्यवहार से विवश होकर एक स्त्री अपना घर छोड़कर चले जाने को विवश हो जाती है। यह प्रसंग महिलाओं की बैठक में पारस्परिक

संवाद के माध्यम से ही कहानी आरंभ से अंत तक पहुँचती है। भग्गो भाभी, बड़ी भाभी, मंझली भाभी और अम्मा के पारस्परिक संवाद में पारस्परिक रूढ़िग्रस्त नारी के चरित्र को अभिव्यक्ति मिली है। इन संवादों से यह बात भी उजागर होती है कि नारी, स्वयं ही नारी की सबसे बड़ी शत्रु होती है तथा परस्त्री की निंदा में उसे बहुत रस मिलता है। भग्गो भाभी का यह संवाद द्दष्टव्य है – 'अरे ये सब तो नाटक होगा, नाटक। हमारे पुरखे तिरिय चरित्तर की जो महिमा बखान गए सो झूठी नहीं है। मैं तो क हूँ, पहले से ही किसी से लगी बैठी होगी मरी, बस बहाना चाहिए था।'[10]

महिलाओं की चौंकड़ी में संवाद का उत्साह हिलोरे लेता रहता है और अचानक दीवार दरक जाती है। कहानी का समापन संवाद के माध्यम से ही होता है, जहाँ दीवार टूटने के माध्यम से रूढ़ियों के विरूद्ध विद्रोह की भावना प्रतीकात्मक रूप से व्यक्त हुई है। कहानी के अंतिम संवाद में चरमोंत्कर्ष के साथ उद्देश्य की प्राप्ति होती है – 'गई कहाँ, कुछ पता लगा?' भाभी में जिज्ञासा प्रगट की। 'जाने कहाँ मरी है।' बाहर फिर धमाका हुआ और रोने की मिली-जुली आवाजें आने लगीं। बड़ी भाभी गरम होती हुई बाहर गई- 'ये सत्यानासी बच्चे दो घड़ी चैन से नहीं बैठने देंगे।' पर बाहर जाते ही चिल्लाई 'अरे अम्मा देखो तो, सारी की सारी दीवार टूट गई।'[11]

टूटी दीवार को देखकर अम्मा चिल्लाने लगती है, उनके संवाद में पुरानी पीढ़ी का प्रलाप प्रगट होता है-'उसी दिन मैंने कहीं थी कि इस पौद को उखाड़ फेंको, पर सुनता कौन है मेरी इस घर में। देखों, मरी जरा-सी है। पर सारी की सारी दीवार तोड़ कर रख दी।'[12]

मन्नू भंडारी की प्रतितिनिधि कहानियों में संवाद के सीमित परंतु सामर्थ्यपूर्ण प्रयोग के द्वारा परिवेश और चरित्र के अनेक आयाम उजागर हुए है। कहानी लेखिका ने अपनी संवाद योजना का सार्थक उपयोग करते हुए कथावस्तु की गति, रोचकता एवं औत्सुक्य की भी वृद्धि की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 10
2. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 10
3. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 17-18
4 मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 18
5 मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 21
6 मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 41
7. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 63-64
8. मन्नू भंडारी – तीन निगाहों की एक तस्वीर, पृ 81
9. मन्नू भंडारी – एक प्लेट सैलाब, पृ 60
10. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 99
11. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 99
12. मन्नू भंडारी – मैं हार गई, पृ 99

****

मालती जोशी के कहानी साहित्य में मध्यमवर्गीय नारी पात्रों के विविध रूप

डॉ. कविता रेलवानी *

प्रस्तावना – मालती जोशी मुख्यत: और मूलत: मध्यमवर्गीय पारिवारिक परिवेश की कथाकार हैं उनकी अधिकांश कहानियों में मध्यमवर्गीय नारी पात्रों के विविध रूपों की अवधारणा विद्यमान है। उनकी समग्र कथायात्रा में आरंभ से आज तक मध्यमवर्गीय नारी पात्रों की ही प्रधानता रही है। उनकी कहानियों में मध्यम वर्ग के नारी पात्रों को खोजने की आवश्यकता नही है अपितु मध्यमवर्गीय नारी पात्रों का संसार ही वास्तव में मालती जोशी का कहानी संसार हैं। श्रीमती जोशी की कहानियों में मध्यमवर्गीय नारी पात्रों का जो संसार बसा है उसमें वर्तमान समाज की नारी की विविध छवियाँ विद्यमान है।

समाज का मध्यम वर्ग प्राय: जीवन के मध्य मार्ग पर ही चलने का अभ्यासी रहता है इसलिये शुद्धता या कट्टरपथी आग्रह के स्थान पर मध्यमवर्ग सदा सरलता और सुगमता के पथ पर चलना चाहता है। मध्यमवर्ग के विभिन्न परिवेश मालती जोशी की कहानियों में चित्रित हुए हैं।

मालती जोशी की कहानियाँ मध्यमवर्गीय जीवन का दस्तावेज है। स्वयं कथाकार के अनुसार – 'पिछले तीस–चालीस वर्षो से अनवरत लिख रही हूँ। सारी कहानियों को अगर एक शीर्षक में बांधना हो तो कहना पड़ेगा कि ये मध्यमवर्गीय जीवन का दस्तावेज हैं। मैं स्वयं इसी वर्ग से हूं इसलिये मध्यमवर्ग के सुख दुख राग–द्वेष, आशा आकांक्षा से अच्छी तरह परिचित हूँ। मध्यमवर्गीय परिवार या मध्यमवर्गीय नारी मेरी कहानियों का केन्द्र बिन्दु रहे। मेरी कहानियाँ मेरी तरह ही घरेलू है। घर आँगन में सिमटी हुई है, उनका यह घरेलूपन उनकी कमजोरी भी है और शक्ति भी। इसी कारण से आलोचना का शिकार भी होती है। समीक्षक उन्हें खारिज कर देते हैं और इसी घरेलूपन के कारण वे लोकप्रिय भी है पाठक इन कहानियों में अपने जीवन का प्रतिबिम्ब देखते हैं।'[1]

मालती जोशी के विभिन्न कहानी संग्रहों की कहानियों द्वारा हम मध्यमवर्गीय नारी पात्रों के प्रतिबिम्ब देख सकते है।

मालती जोशी की 'मुट्ठी भर खुशियाँ' कहानी की नायिका के रूप में मध्यमवर्गीय एकाकी नारी चरित्र के अवसाद को उजागर किया गया है इस कहानी में वीणा के रूप में उत्साही, व्यावहारिक और महत्वकांक्षी मध्यमवर्गीय नारी का चरित्र प्रस्तुत किया गया है।

'एक जंगल आदमियों का' शीर्षक की नायिका नीता के रूप में एक ऐसी नारी का चरित्र प्रस्तुत किया गया जो अपने पति की मध्यमवर्गीय आकांक्षाओं की पूर्ति का माध्यम नहीं बनना चाहती है।

मालती जोशी की 'दूसरी दुनिया' शीर्षक कहानी की नायिका सुषमा और भाभी के माध्यम से मध्यमवर्गीय नारी के दो ऐसे चरित्र प्रस्तुत हुए है जो आर्थिक स्थिति में अंतर के कारण परस्पर विरोधी बन जाते हैं।

कहानीकार की 'शराफत' आत्म कथात्मक शैली में लिखी गई कहानी की नायिका के माध्यम से एक ऐसा नारी चरित्र सामने आता है जो मध्यमवर्गीय महिलाओं के मन में बसे भय और असुरक्षा की भावना को अभिव्यक्ति देती है।

'कवच' शीर्षक कहानी में माँ के माध्यम से एक ऐसी मध्यमवर्गीय प्रौढ़ा का चरित्र प्रस्तुत किया गया है जो विधवा होने के कारण अपने घर परिवार में भी अपमान का शिकार होती है।

'अक्षम्य' कहानी में गीता के रूप में मध्यमवर्ग की बीमार और अभिशप्त नारी की मार्मिक प्रस्तुति हुई है, तो दूसरी ओर बिन्दु के रूप में प्रगतिशील नारी का सशक्त और प्रेरक चरित्र सामने आया है।

श्रीमती जोशी की 'सन्नाटा' शीर्षक कहानी की नायिका उत्तरा के रूप में शिक्षित और महत्वकांक्षी मध्यमवर्गीय नारी का ऐसा चरित्र प्रस्तुत हुआ है जो अपनी उन्नति की प्रसन्नता में पति के सम्मिलित नहीं होने के कारण आहत होती है।

मालती जोशी की 'हमको दिया परदेस' शीर्षक कहानी की नायिका कुसुम के रूप में मध्यमवर्गीय आदर्शमयी नारी का पारम्परिक चरित्र प्रस्तुत किया गया है। कुसुम के चरित्र में परिवार के प्रति त्याग और समर्पण का प्रेरक रूप देखने को मिलता है।

मालती जोशी की 'बोल री कठपुतली' शीर्षक कहानी की नायिका आभा के चरित्र में मध्यमवर्गीय नारी की असहायता का चित्रण हुआ है आभा के चरित्र के माध्यम से कहानी में मध्यमवर्गीय समाज के इस सत्य को उजागर किया गया है कि आज भी अनेक परिवारों में आभा जैसी महिलाओं की स्थिति शिक्षित होने पर भी कठपुतली जैसी ही है।

'रानियाँ' शीर्षक कहानी की नायिका वंदना के माध्यम से उच्च मध्यमवर्गीय नारी का एक ऐसा चरित्र प्रस्तुत हुआ है, जो अपने पति की छल का शिकार होती है पति की पूर्व पत्नी के बारे में जानने के बाद उत्पन्न होने वाले तनाव को वंदना के चरित्र में स्पष्ट देखा जा सकता है।

लेखिका की 'आवारा बादल' शीर्षक कहानी में सौतेली मां के रूप में मध्यमवर्ग की नारी का प्रेरक चरित्र प्रस्तुत किया गया है। इस कहानी की नायिका के चरित्र में स्नेह और उदारशीलता का सरल स्वरूप सामने आता है।

श्रीमती जोशी की 'आखरी शर्त' कहानी की नायिका कुसुम के चरित्र मध्यमवर्गीय नारी के दोहरे मानदण्डो की प्रस्तुती हुई है। इस कहानी में कुसुम अपनी दीदी की बेटी और स्वयं अपनी बेटी के लिये अलग–अलग मानदण्ड रखना चाहती है।

* पुष्प निवास, गली नं 1 स्टेशन रोड़, रतलाम (म.प्र.) भारत

मालती जोशी की 'शुभकामना' शीर्षक कहानी में गौरी के रूप में एक ऐसी मध्यमवर्गीय नारी का प्रेरक चरित्र सामने आता है तो अभावो में गृहस्थी चलाने के लिये तत्पर है परंतु जिसके लिए अपने पति द्वारा किए गए चरित्र हनन और की गई उन्नति अच्छी नही लगती है।

इनकी 'औकात' शीर्षक कहानी की नायिका नीता का चरित्र निम्न मध्यमवर्गीय परिवार की अभावग्रस्तता का शिकार है।

मालती जोशी की 'सती' शीर्षक कहानी की नायिका नीलम के रूप में मध्यमवर्गीय नारी का ऐसा रूप प्रस्तुत किया गया है, जो विषम परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए विचलित हो जाती है और कुंए में छलांग लगा देती हैं

'अंतिम संक्षेप' शीर्षक कहानी की नायिका मम्मी के रूप में मध्यमवर्गीय परिवार की एक ऐसी प्रौढ़ नारी का चरित्रांकन हुआ है जो सब कुछ सहन करते हुए अपने बेटे के परिवार की सुख शांति बनाए रखने का प्रयास करती है। मम्मी के चरित्र में ममता, त्याग और सहनशीलता के साथ मध्यमवर्गीय पारम्परिक पारिवारिकता का आभास होता है।

मालती जोशी की 'क्षरण' शीर्षक कहानी की नायिका विमला मध्यमवर्गीय परिवार की उस उदार और सहनशील पीढी का प्रतिनिधित्व करती है जो अपने ही परिवार में सारा जीवन घुटने में ही बीता देती है विमला जितनी उदार है उसकी बहू नेहा उतनी ही अनुदार है। बहू के संकीर्ण व्यवहार के कारण विमला की आस्थाएं तक टुटने लगती है विमला के रुप में बुर्जुग पीढी की शिक्षित और संवेदनशील नारी का उदार चरित्र सामने आता है जो निरन्तर मौन पीडा सहने के लिए अभिशप्त है। विमला के चरित्र का आभास इन पंक्तियों के द्वारा हो सकता है– 'दोनों हाथो में सिर थामकर बिस्तर में धँस गई। आँसुओ का एक सैलाब –सा पलको में उमड आया। आस्थाओ के टूटने का दर्द क्या होता है इसे उन्होनें नये सिरे से महसूस किया। सोच काश! वे भी शर्माइन की तरह अनपढ और गंवार होती तो वे भी उनकी तरह हिलग–हिलगकर रो लेती।'

पर वे जानती है वे रोंएगी नही। इस बार अपनी पीडा का समुद्र चुपचाप पी जाएगी। अपनी टूटन किसी पर जाहिर नही होने देगी। ये छोटे–छोटे दुख उनके भीतर इसी तरह रिस्ते रहेंगे और उनके साथ भी क्षार होती रहेगी उनकी जिजीविषा।'2 विमला के रुप में मध्यमवर्गीय अबला नारी की छवि देखने को मिलती है।

उनकी 'मान–अपमान' शीर्षक कहानी की माँजी के रुप में मध्यमवर्गीय परिवार की ऐसा प्रौढा नारी का चरित्रांकन हुआ है। वह उदार स्नेहमयी और संवेदनशील है तथा अपने इन मानवीय गुणो के कारण ही जिसे अपमान का घूंट पीना पडता है।

मालती जोशी की 'छीना हुआ सुख' शीर्षक कहानी की बुआजी अनु और बिन्नी जैसे चरित्र मध्यमवर्गीय नारी का प्रतिनिधित्व करते है।

मालती जोशी की 'अपने अपने दायरे' शीर्षक कहानी की नायिका पुष्पा के रुप में मध्यमवर्गीय नारी का चरित्र प्रस्तुत किया गया है जो अपनी माँ द्वारा ही भ्रमित किऐ जाने के कारण ससुराल में लालचीपन प्रकट करती है।

मालती जोशी की 'सन्नाटा ही सन्नाटा' शीर्षक कहानी की सावित्री के रुप में एक ऐसी मध्यमवर्गीय प्रोढ़ नारी का चरित्र प्रस्तुत हुआ है जो अपने बहू के व्यवहार के कारण अपने पुत्र नरेश के साथ नही रह पाती है।

'हॉर्ले –स्ट्रीट' शीर्षक कहानी की मम्मी के रुप में एक ऐसी मध्यमवर्गीय नारी का चरित्र प्रस्तुत हुआ है। जो अपने लाड–प्यार में पकवान खिला–खिलाकर बेटे बबलू को बीमार बना देती है। मम्मी के चरित्र का आभास इस आत्मकथा में मिल सकता है। 'बबलू ठीक कह रहा था। गलती मेरी ही थी। पर मैं भी क्या करुँ– उसे सुबह–शाम ब्रेड–आमलेट और कार्नफ्लेक्स पर गुजारा करते देखकर मेरी ममता का बांध फूट पडा था। बडी मुश्किल से तो महीने भर को घर रामसेवक को सौपंकर मैं यहाँ आई थी। उतने थोडे से समय में ही सारी कसर निकालने का मेरा इरादा था वैसे भी साल भर से बबलू के पापा के लिए फीकी, चाय, उबली सब्जियाँ और चोकर के आटे की रोटियाँ बना–बनाकर मैं बोर हो गई थी। यहाँ आते ही जैसे मेरी पाक कला के लिए अपार संभावनाओ के द्वार खुल गए थे। मुझ पर एक तरह से 'कुकिंग का दौरा पड गया था।'[3]

लेखिका की 'गंगाबाई और मैं बेचारी' शीर्षक कहानी की नायिका के रुप में एक ऐसी मध्यमवर्गीय नारी का चरित्र प्रस्तुत किया गया है जो अपनी नौकरानी गंगाबाई की सम्पन्नता को देखकर ईर्ष्यालु बन जाती है आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई इस कहानी में जब नौकरानी गंगाबाई मध्यमवर्गीय नायिका से सोने का भाव पूछती है और अपने बच्चो के लिए सोने की बालियाँ बनवाने की बात करती है तो मध्यमवर्गीय नायिका का मन अपनी अभावग्रस्तता के कारण ईर्ष्या से भर जाता है मन की यह ईर्ष्या क्रोध के रुप में व्यक्त होती है और वह गंगाबाई को स्वर्ण आभूषण पहनने के कारण लडकियो के संकट ग्रस्त होने का उपदेश देने लगती है।

मालती जोशी की 'बचत एक ट्यूशन की' शीर्षक कहानी की नायिका के माध्यम से एक मध्यमवर्गीय नारी का चरित्र सामने आता है जो घर के आर्थिक अभाव के कारण अपने बेटे राजू को ट्यूशन पर नही भेजकर स्वयं ही पढाती है। मध्यमवर्गीय नारी का बचत के लिये किया गया प्रयास भी कैसे फजीहत का कारण बन जाता है। यह आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई कहानी को नायिका के चरित्र में माध्यम से दर्शाया गया है। मध्यमवर्गीय नायिका जब घर पर ही अपने बेटे राजू को पढाने लगती है तो पडोसी भी अपने बच्चो को पढने के लिए वहॉ छोड जाते है। नायिका के घर में एक छोटा सा गुरुकुल आरंभ हो जाता है और ट्यूशन की बचत से कहीं अधिक आर्थिक हानि होने लगती है। स्वयं नायिका के शब्दो में – 'महीने के अन्त में परिणाम निकला की दूध, बिजली और चाय शक्कर का खर्च दुगुना हो गया। कई चादरों पर स्याही के असम दाग थे। दो फूलदान टूट गए थे। राजू के घुटने में चोट थी और पेन गायब था। दो पडोसियो से झगडा हो गया था। सबसे बुरा तो यह हुआ कि राजू की अपने पिता के प्रति बौद्धिक स्तर पर विषय में आवांछित धारणाएं बन गई थी।'[4]

मालती जोशी की 'एक सार्थक दिन' शीर्षक कहानी की अम्मा और भाभी के रुप में मध्यमवर्गीय नारी के दो पारिवारिक चरित्र प्रस्तुत किए गए है दिलीप की बेरोजगारी के कारण अभावग्रस्त मध्यमवर्गीय परिवार की अम्मा और भाभी के चरित्र में करुणा और ममता कि छवि देखने को मिलती है।

'बाबुल का घर' शीर्षक कहानी की अम्मा सुमि, पम्मी के रुप में मध्यमवर्गीय पारिवारिक नारी चरित्रों का सहज चित्रण हुआ है। इस कहानी में पम्मी अपनी छोटी बहन सुमि के विवाह के अवसर पर अम्मा के घर आती है और माँ और बेटी के मध्य में सवेंदना के तार झनझना जाते हैं। सुमि के रुप में मध्यमवर्गीय नारी का सवेंदनशील चरित्रांकन हुआ है। इन्जीनियर से विवाह होने पर भी वह प्रसन्न नही हो पाती है क्योकि उसे अपनी वृद्ध अम्मा की बहुत चिन्ता है। सुमि के मध्यमवर्गीय चरित्र की सवेंदना को इन पंक्तियों से जाना जा सकता है– 'मैनें सुमि की ओर देखा अभी अभी रो चुकी उसकी आँखे एकदम सूनी थी। आँखों में न लाज के डोरे थे, न सपनो के रंग। शायद

कई रातों की जागी हुई थी। आखों के नीचे स्याह घेरे बन गये थे दुल्हन क्या ऐसी होती है? चेहरे पर जरा भी रौनक नही थी मैं तो सोच रही थी कि इन्जीनियर पति पाकर वह उडी उडी फिरती होगी। पर उसके पांवो में तो जैसे किसी ने मन मन भर की बेडियाँ डाल दी थी। अम्मा की चिंता में तो वह हंसना भी भूल गयी थी। शादी के वक्त लडकियों पर कैसा निखार आ जाता है पर इसका तो अपना चम्पई रंग की मटमैला पड गया था। और हैरत की बात यह थी कि घर में किसी को इसकी चिन्ता नही सब अपने अपने हिसाब किताब में व्यस्त।'[5]

मालती जोशी की 'आ अब लौट चले' शीर्षक कहानी की नायिका रेणु के रुप में एक ऐसी मध्यमवर्गीय विधवा नारी का चरित्रांकन हुआ है, जो अपने पति की मृत्यु के बाद ससुराल और पीहर में अपने ही परिजनो की स्वार्थी प्रवृत्तियों की शिकार का पैसा भी उसके पास है। ससुराल के सम्बंधियों के लालचीपन से घबराकर रेणु पीहर में आ जाती है परन्तु वहाँ भी सबकी दृष्टि उसके पैसे पर ही रहती है। पीहर वालो के प्रति रेणु का मोहभंग होता है और वह एक बार फिर ससुराल के प्रति अपने कर्तव्यों की चिन्ता करने लगती है।

मालती जोशी के सभी नारी चरित्र मध्यमवर्गीय जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। मध्य वर्ग में निरंतर शोषण और अन्याय का शिकार होते हुए त्याग, समर्पण, कर्तव्य परायणता और संघर्षशीलता का जो प्रभावी रूप सामान्य मध्यमवर्गीय नारी में दृष्टि गोचर होता है। उसी की प्रभावी अवधारणा मालती जोशी के कथा-साहित्य में हुई है।

मालती जोशी ने मध्यमवर्गीय पारिवारिकता के विराट परिवेश में नारी की विभिन्न छवियाँ प्रस्तुत की है। उनके नारी पात्र जीवन्त और विश्वसनीय है। वास्तव में विभिन्न मध्यमवर्गीय नारी चरित्र के वर्चस्व ने ही मालती जोशी के कथा साहित्य को महत्वपूर्ण बनाया। मध्यमवर्गीय नारी की अनेक प्रेरक, मार्मिक और प्रभावी छवियां उनकी रचनाओं में प्रस्तुत हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मालती जोशी - रहिमन धागा प्रेम का, पृ. 7,8
2. मालती जोशी - अंतिम संक्षेप पृ. 50
3. मालती जोशी - हार्ले स्ट्रीट, पृ. 19, 20
4. मालती जोशी - हार्ले स्ट्रीट, पृ. 41
5. मालती जोशी - बाबुल का घर, पृ. 19, 20

****

नारी मन की प्रवक्ता मालती जोशी

डॉ. रजनी रेलवानी *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश की प्रमुख कहानी लेखिकाओ में मालती जोशी का प्रतिष्ठित स्थान हैं। अपने सौम्य व्यक्तित्व और लोकप्रिय लेखन के कारण मालती जोशी ने समाज में सम्मानित स्थान बनाया हैं सुसंस्कारों और सुन्दर अभिरूचियों ने मालती जोशी के व्यक्तित्व को संवांरा तथा उनके कृतित्व को प्रभावी बनाया हैं। मालती जोशी ने महिला विषयक कई कहानियाँ लिखी हैं। एक महिला होने के नाते नारी से जुड़ी समस्याओं और मनोभावों से वे बखूबी परिचित थी। यही कारण हैं कि सदियों से तिरस्कृत उपेक्षित व उत्पीड़ित नारी के दुख दर्द को मालती जोशी ने न केवल समझा बल्कि उसको अपनी कहानियों के माध्यम से यथार्थ रूप में अभिव्यक्त भी किया। मालती जोशी एक ऐसी कथाकार हैं जिन्होंने पूरी स्वतंत्रता व सच्चाई के साथ नारी जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया हैं। मालती जोशी ने अपने कहानी साहित्य में नारी पात्रों के विविध रूपों को प्रस्तुत किया है। उन्होंने हर वर्ग की नारी को लेकर कहानियाँ लिखी। उनकी कहानी का केंद्र उच्चवर्ग, मध्यमवर्ग और निम्न वर्ग की नारियाँ है उन्होंने सामाजिक और आर्थिक आधार पर कहानियाँ लिखी है जिनमें मानवीय संबंधों पर आधारित, रूढ़ियों और परम्पराओं में जकडी नारी, आधुनिक नारी, नौकरीपेशा और अन्य पर निर्भर नारियों का चित्रांकन किया है।

श्रीमती जोशी ने उच्चवर्ग की नारियों के चरित्रों को अपनी कहानियों का आधार बनाया है। उच्चवर्ग समाज का एक ऐसा सुसम्पन्न वर्ग जिसके पास आवश्यकता से अधिक धन और विलासिता के अनेक साधन उपलब्ध है।

मालती जोशी ने अपनी कहानियों में उच्चवर्ग के जीवन का चित्रण किया है जिसमें नारी पात्रों की पर्याप्त और प्रभावी प्रस्तुती हुई है। उनकी 'शापित शैशव' कहानी की नायिका रजनी डॉ. कुमार के सम्पन्न घर में पत्नी के रूप में आती है परन्तु कुमार की पूर्व पत्नी की बेटी पम्मी के असहज व्यवहार के कारण वह परेशान रहती है। उच्चवर्गीय जीवन के परिवेश में माँ और बेटी के संबंधों के तनाव को इस कहानी में रजनी और पारूल के चरित्र के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। रजनी और पारूल के उच्चवर्गीय चरित्र की नियति को कहानी उजागर करती है।

मालती जोशी की 'महकते रिश्ते' शीर्षक कहानी की जिज्जी के रूप में उच्चवर्ग की प्रौढ़ नारी के उदार चरित्र की प्रस्तुती हुई है। जिज्जी के घर में सम्पन्नता का साम्राज्य रहता है परन्तु फिर भी उनके मन में आत्मीयता और उदारता बनी रहती है।

मध्यम वर्ग संभवत: किसी भी समाज का सबसे महत्वपूर्ण और संवेदनशील समुदाय होता है सामाजिक परिवर्तन और विकास में इस वर्ग की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अधिकांश कथाकार मध्यम वर्ग से संबंध रखते है। इस कारण मध्यम वर्गीय परिवेश और पात्रों का चित्रण कथा-साहित्य में बहुतायत से हुआ है जिनमें महिला पात्रों का प्रतिनिधित्व भी महत्वपूर्ण है। मालती जोशी का कथा संसार मध्यम वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है वे स्वयं मध्यम वर्ग से जुड़ी है। अत: उन्होंने ज्यादातर मध्यमवर्ग पर आधारित कहानियाँ लिखी है वे स्वयं लिखती है-'मैं मध्यमवर्गीय घरेलू महिला हूँ उसी जीवन को कहानियों में उकेरती रही हूँ। यह सराहा जाता है यह मेरे लिए गौरव की बात हैं।'[1] उन्होने अपनी कहानियो में मध्यम वर्ग की विविध समस्याओं को अनेक दृष्टिकोणों से स्पष्ट किया है।

मालती जोशी की 'एक ओर देवदास' कहानी की नायिका गीता के रूप में मध्यम वर्गीय नारी का एक ऐसा चरित्र प्रस्तुत किया गया है जो पहले तो स्वंय अपने प्रेमी से विवाह नहीं करती परन्तु बाद में उसका अन्यत्र विवाह हो जाने पर विचलित हो जाती हैं।

कहानीकार की 'कुहासे' कहानी में नायिका स्वाति और उसकी दीदी मध्यमवर्गीय परिवेश की दो ऐसे नारी चरित्र है जो दाम्पत्य तनाव के कारण अधूरेपन की अनुभूति करते हैं।

मालती जोशी की 'गुड मॉर्निंग मिस मैथ्यूस' शीर्षक कहानी में और संवेदनशील मध्यमवर्गीय प्रौढ़ नारी की मार्मिक छवि प्रस्तुत की गई है।

'एक घर सपनों का' शीर्षक कहानी की अम्मा के रूप में मध्यमवर्ग की पुरानी पीढ़ी के एक ऐसे नारी चरित्र का प्रतिनिधित्व हुआ है जो अपने समग्र जीवन को होम कर देने के बाद भी स्नेह के लिए अन्त तक तरसती रहती है। अम्मा के चरित्र का आभास इन पंक्तियों द्वारा हो सकता है -'जिंदगी भर अम्मा ने रोटियाँ सेकी है दूसरो की लेकिन वह मजबूरी दूसरे प्रकार की थी, यह दूसरे प्रकार की। मान-मनुहार की भूखी अम्मा क्यों मेरे पड़ोसियों पर जान छिड़कती है यह मेरी अब समझ में आया। पति से तिरस्कृत नारी की हर जगह दुर्गति होती है - चाहे ससुराल में चाहे पीहर में। वह तो बिना पेंदे की लुटिया होती है। जब चाहा लुढ़का दिया बिना पैसे की नौकरानी होती है। जैसा चाहा काम लिया और बस छुट्टी। जिसके पीछे चार बच्चे होते हैं, उसे तो जहर का घूंट पीना ही पड़ता है। अकेली जान हो तो कुएँ में कूद जाए कोई।'[2]

मालती जोशी की कहानियों में मध्यमवर्गीय नारी चरित्रों की ही प्रमुखता है परन्तु निम्नवर्ग के प्रभावी और मार्मिक चरित्रांकन के उदाहरण भी इनकी कहानियों में विद्यमान है।

श्रीमती जोशी की 'बदामी' शीर्षक कहानी की नायिका बदामी के रूप में निम्न वर्ग की लड़की का मार्मिक चरित्रांकन हुआ है। गाँव की गरीब लड़की बदामी को बचपन से ही शहर के बंगलें में नौकरानी बनकर रहना पड़ता है।

* एम-ख, 95 स्टेडियम ग्राउण्ड नंदा नगर, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बचपन में ही बदामी की सगाई भी हो गई है। बदामी के रूप में निम्नवर्गीय नारी का ऐसा चरित्र सामने आता है जो आजीवन अपने ही परिजनों के लिए खटकते रहने के लिए अभिशप्त है। उसकी विवशता का अंकन इन पंक्तियों में हुआ है- 'मतलब यह कि बदामी की सगाई हो चुकी है शादी होने तक जितना कमा सकेगी बाप को कमाकर देगी। फिर शायद पति के राज में भी किसी बंगले पर काम करने लगेगी। बचपन की ट्रेनिंग व्यर्थ थोड़े ही जाएगी।'[3]

मालती जोशी की 'मान-अपमान' शीर्षक कहानी की अल्लारक्खी के रूप में निम्नवर्ग की असहाय परन्तु उदार और सहनशील प्रौढ़ नारी का चरित्र प्रस्तुत किया गया है। करीम कम्पाउन्डर की बहन अल्लारक्खी को उसका पति तलाक दे देता है और भाई के घर में भी खाने के लाले पड़ते है।

अल्लारक्खी डॉक्टर यादव के परिवार में नौकरानी की तरह रहती है, परन्तु अपने व्यवहार से वह परिवार का अभिन्न अंग बन जाती है। कालान्तर में डॉ. यादव के परिवार में भेट होने पर अल्लारक्खी को निम्नवर्गीय होने के कारण अपमान की शिकार होना पड़ता है।

समाज में सभी स्तरों पर जिस तीव्रता से परिवर्तन हुए है। उसमें महिलाओं का केई भी वर्ग अछूता नहीं रह पाया है। महिलाएँ चाहे घर की चार दीवारों में कैद है या आधुनिक नारी के रूप में स्वच्छन्द विचरण करती है परन्तु किसी भी दशा में निरंतर हो रहे सामाजिक परिवर्तन में अप्रभावित नहीं रह सकती है। सामाजिक शीर्षक कहानी में माँ के रूप में प्रौढ़ नारी की उदार छवि उजागर हुई है। इस कहानी की माँ अपने पुत्र और बहू के दाम्पत्य जीवन को टूटने से बचाने के लिए त्याग और सहनशीलता के साथ समझदारी का भी परिचय देती है। पत्नी के झगड़े के बाद घर आए पुत्र को माँ स्वयं वापस पत्नी के पास भेज देती है।

पारिवारिक परिवेश की कथाकार होने के कारण मालती जोशी की कहानियों में दाम्पत्य जीवन का विविधतापूर्ण चित्रण हुआ है। मालती जोशी ने अपनी कहानी 'एक घर सपनों का' में एक ऐसी औरत का मार्मिक चित्रण किया है जो पति की शराब की आदत के कारण अपने घर के लिए तरस जाती है पति को अपनी पत्नी से कोई मतलब नहीं है। वह चली जाती है तो कोई दु:ख नहीं होता। आ जाती तो कोई प्रसन्नता नहीं होती। पत्नी अपने पति के घर को अपना न बना सकने से कितनी दु:खी है यह इसी वाक्य से पता चलता है-'यही पी. डबल की नौकरी तेरे बाबुजी की थी यही लालाजी की भी है पर दुल्हिन को देखो कैसे ठाठ से रहती?'[4] पति की आदतें पत्नी को कितना कष्ट देती है यही इस कहानी में बड़ी स्वाभाविकता और मार्मिकता से चित्रित किया गया है।

दाम्पत्य जीवन के अलगाव पर केंद्रित मालती जोशी की कहानियाँ प्राय: नारी परक है और उनमें पत्नी की उपेक्षा और अवमानना का मार्मिक चित्रण हुआ है। मालती जोशी की 'एक जंगल आदमियों' का शीर्षक कहानी की नायिका शास्त्रीय संगीत की कलाकार है परन्तु उसका पति उसे केवल अपनी स्वार्थपूर्ति का माध्यम बनाना चाहता है। इस कहानी में समकालीन जीवन की वह त्रासदी व्यक्त हुई है, जहाँ पत्नी केवल पति को प्रसन्न रखने का यन्त्र मात्र बनकर रह जाती है।

दाम्पत्य जीवन का अलगाव केवल पति और पत्नी के लिए ही नहीं अपितु संतान के लिए भी कटुतापूर्ण अनुभवों का कारण बन जाता है। मालती जोशी की आस्था के आयाम शीर्षक कहानी में कौमुदी को अपने माता और पिता के मध्य अलगाव का मूल्य चुकाना पड़ता है। इस कहानी में धीरेन्द्र उसके परिजन कौमुदी को सहर्ष पसंद कर लेते है परंतु यह जानकर विचलित हो जाते है कि माँ और पिता के मध्य तलाक हो चुका है। कौमुदी अपनी माँ के साथ ही रहती है परन्तु धीरेन्द्र के घर वाले यह शर्त लगा देते है कि शादी के अवसर पर कौमुदी के पिता की उपस्थिति होना अनिवार्य है। कौमुदी इस शर्त को अस्वीकार करते हुए विद्रोह कर देती है। परिवार में बेटे और बेटी के मध्य किये जाने वाले असमानतापूर्ण व्यवहार के कारण भी तनाव और अलगाव जन्म लेते है, जिसकी ओर मालती जोशी ने अपनी कहानी 'बेटी की माँ' में स्पष्ट संकेत किया है। इस कहानी में पुत्र और पुत्री में भेदभाव की भावना के कारण बेटी अपनी माँ से ही बहुत दूर जा पड़ती है। इस पारिवारिक अलगाव की मार्मिक अभिव्यक्ति इन पंक्तियों में देखी जा सकती है-'उन्हें (माँ को) सांत्वना देने का जरा भी मन नहीं हुआ क्योंकि पता था कि उनके आँसुओं में से एक भी मेरे लिए नहीं है। मेरे उजडे अतीत के लिए, मेरे सूने भविष्य के लिए, मेरे बिखरे सपनों के लिये अम्मा कब रोयी थी जो आज रोएगी। आज पक्का विश्वास हो गया अपने को कि जिनके लिए तिल-तिलकर जी रही हूँ वे मेरी माँ नहीं है। वे तो भैय्या की माँ हैं, अपने बेटे की माँ।'[5] बेटी की इस वेदना भरी अनुभूति में निश्चित ही पारिवारिक संबंधों में अलगाव का टूटता चेहरा दृष्टिगत होता है।

पारिवारिक और सामाजिक परिवेश के अन्तर्गत मालती जोशी ने रूढ़ियों और परम्पराओं में जकड़ी नारी तथा आधुनिक नारी का चित्रण भी अपनी कहानियों में बेखूबी किया है। उनकी 'साजिश' कहानी की अम्मा के रूप में रूढ़ियों और परंपराओं में जकड़ी प्रौढ़ नारी का चरित्र प्रस्तुत हुआ है। अम्मा की बेटी पम्मी ससुराल के त्रास से दुखी है और अम्मा के मन में उसके दुख के प्रति बहुत करूणा भी है। ससुराल से तंग आकर पम्मी अपने पीहर में रहना चाहती है परन्तु रूढ़ि ग्रस्तता के कारण अम्मा को यह स्वीकार नहीं होता है। इसी प्रकार मालती जोशी की 'कुलदीप' शीर्षक कहानी में श्रीमती शर्मा के रूप एक ऐसी नारी का चरित्र प्रस्तुत हुआ है जो अपने पुत्र मोह के कारण अंध विश्वास के जाल में घिरी रहती है। पुत्र की कामना में वे गिरते स्वास्थ्य की चिंता न कर बढ़ती उम्र में भी माँ बनती है। श्रीमती शर्मा के चरित्र का आभास इन पंक्तियों से होता है 'एक पुत्र का जन्म जैसे दोनों के जीवन का सबसे बड़ा प्रश्न, सबसे बड़ी चुनौती बन गया है, कितने ही साधु-संतों के पैर पूजे गए है। बीसियों जगह कुण्डलियाँ दिखाई गयी है। व्रत-उपवासों की तो कोई सीमा ही नहीं पर यह पुत्र रूपी नक्षत्र उनके भाग्याकाश में उदय होने का नाम नहीं ले रहा था मानों उनके धैर्य की परीक्षा ले रहा था।'[6]

इसी तरह मालती जोशी ने आधुनिक नारी का चित्रांकन भी अपनी कहानियों में किया है। मालती जोशी की कहानी 'किसी को किसी से शिकायत नहीं है' शीर्षक कहानी की नायिका ईशिता के रूप में आधुनिक नारी का चित्रांकन हुआ है। ईशिता का परिवार पाश्चात्य रंग में रंगा हुआ है, जिसकी महत्वकांक्षाओं का मूल अमेरिका की चका-चौंध की ओर है। ईशिता सुशील से विवाह के प्रस्ताव को इसलिए ठुकरा देती है क्योंकि अपने घरेलू दायित्वों के कारण सुशील को अमेरिका न जाते हुए स्वदेश में रहना पड़ता है। 'दूसरी दुनिया' शीर्षक कहानी की मामी के रूप में प्रौढ़ आधुनिक नारी का चरित्रांकन हुआ है। मामी क्लब जाती है और जब उनकी भानजी सुषमा घर आती है तो वह उसे भी अपने साथ क्लब ले आती है। मामी और क्लब की अन्य महिलाओं के प्रति सुषमा की प्रतिक्रिया उनके आधुनिक चरित्र को उजागर करती है।

पारिवारिक और सामाजिक परिवेश के साथ ही मालती जोशी की कहानियों में आर्थिक समस्याओं के संदर्भ भी अनेक स्थानों पर उपलब्ध है। उनकी कहानियों में स्वालम्बी और परावलम्बी दोनों ही तरह के नारी चरित्रों का चित्रण हुआ है। मालती जोशी की कहानियों में आर्थिक अभाव और संघर्ष से जूझती नारी के चित्र भी देखने को मिलते है। ऐसी ही उनकी कहानी

'विकल्पय है जिसमें बड़ी दीदी के रूप में एक ऐसी नौकरी पेशा नारी का रूप उभरकर आता है जो अपने परिवार की अभावग्रस्तता के कारण स्वयं नौकरी करके दहेज का प्रबंध करती है। उनकी 'गणित' कहानी की नायिका सीमा अपने परिवार की आर्थिक आवश्यकताओं के कारण विवश होकर नौकरी करती है। सीमा की नौकरी उसके परिवार के लिए अनिवार्य बन जाती है। मालती जोशी की 'अवसान एक स्वप्न' शीर्षक कहानी की दोनों बहनें आरती और भारती नौकरी करती है और इसी कारण उनका विवाह नहीं हो पाता है उनकी नौकरी के द्वारा होने वाली आमदनी के लालच में घरवाले विवाह की बात को किसी न किसी बहाने टालते जाते है। आर्थिक समस्या के कारण नौकरी पेशा भारती के चरित्र का आभास इन पंक्तियों के द्वारा हो सकता है– 'इस रात मुझे ठीक से नींद नहीं आई। हाथों से फिसलती उम्र का खौफ मुझे सोने नहीं दे रहा था। बढ़ती उम्र का अहसास इतनी तीव्रता से पहले कभी नहीं हुआ था पर स्वीटी की शादी ने मुझे बौखला दिया था लग रहा था मैं एकदम सीनियर बैच में आ गई हूँ और यह ख्याल बड़ा डरावना था।'[7]

मालती जोशी की 'कड़वा सच' कहानी की नायिका रजनी अपने घर से भागकर कवि कोकिल से विवाह करती है। विवाह के पश्चात् अपने पति की अकर्मण्यता के कारण घर का सब दायित्व रजनी को ही वहन करना पड़ता है और इसीलिए उसे नौकरी करनी पड़ती है। रजनी के रूप में एक ऐसा नारी चरित्र सामने आता है जो विवशता के कारण नौकरी तो करती है परंतु अपनी इस विवशता के कारण सदैव सन्तप्त भी रहती है। रजनी के मन में हमेशा, यह पश्चाताप बना रहता है कि यदि उसने घरवालों की इस इच्छा के अनुसार किसी नौकरी पेशा वर से विवाह किया होता तो उसे नौकरी नहीं करनी पड़ती।

'आउट साइडर' शीर्षक कहानी की नायिका नीलम को पिता की आकस्मिक मृत्यु के बाद परिवार का दायित्व वहन करना पड़ता है–'पिता की आकस्मिक मृत्यु के बाद, जब उसने घर की बागडोर संभाली थी कि अब यही उसकी नियती होगी। मन में एक क्षीण आशा थी कल को भाई जब लायक हो जाएंगे तो वह अपनी जिंदगी जी सकेगी पर वह आशा दुराशा ही साबित हुई।'[8] मालती जोशी की कहानियों में पराश्रित अथवा अन्य पर निर्भर अनेक नारी चरित्र विद्यमान है। 'क्षरण' शीर्षक कहानी की माँ के रूप में अन्य पर निर्भर प्रौढ़ नारी का विवशताजन्य चरित्रांकन हुआ है। इस कहानी की माँ विमला अपने पुत्र समीर पर निर्भर है। वह स्वयं उदार मन की है परंतु बहू नेहा के संकीर्णतापूर्ण व्यवहार को भी सहन करना पड़ता है, क्योंकि वह स्वयं पर नहीं अपितु पुत्र पर निर्भर है। इस प्रकार मालती जोशी की कहानियों के स्त्री पात्रों को आर्थिक समस्याओं के कारण अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं का दमन करना पड़ता है।

मालती जोशी की कहानियों का संसार भारतीय परिवारों का जीवन्त परिवेश है वे मध्यमवर्गीय भारी–मन और उनकी संवेदनाओं की प्रवक्ता है। वे अपनी रचनाओं में स्त्री की कुंठा, संत्रास और संघर्ष को स्वर देती है। उनके अनुसार भारतीय स्त्री आज भी संक्रमण काल से गुजर रही है। कहा जा रहा है कि औरत की दुनिया बदली है, पर क्या सचमुच बदली है ? उसका एक पैर घर के बाहर निकला है, लेकिन दूसरा अभी भी रसोई में है। शिक्षा ने उसके लिए प्रगति के द्वार खोले हैं, पर घर परिवार आज भी उसकी प्राथमिकता बना हुआ है। परिवार की लक्ष्मण–रेखा उसे घेरे हुए है अभी भी पिता की दृष्टि से वह 'दान' की वस्तु है और पति की दृष्टि में वह 'भोग' की। घर में पुरूष आज भी शासक बना रहना चाहता है।'[9]

मालती जोशी ने अपनी कहानियों में पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं से जूझती नारी का मार्मिक और प्रभावी चित्रण किया है। उनकी कहानियों में नारी के विविध रूप देखने को मिलते है। सर्वाधिक चित्र मध्यमवर्गीय नारी के है जो विश्वसनीय और जीवन्त प्रतीत होते है। नारी के शोषण, प्रताड़ना और अपमान का सशक्त चित्रण मालती जोशी की कहानियों में हुआ है। आर्थिक अभाव के और संघर्ष के चित्र मालती जोशी की कहानियों में करूणा का आभास कराते है।

मालती जोशी ने अपनी साहित्यिक दृष्टि से नारी मन के भीतर तक झांककर उसकी मनः स्थिति की अभिव्यक्ति नए रूप में की है। महिलाओं की वेदनाओं को नई चेतना के संदर्भ में व्यक्त किया है। उनकी समस्याओं और चुनौतियों को समाज के सम्मुख प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सुभाष तलेकर – म प्र लेखक संघ – स्मारिका 1995, पृ 77
2. मालती जोशी – एक घर सपनों का , पृ.17
3. मालती जोशी – महकते रिश्ते, पृ 101
4. मालती जोशी – एक घर सपनों का, पृ 102
5. मालती जोशी – शापित शैशव, पृ 93
6. मालती जोशी – महकते रिश्ते, पृ 67
7. मालती जोशी – औरत एक रात है, पृ 61
8. मालती जोशी – महकते रिश्ते, पृ 141
9. संपादक – नरेन्द्र दीपक – साहित्यिक पत्रिका – पहला अंतरा, पृ 9,10

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Bitcoin : Growth and Working

Dr. Neetu Agarwal * Dr. Sanjay Chaudhary**

Abstract - Bitcoin is a Virtual Currency program which is slowly growing up on internet users across the globe. It is a new currency that was created in 2009 by Satoshi Nakamoto. For transactions, there is no need for middle men – means, no banks. Unlike paper currencies, Bitcoins cannot be print, they can only be created. There are only 21 million bitcoins that have been created. At present, only 16.8 million or 80 per cent of all the bitcoins have been created. It can use each and every place for transaction and for earning also. In this paper some advantages, working and mining of bitcoin is discussed.
Keywords - Bitcoin, peer to peer network, Coinbase, Bitfinex, Kraken, Huobi or OKCoin.

Introduction - Bitcoin is a Virtual Currency program which is slowly growing up on internet users across the globe. It is a new currency that was created in 2009 by Satoshi Nakamoto. For transactions, there is no need for middle men – means, no banks! Bitcoin is cash for the internet or we can say it is nothing more than a computer program or mobile app that provides a personal Bitcoin wallet and allows a user to send and receive bitcoins with them. A transaction's authenticity is ensured through digital signatures.

Bitcoin acts as a payment platform that functions on completely virtual or digital currency. It is the first decentralized peer-to-peer payment network that is powered by its users with no central authority or middlemen. It is open source software. It is commonly called a decentralized digital currency. This means, that no person, company or country owns this network just like no one owns the Internet. Unlike paper currencies, Bitcoins cannot be print, they can only be created. There are only 21 million bitcoins that have been created. At present, only 16.8 million or 80 per cent of all the bitcoins have been created.

We can see the changes in Bitcoin value from 2009 to 2017. According to graph it is imagine growth in the value. The graph is shown below:-

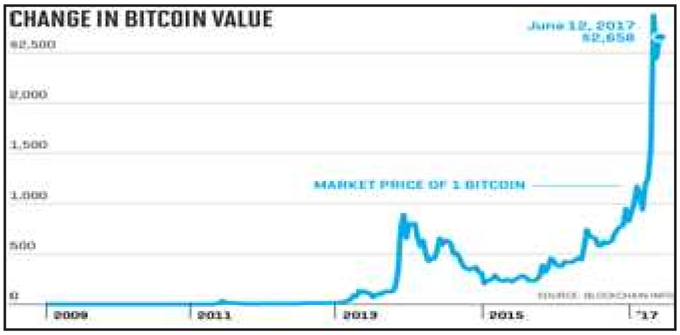

Graph showing increasing value of Bitcoin Month wise from Jan-2017 to Oct-2017.

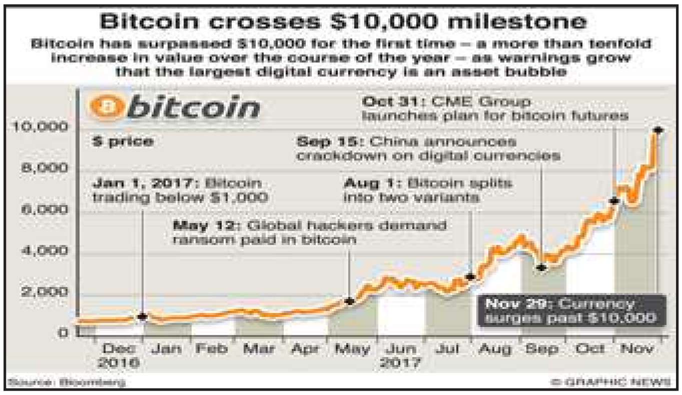

Uses of Bitcoin

1. **Online e-commerce sites:** Bitcoin can be used as a payment option for so many digital content across its online platforms. Bitcoin users can add money to their accounts, which can be used to purchase games, various apps and videos etc. from Windows Phone and Xbox platforms.
2. **Using bitcoin to obtain discounts:** Amezon gives a discount on the purchasing items with the use of Bitcoin with a credit card or via PayPal. The service claims probable discounts of up to 20% for bitcoin shoppers.
3. **Bitcoin gift cards:** If there is not possible to find physical or online stores that accept bitcoin directly for the item(s) which any customer require, the easiest way to turn his/her digital currency into 'real-world' goods and services is via gift cards.
4. **Physical stores that accept bitcoin:** Now Bitcoin can be used as the mode of the payment at physical stores. For example REEDS Jewelers, a large jewelry chain in the US, is one of the most prominent merchants to accept bitcoin as a form of payment. The firm has 64 retail counters

*Assistant Professor, Pacific College of Basic and Applied Sciences, Udaipur (Raj.) INDIA
** Professor, Deptt. of CSE, Madhav University, Sirohi (Raj) INDIA

in the eastern US, as well as an online presence. Like this so many other stores has the form of payment in the terms of bitcoin.

5. **Hotels and property:** If we are traveling across borders, it is a very risky and tough task to carry visit currency and exchange and pay their commissions and fees. Avoiding these botherations, crypto currency is used. Now the dream is starting to take off, with notable names starting to welcome bitcoin onboard. For example Expedia has announced it will now accepts bitcoin for all hotel bookings, making it the first major travel company to accept payments in crypto currency. Expedia said bitcoin will be integrated into the payment options for customers at check-out, sitting alongside payment methods like PayPal and Visa. If all goes well, the company says it may develop the payments option to other areas of its business, including flights. Bitcoin also can make a decent amount of money by simply buying and selling If you if it is invested wisely and patiently. It is also very useful particularly interesting the low-end offerings, one of the advantages of Bitcoin is that it makes it much easier than almost any other consumer e-commerce system to manage very small amounts of money.

How Bitcoin can generate

There are three primary ways to get bitcoins

1. Buying on an exchange
2. Accepting them for goods and services
3. Mining new ones

"Mining" is idiom for the discovery of new bitcoins—just like finding gold. Actuality, it's simply the verification of bitcoin transactions. For example, Mr. X buys a TV from Nicole with a bitcoin. In order to make sure his bitcoin is a genuine bitcoin, miners begin to verify the transaction. It's not just single method of transaction individuals are trying to verify; it's many. All the transactions are gathered into boxes with a virtual padlock (Security Code) on them—called "block chains."

Miners run software to find the key that will open that padlock.

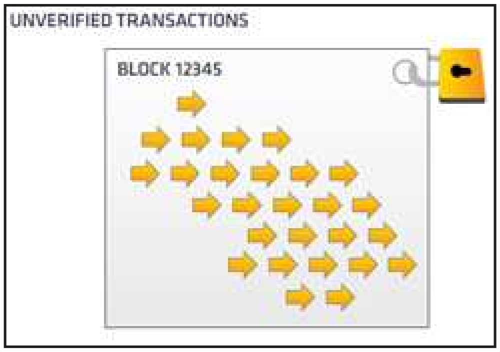

Once their computer finds it, the box pops open and the transactions are verified. For finding that "needle in a haystack" key, the miner gets a reward of 25 newly generated bitcoins. The current number of attempts it takes to find the correct key is around 1,789,546,951.05, according to Blockchain.info (a top site for the latest real-time bitcoin transactions). Regardless of that many attempts, the 25-bitcoin reward is given out about every 10 minutes. In 2017, the bitcoin reward for verifying transactions will halve to 12.5 new bitcoins and will continue to do so every four years.

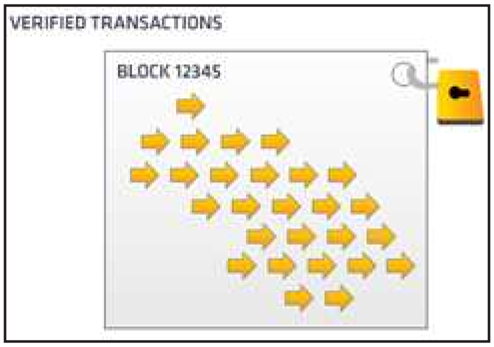

Some other method to get bitcoins

1. **Buy small amounts of Bitcoin online**. If a user wants to buy under $2000 of Bitcoin or is new to crypto currencies then he/she can try one of the combined wallet / bitcoin traders to get rolling for example Coinbase and Xapo. These sites will allow him to buy a small amount of Bitcoin in exchange for an approximate 1% service charge.

2. **Buy large amounts of Bitcoin via a trading exchange.** If users are buying over $2000 of Bitcoin and they will want to take advantage of the lower commission rates offered on an exchange. These exchanges operate like a stock market for this user has to create an account at an exchange is a similar process to opening a new bank account. Different countries and currencies have different Bitcoin exchanges like:

1. US Dollars to Bitcoin - Bitfinex, GDAX (owned by Coinbase)
2. Euro to Bitcoin - Kraken
3. Chinese Yuan to Bitcoin - BTCC, Huobi or OKCoin

3. Take money out of a Bitcoin ATMs. Many cities around the world offer a bitcoin ATM where we can trade cash for bitcoin. These ATMs usually charge a 5-8% fee for doing the trade.

4. Buy bitcoin from a live person offline. All over the world it's possible to give someone a bundle of cash and have them load some bitcoins onto your phone.

5. Earn bitcoin. Look for other companies that are willing to hire people in exchange for bitcoin.

6. Mine bitcoins. Download and run a "mining" program (CGMiner, for example) on a custom computer that turns math equations into bitcoin.

How a Bitcoin can work - Each bitcoin consists of unique computer codes. Each coin can be split into fractions and those fractions are also each identified by unique codes. The smallest fraction is named the "Satoshi" in honor of the creator. Each coin and its owner can be identified by using a combination of private-public keys. The public key, which everybody knows, identifies the coin. But only the owners know the private key and can thus identify themselves. To put it another way, the owners are the owners because they have the private key.

Coins are held in digital wallets. Many programmers have created free digital wallets, which can just be downloaded by anybody, secretly. Anyone can create their own digital wallet, or even just write down their private key on a piece of paper.

Advantages of Bitcoin

1. Bitcoins are impossible to fake or inflate.
2. Bitcoin payments are impossible to block, and bitcoin wallets can't be frozen. So we can use them to send or receive any amount of money, with anyone, anywhere in the world, at very low cost.
3. With Bitcoin we can directly control the money ourself without going through a third party like a bank or Paypal.
4. Bitcoin transactions cannot be wrong side up or refunded.
5. Bitcoin transactions must be confirmed at least once but if possible 6+ times before it has happened and becomes irreparable for proper validation.
6. All Bitcoin transactions are stored publicly and permanently on the network, which means anyone can see the balance and transactions of any Bitcoin address.
7. Bitcoins can use for a friend or someone near us for a payment of goods and services. We can also buy them directly from an exchange with our bank account.

Conclusion - In this paper it is discussed that Bitcoin is a Virtual Currency program which is slowly growing up on internet users across the globe. It is a new currency that was created in 2009 by Satoshi Nakamoto. As shown in graphs value of Bitcoin is continuously increasing. Within a year it is rapidly grow. Uses, of bitcoin are also discussed in this paper. Various methods of generations for bitcoin and working of bitcoin is also discussed. At the last but not least various advantages are also encountered.

References :-

1. https://lifehacker.com/5991523/what-is-bitcoin-and-what-can-i-do-with-it
2. https://bitcoinmagazine.com/articles/where-to-spend-your-bitcoins-1351206720/
3. https://www.cnbc.com/2014/01/23/cnbc-explains-how-to-mine-bitcoins-on-your-own.html
4. http://www.independent.co.uk/news/business/news/bitcoin-what-is-cryptocurrency-where-use-investment-dark-web-illegal-explained-value-exchange-rate-a8082491.html
5. https://www.coindesk.com/information/what-can-you-buy-with-bitcoins/
6. https://www.weusecoins.com/en/getting-

****

बेनीसागर

सुनयना बोयपाई *

प्रस्तावना – झारखण्ड प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण राज्य है। हरे-भरे वन उपवनों की कतारे, वनों का मौन तोड़ती जलधाराएँ, सुहाना मौसम, मनोहारी झीलें, कलकल बहती नदियों आदि सदैव अभिभूत करते हैं। इस कारण यहाँ की ऐतिहासिक स्थलें प्राचीन मंदिरें लोगों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती है। झारखण्ड में धर्म-धार्मिकता के प्राचीन अवशेष मिलते है। यहाँ कई संस्कृतिक साक्ष्य और स्थापत्य कला बिखरे पड़े है। इसी क्रम मे मैं झारखण्ड के बेनीसागर के बारे में थोड़ी जानकारी देना चाहूँगी।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक और द्वितीयक शोध सामाग्री संकलन के आधार बनाया गया है। इस हेतु बेनीसागर की गहराईयों में जानने के लिए विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया हैं।

समस्या – बेनीसागर एक ऐतिहासिक स्थल है जो झारखण्ड के पश्चिम सिंहभूमि जिले के मंझगाँव प्रखण्ड के खारपोस पंचायत में स्थित है। यह झारखण्ड एवं उड़िसा के क्योझर से 12 कि.मी. दूर है।

उद्देश्य – कहा जाता है कि महाभारत के पाण्डव जब अज्ञातवास काट रहे थे तब वे बेनीसागर के जंगलों में रह रहे थे। इस गाँव का नाम पहले कोचांग था किन्तु अब इसे बेनीसागर के नाम से जाना जाता है। बेनीसागर अथवा बेनुसागर नाम संभवत: बेनु राजा के नाम पर पड़ा है जो किसनगढ़ के राजा के पुत्र थे। बेनु राजा ने एक झील का निर्माण करवाया था। यह झील 60 एकड़ क्षेत्र में सागर की तरह प्रतीत होता है। इस झील की गहराई 25 फीट थी जो अब 15 फीट ही रह गई है। यह झील 340 मी. लम्बा और 300 मी. चौड़ा है जिसके बारे में कर्नल टिकेल ने पहली बार अपने रिपोर्ट में उस स्थल का भ्रमण सन् 1840 ई. में करने के बाद किया था। बाद में जे0डी0 बेगलर ने उस तालाब का भ्रमण 1875 में किया। जिन्हें कुछ मूर्तियाँ मिली और जिनके आधार पर उन्होंने इस स्थान की तिथि निर्धारण 7 वीं शताब्दी में किया यद्यपि स्थानीय परंपराओं के अनुसार कहा जा सकता है कि इस तालाब को तो बेनु राजा ने खुदवाया था। पुरातात्विक दृष्टिकोण से अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि वास्तव में किसने इस तालाब का निर्माण किया। तालाब का दक्षिण पूर्व देवस्थान के नाम से जाना जाता है।

समाधान :

खुदाई से प्राप्त मूर्तियाँ – यहाँ 6 ठीं शताब्दी की 35 छोटी-बड़ी मूर्तियाँ हाल ही में पुरातात्विक उत्खनन के दौरान मिली, ये है- दो पंचायतन मंदिर परिसर, कुछ धर्म निरपेक्ष भग्नाशेष, शिवमंदिर, सूर्य, भैराव, महिषासुरमर्दिनी, गंगा, विष्णु, गणेश, दुर्गा, यमुना, लकुलिश, अग्नि, वायु, कुबेर एवं द्वारापाल आदि की मूर्तियाँ प्रमुख है। यहाँ कई शिवलिंग भी पाए गए, इनके अलावा उत्खनन के द्वारा पत्थर की सील (मुहर) मिली है जिस पर 'प्रियांगु धेयम्चतुविद्य' (चतुर्विध) खुदा हुआ है जिसका मतलब होता है, एक व्यक्ति जिसका नाम प्रियांगु था, वह चारों वेदों में निपुण था। यहाँ अभिलेख भी प्राप्त हुए है। लेख की लिपि ब्रह्मी है और उसकी भाषा संस्कृत। जिसके आधार पर तिथि निर्धारण 5 वीं सदी किया जा सकता है। ये अशोक के स्तंभ की तरह है जो वैशाली एवं बिहार की राजगीर में है।

पुरातत्तव विशेषज्ञों को 45 सेमी. की प्रमिमा भी मिली जो कोर्णाक सूर्य मंदिर और खजुराहों की मूर्तियों की तरह प्रतीत होती है। यहाँ टेराकोटा की मूर्तियाँ मिली है जिसमें एक शेर बैठने की मुद्रा में है। शिव की एक प्रतिमा जिसमें एक हाथ में तलवार है तथा दूसरे हाथ में ब्रह्मा का सिर, जिसे 'ब्रह्मासिरोछेदका भैरवा' कहा जाता है, देखने लायक है। अग्नि, वायु और कुबेर अक्षतादिक्पाल को दर्शाते हैं।

2006 में पुन: पुरात्तववेताओं ने खोदना शुरू किया जिसमें कई वेदी एवं हवन कुण्ड मिले हैं। संभवत: यहाँ पूजा अनुष्ठान हुए होंगे। ईटों के भवनादि के अवशेष भी पाए गए है। मंदिर के दक्षिण पूर्व में रसोई घर एवं मूर्तियों के अलावे लोहे की चुड़ियाँ, अंगुठी, तीर, भाला, चाकू एवं मिट्टी के मटके प्राप्त हुए है।

दो मंदिर पंचायतन एक दूसरे की ओर मुख किए हुए हैं ये पंचायतन तीर्थ के लिए बने हुए हैं, इसमें एक मंडप भी है जो 8,10×6.60 मी. का हैं। यहाँ मंदिर के प्रदक्षिणापथ भी मिले है। वेदिका 6×6 मी. है। यहाँ की दिवारों की ईटें मकड़ा पत्थर की है जो संभवत: बाहर से मंगवाई गई है। ईटों का आकार 36×23×7 सें.मी. 36×23×6 सें.मी., 36×23×7 सें.मी., 35×21×6 सें.मी. है।

वर्ष 2006 में पुन: खुदाई के बाद वहाँ की स्थिति काफी अच्छी है। वहाँ गार्ड एवं पुरातत्व विभाग के कर्मचारी हैं जो नियामित देखभाल करते हैं। वर्तमान में वहाँ की स्थिति बहुत अच्छी है। स्थापत्य कला के प्रेमी एवं पर्यटक यहाँ आकार निराश नहीं होगें। बेनीसागर स्थापत्य कला का बेजोड़ नमुना पेश करता है। प्राप्त पुरातत्विक अवशेषों के आधार पर कहा जा सकता है कि यह स्थान पाँचवी सदी से लेकर 16-17 वीं शताब्दी तक लगातार बसा रहा था। यहाँ मिली मूर्तियों के आधार पर गुप्त वंश एवं जाल वंश की झलक दिखाई पड़ती है साथ ही शिव रौद्र रूप वाला मूर्ति खजुराहों एवं कोणार्क क मूर्तियों सा प्रतीत होता है।

अगाध पुरातात्विक संभावनाओं वाले झारखण्ड राज्य के इतिहास, सामाजिक जीवन और सांस्कृतिक परम्पराओं को समझने के लिए व्यापक व गहन सर्वेक्षण, अन्वेषण और उत्खनन की आवश्यकता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि झारखण्ड में समुचित ध्यान देकर इन स्थलों को विकसित करने की आवश्यकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* शोधार्थी, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

छिंदवाड़ा जिले की प्रमख जागीरे और उनकी व्यवस्था : एक ऐतिहासिक अध्ययन 1854-1876 तक

माया साहू* डॉ. पी.ए. भाटिया**

शोध सारांश - मध्यप्रदेश का छिंदवाड़ा जिला सतपुड़ा पर्वत माला पर एक पहाड़ी युक्त वनाच्छादित क्षेत्र है। जिसमें बहुसंख्यक जनजातियाँ निवासरत रहती है। जिले का लिखित इतिहास मध्यकाल में देवगढ़ के गोंड राजवंश से प्राप्त होता है। तदनुसार सर्वप्रथम इस भू-भाग पर 1680 से 1742 ई. तक गोंड राजवंश का अधिपत्य बना रहा। उन्होंने ही यहाँ जागीरदारी प्रथा का सूत्रपात किया। जिले की सभी जागीर्रें देवगढ़ के शासकों के अधीनस्थ थी। 18 वीं शताब्दी के मध्य में गोंड राजवंश के पतन के उपरांत यह क्षेत्र भोसलों (मराठो) के आधिपत्य में चला गया। 1854 में नागपुर राज्य के ब्रिटिश साम्राज्य में विलय के हो जाने के कारण यह जिला अंग्रेजों के साम्राज्यान्र्गत हो गया और अंग्रेज सरकार द्वारा यहाँ से 'टाकोली कर' वसूल किया जाता था। जो सरकार की आय का महत्वपूर्ण स्त्रोत था। समय-समय पर अंग्रेजी सरकार द्वारा पारित भू-राजस्व अधिनियमों के माध्यम से यहाँ की जागीरों के किसानों पर कर भार बढ़ता गया। किसानों की दशा सोचनीय हो गई और कृषकों व जागीरदार ऋणग्रस्त होते चले गए। जिससे वे साहूकार के चुंगल में फंसते चले आये और कुछ जागीरों को कु-प्रबंध के कारण 'कोर्ट ऑफ वार्डस' कर दी गई।

प्रस्तावना - 1854 में इस जिले पर पूर्णरूप से अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हो गई थी। उस समय इस जिले में अनेक जागीरों पर जागीरदारी शासन चल रहा था। डिप्टी कमीश्नर मिस्टर मॉण्टगोमरी द्वारा प्रकाशित छिंदवाा जिला गजेटियर में यहाँ की जागीरों का उल्लेख किया गया है। अन्य स्त्रोतों का संक्षिप्त वृत्त लिख देना आवश्यक है। ब्रिटिश सत्ता की स्थापना के समय (1854) जिले के लगभग आधे भू-भाग पर जागीरदारों का अधिकार था। इस जागीरी क्षेत्र में हर्रई जागीर प्रमुख थी। यहाँ के राजवंश के पास 70 पीढ़ियों की वंशावली है।[1] इस जागीर में एक सुदृढ़ किला है। मिस्टर मॉण्टगोमरी ने लिखा है कि वर्तमान जागरदार मर्दानशाह एक किले के लिए उन्होंने स्पष्ट रूप से ही 'फोर्ट' शब्द का प्रयोग किया है। मिस्टर मॉण्टगोमरी ने इस किले को 300 वर्षो से अधिक प्राचीन बताया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि यह किला 16 वीं शताब्दी से पूर्व का होना चाहिए। इस जागीर का परम्परागत शासन एक राजा के हाथ में था जिसकी सत्ता के साथ छोटी सी सेना और पुलिस का अपना प्रबंध भी था। यह जागीरी व्यवस्था अंग्रेजों के मराठों से सत्ता प्राप्त कर लेने के बाद थी, 1900 ई. तक बनी रही। इस क्षितिज की जागीर्रें कितनी पुरानी थी और यहाँ के जागीरदार कब से स्वतंत्र थे इसकी कोई प्रमाणिक जानकारी नहीं मिलती है। ऐसा माना जाता है कि देवगढ़ की सत्ता प्राप्त की थी। तब इस भू-भाग के सम्पूर्ण छोटे-छोटे राज्य अथवा जागीरदार अपने स्वजातीय राजा को मान्यता देने लगे जो पहले खेरला राज्य को मान्यता देते थे।[2]

1854 ई. में अंग्रेजों के यहाँ बाने के समय दस जागीरों का उल्लेख किया गया है। इन दस जागीरों में केवल एक जागीर मवासी (कोरकू) जनजातीय की थी, जिसका नाम पचमढ़ी था। अंग्रेजों ने इस जागीरों की दुर्गम पहाड़ियों और बीहड़ वनों पर अपनी शासन व्यवस्था में तत्काल बहुत असुविधायें देखते हुए इन छोटे राजाओं को जागीरदारी व्यवस्था के रूप में अपने अधीनस्थ रखते हुए 1868 में उनकी पूर्ण सनदों के आधार पर जागीरदारी के नये पट्टे वितरित किए। जागीरदारों ने भी अंग्रेजों की शक्ति सम्पन्ता एवं युद्ध सामग्री की श्रेष्ठता को देखते हुए उनकी सत्ता को स्वीकार कर लिया क्योंकि उन दिनों गोंडवाने का कोई संगठन स्वरूप नहीं था। अंग्रेज शासकों ने तत्कालीन पिण्डारियों तथा मराठा शासन के विघटित सैनिक सरदारों तथा यत्र-तत्र मचाये गए आतंक तथा लूट-खसोट पर नियंत्रण रख सकने के तात्पर्य से भी इन जागीरदारों को मान्यता दे दी थी। साथ ही इन जागीरदारों से अंग्रेजी सत्ता की अधीनता स्वीकार कर कुछ कर देना स्वीकार करा लिया था। उसे 'टाकोली कर' कहा जाता था।

1906-07 के गजेठियर के अनुसार उस समय जिले में 10 जागीर्रें थी जिनका विवरण निम्नानुसार है -

1. आल्मोद जागीर - यह 89 वर्गमील की 29 ग्रामों में बसी हुई महादेव पर्वत के दक्षिण में ऊँची-नीची पहाड़ी भूमि पर कम उपजाऊ जागीर थी। आल्मोद यह नाम इसकी भू सतह की बनावट और गोंड परम्परा की चट्टानों के कारण दिया गया। यहाँ के जागीरदार जामुन डोंगा ग्राम में निवास करता था।[3]

जगीर की 25 प्रतिशत अथवा 6 हजार एकड़ भूमि कृषि के लिए दी गई थी। शेष 9000 एकड़ भूमि वनों के लिए अभिलेखित यहाँ की मुख्य फसलें कोदो, कुटकी और दाले उड़द और मूंग थी। सामान्यत: यहाँ की मिट्टी पहाड़ी और कम उपजाऊ थी।

इस जागीर की 12 गाँव मुकासा कहलात थे। इसका अर्थ था लगानिया राजस्व मुक्त परिवार के रिश्तेदारों के लिए प्रदत्त गाँव। आल्मोद जागीर के 4 गाँव होशंगाबाद जिले में आते थे। जागीर के एक गाँव नागद्वारी में दो वार्षिक मेले भरते थे। इनमें एक मेला सावन (जुलाई-अगस्त) और दूसरा बैशाख (अप्रैल-मई) में भरता था। जागीरदार इन मेलों में अपने तीर्थ यात्रियों से कर वसूल करता था। यह कर 1874 ई. में बंद कर दिया और जागीरदार को 170 रूपये वार्षिक हर्जाना दिया जाने लगा। इसका आधा 85 रूपये उसके

*अतिथि विद्वान (इतिहास) शा.स्वा.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत
** विभागध्यक्ष एवं मार्गदर्शक, शा.स्वा.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

उत्तराधिकारी को दिया जाने लगा। स्वयं के इच्छा से तीर्थ यात्री जो भेंट चढ़ाते थे। वह जागीर की आय का महत्वपूर्ण स्त्रोत था। मराठा शासन की समाप्ति के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने अंतिम अनुबंध के अनुसार दिया जाने वाले टाकोली कर 125 रूपये निश्चित किया। 1905-06 में जागीर की आय 5000 रूपये थी।[4]

2. गोरघाट जागीर – यह 15 मील में फैली पाँच गाँवों की जागीर थी जो आल्मोद के उत्तर में स्थित थी। यहाँ के जागीरदार को महादेव मेले की आय प्राप्ति का वंशानुगत अधिकार था। इस जागीर की सनद 1820 में दी गई थी। कृषि केवल 1000 एक भूमि पर की जाती थी। यहाँ के जागीरदार चालरा नामक ग्राम में निवास करते थे।[5] हर्रई का जागीरदार इनका संबंधी था। इसकी वार्षिक आय 1400 रूपये थी। जो अधिकांश वन विभाग से होती थी। यह जागीर भी कुप्रबंध के कारण कोर्ट ऑफ वार्डस हो गई थी। किन्तु बाद में मुक्त कर दी गई।

3. भरदागढ़ जागीर – यह जागीर महादेव पर्वत से बैतूल जिले तक फैली हुई थी। इसके 120 वर्गमील क्षेत्रफल में 40 ग्राम सम्मिलित थे। इनमें 14 ग्राम मुकासा थे जो मुकासदारों के अधीन थे। इस जागीर की सनद 1920 ई. थी। 1901 में इस जागीर की कुल जनसंख्या 2556 थी। इसका जागीरदार टेकाढाना नामक ग्राम में निवास करता था। जागीर में 7500 एकड़ भूमि पर खेती की जाती थी। शेष भूमि वनाच्छादित थी। इसी से जागीर को आय प्रापत होती थी। इस जागीर में जिले की सबसे बड़ी नदी कन्हान का उद्गम हुआ है। इसकी वार्षिक आय 5000 रू. थी जिस पर 174 रू. टाकोली देना पड़ता था।[6]

4. बारीआम पगारा जागीर – मध्यप्रांत के जिलों की सीमा निर्धारण के पश्चात् यह जागीर होशंगाबाद में शामिल कर दी गई है। छिंदवाड़ा जिले में केवल दो ग्राम ही इसमें रह गए थे।[7] इस प्रकार यह जागीर केवल नाम मात्र की रह गई।

5. बटकागढ़ जागीर – यह जागीर जिले के उत्तर में नरसिंहपुर की सीमा से लगी हुई थी। इसका क्षेत्रफल 275 वर्गमील था जिसमें 98 ग्राम सम्मिलित थे। इसके दक्षिण में सोनपुर, धनोरा तथा पूर्व में हर्रई जागीर विद्यमान थी। यह जागीर देवगढ़ के राजाओं द्वारा उनकी सेवा-चाकरी के बदले में दी गई थी। जिला गजेटियर 190 के अनुसार जब तात्याटोपे इस क्षेत्र में आये थे तब यहाँ के तत्कालीन जागीरदार बखतसिंह ने अंग्रेजों का साथ देकर तात्याटोपे के सैनय दल को इस क्षेत्र से बाहर निकालने में सहायता पहुचाई थी। इसके फलस्वरूप अंग्रेजी शासन ने इस जागीरदार का सम्मान किया और उसकी संरक्षता के लिए विषेष प्रबंध किए।[8]

बखतसिंह के पश्चात् उसका पुत्र गोपालशाह के नाम से जागीरदार बना। गोपालशाह की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र बिपतशाह 1906 में जागीरदार बना इस जागीर के पूर्व पुरूष भोपाल के पास गन्नौरगढ़ से यहाँ आये।[9]

1901 में इसकी जनसंख्या 6804 थी। वनोपज इस जागीर की आय का मुख्य साधन था। 1905 में यह जागीर कुप्रबंध के कारण 'कोर्ट ऑफ वार्डस' कर दी गई। तत्कालीन डिस्ट्रिक्ट कौंसिल द्वारा यहाँ एक प्राथमिक शाला, पोस्ट ऑफिस और पुलिस चौंकी खोली गई थी।

6. प्रतापगढ़, पगारा और हर्रई जागीर समूह – इन जागीरों का संस्थापक संग्रामशाह था। इस जागीर समूह में प्रतापगढ़ पगारा हर्रई सोनपुर और धनोरा शामिल थी। 1818 में सोनपुर और प्रतापगढ़ के जागीरदार चैनसिंह और राजबाशाह ने अप्पाजी भोंसले को संरक्षण प्रदान किया था। फलस्वरूप अंग्रेजी सरकार द्वारा उन्हें बन्दी बनाकर चांदा जेल भेज दिया गया जहाँ उनकी मृत्यु हो गई। 1820 में ब्रिटिश शासन ने इन जागीरों पर अपना नियंत्रण स्थापित कर इनका बटवारा कर दिया। हर्रई जागीर जसवंतशाह को दी गई। चैनशाह के पुत्र सोनेशाह को सोनुपर और धनोरा का जागीरदार बनाया गया। प्रतापगढ़ पगारा की जार्गीरें अंग्रेजी सरकार ने 1826 तक अपने नियंत्रण में रखी। कुछ समय पश्चात् उन्हें राजबाशाह के पुत्र रणजीतशाह को सौंप दिया गया। 1867 के सेटलमेंट प्रबंध के बाद हर्रई जागीर नाम मात्र की रह र्ग। 1878 में जागीरदार के अन्य वयस्क होने के कारण प्रतापगढ़ पगारा जागीर 'कोर्ट ऑफ वार्डस' कर दी गई। 1902 में यह हर्रई के जागीरदार मर्दानशाह के अधिकार में आ गई। यहाँ की पर्वत श्रेणियाँ दर्शनीय एवं लुभावनी थी।[10]

7. प्रतापगढ़ पगारा जागीर – 1901 में इस जागीर की जनसंख्या 19489 थी इसका क्षेत्रफल 494 वर्गमील तथा इसमें 176 ग्राम शामिल थे। 1905-06 में उसकी आय 42000 रू. थी। इस जागीर पर 739 रू. टाकोली थी। इसकी 50 प्रतिशत आय वन विभाग से होती थी। इस जागीर का सबसे बड़ा ग्राम पगारा था। इसके अतिरिक्त चावलपानी और भी बड़े ग्राम माने जाते थे। इन सभी ग्रामों में प्रारंभिक पाठशालएं प्रारंभ हो गई थी और पुलिस चौकियाँ तथा ब्राँच पोस्ट ऑफिस (उप डाक कार्यालय) भी थे।[11]

8. हर्रई जागीर – यह जागीर अन्य सब जागीरों से बड़ी थी। यह जिले के उत्तर में नरसिंहपुर जिले नर्मदा कछार तक तथा दक्षिण में अमरवाड़ा तहसील के खालसा भूमि तक फैली हुई थी। इसका क्षेत्रफल 281 वर्गमील था। जिसमें 94 गाँव शामिल थे।12 यह जिले की सबसे महत्वपूर्ण जागीर थी। यहाँ के मूल निवासी कोदो, कुटकी और अन्य लोग गेहूँ, चांवल और ज्वार खाते थे।

9. पचमढ़ी जागीर – पचमढ़ी जागीर इस जिले के प्रसिद्ध महादेव पर्वत चौरागढ़ तीर्थ स्थल तक फैली हुई थी। इसका दक्षिण-पूर्वी भाग भौगोलिक दृष्टि से विस्तृत एवं विभाजन पर्वत श्रेणियाँ तथा वनाच्छादित जागीरी क्षेत्र था। इसका क्षेत्रफल 104 वर्गमील था जिसमें केवल 8 गाँव ही बसे थे। यह उपजाऊ भू-भाग वाली जागीर थी। इस जागीर का वंशजवासी कोरकू जाति का था। महादेव तथा चौरागढ़ के पर्वत तीर्थ के यात्रियों की व्यवस्था भी पहले ही के जागीरदारों के अधीन थी। क्योंकि तीर्थ स्थल इसी जागीर के अंतर्गत था इसलिए पूजा व्यवस्था जिस भी यहीं के लोग किया करते थे। तीर्थ स्थल से होने वाली आय इन्हें ही प्राप्त होती थी।

1901 में यहाँ की जनसंख्या 5402 थी। जिले के 51 गाँव इस जागीर में सम्मिलित थे। इसके 6 गाँव होशंगाबाद जिले थे। 1905-06 में यहाँ की आय 8000 रू. थी जिस पर जागीरदार को 267 रू. टाकोली कर देना पड़ता था।13

10. गौरपानी जागीर – यह जागीर छिंदवाड़ा जिले के पूर्वोत्तर में सिवनी जिले से लगी हुई छोटी सी जागीर थी जिसका क्षेत्रफल 31 वर्गमील था। 1901 में इस जागीर की जनसंख्या 378 थी। 1905 में इस जागीर की आय 2000 रह गई थी। इस जागीर पर 81 रू. टाकोली कर था। इस जागीर पर कोई कर्ज नहीं था। अंग्रेजी शासकों से भी इन्हें कोई सहायता नहीं मिलती थी।

निष्कर्ष – इस प्रकार छिंदवाड़ा जिले का अधिकांश भू-भाग जागीरों में विभक्त था। सभी जागीरें जनजाति बाहुल्य एवं वनाच्छादित थी। जागीर की देखभाल की जिम्मेदारी जागीरदार पर होती थी। जिसका पद मुख्यत: वंशानुगत होता था। जागीर क्षेत्र में शांति सुव्यवस्था और सुरक्षा हेतु जागीरदार प्राय: छोटी-छोटी सेनायें एवं पुलिस रखते थे। मध्यकाल तक

जिले की सभी जागीरें देवगढ़ के गोंड शासकों के अधीन थी। तथा उन्हें कर दिया करती थी। 1854 में छिंदवाड़ा जिले पर ब्रिटिश सत्ता की स्थापना के पश्चात् जागीरों पर भी अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया उनकी नई सनदें जारी की गई। कु-प्रबंध के कारण कछ जार्गीरें कोर्ट ऑफ वार्डस भी हुई। 1947 तक जागीरों पर ब्रिटिश प्रभुत्व बा रहा, परंतु स्वतंत्रता के पश्चात् लगभग सभी जागीरों का अस्तित्व समाप्त हो गया।

मराठा (भोंसला) प्रशासन एवं व्यवस्था का अध्ययन करने पर पता चलता है कि वह मध्यकालीन ढाँचे पर आश्रित थी। इस काल में भू-राजस्व की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी। वस्तुत: वह पटेल अथवा गाँव के मुखिया पर निर्भर थी। जागीरदारी प्रथा यथावत बनी रही। मराठा शासन अथवा ब्रिटिश शासन की स्थापना के पूर्व छिंदवाड़ा जिले में 10 जागीरों का उल्लेख मिलता है। प्रशासन में गतिशीलता लाने के लिए भोंसलों ने अनेक पदों का सृजन किया। किन्तु प्रशासन में नवीनता का अभाव बना रहा। सूबेदार तथा कमविसदार राज्य के सर्वोच्च पदाधिकारी थे। जिन्हें असीमित अधिकार प्रदान किए गए थे। उनके मनमाने शासन से राज्य की जनता अत्याधिक पीड़ित थी। संचार के क्षेत्र में भी कोई उल्लेखनीय बदलाव नहीं परिलक्षित नहीं होते। सभी सड़क मार्ग पुराने ही थे। कुछ नवीन मार्ग अवश्य ही बनाये गए थे। जो सामरिक तथा राजनैतिक दृष्टि से उपयोगी माने जा सकते हैं। जनसामान्य हेतु यातायात मुख्यत: प्राचीन मार्गों से ही संचालित होता रहा। संसाधनों के अभावों में नागरिक सुरक्षा भी नाममात्र की थी। गाँव में पुलिस के अभाव में नागरिकों को अपनी सुरक्षा स्वयं करनी पड़ती थी। मराठा न्याय व्यवस्था भेदभावपूर्ण थी जो जाति और वर्ण पर आधारित थी। पुरातन पंचायत व्यवस्था को बनाये रखना भोंसला प्रशासन का वास्तव में एक सराहनीय कार्य था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महेश्वरी, रामगोपाल (संपा) - शुक्ल अभिनन्दन ग्रंथ, 1955 इतिहास खण्ड, पृ. 64
2. ओकटे, मारूतिराव - वही, पृ. 126
3. ओकटे, मारूतिराव - वही, पृ. 127
4. रसल, आर.वी. - छिंदवाड़ा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1907, पृ. 200
5. ओकटे, मारूतिराव - वही, पृ. 128
6. ओकटे, मारूतिराव - छिंदवाड़ा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1907, पृ. 120
7. रसल, आर.वी. - छिंदवाड़ा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1907, पृ. 200
8. ओकटे, मारूतिराव - वही, पृ. 132
9. रसल, आर.वी. - वही पृ. 201
10. तिवारी, कपिल देव - छिंदवाड़ा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1907, पृ. 120
11. रसल, आर.वी. - वही, पृ. 131
12. रसल, आर.वी. - वही, पृ. 214
13. रसल, आर.वी. - वही, पृ. 224
14. ओकटे, मारूतिराव - वहीं, पृ. 135

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

पश्चिमी निमाड़ की भौगोलिक एंव ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

डॉ. शरमा बघेल *

प्रस्तावना – पश्चिमी निमाड़ मध्यप्रदेश का प्राचीनतम् संस्कृति और सभ्यता का केन्द्र स्थल रहा है। निमाड़ का नाम लेते ही हर व्यक्ति के मन में उस भू-भाग का स्मरण हो आता है जिसमें माँ-नर्मदा रूपी सरिता प्रवाहीत है एंव सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला सजगप्रहरी के रूप में सदैव तत्पर है। यह निमाड़ क्षेत्र वनो से अच्छादित एंव गर्भ में बहुमूल्य खनिज सम्पदा को छिपाये हुए है। निमाड़ के नाम की व्युत्पत्ति के संबंध में कुछ ज्ञात नही है लेकिन यह माना जाता है कि निमाड़ का नाम नीम अर्थात् आधे से व्युत्पन्न है क्योंकि यह प्रान्त नर्मदा नदी के प्रवाह मार्ग पर आधी दुरी पर स्थित माना जाता है। एक अन्य व्युत्पत्ति पूर्व में डिप्टी कमिश्नर सी.जी. लेफ्ट विच के द्वारा सुझाई गई तथा वह आज भी प्रचलित है उनके अनुसार यह नाम नीम के वृक्षों की अधिकता के कारण पड़ा होगा क्योंकि यहाँ नीम के वृक्षों की अधिकता थी और एक अनुमान यह भी लगाया जाता है कि यह उत्तर भारत और दक्षिण भारत का संधि स्थल होने से अनार्यो की मिश्रित भूमि रहा होगा और इसी कारण इसका नाम निमार्य (नीम+आर्य) पड़ा होगा। इसी निमार्य का बदला स्वरूप निमाड़ है। मुस्लिम लेखकों के प्रारंभिक अभिलेखों में इसका उच्चारण निमोर किया गया है। पुराण साहित्य में नेमावर नाम कहा गया है।

पश्चिम निमाड़ की भौगोलिक पृष्ठभूमि – हिन्दुस्तान के नक्शे में विन्ध्य और सतपुड़ा के बीच जो भू-भाग बसा है वह निमाड़ के नाम से प्रसिद्ध है। पश्चिम निमाड़ जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम भाग में है। यह क्षेत्र इन्दौर जिले की दक्षिण सीमा एंव धार अलिराजपुर जिले की दक्षिण पूर्वी सीमा का निर्धारण करती है। दक्षिण-पश्चिम में अन्तर्राज्यीय सीमाएँ छूती है। पश्चिम में गुजरात सीमा दक्षिण पश्चिम में महाराष्ट्र के धड़गांव ,शहदा, शिरपुर, चौपड़ा , यावल, शवेर एंव बोर घाट क्षेत्र की सीमावों से सटा हुआ है। यह जिला $21^{0}27^{0}$ तथा 22^{0} 35^{0} उत्तरी अक्षांश तथा 74^{0} 75^{0} तथा 76^{0} 14^{0} पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। कर्क रेखा इसके उत्तरीभाग से लगभग 63 मील दूर से गुजरती है यह जिला त्रिकोणाकार फैला हुआ है जिसका कोण पश्चिम में स्थित है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्यप्रदेश का दूसरा सबसे बडा राज्य है। वर्तमान म.प्र. का कुल क्षेत्रफल 308252 वर्ग किलोमीटर है जिसमें से पश्चिम निमाड़ क क्षेत्रफल 13450 वर्ग किलोमीटर है जो प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 4.36 प्रतिशत है। इस प्रकार यह क्षेत्र कुल 18 तहसीलों से बना है। सबसे बड़ी तहसील बड़वाह है जिसका क्षेत्रफल 850 वर्ग कि.मी. है तथा सबसे छोटी तहसील सेगॉव है। जिसका क्षेत्रफल 210 वर्ग कि.मी. है।

पश्चिमी निमाड़ का अपवाह तंत्र – प्रवाह तंत्र के अन्तरर्गत किसी क्षेत्र की नदियों का अध्ययन किया जाता है। पश्चिम निमाड़ क्षेत्र के अन्तर्गत खरगोन जिले की प्रमुख नदियॉं कुन्दा, वेदा और चोरल है बड़वानी जिले में गाई, बेल, निहाली, सेंधवा तहसील में अनेर, गोई और महेश्वर में नर्मदा नदी इसके अतिरिक्त मालन , गोमती, नानली, सातक, खारकटा, बुन्दा ऊमरी-टारी बौराड कारम तथा खोड़ा आदि छोटी नदियॉं है। नर्मदा नही भारत प्रायद्धीप की महत्वपूर्ण नदी है। इसे मध्यप्रदेश की जीवन धारा भी कहते है।

भौतिक तत्व – प्रदेश में पाये जाने शैल समूह तथा कृषि के वर्तमान प्रतिरूप में प्रत्यक्ष रूप से घनिष्ट सम्बन्ध है। पश्चिम निमाड़ में नर्मदा नदी के तटीय कुछ भाग को छोड़कर सम्पूर्ण निमाड़ क्षेत्र में धरातलीय चट्टाने डैकेन ट्रेन एंव कॉप मिट्टी की है। प्रदेश का भू-गर्भिक निर्माण आधुनिकयुग की धरातलीय मिट्टी नवीन कॉप प्लाइस्टोसीन युग का पुरातन कॉप लेहेराईट युग का डेकैन ट्रेप एंव लमेटा से हुआ है इसके अतिरिक्त पुराण युग का शिष्ट ग्रेनाईट तथा नीस प्रवसीय चूने के पत्थर, जलोढ भूमि आदि मिलता है।

पश्चिम निमाड़ का भू-आकृतिक प्रदेश – धरातलीय दृष्टि से निमाड़ प्रदेश में अनेक विभिन्नताएँ पायी है वास्तव में निमाड़ प्रदेश पर्वत श्रेणियों, मैदानी भाग एंव पठारी भाग का एक मिला-जुला स्वरूप है अत: भौतिक बनावट की दृष्टि से निमाड़ क्षेत्र को तीन प्रमुख भौतिक प्रदेशों में विभाजित किया गया है जिसमें 1. मैदानी भाग, 2. पठारी भाग, 3. पर्वतीय भाग है निमाड़ प्रदेश का अधिकांश भाग मैदानी भाग है जो नदियों की सहायता से मैदानों का निर्माण हुआ है जिसमें मुख्य भाग रूप से नर्मदा घाटी मैदान कुन्दी और वेदा नदी मैदान, गोई नदी का मैदान और कुमारी नदी का मैदान है।

निमाड़ प्रदेश में पाए जाने वाले पठार डेकेन ट्रेप की श्रृंखला में आते हैं इनका निर्माण टर्शरी युग में होने वाले ज्वालामुखी विस्फोट से हुआ है जो लगभग पॉच लाख वर्ष पुराना बताया जाता है जिसमें खरगोन का पठार सेंधवा का पठार है। पर्वतीय भाग में सपुड़ा पर्वत श्रेणी और विन्ध्यांचल पर्वत श्रेणियॉं प्रमुख है।

पश्चिम निमाड़ की मिट्टियॉं वनस्पति और खनिज सम्पदा-

मिट्टियॉं– मिट्टी चट्टान तथा जीवांश्म के मिश्रण से बनती है और इस आधार पर उर्वरा शक्ति में भिन्नता पाईजाती है पश्चिम निमाड़ की मिट्टी में विशेषकर मेगनीज तथा लोह खनिज की मात्र अधिक होती है। इसका प्रमुख कारण ढक्कन ट्रेप की लावा चट्टानों से निर्माण है यहॉं की मिट्टी में बेक्टीरिया की मात्रा कम होने से नम जलवायु वाली काली मिट्टी की अपेक्षा कम उपजाऊ है। इस क्षेत्र मं अधिकाशं भाग पर काली मिट्टी पायी जाती है लेकिन इसके अतिरिक्त कछारी मिट्टी लाल तथा खाकी मिट्टी पीली और रेतीली मिट्टी भी यहॉं देखी गई है।

वनस्पती – पश्चिम निमाड़ क्षेत्र में विन्ध्याचल एंव सतपुड़ा पहाड़ी प्राचीनकाल से ही वनाच्छादित रही है। लेकिन यहॉं की भील जनजाति एंव अन्य जनजातियॉं कृषि पर निर्भर होने के कारण कृषि योग्य भूमि का बहुत

* ग्राम नवापाडा, पोस्टपारा, तह. एवं जिला - झाबुआ (म.प्र.) भारत

बड़ा भाग उपयोग कर लिया गया है और कुछ कृषि भूमि वनहीन मैदान भाग में की जाती है। वनों में मुख्यत: ऊष्ण कटीबंधीय वन अधिक है, जिनमें सागोन, बांस, पलाश, बबुल, शाल, अंजन, सलाई, धावड़ा, दूधी, बेहड़ा, सेमल, खैर, आंवला तथा महुआ आदि है। समूह के आधार पर शुष्क सागौन वन इस जिले में 2072 वर्ग किलोमीटर में फैले है जिसमें बड़वाह, महेश्वर, भीकन गॉव, रनेज के चैनपुर, वत्त के प्रमुख भाग है।

खनिज सम्पदा – मैगनीज खरगौन में चूना, पत्थर, बड़वानी के उत्तरी भाग एंव धार के दक्षिणी भाग में उपलब्ध है। केलसाइट खनिज का प्रदेश में एक मात्र जिला बड़वानी है वर्तमान में खरगौन जिले में उच्चस्तरीय रॉक फास्फेट का पता चल चुका है।

पश्चिमी निमाड़ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – देश का हृदय स्थल कहा जाने वाला मध्यप्रदेश भू-वैज्ञानिक दृष्टि से सर्वाधिक प्राचीनतम् गोडवाना लैण्ड, भू-संहिता का भू-भाग है। इसके पूर्वी भू-भाग की ओर विंध्य शैल समूह तथा पश्चिम भाग में ढक्कन ट्रेप आकृत है। यहॉ स्थित पश्चिम निमाड़ का इतिहास उसना ही पुराना है, जितना कि मानव सभ्यता का। क्योंकि पश्चिम निमाड़ जिले के महेश्वर, राबर खेड़ी , मण्डलेश्वर, बैड़िया व नावदा टोली आदि ऐसे स्थान है जहॉ प्राप्त पाषाण कालीन एंव लघु पाषाणकालीन प्रस्तर उपकरणों ने प्रमाणित कर दिया है कि उक्त स्थल मानव सभ्यता के विकास के प्राथमिक स्थल थे जिले के महेश्वर के समीप कसरावाद और नावदा-टोली नामक स्थानों पर किए गए पुरातात्विक उत्खननों से जहॉ ताम्र पाषाण कालीन मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए है। कौरव और पाण्डवों ने सहा रहकर ओंकारेश्वर, सिद्धेश्वर, सोमनाथ आदि में मंदिरों का निर्माण करवाया है चिन्तामणि विनायक वेद्य ने अपने महाभारत मीमांसा नामक ग्रंथ में निमाड़ क्षेत्र को अनूप देश के रूप में प्राचीनकाल से अस्तित्व में स्वीकार किया है। इस क्षेत्र पर प्रथम शताब्दी से लेकर 18वीं शताब्दी तक कई राजाओं ने राज्य किया सन् 1818 में हुए मराठा युद्ध एंव मदसौर संधि के पश्चात् पेशवा के अधिकांश क्षेत्र में शामिल सनावद कानापुर और बैडिया पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया, लेकिन 1857 की क्रान्ति में सहयोग करने के पुरस्कार स्वरूप सन् 1861 में खरगोन का क्षेत्र होल्करों को दे दिया गया।

सन् 1868 में होल्करों ने निमाड़ में अपने अधिकृत क्षेत्र को खरगोन और मण्डलेश्वर इन दो जिलों में विभाजित कर दिया। सन् 1904 में इन्हें मिलाकर (होल्कर अधिकृत) निमाड़ निमाड़ जिले का गठन किया जिसका मुख्यालय खरगोन था परगनों की कुल संख्या 16 से घटाकर 11 कर दी गई। सन् 1904 में प्रशासनिक सम्भागों के पुनर्गठन के फलस्वरूप यह जिला बड़वाह, भीकनगॉव, सेगाव, निसरपुर,कसरावद, खरगौन, महेश्वर तथा सेंधवा इन आठ महालों (तहसीलों) में उपविभाजित कर दिया गया। सन् 1947 के बाद सम्पूर्ण क्षेत्र मध्यभारत में मिला दिया गया। 1 नवम्बर 1956 के पूर्व यह जिला सिर्फ निमाड़ कहलाता था लेकिन यह जिला पुराने निमाड़ जिले के पश्चिम में होने के कारण इसका नाम 'पश्चिम निमाड़' एंव शेष भाग पूर्वी निमाड़ हो गया। खरगोन होल्करों का प्रशासनिक मुख्यालय रहा इसलिए इसे जिला मुख्यालय बना दिया गया। जिला एंव सत्र न्यायालय को मण्डलेश्वर में रखा गया क्योंकि अंग्रेजों के समय से ही न्याय व प्रशासन का केन्द्र रहा था और चिकित्सालय भवन व श्रेष्ठ चिकित्सा सेवाऍ बड़वानी में रही है इसलिए वहॉ जिला चिकित्सालय स्थापिता कर दिया गया।

निष्कर्ष – भारत में अति प्राचीन काल से ही विभिन्न प्रजातीय तत्व की लहरे आती रही और वह बहु प्रजातीय महासागर में विलीन होती रही है। संरचना की दृष्टि से प्रत्येक समाज की अपनी एक पृथक संरचना होती है। पश्चिम निमाड़ की भी अपनी भौगोलिक एंव ऐतिहासीक पृष्ठभूमि रही है। हिन्दुस्तान के नक्शे में विन्ध्य और सतपुड़ा के बीच जो भू-भाग बसा है वह निमाड़ के नाम प्रसिद्ध है। पश्चिम निमाड़ जिला खरगौन, बड़वानी एंव धार जिले का कुछ क्षेत्र मिलाकर बनता है। जो सतपुड़ा अचंलीय पर्वत श्रेणियों और तलहेटियों में बसा है। प्राकृतिक दृष्टि से यह जिला नर्मदा घाटी मध्यवर्ती भाग है यह जिला तिकोने आकर में फैला हुआ है। जिसका शिखर पश्चिम में स्थत है। इस प्रकार यह जिला अपनी गरिमा एंव शालीनता को ओढे सांस्कृतिक एंव राजेनैतिक उत्थान-पतन की स्मतियों में बंधा एक भील बाहुल्य क्षेत्र है। भाषा, वेश-भूषा, रहन-सहन, तीज-त्यौहार, संस्कार और लोकगीतों की पारम्परिक शैली में यहॉ के लोकनृत्य, मैले तमाशे अपने आप में अपूर्ण छटा बिखरने वाले भीलों का क्षेत्र है जो कि निमाड़ क्षेत्र है। इसलिए यहॉ के लोग निमाड़िया कहलाने का गौरव प्राप्त किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 उपाध्याय उस.एन.- 'पश्चिम निमाड़ जिले का भूगोल' म.प्र. पाठयपुस्तक निगम भोपाल, 1984
2. निमाड़ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1908 जिल्द म.प्र. तथा जिलाध्यक्ष सूची।
3. उपाध्याय आर.एन.-निमाड़ और उसका लोक साहित्य - उषा प्रकाशन ललिपुर झांसी 1986।
4. रामनारायण उपाध्याय-निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, नागपूर 1980।
5. मध्यप्रदेश का नवीनतम मानचित्र:- प्रकाशक, इण्डियन बुकडिपों (मैपहाउस) सदर बाजार दिल्ली 110006।
6. निमाड़ डिस्ट्रिकर गजेटियर, 1908 म.प्र.। तथा जिलाध्यक्ष सूचि।

****

संचार व्यवस्था का भील जनजाति पर प्रभाव

डॉ. शरमा बघेल *

प्रस्तावना – परिवर्तन एक सार्वभौमिक घटना है। कोई भी मानव समाज दूसरों से अछूता नहीं रहा है, चाहे आदिम समाज हो व आधुनिक प्रत्येक में परिवर्तन न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य दृष्टिगोचर होता है। समाज में परिवर्तन विकास से होता है। क्योंकि यह प्रगति का प्रतीक है। प्रगति और परिवर्तन में संचार व्यवस्था की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। पश्चिम निमाड़ की भील जनजाति भी इसके प्रभाव से अछूती नही है। फिर भी इस जनजाति में परिवर्तन विकास एक समान नहीं रहते जो गॉव नगर, कस्बों के निकटवर्ती होते हैं उसमें संचार व्यवस्था पर्याप्त होती है, उनके घरों में ही टी.वी., रेडियो, टेलीफोन, मोबाईल आदि ऐसे साधन मिल जायेंगे जिससे यह समाज आधुनीकीकरण की क्षेत्र में खड़े मिलते हैं। उसके गॉव की सड़क नगरों से जोड़ती है और इस कारण आवागमन के साधन पर्याप्त होते हैं जिससे वे लोग निरन्तर नगरीय जन सम्पर्क में रहते है। उसी का परिणाम ग्रामीण क्षेत्र में खान-पान एंव रहन-सहन पर वेष-भूषा, संस्कार और धार्मिक तथा आर्थिक जीवन पर पड़ने वाला प्रभाव है।

खान-पान एंव रहन-सहन पर प्रभाव – चूँकि सभ्य समाज में जितना संचार का प्रभाव पड़ा है। उतना ग्रामीण और असभ्य समाज तक नहीं पहुँचा है लेकिन फिर भी प्रभाव देखने को मिलता है। खान-पान में भील मांसाहारी एंव शाकाहारी दोनों प्रकार का भोजन करते हैं। मांसाहारी भील अधिक हैं जो जंगल से खरगोश, पक्षियों आदि का शिकार करके सेवन करते हैं लेकिन कुछ शिक्षित वर्ग हिन्दु समाज के संस्कारों को समझने लगे हैं। धार्मिक व्रत, उपवास भी करने लगे हैं कुछ भील परिवार संतो के भक्त हो गये हैं, उनमें परिवर्तन देखने को मिल रहा है जो शाकाहारी वर्ग है। वे भोजन में पौष्टिक भोजन करने लगे हैं। पहले प्याज, मिर्च के साथ रोटी खाने वाले लोग अब हरी सब्जी और पक्का भोजन तक करने लगे हैं जहॉ ये लोग ज्वार, बाजरा, मक्का की रोटी का सेवन करते थे। अब समय के साथ उसका स्थान गेंहू की रोटी ने ले लिया है। पहले महुआ की डोली के तेल का प्रयोग करते थे। लेकिन सोयाबीन और मूंगफली का तेल प्रयोग में लाया जाता है। पूर्व में भोजन का पात्र मिट्टी की दूमड़ी हुआ करती थी लेकिन अब उसका स्थान कॉसे स्टील की थाली ने ले लिया है। भीलों के मकान की छते घास-फूस की होती थी और दिवार के रूप में लकड़ी या तुवर के सार्टिये होते थे। एक मकान में आधे हिस्से में पशु और आधे स्थान में परिवार रहा करता था लेकिन अब इनकी आवास व्यवस्था में मकान पक्के, ईट से बनने लगे हैं। जिसमें पशुओं के लिए अलग से स्थान रखा जाता है मकान की बनावट पहले के समान ही होती है लेकिन उसमें लगने वाली सामाग्री में परिवर्तन देखने को मिला है।

वेशभूषा पर प्रभाव – भील जनजाति पर पाश्चात्य संस्कृति की छाप पड़ने लगी है पहले ये लोग पूर्व क्षेत्रीय वेशभूषा में दिखाई देते थे लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अब सब बदलने लगा है। पहले भील महिलाएँ चिल्ला वाला काछड़ा (घाघरा) तथा लहरिया लुगड़ा (साड़ी) हाथों में कॉच की मोटी चूड़ियॉ, कमर में कंदोरा पैरों में पायल जो बजने वाली होती थी उसे पहनते थे। पुरूष वर्ग कमर में कनाड़ी (धोती) दो जेब वाली मोटे कपड़े की कमीज सिर पर पगड़ी कानों में मुर्की पहनते थे लेकिन ये वेशभूषा अब इक्का-दुक्का ही धारण किए हुए दिखाई देते है अब यह वेशभूषा लुप्त होने की कगार पर हैं युवा वर्ग जीन्स पेंट, शर्ट, टी-शर्ट, पैरों में जूते कमर में बेल्ट इनसर्ट किए हुए होते है। वहीं युवतियॉ भी सलवार सूट, उल्टे पल्ले की साड़ी, चॉदी की रमझोल (पायल) नखपालिस, लाली, पावडर का प्रचलन हो चला है। युवा वर्ग में त्यौहारों के समय-चश्मा लगाने का बड़ा शौक होता है।

संस्कारों पर प्रभाव – संचार व्यवस्था से भील जनजाति के संस्कारों पर सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ा है। पहले नामकरण वारों के नाम से किया जाता था जैसे सोमवार को पेदा हुए बालक का नाम सोमला, सोमजी मंगलवार के दिन पैदा बालक का नाम मंगलिया, मंगु, लडकी का नाम मंगली जैसे रख दिया जाता था लेकिन अब नवजात शिशु का नाम पंडितों के द्वारा करवाया जाता है और हिरों-हिरोईने के नाम से रखे जानें लगे हैं। कुछ संस्कार पूरी तहस से लुप्त होने की कगार पर है जैसे गुदना, डाम देना आदि नाममात्र दिखाई देने लगे हैं। कुछ संस्कारों में बदलाव हुए हैं जिसमें मुख्य है विवाह संस्कार यह संस्कार हर समाज के लिए अनिवार्य है इसमें रिवाज वही है लेकिन पहनावे पर प्रभाव अधिक पड़ा है कुछ विवाह के प्रकार लुप्त हो रहे है। जेसमें घर जमाई विवाह, हरण, विवाह है। मोबाईल के आविष्कार ने भील जनजाति के युवक-युवतियों में नजदीकियॉ बढ़ा दी है। अत: इसका प्रभाव प्रेम विवाह की बढ़ती संख्या के रूप में हो रहा है। ऐसे ही अनेक प्रभाव संस्कारों पर पड़ रहें है।

धार्मिक जीवन पर प्रभाव – प्राचीनकाल में भील जनजाति का अलग ही स्वतंत्र धर्म था। इनके देवी-देवता एंव उनकी उपासना पूजा के अलग ही तरीके थे, जो हिन्दू संस्कृति से भिन्न थे जैसे बाबा देव, भीलट देव, जहमा माता, खेतर पाल देव आदि परन्तु नगरीय क्षेत्र और मनोरंजन के साधन, टीवी, सिनेमा के सम्पर्क में आकर हिन्दू देवी-देवताओं की पूजा अर्चना करने लगे है। यथा राम, हनुमानजी, गणेशजी आदि बड़वानी के बावनगजा की आराधना करते हुए भीलों को देखा जा सकता है अस्थि, अवशेषों को भी गंगा में प्रवाहित करने लगे है। इस तरह से धार्मिक क्षेत्र में भी संचार व्यवस्था का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

भीलों का आर्थिक जीवन पर प्रभाव – पश्चिम निमाड़ क्षेत्र की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर है। संचार व्यवस्था से कृषि कार्य के तरीकों में अन्तर देखने को मिलता है। नवीन कृषि उपकरणों का प्रयोग

* ग्राम नवापाडा, पोस्टपारा, तह. एवं जिला - झाबुआ (म.प्र.) भारत

किया जाने लगा है और नवीन किस्म के बीज जो उपचारित उन्हें बोया जाता है जिससे पैदावार में बढ़ोत्तरी हुई है। देशी खाद की जगह रासायनिक खादों ने ले ली है और फसलों को कीटों से बचाने के लिए कीटनाशक का प्रयोग किया जाने लगा है। इस क्षेत्र की प्रमुख फसल मक्का, ज्वार, बाजरा हुआ करती थी लेकिन अब गेंहूँ, सोयाबीन, कपास, केले, गन्ने और मिर्ची की खेती की जाने लगी है। पहले सिंचाई कुओं से रहट पम्पों से की जाती थी लेकिन अब पम्पों के माध्यम से खेती में फवारे लगाये जाते है ताकि पानी का उपयोग सही रूप से हो सके। अब वर्ष में करीब तीन फसल तक लेने लगे है। संचार व्यवस्था ने साहूकारों से मुक्ति दिलाई है क्योंकि अब आवागमन के पर्याप्त साधन होने से फसल सीधे मण्डी तक पहुँच रही है। सहायक व्यवसाय जैसे पशुपालन, मुर्गीपालन, मछली पकड़ने में भी बहुत कुछ परिवर्तन दृष्टि गोचर होता है।

भील जनजाति हमेशा से ही एकांकी क्षेत्रों में निवास करती है। जहॉ उनके विकास से संबंधित योजनाएॅ पहुॅचने में समय लगता है। प्राकृतिक स्थान के अनुरूप समस्याओं के स्वरूप में भी भिन्नता रही है और शहरी समाज की समस्याओं से कहीं अधिक रही है। स्वतंत्रता के पचास वर्षो पश्चात् भी ऐसे दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्र तक सरकार की जनकल्याण योजनाएॅ नही पहुॅच पा रही है जिसमें इनकी समस्या ज्यों कि त्यों बनी हुई है।

पश्चिम निमाड़ की भील जनजाति की मुख्य समस्या शिक्षा है और शिक्षा ही समाज की अन्य समस्याओं का कारण है शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से समस्याओं को दूर किया जा सकता है। सरकार कितना भी दावा कर ले कि ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा को सुविधाएॅ सुलभ करायी जा रही है, और साक्षरता दर भी बढ़ा ले, लेकिन व्यवहारिक रूप में इस पर अमल नही हो पा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में स्कूल खुले हैं लेकिन शिक्षको की कमी के कारण ग्रामीण क्षेत्र के रहवासी अपने बच्चों को भेजने में कतराते है। कुछ लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहता है तो सामने आर्थिक स्थिति बाधक हो जाती है दुसरी और आज की शिक्षा रोजगार उन्मुखी नहीं है। जिससे शिक्षित वर्ग को बेकारी का सामना करना पड़ता है।

निरक्षरता के कारण समाज की रूढ़ियॉ अंधविश्वास, टोना टोटके आदि व्याधियॉ समाज में बनी हुई है जिसके कारण कृषि कार्य भी पारम्परिक तरीके से करते हैं जिससे उत्पादन की कमी देखने को मिलती है और परिणाम होता है गॉव से पलायन कर जाना। भील जनजाति की और कई समस्याएॅ हैं जिसमें मुख्य रूप से कृषि समस्या, सांस्कृतिक समस्या, नारी समस्या, संचार संबंधी समस्याएॅ हैं। वर्तमान में संचार व्यवस्था के कारण इन सभी समस्याओं में परिवर्तन देखने को मिलता है।

निष्कर्ष – परिर्वतन एक सार्वभौमिक घटना है। कोई भी मानव समाज दुसरों से अछूता नहीं रहा है, समाज में परिवर्तन विकास से होता है। और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका उस क्षेत्र की संचार व्यवस्था का है। संचार व्यवस्था का प्रभाव समाज पर पड़ता है उस प्रभाव का परिणाम सामाजिक विकास और उसमें होने वाला परिवर्तन है। आज का जनजाति समाज भी इस परिवर्तन से अछूता नही है। समाज के प्रत्येक पहलु जैसे रहन–सहन, खान–पान, वेशभूषा, तिज–त्यौहार, संस्कार, धार्मिक और आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी एंव डॉ. भारत अग्रवाल–'यूनिफाईट समाजशास्त्र' ।
2. भील समाज कला एंव संस्कृति – डॉ. सी.एल. शर्मा राजस्थान, 1998।
3. उपाध्याय डॉ. विजय शंकर एंव शर्मा भारत की जनजाति संस्कृति पर प्रकाश, भोपाल, प्रथम 1989, द्वितीय संशोधित 1993, तृतीय 1995, चतुर्थ 1996, पंचम आवृति 1998 पृ. 104।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

कृषि का आधुनिकीकरण एवं पर्यावरण पर प्रभाव (नरसिंहपुर जिले के सन्दर्भ में)

ब्रजेश कुमार डेहरिया * डॉ. भुनेश्वर टेम्भरे **

प्रस्तावना - कृषि के आधुनिकीकरण का पर्यावरणीय प्रभाव मानव विकास का एक प्रगतिशील आयाम है। इसके बिना मानव विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। मानव अपने दैनिक आवश्यकताओं को निरन्तर बढ़ाने के लिए उद्यम और कार्य की अग्रसर हो रहा है। जिसमें सबसे महत्वपूर्ण भौगोलिक रूप से कृषि का केन्द्र बिन्दु है। मानव एक ऐसा प्राणी जो बिना कार्य के दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता है। जहाँ इन्हें भौगोलिक वातावरण विकासशील राज्यों द्धारा उन्नत किस्म के बीजों की उपलब्ध ही सफल के उन्नति का मूल स्त्रोत माना जाता है। उसके साथ-साथ आवश्यकताऐं मानव जीवन की अनंत होने के कारण वह कभी सन्तुष्ट नही रह सकता है। अपनी बढ़ती आवश्यक्ताओं के लिए संसाधनों को भी बढ़ना महत्वपूर्ण है। जबकि कृषि के क्षेत्र में उत्पादन की पूर्वी दिशाओं की अपेक्षा मानव का चक्रिय विकास सामाजिक विसंगतियों का परिणाम होने के साथ कृषि पर आश्रित जनसंख्या अत्यधिक रूप में होती है। कृषक जीवन पर प्रभाव पड़ रहा है। उनके रहन-सहन आर्थिक स्थिति एवं संस्कृति पर प्रभाव पड़ रहा है।

नरसिंहपुर जिले की सीमा कुल सात जिलों से मिलती है। जिसमें पूर्वी सीमा रेखा पर जबलपुर स्थित है। पूर्वी और दक्षिणी सीमा रेखा पर सिवनी जिला को स्पर्श करती हुई गुजरती है। दक्षिणी सीमा रेखा पर छिंदवाड़ा जिला स्थित है। पश्चिमी दिशा में रायसेन और होशंगाबाद जिला स्थित है। जिले की उत्तरी सीमा का निर्धारण सागर एवं दमोह जिले पर निर्धारित होती हैं।

नरसिंहपुर जिला में भगवान नरसिंह का मंदिर एक प्राचीन धरोहर के रूप में स्थित है। जिसका अध्यात्मिक महत्व अधिक है। इन मंदिरों का निर्माण जाट सरदार द्धारा हुआ था। इसलिए इस नगरों में भगवान नरसिंह की अध्यात्मिक परम्पराओं के रूप में निर्धारित है। इसी कारण इसका नाम भी नरसिंहपुर के रूप में उल्लेखित हुआ है।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्धितीयक शोध सामाग्री के आधार पर तथ्यों के संकलन का प्रयास किया गया है। इसके साथ-साथ विद्धानों का मार्गदर्शन भी लिया गया है। इन्हीं तथ्यों को सारणीयन के लिए इकाईयों का संकलन किया गया है। इसके साथ-साथ शोध-पत्र, पत्रिकाओं के माध्यम से भी अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य :

1. कृषि का आधुनिकीकरण एवं पर्यावरणीय के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. आधुनिक उन्नत किस्म के बीजों के बीजों उपचार का अध्ययन करना।
3. आधुनिक कृषि व्यवस्था में रहन-सहन और पर्यावरण के प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र - नरसिंहपुर जिला की उत्तरी सीमा में विध्यांचल की श्रेणी व सागर के पठारी भाग है। यहाँ पर्यावरणीय संतुलन का एक अच्छा वातावरण निर्मित हो रहा है। दक्षिणी दिशाओं में सतपुड़ा पर्वत की महादेव श्रेणी भी गोंडवाना पहाड़ियों से मिलती-जुलती जिले की भौगोलिक सीमाओं को स्पर्श करती है। जिले का 30 प्रतिशत भाग नर्मदा कछार में आता है। यह कछारी क्षेत्र कृषि के लिए अत्याधिक उपयुक्त है। इस क्षेत्र में नर्मदा नदी की प्रमुख सहायक नदियाँ शक्कर, दुधी, शेर, सीतारेवा, वारूरेवा, सींगर, उमर, हिरण आदि नदियाँ बहती है। नरसिंहपुर में कुल पाँच तहसील एवं छ: विकास खण्ड हैं। जिला की प्रमुख तहसील : नरसिंहपुर गोटेगाँव करेली गाडरवाड़ा तेंदूखेड़ा है जबकि जिले के प्रमुख विकासखण्ड नरसिंहपुर, गोटेगाँव, करेली, चोवरपाठा, सांइखेड़ा एवं चीचली है।

नरसिंहपुर जिला : गौवंश, भैसवंश, बकरी लिपालन - नरसिंहपुर जिला में कृषि के साथ- साथ यहॉ के किसान दुग्ध उत्पादन हेतु गाय, भैस, एवं बकरी का पालन करते है जिससे कृषि के अतिरिक्त आय प्राप्त हो जाति है इसी प्रकार जिले के किसान कुक्कुट पालन भी करते है। वर्ष 2011-12 में गौवंश, नर 71030 मादा 169192, बछडे बछिया 134261, कुल गौवंश 374483 है भैंसवंश नर 2366, मादा 71279 पडे पड़िया 58886 कुल भैंसवंश 132531 है।

जिला नरसिंहपुर : कृषक जीवन - नरसिंहपुर जिला में सभी कृषकों के पास सामान रूप से जमीन उपलब्ध नहीं है। इन्हें पाँच भागों में विभाजित किया गया है। उपरोक्त सारणी में 1990-91 से 2010-11 के आँकड़े द्धारा प्रदर्शित किया गया है।

साराणी क्रं. 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आरेख क्रं. 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

आरेख क्रं. 1 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1990-91 में सीमांत कृषकों की संख्या 31957 एवं क्षेत्रफल 17106 लघु कृषकों की संख्या 34833 एवं क्षेत्रफल 51173 हेव. अर्द्ध, मध्यम कृषकों की संख्या 25394 एवं क्षेत्रफल 70994 हेव. मध्यम कृषकों की संख्या 19440. एवं क्षेत्रफल 117327 हेव. है। बड़े कृषकों की संख्या 3829 एवं क्षेत्रफल 58956 हेव. है। सभी आकार के कृषकों की कुल संख्या 117453 एवं क्षेत्रफल 315556 हेव. है। वर्ष 2000-01 में सीमांत कृषकों की संख्या 38171 एवं क्षेत्रफल 19637 हेव. है। लघु कृषकों की संख्या 38059 एवं क्षेत्रफल 56104 हेव. है। अर्द्ध, मध्यम कृषकों की संख्या 26470 एवं क्षेत्रफल 74516 है। मध्यम कृषकों की संख्या 18720 एवं क्षेत्रफल 111736 हेव. है। बड़े कृषकों की

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मण्डला (म.प्र.) भारत

संख्या 3332 एवं क्षेत्रफल 51159 हेव. है। सभी आकार के कृषकों की कुल संख्या 124752 एवं क्षेत्रफल 313151 हेव. है। 2010-11 में सीमांत कृषकों की संख्या 46432 एवं क्षेत्रफल 26140 हेव. है। लघु कृषकों की संख्या 26470 एवं क्षेत्रफल 74516 हेव. है। अर्द्ध, मध्यम कृषकों की संख्या 29450 क्षेत्रफल 82530 है। मध्यम कृषकों की संख्या 14090 एवं क्षेत्रफल 83525 हेव. है। बड़े कृषकों की संख्या 1748 एवं क्षेत्रफल 26393 हेव. है। सभी आकार के कृषकों की कुल संख्या 109998 है।

कृषक जीवन में परिवर्तन – परिवर्तन प्रकृति का नियम है कृषि के क्षेत्र में परिवर्तन हो रहे हैं भरण-पोषण के उद्देश्य से होने वाली कृषि अब परिवर्तित हो कर आर्थिक लाभ प्रदान करने वाली हो चुकी है। नरसिंहपुर जिले में अर्जित प्राथमिक समंक द्वारा संग्रहण उपरोक्त तालिका में प्रादर्शित किया गया है।

सारणी क्रं. 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आरेख क्रं. 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आरेख 02 से स्पष्ट होता है कि कृषक द्वारा कृषि में परिवर्तन तहसील नरसिंहपुर में 74 प्रतिशत उत्तरदाता हाँ, 22 प्रतिशत नहीं, 04 प्रतिशत निरूत्तर हैं। करेली विकासखण्ड में 76 प्रतिशत उत्तरदाता हाँ, 20 प्रतिशत नहीं, 04 प्रतिशत निरूत्तर हैं। गोटेगाँव विकासखण्ड में 70 प्रतिशत उत्तरदाता हाँ, 28 प्रतिशत नहीं, 02 प्रतिशत निरूत्तर हैं। गाडरवारा विकासखण्ड में 73.33 प्रतिशत उत्तरदाता हाँ, 23.33 प्रतिशत नहीं, 03.33 प्रतिशत निरूत्तर हैं।मानव की आवश्यकताऐं असीमित है। मानव कभी संतुष्ट नहीं रहता है, अध्ययन क्षेत्र नरसिंहपुर की कुल जनसंख्या 1091854 है। जिसमें से कुल कृषक 102383 एवं खेतिहर मजदूर 165445 हैं। नरसिंहपुर में प्रति हैक्टे. उपज चावल वर्ष 2007-08 में चावल 2236 कि.ग्रा., गेंहूँ 2865 कि.ग्रा., ज्वार 1489 कि.ग्रा., मक्का 21253 कि.ग्रा., तुअर 1218 कि.ग्रा., मूँगफली 2268 कि.ग्रा., अलसी 565 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर है। वर्ष 2014-15 में चावल 3680 कि.ग्रा., गेंहूँ 3480 कि.ग्रा., ज्वार 2397 कि.ग्रा., मक्का 1353 कि.ग्रा., तुअर 1368 कि.ग्रा., मूँगफली 1467 कि.ग्रा., अलसी 660 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर है।

वर्ष 2007-08 में चावल 23.12 मिलियन टन गेंहूँ 198. 32 मिलियन टन गन्ना 141.15 मिलियन टन तुअर 33.13 मिलियन टन, उडद 4.68 मिलियन टन, चना 126.37 मिलियन टन,सोयाबीन 102.12 मिलियन टन उत्पादन रहा।

वर्ष 2014-15 में चावल 111.87 मिलियन टन, गेंहु 330.60 मिलियन टन गन्ना 320.61 मिलियन टन, तुअर 57.05 मिलियन टन उडद 5.86 मिलियन टन उत्पादन हुआ। चना 73.47 मिलियन टन, सोयाबीन 56. 75 मिलियन टन उत्पादन हुआ। कृषि के साथ यहाँ पर गाय, भैस, बकरी पालन से भी कृषकों को अतिरिक्त आय प्राप्त हो रही है।

वर्ष 1990-91 में सीमांत कृषकों की संख्या 31957 एवं क्षेत्रफल 17106 लघु कृषकों की संख्या 34833 एवं क्षेत्रफल 51173 हेव. अर्द्ध, मध्यम कृषकों की संख्या 25394 एवं क्षेत्रफल 70994 हेव. मध्यम कृषकों की संख्या 19440. एवं क्षेत्रफल 117327 हेव. है। बड़े कृषकों की संख्या 3829 एवं क्षेत्रफल 58956 हेव. है। सभी आकार के कृषकों की कुल संख्या 117453 एवं क्षेत्रफल 315556 हेव. है।

वर्ष 2010-11 में सीमांत कृषकों की संख्या 46432 एवं क्षेत्रफल 26140 हेव. है। लघु कृषकों की संख्या 26470 एवं क्षेत्रफल 74516 हेव. है। अर्द्ध, मध्यम कृषकों की संख्या 29450 क्षेत्रफल 82530 है। मध्यम कृषकों की संख्या 14090 एवं क्षेत्रफल 83525 हेव. है। बड़े कृषकों की संख्या 1748 एवं क्षेत्रफल 26393 हेव. है। सभी आकार के कृषकों की कुल संख्या 109998 है।

निष्कर्ष – इस प्रकार नरसिंहपुर में कृषकों कृषि उत्पादन बढ़ने से कृषक जीवन पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है। उससे पर्यावरण के संतुलन का भी एक अच्छा प्रभाव देखा गया है। जिसमें कृषकों ने उनकी संस्कृति परिवर्तित हो रही है, आर्थिक लाभ हो रहा है, इनका जीवन स्तर में सुधार हो रहा है। मानव के स्वास्थ्य का सबसे महत्वपूर्ण कारक तत्व पर्यावरणीय संतुलन और वातावरण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पटैल विजय कुमार, (2006), 'नरसिंहपुर जिले में 1857 में कृषि विकास में वाणिज्यिक बैंक की भूमिका का तुलनात्मक मूल्यांकन' पी-एच.डी. उपाधि हेतु अप्रकाशित शोध प्रबंध, वाणिज्यिक विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)।
2. विश्वकर्मा, आरती (2011), 'नरसिंहपुर जिले में सामाजिक एवं आर्थिक विकास में कृषि परिवर्तन की भूमिका' पी-एच.डी. उपाधि हेतु अप्रकाषित शोध प्रबंध, भूगोल विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)।
3. नामदेव, अर्चना, (2013), 'कृषि पद्धातियाँ एवं पर्यावरण अरूणाचल प्रदेश के संदर्भ में एक भौगोलिक अध्ययन' पी-एच.डी. उपाधि हेतु अप्रकाशित शोध प्रबंध, भूगोल विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)।

साराणी क्रं. 01 : आकार कृषि जोत की संख्या

वर्ष	सीमांत कृषक (एक हेव. से कम)		लघु कृषक (एक हेव. से अधिक तथा 2 से कम)		अर्द्ध, मध्यम 2 हेव. से अधिक तथा 4 से कम		मध्यम कृषक (4.0 हेव. से 9.99 हेव. तक)		बड़े कृषक 10 हेव. से 20 हेव. तक		योग सभी आकार	
	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल
1990-91	33957	17106	34833	51173	25394	70994	19440	117327	3829	58956	117453	315556
2000-01	38171	19637	38059	56104	26470	74516	18720	111736	3332	51159	124752	313151
2010-11	46432	26140	42018	64305	29450	82530	14090	83525	1748	26393	10990	109998

आरेख क्रं. 01

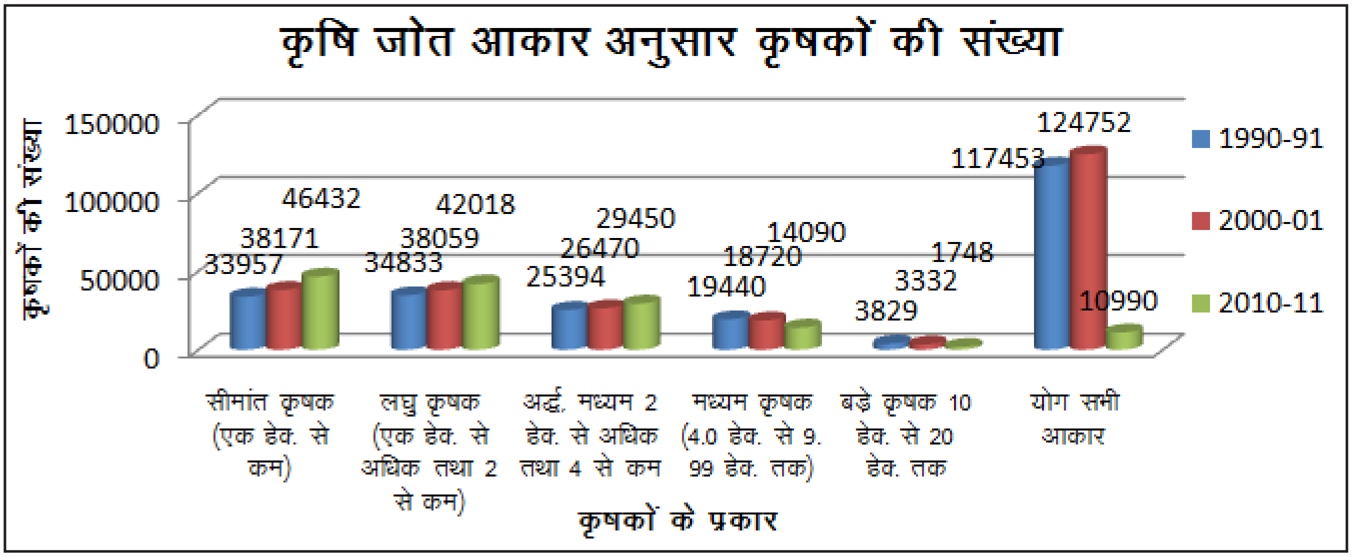

सारणी क्रं. 02 : कृषि द्वारा कृषक जीवन में परिवर्तन

		नरसिंहपुर		करेली		गोटेगाँव		गडारवारा	
क्र.	आव्रति	उत्तरदाता	प्रतिशत	उत्तरदाता	प्रतिशत	उत्तरदाता	प्रतिशत	कुल उत्तरदाता	प्रतिशत
1	हाँ	37	74%	38	76%	35	70%	110	73.33%
2	नहीं	11	22%	10	20%	14	28%	035	23.33%
4	निरूत्तर	02	04%	02	04%	01	02%	005	03.33%
	कुल योग	50	100	50	100	50	100%	150	100%

आरेख क्रं. 02

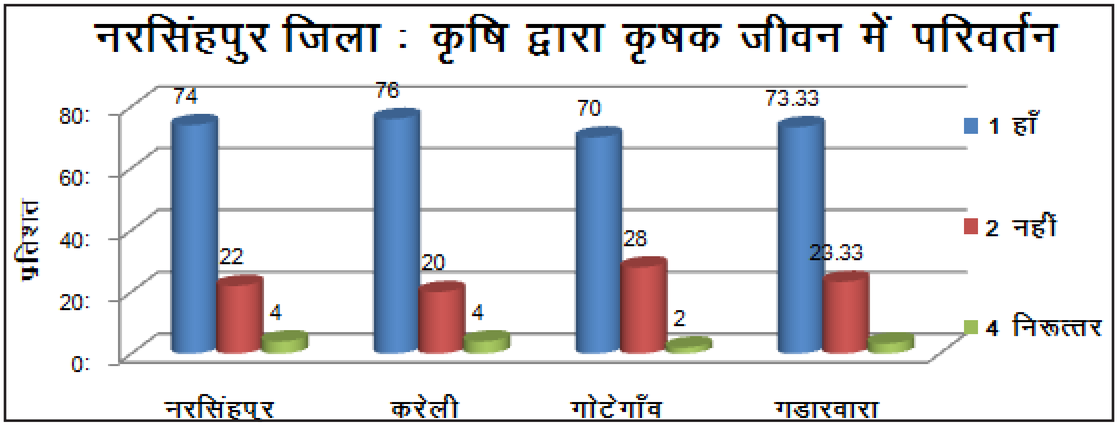

****

भूमण्डलीकरण एवं हिन्दी साहित्य की विधाऐं - हिन्दी साहित्य में विभिन्न विधाओं का विकास

डॉ. नीलम राणा *

प्रस्तावना - भूमण्डलीकरण की अवधारण, आधुनिकीकरण की एक विशिष्ट शैली हरै, जो ओद्योगीकरण, शहरीकरण और सामजिक गत्यात्मकता पर आधारित है। पश्चिमी विचारकों ने भारतीय संस्कृति की धारणाओं 'वासुदेव कुटुम्बकम', **मानववाद और समष्टि की तर्ज पर** ग्लोबलाइजेशन (भूमण्डलीकरण, वैश्वीकरण), विश्व पडोसी आदि अवधारणाओं की स्थापना पर बल देना प्रारमभ किया है, भारतीय अवधारणा भैतिकवाद पर आधारित है। अत: दोनों में काफी अन्तर है।

भूमण्डलीय की नयी अवधारणा मुख्यत: पश्चिमीकरण का रूपान्तरण है, विश्व की अर्थव्यवस्था में विकसित देशों के वर्चस्व को बनाना और बनाये रखना इसका लक्ष्य है। इस प्रकार तैयार मॉडल तकनीक से लेकर राजनीति और संस्कृति तक को प्रसारित व सवंमित करता हैं भूमण्डलीकरण का मुख्य शस्त्र भले ही अर्थ व्यवस्था को प्रभावित करता है लेकिन इसका सबसे ज्यादा प्रभाव सांस्कृतिक होता है। यह प्रभाव अनायास नहीं बल्कि जीवन शैली में बदलाव प्राय: सभी जगहों की स्थानीय विशिष्टताओं, भाषा, संगीत गीत सबको प्रभावित करता है। भूमण्डलीकरण में भाषा का महत्वपूर्ण योगदान है। भाषा द्धारा एक देश की वैचारिक व्यवस्था का प्रचार प्रसार होता है। भाषा परस्पर संवाद स्थापित करती है, जिसके कारण हम पश्चिमी सभ्यता को अपनाते जा रहे है। भाषा द्धारा हम पश्चिमी देशों की व्यवस्थाओं का अनुवाद कम्प्यूटर द्धारा ग्रहण करते है। यह ही नहीं हिन्दी भाषा भूमण्डलीकरण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हे। जहां हम अपनी संसकृति को अपना रहे है। पश्चिमी देशों में हिन्दी भाषा को सिखाखा जा रहा है, जिसका उदाहरण अमेरिका एवं कनाडा में खुलने वाले हिन्दी पढ़ाने वाले स्कूलों से ले सकते है, यही नहीं सही नहीं हमारे देश की योग-साधना के सिद्धान्त को आज सम्पूर्ण को आज सम्पूर्ण विश्व अपनाने के लिये तैयार है। जिसके लिये भाषा विशेषत: हिन्दी एवं संस्कृत को पश्चिमी देशों में विशेष महत्व दिया जा रहा है। भाषा के महत्व को प्रकट करने के लिये आवश्यक है कि इसके विकास एवं विधाओं पर भी प्रकाश एवं विधाओं पर भी प्रकाश डालना चाहिए। हिन्दी भाषा के महत्व को सम्पूर्ण विश्व में स्थान मिला है, वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि हिन्दी व संस्कृत प्रयोग करने वाले व्यक्तियों का मानसिक विकास अन्य भाषा बोलने वालों से अधिक विशिष्टता लिये होता है।

हिन्दी साहित्य - हिन्दी भाषा भारतीय संस्कृति का सशक्त अंग है, भारत में हिन्दी साहित्य का विकास विभिन्न चरणों में हुआ है, जिसका मुख्य अंग भाषा है जो भारत में एक बड़े हिस्से में बोली जाती है।

हिन्दी साहित्य में विभिन्न विधाओं के विकास को समझने के लिये जरूरी है कि पहले हिन्दी साहित्य के विकास को भी समझे।

साहित्य के बारें में न्यूलिटरेरी हिस्ट्री (भा02सं01,पृ0 1383 सं0 1970) में जीव हार्टमैन ने बताया है कि बौद्धिक अनुशासन के रूप में साहित्य जरूरी है, क्योंकि रचना की अर्न्तवस्तु उसका कलात्मक रूप और उसकी मूल्यवत्ता यह सभी कुछ रचनाकर की ऐतिहासिक चेतना के द्धारा निर्धारित और नियमित होता है। डिस्क्रमिनेशन सं0 (1970 पृ0 143 पर) से वैलक के अनुसार साहित्य की प्रगति परम्परा निरन्तरता और विकास की पहचान करना एवं करवाना ही साहित्य इतिहास का मूल भूत प्रयोजन है। साहित्य यात्रा एक विकासशील प्रक्रिया है। इसमें नयी प्रवृत्तियां साकार होती है। और नयी प्रवृत्तियों का पुरानी प्रवृत्तियों से संघर्ष होता है। नये प्रयोग नये परिवर्तन होते है। इस प्रकार निरन्तरता का क्रम चलता रहता है।

हिन्दी भाषा व साहित्य - किसी साहित्य का आरम्भ कब हुआ, इसका सीधा उत्तर यही है कि जिस भाषा का वह साहित्य है, उस भाषा ने तब अपने रूप का निर्माण कर लिया होगा। अत: यहां पर यह भी जानना आवश्यक हे कि हिन्दी का एक रूप वह भी है। जो आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक हिन्दी साहित्य में प्रयुक्त हुआ है। यह रूप हिन्दी की अठ्ठारह बोलियों तक सीमित है, पश्चिमी हिन्दी की पांच (अवधी, बघेली छतीसगढी, कौरवी, ब्रज बुन्देलखण्डी, कन्नौजी) पूर्वी हिन्दी की तीन (अवधि, बघेली छतीसगढी) राजस्थानी की चार (मालवी, मारवाडी, मारवाडी,मेवाती, जयपुरी) पहाडी की तीन (पूर्वी, मध्य, पश्चिमी) तथा बिहारी की तीन (मैंथली, भोजपुरी व मराठी)। लेकिन वर्तमान में हिन्दी साहित्य खडी बोली में रचा जा रहा है। खडी बोली ही भारत की राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा है। वैसे भारत में विभिन्न क्षेत्रों में क्षेत्रीय हिन्दी का प्रयोग होता है, जैसे कलकत्ता में कलकत्तियां, हिन्दी, मुम्बई में मुम्बईयां, हिन्दी हैदराबाद में दक्षिणी हिन्दी, इस प्रकार हिन्दी साहित्य केवल खड़ी बोली का साहित्य ही नही बल्कि विभिन्न बोली जाने वाली भाषा का भी साहित्य है।

हिन्दी साहित्य के लेखन का पहला प्रयास, फ्रांसीसी विद्धान मॉर्सा-द तॉसी ने कियां। लेकिन उन्होने हिन्दी साहित्य के आविर्भाव की काल सीमा के बारे में विचार नहीं किया। इसके बाद सर्वप्रथम शिव सिंह सेंगर ने शिव सिंह सरोज (1893 ई0) के अन्तर्गत किसी जनजाति को साक्ष्य मानकर 7वीं शताब्दी के किसी पुष्प कवि को हिन्दी का पहला कवि माना। इस आधार पर 7वीं शताब्दी से ही हिन्दी साहितय का आरम्भ काल माना गया है। हिन्दी साहित्य के लेखन में आचार्य शुक्ल को साहित्योतिहास का लेखन का प्रारूप हमें वृत संग्रहों के रूप में उपलब्ध होता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार नाभादास ने भक्तकाल की रचना सं0 1642 में की थी। जिस पर सं0 1739 में प्रियदास ने एक टीका भी लिखी हैं। अत: यह माना गया कि साहित्य लेखन सर्वप्रथम वृत संग्रहों (सं0 1700) के रूप में ही शुरू हुआ था। भक्तकाल के अन्तर्गत भक्त कवियों के जीवन वृत के साथ प्रासंगिक रूप में ही शुरू हुआ था। भक्तकाल के अन्तर्गत भक्त कवियों के

* हिन्दी विभाग, जनता वैदिक कॉलिज, बड़ौत (उ.प्र.) भारत

जीवन वृत के साथ प्रसांगिक रूप मं उनके काव्य सौन्दर्य का उल्लेख भी है। भक्तकाल के बाद चौरासी वैष्णव एवं दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता का स्थान है, इसके बाद कविमाला एवं कालिदास हजारा का नाम आता है।

इन रचनाओं के उपरान्त जो रचना हमें हिन्दी साहित्य के इतिहास नाम से प्राप्त होती है। उनमें पहली रचना गॉर्सा-द-तॉसी की इस्त्वार-दला लिल्लेत्युर ऐन्दुई (हिन्दुई और हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहास) प्रथम भाग 1839 है और दूसरी कृति तजकिरा-ए शओरआए-हिन्दी (करीमुद्दीन) की है। ये रचनायें कविवृत ही है।

हिन्दी साहित्य में विभिन्न विधाओं का विकास – वृत्त संग्रहों से लेकर अब तक हिन्दी साहित्य के इतिहास के लेखन की परंमरा में विभिन्न नयी उपलब्धियां जुड़ी हैं, इन नयी स्थापनाओं के प्रयासों आदि के फलस्वरूप साहित्येतिहास की लेखन परंपरा विकासोन्मुखी बनी है।

हिन्दी साहित्य में आदिकाल से अब तक दो रूपों में साहित्य मिलता है, काव्य शास्त्र और गद्यशास्त्र/आदिकाल का साहित्य वर्ष विषय की दृष्टि मे इस प्रकार विभाजित था (1) धार्मिक साहित्य, (2) लोक सवेदना का साहित्य (3) राज्याश्रिम काव्य। लेखन के साथ-साथ गद्य लेखन में विभिन्न नयी विधाओं का विकास हुआ- जिन्हें आधुनिक गद्य साहित्य की विधाओं के रूप में जाना जाता है। प्रमुखता -

1. नाटक लेखन 2. एकांकी
3. उपन्यास 4. निबन्ध लेखन
5. कहानी

साहित्य लेखन में जो प्रकीर्ण गद्य विधाएं है, इस प्रकार हैं-
जीवनी, आत्मकथा, यात्रावृत पत्र पत्रिकायें,
रेखाचित्र और संस्मरण तथा रिपोर्ताज।

नाटक साहित्य – भारतेन्द्र हरिश्चन्द्र को हिन्दी नाटक सहित्य का जम्मदाता माना जाता है। हिन्दी में नाटक की शुरूआत रीवां नरेश रघुनाथ सिंह (सं0 1846-1911) के द्वारा हुई है, उनके द्वारा रचित नाटक 'आन्नद रघुन्दन' ही हिन्दी का पहला नाटक माना जाता है जबकि खढी बोली भाषा रूप में नाटक की शुरूआत भारतेन्दु जी ने ही की है, भारतेन्दु जी ने शेक्सपियर के नाटक 'मर्चेन्ट ऑफ वेनिस' का अनुवाद 'दुर्लभबन्ध' नाम से कर नाटक की शुरूआत की। इसके अलावा वैदिकी हिंसा, 'हिसा न भावति', भारत दुर्दशा अंधेर नगरी, प्रेमयोगिता आदि उनके मौलिक नाटक है। तत्पश्चात श्री निवास और किशोरी लाल गोंस्वामी के 'रणधीर मोहिनी' एवं 'मयंक मंजरी' नाटको का नाम रोमांटिकता के रूप में मिलता है। जागरण एवं सुधारकाल में प्रसाद जी का नाम महत्पूर्ण हे। आलोच्यकाल में हरिकृष्ण प्रेमी व लक्ष्मीनारायण मिश्र की नाटक रचना भी प्रसिद्ध है, रामनरेश त्रिपाटी वियोगी हरि रामचरित उपाध्याय आदि इस काल के अन्य नाटककार है। सन् 1918 में जयशंकर प्रसाद ने नाटक लिखना आरम्भ किया तथा नाट्य विधानकी दृष्टि से प्रशंसा योग्य मील का पत्थर बने। इसके बाद उपेन्द्र नाथ अश्क के अलग-अलग रास्ते (1954), उडान (1950),अन्धी गली (1950) बड़े खिलाड़ी (1967) आदि प्रमुख है। हिन्दी नाटक को सही दिशा में अग्रसर करने के लिए अश्क जी के बाद जगदीश चन्द्र माथुर का नाम आता है। उनका नाटक 'कोर्णाक' (1951) हिन्दी नाटक विकास में महत्वपूर्ण माना जाता है। तत्पश्चात् धर्मवीर भारती 'अन्धा युग' (1953), मोहन राकेश 'आषाढ का एक दिन' (1958), विनोद रस्तौगी 'नये हाथ' (1958) मनुभण्डारी 'बिना दीवारों का घर' (1965) आदि नाटक जीवन के नये आयाम प्रस्तुत करने में सफल रहे है। नाटक यात्रा में मुद्रा राक्षस, शंकर शेष, रमेश बढानी सुरेन्द्र वर्मा, गिरिराज किशोर व नरेन्द्र कोहली नाम भी प्रमुखता से लिया जाता है।

उपन्यास – उपान्यस जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्ति देने वाली एक समर्थ विधा है। इसमें काव्य विधा के रूप में बाणभट्ट की 'कामम्बरी को आदर्श रचना उदघृत किया जाता है। आधुनिक उपन्यास विधा में श्री निवास दास की कृति 'परीक्षागुरू' (1842) मौलिक कृति है। आलोव्यकाल में भट्ट बालकृष्ण के दो उपन्यास 'वेतरन ब्रहमचारी' (1884) और 'सौ अजान एक सुजान' (1892) दोनों में मानव ह्दय परिवर्तन का प्रयास किया गया है। भारतेन्द्रकाल में अन्य उपन्यासकारों में श्रीनिवास दास, किशोरीलाल गोस्वामी, राधाकृष्णदास, लज्जाराम शर्मा देवकीनन्दन खत्री और गोपाल राम गहमरी के नाम प्रमुख हैं।

देवकीनन्दन खत्री को तिलस्मी उपन्यासों का प्रवर्तक माना जाता है। उन्होंनें 'चन्द्रकांता' के द्वारा के द्वारा सदाचार का सहारा लेने की शिक्षा समाज को दी है। इसके बाद प्रेमचन्द जी का नाम, आलोच्यकाल में ही उनके उपन्यास प्रेमा, रूठी रानी, सेवासदन आदि द्वारा उपन्यासकारों में जुड़ गया था। प्रेमचन्द जी ने उपन्यास विधा में चरित्र चित्रण कर उसे नया मोड प्रदान किया उनके 'गोदान' (1936) उनके मोहभंग का उपन्यास हें एनके अन्य उपन्यास रंगभूमि, कर्मभूमि व गबन हे। प्रेमचन्द के बाद इस युग के उपन्यासकारों में मुख्यतया जयशकर प्रसाद का नाम आता है, उनके उपन्यास कंकाल (1929), तितली (1934) आदर्शवादी उपन्यास है। तत्पश्चात् इस विधा में भगवतीचरण वर्मा ने 'चित्र लेखा' के रूप में एतिहासिक उपन्यासकृति रची थी, इसके बाद यशपाल जी का नाम उपन्यास विधा को आगे बढाने में लिया जाता है। उनके 'पथ' सुबह के भूल, जहाज का पंछी, सामाजिकता का प्रभाव छोड़ते हैं। तत्पश्चात महत्वपूर्ण उपन्यासकारो में उपेन्द्रनाथ अश्क सितारों का खेल, गर्म राख, अमृतलाल नागर बूंद और समुद्र, धर्मवीर भारती सूरज का सॉंतवा घोड़ा, मोहन राकेश अंधेरे बंद कमरे, आने वाला कल, निर्मल वर्मा वे दिन, गंगा प्रसाद विमल अपने से अलग, मंनुभंडारी आपका बंटी उषाप्रियवदा पचपन खम्बेलाल दीवार आदि प्रमुख है।

कहानी – भारतेन्द्र ने कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास एवं कहानी को दो अलग विधाओं के रूप में स्वीकृति देने का सुझाव दिया था तत्पश्चात् साहित्यकारों बहुमत के साथ किशोरीलाल गोस्वामी की रचना 'प्राणयिनी परिणय' (1900) को हिन्दी की पहली कहानी मान लिया। फिर गोस्वमी जी की दूसरी कहानी 'इन्दूमती' प्रकाशित हुई। यही पुनर्जागरण काल में कहानी की शुरूआती स्थिति है। गोस्वामी जी, माधव प्रसाद मिश्र, बंग महिला और रामचन्द्र शुक्ल आधुनिक हिन्दी कहानी के आरम्भिक कहानीकार है। रामचन्द्र शुक्ल की कहानी 'ग्यारह वर्ष' (1903 ई0) और बंग महिला की कहानी 'दुलाई वाली' (1907 ई0) हिन्दी की पहली कहानी है। इसके बाद मुंशी प्रेमचन्द व जयशंकर प्रसाद कहानी लेखन में अतरित हुए। बाद में चन्द्र शर्मा गुलेरी ने 'उसने कहा था' (1915) जैसी सफल कहान लिखी। 'हिन्दी गल्पमाला' (1918) बिशम्बर नाथ कौशिक की रक्षाबन्धन (1913) प्रेमचन्द की 'पंचपरमेश्वर' जयशंकर प्रसाद की 'ग्राम' (1911) आदि प्रमुख कहानियां हिन्दी में कहानी विधा के विकासका आधार है। यशपाल, भीष्म साहनी, अमरकान्त, रांगेयराघव, अमृतराय मोहन, राकेश कमलेश्वर राजेन्द्र यादव आदि कहानीकारो का नाम आज के कहानीकारों में आता है। हिन्दी कहानी का मिजाज उत्तरोत्तर बदलता रहा है, जहां पहले कहानी समय बिताने एवं मनोरंजन का साधन थी, वहीं बाद में कहानी जीवन के गहरे अर्थो से जुड़ती चली गयीं अपनी विकास यात्रा में कहानी ने प्रगतिवादी चेतना,

व्यक्तिवादी प्रवृत्ति, सामाजिकता एवं प्रगतिशीलता व अन्य जीवन की समस्याओ को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तृत किया है। आजादी के बाद कहानी में सांचलिकता का प्रवेश हुआ। बाद में वर्ग-संघर्ष, मनोविशलेषण, भोतिकवादख नैतिक मूल्य व सामाजिक बुराई को ग्रहण किया। 1960 तक आते-आते कहानी रूढ़ सांचो में ढलने लगी थी, कहानी लेखिकाओं में मनु भंडारी, कृष्ण सोबती, उषा प्रियवदा ओर विजया चौहान आदि के विशेष स्थान है। सातवे दशक में कहानी ने रोमांश की वृत्ती को त्याग यथार्थ को उजागर करना शुरू किया है। मूल्यहीनता और खण्डित व्यक्तिव्त कहानी के मुख्य स्वर है। इस काल में ज्ञान रंजन, दूधनाथ सिंह रवीन्द्र कालिया, काशीनाथ सिंह आदि कहानीकारों के नाम मुख्यतया लिये जाते है।

एकांकी – हिन्दी एकांकी एक अंक वाली आधुनिक नाटक विधा है। एकांकी अंग्रेजी भाषा के एक अक वाले नवीन नाअय विधान का प्रभाव रखती है। आज के मशीनीकरण एवं व्यक्ति की अति व्यस्तता के कारण ही एक अंक वाले नाटकोंक का जन्म हुआ, हिन्दी में एकांकी विधा का आरम्भ भारतेन्द्र हरिश्चन्द्र के नाटकों 'धनंजय विजय' विषस्य विषमौषधम 'भारत दुर्दशा' और 'अंधेर नगरी आदि के से माना जाता हैं जयशंकर प्रसाद के एक घूट' से हिन्दी में आधुनिक एकांकी का जन्म मान सकते है। इस विधा को सही रूप में स्वीकृति में रामकुमार वर्मा का योगदान है। आधुनिक एंकाकीकारों में भुवनेश्वर को विशेष स्थान प्राप्त है। उन्होनें रोमांस दृष्टि रखते हुए 'श्यामा' (1933 ई0) में छपवाया। एकाकीं मानवीय संघर्षो में व्यक्ति की मानसिक स्थिति के चित्रण में सफल हैं। भुवनेश्वर के 'कारवा' (1935) 'रोशनी और आग' (1941) 'इतिहास के केचुल' (1948) प्रमुख एकांकी है। एकांकी की परम्परा में सेठ गोविन्ददास, हरिकृष्ण प्रेमी उदय शंकर भट्ट सदगुरू शरणअवस्थी, उपेन्द्रनाथ अश्क, जगदीश माथुर, विष्णु प्रभाकर आदि एकांकीरों के नाम प्रमुख हैं। बाद में धर्मवीर भारती ने भी एकांकी की कला में योग दिया 'नदी प्यासी थी' द्वारा इन्होंने मानवीय संदीर्भो को नाट्य कला के परिप्रेक्ष्य में दिशा दी। अन्त में विनोद रस्तौगी, भारत भूष्ण, अग्रवाल, अज्ञेय, रेवतीरमण शर्मा, बिमला लूथरा, आरसी प्रसाद सिहं आदि ने भी हिन्दी एकांकी विधा को अपना योगदान दिया है।

निबन्ध – निबन्ध पुर्नजागरण काल से पहले से लिखे जाते रहे, लेकिन पुर्नजागरण काल में पर्याप्त मात्रा में निबन्ध साहित्य रचा गया। भारतेन्दु का नाम अपने युग के प्रतिभा सम्पन्न निबन्धकारों में लिया जाता है। इसी युग में बालकृष्ण भट्ट ने राजा और प्रजा स्त्रियों और उनकी शिक्षा, देश, सेवा, बाल विवाह आदि निबन्ध द्वारा सामाजिक समस्याओं को अजागर किया है। प्रताप नारायण मिश्र ने हिन्दी निबन्धों को समृद्दि दी है, बेगार, रिश्वत, देशोन्नति, वर्षरंभ, मूढ़ँ, गोरक्षा, छल आदि उनके प्रमुख निबन्ध है। द्विदेदी ने ज्ञान विस्तार पर निबन्ध लिखे जबकि आचार्य रामचन्द्रशुक्ल ने निबन्ध साहित्य को नया आयाम दिया। सरदार पूर्ण सिहं लाक्षणिक एवं व्यकितक व्यंजन शैली के सफल निबन्धकार है, आचरण की सभ्यता, सच्ची वीरता, मजदूरी एवं प्रम, कन्यादान आदि उनके उल्लेखनीय निबन्ध हैं।

बाबू गुलाबराय ने निबन्ध विधा को प्राणवत्त बनाया उन्होंने व्यक्ति व्यंजन निबन्ध लिखे है, 'उलुआ क्लब', 'फिर निराशा क्यों', 'कुछ उथले कुछ गहरेय अनकी निबन्ध रचनायें हैं। रघुवीर सिहं, शिवपूजन, सहाय, बेचेन शर्मा, निराला आदि ने इसी काल में निबन्ध साहित्य का कलेवर बढाया है। तत्पश्चात् जैनेन्द्र ने निबन्धों को दार्शनिक आधार प्रदान किया। रामवृद्ध बेनपुरी ने भावनात्मक निबन्ध लिखे 'गेहूँ और गुलाब' जैसे निबन्ध उनकी प्रमुख रचना है।

रामधारी सिहं दिनकर ने निबंधों में अन्तरंग को उद्धारित किया है और परंपरागत मूल्यों से संयोजित कर विचार प्रधान निंबधों की रचना की है। अज्ञेय ने अनुभूत सत्यों का वेचारिक विश्लेषण निबन्धों के रूप में रूप में रचा है। विद्या निवास मिश्र, कुबेरनाथ व नामवर सिहं आदि ने भी निबन्ध विधा को सशक्त बनाया है। हरिशंकर परसोई ने हास्य-व्यंग्य के निंबध मूल्यगत विसंगतियों को सम्मूख रखकर लिये है, इसी कारण उन्हें तीखे व्यंग्य के निबन्धकार माना जाता है।

हिन्दी निबन्ध की यात्रा भारतेन्दु से शुरू होकर द्विदेवी युग, पुनरूत्थान काल छायावाद युग से गुजरती हुई उततर स्वच्छन्दतावाद युग तक पहुंचती है और अपना बहुमुंखी विकास करती हुई नित्य नये आयाम छूकर यह काल यात्रा आज भी जारी है।

हिन्दी साहित्य में प्रकीर्ण गद्य विधायें – नव जागरण की परिवर्तित परिस्थितियों तथा पश्चिमी साहित्य की विभिन्न विधाओं के प्रभावान्तर्गत हिन्दी में साहित्य विधाओं में बहुरूपता का विकास हुआ। इन्हें हिन्दी की प्रकीर्ण गद्य विधायें कहा गया–

जीवनी – जीवनी का अंग्रेजी अनुवाद 'बायोग्राफी' तथा आत्मकथा का ऑटोबायोग्राफी है। जीवनी का लेखक कोई दूसरा व्यक्ति होता है जबकि आत्मकथा स्वयं उसी द्वारा लिखी जाती है।

भारतेन्दु काल में आधुनिक काल तक के महापुरूषों की जीवनियां लिखी गयी है, नयी विधा के रूप में जीवनी में नयी संरचना पद्धति अपनाई गई है। आलोच्यकाल के जीवनी लेखको में कीर्ति प्रसाद खत्री, कांशीनाथ खत्री, रमाशंकर व्यास व देवी प्रसाद प्रमुख है। जागरण सुधार काल में दयानन्द सरस्वती के जीवन चरित्र पर व्यापक रूप से लिखा गया, इस युग में महापुरूषों पर भी लिखा गया। साहित्यकार पारसनाथ त्रिपाठी, बृजबिहारी शुक्ल और शीतलाचरण वाजपेयी ने, महात्मा गांधी, अरविन्द घोष, लाला लाला लाजपतराय, मदन मोहन मालवीय, लोकमान्य तिलक पृथ्वीराज चौहल, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी आदि महापुरूषों पर व्यापक रूप से लिखा है।

स्वच्छन्द काल में आंदोलन में भाग लेने वाले युगपुरूषों पर तथा देश के उत्थान में योग देने वाली महिलाओं के जीवन चरित्र लिखे गये।

आलोच्यकाल में बालगंगाधर तिलक (1920), गांधी मीमांसा (1921), पं0 जवाहर लाल नेहरू (1926), चन्द्रशेखर आजाद (1938) आदि पर जीवनियां लिखी गयी जीवनी लेखकों में ईश्वर प्रसाद शर्मा, रामदयाल तिवारी, रामनरेश त्रिपाठी, राजेन्द्र प्रसाद, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता हैं

आत्मकथा – जब कोई लेखक अपने ही जीवन का वृतान्त देता है। तो जीवनी के इस रूप को आत्मकथा कहते हैं। आत्मकथा आधुनिक काल से पहले से ही लिखी जाती रही है। आत्मकथा का प्रारम्भ बनारसीदास जैन ने किया था।

भारतेन्दु द्वारा लिखित कुछ आप बीती कुछ जग बीती आत्मकथा है। भारतेन्दु काल में राधा चरण गोस्वामी की मेरा संक्षिप्त जीवन श्री आमविका दत्त बियास औ लाला लाजपत राय की इस श्रेणी की आत्मकथा हैं स्वच्छन्दतावादी युग में भाई परमानन्द, महात्मा गांधी, सुभाषचन्द बोस, जवाहरलाल नेहरू आदि ने आत्मकथा की रचना की है।

आत्मकथा में लेखक युग के संदर्भ और हालात के परिपासर्व एवं विभिन्न अनुकूल परिस्थितियों के परिपेक्ष में अपनी जीवनचर्या को रोचक परन्तु सत्य आधारित शैली में प्रस्तुत करता है। स्वतंत्रता के बाद डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद

की आत्मकथा, भवानी दयाल सन्यासी की आत्मकथा, परवासी से की आत्मकथा नामक शीर्षक से प्रकाशित हुई। आत्मकथा की इस यात्रा में कवि हरवंशराय बच्चन की क्या याद करू यशपाल की आत्मकथात्मक सिंहावलोकन सेठ गोविन्दास की आत्म निरीक्षण सशक्त रचनायें हैं।

यात्रावृत्त – यात्रावृत्त वह विधा है जिसमें लेखक अपने यात्रा अनुभव के दौरान उस पर पडे प्रभावों आदि को साहित्यिक शैली में पस्तुत करता है। यात्रावृत्त में यात्रा का स्थान, जनजीवन, प्रकृति एवं अन्य विषयों का उल्लेख रहता है। यात्रा विधा में भारतेन्दु ने स्वयं यात्रा वृत्त लिखकर इस दिशा में लेखकों को प्रेरणा दी है। प्रताप नारायण मिश्र एवं बाल कृष्ण भट्ट ने भी इस विधा में अच्छा योगदान किया है।

जागरण सुधार काल में यात्रावृत्त अनेक पुसतकों में प्रकाशित हुई। इनमें गोपल गहमरी की लंका यात्रा का विवरण (1916) देवी प्रसाद खत्री की बदरी का आश्रम 1902, गदाधर सिहं की 'एडवर्ड तिलक यात्रा' (1903) विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

स्वछन्तावादी युग में मेरी योरोप यात्रा 1932, मेरी जर्मनी यात्रा 1936, उल्लेखनीय यात्रा वृत्त हैं। इस दिशा में राम नारायण मिश्र, नेहरू, सत्यदेव परिव्राजक, सेठ गोविन्ददास आदि ने अपनी कलम का परिचय दिया, इनके अलावा अज्ञेय (अरे यायावार रहेगा याद 1953) कर्नल सज्जन सिहं, विष्णु प्रभाकर, डा0 नगेन्द्र और डा0 मोहन राकेश आदि के नाम प्रमुख है।

पत्र–पत्रिकायें – पत्र पत्रिकायें वे माध्यम हैं जिनके द्धारा साहित्य एवं साहित्येत्तर, भावात्मक एवं शुद्ध बौद्धिक, वैज्ञानिक या व्यवहारिक विषयों की जानकारी पाठकों तक पहुंचती है। भारत में पत्र पत्रिकाओं का आरम्भ सर्वप्रथम कलकत्ता में हुआ। भारतेन्दु ने सन् 1880 ई0 में कांशी में कवि वचन सुधा नामक नत्रिका का प्रकाशन किया । इसी काल में उदत्त मार्तण्ड आदि इसी तरह की 13 पत्रिकायें प्रकाशित हुई। इस उत्थान में बगांल ही प्रधान रूप से नयी चेतना का केन्द्र रहा इसओर हिन्दी प्रदीप द्धारा किया गया कार्य भी सराहनीय रहा। जागरण सुधार काल में राजनीति से प्ररित पत्रों को गणेश शंकर विद्यार्थी ने काफी प्रभावित किया। 1908 ई0 में केशरी पत्रिका हिन्दी संस्करण हिन्दी केशरी के नाम से प्रकाशित हुआ इस विधा में हितवाणी 1904 नर सिहं 1907, अभियुद्य 1907, कर्मयोगी 1909, प्रभा 1913 आदि पत्रिकायें प्रकाशित हुई। साप्ताहिकी पत्रिका के रूप में चादं मासिका पत्रिाक के रूप में कल्याण 1925, प्रेमचन्द द्धारा सम्पादित हंस 1930, हिन्दी नव जीवन 1921, मतवाला 1983, सरोज 1928 आदि पत्रिकायें भी अपने समय की गतिविधियां उजागर करने में समर्थ रहीं स्वच्छन्दतावादोत्तर युग में सरस्वती, वीणा, विशाल भारत प्रकार संचालित किया। स्वतंत्रता के बाद पत्रिकाओं के लेखन में बहुत तेज गति से विकास हुआ। हिन्दी की साप्ताहिक पत्रिकाओं में धर्म युग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान और दिनमान व मासिक पत्रिकाओं में कल्पना, नवनीव, ज्ञानोद्धय, कादम्बनी, आजकल आदि पत्रिकायें स्वस्थ पाठ्य सामग्री प्रदान करती है। कहानी पत्रिकाओं में सारिका कहानी संचेतन और पहल आदि उल्लेखनीय है। स्वतंत्रता के बाद जहां पत्र पत्रिकाओं ने संख्या में प्रगति की है, वही गणों में नि:संदेह हास हुआ है।

रेखाचित्र और संस्मरण – रेखाचित्र स्वच्छन्दवावादी की देन हैं, किन्तु संसमरण लेखन बहुत पहले आरम्भ हो चुका था रेखाचित्र में प्रस्तुत व्यकित, वस्तु आदि के रेखाचित्र का निर्माण तलीका के रंगों से होता है। रामकुमार खेमका ओर कृपनाथ मिश्र आदि ने सरस्वती पत्रिका में संस्मरणों की नीव डाली थी, जो यात्रा वृत्त मूलक संस्मरण है। संस्मरणों को भी विवरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। साहित्य में कुछ जीवनी परक संस्मरणें की रचना भी हुई है। श्री रामशर्मा ने बोलती प्रतिभा (1937) के द्धारा इस विधा के सभी गुणों की अवतारणा की है। महादेवी वर्मा और बनारसी दास चतुर्वेदी के रेखाचित्र इस विधा के आदर्श उहाहरण है। संस्मरण विधा में बनारसीदास चतुर्वेदी माहिर संस्मरणकार माने जाते हैं। इस विधा में श्री राम शर्मा का नाम भी महत्वपूर्ण है। रेखाचित्रों के इतिहास में महादेवी वर्मा का विशेष स्थान है। अतीत के चलचित्र और स्मृति की रेखयें में उन्होंने संस्मरण विधा को नये आयाम दिये हैं। अन्य रेखाचित्रकारों में विनय मोहन शर्मा, दिवाकर और बच्चन आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है।

रिपोर्ताज – रिपोर्ताज वह नयी साहित्यिक विधा है जिसके अन्तर्गत आंखों देखे, कानों सुने वृतों और दृश्यों को साहित्य विधा की प्रकृति द्धारा प्रस्तुत किया जाता है। इस विधा का जन्म द्धितीय विश्व युद्ध में आस–पास स्वीकार किया जाता है। हिन्दी में इस विधा के प्रवृर्तक के रूप में शिवदान सिहं चौहान का नाम लिया जाता है। उन्होंने मौत के खिलाफ जिन्दगी की लडाई नामक शीर्षक से रिपोर्ताज हंस पत्रिका में लिखा था। रांगेय ने विशाद मठ शीर्षक से रिपोर्ताज शैली में उपन्यास लिखा। धर्मवीर भारती ने स्वंतत्रता की लडाई में धर्मयुद्ध के लिये रिपोर्ताज लिखे, राहुल सांस्कृतयायन ने पर्यटन विषय पर रिपोर्ताज लिखे। इस विधा में अन्य लेखक अश्क प्रभाकर माचवे, रघुवीर सहाय, निर्मल वर्मा, विष्णुकान्त शास्त्री, राही मासुम रजा आदि ने रिपोर्ताज लेखन में अपना योगदान किया।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी साहितय में अनेक विधाओं का जन्म भारतेन्दु काल में ही हुआ हैं। नाटक विधा की शूरूआत जहां रीवा नरेश रघुनाथ सिहं (सं0 1846–1911 आनन्द रघुनन्दन) को माना जाता है, वही उपन्यास विधा का जन्म बाणभट्ट की कादम्बरी से माना जाता है। आधुनिक उपन्यास विधा का जन्म बाणभट्ट की कादम्बरी से माना जाता है। आधुनिक उपन्यास विधा श्रीनिवास दास की कृति परीक्षा गुरू 1882 मौलिक कृति है। हिन्दी साहित्यकारों ने किशोरीलाल गौस्वामी की रचना (प्रणयनी परिणय 1990) को हिन्दी की पहली कहानी माना है तथा प्रेमचन्द की पंचपरमेश्वर व जयशंकर प्रसाद की ग्राम 1911 आदि हिन्दी की प्रसिद्ध कहानी है। हिन्दी एकांकी एक अंक वाली आधुनिक नाटक विधा है, जयशंकर प्रसाद के एक घूट से ही हिन्दी में आधुनिक एकांकी का जन्म होता है। निबन्ध पुर्नजागरण काल से लिखे जाते रहे है फिर भी भारतेन्दु का नाम अपने युग के प्रतिभा सम्पन्न निबन्धकारों में लिया जाता है। निबन्ध की यात्रा भारतेन्दु युग से शुरू होकर द्धिवेदी युग , पुनरूत्थान काल छायावाद युग से गुजरती हुई उत्तर स्वच्छन्तावाद युग तक पहुंचती हे तथा यह यात्रा नित नये आयाम छूकर आज भी जारी हैं।

हिन्दी साहित्य की प्रकीर्ण विधाओं में जीवनी भारतेन्दु काल से ही लिखी जाती रही है जीवनी लेखन में कीर्ति प्रसाद खत्री, काशीनाथ खत्री व देवी प्रसाद आदि प्रमुख नाम है, जिन्होने विभिन्न महापुरूषों व महिलाओं के जीवन चरित्र पर व्यापक रूप से लिखा है, आधुनिक काल से ही बनारसीदास जैन ने आत्मकथा को प्रारम्भ किया। आत्मकथा की इस यात्रा में हरिवंशराय बच्चन की क्या याद करू यशपाल की सिंहावलोकन व सेठ गोविन्द दास की आत्म निरीक्षण सशक्त रचनाये हैं। यात्रावृत्त विधा की शुरूआत स्वयं भारतेन्दु ने यात्रावृत्त लिखकर की है। देवी प्रसाद खत्री की बदरी का आश्रम 1902 व गदाधर सिहं की एडवर्ड तिलक यात्रा 1903 उस काल का उल्लेखनीय यात्रावृत्त है। भारतेनदु ने ही कवि वचन सुधा 1880 नामक पत्रिका के प्रकाशन द्धारा पत्रिका लेखन की शुरूआत की है।

हिनदकेशरी 1908 व हितवाणी 1904 ने इस विधा को आगे बढाया गया। वर्तमान में आजकल, कल्पना, हसं, कादम्बनी, सारिका जैसी विभिन्न मासिक व साप्ताहिक पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। रेखाचित्र स्वस्छन्दतावादी युग की देन है, रामकुमार खेमका व कृपानाथ मिश्र ने सरस्वती पत्रिका में संस्मरणों की नीव डाली थी। संस्मरण विधा में जहां बनारसीदास चतुर्वेदी माहिर संस्मरणकार माने जाते हैं, इस विधा के उत्तम उदाहरण है। रिपोर्ताज नई साहित्यिक विधा है, हिन्दी में इस विधा के प्रवर्तक के रूप में शिवदान सिहं चौहान का नाम आता है। उनके द्धारा मौत के खिलाफ जिंदगी की लडाई शीर्षक से रिपोर्ताज हंस पत्रिका में लिखा गया था।

हिन्दी साहित्य लेखन की विकास यात्रा में प्रभाकर, उपेन्द्रनाथ अश्क, सेठ गोविन्ददास, निर्मल, विष्णुकान्त शास्त्री, चन्द्रशर्मा गुलेरी, राही मासूम रजा, अज्ञेय, नगेन्द्र, डा0 मोहन राकेश, राजेन्द्र प्रसाद, गणेश शंकर, विद्यार्थी, भारत भुषण, धर्मवीर भारती, देवकीनन्दन खत्री अदि ऐसे हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने हिन्दी साहित्य में विभिन्न विधाओं के विकास को नित नये आयाम दिये हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 निर्मल सुरेशचन्द, सरन प्रकाशन मन्दिर, 154 विजयनगर मेरठ
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 शेखर शर्मा व डॉ0 इन्दु बाला शर्मा, प्रकाशन संस्थान 4715/21 दरियागंज, नई दिल्ली- 110002
3. हिन्दी का साहित्य शास्त्र- डॉ0 रामकृष्ण कौशिक, डॉ0 कृष्णचन्द्र गुप्ता भावना प्रकाशन, 174 सी पटपड़गंजदिल्ली।
4. आजकल- मासिक पत्रिकाआ अंक दिस्म्बर 2005, प्रकाशन विभाग 120, सूचना भवन लोदी रोड नई दिल्ली-110003
5. हंस- जनचेतना की प्रगतिशील कथा- मासिक अंक दिस्म्बर 2005, अक्षर प्रकाशन 2/36 अन्सारी रोड, दरियांगज नई दिल्ली-110002
6. आधुनिक लखिकाओं के नगरीय परिवेश के उपन्यास- डॉ0 पारूकान्त देसाई, चिन्तन प्रकाशन नौबसता, कानपुर-208021
7. साहित्य के तत्व- डॉ0 विनोद पाणि दिवाकर, प्रकाान संस्थान दयानन्द मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली-110002

****

A Study On Adoption Of Mobile Banking - A Select Case Of Rajasthan

Dr. Ganpat Joshi *

Abstract - Mobile communication technologies offer vast additional value for consumer. Technology enabled solutions provide low cost and efficient delivery channels for unreachable regions of India. Electronic modes of payments can help in reducing the costs of operation for banks, the benefit of which can be transferred to customers. M-Banking in India has evolved from basic services such as alerts to complex ones such as money transfer. Present study attempts to investigate the status of adoption of mobile banking with special reference to Rajasthan and ascertain the factors that influence the decision to use mobile banking.
Keywords - Mobile communication, technologies, banking, Rajasthan.

Introduction - Mobile communication technologies offer vast additional value for consumer. Mobile technology has created an incredible market space for companies to provide large variety of services online. Due to their always-on functionality mobile present functionalities for banking transactions and the option to access banks anytime and anywhere. This convergence of telecommunication and financial services has created openings for the emergence of mobile banking solutions. On one hand, mobile banking services provide time convenience and cost efficiency to customers; also on other hand this can remove the barrier of an expensive and time-consuming visit to the nearest bank branch especially for low-income communities.

Technology enabled solutions provide low cost and efficient delivery channels for unreachable regions of India. Electronic modes of payments can help in reducing the costs of operation for banks, the benefit of which can be transferred to customers. Mobile communication technologies offer vast additional value for consumer. Mobile technology has created an incredible market space for companies. The M-commerce sector is poised for growth in the Indian market. But m-commerce is in its emerging stages, it is projected to grow with growing technology and lower prices of mobile handsets. M-Banking in India have evolved from basic services such as alerts to complex ones such as money transfer. Customizable and convenient mobile banking solutions have potential to provide improvements over current desktop based internet banking experience. Along with advantages of meeting the financial inclusion goals of regulators. Mobile payment services can offer significant business potential and cost optimization opportunities for all the stakeholders. Banks could offer mobile payment services to their banking customers and increase share of revenue from existing customers.

Mobile banking Challenges :

1. Security issues,
2. Lack of ubiquitous wireless network coverage,
3. Lack of standards, and
4. Technical mismatches among various wireless devices & smartphones
5. Consumer mobile/ internet literacy issues
6. Slow adoption rate

Literature Review - User acceptance is crucial to the success of new technologies but it is difficult to predict. User acceptance of new technologies that are not just incremental improvements on existing ones but cause remarkable changes in people lives so-called disruptive technologies. It is especially hard to predict because these technologies may take decades or longer to undergo the transition into everyday objects (Norman, 1998). Before addressing the reasons UTAUT was selected over TAM for this research, it is important to highlight the commonalities of adoption theories. An individual's decision to adopt a technology can be a one-time event; however, the process for making this decision is not a single event. Most adoption and diffusion theories propose that an individual's beliefs and attitudes form over time and can influence his/her decision to adopt or not to adopt a given innovation. While both TAM and UTAUT are easily applicable through the use of quantifiable variables for understanding determinants of adoption, TAM does not fully meet the needs of this study. This section outlines reasons for selecting UTAUT over TAM for the theoretical basis of this research.

UTUAT's key advantage is that it demonstrates superior factor strength. It can explain up to 70% of variance of intention (Venkatesh, et al., 2003). Thus, many observe its superiority over previous metrics (Gayar and Moran, 2006; Venkatesh, et al., 2003). Research shows that previous technology acceptance models (e.g. TAM) can only

*Asst. Professor (Computer Science) Siddeshwar Vinayak Collage, Dhariawad, Distt. Pratapgarh (Raj.) INDIA

successfully predict the acceptance of an innovation in roughly 30% (Meister & Compeau, 2002) to 40% of cases (S. Taylor & P. A. Todd, 1995b; Venkatesh & Davis, 2000). Unlike TAM, UTAUT addresses voluntariness of use and facilitating factors. Moreover, UTAUT has the advantage of including a distinction between mediating and determining factors.

Figure 1 (see in last page)

UTAUT is a relatively new theoretical framework and needs additional research to replicate findings, validate its measures, and validate its robustness (Straub, 2009). Furthermore, it does not include individual factors like perceived playfulness and self-motivation that may help explain information system acceptance and use of mobile devices.

Retaining mobile banking users and attracting new ones may not be easy. Therefore, it is important to understand what factors contribute to users' intention to use mobile banking. During the last two decades, researchers have used TAM, the TAM suffers from many limitations. Hence present research uses the advanced model (UTAUT). The purpose of this research is to examine and validate determinants of users' intention in mobile banking, utilizing constructs from these researches in an integrated model.

Objective :

1. To investigate the status of adoption of mobile banking with special reference to Rajasthan.
2. To ascertain the factors that influences the decision to use mobile banking.

As per the study objective and previous discussions in Research methodology. Following Hypothesis are considered for empirical testing.

H1: All independent variables for UTAUT model are not significant predictors of the behavioral intention to use mobile banking

Methodology :

Approach: The present research use deductive research approach. In the deductive research approach the researchers generate hypothesis from theory.

Model: The UTAUT technology acceptance theory forms the theoretical foundation for this thesis.

Primary Data: questionnaire has been prepared, this was filled by the respondents who are using the mobile banking services in selected geographical area of study i.e. Rajasthan.

Secondary Data: from the files, newspapers, reports, records, policies, government publications, magazines, company publications, journals, books, articles, websites, etc.

Sampling Technique: convenience sampling (using a cross-sectional design)

Result

Table1: Result- Multiple Regression Analysis

Descriptive Statistics

	Mean	Std. Deviation	N
Attitude	3.4700	1.13823	200
PE1	3.5100	1.15611	200
PE2	3.3100	1.02917	200
PE3	3.2800	1.05221	200
PE4	3.5000	1.16481	200
EE1	3.4600	1.11111	200
EE2	3.5700	1.00506	200
EE3	3.2100	1.05426	200
EE4	3.5500	1.13753	200
SI1	3.2600	1.18296	200
SI2	3.5300	.98690	200
SI3	3.5700	1.06337	200
FC1	3.4400	1.00571	200
FC2	3.5300	1.18156	200
FC3	3.6000	1.07974	200
FC4	3.2800	1.16980	200

Model Summary

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
8	.839[h]	.704	.695	.62855

h. Predictors: (Constant), FC2, SI1, PE4, PE1, SI3, EE4

ANOVA[i]

Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
8	Regression	181.571	6	30.262	76.599	.000[h]
	Residual	76.249	193	.395		
	Total	257.820	199			

h. Predictors: (Constant), FC2, SI1, PE4, PE1, SI3, EE4i. Dependent Variable: Attitude

Coefficients[a] (see in last page)

The final Regression model with 6 independent variables (FC2, SI1, PE4, PE1, SI3, and EE4) explains almost 69.5% of the variance of consumer attitude for adopting mobile banking. The ANOVA analysis provides the statistical test for overall model fit in terms of F Ratio. The six regression coefficients, plus the constraints are significant at 0.05 levels. With the above analysis it can be conclude that six variables i.e., FC2, SI1, PE4, PE1, SI3, and EE4 explains the attitude of consumer for mobile banking and its adoption.

The major findings are summarized as under:

1. **Major user group of alternative banking:** In present research, the sample profile shows that most of mobile banking users were male (52%), with a age group between 20 to 39 (70%), post graduates (56%). These users are service class persons (45%) and surprisingly students (49%). The major reasons of this pattern are may be the 'ease of use' and time and place convenience with the mobile services.
2. **Usage behavior:** The usage behavior shows that people are using mobile banking for about one to three

transactions per month (82 percent). 11 percent of respondents reported that they use mobile banking for performing banking inquiries and communication 3-6 times. 36 percent of respondents are using mobile banking from one to six months. 25 percent of customers are using mobile banking less than one year.

3. **Descriptive statistics**: these statistics and the one sample statistical test reveal a positive response towards each independent factors as well as attitude towards mobile banking. The mean values show that consumers are willing to avail mobile based services for banking transactions. However none of the construct reveals a higher degree of agreement towards perceived expectancy, effort expectancy, social influence and facilitating conditions. These results indicate a premature stage of mobile banking adoption in Rajasthan and provide a vast scope of improvement policy, implementation, and technology dimensions.

4. **Factors affecting on customer acceptance:** The results of the study present realistic evidences for the factors that have a direct positive effect on customer acceptance and intention to use mobile banking. In this study we hypothesized five major factors affecting on customer adoption based on literature review i.e. performance expectancy, Effort expectancy, social influence, facilitating conditions and demographic profile of the customer. Although, empirical results shows that 6 independent variables (FC2, SI1, PE4, PE1, SI3, and EE4) explains almost 69.5% of the variance of consumer attitude for adopting mobile banking. It means that the knowledge necessary to use mobile banking, People influence towards the use mobile banking and the quickness of Mobile banking to enable banking transaction are the major factors to drive end users to adopt mobile based banking services.

Conclusion - Increasing the adoption of Mobile banking would help the objective of less cash society with huge benefits to all stakeholders. It is evident that mobile banking is an ideal solution to accelerate financial inclusion in terms of Availability, Accessibility and Affordability. These features need to be integrated to the banks' business and operating models. The potential of mobile banking is of impressive extent and with right kind of investments in awareness and educating customers; the adoption of mobile banking would gain footing. Banks must redesign their business and operating process to accelerate the adoption of Mobile banking, with process change being a critical success factor

Recommendation - For customers: Use good antivirus program in Mobile to protect account information, ID, Password, PIN and unauthorized access. Use only official website of the bank for internet banking. Avoid follow links provided by any other organization/person because it will be cause of password theft and fraud. Use branded mobile phones for mobile banking service which is having supported applications for mobile banking. Keep off blue tooth facility on your mobile handset when you are log-in on the mobile banking account. Don t reply spam e-mails (unknown) and avoid providing information about your account number, card numbers and name of the bank etc.

For bankers: Develop unique mobile banking application which can be used in all mobile handsets. Presently, some applications were not supported to all handsets. Bank should mention website and mobile banking system to survive all the time. The customer may not be required to visit the bank branch for mobile number registration. Alternate channels for mobile number registration may be made available, such as ATM network across banks as well as the BC / agent network using biometric authentication, so that the customer can register the mobile number conveniently. In the case of first time registration of mobile number, appropriate security safeguards may be put in place by the banks.

References :-

1. Adams, D. A., Nelson, R. R., & Todd, P. A. (1992). Perceived usefulness, ease of use, and usage of information technology: A replication. MIS Quarterly, 16(2), 227–247.
2. Agarwal, N., Agarwal, R., Sharma, P. and Sherry, A. M. (2003), E-banking for comprehensive E-Democracy: An Indian Discernment, Journal of Internet Banking and Commerce, Vol. 8, No. 1, June.
3. Agarwal, R., & Karahanna, E. (2000). Time Flies When You're Having Fun: Cognitive Absorption and Beliefs about Information Technology Usage. *MIS Quarterly, 24*(4), 665-694.
4. Billsus, D., Brunk, C. A., Evans, C., Gladish, B. and Pazzani, M. 2002. Adaptive interfaces for ubiquitous Web access. Communications of the ACM, Vol. 45, No. 5, pp. 34.38.
5. Blom, J. 2000. Personalisation . a taxonomy. Extended abstracts of CHI'00. ACM, New York. Pp. 313.314
6. Brown, I., Cajee, Z., Davies, D., & Stroebel, S. (2003). Cell phone banking: Predictors of adoption in South Africa—an exploratory study. *International Journal of Information Management, 23*(5), 381-394.
7. Compeau, D. R., & Meister, D. B. (2002). Infusion of innovation adoption: An individual perspective. *Proeedings of the ASAC, Winnipeg, Manitoba*, 23-33.
8. Gayar, O. F., & Moran, M. (2006). College students' acceptance of tablet PCs: an application of the UTAUT model. *Dakota State University*, *820*.
9. Goswami, S. (2014). Understanding adoption of electronic G2C service: An extension to Technology Adoption Model. *Pacific Business Review*, *8*(6), 36-44.
10. Goswami, S. (2015). A Study on the Online Branding Strategies of Indian Fashion Retail Stores. *IUP Journal of Brand Management*, *12*(1), 45.
11. Goswami, S. (2016). Investigating impact of Electronic Word of Mouth on Consumer Purchase Intention. In *Capturing, Analyzing, and Managing Word-of-Mouth in the Digital Marketplace* (pp. 213-229). IGI Global.
12. Goswami, S., & Chandra, B. (2013). Convergence Dynamics of Consumer Innovativeness Vis-à-Vis

Technology Acceptance Propensity: An Empirical Study on Adoption of Mobile Devices. *IUP Journal of Marketing Management*, *12*(3), 63.

13. Goswami, S., & Khan, S. (2015). Impact of consumer decision-making styles on online apparel consumption in India. *Vision*, *19*(4), 303-311.
14. Mathur, M., & Goswami, S. (2014). Store atmospheric factors driving customer purchase intention-an exploratory study. *Journal of Management Research*, *6*(2), 111-117.
15. Taylor, S., and Todd, P. (1995a) Decomposition and crossover effects in the theory of planned behaviour: A study of consumer adoption intentions. *International Journal of Research in Marketing,* 12(2) 137-155.
16. Taylor, S., and Todd, P. (1995b) Understanding Information Technology Usage: A Test of Competing Models. *Information Systems Research* 6 (2) 144-176.
17. Venkatesh, V., Morris, M. (2000) A Longitudinal Field Investigation of Gender Differences in Individual Technology Adoption Decision-Making Processes. *Organizational Behavior and Human Decision Processes,* 38 (1) 33-60.
18. Venkatesh, V., Morris, M. G., & Ackerman, P. L. (2000). A longitudinal field investigation of gender differences in individual technology adoption decision-making processes. *Organizational behavior and human decision processes*, *83*(1), 33-60.
19. Venkatesh, V., Morris, M. G., Davis, G. B., & Davis, F. D. (2003). User acceptance of information technology: Toward a unified view. MIS Quarterly, 27(3), 425–478.

Figure1: UTAUT model adopted in the Study

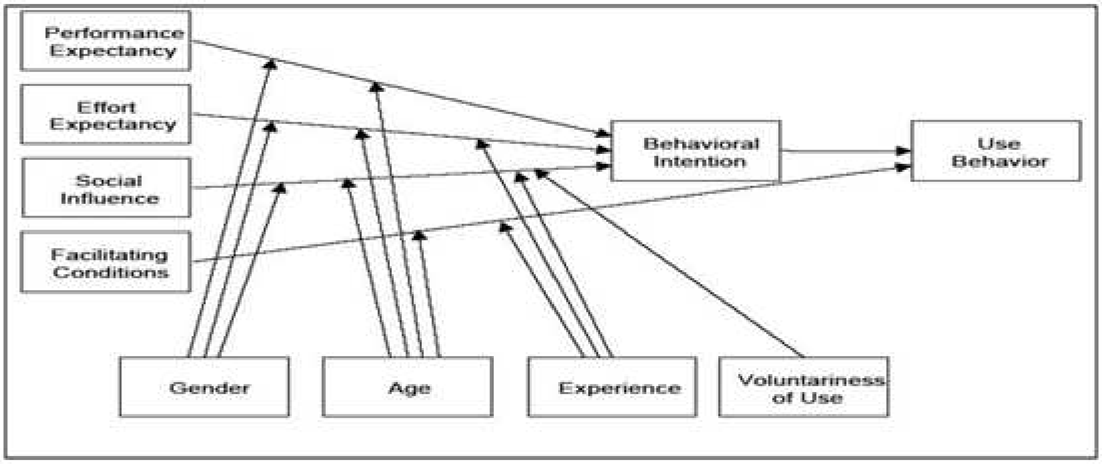

Coefficients[a]

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.	Collinearity Statistics	
		B	Std. Error	Beta			Tolerance	VIF
8	(Constant)	-.025	.187		-.132	.895		
	FC2	.176	.081	.183	2.165	.032	.215	4.646
	SI1	.259	.060	.269	4.298	.000	.392	2.554
	PE4	.290	.058	.297	5.000	.000	.435	2.301
	PE1	.227	.057	.230	3.979	.000	.457	2.186
	SI3	.257	.060	.240	4.254	.000	.481	2.078
	EE4	-.197	.063	-.197	-3.105	.002	.382	2.615

a. Dependent Variable: Attitude

****

Data Centre or Cloud for Dynamic Storage: In Modern Perspective

Vikas Kumar Choudhary * Dr. Sanjay Chaudhary **

Abstract - Now a days we heard everywhere that businesses needs the cloud. Businesses needs a data center and then data center needs the cloud or/and cloud needs Data Center. Yet no one has told you why Data Centre and Cloud are two are fundamentally different ideas.

Run Time Dynamic Data storage is a very important and valuable research field in cloud computing. This paper introduces the concept of cloud computing with respect to run time cloud storage as well as the architecture of cloud storage with Dynamic Storage and Access.

In the last part, it was illustrated that, how to choose distributed storage and fault-tolerant control though technology of Cloud Computing and Cloud Storage.
Keywords - Data Centre, Storage, Cloud Computing, SaaS, PaaS.

Introduction - In latest years, the concept of cloud computing becomes more and more popular. Cloud computing as a new business model is developed from distributed processing, parallel processing and grid computing. At present, Google, Amazon, IBM, Microsoft, Sun and other IT giants are all seeking to develop cloud computing technologies and products. For example, Google has been dedicated to promoting application engines based on the techniques of (Google File System), MapReduce and so on, which provide users methods and means to process massive data. In this paper, we introduce the concept of cloud computing and cloud storage as well as the architecture of cloud storage firstly, analyze the cloud and data storage technology

Data Centre Storage Technology - Data Centre may have following things maintained in-house :

1. Servers, Networking Infrastructures.
2. Communication Media, and Protocol
3. Storage Devices, Security Devices
4. Backup Mechanism fully redundant with power, power backup, cooling solutions,
5. Safety devices, Mainframes, Servers, Disks, Routers/ Switches

The capacity of data centre is scaled only by purchasing and installing hardware equipment. Hence businesses using a third-party data center can have huge savings on power costs and are saved from purchasing the expensive infrastructure.

Hence it can be said that a data-center is a facility composed of networked computers and storage that businesses use to organize, process, store and disseminate large amounts of data.

Cloud computing and Cloud storage - Cloud computing arises from the combination of the traditional computer technology and network technology, such as grid computing, distributed computing, parallel computing, utility computing, and virtualization. One of the core concept of cloud computing is reducing the processing burden on user's terminals through continuously enhancing the clouds' handling capacity. Eventually user's terminals are simplified into a simple input and output devices. Users can use the powerful computing and processing function on clouds and they can order service from the cloud according to their own needs.

Cloud computing technology includes distributed file system, distributed data storage, etc. This architecture, can achieve high concurrent processing system to deal with a huge number of requests and can set up to store huge amounts of data in the cloud storage. Cloud computing architecture has a great design of flexibility, because physical resources are virtualized (abstract and object oriented), such that can be easily configured and managed.

Cloud storage is a system that provides functions such as data storage and business access. It assembles a large number of different types of storage devices through the application software which are based on the functions of the cluster applications, grid techniques, distributed file systems, etc. Cloud storage can be simply understood as the storage in cloud computing, and also can be considered to be a cloud computing system equipped with large capacity storage. Cloud storage system architecture mainly includes storage layer, basic management layer, application

***Ph.D. Scholar (Computer Science) Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur (Raj.) INDIA**
**** Professor, Deptt. of CSE, Madhav University, Abu Road, Sirohi (Raj.) INDIA**

interface layer and access layer.

Hence it can be understand as cloud storage is a service model in which data is maintained, managed, backed up remotely and made available to users over a network (typically the Internet). Google File System, Hadoop, AWS, Dropbox, iBox,iCloud ,Next Cloud, PCloud, IDrive, One Drive, and In-house Cloud Storage Systems (Dev Cloud) Machines are some examples of enterprises of cloud storage technology

Similarities and differences between cloud and data centre-

Similarities:

1. Both cloud and data centres provides data storage and dynamic access, but difference is the way they offer services.
2. Cloud is a resource for data storage that is accessed over internet, while a data center is essentially a part of on in house IT infrastructure of an organization
3. Cloud and Data centres both store data and information and provides infrastructure for any additional services.

Differences:

1. Data center can be setup within organizational premises for greater control on IT and Infrastructure operations. They are managed by large corporate organizations and involve huge investments in terms of purchasing of hardware, software, technical manpower, maintenance, and other overheads such as power and bandwidth expenses. While Cloud providers depend on datacentres for establishing their servers at different geographical locations. Hence it's an added advantage of ensuring various services in any event with a single data centre location.
2. Data centre suffers from several restrictions. It is not possible to scale the number of servers in a data canter if requirements comes. However cloud services gives power to users to scale up number of resources because of dynamic scalability of cloud hosting services.
3. Cloud systems can be built within moments and can also be de-commissioned instantly. This cannot be applied to data centres that may require months or years to come into existence.
4. A data canter, has limited capacity unless an investment has made on more storage. Whereas a cloud system has virtual unlimited storage based on vendor's offerings and service.
5. Cloud-based resources need to be housed in data centres. Cloud resources can be shared with the other users of the same provider, if the private cloud is not used.

Best analogy is any utility distribution. There is a grid that produces gas/electricity/water - assume it's a data-center. Cloud is nothing but the utilities used at home. We don't need and maintain infrastructure. We just need to pay for the number of units consumed and the service provider ensures things up and running 99.99x% of the time.Hence we can say that Data center is a network of specific devices for global collaboration to deliver, accelerate, display, compute, and store data information on the Internet infrastructure.

Application of Data Centre with Cloud - Before Internet infrastructure, cloud computing didn't/couldn't exists. It's booming and in near future, data centers will begin to decline and cloud storage will take over. So the reason behind it is:-

Cloud being virtual infrastructure which may be accessed or delivered with a local network or to remote location through internet. Hence here user can access Computing resources, Networking services and storage and Software. In cloud computing terminologies it's called as Infrastructure as a service and Software as a Service.It is an Off-premise form of computing which can be accessed from the internet, its maintenance and updates is maintained and controlled by the third-party. No physical Infrastructure is presented anytime with user. But in actual this is stored somewhere on real Data Centres. And that layer is hidden from user.

The cloud is an online storage system designed to fragment and duplicate your data across multiple data centre locations. In case of sudden failures, a cloud system always ensures a backup of the backup. Hence the only way anything ever put on the cloud can ever be destroyed is if the Internet/base itself no longer exists.In a cloud based system provider just gets fee to deliver a service and in return he manage the facilities, hardware, software and configurations, platform and ensures the delivery.

Cloud needs data centres to house the equipment and storage devices, but all data centres do not support cloud based services. A data centre is a place where the servers and other hardware are kept. It may be on the corporate network and located anywhere, run by a service provider. Most providers offer redundancy by creating multiple data centres. Cloud services provider's market cloud computing as a utility or a service. This model allows customers to buy only what they require and to scale up or down services as and when needed.

Cloud works with multiple servers called as grid computing so in case of failure at some point, resources are fetched and accessed automatically from the other points in the network. Cloud is scalable on demand. The level of scalability depends on the cloud vendors. The only issue is the users do not have control i.e. they do not know where their data is stored.

In business perspective - If businesses needs customizable and wholly dedicated system, a data center is more appealing. Space is not shared with another organization. However, if needed more space or computing power, it translates into purchasing more equipment, staff to maintain it, and electricity.

It will cost less, if sharing the space with other organizations hiring the third party to maintain their data.

There is a coexistence side by side. There is a way to optimize usage of both a data center and a cloud computing system by placing the most essential and critical data in a data canter.

Pros and Cons of Data Centre

Pros:

1. Organizations able to have an in-house data storage center are far less reliant on maintaining an Internet connection.
2. Data will be accessible as long as the local network remains stable.
3. Remote storage has its advantages as well. If any organization's place is compromised via natural calamity, the data will remain safe and unharmed at its remote location.

Cons:

1. Having all or most of your data stored in one location makes it more easily accessible, both virtually and physically, it may be unsecure.
2. Depending on budget, it could prove too expensive to maintain, own and operated data center.

Pros and Cons of Cloud Computing/Storage.

Pros : Cloud comes with some advantages in interconnected world

1. Services like Microsoft Office 365 and Google Drive and one drive have embraced its ability to store data online and have created services to capitalize on its potential.
2. Businesses can do the same thing with data by making it accessible 24X7. And with online access, data will always be accessible as long as you have Internet.

Cons:

1. Anything online is more susceptible to virtual attack. A hacker is can hook up and isolate a cloud storage system than a data center.
2. Cloud systems also typically don't have as much power as a data center because of their online nature.
3. Cloud security continues to be a concern among users. Providers need to build security capabilities, such as encryption and authentication.

Comparison between Cloud and Data Centre

Efficiency: Since each machine has its own individual network, therefore dedicated server is more efficient in handling greater workloads. Cloud servers handles a network traffic hence performance get affected.

Maintainability: dedicated server need a minimum of two scaling procedure, that is migration and hardware upgrades. If there is a cluster of dedicated server then there is a downtime connected to server dedicated servers are great.

Provisioning: It's nice experience while using cloud server when compared to dedicated server in provisioning. The self-services provided by cloud server is definitely a plus point where things take place in actual time.

Reliability: If dedicated server and cloud server are running on the same hardware then their reliability would be equal. Nothing is left to be compared then.

Security: Dedicated server would be on one level up when compared to cloud server for security purpose only when businesses needs total isolation.

Actual Value: Value is something about services are provided in defined cost. While using dedicated server, consistent amount of sum need to be spend even if same is not being used continuously. Whereas on the other hand cloud server made charges on timey basis and only for the resources consumed. Thus, which is better in terms of value depends on usage.

Conclusions - Cloud computing is the inevitable product with the development of the internet, and it also brings more rich applications to the internet. In this paper, we introduce the related concepts of cloud computing and cloud storage. Then we pose a cloud storage architecture based on OS web operating system in our computers. Experiments verified the system is well. Acknowledgements. There are factors affecting decision and those are: business needs, data security and system costs. A Data centre is perfect for who require a devoted framework that gives them full control over their information and hardware.

References :-

1. Christopher Poelker, "Storage Area Networks for Dummies", Cloud Computing, ISBN-10: 8120350731, ISBN-13: 978-8120350731
2. https://cloud.google.com/about/data-centers/
3. https://en.wikipedia.org/wiki/Cloud_computing
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Cloud_storage
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Data_center
6. https://www.ibm.com/cloud/data-centers/
7. Tom Clark, "IP SANS: A Guide to iSCSI, iFCP, and FCIP Protocols for Storage Area Networks".

****

आधुनिक काल और महादेवी वर्मा

गायत्री मेहरा *

शोध सारांश – आधुनिक गीतकाव्य का प्रादुर्भाव भारतेन्दु युग से हुआ। इस युग के गीतों में मुक्तक शैली का बाहुल्य रहा। दोहा, कवित्त, सवैया, लोक छनद आदि। भावुकता के साथ विचार उत्पन्न समस्याएँ गीतों के विषय बने। भारतेन्दु का दशरथ विलाप, प्रतापनारायण मिश्र की गोरक्षा प्रेमधन का ग्रामीण जनपद आदि रचनाए गीतों की परम्परा बने। नाटकों में गीतों का समावेश इस युग की विशेषता रही।छायावादी कवियों ने अपनी दु:ख निराशा, असफल प्रेम, सभी के गीत में उड़ेल दिया। राष्ट्रीय भावना में परिवर्तन हुआ। इसी समय गीतिकाव्य का नयी विचारधारा मिली। गीतों में संगीतात्मकता और भावों की गहराई इनकी प्रमुख विशेषता रही। जीवन के प्रति करूणा, मजदूरनी, भिखारिनी, श्रमजीवियों के चित्रित किये गये। आधुनिक गीतकाव्य की श्रृंखला में महादेवी का स्थान अभूतपूर्व है। महादेवी जी ने छायावदियों में एक मात्र वह चिन्तन भाव यौवन कवयित्री है जिन्होने युग के परिप्रेक्ष्य में राग तत्व के गूढ़ संवेदन तथा राग मूल्य को अधिक मर्मस्पर्शी गम्भीर अन्तर्मुखी तीव्र संवेदनात्मक अभिव्यक्ति दी है, जिसका कारण स्पष्टत: उनका नारी व्यक्तित्व है।

शब्द कुंजी – भारतेन्दु युग,द्विवेदी युग,छायावाद रहस्यवाद,संगीतात्मकता,महादेवी वर्मा

प्रस्तावना – आधुनिक गीतकाव्य का प्रादुर्भाव भारतेन्दु युग से हुआ। इस युग के गीतों में मुक्तक शैली का बाहुल्य रहा। दोहा, कवित्त, सवैया, लोक छनद आदि। भावुकता के साथ विचार उत्पन्न समस्याएँ गीतों के विषय बने। लोकहित और स्वतन्त्रता वे बोल मुखरित हुए। भारतेन्दु का दशरथ विलाप, प्रतापनारायण मिश्र की गोरक्षा प्रेमधन का ग्रामीण जनपद आदि रचनाए गीतों की परम्परा बने। नाटकों में गीतों का समावेश इस युग की विषेषता रही।

द्विवेदी युग में जीवनकाल आत्माभिव्यति की प्रधानता है, स्वच्छन्दता और परम्परा का समन्वय दिखाई दिया। मैथिलीशरण गुप्त, मुकुटधर पाडेंय पदमलाल पुन्नालाल वख्शी श्रीधर है। मुकुटधर पांडेय ने प्रकृति के मनहर चित्र खींचे। साकेत में गीत अपनी कला की कसौटी पर खरे उतरते है। इस युग में भारतेन्दु युग से चली आ रही राष्ट्रप्रेम की धारा और भी वेगमयी प्रवाहित हुयी। सामाजिक राजनैतिक संघर्ष के परिवर्तनयुक्त युग में मानवतावादी चेतना का अधिक महत्व हुआ। हमारे हिन्दी गीतों में एक नया अध्याय शुरू हुआ। आधुनिक रूप, रंग और सज्जा को देखकर छायावादी काव्य के गीतों के लिये उर्वरा समय सिद्ध हुआ। गीतों में अन्त दृष्टि वैयक्तिकता संगीत रागात्मकता आदि भावुकता के रंगो में डूबे छायावाद की देन है।

छायावादी कवियों ने अपनी दु:ख निराशा, असफल प्रेम, सभी के गीत में उड़ेल दिया। राष्ट्रीय भावना में परिवर्तन हुआ। इसी समय गीतिकाव्य का नयी विचारधारा मिली। गीतों में संगीतात्मकता और भावों की गहराई इनकी प्रमुख विशेषता रही। जीवन के प्रति करूणा, मजदूरनी, भिखारिनी, श्रमजीवियों के चित्रित किये गये।

निराला, महादेवी, रामकुमर प्रसाद पंत आदि कवियों ने अपनी भावप्रवणता, कल्पना, आत्माभिव्यक्ति और संवेदनशीलता को गीतों में प्रविष्ट किये। स्वतन्त्रता के बाद फैली साम्प्रदायिकता पर गीतों का चयन किया।छायावादी कवि पंत ने स्वीकार कर कहा है कि छायावादी गीतों पर रोमान्टिक युग का प्रभाव है कौतूहल सुन्दरता के प्रति आसवित, रहस्यात्मकता, प्रकृतिप्रेम वैयक्तिकता छायावादी गीतों के प्रधान लक्षण बने। दु:खवाद वेदना, प्रत्यावर्तन, स्वप्न सर्जना, मानवतावादी भावना, पलायन वृत्ति आदि की प्रधानता के दर्शन भी इस युग के गीतों की विशेषता है। इस युग के गीतों में धर्मचेतना के विरूद्ध आधुनिक लोकिक चेतना का विद्रोह देखने को मिलता है।

आधुनिक गीतों में छायावाद व रहस्यवाद में अन्नत की ओर निराकार सम्बन्धी सम्बोधन भरे पड़े है छायावादी और रहस्यवादी गीत हदय की रागिनियों में गुंजन के लिये लिखे गए है उनमें संवेदनाओ की पूर्ण अभिव्यक्ति है, भावनात्मक लय की प्रमुखता है, वैयक्तिकता और रागात्मक तत्व की प्रमुखता है। प्रकृति की नवीन छायावादी गीतों में देखने को मिलती है। पंत के गीतों में भाव प्रवणता के साथ प्रकृति का सौन्दर्य मुख हुआ है। प्रकृति चित्र सबसे अधिक पंत के काव्य के प्राण बनकर रह गये है।

निराला के गीतों की प्रेरणा प्रेम का उज्जलव चित्र है, निराला के गीतों में ईश्वर को अनन्त अविनाशी कहा है। अहं विसर्जन का संकल्प है, आत्मचेतना प्रधान गीत भी है आन्तरिक और बाहय सौन्दर्य गीतों में चार चॉद लगाते है।

प्रसाद के गीतों में लाक्षणिकता, सांकेतिकता आदि चित्रों की पूर्णता मिलती है। संलिष्ट वर्णन अवश्य है, प्रकृति का काव्यात्मक चित्रण है संगीतात्मकता का तत्व प्रधान है। प्रसाद ने चन्द्रगुप्त, कामायनी, लहर आदि में गीतों की विविधता के साथ काव्यात्मकता भरपूर है।

आधुनिक गीतकाव्य की श्रृंखला में महादेवी का स्थान अभूतपूर्व है। वह आधुनिक गीतकाव्य की मीरा कही जाती है एक ऐसी कवियित्री के रूप में उनका प्रादुर्भाव हुआ जो अपनी सानी में सर्वोपरि है। और स्वर साधना के रूप में गुणवान। वह आधुनिक काव्य की सचमुच एक सफल कवियित्री के रूप में अवतीर्ण हुई है। महादेवी जी ने छायावदियों में एक मात्र वह चिन्तन भाव यौवन कवयित्री है जिन्होने युग के परिप्रेक्ष्य में राग तत्व के गूढ़ संवेदन तथा राग मूल्य को अधिक मर्मस्पर्शी गम्भीर अन्तर्मुखी तीव्र संवेदनात्मक अभिव्यक्ति दी है, जिसका कारण स्पष्टत: उनका नारी व्यक्तित्व है।

* शोधार्थी (हिन्दी विभाग) भाषा अध्ययन केन्द्र, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

महादेवी वर्मा ने आधुनिक बौद्धिक प्रधान युग मे भावना की गहराइयों के छूकर सरसता की वेगमयी सरिता प्रवाहित की है। गीत की कसौटी पर महादेवी वर्मा का गीतकाव्य खरा उतरता है। गीत के प्रमुख तत्व- भावानुभूति संगीतात्मकता, भावान्विति, साक्षिप्तता वैयक्क्तिा, भावानुकूल भाषा शैली की दृष्टि से महादेवी वर्मा के गीत श्रेयस्कर माने जाते है। उनके गीतों के पीछे भावातिरेक है, कल्पना का, आत्मानुभूति का, प्रणयानुभूति का, उनमें अलौकिक माधुर्य है, समन्वय है चिन्तन और भावों का। नीहार से लेकर दीपशिखा तक गीतों में अनुभूतियों का अथाह सागर हिलोरें ले रहा हैं उनके गीतों में भरा है प्रकृति का अपूर्व सौन्दर्य सुख दुख की गहरी पहुँच प्रेम की बेसी व्यापकता। उनके गीत सहज उद्गारों की अभिव्यक्ति है, उनमें है सात्विक रसाभास।

महादेवी को अपूर्व साहस जुटाना पडा है धैर्य और कर्म का संवल लेकर चलना पडा है उनका व्यक्तित्व प्रसाद पंत, निराला से भिन्न ओर अधिक धनी है। प्रसाद जहॉ अन्त: और बाहय द्वन्दों में फंसे रहे है। और वह आनन्दवादी कवि के रूप में प्रतिष्ठित हुए। पर महादेवी अधिक संलिष्ट दिखाई पड़ी है। उनमें प्रसाद जैसी व्यापकता तो नही, परन्तु लघुता का सागर अपूर्ण रत्नो का ढेर है। पंज जी के चितैरे रहे, प्रकृति के सुकुमार कवि रहे और कल्पना उनकी बागडोर। उनकी विविधता बहुरंगीपन तथा व्यापकता के सामने महादेवी की भावुकता, प्रणय अनुराग और दार्शनिकता में आगे है। इसी तरह निराला के स्वच्छन्द उद्दाम और शक्ति के सामने महादेवी वर्मा दब जाती है। परन्तु भावुकता और बौद्धिकता के संयमपूर्ण क्षमताओं में उनका काव्य आगे है।

हम पूर्ण विश्वास के साथ कह सकते है कि महादेवी वर्मा के गीत आधुनिक काव्य जगत की गौरवमीय परम्परा के गरिमामयी गीत है। विषय ओर शैली दोनों ही दृष्टियों से समृद्ध है और कौशलयुक्त। सुख दु:ख की अभिव्यजना नारी सौन्दर्य प्रकृति प्रेम देश व समाज के प्रति अक्षुण्ण मानवता आधुनिक जीवनन्तता उनके अभिव्यक्ति के विषय बने है। अनुभूति की तीव्रता उच्चकोटि की है। गीतों की भाषा, मधुर अभिरथ प्रधान है कला की कमनीयता, सौन्दर्य, चित्रोपमता और लाक्षणिकता से मंउित है। अलंकारो का आधुनिक युगीन प्रयोग तथा नवीन उपमानों की समायोजन ने कला कलेवर में जान डाल दी है। संगीत की दृष्टि से एक एक शब्द नाचता गाता दिखाई देता है। उनके गीत में संगीतात्मक झंकार से गूंज उठे है। नारी हदय की कोमलता और संवेदनशीलता से ओतप्रोत है। आधुनिक गीतकारों में महादेवी जी को गीतों के गुंजन कौशल में अपूर्व सफलता मिली है। महादेवी के गीत भाव और विचार, कल्पना और कला के समन्वित उदाहरण है। जहॉ उनकी तीव्र विरहानुभूति में अत्यन्त सवंदनशीलता है वहॉ उनके गीतो में साज सज्जा और मनोरम कल्पना छवियों की भी अपूर्व समाहिती है।महादेवी की काव्यानुभूति अनूठी है। आनन्द और मर्मानुभूति की दिव्य चेतना के मिश्रण से उनके रहस्यवादी गीतों की अभिव्यक्ति आधुनिक कवियों से ऊॅचा उठाती है मीरा के बाद गीत का स्वाभाविक रूप महादेवी मे ही मिलता है। यो छायावादी युग में प्रसाद निराला पंत तथा अन्य कवियों के सुन्दर गीत भी मिल सकते है। परन्तु गीतिकाव्य का ऐसा विकास उनमें नही है जो महादेवी जी की कला को छू सके उनके गीत निसर्ग सुन्दर है और उनमें अपनी निजी विशेषता है और वह है उनकी स्वाभाविक गति और भाव भंगिमा महादेवी इस क्षेत्र में अद्वितीय है इसके कारण उनका कलापक्ष अनूठा और अपूर्व हो उठा है। जिसने उनकी भावनाओं को सदा के लिये अमर बना दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वेद में गीतिकाव्य का उद्गम, आलोचना अंक 11,बलदेव उपाध्याय,पृ0 59,
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ0 नगेन्द्र,पृ089
3. भ्रमर गीतसार भूमिका, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल:
4. आधुनिक हिन्दी कविता में गीतितत्व,सच्चिदाननद तिवारी,पृ0।।
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,पृ0124
6. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, रामकुमार वर्मा,पृ0730
7. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, रामकुमार वर्मा,पृ0 483
8. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास,आषा किषोर,पृ0 137
9. सर्वस्व, प्रथम भाग, परिचय, प्रेमधन,पृ0 9
10. हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर, नरेश चतुर्वेदी,पृ0 336
11. कवि सुमित्रानन्दन पंत और उनका प्रतिनिधि काव्य, पृ0 30
12. नया साहित्य नये प्रश्न (हि0सं0),आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी,पृ0 149
13. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध,महादेवी, पृ0 133-134
14. गीतिका, निराला,पृ0 13
15. संगीत, जयशंकर प्रसाद,पृ0 51
16. प्रसाद संगीत, जयशंकर प्रसाद,पृ0 92
17. कमायनी इड़ा सर्ग, जयशंकर प्रसाद,पृ0 167
18. छायावाद- पुनर्मूल्यांकन, सुमित्रानन्दन पंत,पृ0 52
19. बीसवी शताब्दी, हिन्दी साहित्य, पृ0 123
20. महादेवी वर्मा, साहित्य कला जीवन दर्शन, रामचन्द्र गुप्त, पृ0 256
21. हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास,हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0 443
22. राजपाल एण्ड संस द्वारा प्रकाशित कवि की पुस्तकों का कवर
23. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियॉ, डॉ0 नगेन्द्र, पृ0 93-94
24. निशा निमन्त्रण,बच्चन,पृ0 72
25. अनुसन्धान और आलोचना, डॉ0 नगेन्द्र,पृ0 125
26. गिरिजा कुमार माथुर, जीवनी कैलाश वाजपेयी, पृ0 14
27. छायावादोत्तर हिन्दी गीतिकाव्य, सुरेश गौतम,पृ0 268
28. छायावाद का पुनर्मूल्यांकन,सुमित्रानन्दन पंत,पृ0 85
29. आधुनिक प्रगीत काव्य, गणेश खरे,पृ0 284
30. महादेवी वर्मा काव्यकला और जीवनदर्शन, इन्द्रनाथ मदान,पृ0 122

****

मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन (2004-2005) में अनुसुचित जाति की सहभागिता

डॉ. अमृतलाल परमार *

प्रस्तावना - संविधान के73वें संशोधन पारित होने के पश्चात देश में पंचायती राज की स्थापना करनें वालें राज्यों में म.प्र.अग्रणी राज्य रहा है। मध्यप्रदेश नें 73वें संविधान संशोधन केअनुरुप राज्य निर्वाचन आयोग का गठन कर सर्वप्रथम त्रिस्तरीय पंचायती राज की स्थापना कर पंचायतों का संवैधानिक स्वरुप प्रदान करनें की प्रति अपनी प्रतिबद्धता को प्रदर्शित किया।मध्यप्रदेश में पंचायती राज की स्थापना सें समाज के अनुसूचित जाति तथा जनजाति तथा पिछडे वर्गो को सहभागिता प्रदान करनें केलियें आरक्षण प्रदान किया गया,किन्तु आज भी इन वर्गा के राजनितिक अधिकारों के हनन का प्रयास किया जाता है अत:इनको संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है। इसके बावजूद येन केन प्रकारेण इन वर्गो को सत्ता से दूर रखकर इनके संवैधानिक अधिकारो का हनन कर अपना स्वार्थ सिद्ध करनें का प्रयास किया जाता है प्रस्तुत शोध पत्र केमाध्यम सें पंचायत निर्वाचन में अनुंसुचित जाति वर्ग के लिये कियें गए प्रावधानो के उपर प्रकाश डालकर वर्तमान स्थिति सें बुद्धिजीवियो का परिचय करानें का प्रयास किया गया है।

पंचायत निर्वाचन में अनुसूचित जाति केलिए प्रावधान - म.प्र. पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज्य अधिनियम की धारा - 13 की उपधारा एक के अनुसार धारा 17(3)(1) के अनुसार ग्राम पंचायतो के पंचो के तथा विकासखण्ड के भीतर की ग्राम पंचायतो के सरपंचों के लिये स्थानो का आरक्षण किया जायेगा। इस आरक्षण का प्रतिशत यथासम्भव वही होगा जोकि सम्बंधित ग्राम पंचायतो तथा खण्ड की कुल जनसंख्या में इन वर्गो का होगा ।ग्राम पंचायतों तथा खण्ड में सरपंचो केपदो में आरक्षण प्रावधान केसाथ साथ जनपद पंचायत के सदस्य तथा अध्यक्ष एवं जिला पंचायतो के सदस्य तथा अध्यक्षो के पदो में अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लिए जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण का प्रावधान किया गया। इसके अतिरिक्त ग्राम पंचायत का सरपंच,जनपद पंचायत तथा जिला पंचायत अध्यक्ष अगर अनुसूचित जाति,जनजाति या पिछडे वर्ग सें नही है तों ग्राम पंचायत का उपसरपंच, जनपद तथा जिला पंचायत का उपाध्यक्ष इन वर्गो से चुना जायेगा।[1]आरक्षण के लिए किए गए उक्त प्रावधानों में न केवल आरक्षण बल्कि इनमें लैंगिक समानता स्थापित करनें का भी पूरा प्रयास किया गया क्योंकि महिलाओ का घुंघट सें निकालकर नेतृत्व के लिये आगे नही लाया जायेगा। तब तक हमारे संवैधानिक अधुरे ही रहेंगे। अत: सभी मंशा केअनुरुप पंचायती राज एवं ग्राम स्वराज्य अधिनियम में महिलाओ के लिये उनके वर्गो में आरक्षित स्थानो का प्रतिशत 33 रखा गया जोंकि 30 मार्च 2007 से सभी महिलाओ के लिये कुल स्थानो का 50% आरक्षित रखा जायेगा।[2]

अध्ययन का उद्देश्य - पंचायत निर्वाचन में अनुसूचित जाति के लिए किए गए प्रावधानों का व्यवहारिक अध्ययन करना तथा निर्वाचन में इस वर्ग की सहभागिता पर प्रकाश डालना ही प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य है।

अध्ययन पद्धति एवं तथ्य संकलन - व्यवहारिक अनुसंधान पद्धति के द्धारा प्रस्तुत शोध पत्र का लेखन किया गया जिसमें प्राथमिक एवं द्धितीयक तथ्यो दोनो का प्रयोग किया गया।

उपकल्पना - म.प्र.पंचायत निर्वाचन में अनुसूचित जाति वर्ग की सहभागिता में वृद्धि हुई है।

आरक्षित स्थान रखने का प्रभाव और उपलब्धिया - पंचायती राज की स्थापना में हम बात का विशेष प्रावधान किया गया कि समाज का वो वर्ग जो सदियो से अपमान, तिरस्कार , और शोषण का शिकार रहा है सहभागिता सें वंचित न रह जाए, जिसमे महिलाएँ भी शामिल है इन वर्गो के लिये स्थान सुरक्षित रखनें का प्रभाव यह पत्र कि जो लोग गॉवो के मुख्य मार्गो पर पैरो में जूते पहन कर नही निकल सकते है जिनको गॉवो में अपने गले में हंडी और पीठ पर झाडू लगाकर सूर्योदय से सूर्यास्त के पहले गावो में जानें की अनुमती नही थी तथा वो महिलाए जिनका काम चौका चुल्हा और बच्चो कि परवरिश के साथ दिन भर घुंघट निकालकर बेजुबान जानवरो की तरह घरो और खेतों में काम करने के अलावा कुछ नही था। आज उसी वर्ग के लोग और जिसे दुंनिया की आधी आबादी माना जाता है। वही पंचायतो की चौपालो पर अपने गावो में विकास के पर्याय बने हुये है। आज के लोग खुल कर अपनी राजनीतिक सहभागिता और नेतृत्व क्षमता का परिचय दे रही है। यदि पंचायत निर्वाचन के परिणामो का अध्ययन किया जाय तो हम देखते है इन वर्गो ने न केवल अपने बर्गो के लिये आरक्षित स्थानो पर बल्कि अनआरक्षित स्थानो पर अपना विजय परचम लहराया है यह इस बात का सूचक है कि आज इन लोगो की राजनीतिक चेतना विकसित हुई है तथा उनकी मानसिकता में भी परिवर्तन आने लगा है। अत: इन वर्गो के लोग पहले की अपेक्षा जागरुक हुए है। यहॉ पर कुछ तथ्य प्रस्तुत किये गए है जिससे स्पष्ट होता है कि पंचायत निर्वाचन में अनुसूचित जाति की सहभागिता बढनें लगी है।

पंचायत निर्वाचन 2004-2005 में पंच (65108), सरपंच (3977) ,जनपद सदस्य (1315), जिला पंचायत सदस्य(151), के रुप में कुल 7055। पद अनुसुचित जाती के लिये आरक्षित रखे गए।[3] यह आरक्षण का प्रतिशत इस वर्ग की कुल जनसंख्या 14 के अनुपात में रखा गया।

अनुसूचित जाति वर्ग के लोगो नें इन वर्गो के लिये आरक्षित कुल 14% के अलावा अनारक्षित स्थानो पर भी चुनाव लडा और तीनो स्तरो के पदो में से 5066 सामान्य पदो पर जीत हासील की।[4]

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महावीर महाविद्यालय, पेटलावद, जिला झाबुआ (म.प्र.) भारत

आइना दिखाते उदाहरण – आज यह सही बात है कि समाज के अनुसूचित कहे जानें वाले इस वर्ग के लिये स्थानो के आरक्षण से इस सामाजिक वर्ग में राजनितिक चेतना के सुर्योदय के दर्शन हमें हो रहे है लेकिन निचे कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये गये है जो कि हमें वास्तविकता से रुबरु कराते है:-

1. यद्यपि यह उदाहरण मध्यप्रदेश का नही है किन्तु कश्मीर से कन्याकुमारी और अटक से कटक तक हम अखण्ड भारत और भारतीय संस्कृति का आदर्श संजाए हुए है। साथ बात पंचायती राज और पंचायत निर्वाचन में अनुसूचित जाति की सहभागिता की चल रही है तो यहा इस प्रकरण का उल्लेख प्रासंगिक होगा कि सन् 2006 मे तमिलनाडु की कांडिकुलम् पंचायत की अध्यक्ष के पद पर निर्वाचित होने के पश्चात् गॉव के, तथाकथित स्वयं को उच्च मानने वाली जाति के लोगो नें नीलामी कर बोली लगाई और खरीदा गया क्योकि निर्वाचित एकता महिला थी और दुसरा दलित वर्ग से सम्बंधित थी।[5] यह तो एक उदाहरण मात्र है आज भी हमारे देश और प्रदेश में सैकडो ग्राम पंचायते है,जहॉ समाज के इस वर्ग के निर्वाचित प्रतिनिधियो को कही कुर्सी पर बैठने नही दिया जाता तो कही पंचायत का सचिव और भृत्य मटके से पानी नही पिने देता है। समाज के रसूखदार लोग इन दलित प्रतिनिधियो का रबर स्टाम की तरह उपयोग करते है।
2. दुसरा उदाहरण मध्यप्रदेश के शाजापुर जिले का है जिसमें एक 25 वर्षीय व्यक्ति ने अपनी पत्नी को ग्राम पंचायत के पंच का चुनाव लडवाया। साथ ही उसने स्कूल में एक व्यक्ति को एक शिक्षक पालक संघ का चुनाव जिताने में मदद की। यह बात गॉव के उच्च वर्ग के लोगो को नागवार गुजरी और उन्होने उस व्यक्ति कि हत्या कर दी।
3. सीहोर जिले के एक गॉव में दलित परिवार कि बारात को गॉव में निकलने नही दिया गया।
4. सिवनी जिले के ग्राम भोमा टोला में दलित महिला के साथ सामूहिक बलात्कार किया।
5. विदिशा जिले के ग्राम रहमानपूर की एक दलित महिला के साथ समाज के उच्च वर्ग के लोगो ने उसके गुप्तांग में मिर्ची भर दी क्योकि उसने उच्च जाति वाली महिलाओ से पहले पानी भर लिया।
6. राज्य अनुसूचित जाति आयोग में प्रकाशित आकडो का अध्ययन किया जाए तो स्पष्ट होता है कि अप्रेल 2004 से मार्च 2005 में केवल एक वर्ष में कुल 3412 प्रकरण दर्ज किए गए जिनमें से 100 हत्या, 519 बलात्कार, 155 गम्भीर आघात और 2341 अपमान अभित्रास के थे।[6] हमें आज हुए हादसे से ज्यादा दशक हो चुके है। हमने समानता की स्थापना कर दी।अस्पृश्यता को निसिद्ध कर दिया, संसद, विधानसभा, और पंचायती राज में इन वर्गो के लिये स्थानो का आरक्षण कर दिया।[7] किन्तु आज भी अनेक संवैधानिक संस्थाये ऐसी है जहॉ निर्वाचित व्यक्ति स्वयं अपने दायित्वो का निर्वहन अपने विवके के अनुसार नही कर सकते है कही चुनाव में खडे होने पर ही अपनी जान से हाथ धोना पडता तो कही कुर्सी पर बैठने नही दिया जाता, कही बोली लगाकर खरीदा जाता है तो कही पानी पीने नही दिया जाता है।

उपरोक्त प्रस्तुत तथ्य तो मात्र एक उदाहरण है और इसलिए प्रकाश में आए है कि समाचार पत्रो में या संवैधानिक आयोगो के प्रतिवेदनो में प्रकाशित हुए है। इन चंद उदाहरणो से अंदाजा लगाया जा सकता है कि जमीनी स्तर पर हकीकत क्या होगी। आज आवश्यकता इस बात की नही है कि इन वर्गो के लिये पर्याप्त संवैधानिक व्यवस्थाऍ या इनके कल्याण के लियें संस्थानो की स्थापना की जाए बल्कि आवश्यकता इस बात कि है कि पुर्व में किये गए प्रावधनो को समुचित तरीके से क्रियान्वित किया जाए साथ ही साथ इन वर्गो में शिक्षा का प्रसार और राजनीतिक चेतना का विकास एक महती आवश्यकता है।

उपकल्पना का परीक्षण – प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन के दौरान प्रकाश में आए तथ्यो से स्पष्ट है कि अनुसूचित जातिवर्ग के लोगो की राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि के संकेत हमें देखनें को हमें मिलते है।यद्यपि इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना अपेक्षित हैं।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध पत्र में अनुसूचित जाति की पंचायत निर्वाचन में सहभागिता के अध्ययन का प्रयास किया गया है। यद्यपि इन वर्गो के लिये अनेक व्यवस्थाए की गई है जिसके सकारात्मक परिणाम भी देखने को मिले है लेकिन लक्ष्य अभी बहुत दुर है। अत: मात्र संवैधानिक प्रावधान कर देने मात्र से ही इनकी वास्तविक राजनीतिक सहभागिता के लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव है। साथ इस विषय पर एक वृहद शोध की आवश्यकता है जिससे वास्तविक कारणो का अध्ययन कर लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993
2. रोजगार और निर्वाण (साप्ताहिक) भोपाल में प्रकाशित दिनांक 02/04/2007,पृष्ठ 1
3. द्वितीय पंचायत निर्वाचन प्रतिवेदन 2000,मध्यप्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग, भोपाल, प्रतिवेदन पत्र 2001 पृष्ठ 128
4. तृतीय पंचायत निर्वाचन प्रतिवेदन 2004-2005, राज्य निर्वाचन आयोग, भोपाल, प्रतिवेदन वर्ष,2006 पृष्ठ 143
5. नईदुनिया दैनिक, इन्दौर से प्रकाशित दिनांक 21/11/2006 पृष्ठ 06
6. मध्यप्रदेश राज्य अनुसूचित जाति आयोग,नवम् प्रतिवेदन सन् 2005-2006 मध्यप्रदेश, राज्य अनुसूचित जाति आयोग, भोपाल
7. बसु डी.डी.- भारत का संविधान एक परिचय, प्रेटिंस हाल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड,नई दिल्ली,1989

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन का सागर संभाग के शैक्षिक युवावर्ग पर प्रभाव - एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. मोनिषा मिश्रा *

शोध सारांश - वैदिक कालीन समय से शिक्षा धर्म का एक अंग रही है। जन साधारण को समाज की मर्यादा, अनुशासन, सभ्यता, संस्कृति के महत्वपूर्ण पक्ष और धार्मिक संस्कारों के माध्यम से धार्मिक संतो, महापुरुषों द्वारा सिखाये जाते थे। उनका धर्म प्रधान-व्यक्तित्व आचरण एवं सोच जनसाधारण में उत्तम जीवन जीने की दृष्टि से प्रेरणा स्त्रोत के रूप में कार्य करती थी ऐसे ही कुछ संत भारत भूमि पर हुये हैं। आज के वर्तमान भारत में भी इन चिंतकों और दार्शनिकों का प्रभाव विशेष है। स्वामी विवेकानंद वैदिक धर्म एवं संस्कृति के समस्त स्वरूपों के उज्ज्वल प्रतीक थे। यह उन्हीं की प्रतिभा थी जिससे वेदांत का प्रतिपादन इस रूप में हुआ कि, वह वर्तमान युग में मनुष्य द्वारा हृदयंगम किया जा सके। केवल भारत ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व स्वामी जी के स्फूर्तिदायी एवं विधायक विचारों से प्रचुर मात्रा में लाभान्वित हुआ हैं। गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर उपनिषदीय दर्शन के पोषक थे। उपनिषदीय दर्शन को भी इन्होंने मानवीय दृष्टिकोण से देखा-समझा है। ये संसार के समस्त प्राणियों में परमात्मा की व्याप्ति मानते थे और इस आधार पर इन्होनें संसार के समस्त प्राणियों में एकात्म भाव उत्पन्न करने पर बल दिया इन्होनें तात्कालिक शिक्षा प्रणाली को बदलने का प्रयत्न किया क्योंकि इनके अनुसार वह शिक्षा प्रणाली बालकों के मानसिक एवं शारीरिक विकास मे सहायक नही थी इन्होनें प्राकृतिक शिक्षा एवं स्वाभाविक शिक्षा को बढ़ावा दिया एवं इस कार्य में मुख्य भूमिका गुरूदेव की रचना की हैं जिससे भारत के युवाओं में चेतना का संचार होता रहा है। स्वामी विवेकानंद जी तथा गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर इन दोनों महापुरूषों ने अपने समय में भारतीय आध्यात्मिक ज्ञान को विश्व स्तर पर मान्यता दिलाई। दोनों ने ही तात्कालिक शिक्षा व्यवस्था को सही नहीं माना था स्वामी जी ने धर्म को केन्द्र मानकर अपने विचारों को सामने रखा तथा जन साधारण में पहुँचाया जबकि, रवीन्द्रनाथ टैगोर ने शिक्षा को केन्द्र मान कर अपने विचारों से शैक्षिक व्यवस्था को बदलने का प्रयास किया सागर क्षेत्र के वर्तमान युवाओं पर इनके दार्शनिक विचारों के प्रभाव को जानने हेतु यह शोध कार्य किया जा रहा है।

प्रस्तावना - स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर हैं जिनके महान व्यक्तित्व ने न सिर्फ तत्कालीन समाज में क्रांति ला दी थी अपितु आज भी उनके विचार उनके द्वारा स्थापित की गई संस्थाओं के माध्यम से भारतीय युवाओं में वही ओज, ऊर्जा, धर्म, संस्कृति एवं शिक्षा का प्रसार कर धन्य अनुभव कर रही है। आज वे प्रत्यक्ष रूप से नहीं हैं परंतु भारतीय युवा उनके विचारों के माध्यम से अपना मार्गदर्शन कर रहे हैं। वर्तमान भारत में भी जन-जन में इन चिंतको के विचारों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। विशेषकर युवा वर्ग पर उन चिंतकों का प्रभाव सर्वाधिक दिखता है जिन्होंने युवाओं को राष्ट्र निर्माता समझ कर अपने कार्य किये है। आज उनके विचारों को आधुनिक तकनीकों के माध्यम से क्रियान्वित हो रहे है। भारतीय युवा वर्ग विशेषकर सागर संभाग के युवाओं पर स्वामी विवेकानंद जी एवं गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के दार्शनिक विचारों के प्रभाव को जानने हेतु यह शोध किया जा रहा है।

न्यादर्श - प्रस्तुत शोध कार्य में शोधार्थी में सागर संभाग के स्नातक स्तर के महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों तथा उनके शिक्षक-अभिभावकों को जनसंख्या के रूप में लिया है। जो सागर संभाग में अलग-अलग उपाधि पाठ्यक्रमों में पंजीबद्ध है। शोधार्थी का लक्ष्य सागर क्षेत्र के युवाओं में स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगौर के शैक्षिक दर्शन के प्रभावों का अध्ययन करना था अत: सागर संभाग के विभिन्न शहरी तथा ग्रामीण दोनों क्षेत्रों के 1000 इकाईयों का चयन न्यादर्श हेतु किया गया। जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के 400 छात्र, 400 छात्राएँ, 100 शिक्षक एवं 100 अभिभावक को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया है। न्यादर्श के चयन हेतु यादृच्छिकी न्यादर्शन विधि का प्रयोग किया गया है।

शोध उपकरण - शोध समस्या पर शोधकार्य पूर्ण करने के लिये विशेष प्रकार के शोध उपकरण की अवश्यकता होती है। शोध उपकरण के माध्यम से शोध समस्या से संबधित आँकड़े शोध कार्य हेतु संग्रह किये जाते है। उपकरण परिकल्पना की प्रकृति के अनुरूप निश्चित किया जाता है। एक विशेष प्रकार के आँकड़ों को संग्रह करने के लिये उपकरण का प्रयोग किया जाता है। कभी कभी संमस्या के समाधान के लिये आँकड़े एकत्र करने में अनेक उपकरणों का प्रयोग करना पड़ता है। प्रस्तुत शोध में शोध की प्रकृति के अनुसार प्रदत्तों के संग्रह हेतु स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन से संबंधित पदों को लेकर प्रश्नावली का निर्माण किया गया है। न्यादर्श को दोनों दर्शनिकों के दर्शन से अवगत कराने के लिए प्रश्नावली के प्रथम में उनके शैक्षिक दर्शन का संक्षिप्त ब्यौरा दिया जा रहा है।

परीक्षण की वैधता एवं विश्वसनीयता

परीक्षण का क्रम	माध्यमान	मध्यांक	मानक विचलन	सहसबंध	r
परीक्षण	259.01	226	59.06	0.66	0.79
पुनप्रीक्षण	229.78	230	59.00		

संपूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक 0.79 है। इससे वैधता गुणांक 0.88 ज्ञात किया गया है। अत: अर्द्धविटापन विधि में सम विषम के बीच संबंध विश्वसनीय एवं वैध है। पद विश्लेषण प्रक्रिया के बाद 74 प्रश्नों

* प्राचार्या (शिक्षा विभाग) बी. टी. इंस्टीट्यूट ओफ एक्सिलेंस, सागर (म.प्र.) भारत

का प्रारूप तैयार है। इस प्रकार स्वामी जी तथा गुरूदेव के शैक्षिक दर्शन का प्रभाव जानने के लिये परीक्षण पूर्ण तैयार हो गया है। जिससे शहरी तथा ग्रामीण युवावर्ग जिसमें छात्र एवं छात्राएँ तथा उनके शिक्षक एवं अभिभावकों पर स्वामी जी एवं गुरूदेव के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव का मूल्यांकन किया गया।

शोध कार्य के उद्देश्य :

1. शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के शासकीय/अशासकीय महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्र छात्राओं में स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के विचारों के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रो के शासकीय/अशासकीय महाविद्यालयों के शिक्षकों पर स्वामी जी के तथा गुरूदेव के विचारों का अध्ययन करना।
3. शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के अभिभावकों पर स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के विचारों के प्रभाव का अध्ययन करना।
4. स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन की तुलनात्मक समीक्षा करना।

परिकल्पनायें :

1. सागर क्षेत्र के समस्त छात्रों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर नहीं होगा।
2. सागर क्षेत्र के समस्त छात्राओं के शिक्षक अभिभावकों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर नहीं होगा।
3. सागर क्षेत्र के समस्त लिये गये शिक्षकों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर नहीं होगा।
4. सागर क्षेत्र के समस्त लिये गये अभिभावकों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर नहीं होगा।

प्रदत्तों की वर्गीकरण एवं निर्वाचन – प्रस्तुत शोध में आधुनिक भारत के शैक्षिक युवा वर्ग पर स्वामी विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन के प्रभाव को मापने हेतु शोधार्थी ने आधुनिक भारत के सागर संभाग को अध्ययन हेतु चुना। जिसके अंतर्गत सागर के 340 महाविद्यालयों के छात्र–छात्राओं एवं शिक्षक अभिभावकों को अध्ययन हेतु चुना तथा संकलित प्रदत्तों की उचित व्यवस्था एवं निष्कर्षो के परिणाम स्वरूप 1000 विद्यार्थियों शिक्षकों तथा अभिभावकों को न्यादर्श के रूप में लिया गया। जिसमें एक विश्वविद्यालय एवं 24 शासकीय, अर्द्धशासकीय तथा अशासकीय महाविद्यालयों से 400 छात्र, छात्राऐं 100 शिक्षक तथा 100 अभिभावकों के लिया गया। इसके पश्चात् विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान युवावर्ग पर प्रभाव के अध्ययन के लिये अध्ययनरत विद्यार्थियों तथा शिक्षक, अभिभावकों के प्राप्तांकों को आवृत्ति वितरण द्वारा संगठित करके प्रतीपगमन x का y श्रेणी पर प्रतीतगमन गुणांक एवं x का y श्रेणी पर प्रतीपगमन गुणांक प्रतीपगमन गुणाकों द्वारा सहसंबंद्ध गुणांक, प्रतीपगन की प्रमाप त्रुटि प्रतीपगमन अंतर की प्रमाप त्रुटि, स्वतंत्रता के अंश एवं *SEr* ज्ञात करके प्रतीपगमन अंतर की सार्थकता ज्ञात की। तुलनात्मक अध्ययन हेतु मध्यमान, प्रमापविचलन, मध्यमान की प्रमाप त्रुटि, मध्यान अंतर की प्रभाव त्रुटि, स्वतंत्रता के अंश एवं t मूल्य ज्ञात करके मध्यमान अंतर की सार्थकता ज्ञात की गयी है।

तालिका 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

शोध कार्य के निष्कर्ष

परिकल्पना क्र. 1– ली गई परिकल्पना 01 में सागर क्षेत्र के समस्त छात्रों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर अपेक्षित नहीं था। प्रतीपगमन एवं मध्यमान से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर स्नातक स्तर में अध्ययनरत् समस्त छात्रों पर विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थकता स्तर पर (0.01) के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना विश्वसनीय एवं वैध है जिससे परिकल्पना मान्य होती है।

परिकल्पना क्र. 2 – ली गई परिकल्पना 02 में सागर क्षेत्र के समस्त छात्राओं पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर अपेक्षित नहीं था। में प्रतीपगमन एवं मध्यमान से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर स्नातक स्तर में अध्ययनरत् समस्त छात्राओं पर विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थकता स्तर पर (0.01) के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना विश्वसनीय एवं वैध है जिससे परिकल्पना मान्य होती है।

परिकल्पना क्र. 3 – ली गई परिकल्पना 03 में सागर क्षेत्र के लिये गये समस्त शिक्षकों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर अपेक्षित नहीं था। में प्रतीपगमन एवं मध्यमान से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर लिये गये समस्त शिक्षकों पर विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थकता स्तर पर (0.01) के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना विश्वसनीय एवं वैध है जिससे परिकल्पना मान्य होती है।

परिकल्पना क्र. 4– ली गई परिकल्पना 04 में सागर क्षेत्र के लिये गये समस्त अभिभावकों पर रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थक अंतर अपेक्षित नहीं था। में प्रतीपगमन एवं मध्यमान से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर लिये गये समस्त अभिभावकों पर विवेकानंद एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन के प्रभाव में सार्थकता स्तर पर (0.01) के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना विश्वसनीय एवं वैध है जिससे परिकल्पना मान्य होती है।

प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर स्वामी विवेकानंद एवं रविन्द्रनाथ टैगौर के शिक्षा दर्शन का सागर के चयनित छात्र–छात्राओं एवं शिक्षक – अभिभावको पर समान प्रभाव है। शोधार्थी ने शोध द्वारा यह जानने का प्रयास किया कि वर्तमान समय में छात्र–छात्राऐ एवं उनके शिक्षक – अभिभावक स्वामी जी एवं गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगौर के शिक्षा दर्शन से कितना परिचित है तथा उनके दर्शन को किस प्रकार शिक्षा एवं शिक्षण कार्य को उन्नत बनाने में प्रायोग में लाया जा रहा है शोध से प्राप्त परिणाम उदासीन है वर्तमान में उनके शिक्षा दर्शन को अत्मसात करने की आवश्यकता है ताकि शिक्षा के स्तर को व्यवहारिक रूप से उन्नत बनाया जा सके स्वमी विवेकानंद के वैदिक दर्शन तथा युवाओं को प्रेरणा देने वाले उनके विचारों से युवा वर्ग को आत्मनिर्भर तथा नित नवीन विचारों को क्रियान्वित करके जीवन पथ पर अग्रसर होने के लिये प्रेरित किया जाना चाहिए इसी प्रकार रविन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन एवं शिक्षण पद्धतियों को शिक्षण में गंभीरता पूर्वक अमल में लाने से शिक्षण को और भी अधिक रूचिपूर्ण बनाने का प्रयत्न किया जाना चहिए। शोध छात्रा ने अपने शोध में पाया कि वर्तमान शिक्षण प्रक्रिया में उपरोक्त दर्शन को पठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त नही है जिससे उपरोक्त शिक्षा दर्शन का लाभ वर्तमान पीढ़ी नहीं उठा पा रही है अतः शिक्षण संस्थाओं को इस ओर गंभीरता से विचार करना

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अली, मुजफ्फर, शिक्षा के विविध आयाम, जाकिर हुसैन का शिक्षा दर्शन, दिल्ली : अरूण प्रकाशन, 2002
2. चौबे, सरयू प्रसाद, तुलनात्मक शिक्षा, द्वितीय संस्करण, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, 1977।
3. Deouskar Mahesh, Population Education – As percieved by teachers and Students, Reliance Publishing House, New Delhi, 1997.
4. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी., प्रारंभिक सामाजिक अनुसंधान, द्वितीय संस्करण आगरा : साहित्य भवन, 1990।
5. गैरेट, हेनरी ई., शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी, ग्यारहवॉ संस्करण, नई दिल्ली : कल्याणी पब्लिशर्स, 1989, पुन: मुद्रण, 2010।
6. कपिल, एच.के. अनुसंधान विधियॉ (व्यवहारपरक विज्ञानों मे) बारहवाँ संस्करण, आगरा : एच.पी. भार्गव बुक हाउस, 2006।
7. लाल, रमन बिहारी, शिक्षा : सिद्धांत और प्रयोग, प्रथम संस्करण, मेरठ : रस्तोगी पब्लिकेशन्स, 1972।
8. मजूमदार, सत्येन्द्रनाथ, विवेकानंद चरित, द्वारशं संस्करण, नागपुर : रामकृष्ण मठ, 1991
9. मित्तल, एम.एल., उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक, मेरठ : इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 2005।
10. ओड, लक्ष्मीलाल के., शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1975।
11. पाण्डेय, बी.बी. शैक्षिक और सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण, प्रथम संस्करण, गोरखपुर : वसुन्धरा प्रकाशन, 1994-95।
12. पाण्डेय, रामशकल एवं कपूर, बीना शिक्षा के दार्शनिक आधार, द्वितीय संस्करण, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, 2005।
13. पाण्डेय रामशकल, मिश्र, करूणाशंकर, मूल्य शिक्षण, द्वितीय संस्करण, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, 2005।
14. पाण्डेय, रामशकल, शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, नवीनतम संस्करण, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, 2005।

तालिका 1 – विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन का सागर के समस्त छात्रों, छात्राओं, शिक्षक, अभिभावकों पर प्रभाव का तुलनात्मक विश्लेषण

प्रतीपगमन अंतर की सार्थकत		***N***	***r1***	b_{xy}	b_{yx}	$r_{2=}\sqrt{bxy \times byx}$	***SE*** *(estX)*	***SE****(estY)*	***Ss***	***SEr***
Student (Boys)	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	400 400	1	1.05 –	0.948	0.998	0.43	0.41	0.59	0.17
Student (Girls)	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	400 400	0.992	1.074 –	– 0.916	0.992	0.875 –	– 0.808	1.19	0.133
Teachers	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	100 100	1	1.05 –	– 0.948	0.998	0.43	0.41	0.59	0.17
Parents	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	100 100	0.999	0.987 –	– 1.01	0.998	0.44 –	– 0.43	0.62	–0.04
मध्यमान अंतर की सार्थकता		***N***	***Mean***	***S***	SE_M	***SE***	***D***	***t***	***Df 0.01***	**सार्थकता**
Student (Boys)	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	400 400	195.60 194.34	6.88 6.52	0.38 0.34	0.509	1.26	2.47	798	सार्थक है
Student (Girls)	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	400 400	195.16 194.35	6.93 6.40	0.306 0.270	0.408	0.81	1.98	798	सार्थक है
Teachers	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	100 100	195.60 194.34	6.88 6.52	0.38 0.34	0.506	1.26	2.47	198	सार्थक है
Parents	विवेकानंद रवीन्द्रनाथ	100 100	195.60 194.37	6.88 6.96	0.38 0.513	0.64	1.23	1.92	198	सार्थक है

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

अनुसंधान में शोध प्रविधि की भूमिका और प्रासंगिकता

डॉ. अजय तिवारी *

प्रस्तावना - प्राचीन काल में शिक्षा एवं कला के क्षेत्र में विभिन्न स्तरों में हुये सतत् विस्तार के सन्दर्भ में कई विषयों एवं क्षेत्रों में विशेषज्ञता पर आधारित सूक्ष्मस्तरीय शोध पर बल दिया गया है। वहीं व्यापक रूप से शोध में हुई वृद्धि, महत्व एवं उपयोगिता चर्चा का विषय है। फलस्वरूप शोध प्रक्रिया में शोधकर्त्ता अथवा शोध निर्देशक के रूप में हमारी भागीदारी तो लगातार बढ़ी है परन्तु शोध प्रविधि प्रासंगिकता और गुणवत्ता लगातार चिंता का विषय भी बने है।

विगत दो-तीन दशकों में शोध की आवश्यकता लगातार अनुभव की जाने लगी है। फिर चाहे वह अकादमिक प्रायोगिक अथवा व्यवहारिक क्षेत्र हो। हम शोध के बारे में बहुत ही सहजता से सोचते और करते है। शोध के व्यवस्थित नियोजन पर सामान्यत: न तो हमारा ध्यान और सोच होता है, और न ही प्रयास ऐसे सोचने वाले शोधकर्त्ताओं से अधिकांश शोधार्थी बात भी नहीं करते उनके साथ शोध करना तो दूर। अधिकांश शोधकर्त्ता सामान्यत: पर्याप्त जानकारी तो एकत्रित कर लेते है, पर विधिवत ज्ञान और उपयुक्त प्रविधि के आभाव में अपेक्षित उपलब्ध सामग्री का न्यून उपयोग ही कर पाते है। साथ ही अपेक्षित परिणाम पाना कठिन हो जाता है। फलत: समस्त शोध प्रक्रिया निरर्थक होकर रह जाती है, और शोधकर्त्ता के मनोबल टूटने से आगे की सम्भावनाएँ भी सीमित हो जाती है।

आवश्यकता इस बात की है कि शोधार्थी विशेषकर शोध निर्देशक को शोध के स्वरूप आवश्यकता उद्देश्य एवं उपयुक्त प्रविधि के चयन की दृष्टि से शोध सम्बधी आवश्यक बिन्दुओं को समझने के लिए शोध प्रविधि साहित्य का अध्ययन अनिवार्य होना चाहिए। सामान्यत: शोध अवधि में शोधार्थी शोध सम्बन्धी शब्दावली से काफी परेशान रहते है, हालांकि उत्तर उनके पास रहते है, कई स्थितियों में तो शोधार्थी हतोत्साहित होने लगते है। शोध प्रविधि सम्बधी ज्ञान, शोध प्रविधि साहित्य पढ़ने और प्रयास करने पर व्यवस्थित रूप से हमारी शोध मूलक समस्या का सार्थक परिणाम तक पहुंचाने में सहायता करता है।

अध्ययन का उद्देश्य - प्रस्तुत आलेख का मुख्य उद्देश्य शोध प्रविधि समझ पर बल देना है, जिससे हम शोध प्रक्रिया के विभिन्न चरणों जैसे- शोध का अर्थ, महत्व, सार्थकता, उद्देश्य, शोध के प्रकार, साहित्य पुनरावलोकन, शोध को आगे बढ़ाने का क्रम, शोध के लिये प्रेरित होने सम्बधी जानकारी, शोध रूपरेखा को सूत्रवद्ध कर सके। शोध प्रविधि साहित्य का अध्ययन शोध दृष्टि को स्पष्ट करने के साथ-साथ निश्चित समय सीमा में सार्थक, शोध पूरा करने में सहायक होता है। साथ ही शोधार्थी को निर्धारित विषय, प्रसंग और क्षेत्र को सूक्ष्म रूप से समझने का अवसर भी देता है।

शोध संचालन की गहरी समझ शोध प्रक्रिया को समझने पर आती है। जो उसके कुशल सम्पादन में सहायक होती है। शोध नियोजन, उद्देश्य और संसाधनों के बीच एक प्रकार की पुनरावृत्तीय प्रक्रिया होता है, जिसके अन्तर्गत आदर्श परिणामों को पाने के लिये वास्तविक आकड़ों को एकत्रित करने के मूल्य तथा व्यवहार्यता के सन्दर्भ में सीमित हेर-फेर करना सम्भव होता है। शोध के अध्ययन क्षेत्र, उद्देश्य और उपागम सम्बंधी विविधताओं के बावजूद शोध सम्बंधी कुछ सामान्य आकार एवं लक्षणों की पहचान करना सामान्य व्यवस्थित पद्धति की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। जिसके आभाव में शोध आपेक्षित परिणामों के बिना महत्वहीन हो जाने पर शोध की गुणवत्ता एवं स्तर भी प्रभावित हो जाता है। शोध प्रविधि सम्बंधी ज्ञान शोध प्रविधि साहित्य के अध्ययन द्धारा व्यवस्थित रूप से हमारी शोधमूलक समस्या को सार्थक परिणामों तक पहुंचाने में मदद करता है।

सामान्यत: शोधार्थियों और कभी-कभी शोध निर्देशकों के मन में भी शोध के सम्बंध में एक तरह की कल्पना, स्वरूप, आकार और अनुमान सम्बधी जानकारी तो होती है फिर भी वह शोध सम्बंधी स्थापित शब्दावली के सन्दर्भ में अपने भावों को रूपान्तरित नहीं कर पाते है, साथ ही शोध के दौरान शोध के अर्थ, उद्देश्य, आवश्यकता, सार्थतकता शोध प्रक्रिया और शोध पद्धति को समझने में कठिनाई अनुभव करते है। शोधार्थी यह नहीं समझ पाते है कि जानकारी को किस प्रश्न के उत्तर में उपयोग किया जा सकता है। यह भी देखने में आता हैं कि कभी-कभी शोधार्थी की समझ और सोच तो बहुत अच्छी और विशिष्ट होती है, फिर भी वह उसे अभिव्यक्ति नहीं कर पाते है। यह स्थिति शोध प्रविधि साहित्य के प्रति शोधकर्त्ताओं की उदासीनता का परिणाम मात्र है। जिसे दूर करने पर हमें शोध सम्बंधी कई अनुत्तारित प्रश्नों के उत्तर मिलने लगते है। साथ ही शोध की गुणवत्ता में भी सुधार सम्भव हो पाता है।

कुशल शोध संचालन में सहायक विभिन्न पक्षों, मुद्दों और स्थितियों को विधिवत समझने का प्रयास किया जाना चाहिए। हमारी शोध दृष्टि की स्पष्टता एवं कुशलता समय सीमा में सार्थक शोध करने और कराने में सहायक हो सके। इसके लिए शोध कार्य को क्रमश: आगे बढ़ाते हुये शोध का विषय एवं प्रसंग सामान्यत: शोध निर्देशक द्धारा किया जाना अथवा सुझाया जाना बल्कि तय ही किया जाना उपयुक्त होता है। हालांकि अध्ययन क्षेत्र सम्बंधी अन्तिम निर्णय शोधार्थी से चर्चा और सहमति के बाद ही तय किया जाना व्यवहारिक होता है। ऐसी स्थिति में शोध निर्देशक द्धारा सुझाये गये अध्ययन क्षेत्र के सन्दर्भ में संशोधन किया जाना आवश्यक होता है। अध्ययन अवधि में उद्देश्यों के आधार पर अध्ययन इकाई एवं कालावधि को गहन चर्चा एवं आकड़ों की उपलब्धता के आंकलन के पश्चात् ही तय किया जाना चाहिए न कि अति महत्वाकांक्षा एवं भावनात्मकता द्धारा। शोध की सफलता का

* शोधार्थी, डी. लिट. आर.पी.ई.जी. विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

आकंलन अन्य पक्षों के साथ-साथ निर्धारित समय सीमा में पूरा होने पर ही निर्भर करता है। शोध सम्पादन की दृष्टि से शोध अवधि में विभिन्न कार्यो जैसे- प्रयोगशाला परीक्षण, क्षेत्रीय कार्य, संगणक आधारित विश्लेषण कार्य, मानचित्रीय कार्य लेखन सामग्री तथा डाक आदि पर होने वाले व्यय की दृष्टि से वित्तीय स्थिति का आंकलन शोध की प्रारम्भिक अवस्था में कर लेना उपयुक्त होता है। अधिकांशत: ऐसा देखा गया है कि कई स्थितियों में अच्छे व्यवस्थित शोध कार्यो की प्रगति धनाभाव के कारण बाधित हो जाती है। शोध परिणामों को प्रस्तुत करने सम्बंधी विशिष्टता को भी समझ लेना आवश्यक होता है शोध विषय एवं प्रसंग के सन्दर्भ में शोधार्थी एवं शोध निर्देशक की सामर्थ्य का आंकलन निष्पक्षता के साथ करना चाहिए।

किसी भी शोध प्रारूप में शोध उद्देश्यों और संसाधनों के बीच एक तरफ का अघोषित समझौता होता हैं यह आधारभूत समझौता उपयुक्त शोध पद्धति के चयन में सहायक होता है।

जैसे-

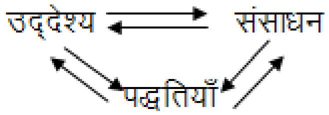

शोध उद्देश्य में सन्दर्भ जानकारियां शामिल होती है, और उद्देश्यों की स्पष्टता एवं सटीकता शोधार्थी को विषय तथा प्रसंग जिसे खोजा जाना है को यर्थारूप में प्रस्तुत करने में सहायक होती है। शोध का अर्थ, शोध का महत्व और शोध के प्रकार सम्बंधी अध्ययन शोधार्थी को शोध के स्वरूप, आकार के साथ ही शोध प्रसंग, क्षेत्र एवं उपयोग की जाने वाली प्रविधि के चयन में भी सहायक होते है।

शोध का अर्थ - शोध का सामान्य अर्थ ज्ञान की खोज है। शोध वैज्ञानिक अनुसंधान और खोज की कला है। जिसमें विशिष्ट प्रसंग से सम्बंधित प्रासंगिक जानकारी को वैज्ञानिक तथा क्रमबद्ध तरीके से ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है। ज्ञान के किसी विशेष शाखा के सम्बध में सावधानीपूर्वक अन्वेषण अथवा जांच के द्वारा नये तथ्यों को ज्ञात करते है। शोध का उद्देश्य किसी समस्या को परिभाषित अथवा पुन: परिभाषित करना भी होता है। वास्तव में शोध कोई स्थिर प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक प्रकार का आन्दोलन होता है जिसके द्वारा ज्ञात से अज्ञात की ओर जाने का प्रयास किया जाता है। साथ ही शोधकर्त्ता क्रमबद्ध प्रयासों द्वारा ज्ञान के नये आयामों को खोजने में भी सफल होता है। शोध का आशय हमेशा कुछ नया खोजना ही नहीं बल्कि ज्ञान के वर्तमान स्वरूप और अर्थ को आगे बढ़ाना तथा बीच-बीच में छूट गई रिक्तता को भरना भी होता है। इस तरह शोध एक प्रकार का व्यवहार कौशल है, जिसमें वसतुओं, अभिकल्पनाओं अथवा प्रतीकों का उद्देश्य के सन्दर्भ में सामान्यीकरण द्वारा ज्ञान के विस्तार की स्पष्टता और यथार्थता को संशोधित करते हुए सिद्धांत प्रतिपादित करने के प्रयास किए जाते है।

समकालीन जीवन में शोध का महत्व प्रासंगिकता और सार्थकता मात्र अकादमिक दृष्टि से नहीं बल्कि व्यावहारिक दृष्टि से भी होना चाहिए। समस्त प्रगति जिज्ञासा का परिणाम होती है, फिर भी शोध के सन्दर्भ में अति आत्मविश्वास की तुलना में संदेह, शोध संपादन की दृष्टि से अनुकूल और हितकर होता है। शोध हमारी तर्कसंगत सोच एवं व्यवस्थित प्रकृति एवं स्वभाव को विकसित करने में सहायक होता है। तीव्र जनंसख्या वृद्धि एवं विकास दर के सन्दर्भ में विभिन्न क्षेत्रों में शोध की भूमिका लगातार बढ़ती जा रही है। शोध कार्यो की नीति निर्धारण एवं आर्थिक तंत्र के आधार पर होने के कारण ही अकादमिक, व्यापार एवं उद्योग क्षेत्रों में परिचालन और नियोजन सम्बंधी समस्याओं के समाधान में एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में इसका उपयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। साथ ही सामाजिक सम्बंधों तथा विभिन्न सामाजिक समस्याओं के अध्ययन एवं समाधान में शोध की भूमिका लगातार बढ़ रही है। शोध कार्य नये विचारों और सम्बंधों एवं अंत:दृष्टि को बढ़ावा देता है। परिणाम स्वरूप शोध की नई शैली एवं सृजनात्मकता के द्वारा शोधार्थी के विश्लेषण क्षमता तथा बौद्धिकता का भी विकास हो पाता है।

सामान्यत: शोध प्रकारों की जानकारी के अभाव में शोध के उद्देश्य को ध्यान में रखे बिना शोध प्राविधि का चयन करने से न तो अपेक्षित प्रतिरूप उभरते है और न ही अपेक्षित परिणाम सामने आते हैं। शोधार्थी प्राप्त परिणामों को समझने में अपने आप को सक्षम नहीं पाता है। जैसे- जनसंख्या वृद्धि और जनसंख्या विकास का अध्ययन सरल नहीं होता है क्योंकि एक में मात्रात्मकता की प्रमुखता है तो दूसरे में गुणात्मकता की।

शोध के कुछ आधारभूत प्रकार और उनकी विशेषताओं की जानकारी शोधार्थी को शोध की रूपरेखा तैयार करने एवं प्रविधि चयन में सहायक होती है। साथ ही शोध की गुणवत्ता को भी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करती है। शोध के प्रकारों को निम्न वर्गो में विभाजित किया जाता है।

1. वर्णनात्मक बनाम विश्लेषणात्मक
2. व्यवहारिक बनाम मूलभूत एवं आधारभूत
3. मात्रात्मक बनाम गुणात्मक
4. संकल्पनात्मक बनाम अनुभूतिमूलक

शोध के अर्थ और महत्व सम्बंधी जानकारी शोधार्थी को शोध उद्देश्यों को तय करने में सहायक होती है। किसी भी शोध का मुख्य उद्देश्य वैज्ञानिक कार्यविधि द्वारा अनुत्तरित प्रश्नों के उत्तर खोजना होता है। साथ ही सन्दर्भित विषय क्षेत्र और तथ्यों सम्बंधी सत्यता को उजागर करना होता है। शोधार्थी अपने-अपने अध्ययन क्षेत्र विषय स्थिति और समय सीमा के अनुसार उद्देश्य निर्धारित करते है फिर भी निम्नबातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है।

1. किसी तथ्य तथा दृष्टि के सम्बंध में घनिष्ठता स्थापित कर विभिन्न पक्षों को उजाकर करना और ऐसे प्रयास अनुसंधान शोध के वर्ग में आते है।
2. विषय क्षेत्र के सम्बंध में अर्न्तदृष्टि पाना, ऐसे प्रयास सूत्रवद्ध शोध के वर्ग में आते है।
3. व्यक्तियों, समूहों और स्थिति की विशेषताओं को उनके कारणों सहित प्रस्तुत करने वाले शोध वर्णनात्मक श्रेणी में आते है।
4. किसी घटनाक्रम की बारम्बरता को निर्धारित करना और उसके कारणों को समझाना अथवा विश्लेषित करना निदान सूचक पद्धति होती है।
5. विभिन्न चरों के सह-सम्बधों के आधार पर निर्धारित परिकल्पना का परीक्षण करना परिकल्पना परीक्षण शोध का भाग होती है।

शोधार्थी शोध क्यों करना चाहते है? इस आधारभूत प्रश्न का उत्तर शोधार्थी की शोध परकता, रूचि, सक्रिय भागीदारी, दृष्टिकोण, रवैया, विचार और उसमें शोध प्रक्रिया में सम्मिलित होने की गहनता को स्पष्ट करते है। इनमें से कोई एक अथवा एक से अधिक शोध के आधार हो सकते है, जो गुणवत्ता और उसके पूरे होने की सम्भावनाओं को निश्चित करने में सहायक होते है जैसे-

1. शोध उपाधि एवं सम्बद्ध लाभ प्राप्त करने की इच्छा।
2. अनुत्तरित प्रश्नों एवं समस्याओं के समाधान खोजने की चुनौती का सामना करने की इच्छा।

3. शोध के माध्यम से सृजनात्मक कार्यो द्वारा बौद्धिक आनन्द पाने की इच्छा।
4. समाज की सेवा करने की इच्छा और स्पष्ट शोध द्वारा सम्मान पाने की इच्छा मुख्य है।

शोध उद्देश्यों और शोध के लिये प्रेरित होने की इच्छा के सन्दर्भ में शोध को प्रारम्भ करने अथवा पूरा करने में एक अथवा एक से अधिक उपागमों का चयन किया जा सकता है। उपयुक्त चयनित उपागम के माध्यम द्वारा ही शोध को पूरा करना सम्भव हो पाता है। इनमें से कुछ इस प्रकार है।

क्षेत्र परीक्षण – प्रयोगशाला के बाहर अध्ययन क्षेत्र में पहचानी गई निर्धारित समस्याओं सम्बंधी दशाओं के विश्लेषण में लक्ष्यों के सन्दर्भ में निर्धारित चरों (जिन पर शोधार्थी का नियंत्रण होता है) को ही बनाया जाता है।

वैयक्तिक अध्ययन – इस उपागम में किसी घटना, विषय, समस्या, स्थिति, दशा और कारकों के आधार अथवा सन्दर्भ में सामाजिक विज्ञान, मानविकी और पर्यावरणीय विज्ञान तथा स्थान, समुदाय और संगठन के अन्तर्गत एक निर्धारित अवधि में पूर्ण किये गये शोध शामिल होते हैं।

सर्वेक्षण – यह आंकड़ों एवं जानकारियों को एकत्रित करने का महत्वपूर्ण उपागम है। साथ ही किसी दशा, स्थिति अथवा मूल्य सम्बंधी तथ्यों की जांच करना और उनके उपर्युक्त संसाधन खोजने में सहायता करना शामिल होता है।

प्रयोगशाला उपागम – सामान्यत: विज्ञान, जीवन विज्ञान, पर्यावरणीय विज्ञान एवं अभियांत्रिकी क्षेत्रों के शोध कार्यो में प्रयोगशाला उपागम अधिक उपयुक्त और आवश्यक होता है।

साहित्य पुनरावलोकन – शोधार्थी और कभी-कभी शोध निर्देशकों (प्रारम्भिक स्थिति में) के मन में भी शोध के सम्बंध में एक तरह की कल्पना, स्वरूप एवं आकार सम्बंधी जानकारी तो होती है, परन्तु वह अपने भावों को रूपान्तरित नहीं कर पाते हैं। फलस्वरूप प्रारम्भ में ही शोध स्वरूप अव्यवस्थित होने लगता है यही कारण है कि नियोजित एवं व्यवस्थित शोध के शुरूआत सामान्यत: साहित्य पुनरावलोकन के साथ ही होती है। साथ ही यह कठिन कार्य शोध समाप्त होने तक सतत् रूप से चलता रहता है। सम्बद्ध शोध विषय के सम्बंध में पूर्व शोधकर्त्ताओं के कार्यो के द्वारा विषय विशेष अथवा क्षेत्र विशेष की विशिष्ट जानकारियां उपलब्ध हो पाती है, जो नये शोधार्थियों को एक प्रकार की प्रारम्भिक अकादमिक खबर ही होती है। इन तथ्यों के आधार पर शोधार्थी अपने दृष्टिकोण के अनुरूप, शोध उद्देश्यों, अभिप्राय तथा प्रयोजन के अनुसार विचार, अभिमत् और अनुमान को विकसित करते हुए आगे बढ़ाते हैं। शोधार्थी अपनी-अपनी शोध आवश्यकताओं की दृष्टि से उपलब्ध साहित्य की समीक्षा करते हैं। इस दौरान साहित्य पर पुनर्विचार साहित्य का पुनरावलोकन, साहित्य निरीक्षण और उसकी समीक्षा शोध विषय की सार्थकता, प्रासंगिकता और उपादेयता के सन्दर्भ में शोध प्रविधि और पद्धति के निर्धारण में सहायक होता है।

शोध अवधि में उपलब्ध साहित्य का अध्ययन और विश्लेषण शोधकर्त्ता की सोच, शोध विषय के प्रति उसकी दृष्टि, अर्थ, परिभाषा, गहनता एवं व्यापकता को निर्धारित करने में भी सहायक होता है। साथ ही अलग-अलग अध्ययनो में उपयोग किये गये सिद्धांतों, संकल्पनाओं और उनके शोध परिणामों को जानने और समझने में मदद मिलती है। विभिन्न सांख्यिकी विधियों के उपयोग की सार्थकता का आभास भी सहजता से हो जाता है। तात्पर्य यह है कि शोध विषय सम्बंधी साहित्य के अध्ययन से उपरोक्त लाभ होते ही है, साथ ही सन्दर्भित विषय में विभिन्न शोधकर्त्ताओं को स्वयं के शोध कार्य के लिये एक दिशा, प्राविधी चयन, शोध स्वरूप, शोध आकार को निश्चित करने में भी मदद मिलती है।

शोध विषय में सन्दर्भ में सामान्य से विशेष विशिष्ट अथवा द्वितीयक एवं तृतीयक स्रोतों के स्थान पर प्राथमिक स्रोतों से जानकारियां एवं आकड़ों को उपलब्ध कराने में सहायक प्रमुख स्रोतों के अंतर्गत-

(1) प्राथमिक स्रोत – विषयवार, पत्रिकाएँ, पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध आलेख और आलेख।

1. संगोष्ठी कार्य विवरण ग्रन्थ
2. रिपोर्ट प्रतिवेदन
3. सरकारी प्रकाशन
4. विभिन्न संस्थाओं द्वारा निर्धारित मानक
5. विषयवार एवं सामान्य सूची-पत्र तथा निर्देशिकाएँ और सामयिक ज्ञान

(2) द्वितीयक स्रोत –

1. लघु निबंध
2. पाठ्यपुस्तकें
3. वार्षिक समीक्षाऐं
4. शोध आलेखों की समीक्षाऐं
5. विषयवार अथवा, क्षेत्रवार पत्रिकाएँ
6. विभिन्न प्रकाशनों की अनुक्रमणिकाएँ
7. विषयवार संक्षेप

(3) तृतीयक स्रोत –

1. पुस्तिकायें
2. विशिष्ट विषयों एवं साहित्य की संदर्शिकायें
3. विषयवार सन्दर्भ ग्रंथ सूचियां
4. विश्वकोष

साहित्यावलोकन के माध्यम से उपलब्ध सामग्री एवं विषय पर ज्ञान, विषय एवं प्रसंग के चयन में सहायक होने के साथ-साथ व्यवस्थित कार्य-प्रणाली एवं उपयोगी पद्धति के चयन में भी सहायक होता है। साहित्य पढ़ने और समझने को यांत्रिक रूप में न करते हुए एक सोच प्रक्रिया के रूप में किया जाना चाहिए।

चयनित शोध-विषय के सन्दर्भ में आवश्यक साहित्य, आंकड़े और जानकारियां विभिन्न विश्वविद्यालयों राष्ट्रीय शोध संस्थानों, राज्य सरकार के विभिन्न विभागों एवं मंत्रालयों और योजना आयोग के पुस्तकालयों द्वारा आसानी से उपलब्ध किये जा सकते है। कुछ राष्ट्रीय शोध संस्थानों द्वारा भुगतान करने पर शोध के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के सन्दर्भ में विषयवार तथा प्रसंगवार चाही गई समयावधि के लिये ग्रन्थसूची उपलब्ध करायी जाती है। इस सुविधा का समुचित उपयोग काफी सीमा तक शोधार्थी की विषयानुसार आवश्यकता की स्पष्टता पर निर्भर करता है।

देश, प्रदेश एवं कई शोध संस्थानों के पुस्तकालयों में उपलब्ध साहित्य सामग्री एवं जानकारियों को संगणक पर हस्तांतरित किया जा चुका है। इस सुविधा से न केवल साहित्यावलोकन अवधि में काफी कमी सम्भव हुई है। बल्कि नये स्रोत्रों द्वारा जानकारी मिलना भी सम्भव होने लगा हैं। इसके अतिरिक्त कई शोध संस्थानों, पुस्तकालयों एवं अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय संगठनों की विस्तृत जानकारियाँ तथा जानकारियों सम्बंधित सूचनायें इंटरनेट के माध्यम से सीधे रूप में प्राप्त करना सम्भव हो गया है। इन नवीन सुविधाओं के चलते शोध साहित्य को अद्यावधिक करना न केवल सम्भव बल्कि सुगम भी हो गया है।

साहित्यावलोकन के साथ–साथ शोधार्थियों को मानक प्रारूप में वर्णानुक्रम में ग्रन्थ सूची भी तैयार करते जाना चाहिए। इस प्रकार यह कार्य क्रमश: पूरा होता जाता है। साथ ही शोध कार्य के पूरा हो जाने पर अतिरिक्त समय और कार्यभार से बचा भी जा सकता है। चूंकि शोध समाप्ति के समय कई प्रकार के कार्यों को पूरा करना होता है। सामान्यत: साहित्य और जानकारियों को संकलित करते समय प्राय: शोधार्थी अधूरी जानकारियों के आधार पर ही ग्रन्थ सूची बनाते जाते हैं। धीरे–धीरे यह ही बड़े एवं कठिन कार्य के रूप में समस्या पैदा करता है। मानक रूप में ग्रन्थ–सूची बनाते समय कुछ बातों को ध्यान में रखना चाहिए जैसे–

पुस्तकों के लिये – लेखक का नाम (पहले उपनाम), प्रकाशन वर्ष, पुस्तक का शीर्षक (इसे रेखांकित करें), प्रकाशक का नाम, प्रकाशन का स्थान लिखा जाना चाहिए।

जर्नल/पत्रिकाओं के लिये – लेखक का नाम (पहले उपनाम), प्रकाशन वर्ष, आलेख का शीर्षक, जर्नल का नाम (इसे रेखांकित करें), खण्ड संख्या, अंक संख्या, पृष्ठ संख्या, प्रकाशन स्थान एवं नाम लिखना चाहिए।

उदाहरण :

1. Choubey, K. and Shukla, S.K. (1984) Environment Health Hazards and Bidi Industry : A Case study of Sagar City, Hill Geographer, Vol. III, No. 1, pp. 43-48. Shillong.
2. Mukherjee, A. and Agnihotri, V.K (1993) Environment and Development Concept publishing company, New Delhi.
3. तिवारी, भगवानदास (1981) मीरा का काव्य, साहित्य भवन, इलाहाबाद।

साहित्यावलोकन के अन्तर्गत शोधार्थी को सबसे पहले उपलब्ध साहित्य से शोध–विषय के उद्देश्यों के सन्दर्भ में पुस्तकों एवं आलेखों की सूची बनाना चाहिए। यह कार्य जारी रखते हुये धीरे–धीरे आलेखों एवं पुस्तकों के विभिन्न भागों और अध्यायों का अवलोकन और अध्ययन शुरू करना चाहिए। साथ ही उपयोगी जानकारी को चिहिन्त करते जाना चाहिए। तद्पश्चात शोधार्थी को आवश्यकतानुसार शोध की दृष्टि से उपलब्ध चिन्हित सामग्री को सन्दर्भ के रूप में भाषायी अस्पष्टता सम्बंधी भ्रम को दूर करते समय अनिवार्य रूप से सहायक होती है। प्रारम्भ से ही किया जाने वाला यह सहज कार्य आगे जाकर क्रमश: कष्टदायक बन जाता है।

आंकड़ों एवं जानकारियों का संकलन – शोध सम्बंधी आकड़ों, जानकारियों, मानचित्रों एवं फोटोग्राफ आदि का संकलन शोधार्थी द्वारा निर्धारित शोध विषय के सन्दर्भ में किया जाता है। अधिकांश, शोधार्थी सामान्यत: सर्वेक्षण का आसय मात्र आंकड़ों में संकलित करने और प्रश्नावली, बना लेने से ही मानते है। जबकि इस प्रक्रिया में प्रबंधन एवं विश्लेषण भी शामिल होता है। व्यवस्थित शोध सर्वेक्षण में कई पक्षों को समाहित किया जाना चाहिए।

शोध के विषय में विश्वसनीयता प्रासंगिक, क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित आंकड़ों को संकलित करने में क्षेत्रीय कार्य के प्रबंधन की महत्वपूर्ण और आवश्यक भूमिका होती है। आन्तरिक स्तर पर क्षेत्रीय कार्य के प्रबंधन से आशय कार्यानुसार समय सारणी तैयार करना, शोधार्थियों के प्रशिक्षण एवं प्रलेखन से होता है। बाह्य स्तर पर क्षेत्रीय कार्य के प्रबंधन से आशय शासकीय विभागों एवं अन्य सर्वेक्षकों गैर शासकीय विभागों तथा विभिन्न समूहों एवं समुदायों में प्रतिनिधियों के साथ सम्पर्क करने के साथ–साथ क्षेत्रीय कार्यकर्त्ताओं की कुशलता एवं कार्य निष्पादन से सम्बंधित होता है। विभिन्न शोधार्थियों द्वारा किये जाने वाले सर्वेक्षण कार्य को समयवद्ध कर विभिन्न स्तरों में बांट कर अधिक उपयोगी एवं प्रभावी बनाया जा सकता है।

शोध विषय के सन्दर्भ में जानकारियों एवं आंकड़ों को संकलित करते समय यह भी जानने का प्रयास करना चाहिए कि आपेक्षित जानकारी उपलब्धता नहीं है। इस प्रक्रिया में विभिन्न शासकीय विभागों, संगठनों, प्राधिकरणों, विश्वविद्यालय के पुस्तकालयों, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय शोध संस्थानों, गैर सरकारी संगठनों एवं संस्थानों से पत्राचार एवं परामर्श कर उनके द्वारा प्रकाशित सामग्री प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। चूंकि विभिन्न संगठनों एवं संस्थानों द्वारा नियमित रूप से जानकारियों एवं आकड़ों को संकलित कर प्रकाशित किया जाता है। इनमें से अधिकांश तो विभागीय कार्य के लिए होते है। परन्तु इनमें से कुछ शासकीय प्रकाशन विक्रय हेतु भी उपलब्ध होते है। जैसे– जनगणना प्रतिवेदन, भू–अभिलेख, कृषि सांख्यिकी, खनिज सांख्यिकी एवं अन्य विभागों के अलग–अलग प्रकाशनों के अतिरिक्त आर्थिक एवं सांख्यिकीय निदेशालय लगभग सभी विषयों से सम्बंधित जिला स्तरीय एवं राज्य स्तरीय आकड़ों को संकलित कर प्रकाशित करते है। भारत सरकार के सभी विभागों में विभिन्न विषयों से सम्बंधित आकड़ों एवं जानकारियों को राज्यवार संकलित कर प्रकाशित किया जाता है।

कई बार शोध विषयों के उद्देश्यों के सन्दर्भ में आपेक्षित आँकड़े उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। ऐसी स्थिति में शोधार्थी द्वारा शोध विषय की आवश्यकतानुसार विभिन्न अध्यायों के सन्दर्भ में प्रश्नावली तैयार कर आँकड़ों एवं जानकारियों को संकलित किया जाना चाहिए। शोध विषय की प्रकृति के आधार पर प्रस्तावित अध्यायों के सन्दर्भ में प्रश्नावली को एक से अधिक भागों में विभाजित किया जाना उपयोगी होता है। ऐसे नियोजित क्रमवद्ध विभाजन से विषय सामग्री को व्यवस्थित रूप से बढ़ाने के साथ–साथ प्रश्नों की संख्या, उनका सुस्पष्ट स्वरूप एवं भाषा, शोधार्थी के शोध उद्देश्यों की स्पष्टता को भी दर्शाता है। शोधार्थी को प्रयास करना चाहिए की प्रश्नावली का आकार सन्तुलित हो, क्योंकि इसमें समय ऊर्जा एवं पर्याप्त धन की आवश्यकता होती है।

संकलित आँकड़ों को रूपान्तरित करना – आँकड़ों को रूपान्तरित करने का उद्देश्य संकलित मूल आँकड़ों को सांख्यिकीय विश्लेषण एवं प्रस्तुति के लिये तैयार करने से होता है। इस उद्देश्य से शोधार्थी को स्वत: अथवा संगणक द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण करते समय कई बातों को ध्यान रखना चाहिए।

क्षेत्रीय कार्य का समापन

|

भरे/पूर्ण की गई प्रश्नावलियों की जांच

|

संकेतानुसार प्रतिक्रिया

|

माध्यम विधि में रूपान्तर

|

आंकड़ों को मान्य करना/वैधीकरण

|

त्रुटियों को जांचना

|

प्रारम्भिक सारणीयन

|
अन्वेषणात्मक विश्लेषण
|
अंतिम विश्लेषण

संकलित आंकड़ों को क्रमानुसार तैयार करने के साथ-साथ उनकी विविधता एवं सम्पूर्णता की जांच करते रहना चाहिए। दूसरी ओर आँकड़ों को संकलित करते समय हुई सम्भावित भूल-चूक की जाँच भी लगातार करते रहने से प्रारम्भिक स्तर पर ही गलतियां ठीक करने में आसानी रहती है। कोशिश की जानी चाहिए कि सत्यापन के बाद ही आंकड़ों का विश्लेषण करना सरल एवं उपयोगी हो जाए।

परिणामों की प्रस्तुती - प्रतिवेदन का शीर्षक तथा सम्मलित वस्तु सामग्री स्पष्ट होना चाहिए। प्रस्तुत की गई विषयवस्तु के भाव, अनुभूति एवं प्रतिवेदन लिखने का मुख्य उद्देश्य अध्ययनकर्त्ता तक मूल रूप से प्रस्तुत की गई जानकारियों अथवा तथ्यों को पूर्ण स्पष्टता के साथ पहुंचाना होता है। कई बार अति उत्साही शोधार्थी विभिन्न प्रकार के तथ्यों और सांख्यिकीय आकंड़ों को एक साथ प्रस्तुत करते है, साथ ही इस आधारभूत तथ्य को भूल जाते हैं कि मूलत: सम्बद्ध शोध का उद्देश्य शोध परिणामों को अन्य अध्ययनकर्त्ताओं तक पहुंचाना है। एक अच्छे प्रतिवेदन में तर्कसंगत संरचना द्धारा प्रत्यक्ष रूप से शोध परिणामों को व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध जानकारी के रूप में अध्ययनवस्तुओं तक पहुंचाने का प्रयास करना चाहिए। शोध-परिणामों के आधार पर कोई निर्णय किया जाता है अथवा किसी प्रकार की कार्यवाही को प्रस्तावित किया जाता है तो प्रतिवेदन के उपसंहार में व्यवहारिक सटीक एवं सुस्पष्टता के साथ सुझावों को शामिल किया जाना चाहिए।

लेखन शैली शोधकर्त्ता के व्यक्तित्व का प्रतिविंब होती है। फिर भी शोधार्थी एवं अध्ययनकर्त्ता को ध्यान में रखकर शोध प्रतिवेदन लिखना चाहिए। प्रतिवेदन तैयार करते समय प्रारम्भिक विचारणीय पक्ष यह होता है कि इसका अध्ययनकर्त्ता कौन है? कौन उसका अध्ययन करेगा और उसकी आवश्यकता क्या है अथवा होगी आदि का विशेष ध्यान रखना चाहिए। यह कार्य जितना स्पष्ट और यथार्थ पर आधारित होता है। प्रतिवेदन की सामग्री की प्रस्तुती का ढंग, विश्लेषण स्वरूप और स्तर तय करना उतना ही सरल एवं सहज हो जाता है। प्रतिवेदन को उपयोगी बनाने में सामग्री की अधिकता के स्थान पर लेखन को तर्क पूर्ण एवं एथार्थपरकता द्धारा अधिक प्रभावी एवं उपयोगी बनाने के प्रयास किये जाने चाहिए। ऐसे प्रयासों से जानकारियों को सहजता से प्रस्तुत करना आसान हो जाता है। पठनीयता एवं ग्राह्यता की दृष्टि से वाक्यों की भाषा, संरचना एवं लम्बाई पर भी पर्याप्त और विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

शोध प्रविधि का सैद्धांतिक ज्ञान और जानकारी हमें शोध सम्बंधी उचित दिशा सुझाने में सहायक होती है। इस प्रकार शोधार्थी विभिन्न तथ्यों को जो सम्बद्ध क्षेत्र विशेष में समय विशेष पर होते है को तार्किक विवेचना द्धारा विकेकपूर्ण परिणाम तक पहुंचाने में सफल हो पाते है। शोध प्रविधि को जान लेने पर शोधार्थी की शोध सम्बधी समझ और विकसित नवीन अन्त:दृष्टि से केवल शोध की गुणवत्ता में ही सुधार नहीं होता है बल्कि शोध की प्रासंगिकता को स्थापित करने में सहायता मिलती है।

शोध प्रविधि सम्बंधी ज्ञान एवं जानकारी से शोधार्थी में आत्मविश्वास बढ़ता है जिससे उसकी कार्यकुशलता में सुधार सम्भव हो पाता है और अन्तत: शोधार्थी एक उपयोगी, सार्थक शोध को निर्धारित समय सीमा में पूरा करने के सम्मान से गौराविन्त होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Anderson, J, Durston, B.H. and Pool, M. 1971, Thesis and Assignment Writing, Wiley Eastern Private Limited, New Delhi.
2. Keppel, G. 1973, Design and Analysis : A Researcher's Handbook, Prentice Hall, London.
3. Berdie, D. R. and Anderson, J.F. 1974, Questionnaires : Design and Use, Scare Crow Press, New Jersey.
4. Howard, K. and Sharp, J.A. 1983, The Management of a Student Research Project, Gower, Aldershot.
5. Howard, K. (Ed.) 1978, Managing a Thesis, University of Bradford Management Centre.
6. त्रिवेदी, आर.एन. एवं शुक्ला, डी.पी. 1991, रिसर्च मैथाडोलॉजी, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
7. Bell, Judith 1993, How to complete your Research Project Successfully, UBSPD, New Delhi.
8. Thakur, Devendra 1993, Research Methodology in Social Sciences, Deep and Deep Publications, New Delhi
9. श्रीवास्तव, जे.पी. 1993, सामाजिक सर्वेक्षण : विधियाँ और सिद्धांत, श्री पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली
10. Gupta, Santosh 1995, Research Methodology and Statistical Techniques, Deep and Deep Publications, New Delhi.
11. शुक्ल, सन्तोष 2002, शोध प्रविधि के आयाम, चर्मण्वती : भूगोल शोध पत्रिका, Vol. 2, पृष्ठ 27-32, अम्बाह, (मुरैना) म.प्र.।
12. शुक्ल, सन्तोष 2003, शोध संचालन कैसे करें, मध्य भारती अनुसंधान पत्रिका, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय अंक 53, मार्च, पृष्ठ 81-90, सागर (म.प्र.)
13. शुक्ल सन्तोष 2009, शोध विधितंत्र एवं भौगोलिक विश्लेषण, संपादक प्रकाशन वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा ISBN - 131978-81-8496-04-6
14. शुक्ल, सन्तोष 2009, शोध साहित्य पुनरावलोकन - आवश्यकता एवं कार्यविधि चर्मण्वति - भूगोल शोध पत्रिका Vol. IX पृष्ठ 19-30, अम्बाह, मुरैना, म.प्र.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

मध्यकालीन मालवा के क्षेत्रीय इतिहास लेखन में डॉ. श्यामसुन्दर निगम की भूमिका

शांता मण्डलोई *

प्रस्तावना – भारत के इतिहास के विषय में वैज्ञानिक तथा क्रमबद्ध सामग्री का चयन करना इतिहासकारों के लिए एक समस्या रही है। इसका मूल कारण प्रमाणिक प्राचीन ऐतिहासिक ग्रंथों का अभाव होना है। ठोस प्रमाणिकता के अभाव में आज भी इतिहासकारों के लिए विवाद का विषय बने हुए है।[1] इसी के संबंध में वर्डस्वर्थ ने कहा था कि 'बहता हुआ झरना, एक रोड़ा और जमीन में दबी हुई चीज प्राचीन मानव की सही जानकारी की सामग्री है, किताबें नहीं'[2] उक्त कथन मध्यकालीन इतिहास के संबंध में सच नहीं है। मध्यकाल में कई ऐतिहासिक ग्रंथ लिखे गये जो प्रमाणिक है। भारत में इतिहस लेखन हेतु अलग-अलग विद्वानों ने अलग-अलग तर्क दिये है।

भारत में इतिहस लेखन मुस्लिम राज्य की स्थापना के समय से नये युग का आरम्भ होता है। उस समय में कई विद्वानों ने अपने स्तर पर इतिहास लेखन कार्य किया। इसी संबंध में पी.हार्डी का कथन था कि उस समय का इतिहासकार एक शोधकर्ता नहीं था अपितु घटनाओं का वर्णन करने वाला एक लेखक था।[3]

इतिहास लेखन में सल्तनत काल में अनेक ऐतिहासिक ग्रंथ की रचना हुई हैं, किन्तु मुगलकाल में उनकी संख्या में काफी वृद्धि हुई इस काल में अबुल फज़ल, अब्दूल हमीद लौहारी, तथा खाफी खाँ तथा अन्य इतिहासकारों की कृतियां मिलती है। बाबर व जहांगीर के आत्म-चरित्र एवं क्षेत्रीय इतिहास भी लेखे गये।[4]

क्षेत्रीय इतिहस लेखन एवं अनुसंधान में डॉ. श्याम सुन्दर निगम का मालवा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इतिहास लेखन के कार्य के साथ ही साथ पुरातत्व साहित्य कला, वाणिज्य, विधि दर्शन उपनिषद, वेद पुराण आदि शाखाओं में महान विद्धान थे।

मध्यभारत मालवा के क्षेत्रीय इतिहास लेखन में कई जाने-माने इतिहासकारों का योगदान रहा है, किन्तु प्रस्तुत शोध पत्र में शोधार्थी द्वारा डॉ. श्यामसुन्दर निगम के इतिहास लेखन में योगदान का अध्ययन किया गया है।

डॉ. श्यामसुन्दर निगम का जन्म 25 अक्टूम्बर 1931 ई. में हुआ था। उनकी शिक्षा में उन्होंने एम.ए. इतिहास के साथ कई विषयों में स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की। पी.एचडी. 1967 ई. में **'प्राचीन भारतीय आर्थिक संगठन'** विषय पर विक्रम विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त की है। उनकी इतिहास के क्षेत्र विशेष रूची होने के कारण इतिहास के विभिन्न क्षेत्र जैसे क्षेत्रीय लोक परम्पराऐं, भारतीय, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का इतिहास, पुराविभलेख एवं पुरातत्व विज्ञान, क्षेत्रीय इतिहास एवं विभिन्न युगीन भारतीय संस्कृति विशेष अध्ययन एवं खोज रही है।

मालवा के क्षेत्रीय इतिहास लेखन में डॉ. श्यामसुन्दर निगम का योगदान – डॉ. निगम के संबंध में यह सत्य है कि वे एक प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता, इतिहासकार एवं साहित्यकार रहे। उन्होंने कई शोधार्थियों को शोधकार्य करवाया जिसमें मुख्यत: मालवा का क्षेत्रीय इतिहास लेखन पर अधिक कार्य करवाये थे।

डॉ. निगम ने मालवा पर एक स्वतंत्र लेखन का कार्य किया है। जो **'मालवा के इतिहास एवं संस्कृति के कतिपय पहलू'** के नाम से प्रसिद्ध हुआ है। यह ग्रंथ 2004 में प्रकाशित हुआ तथा सम्पूर्ण ग्रंथ 5 खण्डों में विभाजित है। जिसमें मालवा के इतिहास एवं संस्कृति विषय का हिन्दी एवं आंग्ल भाषा में लिखे गये है। यह ग्रंथ इतिहास एवं संस्कृति की कड़ियों एवं अनछुए पहलुओं को उजागर करते है। जो मालवा के क्षेत्रीय इतिहास लेखन एवं शोधकार्य हेतु बहुत ही उपयोगी एवं प्रेरणादायक होगें।[5]

डॉ. निगम सुप्रसिद्ध इतिहासकार ही नहीं अपितु वे महान पुरातत्ववेता एवं प्राचीन ताम्र पत्रों, मुद्राओं और शिलालेखों के अध्ययन में विशेषज्ञ थें। इनका दूसरा ग्रंथ **'क्षैत्रीय खंगार जाति का इतिहास'** है। जो चन्देलों का पतन एवं बुन्देलों के अभ्युदन के मध्य का यह ग्रंथ विलुप्त कड़ियों को जोडने वाला एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। खंगार जाति के मूल इतिहस के मूल स्त्रोत बहुत ही कम उपलब्ध होते है। इस कारण डॉ. निगम को भारी मेहनत करनी पड़ी तथा खंगारों से संबतित स्थानों का सूक्ष्म सर्वेक्षण कर ग्रंथों को पठनीय और संग्रह योग्य बनाया है।[6]

डॉ. निगम का तीसरा ग्रंथ **'संक्रमण कालीन बुन्देलखण्ड'** (11वीं-13वीं सदी) यह ग्रंथ चन्देलों के पतन और बुन्देलों के अभ्युदय के मध्य की एक खोई हुई कड़ी है। डॉ. निगम ने इस ग्रंथ में बुन्देल खण्ड के इतिहास की विलुप्त कड़ियों को खोजकर एवं जोड़कर उन्हें एक महत्वपूर्ण ग्रंथ तैयार किया है।[6]

डॉ. निगम के अन्य ग्रंथ भी है जो शोध पर आधारित ग्रंथ भी है। इसके अतिरिक्त डॉ. निगम इतिहास के ज्ञाता तो थे ही किन्तु इसके अतिरिक्त विधिशास्त्र, आयुर्वेद, संस्कृत तथा हिन्दी साहित्य में भी अधिकारिक विद्वान थे। उन्होंने आयुर्वेद रत्न और भिषगाचार्य की उपाधि भी अर्जित की है। आंचलिक बोलियों, लोक कलाओं तथा लोक जीवन के प्रति इतनी समग्र और सारगर्भित दृष्टि सम्पन्नता अन्य किसी में देख पाना दुर्लभ है।

डॉ. निगम एवं कावेरी शोध संस्थान – डॉ. निगम का कावेरी शोध संस्थान में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस संस्थान में उनका स्वाध्याय सत्संग मण्डल है। जहां विगत 15 वर्षो से उज्जैन के बौद्धिक कार्यक्रमों की आधारशिला रहा है। इस स्वाध्याय मण्डल को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्धानों मनीषियों एवं विशेषज्ञों का उद्बोधन भी आर्शिवाद स्वरूप प्राप्त होता रहा है।

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

श्री कावेरी शोध संस्थान में डॉ निगम की कीर्ति का साकार विग्रह है। अपनी मातुश्री कावेरी देवी के नाम पर डॉ. निगम में कावेरी शोध संस्थान की स्थापना की है। उन्होंने इसी संस्थान में अपने पिता की स्मृति में अमृत न्यास की स्थापना की है।

डॉ. निगम द्वारा यह संस्थान शोधार्थी के लिए शोध संस्थान के रूप में स्थापित किया है। इस संस्थान में लगभग बीस हजार ग्रंथ है तथा कई पाण्डुलिपियां भी है। उज्जैन में स्थित यह कावेरी शोध संस्थान, अपनी बौद्धिक गतिविधियों के लिए सम्पूर्ण देश में प्रसिद्ध है। इस संस्थान को प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. भवानीलाल ने देखा तो देखकर आश्चर्य चकित हो गये और डॉ. निगम की स्वाध्याय वृत्ति देखकर उन्हें **'भामति वाचस्पति मिश्र दर्शनाचार्य'** नाम से संबोधित किया।

डॉ. श्यामसुन्दर निगम ने उज्जैन और मालवा की सांस्कृतिक परम्पराओं के विलक्षण अध्येता थे। वे इतिहास और नगर अनुभूतियों के अद्वितीय मनीषी थे। वे पत्थरों की भाषाखुब पहचानते थे। डॉ. निगम ने सोंधवाड़ क्षेत्र में पुरातत्व खोज की जिसमें परमार कालीन मंदिर के अवशेष तथा अष्टकोणीय बावडी खोजी, जो हजार साल पुरानी थी। इसके पश्चात् प्राचीन सभ्यता का इतिहास खोजा, जिसमें तीन हजार वर्ष पुरानी ताराश्म युगीन सभ्यता के अवशेष मिले। डॉ. निगम मध्यप्रदेश के हर क्षेत्र में पुरातत्व की खोज का कार्य किया, वे हर पुरा महत्व के स्थल पर पंहुचे, रतलाम जिले के कलस्था, शिपावार, कराड़िया, गुलबालोद आदि महत्वपूर्ण प्रगतिहासिक सभ्यताओं की खोज और अनुशीलन का कार्य किया।

अंत में कहा जा सकता है कि डॉ. श्यामसुन्दर निगम मालवा के महान इतिहासकार एवं पुरातत्वेत्ता थे। उन्होंने मध्यप्रदेश के इतिहास को विश्व के नक्शे पर अंकित करवाया। उन्होंने इतिहस के क्षेत्रों में कई ग्रंथो तथा सैकड़ों अनुसंधानपरक आलेखों का प्रकाशन किया। इसमें सिंहस्थ महापर्व, मालवी साहित्य का इतिहास खंगार क्षेत्रीय, पोरवाल, कुमावत जाति काइतिहास आदि है। उन्होंने कई पत्र पत्रिकाओं का भी सम्पादन किया है।

उनके द्वारा स्थापित कावेरी शोध संस्थान के जरिये हजारों की संख्या में इतिहास, संस्कृति, पुरातत्व, दुर्लभ शोध सामग्री, इतिहास लेखन तथा पत्र-पत्रिकाओं की अमूल्य विरासत को सहेजा। उनके व्यक्तित्व, जीवन और अवदान पर दो विशिष्ट ग्रंथों-अमृतपुत्र और निगमागम का प्रकाशन भी हुआ था।

अत: कहा जा सकता है कि डॉ. श्याम सुन्दर निगम जीवन भर मालवा के इतिहास एवं पुरातत्व की खोज एवं ऐतिहासिक लेखन तथा ग्रंथों को सहेने एवं संवारने में लगे रहे, वास्तव में वे अमृत पुत्र थे, पुरा इतिहास एवं संस्कृति जगत उन्हें कभी भूला नहीं पायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एस.एल. वरे, 'इतिहस लेखन' भोपाल पृ. 137।
2. डॉ. दिनेश चन्द्र भारद्वाज 'मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति' पृ.3।
3. डॉ. बी.एल. माथुर, 'आधुनिक भारत के इतिहिासकार एवं उनकी ऐतिहासिकी' आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर पृ. 2।
4. राधेशरण (2006), इतिहास और इतिहास लेखन, भोपाल पृ. 342-343।
5. डॉ. शिव चौरसिया (सम्पादक) 'डॉ.श्याम सुन्दर अमृत अभिनन्दन ग्रंथ' प्रकाशक स्वाध्याय मण्डल कावेरी शोध संस्थान, उज्जैन- 174।
6. डॉ. शिव चौरसिया (सम्पादक) डॉ. श्याम सुन्दर अमृत अभिनंदन ग्रंथ वृ. 172।

****

मध्यप्रदेश के निमाड़ में पर्यटन उद्योग की सम्भावनाऐं

डॉ. सुनील मोरे *

प्रस्तावना – पर्यटन करने वाले व्यक्ति को **पर्यटक** कहा जाता है। **'पर्यटक वे लोग है जो यात्रा के आनन्द के लिए, उत्सुकतावश, समय के सबसे अच्छे उपयोग के लिए यात्रा करते है।'**

विश्व पर्यटक संगठन (W.T.O.) के अनुसार– 'पर्यटक एक अल्पकालिक आगन्तुक होता है जिसका उस स्थान पर ठहराव कम से कम चौबिस घण्टे का होता है और उसकी यात्रा का उद्देश्य–

1. अवकाश काल में आनन्द, स्वास्थ्य, अध्ययन, धर्म संबंधी क्रियाऐ और खेलकूद या
2. कार्यालय में स्वजन मिलन, उद्देश्य की पूर्ति या सम्मेलनों में भाग लेना आदि में से कोई एक हो सकता है।'

पर्यटन को मूलत: आनंदात्मक क्रिया माना गया है। इसमें व्यक्ति अपने अर्जित धन को व्यय करने हेतु दर्शनीय स्थलों की यात्रा करता है।

इन्टरनेशनल एसोसिएशन ऑफ साईंटिफिक एक्सपर्टस ऑन ट्रिज्म के अनुसार पर्यटन में (1) दर्शनीय स्थल (2) यात्रा (3) अस्थायी ठहराव (4) आर्थिक क्रियाऐं–ये चार मूल संदर्भ होते है।

पर्यटक के उद्देश्य :

1. आनन्द प्राप्त करना
2. शैक्षिणिक गतिविधि
3. सांस्कृतिक गतिविधि
4. सामाजिक संबंधो का निर्वहन
5. स्वास्थगत लाभ प्राप्त करना।

पर्यटन के प्रकार :

1. घरेलु पर्यटन
2. विदेशी पर्यटन
3. व्यक्तिगत पर्यटन
4. समूह पर्यटन
5. सामाजिक पर्यटन
6. धार्मिक पर्यटन

संयुक्त राष्ट्र संघ में सन् 1963 में पर्यटन के विकास के लिए पारस्परिक सहयोग के विस्तार हेतु रोम में सदस्य देशों का सम्मेलन आयोजित किया था। इस सम्मेलन में लिए गए निर्णयों के आधार पर भारत में पर्यटन को विकसित करने के लिए पर्यटन विभाग की स्थापना की गई है। सन् 1967 में भारत सरकार ने एक अलग पर्यटन मंत्रालय स्थापित किया है।

नियोजित पर्यटन उद्योग – आधुनिक समय में पर्यटन उद्योग का स्वरुप धारित कर चुका है। विश्व के कई विकसित देशों की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार ही पर्यटन है। पर्यटन उद्योग में पर्यटन स्थलों पर उपलब्ध सेवाओं को उत्पाद के रुप में माना जाता है। पर्यटन स्थल पर यात्रा से लेकर ठहरने, भोजन, खरीदी, मनोरंजन, खेलकूद, संगीत आदि सेवाओं का बाजार विकसित होता है।

पर्यटन उद्योग के विकास में देश की अधोसंरचना (सड़के, परिवहन के साधन, होटल, भोजनालय और स्वच्छता) की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विश्व के सभी देशों में पर्यटन को उद्योग का दर्जा देकर विकसित किया जा रहा है।

पर्यटन उद्योग में साधारणत: किसी व्यक्ति विशेष उद्यमी की भूमिका नही होती है, बल्कि सरकारी प्रेरणा, सहायता व नीति से पर्यटन को बढावा मिलता है। पर्यटक पर्यटन उद्योग का उपभोक्ता है और पर्यटन स्थल को उत्पाद माना गया है।

निमाड़ में पर्यटन के विकास के क्षेत्र में प्रमुख संभावनाऐं :

- **निमाड़ पर्यटन कॉरिडोर –** निमाड़ के एक छोर बड़वानी जिले से आरंभ करते हुए बुरहानपुर जिले की सीमा तक की दूरी के मध्य के सभी प्रमुख स्थलों का पर्यटन कॉरिडोर के रुप में विकास नही हुआ है। इस कारण भी यहाँ के पर्यटन क्षेत्रों में पिछड़ेपन की स्थिति है। गुजरात व राजस्थान में पर्यटन स्थलों को आस-पास के लगभग 200-300 किलोमीटर के मध्य पर्यटन स्थलों को कॉरिडोर के रुप में विकसित किया गया है। इस कारण पर्यटक दो-तीन दिन के अपने पर्यटन प्रवास का लाभ उठाते हैं।

भारत सरकार व मध्यप्रदेश सरकार संयुक्त रुप से योजना बनाकर निमाड़ के पर्यटन क्षेत्रों को विकसित करने के लिए निमाड़ पर्यटन कॉरिडोर की संरचना कर सकती हैं। इस कार्य के लिए निजी क्षेत्र से भागीदारी की जा सकती हैं। निमाड़ में आगामी 2-3 वर्षो में मनमाड-इन्दौर रेल परियोजना के अन्तर्गत रेल सेवा आरंभ हो रही हैं। इस क्षेत्र में पर्यटन के विकास का गति मिल सकती हैं। निमाड़ के चारों जिलों के जनप्रतिनिधि, सामाजिक कार्यकर्ता, पर्यटन विशेषज्ञ, व्यवसायी व प्रशासनिक अधिकारी चारों जिलों के बैठक आयोजित कर निमाड़ के पर्यटन कॉरिडोर निर्माण की योजना प्रस्तुत कर सकते हैं।

- **निमाड़ के पर्यटन स्थलों का वैश्वीकरण –** निमाड़ के विभिन्न पर्यटन स्थलों में से किसी को भी विश्व सांस्कृतिक धरोहर की सूची में सम्मिलित नही किया गया है। इस कारण यहाँ के पर्यटकों में विदेशी पर्यटको की संख्या नगण्य है। निमाड़ के सुप्रसिद्ध धार्मिक पर्यटन स्थल ओंकारेश्वर मंदिर देश के 12 ज्योर्तिलिंग में से एक है। इस कारण इसे देश विदेश में पहचान मिली हैं। इसके अतिरिक्त महेश्वर का किला व नर्मदा घाट की प्रसिद्धि देश विदेश में भी है। यहां पर्यटन उद्योग को विकसित करने के लिए राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार-प्रसार आवश्यक है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत

निमाड़ के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक पर्यटन स्थलों बावनगजा (बड़वानी), भीलट मंदिर (नागलवाडी), ऊन के निन्यान्वें मंदिर व छत्रियां, महेश्वर का किला व धार तथा बुरहानपुर की ऐतिहासिक इमारतों का विश्व सांस्कृतिक धरोहर में सम्मिलित किए जाने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए। निमाड़ के खण्ड़वा व बड़वानी दो जिलों में वायु परिवहन सेवाऐं भी आरंभ की जानी चाहिए।

- **सिनेमा व टेलीविजन कार्यक्रमों में पर्यटन स्थल की उपयोगिता –** निमाड़ के प्रसिद्ध पर्यटन स्थलों पर सिनेमा और टेलीविजन कार्यक्रमों के लिए शूटिंग की जा सकती हैं। इन पर्यटन स्थलों से भव्य ऐतिहासिक एवं प्राकृतिक चित्रों का प्रस्तुतीकरण सहजता से हो सकता है। यद्यपि राज्य शासन ने फिल्म एवं टेलीविजन निर्माण हेतु प्रोत्साहन की नीति तैयार की है। निमाड़ के महेश्वर में विगत वर्षो में कई बड़ी फिल्मों की शूटिंग हुई है। इससे इस पर्यटन स्थल का प्रचार–प्रसार हो रहा है। इस प्रकार निमाड़ में केवल महेश्वर में ही यह कार्य हो रहा है। जबकि निमाड़ के अन्य पर्यटन स्थलों पर भी इसका विस्तार किया जा सकता है।

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा निमाड़ में पर्यटन प्रोत्साहन हेतु निमाड़ के पर्यटन स्थलों पर शूटिंग करने वाले सिनेमा व टेलीविजन कार्यक्रम निर्माताओं का कर व अन्य शुल्क में रियायत अथवा अनुदान देकर प्रेरित करना चाहिए। निमाड़ के नागनवाड़ी व बावनगजा भी सतपुडा पर्वत श्रृंखला में मनोरम दृष्यों का फिल्मांकन किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

भारतीय समाज में नैतिक मूल्य

डॉ. मनोरमा सिंह *

प्रस्तावना – भारतीय सामाजिक व्यवस्था में मूल्यों का बहुत बड़ा योगदान है। इनकी संरचना में विद्यमान जाति प्रथा और वर्ण व्यवस्था की तरफ से व्यक्ति में 'जब धार्मिक रूप से व्यक्ति के मन में पनपने वाले संकीर्णतापूर्ण विचारों को एक सामाजिकता बनाये रखने में पृष्ठांकन किया गया है।' वहाँ नैतिक मूल्य मानव के जीवन में होने के बाद भी वह जीने के लिए मजबूर है। जबकि नीतिशास्त्रीय पक्ष मानव आचरण के शुद्ध आदर्शों के परिणाम है। व्यक्ति हमेशा मूल्यों की समीक्षा करता है। जहाँ तक मनुष्य की विचारधारा के रूप में मानव जीवन का एक घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित होता है। व्यक्ति के जीवन में मूल्य ही वास्तविक आदर्श है। जहाँ आदर्श होते हैं। वहाँ व्यक्ति के जीवन और जगत् की कठिनाईयों की चिन्ता नहीं करता है। व्यक्ति में मूल्यों की परिधि का होना भी आवश्यक है। जहाँ तक मेरा मानना है वहाँ मुल्य को यदि आदर्श मानते हैं। वहाँ ईमानदारी भी व्यक्ति का कर्तव्य बन जाता है। इस आधुनिकता के विशैले वातावरण के रूपों में नीतिशास्त्रीय परम्पराओं को एक सम्बन्ध के रूपों में मानव का आचरण ही सर्वोच्च होता है। नीति के मूल्यों की वैचारिक व्यवस्था का परिणाम भी मानव जीवन के रूपों में अभिव्यक्ति है। मानव समाज का एक नैतिक माहौल भी समाज में तैयार करता है। जहाँ नैतिक मूल्य होते हैं। वहाँ समाज में अच्छे और बुरे की कल्पना की जाती है।

शोध प्रविधि – भारतीय समाज में नैतिक मूल्य में द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर शोध पत्र को तैयार किया गया है। धार्मिक ग्रन्थों, पत्र पत्रिकाओं आदि को नैतिक मूल्यों के सन्दर्भ में समाहित करने का प्रयास किया गया है। इसके साथ–साथ विद्वानों का मार्गदर्शन भी शोध पत्र में लिया गया है। जिस आधार पर नैतिक मूल्यों के सन्दर्भ में भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों, प्रथाओं हेतु सन्दर्भित किया गया है।

शोध के उद्देश्य :

1. भारतीय समाज में नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
2. नैतिक मूल्यों के का मानव जीवन में महत्व का अध्ययन करना।
3. भारतीय सामाजिक व्यवस्था का स्वरूप ही नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
4. मानवीय मूल्यों के संरक्षण का अध्ययन करना।

समस्या :

1. मानवीय मूल्यों का क्षरण हो रहा है।
2. नैतिक मूल्यों के पतन का कारण मनुष्य में उत्पन्न होने वाले अहंकार है।
3. समाज में कुप्रथाओं के कारण भी नैतिक मूल्यों का हास्य हो रहा है।
4. आये दिन होने वाली आगजनी, बलात्कार आदि समस्याऐं उत्पन्न हो रही है।
5. मानव एक बुद्धिमान प्राणी होने के साथ–साथ वह कितने निकृष्ठ कार्य कर रहा है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इन्हीं तथ्यों में मानव की नैतिकता व्यवहारिकता जैसे अनेकों प्रश्न मानव समाज के लिए एकत्रित रूपों में दिखाई देते हैं। मनुष्य स्वयं के कर्मो को करने के लिए समाज को एक प्रभावशाली दिशा दिखाता है। जहाँ जीवन की कठिनाईयों में कर्मो के वेदना को समझना भी न्याय का कार्य है।

मनुष्य समय पर प्रसंशा और निन्दा दोनों को करता है। यही कारण है कि जीवन और जगत् के व्यवहारिक पहलू भी बचपन की यादों में बीतता है। अच्छे और बुरे विचारों का केन्द्र बिन्दु मानव की शिक्षा व्यवस्था है। वहीं बुजुर्गों से सामाजिक व्यवस्था का नियम बद्धता से सीखने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। इन्हीं विचारों के बढ़ने से जीवन में नये तर्क भी सामने आते हैं। मूल्य हमेशा से शास्वत सत्य होते हैं। इसके लिए अनेकों प्रकार की शिक्षा और संस्कारों की आवश्यकता होती है। मानव अपनी नीव खड़ा करता है। उस नीव की मजबूती का प्रमाण भी मनुष्य जानता है। वह कितनी मेहनत और परिश्रम के द्वारा बनाया है। इन्हीं तथ्यों की प्रमाणिकता ही मानव अभिव्यक्ति में निहित है।[1]

व्यक्ति के बौद्धिक विकास की नीव भी सात वर्षो की उम्र में ही पड़ जाती है। आगे चलकर उस मानव में व्यक्ति की ईमारत खड़ी होती है। इसी कारण बचपन के सिराहों पर खड़ा होने वाला संस्कारी जवान भी अपनी आभा से पल्लवित होता है। उसी में फल पुण्य की किरणें भी दिखाई देती है। यहीं मानव का वैचारिक पूर्ण भिन्नता का स्वरूप और संस्कार है। मानव में वंश परम्पराओं के आधार पर संस्कारों का निर्माण होता है। यही सामाजिक और राजनैतिक आधारो पर ताने–बाने से व्यक्ति के सम्मुख चरित्र का भी निर्माण होता है।[2]

मानव के नैतिक विचारों में एक ऐतिहासिक परिदृश्य की स्पष्ट रूपों में दिखाई देता है। वहीं मानव समुदाय का एक समूह जो व्यक्ति के व्यवहारों को कुशल बनाने में काम करता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के साथ–साथ एक परिवार जाति वा कबीले पर आधारित मानव का एक झुण्ड है। जहाँ एक वंश परम्परा के लोग होते हैं। उनके मूल्यों का समन्वय संस्कृति और न्याय की पद्धति भी अलग होती है। उनके झुण्ड में प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रत चेतन शक्ति पाई जाती है। इन्हीं प्रमाणों के आधार पर मानव के मूल्यों को पहचाना जा सकता है। जहाँ समाज राष्ट्र, कला, संस्कृति के द्योतक है।[3]

सर्वे भवन्तु सुखिन: का उद्गार व्यक्त करने वाली हिन्दू जाति की कथनी

* इतिहास विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

और करनी में मूलत: परिवर्तित समूहों का विचार भी पाया जाता है। यही उनके जीवन और जगत् को वर्णित करने का माध्यम हो सकता है। जहाँ परोपकार सामंजस्य की समानता दिखाई देती है। वहाँ मूल्यों की विचारधारा स्वयं में प्रकट होती है। मानव में यदि हम गाँधी के सिद्धान्त की चर्चा करते है। वहाँ सत्य, अहिंसा, स्तेय, अपरिग्रह अैर ब्रह्मचर्य आदि के द्वारा भी मानवीय मूल्यों को समझा जा सकता है। यहीं विचार शक्ति का समन्वित रूप भी मानव भावनाओं पर केन्द्रित एक शक्ति का निर्माण करती है। वहीं व्यक्ति और विश्वास जीवन में एक प्रकटताप का स्वरूप भी दिखाई देता है। इसी आधार पर मानव की जीवन लीला का एक स्वर्णिम अवसर भी दिखाई देता है।[4]

भारतीय नीति मानव के आदर्शों पर एक मीमांसा का कार्य करती है। वहाँ किसी तथ्य या सुझाव की आवश्यकता नहीं होती है। यदि हम किसी कर्मो की सीढ़ी को पहचान सकने में सक्षम है। वहीं मानव इतिहास का केन्द्र बिन्दु हमें लगता है। प्रश्न यह है कि किन कर्मों से आदर्श की प्राप्ति सम्भव है। क्या उचित है और क्या अनुचित है। यह कहा पाना मानव जीवन के लिए बहुत ही कठिन कार्य कहा जा सकता है। नीतिशास्त्रीय आधार पर मानव जीवन की लीला में सम्पूर्ण शक्ति के माध्यम से कार्य करती है। कुछ विचारकों को केवल सैद्धान्तिक रूपों में मानव के आदर्शों की औचित्य पूर्ण विवेचना का केन्द्र बिन्दु रहा है।[5]

यदि हम यूरोपीय देशों की नैतिकता का यदि दृष्टिकोण को पहचानने का प्रयास करते हैं। वहाँ व्यवहारिक अन्तर भी दिखाई देता है। हमें किसी भी नीतिशास्त्र के दृष्टिकोण को समझने के लिए मानव विचारों की अभिव्यक्ति का सैद्धान्तिक रूप ही मानव आचरण का एक साधारण तथ्य है। उन्हीं आदर्शो की प्राप्ति में एक विचार और सद् आचरण की प्रवृत्ति पाई जाती है। उनका दृष्टिकोा भी सैद्धान्तिक होने में विश्वास करता है। जहाँ भारतीय नीति का प्रश्न है। ज्ञान के लक्षण को पहचानना। वहीं मानव के आदर्श गुणों की पहचान करता है। जहाँ भारतीय सामाजिक व्यवस्था का नैतिक गुण है।[6]

मानवीय मूल्यों का आधार बुद्धि है। इन्हीं बौद्धिक संस्कारों से मानव जीवन की लीला का वर्णन करते हैं। मानव में संस्कार का उत्पन्न होना भी मूल्यों को जन्म देना है। जैसे-जैसे व्यक्ति में संस्कार उत्पन्न होते हैं। उसी प्रकार नैतिक विकास में भी वृद्धि होती है।

आचार: परमोधर्म: आचार: परमं तप:।
आचार: परमं ज्ञानमाचारात किनु साध्यते।।[7]

मानव का आचारण ही धर्म के मूल तत्वों से बनता है। धर्म और नैतिकता एक-दूसरे के पूरक है। आचरण की शुद्धता का सबसे बड़ा प्रमाण सम्बन्ध है। धर्म ही उसके लक्षण है। इन्हीं धर्म के आचरण सम्मत व्यवहार को ही धर्म कहा गया है। उसे ही परम्तप ही परमेश्वर की अराधना से ही ज्ञान मिल सकता है। यही मानव जीवन केक लिए परम ज्ञान के स्वरूपों में कार्य करता है। आचरण से ही मानव के अनेकों सिद्धियाँ की प्राप्ति होती है। यहीं मानव जीवन का सार तत्व कहा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महादेव प्रसाद, *महात्मा गाँधी का समाज दर्शन,* हरियाणा ग्रन्थ अकादमी, पंचकूला, 2012, पृष्ठ 61
2. हनुमानप्रसाद पोद्दार, *नारी-शिक्षा,* गीताप्रेस, गोरखपुर सं. 2070 पृष्ठ 66
3. महादेव प्रसाद, *महात्मा गाँधी का समाज दर्शन,* हरियाणा ग्रन्थ अकादमी, पंचकूला, 2012, पृष्ठ 13
4. श्रीराम शर्मा आचार्य, *विश्व की महान नारियाँ,* युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि, मथुरा, 2011, पृष्ठ 45
5. विदुर नीति उद्योग-पर्व से : हनुमान पोद्दार, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 40
6. नीति शिक्षा : श्री वासुदेव द्विवेदी वेदशास्त्री सहित्याचार्य, सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय वाराणसी, मौनी अमावस्या, 2024 पृष्ठ 2
7. डॉ. राम जी मिश्र, धर्म और राजनीति, आचार्य प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम, 2009, पृष्ठ 43
8. पाणिनी 3/3/19/50
9. विष्णु पुराण, 3/11/3
10. गीता 3/29

****

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के चिन्तन में सामाजिक न्याय

डॉ. नवीन कुमार * पुष्पा साकेत **

प्रस्तावना – सामाजिक न्याय से अर्थ से यह आशय है कि समाज की मुख्यधारा से कटे वंचित, शोषितों के साथ होने वाले अत्याचार और अन्याय को किसी भी रोकटोक के प्रत्येक व्यक्ति को उसे बिना धर्म, जाति के अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति ही सामाजिक न्याय है। जिस प्रकार से मूलभूत सुविधाऐं उदाहरण के रूप में-भोजन, कपड़ा और मकान का हक प्रदान हो ऐसे व्यक्तियों को सामाजिक, आर्थिक विकास का अवसर प्राप्त होना चाहिए।

व्यक्ति का व्यक्ति के साथ अन्याय होना मानव समुदाय के लिए बहुत ही बड़ा खतरा है। क्योंकि इस संसार जो भी प्राणी है। उसे उसका अधिकार तो प्राप्त होना चाहिए। तभी तो हम बसुधैव कुटुम्बकम् की बात कर पायेगें। यदि समानता मानव में नहीं है। तब हमारे लिए एकता और अखण्डता का कोई प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। इसके लिए मानव विकास का आधार ही सामाजिक संरचना है। इस प्रकार से शोषक और शोषित दोनों में खाई और बढ़ती जायेगी। इसकों ध्यान में रखकर सामाजिक न्याय की व्यवस्था को स्थापित किया गया है। ताकि किसी भी व्यक्ति के साथ अन्याय और अत्याचार न हो। ऐसी स्थिति मानवीय संवेदना को जन्म देती है।

शोध प्रविधि – इस शोधपत्र **डॉ. भीमराव अम्बेडकर के चिन्तन में सामाजिक न्याय में** द्वितीय शोध सामाग्री के द्वारा तथ्यों का संकलन किया गया है। इन्हीं तथ्यों को समन्वय करते हुए शोध पत्र को तैयार किया गया है। इस कारण को जानने और न्याय प्रक्रिया का अपनाने के लिए और उचित संन्दर्भ देने के लिए पत्र-पत्रिकाओं के साथ विद्धानों का भी मार्गदर्शन लिया गया है। इसके साथ-साथ पुस्तकालय द्वारा प्राप्त सामाग्री को भी शोध पत्र तैयार करने का आधार ग्रन्थ के अध्ययन को भी समाहित किया गया है।

उद्देश्य :

1. दलित वर्ग को सामाजिक न्याय प्रदान करने हेतु डॉ. अम्बेडकर ने अथक प्रयास किये। जिनसे मानव को सामाजिक न्याय प्राप्त हो सकें।
2. राटी, कपड़ा, माकान की जरूरतों को पूर्ति हेतु संवैधानिक नियमों की संरचना की गई।
3. शिक्षा के अधिकार के द्वारा सभी वंचित वर्ग शिक्षा की कड़ी में अग्रसर होगे। इसलिए उन्हें सम्पूर्ण शिक्षण शुल्क पूर्ति का दायित्व राज्य सरकार को सौपा गया। ताकि कोई भी नागरिक शिक्षा से वंचित न रहें।
4. सामाजिक न्याय के द्वारा उन्हें अधिकार प्रदान करना ताकि उनके जीवन में छुआछूत का समाप्त कर एकता और अखण्डता को स्थापित किया जा सके।
5. समाज और सभा आदि जगहों पर भेदभाव पर रोक के लिए कानून व्यवस्था एक सबसे बड़ा कार्य रहा है। जिसरें आज दलित वर्ग चैन की साँस लेकर विवाह, उत्सव, सम्मेलन, प्रतियोगिता, भाषण आदि में खुले रूप से बोल पा रहा है।
6. समाज में तथाकथित वर्ग द्धारा किये जाने वाले अत्याचार से भी संविधान के न्याय प्रणाली के कारण कुछ राहत मिली है। जिससे आज उस प्रकार के अत्याचार नहीं हो रहे हैं। जो सरे आम पहले हुआ करता है। उस समय राजसत्ता को देखकर जंगली जानवरों जैसा वर्तव मानव के साथ होता था। किन्तु संविधान ने इन्हें कानून व्यवस्था में बाधाने के कारण यह आराजकता का पैगाम रूका है। अत्याचार तो आज भी होते हैं। किन्तु उस प्रकार से नहीं जैसे पहले होते थें।

समस्या :

1. सामाजिक न्याय को प्रदान करने में जो समस्या आ रही है। वह समस्या वास्तव में शिक्षा को लेकर है। क्योंकि आज भी कक्षा 1 से आठ तक के बालकों की शिक्षा व्यवस्था कारगर नहीं हो रही हैं। उन्हें कृपापात्रता से पास कर भवीष्यगामी विकलांग बनाया जा रहा है। यह सामाजिक अस्तित्व का सबसे बड़ा खतरा मानव समाज के सामने हैं।
2. सामाजिक स्तर पर जीवन में छूआ-छूत की समस्या आज भी विद्यमान है। इसके साथ-साथ भेदभाव की चरम सीमा वर्तमान में देखने को मिल रही है। इससे मानव समुदाय बहुत ही दु:खी प्रतीत होता है। चाहे अधिकारी हो, या चपरासी इन दोनों को दलित वर्ग के नाम पर उपेक्षा झेलनी पड़ रही है। उनके साथ भेदभाव अधिक होता जा रहा है।
3. राजनीतिक स्तर पर आज भी तथाकथित वर्ग का प्रभुत्व है। उन्हें आज भी धन के आभाव के कारण उन्हें टिकट नहीं मिल पाता है। उनके विचार और व्यवहार को नजर अंदाज कर उन्हें पैसे की अधिकता के कारण टिकट प्रदान कर उन्हें प्रतिनिधि बनाया जाता है। जिससे सामाजिक न्याय की प्रक्रिया मानव के लिए अभिशाप सिद्ध हो रही है।

सामाजिक विचारधारा को व्यक्ति ने अपने आर्थिक और सामाजिक लाभ को प्राप्त करने के अनेक दलित वर्गों को नुकसान पहुँचाया गया है। उसका मूल कारण उनकी अज्ञानता और अशिक्षा है। जिसके कारण उन्हें पता नहीं कि हमारा कहाँ उपयोग किया जा रहा है। और कहा दुरपयोग किया जा रहा है। ऐसी स्थिति में मानवीय समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग शोषक के रूप में उत्पन्न हुआ है। जो भेदभाव तो नहीं बल्कि मानसिक और शारीर रूप से शोषण कर रहा है।

मानसिक रूप से शोषण का मतलब उन्हें कार्य क्षमता से ज्यादा कार्य करके उसे कम मजदूरी देकर कार्य करवाना। उसके साथ इतना कार्य करवाया

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

जाता है। कि उसकी जीवन की आयु कम हो जाती है। उसे जीवन जीने की आशा प्रत्यासा खत्म होने लगती है। इस प्रकार की भ्रष्टता मानव को जीवन से वंचित कर देती है।

शारीरिक शोषणा से मतलब है कि उसके श्रम को अनियंत्रित कार्य लेना उसकी क्षमता से ज्यादा कार्य करवाने से उसकी शारीरिक क्षमता क्षीण होने लगती है। उसका जीवन प्रत्यासा कम हो जाती है। जिसका जिक्र तो संविधान में है। किन्तु उसका पालन आज तक नहीं हो पाया की मानव की कार्य क्षमता और उसके अनुसार कार्य का समान वेतन दिया जाना चाहिए। किन्तु आज सरकार हो या पूँजीपति दोनों इन श्रमिकों को अनियंत्रित शोषण करते हैं। उन शोषित पूँजी को विदेशों के बैंक में जमा करते हैं। इनकी अधिकार छीन कर यैसों आराम कर रहें पूँजीपति दोनों में एक भेदभाव की चरम सीमा दिखाई देती है।

डॉ. अम्बेडकर ने श्रम नीति को भी बनाया ताकि इसके साथ सामाजिक न्याय और श्रमिकों पर अत्याचार और शोषण न हो सकें।

1. इनके कार्य को देखने के लिए सामाजिक स्तर पर एक कर्मचारी को रक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा का दायित्व सौपा गया। ताकि किसी व्यक्ति के साथ अत्याचार और शोषण होता है। उससे वह निजात पा सके। वह खुले तौर पर उसका वह निराकरण किया जायें।
2. श्रम नीति के प्रतिपादन में कर्मचारियों और नियोक्ताओं के आधार पर समान अवसर प्राप्त हो सके। इसके साथ श्रमिक संघ को मान्यता प्राप्त हो सकें। जिससे इनके साथ अत्याचार होने पर अपने संगठन के साथ आन्दोलन कर के अपने हक को हासिल कर सके।
3. श्रम कानून व्यवस्था के होने के कारण इनमें कोई और किसी भी प्रकार की संमजस्यता का निपटारा किया जाना। इसके साथ-साथ कार्यतंत्र की व्यवस्था करना है।
4. सामाजिक न्याय के जरियें सभी छात्रों को एक साथ कक्षा में बैठने की व्यवस्था संवधिान की कानून व्यवस्था ने प्रदान किया है। जिससे आज तक सभी छात्र अपनी रूचि के अनुरूप बैकर कर शिक्षा को ग्रहण कर पा रहा है।
5. किसी भी छात्र को अलग से पानी और भोजन की व्यवस्था को खत्म करने के लिए सामाजिक न्याय की व्यवस्था ने विद्यालय में भोजन की व्यवस्था की गई। जिससे सभी में समानता की विचारधारा का प्रवाह तंत्र तैयार हो सके। यह योजना वास्तव में सफलता को अंजाम तो दिया। किन्तु शिक्षा के स्तर में काफी गिरावट का सामना करना पड़ा।

निष्कर्ष – डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने भारतीय समाज के लिए बहुत ही स्वर्णिम अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्रदान किया। जहाँ तक कुछ जातियों को उनके सम्पत्ति, सत्ता, उद्योग, नौकरी, व्यापार, खेती, लोन आदि की व्यवस्था सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए इन्होनें कानून व्यवस्था बनाया है। इसके साथ-साथ भेदभाव को खत्म कर समता पूर्ण समाज की संरचना के सन्दर्भ में मानवीय समुदाय का एक पक्षीय आन्दोलन को नहीं बल्कि दोनों को समान अधिकार प्रदान करने की बात डॉ. अम्बेडकर कहते हैं। जिससे राष्ट्रीय एकता और अखण्डता में विश्वास की भावना प्रत्येक नागरिक में पैदा हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रामगोपाल सिंह, डॉ. अम्बेडकर: सामाजिक-आर्थिक विचार दर्शन, 2014, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ 65
2. डॉ. किरण सिंह, डॉ. भीमराव अम्बेडकर सामाजिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक दर्शन, 2006, आशा पब्लिशिंग, आगरा, पृष्ठ 63
3. श्याम सिंह, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर व्यक्तित्व-परिचय, प्र.सं.1988, द्वि.सं. 2005, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 35
4. पी. अब्रहाम, डॉ. अम्बेडकर भारतीय आर्थिक शिल्पकार, सूर्यकुमारी अब्रहाम मेमोरियल फाउण्डेशन, हैदराबाद, 2005, पृष्ठ 55
5. डॉ. डी. आर. जाटव, भगवान् बुद्ध और कॉर्ल मार्क्स, समाता साहित्य सदन, जयपुर, 1991, पृष्ठ 87

****

किशोर और किशोरियों के मध्य आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियों तथा अवसाद का तुलनात्मक अध्ययन(खरगोन जिले के आदिवासी-गैर आदिवासी समुदाय के संबंध में)

डॉ. मंजु पाटनी* दीपिका सेठे **

प्रस्तावना – वर्तमान समय की एक गंभीर समस्या के रुप में किशोरों का विकसित होना दृष्टिकोण सामने आ रहा है। आधुनिक जीवन शैली से जहाँ यह दृष्टिकोण प्रभावित हो रहा है, वहीं परम्परागत जीवन भी दृष्टिकोण के विकास में सहायक हो रहा है। जीवन की इस आपाधापी में किशोर अपना रास्ता ही नहीं तलाश पा रहे है। चारो ओर अवसरों की उपलब्धता ने भी इन्हें भ्रमित कर रखा है। इस देश में व्यक्ति को अपना रास्ता स्वयं ही बनाना पड़ता है। विशेषकर किशोरों के सामने यह समस्या हमेशा से बनी हुई है। किशोर अवस्था के मन में अनेक भ्रांतियाँ फैली रहती है। उसके सामने उसका करियर और भविष्य की चिंतायें बाहे फैलाये खड़ी होती है। उचित मार्गदर्शन के अभाव में वह अपने आप को चौराहे पर खड़ा पाता है। उसे सही निर्णय लेने में उनके मार्ग में अनेक बाधाएँ होती है, उसे शिक्षता संस्थायें उचित मार्गदर्शन नहीं दे पा रही है। परिवार और परिवार के सदस्य भी उसे उचित मार्ग प्रदान नहीं कर पा रहे है। ऐसे में वह या तो दोस्तों की राह पर चलता है या विज्ञापनों के चक्कर में आकर अपना रास्ता खोजने का प्रयास करते है। भारतीय परिवार व्यवस्था भी सामाजीकरण में प्रमुख भूमिका निभाते है। वह बचपन से ही संस्कार डालने का कार्य करते है। वह बच्चों के लिए शिक्षण संस्थाओं का भी कार्य करते है। कहते है परिवार बच्चों की प्रथम पाठशाला होती है और माता प्रथम शिक्षका। बदलते युग में माता-पिता कामकाजी हो चुके है। वह अपने बच्चों पर अपने कामकाज के कारण समुचित ध्यान नहीं रख पाते है। बच्चे शिक्षा प्राप्त करने में व्यस्त रहते है। ऐसे में माता-पिता उन्हें उचित-अनुचित बातों को सिखाने में लापरवाही बरतते है। समय के साथ-साथ बच्चे और किशोर अपना रास्ता बना लेते है। किशोर अवस्था में किशोर अधिक रोका-रोकी पसंद नहीं करते है। माता-पिता की बातों को वह अनसुना करने लगते है। ऐसे में माता-पिता उनकी उपेक्षा करने लगते है। यही उपेक्षित किशोर परिवार में अस्वीकृत हो जाते है। माता-पिता की नजरों से गिरने लगते है। यही किशोरों में उदासीनता का भाव पनपने लगता है। उसके दृष्टिकोण में नकारात्मकता आने लगती है। यह नकारात्मकता उनमें निराशावादी दृष्टिकोण को विकसित करने में मदद करती है। लम्बे समय तक यही दृष्टिकोण अवसाद का कारण बनता है। परिवार द्वारा दृष्टिकोण के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। स्वीकृत बच्चों में आशावादी दृष्टिकोण विकसित होता है। वही उपेक्षित किशोरों में निराशावादी दृष्टिकोण विकसित होता है।

मेरे अध्ययन में इन प्रवृत्तियों को आदिवासी एवं गैर आदिवासी किशोर एवं किशोरियों दोनों का ही तुलनात्मक अध्ययन का समावेश किया है। खरगोन क्षेत्र में दोनों ही समुदायों में किशोरों के इन दृष्टिकोणों का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया है।

अध्ययन का उद्देश्य – मेरे अध्ययन का उद्देश्य आदिवासी एवं गैर आदिवासी युवक-युवतियों में विकसित हो रही आशावादी निराशावादी तथा अवसाद की प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करना है। कुछ उद्देश्य निम्न है –

1. आदिवासी-गैर आदिवासी किशोरों में आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियों के विकास के कारणों का विश्लेषण करना।
2. आदिवासी-गैर आदिवासी किशोरियों में आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियों के विकास के कारणों का विश्लेषण करना।
3. इन प्रवृत्तियों में विकास के कारणों का पता लगाना।
4. दोनों ही समुदायों में माता-पिता तथा परिवार की भूमिका को चिन्हित करना।
5. इन दोनों ही समुदाय में विकसित हो रही आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
6. निराशावादी दृष्टिकोण के कारण अवसाद के कारण को जानना तथा तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि

(अ) अध्ययन क्षेत्र – खरगोन (पश्चिम निमाड़)
जिले के सामाजिक-आर्थिक मिश्रित, आदिवासी और गैर आदिवासी परिवारों के किशोरों का अध्ययन है।

(ब) अध्ययन इकाई – आदिवासी तथा गैर आदिवासी परिवारों के विषय से सम्बन्धित किशोर और किशोरियां है।

(स) निदर्शन – किशोरों का चयन नमूना पद्धति (लाटरी पद्धति) तथा उद्देश्यपूर्ण नमूना पद्धति से इकाईयों का चयन।

(द) शोध मापदण्ड (मनोवैज्ञानिक परीक्षण) –

1. डॉ. (श्रीमती) जे.पी. शेरी एवं डॉ. जे.सी. सिन्हा द्वारा निर्मित पारिवारिक सम्बन्ध प्रश्नसूची।
2. डॉ. डी.एस. पाराशर की आशावादी-निराशावादी अभिवृत्ति मापनी।
3. प्रो. ओ.पी. मिश्रा का अवसाद परीक्षण।

अध्ययन का महत्व – अध्ययन के उद्देश्य के अनुरुप ही अध्ययन का समाज और देश के लिए निम्न महत्व है –

1. तुलनात्मक अध्ययन कर इसके अन्तर को दर्शाना तथा इनके कारणों

* विभागाध्यक्ष (गृह-विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह-विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

को समाज एवं किशोरों के समक्ष रखना, जिससे किशोरों को दिशा निर्देश प्राप्त हो सके।

2. परिवार और विशेषकर माता-पिता को संकेत देना ही आपके द्वारा स्वीकृति या उपेक्षा ही इन प्रवृत्तियों के विकास में सहायक है।
3. माता-पिता को अवसाद से ग्रसित किशोरों को मेडिकल ईलाज की ओर जाग्रत करना।
4. नीति-निर्धारकों के लिए एक पथ प्रदर्शक के रुप में अध्ययन उपलब्ध कराना, जिससे वह योजनाओं का निर्माण कर सके।
5. बढ़ती निराशावादी तथा अवसाद की प्रवृत्तियों के कारणों का विश्लेषण करना तथा इन्हें दूर करने के उपायों पर सुझाव प्रदान करना।

अध्ययन के निष्कर्ष - प्रस्तुत अध्ययन में मैंने दोनों ही समुदायों के किशोर एवं किशोरियों का आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियों तथा अवसाद का तुलनात्मक अध्ययन किया, जिसके परिणाम निम्नानुसार प्राप्त हुए :-

1. आदिवासी किशोरों की तुलना में, गैर आदिवासी किशोरों में यह दोनों मापदण्डों का मान उच्च रहा।
2. दोनों वर्गो के किशोरों में आशावादी-निराशावादी तथा अवसाद का विस्तार लगभग समान रुप से पाया गया।
3. किशोरों में, किशोरियों की तुलना में आशावादी-निराशावादी अभिवृत्ति तथा अवसाद बढ़ा हुआ पाया।
4. किशोरों की दोनों समुदाय में तुलना करने पर पाया गया कि गैर आदिवासी किशोरों में आदिवासी किशोरों की तुलना के आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियां अधिक है, जबकि अवसाद का मान कम है।
5. आदिवासी किशोरियों में गैर आदिवासी किशोरियों की अपेक्षा आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियाँ बढ़ी हुई एवं अवसाद का मान कम है।
6. आदिवासी एवं गैर आदिवासी वर्गो की किशोरियों में आशावादी-निराशावादी अभिवृत्तियाँ दोनों वर्गो में स्वतंत्र रही, जबकि किशोरियों में अवसाद भी दोनों वर्गो में स्वतंत्र रहा।
7. गैर-आदिवासी किशोरियों में अवसाद स्पष्टत: अधिक देखा गया।

सुझाव - खरगोन पश्चिम निमाड़ क्षेत्र अत्यंत पिछड़ा और उद्योग रहित क्षेत्र है। जहाँ पर रोजगार के अवसरों की कमी है। इस क्षेत्र में शिक्षा के उच्च संसाधनों का भी अभाव है। यहां के रहवासी मुख्यत: कृषि पर निर्भर करते है। अधिकांश क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से भी उबड़-खाबड़ भरा है। सतपुड़ा की अनेक पहाड़ियाँ इसी क्षेत्र के अंतर्गत आती है। ऐसे में गैर आदिवासी समाज और आदिवासी समाज अनेक भौगोलिक समस्याओं से प्रभावित होते ही है। अधिकांश परिवार आर्थिक रुप से सक्षम नहीं है, इस स्थिति में वह अपने बच्चों का पालन-पोषण करने में अपने आप को असहाय सा महसूस करते है। ऐसे में किशोरों में निराशा व्याप्त है जो कभी-कभी अवसाद का कारण भी बनती है।

1. माता-पिता को संतान पालन की उचित शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए। इस संबंध में खरगोन जिले में कार्यरत स्वयंसेवी संगठन तथ स्वैच्छिक संस्थायें अपनी भूमिका अदा कर सकती है। बशर्ते उन्हें शासन द्वारा उचित सहयोग एवं परामर्श प्राप्त हो।
2. किशोरों के लिए जिला स्तर पर 'परामर्श एवं मार्गदर्शन' केन्द्र होना अनिवार्य है तथा ऐसे किशोरों की पहचान सुनिश्चित होनी चाहिए, जिन्हें यहां तक पहुंचाया जा सके। ऐसे में शासकीय कर्मचारी, स्कूल शिक्षक, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता, पंचायत सचिवों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।
3. अवसाद से ग्रसित किशोरों के लिए अलग से मेडिकल सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए।
4. क्षेत्र में शिक्षा के स्तर को सुधारने के साथ-साथ रोजगार के संसाधनों की सुनिश्चिचता आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाई योगेन्द्रजीत -विकासात्मक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक सदन आगरा, 1952
2. भार्गव उषा (1987) - किशोरावस्था एवं किशोर मनोविज्ञान-प्रकाशक राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
3. शुक्ला अनिता (2007)- अनुसूचित जाति तथा सामान्य वर्ग के किशोरों की सामाजिक परिपक्वता, पारिवारिक संबंध एवं किशोरावस्था की समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन
4. हरलॉक बी.एजिलाबेथ (2007)- विकास मनोविज्ञान हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित
5. डेविड अलका (1988) - किशोरावस्था की सामान्य अवधारणा एवं सिद्धांत किशोरावस्था विवाह एवं पारिवारिक जीवन, शिवा प्रकाशन

****

भारत में महिला उद्यमिताओं का अस्तित्व

डॉ. मुमुक्षा जैन *

शोध सारांश – स्वामी विवेकानंदजी ने कहा था 'जो जाति नारियों का सम्मान करना नहीं जानती, वह न तो अतीत में उन्नति कर सकती है, न आगे उन्नति कर सकेगी' । उन्नति की ओर अग्रसर होने के लिये महिलाओं का पुरुषों के समकक्ष दायित्वों का वहन करना आवश्यक है। इसलिये वर्त्तमान समय में पुरुष उद्यमी ही नहीं वरन महिला उद्यमी भी कई क्षेत्रों में एक दूसरे के कंधे से कंधा मिलाकर विकास की ओर बढ़ रहें है। महिला उद्यमिता को आर्थिक प्रगति का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत माना गया है। महिला उद्यमी अपनें लिए व अन्य लोगों के लिए नए कार्य सृजित करती है और समाज को प्रबंध, संगठन एंव व्यवसायिक समस्याओं के भिन्न–भिन्न समाधन उपलब्ध कराती है। किंतु फिर भी उद्यमियों में उनकी संख्या काफी कम है। महिला उद्यमियों को अक्सर अपना व्यवसाय प्रारंभ करने और उन्हें बढ़ाने में लिंग भेद आधारित बाधाओं का सामना करना पड़ता है– जैसे भेदभावपूर्ण सम्पत्ति, विवाह एवं उत्तराधिकार कानून या सांस्कृतिक परंम्पराएँ ,औपचारिक वित्त प्रणाली तक पहुँच न होना, सीमित गतिशीलता तथा सूचनाओं व नेटवर्क तक सीमित पहुँच आदि । भेदभाव के अलावा महिलाओं की काबिलियत पर सवाल उठाये जाते है, यही वजह है कि महिला उद्यमिता सूचकांक की सूची में शामिल 77 देशें में से भारत 70वें स्थान पर है।

मुख्य शब्द– महिला उद्यमी, उद्यमिता समस्याएं

प्रस्तावना – आजाद भारत में महिलाएं दिन–प्रतिदिन अपनी लगन, मेहनत और सराहनीय कार्यो द्वारा देश के पटल पर अपनी पहचान बनाने में कामियाब हुई है। मौजूदा दौर में महिलाएं नए भारत के आगाज की अहम कड़ी दिख रही है। लबें अरसे के अथक प्रयत्नों के बाद भारतीय महिलाएं समूचे विश्व में अपने पदचिन्ह छोड़ रही है और यह कहना भी गलत नहीं होगा कि पुरुष प्रधान रूढिवादी समाज में महिलाएं निष्चित रुप से आगामी स्वर्णिम भारत की नींव और मजबूत करने का हर संभव प्रयास कर रही है जो सचमुच काबिले तारीफ है। लेकिन यह भी सत्य है कि कुछ जगह पर आज भी महिलाएं घर की चारदिवारी में कैद होकर रूढिवादी परंपराओं का बोझ ढो रही है वजह भी साफ है, पुरुष प्रधान समाज का महज संकुचित मानसिकता से बंधे होना। लेकिन पिछले कुछ समय में भारत ने कई बड़े बदलाव का सामना किया है। प्राचीनकाल में पुरुषों के साथ बराबरी की स्थिति से लेकर मध्ययुगीन काल के निम्न स्तरीय जीवन और साथ ही कई सुधारकों द्वारा समान अधिकारों को बढ़ावा दिये जाने तक भारत में महिलाओं का इतिहास काफी गतिशील रहा है। आधुनिक भारत में महिलाएं राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, प्रतिपक्ष की नेता आदि जैसे शीर्ष पदों पर आसीन हुई है।

योजनाएँ– भारत में अत्यंत लघु, लघु एवं मध्यम उद्यम संगठन, विभिन्न राज्य लघु उद्योग विकास निगम,राष्ट्रीकृत बैंक, और यहां तक कि गैर सरकारी संगठन उन संभावित महिला उद्योगों की आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न कार्यक्रम चला रहें हैं, जो पर्याप्त रुप से शिक्षित और कुशल नहीं है। ऐसे कार्यक्रमों में उद्यमिता विकास कार्यक्रम भी एक है। विकास आयुक्त के कार्यालय ने भी एक महिला कक्ष खोला है, जो विशिष्ट समस्याओं का सामना करने वाली महिला उद्यमियों को समन्वय एंव सहायता उपलब्ध कराता है। केन्द्र सरकार व राज्य सरकार की ऐसी अनेक योजनाएं है जैसे राष्ट्रीय महिला कोष, महिलाओं के लिए व्यापार संबद्ध उद्यमिता सहायता एवं विकास योजना 'ट्रीड', प्रधानमंत्री का महिला रोजगार सृजन कार्यक्रम, माइक्रो ऋण योजना, मिसिंग मिडिल ऋण योजना, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों/ सहकारी बैंकों के लिए पुनर्वित योजना 'आरएसबी' महिला उद्यमी योजना आदि जो जरुरतमंद महिलाओं को प्रशिक्षण –सह–आय उपार्जक गतिविधियों की स्थापना के लिए सहायता उपलब्ध कराती है, ताकि उन्हें आर्थिक रुप से आत्मनिर्भर बनाया जा सकें। भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक सिडबी भी महिला उद्यमियों के लिये विशेष योजनाओं का कार्यान्वयन करता है।महिला उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करने का जिम्मा सरकारी योजनाओं और नीतियों पर भी टिका हुआ है। सरकार द्वारा चलाये जाने वाले कौशल विकास कार्यक्रम भी अपने आप में महिला उद्यमियों के आधार है। अप्रैल 2016 में भारत सरकार ने स्टैंड अप इंड़िया स्कीम प्रारम्भ की जिसका मुख्य उद्देश्य एससी/ एसटी महिलाओं के बीच उद्यमिता को प्रोत्साहन देना है जिसके तहत स्वयं का व्यवसाय प्रारम्भ करने के लिए 10 लाख से लेकर 1 करोड़ तक का कर्ज दिया जा सकता है।

उद्देश्य – यह सही है कि भारत में अब उच्च तकनीकी शिक्षा और प्रबंधन की डिग्री के साथ हर साल पहले के मुकाबले ज्यादा महिलाएं कारोबार के क्षेत्र में कदम रख रही हैं, लेकिन यह भी सही है कि समानता के तमाम दावों के बावजूद उनको इस क्षेत्र में पुरुषों में मुकाबले ज्यादा परेशानियों का सामना करना पड़ता है। इसका प्रमुख कारण है हमारे समाज का नजरिया। बैंकों और वित्तीय संस्थानों को भी उनकी काबलियत पर संदेह होता है इसके कारण व्यवसाय के लिये पूंजी जुटाना काफी कठिन हो जाता है। सामाजिक संबल हेतू बदलते भारत में महिलाओं की साक्षरता दर लगातार बढ़ती जा रही है, परंतु पुरुष साक्षरता दर से अब भी कम है। लड़कों की तुलना में बहुत कम लड़कियां ही स्कूल में दाखिला लेती है।

महिलाओं द्वारा उद्यमशीलता को अपनाने की प्रवृति बहुत धीमें स्वरुप में बढ़ती जा रही है। लेकिन इतिहास पर नजर डाले तो भारत में महिलाओं द्वारा अचार और पापड़ को तैयार करके बेचने का चलन बहुत पुराने समय से चला आ रहा है। और इस क्रम में 1959 में एक भारतीय महिला सहकारी के

* 'वन्दे मातरम' 784, सुदामा नगर, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रुप में प्रमिष्ठित 'लिज्जत पापड़' का जन्म हुआ। आज की तारीख में यह उपक्रम 42 हजार लोगों को रोजगार प्रदान करवाने के अलावा 800 करोड़ रुपये से ज्यादा का टर्न ओवर रखता है। बीएनपी परीबास द्वारा अमरीका, यूरोप, मध्यपूर्व और एशिया के क्षेत्र को कवर करते हुये सन् 2015 में जारी एक रिपोर्ट के अनुसार इन तमाम क्षेत्रों में महिला उद्यमियों के लिहाज से भारत सबसे सक्रिय देश के रुप में सामने आया है। रिपोर्ट यह भी बताती है कि भारत में मौजुद उद्यमियों में से 49 प्रतिशत महिलाएं है और इस प्रकार भारत सक्रिय महिला उद्यमियों के मामलें में हाँगकाँग और फ्रांस से कहीं आगे खड़ा हुआ है। सन् 2013 अक्टूबर/नवंबर में भारत की लगभग आधे बैंक व वित उद्योग की अध्यक्षता महिलाओं के हाथ में थी।

महिलाओं के उद्यमशीलता के क्षेत्र में उतरने के सपनों को वास्तविकता में बदलने के पीछे सबसे बड़े कारण उनके बीच शिक्षा और व्यवसायिक प्रशिक्षण का बढ़ता हुआ दौर है। सामाजिक आर्थिक कारणों के चलते महिलाएं अनेक दिशाओं में अपनी रुचि अनुसार अपनी क्षमतानुसार कार्य कर रही है चाहें वह पालतू जानवरों की देखभाल करने वाली क्लिनीक, ऋण वसूली कंपनियॉ, व्हीलचेयर निर्माण करने वाली कंपनियाँ , टेलीमार्केटिंग कंपनियां, हर्बल उत्पाद, प्रकाशन आदि। इससे महिलाओं के आत्मविश्वास में भी वृद्धि हुई है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत के विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार में लगी हुई महिलाओं का प्रतिशत इस प्रकार है-

कृषि-76.3 मिलियन
विनिर्माण क्षेत्र - 10 मिलियन
सेवा क्षेत्र- 8.5 मिलियन
अन्य क्षेत्र - 7.1 मिलियन

शोध विधि - इस शोध के लिए द्वितीय समंक प्रणाली द्वारा जानकारियों को एकत्र किया गया है। महिलाएं समाज का स्तंम्भ होती है। हमारे आसपास महिलाएं सह्दय बेटियां, संवेदनशील माताएं, सक्षम सहयोगी और अन्य कई भूमिकाओं को बड़ी कुशलता व सौम्यता से निभा रही है। लेकिन आज भी दुनिया के कर्द हिस्सों में समाज उनकी भूमिका को नजरअंदाज करता है। इसके चलते महिलाओं को बड़े पैमाने पर असमानता, उत्पीड़न, वित्तीय निर्भरता और अन्य सामाजिक बुराइयों का खामियाजा वहन करना पड़ता है। सदियों से यह बंधन महिलाओं को पेशेवर व व्यक्तिगत शिखरों को प्राप्त करने से अवरुद्ध करता है। लेकिन अब इन परिस्थितियों में बदलाव आ रहा है। भारत महिला उद्यमिता को लेकर क्रांति के छोर पर बैठा है। और समय के साथ महिलाओं की सफलता की सूची अब लंबी होती जा रही है।

आमतौर पर महिलाएं आजीविका अर्जित करने में हिस्सेदारी रखती है लेकिन मोटेतौर पर उनका काम छोटे स्तर पर ही सीमित रहा या उनकी अनदेखी होती रही। पापड़ अचार व उन जैसी घरेलु वस्तुओं को बनाने से लेकर तो सिलाई, कपड़ें बुनने और एम्ब्रायडरी तक, डायरेक्ट सेलिंगएम्वे और टपरवेयर जैसी कंपनियों के लियेय तक ,घर पर टयूशन देने तक और यहां तक कि छोटे कार्यक्रमों में केंटरिंग तक का रहा है। किसी ना किसी तरह महिलाएं उद्योग से जुड़ी ही रहती है। लेकिन अब समय में बदलाव आ रहा है टेक्नोलॉजी, शिक्षा और फंड़िग व मार्केटिंग के बढ़े हुये चैनल्स की वजह से महिलाएं उद्यमी बनना चाहती है अपना स्वयं का व्यापार प्रारंम्भ करना चाहती है।

इन प्रयासो में कई स्तरों पर कई तरह की समस्याएं है। इसमें एक बड़ा कारण है महत्व ना देना।फंड़िग संसाधनों की कम जानकारी और उनके कारोबार को मदद देने वाली योजनाओं के बारे में जानकारी ना होना भी एक कारण है। कई बार सहयोगी परिवार का ना होना भी महिला उद्यमिताओं के पैर की बेड़िया बन जाता है। हमारे समाज का तजरिया भी महिला स्टार्टअप की तुलना में पुरुष स्टार्टअप को ज्यादा महत्व देता है। जागरुकता प्रोत्साहन देने वाला नजरिया और मूल्य व्यवस्था में बदलाव की जरुरत महसूस होती आ रही है। इस हेतू भारत सरकार ने अप्रैल 2016 में स्टैडअप इंडिया स्कीम प्रारंभ की है।

समय के साथ साथ परिस्थितियों में बदलाव आया है लेकिन उतना नहीं जितना अपेक्षित था फिर भी सराहनीय है, जैसे सन् 2012 में लिंक्डइन द्वारा अधिग्रहित की गई कंपनी स्लाइडशेयर की संस्थापक **रश्मि सिन्हा** को फास्ट कंपनी द्वारा वेब 2.0 में विश्व की टॉप 10 वूमेन इन्फलूएंसर के रुप में नामित किया। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रयोग करते हुये समस्याओं को हल करने वाली कंपनीमैड स्ट्रीट डैन की संस्थापक **अश्विनी अशोकन** ;लाखों का राजस्व कमाने वाली ऑनलाइन रीटेलर इन्फीबीम की संस्थापक **नीरुशर्मा**; शहरी क्षेत्र के निवासियों को पाईप्ड पानी की उपलब्धता के बारे में जानकारी देने वाली नेक्स्टड्रॉप की संस्थापक **अनुश्रीधरन**, शांति लाइफ के माध्यम से झुग्गियों में रहने वाले लोगों को व्यवसाय प्रारम्भ करने के लिये सहायता उपलब्ध कराने वाली शीतल वॉल्श और प्रतिभाशाली महिला पेशेवरों को कामकाज के अवसर प्रदान करवाने में मदद करने वाली शीरोस की संस्थापक **साइरी पहल**। समय के साथ यह सूची बढ़ती ही जा रही है और इसी के साथ दुनिया में यह धारणा मजबूत होती जा रही है कि आने वाले समय में महिला उद्यमी भारतीय अर्थव्यवस्था पर एक जबरदस्त प्रभाव छोडने में सफल रहेंगी। ऐसे कई नाम है जो दुनिया के समक्ष अपना प्रभाव दिखा चुके है जैसे **अखिला श्रीनिवासन** मैनेजिंग डाइरेक्टर श्रीराम इनवेस्टमेन्ट लिमिटेड, **ज्योति नायक** प्रेसिडेंट लिज्जत पापड़, **प्रिया पॉल** चेयरमेन ऐपीजे पार्क होटल, **राजश्री पथय** चेयरमेन राजश्रीशुगर एंड़ केमिकल्स लिमिटेड, **रीतू कुमार** फैशन डिजाईनर और ऐसे अनेकों नाम है जो दुनिया में उद्योग क्षेत्र में धूम मचा रहें है।

देश में जो महिलाएं व्यवसाय करना चाहती है उन महिलाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करने और उन्हें औपचारिक बैंकिंग संस्थानों से जोड़ने के लिये 2013 में भारतीय महिला बैंक लिमिटेड 'बीएमपीएल' की स्थापना की गई थी। इस बैंक का प्रमुख **उद्देश्य** है भारतीय महिलाओं को नॉन बैंकिंग फाइनेंसर्स और साहूकारों से दूर रखना। इनमें छोटे-छोटे दलाल और निजी संस्थान सम्मिलित है। जो पारंपरिक तौर पर महिलाओं की बचत को खत्म कर देते है और कर्ज के बदले मोटी रकम वसूलते है। ऐसा घटनाओं में महिलाओं के साथ धोखाधड़ी और उच्च ब्याज दर वसूलने की आशंका ज्यादा रहती है।

निष्कर्ष- महिला उद्यमी एक बेहद कीमती संसाधन है और महिलाओं के बीच उद्यमिता की बढ़ती हुई प्रवृत्ति स्वागत योग्य है। महिलाएं स्वभाव से मजबूत, धैर्यवान, प्रतिस्पर्धी, साधन संम्पन्न होती है। उनके पास व्यापार को संचालित करने के लिये बेहद आवश्यक दृष्टिकोण और नई सोच को अपनाने की क्षमता है। सन् 2014 की ग्लोबल जेंड़र रिपोर्ट के अनुसार भारत में कर्मचारियों की कुल संख्या का एक तिहाई से कुछ अधिक हिस्सा महिलाओं का है जिसके चलते जीडीपी को बढ़ाने में उनकी योगदान और रोजगार के अवसर पैदा करने की क्षमता भारतीय अर्थव्यवस्था के लिये एक गेम चेंजर साबित हो सकती है।

महिला उद्यमियों को सामान्यतया अपने उत्पादों के विपणन करने में निरंतर बाधाएं उठानी पड़ती है क्योंकि विपणन क्षेत्र में पुरुषों का बाहुल्य है जिसके कारण महिलाएं पर्याप्त अनुभव होने पर भी विशेष स्थान प्राप्त नहीं कर पाती। महिला उद्यमी को बडे ज़ोखिम वहन करने की क्षमता अत्यंत कम

होती है। पुरुषों की तरह महिलाएं एक स्थान से दूसरी स्थान पर उतनी आसानी से व्यवसायिक यात्रा नहीं कर पाती। उन्हें विपणन के संबंध में देर रात बात रहने, दूरस्थ स्थानों में जाना अति मुश्किल प्रतित है।

कई सामाजिक संस्थाए महिलाओं के विकास के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम भी चलाती है। उनका मानना है कि महिलायें अपने घरों में साफट खिलौने बनाना पेंटिंग कशीदाकारी, पेचवर्क, कढ़ाई बुनाई करना, लकड़ी के खिलौने बनाना, पूजा के बर्तन बनाना आदि कार्य बहुत सफलतापूर्वक संचालित कर सकती है। साथ ही वे अन्य महिलाओं को भी प्रशिक्षित कर लेती है। यही नहीं आर्थिक लाभ व आय भी अर्जित कर लेती है। इसके अलावा आसपास की महिलाओं व युवतियों को रोजगार भी उपलब्ध करवा सकती है। महिलाओं में नये- नये उत्पादों के सृजन, सजावट और रोचक प्रस्तुतिकरण करने के लिये एक विशेष विद्या होती है। इस प्रकार बनाई गई वस्तुओं की अन्तराष्ट्रीय बाजारों में बहुत मांग है।

महिला उद्यमियों की राह की बाधाएं दूर करने के लिये अभी बहुत कुछ किया जाना बाकि है,इनमें बैंक खातों तक पहुँच आसान बनाना, वित्तीय प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ करना और पूंजीगत जरुरतों को पूरा करने के लिये उपाय तलाशना मुख्य है। अपनें उद्यम के प्रारम्भिक दौर में उन्हें निजी पूंजी के सहारे आगे बढ़ना पड़ता है जोकि कई बार जोखिम भरा निर्णय हो जाता है इसलिये कई बार महिला उद्यमी कुशल होने के बावजूद भी आगे नहीं बढ़ पाती है। सरकार का भी इस ओर ध्यान गया है और वह भी इस तरह की कठिनाईयों को दूर करने के प्रयासरत है जिससे महिला उद्यमियों की संख्या में कोई कमी ना आये और वे बिना रुके बिना थके प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ती रहें। इस हेतू सरकार द्धारा राष्ट्रीयकृत बैकों को महिला उद्यमियों के लिये खास तौर पर कर्ज की योजनाएं प्रारम्भ की है इनमें अन्नपूर्णा योजना, देनाशक्ति योजना ,उद्योगिनी योजना, स्त्रीशक्ति योजना, महिला उद्यम निगम योजना आदि सम्मिलित है जो कि महिला उद्यमिताओं के लिये एक मजबूत आधार प्रदान करेगी जो आज के समय की मांग है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इंमपावरमेन्ट ऑफ वूमेन इन इंडिया - करनी पदमावती
2. वूमेन इंमपावरमेन्ट डॉ रविप्रकाश यादव
3. वूमेन इंमपावरमेन्ट थ्रू एजुकेशन- महानंदा चन्द्रकान्त दलवी, डॉ रमेश धागे
4. नारी उत्थान की समस्या और समाधान-श्रीरामशर्मा आचार्य,डॉ प्रणव पंड्या
5. विश्व की महान नारियाँ भाग -1 - श्रीरामशर्मा आचार्य
6. नारी को उसका उचित सम्मान देना ही होगा - भगवती देवीशर्मा
7. वूमेन इंटरप्रीनियोरशिप- मृदुला वेलागपुडी

****

'Role-Playing' As An Effective English Teaching Technique : A Study

Dr. Uttam.B. Parekar *

Introduction - Drama is a composite art form of literature. A dramatic performance definitely appeals to the emotions and intellect of the audience. Though a stage-performance of an interesting drama is a formal activity, it definitely involves the audience in the action of the play to a great extent. It leaves such everlasting impressions on their minds that they come out of the theatre muttering some dialogues and humming some songs. The basic reason behind this fact is that stage-performance of a drama takes the audience away in the world of dramatic experiences and makes them feel that they are part and parcel of the dramatic action. This process of the conditioning of the audience's mind is the ideal situation in which the audience lingers under the impact of the play performance. An academician believes that the success of imparting the skills of hearing and speaking to students is dependent upon the teacher's skill of creating a class-room situation. By giving a short training in acting and dialogue delivery to students a skilled teacher can render any teaching item in the form of a dramatic performance in the class-room. This method will help students in a long way exhorting their fear of English and acquiring the skills of hearing and speaking of English learning. A teacher trained in the art of dramatic rendering can dramatize any given teaching item into an interesting situation and can certainly make his teaching effective and fruitful. Dramatic rendering becomes more effective when it is pervaded by the nostalgia of students' life experiences. Employing this principle of student's psychology a teacher can make use of emotive and evocative dramatic tools to influence students' learning experience. However, the use of 'role-playing' in teaching process will enable a teacher to prepare his students to the processes of 'conditioning of mind', 'interactive class-room situations' and 'creative sessions'.

Keeping in view the place of English as a 'window to the world', a library language and a language functioning as a unifying factor of our nation, teaching of English is made compulsory in our school and university curriculum. Pt. Jawaharlal Nehru, while placing the bill of 'The Official Language Act, 1963' before the parliament session had emphatically stated, "If you push out English, does Hindi fully take its place? I hope it will. I am sure it will. But I wish to avoid the danger of one unifying factor being pushed out without another unifying factor fully taking its place." Stressing the importance of English as a key to the store-house of knowledge Dr. Radhakrishnan in his University Commission Report (1949) says, "Unable to have access to this knowledge our standards of scholarship would fast deteriorate and our participation in the world movement of thought would become negligible." Today, our Constitution has recognized English as 'an associate official language of the union of India'. A brief historical perspective throwing light on the process of English becoming a major language of education and administration in our country will definitely reveal the need to teach English language to school and college students still more effectively.

The story of English in India has a long history narrating the intimate contact of 150 years with British particularly in the fields of culture, administration and education. After having colonized India the English men needed clerks and administrators to carry out the business of their trade and Govt. administration. To fashion Indian youths into 'a class of people, Indian in blood and colour, but English in taste, in opinions, in morals and in intellect' Lord Macaulay, in his report, suggested the contemporary British Govt. to implant English system of education in India. British wanted cheap clerks and trained workers to carry on the business of their trade and rule in the country. "British achieved their aim not only by introducing English but by reinforcing it as a part of Indian culture." For this purpose they supported the anglicized movements led by educated Indians. The declaration made by Lord Hardinge in 1844 that preference would be given to Indians educated in English schools in Govt. services inspired some Indian educationists and social reformers to open such schools and colleges in India; and British Govt. allocated some funds for that purpose.

British Govt. imparted status to English in all walks of life; thus, English became official language of courts, banks and administration in India. Those days there was no one rich language with Indians useful to unify all states. Therefore English, rich in all respects, became a popular means of communication. In pre-Independence era English

* Yeshwant Mahavidyalaya, Wardha (Maharashtra) INDIA

occupied a privileged place for it was the language of administration, a medium of instruction at school, college and university level, and a compulsory language for employment. In school curriculum the task of a teacher was not to impart subject knowledge of a particular subject to the students but to use it to strengthen their ability of English communication.

With the attainment of Independence in 1947, the position of English in the academic curriculum and in the national life came to be seriously questioned. The absolute importance of English declined. C. Rajagopalachari said, "We in our anger against the British people should not throw away the baby (English language) with the bath water (English people)." Pt. Jawaharlal Nehru observed,

Indian languages have suffered psychologically and otherwise because of English, yet they have gained a great deal too from contacts with the wider world …however, English can not be in India anything but a second language in future.

Thus, the status of English, which was of high order during British rule, had gone under a great change after independence. English language which served as a great unifying force in the struggle for independence and in the awakening of masses from ignorance, as per the dictation of Constitution, came to be recognized as 'an official language of the union of India' until Hindi would be enriched so as to replace it (English). Keeping aside the controversial issue of the importance of English in Indian life, with the passage of time importance of English is marked ever growing in the context of new developments in the fields of science, technology, industry, marketing and service sector. Today English is important to us for it is a national link language; it is the world's lingua-franca; it is a library language; and it is a compulsory language for prospects of employment in multi-national companies.

Hypothesis - The objective of this paper is to assess the usefulness of role-playing in the teaching of English language. Objective of this paper is to show how 'Role-Playing Technique' is useful in teaching of English language in class-room.

Position of English in School and University Curriculum - After Independence the position of English underwent a great change. It must be admitted that the importance of learning English can not occupy the same place in the school and university curriculum as it did in the past. In the present curriculum English is not used as the medium of instruction; it is learnt and taught only from the practical point of view. The main purpose of teaching English is to enable the pupils to listen, to speak, to read and write English correctly. Thus, English is taught as a language and not as a literature. The Official Language Commission appointed by the Govt. of India clearly shows the position of English in our educational system:

Since we need knowledge of English for different purposes, the content and character of that language as well as the method of imparting it have to undergo a change. English has to be taught hereafter, principally as 'language of comprehension' rather than as literary language so as to develop in the students learning faculty for comprehending writings in the English language…The requirement of knowledge for comprehending English is mainly a matter of understanding the basic grammar and structure of language and thereafter, principally, a question of widening the vocabulary in the desired direction.

Mudliar Commission (1953) and Kothari Commission (1964-66) suggested the Three Language Formula in which English has been placed as a second or third language. It is expected that English should be one of the compulsory subjects and it should be taught as a second or third language. It is also recommended that English should be taught from V or VIII standard.

The position of English in respect of teaching is not so far good. Most of the schools do not have good English teachers. The result is that the standard of teaching and learning English has been deteriorated. English is taught from examination point of view, and students cannot achieve mastery over language skills.

The Concept of Role-Playing -'Role-Playing' is an activity (especially in language teaching or treating mentally ill people) in which person acts a part. 'Role play', which is also known as 'role playing', signifies acting of characters or situations as an aid in language teaching or psychotherapy. This is a very effective teaching device which touches upon the language skills of listening and speaking and makes the learning experience go supplemented with theatrical actions. Originally 'Role-Playing' is a theatrical device which refers to the acts of 'performance', 'acting', 'narration', 'monologue', 'dialogue' etc. Being a theatrical device it has potential to enhance the effect of the presentation. When used in the course of teaching it works wonders. It mesmerizes students and the import of the teaching items goes direct deep into the core of students' psychology.

'Role-Playing' is a comprehensively and widely used pedagogical device with a view to make learning experience concrete and effective. In a class-room situation a trained teacher can employ this device to act out the part of a character portrayed in a unit of teaching. A trained teacher may use this device to personify the inanimate objects delineated in the unit of teaching. 'Role-Playing' is a device which enables a teacher to bring home the idea of situation through his skillful presentation.

Language learning is a slow and long time process which passes through the stages of 'comprehension', 'retention', 'assimilation' and 'creativity'. The teaching device of 'role-playing' makes students pass through all these stages of learning experience. It turns a class-room into a psychiatrist's consultation clinic where teacher operates on the students' language learning faculty. With this technique a skilled teacher can create favourable class-room situations and at required point of time he can acquaint his subject with the ways English expressions are made. Under

the guidance and initiation of teacher students can be ushered into the flux of competition and the students, in free and fearless class-room situation, will feel encouraged to make sentences using the words and phrases explained.

For the purpose of demonstrating the effective use of 'role-playing' as a pedagogical device I wish to take up Robert Browning's poem 'Porphyria's Lover' for experimentation. In the present demonstration my objective is to acquaint audience with the poet's typical style of using words and phrases. If carried out in the class-room, such an experiment will enrich students' vocabulary. It adds joy to the teaching process and students find interest in learning the language through these innovative techniques. The device of 'role-playing' definitely enhances the process of learning language and it enables the learners to use the words and phrases in making their language florid. To follow a certain system I wish to employ 'narration', 'acting' and 'performance' as the principles of 'role-playing' which make the teaching process effective and fruitful. The method used in this experiment is inductive and the subject will be motivated to model their responses on the poet's way of using the words and phrases.

Teaching Items:

1-Presentation of Situation: 'to set in', 'to be awake', 'to tear…down', 'to listen with heart fit to break', 'to glide in', 'which done,…'

2-Demonstration: 'withdraw (something)', 'let (something) fall', 'put (something) about (something)', 'to make (something) bare'

3-Facial & Physical Gestures:'to look up', 'happy and proud', 'to make (one's) heart swell', 'to be mine'

'PORPHYRIA'S LOVER' **Teaching items**
(Robert Browning)

The rain **set** early **in** tonight, 'to set in'
The sullen wind **was** soon **awake**, 'to be awake'
It **tore** the elm-tops **down** for spite, 'to tear…down'
And did its worst to vex the lake,
I **listened with heart fit to break**. 'to listen with heart fit to break'
When **glided in** Porphyria; straight 'to glide in'
She shut the cold out and the storm,
And kneeled and made the cheerless grate
Blaze up, and all the cottage warm:
Which done, she rose and from her form 'Which done…'
Withdrew the dripping cloak and shawl.'to withdraw (something'
And laid her soiled gloves by, untied
Her hat and **let** the damp hair **fall,**'to let (something) fall'
And, last, she sat down by my side
And called me. When no voice replied,
She **put** my arm **about** her waist, 'to put (something) about (something)
and**made** her smooth white shoulder **bare**'to make (something) bare'
And all her yellow hair displaced,
And, stooping, made my cheek lie there,
And spread o'er all her yellow hair,
Murmuring how she loved me - she
Too weak, for all her heart's endeavour,
To set its struggling passion free
From pride, and vainer ties dissever,
And give herself to me for ever.

But passion sometimes would prevail,
Nor could to-night's gay feast restrain
A sudden thought of one so pale
For love of her and all in vain;
So, she was come through wind and rain.
Be sure I **looked up** at her eyes 'to look up'
Happy and proud; at last I knew 'happy and proud'
Porphyria worshipped me; surprise
Made my heart swell, and still it grew 'to make (one's) heart swell'
While I debated what to do.

That moment she **was mine**, mine, fair 'to be mine'
Perfectly pure and good: I found
A thing to do, and all her hair
In one long yellow string I wound
Three times her little throat around,
And strangled her. No pain felt she;
I am quite sure she felt no pain.
As a shut bud that holds a bee,
I warily oped her lids; again
Laughed the blue eyes without a stain.
And I untightened next the tress
About her neck; her cheek once more
Blushed bright beneath my burning kiss:
I propped her head up as before,
Only, this time my shoulder bore
Her head, which droops upon it still:
The smiling rosy little head,
So glad it has its utmost will,
That all it scorned at once is fled,
And I, its love, am gained instead!
Porphyria's love : she guessed not how
Her darling one wish would be heard.
And thus we sit together now,
And all night long we have not stirred;
And yet God has not said a word!

Conclusion - It is a commonplace practice among today's youths to use gesticulations & body-language in their speech act. If this trait of their life style is invested in class-room teaching, definitely, teaching could be made effective, involving & fruitful. Naturally students like humour& acting hence they get totally involved in the teacher's acting performance. Furthermore it enables a teacher to well settle them in their subconscious. Such performances provide contexts for the students to remember the words & phrases by & by. This pedagogical tool helps teachers develop informal relationship with students. Once a word or a phrase is learnt in terms of meaning & its use in sentence it interests

students use it very often in speaking & writing. However, 'Role-Playing' helps a teacher make his class-room teaching interesting in a big way.

References :-

1. Palmer, H.E.: Principles of Language Teaching, OxfordUniversity Press: London 1964.
2. French, F.G.: 'The Teaching of English Abroad', English in Tables, OxfordUniversity Press: London 1971.
3. Gurreym P.: Teaching English as a FoeignLnguage, University of London Publication: London 1961.
4. M.S. Sachdeva: A New Approach to Teaching of English in India, Atlantic Publishers and Distributors: New Delhi 2002
5. Kochhar, S.K.: Methods and Techniques of Teaching, Prestige Books: New Delhi 2000.
6. Dandekar, W. N.: Evaluation in Schools, Atlantic Publishers and distributors: New Delhi 2001
7. Browning, Robert: 'Porphyria's Lover', Fifteen Poets, Oxford University Press: New Delhi 1986.
8. Gurav, H.K.: Teaching Aspects of English Language, Prestige Books: New Delhi 1992.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

An Analytical study of Non Performing assets in State Bank of India

Amrita Soni* Dr. Ashish Pathak**

Introduction - The banking system plays a vital role in the development of its sound economy. Banking is an important segment of the tertiary sector and acts as a back bone of economic progress. Banks are supposed to be more directly and positively related to the performance of the economy. Banks act as a development agency and are the source of hope and aspirations of the masses. They are the oldest form of banking institution having large volume of operations over a vast area. They are having very good net-work of branches even in rural and semi-urban areas They are the oldest form of banking institution having large volume of operations over a vast area. They are having very good net-work of branches even in rural and semi-urban areas. Now they are not only engaged in their traditional business of the accepting and lending money but have diversified their activities into new fields of operations like merchant banking, leasing housing finance, mutual funds and venture capital. State Bank of India is an Indian multinational,

The 8 Banking subsidiaries are:-

1. State Bank of Bikaner & Jaipur (SBBJ)
2. State Bank of Hyderabad (SBH)
3. State Bank of India (SBI)
4. State Bank of Indore (SBIR)
5. State Bank of Mysore (SBM)
6. State Bank of Patiala (SBP)
7. State Bank of Saurashtra (SBS)
8. State Bank of Travancore (SBT)

Non Performing Assets:- The Non Performing Asset (NPA) concept is restricted to loans, advances and investments. As long as an asset generates the income expected from it and does not disclose any unusual risk other than normal commercial risk, it is treated as performing asset, and when it fails to generate the expected income it becomes a "Non Performing Asset". In other words, a loan asset becomes a Non Performing Asset (NPA) when it ceases to generate income, i.e. interest, fees, commission or any other dues for the bank for more than 90 days. A NPA is an advance where payment of interest or repayment of instalment on principal or both remains unpaid for a period of two quarters or more and if they have become „past due. An amount under any of the credit facilities is to be treated as past due when it remain unpaid for 30 days beyond due date. It is also called as Non Performing Loans.

Net NPA = Gross NPA – (Balance in Interest Suspense account + DICGC/ECGC

Deposit Insurance and Credit Guarantee Corporation (DICGC)

Export Credit Guarantee Corporation of India Limited (ECGC)

Claims received and held pending adjustment + Part payment received and kept in suspense account + Total provisions held).

Types of NPA:-

a) Sub-standard Assets
b) Doubtful Assets
c) Loss Assets

Literature Review:- Review of literature is important part of the scientific research. It enables the researcher to understand different aspect of the study or the problems to be investigated.

1. Pathrose, P.P.(1998)- hold the view that the introduction of straight NPA norms and the standardization of provisioning requirements along with revised disclosure norms and new accounting standards have changed the situation altogether and the mounting provision for NPA is a cause of drain in the profitability of banks.

2. Wahab (2001) has analyzed the performance of the commercial banks under reforms. He also highlighted the major issues need to be considered for further improvement. He concluded that reforms have produced favourable effects on performance of commercial banks in general but still there are some distortions like low priority sector advances, low profitability etc. That needs to be reformed again.

3. Barthetal (2001) using cross country data on commercial bank regulation and ownership from over 60countries find that state ownership of banks is negatively associated with bank performance and overall financial sector development and does not reduce the likelihood of financial crises.

4. Mishra, T.P. (2003) revealed the high rise in gross and Net NPA of the banking sector in the recent past as the

*Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA
** Professor (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

exponential rate giving an indication, that the ongoing recession was taking a heavy toll on corporate audit discipline. This was further supported by recovery climate, legal system, approach of the lenders towards lending and many other factors. Despite myriad problems and existing set up, bans had to perform well and achieve the target for NPA reduction affixed as per international standard.

5. Kaur, H. and Pasricha, J.S. (2004) - Highlight the problem of non performing assets in public sector banks. The study covered the prudential norms given by RBI and also analysed the NPA management policies of public sector bank. Authors suggested that for effective handling of NPAs on profitability amongst bank staff, particularly the field functionaries. Bankers should have frequent interaction and meeting with the borrowers for creating better understanding and mutual trust.

6. Bhatia (2007) - Explored an empirical approach to the analysis of NPAs of public, private sectors banks in India. NPAs are considered as an important measuring rod to judge the performance and financial health of banks. The level of NPAs is one of the drivers of financial stability and growth of the banking sector.

Objective:- A specific result that a person or system aims to achieve within a time frame and with available resources Objective of the study play the important role to find the result

1. To study the Gross Non-Performing Assets level in Public Sector Banks in India.
2. To study the Financial Position of State Banks of India.
3. To compare the, Gross NPA and Advances of State Bank of India

Hypothesis:- A hypothesis is an educated prediction that can be tested. You will discover the purpose of a hypothesis then learn how one is developed and written.

1. The NPA level is continuous increasing in Public Sector Banks.
2. The Gross NPA Ratio is directly affect of Public Sector Banks is Stable.
3. Due to largest bank in Public Sector, State Bank of India should reduce their NPA.

Research Methodology:- The nature of research is methodology study is aimed at exploring the impact of securitization Act on the NPA's in the banking sector.

Data is collected and analyzed to create information suitable for making decisions. Data is a set of values of qualitative or quantitative variables Restated, pieces of data are individual pieces of information. Data is measured, collected and reported, and analyzed, where upon it can be visualized using graphs or images. Data as an general concept refers to the fact that some existence information or knowledge is represented or coded in some form suitable for better usage or processing.

Importance of Non – Performing Assets has become more and more since the formation of Shri M. Narshimham Committee on banking sector reform in 1991.We can say that it is a second landmark in banking sector in India after nationalization of banks. of data is considered to be highly skilled and technical job which should be carried out .Only by the researcher himself or under his close supervision. Analysis of data means critical examination of the data for studying the characteristics of the object under study and for determining the patterns of relationship among the variables relating to it's using both quantitative and qualitative methods.

After nationalization of banks it has been given much attention on the lending policy of nationalized banks but not much attention has been given to the recovery of advances of nationalized banks by Reserve Bank of India (RBI). Recovery of non – performing assets has become critical performance area for all banks in India. As per RBI report, March 1999, the gross NPA of all the scheduled commercial banks and primary co – operative banks have gone up to Rs. 58,554 crores India (RBI) introduced a new set of prudential norms in April, 1992 for commercial banks and subsequently it has been extended, in stages to urban co-operative banks as well, as per the recommendations of high power committee on urban co-operative banks constituted in May 1999 under the chairmanship of K. Madharao as a need for strengthening the co-operative sector in order to enhance operational efficiency, productivity and profitability and with the objective of implementing international. best practices in Indian banks, it is compulsory for all banking institutions to comply with prudential norms of RBI.

Table-1 : Gross NPA of SBI

YEAR	GROSS NPA SBI	In %
2010-2011	25,326.29	100
2011-2012	39,676.46	156.6611612
2012-2013	51,189.39	202.1195761
2013-2014	61,605.00	243.2452602
2014-2015	56,725.00	223.9767451
2015-2016	98,172.80	387.6319824
2016-2017	112,342.99	443.5824987

(Source: Annual report of SBI Bank)

Graph-1 : Gross NPA of SBI (in Rs.)

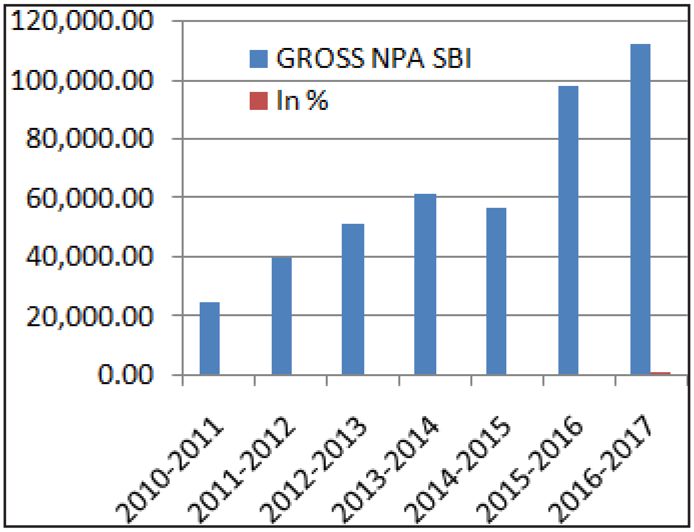

Table-2 : Advances of State Bank Of india

YEAR	ADVANCES of SBI	In %
2010-2011	756,719.45	100
2011-2012	867,578.89	114.6500054
2012-2013	1,045,616.55	138.1775703
2013-2014	1,209,828.72	159.8781054
2014-2015	1,300,026.39	171.7976709
2015-2016	1,463,700.42	193.4270911
2016-2017	1,571,078.38	207.6170211

(Source: Annual report of SBI Bank)

Graph-2 : Advances of State Bank of India

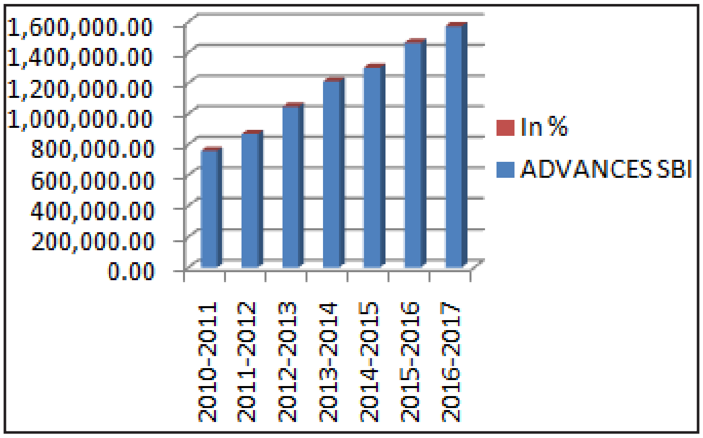

Findings, Analysis and Recomondation:- we have study last 7 years data of state bank of India of Advances,Gross NPA. We observe the every year Advances increases as well as NPA also increases. And we present the all data from SBI balancesheet. The NPAs have always been a big worry for the banks in India. The Indian banking sector faced a serious problem of NPAs. . A high level of NPAs suggests high probability of a large number of credit defaults that affect the profitability and liquidity of banks. The extent of NPAs has comparatively higher in public sectors banks. To improve the efficiency and profitability, the NPAs have to be scheduled

Scope Of Study:- The NPAs have always been a big worry for the banks in India. The Indian banking sector faced a serious problem of NPAs. . A high level of NPAs suggests high probability of a large number of credit defaults that affect the profitability and liquidity of banks. The extent of NPAs has comparatively higher in public sectors banks. To improve the efficiency and profitability, the NPAs have to be scheduled. Various steps have been taken by government to reduce the NPAs. It is highly impossible to have zero percentage NPAs. But at least Indian banks should take care to ensure that they give loans to creditworthy customers. The study will lead to evaluate the non-performing assets and there effect on current valuation of banking performance. The study of NPA growth will give the direction and reason for increasing the dead block. How and why is the major concern of my study and it will give the direction to identify the reasons to modify the outcomes? The outcomes of study will help the bankers to check the day to day operation to reduce the NPA in there current account.

Conclusion:- In the present competitive global environment, the management of NPA is becoming critical and has become the need of the hour. The banking sector to become effective, NPA management must be an exercise for the entire bank from the Board down the last level. NPA particularly, its increased trend during financial crisis highlights the need for effective credit risk management mechanism. NPAs are draining the capital of the banks and weakening their financial strength. It is also as much a political and a financial issue. NPA directly effect to banks position. The banks and financial institutions should be more proactive to adopt pragmatic and structured non-performing assets management policy where prevention of non-performance assets receives priority. As compared to private sector banks, public sector bank is more in the NPA level. Public Sector bank must take more care in avoiding any account becoming NPA by taking proper preventive measures in an efficient manner.

References :-

1. Kothari C.R. Research Methodology, new age international publication 4835/24 Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-110002
2. Amarchand, D, Ed. Research Methods in Commerce, Madras: Emerald, 1987.
3. Agarwal, A.N, Indian Economy, New Delhi: Vikas Publishing House, 1994.
4. The Evolution of Bankings by Robert Harrison Howe - C. H. Kerr & co , 1915
5. Jain, Vibha Management of Non Performing Assets in Commercial Banks", Regal Publications, New Delhi, 2007
6. Singh Rajendra, Empowering Banks for Recovery of Non-performing Assets (NPAs), the Journal of Indian Institute of Banking & Finance, P.5 ,2005.
7. Naryanan V. (2000), NPA Reduction The New 'Mantra' of Slippage Management ,MID-Term Review of Monetary & Credit Policy, A BankingJournal, Published by Indian Bank's Association Mumbai , Vol. XXII No 10,Oct. 2000.
8. Mohan, Rakesh (2003).Transforming Indian Banking: In Search of a Better Tomorrow, Reserve Bank of India. Reserve Bank of India Bulletin, Speech article. January, 2003.
9. Prasad M., Sinha, K. K. and Prasad, K. M. (2004), Post-reform Performance of Public Sector Banks with Special Reference to Non-performance Assets, Edited Book Banking in the New Millennium, New Delhi

****

Performance Analysis of Pre and Post-Merger & Acquisition of SBI & Associate Bank (with Special Reference to State Bank of Saurashtra)

Dr. Mahesh Gupta* Prof. Jaikishan Sahu**

Abstract - The purpose of the present paper is to analyze the pre and post -merger performance of State Bank of India with the help of various parameters such as Deposits, Advances, Net Profits, Employees,and Branches. T-test is applied for the purpose of testing the statistical significance of various parameters. The study is based on secondary data covering eight years annual data of pre and post- merger period. The study reveals that the State Bank of India (SBI) does not shows significant improvement in the performance in the post-merger period. There are some of the parameters have shown significant improvement during the post-merger period while most of the parameters have not shown significant improvement during the post-merger period.
Keywords - Performanceparameters, Merger and Acquisitions, Pre and Post-Merger, CAGR.

Introduction - Banking Sector in India has witnessed many Mergers during the years for various reasons such as Restructuring of Weak Banks; Economies of Scale; Expansion of Market; Business Consolidation etc. Looking into the history of Mergers in Banking Sector in India, initially they have taken place as a measure to protect the interests of the customers of the weak banks but subsequently a few Mergers also have take place voluntarily in the Post Liberalization Period between various banks for several reasons.

Merger of two weaker banks or merger of one health Bank with one weak bank can be treated as the faster and less costly way to improve profitability then spurring internal growth . The main motive behind the merger and acquisition in the banking industry is to achieve economies of scale and scope. Mergers also help in the diversification of the products, which help to reduce the risk.Mergers & Acquisitions can be used as a strong tool in order to revive the business of the failing companies. However M&As are not always successful. They may also turn into loss making institutions which are more harmful than beneficial for business. Thus a careful and conscious use of the resources should be made in order to ensure that an M&A is adequately profitable for any given business.

Mergers - A merger happens when two companies combine due to mutual agreement. Mergers are often misunderstood to be acquisitions. Acquisition is when one large company buys and subsumes another company, thus making the latter non- existential in terms of title and control. However, in most mergers, companies merge to form a completely new organization. Mergers happen for various reasons and in various ways. The direction of the merger is usually fuelled by the reason behind the merger. The two major types of Mergers are:

(a) Horizontal Merger- A horizontal merger occurs between two companies at equal degree of competition. This merger usually takes place to minimize the costs and maximize the synergy between the 2 companies. For example, when 2 companies merge, one of the companies which is operating in an old factory but has valuable land, can sell its land, and produce its products in the factory of the other company. This increases the profits as well as reduces the administrative costs, by using the administrative staff of only one of the companies.

(b) Vertical Merger- In a vertical merger, a company merges with either a supplier or a customer. For example, under merger with the supplier, a food processing company may merge with an industrial agricultural company, so that it gets a continuous supply of agricultural products. Under merger with customer, the food processing company may merge with a retail store, in order to market its products to the customers directly.

Acquisitions The acquisition of a company is the purchase of a company or the division of the company. Most acquisitions are either paid in cash, or in a combination of both cash and the stock of the acquiring company. When some acquisitions are financed with debt, it is called a **leveraged buyout**.

Acquisitions are of two types. A company may acquire another company from the same level, to improve its own

*Assistant Professor, SABBGA & CC, Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Acropolis Institute of Management Studies & Research, Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA

operation. Sometimes it may acquire its own competitor in order to expand its share and dominance in the marketplace. Another type is when the company acquires another company from an entirely new line of business. This is done by the company in order to diversify its business. Acquisitions can also be undertaken by a financial company or an individual financier, usually to resell the purchased company at a profit. In a corporate company, the buyer purchases a company with a view to improve its operation and business, and increases its share price hence earning more profits when the shares are sold. For example, Whatsapp and Instagram were acquired by Facebook.

State Bank of Saurashtra - The origins of State Bank of Saurashtra canbe traced to BhavanagarDarbar bank, which was established in the year 1902. Bhavanagar was one of the princely states of the saurashtra region of Gujarat. In 1948 when primly states wereintegrated to from saurashtra state a need for state-owned bank was felt. Accordingly, the BhavanagarDarbar bank was formed into a statutory corporation caused State Bank of Saurashtra and the 4 Darbar banks – Rajkot State Bank, porbandar State Bank, PatitanaDarbar bank and vadia State Bank were merged with it with effect from 1st July, 1950 as its fully owned subsidiaries. This enabled State Bank of Saurashtra to expand its operations by using the network of the State Bank group furthering its business activities. At the close of 1950, the total deposits announced to Rs.15806.00crores and total advances reached at the level of Rs.11082.00crores bank had a network of 426 branches spread over 15 states and Union Territory of Demand Diu.

Review of Literature

S. Rachappa and S.V. Satyanarayana (2005)studiedthe mergers and its effect on market gains. It was based onthe sample of 10 companies. The main objective of this studywas to find out the market performance of the share of theacquiring and acquired companies. They took four monthsbefore the announcement of merger, four months during theannouncement of merger and four months long period ofthe announcement of merger. It is concluded that themergers are more beneficial to the shareholders of theacquiring firms than that of the shareholders of the acquiredfirm in term of giving abnormal gains. However, the abnormalgains to shareholders of acquiring company differ at variousstages of the process of merger.

PrasanthaAthma (1996) covered the Performance of Public Sector Commercial Banks – A Case Study of State Bank of Hyderabad. It covers the Growth and Progress of Commercial Banking in India. In her study analyzed the trends in deposits of SBH over a period of time and to evaluate the various components of profits. This is useful for understanding the financial performance of banking Industry. She used various ratios for calculating the bank performance. She concludes that the progress of banking in India has been impressive and the present structure outcome of the process of expansion, reorganization and consolidation.

MarjanPetreski (2007) his paper aims to cover the performance effects of bank mergers and acquisitions. A broad literature is reviewed as to banks cost and profit efficiency, market power, stock price, and welfare effects behind the merger/acquisition event. Furthermore, the acquisition of Stopanska Banka AD Skopje by National Bank of Greece is deeply examined with regard to the postacquisition performance of Stopanska Banka on top of the benefits for NBG of this endeavor.

Objectives - To analyze the Pre & Post- Merger performance of key parameters like Deposits, Advances, Net profit, Number of Employee, Number of Branches of SBI & Associate Bank (SBS)

Methodology

Sources of Data - The study is based on Secondary Sources which includes the Annual Reports of the Select Banks; RBI Database- Profile of Banks –various issues; research publications etc.

Period of Study - The Period of the Study is eight years before the merger and eight years after the merger of State Bank of Sourashtra

Sample Selection - SBI took the first step to move on with merger for several reasons during the period of global financial crisis. Therefore, the study is undertaken to analyse the performance of the select Banks that have participated in the merger activity voluntarily. Incidentally, these two are the leading banks in Public and Sectors in Indian Banking Sector respectively in India.Deposits and Advances represent the volume of the business of the banks. These two parameters will have an impact on the profits of the bank.

Hypothesis

Ho: There is no significant difference in the Profits per Employee and per Branch of the Select Banks before and after Merger

H1: There is a significant difference in the Profits per Employee and per Branch of the Select Banks before and after Merger

Tools for Analysis - The following tools are used for the analysis of the data apart from Percentages, Averages, Median, SD, Kurtosis, and Skewness

CAGR - to analyze the growth in Deposits; Advances and Profits of the select Banks

T- test - to test the Hypothesis as to whether there is any significant difference in the performance of the select Banks before and after the Merger.

Pearson's Multiple Correlation: to test the measure of the strength of the association between the dependent and independent variables

Table 1 and 2 (see in last page)

Deposits; Advances; Net Profit; Number of Employees & Branches of SBI eight years before the merger and eight years after the merger of State Bank of Sourashtra with itself in the year 2008-09 are presented in Tables. The year of merger 2008-09 is taken as a base year for calculating CAGR. The Deposits and Advances of State Bank of

Sourashtra at the time of the merger were Rs. 419425 and Rs. 12309.29 crores; Net Profit Rs. 35.45crores; Employees 7399 and the Bank had a network of 460 branches against that of SBI which had Deposits of Rs. 7,42,073 crores and Advances of Rs. 5, 42,503 crores; 2, 05,896 crores of Profits; had 12,022 Employees and a branch network of 9,121. The Deposits and Advances of SBI, post- merger grew by 11.92 % and 12.54% as against 13.22% and 18.97 % during the pre- merger period; Profits have recorded a CAGR of 1.56 % as against pre- merger CAGR of 21.30%; Number of Employees increased by .20% during the post-merger period and its CAGR was in negative during the pre- merger period and the Number of Branches increased by 4.04% as against 3.17 % during the pre- merger period.

It is evident from the above tables that, there has been an increase in the two parameters Deposits; Advances all through; there is increase in the profits year after year excepting in the years 2013-14 and 2015-16; Number of Branches increased during the overall study period excepting in the year 2002-03 during the premerger period; in case of Employees it is observed that from the year 1999-2000 there has been a consistent fall year after year in the number of Employees during the pre and post- merger periods with an exception to the years 2010-11 and 2012-13 and recorded a lowest growth rate of .20 % during the post- merger period against a negative growth rate of -3.00% during the pre- merger period.

The Average increase during the Pre and Post- Merger Period in Deposits was Rs. 356018.63 Crores and Rs.1341388.923 Crores; Advances Rs. 218545.86 Crores and Rs. 1105807.851 Crores; Net Profits Rs. 3850.5 Crores and Rs. 10936.09 Crores; Number of Employees 201153.3 and 214948.3; Number of Branches 9420.75 and 15525.13. These figures only indicate the fact that, the Bank has been doing well, by generating increased amounts of Deposits and disbursing increased amount of Advances. T test is employed to see whether the difference in the key parameters before and after the merger is significant or not and the results are presented in table .

Table 3 (see below)

Result - T test is employed to see whether the difference in the Key Parameters is significant or not for Pre and Post - Merger Periods. The t stat values as per " t test at 5% significance level in case of all the Parameters is less than the t critical two tail value; p value less than .05, indicating that there is a significant difference in their performance, rejecting the null hypothesis.

References :-

1. Manoj Anand & Singh Jagandeep, (2008). Impact of Merger Announcements on Shareholders' Wealth: Evidence from Indian Private Sector Banks. Vikalpa: Journal for Decision Makers, January-March, Vol. 33, No. 1, pp. 35-54.
2. Kuriakose Sony & Gireesh Kumar G. S (2010), "Assessing the Strategic and Financial Similarities of Merged Banks: Evidence from Voluntary Amalgamations in IndianBanking Sector", Scienece & Society, Vol. 8, No. 1, 2010.
3. Azeem Ahmed Khan (2011), "Mergers and Acquisitions in Indian Banking Sector in Post Liberalisation Regime", International Journal of Contemporary Business Studies Vol 2, No: 11 November 2011
4. Srinivas K, "Mergers and Acquisitions in Indian Banking Sector- A Study of Selected Banks"
5. Goyal Dr. K.A, Joshi Vijay. Mergers in Banking Industry of India: Some Emerging Issues, Asian Journal of Business and Management Sciences.
6. Pawaskar V. Effect of Mergers on Corporate Performance in India, Vikalpa, 2001; 26(1):19-32.

Websites :

1. www.wikipedia.com
2. www.investopedia.com
3. www.sbi.in
4. www.moneycontrol.com
5. www.nseindia.com

Table 3 : T Test Results of Key Parameters of State Bank of India

	Deposits	Advances	Net Profits	Employees	Branches
Pre- Mergermean value	356018.625	218545.875	3850.5	201153.25	9420.75
Post- Mergermean value	1341388.923	1105808	10936.09	214948.25	15525.125
t Stat	-8.42931042	- 10.6346894	-8.34173232	-2.89905605	-16.2606474
t critical twotail	2.36462425	2.36462425	2.36462425	2.36462425	2.36462425
Ptwotail value	0.00006519	0.0000142	0.00006972	0.023016899	0.0000008
Result	**Reject Ho**	**Reject Ho**	**Reject Ho**	**Reject Ho**	**Reject Ho**

Table 1 : Pre & Post Merger Key Parameters of SBI

Years	Deposits	Advances	Net Profit	No. of Employees	No. of Branches
2000-01	242828	113590	1604	214845	9078
2001-02	270560	120806	2433	209462	9102
2002-03	296123	137758	3105	208998	9088
2003-04	318619	157934	3681	207039	9107
2004-05	367048	202374	4304	205515	9161
2005-06	380046	261801	4407	198774	9468
2006-07	435521	337336	4541	185388	9679
2007-08	537404	416768	6729	179205	10683
BaseYear	742073	542503	9121	205896	12022
CAGR	**13.22%**	**18.97%**	**21.30%**	**-0.47%**	**3.17%**
Mean	356018.63	218545.86	3850.5	201153.3	9420.75
Median	342833.5	180154	3992.5	206277	9134
SD	96378.54	111037.3	1554.646	12579.1	555.2234
Kurtosis	0.484581	-0.35464	0.901001	-0.25621	4.457196
Skewness	0.881675	0.932432	0.49884	-1.01389	2.081629

Note: MergerYearis Base Year2008-09.

Table 2 : Post- Merger Key Parameters of State Bank of India

Years	Deposits	Advances	Net Profit	No. of Employees	No. of Branches
BaseYear	742073	542503	9121	205896	12022
2009-10	804116	631914	9166	200299	13039
2010-11	933933	756719	7370	222933	14350
2011-12	1043647	867579	11686	215481	14902
2012-13	1202740	1045617	14839	228296	15564
2013-14	1394409	1209829	**10,891**	222033	16059
2014-15	1576793	1300026	**13,102**	213238	16333
2015-16	1730722	1463700	**9,951**	207739	16784
2016-17	2044751	1571078	**10484**	209567	17170
CAGR	**11.92%**	**12.54%**	**1.56%**	**.20%**	**4.04%**
Mean	**1341388.923**	**1105807.851**	**10936.09**	**214948.3**	**15525.13**
Median	1298574	1127723	10687.64	214359.5	15811.5
SD	425454.7	338044.6	2314.978	9187.357661	1372.151
Kurtosis	-0.81987	-1.39946	0.196524	-0.668664275	-0.00617
Skewness	0.416457	-0.03792	0.277795	-0.107177778	-0.7451

****

गैर निष्पादित सम्पत्ति का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

डॉ. प्रियंका श्रीवास्तव*

प्रस्तावना - भारतीय अर्थव्यवस्था में बैंक रीढ़ की हड्डी की तरह कार्य कर रही है, फिर भी वर्तमान में बैंकों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसमें सबसे बड़ी समस्या है गैर-निष्पादित सम्पत्तियाँ (एन0पी0ए0) साधारण भाषा में बात करें तो वह धन जो बैंकों से दूर चला जाता है। जब बैंको द्वारा लोन प्रदान किया जाये एवं तय तिथि पर लोन का मूलधन एवं ब्याज प्राप्त नही किया जा सकता है तो वह गैर-निष्पादित सम्पत्तियाँ कहलाती हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के मुताबिक मार्च 31, 2014 को नियम बनाया गया जिसमें यदि किसी मियादी ऋण पर एक वर्ष में एक तिमाही या 90 दिनों से अधिक होने के बावजूद भी प्रदत्त राशि पर बैंक को मूलधन या ब्याज या दोनों के किश्तों की अदायगी न की जाये तो वह एन0पी0ए0 होता है।

कोई लोन भविष्य में एन0पी0ए0 बन सकता है, इसकी पहचान के लिए रिजर्व बैंक द्वारा नियम बनाया गया है। जिसके तहत बैंक को उनके लोन को स्पेशल मेन्शन एकाउण्ट के तहत चिन्हित करना होगा। अगर किसी लोन में मूलधन या ब्याज या दोनों की किश्त का भुगतान निर्धारित तिथि से 30 दिन तक नही होता तो उसे एस0एम0ए0-0 कहा जाता है और यदि 31 से 60 दिन तक न हो तो उसे एस0एम0ए0-1 कहा जायेगा। इसके पश्चात यदि 61 से 90 दिन तक ब्याज या मूलधन या दोनों को न चुकाया जाये तो वह एस0एम0ए0-2 कहलाता है। यदि कोई खाता 90 दिनों की देरी से भुगतान को देखता है तो वह एन0पी0ए0 में बदल जाता है। किसी लोन खाते को एन0पी0ए0 घोषित करने के पश्चात एन0पी0ए0 खाते को तीन श्रेणी में बांटा जाता है। सब-स्टैंडर्ड एसेट्स, डाउटफुल एसेट्स एवं लॉस एसेट्स।

कोई लोन खाता एक साल से कम अवधि तक एन0पी0ए0 रहता है तो सब-स्टैण्डर्ड कहा जाता है, एक वर्ष तक सब स्टैण्डर्ड बना रहने पर डाउटफुट श्रेणी में आ जाता है। जब बैंक द्वारा यह मान लिया जाये कि कर्ज वसूला नही जा सकता तो वह लॉस एसेट्स की श्रेणी में डाल दिया जाता है।

एक तरफ तो अर्थव्यस्था में तेजी से विकास हो रहा है, तो दूसरी तरफ एन0पी0ए0 बैंकिंग व्यवस्था को कमजोर बना रही है। रिजर्व बैंक के पूर्व गर्वनर श्री रघुराम राजन ने एन0पी0ए0 को कैंसर माना है। जो भारतीय अर्थव्यवस्था को खोखला कर रहा है। यह एक गम्भीर बीमारी तो है परन्तु लाइलाज नही है। श्री रघुराम राजन के अनुसार खराब ऋण की तीव्रता में वृद्धि का आरम्भ वर्ष 2006-07 से हुआ, उस समय भारतीय अर्थव्यवस्था में तेजी थी, पावर प्रोजेक्ट्स बजट के भीतर एवं समय से पूर्ण हो रहे थे। ऐसे समय में बैंक अधिक वृद्धि का अनुमान लगाते हुये ऋण का वितरण बिना किसी जांच पड़ताल के प्रारम्भ कर दिया। जिससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलर तथा बैंकों की पूँजी, बैंको से दूर होती चली गयी।

यदि बैंकों का एन0पी0ए0 बढ़ता है तो बैंको को ज्यादा कर्ज लेने की आवश्यकता पड़ती है। जिससे बैंकों की पूंजी लागत बढ़ जाती है। तथा एन0पी0ए0 के रूप में कर्ज धन रूक जाता है, तो उसके प्रावधान के लिए लाभ का एक निश्चित भाग संचय के रूप में अलग रखना पड़ता है जिससे लाभ कम होने लगता है। लाभ कम होने के कारण बैंकों के विस्तार एवं ग्राहकों की सेवाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

डूबत ऋण के बढ़ते बोझ से बेहाल अर्थव्यवस्था में सरकारी बैंक ऋण देने में सावधानी बरत रहे हैं। रिजर्व बैंक के आंकड़ों से पता चलता है कि एन0पी0ए0 के ऊँचे स्तर एवं कमजोर कारपोरेट मांग के चलते देश की क्रेडिट वृद्धि 60 साल के निचले स्तर पर आ पहुँची है। इससे पहले कर्ज वृद्धि की न्यूनतम दर वर्ष 1953-1954 में रिकार्ड की गई थी जो केवल 1.7%ही थी। रिजर्व बैंक के द्वारा जारी किये गये आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2016-2017 में रु0 78.82 लाख करोड़ का कर्ज प्रदान किया गया। जिसमें 3.16 लाख करोड़ का कर्ज मार्च के अन्तिम 15 दिनों में प्रदान किया गया।

सरकारी बैंकों के डूबत ऋण में 70% भाग कारपोरेट घरानो का है। जबकि किसानों का हिस्सा केवल 1% ही है। वैश्विक ख्याति प्राप्त संगठन मुडीज इन्वेस्टर्स सर्विस की रिपोर्ट के अनुसार वित्त वर्ष 2016-2017 बैंकिंग सेक्टर के लिए खासा चुनौती पूर्ण रहा है। इस वर्ष लगभग 25 सरकारी एवं प्राईवेट बैंकों के मुनाफे में करीब 35%की गिरावट हुई है। जब कि ब्याज से होने वाली आय में केवल 1%की ही वृद्धि हुई है। देश के सरकारी बैंकों के 100 सबसे बड़े कर्जदारों पर कुल रु0 1.73 लाख करोड़ का बकाया है। वित्त वर्ष 2014-2015 में एन0पी0ए0 5.7 %थी, जो वर्ष 2016-2017 में 7.3%पहुँच गई।

यह सोचनीय विषय है कि एन0पी0ए0 का स्तर रु0 3 लाख करोड़ से अधिक है, यदि इस राशि को वसूल कर लिया जाता है तो सरकारी बैंकों के लाभ में तीव्रता से वृद्धि होगी। जिससे वह अधिक मात्रा में ऋण प्रदान करने की क्षमता रखेगें, अनेकों रोजगार को विकसित किया जा सकेगा, नीतिगत दर में कटौती से कारोबारियों को लाभ पहुंचेगा, आधारभूत संरचना का निर्माण होगा, कृषि में बेहतर संसाधन उपलब्ध होगें और अर्थ व्यवस्था में मजबूती एव विकास की गति को प्राप्त किया जा सकेगा।

देश में बैंको की हालत सुधारने के लिये भारत सरकार एवं भारत का केन्द्रीय बैंक (रिजर्व बैंक आफ इंडिया) द्वारा अनेक कानून एवं कार्यक्रम की उद्घोषणा की गई है जैसे- इन्द्र धनुष योजना, इन्सालवेन्सी एवं बैंकरेप्टी

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) अर्मापुर स्नातकोत्तर महाविद्यालय,अर्मापुर, कानपुर (उ.प्र.) भारत

कोड, बैंकिंग रेगुलेशन एमेन्डमेंन्ट बिल 2017, बैसल–3।

नये कानून बनने से यह उम्मीद की जा रही है कि एक ओर ऋण की रिकवरी आसानी से की जा सकेगी तो दूसरी ओर डूबत ऋण पर लगाम लगेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

पर्यावरण जागरूकता के प्रति माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का अध्ययन

जीतेन्द्र बैरागी* डॉ. महेश कुमार तिवारी**

प्रस्तावना – पर्यावरण का मानव के जीवन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। मनुष्य को प्रकृति का पुत्र कहा जाता है। प्रकृति का पुत्र कहा जाता है। प्रकृति की गोद में ही वह बड़ा होता है। पर्यावरण अर्थात् वायु, जल, भोजन, पेड़-पौधे आदि ही मानव जीवन को स्वच्छ और सुखद बनाते हैं। पर्यावरण के विभिन्न तत्वों के मध्य एक संतुलन का होना आवश्यक है। यदि मनुष्य प्रकृति के नियम को समझ कर प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग तथा उपभोग इस प्रकार से करता है कि प्राकृतिक संतुलन बना रहे, तब ही सृष्टि के द्वारा निर्मित पर्यावरण तथा मानव जाति स्वस्थ रह सकती है। भारतीय संस्कृति में इस अटल सत्य को आदिकाल से ही स्वीकार किया गया था तथा भारतीय समाज में पर्यावरण के प्रति जागरूकता बनी रही है।

पर्यावरण के तत्वों जैसे नदी, तालाब, पेड़-पौधे, वायु, धरातल तथा जीवों आदि को देवता मान कर उनका ध्यान रखा गया। यद्यपि सामान्य अवधारणा के अनुसार यह हिन्दुओं का धार्मिक पक्ष था। परन्तु वस्तुत: मानव आचरण तथा अनुभूति को पर्यावरण से जोड़ने के लिए ऐसा किया गया होगा। धर्म के माध्यम से मानव जाति को अनेक शताब्दियों तक पर्यावरण के प्रति सजग रखा गया। यही कारण था कि उस समय पर्यावरण सम्बन्धी समस्यायें न्यूनतम थीं तथा भारत को पर्यावरण की कोई विकट समस्या नहीं झेलनी पड़ी।

लेकिन आज प्रकृति मानव के लिए उतनी आनंददायिनी नहीं रही है। अनियोजित मानवीय गतिविधियों के दुष्परिणाम स्वरूप प्राकृतिक असंतुलन और पर्यावरण प्रदूषण की उत्पत्तिा होने लगी है, जो मानव जाति के अस्तित्व के लिए भयावह बनती जा रही है। आज मानव इसके समाधान हेतु व्याकुल है। संभवत: प्रकृति के दुष्प्रकोप की भयावह कल्पना ने ही मानव को प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करने हेतु बाध्य कर रखा था। प्रसिद्ध दार्शनिक एवं शिक्षाविद् रूसो ने कहा था कि– 'प्रकृति की ओर लौटो' अर्थात् शिक्षा प्रकृति से सम्बद्ध होनी चाहिए।

पर्यावरण शब्द परि तथा आवरण से मिलकर बना हैं। परि का अर्थ है चारों ओर तथा आवरण का अर्थ है–ढका हुआ अत: पर्यावरण शब्द से तात्पर्य उन सभी परिस्थितियों से है जो हमारे चारों ओर विद्यमान है। पर्यावरण को वातावरण भी कहा जाता है।

अंग्रेजी में पर्यावरण को Environment कहा जाता है। Environ का अर्थ है घेरना तथा ment का अर्थ है चारो ओर से। इस प्रकार इसका अर्थ है चारों ओर से घेरना। Environment शब्द का Envelop का भी पर्याय है जिसका अभिप्राय है 'Total set of surroundings'.

मानव के विकास में वंशानुक्रम के साथ-साथ पर्यावरण भी विशेष महत्व रखता है। व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों ने तो यहाँ तक माना है कि अच्छे पर्यावरण द्वारा बालक में बहुत परिवर्तन संभव है।

पर्यावरण विश्वकोष– 'पर्यावरण के अन्तर्गत उन सभी दशाओं, संगठनों, प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है जो किसी जीव अथवा जाति के उद्‌भव, विकास तथा मृत्यु को प्रभावित करते हैं।

बेरिंग, लैंगफील्ड तथा वेल्ड के अनुसार – एक व्यक्ति के वातावरण के अन्तर्गत उन सभी उत्तोजनाओं को योग आ जाता है, जिनको वह जन्म से मृत्यु तक ग्रहण करता है।

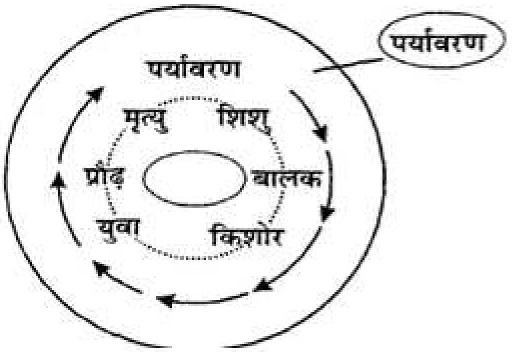

पर्यावरण का क्षेत्र असीमित है परन्तु पर्यावरण के विस्तारात्मक विश्लेषण के द्वारा उसका सीमांकन संभव है। पर्यावरण को प्राकृतिक व मानव निर्मित के दृष्टिकोण के आधार पर विभिन्न प्रकारों में सीमांकित किया जा सकता है।

पर्यावरण चार्ट (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

प्रकृति ने प्राकृतिक संसाधन जैसे वायु, जल भूमि, खनिज पदार्थ, पेड़-पौधे प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कराए हैं परन्तु इस उपलब्धता की भी अपनी एक सीमा है। विगत कुछ दशकों में हुई जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण तथा विकास यांजनाओं के फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का दोहन अत्यन्त तीव्रता से हुआ है। प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन, अपव्ययपूर्ण उपभोग तथा अविवेकपूर्ण पर्यावरण उपेक्षा के कारण पर्यावरण समस्याएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। प्रकृति की स्वनियामक क्षमता क्षीण होती गई जिससे मानव जीवन की गुणवत्ताा का ह्रास हुआ है। पर्यावरण समस्याओं

* शोधार्थी, मेवाड विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ (राज.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, चित्तौड़गढ (राज.) भारत

की गम्भीरता के फलस्वरूप सभ्य समाज में एक नवीन चेतना जागृत हुई। पर्यावरण संरक्षण तथा उसमें सुधार की महती आवश्यकता की ओर जनमानस का ध्यान आकर्षित हुआ है। पर्यावरण तथा जीवधारियों के बीच के सम्बन्ध को समझना आवश्यक प्रतीत होने लगा है। पर्यावरण की रक्षा तथा उसमें सुधार एक ओर जहाँ पर्यावरणविदों के लिए एक चुनौती है वहीं प्रदूषण निवारण के लिए आम जनता को पर्याप्त संरक्षण तथा उसमें सुधार की आवश्यकता के प्रति जागरूक बनाना भी आवश्यक है। पर्यावरण की समस्याओं के निराकरण तथा पर्यावरण सुधार की योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए अपेक्षित जन सहयोग प्राप्त करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि विगत कुछ समय से पर्यावरण शिक्षा के नवीन प्रत्यय पर जोर दिया जा रहा है। पर्यावरण शिक्षा वास्तव में मानव समाज के उत्थान तथा पतन की प्रतीक है।

पर्यावरण शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जो पर्यावरण के बारे में हमें जागृति, ज्ञान और समझ प्रदान करती है। इसके बारे में अनुकूल दृष्टिकोण का विकास करती है और इसके संरक्षण तथा सुधार की दिशा में हमें प्रतिबद्ध करती है। साथ ही मनुष्य और प्रकृति के बीच सहसम्बन्ध की व्याख्या करती है। पर्यावरण शिक्षा को उद्देश्यों को तीन भागों में विभाजित किया गया है–

ज्ञानात्मक पक्ष पर आधारित उद्देश्य :

1. अपने चारों ओर के पर्यावरण का ज्ञान प्राप्त कराना।
2. जैविक और अजैविक घटकों का अवबोध कराना
3. बढ़ती हुई जनसंख्या और उसके दुष्परिणामें का अवबोध कराना।
4. संसाधनों के अनियंत्रित दोहन के दुष्परिणामों का अवबोध कराना।
5. पर्यावरणीय प्रदूषण के विभिन्न प्रकारों एवं उनके प्रभाव का अवबोध कराना।
6. विभिन्न पोषक स्तरों और उनके अन्तर्सम्बन्धों का अवबोध कराना।
7. पर्यावरणीय संकट व पर्यावरणीय प्रदूषण को दूर करने वाली विधियों का ज्ञान कराना।
8. पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान ढूँढने की योग्यता उत्पन्न करना।

भावात्मक पक्ष पर आधारित उद्देश्य :

1. पर्यावरण के प्रति संचेतना एवं वैज्ञानिक सोच का विकास करना।
2. प्रकृति प्रेम की भावना का विकास करना।
3. पर्यावरणीय घटकों के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण का विकास करना।
4. पर्यावरणीय समस्या समाधान के प्रति जनमत की विकास करना।
5. विभिन्न धर्मो, जातियों व संस्कृतियों के प्रति संवेगात्मक दृष्टिकोण का विकास करना।
6. मानवीय व्यवहारों जैसे समानता, न्यायप्रियता, सत्यता आदि के मूल्यात्मक पहलू का विकास करना।

क्रियात्मक पक्ष पर आधारित उद्देश्य :

1. विभिन्न प्रदूषणों को दूर करने से सम्बन्धित कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग लेना।
2. स्वच्छता से सम्बन्धित कार्यक्रमों में भाग लेना।
3. नगरीय तथा ग्रामीण नियोजन में भाग लेना।
4. खाद्य पदार्थों की मिलावट को दूर करने वाले कार्यक्रमों में भाग लेना।
5. पर्यावरण खेलों के माध्यम से जागरूकता पैदा करना।
6. पर्यावरण क्लब तथा संग्रहालय आदि की स्थापना करना।
7. पर्यावरण के क्षेत्र में लेखन सम्बन्धी कौशलों को विकसित करना।

पर्यावरण की समस्या आज एक गाँव, नगर, प्रदेश या देश की ही नहीं अपितु सारे संसार की है। आज विश्व भर के पर्यावरण विशेषज्ञ, बंद्धिजीवी, राजनेता और सरकारें इस समस्या से जूझ रहे हैं और बिगड़ते हुए पर्यावरण की समस्या को सुलझाने का प्रयास कर रहे हैं। इस समस्या के दो ही समाधान हैं और वे हैं– जन–जन को पर्यावरण के विषय में जानकारी प्रदान करना और मानव में नैतिक चेतना पैदा करना। पर्यावरण के विषय में जागरूकता के बिना उसे सुरक्षा प्रदान नहीं की जा सकती है। पर्यावरण की बेहतरी कोई एक व्यक्ति या सरकार भी नहीं कर सकती। इसे बेहतर बनाने के लिए समस्त मानव समाज को अपनी जिम्मेदारी समझकर प्रयास करना होगा। मानव को पर्यावरण की जिम्मेदारी केवल पर्यावरण शिक्षा द्वारा ही समझायी जा सकती है।

अध्ययन औचित्य – पृथ्वी पर जनसंख्या बहुत द्रुत गति से बढ़ रही है। प्राकृतिक ससां धनों काअनर्गल उपयोग इस बात की चेतावनी दे रहा है कि ये साधन बहुत ही जल्दीसमाप्त होने जा रहे हैं। आर्थिक विकास के लिए जो मृदा, जंगल, ऊर्जा और जलबहुत तेजी से उपयोग में लाये जा रहे है वे कालान्तर में समाप्त हो जायेंगे। अत:आवश्यकता इस बात की है कि इनके वैकल्पिक साधन पहले से ही ढूंढ़ लियेजाये। औद्योगिक अवशेष एवं मल–मूत्र आदि पदार्थों को वायुमण्डल एवं जल में प्रवाहित कर दिया जाता है, अत: ये सभी इस पृथ्वी के लिए गंभीर बढ़ा खतरा हैं।और इस तथ्य पर गंभीरता से विचार किया जा रहा है कि इस वृत्ति से भविष्य में क्या स्थिति रहेगी? आज सम्पूर्ण मानव के लिए सुरक्षित पर्यावरण हेतु ऐसीव्यूह–रचना की आवश्यकता है, जो तर्कहीन न होकर मानव तथा प्रकृति के परस्परसंबंधों को सुधार सके। हमें विकसित चेतना एवं नियन्त्रित सभ्यता की ओर स्वत: हीठोस कदम उठाने चाहिए।

आज सारी दुनिया में पर्यावरण के प्रति चेतना एवं जागरूकता पैदा हो रही है क्योंकि पर्यावरण प्रदूषण के गंभीर परिणामों ने भयावह स्थिति पैदा कर दी है।आज समय की मांग है कि सरकारी तंत्र के अतिरिक्त विद्यार्थियो ं एव ं स्वयं सेवी सस्ं थाओं को भी पारिस्थितिकीय– सतुंलन के विकास हेतु अहम् भूमिका निभानीचाहिए।

समस्या कथन – पर्यावरण जागरूकता के प्रति माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का अध्ययन

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध विषय के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं–

1. प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की पर्यावरणके प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
2. प्रतापगढ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की लिंगभेद केआधार पर पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
3. प्रतापगढ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की क्षेत्र केआधार पर पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. प्रतापगढ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियो ं की लिंगभेद केआधार पर पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. प्रतापगढ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की क्षेत्र केआधार पर पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन विधि – प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा 'सर्वेक्षण विधि' का प्रयोग किया हैं क्योंकि यह विधि व्यक्ति विशेष से सम्बन्धितन होकर पूरे समूह से सम्बन्धित होती हैं और इसमें अधिक से अधिक व्यक्तियों

कोसम्मिलित किया जा सकता है।

प्रतिदर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के प्रतापगढ जिले सेमाध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत शहरी क्षेत्र के 5 सरकारी तथा ग्रामीण क्षेत्र के 5 सरकारी कुल 10 विद्यालयों के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है। इस हेतु सम्पूर्ण जनसंख्या मेंसे स्तरीकृत यादृछिक न्यादर्श विधि से 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने प्रमापीकृत उपकरण प्रयुक्त किया हैजिसकी विश्वसनीयता तथा वैद्यता निश्चित है। इनका प्रयोग सरलता से किया जासकता है। अपने अध्ययन हेतु शोधकर्ता ने निम्न उपकरण का प्रयोग किया है–

- पर्यावरण जागरूकता अभियोग्यता मापनी–डॉ. प्रवीण कुमार झा

शोध की परिसीमन – प्रस्तुत शोध में निम्न प्रकार से शोध का परिसीमन किया गया है–

1. शोध को केवल राजस्थान राज्य के प्रतापगढ़ जिले तक ही सीमित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध केवल माध्यमिक विद्यालयों तक ही सीमित किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध में उपकरण को डॉ. प्रवीण कुमार झा के पर्यावरण जागरूकता तक ही सीमित किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या – प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या सांख्यिकीय विधि द्वारा की जाती है। प्रस्तुतशोध में प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों कीपर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन में समस्या के चयन, उसके महत्व, सम्बिन्धित साहित्य केपुनरावलोकन, न्यादर्श के चयन व अध्ययन विधियों के निर्धारण के उपरान्त सर्वेक्षणविधि द्वारा आंकडों का संग्रहण किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में संकलित सामग्री कावर्गीकरण, सारणीयन व विश्लेषण करने का शोधकर्ता द्वारा प्रयास किया गया है।प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों द्वारा दिये गये उत्तारों के आधार पर अंकन किया गया तथा आंकडों का वर्गीकरण करकेसांख्यिकीय गणना की गई।

- प्रतापगढ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की लिंगभेद के आधार पर पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों को मध्यमान 36.82 एवं मानक विचलन 2.40 है तथा छात्राओं का मध्यमान 37.54 एवं मानक विचलन 2.07 है। तालिका 1 से प्राप्त मध्यमानों में छात्रों का मध्यमान छात्राओं के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानोंके अन्तर का डीएफ598 पर टी–मान 3.41 है। जो 0.05 एवं 0.01 स्तर के प्राप्त मान

1.96 एवं 2.58 से अधिक है। अत: परिकल्पना 'प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिकस्तर पर अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि छात्र एवंछात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में अन्तर पाया जाता है। छात्रों की अपेक्षा छात्राएँ पर्यावरण प्रदूषण के प्रति अधिक जागरूक हैं।

- प्रतापगढ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 को देखने से स्पष्ट होता है कि उच्चमाध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण विद्यालयों के विद्यार्थियों का मध्यमान 37.10एवं मानक विचलन 2.88 है तथा शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान 38.22 एवं मानकविचलन 2.90 है, तालिका 2 से प्राप्त मध्यमानों में शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान ग्रामीणविद्यार्थियों के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ–618 परटी–मान 4.52 है, जो 0.05 एवं 0.01 स्तर के प्राप्त मान 1.96 एवं 2.58 से अधिकहै। अत: परिकल्पना प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीणएवं शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में कोई सार्थकअन्तर नहीं है, अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीणविद्यार्थियों एवं शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में अन्तरपाया जाता है। ग्रामीण विद्यार्थियों की अपेक्षा शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदषणके प्रति अधिक जागरूक है।

निष्कर्ष :

1. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओंकी पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, अस्वीकृतकी जाती है क्योंकि छात्र एवं छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता केमध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतुआवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्षनिकाला जा सकता है कि छात्र एवं छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रतिजागरूकता में अन्तर पाया जाता है। छात्रों की अपेक्षा छात्राएँ पर्यावरण प्रदूषण केप्रति अधिक जागरूक हैं।
2. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेशण के पश्चात् परिकल्पना प्रतापगढ़ जिले के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरीविद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है,अस्वीकृत की जाती है क्योंकि ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण केप्रति जागरूकता के मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यहनिष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण विद्यार्थियों एवं शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण विद्यार्थियोंकी अपेक्षा शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति अधिक जागरूक है।

सुझाव – प्रस्तुत शोधकार्य में माध्यमिकस्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरतछात्र–छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता काअध्ययन किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि साहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत ा छात्र–छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में भी अंतरपाया गया है। शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों मेंपर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता में अंतर पाया गया जबकि लिंगभेद के आधार

पर अधिक अंतर नहीं पाया गया।

सरकार के लिए सुझाव – सरकार को चाहिए कि वह वृक्षारोपण को बढावा दे, इस हेतु नि:शुल्क पौधोंका वितरण किया जाए। इनकी सुरक्षा हेतु पुरूस्कार देने की भी घोषणा करें। पीने के पानी के वितरण की सही व्यवस्था के साथ–साथ उसके संरक्षण एवं उसके व्यर्थ बहने को रोकने की सही व्यवस्था करें। औद्योगिक एवं घरेलू अपशिष्ट के निस्तारण की सही व्यवस्था करें ताकि पर्यावरण सुरक्षित रह सके।

समाज के लिए सुझाव – समाज के सभी लोग मिलकर यह शपथ लें कि सरकार द्वारा बनाए गएपर्यावरण संरक्षण हेतु कानूनों का पालन केवल दण्ड के भय से न करके स्वेच्छा से करें। कचरे का सही निस्तारण, पॉलिथीन बैग्स के प्रयोग पर प्रतिबन्ध, पानी एवं वाहनों का आवश्यकतानुसार सयंमित प्रयोग करें ताकि भविष्य सुरक्षित हो सके।

शिक्षकों के लिए सुझाव – शिक्षविद्ों को चाहिए कि वे सरकार के साथ मिलकर पर्यावरण संरक्षण कीविषय वस्तु को स्तरानुसार आसान भाषा में विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम में शामिलकराएं ताकि विद्यार्थी उसका महत्व समझकर जीवन में उसका पालन कर सकें। विभिन्न पाठ्यसहगामी क्रियाओं की सहायता से भी विद्यार्थियों को पर्यावरण एवं उसके संरक्षण के उपायों पर प्रकाश डालें साथ ही प्रदूषण के दुष्प्रभावों से भीअवगत कराये ताकि वे स्वेच्छा से संरक्षण हेतु प्रेरित हो सकें। विद्यालय एवं आस–पास वृक्षारोपण भी कराये, यह कार्य प्रतियोगिता की तरह आयोजित किया जा सकता है।

विद्यार्थियों के लिए सुझाव – पर्यावरण संरक्षण के कार्यो को अपने जीवन में अपनाकर वे समाज का सहयोग करें। वृक्षों के महत्व को अन्य लोगों को समझाएं। स्वयं कचरा इधर–उधरना फेंके। सीमित प्राकृतिक संसाधन– पानी, बिजली, कागज, लकडी एवं ईधन आदिका सही एवं समूचित उपयोग करें। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा चलाए गएस्वच्छ भारत अभियान में सहयोग दें तथा अपने आस–पास के लोगों को भी इसके लिए प्रेरित करें। ऊचीं आवाज में गाने न सुने तथा गाडियों में उचित ध्वनि के हॉर्न का प्रयोग करें ताकि ध्वनि प्रदूषण को कम किया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. इबेल, राबर्ट एल., (1972),'एसेन्शियलस ऑफ एज्यूकेशनल मेजरमेंट;, न्यूजर्सी:प्रेन्टिस हॉल इनकार्पोरेटेड, पृ. 27.
2. बोर्ग, वाल्टर आर. एण्ड गॉल, मैरिडिथ डी., (1971), 'एज्युकेशनल रिसर्च इनइन्ट्रोडक्शन', II एडीशन, न्यूयार्क: डेविड मैके कम्पनी इनकार्पोरेटेड, पृ. 64.
3. बोर्ग, वाल्टर आर., (1981), 'एप्लाईंग एज्यूकेशनल रिसर्च : ए प्रेक्टिकल गाइड फॉरटीचर्स', न्यूयार्क: लौंगमैन इनकार्पोरेटेड, पृ. 176.
4. बेसिस, एच. सी. एण्ड बेसिस, के. एस., (1991), जनसंख्या विस्फोट और पर्यावरण,सतसाहित्य प्रकाशन, दिल्ली।
5. बेस्ट, डब्ल्यू. जॉन, (1993), 'रिसर्च इन एज्यूकेशन', IV एडीशन, न्यू देहली: प्रेंटिसहॉल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, पृ. 40.
6. बेस्ट, डब्ल्यू. जॉन, (1989), 'रिसर्च इन एज्यूकेशन', न्यू देहली: प्रेंटिस हॉल ऑफइण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, पृ. 31, 39
7. बेस्ट, डब्ल्यू.जॉन, (1977), रिसर्च इन एज्यूकेशन, नई दिल्ली: प्रेन्टिस हॉल प्रा.लि.।
8. बन्धुदेश एण्ड बिरबिरेट, जी., (1985), एनवायरमेन्टल एजूकेशन फॉर कनसरवेशनएण्ड डेवलपमेंट, इन्डियन एनवायरमेन्ट, नई दिल्ली: प्रेंटिस हॉल ऑफ इण्डियाप्राइवेट लिमिटेड।
9. करलिंगर, फ्रेड एन., (1983), 'फाउण्डेशन्स ऑफ बिहेवेरियल रिसर्च', खखएडीशन
10. यू. एस. ए., हॉल्ट, रिनेहार्ट एण्ड विंस्टन इनकार्पोरेटेड, न्यू देहली: सुरजीतपब्लिकेशन्स, पृ. 12, 202.
11. कौल, लोकेश, (1993), मैथेडोलॉजी ऑफ एज्यूकेशनल रिसर्च, न्यू देहली: विकासपब्लिशिंग हाउस।
12. सिंह, मनमोहन एण्ड राव, एल. एस. प्रहलाद, (1980), मेजर ऑफ इन्वायरमेन्टलअवेरनेस, विक्रम ए साराभाई कम्यूनिटी सांइस सेंटर, नवरंगपुरा, अहमदाबाद: वी. केपब्लिशर्स।
13. भाटिया, एस. वी., (2014), एनवायरमेन्टल पॉल्यूशन एण्ड कन्ट्रोल इन कैमिकलप्रोसेस इन्डस्ट्रीज, जयपुर : जैन बुक एजेन्सीज।
14. भारद्धाज, मनी, अनीता, (2009), अवेयरनेस एण्ड इम्पैक्ट ऑफ एनवायरमेन्टलपॉल्यूशन ऑन द मैनेजमेन्ट ऑफ होम, गंगा सिंह यूनिवर्सिटी, बीकानेर: आर. केबुककम्पनी।
15. भुवनेश्वर, लक्ष्मीजी एवं शैलजा, बी.पी. (2007), टीचर्स विद पोजिटिवएनवायरमेन्टल एटीट्यूड केन ओन्ली डू जस्टीस टू एनवायरमेन्टल एजूकेशन, Vol-45, No-44, अक्टूबर –नवम्बर, कलकत्ता : यूनिवर्सिटी न्यूज ।
16. शर्मा, रामकरण (2016), सेवापूर्व तथा सेवारत माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों केबीच पर्यावरणीय शिक्षा के प्रति पर्यावरणीय जागरूकता, पर्यावरणीय अभिवृत्ति तथापर्यावरणीय ज्ञान का अध्ययन, त्रैमासिक पत्रिका, जनवरी–मार्च अंक, जयपुर :रिसर्च एनालिसिस।
17. बेनिवाल, संजय (2015), माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरण प्रमुखता परसंस्कृति एवं मूल्यों का प्रभाव, जुलाई–अक्टूबर अंक, कानपुर : शिक्षा चिन्तन।
18. मुंजाल, महेश कुमार, (2007), माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो ं की पर्यावरण संरक्षणहेतु जागरूकता का अध्ययन, परिप्रेक्ष्य, अंक–अगस्त, नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिकयोजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय।
19. पारीक, रमेश चन्द्र, (1995), पर्यावरण–संरक्षण एक शैक्षिक समस्या, भारतीयआधुनिक शिक्षा, अंक–अक्टूबर, नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षणपरिषद्।
20. प्रहलाद, बी., (1991), एनवायरमेन्टल नोलेज, एनवायरमेन्टल एटीट्यूड एण्डपरसेप्शन रीगार्डिंग एनवायरमेन्टल एजूकेशन अमंग प्रि–सर्विस एण्ड इन सर्विससेकण्डरी स्कूल टीचर्स, Vol-II,नई दिल्ली : एन.सी.ई.आर.टी.।

तालिका 1 माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक-विचलन	टी-मान	डीएफ	सार्थकता स्तर
छात्र	300	36.82	2.40	3.41	598	अस्वीकृति
छात्राएँ	300	37.54	2.07			

0.05 पर सार्थकता स्तर 1.96

0-01 पर सार्थकता स्तर 2.58

तालिका 2 – माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियोंकी पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक-विचलन	टी-मान	डीएफ	सार्थकता स्तर
ग्रामीण विद्यार्थी	300	37.10	2.88	4.52	598	अस्वीकृति
शहरी विद्यार्थी	300	38.22	2.90			

0-05 पर सार्थकता स्तर 1.96

0.01पर सार्थकता स्तर 2.58

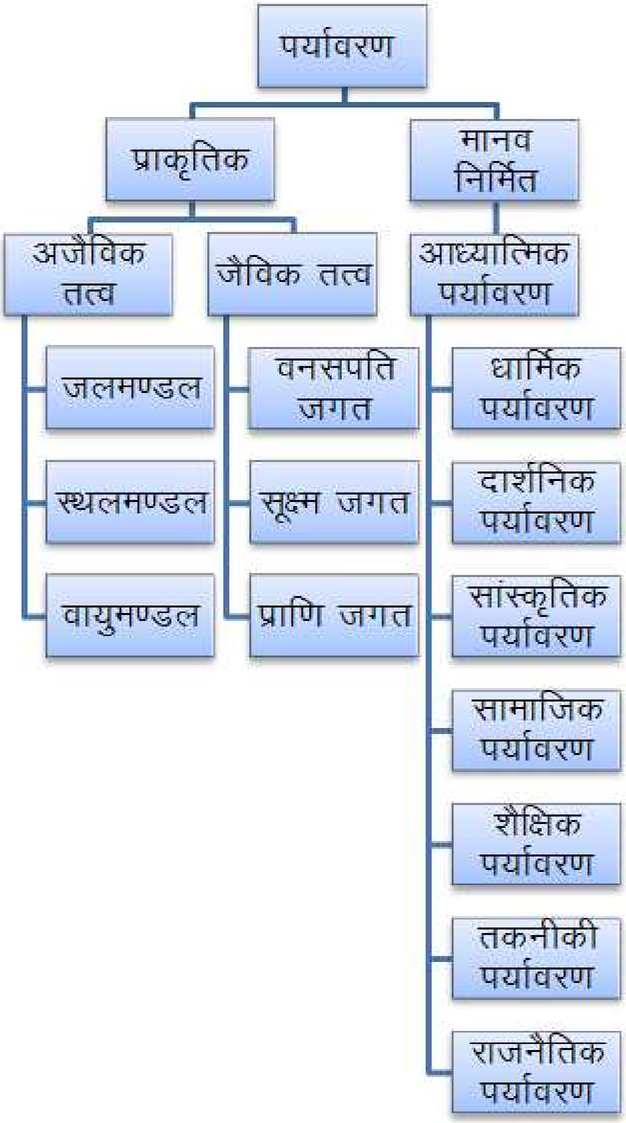

****

बुन्देलखण्ड की फाग परम्परा

धनीराम अहिरवार *

प्रस्तावना – ऋतु बसंत प्रकृति का अनुपम अद्बितीय श्रृंगार है, तभी इसे ऋतुओं की सम्राज्ञी कहा जाता है। बसंत का पदार्पण सम्पूर्ण सृष्टि को प्राणवान बना देता है। वृक्षों की पतझड़ के पश्चात् नव कोपलें आने लगती है, वृक्ष रंग–बिरंगे पुष्पों से आच्छादित हो जाते है। खेतों को देखकर ह्रदय उमंगित हो उठता है। प्रकृति, नवयौवना दृष्टिगत होने लगती है। बसंतागमन पर प्रकृति स्वागत कर रही है। इस मधुमयी ऋतु का संबंध आनन्द और उल्लास के प्रतीक कामदेव के साथ जोड़ा जाता है। परिणाम स्वरूप फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी के दिन मदनोत्सव मनाया जाने लगा अर्थात बसंतारम्भ में काम देवता के रूप में अर्चित होने लगे।

हमारा देश उत्सव प्रिय देश है। यहाँ प्रत्येक ऋतु में एक न एक उत्सव मनाने की परम्परा सदियों से चली आ रही है। समाज के स्वास्थ्य जीवन के लिए व्यक्ति की दिनचर्या में विनोद, हास और उल्लास के लिए भी कुछ क्षण आवश्यक है। मनोविज्ञान का नियम है कि मानव की सहज प्रवृत्तियों में यदि अवरोध हुआ तो मानव मन स्वच्छ और स्वस्थ्य नही रह सकेगा। पूरे वर्ष में होने वाले उत्सवों, तीज–त्यौहारों में होली ही एक ऐसा त्यौहार है जिसमें मानव मन सहज ही उन्मुक्त हो जाता है। शिष्टाचार और मर्यादाओं का उल्लंघन भी सहजता से स्वीकारा जाता है– रंगरेजा हमारे यार चुनरिया रंगजा रे ....

फाग गीत, श्रृंगारी गीतों के परिचायक मान लिये गये है और इनका केन्द्र बिन्दु भी श्रृंगार रस ही है। किन्तु इन गीतों में ऋतु वर्णन, भक्ति भाव, इतिहास, लोकजीवन की झांकी भी प्रचुर मात्रा में है:–

नयी गोरी के बालमा रे, नई होरी के झाँक,
ऐसी होरी दागियो रे, तोरे कुल न आवे आँच।
सभार के होरी खेलो मोरे बालमा।।
आग लगी दरयाब में, धुआं ने परगट होय।
के दिल जानो आपनो, कै जे पे बीती होय।।

हमारी संस्कृति में हर तीज–त्यौहार पर गीत गाये जाने की परम्परा है, जैसे– श्रावण में सैरे, कजरी, दिवारी, पर दिवारी, होली पर फागें आदि और वे उसी पर्व के नाम से प्रसिद्ध है।

हमारे देश में कालीदास के प्रसिद्ध नाटक, शकुन्तला में हुआ जो कि बसंत ऋतु के आगमन पर होता था। चंदेल नरेश परमार देव के समय भी बसंत का वर्णन मिलता है। नारद पुराण में फाल्गुन की पूर्णिमा को होलिका पूजन होता था।

होली तो जीवन जागृति का राष्ट्रीय त्यौहार है। होली के समय हास–परिहास तथा उल्लास अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर दसों दिशाओं में उमड़ पड़ता है। होली में सभी वर्ग, समुदाय, उम्र का कोई लिहाज नही होता, सबको अपने रंगों में रंग लेता है:

सिर बांदे मुकट खेले होरी,
सिर बांदे मुकट खेले होरी।
पैली जा होरी सतजुग में खेली,
गौरा महादेव की है जोड़ी।
सिर बांदे मुकट ....
दूजी जा होरी त्रेता में खेली,
सियाराम की है जोड़ी।
सिर बांदे मुकट ....
तीजी जा होरी द्बापर में खेली,
राधा कन्हैया की जा जोड़ी।
सिर बांदे मुकट ....

बुन्देलखण्ड में होली का पूर्व रूप कुछ इस तरह से था। फाल्गुन शुक्ल–पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिन होलिकाष्टक कहे जाते है। इस समय हरेक घरों में गोबर की मलियॉ बनतीं है। इन्हें होलिका दहन के दिन जलाया जाता है। हुरयारे इतने दिनों तक उस स्थान पर जहॉ होली जलाई जाती है लकड़ी, कन्डे, झाड़–झंकाड़ जो कि खेतों में होते हैं, उन्हें एकत्रित करके होली में डाला जाता है। इसके पीछे शायद यही कारण रहा होगा कि खेतों में फसल कटने के पश्चात् मार्ग के कॉंटों आदि की सफाई हो जाती थी वरन् ग्रीष्म की तेज हवाओं से उड़कर कॉंटे, झाड़ आदि मार्ग में रूकावट पैदा करते है। उनकी भी सफाई हो जाती थी। होलिका दहन के स्थान पर लकड़ी–कन्डों का ढेर लग जाता है और होलिका दहन के पूर्व गॉंव या शहर के लोग उस स्थान पर एकत्रित होकर होलिका का पूजन करते है। होली के बीचों बीच एक बॉस जिसमें झण्डा लगा होता है, उसे गाढ़ा जाता है। तत्पश्चात् होली में अग्नि जला दी जाती है। होली जलते समय झण्डा जिस दिशा में गिरे, उसमें शुभ–अशुभ, वायु परीक्षा आदि की भविष्यवाणी लोग करते है।

होली की अग्नि लोग अपने–अपने घरों में लाकर उन गोबर की बनी मलियों का पूजन करके उन मलियों को उसी आग से जलाते हैं तथा उनमें गॉंकड बनाई जताती है। होलिका दहन के समय होली की अग्नि में गेंहूँ की बालें भूनी जाती है जिन्हें प्रसाद के रूप में ग्रहण करने की प्रथा है।

जब भींज गई रंग सारी, अब थर–थर कंपे दुलारी,
अब थर थर कंपे दुलारी, सब सखा हंसै दे तारी।
सब सखा हंसे दे तारी, सब मोहन पे बलिहारी,
हो बिन्द्रावन में, बिन्द्रावन में बंशी बाजी हो।

होलिका दहन के दूसरे दिन अर्थात् धुड़ेरी को उस स्थान पर लोग जाते है। ग्रामीण क्षेत्रों तथा शहरों में उस स्थान पर फाग मंडलियॉ फागें गाते हुए

* शोधार्थी, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

जाती हैं और होलिका की प्रदक्षिणा करके विभूति उठाकर समस्त देव स्थानों पर देवताओं को लगाई जाती है। तत्पश्चात् उसे एक-दूसरे के माथे में लगाकर आपस में गले मिलते हैं। उस दिन कीचड़, धूल, गोबर आदि एक -दूसरे पर डाला जाता था, लेकिन वर्तमान में उसका स्थान रंगों ने ले लिया है।

ग्रामों में द्वार-द्वार पर फाग मंडलियॉ जाती हैं, इनमें एक गायकों की मंडली होती है दूसरी फाग खेलने वालों की। ग्रामों तथा शहरी क्षेत्रों में स्त्रियॉं भी फाग खेलने को निकलती हैं स्त्रियॉ अपने देवरों के साथ फाग खेलती है। उनके ऊपर रंग डालती हैं, गुलाल लगातीं हैं तथा ऑखों में काजल भी लगा देती है। देवर उन्हें फगुआ के रूप में मिष्ठान, वस्त्र, द्रव्य, आदि प्रदान करते है। स्त्रियॉ भी एक-दूसरे पर रंग-गुलाल डालती हैं। फागों के प्रति शिष्ट समाज में एक भ्रान्ति है कि फागों में फूहड़पन ही रहता है। चूँकि होली के समय अश्लील फागें भी गाई जाती है, इसलिए लेकिन गहाराई से देखों तो फागों में लोक जीवन की बहूरंगी झलक और विषयगत् विविधता स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है:-

सूरज मोरे पाउने, चन्दरमा आये।
काहो डारों बैठका, चन्दरमा आये।।

फाग गीतों के साथ संगीत और नृत्य दर्शकों, श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर लेता है। संगीत तो ईश्वर प्रदत्त कला है जो कि मनुष्य के दुख-दर्द को भुलाकर उन्हें सुख-शांति प्रदान करता है। वाद्य तो मानव के चिरन्तन साथी है, कुछ विद्वान मानते हैं कि शब्द और स्वर यानि काव्य और संगीत का जन्म साथ-साथ हुआ होगा। कविता तो प्रकृति की रागनी है और ग्राम प्रकृति देवी के लीलाधाम हैं और ग्राम गीतों का उपादान कारण, मस्तिष्क नहीं हृद्य है। बुन्देलखण्ड में फागों के जितने रूप प्रचलित है उतने शायद अन्य जनपद में नहीं होंगे। इनमें प्रमुख है- सुमरनी की फाग, सखियाऊ फाग, छंदयाऊ फाग, ढपकी फाग, डिढखुरयाऊ फाग, चौकड़िया फाग, खड़ी फाग, लाल की फाग, रसिया, बारामासी फाग, लेद की फाग, झगड़े की फाग, अनरये की फाग आदि।

उदाहरण – *ऊॅचे से मठ जहां नगर तहां हर खेलत होरी।*
ये जू खेलत है, ये जू खेलत है, ये जू खेलत है,
राधो के संगे खेलत है।
कै मन केसर गार है, मै मन उडे गुलाल।
राधका खेलत है, ये जू खेलत है ....

नो मन केसर गार हैं, सौ दस मन उड़त गुलाल
राधका खेलत है, ये जू खेलत है
ये जू खेलत है, ये जू खेलत है ....

हमारे महर्षियों ने बसंत माधुरी की मधुमयता से आनन्द विभोर हो मधुमास से ही अपने वर्ष का प्रारम्भ करते हुए परमेश्वर से प्रार्थना के रूप में कहा था कि हमारे लिए वायु मधु बनकर बहे, नदियॉं मधुक्षरण करें।

औषधियॉ मधुमयी हों अर्थात् भूमि का कण-कण, आकाश, वनस्पितयॉं, सूर्य और हमारी गायें सभी मधुमय हो।

होली के साथ रंगों का भी अपना महत्व है- सूर्य-प्रकाश सात रंगों से मिलकर बना है। जिस प्रकार शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिए विभिन्न तत्व आवश्यक है उसी प्रकार रंग विशेषज्ञों के अनुसार शरीर में रंगों का संतुलन नितांत आवश्यक है। प्रत्येक रंग का अपना विशेष महत्व है। रंगों के माध्यम से अनेक मनोविकार तथा शारीरिक रोगों का शमन होता है। रंगों का शरीर की सप्त धातुओं और कार्य पद्धतियों पर बहुत प्रभाव पड़ता है और यही सब सोचकर तो होली के साथ रंगों का संबंध जोड़ा गया है।

उदाहरण– *बिन्द्रावन में बंशी बाजी हो, विन्द्रावन में।*
विन्द्रावन में बंशी बाजी, फिर उतेराधका साजी,
फिर उते राधका साजी, जब मोहन भरी पिचकारी,
जब मोहन भरी पिचकारी, जब लय राधा पे डारी
जब लै राधा पै डारी, तब भींज गई रंग सारी।
हो बिन्द्रावन में बंशी बाजों हो ....

जिस प्रकार यह महोत्सव आनन्द-उल्लास, हास-परिहास, आमोद-प्रमोद और व्यंग विनोदों से उल्लसित रहता है, उसी प्रकार ये गीत भी इन भावों के तन्मयी भवन रखते हुए मानव जीवन में सरसता का संचार करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बुन्देलखण्ड के लोक दर्शन की विशिष्टतायें- डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी बुन्देली बसंत 2007 पृ. 9
2. बुन्देली संस्कृति और साहित्य- डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त
3. बुन्देली लोक काव्य भाग 1 - डॉ. बलभद्र तिवारी
4. बुन्देली फाग परम्परा, डॉ. ओ.पी. चौबे
5. बुन्देली का फाग साहित्य, श्याम सुन्दर बादल, म.प्र. लोककला अकादमी, आदिवासी परिषद् भोपाल

****

ग्रामीण समाज में जातीय संरचना (छीमक गॉव के विशेष संदर्भ में)

करन सिंह *

शोध सारांश - उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज का वास्तविक दर्पण ग्रामीण समाज ही है जहां विवाह परिवार नातेदारी, समुदाय इत्यादि के साथ जाति इसकी रग रग में वसी है जिसकी परम्परागत विशेषताओं में ऊँच-नीच, छूआछूत अन्तजातिय विवाह प्रतिबन्ध, से सामाजिक स्तरीकरण को बढ़ावा मिला और समाज में कुछ जातियां ऊँची तो कुछ नीची समझी जाने लगी लेकिन समय के बदलाव के साथ शिक्षा, जागरूगताके बढ़ने तथा संविधान व कानून के राज से इन सामाजिक बुराइयों पर लगाम लगने लगी। विभिन्न समाजशास्त्रियं, विचारकों की मेहनत व संघर्ष से इन सामाजिक निषेधों, नियोग्यताओं में शिथिलता आने लगी और आगे चलकर एस.सी. दुबे. एम.एन. श्रीनिवास जैसे समाजशास्त्रियों के ग्रामीण अध्ययन से ग्रामीण जातीय संरचना की वास्तविक तस्वीर सामने आई जिसमें प्रभूजाति की अवधारणा भी उजागर हुई। इन्ही के प्रयासों से ग्रामीण जातिय संरचना में संस्कृतिकरण, पश्चिमीकरण, आधुनिकरण व वैश्वीकरण ने आमूलचूल परिवर्तन ला दिया। आज समाज में निम्न समझी, जाने वाली जातियां अच्छी जीवन शैली अपनाकर तथा अन्तर्जातीय विवाह प्रचलन से सामाजिक सद्भाव बढ रहा है तथा प्रभुजाति की अवधारणा में परिवर्तन आ रहा है।

शब्द कुंजी - सामाजिक स्तरीकरण, निर्योग्यताऐं,वैश्विकरण, आधुनिकीकरण, अस्पृश्यता, पश्चिमीकरण, संस्कृतीकरण, प्रभुजाति।

प्रस्तावना - 'भारतीय समाज ग्राम प्रधान समाज है जो अधिकांशत कृषि मजदूरी, पशुपालन पर निर्भर रहा है। प्राय: यह विश्वास किया जाता है कि प्रारम्भ में चार वर्ण अर्थात् ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र थे जिन में आगे चलकर परम्परागत व्यवसाय, रीति रिवाज, चाल-चलन, वैवाहिक सबंध कठोर होते गए और ये चारो वर्ण समय के साथ जाति-उपजातियों में परिवर्तित होने गए। इन जातियों-उपजातियों में वैवाहिक व खान-पान सबंध निषिद्ध होते गए। इस प्रकार यह एक प्रकार का सामाजिक स्तरीकरण था जिसने सम्पूर्ण समाज को विखण्डित किया तथा एक जाति को दूसरी जाति से प्रथक कर सम्पूर्ण सामाजिक संरचना ऊंच-नीच में परिवर्तित कर दी। और इसका कठोर रूप भारतीय ग्रामीण समाज में प्रमुख रूप से रहा है। जो आज भी ग्रामीण समाज में कही-कही देखने को मिलता है।' वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में ग्रामीण समाज में जातीय संरचना का स्वरूप और मौलिक आधार बदल रहा है जिससे ग्रामीण जातीय संरचना परिवर्तित हो रही है। आज व्यक्ति केवल जाति तक सीमित नहीं रहा है बल्कि उसका पद,व्यवसाय और कर्त्ताव्यो का निर्धारण अब जाति पर न होकर व्यक्तिगत योग्यता पर आधारित हो गया है। यह मेरे द्वारा जिला-ग्वालियर की डबरा तहसील के छीमक गांव की सामाजिक व्यवस्था पर किये जा रहे अध्ययन से भी ज्ञात होता है, कि वहां पर किसी की जाति-उपजाति का व्यक्ति पैतृक पैशा न अपनाकर योग्यतानुसार अपने पैशे, व्यवसाय का निर्धारण कर रहे है। पहले इस गांव की अधिकांश जातियां अपने व्यवसाय व कृषि मजदुरी में संलग्न थी किन्त आज परिवर्तन के दौर में यहां के लोग दुकानदारी, नौकरी, कम्पनी में कार्यरत है। जिनमें एक साथ कई जाति- उपजाति के लोग कार्य कर रहें है। ग्रामीण समाज की जातीय संरचना में हो रहे परिवर्तनो को हम निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट कर सकते है-

- 'ग्रामीण समाज ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारतीय समाज जाति व्यवस्था द्वारा समाज का (खण्डात्मक) विभाजन प्रस्तुत करती है इसी के आधार पर यह देश विभिन्न समूहों - उप समूहो में ऊँच- नीच के आधार पर बटा रहा है किन्तु आज भूमण्डलिकरण के दौर में जाति व्यवस्था की यह विशेषता कहीं पूर्णत: तो कहीं आंशिक रूप से परिवर्तित हो गई है। आज व्यक्ति कार्य का निर्धारण जाति के आधार पर न करके, अपनी योग्यता, क्षमता के आधार पर, पद व्यवसाय और कर्त्ताव्य का निर्धारण करता है। ग्रामीण समाज भी इससे अछूता नहीं रहा है आज गांवो में भी लोग जातिय बंधनों को त्यागकर अन्तर्जातिय सबंधों को बढ़ावा दे रहे है तथा विभिन्न जातियों के मध्य विद्यमान रहे कई निषिद्धों में शिथिलता देखने को मिल रही है।'
- 'सम्पूर्ण जातीय संरचना के ऐतिहासिक अध्ययनसे यह ज्ञात होता है कि ग्रामीण जातिय संरचना में ब्राहाणों का प्रभुत्व व ऊँचा स्थान रहा है समाज की सत्ताा इन्ही के हाथों में रही है जिसके परिणामस्वरूप इनका समाज के राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में सदा ही एकाधिकार रहा है परन्तु आज हम देखते है कि समाज के सभी वर्ग, जातियों के सदस्य शिक्षित-जागरूक हो रहे है तथा अपने अधिकारों के प्रति सजग है गांवों में भी देखने में आया है कि अब शिक्षित-जागरूक परिवारों के लोग बाम्हाणों को कम ही बुलाते है तथा अधिकांशत: धार्मिक कार्य पूजा-अर्चना नामकरण व अन्य संस्कार बांम्हाणों से न कराकर स्वंय ही करने लगे है।'
- 'जातिय संरचना समाज को ऊँच-नीच के आधार पर असमान खण्डों में बोंटती है और इसका कठोर रूप आज भी हमें ग्रामीण समाज में कई जगह देखने को मिलता है जिसमें किसी जगह ब्राम्हणों को तो कहीं क्षत्रिए जाति को समाज में धन, बल व प्रतिष्ठा के आधार पर ऊँचा स्थान प्राप्त है वहीं हम देखते है कि अन्य जातियों को समाज मे निम्न स्थान प्राप्त है और यह स्थिती समानता की विरोधी है। परन्तु आज हम पाते है कि स्तरीकरण की धारणा में भी परिवर्तन हुआ है, चाहे वह ग्रामीण समाज में ही क्यों न हो। आज अनेक जातियों उपजातियों अपने-अपने समूहों को सामाजिक संस्तरण में ऊँजा उठाने व बताने का प्रयास कर रहीं है।' और इस प्रक्रिया को एम.एन. श्रीनिवास

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय एम0एल0बी0 उत्क्रष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

ने अपने '**रामपुरा गांव**' के अध्ययन में भी स्पष्ट किया है,जिसे इन्होंने संस्कृतिकरण की प्रक्रिया माना है 'जिसमें कोई निम्न हिन्दू जाति, समूह उच्चजाति की जीवनशैली अपनाने लगती है ताकि सामाजिक संस्तरण में उच्च स्थान प्राप्त हो सके।'[1]

- 'ग्रामीण जातीय संरचना में सबसे निम्न स्थिति अछूत समझी जाने वाली जातियों को दी गई। इन्हे अत्यन्त नीचा समझा जाता था तथा उन पर कई प्रकार के निषेध व निर्योग्यताऐं लगा दी गई व उच्च समझी जाने वाली जातियों इन्हें हेय दृष्टि से देखती थी तथा समाज में छुआछूत नामक सामाजिक बुराई से निम्न जातियों को अपमान सहन करना पड़ता था तथा उच्च जाति के लोग धार्मिक कार्यो में इन्हें सामिल नहीं करते थे एवं कई गांवो में सार्वजनिक मंदिर कुँआ आदि के उपयोग से इन्हें दूर रखा गया तथा खान-पान के संबध भी इनसे नहीं बनाए जाते थे। परंन्तु आज संवैधानिक प्रावधानों, अस्पृश्यता निवारण कानून इत्यादि से उनकी सामाजिक स्थिति में भी परिवर्तन हो रहा है अब वे समाज में समानता के साथ सर उठाकर जीने लगे है। तथा सामाजिक आर्थिक व धार्मिक क्षेत्र में भी उनके अधिकार सवर्णो के विपरीत है इस दृष्टि से भी ग्रामीण जातीय संरचना में परिवर्तन देखने को मिलता है। परम्परागत जातीय संरचना में अपने जाति विशेष के सदस्यों पर दूसरी जाति से भोजना व सामाजिक सहवास जैस सम्बयों पर विशेष प्रतिबध थे एक जाति के सदस्य दूसरी जाति मे विवाह व खान- पान सबंध स्थापित नहीं कर सकते थे। यदि ग्रामीण स्तर पर किसी सदस्य द्वारा ऐसा किया भी जाता था तो उस परिवार का, उसकी जाति के लोग बहिष्कार कर देते थे परन्तु आज इस स्थिति में काफी सुधार देखने को मिल रहा है तथा पूर्व से चले आ रहे निषेध व नियोग्यताऐं कमजोर पड़ती जा रही है। यही कारण है कि आज अन्तर्जातीय विवाह बढ़ते जा रहें तथा यह स्थिति कई गांवो में भी देखने को मिल रही है आज गांवो में भी शिक्षा, जागरूकता व अच्छी जीवन शैली के प्रभाव से विभिन्न जातियों के बीच खान-पान व अन्य सबंध स्थापित होने लगे है।'

'आज सभी जातियां हर दृष्टि से समान अधिकारों की मांग करने लगी है इस प्रकार आज जातीय संस्तरण की जो व्यवस्था पहले थी वह आज परिवर्तित होती नजर आ रही है। इसमें सर्वाधिक परिर्वतन अछूतों की स्थिति में हुआ, पहले इन्हें समाज में सभी के समान बैठने की अनुमति नहीं थी जो आज समानता का जीवन जी रहे है तथा इसका प्रभाव सभी जातियों और उपजातियों पर पड़ा है। आज हम देखते है कि शहर ही नहीं अपितु गांव में भी पश्चिमीकरण अपनी जड़े जमाने में लगा हुआ है पहले ग्रामीण लोग स्वदेशी/ खादी पायजामा कुर्ता, धोती व साधारण पेन्ट-सर्ट का उपयोग पुरूष करते थे वहीं महिलाओं में सलवार कुर्ता, साड़ी-ब्लाज पेटीकोट व देशी आभूषणों का प्रचलन था जैसा की छीमक गांव के उत्तारदाताओं से प्राप्त जानकारी से पता चलता है लेकिन आज पश्चिमीकरण के प्रभाव से पश्चिम के देशों का पहनावा, वैशभूषा, आभूशण जिनमें जीन्स-टीसर्ट, कैप्री, टॉप प्रमुख है, का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। यह बदलाव शहर की ही नही अपितु गांव की सभी जातियों की जीवन शैली में देखा जा सकता है अर्थात-'भारतीय समाज पश्चिमी सभ्यता का अनुशरण करता जा रहा है।'[2] इस प्रक्रिया को एम.एन. श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण नाम दिया है।

ग्रामीण जातीय संरचना में हो रहें सम्पूर्ण परिवर्तन सामाजिक परिवर्तवन को बढ़ावा देते है तथा जातीय परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन का आधारभूत हिस्सा है हालाकि सामाजिक परिवर्तन एक व्यापक अवधारणा है। जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक इत्यादि सभी पक्षों को समाहित किया जाता है। जैसाकि-गिलिन व गिलिन के अनुसारः- 'सामाजिक परिवर्तनों को जीवन की स्वीकृत रीतियों से विभिन्नता के रूप में परिभाषित किया है भले ही यह परिवर्तन भौगोलिक दशाओं, सांस्कृति साज सज्जा जनसंख्या अथवा वैचारिकी की बनावट में अदल-बदल कारण घटितहो और चाहे समूह के अन्तर्गत किसी विस्तृति या अनुसंधान के कारण।'[3]

मैकाइवरएवं पेज- 'सामाजिक सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तनों को ही हम सामाजिक परिवर्तन मानेगे। इस प्रकार सामाजिक परिवर्तन सांस्कृतिक अथवा सभ्यवागत परिवर्तन से एक पृथक वस्तु है।'[4]

- एच.एम.जॉनसन- 'मूल अर्थो में सामाजिक परिवर्तन का अर्थ संरचनात्म परिवर्तन है।[5]

ऊपर दी गई परिभाषाओं से स्पष्ट होता कि परिवर्तन एक व्यापक प्रक्रिया है इसमें जातीय संरचना के साथ-साथ समाज की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व धार्मिक संरचना व सम्बन्धों में हो रहे परिवर्तन भी शामिल है यह परिवर्तन स्वंय प्रकृति के द्वारा या मानव समाज द्वारा योजनाबद्ध रूप में हो सकता। यह किसी न किसी रूप मे हमेशा चलने वाली प्रक्रिया है चुंकि ग्रामीण समाज की बात की जाए तो यहां जातीय संरचना एक प्रमुख विशेषता है जो सम्पूर्ण ग्रामीण समाज को किसी न किसी रूप में प्रभावित करती है तथा ग्रामीण स्तर पर जातीय संरचना को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में आसानी से समझा व अनुभव किया जा सकता है आज भी हमें समाचार पत्रों, टीवी, रेडियों व अन्य दूर संचार के साधनों से पता चलता है कि कहीं छूआछूत अश्पृश्यता की घटना हो रही है तो कहीं जातिगत भेदभाव व सामाजिक निर्योग्यताओं का पालन करने से विवाद आदि हमें देखने को मिलते है जो कहीं न कही ग्रामीण जातीय संरचना की परम्परागत स्थिति को दर्शाती है तथा ऐसे विषयों पर कई मित्रों में विवाद होते रहते है जिन पर न्यायलय भी समय-समय पर संज्ञान लेता रहा है। तथा इन विवादों में कई बार गांव की प्रभूजाति का प्रभाव जिम्मेदार रहा है।

प्रभुजाति की स्थिति- 'प्रभुजाति से तात्पर्य किसी गांव की ऐसी जाती से जो पूरे गांव में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेती है और यह प्रभुत्व आर्थित सम्पन्नता, सामाजिक प्रतिष्ठा, जाति के लोगो की संख्या, भूस्वामित्व, राजनैतिक प्रभाव व अन्य कारकों से प्राप्त होता है तथा वह जाति गांव की अन्य सभी जाति, धर्म के लोगो को अपने अधीन रखने की क्षमता रखती हो।' अर्थात किसी गांव की वह जाति जो गांव के अन्य सभी ग्रामवासियों पर अपनी सत्ता प्रभुत्व थोपती हो तथा अपने अनुसार गांव की व्यवस्था संचालित करती हो तथा गांव के सार्वजनिक मुदो पर वही अन्तिम निर्णय लेती है तथा प्रभूजाति के सदस्य पूरे गांव में वर्चस्व बनाए रखते हो, प्रभूजाति कहलाती है। ग्रामीण जातीय संरचना में प्रभुजाति सर्वोच्च स्थान पर होती है और यह जरूरी नहीं कि किसी गांव की प्रभुजाति ब्राम्हण या क्षत्रिय ही हो, यदि अन्य जाति भी किसी गांव में जनसंख्या, भूभाग, आर्थिक सम्पन्नता से युक्त है तो वह भी प्रभुजाति का स्थान प्राप्त कर सकती है। जैसाकि एम.एन. श्रीनिवास द्वारा यरामपुरा गांव के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि रामपुरा गांव में ओक्कालिंगा जाति एक प्रभुजाति के रूप में विधमान की क्योंकि उस गांव में इनकी जनसंख्या व भूस्वामित्व भी अधिक था। श्रीनिवास के अनुसार 'रामपुरा गांव में ओक्कालिंगा जाति ही शक्तिशाली व सर्वोच्च थी तथा गांव की सम्पूर्ण व्यवस्था पर इस जाति का आधिपत्य था।'[6]

प्रभुजाति ग्रामीण समाज की महत्वपूर्ण विशेषता रही है देश के प्रत्येक गांव में कोई न कोई जाति इस रूप में विधमान थी किन्तु आज

आधुनिकीकरण, संविधान व कानून के शासन से इस व्यवस्था में बदलाव देखा का सकता है आज गांव का गरीब, पिछड़ा, आदिवासी कोई भी हो, सभी को समान न्याय का अधिकार है तथा कानून की नजर में सभी समान है तथा कानून के प्रभाव से ग्रामीण जातीय संरचना से प्रभु जाति का प्रभुत्व समाप्त होता जा रहा है भले ही किसी गांव में किसी जाति विशेष की अधिक संख्या भुस्वामित्व, आर्थिक सम्पन्नता से युक्त क्यों न हो लेकिन वह गांव की अन्य जातियों को विवश, अधीन नहीं कर सकती हॉलाकि अभी भी कई गांव इसके अपवाद हो सकते है।

अतः स्पष्टतः कहा जा समता है आज ग्रामीण जातीय संरचना में हो रहें व्यापक परिवर्तन से सम्पूर्ण सामाजिक संरचना परिवर्तन के दौर से गुजर रही है तथा कई सामाजिक बुराईयां विलुप्त होती जा रही है जो गांधी जी के 'रामराज्य' की संकल्पना के अनुरूप ही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कास्ट इन मोडर्न इण्डिया एण्ड अदर एर्सेज: एम. एन श्रीनिवास पृष्ठ 48 (मीडिया प्रमोटर्स) एवं पब्लिसर्स प्रा.लि., बाम्बे, प्रथम प्रकाशन 1962 11वी प्रकाशन 1994)
2. सैलेन देखनाथ :- धर्मनिरपेक्षता: 'पश्चिमी और भारतीय' अटलांटिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली
3. डॉ जीआर मदान:- 'परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र' पृष्ठ 2, विवके प्रकाशन, दिल्ली 2015
4. उपर्युक्त -पृष्ठ 1 विवेक प्रकाशन, दिल्ली
5. उपर्युक्त- पृष्ठ2 विवेक प्रकाशन, दिल्ली
6. पेलाक डॉ0 एफ0 : जातियों का संचरण यमानव 1985

****

शैक्षणिक वातावरण, सामाजिक और राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन

डॉ. मनोरमा सिंह *

शोध सारांश – किसी भी देश की मजबूत कड़ी शिक्षा है। यदि शिक्षा का राजनीतिकरण कर दिया जाय। तो वहाँ समाज अपने आप खण्डहर होकर ढ़ह जाता है। आजादी से लेकर आज तक शिक्षा की अनेकों योजनाओं का क्रियान्वयन हुआ है फिर भी शिक्षा मानव से कोशो दूर होती जा रही है। सत्तावादी राजनेताओं ने अपने पेट को भरने के लिए शिक्षा की मजबूत कड़ी को तोड़ कर रख दिया है। यहाँ तक ग्रामीण आँचलों में शिक्षा के स्तर में बहुत ही गिरावट आ रही हैं। इसका मूल कारण राजनैतिक सत्तावादी अहंकार पूर्ण कृत्य कहा जा सकता है। आज भी शिक्षण संस्थानों में शिक्षक अपने उत्तरदायित्वों का निवर्हन न करते हुए राजनेताओं के इर्द-गिर्द चापलूसी करते हुए दिखाई देते हैं। क्या यही शिक्षा की असली नीव है? हमें लगता हैं कि शिक्षा व्यवस्था में चाहे स्कूल शिक्षा व्यवस्था हो या उच्चशिक्षा व्यवस्था हो, इनके कार्य क्षेत्र में राजनेताओं के हस्ताक्षेप से स्वतंत्र होने पर शिक्षा की नीव अधिक मजबूत होगी। इसका उत्तरदायित्व न्यायपालिका के नियंत्रण में होने से योग्यता पूर्ण व्यक्ति अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन करेगा।

शोध प्रविधि – शैक्षणिक वातावरण, सामाजिक और राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन में द्वितीयक शोध सामाग्री के द्वारा शोध पत्र में तथ्यों को समाहित किया गया है। इसके हेतु सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक पुस्तकों को समाहित करके अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ धार्मिक ग्रन्थों, पत्र पत्रिकाओं आदि से सन्दर्भ ग्रन्थ को समाहित किया गया है। शिक्षा व्यवस्था में आज भी हो रहे राजनैतिक परिवर्तन क्यों सही मार्ग दिखा पायेगें। इसकी कुछ समस्याओं हेतु इस शोध पत्र का लेखन किया गया है। इस शोध पत्र के माध्यम से भारतीय समाज में व्याप्त शिक्षा व्यवस्था की समस्याओं को प्रकाश में लाने का प्रयास है।

शोध के उद्देश्य :

1. मानव जीवन के विकास का माध्यम शिक्षा व्यवस्था है फिर भी क्या सही दिशा का संचालन हो पा रहा है। इसका अध्ययन करना।
2. सामाजिक जन जीवन को शिक्षा से होने वाले लाभ का अध्ययन करना।
3. भारतीय सामाजिक व्यवस्था में शिक्षा के द्वारा होने वाले प्रोत्सहन का अध्ययन करना।
4. मानव जीवन के शिक्षा और मूल्य अध्ययन वास्तव में एक आधार शिला के रूप में होने वाले वैचारिक विमर्श का असर भारतीय समाज पर पड़ रहा या नहीं इसका अध्ययन करना।
5. ग्रामीण जीवन शिक्षा के मायने पर जागरूक हुआ है कि नहीं इसका अध्ययन करना।

समस्या :

1. प्राइमरी स्कूलों में होने वाली सरकारी स्कूलों की शिक्षा से बालकों के बौद्धिक स्तर बहुत कमजोर हो रहें हैं।
2. नैतिक शिक्षा के अभाव में संस्कार का सृजन नहीं हो पा रहा है।
3. मानवीय मूल्यों और समाज का शिक्षा में कुप्रभाव पड़ रहा है। इससे सामाजिक पिछड़ा पन अभी भी दिखाई दे रहा है।
4. समाज और राजनीतिक हथकण्डों के द्वारा स्कूल की व्यवस्था में कोई आशा जनक सुधार नहीं दिखाई देता है।
5. शिक्षा व्यवस्था के ग्रामीण ईलाकों में उसी परिक्षेत्र का शिक्षक होने से शिक्षक समय पर स्कूलों में नहीं पहुँच पाते हैं। इससे बालकों की शिक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

यदि वह व्यक्ति अपने उत्तारदायित्वों का निर्वहन नहीं करता। उसे दण्ड न्याय पालिका देने के लिए तात्पर्य होगी। ऐसी स्थिति में राजनेताओं का कोई हस्ताक्षेप नहीं होने से शैक्षिक कार्यो की प्रवृत्तियाँ सुचारू रूप से संचालित होगी। यदि बहुत योग्य और विद्वान व्यक्ति शिक्षा की मजबूत कड़ी के लिए पूर्णरूप से समर्पित होकर कार्य करता है। उन्हें दूसरें लोगों और चमचों की बाते अच्छी नहीं लगती है। उसके बाद नेताओं से तबादले करने की धमिकियाँ देते हैं। ऐसी स्थिति में अनेक अच्छे कार्य करने वाले कर्मचारी डर से शिक्षा के पूर्ण उत्तारदायित्व को निर्वहन नहीं कर पाते हैं। समाज में वंचित वर्ग जो सुख सुविधाओं के अभाव में अधिक कष्ट पूर्ण जीवन जीते हैं। उनके लिए उपयुक्त रूप से आर्थिक विसमताओं के कारण या तो प्रवेश नहीं ले पाते या उन्हें आयु के वंधनों की अधिकता से वंचित होना पड़ता है। यहाँ तक व्यवसायिक पाठक्रमों में प्रवेश लेना बहुत मुश्किल होता है। इन पाठ्क्रमों की फीस अत्यधिक होने के कारण जमीनी गरीब और मजदूर व्यक्ति प्रवेश नहीं ले पता है। यह स्थिति आज भी ग्रामीण पिछड़े हुए बाहुल्य में दिखाई देती है। आज व्यक्ति को शिक्षा पूर्ण होने के बाद जीवन में शारीरिक श्रम के लिए बाध्य हो जाता है। यह श्रम मानव अयोग्यता के दायरे में अपराध साबित होती है। यहाँ अधिक से अधिक लोक आज कारखानों की ओर पलायन कर रहे हैं। कुछ तो कृषि कार्य में अपने जीवन को व्यतीत करने लगे हैं। आज की शिक्षा प्रतियोगितावादी है। उस प्रतियोगितावादी शिक्षा के लिए समाज में उपभोक्ता जैसा व्यवहार होता जा रहा है। हम वेतन आपकी योग्यता के अनुसार नहीं बल्कि आपने अनुसार दूँगा और काम भी अपनी मर्जी के अनुसार लूगा। चाहे कारखाना हो, चाहे ठेकेदार द्वारा करायी जाने वाली मजदूरी हो सभी में राजनेताओं का हस्ताक्षेप होने से जितनी मेहनत उतना वेतन का सबाल ही नहीं उठता है। ऐसी स्थिति में सामाजिक वातावरण शिक्षा की ओर कैसे उन्मुख होगा। आज एक कान्वेन्ट की फीस पाँच हजार से दस

* इतिहास विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

हजार रूपये महीने होती है। एक मजदूर को दो सौ और तीन सौ रूपये मजदूरी मिलती है। बताई उसकी बेहतर शिक्षा कैसे हो सकती है। सरकारी तंत्र में पढ़ाई का नाम और अस्तित्व ही समाप्त होता जा रहा है। पूँजीपति कान्वेन्ट की ओर अपने बच्चों को पलायन कर रहे हैं। इस स्थिति में गरीबों का क्या होगा महोदय यह एक विचारणीय प्रश्न है? शिक्षा द्वारा ही समाज को आगे अग्रसर किया जा सकता है। यह व्यवहार, मानवीय मूल्य, सदाचार, रोजगारमुखी, राष्ट्र हित का माध्यम अगर कोई है, वह शिक्षा व्यवस्था है। आज भी विद्यालयों में पुस्तकालय का नाम है किन्तु पुस्तके नहीं, लैव का नाम है लेकिन लैव नहीं। ऐसी विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में राजनेताओं के दम पर आने वाले प्रशासक असीमित मूल्यों की पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त पुस्तकों की खरीददारी से पुस्तकालय तो भरा हैं किन्तु उपयोगी पाठ्यसामाग्री नहीं होने पर विद्यार्थी की शिक्षा व्यवस्था चौपट हो रहीं है। यहाँ तक आज मौलिकता, साहित्य, के समीक्षात्मक दृष्टिकोण, नये आयाम को प्रस्तुत करने के लिए व्यवस्थित पुस्तकों का संकट राज्य स्तरीय विश्वविद्यालयों में अत्यधिक मात्रा है जबकि केन्दीय विश्वविद्यालयों की पुस्तकालयों में कहीं पुस्तकों व्यवस्थाओं की सुविधाएँ हैं। उनके आधार पर यदि हम राज्यस्तरीय पुस्तकालयों और विद्यार्थियों का तुलना करते हैं। वहाँ स्वाभाविक है कि जहाँ समुचित सुविधाओं से पूर्ण विद्यार्थी का मनोविकास कहीं अधिक प्रभावी होगा। यदि इस शोध पत्र के माध्यम से राज्यस्तरीय विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की व्यवस्था को मजबूत किया जाय। उस दिन वास्तव में शिक्षा की सफलता की कड़ी में यह राष्ट्र सर्वोच्च शक्तिशाली होगा।

निष्कर्ष – यदि हम दर्शन के बहुआयामी दृष्टिकोणों की बात करते हैं वहाँ ज्ञान परम्पराओं का विकास शिक्षा के सहीं मायने प्रस्तुत करने में हैं। यहीं इस शोध पत्र का उद्देश्य है। आप तक हम इन समस्याओं को पहुँचाना सौभग्य समझता हूँ, क्योंकि शिक्षा की मजबूत कड़ी राष्ट्र निर्माता शिक्षक होते हैं। उन्हीं के हाथों में आज की बच्चों और युवाओं का भविष्य निर्धारित करता है। इन विद्यार्थियों के भविष्य बनने से उन बुजुर्गों का भविष्य सुनिश्चित होता है। उन्हें सुख शान्ति और स्मृद्धि का स्वप्न साकार होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. श्रीमती कृष्णकान्ता एम.ए., नैतिक शिक्षा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1979, पृष्ठ 15
2. श्यामाचरण दुबे, शिक्षा और समाज, सातवाहन पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली, सं. 1983, पृष्ठ 31
3. रघुवीर सिंह, *बदलते जीवन मूल्य और बौद्ध धर्म,* अतिश प्रकाशन, दिल्ली, 2001, पृष्ठ 10
4. राहुल सांकृत्यायन, *पालि साहित्य का इतिहास,* उत्तार प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2011, पृष्ठ 105
5. वेद प्रकाश सोनी, *भगवान बुद्ध : जीवन–दर्शन,* ए.के. इण्टरप्राइजेज, दिल्ली, 2009, पृष्ठ 45

****

भारत में मुस्लिम तलाकशुदा महिलाओं की स्थिति: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

शुभम ओझा * डॉ. बी. एल. जोशी **

प्रस्तावना – पुरूष सत्तात्मक समाज ने स्त्री के साथ अन्याय करने में कोई कमी नही छोड़ी है, इसने उसे सिर्फ भोग की वस्तु मात्र बनाकर ही हानि नही पहुँचायी अपितु उसका इस तरह शोषण किया है, कि अबला, कमजोर और बेसहारा कहकर उसकी वास्तविक शक्ति से उसे परिचित ही नही होने दिया। इस सबके पीछे पुरूषों का यह रूप स्पष्ट दिखाई देता है, कि यदि स्त्री अपनी वास्तविक शक्ति से परिचित हो गई तो वह उसकी ताड़नाओं और शोषण की शिकार मात्र बनकर न रह सकेगी। इन्ही धारणाओं के कारण वह प्रताड़ित और परित्यक्त होती रही है। चाहे गौतम का इन्द्र द्धारा छली गयी अपनी निरपराध पत्नी को शिला बना देने का प्रसंग हो या गांधारी का अभिशप्त अन्ध वैवाहिक जीवन अथवा शकुन्तला का निर्वासन हो या राम द्धारा अपनी पत्नी सीता का परित्याग। युग बदल गया जीवन और परिस्थितियाँ बदल गयी किन्तु अब भी बार-बार महिला को अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है।[1] अनेक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक कारणों से भारतीय समाज में अधिकांश महिलाओं की प्रस्थिति वर्तमान समय में भी कमजोर वर्ग की बनी हुई है। इक्कीसवी सदी में महिलाओं के शिक्षित व जागरूक होने के कारण जब वह अपने अधिकारों की माँग व प्रयोग करती है, जिसे अधिसंख्य पुरूष समाज किसी भी प्रकार पचाने में समर्थ नही है, इसी के परिणामस्वरूप महिला को या तो तलाकशुदा जीवन-यापन करना पड़ता है या परित्यक्ता का जीवन जीने को विवश होना पड़ता है और फिर इसी समाज द्धारा इन तलाकशुदा महिलाओं को हेय दृष्टि से देखा जाता है। जिसका इनके संवेगात्मक पक्ष पर अत्यधिक गहरा प्रभाव पड़ता है। इसके उपरान्त भी जीवन भर उस महिला को अपने अस्तित्व व जीविका हेतु संघर्ष करना पड़ता है।

तलाक (विवाह-विच्छेद) – सामाजिक एवं कानूनी रूप से पति-पत्नी के विवाह सम्बन्धों की समाप्ति ही तलाक कहलाता है। तलाक पति-पत्नी के वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन में असामंजस्य एवं असफलता का सूचक है। इसका तात्पर्य यह है, कि जिन उद्देश्यों को लेकर विवाह किया गया वे पूर्ण नही हुये हैं। यह एक दु:खद घटना है, विश्वास की समाप्ति है, प्रतिज्ञा एवं मोहभंग की स्थिति है। इसमें एक साथी दूसरे का मूल्यांकन कर लेता है, और जिसे रद्द कर दिया जाता है, वह अपने आपको अपमानित एवं कुचला हुआ महसूस करता है। उसके आत्माभिमान को चोट पहुँचती है। **मिशेल (1970)** के अनुसार तलाक वह प्रक्रिया है, जिसमें पति-पत्नी विवाह संस्था द्धारा विधिपूर्वक अलग होकर एकाकी स्तर को प्राप्त कर लेते है और भावी समय में पुर्नविवाह के लिये स्वतन्त्र हो जाते हैं।[2]

मुसलमानों में तलाक – मुसलमानों में तलाक के अधिकार का उपयोग जब पुरूष करता है तब तलाक पाने के लिये पति को कोई कारण बताने की भी आवश्यकता नही है। इसके विपरीत महिला परम्परागत मुस्लिम नियमों के अनुसार भी विवाह-विच्छेद नही करा सकती, जब तक कि उसका पति इसके लिये तैयार न हो। इस्लाम में महिला को भी विवाह-विच्छेद करने का पुरूष के समान अधिकार है। किन्तु यह व्यवहार में लागू नही है। जिन दशाओं में महिला तलाक की माँग करती है, उनमें भी विवाह-विच्छेद का स्त्रोत परम्परागत नियमों के अनुसार पति ही होता है। उदाहरण के लिये खुला नामक विवाह-विच्छेद के ढ़ग में महिला मेहर के धन को लौटाकर तलाक की माँग तो कर सकती है, किन्तु यह तलाक पूरा तभी होगा, जब पति इसके लिये तैयार हो। पति की अनुमति मिलने पर महिला पति द्धारा दि गयी मेहर रकम वापस लौटाकर ही तलाक ले सकती है।[3]

मुस्लिम तलाक कानून के अनुसार पति अपनी पत्नी को जब चाहे छोड़ सकता है। उसके लिये इतना ही पर्याप्त है, कि वह पत्नी से चार माह तक सहवास न करे। मुसलमानों मे तलाक न्यायालय एवं बिना न्यायालय की सहायता से तथा लिखित और मौखिक दोनों तरीको से हो सकता है।[4]

जहाँ तक मुस्लिम महिलाओं में तलाक का प्रश्न है, तो सन् 1939 से पूर्व मुस्लिम महिलाओं की स्थिति तलाक के मामले मे बहुत खराब थी। तलाक देना पुरूष का एक निरंकुश अधिकार था, वह जब चाहे अपनी पत्नी को तीन शब्दों का उच्चारण कर तलाक दे सकता था। इतना ही नही एक मुस्लिम पुरूष तलाक के पश्चात् केवल इद्दत की अवधि तक ही पत्नी को भरण-पोषण का खर्चा देने के लिये बाध्य है। इस स्थिति ने महिला की स्थिति को और ज्यादा विकृत बना दिया और पति के लिये पत्नी को तलाक देना आसानी से एक आम बात बन गई। **सन् 1939** से पूर्व पत्नी केवल पारस्परिक सहमति के आधार पर मुबारत तलाक ले सकती थी। जिसमें भी उसे अपनी मेहर की पूरी रकम का त्याग करना पड़ता था। इसके अलावा पति की सहमति से ही ऐसा तलाक सम्भव था। इसके अतिरिक्त इला अर्थात आत्मसंयम की प्रतिज्ञा, जिहार एवं लियान अर्थात् पर-पुरूषगमन के झूठे आरोप के आधार पर तलाक ले सकती थी, किन्तु इसे सिद्ध करना बहुत जटिल कार्य था, तथा इसके लिये न्यायालय की डिग्री प्राप्त करना आवश्यक था, अर्थात् पति-पत्नी के बीच मे तलाक के मामले में स्थिति बराबर नही थी। पहली बार **सन 1939 के मुस्लिम विवाह-विच्छेद कानून** के अनुसार पत्नी को भी तलाक देने सम्बन्धी कुछ अधिकार प्रदान करायें गये। जिसके द्धारा वर्तमान में एक मुस्लिम पत्नी भी विवाह-विच्छेद करा सकती है। विवाह-विच्छेद निम्नलिखित में किसी एक या एक से अधिक आधारों पर हो सकता है :-

1. पति के बारे में चार वर्ष से कुछ भी पता न हो।

*शोधथीर्, समाजशास्त्र अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (सेवानिवृत) शासकीय महाविद्यालय, कालापीपल, शाजापुर (म.प्र.) भारत

2. यदि पति अपनी इच्छा से, अथवा असमर्थता से दो वर्ष तक पत्नी का भरण-पोषण न कर सका है।
3. यदि पति को सात वर्ष या उससे अधिक समय के लिए कैद की सजा हो गई हो।
4. यदि बिना किसी पर्याप्त कारण के पति ने तीन वर्ष से अपने दाम्पत्य कर्तव्यों को पूरा न किया हो।
5. यदि पति विवाह के समय से ही नपुंसक हो।
6. यदि पति दो वर्ष से पागल हो अथवा वह कोढ़ या असाध्य यौन रोग से ग्रस्त हो।
7. 18 वर्ष की आयु से पूर्व बचपन में किये हुये विवाह का विच्छेद बालिग हो जाने के बाद करवाया जा सकता है, यदि वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित न हुये हो।
8. पति की क्रूरता (क्रूरता का तात्पर्य कानून में स्पष्ट किया गया है)।
9. किसी अन्य आधार पर जिसे मुस्लिम कानून स्वीकार करता है।

जहाँ तक पति-पत्नी के बीच पुर्नविवाह का प्रश्न है, तो मुस्लिम विधि इतनी सरल नही है, जितनी कि हिन्दु विधि। क्योंकि हिन्दु विधि में **धारा 15** के अन्तर्गत आसानी से पुर्नविवाह हो जाता है, जबकि मुस्लिम विधि के अनुसार तलाकशुदा महिला का विवाह तलाक के पश्चात् अन्य व्यक्ति के साथ होना चाहिये, फिर दोनों के बीच लैंगिक सम्बन्ध स्थापित हो जाने चाहिये। उसके बाद दोनों के बीच तलाक होने के पश्चात् ही पुर्नविवाह पूर्व पति-पत्नी के मध्य हो सकता है अन्यथा नही, और यदि मध्य का विवाह नही होता तो तलाक के बाद उन पति-पत्नी के बीच का विवाह शून्य विवाह होगा। इस स्थिति की वजह से अवश्य ही मुस्लिम पति पर तलाक लेने के मामले में भारी अंकुश लगा है, क्योंकि एक बार गलती से भी तलाक दे देने की अवस्था में मध्य के विवाह की शर्त आवश्यक है।[5]

तलाक के प्रकार

1. तलाक – मुस्लिम कानून के अनुसार कोई भी पुरूष जो बालिग और स्वस्थ मस्तिष्क वाला है, बिना कारण बताये अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है। इस मौखिक तलाक के कई प्रकार है :-

(i) तलाक-ए-अहसन – इसमे पति पत्नी के तुहर (मासिक धर्म) के समय एक बार तलाक की घोषणा करता है और उसके पश्चात् 'इद्दत' की अवधि में पत्नी से यौन सम्बन्ध स्थापित नही करता है। इद्दत चार मासिक धर्मो के बीच तीन माह की अवधि को कहते है। इस अवधि तक यदि पति पत्नी के साथ सहवास नही करता है। तो अवधि समाप्ति पर तलाक हो जाता है।

(ii) तलाके हसन – इसमे पति तीन तुहरों अर्थात मासिक धर्मो के मध्य के समय में तीन बार तलाक शब्द कहता है और इस बीच वह पत्नी से सहवास नही करता है। इस अवधि की समाप्ति के पश्चात् तलाक मान लिया जाता है।

(iii) तलाक-उल-बिद्दत – इसमें पति किसी भी मासिक धर्म के अवसर पर थोड़े-थोडे समय के पश्चात् तलाक की तीन बार घोषणा करता है और इसके बाद इद्दत की अवधि समाप्त होने पर तलाक मान लिया जाता है।

2. इला – इसमें पति खुदा की कसम खाकर यह घोषणा करता है, कि वह चार माह या अधिक समय तक पत्नी के साथ सहवास नही करेगा। इस अवधि तक यदि वह सहवास नही करता है, तो तलाक हो जाता है।

3. जिहर – जब पति अपनी पत्नी की तुलना किसी ऐसे सम्बन्धी से करें, जिनसे विवाह निषेध है, जैसे वह यह कहे, कि तुम तो मेरी माँ के समान हो, तो पत्नी पति को प्रायश्चित करने के लिये कहती है। यदि पति ऐसा नही करता है, तो पत्नी अदालत में तलाक की माँग कर सकती है और न्यायालय ऐसी स्थिति मे तलाक स्वीकार कर देता है।

4. खुला – इसमें पत्नी पति से कहती है, कि यदि वह उसे विवाह से मुक्त कर दे तो वह उसे मेहर वापस लौटा कर उसकी क्षतिपूर्ति कर देगी, यदि दोनों मे सहमति हो जाती है, तो तलाक हो जाता है।

5. मुबारत – यह तलाक दोनों की पारस्परिक सहमति से होता है, किन्तु इसमें खुला की तरह पत्नी पति को कोई धन नही देती है। इस प्रकार के तलाक मे पत्नी इद्दत की अवधि के दौरान पति के पास ही रहती है।

6. लियान – इसमें पति पत्नी पर व्याभिचार का आरोप लगाता है और पत्नी इसका खण्डन करती है एवं अदालत से प्रार्थना करती है, कि या तो पति अपने आरोप को वापस ले अथवा खुदा को हाजिर-नाजिर समझकर घोषणा करें, कि यह आरोप सत्य है। यदि पति का आरोप झूठा सिद्ध होता है, तो पत्नी को तलाक का अधिकार मिल जाता है।

7. तलाके-तफबीज – इसमे पत्नी तलाक की माँग करती है, जो उसे विवाह के समय पति द्वारा दिये गये अधिकारों के आधार पर प्राप्त होता है।[6]

तलाक पर विश्लेषण देश में समान नागरिक संहिता पर बहस तेज हो गई है। एक तरफ केंद्र सरकार इसकी तरफदारी कर रही है, तो दूसरी ओर देश भर के मुस्लिम संगठन इसके खिलाफ लगातार आवाज बुलंद कर रहे हैं। मुस्लिम संगठनों का कहना है कि समान नागरिक संहिता को आगे बढ़ाने का कोई भी कदम महिलाओं के लिए नुकसानदायक है, क्योंकि समानता बराबरी की गारंटी नहीं है। बहरहाल, बहस तो होती रहेगी लेकिन इससे संबंधित आंकड़े कुछ और बयां कर रहे हैं। साल 2011 की जनगणना के आंकड़ों के विश्लेषण के मुताबिक, भारत में प्रत्येक तलाकशुदा मुस्लिम पुरुष के मुकाबले तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं की संख्या चार है। सिख समुदाय को छोड़ दें, तो पुरुषों की तुलना में तलाकशुदा महिलाओं की संख्या सबसे अधिक है।

मुसलमानों में महिलाओं व पुरुषों के तलाक का अनुपात 79:21, अन्य धर्मो में 72:28 तथा बौद्धों में 70:30 है। आंकड़ों से साफ है कि तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं की संख्या अन्य धार्मिक समुदायों के मुकाबले कहीं अधिक है।भारतीयों की वैवाहिक स्थिति पर साल 2011 की जनगणना के मुताबिक, तलाकशुदा भारतीय महिलाओं में 68 फीसदी हिंदू तथा 23.3 फीसदी मुसलमान हैं। समान नागरिक संहिता खासकर तीन तलाक पर केंद्र सरकार के प्रतिकूल रवैये के खिलाफ विरोध करते हुए मुस्लिम समूहों ने हाल में इन आंकड़ों का हवाला दिया।

तलाकशुदा पुरुषों में हिंदू 76 फीसदी तथा मुसलमान 12.7 फीसदी हैं। महिला अधिकार कार्यकर्ताओं का मानना है कि संख्याओं में लैंगिक असंतुलन का आशय यह है कि महिलाओं की तुलना में पुरुष अधिक संख्या में दोबारा शादी कर रहे हैं। कानून की जानकार व महिला अधिकार कार्यकर्ता फ्लाविया एग्नेस ने टेलीफोन पर इंडियास्पेंड को दिए एक साक्षात्कार में कहा, यदि 100 तलाकशुदा जोड़े हैं, तो यह 50:50 अनुपात दर्शाता है।

अनुपात में अंतर दर्शाता है कि तलाक के बाद पुरुषों के लिए भले ही दोबारा शादी करना आसान नहीं है, लेकिन यह बात भी है कि वे दोबारा शादी करने की अधिक से अधिक चाहत दर्शाते हैं। मुंबई में मुसलमान महिलाओं की संस्था बेबाक कलेक्टिव की संस्थापक हसीना खान ने मुसलमानों में तलाक के अनुपात में अंतर के पीछे दो कारणों को जिम्मेदार ठहराया। उन्होंने कहा, 'पहला यह है कि मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत तीन तलाक की मंजूरी देकर पुरुषों को अधिक से अधिक शक्ति दी गई है।'

महिलाओं के लिए शादी रहने की सुरक्षा व भोजन के साथ-साथ समझौते के लिए कुछ अधिकार दिए गए हैं। खान ने कहा कि 'दूसरा कारण सरकार द्वारा मुस्लिम महिलाओं को सशक्त न करना है'। उन्होंने कहा, 'इस उप-समूह की जरूरतों के समाधान के लिए बेहद कम राजनीतिक इच्छा शक्ति है। भारत में मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक दशा लगातार खराब होती जा रही है। न तो उन्हें अच्छी शिक्षा मिल रही है न ही नौकरी के मौके'।

भारत में तलाकशुदा लोगों की कुल संख्या 8.5 लाख है। जनगणना के मुताबिक, ग्रामीण भारत में शादियां ज्यादा टूटीं। वहीं शहरी भारत में तलाकशुदा लोगों की संख्या 5.03 लाख है। महाराष्ट्र में तलाकशुदा लोगों की संख्या सर्वाधिक 2.09 लाख है। राज्य में कुल तलाकशुदा लोगों में लगभग 73.5 फीसदी महिलाएं हैं।

देश के गुजरात राज्य में तलाकशुदा पुरुषों की संख्या सर्वाधिक है, यह आंकड़ा 1.03 लाख है और यह राज्य में तलाकशुदा आबादी का 54 फीसदी है। गोवा में मात्र 1,330 तलाकशुदा लोग हैं, जहां नाकाम शादियों की संख्या सबसे कम है। एग्नेस ने कहा, पुरुष अक्सर अपनी पत्नियों को तलाक न देकर केवल संबंध विच्छेद कर लेते हैं, जिससे दोबारा शादी करने का उनका रास्ता बंद हो जाता है।

आंकड़ों में अंतर स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अधिक से अधिक पुरुष एक से अधिक शादियां करते हैं। पुरुष दूसरी, तीसरी शादियां करते हैं, जबकि समाज महिलाओं को यह अधिकार नहीं देता। इंडिया स्पेंड की नवंबर 2015 की एक रिपोर्ट के मुताबिक, साल 2011 के अंत तक एकल भारतीय महिला की संख्या में 39 फीसदी की बढ़ोतरी हुई।

भारत की कुल आबादी का 80 फीसदी हिंदू, 14.23 फीसदी मुसलमान, जबकि सिख 1.72 फीसदी, ईसाई 2.3 फीसदी, बौद्ध 0.7 फीसदी तथा जैन 0.37 फीसदी हैं।[6]

तुलानात्मक परिप्रेक्ष्य में यदि देखें तो भारत में रहने वाली मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पाकिस्तान एवं बॉग्लादेश की मुस्लिम महिलाओं की भॉति शोचनीय नहीं हैं। भारतीय जनतांत्रिक एवं धर्मनिरक्षेप व्यवस्था में राज्य द्वारा आरोपित कोई धर्म नहीं हैं। राज्य की ओर से भारतीय मुलिस्म महिलाएं भी अन्य महिलाएं की तरह अपने अधिकारी की रक्षा के लिए स्वतंत्र हैं। अन्य नागरिको के भाति ही कानून के समक्ष मुस्लिम महिलाओं को समानता प्राप्त हैं। संविधान उन्हें विकास के समान अवसर प्रदान करता हैं। यदि वे चाहें तो आरोपित धार्मिक कानूनों के विरूद्ध भारतीय न्याय व्यवस्था की शरण ले सकती। मुस्लिम महिलाएं इक्कीसवीं सदी में पदार्पण करने के बावजूद मध्ययुगीन धार्मिक कानूनों, रूढ़ियों एवं परम्पराओं के बन्धनों में जकड़ी हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आफरीन खान, 'पर्सनल लॉ एवं मुस्लिम महिलाएं', मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल, वर्ष 6, अंक 2, जूलाई-दिस्मबर, 2008
2. असगर अली इंजीनियर, 'मुस्लिम वुमन ऑन द मूव', सेक्यूलर पर्सपेक्टिव, भाग 6, अंक 13, सेण्टर फार द स्टडी ऑफ सोसायटी एण्ड सेक्यूलरिज़्म, मुम्बई, 2003
3. डॉ. राजकुमार : नारी शोषण समस्या एवं समाधान, अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, दरियागंज नई दिल्ली, 2008
4. रिंकी भट्टाचार्य : भारत में घरेलू हिंसा, सेज पब्लिकेशन्स इण्डिया प्राईवेट लि. नई दिल्ली, ISBN 978-93-528-0391-0 (PB), 2017
5. मीनाक्षी निशांत सिंह : 'आधुनिकता और महिला उत्पीड़न', ओमेगा प्रकाशन, दिल्ली, ISBN No. 978-81-8455-39-9, 2010.
6. http://www.deshbandhu.co.in/newsdetail/304047/1/19

****

लोक नाच फुम्मनी ते कलाकार रतन लाल डोगरा

शिव कुमार खजूरिया *

प्रस्तावना – फुम्मनी डुग्गर दा लोक प्रसिद्ध नाच ऐ। एह् नाच ज्यादातर डुग्गर दे कंढी लाके च मशहूर ऐ। फुम्मनियां दी शरूआत सैकड़े ब'रे पैह्ले होई ही। पराने समें च अपने कुलदेवी–दूवते अग्गें कीती गेदी सुक्खन पूरी होने पर डुग्गर दे लोक खुशी कन्नै फुम्मनियां पोंदे होई देवस्थान पर जंदे हे। समें दे प्रवाह् कन्नै एह् नाच मता प्रचलत होंदा गेआ ते इसगी डुग्गर दे लोक ब्याह् कारज, सूतरा ते हर खूशी दे मौके पर नच्चन लगी पे। इस नाच गी नच्चने आस्तै खास डोगरा लाब्बा जेह्दे च घट्न्ना, खिलका कुर्ता, डोगरा पग्ग ते कमर बंद्ध दी जरूरत पौंदी ऐ। इस नाच च साज, नरसिंगा, ढो टोल ,बंसरी, नगाड़ा ते डंडारस आदी दी जरूरत पौंदी ऐ। एह् नाच खु'ल्ली थ्हारै दे कन्नै–कन्नै स्टेज उप्पर बी नच्चेआ जंदा ऐ। इस च परफारम करने आह्ले कलाकारें दी गिनतरी च कोई बंदिश नेईं होंदी ऐ। पर, साज बजाने आह्ले कलाकारें दा होना बड़ा जरूरी ऐ।

नाच दी शरूआत लोक प्रसिद्ध कारक जां बार कन्नै कीती जंदी ऐ। कारक जां बार दे बोल खत्म होंदे गै नरसिंगा बजाया जंदा ऐ ते प्ही दौनें टोल्लियें दे डगे कन्नै नाच दी शुरूआत होंदी ऐ। नाच नच्चदे होई कलाकार बक्ख–बक्ख मुद्राएं गी पेश करदे न। फुम्मनिआं नाच च मुक्ख तौरा पर चौह्दा–पंदरा मुद्रां होंदियां न। पर, स्टेज उप्पर परफारम करदे होई कलाकारें गी समें दी किल्लत होंदी ऐ। इसकरी ओह् बड़ी मुश्कल कन्नै अट्ठ–नौ मुद्रां गै पेश करी पांदे न। डोगरा नाच फुम्मनी दे खेतर च स्व. श्री विश्वनाथ खजूरिया हुंदा नांऽ बड़ा प्रसिद्ध रेहा ऐ। एह् विश्वनाथ खजूरिया होर गै हे जिनें इस डोगरा नाच गी अपनी मंडली कन्नै रलिऐ देश दे बक्ख–बक्ख हिस्से च नच्चेआ। स्व. श्री विश्वनाथ खजूरिया होरें रणवीर हाई स्कूल दे विधार्थियें कन्नै रलियै अपनी इक टोल्ली बनाई दी ही। इस टोल्ली दे गै इक सदस्य श्री रतन लाल डोगरा जि'नें खजूरिया हुंदी अगुआई च देश दी बक्खरी–बक्खरी सटेटें च जाईयै परफारम गै नेंईं कीता सगुआं खजुरिया हुंदी मौती परैंत इस परम्परा गी जारी रखदे होई 'रतन लाल डोगरा एंड पार्टी' बनाईयै इस नाच दे प्रोत्साहन लेइ कम्म कीता। रतन लाल डोगरा होर स्व. श्री विश्वनाथ खजूरिया होरें गी अपना गुरू मनदे न।

इंदा जन्म 27 अप्रैल सन् 1951 ई., पैलेस रोड, हाउस न. 203, सी. पी. ओ चौक, उसताद मह्ल्ला, जम्मु च होआ। इं'दे पिता हुंदा नांऽ श्री चरण दास ते माता हुंदा श्रीमती ज्ञान देबी हा। बड़ी नक्की बरेसा च इं'दे पिता हुंदा काल होई गेआ हा। घर च बड्डे होने करी घर दी सारी जिम्मेवारी डोगरा हुंदे मूंडे उप्पर आई गेई। पिता हुंदे काल होने दे त्रै साल बाद इंदी माता हुंदा बी निधन होई गेआ।

डोगरा होरें अपनी शुरूआती शिक्षा प्राईमरी स्कूल आमबफला थमां हासल कीती। प्ही उ'नें छेमीं जमातै शा दसमीं जमातै तगर दी पढ़ाई रणवीर हाई स्कूल थमां कीती। दसमीं पास करदे गै इं'दी स्लैक्शन फौज च होई गेई । पर, परिवार च सारे थमां बड्डा होने ते परिवार प्रति अपनी जिम्मेवारी निभाने खातर फौज च देस सेवा लेई नेईं जाई सके। इ'नें अपनी पढ़ाई जारी रखदे होई ग्यारमीं जमातै आस्तै प्रिंस ऑफ वैलस कालेज च दाखला लैता। कालज च पैह्ले साल दी पढ़ाई दे दौरान गै उं'दी नौकरी रियास्ती सेह्त मैह्कमें च लग्गी गेई। सन् 2009 ई. च एह् कम्युनिटी हैलथ अफसर दे औह्दे परा रटैर होई गे। रतन लाल डोगरा हुंदा व्याह् श्रीमती शांती देवी हुंदे कन्नै होआ जेह्ड़ियां रियास्ती शिक्षा विभाग च अध्यापक दे तौर पर नियुक्त न। इं'दियां त्रै धीआं ते इक जागत ऐ।

डोगरा होंरे फुम्मनी नाच बचपन दे दिनें पढ़ाई दौरान गै श्री रणवीर हाई स्कूल च उत्थूं दे अध्यापक श्री विश्वनाथ खजूरियां हुंदे थमां सिक्खेआ हा। रतन लाल डोगरा होर स्व. विश्वनाथ खजूरिया हुंदे नेतृत्व आह्ली रणवीर हाई स्कूल दी मण्डली च फुम्मनी नाच नच्चदे हे। इनें मण्डली च रेहियै रियास्त ते देस दे केईं हिस्से च इस नाच दा प्रदर्शन कीता। जेह्दे च स्वतन्त्रता ध्याड़े दे मौके पर जम्मू च रूस दे राश्टपती यबुलगान्न दी मौजूदगी च कीता जाने आह्ला इन्दी सारे शा बड्डी यादगार ऐ। एह् प्रदर्शन दिक्खियै बुलगान्न नै इन्दी मण्डली गी अपने देस रूस औने दा साद्दा दित्ता। पर, किश राजनितिक कारनें करी इंदी मण्डली रूस नेईं जाई सकी। इसदे इलावा इ'नेंगी स्व. प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू हुंदे जन्म ध्याड़े पर दिल्ली च यतीन मूरती मार्ग उं'दे निवास स्थान पर फुम्मनी नाच नच्चेआ हा। इस नाच दी प्रधानमंत्री होरें बड़ी सराह्ना कीती। स्न 1970 ई. च स्वतंत्रता ध्याड़े दे मौके पर इं'दी मंडली ने नमें दिल्ली च प्रदशन कीता जिस कोला उस बेल्ले दी प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इंधरा गांधी इ'न्नी मुतासर होइयां जे ओह् इं'दी नृत्य मण्डली च शामल होईयै नच्चन लगी पेईयां। इसदे इलावा इ'नें सन् 1958 ई. च जश्न. ए. कश्मीर कार्यक्रम, आल इंडिया कांग्रेस रौशन बड़ौदा, कश्मीर च स्वतंत्रा दिवस 1962–1963 दे इलावा देस दे केईं होर हिस्सें च प्रर्दशन कीता। डोगरा होंरे गी इस नाच राहें समाजिक जीवन च बड़ी ऐह्मियत थ्होई। इक कलाकार दे तौर पर जिसलै बी औह् कुतै नाच दे प्रर्दशन लेई जाना चांहदे तां उं'दे मैहकमें ते सहायक कर्मचारियें पारस्सेआ उ'नेंगी कदें कोई बंदिश नेईं मिली, सगुआं उं'दी इस कला ने परिवार, समाज ते मैह्कमे च डोगरा हुंदी इक बक्खरी पंछान बनाई दित्ती दी ही।

इक फुम्मनी नाच दे कलाकार दे तौर पर इनेंगी इ'न्नी प्रसिद्धी मिली जे एह् रामानंद सागर हुंदे साद्दे उप्पर मुम्बई गे। उत्थै इन्दे फुम्मनी नाच दा प्रर्दशन इक ऐसे प्रोग्राम च करोआया गेआ जित्थै बालीवुड दे बड्डे–बड्डे कलाकारें अपना प्रर्दशन कीता हा। उस प्रोग्राम च इं'दे नाच दी सारें गै मती सराह्ना कीती। फुम्मनी नाच कन्नै थ्होई दी प्रसिद्धी करी गै इ'नेंगी वेद राही

* शोधकर्ता (डोगरी विभाग) जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू, भारत

हुंदी फिल्म 'दरार' च कम्म करने दा मौका मिलआ। फिल्म च इ'नें पुरमण्डल च हिरो दे दोस्त दे तौर पर कम्म कीते दा ऐ। इन्हें टैली फिल्म 'पूजा' च रतन लाल एण्ड पार्टी य दे तौरा पर पत्नीटाप ते गौरी कुण्ड च नाच दा प्रर्दशन कीते दा ऐ।

इक फुम्मनी नाच दा कलाकार होने कन्नै इनेंगी समाज च जेह्ड़ा मान–सम्मान थ्होआ उस थमां गै प्रभावत होइयै इं'दे पुत्तर 'अतुल डोगरा' होरें इस नाच गी अपनाया जेह्ड़े इक नटरंग कलाकार बी हैन। रतन होर डागरी दे कवी शिव राम दीप ते मोहन लाल सपोलिया हुंदे बड़े करीबी दोस्त रेह् न। एह् 'जे.एण्ड.के अकैडमी ऑफ आर्ट कल्चरल एंड लैंग्वेजिज' दा दिल दी गैहाईएं थमां धन्नवाद करदे न कि जे ओह् नित्ता नमें प्रोग्राम करोआईयै जम्मू दी संस्कृती कन्नै जुड़ै ़करदे नमें लोक कलाकारें ते लोक कलाएं गी प्रोत्साह्न देआ करदी ऐ। डोगरा हुंदा मन्नना ऐ जे फुम्मनी नाच डुग्गर संस्कृती दा सशक्त नाच ऐ। एह् नाच वाजारवाद ते आधुनिकता दे साए थल्लै नित्त नमें बदलोंदे परिवेश च बी अपनी होंद गी बचाई रक्खने च कामयाव ऐ ते अग्गै औने आह्लियां डोगरा पीढ़ियां इस नाच गी बक्ख–बक्ख कार्यक्रम च गै सेही पर पेश करदियां रौड.गन।

रतन लाल डोगरा, भेटवार्ता, तारीक (3–9–2015)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. National Herald, 22 January, 1970
2. Daily Excelsior , 11 March, 1989
3. Daily Excelsior , 20 november, 1989
4. The Kashmir Times jammu, 4 March, 1992
5. The Kashmir Times jammu, 2 february, 1992

****

डोगरी लोक-गीतें च झलकदे संस्कृति दे प्रतीक : पर्व-ध्यार

डॉ. प्रीति रचना *

प्रस्तावना – पर्व-ध्यार माह्नू दे समाजिक जीवन दा म्हत्तावपूर्ण अंग न। एह् मनुक्खी एकता दे प्रतीक न, जेह्ड़े लोक वेदे दे समें कोला लेइयै अज्जै तगर अपने-अपने ढंगै कन्नै मनांदे आवा दे न।

डुग्गर प्रदेस च इ'नें ध्यारें दी बड़ी मानता ऐ। इत्थूं दा लोकमानस मनदा ऐ जे इनें पर्व-ध्यारें गी मनाने कन्नै सुख-समृद्धि दी अनुभूति होंदी ऐ। इस्सै करी ओह् परंपरा मताबक पर्व-ध्यार मनांदे न। एह् ध्यार सिर्फ खुशी-खुशी मनाईयै इक रस्म गै पूरी नेईं कीती जंदी बल्के इं'दे च संस्कृति, इतिहास ते परंपरा मौजूद ऐ। डुग्गर च हर धर्म दे लोक रौह्दे न ते सब्भै प्रेमभाव कन्नै मिली-जुलियै ध्यार मनांदे न। इं'नें पर्व-ध्यारें दी अपनी-अपनी खास विशेशता ऐ, जेह्दे कन्नै जुड़ी दिये मानताएं दे अधार पर सांस्कृतिक ध्यार मनाए जंदे न। डुग्गर च केईं चाल्ली दे पर्व-ध्यार मनाए जंदे न जि'यां- लोह्ड़ी, नराते, झिड़ी, द्रुब्बड़ी, करेआचौथ, संकटचौथ, तुलसी पूजा, होली ते भुग्गा आदि। एह् पर्व-ध्यार चा मते सारे ध्यारें दी झलक डोगरी लोक गीतें च बी लभदी ऐ। जि'यां-

लोह्ड़ी –लोह्ड़ी दा ध्यार डुग्गर च बी बड़ी धूम-धम कन्नै मनाया जंदा ऐ। एह् पौह् म्हीने दे खीरी रोज़ औंदा ऐ। ग्रांS दे जागत-कुड़ियां कट्ठे होइयै जिस घर पुत्तरै दा ब्याह् होए दा होऐ जां जागतै दा जनम होए दा होऐ, उस घर जाइयै गीत गाई-गाईयै लोह्ड़ी मंगदे न। इस ध्यार दा वर्णन डोगरी लोक गीतें च बखूवी लभदा ऐ। डुग्गर च ऐसे केईं लोक-गीत प्रचलत न, जिं'दे च लोह्ड़ी दा वर्णन होए दा ऐ। जि'यां- इक लोकगीतै च लोह्ड़ी गी साद्दा देने दा जिकर मिलदा ऐ-

'नींद्रा निं लोह्ड़िये नींद्रा,
अज्जै दी रातीं कल्लै दी ध्याड़ी
अत्तारूं लोहड़िये औना ऐ।'[1]

मते सारे लोकगीतें च लोह्ड़ी दा चित्रण नज़री औंदा ऐ।

उदाहरण :-

'आओ भाई खेढ़चै लोहड़िया,
आनो गुड़ै दियां रेयोड़ियां।
चिड़यु ते तरसौल लेई आवो,
दब्बी खाओ तरचौलियां।'[2]

भुग्गा – लोह्ड़ी दे बाद औने आह्ला दूआ जनाना पर्व ऐ भुग्गा, जेह्ड़ा के पति ते लुआदी दी मंगल कामना लेई मनाया जंदा ऐ। इस रोज़ जनानियां तिल, गुड़, मुंगफली पाइयै भुग्गा कुटदियां न। पूरे दिन निर्जल बरत रखदियां न ते चन्न चढ़ै पानी पींदियां न। इस ध्यारे दा जिकर बी किश इक लोकगीतै च होए दा ऐ।

उदाहरण इ'यां ऐ-

'अखें भुग्गे दा बर्त, गोरी भुग्गा कुटदी ऐ,
मुट्टे-मुट्टे फोलके तवै'र सुटदी ऐ।
गोरी दा रोह् गेआ ते गोह् गेआ।'[3]

बच्छ दुआह् – एह् पर्व जन्म अश्टमी दे चोथै रोज मनाया जंदा ऐ। जनानियां इस दिन बी बरत रखदियां न ते घरे दे मर्द जीवें जिन्ने रुट्ट बनांदियां न ते आटे दे गौ, कट्टू-बच्छू बनाइयै, राती दे सेड़े दे काले चन्ने बगैरा कन्नै नदी कंडै जाइयै बच्छ-दुआह् पूजदियां न। इस पर्व दा वर्णन बी लोकगीतें च लभदा ऐ। इक गीतै दे बोल इयां न-

'इक, दो, त्रै चार, पंज, छे, सत्ता,
अट्ठ, नौ, दस्स, ग्यारां, बारां, तेरा।
तेरो बच्छ-दुआह्।'[4]

द्रुब्बड़ी – द्रुब्बड़ी, जन्म अश्टमी दी अगली अश्टमी गी औंदा ऐ। जि'नें घरें बच्छ-दुआह् पर्जोदी ऐ ओह् द्रुब्बड़ी नेईं पूजदे। द्रुब्बड़ी दा वर्णन डोगरी लोकगीतें च बी लभदा ऐ, जेह्दा उदाहरण लोकगीतै दी इ'नें सतरें च लभदा ऐ-

'द्रुब्बड़ी-द्रुब्बड़ी दा ब्याह् होआ, हे-ऊ,
रुट्टै आली दे जागत होआ, हे-ऊ।'[5]

करेआचोथा – करेआचोथ दा सरबंध अपने सुहाग दी मंगलकामना कन्नै होंदा ऐ। हिन्दू सुहागन जनानियां अपने पति दी लम्मी उमरी लेई करआचोथ दा बरत रखदियां न। करेआचोथ दी कथा सुनदियां न ते रातीं चन्द्रमें गी अर्घ देइयै गै पानी दा घुट्ट पींदियां न। इस बरतै च किश कम्में दी ठाक होंदी ऐ जि'यां- बाही होई जमीनै च बरतै आह्ली जनानी नै पैर नेईं रखना, सीने-परोने दा कम्म नेईं करना बगैरा- बगैरा। इ'नें सभनें ठाकें दा वर्णन डोगरी लोकगीतें च बी होए दा ऐ, जेह्दा इक उदाहरण इस चाल्ली ऐ-

'लै वीरो कुड़िये कौलड़ा।
लै सर्व सुहागनी कौलड़ा।।
लै कत्ती नां, टेरी नां।
घूं झरक्खड़ा फेरी नां।।
बाह्न पैर पाईं नां।
रुटण्डा मनाई नां।।
भैन प्यारी बीरां।
चन्न चढ़े ते पानी पीना।'[6]

करवाचौथ आह्ले रोज नूंहां अपनी सस्सू गी बेआ बी दिंदियां न एह् परंपरा बी पराने समें शा चलदी आवा दी ऐ। बेऐ दा जिकर बी इ'नें गीतें च द्रिश्टीगोचर होंदा ऐ-

'देन चली, देन चली,

* ग्रांव बकोर, तसील अखनूर, जिला जम्मू, भारत

सस्सू गी बेआ देन चली।
नेईं लैंदी, नेईं लैंदी ऐ,
सरस गमानन नेईं लैंदी।'[7]

नराते – नराते, कुड़िये दा ध्यार ऐ। एह् ब'रे च दो बारी औंदा ऐ। इक चेत्तर म्हीनै ते दूई बारी अस्सू म्हीनै। नरातें च दुर्गा पूजा कीती जंदी ऐ। इस रोज कुड़ियां कुसै थाहा दी सुच्ची मिट्टी आह्नियै साख लांदियां न ते पतीले कन्नै खट्टी दिदियां न। किश कुड़ियां कट्ठे होइयै इक घर नराते रखदियां न ते रोज संञां कट्ठे रुट्टी खंदियां न। इ'नें कुड़ियें च इक कुड़ी मुक्ख पचैलन होंदी ऐ। अठमें रोज एह् कुड़ियां घर–घर जाइयै तेल मंगदियां न ते उस तेलै कन्नै माता दी अखंड जोत जगांदियां न ते रातीं निक्की–निक्की कुड़ियै गी काह्न–सखी बनांदियां न। इ'नें नरातें दा वर्णन बी इ'नें लोक गीतें च द्रिश्चीगोचर होए दा ऐ, जेह्दा उदाहरण इ'नें सतरें च लभदा ऐ–

'पैह्ला नराता गंगा न्हाता,
गंगा भठोरू आए।
चुग्गो कुड़े चिड़ियो–मिड़ियो,
असैं नराते तुसैं चुगाए।'[8]

होर बी केईं लोकगीतें च नरातें दा जिकर होए दा ऐ। जियां इक होर गीतै दा उदाहरण इ'यां ऐ–

'इक नराता, दो नराते, त्रै नराते, चार नराते, पंज नराते,
छे नराते, सत्त नराते, अट्ठ नराते, नौ नराते, दस नराते।
गंगा न्हाते, गंगा दै पचवाड़ न्हाते।'[9]

होली – होली, हिन्दुयें लेई इक धार्मिक, पारंपरिक ते सांस्कृतिक ध्यार ऐ, जेह्ड़ा पराने समें कोला गै लोक मनांदे आवा दे नं एह् ध्यार ते रंगें दा ध्यार ऐ, जेह्ड़ा हर साल हिन्दू धर्म दे लोकें आसेआ मनाया जंदा ऐ। एह् फग्गन म्हीनै औंदा ऐ। लोक इक–दुए गी रंग लांदे ते खुशी–खुशी एह् ध्यार मनांदे न। इस रोज होलिका दा पूतला बनाईयै बी फूकेआ जंदा ऐ, जिसगी बुराई पर अच्छाई दी जित्ता दा प्रतीक मन्नेआ जंदा ऐ। होली सरबंधी केईं लोकगीत बी डुग्गर च प्रचलत न, जिं'दे च होली दा वर्णन बखूवी होए दा ऐ–

'होली!
पूरबी पेई न्हौन चली जमना,
पूरबी पेई न्हौन चली जमना।
होली पूरबी पेई न्यौन चली जमना।'[10]

इक होर लोकगीतै च होली दा वर्णन होए दा ऐ, जेह्दे च भगवान श्री कृष्ण गी होली खेढने लेई गलाया गेदा ऐ। इस गीतै जि'नें सतरें च एह् वर्णन होए दा ऐ ओह्दा उदाहरण इ'यां ऐ–

'होली खेडो रे– द्वारका बाले,
गौआं बी कलपन, बछड़े बी कलपन,
कलपन बाल–गोआले।
होली खेडो रे– द्वारक बाले।'[11]

इ'दें अलाबा बी केईं डोगरी लोकगीतें च एह्दा उदाहरण मिलदा ऐ। जि'यां–

'सैल्ले–पीले रंग, खेड़ो होली जी।
गोरी दे दुद्ध पिट्ट दंद, खेड़ो होली जी।
सैले–पीले रंग, खेडो होली जी।'[12]

रक्खड़ी – रक्खड़ी, भैन–भ्राऊ दे प्रेम दा प्रतीक ऐ। एह् पर्व भाद्रो म्हीनै औंदा ऐ। इस रोज रक्षासूत्र दा बड़ी म्हत्ता ऐ, जेह्ड़ा भैन, भ्राऊ दे सज्जें हत्थै पर बनदी ऐ ते ओह्दी लम्मी उमरी दी कामना करदी ऐ। मन्नेआ जंदा ऐ जे रक्खड़ी दे रंग–बरंगे धागे भैन–भ्राऊ दे प्रेम दे बंधन गी मजबूत करदे न। एह् इक ऐसा पर्व ऐ, जेह्ड़ा भैन–भ्राऊ दे पवित्र रिश्ते गी आदर मान दिंदा ऐ। इस पर्व दा जिकर बी किश लोकगीतें च नज़री औंदा ऐ–

'हस्सी–हस्सी पुछदी राधके,
गान्नां कुत्थूं बन्हाया ई।
भाद्रो म्हीने दी रक्खड़ी,
भैनें सगन मनाया ई।।'[13]

टिक्का – रक्खड़ी आंगर एह् ध्यार बी भैन–भ्राऊ दे प्रेम दा प्रतीक ऐ। एह् देआली परा त्रीए रोज़ औंदा ऐ। इस रोज भैन, फुल्ल, ध्योऽ, सिंदूर ते चौलें कन्नै बनाए दा टिक्का भ्राऊ दे मत्थै लांदी ऐ ते ओह्दा सुख ते लम्मी उमर मंगदी ऐ। इस ध्यार दा वण्रन बी इ'नें गीतें च होए दा ऐ, जेह्दा उदाहरण गीतै दी इ'नें सत्तरें च बी नज़री औंदा ऐ–

'हस्सी–हस्सी पुछदी राधके,
टिक्का कुत्थें लोआया ई।
कत्तो म्हीनें दी दुतिया,
भैनें सगन मनाया ई।[14]

राड़े – राड़े बी कुड़ियें दा ध्यार ऐ, जेह्ड़ा हाड़ म्हीनै औंदा ऐ। राड़े खेढने लेई कुड़ियां संगरांदी थमां किश दिन पैह्लें कुन्नियें–चाटियें दे गलमे, घड़े दे बिल ते मट्टें दे बिलड़ किट्ठे करना शुरू करी दिंदिया न ते सतबन्ने बनांदियां न। ओह् रंगें कन्नै इस म्हीनै हर ऐतवारें संञां लै राड़े चितरदियां न। राड़े चितरियै कुड़ियां ते नमियां लाड़ियां रूट्ट खेढढियां न, जेह्दे च पकोआन खाह्दे जंदे ते फ्ही गीत गांदियां न। अट्ठें दिनें परैंत्ता सौन म्हीने दी पैह्ली गी कुड़ियां दरेआ जां कुतै पानी कंडै मिट्ठे–फिक्के बब्बरू लेई जंदियां न ते उत्थै रूट्ट खेढदियां न ते इस रोज ओह् राड़े नदी, दरेआ च परवांदिया न। अज बशक्क एह् ध्यार मनाने दी परंपरा घटदी जा दी ऐ। पर फ्ही बी किश कुड़ियां बड़ी रीझें कन्नै एह् ध्यार मनांदियां न। इस ध्यार दी झलक बी डोगरी लोकगीतें च केईं थाहें नज़री औंदी ऐ। इक ऐसे गीतै दा उदाहरण इस चाल्ली ऐ–

'राड़े चित्तरे माए,
ते बदल पिच्छड़े आए,
राड़े चित्तरे माए,
ते ढल्ले बिस्सरे माए।'[15]

इक होर गीतै दा उदाहरण प्रस्तुत ऐ–

'हाड़ म्हीना आया,
असैं राड़े राह्ले, असैं राड़े राह्ले।
माए गूढ़े रंग बनाने।'[16]

देआली – देआली हिन्दुयें दा प्राचीन ध्यार ऐ। सभने ध्यारें च एह्दी समाजिक ते धार्मक दौनें चाल्ली कन्नै बड़ी म्हत्ता ऐ। मन्नेआ जंदा ऐ जे इस रोज अयोध्या दे राजा राम वनवास कट्टियै वापस परतोए हे। ते उंदे औने पर खुशी च अयोध्या दे लोकें खुशी–खुशी घ्योऽ दे दीये जगाए हे। तदूं कोला लेइयै अज्ज तगर लोक एह् ध्यार मनांदे आवा दे न। एह् ध्यार लोक–गीतें च बी कुतै–कुतै द्रिश्चीगोचर होए दा ऐ। इक लोक–गीत 'बारा–माह्' च इक पत्नी अपनी पति गी नौकरी पर जाने शा रोकदे होई गलांदी ऐ जे कत्तो म्हीनै नेईं जायां अदूं देआली होंदी ऐ तां जे ओह् ध्यार कट्ठे मनाई सकन।

उदाहरण :–

'कत्तै निं जायो, बे दियाली दा त्यहार,
कत्तै म्हीनै ढोली घर र'वो।'[17]

इक होर लोक–गीतै च बी इयै जनेहा उदाहरण मिलदा ऐ–

'कत्तै दयाली, माही जी, घर करो,
मग्घर निं जाएओ, घर लेफ पुराने।'[18]

बसाखी – एह् पर्व हर साल 13 जां 14 अप्रैल गी मनाया जंदा ऐ। एह् हिन्दू ते सिक्ख दौने धर्में लेई म्हत्वपूर्ण ऐ। दौनें धर्में दे लोक अपने-अपने स्हाबें बड़े प्रेमभाव कन्नै मिली-जुलियै इस पर्व गी मनांदे न। एह्दा चित्रण बी डोगरी लोकगीतें च होए दा मिलदा ऐ, जेह्दा उदाहरण इस चाल्ली ऐ-

'बसाख निं जायो, बे बसाखी दा त्यहार,
बसाख म्हीनै ढोली घर र'वो।'[19]

निश्कर्श – निश्कर्श दे तौर पर एह् गलाया जाई सकदा ऐ जे डोगरी लोक-गीतें च बड़े सारे पर्व-ध्यार जि'यां- लोह्ड़ी, भुग्गा, बच्छ-दुआह्, द्रुब्बड़ी, करेआचोथ, नराते, होली, रक्खड़ी, राड़े, बसाखी ते देआली द्रिश्चीगोचर होए दे न, जेह्ड़े डुग्गर प्रदेस च मनाए जंदे न। साढ़ी संस्कृति ते परंपरा दे प्रतीक एह् जिन्ने बी पर्व-ध्यार डोगरी लोक-गीतें च नज़री औंदे न ओह् मनुक्खी मनै च अपनी संस्कृति दी सुरक्षा करने प्रति रूचि बद्धांधे न। संस्कृति दे तैह्त औने आह्ले एह् पर्व-ध्यार डोगरे समाज दे रीति-रवाजें कन्नै चंगी चाल्ली अवगत करांदे न। ते लोकें दे मनै च परिवारिक प्रेम, आपसी भाईचारा ते समाजिक व्यवस्था बारै जानकारी देने च बी कारगर सिद्ध होंदे न।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डोगरी लोकगीत, भाग- 11, ओम गोस्वामी, सफा-92
2. डोगरी लोकगीत, भाग- 14, ओम गोस्वामी, सफा- 183
3. डोगरी लोकगीत, भाग- 13, ओम गोस्वामी, (भूमिका) सफा-xix
4. उ'ऐ, (भूमिका) सफा- xii
5. डोगरी साहित्य दा इतिहास, डॉ. जितेन्द्र उधमपुरी, सफा-36
6. डोगरी लोकगीत, भाग-17, शिवराम द्वीप, सफा-25
7. उ'ऐ, सफा-26
8. डोगरी लोकगीत, भाग-3, नीलांबर देव शर्मा, केहरि सिंह मधुकर, सफा- 124
9. डोगरी लोकगीत, भाग- 14, ओम गोस्वामी, सफा- 14
10. डोगरी लोकगीत, भाग- 12, ओम गोस्वामी, सफा- 19
11. डोगरी लोकगीत, भाग-3, नीलांबर देव शर्मा, केहरि सिंह मधुकर, सफा- 140
12. डोगरी लोकगीत, भाग- 12, ओम गोस्वामी, सफा-20
13. डोगरी लोकगीत, भाग- 17, शिवराम द्वीप, सफा-4
14. उ'ऐ, सफा-4
15. डोगरी लोकगीत, भाग- 14, ओम गोस्वामी, सफा- 178
16. उ'ऐ, सफा- 178
17. डोगरी लोकगीत, भाग- 12, ओम गोस्वामी, सफा-98
18. डोगरी लोकगीत, भाग-3, नीलांबर देव शर्मा, केहरि सिंह मधुकर, सफा-73
19. डोगरी लोकगीत, भाग- 17, शिवराम द्वीप, सफा-97

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

महुआ माजी के उपन्यास 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' में आदिवासी (जनजाति) चित्रण

अखिलेश कुमार *

प्रस्तावना - भारतीय समाज की महत्वपूर्ण इकाई जनजातिया है। इनका भारत वर्ष में हमेशा महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इनका योगदान जंगल और पर्यावरण के संरक्षण में था। पर्यावरण की सम्पदा और विविधता और बहुलता के केन्द्र में जनजाति ही थी।

भारत में शबरी, निशादराज, केवट और एकलव्य इन जातियों के अग्रणी आदर्श उदाहरण हैं, जिनके द्वारा समाज में सत्यता और पवित्रता की रक्षा के लिए अपना जीवन न्यौछावर कर दिया गया था। भारत वर्ष पर विदेशियों की जब बुरी नजर पड़ने लगी और महान संस्कृति को आघात होने लगा तब से ही इन जनजातियों के द्वारा भील विद्रोह 1880-1857, अमोह विद्राह 1828-1833, खासी विद्रोह 1830, सिंगफो विद्रोह 1830, कोल विद्रोह 1832-1837, संथाल विद्रोह 1835-1856, मुंडा विद्रोह 1893-1900, कूकी विद्रोह 1917-1919 जैसे सैकड़ों आन्दोलन इन जातियों के द्वारा क्रूर विदेशियों के अत्याचारों के खिलाफ किये गये थे जिनमे सिद्ध एवं कांहू, विरसा मुंडा, बुद्धो भगत, तेजावर एवं तातयाभील जैसे हजारों जनजाति युवकों द्वारा गोरो के खिलाफ सफलता पूर्वक मुकाबला किया गया और भारत को स्वतंत्रता दिलाने में अंग्रेजों को उनकी औकात याद दिलाई और अपनी शक्ति का लोहा मनवाया।

देश के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इन जनजातियों को संविधान में अनुसूचित किया गया और अनुसूचित जनजाति नाम दिया गया लेकिन भारत में पनपी अंग्रेजी दासता वाली मानसिकता वाली लोगों की पीढ़ी के खिलाफ जनजातियों को संघर्ष करना पड़ा और इन अंग्रेजी परस्त लोगों के द्वारा जनजातियों के अमर बलिदान को भुलाने की कोशिश गई। जिनके खिलाफ आज हमारे प्रकृति के रखवारे जनजाति बंधु संघर्ष करते नजर आ रहे है। आज भी आठ करोड़ जनसंख्या वाले समाज को अपनी संस्कृति के लिये जीने वाले शिक्षा, आर्थिक, राजनैतिक रूप से समाज में सबसे पीछे खड़े अदृश्य जैसे दिखाई देते है।

महुआ माझी इन्हीं जनजातियों के विषय में लिखने वाली आधुनिक उपन्यासकार है 'मरंग गोड़ा नीलकंण्ठ हुआ' में विकिरण प्रदूषण व विस्थापन से जूझते आदिवासियों की गाथा को लेखनी वद्ध किया गया है। 'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ' का प्रकाशन, राजकमल प्रकाशन के द्वारा 2012 में प्रकाशित किया गया था।

इन उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने आदिवासियों के जीवन को जंगल के इर्द गिर्द दिखाया है, जो कि इनके जीवन की सच्चाई है। इस उपन्यास के पात्र संगेन तथा जाम्वीरा के विषय में जो कि जंगल से प्यार करते थे। 'संगेन के ततंग............को जाम्वीरा को जंगल से प्यार था। बहुत प्यार। शायद संगेन के हिस्से में आये प्यार से भी ज्यादा। इस प्यार को उस प्यार में और उस प्यार को इस प्यार में उड़ेलते हुये जंगल के ढेरों किस्से कहानियाँ सुनाया करते थे वो संगेन को अब भी बचपन में सुनी वे कहानियाँ रोमांचित करती है।'[1]

इस उपन्यास में झारखण्ड के जंगल में रहने वाले आदिवासियों (जनजातियों) के जीवन से जुड़े आधुनिक पहलुओ और उनके जीवन में पड़े प्रभाव को बड़े शोधपूर्ण एंव गम्भीरता के साथ लिखा गया है। इस उपन्यास के माध्यम से उस जंगल को बताया है। जो घनघोर था क्योकि किसी का कोई बाह्य हस्तक्षेप नहीं था उस समय के जंगल में जब तो हम अन्दाजा लगा सकते है, कि आदिवासियों के जीवन में जंगल के बाहुल्य होने से कोई कमी न रही होगी। प्रकृति के आयामो का भी क्षय नहीं हुआ। आदिवासियों का जीवन सांस्कृतिक रूप से भरा हुआ था। प्रकृति के विविध रूप उनके देवता थे उनके आस पास परमपरागत नियम कायदे थे। मरंग गोड़ा भी एक जंगल का नाम है। और यहाँ पर प्राचीन पुरातत्व अन्वेषण का काम होता है। इनके लिए जियोलॉजिस्ट आते हैं जो आदि वासियों के प्रतिनिधि जाम्बीरा को अच्छा लगता है। अन्वेषण के लिए जंगल को साफ किया जाता है जिसको आदिवासी कौतुहल से देखते हैं और कोई उनकी भलाई की वस्तु उस खोज में निकले। लेकिन वो उनकी भलाई के लिए नहीं आते, बल्कि अपने हित के लिए आये थे। उनका हित, मतलब खनन के लिए, जिससे बिना आदिवासियो के जीवन की चिंता करके आर्थिक लाभ कमा सके।

'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ' में महुआ जी ने आदिवासियों की शादी के समय होने वाली परम्पराओं को रेखांकित किया है जो कि उनकी परम्परानुसार ही शादी योग्य युवतियों के विषय में कहते है। 'आप लोगों के इलाके के पेड़ पौधों में नई-नई सुन्दर-सुन्दर पत्तियाँ नजर आयी। हमारे इलाके में नहीं है। हमें इनकी काफी आवश्यक्ता है। हम लोग इसी चाहत में आये है।'[2]

उन घने जंगलों को जब कोई नुकसान पहुँचाता है तो आदिवासी जंगल को बचाने के लिए संवेदनशील हो जाते है, अंधेरे में तीर धनुष उठा कर निशाना साधने की कोशिश करते है जाम्बीरा जैसे आदिवासी आगे बढ़कर करते है। ये आदिवासी बिना परिणाम सोचे जंगल बचाने के लिए तत्पर रहते है।

उसी जंगल के पास ताँबे की खदान से उत्पन्न होती स्थिति को इस उपन्यास में दर्शाया गया है और खदान के बाद उत्पन्न होती स्थितियों के बाद आदिवासियों के जीवन को भी चित्रित किया गया है और आगे चलकर मरंग गोड़ा में बदलाब आने लगा और नई-नई खदाने शुरू हुई और उनमें

*शोधार्थी (हिन्दी) अटलबिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

तेजी से काम होने लगा और उन खदानों से हर जगह धूल उड़ने लगी और इन खदानों में काम करने वाले मजदूरों का शरीर तथा शरीर के अन्दर पहुँच कर धूल उनको तकलीफ देने लगी। इस दौरान आदिवासियों की कई पीढ़ियाँ निकलती गई। पहले जो आदिवासी शिकार के लिए जाते थे वे अब इन खदानों के कारण अपनी कला से महरूम हो चुके हैं। जब से इन खदानों की धूल इस सिंह भूम में उड़ने लगी तब से इन जनजातियों की रत्नगर्भा जमीन भी खाने का अनाज देने के लायक नहीं बची। आदिवासियों पर पड़ रहे दुष्प्रभाव के कारण अनेक प्रकार के जंगल आन्दोलन जगह–जगह हो रहे थे, इसी उपन्यास के एक पात्र 'जोट्या' के भाई को जंगल आन्दोलन का अग्रणी नेतृत्वकर्ता बताया जो कि यथार्थ में या आदिवासियों के आन्दोलन को बताता है। 'जोट्या के घर में हमेशा गहमा–गहमी लगी रहती थी। उन दिनों उसके बड़े भाई उस इलाके में चल रहे जंगल आन्दोलन में सक्रिय थे। अक्सर सभा, धरना, प्रदर्शन, रैली आदि में भाग लिया करते थे। सुदूरवर्ती ग्रामीण इलाकों में जो इस आन्दोलन से अछूते थे, जाकर आदिवासियों को उनके हक के लिए लड़ने के लिए प्रेरित करते थे।'[3]

ये अदिवासी जंगल को हो रहे नुकसान के लिए आन्दोलन तो कर रहे थे, लेकिन उनको तरह–तरह से धमकाया जा रहा था उन आदिवासियों को प्रकृति के दुश्मन खौफ दिखा रहे थे जिससे आदिवासी चिन्तित भी थे और मरंग गोड़ा इस चिन्ता का केन्द्र बन गया था। कई ऐसे मानवता के दुश्मन थे जो कि दहशत के वातावरण को फैला रहे थे। इस उपन्यास के पात्र सगेन जैसे आदिवासी भी संशकित रहते हैं। 'दहशत के माहौल में दिन गुजार रहा था सगेन। किसी अनहोनी की आशंका उसे हर वक्त घेरे रहती थी लोगो की संदेह और घृणा भरी निगाहें घर की दीवारों को भेद कर सिर्फ उसकी ताई को ही नही, बल्कि उसे और उसके ताऊ को भी लहुलुहान करती रहती थी।'[4]

'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ' उपन्यास में आदिवासियों का शोषण उनके धन सम्पदा से भरे जंगलरूपी खनिज स्थलों के बावजूद इस आदिवासियों का रहन–सहन बिल्कुल निम्न स्तरिय हो गया वे खाने से भी वंचित रहते है आज भी वासा भोजन खाने को बाध्य है इस उपन्यास में आदिवासियों के हितों को नजर अन्दाज कर परमाणु के द्वारा खनन होता है और इस प्रकार से प्रकृति से खेलने वाले दलाल उस स्थिति को बदतर करते है। जिससे हमें पर्यावरण प्रदूषण के साथ–साथ नक्सलवाद माओवाद और अन्य इस तरह की समस्याओं के बीच जीवन गुजारना पड़ रहा है। 'जबसे खनन कम्पनियों के साथ दलालों का आना शुरू हुआ, तब से पूरी व्यवस्था ही बदल गई गाँव वालों का आरोप है कि वे नक्सली और पुलिस वालों के बीच पिसकर बर्बाद हो रहे है।'[5]

आदिवासियों के क्षेत्र जंगल में हो रहे हस्तक्षेप जिसमें परमाणु का प्रयोग उत्खनन या अन्य कार्यो से विस्थापन के लिए आदिवासियों को मजबूर करना है, उसी प्रकार से जिस प्रकार से जिस प्रकार से मछली को पानी से बाहर निकाल कर जीवनहीन करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ, महुआ माजी, प्रथम संस्करण 2015 राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 12।
2. मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ, महुआ माजी, प्रथम संस्करण 2015 राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 32
3. मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ, महुआ माजी, प्रथम संस्करण 2015 राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 111
4. मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ, महुआ माजी, प्रथम संस्करण 2015 राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 157
5. मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ, महुआ माजी, प्रथम संस्करण 2015 राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 396

****

विधानसभा निर्वाचनों में इन्दौर के मजदूर संघ (1952-1980)

शेफाली राजवाल *

प्रस्तावना - सर सेठ हुकुमचंद राजवाड़ा तथा अन्य ऐतिहासिक धरोहरें ही इन्दौर शहर के अतीत के गौरव की पहचान नहीं है और भी चीजें हैं जिसने इन्दौर जाना जाता था। शहर की मिलें शहर की शान भी थी और जान भी। वर्तमान में भले हीं इन कपड़ा मिलों का अस्तित्व मिट गया है। पर अब से साठ-सत्तर बरस पहले मिलें, उनमें कार्यरत मजदूर तथा मजदूरों के हित व कल्याण के लिए कार्यरत मजदूर संघों की शहर के विभिन्न क्षेत्रों में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रहा करती थी। राजनैतिक क्षेत्र भी उनमें से एक था।

कपड़ा मिलों में काम करने वाले मजदूरों का नेतृत्व करने वाले विभिन्न श्रमिक संघों के श्रमिक नेताओं की इन्दौर की राजनीति में अच्छी पूछ-परख थी। श्रमिक संगठन (इंटक) अगर कांग्रेस से जुड़ा था तो 'एटक' भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन था और इन श्रमिक संघों से जुड़े नेता, मसलन वी.वी.द्रविड़, रामसिंह भाई वर्मा, गंगाराम तिवारी, कन्हैयालाल यादव (सभी इंटक), होमी एफ.दाजी, कामरेड हरिसिंह, अर्जुनसिंह हाड़ा (सभी एटक) तथा मधुकर चंदवासकर (जनसंघ) आदि की इन्दौर शहर की राजनैतिक नब्ज पर कड़ी पकड़ थी। तभी तो मध्यभारत और मध्यप्रदेश विधानसभा के लिए सम्पन्न पहले सात निर्वाचनों में इन्दौर के श्रमिक क्षेत्र कहलाने वाले एक इलाके से खड़े भी श्रमिक नेता ही होते थे और निश्चित ही विजय भी कोई श्रमिक नेता ही होता था। वर्तमान परिदृष्य में भले ही श्रमिक क्षेत्र अपना अस्तित्व भूला बैठा है, क्योंकि कपड़ मिलें ही खत्म हो गई हैं पर तब तो ऐसा नहीं था।

निर्वाचनों में मजदूर संघ नेता - देश के पहले आम चुनाव 1952 में हुए तब मध्यप्रदेश नहीं मध्यभारत हुआ करता था। इन्दौर शहर चार विधानसभा क्षेत्रों में बँटा हुआ था और इनमें से दो में श्रमिक संघों के नेता प्रत्याक्षी थे। इन्दौर-ए से रामसिंह भाई वर्मा (इंटक) 49.1 प्रतिशत मत पाकर विजयी हुए जबकि एल.आर.सी. खंडकर (एटक) 13.5 प्रतिशत मतों से पराजित हुए थे। इसी तरह इन्दौर-बी से वी.वी. द्रविड़ (इंटक) 67.8 प्रतिशत मत से जीते थे और एटक के होमी.एफ.दाजी 10.9 प्रतिशत मतों से चुनाव हारे थे।

राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिषों के आधार पर नवम्बर 1956 को नए प्रदेश के रूप में मध्यप्रदेश अस्तित्व में आया और 1957 में प्रदेश के पहले आम चुनाव हुए। इन्दौर शहर में एक बार फिर चार विधानसभा सीटें थीं और एक बार फिर से सीटों पर श्रमिक नेता विजयी हुए। इन्दौर से इंटक से वी.वी.द्रविड़ 60.4 प्रतिशत मत और इन्दौर पूर्व से एटक के **1962 का निवाचन -** इस बार भी सीटें श्रमिक नेताओं ने ही जीती। इंटक के वी.वी.द्रविड़ और गंगाराम तिवारी ने क्रमश: लक्ष्मीशंकर शुक्ला एवं प्रभाकर अड़सुले को हराया था। ये दोनों उस दौर में होमी एफ दाजी के साथी थे। 1967 में इन्दौर दो विधानसभा क्षेत्र के ग्रुप में श्रमिक क्षेत्र का नया ग्रुप सामने आया। इस निर्वाचन में एक और नई बात सामने आई पहले तीन निर्वाचनों में श्रमिक नेताओं के लिए दो क्षेत्र हुआ करते थे पर 1967 के निर्वाचन में श्रमिक क्षेत्र एक ही रह गया इस निर्वाचन में इन्दौर दो से इंटक के गंगाराम तिवारी ने 43.9 प्रतिशत मत लेकर एटक के कामरेड हरिसिंह (41.4 प्रतिशत मत) तथा जनसंघ के श्रमिक नेता मधुकर चंदवासकर (7.3 प्रतिशत मत) को हराया था। 1952 से 1967 के बीच सम्पन्न चार निर्वाचनों में इंटक के वी.वी.द्रविड़ तीन बार गंगाराम तिवारी दो बार विधायक बने और दोनों श्रमिक नेता के रूप में मध्यप्रदेश की कांग्रेस सरकार के मंत्री भी रहे।

1972 का निर्वाचन - चूँकि बांगलादेश मुक्ति संग्राम के दौर में (1971) केन्द्र श्रीमती इन्दिरा गाँधी की सरकार के समर्थन में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी थी अत: 1972 के विधानसभा निर्वाचन में श्रमिक नेता होमी एफ. दाजी को इन्दौर दो से कांग्रेस ने अपना समर्थन दे दिया था। दाजी ने 79.5 प्रतिशत मत हासिल कर एक तरफा जीत पाई थी। मधुकर चंदवासकर ने 11 प्रतिशत और इंटक के बाकी प्रत्याक्षी रामसेवक शर्मा को 7.3 प्रतिशत मत ही मिल सके थे।

1977 का निर्वाचन-यह निर्वाचन प्रदेश ही नहीं देश में भी विशेष परिस्थितियों में लड़ा गया था। 1975 में श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने देश में इमरजेंसी आरोपित की थी और उसकी समाप्ति के बाद से निर्वाचन हुए थे। देश में तो मतदाताओं ने इमरजेंसी के कड़वे पुल के रूप में कांग्रेस पार्टी को नकारा ही था। प्रदेश और इन्दौर के संसदीय एवं विधानसभा निर्वाचनों में भी कांग्रेस को नकार दिया था। प्रदेश ओर इन्दौर के संदसीय निर्वाचन में कांग्रेस को 40 में से केवल एक सीट मिली थी छिंदवाड़ा जहाँ कांग्रेस के गौरीशंकर मिश्रा जीते थे।

इन्दौर की संसदीय सीट जनता पार्टी के प्रत्याक्षी कल्याण जैन ने जीती थी, जबकि एक (ओमप्रकाश रावत), तीन (राजेन्द्र धारकर) और चार (श्री वल्लभ शर्मा) पर भी इसी पार्टी ने विजय प्राप्त की थी। इन्दौर पाँच पर कांग्रेस के सुरेश सेठ तथा श्रमिक क्षेत्र की इन्दौर दो सीट पर कांग्रेस के ही यज्ञदत्त शर्मा 38.6 प्रतिशत मत पाकर जीते थे, उन्होंने जनता पार्टी के प्रत्याक्षी कामरेड हरिसिंह (34.2 प्रतिशत मत), सी.पी.आई. के अनंत लागू (18.7 प्रतिशत मत) और मधुकर चंदवासकर (4.1 प्रतिशत मत) को हराया था। निश्चित ही शर्मा सहित अन्य सभी प्रत्याक्षी श्रमिक समस्याओं के जरिए श्रमिकों से जुड़े हुए थे।

1980 में हुए निर्वाचन में इंटक से जुड़े कांग्रेस के कन्हैयालाल यादव (39.2 प्रतिशत मत) जीते थे। पराजित उम्मीदवारों में एक समय के दिग्गज नेता होमी एफ. दाजी 29.6 प्रतिशत मत और श्रमिक क्षेत्र में उभरते युवा भाजपा नेता भंवरसिंह शेखावत (28.9 प्रतिशत मत) भी थे। 1980 के

* शोधार्थी (इतिहास) स्कूल ऑफ सोशल सांईस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

निर्वाचन के बाद श्रमिक क्षेत्र (इन्दौर दो) की चमक-दमक कम हो चुकी थी। कपड़ा मिलें जिनसे श्रमिक शक्ति संगठनों को जान मिला करती थी, एक-एक कर बंद होना शुरू हो गई थी और जब आधार ही खत्म हो गया हो तो श्रमिक क्षेत्र ही अस्त-व्यस्त हो गया।

1985 से 2018 के बीच हुए आठ विधानसभा निर्वाचना में इन्दौर-दो क्षेत्र से तीन बार भाजपा के कैलाश विजयवर्गीय (1993, 1998, 2003), तीन बार भाजपा के ही रमेश मेन्दोला (2008, 2013, 2018) और एक-एक बार कांग्रेस के कन्हैयालाल यादव (1985) तथा सुरेश सिंह (1990) विधायक बने, पर 1980 के पूर्व का श्रमिक संघो का वर्चस्व समाप्त हो चुका था। नंदानगर आज भी है, श्रम संगठन इंटक की पहचान बताता श्रम षिविर आज भी है, पर हुकुमचंद राजकुमार, कल्याणमल, स्वदेशी, मालवा और भण्डारी आदि कपड़ा मिलों का अस्तित्व कहीं नजर नहीं आता। श्रमिक शक्ति का नामोनिशान नहीं है, जिनकी ताकत जोश एवं उत्साह के दम पर न केवल इंटक बल्कि एटक जैसे श्रम संगठनों ने इन्दौर शहर पर अपना वर्चस्व कायम कर रखा था। विधानसभा क्षेत्र में श्रमिक नेताओं का जीतना, होमी एफ.दाजी का विधायक व सांसद बनना और 1958 के नगर निगम निर्वाचन में दाजी के नागरिक मोर्चे का कांग्रेस को पहली दफा अपदस्थ करके अपनी परिषद बनाना यह सब अतीत हो चुका पर इन्दौर में ऐसा हुआ था और सब श्रम शक्ति, श्रम संगठन तथा श्रमिक तथा श्रमिक नेताओं के कारण।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नगरिक, पत्रिका, नगर निगम इन्दौर
2. नई दुनिया विधानसभा निर्वाचन विश्लेषण 1967, 1977, 1980
3. विकास की व्यथा-कथा कारवा एक अभय छजलानी लाभचन्द्र प्रकाशन इन्दौर प्रथम संस्करण पृ.स. 316, 344, 345
4. घटपटाता शहर कारवा भाग दो अभय छजलानी लाभचन्द्र प्रकाशन इन्दौर प्रथम संस्करण पृष्ठ सं. 178, 180
5. शहर अकेला इस भीड़ में कारवा भाग तीन, अभय छजलानी लाभचन्द्र प्रकाशन इन्दौर प्रथम संस्करण पृष्ठ स. 48, 49
6. अपना इन्दौर भाग 1 संपादन अभय छजलानी लाभचन्द, प्रकाशन इन्दौर तृतीय संस्करण 2017, पृष्ठ स. 287, 288
7. अपना इन्दौर भाग 3 अभय छजलानी लाभचन्द्र प्रकाशन इन्दौर प्रथम संस्करण पृष्ठ सं. 92, 93

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

इस्लाम धर्म कि कर प्रणाली की व्याख्या तथा समाज को संदेश

बेनज़ीर पटेल *

प्रस्तावना – इस्लाम धर्म की हर समाजिक व्यवस्था में समानता पर ही बल दिया गया है। इस्लाम धर्म में छोटा बड़ा कुछ नही होता। इस्लाम धर्म को मानने वाला हर बंदा इस्लाम धर्म के हर नियम को मानता है। इस्लाम एक एकेश्वरवाद ही धर्म है। जो इसके अनुयायियों के अनुसार अल्लाह के अंतिम रसूल और नबी मोहम्मद द्धारा मनुष्य तक पहुंचाई गई अंतिम ईश्वरीय पुस्तक कुरान की शिक्षा पर आधारित है। कुरान अरबी भाषा में रची गई और इसी भाषा में विश्व की कुल जनसंख्या के 25 प्रतिशत हिस्से यानी लगभग 1.6 से 1 दशमलव 18 अरब लोगों द्धारा पढ़ी जाती है। हजरत मोहम्मद साहब के मुंह से कथित होकर लिखी जाने वाली पुस्तक और पुस्तक का पालन करने के निर्देश प्रदान करने वाली शरीयत ही दो ऐसे संसाधन है। जो इस्लाम की जानकारी स्त्रोत को सही करार दिए जाते हैं। ईश्वर की ओर से संसार में जितने धर्म नेता और धर्म शिक्षक आए उन सब का एक मात्र आदेश यही था कि ईश्वर को मानो उसी को पूजा और उसी की आज्ञा पर चलो कुरान में खुदा कहता है।

'वामा अरसलनाका रसूल इन इला नहीं इलाही अन्नू ला इलाहा इलल्लाह आना'

अर्थात हमने जितने भी रसूल भेजें उनको यही आदेश दिया कि मेरे सिवाय कोई पूछ नहीं शो मेरी ही पूजा बंदगी करो और मेरी आज्ञा पर चलो। इस्लाम धर्म की कर प्रणाली भी इसी समानता की व्यवस्था पर आधारित है। जो सामाजिक व्यवस्था का आधार है। ना कि, कट्टर रूप या किसी कट्टर की और इशारा नहीं करता है। ये फिर सामाजिक व्यवस्था का ही आधार है। धर्म का नहीं।

इस्लामिक शासन व्यवस्था में 5 कर है

1. जज़िया
2. जाकत
3. खराजर
4. खुम्स
5. उशर

पहले चार कर मुसलमानों से और पाचवा जज़िया गैर मुसलमानों से लेने की व्यवस्था रही है। कोई भी शासन व्यवस्था कर के द्धारा ही चलती है। कर हर नागरिक को देना पड़ता है। बदले में सरकार उस की सुरक्षा और अन्य सामाजिक सेवाएं देती है। मुसलमानों पर लगने वाले दोनों करो कि कुल राशि गैर मुस्लिमों पर लगने वाले जज़िया से अधिक है। मतलब इसलामिक व्यवस्था में मुसलमान व्यति को गैर मुस्लिम से अधिक कर देना पड़ता है। यह चारों एक इस्लाम धर्म का आधार है, मजबूत सामाजिक व्यवस्था का सबूत जो सिर्फ इस्लामी लोगों को समानता से रहने के लिए बनाई गई थी ताकि समाज में समानता का फैलाव निरन्तर होता रहे, और समाज एकता से सूत्र में बंधा रहे।

लेकिन बाद में कुछ कट्टरंपथी ने इस कि व्यवस्था को पूरी तरह बदल डाला और इसे धर्म का रूप अनेक भ्रंतिया फैला दी।

लेकिन वास्तविकता ये है कि व्यवस्था इस्लाम के मजबूत आधारों में से एक है जो समाज की भलाई के लिए एकता में बांधे रखने के लिए बनाई गई थी।

जज़िया – (अर्थ और उद्धव) अब जज़िया एक धार्मिक परिभाषा बन गया है परन्तु में ये जज़िया शब्द, खिराज या लगान का सम्मनार्थी है। अरबी भाषा के प्रसिद्ध शब्दकोष 'कामुस' में है। अल जिजयतु खिराजुल अर्जी वमा यूखजु मिन जिज्ममि अर्थात जिज्या जमीन की लगान और उस कर को भी कहते है। जो जिमि से लिया गया है।

1. जिम्मी इस्लामिक राज्य की गैर मुस्लिम जनता को कहते है। जिम्मी जिम्मेदारी शब्द से बना है। इस्लामी राज्य की गैर मुस्लिम जनता की जिम्मी इसलिए कहते है कि इस्लामिक राज्य खुदा और रसूल के नाम पर उनके प्राण, धन धर्म सबकी रक्षा का जिम्मेदार बन जाता है, जिज्या शब्द फारसी भाषा के जिज्यत शब्द से बना है।

इस्लाम में जजिया कर – उसको कहा गया है। जो इस्लामिक राज्यों की गैर मुस्लिम जनता से रक्षा के रूप में लिया जाए। दूसरे शब्दों में जिज़िया कोई धार्मिक कर नहीं है भूमि कर के समान केवल रक्षा कर है। प्रत्येक गैर मुस्लिम प्रजा के लिए जजिया कर की दर समान नहीं है। धन वालों के लिए जो दर है। उसमें का मध्यम वर्ग वालों के लिए है। और उनमें से भी कम निम्न वर्ग वालों के लिए है। जिज्या अनिवार्य नही।

जिज्या सैनिक सेवा के बदले में लिया जाता है। इसलिए जिन गैर मुस्लिमों पर जिज्या कर है। उनमें भी जो सैनिक सेवा के योग्य ना हो जैसे स्त्रियों बालक पागल अंधे अपाहिज अत्यधिक वृद्धि मंदिरों और उपासना ग्रहों के सेवक साधु सन्यासी घर गृहस्ती छोड़कर उपासना ग्रह में जीवन व्यतीत करने वाले जजिया कर से मुक्त है।

ज़कात – ज़कात समाज के विभिन्न तथा कष्ट ग्रस्त व्यक्तियों की सहायता अनिवार्य धर्मदान है। यह दान प्रत्येक धनवान व्यक्ति को ढाई रूपया प्रतिशत वार्षिक की दर से देना पड़ता है।

कुरान की एक आयत है – जो लोग सोना चांदी संचित करते हैं। और उसको ईश्वर के मार्ग में नही करते उनको उस दिन के कष्टदायक दंड का समाचार सुनना है। जिस दिन वह दर नरक की आग में अच्छी तरह पटाया जाएगा फिर उससे उनके माथे उनकी बदले और उनकी पीढ़ी दाढ़ी जाएगी और कहा जाएगा कि यह वहीं जो तुमने अपने लिए संचित किया था। सो जो तुम संचित करते थे अब उसका फल चखो (सूर तोबा आयात 33) जकात

*शोधार्थी (इतिहास) स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

के संबंध की दूसरी मुख्य बात यह है। कि आपके द्वारा इस्लाम में ऐसी व्यवस्था की है कि समाज का कोई व्यक्ति इतना धनी ना हो पाए कि वह जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति ना कर सके इस्लाम में धन हीनो और कष्ट ग्रंथ व्यक्तियों के सहायता अर्थ धर्म को कितना महत्व दिया है। और किस प्रकार जन सेवा और सहायता अर्थ धर्म को कितना महत्व दिया है। और किस प्रकार जन सेवा और सहायता को धर्म का मुख्य अंग बना दिया है। जो पूरे समाज के गरीब और अमीर व्यक्ति को एक सूत्र में बांध कर रख देते हैं।

इस्लाम में खम्स – किसी भी मुस्लिम सेना के ऐतिहासिक रूप से आवश्यक धार्मिक दायित्व को युद्ध के लूट के पांचवें हिस्से का भुगतान करने के लिए संदर्भित करता है एक सैन्य अभियान के बाद अविजयों को यह कर खलीफा, सुल्तान को दिया गया था। जो इस्लाम राज्य का प्रतिनिधित्व करता था सुन्नी इस्लाम परंपरा में हम सरकार आ रहा है। जिसमें युद्ध की लूट के रूप में परिभाषित किया गया है। या परंपरा में लूट समुद्र से प्राप्त वस्तुएं खजाना खनिज संसाधन काली कमाई वैध (जो गैर कानूनी हो) खम्स 20 प्रतिशत कर है जिसे गनिमा (युद्ध के साथ जब्त लूट) के रूप में माना जाने वाले सभी वस्तुओं पर भूखतना किया जाना चाहिए। खम्स अलग – अलग इस्लामिक करो जैसे जाकत, जज़िया से अलग है।

उशर – मुसलमानों से लिये जाने वाला भूमि कर।

उपसंहार – इस्लामिक शासन काल में जितने भी कर लिए जाते रहे हैं। वो समाज कि लभाई, उत्थान, विकास के लिए जाते थे। कर के जरिए समाज में उच–नीच की दूरी को दूर करना भी रहा है, कर समाज की भलाई के लिए तो था ही साथ में शहर की सुरक्षा को मजबूत बनाना भी रहा है, समाज के सभी वर्गो के द्वारा दिये कर से नागरिकों को सभी सुविधाएं भी देना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. https://www.hindiaudionotes.in
2. https://m.facebook.com
3. (knowledge if the islam)
4. https://en.p. Wikipedia.org/wiki/khums
5. मुस्लिम महिलाएँ और सामाजिक परिवर्तन (लेखक – अय्यूब मोहम्मद) राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली,
6. भारतीय मुसलमान : दशा और दिशा (संपादक –यादव सिंह डॉ. वीरेन्द्र) राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली,
7. मध्यकालीन इस्लाम (लेखक – के.एल.चंचरीक) यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली

****

प्रदेश के विकास में उत्तर-प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड की भूमिका

डॉ. राकेश कुमार *

प्रस्तावना – उ0प्र0 में औद्योगिक विकास को त्वरित गति प्रदान करने के लिये उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास लि0 की स्थापना मार्च 1961 में उ0प्र0 शासन द्वारा कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत की गई थी। वर्तमान में निगम राज्य शासन में अभिकरण के रूप में प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में चयनित स्थलों पर अवस्थापन सुविधाओं से युक्त एकीकृत औद्योगिक क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास करके औद्योगिक एवं अन्य सम्बन्धित उपयोग हेतु भूखण्ड उपलब्ध कराता है।

निगम प्रदेश के तीव्र सर्वांगीण औद्योगिक विकास के लिये मुख्य रूप से निम्न कार्यो को सम्पादित कर रहा है।

1. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में अवस्थापना सुविधाओं से युक्त एकीकृत औद्योगिक नगरी एवं औद्योगिक क्षेत्रों का विकास करके औद्योगिक एवं अन्य सम्बंधित उपयोगों हेतु भूखण्ड/भवन उपलब्ध कराना।
2. औगिक अवस्थापना सुविधाओं के विकासएंव इसमें निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित कराने के लिये नोडल संस्था के रूप में कार्य करना।
3. सार्वजनिक/अर्द्ध सार्वजनिक संस्थानों के लिये निर्माण कार्य संचय आधार पर सम्पादित करना।
4. बड़े उद्योगों/अवस्थापना परियोजनाओं हेतु भूमि अधिग्रहण औद्योगिक इकाई की स्थापना के लिये भूमि की सर्वप्रथम अपरिहार्य आवश्यकता होती है। उद्यमियों को उचित दर पर नियोजित औद्योगिक क्षेत्रों में भूमि उपलब्ध कराने का दायित्व निगम का है। निगम द्वारा औद्योगिक क्षेत्र योजना की अधीन सड़क, नाली, विद्युत लाइने तथा अन्य प्राथमिक/सहायक अवस्थापना सुविधाओं से युक्त विभिन्न आकारों के विकसित भूखण्ड उद्यमियों को 90 वर्ष के पट्टे पर आवंटित किये जाते है।

निगम की प्रमुख परियोजनायें

ग्रोथ सेन्टर्स परियोजनायें – निगम द्वारा प्रदेश में जैनपुर, शाहजहांपुर, दिबियापुर एवं झाँसी ग्रोथ सेन्टर्स का विकास क्रमश: 331 एकड़, 324 एकड़, 346 एकड़ एवं 385.04 एकड़ भूमि पर किया गया है। इनकी परियोजना लागत क्रमश: रु0 3100.76 लाख, रु0 1622 लाख एवं रु0 1885 लाख है। इन ग्रोथ सेन्टर्स परियोजनाओं में जैनपुर तथा शाहजहांपुर का विकास कार्य पूर्ण हो चुका है। झाँसी एवं दिबियापुर विकास केन्द्रों का कार्य प्रगति पर है।

एग्रो पार्कस – खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से कृषि आधारित उद्योगों को बढ़वा देने हेतु निगम द्वारा कुर्सी रोड (बाराबंकी) तथा करखियांव (वाराणसी) में दो एग्रो पार्क में अवस्थापना सुविधाओं के विकास हेतु क्रमश: रु0 1314.53 लाख रु0 1417.03 लाख व्यय किये जा चुके है। दोनों एग्रो पार्को का विकास कार्य पूर्ण हो चुका है।

विशेष आर्थिक जोन (Special Economic Zone) कानपुर – विशेष परिक्षेत्र परियोजनाओं को सिंगल प्रोडक्ट के रूप में शासन के निर्देशानुसार UPSIDC द्वारा विकासकर्ता की भूमिका अदा करते हुए कानपुर के तीन सेक्टर स्पेसिफिक परियोजनायें विकसित की जानी है। उक्त परियोजना पर बोर्ड ऑफ एप्रूवल, भारत सरकार द्वारा दिनांक 31.05.2007 को अनुमोदन प्रदान किया गया है।

विशेष आर्थिक जोन (Special Economic Zone) भदोही – भदोही विशेष आर्थिक परिक्षेत्र परियोजना को सेक्टर स्पेसिफिक परियोजना (कारपेट उत्पादक) के रूप में णङ्मडखउ्ल द्वारा विकासकर्ता की भूमिका अदा करते हुए विकसित किया जाना है। इस परियोजना पर एप्रूवल, भारत सरकार द्वारा सन् 2008 में औपचारिक अनुमोदन प्रदान कर दिया गया है। भूमि का वास्तविक कब्जा प्राप्त कर विकास कार्य प्रारम्भ करने में स्थानीय कास्तकारों द्वारा विरोध किया जा रहा है जिला प्रशासन के सहयोग से भौतिक कब्जा प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है।

विशेष आर्थिक जोन (Special Economic Zone) मुरादाबाद – मुरादाबाद में हस्तनिर्मित वस्तुओं के लिये विशेष आर्थिक परिक्षेत्र स्थापित करने हेतु भारत सरकार से अनुमोदित इस परियोजना में उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास निगम द्वारा जल, विद्युत, जल निकासी, सामान्य सुविधायें, इंन्लैंड कन्टेनर डिपो, विकास आयुक्त कार्यालय, कस्टम कार्यालय, बैंक, पोस्ट-ऑफिस, टेलीफोन, पुलिस आउट पोस्ट, फायर स्टेशन, बाउंड्री बाल, आवासीय क्षेत्र, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र आदि सुविधाओं का निर्माण। विकास कार्य लगभग पूर्ण हो चुका है। उद्यमियों को भू-आवंटन की प्रक्रिया जारी है।

औद्योगिक अवस्थापन उच्चीकरण योजना (औद्योकगिक क्लस्टर योजना) – निगम के चार औद्योगिक क्षेत्रों (गाजियाबाद-2, बुलन्दशहर एवं कानपुर) में अवस्थापन सुविधाओं के उच्चीकरण हेतु परियोजनायें राज्य सरकार की संस्तुति सहित भारत सरकार के अनुमोदन हेतु प्रेषित की गई है। इसके अतिरिक्त मेरठ कलस्टर हेतु भी एक परियोजना रिपोर्ट तैयार की गयी है।

एकीकृत अवस्थापन विकास केन्द्र (आई0आई0डी0सी0) – इस योजना यू0पी0एस0आई0डी0सी0 दौरा उत्तर प्रदेश के पिछड़े जनपदों में लघु-उद्योग स्थापित किये जाने हेतु कोसी — कोटवन (मथुरा) एटा, वन्थर (उन्नाव) में परियोजनायें स्थापित किये जाने हेतु भारत सरकार उद्योग

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) रामसहाय राजकीय महाविद्यालय, बैरी शिवराजपुर, कानपुर नगर (उ.प्र.) भारत

मंत्रालय द्वारा 1996-97 में स्वीकृत प्रदान की गयी थी। एवं इन परियोजनायें का विकास कार्य पूर्ण हो चुका है। सम्बंधित केन्द्रों में उद्यमियों को अवस्थापना सुविधाये प्रदान करते हुए 200 मीटर एवं 300 मीटर में भू-खण्डों को उपलब्ध कराया गया है।

उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास प्राधिकरण:- निगम द्वारा विकसित औद्योगिक क्षेत्रों के विकास प्रबंधन, रख-रखाव का निर्धारण, मास्टरप्लान व विकास योजनायें बनाने, स्वीकृत भू-उपयोग के अनुश्रवण व कराधान हेतु शासन के नोटिफिकेशन संख्या 1418/77/2001-267 या/97 टी.सी.-1 दिनांक 5 सितम्बर 2001 द्वारा अभिज्ञापित कर दिया गया है। तथा निगम के अध्यक्ष को पदेन प्राधिकरण का अध्यक्ष भी नामित किया गया है।

आई0टी0 विशेष आर्थिक परिक्षेत्र सिटी :- उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास निगम लि0 द्वारा विकसित ट्रोनिगक सिटी में लगभग 27.13 एकड़ भूखण्ड पर आई0टी0/आई0टी0एस0एस0ई0जेड0 विकसित करने को परियोजना पर भारत सरकार द्वारा जून 2008 में अनुमोदन प्रदान कर दिया गया है।

औद्योगिक इकाई की स्थापना के लिये उद्यमियों की उचित दर पर नियोजित औद्योगिक क्षेत्रों में उपलब्ध भूमि को उद्यमियों को नीतिगत व्यवस्था के अन्तर्गत सौंपी जाती है। उक्त योजना में निम्नलिखित उद्देश्य की पूर्ति में योगदान मिला है।

1. उद्यमियों को उचित दरों पर औद्योगिक भू-खण्ड उपलब्ध कराना।
2. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में औद्योगिक संभाव्यता का कुशलतम दोहन।
3. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों का सामान्य व सन्तुलित औद्योगिक विकास।

प्रदेश में सन्तुलित औद्योगिक एवं आर्थिक विकास के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये पिछड़े एवं उद्योग शून्य जनपदों में औद्योगिक क्षेत्र स्थापित करने का समुचित बल दिया है। बदलते आर्थिक/औद्योगिक परिवेश में मांग आधारित औद्योगिक क्षेत्रों के विकास को प्राथमिकता दी जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उत्तर-प्रदेश में औद्योगिक विकास (प्रगति समीक्षा 2015-16) उद्योग निदेशालय, कानपुर (उत्तर - प्रदेश)। पृष्ठ सं0-107, 108
2. उत्तर-प्रदेश में औद्योगिक विकास (प्रगति समीक्षा 2016-17) उद्योग निदेशालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)। पृष्ठ सं0 125, 127, 129
3. उत्तर-प्रदेश 2016, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर-प्रदेश पृष्ठ सं0 171, 172
4. उत्तर प्रदेश 2015, सूचना एवं जन्सम्पर्क विभाग उत्तर-प्रदेश पृष्ठ सं0 869, 870
5. डॉ0 एच0के0 सिंह व डॉ0 मीरा सिंह : व्यवसायिक वित्त, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद (संस्करण 2015) पृष्ठ सं0 385

****

नागपुरी भाषा के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान

कोरनेलियुस मिंज *

शोध सारांश – नागपुरी साहित्य को बढ़ावा देने और नागपुरी रचनाओं को उजागर करने में आदिवासी पत्रिका का सबसे बड़ा योगदान रहा है। इसमें नागपुरी साहित्य की सभी विधाओं को जगह दी गयी। हालांकि सबसे अधिक नागपुरी कविताओं को प्रश्रय मिला। इस पत्रिका के पहले अंक 3 फरवरी 1947 में मसीदास की एक कविता हमरे छपी। इस कविता की भाषा बिल्कुल सपाट और ठेठ है।

प्रस्तावना – कविता : हमरे

'हमरे उपजाइला माटी में सोना।
हमरे करिला माटी के सोना।।
टपाटैप चूए पसेना
छेह मोर फरहर
खेत दोन हरिहर
हरियर करीला धरती कोना कोना।
हमरे जनमाइला माटी में सोना ।।'[1]

सात दिसंबर 1961 ई. के योजना विशेषांक में दुख हरण नायक की एक नागपुरी गीत छपी थी। जिसका शीर्षक है – हेराल बेटी सहिया बेटी। गीत की पंक्तियां आसानी से लोगों के जेहन को छूती हैं–

'झरझराझर सावन झईर बिजली कड़क कड़के
लूटाल हेजाल बेटी दुखे आईखलोर मोर ढरके।।
हेजाल गंवाल बेटीक दुखे पटाल ओढा मुंये।
पेट चपटा भूखे टटाल देहिया भींजल गांवे।।'[2]

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों के द्वारा अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं के स्त्रोतों को समाहित किया गया है।

वहीं अप्रैल 1961 ई. में प्रकाशित 'नागपुरी' पत्रिका, शिलौंग से 1961 ई. से प्रकाशित 'घरैया गोइठ', नागपुरी महिनवारी कागज, नागपुरिया समाचार, झारखंड समाचार, जय झारखंड, छोटानागपुर संदेश, रांची एक्सप्रेस, शंखनाद, संवाद, जोहार पत्रिका में नागपुरी की लगभग सभी विधाओं में रचनाएँ छपती रही हैं। जोहार पत्रिका आदिवासी पत्रिका की तरह सरकारी होते हुए भी नागपुरी की रचनाओं को प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया। इसमें कई नागपुरी साहित्यकारों की अच्छी रचनाएँ सामने आयीं। वहीं काफी प्रफ रीडिंग के साथ प्रकाशित की जाती थी। तिरफला कहानी की कुछ पंक्तियों को देखा जा सकता है –'उकर गतर काया आंइख, ठेहुना, कान नाक आउर आठो अंग कर सुन्दर से सुन्दर कल्पना में बोहाय जायना, बोहाय जायला।'[3] इस पत्रिका के प्रधान संपादक रेव्ह दिलवर हंस थे। यह पत्रिका भी कम अवधि में ही बंद हो गयी। कचनार, आज, आह्वान, पझरा, कोयनार, अगुवा, हिंदुस्तान, दैनिक सांध्य न्यूज पेपर झारखंड न्यूजलाइन, दैनिक भास्कर, खबर मन्त्र, तरंग भारती सहित अन्य पत्र-पत्रिकाओं नागपुरी भाषा की रचनाओं को प्रकाशित कर ना सिर्फ भाषा-साहित्य के संरक्षण-संवर्द्धन में अपनी महती भूमिका निभायी लेकिन लोगों भाषा को लेकर स्वाभिमान की भावना भी जागृत किया। मीडिया अगर न होती तो नागपुरी का जो स्वरुप आज वर्तमान में नजर आ रहा है, शायद वह न होती। लोग अपनी भाषा- बोलने से शर्माते थे, तो लिखना और उसे लोगों समक्ष लाना बहुत मुश्किल काम था। ये तो मीडिया का ही कमाल है कि नागपुरी रचनाओं को लोगों के समक्ष लाया और इसे बचाये रखने व समृद्ध करने में बड़ा योगदान दिया है। इसमें प्रिंट मीडिया के साथ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का भी महत्वपूर्ण योगदान है। नागपुरी भाषा-साहित्य को 1948 ई. को स्थापित आकाशवाणी पटना की स्थापना से ही नागपुरी को जगह मिलना प्रारंभ हो गया था। सर्वप्रथम नागपुरी गायक पांडेय वीरेंद्र नाथ राय ने पटना आकाशवाणी जाकर नागपुरी गीत गाना प्रारंभ किया। 16 दिसंबर 1950 को उनके दो नागपुरी गीत रिकॉर्ड किया गया था, जिसमें ये गीत शामिल हैं – गीत इस प्रकार है –

'गीत-भिनसरवा राग
निसि अधियारी मुरगा देलैं बांग रे
हायरे दैया, कहां रहलैं नन्दकि सोर रे
जोहे के जोहली जोहते भेलैं भोर रे।।
गुनते गुनते समय भेलैं मोर रे।
हायरे दैया, पिया भेलैं कठिन कठोर रे।।'[4]

30.10.1950 में रिकॉर्ड किया गया गीत

'हो हो रे कैसे दिल बोधब गोइया
लोरे भिंजत छतिया कैसे दिल ...
भावन भोज न धरे, नींद नहि एक सरे कैसे दिल ...
श्रीसी दरसन बीनु घांसी झुरे मन कैसे दिल बोधब गोइया
कब जुड़ाबै छतिया कैसे दिल बोधब ......'[5]

आकाशवाणी राँची की स्थापना के बाद तो नागपुरी भाषा-साहित्य में उर्जा का संचार हो गया। मानो डूबते को तिनके का सहारा मिल गया हो। 27 जुलाई 1927 ई. को स्थापित आकाशवाणी राँची का पहला कार्यक्रम 'देहाती दुनिया' ही नागपुरी में प्रसारित की गयी। यह कार्यक्रम आज भी प्रसारित होती है। रेडियो के माध्यम नागपुरी साहित्य की कई विधाएँ प्रचलित हुईं। कविता के अलावे कहानी, नाटक रूपक, संस्मरण, वार्ता, लोक कथाएँ प्रसारित की जाने लगी। साहित्यिक पत्रिका एवं कवि गोष्ठी कार्यक्रम के माध्यम से नागपुरी साहित्य जगत में क्रांति पैदा कर दी। 100 से अधिक

* सहायक प्राध्यापक (जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग) राँची महिला महाविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

नागपुरी गायक रेडियो से जुड़े और शिष्ट गीतों के प्रचलन को आगे बढ़ाने का काम किया है। वहीं 50 से अधिक नागपुरी कवि आकाशवाणी से जुड़े, जिनकी शिष्ट कविताएँ प्रसारित की जाती रही हैं। इसी तरह कहानी, नाटक और निबंध लिखने वाले रचनाकारों की एक पंक्ति तैयार हो गयी। इसी तरह दूरदर्शन राँची ने नागपुरी भाषा-साहित्य को संरक्षित-सवंर्द्धित करने का कार्य किया है। 1984 ई. में स्थापित राँची दूरदर्शन ने नागपुरी में भेंटवार्ता, गीत-नृत्य और कविता पाठ का आयोजन होता रहा है। जिसके माध्यम से शिष्ट रचनाओं को गति मिला है। साथ ही लुप्त होती कई चीजों को संरक्षित करने का काम किया हुआ है। ग्राम ज्योति और कल्याणी कार्यक्रम ने नागपुरी को जीवंत कर दिया। इसके किरदार लोगों के मनो-मस्तिष्क में छा गये। स्थापना समारोह के दिन से ही नागपुरी को जगह मिलने लगी थी। उस दिन नागपुरी गायकों, वादकों को विशेष रुप से आमंत्रित किया गया था। नागपुरी लोक गायक क्षितिज कुमार राय को तत्कालीन सांसद शिव प्रसाद साहू ने दूरदर्षन स्थापना के दिन गीत-नृत्य प्रस्तुत करने के लिए आमंत्रित किया था। उनके साथ मधु मंसूरी, महावीर नायक, मुकुंद नायक, यशोदा देवी, देवी शरण मलार, मन पूरन नायक भी शामिल थे। उस दिन क्षितीश कुमार राय ने जनानी झूमर राग में गीत प्रस्तुत किया था, जिसे रिकॉर्डिंग कर कई बार पुन: प्रसारण किया गया। इस रिकॉर्डिंग को अखरा कार्यक्रम में कई बार प्रसारित किया गया।

ये गीत इस प्रकार है :

गीत :

'दुनिया एक फूलवारी
फूइल के झरेला
धीरे-धीरे लता पता
फूल से भरेला
माली मन में हांसेला.....।।'[6]
'माली पटावे पानी
डके आपन शिषु जानी
जतन करेला
एके एके सोची-सोची
चुइन के तोरेला कइसन
जतन करेला
माली मन में हांसेला.......
डाली-डाली बात करे
आइज मालिक आवी तोरे
जाइन के झुमेला कइसन जाइन के झूमेला
एक संगे प्रीत रंगे
धरती चुमेल
माली मन में हांसेला माली मन में हांसेला .....।।'[7]

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में निजी एफएम और टीवी चैनलों ने गीत, नाटक व भेंटवार्ता एवं साक्षात्कार आदि प्रसारित कर इस नागपुरी को बढ़ावा देने का कार्य किया है। जिनमें झारखंड टीवी, नजर टीवी, हमार टीवी, रेडियो धूम, बिग एफएम 92.9 और रेडियो मंत्रा शामिल हैं। इन दिनों न्यूज -11 न्यूज चैनल नवंबर 2017 से लगातार साप्ताहिक परिचर्चा नागपुरी में प्रसारित कर रहा है। अब तक 100 से अधिक परिचर्चा प्रसारित किये जा चुके हैं।

निष्कर्ष - नागपुरी साहित्य को जो वर्तमान रूप दिख रहा है, उसकी वजह मीडिया है। चूंकि जो भी लिखते थे तो उनकी रचनाएँ पांडुलिपि के रूप बक्से में बंद पड़ी रहती थी, अंतत: दीमक चट कर जाता था। जिसे मीडिया ने प्रसारित और प्रकाशित कर संरक्षित और सवर्द्धित करने का काम किया है। अगर मीडिया न होता तो नागपुरी साहित्य इतना व्यापक नहीं हो पाता है। उसकी वजह से लोगों में नागपुरी के प्रति स्वाभिमान की भावना जगी और लिखने के लिए प्रेरित हुए। इसमें आकाशवाणी राँची ने सबसे अधिक योगदान दिया है। वहीं राँची एक्सप्रेस, प्रभात खबर और आदिवासी पत्रिका ने नागपुरी रचनाओं को लगातार प्रकाशित किया है। जिससे इसका साहित्य लगातार समृद्ध होता जा रहा है। इस प्रकार नागपुरी साहित्य विकास में समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 'समाचार पत्र का सबसे महत्वपूर्ण कार्य जनमत का निर्माण करना है।'[8] डॉ विसेश्वर प्रसाद केशरी के शब्दों में कहा जाय - 'नागपुरी साहित्य के संकलन, प्रकाशन में चाईबासा के धनीराम बक्शी का योगदान सदैव उल्लेखनीय रहेगा। उनके हिंतैशी कार्यालय से नागपुरी की तीसों पुस्तिकाएँ एवं बड़ाईक जीवन आदि कई पत्रिकाएँ भी प्रकाशित हुई।'[9] 'अच्छी रचनाओं की परख पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भली-भांति हो जाती है। अत: कहा जा सकता है कि लोकप्रिय रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं की सीढ़ी चढ़कर लोकप्रियता की ऊँची मंजिल को सहज ही प्राप्त कर लेती है।'[10]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आदिवासी पत्रिका, तीन फरवरी 1947 ई. में पृ-01 में प्रकाशित मसीदास की कविता हमरे से लिया गया है।
2. आदिवासी पत्रिका, 1961 योजना विशेषांक, दुखहरण नायक की गीत - हेराल बेटी सहिया बेटी, से प्राप्त, पृ-38।
3. जोहार पत्रिका, अंक 02, 1980, पृ - 05
4. पांडेय वीरेंद्र नाथ के गीतों की डायरी में किये उल्लेख से मिली जानकारी के अनुसार
5. पांडेय वीरेंद्र नाथ के गीतों की डायरी में किये उल्लेख से मिली जानकारी के अनुसार
6. क्षितीष कुमार राय की डायरी से प्राप्त।
7. क्षितीष कुमार राय की डायरी से प्राप्त।
8. सुधीर लाल, झारखंड का सामान्य ज्ञान, पृ -137
9. गिरिधारी राम गौंझू, पीटर शांति नवरंगी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ - 307
10. गिरिधारी राम गौंझू, पीटर शांति नवरंगी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ - 309

****

An Analysis of Assorted Factors Influencing Score of Elementary & Middle Level School Students in Science Subject

Sarika Manthanwar*

Abstract - The present paper enlightens role of various factors in improvement of the academic performance of school students in Science Subject by taking sample of 1000 students from various elementary and middle level schools located in Nagpur Region covering all the boards and medium of instructions. The core focus of the paper was on the impact of various factors in the performance of students and how these factors can be identified in order of preference for sake of improvement. Role of teachers and parents in students' life can't be unnoticed. The paper is based on a study to cover various family related, teacher related, student related, school related, development related and evaluation related factors enclosing 55 relevant statements for the students to analyze the subject matter. It also analyzed the teachers' responses for confirming the students' views and opinions by constructing an additional questionnaire. Suitable statistical tests were applied and conclusion was drawn followed by testing the formulated hypotheses. It was followed by factor-analysis inference and suitable suggestions on the subject. The research opined about the improvement in the academic performance in Science subject through cognitive and non-cognitive, intrinsic and extrinsic, controllable and non-controllable factors.

Keywords - Science, factors, school students, parents, teachers, analysis.

Preamble - Development of civilisation demands continual learning and its implementation for the benefit of society. Knowledge gaining should be a practice and it must start at early ages. Experts need to be fully acquainted with the basics of his subject, which can only be achieved during school education. At schools, one must able to capture knowledge of varied areas including English, History Geography, EVS and most significant being Mathematics and Science. These subjects are of vital importance to create great mathematicians and scientists for our country.

However, it has never been that easy for every student to gain command over these subjects as these specialized knowledge can only be implemented when learnt practically and not just theoretically. Obviously, role of the subject teacher cannot be overlooked. A teacher can only prepare good students by taking care of assorted factor affecting the performance of a student. These factors are required to be observed carefully by the custodians of the students i.e. parents and teachers.

Infact, education process at school level centres on parent-teacher-student coordination. Role of each of these cannot be mistreated. It becomes rather crucial in case of critical subjects like mathematics and science. Especially science requires theoretical updation, practical implementation and experimentation. It requires a student to be perfect in order to able to present his experiment or model, invention or innovation for the society. And the first step is to comprehend the basics of the subject. The paper endeavours to analyze assorted factors contributing in score improvement of a student studying science subject at elementary and middle level schooling. The research has taken sample size of 1000 students from various boards and mediums of schools located in Nagpur Region. Their responses for various factors have been analyzed through a questionnaire constructed by using Likert scale. It has been designed by taking into consideration all the affecting relevant factors. However the core focus of the research was on the analysis of assorted factors playing crucial role fluctuating the academic performance of students particularly in Science subject. The research was undertaken with the intention to analyze these factors and to understand whether the performance can be improved by taking care of these factors.

Study Of Factors Affecting The Students' Performance - Assorted factors affecting the performance of students in Science subject at elementary and middle level schooling were analyzed in the first phase of research. The study analyzed various cognitive and non-cognitive factors. Usually measured through examinations, cognitive or learning factors are the extent to which a person's individual capabilities can influence their academic or learning performance. Non-cognitive factors are set of attitudes, behaviours, and strategies to promote academic self-efficacy, self-control, motivation, expectancy, emotional intelligence, and determination. Factors can again be differentiated into extrinsic and intrinsic factors, personal

*Assistant Professor, Umrer Shikshan Mahavidyalaya, Umrer, Distt. Nagpur (Maharashtra) INDIA

and group factors, and other miscellaneous factors. Cognitive and non-cognitive categorisation would have provided a better realization in the concerned subject matter. The second thought provided the study to categorize the various factors into extrinsic and intrinsic factors. As the questionnaire has to be deal with school students studying at elementary and middle level, it was very necessary to construct a questionnaire comprising of various factors and its categorization into such groups which the school students do understand easily so that they could provide reliable responses to the research subject.

The research analyzed numerous imperative elements which may affect the performance of the students in concerned subject. It includes demographic factors affecting students' attitudes, cultural/ethnic approach, socio-economic status, parental education, family ambiance, psychological fear, mediocre response, inadequate resources, poor practical orientation, lack of dedication, sneaking in and out of the classrooms and laboratories, inabilities of students to perform well in practical, teachers' methodology, constructing curriculum, lack of concentration, serious lack of time spent in teaching science content at elementary grade classes, lack in training and self-confident in teachers, teacher's inability to teach science due to lack of specialization, complex and ambiguous text language, inadequate laboratory equipment and facilities, poor motivated teaching strategies and shortage of suitable textbooks. All these categories surely affect students in their academic life which basically depends upon their home as well as school environment. The research evaluated the various factors that contribute to students' Science Academic Achievement. The research study found many contributing factors affecting academic performance of school students in science subject. These contributing factors affect performance of students directly or indirectly and prove influential. In order to evaluate whether the success or failure of a students' performance depends upon these contributing factors, it becomes very necessary to analyse these factors in depth. It is therefore the various factors have been categorized into group categories:

Table 1 (See in last page)

Table 1 categorisation provides a base of evaluation to the present study. Apart from these, an evaluation category was introduced to confirm the reliability of data responded by the students. It provided a check on various factor responses and provided a yardstick to measure the responses provided through factors.

Evaluation Through Questionnaire -To evaluate these factors, a questionnaire was designed for the school students in simple language to gather requisite information from the students. The statements grouped in the relevant categories to evaluate the influence of various factors. While analysing the factors affecting the academic performance, the research observed that there may exist a number of factors like family size, level of parental education, their efforts, school facilities, teacher's competence etc. The questionnaire enclosed two sections, first for basic information and another, the main questionnaire. The basic information helped the research to get a feel about the student. However, the main questionnaire contained objective type questions covering the factors like Science as a subject, science class, teacher, laboratory, library resource, examinations, family ambiance, role of parents, intensity of factors, academic evaluation etc.

The questionnaire contained questions of objective nature based on five-point Likert Scale. Sufficient questions were classified in relevant categories on uniform scale to infer by applying various statistical tests on the collected data. The responses under the various categories were classified, tabulated, analyzed and interpreted with support of pictograms before application of suitable statistical tests. In all 55 statements were presented to the students to respond about the subject issue which yielded the following mean scores:

Table 2

S.	Category Group	Mean Score	Standard Deviation
1	Family related factors	3.79	0.19
2	Teaching related factors	3.81	0.07
3	School related factors	3.45	0.12
4	Student related factors	3.63	0.19
5	Developmental factors	3.77	0.24

The mean score for overall factors for both the genders was determined as 3.68 for crucial factors analyzed while yearwise analysis yielded mean score of 3.71. Formulated hypotheses were tested on the basis of these responses by applying statistical tests including t test which provided value of 0.26 in comparison to tabulated value of 2.775 at 95%. Evaluation factors were analyzed and tested by using Chi square test. A separate set of questionnaire prepared for group of teachers to confirm the students' responses. It was tested by using Z test. Inferences were drawn about the efficacy of various factors affecting the academic score of science subject of elementary and middle level school students.

Conclusion Drawn In Respect Of Influencing Factors - The conclusion was inferred about the influence of assorted factors on the academic performance in Science subject. Each of the considered factors was appraised and interpreted and their level of order was determined from the most influencing factors to least influencing factor so as to improve the performance of the student. It was observed that the affecting factors centre around four important performance changers, namely, family (parents), school management, teachers and students. All these act as basic pillars, which require proper co-ordination in order to improve the performance of a student. It is parents who want teachers to play their part sincerely in order to improve performance of their child. On the contrary, it is teachers want parents to co-ordinate and be disciplined about studies

and homework to improve to serve the same purpose. Both these participants seek school management to provide all facilities and infrastructure development. Amongst all these, student for whom all these participants concentrate need to be sincere on his/her part, following the instructions and guidelines in a disciplined manner. However, improvement in performance is very difficult without the support of parents, teachers and school management. If any of these participants fail to perform his part of duty, it may hinder the performance. Parent involvement act as a main factor and require participation of parent active and constant. Parents are expected to fulfil the basic needs of a child in order to provide all comfort to their ward so that he can study and get developed in a convenient manner. Parents are also expected to be in constant touch with school management not only for safety and security but also for development of their child. Communication between parents and school management has key role to play. However, one cannot deny the role of concerned affiliated board in respect of deciding its curriculum which should, at this stage, should be such so as to raise subject knowledge of the students of all levels. Here, how a curriculum is designed plays a very important part for development of student. Teaching materials in the form of prescribed text books, sufficiency of contents, language, content material and other inputs should be such to create interest on the subject alongwith with other aspects like relevancy, quality, explorative nature etc. Apart from this, the inputs which a teacher can provide in the form of class notes, assignments, practical teaching and theoretical explanation also act as important part. If student get interest in what teachers use to taught them, it will also help in reducing the number of school dropouts.

The research has given suggestions and recommendations to improve the academic performance of the students in Science subject through factor analysis. The research suggested forming parent-teacher association, suggesting creative and innovative ideas to teach the subject, extra guidance, updating library and laboratory resource, forming forums, giving more stress to science exhibitions, fairs etc.

References:-

1. allindiaeducationblog.blogspot.in
2. *American Journal of Educational Research*, 2013 1 (8), pp 283-289. DOI: 10.12691/education-1-8-3
3. Annie Ward; Howard W. Stoker; Mildred Murray-Ward (1996), “Achievement and Ability Tests - Definition of the Domain”, *Educational Measurement*, 2, University Press of America, pp. 2–5, ISBN 978-0-7618-0385-0
4. Bossaert, G; S. Doumen; E. Buyse; K. Verschueren (2011). “Predicting Students’ Academic Achievement After the Transition to First Grade: A Two-Year Longitudinal Study”. Journal of Applied Developmental Psychology. 32: 47–57
5. brijchaudhary.blogspot.in/2016/11/education-system-in-india.html
6. Eccles, Jacquelynne S.; Templeton, Janice (2002). “Extracurricular and Other After-School Activities for Youth”. Review of Research in Education. 26
7. en.wikipedia.org/
8. Garrett Henery, Statistics in Psychology and Education, New Delhi, Paragon International Publishers, 2011, Page 324
9. Gutman, Leslie; Schoon, Ingrid (2013). ”The Impact of non-cognitive skills on outcomes for young people” (PDF). Education Endowment Foundation: 59.
10. http://www.recentscientific.com/sites/default/files/2746.pdf
11. http://www.sciencemadesimple.com/science-definition.html
12. http://www.vbtutor.net/research/research_chp7.htm
13. https://es.scribd.com/document/88284190/What-is-Research-Methodology
14. https://explorable.com/definition-of-science
15. Journal of Quality and Technology Management Volume VII, Issue II, December, 2011
16. Kothari CR & Garg Gaurav, Research Methodology – Methods & Techniques, New Delhi, New Age International Publishers, 2014
17. Matt Ridley, 1999, *Genome: the autobiography of a species in 23 chapters*, p. 271.
18. P Saravanavel, Research Methodology
19. Research Methodology in Commerce, S. Mohan & R. Elangovan, Deep & Deep Publications
20. Presentation on Descriptive Research Methodologies By Connie McNabb
21. Research Methodology, Dr. C. Rajesh Kumar, APH Publishing Corporation, New Delhi
22. Sawlikar, R.K., Statistics and Quantitative Techniques, Nagpur, Rajani Publishers, 2010, Page 21
23. Sinha S & Dhiman AK, Research Methodology Vol I & II
24. Trivedi Kishor, Probability and Statistics with Reliability, Queuing and Computer Science Applications, New Delhi, Prentice Hall of India Private Limited, 1997.

Family related factors	Teaching related factors	School related factors	Students related factors	Developmental factors
parent's education, family atmosphere, separate study room, attitude, responsiveness to queries, regular check on homework and assignments, interaction with science teacher, providing inputs, family income	Play & learn method, Organizing science quizzes, talks, Motivation, Correlation with practical exposure, Regular work, teaching methodologies, Strategies, styles Periodical tests, Classroom discipline	School environment, Teacher's level of education, Library resources, Laboratory resources, Conduct of competitive examinations, Science fairs, Parent-teacher meet	Evaluation of study material, Friend circle, Participations in Science fairs & exhibitions, Competitive examinations, Homework and assignment completion rate, Preparation of Science models	Subject interest, Confidence to attempt exams, Past school experiences, Home experiences, Physical and mental health, Regular Yoga & meditation, Intelligence level

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

छिन्दवाड़ा जिले में कृषकों द्वारा लिए गए ऋणों की स्थिति (जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा के संदर्भ में)

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा* सपना पाण्डे **

प्रस्तावना - भारत गांवो का देश है। वर्तमान में कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है। भारतीय कृषि प्रारंभ से ही कृषि संसाधनों की कमी, सिंचाई साधनों का अभाव तथा कृषकों की ऋणग्रस्तता आदि समस्याओं से जूझती रही है। भारत में कृषि न केवल जीविकोपार्जन का साधन है, बल्कि सर्वाधिक रोजगार प्रदाता, अधिकांश उद्योगों की जननी, मानव जीवन की पोषक प्रगति की सूचक तथा संपन्नता की प्रतीक समझी जाती है। भारत की 72 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आश्रित है। कृषि से होने वाली आय का प्रयोग कृषक अपने जीविकोपार्जन तथा कृषि कार्य में पूंजी के रूप में करते है। किन्तु यह आय दोनो कार्य के लिए पर्याप्त नही होती है, इसलिए कृषकों को ऋण की आवश्यकता होती है। कृषकों को ऋण प्रदान के क्षेत्र में संगठित तथा असंगठित दोनों ही क्षेत्रों का महत्वपूर्ण योगदान है। परन्तु जैसे-जैसे बैंकिग क्षेत्र का विस्तार होता जा रहा है वैसे-वैसे असंगठित क्षेत्र की भूमिका लगातार कम होती जा रही है। आर्थिक सर्वेक्षण यह भी बताता हैं, कि ग्रामीण क्षेत्रों की कृषिगत समास्याओं का समाधान जिला सहकारी बैंक के माध्यम से सहकारी संस्थाओं के द्वारा ज्यादा सहज और सफल है। ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों की शाखाओं और सहकारी साख संस्थाओं में निरंतर वृद्धि के साथ-साथ ऋण प्राप्त करने वाले कृषकों में भी लगातार वृद्धि हो रही है।

छिन्दवाड़ा जिला एक कृषि प्रधान जिला है। क्षेत्र में भरपूर प्रकृति संपदा और भौगोलिक अनुकूलताओं के उपरांत भी यहां के अधिकांश कृषकों की आर्थिक स्थिति संतोषजनक नही है। इसका प्रमुख कारण समय-समय पर होने वाली वित्तीय आवश्यकताओं की पर्याप्त पूर्ति न होना है। जन-जागरूकता व शैक्षणिक स्तर में लगातार वृद्धि हो रही है। छिन्दवाड़ा जिले के कृषक असंस्थागत स्त्रोतों में सहकारी संस्थाओं के माध्यम से ऋण लेने लगे हैं। सहकारी क्षेत्र का छिन्दवाड़ा जिले के बैंकिंग क्षेत्र में प्रमुख स्थान है। सहकारी क्षेत्र के अंतर्गत जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की कृषकों की ऋण आवश्यकता की पूर्ति में अहम भूमिका है। यह संस्था किस सीमा तक ऋण उपलब्ध करा पा रही है, कृषकों की ऋण प्राप्ति के स्त्रोत क्या-क्या है, और इन स्त्रोतो में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की क्या भूमिका रही है। इसके लिए जिले के समग्र कृषक वर्ग का प्रतिनिधित्व हो सके। इस दृष्टि से जिले की प्रमुख 6 तहसील- छिन्दवाड़ा, सौंसर, पांढुर्ना, परासिया, चौरई, अमरवाड़ा की 125 कृषि सहकारी समिति से संबंद्ध 300 किसानों का चयन दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा कर शोध अध्ययन किया गया। इस शोध में वर्ष 2016-17 में इन तहसीलों के कृषकों द्वारा लिए गए ऋणों की राशि के अनुसार अध्ययन कर उनकी आवश्यकता की जानकारी प्राप्त हुई है।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक तथा समितियों से लिए गए ऋण की स्थिति तालिका 1 से स्पष्ट है कि रूपये 1000 से 5000 तक ऋण लेने वाले सर्वेक्षित हितग्राही कृषकों का 21.33 प्रतिशत है जबकि कृषकों की संख्या 64 है। रूपये 6000 से 10000 ऋण लेनेवाले हितग्राही का 34.4 प्रतिशत तथा संख्या 104 है। शासन द्वारा जिला सहकारी बैंक एवं अन्य समितियों के माध्यम से दिये जाने वाले ऋण का कुछ भाग खाद-बीज एवं अन्य कृषि उपयोगी सामग्री के रूप में प्रदान किया जाता है। अध्ययन में यह भी पाया गया है कि जिलें में समस्त कृषक हितग्राही की भूमि की मात्रा तथा ऋणमान सीमा के आधार पर ऋण स्वीकृत किया जाता है। रूपये 11000 से 20000 तक ऋण लेने वाले कृषकों का 14.34 प्रतिशत है, तथा संख्या 43 है। रूपये 21000 से 40000 तक ऋण लेने वाले कृषकों का 14.67 प्रतिशत तथा रूपये 41000 से 75000 तक ऋण लेने वालो का 10.67 प्रतिशत है। रूपये 76000 से 1,00,000 तक ऋण लेने वाले 2.33 प्रतिशत है। रूपये 1 लाख से अधिक ऋण लेने वाले हितग्राहियों का सबसे न्यून 1.33 प्रतिशत है। बैंक के मतानुसार पर्याप्त फण्ड के अभाव के कारण अधिक मात्रा में ऋण देना तथा दीर्घकालीन ऋण वितरण में कमी करना है।

छिन्दवाड़ा जिले के सर्वेक्षित कृषकों द्वारा जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक तथा समितियों से लिए गए ऋण की स्थिति निम्नांकित तालिका के माध्यम से स्पष्ट की गई है।

तालिका 1 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

सर्वेक्षित तालिका 1 से यह स्पष्ट होता है कि बैंक तथा सहकारी समितियों से रूपये 6000 से 10000 तक ऋण लेनेवाले हितग्राही 34.44 प्रतिशत तथा कृषकों की संख्या 104 सर्वाधिक है एवं 1 लाख से अधिक ऋण लेने वाले हितग्राही कृषकों का 1.33 प्रतिशत जो न्यूनतम है। जिला सहकारी बैंक एवं अन्य समितियों से कृषकों द्वारा लिए गए ऋण को हम निम्न ग्राफ से और अधिक स्पष्ट कर सकते है -

रेखाचित्र 1 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

रेखाचित्र 1 के माध्यम से ज्ञात होता है कि छिन्दवाड़ा जिले की सर्वेक्षित 6 तहसीलों से निदर्शित 300 कृषकों का सर्वे किया गया है। जिससे यह ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित सभी तहसील में रूपये 6000 से 10000 तक ऋण लेने वाले कृषकों की संख्या अन्य राशि के ऋण लेने वाले कृषकों की संख्या से अधिक है। ग्राफ यह भी स्पष्ट करता है कि रूपये 76000 से अधिक ऋण लेने वाले कृषकों की संख्या सबसे कम है, जो यह भी दर्शित करता है, कि इस जिले के कृषक पूंजीगत कृषि व्यय नही करते है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय हमीदिया कॉलेज, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) बरलतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल(म.प्र.) भारत

निष्कर्ष – शोध पत्र में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एव अन्य सहकारी समितियों से किस मात्रा में ऋण कृषक लेते है का अध्ययन किया गया। सर्वेक्षित कृषकों से ज्ञात होता है कि कृषकों द्वारा राशि रूपये 6000 से 10000 तक के ऋण सभी तहसील द्वारा सबसे अधिक लिए गए जो कि यह दर्शाता है कि कृषक इस ऋण का उपयोग अपनी तत्कालिक कृषि आवश्यकताएं जैसे- खाद्, बीज, निंदाई-गुढाई तथा कीटनाशक आदि में करते है।

उपरोक्त अध्ययन यह भी निष्कर्ष निकालता है कि ये संस्थाएं कृषकों का पूंजीगत ० के लिए ऋण उपलब्ध नही कराती है। वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक तथा अन्य समितियों के द्वारा किसानों को जो ऋण प्रदान करती है, उसका अधिकांश भाग खाद एवं बीज के रूप में होता है। जिन किसानों को इनकी आवश्यकता नही है, उन्हे भी ऋण के रूप में ये लेना पड़ता है। बैंक तथा सहकारी समितियों के इन्ही नियमों व इनके पास धन की पर्याप्त उपलब्धता नही होने के कारण कई कृषक अन्य वित्तीय संस्थाओं के संपर्क में आने लगे हैं और अधिक ब्याज दर पर ऋण लेने के लिए मजबूर हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. माथुर बी.एस. सहकारिता 1990 साहित्य भवन आगरा।
2. डॉ. जैन बी.एम. शोध प्रविधि तकनीक 1989 रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
3. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा वार्षिक प्रतिवेदन।
4. अधीक्षक भू-लेख शाखा छिन्दवाड़ा वार्षिक प्रतिवेदन।

तालिका 1

क्र.	वितरित धनराशि (रू.)	छिन्दवाड़ा	चौरई	अमरवाड़ा	पांढुर्ना	सौंसर	परासिया	योग	प्रतिशत
1	1000 से 5000 तक	10	7	10	15	10	12	64	21.33
2	6000 से 10000 तक	22	15	21	16	18	12	104	34.66
3	11000 से 20000 तक	10	10	5	5	8	5	43	14.33
4	21000 से 40000 तक	1	12	8	10	2	11	44	14.66
5	41000 से 75000 तक	5	4	5	4	9	7	34	11.33
6	76000 से 1 लाख तक	1	2	1	0	1	2	07	2.33
7	1 लाख से अधिक	1	2	0	0	2	1	04	1.33
							योग	300	100

(प्राथमिक समंक संकलन)

रेखाचित्र 1

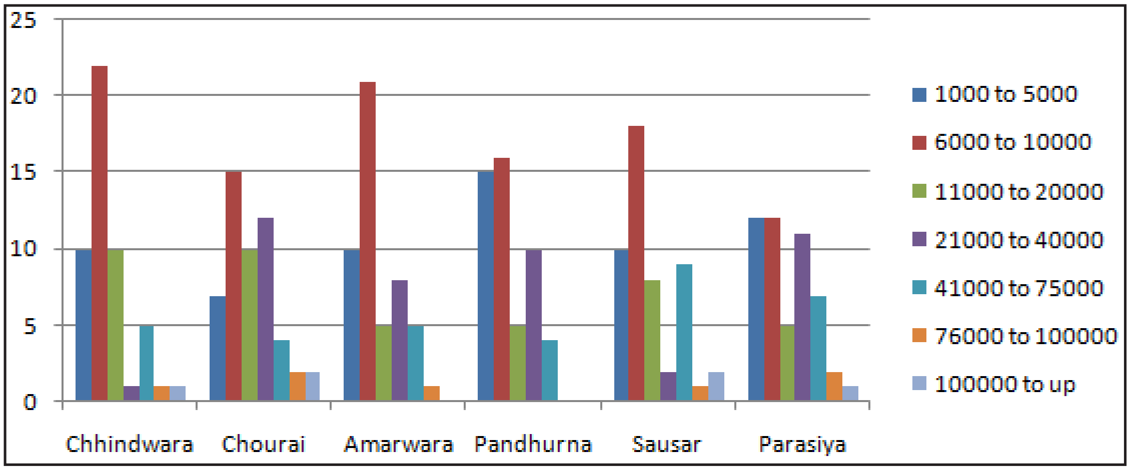

****

Consumer behavior towards Domestic versus Nondomestic brand footwear in India

Dr. Manish Jain*

Abstract - Changing lifestyles and increasing affluence are seemly to prop up the faster growth rate. To tap these trends, flourishing domestic and nondomestic brands such as Liberty, Bata, Nike, Adidas, Puma, Reebok, Florsheim, Rockport etc. have also entered into the market and on the expansion mode. Currently, India is the second largest producer of footwear in the world after china and accounts for 12.2% of the Asia-Pacific footwear market value. Indian footwear market is highly fragmented and products are sold through variety of channels like supermarkets, hypermarkets, discount stores, single and multi branded showrooms, variety stores etc. As the population of India is growing at a rapid pace, India is turning tube a lucrative market for Indian as well as foreign footwear brands strength of India in the footwear sector comes from its availability of reliable supply of resources in the form of raw hides and skins, quality finished leather, large human capital with expertise and technology base, skilled manpower and relatively low labour cost. The objective of this study is to determine the attitude of consumers towards domestic versus nondomestic brand footwear and to examine the consumers purchasing behavior.
Keywords - Footwear, lifestyle, leather, hides and skins etc.

Introduction - The footwear industry is one of the most rapidly expanding industries globally. Increasing demand for new and innovative footwear and emergence of various global as well as regional brands across segments in the category is primarily driving the market. Innovative and trendy footwear are being consistently manufactured by leading market players due to advancement in the footwear manufacturing process, technological innovations, and development of new material.

In India key strengths of footwear Industries are availability of quality raw materials, low labour cost, skilled manpower etc. Technology driven the Indian footwear market has been very robust for recent years and the market is forecast to continue at a steady rate. The Indian footwear market had clocked $4.10 billion in 2009, with a compound annual growth rate (CAGR) of 9.3% for the period spanning 2005-09 while its arch-rival China with a CAGR of 9.6%, and the Japanese market declined with a CAGR of -0.7%. Clothing, footwear, sportswear and accessories retailer's sales top the table in footwear market in 2009, with total revenues of $3.78 billion. Market segmentation percent share by value (2009). The market was forecast to accelerate, with an anticipated CAGR 9.4% for the next five year period 2009-14 with a total value of $6.43 billion by the end of 2014 while the Chinese market will go up with CAGR of 7.9% and the Japanese market will see the decline with a CAGR of -1%, over the same period.

Key Players Of Footwear Industries:

Domestic Players

Bata - Bata is one of the largest retailer and leading manufacturer of footwear in India, established in 1931 as Bata Shoe Company Private Limited. Its Batanagar manufacturing facility is also the first of its kind in India to have been given the ISO: 9001 certification. Today, Bata India has established itself as India's largest footwear retailer with a retail network of over 1,200 stores across the country. The stores are present in prime locations and can be found in all the metros, mini-metros and towns.

Liberty - Liberty Shoes, established in 1954 in Karnal, Haryana, is one of the largest shoe companies in India and amongst the top five leather footwear manufacturers in the world. The company produces 50,000 pairs of footwear a day through its six manufacturing units and has established its presence around the globe, registering an annual turnover of over Rs 5 billion (US$ 80.3 million).

Liberty shoes ltd. is the only Indian company that is among the top five manufactures of leather footwear in the world with a turnover exceed US$100 million. Company produces more than 50000 pairs of footwear a day covering virtually every age group and income category. Products are marketed across the globe through 150 distributors, 350 exclusive showrooms and over 6000 multi-brand outlets, and sold in thousands every day in more than 25 countries including fashion-driven, quality-obsessed nations like France, Italy, and Germany.

Liberty has developed a spectrum of 10 exclusive brands, each of has been given that extra edge to cater to a specific target group. Today, the new range from Liberty is all about style, design and comfort. The range imbibes the spirit of fun and is trendy to the core. Liberty has

* Vice Principal, Acropolis Institute of Management Studies & Research, Indore (M.P.) INDIA

something for every occasion, for every income group and every age bracket. It pampers its customer by keeping pace with global footwear fashion trends and by going that extra mile which is why, special care has been taken to make sure that the outlets, design meets the specific needs and taste of the target groups. Apart from the existing brands, Liberty is busy fashioning the look of the future in footwear. Introducing new designs that redefine styles and comfort associated with the finest in workmanship.

Paragon - Paragon Footwear's is one of India's leading footwear manufacturers founded in 1975. Today, Paragon's total production capacity (in-house) is 400,000 pairs a day. Apart from in-house production, Paragon has also outsourced production of footwear in Bangalore, Hyderabad, Kottayam, Calcutta and other parts of the country. The total sales are approximated to 14,00,00,000 pairs each year. Promoted by the Paragon Group of Companies, it has four major ISO-9001 certified factories across the country.

Lancer - Lancer was founded in 1989 and headquartered in New Delhi. Lancer operates its footwear production in its 7 manufacturing facilities spread across Delhi and Haryana. As one of the top shoe brands in India, Lancer's portfolio of products rests on the strong foundations of institutional strengths derived from its deep consumer insights, cutting-edge Research & Development in the footwear industry, differentiated product development capacity, strategic brand-building, world-class manufacturing infrastructure, and efficient marketing and distribution network.

Relaxo - Relaxo Footwear's Ltd. is one of the most popular shoe companies in India. Relaxo footwear's brand provides a wide range of fashionable and comfortable shoes, slippers, flip flops and sandals for women, men, and kids at an affordable price. With its headquarter in New Delhi and 8 manufacturing units, Relaxo produces over 6 lacs pairs of footwear every day. Relaxo footwear's range boasts a fine combination of comfort, style, and quality workmanship. A wide range of fashionable, colorful, comfortable and durable footwear for men, women, and children.

Non domestic Players

Nike - Nike, originally known as Blue Ribbon Sports (BRS) founded in 11964. Inspiring the world's athletes, *Nike* delivers innovative sports products, experiences, and services. Nike is a Top Sports international brand which deals in the all kind of sports accessories specially Shoes and Apparels. It is an American multinational Fortune 500 company based at Portland, Oregon. It is one of the top sports business brand and also the biggest sports equipment Brand with a turnover of around $27 billion. They have multiple kinds of Design, color, and sizes and hence choose the right model according to your preference within budget. For a casual look, they have canvas shoes which are teamed up with a shirt and blue denim for perfect look and feel. Nike offers shoes in various categories like running, golf, snowboarding, skateboarding, basketball, soccer, tennis, football etc.

Woodland - Woodland's parent company, Aero Group, has been a well-known name in the outdoor shoe industry since the early 50s. Founded in Quebec, Canada, it entered the Indian market in 1992. Before that, Aero Group was majorly exporting its leather shoes to Russia. After the division of Russia into various states known as the USSR, the group decided to launch some of its products in India. Hence, the first hand-stitched leather shoe was launched, which took the entire shoe market by storm. That shoe made the brand 'Woodland'. They make rough and tough shoes, boots which are apt for outdoor adventure and rough terrain.

Adidas - Adidas is popular for its unique designs and quality in sports clothing, accessories and shoe range. They offer comfortable sneakers and sports shoes for men and women, ideal for running, trekking, adventure and outdoor activities. This German multinational company was founded by Dassler brothers – Adi and Rudolph. It is the second largest sportswear company in the world with the annual turnover of around $23 billion.

SeeandWear - SeeandWear is one of the Fastest Growing Brand in Men's pure Leather Shoes. SeeandWear is known for its Premium Quality Leather and Casual Shoes at Lowest prices. They hold Number one Ranking in Product Reviews and Sales on Amazon. It was founded by Prabhat Saini in 2010. Product Design, Quality, Warranty, after sales Superior. Customer support service has attracted a lot of Customers in a very short span of time. Shoes are Designed on Mould (Last) which are used by World's Top Designers.

Lee Cooper - Lee Cooper is widely popular for its exquisite range of apparels, accessories, and Shoes in over 70 countries across the globe. They have a huge variety of formal leather shoes, casual shoes and flip-flops providing comfort and style to the users.

Fila - The Italian sports brand Fila which were bought by a South Korean businessman in 2007 making it one of the largest sportswear companies in South Korea. It provides the wide range of Top Quality sportswear and accessories which are mostly available at online stores across the Globe.

Puma - Puma is a globally famous Shoes and apparel brand which was launched in 2005 and sells its merchandise through online stores as well as retail outlets in India. It is among the top five sports shoe and apparel Brand. Puma shoes are comfortable, durable and pair them with Puma polo t-shirts and blue jeans to get the cool and smart look. Puma's running shoes are most popular and are high on style and functionality. Their best selling sports shoes are evoPower football shoes and evoSpeed cricket shoes.

Objectives of study:

1. The objective of the study is to determine the attitude of consumers towards domestic versus nondomestic brand footwear.
2. To examine the consumers purchasing behavior.

Hypothesis:

H_0: Consumers choice of preference is not related to Domestic and Nondomestic footwear brands.

Research Methodology - This research is based on Primary as well as Secondary sources of data. Questionnaires are distributed through e-mail and personally to respondents. The sample consist 100 people aged 14 to 50 years Indore city is the study area selected for this research. Primary data is collected through well structured questionnaire. Samples of 100 respondents in Indore city have been selected by using random sampling method. The collected information were reviewed & consolidated into a master table. For the purpose of analysis the data were further processed by statistical tools.

Literature Review - Cashless economy is not the complete absence of cash, it is an economic setting in which goods and services are bought and paid for through electronic media.

1. According to **Roberta Rabellotti (1998) -** In the empirical investigation, these economic effects have been analyzed in four clusters of footwear firms in Italy and Mexico. The first result of the empirical investigation is the confirmation of the importance of collective efficiency both in the proper Italian districts and in the Mexican clusters. Nevertheless, there are considerable differences concerning the intensity and quality of the collective effects between the realities studied. Those differences are explained through the impact of the disparities in the outside environment on the core characteristics of the different clusters. Finally, some considerations about the need for moving from a static to a dynamic approach to explain differences between stages of development and growth trajectory patterns of the districts are put forward.

2. **Paul Anthony Brenton and L Alan Winters (1990) -** The imposition of a quantitative restriction on imports implies that someone somewhere is quantity-rationed. If prices rise to cut demand back to the constraint level, suppliers are rationed; if not, demanders are. In this paper Paul and Alan develop techniques for identifying if and when consumers are rationed and for taking account of rationing in the estimation of demand equations and in the calculation of welfare effects. By way of example They consider the effects of the various non-tariff barriers that have affected imports of different types of footwear from certain suppliers into the UK. They estimate simple CES demand systems for four types of footwear, identifying in each case the principal suppliers. Their results reveal several cases in which import restrictions on footwear led to rationing and suggest that even if prices did not rise to clear the market, the welfare losses to UK consumers of being limited in their purchases of footwear were as high as 53m pounds sterling in 1986.

3. **Suzanne Scheld, (2008) -** In Dakar, footwear and clothing markets are unstoppable forces of urbanism and modernity they are packed with merchandise, and they sprawl beyond the official boundaries set by the municipality. For better or for worse, footwear and apparel keep the city in motion, give it life, and keep it current with global trends. The movement of traders and transmigrants through Dakar and globally dispersed Senegalese communities informs style and taste at “home” and “abroad.” This paper examines the production, exchange and consumption trajectory of a particular commodity, Sebago shoes, as a means to highlight the spatial dimensions of Dakar clothing markets and the city itself. The “social life” of Sebago and its various symbolic meanings assigned by Senegalese in Dakar and New York illustrates: 1) the complex nature of global flows and 2) that the city and its transmigrant communities share a continuous social space. This picture of complex flows and exchanges suggests the redefinition of city and market boundaries.

Limitations - Future research needs to be done if the results are to be expanded into other regional Indian markets (Indore City) in light of the significant gaps between different regions. Further research also could strengthen this analysis by adding performance measurement into the model.

Analysis:

Age group & Brand choice of consumers

Age\ Choice	Domestic	Non domestic	Total
10-20	20	4	**24**
20-30	20	18	**38**
30-40	23	05	**28**
40-50	9	1	**10**
Total	**72**	**28**	**100**

In above table we see that the 72% respondents use Domestic footwear’s, and 28% uses Nondomestic footwear’s in India. The consumers of 20-30 age groups have more interest and preferences towards non-domestic footwear.

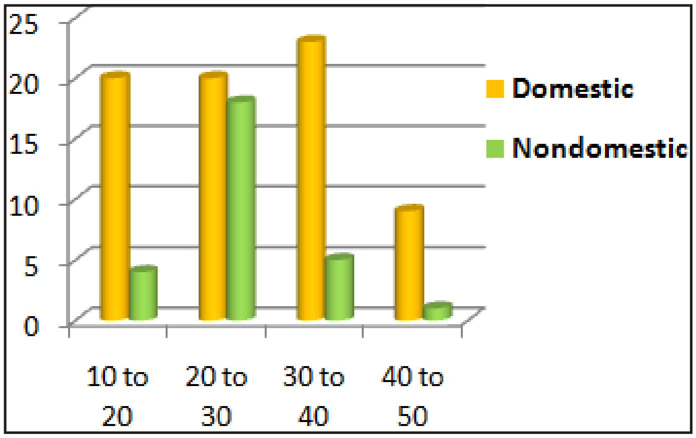

It can be seen that majority of respondents choice is domestic footwear’s. In the age group 10-20 total 24% of the sample falls and of which 20% prefers domestic footwear’s and only 4% prefers non- domestic footwear’s. In the age group 20-30 total 38% of the sample falls and of which 20% prefers domestic footwear’s and 18% prefers non- domestic footwear’s. In the age group 30-40 total 28% of the sample falls and of which 23% prefers domestic footwear’s and only 5% prefers non- domestic footwear’s. In the age group 40-50 total 10% of the sample falls and of which 9% prefers domestic footwear’s and only 1% prefers non- domestic footwear’s.

Consumer preference towards footwear

Base	Consumers
Price	47
Quality	10
Durability	25
Design	6
Fashion	12
Total	**100**

Majority shows the trend of choice of consumer's preference 47% towards price of footwear. On the analysis of table above we see that 25% Consumer's preference towards the durability of footwear's.12% preference towards fashion, 10% towards quality and only 6% prefer their choice on the basis of design.

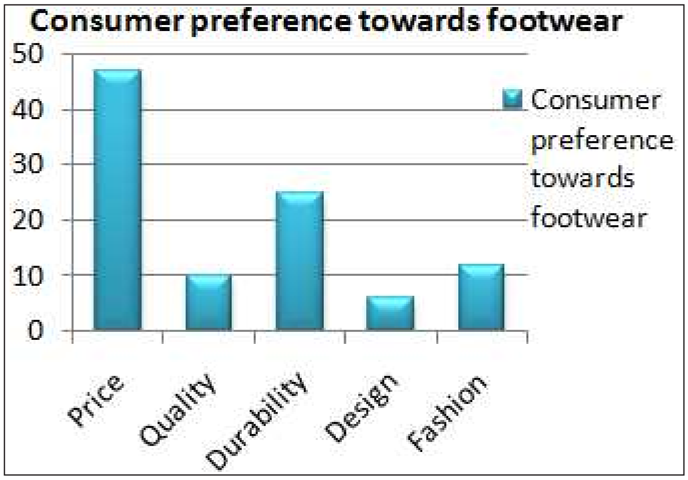

Hypothesis Testing:

H_0: Consumers choice of preference is not related to Domestic and Nondomestic footwear brands.

In order to test the hypothesis is tested by percentage tool. Our hypothesis is rejected because there is strong relation between consumers choice of preference towards domestic footwear brands. And it was found that 72% of consumers choice of preference is domestic footwear's, it shows the consumer believe in domestic footwear's in comparison to nondomestic footwear's. On deep analysis we found that most consumer's preference of choice is based on the price of footwear's, 47% of them take their decision on the basis of price. Domestic footwear's are cheaper than nondomestic footwear's.

Conclusion - This study was to know the behavior of consumers towards domestic verses nondomestic brand footwear. The findings reveal that majority of consumer choice of preference towards domestic footwear's. So that we can say that the domestic brand footwear's are the first preference of Indian market consumers. Domestic branded footwear's reliable, durable, and chipper than the nondomestic footwear's, it is the reason. Domestic manufacturers understand the mentality of consumers and responds accordingly; it is the major difference between the domestic and nondomestic footwear manufacturers.

As we know that India is the second largest footwear manufacturer in the world. In India the purchasing power of medial class is in a limit, that why domestic brand of footwear is most likely for Indian peoples. Nondomestic brand footwear covers the 28% of Indian market; it shows the nondomestic footwear's are also like in India. But most of the consumers of this category belong to higher class or higher medial class, because of the purchasing power is higher than others.

Finally we can say that the choice of consumer preference is directly related to domestic brand footwear's. The reason behind is most of the population of India are from medial class family and their purchasing power are in a limit.

Findings - The major findings of this research are as follows:

1. Majority of the consumers 72% belong to the choice of preference towards the domestic brand footwear's.
2. Majority of the consumers 46% are males and 54% of consumers are female.
3. 28% of the consumers prefer the nondomestic brand footwear's.
4. In the age group of 20-30 year domestic and nondomestic branded footwear's are most liked.
5. Majority of the respondents 64% have an annual income between 3 lakh to 5 lakh.

References :-

1. **Roberta Rabellotti**, Collective effects in Italian and Mexican footwear industrial clusters May 1998, Volume 10, Issue 3, pp 243–26
2. **Brenton, Paul & Winters, L. Alan, (1990),** "Non-tariff Barriers and Rationing: UK Footwear Imports," CEPR Discussion Papers 365, C.E.P.R. Discussion Papers.
3. **Suzanne Scheld,** the City in a Shoe: redefining urban Africa through Sebago footwear consumption, 28 June 2008.
4. **T Staikos and S Rahimifard, (2007),** Post-Consumer waste management issues in the footwear industry, February 1, 2007
5. **Juyeon Park, (2012),** Gauging the emerging plus-size footwear market an anthropometric approach, December 21, 2012
6. **Nácher, B., Alemany, S., González, J., Alcántara, E. et al., (2006),** "A Footwear Fit Classification Model Based on Anthropometric Data," SAE Technical Paper 2006-01-2356, 2006,

Bibliography :-

1. www.scholar.google.co.in
2. www.scribd.com
3. www.wikipedia.com
4. www.economictimes.com
5. www.indiatoday.com
6. www.ivestopedia.com

****

सामाजिक-न्याय एवं पाश्चात्य चिन्तन परम्परा

महेश कुमार रचियता*

प्रस्तावना – प्राचीनकाल से ही सामाजिक और आर्थिक न्याय का विचार, विचारकों व दार्शनिकों के चिंतन का मुख्य विषय रहा है। पाश्चात्य विचारकों में सामाजिक-न्याय की अवधारणा का विवरण प्लेटो के दर्शन से ही मिलना प्रारम्भ हो जाता है। प्लेटो की राजनीतिक विचारधारा का केन्द्रीय विषय है – आदर्श नगर राज्य की स्थापना जो न्याय के अभाव में नहीं की जा सकती है। अत: प्लेटो के राज दर्शन में आदर्श नगर राज्य व्यवस्था के साथ ही न्याय सिद्धांत का भी महत्तवपूर्ण स्थान रहा है। प्लेटो का यह अभिप्राय इस तथ्य से भी समझा जा सकता है कि उसने अपने ग्रंथ का शीर्षक पोलिटिया दिया है। वहाँ इसका उपशीर्षक डिस्कोर्स्यून भी रखा है। यूनानी भाषा के इन दोनों शब्दों का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद रिपब्लिक तथा कन्सर्निंग जस्टिस है तथा हिन्दी भाषा में इनका अनुवाद, आदर्श नगर राज्य व्यवस्था तथा न्याय से सम्बन्धित है। परन्तु प्लेटो ने एक ही साथ इन दोनों शीर्षकों को स्वीकार कर यही संकेत दिया है कि उसकी आदर्श राज्य व्यवस्था का मुख्य आधार उसका न्याय सिद्धांत ही है। प्लेटो के लिए न्याय एक नैतिक तथा दार्शनिक अवधारणा है। यह वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन का आधारभूत सद्गुण अथवा अच्छाई है।

सामाजिक-न्याय का अर्थ स्पष्ट करते हुए प्लेटो यह कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने वर्ग से सम्बन्धित कार्यो को ही करें और अन्य वर्गो के कार्यो में कोई हस्तक्षेप नहीं करें। व्यक्ति के कार्यो के बारे में प्लेटो यह मानता है कि एक व्यक्ति को केवल एक ही कार्य करना चाहिए जो उसकी प्रकृति के सर्वाधिक अनुरूप हो, क्योंकि प्लेटो ने सामाजिक-न्याय का आधार स्वयं मानव आत्मा की प्रकृति को माना है तथा पूर्ण सामाजिक-न्याय वाले राज्य को ही आदर्श राज्य बताता है और उसने ऐसे ही आदर्श राज्य के संदर्भ में अपनी व्याख्या प्रस्तुत की है।

प्लेटो के समाज का प्रारम्भ हालांकि उत्पादन वर्ग से ही होता है किन्तु इसे पूर्णता सैनिक वर्ग एवं शासक वर्ग से प्राप्त होती है। प्लेटो इन त्रिवर्ग से निर्मित समाज को ही राज्य मानता है और उसका सामाजिक-न्याय इस त्रिवर्गीय राज्य में पाया जाने वाला न्याय ही है। प्लेटो यह मानता है कि न्याय का विकास मूलत: मानव आत्मा में होता है क्योंकि राज्य मानव आत्मा का ही बड़ा रूप है। अत: न्याय का निवास राज्य में होता है, जिसे सामाजिक-न्याय कहा जाता है। अपनी अंतिम कृति 'दि लाज' (The Laws) में प्लेटो ने सामाजिक-न्याय की स्थापना के लिए राज्य का उद्देश्य नागरिक समाज के सामान्य हित की अधिकतम पूर्ति माना है। समाज में पब्लिक की सम्पत्ति का अधिकार स्वीकारा है तथा साथ ही सार्वजनिक हित में निजी सम्पत्ति पर राज्य का नियंत्रण स्वीकार किया है। प्लेटो स्त्रियों के भी सम्मानजनक जीवन की बात करते हुए उनके लिए भी शिक्षा की अनिवार्यता के संकेत अपने दर्शन में दिए हैं।

अरस्तू ने अपने ग्रंथ पालिटिक्स में न्याय शब्द का पर्याप्त उल्लेख किया है परन्तु अरस्तू ने न्याय की समुचित व्याख्या अपने एक अन्य ग्रंथ 'एथिक्स' (Ethics) में की है। उसके अनुसार पूर्ण न्याय या सामान्य न्याय केवल आदर्श राज्य में ही पाया जाता है। पूर्ण न्याय का अर्थ है कि आदर्श राज्य के व्यक्तियों के आपसी सम्बन्ध सद्गुण पर आधारित होने चाहिए। ऐसे राज्य में कानून सदा विवेक का अनुसरण करते हैं। इस प्रकार आदर्श राज्य के सद्गुण युक्त कानूनों का पालन करना ही पूर्ण अथवा सामान्य न्याय है। पूर्ण न्याय के कारण आदर्श राज्य में राजनीति एवं नीति में कानून तथा विवेक में और नागरिक एवं सद्गुणी व्यक्ति में कोई अन्तर नहीं होगा।

अरस्तू न्याय की अवधारणा में राज्य की एकता स्थायित्व एवं नैतिक जीवन की स्थापना चाहते हैं। उनकी न्याय की धारणा नागरिकों के अधिकारों से सम्बन्धित है। अरस्तू का कहना है कि प्रत्येक नागरिक द्वारा की गई राज्य की सेवा के अनुपात में उसे अधिकार प्राप्त होने चाहिए तथा जब राज्य से प्राप्त होने वाले लाभों को नागरिकों की बहुसंख्या में बांटा गया है तो राजनीतिक स्थायित्व प्राप्त होता है। यहाँ पर अरस्तू यह भी जोड़ता है कि नागरिकों के बीच कानून की समानता होनी चाहिए।

अरस्तू का मानना है कि असमानता ही क्रांति का मूल कारण होती है तथा समानता की स्थापना करना क्रांति का मूल उद्देश्य माना जा सकता है। अरस्तू का मत है कि समानता के बारे में परस्पर दो विरोधी विचार पाए जाते हैं – निरपेक्ष समानता तथा आनुपातिक समानता। सामान्य नागरिक निरपेक्ष समानता में विश्वास करता है उसका मत होता है कि सभी नागरिक समान है। अत: उनके बीच सम्पत्ति, अधिकार, सुविधाओं, पदों आदि का भी समान वितरण होना चाहिए। जब सामान्य नागरिक यह देखता व अनुभव करता है कि उसे अन्यों के समान उपरोक्त लाभ नहीं मिल रहे हैं तो वह इसे समानता का उल्लंघन तथा असमानता की स्थापना मानता है तथा इसे अपने प्रति असमानता भी मानता है और इससे अपने प्रति अन्याय भी महसूस करता है और तब वह क्रांति के विचारों से प्रभावित होता है। जो नागरिक योग्यता, शिक्षा, धन, वंश आदि की दृष्टि से सामान्य नागरिक से ऊँचे होते हैं वे आनुपातिक सामानता में विश्वास करते हैं। उन नागरिकों का मत होता है कि वे अपने उपरोक्त गुणों के कारण जिस अनुपात में सामान्य नागरिक से श्रेष्ठ है, उसी अनुपात में उन्हें सामान्य नागरिक की तुलना में अधिक अधिकार सुविधाएं पद आदि भी मिलने चाहिए। जब वे देखते हैं कि उनके गुणों की उपेक्षा करके उनके साथ सामान्य नागरिक जैसा ही व्यवहार किया जा रहा है तो इसे अपने गुणों का अनादर तथा अपने प्रति अन्याय की स्थिति मानते हैं और क्रांति के लिए प्रेरित होते हैं। न्याय के बारे में नागरिकों के विभिन्न

* सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

वर्गों में जो मतभेद पाए जाते हैं, उसका आधार उनकी समानता सम्बन्धी अवधारणा में निहित है।

सामाजिक-न्याय के लिए अरस्तू ने निजी सम्पत्ति को राज्य की बहुलता का रक्षक तथा व्यक्ति के नैतिक उत्थान में सहायक मानते हुए सम्पत्ति की धारणा पर गम्भीर चिंतन किया है। उसने अपने विचार प्राचीन यूनान के नगर राज्यों के संदर्भ में प्रकट किए हैं। वस्तुत: आधुनिक युग की दृष्टि से भी अरस्तू के विचारों में ऐसे तथ्य देखे जा सकते हैं, जिनका महत्तव है। अरस्तू ने निजी सम्पत्ति को नैतिक आधार दिया है और उसके महत्तव को प्रतिपादित करते हुए भी उसे मात्र एक साधन माना है। उनका यह मत आज भी स्वीकार करने योग्य है कि निजी सम्पत्ति की सीमा तय की जानी चाहिए ताकि समाज में तीव्र आर्थिक असमानता उत्पन्न नहीं हो। अरस्तू का यह मत तार्किक है कि जब आर्थिक असमानता अत्यधिक होती है तो वर्ग द्वेष उत्पन्न होता है और राजनीतिक स्थिरता समाप्त होती है। अरस्तू के सम्पत्ति सम्बन्धी विचारों में उदारवादी व समाजवादी पक्षों का संतुलन हिल पड़ता है जो आधुनिक युग में भी उचित माना जाता है। इस प्रकार अरस्तू आर्थिक समानता के आधार पर सामाजिक-न्याय की स्थापना करना चाहते हैं।

अरस्तू इस तथ्य से भलीभांति परिचित हैं कि नागरिकों के मध्य अत्यधिक आर्थिक असमानता अन्तत: वर्ग विद्वेष को ही जन्म देगी, वे निजी सम्पत्ति की एक निश्चित सीमा को उचित मानते हैं और नागरिकों के बीच विवेकपूर्ण तथा सहनीय आर्थिक असमानता को उचित मानते हैं। समाज के कुछ लोगों के पास अत्यधिक सम्पत्ति संग्रह को इस संदर्भ में देखते हैं कि इससे अधिकांश व्यक्ति निर्धन होंगे और यह स्थिति सामाजिक वर्ग विद्वेष को तथा राजनीतिक अस्थिरता को बढ़ावा देगी। इस प्रकार अरस्तू आर्थिक समानता के संदर्भ में ही सामाजिक-न्याय का प्रसंग देखते हैं।

पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन में मध्ययुगीन विचारक थॉमस एक्वीनॉस का भी उल्लेख करना आवश्यक है। सामाजिक-न्याय की दृष्टि से एक्वीनॉस का मानवीय कानून भी दृष्टया है। एक्वीनॉस के अनुसार, कानून सामान्य हित में विवेक द्वारा दिया गया आदेश है जिसे वह व्यक्ति उद्घोषित व लागू करता है जिस पर समाज की रक्षा का भार होता है। एक्वीनॉस के कानून की विशेषताओं में प्रमुख हैं - कानून में सामान्य हित, जन समूह की इच्छा, कानून की घोषणा, कानून की सार्वभौमिकता आदि हैं और यह सब सामाजिक-न्याय की प्राप्ति के लिए भी आवश्यक माने जाते हैं। हालांकि मध्ययुगीन यूरोप में धार्मिक कट्टरता का बोलबाला था और धार्मिक आधार पर अल्पसंख्यकों के प्रति भेदभाव किया जाता था परन्तु एक्वीनॉस ने मानवीय समानता तथा धार्मिक सहिष्णुता के सिद्धांतों को प्रतिपादित किया। उन्होंने मानवीय समानता के पक्ष में चार तर्क दिए, सभी मानव ईश्वर की संतान हैं, सभी मानव समान रूप से आत्मा धारण किए हुए होते हैं। समस्त मानवों में लक्ष्य की समानता रहती है और सभी मानव एक जैसी इच्छाएं रखते हैं। धार्मिक सहिष्णुता के सम्बन्ध में वह कहता है कि यहूदियों व मुसलमानों के सम्मान की रक्षा की जानी चाहिए और उनके बच्चों का बलपूर्वक जन्म संस्कार नहीं किया जाना चाहिए। एक्वीनॉस ने राज्य के जो प्रमुख कार्य बताए हैं उनमें सामाजिक **विधायान** का तत्त्व मौजूद है। कुल मिलाकर एक्वीनॉस लोकतंत्रवादी तो नहीं हैं, किन्तु गरीब वर्ग के भरण-पोषण को राज्य के कार्यों में सम्मिलित करके राज्य को एक प्रकार से सामाजिक-न्याय की प्राप्ति के लिए कटिबद्ध राज्य की श्रेणी में ले जाता है।

पश्चिमी दार्शनिक मैकियावली पुनर्जागरण के पारलौकिक सत्य के स्थान पर लौकिक सत्य की स्थापना के संदेश से अत्यधिक प्रभावित था। यही कारण है कि उसने राज्य पर धर्म के बन्धनों का विरोध किया था तथा धर्म-निरपेक्ष राज्य के विचार का प्रतिपादन किया। मैकियावली ने केवल नागरिक विधि के महत्तव को ही स्वीकार किया। उसका तर्क था कि केवल यही ऐसी विधि है जो अराजकता व अव्यवस्था को समाप्त करके नागरिक समाज की स्थापना करने में समर्थ है। मैकियावली ने पुनर्जागरण के प्रभाव के कारण मानव के प्रति बौद्धिक व तार्किक दृष्टिकोण भी अपनाया। उसने व्यक्ति को ईश्वर की सत्ताा, चर्च की सत्ताा तथा अबौद्धिक परम्पराओं आदि से मुक्ति दिलायी।

हॉब्स के चिन्तन में सामाजिक-न्याय का जो स्पष्टीकरण मिलता है वह यह है कि हॉब्स सभी मनुष्यों की शारीरिक व मानसिक शक्तियों में पर्याप्त समानता की स्थिति को स्वीकार करता है। राज्य का उद्देश्य व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करना है। वह व्यक्ति के हित को सबसे ऊपर स्थान देता है। वह सभी व्यक्तियों के निजी हितों के योग को ही सामाजिक हित मानता है। वह व्यक्ति के जीवन एवं कार्यों में राज्य के अनावश्यक हस्तक्षेप का विरोधी है। उसका मानना है कि कानूनों का उद्देश्य व्यक्ति के समस्त कार्यों में हस्तक्षेप करना नहीं है अपितु व्यक्ति के मात्र उन कार्यों पर प्रतिबंध लगाना है जो सार्वजनिक शांति और व्यवस्था के लिए हानिकारक हो। इस दृष्टि से हॉब्स व्यक्ति की अंत:करण तथा विश्वास सम्बन्धी स्वतंत्रता को स्वीकार करता है। वह आत्मरक्षा की दृष्टि से सभी लोगों को समान समझता है और यहाँ तक कि शासक और सामान्य व्यक्ति को भी समान मानता है।

प्राकृतिक रूप से ही मनुष्य को यह शक्ति प्राप्त हुई है कि वह अपने जीवन, स्वतंत्रता तथा सम्पत्ति की रक्षा करे। उक्त कथन में ही लॉक ने सामाजिक-न्याय के आधारभूत सिद्धांतों की बात की है। लॉक का मानना है कि जहाँ से कानून समाप्त होता है वहीं से अत्याचार प्रारम्भ हो जाता है और सरकार कुछ निश्चित उद्देश्यों के लिए कार्य करने वाली न्यासधारी शक्ति मात्र है। लॉक यह मानता है कि मनुष्यों में बाहरी असमानताओं के बावजूद सभी मनुष्य मूलत: समान ही होते हैं। सभी व्यक्तियों में एक नैतिक प्रकृति की समानता पायी जाती है। सभी व्यक्ति स्वतंत्र रूप से जन्म लेते हैं और उन पर प्राकृतिक कानून समान रूप से लागू होते हैं तथा उन सबको समान रूप से ही प्राकृतिक अधिकार प्राप्त होते हैं। मनुष्यों का जीवन प्राकृतिक कानूनों से ही नियंत्रित होता है और इन्हीं प्राकृतिक कानूनों द्वारा ही समस्त मनुष्यों को प्राकृतिक अधिकार प्राप्त होते हैं। मनुष्यों को तीन प्राकृतिक अधिकार प्राप्त होते हैं - जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार तथा सम्पत्ति का अधिकार।

लॉक ने मानवीय स्वतंत्रता पर बल देते हुए मनुष्यों के बीच बन्धुत्व को एक स्वाभाविक प्रवृत्तिा के रूप में स्वीकारा है। यही कारण है कि आगे चलकर फ्रांस और अमरीका की लोकतांत्रिक क्रांतियों के समर्थक विद्वानों ने लॉक के विचारों से प्रेरणा प्राप्त की तथा आगे चलकर अफ्रीकी एवं एशियाई देशों के नागरिकों ने भी इसी तथ्य से प्रेरणा प्राप्त की कि शासन हमेशा जनता की सहमति के अनुसार ही किया जाना चाहिए।

रूसो के सामान्य इच्छा के सिद्धांत में भी सामाजिक-न्याय की अवधारणा के तत्तव मौजूद हैं। रूसो की सामान्य इच्छा की अवधारणा को व्यक्तियों की दो प्रकार की इच्छाओं की मदद से स्पष्ट किया जा सकता है अर्थात् रूसो का मत है कि सार्वजनिक हित के संदर्भ में व्यक्ति की दो प्रकार की इच्छाएं होती हैं। एक यथार्थ इच्छा व्यक्ति की स्वार्थपूर्ण इच्छा होती है और इसमें व्यक्ति सार्वजनिक हित के बजाए व्यक्तिगत हित को प्रधानता देता है। आदर्श इच्छा व्यक्ति की ऐसी नैतिकतापूर्ण इच्छा होती है जिसके

अनुसार व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हित के ऊपर सार्वजनिक हित को महत्त्व देता है। आदर्श इच्छा व्यक्ति के हित तथा सामाजिक हित में सामंजस्य स्थापित करने वाली इच्छा होती है। व्यक्ति स्वयं सम्पूर्ण समाज का अंग है और जब आदर्श इच्छा द्वारा सम्पूर्ण समाज का हित किया जाता है तो समाज के एक अंग के रूप में व्यक्ति विशेष का भी हित पूरा हो जाता है।

रूसो का दर्शन अन्यायपूर्ण व असमानता पूर्ण समाज व्यवस्था का विरोध करते हुए एक ऐसी आदर्श राज्य व्यवस्था की स्थापना पर बल देता है जो समानता, स्वतंत्रता तथा भाईचारे के सिद्धांतों पर संगठित हो। यद्यपि समाजवाद रूसो के बाद की विचारधारा है किन्तु इसके विकास पर रूसो के चिन्तन का प्रभाव आसानी से समझा जा सकता है। जैसे कि समाजवाद की तीन प्रमुख मान्यताएं हैं - प्रथम यह समाज को प्रधान तथा व्यक्ति को गौण मानता है, द्वितीय यह व्यक्तियों की समानता में विश्वास करता है, तृतीय यह निजी सम्पत्ति की संरचना को अन्यायपूर्ण मानता है और यहाँ यह उल्लेखनीय है कि रूसो के दर्शन में यह उपरोक्त तत्तव पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं।

जरमी बैंथम का चिन्तन एवं समकालीन ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति का उल्लेख भी यहाँ प्रासंगिक रहेगा क्योंकि औद्योगिक क्रांति के कारण इंग्लैण्ड के सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न होने लग गई थी और ब्रिटेन का जन सामान्य इनसे त्रस्त होने लगा। बैंथम ने इस स्थिति से निपटने के लिए सम्पूर्ण सामाजिक ढांचे में आवश्यक परिवर्तन करने पर बल दिया और इस संदर्भ में अपना उपयोगितवादी चिन्तन प्रस्तुत किया।

जॉन स्टुअर्ट मिल का मत है कि सभी शासन प्रणालियां समाज के हित के नाम पर व्यक्तियों के हितों की उपेक्षा करती हैं। मिल सामाजिक हित के साथ-साथ व्यक्तिगत हित को भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मानता है। वह व्यक्ति के मूल्य पर समाज का हित नहीं चाहता। मिल का यह मानना है कि प्रतिनिधि शासन ही वह व्यवस्था है जिसमें व्यक्ति और समाज दोनों के हितों में समन्वय रहता है और राज्य को व्यक्ति के आर्थिक विकास की बाधाओं को समाप्त करना चाहिए जिससे समाज में आर्थिक विकास की बाधाओं को समाप्त करना चाहिए जिससे समाज में आर्थिक समानता स्थापित हो जो कि सामाजिक-न्याय की एक आवश्यक कड़ी है। जॉन स्टुअर्ट मिल का यह विचार आज भी अपनी पूर्ण प्रासंगिकता लिए हुए है कि व्यक्ति के जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य अपने व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास ही होना चाहिए और राज्य, समाज, धर्म एवं वर्ग के द्वारा व्यक्ति का दमन अनुचित है।

कार्ल मार्क्स का मानना है कि वर्ग संघर्ष की उत्पत्त्ति का मूल कारण ही निजी सम्पत्ति की व्यवस्था है जो समाज को सम्पन्न तथा विपन्न वर्गों में विभाजित करती है। यह दोनों वर्ग की क्रमश: शोषक और शोषित वर्ग कहलाते हैं और समाज में इन दोनों में तीव्र विरोध होता है और कालांतर में यही विरोध वर्ग संघर्ष के रूप में परिलक्षित होता है। मार्क्स यहाँ पर कहता है कि जब समाज में निजी सम्पत्ति की व्यवस्था का अंत हो जायेगा तो वर्गविहीन समाज की स्थापना होगी और ऐसे समाज में वर्ग संघर्ष नहीं होगा, शोषण व अन्याय नहीं होगा तथा यहीं से सामाजिक-न्याय की स्थापना का प्रारम्भ हो सकता है।

सामाजिक-न्याय के सम्बन्ध में लास्की का विचार है कि एक ऐसे समाज में ही व्यक्ति की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति होगी और व्यक्तित्व के सभी पक्षों का समुचित विकास होगा, जिसमें राज्य का स्वरूप शोषण रहित तथा न्यायमुक्त हो तथा बहुलवादी स्वरूप हो। लास्की का स्वतंत्रता से अभिप्राय यह है कि सभी समान रूप से हो। इस प्रकार लास्की उत्पादन तथा वितरण के साधनों पर सामाजिक स्वामित्व की स्थापना का समर्थक है। लास्की का यह भी मानना है कि समाजवाद केवल मात्र श्रमिक वर्ग के हितों को साधने वाली विचारधारा ही नहीं है अपितु यह सम्पूर्ण समाज की विचारधारा है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि समाजवादी व्यवस्था आवश्यक रूप से लोकतांत्रिक भी हो, राजनीतिक स्वतंत्रता और आर्थिक समता परस्पर एक-दूसरे की पूरक हैं और एक के अभाव में दूसरी अर्थहीन है।

सामाजिक-न्याय के संदर्भ में प्रमुख पश्चिमी राजनीतिक विचारकों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से किए गए उपरोक्त संक्षिप्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक-न्याय एक वृहद विषय है जिसमें समाज और मनुष्य के सम्बन्धों का मानवीय दृष्टिकोण के साथ-साथ उसके आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक अंतर्सम्बन्धों का विवेचन भी सम्मिलित है और यह भी स्पष्ट है कि प्रत्येक विचारक ने अपने काल और परिस्थितियों के अनुरूप ही इस समस्या को खत्म करने के लिए अपने अपने विचार प्रतिपादित किए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डेविड मिलर : दी ब्लेक वैल इन साइक्लोपीडिया ऑफ पोलिटीकल थॉट, न्यूयॉर्क, 1987, पृ. 26
2. मिस सोफिया, डोबसन कोलेट : लाइफ एण्ड लैटर्स ऑफ राजा राम मोहन राय, एच.सी. सरकार एण्ड को., कलकत्ता, 1913, पृ. 15
3. रफीक जकरिया : रिनोसेंट इण्डिया, एलन एण्ड अनविन, लंदन, 1933, पृ. 15
4. शिवनाथ शास्त्री : हिस्ट्री ऑफ दी ब्रह्म समाज, पृ. 16-30; मणि लाल पारेख : दी ब्रह्म समाज : ए शोर्ट हिस्ट्री आरिएंटल, क्राइस्ट हाउस, राजकोट, 1929, पृ. 15-18
5. सत्यार्थ प्रकाश, वैदिक पुस्तकालय, अजमेर, 1966, 34वां संस्करण, पृ. 51
6. दी लाईफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द, बाई हिज ईस्टर्न एण्ड वेस्टर्न डिसाईपल्स, अद्धैत आश्रम, अल्मोड़ा, खण्ड-2, पृ. 796
7. दी मैसेज ऑफ विवेकानन्द : अद्धैत आश्रम, कलकत्ता, 1966, पृ. 13-14
8. जवाहर लाल नेहरू : 'डिस्कवरी ऑफ इण्डिया', एलाईड पब्लिशर्स, बॉम्बे, 1962, पृ. 358
9. डी.पी. कमरकर : बाल गंगाधर तिलक : ए स्टडी, पोपुलर बुक डिपो, बम्बई, 1956, पृ. 72-83
10. बाल गंगाधर तिलक : हिज राईटिंग्स एण्ड स्पीचेज, गणेश एण्ड को., मद्रास, 1922, तृतीय संस्करण, पृ. 24-27
11. रीजनर तथा गोल्डबर्ग (सं.) : तिलक एण्ड दी स्ट्रगल फॉर फ्रीडम, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1960, पृ. 11
12. राम गोपाल : लोकमान्य तिलक, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1965, पृ. 235
13. टी.वी. पार्वते : बाल गंगाधर तिलक, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1958, पृ. 222
14. श्री अरविन्दो : दी आईडियल ऑफ ह्यूमन यूनिटी, श्री अरविन्दो बर्थ सेन्टेनरी लाईब्रेरी, पाण्डिचेरी, 1971, पृ. 479
15. महात्मा गांधी : आत्मकथा, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1962

The Emergence of New Woman in Tagore's The Home and the World

Sunita Ahuja*

Abstract - Tagore, one of the prominent writers of the world, always gave new thoughts and lessons through his writings. His novels are based on the psychoanalysis of the life of middle- class people in Bengal. The novel "The Home and The World", (1919) deals with women's condition, in Indian society, in the later nineteenth century. The novel shows the changing scenario of women's status through its character Bimala a traditional Indian woman. Her educated husband Nikhil helps her to emerge out of inner quarters to the outer world. Nikhil's friend Sandeep exploits her because of her simplicity. But at the right time, she realizes his evil desires and finds him selfish. She is not defeated here but learns a lesson to identify the real and the fake people. She returns to Nikhil who waited with patience to see her back. Tagore proved that love and truth are always superior to violence and death. He was in the favor of society's welfare and women's emancipation and was also curious to look forward into social and cultural changes which brought zeal and enthusiasm in the people of Bengal. This paper is concerned with the emergence of a new woman in Indian society and also shows how Tagore tried to break the cultural mould of the time by introducing new thoughts through his novel.

Keywords - Emancipation of women, Modernization, Liberation, Education.

Introduction - Written in 1916, The novel "The Home and The World" had a political background and was not accepted by the people because of its modernistic outlook. But later on, it was translated into English and published in book form in 1919.

"For three long years after its publication, the critics continued to tear the novel to pieces- a tribute to its impact on their minds."[1]

In this novel, Tagore showed the revolutionary background of Bengal in 1905. Swadeshi movement was on its full swing and anti-British feelings arose in the hearts of people. Echo of Bande Mataram could have been listened at every nook and corner and love for nation could be seen in the eyes of youth. The youth of Bengal also were colored in Swadeshi movement which made them move towards violence of all sorts. The Swadeshi Movement involved a boycott of all British clothes and goods in favor of locally produced goods. Tagore was against violence hence he flinched from the movement. For that reason people criticized him. Tagore believed in love, truth and non-violence and so he kept himself firm on his ethics.

"He deemed the sudden change hypnotic and tried to make people conscious so that they would not be senselessly misled. He gave a vent to his own state of mind in writing The Home and the World. The novel is, therefore, more a collective memoir of three representatives of the then society than the usual 'prose narrative of a certain length."[2]

The plot of the novel centres around upper- middle-class Bengali family. There are three principal characters in the novel – Nikhil, the idealistic husband, Bimala, Nikhil's wife and Sandeep, his friend. Bimala, a dark complexion young lady, has the shine of holiness on her face. She gets married to Nikhil and comes to reside in his traditional house where the women are never allowed to cross the inner quarters (zenana) of their house. Brought up in a traditional family there is nothing new for Bimala. She has seen her mother putting a vermilion mark on her head and worshipping her husband. She also believes that the husband should be worshipped. She touches Nikhil's feet when he is asleep. Though Nikhil is not her man of dream but being a traditional Hindu wife, her real happiness lies at her husband's feet. She says, "It was my woman's heart, which must worship in order to love."[3]

Tagore has shown here two spheres of life national and domestic. Here female protagonist not only stands for freedom of females but also for the nation. Bimala is happy with Nikhil and finds herself fortunate because Nikhil is a modern and an open-minded man and has no bad habit of the 'Rajahs'. He desires Bimala to have a life outside the home and to have the freedom to choose her own path in life. He brings fashionable garments and ornaments for her. Being an educated person he believes in the liberation and education of women. For him, a woman is not an object to decorate the house or to entertain her husband. He does not believe in keeping her wife in 'purdah'. Therefore, he

* Research Scholar (English) Govt. J.H.P.G. College, Betul (M.P.) INDIA

starts for her lessons in reading and western music by Miss Gilby, an English woman. Bimala has lived in his house for nine years in purdah obeying all social norms, so it is not easy for her to come out of 'purdah'. They have arguments on this matter frequently, though he encourages Bimala to come out to the outer world, it is not Nikhil but Sandeep who brings her out from her closet.

"If the outside world has got on so long without me, it may go on for some time longer. It need not pine to death for want of me."[4]

Nikhil and Sandip have two different attitudes for women. For Nikhil, she is an individual who possesses her own identity and for Sandip, she is an object of pleasure. Sandip is an active participant in the Swadeshi movement for which Nikhil funds him. Initially, when Bimala sees Sandip's photograph, there is something which she does not like. Though Sandip is a handsome man, she could see the cunningness in his face. She does not like Nikhil's funding to Sandip on the pretext of Swadeshi work. He is taking advantage of Nikhil's friendship.

"I had seen Sandip Babu's photograph before. There was something in his features which I did not quite like. Not that he was bad-looking,— far from it: he had a splendidly handsome face. Yet I know not why, it seemed to me, in spite of all its brilliance, that too much of base alloy had gone into its making. The light in his eyes somehow did not shine true."[5]

Thousands of people are attracted to Sandip's personality. When Nikhil introduces Bimala with Sandip, she also gets attracted to him. Bimala, who never accepted her husband's proposal to come out from the closet, is now ready to join the Swadeshi movement with Sandip. She is hypnotized by Sandip. He leaves no chance to converse with Bimala and visits her frequently. He praises her and compares her to "goddess" or "shakti" because of his self-interest.

He would go into raptures and say: 'Men can only think. You women have a way of understanding without thinking. Woman was created out of God's own fancy. Man, had to hammer into shape.'[6]

After interaction with Sandip, Bimala does not take herself as merely a domestic wife. To increase her value in Sandip's eyes, she wants him to notice the fire which is lightening in her. Sandip discusses all his Swadeshi movement's plans with her. Now she feels her worth, her role, her identity as an educated woman in the outer world. She feels as supreme. Here, Tagore has shown women's simplicity and innocence through Bimala that they believe anyone so easily without thinking much about that person. They don't know the tactics of the outer world.

"Possibly this is woman's nature. When her passion is roused she loses her sensibility for all that is outside it. When, like the river, we women keep to our banks, we give nourishment with all that we have: when we overflow them we destroy with all that we are."[7]

Bimala has the eagerness to do some sacrifice for nation so she wants to get rid of her English teacher, Miss Gilby and also burns her foreign clothes but Nikhil neither likes nor supports her in this havoc. We can see Tagore's reflection in Nikhil. In 1905, when Swadeshi Movement was on upsurge foreign clothes and goods were burnt, Tagore was also against it.

"Listening to his allegories, I had forgotten that I was plain and simple Bimala. I was Shakti; also an embodiment of Universal joy, nothing could fetter me, nothing was impossible for me; whatever I touched would gain new life. The world around me was a fresh creation of mine; for behold, before my heart's response had touched it, there had not been this wealth of gold in the autumn sky! And this hero, this true servant of the country, this devotee of mine, — this flaming intelligence, this burning energy, this shining genius,- him also was I creating from moment to moment. Have I not seen how my presence pours fresh life into him time after time."[8]

Being traditional Indian women his grandmother and sister-in-law do not accept Bimala's freedom. His grandmother assumes that this attitude of hers would lead to the destruction of the family and Nikhil. Nikhil's sister-in-law is also against his decision. She does not like Bimala's new get-up. She is jealous of Bimala because she is deprived of all such joys of married life. Bimala does not like her attitude and feels that a woman's mind is so petty. But Nikhil is a sensible man and he understands his sister-in-law's feeling and psyche very well, he tells Bimala that they are not petty minded but it is the society that makes them so.

"I remember I once told him: 'Woman's minds are so petty, so crooke!' 'Like the feet of Chinese women,' he replied. 'Has not the pressure of society cramped them into pettiness and crookedness? They are but pawns of the fate which gambles with them. What responsibilities have they of their own?' "[9]

According to Sandeep men are kings and they have their tributes. Women are here only to serve the men. He praises Bimala's beauty, her ideas and calls her an inspiring source for him. He knows very well how to conquer a woman's heart. For him, Bimala is a fruit, whom he must pluck. Sandip gets letters from all over the country. He gives all the letters to Bimala first, for her opinion and discussions. Sandip makes her feel the most responsible person in the Swadeshi movement. Thus Sandip exploits her and utilizes the opportunity to use her. She is engrossed in Swadeshi movement so much that she ignores her duty towards Nikhil and the family. Even she has no matter to converse with her husband, since they don't have similar thoughts regarding the Swadeshi movement gradually they stop conversing with each other.

"I sent for my husband. In the old days, I could contrive a hundred and one excuses, good or bad, to get him to me. Now that all this had stopped for days I had lost the art of contriving."[11]

Bimala is very well aware of Sandip's evil thoughts,

yet she is unable to set herself free from his web. Now Nikhil's true words do not affect her in any way. He still loves her from the bottom of his heart but painfully and with patience faces the bitter truth of his life. "My beloved, your smile shall never fade, and every dawn there shall appear fresh for me the vermilion mark on your forehead!" [9] He knows that Bimala's nature can find a true union with Sandip's only. He thinks that Sandip is the right person for Bimala, not he. But at the same time, he has true belief in his love also. He waits for Bimala to come back to him. Even his master Chandranath Babu wishes to protect Bimala from Sandip.

"I must not lose my faith: I shall wait. The passage from the narrow to the larger world is stormy. When she is familiar with this freedom, then I shall know where my place is. If I discover that I do not fit in with the arrangement of the outer world, then I shall not quarrel with my fate, but silently take my leave.... Use force? But for what? Can force prevail against Truth?"[12]

Bimala who could judge Sandip in the beginning, could not understand her attraction for Sandip. Perhaps it is her nature, her simplicity that she believes Sandip blindly and could not save herself from his disastrous effect. Her misconception leads her towards degradation and becomes the victim of Sandip's lust. One fine day he asks her for money. She steals money from her home and somehow manages to give him but she cannot disclose it to anybody. "The moment I had stolen my husband's money and paid it to Sandip, the music that was in our relation stopped. Not only did I destroy all my own value by making myself cheap, but Sandip's powers, too, lost scope for their full play."[13]
Sandip is so crafty that not only Bimala but also many other people get attracted by him. They can do anything for him for the sake of the country. When Bimala sees Amulya, a young boy, who talks like Sandip; she realizes the truth. Amulya is ready to kill the watchman to get the money for Sandip. Bimala cannot make herself away from Sandip only to save Amulya.

"To hear Sandip's phrases in the mouth of this mere boy staggered me. So delightfully, lovably immature was he,— of that age when the good may still be believed in as good, of that age when one really lives and grows. The mother in me awoke."[14]

Later on, she understands that her inclination towards Sandip is wrong. She sees Sandip's jealousy and craftiness and saves herself from his elusive love. The moment she comes to know his crooked plans and lust, he falls from her grace. Bimala, who ignores her love and duty as a wife, now finds Sandip selfish. Tagore has put a light on Bimala's state of mind, "Where the strong man shows weakness, there the weaker sex cannot help beating her drums of victory."[15]

Bimala soon overcomes with guilt over what she has done and arranges to repay the stolen money, which she will get by selling her ornaments. Nikhil is upset about Bimala's betrayal but he stands by his principles: he forgives Bimala for theft and tells her that she is free to follow her heart, that means leaving Nikhil. But she realizes that it is Nikhil, not Sandip, whom she truely loves.

Bimala is able to come back from the tragic way of the world. Nikhil's love, Amulya's innocence and her own virtues have helped her to release from Sandip's elusive love. She had distracted from her right path, but her inner strength saved her from fall. "To err is human and woman is not an angel but a human being."[16]

"God can create new things, but has even He the power to create afresh that which has been destroyed?"[17]

Bimala learns a lesson regarding what is right and what is wrong. Sandip's elusive love has blindfolded her eyes. As soon as she realizes her mistake, she tries to set herself free from his false love. Tagore has conveyed a message through her that returning back to home is not her defeat but it is her real education in the outer world. She is a representative of the modern generation which was trying to come out of home and stand in the outer world without knowing the vices of the outside world. Now she will not believe anyone blindly. She has become confident as well as a strong woman in her struggle with the outer world.
"It is a true education for Bimala who comes out of the sacred precincts of a "Home" to the "World" outside, devastated by voilence, and the intricate machinations of greedy and corrupt people"[18]

References:-

1. Kriplani, Krishna. Rabindranath Tagore: A Biography. New Delhi: UBS Publishers' Distributors Pvt. Ltd. 2012.p.238.
2. Swain, Satyananda. Female Paradigms of Love. New Delhi: Adhyayan Publishers & Distributors, 2013.p.113.
3. Tagore, Rabindranath. The Home and The World. New Delhi: Rupa Publications, 2002.p.03.
4. Ibid., p.08.
5. Ibid.,p.16.
6. Ibid., p.41.
7. Ibid., p.42.
8. Ibid.,p.96.
9. Ibid., p.07.
10. Ibid., p.97.
11. Ibid., p.59.
12. Ibid., p33.
13. Ibid., p164.
14. Ibid., p.146.
15. Ibid., p162.
16. Sapowadia, Soniya F. Woman In Tagore's Novels: A Critical Study. Jaipur: Shree Niwas Publications, 2010.p.80.
17. Tagore, Rabindranath. The Home and The World. New Delhi: Rupa Publications, 2002.p.198
18. Swain, Satyananda. Female Paradigms of Love. New Delhi: Adhyayan Publishers & Distributors, 2013.p.119

Synthesis and Characterization of Zero Valent Iron Nanoparticles

Dr. Shikha Yadav *

Abstract - In the present work, nano scaled zero valent iron (nZVI) were synthesized by the method of ferric chloride ($FeCl_3$) reduction using sodium borohydride as a reducing agent under atmospheric conditions. A systematic characterization of nZVI was performed using XRD, SEM and FTIR studies. The obtained iron nanoparticles are mainly in zero valent oxidation state.

Keywords - Zero valent iron, Nanoparticles, Synthesis, XRD, SEM, FTIR.

Introduction - The field of nanotechnology is one of the most active research areas in modern material Science. Nano is raised from the Greek word for goblin. A nanometre is one billionth of a meter and might be represented by the length of ten hydrogen atoms lined up in a row [1]. Nanotechnology implicates the creation and utilization of materials, devices and systems through the control of matter on the nanometer-length scale i.e. at the level of atoms, molecules and supramolecular structures [2-4]. Such technology is mainly concerned with synthesis of nanoparticles of variable sizes, shapes, chemical compositions and controlled dispersity and their potential use for human interests. However, physical and chemical methods may successfully produce pure, well-defined nanoparticles, these are quite costly and potentially risky to the environment. Utilize of biological organisms such as microorganisms, plant extractor, plant biomass could be an alternative to physical and chemical methods for the production of nanoparticles in an eco-friendly manner [5-7]. Nanotechnology is a reliable and enabling environment friendly process for the synthesis of nanoscale particles. Nanosize outcomes in peculiar physicochemical characteristics such as high surface area to volume ratio, which potentially results in high reactivity [8].

Recent studies have revealed the effect of zero valent iron nanoparticles for the transformation of organic contaminants and heavy metals. Moreover, many studies revealed that zero valent iron is effective at stabilization or destruction of a host of pollutants by its highly reducing character. From these aspects, zero valent iron (ZVI) is proposed as one of the best reactive materials in permeable reactive barrier techniques [9]. Past few years, different synthetic methods have been developed to produce iron nanoparticles, modify the nanoparticle surface properties and enhance its efficiency for field delivery and reactions [10-11]. The most widely used method for environmental purposes is the borohydrate reduction of Fe (II) or Fe (III) ions in aqueous media. In the present study nanoparticles were formed by using ferric chloride and sodium borohydride. These nanoparticles were characterizied by XRD, SEM, and FTIR.

Experimental Methods - Production of ZVI involved a reduction method using two main chemicals which were anhydrous $FeCl_3$ and$NaBH_4$. The $NaBH_4$ functions as a reducing agent in order to reduce the ferric chloride ($FeCl_3$) in form of solution to produce zero valent iron. We Dissolve 1.622g ferric chloride ($FeCl_3$) in 100ml distilled water. Also prepare sodium borohydride solution by dissolving 1.8915g $NaBH_4$ in 100 ml distilled water. Mix both the solutions. Black coloured particles are formed. Filter these particles using Whattman filter paper No.1 and wash it with 20ml distilled water and 20ml ethanol three times. Black coloured particles so obtained are stored in ethanol overnight and dried in dessicator.

Results And Discussion - The nanoscaled zero valent iron (nZVI) have been synthesized in aqueous medium by the method of ferric iron reduction using sodium borohydride as a reducing agent under atmospheric condition. A careful characterization of nZVI has been performed using FTIR, XRD and SEM studies.

Fig. 1 (see in next page)

Fig. 1 shows the FTIR spectrum of iron nano particles. The broad peak 3741.69cm^{-1} is owing to the presence of O-H from alcohol used in washing. 1693cm^{-1} may be attributed to H-O-H stretching of deionised deoxygenated water. 515.76 cm^{-1} is attributed to zero valent Iron.

Fig.2 (see in next page)

Fig. 2 shows the powder XRD pattern of nZVI samples under ambient conditions. The broad peak reveals the existence of an amorphous phase of iron .The characteristic broad peak at 2θ of 44.55^o indicates that the zero valent iron is predominantly present in the sample.

*Asst. Professor (Chemistry) Govt. Degree College, Shivrajpur, Distt. Kanpur (U.P.) INDIA

Fig.3 (see in next page)

Fig.3 shows the SEM image of freshly synthesized iron nano particles. Results indicate that the synthesized nZVI particles show dendritic structure. All nZVI were non uniform in size and non spherical in shape.

Conclusion - In this study we have concluded that nZVI has been successfully synthesized in the laboratory using anhydrous $FeCl_3$ and sodium borohydride. Owing to iron metal is of low cost, zero valent iron can be used to remove waste water pollutants such as heavy metals, pesticides, dyes etc.

References :-

1. Wu M.K., Windeler R.S., Steiner C.K., Bros T., Friedlander S.K., Controlled synthesis of nanosized particles by aerosol processes. Aerosol Science and Technology 19, 527-548 (1993).
2. Chiu, D.T., Interfacing droplet micro fluidics with chemical separation for cellular analysis, Anal Bioanal Chem., 397: 3179-83 (2010).
3. De, D., S.M. Mandal, S.S. Gauri Antibacterial effect of lanthanum calcium manganite nanoparticles against Pseudomon asaeruginosa ATCC 27853, J. Biomed Nanotechnol., 6: 138-44 (2010).
4. Dixon, M.B., C. Falconet, L. Ho, Removal of cyano bacterial metabolites by nano filtration from two treated waters, J. Hazard Mater, 1882: 88-95 (2011).
5. Sastry, M., A. Ahmad, M.I. Khan and R. Kumar, 2004. Microbial nanoparticle production, in Nanobiotechnology, ed. by NiemeyerCM and MirkinCA. Wiley-VCH, Weinheim, pp: 126-135.
6. Bhattacharya, D. and G. Rajinder, Nanotechnology and potential of microorganisms. Crit Rev Biotechnol., 25: 199-204 (2005).
7. Mohanpuria, P., N.K. Rana and S.K. Yadav, Biosynthesis of nanoparticles: technological concepts and future applications. J. Nano part Res., 10: 507-517 (2008).
8. Monalisa Pattanayak and P.L. Nayak, Green Synthesis and Characterization of Zero Valent Iron Nanoparticles from the Leaf Extract of Azadirachta indica (Neem), World Journal of Nano Science & Technology 2(1): 06-09, (2013).
9. O. Celebi, C. Uzum, T.Shahwan, H.N. Erten, Journal of Hazardous Materials 148, 761 (2007).
10. Y. Sun, X. Li, J. Cao, W. Zhang, H.P. Wang, Advances in Colloid and Interface Science120, 47 (2006).
11. L. Li, M. Fan, R.C. Brown, L. Van Leeuwen, Synthesis, Properties, and Environmental Applications of Nanoscale Iron Based Materials: A Review, Critical Reviews in Environmental Science and Technology 36, 405 (2006).

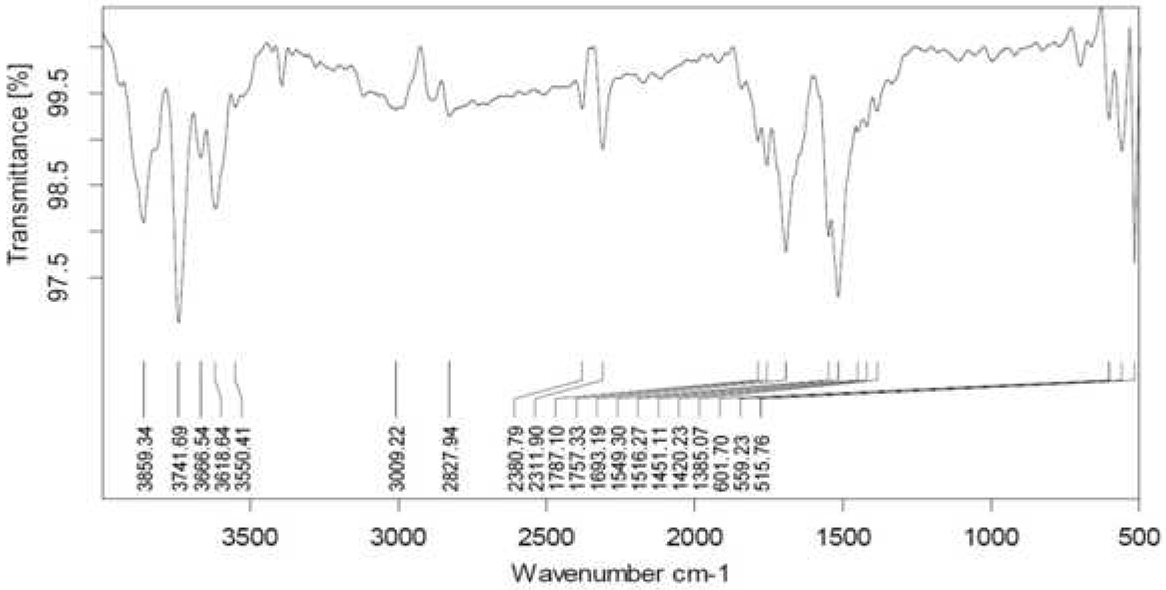

Fig. 1 FTIR spectrum of zero valent iron nanoparticles

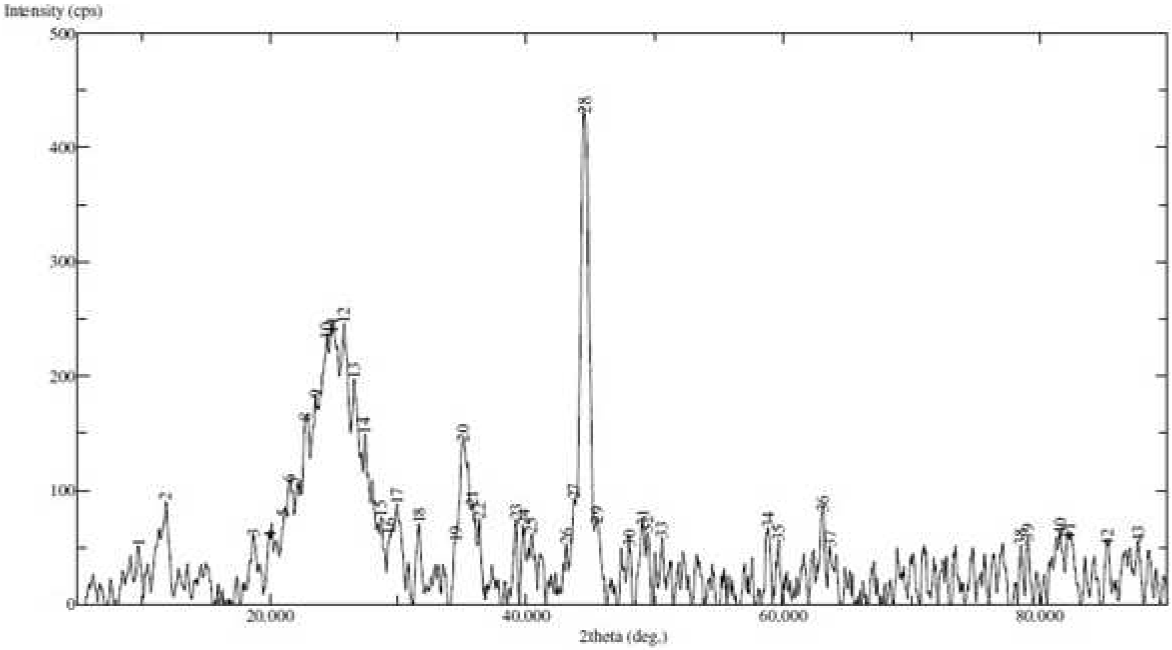

Fig.2 XRD pattern of zero valent iron nanoparticles

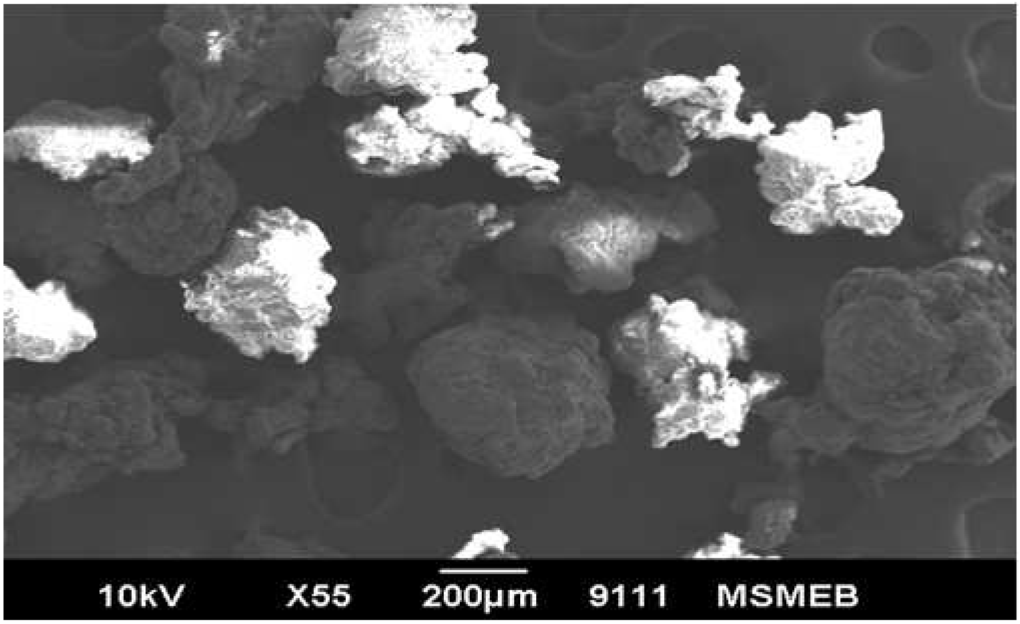

Fig.3 SEM image of zero valent iron nanoparticles

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Universal Basic Income : A Radical New Vision

Dr. P.K. Sirothia*

Introduction - Economic survey of 2016-17 come up with the idea of Universal Basic Income. Several scholar like **Guy Standing**and **PranobBardhan** has expressed support to the **UBI** after the successful completion of pilot project in Madhya Pradesh by SEWA and UNICEF in 2011, where they concluded that such type of system prove more productive for welfare of Indian Citizen.

First idea of UBI came in the mind of Thomas More when his book 'Utopia' published in 16th Century.

Universal Basic Income (also known as UBI) has emerged as one of the most exciting and ambitious ideas in a generation. Understood as an unconditional cash transfer offered to anyone regardless of their income, it has been heralded as an answer to the problem of poverty and social breakdown. It offers individuals the opportunity to lead the life they want to lead, say no to degrading and low paid work, and afford the chance to invest in boosting their own productivity.

More recently UBI has been heralded as the answer to wider problems of automation, wealth inequality and social mobility.

Examples from around the world - Many countries in the world have tried the idea of UBI in one form or the other

1. **Namibia**: A pilot project with basic income grant was implemented in the Namibian villages of Otjievero and Omitara. After the launch, the project was found to have significantly reduced child malnutrition and increased school attendance. It was also found to have increased the community's income significantly.
2. **Finland**: Finland recently concluded a two-year experiment on effects of UBI on unemployed citizens, which commenced in January 2017.
3. **Canada**: The government of Ontario, Canada had announced a plan to test a kind of unconditional income guarantee and enrolled participants in three areas of the province for a guaranteed income for up to three years.
4. **Netherland and Spain** : Some cities in the Netherlands have launched municipal level trials for UBI. Barcelona in Spain has also tested several potential changes to its anti-poverty programmes, including unconditional cash payments. In high-income countries (HICs), the main rationale for UBI is related to automation, artificial intelligence, stagnant real wages, etc.

Arguments for Universal Basic Income - The time has come to think of UBI for a number of reasons:-

Social Justice - UBI is, a test of just and non-exploitative society. From Tom Paine to John Rawls, nearly every theory of justice has argued that a society that fails to guarantee a decent minimum income to all citizens will fail the test of justice. A Universal Basic Income promotes many of the basic values of a society which respects all individuals as free and equal. It promotes liberty because it is anti-paternalistic, opens up the possibility of flexibility in labour markets. It promotes equality by reducing poverty. It promotes efficiency by reducing waste in government transfers. And it could, under some circumstances, even promote greater productivity.

Favourable for women – they face worse prospects in almost every respect of their daily lives – employment opportunities, education, health or financial inclusion. Simultaneously, there exists plenty of evidence on both the higher social benefits and the multi-generational impact of improved development outcomes for women. A UBI for women can, therefore, not only reduce the fiscal cost of providing a UBI for women can, therefore, not only reduce the fiscal cost of providing a UBI (to about half) but have large multiplier effects on the household. Giving money to women also improves the bargaining power of women within households and reduces concerns of money being splurged on conspicuous goods. The UBI could also factor in children in a household to provide a higher amount to women. This addition, though, has three potential problems – one, it may not be easy to identify the number of children in a household; two, it may encourage households to have a greater number of children; and three, phasing out boys from beneficiary list once they reach a certain age (say 18 year) may not be easy to monitor and undertake.

It will curb the issue of corruption related to other welfare programme and prevent leakages.

Poverty reduction - UBI may simply be the fastest way of reducing poverty. UBI is also paradoxically, more feasible in a country like India, where it can be begged at relatively low levels of income but still yield immense welfare gains. Advocates of UBI say its primary purpose is rooted in the clear theory that by giving someone money, they won't suffer from the five giant evils that Beveridge highlighted – want,

***Professor (Commerce) Vijayaraje Government Girls Post Graduate College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA**

disease, ignorance, idleness and squalor.

Employment - UBI is an acknowledgement that society's obligation to guarantee a minimum living standard, is even more urgent in an era of uncertain employment generation. Moreover, UBI could also open up new possibilities for labour markets. They allow for more non-exploitative bargaining since individuals will no longer be forced, to accept any working conditions, just so that they can subsist.

Agency - A UBI is also practically useful. The circumstances that keep individuals trapped in poverty are varied; the risks they face and the shocks they face also vary. The state is not in the best position to determine which risks should be mitigated and how priorities are to be set. UBI liberates citizens from paternalistic and clientelistic relationships with the state. By taking the individual and not the household as the unit of beneficiary, UBI can also enhance agency, especially of women within households.

Administrative Efficiency - In India in particular, the case for UBi has been enhanced because of the weakness of existing welfare schemes which are riddled with misallocation, leakages and exclusion of the poor, while Aadhar is designed to solve the identification problem, it cannot, on its own, solve the targeting problem. It is important to recognize that universal basic income will not diminish the need to build state capacity: the state will still have to enhance its capacities to provide a whole range of public goods. UBI is not a substitute for state capacity: it is a way of ensuring that state welfare transfers are more efficient so that the state can concentrate on other public goods.

Productivity Growth - Providing citizens with a UBI would allow each individual to invest more in their own economic capacity. This is most clearly understood in terms of accessing graduate and non-graduate education opportunities that increase the opportunity for work and wage progression UBI would allow all people to improve their skill capacity and raise their productivity.

Efficient use of Natural Resources – UBI could be a more appropriate means of redistributing wealth generated from natural resources. Advocates believe that this would be both the most efficient use of money, but also (in the third world) a clear moral obligation.

Reduction in Inequality and social division - UBI could help reduce economic inequality. Assuming UBI is distributed pre-tax and higher incomes are taxed on their UBI, the gap between poor and rich households would theoretically shrink.

Considerations against UBI

Disincentives to work – There is evidence to suggest that unconditional cash transfers disincentivise people to work and cause a reduction in the supply of labour within an economy. In the words of Mahatma Gandhi:-

"My ahimsa would not tolerate the idea of giving a free meal to a healthy person who has not worked for it, in some honest way, and if I had the power, I would stop every Sadavarta where free meals are given. It has degraded the mation and it has encouraged laziness, idleness, hypocrisy and even crime. Such misplaced charity adds nothing to the wealth of the country, whether material or spiritual, and gives a false sense of meritoriousness to the donor. How nice and wise it would be if the donor were to open institutions where they would give meals under healthy, clean surroundings to men and women who would work for them… only the rule should be: No labour, No meal." – Mahatma Gandhi

It is a worldview encapsulated in the quote by Gandhiji.

Affordability - The most practical argument against the implementation of a UBI is its affordability. Estimating the cost of UBI programmes is highly dependent on the parameters; the generosity of the transfer, the age condition of recipients.

Effectiveness – Does UBI make a difference for people in poverty? - The five non-financial roots of poverty – education failure, unemployment and welfare dependency, family breakdown, drug addiction and debt problems – are connected and often co-occur in a chaotic environment. Where one affliction exists, you often find others. And while money can help, solve short term problems such as providing emergency accommodation, food and clothing, state subsidies are less successful at helping to solve the deeper roots of poverty that afflict people up and down the country. Fundamentally, regardless of how generous state support is, unless a drug addict facing homelessness and without a good education gets access to bespoke support that helps them get off drugs, find a home and learn to read, they are unlikely to emerge out of their story state of destitution.

Concern out of reciprocity – If society is indeed a "scheme of social cooperation", should income be unconditional, with no regard to people's contribution to society? The short answer is that individuals as a matter of fact will in most cases contribute to society, as started above. In fact, UBI can also be a way of acknowledging, non-wage work related contributions to society. In the current social structure, for example, homemaking contributions of women are largely unacknowledged economically, since they do not take the form of wage or contract employment.It is important that UBI is not framed as a transfer payment from the rich to the poor. Its basis is rather different.

UBI gives concrete expression to the idea that we have a right to a minimum income, merely by virtue of being citizens. It is the acknowledgement of the economy as a common project. This right requires that the basic economic structure be configured in a way that every individual gets basic income.

Rise in inflation because of the abrupt increase in the demand for goods and services, people may spent it on alcohol and tobacco.

It may reduce labour supply due to laziness of labour.

How can a UBI overcome these issues?

Reduced out of system leakage because transfers are directed straight to the beneficiaries bank accounts.

The simplicity of the process cannot be overstated: beneficiaries are simply required to withdraw money from their accounts as and when they please, without having to jump through bureaucratic hoops. The simplicity of the process also implies that the success of a UBI hinges much less on local bureaucratic ability than do other schemes.

Out of system leakage: Conceptually, a UBI reduces out of system leakage because transfers are directed straight to the beneficiaries' bank accounts. The scope for diversion is reduced considerably, since discretionary powers of authorities are eliminated almost wholly.

Establish the principle of replacement and choice

Rather than provide a UBI in addition to current schemes, it may be useful to start off by offering UBI as a choice to beneficiaries of existing programs. In other words, beneficiaries are allowed to choose the UBI in place of existing entitlements. This strategy has many advantages, beyond simply containing costs. It gives people agency, not only in that they have greater choice, but importantly because they have greater power in negotiating with the administrators who are currently supposed to be giving them benefits.

Insurance Against Risk

Poor households (in fact even many of those above poverty) are often faced with idiosyncratic shocks such as bad health and job loss, and covariate or aggregate shocks such as natural disasters and political risk. Jha, Nagarajan and Pradhan (2012) show that slightly more than 50 percent of rural households across India face one or more forms of shock, with the most prominent being aggregate shocks (crop loss, water borne diseases, loss of property, cyclones, drought, etc.). In their data, about 60 percent of individuals use personal savings to cope up with these shocks. Government assistance comes a distant second with only close to 10 percent of individuals accessing it. The third most prominent option, at 6 percent, is borrowing from friends. In the face of such prominence of shocks, a guaranteed basic income can provide a basic form of insurance.

Being universal, exclusion errors under the UBI should be lower than existing targeted schemes

In addition, by focusing on universality, UBI reduces the burden on the administration further by doing away with the tedious task of separating the poor from the non-poor.

Exclusion Error - Given the link between misallocation and exclusion errors, a UBI that improves allocation of resources should mechanically bring down exclusion error. Furthermore, by virtue of being universal, exclusion errors under the UBI should be lower than existing targeted schemes.

Conclusion - While some say that a generous UBI programme is so expensive it would require a significant reduction in the provision of other social services and protections including healthcare, education, pensions and housing. And we remain skeptical of whether a UBI payment would offer better support than Universal Credit.

The 2017 Economic Survey had flagged the UBI scheme as **"A conceptually appealing idea"** and a possible alternative to social welfare programmes targeted at reducing poverty.Premised on the idea that a just society needs to guarantee to each individual a minimum income which they can count on, **Universal Basic Income is a radical and compelling paradigm shift in thinking about both social justice and a productive economy.**

References :-

1. Bardhan, Pranab (2016), "Could Basic Income Help Poor Countries?",Project Syndicate (https://www.project-syndicate.org/commentary/developing-country-basic-income-by-pranabbardhan-2016-06).
2. Sundaram, K. (2003), "On identification of households below poverty line in BPL census 2002: Some comments on proposed methodology", Economic & Political Weekly Volume 38 Issue No. 9
3. KheraReetika (2016) "A phased approach with make a basic income. Affordable for Indian. The Wire
4. World Bank (2015), "World Development Report 2015: Mind, Society, and Behaviour"
5. Economic Survey 2016-17, Government of India, Ministry of Finance, Department of Economic Affairs Economic Division January, 2017.
6. Evans, David K. and Anna Popova (2014) Cash Transfers and Temptation Goods.'A Review of Global evidences" – World Bank Policy Research Working Paper.
7. Joshi, Vijay (2016): Universal basic Income is worth fighting for even against the long odds of its implementation.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

अकबर कालीन सूबा इलाहाबाद में हिन्दू-मुस्लिम शिक्षा

डॉ. नीलम सोनी*

प्रस्तावना - मध्यकाल में सभ्य समाज के लिए शिक्षा की अनिर्वायता पर बल दिया गया। उचित शिक्षा के अभाव में तत्कालीन सामाजिक समस्याओं का न तो निराकरण किया जा सकता था और न ही शासन के नियमों को सही ढंग से समझ पाना ही सम्भव था। फलतः मुस्लिम समाज के शिक्षा विदों, धार्मिक व्यक्तियों चिन्तकों और विचारकों का ध्यान शिक्षा की ओर गया। आम मुसलमान जो मुस्लिम सत्ता से सम्बद्ध नहीं था उसे कुरान में उल्लिखित विषयों का ज्ञान हो सके इसके लिए इन शिक्षाविदों ने अरबी भाषा के ज्ञान की वृद्धि के लिए भरसक प्रयास किया। इनके प्रयासों से इस्लामिक शिक्षा का समाज में विकास तो हुआ। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में कोई विशेष उन्नति नहीं हो सकी।

फिर भी भारत में तुर्की सत्ता की स्थापना के उपरान्त मुसलमानों ने शिक्षा के प्रसार हेतु अनेक प्रकार की संस्थाओं जैसे कि मकतब, मदरस और खानकाहों की स्थापना की।[1] मुसलमान परिवारों में शिशु की शिक्षा विस्मिल्लाह खानी या मकतब संस्कार से प्रारम्भ होती थी। शिशु की आयु जब 4 वर्ष 4 माह 4 दिन की हो जाती थी तो उसके माता-पिता बड़े धूम-धाम से विस्मिल्लाह खानी या अक्षर बोध का संस्कार मौलवी या काजी द्वारा सम्पन्न करवाते थे।[2] इस अवसर पर शिशु से वर्णमाला का प्रथम अक्षर 'अलिफ' तख्ती पर लिखवाया जाता था। उसके बाद सम्पन्न परिवारों में शिशु को प्रारम्भिक शिक्षा देने के लिए शिक्षक नियुक्त किये जाते थे। इस शिशुओं का ज्ञान वर्णमाला, कुरान के पाठ, सुलेख, व्याकरण आदि विषयों तक ही सीमित रहता था। इसके पश्चात कुछ बड़े होने पर उन्हें साहित्य तथा इतिहास व नीति-शास्त्र इत्यादि विषयों का अध्ययन करना पड़ता था। वे पदनामा, आमदनामा, मुलिस्तॉ, बोस्तॉ, हार-ए-दानिश तथा सिकन्दरनामा का अध्ययन करते थे।[3] जो विद्यार्थी इसके उपरान्त शिक्षा नहीं ग्रहण करते थे उन्हें मुंशी तथा जो उच्च शिक्षा ग्रहण करते थे उन्हें मौलाना, मौलवी या फाजिल की पदवियॉ दी जाती थी। जो विद्यार्थी केवल अरबी की शिक्षा प्राप्त करते थे उन्हें कुरान के अतिरिक्त मुहम्मद साहब की जीवनी से सम्बन्धित ग्रंथ, कुरान की टीकाएं तसउफ्फ, दर्शन तथा अन्य विषयों का अध्ययन करना पड़ता था।[4]

इस काल में शिक्षा प्रणाली में शिक्षा संस्थाओं का महत्वपूर्ण स्थान था। सम्पन्न परिवारों के घरों में बैठक में परिवार व आस-पास के शिशु प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते थे। इस बैठक को मकतब कहते थे। मकतब के शिक्षक के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व उस परिवार पर ही रहता था जिन परिवारों के बच्चें वहॉ शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे, वे भी उसकी आर्थिक सहायता करते थे।

शिक्षा का दूसरा केन्द्र मदरसा था। राज्य द्वारा स्थापित मदरसों को राज्य की ओर से वित्तिय सहायता मिलती थी। 'ताज-उल-मासिर' के रचयिता हसन निजामी के अनुसार मुहम्मद गोरी ने अजमेर में अनेक मदरसों की स्थापना,शिक्षा का तृतीय महत्वपूर्ण केन्द्र सूफी सन्तों की खानकाहें थी। अजमेर में शेख मुइनुद्दीन चिश्ती की खानकाह, दिल्ली में शेख निजामुद्दीन औलिया की खानकाह, सीदी मौला की खानकाह, शिक्षा के सुप्रसिद्ध केन्द्र थे। दिल्ली व उसके समीप लगभग 2000 खानकाहें सूफी सन्तों की थी। जहॉ देश-विदेश से विद्यार्थी सूफीमत व आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते थे।[5]

इस काल में हिन्दू शिक्षा के महान केन्द्र बनारस, मिथिला, नदिया, काश्मीर, विक्रमशिला, गुजरात आदि थे। बनारस (वाराणसी) वेदान्त, संस्कृत साहित्य व व्याकरण की शिक्षा का महान केन्द्र था।[6]

सल्तनत काल के अन्तिम चरण में प्रान्तीय राज्य जब स्वतंत्र होने लगे तब उनके यहॉ भी शिक्षा की व्यवस्था में गुणात्मक सुधार आया। शर्की वंश की स्थापना के बाद शर्की सुल्तानों ने अपने साम्राज्य में नई शिक्षा नीति का अवलम्बन किया। देखते-देखते जौनपुर सारे विश्व में शिक्षा का प्रमुख केन्द्र बन गया। विश्व के तमाम इस्लामी देशों के छात्र यहॉ मतकब, मदरसों तथा खानकाहों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए काफी संख्या में आने लगे। इसीलिए शाहजहॉ ने इसे 'शीराज-ए-हिन्द' कहा था।[7] यही पर शेरशाह सूरी जैसा अद्‌भुत व्यक्ति शिक्षा विद् अध्ययनरत रहा।

भारत में मुगलों की विजय के पश्चात् शिक्षा की बड़ी प्रगति हुई।[8] बाबर स्वयं एक उच्चकोटि का विद्वान, साहित्यकार एवं कला का प्रेमी था। उसकी आत्मकथा 'बाबरनामा' एक अद्धितीय गन्थ है।[9] उसने सर्वप्रथम दिल्ली में एक मदरसा की स्थापना की थी, जिसमें परम्परागत इस्लामी विषयों के अतिरिक्त गणित, ज्योतिष तथा भूगोल आदि विषयों के अध्ययन की व्यवस्था की गई थी।[10]

सल्तनत काल की भॉति अकबर कालीन सूबा इलाहाबाद में प्राथमिक शिक्षा मस्जिदों से संलग्न मकतबों में या निजी व्यक्तियों के घरों में स्थापित मकतबों में दी जाती थी।[11] ये मकतब गांव, नगर और मुहल्ला के मस्जिदों से संलग्न होते थे। धनी वर्ग के लोग अपने बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा के लिए अलग से अध्यापक की नियुक्ति करते थे लेकिन उस क्षेत्र के जनसाधरण मकतब में अपने बच्चों को भेजते थे। इसके अतिरिक्त खानकाह और दरगाहों में भी प्राथमिक शिक्षा दी जाती थी।[12]

अकबर के शासन काल में भी मुस्लिम परिवार में जब बालक चार वर्ष, चार महिने और चार दिन का हो जाता था तो उसे शिक्षा देने की रश्म अदा की जाती थी, जिसे 'बिसमिल्लाह-खानी' कहते थे। इस अवसर पर बालक से वर्णमाला का प्रथम अक्षर 'अलिफ' तक्थी पर लिखवाया जाता था। यदि

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) राम सहाय राजकीय महाविद्यालय, शिवराजपुर, कानपुर (उ.प्र.) भारत

बालक हठी होता था और वर्णमाला सीखने से इन्कार करता था तो उससे केवल 'बिसमिल्लाह' कहलाया जाता था।[13] मकतबों में सभी वर्गो के लोग शिक्षा प्राप्त करते थे। सबसे पहले विद्यार्थियों का लिपि का ज्ञान कराया जाता था जो कुरान के 30वें अध्याय से जिसमें प्रतिदिन की प्रार्थना और फातिहा (दफनाने के समय पढ़ा जाने वाला पद्य) सम्मिलित रहता था, इसका अध्ययन करते थे। विद्यार्थियों को फारसी भाषा का व्याकरण कण्ठाग्र कराया जाता था। इसके बाद शेख शादी द्धारा रचित गुलिस्ता और बोस्तॉ का अध्ययन कराया जाता था। विद्यार्थियों को कुछ कविताएं जैसे- 'युसूफ' और 'जुलेखा' लैला और मजनूँ और 'सिकंदर-नामा' पढ़ाया जाता था। इसके अतिरिक्त प्राथमिक गणित, बोलचाल का ढंग, पत्र-व्यवहार, आवेदन-पत्र लिखना आदि सिखाया जाता था।

देश के अन्य भागों के समान सूबा इलाहाबाद में भी उच्च शिक्षा मदरसों में दी जाती थी, जहॉ विद्धान विद्यार्थियों को व्याख्यान देते थे।[14] भिन्न-भिन्न विषयों के अध्यापक विद्यार्थियों को पढ़ाते थे। साधारणत: इनके अध्यापक की नियुक्ति राज्य सरकार करती थी।[15] जो विद्यार्थी मकतब की पढ़ाई पूरी कर लेते थे उन्हें मदरसों में प्रवेश मिलता था। मदरसों का संचालन एक व्यक्तिगत प्रबन्ध समिति द्धारा होता था, जिसमें सम्भ्रान्त व्यक्ति होते थे।[16] हिन्दू शिक्षण संस्थाएं तीन प्रकार की थी:-

1. पाठशालाएं, जहॉ प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती थी।
2. टोल या विद्यालय, जहॉ उच्च शिक्षा दी जाती थी।
3. व्यक्तिगत शिक्षण संस्थाएं।[17]

हिन्दू बालकों की शिक्षा प्रारम्भ करने के सम्बन्ध में कोई विशेष नियम न थे और न और न कोई आयु निर्धारित थी। ब्राह्मणों में जब बालक की आयु 8 वर्ष की हो जाती थी तो परिवार के सदस्य एकत्र होकर मूंज से सवा दो गज लम्बी डोरी बनाकर मन्त्रों का उच्चारण करते हुए उसकी कमर में बॉध देते थे। तदुपरान्त उसे जनेऊ पहनाया जाता था। जिसे उपनयन संस्कार कहा जाता था। विधि के अनुसार इन संस्कारों को सम्पन्न करने के उपरान्त बालक को अक्षर बोध करवाया जाता था। उसके बाद उससे तख्ती पर 'हरि' या 'ऊ' या 'श्री' लिखवाकर उसकी शिक्षा प्रारम्भ की जाती थी।[18]

उस समय पाठशाला की शिक्षा से लोग काफी कुछ सीख लेते थे। व्यापारियों के लड़के प्राथमिक शिक्षा से ही इतने निपुण हो जाते थे कि अपना कारोबार भलीं-भॉति संभाल लेते थे, तथा सोने, चॉदी की परख करने में निपुण तथा बही खाते विधि पूर्वक लिखना और बाजार में बैठकर सरफिं का कार्य करते थे।

प्राथमिक शिक्षा के उपरान्त माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा की व्यवस्था टोल या विद्यालय में होती थी, जहॉ उन्हें चार शास्त्रों, व्याकरण, विधि, पुराण व दर्शन का अध्ययन कराया जाता था। पठन-पाठन की भाषा संस्कृत होती थी। अकबर के शासन काल में अनेक हिन्दुओं ने फारसी व अरबी का ज्ञान प्राप्त कर इस्लामी शिक्षा प्राप्त की। इस प्रकार उन्हें राज्य सेवा के विभिन्न विभागों में प्रवेश करने का अवसर मिला। तत्कालिन शिक्षा-प्रसार के विषय में यह निश्चित अनुमान किया जा सकता है कि सब नहीं तो कम से कम व्यापारी वर्ग के बहुत से लोग हिन्दी और फारसी उस समय पढ़ते थे और लिखने-पढ़ने में प्रवीण होते थे।

संभवत: मुस्लिम इतिहास में पहली बार, अकबर जैसे शासक को हिन्दू और मुसलमान दोनों को समान रूप से शिक्षा देने के प्रति उत्सुक पाते है। उसी के शासन में हमें हिन्दू और मुसलमानों को मदरसों और पाठशालाओं (विद्यालयों) में भी प्रथम बार साथ ही साथ अध्ययन करने का उदाहरण मिलता है।

सूबा इलाहाबाद में मुस्लिम शिक्षा का केन्द्र बनारस, जौनपुर, इलाहाबाद जैसे बड़े नगर थे। मकतब में शिक्षा बहुत साधारण ढंग से दी जाती थी। बालकों को 'कलमा' याद कराया जाता था। इसके बाद विद्यार्थियों को कुरान की कुछ आयतें बतलाई जाती थी। जब बालक की उम्र सात वर्ष हो जाती थी तब से धार्मिक शिक्षा दी जाती थी और उसे साधारण गणित सिखाया जाता था। संक्षेप में, अकबर ने इस पर जोर दिया कि शिक्षण में प्रमुख भाग शिक्षक का नहीं अपितु विद्यार्थी का होना चाहिए। उसने इस प्रकार जैसे आधुनिक शिक्षण पद्धति की पहल की, जिसके अनुसार विद्यार्थियों को ज्ञान प्राप्त करने के लिए स्वंय परिश्रम करना पड़ता है। और शिक्षक का कार्य उनका कार्य करना नहीं, बल्कि केवल उन्हें सहायता देना होता है।

अकबर द्धारा विकसित यह नयी पद्धति अधिक समय तक न चल सकी और धीरे-धीरे उसका ह्रास होने लगा। यही कारण था कि औरंगजेब ने अपने शासनावधि में शिक्षा में नये परिवर्तन की आवश्यकता समझी।

उच्च शिक्षा मदरसों में दी जाती थी, वह भी प्राय: मौखिक होती थी। यद्यपि मदरसों में योग्य और अनुभवी शिक्षक रखे जाते थे, फिर भी बौद्ध शिक्षा प्रणाली की तरह मानीटर (कक्षा का वरिष्ठ विद्यार्थी या कक्षा नायक) पद्धति प्रचलित थी। इस व्यवस्था से शिक्षक की अनुमति से उॅची कक्षा के छात्र निचली कक्षा के छात्रों को पढ़ाते।

अकबर इस व्यवस्था से संतुष्ट नहीं था, क्योंकि इससे बहुत समय नष्ट होता था। उसने इस दोष को दूर करने के लिए प्राचीन भारतीय पद्धति का अनुसरण किया और लिखने-पढ़ने को कार्य छात्रों से साथ-साथ लिया जाने लगा।

मध्यकाल में स्वाध्याय की पद्धति भी प्रचलित थी। छात्र अकेले अध्ययन करते थे और समय-समय पर अपने शिक्षक से निर्देश प्राप्त करते थे। इस तरीके में तोते की तरह रटने की प्रक्रिया थी। अकबर के समय में ही नहीं बल्कि पूरे मध्य युग में शिक्षा पद्धति लचीली नहीं था। यह अधिक कठोर और अनुत्पादक थी। समय-समय पर जो शिक्षा पद्धति में संशोधन किये गये उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसकी सबसे बड़ी विफलता यह थी कि इसमें समायनुकूल परिवर्तन नहीं किया ता सकता था।

उच्च शिक्षा के लिए टोल या चतुष्पदी था जिसे चोपारी के नाम से भी पुकारा जाता था। इन विद्यालयों में विद्यार्थी संस्कृत भाषा और साहित्य, पुराण, वेद, दर्शनशास्त्र, आयुर्विज्ञान, ज्योतिष शास्त्र, खगोल विद्या आदि का अध्ययन करते थे। प्राथमिक पाठशालाओं में स्लेटो, पेन्सिलें और सियाह तख्ते को इस्तेमाल नहीं किया जाता था। विद्यार्थी चटाइयों पर बैठते थे। और शिक्षक चौकी पर बैठते थे। सुन्दर लिखावट पर जोर दिया जाता था। उच्च कक्षाओं में स्याही और कागज का प्रयोग किया जाता था।

कक्षाएं प्रात:काल से दोपहर तक होती थी और फिर एक घंटे के अवकाश के पश्चात अपरान्ह में लगा करती थी। छात्र सन्ध्या को घर जाते थे। कोई निर्धारित शुल्क नहीं लगता था। लेकिन विद्यार्थियों को गुरू की सेवा करनी पड़ती थी। अपराधी विद्यार्थियों को कभी-कभी कक्षाएं समाप्त होने के पश्चात् एक-दो घण्टे रोक लिया जाता था, और कभी-कभी उन्हें कष्टदायक आसनों का दण्ड भी दिया जाता था।

अकबर ने 1580 ई0 में सभी जातियों के विद्धानों को भूमि और नकद अनुदान देने का व्यवस्था किया। अकबर से पूर्व हिन्दू शिक्षण संस्थाओं और विद्धानों को राजकीय अनुदान नहीं प्राप्त होता था। अकबर की इस नीति के कारण शिक्षा पर शीघ्रता से प्रसार हुआ और संस्कृत भाषा को पुन:

अध्ययन किया जाने लगा।

उस समय आज–कल की भॉति वार्षिक परीक्षाएं नहीं होती थी। विद्यार्थियों को शिक्षक उसकी योग्यता के अनुसार अगली कक्षा में प्रवेश दे देता था। शिक्षक अपने छात्रों से घनिष्ट रूप से परिचित होता था। इसलिए छात्रों की योग्यता का अनुमान करने में उसे कठिनाई नहीं होती थी।अध्ययन काल समाप्त होने पर वह छात्रों की परीक्षा अपने ढंग से लेकर उसे उपाध्याय, महामहोपाध्याय, सर्वभौम की उपाधियॉ देता था। अकबर कालीन सूबा इलाहाबाद के मदरसों में जो पाठ्यक्रम प्रचलित था उसका अनुमान 18वीं सदी के पाठ्यक्रम से हो सकता है। इस पाठ्यक्रम को दस–ए–निजामी कहते थे। इसमें 11 विषय होते थे, और सबके लिए अलग–अलग पुस्तकें थी।

अकबर मध्य युगीन भारत का प्रथम शासक था, जिसने पाठ्यक्रम में सुधार की आवश्यकता को समझा। अकबर ने हिन्दू विद्यार्थियों के लिए निर्देश दिया कि संस्कृत पाठशालाओं के विद्यार्थियों को व्याकरण, न्याय, वेदान्त और पंजजलि का भाष्य पढ़ना चाहिए। उसने इस पर विशेष जोर दिया कि 'किसी को भी इन बातों (विषयों) की जिनकी इस समय आवश्यकता है, उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।' यह वास्तव में उन मदरसों के पाठ्यक्रम में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन ही था जो अकबर के समय के पहले से केवल मुस्लिम धर्मशास्त्र और पाठ्य विषयों को तो पढ़ाते चले आ रहे थे पर भारत से सम्बन्धित विषयों की अवहेलना करते रहे थे। अकबर ने हिन्दी, भारतीय इतिहास और हिन्दू दर्शन के पढ़ाये जाने पर विशेष जोर दिया। वह अपने इन सभी निर्देशों को गम्भीरता से पालन कराने को उत्सुक था जैसा इस बात से पता चलता है कि उसने स्वयं अपने पुत्रों और पौत्रों को इन विषयों को पढ़ाये जाने की व्यवस्था की थी।

सूबा इलाहाबाद में मुस्लिम समाज की बालिकाए, बालकों के साथ मकतबों और मदरसों में अध्ययन के लिए नहीं जा सकती थी। केवल लड़कियॉ उस क्षेत्र की मसजिद से संलग्न मकतब में जाती थी जिनका उद्देश्य साधारण ढंग से लिखना और पढ़ना होता था।

इस प्रकार अकबर कालीन सूबा इलाहाबाद में अकबर द्वारा हिन्दू मुस्लिम शिक्षा के लिए जो भी शिक्षा व्यवस्था अपनायी गयी वह सल्तनत कालिन शिक्षा व्यवस्था में कुछ परिर्वतन करते हुए एक नये सिद्धान्तों के साथ स्वीकार कर लिया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रो0 रोधश्याम, मध्यकालीन प्रशासन समाज एवं संस्कृति, पृ0 295.
2. रशीद, ए. सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मिडिवल इण्डिया, पृ. 150,
3. रावत, पी.एल. हिस्ट्री आफ इण्डियन एजूकेशन, पृ. 93
4. प्रो. राधेष्याम, मध्यकालीन प्रशासन समाज एवं संस्कृति, पृ. 295.
5. प्रो. राधेश्याम, मध्यकालीन प्रशासन समाज एवं संस्कृति, पृ. 296.
6. चोपड़ा, पुरी, दास, भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ. 142–44.
7. ला. एन. एन., प्रमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया, ड्यूरिंग मुहम्मडन रूल, पृ. 103.
8. युसूफ हुसेन, ग्लिम्पसेज आफ मिडिवल इण्डियन कल्चर, पृ. 78.
9. तुर्की भाषा का यह बहुमूल्य ग्रन्थ है। इसकी तुलना सेण्ट आंगस्टीन, रूसों, गिबन और न्यूटन की आत्मकथाओं से की जाती है। एडवर्ड, एम.एम. एवं जैरेट, एच.एल. ओ., मुगल रूल इन इण्डिया, पृ. 225.
10. अहमद, लईक, मध्यकालीन भारतीय संस्कृत, पृ. 46–47.
11. जाफर एस.एम., सम कल्चरल आस्पेक्ट्स आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृ. 76, रशीद, ए., सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मिडिवल इण्डिया, पृ. 158.
12. जाफर, एस.एम., एजूकेशन एन मुस्लिम इण्डिया, पृ. 32.
13. रावत, पी.एल., हिस्ट्री आफ इण्डियन एजूकेशन, पृ. 93.
14. मदरसों का संचालन राज्य सरकार के द्वारा होता था जबकि मकतब का प्रबन्ध संस्थाओं द्वारा होता था। युसूफ हुसेन, ग्लिम्पसेज आफ मिडिवल इण्डियन कल्चर, पृ. 71.
15. रसीद, ए., सेसाइटी एण्ड कल्चर इन मिडिवल इण्डिया, पृ. 154–57.
16. रावत, पी.एल., हिस्ट्री आफ इण्डियन एजूकेशन, पृ. 94.
17. ओझा, पृ. 87, प्रो. राधेश्याम, मध्यकालीन प्रशासन समाज एवं संस्कृति, पृ. 305–6.
18. वही, पृ. 87, प्रो. राधेश्याम, मध्यकालीन प्रशासन समाज एवं संस्कृति, पृ. 305–6.

****

Physical Effects on Women Using Ordinary Salt and Rock Salt

Dr. Shikha Yadav *

Abstract - Rock salt (NaCl) is an ionic compound that occurs naturally as white crystals. It is extracted from the mineral form halite or evaporation of seawater. The structure of NaCl is formed by repeating the face centered cubic unit cell. It has 1: 1 stoichiometry ratio of Na: Cl of a molar mass of 58.4 g / mol. Compounds with the sodium chloride structure include alkali halides and metal oxides and transition-metal compounds. An important role Some applications include crystallization of proteins and conformational behavior of peptides and nucleic acids.

Introduction - Salt is considered to be the essential element for human body. By using proper quantities of it, the dishes are not eatable due to the special flavored and tasteless use of less or more quantities. There is no definite proportion of its use, as different members of the family are used in different quantities according to the taste. Salt is not just a normal diet. Its role in foodstuffs is ego. In addition to food items, it also has medicinal value. While people with high blood pressure are completely prohibited, patients with low blood pressure (low blood pressure) are advised to consume salt in excessive amounts. Salt is considered essential element for human body.

According of different Reviews - Rock salt is considered to be the most pure salt, because it does not contain adulteration and chemicals. Very few people know that this salt is not just a spice, but it contains all the ingredients that require a body. Like iron, calcium, potassium, gink and many other stones are present in the salt. You can eat it by eating it or you have supplements, powder and pills in the market which you can take. But do not take it without a doctor's suggestion

Rock salt is quite effective in the treatment of poor digestion. It works like a medicine, which improves digestion. They also provide relief in your hunger and gas.

Everyday the rock replaces the lost electrolytes of body by eating salt and maintains the pH level. It stimulates blood circulation and removes the existing dirt and toxic mineral in the body.

It maintains the balance of blood pressure levels. Rock salt removes many herpes and worms from the treatment of diseases, with acne and pains. They are found in every Indian house.

When rock salt is taken with lemon juice, it provides relief from stomach worms and also prevents vomiting. Seasoned salt made of salt and water from the water provides relief from chronic arthritis, stones. Instead of buying an expensive Salt bath, you can make yourself without spending any rupees, add your own tea salt, add 1 teaspoon rock salt to your bath water and then use that water for bathing. Bathing with this water will give you relief, it relaxes the throat muscles, makes body datoxyfaay. Along with this, you control your blood pressure.

Rock salt (NaCl) is an ionic compound that occurs naturally as white crystals. It is extracted from the mineral form halite or evaporation of seawater. The structure of NaCl is formed by repeating the face centered cubic unit cell. It has 1: 1 stoichiometry ratio of Na: Cl of a molar mass of 58.4 g / mol. Compounds with the sodium chloride structure include alkali halides and metal oxides and transition-metal compounds. An important role Some applications include crystallization of proteins and conformational behavior of peptides and nucleic acids. (6.11A: Structure - Rock Salt (NaCl) 2019) This presentation is related to the use of rock salt and ordinary salt of Indian women and its physical consequences.

Objectives of the Study :

1. Know the effects of using ordinary salt in women.
2. Study the uses and effects of rock salt and ordinary salt.

Question of study :

1. Is using rock salt has a positive effect on women's health.

Data Collecting Techniques and Sources - In the research presented, both primary and secondary sources have been employed. Interview-schedule method has been used with the observation method for basic fact collection. With the study done prior to collection of secondary facts, the basis for the public and non-government published publications related to food habits has been made. Assuming women as important, fact-finding has been completed in a direct and indirect way.

Participant & Sampling - Purpose and presentation of this study, completed in Kanpur city of Uttar Pradesh, is to work with the working women and gathering facts. The use of

*Asst. Professor (Chemistry) Govt. Degree College, Shivrajpur, Distt. Kanpur (U.P.) INDIA

objective and convenient demonstration. This demonstration method has been effective due to legal process and time limit liability. Thus, as per the above mentioned details from the city of Kanpur, 50 women have been included in the study.

Respondent by age

Figure 01 : Respondents according to age

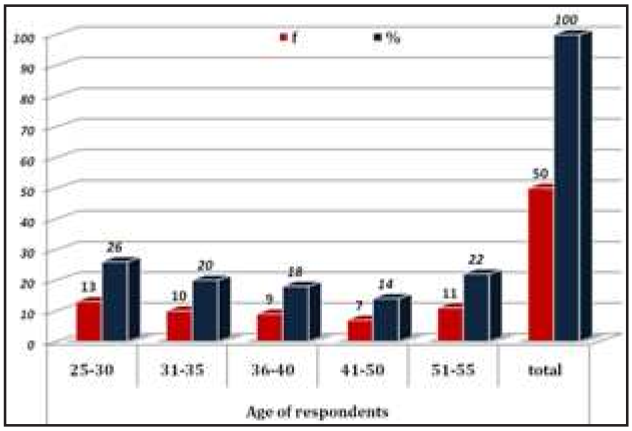

For this experiment we selected 50 women, who were 25 to 55 years old. In the above figure 01, the details of the 50 female respondents are given as per the age of age, in which 26% of women are aged 25 to 30 and 20% are women aged 31 to 35 and 18% women are 36 to 40 years old, 14 percent of women are aged 41 to 50 years while 22 percent of women are aged between 51 and 55 years.

Respondent by social class

Figure 02: social class

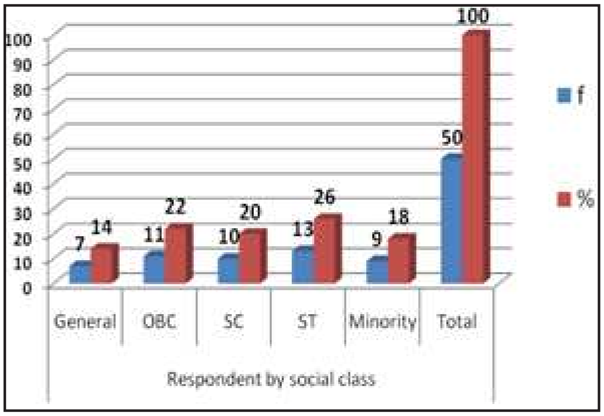

In the above figure 02, the social class of the respondents has been given in which there are 7 (14 percent) women from the general category, 11 (22 percent) women from other backward classes, 10 (20 percent) women from Scheduled Castes category, Scheduled Tribes There are 13 (26 percent) women, 9 (18 percent) women from the minority category. In the conclusion, we can say that the highest percentage is of scheduled caste women and the lowest common category is of women.

Marital Status

Figure 03 : Respondent by marital status

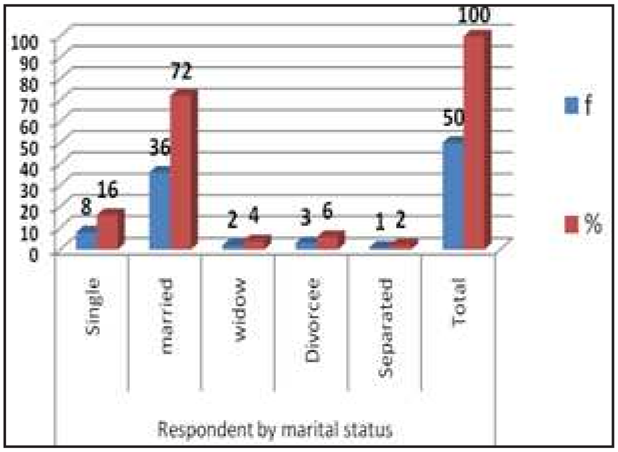

In the above picture 03, the details of marital status are given in which there are 8 (16%) women unmarried, 36 (72%) women are married, 2 (4%) are widowed women, 3 (6%) women divorced and 1 (2%) the women separated. In conclusion, we can say that the highest percentage is of married women and unmarried women are less.

Experiment - The control group of 50 women mentioned above was taken to see the effect of rock salt and ordinary salt, in which 25 women were given for rock salt for 1 month and 25 women were given for normal salt meals. Prior to this experiment some tests of all women were done in which the examination of diabetes, blood pressure was checked. The codes were given to the women in which the women eating rock salt were given 1 to 25 and the normal salt was given to the number of 26 to 50 codes.

Table : 01 : Reports of women with rock salt before experiment (Respondent code 1 to25)

Perimeter	Diabetes	Blood pressure
Controlled	1,2,3,4,5,7,8,9,10, 11,1415,17,19,20, 21,24	1,2,3,4,5,7,8,9,10, 11,1415,17,19,20, 21,24
Ordinary	13,18,23,25	13,12,23,25
Uncontrolled	12,16, 22	18,16, 22

Diabetes and blood pressure examination of women in the 1st and 25th of the code before consuming rock salt in the above table was found in which it found that diabetic levels of 17 women were found to be controlled and four women were found to be diagnosed with Diabetes and 3 women were found Uncontrolled Similarly, blood pressure check was found 17 levels of women were found and 4 women were found to be diagnosed with diabetes and 3 women were found to be uncontrolled. If, according to the Respondent Code, checks for diabetes and clonic examination of the codes 1 to 11, and 14, 15, 17, 19, 20, 21, 24 were regulated. Code 13,18,23,25 was found to be normal for diabetes, but the blood pressure check code is 13,12,23,25 in normal condition and 18,16,22 of the code was found uncontrolled. Diabetes mellitus codes 12,16, 22 were found to be uncontrolled.

Table : 02 : Reports of women with normal salt before experiment

(Respondent code 26 to 50)

Perimeter	Diabetes	Blood pressure
Controlled	27,29,30,31,32, 35,43,44,45,47, 48,49,50	27,29,30,31,32, 35,43, 49,50
Ordinary	34,36,38,39,40, 41,42,	44,45,47,48,40, 41,42,
Uncontrolled	26, 28, 33,37, 46	26, 28, 33,37, 46, 34, 36,38,39

Prior to eating simple salt in the above table, diabetes and blood pressure examination of 26 to 50 codes of women were found in which it found that diabetes levels of 13 women were found to be controlled and 7 women were found to be diagnosed with Diabetes and 5 women were found to be normal. Uncontrolled Similarly, blood pressure check was found to control the level of 9 women and diagnosis of diabetes of 7 women was found to be common and 9 women were found to be uncontrolled. If, according to the Respondent Code, the code of 27,29,30,31,32,32,35,43,44,45,47,48,49,50 diabetic checks were found to be seen. Code of 34,36,38,39,40,41,42, diabetic examination was found to be normal and Diabetes Code 26, 28, 33,37,46 were found to be uncontrolled. Similarly, the blood pressure check codes of 27,29,30,31,32,35,43,49,50 were found to be controlled code 44,45,47,48,40,41,42 test checks were found normal and 26, 28,33,37,46,34,36,38,39 chromosomes of the code were found unchecked.

After one mounth reports

Table : 03 - Reports of women with rock salt after experiment (Respondent code 1 to25)

Perimeter	Diabetes	Blood pressure
Controlled	1,2,3,4,5,7,8,9,10, 11,1415,17,19,20, 21,24	1,2,3,4,5,7,8,9,10, 11,1415,17,19,20, 21,24
Ordinary	13,18,23,25	13,12,23,25
Uncontrolled	12,16, 22	18,16, 22

According to the Respondent Code, checks for diabetes and clonic examination of the codes 1 to 11, and 14, 15, 17, 19, 20, 21, 24 were regulated. Code 13,18,23,25 was found to be normal for diabetes, but the blood pressure check code is 13,12,23,25 in normal condition and 18,16,22 of the code was found uncontrolled. Diabetes mellitus codes 12,16, 22 were found to be uncontrolled.

Table : 04 - Reports of women with normal salt after experiment (Respondent code 26 to 50)

Perimeter	Diabetes	Blood pressure
Controlled	27,29,30,31,32, 35,43,44,45,47, 48,49,50	27,29,30,31,32,35, 43, 49,50
Ordinary	34,36,38,39,40, 41,42,	44,45,47,48,40, 41,42,
Uncontrolled	26, 28, 33,37, 46	26, 28, 33,37, 46,34, 36,38,39

According to the Respondent Code, the code of 27,29,30,31,32,32, 35,43,44,45,47,48,49,50 diabetic checks were found to be seen. Code of 34,36,38,39,40, 41,42, diabetic examination was found to be normal and Diabetes Code 26, 28, 33,37,46 were found to be uncontrolled. Similarly, the blood pressure check codes of 27,29,30,31,32,35,43,49,50 were found to be controlled code 44,45,47,48,40,41,42 test checks were found normal and 26, 28,33,37,46,34,36,38,39 chromosomes of the code were found unchecked.

Results :

1. There is no special difference in pre and post examination of rock salt and ordinary salt on women.
2. According to the women, they had to take less than the usual food in the daily rock salt because they are more scrupulously.
3. Rock salt dissolves with the delay in comparison to ordinary salt.

Suggestion :

1. Any food should be taken after innovation and doctor's opinion.
2. Some chemical components can be found both profit and loss at the same time.
3. There is a need to further control the above test, in which the weight of women, community and age and the same food and drinking habits of water should also be seen.
4. The said test can also be done in weekly, fortnightly and monthly and quarterly time limits

References :-

1. Gao, H.X., L.-M. Peng, and J.M Zuo. "Lattice dynamics and Debye-Waller factors of some compounds with the sodium chloride structure." Acta Crystallographica: Section A (Wiley-Blackwell) 55.6 (1999): 1014. Academic Search Complete. EBSCO. Web.
2. Housecroft, Catherine E., and Alan G. Sharpe. Inorganic Chemistry. 3rd ed. Harlow: Pearson Education, 2008. Print.
3. Jun Soo, Kim, and Yethiraj Arun. "A Diffusive Anomaly of Water in Aqueous Sodium Chloride Solutions at Low Temperatures." Journal of Physical Chemistry B 112.6 (2008): 1729-1735. Academic Search Complete. EBSCO. Web.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारतीय दर्शन में आचार मीमांसा

देवदास साकेत *

शोध सारांश – दर्शन की शाखा आचार मीमांसा या कर्तव्यशास्त्र के प्रधान विषय है, किन्तु व्यक्ति के आचरण को लेकर एक प्रश्न खड़ा होता है कि वह अपने जीवन को किस प्रकार सफल बनायें। इस पृथ्वी पर दो तरह के दृष्टिकोण सामने आते हैं। प्रथमत: इस जगत् में मानव के जीवन की दिशा निर्सगत: बुरी दिखाई देती है। वैसे भी उन कामनाओं की सृष्टि ने प्रकृति के सुख की उपलब्धि के उद्‌श्यों से परिपूर्ण किया है। किन्तु वह वास्तविक रूपों में दु:ख उत्पन्न करने वाले हैं, जिस प्रकार से जो व्यक्ति दिशाओं में भटकता है। वही दिशा को प्राप्त करता है। सच्चाई देखने का प्रयास किया जाये तो लगता है कि इस प्रकृति में एक मात्र दु:ख ही वास्तविक सत्ता है। वैसे भी निराशा की उत्पत्ति ही अंत के कारण होती है। दु:ख से ही सुख की प्राप्ति सुनिश्चित होती है। इसी से निराशा के उत्पन्न होने से आशा की किरणे प्रज्वलित होती है। जहाँ निराशा नहीं है वहाँ आशा का कोई भी अस्तित्व दिखाई नहीं देता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र विषय में '**भारतीय दर्शन में आचार मीमासा' में** द्वितीयक तथ्यों के द्वारा अध्ययन कर सामाग्री का संकलन किया गया है। इसमें विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक विधि के रूप में शोध पर को तैयार किया गया है। इसके साथ मूल ग्रन्थों का अध्ययन करते हुए विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है।

समस्या – व्यक्ति में लालच, द्वेषु, अकर्मणता, मोह आदि गुणों के कारण समस्याऐं विद्यमान है। लूट-खसोट आदि के कारण व्यक्ति में एक-दूसरे के प्रति विश्वास टूटता जा रहा है। व्यक्ति में चिन्तन करने की प्रवृत्ति समाप्त होती जा रही है। वह स्वयं में सोचता कम है कि क्या सही है और क्या गलत है। उसके परिणाम जाने बिना ही कार्य को करता जा रहा है। इससे समाज में अनेकों प्रकार की विसंगतियाँ जन्म ले रही है।

उद्देश्य – व्यक्ति में यदि सही सोचने की शक्ति विद्यमान हो गई तब कभी भी मानवीय मूल्यों की समस्या नहीं उत्पन्न होगी। दर्शन हमेशा मानव को सही दिशा दिखाने का प्रयास करता है। इसीलिए भारतीय दर्शन में आचार शास्त्र की विशेष चर्चा की गई है। मानव में नैतिकता ही सबसे बड़ा उद्देश्य है।

समाधान – भारतवर्ष में दर्शन तथा धर्म का प्रगाढ़ सम्बन्ध है। उसी प्रकार तत्तवज्ञान तथा भारतीय जीवन का गहरा सम्बन्ध है। त्रिविध संताप से सन्तप्त जन की शान्ति के लिए, क्लेशमय संसार से आत्यन्तिक दु:खनिवृत्ति के लिए भारत में दर्शनशास्त्र का प्रादुर्भव होता है।[1] *भारतीय दर्शन पृष्ठ 9*

दर्शन ही मानव जीवन के मानवीय मूल्यों के प्रकाश को संजोये हुए है। वही मूल्य व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करता है। धर्म ही सत्य है। सत्य के प्रकाश से संसार प्रकाशमान हो रहा है। इसके बिना व्यक्ति के मूल्यों का उद्‌विकास नहीं हो सकता है।

इसी से मानव के मूल्यों की विशेषताओं का पता चलता है। धर्म का उच्च आदर्श केवल इस शरीर के लिए नहीं कहा जा सकता है। अपितु देहत्याग के उपरांत भी धर्म उसके साथ रहता है। इसका प्रमाण स्वरूप बृहदारण्यकोपनिषद्‌के मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य-संवाद में कहा गया है- कि मानव में सबसे बढ़कर प्रिय आत्म तत्व है और आत्म तत्व के प्रियका साधन धर्म है। धर्म ही मानव की नैतिकता है।[2]

जिस प्रकार से मनुस्मृति में कहा गया है। कि -

सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक्पृथक्।
वेदशब्देभ्य एवाऽऽदौ पृथक् संस्थाश् च निर्ममे।[3]

मनुस्मृति श्लोक 1/21

ब्रह्म ने संसार के सभी पदार्थो का उक्त स्थान काल की दृष्टि से नाम प्रदान किया है। अनेकानेक कर्मो को अनेकानेक परिस्थियों को भी सृष्टि के उद्धारक वेदों के शब्दों को ही जानकर बनाया है, जिस तरह से नील गाय का उदाहरण अनुमान लगाने वाले को यह ज्ञान न हो की यह आकृति गाय के समरूप है। तो वह नील गाय का पता नहीं लग सकता है। परमपिता परमेश्वर ने इस जीवन और जगत् में वेदों के शब्दों से अनेक जीवों और प्राणियों का नाम कर्म के साथ-साथ लौकिक जगत् की सम्पूर्ण व्यवस्थाओं का निर्माण किया है।

नानारूपं च भूतानां कर्मणां च प्रवर्तनम्।
वेदशब्देभ्य एवादौ निर्मिमीते स ईश्वर:।।
नामधेयानि चर्षीणां याश्च वेदेषु सृष्टय:।
शर्वर्यन्ते सुजातानामन्येभ्यो विदधात्यज:।।[4]

महाभारत शान्तिपर्व- श्लोक 25-26

अनेकों प्रकार के पदार्थों और प्राणियों का नाम ईश्वर कृत है। इस संसार के प्रत्येक प्राणी के कर्मो का भी वर्णन विधि-विधान सहित वेदों के द्वारा ही अनादिकाल से इनके नामों को रखा गया है। अनकों ऋषियों और इस सृष्टि के पालनकर्त्ता भगवान ने सब पदार्थों का इस पृथ्वी के प्रभातकाल में अपने द्वारा वर्णित सभी पदार्थों के आदि और दूसरों के नामों का उल्लेख बड़ी ही गम्भीरता से करते हैं।

प्राचीन लेखकों और उनके अनुयाईयों के द्वारा अनेकों ऐसे यज्ञों में विभिन्न वेदमन्त्रों का विनियोग किया है। इन यज्ञों में कुछ यज्ञ ऐसे भी होते थे। जिनमें कई तरह के पशुओं की बलि दी जाती थी। उस पशु की बलि के मॉस तथा अंग-प्रत्यंगों से आहुतियाँ देने का प्रचलन था।

'गौमेद्य यज्ञ में गाय को मारकर उसके माँस से आहुतियाँ दी जाती थी।' 'अश्वमेध यज्ञ मे -घोडे को मारकर उसके माँस से आहुतियाँ दी जाती थी।' 'अजमेद्य, अविमेद्य यज्ञों में बकरे तथा भेड़ों को मारकर उसके माँस से आहुतियाँ दी जाती थी।' यह बलि प्रथ बहुतायत में प्रचलित थी। यह यज्ञ सम्पन्न करने

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

के लिए उस काल में आवश्यक माना जाता था। यहाँ तक की नरमेद्य यज्ञ की भी कल्पना की गयी थी।[5]

ऐसे ऋषियों के मॉस खाने में कोई प्रतिबन्ध नहीं था। किन्तु शूद्र वर्ग को वेदों के अध्ययन जैसे क्रियाकलापों से अलग करना क्या उचित था। क्योंकि अगर शूद्र की उत्पत्ति ईश्वर के पैरों से होने के कारण क्या वह अपवित्र था। जबकि गंगा की उत्पत्ति नारायण के चरणों से हुई। ऐसी दशा में आप क्या कहेगें की गंगा भी अपवित्र है। उनकों भगवान शंकर ने अपने शीश में स्थान दिया। गंगा की पवित्रता को कौन नहीं जानता।

इस प्रकार वेदों के नाम पर इस तरह के यज्ञों में इस प्रकार की विसंगतियों के कारण भारत की जो कई परम्पराओं का उदय होने के कारण भी इतनी महँगी बलि प्रथा को भी कारण माना जा सकता है। इन्हीं विसंगतियों के कारण कुछ धर्म पंथ भी उगें जिस प्रकार से महात्मा बुद्ध, स्वामी महावीर जैन आदि दार्शनिक आते हैं। इसके बाद समकालीन दार्शनिकों ने वेदान्त की परम्परा का निर्वहन करते हुए। नव्य वेदान्त की तरफ से समाज में सुधार करने का प्रयास किया। जिसमें से महाषि दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द अनेकों दार्शनिकों में से बलि प्रथा का घोर विरोध किया। किन्तु बौद्ध और जैन ईश्वर के अस्तित्व को मानने से ही इंकार कर दिया। जिन्होंने स्वामी विवेकानन्द के सर्वधर्म समभाव की बात करके भी मानव समाज के सामने एक नया युग ही लाकर खडा़ कर दिये।

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।[6]

श्रीमद्भगवद्गीता 2/27

जो व्यक्ति पैदा हुआ है। उस व्यक्ति की मृत्यु अवश्य होगी, जो मर गये है उसका जन्म भी नितान्त आवश्यक है। इसलिए असंभावी बातों पर तुम्हें विचार या शोक नहीं करना चाहिए।

व्यक्ति को हमेशा अपने सच्चे कार्यों पर ही विश्वास करना चाहिए। सत् कार्य के अलावा सफलता का कोई रास्ता ही नहीं है। जो सत् को छोड़कर कार्य करते है। क्षणमात्र के लिए ही सुखी होते हैं। उसके बाद हमेशा दु:खों में ही विरक्त रहते हैं।

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तत्तो पदं संग्रहेण ब्रवीमि; ओमित्येतत्।[7]

उपनिषद्–अंक पृष्ठ 11

निष्कर्षत: सम्पूर्ण जगत् को वेद ने जिन पदों का बार–बार प्रतिपादित करते है। उसका नाम ही ओम् है ओऽम् का उच्चरण करने पर तीन मात्राऐं आती है। जिसमें अ, उ, म इसके बाद चौथे पद को इस प्रकार बताया गया है कि वह ब्रह्म परम शान्त, परम कल्याणकारी, अद्वैत (भेदशून्य) है। भेदशून्यता को ही आत्मा बताया गया जो ब्रह्म को जानने की कोशिस करता है, वह निश्चय ही ब्रह्म को प्राप्त करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आचार्य बलदेव उपाध्याय, भारतीय दर्शन (भारतवर्ष की विविध दार्शनिक–वैदिक और तान्त्रिक–विचारधाराओं का प्रामाणिक विवेचन) शारदा मन्दिर, वाराणसी, संस्करण 1991 पृष्ठ 9
2. *बृहदारण्यकोपनिषद।*
3. शिवराज आचार्य: कौण्डिन्न्यायन:, मनुस्मृति:, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण प्रथम 2007, पृष्ठ 84
4. साहित्याचार्य पण्डित रामनारायणदत्ता शास्त्री पाण्डेय 'राम', महाभारत–शान्तिपर्व, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2070, चौदहवाँ संस्करण, पृष्ठ 729
5. आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, वेद और उसकी वैज्ञानिकता भारतीय मनीषा के परिप्रेक्ष्य में, श्रद्धनन्द अनुसन्धान प्रकाशन, केन्द्र गुरूकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, प्रथम सन् 1990 पृष्ठ 180
6. श्रीमद्भगवदगीता, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2071, तिरपनवाँ पुनर्मुद्रण, पृष्ठ 33
7. कल्याण, उपनिषद्–अंक, गीताप्रस, गोरखपुर, सं0 2064 आठवाँ पुनर्मुद्रण तेईसवें वर्ष का विशेषांक, पृष्ठ 11

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

सोलंकीकालिन वास्तुकला जल संसाधनों के विशेष संदर्भ में

डॉ. मनोज दाधीच * कल्पेश कुमार पी. चौधरी**

प्रस्तावना – अन्हिलवाड पाटन से सम्बन्धित साहित्य से सौलंकी कालीन जल संसाधनों की जानकारी प्राप्त होती है। इस दृष्टि से यहाँ तालाब झीले, बाण (बावडीयाँ) कुण्ड आदि उल्लेखनीय है। ये स्त्रोत जहाँ सौलंकी राजाओं के जनहित रक्षार्थ और कल्याण को दर्शाते है वही इनकी बनावट सौलंकी शासकों की स्थापत्यकला के प्रति रूचि को प्रदर्शित करती है।

सौलंकी शासकों में भीमदेव, कुमारपाल, सिद्धराज, मीनालदेवी, क्षिपपाल तेजपाल, वस्तुपाल के नाम उल्लेखनीय है इन्होने सार्वजनिक कल्याण के लिए कई जलाशयों का निर्माण किया। गुजरात में जल स्त्रोत का निर्माण करवाना प्राचीन समय से ही एक धार्मिक काम माना जाता था। इन जलाशयों में वाव, कुण्ड, तालाब झीले आदि सम्मिलित है। सौलंकीकाल में निर्मित विरामगाम की मानसून झील, पाटन की सहसलिंग झील, ढोलक्का के मालव झील, पाटन की रानी, वाधवन के मदहाब और मोधेरा सूर्य मंदिर आदि की सामने की खाड़ी आदि उल्लेखनीय हैं। जिनका वास्तुशिल्प भी अत्यन्त अद्भुत है।

विरमगाम की मुनसर झील –जिस समय पाटन में सहस्त्रिलिंग झील का निर्माण किया गया लगभग उसी समय सिद्धराज जयसिंह की माता मिनलेदवी की स्मृति में गुजरात के विरमगाम में मुनसर झील का भी निर्माण करवाया गया था। यह झील प्राकृतिक वातावरण में चारो और से पहाड़ों से घीरी हुई थी। बर्गेस के अनुसार, झील के उत्तर की तरफ वैष्णव संप्रदाय और पूर्व में साई संप्रदाय से संबंधित स्थान हैं। इसकी दीवारों पर विभिन्न प्रकार की मूर्तियां बनी है। इसकी दीवारे और अन्य भाग सुंदर चमकदार नक्काशीदार और घुमावदार हैं। इस झील के पूर्व-पश्चिम और दक्षिण में महाकाल, भैरव और नातेश की एक मूर्ति बनी है। झील में तीर्थ यात्रियों के ठहरने के बरामदों में विरमदेव और सुभालदेवी के लेख उत्कीर्ण है। जिससे ज्ञात होता है की राणा वीरमदेव के शासनकाल में इसका निर्माण और राणा भीमदेव के समय इसका पुनर्निमाण किया गया था।

सहस्त्रलिंग झील –अणहिलवाड पाटन कि इस झील का उल्लेख दयाश्रय कीर्तिकौमुदी, वसंतविलास आदि में उल्लेखित किया गया है। कवि श्रीपाल ने सहस्त्रलिंग झील पर एक उत्कृष्ट प्रशस्ति की रचना की थी। सरस्वती पुराण से भी इस झील के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। इस झील को एक युग में 'दुर्लभराज सर' भी कहा जाता था। सुकृतसंस्कीतर्न में उनका नाम 'सिद्धसर' है। इस प्रकार इसका सहस्त्रलिंग नाम बाद में अस्तित्व में आया होगा ऐसा लगता हैं।

सिद्धराज द्वारा बंधाये इस जलाशय का हेमचंद्रचार्य ने दयाश्रय में वर्णन किया है। इसमें कहा गया कि है कि सिद्धराज ने महासरग के तट पर 1008 शिवमंदिर, 108 देवी मंदिर और एक दशावतार का एक मंदिर बनवाया था। सरव्ती पुराण में इस मंदिर का वर्णन किया गया है। 108 देवि मंदिरों को ब्रहमानी, योगेश्वरी, शुभा इत्यादि नामों के साथ संगमतीर्थ के रूप में वर्णित किया गया है। सूर्य, गणेश, कार्तिकेय, लकुलीश आदि के मंदिर भी यहाँ पर थे। इस झील के निकट ही एक सुन्दर विष्णु मन्दिर भी अवस्थित था।

झील के तट पर एक कीर्तिस्थंभ भी था। यह विजय स्तंभ मालवा पर विजय की स्मृति में बनाया गया था। झील के तट पर सौलंकी शासकों द्धारा निर्मित संचालित एक विद्यालय भी था जो दान स्कूल कहलाता था। यहाँ पर कई विद्धवन अध्ययन अध्यापन करते थे।

कवि सोमेश्वर किर्तिकुमुडी में लिखते हैं कि सरोवर की शोभा, झील में रात के दौरान बनने वाले शिव मंदिरों के दीपक के प्रतिबिंबों से जानी जाती है। जिससे झील के जल में आकाश गंगा के समान दीपक के प्रतिबिम्ब तारों की तरह टिम-टिमाते दिखते है। यह तलाब गुजरात के सौलंकी शासकों के बहतरीन जल प्रबंधन को दर्शाता है। जो सरस्वती नदी से जुडी एक नहर द्धारा जल प्राप्त करता था। तलाब के निकट ही भारतीय पुरातत्व विभाग का संग्रहालय है जिससे कई पुरातार्टवक अवशेष संग्रहीत है।

मालवा झील – मालवा झील गुजरात के ढोलका गांव में स्थित थी। जिसे कुछ लोग 'मिणलसर' भी कहते हैं। इस झील का निर्माण सोलंकी काल में सिद्धराज जयसिंह की मां ने करवाया था। यह झील अभी भी मिनलदेवी की लोकप्रियता और न्याय को साबित करती है। ऐसा कहा जाता है कि जब यह झील बनायी जा रही थी तब इसके एक कोने में एक (वैश्या) गणिका का घर आता था। मिनल ने गणिका से तालाब कि सुंदरता के लिए अन्यत्र घर देने का आश्वासन दिया किन्तु गणिका ने इसे अस्वीकार कर दिया। अतः मलावा झील को गौलाकार स्वरूप प्रदान कर मिलन देवी ने गणिका के घर की रक्षा की। फलतः लोगों ने यह कहना प्रारम्भ कर दिया की मिनल देवी का न्याय देखना है तो मलावा झील को देखीये।

गुजरात के साहित्य संग्रह के अनुसार, इस झील का व्यास लगीाग 400 गुना है। इसका निर्माण का वास्तु भी वीरमगमा की सहस्त्रलिंग और मानसर झील से मिलता है। इसके किनारे के पास छोटा सा पुरातात्विक अवशेष इसकी प्राचीन महिमा की गवाही देता है। झील के नजदीक एक सुंदर रुद्रकप पत्थर है। कूप का व्यास लगभग 8 गुना है। चारों तरफ, छत को पत्थर से 11 किलोमीटर दूर रखा गया है। इन रुद्रों का गठन ऐसा है कि जब रुद्रकुपा के मुंह में पानी आता है तो रुद्रों से झील में भरता है और झील पूरी होती है। इस कूप से जुड़े तीन माला और छोटे पत्थर की तरंगे बनाइ गई है। पानी झील में प्रवेश करने से पहले, पहले 10 फीट लंबे खंभे, में जिन्हें

*सहायक आचार्य (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

कछुए के नाम से जाना जाता है, में भराता है। जिससे झील क्षतिग्रस्त नहीं होती है। इस प्रकार झील का वास्तु शिल्प सौलंकीकालीन शासकों की दुरदर्शिता का परिचायक है।

इसके अलावा वस्तुपाल ने पादलिप्तपुर (पालीताना) के अंकवतिया गांव में एक तालाब बनाया गया था। साथ ही गिरनार की तलहटी पर, माँ के स्मृति में कुमार देवी नामक झील का निर्माण भी करवाया था।

वाव – जल संसाधन का एक अन्य प्रमुख स्वरूप (वाण) बावडी भी है। प्राचीनकाल में, सार्वजनिक और वाणिज्यिक मार्गो पर यात्रियों की सुविधा के लिए बनाई गई भवन आकृतियों में वाव (बावडीयों) का विशेष स्थान था। जो यात्रीयों और व्यापारियों की जल सम्बन्धित आवश्यकताओं को पूर्ण करने के उद्देश्य से बनाई जाती थी। सौलंकी काल में इसी उद्देश्य से कई बावडीयों अथवा नावों का निर्माण करवया गया जिसमे रानी की वाव, वागड की वाव, वढवान की माधावाव, और कुछ कुण्ड उल्लेखनीय है।

रानी की वाव – रानी की वाव एक जटिलतापूर्वक बनायी गयी बावड़ी है, जो भारत में गुजरात के पाटन गाँव में स्थित हैं। यह बावड़ी सरस्वती नदी के किनारे पर स्थित है। रानी की वाव का निर्माण 11 वी शताब्दी में हुआ था। जून 2014 को इसे यूनेस्को वर्ल्ड हेरिटेज साईट में भी शामिल किया गया था। यह बावड़ी भूमिगत जल स्त्रोतों से कुछ अलग है। रानी की वाव को मारू गुर्जरा आर्किटेक्चर स्टाइल में एक कॉम्पलेक्स के रूप में बनाया था। इसके भीतर एक मंदिर और सीढियों की सात कतारे भी है जिसमें 500 से भी ज्यादा मुर्तिकलाओं को प्रदिर्शत किया गया है।

रानी की वाव का इतिहास – रानी की वाव और राण–की वाव का निर्माण सोलंकी साम्राज्य के समय में किया गया था। प्राचीन मान्यताओं के अनुसार इसका निर्माण सोलंकी साम्राज्य के संस्थापक मुलाराजा के बेटे भीमदेव प्रथम (अऊ1022 से 1063) की याद में 1050 अऊके समय में उनकी विधवा पत्नी उदयामती ने करवाया था, जिसे बाद में करणदेव प्रथम ने भी पूरा किया था। इस बावड़ी को बाद में सरस्वती नदी ने पूरी तरह से जलव्याप्त कर दिया थां और 1980 तक यह बावड़ी पूरी तरह से पानी से ही भरी हुई थी। कुछ समय बाद आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया ने इसे खोज निकाला वर्तमान में इसकी हालत काफी खराब है।

रानी की वाव का स्थापत्य शिल्प – प्राचीन जानकारों के अनुसार यह आकर्षक बावड़ी तकरीबन 64 मीटर लम्बी, 27 मीटर गहरी और 20 मीटर चौडी है। अपने समय की सबसे प्राचीन और सबसे अद्भुत निर्मितियों में इस बावड़ी का समावेश किया गया है। लेकिन वर्तमान में इसमें बहुत पानी भरा हुआ है अत: इसके कलात्मक शिल्प का बहुत थोडा सा हिस्सा ही पूरी तरह से दिखाई देता है। लेकिन बावड़ी में स्थापित एक स्तम्भ आज भी प्राचीन समय की अद्रुत कलाकृतियों एक अनुठा उदाहरण है। भारत की सबसे प्राचीनतम और अदुत और सुंदर निर्मितियों और कलाकृतियों में से यह एक है। बावड़ी के निचे एक छोटा द्वार भी है, जिसके भीतर 30 किलोमीटर की एक सुरंग भी है, लेकिन फिलहाल इस सुरंग को मिटटी और पत्थरों से ढँक दिया गया है। पहले यह सुरंग बावड़ी से निकलकर सीधी सिधपुर गाँव को जाकर मिलती थी। कहा जाता है की राजा इसका उपयोग गुप्त निकास द्वार के रूप में करते थे।

अलंकृत किनारों की दीवारे – बावड़ी में बनी बहुत सी कलाकृतियों की मूर्तियों में ज्यादातर भगवान विष्णु से संबंधित है। भगवान विष्णु के दशावतार के रूप में ही बावडी में मूर्तियों का निर्माण किया गया है, जिनमे मुख्य रूप से कल्कि, राम, कृष्णा, नरसिम्हा, वामन, वाराही और दुसरे मुख्य अवतार भी शामिल है। इसके साथ–साथ बावड़ी में नागकन्या और योगिनी जैसी सुंदर अप्सराओं की कलाकृतियाँ बनायी गयी है। गुजरात में स्थापित इस वाव का महत्व केवल वानी जमा करने के लिए नहीं है बल्कि इसका आध्यात्मिक महत्व भी है। वास्तव में गुजरात की वाव का निर्माण प्राचीन आर्किटेक्चर स्टाइल में ही किया गया है, जिसके अंदर मंदिर और एक गुप्त सुरंग भी है। जैसे–जैसे हम इसके अंदर जाते है, वैसे–वैसे इसमें पानी का प्रमाण बढ़ते जाता है। रानी की वाव में बनी सीढियाँ निचली सतह तक बनी हुई है। और इस बीच बावड़ी की दीवारों को अलंकृत भी किया गया है और दीवारों पर विविध कलाकृतियाँ भी की गयी है। इन कलाकृतियों में मुख्यत: विष्णु के दशावतार, ब्रहमा, नर्तकी और मनमोहक दृश्यों की कलाकृतियाँ शामिल है। बावड़ी में जहाँ पानी की सतह है वहाँ पर हमें विष्णु का शेषनाग वाला अवतार भी देखने को मिलता है।

वायाड की वाव – बनासनदी के पास आये वायड गांव की वाव सोलंकीकाल से संबंधित है जो लगभग 120 फीट लंबी है। इसमें पांच स्तम्भ और नीचे उतरने के हेतु सीढीयों की व्यवस्था है। इसकी दीवारों पर कई देव प्रतिमाऐं बनी है। जिनमें भगवान शिव की प्रतिमा उल्लेखनीय है।

वढवान की माधावाव – सौलंकीकालीन यह स्मारकीय वाव (बावडी) सौराष्ट्र के बढवान शहर के मध्य में स्थित है। इस बाव के संबंध में अनेको किंवदंतीयां प्रचलित है जो अंधविश्वास मात्र प्रतीत होती है। लोक गीतों के अनुसार इस वाव का निर्माण सौलंकी राजा कर्णदवे के मंत्री माधव द्वारा करवाया गया था। यह गुजरात की सर्वोत्ताम पुरातात्विक कृतियों में से एक है जिसके कुण्ड पर एक झुलता हुआ झरोखा बना है। प्रवेश द्वार के आस पास की दीवारों पर सुंदर नक्काशी का कार्य किया हुआ है। इस वाव में सात स्तम्भ है। इसका आकार चौकोर है। इस वाव में कई देवी देवताओं की मूर्तियां भी बनी है। जिनमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव, नवग्रह, दशावतार और सत्यमाता के नाम उल्लेखनीय है। इसके अलावा, नडियाद का पुराना वाव, कपडवंज के तोरन के पास की वाव उमरेठ की भद्रकाली वाव आदि सौलंकी कालीन स्थापत्य शिल्प के अनूठे उदाहरण है।

कुंड – कुण्ड भी जल संसाधन का ही एक रूप है। सौलंकी काल में प्राय: उन मंदिरों में जहां निकट में कोई नदी अथवा झील नहीं होती वहां स्नान करने के लिएएक कुंड की व्यवस्था की जाती है। इस काल में इनका आकार वर्गाकार अथवा आयताकार होता था। कुण्ड में जल की सतह तक पहुंचने और ऊपर जाने के लिए सीढीयों की व्यवस्था होती थी। सौलंकी काल में निर्मित कलात्मक कुण्डों के उदाहरण में मोढेरो के सूर्यमंदिर के आगे बना खूबसूरत कुंड इसमें सूर्य, विष्णु, ब्रह्मा इत्यादि की खूबसूरत मूर्तियां है।इसके अलावा, वडनगर के अजयपाल कुंड को भी सोलंकी कालीन का कहा जाता है। पोरबंदर के कांटेला गांव में सामंतसिंह ने रेवती कुंड में भगवान शिव, विष्णु, गणेश, चन्द्रिका, बलराम आदि की मूर्तियां स्थापित करवायी थी। सौराष्ट्र के मांगरोल से लगभग 16 किमी दूरी पर स्थित कामनाथ मंदिर के पास नदी में निर्मित पद्यकुंड भी सौलंकी काल में निर्मित किया गया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. न. आ. आचार्य, 'प्रतिभालेखों', गुजरात इतिहास संदर्भ सूचि, खड–3, अहमदाबाद
2. रसिकलाल चरिक्ष, 'गुजरात नो सांस्कृतिक इतिहास', भो.जे. विद्या भवन, अहमाबाद, 1965
3. प्रविण चंद, सी. परिख, 'गुजरातनो सांस्कृतिक इतिहास', गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, 1980

4. आ. जशुभाई बी. पटेल, 'गुजरातनो इतिहास', युनि. ग्रंथनिर्माण बोर्ड, अहमदाबाद, 1975
5. डॉ. हरिप्रसाद गोदानी, 'गुजरातना शिल्पे अने स्थापत्यो', कलख प्रकाशन, अहमदाबाद, 1984
6. जे. भोगालाल जे. सांडेसरा, 'स्थलनामों का इतिहास', श्रेम. अंस. धुनि, बरोड़ा, 1970
7. कनैयालाल दवे, 'चारण', नगरपालिका, पास, 1980
8. डॉ. हरिप्रसाद शास्त्री, 'गुजरातनो राजकीय अने सांस्कृतिक इतिहास', भाग 1-2, युनि. ग्रंथनिर्माण बोर्ड, 2014
9. डॉ. हरिप्रसाद शास्त्री, 'गुजरातनो प्राचीन इतिहास', भो.जे. विद्याभवन, अहमदाबाद, 1973

****

महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर स्व सहायता समूह का प्रभाव (धार जिले के संदर्भ में एक अध्ययन)

संजीव कुमार व्यास* डॉ. विजय ग्रेवाल**

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध लेख मध्यप्रदेश के धार जिले में संचालित स्व सहायता समूह पर आधारित है। स्व सहायता समूह की अवधारणा 'संगठन में शक्ति' पर आधारित है। तिनकों से बनी रस्सी जिस प्रकार शक्तिशाली गजराज को बाँध सकती है, वैसे ही आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति भी एक सथ मिलकर 'गरीबी के दुष्चक्र' को तोड़ सकते हैं। स्व सहायता समूह मुख्य रूप से गरीबी में जीवनयापन कर रहे व्यक्तियों के जीवन स्तर के उन्नयन के लिए निर्मित किया जाता है। स्व सहायता समूह के पीछे मान्यता यह है कि बिखरे हुए व्यक्तियों को तो उत्पीड़ित व शोषित किया जा सकता है, लेकिन यदि उन्हें संगठित किया जाए, तो वे बड़ी ताकत बन जाते हैं। समूह के सदस्य मिलकर एक ऐसी ताकत का निर्माण करते हैं, जिससे वे स्थानीय शोषणकर्ताओं, साहूकारों, सेठों, बाहुबलियों आदि के अत्याचारों का जमकर विरोध कर सकते हैं और उन पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाना – स्व सहायता समूह के माध्यम से महिला सदस्यों को आत्मनिर्भर बनाने की कोशिश की जाती है। इसके द्वारा सदस्य महिलाएँ आपस में मिलजुलकर एक–दूसरे की मदद करती हैं और अपनी समस्याओं के समाधान के लिए पहल करती हैं तथा उसके समाधान तक पहुँचती हैं। महिला स्व सहायता समूह ने हजारों–लाखों अशिक्षित गरीब वर्ग की महिलाओं को न केवल घर की चौखट के बंधन से मुक्त करके बाहर निकाला है, बल्कि उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने में समर्थ बनाया है।

स्व सहायता समूह के माध्यम से महिला विकास आन्दोलन को देश के विभिन्न भागों में एवं देश के बाहर प्रस्तुत किया गया ताकि महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में परिवर्तन करते हुए उनका चहुँमुखी विकास हो सके। सन् 1980 की शुरूआत में इस आन्दोलन का प्रारम्भ हमारे पड़ोसी राष्ट्र बांग्लादेश में प्रयोग के रूप में डा0 मुहम्मद युनुस के कर कमलों द्वारा किया गया। डॉ0 युनुस ने भूमिहीन तथा सीमान्त एवं मागनें वाली महिलाओं को इसमें शामिल करते हुए लघु व्यापार को लघु ऋण पर आधारित करते हुए शुरूआत की, जिसने बाद में एक आन्दोलन का रूप ग्रहण कर लिया और एक नये दृष्टिकोण का सूत्रपात्र हुआ जिसके द्वारा निर्धन तथा गैर–लाभान्वित महिलाओं को लघु बचत एवं समाज क्रियाओं के लिए प्रेरित किया जा सके। इसी दृष्टिकोण को भारत सरकार द्वारा एक कार्यक्रम के रूप में देश के विभिन्न भागों में लागू किया गया जिसका प्रमुख उद्देश्य स्व सहायता समूह को निर्मित करते हुए महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाना है।

भारत में स्व सहायता समूह अपेक्षाकृत नया प्रयोग है लेकिन पिछले लगभग एक दशक से देशभर मे, विशेषकर दक्षिणी राज्यों में स्व सहायता समूह की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है और इसे ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण का नया कारगर औजार माना जाने लगा है। सबसे अधिक स्व सहायता समूह आन्ध्र प्रदेश में चल रहे हैं। स्व सहायता समूह महिलाओं का एक अनौपचारिक समूह है जो अपनी बचत तथा बैंकों से लघु ऋण लेकर अपनी सदस्याओं की पारिवारिक जरूरतें पूरी करते हैं और विकास गतिविधियाँ चलाकर गाँवों में गरीबी दूर करने और महिला सशक्तिकरण में योगदान देते हैं।

ये समूह आपसी एकजुटता, स्वयं सहायता और सामूहिक जिम्मेदारी की धारणा को लेकर चलते हैं इसलिए इनमें प्राय: एक जैसी आर्थिक और सामाजिक स्थिति के व्यक्ति एक साथ आते हैं। इससे उनमें ऊँच–नीच की भावना नहीं रहती और छोटी से छोटी बचत जमा करने में भी उन्हें संकोच नहीं होता। सारी व्यवस्था क्योंकि आपसी भरोसे पर टिकी है इसलिए कर्ज वापस लेने में विशेष कठिनाई नहीं होती। इससे समूह के सदस्यों में यह आत्मविश्वास भी पैदा हो जाता है कि वे इतने सक्षम हैं कि कर्ज लेकर उसे लौटा भी सकते हैं। निष्कर्षत: यह कह सकते हैं कि स्व सहायता समूह का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को बचत और ऋण उपलब्ध कराना है।

संचालन की प्रक्रिया – समूह के औपचारिक गठन के बाद समूह के सदस्य छोटी–छोटी बचत (यह राशि समूह के सदस्य मिलकर तय करते हैं) को संग्रहीत करते हैं। कुछ समय के बाद समूह ऋण देने का कार्य प्रारम्भ कर सकता है। ऋण के लेन–देन के सम्बन्ध में नियम पूर्व में सबकी सहमति से बना लिए जाते हैं। एक निश्चित अवधि के बाद जब बचत नियमित रूप से होती रहे तो समूह का बैंक में खाता खुलवा लिया जाता हैं। इससे समूह की धनराशि सुरक्षित रहती है और बैंक द्वारा जमा धन पर ब्याज का लाभ मिलता है। साथ ही जमाराशि के अनुसार मैचिंग ग्रांट भी प्राप्त हो सकती है। बैंक में खाता खुलवाने हेतु सदस्यों को फोटोग्राफ, खाता खोलने हेतु समूह का प्रस्ताव, समूह की नियमावली, परिचय–पत्र आदि की आवश्यकता होती है। आय संवर्द्धन कार्यक्रमों के संचालन के लिए स्व सहायता समूह को सरकार की ओर से बैंकों के माध्यम से अनुदानयुक्त ऋण देने की योजनाएं संचालित हैं, जिसका लाभ लिया जा सकता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. स्व सहायता समूह का महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव का मूल्यांकन करना।
2. स्व सहायता समूह के प्रभाव से महिलाओं में निर्णय लेने की क्षमता के विकास के बारे में जानना।

* शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्ररिकल्पनाएँ :

1. स्व सहायता समूह का महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर सार्थक स्तर तक प्रभाव पड़ा हैं।
2. स्व सहायता समूह के प्रभाव से महिलाओं में निर्णय लेने की क्षमता का विकास हुआ हैं।

न्यादर्श – न्यादर्श हेतु रेन्डम सेंपलिंग की विधि को प्रयोग में लाया गया हैं जिसमें विभिन्ना योजनान्तर्गत मध्यप्रदेश के धार जिले में गठित स्व सहायता समूह की 200 सदस्यों का चयन किया गया हैं।

तथ्य संकलन – प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची तथा फोकस ग्रुप डिस्कशन प्रविधि का प्रयोग किया गया हैं। यह तथ्य संकलन महिलाओं के उपलब्धता के अनुसार किया गया हैं।

आयु के अनुसार महिलाएँ – उक्त अध्ययन हेतु महिलाओं की आयु सम्बन्धित तथ्यों का संकलित किया गया है। आयु के अनुसार कर्यक्षमता और उत्पादकता की तुलना की जाती हैं। दण्ड आरेख संख्या 01 में आयु के अनुसार स्व सहायता समूहें की महिलाओं का विवरण दिया गया है जिसमें 18 से 25 वर्ष की आयु की 19 महिलाएँ है और 26 से 30 वर्ष की आयु की 23 महिलाएँ पायी गई एवं 31 से 35 वर्ष की आयु की 29 महिलाएँ तथा 36 से 40 वर्ष की आयु की 34 महिलाएँ पायी गई जबकि 41 से 45 वर्ष की आयु की 36 महिलाएँ थीं। 46 से 56 वर्ष की आयु की 32 महिलाएँ और 51 से 60 वर्ष की आयु की 27 महिलाएँ पायीं गई। निष्कर्षत: यह ज्ञात होता है कि सबसे कम 18 से 25 वर्ष महिलाएँ है और सबसे अधिक 41 से 45 वर्ष की महिलाएँ पायी गई।

आरेख संख्या : 01

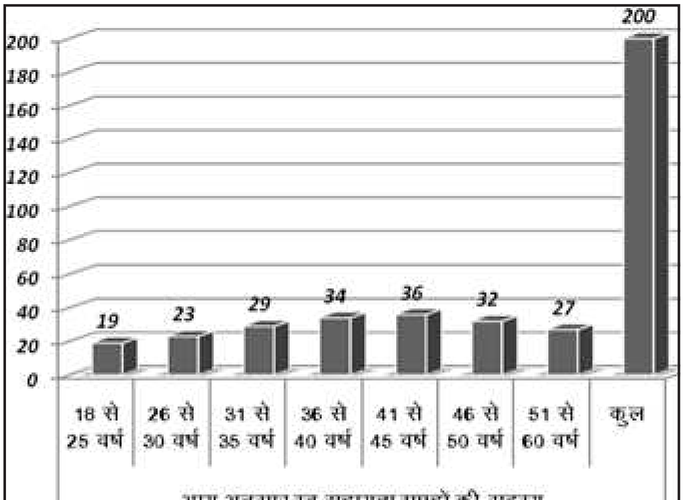

आयु अनुसार स्व सहायता समूहों की सदस्य

वर्ग के अनुसार महिलाएँ – पारंपरिक रूप से भारतीय जाति व्यवस्था सामाजिक वर्ग की सबसे पुरानी एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण व्यवस्था थी। यह वर्णाश्रम धर्म, से भिन्नता रखता है जो हिन्दूवाद में पाया गया, जिसके अंतर्गत किसी निश्चित वर्ण में जन्म लिए व्यक्ति को अपनी योग्यता के अनुसार ऊपर या नीचे जाने की अनुमति थी। इसने समाज को कौशल और योग्यता के आधार पर विभाजित किया। संक्षेप में, ब्राह्मण वर्ण को धीरे–धीरे आदर्श के रूप में पुरोहित वर्ग माना गया जो धार्मिक अनुष्ठान करते थे। सामाजिक वर्ग की अक्सर सामाजिक स्तरीकरण के संदर्भ में चर्चा की जाती है। आधुनिक पश्चिमी संदर्भ में, स्तरीकरण आमतौर पर तीन परतों रू उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग से बना है। प्रत्येक वर्ग और आगे छोटे वर्गों (जैसे वृत्तिक) में उपविभाजित हो सकता है। भारत में जातियों के अनुसार वर्गों को अनुसूचित किया गया हैं।

आरेख संख्या : 02

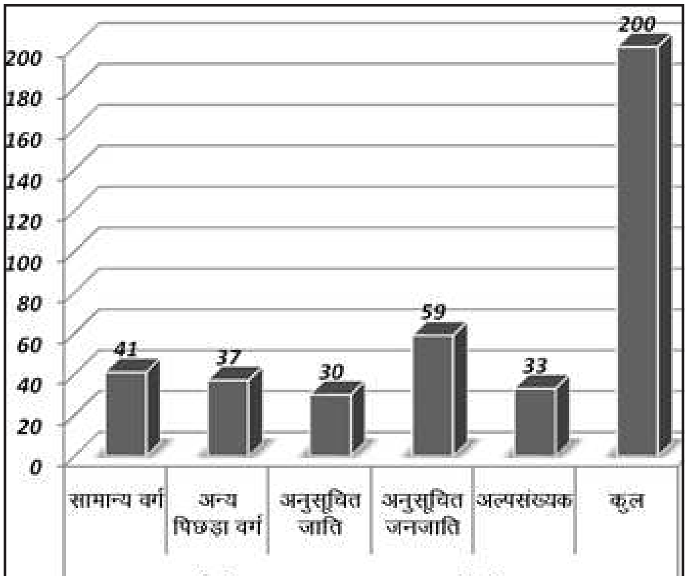

वर्ग के अनुसार स्व सहायता समूहों की सदस्य

आरेख 02 के अनुसार कुल 200 स्व सहायता समूह के सदस्यों में से 41 सामान्य वर्ग की पायीं गई और 37 अन्य पिछड़ा वर्ग एवं 30 महिलाएँ अनुसूचित जाति की थी तथा 59 महिलाएँ अनुसूचित जनजाति की पायी गई जबकि 33 महिलाएँ अल्पसंख्यक वर्ग की थीं। सबसे कम अनुसूचित जाति तथा सर्वाधिक अनुसूचित जाति महिलाएँ स्व सहायता समूह की सदस्य पाई गई।

ऋण राशि का उपयोग – स्व सहायता समूहें को बैंक बिना किसी प्रतिभूति के ऋण देता है। समूह के सदस्य इसका उपयोग अपने उद्यम या विकास के लिए करते हैं। स्व सहायता समूह से मिले लघु ऋणों से महिलाओं को सूदखोर व्यवस्था से काफी हद तक छुटकारा पाने में मदद मिली है। इन समूहें के जरिए बचत की आदत ने महिलाओं में नए तरह की आर्थिक जागरुकता पैदा कर दी है। एक अध्ययन के अनुसार जिन–जिन क्षेत्रों में स्व सहायता समूह आंदोलन सक्रिय हैं, वहाँ ऋण के लिए सूदखोरी व्यवस्था का हिस्सा 66 प्रतिशत से घटकर 15 प्रतिशत रह गया है।

दण्ड आरेख संख्या : 03

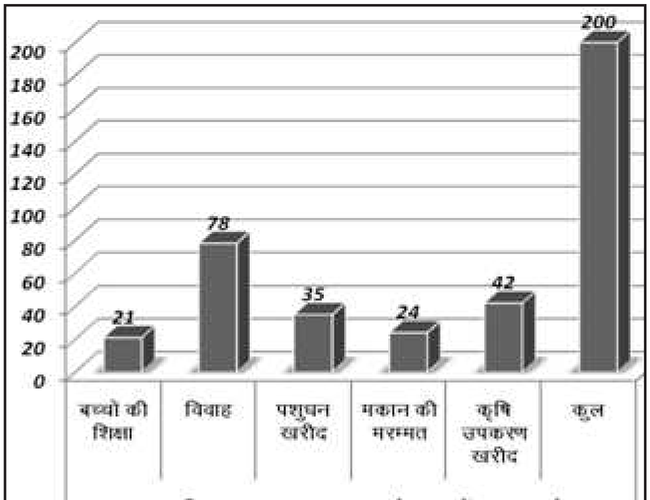

ऋण राशि का स्व सहायता समूह के सदस्यों द्वारा उपयोग

समूहें से कर्ज़ लेकर सदस्यों ने अपने परिवारों की तत्कालिक जरूरतें पूरी करने के साथ-साथ परिवार की आर्थिक स्थिति मज़बूत बनाने में भी सफलता प्राप्त की है जिससे गाँवों में गरीबी कम हो रही है। स्व सहायता समूह से प्राप्त धन का इस्तेमाल सामान्य व्यावसायिक गतिविधियों जैसे कि पशुपालन, खेतीबाड़ी और छोटे-छोटे कामधंधे शुरू करने के लिए भी किया जा रहा है। तमिलनाडु में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला है कि 74 प्रतिशत परिवारों ने इन लघु ऋणों से प्राप्त धन, ज़मीन, पशुधन और घर की ज़रूरी चीज़े खरीदने पर लगाया गया है। आरेख 03 के अनुसार कुल 200 स्व सहायता समूह के सदस्यों में से 21 महिलाओं ने बच्चों की शिक्षा पर ऋण का व्यय किया है और 78 महिलाओं ने विवाह जैसे महत्वपूर्ण कार्य किए है एवं 35 महिलाओं ने पशुधन क्रय किया है तथा 24 महिलाओं ने मकान की मरम्मत करवाई हैं जबकि 42 महिलाओं ने कृषि उपकरणों की खरीद की हैं। उक्त दण्ड आरेण से यह ज्ञात होता है कि महिलाओं ने ऋण का उपयोग स्वयं के निर्णय से किया है जिससे हम मान सकतें हैं कि स्व सहायता समूहें से महिलाओं में निर्णय लेने का कौशल विकसित हुआ हैं।

स्वयं की आय में वृद्धि

तालिका संख्या 01

वृद्धि का स्तर	स्व सहायता समूह में जुड़ने के पश्चात
बहुत अधिक	78
अधिक	62
सामान्य	26
कम	23
बहुत कम	11
कुल	200

स्व सहायता समूह अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में निरन्तर आय सृजन के अवसर पैदा करने के लिए गरीब व्यक्तियों की क्षमता और हर क्षेत्र की भूमि-आधारित और अन्य संभावनाओं के आधार पर बड़ी संख्या में लघु उद्यमों की स्थापना पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इसलिये इसमें विभिन्न घटकों जैसे गरीब व्यक्तियों में क्षमता पैदा करना, कौशल विकास प्रशिक्षण, ऋण प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, विपणन और ढाँचागत सहायता पर विशेष बल दिया जाता है। तालिका संख्या 01 के अनुसार महिलाओं की आय में वृद्धि का विवरण दिया गया है जिसमें 78 महिलाओं ने माना कि उनकी आय में वृद्धि बहुत अधिक हुई है और 62 महिलाओं के अनुसार उनकी आय में वृद्धि अधिक हुई है एवं 26 महिलाएँ मानतीं है कि उनकी आय में सामान्य स्तर तक वृद्धि हुई है तथा 23 महिलाओं ने माना कि उनकी आय में वृद्धि कम हुई है जबकि 11 महिलाओं ने माना कि उनकी आय में वृद्धि बहुत कम हुई है।

निष्कर्ष :

1. 21 स्व सहायता समूह के सदस्यों ने बच्चों की शिक्षा पर ऋण का व्यय किया है।
2. 78 स्व सहायता समूह के सदस्यों ने विवाह जैसे महत्वपूर्ण कार्य किए है एवं 35 स्व सहायता समूह के सदस्यों ने पशुधन क्रय किया है।
3. 24 स्व सहायता समूह के सदस्यों ने मकान की मरम्मत करवाई हैं जबकि 42 स्व सहायता समूह के सदस्यों ने कृषि उपकरणों की खरीद की है।
4. स्व सहायता समूह के 78 सदस्यों ने माना कि उनकी आय में वृद्धि बहुत अधिक हुई है।
5. 26 महिलाएँ मानतीं है कि उनकी आय में सामान्य स्तर तक वृद्धि हुई है।
6. तथा 23 स्व सहायता समूह के सदस्यों ने माना कि उनकी आय में वृद्धि कम हुई है।

सुझाव - ग्रामीण भारत में महिला स्व सहायता समूहें ने हजारों-लाखों अशिक्षित निर्धन वर्ग की महिलाओं को न केवल घर की चौखट के बंधन से मुक्त करके बाहर निकाला है, बल्कि उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में समर्थ बनाया है। महिला स्व सहायता समूह तंगहाली व गरीबी से जूझती महिलाओं के लिए नवजीवन का संदेश लेकर आए हैं। स्व सहायता समूहें से जुड़कर महिलाएँ एक-दूसरे की मदद करके जीवन की चुनौतियों का समाधान ढूढ़ने में समर्थ हुई हैं। स्व सहायता समूह महिला सशक्तीकरण के लिए आवश्यक आधार तैयार करता है। समूहें से जुड़कर महिलाएँ शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वरोजगार, कानूनी अधिकार, सरकार द्वारा चलायी जा रही कल्याणकारी योजनाओं आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करती हैं। समूहें द्वारा उनका बाह्य परिवेश से जुड़ाव बढ़ता है और दुनियादारी की व्यावहारिक समझ विकसित होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिन्हा अजीत कुमार : 'महिला सशक्तिकरण का नया आयाम', दीप और दीप प्रकाशन, नई दिल्ली 2008
2. तिवारी आर.पी. एंव शुक्ला डी.पी. :'भारतीय नारी, वर्तमान समस्याऐ और भावी समाधान', ए.पी. एच पब्लिशिंग का कार्पोरेशन, नई दिल्ली, 1999 पृ.सं. 15।
3. यादव, रवि प्रकाश, दीप, रागिनी, राय पूजा : 'लैंगिक हिंसा एवं महिला सशक्तिकरण' आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर, 2010 पृ.सं. 155
4. जड़िया, प्रभावती : 'हिन्दू नारी कार्यशीलता' बुक एनक्लेब, जयपुर, 2005 पृ. सं. 4।
5. आप्टे, प्रभा : 'भारतीय समाज' क्लासिक पब्लिशिंग हाउऽस, जयपुर 1996 पृ. सं. 21।

****

उच्च माध्यमिक स्तर के बालक-बालिकाओं के जीवन पर कौशल शिक्षा का प्रभाव

डॉ. बी. के. गुप्ता*

प्रस्तावना - हम एक ऐसे देश से हैं जो दुनिया की दूसरी सबसे ज्यादा आबादी वाला देश है। देश की आधी आबादी से भी ज्यादा लगभग 600 मिलियन युवा है। युवा लोगों की संख्या अभी तक एक संपत्ति बननी बाकी है। केवल 2.3 प्रतिशत भारतीय श्रमिकों के पास औपचारिक प्रशिक्षण है। जनशक्ति हमें विनिर्माण उद्योग के राजा बनने में मदद कर सकती है। दुनिया में धन और उद्योग हैं लेकिन उन्हें चलाने के लिए कोई युवा नहीं है, भारत वैश्विक स्तर पर उद्योग चलाने के लिए जनशक्ति की आपूर्ति कर सकता है। इसके लिए, हमें अपनी संपत्तियों को प्रशिक्षित करने की जरूरत है। हमें तकनीकी और प्रबंधन कौशल के साथ उन्हें पोषित करने की जरूरत है। उच्च माध्यमिक स्तर के बालक-बालिकाएँ 16 से 18 वर्ष के होने लगते है। अगर हम निम्न मध्यम तथा निम्न आय वर्ग के बालकों की तरफ देखें तो उन्हें आयजनक गतिविधि करने की आवश्यकता हाने लगती हैं। छोटे-बड़े पारिवारिक व्यवसाय में ये बालक-बालिकाएँ हाथ बटाते हुए कौशल शिक्षा को अनौपचारिक तौर पर ग्रहण कर ही लेते हैं। औपचारिक तौर पर सरकारी प्रयास बहुत ही प्रभावी हैं। ग्यारहवीं और बारहवीं के बालक-बालिकाएँ इनमें बढ़-चढ़ कर भाग ले रहें हैं। इस प्रकार की प्रणाली देश की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देती है। प्रभावी व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम स्थानीय राष्ट्रीय व्यवसायों के भीतर रिक्त पदों को काम करने में मदद कर सकते हैं। प्रस्तुत शोध लेख उक्त कौशल शिक्षा का बालक-बालिकाओं के जीवन पर प्रभाव को देखने का एक प्रयास है।

कौशल शिक्षा - यह शिक्षा और प्रशिक्षण है जो रोजगार के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल प्रदान करता है। इसे सामाजिक समानता और समावेश के साथ-साथ विकास की स्थिरता के लिए भी महत्वपूर्ण माना जाता है। यह व्यापार में काम के लिए नौकरी विशिष्ट तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान करता है। यह मुख्य रूप से छात्रों को व्यावहारिक व क्रियाशील निर्देश प्रदान करने पर केंद्रित है और प्रमाणन, डिप्लोमा या प्रमाण पत्र का कारण बन सकता है। एक व्यावसायिक विद्यालय में अंशकालिक कक्षा निर्देश के साथ एक होस्टिंग कंपनी में अंशकालिक शिक्षुता के साथ संयोजन करते हैं, कार्यस्थल पर सप्ताह के अधिक दिनों के साथ। यह प्रणाली युवाओं को पेशेवर कौशल हासिल करने की अनुमति देती है और श्रम बाजार में रास्ता बनाती है। जब बालकों का उच्च माध्यमिक स्तर पूरा हो जाता है, तो सीधे तृतीयक स्तर की व्यावसायिक शिक्षा में जाने या बाद के चरण में शुरू करने का विकल्प होता है। यह मार्ग पेशेवरों को अतिरिक्त कौशल प्रदान करता है और उन्हें अत्यधिक तकनीकी और प्रबंधकीय पदों के लिए तैयार करता है। छात्र जो शिक्षुता शुरू करने के लिए तैयार नहीं हैं या 16 वर्ष के निचले माध्यमिक स्तर को खत्म करते समय स्नातक विद्यालय जाते हैं, उनके पास 10 वीं विद्यालय वर्ष, पूर्व-शिक्षुता या विद्यालय में भाग लेने का विकल्प होता है जो युवा लोगों को व्यावसायिक शिक्षा प्रशिक्षण में नामांकन के लिए तैयार करता है।

पायलट परियोजना - उत्तर प्रदेश के कुछ विद्यालयों में पायलट परियोजना के आधार पर इसकी शुरुआत हो चुकी थी। उच्च माध्यमिक स्तर पर 40 व्यावसायिक पाठ्यक्रम पेश किए जा रहे हैं जिसमें बैंकिंग, कार्यालय सचिव, स्टेनोग्राफर, लेखा, विपणन, खुदरा, वित्तीय बाजार प्रबंधन, कारोबार प्रशासन, इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी शामिल है। श्वद्यालयों में उच्च माध्यमिक स्तर पर शुरू होने वाले व्यावसायिक पाठ्यक्रम में आटोमोबाइल प्रौद्योगिकी, सिविल इंजीनियरिंग, एयर कंडिशन एवं रेफ्रिजरेशन, इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी, भूगर्भ प्रौद्योगिकी, आईटी एप्लीकेशन, मेडिकल लेबोरेटरी तकनीकी, नर्सिंग, एक्स रे तकनीक, स्वास्थ्य विज्ञान और सौंदर्य अध्ययन शामिल हैं। इन पाठ्यक्रमों में चिकित्सा आकलन, फैशन डिजाइन, टेक्सटाइल डिजाइन, संगीत तकनीक उत्पाद, सौंदर्य सेवा, परिवहन प्रणाली, जीवन बीमा, पुस्तकालय विज्ञान, पोल्ट्री फार्मिंग, सब्जी उत्पादन, डेयरी विज्ञान, खाद्य उत्पादन, मास मीडिया एवं मीडिया प्रोडक्शन, बेकरी, यात्रा एवं पर्यटन आदि भी शामिल है। अधिकारी ने बताया कि बोर्ड वर्तमान पाठ्यक्रम को उन्नत बनाने और अर्थव्यवस्था की जरूरतों के अनुरूप नए पाठ्यक्रम पेश करने की पहल को आगे बढ़ा रहा है।

एसोचैम का अध्ययन - शिक्षा के क्षेत्र में बहुत प्रगति हुई है, लेकिन कोई व्यावसायिक शिक्षा के लिए ऐसा नहीं कह सकता है, जो भारत के विकास के लिए एक आवश्यक स्तंभ है। एसोचैम के अध्ययन के अनुसार, 2020 तक 40 मिलियन कार्यरत पेशेवरों की कमी होगी। इसके अलावा, यह भी देखा गया है कि लगभग 41 प्रतिशत नियोक्ता अभी-भी कमी की वजह से पदों को भरने में कठिनाई का सामना कर रहे हैं।

ग्रेस अकादमी का अध्ययन - ग्रेस अकादमी के अध्यक्ष और सीईओ दुर्जय पुरी बताते हैं, 'भारत में पारंपरिक शिक्षा प्रणाली युवाओं की संक्रमण मांग और आकांक्षाओं को जारी रखने में सक्षम नहीं है। विश्वविद्यालय की डिग्री कमाने की कोई गारंटी नहीं है कि एक छात्र को नौकरी मिल जाएगी, ओर वह अपनी पसंद का काम कर सकते हैं। हमारे युवा, वित्तीय और अन्य परिस्थितियों के कारण विद्यालय छोड़ते हैं। वे मासिक नौकरियां कर रहे हैं, जहां उन्हें थोड़ा भुगतान किया जाता है और अक्सर बेईमान नियोक्ताओं द्वारा इसका शोषण किया जाता है। व्यावसायिक प्रशिक्षण हमारे युवाओं (पुरुषों और महिलाओं दोनों) की कार्य सीखने में मदद करेगा। इलेक्ट्रॉनिक्स, आईटी, हॉस्पिटैलिटी, हेल्थकेयर, टेलीकॉम इत्यादि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में व्यावहारिक कौशल सीखना हमारे युवाओं को रोजगार खोजने या अपने व्यवसाय शुरू करने में सक्षम बनाता है और इसलिए गौरव के साथ

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा) जे. एन. एम. पी. जी. कॉलेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

आजीविका कमाता है।'

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक स्तर के बालक–बालिकाओं पर कौशल शिक्षा के प्रभावों को जानना।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के बालक–बालिकाओं में कौशल शिक्षा और समस्या समाधान के सम्बन्ध को जानना।

प्राक्कल्पनाएँ :

1. कौशल शिक्षा से उच्च माध्यमिक स्तर के बालक–बालिकाओं में निर्णय लेने का विकास होता है।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के बालक–बालिकाओं में कौशल शिक्षा से समस्या समाधान की क्षमता बढ़ती हैं।

न्यादर्श – न्यादर्श हेतु उद्धेश्यपूर्ण निदर्शन की विधि को प्रयोग में लाया गया हैं जिसमें उत्तर प्रदेश के लखनऊ संभाग के सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 11 एवं 12 के 100 बालक एवं 100 बालिकाओं, कुल 200 उत्तरदाताओं के रूप में चयन किया गया हैं।

तथ्य संकलन – प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु 5 बिन्दू लिकर्ट स्केल आधारित साक्षात्कार अनुसूची तथा फोकस ग्रुप डिस्कशन प्रविधि का प्रयोग किया गया हैं। यह तथ्य संकलन उत्तरदाताओं की उपलब्धता के अनुसार किया गया हैं।

आयु के अनुसार उत्तरदाता

सारणी 01 – आयु के अनुसार उत्तरदाता

आयु वर्ग	200 उत्तरदाता		कुल आवृत्ति	कुल प्रतिशत
	100 बालक आवृत्ति	100 बालिकाएँ आवृत्ति		
15 से 16 वर्ष तक	32	36	68	34
17 से 18 वर्ष तक	41	34	75	37.5
18 से अधिक	27	30	57	28.5
कुल	100	100	200	100

सारणी 01 में आयु के अनुसार उत्तरदाताओं का विवरण दिया गया है जिसमें 15 से 16 वर्ष के 32 बालक और 36 बालिकाएँ हैं और 17 से 18 वर्ष के 41 बालक और 34 बालिकाएँ हैं एवं 18 वर्ष से अधिक के 27 बालक और 30 बालिकाएँ हैं। अतः यह ज्ञात होता है कि 15 वर्ष से 18 वर्ष तक के बालक बालिकाओं में कौशल शिक्षा लेने की माँग का स्तर बेहतर हैं।

निर्णय लेने की क्षमता – कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता में विकास होता है क्योंकि व्यापार उद्यम के समक्ष नई समस्याओं, कठिनाइयों और चुनौतियों के नियमित रूप से निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। यह बाहरी वातावरण में बदलाव के कारण हो सकता है। नए उत्पाद बाजार में आ सकते हैं, नए प्रतियोगी बाजार में प्रवेश कर सकते हैं और सरकार की नीतियां बदल सकती हैं। यह सब व्यापार इकाई के आसपास के वातावरण में बदलाव की ओर ले जाता है। इस तरह के बदलाव से नई समस्याएं पैदा होती हैं और नए फैसलों की जरूरत होती है। एक प्रबंधक को अभिनय से पहले या निष्पादन की योजना तैयार करने से पहले निर्णय लेना होता है। इसके अलावा, उनकी क्षमता को अक्सर उनके द्वारा लिए गए निर्णयों की गुणवत्ता से आंका जाता है। इस प्रकार, प्रबंधन हमेशा निर्णय लेने की प्रक्रिया है। यह प्रत्येक प्रबंधकीय कार्य का एक हिस्सा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कार्रवाई तब तक संभव नहीं है जब तक कि किसी व्यावसायिक समस्या या स्थिति के बारे में कोई ठोस निर्णय नहीं लिया जाता है। प्रबंधन के कार्य तभी शुरू होते हैं जब शीर्ष स्तर का प्रबंधन रणनीतिक निर्णय लेता है। फैसलों के बिना, कार्रवाई संभव नहीं होगी और संसाधनों का उपयोग करने के लिए नहीं रखा जाएगा। इस प्रकार निर्णय लेना प्रबंधन का प्राथमिक कार्य है। निर्णय लेने की पहली प्रबंधन गतिविधि के लिए निर्णय लेना एक उचित पृष्ठभूमि बनाता है। योजना शीर्ष स्तर के प्रबंधन द्वारा लिए गए व्यावसायिक उद्देश्यों के बारे में व्यापक निर्णयों को ठोस आकार देती है। इसके अलावा, अन्य प्रबंधन कार्यों जैसे कि आयोजन, स्टाफिंग, समन्वय और संवाद स्थापित करते समय निर्णय लेना आवश्यक है।

सारणी 02 – कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता का विकास

निर्णय लेने की क्षमता का विकास का स्तर	200 उत्तरदाता		कुल आवृत्ति	कुल प्रतिशत
	100 बालक आवृत्ति	100 बालिकाएँ आवृत्ति		
बहुत अधिक	17	25	42	21
अधिक	51	43	94	47
सामान्य	11	15	26	13
कम	13	12	25	12.5
बहुत कम	8	5	13	6.5
कुल	100	100	200	100

सारणी 02 में कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता के विकास पर उत्तरदाताओं का विवरण दिया गया है जिसमें 17 बालक और 25 बालिकाओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता का विकास बहुत अधिक स्तर तक होता है और 51 बालक और 43 बालिकाओं के अनुसार अधिक स्तर तक होता है एवं 11 बालक और 15 बालिकाओं के अनुसार सामान्य स्तर तक होता है तथा 13 बालक और 12 बालिकाओं के अनुसार कम स्तर तक होता है जबकि 8 बालक और 5 बालिकाओं के अनुसार बहुत कम स्तर तक होता है। अतः यह ज्ञात होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के अनुसार में कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता हैं।

समस्या समाधान – समस्या समाधान यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो बालकों के सामने आने वाली समस्याओं और अवसरों को फिर से परिभाषित करने में मदद करती है, नए, नए जवाब और समाधान लेकर आती है और फिर कार्रवाई करती है। कौशल शिक्षा में उपयोग किए गए उपकरण और तकनीक प्रक्रिया को मजेदार, आकर्षक और सहयोगी बनाते हैं। रचनात्मकता, समस्याएं सुलझाने और निर्णय लेने से न केवल बालकों को बेहतर समाधान बनाने में मदद मिलती है, यह एक सकारात्मक अनुभव बनाता है जो नए विचारों को अपनाने में तेजी लाता है।

सारणी 3 – कौशल शिक्षा से समस्या समाधान करने की क्षमता का विकास

समस्या समाधान करने की क्षमता के विकास का स्तर	200 उत्तरदाता		कुल आवृत्ति	कुल प्रतिशत
	100 बालक आवृत्ति	100 बालिकाएँ आवृत्ति		
बहुत अधिक	21	24	45	22.5
अधिक	42	38	80	40
सामान्य	16	18	34	17
कम	10	12	22	11
बहुत कम	11	8	19	9.5
कुल	100	100	200	100

सारणी 3 में कौशल शिक्षा से समस्या समाधान की क्षमता के विकास पर उत्तरदाताओं का विवरण दिया गया है जिसमें 21 बालक और 24 बालिकाओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से समस्या समाधान करने की क्षमता का विकास बहुत अधिक स्तर तक होता है और 42 बालक और 38 बालिकाओं के अनुसार अधिक स्तर तक होता है एवं 16 बालक और 18 बालिकाओं के अनुसार सामान्य स्तर तक होता है तथा 10 बालक और 12 बालिकाओं के अनुसार कम स्तर तक होता है जबकि 11 बालक और 8 बालिकाओं के अनुसार बहुत कम स्तर तक होता है। अत: यह ज्ञात होता है कि उच्च माद्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के अनुसार में कौशल शिक्षा से समस्या समाधान करने की क्षमता का विकास होता हैं।

निष्कर्ष :

1. 21 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता का विकास बहुत अधिक स्तर तक होता है।
2. 47 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता का विकास अधिक स्तर तक होता है।
3. 6.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से निर्णय लेने की क्षमता का विकास बहुत कम स्तर तक होता है।
4. 22.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से समस्या समाधान करने की क्षमता का विकास बहुत अधिक स्तर तक होता है।
5. 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से समस्या समाधान करने की क्षमता का विकास अधिक स्तर तक होता है।
6. 9.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कौशल शिक्षा से समस्या समाधान करने की क्षमता का विकास बहुत कम स्तर तक होता है।

सुझाव :

1. उच्च माद्यमिक स्तर की विद्यालयी शिक्षा के साथ-साथ कौशल शिक्षा देने का प्रावधान बालक-बालिकाओं को स्वजागरूक बनाता है अत: इसे कक्षा 8 से भी प्रारम्भ किया जा सकता हैं।
2. कौशल शिक्षा घरों में भी सीखने को मिलती है, घर के छोटे-छोटे कार्य भी कौशल शिक्षा के पाठ्क्रम में जुड़ सकतें है।
3. सही समय पर आयजनक गतिविधि कर स्वयं को आर्थिक संबल कर उच्च माद्यमिक स्तर के बालक-बालिकाएँ सही समय पर विवाह कर अपने प्रजनन अधिकारों का प्रयोग कर सकते हैं।
4. बालक-बालिकाएँ कौशल शिक्षा से नौकरी पाने वाले की बजाए नौकरी देने वाले सशक्तिकरण की ओर बढ़ सकतें हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Indusnettechnologies, Goutam Pal, Dipak K S, Swadesh Dey. "National Urban Livelihoods Mission (NULM): National Urban Livelihoods Mission (NULM)". udd.uk.gov.in.
2. "Welcome to National Rural Livelihoods Mission | National Rural Livelihoods Mission". aajeevika.gov.in.
3. "Vocational Training in India - A skill Based Education". Vocational Training Center. 2018-05-01.

****

पूर्ण अद्वैत योग की अवधारणा (योग से अद्वैत योग की ओर संक्रमण)

डॉ. दिनेश कुमार कौशल *

प्रस्तावना – ऋग्वेद में योग शब्द विभिन्न अर्थो में प्रयुक्त हुआ है, जैसे जूड़ा डालना या हल डालना अनुपलब्ध की प्राप्ति, जोड़ना इत्यादि। जूड़ा डालने के अर्थ में इसका उतना प्रयोग नहीं हुआ जितना कि अन्य अर्थों में, किन्तु यह सत्य है, कि ऋग्वेद तथा उपनिषद में इस अर्थ मे भी इस शब्द का प्रयोग हुआ है। इसी शब्द से एक अन्य पद भी निकला है– 'युग्म' जिसका प्रयोग परवर्ती संस्कृत साहित्य में हुआ है। ऋग्वेद में धार्मिक और दार्शनिक विचारों के साथ-साथ हम धार्मिक यम, नियम और आचार का अधिक महत्व पाते हैं। उस समय तप और ब्रह्मचर्य बहुत महत्वपूर्ण गुण माने जाते थें तथा उन्हें उच्चतम शक्ति का स्त्रोत माना जाता था। पाणिनि के समय तक आतें-आतें योग शब्द ने तकनीकी अर्थ धारण कर लिया था। पाणिनि ने 'युज समाधौ' धातु को 'यजुरयोगे' धातु से इसलिए अलग माना जाता है। समाधि या एकाग्रता के अर्थ वाला युज धातु क्रियापदों में कहीं भी प्रयुक्त नहीं हुआ है।

शोध प्रविधि – इस शोधपत्र में द्वितीयक सामाग्री के रूप में ज्ञानमीमांसीय चिन्तन किया गया है। ज्ञानमीमांसीय दृष्टिकोण हमेशा मानव का जीवन किस लिए है? इस अध्ययन का आधार क्या है? इससे निदान क्या हो सकता है? इत्यादि प्रश्नों पर आधारित है।

श्रीमद्‌भगवद् गीता में योग शब्द का प्रयोग 'युज समाधौ' वाले अर्थ में तो हुआ ही है, 'युजिर योगे' वाले अर्थ में भी हुआ है।

योग का अर्थ एवं परिभाषा – योग शब्द संस्कृत में युज धातु से बना है। युज का अर्थ है– संयुक्त होना। 'युज्येत अनेन इति योग:।' योग का अर्थ है जो संयुक्त करता है। वे कौन से तत्व हैं, जिन्हें संयुक्त किया जाता है। पारम्परिक पारिभाषिक शब्दावली में यह जीवात्मा का परमात्मा से संयुक्तीकरण है। यह एक संकीर्ण संकुचित अहंकारग्रस्त व्यक्ति सत्तता का परम सत्ता की नित्य शाश्वत सर्वव्यापी आनन्द स्थिति में विस्तार है।

महाऋषि पंतजलि ने अपने योगसूत्र में योग की परिभाषा करते हुए कहा है कि चित्त के ऊपर नियन्त्रण पाने की प्रक्रिया का नाम योग है ।

'योग: चित्तावृत्ति निरोध:'

'योगवाशिष्ठ' में योग के सार को अत्यन्त सुन्दरता से इस प्रकार चित्रित किया गया है :-

'मन: प्रशमनोपाय: योग: इत्यभिधीयते।'

श्रीमद्‌भगवद् गीता में योग की निम्न परिभाषा दी गई है :-

'योग: कर्मसु कौशलम्।'

पूर्ण अद्धैत योग – महर्षि अरविन्द के अनुसार विकास प्रक्रिया का चरम लक्ष्य दिव्य जीवन की स्थापना है। किन्तु यह चरम लक्ष्य कैसे प्राप्त होगा? अरविन्द का स्पष्ट उत्तर है– वह साधन योग है।

उद्देश्य – 'योग' शब्द का शाब्दिक अर्थ है-'मिलन' अथवा 'एकलन (Union)। अत: हर प्रकार के योग का लक्ष्य 'ईश्वर मिलन' है, 'एकत्व' प्राप्ति करना है। प्राय: सभी योग दर्शन यह मानते हैं कि सभी अशुभ रूपों के जड़ में 'जीव' का 'अनन्त' से अलगाव है। अत: उन सबों के अनुसार योग का लक्ष्य इस अलगाव से ऊपर उठना, ससीम तथा असीम के मौलिक एकत्व को पा लेना है। कहा जा सकता है कि श्री अरविन्द भी योग के इस प्रकार के विचार को अपने ढंग से स्वीकार करते हैं किन्तु उनका स्पष्ट प्रयत्न है कि वे योग विचार को भी अपनी मूल तात्विक मान्यताओं के अनुरूप सजाये। इस दृष्टि से उनके विचारों को समझने पर स्पष्ट हो जाता है कि उनके अनुसार योग के कुछ मूल एवं विशिष्ट लक्ष्य हैं। सामान्य ढंग से इन लक्ष्यों को निम्नलिखित रूपों में निर्धारित किया जा सकता है।

समाधान :

1. श्री अरविन्द के अनुसार विकास प्रक्रिया वैयक्तिक तथा जगत दोनों स्तरों पर एक विशेष अवस्था पर पहुँची है। हमने यह भी जाना है कि अब विकास प्रक्रिया आध्यात्मिक क्षेत्र में छलांग लगाने के लिए उद्यत है– तत्पर है। श्री अरविन्द के अनुसार 'योग' की आवश्यकता एवं उसका लक्ष्य है कि इस छलांग को सहज बना दें तथा इसकी संभावना को निकट ला दें।
2. श्री अरविन्द के अनुसार विकास प्रक्रिया का चरम लक्ष्य उसकी परिणति एक ऐसे दिव्य जीवन की स्थापना में है, जिसमें हर व्यक्ति अज्ञान के क्षेत्र से बाहर या ज्ञान-पुरुष में परिणित हुआ रहेगा। उनका विश्वास है कि दिव्य जीवन आता ही है। इस आगमन की गति को तीव्र किया जा सकता है। इस लक्ष्य की पूर्ति में योग सहायक है।
3. श्री अरविन्द स्वीकार करते हैं कि एक दृष्टि से जीवन प्रक्रिया ही योग प्रक्रिया है, क्योंकि वस्तुत: जीवन के हर कर्म, हर कार्य एक प्रकार से मूल तत्व की ओर प्रेरित है। हर गतिविधि में असीम की अभिव्यक्ति है। जीवन प्रक्रिया चल ही नहीं सकती, यदि उसमें उच्चतर रूपों का अवतरण न हो, किन्तु साधारण जीवन में यह चेतना नहीं रहती कि हमारी गतिविधियाँ एकत्व की ओर प्रेरित हैं। योग का लक्ष्य है कि इस एकत्व की ओर की उन्मुखता चेतन-जीवन का अंग बन जाये। हमे अपनी क्रियाओं में चेतना रहे कि उनके माध्यम से असीम ही व्यक्त हो रहा है।
4. साधारणत: विकास प्रक्रिया धीमी गति से अग्रसर होती है, क्योंकि हमारा जीवन सामान्यतया बाह्यता का जीवन होता है। इसकी गति तीव्र करने के लिए आवश्यक है कि हमारी चेतना का केन्द्र बाह्यत: न रहे बल्कि आन्तरिक हो जाये। योग इसमें सहायक है। इसी आशय से श्री अरविन्द कहते हैं:-

* शिवाजी नगर, बी. डी. ए. कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) भारत

"Yoga implies not only the realisation of God, but an entire consecration of inner and outer life till it is fit to manifest a divine consciousness and become part of a divine work."**

श्री अरविन्द योग के स्वरूप का विवरण विभिन्न प्रकार से करते हैं। कभी–कभी कहा गया है कि 'योग मानव की संपूर्णता में ईश्वरत्व का उत्प्रवाह है।' कभी–कभी कहा गया है 'योग को आत्मचेतना नहीं समझ कर उसे आध्यात्मिक आत्म–अभिव्यक्ति कहना चाहिए।'

उपरोक्त वर्णन के आधार पर श्री अरविन्द योग की एक विशिष्टता प्रकाश में आती है। उनके अनुसार योग का लक्ष्य इसी जीवन, शरीर रूप में ही ईश्वरत्व की पूर्ण चेतना है। अपने सामान्य दार्शनिक विचार के अनुरूप श्री अरविन्द कहते हैं कि योग का लक्ष्य उत्थान तथा अवतरण दोनों है। यह विकास प्रक्रिया में घिरे आत्म के उत्थान का प्रयत्न है, साथ–साथ उच्चतर रूपों के अवतरण का प्रयत्न है। इसकी परिणति अतिमानसिक रूपान्तरिण में है। वे कहते हैं:–

"Our yoga is a double movement of ascent and descent, one rises to higher tools of consciousness, but at the same time one brings down their power not only into mind and life, but in the end even into the body and highest of these levels, the one which it aims, is super mind. only when that can be brought down is a devine transformation possible in the earth consciousness."

अत: श्री अरविन्द के पूर्ण अद्धैत योग का चरम लक्ष्य है– जीवन एवं जगत का ईश्वरत्व रूप में रूपान्तरण, दिव्य–जीवन (Divine Life) का अवतरण जो वैयक्तिक मोक्ष न होकर सबों का मोक्ष है– सर्वमुक्ति है।

योग का स्वरूप:–

According to Shri Arvind:-

"Yoga means union with divine, a union either transcentental (Above the Universe) or cosmic (universal) or individual, or as in our yoga, all three together."

उपरोक्त पंक्तियों में योग की प्राय: सभी विधाओं का उल्लेख है। योग का अर्थ है– ईश्वर मिलन। किन्तु यह पारलौकिक स्तर पर हो सकता है। योग का प्रतिपादन करने वाले विभिन्न विचारों से इन्हीं विधाओं में किसी एक का चयन किया है। श्री अरविन्द के अनुसार योग में तीनों विधाये एक जुड़ी हुई हैं। यह भी एक कारण है जिसके चलते वे अपने योग को पूर्ण अद्धैत योग कहते हैं। योग वह प्रक्रिया है जो चेतना को विस्तृत करने उच्चतर उठने तथा अन्तत: एकरूप होने की प्रक्रिया को रूप देता है। योग से इन सारी प्रक्रियाओं को बल मिलता है। इसी कारण श्री अरविन्द इसे पूर्ण अद्धैत योग कहते हैं या पूर्ण योग कहते हैं।

विश्लेषण :

1. योग की प्राय: सभी विधाओं में कुछ ऐसे विशिष्ट शक्तियों को विकसित करने की बात होती है कि सर्वसाधारण के लिए यह दुर्लभ एवं जटिल है। अत: श्री अरविन्द आन्तरिक योग के ढंगों का विवरण करते है, जिसका अनुशीलन सबके लिए संभव है। इसी कारण वे हठयोग के अनुशासनों पर बल नहीं देते। आसन, प्राणायाम पर बहुत बल नहीं देते। वे प्रार्थना एवं मंत्र जाप आदि को भी अनिवार्य नहीं कहते। उनका योग आन्तरिक योग है जिसमें हर योग के समान कुछ आन्तरिक अनुशासनों की अनुशंसा तो अवश्य है, किन्तु वे अनुशासन ऐसे हैं जिनका पालन सबके लिए संभव है।
2. अधिकतर योग–विधियों की जगत के प्रति अभिवृत्ति निषेधात्मक है। पतंजलि के अनुसार योग का लक्ष्य विवेक, ज्ञान की प्राप्ति है, जिस ज्ञान में आत्म तथा अनात्म के भेद का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है, किन्तु श्री अरविन्द के अनुसार योग का लक्ष्य 'आत्म' तथा 'अनात्म' में भी आत्म–रूप, आध्यात्मिकता की पहचान है।
3. योग के सभी प्रतिवादक योग का लक्ष्य भौतिक एवं शारीरिक स्तर पर निषेध है, उससे ऊपर उठना है, किन्तु श्री अरविन्द के अनुसार योग का लक्ष्य भौतिक एवं शारीरिक का हनन नहीं, बल्कि उनको भी अतिमानसिक प्रकाश से रूपान्तरित कर देना है।
4. सभी योगों के अनुसार योग का लक्ष्य 'व्यक्ति' का मोक्ष है। परन्तु उनके अनुसार मात्र माक्ष ही योग का लक्ष्य नहीं है, बल्कि व्यक्ति का मोक्ष चरम लक्ष्य का अंश है। योग का लक्ष्य सबों की मुक्ति है या धरती पर दिव्य जीवन को उतार लाना है।
5. योगों का लक्ष्य समाधि की अवस्था में सिद्ध प्राप्त करना है, मोक्ष प्राप्त करना है, किन्तु श्री अरविन्द के अनुसार पूर्ण एकत्व की प्राप्ति शरीर में रहते हुए, जाग्रतावस्था तथा जगत से संपर्क तोड़े बिना संभव है।
6. उपरोक्त कारणों के आधार पर ही श्री अरविन्द के द्वारा दी गई योग विधि प्रचलित सामान्य योग के ढंगों से भिन्न है। श्री अरविन्द ने तीन स्तरों वाली विधि की अनुशंसा की है जो पहले चर्चित 'त्रिविध रूपान्तरण' के अनुरूप है। इसके अंतर्गत तीन प्रक्रियाएँ आती हैं:–

1. आत्मिकता
2. आध्यात्मिकता
3. अतिमानसिकता की प्रक्रिया।

निष्कर्ष – उपरोक्त विचारमंथन से स्पष्ट है कि परम्परागत योग की व्याख्या एवं उद्देश्य पुरूषार्थ चतुष्ट्य की विकास यात्रा का अंतिम पड़ाव मोक्ष पर टिका है, किन्तु श्री अरविन्द योग की एक पृथक, नवीन एवं भौतिक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए धरती में दिव्य जीवन एवं अतिमानसिकता की चर्चा करते हैं। समकालीन भारतीय दर्शन में नि:संदेह श्री अरविन्द मौलिकता, नवीनता एवं सूक्ष्म दार्शनिक मिमांसा पर अपना अधिकार रखते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद, 1–34–9, 7–67–8, 3–27–11 शतपथ ब्राम्हण
2. कठोपनिषद 3–4, 2–6
3. योगवाशिष्ठ
4. श्रीमद् भगवत्गीता ।।2/50।।
5. योगसूत्र, ।।1/2।।
6. श्री अरविन्दो, द रिडिल ऑफ द वर्ल्ड, पृष्ठ 2–3
7. श्री अरविन्द, लाइट्स ऑन योगा, पृष्ठ– 16
8. श्री अरविन्द, द लाइफ डिवाइन, पृष्ठ– 947

****

महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि में नारी के विविध रूप

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

प्रस्तावना – किसी काल की नारी की स्थिति के ज्ञान के लिए विधवा-जीवन का अध्ययन अनिवार्य है। कोई समाज अपने नारी-वर्ग के सम्मन के लिए सामान्य रूप से कितना भी गौरव का अनुभव करे किन्तु विधवा के प्रति उसके दृष्टिकोण से ही उसकी सही भावना का मूल्यांकन किया जा सकता है। माता, पत्नी और पुत्री के रूपों में नारी की स्थिति से विधवा की अवस्था का अनुमान लगाना सम्भव नहीं है। कारण यह है कि कन्या ,पत्नी और माता के साथ मनुष्य स्वाभाविक स्नेह रखता है क्योंकि इनका किसी न किसी आवश्यक धर्म कार्अ में संबंध होता है। किन्तु विधवा की स्थिति इनसे सर्वथा भिन्न होती है। पति से (जिस पर स्त्री का सारा स्वाभिमान आधारित होता है) विधवा सर्वथा वंचित होती है। अपने माता-पिता के जीवित रहने पर भी विधवा को पतिकाल के सदस्यों पर अवलम्बित होना पड़ता है, जिनका विधवा के साथ नतो स्वाभाविक संबंध होता है और न संस्कारगत प्रेम ही। इस प्रकार विपरीत परिस्थिति में रहका बेकार झंझावतो से संघर्ष करने वाली अश्रुसिक्त विधवा की अवस्था से ही काल विशेष के नारी-जीवन का सही मूल्यांकन सम्भव है।

विधवा की स्थिति के ज्ञानार्थ निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार करना आवश्यक है। यथा-पति की मृत्यु के बाद उसे जीवित रहने का अधिकार था या नहीं ? उसे पति के अनुकरण (सती) के लिए विवश तो नहीं किया जाता था ? जीवित रहने पर उसे पुनर्विवाह की सामाजिक अुनशंसा प्राप्त थी या नहीं ? पति की सम्पत्ति पर उसका अधिकार था या नहीं ? समाज एवं परिवार के लोगों की उसके प्रति कैसी धारणा थी ? इत्यादि।

प्रागैतिहासिक समाज में यह धारणा व्याप्त हो गयी थी कि मृत्यु के बाद दूसरे लोक में भी मनुष्य को उन सारी वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है, जिनका वह इहलोक में उपयोग करता था। इसी भावना से प्रेरित होकर व्यक्ति की मृत्यु के बाद उनके शव के साथ-साथ उसकी समस्त आवश्यक सामग्रियों को दफना दिया जाता था। यहाँ तक कि उसके वाहन और उसकी पत्नी को भी चिंता पर चढ़ा दिया जाता था। सम्भवत: उसी भावना ने सती प्रथा को जन्म दिया होगा ।

पति की मृत्यु के बाद पत्नी के द्वारा उसका अनुगमन करने की प्रथा आर्यो में बहुत पहले से ही थी। पूर्ववैदिक और उत्तारवैदिक साहित्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सती प्रथा का आरम्भ आर्यो के प्रारंभिक जीवनकाल से हुआ। किन्तु सती प्रथा के सम्बन्ध में जो निर्देश मिलते हैं, वे अत्यन्त संदिग्ध हैं। ऋग्वेद में आए हुए एक मंत्र में प्रयुक्त 'अग्ने' शब्द को लेकर मतभेद है कि यह 'अग्ने' है या आगे। उक्त अंश का यह अर्थ है कि स्त्री अपने मृत पति के शव के साथ लेटती है। तत्पश्चात् उसे संबोधित किया जाता है, 'नारी उठो, पुन: इस संसार में आओ'।इस अंश के आधार पर माना गया है कि सती प्रथा का प्रारम्भ पूर्ववैदिक युग में ही हो गया था। सती प्रथा से सम्बन्धित इसी प्रकार का अर्थ व्यंजित करने वाले उत्तरवैदिककालीन साहित्य में कई निर्देश मिलते हैं। अथर्ववेद में उल्लिखित है कि अपने मृत पति के शव के साथ विधवा नारी चिता पर आरोहण करती है और उसके बाद उसे पिता से उतर आने के लिए निर्देशित किया जाता है।इस उद्धरण से भी सती प्रथा के प्रचलन का अनुमान होता है। आपस्तम्ब गृह्य सूत्र में बतलाया गया है कि विधवा को चिता से देवर या उसके पति का शिष्य या उसका पुराना नौकर यह कहते हुए उतार ले कि हे नारी! तुम इस जीवलोक में आ जाओ। इन उद्धरणों से प्रतीत होता है कि वैदिक युग में सती प्रथा व्यावहारिक रूप में कहीं नहीं थी। कहीं थी भी, तो औपचारिक रूप में ही।

मनु ने सती प्रथा का विरोध किया है। अनुमरण को निन्द्य बतलाते हुए उन्होंने विधवा के लिए सामान्य जीवन व्यतीत करने का निर्देश दिया है।

महाभारत काल में सती प्रथा के प्रचलन के उदाहरण प्राप्त होते है, पति बिना मृतं श्रेया इसी भावना से प्रेरित होकर पतिव्रताएँ पति के साथ चिता में प्रवेश करती थी। माद्री, वसुदेव की चार पत्नियों, एवं ब्राह्मणी आंगिरिसी ने अपने पति के शव के साथ चितारोहण किया है। कृष्ण की पत्नियों में रूकमणी,गान्धारह,शैव्या,हेमवती,जाम्बवती ने पति की मृत्यु के कुछ समय पश्चात् हस्तिनापुर जाकर अग्नि में प्रवेश करके प्राण त्याग दिया। प्राय: सभी उच्चकुलीन साध्वियाँ वैधव्य की अपेक्षा अनुमरण पसन्द करती थी। एक बाढ़ अवश्य थी अल्पवयस्क पुत्रों की माता या गर्भवती को अनुमरण का अधिकार नहीं था, उसके लिए अनुमरण निन्दनीय समझा जाता था।

रामायण और महाभारत प्राय: एक ही विशेष सभ्यता-संस्कृति के पोषक ग्रन्थ हैं। रामायण की तरह महाभारत में भी सती प्रथा के प्रचलन के उदाहरण मिलते है। महाराज दशरथ की मृत्यु के समय विलाप करती हुई कौशल्या कहती है कि मैं आपके (पति) साथ आज ही मृत्यु का वरण करूँगी तथा एक पतिव्रता की भाँति आपके मृत-शरीर का अलिंगन करके चिता की आग में प्रवेश कर जाऊँगी। बाली की पत्नी तारा भी पति के शव के साथ सती होने के लिए तैयार है। उसके समक्ष एक ओर पुत्र (अंगद) के पालन-पोषण का दायित्व है तो दूसरी ओर पातिव्रत्य धर्म के पालन का। इस द्वन्द्व के बीच भी वह पति के साथ सती होना ही श्रेयस्कर समझती है। ऐसा निर्णय लेने के बाद भी तारा सती नहीं होती। कौशल्या भी शमशान में जाकर पति के शव की प्रदक्षिणा करके ही लौट जाती है। इससे यह अनुमान होता है कि रामायणकाल में भी अल्पवयस्का माता, गर्भवती विधवा को अनुमरण की अनुमति नहीं थी। ऐसी स्थिति से अनुमरण की इच्छावली विधवा को शमशान ले जाकर तथा उसके द्वारा चिता की परिक्रमा कराकर उसे पुन: आग्रहपूर्वक घर लौटा लाया जाता था और इस प्रकार सती प्रथा की औपचारिकता पूरी

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

कर दी जाती थी।

इन उद्धरणों से प्रतीत होता है कि रामायणकाल में सती प्रथा के प्रति पतिव्रता की आस्था एवं आसक्ति थी। परन्तु समाज की ओर से उसे अनुमोदन प्राप्त नहीं था। इसीलिए औपचारिकता (विधि) पूरी करके विधवा को अनुमरण से रोक दिया जाता था। किसी भी विधवा को सती होने के लिए बाध्य नहीं किया जाता था।

विधवा विवाह – वैदिक काल में विधवा के अनुमरण का निषेध किया गया है।विधवा के लिए जीवित रहना और पुनर्विवाह कर लेना ही अधिक श्रेयस्कर माना गया है। ऋग्वेद के अन्त्येष्टि सूक्त के एक मंत्र में विधवा-विवाह का संकेत किया गया है। इस मंत्र के अर्थ के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों में मतान्तर है। मैकडोनल के अनुसार विधवा पति का अनुगमन न करके इस लोक में रहकर पुनर्विवाह करके पति की स्मृति को सुरक्षित रखे यही इस मंत्र का अर्थ है। यह उपयुक्त भी प्रतीत होता है क्योंकि इसका समर्थन सूत्र साहित्य में भी मिलता है। तैत्तिरीय संहिता में विधवा विवाह का सबल प्रमाण प्राप्त हो है। इसके एक स्थल पर विधवा के पुत्र का उल्लेख है।अथर्ववेद में भी विधवा विवाह का संकेत प्राप्त होता है। इसके एक मंत्र में बतलाया गया है कि परलोक में कोई पत्नी द्वितीय पति से पुनः मिल सकती है।

आपस्तम्ब धर्मसूत्र में विधवा विवाह की निन्दा की गयी है। मनु ने भी विधवा-विवाह का प्रबल विरोध किया है। अन्य पुरूष द्वारा उत्पन्न संतान शास्त्रविरूद्ध है। अन्य की स्त्री में उत्पन्न संतान उत्पादनकर्ता की नहीं होती। पतिव्रता के लिए भी परपति का विधान नहीं है।इन्होंने कहा है कि विवाह विधान वाले शास्त्रों में कही भी विधवा-विवाह का निर्देश नहीं है। उन्होंने विधवा को सदा पतिव्रताओं के धर्म की इच्दा करने वाली, क्षमामयी और ब्रह्मचारिणी रहने का निर्देश दिया है।पति के मर जाने पर ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करने वाली स्त्री पुत्रहीन न होने पर भी स्वर्गलोक को प्राप्त करती है।पुत्र के लोभ से जो स्त्री पति का अतिक्रमण करती है,वह इस लोक में तो निन्दित होती ही है, परलोक से भी गिर जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ. 437
2. ऋग्वेद 10/18/7-8
3. इयंनारी पतिलोकं वृणानां निपद्यते उपत्वा कर्त्य प्रेतम्।
   धर्मम् पुराणमनुपालयन्ती तस्मै प्रजां द्रवणिं चाहेघता।। अथर्व.19/21
4. तमुत्थापये देवरः पतिस्थनीयोन्तवासी वर दासो वा
   उदीष्व नारि अमि जीवलोकम् इति।आप.गृह्य.4/2/18
5. वीमेन इन मनु एण्ड हिज सेवेन कॉमन्टेटर्स-आर.एस.दास पृ.-221
6. महा. आदि. 112/20 , 146/22
7. वही, 190/75 , 116/31
8. वही, मौसल. 8/18
9. वही, आदि. 173/29
10. वही, मौसल. 8/71
11. साहमद्यैव दिष्टान्तं गमिष्यामि पतिव्रता।
    इदं शरीरमालिड्.गय प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्।। वा.रा. 2/66/12
12. अंगदं प्रतिरूपाणां पुत्राणामेकतः शतम्।
    हतस्याप्यस्य वीरस्य गात्रसंश्लेषणं वरम्।। वही, 4/21/13
13. ऋग्वेद 10/18/8
14. आश्व. गृह्य. 4/2/18
15. तै. सं. 2/2/44
16. अथर्व. 9/5/27-28
17. मनु.5/162
18. न विवाहविधायुक्तं विधवा वेदनं पुनः।। वही,9/65
19. आसीतामरणात्क्षान्ता नियता ब्रह्मचारिणी।
    यो धर्म एकपत्नीनां काड्.गक्षन्ती तमनुत्तमम्।। वही, 9/158
20. मृते भर्तरि साध्वी स्त्री ब्रह्मचर्य व्यवस्थिता।
    स्वर्ग गच्छत्यपुत्राति यथा ते ब्रह्मचारिणः।। वही, 5/160
21. अपत्यलोभाद्या तु स्त्री भर्तारमतिवर्तते।
    सेह निन्दामवाप्नोति पतिलोकाच्च हीसते।। वही, 5/161

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

English for specific purposes ; course design for engineering students in National Capital Region

Dr. Omprakash Upadhyay*

Abstract - English for specific purposes has emerged as varying purposes and needs of language learners and it is the kind of profession. English is taught as a second language in India. Now a days It is the demand of the hour that a course is required to design to cater the need of students studying Engineering in National Capital Region. The present study is presented to analyse four skills during the teaching of English. Some authentic tools were applied to arrive final conclusion. At last a suggestive outline for course was presented for students. This course may help students in present circumstances to use English. In professional life English as a global language can help to grip work.

Introduction - The purpose of the present study is to identify and analyze the language needs of students studying a degree programme OF BACHELOR OF TECHNOLOGY (B.Tech.) in NCR and to make recommendations for enhancing the present English syllabus and making it more learner-centered. To find out the needs of these B.Tech. students, a needs analysis was conducted. Two questionnaires, one for students and one for EST teachers, was prepared and administered. The data was then tabulated and analyzed. Then the researcher had a discussion with some students to re-assess the data collected through questionnaires. The results show that even after having learned English at primary, secondary and higher secondary levels, the students are unable to use the English language, as they are taught English as a subject in their schools. With the globalization of trade and economy and the continuing increase of international communication in various fields, the demand for English for Specific Purposes (ESP) is expanding. To evaluate how effective the teaching and learning process at technical colleges and what the real needs of the students in a technical institution are, students were selected to participate in this research. Remedial classes are provided to improve the academic skills, linguistic proficiency and levels of comprehension. In the classes, these students are prepared to face the challenges of the B.Tech. courses so that they can stand academically. In the language classes, these students are encouraged to develop their writing skills and grammar skills so they can perform well in their written examination. The ESP approach is practiced to develop students' language skills.

Objective of study - The present study is to demonstrate how the learners can learn the English language most effectively, it would be vital to explore what the learners actually know. The objectives of the study are to identify learners' subordinate skills and knowledge required by the learners in order to carry out real world communication tasks; to find out what these learners should be taught at this level when they are getting prepared to face the challenges of B.Tech. courses; to see what can be done to improve students' poor motivation; and to examine how the course of study should be prepared to serve students' academic needs in language usage and to cater to their sociolinguistic needs.

Needs Analysis - Needs analysis is a crucial starting point for designing a learner-centered course. According to Singh (2005:110-111), needs assessment starts with identifying the learners' personal, socio cultural and educational traits, involving an assessment of the students' expectations and interest, and their real language needs, methods of teaching, study skills proficiency, learning style, data availability, experience, material production, constraints of money, time available, teaching equipment, facilities granted, physical setting, course designer, sponsors (such as the technical institution in the present study), teachers, and the students. The data related to learners' educational and cultural background may help in analyzing their language competence and exposure to the English language. In a needs analysis exercise, it is vital to explore the study skill and learning style of the learners in order to achieve effective learning and teaching. Other components, like learning materials, money, facilities granted, teaching equipments and the physical setting in which the course is taking place, also contribute to the success of an ESP course. Apart from these, the course designer, sponsors, teachers, and the students are the four major pillars of an ESP course.

Data Collection and Discussion - The objective of this section was to assess the learners' present language competence, and the language skills that are required in

***Lecturer, Kamla College, Dholpur (Raj.) INDIA**

different situations. This section aimed to investigate the adequacy of the present language syllabus, and the areas and the fields which the learners find more important and relevant to support their study of some courses The questionnaire for teachers was aimed to investigate the teachers' use of the English language; their attitude towards the language, student-teacher relationships,and the syllabus; and their motivation and commitment regarding the course and their work. Secondly the availability of the resources, their accessibility and their own ability as language teachers. Thirdly this section was designed to extract data related to students' linguistic needs, their language competence and perception, and the teachers' ability to understand their students. Methodological: This section aimed to identify teachers' perception of ESP, their ESP methodology, and their attitude as ESP practitioners. I support to develop new ideas. This is an important factor of this process. The students tested in this process**,**most of them mentioned Hindi as their mother tongue .These students are native speakers of Brij, Haroti, Punjabi, Marwadi and The class is linguistically different and almost 94% of the total students feel that it is more comfortable to converse in their mother tongue. More than 88% of all students think that English is very important to shape their career. This data reflects that the majority of students are aware of their language needs. Among the students, almost 65% use Hindi sometimes to interact with their teachers, about 16% often use Hindi and nearly 19% never use Hindi while interacting with the teachers.

The majority of students sometimes interact with their teachers in Hindi irrespective of their mother tongue. When interacting with their classmates, 84% of the students use Hindi, and 15% sometimes use Hindi. This is because of the social setting – the institution is at NCR in Rajasthan where Hindi is the dominant language of use in the society, and everybody can speak and understand Hindi. It might be due to this reason that the speakers adopted Hindi as the language of communication. When it comes to the use of the mother tongue, more than 27% of the students use their mother tongue often to interact with their teachers, over 50% use it sometimes and almost 30% never use their mother tongue while interacting with their teachers.

It must be taken into account that the medium of instruction in college is English; all course books are in English, and students do their lab work in English. They are expected to understand the lectures, laboratory work, examination papers, and of course their course books. However, the students' response reflects that the majority of them are unable to express themselves in English. This may be due to lack of any functional English course at the school level.

Another question students were asked was 'Among speaking, reading, writing, listening, pronunciation, public speaking, sentence framing, vocabulary development, discussion and conversation, grammar, and punctuation, which one of them should be given more attention in the language classes?'. Nearly 90% of total students choose speaking skills, 83% public speaking, 85% vocabulary development, 82% discussion and conversation, 64% grammar, and 60% sentence framing. Punctuation and reading, with 38% each, are skills which only few answered well.

Five out of six EST teachers said that they do not get enough support, to pay extra attention to Special language courses for the students of science and technology. It is necessary that a common language can be spoken and understood by everyone. In such a situation English can play an important role. sametime, it was observed that the majority of students can take down notes during subject classes and more than 95% of students understand their course books. This certainly means that they understand the concepts of science and technology, though they may have problems in translating them into English.The teachers assert that the students need to improve their writing skills; instead, they need a course that should be based on remedial grammar (as remedial grammar can help them overcome their grammatical incompetence) and should be subject- specific in nature. The EST teachers comment that they are bound to use Hindi in the class to make the students understand certain concepts and to assure communication. They express the views that the students hesitate to speak English in the class either due to less knowledge or lack of understanding of what is being taught in the class. When interpreting these findings, it must be taken into consideration that these students are granted their respective branches of engineering on the basis of their performance in their class tests, mid-semester exams, and their end-semester examination. They are not judged on the basis of their speaking skills, but their writing skills. So it is important that the language classes should focus on developing their writing skills.

Course outline - Having determined the engineering needs through the tools I have used namely a questionnaire and authentic data analysis, the discussion will take place around, determining the outline for the technical course. The technical students need a language course that encompasses teaching of all the four language skills, emphasizing speaking and writing. The teachers seem quite aware of the students 'real and practical needs, but at the same time the wants and necessities of the learners cannot be ignored.

Aims and objectives :

1. The objectives of the course will be Recognize the organization of different report genre.
2. Use appropriate grammatical structures and functions
3. Write a full report with accuracy.
4. Assess each other's writing.
5. Use technical and semi technical vocabulary.
6. Employ the process of editing and drafting.
7. Promoting writing fluency,
8. Given the wants, necessities, and lack of language skills of the students.

the following items are suggested for course:

Designed course

Objectives:

1. Upon successful completion of the course.
2. The students should be able to become familiar with the basic principles of paragraph writing.
3. Learn and practice the key concept of four skills.
4. Learn key concept of essay writing.
5. Learn the key concepts of essay writing such as subject, purpose, audience, thesis, statement, introduction, body, and conclusion.
6. Learn technical report writing.
7. Gain understanding of presentation about a technical subject.

Recommendations - At least two hrs a day, six weeks in total should be length and period of class .Regularity of attendance, active participation, academic code of conduct and attitude towards course are essential for learning.

Conclusion - This research explored the self perceived English proficiency of students in engineering fields. They can perform better in all the four skills in their working fields such as conversation with employees, dealing with foreign delegates, in writing report,. Mailing, .particular tasks dealing with customers, using daily technical words, relationships and industry-specific tasks. Thus Engineering employees have the advantage of the real professional practices to improve their language skills. I have introduced theoretical background concerning ESP and mentioned some characteristic features closely connected with process of ESP learning. I drew the special to organizing ESP course and selecting material to fulfill demands of ESP learners in engineering fields. I have also pointed out some role between ESP teachers and General English teachers. I have also mentioned learning centered approach based on learners 'needs, expectations and learners' way of learning language. Learning strategies and teachers 'attitude to ESP course and motivation is also emphasized as a necessary part of learning process. In my practical part I have focused on particular learning aspects and various activities that have been done in the course of engineering.

References :-

1. Brown, J. D. (2006). Second language studies: Curriculum development.
2. ETIC. (1975). English for Academic Study: problems and perspectives. ETIC Occasional Paper. London: The British Council.
3. Flowerdew, J., & Peacock, M. (2001). Research perspectives on English for academic purposes. Ernst Klett Sprachen.
4. Hutchinson, T. & A. Waters. 1987. English for Specific Purposes: A Learning- Centred Approach. Cambridge: Cambridge University Press.
5. Hyland, K., & Hamp-Lyons, L. (2002). EAP: Issues and directions. Journal of English for academic purposes, 1(1), 1-12.
6. Jordan, R. R. (1997). English for academic purposes: A guide and resource book for teachers. Cambridge University Press.
7. Krogstad, A. (2011). For what purpose do language teachers use group work in their lessons? A study of group work in the teaching of English, and modern languages, in a Swedish school.
8. Munby, J. (1978). Communicative syllabus design: a sociolinguistic model for defining the content of purpose-specific language programmers. Cambridge University Press.

****

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी और दाम्पत्य सम्बन्ध

डॉ. अभयवीर *

शोध सारांश – साहित्य को हमारे जीवन में नवीन शक्ति पैदा करने वाला संसाधन कहा जाए तो किसी प्रकार की अतिशयोक्ति न होगी ठीक वैसे ही स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानीकारों और उनके द्वारा रचित कहानियों के मार्मिक तथ्यों का विवरण जो साहित्य की श्रीवृद्धि करता है। उस साहित्यिक तथ्यों में दाम्पत्य सम्बन्धों के विवरण ने हमें जीने की एक कला दी है। जिससे नए समाज का निर्माण किया जा सकता है ऐसे अनेक कहानीकारों ने दाम्पत्य सम्बन्धों के बनते-बिगड़ते प्रसंगों का उल्लेख यथार्थमयी स्थिति में करके आदर्श समाज की कल्पना की है। ऐसे कहानीकारों में, राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी, ज्ञानरंजन, श्रीकान्त वर्मा,दूधनाथ सिंह, चित्रा मुदगल, कृष्णा सोबती, सूर्य वाला, ऊषा प्रियंवदा, प्रभा खेतान, मृणाल पाण्डे, का नाम लिया जा सकता है। आधुनिक समय में हमारे समाज के परम्परागत जीवन मूल्यों ने हमें नए टकराव की परिस्थतियों में खड़ा कर दिया है जिससे स्त्री-पुरूषों के आपसी सम्बन्धों में उतार-चढ़ाव के दौर देखने को मिलते है। सवतंत्रता के बाद मानवीय सम्बनधों के वीच में आधुनिकता का पर्दा इस प्रकार पड़ गया है कि स्त्री-पुरूष दोनों ही राम-सीता, कृष्ण-राधा, शिव-पार्वती वाली नैतिक जीवन जीने की कला से हटकर पाश्चात्य संस्कृति के अनुसार जीने में विश्वास करने लगे हैं। जिससे समाज का नव-निर्माण होने की अपेक्षा पतन के गर्त में जा रहा है। आज के सन्दर्भ में हमें स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों के द्वारा किये गये लेखन पर दृष्टि डालकर वास्तविक जीवन में उन प्रेरणामयी प्रसंगों को उतारने की आवश्यकता आ पड़ी है। जिससे नया समाज, आदर्श समाज की रचना की जा सके क्योंकि स्त्री-पुरूषों के सम्बन्धों पर ही किसी भी राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है साथ ही अपनी संस्कृति को सुरक्षित रखने का दायित्व बनता है कि हम अपनी नैतिक परम्पराओं में बंधकर जीवन जीयें और नया समाज बनायें।

शब्द कुंजी – स्वातंत्र्योत्तर कहानी की रूपरेखा,पति-पत्नी के आधुनिक रिश्ते, सम्बन्धों में तीसरे की भूमिका, दाम्पत्य सम्बन्ध और आधुनिक परिवेश।

प्रस्तावना – आज समाज का अवलोकन करने पर पता चलता है कि समाज, देश, राष्ट्र में से मानवीयता, संवेदनशीलता का दिन पर पर दिन विघटित होता रूप देखा जा सकता है। जब लोग देश एकता, राष्ट्रीयता जैसी बातें करते हैं, लेकिन एक ओर व्यक्ति अपनी पीड़ा से कराहता हुआ अकेला नजर आता है। उस अकेलेपन की पीड़ा से मुक्त होने के लिए छटपटाता रहता है लेकिन कोई उसकी समस्या का निराकरण करने बाला नजर नहीं आता ऐसी स्थिति में अकेलेपन की घुटन जब हद से अधिक बड़ने लगती है तो अनैतिक रास्तों पर चलना प्रारंभ कर देता है जिससे दाम्पत्य सम्बन्धों की डोरी टूटती नजर आती है। इन समस्याओं का मूलभूत कारण संयुक्त परिवारों के विघटन को भी कहा जा सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. स्वातंत्र्योत्तर कहानी साहित्य के माध्यम से पति-पत्नी के रिश्तों का वर्णन करना
2. दाम्पत्य सम्बन्धों पर आधुनिक परिवेश का प्रभाव।
3. औद्योगीकरण,वैज्ञानिकता,तकनीकी,शिक्षा आदि का दाम्पत्य सम्बन्धों पर प्रभाव।
4. दूधनाथसिंह, ज्ञान रंजन, कृष्णा सोबती,चित्रा मुद्गल, प्रभा खेतान, मोहन राकेश, मन्नू भण्डारी, राजेन्द्र यादव, जैसे कहानीकारों के विचारों से परिचय कराना।
5. आधुनिक परिवेश में दाम्पत्य सम्बन्धों पर चिन्तन-मनन करने की आवश्यकता।
6. सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना करना,पति-पत्नी के रिश्तों में प्रगाढ़ता बढ़ाना।
7. पति-पत्नी में एकरूपता कायम रखने की आवश्यकता पर जोर।

विषय विस्तार – स्वतंत्रता के बाद समाज में तीव्र गति से बदलाव हुए है और दिन पर दिन बदलाव हो रहे हैं। समाज में हो रहे इन बदलावों का उल्लेख हमारे स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों ने बखूबी से करने का प्रयास किया है। जिससे हमारी संस्कृति के सनातन मूल्य कायम रह सकें राजेन्द्र यादव जैसे कहानीकारों ने समाज की तहकीकात करके एवं स्वातंत्र्योत्तर कहानी साहित्य को पढ़कर महसूस किया था कि आज जितनी भी कहानियाँ लिखी जा रही हैं वे सभी दाम्पत्य सम्बन्धों के बनने की न होकर टूटने की कहानियाँ है।

आज के सन्दर्भ में देखने में आता है व्यक्ति आधुनिकता के पर्दे में इस प्रकार ढ़क चुका है। कि उसे सुख तो मिल रहा है लेकिन शान्ति की तलाश में भटक रहा है।

स्वातंत्र्योत्तर कहानीकार के रूप में ज्ञान रंजन जैसे श्रेष्ठ कहानीकार ने ऐसे सम्बन्धों से तृसित कहानियों की रचना की जिससे समाज का एक पर्दा हटता नजर आता है उनकी 'सम्बन्ध' एक ऐसी कहानी है जिसमें भावनात्मक रिश्तों को तार-तार होते हुए दिखाया गया है। माँ-बेटे में तालमेल न होना पत्नी का यौनाचार सम्बनधों में बढ़ता रूझान तो पति की लाचारी का चित्रण ज्ञानरंजन के 'सम्बन्ध' कहानी में बखूबी से किया है।

स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों में दूधनाथ सिंह जैसे श्रेष्ठ लेखकों को समाज की विसंगतियों का काला पर्दा उधेड़ने वाला कहा जाए तो सही सावित होगा उनके द्वारा लिखित कहानी 'रक्तपात' आपसी सम्बन्धों की टकराहट भरी जिन्दगी का उल्लेख करती है। पत्नी की अनैतिक हरकतों से तंग आकर

*असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी) कमला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धौलपुर (राज.) भारत

कहानी में नायक को ऐसा महसूस होता है। सभी ने उसे छोड़ दिया है लेकिन धीरे-धीरे उसे महसूस होने लगता है उसी ने सारे समाज एवं सम्बन्धियों को छोड़ दिया है। उनकी कहानियों में सपाट चहरे वाला आदमी,'सुखान्त' प्रेमकथा का अंत न कोई, माई का लोकगीत, धर्मक्षेत्रे कुरूक्षेत्रे, 'तू फू' , 'जलमुर्गियों का शिकार' में जीवन की विविध विसंगतियों का चित्रण दाम्पत्य सम्बन्धों को लेकर किया गया है।

आधुनिक परिवेश में पत्नी नारी अपनी इच्छाओं को वशीभूत नहीं कर पा रही है। आज की नारी निर्मम, निर्विकार, और तटस्थ जान पड़ती है आज की नारी को स्वतंत्रता के अलावा बहुत कुछ चाहिए जैसे की कि प्रेम, रोमांस, सैक्स, स्वतंत्रता आदि।

श्रीकान्त वर्मा जैसे कहानीकारों ने आत्मग्लानि से जीवन जीने वाले पुरूषों का चित्रण करने वाली 'साथ का कपिल' कहानी में कपिल अपनी पत्नी रति के साथ घुटन भरी जिन्दगी जीने को विवश नजर आता है। हर क्षेत्र में वह अपने आप को पत्नी रति से छोटा महसूस करता है। आत्मग्लानि से ग्रसित होकर उसे ऐसा लगने लगता है कि पत्नी रति से शादी न कर उसने आत्मग्लानि से विवाह कर लिया हो। स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों में रवीन्द्र कालिया ने य कोजी कार्नर य श्रीकान्त वर्मा की एक ओर कहानी 'ट्यूमर' परिणय सम्बन्धों की उधेड़-वुन का उल्लेख करने वाली कहानी है।

कृष्णा सोबती जैसी महिला कहानीकारों ने दाम्पत्य सम्बन्धों का उल्लेख करने वाली कहानी 'बादलों के घेरे' लिखी जो कि आधुनिक दाम्पत्य सम्बन्धों की गाँठ खोलती है। इनके द्वारा सामाजिक सम्बन्धों का चित्रण करने वाला 'जिंदगीनामा' उपन्यास पर 1980 में साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला।

पश्चात्य सभ्यता के प्रभाव में आने के कारण भारतीय दाम्पत्य सम्बन्धों में आए नये-नये बदलाव एवं प्रभावों का उल्लेख करने वाली अनेक कहानियों की रचना स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों ने की है पाश्चात्य प्रभाव के कारण जीवन में अकेलेपन, अजनवीपन, जीवन जीने की रिक्तता, उदासीनता एवं परायेपन की अनुभूति दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। ऐसे सन्दर्भों का उल्लेख करने वाले कहानीकारों में मोहन राकेश ने 'चौगान' ,ऊषा प्रियंवदा ने 'सागर पार का संगीत', रामकुमार वर्मा ने 'जीवन का विष' तो निर्मल वर्मा ने 'डेढ़ इंच ऊपर' लिखकर दाम्पत्य सम्बन्धों में आए अलगाव का चित्रण किया है।

पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण करने से, बढ़ती आधुनिकता ने दाम्पत्य सम्बन्धों के बीच में किसी तीसरे या तीसरी के आ जाने से सम्बन्धों को तोड़कर रख दिया है। जिसके कारण दिन पर दिन तलाक, आत्महत्या, हत्या, जैसे टकराव बढ़ रहे है ऐसे बिखरावों का उल्लेख हमारे स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों ने खूब किया है। पति-पत्नी के बीच तीसरे का नाम आते ही शंका के बीज अंकुरित होने लगते हैं। ऐसे सम्बन्धों का उल्लेख मन्नू भण्डारी जैसी श्रेष्ठ कहानीकार ने 'तीसरा आदमी' कहानी लिखकर किया है। कहानी के नायक सतीश को पत्नी शकुन पर दिन पर दिन शंका बढ़ती जाती है। उसे लगने लगता है शकुन ने तन और मन से सतीश का साथ छोड़ दिया है। ऐसी ही कहानी 'सब ठीक हो जाएगा' हिन्दी के श्रेष्ठ कहानीकार दूधनाथ सिंह ने लिखी जिसमें पत्नी की सैक्स के प्रति दिन पर दिन हवस बढ़ती जाती है। पति-पत्नी के इस रूप को महसूस कर लाचार हो जाता है। और सब-कुछ जानकर घुटन भरी जिन्दगी जीने को विवश है।

स्वतंत्रता के बाद समाज में बड़ी तीव्र गति से परिवर्तन देखने को मिल रहा है। आधुनिक परम्परावादी जीवन जीने से आम-आदमी समाज, परिवार, संस्कृति, धार्मिकता, खानपान, वेशभूषा , आदि से कटता जा रहा है। समाज में संयुक्त पारिवारिक जीवन नष्ट होता जा रहा है। दिन पर दिन बढ़ता भृष्टाचार, घूसखोरी, काले धंधे से हर व्यक्ति आक्रामक होता हुआ नजर आ रहा है। बढ़ती वैज्ञानिकता, औद्योगीकरण समस्त कार्यों के मशीनीकृत हो जाने से आज का व्यक्ति अकेला फालतू एवं अजनबी सा हो गया है। महानगरीय जीवन-जीने से अकेलेपन का रूप और भी बढ़ गया है, इस बढ़ती आधुनिकता ने व्यक्ति को समाज और सम्बन्धों से विच्छेदित कर दिया है इन सभी बातों का प्रभाव स्त्री-पुरूष के सम्बन्धों पर पड़ना स्वाभाविक हो जाता है। जिसके कारण दिन पर दिन सम्बन्धों में बिखराव होता है।

मन्नू भण्डारी द्वारा दाम्पत्य सम्बन्धों में नारी का विविध मुखी चित्रण कहानी और उपन्यासों के माध्यम से किया गया है इनकी प्रसिद्ध दाम्पत्य सम्बन्धी रचनाओं में मेरी प्रिय कहानियाँ य में हार गई 'यही सच है' 'स्वामी' 'त्रिशंकु' को देखा जा सकता है। इन्होंने स्त्री-पुरूष सम्बंधों को लेकर जीवन के बनते-बिगड़ते खेलों का उल्लेख आधुनिक सन्दर्भो को ध्यान में रखकर अपनी कहानियाँ और उपन्यासों में किया है जिससे एक नये समाज का नव-निर्माण किया जा सके।

स्वातंत्र्योत्तर महिला कहानीकारों में चित्रा मुद्गल के नाम को भी भुलाया नहीं जा सकता, दाम्पत्य सम्बन्धों के बनते-बिगड़ते रिश्तों का उचित सन्दर्भ के अनुसार उन्होंने अपनी कहानियों में बखूबी से वर्णन किया है। चित्रा मुद्गल जी का जीवन स्वयं में संघर्ष की कहानी रहा व्यक्ति के जीवन में वैसे ही उतार-चढ़ाव का क्रम निरन्तर बना रहता है। जिसका प्रभाव दाम्पत्य जीवन पर पड़ना स्वाभाविक है। उनकी कहानियों में समाज के विविध धरातलों पर जी रहे लोगों की समस्याओं का चित्रण, बखूबी के सीथ किया है। समकालीन जीवन के यथार्थ का चित्रण, स्त्री की स्थिति, नियति, व्यवस्था आदि उनकी रचनाओं की विशेषताऐं हैं। इनकी कहानियों में 'जिनावर' 'बयान' चित्रा मुद्गल की 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' दाम्पत्य सम्बन्धों में विविध उतार-चढ़ाव देखने को मिलते हैं।

चित्रा मुद्गल जी ने स्त्री-पुरूष दोनों को लेकर मनोवैज्ञानिक तरीके को अपनाकर कहानियों की रचना की ग्रामीण परिवेश से लेकर शहरी परिवेश तक हुए परिवर्तनों का उल्लेख पति-पत्नी को लेकर किया गया है। सामान्य गृहणी से नौकरी पेशा स्त्रियों की भूमिका का उल्लेख उनकी कहानियों में मिल जाता है। फिल्मी विज्ञापन,पत्रकारिता,कानून जैसे क्षेत्रों में नारी की सक्रियता का उल्लेख चित्रा मुद्गल ने किया है। स्त्री-स्त्री की शत्रु या स्त्री देह-मात्र न होकर अन्याय एवं शोषण के विरूद्ध जागरण और मुक्ति की भी संदेशबाहक है। इनके द्वारा लिखित कहानी संग्रह 'पेंटिंग अकेली है' में स्त्री-पुरूष के संघर्ष के अनेकों रूप दिखाई देते हैं। चित्रा जी द्वारा लिखित कहानी 'पाली का आदमी' का पात्र रवि, स्त्री को कई कोणों से देखता है उनकी अन्य कहानियों में 'लकड़बग्घा' , 'पंछाहवाली', 'केंचुल', 'कमल', 'भूख' , 'लक्ष्मा' , 'नीले चौखाने वाला कंबल' , 'प्रेतयोनि टिकैतिन की कक्की' आदि प्रसिद्ध हैं।

स्वातंत्र्योत्तर दाम्पत्य सम्बन्धों पर कहानी लेखन करने वालों में उषा प्रियंवदा के नाम को भुलाया नहीं जा सकता महिला सशक्तिकरण के इस दौर में अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध अपनी आवाज उठाने की शक्ति का संचार हुआ है। ऊषा जी की कहानियों में स्त्री के सभी रूपों का वर्णन देखने को मिलता है। उन्होंने भारतीय पृष्ठभूमि को आधार बनाने के साथ-साथ विदेशी पृष्ठभूमि में भारतीय लोगों के अकेलेपन, घुटन अपने देश से दूर रहने की वेदना का जीता-जागता चित्रण उन्होंने अपने कहानियों में किया

है। उन्होंने भारतीय परम्परा के संयुक्त एवं एकल परिवारों की समस्याओं पर भी दृष्टिपात किया है।

ऊषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी में गजाधर बाबू के विसंगति पूर्ण जीवन का वर्णन जिस खुले रूप से किया गया है वास्तविक रूप से वह प्रेरणादायी है। अपने ही घर में उन्हें अहसास होता है कि आज उनकी ओर कोई ध्यान देने वाला नहीं साथ ही पत्नी भी किनारा करने लगी है और बच्चे भी पिता की दखलनदांजी से तंग आ चुके है उनका बड़ा बेटा अमर तो यहां तक कह देता है कि 'बूढ़े आदमी हैं, चुपचाप पड़े रहें हर चीज में दखल क्यों देते है।'

ऐसा परिवर्तन आधुनिकता के परिवेश एवं शिक्षा ने किया है। जिसमें अपने सम्बन्धियों के रिश्ते को भी तार-तार कर दिया जाता है।

ऊषा प्रियंवदा की 'दृष्टि दोष' कहानी में पत्नी का रौबीला स्वभाव सास के साथ अनैतिकता का रूप देखने को मिलता है। उच्चवर्गीय परिवारों की लड़कियां मध्यवर्गीय परिवार में आकर कलह के बीज बो देती हैं कहानी की पात्र 'चंद्रा' ऐसा ही करती नजर आती है। वह पति से बात-बात पर सम्बन्ध तोड़ना चाहती है लेकिन पति ऐसा नहीं करता तो वह हमेंशा के लिए पति का घर छोड़कर अपने माता-पिता के घर चली जाती है जिससे एक परिवार बिखण्डित हो जाता है, यह सब आधुनिकता का ही प्रभाव है आज की नारी अपने आपको अत्यधिक स्वाभिमानी समझने लगी है।

ऊषा प्रियंवदा की जिंदगी और गुलाब के फूल कहानी में आर्थिक स्वार्थ से अंधे सम्बन्धों पर प्रहार किया है। अर्थ से व्यक्ति इतना अंधा हो जाता है कि उसको कोई सम्बन्ध, रिश्ता, भावना आदि का खयाल नहीं रहता सुबोध कहानी का पात्र य बेरोजगार होने के कारण घर में ही आत्मग्लानि का शिकार होता है वह अपनी बहन वृंदा की सत्ता एवं अधिपत्य को स्वीकार नहीं कर पाता वृंदा की सत्ता का कारण वृंदा का नौकरी करना है।

ऊषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज में व्याप्त लोगों की मानसिकता आधुनिक परिवेश में किस प्रकार से बदली है साथ ही सम्बन्धों, पति-पत्नी के रिश्तों में किस प्रकार गिरावट होती जा रही है यह सब चित्रण हमें ऊषा प्रियंवदा की कहानियों में देखने को मिलता है।

विविध कहानीकारों ने अपने-अपने अनुसार दाम्पत्य सम्बन्धों की विसंगतियों का उल्लेख करके समाज को सुदृढ़ बनाने का पूरा प्रयास किया है। एक अच्छे समाज एवं राष्ट्र का निर्माण करने के लिए पति-पत्नी के रिश्तों का पारदर्शक एवं स्वच्छन्द होना आज की आवश्यकता जान पड़ती है।

निष्कर्ष - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी के माध्यम से दाम्पत्य सम्बन्धों की जो व्याख्या की गई है, वास्तविक रूप से हमारे समाज के पर्दे को खोलने का कार्य करती है, कि आधुनिक परिवेश में पति-पत्नी के सम्बन्धों में उनके मूल्य स्थापना की दृष्टि से दिन पर दिन गिरावट आती जा रही है। एक ओर तो शिक्षा,तकनीकी,विज्ञान ने महिलाओं को स्वाभिमानी एवं स्वरोजगार के प्रति उन्मुख किया है तो दूसरी ओर स्वतंत्रता पूर्वक जीवन-जीने के लिए खुली छूट के दरवाजे खोल दिए हैं, जिसके कारण आधुनिक नारियाँ यपति-परमेश्वर बाले रूप को भूलकर दाम्पत्य सम्बन्धों में नियोजित क्रिया-कलापों में विश्वास करना छोड़ रही हैं। आज की नारी विज्ञापन,फिल्म, जैसे क्षेत्रों में खुला प्रदर्शन करके भारतीय संस्कृति के मूल्यों को छोड़ती जा रही हैं, और पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण तीव्र गति से करती जा रही हैं। वर्तमान में हो रहे ऐसे परिवर्तनों पर स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों में ज्ञान रंजन, दूधनाथसिंह, राजेन्द्र यादव, श्रीकान्त वर्मा, मन्नू भण्डारी,चित्रा मुद्गल, कृष्णा सोबती, मृणाल पांण्डे, ऊषा प्रियंवदा, अत्यधिक प्रसिद्धी पर पहुँचने वाले कहानीकार रहे। सभ्य दाम्पत्य सम्बन्धों को कायम रखने के लिए भारतीय संस्कृति के पुरातन मूल्यों को पहचानने की आज आवश्यकता जान पड़ती है। इन मूल्यों की पहचान पति-पत्नी तभी कर सकते हैं, जव वे स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों की कहानियों का अध्ययन करें उनके अनुसार आधुनिकता की आँधी में हो रहे परिवर्तनों पर अमल किया जाए तो पति-पत्नी के बीच, तलाक, बड़ती वैमनस्यता, अर्थ की प्रधानता से अहम् भाव का संचार, शारीरिक सम्बन्धों की खुली छूट पर नियंत्रण,फैशन-परस्त जिन्दगी पर नियन्त्रण करके पति-पत्नी के रिश्तों को नियन्त्रित करके नये समाज का निर्माण संभव है। नव-निर्माण की इस कड़ी में हर दम्पत्ती की आज सहभागिता अत्यन्त आवश्यक हो जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. राजेन्द्र यादव-एक दुनिया समानान्तर पृ0-221
2. मन्नू भण्डारी-यही सच है और अन्य कहानियां तीसरा आदमी पृ0-34
3. दूधनाथ सिंह-सपाट चेहरे वाला आदमी, रक्तपात पृ0-121
4. दूधनाथ सिंह- सपाट चेहरे वाला आदमी, सब ठीक हो जायेगा पृ0-45
5. ज्ञान रंजन- फेंस के इधर और उधर
6. चित्रा मुद्गल-चर्चित कहानियां सामयिक प्रकाशन वर्ष-1992
7. चित्रा मुद्गल-जिनाबर,किताबघर प्रकाशन वर्ष-1996
8. चित्रा मुद्गल-बयान, भरतीय ज्ञानपीठ वर्ष-2004
9. चित्रा मुद्गल-दस प्रतिनिधि कहानियां,किताबघर प्रकाशन वर्ष-2005
10. www.chitramudgal.info
11. मन्नू भण्डारी-मैं हार गई-राधा कृष्ण प्रकाशन दिल्ली संस्करण-2001
12. 'यही सच है', राधा कृष्ण प्रकाशन दिल्ली संस्करण-1995
13. स्त्री अस्मिता- सं. जगदीश चतुर्वेदी- आनन्द प्रकाशन कोलकता पृ0 स0 2004
14. सम्पूर्ण कहानियां-ऊषा प्रियंवदा
15. स्वातंत्र्योत्तर कथा लेखिकाएँ
16. ऊषा प्रयंवदा-विक पीड़िया
17. कथाकार ऊषा प्रयंवदा, डॉ. संभाष पवार

****

महिला श्रमिकों की स्थिति

प्रीती रवि* डॉ. ए. के. पाण्डे **

प्रस्तावना - महिला श्रमिक समाज सेवी कार्य, लघु उधोग, कारखाना उधोग, बागान, खनन, कृषि और सफेद पोश नौकरियों में मिलती हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार, भारत में महिला-श्रमिकों की कुल संख्या 460 लाख थी जो 1991 में बढ़कर 914 लाख हो गयी। लगभग 786 प्रतिशत स्त्री-श्रमिक प्राथमिक क्षेत्र में और शेष 21.4 प्रतिशत द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्रों में संलग्न हैं कारखानार उधोग के अंतर्गत जितनी स्त्रियों को रोजगार प्राप्त हैं, उनमें से लगभग आधी कपास तथा पटसन मिलों में कार्यरत हैं। अन्य कारखाना उधोग जिनमें स्त्री श्रमिक कार्यरत हैं, इस प्रकार हैं-खाद्यान्न, अलौह धातु, कागज, रासयनिक पदार्थ, लकड़ी, सूती, ऊनी और रेषमी बस्त्र, चावल और दाल मिलें। बागानों में भी महिलाओं को बड़ी संख्या में रोजगार प्राप्त है। बागानों की कुल श्रमषक्ति में स्त्री श्रमिकों का अनुपात 41.5 प्रतिशत है तो दूसरी तरफ खनिज उधोग और कारखाना उधोग की श्रमशक्ति में उनका अनुपात 19.3 प्रतिशत और 10.2 प्रतिशत हैं। दक्षिणी भारत के चाय बागानों में 46 प्रतिशत, कहवा बागानों में 40 प्रतिशत और रबड़ बागानों में 24 प्रतिशत स्त्री श्रमिक हैं। बाल-श्रमिकों की तरह स्त्री-श्रमिक भी बीड़ी उधोग में बड़ी संख्या केन्द्रित हैं। यह उधोग मुख्यत: मध्यप्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल में केन्द्रित हैं। देश के जिन क्षेत्रों में धान और दालों की उपज अधिक होती हैं। उन क्षेत्रों में बहुत बड़ी संख्या में स्त्री-श्रमिक दाल और धान कूटने, सूखाने और धोने का कार्य करती हैं। स्त्री-श्रमिक घरेलू सेवा के कार्य तथा म्युनिसिपल सेवा के कार्य भी करती हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले महिलाएं विभिन्न प्रकार के कार्यो में योगदान देती हैं। सही रूप में समझने हेतु इनके कार्यो को चार भागों में बाँटा गया हैं।

1. जीव जन्तुओं से संबंधित कार्य।
2. मीन से संबंधित कार्य।
3. उत्पादन से संबंधित कार्य।
4. अन्य कार्य।

1. जीव-जन्तुओं से संबंधित कार्य - ग्रामीण क्षेत्रों में पशुपालन को प्रमुख व्यवसाय माना गया हैं। पशुपालन से अनेक क्षेत्रों में सहायता मिलती हैं, जैसे खेती करने में ईधन के रूप में इत्यादि। पशुओं की देखभाल का कार्य ज्यादातर स्त्रियाँ ही करती हैं। स्त्रियों द्वारा सम्पन्न जीव-जन्तु संबंधी कार्य निम्नलिखित हैं।

(क) पशु-पालन - पशुपालन द्वारा दुग्ध के साथ-साथ चमड़ा व गोबर की भी प्राप्ति होती हैं। दूध की प्राप्ति हेतु गाय, भैंस, बकरी, भेंड़ इत्यादि पशुओं को घरेलू पशुओं को के रूप में पाला जाता हैं। इन घरेलू पशुओं को चारा देना, सानी तथा पानी देना, दूध दुहना, उनके बच्चों की देखभाल करने का काम ज्यादातर स्त्रियाँ ही करती हैं। इन पशुओं को बाँधने के स्थान की सफाई करना एवं गोबर से (कण्डे) बनाये जाते है तथा कण्डे का उपयोग स्त्रियाँ खाना बनाने के काम में उपयोग करती हैं।, तथा (अंगोरा नाम की) बकरियाँ दूध के साथ-साथ ऊन की प्रांप्ति हेतु पहाड़ी प्रदेशों में पाली जाती हैं। इन्हें चराने एवं इनकी देखभाल का कार्य स्त्रिया एवं किशोरी लड़कियाँ भी करती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में यह भी एक प्रमुख व्यवसाय हैं। तथा आज यह व्यवसाय तेजी से बढ़ रहा हैं सतना जिले में भी महिलायें इन कामों को करती हैं। तथा अपना जीवन-यापन करती हैं।

(ख) मुर्गी-पालन में महिलाओं के कार्य - ग्रामों में मुर्गियों दो उद्देश्यों से पाली जाती हैं-एक तो माँस की प्राप्ति हेतु तथा दूसरे, अंडो की प्राप्ति के लिए। मुर्गियों के निमित रहने के स्थान का निर्माण एवं चारे का प्रबन्ध तो पुरूष करते हैं। किन्तु दाना-पानी देने का कार्य स्त्रियाँ ही मुर्गी के अण्डों को एकत्र करके गिनती, सहेजती एवं बेचने का कार्य भी करती हैं।

(ग) मत्स्य पालन में महिलाओं के कार्य - ग्रामीणों के जीविकोपार्जन का यह प्रमुख साधन हैं। जिन क्षेत्रों में नदी या तालाब पास होता हैं। वहीं यह कार्य किया जाता हैं। स्त्रियाँ कभी-कभी मछली पकड़ने में पुरूषों की मदद करती हैं किन्तु मछलियों को नमक लगाकर सुखाने का कार्य ज्यादातर स्त्रियों के जिम्मे ही होता हैं। जहाँ मछली उधोग के तहत उनक डिब्बाबन्दी के लिए तैयार करती हैं। हमारे देश की डिब्बाबन्दी मछलियाँ विदेशों में भी निर्यात की जाती हैं। इस प्रकार मछली उधोग को चलाने में स्त्रियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। विष्व में सर्बाधिक मछलियों का उत्पादन भोजन के रूप में प्रयोग जापान में किया जाता हैं।

(घ) मधुमक्खी पालन में महिलाओं के कार्य - ग्रामों में शहद की प्राप्ति हेतु मधुमक्खी पालन किया जाता हैं। महिलाये भी इस कार्य में अपना सहयोग देती हैं। खादी ग्रामोधोग भी यह कार्य करता हैं। कई स्थानों पर सरकार द्वारा मधुमक्खी पालन के लिए पचास प्रतिशत राषि अनुदान के रूप में एवं पचास प्रतिशत राशि ऋण के रूप में प्रदान की जाती हैं। इस उधोग से शहर के व्यापार को बढ़ावा मिलता है एवं मधुमक्खियों द्वारा परागण की क्रिया से उपज में सत्तर प्रतिशत तक वृद्धि होती हैं। कई प्रदेशों में परागण में वृद्धि करने हेतु मधुमक्खियाँ खरीदनी पड़ती हैं किन्तु मधुमक्खी पालन से दोहरा फायदा होता हैं, मधु भी प्राप्त होता है तथा स्वत: परागण हो जाता हैं। यह कार्य आसान होता हैं, इसमें अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं पड़ती।

(ड़) रेशमी कीड़ो को पालन-पोषण - रेशम के कीड़ों को शहतूत के वृक्ष पर पाला जाता हैं। इस कीड़े की तितलियाँ शहतूत के पेड़ों पर अण्डे देती हैं। इन अण्डों से इल्लियाँ निकलकर भरपेट पत्तियाँ खाती हैं एवं अपनी लार को

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

शरीर पर लपेटती हैं। यही लार सूखकर रेशम का तार बन जाता हैं एवं रेशमी तारों में लिपटी इल्ली ककून कहलाती हैं। इल्ली से तितली बनने से पहले ककून एकत्रित कर लिए जाते हैं। इन्हें उबालकर, साफ कर रेशम प्राप्त किया जाता हैं। इस प्रकार ग्रामीण स्त्रियाँ विभिन्न जीव-जन्तुओं के पालन का कार्य करके दूध, माँस, मछली, अण्डे जैसे प्रोटीन बहुल आहार की प्राप्ति में सहायक होकर पोषण स्तर उत्पन्न करती हैं।

2. **जमीन से संबंधित कार्यो में महिला श्रमिक -** कृषि कार्यो के अलावा और भी काम जमीन से किये जाते हैं। जमीन के बहुत से कामों में खेती का खास स्थान हैं। कृषि-कार्यो में स्त्रियाँ कई महत्वपूर्ण कार्य करती हैं। जैसे- बीज बोना, धान रोपना, तैयार फसल काटना, खेत से खलिहान में लाकर अनाज को बालियों में से निकालना, फटकना, चुनना, बीनना एवं अनाज का उचित रीति से भण्डारण करना तथा बहोत सी ग्रामीण महिलाये जंगल से जलाने हेतू सूखे पत्ते, पेड़ों की टहनियों को काटकर व सुखाकरी इसे ईधन के रूप में उपयोग करती हैं। तथा वे जंगल में वृक्षारोपण का कार्य भी करती हैं। आज देश के कई स्थानों मे तो स्त्रियों ने फूलों की खेती का कार्य भी आरम्भ किया हैं। नगरों तथा महानगरों में पूजा, विवाह अथवा विशिष्ट समारोहों में फूलों के गुलदस्ते एवं फूलमालाओं की माँग अधिक होती हैं। अतएव इनकी बिक्री में अधिक कठिनाई नहीं होती। कम धन व्यय करके, कम समय में फूलों के बाग से पर्याप्त धन अर्जित किया जा सकता हैं। कम धन व्यय करके, कम समय में फूलों के बाग से पर्याप्त धन अर्जित किया जा सकता हैं। कई ग्रामीण महिलाएँ घर में अथवा घर के भीतर रखे जाने वाले पौधों के गमले तैयार करके बेचती हैं। पौधों की नर्सरी लगाकर बिक्री हेतु छोटे पौधे तैयार करती हैं। इससे भी उन्हें पैसे मिलते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

अनुसूचित जनजाति बैगा पिछड़ापन का कारण एवं विकास के नाम से मुकुट लगाना

डॉ. एस.पी. पाण्डेय* बैजनाथ**

प्रस्तावना – जीवन मानव समाज का एक चौराहा है जिससे शिक्षा दिशा को लेकर आपस में बांटवारा बाट लिया गया। सामाजिक धार्मिक राज विरासत के आधार पर धार्मिक ग्रान्थों में उल्लेख लिखा गया साबूत बताता है। मानव द्वारा लिखी गयी रचनाएँ अनेक पर व्याख्या एवं क्रमागत अनुसार वर्ण भेद, लिंगभेद, जाति भेद, ग्रन्थभेद के अनुसार एक सूचना एवं सूची क्रम बद्ध अध्ययन को अनुमानित कर काल्पनिक चिन्तन मंथन करना। अनुसुचित जाति,अनुसूचित जनजाति के प्रावधान बनाया गया। मानव-मानव में भेदभाव करने वाले लोगों ने क्रमा, क्रम से व्याख्या की गयी धार्मिक ग्रान्थों मानक सूचि तैयार आज तक का इतिहास बन गया।

गौतम बुद्ध का जन्म ई.पू. 500 से 600 ई. माना जाता है। महात्माबुद्ध ने वर्ण तथा यश व्यवस्था का कडा विरोध करके मनुष्य मान को केन्द्र में रखकर अपना दर्शन प्रस्तुत किया था। इससे स्पष्ट है कि वर्ण तथा जाति की क्रूरता से यहाँ का चन्द दलित मनुष्य करीब तीन हजार वर्षो से रौदा जा रहा था।

बुद्ध व्यवस्था में जिनके हित सुरक्षित थे वे बौद्ध धर्म स्वीकार कैसे करते है बौद्ध धर्म इनता तर्क शुद्ध और मानवीय था कि उनसक विरोध भी सम्भव नहीं था। इसी कारण बौद्ध धर्म के श्रेष्ठ मूल्यों को स्वीकार कर उसे अपने अनुकूल ढालने का प्रयत्न यहां से हुआ।

जब यह सम्भवन नहीं अनुहा तब हिन्दू धर्म को ही बौद्ध धर्म के अनुकूल ढ़ालने का प्रयत्न हुआ। शंकराचार्य जी को प्रच्छन्न बौद्ध करने का एक कारण यह भी है।

इस देश में वर्ण और जाति व्यवस्था कब से प्रचलित रही है। इसे लेकर विद्धवानों में अनेक मतभेद रहे है। आर्य जब भारत में आए तब जाति प्रथा नहीं थी, परन्तु व्यवस्था के आधार पर समूह का वर्गीकरण करने की पद्धति यहां थी। 'भारतीय साहित्य' में वर्ण शब्द का उल्लेख पहले और जाति शब्द का उल्लेख बहुत बाद में मिलता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। यहाँ तक पत्र-पत्रिकाओं और विद्धानों का मार्गदर्शन मिला है। जनजातीय समाज में उनकी समस्याओं और परम्पराओं को जानने के लिए साक्षात्कार पद्धति के माध्यम से इस शोध पत्र का निर्माण किया गया है।

समस्या :

1. उसी व्यक्ति के जन्म के पूर्व भी समाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक परिस्थितियों रही हो इनका अवलोकन और उसी व्यक्ति के कार्यो का मूल्यांकन।?
2. उस महानतम व्यक्ति के जीविताव्यावस्था में स्थिति समाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक परिस्थितियाँ क्रान्तकारी कार्य के विरो में सक्रिय शक्तियाँ तथा उनसे टकराने की उस व्यक्ति की क्षमता।
3. उस व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसके कार्यो का बाद के समाज पर होने वाला प्रभाव उत्पन्न स्थितियों परिवर्तन की प्रक्रिया को गति देने की उस व्यक्ति के विचार क्षमता।

उद्देश्य :

राज्य द्वारा संचालित शैक्षणिक विकास की योजनाएँ :

1. राज्य छात्रवृत्ति – अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों को अध्ययन के दौरान शिक्षा के प्रति जागरूकता जगाने छात्राओं को प्रोत्साहन हेतु कक्ष 1 से 5 तक छात्राओं को 15 रूपये प्रति माह की दर से 150 रू. छात्रवृत्ति दी जाती है, कक्षा 6 से 8 तक की छात्राओं को 20 रूपये प्रतिमाह एवं छात्राओं को 30 रूपये प्रतिमाह एवं कक्षा 9 एवं 10 को क्रमश: 60 एवं 80 रूपये प्रतिमाह दी जाती है।

2. मैट्रिकोत्तर (पोस्टमैट्रिक) छात्रवृत्ति
3. अनुसूचित जनजाति राज्य प्रवीण्य छात्रवृत्ति
4. अस्वच्छ धंधों में लगे लोगों के बच्चों के कलए छात्रवृत्ति
5. कन्या साक्षरता प्रोत्साहन
6. सिविल सेवा परीक्षाओं में सफलता पर प्रोत्साहन राशि
7. विधि स्नातकों को आर्थिक सहायता।
8. विद्यार्थी कल्याण योजना।
9. विदेश में अध्ययन हेतु छात्रवृत्ति योजना।
10. छात्रावासों, आश्रमों हेतु उत्कृटता पुरूस्कार योजना
11. छाल-छात्राओं के व्यक्तित्व व नेतृत्व विकास योजना।
12. पी.ई.टी./पी.एम.टी. एवं पी.ए.टी. प्रशिक्षण योजना।
13. आश्रम शाला।
14. छात्रावास

जनकल्याणकारी योजना :

1. सौभाग्यवती योजना।
2. अनुसूचित जाति/जनजाति बास्ती विकास योजना।
3. मान्यता प्राप्त अशासकीय संस्थाओं का अनुदान।
4. अनुसूचित जनजाति परिवारों हेतु आर्थिक विकास कार्यक्रम
5. अनुसूचित जाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वनअधिकारों

* प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी) महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी) महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

की मान्यता अधिनियम 2006 एवं 2007)

मूल बैदिक काल में आरयै ब्राम्हण, क्षत्रिय और वैश्यों में वर्गीकरण हुआ था। ऋग्वेद काल में शुद्र विस्तुत भी नहीं थे। वास्तव में ऋग्वेद में तीन ही वर्ण थे- ब्राम्हण, क्षत्रिय और वैश्य उपनिषद काल से धीरे-धीरे चौथे वर्ण की तथा बाद के कालखण्डों में अछूत वर्ग की निर्मित की गयी।

उपनिषदों को काल साधारण तथा ई. पूर्व 1200 से 600 माना जाता है। वर्ण एवं जाति व्यवस्था के नाम पर मनुष्य का तिरस्कार सान तथा अन्य स्पर्धात्मक क्षेत्रों के अधिकारों से इस मनुष्य को वंचित करने की परम्परा यही बड़ी प्रचीन रही है।

गुण पर आधारित वर्ण व्यवस्था का रूपान्तरण जन्माधिष्ठत कब कैसे और किस सन् में अुआ इसके बारे में निश्चत प्रमाण देना आज किसे को सम्भव नहीं है। परन्तु यह सारी प्रक्रिया बहुत धीरे-धीरे हुयी। यह निश्चित है ज्ञान तथा अन्य क्षेत्रों से एक बहुत तबकेक को बहिष्कृत करने से अपने फायदे का एहसास जब कभी ऊपर के तबके को हुआ होगा तो उसी समय से जन्माधिष्ठित वणर्ण व्यवस्था की नीव डाली जाने लगी। भारत के अधिकांश समाज सुधारक मनुस्मृति से इस नवीन सामाजिक व्यवस्था काा आरम्भ मानते है। परन्तु वास्तव में मनु के बहुत पूर्व ही शूद्रों और अछूतों के अधिकार छीन लिए गए थे। मनु ने तो समाज में जो प्रचलित था। उसे क्रमबद्ध रूप से लिखकर शास्त्र बना दिया। मनुस्मृति का काल ई.पू. 200 वर्ष होगा। ऐसा विद्धानों का आन्दाज है। (अनुमान है) आरम्भ में मनुस्मृति में अनेक स्तर रहे होगें। इस समय ग्रन्थ की रचना एवं विशिष्ट समाज में न होकर ई.पू. 200 से ई. 200 तक हुई होगी।

समाधान – किसी महामानव आसाधारण व्यक्ति के क्रान्तिकारी कार्यो का अवलोकन करने क लिए प्राय: तीन पद्धतियों का उपयोग किया जाता है।

अगर मानव समाजिकि ज्ञान से बंचित हो जाए तो विद्या और ज्ञान में अन्तर नहीं समझ पाता क्योंकि चेहरा किसी और का उपरी मुकुट किसी और को पहनादिया जाता है। उसी समय का ज्ञान से बंचित लो आज भी पिछड़े एवं बिछड़े लोग एक सामाजिक पराम्परा बना दिया है। धीर-धीरे उनकी मानसिक परिवर्तन पीड़ी दर पीड़ी एक लेयर एक जाति का निर्माण तथा ग्रान्थों में समाहित कर दिया गया । सामाजिक ज्ञान परिचय न करवाया जाए तो जाति भेद भाव का औचित नहीं होगा क्योंकि मानव एक प्रकार का ही जन्मा होगा होता है। किसी प्रकार की कमी मानव में नहीं होती। जाति, धर्म, लिंग, भेद, भाव का मुकुट पहनाने वाले लोगों द्वारा उपदेश धार्मिक ग्रान्थ का नाम लगाकर समाज में सेहरा बांध दिया गया। किसी महामानव आसाधरण व्यक्ति के क्रान्तिकारी कार्यो का अवलोकन करने के लिए प्राय: तीन पद्धतियों का, उपयोग किया जाता है-

इस भारत में सभी धर्मो को अलग-अलग जाति धर्म के नाम पर अपने निजि स्वार्थ पराए दूसरों की कमाई खाने वाले पूजापाठ धर्मो को ज्ञान मंदिन मानकर अपना जीवनल यापन चलाते जों उनकी बातों को स्वीकार नहीं किया राक्षस, असुर, पशु, जानवर से भी बत्तर जीवन मानव सामाज को ग्रान्थों में उल्लेखित कर बंचित करार दिया गया। समस्त धार्मिक ग्रान्थों से बंचित कर दूर रखा गया। जबकि इस देश का निवासी प्राचीनकाल से निवास करने वाला वनवासी करार दिया गया पीछे के श्रेणी में रखा गया – बैगा, भाररिया, सहारिया, मारिया, कारिया आदि का सम्बोधन कर नाम से सूचियों में भारत स्वतंत्रता के पश्चात किसी सामाजिक वर्णो को वर्गो में बनाए गए परम्परा को जो नाम दिया गया वह उसी से पीढ़ी दर पीढ़ी मानना शुरूआत कर दिया जब कि भारतीय संविधान में मानव-मानव में किसी जाति का विशेष उल्लेख नहीं किया गया कि कौन वैश्य, ब्राम्हण, क्षत्रीय, शूद्र चार वर्ण का विभाजन नहीं है।

फिर भी अपने हिसाब से भारत में जातियों की संख्या अलग-अलग मान ली गई प्रमाण पत्र बना दिया जाता है। खाना से बंचित लोग पानी से बंचित लोग सामाजिक चिंतन से बंचित लोग उनके इतिहस से भी वंचित कर दिया गया। बैगा समाज का इतिहास भी कुछ अपने अनुसार ज्ञानी व्यक्तियों ने केकड़ा कौआ, नाग, कीड़ा, मकोड़ो की उत्पत्ति का इतिहास लिखा क्योंकि किसी भी प्रकार का प्रमाणित साबूत लिख ही नहीं पाते क्योंकि किसी भी इतिहास को लगड़ा कर दिया गया।

मध्यप्रदेश में समस्त जातियों की सूची बना दिया गया पिछले के अनुसार सूची बद्ध कर बिल का एक मुकुट पहनाया गया अलग-अलग योजनाओं के माध्यम से 1947 भारत स्वतंत्रता मिलने के बाद सभी समाज को मुख्य धारा से जोड़ने का शासन द्वारा किया गया जिससे आज समाज के लोगों आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक धार्मिक प्रोत्साहित कर विशेष पिछड़ी जनजातियों को प्रोजेक्ट बनाकर प्रत्यक्ष ग्रामीण व शहरी योजनाओ को लाभ मिल सकें मध्यप्रदेश शासन सामाजिक न्याय कल्याण विभाग इस लिए बनाया कि सामाजिक व्यावस्था को बनाए रखें तथा उनकी सही समय में निरिक्षण मूल्यांकन समय-समय में शासन द्वारा योजनाओं का उन सामाजिक परिवर्तन के लिए शासन विशेष प्रोजेक्ट जो शासन द्वारा अलग से विभागीय योजनाओं का लाभ मिल रहा है या नहीं सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक एवं कानूनी प्राक्रिया से सही समय पर उपयोग हो रहा है या नहीं क्योंकि प्रत्येक जिलेबार यह विभाग आदिम जाति कल्याण विभाग कार्यालय स्थापित किया गया प्रत्येक जिले की जुम्मेवारी वहाँ के कलेक्टर को सौपा जाता हे।

संविधान (अनुसूचित जनजाति) अध्यादेश अनुसूची भाग 8 मध्यप्रदेश अनुसूचित जातियों को मध्यप्रदेश शासन ने विकास की योजनाओं में अलग-अलग जातियाँ एवं उपजातियाँ में भारतीय संविधान के अनुसार मूल्यांकन कर अलग से विशेष अयोजनाओं का लाभ पहुचाने की जुम्मेवारी बनती है।

निष्कर्ष – भारत विविधितावादी देश है जो जनसंख्या की दृष्टि से दूसरे स्थान में है। जिससे विभिन्न वर्ग, धर्म, जाति, रंग, नस्ल, में मानव निवास करते है।

प्राचीन भारत का इतिहास गौरवपूर्ण होन के साथ-साथ यहाँ आमान्यवीयता व क्रूर निर्दयता शोषण इत्यादि भी हजारों वर्षो तक रेखांकित करता जुल्म ज्यादितियों का ताना-बाना बुना दिया गया। इस समुदाय खास तौर पर अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों को सदियों से मूल्यभूत सुविधाओं से बंचित रखा गया। शिक्षा से आर्थिक सम्पन्नता से बंचित रखा जगया यह वर्ग भारतीय सामाजिक व्यवस्था में अन्तिम पायदान पर स्थिर है दबे-कुचले पद्दरियत अनुसूचित जातियों व अनुसूतिचत जनजातियों के लोगों को कभी अवसर की समता भी प्राप्त नहीं हो सकी वर्तमान 2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार देश में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 20 करोड़ 14 लाख है जो कि देश की कुल जनसंख्या का 25.25 प्रतिशत है। किन्ही सामाजिक ऐतिहासिक कारणों से भारत में इन जातियों के लोगों को शास्त्रीय कानूनों के माध्यम से सदा सर्वदा के लिए देश के सामाजिक पिरामिड के सर्वाधिक नीचले पायदान पर धकेल दिया गया। जिसकी वजह से इन जातियों के लोग सर्वाधिक शोषित पीड़ित और अत्याचार से दमित रहें है।

अतीत में इन्हें छुआ–छूत (अस्पृश्यता) की बेड़ियों में इस प्रकार स्थायी रूप से जकड़ दिया गया था कि ये अपनी दासतापूर्ण अमानवीय जीवन से मुक्ति की कल्पना भ नहीं कर सकते थे। अपनी अस्पृश्यता की बोड़ी को तोड़ नहीं पाये इस लिहाज से उन शास्त्रों के माध्यम से नाना प्रकार की पाबंदिया लगा दी गई।

नोट :– अज्ञान/भ्रान्ति को जब तक नहीं मिटाएगा तो परम् मुक्ति का द्वार कैसे खोलपाएगा। (अर्थात् परम् मुक्ति कैसे प्राप्त कर पाएगा)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कास्ट इन इंडिया, बाबा साहेब अम्बेडकर राईटिंग एण्ड स्पीचेस, महाराष्ट्र सरकार 1979 पृष्ठ 27
2. कौशलल्यायन भारत आनंद (2000) यदि बाध्य न होते नागपुर पृ. 66–67।
3. शोधार्थी सुभाष चन्द्र वर्मा एम. फिल. 2015 ब्राउस डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर नगर महू
4. अनुसूचित जनजाति कल्याण विभाग पत्रिका कल्याकारी योजना मध्यप्रदेश
5. आदिम जाति कल्याण विभाग सतना कार्यलय जातियों की सूची
6. दास्ता से मुक्ति की ओर , प्रकाशक दलित दासता विरोधी आंदोलन जिला जालंधर पंजाब 1989/अधिनियम 1995
7. श्री डी.सी. अहिर, बुद्धिज्म एण्ड अम्बेडकर अजय प्रकाशन 1968
8. द अम्बेडकर एण्ढ इण्डियन कास्टि्यूशन बुद्ध बिहार रिसालदार 1972
9. गौतम बुद्ध धर्मचक्र गतिमान– लेखक चंद्रकांता मुगलें 1991
10. आदिवासीयों के अधिकार 2011 प्रकाशन नागपुर महाराष्ट्र

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

महिलाओं द्वारा पुरूषों की भाँति अपराध करने के कारणों का सैद्धान्तिक अध्ययन

गुंजन पारिख *

शोध सारांश – सशक्त होना स्वयं मे तो अच्छा है परन्तु जब इसका भयावह रूप अपराध के परिप्रेक्ष्य से देखते है तो यह हमारे लिए अत्यन्त कष्टकारी होता है। महिलाओं मे आज हम एक अलग तरह का व्यवहार देखते है। यह ऐसा व्यवहार है जो उनके अपने पूर्ववर्ती व्यवहार से बिल्कुल भिन्न है। जिसे आज हम व्यवहार विचलन के नाम से भी समझ सकते है। वर्तमान मे कई सिद्धान्तों के माध्यम से यह अध्ययन किया गया और बताया गया कि महिलाओं के इस व्यवहार विचलन का कारण उनके द्वारा अपने व्यवहार में पुरूषत्व के गुण को विकसित करना है। इस प्रकार अपने इस विचलन के द्वारा वे आज कई ऐसे कार्य भी कर रही है जो कि पहले महिलाएं करने से पूर्व सोचती थी या फिर उन कार्यो को नही के बराबर करती थी।

मेरा यह आर्टिकल महिलाओं द्वारा किये जा रहे अपने व्यवहार विचलन केकारणों एवं महिला अपराधिकता सम्बन्धित सिद्धान्तों पर प्रकाश ड़ालने के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है।

शब्द कुंजी – गुलाबी पोश अपराध, व्यवहार विचलन, कार्य स्थल

प्रस्तावना – काफी समय से हम सफेदपोश अपराधों को सिर्फ पुरूषों के द्वारा किया जाने वाला कार्य ही मानते रहे है। क्योंकि हम सभी यह जानते है कि पुरूषों की शारीरिक क्षमता महिलाओं से ज्यादा होती है तथा उनका मानसिक विकास ही इस तरह से किया जाता है कि वे इस दुनिया का हर कार्य कर सकते है। किन्तु महिलाऐं नहीं यह सही भी है। क्योंकि महिलाऐं अपनी शारीरिक अक्षमताओं की वजह से घर से बाहर ज्यादा नहीं निकलती है इसलिए आज भी महिलाओं अपराध कार्य करने का प्रमुख उत्प्रेरक नहीं माना जाता है परन्तु आज महिलाऐं भी घर से बाहर कदम रख रही है व्यापार, वृद्धि, नौकरी कर रही है तथा कमाई करके घर की आर्थिक स्थिति को ठीक करने में सहयोग दे रही है। परन्तु यहीं से इनके व्यवहार में विचलन प्रारंभ हो जाता है जब आप सशक्त होते हैं तो अच्छे एवं बुरे दोनों तरीकों से सशक्त होते हैं। वर्तमान में कार्यस्थल पर एक महिला स्वयं को अधिक सशक्त महसुस करती है उसका आत्मविश्वास बढ़ा हुआ रहता है परन्तु वही एक गृहिणी जो घर में रहकर घरेलू कार्य करती है स्वयं को हर मामले में कार्यरत या कामकाजी महिलाओं से कम समझती है तथा उनमें अपने आत्मविश्वास की बहुत ज्यादा कमी हो जाती है।

किन्तु जब आप कार्यस्थल पर होते हैं तो स्वयं को अधिक सशक्त समझते है और जब आप अधिक सशक्त होते है तो आपके पास अवसरों तक पहुंचने के साधन भी सुलभ हो जाते है मतलब **अधिक सशक्त होना अधिक अवसरों तक पहुंच बनाता है।** और इन पर बहुत कम सामाजिक नियंत्रण बनाता है इस प्रकार तकनीक का इन महिलाओं को कामकाजी होने की वजह से अधिक ज्ञान होता है। तकनीक का अधिक ज्ञान और संचार के उन्नत साधनों का अधिक ज्ञान एवं अपने अधिकारों के बारे में अधिक जागरूकता आज की महिलाओं को अधिक सशक्त बनाता है और जब आप सशक्त हो जाते है तो आपके पास अपराध करने के भी अधिक अवसर उत्पन्न हो जाते है। इस प्रकार तकनीक एवं ज्ञान के उन्नत साधनों का उपयोग एवं अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता आदि आज महिलाओं के लिए अपराध की दुनिया में प्रवेश के द्वारा खोल रहा है। महिलाओ का कामकाजी होना तथा अपराध कार्य करना महिलाओं के अनियमित व्यवहार को दर्शाता है। ऐसे कृत्य करना जो कि समाज के नियमों के विरूद्ध हो आज पुरूषों के साथ-साथ महिलाओं के भी बहुत आम सा हो गया है तथा महिलाऐं आज भी सभी अपराध कार्य कर रही है जो कि पूर्व में सिर्फ पुरूषों के द्वारा ही किए जाते रहे है।

सफेद पोश एवं गुलाबी पोश अपराधों की परिभाषा – सफेद पोश अपराधों को प्रोफेसर सदर लैण्ड के द्वारा औपचारिक रूप से सफेद पोश अपराधों को परिचित करवाए हुए लगभग आठवां दशक चल रहा है परंतु वर्तमान तक में भी इसकी कोई सही व्याख्या नहीं हो पाना ही इन अपराधों के निपटारे की सबसे बड़ी उलझन है ।

ऐसा इसलिए है क्योंकि सफेद पोश अपराधों की विशेष गतिविधियों को अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग शीर्षकों के माध्यम से सम्बोधित किया जा सकता है जो कि आपस में निकटता से जुड़े हुए हैं जैसे-उच वर्ग का विचलन, आर्थिक अपराध, व्यवसायिक अपराध, व्यापारिक अपराध, बाजार अपराध, प्रतिष्ठित अपराध, ग्राहक अपराध, श्रेणी अपराध, राजनैतिक अपराध, सरकारी अपराध, निगमित अपराध, कार्यस्थल अपराध, राज्य एवं राज्य संगठीत अपराध, आकर्षण अपराध, टेक्नो अपराध, कम्प्यूटर अपराध, लोक अपराध, अदृष्य अपराध आदि।

स्पष्टत: देखने से प्रतित होता है कि इन शब्दों को बुलाने या बोलने का तरीका आपस में इस तरह से अर्न्तर संबंधित है कि वह सभी हक्का-बक्का कर देता है तथा एक सामान्य उजझन पैदा करने वाला होता है। आम तौर पर अपराधा शास्त्री निम्न सामान्य परिभाषा पर सहमत होते है।

1. वैध व्यावसायिक प्रसंग में होना।
2. व्यवसायिक सफलता पाने में या आर्थिक लाभ पाने के उद्देश्य से किया जाना।
3. सीधे तौर पर इन अपराधों को आषयिक हिंसा के रूप में शामिल नहीं

* शोधार्थी (विधि) मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत

किया जा सकना।

गुलाबीपोश अपराधों की परिभाषा – गुलाबीपोश अपराध शब्द केथलीन डेली ने 1980 के दशक में गबन जैसे अपराधों को समझाने के लिए किया था। जो कि विशेषत: महिलाओं द्वारा सीमित अवसरानुकुल स्थिति में किया जाता था।

केथलीन डेली के अनुसार 'गुलाबीपोश अपराधी निम्न एवं उच्च वर्ग की कार्य स्थल पर जाने वाली महिलाऐं है जो मैनेजर, क्लर्क, किताबे संभालने वाली आदि हो सकती है और जो अपने कार्य स्थल से पैसों को चुराती है ।' गुलाबीपोश अपराध शब्द निम्न एवं मध्यम वर्ग की कार्यस्थल में कार्य करने वाली महिला कर्मचारीयों द्वारा किए गये अपराधों को समझाने के लिए उपयोग किया गया था।

आम तौर पर महिलाऐं निम्न स्तर के गुलाबीपोश अपराध करती है जैसे जाली चैक बनाना या उस पर राशि बढ़ा कर लिखना, इसी तरह किताबों को अपने पास अधिक समय तक रखे रखना आदि ये अपराध महिलाऐं अपने कार्य स्थल में स्वयं को प्राप्त सीमित अधिकार या शक्ति के होते हुए करती है। यह सीमित शक्ति महिलाओं में सफेदपोश अपराध करने वाले पुरूषों से कहीं कम होती है। सफेदपोश अपराधों के सारे प्रकारों जैसे नीलापोश अपराध, लालपोश अपराध, हरापोश अपराध, आदि के मुकाबले गुलाबीपोश अपराधों में अत्यधिक बढ़ोतरी हो रही है तथा आये दिन अखबारों में इन अपराधों के बारे में लेख आते रहते है।

कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि गुलाबीपोश अपराधों का स्तर इतना निम्न होता है कि यह अपराध बिना पीड़ित का या Victimless अपराध होते हैं।

गुलाबीपोश शब्द गुलाबीपोश अपराध उन कार्य स्थलों को दर्शाता है जहां कि महिला कर्मचारियों की संख्या अन्य स्थलों की अपेक्षा अधिक है।

फ्रेडा एडलर 1975 की इनकी बहस के अनुसार इस तरह के अवसर समझदारी पर केन्द्रित है सफेदपोश अपराधों में महिलाओं की भागीदारी इसलिए बढ़ रही है क्योंकि महिलाओं को पुरूषों के समान स्वतंत्रता दी जा रही है। और पुंसत्वभवन Masculinization भी इसी तरह का एक असामान्य विकास है शब्द Masculine Female ऐसा शब्द है जो कि ऐसी महिला को दर्षाता है जो Masculine चरित्र को दर्शाती है।

Masculinization is a term applied to the critique of traditional academic discussion of the female offender and of popular depictior of female criminality.

फेडा एडलर के अनुसार इन अपराधों के अवसर समझदारी परी केन्द्रित हैं महिलाओं द्वारा सफेदपोश अपराधों में भागीदारी कोई पुंसत्वभवन Masculinization नहीं है । बल्कि वर्तमान में महिलाओं द्वारा अपराध कार्य करके समाज द्वारा स्थापित काँच बाधा Glass Celling को तोड दिया गया है। ये सामाजिक बाधाऐं महिलाओं को सामाजिक रिश्तों की वजह से समाज में बाहर नहीं आने देती थी। इस तरह महिलाऐं अपने आप को आगे लाने की होड में वे सभी कार्य भी करने लगी जो कि पूर्व में उनके लिए अनैतिक थे। किन्तु **वर्तमान में द्वार सबके लिए खुले है।** महिलाऐं आज बहुत धन कमा रही है यह सब अवसर की बढ़ोतरी से ही संभव हुआ है। अपराध मानवीय प्रवृति है न तो महिलाऐं ना ही पुरूष इनमें लिप्त हैं। विज्ञान में लिंग का कोई मुद्दा नहीं है।

गुलाबीपोश अपराध शब्द का उपयोग उन अपराधों को पहचानने में या समझने में किया जाता है जहां अपराध महिलाओं द्वारा अपने कार्य स्थल पर किया जाता है।

गुलाबीपोश अपराध कार्यों में ज्यादा वेतन, साख एवं प्रशिक्षण कि आवश्यकता नहीं होती है। गुलाबीपोश अपराधों में महिलाओं की बढ़ोतरी आवश्यकता तथा सुख सुविधा की प्राप्ति है। औद्योगिकरण एवं वैश्वीकरण ने वर्तमान में गुलाबीपोश अपराधियों की संख्या में भी बढ़ोतरी की है।

Theories

विभिन्न स्कोलर्स के द्वारा महिला अपराधिकता से संबंधित कई सिद्धान्त दिये गये है उनमें से प्रमुख निम्न है :–

Strain Theory – इस सिद्धान्त के अनुसार अपराधिकता का कारण दबाव या तनाव है। इस सिद्धान्त के अनुसार अपराधी अपराध करके अपना तनाव कम करते है या अवैध तरीके से अपने लक्ष्य को प्राप्त करते है। **रोबर्ट मोर्टन तथा अल्बर्ट कोहेन** ने पूर्व में इसे पुरूष अपचारिका का नाम दिया। **कोहेन** ने तो यहां तक कहा कि महिलाएं अपने विपरीत लिंग के द्वारा शोषित होती है।

Differential Association Theory – को अपराध सीखने का सिद्धान्त भी कहते है इस सिद्धान्त का प्रतिवादन **सदरलैण्ड एवं क्रेसी** ने किया था के अनुसार अपराध व्यवहार सीखा जाता है महिला अपराधिक घेरे में सम्मिलित नहीं होती है क्योंकि उनकी लिंग आधारित भूमिका जो बीवी के रूप में, माँ के रूप में होती है उन्हें अपना कार्य घर में ही करने को उकसाता है और लडकियों को अच्छा बनने की शिक्षा दी जाती है। इन्हें पुरूषों की तरह स्वतंत्रता नहीं दी जाती है इसलिए अपराध कार्य करने का मौका ही नहीं मिलता है। महिलाएं कम अपराध करती है क्योंकि उनका सीखने का अनुभव कम होता है तथा उनमें पुरूषों की तरह कौशल नहीं होता हैं

Control Theory – होर्सची के अनुसार मानव स्वभाव प्राकृतिक रूप से अनैतिक होता है वे दोनों तरह के सामाजिक एवं असामाजिक गतिविधियों में संलिप्त रहता है जब तक कि कोई उसमें दखल ना दे। अत: समाज के द्वारा कई तरह से अपने सदस्यों पर नियंत्रण रखा जाता है ताकि उनकी प्राकृतिक प्रवृत्ति से उन्हें दूर रखा जा सके जब कोई व्यक्ति सामाजिक प्राणी के रूप में सामाजिक संस्थानों में जाता है व्यवहार करता है तथा उनके नियमों को मानता है वह व्यक्ति अपराध नहीं करने का ही चुनाव करेगा। जब किसी व्यक्ति का अपने माता पिता के साथ सम्पर्क में होना तथा उसका अच्छा विद्यालय रिकार्ड होता है तो उसके अपराधी होने की आषंका काफी कम होती है।

Laberlling Theory – हावर्ड बेकर के सुझाव के अनुसार बाहरी सामाजिक Stigma कलंक या ठप्पा अपराधी बनाता है इसके अनुसार शक्तिशाली व्यक्ति ठप्पा बनाता है तथा उसे गरीब शक्तिहीन लोगों पर जारी करता है उस तरह से लोग अपराध करना प्रारंभ करते है **एन्थोनी हेरिस** के अनुसार शक्तिशाली व्यक्ति महिलाओं को धमकाता है ऐसे ही महिलाएं भी अपराध में अपने से कम शक्तिशाली महिला के अपराध कार्य करने के लिए डराती है।

Liberation Theory – फ्रेडा एडलर के अनुसार महिलाओं को दी जा रही आजादी ही महिलाओं के द्वारा किए जा रहे अपराधों में बढ़ोत्तरी का कारण है।

Double Standard theory– इस सिद्धांत में **पोलाक** के अनुसार महिलाएं अपने शारीरिक सौन्दर्य का उपयोग करके पीडित को फँसाती है और अपराध कर बैठती है।

Exitement Theory Thomes – के अनुसार सारे मनुष्य उत्तोजना

एवं प्रतिक्रिया चाहते है परन्तु कुछ महिलाए उत्तोजना एवं प्रतिक्रिया यौन क्रिया के माध्यम से जैसे वैश्यावृत्ति के माध्यम से चाहती है।

Novelty Theory – Kingstley Davis – ने यह समझाया कि वैश्यावृत्ति किसी परिस्थिती के कारण हो सकती है किन्तु जहां यौन नवीनता की मांग की जाती है वहां अगर पुरूष संतुष्ट नहीं करता है तो यह वेश्यावृत्ति का कारण होता है। उन्होंने पाया कि अगर महिला वैश्यावृत्ति करती है तो कारण असमान व्यवहार या Neuratic होना या विकृत या पागलपन हो सकता है।

Biological theory – लोम्ब्रोसो और पोजिटिव थ्योरी के अनुसार वेष्याओं के अपराध एवं अन्य सामान्य अपराधी महिलाओं में वेश्याओं द्वारा ज्यादा शारीरिक असमानताएं दिखाई गई।

Emotion Theory – Konopka – के अनुसार महिलाओं द्वारा ज्यादा विचलित व्यवहार तब किया जाता है जब वे अकेलेपन एवं किसी पर बोझ या निर्भर बनने की वजह से परेषान होती है।

Biology Theory :- John cowie – के अनुसार महिला अपराधिकता उनकी जैविक स्थिति जैसे कि ज्यादा वजन होना या अन्य शारीरिक समस्या के कारण भी हो सकता है।

Faminist Theory - फेमिनिस्ट यह विश्वास करते है कि सारे अपराधों के सिद्धान्त पुरूषों के अनुभव के आधार पर अपराध शास्त्र में किए गए है अर्थात् अपराध शास्त्र पुरूष प्रधानता पर आधारित है फेमिनिस्ट के अनुसार महिलाओं का अनुभव पुरूषों के अनुभव के अधीन रखे जाने से ही अपराध को बढ़ावा मिला है। पुरूषों के अधिपत्य के दोहरे मापदंड से ही महिलाओं के अपराधों में, बढ़ोतरी हुई है। पुरूषों के अधिपत्य के परिणामस्वरूप ही महिलाओं द्वारा किए जा रहे अपराधों में बढ़ोतरी हुई है।

Destiny theory – वे महिलाएं जो कि अपनी अनुपस्थिति को समायोजीत नहीं कर पाती है और जो लिंग के लालयित रहती है तथा सांस्कृतिक तरीकों से अपना Sex Performance एवं मातृत्वता नहीं पूर्ण कर पाती है वे प्रतीकात्मक Masculinity अपनाने की कोशिश करती है तथा वे महिलाएं बागी हो जाती है तथा अपने महिला वाली भूमिका से वे अपने आप को बाहर कर देती है।

(Curran and Ranzatti) 2001:77

अपनी शारीरिक क्षमताओं की कमी को दूर करने तथा पुरूषात्मक गुण दर्षाने के लिए वे अपने व्यवहार में बदलाव लाती है वे अपनी महिला की भूमिका को नकारती है और स्वयं को पुरूष की भूमिका में Masculinity में पहचानना पसंद करती है अर्थात वे स्वयं को पुरूष के रूप में पहचाना जाना पसंद करती है (Klein 1973:17)

Dominanat Theory Bialogical सिद्धान्त Combrose (1898) तथा Phychological सिद्धान्तों (1905, 1931, 1933) तथा वर्तमान की Contemporary सिद्धान्त के अनुसार महिलाओं को दी जाने वाली छूट ही महिला अपराधों को बढ़ावा दे रहा है वर्तमान में यह सैद्धान्तिक विचार कि महिला अपराधिकता महिलाओं के Masculinity व्यवहार का उत्पाद है, यह कहा गया कि महिला अपराधी उन महिलाओं से जो कि अपराध न करने वाली महिलाऐं हैं से ज्यादा Masculine है चाहे व जैविक रूप से हो चाहे मानसिक रूप से या सामाजिक रूप से हो।

एडलर (1975) के अध्ययन अनुसार वैश्यावृत्ति, मादक पदार्थों का सेवन तथा किशोरों का कानून तोड़ना आदि को महिलाऐं अपने **'मुक्ति आन्दोलन'** से जोड़कर देखती है। उनके अनुसार पढ़ी लिखी लड़कियां उन परंपरागत रोक या सामाजिक दबावों की उपेक्षा करने के लिए अत्यन्त उत्सुक हैं जो कि उन पर हमेशा से समाज द्वारा आरोपित किए गये थे। इस तरह महिलाओं के उपर से दबावों की हथकड़ियों का खुलना भी महिला अपराधिकता का कारण है भारत के परिप्रेक्ष में **ज्यादा दबाव का अर्थ है अत्यन्त गंभीर अपराध।**

निष्कर्ष – महिलाएं ही हैं जो कि आध्यात्म का वास्तविक दबाव बनाती है या आध्यात्म की नींव रखती है महिलाओं की सहानुभूति ही नए जीवन का संचार करती है। किन्तु जब महिला समाज में अपनी कार्यस्थल पर कार्यरत होने की भूमिका का भी निर्वाह करती है तो उनके द्वारा अपराध किए जाने की संभावना भी बढ़ जाती है। महिलाएँ सामान्यता उन जगहों पर रह कर अपने कार्यो को सम्पादित करती है। जहां वह स्वयं को सुरक्षित महसुस करती है। अत: उन जगहों मे सर्वाधिक प्रतिशत कार्यस्थल एवं घर पर किये जाने वाले अपराधों का आता है। पुराने समय में महिलाओं द्वारा अपराध किए जाने की संभावनाएं बहुत कम थी एवं महिलाऐं पुरूषों की तुलना में भी बहुत कम अपराध करती थी एवं **यह भी देखा गया कि महिलाओं द्वारा अपराध किए जाने पर समुदाय में महिलाऐं पुरूषों की तुलना में अधिक दण्ड प्राप्त करती है।** जिसकी घुटन को वे और ज्यादा अपराध कार्य करके कम करती है।

इस प्रकार उपरोक्त सभी सिद्धातों के माध्यम से हमें यह ज्ञात होता है कि महिलाओं की आपराधिक प्रवृत्ति का मुख्य कारण उनके द्वारा पुंसत्वभवन Masculinity को धारण करना तथा स्वयं समाज में सशक्त होने से अवसरों की उपलब्धता आसानी से होना है। तथा समाज के द्वारा महिलाओं के प्रति विभेदकारी व्यवहार भी महिलाओं को इन अपराधों के लिए उकसाने का कार्य करता है। जिससे कि महिलाऍं स्वयं को उपक्षित महसुस करते हुए अपराध की ओर अग्रसर होती है।

References :-

1. Theories of Female Criminality : A criminological analysis
2. International journal of criminology and sociological theory,Vol.7,No.1, December 2014,1-8
3. Adler, Freda., Mueller, Gerhard. O.W., & Laufer, William. S. (2004). Crimilnology, 5th Editiion, New York: McGraw- Hill Higher Education
4. Adler, Freda.,(1975). SISTERS IN CRIME: The Rise of the new female criminal, USA: Mc|Graw Hill Company.
a. Daly, K (1988) `Rethinking Judicial Paternalism: Gender, Work- Family Relations and Sentencing', Gender and Society, 3(1): 9-36.
5. International Journal of Criminology and Sociological Theory, Vol. 7, No. 1, December 2014,1-8.
6. Celik, Hande. (2008). A SOCIOLOGICAL ANALYSIS OF WOMEN CRIMINALS IN THE DENIZLI
7. OPEN PRISON, Department of Sociology, Turkey: Middle East Technical University.
8. Chesney-Lind, Meda. (1997). "Women and Crime": The Female Offender, Sign, Vol-12, No-1, (Autumn), P.78-96.
9. Chesney-Lind, Meda. and Daly, K. (1988). Girls' Crime and Woman's Place: Toward a Feminist Model of Female Delinquency, CRIME & DELINQUENCY, Vol-

35, No-1, (January), P. 5-29.

10. Curran, Daniel. J. and Renzetti, Claire. M. (2001). Theories of Crime, Boston: Allyn and Bacon.
11. DALY, K. (1988). `Rethinking Judicial Paternalism: Gender, Work-Family Relations and Sentencing', Gender and Society, 3(1): 9–36.
12. Freud, Sigmund. (1933). New Introductory Lectures on Psychoanalysis. New York: Norton.
13. Heidensohn, Frances. and Marisa. Silvestri. (1995). Gender and Crime, in Oxford Handbook of Criminology, London: Oxford University Press.
14. Herrington, Victoria., & Nee, Claire. (2005). SELF-PERCEPTION, MASCULINITY AND FEMALE OFFENDERS, Internet Journal of Criminology, P. 1-30.Website: http://www.internetjournalof criminology.com, (Accssed date: 12/06/2011)
15. Klein, Dorie. (1973). “The Etiology of Female Crime: A Review of Literature.” Issues in Criminology 8, 2:3-30.
16. Lombroso, Cesare. and Ferraro, William. (1898). The Female Offender, New York: D. Appleton andCompany.
17. Pollak, O. (1950). The Criminality of Women, Baltimore: University of Pennsylvania Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

कृषि उत्पादन में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग से मृदा उर्वरता पर प्रभाव - जनपद इटावा

रामरतन *

प्रस्तावना - सामान्य अर्थ में कृषि वह क्रिया है जिसके द्वारा मिट्टी से फसलों को उत्पन्न किया जाता है। कृषि के अन्तर्गत भूमि को साफ करने और मिट्टी की जुताई से लेकर फसल उगाने, काटने तथा उत्पादन प्राप्त करने तक की विविध प्रकार की क्रियायें सम्मिलित हैं। कृषि कार्य के ऊपर भूमि की उपलब्धता जलवायु, प्राकृतिक दशाओं, मिट्टी की उर्वरता जनसंख्या आकार, आर्थिक एवं तकनीकि विकास के स्तर आदि का व्यापक प्रभाव पाया जाता है।

रासायनिक खाद असल में जमीन को उत्तेजित करता है जिससे फसल लाभ में तत्काल फर्क दिखता है और फसल अपनी जरूरत ज्यादा पोषक तत्व को जमीन में बनने वाले कुदरती तौर में बनने वाले तत्व में कमी करती है साथ में रासायनिक खाद घी में जहर की तरह जमीन में पोषक तत्व को बनाने वाले जमीन को भुरभुरा करने में सहायक करने वाले केचुंवे को मार देता है जिससे अगली फसलों में ज्यादा खाद डालनी होती है। और विषचक्र शुरू हो जाता है अगर आप मुनाफा लेने के चक्कर रासायनिक खाद डालेगें तो दूसरी फसल में पहले से ज्यादा खाद डालनी पड़ेगी।

भारत एक कृषि प्रधान देश है यहां 68.84 प्रति जनसंख्या (2011) गांव में निवास करती हैं। हमारे देश में ग्रामीण जनसंख्या की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक गतविधियों का मूल आधार कृषि है। इसलिए कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की धुरी कही जाती है। देश के विशाल जनसमूह की खाद्यान्य आपूर्ति कृषि पर निर्भर है उद्योग, रोजगार व पूरक व्यवसायों में भी कृषि पर निर्भर है। उद्योग, रोजगार व पूरक व्यवसायों में भी कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है वस्तुत: प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से भरण-पोषण हेतु भारतीय जन-मानस कृषि पर निर्भर है। वर्तमान समय में कृषि विकास के पथ पर तीव्र गति से चलने वाले अग्रणीय देशों में भारत का महत्वपूर्ण स्थान है। विकास एक सकारात्मक प्रक्रिया है जो स्थान, समय एवं परिस्थिति के सापेक्ष आंकलित होती है। कृषि विकास की सफलता सुनिश्चित करने हेतु पर्यावरण संतुलित होना आवश्यक है तथा संतुलित विकास नियोजन से ही संभव है। अत: किसी भी क्षेत्र की कृषि के संतुलित विकास व नियोजन हेतु वहां का भोगोलिक अध्ययन महत्वपूर्ण होता है।

कृषि में आये नवपर्वतन से विकास हुआ है कृषकों ने कृषि में नवीन तकनीकियों द्वारा रासायनिक उर्वरक, सिंचाई के साधन एवं सुविधाओं के प्रयोग में बृद्धि हुई है। साथ ही उच्च उत्पाद बीज एवं कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से उत्पादन में बृद्धि कर कृषि में पर्याप्त विकास किया है। इसमें निरन्तर जनबृद्धि के अनुरूप बढ़ती खाद्यान्नों की मांग आपूति संभव हुई है तदापि कृषि विकास के विभिन्न समस्याओं को भी जन्म दिया है जो कि स्वयं मानव के लिये घातक है। कृषि विकास से उत्पन्न पर्यावरणीय प्रभावों में मिट्टी की उर्वरता पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन वर्तमान समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है क्योंकि फसलोत्पादन की निरन्तरता हेतु मिट्टी की पोषक तत्वों में निरन्तरता का होना आवश्यक है। इस प्रकार से सूक्ष्म स्तरीय भौगोलिक अध्ययन क्षेत्र विशेष के लिए भी उपयोगी होते हैं। प्रस्तावित शोधपत्र द्वारा कृषि प्रधान क्षेत्र में कृषि विकास के प्रभावों का मूल्यांकन कर उसमें उत्पन्न मृदा समस्याओं को उजाकर करते हुए उनके निदानार्थ सुझाव प्रस्तुत करने के उद्देश्य पर आधारित है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा उ0प्र0 जिसका क्षेत्रफल 2396.15 वर्ग मीटर है इसका विस्तार गंगा-यमुना दोआव में 26^{0}24' उत्तरी अक्षांश से 27^{0}5' उत्तरी अक्षांश तक एवं 78^{0}45' पूर्वी देशान्तर से 76^{0}22' 15'' के मध्य है। अध्ययन क्षेत्र 2011 की जनगणना की कुल जनसंख्या 1579160 व्यक्ति है जिसमें ग्रामीण जनसंख्या 11850 व्यक्ति (76.80 प्रतिशत) है तथा 366310 व्यक्ति नगरीय जनसंख्या (30 प्रतिशत) जो प्रदेश की कुल जनसंख्या का .79 प्रतिशत है।

जनपद इटावा कृषि विकास क्रियाशील मानव प्राचीनकाल से नई तकनीकी की खोजकर विकास प्रक्रिया को बनाए हुए है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि विकास की गति यंत्रीकरण, रासायनिक उर्वरक, उच्च उत्पाद बीज, कीटनाशक दवाओं, सिंचाई, तकनीकी ज्ञान वित्त एवं फसल बीमा योजनाओं की सहायता से तीव्र हुई है तथ कृषि पद्धति व उत्पादन में सकारात्मक परिवर्तन हुए है। कृषि विकास मूलत: उत्पादन बृद्धि में परिलक्षित होता है। नवीन कृषि पद्धतियों के उपयोग के सकारात्मक परिणाम भी उत्पदन बृद्धि से प्रभावित होते हैं। अध्ययन क्षेत्र में कृषि नव प्रर्वतन प्रक्रिया के तीव्र प्रकार से फसलोत्पादन में आशातीत बृद्धि हुई है। इटावा जनपद मं फसलोत्पादन में बृद्धि सारणीय क्रमांक -1 व 2 स्पष्ट है।

सारणी 1 - (अगले पृष्ठ पर देखे)

अध्ययन क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग में निरन्तर बृद्धि हुई है उस प्रकार से फसलोत्पादन में बृद्धि नहीं हुई है। जिले में फसलोत्पादन में बृद्धि न के बराबर हुई है वहीं रासायनिक उर्वरको के प्रयोग में दोगुना बृद्धि देखी गयी है।

अध्ययन क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग सारणी 1 में स्पष्ट है।

रासायनिक उर्वरक का मृदा उर्वरता शक्ति पर प्रभाव- कृषि विकास में रासायनिक उर्वरकों की महत्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि कृषि से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरको का प्रयोग आवश्यक हो गया है। रासायनिक उर्वरकों के उचित प्रयोग से कृषि उत्पादन में बृद्धि को लगभग

*शोधार्थी, विवेकानंद ग्रामोद्योग महाविद्यालय,दिव्यापुर, ओरैया (उ.प्र.) भारत

70 प्रतिशत उर्वरक के अधिक प्रयोग के फलस्परूप है। अध्ययन क्षेत्र में उर्वरकों के उचित प्रयोग में ही अधिक उत्पादन किया जा रहा है। किन्तु साथ ही भूमि पर निरन्तर रासायनिक उर्वरकों का अन्धाधुन्ध प्रयोग से उसकी उर्वरा शक्ति का ह्रास होता जा रहा है। यहाँ के कृषकों द्वारा अधिक उत्पादन एवं आर्थिक लाभ की प्रवृत्ति से फसल चक्र को सीमित फसलों तक संकुचित कर दिया है। अपरीक्षित मिट्टी में फसलों उत्पादन बढ़ाने हेतु रासायनिक उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग से भी मिट्टी के पोषक तत्वों हा ह्रास हो रहा है।

अध्ययन क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों से मृदा में लवणीय एवं क्षारीय मृदा का प्रकार बढ़ा है। ऐसी स्थिति में हानिकारक लवणों द्वारा भूमि की उर्वरा शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

सारणी-2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

रासायनिक खाद की उर्वरकता शक्ति पर प्रभाव – रासायनिक खाद के उपयोग से खेत की मिट्टी में अम्ल की मात्रा बढ़ने के साथ अब जिंक और बोरान जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती जा रही है। इसका दुष्प्रभाव मिट्टी पर तो पड़ रहा है। इसका दुष्प्रभाव प्रमुख मनुष्य के स्वास्थ पर भी पड़ सकता है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार मिट्टी इन पोषकतत्वों की लगातार कमी से फसल प्रभावित होगी वहीं जिंक की लगातार कमी से बाल झड़ने के साथ ही शरीर का विकास भी थम सकता है। और कुपोषण कारण भी बन सकता है। जिले के किसान रासायनिक खाद क दुष्प्रभाव प्रति जागरूक होने लगे है इसके चलते वे अब अपने खेतों में जैविक खाद का उपयोग करने लगे हैं।

मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के सुझाव – अध्ययन क्षेत्र में एक वर्ष में दो अधिक फसलें ली जा रही है जिससे भूमि में फसलों द्वारा पोषक तत्वों का भारी अवशोषण होने में मृदा में उर्वरा शक्ति कमी हुई है। मृदा की उर्वरा शक्ति का बनाये रखने हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं:-

कृषक उचित फसल चक्र प्रणाली अपना कर जैसे उथली जड़ वाली फसलों के उपरान्त गहरी जड़ वाली फसलों को लगाना एवं खाद्यान्न फसलों के बाद दलहनी फसलों को बोना एवं हरी खाद बनाने वाली फसलों को बोना रासायनिक खेती के स्थान पर जैविक खेती एवं एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन विधि की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाण्डेय जे0एन0 कमलेश एस0आर0 कृषि भूगोल बसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर उ0प्र0 1999
2. जनगणना पुस्तिका जिला इटावा उ0प्र0 2011
3. जिला कृषि अधिकारी कार्यालय साख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा 2013
4. अर्थ एवं सांख्यिकी विभाग जनपद इटावा 2013
5. डा0 जी0पी0 मिश्र 2009 इटावा जनपद में कृषि नवाचार का भूदृश्य का प्रभाव प्रकाशित पी0एचडी0 शोध ग्रन्थ छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय कानपुर उ0प्र0
6. एकीकृत नाशी जीव प्रबन्धन (आई0पी0एम0) प्रसार शिक्षा एवं प्रशिक्षण ब्यरो कृषि विभाग उ0प्र0 कृषि ज्ञान मंजूषा प्रसार शिक्षा एवं प्रशिक्षण ब्यरो कृषि विभाग उ0प्र0।
7. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।

सारणी न0-1

जनपद इटावा में फसलो उत्पादन प्रति हैक्टेयर कि0ग्रा0 प्रतिशत 2008 से 2011

वर्ष	गेहूं उपज वृद्धि प्रतिषत कि0ग्रा0	धान उपज वृद्धि प्रतिषत कि0ग्रा0	चना उपज वृद्धि प्रतिषत कि0ग्रा0	सरसों उपज वृद्धि प्रतिषत कि0ग्रा0
2008–2009	35.08	27.76	14.85	14.12
2009–2010	29.47	18.07	12.82	10.19
2010–2011	35.08	25.25	15.23	16.64

स्रोत : सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा 2013

जनपद इटावा में फसलो उत्पादन

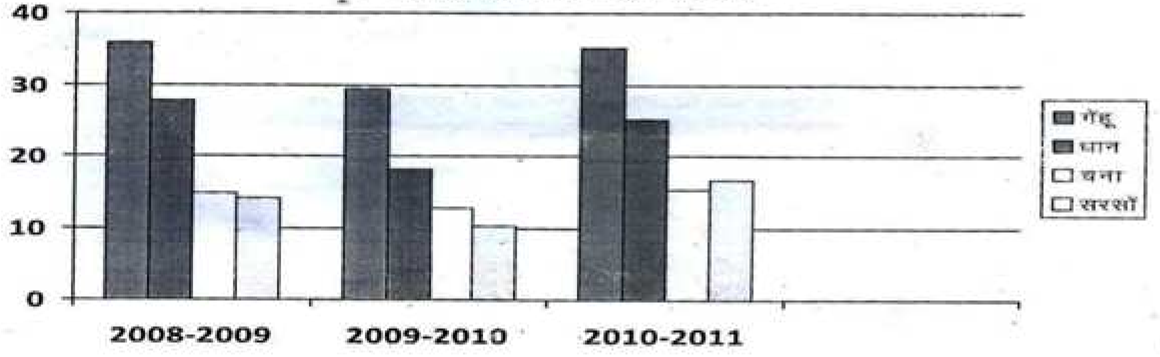

सारणी-2 - जनपद इटावा में रासायनिक उर्वकों का प्रयोग वर्ष 2008-2009

क्र.	वर्ष	नईट्रोजन		फासमोरस		पोटाश		योग	
0.		कुल उपयोग टन	बृद्धि प्रतिशत	कुल उपयोग टन	बृद्धि प्रतिशत	कुल उपयोग टन	बृद्धि प्रतिशत	योग	बृद्धि प्रतिशत
1.	2008-09	23946	-	11172	-	1772	-	3689	-
2.	2009-10	24702	3.05	13048	14.37	2477	28.46	40226	8.29
3.	2010-11	31700	22.07	15121	13.70	3105	20.22	49926	1942
4.	2011-12	27082	-	12613	-	2008	-	41703	-

स्रोत : सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा 2013

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

हरिवंश राय बच्चन के काव्य में राष्ट्रीय चेतना

कमलसिंह भूरिया * डॉ. शहजाद कुरैशी **

प्रस्तावना - 'वास्तव में राष्ट्र शब्द की चर्चा प्राचीन वाड्मय में अनेक स्थानों पर कई रूपों में है' हम पाते।' मनुस्मृति के अनुसार- अधिवासी, 'वह लोक समुदाय जो एक ही देश में बसता हो, एक ही राज्य के शासन में रहता हुआ एक बद्ध हो।'

यजुर्वेद में राष्ट्र शब्द की पुनरुक्ति हुई है और अनेक बार 'राष्ट्र' में देहि और 'राष्ट्र में दत्त' कहकर राष्ट्र प्राप्ति की उत्कृष्ट कामना प्रकट की गई है। अंग्रेजी में राष्ट्र के लिए 'नेशन' शब्द 'राष्ट्र' के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार राष्ट्र की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है- 'राष्ट्र धर्म को ही लोक अपना सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते हैं। भूमि', भूमिवासी, जन और जन संस्कृति तीनों के सम्मिलित होने से राष्ट्र का स्वरूप बनता है। भौगोलिक एकता, जन अर्थात् जनगण की राजनीतिक एकता और जनसंस्कृति अर्थात् सांस्कृतिक एकता, तीनों के समुच्च का नाम राष्ट्र है। राष्ट्र में भौगोलिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक इकाइयाँ पूंजीभूत हैं।'

समाज केवल व्यक्तिों का समूह ही नहीं, वरन् एक सशक्त सत्ता है। किसी राज्य में संगठित समाज जिसके रीति-रिवाज, धर्म, विश्वास तथा अन्य जीवन के सुख-दुख की चेतना समान हो, राष्ट्र कहलाता है। बर्गेस के अनुसार- 'राष्ट्र एक समुदाय है जिसकी भाषा एवं साहित्य, रीति-रिवाज तथा भले-बुरे की चेतना सामान्य हो और भौगोलिक एकता-युक्त प्रदेश में रहता है।'

इस तरह राष्ट्र के रूप में ऐसा जन-समूह जो अपनी एक स्वतंत्र-प्रभुसत्ता है और राजनैतिक दृष्टि से एक इकाई में सम्बद्ध है। वह राष्ट्र कहलाता है। वस्तुत: जन सामान्य लोगों में उनमें परस्पर भावनात्मक सम्बद्ध होता है। 'राष्ट्र राज्य-सूत्रों के बन्धनों की एकता से सम्पूर्णत: निरपेक्ष विभिन्न व्यवसायों एवं सामाजिक स्तर के मनुष्यों का समुदाय होता है, जो परम्परा प्राप्त संस्कारों एवं भावनाओं वाले एक समाज में रहता है, जिसका प्रत्येक सदस्य, भाषा तथा आचार के आधार पर अपने समाज के अन्य सदस्यों से अपनी एकता एवं विदेशियों से अपनी पृथकता अनुभव करता है।'

राष्ट्र के प्रति राष्ट्र के जनमानस में राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना है। आस्था की भावना है। जनमानस में जनता के प्रति श्रद्धा भक्ति की भावना है।

राष्ट्रीता एक ऐसी भावना है जिसका सम्बन्ध मानव की अन्त:चेतना से है, जो अनिर्वचनीय होने के कारण केवल अनुभूति का विषय है।

डॉ. अम्बेड़कर ने कहा था- 'राष्ट्रीयता श्रेणीगत चेतना की एक अनुभूति है जो एक तो उन व्यक्तियों को, जिनमें यह तीन प्रगाढ़ होती है कि आर्थिक संघर्ष या समाजगत उच्चता-नीचता के कारण उत्पन्न होने वाले भेदभावों को दबाकर एक सूत्र में बांधें रखती है और दूसरी ओर उसके ऐसे गुणों से पृथक करती है जो उस श्रेणी के नहीं है।'

भौगालिक एकता के लिए जन समूह के पास प्राकृतिक सीमाओं से युक्त एक क्षेत्र होना चाहिए, निश्चित भू-भाग के आधार पर ही राष्ट्र को जन्मभूमि के रूप में निरूपित किया जाता है। 'कोई भी जाति अपनी भूमि के लिए बिना राष्ट्रीयता प्राप्त नहीं कर सकती। चाहे वह कितनी ही वैभव शाली अथवा सम्पन्न क्यों न हो।' वास्तव में अपना देश ही अपना घर है जिसमें रहने वाले सदस्य परस्पर प्रेम तथा सहानुभूति के कारण एक दूसरे की अपेक्षा शीघ्रता से एक दूसरे को समझने-बुझने में सफल होते हैं।'

अंग्रेजों ने अपनी नीतियों के कारण धीरे-धीरे संपूर्ण भारत पर आधिपत्य कर लिया। अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कंपनी ने राज्य के अंग्रेजी राज्य में सम्मिलित करना शुरू किया। परिणामत: 1857 में अंग्रेजी नीतियों से असन्तुष्ट होकर देशी राजाओं ने एकजूट होकर व्यापक स्तर पर विद्रोह किया। फलत: ईस्ट इंडिया कंपनी ने राज करने के अधिकार ले लिया और भारत वर्ष ब्रिटिश साम्राज्य का उननिवेश बन गया। इन घटनाओं के कारण अंग्रेजों ने आर्थिक, शैक्षणिक और प्रशासनिक नीतियों में परिवर्तन किया। भारत के पूर्व में गाँव छोटे-छोटे गणतंत्र थे। हिंदू, पठान, यमुगल, सिक्ख, मराठा ऐसे राज्य बने और बिगड़े। इस प्रकार सामाजिक संघटना एकजूट नहीं थी। अनेक जातियों-उपजातियों में विभक्त इस देश में पारम्परिक एकता का सर्वथा अभाव रहा।

अंग्रेजों राज्य के कारण कृषि की अवनति हुई, उद्योग-धंधे नष्ट हो गये, हजारों लोग बेरोजगार हो गये। इस अवनति के कारण ही देश में गांधी जी के नेतृत्व में स्वतंत्रता का लंबा आंदोलन प्रारंभ हुआ। 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ।

तब से भारतीय समाज विकास की ओर अग्रसर हुआ और देश में राष्ट्रीय एकता की लहर प्रारंभ हुई। स्वामी विवेकानंद ने शिक्षित तथा उच्च वर्ग की भर्त्सना करते हुए कहा कि- 'जब तक देश के हजारों लोग भूखे हैं, अज्ञानी हैं, उनकी ओर तनिक भी धन नहीं देते। उच्च वर्ग नैतिक दृष्टि से मर चुका है।'

डॉ. नगेन्द्र ने छायावादी युग की उपलब्धियों की चर्चा करते हुए कहा है कि-'व्यापक दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है कि 'छायावादी युग' भारत के लिए अस्मिता की खोज का युग है। सदियों की दासता के कारण भारतीय जनता आत्मकेन्द्रित होती हुई रुढ़िग्रस्त हो गयी थी। पाश्चात्य साम्राज्यवादियों के आगमन ने देश में एक विराट तूफान पैदा कर दिया था, जिसके कारण रुढ़ियों में गुप्त देश की आत्मा पूरी शक्ति और उद्धेलन के

* शोधार्थी (हिन्दी साहित्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक , शासकीय महाविद्यालय, मुंदी, खण्डवा (म.प्र.) भारत

साथ जाग उठी। परिणाम स्वरूप भारतीय मनीषी अपने परिवेश की त्रासपूर्ण विघटनमयी स्थिति के प्रति सजग हुए और उसके व्यापक सुधार की आवश्कता की ओर उनका ध्यान आकर्षित हुआ।'

'सामाजिक जीवन के प्रति भी उन्होंने उत्साह दिखाया। इन कवियों को वर्तमान काल में जन्म भूमि की शोभा मलिन दिखाई पड़ी। कविताओं में उन्होंने दासता पर क्षोभ प्रकट किया है। जाति-पाँति, विदेशयात्रा के बन्धन, कूप मंडूक वृत्ति, भूतादि की पूजा, यफूट, वैर आलस्य, अकर्मणता, अन्धविश्वास, अविद्या, अज्ञान तथा निन्दनी रुढ़ियों के कारण समाज-शरीर के सब अंग दूषित हो गये थे।'

कवियों में राष्ट्र भक्ति, राष्ट्रीय समर्पण की भावना, बलिदान का स्वर आदि राष्ट्रीय भावनाएँ व्यक्त की है।

बच्चन के राष्ट्रीयता काव्य की पृष्ठभूमि - बच्चन का गीत संसार काफी व्यापक है, जिसमें भावों का भी बड़ा व्यापक विस्तार है। उनकी रचनाओं में जीवन, प्रकृति, राष्ट्र और देश प्रेम' प्रमुख हैं। इन रचनाओं में उनकी व्यापक अनुभूतियाँ देखने को मिलती है। इनमें प्रमुख रूप से- बंगाल का काल, खादी के यफूल, अग्निपथ, स्वतंत्रता, राष्ट्रपिता गांधी, तूफान, बलिदान, रक्त स्थान, ताजमहल, आदि कविताएँ प्रमुख हैं। कवि ने राष्ट्र और बापू को संबोधित कर जो कविताएँ लिखीं हैं, उनं देशभक्ति की भावना प्रबल रूप से उभरी हैं। 'बंगाल का काल में मातृभूभि' को सुजलां, सुफलां, शस्यशामलां के रूप में प्रस्तुत की हैं।

'धार के इधर-उधर' में देश-विभाजन की टीस के साथ उनमें उद्बोधन एवं निर्माण का स्वर है। देश के विकास के लिए एकता को ध्यान में रखना जरूरी है। साम्प्रदायिक भेदभाव भुलाकर भावात्मक स्तर पर एकजुट होने की जरूरत पर बच्चन जी ने बल दिया। राष्ट्रभाषा के समर्थन का उन्होंने पूरजोर प्रयास किया।

बच्चन जी ने राष्ट्रप्रेम की भावनाएँ अपनी रचनाओं में व्यक्त की हैं। बच्चन ने भारत की समसामयिक पृष्ठभूमि पर देश के विभाजन और उससे उत्पन्न साम्प्रदाकिता के प्रति आक्र ेाश व्यक्त किये है। कवि ने 'यमधुशाला', 'धार के इधर-उधर' जैसी रचनाओं में साम्प्रदायिता विरोधी भावनाएँ व्यक्त की हैं। कवि ने सम्प्रदावादी स्रोत को भुलाकर राष्ट्र की एकता की भावना को प्रबल करने की बात कहीं है- कवि कहता है कि-

'रहे न एक साथ जब रहे,
अलग, विरुद्ध पंथ आज तो गहे,
यही विलाप है कि राम' मुँह कहे
यगर बगल छिपी हुई कटार हो।'
'वह पुण्य कृत, यह पाप कर्म
कह भी दूँ, तो दूँ क्या सबूत,
कब कंचन मस्जिद पर बरसा
कब मदिरालय पर गाज गिरी।।'
बच्चन के काव्य में राष्ट्रीय भावना
'भूख-भूख कर/ सूख सूख कर/ पंजर-पंजर
गिर धरती पर/ यों न तोड़ देते अपना दम,
और नपुंसक मृत्यु न मरते,
भूखे बंग के वासी।'

गांधी जी की मृत्यु पर कवि ने गहरा दु:ख व्यक्त किया है और गांधीजी के हत्यारे के प्रति उनके मन में आक्रोश टूट पड़ा हैं-

'पड़ गया सूर्य क्या ठंडा हिम के पाले से।'
क्या बैठ गया गिरि मेरु तूल के गाले से
प्रभु पाहि देश, प्रभु त्राहि जाति, सुर के तन को
अपने मुंह में/ लघु नरक कीट ने/ लिया दबा।।

बापू की पूर्व स्मृति को याद करते हुए गांधीजी की दांडी यात्रा की याद की है। चंपारन के आंदोलन की याद की है। चंपारन के आंदोलन की याद की है।

बच्चन जी ने हमेंशा साम्प्रदाकिता का विरोध किया है। मधुशाला में भी उन्होंने कहा है कि-

'मंदिर, मस्जिद लड़वाते हैं
मेल कराती मधुशाला।'

निष्कर्ष - कवि हरिवंश राय बच्चन की रचनाओं में सांस्कृतिक, राजनैतिक और भौगोलिक दृष्टि से राष्ट्रीय भावों का और उसके उद्भव और विकास की चर्चा की है। डॉ. अम्बेडकर ने भी राष्ट्रीयता की भावना को व्यक्त किया है तथा राष्ट्रीय चेतना को भलीभाँति से अभिव्यक्त किया है।

स्वाधीनता आंदोलनों से जुड़ी अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का कवि ने उल्लेख किया है। गांधी जी के नेतृत्व में स्वाधीनता का एक दीर्घ आंदोलन संचालित किया गया है। अन्त में 1947 को देश आजाद हुआ। बच्चन जी के राष्ट्रीय काव्य की पृष्ठभूमि में कवि ने बंगाल के अकाल की याद दिलाई है। इसके साथ ही उनकी अन्य रचनाओं में गांधी जी के असामयिक निधन पर उन्होंने भावपूर्ण श्रद्धा अर्पित की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तैतरी संहिता- 7-5-98
2. नालन्दा शब्द कोष।
3. यजुर्वेद- 10-2-3
4. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल- सा.हि.।
5. जे.डब्ल्यू. वर्गीस- राजनीतिशास्त्र और संवैधानिक विधि, व्हा.1,
6. विनय मोहन शर्मा- साहित्य, शोध समीक्षा।
7. डॉ. नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास।
8. मैथिलीशरण गुप्त- हिन्दू, भारत भारती।
9. बच्चन रचनावाली-2 धार के इधर-उधर- देश विभाजन।
10. मेरी श्रेष्ठ कविताएँ- हरिवंश राय बच्चन, मधुबाला।
11. बच्चन- 'बंगाल का काल'- मेरी श्रेष्ठ कविता से संकलित।
12. बच्चन- सूत की माला, मेरी श्रेष्ठ कविताएँ।
13. बच्चन- सूत की माला- संकलन।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

शिक्षा के निजीकरण से अनुसूचित जातियों के शैक्षणिक विकास व विद्यालयी वातावरण में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन (म.प्र.के इन्दौर जिले के इन्दौर तहसील के अमन नगर के विशेष संदर्भ में)

ज्योति सौलंकी *

प्रस्तावना – शिक्षा अज्ञानता रूपी अंधेरे को समाप्त करने वाली प्रकाश की वह किरण होती हैं, जो हमें हर विषय को तर्क के धरातल पर माप कर प्रयोग करने को प्रेरित करती हैं शिक्षा बालक का सर्वागीण विकास हैं कहने का तात्पर्य हैं कि शिक्षा व्यक्ति परिवार समाज, तथा देश के विकास का प्रमुख सहायक तत्व हैं शिक्षा वह धन हैं जो कभी समाप्त नहीं होता, जिसे न चोरी का भय होता हैं और न ही नष्ट होने का बल्कि वह एक ऐसी सम्पति होती हैं जो व्यय करने पर और अधिक बढती जाती है और एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तांतरित होती हैं।

किन्तु भारत की शिक्षा प्रणाली अनेक अन्तर्विरोधी तथा अन्तर्द्वन्द्वों से ग्रस्त है एक साथ कई विपरित और विरोधी लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रयत्नों में वह स्वयं लक्ष्यहीन बन गई हैं। बाहरी तथा भीतरी दबावों के उत्पन्न द्वन्द्वों ने उनकी निर्णय शक्ति को क्षीण कर दिया है ये दबाव निरंतर बढ रहे है और समाधान की पेचीदगियों और उलझनों को बढा रहे है। हमारी शैक्षिक, प्राथमिकताएं आधारहीन है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने साक्षरता के प्रसार एवं प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य और देशव्यापी बनाने का जो आश्वासन दिया था, उसे पूर्ण होने में छः दशक लग गए। इसका कारण हमने अपने लक्ष्य को कभी गंभीरता से नहीं लिया। न तो शिक्षा व्यवस्था भी बहुत अच्छी हैं और यदि ग्रामीण स्कूलों की व्यवस्था की ओर नजर डाले तो शाला के रूप में कच्चे-पक्के एक कमरे के मकान व वृक्ष का चबूतरा या तम्बू नजर आते है। शिक्षकों को साक्षकों को देखों तो यह पूरा वर्ग एक दया और कमजोर व्यक्ति की परिकल्पना को साकार करके तथा दरिद्रता को शिक्षकियता का प्रमाण मानने वाला वर्ग हैं। बल्कि जिसे हम विद्यार्थी कहते है वह कमजोर स्थिति और शिक्षा सामग्री के अभाव में शिक्षा के उद्देश्यों को ही नहीं समझ पा रहा हैं।

भारत शिक्षा जगत में दो अलग असमान स्थितियॉ है जिसे हम शिक्षा के रूप में देखे तो एक ओर आर्थिक रूप से सम्पन्न वे परिवार जिनकी संतान निजी शिक्षण संस्थानों में अध्ययन कर रही है, जहां सर्वसुविधाओं एवं व्यवस्थित माहौल के कारण उसके सामाजीकरण एवं विकास की गति तीव्र हैं वही दूसरी और गरीब परिवार के वे बच्चें जिन्हें आज भी दो वक्त का भरपेट भोजन नहीं मिलता वे अपनी कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण शासकीय शिक्षण संस्थान जो कि परम्परागत पद्धति से अध्ययन शैक्षणिक तंत्र की अगुणवत्ता व आदर्श प्रबंधन की असफल व्यवस्था के लिए जाने जाते है, और विकास की दौड में अन्य बच्चों से पिछडे हुए हैं।

अनुसूचित जाति जिसकी समाज में आर्थिक स्थिति अत्यंत ही दयनीय है और जो कि अनेक कठिनाईयों और परेशानियों में अपना जीवन-यापन करते है उनमें भी यह देखने में आया है कि जो परिवार आर्थिक रूप से सम्पन्न है वे ही अपने बच्चों को निजी शिक्षण संस्थान की सुविधायुक्त और गुणवत्ता से परिपूर्ण शैक्षणिक व्यवस्था में अध्ययन कराते है, शेष जो गरीब परिवार आज भी अपने बच्चों को शासकीय शिक्षा संस्थाओं की असुविधा एवं अगुणवत्तायुक्त शैक्षणिक व्यवस्था में अध्ययन करा रहे है इससे भारत में विशेषकर दो अलग स्थितियां दिखाई दे रही है एक ओर शासकीय शिक्षण संस्थान में अध्ययनरत विधार्थी तो दूसरी ओर निजी शिक्षण संस्थान में अध्यनरत विधार्थी जो कि किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र में दो अलग-अलग प्रस्थितियों का निर्माण करते है। अतः इसके लिए समाधान हेतु प्रयास किये जाने चाहिए।

साहित्य समीक्षा :

वेनकईह (1977) – कला और विज्ञान के विद्यार्थियों में सामाजिक, आर्थिक रूप से उनका शैक्षणिक निष्पादन धनात्मक रूप से संबंधित था।

दत्ता, पी.के.(2007) – निजीकरण एवं उससे उच्च शिक्षा में होने वाले परिवर्तन के विषय में बताया।

मौर्य, आर.डी.(2007) – इस नीति के परिणामस्वरूप दलित युवायों की शिक्षा पर बुरा प्रभाव पडा हैं क्योंकि केवल वे छात्र उच्च शिक्षा के ऐसे संस्थाओं में प्रवेश पा सकेंगं जो इनकी मोटी फीस अदा करने में सक्षम होंगे।

कुमार मंगल (2007) – गुणवत्ता की शिक्षा में भारत की शिक्षा व्यवस्था तथा शिक्षा के क्षेत्र में नागरिकों का क्या योगदान है और उसके साथ ही साथ वर्तमान में बुनियादी सुविधाओं के माध्यम से गुणवत्ता के विषय में बताया गया हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. शिक्षा के निजीकरण से अनुसूचित जातियों के शैक्षणिक विकास में आने वाली चुनौतियों व कठिनाईयों का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र का चयन – इंदौर जिला म.प्र.की आर्थिक राजधानी व औद्योगिक केन्द्र के रूप में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं शिक्षा तथा चिकित्सा के क्षेत्र में भी वर्तमान में यहॉ निरंतर प्रगति परिलक्षित हो रही हैं। जिसे का नाम इंदौर मुख्यालय नगर के नाम पर हैं जो पहले इंदुर कहलाता था, जो इंद्रेश्वर या इंदपुर का अपभ्रांश हैं। भौगोलिक दृष्टि से इंदौर जिला 22.20 से 23.05 अक्षांश उत्तर तथा 75.25 से 76.15 देशांत पूर्व में देवास तथा पश्चिम में धार जिला स्थित हैं जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3898 वर्ग कि.मी.हैं व कुल वन क्षेत्र 70957 हैटेयर है जिले में इंदौर, महू,

* शोधार्थी, डॉ.अम्बेडकर विचार एवं दर्शनशास्त्र बानिस, महू, इंदौर (म.प्र.) भारत

सांवेर, देपालपुर, व हातोद 5 तहसील है जिसमें 645 ग्राम व 304 ग्राम पंचायते है जिले का कुल क्षेत्रफल 3898 वर्ग किमी हैं।

अनुंसधान विधि – अध्ययन के समग्र से अध्ययन की जाने वाली इकाइयों को चयन सरल दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा किया गया हैं। एवं म.प्र. के इंदौर जिले की इंदौर तहसील के अमन नगर के अनुसूचित जाति के 50 परिवार व एक प्रायवेट स्कूल अध्ययन का समग्र हैं।

संमको का संकलन – प्राथमिक स्त्रोत– साक्षातकार अनुसूची, अवलोकन, समूह चर्चा।

द्वितीयक स्त्रोत– पुस्तकों, उपलब्ध लेखों, समाचार, पत्र–पत्रिकाओं, शोध पत्रिकाएं, शोध प्रबंध, रिसर्च प्रोजेक्टस, वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट व मास्टर चार्ट व इंटरनेट आदि।

तालिका क्रमांक 1– आयु संबंधित विवरण

क्र.	आयु	उत्तरदाताओं की संख्या		प्रतिशत	
		महिला	पुरुष	महिला	पुरुष
1.	10 – 20	0	0	0	0
2.	20 – 30	10	5	20	10
3.	30 – 40	9	11	18	22
4.	40 – 50	6	4	12	8
5.	50 – 60	2	3	4	6
	योग	27	23	54	46

स्त्रोत :–सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के 20 – 30 के बीच उत्तरदाता महिला 20 प्रतिशत व पुरूष 10 प्रतिशत प्राप्त हुये। 30 – 40 के बीच उत्तरदाता महिला 18 प्रतिशत व पुरूष 22 प्रतिशत प्राप्त हुये। 40 – 50 के बीच उत्तरदाता महिला 12 प्रतिशत व पुरूष 08 प्रतिशत प्राप्त हुये।50 – 60 के बीच उत्तरदाता महिला 04 प्रतिशत व पुरूष 06 प्रतिशत प्राप्त हुये।

तालिका क्रमांक 2 –उत्तरदाताओं का शैक्षणिक स्तर

क्र.	शिक्षा का स्तर	उत्तरदाताओं की संख्या		प्रतिशत	
		महिला	पुरुष	महिला	पुरुष
1.	प्राथमिक शिक्षा	5	8	10	16
2.	माध्यमिक शिक्षा	12	5	24	10
3.	हाई सेकेण्डरी	3	5	6	10
4.	उच्च शिक्षा	0	3	0	6
5.	अशिक्षित	7	2	14	4
	योग	27	23	54	46

स्त्रोत :–सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के लोगों में शैक्षणिक प्राथमिक स्तर महिला 10 प्रतिशत व पुरूष 16 प्रतिशत प्राप्त हुये। माध्यमिक शिक्षा में महिला 24 प्रतिशत व पुरूष 10 प्रतिशत प्राप्त हुये। हाई सेकण्डरी महिला 06 प्रतिशत व पुरूष 10 प्रतिशत प्राप्त हुये।उच्च शिक्षा महिला 0 प्रतिशत व पुरूष 06 प्रतिशत प्राप्त हुये। और वही पर अशिक्षित महिला 14 प्रतिशत व पुरूष 04 प्रतिशत प्राप्त हुये। इससे यह स्पष्ट होता हैं कि पुरूष अधिक शिक्षित हैं।

तालिका क्रमांक 3– परिवार की मासिक आय

क्र.	परिवार की कुल मासिक आय	संख्या	प्रतिशत
1	3000 – 4000	12	24
2	5000 – 6000	20	40
3	7000 – 8000	15	30
4	9000 – 10000	3	6
	योग	50	100

स्त्रोत :–सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के परिवार को मासिक आय 3000–4000 तक 24 प्रतिशत हैं 5000–6000 तक 40 प्रतिशत हैं तथा 7000–8000 तक 30 प्रतिशत हैं जबकि 9000–10000 तक 06 प्रतिशत हैं।

तालिका क्रमांक 4 – बालक बालिकाओं के स्कूल जाने का विवरण

क्रं.	बालक बालिकाओं के स्कूल जाने का विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	प्राइवेट स्कूल	38	76
2	सरकारी स्कूल	12	24
	योग	50	100

स्त्रोत :–सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के 76 प्रतिशत उत्तरदाता अपने बच्चों को प्रायवेट स्कूल में भेजते हैं जबकि 24 प्रतिशत उत्तरदाता अपने बच्चों को सरकारी स्कूल में भेजते हैं।

तालिका क्रं. 5 – शिक्षा के निजीकरण से अनुसूचित जातियों के शैक्षणिक विकास में आने वाले चुनौतियों व कठिनाईयों का अध्ययन

क्र	चुनौतियां व कठिनाईयां	संख्या	प्रतिशत
1	दाखिला न होना	20	40
2	फीस भरने में देरी	25	50
3	आर्थिक स्थिति ठीक नही	05	10
	योग	50	100

स्त्रोत :–सर्वेक्षण के आधार पर

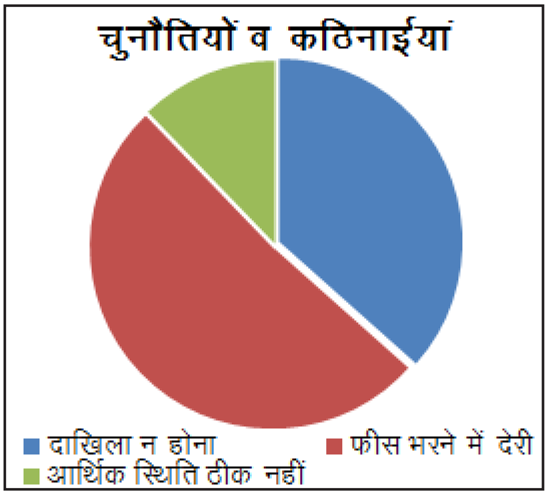

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि शिक्षा प्राप्त करने के दौरान चुनौतियों व कठिनाईया का सामना करने वालों का 40 प्रतिशत दाखिला न होना। 50 प्रतिशत फिस भरने में देरी के कारण व 10 प्रतिशत आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होने से इन सभी समस्याओं का सामना करना होता हैं।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर परिणामों को निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत किया गया हैं :

1. अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षण से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के 20 – 30 के बीच उत्तरदाता महिला 20 प्रतिशत व पुरूष 10 प्रतिशत प्राप्त हुये। 30 – 40 के बीच उत्तरदाता महिला 18 प्रतिशत व पुरूष 22

प्रतिशत प्राप्त हुये। 40 – 50 के बीच उत्तरदाता महिला 12 प्रतिशत व पुरूष 08 प्रतिशत प्राप्त हुये। 50 – 60 के बीच उत्तरदाता महिला 04 प्रतिशत व पुरूष 06 प्रतिशत प्राप्त हुये। पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं का प्रतिशत अधिक हैं।

2. अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षण से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के लोगों में शैक्षणिक प्राथमिक स्तर महिला 10 प्रतिशत व पुरूष 16 प्रतिशत प्राप्त हुये। माध्यमिक शिक्षा में महिला 24 प्रतिशत व पुरूष 10 प्रतिशत प्राप्त हुये। हाई सेकण्डरी महिला 06 प्रतिशत व पुरूष 10 प्रतिशत प्राप्त हुये। उच्च शिक्षा महिला 0 प्रतिशत व पुरूष 06 प्रतिशत प्राप्त हुये और वही पर अशिक्षित महिला 14 प्रतिशत व पुरूष 04 प्रतिशत प्राप्त हुये। इससे यह स्पष्ट होता हैं कि पुरूष अधिक शिक्षित हैं।
3. अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षण से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के परिवार को मासिक आय 3000–4000 तक 24 प्रतिशत हैं 5000–6000 तक 40 प्रतिशत हैं तथा 7000–8000 तक 30 प्रतिशत हैं जबकि 9000–10000 तक 06 प्रतिशत हैं।
4. अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षण से स्पष्ट हैं कि अनुसूचित जाति के 76 प्रतिशत उत्तरदाता अपने बच्चों को प्रायवेट स्कूल में भेजते हैं जबकि 24 प्रतिशत उत्तरदाता अपने बच्चों को सरकारी स्कूल में भेजते हैं। इससे यह स्पष्ट होता हैं कि प्रायवेट स्कूलों में जाने वाले बच्चों का प्रतिशत ज्यादा हैं।

सुझाव :

1. अनुसूचित जातियों में पहले की अपेक्षा शिक्षा में प्रचार हुआ है, किन्तु सामान्य शिक्षा के साथ ही व्यवसायिक शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि वे अपने पारस्परिक व्यवसाय परिवर्तन हेतु अधिक विकास प्राप्त कर सके।
2. शासन की ओर से दी जाने वाली सुविधाओं एवं कल्याणकारी योजनाओं का प्रचार माध्यम शिक्षित लोगों के लिए आधार ठीक नहीं हो पा रहा हैं अत: उचित माध्यम से इनकी बस्तियों में योजनाओं का भलीभांती रूप से प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए।
3. अनुसूचित जातिय के बच्चों के लिए निजी शिक्षण संस्थाओं में कम फीस होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दत्ता, पी.के. (2007)– 'भारत की उच्च शिक्षा में गुणवत्ता', नई दिल्ली।
2. मौर्य, आर. डी. (2007)– 'दलित युवाओं की शिक्षा पर बुरा प्रभाव' डॉ. आम्बेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका, संस्थान महू, म.प्र.।
3. सिंह, एस.के. (2008)– 'शिक्षण गुणवत्ता एवं मानव विकास', विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
4. चन्सौरिया, मुकेश योजना (2009)– 'भारत में उच्च शिक्षा समस्याएॅं एवं समाधान', योजना भवन, संसद मार्ग नई दिल्ली, पे. न. 27।
5. यादव, केदार सिंह (2009)– 'भारतीय शिक्षा इतिहास समस्याऍं', अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

****

सेन्ट्रल म.प्र. ग्रामीण बैंक की विभिन्न ऋण योजनाओं का महत्व

डॉ. आर.के. पाटिल* तृप्ति शुक्ला सराफ **

प्रस्तावना – देश का आर्थिक एवं सामाजिक विकास इस बात पर निर्भर करता है कि उस देश के विकास में किन–किन क्षेत्रों का योगदान रहा है, जैसे कि परिवहन का क्षेत्र जिसके अन्तर्गत रेल्वे, सड़क यातायात, हवाई, क्षेत्र आदि अपने माध्यम से देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने मे सहयोग प्रदान करते है। इसके आलावा आवासीय सुविधाओं को प्रदान करने का क्षेत्र आदि। इन्हीं क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण क्षेत्र कृषि को माना गया है जिसके माध्यम से देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाया जा सकता है।

भारत को एक कृषि प्रधान देश कहा गया है। वर्तमान में भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित होते हुए अपने निजी विकास के साथ–साथ देश के विकास में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। चूंकि भारत में कृषि कार्य ग्रामीण क्षेत्रों में अत्याधिक प्रगतिशीलता की ओर अग्रसर है, इसलिए कृषि कार्य से सम्बंधित आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए ग्रामीण बैंको की स्थापना की गई है। मुख्य रूप से सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा मध्यप्रदेश के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार के ऋणों के रूप में कृषि को सहायता प्रदान की गई है।

सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा मुख्यत: ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों, लघु व्यवसायियों, स्वरोजगार, उपभोग हेतु आदि के लिए ऋणों के रूप में आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है उपरोक्त तथ्यों के आधार पर सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक दवारा चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाओं का विश्लेषण एवं विवेचन निम्न शीर्षकों के माध्यम से किया गया है।

शोध अध्ययन की अवधि – शोधार्थी द्वारा सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा चलाई जाने वाली योजानाओं को गत 2012–13 से 2017–2018 वर्ष तक की अवधि के आधार पर उल्लेखित किया गया है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य – प्राय: यह देखा जाता है कि किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए पूर्व से ही कुछ उद्देश्य निर्धारित कर लिए जाते हैं जो कि निम्नानुसार–है

1. सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा अपनाई जाने वाली योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना।
2. योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र के विकास के साथ–साथ बैंक की आर्थिक स्थिति में भी सुधार लाना।

शोध प्रविधि – शोधार्थी द्वारा यह शोध पत्र द्वितीय समंकों एवं सूचनाओं के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा निर्गमित की गई वार्षिक प्रतिवेदनों कि प्रतियों के माध्यम से शोधार्थी द्वारा शोध पत्र से सम्बन्धित समंकों को एकत्रित करने के पश्चात उनके कार्यों को पूर्ण किया गया है। सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक दवारा ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए चलाई जा रही योजनाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रही है।

ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा जिन विभिन्न योजनाओं का निर्माण करते हुए उन्हें प्रचलन में लाया गया है, उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार किया गया है :

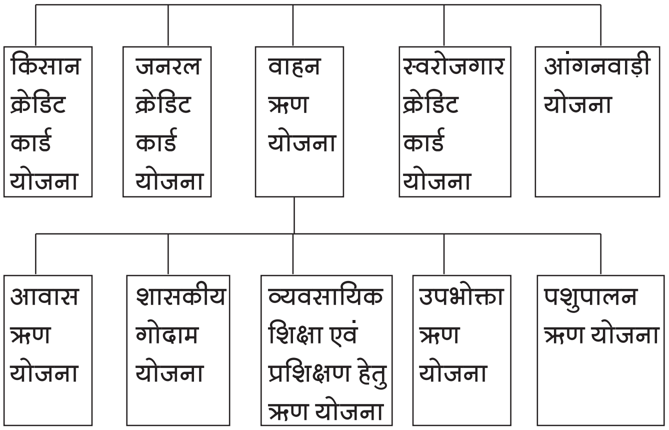

1. सेंट एम.पी. किसान क्रेडिट कार्ड योजना – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा निर्धारित की गई उपरोक्त योजना के अन्तर्गत कृषकों को बैकिंग सिस्टम द्वारा एकल खिड़की के माध्यम से कृषि कार्य हेतु ऋण की व्यवस्था कराना।

इस योजना के अनुसार ग्रामीण बैंक द्वारा सभी प्रकार के कृषकों को कृषि कार्य हेतु ऋण प्रदान किया जाता है, चाहे वह किसान भूस्वामी हो अर्थात भूमि का मालिक हो या उसने किसी अन्य से किराए पर कृषि भूमि ली गई हो।

इस योजना के अन्तर्गत सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा सीमांत कृषकों के अतिरिक्त अन्य सभी कृषकों को प्रथम वर्ष केवल एक फसल होने वाले कृषकों को कृषि कार्य के लिए आवश्यक राशि का 10 प्रतिशत एवं फसल बीमा से सम्बंधित आवश्यक राशि का 20 प्रतिशत तक की सीमा का ऋण की राशि का प्रबन्ध किया जाता है।

अन्य वर्षो के लिए कृषि लागत में वृद्धि को ध्यान में रखते हुए निर्धारित सीमा पर 10 प्रतिशत की वृद्धि करते हुए बैंक द्वारा ऋण के रूप में राशि की व्यवस्था की जाती है।

सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड की योजना

* प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, टिमरनी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य संकाय) बरकतउल्ला विष्वद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

का लाभ सामान्यत: वार्षिक समीक्षा के आधार पर 5 वर्ष तक की अवधि तक निर्धारित किया गया।

2. सेंट एम.पी. जनरल क्रेडिट कार्ड योजना – उपरोक्त योजना को प्रचलन में लाने का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण एवं अर्द्धशहरी क्षेत्रों में शाखाओं के ग्राहकों की सामान्य ऋण आवश्यकताओं को पूरा करना होता है।

इस योजना के अन्तर्गत शाखा द्वारा संचालित चालू एवं बचत खातों को ध्यान में रखते हुए आय एवं केशफ्लो के आधार पर बिना किसी प्रतिभूतियों एवं प्रमाण पत्रों के अधिकतम अधिविकर्ष की सीमा प्रदान की जाती है।

इस योजना का लाभ लेने हेतु आवेदक को जमा खाते के रूप में शाखा में कम से कम 6 माह से कार्यरत होते हुए शाखा के कमांड क्षेत्र का स्थायी निवासी होना चाहिए। साथ ही आवेदक की आयु न्यूनतम 21 वर्ष और अधिकतम 50 वर्ष होनी चाहिए।

उपरोक्त योजनानुसार ग्रामीण बैंक द्वारा ऋण की राशि अधिकतम 25000 रूपये तक निर्धारित की गई है

3. सेंट एम.पी. वाहन ऋण योजना – इस योजना के अंतर्गत सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक दवारा केवल व्यक्तिगत उपयोग के लिए दो पहिया एवं चार पहिया वाहन पुरानी या सेकेन्ड हेन्ड कार को क्रय करने के लिए वित्ता प्रदान किया जाता है। परन्तु सेकेन्ड हेण्ड होने के लिए कार 03 वर्ष से अधिक पुरानी नहीं होनी चाहिए और शेष जीवन काल 10 वर्ष का भी हो तो वाहन क्रय करने के लिए वित्ता की व्यवस्था की जा सकती है। इस योजना के अन्तर्गत ऋण लेने वाले व्यक्तियों की आयु 18 वर्ष एवं इससे अधिक होनी चाहिए। साथ ही व्यक्ति राज्य सरकार, केन्द्र सरकार, स्थानीय, स्वाशासित सरकार के अधीन कार्यरत होना चाहिए। कृषकों के सम्बंध में ऋण लेने के सम्बन्ध में यह आवश्यक है कि दो पहिया वाहन को क्रय करने के लिए उनके पास न्यूनतम 05 एकड़ एवं चार पहिया वाहन को क्रय करने के लिए न्यूनतम 10 एकड़ सिंचित कृषि भूमि होना चाहिए।

4. सेंट एम.पी. स्वरोजगार क्रेडिट कार्ड योजना – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा चलाई जाने वाली इस योजना के अन्तर्गत हितग्राही का 5000/- रू. परियोजना लागत के विरूद्ध 4750/- रूपये की अधिकविकर्ष सीमा 2 वर्ष हेतु व्यापार के लिए माल क्रय करने हेतु प्रदान की जाती है। उपरोक्त सीमा की समीक्षा वार्षिक आधार पर की जाएगी संचालन संतोषजनक पाए जाने पर 25000/- रूपये तक की सीमा को बढ़ाया जा सकता है।

5. सेंट एम.पी. आंगनवाड़ी योजना – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा चालाई जा रही इस योजना का प्रयोजन आकस्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सावधि ऋण योजना के अन्तर्गत ऋण की व्यवस्था कराना है। इस योजना के अन्तर्गत ऋण सुविधा का लाभ प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि आंगनवाड़ी के कार्यकर्ता मध्यप्रदेश शासन द्वारा विधिवत रूप से नियुक्त किए गये हैं। साथ ही कार्यकर्ता की कार्यकारिणी अवधि कम से कम 02 वर्ष हो चुकी है और सेवा अवधि कम से कम 02 वर्ष बची हो। इस योजना के अन्तर्गत 02 वर्ष से अधिक एवं 05 वर्ष तक सेवा अवधि वाले कर्मचारियों को 6 माह के सकल वेतन के बराबर या अधिकतम 15000/- रूपये जो दोनों में से कम हो तक की राशि का ऋण प्राप्त हो सकता है। 05 वर्ष से अधिक सेवा अवधि वाले कर्मचारियों को 02 माह के सकल वेतन के बराबर या अधिकतम 20000/-रू. जो दोनों में से कम हो ऋण के रूप में वित्ता सुविधा प्राप्त हो सकती है।

6. एम.पी. आवास ऋण योजना – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा अपनाई जाने वाली इस योजना का प्रयोजन आवास/फ्लेट के क्रय हेतु ऋण प्रदान करने के लिए किया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत वेतनभोगी कर्मचारी, स्वनियोजित व्यक्ति, आदि ऋण प्राप्त करने की पात्रता रखते हुए 10 लाख रूपये तक ऋण के रूप में राशि प्राप्त कर सकता है, और साथ ही 10 लाख रूपये से अधिक का ऋण प्राप्त करने के लिए आवेदक को पिछले दो वर्ष का इनकम टैक्स रिटर्न प्रस्तुत करना आवश्यक होगा।

7. सेंट एम.पी. शासकीय गोदाम योजना – इस योजना के अर्गत कृषकों को गोदामों में भंडारित माल की गोदाम रसीद के विरूद्ध मांग ऋण या ओवर ड्राफ्ट प्राप्त करने की पात्रता होगी। ऋण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की पहचान के.वाई.सी. मापदण्ड के तहत करते हुए एक परिवार के एक व्यक्ति को ऋण दिया जाएगा। इस योजना के अन्तर्गत दी जाने वाली राशि प्राप्ति कृषक व्यापारी को भंडारित माल की रसीद में दर्शाए गए मूल्य या समर्थन मूल्य जो कम से कम, दहलन के मामले में अधिकतम 60 प्रतिशत एवं अन्य अनाज के मामले में अधिकतम 70 प्रतिशत तक ऋण के रूप में राशि स्वीकृत होगी।

8. सेंट एम.पी. व्यवसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण हेतु ऋण योजना – इस योजना के अन्तर्गत सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा शैक्षणिक संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त करने एवं विकासशील कार्यों में उन्नति प्राप्त करने के लिए वित्ता की व्यवस्था ऋण के रूप में की जाती है ऋण की पात्रता के लिए आवश्यक है कि आवेदक भारतीय नागरिकता प्राप्त किये हो। साथ ही आवेदक को ऋण प्राप्त करने के लिए उसकी उम्र पर कोई शर्त लागू नहीं की गई है यदि आवेदक अवयस्क है तो उसके अभिभावक का ये दायित्व अपने उपर वहन करते हुए ऋण की राशि स्वीकार करते हुए आवेदक के वयस्क होने पर यह भार उस पर सौंप दिया जाएगा।

9. सेंट एम.पी. उपभोक्ता ऋण योजना – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा इस योजना के अन्तर्गत उपभोक्ता वस्तुओं को क्रय करने के लिए ऋण की व्यवस्था कराना होता है। सामान्यत: निम्न वस्तुओं को क्रय करने के लिए इस योजना के अन्तर्गत ऋणों की राशि का प्रबन्ध किया जाता है। टी.वी., फ्रिज, वाशिंग मशीन, लेपटाप, घेरलू, फर्नीचर, ए.सी. मशीन आदि। उपरोक्त योजना के अन्तर्गत उन्हीं व्यक्तियों या कर्मचारियों को ऋण की राशि उपलब्ध करायी जा सकती है जिनका सकल मासिक वेतन न्यूनतम 10000 रूपये हो। साथ ही आवेदक को सकल वेतन का 10 गुना या अधिकतम 1 लाख जो दोनों से कम हो ऋण की राशि के रूप में वितरित किया जा सकेगा।

10. पशुपालन ऋण योजना – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा पशुपालन हेतु विविध योजनाओं का निर्माण किया गया है। जिनके द्वारा लघु-सीमांत कृषक, भूमिहीन कृषक, कृषि में संलग्न होने के साथ-साथ पशुपालन का लाभ भी उठा सकता है। इनमें मुख्यत: निम्न योजनाओं को सम्मिलित किया गया है।

1. दुधारू पशुओं हेतु वित्ता पोषण। 2. बकरी पालन हेतु वित्तीय योजना आदि। इन योजनाओं में अधिकतम ऋण की राशि के आधार पर बकरी पालन के लिए 35000/- रूपये एवं अन्य पशु पालन के लिए 10000/- रूपये तक आवेदकों को ऋण की व्यवस्था की जाती है।

ऋण योजनाओं की विशेषताएँ – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा भिन्न-भिन्न कार्यो के समय-समय पर जो योजनाएं बनाई गई हैं उन्हें कुछ विशेष तथ्यों के आधार पर निर्मित किया गया है। जिनसे निम्न विशेषताएं प्रकट होती है।

1. केन्द्र सरकार अल्पावधि फसल ऋण के लिए सभी किसानों को प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत की दर से छूट देगी।
2. यदि किसान एक साल में ऋण की राशि का भुगतान न कर पाए तो उन्हें ब्याज की दर में 2 प्रतिशत से छूट मिलेगी।
3. ऋण की राशि का लाभ सभी प्रकार की फसलों के लिये किया जा सकेगा।
4. प्राकृतिक आपदा प्रभावित क्षेत्रों में कृषकों को ऋण राशि पर विशेष छूट दी जाएगी।

शोध परिकल्पना – शोध विषय का अध्ययन करने के लिए शोधार्थी द्वारा पूर्व से यह परिकल्पना की गई है कि सेन्ट्रल म.प्र. ग्रामीण बैंक द्वारा जिन योजनाओं को ग्रामीण विकास के लिए प्रचलन में लाया जा रहा है वे सार्थक सिद्ध होगी।

शोध अध्ययन की सीमाएं – सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा ग्रामीण विकास के लिए जिन योजनाओं को स्थापित किया गया है, उनके माध्यम से कृषकों या अन्य व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान करने में विभाग को अधिक o करने की संभावनाओं को नकारा नहीं जा सकता साथ ही शोधार्थी द्वारा यह भी देखा गया है कि योजनाओं की योग्यता एवं श्रेष्ठता को मापने के लिए अन्य बैंकों या संस्थाओं की योजनाओं को ध्यान में नहीं रखा गया है।

निष्कर्ष एंव सुझाव – शोध–पत्र के माध्यम से शोधार्थी द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास के साथ–साथ सम्पूर्ण देश की अर्थव्यवस्था पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। साथ ही शोधार्थी द्वारा यह सुझाव भी दिया जा सकता है कि सेन्ट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक द्वारा अन्य और लाभदायक योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सेंट्रल मध्यप्रदेश ग्रामीण बैंक के वार्षिक प्रतिवेदन।
2. रिसर्च मेथोडोलॉजी वीरेंद्र प्रकाश शर्मा पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
3. centralmpgraminbank.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Mahadji Shinde and North India

Prof. Dr. Sheela K. Umale (Chaple)* Dr. Shital R. Kadam**

Introduction - India with a crown of Himalaya on its head has a glorious history. It has been a land of scholars and great warriors. Maratha power played a very important role in Indian history and finally proved themselves decision markers of Indian politics. The history of that state and dynasties comprising the Maratha Empire constitutes. A major portion of the history of late medieval India. The rise of the Marathas led to the dilution of the castes system as a large numbers of lower castes, Brahmins, and other caste fought along with them. Shivaji was the Maratha aristocrat of the Bhosle who favored the Maratha empire. He reestablished Hindavi-swaraj and he was crowned as chhatrapati of the Maratha empire in 1674.[l1

Shivaji was first king in India whose vision encompassed the dev (god), desh (country) and dharma (natural law) Shivaji created an independent. Maratha empire wages war for 27 years with the mughal from 1681 to 1707, which became longest war in the history of India. Mughal emperors and Maratha power were going parallel in politics of India. Chattrapatishahu, a grandson of shivaji became Maratha ruler in 1707.

Emperor shivaji created the peshawa designation in India in order to more effectively delegates administrative duty during the growth of Maratha power. Peshwas were all Brahmins ministers who initially started as the chief executive of the king offer the coronation of shivaji in 1674. He appointed Trimbakpingle as the first peshwa.

National Conference in History on 'Influence of the Marathas in North India : Political, Socio-economic & Cultural Aspects"

In 1707 ChatrapatiShahubecame ruler of Maratha kingdom at the time Kulkarhi followed by BalajiVishwanath was on peslawas post and this was remarkable and very important for Maratha history because after the death of shahupeshwas became the defacto leaders of Maratha empire from 1749 to 1761 while Shivaji successors continued as nominal ruler from their base in Satara. During regime of shahuRanujibhosle expanded empire in east, Dhabhade in west, PeshawaBajirao& his there chief Pawar (Dhar) Holkar (Indore) and Scindia (Gwalior) expanded in north. These all houses become hereditary thereby undermining kings authority in due course of time. After the battle PanipatMadhavraoPeshawareinstalled the Maratha authority north India. In a bid to effectively manage the large empire semi- authonomy was given to strongest of knight. Which empire MahadjiScindia was the ruler of state of Gwalior in center India created a confidency of Maratha states. They Become know as Gaeikwad of Baroda, the Holkarsof Indore, the Scidiasof Gwalior Ujjain and Bhonsale of Nagpur etc.

Thus the semi autonomous Maratha states came into being in far flung region of the empire. The empire resulted in the voluntary relocated of sulstantial numbers of Maratha , outside, across a big part of out of these powerful knights of peshawa empire MahadjiScindia was the ruler of state of Gwalior in center India. He took full advantage of the system of neutrality persued by the British to resurrect Maratha power over northen India. He was assisted by benoit de boigre who increased Scindia regular forces to three brigades, which these troops Scindia became a power in Northen India.

Aften the growth in power of feudal lords like malwasardars, landloard of bundelkahnd and Rajputana kingdom of rajsthan, they refused to pay the tribes to MahadjiScindia indirectly Maratha power & he sent his army conquer the state swan as Bhopal, Datiya, Chanderi,NarwanSalbaigohad etc. From 1745 to 1761 Mahadji fought in around 50 including these in Malwa, Rajputana and hard, Doob, Rahilkahnd, delhi and in the panipat. Among the complaining which adjl assisted, the notabl ones include the ones at chandravatiGanj (1746) fatehabad (1746), badisadri(1747)

Marwar(1747) himatnagar (1748). The army of madhavraoholkar joined the army to bring all on Rajput lates under Maratha suzerainty as directly by the peshawaunder this campaign several city states were added to Maratha empire. Such as medtya, Ratnagarh, lalgarh, Bikaner, laswari, lachhamanghr, kumher, and degg and the state with territory of Taipan and Jodhpur agreed to become vassls of the Maratha empire. All the jay states except of the Bhratpur and vijaynagar too were conquered.[121]

Maratha which was under mughal rule was captured by MahadjiScindia in 1755. In January 1758 Mahadji established Gwalior as his head quarters. Jagappashinde

*Head and Associate Professor, V.N.G.I.A.S.S., Nagpur (Maharashtra) INDIA
** Research Scholar, RTMNU, Nagpur (Maharashtra) INDIA

the head of Shinde family was murdered in his own house and was succed by his son Jankoji. In 1761 the shindes joined peshawa's army lid by sadashivraobhau against the afgan force of ahmad shah at the thired battle of panipat. MahadjiScindia was the next successor in line ascended as the ruler of Gwalior state.

In 1761 MahadjiScindia too had fought at panipat and made a hair breadth escape from the rought of the Maratha army. He suffered a serious wound in his leg, which left him with a limp for the just of his like. When the Maratha army crossed the narmada, the jatNawal Singh of Bhartpur apposed them, however in the battle on 6 thapril 1770 MahadjiScindia defeated him and Maratha supremacy over the north was reestablished.

MahadjiScindia provided military assistance to the peshwas against the Maratha army of Scindia reinstated the Mughl emperor Shah Alam II on this throne at Delhi, Receiving in return the title of DeputVakil- ul-mutlaq or vice regent of emperor, in 1784 that'ofVakil-ul-mutlaq being at his request conferred on the peshwa his master, as he was pleased to designate him.[1^]

By the month of June 1780, MahadjiScindia had taken a clear decision to go back to Malwa and stay at Ujjain. Mahadji wrote to Nana, end of July 1780, that if, in spite of his presence being so necessary in Malwa, the latter wanted him to go to Poona he would do so but, in that case, Malwa would certainly be lost by them. If MalvEa, was lost, tho military operations of the Maratha State were bound to be seriously jeopardised.[23]MahadjiScindia was conscious of the supreme importance of not only clearing Malwa of the enemy but of blocking it completely to all his future attempts at trespassing through it.

"If I come to the Deccan", wrote MahadjiScindia to Nana, "there will be no check for the English anywhere. They will surely reach the Narbada by Dashera, capturing all the provinces that come in their way. This will surely , encourage them to move still further." The English were, undoubtedly, making the fullest use of the northern route. Towards the end of May,_1780, the entire English army was reorganised.

Major Camac, proceeded towards Gwalior, the capital of MahadjiScindia's northern teritories—the idea being 'to bring the war home to his interests and thus 'induce him to be an equal solicitor for peace to which at this time he appeared to be the only impediment., The English now, possibly encouraged by MahadjiScindia inactivity, decided to adopt a more positive policy in Malwa. In the wake of this decision came the English capture of the fort of Gwalior, by treachery, on August 4, 1780.

The loss of Gwalior, in such a sudden and unexpected way, was bound to be a severe blow to the Maratha power in general and to MahadjiScindia's prestige in particular. In 1780, Marathas appeared surrounded by difficulties from all sides.

In the face of this growing crisis for the Mara-tha State, Mahadji reiterated his policies with , greater firmness.- In a letter to Nana, on August / 13, 1780, MahadjiScindia wrote that there were three major fronts on which the Marathas had to organise their war against the English—in the Konkan, in Khandesh and Gujrat, and in Malwa.

He himself was to be made responsible for malwa. Mahadji on the other hand, looked at things from a "different if not broader point of view. He_ seems to have realised that with the establishment 'of the English power in Bengal and their alliance with the Nawab-Wazir of Awadh, the centre of political in India had shifted to the north .and that the only way to check the growth of the English power in north. India was to raise a strong barrier against their advance in Northern India.[141]

Nana strongly criticisedMahadji entire policy in Malwa as completely in-effective. He was neither able to drive the English out of Malwa nor to bring the Mughal Emperor under a closer alliance. Mahadji, in the summer of 1781, had clearly been reduced 'to think in terms of a purely defensive strategy.

Many of principle feudal lords of the emperor refuse to pay tribute to Scindia. Scindia launched an expedition against the Raja of Jaipur but withdrawl after battle of Lalsot in 1787.

In 1788 Scindia army defeated Ismail Beg, a Mughal noble, who resistate Maratha. Afghan Chief Ghulam Kadir's took over Delhi and deposed and blined the emeror Shah Alam Placing a puppet on Delhi throne. Scindia intervened, taking possession of Delhi on October 2nd restoring shah AlamMahadjiScindia sent forces to Jaipur and Marwar in 1790.

Appointment as Vakil-Ul-MutlaqMahadji faced a lot of problem. Other Marathi knights had a negative thought about him. Secondly economic condition was not very well to cover all these things Mahadji took interest in some conquests.

On 27th March 1784 MahadjiScindia won fort of Agra and then in November 1784 fort of Aligarh was under Maratha Control. In the same year Mahadji won Radhogarh and Bundelkhand also.

At that time Pune was center of Maratha power and Britishers appointed a political agent in Puna Court.[131]

Ultimate aim of MahadjiScindia was Maratha welfare only and at that time MahadjiScindia was not only strongest in Maratha Emperor but also in whole India, who was able to faced English power.

It is fact that when whole India was directly or indirectly under the influence of Britishers only MahadjiScindia was maintained Maratha supremacy which was surrounded by English enemy. Mahadji attacked Jaipur in 1787 due to some reasons Mahadji was uneasy and got back. Actually it was clever trick, that was played by MahadjiScindia. After some time in 1790 War of Patan was there and concluding war of Medta was there. MahadjiScindia won both battles and established Maratha supremacy over Rajput.

Mahadji Scindia completed an incomplete work of establishment of Marahta power in with secondly. He tried

to success whipful the weak image of Maratha power after defect in Illrd battle of Panipat thirdly the art success in Establishment of Maratha power over Rajput.

Scindia successfully exerted this influence. De brignedefected the forces of holkent at lakheri on Lakheri on 1st June 1793. MahadjiScindia was now at the zenith of his power, when all his schemes for further arragadizement were cut short by his sudden death in 1794 at waowri near pune.

Thus we conclude that MahadjiScindia was a unique character of Indian history. We definitely influenced north India and made Maratha power most glorious at that time.

References :-

1. Shivaji and his times, Jadunath Sarkar, Publication - Orient Longman Ltd. 1952, pp 160.
2. The great Maratha MahadjiScindia, N. G. Rathod, google books, book.google.co.in/retrieved/2012-05-25.
3. History of the Maratha's, Vol. II, James Grant Duff, Low Price Publications, 1863, pp. 344.
4. A study in Maratha Diplomacy, S. P. Verma, Educational Publishers, 1956, pp 241.
5. A study in Maratha Diplomacy, S. P. Verma, Educational Publishers, 1956, pp 391.

****

New Trends In History- With Special Reference To Tourism

Prof. Dr. Ashok N. Bhorjar*

Abstract - Education has been understood so long as the art and science of teaching the learners. Teaching is one of the main components in education planning. Education in humanities and social science provides graduates with essentialskills. Itincludes literature,philosophy, politics,history etc. Over thelast 10 year and so, history as an academic discipline has become stepped in controversy and introspection. Rapid changes of modern world has caused the higher education system to face a great variety of challenges. So innovative and new trends in teaching of history and tourism are required. ICT assist teaching methods,Augmented reality,state of art technology, field trip, participated method, manual vs module concept are some new trends in teaching of history & tourism. But innovative new trends are not a quick fix.Technologicalinnovativeare partof education but only the innovations that come with solid teaching practices will stand the last of time.

Introduction - Education has been understood so long as the art and science of teaching/ leading the learners with students as the center. Learning is a dynamic process that aims at learningbehavioral changes (In terms of under-standing, attitude and skill) on thepupils.

Teaching is one of the main components in educational planning which is a key factorin conducting educational plans. Despite the importance of good teaching, the outcomes are far from ideal.A good teachingmethod helps the student to question their preconceptions and motivates them to learn, by putting them in situation in which they come to see themselves as the authors of answer, as theagents of responsibility for change.[1]

It is supposed that there is most important role of teachesin higher education to become more involved in the regulation ofteaching rules and follow four ECES of effective teaching(outcomes, clarity, enthusiasm and engagement). The fourECES representa consolidatedway ofthinking as itinfluences the product (Student).[2] To bring effective teaching learning environment, implementation of various appropriate teaching methods are anindispensable agendum.Simonteneously higher education has to accept some new trends in teaching and learning of history and tourism.

Education in humanities and social science provides graduates with essentialskill that stay with them throughout their personal and professional life.Teachers should try to develop critical thinking, analytical, logical and presentation skills in students throughout the course of their degrees.Thehumanities as a subject is an academic disciplinewhich deals with the study of human creation & condition.Utilizing methodologies that are usually analytical, critical or speculative.Humanities includes literature, philosophy, politics, history etc.Since human have been able, if we concentrate on history, we found that the study of history in very important as it allowsus to understand our present.[3]Itmakes us able to access tothe full wealth of human experience and enhanced capacity forinformed citizenship, critical thinking and simple awareness.[4]Winston Churchill once said “A nation that forgets its past has no future.”[5]

Over the last 10 year and so, history as an academic discipline has become steeped in controversy and introspection. Additional areas ofinterest haveopened up,freshprospective and approaches have been offered and new teaching and learning strategies have been advocated. There has been an increasing emphasis on producing well qualified graduates equipped with the skill, knowledge and attitude to cope with the changing demands of the world of work.[6]

The historical and culturalheritage playshuge role in development of internal tourism. It providesopportunities for economic growth by providing job opportunities with leveling seasonable fluctuations. It not only bring income to the region but provide ground to local people to be proud ofthe unique heritage knowledge of history. History and tourism together provide a beneficialaspect of employment to students. So special programmes (jog oriented) and new trends are expected in teaching of history and tourism.

Rapid changes of modern world has caused thehigher education system to face a great variety of challenges. Therefore new trends in teaching are required.

1. Information and communication technologies (ICT) playan important role in education today. New media

*Head (History) Late N.A. Deshmukh College, Chandur Bazaar, Distt. Amravati (Maharashtra) INDIA

enrich teaching practices with interactivity, promote communication and feedback.ICT is changing the face of education and creating new opportunities for improvement inquality of teaching and learning.[7]

2. Technology nowadays offering teachers many possibilities to attract students and innovatively offers them learning subject not only this bot students can also directly involves themselves in to interesting experiments. Augmented reality has great potentiality as a means of highlighting interesting features or bringing history to life.
3. Augmented reality is one of the newest technologies, which offers new ways how to educate effectively and attractively. It is a way displaying digital content in an image of the real world and its possible interaction with environment and user.In teaching of history and tourism the use of augmented reality is destined for out door use with a high degree of mobility of the user. Thees sence of augmented reality is to display digital content in real images.Every thing happens with a touch screen of mobile device that captures the true picture by the front web camera. The location of digital content must match the actual content as closely as possible. These technologies include front web camera, global positioning system, internet facility etc.Students use smartphones and tablets to communicate with their peers throughout the lecture.[8]
4. Tourism and education get a new dimension in learning by teleconferencing, video conferencing, etc. it has great potential as means of highlighting interesting features and bringing history in life via multimedia content in mobile device.
5. Manual vs module: In theimplementation of new trends some educational institutions practice BYOD (Bring Your Own Device) and facilitate them by providing free of cost Wi-Fi.[9]
6. In the same way many libraries are digitalized and e-learning places are created.
7. ATAL LABORATORY is best example of providing 3D-4D images of studentsimaginations and creativity.
8. Students driven learning is appreciated.Teachers are increasingly becoming facilitators rather them the chiefprotagonists.It isnot just what youknow?But rather,how youknow it? And what you are going to dowithdata?
9. Training teachers with new technologies is a new start in new trend.
10. Concept ofinternationalization of education provides a platform to students where they come to know about another nation's culture, history etc.
11. Few trends in teaching history and tourism offers new and better tools to supportdyslexic students.Computer based assistive technologies such as text to speech programme, predicative spellers and phoenix basedmethods make is easy to understand.
12. Developing "State of Art Technology"is another trend which reflects a specific people with specific mindset.It has become a tool to increase competitiveness.
13. Fieldtrip is preferred as most interesting method ofteaching for students to learntourism courses followed by discussions, problem solving and brain storming.[10]
14. Participative method of case study education helps to cultivate studentsindependent thinking, independent analysis and the ability to solve practical problems.
15. Innovative teaching and learning methodologies, problem basedlearning, workshops, training camps, internship etc. are some more out of new trends.
16. The open book project is simplest way to engage students in leisure time.

Conclusion - Any innovative and learning method is not a quick fix oruniversal remedy. It cannot replace a traditional teachingmethodology in education butrather supports it. Education for future requires that we explore as many varieties of models and teaching methodologies as possible. We need to remain cognisant of the culturally and other specific needs of our students.

Technological innovations are part of education but only the innovations that come with solid teaching practices will stand the last of time.

References :-

1. Journal of Effective Teaching, Volume-5, No-2, 2002, Retrieved. www.uncw.edu, 9.44 P.M., 7thFeb.19.
2. Walls. E.B., "The Four ECES of Effective Teaching" 1999.
3. Goh, Chor Boon, "The Relevance of History in our Lives Today", Published by Institute of Education, Singapore.
4. Article –"Why Study History?"The American Historical Association, Proceeding, 1998.
5. Do Mnique Euright (ed.)"The Wicked Wit of Winston Chaurchill", Michal OMora Books Limited, London, 2001
6. Geoff Timmings, Vermon Kinealy, "Teaching and Learning History",Sage Publishing, 2005.
7. Sabarwal Rajiv, "Role of ICT's in Travel and Tourism",Pacific Publication, Delhi, 2011.
8. Jiri Kysela & Pavla Storkova, "Procedia-Social and Behavioral Sciences",Published Elsevir Ltd., 2015.
9. Gerry Cadiz, "Instructional Materials Development Manual", Eastern VisayasState University, Taclobancity.
10. ChiaSuanChong,"TenTrends and Innovation in Teaching", 2018.

****

उदयपुरवाटी में जल स्वावलम्बन अभियान की वस्तु स्थिति

डॉ. जयदेव प्रसाद शर्मा *

प्रस्तावना - पृथ्वी पर विद्यमान सभी मण्डलों में सबसे महत्वपूर्ण घटक जल मण्डल है। यह एक प्रमुख प्राकृतिक संसाधन है प्राचीन सभ्यताओं का उदभव भी वहीं मिला, जहां जल स्रेत उपलब्ध था। अत: कह सकते है कि मनुष्य जीवन का अतित्व जल संसाधन पर आश्रित है इसके बिना जीवन जीने की कल्पना तक भी नहीं की जा सकती है। मानव जाति ने आज जितना अधिक विकास करता है उससे उतनी ही अधिक पानी की जरुरत होती है। जिससे पानी की समस्या आये दिन बढ़ती जाती है अत: जल को बचाना उतना ही आवश्यक है जितना अपने स्वयं की जिन्दगी को । मानव इस संसाधन का उपयोग भिन्न भिन्न कार्यो में करता आ रहा है। वैसे देखा जाये तो पृथ्वी स्वयं एक जलीय ग्रह है जिसे जिसे जल ग्रह के नाम से संबोधित किया जाता है यहां पर 71 प्रतिशत तक जल पाया जाता है। लेकिन फिर भी आज जल संकट सामने खड़ा है क्योंकि यह महासागरों, सागरों व अन्य जल स्त्रोंतों में उपलब्ध होने के अलावा मनुष्य पानी को स्वतंत्र रुप से काम में ले रहा है। लेकिन जब मानव जाति के प्रत्येक या आम आदमी को जल की एक-एक बूंद की कीमत पता चलेगी चले तो आने वाले भावी पीढी जल संकट युद्ध से पहले ही इसके संरक्षण के द्वारा बचा जा सकता है।

अभियान की रुपरेखा :- राज्य सरकार द्वारा चलायी गयी यह योजना है जो कि चतुर्थ वर्षीय कार्यक्रम है प्रत्येक हिस्से में एक-एक चरण को लेते हुए कुल चार चरणों में इस अभियान को पूरा किया जाने का मकसद है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत न्यूनतम लागत में जल संग्रहण ढांचे को बनाना है। इसके तहत पूरे ग्रामों को जल के लिए स्वयं आश्रित बनाना है। तथा इसमें सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक समूहों एवं जनजातियों तथा आदि के सहयोग से खर्च वहन किया जायेगा। और इस योजना द्वारा नागरिको एवं ग्रामीणों की भागीदारी को निरुपित किया गया है। इसके अन्तर्गत - कोई भी ग्रमीण व नगरीय लोग या कोई भी मानवजाति ऑन-लाईन पॉर्टल के माध्यम से अपनी श्रृद्धानुसार कितना भी दान या गुप्तदान कर सकता है।

भारत के सबसे बड़े राज्य राजस्थान जो कि भौगोलिक विषमताओं वाला प्रदेश है। इसमें विश्व की सबसे प्राचीनतम अरावली पर्वत श्रेणी को विस्तार है यहां पर इस श्रेणी की दिशा दक्षिण पश्चिम से उत्तर-पूर्व होने के कारण वर्षा काल में मानसूनी हवाएं इसके समानान्तर चलती है। इस कारण प्रदेश में वर्षा न के बराबर होती है। यहीं वजह प्रदेश में सूखे का कारण है। अगर अरावली श्रेणी की दिशा पश्चिम-पूर्व से उत्तर-पूर्व होती तो राजस्थान इतने शुष्कता का कारण नहीं बनता क्योंकि यह श्रेणी एक अवरोध का काम करती और यहां वर्षा पर्याप्त मात्रा में होती।लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है।

जैसे एक आदमी जो 60-70 की गति से चल रहा है और उसके पास बहुत सारा सामान (सिर पर, हाथ में तथा पीठ पर लदा हुआ है। यह इंसान इस गति से जब तक चलेगा तब तक सामने कोई अवरोधक नहीं हो जैसे ही उसके सामने कोई रुकावट आ जाती है तब उसका यह लदा हुआ सामान अवरोध से टकराकर नीचे गिर जाता है।

ठीक इसी प्रकार राज. में अरावली का दिशा के मानसूनी हवाएं इसके बराबर चलती है और वर्षा नहीं हो पाती है। लेकिन इस वर्षा का कम होना व जितनी वर्षा होती उतना वर्षा जल का सुग्रहण करना और वर्तमान जल संकअ से निजात पाना अभियान का प्रमुख लक्ष्य है।

उद्देश्य :- एम.जे.एस.ए. के मुख्य उद्देश्य निम्न है :-

1. इस अभियान के तहत प्रदेश को स्थायी जलवाला व जल समस्या से मुक्त वाला राज्य बनाना है।
2. 40 प्रतिशत वर्षा जल को सिंचाई के काम में लिया जाना है।
3. सिंचाई स्थलों को बढावा देने के लिए भिन्न-भिन्न विभागों के विभिन्न मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले स्त्रोतो के अभिसरण की सहायता से प्रभावी जल बचाव को सुनिश्चित करने के लिए किया गया है।
4. कृषि प्रारुप को बदलना।
5. भूमिगत जल स्तर को बढाना।
6. बांध, कुओं, नलकूप, जोहड़ आदि का जीर्णोद्धार करना।।
7. फसल उत्पादता में वृद्धि करना।
8. सभी ग्रामों को जल के लिए आत्म निर्भर बनाना है।
9. जल विभाजन की मुख्य धारा में धरातलीय पानी के बहाव को रोककर संग्रहण करना।
10. जल संग्रहण की विभिन्न विधियों से जल का संचयन करना।
11. ग्रामवासियों को जल बचाने के फायदे बताकर उनमें जागरुकता लाना......इत्यादि।

मुख्यमंत्री जल स्वावलम्बन योजना के चरण :- इस योजना को चार चरणों में पूरा करने का कार्यक्रम बनाया गया है जो कि अलग-अलग जिलों के भिन्न-भिन्न गांवों तथा शहरों में जल बचाव से संबंधित विभिन्न प्रकार के कार्य किये गये जिससे काफी फायदा हुआ। इस अभियान के चरण निम्न प्रकार से हैं -

प्रथम चरण :-(27 .01 2016 - 30 .06. 2016 तक) राजस्थान में मिशन की पहली सीढी की शुरुवात 27.01.2016 बुधवार को माननीया मुख्यमंत्री महोद्या श्रीमती राजे ने झालावाड़ की सुनेल पंचायत के गर्दनखेड़ी ग्राम से और जिलें के आठ पंचायत समितियों 54 ग्राम पंचायतों के 180 गांवों में की गई। इस चरण में राज्य की 295 तालुका के 3929 गांवों को

* सहायक आचार्य, श्री जे.जे.टी. विश्वविद्यालय विद्यानगरी, झुन्झुनू (राजस्थान) भारत

चुना गया। योजना के इस चरण का कुल खर्चा 1270 करोड़ रुपये खर्चा हुआ जिसमें 94000 हजार निर्माण कार्य को पूरा किया गया।

द्वितीय चरण :-(09 .12. 2016 - 8 .12. 2017 तक) राजस्थान में मुख्यमंत्री जल स्वावलम्बन की दूसरी सीढी का आरम्भ तारीख 09दिसम्बर 2016 को किया गया। इसमें 4200 नवीन ग्रामों एवं 66 शहरों अर्थात राज्य के हर जिलें में 2 शहरों को सम्मिलित किया गया ।

तृतीय चरण :- (09 .12 .2017 - 8 .12. 2018 तक) राजस्थान में मुख्यमंत्री जल स्वावलम्बन योजना के तीसरे चरण का शुभारम्भ 09 दिसम्बर 2017 को हुआ। इसकें अन्तर्गत 4240 ग्रामो को शामिल किया गया। मरुस्थलीय व अर्द्ध- मरुस्थलीय क्षेत्रों में कार्य किया गया।

चतुर्थ चरण :- 03 .10 .2018 : यह चरण सी.एम. वसुन्धरा राजे द्वारा 3 अक्टूबर 2018 को आरम्भ किया गया। इसमें राज्य के सभी जिलों के 295 पंचायत समितियों के 4000 गावों को समाविष्ट किया गया।

अभियान के लाभ :- इस अभियान के दौरान इसके विभिन्न चरणों में किए गए जल बचाव के कार्यो से लाभ प्राप्त हुए जो अग्रलिखित है:-

1. अंशतह धरतलीय जल के साधनों में जल जमाव।
2. भूमिगत जल स्तर में वृद्धि।
3. जल प्रवाह से माटी के उपरी परत के कटाव या अपरदन को रोकना, जिससे मृदा की नमी में बढोतरी।
4. खेतों की फसल उपजों में बढ़त हुई।
5. पहाडी़ क्षेत्रों में हरियाली में बढोतरी।
6. भू जल में 4.66 फुट की वृद्धि। 63 प्रतिशत हैण्ड़पम्पों तथा 20 प्रतिशत नलकूपों के पानी में वृद्धि हुई।

अध्ययन की आवश्यकता :- पिछलें कई सालों में देश में जल सरक्षण के क्षेत्र में कई कार्य किये गये एवं उनको लगातार आगे की और अग्रसर किया जा रहा है। भविष्य में जल संकट आज की एक चुनौती के रूप में सामने आ रहा है जो कि भविष्य में सत्य होती दिखाई दे रही है। दिखाई दे रहा है। जिसके परिणाम को जांचने के लिए यह अनुसंधान जरुरी है। भूमिगत जल के अतिदोहन के कारण यह एक विकराल समसया बनती जा रही है जबकि दूसरी तरफ अतिवृष्टि के कारण भी आम आदमी मुसीबतों का सामना कर रहा है। अत: इस पर अनुसंधाना करना बहुत ही जरुरी है।

मरुधरा में भौगोलिक विषमताओं के कारण औसत वार्षिक वर्षा 25 सेमी. से कम होती है एवं वो भी अनिश्चित एवं अनियमित तथा कभी समय से पहले तथा कभी समय के बाद होती है। तथा बढ़ती जनसंख्या के कारण जल का अतिदोहन होना और इन्हीं समस्त कारणों से आज जल स्तर दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है। राजस्थान के बहुत सारे क्षेत्रों में आज जल संकट मुंह खोलकर खड़ा हुआ है। इसी प्रकार शेखावाटी के झुन्झुनू में अध्ययन क्षेत्र में आज यह पानी की समस्यों से उतना ही जुझ रहा है हालांकि सरकार द्वारा जल बचाव एवं जल का उचित उपयोग करने के लिए बहूत सारे कार्यक्रम चलाये जा रहे है। लंकिन यहां पर उनका प्रभाव बहुत ही कम व आख्यान रुप में ही है। अत: वर्तमान की इन भयानक समस्याओं से उभरने के लिए शोध किया जाना आवश्यक है।

उदयपुरवाटी तहसील में मुख्य मार्गो एवं अन्य रास्तों पर पाईप लाईनो से पानी का रिसाव एवं वर्षा जल का व्यर्थ बहना आदि समस्याएं सामने आ रही है। दूसरी और सभी वार्डो में पेयजल की भयंकर समस्या हो रही है, । रोजाना काम में लेने वाले पानी को कई जगहों पर नल के द्वारा खुला छोड़कर व्यर्थ बहाया जाता है। यदि इसी जल को आवश्यकता के अनुसार उपयोग लेने के बाद बंद कर दे तो जल का अप० भी नहीं होंगा तथा भविष्य में जल की कमी भी नहीं होगी। इन सभी समस्याओं से निजात पाने के लिए तथा जल संसाधन की महत्वता बताकर एवं उचित उपयोग एवं जल बचाव ही शोध अध्ययन की आवश्यकता है।

अध्ययन का उद्देश्य :- संसार में किये जाने वाले शोध कभी भी बिना कारण नहीं किये जाते है इनका मकसद मानव हित में काम में करना है। ये कार्य बहुत ही कठिन होते है। इनमें बहुत सारा जन धन तथा वक्त खर्च होता है। पृथ्वी पर शुद्ध जल सीमित है तथा इसका बहुत अधिक मात्रा में दोहन हो रहा है। यदि वक्त पर हम जागरुक नहीं हुए तो वे दिन ज्यादा दूर नहीं जब पेयजल के लिए हमें युद्ध करना पड़ेगा। कृषि, औद्योगिक एवं तीव्रगति से बढ़ती जनसंख्या व कई वजहों से जहाँ एक ओर पानी की मांग बढ़ रही है वहाँ दूसरी तरफ बरसात की कमी, जल का दोहन से जल संसाधनों जल की मात्रा कम होती जा रही है। साराशंत: शोध में यह अनुसंधान निम्न उद्देश्यों की पूरा करने के लिए किया जा रहा है:-

1. इस अध्ययन का उद्देश्य उदयपुरवाटी तहसील में स्थलीय एवं भूमिगत जल के भिन्न-भिन्न स्त्रोतो की उपलब्धिा एवं उनके उपयोग के लिए उचित एवं सहीं तरीकों का चयन करना एवं इसके लिए न्यूनतम जल संरक्षण क्षेत्र और अधिकतम जल संसाधनों की जगहों की जानकारी एकत्रित करना जिसस इन स्त्रोतों से फिजूल खर्च होने वाले पानी को रोका जा सके।
2. जल संरक्षण विकास की योजनाए जो बनी हुई है उनके प्रति जन जागरुक हो एवं नई योजना बनाना।
3. जल से संबंधित वातावरणीय मुसीबतों का अध्ययन करना।
4. जल के रिसाव को रोकना।
5. सिंचाई के माध्यम से (जैसे क्यारी धोरा से) सिंचाई से व्यर्थ होने वाले जल को बचाना
6. मुख्यमंत्री जलस्वावलम्बन अभियान के फायदे एवं लाभ का अध्ययन करना।
7. धरातल के स्वभाव के अनुसार ऐसी फसल कार्यक्रम तैयार करना जिससे ज्यादा से ज्यादा उपज की प्राप्ति हो।
8. सूखे पर नियंत्रण।
9. पेयजल की समस्या को दूर कर स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति करना।
10. भविष्य में होने वाली/भावी जल युद्ध से बचाना।
11. तहसील में जल की मात्रा निरीक्षण कर सही तरीके से पानी उपयोग की भविष्यात्मक रचना बनाना।
12. भूमिगत गिरते पानी के स्तर को फिर से बढाने वाली तकनीकों की जानकारी बताना।

इस प्रकार उदयपुरवाटी शोधार्थी द्वारा किये गये अध्ययन क्षेत्र पर शोध का उद्देश्य जल संकट से निजात पाने के लिये हमें जल के प्रति मानसिकता में बदलाव लाकर हमारे अन्दर जलयोग वाला मानवीय व्यवहार उत्पन्न करना है।

सुझाव :-शोधार्थी द्वारा किए गये अध्ययन क्षेत्र में शोध कार्य के दौरान पायी समस्याओं को निम्न सुझावों के माध्यम से बचा जा सकता है-

1. प्रशासनिक भागीदारी :- सरकारी एवं गैर सरकारी विभागीय अधिकारियों को भी अपने कार्य के प्रति सचेत रहना होगा क्योंकि जैसे जल पर चर्चा करें तो जल स्त्रोतों की समय -समय सफाई करवाना (मुख्य रुप से पेयजल की) देखरेख एवं जहां पर जल रिसाव या पाईप टूटा हुआ हो तो

तुरन्त ही व्यर्थ जल बहने से रोकना व समय पर सहीं करवाना आदि बातों का ध्यान रखना । लेकिन वर्तमान में ये अपनी मनमर्जी चलाते है। काफी दिनों तक पाईपों के माध्यम एवं नलकूपों के माध्यम से जल रिसाव होकर बहूत सारा पानी बिना किसी उपयोग के ही बह जाता है।

2. मोनिटरिंग :- निश्चित समय की अवधि तक लगातार जांच पडताल कर या उसे लेखाबद्ध करना/निगरानी एक प्रक्रिया है जो प्रदर्शन को बेहतर और परिणाम प्राप्त करने में सहायता करता है इसका उद्देश्य प्रक्षेपण करना तथा परिणामों और प्रभाव के आज और भविष्य के प्रबंध में सुधार करना है। इस प्रकार निरीक्षण करने वाला सच्चा और ईमानदार एवं अपने कार्य के प्रति जागरुक रहने वाला होना चाहिए।

3. जन जागरुकता :- वास्तविक तौर पर लोगों को जागरुक करने की सबसे ज्यादा जरुरत है। जन जागरुक के अभाव में कोई भी योजना को सफलता तक इनके सहयोग के बिना नहीं पहुचांया जा सकता।

4. अनूकुलम योजनाएं :-सरकार द्वारा बनायी जाने वाली योजनाएं लोगों की आवश्यकतानुसार बननी चाहिए। ताकि आजन भी उसमें शामिल हो सकें।

योजनाओं का क्रियान्वयन :- सरकार द्वारा बनायी गई परियोजनाए जिसमें पुरा कार्य बजट पारित हो जाता है। लेकिन उस राशि के अनुसार कार्य नहीं करवाया जाता है वह कार्य केवल फाईलों तक ही पूरा होता है। और अंशतह ही काम होता है। इसलिए शोधार्थी का सुझाव है कि अख्यान रुप से कार्य हांकर वास्तविकता मेें होना।

जल संसाधनों को पूजनीयता :- देश में जन्म से लेकर मृत्यु तक के कार्य स्त्रोतों के साथ ही किये जाते है। इसे धार्मिता से लोगोें को वास्तविक स्थिति व भविष्य में जल संकट एक चुनौती मानकर साकार द्वारा,गैर सरकारी अन्य विभागों को समाझाना। जिस प्रकार यूरोप महाद्वीप में एक राष्ट्र इजराइल में जल को व्यर्थ बहाने पर अर्थात बर्बाद करने पर व्यक्ति को सजा दी जाती है। इसके अलावा फलोरिडा में जल का पुनर्चक्रण नहीं करने पर इंसान को जुर्माना भरना पड़ता है।स्वय। इसी तरह यहां पर भी यह कानून का प्रावधान हो जाये कि व्यर्थ पानी बहानें पर सजा का प्रावधान हो तो काफी हद तक इस समस्या से निकल सकते है। प्रत्येक विद्यालय या सरकारी हिवभाग में जल का पुन:चकर्ण प्लांट होने चाहिए। जल का रिसाइकिल तीन प्रकार से होता है-

1. प्राइमरी रिसाइकिल ।
2. सैकण्डरी पुन:चकर्ण।
3. तृतीय पुन:चकर्ण।

अपना जल बचाव तो अपना कल बचाव अब अपने हाथ में।

1. बूंद-बूंद की कीमत को आम जनता तक फिल्मों के माध्यम /नाटक/ प्रदर्शन के माध्यम से बताया जाये तो इनमें जरुर जागरुकता पैदा होगी।
2. प्रत्येक गांव, शहर हर खेत प्रत्येक घर का व्यर्थ बहता वर्षा का जल वही का वहीं संग्रहित कर लिया जो काफी हद तक इससे बचा सकता है।
3. सरकार द्वारा बहुत सारी योजनाएं, अभियान, नीतियां, कार्यक्रम तैयार किये जा रहे है उनमें सरकारी के साथ गैर सरकारी केसाथ वहां के सभी लोगों को शामिल किया जाना चाहिए ताकि ये सारी नीतियां जन सहयोग के माध्यम से सही परिणाम तक पहुंच सके।
4. इक्कसवी जो जल की सदी के रुप में है। जल प्रबंधन को बहुआयामी के रुप में अपनाना चाहिए।
5. इस प्रकार जल संसाधन जीने के लिए महत्वपूर्ण मानव के काम में आने वाला तत्व है।

इसलिए शोधार्थी का मुख्य जल को बचाव के लिए सरकार भले ही कितनी भी नितियां बनाये लेकिन जब हम इसको बचाने की नीति अपने घर से शुरु नहीं करेगें तो ये बनी हुई नीतियां सफल नहीं हो पायेगी।

वास्तव में सम्पूर्ण तरीके से लोगों को जागरुक कर इसके प्रति वचनों में बांधकर इस भावी युद्ध से बचा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुरचरण सिंह एवं जगदीयश सिंह (2013) 'जल संभरण, सफाई एवं पर्यावरण इंजीनियरी', प्रकाशक: स्टैण्डर्ड पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स 1705-ठ, नई सड़क, दिल्ली -110006
2. डॉ. सविन्द्र सिंह (2002) 'भौतिक भूगोल' प्रकाशक: वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
3. डॉ. धर्मेन्द्र सिंह (2012) 'जल संरक्षण - आवश्यकता एवं उपाय', प्रकाशक - श्री गिर्राज प्रकाशन, राम भवन चौड़ा रास्ता, जयपुर
4. निधि मेहता (2013) 'जल संरक्षण के तरीके', प्रकाशक- स्वास्तिक पब्लिशर्स, जयपुर
5. डॉ. राम कुमार गुर्जर, डॉ. बी.सी. जाट (2007) 'संसाधन भूगोल' प्रकाशक- पंचशील प्रकाशन, जयपुर
6. श्री पी. एस. रंगवाला (2004) 'वाटर सप्लाई एण्ड सेनेटरी इंजीनियरिंग' प्रकाशक - चारोतर पब्लिशिंग हाउस, अमूल डेयरी के सामने, आनन्द (गुजरात), संस्करण -उन्नीसवाँ
7. डॉ. लाजपत राय भल्ला रिटार्यड प्रोफेसर ऑफ ज्योग्राफी (1985-2012) 'राजस्थान का भूगोल', प्रकाशक- कुलदीप पब्लिशिंग हाउस, जयपुर
8. बारलोव एम एवं क्लार्क टी, 'Blue Gold',इस पुस्तक में 21 वीं सदी में मानवीय क्रियाकलापों के कारण जल संसाधान की गुणवता में आई कमी की विस्तृत विवेचना की गई हैं।
9. पीटर पी. मॉलींगा की 'Water for food and Rural Development' नामक पुस्तक में द. एशिया के ग्रामीण क्षेत्रों में जल एवं भोज्य सामग्री के उपयोग के विकास की विवेचना की गई है।
10. डॉ. एस. पी. भारद्धाज, डॉ. रामबाबू, इ.जी.पी. जुयाल और डॉ. एस. के. ध्यानी की 'भूमि संरक्षण और जल समेट प्रबन्ध', नामक पुस्तक में देश के विभिन्न जलवायु प्रदेों में भूमि संरक्षण एवं जल समेट प्रबन्ध का विस्तृत विवेचना की गई हैं।
11. Chris Baroow - 'Water Resources and Agricultural Development in the Tropice', नामक पुस्तक में उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में जल एवं कृषि क्षेत्रों पर विशेष चर्चा की गई है।
12. एस. सी महनोत, पी. के सिंह एवं संजय मोटी ने 'Watershed Approches in Improving The Socio-economic States of Trible Area' में जल ग्रहण विकास द्वारा राज्य के जनजातीय भागों में जीवन सुधार पर अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।
13. डॉ. आर. के. गुर्जर ने 'Irrigation Impact on Desert Ecology' में पश्चिमी मरूस्थलीय पारिस्थितिकी दशाओं के प्रभावों का अध्ययन किया गया है।
14. जी. एस. नरवानी 'Community Water Management' में सामुदायिक रूप से जल ग्रहण प्रबन्धन पर विशेष विवेचना की।

15. डॉ. बी. सी. जाट ने 'Water Resource Geography'में जल संसाधन पर विशेष विवेचना की गई है।
16. जल ग्रहण विकास एवं मृदा संरक्षण विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर की 'बारानी खेती की राष्ट्रीय जलागम (जलग्रहण) विकास परियोजना (1996)' में राजस्थान राज्य के जलग्रहण विकास एवं मृदा संरक्षण क्षेत्रों पर विशेष विवेचना की।
17. 'Goutam Mahagandh"Ground Water Recharge' नामक पुस्तक में धरातलीय जल पुन: पूरण पर विशेष विवेचना की गई।
18. M.L.Gupta dh 'Urban Water Supply',नामक पुस्तक में नगरीय जल वितरण पर विशेष अध्ययन किया।
19. R.K. Gurjar (1995) us 'Geography of India Gandhi Cand Command Area' नामक पुस्तक में राजस्थान में इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना एवं जल वितरण का विशेष अध्ययन किया।
20. K.C.Kathuria dh "Watershed Phanning for optimum (अनुकूलतम) Utilization of Water में जलग्रहण योजना द्धारा जल की अनुकूलतम उपयोगिता पर विशेष अध्ययन किया गया।
21. डॉ. आर. एल. नौलखा ने 'प्रबन्ध के सिद्धान्त' में प्रबन्ध के नियोजन, समन्वय, संगठन, निर्देशन, अभिप्रेरण एवं नियन्त्रण का विशेष अध्ययन किया है।
22. गुरचरन सिंह एवं जगदीश सिंह के 'जल सम्भरण, सफाई एवं पर्यावरण इंजीनियरी' में जल संसाधन के स्त्रोत एवं उपयोग का विशेष अध्ययन किया गया है।
23. S.C. RANGWALA, K.S. RANGWALA & P.S. RANGWALA us 'WATER SUPPLY AND SANITARY ENGINEERING', जल संसाधान स्वच्छता पर विशेष अध्ययन किया है।
24. निधि मेहता ने 'जल संरक्षण के तरीके' में जल संरक्षण पर विशेष अध्ययन किया है।

****

Impact of Climate Change on Biodiversity in Uttarakhand

Dr. SumanLata Pandey*

Abstract - The world has realized the importance of being sensitive to the damage caused to the environment by climate change. While the impact of these changes to the health of humans is widely discussed, the impact of these changes on the flora and fauna around us is not always fully understood. The impact of these changes on the bio-diversity also tend to have an indirect impact on humans. Hence, these impacts need to be understood and studied to identify ways to prevent, or counter them.

Introduction - Uttarakhand, a hill state blessed with a rich plethora of biodiversity is blessed with the Himalayas and its surrounding valleys. The geography of Uttarakhand comprises of the Great, Middle and sub-Himalayas(Tariyal, 2017), with each of these boasting of their unique flora and fauna. The Great Himalayas have the snow-clad peaks, middle Himalayas have forests and fertile valleys in between, while the sub-Himalayan region consists of spindle-shaped valleys called duns. There are also areas of the foothills (Terais) which are heavily farmed.

The enmeshing of these diverse eco-systems makes the area very ecologically brittle and serves as an indicator of impending ecological damage in other parts of the region as well.

The Kedarnath disaster that happened in the early monsoons of 2013, was an outcome of the ignorance of the impact of climatic change on the ecosystem.

Environment and Indian Traditions - Indian Vedic tradition has multiple references to the environment, weather cycles, forces of nature, and related phenomena.

Vedic deities were elements of nature: Varuna, Indra, Mitra, Aditya and Maruts. Mountains, lakes, forests, trees and rivers were venerated and this reflects some level of awareness about their significance for human existence.(Sharma, 2009)

For projects leading to usage of natural resources, prayers were offered for nature's recovery. These traditions carried through the middle ages up until the modern era, and continue to be a part of Indian traditions even today. In the backdrop of these, the current generation also needs to uphold the practices that would preserve the environment.

To be able to manage these changes, it is of utmost importance to closely understand the impact that the changes in climate have on the environment. While, there has been enough literature on the direct physical impact of climate change in the quality of air, water, air, or soil; the present paper aims to go a step further and broadly understand the impact of these physical changes on the bio-diversity of our eco-systems with focus on the region of Uttarakhand.

Climate change in Uttarakhand: Trends and future projections - The annual mean temperature is forecasted to increase from 0.9 ± 0.6 to 0.6 ± 0.7 in the 2030s. This would be approximately 1.7 to 2.2 more than the average temperatures in the 1970s(Government of Uttarakhand, 2014). There is also an estimated increase in rainfall by 5-13% over the 1970s, with certain areas in Uttarakhand expected to experience a 50% increase(Government of Uttarakhand, 2014). This increase would result in higher erosion leading to sedimentation of river-systems covering the region.

The actual changes already observed in Uttarakhand have been at Pantnagar(Government of Uttarakhand, 2014) where the average temperature range has been reducing (increasing average minimum temperatures and reducing average maximum temperatures). Such changes have a direct impact on plants as their respiration rates are directly proportional to the minimum temperatures leading to lower food production.

Similarly, rainfall trends indicate a decrease in average annual rainfall in Almora along with a shift in the peak volume from July to August-September(Jain).

Snow cover data, is another factor important to Himalayan geography. This too, shows a declining trend of ~18% from 1990 to 1999(Government of Uttarakhand, 2014).

Overall, studies such as the Uttarakhand Action Plan for Climate Change reflect the following trends:

1. Over less, but more erratic rain
2. Lower water availability
3. Lower Winter rains
4. Higher frequency of intense rains
5. More pests and diseases
6. Higher temperatures
7. Shorter winters with warmer temperatures. (Government of Uttarakhand, 2014)

Impacts of these Climatic Changes - The impact from

***Assistant Professor (Chemistry) DAV (PG) College, Dehradun (Uttarakhand) INDIA**

these changes can be categorized as follows:
1. Direct Impact
2. Indirect Impact.

The direct impact is the affect these changes on the health and biological systems of different species, while the indirect impacts are the result of these direct changes which further aggravate the direct impacts. These direct impacts can be studied broadly under the following heads:
1. Impact on the agricultural eco-systems
2. Impact on the forest eco-systems

Direct Impact - The direct impact of these changes are those affecting reproduction cycles, adaptability, viability of species in an area, etc. As discussed earlier, we can study these under the following categories:

Agricultural Eco-systems - Climate change would present several challenges to agricultural eco-systems:
1. Erratic weather would lead to difficulties in operational planning
2. Erratic rainfall would reduce farm productivity
3. Higher night temperatures would reduce productivity
4. Dependence on fertilizers would increase to compensate for this loss.(Negi, et al., 2012)

These factors have limited the types of crops and their seasons in hilly areas, severely limiting the bio-diversity in these areas.

Forest Eco-system - The forest eco-system can be broken down into the flora and the fauna, with each being impacted by climate changes.

Flora - The vegetation types that grow in a certain area are dependent on the climate of the areas. Consequently, there has been a shift of vegetation that is dominant in the plains towards the higher altitudes. There has been change in flowering patterns of native flowers as documented(Negi, Phenology and Nutrient Dynamics, 1989). It has also allowed foreign species that would be invasive to an eco-system to spread and thrive, negatively impacting the natural flora of the area.

Another notable impact, one that has been severely impacting hills in Uttarakhand, has been the increased incidences of forest fires. (Government of Uttarakhand, 2014)

Fauna - The fauna living in an eco-system is dependent on the flora of the region, hence any impact on the same would have a butterfly effect on the fauna as well. Additionally, there are other factors affected by climate change that also impact the fauna:
1. With rising temperatures the amount of space available to the Himalayan fauna would reduce leading to a higher chance of extinction.
2. The erratic rains and the receding glaciers can result in glacial lake outburst which would displace both the local fauna and human settlements as well.
3. Erratic rainfall leads to periods of floods and droughts, both being detrimental to the diversity of fauna in an area.

Indirect Impact - In addition to these effects of climate change on the bio-diversity, there are several secondary effects which arise out of these first set of changes:
1. The stress on bio-diversity will affect the poor and marginalized sections of human society who depend on their eco-system for a lot of their day-to –day resources.
2. There are increased instances of vector illnesses and water borne pathogens which directly impact flora, fauna, as well as human inhabitants. Eg. Malaria mosquitoes have been observed in higher altitudes compared to earlier.(Eriksson, 2008).

Conclusion - Climatic change has been having and will continue to have several unintended effects on the bio-diversity of the world in the years to come. With Uttarakhand being an ecologically fragile region, these effects get accentuated and hence become an even bigger concern for its residents. These climate change concerns need to dictate policy making at the national and state levels. While some policies have been there for some time now, Uttarakhand needs to develop them in a more comprehensive manner. The gap between practical implementation and theoretical policy needs to be addressed by inculcating environmental costs/benefits into overall macro-policy frameworks.

Further, the acuteness of the issue and the lack of enough understanding of it means that academia also needs to increase its attention towards these issues. The major areas of research arising out of the impact of climate change could be as follows:
1. Collection and analysis of meteorological data
2. Capturing precipitation, and flood-drought cycles' data
3. Cellular-level understanding of the effects of the changes in temperatures on plants
4. Documentation of local-level innovation to counter the effects of climate change

References :-

1. Eriksson, M. J. (2008). How does climate affect human health in the Hindu Kush-Himalayan region? *Regional Health Forum 12*, 11-15.
2. Government of Uttarakhand. (2014). *Uttarakhand Action Plan on Climate.*
3. Jain, D. (n.d.). Environmental Changes and Biodiversity in Uttarakhand. *Biology Discussion*.
4. Negi, G. (1989). Phenology and Nutrient Dynamics. *Ph. D Thesis*.
5. Negi, G., Samal, P., Kuniyal, J. C., Kothyari, B., Sharma, R., & Dhyani, P. (2012). Impact of climate change on the western Himalayan. *International Society for Tropical Ecology*, 345-356.
6. Sharma, K. N. (2009, June 30). *Vedic perspective on environment*. Retrieved from Times of India: https://timesofindia.indiatimes.com/Vedic-perspective-on-environment/articleshow/4613346.cms
7. Tariyal, K. (2017). Climatic fluctuations in Uttarakhand Himalayan region and resulting impacts:. *Archives of Agriculture and Environmental Science*, 124-128.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

डॉ. देवराज के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

डॉ. रोली श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – 'उपन्यास' हिन्दी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। विशेषकर उसके विकास में मनोवैज्ञानिक रचनाकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस परम्परा में प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, अज्ञेय, भगवतीचरण वर्मा, इलाचन्द्र जोशी के साथ डॉ0 नन्दकिशोर देवराज का स्थान उल्लेखनीय है। डॉ0 देवराज विचारक, आलोचक, उपन्यासकार और कवि अपने इन सभी रूपों में सुपरिचित हैं। डॉ0 देवराज जी ने ग्यारह 'काव्य ग्रन्थ', 'आठ उपन्यास' और 'सात आलोचना', पुस्तकों के अलावा 'तेरह दार्शनिक वैचारिक ग्रन्थ' लिखे हैं। उन्हें हिन्दी साहित्य में मूलत: एक यशस्वी उपन्यासकार के रूप में ही जाना जाता है। इनके उपन्यासों में मानव मन की उलझनों गुत्थियों और तनावों का व्यापक चित्रण एक मनोवैज्ञानिक की तरह किया गया है। इन स्थितियों में संघर्ष करते हुये मानव किस प्रकार अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखता है। इसका जीवन्त चित्रण इनके उपन्यासों में प्राप्त होता है।

इस सम्बन्ध में ये तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि हिन्दी उपन्यास की मूल प्रवृत्ति प्रधानता परम्परावादी रही है, इसी कारण मनोविश्लेषणवादी सिद्धांतों का आरोपण हिन्दी उपन्यासों में होने के पश्चात भी उसका विकास विशेष रूप से स्वतंत्रता के पश्चात हुआ। मनोवैज्ञानिक उपन्यास की अवधारणा स्पष्ट करते हुये यहाँ पर इस तथ्य का निदर्शन करना असंगत न होगा कि वह कथानक की बाह्य घटनाओं से इतना सम्बद्ध नहीं होता, जितना चरित्रों के मानसिक एवं भावात्मक जीवन से, यही कारण है कि पात्रों के कार्यकलाप के मूल प्रेरणा स्त्रोतों का उद्घाटन मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का मुख्य विषय रहता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यास की अवधारणा के सम्बन्ध में सर्वप्रमुख यह बात ध्यान देने योग्य है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यास मनुष्य के हृदय में स्थित अनुभूतियों के उद्रेक की अभिव्यक्ति करता है। व्यवहारिक दृष्टिकोण से यह उसकी वैयक्तिक आत्म निष्ठा का प्रतीक होता हैं, इसकी विशेषता यह होती है कि अभिव्यक्ति का यह रूप सामान्यत: इतने स्पष्ट और स्वाभाविक रूप में अन्य प्रकार के उपन्यासों में प्राय: नहीं मिलता है। इसके मूल में यह तथ्य विद्यमान है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यास अपने पात्रो मनोविश्लषेणात्मक प्रक्रियाओ की उनके व्यवहारिक कार्यकलाप को मूल स्त्रोत मानता है। अतृप्त यौन भावना जीवन में किस प्रकार विभिन्न रूपों में प्रकट होती है इसे देवराज ने अपने उपन्यासों में दर्शाया है। 'तपती रेखाएं' की इरावती अतृप्त यौन भावना के कारण अपने सौन्दर्य को निरर्थक, निरूद्देश्य तथा लक्ष्यहीन समझने लगती है। सुबोध में अतृप्त यौन भावना कुंठा और घुटन बनकर व्याप्त हो गई थी। अतृप्त काम भावना के कारण इरावती अपने पति देव के प्रति वफादार नहीं रह पाती तथा न चाहते हुये सुबोध के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। अतृप्त काम भावना के कारण 'अजय की डायरी' का नायक अपनी साधना से पथ भ्रष्ट होता है। 'भीतर का घाव' उपन्यास में उस वर्ग के पात्रों का चित्रण है जो स्वयं तो सुविधा सम्पन्न है किन्तु अपने आदर्शो तथा दूसरों के प्रति दया की भावना रखने के कारण इड तथा इगो के संघर्ष में फँसे रहते है। जीवन की असफलताओं से निराश होकर डॉ0 देवराज के उपन्यासों के पात्रों में फ्रॉयड की मरण प्रवृत्ति सक्रिय होती है किन्तु आत्मकेन्द्रित न होने के कारण उनमें यह प्रवृत्ति अधिक उग्र रूप धारण नहीं कर पाती। उनकी यह प्रवृत्ति कहीं किसी दूसरे पात्र द्वारा, कहीं अन्तर्प्रेरणा द्वारा तथा कहीं परिस्थितियों के कारण जीवन प्रवृत्ति में परिवर्तित हो जाती है। जीवन प्रवृत्ति तथा मृत्यु प्रवृत्ति के मध्य संघर्ष करते उनके पात्र कहीं जीवन के प्रति आस्थावादी तो कहीं अनास्थावदी दृष्टिकोण अपनाते चलते हैं। 'पथ की खाजे' उपन्यास के पात्र मदन में परिस्थितियों से विवश होकर मृत्यु प्रवृत्ति सक्रिय हो जाती है। लेकिन वह उग्र रूप नहीं धारण कर पाती।

एडलर का जीवन लक्ष्य तथा जीवन शैली का सिद्धान्त डॉ0 देवराज के उपन्यासों में अपने स्वाभाविक रूप में आया है। 'रोड़े और पत्थर' का नायक हरीश निम्न मध्य वर्ग का पात्र है जो अपनी उच्चाकांक्षाओं के कारण अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होता है। एडलर के अनुसार व्यक्ति की बाल्यावस्था से ही एक जीवन शैली बन जाती है। जिसके अनुसार वह जीवन पर्यन्त आचरण करता है। 'दूसरा सूत्र' का पात्र सुनील सौतेली माँ के साथ-साथ अपने पिता से भी दूर भागने लगता है, क्योंकि उसे लगता है, कि पिताजी भी माँ की राय से सहमत रहते हैं इसलिये जीवन पर्यन्त वह माँ तथा पिता जी दोनों से दूर रहकर अपनी अलग जीवन शैली अपनाता है। 'रोड़े और पत्थर' की आभा फिल्मी सस्कृति से प्रभावित है। वह अपने घर को सुन्दर अभिनेत्रियों की तस्वीरो से सजाना चाहती है। तब हरीश अपने बेटी को समझाता है कि इन अभिनेत्रियों की तस्वीरों से नहीं, महान विभूतियों से ड्राइंग रूम की शोभा बढ़ती है।'अजय की डायरी' की पात्र दीपिका हीनता की भावना से पीड़ित होने के कारण हेम के प्रति कटु हो जाया करती थी। दीपिका अजय को पसन्द करती थी। हेम के मुख से अजय की प्रशंसा सुनकर दीपिका हीनता की भावना से ग्रस्त हो जाने के कारण पीड़ा का अनुभव करती थी। शीला भी हीनता की भावना के कारण जब भी अवसर मिलता अजय का अपमान करने से नहीं चूकती थी।नर-नारी सम्बन्धों के बारे में डॉ0 देवराज के विचार प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक राक से मिलते जुलते हैं राक के अनुसार पुरूष और स्त्री में आंशिक सरंचना की तरह उनके मनोविज्ञान में भी समानता नहीं होती। पुरूष में सृजनात्मक शक्ति की प्रधानता होती है और स्त्री में काम की। राक के अनुसर स्त्री संरक्षण के लिये अधिक प्रयत्नशील होती है इसके विपरीत पुरूष में अहम् की प्रधानता होती है।

डॉ0 देवराज करूणा और समर्पण को नारी का गुण मानते हैं। डॉ0देवराज

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद मेमोरियल डिग्री कॉलेज, राजाजीपुरम, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

जी की मान्यता है कि विवाह के माध्यम से पुरूष स्त्री को संरक्षण देता है। 'पथ की खोज' उपन्यास में सावित्री स्वच्छन्द प्रकृति की नारी है। वह पति के सुख में ही अपना सुख समझती है। कोई भी पत्नी जो भारतीय स्त्री है। अपने पति से प्रेम करेगी क्योंकि वह उसकी जीविका के प्रश्न को हल करता है। भारतीय संस्कृति की छाप नारी के अस्तित्व में विराजमान है। डॉ0 देवराज के उपन्यासों के पात्रों का अहम अत्यधिक विकसित है।

उनके प्रत्येक उपन्यास के अधिकांश पात्र अपना निजी व्यक्तित्व रखते हैं। नारी पात्रों में साधना, सुशीला, अर्चना, इरावती, हेम, दीपिका, प्रतिभा, जयश्री आदि पात्र अपने विकसित दर्ज करा देने वाले डॉ0 नन्द किशोर देवराज ने साहित्य में दार्शनिक मनोविज्ञान की बुनियाद डाली थी, वे इसके शलाका पुरूष हो गये।

उनके उपन्यासों में जीवन मूल्यों की तलाश की जो कोशिश और निश्छलता है, वह और कहीं नहीं है।

आधुनिक साहित्यकारों की जिस श्रेणी में डॉ0 देवराज की गणना की जाती है, वह श्रेणी मनोवैज्ञानिक कथाकारों की है। अपनी परम्परा को परिपुष्ट करते हुये भी वे उससे नितान्त भिन्न हैं। वर्तमान प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कथाकार प्रेमचन्द, जैनेन्द्र अज्ञेय इलाचन्द्र जोशी, भगवती चरण वर्मा आदि से डॉ0 देशराज जी ने अपनी अलग पहचान बनायी है।

सक्षंपे में कहा जा सकता है कि डॉ0 देवराज जी का मत सम्पूर्ण कथा साहित्य उनके व्यक्तिगत जीवनानुभवों का कलात्मक प्रस्तुतीकरण है। उनकी मनोविज्ञान प्रियता, वैयक्तिक और सामाजिक चेतना का समन्वय प्रकृति, प्रेम आदर्श और यथार्थ का सामंजस्य अहम् भाव की एकांतिकता पर प्रहार आदि समस्त प्रवृत्तियाँ उनकी वैयक्तिक अनुभूति की देन है। अपनी रचना के मनोग्राही शिल्प विधान द्धारा कथाकार ने मानव मन की यथार्थ स्थिति को मूर्त रूप देने का सुन्दर प्रयास किया है। समाजोन्मुखी एवं रचनात्मक मन प्रवृत्ति तथा मानसिक संतुलन को सर्वत्र ऊँचा स्थान देकर कथाकार ने अहमूलक स्वार्थमय एवं ध्वंसात्मक प्रवृत्ति और मानसिक असंतुलन को सर्वथा देय ठहराया है। अतएव कथाकार के मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के सम्बन्ध में यह कहना ही उचित होगा कि अपने कथा साहित्य में उन्हें मन के उदार स्वरूप पर ही बल दिया है। मनोभावों के उदात्तीकरण में उनका दृढ़ विश्वास है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ0 नन्द किशोर देवराज रोड़े और पत्थर, पृ0सं0 61-62
2. डॉ0 नन्द किशोर देवराज नन्द तपती रेखायें, पृ0सं0 79-85
3. डॉ0 धनराज मानधाने, हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास
4. डॉ0 रामनाथ शर्मा, सामान्य मनोविज्ञान
5. डॉ0 रामनाथ शर्मा, मनोविज्ञान का इतिहास -
6. डॉ0 देवराज उपाध्याय, आधुनिक हिन्दी कथ साहित्य और मनोविज्ञान

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

An Analytical Study Of Social Business Unitwith Reference To Indian Economy

Dr. D.N. Khadse*

Introduction - The Indian economy is one of the most rapidly developing economies in the world, with a variety of classes and subclasses within the strata of its economy. The Indian economy is considered to be the most varied economy in the world. But the most alarming situation in India is the widening gap between the economies of ach strata which as per reports is widening at a very rapid rate. On one hand we have the elite, rich, upper middle class section abundant in socio economic status and an increasing Purchasing capacity; on the other side is the lower middle class, semi-poor and poor class who fight a daily hand to mouth existence.

According to the reports of the Ministry of Housing and poverty alleviation (2011) nearly 30% of Indian population living in India's roughly 45 cities and 5000 rural areas live in abject poverty. Without the 3 basic necessities of living they fight for literal survival. Among this the most effected group are the children below 10 yrs of age with many dying without proper nourishment and medical facilities. According to the Poverty Report of India 2011, there exists approximately 7.5 crore poor household out of which 6 crore are in rural area and 1.5 crore are in urban area living a below poverty line existence. Such is the situation that even after more than 60 years of independence one out of every four in India lives in poverty. On one had wherein the life expectancy of an Indian has increased to 68 yrs the issue of infant mortality persists at 62%, indicating that even though highly specialized medical facilities are available outreach of the same is very limited.

One of the most shocking is the finding about child malnourishment. Out of every three children malnourished children in the world one belong to India. Children are considered to be the soft target for any socio- economic downside. With a life totally dependent on adults children are the first and the most to suffer any socio-economic drawbacks. This is more shocking considering the vastlygrowing GDP percentage of India as against its Asian counterparts.

These findings are not something unknown to us. Many of us are quite aware of this situation but we voluntarily chose to remain a mute spectator. The reasons for the same are many- people feel that poverty is not within our purview, a problem that can be effectively handled by those with lots of money to spend on philanthropic pursuit, or handled by government by introduction of many of the so call schemes of poverty alleviation and assistance of NGO's and other social institutions. Incidentally according to a report published in Times of India Dated 24th December 2011 Indians stand in the 91st position in World giving Chart which signifies the generous mentality of people of various nations around the world.

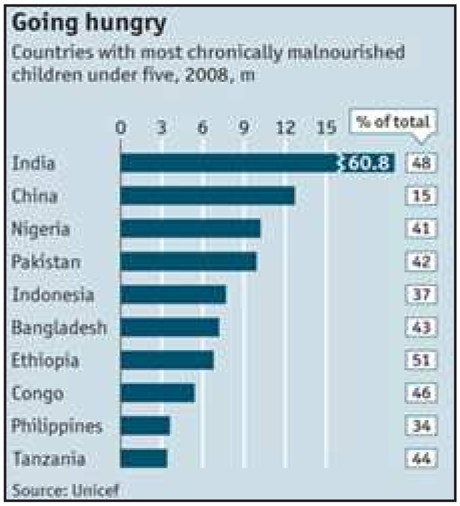

**Unicef report 2010*

Indians have an attitude of believing that poverty is a matter of choice and it is chosen by the people to live in poor conditions. We can fight and win on everything; outside incursion, corruption even alien invasion but poverty can never be eliminated at least not by the common man. The more we read the more we feel pitiful, helpless, disgusted and ultimately choose to ignore since we there is nothing we can do.

But we forget that for the nation to be strong the roots have to be strengthened and it can be done only if the disease named poverty can be successfully curtailed at its root. Here the famous Japanese story of the fisherman and the beggar hold true.

The moral "If you give alms the beggar will still beg- but if you teach him tools of trade he will not only fend himself but also his family and ultimately the whole society." A social business Unit is a tool in the hands of the needy to fend

*Associate Professor (Commerce) Dhanwate National College, Nagpur (Maharashtra) INDIA

and fight for themselves instead of looking for charity and hand-outs.

Research Methodology - This research is an analytical research wherein the fact and information already available is analyzed and an effort is made to critical evaluates the same in Indian context. This study is done using Analytical Social research method based on Quantitative fact and information wherein a scientific research is done to introduce the concept of social business.

Objective Of Study - To analyze the concept of Social Business Unit in relation to Indian Economy for improving conditions of the people living below poverty line and study the effectiveness of business as a tool of poverty alleviation and other associated issues governing poverty.

Social Business Unit - The economy of India is the 9th largest in the world by nominal GDP and fourth largest by Purchasing power parity. The post independence economic reforms has capitulated the country's economic growth and with Liberalization, Privatization and Globalization there has been huge economic progress. But in spite of all the reforms Indian economy continues to face massive social and economic inequality, high unemployment and widespread malnourishment among children.

This paper is an effort to analyze how introduction of Social Business Units can affect the Indian economy on the whole; an effort to understand the impact of such business on people and their environment rather than concentrating on profit motive. A foray has also been made linking microfinance and social business unit to effectively combat poverty and other associated issue that govern poverty.

The concept of social business unit has been historically defined propagated and implemented by Dr. Yunus Mohammad founder of Grameen Bank in Bangladesh. It was first defined by Dr. Yunus in his book 'Creating a World without Poverty – Social Business and the Future of Capitalism'. According to him social business is a non-loss,Non-dividend Company designed to address a social objective. Now the question that arises is how a unit can survive without profit!!! The next is a conception that SBU is somewhat similar to a co-operative society.

For the first question SBU's mention of non-profit is in equation because SBU business should seek to generate a modest profitbut this profit is used to expand the company's reach, improve its product or service and other ways by which it can subscribe or effectively delegate its social mission.

There are two types of Social Business:

Type I: A business which focuses on providing a product and /or service with specific social, ethical or environmental goal.

Type II: A profit oriented business that is owned by the poor or other underprivileged parts of the society who gain through receiving direct dividend or by indirect benefits.

But the model proposed in this research paper is a combination of Type I and Type II units wherein members come together to form a unit which significantly targets a social problem with a non-profit motive. A new world of business in which profit making enterprise and social benefit maximizing enterprise co-exist with a difference. In this business the company's shareholders and investors would only be re-accumulating their initial investment as opposed to receiving dividend. They can only recoup the money invested but cannot take any dividend beyond that point. The profit stays with the company for expansion and improvement. A social business works on the concept that "Every human being is born into this world fully equipped not only to take care of himself or herself but also to contribute to the well being of the world as a whole".

Advantages Of Social Business Unit:

1. Better scope of investment opportunity as it is free from pre-determined fixation of Return on Investment as the idea is not based on potential profit.
2. Creates job and job satisfaction for the Poor people considering the fact that those who become dependent on charity do not feel encouraged to stand on their own feet but people who pay a fair price for the goods and services they receive are taking a giant step towards self-reliance.
3. Helps underprivileged and increase economic-self sustainability and sufficiency.
4. Effectively find solution for a specific social problem.

Principles For Functioning Of The Social Business Unit: The first and the foremost principle for the starting and working of SBU is the generous mentality of an individual/ individuals and a full dedication to the cause of uprooting the specific social problem. The question that arises is whether it is possible? Every individual's identity is made of two parts. The conscious and the subconscious. It is the conscious part that realizes the cognitive needs of individuals and tries to fulfill them. What we are targeting is the subconscious mind. A mind and an attitude to change the society. Anna Hazare stand against corruption and support of people nationwide is an evidenceof the fact that there are many individuals in India having a subconscious thinking of changing the society. A tool to fight against poverty and poverty related issues that hamper the nation's forward momentum.

As Dr. Yunus has rightly said "Poverty is not created by poor people. It is created by the system we have built the institution we have designed and the concepts we have formulated."

Secondly is identification of a socio-economic problem affecting the nation. The objective of the SBU should to be to overcome poverty or one or more problem that threatens people and society. E.g. Malnourishment in India. According to reports of UNICEF one out of every three children who are suffering from malnutrition is from India. For the same an effective model/system should be created and implemented e.g. Grameen Danone Ltd. The so called system or model should be free from ambiguity & corruption.

Thirdly a proper management of the SBU as an ordinary business establishment to attain financial and economic sustainability. After release of investment money the profit earned should be reinvested for expansion and improvement. Also the concern should be socially,

monetarily and environmentally conscious. Proper working conditions and payment to workers with good standards of working should be provided to the workforce. Lastly and not the least the business should bring **JOY** to all.

Suggesstions - As this model is still in study against the Indian Context a lot of possible suggestions are being arrived at. But the following suggestions are being suggested so as to facilitate the inception of this concept in the Indian environment:

1. The government needs to identify the need of these units and give them a special status. They need to pass special legislation to give legal recognition to SBU and create regulatory bodies to ensure transparency, integrity and honesty of this sector. A negligence of the same can create issues as we have seen with micro-finance bodies. A high subsidy and granting of interest free loans is also commendable.

2. For the awareness of this unit it is suggested to introduce the same in schools and colleges thus making students aware of two kinds of business: traditional money making business and social business. As we are all aware that the youth force has the majority share in changing the socio-economic conditions and thus making an avenue open to them will benefit the entrepreneurial activities along the lines of social benefit.

Conclusion - Not all charity can be replaced. Sometimes helping people in desperate need is also essential. There are sections of society e.g. the children, the old and the handicapped who still depend on the charities and donations of generous individuals, organizations and government. But the majorities of section is capable of fending themselves and in the course of the way help the society. It is a matter of providing the right skills, tools and environment to them…It is a matter of giving them a chance. No one decides to be poor; it is circumstances that force them to lead the particular way of life. A system that does not allow them to get out of the vicious cycle of poverty. Every human being is equal and has got equal rights to live as per the constitution. Its high time we realize the need to actually implement the same. May be not for us but for the future generation to grow…Just like in the panchtantra story of the gardener…

Once a kind was roaming in his garden. He saw the old gardener planting some saplings. When asked, the gardener said that they were mango saplings and they produce the sweetest mangoes. The king laughed and reminded the gardener that he may never taste them as he was too old. Thegardener replied that it was not for him but for the generations to come and enjoy the fruit. He may be dead but will be reminded each time someone praised the sweet mangoes.

References :-

1. Yunus Muhammad (2011) Building Social business: The New Kind of Capitalism that serves humanity most pressing Needs. Public Affairs. Pp. 256, ISBN 978-1586489564 pp 1-56
2. C.K. Prahald 2011," The Fortune at the bottom of the pyramid- Eradicating poverty through profits" Fifth Edition, Pearson, Part II : Chapter 1, ISBN 978-81-317-3080-5, pp 25-69
3. 2009 Edition, NABARD- "Financial Report" Journal of Economic and Social Welfare, Vol 39, PP-24-25
4. Gothekar Pada 2010 ," The Economist: Child malnutrition in India: Putting the smallest first"
5. http://grameenfoundation.wordpress.com/2008/03/03
6. http://www.poverty.ch/newsfinding/income: Poverty alleviation as a business service
7. http://www.muhammadyunus.org/social-business-Introducting the social business unit.
8. 2011-India Poverty Report by Ministry of housing and poverty alleviation.
9. May 2011, United Nations Children's Fund (UNICEF): The situation of Children in India.o
10. http://www.muhamadyunus.org/social-business;dt: 1/11/2011;time: 10.30 a.m,.
11. http://www.dachisgorup.com/social-busines-design;dt: 1/11/2011 time: 11.00 a.m.
12. Jager, Urs (2010) Managing social Businesses. Mission, governance, Strategy and Accountability. Palgrave Macmillan pp. 256, ISBN 978-0230252547
13. Business Standard: Indian has huge potential in social business, Muhammad Yunus – Sanjay Jog/ Mumbai March 24,2010,1.03 IST
14. http://www.corporate citicenship.novartis.com/news/2009-02-12-rmai-shtml.
15. The New York Times- Business Day Micro Credit? To Him, Its only a start By Devin Leonard/New York, May 1,2010

****

Right to Education : Issues and challenges

Yatindra Kumar Jha*

Abstract - Everyone has the right to education. At least elementary and fundamental steps will be free of education. Elementary education shall be compulsory. (Article 26 of the Universal Declaration of Human Rights in 1948). This recommendation of the United Nations has been reintroduced in the provisions of the Right of Children to Free and Compulsory Education (RTE) Act (2009). This Act came into force on April 1, 2010, for the first time, the law for the rights of all Indian children Contained in. Regarding the initial and compulsory education, regardless of caste, class, gender, etc., the children of the age group of 6 to 14 years, the RTE Act, although it is entitled to proper credit for the responsibility of the state in very specific terms for education. It would be appropriate to provide free elementary education to the children and the aged children between the age of six to fourteen years from the School and Concerned Authority. The current research study has tried to find out the situation of implementation, awareness and understanding of RTE provisions among teachers, parents and children in some rural schools. The RTE Act has passed two years ago, but so far only progress has been made in the context of enrolment / infrastructure, but in terms of quality education in case of student learning in the state much more not achieved. The same is about the awareness and understanding between his various stakeholders. To strengthen the operational aspect of the Act in the state, by giving some recommendations for immediate intervention by the government and some other opportunities of research.
Keywords - Right to education, Illiteracy, Ignorance, age appropriate classrooms, no detention policy.

Introduction - The Right to Education Act, 2009 is the first central law on school education that is applicable throughout India (excluding Jammu and Kashmir). In 2010, the country achieved a landmark milestone when the Article 21-A and the rights of children were enacted on the Free and Compulsory Education (RTE) Act, 2009, April 1, 2010 and in the direction of making elementary education universal in the country an important step represented And the route is really full of challenges.

The most important challenge that the RTE Act is in itself, is to end child labor in the poor country. Every day, we see children working in households, in domestic work, in tea stalls,dhabas and restaurants, workshops and selling goods on the roads. Bringing all these children to schools is not as easy as it seems because many government agencies are involved in working with them. Therefore, there are challenges in effective implementation of the RTE Act.

Till the nineteenth century, education in India was an exclusive right available only to a small section of society[1]. Under British rule, in spite of compulsory education laws, not much progress was made in this direction[2]. Post-independence, Article 45 of the newly framed Constitution stated that "the State shall endeavour to provide within a period of 10 years from the commencement of the Constitution, free and compulsory education to all children until they complete the age of 14 years"[3]. But nothing much happened towards universalisation of elementary education. National Policy on Education, 1968[4]was the first official document which attested Indian Government's commitment towards elementary education. This was further emphasized in the National Policy on Education, 1986[5].

In the review of the policy in 1990, the constitution was recommended to include the right to education as a fundamental right, on the basis of which a national policy was created in 1992. Meanwhile, India signed the United Nations Conference on Child Rights (CRC) in 1992, and started the process of adopting the law to make education the fundamental right of the child. In this direction, in 1976, amendment was made to enable the central government to make laws for school education through amendment in the constitution for which the power was in the hands of state governments. In 1992, in the case of *Mohini Jain v. Karnataka State*, the Supreme Court of India believed that the right to education is in accordance with the fundamental rights contained in Part III of the Constitution and every citizen has the right to education under the Constitution. After this, in the case of Unnikrishnan, JP vs Andhra Pradesh, the Supreme Court said that "the right to education has not been explicitly said to be the fundamental right, it is vested and free from the right of life guaranteed under 21 years of age. " Age The Constitution should be recruited in view of the principles of principles. Thus, the right to education is understood in the context of Article 45 and 41. (A) Every child / citizen of this country has the right to free education till he is fourteen years after a child and (B) age / citizen If 14 years do not complete, the right to education

*Asst. Prof., Rajendra Prashad Memorial Degree College, Lucknow (U.P.) INDIA

is surrounded by the economic capabilities of the state and the boundaries of its development. "1. In the end, in 2002, the amendment of the Constitution of India made education a fundamental right, but by adding it, the character of this right will be determined by the resulting law. This follow up legislation referred to in the 2002 Amendment of the Constitution of India (the Constitution 86th Amendment)[6] is the 'The Right of Children to Free and Compulsory Education Act 2009',[7] passed by parliament in August 2009, and notified into force in April 2010. Based on this Act, a subordinate legislation, the Model Rules, was framed by the centre to provide guidelines to states for implementing the Act[8].

Specific issues and challenges before the RTE Act

1. Act involves children between 6 and 14 and does not exceed 14 to 18 and less than 6 years - Only six to fourteen years of age children are included in the Act to get the privileges. It leaves the little children at zero and six years old at the age of fourteen to eighteen years. The fact is that India has signed the UN Charter, which clearly states that all children upto the age of 18 should be given free and compulsory education. The age group of six to six years is formally considered in the nurturing of children in the age of 14 years and the work is left halfway because the next 4 years of adolescence is also similar in the process of matured children The form is important. Education is not enough for a person to live a minimum civilized life till the age of 14 years.

2. Physical infrastructure and other resources - The Act[88] Model Rules under the Right of children to free and compulsory Education Act **(2009)** says that school building should be an 'all weather' structure, and should include an office cum store for the head teacher, separate toilets for boys and for girls, a kitchen for cooking the free mid day meal that children are provided, have access to safe drinking water, a library, a playground, and barrier free access.

The investigator noticed that most schools have 'all weather' buildings, and office co-stores for the main teacher, separate toilets for boys and girls, free mid day meal, a playground and cooking barrier free food there is a kitchen. . Two schools said that earlier when midday meal was cooked in the school, then they did not have a kitchen in the school and therefore they were making food in the school premises. Principal teachers shared that a few days ago, they received instructions from the Education Office to have a kitchen in their respective schools. Schools did not require kitchen now, because nowadays a government agency ISKCON provides mid day meal to these government schools, but they were forced to build the kitchen because it was necessary according to the standard. According to the RTE Act, even though every school requires access to safe drinking water, and in a library the investigator found that most schools do not have access to safe drinking water and libraries. Research shows that availability of physical facilities like safe drinking water, electricity, toilets, furniture, playgrounds and libraries positively influences the performance of students and their achievements.

The investigator noticed that a newspaper used to come to the school, but the students were not allowed to read it and were rarely taught by the teachers. When the investigator asked about the convenience of the library, the chief teacher shared that some of his schools get some books from the government, but these books are not used to lend to the students because students use them properly Do not do ' On the other hand, almost all students shared that they really liked reading books and some of them said that there is a private library in the neighborhood where someone needs to register and read books, newspapers for 15 days Or it can be done for release and students are not charged anything. Many students were found registered in this library. There is enough evidence to show that the students who have access to good library resources, who are interested in them and challenge them, will have deep love for reading and learning.[9]As reported by various studies, there is a strong correlation between the presence and the use of library resources by students and teachers with better student performance. Arko-Cobbah[10] described that 'the library in rural schools plays a significant role in the school curriculum**'.** School library resources play an important role in informing, educating, entertaining, and enriching students. When students are able to explore meaningful information they want, they learn faster and their literacy skills also grow rapidly; they learn how to learn[11].

3. Age appropriate classrooms - Act provides children above six years, who have never been admitted to any school or, have not completed primary education and have dropped out, the right to be admitted to a school in their / her age education The Act facilitates a child admitted to the special class to be given special training to enable him / her to be par in other children. The RTE Rules also states that children admitted after six months of the beginning of the academic session.

The Head teacher of the school was not aware of what the special training is and what constitutes this training. The investigator visited this school during November and February so the students were already in their second semester. Some 4-5 children joined school during this time but the investigator did not have any mechanism there to check whether a new student needs a special training or not. This is more or less true of other nearby schools too. In such a situation when they are not even aware of the special training, expecting them to know who will impart the training, where and how will be needless

4. Access to education - In order to provide access to education, no screening and document, no capitation fee, easy transfer certificate has been given in the year 2009, no screening and documentation. According to the RTE Act, no school can refuse to give admission or transfer certificate to any child. The investigator found that some students in a school wanted to go to another government

school, but they said that neither the school where they were studying was ready to give transfer certificates nor the school they wanted to enroll , He wanted to accept them. They directed everyone to study at the nearest school.

5. Not Enough Trained Teachers - Teachers are at the root of the implementation of the RTE which want to work towards a heterogeneous and democratic classroom, where all children participate in the same partnership. The primary part of our education system is already suffering from teachers shortage and a large number of teachers in this section are untrained. Unavailability of professionally qualified teachers has become a serious challenge in the proper implementation of the RTE Act. The student-teacher ratio specified in the Act created a huge demand for qualified teachers. This compelled many states to take exemption to abide by eligibility norms during recruitment. As a result, ineligible candidates were pushed into parachute teachers for running the education machinery.

The work of training of teachers is with the District Education and Training Institute (DIET), which has been formed after the National Policy on Education Policy, 1986. Most of the states - especially Bihar, Uttar Pradesh, Jharkhand, Orissa, Chhattisgarh, Assam and West Bengal - have never been bothered to develop. Ignored the appointments of institutional capacities and teacher trainers of these DIETs.

When the RTE was passed, it was estimated that a total of 10.6 lakh teachers would be required to have professional training, which was to be completed within five years from the implementation of the RTE Act - till March 2015. However, in 2016 the number of unqualified teachers was also standing. According to the Parliament, according to the Ministry of Human Resource Development 11 lakh Therefore, an amendment bill was passed to give these teachers the time till March 2019 to achieve the minimum qualification.

But here's a problem. According to the National Council for Teacher Education Teacher Recruitment Norms (2011), the prescribed qualification for obtaining the desired diploma or degree requires 2-4 years of studies. If March 2019 is the deadline,

Haryana has developed workbooks in different social science subjects. These books have all sorts of questions-small, long, map work, multiple choice as well as questions on pictures but students were hardly observed using this workbook. This workbook is meant to be done in the classroom but as children shared with the investigator their teachers told them to do it at home. With regard to the evaluation methods the investigator found out that schools were following CCE as they understood it. The methods adopted for the continuous evaluation were monthly unit tests, half-yearly examination and annual examination etc. No school has made it mandatory to pass any examination for going to the next higher class. Not all, but some schools have got profile books for every student where a teacher can record things about the individual student. In these profile books several things are mentioned covering different subjects and areas which are required for assessment. There are so many things to record in the book that teachers are really reluctant to make entry in these books. Because of these recording works they complained that CCE should be scrapped which is adversely affecting their actual teaching-learning. The investigator observed that there is a wide gap between policy interventions[12]and how it is actually perceived and implemented in the field. The actual motive behind CCE as a way to assess child's understanding of knowledge and or her ability to apply the same has been taken over by some mechanical activities of doing some projects by copying and pasting things from the textbook and entering it in the profile books of children. [13]

6. Teacher training - The Act[8] demands for qualified teachers and also makes way for teachers to receive in service training to enable them to acquire the requisite certifications within a period of 5 years. Research[14, 23] shows that teacher qualification, preparation of teaching and learning, content knowledge, and experience, are important factors contributing towards teacher effectiveness. The in service teacher training helps the teachers to be more systematic and logical in their teaching style[15]. The investigator observed that though, most of these government schools had qualified teachers, they had little information about advances in different subjects and they were not equipped to take corrective action as the law prescribes regarding CCE.

7. No detention policy - Section 16 of RTE Act prohibits holding back and expulsion of a child from school till the accomplishment of elementary education. The 'no detention' provision in the RTE Act does not mean that children's learning will not be assessed. The RTE Act makes provision of continuous and comprehensive evaluation (CCE) procedure which will enable the teacher to assess the child's learning and performance in a more constructive way. Several states including Haryana have taken steps to implement some form of CCE as they understand it. But as the investigator observed, in the name of CCE these schools are conducting activities which are very mechanical in nature and only aim at keeping children busy without learning anything substantial. Children come to these schools, get a free meal and it bothers to no one whether they are making any progress at all. The Annual Status for Education Report (ASER) – Rural, 2012[16]also states that enrollment levels have been 96% or more but 58.3% of children enrolled in Class V(government schools across rural India) cannot even read Class 2 text. The investigator observed teachers saying that 'whether students learn anything or not, they are going to be promoted to the next class as per the RTE Act. So nothing is in our hands'. Teachers perceive passing of examination as a criteria for being promoted to the next higher class. Teachers should be made appraised that 'pass' 'fail' options are not a necessary requirement for learning. A child would not acquire any special resource to handle the same syllabus

for yet another year by just repeating a class. There is no evidence that suggests that the quality of the learning of the child improves if the child is failed[17].

8. School Management Committees - To encourage parent and broader community participation in school monitoring and decision-making the ACT makes provision for schools to form a School Management Committee (SMC) with at least 75% of parents of children in the school of which fifty percent are to be mothers. SMC's are empowered to monitor the performance of schools and the use of government grants, to prepare school development plans and to fulfill other functions prescribed by state governments. During three months study the investigator did not find any parent teacher meeting or meeting of SMC members. The Head teacher and other school teachers in their informal talks shared that '*parents are not interested in coming to school because for them coming to school simply means losing a day's salary*'. So provision of SMC does not have any meaning for these schools where children are first generation learners and where parents are daily wage manual labourers. On the other hand, studies show[18] that communities can have a positive impact on school effectiveness. Whatever research is available on community engagement show that communities active role in school improvement often leads to many positive outcomes including improved student achievement. When schools involve families in positive ways, rather than labeling them as problems, such schools can easily be transformed from places where only some students flourish to one where all children do well.

9. Status of poor kids in the private schools - The RTE Act, 2009 opens the doors of private schools for children with a weak background. But the main challenge comes from the perspective of the private school administrators. A horrific question is how much parents are willing to send their children to private schools, even if education is free? Even if they are interested, children will be exposed to a different life level suddenly. Will they be treated with dignity and equality by their peers and teachers? Would not it be sad for poor children?

Apart from this, what about overhead expenses like uniforms, books, stationery etc. to participate in a private school? It is more likely that parents will feel intimidated by the idea of sending their children to private schools. Regarding the private school's stone-making strategy to keep poor children away. As a result, most private schools which accommodate poor children are mostly school with low budget low budget.

10.Recognition Process for State Schools - Section 19 states that Government schools must fulfill the minimum requirements of the schedule but the Act does not say anything on the action that will be taken against those schools which are not been able to fulfill minimum requirements for quality mentioned in the schedule. There is no library for children in school and safe drinking water facility.

11. Exercise of rights - The rights of pupils to education include right in education and in the classroom. This Act not only bans the corporal punishment of children but has also made it an offence to subject them to mental harassment. The Act makes provision of the establishment of the National/ State Commissions for Protection of Child Rights. NCPCR/SCPCR is also made responsible for monitoring out-of-school children to facilitate their access and participation in the schooling system. This would include children who have never enrolled or have dropped out, children who are temporarily absent, and children who are permanent migrants, who migrate seasonally with their parents. In Haryana, Right to Education Protection Authority[19] has been set up as an interim measure. One of the most important observations is that physical punishment or mental harassment is not a practice in any of the school. But the investigator did not observe any designated authority at the habitation level where violations of the Act can be registered, investigated and responded within a definite time frame.

12. Perception of Parents - All parents are aware of free elementary education in the government school. Majority parents shared that classrooms and schools are not cleaned regularly; classes are not regularly held. When further explored to find out the reasons for the irregular classes, they said irregularity of the teachers; some teachers come to the school on alternate days. Most of the parents are not satisfied with the teaching methods adopted in the schools. They feel effective teaching methods should be used like use of visual aids, regular class tests, continuous feedback to the parents, sufficient lab equipments, computer classes, regular classes, special coaching to the students, field visits, quizzes and vocational work for the students. Parents feel that teachers just teach and do not interact with the students, no homework is given to the students and teachers give less importance to the academic work. Most of the parents say that their children are not satisfied with the school. The reasons cited by them are, schools have no proper infrastructure, no electricity, no regular teaching, no cocurricular activities etc. When asked whether principals and teachers motivate the non-enrolled children to take admission in the schools, most of the parents said no.

13. Perception of Children - The investigator observed that most of the children are not aware of the benefits of the RTE Act. It is important to note that majority students are dissatisfied with the cleanliness of the schools; boring teaching methods followed in the schools; attention given by the teachers to the children; regularity of classes. They also shared that principals and teachers do not motivate children in the schools. In one of the schools while talking to students about their aspirations the investigator found one girl with tears in her eyes saying, '*ye log hauslanahidete'* *(*they do not give us any motivation). This reminds the investigator of famous lines, '*manzilna de chiragna de hausla to de'(*do not show light or take us to our destination

but at least give us some motivation*)*. In schools of Haryana students use NCERT textbooks published by their state and in these NCERT books there are many activities and questions which promote critical thinking. But the investigator observed that many such questions and activities were not done with students and when the investigator discussed the content of these textbooks, raised questions, conducted quiz, role play and other such action oriented exercises, students found the subject to be very interesting. Workbook activities were done by students regularly during the study period and for all this a few words of appreciation-motivation was required. As teachers, we know that if our students are motivated to learn, our work becomes a pleasure.[20]

References :-

1. Aradhya N. and Kashyap A., The 'Fundamentals' of the Fundamental Right to Education in India, Books for change, Bangalore **(2006)**
2. NaliniJuneja, India's Historic Right to Free and Compulsory Education for Children Act 2009, The Articulation of A New Vision, In KazuyoMinamide and
3. Pillai Chandrasekharan, Right to Education in India, A report, Second International Conference on Law, Organized by UNESCO, New Delhi and the Indian Society of International Law **(2004)**
4. MHRD: National Policy on Education (New Delhi, MHRD), para 4(4) **(1968)**
5. MHRD: National Policy on Education (New Delhi, MHRD), para 3.2. **(1986)**
6. http://indiacode.nic.in/coiweb/amend/amend86.htm
7. *Ministry* of Human Resources Development: The Right of Children to Free and Compulsory Education Act 2009 (New Delhi: MHRD) **(2009)**
8. Model Rules under the Right of children to free and compulsory Education Act **(2009)** http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/RTI_Mode l_Rules.pdf
9. School libraries and student achievement in Ontario, the Ontario Libarary association, Toronto, Ontario, **(2006)**
10. Arko-Cobbah A., The Role of Libraries in StudentCentered Learning: The Case of Students from the Disadvantaged Communities in South Africa. *TheInternational Information & Library Review*, **36**, 263-271 **(2004)**
11. School Libraries Work, Research foundation paper, Scholastic Library Publishing, 3rd edn. **(2008)** available at www.scholastic.com/content/collateral_resources/pdf/s/sl w3_2008.pdf
12. National Council for Educational Research and Training, National Focus Group on Examination Reforms, Position Paper (New Delhi, NCERT) **(2005)**
13. Lance K.C., Hamilton-Pennell C., Rodney M.J., Petersen L. & Sitter C., Information empowered: The school librarian as an agent of academic achievement in Alaska schools. Anchorage, AK: Alaska State Library, 1-3 **(1999)** available at http://www.library.state.ak.us/pdf/anc/infoemxs.pdf
14. Darling-Hammond, L. Powerful Teacher Education: Lessons from Exemplary Programs**.**San Francisco: John Wiley and Sons **(2006)**
15. Kazmi S.F., Pervez T., Mumtaz S., In-Service Teacher Training in Pakistani Schools and Total Quality Management*Interdisciplinary Journal Of Contemporary Research In Business*, **2**, 238-248 **(2011)**
16. Annual Status of Education Report, rural (ASER) report, Pratham, ASER Centre, New Delhi **(2013)**
17. The Right of children to free and compulsory Education Act, 2009 Clarification on Provisions, available at http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/RTE_Section_wise_rationale_rev_0.pdf
18. Family, School and Community Connections: Improving Student Learning, IOWA School Boards Foundation, **1(6)** 1-6 **(2007)**
19. Lance K.C., Hamilton-Pennell C., Rodney M.J., Petersen L. & Sitter C., Information empowered: The school librarian as an agent of academic achievement in Alaska schools. Anchorage, AK: Alaska State Library, 1-3 **(1999)** available at http://www.library.state.ak.us/pdf/anc/infoemxs.pdf
20. Mukunda V., Kamala, What did you ask at school today? A Handbook of child learning, Harper Collins Publisher **(2009)**

****

पर्यावरण संरक्षण में उच्चतम न्यायालय की भूमिका का अध्ययन

डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल*

शोध सारांश – हमारे चारों तरफ प्रकृति तथा मानव निर्मित जो भी जीवित तथा निर्जीव वस्तुएं हैं वे मिलकर पर्यावरण बनाती हैं। पर्यावरण का संरक्षण वर्तमान में वैश्विक चिन्ता का विषय है। पर्यावरण का संबंध सम्पूर्ण प्रकृति के साथ है। स्टाक होम सम्मेलन, रियो घोषणा इत्यादि वैश्विक सम्मेलनों में बढ़ती हुई पर्यावरण प्रदूषण के संबंध में वृहद दिशानिर्देश जारी किये गये इससे स्पष्ट होता है कि पर्यावरण की समस्या एक प्रमुख समस्या है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण के संरक्षण हेतु विभिन्न अधिनियम लागू किये गये हैं परन्तु इन अधिनियमों का उद्देश्य तभी सफल होगा जब इनका समूचित पालन हो सके। पर्यावरण के संबंध में उच्चतम न्यायालय ने अपने प्रारंभिक दशकों से वर्तमान तक अपनी विभिन्न निर्णयों में कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका को विभिन्न दिशा निर्देशों के माध्यम से दिया है। इस शोध पत्र में माननीय उच्चतम न्यायालय एवं विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों के संबंध में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

कुंजी शब्द – पर्यावरण, न्यायालय, वाद विधियां।

अध्ययन का उद्देश्य – इस शोध पत्र के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण हेतु माननीय उच्चतम न्यायालय एवं विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा अग्रणीय वाद विधियों का अध्ययन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र सैद्धांतिक विधि पर (द्वितीयक आकड़ें) आधारित है। इस विधि में सर्वमान्य ग्रन्थों तथा उच्चतम न्यायालय के विभिन्न जर्नलों से प्राप्त समंकों का विश्लेषण किया गया है।

विवेचना – उच्चतम न्यायालय ने स्वस्थ पर्यावरण के अधिकार को संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रत्याभूत प्राण के अधिकार का भाग माना है। अनुच्छेद 21 मे कहा गया है कि किसी व्यक्ति को उसके प्राण और दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार छोड़कर अन्यथा वंचित नहीं किया जाएगा। पर्यावरण प्रदूषण द्वारा कारित प्रदूषित वातावरण से धीरे–धीरे जहर दिया जाना संविधान के अनुच्छेद 21 का अतिक्रमण है। वास्तव में अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत प्राण के अधिकार में प्रकृति के उपहार का संरक्षण और परिरक्षण अंतर्वलित है, जिसके बिना जीवन का निर्वाह नहीं किया जा सकता है। यह सुस्थापित तथ्य है कि प्राण के अधिकार और पर्यावरण में घनिष्ट संबंध है। मूल अधिकारों और विशेष कर प्राण के अधिकार की बात निरर्थक हो जाएगी यदि स्वस्थ वातावरण जीने के लिये नहीं रहता है। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रमुख वाद विधियों का अध्ययन प्रस्तुत है।

रूरल लेटिगेशन एण्ड इन्टाइटिलमेण्ट केन्द्र बनाम उत्तरप्रदेश राज्य – इस मामले में उच्चतम न्यायालय देहरादून में कार्यरत कतिपय चूना पत्थर के खदानों को बंद करने के लिए आदेश इस आधार पर दिया कि उनमें खतरों के बारे में गंभीर कमियां थी, जो कार्य क्षेत्र की पारिस्थितिकी को प्रभावित करने के लिए सम्भाव्य था।

एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ – यह मामला जो गैस लीक मामले के नाम से विख्यात है, उच्चतम न्यायालय ने श्रीराम फुट एण्ड फर्टीलाइजर कम्पनी को कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व आवश्यक सुरक्षा उपाय करने का आदेश दिया क्योंकि कम्पनी परिसंकटमय तथा घातक रसायनों की थी जो पड़ोस में रहने वाले लोगों तथा कर्मकारों के जीवन तथा स्वास्थ्य को खतरा उत्पन्न करती थीं। न्यायालय ने ओलियम गैस के रिसाव से पीड़ितों के प्रतिकर दावों के भुगतान के लिए प्रतिभूति के रूप में 20 लाख रूपयें और न्यायालय के आदेश का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए बैंक प्रतिभूति के रूप में 15 लाख रूपयें की धनराशि के रूप में निक्षेप का भी निर्देश दिया।

इण्डियन काउंसिल फॉर इनवायरो लीगल एक्सन बनाम भारत संघ – इस मामले में यह संप्रेक्षण किया गया है कि– 'प्रदूषण चाहें हवा का हो या जल का प्रदूषण है और मानवजाति के लिए घातक है। अब समय आ गया है, जब प्रदूषण निवारण एवं पर्यावरण संरक्षण के लिए शासन, प्रशासन एवं स्वैच्छिक संगठनों को पहल करनी होगी।'

अभिलाष टेक्साटाइल्स बनाम राजकोट नगरपालिका निगम – के मामले में तथ्य इस प्रकार थे कि याचीगण अपनी फैक्ट्री का गंदा पानी सार्वजनिक सड़क पर और सार्वजनिक जल निकास की नाली में शुद्ध किए बिना छोड़ रहे थे, जिससे सार्वजनिक स्वास्थ्य को क्षति हो रही थी।

उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि कोई व्यक्ति इस प्रकार कारोबार नहीं कर सकता है, जिससे कारोबार क्रियाकलाप समस्त समाज के लिये खतरा हो जाए।

एम. सी. मेहता बनाम भारत संघ – इस मामले में चर्मशोधन शालाएं शोधनालय अपने कारखाने से बड़ी मात्रा में बहि:स्त्रावी जल पवित्र गंगा में बहा रही थीं, जिससे जल प्रदूषण हो रहा था। कई वर्षो से कहे जाने के बावजूद भी उनके द्वारा प्राइमरी अभिक्रिया संयंत्र नहीं स्थापित किए गए और वे प्राइमरी शोधन संयंत्र स्थापित करने के लिये कोई इच्छा भी नहीं व्यक्त कर रही थी। तदनुसार उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित किया–

'हम इसलिए उन चर्मशोधन शालाओं को बंद करने के लिये निर्देश दे रहे हैं, जो औद्योगिक बहि:स्त्राव के लिये अपेक्षित प्राइमरी शोधन अभिक्रिया के बारे में न्यूनतम कदम उठाने में असफल रहे है। हम इसके प्रति सचेत है कि चर्मशोधन शालाओं के बंद किए जाने से बेरोजगारों और राजस्व की हानि होगी परंतु जीवन, स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी का जनता के लिये महत्व अधिक बढ़ा है।'

* सहा. प्राध्यापक, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

एम. सी मेहता बनाम भारत संघ – इस मामले मे उच्चतम न्यायालय ने निर्देश दिया कि कतिपय उद्योग जिन्होंने उच्चतम न्यायालयों के पूर्ववर्ती आदेश के अनुपालन में वायु प्रदूषण नियंत्रण प्रणाली के संस्थापन के बारे में कोई प्रगति नहीं दिखाई है, बंद कर दिए जाए।

टेहरी विरोधी संघर्ष समिति बनाम उ. प्र. राज्य – में उच्चतम न्यायालय ने गैर सरकारी संगठन की याचिका पर सरकार के बांध निर्माण संबंधी निर्णय की छानबीन की। न्यायालय ने पाया कि विभिन्न समितियों की रिपोर्ट में बांध की सुरक्षा उपायों की व्यवस्था थी अत: याचिका को खारिज कर दिया।

एफ. बी. तारापोर वाला बनाम वेयर इण्डिया लिमिटेड – के मामले में थाणे की अधिक जनसंख्याा वाले क्षेत्र से रसायन उद्योग के हटाने के संबंध में न्यायालय ने महसूस किया कि इसके पास विशेषज्ञ जानकारी नहीं है। अत: न्यायालय ने पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 की धारा 3 (3) के अंतर्गत एक प्राधिकारी की नियुक्ति का निर्देश दिया जो पूरे प्रकरण की छानबीन करे।

इण्डियन काउन्सिल फार इन्वायरो लीगल ऐक्शन बनाम भारत संघ – के मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया कि यदि सरकार या प्राधिकारी औद्योगिक इकाइयों से प्रदूषण शुद्ध रखने के दायित्व को पूरा कराने में असफल है तो उच्चतम न्यायालय नागरिकों के मूल अधिकारों के प्रवर्तन हेतु हस्तक्षेप करेगा।

डॉ. अशोक बनाम भारत संघ – के मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अनु. 21 में वर्णित जीवन की वृहद व्याख्या कर प्रदूषण के द्धारा कारित स्वास्थ्य परिसंकट को इसके अंतर्गत सम्मिलित किया गया है।

आंध्र प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड बनाम प्रो. एम. वी. नायडू – में उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि स्वच्छ पेय जल तक पहुंच मूल अधिकार है और राज्य का अपने नागरिकों को स्वच्छ जल प्रदान करने का दायित्व/कर्तव्य है। कई मामलों में प्रदूषित पर्यावरण को एक धीमा जहर मानते इसके कारकों को बंद करने का आदेश जारी किया गया है।

राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला – के मामले में उच्चतम न्यायालय ने इसको वैध अभिनिर्धारित किया। इस अधिनियम में यह अपेक्षा की गई थी कि 6 फीट से ज्यादा उंचाई पर लागऐ गये लाउड स्पीकर जो 30 गज से ज्यादा दूरी तक आवाज दें उसके लिये अनुमति आवश्यक है।

उपसंहार – पर्यावरण संरक्षण में माननीय उच्चतम न्यायालय की अतुलनीय भूमिका रही है। इस शोध पत्र में प्रमुख मार्गदर्शक वाद विधियों को अध्ययन का आधार बनाया गया है। उनके विश्लेषण उपरांत निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं।

1. उच्चतम न्यायालय ने जहाँ एक ओर अंधाधूंध पहाड़ों की कटाई को रोकने के लिए जो दिशा निर्देश दिये हैं वह पारिस्थितिक तंत्र के लिए आवश्यक है।
2. न्यायालय ने गंगा के प्रदूषण को मानव समुदाय के लिए खतरा बताते हुए गंगा के सफाई को महत्वपूर्ण बताया।
3. उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि स्वच्छ पेय जल तक पहुंच मूल अधिकार है और राज्य का अपने नागरिकों को स्वच्छ जल प्रदान करने का दायित्व/कर्तव्य है।

अंत में निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि उच्चतम न्यायालय ने पर्यावरण के संरक्षण के लिए विभिन्न समयों में जो दिशा निर्देश दिये हैं वे वर्तमान में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ए. आई. आर. 1985
2. एस. सी. सी. 1988
3. ए. आई. आर. 1996
4. ए. आई. आर. 1988
5. ए. आई. आर. 1988
6. एस. सी. सी. 1994
7. एस. सी. सी. 1996
8. एस. सी. सी. 1996
9. एस. सी. सी. 1999
10. एस. सी. सी. 2001
11. ए. आई. आर. 1959

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

चंद्रकान्त देवताले के काव्य में परिवार विमर्श की रचना का संवेदना पक्ष

प्रो. मुकेश भार्गव *

प्रस्तावना – प्राय: समकालीन सभी कवियों ने अपनी कविता में विसंगति, विडम्बना, विद्रूपता, तनाव, दमन, अत्याचार, भ्रष्ट व्यवस्था, राजनीति के विकृत रूप और विघटित समाज की, सांस्कृतिक मूल्य जो धीरे–धीरे पतनशीलता की ओर वृद्धिगत हो रहे थे, धर्म में इसमें और भी विकृत रूपधारण किया था, छद्म मुखौटाधारी संस्कृति और दूषित राजनैतिक परिवेश, आतंक का साया की बात समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ रही हैं। व्यवस्था इतनी निर्मम और क्रूर है कि उसने व्यक्ति को सत्वहीन बना लिया है।

समकालीन कवियों ने सत्ता के हठ, निर्ममता, निरंकुशता और दमन की नीतियों का खुलकर विरोध किया था।

डॉ. गुरचरणसिंह ने समकालीन कवियों की अपनी कविताओं में कहा है कि –'समकालीन कवियों ने अपने भोगे हुए अनुभवों को वैयक्तिक अनुभूतियों, स्मृतियों, आकांक्षाओं कोअभिव्यक्ति दी है। नारियों ने अपनी पीड़ा पाठकों के सामने रखी है तो दलित लेखकों को युगों से हो रहे अन्याय, अपमान, शोषण, दमन, अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाई है' समकालीन कवि की प्रमुख प्रवृत्ति के रूप में टूटती हुई आस्थाओं और खंडित होते हुए मानव जीवन को देखकर कवि मानस प्रबुध्द हो जाता है। इसलिए समकालीन काव्य के दौर में जर्जर परम्पराओं रुढ़ियों और टूटते हुए मूल्यों को समाप्त करने का कवियों ने अपनी रचनाओं से प्रयास किया है। समकालीन कवियों ने अपने कालखण्ड की पारम्परिक मान्यताओं को ठुकराकर नये मूल्यों की ओर झुकाव बढ़ता गया।

कवि पूंजीपतियों और शोषणकर्ताओं के अत्याचार पीड़ित है। इसलिए कवियों ने इस स्थिति को देखकर आक्रोश व्यक्त किया है। व्यक्ति राजतंत्र के हथकंडों से परेशान है। प्रशासनिक व्यवस्था भ्रष्ट हो चुकी है। क्रुद्ध युवा जो बुद्धिजीवी है, उनके मन में मानवीय मूल्यों और मानवीय आदर्श खोखले लगने लगे हैं। समकालीन कवियों ने आजादी के खोखलेपन को घोषित किया है। उन्होंने राजनीति नारों की निरर्थकता को उजागर किया है। अभावग्रस्त नारों की निरर्थकता को उजागर किया है। अभावग्रस्त जनता की असह्य पीड़ा को समकालीन कवि ने महसूस किया है और अनेक समकालीन कवियों ने इनको भी व्यक्त किया है। इस प्रकार समकालीन कविता में आर्थिक द्वंद्व ने आज लोगों के जीवन को प्रभावित किया है। देश की धार्मिक और सांस्कृतिक स्थिति में भारी परिवर्तन आये। ईश्वरीय सत्ता के प्रति बुद्धिजीवी साहित्यकारों ने प्रश्नचिह्न खड़े किये। फलत: कवियों ने ईश्वरीय सत्ता तक को पाखण्ड के बढ़ने से ईश्वरीय श्रद्धा के प्रति अनास्था पैदा हुई। पारम्परिक नैतिक मूल्यों और मान्यताओं में तेजी से विघटन होता गया। देश की संस्कृति और सभ्यता को भी आँच आने लगी। हताशा, कुण्ठा, पराजय और अनास्था के कारण लोगों की मानसिकता में विकृतियाँ पैदा होने लगी। समकालीन कवि का हृदय संत्रास और तनाव से भर गया। अनेक लोग अध्यात्म की बात करते है लेकिन देवताले ने यह अध्यात्म बगैरह को कभी आकर्षित नहीं किया। कवि ने अपने मनुष्य होने के प्रति विश्वास बनाये रखने को अधिक सार्थक माना। कवि ने पाखण्ड और पाडित्य प्रदर्शन को भी अस्वीकार किया। चद्रंकात देवताले ने सन् 1971 में **'थोड़े से बच्चे और बाकी बच्चे'** नामक कविता दिनमान में काफी प्रशंसित रही। **'भूखण्ड तप रहा है'** में कवि ने अपनी आत्मकथा जैसी अपने गाँव, खेत, रश्तेदार, तमाम बातों का जिक्र किया उन सबको अपना जीवन बनकर व्यक्त किया है। विवेक गुप्ता, आशुतोष दुबे और रवीन्द्र व्यास से साक्षात्कार में पूछे गये प्रश्न में 'स्त्रियों पर आपने जो कविताएँ लिखी है, क्या आपके जीवन में स्त्रियों की कोई विशेष भूमिका रही ? के प्रत्युत्तर में – चन्द्रकान्त देवताले ने कहा कि – 'हम अपने समाज में स्त्रियों को उनका दु:ख, उनकी यातना, उनका समर्पण, उनकी मेहनत यह सब निरन्तर देखते है। आदमी खाता रहता है औरत काम करती रहती है, मरती खपती– रहती है' स्त्रियों के काम का, कोई मूल्यांकन नहीं होता है।' सामाजिक प्रतिबद्धता के संदर्भ में कवि देवताले जी का कहना है कि 'हम समाज के एक अभिन्न अंग है। समाज का अगर कोई हिस्सा दरकता है या टूटता है तो हम भी कहीं न कहीं टूटते है और हम कहीं न कहीं समृद्ध होते है तो हम यह देखना चाहते है कि हमारे आसपास भी उससे समृद्ध होगा या नहीं।'वैयक्तिकता खंडित होने के खतरे की और संकेतित करते हुए देवताले जी कहते हैं कि, आज हमारी व्यवस्थाएँ इस तरह से नष्ट हो गई है और समाज इस तरह से गड्ड–मड्ड हो गया है जिसमें पूंजीवाद अपने नए–नए चेहरे दिखा रहा है, सामंतवाद नए–नए चेहरे दिखा रहा है। 'उनके बारे में बहुत आसानी से कहा नहीं जा सकता।' साठोत्तरी के दौर से चन्द्रकान्त देवताले की काव्य–यात्रा शुरू की प्रारंभ में अकविता के क्षेत्र में भी विद्रोही कवि के रूप में उन्होंने काव्य रचनाएँ कीं। **'दीवारों पर खून से'** काव्य संकलन से लेकर **'पत्थर फेंक रहा हूँ '** तक उनके काव्य जगत् का विस्तार हुआ। महानगरीय जीवन, और कवि कर्म के सन्दर्भ में डॉ. आशासिंह सिकरवार कहती है कि – 'महानगरीय जीवन में दिनोदिन पनप रही स्वार्थपरता, सीमित दायरे, अजनबीपन, अकेलापन, निरर्थक बोध घर कर रहा है जिसे देवताले ने अपनी कविताओं में प्रभावी तरीके से प्रकट करते है।' यांत्रिकता ने मनुष्य को भी यांत्रिक बनाना शुरू किया है तभी तो जीवन अकि कष्टप्रद हो गया है।

वर्तमान में राजनेता सत्ता प्राप्त करने के लिए आदमी की हत्या एवं साम्प्रदायिकता की आग में जलता हुआ शहर देवताले के काव्य संसार में

* व्याख्याता, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

विशिष्ट रूप से शब्द बद्ध हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समकालीन कविता का सच- डॉ. गुरचरण सिंह - पृ. 11
2. मेरे साक्षात्कार- चंद्रकांत देवताले, पृ. 72
3. मेरे साक्षात्कार- चन्द्रकान्त देवताले, पृ. 82
4. मेरे साक्षात्कार- चन्द्रकान्त देवताले, पृ. 86
5. चन्द्रकान्त देवताले की कविताएँ- डॉ.आशासिंह सिकरवार, पृ. 462-466

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

छत्तीसगढ़ राज्य की गैर औषधीय लघु वनोपज के व्यापार का एक अध्ययन (आंवला के विशेष संदर्भ में)

राकेश कुमार गुप्ता *

शोध सारांश – आंवला का औषधीय एवं खाद्य पदार्थ के रूप में उपयोग होने के कारण इसकी मांग औषधि निर्माण उद्योग में अधिक है। छत्तीसगढ़ राज्य में बड़ी औषधि निर्माण इकाइयों की स्थापना नही हुई है। इसके बावजूद लघु इकाइयों द्वारा इनकी खपत की जाती है और साथ ही अन्य राज्यों जैसे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों के बाजारों में इसका विक्रय किया जाता है, जहां औषधि एवं अन्य खाद्य पदार्थों का निर्माण किया जाता है।

शब्द कुँजी –एग्रोक्लाइमेटिक जोन, अराष्ट्रीयकृत औषधीय लघुवनोपज, संपोष्य विकास एवं प्रसंस्करण।

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ राज्य में सूखे आंवला का वार्षिक उत्पादन लगभग 31,000 क्विंटल है एवं रू. 30/- प्रति किलो दर से रू. 9.30 करोड़ का वार्षिक व्यापार होता है। आंवला का उपयोग कई तरह की औषधियों के निर्माण एवं खाद्य पदार्थ बनाने में किया जाता है। इन्हीं कारणों से आंवले की मांग बनी रहती है। राज्य में आंवले के मुख्य उत्पादन क्षेत्र वनमंडलवार नीचे दी गई तालिका-1 में दर्शाए गए हैं। इस तालिका-1 का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि बस्तर पठार एवं सरगुजा क्षेत्र के एग्रोक्लाइमेटिक जोन के कुछ भागो जैसे कांकेर, सुकमा, बीजापुर, मनेन्द्रगढ, पूर्व सरगुजा, मरवाही एवं कवर्धा क्षेत्रों में आंवला अधिक मात्रा के उपलब्ध है, अत: आंवला संग्रहण एवं प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना हेतु उक्त क्षेत्र उपयुक्त सिद्ध हो सकते हैं।

तालिका 1 आंवला के मुख्य उत्पादन क्षेत्र

क्र.	उत्पादन हेतु उपयुक्त जिला यूनियन	स्थानीय बाजार	वार्षिक उत्पादन मात्रा (क्वि.में)
1	जगदलपुर	माचकोट, जगदलपुर	500
2	दंतेवाड़ा	भैरमगढ़, बचेली, छिन्नार, गीदम	500
3	सुकमा	कोन्टा, करेलापाल	1500
4	बीजापुर	बीजापुर	3000
5	कांकेर	कोरार, संबलपुर	1000
6	पूर्व भानुप्रतापपुर	टंतागढ़, आमाबेडा	1000
7	पश्चिम भानुप्रतापपुर	कोयलीबेड़ा, कापसी	800
8	उत्तर कोण्डागांव	केशकाल, बड़ेराजपुर	500
9	दक्षिण कोण्डागांव	माकडी, हीरापुर, केशकाल	500
10	नारायणपुर	बेनूर, छोटेडोंगर	500
11	धमतरी	नगरी, धमतरी	500
12	पूर्व रायपुर	गरियाबंद, धवलपुर, छुरा	1000
13	उदंती	मैनपुर, लोरेगा	1500
14	दुर्ग	बालोद, डोंडी लोहारा	500
15	राजनांदगांव	चौकी, छुरिया	500
16	खैरागढ़	मोहगांव, साल्हेवारा	1500
17	कवर्धा	चिल्फी, बोडला, पंडरिया	2000
18	बिलासपुर	डिण्डौरी, लोरमी, तखतपुर	1500
19	मरवाही	मरवाही	3000
20	कोरबा	मदनपुर, भैसमा	1000
21	कटघोरा	पासान, पाली, कोरबी	200
22	उत्तर सरगुजा	रघुनाथपुर, प्रतापपुर, वाड्रफनगर	500
23	दक्षिण सरगुजा	सूरजपुर, भईयाथान	2000
24	पूर्व सरगुजा	बलरामपुर, रामानजुगंज	2000
25	कोरिया	कोरिया, बैकुण्ठपुर	500
26	मनेन्द्रगढ़	मनेन्द्रगढ़, केल्हारी, जनकपुर	3000
	योग		**31,000**

उद्देश्य : छत्तीसगढ राज्य के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप 1 नवम्बर 2000 देश के 26वें राज्य के रूप में छत्तीसगढ़ की स्थापना की गई। मूलत: यह राज्य विपुल वन संसाधनों एवं खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद मध्यप्रदेश राज्य के अंतर्गत सदैव उपेक्षित रहा। प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में गैर औषधीय लघु वनोपज आंवला के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
3. अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला के व्यापार का छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति में सशक्त संभावनाओं का अघ्न करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला के व्यापार एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला के व्यापार एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र :

1. अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

2. यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।
3. अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य की अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला के व्यापार एवं विपणन पर आधारित हैं।
4. अध्ययन की समय सीमा पिछले पाँच वर्षो के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

शोध उपकरण – अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

सांख्यिकी उपकरण – यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।

शोध व्याख्या – छत्तीसगढ़ राज्य को भौगोलिक स्थिति एवं जलवायु के आधार पर तीन एग्रोक्लाइमेटिक जोन में वर्गीकृत किया गया है। ये तीन एग्रोक्लाइमेटिक जोन बस्तर पठार (सरगुजा, जशपुर कोरिया आदि क्षेत्र) है, इन तीनों क्षेत्रों से विभिन्न प्रकार की गैर वनौषधियाँ उपलब्ध होती हैं। तालिका-1 में दर्शाये अनुसार मुख्य गैर वनौषधियों का संग्रहण करने हेतु संबंधित एग्रोक्लाइमेटिक जोन उपयुक्त है, तद्नुसार संग्रहण कार्य प्रणाली में सुधार या निजी क्षेत्र में खेती द्वारा इन वनौषधियों के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती हैं।

राज्य के गैर औषधीय लघु वनोपज बाजार – वनोपज के मुख्य बाजारों के व्यापारियों द्वारा परम्परागत रूप से गैर-औषधीय लघुवनोपज का उचित मूल्य प्राप्त करने की दृष्टि से राज्य के धमतरी, रायपुर एवं जगदलपुर बाजार अत्यंत उपयुक्त हैं। सामान्यत: संग्रहणकर्ता द्वारा गैर-औषधीय वनोपज को संबंधित बाजार के स्थानीय व्यापारी से संपर्क कर मांग एवं गुणवत्ता के आधार पर व्यापारी द्वारा निर्धारित मूल्य पर विक्रय जाता है।

राज्य के मुख्य गैर-औषधीय लघुवनोपज व्यापारी – छत्तीसगढ़ राज्य के मुख्य बाजारों के गैर-औषधीय व्यापारियों द्वारा क्रय-विक्रय की जाने वाली मात्रा एवं दर, देश के अन्य बाजारों में इनकी मांग पर निर्भर करती है। गैर-औषधीय लघुवनोपज प्रजातियों की मांग एवं उत्पादन अधिक या कम होने से भी इनकी दरों में अंतर आता रहता है। इस प्रकार मांग और आपूर्ति में अंतर आने पर इनकी दरों में काफी उतार चढ़ाव आता रहता है।

देश के मुख्य गैर-औषधीय लघुवनोपज बाजार – छत्तीसगढ़ राज्य की गैर-औषधीय लघुवनोपज को देश की विभिन्न राज्यों की मंडियों में विक्रय किया जाता है। मुख्य गैर-औषधीय लघुवनोपज प्रजातियों को उनके उपयोग एवं मांग के अनुसार देश के बाजारों में उपलब्ध कराया जाता है। उदाहरणत: इमली हेतु मुख्यत: दक्षिण भारत में आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र आदि राज्यों में, छत्तीसगढ़ की उत्पादित मात्रा का एक बड़ा भाग विक्रय किया जाता है। इस प्रकार देश के उत्तर, दक्षिण एवं मध्य भागों में गैर-औषधीय लघुवनोपज प्रजातियों की मांग होने के कारण इन राज्यों के व्यापारियों एंव उद्यमियों से संपर्क कर उचित दरों पर विक्रय की कार्यवाही की जा सकती हैं।

तालिका 2- देश के मुख्य गैर-औषधीय लघुवनोपज बाजार

क्र.	राज्य	बाजार	गैर-औषधीय लघुवनोपज
1	छत्तीसगढ़	धमतरी, रायपुर, बिलासपुर, जगदलपुर, अम्बिकापुर	कुसुम, इमली, कोसा, महुआ, तिखुर, करंज, माहुल, चिरौंजी, पलाश लाख, चरौटा
2	मध्यप्रदेश	इंदौर, जबलपुर, ग्वालियर	महुआ, तिखुर, इमली, करंज, कुसुम, चिरौंजी, पलाश लाख, बैचांदी
3	उत्तरप्रदेश	आगरा, लखनऊ, कानपुर, सहारनपुर, गाजियाबाद	करंज, चिरौंजी, पलाश लाख, महुआ, इमली
4	आंध्रप्रदेश	विजयवाड़ा, विशाखापट्टनम,हैदराबाद, सालूर, गुंटुर	तिखुर, करंज, माहुल, चिरौंजी, पलाश लाख, महुआ, इमली
5	कर्नाटक	बैंगलोर	महुआ, करंज, माहुल, चिरौंजी, इमली
6	तमिलनाडू	चैन्नई, नागरकोइल,थैनी	महुल, चिरौंजी कुसुम, करंज, पलाश लाख, इमली
7	दिल्ली	दिल्ली	कुसुम, इमली, कोसा, महुआ, पलाश लाख, चिरौंजी, बैचांदी
8	महाराष्ट्र	मुबंई, नागपुर, गोंदिया	करंज, चिरौंजी, पलाश लाख, कुसुम, महुआ, इमली

राज्य में स्थापित लघु वनोपज आधारित मुख्य प्रसंस्करण इकाईयाँ – छत्तीसगढ़ राज्य में प्रसंस्करण इकाईयों का विकास अपर्याप्त है। औषधीय लघुवनोपज प्रजाति पर आधारित इकाईयों की संख्या राज्य में नगण्य है परन्तु गैर-औषधीय लघुवनोपज प्रजातियों पर आधारित कुछ प्रसंस्करण इकाइयाँ छत्तीसगढ़ राज्य भर में स्थापित हैं इन प्रसंस्करण इकाइयों से संपर्क कर कच्ची लघु वनोपज विपणन हेतु चजण किया जा सकता है। छत्तीसगढ़ राज्य में स्थापित प्रसंस्करण इकाइयों का प्रजाति एवं उत्पाद के आधार पर विवरण निम्नानुसार तालिका 3 में दिया गया हैं। उपरोक्त तालिका-3 से यह स्पष्ट होता है कि राज्य में कुसुम तथा पलाश लाख एवं महुआ तथा कुसुम तेल की क्रमश: 18 एवं 19 प्रसंकरण इकाईयाँ स्थापित हैं। इनके अलावा इमली (स्टार्च पाउडर) एवं चार गुठली की भी प्रसंस्करण इकाईयाँ अधिक मात्रा में स्थापित है। साथ ही माहुल पत्ते से दोना पत्तल निर्माण की 22 लघु प्रसंस्करण इकाइयाँ राज्य में स्थापित है। जिनसे स्थानीय निवासियों को रोजगार के अतिरिक्त साधन प्राप्त होते हैं, अत: इन लघु वनोपजों का संग्रहण कर उपरोक्त उद्यमियों से संपर्क कर विपणन हेतु अनुबंध किये जा सकते हैं।

तलिका 3- राज्य में स्थापित लघु वनोपज की प्रसंस्करण इकाइयों का विवरण

क्र.	प्रजाति	उत्पाद	इकाई संख्या
1	इमली (बीज)	स्टार्च पाउडर	07
2	इमली (आंटी)	फूल इमली	05
3	कुसुम, पलाश	दाना(लाख), बटन	18
4	हर्रा	हर्रा पाउडर	02
5	आंवला, शिकाकाई, कालमेघ, रीठा	पाउडर	01

6	माहुल	दोना पत्तल	22
7	साल	दोना पत्तल	03
8	महुआ, कुसुम, नीम,	तेल	19
9	चार गुठली	चिरौंजी	09
10	लेमन घास, नागरमोथा	परफ्यूम्स, तेल	06
11	चरोटा, बेल, वनतुलसी	अगरबत्ती	01
12	बबूल	चुनी (पशु आहार)	02
13	फूलबाहरी	झाडू	02
	योग		**97**

आंवला के मुख्य उत्पादन क्षेत्र : आंवला के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार – आंवला का औषधीय एवं खाद्य पदार्थ के रूप में उपयोग होने के कारण इसकी मांग औषधि निर्माण उद्योग में अधिक है। राज्य में बड़ी औषधि निर्माण इकाइयों की स्थापना नही हुई है। इसके बावजूद लघु इकाइयों द्वारा इनकी खपत की जाती है और साथ ही अन्य राज्यों जैसे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों के बाजारों में इसका विक्रय किया जाता है, जहां औषधि एवं अन्य खाद्य पदार्थो का निर्माण किया जाता है। राज्य एवं देश के मुख्य बाजारों का विवरण तालिका क्र.-4 में दिया गया हैं।

तालिका 4 (अगले पृष्ठ पर देखे)

निष्कर्ष – प्रस्तुत लघु शोध पत्र के अंतर्गत अध्ययन के दौरान यह पाया कि छत्तीसगढ़ राज्य में वन्य स्थिति संतुलन के आधार पर उपयुक्त है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला का अधिक मात्रा में उत्पादन हो रहा है किन्तु राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगो का नितान्त अभाव है यदि छत्तीसगढ़ राज्य सरकार इस क्षेत्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करे तो न केवल प्राकृतिक हरियाली बढ़ेगी साथ ही राज्य में वित्त के विविध स्त्रोत उपलब्ध हो जायेंगे। शोधार्थी के अध्ययन के अनुसार यदि अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला पर आधारित उद्योगो में ग्रामीण क्षेत्रो के रहवासी को सहभागी बनाया जाए तो न केवल उन वनवासियों को रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे अपितु वनोपज संग्रहण में उनकी कुशलता भी निखरकर सामने आयेगी।

सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध पत्र के अंतर्गत यह पाया गया कि अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नही होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट बजारो में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते है। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी राज्य की इन लघु वनोपज को मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाजारो पर विक्रय करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते है। प्रत्येक वर्ष छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगो को भेज दी जाती है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला पर आधारित उद्योगो का विकास अपर्याप्त है साथ ही आंवलें की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका संपोष्य विकास करते हुए संबंधित उद्योगों के विकास की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे, डॉ. श्यामाचरण – आदिवासी लोक कला परिषद, 1987
2. तिवारी डॉ वी.के.– छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ, 2001
3. Tiwari D.N. Primitiv eTribes of M.P.
4. Mahapatro, P.C. – Economic Development of Tribal India 1987 , New Delhi
5. Social History of Chhattisgarh, Agam kala Prakasham Delhi 1985
6. Chhattisgardh Redis Coverd, Aryan Book International Delhi 1995
7. मामोरिया डॉ. चतुर्भुज, भूगोल, साहित्यभवन पब्लिकेशन्स 2013.
8. भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2011
9. Census of India 2001 &2011
10. आर्थिक सर्वेक्षण – 2010–11, 2011–12, 2012–13.
11. Impact of Forestry Project on Tribal Economy Tribal & Harijan WelfarePlanning – Commission
12. 11वीं पंचवर्षीय योजना 2007–2012, छ.ग. रायपुर
13. 12वीं पंचवर्षीय योजना 2012–2017, छ.ग. रायपुर

तालिका 5– आंवला के मुख्य उत्पादन क्षेत्र

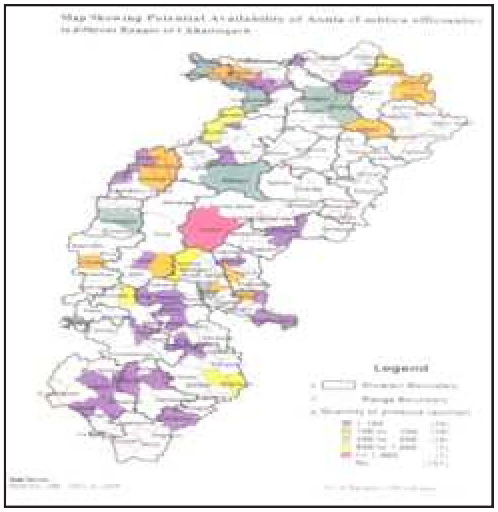

तालिका 4 – आंवला के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार

छत्तीसगढ़ राज्य के मुख्य बाजार	अन्य राज्य	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं. में)	मुख्य बाजार	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं. में)
धमतरी, रायपुर, बिलासपुर, जगदलपुर	मध्यप्रदेश	2321	कटनी	1600
	उमरिया	500		
	महाराष्ट्र	1250	मुंबई	800
	नागपुर	450		
	पश्चिम बंगाल	1600	वोलकाता	1600
	तमिलनाडू	540	चेन्नई	289
	दिल्ली	1300	दिल्ली	1300
	उत्तरप्रदेश	1550	वानपुर	420
	गाजियाबाद	300		
	योग	**8561**		**7259**

****

An Interesting Story of Earth's Magnetic Field and Earth's History

Dr. Anjleli Garg*

Abstract - The flux shields the surface of the world from the charged particles of the solar radiation and is generated by electrical currents situated in many various elements of the world. it's compressed on the day (Sun) aspect thanks to the force of the coming particles, and extended on the night aspect. Earth's flux (and the surface magnetic field) is around a dipole, with the flux S pole close to the Earth's geographic North Pole (see north Pole) and therefore the alternative flux N pole close to the Earth's geographic South Pole (see Magnetic South Pole). This makes the compass usable for navigation. The explanation for the sector may be explained by generator theory. flux extends infinitely, although it weakens with distance from its supply. The Earth's flux, conjointly referred to as the geomagnetic field, that effectively extends many tens of thousands of kilometres into house, forms the Earth's flux.

Introduction - A paleomagnetic study of Australian red volcanic rock and pillow volcanic rock has calculable the flux to be a minimum of three.5 billion years previous. Earth is essentially protected against the solar radiation, a stream of energetic charged particles emanating from the Sun, by its flux, that deflects most of the charged particles. a number of the charged particles from the solar radiation area unit treed within the James Alfred Van Allen radiation belt. A smaller range of particles from the solar radiation manage to travel, as if on AN magnetic attraction energy line, to the Earth's higher atmosphere and region within the auroral zones. the sole time the solar radiation is discernible on the world is once it's robust enough to provide phenomena like the aurora and geomagnetic storms. Bright auroras powerfully heat the region, inflicting its plasma to expand into the magnetic field, increasing the dimensions of the plasma layer, and inflicting escape of region matter into the solar radiation. Geomagnetic storms result once the pressure of plasmas contained within the magnetic field is sufficiently giant to inflate and thereby distort the geomagnetic field. The solar radiation is chargeable for the general form of Earth's magnetic field, and fluctuations in its speed, density, direction, and entrained flux powerfully have an effect on Earth's native house atmosphere. for instance, the degree of radiation and radio interference will vary by factors of a whole bunch to thousands; and also the form and site of the magnetopause and bow blast wave upstream of it will modification by many Earth radii, exposing fixed satellites to the direct solar radiation. These phenomena area unit together known as house weather. The mechanism of region removal is caused by gas being caught in bubbles of flux, that area unit ripped off by star winds. Variations within the flux strength are correlate to rain variation inside the tropics.

Magnetic poles and magnetic dipole - The positions of the magnetic poles will be outlined in a minimum of 2 ways in which. Often, a magnetic (dip) pole is viewed as some extent on the Earth's surface wherever the force field is entirely vertical. in a different way of claiming this can be that the inclination of the Earth's field is 90° at the North Magnetic Pole and -90° at the South Magnetic Pole. At a magnetic pole, a compass command within the horizontal plane points indiscriminately, whereas otherwise it points nearly to the North Magnetic Pole or off from the South Magnetic Pole, tho' native deviations exist. the 2 poles wander severally of every alternative and aren't at directly opposite positions on the world. dip pole will migrate quickly, observation of up to forty metric linear unit annually are created for the North Magnetic Pole. The Earth's force field will be closely approximated by the sphere of a dipole positioned close to the centre of the planet. A dipole's orientation is outlined by AN axis. the 2 positions wherever the axis of the dipole that most closely fits the geomagnetic field run across the Earth's surface area unit known as the North and South geomagnetic poles. For best match the dipole representing the geomagnetic field ought to be placed regarding five hundred metric linear unit off the middle of the planet. This causes the inner radiation belt to skim lower in Southern Atlantic Ocean, wherever the surface field is that the weakest, making what's known as the Atlantic Anomaly. If the Earth's force field were utterly couple, the geomagnetic and dip poles would coincide. However, important non-dipolar terms in AN correct description of the geomagnetic field cause the position of the 2 pole sorts to be in several places.

Field characteristics - The strength of the sector at the

*Department of Mathematics, Mahamaya Government College, Sherkot, Bijnor (U.P.) INDIA

layer ranges from but thirty microteslas (0.3 gauss) in a vicinity together with most of South America and African nation to over sixty microteslas (0.6 gauss) round the magnetic poles in northern North American nation and south of Australia, and partly of Siberia. the sector is comparable thereto of a magnet. The Earth's magnetic flux is usually caused by electrical currents within the liquid outer core. The Earth's core is hotter than 1043 K, the temperature temperature on top of that the orientations of spins among iron become randomised. Such organization causes the substance to lose its magnetization. Convection of melted iron among the outer liquid core, along side a issue caused by the planetary rotation, tends to prepare these "electric currents" in rolls aligned on the north-south polar axis. once conducting fluid flows across associate existing magnetic flux, electrical currents square measure iatrogenic, this successively creates another magnetic flux. once this magnetic flux reinforces the first magnetic flux, a generator is formed that sustains itself. this is often referred to as the generator Theory and it explains however the Earth's magnetic flux is sustained. Another feature that distinguishes the world magnetically from a magnet is its flux. At giant distances from the world, this dominates the surface magnetic flux. electrical currents iatrogenic within the region conjointly generate magnetic fields. Such a field is usually generated close to wherever the atmosphere is nearest to the Sun, inflicting daily alterations which will deflect surface magnetic fields by the maximum amount jointly degree. Typical daily variations of field intensity square measure concerning twenty five nanoteslas (nT) (i.e. ~ 1:2,000), with variations over some seconds of usually around one NGO (i.e. ~ 1:50,000). magnetic flux variations.The currents within the core of the world that make its magnetic flux started up a minimum of three,450 million years past. Magnetometers observe minute deviations within the Earth's magnetic flux caused by iron artifacts, kilns, some varieties of stone structures, and even ditches and middens in archeological geology. exploitation magnetic instruments tailored from mobile magnetic anomaly observeors developed throughout warfare II to detect submarines, the magnetic variations across the seabed are mapped. The volcanic rock — the iron-rich, igneous rock creating up the seabed — contains a powerfully magnetic mineral (magnetite) and might domestically distort compass readings. The distortion was recognized by Icelandic mariners as early because the late eighteenth century. a lot of necessary, as a result of the presence of iron ore provides the volcanic rock measurable magnetic properties, these magnetic variations have provided another suggests that to review the deep seabed. once fresh shaped rock cools, such magnetic materials record the Earth's magnetic flux. Frequently, the Earth's flux is hit by star flares inflicting geomagnetic storms, agitative displays of aurorae. The short-run instability of the magnetic flux is measured with the K-index. Recently, leaks are detected within the magnetic flux, that move with the Sun's solar radiation during a manner opposite to the first hypothesis. throughout star storms, this might lead to large-scale blackouts and disruptions in artificial satellites.

Magnetic field reversals - Based upon the study of volcanic rock flows of volcanic rock throughout the planet, it's been projected that the Earth's magnetic flux reverses at intervals, starting from tens of thousands to several numerous years, with a median interval of roughly three hundred,000 years. However, the last such event, known as the Brunhes–Matuyama reversal, is ascertained to possess occurred some 780,000 years past. there's no clear theory on however the geomagnetic reversals may need occurred . Some scientists have created models for the core of the world whereby the magnetic flux is simply quasi-stable and also the poles will ad lib migrate from one orientation to the opposite over the course of some hundred to some thousand years. alternative scientists propose that the geodynamo 1st turns itself off, either ad lib or through some external action sort of a estraterrestrial body impact, and so restarts itself with the magnetic "North" pole inform either North or South. External events don't seem to be seemingly to be routine causes of magnetic flux reversals because of the dearth of a correlation between the age of impact craters and also the temporal order of reversals. no matter the cause, once the magnetic pole flips from one hemisphere to the opposite this can be called a reversal, whereas temporary dipole tilt variations that take the dipole axis across the equator and so back to the first polarity square measure called excursions.Studies of volcanic rock flows on Steens Mountain, Oregon, indicate that the magnetic flux may have shifted at a rate of up to six degrees per day at a while in Earth's history, that considerably challenges the favored understanding of however the Earth's magnetic flux works. Paleomagnetic studies like these generally encompass measurements of the remnant magnetization of stone from volcanic events. Sediments set on the bottom orient themselves with the native magnetic flux, a proof that may be recorded as they solidify. though deposits of stone square measure largely magnet, they are doing contain traces of ferri- and magnetism materials within the variety of metallic element oxides, so giving them the flexibility to possess remnant magnetization. In fact, this characteristic is kind of common in various alternative kinds of rocks and sediments found throughout the planet. one in every of the foremost common of those oxides found in natural rock deposits is iron ore. As associate degree example of however this property of igneous rocks permits USA to see that the Earth's field has reversed within the past, think about measurements of magnetism across ocean ridges. Before rock exits the mantle through a fissure, it's at a particularly heat, on top of the Curie temperature of any metallic element compound that it's going to contain. The volcanic rock begins to chill and solidify once it enters the ocean, permitting these metallic element oxides to eventually regain their magnetic properties, specifically, the flexibility to carry a remnant magnetization. assumptive that

the sole magnetic flux gift at these locations is that related to the world itself, this solid rock becomes magnetic within the direction of the geomagnetic field. though the strength of the sector is very weak and also the iron content of typical rock samples is little, the comparatively little remnant magnetization of the samples is well at intervals the resolution of recent magnetometers. The age and magnetization of solid volcanic rock samples will then be measured to see the orientation of the geomagnetic field throughout ancient eras.

Magnetic field detection - Deviations of a magnetic flux model from measured information, information created by satellites with sensitive magnetometers. The Earth's magnetic flux strength was measured by Carl Friedrich Gauss in 1835 and has been repeatedly measured since then, showing a relative decay of concerning 100% over the last one hundred fifty years.The Magsat satellite and later satellites have used 3-axis vector magnetometers to probe the three-D structure of the Earth's magnetic flux. The later Orsted satellite allowed a comparison indicating a dynamic geodynamo in action that seems to be giving rise to Associate in Nursing alternate pole beneath the ocean west of S. Africa. Governments generally operate units that concentrate on measuring of the Earth's magnetic flux. These square measure geomagnetic observatories, generally a part of a national earth science Survey, as an example land earth science Survey's Eskdalemuir Observatory. Such observatories will live and forecast magnetic conditions that generally have an effect on communications, power, and alternative human activities. The International time period Magnetic Observatory Network, with over one hundred interlinked geomagnetic observatories round the world has been recording the earths magnetic flux since 1991. The military determines native geomagnetic field characteristics, so as to find anomalies within the natural background that may be caused by a major gilded object like a submerged submarine. Typically, these magnetic Associate in Nursingomaly detectors square measure flown in craft just like the UK's Nimrod or towed as Associate in Nursing instrument or an array of instruments from surface ships. Commercially, geology prospecting corporations conjointly use magnetic detectors to spot present anomalies from ore bodies, like the urban center Magnetic Anomaly. Animals together with birds and turtles will find the Earth's magnetic flux, and use the sphere to navigate throughout migration. Cows and wild ruminant tend to align their bodies north-south whereas quiet, however not once the animals square measure beneath high voltage power lines, leading researchers to believe magnetism is accountable.

Geomagnetic storm - A geomagnetic storm may be a temporary disturbance of the Earth's flux caused by a disturbance in house weather. related to star flares and resultant star chaplet mass ejections (CME), a geomagnetic storm is caused by a solar radiation undulation which generally strikes the Earth's flux three days when the event. The solar radiation pressure on the flux can increase or decrease counting on the Sun's activity. These solar radiation pressure changes modify the electrical currents within the region. Magnetic storms typically last twenty four to forty eight hours, however some might last for several days. In 1989, associate degree magnetic attraction storm discontinuous power throughout most of Quebec and caused aurorae as so much south as Lone-Star State. giant and probably damaging geomagnetic storms area unit foreseen for the peak of succeeding star macula cycle throughout the 2012-2013 amount

Historical occurrences - From August twenty eight till Gregorian calendar month a pair of, 1859, various sunspots and star flares were discovered on the sun, the most important flare occurring on Gregorian calendar month one. an enormous CME headed directly at Earth thanks to the solar radiation and created it inside eighteen hours — a visit that unremarkably takes 3 to four days. On Gregorian calendar month one – a pair of, the most important recorded geomagnetic storm occurred. The horizontal intensity of geomagnetic field was reduced by 1600 nongovernmental organization as recorded by the Colaba observatory close to Bombay, India. Telegraph wires in each the u. s. and Europe older evoked voltage, in some cases even stunning telegraph operators and inflicting fires. Auroras were seen as so much south as Hawaii, Mexico, Cuba, and Italy — phenomena that area unit sometimes solely seen close to the poles. This was the 1859 star superstorm. On March thirteen, 1989 a severe geomagnetic storm caused the collapse of the Hydro-Québec installation in a very matter of seconds as instrumentality protection relays tripped in a very cascading sequence of events. Six million individuals were left while not power for 9 hours, with important economic loss. The storm even caused auroras as so much south as American state. The geomagnetic storm inflicting this event was itself the results of a garland mass ejection, ejected from the Sun on March nine, 1989. Ice cores show proof that events of comparable intensity recur at a median rate of roughly once per five hundred years. Since 1859, less severe storms have occurred in 1921 and 1960, once widespread radio disruption was reportable. In August 1989, another storm affected microchips, resulting in a halt of all commerce on Toronto's exchange. Since 1989, power firms in North America, the UK, geographic region et al. evaluated the risks of geomagnetically evoked currents (GIC) and developed mitigation methods.[citation needed] Since 1995, geomagnetic storms and star flares are monitored from the star and Heliospheric Observatory (SOHO) joint-NASA-European house Agency satellite. On Gregorian calendar month twenty six, 2008 the magnetic fields erupted within the generator tail, cathartic concerning 1015 Joules of energy. The blast launched 2 large clouds of protons and electrons, one toward Earth and one aloof from Earth. The Earth-directed cloud crashed into the earth below, sparking vivid auroras in Canada and American state.

Interactions with planetary processes - The solar

radiation conjointly carries with it the magnetic flux of the Sun. This field can have either a North or South orientation. If the solar radiation has energetic bursts, getting and increasing the magnetic flux, or if the solar radiation takes a southward polarization, geomagnetic storms will be expected. The southward field causes magnetic reconnection of the dayside magnetopause, speedily injecting magnetic and particle energy into the Earth's magnetic flux. throughout a geomagnetic storm, the ionosphere's F2 layer can become unstable, fragment, and should even disappear. within the northern and southern pole regions of the world, auroras are going to be discernible within the sky.

Summary - Earth's force field could be a force field that emanates from Earth's core and encircles the planet. It may be checked out as type of a field that encompasses the planet and protects our planet from radiation. while not a force field, cosmic rays and radiation would enter our planet, and a variety of radiation from the sun referred to as the solar radiation would strip away Earth's atmosphere, destroying most kinds of life on our planet. The famed 'Northern Lights' area unit caused by the deflection of deadly cosmic rays by the Earth's force field. This 'force field' or magnetic field that encircles our planet extends many thousands of kilometers into house around Earth. we are able to imagine the planet collectively huge geomagnet, with a North Pole and a South Pole. The North Pole and South Pole area unit comparatively close to the highest and bottom of the earth, that is why and also then|every now and then} we have a tendency to reference the Arctic region because the North Pole and the space close to continent because the South Pole. force field lines extend from each these poles into house to form this magnetic field around Earth (see photo). Another attention-grabbing reality regarding Earth's force field is that it's tipped at Associate in Nursing angle of ten degrees from the Earth's axis.

References :-

1. Glatzmaier, Gary. "The Geodynamo". University of California Santa Cruz. Retrieved 20 October 2013.
2. Wei, Z.; Zvereva, T. I. (December 2010). "International Geomagnetic Reference Field: the eleventh generation". Geophysical Journal International. 183 (3): 1216–1230. Bibcode: 2010GeoJI. 183.1216F. doi:10.1111/ j.1365-246X.2010.04804.x.
3. Shlermeler, Quirin (3 March 2005). "Solar wind hammers the ozone layer". News@ nature. doi:10.1038 / news050228 - 12.
4. "Solar wind ripping chunks off Mars". Cosmos Online. 25 November 2008. Archived from the original on 4 March 2016. Retrieved 21 October 2013.Luhmann, Johnson & Zhang 1992 Structure of the Earth Archived 2013-03-15 at the Wayback Machine. Scign.jpl.nasa.gov. Retrieved on 2012-01-27.
5. McElhinny, Michael W.; McFadden, Phillip L. (2000). Paleomagnetism: Continents and Oceans. Academic Press. ISBN 978-0-12-483355-5.
6. Opdyke, Neil D.; Channell, James E. T. (1996). Magnetic Stratigraphy. Academic Press. ISBN 978-0-12-527470-8.
7. Mussett, Alan E.; Khan, M. Aftab (2000). Looking into the Earth: An introduction to Geological Geophysics. Cambridge University Press. ISBN 978-0-521-78085-8.
8. Temple, Robert (2006). The Genius of China. Andre Deutsch. ISBN 978-0-671-62028-8.
9. Merrill, McElhinny & McFadden 1996, Chapter 2 "Geomagnetism Frequently Asked Questions". National Geophysical Data Center. Retrieved 21 October 2013.
10. Palm, Eric (2011). "Tesla". National High Magnetic Field Laboratory. Archived from the original on 21 March 2013. Retrieved 20 October 2013.
11. Chulliat, A.; Macmillan, S.; Alken, P.; Beggan, C.; Nair, M.; Hamilton, B.; Woods, A.; Ridley, V.; Maus, S.; Thomson, A. (2015). The US/UK World Magnetic Model for 2015-2020 (PDF) (Report). National Geophysical Data Center. Retrieved 21 February 2016.
12. Casselman, Anne (28 February 2008). "The Earth Has More Than One North Pole". Scientific American. Retrieved 21 May 2013.

****

Impact of internet banking on customer satisfaction and business performance: a study of Bank of India

Niket Shukla*

Abstract - The study has been conducted in order to careful evolution and examines globalization in an online banking system. All the banking sector to be studied with great India reason for chosen online banking system satisfaction towards internet banking and to find out the problems encountered by the customers. This research will assist bank administrative to ascertain a better understanding of customer satisfaction towards online banking system offered by the bank of India in Bilaspur city of Chhattisgarh.
Keywords - Customer satisfaction, Online banking system Bank of India, Banking, Internet banking.

Introduction - This study analyses the customers satisfaction towards internet banking of all Banks has been elicited and analyzed. Furthermore, this part consists of demographic profile of customers and bank transaction details and reasons for using internet banking has been taken into consideration. As India taking giants leaps towards globalization in internet banking India, all the banking sector to be studied with great India. The question of how attitude towards element of existing banking service might influence to customer decision to used internet banking has not been investigated. As customer get more and educated, getting insight about modern banking, via internet banking has enrolled as primary data concern for all leading and upcoming banks in India. There is a clear need to develop a better understanding of how customers evaluate these services and boost up satisfaction. Customer satisfaction is one of the main aspects determining the success or failure of any electronic banking services in India. Online banking also known as electronic payment, that enables customer of a banks conduct range of financial transaction through the financial institution websites. The online banking system will typically connect to or be part of the core banking system operated by a bank and contrast to branch banking which was the traditional way customer accessed banking services.

Customer Satisfactions And Relationship In Internet Banking (see in last page)

Problem Statement: This study analyses the customers satisfaction towards internet banking of all Banks has been elicited and analyzed. Furthermore, this part consists of demographic profile of customers and bank transaction details and reasons for using internet banking has been taken into consideration system operated by a bank and contrast to branch banking which was the traditional way customer accessed banking services. The marvellous kinds of innovation in technology and hard line blend of it with information technology made a paradigm shift in the banking industry. Technology itself created its world in the globe of human beings. Advent of Internet banking happened in early 1990. This beginning of Internet Banking created a phenomenal system, Internet banking. Internet banking is a kind of systems that enable financial institution customers, individuals or Businesses, to access accounts, transact business, or obtain information on financial products and services through the Internet.

Scope Of The Study: In this customer satisfaction towards online banking system is value measured to an internet banking. The action which can increase the satisfaction level of customer towards online banking system and motivate them to use internet banking efficiently the study brings the attention of measurement towards the importance of online banking system.

Significance Of The Study: Research has been conducted in order to critically evaluate and examine the customer satisfaction towards online banking system of Bank of India. The purpose of this study is also observed and analyse the purpose of using internat. Reason for chosen customer satisfaction towards online banking system to find out the problems faced by customers, specifically this study highlights the important points that Bank of India to increase the number of users used online Banking system.

Objectives:

1. To study the various internet banking facilities provided to the customers by bank of India at Bilaspur city of Chhattisgarh.
2. To know the awareness of customer redirecting different internet banking facilities provided by Bank of India at Bilaspur city of Chhattisgarh.
3. To know the perception of the customer with respect to internet banking services in bank of India at Bilaspur

***Assistant Professor (Management) Dr. C. V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

city of Chhattisgarh.

4. To identify the problems faced by the customers and to provide suggestions for overcoming the problems faced by customers while using internet Banking services at Bilaspur City of Chhattisgarh.

Hypothesis Of The Study - Based on the review of earlier studies and pilot study, the following hypotheses have been formulated in order to ascertain the facts for arriving at suitable conclusions.

HO1: Consumers do not face any problems in using online Banking services.

Research Methodology: This chapter presents the brief methodologies imparted which constitutes population, sample of the study, research design, research instruments formulated to gather data and statistical tools used for analysis of data.

Population Of The Study: All the customers of Bank of India at Bilaspur are considered as population for the study.

Sampling Technique And Sample Size Of The Study: Stratified Random sampling' is used in the current study with an overall sample size of **100** respondents.

Research Design: Exploratory Cum Descriptive Research Design.

Research Instrument: The research instrument used for the study was the self-administered questionnaire.

Reliability Of The Instrument: In order to establish the issues around the topic and prior to final survey, the questionnaire was pre-tested on a sample of respondents similar in nature to the final sample. The goal of pilot survey was to ensure readability and logical arrangements of the questions.

Validity Of The Instrument: Designed instrument is send to subject expert and statistical experts for review. Both face validity and content validity of the designed instrument is checked by the experts.

Scaling Techniques: Likert scale **(Kothari, p-84-85)** was used for few of the questions to rate items on the questionnaire on five degree scale.

Analytical Tools Used In The Study: To analyze Primary data Percentage and frequency analysis were used. This method is most common in use and need not to require tools like SPSS.

1.Percentage = Actual responce of the respondents x 100
Total no. of respondents involved in the responce

Data Analysis And Interpretation: To access customer response, preferences and their satisfaction level researcher have quired customers about the frequency of uses, main reasons of choosing online banking services, main features and their level of satisfaction analysis of primary data collected are shown in the following pie chart.

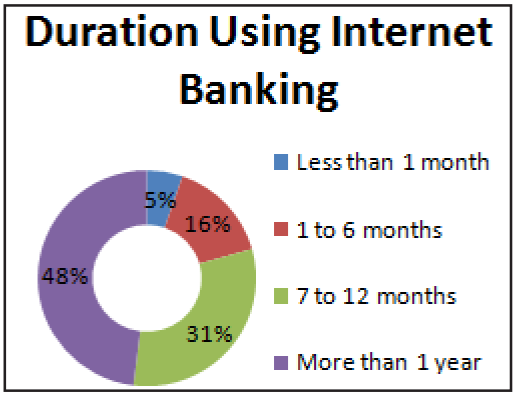

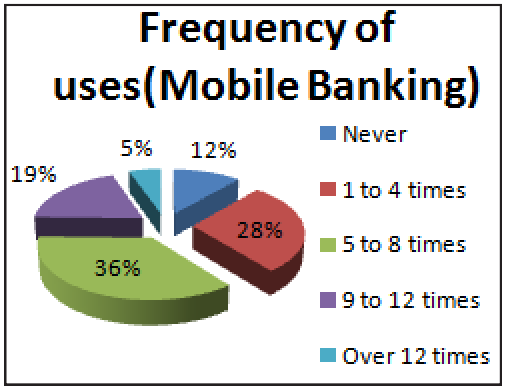

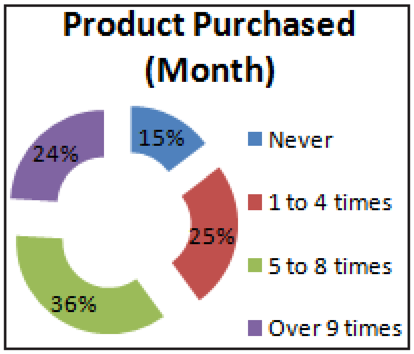

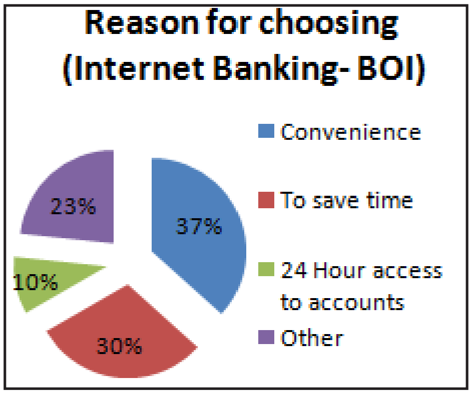

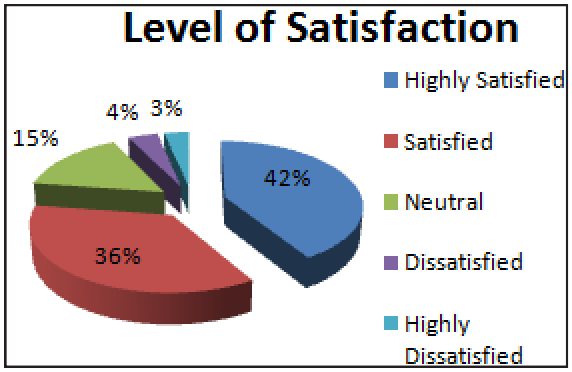

Interpretation: As for as frequency of uses is concern, after analysis it is found that most of the respondents i.e. 48% are using internet banking services of Bank of India from at least 1 year and 38% customers frequency of uses are 5 – 8 times in a month, then 24 % for 1- 4 times and surprisingly 14 % of the respondents are not using Internet Banking. To save time is the most popular reason for choosing online banking services and 44% are in the favor of the same, 16% of the respondents say that they use online banking services for the sake of access of their account. The most popular online banking feature is bill payments and among 50 respondents 16 respondents mostly use online banking services to pay their bills. process payroll is the least popular feature.22% of the respondents say transfer fund is a good feature of online banking service, after review and analyse all the data it seems like customers are highly satisfied with the internet banking services of Bank of India, few of the respondents i.e. 4% are highly dissatisfied with online banking services of Bank of India.

Results And Finding And Suggestions:

1. A problem of pin number hacking of some of the persons.
2. A providing the more than of security of internet banking.
3. Web page delay to opening a net banking.
4. Net banking is collected mainly more than of service charges of every transaction.
5. A majority of customer expectation of betterment of internet banking 40% respondent creates a more than awareness of internet banking.

Suggestions:

a. Suggestion For customers & Society.

1. Banks employee should take necessary steps to create awareness among rural people about the advantages of internet banking services available in the banks.
2. The e-banking system should be enhanced to make the online enquiry and online payment much easier to the customers.
3. Public sector banks should improve their internet banking services to compete with their private sector counterparts.

b. Suggestion for Banks.

1. The best strategy at the early adaptation stage is to provide and maximise the awareness regarding e-banking among customers.
2. To fulfil these objective banks should use every form of advertising such as TV commercials, advertisement in magazines, brochures, online advertisement etc. to educate customers about its advantages, so it can reach to the maximum number of existing and prospecting e-banking customers.
3. To reach maximum number of prospecting internet banking customers and banking staff should take initiative to inform them e-banking services provided by the bank.

Conclusion: This study analyses the customers satisfaction towards internet banking of all Banks has been elicited and analyzed. Furthermore, this part consists of demographic profile of customers and bank transaction details and reasons for using internet banking has been taken into consideration. As India taking giants leaps towards globalization in internet banking India all the banking sector to be studied with great India. The question of how attitude towards element of existing banking service might influence to customer decision to used internet banking has not been investigated.

References:-

1. Anita and Mahavir (2013). "Customer Satisfaction & Retail Banking: A Study of Customer Satisfaction in Retail Banking", International Journal of Reviews, Surveys and Research, pp.1-16
2. Arora S. and Malhotra Meenakshi (1997). "Customer Satisfaction: A Comparative Analysis of Public and Private Sector Banks", Decision, Vol.24, January-June, pp.109-130.
3. Bailey, J., & Pearson, S. (1983). Development of a Tool for Measuring and Analyzing Computer User Satisfaction. Management Science, 29(5), 530-545
4. Beckett, A., Hewer, P., & Howcroft, B. (2000). An exposition of consumer behavior in the financialservices industry. The International Journal of Bank Marketing, 18(1)
5. Bedi M. 2010, an integrated framework for service quality, customer satisfaction and behavioral responses in Indians banking industry, journal of services research, vol. 10(1), pp.157-72
6. Daniel, E. (1999). Provision of electronic banking in the UK and the Republic of Ireland. International Journal of Bank Marketing, 17(2), 72-82.
7. Gbadeyan RA, Akinyosoye-Gbonda OO (2011) Customers' Preference For EBanking Services: A Case study of Selected Banks in Sierra Leone. Australian Journal of Business and Management Research 1: 108-116.
8. Hallowell, R (1996). "The Relationships of Customer Satisfaction, Customer Loyalty and Profitability: An Empirical Study", International Journal of Service Industry Management, Vol.7, No.4, pp.27-42.
9. http://www.arraydev.com/commerce/jibc
10. http://www.google.com

Customer Satisfactions And Relationship In Internet Banking

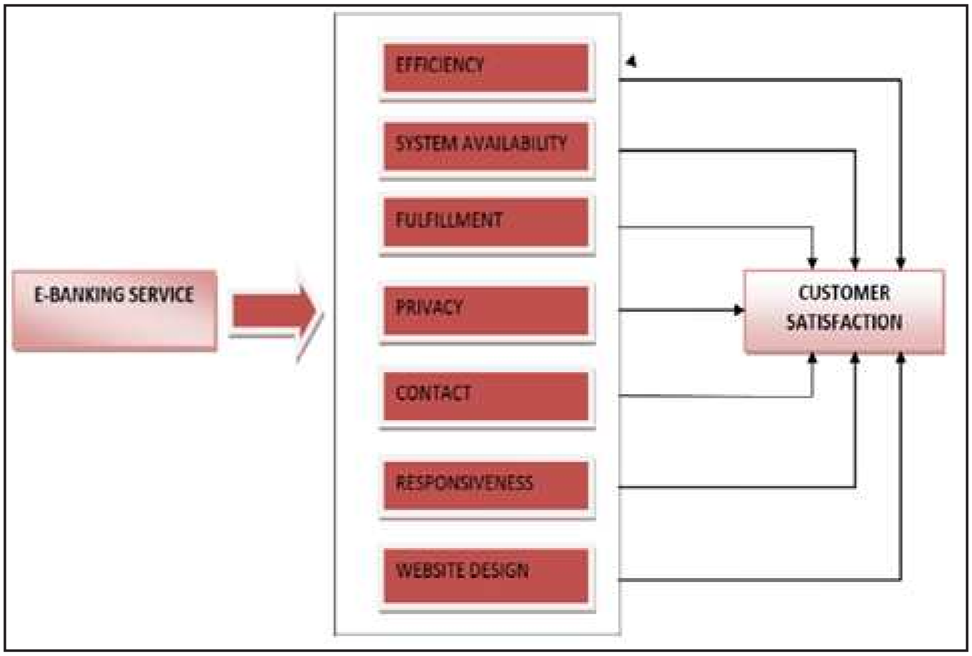

****

Quality of Life and Health Outcomes

Kapil Bala Panchal*

Introduction - World Health Organization (WHO) report said that by the year 2010 more than 60 percent of the world's heart patients and diabetic patients will be from India. Diabetes is an "iceberg" disease. Although increase in both the prevalence and incidence of the type 2 diabetes have occurred globally, they have been especially dramatic in societies in economic transition. In newly industrialized countries and in developing countries currently the number of cases of diabetes worldwide is estimated to be around 150 million. This number is predicted to double by 2025 (a prevalence rate of about 5.4 percent) with the greatest number of cases being expected in china and India.[1]

Diabetes and related disorders like obesity, hypertension, cardiac ailments, dyslipidemia are not on the high rise but have already escalated in alarming proportion leading to poor quality of life physically and mentally

Anxiety - The anxiety is the kind of psychoneurosis. Anxiety disorders are more common in the general population than are any other disorders. Anxiety may play a role in many disorders. The most important symptoms include both vague fears and apprehension are accompanied in many cases by increased activity of sympathetic nervous system which is manifested by physical signs such as sweating, rapid heartbeat, rapid respiration tremor, gastrointestinal distress, insomnia, dizziness, muscle twitches, fearfulness, hyperventilation, dry mouth etc.[2] The individual suffering from anxiety neurosis has difficult difficulty in making his own decision. He feels helpless and dependence, but does not like his dependence on other. He feels insecure; the feeling of insecurity gives rise to a sense of unimportance and a disbelief in once abilities. He regards his success either as accidental or due to other people's kindness. Other symptoms of the sensitivity to the attitude of others. Suspicious of others motives the tendency to interpret others, chance remarks as criticism, irritability, inability to concentrate and swings of moods from excitement to depression. The anxiety neurotic patient constantly seeks medical attention, does not feel happy to learn that he has no organic illness. He is difficult to treat, among the major anxiety disorders are-

1. Generalized anxiety.
2. Panic attacks disorder.
3. Phobia or phobic disorder.
4. Obsessive compulsive disorder

Stress - The Term 'Stress' in medicine and biology today is used in a number of different ways. It may refer to external forces or conditions experienced by the organisms, or to the reaction of the organisms to these.[3]

When applied to external forces the term stress is similar to its use in physics and applies to an external stimulus or force which is strain-producing, or potentially strain-producing to the person to whom it is applied. Anything may be considered a stress if it threatens the biological integrity of the organism whether directly by its physical or chemical properties or indirectly because of its symbolic meaning. According to Colmen "Stress, like a motive may be partly or wholly unconscious, though the presence of uneasiness or anxiety may be the clue that stress is present. Stress inevitable and sometimes chosen voluntarily, mental health results not from lack of stress but ability to cope with it satisfactory."[4]

According to lazarus and Folkman 1984:- Stress as an internal state which can be caused by Physical demands on the body (Disease conditions, exercise, extremes of temperature and the like) or by environmental and social situations which are evaluated as potentially harmful, uncontrollable, or exceeding our resources for coping.

The Physical, Environmental, and Social causes of the stress state are termed stressors. Or stressors are the situations, or events which cause the stress responses of the body. Training, the client attention is focused on specific parts of the body together with such mental images as heaviness and warmth.

Diabetes - The American diabetes Association (ADA) defines "diabetes is a group of metabolic disorders characterized by hyperglycemia (increase in serum glucose) glycosuria (increase in urinary sugar) resulting from relative or absolute defects of Insulin secretion impaired action of insulin on target tissues or both". The chronic nature of diabetes is associated with of long term damage, dysfunction and failure of various organs.

"Diabetes is the result of lack of effective insulin action. Insulin is a hormone secreted by the beta cells of islets of Langerhans which are an endocrine portion of the pancreas some minute quantities of insulin are also known to be secreted by the muscle tissue for its own use". For this

*Research Scholar (Psychology) D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

reason moderate amount of muscular exercise (Long walk, swimming) is always advocated for diabetic patients. This hormone is necessary for release of energy from glucose, which is a simple sugar from carbohydrate sources.

Lack of insulin may be either absolute or relative. Absolute insulin deficiency does not occur normally. It occurs only in patients whose pancreas has been operated upon for the removal of a malignant tumor.

Relative insulin deficiency occurs when the quantity of insulin secreted is insufficient to metabolize the carbohydrates consumed.

In a majority of patients however the disease develops apparently unprovoked probably as a result of a hereditary predisposition i.e. an inherent weakness of beta cells.

In a normal person the values of blood glucose level while fasting is between 70-110 mg percent and may reach up to 130 mg percent post prandially with a peak level of 150 mg percent but not exceeding 170 mg percent. The normal renal threshold of glucose is 150-170 mg. percent.

Complications Of Diabetes Type 2-

1. Coronary artery disease.
2. Hypertension.
3. Diabetic nephropathy.
4. Diabetic foot ulcers
5. Diabetic neuropathy
6. Diabetic retinopathy
7. Erectile dysfunction
8. Psychological problems etc

Management of Diabetes Objectives :

1. To improve blood glucose and lipid level.
2. To promote consistent day to day in take for people with insulin dependent diabetes and weight management for people with non-insulin dependent type.
3. To encourage healthy eating habits.

a. The main modes of treatment of diabetes are -

4. Diet
5. Oral hypoglycemic drugs
6. Physical activity
7. Education

Diet - Dietary measures are an essential part of the treatment of diabetic patients. Whether they are on diet alone or on sulphonylurea drug or insulin. If a fixed daily intake is to be achieved an exchange system is necessary.

Aetiology of Diabetes - Pattern of inheritance and the environmental factors differ in IDDM and NIDDM.

IDDM : (In dian Dependent Diabetes Melitus) - Genetics : The inheritance of human IDDM in polygenic. It has been estimated that over 50 percent of the heritibility is contributed by the HLA class II Jenus (Chromosome 6).

Environmental Factors :

Infetions - Infections cause a non-specific outpouring of catabolic hormones which antagonise insulin action and then may trigger the onset of the disorder.

There is increasing evidence that Type 1 diabetes, especially in the younger patients, follow a coxsackie or other virus infection. There is sometimes a long interval between the infaction and the onset of symptoms. The virus may trigger an antoimmune reaction in the pancreatic is let and this impairs insulin secretion and ultimately destroy the B-cells.

Acute Stress - The normal glucose homeostasis in the body is achieved by a delicate interplay of various hormones. The body releases actrenaline noradrenaline, and cortisol hormones that raises blood glucose level to provide a quick source of energy for coping with stress. In acute cases of stress blood glucose levels may rise.

Quite profoundly and in extreme cases diabetic ketosis and coma also may result particularly among those with a genetic predsiposition.

Physical injury surgery and emotional distress sometimes precede the first symptoms of diabetes. Like infection, these cause a sudden increase in secretion of catabolic hormones which may precipitate the disorder.

Immunological Factors - IDDM is a slow autoimmune disease. IDDM is associated with other autoimmune disorders hyperglycemia accompanied by the classical symptoms of diabetes occurs only when 90 percent of insulin secreting cells are already distroyed.

NIDDM : (Non insulin dependent diabetes melitus)

Genetics - Indians have a high genetic risk for diabetes. NIDDM is no HLA-linked and there is no evidence that autoimmunity or viruses have anything to do with its development.

NIDDM is commonly associated with obesity, hypertension and hyperlipidemia. In all this insulin resistance being the primary defect know as syndrome X or metabolic syndrome. Therefore, it seems likely that NIDDM represent a combination of major and minor genes affecting insulin secretion, insulin action and obesity. A mutation of the glucokinase gene is associated with some cases of uncommon syndrome of maturity onset diabetes in the young (MODY).

Environmental Factors :

Life Style - NIDDM is associated with people who are obese and underactive usually they prereat. The majority of middle aged diabetic patients are obese but only a few obese people develop diabetics obesity probably acts as a diabetogenic factor through increasing resistance to the action of insulin among those genetically predisposed to develop NIDDM. Recently resisting a systeine rich secratory protein has been implicated at the molecular link between obesity and type II diabetes.

Higher intake of refined grains which have high GI (Glyoemic Index) abrevation combined with sedentary activity could be major reasons for incidence of obesity, diabetes and CVD (cardiovascular disease abravation) epidemic in India.

Age - NIDDM is principally a disease of the middle aged and elderly half of all new cases of type II diabetes occur among people over age 55.

Abdominal Fut - People with a high waist/hip ratio -

indicating that fat is largely in the abdominal cavity - has a greater risk of diabetes than people with a similar amount of fat distributed peripherally. This probably relates to the insulin insensitivity which is caused by a high flux of free fatty acids in the portal circulation. Since intra-abdominal fat cells can release fatty acids very rapidly.

Diabetes is the increasingly growing metabolic of the era. It was first described[1] in an Egyptian manuscript from 1500 BC, mentioning "too great emptying of the urine."[5] Late on, Indian physicians described also the disease and classified it as honey urine by the fact that ants were attacked by patient's urine. Diabetes type 1 and 2 were recognized for the first time as separate conditions by the Indian physicians Sushruta and Charaka in 400-500 BC, linking type 1 diabetes with youth and type 2 with obesity.

It is well established that the prevalence of diabetes has increased in the developed and developing countries during the last four decades. That is a result of the abundance of food, the consequent change of our dietary habits and the lack of exercise. According to International diabetes federation, nowadays , one every 11 adults have diabetes. The 12% of the global expenditure is spent on diabetes and the prevalence of undiagnosed diabetes was 34%.

Health related quality of life meaning - According to United States centers for Disease Control and Prevention (CDC) quality of life is a multidimensional concept that includes evaluation of both positive and negative aspects of a person's life. Since the 1980s the term health related quality of life has comprised those aspect of quality of life that can be shown to affect physical or mental health. Health Related Quality of Life includes physical and mental health perceptions (health conditions, social and socio-economic status) and community level resources, conditions. According to all these centres for disease control and prevention has defined health related quality of life as, "an individuals or groups perceived physical and mental health over time.

Studies about health related quality of life and diabetes - In a Chinese study involving type 2 diabetics by Zhang et al[6], which was part of a program reported that over 80% of diabetics had either hypertension or dyslipidemia and over half were obese.

In the Dutch study by Redekop et al.[7] in type 2 diabetics older patients, female subjects, treatment with insulin. Obesity and presence of complications were correlated with a lower health related quality of life.

A Greek study[6] of elderly people living in rural place showed that the most important predictors of impaired health related quality of life were female gender, lower education (60.5 in the SF 36 Psychometric tool), being unmarried (59.6 in the SF 36 psychometric too), obesity (60.5 in the SF 36 psychometric too) were also associated with impaired HRQOL.

Management of Diabetes - Through lifestyle and diet modification studies have shown that there was significant reduction in the incidence of type 2 diabetes mellitus with a combination of maintenance of body mass index of 25 kg/m^2 eating high fibre and unsaturated fat and diet low in saturated and trans fats and glycemic index, regular exercise, abstinence from smoking and moderate consumption of alcohol.[8] Suggesting that majority of type 2 diabetes mellitus can be prevented by lifestyle modification. Patients should receive a medical nutrition evaluation lifestyle recommendations should be tailored according to physical and functional ability.[9]

Lifestyle intervention for preventing diabetes :

1. Physical activity interventions
2. Healthy eating
3. Behaviour change interventions
4. Obesity management

Conclusion - Diabetes and its related complications impose heavy health burdens worldwide and there have been not effective measures to fully cope with the disease. The main cause of the diabetes epidemic is the interaction between genetic and environmental risk. A wide variety of lifestyle factors are also of great importance to the development of diabetes type-2. Such as sedentory lifestyle physical inactivity[10], smoking[7] and alcohol consumption[41] studies have also shown that a low fibre diet with a high glycemic index is positively associated with a higher risk of diabetese mellitus.

Accumulating evidence supports that vitamin D may have a potential role in the control of diabetes.[11]

References :-

1. Aikatenini et al. Type 2 diabetes and quality of life. World Journal of Diabetes 2017 April 15.
2. Brian C, Leutholtz, Ripoll. I. Exercise and disease management 2nd ed. CRC Press, Roll. pp. 256, p. 9, B/W illustrations.
3. Papadopoulos A.A., Kontodimopoulos N, Fryda S. A., Ikonomakis, E. Niakas D. 2007. Predictor of health related quality of life in type II diabetic patients in Greece. BMC Public Health.
4. Centers for Disease Control and Prevention. Measuring healthy Days : Population assessment of health. Related quality of life, 2000, Atlanta, Georgia.
5. Gandek, B. Sindair S.J. Kosinski M, Wase J.E. 2004. Psychometric evaluation of the SF-36 health survey in medicare managed care. Health Care Financ Rev.
6. MC Horney C.A. 1999. Health status assessment methods for adults; Past accomplishments and future challenges. Annu. Rev. Public Health.
7. Selim AJ, Rogers W. Fleishman JA, Qian SX, Fincke BG, Rothendler JA, Kazis LE, 2009. Updated U.S. Population standard for the Veterans RAND 12 item health survey VR-12 Qual. Life Res.
8. Zhang, Oyla Ko G. Brow N, Ozaki R, Tong P. Ma, R, Tsang C, Chekng, Y. Kong, A. Chow, C. et al. 2014. On behalf of the joint Asia diabetes foundation, Hong Kong. Health Relation Quality of life in Chinese Patients

with type 2 diabetes An analysis of JADF program.

9. Redekop WK, Koopmanshap, MA, Stolk RP, Rutten GE, Wolffenbuttel BH, Niessen LW, Health Related Quality of life and treatment satisfaction in Dutch Patients with type 2 diabetes, 2002, p. 458-463.
10. Hu FB, Manson JE, Stanfer MJ et al. 2001. Lifestyle and the risk of type 2 diabetes mellitus in women 790-797 (pubmed)
11. Manson JE, Ajani UA, Liu S. et al. 2000. A prospective study of cigarette smoking and the incidence of diabetes mellitus among US male physicians. 538-542 (Pubmed)
12. Cullman M. Hilding A. Ostenson CG, 2012. Alcohol consumption and risk of pre diabetes and type 2 diabetes, development in a Swedish population, 441-452 (Pubmed).

****

वागड में लिपि का विकास

नीता चौबीसा* डॉ. अजात शत्रु सिंह राणावत** डॉ. करुणा जोशी***

वागड़ क्षेत्र का सामान्य परिचय – दक्षिणी राजस्थान में जो आदिवासी बहुल क्षेत्र है जो माही नदी के किनारों पर विकसित हई सभ्यता और संस्कृति को अपनी कुक्षी में पल्लवित विकसित सम्हाले हुए, वागड़ नाम से जाना जाता है। वागड़ का प्राचीन गौरव व इतिहास यह बताता है कि राजस्थान का दक्षिणी अंचल सदियो से प्राकृतिक सौन्दर्य की गरिमा से शोभायमान रहा है। राजस्थान का यह दक्षिणी भाग वागड़ नाम से प्राचीन काल से ही सुविख्यात रहा है। राजस्थान के इतिहास में इस ठेठ आदिवासी दक्षिणी अंचल का 'वागड़' नाम लगभग एक सहस्त्र शताब्दी प्रचलित है। संस्कृत के विद्धानों ने वागड़ को संस्कृत रूप प्रदान करने के उद्देश्य से 'वाग्वर' 1 'वैयागड' 2 'वागट' 3 या 'वार्गट' 4 और प्राकृत के विद्धानों ने उसका प्राकृत रूप 'बग्गड' अभिहित किया।[1] 'वग्गड़' शब्द का अर्थ है जंगल या उजाड़ प्रदेश! वागड से प्राप्त अभिलेखों के अनुसार इस क्षेत्र की प्राचीन राजधानी 'वटप्रद्रक' थी जिसको आज बड़ौदा नाम से जाना जाता है। ऐतिहासिक सामग्री, शिलालेख एव ताम्रपत्रों मे 'वागड' शब्द का प्रयोग देखनेको मिलता है। पूर्व में वागड़ प्रदेश में डूंगरपुर और बासवाड़ा राज्य के साथ उदयपुर राज्य का छप्पन मेवाड का कुछ भाग, कांठल बनासकांठा,गुजरात के माही कांठा तथा रेवाकांठा के कुछ भाग आते थे ।मध्यप्रदेश, गुजरात,व मेवाड़ के महत्वपूर्ण संधिस्थल व हस्तिनापुर से द्धारिका के अरब सागरीय व्यापारिक मार्ग पर पड़ने से वागड पर सदैव गुजरात व मालवा व कालांतर में मेवाड़ के शासकों की दृष्टि जमी रही। यही कारण है की प्राचीन काल से ही वागड की सीमाएं कभी एक सी न रही युगानुरूप बनती बिगड़ती रही।स्वतन्त्रता के उपरांत राजस्थान के नवगठन व एकीकरकरण से वर्तमान में वागड़ क्षेत्र में बासवाड़ा और डूंगरपुर जिले ही आते है पर प्राचीन वागड की सीमाएं मध्यमप्रदेश के मन्दसौर, झाबुआ, रतलाम, नीमच, धार से गुजरात के लाट प्रदेश दोहद, सूरत, बड़ोदा, संतरामपुर, मेघरज, शामलाजी आदि तक विस्तृत था। न केवल राजनैतिक अपितु सांस्कृतिक दृष्टि से भी दीर्घकाल तक वागड गुजरात और मालवा का हिस्सा रहा जिसका प्रभाव यहां के परम्पराओ, रितिरिवाजो पर ही नही अपितु भाषाई व लिपि विकास पर भी दृष्टिगोचर होता है।यहाँ के मूल निवासी भील जनजाति के है जिनकी मूल स्थानीय भाषा 'भीली' गुजरात से मध्यप्रदेश तक कायिक भीली से प्रभावित है,जिसे वागड़ी कहा जाता है जो स्थानीय भौगोलिक आंचलिक प्रभाव को दर्शाती है।

वागड में भाषाई और लिपि का विकास – भीली, संस्कृत, पैशाची, शौरसेनी, अपभ्रंश और भूतभाषा के रूप में चरणबद्ध रूप से क्रमिक रूप से विकसित हुई वागड़ी बोली का अपना मौलिक शब्दकोश अत्यंत विस्तृत व समृद्ध है जिसमे लोक गाथाओ,लोकगीतों,कहावतों,लोकक्तियो का बड़ा योगदान है।व्याकरणिक दृष्टि से गुजराती का इस पर बड़ा प्रभाव है और शाब्दिक दृष्टि से इसमें गुजराती, राजस्थानी, मेवाड़ी, मालवी, भीली, रांगठी व निमाड़ी के शब्दों का मेल पाया जाता है क्योंकि किसी भी भाषा और बोली के विकास पर भौगोलिक परिदृश्य व आंचलिकता का व्यापक प्रभाव होता है,यही प्रभाव वागड़ी के संदर्भ में भी देखा जाता है।इसकी अपनी कोई मौलिक विशेष लिपि नही है अपितु वागड में भी लिपि का विकास उसी क्रम में दिखाई पड़ता है जैसा कि भारत के अन्य भागों खासतौर पर गुजरात मे हुआ है। सम्भव है इसका कारण सुदीर्घ काल तक गुजरात के लाट प्रदेश का वागड का हिस्सा होना रहा हो।प्रो.डॉ एल डी जोशी द्धारा वागड़ी बोली के विकास के अध्ययन पर किये शोध में उन्होंने इस तथ्य को इंगित किया है,जो बहुत हद तक तथ्यपूर्ण भी है।[2] दक्षिण राजस्थान में कविता रचने की परंपरा बहुत पुरानी है। यहां का भाषाशास्त्रीय अध्ययन भरत के नाट्य शास्त्र के समय सर्वप्रथम हुआ था। राजशेखर ने काव्यमीमांसा में लिखा है कि दसवीं सदी तक दक्षिणी राजस्थान में स्थानीय भाषा में कविता होने लगी थी।उसने दशपुर में होने वाली काव्य सभाओं का विवरण भी दिया है।भरताचार्य ने भी नाट्यशास्त्र चंबल से लेकर आबू तक का भाषा शास्त्रीय अध्ययन किया था और इसे 'तकार' बोली वाला प्रदेश बताया है।इसमें बोले जाने वाली स्थानीय बोलियों को लोक नाट्य के संवादों में प्रयुक्त भाषा के रूप की स्वीकृति दी है। यह निश्चित ही वागड़ के भाषाई विकास के लिए गौरव की बात है।मेरुतुंग की प्रबन्धचिन्तामनी में तो जयसिंह सिद्धराज जो वागड का शासक रहा है को जेसल के रूप में लोल नायक बना कर गवरी का मुख्य पात्र व्याख्यायित किया गया है वागडी को हीन बोली समझने वालों को समझना चाहिए कि वह भी एक युग था जब राजदरबारो में वागड़ी काव्य की छटा भूतभाषा के रूप में बिखरती थी और लोक नाट्यो के संवाद रचे जाते थे ![3] प्राय: आज भी इनकी बानगी बहुतेरे आदिवासी लोकनाट्यों गलालेंग गाथा,वीर गाथाओं आदि में सदियों से परम्परागत रूप से देखी जा सकती है।प्राचीन काल से आज तक वागड़ी वह बोली रही है जिसका प्रयोग कभी लोकनाटकों के संवादों, काव्यों, अभिलेखों और वंशावली लेखन में किया जाता था। जहाँ तक वागड में लिपि के विकास का प्रश्न है उसका चरणबद्ध अध्ययन हमें यहां से प्राप्त प्राचीन शिलालेखो, ताम्रपत्रों व अभिलेखों से ज्ञात होता है।

भारत मे लिपि का विकास – सम्पूर्ण मानव सभ्यता का सबसे बड़ा आविष्कार है लिपि का विकास ।भाषा का आधार ध्वनि होती है। भाषा श्रव्य

* शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** मुख्य शोध निर्देशक, प्रभारी इतिहास विभाग, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
*** सहा. शोध निर्देशक , प्रभारी इतिहास विभाग, राजकीय एस बी पी महाविद्यालय, डुंगरपुर (राज.) भारत

या कर्णगोचर होती है।संसार की बहुत-सी लुप्तप्राय सभ्यताओं के बारे में आज हम बहुत कुछ प्रामाणिक ढंग से इसीलिए जानते हैं कि वे अपने बारे में शिलालेखों,भाँडो और साहित्य ताम्रपत्र भोजपत्र,ताड़पत्रों आदि पर बहुत-कुछ लिखा हुआ छोड़ गई हैं। लिपि का शाब्दिक अर्थ ही होता है -लिखित या चित्रित करना।प्राचीन काल के मानव ने अपने विचारों को सुरक्षित रखने के लिए कुछ ऐसे प्रतीक-चिह्नों का आविष्कार, संयोजन निष्पादन किया कि जिनके द्वारा श्रव्य भाषा को दृष्टिगोचर और सुगम बोधगम्य बनाया जा सके जिसे लिपि कहा जाता है। सुनी या कही हुई बात केवल उसी समय और उसी स्थान पर उपयोगी होती है। किंतु लिपिबद्ध कथन या विचार दिक् और काल की सीमाओं को लांघ सकते हैं। लिपि के बारे में यही सबसे महत्तवपूर्ण बात है जिसका अतीत की बोधगम्यता और ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्व है। समय ,काल और स्थान के अनुरूप कई लिपियों का विकास होता रहा है जिसमे से कुछ मिस्र, मेसोपोटामिया और चीन की आरंभिक लिपियां मुख्यत: भाव-चित्रात्मक थीं। सिंधु जैसी कुछ विस्तृत लिपियों को अभी पढा नही जा सका है। आज पूरे विश्व में लगभग 400 विभिन्न लिपियों का प्रयोग होता है। इनमें से बहुतों का आरंभ एवं विकास प्राचीन काल की कुछ प्रमुख लिपियों से हुआ है। जैसे, दूसरी सहस्राब्दी में सेमेटिक अक्षर मालात्मक लिपि अस्तित्व में आई। 1000 ई. पू. के आसपास इस लिपि ने व्यंजनात्मक या वर्णमालात्मक रूप धारण किया। इसके अलावा 'उत्तरी सेमेटिक', 'कनानी' या 'फिनीशियन' यूनानी लिपि और इससे निर्मित विकसित लैटिन या रोमन लिपि है जिसके आधार पर कालांतर में यूरोप व अमेरिका की कई लिपियों का जन्म हुआ।[4]

प्राचीन काल से ही लेखन-कला को पवित्र माना जाता रहा है। प्राय: सभी प्राचीन सभ्यताओं ने अपनी लिपियों के आविष्कर्ता के रूप में किसी न किसी देवता की कल्पना की है। भारत में यह मान्यता थी कि लिपि के निर्माता ब्रह्मा हैं, और शायद इसीलिए हमारे देश की प्राचीन लिपि का नाम ब्राह्मी पड़ा। जहां तक भारत में लिपि का इतिहास अध्ययन करते है तो ज्ञात होत है कि भारत में लगभग छठी शताब्दी ई.पू. में अस्तित्व में आई ब्राह्मी लिपि ऐसी धात्री लिपि है जिसने यहां बहुत-सी लिपियों को जन्म दिया। भारत की सारी वर्तमान लिपियां (अरबी-फारसी लिपि को छोड़कर) ब्राह्मी से ही विकसित हुई हैं। इतना ही नहीं तिब्बती, सिंहली तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों की बहुत-सी लिपियां ब्राह्मी से ही जन्मी हैं। तात्पर्य यही कि धर्म की तरह लिपियां भी देशों और जातियों की सीमाओं को लांघती चली गई। भाषाओं की सीमाएं लांघना तो लिपियों के लिए बहुत ही सरल काम रहा है। जो लिपि आरंभ में एक सेमेटिक भाषा के लिए अस्तित्व में आई थी, उसे बाद में 'भारोपीय भाषा परिवार' की अनेक भाषाओं के लिए अपना लिया गया।[5]

अभिलेखीय आधारों पर वागड में लिपि का विकास - प्राचीन अभिलेखों की आखर-ज्योति वागड में किस भांति, कहाँ-कहाँ किस विध अपने अंक से आलोकित होती है और हमें अतीत के गौरव से साक्षात्कार करवाती है, यह देखने के लिए हमे वागड से प्राप्त हुए प्राचीन अभिलेखों के गलियारों में झांकने की आवश्यकता है।पुराणों में पुण्यदेशों के रूप में सुविख्यात रहा वागड प्रदेश जनजातिय गणराज्य के रूप में उभर कर शीघ्र ही सारस्वत ब्राह्मणों का निवास स्थल भी बन गया।सातवी शताब्दी तक आते आते स्कंद पुराण में कुमारिक खंड में यह स्पष्ट रूप से वर्णित है कि तब तक वागड सारस्वत ब्राह्मणों के निवास गुप्त स्थल के रूप में स्थल मंडल के रूप में वर्णित हुआ है।एक मंडल का अर्थ एक ऐसी विस्तृत मौलिक भौगौलिक इकाई जिसकी अपनी संस्कृति हो, पहचान हो जिसके भीतर बहुतेरे गांव पड़ते हैं।वागड को स्कंदपुराण में एक देश के रूप में परिभाषित किया गया है।वस्तुत: वागड अशोक मौर्य के गिरनार जूनागढ़ क्षेत्र में पड़ने वाला शासनान्तर्गत क्षेत्र था तदन्तर अहार शब्द सातवाहनों के समय से प्रचलन में आया जबकि उत्तर गुप्तकाल में जनपद का प्रचलन बहुत होने लगा था। इसी काल मे वागड में भी अभिलेखों में जनपद शब्द का प्रयोग हुआ है। इससे लगता है कि यह परमारों के अधीन एक जनपद था। वागड के लिए जनपद का यह पहला अभिलेखीय संदर्भ है।वागड के ताम्रपत्र में भी यह शब्द दो बार आया है। संस्कृत हो या अपभ्रंश या पैशाची जैसी पूर्व भाषाएं,हमारे पुराणों और उपपुराणों में हमारी भाषाओं को प्रारम्भ में जहां ब्रह्माक्षर[6] में लिखने का निर्देश हैं, वहीं बाद में नन्दिनागरी लिपि में लिखने का निर्देश मिलता है।

वागड में प्रचलित थी ब्राह्मी लिपि - दक्षिणी राजस्थान के वागड के आसपास के क्षेत्र में ब्राह्मी लिपि पांचवीं सदी तक प्रचलन में थी। इसके पठन पाठन की प्रक्रिया लोक समुदाय के शिल्पियों में भी स्थानीय इलाके में विशेषकर प्रचलित थी। खासकर गृहोपयोगी वस्तुओं, बर्तनों ,मर्तबानों पर नाम लिखने की परंपरा आज की भांति ही यहां पांचवी शताब्दी के आसपास भी उसी तरह प्रचलन में थी, जैसी आज धातुओं के बर्तनों पर अपना, उपयोगकर्ता या खरीददार के नाम लिखने की परंपरा वागड में मौजूद है।वर्तमान डूंगरपुर से लगे शामलाजी की देवनमगरी के आसपास 1962 में जो खुदाई हुई है, उसमें मिले एक मिट्टी के ठीकरे पर ब्राह्मी में लिखे चार अक्षर मिले हें।ये अक्षर बर्तन बनाने वाले कुंभकार के लिखे हुए हैं। उसने अपना नाम लिखा या खरीदने वाले का, कहा नहीं जा सकता है। यह विचार आता है कि शायद उसके बर्तन प्रसिद्ध रहे हों, और वह कोई नाम अंकित कर देता है, वैसे अंतिम विचार नहीं है मगर यह तय है कि ये अक्षर ब्राह्मी के हैं। इन चारों ही अक्षरों के आधार पर 'बदशले' या 'बहशले' अथवा 'बहधाले' शब्द बनता है। इनका क्या आशय है ज्ञात न हो सका है।[7]

ब्राह्मी लिपि के वागड क्षेत्र में प्रचलन का जीता जागता उदाहरण वागड डूंगरपुर के मोदर के ऊपरी जंगलों से निकलने वाली मेशवा नदी के किनारे आधुनिक गुजरात व प्राचीन वागड में पड़ने वाले देव नी मोरी क्षेत्र के चौथी पांचवी शताब्दी के बौद्ध विहारों से मिले मर्तबान पर ब्राह्मी में खुदे अक्षर प्राप्त हुए है।ब्राह्मी लिपि के इस लेख में शक संवत 127 में क्षत्रप शासक रुद्रसेन नाम के साथ बौद्ध साधु अग्निवर्मा और लिपि को लिखने वाले का नाम मंग के पुत्र वराह का नाम और कांच के जार में बुद्ध के अवशेष के साथ दशबल शरीर निलय आदि ब्राह्मी लिपि में लिखा मिलता है।पुराविद् आरएन मेहता और एजे पटेल ने इन अक्षरों को पढ़ते हुए इन्हें चौथी ,पांचवी सदी का स्वीकार किया है।[8]

जूनागढ व गिरनार के अशोक मौर्य के अभिलेख से यह जाहिर होता है कि पश्चिमी प्रान्त के रूप में अशोक ने बौद्ध धर्म का प्रचार ही नही अपितु अपनी सांस्कृतिक सीमाओं का विस्तार भी वागड तक किया था जिसका देव नी मोरी प्रत्यक्ष प्रमाण है ,हो सकता है यह उत्तार मौर्य कालीन या पूर्व गुप्त कालीन हो किंतु इस समय यहां पर यूनानी क्षत्रपों का अधिकार था और ब्राह्मी लिपि का प्रचलन था यह सुनिश्चित जान पड़ता है। देव नी मोरी के अलावा वागड के सुरवानीय गांव में क्षत्रपों के भारी मात्रा में सिक्के मिले हैं, जिससे प्रमाणित होता है कि वागड पर दीर्घकाल तक क्षत्रपों का आधिपत्य था।यहां से मिले पूरा वशेषो से यह तय जान पड़ता है कि अशोक महान के धम्म और संघ के साथ ही ब्रह्मी लिपि ने भी वागड में अपनी जगह बना ली थी।

ब्राह्मी लिपि एक प्राचीन लिपि है जिससे कई एशियाई लिपियों का विकास हुआ है। प्राचीन ब्राह्मी लिपि के उत्कृष्ट उदाहरण मौर्य सम्राट अशोक महान द्वारा ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में बनवाये गये शिलालेखों के रूप में अनेक स्थलों पर मिलते हैं। नये अनुसंधानों के आधार 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व के लेख भी मिले है। ब्राह्मी भी खरोष्ठी की तरह ही पूरे एशिया में फैली हुई थी। अशोक ने अपने लेखों की लिपि को 'धम्मलिपि' का नाम दिया हैय उसके लेखों में कहीं भी इस लिपि के लिए 'ब्राह्मी' नाम नहीं मिलता। लेकिन बौद्धों, जैनों तथा ब्राह्मण-धर्म के ग्रंथों के अनेक उल्लेखों से ज्ञात होता है कि इस लिपि का नाम 'ब्राह्मी' लिपि ही रहा होगा।हमारे प्राचीन संस्कृत ग्रंथों के आधार पर प्राचीन अज्ञेय अज्ञात निर्माता के रूप में उसे 'ब्रह्मा' का मान कर ब्राह्मी नाम दिया गया।बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर',जैन ग्रंथ,'पण्णवणासूत्र' तथा 'समवायांगसूत्र' में 16 लिपियों के नाम दिए गए हैं, जिनमें से पहला नाम 'बंभी' (ब्राह्मी) का है।' भगवतीसूत्र में सर्वप्रथम 'बंभी' (ब्राह्मी) लिपि को नमस्कार करके (नमो बंभीए लिविए) सूत्र का आरंभ किया गया है।जिसकी लिपि बाईं ओर से दाहिनी ओर को पढ़ी जाती है।इससे यही जान पड़ता है कि ब्राह्मी भारत की सार्वदेशिक लिपि थी और उसका जन्म भारत में ही हुआ परन्तु इसे सवार्धिक लोक प्रचलित करने वाला सम्राट था मौर्य सम्राट अशोक इसलिए ब्राह्मी को अशोक महान की लिपि के रूप में लोकप्रियता मिली।[9] गिरनार से वागड तक वागड़ी को प्रभावित करती ब्राह्मी ब्रह्मस्वरूप देशज एकरूपता में बांधती भाषाई संवेदना का प्रतीक बन जाती है।

अधितकतर भाषाओं की तरह देवनागरी भी बायें से दायें लिखी जाती है। प्रत्येक शब्द के ऊपर एक रेखा खिंची होती है (कुछ वर्णों के ऊपर रेखा नहीं होती है) इसे शिरोरेखा कहते हैं। इसका विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है। यह एक ध्वन्यात्मक लिपि है जो प्रचलित लिपियों (रोमन, अरबी, चीनी आदि) में सबसे अधिक वैज्ञानिक है।भारतीय भाषाओं के किसी भी शब्द या ध्वनि को देवनागरी लिपि में ज्यों का त्यों लिखा जा सकता है और फिर लिखे पाठ को लगभग हू-ब-हू उच्चारण किया जा सकता है, जो कि रोमन लिपि और अन्य कई लिपियों में सम्भव नहीं है।इसमें कुल 52 अक्षर हैं, जिसमें 14 स्वर और 38 व्यंजन हैं। अक्षरों की क्रम व्यवस्था (विन्यास) भी बहुत ही वैज्ञानिक है। स्वर-व्यंजन, कोमल-कठोर, अल्पप्राण-महाप्राण, अनुनासिक्य-अन्तस्थ-उष्म इत्यादि वर्गीकरण भी वैज्ञानिक हैं। एक मत के अनुसार देवनगर (काशी) मे प्रचलन के कारण इसका नाम देवनागरी पड़ा।भारत तथा एशिया की अनेक लिपियों के संकेत देवनागरी से अलग हैं (उर्दू को छोडकर), पर उच्चारण व वर्ण-क्रम आदि देवनागरी के ही समान हैं कृ क्योंकि वो सभी ब्राह्मी लिपि से उत्पन्न हुई हैं। इसलिए इन लिपियों को परस्पर आसानी से लिप्यन्तरित किया जा सकता है। देवनागरी लेखन की दृष्टि से सरल, सौन्दर्य की दृष्टि से सुन्दर और वाचन की दृष्टि से सुपाठ्य है। वर्तमान में संस्कृत, पाली, हिन्दी, मराठी, कोंकणी, सिन्धी, काश्मीरी, नेपाली, बोडो, मैथिली और अनेक स्थानीय बोलियों और भाषाओं की लिपि है ।

यह एक ध्वन्यात्मक (फोनेटिक या फोनेमिक) लिपि है जो प्रचलित लिपियों (रोमन, अरबी, चीनी आदि) में सबसे अधिक वैज्ञानिक है। अक्षरों की क्रम व्यवस्था (विन्यास) भी बहुत ही वैज्ञानिक है। स्वर-व्यंजन, कोमल-कठोर, अल्पप्राण-महाप्राण, अनुनासिक्य-अन्तस्थ-उष्म इत्यादि वर्गीकरण भी वैज्ञानिक हैं। एक मत के अनुसार इसका उद्भव गुजरात के एक नगर देवनगर से होने के कारण देवनागरी हुआ एक अन्य मत के अनुसार देवनगर (काशी) मे प्रचलन के कारण इसका नाम देवनागरी पडा। गुजरात के समीपवर्ती क्षेत्र होने से व सुगमता के कारण सम्भवतया यह वागड में शीघ्र बहुप्रचलित हो गई।

इस लिपि में विश्व की समस्त भाषाओं की ध्वनिओं को व्यक्त करने की क्षमता है। यही वह लिपि है जिसमे संसार की किसी भी भाषा को रूपान्तरित किया जा सकता है। इसकी वैज्ञानिकता आश्चर्यचकित कर देती है। भारत तथा एशिया की अनेक लिपियों के संकेत देवनागरी से अलग हैं (उर्दू को छोडकर), पर उच्चारण व वर्ण-क्रम आदि देवनागरी के ही समान है। इसलिए इन लिपियों को परस्पर आसानी से लिपियान्तरित किया जा सकता है।यह बायें से दायें की तरफ लिखी जाती है।देवनागरी लेखन की दृष्टि से सरल, सौन्दर्य की दृष्टि से सुन्दर और वाचन की दृष्टि से सुपाठ्य है। एक सांकेतिक चिन्ह , एक स्वर और व्यंजन में तर्कसंगत एवं वैज्ञानिक,क्रम-विन्यास,वर्णो की पूर्णता एवं सम्पन्नता (52 वर्ण , न बहुत अधिक न बहुत कम ,उच्चारण और लेखन में एकरुपता, उच्चारण स्पष्टता (कहीं कोइ संदेह नही), लेखन और मुद्रण मे एकरूपता (रोमन, अरबी और फारसी मे हस्तलिखित और मुद्रित रूप अलग-अलग हैं), देवनागरी लिपि सर्वाधिक ध्वनि चिन्हों को व्यक्त करती है। लिपि चिन्हों के नाम और ध्वनि मे कोई अन्तर नही होना, मात्राओं का प्रयोग, अर्ध अक्षर के रूप की सुगमता के कारण स्थानीय बोलियों की अभिव्यक्ति का सुगम माध्यम बन गई। (देवनागरी लिपि का संक्षिप्त परिचय:मिथिलेश वामन का संघ लोक सेवा आयोग की हिन्दी साहित्य हेतु वेब पत्र) वागड में उत्तार गुप्त काल मे प्राप्त अभिलेखों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि धार के परमारो की सरस्वती उपासकों की वागड शाखा के परमार शासकों के नेतृत्व में देवनागरी वागड़ी में भी ऐसी आत्यंतिक तरीके से घुलमिल गई कि पृथक से पहचानना भी मुश्किल है। देवनागरी ऐसे वागड़ी के रोम रोम में अंगीकार हो रच बस गई जैसे सदा से उसी की लिपि रही हो। मूल गुजरात से निकली होने से तथा गुजराती व वागड़ी और रांगठी की दैहिक समीपता के कारण भी नागरी वागड़ी के लिए सुपाच्य हो सकी।

वागड में देवनागरी लिपि का प्रचलन और महत्ता – वागड से प्राप्त प्राचीन अभिलेखों, ताम्रपत्रों, दानपत्रों, भांड लेखों, राजाज्ञाओं व विविध लेखों की लिपि का विधिवत चरणबद्ध अध्ययन करने से यह ज्ञात होटभै के वागड अंचल में उत्तर गुप्तकाल के बाद से ब्राह्मी का स्थान देवनागरी लिपि ने ले लिया था। देवनागरी लिपि का चलन हो गया था। खासकर यहां भोज के काल में प्रचलित नागरी लिपि का चलन देखने में आता है। इस काल तक कुटिल लिपि केवल कारीगरों या विशेष लिपिकारों तक सिमट गई थी और साफ सुथरे देवनागरी के अक्षर लोकप्रिय हो रहे थे। इस काल तक राजागण भी अपने हस्ताक्षरों से ताम्रपत्र जारी करते थे।कुटिल लिपि को 'उत्तरलिच्छवी लिपि' भी कहते हैं। यह लिपि भारत से प्रारम्भ हुई थी। इस लिपि को भारत में 'विकटाक्षर' भी कहते हैं। पुरातत्वविदों ने इस लिपि को 'सिद्धमातृका लिपि' कहा है। यह लिपि नेपाल में अंशुवर्मा (ई0सं0 6.5-621) के शासनकाल के बाद ही प्रचलन में आई। फिर भी अंशुवर्मा के शिलालेखों के अक्षरों में कुटिला लिपि का प्रभाव देख जा सकता है। ऐसे कुटिलाक्षर में विशेषतया ह्रस्व, दीर्घ ईकार और ओकार स्वर आदि प्रयोग हुए हैं। गुप्त लिपि से अधिक कुटिला लिपि व्यापकरूप में प्रचलित थी।कालान्तर में देवनागरी के प्रचलन से कुटिला लिपि लोप होती गई। वागड में इसके अभिलेख प्राप्त नही हुए है।[10]

वागड में सर्वप्रथम 1109 ई. के अर्थूणा अभिलेख में नागरी लिपि का जिक्र आता है। उससे स्पष्ट रूप से नागरी के लिपिकारों का इस इलाके में

होना प्रमाणित होता है। तब संधिविग्रहिक द्धारा नागरी लिपि में आज्ञाओं को लिखा जाता था। अर्थूणा के जैन अभिलेख में आया है कि वालभान्वय या वालभ गोत्र के कायस्थ राजपाल के पुत्र ने इस लेख को लिखा था- संधि विग्रह संज्ञेन लिखिता नागरी लिपि। (श्लोक 29) इसमें पडी मात्राओं के विपरीत खडी मात्राओं का शानदार प्रयोग हुआ है। एक पूर्ण नागरी के रूप में इस अभिलेख को लिखा गया है। इस लिपिकार ने यह कामना भी है कि उसकी यह लिपि हमेशा चिरायु हो। उसने माना है कि जब तक रावण और राम का चरित्र गाया जाता रहे अर्थात रामायण की महत्ता रहे, विष्णुपदी या गंगा नदी में जल का प्रवाह रहे, आकाश में चंद्रमा की विद्यमानता रहे और अर्हचक्र के संबंध में पढा-सुना जाता रहे तब तक यह नागरी लिपि का अभिलेख स्थाय रहे। इस अभिलेख में अपनी लेखनी को चिरंजीवी करने का भाव कुछ इस तरह अभिव्यक्त किया गया है जो साहित्यिक प्रतिभा के साथ देवनागरी की परिपूर्णता को भी दर्शाता है-'यावद्धरावण रामयो: सुचरितं भूमौ जनैर्गीयते, यावद्विष्णुपदी जलं प्रवहति व्योम्न्यस्ति यावच्छशी। अर्हच्चक्र विनिर्गतं श्रवणकै: यावच्तं पठ्यते तावत्कीर्ति रियं चिराय जयतात्संस्तूयमाना जनै!'[11]

सारांश - वागड राजस्थान के दक्षिणावर्त इलाके में जनजातीय बहुल क्षेत्र है। भीली, मेवाड़ी, मालवी, निमाड़ी, गुजराती, मालवी शब्दो से मिश्रित स्थानीय बोली जिसे 'वागड़ी' कहा जाता है मौलिक रूप से यहां आरम्भ से ही विकसित हुई। वागड़ी का स्थानीय बोली और प्रादेशिक भाषा के रूप में प्राचीन काल से क्रमिक विकास हुआ है। अन्य स्थानीय बोलियों की भांति ही इसकी भी अपनी कोई मौलिक व स्वतंत्र लिपि नही थी परंतु भौगोलिक सन्दर्भ में गुर्जरा -लाट व मालव प्रदेश के आंचलिकता में सांगोपांग रंगे वागड में प्रथमत: अभिलेखीय साक्ष्यों के आधार पर ब्राह्मी,गुप्त या कुटिल लिपि तदन्तर देवनागरी लिपि प्रचलन में आई ।नवी दसवीं शताब्दी तक आते आते वंशावली लेखन,साहित्य व काव्य की भाषा के रूप में भूत भाषा वागड़ी का प्रयोग नानाविध अभिलेखों व सभाओं में हुआ और देवनागरी में लिखी जाने लगी।राजा भोज के काल से अब तक यह समृद्ध राजस्थानी का हिस्सा बन चुकी वागड़ी देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली अपभ्रंश और पैशाची से उद्भव हुई मौलिक व समृद्ध शब्दकोष वाली भाषा के रूप में राजस्थानी का अविरल हिस्सा बन चुकी है।यहां का लिपिक विकास गुजरात व मालव धरा के लगभग अनुरूप ही रहा।—नीता चौबीसा

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शोधगंगा पर उपलब्ध बाहर के पश्चिम इतिहास एवं डॉ. दीपक दत्त आचार्य के राजस्थान के जनजातीय क्षेत्रो की साहित्यिक-सांस्कृतिक विरासतों के सरंक्षण में माध्यमो की भूमिका
2. डॉ. ज्योतिपुंज सम्पादकीय : वागड़ी अंचल री राजस्थानी कवितावां, भाषा व साहित्य अकादमी बीकानेर राजस्थान
3. डॉ. एस.के. जुगनू मेवाड़ का प्रारम्भिक इतिहास पृ.स. 12-20
4. गुणाकर मुळे, अक्षर कथा, 10-12, नई दिल्ली: सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
5. स्टुअर्ट पिगॉट, 'प्रीहिस्टॉरिक इण्डिया', पृष्ठ 14
6. या ब्राह्मी। सन्दर्भ-शिवधर्मपुराण
7. डॉ. श्रीकृष्ण, 'जुगनू', दक्षिण राजस्थान में प्रचलित थी ब्राह्मी : आलेख पर आधारित
8. रिपोर्ट ऑफ बड़ौदा - शामला जी म्यूजियम,देव नी मोरी गदाधर मन्दिर प्रो आर. इन. मेहता
9. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा प्राचीन लिपिमाला
10. भारत ज्ञान कोष पेहीज से साभार
11. डॉ. श्री कृष्ण जुगनू:इतिहास के स्रोत आर्यावर्त संस्कृति संस्थान, दिल्ली 2019

****

Capital Markets and its Challenges with special reference to 'Reforms in the Capital Markets in India'

Dr. Suresh Shrawan Patil*

Abstract - During the Nineteen Eighties, the developing countries started liberalizing their economies. There has been larger stress on the event of equity markets as an area of economic reforms. India has also followed this path. globalization, financial markets are becoming more and more important every day. A developed stock market is considered crucial to national economic growth as it provides an additional channel along with banks and other financial institutions, for encouraging and thus mobilizing domestic savings. It additionally ensures enhancements within the productivity of investment through the market allocation of capital and will increase management discipline through the marketplace for company control. A study by the World Institute for Development Economic Research (WIDER, 1990) has argued that the developing countries should liberalize their financial markets in order to attract foreign portfolio equity flow. The huge amount of financial capital available in the developed countries through pension and investment funds could be attracted to the developing countries provided the latter liberalize their markets externally and developed their stock market internally. Capital markets have taken a distinguished place within the developing countries national economy throughout the last decade. The most necessary live taken during this regard by developing countries was the gap of their individual stock markets to international investors. This step, taken in the late 1980s or early 1990s, resulted in a historically high level of portfolio investment in the emerging markets by global and regional funds. In developing countries like India, there is a great need for foreign capital not only to increase the productivity of labour but also to build a foreign exchange reserve to meet trade deficits. After opening up the borders for capital movement in 1991, foreign investment in India has grown enormous.

Keywords - Equity Market, Capital Market, Economy, Productivity, Marketplace, Financial Institutions, Investors, Foreign Investment.

Introduction - The capital market may be important for the financial set-up. The capital market provides the support of laissez-faire economy to the country. The wave of economic reforms initiated by the govt. has influenced the functioning and governance of the capital market. The Indian capital market is additionally undergoing structural transformation since the easement. The chief aim of the reforms exercise is to enhance market potency, create stock exchange transactions a lot of clear, and curb unfair trade practices and to bring our money markets up to international standards. Further, the consistent reforms in the Indian capital market, particularly within the secondary market leading to trendy technology and online mercantilism have revolutionized the securities market. Capital market involved with the economic security market, government securities markets, and long run loan market. The capital market deals with long term loan market. It supplies long-term and medium-term funds. It deals with shares, stocks debentures and bonds. Security dealt in capital markets is long-term securities. It provides a market mechanism for those that have to save and to those that want funds for productive investments the capital market aids economic growth by moiling the savings of the economic sector and directing the same towards channels of productive uses.[1] Companies intercommunicate them to boost funds required to finance for the infrastructure facilities and company activities. The capital market is a supply of financial gain for investors. When the stock of different money assets rise in price, investors become wealthier, often they spend some of this additional wealth boost sales and promoting economic growth. Stock price reflects capitalist reactions to government policy also if the govt. adopts policies that investors believe can hurt the economy and company profits, vice-versa.

Definition and Meaning of Capital Market - The capital market may be a place wherever individuals purchase and sell securities. Securities during this sense is solely a bundle of rights oversubscribed to the general public by firms, authorities or establishments on which individuals then change the capital market. There square measure different types of securities or bundles of rights. These include shares, debentures, bonds, etc. There are two levels of the market. The primary market is that the market wherever those desire to boost funds from the stock exchange sells

*Associate Proffesor (Economics) KKHA Arts SMGL Commerce and SPHJ Science College, Neminagar Chandwad, Distt. Nashik (Maharastra) INDIA

their securities to the general public. The secondary market is wherever people who bought the securities within the IPO[2] will sell them any time they want. The reason why individuals purchase securities from the first market is as a result of they need the reassurance that there's a secondary market wherever they'll sell those shares presumably at a profit.

Capital Market defined as "The market for relatively long-term financial instruments. It consists of the gilt-edged market and the industrial securities market. The gilt-edged market refers to the marketplace for government and semi-government securities backed by the run batted in. The securities traded in this market are stable in value and are much sought after by banks and other institutions".[3]

Main components of the capital market are 1. Primary Market 2. Secondary Market.

1. Primary Market (New Issue Market) - The primary market is additionally referred to as the new issue market. As during this market securities square measure oversubscribed for the primary time, i.e., new securities square measure issued from the corporate. Primary capital market directly contributes to capital formation as a result of in primary market company goes on to investors and utilises these funds for investment in buildings, plants, machinery etc. The primary market doesn't embrace finance within the variety of a loan from a financial institution as a result of once the loan is issued from the money institution it implies changing personal capital into public capital and this method of changing personal capital into public capital is termed going public. The common securities issued in the primary market are equity shares, debentures, bonds, preference shares and other innovative securities.[4]

Methods of Floatation of Securities in Primary Market - The securities may be issued in the primary market by the following methods:

1. Public Issue through Prospectus - Under this methodology company problems a prospectus to tell and attract the general public. In the prospectus, the company provides details about the purpose for which funds are being raised, the past financial performance of the company, background and future prospects of the company.

The information within the prospectus helps the general public to grasp concerning the danger and earning potential of the corporate and consequently they decide whether or not to take a position or not therein company Through IPO[5] company can approach a large number of persons and can approach public at large. Sometimes companies involve intermediaries such as bankers, brokers and underwriters to raise capital from the general public.

2. Offer for Sale - Under this methodology, new securities are offered to the general public but not directly by the company but by an intermediary who buys a whole lot of securities from the company. Generally, the intermediaries are the firms of brokers. So the sale of securities takes place in two steps: first when the company issues securities to the intermediary at face value and second when intermediaries issue securities to the general public at a higher price to earn a profit. Under this method, the company is saved from the formalities and complexities of issuing securities directly to the public.[6]

3. Private Placement - Under this methodology, the securities are sold by the company to an intermediary at a fixed price and in second step intermediaries sell these securities not to the general public but to selected clients at a higher price. The provision company problems prospectus to grant details concerning its objectives, future prospects so that reputed clients prefer to buy the security from the intermediary. Under this methodology, the intermediaries issue securities to selected clients such as UTI, LIC, General Insurance, etc.

The personal placement methodology could be a cost-saving methodology as an organization is saved from the expenses of underwriter fees, manager fees, agents' commission, a listing of the company's name in stock exchange etc. Small and new corporations like personal placement as they cannot afford to boost from public issue.

4. Right Issue (For Existing Companies) - This is the problem of recent shares to existing shareholders. It is called the right issue because it is the pre-emptive right of shareholders that the company must offer them the new issue before subscribing to outsiders. Each investor has the proper to take the new shares within the proportion of shares he already holds. A right issue is mandatory for companies under the Companies' Act 2013.

The stock market doesn't permit the present corporations to travel for a replacement issue while not giving pre-emptive rights to existing shareholders as a result of if the new issue is directly issued to new subscribers then the existing equity shareholders may lose their share in capital and control of company i.e., it would water their equity. To stop this the pre-emptive or right issue is compulsory for an existing company.[7]

5. e-IPOs[8] - It is the new method of issuing securities through an online system of stock exchange. In this company has got to appoint registered brokers for the aim of accepting applications and inserting orders. The company providing security has got to apply for listing of its securities on any exchange aside from the exchange it offered its securities earlier. The manager coordinates the activities through numerous intermediaries connected with the problem.[9]

2. Secondary Market (Stock Exchange) - The secondary market is that the marketplace for the sale and buy of previously issued or second-hand securities.

In the secondary market, securities are not directly issued by the company to investors. The securities square measure oversubscribed by existing investors to alternative investors. Sometimes the investor is in need of cash and another investor wants to buy the shares of the company as he could not get directly from the company. Then each the investors will meet in secondary market and exchange securities for money through intercessor known as a broker.

In the secondary market, companies get no additional

capital as securities are bought and sold between investors only so directly there is no capital formation but secondary market indirectly contributes in capital formation by providing liquidity to securities of the corporate.[10]

If there's no secondary market then investors may revisit their investment solely when the redemption amount is over or once an organization gets dissolved which suggests investors can be blocked for an extended amount of your time however with the presence of secondary market, the investors can convert their securities into cash whenever they want and it also gives chance to investors to create profit as securities square measure bought and oversubscribed at market value that is usually quite the first price of the securities.

Capital Market Regulators - Often in the haste of becoming a market participant/ trader/ investor, we forget to know the roots governing the Stock Market. This means that we tend to overlook the principles, rules, regulatory bodies who guide the flow of Indian Capital Markets. This becomes important for us to know because they have a major impact on our financial decisions. At times, any modification within the rules or rules of the Act, governing the Indian Capital Market tends to bring substantial change on market psychology or sentiments. This eventually affects our financial decisions.

In this article, we are going to perceive on United Nations agency governs the capital of India Markets. Rules governing the stock exchange, transient on the stock exchange, Stock Market participants, and functions of the Stock Market.[11]

While available investment Market some opt to take less risk and go short. Others may prefer to take a long-term leap. The basis of this money market is split into two kinds of the market- Money Market and Capital Market. While Money Market Securities are short-term in nature. A Capital Market pitches long-term investments.

The Ministry of Finance (MoF), the Securities & Exchange Board of India (SEBI) and also the Reserve Bank of India (RBI) are the 3 restrictive authorities governing Indian Capital Markets.

Ministry of Finance (MoF) - The Department of Economic affairs directly manages the Capital Markets phase beneath the directions of MoF. This phase formulates the principles for the economic growth of the stock exchange which incorporates derivatives, debt, and equity.[12] It conjointly formulates laws for safeguarding the interest of the investors.

This phase regulates the capital of India Markets through the subsequent laws:

1. Depositories Act, 1996.
2. Securities Contract (Regulation) Act, 1956.
3. Securities and Exchange Board of India Act, 1992.

Reserve Bank of India (RBI)[13] - The bank of India Act, 1934 governs policies framed by the Reserve Bank of India. The functions of RBI during this regard are as follows:

1. Implementation of Monetary and Credit policies.
2. Issuance of Currency Notes.
3. Government's Banker.
4. Banking System Regulator.
5. Foreign Exchange through Foreign Exchange Management Act, 1999.
6. Managing payment & settlement system.

Apart from the higher than functions, RBI is also actively involved in developing the financial market.

Securities & Exchange Board of India (SEBI)[14]

The Securities & Exchange Board of Bharat (SEBI) Act, 1992 regulates the functioning of SEBI. SEBI is that the apex body governing the Indian stock exchanges.

The primary functions of SEBI are as follows:

1. Protective Functions
2. It checks Price rigging.
3. Prohibits insider trading.
4. Prohibits fraudulent and Unfair Trade Practices.

Development Functions[15]

1. SEBI promotes coaching of intermediaries of the stock exchange.
2. SEBI tries to push activities of the stock market by adopting a versatile and all-mains approach.

Regulatory Functions[16]

1. SEBI has framed rules and laws and a code of conduct to control the intermediaries like merchant bankers, brokers, underwriters, etc.
2. These intermediaries are brought beneath the regulative ambit and personal placement has been created a lot of restrictive.
3. SEBI registers and regulates the operating of stock brokers, sub-brokers, share transfer agents, trustees, merchant bankers and everyone people who are related to the stock market in any manner.
4. SEBI registers and regulates the operating of mutual funds etc.
5. SEBI regulates takeover of the companies.
6. SEBI conducts inquiries and audit of stock exchanges.
7. The participation in the Indian Stock Market of both the domestic or foreign financial intermediaries is governed by the regulations framed by SEBI. Additionally, Foreign Portfolio Investors (FPIs) can participate in the Indian Stock Market after registering them with an authorized Depository Participant.

National Stock Exchange of India (NSE)[17]

NSE is responsible for formulating and implementing the rules pertaining to:

1. Registration of Members.
2. Listing of Securities.[18]
3. Monitoring of Transactions.
4. Compliance.
5. Other additional functions related to the above functions.

NSE itself is regulated by SEBI and is beneath regular vigilance for all regulative compliances.

Reforms in the Capital Market of India - The major reforms undertaken in the capital market of India include:-

Establishment of SEBI: The Securities and Exchange Board of India (SEBI) was established in 1988. It got a legal status in 1992. SEBI was primarily got the wind off to control the activities of the businessperson banks, to control the operations of mutual funds, to work as a promoter of the stock exchange activities and to act as an administrative body of recent issue activities of firms. The SEBI was got wind of with the basic objective, "to protect the interest of investors in the securities market and for matters connected therewith or incidental thereto."[19]

Establishment of Creditors Rating Agencies: Three creditors rating agencies viz. The Credit Rating Information Services of India Limited (CRISIL - 1988), the Investment Information and Credit Rating Agency of India Limited (ICRA - 1991) and Credit Analysis and Research Limited (CARE) were got wind of so as to assess the money health of various money establishments and agencies associated with the stock exchange activities. It is a guide for the investors conjointly in analysing the risk of their investments.

Increasing of businessperson Banking Activities: Several Indian and foreign business banks have got wind of their businessperson banking divisions within the previous few years. These divisions give money services like underwriting facilities, issue organising, consultancy services, etc. It has evidenced as an assist to factors associated with the capital market.

Intimate Performance of Indian Economy: In the last few years, the Indian economy is growing at a good speed. It has attracted an enormous flow of FII[20]. The massive entry of FIIs in the Indian capital market has given good appreciation for the Indian investors in recent times. Similarly, several new firms are rising on the horizon of the Indian Capital Market to lift capital for his or her expansions.

Rising Electronic Transactions: Because of technological development within the previous few years. The physical transaction with more paperwork is reduced. Now paperless transactions are increasing at a fast rate. It saves money, time and energy of investors. Thus it's created finance safer and hassle-free encouraging a lot of individuals to affix the capital market.[21]

Growing fund Industry: The growing of mutual funds in India has definitely helped the capital market to grow. Public sector banks, foreign banks, financial institutions and joint mutual funds between the Indian and foreign firms have launched many new funds. A big diversification in terms of schemes, maturity, etc. has taken place in mutual funds in India. It has given a wide choice for common investors to enter the capital market.

Growing Stock Exchanges: The numbers of varied Stock Exchanges in India are increasing. Initially, the BSE was the prominent exchange, however currently when the fixing of the NSE and also the OTCEI, stock exchanges have spread across the country. Recently a replacement Inter-connected stock exchange of India has joined the present stock exchanges.

Investor's Protection: Beneath the orbit of the SEBI the Central Government of India has got wind of the IEPF[22] in 2001. It works in educating and guiding investors. It tries to protect the interest of small investors from frauds and malpractices in the capital market.[23]

The growth of Derivative Transactions: Since June 2000, the NSE has introduced the derivatives trading in the equities. In November 2001 it conjointly introduced the future and optional transactions. These innovative products have given a selection for the investment resulting in the growth of the capital market.

Insurance Sector Reforms: Indian insurance sector has also witnessed massive reforms in the last few years. IRDA[24] was got wind of in 2000. It sealed the entry of the private insurance companies in India. As several insurance firms invest their money within the capital market, it has expanded.[25]

Commodity Trading: Together with the commercialism of normal securities, the trading in commodities is also recently encouraged. MCX[26] is set up. The volume of such transactions is growing at a splendid rate.

Conclusion - A market is an arrangement that allows buyers and sellers to come together to exchange money for goods, services, or financial assets. Markets can be physical or virtual. Examples of capital markets are markets for purchasing and marketing stocks and bonds. They embrace primary markets, where newly issued stocks and bonds are sold to investors, and secondary markets in which existing stocks and bonds are traded. Capital markets play a very important role in the economy. Through primary capital markets, businesses and entrepreneurs will issue stocks and bonds to lift monetary capital to begin or expand businesses. Through each the first and also the secondary capital markets, savers are able to buy financial assets from which they hope to gain returns and build wealth. A stock may be a share of possession during a company. A bond may be a certificate of liability issued by a government or corporation. The government or corporation is needed to repay the loan in conjunction with some quantity of interest. Now you recognize some basics regarding capital markets, stocks and bonds and the way capital markets profit the economy.

References :-

1. www.Investopedia.com,
2. Initial Public Offering
3. Rajesh Chakrabarti: Capital Market in India- Definition.
4. http://www.yourarticlelibrary.com
5. Initial Public Offering
6. http://www.yourarticlelibrary.com
7. http://www.yourarticlelibrary.com
8. Electronic Initial Public Offer
9. http://www.yourarticlelibrary.com
10. http://www.yourarticlelibrary.com/
11. https://blog.elearnmarkets.com/capital-market-regulators
12. https://blog.elearnmarkets.com/capital-market-

regulators.

13. India's central banking establishment that controls the issuing and provides of the Indian monetary unit.
14. SEBI is that the regulator for the exchange in the Republic of India. It was established in 1988 and given statutory powers on thirty January 1992 through the SEBI Act, 1992.
15. https://www.sebi.gov.in/powers-and-functions.html
16. https://www.sebi.gov.in/powers-and-functions.html
17. NSE is the major stock exchange of India, placed in Mumbai. The NSE was established in 1992 because the 1st demutualized electronic exchange within the country.
18. www.nseindia.com
19. http://kalyan-city.blogspot.com
20. Foreign Institutional Investments.
21. http://kalyan-city.blogspot.com
22. Investors Education and Protection Fund
23. http://kalyan-city.blogspot.com
24. The Insurance Regulative and Development Authority.
25. http://kalyan-city.blogspot.com
26. The Multi Commodity Exchange.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

डॉ. रामकुमार वर्मा और खड़ी बोली काव्य भाषा

झेलम झेंडे *

प्रस्तावना – सामान्यत: लोक समूह के बीच प्रयुक्त लोक भाषाओं का एक निर्धरित स्वरूप है किन्तु इसके लिए हिन्दी खड़ी बोली स्वंय में एक अपवाद है। एक ओर वह जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश में लोक समूह द्वारा बोली जाती है और दूसरी ओर वह खड़ी बोली जो भारत की राजभाषा, सम्पर्क भाषा, संचार भाषा, वैचारिक आदान–प्रदान एवं साहित्य सृजन की राष्ट्रव्यापी तथा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है– दोनों दो भिन्न छोरों पर हैं। लोकसमूह एवं शिष्ट प्रयोग वाली हिन्दी एक दूसरे से दिनों–दिन दूर होती जा रही है। इस साहित्यिक खड़ी बोली की कथा ठीक संस्कृत भाषा की भाँति है। ब्राह्मण युग से वैयाकरणों तथा काव्यचिन्तकों ने परम्परित संस्कृत को संस्कारित करके उसे आमजन के प्रयोग से भिन्न किया। यह संस्कृत, इस युग में अपने मूल स्वरूप से भिन्न होकर एक प्रकार से कृत्रिम एवं गढ़ी हुई भाषा बनकर साहित्य के अन्तर्गत व्यावहारिक भाषा बनी थी, ठीक ऐसी ही स्थिति आज साहित्यिक हिन्दी खड़ी बोली की है। इस खड़ी बोली की भाषिक बनावट फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना से शुरू हुई और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र युग में यह नई चाल में ढली। विशेषकर कविता के क्षेत्र में यह भारतेन्दु युग की ग्राह्य भाषा नहीं बन पाई थी किन्तु इस युग के कविगण इसे काव्य के संदर्भ में ब्रजभाषा जैसी लचीली भाषिक अन्विति देने की ओर सचेष्ट थे।

एक पूर्ण परिभाषित व्यंजना की सहज प्रतीति दिलाने वाली संवेदनापूर्ण भाषा बनाने की होड़ हमें छायावाद युग के प्रारम्भ तक दिखाई पड़ती है। यही नहीं, छायावाद युग के पूर्व उर्दू तथा अंग्रेजी भाषाओं के भी दो मानक कई कवियों द्वारा सामने लाये गए किन्तु लयात्मक भाव संवेदना की वाहिका के रूप में यह खड़ी बोली सन् 1920 के आसपास छायावाद के विकास के साथ–साथ विकसित होती हुई आई और सन् 1940 तक इसका भाषिक संवेदना संदर्भ पूर्णत: मुखरित हुआ। छायावाद के मधयकाल की काव्यात्मक हिन्दी अपनी संवदेनात्मक अभिव्यक्ति के संदर्भ में अधिक रुचि लेती दिखाई पड़ती है। अंग्रेजी में कविता की भाषा को 'इमोटिव यूञज आपफ लैंग्वेज'[1] कहा गया है और छायावादी काव्यभाषा जैसे इस परिभाषा की पर्याय बन चुकी है। 'मैं'पन के अभाव की पीड़ा इसके सृजन का तनाव है। उद्दाम यौवन की मादकता कुंठित भावनामय प्रेम तथा रहस्यमयता के आवरण में वस्तु संवेदना को साधे हुई यह छायावादी कविता तरलित होकर स्वयं बहती है। छायावादी कविता ने सामाजिक मूल्य दिए हों या न दिए हों किन्तु खड़ी बोली हिन्दी काव्य के लिए उसका सबसे बड़ा योगदान है कि उसने एक इतिवृत्तात्मक भाषा के रूप को संवेदनात्मक भाषा के रूप में ढाला।

इस प्रक्रिया के लिए महादेवी वर्मा ने सर्वाधिक कोमल, सर्वाधिक सुकुमार तथा सर्वाधिक सुन्दर को व्यक्त करने के लिए लघुतम भावना–प्रधान शब्दों का प्रयोग किया है। पण्डित सुमित्रानन्दन पंत ने 'विशेषणों' से अपनी काव्यभाषा का निर्माण किया है। निराला बंगभाषा के पैटर्न पर 'रागमयता तथा लयात्मकता' को संगीत से सीधे जोड़ते हैं। 'संगीत के रागों की भाषा' का प्रयोग निराला की काव्यभाषा की अपनी प्रकृति है। जयशंकर प्रसाद ने प्रणय, विरह एवं वेदना से जुड़े भारतीय रोमैंटिक शब्दावली से अपनी काव्यभाषा सजाई है और डॉ. राम कुमार वर्मा– जो इस विषय के विवेच्य हैं – उनकी संवेदनात्मक काव्यभाषा– विशेषकर जो उनके गीतिकाव्य में प्रयुक्त है, किन तत्त्वों और किन काव्यान्वितियों से निर्मित होती है, यह एक विचारणीय समस्या है।

डॉ. राम कुमार वर्मा के गीति काव्य की सर्जनात्मक भाषा का विश्लेषण करने के पूर्व इस संदर्भ में दो–चार पंक्तियों में उनके व्यक्तित्व का विश्लेषण कर लेना आवश्यक होगा –डॉ.राम कुमार वर्मा के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि 'वह अपने व्यवहार एवं सिद्धांन्त के प्रत्येक क्षण के साहित्यकार हैं।'[2] भाषिक सृजनभंगिमा एवं उससे उत्पन्न होने वाली उन्मेशवृत्ति को व्यवहार की भाषा में भी वे इस प्रकार प्रकट करते रहते थे जैसे, वे सृजन और केवल सृजन के लिए तैयार बैठे हों। उनका अध्यापक व्यक्तित्व भी उनके इस साहित्यकार व्यक्तित्व में घुला मिला दिखाई देता है। उनका अध्यापन छात्रा समुदाय को समझता कम था, भावात्मक आवेग में ज्यादा बाँधे रहता था। ललितभाषा का लाक्षणिक विधन प्रतिक्षण श्रोताओं को तनाव में उद्धीप्त करता था, और उनके सम्पर्क में आने वाला – पाठक, छात्रा, श्रोता सभी उनके इस साहित्यकार के व्यक्तित्व से निरन्तर बँधे दिखाई पड़ते थे – उनका कवि व्यक्तित्व, सर्जक व्यक्तित्व, साहित्यकार का व्यक्तित्व सभी को इस तरह बाँधता था कि श्रोता उनसे तन्मयीभूत होने के लिए विवश था – वह लोक व्यवस्था से सम्बन्ध होकर भी साहित्य व्यवस्था के संलाप से जुड़ जाता था।

डॉ. राम कुमार वर्मा के व्यक्तित्व की यह विशेषता न पंत में मिलती है और न महादेवी वर्मा में। निराला का काव्य जगत तो आत्मलाप की रचनाभूमि थी, और सबसे भिन्न। इस विशेषता से मंडित डॉ. राम कुमार वर्मा के सृजन की काव्यभाषा निर्मिति का स्वरूप क्या था – उनकी टिप्पणियों द्वारा इसे स्पष्ट करने में हमें अधिक सुविधा होगी। उन्होंने अपनी काव्यभाषा के बारे में अपनी कविताओं में भी जगह–जगह पर टिप्पणियाँ दी हैं – जिनमें से एकाध इस प्रकार हैं –

क्या अपनों का ही यही स्वार्थ साधन सुख की परिभाषा है।
जिसमें न हृदय का स्पन्दन है वह भाषा भी क्या भाषा है।
हों तुम्हारे ये लजीले प्रश्न तो उत्तर बनू मैं ?
क्यों हृदय की भावना को मिल सकी अब तक न भाषा

इस संदर्भ में जिस भाषा की बात कही गई है, वह मानव जाति की

* असिस्टेंट प्रोफेसर, वीर वाजेकर ए.एस.सी. कॉलेज, फुंडे, ता. उरण, जि.रायगड (महाराष्ट्र) भारत

चित्तवृत्ति के भावनात्मक स्पन्दन से जुड़ती है। वह भाषा– जो आवेग के क्षणों में उत्पन्न होकर श्रोता के सोए भावात्मक संस्कारों को उद्धेलित करे या वह भाषा जो व्यक्ति के भावात्मक प्रतीकों का मूर्तरूप बनकर चित्रा में विम्बाकृति बनकर खड़ी हो जाए। डॉ.राम कुमार वर्मा अपनी भाषा से, अपने शब्दों से, भाषिक आरोह–आवरोह एवं लयता से, अन्वितियों से जुड़ी आकांक्षाओं से, अपनी अतृप्तियों एवं उन्मादभरी काम दीप्तियों से एक ऐसी काव्यभाषा को गढ़ने की बात करते हैं – जो श्रोता या पाठक के चित्त में जीती–जागती रोमानियत बिम्बों से भरे स्वप्न लोक को प्रातीतिक सत्य बना दे। डॉ.वर्मा कला विलास की भाषा से स्वप्निल चित्रा नहीं, जीते–जागते चित्रों को चित्र में रखना चाहते हैं। छायावादी कविता की खड़ी बोली भाषा उनकी इन अवधारणाओं से कैसे सजती है – उसके कुछ सूत्रा इस प्रकार हैं –

1. वे स्वयं कहते हैं कि ‘उनकी रूपराशि कल्पना से निर्मित है।’[3]
2. उनकी भावुकता का सबसे बड़ा तत्त्व है, रोमानियत – प्रणयभाव, उल्लास, मादकता, अतृप्ति, साहचर्य की कामना का अतिरेक
3. उनकी कविता कल्पनालोक तथा प्रणय के मधुर लोक के संयोग से बनती है किन्तु डॉ. वर्मा उसमें यथार्थ जैसा जीवन भोगने की कामना रखते हैं।
4. कोमलतम, रमणीयतम, सुन्दरतम की परम्परा, अनुभव एवं भाषा एक बिन्दु पर एक साथ हैं।
5. वस्तुसत्ता को आत्मसत्ता में विलीनीकरण की प्रवृत्ति।

प्राय: डॉ. वर्मा की ये अवधरणाएँ उनकी अभिव्यक्ति के लिए भाषा का सृजन करती हैं। उनके गीतों की सृजित भाषा का स्वरूप इसी प्रकार निर्मित है। काव्यभाषा निर्माण के संदर्भ में डॉ.राम कुमार वर्मा का सबसे बड़ा हथियार– विपरीतार्थकता है। यह विषय,विरोध, विसंगति से प्रारम्भ होकर अन्तर्विरोध को फैलाती चलती है और अन्त में लाक्षणिक पैनेपन एवं कल्पना की अतिशयता से स्वयं को सजा लेती है। कष्ट की गहराई के ऊपर खिला कमल,पूरी बात का अधूरा रह जाना, विद्युत की हँसी में रात का सिहरना, तारों की अधखिली कलियाँ–अँधेरी रात में भाग्य की विडम्बनाएँ, रसमय हृदय की चपल ज्वाला, आकाश का अश्रु – तुम्हारा हास है, काले नश्वर बादल जीवन के श्रृंगार हैं, ‘ना को इनकार न मानना’ पाप से कलुशित प्रिय का पुण्य गात, आदि–आदि कितने उदाहरणों से उनके गीत भरे पड़े हैं।

भाषा के प्रयोग के द्वारा आकस्मिक परिवर्तन करके चमत्कृति द्वारा पाठक के मन में भावद्वन्द्व उत्पन्न करना इस प्रयोग का प्रतिपफल है। गीतों में यह विपरीतार्थता उन्माद, भावुकता, प्रणय, कोमलता, अतृप्ति, भोग की कामना आदि से जुड़ी शब्दावलियों तथा आकांक्षाओं से सम्बन्ध है। उन्मेश, कल्पना, सृजन की व्याप्ति आदि से समन्वित यह ब्रजभाषा से अधिक समृद्ध रोमानियत तथा स्वच्छन्द प्रेम से मंडित है। डॉ.राम कुमार वर्मा जब सृजन के क्षणों में अधिक भावुक होते हैं तो क्रियापदों की आवृत्ति बहुलता एवं उनसे निर्मित सूक्ष्म रोमानियत भरे विम्ब अधिक सचेत दिखाई पड़ने लगते हैं। क्रियापदों की निरन्तरता और आवृत्तियों से निर्मित उनके चित्रा अधिक संवेदनशीलता का परिवेश निर्मित करते हैं– जैसे – आज मेरी गति तुम्हारी आरती बन जाए।

‘आरती घूमे कि खिंचता जाए रंजित क्षितिज घेरा।
धूम सा जलकर भटकता चले सारा नभ अँधेरा।।’[4]

गतिशीलता, आरती बनना, घूमना, खिंचना, जलना, भटक कर चलना ये क्रियापद तथा कृदन्तीय रूप एक विशाल बिम्ब द्वारा प्रेम की चित्रात्मक आवृति निर्मित करते हैं। – छायावादी युग में रचा गया भाषा का यह कथात्मक प्रयोग उसकी सम्पन्नता का स्वयं में एक जीवन्त साक्ष्य है।

काव्यभाषा की दृष्टि से कभी–कभी लगता है, उनका अध्यापक– साहित्यकार उनके सर्जन पर पूरी तरह से हावी है। इस संदर्भ में जब वे काव्यभाषा को रचना के स्तर पर उतारते हैं, तो लाक्षणिक जटिलता, उनके साथ–साथ चलने लगती है। डॉ. वर्मा में यह लाक्षणिक जटिलता उनकी कल्पना से जुड़कर वक्रतापूर्ण अर्थ विधन का कार्य करने लगती है। यह सत्य है कि डॉ. राम कुमार वर्मा की काव्यभाषा में लाक्षणिकता की भंगिमा उसका प्रमुख तत्त्व है, किन्तु यह लाक्षणिकता धीरे–धीरे शास्त्रावाद का रूप ग्रहण करने लगती है और तब डॉ. वर्मा संस्कृत काव्य परम्परा में महाकवि भारवि, श्री हर्ष, माघ जैसे प्रयोगों के प्रति उद्यत दिखाई पड़ने लगते हैं। वर्मा जी के प्रबन्धकाव्यों में भाषा की यह प्रवृत्ति निरन्तर दिखाई देती है जैसे – ‘ज्यों श्लेष अलंकार में प्रयुक्त एक शब्द।

एक बार में अनेक अर्थ कह देता है।।
है ब्राह्म बेला तंद्रा कुछ ऐसी होती है,
जैसे कर्मनाशा मिल जाय हनुजाया में।
वज्र तर्जनी से हा! कितना विवश हूँ,
हो गया हूँ पुष्प मुरझाया–सा कूष्मांड का।’[5]

हिन्दी काव्यभाषा के निर्माण की यह विशेषता आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी युग की प्रवृत्ति के विकास का दूसरा सोपान् कहा जा सकता है।

निष्कर्ष – भंगिमाएँ ही उनकी काव्यभाषा के लिए आवरण हैं। सीमित शब्दों की यह सांकेतिक अर्थ भंगिमा उनकी कविता की निर्मित के लिए सर्वत्र आधार का कार्य करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रिंसिपिल्स ऑफ लिट्रेरी क्रिटिसिज्म – पृ. 98 तथा 114
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – डॉ. राम स्वरूप चर्तुवेदी – पृ. 11., 111
3. नई कविता : खण्ड एक : सैद्धान्तिक – पृ. 164
4. नई कविता के आलोचकों से– डॉ. राम कुमार वर्मा–पृ. 335
5. नई कविता : खण्ड एक, सैद्धान्तिक पक्ष– पृ. 171

****

लघु एवं कुटीर उद्योगो का विश्लेषणात्मक अध्ययन (मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले के विशेष संदर्भ में)

माया पिण्डोलिया*

प्रस्तावना – उद्योग एक व्यापक शब्द है और इसमें उद्यम छिपा हुआ है। उद्यम का अभिप्राय है – प्रयत्न करना। प्रत्येक क्रिया चाहे वह आर्थिक हो या अनार्थिक उसमें उद्यम (प्रयत्न) किया जाता है। अत: वे उद्योग ही है किन्तु जब व्यावसायिक और व्यापारिक जगत की चर्चा होती है तो उद्योग शब्द अपने सीमित रूप में हमारे सामने आता है, अर्थात प्रकृति प्रदत्त पदार्थो को रूपान्तरित करके उन्हें उपयोगी बनाने की क्रिया ही उद्योग है। प्रकृति ने जो भौतिक पदार्थ हमें उपहारस्वरूप प्रदान किये है, उनका निर्माण करना या उनका विनाश करना मानवीय शक्ति से परे है। अत: मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए –

1. व्यक्ति अपने प्रयत्नों से उपलब्ध संसाधनों का रूप परिवर्तित कर दे। या
2. व्यक्ति अपने प्रयत्नों से संसाधनों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर यातायात व परिवहन के माध्यम से पहुंचाकर उनकी उपयोगिता में वृद्धि कर दें। या
3. व्यक्ति अपने प्रयत्नों से अनिर्मित वस्तु का पूर्ण रूप से निर्माण कर दें। यह सभी उद्योग कहलाता है।

अन्य शब्दों में उपरोक्त तीन तत्वों में सामंजस्य स्थापित करके जो कार्य किया जाता है, उसे उत्पादन और जिस स्थान पर यह कार्य संपन्न किया जाता है, उसे उद्योग कहा जाता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से पुनर्गठित मध्यप्रदेश भारत का दूसरा बडा प्रदेश है। यहां विभिन्न नैसर्गिक संसाधन उपलब्ध है। प्रदेश में लगभग 30 प्रकार के खनिज प्राप्त होते है। प्रदेश में भारत का 50% मैगनीज, 35 कोयला, 30 लोह अयस्क एवं 44 बाक्साइड के भण्डार उपलब्ध है। इसके अलावा अभ्रक, तांबा, सोना, हीरा, शीषा, डोलोमाइट एवं ग्रेफाइट आदि खनिज भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होते है। ब्रिटिश काल में सेन्ट्रल प्रॉविंस में औद्योगिक संसाधनों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। इसके चारों ओर छोटी–छोटी रियासते थी, जो अधिकतर स्वावलम्बी के रूप में थी। इनके राजाओं का ध्यान प्रादेशिक आर्थिक विकास की ओर नहीं था परिणामस्वरूप अन्य राज्यों की तुलना में मध्यप्रदेश में उद्योगों का विकास प्रारंभिक वर्षो में मंद था।

मध्यप्रदेश की रियासते अपेक्षाकृत अधिक विकासोन्मुख थीं। नया ग्वालियर, इन्दौर, उज्जैन, रतलाम इत्यादि नगर छोटे–छोटे औद्योगिक केन्द्र बन गए थे किन्तु यहां के सभी उद्योग उपभोक्ता सामग्री से संबंधित थे जैसे – इन्दौर, ग्वालियर में कपड़ा, शक्कर, चमड़े इत्यादि के उद्योग स्थापित हो गए थे। सेन्ट्रल प्रॉविंस में नागपुर और जबलपुर औद्योगिक दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है, किन्तु उद्योगों की दिशा भी यहां भिन्न थी। यद्यपि खनिज, वन एवं कृषि संसाधनों की दृष्टि से पूर्वी मध्यप्रदेश अधिक संपन्न है, किन्तु औद्योगिक विकास पश्चिमी मध्यप्रदेश का अधिक हुआ है।

मध्यप्रदेश न केवल वनो के क्षेत्र की दृष्टि से अग्रणी है, बल्कि यहां पर्याप्त औद्योगिक कच्चा माल भी प्राप्त होता है। नियोजित विकास के पूर्व प्रमुख औद्योगिक केन्द्र पश्चिमी मध्यप्रदेश में थे और अधिकतर औद्योगिक उत्पादन उपभोक्ता सामग्री का होता था। इस दृष्टि से भारत के अन्य राज्यों की तुलना में म.प्र. अभी तक पिछडा हुआ है। किन्तु नियोजित विकासकाल में उद्योगों के विकास पर विशेष बल दिया। मध्यप्रदेश में विभिन्न प्रकार के उद्योगों के लिए प्राकृतिक संसाधन है, अत: ऐसे उद्योगो के विकास पर बल दिया गया ऐसे आधारभूत उद्योगों को प्रोत्साहन दिया गया, जो अन्य उद्योगों के विकास में सहायक हो– जैसे लोहा, इस्पात, रसायन, सीमेंट एवं हैवी इलेक्ट्रीकल्स। इनको प्रोत्साहन देने के लिए इण्डस्ट्रीयल स्टेट तथा इण्डस्ट्रीयल एरिया स्थापित किये गये साथ ही आर्थिक सहायता प्रशिक्षण केन्द्रों के स्थापना एवं विक्रय में भी सहायता दी गई। फलस्वरूप उद्योगों के प्रादेशिक वितरण का प्रतिरूप गत वर्षो में बहुत अधिक परिवर्तित हो गया है। मध्यप्रदेश में गतवर्षो में उद्योग धंधो का पर्याप्त विकास हुआ है। वर्तमान में मध्यप्रदेश औद्योगिकरण की राह पर तेजी से अग्रसर होकर संपूर्ण देश में औद्योगिकरण की दृष्टि से 6वें स्थान पर आ गया है।

प्रदेश में उद्योगों में रोजगार एवं कुशल कारीगरों की उपलब्धि की दृष्टि से प्रथम पायदान पर खड़े इन्दौर जिले में 1994 में इण्डो जर्मन टूल रूम स्थापित किया गया। इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योगों के विकास के लिए मध्यप्रदेश इलेक्ट्रॉनिक्स डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन को नोडल एजेंसी के रूप में मान्यता दी गयी है। इसी के साथ इन्दौर में भारत सरकार द्वारा इलेक्ट्रॉनिक्स टेस्टिंग व विकास केन्द्र स्थापित किया गया है। औद्योगिकरण केन्द्र स्थापित किये गये है, इनके मुख्यालय क्रमश: इन्दौर, जबलपुर, रायपुर (वर्तमान में छत्तीसगढ़ राज्य में) तथा रीवा में है।

इस प्रकार इन्दौर जिला औद्योगिक विकास की संभावनाओं की दृष्टि से सदैव राज्य शासन के औद्योगिकीकरण के प्रयासों में प्रमुख स्थान एवं प्राथमिकता पाता रहा है।

- **इन्दौर जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थिति**

तालिका क्रमांक–1.1

जिले के पंजीकृत लघु एवं कुटीर उद्योगों की इकाइयां

वर्ष	संख्या	रोजगार	निवेश (लाखों में)
1990–91	386	2692	655.70
1991–92	352	2205	671.87

* शोधार्थी, वाणिज्य अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

1992-93	446	1663	699.76
1993-94	571	2558	644.15
1994-95	1104	4110	790.04
1995-96	837	2746	748.60
1996-97	323	2314	751.45
1997-98	251	1981	1219.22
1998-99	143	1377	1954.11
1999-2000	126	1214	889.49
2000-01	226	1218	1254.67
2001-02	120	1224	922.94
2002-03	111	846	685.88
2003-04	707	1846	649.13
2004-05	659	1845	846.00
2005-06	610	1446	906.14
2006-07	603	2122	1366.03
2007-08	752	2266	3168.08
2008-09	789	2587	1488.04
2009-10	803	1720	1275.02
2010-11	806	2068	1190.06
2011-12	844	1900	3383.07
2012-13	663	1744	2695.37
2013-14	807	1908	3250.19
2014-15	822	1845	3196.23
2015-16	851	1911	3349.39

स्त्रोत - जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र इन्दौर

जिले में पंजीकृत लघु उद्योगों की तालिका क्रमांक-1.1 का अवलोकन करने पर स्पष्ट हो रहा है कि जिले में वर्ष 1990-91 में 386 इकाइयां पंजीकृत हुई जिसमें 2692 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त था और कुल निवेश 655.70 लाख रू. था और वर्ष 2015-16 में 851 इकाइयां पंजीकृत हुई जिसमें 1911 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त था और कुल निवेश 3349.39 लाख रू. रहा। सबसे अधिक लघु उद्योग वर्ष 1994-95 में 1104 पंजीकृत हुए जिसमें 4110 व्यक्तियों को रोजगार मिला और कुल निवेश 790.04 लाख रू. रहा और सबसे कम लघु उद्योग वर्ष 2002-03 में 111 पंजीकृत हुए जिसमें 846 व्यक्तियों को रोजगार मिला और कुल निवेश 685.88 लाख रू. रहा। सर्वाधिक निवेश वर्ष 2015-16 में 3349.39 लाख रू. और सबसे कम निवेश वर्ष 1993-94 में 644.15 लाख रू. रहा।

उपरोक्त तालिका से स्प्ष्ट है कि वर्ष 1995-96 से लघु उद्योगों की स्थापित होने वाली नवीन इकाइयों की संख्या में निरंतर कमी होती गई व वर्ष 2002-03 में यह मात्र 111 रह गई जो कि पूर्व वर्ष की अपेक्षा अधिक गिरावट दर्शा रही है। यह जिले के लघु उद्योगों के लिए चिन्ता का विषय है नवीन पंजीकृत लघु उद्योगों की इकाइयों की संख्या में कमी की यह प्रवृत्ति उदारीकरण की नीतियों को अपनाने और उन्हें लागू करने के बाद बढ़ी है। अत: साधिकार यह कहना उचित होगा कि उदारीकरण की नीतियों का जिले के लघु उद्योगों पर सुप्रभाव नहीं दिखाई दे रहा है।

- **जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थिति**

तालिका क्रमांक-1.2

जिले के पंजीकृत लघु एवं कुटीर में प्रति उद्योग रोजगार व निवेश

वर्ष	संख्या	रोजगार प्रति उद्योग(व्यक्ति)	निवेश प्रति उद्योग(लाखों में)
1990-91	386	6.97	1.98
1991-92	352	6.26	1.90
1992-93	446	3.72	1.56
1993-94	571	4.47	1.12
1994-95	1104	3.73	**0.71**
1995-96	837	3.28	0.89
1996-97	323	7.16	2.32
1997-98	251	7.89	4.85
1998-99	143	9.62	**13.66**
1999-2000	126	9.63	7.05
2000-01	226	5.38	5.55
2001-02	120	10.20	7.69
2002-03	111	7.62	6.17
2003-04	707	2.61	0.91
2004-05	659	2.79	1.28
2005-06	610	2.37	1.48
2006-07	603	3.51	2.26
2007-08	752	3.01	4.21
2008-09	789	3.27	1.88
2009-10	803	2.14	1.58
2010-11	806	2.56	1.47
2011-12	844	2.25	4.00
2012-13	663	2.63	4.06
2013-14	807	2.36	4.02
2014-15	822	2.24	3.88
2015-16	851	2.24	3.93

स्त्रोत - जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र इन्दौर

उपरोक्त तालिका में यदि रोजगार की तुलना की जाये तो विभिन्न वर्षो में प्रति उद्योग रोजगार 2 से अधिक रहा है, सर्वाधिक प्रति उद्योग रोजगार वर्ष 2001-02 में 10.20 रहा जबकि केवल 120 उद्योग ही स्थापित हुए और सबसे कम प्रति उद्योग रोजगार वर्ष 2.14 रहा जबकि 803 उद्योगों की स्थापना हुई, इस विश्लेषण के आधार पर यह कहा जिस वर्ष कम उद्योग स्थापित हुए है उन वर्षो में प्रति उद्योग रोजगार अधिक है और जिस वर्ष अधिक उद्योग स्थापित हुए है उन उन वर्षो में प्रति उद्योग रोजगार कम है।

विनियोग के क्षेत्र में देखा जाये तो विभिन्न वर्षो सर्वाधिक प्रति उद्योग निवेश 1998-99 में 13.66 लाख रू. रहा जबकि 143 उद्योग ही स्थापित हुए और सबसे कम प्रति उद्योग निवेश वर्ष 1994-95 में 0.71 लाख रू. रहा अर्थात इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि जिस वर्ष अधिक उद्योग स्थापित हुए उस वर्ष निवेश की दर कम थी और जिस वर्ष उद्योग कम स्थापित हुए उस वर्ष निवेश की दर अधिक रही।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला विकास पुस्तिका वर्ष 2010, संभागीय योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय, संभाग इन्दौर।
2. वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16, भारत सरकार उद्योग मंत्रालय, नई दिल्ली।
3. जिला उद्योग केन्द्र इन्दौर।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

आरक्षण के जनक शाहू छत्रपति

अमिता वानखेड़े *

प्रस्तावना – वर्तमान में देश में अक्सर आरक्षण को लेकर चर्चा और बहस होती रहती है। उसमें संशोधन भी होते रहते है।

आमतौर पर माना जाता है कि देश में आरक्षण पहली बार स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संविधान के निर्माण के दौरान चर्चा में आया। किंतु यह सत्य नही है, सत्य तो यह है कि आधुनिक भारत में आरक्षण का सबसे पहला विचार प्रस्ताव सन् 1809 में मैसूर के महाराजा चामराज (कामराजा) वाडियर दशम ने किया था। उन्होंने ब्राह्मणों को छोड़कर अन्य सभी जातियों को आरक्षण देने का विचार किया और प्रस्ताव को दरबार में रखा। इस प्रस्ताव से सभी स्तब्ध रह गये थे। और भयवश कोई सहमति नही हुई, तब राजा ने अकेले में अपने दीवान (प्रधानमंत्री) से सलाह ली। उनके प्रधानमंत्री के शेषाद्री अय्यर बहुत विद्वान और दूरदर्शी व्यक्ति थे। उन्होंने राजा को सलाह देते हुए कहा 'आप महाराजा है, आप जो चाहे कर सकते है किंतु आपने मुझसे सलाह मांगी है, इसलिए मैं आपको स्पष्ट सलाह दे रहा हुँ कि किसी भी प्रकार का आरक्षण यह विशेषाधिकार समाज के विखंडन का कारण बनेगा। आज दिया जा रहा यह विशेषाधिकार कल जन्मसिद्ध अधिकार मान लिया जाएगा।' एक बार देने के बाद आप इसे समाप्त नही कर पायेंगे क्योंकि इससे विद्रोह होगा। फिर भी यदि आप आरक्षण देना चाहते है तो आप तीन विभागों में आरक्षण कदापि न दे। न्यायपालिका, शिक्षा और प्रशासन, ये तीनों अंग ऐसे है जो योग्यता के आधार पर नही चलाए गए तो देश के विनाष का कारण बनते है।

इस सलाह का यह परिणाम हुआ कि मैसूर के महाराजा ने आरक्षण का विचार समूल त्याग दिया। किंतु बाद में यह विचार यहाँ से महाराष्ट्र के कोल्हापुर पहुँच गया। कोल्हापुर के महाराजा छत्रपति शाहूजी महाराज ने राज्य के बुद्धिमान लोगों की सलाह के बावजूद सन् 1902 में अपने राज्य में 50 प्रतिशत आरक्षण लागू किया। इस आरक्षण में सिर्फ ब्राह्मणों को छोड़कर सभी वर्ग के लोग शामिल थे। उनके पूर्वग्रहों का कारण यह रहा होगा कि तब ब्राह्मणों की स्थिति कम से कम मराठी भाषी क्षेत्र में अच्छी थी। किंतु शेष भारत में ब्राह्मण विपन्न ही थे।

सन् 1894 ई. में कोल्हापुर राज्य में राजकारोबार में कुल 71 अफसर थे, उनमें 60 ब्राह्मण थे। और शाहू छत्रपति महाराज की खानगी (प्रायवेट) नौकरी में 52 में से 45 ब्राह्मण थे। कोल्हापुर रियासत की कुल नौ लाख की बस्ती में ब्राह्मण और ऊँची श्रेणी के लोगों की संख्या मात्र छब्बीस हजार थी। इस प्रकार शाहू छत्रपति के हाथों में राजकारोबार के सुत्र आने के पहले दरबार और खानगी (प्रायवेट) कारोबार उन आमजनों की बपौत्ती बना हुआ था। उस समय कोल्हापुर में शिक्षित ब्राह्मण 79.1 प्रतिशत, तो मराठा 8.6 प्रतिशत, किसानकर्मी 1.5 प्रतिशत, मुस्लिम 7.5 प्रतिशत और जैन लिंगायत 10.1 प्रतिशत शिक्षित थे।

अंबेडकर, शाहू छत्रपति से प्रभावित थे। 1920 ई. में उन्होंने डॉ. बी.आर. अंबेडकर के नेतृत्व में आयोजित एक विशाल रैली को संबोधित किया और उत्पीड़ीतों की उन्नति संबंधी अपना अभियान डॉ. बी.आर.अंबेडकर को सौंपने की घोषणा की, क्योंकि वह डॉ.अंबेडकर से सहमत थे। और डॉ. अंबेडकर के प्रति उनके मन में पूरा विश्वास था।

डॉ. अंबेडकरजी ने संविधान का मसौदा तैयार कर दो साल 11 माह और 18 दिन में संविधान का निर्माण किया था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 26 नवंबर 1956 ई. को देश का संविधान निर्मित हुआ। एवं उसे 26 जनवरी 1956 ई. से लागू किया गया। संविधान के अनुसार अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं अल्पसंख्यक समुदाय को भी आरक्षण का लाभ प्राप्त हो रहा है। तब ब्राह्मण वर्ग को आरक्षण की सुविधा प्राप्त नही थी। परंतु वर्तमान में संविधान में संशोधन कर ब्राह्मण वर्ग को भी आर्थिक स्तर के आधार पर 10 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान तय किया गया।

निष्कर्ष – शाहू छत्रपति महाराज ने अपनी रियासत में यह बहुत अच्छे से महसूस किया था कि जब तक पिछड़ी जाति को आरक्षण नही दिया जाता, तब तक उनका आर्थिक और सामाजिक विकास होना संभव नही है। उनकी रियासत में सभी उच्च पदों से लेकर निचले स्तर तक ब्राह्मणों का ही वर्चस्व है। इन पिछड़ी जाति के लोगों को न्याय नही मिल पाता, बल्कि इनका शोषण ही होता है। तब उन्होंने अपनी रियासत के प्रत्येक क्षेत्र में आरक्षण प्रणाली लागू कर इनकी नियुक्ति की ताकि इन पिछड़ी जातियों को न्याय, सम्मान और आर्थिक रुप से सक्षम एवं संपन्न हो सके। और इनका शोषण न हो पाए।

इसी उद्देश्य से उस समय की 22 रियासतों में से केवल शाहू छत्रपति ही एक ऐसे राजा थे, जिन्होंने अपने राज्य में आरक्षण प्रणाली प्रारंभ की थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. धनंजय किर – राजर्षी शाहू महाराज
2. रमेश जाधव – लोकराजा शाहू छत्रपति
3. कोल्हापुर दर्शन – ग.र. भिडे पुल. देशपांडे
4. राजर्षी शाहू छत्रपति यांचे अंतरंग – वा.द. तोफखाने
5. श्री शाहू महाराज यांच्या आठवणी – माधवराव बागल 1950
6. राजर्षी शाहू – राजा व माणूस – कृ. गो. सूर्यवंशी

* शोधार्थी (समाज विज्ञान) अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Uphill Battle of Human Rights and Democracy

Rachna Mathur*

Introduction - The India's liberal, democratic, and market-oriented economy offers an alternative to the hard authoritarian growth model of East Asia. Furthermore, India's democratic path is arguably more relevant to the developing countries of Asia, Africa, and Middle East than the European road to modernization and democracy. India has developed a unique formula to balance individual and group rights, devolve federal power down to the village-level (Panchayat Raj), and use its multiparty system as a grand bargain to reconcile differences over identities, interests, and office. In this sense, India's democratic experiment is one of 28 the greatest political experiments of our time. However, India has been generally reluctant to export democracy or engage in policies of regime change for at least three reasons. First, protection of its 'strategic autonomy' has compelled India to reject attempts to set any general precedent of collective intervention on behalf of intervention in the domestic affairs of other states; it does not wish to set a precedent of intervention in the name of normative principles. Second, prodemocracy coalitions (for much of the Cold War period) were military alliances in disguise led by the United States to promote U.S. interests. India was reluctant to participate in these. Third, challenges arising from ethnic demography in Punjab, Indian Kashmir, and many parts of the Northeast have made India vulnerable to charges of human rights violations. India has therefore been reluctant to support any blanket endorsement of international human rights regimes. India's policy objective is to retain maximum freedom of action so that it can consolidate its own periphery and incorporate hitherto loosely integrated communities into the Indian Union. These structural problems explain India's ambivalence regarding the promotion of democracy and human rights. While India has the military power to affect regime change in smaller neighboring states, overlapping communities, disputed borders, and fear of domestic repercussions limit India's options.

Human rights are moral principles or norms, which describe certain standards of human behaviour, and are regularly protected as legal rights in municipal and international law. They are commonly understood as inalienable fundamental rights "to which a person is inherently entitled simply because she or he is a human being," and which are "inherent in all human beings" regardless of their nation, location, language, religion, ethnic origin or any other status. They are applicable everywhere and at every time in the sense of being universal, and they are egalitarian in the sense of being the same for everyone. They require empathy and the rule of law and impose an obligation on persons to respect the human rights of others. They should not be taken away except as a result of due process based on specific circumstances; for example, human rights may include freedom from unlawful imprisonment, torture, and execution. The doctrine of human rights has been highly influential within international law, global and regional institutions. Actions by states and non-governmental organizations form a basis of public policy worldwide. The idea of human rights suggests that "if the public discourse of peacetime global society can be said to have a common moral language, it is that of human rights." The strong claims made by the doctrine of human rights continue to provoke considerable skepticism and debates about the content, nature and justifications of human rights to this day. The precise meaning of the term right is controversial and is the subject of continued philosophical debate; while there is consensus that human rights encompasses a wide variety of rights such as the right to a fair trial, protection against enslavement, prohibition of genocide, free speech, or a right to education, there is disagreement about which of these particular rights should be included within the general framework of human rights; some thinkers suggest that human rights should be a minimum requirement to avoid the worst-case abuses, while others see it as a higher standard. Many of the basic ideas that animated the human rights movement developed in the aftermath of the Second World War and the atrocities of The Holocaust, culminating in the adoption of the Universal Declaration of Human Rights in Paris by the United Nations General Assembly in 1948. Ancient peoples did not have the same modern-day conception of universal human rights.The true forerunner of human rights discourse was the concept of natural rights which appeared as part of the medieval natural law tradition that became prominent during the European Enlightenment with such philosophers as John Locke, Francis Hutcheson, and Jean-Jacques Burlamaqui, and which featured prominently in the political

*Lecturer (English) M. S. Govt. Girls College, Bikaner (Raj.) INDIA

discourse of the American Revolution and the French Revolution. From this foundation, the modern human rights arguments emerged over the latter half of the twentieth century, possibly as a reaction to slavery, torture, genocide, and war crimes, as a realization of inherent human vulnerability and as being a precondition for the possibility of a just society.

DEFINING HUMAN RIGHTS whenever we think of Human Rights, we are reminded of the UN Declaration of Human Rights of 1948. On December 10, 1948, the General Assembly of the United Nations adopted and proclaimed the Universal Declaration of Human Rights. Human Rights are generally defined as the rights which every human being is entitled to enjoy. Each and every human being has to enjoy certain rights as being human. Human rights are those rights that belong to everyone as a member of the human race, regardless of skin colour, nationality, political convictions or religious persuasion, social standing, gender or age. Every individual possesses human rights. They are subjective rights because the right-holders of human rights are individuals, and not collective. Human rights are rights with a certain complexity because they are at the same time moral, legal, and political rights. That is why almost all societies have developed certain rights that have to be respected and followed. 1n 1940s members of the UNO (that time there were 51 countries and today there are 193 countries who are signatory to this declaration) came together and adopted and proclaimed the universal declaration of Human Rights. All these rights have been listed in the UN Declaration of Human Rights of 1948. No matter how great a nation may be yet it has to abide and conform to Human Rights Laws. It is because all nations agreed the Charter and signed. Human Rights Laws do have some primacy over the laws of various nations. Most of the countries of 21st century have adopted democratic system of government. Though adopted still there are many countries which have not been practicing democratic pattern of government. But they are the signatory of the UN Declaration of Human Rights of 1948. Are they able to protect the Human Rights of their citizens in their countries? The present study is an attempt to study how nondemocratic countries are able to protect Human Rights. The study will try to find out whether there is any relationship between Democracy and Human Rights at all. The study will find out the complex relationship between two concepts, viz., democracy and Human Rights. Democracy without Protection of Human Rights and Pro-Poor Development programs is a Myth All democratic countries must put all effort to alleviate poverty as it is considered as brutal denial of human rights. People in general do require these essential conditions. Poverty is a situation that gives Understanding the Relationship Between Democracy and Human Rights Proceedings of WRFER International Conference, 16th April 2017, Pune, India 137 rise to a feeling of acute discrimination, as what one has and what one 'should have' Again Right to life is a fundamental right. This must be recognized at the outset by all Policy-makers, including governments, donor agencies, international organizations and NonGovernmental Organization (NGOs). Poverty is a condition generated by chronic situations where people are deprived of basic daily needs such as Roti, Kapda aur Makan (Food, Clothing and Shelter). If these are not fulfilled, then it is a violation of Human Rights. Besides these three basic conditions, there are other conditions which correspond to the violation of internationally recognized human rights standards namely, the right to educational opportunities, the right to health facilities, the right to work, the right to livelihood, the right of equal access to public services and the right to seek justice. Many countries have got freedom

Human rights are rights inherent to all human beings, whatever our nationality, place of residence, sex, national or ethnic origin, colour, religion, language, or any other status. We are all equally entitled to our human rights without discrimination. These rights are all interrelated, interdependent and indivisible. Human rights are moral principles that set out certain standards of human behaviour and are regularly protected as legal rights in national and international law. They are "commonly understood as inalienable fundamental rights to which a person is inherently entitled simply because she or he is a human being." The doctrine of human rights has been highly influential within international law, global and regional institutions. In India, too, these rights along with Fundamental Rights have been provided to citizens. The concept of "A human rights" is not of recent origin. Many of the basic ideas that animated the human rights movement developed in the aftermath of the Second World War and the atrocities of The Holocaust, culminating in the adoption of the Universal Declaration of Human Rights in Paris by the United Nations General Assembly in 1948. The ancient world did not possess the concept of universal human rights. So, the expression was first employed in the Declaration of United Nations signed by the Allied Powers on January 1, 1942. India, the world's most populous democracy, continues to have significant human rights problems despite making commitments to tackle some of the most prevalent abuses. The country has a thriving civil society, free media, and an independent judiciary.

References :-

1. Austin, Granville (1999): Selected Chapters in Working a Democratic Constitution- A History of the Indian Experience (Oxford: OUP).
2. Chakrabarty, Bidyut and Pandey, Rajendra Kumar (2008): "Executive System in Theory and Practice", "Parliament", "The Judiciary" and "Federalism" in Indian Government and Politics (New Delhi: Sage) 55-106, 129-163, 35-51.
3. Kapur, Devesh and Mehta, Pratap Bhanu ed. (2005): "The Indian Parliament", " India's Judiciary: The Promise of Uncertainity" in Public Institutions in India: Performance and Design (New Delhi: OUP) 77-102, 158-

193.

4. Kashyap, Subhash C. (1995): Selected Chapters in Perspectives on Constitution (Delhi: Shipra Publishers).
5. Praveen Priyadarshi ed., Contemporary India: Economy, Society, Politics (New Delhi: Pearson Publication) 184 – 211. Assessment methodology: The
6. Gowda, Chandan (2010). Advance Mysore: The Cultural logic of a Developmental State, Economic & Political Weekly, July 17. Vol XLV No. 29
7. Aiyar, Mani Shankar (2010). “The Dilemma of Development and Democracy in India”, M.P., National lecture series, Nehru Memorial Museum; 24 November.
8. Sahoo, Sanbeswar (2005). “Tribal Displacements and Human Rights Violation in Orissa”, Social Action: Quarterly Review of Social Works Trends, April June, Vol. 55, No.2
9. Bhuimali, A (2007),Democracy And Human Rights. New Delhi, Serials Publications.
10. Bronitt, S And Misra,A, Reforming Sexual Offences In India: Lessons In Human Rights And Comparative Law. Griffith Asia Quarterly Vol. 2, No. 1 (2014).
11. Chatterjee,P(2008),State And Politics In India. New Delhi, Oxford University Press.
12. Chattopadhyay, B,Guha, A.R And Chatterjee, R (2002). Kolkata, Progressive Publishers.
13. Crime In India (2012) Statistics. New Delhi, National Crime Records Bureau, Ministry Of Home Affairs, Government Of India. Http://Ncrb.Nic.In/Cd-Cii2012/Statistics2012.

****

The Phenological Pattern in *Calligonumpolygonoides*Linn., (Polygonaceae)

M. Kumar* R.P. Ahrodia**

Abstract - *Calligonumpolygonoides*Linn. is a psammophyte shrub and constitutesthe main part of 'TharDesert' scrub vegetation.It is locally known as "Phog". The most beneficial role of this plant in the desert region is as a soil binder on dunes of Western Rajasthan and to increase soil fertility. The plant has food and medicinal value locally; its buds and seeds are used by local people. "Raita" can be prepared by its buds known as 'Phogla' in the local language. Seeds are usually eaten raw. Branches of *C. polygonoides*are used in the zinc purification. Roots and thick branches are used as fuel. The aqueous paste of plant acts as an antidote against the heavy dose of opium and poisonous effects of *Calotropisprocera*.The plant extract is used to cure typhoid by locals (Kumar *et al*., 2015).

Phenology is the study of the periodicity or timing of recurringbiological events.In the case of plants, phenological events involve leaf fall, flowering, fruiting, seed dispersal, and seed germination.

In *Calligonumpolygonoides*, leaf fall starts in the last week of November and it continues till the plants become nude inDecember. Maximum flowering was observed after the last week of February and continues up to the end of March.Fruiting occurs after 25 to 30 days of flowering in March-April. Seed dispersalstarts at the end of April or at the beginning of May by wind or mechanical jerk.

Keywords - Phenology, Leaf-fall, Flowering, Fruiting and Seed dispersal.

Introduction - The study of plant phenology provides knowledge about the pattern of plant growth and development as well as the effects of environment and selective pressures on flowering and fruiting behaviour (Zhang *et al*., 2006). Phenology may be considered as a branch of science which deals with bio-climates, the sequence of plant or crop developmental stages through its life cycle. Phenology is of great interest in agriculture when the timing of flower and fruit production can be critical in determining crop yield. Plant phenology includes seasonal patterns of leafing, flowering and fruiting in relation to climate are the topics of scientific study since the century (Bowers and Dimmitt, 1994). The most important and intensely studied phenoevent is the composition for pollination and the availability of the pollinators. Leafing and flowering phenophases does not occur simultaneously in woody species and flowering may be partly or wholly dependent on leafing activity (Singh and Kushwaha, 2005).

In the present investigation, work on the phenological aspects of *Calligonumpolygonoides*has been done.

Materials And Methods - Phenology was studied in *Calligonumpolygonoides*Linn. Observations of the phenological events in *C. polygonoides* were carried out throughout the year from Feb. 2010 to Jan. 2011 at two different locations situated in district Churu and Bikaner. Study sites were visited after every15 days and the phenologicalcharacteristics such as leaf-fall, flowering, fruit formation, fruit fall and dispersal of seeds were recorded.

Observations

Leaf-fall - It has been observed that browning of leaves commences in the mid of November and leaf fall starts in the last week of November, it continues till the plants become nude i.e. inDecember. Thus, plants of *Calligonumpolygonoides* Linn.bear leaves for 9 to 10 months. Leaves arise after winter rain(locally called as 'Mawath' in Rajasthan) in January.

Flowering - The observation revealed that flower bud initiation in *C. polygonoides* takes place in the last week of January at Churu but at Bikaner, it commences in the mid of February. Maximum flowering was observed after the last week of February and continues up to the end of March at both the study sites.

Fruiting - Fruit formation in *C. polygonoides* at Churu and Bikaner commences after 25 to 30 days of flowering *i.e.* in the month of March-April. Fully ripened fruits were observed at the end of April. The fruits when dry become globular due to tufted growth of hairs also called as bristles.

Seed dispersal - Seed dispersalis by wind or mechanical jerk. By the end of April or at the beginning of May, the dry wind starts to sweep over the arid tract of Rajasthan. Strong wind sweeping over the dunes in May and June results in shedding of fruits from the parent plant by the rolling

*Lab No. 2, Deptt. of Botany, UOR Jaipur (Raj.) INDIA
** Lecturer (Botany) Govt. N. M. College, Hanumangarh (Raj.) INDIA

mechanism. This mode of dispersal is common in deserts (Ridley, 1930).

Flowersare pinkish, loosely clustered in the axils of the ochreatestipules, pedicellate, pedicel 1.0 to 2.0 mm long, bisexual. Perianth five, imbricate, unequal, divided about 2/3 the way down, three large tepals, about 3.5 x 2.2 mm and two small 3.0x1.6 mm segments, obovate, cuneate, reticulately veined and persistent. Stamens 10-12, forming a flashy cup at the base, 3.0 mm long (2.0mm filament +1.0 mm anther), anther two-celled and dehiscence longitudinal. Ovary superior, syncarpous, four-angled due to four, slightly connate at the base, stigmas capitate.

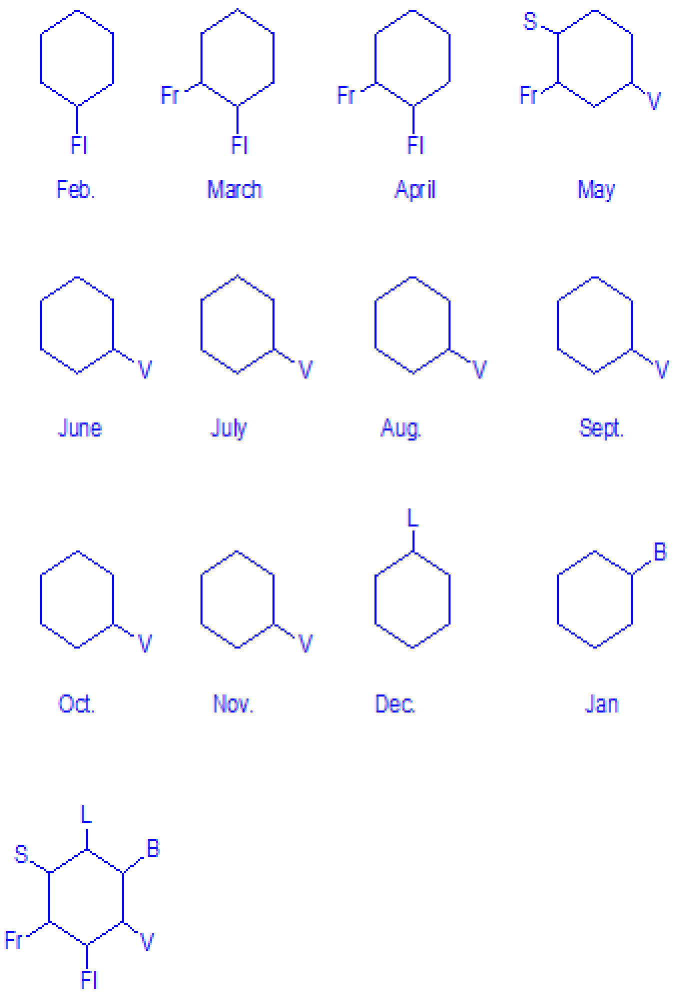

Fig. 1- Phenological events of *Calligonumpolygonoides* Linn.
L = Leaf fall
B = Budding
V = Vegetative
Fl = Flowering
Fr = Fruiting
S = Seed maturity

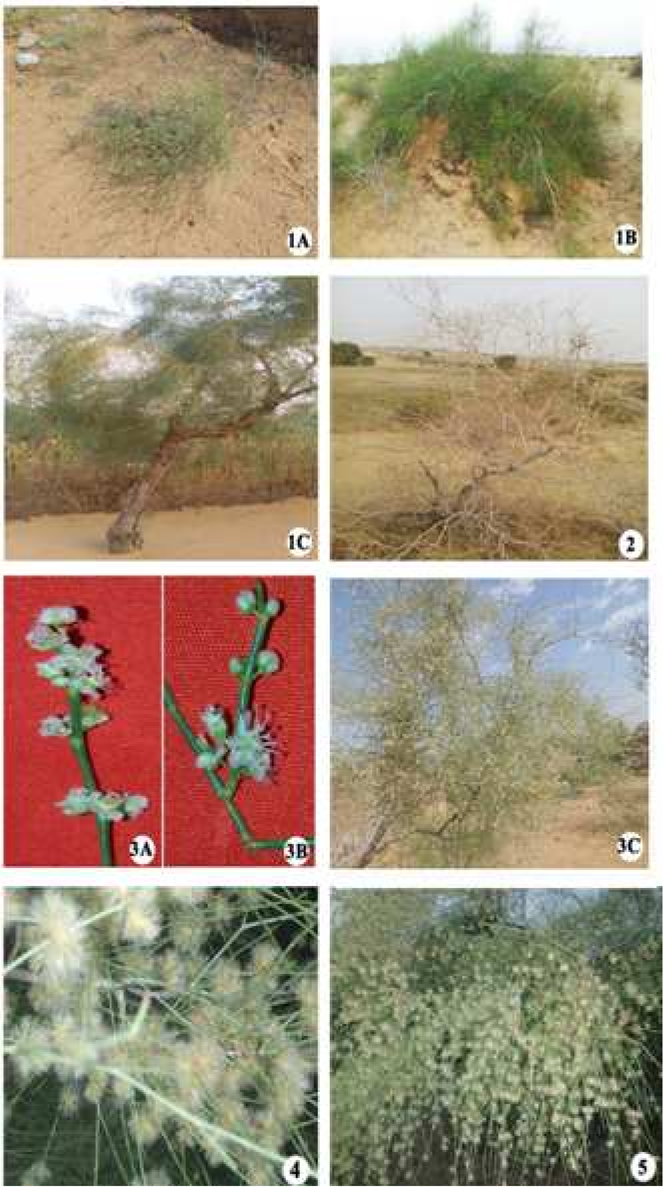

PLATE-1.1 : The vegetative stage of *Calligonumpoly-gonoides* Linn.

A. Young shrub
B. Mature shrub
C. The old plant looks like a tree
2. Leaf fall stage
3. Flowering stage
A. A cluster of flowers bud
B. Open flowers
C. Blossoming
4. Fruiting
5. Seed dispersal stage

Discussion - Some reports are available on the flower phenological characteristics of the genus *Calligonum*as investigated by Yin(1987) and Wang and Yin (1991). According to Dhief*et al*. (2011), the phenological pattern of the three species of *Calligonum* showed a similar sequence of phenophases with growth activity occurring mostly

between spring and summer season. They found a species-dependent response to summer drought, as in *C. comosum* completed all phenophases in June, while *C. azel* and *C. arich* extended their vegetative growth into the summer period of low precipitation.

The plant of *C.polygonoides* L. bears flowers ones a year from February to mid of the March. Even a one-year-old plant has been observed to flower. Flowering on small scale sets in, at the end of January as observed in plants growing in garden plots. Blatter and Hallberg (1918) had given the flowering season of this plant as October and November months in the Indian desert. However, Bhandari (1978) was not in the favour of this observation. Flowering in one old population growing in the garden was observed in the second week of November. Only a few of the plants bear flowers at this time and sheds away without producing fruits.

Kang *et al*., (2011) studied floral phenology, breeding system, pollination and seed germination of four species of *Calligonum*, *viz*.,*C. calliphysa, C. rubicundum, C. densum and C. ebinuricum* in the TurpanEremophytes Botanic Garden (TEBG), China. They observed flowering time of the above four species of *Calligonum* from mid of Mayto early Junein the fields.Bala and Kaul (2011) reported that flowering in *E. australis* starts *during* the first week of December. They found protandry, male-biased sex ratio, high Pollen/Ovule ratio, wind pollination, which indicates cross-pollination.

In the present investigation, flowering time was observed from last week of January to end of February. Maximum flowering was found in the last week of February. The setting of fruits starts after 25 to 30 days of flowering i.e. in March/April months. Another 30 days are required for ripening. In the beginning, the fruit is pinkish-green and turns gradually pale green to yellow and finally to reddish-brown when mature and dry.

*Calligonum*have bisexual flowers that occur in groups of two to four in the leaf axils. The perianth is persistent and comprises five parts. Tepals are green or red with a broad white margin abaxially, ovate, unequal, and not accrescent in fruit. There are 12–18 stamens and the filaments are connate at the base. The four styles are short and stigmas are capitate (Bao and Grabovskaya-Borodina, 2003). The nectary belongs to the torus type (Lin, 1989 and Wang *et al*., 2010).

Xiaoshan*et al*. (2011) reported the similar mating system in four species of *Calligonum* genus and they observed geitonogamy, cross-pollination and entemophilly. Similar observations are recorded in the present study of *C. polygonoides* L i.e. cross-pollination and entemophilly-members of Polygonaceae have sporophytic self-incompatibility and trinucleate pollen grains (Brewbaker, 1957). *Fagopyrumesculentum* and *F. cymosum* have a dimorphic sporophytic system of self-incompatibility. The incompatibility reaction has been recognized to be governed by a complex of genes or a supergene, S (Brewbaker, 1957 and Sharma and Boyes, 1961).

Dimorphic heterostyly condition has been reported in *Fagopyrumesculentum* (Dahlgren, 1922 and Schoch-Bodmer, 1934), *Oxygonum* (Graham,1957), in some species of *Persicaria* (Stanford, 1925 and Hassan and Khan, 1987) and *Aconogononcampanulatum*(Hong, 1991).These typical heteromorphic flower organizations result in dimorphic heterostyly, followed by the failure of fertilization (Adachi, 1990). Common buckwheat is, therefore strictly self-incompatible (Nagatomo and Adachi 1985 and Adachi, 1990). Chen (1999) carried out cross-pollination between seven species of *Fagopyrum* native to China and cross between various types of flowers (homostyle and heterostyle*etc*.). He suggested that the intraspecific incompatibility also occurs in interspecific crosses. Self-incompatibility of buckwheat requires cross-pollination between pin and thrum flowers (Nagatomo and Adachi 1985 and Adachi, 1990).

Wills *et al*., (2017) reviewed the current status of herbarium-based phenological research, identifiedthe potential biases and limitations in the collection, digitization, and interpretation of specimen data, and discussed future opportunities for phenological investigations using herbarium specimens.

Although phenological data obtained from the world are currently available. Truly global analysis of plant phenology has so far been difficult because the organizations producing large-scale phenological data are using non-standardized terminologies and metrics during data collection and data processing. To address this problem, Stucky *et al*., 2017 have developed the Plant Phenology Ontology (PPO). The PPO provides the standardized vocabulary and semantic framework that is needed for large-scale integration of heterogeneous plant phenological data.

References :-

1. Kumar M., Tiwari M., Mohil P., Bharti V. and Jain U. Ind. J. Plant Sci. 4 (2015) 63.
2. Zhang G., Song Q. and Yang D., Biotropica 38 (2006) 334.
3. Bowers J. and Dimmitt M.A., Bull. Torrey Bot. Club, 121(1994) 215.
4. Singh K.P. and Kushwah C.P., Curr. Sci. 89 (2005) 964.
5. Ridley H.N., Reeve and Co. Ashford, Kent, UK., (1930)17.
6. Yin L.K., Arid Zone Res. 4 (1987) 25.
7. Wang Y. and Yin L.K., Arid Zone Res. 4 (1991) 25.
8. Dhief A., Goraia M., Aschi-Smitib S. and Neffati M., Flora 204 (2011) 581.
9. Blatter S.J. and Hallberg F., J. Bom. Nat. Hist. Soc., 27(1918-1921) 506.
10. Bhandari M.M., Sci. Pub. Jodhpur, (1978) 331-332.
11. Kang X.S., Pan B.R., Duan S.M., Shi W. and Zhang Y.Z., (Brazilian J. Nature Cons.) NaturezaConservacao 9 (2011) 47.
12. Bala R. and Kaul V., Curr. Sci., 101 (2011) 554.

13. Bao B.J. and Grabovskaya-Borodina A.E., Beijing Sci. Press, Beijing, 5 (2003) 325.
14. Lin S.Q., China Forestry Pub. House, Beijing. (1989) 208-209.
15. Wang H., Wang X., Wang Y.X., Yang B.Y. and Jiang Y.C., Bull. Bot. Res. 30 (2010) 262.
16. Xiaoshan K., Borong P., Shimin D., Wei1 S. and Yongzhi Z., Arch. Biol. Sci. 63 (2011) 799.
17. Brewbaker J.I., J. Heredity. 48 (1957) 271.
18. Sharma K.D. and Boyes J.M., Can. J. Bot. 39 (1961) 1241.
19. Dahlgren K. V. O. Hereditas. 3 (1922) 91.
20. Schoch-Bodmer H., Planta, 22 (1934) 152.
21. Graham R.A., Kew Bull.1 (1957) 145.
22. Stanford E.E., Rhodora, 27 (1925) 47.
23. Hassan M.A., and Khan M.S.,Bangladesh J. Bot., 16 (1987) 93.
24. Hong S.P., Plant System. Evol. 176 (1991) 125.
25. Adachi T., Fagopyrum, 10 (1990) 11.
26. Nagatomo T. and Adachi T., In: Halevy AH (Ed) Handbook of Flowering (Vol. III), CRC Press, Boca Raton, Fl, USA, (1985) 1-8.
27. Chen Q.F., Bot. Jour. Linn. Soc. 131(1999) 177.
28. Wills C.G., law E., Williams A. C., Franzon B. F., Bernardos R., Bruno L., Hopkins C., Schorn C., Weber E., Park D. S. and Davis C. C. New Phyto. 205 (2017) 479.
29. Stucky B.J., Guralnick R., DeckJ., Denny E. G., Bolmgren K. and Walls R. Front. Plant Sci. 9 (2017) 517.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

सर्वशिक्षा अभियान व राजस्थान : एक परिचय

डॉ. मीनाक्षी मिश्रा *

प्रस्तावना – शिक्षा वह प्रकाश है जिसके द्वारा बालक की समस्त शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होता है। इससे वह समाज की सर्वांगीण उन्नति में अपनी शक्ति का उत्तरोत्तर प्रयोग करने की भावना से ओत-प्रोत होकर संस्कृति तथा सभ्यता को पुनर्जीवित करने के लिये प्रेरित हो जात है।

जिस प्रकार शिक्षा एक ओर बालक का सर्वांगीण विकास करके उसे तेजस्वी, बुद्धि, चरित्रवान विद्वान तथा वीर बनाती है, उसी प्रकार दूसरी ओर शिक्षा समाज की उन्नति के लिये भी एक आवश्यक तथा शक्तिशाली साधन है। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति की भाँति समाज भी शिक्षा के चमत्कार से लाभान्वित होता है। शिक्षा के द्वारा समाज भावी पीढ़ी के बालकों को उच्च आदर्शों, आशाओं, आकांक्षाओं, विश्वासों तथा परम्पराओं आदि सांस्कृतिक सम्पत्ति को इस प्रकार से हस्तान्तरित करता है कि उनके हृदय में देश-प्रेम तथा त्याग की भावना प्रज्ज्वलित हो जाती है। शिक्षा के द्वारा ही राष्ट्र का एकीकरण होता है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय अन्य क्षेत्रों की तरह शिक्षा के मामले में भी हमारी स्थिति चिन्तनीय थी। लेकिन सन् 1947 के बाद भारत में प्रारम्भिक शिक्षा के उन्नयन हेतु प्रभावशाली प्रयास हुए। हाँ, हम गर्व कर सकते हैं कि जहाँ वर्ष 1950 में स्कूलों में छात्रों की संख्या 1 करोड़ 90 लाख थी, वर्ष 1999 में लगभग 11 करोड़ हो गई। वर्ष 2001 की जनगणना के परिणाम इस बातकी पुष्टि करते हैं। 1951 में साक्षरता की दर 18.33 प्रतिशत थी, जो 2001 में बढ़कर 64.84 प्रतिशत हो गई जिसका मतलब है कि प्रत्येक दशक में कुल मिलाकर 12.63 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई है, स्वतंत्रता प्राप्त के बाद यह सबसे ऊँची दर है।

राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में बात करें तो यह सामाजिक एवम् आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा राज्य है। राजस्थान में शिक्षा का स्तर भारत के अन्य राज्यों की तुलना में काफी कम है। यहाँ महिला शिक्षा की स्थिति पुरूष शिक्षा से काफी दयनीय है जिसका मुख्य कारण सामाजिक परम्पराएँ एवं रीति-रिवाज है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् राज्य की सामाजिक एवम् आर्थिक परिस्थितियों में परिवर्तन के फलस्वरूप यहाँ शिक्षा की स्थिति में काफी सुधार आया है। राजस्थान में 2001 की जनगणना के अनुसार कुल साक्षरता 61.03 प्रतिशत थी, जिसमें महिला साक्षरता 44.34 प्रतिशत एवं पुरूष साक्षरता 76.46 प्रतिशत रही। हालांकि राजस्थान में 1991-2001 के दशक में राजस्थान की कुल साक्षरता में काफी वृद्धि हुई है, लेकिन राज्य की स्थिति अभी भी राष्ट्रीय औसत (65.38 प्रतिशत) से काफी कम है। राजस्थान में वर्ष 2004 में 1991 की तुलना में महिला साक्षरता दर में वृद्धि दुगुनी से भी ज्यादा है तथा पुरूष साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। इसी को सम्मान देते हुए यूनेस्को (UNESCO) ने राजस्थान को वर्ष 2006 का 'साक्षरता हेतु कन्फयूशियस पुरस्कार' प्रदान किया।

राजस्थान में महिला शिक्षा की स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण भारत सरकार ने यहाँ शिक्षा को प्रोत्साहित करने हेतु अनेक अभियान चलाकर 'सभी के लिये शिक्षा' के तहत कई प्रयास किये हैं और किये जा रहें हैं। राज्य सरकार द्वारा केन्द्र सरकार ने निर्देशों एवम् नीतियों की पालना कर, केन्द्र सरकार के आर्थिक सहयोग से शिक्षा कर्मी योजना, गुरू मित्र योजना, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम और राजीव गांधी स्वर्ण जयंती पाठशाला आदि कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है तथा अन्य भी अनेकों अभिकरण इस कार्य में अपनी भूमिका का बखूबी निवर्हन कर रहे हैं।

प्राथमिक शिक्षा व राजस्थान – स्वतंत्रता प्राप्ति से ही प्राथमिक शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिये करोड़ों रूपये खर्च किये जा चुके हैं, किन्तु देश की आजादी के 60 वर्ष पूर्ण (2007) होने के उपरान्त आज तक हम प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लक्ष्य को हासिल नहीं कर पाय हैं। राजस्थान में शिक्षा का विस्तार काफी हद तक हुआ है जिसके फलस्वरूप साक्षरता का प्रतिशत 38.55 (1991) से 61.03 (2001) हो गया, लेकिन यह स्थिति नामांकन एवं ठहराव की दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर पर संतोषजनक नहीं है, क्योंकि वर्ष 2001 की जनगणनानुसार राजस्थान 44.34 प्रतिशत महिला साक्षरता दर के साथ देश में 29वें स्थान पर है जो इस सदी के लिय संतोषजनक नहीं कही जा सकती।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनिकरण के लक्ष्य को हासिल करने हेतु राज्य सरकार द्वारा अनेक प्रयास किये गये जिनमें मुख्य रूप से शिक्षाकर्मी, लोकजुम्बिश, आदर्श विद्यालय योजना, सर्व शिक्षा अभियान, सरस्वती योजना, गुरुमित्र, डी.पी.ई.पी. शिक्षा आपके द्वारा राजीव गांधी पाठशाला, शिक्षा गारंटी योजना, चलता-फिरता स्कूल योजना, कस्तूरबा गांधी आवासीय योजना, मिड डे मील योजना, नि:शुल्क पाठ्यक्रम वितरण योजना शिक्षा नि:शक्त के द्वारा एवं वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा इत्यादि कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिनका प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र का शैक्षिक विकास तथा शिक्षा का सार्वभौमिकरण है। इस उद्देश्य प्राप्ति के लिये राजस्थान में अनेक स्वयंसेवी संस्थाओं ने भी उल्लेखनीय योगदान दिया।

उपर्युक्त प्रयासों एवं शिक्षा हेतु उपलब्ध कुल बजट की 60.53 प्रतिशत राशि प्राथमिक शिक्षा पर खर्च होने के बावजूद भी अभी तक राजस्थान में 12.21 लाख बालक/बालिकाएँ विद्यालय से बाहर हैं। विद्यालय नहीं जाने वाले सीमित बालक/बालिकाएँ को विद्यालय से जोड़ने की चुनौती को स्वीकार करते हुए राज्य सरकार ने संपूर्ण राजस्थान को विभिन्न परियोजना क्षेत्र में लाने का निर्णय किया। इस व्यूह रचना के अन्तर्गत 13 जिलों में लोक

* प्राचार्य, भारती शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

जुम्बिश तथा 19 जिलों में जिला प्राथमिक कार्यक्रम (डी.पी.ई.पी.) प्रारम्भ किया गया। अब इन कार्यक्रमों को सर्व शिक्षा अभियान में शामिल कर लिया गया।

राज्य सरकार ने 21वीं सदी में प्रवेश करने के साथ ही राज्य की शैक्षिक पिछड़ेपन की स्थिति से उभारने का पुनीत संकल्प लिया। इस संकल्प की परीणिति के रूप में राज्य सरकार ने विश्व बैंक की सहायता से जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी.पी.ई.पी.) करने की आवश्यकता महसूस की, क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्ति से ही प्राथमिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए करोड़ों रूपये खर्च किये जा चुके हैं, किन्तु प्राथमिक शिक्षा का वांछित लक्ष्य अभी तक प्राप्त नहीं हो पाया। इस उद्देश्य से राजस्थान में सर्व शिक्षा अभियान की शुरूआत हुई।

भारत सरकार ने तय किया है कि वर्ष 2002 से 2012 तक सभी बालक-बालिकाएँ जो 6-14 वर्ष की उम्र के बीच है, सन् 2012 तक अनिवार्य रूप से कक्षा 8वीं तक की शिक्षा प्राप्त करें तथा इस अभियान का नाम सर्व शिक्षा अभियान दिया गया है। अब धीरे-धीरे भारत में चल रहे सारे शिक्षा प्रचार-प्रसार एवं उन्नयन के कार्यक्रम चाहे वे राज्यों द्वारा प्रायोजित हों या केन्द्र सरकार द्वारा उनको सर्व शिक्षा अभियान में सम्मिलित कर दिया गया है।

राजस्थान के सर्वांगीण विकास में शिक्षा की महत्ता को सर्वोपरि समझते हुए राजस्थान सरकार ने पिछले वर्षों में कई प्रयास एवम् नवाचार किये। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप राज्य की साक्षरता दर में उत्साहजनक वृद्धि हुई है। राजस्थान की जनगणना 2001 में राज्य की साक्षरता 1991 की साक्षरता दर से 22.48 प्रतिशत अधिक है। प्राथमिक शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के विकास के लिये आवश्यक है। यह मानकर राज्य सरकार ने इस पर काफी ध्यान किया है तथा अनेक परियोजनाओं को लागू किया है। इतने प्रयास होते हुए भी 6-14 आयु वर्ग के शिक्षा दर्पण 2002 सर्वे के आधार पर 3.61 लाख बच्चे विद्यालयों में नहीं आ रहे हैं। यह शिक्षा से वंचित बालक-बालिकाएँ सब हार्डकोर हैं जिनको शिक्षा से जोड़ने में बहुत कठिनाई आ रही है। राज्य सरकार ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए एक नई महत्वकांक्षी योजना 'शिक्षा आपके द्वार' कार्यक्रम का शुभारंभ 19 नवम्बर 2001 को किया।

सर्व शिक्षा अभियान

डी.पी.ई.पी. – जिला प्राथमिक कार्यक्रम राज्यों में 6-11 आयु वर्ग के समस्त बालक-बालिकाओं को विद्यालय से जोड़ने, ठहराव सुनिश्चित करने तथा गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने हेतु राज्य सरकार द्वारा चलाई गई योजना।

सर्व शिक्षा अभियान – भारतवर्ष को शिक्षा के सार्वजनीकरण हेतु नई सहस्रावदी के प्रारम्भ में चलाई महत्वाकांक्षी योजना जो

1. प्रक्रियाओं में लचीलापन
2. विकेन्द्रीकृत प्रबन्ध व्यवस्था
3. सामाजिक क्षमता
4. सामुदायिक सहभागिता पर आधारित है।

सर्व शिक्षा अभियान एक निश्चित समयावधि में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण का कार्यक्रम है तथा पूरे देश में एक स्तरीय मूल शिक्षा देने का विचार है यह प्राथमिक शिक्षा द्वारा सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करने का अवसर है। यह प्राथमिक शिक्षा के सभी अभिकरणों को जोड़ने का प्रभावी एवं समन्वित प्रयास हैं। ये केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय सरकार की साझेदारी में प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रयास है।

राजस्थान में यह योजना वर्ष 2001-02 में प्राथमिक शिक्षा के सुदृढ़ीकरण व संपूर्ण साक्षरात के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु भारत सरकार व राज्य सरकार की 85:15 की भागीदारी से शुरू की गई है। इसकी नोडल ऐजन्सी राजकीय प्राथमिक शिक्षा परिषद् है। इस योजना मं बालिकाओं एवं वंचित वर्ग के लिये विशेष सैनिक योजना का प्रावधान भी है। भारत सरकार ने राजीव गांधी स्वर्ण जयंती पाठशालाओं को सर्व शिक्षा अभियान के तहत् शिक्षा गारन्टी केन्द्रों के रूप में संचालित की स्वीकृति भी प्रदान की है।

राजस्थान में सर्व शिक्षा अभियान के उद्देश्य:

1. सभी बच्चों के लिये वर्ष 2003 तक स्कूल शिक्षा गांरटी केन्द्र, वैकल्पिक स्कूल, पुन: विद्यालय प्रवेश शिविर उपलब्ध कराना।
2. सभी बालक-बालिकांए वर्ष 2007 तक पांच वर्ष की प्राथमिक शिक्षा पूरी कर ले।
3. सभी बालक-बालिकांए वर्ष 2010 तक 8 वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा पूरी कर ले।
4. संतोषजनक गुणवत्तापूर्ण एवं संस्कारयुक्त शिक्षा पर बल, जिसमें जीवन उपयोगी शिक्षा को विशेष महत्त्व दिया गया हो।
5. वर्ष 2010 तक सभी बच्चों का ठहराव सुनिश्चित करना।
6. शिक्षा में स्त्री-पुरूष असमानता तथा सामाजिक वर्ग भेद को 2007 तथा प्राथमिक स्तर पर तथा 2010 तक प्रारम्भिक स्तर पर समाप्त करना।

सर्व शिक्षा अभियान के लक्ष्य:

1. सभी बालक/बालिकाओं को औपचारिक या अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा देना।
2. बालक/बालिकाओं तथा समाज के वंचित वर्गो के बीच नामांकन, ठहराव तथा उपलब्धि के क्षेत्र में अन्तर को 5 प्रतिशत तक कम करना।
3. बालक/बालिकाओं के विद्यालय छोड़ने की दर को 10 प्रतिशत तक करना।
4. बालक/बालिकाओं के विद्यालय छोड़ने की दर को 10 प्रतिशत तक कम करना।
5. 'प्रभावी प्रशिक्षण' के माध्यम से शिक्षकों का सबलीकरण करना।
6. सभी क्षेत्रों में समाज की भागीदारी सुनिश्चित करना।
7. बाल केन्द्रित व क्रिया आधारित शिक्षा प्रणाली को लागू करना।
8. पर्यविक्षण एवं शैक्षिक सम्बलन की प्रभावी व्यवस्था करना।
9. विद्यालय भवन का निर्माण एवं मरम्मत करना।

सर्व शिक्षा अभियान की गतिविधियां – विद्यालय विहिन बस्तियां में ई.जी.एस. स्कूल खोलना,गुणात्मक शिक्षा पर बल, विशेष लक्षित समूह की शिक्षा व्यवस्था, पूर्व प्राथमिक शिक्षा। शोध एवं मूल्याकन, सामुदायिक सहभागिता, प्रबन्ध सूचना तंत्र, निर्माण कार्य, संस्थागत सुदृढीकरण

जिला प्राथमिक शिक्षा परियोजना के अन्तगर्त मात्र 6 से 11 वर्ष तक के बच्चो के शत-प्रतिशत नामाकन धारण एवं गुणवत्ता का लक्ष्य रख गया है लेकिन सर्व शिक्षा अभियान में 6-14 वर्ष तक के बालकों को सम्मिलित किया गया है।

योजना को अधिक सफल बनाने के उद्देश्य से विकेन्द्रीकरण की नीति पर अधिक बल दिया गया है और लक्ष्य की प्राप्ति हेतु रणनीति एवं प्राथमिकता जिला स्तर पर तैयार की गई है। परियोजना में शिक्षण, प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तक निर्माण किया जा रहा है। इस परियोजना के अंतगर्त ग्राम स्तरीय योजना एवं सामुदायिक सहभागिता पर बल गया है। इसमें भौतिक संसाधन की तुलना में शैक्षिक पहलू पर अधिक बल दिया गया है। पूर्व

प्राथमिक शिक्षा एवं लैंगिक समानता (जेण्डर इक्केलिटी) के आयाम पर विशेष बल दिया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कामेटी गारडन : इनोवेशन प्रेक्टिशस, नेशन स्कूल्स (1967) पेज 70
2. आबिद हुसैन : प्राइमरी एजूकेशन नइ इण्डिया एन अनुफिनिश्ड एजेण्डा
3. अग्रवास, जे.सी. : भारतीय शिक्षा पद्धति स्वरूप एवं समस्याएँ आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली
4. डी.पी.ई.पी. गाइडलाइन्स : मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार
5. वार्षिक प्रतिवेदन : माध्यमिक शिक्षा एवं उच्चतर (2009-10) शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार
6. सबके लिये शिक्षा : मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार एवं (NEUPA)
7. योजना : बाल विकास नवम्बर 2006 अंक 6 अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा.लि., नई दिल्ली
8. वार्षिक प्रतिवेदन : राजस्थान प्रारम्भिक (2006-07) अंकेक्षित शिक्षा परिषद, शिक्षा संकुल, जयपुर
9. भारतीय शिक्षा : लखनऊ, शोध प्रत्रिका

****

Kamala Das and the Conflict within the Self

Dr. Mamta Gupta*

Abstract - When Kamala Das speaks of her language she describes it as "half English, half Indian" and later on she talks of "the speech of the mind". It is her language which defines her because she is a product of globalization. English does not belong to India but this language of domination was destined to become the language of our freedom, national and international, perhaps, more so, in the case of women in post-independence India. Steger says that the connection between "globalization to new forms of cultural expression" is obvious and it could be seen in terms of the entire corpus of Kamala Das's writings. Steger relies on Robertson to buttress his arguments because Robertson emphasises the importance of the local in globalization and it was Robertson who first spoke of 'glocalization' at length. (Steger 75) This has been celebrated as cultural hybridity which has resulted in freedom for women. It has never been a blind imitation but a kind of liberation from tradition which over the years has become perverse. Kamala Das tells us that she wore her brother's shirt and trousers after cutting her hair short like American and European women and it emboldened her to take on the patriarchy, including that which she had to confront within the family. It was the global against the headstrong and arrogant local which had refused to change and move ahead with the times. Das never gave up her strong affiliations with the Nair community to which she belonged nor did she give up writing in Malayali, her mother tongue. She was aware that colonialism and globalization were fraught with dangers and she deftly handled the local against the global too, never missed an opportunity to strike where ever required. Her cultural moorings with Kerala were much too strong.

Key words - feminism, patriarchy, power,Introduction, Indian Feminism.

Introduction - All has not been wrong with Hinduism and many deities of power, for example, Durga and Kali are female. It has become fashionable to attack Hinduism in the name of secularism but, for our purposes, it does serve the cause of feminism. It all depends on the eyes and vision. The female goddesses supplement the male gods and its was from the female goddesses that Mahatma Gandhi derived his concept of Stree Shakti, women power, which gained even greater momentum in post-independent India. Kamala Das therefore had some mythical support unlike the black women when she was writing and espousing the feminist cause through poetry, the biggest paradox lay in the division among Indian feminists themselves on caste, class and religious lines which defeated Kamala Das's intentions behind writing for the weak and not merely about some kind of subjective journeys within the hazy self. An Introduction is a fundamental and basic text for literary feminists and it has encouraged a lot of acrimony and debate, including those which confront Indian feminism. Gail Omvedt says that the biggest weakness of early Indian feminism is that it does not address the problem of caste and subordination. (Chaudhuri 284) Caste is a crucial fact of Indian life and Kamala Das's was no exception.

However, things had been crossing the limits, had become past endurance for her and one fine day she decided to revolt. Kamala Das was always well aware of the latest emancipatory ideas that were coming from the west. These ideas were enticing for her because they held a promise of liberation. Those were the days when the feminist revolution was at its peak and passing through its most radical phase. Kamala Das envied the freedom which the men-folk enjoyed in the Malayali society and imitating these men she tried to assert her freedom by putting on a shirt and her brother's trousers and cutting down her hair. In a backward society the devaluation of space which stands on the side of understanding and the analytical is a common phenomenon. Women in traditional Kerala society, to which she belonged, were not supposed to do any of these things according to the diktats of the Hindu code of conduct. The interweaving of power and knowledge is used to her advantage by Kamala Das at times by indulging in irrational activities which actually comprise of the unthinkable within the structures of power. Her own family members and her in-laws insisted that she should behave like other women, dress up in silk sarees, and play the roles that wives play within the family. Kamala Das, being the last person to accept all these, ironically mentions that the kind of suggestions that were repeatedly made to her by her well wishers in their naiveté were aimed at making her to follow the past times of Malayali women in general - embroidery, cooking, scolding the servants etc. Andrew Slade while writing about 'Psycho-Analysis and Literature' to prove his

*Associate Professor (English) Arya Kanya Degree College, Allahabad (U.P.) INDIA

point has relied on Joseph Wood Krutch and Felman's analysis of Freud. When he claimed that a text is primarily "an accurate transcription of a severe neurosis". (Slade76-77) It is in this context that we can see Kamala Das's poem An Introduction.

Chris Weedon suspected all that has been described as common sense and "natural" because according to him "it is a way of understanding social relations which denies history and the possibility of change for the future". Kamala Das's attitude in the poem challenges all that was considered to be a part of life naturally by most people and to accept the codes of conduct which have governed their lives was supposed to be a part of common sense; to question and to subvert meant defying history and challenging commonsense. Thus, Kamala Das in the poem tries to find her own way by rejecting the traditional modes of thought and behaviour. It was in patriarchy that the control over sexuality was inbuilt and its practices were inscribed on all aspects of existence.

Those who behave like other women, fit into the society very well, are the ones who are claimed proudly by the society as its valued possessions. Kamala Das wanted to be like herself and nobody else, she rejected all that was being imposed on her through social pressure. She refused to be categorised into any given category and wanted to become like Mary Wollstonecraft, one of a new genus. She went on to redefine the rules, enjoyed breaking them because it hurt the society which had been hurting her all through. For example, for a lady to sit on a wall in slacks amounted to bringing disrepute to the family and the society which had produced her. She did this as an act of symbolic defiance of rules and regulations of whatever was thought to be proper conduct. She tried to probe into the lives of other people through or from behind the curtains, symbolic of breaking barriers which folks create between themselves and others to maintain their privacy, to hide their true selves. Kamala Das belonged to the confessional school and, therefore, could write about some of the most embarrassing truths about herself. She did not stop here and went on to expose the others who come within her range of intimacy. The society wanted Kamala Das to fit into a mould and Kamala Das had stubbornly decided to break all the possible moulds that were being suggested. She had become a divided personality under stress and had liaisons with several men. She was not the sort who would follow any rules or regulations of any society, if only out of spite and would damn those who were its self appointed guardians. They wanted to categorise her as a daughter, sister, daughter-in-law etc. and force her into following a pre-decided role. It was as though the role that she would choose for herself would impose a code of conduct and Kamala Das wanted no rules for her except those that she decided for herself being a free soul. The diverse ensemble of discourses invariably works against women and all the institutions connive in it. For a person who was sensitive to these social conspiracies and over-powering forces, neurosis was bound to happen, even though in the end it meant victory. The problem of an adventurer and experimenter with feminism is that her conceptual instruments themselves can be polluted. The point for Kamala Das was to not only interpret her world but to change it as well by using the play of power in gender relationships to her advantage. Her quarrel with the society was primarily there because she did not want others to impose their will on her. The basic problem was that Kamala Das wanted to choose whatever she wanted in life for herself and this according to Simone de Beauvoir is the greatest of freedom for women in a hide-bound traditional society. Her intimate interface with men was misinterpreted by the patriarchy and the women who surrounded her. The clashes which Kamala Das had to face were partially due to the fact that she wanted to become a writer and that too not an inhibited one, but after the confessional mode, which upset all her near and dear ones. The society in which she was born into was also disturbed and upset because many of its evils which had been brushed under the carpet had been disagreeably and inconveniently made public. Kamala Das was not one of those who would give up. On the contrary she enjoyed a good fight against the social mores. She broke the sexual taboos and exposed the discomfiting and distressing weaknesses of her male dominated society's histories; suffering and emotional disorder brought her the satisfaction of having won. The mixed bag of suffering had more triumphs for Kamala Das and even the sufferings were transformed by her into pleasure because she had the satisfaction of having made poetry out of them. She confesses that she was the one who had been spending her nights all by herself in hotels and drinking to keep herself going and that too in places in which she does not quite feel comfortable. Such experiences were certainly not pleasant ones and yet being a fighter she laughs at her own condition unrepentently. She confesses without betraying any signs of weakness that she had been making love in seedy hotels and then felt ashamed about indulging in casual sex. Perhaps, momentary pleasures led to depression but, then, like an amoral person from the renaissance times she bears it all. For her were the pleasures and the consequences, both, but no regrets because she never failed to take responsibilities for her own wilful actions. Sometimes sadness, hopelessness, dejection and psychic disorders down- hearted her to such an extent that she felt that she was on the verge of dying with a choking sensation in her throat. It is precisely at this very moment when she capitulates that she recovers at the next moment celebrating as it were her deeds with a firm voice. It is in the acknowledgement of her deeds and their open declaration that the poetess moves from strength to strength. She is quite clear when she declares herself a sinner unambiguously in society. She hit them hard where it hurt them the most. She talks about her dodgy affair with a man in which failure in the relationship seemed inbuilt, a foregone conclusion. Kamala Das, going by whatever she

has to say in the poem at its face value, alleges that she had been deceived in love several times and that broken relationships had inflicted emotional torture on her. In her pain and anger she rushes into banal generalisations concerning the very basic nature of men and women. She claims that all women look for love in men who are capable of emotionally satisfying them and that men are only interested in the physical part of the relationship. She compares male sexuality and burning desires with fast flowing rivers and women's sexuality with the ocean which keeps on waiting to receive the brisk currents of the river till they reach it finally. Kate Millet once said very confidently for all women creative writers that they were branded as bitches and sex-goddesses by the patriarchal society. This position she had adopted around 1970. It is precisely this kind of reputation and label which was stuck to Kamala Das, around the same time when Millet was vociferously fighting intellectual battles. Even though more than four decades have passed ever since hue and cry was raised about debunking and denigration of women writers but even now the perverse reputation continues to stick to Kamala Das.

Kamala Das was not the sort of person who would be easily satisfied in a relationship and for her more than the physical relationship, which was also important, it was the depth and intensity and breadth of communication which mattered. This perhaps most men did not appreciate nor were those who came in her life bothered about a prolonged relationship with her nor were they as gifted intellectually as she was to satisfy her urges which went beyond the sexual. Kamala Das was also aware that men were dangerous playthings, egoistic to the bone, and who could cut and hurt her if she dared to go too close to them because in a male dominated society they had a natural advantage over her. Thus, gender relationships in the poem become perplexing, sticky, touchy and uneasy wherever and whenever they become intense. It is in this terrain where bodies, intellect and emotions mingle that Kamala Das's poetry is born, leading us into paradoxes and for women into a way out of the gender morass with the help of feminism. Kamala Das never denied the influence of feminism and feminists on her. She faced the most awkward, painful and distressing relationships boldly and experienced them completely, in all their heat and rawness. She was not scared of any unsheathed sword nor was she scared of men, including those who gave her emotional traumas, and was happy to discuss her sorrows without any hesitation in her poetry. Once Kamala Das was launched in life and she became independent, perhaps, more importantly in the economic sense, she could throw to the winds all that the male dominated system had to impose on her. She moved from one place to another freely and even lived alone in hotels which in the traditional Indian scheme of things was unacceptable in the larger society. She sceptically looked at all the prescribed codes of conduct and spurned them, rejoiced in her reputation which the people incredulously watched. This nihilistic approach towards all things conventional with success gave Kamala Das the much required confidence in her own self and her abilities.

Helen Cixous was right when she said that creative writing by women cannot ever be "theorised, enclosed, and coded" because it is always going to cross and exceed the boundaries of the phallocentric system. Those who appreciated her guts were amazed because she had her way successfully in the society and with the people who moved around her. To break the norms of the society has its share of pain and suffering but triumph gives a joy, even if it be laced with pain, finally. If she does not squeal, and, stout hearted, moves on with an open and clean mindset to declare herself a saint, it is because some of our greatest saints have been men like Valmiki and St. Augustine. Triumphal, Kamala Das continues to move assertively and she owns up with courage that she has been both the beloved and the betrayed, faced life with all its joys and pangs which few women have dared to experience in all its rawness. But there is no disavowal.

There is no succumbing to social pressure nor is there any retracting from the truths which she had experienced; on the contrary there is an unabashed acknowledgement of all that she had done in life, a wonderful introduction, as it were. Her unrepentant eyes, in the last two lines turn towards the readers directly and the poet tries to tell us that she enjoys and suffers the same things which we do. She makes a u-turn for in the beginning of the poem as also much of it, she tries to portray herself as an individual distinct from the other members of her society and in the end she identifies herself with the common people without conceding her individuality. There is an attempted identification with other men and women but the capital 'I' forever stands out. It was Adrienne Rich who described the practice of writing by women as "an act of survival". Kamala Das also wrote her poems with fierce independence and candour to survive in a patriarchal set-up which also tried to use force against her for being self-assertive and independent in her opinions. When Kamala Das attacked her own society in her poetry, her own people reacted against her strongly and often she was confronted by the prospects of undergoing physical violence. The present poem compels us always to rethink and forces the women folk to understand the "misprison" in which their thought dwells and in which they have been pushed. Amitava Kumar says that "as a writer you grasp more universal way" (Kumar 75). Amitava Kumar was one of those people who had described much of Indian English creative writing as an act of translation as well as of cultural engineering. These two facts made us feel the hiatus in between the Indian reality and the rest of the world. Kamala Das mercifully does not suffer from any such weaknesses and it was the universal quality of her poetry, shall we say, that got her readers worldwide, including a nomination for the Nobel Prize. Kamala Das would forever be Kamala Das; always with

the people and yet an individual to the core in a crowd. She stood out because of her poetry and her ideas, and instinctive iconoclasm she could not help nor could she ever deny herself the pleasure of using language against patriarchy.

References :-

1. Chaudhuri, Maitrayee, Feminism in India. New Delhi: Women Unlimited & Kali for Women, 2004.
2. Gokak, Vinayak Krishna, ed., The Golden Treasury of Indo-Anglian Poetry. New Delhi: Sahitya Akademi, 2007.
3. Hoy, David Couzens, Foucault: A Critical Reader. Oxford: Blackwell, 1986.
4. Kauffman, Linda, ed., Gender and Theory: Dialogues on Feminist Criticism. Oxford: Blackwell, 1989.
5. Kumar, Amitava, The Shiver of the Real: Raising the Stakes for Indian Writing in English, Caravan, Volume 6, Issue 5, May 2014.
6. Slade, Andrew, Psychoanalytic Theory and Criticism By Way of an Introduction to the Writings of Sigmund Freud. Hyderabad: Orient Black Swan, 2016.
7. Steger, Manfred B., Globalization: A very short introduction. New Delhi: OUP, 2007.
8. Weedon, Chris, Feminist Practice & Poststructuralist Theory. Oxford: Blackwell, 1987.

****

ब्रज की सांगीतिक परम्परा

डॉ. इला मालवीय *

महारास नृत्य – जिस प्रकार 'ताण्डव' शंकर जी की तामसिक प्रवृत्तियों का प्रतीक है, उसी प्रकार 'रास' भगवान कृष्ण की श्रृंगार-प्रधान भावनाओं का द्योतक है। 'नाट्यशास्त्र' में महर्षि भरत ने रास के तीन भेद बताए हैं – ताल रासक, दण्ड रासक और मण्डल रासक या ताली रासक।

हल्लीसक, रास और रासक एक दूसरे के अत्यंत निकट हैं। अभिनव गुप्त ने कहा है 'मण्डल के द्वारा जो नृत्य सम्पन्न हो, उसे हल्लीसक कहते हैं।' उसमें एक नेता होना चाहिए, जिस प्रकार कि गोपियों में भगवान हरि। इसमें अनेक राग, ताल तथा विभिन्न प्रकार की लयों की समावेश होता है। नियम रहित होने के कारण इसके लास्य के भाव-भेद से अनेक भेद हो जाते हैं जो परिवर्तित होते रहते हैं।

कालान्तर में मण्डल रासक अधिक लोकप्रिय हुआ। जिसमें लोक-नृत्य की प्रधानता रहती थी। 'रास शब्द से जहाँ ब्रज प्रदेश में होने वाले श्री कृष्ण की लीलाओं का बोध होता है वहीं विभिन्न प्रदेशों में भी यह विद्यमान है।' मध्य गुजरात के जिनदत्त सूरि ने पुरुषों द्वारा छड़ियों के से लिए जाने वाले 'लकुट-रस' का उल्लेख किया है। 'रासक' के लिए कहा गया है, यह एक गीत है, जिसमें ताल की मंद और उत्ताल गति का समावेश रहता है। कवि बाण ने रास नृत्य के वर्णन में बताया है कि यह नृत्य 8, 12 अथवा 32 स्त्रियों द्वारा किया जाता है।

रास नृत्य के जन्मदाता तथा प्रचारक भगवान श्री कृष्ण है। यह नृत्य श्रृंगार प्रधान भावनाओं से ओत-प्रोत लास्य नृत्य का ही एक अंग है। नाट्यशास्त्र में वर्णित तीन रस है- ताल रासक, दण्ड रासक और मण्डल रासक।

ताल रासक में नृत्य के साथ हाथों से ताली दी जाती है। दण्ड रासक में नर्तक छोटे-छोटे डण्डे लेकर उन्हें बजाते हुए नाचते हैं तथा मण्डल द्वारा नृत्य करना मण्डल रासक कहलाता है। हल्लीसक मण्डल रासक का ही एक रूप था।

उपर्युक्त रासों में से मण्डल रासक अधिक प्रचलित हुआ। इसमें लोक-नृत्य की प्रधानता रहती थी तथा यह रंगमंच पर प्रस्तुत किया जाता था। प्राचीन काल में लोक नृत्य रास नृत्य के रूप में प्रचलित था।

'श्रीमद् भागवत की रस पंचाध्यायी रासलीला का मुख्य आधार है। उसमें रासलीला या रास क्रीड़ा पर विस्तार से विवेचन किया गया है। यह नृत्य कृष्ण के अनेक रूपों के साथ गोपियाँ परस्पर हाथ बांधकर वृत्ताकार रूप में करती हैं।'

आन्ध्र महाराजा वेम ने रास नृत्य के बारे में यह कहा – 'रास नृत्य में लास्य के समान चारी का प्रयोग होता है। नर्तकियाँ दो-दो गायक ऋतु के अनुकूल राग में प्रबन्ध गाते हैं। नर्तकियाँ खण्ड-मण्डल, लास्यांग तथा चारी के मेल से आकर्षक नृत्य करती हैं तथा हाथों से तालियाँ बजाकर विभिन्न लयों का प्रदर्शन करती हैं।'

'रासलीला परमानन्दमयी भावना है जिसमें स्वर, लय आदि और अंत में सृष्टि की ये दोनों सनातन स्थिति निहित है।'

शारदातनय के मतानुसार रास में 8 से लेकर 16 नर्तक रहते हैं जो आपस में हाथ से हाथ बाँधकर नृत्य करते हैं।

रास नृत्य में परिवर्तन आया। रास नृत्य सम्पूर्ण देश में फैला, किन्तु उसका मूल एक है। वर्तमान समय में प्रचलित लोक-नृत्यों में से कुमाऊँ प्रदेश का चर्चरी नृत्य, मणिपुरी का लाइहरोवा, राजस्थान का डाँडिया, घूमर, गुजरात

कुमाऊँ	–	चर्चरी नृत्य
मणिपुरी	–	लाइहरोवा
राजस्थान	–	डाँडिया, घूमर
गुजरात	–	गोफा, गरवा
छत्तीसगढ़	–	डण्डा
सिक्किम	–	शापदोह
कश्मीर	–	हिरक
आन्ध्र	–	कौलाटम्
बंगाल	–	जात्रा
हिमांचल प्रदेश	–	मलका

ब्रज रास नृत्य का केन्द्र है। यहीं से रास नृत्य की उत्पत्ति हुई है।

रास नृत्य की शैली :

1. रास नृत्य में भगवान कृष्ण की लीलाओं को प्रधानता दी जाती है।
2. रास नृत्य में प्रधान नायक तथा नायिका श्रीकृष्ण तथा राधा होती है।
3. रास नृत्य में नर्तक-नर्तकियों मण्डलाकार खड़े होकर नृत्य करते हैं तथा मण्डल के मध्य में कृष्ण-राधा की भूमिका करने वाले नर्तक-नर्तकी रहते हैं।
4. रास नृत्य में विभिन्न हस्त-मुद्रा, अंग-उपांग, संचालन-करण, अंगहार, चारी, गति, भ्रमरी, ताल, लय आदि का प्रयोग होता है।
5. रास नृत्य लास्य अंग का नृत्य है, अतः इसमें कोमलता, सरसता तथा श्रृंगारिक भावनाएँ विशेष रूप से पाई जाती है।
6. रास नृत्य में नृत्य के कुछ प्राचीन अंग, जैसे-सुलप, तिरप, शुद्ध मुद्रा, लाग, डाट, पुहुप पुज्जरी तथा प्रिमूल आदि की झलक भी दिखाई देती है।

वेशभूषा – इस नृत्य में कृष्ण-राधा की वेशभूषाएँ विशेष आकर्षक होती है। कृष्ण के लिए पीताम्बर, दुपट्टा, मोरमुकुट, पुष्पहार, बाजूबन्द, कुण्डल,

* विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर (संगीत) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

आकर्षक आभूषण आदि तथा राधा के लिए साड़ी, चोली, ओढ़नी, मुकुट तथा विभिन्न आभूषणों की आवश्यकता होती है। अन्य नर्तक–नर्तकियों की वेशभूषाएँ सामान्य होती हैं।

मुद्रा – वैसे तो समस्त भारत में रास नृत्य की भिन्न–भिन्न मुद्राएँ हैं। सामान्यतः, पताका, अद्ध पताका, अर्द्ध चन्द्र, अराल, मुष्टि, पल्लव, शिखर, सूचीमुख, सर्पशीर्ष मुकुट, अञ्जली, कपोत, आदि का प्रयोग होता है।

कुतुप – रास नृत्य के कुतुप के लिए मृदंग, शहनाई, वंशी, ढोल, डफ, ढोलक, झाँझ, मँजीरा, खोल, वीणा आदि वाद्य उपयुक्त है। रास नृत्य में गीत–गायक भी होते हैं। इसमें श्रृंगार रस की प्रधानता रहती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रासलीला तथा रसानुकरण विकास – डॉ. वसंत यामदग्नि
2. भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय दर्पय वाचस्पति त्रैरौला
3. श्रीमद् भगवत पुराण – सुबोधिनी बम्बई
4. रासपंचाध्यायी – हरिराम व्यास, प्रकाशक गोविन्द किशोर गोस्वामी, वृन्दावन
5. अष्टछाप परिचय – प्रभु दयाल मीतल अग्रवाल, प्रेस मथुरा
6. परमानंद सागर – सम्पादक गोस्वामी ब्रजभूषण शर्मा
7. सूर सागर – नागरी प्रचारिणी सभा

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

A Study on Quality of Work Life and HR Practices in Public Sector Undertaking : A Case Study of BHEL

Jyoti Pachori* Mohammad Sajid**

Abstract - Work is an intrinsic part of our everyday life, as it is our livelihood. On an average we spend around twelve hours daily in the work place, which is one third of our entire life and does influence the overall quality of our life. It should earn job satisfaction; give peace of mind, a perfection of having done a task, as it is expected, without any pitfall and having spent the time worthwhile, productive and conscious. Even if it is a small step towards our lifetime goal, lastly, it gives satisfaction and eagerness to look forward to the next step.
Keywords - QWL, HR Practices, PSU, BHEL.

Introduction - In the recent times, the new face of the corporate world has come up with profound changes in the nature and working of managerial profiles. And the most affected ones are the 'people managers' – the HR professionals, with the increased recognition of the fact that your people can only be your long term competitive advantage. Increasingly, the organizations have realized that all corporate strengths are dependent on and centered on human resource (Pande, 2003).

In fact, people have always been central to organization's existence, economic wellbeing and prosperity; but their strategic importance has increased in this knowledge based economy (Thakkar, 2008). It is well known that to ensure an organization's continued survival, growth and prosperity, every organization needs to have competent, committed and motivated people at all levels; as this people dimension can only be a long term competitive advantage for any organization.

Talking from the organization's practical point of view, the overriding prime focus of attention would certainly be the continuous improvements in employee productivity, and thereby leading to higher profitability. As Lawler (1982) quoted in Katzell (1983) that a major obstacle to the voluntary adoption of QWL programmes by employers is the priority given to economic performance.

Quality of Work Life - Quality of work life is an important strategic approach to human resource management. It has been in focus, as it is applicable to business performance and success. The concept of Quality of Work Life (QWL) is widely used to refer to a philosophy of management that enhances the dignity of all workers; introduces changes in an organization's culture; and improves the physical and emotional well-being of employees.

QWL initiatives are also defined as "any activity which takes place at any level of the organization, which seeks greater organizational effectiveness through enhancement of human dignity and growth... a process through which the stockholders in the organization – management, employees and unions - learn how to work together better to determine for themselves what actions, changes and improvements are desirable and workable in order to achieve the twin and simultaneous goals of an improved quality of life at work for all members of the organization and greater effectiveness for both the company and the unions" (Subba Rao, 2005).

Factors Determining The Quality Of Work Life - The factors that influence and decide the Quality of work life are (Garg et al., 2012):

1. Attitude
2. Environment
3. Opportunities
4. Nature of Job
5. People
6. Stress Level
7. Career Prospects
8. Challenges
9. Growth and Development
10. Risk Involved and Reward

Dimensions of HR Practices	Dimensions of QWL Practices
1. Medical facilities	1. Adequate and Fair Com pensation
2. Awards and rewards	2. Employee Welfare Mea sures
3. Working hours	3. Job Security
4. Nature of job	4. Safe and Healthy Work Environment
5. Equipment provided for the performance of the job	5. Work Load
6. Job autonomy	

*Research Scholar (Applied Economics & Business Management) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Technocrats TIT Group, TIT-MBA, Bhopal (M.P.) INDIA

7. Development of human capacities	6. Opportunity for Continued Growth
8.Policies are fair and equal	7. Human Relations and Social Aspect of Work Life
9. Learning opportunities	8. Participation in Decision Making
10. Importance to physical and physiological health	9. Reward and Penalty System
11.Low absenteeism and turnover	10.Equity, Justice and Grievance Handling
12.Mutual trust	11.Image of Organization in the Society
13.Effective implementation of suggestion schemes	12. Job satisfaction
	13. Stress at workplace

Public Sector In India - Prior to 1947, the Indian economy consisted of virtually no 'Public Sector'. The only enterprises mentioning were the Railways, the Post and the Telegraph Department, the Port Trust Authority, the Ordinance and Aircraft Factories and a few State managed undertakings like the government salt factories, quinine factories, etc. The idea that economic development should be promoted by the State actually managing industrial concerns did not take root in India before 1947, even though the concept of planning was much discussed by the Congress Government in the Indian provinces. However, in the post-independence period, the expansion of public sector was undertaken as an integral part of the Industrial Policy, 1956.

The phrase 'Public Enterprise' comprises two words i.e., 'Public' and 'Enterprise'. The word 'Public' is always used in a macro sense. It indicates the entire society or population of a specific area. In a democratic set-up the public is represented by the elected nominees. These public nominees constitute the Government which works for the common goal and welfare of the public. By the word 'Enterprise' is meant any industrial, commercial, economic or agricultural activity involving a risk factor as well as some kind of encouragement taken in an activity which is represented by entrepreneurship.

S.S. Khera has rightly defined the term 'Public Enterprise', thus: "By Public Enterprise is meant the industrial, commercial and economic activities carried on by the Central Government or by a State Government and in each case either solely or in association with private enterprise, so long as it is managed by a self-contained management."

Thus, Public Enterprise means State ownership and operation of industrial, agricultural, financial and commercial undertakings. It can also be said that, State Enterprise (Public Enterprise) in business denotes an undertaking which is controlled and operated by the Government as its sole owner or major shareholder. As per the Encyclopaedia Britannica, the term public enterprise usually refers to "Government ownership and active operation of agencies engaged in supplying the public with goods and services which alternatively might be supplied by private enterprise operations like the same private, are financed wholly or largely by receipts from the sale of goods and services."

From the above definitions it is obvious that the term 'Public Enterprise' refers to a concern owned and managed by the State Government, Central Government or any other public authority constituted by law and rules made there under.

Company Profile - BHEL, acronym for Bharat Heavy Electrical Limited, is synonymous to power. It is the largest heavy electrical manufacturing public sector in India. BHEL was established nearly 38 years ago at Bhopal and was the genesis of the Heavy Electrical Equipment Industry in India. BHEL is a leading AC Machines manufacturer and in the last four decades have supplied more than 20000 HT & LT A.C. Machines for various applications to Indian as well as Export market. The applications include Power Plants, Nuclear Energy, Petrochemicals, Fertilizers, Refineries, Cement & Steel Industries, Irrigation Projects, Pipelines, etc.

BHEL today, s one of the largest manufactures of power generating equipment, ranking among the top 2 organizations in the world. It has been accorded with the prestigious 'Navaratna' status by the Government of India for its consistent performance and contribution to the Indian industry. The company provides products, systems and services in the fields of energy, industry and transportation. BHEL operations are organized around business sectors like power industry and international operations, to provide a strong market orientation. The company today enjoys national and international presence and features among the "Fortune International 500 ".

Significance Of Public Enterprises In India - The question of nationalization of industries in India is taken up from the view point of social justice as well it is contended that the permission to the private sector to appropriate the profit will lead to gross imbalance in Income and wealth.

Objectives of Setting up Public Sector Unit (PSU)

1. To create an industrial base in the country
2. To generate a better quality of employment
3. To develop basic infrastructure in the country
4. To provide resources to the government
5. To promote exports and reduce imports
6. To reduce inequalities and accelerate the economic growth and development of a country.

Statement Of The Problem - The purpose of the study was to carry out an extensive study in BHEL to find out the level of quality of work life and human resource practices among the employees of BHEL, Bhopal.

Objectives Of The Study :

1. To Determine the Factors Affecting Quality of Work Life: An Analysis on Employees of BHEL.
2. To study the perception of the employees towards QWL and HR practices presently followed in the Organization.

Limitations Of The Study - This study was limited to the following aspects.

1. For measuring quality of work life, Richard Walton's eight point factors have been considered. There may be other factors having impact on quality of work life which are not considered for this study.
2. The findings of this study are based on the informa-

tion supplied by the respondents which might have its own limitations.

Review Of Literature

Thomas Jacob (2001) in his research work mentions that the greatest competitive advantage of any organisation depends on the quality of its human resource and the effectiveness with which they were deployed. Acquisition of the adequate and appropriate kind of human resources is perhaps the most crucial, complex and perpetual task of management of any enterprise.

Arun Kumar Krishnamurthy (2001) conducted a study on human resources management. The study reveals that the best service which a human resource function can do is to make the employees feel that they are working in the right place, doing the right work and getting paid justly as long as the 51 employee remains in service. He pointed out a few norms for employee compensation such as annual pay and perquisites, grade or positional based remuneration, remuneration based on number of years' service, rewarding performance with increments has a permanent impact on compensation for ever, etc.

Gangadhar and MadharKeswani (2001) conducted a study on the changing nature of employment and compensation. The study reveals that with today's salaries, employees are reaching the level of hygiene on the monetary compensation front. The ability of monetary rewards to attract and retain has been reduced due to similar and better opportunities available in the market and marginal utility of money.

Research Design - The research design accepted here is descriptive and analytical in nature.

Sample Size - The study was restricted to BHEL unit of Bhopal city which comprises people employees of diverse socio-economic classes. While choosing the sample, every care was taken to ensure that it should reflect the general characteristics of PSU.

Sample Unit Selection - The survey sample was selected randomly from BHEL, Bhopal. Sample size selected consist of 250 respondents; a sample from which conclusions were drawn. I selected respondents to ensure representativeness of the population and later study findings.

Table No.1 : Designation wise description of respondents

Workmen	217
Executive	28
Manager	5
Total	**250**

Source: Primary Data

Fig 1. Designation wise description of respondents

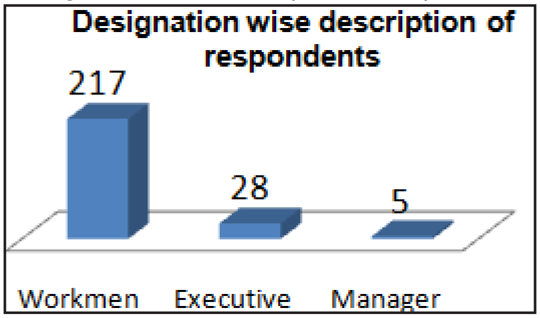

Table No 2 : Age wise description of respondents

Below 30 Years	24
30-40 Years	59
40-50 Years	68
50 Years and above	99
Total	**250**

Source: Primary Data

Fig 2. Age wise description of respondents

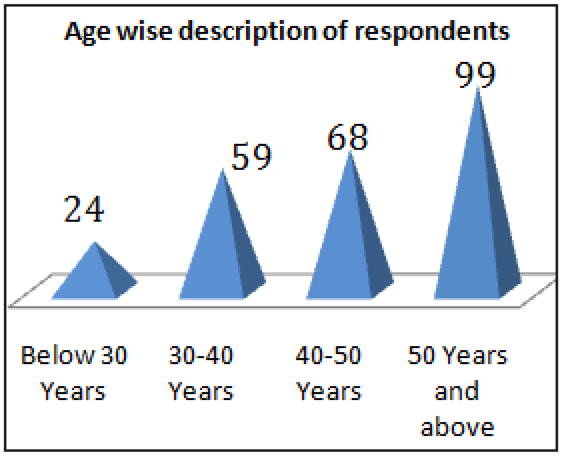

Table 3 : Education wise description of respondents

Diploma	124
Upto Graduation	69
Post-Graduation	33
Professional	24
Total	**250**

Source: Primary Data

Fig 3. Education wise description of respondents

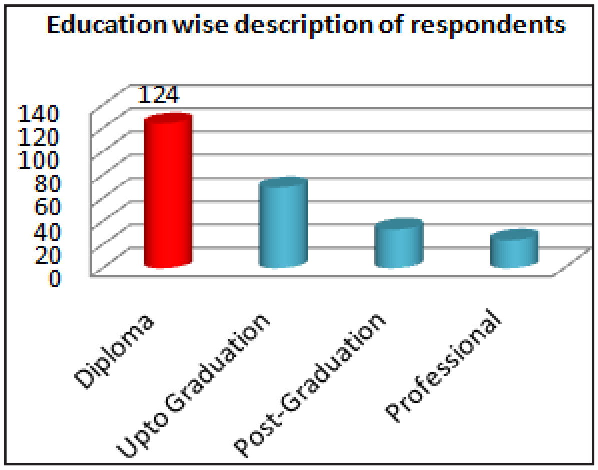

Table 4 : Marital status wise description of respondents

Married	189
Unmarried	61
Total	**250**

Source: Primary Data

Fig 4 Marital Status wise description of respondents

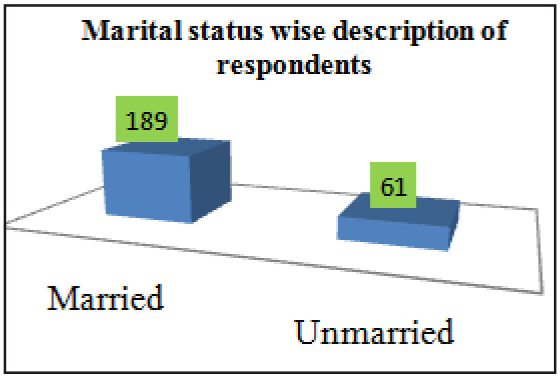

Table 5 : Annual Family Income wise description of respondents

Less than 4 lakhs	89
4-9 Lakhs	101
9-15 Lakhs	51
15 Lakhs and above	9
Total	**250**

Source: Primary Data

Fig 5. Annual Income wise description of respondents

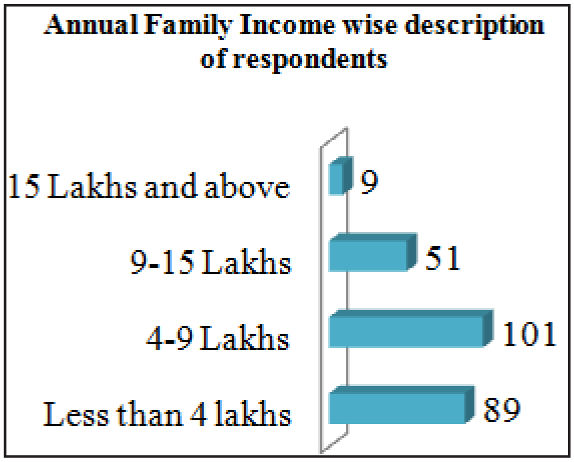

Table 6 (see in next page)

Table 7 (see in next page)

Perception/Findings of the Employees towards QWL and HR Practices

1. Adequate and Fair Compensation, Employee Welfare Measures, Job Security, Safe and Healthy Work Environment, Work Load, Opportunity for Continued Growth, Human Relations and Social Aspect of Work Life, Participation in Decision Making, Reward and Penalty System, Equity, Justice and Grievance Handling, Image of Organization in the Society, Job satisfaction and Stress at workplace.
2. Awareness of HR practices in BHEL amongst the respondents was asked with the options as Yes, No and can't say. it was revealed that more than half of respondents were aware of the HR practices in BHEL, one third part of respondents were unaware and a negligible respondents were not sure about their awareness of HR practices at BHEL.
3. It is evident from the study that the Healthy work environment at workplace in BHEL are not good as the values of chi square test support the observation as the calculated Chi-square value is greater than that of the table value. There is a significant difference in the responses of workmen executives and manager about the Healthy work environment at workplace.
4. Study reveals that the Healthy work environment at workplace in BHEL are not good as the values of chi square test support the observation as the calculated Chi-square value is greater than that of the table value. There is a significant difference in the options for the age group as Below 30 Years, 30-40 Years, 40-50 Years and lastly 50 Years and above, about the Healthy work environment at workplace.
5. It is observed that the Healthy work environment at workplace in BHEL are not good as the values of chi square test support the observation as the calculated Chi-square value is greater than that of the table value. There is a significant difference in the options as Diploma, up to Graduation, Post-Graduation and Professional educational qualification, about the Healthy work environment at workplace.
6. The Safe work environment at workplace in BHEL as evident from the chi square test values show that the calculated Chi-square value is less than that of the table value. It shows that there is no significant difference between the mean responses of workmen executives and manager and different marital status i.e. married and unmarried. But in between different age groups, different educationally qualified peoples and belonging to different income groups has significant difference.
7. From the study, it is observed that the opinions of employees of Bharat Heavy Electricals Limited regarding awareness of performance linked bonus and performance management feedback management system were different as evident from the Chi square test values shows that the calculated Chi-square value is greater than that of the table value. In other words, there is significant difference in the opinions of employees about the awareness of performance linked bonus and performance management feedback management system.

Conclusion - Employees are the quality of an organization and should be treated with nobility and regard for their genuine and diligent work. Employees have the weight of dealing with the duties in their own life just as accomplishing the higher work desires in their expert life. Management ought to embrace a few welfare measures and projects to fulfil the employees through different assets, exercises and participatory results in the work environment.

References :-

1. A. M. Mosadeghrad, Quality of working life and turnover intentions: implications for nursing management. International Journal of Research in Nursing, 4(2), 2013, 47-54.
2. Balaram Bora &D.VishwaMurthy(2015) QWL – A Literature Review International Journal in Management and Social Science, Vol.03 Issue-03, 106-115.

3. Dwivedi R.S, 2004. Human Relations and Organisation Behaviour, Macmillan India Ltd. New Delhi.
4. E. Mumford, The story of socio-technical design: reflections on its successes, failures and potential. Information Systems Journal, 16(4), 2006, 317-342.
5. Gupta C.B, 2003, Human Resource Management, Sultan Chand and Sons, New Delhi.
6. Hannif, Zeenobiyah, (2008), " Call Centers and the Quality of Work Life: Towards a Research Agenda", Journal of Industrial Relations, 50(2) 271–284.
7. Ibrahim Muhammad Faishal, (2003), "Quality of Life of Residents Living near Industrial Estates in Singapore", Social Indicators Research, Vol.61 (2), pp.203-225.
8. J. C., Anderson, M., Rungtusanatham, and R. G. Schroeder,.A theory ofquality management underlying the Deming management method. Academy of Mariagement Review, 19, 1994, 472-509.
9. Md. ZohurulIslam et al (2006), Quality of work life and organizational performance: Empirical evidence from Dhaka Export Processing Zone, International Labour Office, Geneva .

Table 6 : Opinion regarding perception of the employees towards Quality of Work Life

Dimensions of Quality of Work Life (QWL)	**SD**	**D**	**N**	**A**	**SA**
Adequate and Fair Compensation	21(8.4%)	41(16.4%)	55(22.0%)	89(35.6%)	44(17.6%)
Employee Welfare Measures	18(7.2%)	21(8.4%)	56(22.4%)	91(36.4%)	64(25.6%)
Job Security	28(11.2%)	23(9.2%)	69(27.6%)	71(28.4%)	87(34.8%)
Safe and Healthy Work Environment	21(8.4%)	29(11.6%)	71(28.4%)	69(27.6%)	60(24.0%)
Work Load	19(7.6%)	31(12.4%)	69(27.6%)	89(35.6%)	42(16.8%)
Opportunity for Continued Growth	18(7.2%)	28(11.2%)	89(35.6%)	91(36.4%)	24(9.6%)
Human Relations and Social Aspect of Work Life	17(6.8%)	35(14%)	82(32.8%)	88(35.2%)	28(11.2%)
Participation in Decision Making	19(7.6%)	36(14.4%)	59(23.6%)	87(34.8%)	49(19.6%)
Reward and Penalty System	21(8.4%)	27(10.8%)	66(26.4%)	89(35.6%)	47(18.8%)
Equity, Justice and Grievance Handling	22(8.8%)	31(12.4%)	71(28.4%)	88(35.2%)	38(15.2%)
Image of Organization in the Society	24(9.6%)	29(11.6%)	62(24.8%)	69(27.6%)	66(26.4%)
Job satisfaction	18(7.2%)	30(12.0%)	88(35.2%)	78(31.2%)	36(14.4%)
Stress at workplace	23(9.2%)	35(14.0%)	71(28.4%)	73(29.2%)	48(19.2%)

Table 7 : Chi-Square Analysis on dimensions of HR practices

Factors	Mean	Std. Deviation	Coefficient of Variation	Rank
Job autonomy	14.15	1.33	9.38	1
Working hours	29.21	2.76	9.45	2
Nature of job	18.98	1.94	10.24	3
Importance to physical and physiological health	15.95	1.68	10.54	4
Policies are fair and equal	14.75	1.71	11.62	5
Development of human capacities	14.04	1.94	13.82	6
Learning opportunities	14.24	2.04	14.31	7
Equipment provided for the performance of the job	7.17	1.19	16.64	8
Medical facilities	9.74	1.70	17.48	9
Mutual trust	7.13	1.29	18.07	10
Awards and rewards	11.02	1.99	18.09	11
Effective implementation of suggestion schemes	14.28	2.61	18.25	12
Low absenteeism and turnover	16.24	4.02	24.76	13

****

प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थी व स्वच्छता अभियान

डॉ. डी.पी. सिंह* डॉ. शालिनी बिस्सू**

प्रस्तावना – शिक्षा से व्यक्ति के जीवन को गति मिलती है। इसका प्रभाव केवल व्यक्ति पर ही नहीं अपितु सम्पूर्ण समाज पर पड़ता है। शिक्षा का हमेशा से यही उद्देश्य रहा है कि समाज की उन्नति हो, समाज के लिये ऐसे नागरिक तैयार हों जो एक दूसरे को आगे बढ़ाने में सहयोग करें, जीवन को सुखमय बनायें व आने वाली पीढ़ी का भविष्य उज्ज्वल करें। शिक्षा के इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयत्न बचपन से ही करना होगा क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र के जीवन में प्राथमिक शिक्षा प्राथमिकता की वस्तु है। पहली सीढ़ी है, जिसे सफलतापूर्वक पार करके कहीं कोई राष्ट्र अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुंचता है। राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ सम्बन्ध प्राथमिक शिक्षा का है उतना माधयमिक या उच्च शिक्षा का नहीं है। राष्ट्रीय विचारधारा एवं चरित्र का निर्माण करने में जितना महत्वपूर्ण स्थान प्राथमिक शिक्षा का है उतना सामाजिक, राजनीतिक या शैक्षणिक गतिविधि का नहीं है। इसका सम्बन्ध किसी वर्ग से न होकर, देश की पूरी जनसंख्या से होता है। इसके हर कदम पर हर व्यक्ति के जीवन में सम्पर्क होता है।

यह मनोविज्ञान का मान्य सिद्धान्त है कि बाल्यवस्था में सीखी गई बातें तथा बनायी गयी आदतें सम्पूर्ण जीवन नहीं भूलती, नहीं बदलती। यही वह समय होता है जब समाज के लिए सभ्य नागरिक बनने की नींव पड़ती है।

विश्व के विकास में उन्नति के लिए प्रति व्यक्ति समृद्धि व जन्म दर में वृद्धि करने हेतु स्वास्थ्य सुविधाओं, स्वच्छ जल व स्वच्छता की अति आवश्यकता है। एक अनुसंधान के दौरान यह पता चला कि बच्चे सबसे अधिाक इन संक्रामक बीमारियों से ग्रसित होते हैं। इसी सर्वे में यह भी पता चला कि अस्वच्छता, अशुद्ध जल का प्रयोग करने से स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों व युवकों के स्वास्थ्य पर भी प्रभाव पड़ता है। 1998 में लगभग 2 अरब लोग डायरिया की बीमारी से मर गये थे व इन 2 अरब लोगों में सर्वाधिक संख्या बच्चों की थी। बच्चों में व्यवहारगत परिवर्तन लाने व उनकी उत्तम सेहत बनाये रखने में विद्यालय महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

स्वच्छता ऐसी व्यापक अवधारणा है, जिसमें व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्वच्छता की अभिकल्पना निहित है। इसमें प्रत्येक मनुष्य के साथ-साथ सम्पूर्ण समाज एवं पर्यावरण की स्वच्छता, संरक्षण एवं परिवर्द्धन अपेक्षित है। इस कार्य में बालक-बालिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका सिद्ध हो सकती है।यदि बाल्यावस्था से ही उनमें स्वच्छता की आदतों को विकसित कर दिया जाए। ये आदतें उसके भावी जीवन में तो सहयोगी होंगी ही, इसके साथ-साथ ये आदतें उसके परिवेश को साफ व स्वच्छ रखने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

ग्रामीण स्कूल प्रणाली, असल में एक ऐसा विशाल मूल ढांचा है, जिसे स्कूल की चारदीवारी के भीतर बच्चों पर ही नहीं, बल्कि व्यापक समुदाय में लाया जा सकता है। छात्र अन्य बच्चों में व्यवहारगत परिवर्तन लाने में भी सहायक हो सकते हैं तथा अपने माता-पिता व समुदाय के व्यस्क सदस्यों पर भी प्रभाव डाल सकते हैं। इस प्रकार स्कूल माता-पिता, उनके समान समूहों और समुदायों तक स्वच्छता सम्बन्धी संदेश पहुचाने के प्रभावकारी माध्यम भी हो सकते हैं। घर-परिवारों तथा सामान्यत: समुदाय द्वारा अपनाए जाने वाले स्वच्छता-संवेष्टन (स्वच्छता सम्बन्धी आचार-व्यवहार) के लिए स्कूल प्रदर्शन केन्द्रों का भी काम करते हैं।

स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा का निवास होता है और हाईजीनिक/स्वच्छ वातावरण में रहकर ही अच्छा शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य जिस तरह के परिवेश में रहता है, उसका सीधा प्रभाव उसके शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। अत: अपने परिवेश व स्वयं को साफ-सुथरा रखने की आदतों का विकास बच्चों में किया जाना अति आवश्यक है।

जल जीवन है तथा स्वच्छता जीवन जीने का तरीका स्वस्थ व स्वच्छ जीवन जीने के लिए आधारभूत स्वच्छता सुविधाओं तथा स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता आवश्यक है। विकासशील देशों के लगभग 100 करोड़ बच्चे स्वच्छता सुविधाओंके अभाव से पर्यावरण में फैले मानव मल के कारण से आंतों के संक्रमण (कृमि संक्रमण), कुपोषण व मन्द मानसिक व शारीरिक विकास से ग्रस्त है। देश के सबसे बड़े राज्य राजस्थान, जिसका क्षेत्रफल देश का 10.4% है, इसमें देश की 5.50% आबादी निवास करती है, परन्तु जल उपलब्धता केवल 1% है। जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग द्वारा किए गए सर्वेक्षणानुसार 57% उपलब्ध जल स्त्रोतों की गुणवत्ता पेयजल हेतु भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा निर्धारित सीमाओं से अधिाक है, इस प्रकार राज्य में जल उपलब्धता व गुणवत्त दोनों ही गंभीर समस्या है। इस समस्या के लिए एक हद तक स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता का अभाव व स्वच्छता के बारे में आदतों का न होना है।

जिस पेयजल में विशैले पदार्थ, पेरासाईटिक एजेन्ट, रसायन व गन्दगी मिली होती है, उसे प्रदूषित जल कहा जाता है। ऐसे जल के उपयोग से बीमार होने की संभावना निरन्तर बनी रहती है। ऐसे जल के उपयोग से कैंसर जैसी गंभीर बीमारी उत्पन्न हो सकती है, जनन क्षमता पर विपरीत असर पड़ता है। शारीरिक विकास बाधित होता है तथा शरीर की प्रतिरोधिक क्षमता को क्षति पहुंचती है। जल के प्रदूषण के लिए हमारी आदतें ही मूल रूप से जिम्मेदार है। जैसे जल स्त्रोतों के आस-पास खुले में शौच करने, जल स्त्रोतों में नहाने या

* एसोसिएट प्रोफेसर (रीडर) ग्रामोत्थान विद्यापीठ शिक्षा महाविद्यालय, संगारिया, हनुमानगंढ (राज.) भारत
** अध्यापक, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, लधुवाला (राज.) भारत

कपडे धोने, जल स्त्रोतों के समीप सोख्ता गड्ढ़ों के निर्माण से, जल में औद्योगिक कचरे के प्रवाह के, जल स्त्रोतों में सीधो ही सीवर लाईन का पानी छोड़ देने इत्यादि से ।

इन सभी कारणों के लिए हमारी अस्वच्छता की आदतें ही जिम्मेदार हैं। यदि हम अपनी आदतों में सुधार लाकर हमारे वातावरण को प्रदूषित होने से रोके तो बहुत सी बीमारियों से बचा जा सकता है और इसके लिए व्यक्तिगत व सामुदायिक स्वच्छता की आदतों का विकास बालपन से ही हो सके, इसके लिए कड़े प्रयास करने की आवश्यकता है। इसमें विद्यालयों की भूमिका अहम है। छात्र-छात्राओं को बताया जाना चाहिए कि जल स्त्रोतों, जल पात्रों आदि के प्रदूषण को होने से रोका जा सकता है तथा इसका उनके स्वास्थ्य व समुदाय पर किस तरह का प्रभाव पड़ेगा, इससे बीमारियों पर होने वाले व्यय को कम कर राष्ट्रीय विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है।

सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान के उद्देश्य :

1. ग्रामीण जनता का जीवन स्तर सुधारना।
2. ग्रामवासियों को स्वच्छता के फायदे व अस्वच्छ रहने से होने वाले नुकसान के बारे में बताना जिससे वे स्वच्छ आदतों को अपने दैनिक जीवन का एक हिस्सा बना सकें।
3. जागरूकता और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से स्वच्छतागत सुविधाओं के लिए मांग पैदा करना।
4. विद्यालयों एवं आंगनबाड़ी केन्द्रों पर समुदाय की मदद से शौचालय तथा अन्य स्वच्छता सुविधाओं का निर्माण एवं उपयोग को बढ़ावा देना।
5. स्वच्छता के क्षेत्र में कम लागत वाली उपयुक्त प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना।
6. ग्रामीणों को स्वच्छ जीवन की राह दिखाना ताकि कम से कम मानव घंटो का नुकसान हो।
7. बाल मृत्यु दर में कमी लाना एवं प्रदूषित जल के सेवन एवं अस्वच्छता के कारण होने वाली बीमारियों में कमी लाना।
8. ग्रामीणों के बीच उचित लागत पर पसंद के शौचालय निर्माण की तकनीक को बढ़ावा देना।
9. ग्रामीण क्षेत्रों में शुष्क शौचालयों को जलबंधा शौचालयों में बदलना और जहां कहीं भी हो, मनुष्य द्वारा मैला ढोने की प्रथा समाप्त करना।
10. स्वच्छता को सिर्फ शौचालयों के उपयोग तक सीमित न रखकर, बल्कि उसे व्यापक बनाते हुए उसमें गंदे पानी की निकासी एवं कूडे-कचरे का सुरक्षित निपटान को शामिल किया गया है।साथ ही पेयजल, व्यक्तिगत, ग्रामीण और घर एवं भोजन की स्वच्छता पर भी धयान देना है।
11. अत: इस कार्यक्रम का आशय उनके अपने मकानों और स्कूलों में सफाई की अच्छी आदतों को अत्यधािक आकर्षक समर्थन के रूप में उनकी क्षमता का उपयोग करने से है।

सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान का कार्यन्वयन परियोजना पद्धति पर किया जाता है। परियोजना प्रस्ताव को जिलों में तैयार किया जाता है और राज्य सरकार द्वारा उनकी जांच की जाती है फिर सरकार (पेयजल आपूर्ति विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय) को भेज दिया जाता है।

भारत देश अपनी मातृत्व भावना,अनेकता में एकता व सहयोगी भावना के कारण विश्व स्तर पर अपनी अलग पहचान बनाये हुए है। एक अरब जनसंख्या के साथ भारत का जनसंख्या की दृष्टि से चीन के बाद दूसरा स्थान है। इस देश में लगभग 70% लोग गांवो मे निवास करते है। 2001 में पूरे देश में केवल 36.4% लोगों के घरों में शौचालय की सुविधा थी। ग्रामीण क्षेत्रों मे यह अनुपात 21.9% रहा और सिर्फ 7.1% घरों में ही शौचालय के साथ-साथ जल सुविधा की व्यवस्था भी रही। भारत देश में सर्वाधिक संख्या में बच्चे विद्यालय जाते हैं, मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या अधिक निवास करने के कारण विद्यालय जाने वाले बच्चों की संख्या भी गांवों में अधिक है। विश्व में ग्रामीण विद्यालयों में जाने वाले बच्चों की सर्वाधिक संख्या हमारे देश में है। यहां के लगभग 6.3 लाख ग्रामीण प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में लगभग 8 करोड़ बच्चे अध्ययनरत हैं। 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के लगभग 75% बच्चे ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत हैं। उपलब्ध सुविधाओं का अपर्याप्त उपयोग होता है व उनकी उचित देखभाल नहीं होती है। यही कारण है कि वर्तमान में अनेक ग्रामीण विद्यालयों का परिवेश अस्वास्थ्यकर है, जो बीमारियों के फैलाव में सहायक है। उदाहरण के लिए दूषित पानी व गन्दे परिवेश के कारण बच्चों में अनेक प्रकार के आँतों व फेफड़ों से सम्बन्धित संक्रमण हो जाते हैं जैसे डायरिया, डिसेन्ट्री , हैपेटाइटिस, पोलियो, ट्रेकोमा, स्केबीज आदि । स्वास्थ्य में गिरावट से बच्चों की शाला में नियमित उपस्थिति तथा सीखने-समझने की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, फलस्वरूप बच्चे विद्यालय से पलायन करने लगते हैं। विद्यालयों में गन्दे पानी की सुरक्षित निकासी की सुविधाएँ नहीं होने के कारण मच्छर तथा मक्खियाँ पनपते हैं। अन्य घातक रोगों तथा मलेरिया इत्यादि के संक्रमण की संभावना बहुत अधिक हो जाती है। अत: विद्यालयों में स्वच्छ पेयजल आपूर्ति एवं शौचालय/मूत्रालय सुविधाओं की नियमित साफ-सफाई की सुदृढ़ व स्वप्रेरित व्यवस्था कायम करना उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है। यह तभी सम्भव है जब सभी बच्चों, शिक्षकों व स्थानीय समुदायों में स्वच्छता स्थापना के उचित दृष्टिकोण का विकास किया जाए, तभी हमारे विद्यालयों का पर्यावरण स्वच्छ व स्वास्थ्यवर्द्धक बनेगा और ये बच्चे सामुदायिक परिवर्तनकर्त्ता सिद्ध हो सकेंगें। भारत देश में बड़े पैमाने पर प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम सुचारू रूप से चल रहा है।

1975 में बनी अखिल भारतीय प्राथमिक शिक्षा परिषद् जिसकी स्थापना का उद्देश्य सभी 14 वर्ष तक के बालको को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना था जिसे बाद में अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् के साथ मिलकर 1961 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् में बदल दिया गया, 1964 में गठित दौलतसिंह कोठारी की अध्यक्षता में बने कोठारी आयोग ने शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक स्तर पर सुझाव प्रेषित किये, 1968 में शिक्षा को समुचित आधार प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी, 1979 में 6 से 11 वर्ष आयु वर्ग के स्कूल के बाहर के बालकों को अल्प अवधि शिक्षा की व्यवस्था उनकी सुविधा के समय पर प्रदान करने के लिए अनौपचारिक शिक्षा योजना बनायी गयी, दूसरी राष्ट्रीय शिक्षा नीति का निर्माण 1986 में किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य देश की परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा को विकसित करने हेतु दिशा निर्देश देना था। जिसे बाद में 1992 में संशोधित शिक्षा नीति के तहत सुधारा गया, 1987 में देश के प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यक भौतिक संसाधनों की पूर्ति करने के लिए ऑपरेशन ब्लैड बोर्ड योजना का निर्माण किया गया, 1988 में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों (Diets) का केन्द्रीय प्रवर्तित योजनान्तर्गत प्राथमिक शिक्षा के शिक्षण प्रशिक्षण हेतु उदय हुआ,1988 में ही प्राथमिक शिक्षा हेतु 'सम्पूर्ण साक्षरता मिशन' (TLP) को पारित किया गया। 1991 में न्यूनतम अधिगत स्तर (MLL)

कार्यक्रम भाषा और गणित में मूलभूत कमियों को दूर करने पठ्यपुस्तकों का निर्माण करने के लिए प्रारम्भ किया गया, 1992 में बच्चों के बस्ते के बोझ को कम करने के उद्देश्य से सुझाव लेने हेतु सरकार ने डॉ. यशपाल समिति का गठन किया, 1994 में देश में प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनिकरण को सुनिश्चित करने के लिए जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) को प्रारम्भ किया गया, 1995 में प्राथमिक विद्यालयों में बालकों के ठहराव को प्रोत्साहित करने के लिए दोपहर के भोजन की व्यवस्था विद्यालय में ही करने की मध्यान्ह भोजन योजना प्रारम्भ की गयी, 1999 में जिन गाँवों में प्राथमिक विद्यालय नहीं थे उनमें ग्राम पंचायतों द्वारा प्राथमिक विद्यालयों को खोलकर शिक्षा प्रदान करने हेतु शिक्षा गारन्टी स्कीम को प्रारम्भ किया गया, विद्यालयों से बाहर सभी बालकों को प्राथमिक विद्यालयों में नामांकित करने के उद्देश्य से सन् 2000 में 'सर्वशिक्षा अभियान' कार्यक्रम चलाया गया, नया मिलेनियम पाठ्यक्रम (NCERT) द्वारा नवम्बर माह में प्रस्तुत किया गया। इसमें प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के बदलते परिवेश के अनुरूप को ध्यान मे रखत हुए शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गयी है। भारत बच्चों के जीवन, उनकी सुरक्षा तथा विकास पर 'विश्व शिखर घोषणा' का हस्ताक्षरकर्त्ता है, इस घोषणा के लक्ष्यों मे एक लक्ष्य सर्वव्यापी स्वच्छता भी है।

ग्रामीणों में स्वास्थ्य जागरूकता अभाव, जल की कमी और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी के कारण बच्चे संक्रमण द्वारा बीमारियों से ग्रस्त हो जाते हैं तथा ये बीमारियाँ समुदाय तक फैल जाती हैं। इस प्रकार यदि प्रत्येक व्यक्ति अस्वच्छता के कारण इन बीमारियों से ग्रस्त हो गया तो भारत को विकसित देशों की श्रेणी में लाने का सपना मात्र सपना बनकर ही रह जाएगा। स्वच्छता सम्बन्धी स्वास्थ्य निहितार्थों के परिणामस्वरूप सालाना 80 करोड़ कार्यदिवसों की हानि और 1200 करोड़ रूपये की आर्थिक हानि होती है। यह अनुमान है कि साबुन से हाथ धोने से हर साल बीमारियों की लगभग 90 लाख घटनाओं को कम किया जा सकता है। बांग्लादेश में एक स्कूल स्वच्छता परियोजना के कारण लड़कियों के दाखिलों में 11 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। देश की प्रगति उसके नागरिकों के व्यवसाय उनके श्रम, उनकी तरक्की व विकास पर ही सम्भव है। यदि वे शारीरिक रूप से अस्वच्छ रहेंगे तो बीमारियों से ग्रस्त होंगे व मानसिक रूप से तनाव से ग्रसित हो जाऐंगे, जिससे कि देश की आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है आज देश में स्वास्थ्य सुविधाओं को प्रत्येक विद्यालय में पहुँचाने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं, ताकि नागरिकों की कड़ी मेहनत व शैक्षिक उन्नति से भारत देश विकसित देशों की बराबरी कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में योग-शक्ति-महाशक्ति

डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – "Yoga is not an ancient myth buried in oblivion. It is the most valuable inheritance of the present. It is the essential need of today and the culture of tomorrow." - Swami Satyananda Saraswati

जगत् की गतिशीलता का अंतिम लक्ष्य सत्य का साक्षात्कार है, उस परमात्मा का साक्षात्कार है जो इस सृष्टि का एक मात्र सत्य है। भौतिकता की चकाचौंध में हम अपनी प्राचीन अध्यात्मपरक संस्कृति को भूल गए हैं। आज पाश्चात्य जगत् भारतीय अध्यात्म के प्रति आकर्षित है परन्तु दुर्भाग्य है कि भारत अपनी ही प्राचीन सम्पदा से आत्मिक सम्पदा से विहीन हो रहा है। अपने में स्थित होना ही स्वस्थ होना है अपने से जुड़ना ही योग है। योग अत्यन्त प्राचीन विद्या है जो जीवन को संतुलित और सहज बनाती है। आज पतंजलि के योगसूत्रों का ही सर्वत्र अनुसरण किया जा रहा है। पतंजलि ने समाधि की अवस्था को प्राप्त करने की प्रक्रिया का वर्णन 'अष्टांग योग' द्वारा विस्तार से किया है। योग साधना से ही योग को जाना जा सकता है। गीता में श्रीकृष्ण ने कर्म फल के प्रति अनासक्त होकर कर्त्ताव्य पालन के निष्काम कर्मयोग की शिक्षा दी है। श्री अरविन्द घोष ने जीवन की प्रत्येक क्रिया को तन्मयतापूर्ण ढंग से करके सम्पूर्ण जीवन को ही योग बना देने के पूर्ण योग की शिक्षा दी है। अन्ततः योग एक आंतरिक सम्पदा है।

देह, मन, आत्मा को स्वास्थ्य प्रदान करने के कारण चिकित्सा शास्त्र भी है। योग धर्म निरपेक्ष नीतिशास्त्र है, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में योग में ही जीवन की समस्त समस्याओं का समाधान है।[1]

मानव का उद्देश्य क्या है?

जड़ चेतन गुण दोषमय विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारिविकार॥

विधाता ने इस जड़-चेतन विश्व को गुण दोषमय रचा है किन्तु संतरूपी हंस दोषरूपी फल छोड़कर गुणरूपी दूध को ही ग्रहण करते हैं।

शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य, दैवी-आसुरी दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ सदा से ही विद्यमान हैं। जगत की गतिशीलता का अंतिम लक्ष्य सत्य का साक्षात्कार है, उस परमात्मा का साक्षात्कार है जो इस सृष्टि का एकमात्र सत्य है। मनुस्मृति में कहा गया है – 'सभी प्राणियों में अपनी आत्मा को और अपनी आत्मा में सभी प्राणियों को बराबर देखने वाला आत्मयाजी स्वराज्य प्राप्त करता है।'

'सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि
समं पश्यन्नात्मयाजी स्वराज्यमधिगच्छति।'[2]

वर्तमान स्थिति – आज अंध आधुनिकता की दौड़ में, प्रतियोगिता और प्रतिस्पर्धा के घोर भौतिकवादी युग में पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्ध छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। स्वार्थ, संकीर्णता, लोभ, बेईमानी आदि मानव के पर्याय बन गए हैं। स्नेह, सौजन्य, सदाचार आदि को वह भूल गया है, मानव का मानव से नाता ही टूट गया है। एकाकी अलग-थलग पड़ा मनुष्य, अकूत संभावनाओं का भण्डार मनुष्य,स्वयं को निरीह प्राणी सा अनुभव करता है। सोते-जागते, उठते-बैठते तनावग्रस्त जीवन एक समस्या सा प्रतीत होता है। सम्पूर्ण मानवता विकास की राह पर चलते-चलते विनाश के कगार पर आ खड़ी है। कुंठित-विवेक, रुग्ण-मानसिकता, बौद्धिक आलस्य से आवृत्त सोयी मानवता समाज को अस्वस्थ करके राष्ट्र में, फिर विश्व में मनोमालिन्य तथा वैमनस्य पैदा कर देती है। परिणामतः आज हिंसा, आतंकवाद, साम्प्रदायिक दुर्भावना जैसी विश्वव्यापी समस्याओं से राष्ट्रीय एकता संकट में है। आत्मिक शांति, समाज की, राष्ट्र की, विश्व की शांति एक सपना सा प्रतीत होती है।

इस स्थिति का कारण क्या है?

भौतिकता की चकाचौंध में हम अपनी प्राचीन अध्यात्मपरक संस्कृति को भूल गए हैं। जड़ और चेतन में भेद न कर पाना, भौतिकता और आध्यात्मिकता में भेद न कर पाना ही अविद्या है। वस्तुतः अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश – ये पाँच क्लेश महादुःख के, जन्म-मृत्यु के कारण हैं। उनमें अविद्या प्रधान है। अनित्य, अपवित्र, दुःख और अनात्म में नित्य, पवित्र, सुख और आत्म-स्वरूप की प्रतीति अविद्या है, अज्ञान है। परम तत्व का ज्ञान प्राप्त करके आत्मा जड़ और चेतन का विवेक कर सकें आत्मवान् बन सके, यही दुःख और तनाव को दूर कर आनन्दित होने का उपाय है।

वस्तुतः असंतुलन ही तनाव का कारण है। यह तनाव ही समस्त व्याधियों की जड़ है। तमस् से उत्पन्न आसुरी तत्वों के विनाश के लिए, विश्व-समुदाय को, मानवता को विनाश से बचाने के लिए, दूषित वर्तमान के संस्कार के लिए, सुन्दर भूत के दर्शन पर विचार करना होगा। जिस उद्देश्य को भूल गए हैं, उस पर पुनः विचार करना होगा। हजारों वर्ष पूर्व भारत ने विश्व को अद्भुत दर्शन दिया था –

'असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमय मा कश्चित दुःख भाग भवेत॥'

यहाँ पर परमात्मा ही सत्य है, ज्योति स्वरूप है ज्ञान का प्रकाश आत्मसाक्षात्कार का प्रकाश है, अध्यात्म का ज्ञान है। आज हम चतुर्दिक उन्नति करते हुए भी आंतरिक रूप से खोखले हैं। पाश्चात्य जगत् भारतीय अध्यात्म के प्रति आकर्षित है परन्तु दुर्भाग्य है कि भारत अपनी ही प्राचीन सम्पदा से, आत्मिक सम्पदा से विहीन हो रहा है। हमें भोगवादी भौतिकवादी संस्कृति के स्थान पर मौलिक सूझ-बूझ से तथा अपनी जड़ों से जुड़कर

* एसोसिएट प्रोफेसर (दर्शन शास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

भारतवर्ष को प्रगतिशील और शक्तिशाली राष्ट्र बनाना है। आध्यात्मिक सत्य का साक्षात्कार मानव का लक्ष्य है जो जीवन भर अधोगति से मानव की रक्षा करता है और जीवन के अंत में मोक्ष की छाया प्रदान करता है। आवश्यकता है, अपने से जुड़ने की। आज मानव इण्टरनेट के माध्यम से सबसे जुड़ा है पर अपने से ही नहीं जुड़ा है। अपने में स्थित होना ही स्वस्थ होना है। ऋषियों ने कहा था 'आत्मानंविद्धि' अपने को जानो, अपने से जुड़ना ही योग है। युजिर् योगे, युज् संयमने, युज् समाधौ – के अनुसार योग का अर्थ जोड़, संयम और समाधि होता है। इसका तात्पर्य क्रियाविधि भी हो सकता है।[3] याज्ञवल्क्य के अनुसार जीवात्मा और सर्वोपरि आत्मा के संयोग का नाम ही योग है। योग में आत्मा को परमात्मा से जोड़ने का तात्पर्य है, स्वार्थ को परमार्थ से जोड़ना। योग में एक और एक दो नहीं एक ही होता है। अपूर्ण एक परिपूर्ण ईकाई बन जाता है।[4]

योग अत्यन्त प्राचीन विद्या है जो जीवन को संतुलित और सहज बनाती है। योग उतना ही पुरातन है जितनी कि सभ्यता। 3000 इ.उ. की पत्थर की मोहरों में योग की विभिन्न मुद्राएँ देखने को मिलती हैं। उपनिषद्, रामायण, महाभारत, गीता आदि सब योग के ही ग्रंथ हैं जिन्हें पढ़कर मानव मन को विश्रांति मिलती है।

पतंजलि योग के जनक कहे जाते हैं। आज पतंजलि के योग सूत्रों का ही सर्वत्र अनुसरण किया जा रहा है। योग तत्व उपनिषद् में चार प्रकार का योग बताया गया है – मंत्रयोग, लययोग, हठयोग, राजयोग। पतंजलिकृत योग अंतिम प्रकार का है। विवेक ज्ञान की प्राप्ति योग के अनुष्ठान से होती है। योग-सूत्र समाधिपाद के प्रथम सूत्र में कहा गया है 'अथ योगानुशासनम्' अर्थात् अब योग को अनुशासन कहते हैं। योग एक अनुशासन है। पतंजलि के अनुसार 'योगः चित्तवृत्ति निरोधः'। पतंजलि योग का मुख्य लक्ष्य यह बताना है कि चित्तवृत्तियों के निरोध द्वारा संयमी जीवन द्वारा किस प्रकार मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। इसमें मन को निश्चल करने का तथा समाधि की अवस्था को प्राप्त करने की प्रक्रिया का वर्णन अष्टांगयोग[5] (यम, नियम, आसन, प्राणायाम्, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि) द्वारा विस्तार से किया गया है। योग के आठ अंग इसके विभिन्न अनुशासन हैं।

योग रूपी Light उन्हीं लोगों के लिए है जो जीवन में आत्मानुशासन अपनाते हैं। इस सम्बन्ध में एक कहानी है – एक संन्यासी रात को सड़क किनारे घूम रहा था, सोने के लिए कोई स्थान ढूँढ रहा था उसके पास एक थैला, कम्बल और लालटेन थी। अचानक एक मोटर साइकिल की आवाज सुनी। उस संन्यासी ने लालटेन दिखाई कि वह रुक जाए लेकिन वह नहीं रुका। संन्यासी चिल्लाया कि एक जाओ, लालटेन ले लो नहीं तो तुम्हारा Accident हो जायेगा तो चालक बोला मेरी गाड़ी में ब्रेक नहीं है। Light से कुछ लाभ नहीं होगा मुझे तो ब्रेक लगाना भी नहीं आता अर्थात् जीवन में यदि अनुशासन, संयम, नियंत्रण नहीं है तो guiding light से भी कोई लाभ नहीं होगा। वह जीवन के accidents को नहीं बचा पाएगी।[6]

योग साधना से ही योग को जाना जा सकता है – 'योगेन योगो ज्ञातव्यो, योगोयोगात्प्रवर्तते। योऽप्रमत्तास्तु न स योगी रमते चिरम्' (महायोग-विज्ञान) एक व्यक्ति अंधे को सूर्य की रोशनी के बारे में बता रहा थाा। वर्णन सुनकर वह अभिभूत हो जाता है। अंधे को सूर्य के प्रकाश का चाहे जितना भी वर्णन किया जाए उसे उसका ज्ञान नहीं मिलता लेकिन यदि उसकी आँख का दोष दूर हो जाता है आँख ठीक हो जाती है तो वह स्वयं सूर्य के प्रकाश को देखता है तभी उसे वास्तविक ज्ञान होता है। इसी तरह योग करके ही उसके आठ अंगों के आचरण से ही उसके लाभ को प्रत्यक्ष जाना जा सकता है।[6A]

योग दर्शन यह मानता है कि बहिर्मुख व्यक्तियों के लिए, ऐसे व्यक्तियों के लिए जो आत्मसंयम का पालन करने योग्य नहीं हों तो उनके लिए क्रिया योग की विधि है। इसमें तपस्या, स्वाध्याय तथा ईश्वर प्राणिधान (भक्ति) शामिल है। योग के अन्य तीन मुख्य मार्ग – ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग है।

निष्काम कर्म योग – श्रीकृष्ण को योगीश्वर (भव प्रत्यय योगी) कहा गया है। गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं, 'योगी भव अर्जुन'।[6] 'समत्वं योगं उच्यतेय'[7] वही द्रष्टायोगी है, स्थित प्रज्ञ है जो सुख-दुःख में समान रहता है। 'योगः कर्मसु कौशलम्' कर्मो में कुशलता ही योग है। जिस उपाय से कर्म सहज स्वाभाविक रूप से सिद्ध हो, बंधन का कारण न हो, उसी का नाम योग है। प्राचीन काल में ऋषि कुमार यज्ञ के लिए कुश बटोरने जाते थे कुश उखाड़ते समय उनका हाथ कट जाता था इस भय से कुछ कुमार इसरो से माँग कर काम चलाते थे लेकिन कुछ कुमार कुश उखाड़ते भी थे और हाथ भी नहीं करता था। कुश लाते भी हैं और हाथ भी नहीं कटता था अर्थात् संसार के सब काम भी करते हैं और उसकी माया में बद्ध भी नहीं होते, इस भाव को ही योग कहते हैं। योग को अगर जीवन में ढालना है तो कर्मयोग करना होगा। कर्मयोग तो सभी अपना सकते हैं। केवल कर्म नहीं जागरुक होकर, एकाग्र होकर सब ओर से मन को हटा कर कर्म करो।

अनाश्रितः कर्म फलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्नचाक्रियः ।।[8]

जो व्यक्ति अपने कर्मफल के प्रति अनासक्त है और अपने कर्तव्य कर्म का पालन करता है वही संन्यासी और योगी है, वह नहीं जो न अग्नि जलाता है और न कर्म करता है। कर्म से ज्यादा से ज्यादा प्राप्त करना है। Give give and give, take and take more शांति के लिए कहीं और जाना समाधान नहीं है। भीड़ में, शोर में एकाग्रता पाना ही समाधान है। अष्टावक्र गीता में भी कहा गया है – The englightened one neither avoids the crowd nor seeks the forest under all conditions in any place, he remains perfectly balanced.[9]

पूर्ण योग – श्री अरविन्द घोष ने योग को एक सार्वभौमिक, सामाजिक और स्वाभाविक क्रिया माना। जीवन की प्रत्येक क्रिया को तन्मयतापूर्ण ढंग से करके सम्पूर्ण जीवन को ही योग बना देना है। विश्व के अभी तक के मानस स्तर के विकास को अतिमानस के स्तर से ऊँचा उठा देना, मात्र वैयक्तिक मुक्ति ही नहीं, सम्पूर्ण जगत् की मुक्ति प्राप्त करना इसका लक्ष्य है।

श्री अरविन्द घोष का पूर्णयोग हो, रविशंकर का Art of living हो या पतंजलि का अष्टांगयोग हो, योग एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है। एकाग्रता, ध्यान, साधना और व्यायाम, प्राणों का संयमन जिसके व्यावहारिक रूप हैं। अर्जुन के एक प्रश्न का उत्तार देते हुए श्रीकृष्ण ने कहा था कि मन निःसंदेह बहुत चंचल है वह ठहर नहीं सकता लेकिन योग के द्वारा उसे साधा जा सकता है। योग का सतत् अभ्यास लोभ, मोह को समाप्त करके चित्त को शांत और निर्विकार बनाता है। मन के नियंत्रण से सभी के लिए कल्याणकारी सकारात्मक वाणी का प्रवाह होता है।

जवाहर लाल नेहरू ने भी कहा था – Yoga an ancient practice, a complete way of life. योग एक आंतरिक सम्पदा है, आंतरिक समृद्धि है जिसके बोझ से मन बोझिल नहीं होता।[10]

योग की प्रासंगिकता – प्रो0 संगम लाल पाण्डेय अपनी पुस्तक 'भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण' में लिखते हैं कि योग देह, मन और आत्मा के क्लेशों को

दूर कर तनाव को दूर कर उन्हें स्वास्थ्य प्रदान करने के कारण चिकित्सा शास्त्र भी कहा जा सकता है। योग का मूल्य उसका साधन पक्ष है, सिद्धि पक्ष है। वह अध्यात्म शास्त्र का व्याकरण है, वह कोरा तत्वज्ञान नहीं है। मनुष्य के दु:खों क्लेशों और अज्ञानों को दूर करने वाला शास्त्र है। योग के बिना कोई भी आध्यात्मिक साधना नहीं हो सकती। योग बीज नामक ग्रंथ में कहा गया है, यदि देवता भी ज्ञाननिष्ठ, विरक्त, धर्मज्ञ और इन्द्रियजित हों तो भी बिना योग के उन्हें मोक्ष नहीं मिल सकता। योग से ही वह परमात्मा को देख सकता है, उसमें लीन हो सकता है, उन्हें प्राप्त कर सकता है। योग धर्म निरपेक्ष नीतिशास्त्र है योग का फल और प्रभाव अनुभव सिद्ध है – मनोविज्ञान में बताए गए प्राय: सभी सुझाव योग दर्शन में है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व को यथासम्भव पूर्ण करने का उपाय तथा प्रयोग भी है। बड़े से बड़े वैज्ञानिक को भी वह उपलब्धि नहीं होगी जो एकाग्रता प्राप्त कर लेने पर योगी को होगी। योग दर्शन का महत्व सदा से है और सदा रहेगा। योगशक्ति महाशक्ति है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में योग में ही जीवन की समस्त समस्याओं का समाधान है।

रमण महर्षि से एक बार किसी ने पूछा कि मैं संसार की सहायता करना चाहता हूँ मैं क्या कर सकता हूँ जिससे मनुष्यों में शांति और भाई-चारा स्थापित हो जाए। उनका उत्तार था – दूसरों की समस्याओं को सुलझाने के लिए पहले अपनी समस्याएँ सुलझाकर शांत होना चाहिए। जीवन के अर्थ को अपने में ही खोजकर, योग को अपना कर, हर व्यक्ति जीवन में शांति और सद्भावना ला सकता है।

`Yoga is a light to those people who are now living in darkness' – Swami Satyananda Saraswati

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रामचरित मनास 1/6
2. मनुस्मृति 12/9
3. भगवत् गीता 3.3
4. सर्वदर्शन संग्रह, 15
5. अष्टांग योग

1. यम – सत्य, अंहिसा, अस्तेय, ब्रहमचर्य, अपरिग्रह।
2. नियम – शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान।
3. आसन – 'स्थिरं सुखमासनम्' मन की उत्कण्ठाओं को शांत करने और मन को परमेश्वर में लगा देने से आसन की सिद्धि होती है।
4. प्राणायाम – श्वास-प्रश्वास की गति का नियंत्रण प्राणायाम है। मन संयमित होता है, धारणाओं को ग्रहण करने की योग्यता आती है।
5. प्रत्याहार – इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों को त्याग कर चित्त में अवस्थित हो जाती है।
6. धारणा – चित्त को किसी एक ध्येय में एक निष्ठ कर देना ही धारणा है।
7. ध्यान – ध्येय वस्तु में ही एकाग्रता। ध्यान से शांति, प्रसन्नता, सर्वत्र प्रेम का भाव, सृजन शक्ति और अन्तर्दृष्टि उत्पन्न होती है।
8. समाधि – केवल ध्येय ही आभासित होता है अपने स्वरूप का भी ज्ञान नहीं रहता। ध्यान में ध्याता ध्येय और ध्यान तीनों का अस्तित्व बना रहता है। समाधि में उनका अन्तर मिट कर वे एकाकार हो जाते हैं।

6. Swami Satyananda Saraswati : A Systematic Course in the Ancient Taxtric Techniques of Yoga and Kriya P. 597

6[1]. 6/46

6[A]. The most positive step that you can take is to begin your sadhna, to findout the experiences for yourself. You too will find the light the spiritual light from your own experience in the same way the blind man eventually discovered light for himself when his eye sight was restored.
Swami Satyananda Saraswati : A Systematic Course in the Ancient Tantric Techniques of Yoga and Kriya, Page 145.

7. 2/48

7[1]. 2/50

8. 6/1

9. अष्टावक्रगीता अध्याय 18 : 100

10. एक बार एक धनी महिला बुद्ध के एक प्रमुख शिष्य का प्रवचन सुनने गई। इस बीच उसके घर चोर आ गए। दासी ने धनी महिला को चोरी के बारे में बताया तो वह बोली – चोरों को जितनी चाहे सम्पदा ले लेने दो प्रवचन की अनमोल सम्पदा में विघ्न मत डालो। चोरों के सरदार को पता लगा तो वह समझ गया कि इस धन से ज्यादा मूल्यवान् भी कुछ है। वह प्रवचन सुनने आया तो उसे लगा अभी तक सारा समय उसने कूड़ा करकट एकत्र करने में लगा दिया धन सम्पत्ति घर के बजाय मन में ज्यादा भरती है उसके बोल से मन बोझिल हो जाता है। हम हर समय भयभीत रहते हैं इसलिए भौतिक समृद्धि के बजाय आत्मिक समृद्धि होनी चाहिए।

11. प्रो0 संगम लाल पाण्डेय : 'भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण' पृष्ठ 257।

****

महात्मा गांधी का शैक्षिक दर्शन : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

डॉ. मधुरिमा वर्मा *

शोध सारांश – भारतवर्ष सिद्ध पुरूषों का युग रहा है। महात्मा गाँधी भी उन्हीं विभूतियों में से एक हैं। देश के उत्थान और पुर्ननिर्माण में एक सक्रिय समाज सुधारक व्यवहारिक राजनीतिज्ञ, महान दार्शनिक तथा योग्य शिक्षा शास्त्री के रूप में अपनी भूमिका निभायी है।

सत्य, अहिंसा, निर्भयता एवं सत्याग्रह गाँधी जी के जीवन के प्रमुख सिद्धान्त थे। गाँधी जी आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, प्रयोगवाद तथा यथार्थवाद से भी प्रभावित हैं। गाँधी जी के अनुसार शिक्षा का अर्थ बालक एवं मनुष्य के शरीर और मस्तिष्क तथा आत्मा के गुणों का विकास है। शिक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत वे चरित्र का विकास, सांस्कृतिक, सामाजिक विकास को महत्व देते हैं। जीविकोपार्जन के उद्देश्य को भी वह आवश्यक मानते हैं। पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में उनके विचार थे कि पाठ्यक्रम बालकों को उनके भौतिक तथा सामाजिक वातावरण के अनुकूल बनाये। शिक्षक बालकों के पथ प्रदर्शक तथा रोल मॉडल बनें। विद्यालयों के लिए उनके विचार है कि विद्यालय सामाजिक एवं सामुदायिक जीवन का केन्द्र बने।

अनुशासन के सम्बन्ध में वे दमनात्मक अनुशासन का विरोध करते हैं तथा प्रभावात्मक एवं मुक्त्यात्मक अनुशासन का समर्थन करते हैं। लोकतंत्र की सफलता के लिए वह सामाजिक न्याय की बात करते हैं। राष्ट्रहित में वह स्त्री शिक्षा, अनुसूचित जाति जनजाति तथा प्रौढ़ों की शिक्षा की सिफारिश करते हैं। गाँधी जी ने जन शिक्षा, धर्मशिक्षा तथा राष्ट्रीय शिक्षा पर अपने विचार दिए हैं।गाँधी जी की विशेष देन नवीन शिक्षा पद्धति बेसिक शिक्षा या वर्धा योजना है। इसे राष्ट्रीय योजना के रूप में स्वीकार किया गया। गाँधी जी का शिक्षा दर्शन वर्तमान में भी महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है।

शब्द कुंजी – दर्शन, सत्याग्रह, अहिंसा, जीविकोपार्जन।

प्रस्तावना – भारतवर्ष सिद्ध पुरूषों का युग रहा है। महात्मा गाँधी भी उन्हीं विभूतियों में से एक हैं। डा0 राधा कृष्नन ने उनके लिए कहा है कि उनमें अतीत एवं भविष्य का समन्वय देखने को मिलता है। उनमें अतीत के युगों का समन्वय था तथा भावी युगों के निर्माण करने की नवशक्ति थी। गाँधी जी की महानता केवल भारत को स्वतन्त्र कराने में ही नहीं है अपितु राष्ट्र के पुर्ननिर्माण में भी है। देश के उत्थान और पुर्ननिर्माण में उन्होंने एक सक्रिय समाज सुधारक व्यवहारिक राजनीतिज्ञ, महान दार्शनिक तथा योग्य शिक्षा शास्त्री के रूप में अपनी भूमिकाएँ निभायी हैं। गाँधी जी की महानता केवल राष्ट्र को स्वतंत्र कराने में ही नहीं है बल्कि राष्ट्र के निर्माण में भी है और नवचेतना, नवजागरण एवं नवशक्ति देकर सक्रिय एवं मननशील बनाने में भी है।

गाँधी जी का जीवन दर्शन – महात्मा गाँधी आधुनिक राष्ट्र के जनक कहे जाते हैं। वह सत्य और अहिंसा की बात करते हैं। उनका सतय शिव और सुन्दर भी था। उनका कहना था कि प्राय: लोग सत्य बोलने को ही सत्य मानते हैं। गाँधी जी के अनुसार विचार में वाणी में और आचार में सत्य का होना ही सत्य है। उनके अनुसार जहाँ सत्य नहीं वहाँ ज्ञान की सम्भावना नहीं है।

गाँधी जी का दूसरा महामंत्र अहिंसा था। प्राचीन ऋषियों ने भी अहिंसा परमो धर्म: कह कर अहिंसा के महत्व को स्वीकार किया है। सकारात्मक रूप में अहिंसा प्राणी मात्र से प्रेम करने की प्रेरणा देती है। हिंसा न करना अर्थात् किसी को शारीरिक चोट न पहुँचाना, मानसिक रूप से न प्रताड़ित करना अहिंसा का अभावात्मक अर्थ है। इसका भावात्मक अर्थ चेतनशील वेदना है। सत्य और अहिंसा सिक्के के दो रूप हैं किसी को उल्टा या सीधा नहीं कहा जा सकता। सत्य को साध्य तथा अहिंसा को साधन माना जा सकता है। सत्य की प्राप्ति अहिंसा से होती है। व्यवहारिक रूप में दोनों एक ही है। सत्य और अहिंसा के लिए निर्भीकता आवश्यक है। कायर पुरूष की अहिंसा वास्तविक अहिंसा नहीं है। निर्भीकता आने पर ही व्यक्ति सत्याग्रह करेगा।

अहिंसा का पहला काम विरोधी की शक्ति परीक्षा करना है। उन्होंने 1920 में लिखा था 'क्षमाशीलता भीरू का नहीं, योद्धा का आभूषण है।' यदि भीरूता और हिंसा में एक का चुनाव करना हो तो मैं हिंसा को स्वीकार करूँगा (हिन्द स्वराज 11.8.1920)

गाँधीजी के दर्शन का अन्य प्रमुख सिद्धान्त धर्म था। वे धर्म को मानते थे। उन्होंने सभी धर्मो का एक अपना अर्थ लिया है और उसके कारण हिन्दू मुस्लिम, ईसाई को एकार्थी समझा है। उनकी दैनिक प्रार्थना यह बताती है कि वह एक धार्मिक व्यक्ति थे। उनके विचारानुसार धर्म के बिना जीवन सिद्धान्त विहीन होता है। बिना सिद्धान्त का जीवन बिना पतवार की नौका के समान होता है जो हिलने डुलने के कारण गन्तव्य तक नहीं पहुँच पाती। गाँधी जी ने धर्म को निष्काम कर्म एवं कर्त्तव्य के रूप में माना है। नैतिकता ही धर्म का सार है।

सामाजिक न्याय भी गाँधी जी के दर्शन का एक अंग था। वे वर्ग विहीन समाज की स्थापना चाहते थे। भारत में राम राज्य उनका स्वप्न था। राम राज्य में राज्य का संचालन नैतिक नियमों पर आधारित होगा।

गाँधी जी सादगी और सरलता के समर्थक थे। उनका संदेश था कि परिग्रह मत करो, पंछी की भांति रहो।

गाँधी जी का शैक्षिक दर्शन – गाँधी जी ने शिक्षा का अर्थ एवं अभिप्राय, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियाँ, शिक्षण का माध्यम, अनुशासन, बालक को व्यवसायिक एवं उत्पादक नागरिक बनाने के लिये वयवसायिक शिक्षा, हुनर या कौशल का विकास अशिक्षा को दूर करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा, स्त्री

* विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा शास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

शिक्षा, सामाजिक न्याय के लिए समाज के सभी वर्गो की शिक्षा की समानता के अवसर के लिए अपने स्पष्ट विचार दिए हैं।

शिक्षा का अर्थ एवं अभिप्राय – गाँधी जी केवल साक्षरता को शिक्षा नहीं मानते। वह लिखते हैं कि शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक और मनुष्य में शरीर, मन और आत्मा के विचार से सर्वोत्तम को बाहर प्रकट करना है। सच्ची शिक्षा वह हैजो बालकों को आत्मिक, बौद्धिक और शारीरिक क्षमताओं को उनके अन्दर से बाहर प्रकट करें और उत्तेजित करें । शिक्षा का वृहद अर्थ मानव को समाज के अनुकूल बनाना है। मनुष्य और समाज का आध्यात्मिक और बौद्धिक उत्कर्ष शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। शिक्षा द्वारा मनुष्य अपनी संस्कृति की रक्षा करता है।

शिक्षा के उद्देश्य – शिक्षा का उद्देश्य जीवन का सम्पूर्ण विकास हो। गाँधी जी चाहते थे कि शिक्षा ऐसी हो जो बालक को स्वावलम्बी बना सके। अत: शिक्षा का जीविकोपार्जन और व्यवसायिक उद्देश्य भी हो। गाँधी जी शिक्षा की साहित्यक पक्ष की अपेक्षा सांस्कृतिक पक्ष को अधिक महत्व देते थे। शिक्षा का उद्देश्य सांस्कृतिक विकास भी होना चाहिए। वह चरित्र निर्माण को शिक्षा की आधारशिला मानते थे। शिक्षा के माध्यम से चरित्र का विकास भी हो। शिक्षा द्वारा आध्यात्मिक स्वतन्त्रता भी प्राप्त होती है। गाँधी जी बालक का आध्यात्मिक विकास तथा सामाजिक विकास भी शिक्षा द्वारा करना चाहते थे। बालक का विकास समाज में ही हो सकता है। शून्य में नहीं।

पाठ्यक्रम – निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए हमें उपयुक्त पाठ्यक्रम की आवश्यकता होती है। तत्कालीन शिक्षा के पाठ्यक्रम से गाँधी जी असन्तुष्ट थे। वह उसे दोषपूर्ण मानते थे। उनके अनुसार पाठ्यक्रम ऐसा हो जो बालक के बौद्धिक विकास के साथ–साथ उसे जीविकोपार्जन के योग्य भी बना सके। परम्परागत विषयों के साथ–साथ उसे कोई कौशल या क्राफ्ट भी सिखायी जाए। वह क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम को महत्व देते थे। गाँधी जी ने सर्वांगीण विकास के लिए प्रस्तावित पाठ्यक्रम में इन विषयों को सम्मिलित करने की बात कही है – हस्तकला एवं उद्योग, मातृभाषा, हिन्दुस्तानी व्यवहारिक गणित, सामाजिक विषय, सामान्य ज्ञान, संगीत, चित्रकला, स्वास्थ्य विज्ञान, आचरण शिक्षा आदि। मातृभाषा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है शिक्षण के माध्यम के रूप में भी मातृभाषा को ही स्वीकार किया है।

शिक्षण विधि – गाँधी जी के अनुसार मनुष्य का विकास शरीर मन और आत्मा पर निर्भर करता है। इसी कारण उन्होंने शिक्षण की प्रक्रिया में तीनों की प्रक्रियाओं को स्थान दिया है। शिक्षण के क्षेत्र में आपने सर्वाधिक बल क्रिया पर दिया है। कर के सीखना या अनुभव से सीखने को वे उत्तम सीखना मानते थे। कथन, व्याख्यान और प्रश्नोत्तर विधि के महत्व को भी स्वीकार करते थे। उपनिषद एवं वेदान्त में प्रतिपादित श्रवण, मनन और निदिध्यान्सन की विधि में भी विश्वास था।

अनुकरण विधि – अनुकरण करना बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। बच्चों के लिए यह विधि अवश्य अपनायी जाए। सदाचरण की शिक्षा के लिए वह इसे सर्वाधिक उपयोगी मानते थे।

क्रिया विधि – क्रिया करना भी बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। कला कौशल की शिक्षा क्रिया द्वारा ही दी जानी चाहिए। खेल विधि और प्रयोग विधि भी क्रिया विधि से ही जनित है।

मौखिक विधि – बच्चों में जिज्ञासा की प्रवृत्ति होती है। उन्हें शारीरिक और मानसिक रूप से क्रियाशील रखने के लिए मौखिक विधियों में व्याख्यान प्रश्नोत्तर, वाद विवाद आदि विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

सह सम्बन्ध विधि – गाँधी जी इस बात पर बल देते थे कि बच्चों को जो कुछ भी सिखाया जाए वह जीवन से जोड़कर सिखाया जाय।

श्रवण मनन निदिध्यासन – यह हमारी प्राचीन शिक्षण विधि है। इस विधि में शिष्य पहले अपने गुरु के उपदेश सुनते फिर चिन्तन करते था बाद में अभ्यास करते। चूँकि इसमें चिन्तन भी करना है अत: यह विधि तब अपनायी जाए जब विद्यार्थी चिन्तन के योग्य हो जाए।

अनुशासन सम्बन्धी विचार – गाँधी जी स्व अनुशासन की बात करते थे। दमनात्मक अनुशासन का विरोध करते थे।

शिक्षक – शिक्षक समाज का आदर्श व्यक्ति, ज्ञान का पुँज और सत्य आचरण करने वाला होना चाहिए। आदर्श शिक्षक तभी हो सकता है जब वह शिक्षण व्यवसाय नहीं अपितु सेवा के रूप में स्वीकार करें। उसे बच्चों का पिता, मित्र, सहयोगी और पथ प्रदर्शक बन कर रहना चाहिए। बच्चों का स्वभाव अनुकरण करने वाला होता है अत: शिक्षक को इस बात का ध्यान रखना है कि उसके आचरण में शुचिता एवं पवित्रता हो।

शिक्षार्थी – शिक्षार्थी शिक्षण प्रक्रिया का केन्द्र है। शिक्षार्थी को अनुशासित रहना चाहिए। शिक्षार्थी को संयमी के साथ–साथ जिज्ञासु भी होना चाहिए।

विद्यालय – विद्यालयों के सम्बन्ध में गाँधी जी के विचार है कि विद्यालय ऐसी कर्मशालायें होनी चाहिए जहाँ शिक्षक सेवा भाव से पूर्व निष्ठा के साथ शिक्षण कार्य करें और उनके तथा विद्यार्थियों के संयुक्त प्रयास से उनमें इतना उत्पादन कार्य हो कि वे आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर हों।

शिक्षा के अन्य पक्ष

जनशिक्षा – गाँधी जी के समय 13 प्रतिशत जनता ही साक्षर थी। जनता में जागरूकता और आत्म विश्वास की कमी थी। उनका कहना था कि जन शिक्षा दो रूपों में होगी एक तो बालकों को शिक्षित करना तथा प्रौढ़ों को शिक्षित करना ।

स्त्री शिक्षा – गाँधी जी स्त्री को ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना मानते थे। वह कहते थे स्त्री और पुरूष का कार्यक्षेत्र अलग अलग है किन्तु सांस्कृतिक आवश्यकताएँ समान होती हैं। दोनों को अपने–अपने विकास के अवसर मिलने चाहिए। स्त्रियों को गृह कार्य की भी शिक्षा दी जाए।

सह शिक्षा – गाँधी जी ने सहशिक्षा को स्वीकार किया है। प्राइमरी और उच्च शिक्षा में वह सह शिक्षा को स्वीकार करते हैं। किशोरावस्था में उचित नहीं समझते। सह शिक्षा में गाँधी जी सामाजिक वातावरण पर निर्भर करते हैं।

व्यवसायिक शिक्षा – गाँधी जी पुस्तक प्रधान सैद्धान्तिक शिक्षा का विरोध करते थे। क्रिया प्रधान व्यवहारिक शिक्षा पर बल देते थे। भारत कृषि और कुटीर धन्धों का देश है, इस लिए यहाँ बच्चों को कृषि, बागवानी और हस्त कौशल की शिक्षा दी जानी चाहिए। गाँधी जी के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था औद्योगिक केन्द्रों एवं व्यवसायिक केन्द्रों पर होनी चाहिए। उन्होंने वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा का समर्थन किया।

धर्म शिक्षा – गाँधी जी धार्मिक विचारधारा के व्यक्ति थे। विद्यालयों में किसी धर्म विशेष की शिक्षा देने के पक्ष में नहीं थे। भारत अनेक धर्मो का देश है। उन्हें डर था कि धर्म विशेष की शिक्षा देकर साम्प्रदायिक वैमनस्य उत्पन्न हो सकता है। मानव सेवा सबसे बड़ा धर्म है। बच्चों को मानव सेवा को धर्म समझ कर अपनाना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा – तत्कालीन शिक्षा ऐसी थी जो अंग्रेजी जानने वाला बाबू वर्ग तैयार करती थी तथा ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करती थी जो तन से भारतीय हो और मन से अंग्रेजी परस्त। स्वतन्त्रता की लड़ाई के साथ साथ गाँधी जी ने राष्ट्रीय शिक्षा की माँग रखी और उसकी रूपरेखा भी प्रस्तुत की बेसिक शिक्षा के रूप में ।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गाँधी जी के शैक्षिक दर्शन के बिन्दु आज भी प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। उनके शैक्षिक दर्शन में एक शिक्षा शास्त्री, दार्शनिक, समाजशास्त्री तथा राजनीतिज्ञ के विचारों का समन्वित रूप देखने को मिलता है। उन्होंने जन शिक्षा की बात कही। वास्तव में जहाँ लोकतंत्र हो वहाँ प्रत्येक देशवासी का शिक्षित होना अनिवार्य है। शिक्षित मनुष्य ही सही प्रतिनिधि और सही नेतृत्व का चुनाव कर सकेगा। जिस देश में विभिन्न धर्म, जाति समुदाय के लोग रहते हों वहाँ शिक्षा का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए। एक राष्ट्र भाषा होनी चाहिए। विविधता में एकता हमारी संस्कृति है। यह एकत्व हम राष्ट्रीय शिक्षा के माध्यम से ला पायेगें। अंग्रेजी के भाषायिक बोझ से गाँधी जी व्यथित थे। इसीलिए उन्होंने प्राथमिक स्तर तक मातृभाषा में शिक्षण करने का प्रस्ताव रखा। मातृभाषा में शिक्षण से बच्चे को अधिक और जल्द समझ में आता है। यह आज के लिए भी आवश्यक है। बालक को स्वावलम्बी बनाने के लिए उन्होंने कौशल आधारित शिक्षा पर बल दिया। सेकेन्डरी स्तर पर व्यवसायिक प्रशिक्षण की भी बात करी। यह आज भी हमारे लिए जरूरी है। गाँधी जी केवल सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करने से सन्तुष्ट नहीं थे। केवल पुस्तकीय ज्ञान से ज्ञान की सम्पूर्णता प्राप्त नहीं होती है। उनकी शिक्षा अनुभव केन्द्रित होती थी। इसीलिए शिक्षण विधियों में वह 'कर के सीखने' के सिद्धान्त को अपनाने को कहते है। कर के सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है। गाँधी जी यह चाहते थे कि भारतीय शिक्षा बालक को भारतीय बनाए। भारतीय बनाने से तात्पर्य यह है कि वह भारतीय परम्पराओं नीतियों और मूल्यों को जानने वाला हो। भारतीय बनाने का अर्थ संकीर्णता से नहीं है अपितु वह अन्तर्राष्ट्रीय पृष्ठभूमि में अपनी पहचान बना से। आज के सन्दर्भ में यह बहुत आवश्यक है।

गाँधी जी के दर्शन में धर्म से तात्पर्य आत्मबोध, सद्गुणों का विकास, कर्त्तव्य परायणता तथा नैतिक मूल्यों के विकास से है। वर्तमान समय में जब कि पाश्चात्य भौतिकतावादी संस्कृति अपने पंख फैला रही है, आर्थिक, सम्पन्नता ही हमारी श्रेष्ठता का आधार है। ऐसे समय में गाँधी जी की धार्मिक शिक्षा ही हमारा आध्यात्मिक विकास कर सकेगी। आज के भौतिकवादी समाज में मस्तिष्क की शांति और संतुलन की जरूरत है। गाँधी जी की धार्मिक शिक्षा यानि सद्गुणों का विकास ही उस समस्या का हल है।

शिक्षकों के लिए गाँधी जी के विचार थे कि वह छात्रों के मित्र व पथ प्रदर्शक बनें। वह उनके लिए रोल मॉडल हो। यह भी आज के युग में सार्थक सिद्ध होता है।

गाँधी जी के दर्शन में आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, प्रयोजन वाद सभी दृष्टिगत होते हैं। सबका सम्मिलित रूप ही गाँधीवाद है। यह गाँधीवादी शैक्षिक दर्शन वर्तमान समय की माँग है और प्रासंगिक भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्ता लक्ष्मी नारायण एवं मदन मोहन, महान भारतीय शिक्षा शास्त्री कैलाश प्रकाशन - 126-161
2. गुप्ता आर.पी. एवं राम शकल पाण्डेय, पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षा शास्त्री - 34-59
3. पाण्डेय राम शकल, विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री - 295-317
4. रमन बिहारी लाल, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय सिद्धान्त रस्तोगी पब्लिकेशन्स गंगोत्री, शिवा जी रोड -342 - 364

****

नागपुरी लोकगीतों में अलंकार

सुमन कुमार* डॉ. नाफर अली**

प्रस्तावना – सामान्यत: अलंकार शब्द का अर्थ 'आभूषण' है। आभूषण विभिन्न प्रकार के गहनों को कहा जाता है। जब आभूषण का धारण शरीर के अंगों में किया जाता है तो शरीर की शोभा में व्यापक वृद्धि होती है। रूप की सुन्दरता बढ़ जाती है, ठीक उसी प्रकार गीतों में, काव्यों में अलंकृत शब्द अर्थ के प्रयोग से काव्य की शोभा में वृद्धि होती हैं अलंकार काव्य के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं। इसकी सहयोग से यह अत्यन्त प्रभावशली एवं आकर्षक हो जाते हैं। कथन से अर्थ अभिव्यक्ति अधिक विशिष्ट हो जाते हैं जिसे काव्य की सौन्दर्य शोभा स्वत: अलंकृत हो जाते हैं।

नागपुरी लोकगीतों में शब्दों की चकाचौंध शिष्ट गीतों काव्यों जैसी नहीं है। चूँकि प्रदेश के ग्रामवासियों का पहनाव, वस्त्र, आभूषण, रहन-सहन, शहर या सभ्य समाज के तुलना में कम है। ग्राम्य क्षेत्रों में लोकगीतों का जन्म सहज रूपों में उस परिवेश के अनुरूप हुआ है। ग्राम्य जनजीवन अपनी प्रकृति के अनुसार उपलब्ध वस्त्र आभूषण व जीवन यापन करते हैं। सहज परिवेश प्रयुक्त आभूषणों के भाँति ही सहज बोलचाल भाषाओं में प्रयुक्त आभूषणों के भाँति ही सहज बोलचाल भाषाओं में प्रयुक्त गीत में रोचकतापूर्ण अलंकृत शब्द अर्थ से सहज ही रोचकता एवं मधुरता में चार चाँद लग जाते हैं। गीतों के अर्थ में नया मोड़ आ जाता है। जहाँ शब्द है वहाँ अर्थ भी है इसे कदापि अलग नहीं किया जा सकता है। जैसा शब्द होगा वैसा अर्थ भी होगा।

इसलिए शब्द शरीर है तो अर्थ उसका प्राण है। शब्द एक माध्यम है जिसके द्वारा अर्थ या भाव की प्रतीति होती है। उनके अभिन्न होने पर भी भिन्न प्रयोग होते हैं। अर्थात् शब्द कुछ और अर्थ कुछ ग्रहण किये जाते हैं। इस आधार पर उसका स्वरूप के अनुसार पृथक-पृथक व्यवहार होते हैं। इसे अन्वयव्यक्ति कहते हैं। अर्थात् आँसू को समुद्र, चरण को कमल, मुख को चाँद न रहने पर भी अन्वय से ग्रहण किये जाते हैं, यही व्यक्तिरेक है। शब्द अर्थ के मिलते-जुलते प्रतिती के आधार पर कुछ अचार्यो ने शब्दालंकार, अर्थालंकार एवं उभयालंकार के रूप में विभेद करते हैं। किन्तु शब्द एवं अर्थालंकार ही मुख्य है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के द्वारा संकलन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं और विद्वानों का भी मार्गदर्शन भी लिया गया है।

उद्देश्य – नागपुरी लोकगीतों में संजे-संवरे सभी प्रकार के अलंकार एक जैसे नहीं उपलब्ध है। ग्राम लोक के द्वारा साधारण शब्दों का गीतों में प्रयोग ही इसका आभूषण है। शब्द एवं अर्थ के आधार पर क्रमश: अध्ययन किया जा सकता है-

समाधान :-

शब्दाअलंकार – जिन शब्दों के माध्यम से काव्यों (गीत, कविता, महाकाव्य, खण्डकाव्य) को अलंकृत करते हैं। वे शब्द अलंकार कहलाते हैं। जब किसी काव्य में कोई विशेष शब्द रखा जाये तो उसमें सुन्दरता आ जाए, पर्यायवाची शब्द रखा जाय तो अर्थ में परिवर्तन या लुप्त हो जाए तो शब्दालंकार कहलाता है।

शब्दालंकार के प्रमुख रूप-अनुप्रास, यमक, श्लेष एवं वक्रोक्ति है।

अनुप्रास – जब समान वर्ण या शब्द को काव्य की सुन्दरता बढ़ाने के लिए किसी वर्ण की बार-बार आवृति हो तो वह अनुप्रास अलंकार कहलाता है। जब किसी विशेषण वर्ण की आवृति बार बार होता है तो वाक्य सुनने में सुन्दर लगता है।

अनुप्रास का शाब्दिक अर्थ है-अनु +प्रास में अनु = बारम्बार एवं प्रास = पास-पास रखना। काव्य में वर्णो या शब्दों का बार-बार पास-पास रखने को अनुप्रास कहते हैं।

इसे वर्ण एवं शब्द के आधार पर वर्णानुप्रास एवं शब्दानुप्रास में विभक्त करते हैं। वर्णना अनुप्रास के कई रूप नागपुरी लोकगीतों में मिलते हैं।

छेंकानुप्रास – काव्य की पंक्ति में प्रयुक्त व्यंजन स्वरूप एवं क्रम में कई व्यंजनों की एक ही बार आवृति हो वहाँ छेकानुप्रास अलंकार होता है। नागपुरी लोकगीतों में छेकानुप्रास के उदाहरण बिखरे पड़े हैं-

'काया काया काया काया, मांटी के छाया रे,
काया काया काया सालो नखे बिसुवास।
भाइ बंधु नाना नाती, चाइर दिना संग साथी
रसे रसे ओदे रे दुनियाँ माया छोड़े।
जनी छउवा अन धन, केऊ नहीं देवे काम,
धीरे धीरे ओदे रे दुनिया माया छोड़े।'[1]

यहाँ प्रथम पंक्ति में क, द्वितीय पंक्ति में न तृतीय पंक्ति में ध की लयात्मक आवृति से डमकच गीत का सौन्दर्य बढ़ गई है।

वृत्यानुप्रास अलंकार – जहाँ एक वर्ण या वर्ण समूह की एक या एक से अधिक बार आवृति होती हो, वहाँ वृत्यानुप्रास अलंकार होता है। अर्थात्-वृति के अनुसार एक वर्ण या अनेक वर्ण की आवृति एक से अधिक बार होती है-

'एक व्यंजन की एक बार आवृति-
प्रबल प्रताप ताप योग अवना,
काल कराल रूप धरी के चलना।

यहाँ 'प' की एक बार और 'क' की एक बार आवृति हुई है।

*शोधार्थी, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, रॉची विश्वविद्यालय, रॉची (झारखण्ड़) भारत
** सहायक प्राध्यापक, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, (नागपुरी), माण्डर महाविद्यालय, माण्डर, रॉची (झारखण्ड़) भारत

एक व्यंजन की अनेक बार आवृति–

कंचन काया काया काँच समान।

यहाँ 'क' की अनेक बार आवृति हुई है।

अनेक व्यंजन की अनेक बार स्वरूपतः आवृति–

कुहु–कुहु कोकिला सोर सुनाय,
दु:ख सहलो न जाय तनिक हँसलो न जाय।
दु:ख सहलो न जाय।

यहाँ 'क' और 'स' की आवृति अनेक बार हुआ है।

धम धम धमकत महमह महकत
जूही तो बेलिया सेज खाली रहलै सेथिया।

यहाँ ध, म, ह, क और त की स्वरूपतः क्रमशः आवृति हुई है।

एक अन्य उदाहरण– 'सड़क कर नली नली फूल फूले कली कली,
खोंसाय ले बंगालिन छोंड़ी एको कली फूल।'[2]

अनत्यानुप्रास – जिस काव्य या गीत के पंक्ति अन्त में शब्द वर्ण का तुक मिलती है, वहाँ पर अनत्यानुप्रास अलंकार होता है। नागपुरी लोकगीत में अनत्यानुप्रास अलंकार पाये जाते हैं– 'बाँस बुढा ना रे बँसवाइर बुढा ना,

गोइ केकर अंगना में भेइर बाजा ना ?
बाँस बुढा ना रे बँसवाइर बुढा ना,
गोइ फलना कर अंगना में भेइर बाजा ना।
सेइ सुनी बर बाबु गेलयँ पटना,
साइस लेगिन लाइन देलयँ सोने कंगना।'[3]

यहाँ 'ना' शब्द की आवृति गीत के अंत में हुआ है।

पुनरूक्ति प्रकाश अलंकार – जिस शब्द को काव्य या गीत में दुहराने से बिना अर्थ बदले गीत की रोचकता बढ़ती है, पुनरूक्ति अलंकार कहते हैं। नागपुरी में ऐसे गीत भरे पड़े हैं। यथा– 'ओदे–ओदे रे, भदली के के मारे,

दिने सूते राति चरे जाय,
भदली के के मारे।
डारी–डारी भूलबे, कंडरी मति भांगबे,
भदली के के मारे।
उड़ि बइठे लवंग के डारि,
भदली के के मारे।'[4]

इस गीत में ओदे, ओदे, डारी, डारी शब्द वर्ण की आवृति हुई है।

यमक – 'भिन्न भिन्न अर्थो को व्यक्त करने वाले समान शब्दों या वाक्यों की क्रमशः आवृति को यमक अलंकार कहते हैं।'[5]

नागपुरी लोकगीतों में यमक अलंकार के उदाहरण पाये जाते हैं–

'घन गरजत घन सन–सन पवन चले
छन–छन बिजूरी चमके।'

यहाँ की पंक्ति में घन शब्द की आवृति क्रमशः हुई है, जिसका अर्थ भिन्न–भिन्न है। प्रथम घन का अर्थ बादल है एवं दूसरा घन का अर्थ घनघोर भयकंर से है। इस प्रकार यहाँ यमक अलंकार है।

वीप्सा अलंकार – हर्ष, आतुरता, घबराहट, आश्चर्य घृणा, घबराहट आदि मनोवेगों की बहुलता प्रकट करने के लिए शब्द को दुहराना वीप्सा अलंकार कहते हैं।

नागपुरी लोकगीतों में वीप्सा अलंकार के उदाहरण–

'कुन्दा नगर कुन्दा नगर कुन्दा ससुराइर रे,
कुन्दा नगर बिछिया बहुत रे।'

(यहाँ पर कुन्दा नगर शब्द की आवृति से रोचकता में वृद्धि हुई है।)

'एसाजइन साजइन, ए साजइन साजइन
ए साजइन कति खने आबयँ पिया
बोलबयँ मधुरी बतिया गोइ साजइन।'

(यहाँ पर गीत की प्रभावोत्पादकता के लिए शब्दों को अधिक बार दुहराया गया है।)

'नदिया किनारे तीरे उड़त बगुला रे,
उड़ते बगुला के मछरी लोकी खाय, पंडित जानी,
एतइ अचरज बात पंडित जानी।'

अभी तक यही देखा गया है कि मछली को बगुला पकड़ कर खाता है, लेकिन इस गीत में कहा गया है कि बगुला को मछली खाती है–यह आश्चर्य की बात है, अतः वीप्सा अलंकार है।

'वीप्सा के कारण गीतों में सौन्दर्य आ जाता है। यही कारण है कि न केवल नागपुरी लोकगीत वरन् सभी भाषाओं के लोकगीतों में वीप्सा अलंकार को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।'[6]

अर्थालंकार – जहाँ अर्थ के माध्यम से काव्य, गीत आदि में चमत्कार हो वहाँ अर्थालंकार होता है। शब्द अलंकार काव्य को शब्दों से सजाती है तो अर्थ अलंकार काव्य में सुन्दरता प्रभावोत्पादकता बढ़ाते हैं। इसका क्षेत्र काफी व्यापक है। नागपुरी लोकगीतों में अर्थालंकारों की कमी नहीं है। यह माला स्वरूप जुड़े हुए हैं। अलंकारों से अलंकृत गीतों का अध्ययन ही इसकी प्रमाणिकता स्वतः निखार कर लाते हैं, इसे क्रमशः इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है–

उपमा अलंकार – उपमा शब्द का शाब्दिक अर्थ समानता या तुलना करना। जब किसी व्यक्ति या वस्तु की तुलना दूसरे व्यक्ति या वस्तु के समकक्ष रख कर की जाय तो वहाँ उपमा अलंकार होता है।

नागपुरी के जिन लोकगीत में जइसने, तइसने, इसने, सेहे लखे, वहेतरी, आदि शब्द गीत या काव्य में अलंकृत हो तो उपमा अलंकार समझा जा सकता है–

'जइसने दह का पोठी मछइर झलके,
तइसने बेटी तोरा सोभे रे आइयो।
ना सोभे आइया घरे, ना सोभे बबा घरे,
सोभे ससुरा घरे रे सोभे ससुरा घरे।'[7]

यहाँ पर पोठी उपमेय है और बेटी उपमान है। जइसने एवं तइसने वाचक शब्द है।

रूपक अलंकार – 'जब एक वस्तु पर दूसरी वस्तु का आरोप किया, अर्थात् जब एक वस्तु को दूसरी वस्तु का रूप दिया जाय तो रूपक अलंकार होता है।'[8]

नागपुरी प्रदेश में करमा एवं जितिया के अवसर पर महिलाएँ करमा या पीपल पूजा की डाली पकड़ कर एक–दूसरे से पूछती है–

'झूर धइर के का पाली
आपन जितिया, जगदीश इसन बेटा।'[9]

यहाँ जगदीश बेटा (जगत का रखवाला करनेवाला) कहा गया है। अतः रूपक अलंकार है।

उत्प्रेक्षा अलंकार – जब एक वस्तु में दूसरी वस्तु की संभावना की जाय अर्थात् एक वस्तु को दूसरी वस्तु मान लिया जाए तो वह उत्प्रेक्षा अलंकार कहलाता है। अर्थात्–उपमेय में उपमान की संभावना उत्प्रेक्षा अलंकार है–

'सावंली सुन्दरी नारी
खोपा बांधलइ ललकारी,

खोपा तोर दिसइ दइया,
सरफेनी फेना जोरल।'[10]

यहाँ सांवली युवती के जूड़े में सर्प के फन की उत्प्रेक्षा की गई है। अत: उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भ्रांतिमान अलंकार – जब सादृश्य के कारण उपमेय में उपमान का भ्रम हो अर्थात् उपमेय का मूल से उपमान समझ लिया जाय, तब भ्रांतिमान अलंकार होता हैं नागपुरी लोकगीतों में भ्रांतिमान अलंकार के उदाहरण मिलते हैं–

'धधकी पलास फूले बन दिसे लाले लाल,
पिया निर बुधिया रे समझइ अगिया।'[11]

निष्कर्ष – यहाँ पलास के फूल से आग की भ्रांति हुई है। जंगलों में जब पलास के फूल खिलते हैं तो बहुत लाल होते हैं। दूर से आग जैसा लगता है। अत: यहाँ भ्रांतिमान अलंकार है।

विभावना अलंकार – जब कारण के न होने पर भी कार्य का न होना वर्णित होने पर विभावना अलंकार होता है।

यथा– 'हायरे हाय दइया प्रभु के महिमा भारी,
कान बिनु सुनइ दइया, गोड़ बिनु चलइ रे,
प्रभु के महिमा भारी।'[12]

यहाँ कान (कारण) के अभाव में सुनना (कार्य) कहा गया है। वैसे ही पैर के बिना चलना भी कारण के अभाव में कार्य का कथन है, अत: यहाँ विभावना अलंकार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बी.पी. केसरी : 'नागपुरी लोकगीत : वृहद् संग्रह', पृ.-18
2. बी.पी. केसरी : 'नागपुरी लोकगीत : वृहद् संग्रह', पृ.-05
3. वही पृ.-39
4. बी.पी. केसरी : 'नागपुरी लोकगीत : वृहद् संग्रह', पृ.-73
5. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी एवं मनहर गोपाल भार्गव, श्री राकेश : 'रस दोष छन्द अलंकार निरूपण', पृ.-93
6. डॉ. कलावती ओहदार : 'नागपुरी लोकगीत : साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन', पृ.-248-49
7. बी.पी. केसरी : 'नागपुरी लोकगीत : वृहद् संग्रह', पृ.-176
8. नरोतम दास स्वामी : 'अलंकार', पारिजात पृ.-28
9. कलावती ओहदार : 'नागपुरी लोकगीत : साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन', पृ.-250
10. वही पृ.-251
11. कलावती ओहदार : 'नागपुरी लोकगीत : साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन', पृ.-250
12. वही पृ.-251

****

सतत कृषि विकास में जैविक कृषि की भूमिका का अध्ययन

डॉ. सुरेश श्रवण पाटील*

शोध सारांश – भारत धीरे – धीरे किंतु लगातार जैविक कृषि की ओर बढ़ रहा है। सतत कृषि विकास में जैविक कृषि के योगदान की अपार संभावनाएँ हैं। ग्रामीण युवाओं के रोजगार के लिए एक महान अवसर जैविक उत्पादों, जैविक बाजारों, जैविक क्लीनिक, प्रसंस्करण और विपणन में मौजूद हैं। जैविक खेती में कृषकों और अन्य हितधारकों को कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है और इनको दूर करना भी महत्वपूर्ण है। वर्तमान परिस्थिति में ग्रामीण व्यक्ति कृषि कार्य में दिलचस्पी नहीं ले रहा है। वह शहरों में रोजगार तलाश रहा है, क्योंकि उन्हें कृषि कार्य करने में अधिक श्रम एवं पूँजी लगाना पड़ता है और लाभ कम प्राप्त होता है। यदि वर्तमान में हमारे कृषक जैविक खेती को अपनाते हैं तो इससे न केवल किसान को व्यक्तिगत रूप से फायदा होगा बल्कि सतत् कृषि विकास में भी उसकी भूमिका महत्वपूर्ण होगी।

शब्द कुंजी – कृषि विकास, जैविक कृषि, रोजगार के अवसर, ग्रामीण विकास।

प्रस्तावना – भारत जैसे विशाल देश में ग्रामीण विकास और कृषि का विकास एक सिक्के के दो पहलू हैं। क्योंकि आज भी यहाँ की आधी से ज्यादा आबादी गाँव में निवास करती है। देश के समुचित उत्थान के लिए सतत् कृषि विकास/ग्रामीण विकास आवश्यक है।भारत में प्राचीन समय से ही जैविक खेती की प्रणाली को अपनाया जा रहा है। इस प्रणाली से खेती करने से भूमि उर्वरक, खाद्य पदार्थों तथा अन्य पोषक तत्वों और पर्यावरण अनुकूल, फायदेमंद रोगाणुओं के साथ जैविक सामग्री का उपयोग करके, मिट्टी की उर्वरा शक्ति एवं उत्पादन क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। भारत में जैविक खेती के उत्पादन के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम की शुरूआत सन् 2000 में की गई और इस कार्यक्रम के बाद से जैविक खेती का विकास तेजी से बढ़ रहा है।एक तरफ तो ग्रामीण खुशहाली एवं विकास जरूरी है तो दूसरी तरफ इस सतत विकास को बनाए रखने के लिए सीमित प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग एवं संरक्षण भी आवश्यक है। यदि ये प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो गए अथवा उनका अधिक दोहन हुआ तो विश्व खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है। इस लिए जैविक कृषि का विकास अत्यंत आवश्यक है।

प्रमुख प्राकृतिक संसाधन हैं, भूमि, जल, वायु, वन और वन्यजीव, आदि। विभिन्न मानव सभ्यताओं के विकास में उपरोक्त प्राकृतिक संसाधनों का विशेष योगदान रहा है। इन संसाधनों के समुचित उपयोग से मानव सभ्यताएँ विकसित होती रही हैं और इनके दुरूपयोग से नष्ट भी हुई हैं। वर्तमान में विश्व के कुछ देशों जैसे चीन और भारत आदि में मानव और पशु जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ी है जिसके कारण मानव आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया गया है। प्राकृतिक संसाधनों के कृषि एवं अन्य क्षेत्रों में अत्यधिक दोहन से अनेक समस्याओं का जन्म हुआ है। कुछ क्षेत्रों अथवा दशाओं में कृषि उत्पादन के अंतर्गत रासायनिक कीटनाशकों का अविवेकपूर्ण एवं अंधाधुध प्रयोग किया गया है जिसके अनेक दुष्परिणाम देखने को मिल रहे हैं, इस लिए जैविक खेती को बढ़ावा देना आज की आवश्यकता है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य:–

1. जैविक खेती की स्थिति एवं कृषकों में जागरूकता का अध्ययन।
2. जैविक खेती से संबंधित समूह सम्पर्क की स्थिति एवं किसानों को संस्थान/उद्योग से मिलने वाली जानकारी का अध्ययन।
3. जैविक खेती के विकास से सतत् कृषि विकास का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन विधि एवं अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र नाशिक जिले में जैविक खेती करने वाले 25 कृषक परिवारों पर केंद्रित है। अध्ययन के विधि के रूप में प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया है। तथा 25 कृषक परिवारों का चुनाव निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया है। अध्ययन हेतु प्राथमिक समंको का संकलन किया गया है।प्राथमिक समंक संकलन हेतु जिस अनुसूची का प्रयोग किया गया है, उसके आधार पर अनुसूची से प्राप्त सूचनाओं का वर्गीकरण एवं सारणीयन करने के पश्चात् अग्रलिखित तालिकाओं का विश्लेषण किया गया है।

सारणी क्रमांक : 01 – जैविक खेती करने की स्थिति

क्र.	जैविक खेती वर्षों में	संख्या	प्रतिशत
1.	01 – 02 वर्ष	10	40
2.	03 – 05 वर्ष	8	32
3.	06 – 10 वर्ष	4	16
4.	10 से अधिक वर्ष	3	12
	कुल योग	**25**	**100.00**

चित्र क्रमांक : 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 01 में जैविक खेती करने के वर्षों को दर्शाया गया है। जिससे स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 40 प्रतिशत चयनित सूचनादाताओं द्वारा एक वर्ष से लेकर दो वर्षों तक जैविक खेती करने वालों की संख्या सर्वाधिक देखी गई वहीं 23 प्रतिशत चयनित कृषकों द्वारा जैविक खेती का प्रयोग 03 से 05 वर्ष के मध्य पाया गया इसी प्रकार 06 से 10 वर्षों से जैविक खेती करने वाले कृषकों की संख्या 16 प्रतिशत देखी गई वहीं 12 वर्ष से अधिक समय से

* एसोसिएट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र) क.के.ह. आबड कला श्री.मो. गि. लोढ़ा वाणिज्य एवं श्री.पी.एच. जैन विज्ञान महाविद्यालय, चांदवड, जिला – नाशिक (महा.) भारत

जैविक खेती करने वालों की संख्या सबसे कम 1.5 प्रतिशत रही है।

अत: कहा जा सकता है कि नाशिक क्षेत्र में जैविक खेती करने वाले चयनित कृषकों में जैविक खेती के प्रति जानकारी का अभाव रहा है। चूँकि हरित क्रांति के प्रभाव के परिणामस्वरूप रासायनिक खादों द्वारा उत्पादन में हुई वृद्धि ने जैविक खेती के प्रति कृषकों की नकारात्मक सोच को विकसित किया यही कारण है कि 01 से 02 वर्ष व 03 से 05 वर्षों के अंतराल में ही हमें जैविक कृषि करने वालों की संख्या अधिक दिखाई देती है। अध्ययन वर्ष 2017-19 में जैविक खेती करने वालों की संख्या सर्वाधिक देखी जा सकती है जैसे-जैसे हम पिछले वर्षों की ओर जाते हैं हमें जैविक खेती करने वालों की संख्या में कमी दिखाई देती है।

सारणी क्रमांक : 02 - जैविक खेती हेतु सलाह एवं स्वत: प्रेरित होने की स्थिति

क्र.	अभिमत	संख्या	प्रतिशत
1.	जैविक खेती करने की सलाह प्राप्त हुई	9	36
2.	स्वत: ही अपने अनुभवों एवं प्रयासों द्वारा	7	28
3.	रासायनिक कृषि से होने वाले नुकसान के परिणामस्वरूप	6	24
4.	निकट भविष्य में जैविक खेती के महत्व को देखते हुए	3	12
	कुल योग	**25**	**100.00**

चित्र क्रमांक : 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 02 में यह जानने का प्रयास किया गया है कि चयनित सूचनादाताओं द्वारा जैविक खेती का प्रारंभ किसी की सलाह पर या अपने स्वयं के अनुभवों द्वारा जैविक खेती के महत्व को देखते हुए किया गया। अध्ययन क्षेत्र में चयनित 36 प्रतिशत सूचनादाताओं ने रासायनिक कृषि से होने वाले नुकसानों के परिणामस्वरूप जैविक खेती करने की प्रबल इच्छा शक्ति दर्शायी 28 प्रतिशत ने स्वत: ही अपने अनुभवों व प्रयासों के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि रासायनिक कृषि की तुलना में जैविक कृषि अधिक श्रेष्ठ है। 24 प्रतिशत ने निकट भविष्य में जैविक खेती के महत्व को देखते हुए जैविक खेती करने का निश्चय किया। तथा 12 प्रतिशत सूचनादाताओं द्वारा दूसरों की सलाह के आधार पर जैविक खेती करना प्रारंभ की। अत: वर्तमान समय में किसानों द्वारा रासायनिक कृषि के दुष्परिणामों से त्रस्त होने के कारण स्वयं की प्रेरणा, अनुभवों एवं परामर्श के आधार पर निकट भविष्य में जैविक कृषि से होने वाले लाभों को ध्यान में रखते हुए जैविक खेती करने की बात को स्वीकार किया।

सारणी क्रमांक : 03 - सम्पूर्ण भूमि पर जैविक खेती करने की स्थिति

क्र.	अभिमत	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	9	36
2.	नहीं	16	64
	कुल योग	**25**	**100.00**

चित्र क्रमांक : 03

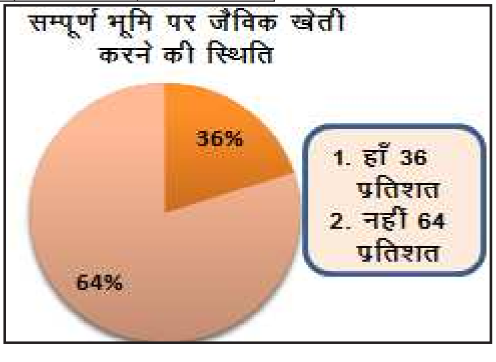

सारणी क्रमांक 03 में सूचनादाताओं द्वारा उनकी कितनी भूमि पर वे जैविक खेती करते हैं कि जानकारी एकत्रित की गई है। अध्ययन में पाया गया कि चयनित कृषकों में 64 प्रतिशत कृषक जो वर्तमान समय में जैविक खेती कर रहे हैं। वे अपनी सम्पूर्ण भूमि पर जैविक खेती नहीं करते हैं अपितु उसमें से कुछ भूमि पर ही अभी वह जैविक खेती कर रहे हैं। इसके अलावा 36 प्रतिशत चयनित सूचनादाता ऐसे हैं जो अपनी सम्पूर्ण भूमि पर जैविक खेती करते पाए गए हैं।

अध्ययन क्षेत्र में पाया गया कि जैविक कृषि के प्रति ज्यादा जागरूकता न होने की स्थिति में प्राय: कृषकों द्वारा एक उत्तम विकल्प के रूप में जैविक खेती का प्रयोग किया जा रहा है। जैसे - जैसे लोगों का रूझान जैविक उत्पादों के प्रति बढ़ेगा तथा जैविक कृषि से जुड़ी हुई समस्याओं का समाधान सुलझता जायेगा वैसे - वैसे जैविक खेती करने वाले कृषकों की संख्या एवं उसके क्षेत्रफल में वृद्धि होती जयेगी।

सारणी क्रमांक: 04 - जैविक खेती की जानकारी मिलने की स्थिति

क्र.	संस्थान/उद्योग का नाम	संख्या	प्रतिशत
1.	कृषि विभाग से	10	40
2.	व्यापारी/उद्योगों से	3	12
3.	स्वसहायता समूह से	8	32
4.	अन्य स्त्रोत	4	16
	कुल योग	**25**	**100.00**

चित्र क्रमांक : 04

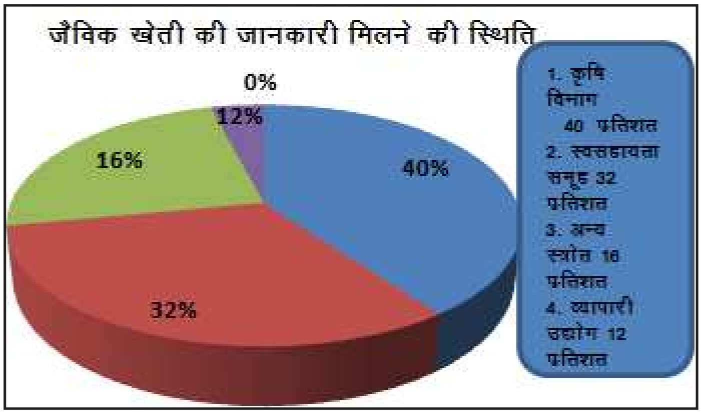

सारणी क्रमांक 04 में जैविक खेती से संबंधित जानकारी प्राप्त करने व जानकारी मिलने के स्रोतों का उल्लेख किया गया है। जिसमें उत्तरदाता कृषकों के द्वारा पाया गया है कि सर्वाधिक चयनित कृषकों में 40 प्रतिशत कृषकों के लिए जैविक खेती की जानकारियों का प्रमुख स्रोत शासन प्रशासन व कृषि विभाग है। इन्हे जैविक खेती से संबंधित समय - समय पर अधिक से अधिक महत्वपूर्ण जानकारी सरलता से मिल जाती है। इसके बाद जैविक खेती से संबंधित जानकारी प्राप्त करने का दूसरा प्रमुख स्रोत स्वसहायता समूह पाया गया है। सूचनादाताओं के अनुसार 32 प्रतिशत जैविक कृषक जैविक खेती की जानकारी स्वसहायता समूह से प्राप्त करते है। वहीं अन्य स्त्रोतों से जानकारी प्राप्त करने वाले 16 प्रतिशत सूचनादाता देखे गये जिन्होने अपने गाँव के कृषक मित्र एवं आस पड़ोस के परिचितों, सम्बंधियों आदि से जैविक खेती के संबंध में जानकारी प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार व्यापारियों एवं उद्योगों से जुड़े व संबंधित लोगों के माध्यम से जानकारी प्राप्त करने वाले 12 प्रतिशत सबसे कम कृषक उत्तरदाता देखे गये। इस प्रकार से कृषक विभिन्न स्रोतों से जानकारी प्राप्त करके देश में जैविक खेती करके गुणवत्तायुक्त

फल, सब्जियाँ, बीज एवं फसलें उगाकर स्वास्थ्य वर्धक भोज्य पदार्थो को उपलब्ध कराते हैं।

सारणी क्रमांक : 05 – जैविक खेती से संबंधित समूह से सम्पर्क की स्थिति

क्र.	समूह से सम्पर्क	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	12	48
2.	नहीं	13	52
	कुल योग	**25**	**100.00**

चित्र क्रमांक : 05

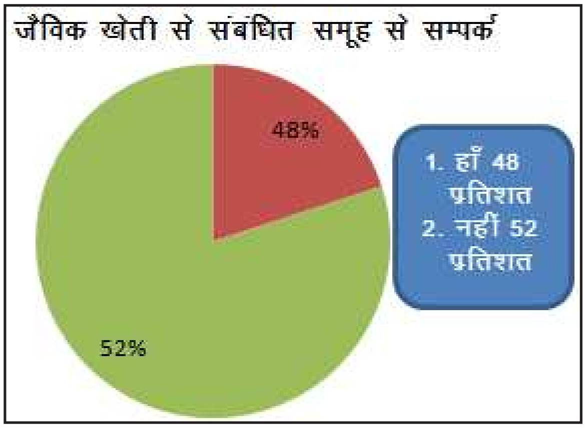

सारणी क्रमांक 05 में जैविक खेती से संबंधित किसी समूह (आत्मा समूह, जैविक मिशन, स्व–सहायता समूह) से सम्पर्क की स्थिति को दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र में चयनित जैविक कृषकों में 48 प्रतिशत कृषक जैविक खेती से संबंधित अन्य किसी समूह या कृषकों के सम्पर्क में रहते है या उनसे प्रेरणा अथवा दिशा निर्देश या जानकारी प्राप्त करते है ऐसे कृषक कम अनुभवी या जिन्होने अभी – अभी जैविक खेती करना प्रारंभ किया है जबकि 52 प्रतिशत ऐसे कृषक देखे गये हैं जो काफी अनुभवी थे और जो बहुत समय से जैविक खेती करते आये हैं एवं उनसे लाभान्वित भी हुए हैं। ये कृषक अन्य समूहों पर निर्भर नहीं होते और न ही इन्हें अन्य व्यक्तियों से प्रशिक्षण/परामर्श/सुझाव आदि की समस्या नहीं होती वर्षो के अनुभव द्वारा ये स्वयं ही इतने दक्ष हो गये हैं कि ये ही प्राय: अन्य लोगों को जैविक खेती करने में सहयोग एवं प्रशिक्षण प्रदान करते है।प्राय: कृषकों द्वारा जैविक खेती के सन्दर्भ में प्रशिक्षण एवं परामर्श लेने में किसी विशेष संस्था की सहायता न लेते हुए उन कृषकों से सम्पर्क करते हैं जो बहुत समय से जैविक खेती करते रहे है एवं उससे अधिक लाभ अर्जित करते आये है।

तथ्यों का विश्लेषण – अध्ययन में पाया गया कि जैविक खेती करने वाले कृषकों में सर्वाधिक सूचनादाता एक से दो वर्षो से जैविक खेती कर रहे हैं। और स्वत: प्रेरित होकर जैविक खेती करना प्रारंभ किये है चयनित सूचनादाताओं में अधिकांशत: किसान अपनी सम्पूर्ण भूमि में से कुछ ही भूमि पर जैविक खेती कर रहे हैं। जिसका कारण जैविक खेती से उत्पादित फसल का उचित मूल्य न मिलना, खाद, बीज का अभाव, जैविक बाजार का अभाव, जानकारी का अभाव, आदि तथ्य शामिल हैं।

निष्कर्ष – अत: निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि **नाशिक** क्षेत्र में चयनित कृषकों द्वारा जैविक खेती के प्रति जानकारी का अभाव पाया गया है। चूँकि हरित क्रांति के प्रभाव के परिणामस्वरूप रासायनिक खादों द्वारा उत्पादन में हुई वृद्धि ने कृषकों की नकारात्मक सोच को विकसित किया है। इस लिए जैविक खेती करने वालों कृषकों में सर्वाधिक एक से दो तथा तीन से पाँच वर्षो से ही खेती कर रहे हैं। तत्पश्चात वर्तमान समय में किसानों द्वारा रासायनिक कृषि के दुष्परिणामों से त्रस्त होने के कारण स्वयं की लगन, साहस, अनुभवों एवं परामर्श के आधार पर निकट भविष्य में जैविक खेती से होने वाले लाभों को ध्यान में रखते हुए जैविक खेती की जा रही है। अध्ययन के दौरान पाया गया कि हाल ही के दो तीन वर्षो में जैविक खेती का प्रकोप बढ़ता ही जा रहा है इसका कारण मृदा की घटती उर्वरता, पोषक तत्वों का अभाव, कम जोत भूमि पर अधिक पूँजी का लगना, रासायनिक खादों व बीजों का मँहगा होना, पर्यावरण प्रभाव, गंभीर बीमारियों का बढ़नाआदि समस्याओं के चलते जैविक खेती ही एक ऐसा विकल्प है जो सतत कृषि विकास को निरंतरता प्रदान कर रही है।ग्रामीण कृषि को सतत विकास के मार्ग में पहुँचाने का कार्य जैविक खेती करके किया जा सकता है साथ ही मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण, जंगल जमीन, प्राकृतिक संसाधनों को दुरूपयोग होने से बचाया जा सकता है।

सुझाव:

1. कृषि का विकास करने के लिए ग्रामीण स्तर तक जैविक खाद, बीज की व्यवस्था कराने की आवश्यकता है। जिससे ग्रामीण कृषक भी इस सुविधा का लाभ लेकर अपने सम्पूर्ण भूमि पर जैविक खेती कर सके।
2. किसानों द्वारा जैविक खेती से उत्पादित फसल का उचित मूल्य मिलना चाहिए ताकि अधिक से अधिक कृषकों का रूझान जैविक खेती की ओर बढ़े।
3. कृषकों के लिए वर्तमान तकनीकी प्रशिक्षण की व्यवस्था उपलब्ध कराना चाहिए जिससे कि ग्रामीण कृषक आधुनिक पद्धति से जैविक खेती करके आर्थिक लाभ में वृद्धि कर सकें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Sarvesh Kumar1 S.R.K. Singh2 And R.C. Sharma3 (2014), Farmers Knowledge Levelon Organic Cultivation in Madhya Pradesh Indian Res. J. Ext. Edu. 14 (3), Page No.1-3
2. P K Sofia*, Rajendra Prasad & V K Vijay (2006), Organic farming¯#Tradition invented Centre or Rural Development and Technology, Indian Institute of Technology, Haus KhazNew Delhi 110 016 Indian Journal of Traditional Knowledge vol. 5(1), pp. 139-142 page no.1-4
3. Gopal Datt Bhatta (M Sc)1, Werner Doppler (Phd) and Krishna Bahadur Kc (Phd) (2009) Potentials Of Organic Agriculture In Nepal The Journal Of Agriculture and Environment Vol : 10, Jun. 2009 Page No. 1-3.
4. H. M. Chandrashekar (2010), Changing scenario of organic farming in India: An Overview International NGO Journal Vol. 5 (1), pp. 034-039. ISSN 1993–8225 © 2010 Academic Journals p.no.1-6
5. K. Guruswamy K. Balanaga Gurunathan, (2010),A Need for Organic Farming in Indian Journal of contemporary research in management January - March, 2010 page no.1-5
6. Ramesh, P., A.B.Singh, S.Ramana and N.R.Panwar.(2007). Feasibility of organic farming: A farmers Surveyin central Madhya Pradesh, Kurukshetra,

February 2007, 25-30.

7. Ramesh, P., Mohan Singh and A.Subba Rao. (2005) b. Organic farming: Its relevance to the Indian context, Current Science, 88 (4): 561-568.

8. Mohan Singh, (2003). Organic farming prospects in Indian agriculture. Souvenir of 68th Annual convention of Indian Soc. Soil Sci, CSAU&T., Kanpur, November 4-8, 2003, 52-60.

9. Chhonkar, P.K. 2003. Organic Farming: Science and Belief, Journal of the Indian Societyof Soil Science Vol.51 , No.4, pp.365-377.

10. L.R.Jackson and F.W. Rayns, (2002). Managing soil fertility in organic farming systems. Soil Use and Management, 18, 239-247.

चित्र क्रमांक : 01

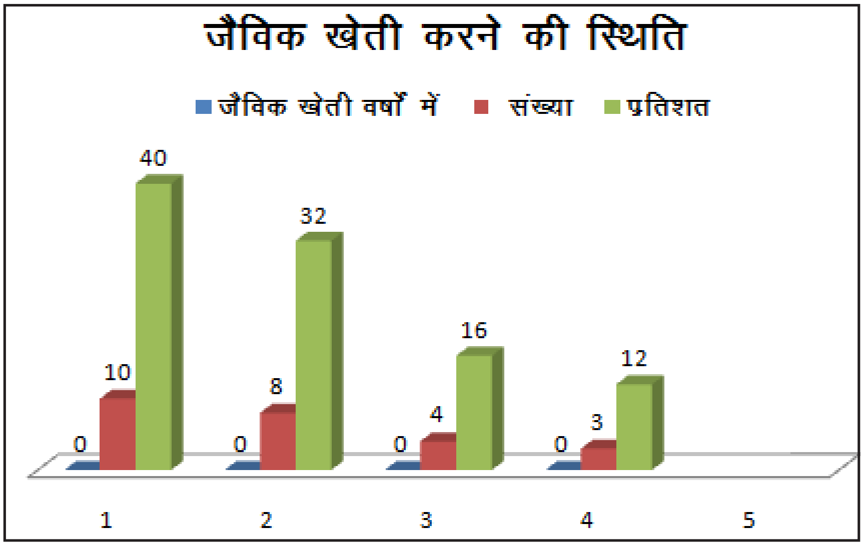

चित्र क्रमांक : 02

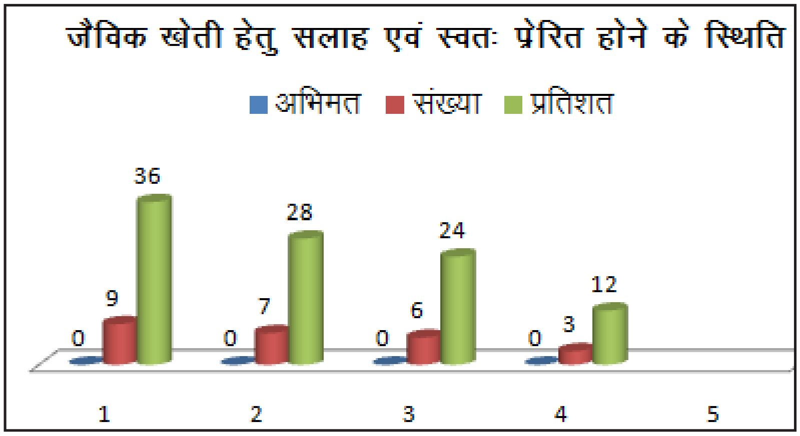

****

Internet and ICT Initiativeses in Rural Madhya Pradesh

Dr. Krishnakant Sharma*

Introduction - The villages imitate the Indian soul. More than 70% of the Indian population living in rural and rural India reflects the core of Indian culture and culture (Patil and Ambekar, 2006). They form an important foundation of the national economy - food, clothing, shelter etc. As well as the democratic system. They live close to nature and are therefore concerned and involved with its nature and preservation, as they are in the processes of indigenous knowledge, culture, art and languages. The progress of the nation depends on all round development. Unless development plans and programs are focused on rural people and giving them the same importance, being given to others and providing the necessary areas for people's participation in development, we will not be able to achieve the country's goals. It is not surprising, then, that India's holistic development as a State depends on the continuous and comprehensive development of rural India, improving the quality of life in all rural areas requires effective planning and a result based on the proper management and use of Information and Communication Technology.

Availability Of Power For Homework - The prevailing rural situation reflects unemployment, population migration, social and environmental degradation, at the household level; illiteracy and lack of health awareness that are inconsistent with agricultural, environmental, and general economic policy and a lack of proper land management planning. Many of these problems can only be solved through programs and programs supported by motivated local people, active and informed government organizations and influential NGOs. The parameters to be integrated for Rural Development are:

Population of rural population;

It is a social community;

1. The production, conservation and efficient use of human and natural resources;
2. Upkeep of home environment; equality and solidarity; agricultural ideas;
3. The state of the art of the local economy in their development;
4. Existing technology and the ability to develop traditional technologies without relying heavily on technology transfer;
5. Behavioral mindset ready for use in the concept of network communication.

Therefore Rural Development requires a huge amount of labor and resources and very few available resources can be enhanced by the efficient use of technology and information. It is also revealed that a very small portion of the budget is reaching the target population, due to flawed development policies aided by the implementation process. The current situation of Rural Development is too limited for the participation of information professionals, and this can be easily reversed by strengthening the existing public and rural system so that, there should be more integration of missing data into the current distribution model with the help of the implementation of Information and Communication Technology, Rural Development.

Technology to be integrated and strengthened especially with respect to dissemination of Rural Development information including radio, television and networking forums, computer and Information and Communication Technology, telephone services etc.

Requirements Of New ICT For Land Development

Areas where ICT can play a major role in improving rural quality are:

1. Decision-Making Process
2. Market Overview
3. Improve services to citizens
4. Empowering Citizens to Access Information and Information
5. Navigating previously Reduced Groups
6. Creating a Job.

ICT Initiativeses In Madhya Pradesh

1. MAP_IT - MAP_IT is a Governmental society set up to promote the growth of Information Technology (IT) in Madhya Pradesh and implement its IT policy.

2. M- Reign - M-Governance is the use of mobile or wireless to enhance Governance and information services "anytime, anywhere". M-Governance is not an e-Governance site, rather it is an eGovernance. m-Governance takes the electronic resources and makes them available through mobile technology using mobile devices.

3. Office - E-Office describes the software and processes used to manage the workflow and to capture, store, and control the organization's content in a comprehensive way.

*Director, Shriji Takniki Evam Vanijyik Prashikshan Sansthan, Ujjain (M.P.) INDIA

E-Office assists in managing content relevant to organizational processes and compliance

4. Member Services IT Capacity Building Program - To promote government department through various IT enabling programs.

The initial aim of the proposal / DPR is to secure funding for Capex and Opex for 3 years under the Capacity Building NeGP fund to establish 15 IT Capacity Building MPs. This can be extended to all 50 states in the next phase.

5. Virtual Classes - The government of Madhya Pradesh has decided to make classes available for difficult subjects such as Maths, English, Science, etc. Classes 9thto 12th, identifying one high school for each 313 block. It is suggested that senior government teachers conduct these classes, so that students from across the State can earn their living. This will increase the achievement of government students.

Students and teachers of classes 9thto 12thof have chosen high schools in 313 state institutions.

6. in the District - The e-District has been considered by the Government of Madhya Pradesh (GoMP) as an automation of workflow and internal administrative processes of the District Administration for the purpose of seamless integration of various departments to provide services to the people. The project is of critical importance to the Government as it will assist in the development of an electronic circuit management system and assist in the provision of efficient departmental services through Community Service Centers (CSCs), LokSewa Kendra, MP-Online and Internet Centers, which may be the first priority channels as proposed project. The eDistrele Project is implemented under the framework of the Public Service Guarantee Act.

7. Madhya Pradesh State Service Delivery Gateway (SSDG) / State Portal - The project is designed to achieve the vision of providing convenient and convenient services to citizens with remote access through the common Community Service Centers (CSCs) and empower the State Portal by making important parts of the Provincial Portal viz. SSDG, electronic form, operating system and infrastructure.

8. in Treasure - The Integrated Treasylvania Computerization Project (ITCP) is a major E-Governance program by the Government of Madhya Pradesh. While its installation extends across the country (229 locations), using 53 regional gems, no less than 159 gems etc., staffed by nearly eight hundred artisans and officials from all State Department departments, the area provided seems a great help improving the financial management of the State. The Budget Control Program with the forced transfer of budget allocations by the DTA server resulted in the complete stopping of illegal allocations / redistribution / deductions from the funds. Up-to-date information on smart data and departmental revenue and spending is now available online and the department can take corrective action on time. Of all the debt transferred to the treasury, the system is not only tracked, but its status is available on the web at the DDO's, thus bringing the entire system to fruition. With over 50% of the state budget being spent on salaries and pensions, the ITCP has put special provisions on them. It is now possible to prepare a payroll of 5.05lakhs of employees and 2,5lakh pension payout statements for personal savings as detailed details of all workers and pensioners are provided in the program.

9. World Recordings - In an agricultural economy, land-use records and their use are very important. However, most of these records are legacy data. Usually, restoring a particular record requires the landowner to start from pillar to post and spend valuable time and money on work that shouldn't be too difficult. Madhya Pradesh government Bhu-Abhilekh has come as a god to land owners. The state of Madhya Pradesh has prepared the largest database of World records in the country. In the province of M.P. World Records of all income villages used, i.e. 100% of the country's database records are converted into electronic form. Computerized world records are changed every week by default format. The 30 million number of Khasra (Plot / Survey) numbers involving eleven million Landowners are made up of computers. Bud-Abhikh is a G2C (Government to Consumer) and G2G (Government to Government) application software used by the Office of the Commissioner, Land Records and Settlement, Treasury Department of the Madhya Pradesh government. Bhu-Abkhil has a computer database containing computers that store sensitive and intelligent information about the world, crops, income, irrigation, demand, collection, land type, rent and more. This data can be retrieved, changed and updated. The system also allows for periodic reports to be released and given to landowners including two key documents Khasra - the Record of Rights (ROR) - and Khatauni.

10. in Tendering - Department of IT, Govt. of the MP using the e-Tendering system of all Government Departments and State PSUs in Parliament. The project is started on a BOOT model for a period of five years at no cost to the Government. The purpose of this ambitious e-Governance project is to bring transparency to the procurement process and to provide time and cost benefits. The traditional way of making tenders has problems with procurement departments. The sheer volume of papers involved was not only difficult to manage but also resulted in high levels of management. Collaboration between contractors seeking contractors leaves departments with far fewer options than existing contractors. At present the project has completed over 5 years of its life. It is an interesting matter to say, the application to date is processing more than 20,000 tenders online with a combined value of approxRs. 36,000 crores employing around 10,000 users. Currently there are 67 GoMP departments / agencies that use the e-Procurement online portal. Now the IT department plans to move to the next level from Tresering to eProcurement, which will be the culmination of completing the solution for all available procurement.

11. Sales Tax - The Commissioner of Sales Tax (CCT), Madhya Pradesh is the largest receiving MP Government with 5 offices, 15 constituency offices, 80 constituency offices and 32 polling stations distributed over the state for managing tax collection activities to Government. The electronic use of the Commercial Tax Department improved service levels and provided transparent, immediate and effective services to taxpayers and citizens. The project has successfully transformed the key processes that lead to improving the delivery of e-Services including e-Registry application, e-Return, downloading official forms and capabilities built up among all stakeholders to deliver better services. The web portal and application modules that were successfully launched under the project are, Registration, Recovery, Tax Accounting System, Industrial Sector Plan, Legal & Legal System, Emphasis, Evaluation, Luxury Tax and Professional Technologies. There has been a comment contribution for this project to improve tax collection from Rs. 9,416 crores in 2009 to Rs. 12, 342 crores in 2010-11.

12. GeoSearch (Geomatics-based application in MP) Geosearch is a web application developed and operated by the Department of Rural Development, GoMP.

a) Its powerful search engine intensifies the process of locating any village on a map and its profile with one click.
b) Data protection available is consistent with the GoI Map Restriction Policy.
c) This new approach is holding back the reconstruction of local data, its unwanted and its inconsistencies.
d) There is a repository of important local resources (rail, forest, river etc.) that enhance analytical capacity.
e) Various Govt. departments (Energy, Food and Public Utilities, Agriculture, Health, Education, Construction, Forestry, PWD, Disaster Management, Planning, and Railway etc.), District Collectors, organization manager Zila Panchayat and other regional authorities are also benefiting.

13. GeoForest - The Geo Forest project is being initiated by the Madhya Pradesh Forest Department, GoMP.

a) With the creation of a Geo-Database, GeoForest facilitates forest management in stock map management, analysis and analysis of forest resources, review and implementation of an effective plan, possible identification of forest planning and management areas and steps to be taken and the preparation of forest atlas repairs. This can help to achieve the desired transparency and ease of access to the planning process but also facilitates an effective and efficient forest management system due to its scientific design and open design.
b) Transforming forest features in a digital format ensures availability of forest stock maps in the standard format in the future and map updates have become much easier.
c) Clear clearing of forest land and its availability in digital form are useful for various land use planning and planning processes and to resolve land disputes.
d) The GIS-based forest planning tool has enabled a holistic view of the whole forest to the level of architects and decision-makers. The location of the top layers of different forest layers (forest type, site quality, Age etc.) enables identification of forest pathways and the selection of suitable sites for various development activities.
e) Identification of the created area provides an additional measure to implement forest management strategies and identify reasons for failure and take adequate steps to prevent them. This is useful for field monitoring, forest atlas repairs, work plans and stock mapping.

14. State Information Center - The State Information Center (SDC) is considered to be a shared, trusted and secure infrastructure sharing service center for the processing and management of State e-Governance applications and its departments / Departments. Currently, the IT center is in the configuration phase and is being developed by HCL Infosystems.

15. National Knowledge Network (NKN) - NKN is the world's largest multi-gigabit pan-India network for providing high speed unified high speed to all information-related institutions in the country. 1500+ centers to be connected; communication at 774 centers has already been provided.

a) As many as 10 (10) institutions such as medical colleges etc. They will probably be connected in the next few months.
b) For special interest groups, NKN enables Virtual Private Network (VPN)

N NKN provides international connectivity to its users in international collaborative research. Currently, NKN is connected to:

a) Trans Eurasia Information Network (TEIN3)
b) Similar links to several other research networks are in the pipeline.

16. Madhya Pradesh State Wide Area Network (MP SWAN) - For the financial and social benefits of information technology the State Wide Area Network (SWAN) has been proposed. This project is to provide voice, data and video communication services across the country and is an effective tool for carrying out project management tasks. SWAN must ensure the distribution of Government services and information anytime and anywhere.

Reliable network for direct and horizontal connectivity throughout the State and will reduce the cost of communication between government departments in various areas and provide secure network infrastructure to allow transmission of sensitive data transmission, payments etc. with enhanced risk management capabilities.

MPSWAN is a high-speed communication channel between G2G, G2C, G2B that provides over 2 Mbps hourly traffic between 50 circuits and 313 blocks / tehsils.

17. MP Online - The MPOnline project has seen the government's vision of providing government services at the door of citizens and businesses. In the short time since

its inception, the benefits of the project have deepened into cities and rural areas, and they provide a great deal of services.

The success of the project is largely evidenced by its within-state reach, the breadth of services offered, the confidence of Government departments on the site by providing services exclusively through MPOnline and the increasing number of citizens accessing the site.

MPOnline is a One Stop Window integrated with Government departments that offer a range of education, recruitment, online counseling, online exam testing and B2C services.

Conclusion - The rate of development of Rural Development in the province is immense, given the state's well-being both in adopting and implementing various ICT initiatives, with the exception of low income and major financial problems facing it. Information and Communication Technology (ICT) has the potential to achieve the dreams of a good government where citizen-government relations are effective and efficient, directed to concerns related to the economy and the public sector. Through ICT, one can bridge the gap between urban and rural India and improve the society as a whole.

Madhya Pradesh Information Technology's 2012 investment policy deals with public infrastructure through the State Wide Area Network, and has established rural connectivity by installing all the villages online in 2010. Vision commits itself to the continuation of investment-friendly policies with special emphasis on Business process outsourcing and IT. enabled the service sector and attracted significant investment. The vision is aimed at ICT for the development of basic sectors, such as education, health, agriculture and special development policy, the same field of service delivery, and special governance policy and computer department completion. The strategic plans will be developed by the Center for Governance, Transformation and Cyber Informatics. The establishment of strong links with the education, industry and government sectors through the IT Policy and promoting the use of hardware and computers valued at between Rs.5, 000 and 10,000 are just some of the activities on the anvil.

According to the National E-governance Action Plan the focus is on the management of roads such as agriculture, sales taxes, employment exchanges, Grama Panchayats, land records, municipalities, police, property registration and transportation and savings. Apart from this, Madhya Pradesh has provided a boon to the Ministry of Food and Public Property, General Education, Health and Social, Higher Education, Industry, Energy, Public Works, Organized Planning and Organized Social, Social and Water Resources. All departmental efforts aim to utilize existing and proposed core projects such as MP Online, Map_IT, Integrated Services and Secretarial Information Services to deliver administrative benefits to urban and rural populations in Madhya Pradesh.

References :-

1. The ALA Glossary of Library and Information Science. Ed. Heartsil Young. Chicago. American Library Association, 1983.
2. Faibisoff, Sylvia G. and Ely, Donald P. (1974). Information and Information needs.
3. Patil,DhanrajA. andAmbekar, Jayawant B.(2006). Information and communication technology(ICT) and ruraldevelopment:lessons from rural India, *IASSI quarterly.* 25(2),121.
4. Dhingra, Anjali and Misra, DC (2001). Rural informatics networkfor E-governance in rural development sector,New Delhi: National informatics centre.
5. Singh, Katar(1986). Rural development: principles, policies andmanagement. NewDelhi: Sage.18
6. Anuradha,P.(1996)"The role of rural community libraryin national development in India". Role of libraries in national development. R. D. Kumar,(Ed.). NewDelhi: Indian Library Association,146-153.
7. Dasgupta, Kalpana. Libraries and librarians in India on the thresholdof the3rdmillennium:challenges-http://ifla.org/IV/ifla66/papers/039-120e.htm
8. Jeevan,VK.(2006) Information oriented Rural Development , Computers at Libraries, New Delhi: EssEss, 196-216.
9. Unnikrishnan, P V. and Sreedharan, E M. Information communication technologies; towards an alternative policy framework for implementation.
10. http://www.mpinfo.org/new/downloads/information communicationtechnologies.pdf
11. Amardeepand Ansari, M A. (2004). Communication technologies and information support for development in India.Kiran Prasad,(Ed) Information and communication technologies:recasting development.NewDelhi: BR,83-112
12. Kaul, H K. and Patil, S K.(2005). Library and information networking: NACLIN.New Delhi:DELNET,90-104.
13. Prasad, Kiran(2004). Information and communication technology for development in India; rethinking media policy and research. Information and communication technology; recasting development .NewDelhi: BR,3-48.
14. Pawar, B V., Sharma, A.K., Mahajan, K. B. And Bhavasar(2004) Application of Information Technology in governance,tourism, learning and agricultural science. NewDelhi: BR, 513-520.
15. Raman Nair, R. (2003). Information technology for participatory development. New Delhi: Centre for informatics research and development,16.
16. Pawar, B V., Sharma, A.K., Mahajan, K. B. And Bhavasar (2004). Application of Information Technology in governance, tourism, learningandagricultural science. NewDelhi: BR, 513-520.
17. http://www.iimahd.ernet.in/egov/ifip/ dec2002/article2.htm
18. Veeranjaneyulu,K.(2004). Community information services for farmers. Information, communication, li-

brary and community development.BR:NewDelhi, 393-397.

19. Munshi, Amitha and Rajyalakshmi, D. (2004). CIS and empowerment of women in 21st century. Information, communication, library andcommunitydevelopment, 523-535.
20. Kawatra,P.S.(2004). Socio-economic issues and the empowerment of women in India. Information, communication, library andcommunity development.563-582.
21. http://www.mp.gov.in/govinstitutions/youth/about.htm
22. Pawar, B V., Sharma, A.K., Mahajan, K. B. And Bhavasar(2004). Application of information technology in governance, tourism, learning and agricultural science. Information,communication,library and community development.B.Ramesh Babuand S.Gopalakrishan. (Ed.) NewDelhi: B R, 513-520.
23. www.ssa.mp.gov.in
24. Mishra,Rabinarayan.(2004).Electronic communicationstream: an effectual and resourceful means of communiqué. Information, communication, library and community development. B. Ramesh Babuand S.Gopalakrishan (Ed). NewDelhi: BR, 75-84.
25. Amardeepand Ansari, M A. (2004). Communication technologies and information support for development in India. KiranPrasad, (Ed.) Information and communication technologies:recasting development. New Delhi: BR, 83-112.
26. Hornby, AS.(1995). Oxford advanced learners Dictionaryof currentEnglish.NewYork:Oxford, 48.
27. Federal Networking Council (a995), cited in Leiner et al.,2010)
28. http://searchciomidmarket.techtarget.com/sDefinition/.html
29. Gould,JuliusandKolb, WilliamL.Ed.(1969).Adictionaryof the social sciences. New York: the United Nations educational, scientific andculturalorganization,612.
30. http://en.wikipedia.org/wiki/Madhya_Pradesh

****

बिलासपुर जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का स्थितिगत अध्ययन

राकेश कुमार गिरि*

शोध सारांश – भारत सरकार कमजोर वर्गो के आर्थिक विकास को प्रथम आवश्यकता मानकर 'स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना' के अंतर्गत लक्ष्य समूह में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिये 50 प्रतिशत, महिलाओं के लिए 40 प्रतिशत तथा विकलांगों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण के जरिए इन कमजोर वर्गो के लिए विशेष सुरक्षात्मक उपाय किये है। व्यक्तिगत स्वरोजारी अथवा स्वसहायता समूहों के लिए योजना के अंतर्गत सहायता सरकार द्धारा अनुदान परियोजना लागत के 30 प्रतिशत अधिकतम 7500 रूपये है। अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए अनुदान परियोजना लागत 50 प्रतिशत अधिकतम 10,000 लाख रूपया तथा सिंचाई परियोजनाओं के लिए अनुदान की कोई वित्तीय सीमा नहीं है।
शब्द कुंजी – व्यक्तिगत स्वरोजगारी अथवा स्वसहायता समूह, पंचायती राज संस्थाएँ, आय संरचना, उपभोग क्रिया, व्यवसाय की विद्यमानता एवं ऋण ग्रस्तता आदि।

प्रस्तावना – स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओं, बैंको, संबंधित विभागों तथा गैर सरकारी संगठनों की सकिय भागीदारी से किया जा रहा है। योजना के तहत् हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) को 3 वर्ष के भीतर गरीबी रेखा से ऊपर लाने का प्रयास किया जा रहा है। योजना के क्रियान्वयन में जिला ग्रामीण विकास अभिकरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शंकर समिति नामक अंतर-मंत्रालय समिति की सिफारिशों पर जिला ग्रामीण विकास अभिकरण को सुद्दढ़ बनाने तथा इसे और अधिक व्यावसायिक प्रभावी बनाने के लिए 01 अप्रैल 1999 से केन्द्र द्धारा प्रायोजित एक नई योजना जिला ग्रामीण विकास अभिकरण प्रशासन शुरू किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के भूमिका का अध्ययन करना है। जिसके लिए निर्धारित उद्देश्य निम्न है:-

1. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धियों का अध्ययन करना। (द्धितीयक समंकों के आधार पर)
2. अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को योजना के अंतर्गत दी जाने वाली विशेष प्राथमिकताओं से होने वाले लाभ, आय सरंचना, उपभोग किया, व्यवसाय की विद्यमानता एवं ऋण ग्रस्तता आदि का मूल्यांकन करना (प्राथमिक समंकों के आधार पर)
3. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था की कार्य कुशलता, पर्याप्तता और बैंकों की भूमिका का अध्ययन करना।

परिकल्पना:- प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न शून्य परिकल्पनाओं की जांच की जाएगी:-

1. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक प्रगति में योगदान नहीं के बराबर है।
2. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति के समुदाय को विशेष प्राथमिकता नहीं प्राप्त हो रही है।
3. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था, कार्य कुशलता एवं बैंकों का सहयोग अपर्याप्त है।

अध्ययन की सीमाएँ – प्रस्तुत अध्ययन में बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के विभिन्न ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की जनसंख्या को ध्यान में रखकर कोटा विकासखण्ड का चयन किया गया है और अनुसूचित जातियों के 45 एवं अनुसूचित जनजातियों के 175 हितग्राही परिवारों तथा अनुसूचित जातियों के 45 एवं अनुसूचित जनजातियों के 175 गैर-हितग्राही परिवारों का अध्ययन किया गया है। इस प्रकार षोधपत्रप्रबंध को अनुसूचित जाति एवं जनजाति समुदाय पर केन्द्रित किया गया है। इस अध्ययन हेतु 2016-17 से 2018-19 के आंकड़ों तथा जानकारियों का प्रयोग किया गया है।

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धि का अध्ययन- भारत में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के वित्तीय लक्ष्य और उपलब्धि की स्थिति को सारणी 1 में प्रदर्शित किया गया है। सारणी से स्पष्ट है कि आधार वर्ष 2006-07 में 1724.55 करोड़ रू. वित्तीय लक्ष्य रखा गया था। इस वर्ष योजना के अंतर्गत 1424.20 करोड़ रूपये व्यय किया गया, जो कुल वित्तीय लक्ष्य का 82.58 प्रतिशत रहा, देश में ग्रामीण गरीबों की इतनी अधिक संख्या होने के बावजूद उपलब्ध राशि का उपयोग कम होना, विकास के कार्य में प्रशासनिक अकुशलता को प्रदर्शित करता है। वर्ष 2008-09 में वित्तीय लक्ष्य 3929.80 करोड़ रू. रखा गया था किन्तु व्यय केवल 3530.07 करोड़ रू. (89.83 प्रतिशत) ही किया जा सका। वित्तीय लक्ष्य एवं व्यय में निरन्तर वृद्धि हुई है किन्तु जिस दर पर प्रतिवर्ष लक्ष्य में वृद्धि हुई है उससे कम दर पर व्यय में वृद्धि हुई। 2009-10 में व्यय का प्रतिशत 100.07 दर्ज किया गया किन्तु 2011-12 में व्यय का प्रतिशत घटकर 73.07 रह गया है। इससे स्पष्ट होता है कि योजना का व्यापक प्रचार-प्रसार नहीं हो सका है। प्रशासनिक सुधार लाकर, योजना का व्यापक प्रचार प्रसार कर वित्तीय लक्ष्य को प्राप्त किया जाना चाहिए, जिससे योजना के उद्देश्यों को पूरा करते हुए ग्रामीण गरीबी में कमी किया जा सके।

* शोधार्थी एवं अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र) किरोड़ीमल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायगढ़ (छ.ग.) भारत

सारणी क्र. -1 (निचे देखे)
आरेख क्र. - 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)
आरेख क्र. - 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

सारणी कमांक 1 से स्पष्ट है कि अध्ययन अवधि 2006-07 से 2011-2012 के छः वर्षो में यदि हम सम्पूर्ण भारत की स्थिति को देखते है तो 2009-10 को छोडकर कभी भी दिये गये वित्तीय लक्ष्य की प्राप्ति नहीं की जा सकी।

बिलासपुर जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की वित्तीय उपलब्धि - बिलासपुर जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का स्थितिगत अध्ययन किया गया है ताकि योजना की वस्तु स्थिति तक पहुँचा जा सके। वित्तीय एवं भौतिक उपलब्धियों को द्वितीयक समंकों के आधार पर वर्षानुसार, कार्यकमानुसार, व्यवसाय, बैंक, लिंग प्रशिक्षण के अनुसार विश्लेषण किया गया है।

सारणी क्र.-2 (अगले पृष्ठ पर देखे)
आरेख क्र. - 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारणी कमांक-3 से स्पष्ट है कि बिलासपुर जिले में इस योजना के तहत वर्ष 2006-07 में 1216.50 लाख रूपया उपलब्ध कराया गया। जिसमें से 1146.67 लाख रूपया व्यय किया गया अर्थात् 94.26 प्रतिशत की उपलब्धि रही। अध्ययन के अंतिम वर्ष 2011-12 में इस योजना के तहत 2386.00 लाख रूपया उपलब्ध कराया गया जिसका 97.64 प्रतिशत अर्थात् 2329.69 लाख रूपया इस योजना के तहत व्यय किया गया। अध्ययन वर्षो में कभी भी शत् प्रतिशत उपलब्धि हासिल न करपाना एक सोचनीय विषय है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र के अधिकांश परिवार रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं।

बिलासपुर जिले में वित्तीय व्यय की स्थिति - सारणी कमांक 4 से स्पष्ट है कि वर्ष 2006-07 में 2948 हितग्राहियों पर कुल वित्तीय व्यय 1146.67 लाख रूपया किया गया था जिसमें 822.17 लाख रूपया ऋण एवं 324.50 लाख रूपया अनुदान दिया गया। प्रति हितग्राही औसत व्यय 38,897 रूपये व्यय किया गया। वर्ष 2008-09 में 4846 हितग्राहियों पर कुल व्यय 1672.38 लाख रूपया किया गया जिसमें 1168.89 लाख रूपया ऋण एवं 503.49 लाख रूपया अनुदान रहा, जोकि 2007-08 में की गई व्यय राशि 1822.93 से कम है। इसी प्रकार वर्ष 2011-12 में 5576 हितग्राहियों पर कुल व्यय 2329.69 लाख रूपया किया गया जिसमें 1650.47 लाख ऋण एवं 679.69 लाख अनुदान रहा इस वर्ष प्रति हितग्राही औसत व्यय 41,781 रूपया प्रदान किया गया जिसमें 17570 रूपया ऋण व 9983 रूपया अनुदान है।

सारणी क्र. - 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि अध्ययन के अंतिम वर्ष 2011-12 में सर्वाधिक वित्तीय व्यय 2329.69 लाख रूपया किया गया। जिसमें 1650.47 लाख रूपया ऋण एवं 679.22 लाख रूपया अनुदान दिया गया। इस वर्ष प्रति हितग्राही औसत व्यय 41781 रूपया रहा तथा आधार वर्ष 2006-07 में सबसे कम वित्तीय व्यय 1146.67 लाख रूपया किया गया। जिसमें 822.17 लाख रूपया ऋण एवं 324.50 लाख रूपया अनुदान दिया गया। इस वर्ष प्रति हितग्राही औसत व्यय 38897 रूपया रहा। सर्वेक्षित वर्षो में कुल वित्तीय व्यय की राशि में बढ़ने की प्रवृत्ति रही है। साथ ही आधार वर्ष की तुलना में अध्ययन के अंतिम वर्ष प्रति हितग्राही औसत व्यय में भी वृद्धि हुई है।

आरेख क्र. - 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पन्त, जे.सी. (1984), *अर्थशास्त्र के सिद्धांत*, द्वितीय पूर्णतः संशोधित संस्करण, साहित्य भवन, आगरा
2. पन्त, जे.सी.(1989-90), *जनांकिकी*, 5वाँ संशोधित संस्करण, गोयल पब्लिशिंग हाउस सुभाष, मेरठ - 2।
3. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम, के.पी.एम. (1990), *भारतीय अर्थव्यवस्था*, 20वाँ संस्करण।, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
4. सुन्दरम, के.पी. एम. (1995), भारतीय अर्थव्यवस्था, 25वाँ संस्करण, श्रीचंद कंपनी लि. नई दिल्ली।

सारणी क्र. -1 : भारत में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की वित्तीय उपलब्धि

क्र.	वर्ष	वित्तीय लक्ष्य (करोड़ रू. में)	कुल व्यय उपलब्धि (करोड़ रू. में)	कुल व्यय उपलब्धि (प्रतिशत में)	कुल व्यय में कमी/वृद्धि
1	2006-07	1724.55	1424.20	82.58	
2	2007-08	2394.17	1965.97	82.11	27.56
3	2008-09	3929.80	3530.07	89.83	44.31
4	2009-10	4443.91	4447.03	100.07	20.62
5	2010-11	5210.63	4585.98	88.01	03.03
6	2011-12	6020.00	4399.00	73.07	-4.25

आरेख क्र. - 1

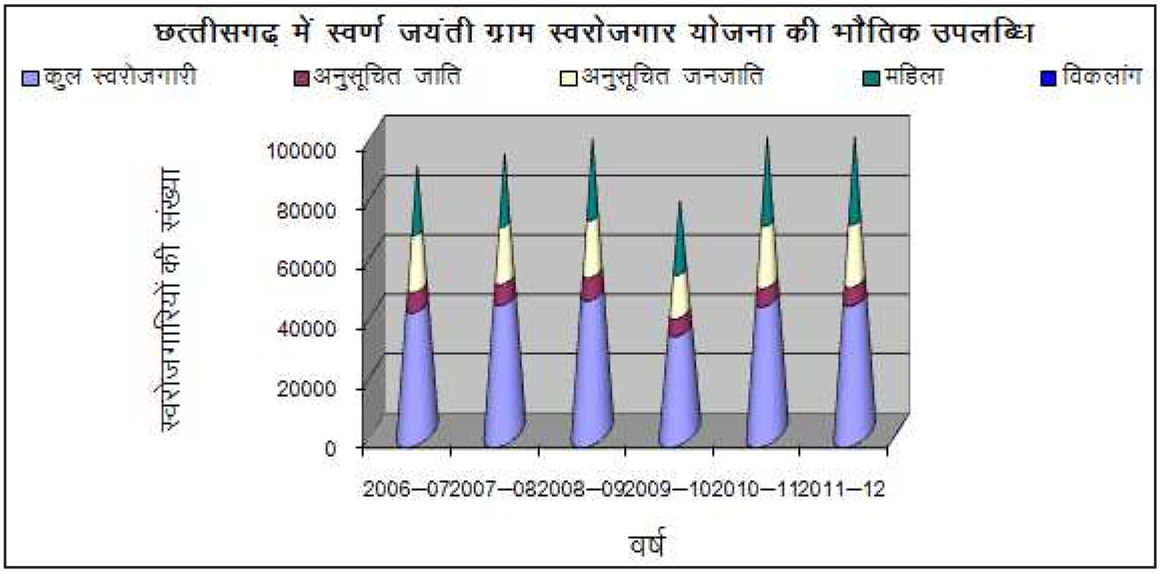

स्त्रोत- भारत सरकार ग्रामीण एवं विकास मंत्रालय, वार्षिक रिपोर्ट 2012-13

आरेख क्र. - 2 भारत में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की वित्तीय उपलब्धि (करोड़ रू.में)

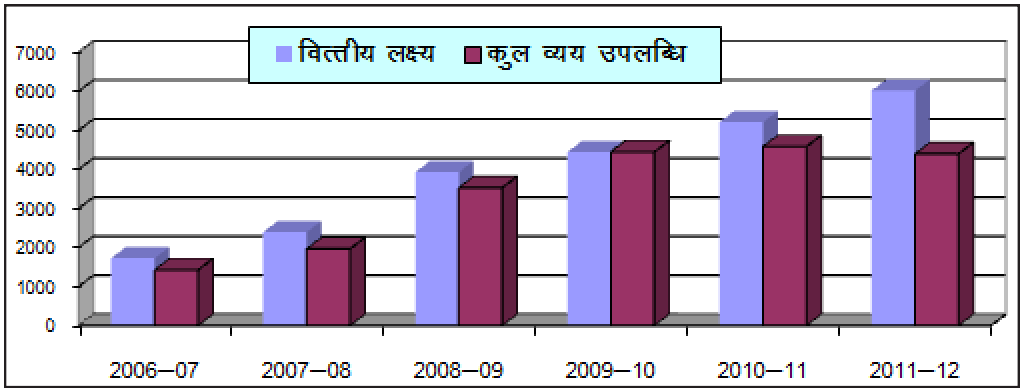

सारणी क्र.-2 बिलासपुर जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धि का विवरण

(लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	वित्तीय लक्ष्य	कुल उपलब्धि	कुल व्यय उपलब्धि (प्रतिशत में)	कुल व्यय में कमी/वृद्धि
1	2006-07	1216.50	1146.67	94.26	-
2	2007-08	1940.99	1822.93	93.92	58.98
3	2008-09	1751.74	1672.38	95.47	-8.26
4	2009-10	2049.55	1990.08	97.10	19.00
5	2010-11	2229.32	2159.10	96.85	08.49
6	2011-12	2386.00	2329.69	97.64	07.90

स्रोत:-जिला ग्रामीण विकास अधिकरण, जिला पंचायत बिलासपुर

आरेख क्र. – 3 बिलासपुर जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धि

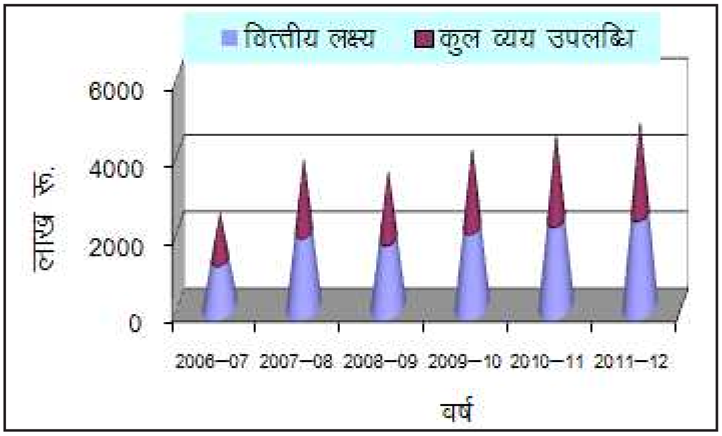

सारणी क्र. – 4 बिलासपुर जिले में वित्तीय व्यय की स्थिति

क्र.	वर्ष	एकल हितग्राही	स्मूह		लाभान्वित हितग्राहियों	कुल वित्तीय व्यय राशि		
			संख्या	हितग्राही	की संख्या	ऋण	अनुदान	कुल
1	2006-07	593	232	2355	2948	822.17	324.50	1146.67
2	2007-08	977	345	3614	4591	1310.31	512.62	1822.93
3	2008-09	570	381	4266	4836	1168.89	503.49	1672.38
4	2009-10	716	438	5022	5738	1381.17	608.91	1990.08
5	2010-11	836	447	5018	5854	1515.96	643.14	2159.10
6	2011-12	1180	395	4396	5576	1650.47	679.22	2329.69

स्रोत:– जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, जिला पंचायत बिलासपुर

आरेख क्र. – 4 बिलासपुर जिले में वित्तीय व्यय की स्थिति

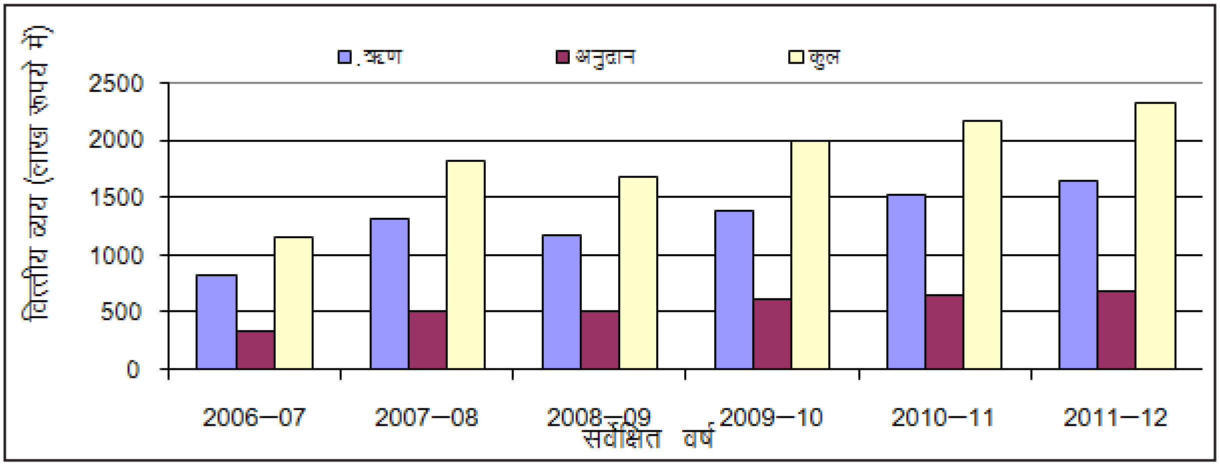

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Occupational Structure of Population in the City of Saharsa

Dr. Birendra Prasad Yadav*

Introduction - Work is defined as participation in any economically productive with or without compensation, wages or profit, such participation may be physical and or mental in nature. Work involves not only actual work but also includes effective supervision and direction of work. It even includes part time help or unpaid work on farm,family enterprises or in any other economic activity.All persons engaged in work as defined above are workers.Persons who are engaged in cultivation even solely for domestic consumption are also treated as workers.(Census,2011).

In present study, an attempt has been made to study the occupational structure of the city of Saharsa and finally to analys how the number of non-workers are increasing in this area by leaps and bounds. It has been observed that the population is increasing rapidly but numbers of appointments in different work are decreasing.The cause of it is that number of different industries and factories are going to be closed and hence less.

Objectives – The main objective of this paper is to verify the rate of work participation of population, to find out the number of non- workers in this region and to judge the present socio-economic status of people of this area.

The Study Area – The study area city of Saharsa forms part of the middle Ganga valley stretching roughly between the reverine tracts of the Ganga in the south and the Shivalik hill of Himalaya in the north, within this limited geographical space magnitude of the pressure of population has arisen to such an extent that numerous problems like unemployment,scarcity of food, shortage of housing and horrible incidence of crime have been acute.

The geographical perspective of the city of Saharsa is diverse due to its location in the flood ravaged belt of the Kosi river.Located on the eastern side of Kosi river just 5 km east and north of Telabe river the people in the city Saharsa always felt happiness and hence,it is a place of eternal peace and enjoyment amidst myriads of channels of the Kosi river.

So far as the areal extent is concerned the city of Saharsa extends over an area of a 35 km^2 divided into 28 wards. According to 2011 census it has a population of 1,56,540 and the density population is 4473 person per squire km. The latitudinal position of Saharsa is 25^0 52' N whereas longitudinal position is 86^0 E.

The sphere of influence of Saharsa suffers from annual floodings as the surrounding area is lowland made of rivers, chaurs and wetlands formed in course of the unequal deposition of sand and silt in the flood plain of the Kosi river.

The Data Base - The database for the present work includes both government and non-governmant,published and unpublished maps, records and reports about the study area;memories,district gazetteers. It also includes the census statistics of the concerned region particularly for population composition,gender and occupational structure.

Methodology - The pre - fieldwork stage of methodology followed in this work pertains to the collection of data on mining, industrial and other activies, population and gender characteristics.

The fieldwork stage includes intensive field works to generate data on various aspects of physical and social environment, oral interviews and surveys with structured questionnaire schedules.

The post-fieldwork tables and charts have been prepared, in some cases,with the help of computers.

Table – A : Occupational Structure Of Urban People In The City Of Saharsa [2011]

S.	Occupation	No. of workers	Percentage
1.	Total Workers	30754	32.10
2.	Cultivators	1542	3.65
3.	Agricultural Labour	4094	5.69
4.	Livestock Rearing	517	0.52
5.	Household Industry	1007	1.05
6.	Other Then H.H. Industry	1535	1.55
7.	Construction	1255	1.27
8.	Trade and Commerce	56.22	5.71
9.	Transport and storage	3015	3.66
10.	Other Services	8959	9.10
11.	Non Workers	93261	68.83

Source- Estimated Figure From Previous Census

The above Table A show the pattern of occupational structure as found in the city of Saharsa. It could be seen

*Ph.D. (Geography) At-Parmanpur, Ps-Ghelarh, Distt. Madhepura (Bihar) INDIA

that only 32.10% people are workers and the rest 68.83% are nonworkers. It means per worker the dependency ratio is more than 2 persons. Among the workers 9 % people are service class in offices,6% are engaged in trade and commerce,6% are agricultural labours and about 4% are in Transport and in agricultural operations. Hence the city at Saharsa still gives a quasi-urban look.Only 3% workers are involved in industrial activities. In case one visits the southern part of saharsa of the railway gumti the area is known as Hatiya gachhi where R.M.College is situated it entirely gives on rural outlook. The situation is more or less than some except central part of the city.

Socio – Economic Condition

1. Most of the people of this area not economimiclally solvent.
2. A good number of people are engaged in earning money adopting malpractice,theft as well as other nasty works.
3. Even a section of people adopts the policy of kidnapping, robbery, forgery and dacoity.

Conclusion - It may be concluded that in this area is an increasing non-workers rapidly,resultion degradation of social status of the people.

1. Government should keep a vigilant eye to look after the unemployed people of this belt.
2. Factories,Mills etc. Should be reopened.
3. Cottage and small scale industries, household industries may be increased to wipe out poverty of the poor people is distant village.

References :-

1. Primary Census Abastract,Saharsa (2011)
2. Yadav,Hira Lal (2005)Elements of Population Geography,(Hindi)Radha Pub. New Delhi.
3. R.B. Mandal,et al;Introductory Method in population Analysis; Concept publishing company,New Delhi,1989.
4. Alam,T,;'Growth of Population in Patna city sub-division',East west Geographer,vol.11;No.1,March,200.
5. Singh,T.N.S. & Singh, D.P.;"Growth of population in India "in some Aspects of population studies in India; sudha publication, Munger,1987.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Illness Perception and Diabetes Self-Care Behaviour of People

Dr. Ranvijay Kumar*

Introduction - Diabetes is one of the largest epidemics in human history and certainly one of the major threats to human health in the 21st century (IDF 2013; Zimmet et al.2003).Diabetes mellitus affects more than 10 million people worldwide. In addition to physical effects of diabetes on health, the psychological burden of this disease in substantial;and quality of life can be markedly reduced in affected people (Bradley & Speight,2002;IDF2013;Rubin Peyrot,2001). There are two common forms of diabetes. Type 1 diabetes(previously known as insulin-dependent or childhood – onset) is characterized by a lack of insulin production and is rapidely fatal sithout daily administration of insulin.Type 2 diabetes,formerly called non – insulin – dependent or adult onset, is a heterogeneous disorder also characterized by chronic hyperglycaemia. The quality of life for people with type 2 diabetes can be largely preserved , and their risk of long -term complications reduced,through proper control of glycaemia,lipidaemia and blood pressure, through provision of effective self-care and health education (World Health Organization,2006).

Type 2 diabetes is primarily a self -managed disease as treatment relies heavily on self-care and self – management skill(Ku & Degels,2014; Song,2010;Van Puffelen et al,2015;Williams et al,2015).Diabetes requires lifelong adherence to demanding and often complex self-care regimens,as well as major lifestyle change. Type 2 diabetes requires individuals to actively participate in their own care by healthy eating, regular physical activity,blood glucose monitoring,medication adherence, psychosocial coping,risk factor reduction, and problem solving self-care skill(Mensing,et al,2000;Mulcahy et al,2003;Williams et at, 2015).The overriding goal of diabetes self – care in the management of diseaseis to avoid the short-term risks and long-term complications associated with the disease as well as to maintain/improve qualityof life.

However,the diabetes regimen is extremely complex(Glasgo,McCaul &Schafer,1986) andit is generally accepted that a patient with a more complex regimen is less likely to be adherent and engage in diabetes self-care behaviours than a patient with a less demanding regimen(Lutfy & Ketcham,2005;Van Puffelen et al,2015). The diabetes-specific health behaviours that compose up to 99% of disease management (Rubin,2000)are difficult to maintain over time.It is crucial that individuals with diabetes follow a strict treatment regiment in order to maintain control over their blood sugar.This regimen includes maintaining a proper diet,engaging in regular physical activity or exercise,blood glucose monitoring,and taking any prescribed medications(McCaul,Glasgow,& Schfer,1987). Research has shown the enhancement of active participation and self-care to be the key factors responsible for the improvement of outcomes in diabetic patients (Funnell & Anderson,2004;Strauss et at,2015;Williams et at,2015).

Participents - Three hundred adults (180 male and 120 female) with type 2 diabetes randomly selected from different hospitals, diabetes clinics and nursing homes located in urban area of Varanasi participated in the study. The age of participents ranged from 25 to 79 years (Mean = 54.31,SD=10.97).Duration of diabetes in these patients ranged from 1 to 17 years. Patients were included in the study if they had diabetes mellitus according to the 1997 American Diabetes Association criteria:(1) fasting plasma glucose greater than 126 mg/dl or (2) symptoms of hypoglycemia with causal plasma glucose greater than 200 mg/dl or (3) a two-hour plasma glucose of greater than 200 mg/dl after a 75g oral glucose tolerance test. Patients were excluded from the study if they had been (1) diagnosed by type 1 diabetes, (2) diagnosed with any psychiatric problem such as depression,(3) inability or unwillingness to participate in the study, (4) any ongoing medical therapy with glycemic interventions, (5) any cardiovascular or other disease which would prohibit participation in physical activity, and (6) any factors likely to preclude adherence to the self-care behaviour such as dementia, alcohol or substance abuse. Severity of diabetes of the participants was determined on the basis of ratings of consulting physician.

Discussion - A number of studies have shown gender and age as significantly associated with health perception(e.g. Hansen et al,2001).Present findings are consistent with those of previous research that reported gender differences in illeness perception and symptom awareness among females as compared with males. Previous research suggests that female patients,because of gender selective

* (Psychology) B.N.M.U., Madhepura, Vill. –Kushha, Po. –Jabe, Ps.- Bhawanipur, Distt. Purnea (Bihar) INDIA

attention to their bodies and an increased attribution of bodily sensations to physical illness,have historically perceived an excess of symptoms compared with males,even when both sexes are healthy (Gijsbers van Wijk et at,1991;Steck et at,2000).

Recently, Aalto,Heijmans, Weinmen,and Aro(2005) reported gender differences in illenes perception in Coronary Heart Disease (CHD). They observed gender differences in cure/control and cause/genes scale. In addition, men also perceived more swrious consequences of CHD than women did.Older respondents perceived less symptoms of CHD (identity) and reported shorter expected CHD duration (timeline). Also there was significant interaction between gender and age in the model of consequences. Although studies are lacking in regard to gender and age differences in illeness perception, gender and age differences may be an important issue particularly in diabetes. Moreover, Trafimow and Finlay (1996) argued that individual differences should be taken into consideration in the predication of health behaviour.

Although findings of the present study have very clearly demonstrated thr roles of illness perception in diabetes self-care behaviour of people with type 2 diabetes,the present research has certain limitations of tools,statistical analyses,cross-sectional nature of research etc,the study has several important methodological strengths such as utilizing a clinical sample,using psychometrically sound self-report measures and above all important hypotheses.

Findings of the present study suggest that illness perception is an important construct in determining self-care behaviour of diabetic persons,which could be targeted for interventions to improve self-cre behaviour. Present findings have implications for diabetes care practice and diabetes management indicating that rather than simply focusing on the provision of information, strategies aimed at enhancing patients' perceptions and beliefs over managing the physical and emotional impact of their treatment may help to encourage their active involvement in self-care.

References :-

1. Aalto,A.M.Heijmans,M.,Weinman,J. and Aro,A.R. (2005).Illness perception in coronary heart disease; Socodemographic,illness-related,and psychosocial correlates,Journal of psychosomatic research,58 (5),393-402.
2. American Diabetes Association (1997 b).Report of the expert committee on the diagnosis and classification of diabetes mellitus.Diabetes care,20,1183-1197.
3. Bradely,C. and Speight, J.(2002). Patient perception of diabetes and diabetes therapy; Assessing quality of life. Diabetes Metabolism Research and Reviews, 18(Suppl 3),S64-S69.
4. Hampson,S.E.,Glasgow, R.E. and Toobert, D.J.(1990).Personal models of diabetes and their relations to self-care activities. Health Psychology, 9, 632-646.
5. Robin, R.R. and Peyrot, M.(2001).Psychological issues and treatments for people with diabetes. Journal of Clinical Psychology, 57, 457-578.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

ग्रामीण विकास में पंचायतीराज संस्थाओं का योगदान

डॉ. तहसीलदार तमोली*

प्रस्तावना – भारत की अधिकांश आबादी ग्रामीण पृष्ठ भूमि से सम्बन्धित है। ग्रामीण स्तर पर गुणवत्ता परक सुधार से ही देश को विकसित श्रेणी में लाया जा सकता है। ग्रामीण विकास हेतु समय-2 पर विभिन्न राष्ट्रीय एवं राज्यों की सरकारों की तरफ से विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है। बिना एक उपयुक्त एजेन्सी के ग्रामीण स्तर पर कोई भी राष्ट्रीय या राज्यस्तरीय योजना सफल नहीं हो सकेगी। यहाँ पर पंचायतीराज संस्था एक महत्वपूर्ण सकारात्मक भूमिका निभा सकती है।

पंचायत संस्थाओं की स्थापना ग्रामीण स्तर पर विकास करने व विद्यमान एवं उत्पन्न होने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान खोजना है। पंचायत संस्था का लक्ष्य है ग्रामीण संरचना विकसित हो। ग्रामीणों की रोजगार, सेवा, सिचाई, बिजली, सड़क, सुविधा, शुद्ध पेय जल एवं किसानों, श्रमिकों, मजदूरों से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं का समाधान हो। ग्रामीण स्तर पर ग्रामीणों की मूलभूत आवश्यकताएं जैसे कपड़ा, रोटी, मकान आदि में समस्या न हो।

उपरोक्त वर्णित समस्त समस्याओं के उपयुक्त समाधान के लिए केन्द्र सरकार एवं राज्यों की सरकारों के द्वारा पंचायतराज संस्था को जिम्मेदारी सौंपा गया है। विभिन्न राष्ट्रीय एवं राज्यस्तरीय योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायतराज संस्था ग्रामीण स्तर पर एक मुख्य एजेन्सी के रूप में उभरकर सामने आयी है।

ग्रामीण विकास के अभाव में किसी देश के विकास की कल्पना अधूरी सी है। भारतीय गांवों के सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक सशक्तिकरण में पंचायत की भूमिका महत्वपूर्ण है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भी पंचायतों के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कहा था कि सच्चा लोकतंत्र वही है, जो निचले स्तर पर लोगों की भागीदारी पर आधारित हो। यह तभी संभव है जब गांव में रहने वाले आम आदमी को भी शासन के बारे में निर्णय करने का अधिकार मिले। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारत शासन अधिनियम, 1919 के तहत पंचायतीराज व्यवस्था के माध्यम से विकेन्द्रीकरण को महत्व प्रदान किया गया तथा देश में पंचायतीराज व्यवस्था को सशक्त करने के लिए प्रभावी कदम उठाए गये। पंचायतीराज व्यवस्था शासन तंत्र की प्राथमिक इकाई है। भारतीय उपमहाद्वीप में स्थानीय शासन की यह सबसे पुरानी प्रणाली है।

14 वें वित्त आयोग ने 2015-2020 की कार्यावधि के लिए 200, 292.2/- करोड़ रूपये का प्रावधान किया है, जो 13 वें वित्त आयोग द्वारा प्रदत्त राशि से तिगुनी है। वर्तमान समय में जबकि शहरी क्षेत्रों में सघनता, प्रदूषण और स्वास्थ्य की समस्याएं लगातार बढ़ रही है। ऐसे में गांवों का विकास करके एक बेहतर भारत की नींव रखी जा सकती है।[1] संविधान ने पंचायतों को अलग-2 स्तरों पर जिम्मेदारी और शक्तियां सौंपी है। सरकार की लोकहितकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों को जन-जन तक पहुंचाने में पंचायतों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। पंचायतों में पोषण, बिजली, पेंशन, टिकाऊ जैसे बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति राज्य शासन द्वारा पंचायतों के माध्यम से किया जा रहा है। जोकि विश्वस्तर पर सतत् विकास के लक्ष्यों में भी सम्मिलित है।[2]

लोकतंत्र को जन-जन तक पहुंचाने का सबसे कारगर उपाय पंचायतीराज व्यवस्था ही है। इनके कारण स्थानीय समस्याओं का निराकरण स्थानीय स्तर पर ही कर लिया जाता है जिस कारण समय और धन की भारी बचत होती है। यदि इन समस्याओं का प्रबन्धन केन्द्र या राज्य स्तर पर किया जायेगा तो बेवजह समय की बर्बादी होगी और केन्द्रीय या राज्य सरकार के कर्मचारी इन समस्याओं को समझ भी नहीं पायेगें। नि:संदेह स्थानीय समस्याओं का प्रबंधन स्थानीय स्तर पर ही अधिक कुशलता से किया जा सकता है। पंचायती राज व्यवस्था के कारण केंद्रीय सरकार पर कार्य का बोझ भी कम होता है। जनकल्याणकारी राज्य व्यवस्था के कारण आजकल राज्य के कामों में बेतहाशा वृद्धि हुई है। यदि स्थानीय स्तर के कार्य भी राज्य ही करेंगे तो कार्य की अधिकता के कारण सरकारी मशीनरी की कशलता व दक्षता घट-जायेगी और भ्रष्टाचार, लालफीता शाही आदि को बढ़ावा मिलेगा।[3]

पंचायती राज वह व्यवस्था है जो लोकतत्रं को सामान्यजन के घर के दरवाजे तक पहुँचाने का माध्यम है। ग्रामीण विकास को गतिमान बनाने एवं लोकतत्रं के विकेन्द्रीकरण का सशक्त माध्यम पंचायत राज को माना जाता है। पंचायत राज का उद्देश्य ग्रामीण स्तर पर स्थानीय स्वशासन को स्थापित करना है।[4]

समन्वित ग्रामीण विकास योजना जैसे कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में हमें उतनी सफलता नही मिली जितनी हम चाहते थे। इसका प्रमुख कारण प्रशासनिक ढ़ांचे की कमियां रहती है, जिन्हें पंचायतीराज संगठन दूर कर सकते हैं। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों और पंचायती राज संगठनों पर विचार करते हुए हमारा ध्यान भ्रष्टाचार/सत्ता में दुरूप्रयोग, अवांछनीय हस्तक्षेप नियमों का उल्लघंन और भाई भतीजा वाद जैसी बुराइयों की ओर भी जाता है। हम इन बुराइयों से बच नही सकते और न ही इनके नाम पर इन संगठनों अथवा कार्यक्रमों की आलोचना कर सकते हैं।[5]

हमारा राष्ट्रीय लक्ष्य है- न्यायोचित और आर्थिक सामाजिक व्यवस्था की स्थापना, गरीबी और निरक्षरता का उन्मूलन और सही मायने में सभी का जीवन समृद्ध करना। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ग्रामीण विकास का समुचित प्रबन्ध किया जाना नितांत आवश्यक है। इसमें पंचायतीराज संगठनों

* असि0 प्रोफेसर (राजनीतिशास्त्र) एस0बी0एस0 पी0जी0 कालेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

का विशेष महत्व है। इसके लिए यह जरूरी है कि ग्राम पंचायतों के साथ-2 मंडल पंचायती को भी सशक्त बनाया जाए।[6]

भारत की बहुसंख्यक आबादी 69% ग्रामीण क्षेत्र में रहती है, तथा उनमें से अधिकतर गरीब है। ग्रामीण क्षेत्र में विकास से राष्ट्र निर्माण व देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण बदलाव आ सकता है। नीति आयोग द्धारा नवम्बर, 2017 को जारी चेजिंग स्ट्रक्चर ऑफ सरल इकोनामी ऑफ इंडिया इम्पलायमेन्ट एण्ड ग्रोथ के अनुसार कुल घरेलू उत्पादन में ग्रामीण भारत की भागीदारी 46.9% है। सरकार ने ग्रामीण विकास मंत्रालय पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय तथा राज्य सरकारो के साथ मिलकर 14-24 अप्रैल, 2016 की अवधि के दौरान ग्रामोदय से भारत उदय अभियान नामक राष्ट्रव्यापी जागरूकता अभियान शुरू किया था।

इस अभियान के अन्तर्गत ग्राम विकास के लिए किये जा रहे कार्यो व पंचायत की भूमि का के बारे में लोगों को बताया गया था।[7]

पंचायतीराज एवं ग्रामीण विकास योजनाओं के परिपेक्ष्य में यह तथ्य स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विकास योजनाओं में कार्य कुशल निष्पादन में पंचायतीराज संस्थाओं को मुख्य अभिकरण माना जा सकता है। आधारभूत सुविधाओं के विकास निर्धनता उन्मूलन के कार्यक्रमों, रोजगारपरक कार्यक्रमों को सफल करवाने व क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों का सम्पादन पंचायतीराज संस्थाओं की कार्यकुशलता से सफलतापूर्वक सम्पादित किया जा सकता है।

वर्तमान में ग्रामीण स्तर पर संरचनात्मक विकास का मुख्य सोपान पंचायतीराज संस्था ही है। अपने त्रिस्तरीय मॉडल के माध्यम से विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायतीराज सक्रिय है। ग्रामीण स्तर पर उनके समस्याओं के समक्ष पंचायते विद्यमान रहती है। इससे इनके द्धारा उन समस्याओं का व्यावहारिक समाधान किया जा सकता है।[8]

ग्रामीण स्तर पर पंचायत संस्थायें उपलब्ध संसाधनों की खोज करना, समस्याओं का त्वरित निदान, विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन में एक महत्वपूर्ण एवं जन उपयोगी संस्था सिद्ध हो रही है। इसके माध्यम से ग्रामीण जनों की सहभागिता भी शतप्रतिशत सुनिश्चित हो जाती है। जन सक्रियता एवं सहभागिता योजनाओं के क्रियान्वयन में सकारात्मक योगदान देती है।[9]

नेहरू के अनुसार भारत के विकास के लिए शहरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों को महत्व देना ही होगा तब ही गांव की गरीब शोषित जनता का सच्चे अर्थो में कल्याण हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों का कल्याण करने के लिए एक मात्र विकल्प विकेन्द्रित नियोजन है। जब तक ग्रामीण क्षेत्र तक सत्ता नहीं जाएगी तब तक ग्रामीण क्षेत्रों का विकास नहीं हो सकता है। विकेन्द्रित नियोजन के तहत ग्राम पंचायत ही आर्थिक विकास की डगर को शहरों से गांवों तक ले जा सकती है।[9]

ग्रामीण विकास एक बहु आयामी अवधारणा है। इसके कई घटक होते है। यह राष्ट्रीय विकस की धुरी है। इनमें ग्रामीण गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पर्यावरणीय सुरक्षा आदि।

महत्वपूर्ण हैं। इन सबके लिए जहाँ एक समग्र कार्यक्रम एवं नितियाँ बनाना आवश्यक होता है। वही इसको कार्यरूप में बदलने हेतु प्रासंगिक कर संस्था की भी आवश्यकता होती है। इस सम्बन्ध में विभिन्न विद्धानों एवं षोधो से यह पूर्णतय: सिद्ध हो चुका है कि ग्रामीण स्तर पर पंचायतीराज ही एक मात्र ऐसी संस्था है, जिसके द्धारा योजनाओं, कार्यक्रमों को त्वरित एवं कुषलता पूर्वक लागू किया जा सकता है। ग्रामीण स्तर पर समग्र विकास का कार्य पंचायती राज से सम्पन्न किया जा सकता है। पंचायत संस्थाए गाँवो में जन्म लेती है, इसके द्धारा ग्रामीण स्तर पर समस्याओं का भली भाँति पहचान रहती है। इस संस्था के माध्यम से ग्रामीणजनों के विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति हो रहा है। गाँवों में बुनियादी सेवाओं के क्रियान्वयन व विस्तार में पंचायतीराज सबसे कारागार संस्था सिद्ध हुई है।[10]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल फरवरी 2019 पृष्ठ-181
2. वही पृष्ठ-182
3. डॉ0 सिंह निशांत पंचायतीराज और महिलाएं सुनील साहित्य, दिल्ली, पृश्ठ-14
4. डॉ0 राठौड़ मधु-पंचायतीराज और महिला विकास, मोइन्टर पब्लिर्शस, जयपुर राजस्थान पृष्ठ-57
5. विकेन्द्रीकरण एवं पंचायतीराज व्यवस्था डॉ0 आशुतोष श्रीवास्तव, सनराइज पब्लिकेशन्स दिल्ली 110092, पृष्ठ-24
6. वही पृष्ठ- 24
7. सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल फरवरी, 2019
8. आर0पी0 जोशी, पा मंगलानी भारत में पंचायतीराज, प्रका0 राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2002 पृश्ठ-212
9. पंचायतीराज तब और अब राकेश शर्मा निशीथ, जान्हवी प्रकाशन, ए-77 विवेक बिहार फेस-2 दिल्ली पृष्ठ-23 व 24
10. पंचायतीराज एंव ग्रामीण विकास धमेन्द्र सिंह यादव, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर
11. भारत में पंचायतीराज के0के0शर्मा कालेज बुक डिपो, जयपुर
12. प्रतापभल देवपुरा, ग्रामीण विकास का आधार आत्मनिर्भर पंचायतें

****

भारतीय पंचायतीराज व्यवस्था का इतिहास और विकास : एक अवलोकन

अखिलेश कुमार*

शोध सारांश - प्राचीन काल से ही हमारे देश में पंचायत की परम्परा रही है। इस परम्परा की जड़े इतनी गहराई तक गयी है कि पंचायते हमारे ग्रामीण समाज की एक सुदृढ़ व्यवस्था में परिवर्तित हो गयी है। किन्तु भारतीय समाज में पंचायतो की स्थिति सदैव एक सी नही रही है, उसमें समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् ही पंचायतो के पुनर्गठन एवं उन्हे मजबूत करने के नियोजित प्रयास किए गये है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-40 में प्रान्तीय सरकारों को यह निर्देश दिए गये थे कि पचायतों का पुनर्गठन करे तथा उन्हे वे सब अधिकार दे जो उन्हे स्वायत्त शासन की इकाई बनाने के लिए आवश्यक हो। इस प्रकार देश के समस्त प्रान्तो ने अपने प्रदेश के लिए अलग-अलग पंचायतो के कानून बनाये है। यहि नहि 1992 में संविधान के 73वें संशोधन के माध्यम से पंचायतो को और अधिक सुदृढ़ करने तथा उनकी प्रभावी भूमिका सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। साथ ही समाज के सभी वर्गो का पंचायत में प्रतिनिधित्व हो सके, उसके लिए विशेष प्रावधान कर महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति आदि के लिए स्थान आरक्षित किए है।

शोध पत्र के उदेश्य - भारतीय पंचायतीराज वयस्था का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करते हुए मुख्यत: चार प्रमुख बिन्दुओ को उठाया गया है:-

1. पंचायतीराज व्यवस्था का ऐतिहासिक स्वरूप,
2. स्वतंत्र भारत मे पंचयतीराज व्यवस्था,
3. पंचायतीराज व्यवस्था के सुदृठिकरण हेतु गठित समितिया,
4. 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम 1993।

पंचायतीराज व्यवस्था का ऐतिहासिक स्वरूप -हमारी संस्कृति तथा सभ्यता के सदृश्य ही पंचायत तथा पंचायती राज की एक गौरवशाली परम्परा का निरूपण सदियों से होता चला आ रहा है। पंचायतो के उद्भव के प्रारम्भिक काल और स्वरू प के विषय में कुछ कहना अत्यन्त ही कठिन है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इतिहास सभ्यता के आरम्भिक काल के सम्बध में पर्याप्त सूचना देने मे असमर्थ है। विद्वानो का विचार है कि सबसे पहले मनुष्य ने कृषि युग में ग्रामीण सामाजिक जीवन को जन्म दिया। मानव ने पेड़ो की छाया में रहने से आगे बढ़कर कृषि करने के अभिप्राय से जब ग्रहो का निर्माण किया तो फलस्वरूप समूहो का भी उद्भव हुआ। इसके साथ ही साथ संगठन तथा व्यवस्था का भी प्रश्न उठा। वेदों में भी ग्राम तथा ग्राम संगठनो की झलक अनेक स्थानो पर देखने को मिलती है।

वैदिक काल में ग्राम स्वराज्य था, गॉव हर बातो के लिए आत्म-निर्भर था, गॉव अपनी जरूरत की चीजे स्वयं पैदा कर लेता था। वैदिक कालीन ग्राम शासन 'सभा' या 'समिति' के नाम से अभिहित किया जाता था। ग्रामाध्यक्ष को वैदिक काल में 'ग्रामीण' कहते थे, उनकी आज्ञा दैवाज्ञा तुल्य थी। महाभारत में पंच ओर पंचायतो का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। 'सभा पर्व' में नारद, युधिष्ठिर से पूछते है - क्या तुम्हारे राष्ट्र में बुद्धिमान और वीर पंच, करो को वसूलने और पंचायत को अन्य सहायक कार्यो को करने में संलग्न है। मुनस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति, श्रुति पुराण सभी में ग्रामीण सामुदायिक संगठन के सम्बध में स्पष्ट तथा विस्तृत नियम मिलते है।

कौटिल्य के अनुसार ग्राम के ऊपर पॉच ग्रामों का प्राय: 'समूह' हुआ करता था, जिसके शासन का भार 'पंचग्रामी' नामक राज्य कर्मचारी पर होता था। इसी प्रकार दस ग्रामों के संगठन के ऊपर बीस-बीस गॉव के संगठन होते थे और सौ-सौ तथा एक हजार ग्रामो के संगठित समूह होते थे। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में चार प्रकार के ग्रामों का वर्णन मिलता है जो कि मौर्य काल में विद्यमान थे। ग्रामाग्र: यह साधारण गॉव था, इन गॉवो में राज्य के सभी साधारण नियम थे। परिहारक ग्राम : मौर्य काल में ब्राह्मण, विद्धन, आयार्य, पुरोहित को राजा की ओर से जमीने प्राप्त होती थी। ऐसी जमीने कर मुक्त हुआ करती थी। योद्धा ग्राम : इन ग्रामो में राजा कर नही लेता था, किन्तु उन्हे युद्ध काल में प्रत्येक परिवार से योग्य सैनिको की आशा रहती थी। करदेया ग्राम : इन ग्रामों में धन के रूप में कर नही लिया जाता था। धन के बदले में गॉव वाले अनाज देते थे। इन चारो प्रकार के गॉवो में पंचायती व्यवस्था थी। दसवी शताब्दी के शुक नीति-सार में भी ग्राम पंचायतो का विस्तृत संगठन देखने को मिलता है। उक्त वर्णन से यह पता चला है कि उस समय ग्राम पंचायतो निर्मित होती थी। ये गॉव पंचायतो का संगठन आधुनिक गणतन्त्र जैसा होता हथा। यह संगठन पॉच निर्वाचित व्यक्तियों को मिलकर हुआ करता था। इसी कारण इसे पंचायत नाम से विभूषित किया गया। ये निर्वाचित व्यक्ति वयोवृद्धि, अनुभवी तथा प्रभावशाली होते थे। यही कारण है इनके मुख से निकला हुआ प्रत्येक शब्द कानून से भी अधिक प्रभावशाली होता था। वास्तव में 'पंच परमेश्वर' की धारणा उस प्राचीन युग की अद्भुत कल्पना है जोकि सदियों से चली आ रही है। 18वीं शताब्दी मे भारत में विद्धिश शासन का आरम्भ होने से पंचायतो की शक्ति पर सबसे अधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इस समय अनेक ऐसी परिस्थितियॉ उत्पन्न हुई, जिनके फलस्वरू प पंचायतो की उपयोगिता समाप्त होने लगी। इन परिस्थितियो में जमीदार प्रथा, नगरो में जमीदारी प्रथा, नगरों में न्यायलयो की स्थापना, पुलिस विभाग का ग्रामीण जीवन में हस्तक्षेप, परिचमीकर से उत्पन्न व्यक्तिवाद, औद्योगिकरण तथा नवीन भूमि व्यवस्था आदि प्रमुख दशाएॅ थी।

* शोध छात्र (यूजीसी-एस0आर0एफ0) राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

स्वतन्त्र भारत में पंचायती राज व्यवस्था – स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण हो उठा। संविधान बनने से पहले कुछ राज्यो में ग्राम पंचायत कानून पास किये जा चुके थे। ग्राम पंचायत को बहुत से कार्य सौपे गये जिससे उन्हे अधिक स्वतन्त्रता से ग्रामीण विकास के अवसर प्राप्त हो सके। महात्मा गॉधी ने भी पंचायती राज को ही गॉव की स्वाधीनता एवं समृद्धि का साधन मानते हुए लिखा कि 'स्वतन्त्रता नीचे से प्रारम्भ होनी चाहिए, इस प्रकार प्रत्येक गॉव एक गणराज्य अथवा पंचायत का राज होगा, ताकि वह अपना सारा प्रबन्ध स्वयं चला सके।' इसलिए भारत के संविधान में ग्राम पंचायतो का विधान किया गया। अनुच्छेद–40 में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया कि 'राज्य को यह प्रयास करना चाहिये कि ग्राम पंचायतो को प्रचालित करने के सम्बन्ध में निर्णय करने से पूर्व ही विभिन्न राज्यो की कांग्रेस सरकारो ने पंचायत संस्थाओं को पुनर्जीवित करने का निर्णय कर लिया था। इस सम्बध में उत्तर प्रदेश अग्रणी राज्य रहा, जिसमें 1947 में विस्तृत ग्राम पंचायत अधिनियम पारित हुआ, जिसने अन्य राज्यों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत किया।'

पंचायतीराज व्यवस्था के सुदृढिकरण हेतु गठित समितिया – स्वतन्त्रता के पश्चात पंचायती राज्य व्यवस्था को मजबूत करने के उद्देश्य से समय–समय पर अनेक समितियॉ कठित की गयी है, जिनमें कुछ प्रमुख समितियॉ निम्नवत् है –

बलवंत राय मेहता समिति, 1957 – बलवंत राय मेहता समिति की रिपोर्ट 24 नवम्बर, 1957 को सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की गयी थी। इस समिति का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना था कि लोगो में पंचायतो के प्रति उत्साह क्यो कम है तथा इस समस्या पर पार पाने के लिए क्या तरिके अपनाएं जाने चाहिए। इस समिति का मुख्य निष्कर्ष यह था कि आम लोगों को ग्रामीण विकास योजनाओं में भागीदारी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि योजना व प्रशासनिक सत्ता दोनो का विकेन्द्रीकरण हो। इस रिपोर्ट में पहली बार विकेन्द्रीकरण के साथ लोकतान्त्रिक शब्द जोड़ा गया है। इसका अर्थ यह है कि जिस लोकतान्त्रिक प्रणाली को हमारे देश ने अपनाया है उनमें प्रत्येक ग्रामीण सक्रिय भाग ले। आम नागरिक यह महसूस करे कि शासन प्रक्रिया में उसका भी योगदान है। रिपोर्ट के अनुसार सामुदायिक विकास व राष्ट्रीय विस्तार सेवा का विकास इसलिए नही हो पाया कि इनमें जन सहभागिता के तत्वों का अभाव था। जनता स्थानीय कार्यकलापों में तभी रूचि लेगी जब उनके लिए प्रतिनिधि सभाये गठित हों प्रतिवेदन मे कहा गया है कि 'बिना जिम्मेदारी और अधिकारों के विकास कार्यो में प्रगति नही हो सकती। सामुदायिक विकास सही अर्थो में तभी हो सकता है, जब समुदाय अपनी समस्याओं को समझे, आवश्यक अधिकारो का प्रयोग कर सके। इस उद्देश्य से हम शीघ्र ही चुने हुए विधि सम्मत एवं निर्वाचित निकायो की स्थापना करने की सिफारिशे करते है और आवश्यक संसाधन, अधिकर तथा प्राधिकार सौपें जोन की भी सिफारिश करते है। इस प्रतिवेदन में यह भी कहा गया कि इन निकायों को अपना कार्य करने के लिए समुचित वित्तीय साधन मिलना आवश्यक है। इसके लिए एक कानून बनाकर आय के कुछ साधन इन्हे सौप देने चाहिए। इन साधनों द्वारा जिन कार्यो के सम्पादन की समिति ने सिफारिश की थी वे है – कृषि, पशुपाल, सहकारिता, लघु सिचाई कार्य, ग्रामोद्योग, प्राथमिक शिक्षा, स्थानीय संचार, सफाई व्यवस्था व चिकित्सा आदि है।

अशोक मेहता समिति, 1977 – 12 दिसम्बर, 1977 को अशोक मेहता की अध्यक्षता में पंचायती राज समिति का गठन हुआ। इस समिति ने पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने हेतु निम्न सुझाव दिये –

1. पंचायते दो स्तरो पर गठित होनी चाहिए : जिला स्तर पर जिला परिषद तथा मंडल/ब्लाक स्तर पर मंडल पंचायत (समिति ने ग्राम पंचायत स्थापित करने की सिफारिश नही की) औसतन 15000 से 20000 तक जनसंख्या पर एक मण्डल पंचायत होनी चाहिए। ग्रामों को ग्राम समितियों के माध्यम से मण्डल पंचायत में शामिल किया जाना चाहिए। चुनावो में अनुसूचित जाति व जनजाति को उनकी जनसंख्या को आधार पर प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। पंचायतो का कार्यकाल 4 वर्ष का होना चाहिए। मण्डल व जिला स्तर पर दो ऐसी महिलाओं को भी जिन्होने जिला परिषद चुनावो में अधिकतम मत प्राप्त किये हो, परिषद का सदस्य बनाया जाएगा। जिला परिषद विभिन्न समितियो के द्वारा कार्या करेगी। ग्राम सभा का गठन होगा जिसकी दो सभाएँ होगी। पंचयती राज चुनावों में राजनैतिक दलों की भागीदारी होगी।
2. पंचायतो का कार्य सूची विकास की गतिशीलता के आधार पर निर्धारित होनी चाहिए। विकेन्द्रीकरण को राजनैतिक खैरात या प्रशासनिक रियायत नही समझना चाहिए। प्रभावी कार्यान्वयन के लिए राज्य सरकारों को सम्बन्धित स्थानीय स्तरो पर पर्याप्त अधिकारो और कार्यो का विकेन्द्रीकरण कार्यक्रम संभाले तथा जिलो स्तर पर योजना बनाए। पंचायतो को विकास कार्य सौपना तब तक अपूर्ण रहेगा जब तक कि पंचायतो को स्वंय निर्णय लेने और अपनी निजी आवश्यकता के अनुसार कार्यक्रम बनाने का अधिकार नही दिया जाता।
3. पंचायतो को केवल जनता के विचार जानने की सभा न बनाकर उन्हे उपलब्ध संसाधनो से स्वयं अपने लि योजना तैयार करने में सक्षम बनाया जाना चाहिए। जिला परिषद जिले की योजना बनाए जिला स्तर पर जिला योजना बनाने के लिए योग्य समिति का गठन किया जाना चहिए।
4. पंचायती राज संस्थाओ के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गो को लाभान्वित करने के लिए कार्यक्रम तैयार करने होगे।
5. राज्य सरकार के कार्यो को विकेन्द्रीकरण करने के साथ–साथ सभी जिला स्तर के अधिकारी को जिला परिषद तथा उसके नीचे के स्तरों के अधीन रखना होगा। श्रेणी–1 और श्रेणी–2 का राजपत्रित कर्मचारी वर्ग राज्य सरकार के कैडर में रहे जबकि श्रेणी–3 तथा श्रेणी–4 का कर्मचारी वर्ग पूरी तरह से पंचायती राज सरकारो को हस्तान्तरिक कर दिया जाय। जिला परिषद के कर्मचारी वर्ग की नियुक्ति स्वतन्त्र राज्य तथा जिला स्तर के बोर्डो द्वारा की जानी चाहिए। पंचायतो के लिए अलग से एक मंत्री होना चाहिए।
6. राज्य सरकार द्वारा बजट हस्तान्तरिक करने के अलावां पंचायतो को स्वयं भी अपने वित्तीय साधन जुटाने होगें तभी वह सही ढंग से अपने दायित्वों को निभा सकती है। वसूल किये गये ऐच्छिक करो के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। भू–राजस्व पर उपकर, जन्मदर पर उपकर स्टाम्प शुल्क पर आदि राजस्व के महत्वपूर्ण साधन है ये सब पंचायतो को सौपें जाने चाहिए। पंचायती राज वित्त नियम स्थापित किये जाने चाहिए।

जी0वी0के0 राव समिति, 1985 – योजना आयोग द्वारा इस समिति का गठन 25 मार्च 1985 को ग्रामीण विकास व गरीबी उन्मूलन से सम्बन्धित प्रशासानिक व्यवस्था की समीक्षा करने के लिए किया गया था। समिति ने अपनी रिपोर्ट 1985 में प्रस्तुत की। इस समिति ने पंचायतो की आर्थिक स्थिति उनके चुनाव और कार्य कलापों पर प्रकाश डालते हुए कहा

कि राज्य सरकारें लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के प्रति उदासीन रही है। अधिकांश राज्यो में पंचायते शक्ति व अधिकार तथा संसाधनो के अभाव में निष्प्रभावी होती जा रही है। समिति ने पंचायतो को मजबूत बनाने के लिए निम्न सुझाव दिये –

1. योजनाऍं तैयार करने, निर्णय लेने व उसे लागू करने का कार्य पंचयतो को सौपा जाए, क्योंकि वे जनता के अधिक निकट है। राज्य की शक्ति को जिला स्तर पर पंचायतो को सौपना आवश्यक है।
2. जिला स्तर के सभी कार्यालय स्पष्ट रूप से जिला परिषद के अधीन होने चाहिए। कृषि, पशुपालन, सहकारिता, लघु सिचाई, प्राथमिक व प्रौढ़शिक्षा, लोक स्वास्थ्य, ग्रामीण जल आपूर्ति, जिले की सड़के, लघु व ग्रामोद्योग, अनुसूचित जाति का कल्याण, समाज व महिला कल्याण और सामाजिक वन पालन जिला परिषदो को दे देने चाहिए।
3. कार्य सम्पादन के लिए जिला परिषदो की विभिन्न समितियों गठित की जानी चाहिए।
4. जिला स्तर से नीचे पंचायत समिति या मण्डल पंचायतो गठित की जानी चाहिए और उनका गठन व संरचना जिला परिषद जैसी ही होनी चाहिए। प्रत्येक गॉव में ग्राम सभा हो, यह बात भी समिति ने कही।
5. पंचायत समिति या ग्राम व मण्डल पंचायत पर बच्चो, महिलाओ व प्रौढ़ो के कल्याण के लिए एक उपसमिति का गठन होना चाहिए जिसके सदस्य मुख्यत: महिलाऍं होनी चाहिए।
6. जो विभिन्न समाजसेवी संस्थाऍं ग्रामो में कार्य कर रही हैं पंचायतो को विभिन्न समितियों के माध्यम से उनकी सेवाऍं लेनी चाहिए।

एल0एम0 सिंधवी समिति, 1986 – इस समिति कगठन 1986 में किया गया था। इसने ग्राम सभा को महत्व दिया। ग्राम सभा को लोकतन्त्र के केन्द्र बिन्दु के रूप में देखा गया। इसकी कुछ मुख्य सिफारिशे है –

1. स्थानीय स्वशासन को संवैधानिक मान्यता दी जाय।
2. पंचायत स्तर पर चुनाव नियन्त्रित और बिना किसी देरी के कराये जाये।
3. पंचायती राज के काम करने के ढंग से सम्बन्धित मामलो का निपटारा करने के लिए हर एक राज्य में पंचायती राज न्यायिक (कानूनी) अधिकरण का गठन किया जाए।
4. पंचायतो को प्रभावशाली ढंग से काम करने के लिए काफी मात्रा में धन की व्यवस्था की जाए।
5. राजनीतिक दलो से जुड़े लोगो की भागीदारी को प्रोत्साहित न किया जाय।
6. मामलो के निपटान के लिए न्याय पंचायत को मध्यस्थता या बीच बचाव का कार्य सौपा जाए।

73वॉ संविधान संशोधन अधिनियम, 1993 – संविधान के 73वें संशोधन के द्वारा संविधान में एक नया अध्याय-9 जोड़ा गया। इस अध्याय में 16 अनुच्छेद और एक अनुसूची (ग्यारहवी अनुसूची) जोड़ी गई। इस अधिनियम के पारित होने से पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ। यह अधिनियम 24 अप्रैल 1993 से सम्पूर्ण भारत में प्रभावशील हो गया। इस अधिनियम की मुख्य विशेषताऍं निम्नलिखित है –

1. **ग्राम सभा–** प्रत्येक गॉव में एक ग्राम सभा होगी और वह राज्य विधान मण्डल द्वारा उपलब्ध कराये गये अधिकारों का उपयोग और कार्यो का निष्पादन करेगी।
2. पंचायतो का गठन अनुच्छेद-243(ख) में त्रिस्तरीय पंचायती राज का प्रावधान किया गया है। प्रत्येक राज्य में ग्राम, मध्यवर्ती और जिला स्तर पर पंचायतो का गठन किया जायेगा, किन्तु मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतो का गठन उस राज्य में नही किया जायेगा जिसकी आबादी 20 लाख से अधिक नही है।
3. **पंचायतो की संरचना –** ग्राम स्तर, मध्यवत्री स्तर तथा जिला स्तर पर पंचायतो के सभी सदस्यो का चुनाव प्रत्यक्ष मतदान द्वारा किया जायेगा। मध्यवर्ती और जिला स्तर पर पंचायतो के अध्यक्षो का चुनाव सीधे न होकर निर्वाचित सदस्यो द्वारा किया जयेगा, लेकिन ग्राम स्तर पर अध्यक्ष का चयन करने का निर्णय राज्य विधान मण्डल को दिया गया है।
4. **पंचातयो में आरक्षण–** (1) प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जातियो और अनुसूचित जनजातियो के लिए उनकी जनसंख्या के अनपालन मे तीनो स्तरो पर स्थान आरक्षित रहेगे। आरक्षित स्थानो में एक तिहाई स्थान इन वर्गो की महिलाओ के लिए आरक्षित रहेगे। (2) प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानो की कुल संख्या के एक तिहाई स्थान जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जातियो और अनुसूचित जनजातियो की महिलाओं के लिए आरक्षित सीटो की संख्या सहीत। महिलाओ के लिए आरक्षित रहेगे, और चक्रानुसार से पंचायत के विभिन्न निर्वाचित क्षेत्रो को अवटित किये जायेगे।
5. **पंचायतो का कार्यकाल –** प्रत्येक राज्य की पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल सामान्य रूप से पॉच वर्ष निश्चित किया गया है, किन्तु अगर कोई पंचायत विघटित कर दी जाती है तो नयी पंचायत का गठन शेष अवधि के लिये किया जायेगा।
6. **सदस्यो की योग्यता –** पंचायत सदस्य निर्वाचित होने के लिए निम्न योग्यतायें होनी चाहिए। (1) व्यक्ति ने 21 वर्ष की आयु पूरी कर ली हो, (2) वह व्यक्ति प्रवृत्ति विधि के अधीन राज्य विधान मण्डल के लिए निर्वाचित होने की योग्यता (आयु के अतिरिक्त अन्य योग्यताऍं) रखता हो, (3) वह राज्य विधान मण्डल द्वारा बनाई गयी विधि के अधीन पंचायत का सदस्य निर्वाचित होने के योग्य हो।
7. **पंचायतो का निर्वाचन –** पंचायत के लिए निर्वाचन नामावली तैयार करने और पंचायतो के सभी निर्वाचनो के संचालन का अधीक्षण, निर्देशन और नियन्त्रण निर्वाचन आयोग में निहित होगा। इसके लिए राज्यपाल द्वारा नियुक्त किया गया एक राज्य निर्वाचन आमुक्त होगा, जिसे केवल उसी रीति और उसी आधार पर उसके पद से हटाया जा सकता है जैसे कि उच्च न्यायालय के न्यायधीश को हटाया जाता है।
8. **पंचायतो की शक्तियॉं, प्रधिकार और उत्तरदायित्व –** संविधान के उपबन्धो के अधीन रहते हुए राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा पंचायतो को ऐसी शक्तियॉं और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा, जो वह उन्हे स्वायत्त शासन की संस्थाओं क रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक समझे। ग्यारहवी अनुसूची ऐसे विषयो के सम्बध में है जो राज्य सरकार आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए उन्हे सौपना चाहे। ग्यारहवी अनुसूची में पंचायतो के लिए उन्हे सौपना चाहे।

इस प्रकार संविधान के तिहत्तरवे संशोधन अधिनियम के लागू होने से भारत में सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में एक नई शुरूआत हुई है। जिसने वास्तव में भारतीय पंचायती व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण को मजबूत किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. महीपाल, पंचायती राज : अतीत, वर्तमान और भविष्य, पेग्विन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996
2. महीपाल, पंचायती राज चुनौतियों एवं सम्भावनाएँ, राष्ट्रीय पुस्तक न्याय, नई दिल्ली, 2014
3. नेहरू , पं0 जवाहर लाल, समुदायिक विकास और पंचायती राज, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, दिल्ली, 1965
4. सिंह, डॉ0 विजेन्द्र, देश की राजनीतिक व्यवस्था में पंचायतो को योगदान, पंचायत एवं समाज सेवा विभाग, भोपाल, म0प्र0
5. त्रिपाठी, डॉ0 भूपेश मणि, पंचायतीराज व्यवस्था एक परिचय, भारती पब्लिशर्स एडं डिस्ट्रीब्यूटर्स, फैजाबाद, उ0प्र0, 2021
6. माहेश्वरी, एस0आर0 भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, अगरा, 2009
7. कटारिया, डॉ0 सुरेन्द्र, पंचायतीराज संस्थाएँ अतीत, वर्तमान और भविष्य, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2010
8. बलवन्त राय मेहता कमेटी ऑन प्लान प्रोजेक्ट्स स्टडी टीम फार कम्यूनिटी डेवलेपमेंट ए.ड नेशनल इक्सटेन्सन सर्विस, प्लानिंग कमीशन, नई दिल्ली, 1957
9. अशोक मेहता डिपार्टमेंट आफ रूरल डेवलेपमेंट कमेटी ऑन पंचायती राज इन्स्टिट्यूशनशन्स मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एंड इरीगेशन, गवर्नमेंट ऑफ इ.डिया प्रेस, नई दिल्ली, 1978

****

भारत में जाति, सामाजिक संरचना और ग्रामीण समुदाय : एक विवेचना

सत्येन्द्र सिंह *

प्रस्तावना - ऐतिहासिक रूप से भारत में जाति व्यवस्था ने व्यक्तियो के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन के लिए नियामकिय आधार प्रस्तुत किये, जिससे भारत में एक विशिष्ट प्रकार की सामाजिक संरचना का निर्माण हुआ है। जो ग्रामीण भारतीय समुदाय के लिए निर्णायक सिद्ध हुई। चूंकि भारत में ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति कार्य की विशिष्टता के सिद्धान्त के आधार पर विकसित हुई थी जो प्रारम्भ में वर्णाश्रम व्यवस्था आधारित तथा बाद में पैतृक कार्यो पर निर्भर हो गई। जिसमें कुछ आवश्यक एवं विशिष्ट कार्यो के सम्पादन के लिए कुछ व्यक्तियो को कुछ विशिष्ट भूमिकाए सौपी गई थी इनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के अतिरिक्त धोबी, नाई, जुलाहा, चर्मकार एवं बढ़ई आदि थें। कालान्तर में इन कार्यो को करने वाले व्यक्तियों एवं उनके कार्यो से उनकी जाति का निर्धारण होना शुरू हुआ। जो उच्च-निम्न में उनके विभाजन आदि की प्रक्रिया से होते हुए, उन्हे वर्ण-जाति की व्यवस्था में स्थापित कर एक नवीन सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करता है। इस नवीन सामाजिक व्यवस्था में इनके आपसी सम्बन्धो से जिस प्रकार की सामाजिक संरचना का निर्माण हुआ। वह ग्रामीण भारतीय समुदाय का एक आवश्यक अंग है जो वर्तमान में भी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का परिचायक भी है।

जाति-व्यवस्था का अर्थ एवं स्वरूप - समकालीन भारत में जाति-व्यवस्था, राजनीतिक एवं सामाजिक संरचना की महत्वपूर्ण घटक है। भारतीय सामाजिक एवं सामाजिक संरचना के विशुद्ध, विवेचन के उपरांत हम कह सकते है कि जाति-व्यवस्था सामाजिक संगठनो के निर्माण का प्रमुख आधार रहा है।यह सर्वविदित है कि जाति की उत्पत्ति संस्कृत की 'जन' धातु से मानी जाती है। जिसका अर्थ 'प्रजाति' 'जन्म' अथवा भेद से किया जाता है। अंग्रेजी में जाति के लिए कास्ट शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह कास्ट शब्द पुर्तगाली शब्द 'कास्टा' से बना है जिसका अर्थ है नस्ल, प्रजाति एवं जन्म से है। कास्ट लैटिन शब्द 'कास्टा' से व्युत्पन्न है।

आधुनिक समाजशास्त्रियो ने भारतीय जाति प्रथा पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार किया है तथा यह निष्कर्ष निकाला है कि जाति प्रथा जन्म और वर्गीय ढाँचे पर आधारित अत्यन्त स्थानीय एवं गतिशील प्रथा है। संभवत: इसलिए समाजशात्रियों को जाति शब्द परिमाषित करना दश्कर सिद्ध हुआ। जे0एच0 हट्टन जैसे प्रसिद्ध समाजशास्त्री भी जाति शब्द की सर्वमान्य परिभाषा देने में असमर्थ है। श्री हट्टन के अनुसार जाति शब्द को परिभाषित करना एक जटिल कार्य है इतना ही नही प्रख्यात समाजशास्त्री श्री रिजले एवं केतकर ने भी जाति-प्रथा को परिभाषित करने का यथोचित प्रयत्न किया है किन्तु ये भी अपने प्रयास में असफल रहे है। जाति-प्रथा की इसी जटीलता के कारण प्रसिद्ध विद्धान मार्क गेलेंटर ने भारतीय जाति-व्यवस्था को कक्षों में विभक्त समाज माना है साथ ही श्री गेलेंटर ने भारतीय समाज को विविध जीवन शैली वाला राज्य बताया है।

फिर भी जाति व्यवस्था के सम्बन्ध में आन्द्र बेतई का मत है कि विभिन्न परिस्थितियों में अलग-अलग लोगो के लिए जाति का अलग-अलग अर्थ है लेकिन सभी के लिए जन्म के आधार पर एक समूह/उपसमूह से जुड़े होने का भाव विशिष्ट है यही भाव सब लोगो का एक सामस्थ बिन्दु है उच्च निम्न जाति प्रस्थिति, ग्रामीण/नगरीय पृष्ट भूमि, शिक्षा का स्तर, व्यवसाय की प्रकृति और गहनता आदि कारको के आधार पर इस भाव की समझ और गहनता प्रत्येक व्यक्ति में समान नही है। किन्तु उससे जुडावे का भाव अपने आप में खास है जाति को परिभाषित करते हुए वेतई ने कहा है कि 'जति एक लघु व लोगो का नामित समूह है जिसका आधार अन्त: विवाह, वंशानुगत सदस्यता तथा एक विशिष्ट जीवन शैली है कभी-कभी एक विशेष परम्परागत व्यवस्था और एक सोपानीय व्यवस्था में कुछ सीमा तक विशेष सांस्कारिक प्रस्थिति के संदर्भ में जाति को समझा जा सकता है। वेतई आगे कहते है कि जाति व्यवस्था द्वारा हिन्दू समाज के विभाजनकारी स्वरूप की संरचना में जाति को एक खण्ड समझा जा सकता है जिसका इन खण्डो की व्यवस्था में कमोवेश एक विशिष्ट स्थान है। वही कोनिग ने लिखा है कि 'जाति की प्रतिष्ठित भूमि भारत है। जाति व्यवस्था एक केन्द्रिय बिन्दु है जिसके चारो ओर सदियो से भारतीय समाज गतिमान रहा है। जाति का पद व्यक्ति को जन्म से प्राप्त होता है तथा जाति की सदस्यता केवल उसमें पैदा होने वाले व्यक्तियो तक ही सीमित होती है। प्रत्येक जाति अपने सदस्यों पर अन्य जातियो के सदस्यों के साथ रहने एवं खाने पीने पर प्रतिबन्ध लगाती है।'

इस प्रकार जाति एक सामाजिक समूह है जिसमें एक विशेष जाति की सदस्यता के केवल उन्ही व्यक्तियो तक सीमित रहती है। जिन्होने उसी जाति में जन्म लिया हो तथा जिसके सदस्यो पर एक दृढ़ सामाजिक नियम के द्वारा अपने समूह के बाहर विवाह करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है।

जति-व्यवस्था का बदलता स्वरूप - जाति व्यवस्था के इतिहास पर दृष्टि डाले तो ज्ञात होता है कि वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक जाति व्यवस्था के स्वरूप में पर्याप्त अन्तर आया है। विभिन्न काल में जाति का स्वरू प भिन्न-भिन्न रहा है। भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना के बाद नई सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियो ने जन्म लिया। अंग्रेजी शासन काल में उद्योगों का विकास और सामन्तशाही व्यवस्था खत्म हो गई। भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जाति व्यवस्था के निषेधो, आदेशो

* शोध छात्र (यूजीसी-एस0आर0एफ0) राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

एवं मूलभूत प्रयासो से क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है। आज व्यक्ति की भावनाऍ केवल जाति तक सीमित नही रह गई है उसका पद, व्यवस्था और कर्तव्य का निर्धरण अब जाति पर नही व्यक्तिगत योग्यता पर आधारित हो गया है। पहले जाति व्यवस्था की संचना में ब्राह्मणों का प्रभुत्व रहा है इसकी शक्ति सर्वोपरि है लेकिन आज इसका रूप परिवर्तित हो गया है क्योंकि जीवन की उच्चता और निम्नता अब जाति पर आधारित नही रह गई है। पहले अन्तर्विवाही व्यवस्था होने के कारण जाति अपने सदस्यो पर विवाह के सम्बंध में भी अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगाती थी पर आज के युग में वैवाहिक मान्यताऍ पूरी तरह से बदल गई है जाति सामाजिक सहवास के प्रतिबन्धो पर भी निषेध लगाती थी लेकिन आज के युग में ये निषेध पूर्णत: समाप्त हो गये है आज व्यक्ति विशाल नगरों में रहता है और उसके सामाजिक सम्बंध भी जाति की अपेक्षा उसके कार्यो द्वारा अधिक निर्देशित होने लगे है।

इस प्रकार वर्तमान समय में औधोगिकरण, आधुनिकरण, अंग्रेजीकरण, संचार एवं यातायात के साधन, प्रौद्योगिकी तथा भारतीय संविधान आदि ने जाति-व्यवस्था के परम्परागत स्वरूप को परिवर्तित किया है निम्न अथवा उच्च जाति से सम्बन्धित निषेधों एवं विशेषाधिकारो की कठोर व्यवस्था को कम अथवा खत्म कर दिया है आज व्यक्ति की पहचान जाति से नही वर्ग के माध्यम से होने लगी है। अत: जाति, वर्ग के रूप में परिवर्तित होती दिख रही है हालांकि नगरों में जाति-व्यवस्था के स्वरूप उसके कार्यो एवं महत्व में परिवर्तन हुआ है परन्तु गॉवो में आज भी यह अपने परम्परागत स्वरूप को बहुत हद तक बनाये हुए है। गॅवो में आज भी जाति से सम्बन्धित छुआछूत, भोजन, विवाह इत्यादि पर प्रतिबन्ध देखा जा सकता है। आज भूमण्डलीकरण और उत्तर-आधुनिकता के इस युग में समाज-व्यवस्था में तीव्र परिवर्तन आया है परिवार विवाह, जाति-व्यवस्था सभी परिवर्तित हो रही है। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मानवीय व्यवहार के नवीन प्रतिमान उदित हुए है।

वैश्वीकरण का जातीय संरचना पर प्रभाव :वैश्वीकरण का प्रमुख पहलू सिर्फ आर्थिक न होकर, इसने समाज को सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से भी प्रभावित किया है। जहॉ भारतीय समाज में क्षेत्रीय परम्परा हावी रही वही वैश्वीकरण के फलस्वरूप उस क्षेत्रिय परम्परा को वैश्विक परम्परा के रूप में बदल दिया गया। यदि प्राचीनकाल में वैदिक युग से शुरूआत करे तो पाते है कि समाज वर्णो में बटा था यहाँ पर कोई जातीय परिकल्पना नही थी। वर्ण और व्यवसाय आपसे में बटे थे कालान्तर में इन्ही वर्णो से जातियों की उत्पत्ति हुई। जिनमें पदानुक्रम की व्यवस्था मौजूद रही है तथा वर्तमान में भी वह पदानुक्रम व्यवस्था मौजूद है। अत: मौलिक संरचनो में कोई बदलाव नही हुआ लेकिन वैश्वीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप इस जातीय संरचना में परिवर्तन अवश्य हुआ है।

जातियों के बारे में समाजशास्त्रियों ने वैश्वीकरण को मुख्य रूप से एक संरचनात्मक अवधारणा के रूप में देखने का प्रयास किया है तो कतिपय मानवशास्त्रियो ने इसे एक सांसकृतिक अवधारणा के रूप में देखा। लेकिन जब हम जाति व्यवस्था को उसकी पूरी समग्रता में देखते है तो ये दोनो अवधारणाऍ एक-दूसरे की पूरक प्रतीत होती है। संरचनात्मक परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत उदाहरण के लिए प्रभुत्व की अधिनस्थता, बचत और शोषण, विशेषाधिकार तथा वंचन सन्दर्भ मुद्दे होते है। सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में विचारो और मूल्यो पर बल दिया जाता है अर्थात पवित्रता-अपवित्रता विवाह के नियम और अन्तजातिय सम्बन्धो के नियम आदि का अध्ययन किया जाता है। संरचनात्मक परिवर्तन की बात करे तो आज के समय में जातियो के बीच प्रभुत्व और अधिनस्थत कम हुई है इसका प्रमुख कारण आर्थिक रहा है वैश्वीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप समाज में प्रत्येक वर्ग को आर्थिक रूप से उन्नत होने का समान अवसर प्राप्त हुआ है अत: जातीय संरचना में परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है।

इस प्रकार वैश्वीकरण की प्रक्रिया से पूर्व का समाज और बाद के समाज में तुलनात्मक रूप से विश्लेषण किया जाये तो पता चलता है कि जातियो मे संरचनात्मक परिवर्तत अवश्य हुए है और इन संरचनात्मक परिवर्तनो को सांस्कृतिक परिवर्तनो के अन्तर्गत भी देखा जा सकता है।

भारतीय समाजिक संरचना और विवाह के बदले प्रतिमान – विश्व में कोई भी मानव समाज पूर्ण समानता पर आधारित नही है यही कारण है कि स्तरीकरण एक विश्वव्यापी प्रधटना है विश्व में स्तरीकरण की जो व्यवस्था है उसे मुख्यत: दो भागों में विभाजित किया जाता है – खुला स्तरीकरण व बन्द स्तरीकण। खुले सतरीकरण का प्रतिनिधित्व 'वर्ग' करता है जबकि बन्द स्तरीकरण का 'जाति'। जाति वह स्तरीकण है जो जन्म पर आधारित है तथा जिसमें परिवर्तन की सम्भावना नग्ण्य मानी जाति रही है। यहाँ यह भी उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि भारत में जाति न सिर्फ स्तरीकरण है अपितु एक व्यवस्था है जो सम्बोधन, सहवास, सहभोज तथा जातिगत सम्बंध पर आधारित है जाति के अस्तित्व व निरन्तरता को बनाये रखने के लिये इसे जाति अन्तर्विवाह तथा गोत्र वहिविर्वाह के नियम से इस प्रकार जोड़ा गया है कि विवाह को जाति से अलग नही किया जा सकता। यही कारण है कि जाति अन्तर्विवाह को जाति व्यवस्था की आत्मा कहा जाता है। यह एक कारण और भी यही कारण है कि जाति व्यवस्था व विवाह के नियम अभिभाजनीय तथा अपरिवर्तनीय से प्रतीत होते है लेकिन परिवर्तन प्रकृति का नियम है जिसका अपवाद स्वयं समाज भी नही है। अत: अपरिवर्तनीय जाति व्यवस्था व वैवाहिक नियम में आद्योगिकरण, आधुनिकरण, नकरीकरण व पश्चिमीकरण की विचारधारा के कारण जातिगत वैवाहिक नियमो में परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे है इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप अन्तर्जातीय प्रेम-विवाह की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है यद्यपि मानवतावादी व प्रतिशील विचारधारको के लिए इस प्रकार परिवर्तन स्वागत योग्य है व भी प्रंशासनीय है लेकिन परम्परावादी व रूढ़िवादी लोगो के लिये एक चुनौती है यही कारण है कि अन्तजातीय प्रेम विवाह करने वाले दम्पत्तियों के समक्ष संघर्ष, समायोजन व सामीकरण की चुनौतियॉ आती है।

इस प्रकार समाज के विकास के साथ-साथ विवाह के स्वरूप में भी परिवर्तन हुये है। आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण आदि के कारण आज अंतर्विवाह एवं बहिर्विवाह संबधी नियम कमजोर हुए है हिन्दु विवाह अधिनियम 1955 में संगोत्र बहिर्विवाह और प्रवर बहिर्विवाह को अमान्य कर दिया गया है। तार्किक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रसार से अब विवाह केवल धार्मिक कर्तव्य न रहकर प्रेम, सहयोग व आनन्द हेतु किया जाने लगा है। आधुनिक शिक्षा एवं जागरूकता के कारण विवाह की आयु में वृद्धि हुई है। युवक-युवतियॉ जीवनसाथी के चयन मे अपनी पसंद-नापसंद के के प्रति अधिक मुखर हुये है। विधवा पुनर्विवाह, दिव्यंगजनों के विवाह हो रहे है तथा समाज में इनकी स्वीकार्यता भी वढ़ी है। सामूहिक विवाह सम्मेलन व परिचय सम्मेलन के आयोजन आदि भी बढे है तथा ये द्वितीयक संस्थाये (विवाह सम्मेलन आयोजन समितियॉ आदि) समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगी है। वर्तमान में लगभग सभी जाति/धर्म की समितियों समाज में विधमान है जो जातीय संगठन अथवा जाति विशेष के नवयुको हेतु सामूहिक विवाह एवं परिचय सम्मेलन आयोजित कर रही है।

ग्रामीण समुदाय एवं उसका बदलता हुआ स्वरूप – प्रारम्भिक काल से

ही मानव जीवन का निवास स्थान ग्रामीण समुदाय रहा है धीरे-धीरे एक ऐसा समय आया जब हमारी ग्रामीण जनसंख्या चरमोत्कर्ष पर पहुच गई। आज औद्योगिकरण, शहरीकरण आदि का प्रभाव मानव को शहर की तरफ प्रोत्साहित तो कर रहा है लेकिन आज भी शहरी दूषित वातावरण से प्रभावित लोग ग्रामीण पवित्रता एवं शुद्धता को देखकर ग्रामीण समुदाय मे बसने के लिए प्रोत्साहित हो रहे है।

आज ग्रामीण समुदाय के बदलते परिवेश में ग्रामीण समुदाय को परिभाषित करना कठिन है ग्रामीण समुदाय की कुछ प्राचीन प्रचलित विशेषताएँ जैसे कृषि का मुख्य व्यवस्था होना, हम की भावना, साधरण जीवन आदि सार्वभौमिक थी लेकिन आज औद्योगिकरण, बढती हुई जनसंख्या एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रमों आदि का प्रभाव ग्रामीण समुदाय में कुछ आश्चर्यजनक परिवर्तन ले आया है इसलिए ग्रामीण जीवन, शहरी जीवन के समीप आता दिखाई दे रहा है ग्रामीण समुदाय की परिभाषाएं निम्नलिखित है - एन0एल0 सिम्स के अनुसार - 'समाजशास्त्र में ग्रामीण समुदाय शब्द को कुछ ऐसे विस्तृत क्षेत्रो तक सीमित कर देने की बढ़ती हुई प्रवृत्ति है जिनमें अधिकतर मानवीय स्वार्थो की पूर्ति होती है।' मेरिल और एलरिज के अनुसार 'ग्रामीण समुदाय के अन्तर्गत संस्थाओ और ऐसे वक्तियों का संकलन होता है जो छोटे से केन्द्र के चारो और संगठित होते है तथा सामान्य प्राकृतिक हितो में भाग लेते है।' इस प्रकार ग्रामीण समुदाय एक ऐसे भू-क्षेत्र का नाम है जहॉ के व्यक्तियों का जीवन कृषि एवं सम्बंधित कार्य पर निर्भर हो और उनमें एक दूसरे के प्रति अधिक लगाव नजदीक का सम्बध तथा उनका जीवन सामाजिक मूल्यों एवं संस्थाओं से प्रभावित होता है।

ग्रामीण समुदाय की विशेषताएँ -

1. कृषि व्यवसाय
2. प्राकृतिक निकटता
3. जातिवाद एवं धर्म का अधिक महत्व
4. सरल और सादा जीवन
5. संयुक्त परिवार
6. सामाजिक जीवन में समीपता
7. सामुदायिक भावना
8. स्त्रियों की निम्न स्थिति
9. धर्म एवं परम्परागत बातों में अर्धिक विश्वास
10. भाग्यवादिता एवं शिक्षा का अभाव

परिवर्तन समाज का नियम है इसलिए समय के साथ-साथ समाज बदलता रहता है। भले ही बदलाव की गति मंद हो अथवा तीव्र। भारतीय समाज का जो वर्तमान रूप है वह शताब्दी पूर्व के भारतीय समाज से पूर्णतया भिन्न है। आज सामाजिक, औद्योगिकी, अर्थतंत्र सामाजिक संस्थाए विचार दर्शन, कला तथा धर्म आदि में निरंतर परिवर्तन आ रहे है इन परिवर्तन के फलस्वरूप ग्रामीण समाज में दर्शनीय परिवर्तन आए है। ये परिवर्तन विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होते है इन सभी परिवर्तनो का सम्बंध ग्रामीण समाज के बाहरी और आंतरिक दोनो पक्षों से है पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली, यातायात और संचार की सुविधाएं, औद्योगिकरण, प्रौद्योगिकी, राजनैतिक तथा समाज सुधार आंदोलन, सामाजिक आधिनियम और सामाजिक विकास कार्यक्रम इत्यादि कुछ ऐसे कारक है जिनके परिणाम स्वरूप ग्रामीण समुदाय में परिवर्तन की गति तीव्र हुई है। इन सब कारको ने ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति को प्रभावित किया है जिससे ग्रामीण समाज बदलने लगा है।

निष्कर्षत: - कहा जा सकता है कि वैश्विक होते भारतीय समाज में जाति और राजनीति के बीच एक वर्ग चेतना उभर रही है साथ ही कुछ लोग यह भी मानने लगे है है कि सरकार और राजनीतिक समुदाय जाति-विहिन समाज की रचना के संकल्प को कुचल रहे है। वे सब तात्कालिक लाभ की दृष्टि से ऐसे कार्य कर रहे है जिनसे जाति का पुर्नउत्पादन हो रहा है इस संदर्भ में विभिन्न राज्यो और केन्द्र की राजनीति में क्षेत्रीय राजनीतिक दलो के उभार को देखा जा सकता है जिनका आधार मुख्यता किसी जाति की विशिष्ट नेतृत्वकारी भूमिका को साथ एक क्षेत्र विशेष में अपना प्रभाव बनाये रखना है। दूसरी तरफ समाज वैज्ञानिक जाति के परम्परागत ढ़ाचे जैसे छुआछूत, पवित्रता अपवित्रता, जजमान-पुरोहित आदि की प्रासंगिकता समाप्त हो रही है। आधुनिक जनतांत्रिक राजनीति इसमें प्रमुख भूमिका अदा कर रही है। वर्तमान समय में जाति के सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष के साथ राजनीतिक पक्ष महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है उदाहरण स्वरूप भारतीय के राजनीतिक धरातल पर काशीराम और मायावती के नेतृत्व में बहुजन समाज पार्टी का उदय होना। जिसने शोषित और दलित वर्ग के हितो को अपनाया। राजनीतिक क्षितिज पर हुए इस परिस्थिति कारको ने अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़ो को नया आयाम प्रदान किया। धीरे-धीरे उनकी सामाजिक शक्ति बढ़ी और उन्होने उत्तर प्रदेश जैसे कई अन्य राज्यो में सरकारे भी बनायी। बाद के चुनावो में भी इन्होने बहुत अच्छा प्रदर्शन किया।

मायावती जैसी एक दलित नेता का मुख्यमंत्री के रूप में प्रतिष्ठित किया जाना अत्यन्त महत्व की घटना थी इससे भी अधिक महत्व की घटना यह है कि श्री के0आर0 नारायण जो एक दलित नेता थे जो भारत के राष्ट्रपति के रूप में पदस्थ किये गये इस घटना का स्वागत किया जाना चाहिए। क्योंकि इससे उन लोगो के लिए समाज में सम्मानजनक स्थान पाने का मार्ग प्रशस्त होता है। जिन्होने शताब्दियो का अत्याचार, आर्थिक तंगी और राजनीतिक शून्यता सही है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वर्तमान में न तो पुरानी जाति व्यवस्था चल सकती है और न ही जातिविहीन समाज बनाने का पुराना आदर्श। क्योकि आज आवश्यकता समाज के सभी लोगो तक एक त्रिमुखी न्याय व्यवस्था की पहुच सुनिश्चित कराने की है जो उपर्युक्त दोनो मार्गो से इतर एक न्यायपूर्ण समाज की स्थापना कराने मे सहायक हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. माइकल, एस0एम0, आधुनिक भारत में दलित: दृष्टि एवं मूल्य, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2010
2. जयसवाल, सुवीरा, वर्णजाति व्यवस्था उद्भव, प्रकार्य और रूपान्तरण, ग्रन्थशिल्पी (इंडिया), प्रा0लि0, नई दिल्ली, 2009
3. अम्बेडकर, डॉ0 भीमराव, कास्ट इन इ.डिया, भीमपत्रिका प्रकाशन, जालंधर, 1977
4. आम्बे, गेल, दलित ए.ड डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1994
5. कुमार, अ. ण, उदारीकरण भूमण्डीकरण एवं दलित, रावत पब्लिकेशन, जयुपर, 2009
6. सिंह, तेज, अम्बेडकरवादी, विचारधारा और समाज, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
7. दुबे, अभय कुमार, आधुनिकता के आइने में दलित, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2009

8. विद्रोही, एम0आर0, दलित दस्तावेज, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004
9. सिंह, रामगोपाल, सामाजिक न्याय, लोकतन्त्र और जाति व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 1999
10. सिंह, एम0पी0, भारतीय शासन एवं राजनीति, ओरिए.ट लॉगमैन, नई दिल्ली, 2010
11. दोषी, एस0एल0 एवं जैन, पी0सी0, भारतीय समाज, संरचना और परिवर्तन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस जयपुर, 2002
12. सिंह, कटार, ग्रामीण विकास सिद्धान्त : नीतियाँ एवं प्रबन्ध, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2011

****

भारतीय समाज में सामाजिक न्याय : लोहिया विचारधारा के संदर्भ में

डॉ. नलिनी*

शोध सारांश – समाज सामाजिक नियमों द्धारा निर्मित एवं संचालित होता है, क्योंकि सामाजिक नियम ही सामाजिक सम्बंधों, जिनसे समाज की रचना होती है को परिभाषित एवं नियन्त्रित करते है किन्तु किसी नियम की सामाजिक नियम के रूप में स्वीकार्यता न्याय पर आधारित होती है। इतना ही नही, सामाजिक नियम जिस वैचारिकी दर्शन एवं मूल्य व्यवस्था से विकसित व संपोषित होते है वे भी न्याय पर ही आधारित होते है कभी भी नियम, वैचारिकी या दर्शन यह नही कहताहैकिवह अन्याय पर आधारित है और अन्याय की रक्षा के लिए बना है, भले हीवह अन्याय का पक्ष पोषण करता हो। थोड़े ही समय में ऐसा नियम जो अन्याय पर आधारित होता है, समाज में अपनी प्रासंगिकता खो देता है। उसे समाप्त होने से बचाया नही जा सकता है। इसी प्रकार जिस समाज की रचना अन्यायपूर्ण नियमो व अन्यायपूर्ण सम्बधों पर आधारित होती है वह भी ज्यादा दिन तक जिन्दा नही रहता। इस प्रकार न्याय किसी भी समाज की रचना और उस रचना को बनाए रखने में आधारभूत भूमिका अदा करता है।

शब्द कुंजी – भारतीय समाज, न्याय, सामाजिक न्याय, डॉ0 राममनोहर लोहिया।

शोध पत्र के उद्देश्य – शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य भारतीय समाज में सामाजिक न्याय का लोहिया विचारधारा के विशेष संदर्भ में अध्ययन करना है जिसे निम्न बिन्दुओ के अन्तर्गत वर्णित किया गया है।

1. न्याय की संकल्पना
2. न्याय सिद्धान्त: सामाजिक न्याय के सन्दर्भ में
3. डॉ0 राममनोहर लोहिया और सामाजिक न्याय आदि।

न्याय की संकल्पना– न्याय की संकल्पना प्राचीन काल से ही सामाजिक-राजनीतिक चिंतन का महत्वपूर्ण विषय रही है। परन्तु आधुनिक युग तक आते-आते इसमें मौलिक परिवर्तन आ गया है। पश्चिमी परंपरा के अन्तर्गत न्याय के स्वरूप की व्याख्या करने के लिए मुख्यत: 'न्यायपरायण व्यक्ति' अर्थात सचरित्र मनुष्य के गुणो पर विचार किया जाता है। इसमें उन सदगुणों की तलाश की जाती है जो व्यक्ति को न्याय की ओर प्रेरित करे। भारतीय परंपरा में भी मनुष्य के 'धर्म' को प्रमुखता दी जाती रही है। साथ ही उसके जीवन को नियत्रित करने में इसे आधारभूत माना गया है। इन दोनो परम्पराओं के साथ ही मान्यता जुड़ी है कि यदि सब व्यक्ति अपने-अपने कर्तव्य का पालन करेगे तो समाज व्यवस्था अपने आप न्यायपूर्ण हो जायेगी। पूर्व में प्रचलित मूल्यों और मान्यताओं को ही न्यायपूर्ण माना जाता रहा है अत: यह दृष्टिकोण एक बनी-बनाई व्यवस्था को बनाए रखने के लिए सर्वथा उपर्युक्त था। तब न्याय की मुख्य समस्या यह थी कि समाज व्यक्ति से क्या चाहता है, परन्तु आधुनिक युग में सामाजिक परिवर्तन इतनी तीव्रगति से हुए है कि कोई व्यक्ति शाक्ति प्राप्त कर लेने के बाद दूसरो को अपनी स्वार्थपूर्ति का साधन बनाने लगता है ऐसी हालत में साधारण मनुष्य अपने आपको सर्वथा विवश अनुभव करता है। इसिलिए अब यह मॉग की जाने लगी है कि पहले समाज-व्यवस्था को न्यायपूर्ण बनाने पर ध्यान देना चाहिए, तभी व्यक्ति को आत्म विकास के अवसर प्राप्त होगें। आज के युग में विशेषत: समाजवादी चिंतन की प्रेरणा से यह सोचा जाने लगा है कि न्यायपूर्ण समाज कैसा होना चाहिए? इसका ध्येय बनी बनाई व्यवस्था को बनाए रखना है अथवा आधुनिक चेतना के अनुरूप सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देना है यह शोध का विषय है।

न्याय सिद्धान्त: सामाजिक न्याय के संदर्भ में – न्याय सिद्धान्त पंरपरागत दृष्टिकोण का मुख्य सरोकार व्यक्ति का चरित्र था किन्तु आज आधुनिक दृष्टिकोण का मुख्य सरोकार सामाजिक न्याय से हे जो मुख्यत: समाज के वंचित वर्गो की दशा सुधारने की मॉग करता है ताकि उन्हे सम्मानपूर्ण जीवन जीने का अवसर मिल सके। अत: यह विचार समाज की सब मूल्यवान वस्तुओ की वितरण-व्यवस्था पर पुर्नविचार की मॉग करता है। आज न्याय की मख्य समस्या यही है कि सामाजिक जीवन के अन्तर्गत विभिन्न व्यक्तियो या समूहो के प्रति वस्तुओ, सेवाओ, लाभों, शक्ति व सम्मन के साथ-साथ दायित्वो और वाध्यताओ के आंवटन का उचित आधार क्या होना चाहिए। जहाँ तक भारतीय समाज की बात है यहाँ भारत में सामाजिक न्याय की मॉग सामाजिक अन्याय की देन है तथा जाति व्यवस्था और सामाजिक ढॉचा इस सामाजिक अन्याय की जड़ में है। वर्णाश्रम धर्म आधारित जाति व्यवस्था तो सामाजिक न्याय का निषेध ही करती है क्योंकि इसने हिन्दू वर्णश्राम धर्म और जाति व्यवस्था में ब्राह्मणो को ऐसी अति उच्चाधिकार प्राप्त जाति के रूप में बढ़ाया है, जिन्हे जन्म के आधार पर ही सामाजिक श्रेष्ठता मिली है। वही बहुसंख्यक लोगो को शूद्र और पंचम वर्ण बताकर केवल शारीरिक श्रम के ही लायक समझा गया। इस प्रकार के सामाजिक ढाचे ने स्थिति की असमानता को तथा सभी के लिए समान अवसर के निषेध को जन्म दिया।

आज विज्ञान के विकास के साथ-साथ स्वतन्त्र चिंतन का मार्ग भी प्रशस्त हुआ है चिन्त के धर्म की पकड़ से मुक्त होने के परिणामस्वरूप लौकिक व्यवहार के नियम का कानून, ईश्वरीय विधान से मुक्त हो गया। आगे चलकर लौकिक विधान के निर्माण, उसकी व्यवस्था और उसके लागू करने के अधिकार राजा अर्थात ईश्वर के प्रतिनिधि के हाथो से हटकर लौकिक जन प्रतिनिधि के हाथ में आ गये। वैश्विक स्तर परफ्रांस की राज्य क्रान्ति के

* लेक्चरर, आर्य महिला पी0जी0 कालेज, वाराणसी (उ.प्र.) भारत

फलस्वरूप स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व पर आधारित सामाजिक न्याय की अवधारणा का विकास हुआ। इस प्रकार जहॉ प्राचीन समाज में सामाजिक न्याय की अवधारणा व्यक्ति के औचित्य पर जोर देती थी और व्यक्ति का औचित्य सम्पूर्ण व्यवस्था को बनाए रखने में उसके वर्गीय दायित्वो के निर्वाह से सम्बन्धित था। इसके विपरित आधुनिक समाज में सामाजिक न्याय की आवधारणा औचित्यपूर्ण समाज की कल्पना करती है। जिसमें सभी व्यक्तियों व समूहो के साथ-समान वर्ताव होता है तथा यह वर्गीय कर्तव्यो की जगह नागरिक अधिकार को महत्व देता है। नागरिक अधिकार समाज में सभी व्यक्तियों व वर्गो को स्वतन्त्रता व समानता की प्रत्याभूति सुनिश्चित किये जाने पर बल देता है। वैसे विगत चौहत्तार वर्षो के दौरान हम भारतीय समाज में सामाजिक न्याय की कहॉ तक स्थापना कर पाए है इसका पता लगाने के लिए हमें कई सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी विश्वनीय चलायमानो का परीक्षण करना पडेगा। किन्तु यदि इसक अनुमान किसी एक चलायमान के आधार पर किया जाना हो। तो वह जाति-व्यवस्था के अतिरिक्त कोई और नही हो सकता। सम्प्रति समाजिक न्याय और जाति-व्यवस्था में विलोमात्मक सम्बंध है।

समाज में जाति-व्यवस्था जितनी कमजोर होगी, सामाजिक न्याय उतना ही अधिक प्रभावी होगा। इसलिए संविधान में जाति की जगह लोकतन्त्र को सामाजिक न्याय का आधार बनाया गया, क्योकि सामाजिक न्याय और लोकतन्त्र में सीधा सम्बंध प्रभावी होता है। समाज मे लोकतन्त्र जितना मजबूत होगा सामाजिक न्याय उतना ही अधिक प्रभावी होगा। भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण, पंचायतीराज व ग्राम सरकार आदि के माध्यम से लोकतन्त्र तो मजबूत हुआ है, किन्तु अधिकांश रूप में भारतीय लोकतन्त्र जाति व्यवस्था की पकड़ में आ गया है जिसकी वजह से सामाजिक न्याय समाज में उतना अधिक कारगर नही हो पाया है जितना कि होना चाहिए था।

डॉ0 राममनोहर लोहिया और सामाजिक न्याय – भारत के राजनीतिक मंच के चौथे, पॉचवे और छठे दशक के जबरदस्त तूफानी और आकर्षक, बहुचर्चित, सुर्खियों में रहने वाले और विवादास्पद व्यक्तित्व का नाम है राममनोहर लोहिया चौथे दशक की पीढ़ी राममनोहर को भारत छोड़ो क्रान्ति के सर्वोच्च नेता और समाजवाद के अग्रणी व्यक्ति के नाते जानती है। पॉचवे और छठे दशक की पीढ़ियॉ उन्हे स्वाधीन भारत में विरोधी पार्टी के जुझारू , अद्‌भुत बुद्धिमत्ता और अदम्य बोध के नेता के रूप में जानतीहै। क्रान्तिकारी विचारक, श्रेष्ठ समाजवादी चिंतक और कर्मवीर के नाते ये पीढियॉ लोहिया को शुरू से जानती है।[2]

मौलिक बुद्धिमत्ता एवं बहुआयामी प्रतिभा के धनी, दार्शनिक, रसिक विद्धान, प्रखर राष्ट्रवादी, विश्वमनवाले विश्वनागरिक, दलित-शोषितो के समर्थ प्रवक्ता जैसे अनेकानेक रूपो में देश-विदेश में राममनोहर लोहिया प्रसिद्ध थे इसी के साथ वे एक क्रांतदर्शी नेता भी थे। उनका मानना था कि, 'दुनिया में एक नही, कई क्रान्तियो की जरूरत है। जब तक निगरानियो और मध्यवर्गीय सभ्यता का निर्ममतापूर्वक विनाश नही किया जाता, तब तक हिन्दुस्तान और रंगीन दुनिया के एक बड़े हिस्से का कोई भविष्य नही है।' श्रम और दिमागी श्रम के बीच न्यायपूर्ण और बराबरी का रिश्ता कायम करना होगा।[3] डॉ0 लोहिया बीसवीं सदी को सबसे बेरहम सदी मानते थे किन्तु इस बेरहम सदी में भी उन्हे आशा की कुछ सुनहरी किरणे दिखाई पड़ी है उन्होने अनुभव किया किइस समय ऐसी परिस्थिति पैदा हो गयी है कि एक नाइंसाफी के खिलाफ नही, सभी नाइंसाफियो के खिलाफ इंसान एक साथ उठा है। 'इस बीच छोटे-बडे, अमीर'-गरीब, नर-नारी, काले-गोरे और ऊॅच-नीच के बीच की गैर बराबरी के खिलाफ एक साथ आवाज उठी है। ऐसा पहले कभी नही हुआ। अगर वह जीता तो, अबकी बार कुछ दुनिया सचमुच हसीन बने। मुमकिन है मै उसे न देख पॉऊ लेकिन बहुतो को देखने को मिलेगी।[4]

डॉ0 लोहिया ने अपनी पुस्तक रूसात क्रान्तियोय मे जिन सात क्रान्तियो को सामाजिक परिवर्तन के लिए आवश्यक माना है वही वास्तविक रूप में सामाजिक न्याय की स्थापना का भी परिचायक है जो निम्न प्रकार है –

1. अमीरी-गरीबी के बीच की दूरी कम करना।
2. नर-नारी समानता।
3. आर्थिक असमान्ता दूर करना।
4. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय गैर बराबरी मिटाना।
5. पूंजीवाद और साम्यवाद की लड़ाई खत्म करना।
6. काले-गोरे में भेद-भाव खत्म करना।
7. जातिवाद और वर्गवाद का संघर्ष खत्म करना।

आदि प्रमुख थे।[5]

लोहिया जी ने सामाजिक असमानता पर कई दृष्टियो से विचार किया। उन्होने देखा कि भारत की जनता संतोषी है अगर उसका पेट भरता रहे समय-समय पर उसकी जरूरते पूरी होती रहे, तो वह बराबरी या गैर-बरबरी पर ध्यान नही देगी। वह इतने से ही खुश हो जायेगी कि चलो कुछ तो मिला 'यहॉ की गरीबीकी क्रान्ति को आदमी इतना नही समझेगा, जितना राहत वाली राजनीति को।' किन्तु यह शाश्वत सत्य नही है। अगर ऐसा होता तो कभी बदलाव नही होता। इस असमानता को उन्होने राष्ट्रीय और अन्तराष्ट्रीय दृष्टि से भी विचार किया उन्होने देखा कि अमेरिका मे प्रति व्यक्ति की सालाना औसत आमदनी 14 हजार रूपये है और भारत में 400 रूपये। अगर इसे थोड़ा घटा बढ़ाकर देखा जाय, तो चार सौ और 14 हजार का फर्क नही, यह तो 12 सौ और 14 हजार का फर्क है (1966 के आकडे के अनुसार)[6] विश्व के सम्पन्न देशों मे और दबे हुए, गरीब और विपन्न देशो में आमदनी मे इतना जबरदस्त फर्क अब कम होना चाहिए। ताकि आय आधारित असमानता के स्थान पर सामाजिक समानता की स्थापना की जा सके। जो सामाजिक न्याय का मूल उद्देश्य है।

डॉ0 लोहिया ने कहा कि भारत में गैर-बराबरी का अनुपात अन्य देशो की अपेक्षा अधिक है उन्होने कहा किसान, मजदूर, व्यापारी, राजनेता, शिक्षक और विश्वविद्यालयो के प्रोफेसर की आमदनी में जो असमानताये है। उस समय उन्होने सभी के उदाहरण प्रस्तुत किए। अतः इस असमानता के खिलाफ सब जगह लड़ाई शुरू हो गई। कही अहिंसक युद्ध चल रहा है तो कही हिंसक। लेकिन संघर्ष जारी हैं ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ0 लोहिया ने भविष्य को देख लिया था। इसलिए उन्होने कहा था 'आर्थिक दृष्टि से कमजोर देशों को मदद करने के लिए पूजीवादी देश और साम्यवादी देश दोनों आगे बढ़ेगे, किन्तु उनका उद्देश्य कमजोर की मदद करना नही होगा। वे मदद करने के बहाने उन पर राजनीतिक और आर्थिक प्रभुत्व स्थापित करना चाहेगें। इसलिए उन दोनो से सावधान रहना होगा।'[7] उनका उस समय दिया गया यह विचार आज की सरकारों के लिए भी अनुकरणीय है कि वे देश की अस्मिता को बनाये रखे तथा कोई भी समझौता करने से पूर्व उसके परिणाम को जॉच ले। यहि स्थिति भारतीय राजनीति की है जहॉ सत्ताधारी राजनैतिक दल क्षणिक लाभ के लिए भारतीय समाज की सामासिक संस्कृति को छिन्न-भिन्न करने को उतारू रहती है। जबकि परिणाम दिर्घकालिक, रूप में भारतीय समाज के लिए ही घातक होते है।

जाति और धर्म के सम्बन्ध में डॉ0 लोहिया जी का मत सबसे अलग था। जाति-भेद भारत में सबसे अधिक है। किन्तु विश्व के अन्य देश भी इस समस्या से अछूते नही है, मनुष्य का इतिहास जहॉ और कई किस्म की पेगे, डॉ0 लोहिया के अनुसार लेता रहा है। वर्ग और जाति की दो धूरियो के बीच मे या दो कोनो के बीच में झूला झूलता रहा अथवा पेंग लेता रहा। इस प्रकार वर्ग है ढीली जाति और जाति है जकड़ा हुआ वर्ग।[8] किसान और मजदूर की दशा विदेशो से सुधरी है। यूरोप में मजदूर इस प्रकार रहते है जैसे हिन्दुस्तान के पुराने नवाब आदि रहते थे। किन्तु भारत में किसान और मजदूर की दशा काफी दयनीय और चिंताजनक है। इसलिए यहॉ क्रान्ति की आवश्यकता है। जो सम्पूर्ण समाज व्यवस्था में आमूल परिवर्तन को अंजाम देगी।

नर-नारी के फर्क को भी उन्होने हर प्रकार के अन्याय की जड़ बताया। जैसे सब प्रकार की नाइंसाफियो का मूल कारण गरीब अमीर की गैर बराबरी होती है, वैसे ही डॉ0 लोहिया ने नर-नारी असमानता को सब नाइंसफियो का आधार बताया। उन्होने कहा इस दूर करने के लिए एक ही उपाय है कि महिलाओं को ज्यादा मौका दिया जाय। नारी को विशेष अवसर दिये जाने के सम्बन्ध में उन्होने सोशलिस्ट पार्टी की नीति स्पष्ट करते हुए लिखा था सोशलिस्ट पार्टी इन सब के लिए 60 सैकड़ा चाहती है और तर्क देती है कि चाहे वे लायक हो या नही जैसे भी हो उन्हे ऊॅची जगह पर बैठाओं, क्योंकि जब ये जगहो पर बैठेगी मौका पायेगीं, तो इनके दिमाग के दरबाजे खुलेगें। इधर तीन-चार हजार बरस से इनके दिमांग के दरबाजे बन्द हो गये है क्योंकि इनको ऊॅची जगहो पर बैठने के मौका नही रहता। सब पार्टीयो का मकसद है पहले योग्यता फिर अवसर। समाजवादी दल कहता है पहले अवसर, फिर योग्यता। पहले अवसर दो और उसके साथ-साथ योग्यता हासिल करो।[9]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में इसके लिए डॉ0 लोहिया की सप्तक्रान्ति का मार्ग भावी भारत के नवनिर्माण के लिए सामाजिक आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए, दिकसूचक यत्र-सा लगता है। उन्होने वर्तमान युग की सारी विसंगतियो के विरूद्ध संघर्ष के लिए सात क्रान्तियो का आवाह्न किया ताकि युवा पीढ़ी इन्ही मे से अपनी भूमिका तलाश सके। तथा इसी मार्ग के अनुसार नये शोषण मुक्त सामाजिक न्याय पर आधारित विषमता रहित अहिंसक समाज की रचना सम्भव हो सकेगी जो आवश्यक भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओम प्रकाश गाबा, राजनीति विज्ञान विश्वकोश, न्याय, पृष्ठ - 389
2. इंदुमति केलकर, राममनोहर लोहिया, भारत माता-पृथ्वी माता, पृष्ठ -01
3. डॉ0 राम सागर सिंह, समाजवाद की दशा एवं दिशा, लोहिया जीवन दर्शन, पृष्ठ - 131
4. वही, पृष्ठ - 131
5. डॉ0 राममनोहर लोहिया, सप्त क्रान्तियॉ
6. डॉ0 राम सागर सिंह, समाजवाद की दशा एवं दिशा, लोहिया जीवन दर्शन, पृष्ठ - 132
7. वही, पृष्ठ - 137
8. डॉ0 मस्तराम कपूर, आधुनिक भारत के निर्माता, पृष्ठ - 129
9. डॉ0 राममनोहर लोहिया, समाजवाद की राजनीति, पृष्ठ - 88
10. राममनोहर लोहिया समग्र रचनावली (सम्पा0 मस्तराम कपूर) (2005) (नौ-खण्ड) अनामिका पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली
11. ओकांर शरद (2008), लोहिया के विचार, छठवा संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

****

फिलिस्तीन-इजराइल विवाद : हमास के विशेष संदर्भ में

अख्तर हुसैन*

प्रस्तावना - 1947 में संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत ने यहूदियों के स्वतंत्र राष्ट्र की योजना का विरोध किया था। भारत का मत था कि फिलिस्तीन अरबों का है। उसका बटवाँरा नहीं होना चाहिए और उसकी छाती पर यहूदियों को सवार नहीं करना चाहिए। यहूदी फिलिस्तीन में जरुर रहे लेकिन संघात्मक राज्य के रुप में जिसमें बहुसंख्यक फिलिस्तीनी अरबों की हो और अल्पसंख्यक यहूदियों को आंतरिक स्वायत्तता दे दी जाए। भारत संयुक्त राष्ट्र की फिलिस्तीन समिति का सदस्य था, फिर भी उसकी नहीं चली।

इज़राइल प्रगतिशील, ताकतवर व सम्पन्न देश था, जबकि अरब पिछड़े गरीब व कमजोर थे, फिर भी भारत अरबों का साथ दिया, क्योंकि खिलाफत आन्दोलन के जमाने से ही भारत अरबों का साथ दे रहा था। कांग्रेस अपने आंदोलन में भारतीय मुसलमानों का समर्थन चाहती थी, और भारत का बटँवारा नहीं चाहती थी, तो वह फिलिस्तीन का बटँवारा कैसे स्वीकार करती। यहूदियों के प्रति भारत की सहानुभूति अवश्य थी, लेकिन यह सहानुभूति अरबों के लिए सजा बन जाए, यह भारत को मंजूर नही था।

भारत ने इज़राइल को सितम्बर 1950 में मान्यता तो प्रदान कर दी परन्तु वहां अपना कोई राजनयिक मिशन नहीं खोला था। इज़राइल ने भारत के मुम्बई में 1951 में अपना वाणिज्य दूतावास खोला था। भारत ने लम्बे समय तक इज़राइल के साथ पूर्ण राजनयिक सम्बन्ध स्थापित नहीं किए जिसके निम्नलिखित कारण थे-

भारत के अनुसार इज़राइल ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के सभ्य समाज के सभी सिद्धान्तों एवं मापदण्डों को सदैव उद्दण्डतापूर्ण अवहेलना और उपेक्षा की। इसने न केवल अन्य देशों के क्षेत्रों पर कब्जा किया, बल्कि उसके सम्बन्ध में समझौता वार्ता करने से भी इन्कार कर दिया। भारत सदैव ही प्रजातिवाद (Racialism) तथा उपनिवेशवाद (Colonialism) का विरोधी रहा है, अत: अपनी इस सैद्धान्तिक विचारधारा से समझौता किए बिना वह इज़राइल के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकता था। इज़राइल के यथार्थ में संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व वाले पश्चिमी गुट का सदस्य होने का तथ्य भारत की निर्गुट नीति के विपरीत था। सोवियत संघ की बढ़त रोकने के लिए अमेरिका की विश्वस्तरीय नीति में इज़राइल समारिक महत्व का राज्य रहा है। इसी कारण अमेरिका हमेशा इज़राइल के पूर्णत: अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार की अनदेखी करता रहा है। इज़राइल के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने से भारत की तृतीय विश्व के नेता की छवि धूमिल होने का डर था।

इज़राइल के साथ सम्बन्ध बढ़ाने से अरब देशों का भारत से विमुख हो जाने का भय था। अरब देश आपस में कितने ही लड़ते-भिड़ते क्यों न हो, इज़राइल से शत्रुता के नाम पर सब एक हो जाते हैं। इज़राइल के प्रति भारत के दृष्टिकोण में जरा से उदारीकरण से भारत के लिए अरब राष्ट्रों की सद्‌भावनापूर्ण नीति की क्षति होती। कश्मीर के प्रश्न पर पाकिस्तान के शत्रुतापूर्ण रवैये को दृष्टिगत रखते हुए यह भारत के हित में नहीं होता। सोवियत संघ के प्रति भारत के झुकाव ने अरब देशों को भारत का मित्र बना दिया। इज़राइल के साथ स्थापित राजनयिक सम्बन्ध इस मित्रता के लिए घातक होता।

भारत में मुस्लिम वोट बैंक तथा अरब देशों में भारत के पर्याप्त आर्थिक हित दाव पर लगे हैं। खाड़ी युद्ध के समय तेल के दामों में अप्रत्याशित वृद्धि, स्वदेश आने वालों के धन की हानि आदि से भारत को नुकसान हुआ। इन सभी कारणों से एक ऐसी स्थिति का सृजन हुआ, जिसमें सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से भारत के लिए यह आवश्यक हो गया कि इज़राइल के विरुद्ध अरबों के संघर्ष में भारत अरब देशों के साथ दिखाई दे। बाद में वैश्विक घटनाओं में आए परिवर्तनों जैसे-खाड़ी युद्ध में अरब एकता का नष्ट होना, पीव एलव ओव द्वारा इराक का पक्ष लेना, भूतपूर्व सोवियत संघ के विघटन के बाद भारत-अमेरिका में नजदीकियां बढ़ना तथा खाड़ी युद्ध के बाद सृजित स्थिति में अब फिलिस्तीन का पक्ष लेना तथा इज़राइल से सम्बन्ध सामान्य करना, दो विरोधाभासी कार्य नहीं समझे जाने लगे। सोवियत संग के विघटन के पश्चात् रक्षा आपूर्ति के लिए भारत ने इज़राइल के महत्व को स्वीकार किया, क्योंकि इज़राइल रक्षा सामग्री का महत्वपूर्ण निर्यातक देश है। इस लिए अब भारतीय विदेश नीति में समान दूरी का सिद्धात (Theory of Equal Distance) अपनाया गया। इस प्रकार इज़राइल के साथ बेहतर संबंधों के द्वारा भारत-फिलिस्तीन समस्या के शांतिपूर्ण समाधान में योगदान दे रहा है। 29 जनवरी, 1992 को भारत के विदेश सचिव ने इज़राइल के साथ पूर्ण राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने की घोषणा की। भारत ने तेल-अबीब (इज़राइल) में तथा इज़राइल ने नई दिल्ली में अपने-अपने दूतावास खोले।

भारत-इज़राइल के बीच सरकारी और मंत्री स्तर पर कई यात्राओं का आदान-प्रदान हुआ। सहयोग के क्षेत्रों में सैन्य आधुनिकीकरण, कृषि अनुसंधान और विकास, इज़राइल का भारत में निवेश, आतंकवाद विरोधी रणनीति में सहयोग, राजनीतिक, सांस्कृतिक और तकनीकी क्षेत्र में सहयोग आदि हैं। भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी फरवरी, 2019 में इजराइल व फिलिस्तीन का आधिकारिक यात्रा किये। इस दौरान भारत और फिलिस्तीन के बीच पांच समझौते हुए जिनमें 3 करोड़ अमेरिकी डॉलर की लागत से एक सुपर स्पेशलिटी अस्पताल का निर्माण, एक त्रि-सशक्तिकरण केन्द्र, एक राष्ट्रीय प्रिंटिंग प्रेस, दो स्कूल और एक नए स्कूल की एक मंजिल का निर्माण शामिल है।

* शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

25 नवम्बर, 2018 को प्रधानमंत्री मोदी ने 'फिलिस्तीनी जनता के साथ एकजुटता के अन्तर्राष्ट्रीय दिवस' के मौके पर कहा था, 'हम जल्द से जल्द एक सम्प्रभु, स्वतंत्र, अविभाजित और व्यवहारिक फिलिस्तीन राज्य के सपने के पूरे होने की आशा करते हैं, जो इज़राइल के साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व में रह सके।' फरवरी 2019 में राष्ट्रपति अब्बास के साथ मोदी ने कहा, 'भारत फिलिस्तीन के शांतिपूर्ण माहौल में शीघ्र एक संप्रभु, स्वतंत्र देश बनने की आशा करता है।'

जवाहर लाल नेहरु यूनिवर्सिटी में वेस्ट एशियन स्ट्डीज के प्रोफेसर एव केव पाशा का कहना है, कि-भारत द्वारा 'अविभाजित' और 'व्यावहारिक' शब्द को हटाए जाने को 'जमीनी हकीकतों' के आइने में देखें जाने की जरूरत है। 2006 से 2008 के बीच फिलिस्तीन में भारतीय राजनयिक प्रतिनिधि रहे जिक्रूर रहमान का कहना है, कि मोदी के बयान से पता चलता है, कि फिलिस्तीन को लेकर भारतीय नीति में निश्चित ही बड़ा बदलाव आया है, जो इज़राइल के पक्ष में है। भारत ने यह मान लिया है, कि 1967 की पूर्व की सीमाओं यानि इज़राइल द्वारा पश्चिमी बैंक और गाजा पर अवैध कब्जा करने से पहले की सीमारेखा पर लौटना अब संभव नहीं है। 'फिलिस्तीन समस्या सहित मध्य पूर्व की स्थिति' विषय पर सुरक्षा परिषद की खुली बहस के दौरान भारत द्वारा जुलाई 2014 में इज़राइल और फिलिस्तीन के बीच संघर्ष में वृद्धि पर गहरी चिंता व्यक्त की गई, क्योंकि इसमें बडी मात्रा में नागरिकों व सम्पत्ति की क्षति हुई। भारत ने दोनों पक्षों से मांग की, कि वे अधिकतम नियंत्रित व्यवहार करें, और ऐसी कार्यवाई करने से बचें जिनसे स्थिति और बिगड़ती हो और भारत इन दोनों पक्षों के बीच तुरन्त युद्ध विराम के लिए किये जाने वाले सभी प्रयासों का समर्थन किया। भारत को विश्वास है कि-बातचीत ही वह एकमात्र व्यवहार्य विकल्प है जिससे इस क्षेत्र के तथा इस क्षेत्र की जनता के मुद्दों का प्रभावी समाधान हो सम्भव है।

फिलिस्तीन के साथ भारत का घनिष्ठ सहयोग और उसके लिए सतत प्रतिबद्धता की जड़े हमारे स्वाधीनता संग्राम से जुड़े आधुनिक इतिहास में है। भारत संगत संयुक्त राष्ट्र संकल्पों, अरब शांति योजना और क्वार्टेट रोड मैप के आधार पर इज़राइल फिलिस्तीन मुद्दे को बातचीत से सुलझाने का समर्थक है, ताकि एक संप्रभु, स्वतंत्र रहने योग्य संयुक्त राज्य फिलिस्तीन की स्थापना हो सके, जिसकी राजधानी पूर्वी ये. शलम हो और इजराइल के साथ जुड़ी हुई उसकी सुरक्षित एवं मान्यता प्राप्त सीमाएं हों।

भारत ने कहा कि-गाजा से नाकेबंदी को अनिवार्य रुप से हटाया जाना चाहिए जो आवश्यक सेवाओं, आर्थिक कार्यकलापों और अवसंरचना विकास पर बुरा प्रभाव डाल रहा है। इस नाकेबन्दी और बढ़ती हुई सेटलमेंट गतिविधियों के मुद्दे का समाधान किया जाना आवश्यक है, ताकि एक पारस्परिक स्वीकार्य राजनीतिक समाधान प्राप्त करने वाली शांति प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जा सके।

निष्कर्ष-आज पश्चिम एशिया विश्व राजनीति में एक महत्वपूर्ण विषय बना हुआ है। खाड़ी युद्ध, भूतपूर्व सोवियत संघ के विघटन तथा यूरोपीय समाजवादी देशों में हुए परिवर्तनों के प्रभावाधीन विश्वव्यवस्था में महान और विशाल परिवर्तन आ चुका है। खाड़ी युद्ध के पश्चात अमेरिका अरबों के समर्थन को बनाए रखने के लिए पश्चिम एशिया को अपना प्रभाव क्षेत्र बनाने की प्रक्रिया में लगा हुआ है। अमेरिकी प्रयत्नों के कारण ही पश्चिम एशिया, विशेषकर फिलिस्तीन की समस्या पर 1991 में अरब-इज़राइल वार्ता आरम्भ हुई तथा इसमें अब तक कई दौर हो चुके हैं तथा 1948 के बाद पहली बार ऐसी सम्भावना बनी है जिसमें अरब-इज़राइल विरोध के समाधान के आसार दृष्टिगोचर हो रहे हैं। फिलिस्तीन के लोगों को अब यह आशा हुई है कि उनका एक स्वतंत्र राज्य वास्तव मे अस्तित्व में आ सकता है। लेकिन अरब-इज़राइल जातीय वैमनस्य का कोई स्थायी एवं पूर्ण समाधान वर्तमान में सम्भव प्रतीत नही होता। फिर फिलिस्तीन तथा इज़राइल के सम्बन्धों को सामान्य होने में अनेकों वर्ष लग जाएंगे। इज़राइल को अमेरिका का समर्थन प्राप्त रहने की प्रबल सम्भावना विद्यमान है क्योंकि अमेरिकी समाज में यहूदी समुदाय एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थिति रखता है। फिर भी अमेरिकी प्रशासन अरबों को सन्तुष्ट करके इस क्षेत्र में अपने प्रभाव की दृढ़ता तथा स्वामित्व बनाने का प्रयत्न कर रहा है। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति क्लिंटन की विदेश नीति में भी इज़राइल को महत्वपूर्ण स्तर प्राप्त था तथा ऐसा ही वर्तमान राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के कार्यकाल में भी है। शीत युद्ध की समाप्ति, भूतपूर्व सोवियत संघ के विघटन, भूतपूर्व समाजवादी राज्यों की कमजोर स्थिति, स्वतंत्र राज्यों की कामनवेल्थ की कमजोर स्थिति तथा रूस की आर्थिक निर्भरता, चीन की स्थिति, अरब देशों में आपसी फूट, तेल राजनीति की सीमाएं, सीरिया व यमन इराक की अस्थिरता केन्द्रिय एशिया के राज्यों की नीतियाँ आदि तत्व आजकल पश्चिम एशिया की राजनीति को प्रभावित कर रहे हैं। मध्य पूर्व की सामरिक महत्व की स्थिति, इजराइल का अस्तित्व, तेल भण्डारों की विद्यमानता, अरब देशों के साथ आर्थिक एवं सैनिक सम्बन्धों की आवश्यकता आदि तत्व विश्व के महाशक्तियों को इस क्षेत्र में अधिकाधिक रुचि लेने को प्रेरित करते हैं। 21वीं शताब्दी में पश्चिम एशिया की राजनीति अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का एक महत्वपूर्ण तत्व बनी रहेगी। अमेरिका इस क्षेत्र में अपने प्रभाव, शक्ति तथा उपस्थिति को दृढ़ता तथा विशालता प्रदान करने का यत्न करता रहेगा। इजराइल को अन्तत: फिलिस्तीनियों के अधिकारों का सम्मान करना ही पड़ेगा। अरबों को भी इजराइल के अस्तित्व को स्थाई रुप में मान्यता देनी होगी।

अरब इजराइल विवाद अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर गहरा प्रभाव डाले हुए है-अरब-इजराइल तनाव के कारण ही मध्यपूर्व के भूमध्य सागरीय क्षेत्र में महाशक्तियां अपनी नौसैनिक शक्ति के विस्तार के लिए प्रतिस्पर्धा करती रहीं हैं। अरब-इजराइल तनाव से विश्व के अन्य देशों की विदेश नीतियां भी प्रभावित हुई है जैसे-भारत चाहते हुए भी इजराइल को लम्बे समय तक राजनयिक मान्यता नहीं दे पाया। इसी तरह मध्यपूर्व के संकट से शीतयुद्ध में उग्रता आती रही। तेल कूटनीति ने समूचे विश्व को प्रभावित किया और विश्व आर्थिक संकट का प्रमुख कारण यही था। मध्यपूर्व समस्या ने विश्व राजनीति में मजहब की भूमिका को उभारा है। वर्तमान विश्व के सम्मुख सबसे बड़ी समस्या आतंकवाद की जड़ यहीं से है। मानवाधिकारों का उल्लघन, संयुक्त राष्ट्र की प्रासंगिकता को चुनौती देता है।

पश्चिम एशिया में अस्थिरता का दौर खत्म नहीं हो रहा है। वर्तमान संकट के तीन पक्ष हैं-इजराइल, दक्षिण लेबनान में सक्रिय हिजबुल्लाह और फिलिस्तीन के एक हिस्से वेस्ट बैंक पर अल-फतह तथा दूसरे हिस्से गाजा पर हमास का शासन। इस क्षेत्र की गरीबी अशिक्षा तथा बेरोजगारी चरमपंथ को बढ़ावा दे रही है, उम्मीद है कि-संयुक्त राष्ट्र संघ व अमेरिका के 'पीस टू प्रास्परिटी' योजना, जिसके तहत पचास अरब डॉलर का इस क्षेत्र में निवेश होगा, से बदलाव आए।

दो राष्ट्रों का निर्माण ही समस्या का व्यावहारिक समाधान है, जिसके अनुसार इजराइल और फिलिस्तीन दोनों का अस्तित्व साथ-साथ हो। फिलिस्तीन में गाजा पट्टी, पश्चिमी क्षेत्र सहित पूर्वी येरूशलम इसकी

राजधानी हो। इसका निर्माण वर्ष 1967 में मिले भू–भाग में व्यावहारिक संशोधन करते हुए तथा इजराइल द्वारा पश्चिमी किनारे पर बनाए गये अवैध बस्तियों को हटाकर करना चाहिए। फिलिस्तीनी शरणार्थियों को वापस आने का अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए तथा हमास को अतिवादी दृष्टिकोण, हिंसक कार्यवाईयां और इजराइल का कट्टरवादी व अतिवादी दृष्टिकोण त्यागकर पारस्परिक सौहार्द्र, शिक्षा व रोजगार को बढ़ावा देकर ही इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। साथ ही अमेरिका एवं अन्य पश्चिमी देशों द्वारा इजराइल पर दबाव डालकर संयुक्त राष्ट्र के फिलिस्तीनी समस्याओं पर पारित प्रस्तावों को ईमानदारी से लागू किया जाए, तो समस्या के स्थाई समाधान हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र महेन्द्र, 'फिलिस्तीन और अरब–इस्रायल संघर्ष', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011
2. पोस्ट जे. सल (संपा0) 'फिलिस्तीनी समस्या का समाधान', डेनियल पाइप्स, जन वरी 7, 2009.
3. क्रानीकल फिलिस्तीन (संपा0) 'वर्तमान हमास–इजरायल शत्रुता पर विचार', डेनियल पाइप्स, नवम्बर 15, 2012
4. Edwards-Milton Veverley and Farrell Stephen, 'Hamas,' Polity Press, Cambridge, V.K. 2010.
5. Sherbok Cohn, 'The Palestine-Israeli Conflict,' One world Publication, Oxford, England, 2008.
6. Lesch, Devid, 'The Arab Israel Conflict : A History,' Oxford University Press, USA, 2007.
7. Ben-Ami and Shlomo, 'Scars of War, Wounds of Peac : The Israel-Arab Tragedy,' Oxford University Press, 2006.
8. Chomsky Nom, 'Middle East Illusion,' Penguin Books, 2003.
9. Syeed W Edward, 'The and of Peace Process,' Granta Books, London, 2000.
10. Wigoder Geoffry, 'New Encyclopedia of Zionism and Israel', Fairleigh Dicknson University Press, 1994
11. B. Oren Michael, 'Six Days of War: June 1967 and the Making of the Modern Middle East', Presidio Press, June 3, 2003.
12. Schanzer Jonathan, 'Hamas Vs Fatah : The Struggle for Palestine', Jerusalem Post, December 20, 2008.
13. Rubin Barry, 'Revolution Until Victory? The Politics and History of the PLO', Harvard University Press, 1994.
14. Alam Ansari Mehtab, 'Iraq and the Arab Word: A Social-Political and Economic Analysis', Rajat Publications New Delhi, 2002.
15. Chomsky Nom, 'Middle East Illusion', Penguin Books, 2003.

****

वैश्वीकरण के दौर मे भारतीय दलित समाज के निहितार्थ

डॉ. रामसूरत हरिजन *

प्रस्तावना - 'ग्लोबलाइजेशन' अंग्रेजी का शब्द है। इस शब्द की रचना इस प्रकार होती है: मूल शब्द ग्लोबल है, इसका अर्थ है गोल अथवा पृथ्वी। ग्लोब का आब्जेक्टिव ग्लोबल होता है। अर्थात जो पूरे विश्व को समाहित करे इस प्रकार ग्लोबल शब्द या क्रिया ग्लोबलाइज है। ग्लोबलाइज वर्ब शब्द ग्लोबलाइजेशन का हिन्दी अनुवाद वैश्वीकरण जिसका पर्यायवाची शब्द भूमण्डलीय है।

वैश्वीकरण एक ऐसा विश्व आर्थिक बाजार व्यवस्था है जिसके माध्यम से एक समाज दूसरे समाज से जुड़ता है। वैश्वीकरण के माध्यम से विश्व के किसी भी स्थान पर हो रही घटनाओं का उल्लेख चंद मिनटों में हम सुन व देख सकते है। वैश्वीकरण द्वारा संचार का माध्यम अत्यन्त सरल व सुलभ बना दिया है। जिससे लोग एक दूसरे के करीब आते जा रहे हैं। वैश्वीकरण की प्रक्रिया बहुआयामी है जिसमें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक घटनाओं से लोग अधिक से अधिक जुड़े होते है और वैश्वीकरण अधिक से अधिक उक्त क्षेत्रों पर अपना प्रभाव भी रखता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के समीप आ रहे है। व्यापार, निवेश एवं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का सीमापार दूसरे मुल्कों में स्वतंत्र रूप से करोबार कर रही है। सांस्कृतियों का आदान-प्रदान तथा उनका प्रचार-प्रसार विश्व के विभिन्न महाद्वीपों, राष्ट्र राज्यों तक उनकी अपनी छाप व पहचान बढ़ती जा रही है।

वैश्वीकरण समाज के अधिकाधिक विस्तृत भाग को प्रभावित करत है और समाज में विविध घटनाओं के घटित होने से इसकी जड़े अधिकाधिक गहरी होती जा रही है। समाज में तीन घटनाओं (सा0आ0 और राजनीतिक) के घटित होने से विश्व संकुचित होता प्रतीत हो रहा है और लोगों की जागरूकता लोगों की तरफ बढ़ती जा रही है। आज सुपरमार्केट का बड़ा महत्व है। ऐसे बाजार में दुनियां भर की वस्तुएं खरीदने को मिलेगी। सेटेलाइट संचार व्यवस्था के विकास ने तो दुनिया के लोग एक दूसरे के साथ सरलता से सम्पर्क स्थापित कर रहे है जैसे- मोबाइल, टेलीफोन, वीडियो, कान्फ्रेसिंग हार्डवेयर, साफ्टवेयर कम्प्यूटर, इंटरनेट, ई-मेल ने तो दुनिया में धूम मचा रखा है।[1]

भूमण्डलीकरण एक ऐसे विचार और व्यवहार का नाम है जो अपनी सार्वभौमिकता के जरिये व्यक्ति और समुदायों को उनकी पारिवशिकता का शिकंजा तोड़ने के लिए सबसे ज्यादा व्याकुल है। विकसित देशों के मुकाबले दुनिया के बाकी क्षेत्रों में स्थिति दयनीय है। अगर भारत की स्थिति पर गौर करें तो यहाँ एक बड़ा अंतर्विरोध यह दिखाई देगा कि जहाँ एक तरफ सरकार आर्थिक समृद्धि से कोसो दूर है। अमीर-गरीब को विकास की एक ही लाठी से हांकने के कारण जो अमीर है और अमीर होते जा रहे है और जो गरीब है और गरीब। ट्रिकल डाउन सिद्धांत पूरी तरह से फेल हो रहा है। कल्याणकारी राज्य अवधारणा धीरे-धीरे गौण होती जा रही है। इस वजह से आर्थिक उत्पादन की अपेक्षा वितरण की समस्या पैदा होती जा रही है क्योंकि भारत में मूल समस्या अब केवल उत्पादन की नही है बल्कि इसके साथ-साथ समान वितरण की है।

वैश्वीकरण दुनिया का सबसे खतरनाक चरित्र है पूंजी का एकल बहाव और इसके ठीक विपरीत दिशा में गरीबी का बहाव। इसका प्रभाव सभी समाजों पर समान रूप से नही पड़ रहा है। एक तरफ दलित समाज की पूर्ववर्ती, स्थिति, सामाजिक संरचना की विशिष्टताएं, संस्कृति और दूसरी ओर वैश्वीकरण के विरोध में राष्ट्र द्वारा लागू की जाने वाली आर्थिक और सामाजिक नीतियों की विशिष्टताएं भिन्न-भिन्न परिणाम उत्पन्न करती है। क्योंकि इस प्रक्रिया के कर्ताधर्ता प्रभुत्वशील वर्ग द्वारा स्वयं के हित में चलाए जा रहे अभियान को यह कहकर दलील दी जाती है कि वैश्वीकरण आम आदमी के हित में कुछ वस्तुएं जैसे मोबाइल (सेलफोन) टूथपेस्ट, मंजन आम आदमी के हित में केता के रूप में हो सकती है लेकिन विक्रेता के रूप में गरीब, असहाय, शोषित के हित में नहीं हो सकती।[2]

पूर्व वर्षो की अपेक्षा वैश्वीकरण व्यापार के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई है। भौगोलिक एकीकरण के दूसरे तत्व के रूप में क्रांति दोनों एक साथ चल रहे है। इसके विकास की गति एक निश्चित प्रकृति में निरन्तर बढ़ रही है। इसका तात्पर्य है कि भौगोलिक एकीकरण को रोका नहीं जा सकता है। दुनिया में आयात-निर्यात में नये युग का प्रवेश हुआ है। और सरलता से उच्चतर स्तर तक के विकास नीतियों में सुदृढ़ता और वयैक्तिक निवेशकर्ता की स्थिति सुदृढ़ हुई है।

भौगोलिक एकीकरण में नि:संकोच वृद्धि हुई है तथा व्यापार एक देश से दूसरे देश में तेजी से फैल रहा है। देखा जाय तो नये शीत युद्ध के बाद औद्योगिक विकास व भौगोलिक एकीकरण का विकास तथा व्यापार की उपलब्धता में वृद्धि हुई है। प्रजातंत्र का विकास भी तेजी से बढ़ा है जिसमें सभी लोगों की समान भागीदार को दर्शाता है। जहाँ एक तरफ वैश्वीकरण का विकास हो रहा है वहीं मानवाधिकार, अपराध के नये-नये रास्ते खुले है जिसमें साइबर अपराध मुख्य है आधुनिक टेक्नालॉजी ने मानवीय जीवन को बढ़ा रहा है स्वच्छ जीवन शैली को जन्म दिया है वही दूसरी तरफ लोगों में असन्तोष, गरीबी भूखमरी और बेरोजगारी तथा कष्टमय जीवन शैली को बढ़ा रहा है। कारण क्रयशक्ति क्षमता तथा संसाधन का अभाव एवं अमीर-गरीब की खाई को चौड़ा करती जा रही है। वैश्वीकरण, उदारीकरण एवं निजीकरण का बोलबाला बढ़ा रहा है जिससे उदारीकरण की प्रक्रिया में अहस्तक्षेप की नीति को भी बढ़ावा मिल रहा है। जिसमें राज्य कम से कम

* असि0 प्रो0 (राजनीतिशास्त्र) एस0डी0एस0एन0 डिग्री कालेज, छोटा भरवारा, गोमती नगर, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

हस्तक्षेप करे वही व्यक्ति की स्वतंत्रता में वृद्धि की मांग करते हुए बाजार व्यवस्था को बढ़ाने का काम कर रही है जहां व्यक्ति सक्षम न हो वही राज्य उसकी मदद करेगा। निजीकरण में लाइसेंस प्रणाली को ढीला कर एक देश का दूसरे देश के बीच निवेश को बढ़ावा देना तथा बाजार व्यवस्था को सुदृढ़ रूप से लागू हो पाता है। कुशल श्रमिक आसानी से इस प्रक्रिया में रोजगार प्राप्त कर लेते है लेकिन अकुशल श्रमिक जिसमें दलितों का बड़ा हिस्सा मौजूद है रोजगार पाने में असफल रह जाता है। या फिर उसे इस प्रक्रिया के लायक नहीं समक्षा जाता। इन सभी का मूल कारण शिक्षा पद्धति का एक समान रूप से लागू न करना सरकार की अकर्मण्यता को दर्शाती है।[3]

भूमण्डलीय सामाजिक विज्ञान है और प्रबन्ध, कारखाने, तकनीकी का क्षेत्र बहुत विशाल है और विज्ञान पर एक बहस करने के लिए प्रेरित करता है। हम लोग भूमण्डलीकरण संसार में जीवन–यापन कर रहे हैं जो बहुत दृढ़तापूर्वक लोगो को एक गांव में समेट रहा है। वैश्वीकरण सामाजिक आर्थिक नियम कानून है जो वाह्य व आन्तरिक रूप से विभिन्न देशों व लोगो को व्यापारीकरण की ओर धकेल रहा है। भूमण्डलीकरण का समर्थक व विरोधी दो दल है। एक तरफ इस प्रक्रिया के समर्थकों का मानना है कि वैश्वीकरण हर वर्ग को लाभ पहुँचा रहा है जिसमें सबसे निचला दलित वर्ग पहले से बेहतर स्थिति में है। गेल ऑम्बेट दलित आयाम की विख्यात इतिहासकार है। ये मानती है कि जाति व्यवस्था व छुआछूत में कमी आयी है। विदेशी पूँजी जाति को पीछे छोड़ दिया है इसके विरोधियों का मानना है कि विदेशी पूँजी की अमलदारी में दलितों की हालत और बुरी होने वाली है। एस0के0 थोराट, के0एस0 चलम, एस नानछरिया का नाम प्रमुख है। ये मानते है कि बाजार के प्रभुत्व में राज्य आर्थिक जीवन से अपने हाथ खींच लेगा इसलिए दलितों का आरक्षण खत्म होने जैसे आघातों का सामन कराना पड़ सकता है। दलित पूरी तरह असुरक्षित हो जायेगा। दलितों को अपने वजूद के लिए संघर्ष करना पड़ेगा। डी0आर0 नागराज कहते है कि वैश्वीकरण द्वारा थोपी जाने वाली समरूपता का परिणाम सामुदायिक संस्कृति की तबाही में निकलेगा जिसका दलितों को भारी पैमाने पर नुकसान उठाना पड़ेगा। सामुदायिक संसाधनों के नष्ट हो जाने से दलितों के लिए रोजी–रोटी की समस्या और गम्भीर हो जायेगी।

भारत में वैश्वीकरण ब्राह्मणवाद की उच्चतम अवस्था बतायी जा रही है। फूले–अम्बेडकर विचारधारा ब्राह्मणवाद ही नही पूँजीवाद को भी दलितों और अन्य मेहनतकशों का खून चूसने वाली जोके मानती है। जहाँ किसी व्यक्तियों का ऐसा समूह जो वैश्वीकरण को सार्वभौम का वाहक मान लेने के बाद क्या बाकी दलित उनके पीछे घसीटे नही जायेगे। कैसी अजीब बात है कि सार्वभौम की उपलब्धि भी जो जाय और दलितों को संज्ञानात्मक धरातल पर नयी उपलब्धियाँ भी हो जाय। दरअसल, सार्वभौम तक दलितों की सामूहिक यात्रा गहरे विचार–विमर्श और जद्दोजहद का परिणाम न होकर जज्बातों और नारों की अवधारणा लिए हुए जिसमें लाभकारी तथा अलाभकारी दोनों को एक ही सीमा के दायरे में घसीटा जा रहा है। जैसे अपराधी तथा निरपराध दोनों को दण्ड देना यही वैश्वीकरण का न्याय है।[4]

सरकारी स्कूल की पढ़ाई एकदम बकवास है। शिक्षक कुर्सी पर बैठा ऊँघता रहता है। बच्चे वहां बैठे–बैठे बोर होते रहते है इनके लिए न तो स्कूल में पीने का पानी की समुचित व्यवस्था और न ही शौचालय की, यहां पर पढ़–लिखकर बच्चा कुछ भी प्राप्त नही करता। प्राइवेट स्कूल इतने महंगे है कि हम वहां जाने की जुर्रत नही करते है। दलित समाज को स्वास्थ्य सेवाएं नि:शुल्क मिला करती थी जो अब उनसे फीस वसूली की जा रही है सरकार कल्याणकारी योजनाओं से नाता तोड़ती जा रही है। शिक्षा स्वास्थ्य रोजगार जैसे आवश्यकताएं अब भी बहुत दूर की वस्तुए कही जा सकती है। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्र द्वारा जारी सहस्राब्दि विकास रिपोर्ट में मानव विकास सूचकांक में भरतीय दलित अब भी शिक्षा स्वास्थ्य रोजगार में अल्प भागीदारी सुनिश्चित हो पाई है। इसलिए यह वर्ग बहुत पीछे है। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के तहत भारत में जाति व्यवस्था को भूमण्डलीयकरण के वर्तमान दौर में खतरनाक बताया है।

भारत में भूमण्डलीयकरण के आगमन से बड़ी तेजी से आर्थिक विकास ने आज मुद्रा का केन्द्रीकरण किया जा रहा है। वही पूँजीपतियों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। दूसरी तरफ गरीबी, बेरोजगारी, भूखमरी आये दिन बढ़ती जा रही है। दलित समाज अपनी दशा पर जीने के लिए मजबूर होता जा रहा है क्योंकि यह समाज दैनिक संसाधन जुटाने में असमर्थ है। आज के परिवेश में उसी की सत्ता है जो आर्थिक रूप से मजबूत हो राजनीतिक रूप से सत्ता में उसकी पकड़ हो बाकी सारी प्रक्रियाएं उसके चारों तरफ घूमती नजर आयेगी।

मार्क्स सबसे पहला व्यक्ति व दार्शनिक था जिसने अर्थ को पहचाना और भविष्य में उसकी प्रासंगिता को समक्षा इसलिए तो उसने साम्यवादी व्यवस्था लाने का प्रयास किया भले यह व्यवस्था असफल रही लेकिन उसके सिद्धान्त आज के वर्तमान भूमण्डलीय में खरे उतरे है और वर्ग विभाजन का खेल जारी है जैसा कि मार्क्स ने कल्पना किया था विज्ञान टेक्नालॉजी मशीनीकरण को बढ़ावा देता जा रहा है जिससे हस्तशिल्पी वे अन्य तरह के कारीगरों की संख्या में बेतहासा बेरोजगारी बढ़ रही है। मशीनीकरण के युग में कुशल व प्रशिक्षित श्रमिक की आवश्यकता होती है जिसके कारण दलित समाज में काफी धीमी गति से दिशाविहीन शिक्षा पद्धति का उपयोग किया जाय तो शायद यह वर्ग कुछ हद तक उपलब्धियाँ हासिल कर सकता है अन्यथा भूमण्डलीयकरण के दौर में यह दलित समाज हाशिये का शिकार बनता जायेगा आने वाले कुछ वर्षो में और काफी बुरी हालत से गुजरना पड़ सकता है।[5]

राबर्ट विलियम फासेज का निष्कर्ष सही लगता है कि दास प्रथा के कारण ही अमरीका को बाज़ारवादी व्यवस्था का नेतृत्वकर्ता बनने का अवसर मिला और इस प्रक्रिया में पूरी की पूरी नीग्रो नस्ल ही गायब हो गई। इसका मतलब बाज़ारवाद अपने विकास के क्रम में लगातार एक किस्म की दासता का निर्माण करता जाएगा। एक अध्ययन के अनुसार भारत के आठ राज्यों में जितनी गरीबी है, उतने ही 26 अफ्रीकी देशों में है। इस ऑकड़े से साफ जाहिर है कि भारत में गरीबों शोशितों, असहायों को खुद की दशा पर जीने के लिए छोड़ दिया गया है जिससे उनकी हालत दिन–ब–दिन खराब स्थिति की ओर बढ़ती जा रही है। आने वाले समय में आईना साफ नजर आने लगेगा। जिससे दलित समाज में गहरी निराशा और कुंठा है। इस स्थिति से उबरने हेतु उसे दोहरी लड़ाई छेड़नी होगी एक तरफ राष्ट्रीय पूँजी के खिलाफ दूसरी तरफ अन्तर्राष्ट्रीय पूँजी के खिलाफ। इसी लड़ाई में न्याय व समता का अधिक व्यापक सिद्धान्त विकसित होगा।

निष्कर्षत: यही कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण के सत्ताधारियों का केन्द्र अर्थ है जो अपने अनुसार इस जटिल प्रक्रिया को बाजार व्यवस्था के माध्यम से लोगों को गुमराह करके आने वाले समय में ऐसे भंवर जाल में डाल देगा कि जहां से निकल पाना भी एक जटिल परिघटना बन जायेगी क्योंकि विगत वर्षो में आर्थिक मंदी ने यह साफ कर दिया है कि गुजरते समय में प्राकृतिक संसाधन भी घटते ही जायेंगे और ऐसे में हर देश आर्थिक

समृद्धि को पाने की चाह में प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ेगा जिससे महान आपदा का आगमन होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रहीस सिंह 2011 'मानवाधिकार और सामाजिक न्याय' योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली पृ0-8
2. गोपाल गुरू 2007, 'भारत का भूमण्डलीकरण' वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ0-255 'सार्वभौम की तरफ छलांग'
3. देवेन्दर कुमार दास 1999, 'ग्लोबलाइजेशन एण्ड डेवलपमेन्ट' दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृ0-254
4. जे0वी0 राघवेन्द्र राव 2008, 'ग्लोबलाइजेशन दलित और सामाजिक न्याय' रावत पब्लिकेशन जवाहर नगर जयपुर पृ0-159
5. राजेन्द्र रवि 2007, 'भारत का भूमण्डलीयकरण', हाशिये से बेदखली, वाणी प्रकाश नई दिल्ली पृ0-306

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

A study of Intelligence and Achievement in Music Dimensions of Students with Respect to the Expenditure & incurred in various types of schools

Dr. Sunita Shrimali*

Abstract - Musical dimensions and active engagement with music have been shown to be positively associated with many intelligence and achievements as well as academic performance in various types of school students. Students who believe that intelligence is malleable are more likely to attribute poor academic performances to effort rather than ability, and are more likely to take remedial action to improve their performance. The main purpose of this research paper is to understand the intelligence and achievement in music dimensions the academic performance of the students with respect to the expenditure and incurred in various types of schools.
Keywords - Music dimensions, intelligence, achievement, academic performances, expenditure, school students.

Introduction - Intelligence derives from ability to learn and to utilize what has been learned in adjusting to new situation and solving new problems. Intelligence is not something we are born with. It develops and at every stage of development, reflects the individual interaction with his environment. At birth we may have a capacity, a potentiality for intellectual growth but this cannot be realized except through learning. The intelligence is something while can be measured with the help of intelligent test. As Benet & Simon put it about intelligence tests that they wished "Simply to show that it is possible to determine in a precise and truly scientific way the mental level of an intelligence to compare the level with a normal level and consequently to determine by how many year a child is retorted.

Intelligence Quotient - In its original meaning the ratio of a subjects mental age (as determined by a standard comparative test) to his actual age and multiplied by 100, i.e. MA/CA X 100. Levels of intelligence in terms of Standford Binet- IQ Ranges.

	IQ Range
Idiot	Below 25
Imbecile	25-50
Moron	50-70
Borderline defective	70-80
Below normal	80-90
Normal or average	90-110
High arrearage	110-120
Supervisor	120-140
Very Supervisor	Above 140

Achievement - According to dictionary of education (Carter V. Good) achievement is accomplishment in a given skill or body of knowledge. It is indeed knowledge attained or skill developed in the school subjects usually designated by the test scores or by marks assigned by the teachers or by both. Achievement is the ability of an individual to perform school task successfully. Academic success is the attainment of some fixed achievement level where as academic failure of scholars in achieving all it us.

State of the Problem - A study of Intelligence and Achievement in Music Dimensions of Students with Respect to the Expenditure & incurred in various types of schools.

Objectives :

1. To find the effect of the total amount of expenditure on the intelligence.
2. To find out the effect of the total amount of expenditure on the achievement level in music of students in various types of schools.

Hypothesis

1. Means of scores on intelligence of students studying in schools involving high expenditure medium expenditure and low expenditure namely Group-I, Group-II and Group-III respectively do not differ significantly.

1.1. Means of scores on intelligence of student studying in schools of Group-I and Group-II do not differ significantly.

1.2. Means of scores of intelligence of students studying in schools of Group-II and Group-III do not differ significantly.

1.3. Means of scores of intelligence of students studying in schools of Group-I and Group-III do not differ significantly.

2. Means of scores on achievement in music of students studying in schools of Group-I, Group-II and Group-III do not differ significantly.

2.1 Means of scores in achievement in music of students

*Associate Professor, Rajasthan Sangeet Sansthan, Jaipur (Raj.) INDIA

studying in schools.

2.2 Means of scores of achievement in music of students studying in schools of Group-II and Group-III do not differ significantly.

2.3 Means of scores on achievement in music of students studying in schools of Group-I and Group-III do not differ significantly.

Delimitations of the Study - Although the research has try to cover the relevant facts and area, still some delimitation are there in this study:

1. Present study covers only the few dimensions of the student's development in schools that is achievement in music and intelligence. Other dimensions are there which are not considered in this study.
2. The study involves the effect of expenditure only. The area of study is limited to the Jaipur City only.

Method of the Study - The methodology used in this study was "Normative survey method".

Variables - The present study involves four variable out of which one is independent and two are dependent.

I. Independent variable:

- Amount of expenditure incurred in schools.

II. Dependent variable:

- Intelligence quotient
- Achievement in music.

Measurement of Tools - The tools and materials used for data collection in this study are 'Samanya Budhi Yogyata Parikshan' Jalota.

Jalota's test for IQ:-

Achievement in music - Achievement scores in music were based on the total marks obtained by the students in their examination. The academic records for achievement was collected from school records.

Statistical Technique Used - The collected data was sorted and tabulated. The means and standard deviation of the scores on intelligence X and achievement Z for all the two schools were obtained.

a) Mean: The sum of all the scores was found and then the total is divided by the total number of items in the groups.

b) The standard deviation: After finding out the arithmetic mean of the scores, the S. D. was calculated.

c) The test of significance:- This was done by using the 't' test.

Table No. 1 (See in next page)

Means of scores of intelligence of students studying in schools of Group-I and Group-III do not differ significantly.

Table No. 2 (See in next page)

School of Group-I and the level of expenditure is medium in Group-II. The means on scores of achievement is high in the case of students of group in comparison to Group-I, So the hypothesis 2. (Means of scores on achievement in music of students studying in schools of Group-I and Group-II do not differ significantly.) is rejected.

Findings

Effect of amount of expenditure on level of intelligence of students.

1. The means of scores of intelligence of students studying in the schools of Group-I does differ significantly with the means of scores of intelligence of the students of Group-II.
2. The means of the scores of the intelligence of the students of Group-II does differ significantly with the means of score of intelligence of students of Group-III.
3. The means of scores of the intelligence of the students of Group-I and Group-III does not differ significantly.

The amount of expenditure incurred is maximum in school of Group-I, medium in Group-II and minimum in Group-III. The mean of intelligence scores of students in Group-II is highest in Group-I, is of medium level and of Group-III is minimum.

Effect of amount of expenditure on the level of achievement in music of students of Group-I and Group-II.

1. There is a significant difference between the music achievement of students of Group-I and Group-II.
2. There is a highly significant difference between the music achievement of students of Group-II and III.
3. There is a significant difference between the music achievement of students of Group-1 and Group-III.

In case of music achievement, the achievement of Group-II is of highest level and that of Group-I is of medium level and of Group-III is lowest level. The expenditure incurred in these schools on students is not effecting the level of music achievement in the least.

Conclusion - It is the child's own input and his capability that is giving him good result. It is not so satisfactory result otherwise type of school has no hand in it. After all the above discussion it may be concluded that parents who try very hard to get their child admitted to a well known and famous school and who are ready to pay any cost for it irrespective of their capacity, are running behind only fame of name. Otherwise there is nothing special in these schools. All the money, which is charged by these schools in the name of resources to be used for child's benefit, is not utilized so rather it is used to maintain the pomp and show of school. The high standard of school is maintained out of parent's pockets. The parents think that their child is going to be very smart. Intelligent and all rounder person. But in reality, the child if was taught in a low fees, not well known school would be on the same level regarding his intelligence and music achievement. In poor schools the fees is low and the is no providence of laboratories, libraries. In high fees schools there is all these things but they are not used for children's benefit. Rather they remain untouched and keeps collecting dust.

References :-

1. BLONDS' ENCYCLOPEDIA OF EDUCATION, Blond Educational, Great Britain (1969), P. 117
2. GOOD C. V. , Essentials of Research, New York, Appleton Century Crofts, as cited by Dr, D. L. Sharma, Education in the Emarging Indian Society, Loyal Book

Depot, Merrut(1972), p 111.

3. HORNE, H.H. The Demographic Philosophy of Education, New York, MacMillan, as cited by D.L. Sharma, Education in the Emarging Indian Society, Loyal Book Depot, Merrut, (1932), p 113.
4. DEWEY JOHN, Democracy and Education, New York, The MacMillan Co., as cited by Dr, D. L. Sharma, Education in the Emarging Indian Society, Loyal Book Depot, Merrut DEWEY, (1946) p 118.
5. GANDHI MAHATMA, Basic Education, ahemdabad, Navjivan Publishing House, as cited by Dr, D. L. Sharma, Education in the Emarging Indian Society, Loyal Book Depot, Merrut, (1941) p 113.
6. MUNN NORMAN. L., Introduction to Psychology, IBM Publishing Company, Calcutta, (1967) p 100
7. NUNN T. P. , Education – its Data and First Principles, London, Edward Arnold and Company; as cited by Dr. D. L. Sharma, Education in the Emarging Indian Society, Loyal Book Depot, Merrut,(1949) p 114
8. A. B. SHAH and C. S. INAMDAR (1980). The unit cost of Post Graduate Education in the University of Poona- A Case stdy, Indian Institute of Education, Pune, IIIrd survey of educational research 1978-83, p.291.
9. F. H. RIJVI, (1960), Financing of Higher Education in less developed countries, A. M. U. Press, IIIrd educational survey of research, 1978-83, p 290.
10. JOHN W. BEST. (1982), research in education, New Delhi, prentice hall of India, Pvt. Ltd. P. 306.

Table No. 1 :- Test for significance of difference between Intelligence of students in various schools:-

S.	Group	Statistics			Pair of Groups	d. f.	f Value	Significance
		N	Mean	SD				
1	I	29	104.10	15.17	I & II	55	3.52**	S
2	II	28	119.57	18	II & III	43	4.80**	S
3	III	17	97.23	8.60	I & III	44	1.68	N.S.

t Value	df_1	df_2	df_3
*At 0.05 level of significance	2.00	2.02	2.02
** At 0.05 level of significance	2.69	2.69	2.69

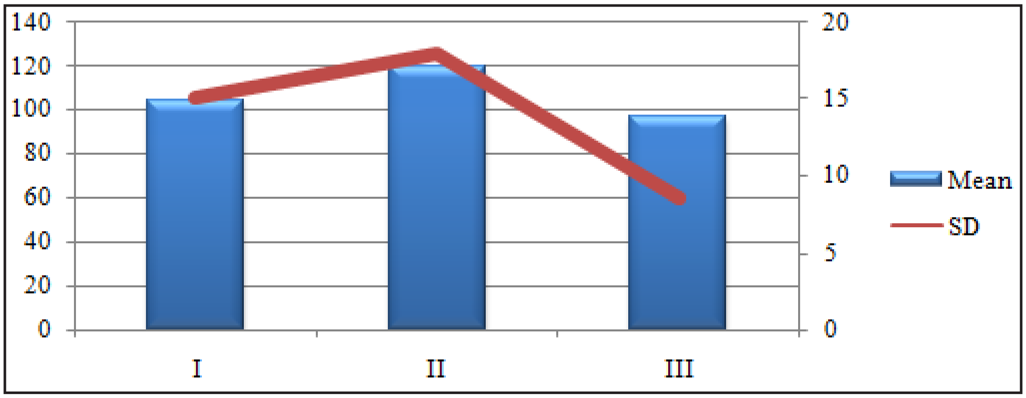

Table No. 2:- Test for the significance of difference between Music achievement of the students in various schools

S.	Group	Statistics			Pair of Groups	d. f.	f Value	Significance
		N	Mean	SD				
1	I	29	402.44	59.49	I & II	55	-4.36	H.S.
2	II	28	401.57	39.53	II & III	43	9.139**	H.S.
3	III	17	345.64	44.32	I & III	44	3.384**	H.S.

t Value	df_1	df_2	df_3
*At 0.05 level of significance	2.00	2.02	2.02
** At 0.05 level of significance	2.66	2.69	2.69

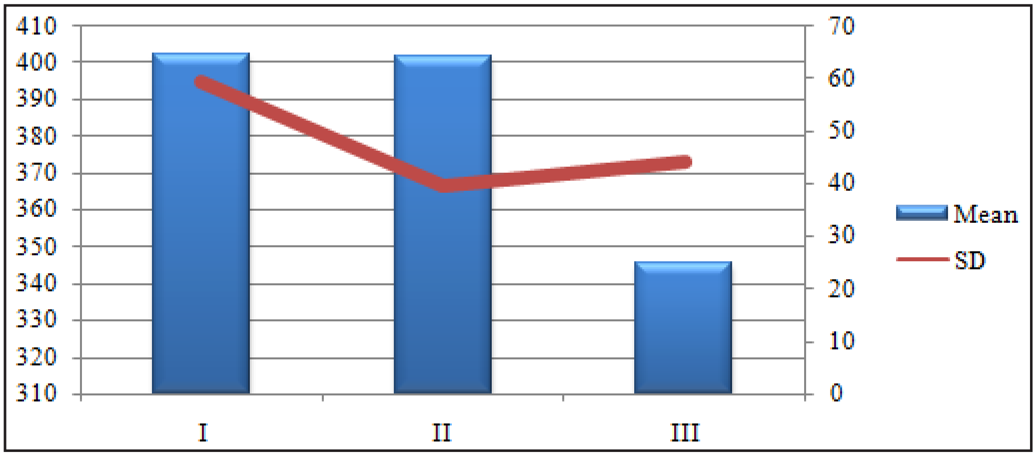
410
400
390
380
370
360
350
340
330
320
310
70
60
50
40
30
20
10
0
I
II
III
Mean
SD

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारतेन्दु की युग दृष्टि एवं उनका व्यक्तित्व

संजीव मिश्र*

प्रस्तावना - 'प्राचीन से नवीन के संक्रमण काल में भारतेन्दु हरिश्चंद्र भारतवासियों की नवोदित आकांक्षाओं और राष्ट्रीयता के प्रतीक थे, वे भारतीय नवोत्थान के अग्रदूत थे'।[1]

भारतेन्दु काल को 'नवजागरण काल' भी कहा गया है। सन् 1856 के क्रांति के बाद साहित्य भी संक्रांति काल से गुजर रही थी। सामाजिक-राजनीतिक क्षेत्रों में बदलाव के बयार बह रहे थे, नये-नये विचारों का प्रसार हो रहा था, उनका भी असर धींरे-धींरे साहित्य पर पड़ रहा था, विचारों में इस परिवर्त्तन का श्रेय भारतेन्दु को जाता है, जिसका स्पष्ट प्रभाव सन् 1868 के बाद साफ दिखता है, इसलिए इस युग को भारतेन्दु युग भी कहते हैं। भारतेन्दु के पहले ब्रजभाषा में भक्ति और शृंगार परक रचनाएँ होती थी, पर भारतेन्दु के समय में शृंगारिकता, रीतिबद्धता में कमी आ गई और राष्ट्र-प्रेम, भाषा-प्रेम, और स्वदेशी वस्तुओं के प्रति प्रेम रचनाकारों के मन में भी पैदा होने लगी। उनका ध्यान सामाजिक समस्या और समाधान की ओर जाने लगा।

भारतेन्दु ने सामाजिक दोशों, रूढ़ियों, कुरीतियों का घोर विरोध किया। उन्होंने धर्म के नाम पर होने वाले ढोंग की पोल खोल दी। छुआछूत के प्रति भी उनका क्षोभ का स्वर था। वे विधवाओं के दुख से दुखी रहते थे, बाल-विवाह के घोर विरोधी थे ओर स्त्री शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। भारतेन्दु ने सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और पाश्चात्य संस्कृति पर कुठाराघात अपने हास्य-व्यंग्यात्मक रचनाओं में पुरजोर ढंग से की है।

इस युग में भाषा अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही थी। नागरी-आंदोलन के चलते कविताओं/रचनाओं में कलात्मकता का अभाव रहा। नागरी-आंदोलन के लिए कवियों को जनमत जगाना था, जो कि जनवाणी से ही संभव था, इसलिए इस युग में रचनाकार-कवि, समाचार-पत्रों द्वारा अपनी रचनाओं-कविता का प्रचार करते थे। इस युग के रचनाकार तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं भाषा संबंधी समस्याओं में इतने व्यस्त थे कि वे नवयुग की चेतना को कलात्मक एवं प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त न कर सके, पर उनकी जैसी भी भाषा शैली उसमें रही हो, सभी जगह यथार्थ की अनुभूति होती रही, जो कि सच्चे-सरल भाषा शैली में अभिव्यक्त हुई है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म एक ऐसे धनाड्य परिवार में हुआ था, जहाँ विलास के सारे वातावरण एवं सामग्रियाँ सहज उपलब्ध थी। वे विलासी अपव्ययी और रूढ़िग्रस्त नैतिकता के प्रचंड विरोधी थे, उन्होंने माधवी और मल्लिका जैसे विधवा वेश्याओं के उद्धार को लेकर किसी की परवाह नहीं की। वे चाहते थे कि वेश्याएँ आर्थिक दृष्टि से आत्म-निर्भर बनकर सम्मान के साथ नारीत्व को बचाते हुए समाज में रहें। उनके इस दृष्टिकोण ने उनके लेखन को ही प्रभावित नहीं किया बल्कि वे सामाजिक दिशाओं के अन्य परिवर्त्तन के अगुवा बने। वे पैसे का उपयोग समाज सेवा के लिए करना चाहते थे। उनका कहना था - 'जिस पैसे ने हमारे बाप-दादों को खा लिया है, उसी को मैं खा जाउँगा। वे पैसा को खाने के लिए पत्रिका निकालने, साहित्यानुरागियों के बीच वितरण करने, देश की स्थिति जानने के लिए यात्रा करने और राजा शिव प्रसाद को चिढ़ाने के लिए तेल-फुलेल की दीये जलाने में करते थे।'[2] भारतेन्दु प्रेमीजीव थे, उनका हृदय अत्यन्त कोमल था, वे अत्यंत संवेदनशील थे, दूसरे का दुख देख-सुनकर वे कातर हो उठते थे। दुसरों की सहायता करते समय वे अपने सुख-दुख की परवाह न करते थे, वस्तुत: वे पर-दुख कातर थे। उनमें धन का मोह बिल्कुल नहीं था। प्रिय से प्रिय वस्तु नि:संकोच वे दुसरों को दे देते थे। ऋणों के भार से वे लद जाने और आर्थिक संकट में लदकर संतुष्ट रहते थे। उन्होंने संचय नाम जाना ही नहीं था, साहित्य समाज और देश को जीवन भर दिया, उनमें व्यापार दृष्टि एकदम नहीं थी। आदर्श और अराध्य के लिए उन्होंने जीवन की बली चढ़ा दी। उनका व्यक्तित्व इन्द्रधनुषी था, सारा साहित्य उनकी इसी व्यक्तित्व का परिणाम है। उनका व्यक्तित्व और उनकी प्रतिभा जीवन से जुड़ी थी। वे नीसीम होकर जीना चाहते थे। वे अत्यन्त क्षमाशील थे, गुणियों और विद्वानों का महत्व सबसे ऊँचा था उनकी दृष्टि में।

भारतेन्दु के व्यक्तित्व का रूप धनिक और शिक्षित धनिक वर्ग का था। पुराने के प्रति उनका मोह था। उनके परंपरागत आर्थिक संस्कार उन्हें सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में उग्रवादी होने से अवश्य रोकती थी। उन्होंने अपने पिता को प्रगतिशील दृष्टिकोण दिया और काव्य को भी प्रगतिशीलता का मार्ग दिखाया। स्त्री शिक्षा की ओर वे स्वयं और अपने पिता को प्रवृत किया। वे स्वयं उच्च शिक्षा से वंचित रहे। घर पर ही स्वाध्याय किया, किन्तु उन्होंने प्रयास करके बनारस में कॉलेज खोला जो आगे चलकर 'हरिश्चंद्र कॉलेज' के नाम से प्रसिद्ध है। भारतेन्दु के समय में ही रेलों का प्रचार हुआ, वे उससे जगन्नाथजी और अन्य यात्राएँ की। उन्होंने इस यात्रा से देश की दशा अपने आँखों से देखी और विभिन्न स्थानों की रीति-रस्मों और भाषाओं से इनका परिचय हुआ। बंगाल की साहित्यिक प्रगति देखकर उन्हें हिन्दी साहित्य में प्रगति लाने की ममता जागी। राजा राममोहन राय, प्रिंस द्वारिका नाथ ठाकुर, केशवचंद्र सेन, ईश्वर चंद्र विद्यासागर प्रभृति नव जागृति के संदेशवाहकों से प्रेरणा ग्रहण की। वे उनसे प्रभावित होकर विधवा विवाह, शिक्षा, सामाजिक एवं धार्मिक सुधार की बातें सीखीं। उनकी जगन्नाथ यात्रा का प्रभाव उनपर बहुत पड़ा। बंगला साहित्य और वहाँ के नवोदित विचार और आन्दोलन को इसी यात्रा के दौरान समझ सके। उन्होंने उसी के अनुसार हिन्दी भाषा और साहित्य की उन्नति के लिए कमर कसी। भारत की अतीत

* सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग) सूरत पाण्डेय डिग्री कॉलेज, गढ़वा, नी.पी.विश्वविद्यालय, मेदिनीनगर (झारखंड) भारत

के प्रति उनमें असीम श्रद्धा थी। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि भारतवर्ष की उन्नति के लिए अंग्रेजों से बहुत बाते सीखनी है। अंग्रेजों के ज्ञान-विज्ञान से वे बहुत प्रभावित उन्होंने यकवि-वचन सुधा : 'हरिश्चन्द्र मैगजीन', 'हरिश्चंद्र सुधा' और 'नवोदिता' के नाम से पत्रिका निकाली। स्त्रियों के उपकार के लिए 'बाबाबोधिनी' नामक पत्रिका निकाली। 1870 में उन्होंने 'कविता-वर्धिनी सभा' स्थापित की। 1873 में उन्होंने Penny Reading Club स्थापित किया। उन्होंने 'तदीय समाज' की स्थापना वैष्णव धर्म और ईश भक्ति के प्रचारार्थ की। यह समाज गो-रक्षा का करती थी और मदिरा-मांस सेवन को रोकती थी। इस समाज ने 'भगवत् भक्तिनी' 'तोषणी' नामक पत्रिका प्रकाशित की। 1874 में इन्होंने 'वैश्याहितैषिणी सभा' की स्थापना की और इसी सभा में इन्होंने अपनी पुत्री का विवाह किया। अश्लील गीतों पर प्रतिबंध लगाया और समाज सुधार का मार्ग प्रशस्त किया। इन्होंने 'प्रविष्ट' 'प्रवीण' और 'पारंगत' नाम की तीन परीक्षाएँ प्रारंभ की। इन परीक्षाओं में उर्त्तीण होने वाले को पारितोषिक दी जाती थी। इन्हीं के प्रयास से 'काशी सार्वजनिक सभा' की स्थापना हुई। इन्होंने 'Young Mean's Association' और 'Debating Club' भी स्थापित किया।'[3] इस तरह भारतेन्दु का जीवन सार्वजनिक था। देश-हित उनके जीवन का प्रधान उद्देश्य था। उन्होंने प्राचीनता और नवीनता का मेल उपस्थित किया। वे अंधानुकरण में विश्वास नहीं रखते थे।

डॉ0 वार्ष्णेय ने लिखा है - 'यह एक महत्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्त्तन था। अस्तु, जिस समय भारतेन्दु का आविर्भाव हुआ उस समय भारतीय स्वाधीनता का सूर्य अस्ताचल-गमन कर चुका था और भारत पर पूर्ण रूप से अंग्रेजों का आतंक छा गया था। किन्तु यह राजनीतिक स्वाधीनता का अपहरण तो केवल एक वाह्य चिन्ह था। सच तो यह है कि भारतीय-इस्लामी संस्कृति अपनी शक्ति खो बैठी थी उस समय मुसलमानों ने भारत वर्ष को पद-दलित किया। जब मुसलमान यहीं बस गए तो इस्लामी संस्कृति, भारतीय जीवन को और स्वयं अपने को यहाँ की संस्कृति से प्रभावित किए बिना न रह सकी थी। इस पारस्परिक संपर्क के अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के परिणाम दृष्टगोचर हुए अठारहवी शताब्दी में यही भारतीय-इस्लामी संस्कृति अपने अन्दर के दोषों का निराकरण कर सकने के कारण पश्चिम की एक जीवित जाति के सामने नत-मस्तक हुई। धर्म और समाज प्रसारोन्मुख न होकर अपने में सिमट कर रह गए थे। खान-पान, छुआछूत संबंधी प्रतिबंधों और रूढ़ि तथा परम्परा का पालन करना ही प्रधान कर्त्तव्य समझा जाने लगा था। वास्तव में संकटकालीन कट्टरता के फलस्वरूप लोग धर्म के वास्तविक स्वरूप को भूल कर उसके वाह्य और समयानुसार परिवर्त्तनशील स्वरूप को चिरंतन समझ कर अपनाए रहे। अबाध और उन्मुक्त गति से प्रभावित होने वाली संस्कृति धारा की गति अवरूद्ध हो गई जिससे उसमें तरह-तरह के अनेक विचार उत्पन्न हो गए। यदि उस समय के भारतवासी अपनी तंग दुनियाँ से बाहर झाँक कर देखते और व्यापक दृष्टिकोण ग्रहण कर काल गति के अनुसार व्यवहार करने की चेष्टा करते तो उन्हें पराधीन जीवन के ये दुर्दिन न देखने पड़ते।'[4] भारतेन्दु का सम्पूर्ण जीवन और लेखन इन्हीं परिस्थितियों से उत्प्रेरित थी।

निष्कर्ष - भारतेन्दु युग (1850-1900) में पूरे देश में राष्ट्रीय जागरण तथा सांस्कृतिक जागरण की लहर दौड़ रही थी और सामंती सामाजिक ढ़ाँचा टूट चुका था, परन्तु यह युग हिन्दी साहित्य के दृष्टिकोण से बहुमुखी विकास का युग था। एक तरफ देशभक्ति का लहर दौड़ रहा था तो वहीं साथ-साथ में अंग्रेजो के योगदान को भी सराहा जा रहा था, इस वजह से एक वर्ग अंग्रेजों का प्रबल समर्थक भी था। 'अंग्रेजी शिक्षा के विकास की गति चाहे जितनी भी धीमी रही हो और उसके उद्देश्य चाहे जितने भी सीमित रहे हों पर उसका व्यापक प्रभाव पूरे देश के पढ़े-लिखे शिक्षित समाज पर पड़ रहा था, जिसके परिणामस्वरूप पूरे देश में एक सशक्त मध्यम-वर्ग तैयार हुआ, जो अत्यधिक संवेदनशील था। यह वर्ग व्यापक दृष्टि से पूरे देश में राष्ट्रीय व सामाजिक हित के विषय में सोचने लगा कि हमारा देश अत्यंत हीन-अवस्था में है, अभाव-ग्रस्त है तथा जीवन के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व धार्मिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में परिवर्त्तान एवं सुधार की आवश्यकता है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र भी इसी प्रगतिशील चेतना के प्रतिनिधि थे और उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से इसी के लिए राष्ट्रीय जागरण का कार्य किया'[5] और इसके लिए भारतेन्दु, अपने अल्प-जीवन काल में अहर्निष लगे रहे, जिसका व्यापक असर उनके जाने के बाद भी रहा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र - डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, पृ.सं. 34
2. भारतेन्दु की गद्य भाषा - डॉ0 ब्रज किशोर पाठक, पृ.सं.-28
3. भारतेन्दु समग्र
4. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, डा0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, पृ.सं. 37-38
5 हिन्दी साहित्य का इतिहास - डा0 नागेन्द्र, पृ.सं. 456-57

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

A Study of Customer Opinion towards Cellular Services With special reference to the Youth of Bilaspur City (C.G.)

Dr. K.L.Tandekar* Shaikh Tasleem Ahmad**

Abstract - This is a research study conducted in a non tribal or normal area named Bilaspur city, which is the second largest city of Chhattisgarh State according to the population as well as the number of cell phone users. Communication sector is one of the most competitive sectors in India, and mobile phones have been included as a basic need in the common men's life. In this study we have tried to know the opinion of the youths of Bilaspur city about their cellular service providers. Only college going youths of a private college of Bilaspur city, had chosen as respondents, on random basis. They were asked the questions related to the experiences of Cell phone services they were using. The researcher had tried to know the customer's reasons behind the selection of service providers, the number of subscribers of different companies, and their percentage also, in a sample of 120 respondents. Reliance Jio, Airtel, Vodafone-Idea and BSNL are the cellular service providers of the research area, and they got the position of First, second, third and last respectively. Data speed, data limit provided by the companies, recharge plans were the determining factors for the decisions of the respondents.
Key words - Communication Sector, Service Provider, Customer's opinion.

Introduction - This is a specified research which is related to the services of cellular companies working in Bilaspur City Municipal corporation area. Bilaspur city is the part of Bilaspur district of Chhattisgarh State, a non tribal or normal area according to revenue records. Bilaspur city is approximately 402 years old and the name of "Bilaspur" is used after the Fisher-woman named "Bilasa". Bilaspur region is encircled by Korea area of Chhattisgarh state in the north, Anuppur locale of Madhya Pradesh in the south, Mungeli and Kabirdham region of Chhattisgarh in the west, newly made Balauda Bazar-Bhatapara district of Chhattisgarh in the south and Korba and Janjgir-Champa districts of Chhattisgarh in the east. The area of the district is 8272 square kilometer. The total population of the district is approximately 2663629 according to census 2011, of which 1351574 were male and 1312055 were female and presently 8 tehsils, 7 blocks and 910 villages are included in Bilaspur district. It is the second-largest city after Raipur City Metro area.

The population of Bilaspur district is 10.43% of State's population, and the density is 322 km2. The literacy rate of the district is 70.78% of which 81.54% males and 59.71% females are literate.

The Chhattisgarh High Court is situated at Bodri town in region Bilaspur which has favored it with the title 'Nyayadhani' (Law Capital) of the state. The Chhattisgarh High Court is the largest High Court of Asia. Bilaspur city is the administrative headquarter of Bilaspur district.

In this research we are trying to analyze & understand the view of young and educated cell phone users of the age group of 17-23 years, and focusing on all the leading service providers who are working our research field. The main companies are Vodafone- Idea (It has converted to **Vi** recently), Reliance Jio, Airtel and BSNL.

Objectives of the Study - Trough this research study we will try to find out the solutions of the questions below

1. To collect Information about service providers and their working period in the research area.
2. To find out the customer's opinions towards their service providers.
3. According to the customer's opinion, rank them on the basis of customer satisfaction.

Sources of Information - Majority of data were collected from primary sources through questionnaire, while some information is used from secondary sources, like website newspapers etc. Area of the research is Bilaspur municipal corporation area. The total population of the district is approximately 2663629 according to census 2011, of which 1351574 were male and 1312055 were female. We have taken 120 respondents from the research area and all the respondents are literate and able to understand the questions, and answer them accordingly.

Limitations of the Study - This study is limited to Bilaspur city municipal corporation area, with special focus to the young cell phone users, who are studying in the different classes of a renowned private college of Bilaspur city. Here

*Research Guide and Principa,l Govt. Nehru P.G. College, Dongargarh (C.G.) INDIA
** Research Scholar, Pt. Ravisanhankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA

we have collected the information about the opinion of the respondents towards their cell phone service providers.

Methodology - A sample of 120 respondents were chosen on the random basis, from college going youths related to a renowned private college of Bilaspur city. With the help of questionnaire, the respondents were asked the name of their service provider, and then their opinion about the services of cell phone service provider and what are the positives and negatives points. This information were tabulated and processed through proper statistical methods, and the results were founded. In the result section we were able to draw a rank of the service providers on the basis of their customer's opinion.

Company wise Analysis - There are four main cellular service provider companies in the research area. These all are also well known players in national level. In which 3(Vodafone- Idea, Airtel, Reliance Jio) are belonging to private sector and 1(BSNL) is from government sector.

S.	Name of the service Provider	No. of Resp -ondents	Percentage
1	BSNL	07	5.84%
2	Vodafone-Idea (Vi)	28	23.35%
3	Airtel	36	30%
4	Reliance Jio	49	40.81%
	Total	120	100%

Source: Primary data

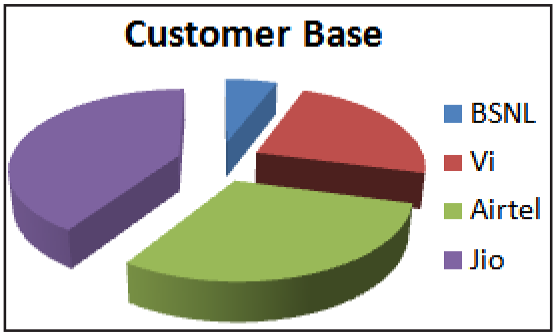

From the above table we can easily understand the current position of the cell phone service provider companies, such as their individual customer base, percentage of the number of customers, and their stake in the total number of the respondents in the research area. With the help of above data we can rank the service provider, as below mentioned manner.

1. **Reliance Jio -** This is a newest service provider of the area, who started his services in November 2016. Jio is a trendsetter company of the cellular sector in India, and providing 4G Volte services in research area. It has a customer base of approx **41%** in research area. Due to the requirement of 4G enabled smart phones and low economical ability, Jio has launched many 4G enabled handsets for the customers, and it has captured the market, as well as first position in our research area. The customers who are using Jio give main reasons such as- faster data speed, better clarity of voice and competitive call rates etc.

2. **Airtel -** Although it is also an old service provider of the area, and started service in year 2005, but the percentage **30%** of customers are using services of the company. So it has got second position in our research area, and same as the BSNL, customers have a strong reason to be with Airtel company, that their numbers are very old and distributed by them to near & dear ones. The Airtel is updating his recharge and data plans according to the market trends, this is another reason that company got second position in

3. **Vodafone-Idea (Vi) -** This is one of the oldest companies on the basis of providing services in research area. It is the alliance of two companies named Vodafone and Idea. Approx **23.35%** of total respondents are using services of **Vi,** so it has got third position in our research study. According to the data collected through questionnaire they are with the idea company from 1 to 4 years. They have not changed or Port their provider even better plans/ tariffs offered by other companies. The customers of **Vi** have many reasons for continue usage of his services such as – It has better network than any other companies, their numbers are very old and provided to their friends and relatives, the company presents better offer time to time, the call rates are reasonable etc.

4. **BSNL -** This is only company of government ownership and providing services since 1998, but surprisingly it has very low customer base. Only **5.84%** respondents are using the services of the company, and they have a single reason that their numbers are very old so they are with the company. It means the customers are with BSNL not only by their choice. So they are not asked for customer satisfaction. The main drawback of the BSNL is that it does not update its services according to the market trends, so it has continuously declined the number of customers, and got last position in our research study.

Conclusion - After analyzing all the information and data collected from the respondents, it is very clear that

- Connectivity is a major issue till today in this area, though our research area is a non tribal or normal area, but clarity of voice and call drop is a real problem. On the basis bases of this point, Reliace Jio has been ranked first by youth customers.
- Now a day, majority of the youth are using smart phones instead of basic phones, so uses of multimedia services, internet facility, and data recharge are very common among them. They are habitat of using more data after launching the services of Reliance Jio.
- Another important point has noticed that there is no brand loyalty in users because they change their service providers usually. Mobile number port (MNP) facility is playing an important role in this trend.
- A number of users are using two or more sim at the same time, and they use different numbers during calls, massaging and data usage. Availability of dual or multi sim mobile phone is promoting this tendency of users.
- Internet facility in cell phones empowered youths through knowledge enhancement and access in huge

information worldwide. They are more informed and updated in education field, as well as day to day life in compare to the previous generation. Regarding this point, Reliance Jio is a record maker company in the view of subscribers.

- Overall ranking according to satisfied customers are Reliance Jio got first position, while Reliance Airtel, Vi, and BSNL are in the second third and last position respectively.

References :-

1. Tecor, Jha, “Understanding Mobile Phone Usage Pattern among College-Goers’,2008.
2. Batra, S.K. &Kazmi, S. (2008) ‘Consumer Behaviour’ 2nd edition, EXCEL Books.
3. Debnath, Roma Mitra, ‘Benchmarking telecommunication service in Indi’ , 2008.
4. Kalwani, Banumathy, ‘Consumer’s Attitude towards Cell phone Services’, 2006.
5. Eshghi, A., Haughton, D., and Topi, H., (2007), ‘Determinants of customer loyalty in the wireless telecommunications industry’, Telecommunications policy, Volume 31, Issue 2, Pages 93-106.

Websites:

1. www.census 2011.co.in
2. www.wikipedia.in
3. www.thekorbacity.com
4. www.tri.gov.in
5. www.timesofindia.com

Newspapers:

1. Daink Bhaskar Newspaper
2. Haribhoomi Newspaper

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

छ.ग. राज्य अंत्यावसायी सहकारी वित्त एवं विकास निगम की आर्थिक योजना का क्रियान्वयन (लक्षित वर्ग के लिए) (राजनांदगांव जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. के.एल.टाण्डेकर* डॉ. मुन्नालाल नंदेश्वर**

प्रस्तावना – वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के प्र्याप्त साधन न होने के कारण युवाओं का रूझान तथा पलायन शहरों की ओर हो रहा है। इससे शहरो में बढ़ती जनसंख्या के कारण शहरी जनजीवन काफी प्रभावित हुआ है तथा सरकार को समस्त नागरिकों के लिए आवास और मूलभूत सुविधाऍं प्रदान करने मे कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। अत: ऐसे विभाग तथा संगठन, जिनका कार्य विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रो में रोजगार प्रदान करने का है उनकी यह जिम्मेदारी हो जाती है कि वे अपनी कार्ययोजना का स्वरूप ग्रामीण अंचल में मूलभूत सुविधाऍं प्रदान करने के साथ-साथ अधिक से अधिक रोजगार सृजन को ध्यान में रखकर करे। इस दिशा में अंत्यावसायी वित्त एवं विकास निगम विशेष भूमिका निभा रहा है।

छत्तीसगढ़ राज्य में कुल आबादी का 31.76 प्रतिशत आदिवासी एवं 11.61 प्रतिशत अनुसुचित जाति वर्ग का है, इन वर्गो के आर्थिक विकास को ध्यान में रखते हुए छ.ग. राज्य अंत्यावसायी वित्त एवं विकास निगम का गठन किया गया, यह नियम गरीबी रेखा से नीचे अंतिम छोर के व्यक्तियों को वित्तीय सहायता दिलाकर स्वावलंबी बनाने के साथ ही सफाई कामगारो एवं पिछडा वर्ग तथा अल्पसंख्यक समुदाय के उत्थान हेतु आर्थिक मूलक योजनाओं का क्रियान्वय करता है।

लक्षित वर्गो के बेरोजगार युवको में व्यवसायिक मानसिकता विकसित करने के उद्देश्य से विभिन्न लघु उद्योग तथा व्यापार संबंधी योजनाओं का संचालन निगम द्वारा किया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रो के आवेदकों को जो गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे है उनकी वार्षिक आय 19750/- रूपये से अधिक न हो योजना के तहत् अनुदान की पात्रता भी निश्चित की गई है।

राजनांदगांव जिले में योजनाओं का क्रियान्वयन अंत्यावसायी विकास निगम द्वारा किया जा रहा है। शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र क बेरोजगारों (लक्षित वर्ग) को योजना के तहत् ट्रैक्टर, ट्राली, महिला समृद्धि माईक्रोक्रेडिट लघु ईकाई, सफाई कामगार, व्यक्ति मूलक, जीप, टेक्सी, आटो रिक्सा, मिनी ट्रक, डीजल आटो, बड़ी व्यवसायिक ईकाई, अन्त्योदय स्वरोजगार योजना, आदिवासी स्वरोजगार योजना, टेन्ट हाउस, मिनी माता स्वालम्बन योजना, कृषि उत्खन, टर्मलोन, शैखणिक ऋण, सूअर पालन जैसी आर्थिक मूलक योजनाओं का क्रियान्वयन कर हितग्राहियो को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास किए जा रहे है।

जिले में निवासरत अनुसुचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग तथा अल्पसंख्यक, सफाई कामगारों की व्यवसायिक क्षेत्रों में सहभागिता सुनिष्चित कर उन्हे विकास की मुख्य धारा से जोडने का प्रयास किया जा रहा है। हितग्राहियो को लघु उद्योग व्यवसाय के क्रियान्वयन हेतु वित्त के स्त्रोत (वित्त पोषक संस्थाऍं) मुख्यत: राष्ट्रीय अनुसुचित जाति वित्त एवं विकास निगम, राष्ट्रीय अनुसुचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक वित्त एवं विकास निगम, राष्ट्रीय सफाई कामगार वित्त एवं विकास निगम, छ.ग. शासन अनुसुचित जाति वित्त एवं विकास प्राधिकरण, छ.ग. शासन अनुसुचित जनजाति बस्तर एवं सरगुजा विकास प्राधिकरण प्रमुख है।

तालिका 1 : राजनांदगांव जिले में योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु निर्धारित लक्ष्य, उपलब्धि, वितरित ऋण एवं अनुदान की जानकारी निम्नानुसार है।

क्रं	वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धि	स्वीकृत ऋण	अनुदान
1	2004-05	345	305	11791000	2528750
2	2005-06	349	228	18615119	1637500
3	2006-07	109	36	4277647	765000
4	2007-08	377	113	9695822	810000
5	2008-09	422	190	9815663	1960000
	योग	1602	872	54195251	70101250

निगम द्वारा मियादी ऋण के रूप में अनुसुचित वर्ग हेतु अधिकतम 30 लाख तक एवं अनु. जनजाति वर्ग के लिए 10 लाख रूपये तक तथा पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग एवं साफ-सफाई कामगारो के लिए अधिकतम 5 लाख रूपये की परियोजना स्वीकृत योग्य है। ऋण पर ब्याज दर कम होने से हितग्राहियों का अधिक रूझान योजना के प्रति देखा जा रहा है।

तालिका 2 **(अगले पृष्ठ पर देखे)**

शासन की विभिन्न योजनाओं का लाभ लक्षित वर्गो को मिल सके इसके लिए निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति हेतु कुल हितग्राही का 50 प्रतिशत से अधिक गरीबी रेखा से जीवन यापन करने वाले लोगो को विशेष प्रोत्साहन दिया गया वही अनुसुचित जाति, जनजाति बाहुल्य क्षेत्र के मात्र 7 प्रतिशत अनुसुचित तथा 27 प्रतिशत अनु.जनजाति के हितग्राही योजनाओं से लाभान्वित हो सके जो कि जनसंख्या के अनुपात की अपेक्षाकृत कम है। अन्य पिछडा वर्ग के 31 प्रतिशत, सफाई कामगारो के 9 प्रतिशत हितग्राही

* प्राचार्य, शासकीय बाबा साहब भीमराव अम्बेड़कर महाविद्यालय, डोंगरगॉव, जिला-राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** वरिष्ठ क्रीडा अधिकारी, शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ़, जिला-राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

योजना का लाभ ले सके अर्थात लक्षित वर्गो के सवर्रागीण विकास की दृष्टि से इन योजनाओं का विस्तारीकरण आवश्यक है। तब ही हम इन लक्षित वर्गो के आर्थिक विकास की कल्पना कर सकते है।

विभाग के द्वारा विभिन्न रोजगार मूलभूत व्यवसायो लिए हितग्राहियो को वितरित ऋण एवं वसूली से संबंधित जानकारी निम्नानुसार है।

तालिका 3 (निचे देखे)

छ.ग. राज्य अंत्यावसायी सहकारी वित्त एवं विकास निगम की विभिन्न आर्थिक योजनाओं के अंतर्गत लक्षित वर्ग विशेषकर अनुसुचिज जाति, अनु. जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, सफाई कामगारों एवं अल्प संख्यक वर्गो के जरूरत मंदो को उन्हे स्वरोजगार उपलब्ध कराकर आत्मनिर्भर बनाने की दृष्टि से राजनांदगांव जिले में संचालित जिला अंत्यावसायी सहकारी विकास समिति मर्या. राजनांदगांव द्वारा दिसम्बर 2008 तक कुल 442 व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायों को ऋण 51006713 रूपये ऋण का तिरण किया गया था, शासन के द्वारा इन योजनाओं के सफल क्रियान्वयन एवं हितग्राही की आर्थिक मदद को ध्यान में रखते हुए 20 से 25 प्रतिशत तक अनुदान का प्रावधान किया गया है। अनुदान उपरांत रूपये 41900817.00 वसूली योग राशि का अनुमान किया गया किंतु दिसम्बर 2008 तक इसके विरूद्ध 35 प्रतिशत ही वसूली हो सकी तथा 65 प्रतिशत वसूली योग राशि हितग्राही से प्राप्त नही की जा सकी।

जिले में अनु.जाति, अनु.जनजाति, पिछडा वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग की जनसंख्या के अनुपात में योजना का लाभ अधिक व्यक्ति तक नही पहुँच पा रहा है, कारण यह है कि लक्ष्य के अनुरूप मात्र 54 प्रतिशत उपलब्धि से अन समुदाय के विकास की कल्पना महज औपचारिकता होगी। जिले में यदि इन वर्गो का सर्वांगीण विकास कर इन्हे व्यवसाय तथा रोजगार उपलब्ध कराना है तो लक्ष्य में वृद्धि कर शत प्रतिशत उपलब्धि प्राप्त करना होगा, इसके लिए वित्त पोषक संस्थाओं को अधिक आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला प्रशासन स्वासी एवं ग्रामोद्योग विभाग जिला कार्यालय, राजनांदगांव (छ.ग.)।
2. उद्यमिता समाचार पत्र, उद्यमिता विकास केन्द्र म.प्र.।
3. जिला योजना एवं सांख्यिकी विभाग, राजनांदगांव (छ.ग)।
4. कार्यालय जिला अंत्यावसायी सहकारी विकास समिति राजनांदगांव (छ.ग) वार्षिक प्रतिवेदन।
5. कुरूक्षेत्र मार्च 2002, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।

तालिका 2 : लाभान्वित हितग्राही का विवरण वर्गवार

वर्ष	अनु.जाति	अ.ज.जाति	पिछडा वर्ग	अल्पसंख्यक	सफाई	अन्तादेय	विकलांग
2004-05	21	165	12	8	63	75	1
2005-06	19	15	5	15	55	240	0
2006-07	23	08	0	01	02	75	0
2007-08	21	115	26	03	0	212	0
2008-09	34	135	12	0	29	212	0
योग	118	438	55	27	149	814	01

स्त्रोत जिला अंत्यावसायी सहकारी विकास समिति राजनांदगांव (छ.ग.)

तालिका 3 : हितग्राहियों को वितरित ऋण एवं वसूली का विवरण

वर्ग	लाभान्वित हितग्राही की संख्या	वितरित ऋण	वसूलियों योग राशि	प्रारंभ से दिसम्बर 2008 तक वसूली गई राशि	वसूली हेतु शेष राशि
अनु. जाति	86	15030785	12226285	2820254	9406031
अनु. जनजाति	45	18076197	17047770	3303608	13741462
अन्य पिछडा वर्ग	48	3275000	3051250	834927	2216323
सफाई कर्मचारी	217	72623931	7729792	3615640	4114152
अल्प संख्यक वर्ग	46	2000800	1845720	195200	1650520
योग	442	51006713	41900817	10772319	31128488

स्त्रोत जिला अंत्यावसायी सहकारी विकास समिति राजनांदगांव (छ.ग.)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य तथा देशी रियासतें

डॉ. सुनीता मीना*

शोध सारांश – भारत की देशी रियासतें और उनके शासक अंग्रेजी औपनिवेशिक साम्राज्य को बनाए रखने के हथियार के रूप में इस्तेमाल होते रहे। भारत में अंग्रेजों का राज्य फैलता गया वैसे-वैसे अंग्रेजों के मन में यह विश्वास जड़ जमाता गया कि गोरी जाति श्रेष्ठ है। 1757 ई. में प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों को पहली बार भारत में राजनीतिक शक्ति प्राप्त हुई। एक-एक करके उन्होंने समस्त भारतीय राजनीतिक शक्तियों को परास्त करके उन्हे सहायक संधी स्वीकार करने पर विवश किया। देशी रियासतों के साथ अंग्रेजी साम्राज्य के सम्बंधों को तीन भागों में विभाजित किया जाता है। अधीनस्थ सन्धि काल 1819-1857ई,अधीनस्थ संघ काल 1858-1905ई,अधीनस्थ सहयोग काल 1906-1947ई, ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सहायक संधियां स्वीकार करके लगभग 1819 ई. तक समस्त भारतीय देशी रियासतें अपनी प्रभुसता को खो चुकी थी।

शब्द कुंजी – औपनिवेशिक साम्राज्य, परमोच्च, शक्ति के सिद्धांत, डॉक्टराइन ऑफ लैप्स,सामन्त, सम्प्रभुत्ता, माउंटबेटन योजना।

प्रस्तावना – लगभग 140 वर्षो के अंग्रेजी शासन काल में भारत की देशी रियासतें और उनके शासक अंग्रेजी औपनिवेशिक साम्राज्य को बनाए रखने के हथियार के रूप में इस्तेमाल होते रहे। इस अवधि में कभी भी अंग्रेजों की साम्राज्यिक नीति स्पष्ट नहीं रही। जैसे-जैसे भारत में अंग्रेजों का राज्य फैलता गया वैसे-वैसे अंग्रेजों के मन में यह विश्वास जड़ जमाता गया कि गोरी जाति श्रेष्ठ और ऊंची है। काले भारतीय नीच और मूर्ख है। उन पर शासन करने की जिम्मेदारी, ईश्वर नामक रहस्यमय शक्ति ने अंगेजों के ही कंधो पर रखी है। अंग्रेज वह जाति है जो केवल जीतने और शासन करने के लिये पैदा हुई है। 1757 ई. में प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों को पहली बार भारत में राजनीतिक शक्ति प्राप्त हुई। एक-एक करके उन्होंने समस्त भारतीय राजनीतिक शक्तियों को परास्त करके उन्हे सहायक संधी स्वीकार करने पर विवश किया। इस प्रकार देशी शासकों ने सुरक्षा की धुन में अपनी स्वतन्त्रता को हमेशा के लिये खो दिया। [1]

देशी रियासतों के साथ अंग्रेजी साम्राज्य के सम्बंधों को तीन भागों में विभाजित किया जाता है। [2]

1. अधीनस्थ सन्धि काल 1819-1857 ई.
2. अधीनस्थ संघ काल 1858-1905 ई.
3. अधीनस्थ सहयोग काल 1906-1947 ई.

1. अधीनस्थ सन्धि काल 1819-1857 ई.– इस अवधि में कंपनी के अधिकारियों ने देशी राज्यों पर अपनी प्रभुसत्ता जताने के लिये कई उपाय किये।[3] राजपूताना की विभिन्न रियासतों के उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि कम्पनी सरकार ने संधि की धाराओं और शर्तो में उल्लेखित निरन्तर मैत्री देकर रियासतों के शासकों को पूर्णतया अधीनता की स्थिति में लाने का लक्ष्य रखा। रियासतों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने के समय कंपनी सरकार के कर्णधारों के मस्तिष्क में परमोच्च शक्ति के सिद्धांत की धारणा सम्भवत: अपरिपक्क व सुशुप्तावस्था में रही होगी। उपरोक्त काल में यह शनै:-शनै: विकसित होने लगी। राज्य के नये उत्ताराधिकारी को मान्यता देना व उसके राज्याभिषेक के समय खिल्लत प्रदान करना, नजर, उपहार आदि स्वीकार करना, विशिष्ट सेवाओं के लिए उपाधियां व सम्मान देना दरबार का आयोजन करना आदि जैसे परमोच्चाधिकारों से मुगल बादशाह को वंचित कर उसके स्थान पर कंपनी सरकार ने परमोच्च शक्ति के रूप में उनका उपभोग करना शुरू कर दिया। रियासतों पर प्रभावी नियंत्रण स्थापित करने के लिये 'एजेंट टू दी गवर्नर जनरल' (ए.जी.जी.) का पद सृजित किया। मुगल बादशाह के सिक्कों के स्थान पर विलियम चतुर्थ के सिक्के ढलवाये गये। यह सब इसलिए किया गया ताकि देशी राज्यों के शासक कम्पनी सरकार को वैद्य रूप से मुगल प्रभुसत्ता का उत्तराधिकारी स्वीकार कर ले।[4]

1833 ई. के चार्टर एक्ट के माध्यम से कम्पनी की व्यापारिक गतिविधियां समाप्त कर दी गयी तथा उसने भारत सरकार के रूप में कार्य करना आरंभ कर दिया।[5] लार्ड डलहौजी का विश्वास था कि भारत के देशी राज्यों में ब्रिटिश माल का निर्यात कम होने का मूल कारण उन राज्यों, भारतीय शासकों का कुप्रशासन है।[6] उसका विचार था कि देशों राजाओं से भारत में ब्रिटिश विजय को सरल बनाने का काम लिया जा चुका है और इन्हे अब समाप्त कर देना लाभप्रद होगा। इसके लिये डलहौजी ने 'डॉक्टराइन ऑफ लैप्स' का आविष्कार किया और देशी राज्यों को हड़पना आरंभ किया।[7]

1857 ई. तक राजपूताना की सभी देशी रियासतों पर अंग्रेजों ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था। अब राज्यों के पास अपनी सैन्य शक्ति कुछ भी शेष नहीं बची थी। देशी राजाओं की स्थिति यह हो चुकी थी कि एक तरफ तो वे अंग्रेज अधिकारियों के शिंकजे में कसे हुए छटपटा रहे थे तो दूसरी और उन्हे यह स्पष्ट लग रहा था कि देशी राज्यों को बने रहना है तो अंग्रेजी शासन को मजबूत बनाये रखने के हर संभव उपाय करने होंगे। घरेलू अत्याचार तथा पारदेशिक आक्रमण से सुरक्षा भारतीय नरेशों के लिये महंगी पडी उनको अपनी स्वतंत्रता राष्ट्रीय आचरण तथा जो कुछ मनुष्य को आदरणीय बनाता है इत्यादि का बलिदान करना पडा। 1857 की क्रांति के समय राजपूताना में शायद ही कोई देशी रियासत होगी जिसने अंग्रेजों के प्रति वफादारी न निभाई हो। 1857 की परिस्थितियों में राजपूताना के राज्यों ने कभी नहीं चाहा कि अंग्रेजों का शासन समाप्त हो।

2. अधीनस्थ संघ काल 1858-1905 ई.–1857 की क्रांति के पश्चात अंग्रेज सरकार और रियासती रजवाड़ों, दोनों को समझ आया कि वे

* व्याख्याता (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर(राज.) भारत

एक दूसरे के लिये अपरिहार्य हैं। इस कारण अंग्रेजों और राजाओं का गठजोड़ अब एक नयी मजबूती को प्राप्त कर गया। अब देशी रियासतों को ब्रिटिश साम्राज्य के तरंगरोध के रूप में इस्तेमाल करना ब्रिटिश नीति बन गई। सर जॉन मैल्कम ने कहा था कि 'अगर हम समस्त भारत को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला दें तो हमारा साम्राज्य 50 साल तक भी न चल सकेगा। किन्तु देशी रियासतों को बिना कोई राजनीतिक सत्ता दिये शाही उपकरणों के रूप में रखें तो हम भारत में तब तक के लिये रहेंगे। जब तक हमारी नौ सैनिक शक्ति बनी रहेगी।' 140 देशी राजाओं को सनद (अधिकार पत्र) दिये गये। तथा यह व्यवस्था की गई की राजगद्दी देशी राजाओं का अधिकार न होकर परमोच्च शक्ति से मिला हुआ उपहार होगी।[8] 1858 से पूर्व भारतीय रजवाडे क़म्पनी सरकार के साथ बराबरी का सम्बन्ध मानते थे किन्तु अब स्थिति पूरी तरह से स्पष्ट हो गयी।1862 ई. में लार्ड केनिंग द्धारा आयोजित दरबार में 'परमोच्च सत्ता' और 'सामन्त' जैसे शब्दों का प्रयोग ब्रिटिश ताज द्धारा भारतीय राजाओं के साथ सम्बन्धों में योजनाबद्ध बदलाव का संकेत था। के.एम. पन्निकर का कथन है कि 'शन्तिपूर्ण ढंग से एक संवैधानिक क्रांति हुई जिससे ब्रिटिश सत्ता भारत में सार्वभौम बन गयी।' सन् 1858 ई. से लेकर ब्रिटिश राज की समाप्ति तक अंग्रेजों की नीति भारतीय नरेशों, जागीरदारों और प्रतिक्रियावादी तत्वों के संरक्षण की रही जिनका प्रयोग वह भारत के प्रगतिशील तत्वों के विरोध में करती रही। 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारतीय राजनीति में परिवर्तन आया। बहुत से ऐसे तथ्य उभर कर आये जिनके फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार को भारतीय नरेशों के साथ अपनाई जा रही नीति पर पुन: विचार करने के लिए बाध्य होना पड़ा इसमें एक महत्वपूर्ण तथ्य था, भारत में राष्ट्रीय भावना का विकास। जब अंग्रेजी प्रभुसत्ता को चुनौती मिलने लगी तब उन्हें एक बार फिर देशी राजाओं की सहायता की आवश्यकता हुई। दूसरी तरफ परमोच्च सत्ता की शक्ति उतरोत्तर बढती जा रही थी जिससे देशी शासक चिंतित थे। वे परमोच्च शक्ति को व्याख्या चाहते थे और सन्धियों से प्राप्त अपने अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिये आतुर थे।

3. अधीनस्थ सहयोग काल 1908-1947 ई.- कर्जन के पश्चात वायसराय लार्ड मिण्टों ने पद संभाला तब उसने देशी राज्यों के आंतरिक मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप करने तथा नरेशों पर अनुचित दबाव डालने को नीति का परित्याग कर दिया। 1909 ई. में उदयपुर यात्रा के समय लार्ड मिण्टो ने कहा कि विशेष परिस्थितियों को छोड़कर सामान्यत: ब्रिटिश सरकार देशी राज्यों के विषय में अहस्तक्षेप की नीति अपनायेगी देशी राज्यों में नियुक्त पॉलिटिकल एजेन्टों के अधिकारों में शनै: शनै: कमी आने लगी थी। एक बार फिर देशी राज्यों का सहयोग प्राप्त करने के लिए समान हितो की बात कहकर ब्रिटिश सरकार ने देशी राज्यों के नरेशो को अपनी ओर आकर्षित करने की नीति निर्धारित की। ब्रिटिश सरकार ने इस काल में राजाओं को मजबूत बनाने के लिये देशी नरेशों का एक संघ बनाए जाने की आवश्यकता महसूस की जिसके द्धारा साम्राज्य परिषद का गठन किया गया इसके माध्यम से ब्रिटिश सत्ता यह प्रकट करना चाहती थी कि वह देशी रियासतों और भारतीयों को साम्राज्य से सम्बन्ध रखने वाले विषयों में सहकारी बनाने का अभिलाषी है।

8 फरवरी 1921 को नरेन्द्र मण्डल का उदघाटन किया गया। इसकी अध्यक्षता वायसराय करता था। इस संस्था के प्रथम चांसलर बीकानेर रियासत के महाराजा गंगासिंह थे। अब दोनों पक्ष यह अनुभव करने लगे थे कि उनके हित अधिकांशत: समान है। इस संस्था के माध्यम से देशी नरेश भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण पक्ष के रूप में प्रविष्ट हुए।[9] इस संस्था का मुख्य कार्य ब्रिटिश सरकार से परामर्श लेना तथा ब्रिटिश सरकार को परामर्श देना था किन्तु बाद में यह संस्था भारतीय राजाओं के अधिकारों के सम्बन्ध में तथा ब्रिटिश नीति के सम्बन्ध में भी विचार विमर्श करने लगी। राजा रजवाड़े यदि चाहते तो इस संस्था का उपयोग अपने अधिकारों को मजबूत बनाने तथा रियासतों की जनता के लिये अनुकूल विधि बनाने में कर सकते थे किन्तु अधिकांश राजाओं को अपने आमोद-प्रमोद तथा विलासिता से ही अवकाश नहीं था। इस प्रकार 20 वीं शती में जब संवैधानिक सुधार आंदोलन का दौर चला तब देशी नरेशों का यह मण्डल गठित हुआ जिसकी प्रेरक ब्रिटिश सरकार थी। केन्द्रीय धारासभा, गोलमेज सम्मेलन या इस प्रकार के अन्य सम्मेलनों में प्रस्तुत प्रस्ताव एवं विधेयक नरेन्द्र मण्डल कि स्वीकृति के बिना संवैधानिक स्तर प्राप्त नहीं कर सकते थे। इस प्रकार यह नरेश मण्डल या देशी राज्यों का संघ अंग्रेज सरकार की सुरक्षा प्राचीर था जिसकी चिनाई बांटो और राज करों के चुना-गारे से हुई थी। अंग्रेजी सत्ता के साथ देशी नरेशों के संबंध का प्रश्न अभी तक पूरी तरह सुलझ नहीं सका था। इस सम्बन्ध में महाराजा गंगासिंह के चांसलर के रूप में किये गये प्रयास भी असफल ही रहे।

लार्ड रीडिंग ने हैदराबाद के निजाम को लिखा कि ब्रिटिश क्राउन की सर्वोच्चता के परिणामस्वरूप उसे देशी रियासतों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का भी अधिकार है। इस प्रकार के कुछ उदाहरणों के कारण देशी रजवाड़ों ने यह महसूस किया कि ब्रिटिश सरकार से उनके सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना आवश्यक है क्योंकि आंग्ल भारत में प्रत्येक राजनीतिक परिवर्तन के साथ उनके सन्धियों से प्राप्त अधिकारों एवं विशेषाधिकारों का ह्रास होता जा रहा था। परिणामत: 26 दिसम्बर 1927 ई. को बटलर समिति की नियुक्ति की गई। देशी नरेशों ने ब्रिटेन के प्रसिद्ध तथा तत्कालीन विश्व के सबसे मंहगे वकील लेसली स्कॉट को बुलाया। उसने बटलर कमेटी के सम्मुख देशी राजाओं की तरफ से पैरवी की उसका मुख्य तर्क यही था कि परमोच्च सत्ताधारी शक्ति के अधिकार सीमित थे और भारत सरकार को देशी राज्यों के आन्तरिक मामलों में हर प्रकार से हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था। किन्तु बटलर कमेटी ने सभी तर्को को नकारते हुए माना कि भारतीय राजा ब्रिटिश सता के साथ बराबरी का दावा नहीं कर सकते परमोच्चता सदैव के लिये परमोच्च है।[10] इस रिपोर्ट को देखकर देशी राजाओं में विशेष क्षोभ उत्पन्न हुआ तथा इसकी आलोचना की गई।

1929 तक आते-आते कांग्रेस पूर्ण स्वराज की मांग पर अड़ गई। इसका महाराजा गंगासिंह तथा देशी राजाओं ने जमकर विरोध किया। गंगासिंह यहॉं तक कह गये कि अंग्रेजी सम्बन्ध विच्छेद के बाद ब्रिटिश भारत और भारतीय राज्यों के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाएंगे। ब्रिटिश सरकार द्धारा संघीय योजना को समर्थन दिये जाने का कारण ब्रिटिश भारत में खतरनाक प्रजातांत्रिक तत्वों के विकास के विरूद्ध संघर्ष करने के लिये विशुद्ध रूढ़िवाद को पनपाना था जबकि राजाओं ने सोचा कि वे ब्रिटिश नियंत्रण से मुक्त हो जायेगें। तथा उन पर संघ का बहुत ही कम नियंत्रण होगा।[11] 'राजाओं की उस समय की मन: स्थिति पर एस.के. बोस ने लिखा है' संभवत: ही किसी भी संघीय योजना में अपने निजी अधिकार और हितों की सुरक्षा के लिये राजा लोग उत्सुक रहते थे और आशवासन चाहते थे कि उनके निजी आंतरिक मामलो में कोई हस्तक्षेप न करें। देशी राजाओं ने अंग्रेज अफसरों की सहायता से हर उस योजना को विफल करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी जिससे भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त होती हो। 1946 की

कैबिनेट मिशन योजना में अंग्रेज सरकार ने फूट डालो की नीति को जारी रखते हुए देशी रियासतों पर ब्रिटिश परमोच्चता की समाप्ती की घोषणा कर दी। 3 जून 1947 को माउंटबेटन योजना में 15 अगस्त 1947 को भारत को सत्ता हस्तान्तरण की घोषणा की गई। इस घोषणा ने जहाँ देश विभाजन का आधार तैयार किया वहीं रियासतों के शासको में पृथकतावादी प्रवृति को भी बढ़ावा दिया। इस प्रकार देशी रजवाड़ो को अपनी वह सम्प्रभुत्ता पुन: प्राप्त हो गई जो 1819 में अधिनस्थ संधिया करने से समाप्त हो गई थी।

निष्कर्ष – ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सहायक संधियां स्वीकार करके लगभग 1819 ई. तक समस्त भारतीय देशी रियासतें अपनी प्रभुसता को खो चुकी थी देशी शासकों ने सुरक्षा की धुन में दासता को जाने-अनजाने में ही स्वीकार कर लिया। राजा रजवाडे अंग्रेजी सरकार की शक्ति को दुर्धर्ष व दुर्निवार्य समझकर अधीनता के आदी बन गये। 1819 ई. से लेकर 1947 ई. तक का देशी रियासतों और ब्रिटिश सरकार का यह राजनीतिक रिश्ता भारत में ब्रिटिश साम्राज्य को पोषित पल्लवित और सुरक्षित बनाता रहा। घरेलू अत्याचार और पारदेशिक आक्रमण से सुरक्षा भारतीय नरेशों के लिये महंगी पड़ी। उनको अपनी स्वतंत्रता राष्ट्रीय आचरण तथा जो कुछ मनुष्य को आदरणीय बनाता है, इत्यादि का बलिदान करना पड़ा। शासकों की बाहरी स्वतन्त्रता तो 1819 ई. में ही समाप्त हो गई थी पर आन्तरिक प्रशासन में ब्रिटिश अधिकारियों के हस्तक्षेप, ब्रिटिश समर्थक पदाधिकारियों और राजकुमारों को प्रोत्साहन देने की आंग्ल-नीति ने शासकों को भोग-विलास और आमोद प्रमोद के कार्यो में व्यस्त कर दिया। इस अवधि में अंग्रेज सरकार ने देशी रियासतों को ब्रिटिश साम्राज्य को बनाए रखने के यन्त्र के रूप में प्रयोग किया जिसके नकारात्मक परिणाम देशी रियासत और ब्रिटिश भारत दोनों की जनता को भोगने पड़े। ब्रिटिश संप्रभुता की छत्रछाया में देशी राजा आन्तरिक प्रशासन के प्रति भी पूरी तरह लापरवाह हो गये तथा उन्होंने राज्य में कुप्रशासन, अव्यवस्था अशिक्षा तथा अत्याचार की नीति को जारी रखने में ही अपना हित समझा। वही ये देशी रियासतें कदम-कदम पर अंग्रेज अफसरों के साथ मिलकर हर उस योजना को विफल बनाने का कार्य करती रहीं जो भारत की स्वतन्त्रता की ओर जाता था। चाहे वह अधीनस्थ सन्धि काल, संघ काल अथवा सहयोग काल हो, ये रियासतें परतन्त्रता और पराधीनता को अपनी नियती समझ कर ब्रिटिश साम्राज्य का खिलौना बनी रहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. के.एम.पन्नीकर :- एन इन्ट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ रिलेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स विथ द गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया पृ. 103 लंदन-1937
2. आर.पी.व्यास :- आधुनिक राजस्थान का वृहत इतिहास पृ. 285
3. मोहनलाल गुप्ता :- ब्रिटिश शासन में राजपूताना की रोचक एवं ऐतिहासिक घटनाएं पृ. 162 जोधपुर-2009
4. उर्मिला वालिया :- चेंजिग ब्रिटिश एटीट्यूडस टू वर्डस द इण्डियन स्टेट्स पृ. 28
5. ए.सी.बैनर्जी (सं) :- इण्डियन कॉस्टीट्यूशनल डॉक्यूमेंन्ट कलकता, 1961
6. सी.एन.वकील :- फाईनेनशियल डवलपमेंट इन मॉडर्न इण्डिया पृ. 199 मुम्बई 1939
7. सी.हीबर्ट :- द ग्रेट म्यूटनी इण्डिया 1857 पृ. 90, नेर्क, 1978
8. आर.एल.हाडा. :- हिस्ट्री ऑफ फ्रिडम स्ट्रगल इन प्रिंसली स्टेट्स पृ. 37 नई दिल्ली - 1968
9. उर्मिला फड़निस :- टूवर्डस द इन्टीग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स 1919-1947 पृ. 27 बाम्बे-1968
10. रघुवीर सिंह :- इण्डियन स्टेट्स पृ. 80 बम्बई 1938
11. फिलिप्स एण्ड वेनराइट :- द पार्टीशन ऑफ इण्डिया पृ. 528 लंदन-1970

****

जनजातीय विकास के सांस्कृतिक आयाम

संदीप कुमार सिंह *

प्रस्तावना – जनजातीय विकास के सांस्कृतिक एकता और अखण्डता को बनाये रखने में संस्कृति भी तेजी से प्रभावित हो रही है। इसमें आवागवन के संसाधनों आदि के द्वारा संचार साधनों की उपलब्धता के द्वारा इनके जीवन शैली को परिवर्तित करने में एक प्रकार से महत्वपूर्ण साबित हो रहे हैं। इस प्रकार से जनजातीय समुदाय में उनकी अपनी संस्कृति और सामाजिक परिक्षेत्र के आधार सांस्कृतिक एकता और अखण्डता का परचम फहराया है। उसे संकल्पित करने में एक प्रकार की भूमिका अदा कर रहें हैं। उस प्रकार से जनजातीय विकास के आयाम को एक विशेष परिरक्षण की प्रक्रिया का विकास के समाधान का पारिवारिक परिवेश भी एक मददगार साबित होता है। उस प्रकार से शिक्षण संस्थाएँ उनके पारम्परिक परिवेश को बदलने में एक नये पर्यावरण का प्रत्यक्षदर्शी बनाती है। यहाँ तक जनजातीय समुदाय में उनकी अलग पहचान खान-पान, रहन-सहन, वेशभूषा आदि के लिए उनकी अपनी अलग संस्कृति है। यहाँ पर ऐसे परिवेश के आधार पर उनकी किया जाने वाले मदद वर ही जीवन की नवीन ज्योति जाग्रत होती है।

जनजातीय समाज पारम्परिक प्रथाओं के आधार पर स्वयं की विचारधारा और संस्कृति के आधार पर जीवन-यापन करते हैं। इस प्रकार के नवीन व्यवस्था के संचालन में पर्यावरणीय अधिकारों को आधार बनाया गया है। इस प्रकार के नये परिवेश में किया जाने वाली कार्य शैली का मूल रूप से इनकी अपनी परम्परा और संस्कृति है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र जनजातीय विकास के सांस्कृतिक आयाम में प्राथमिक और द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं, ग्रामीण जनजातीय समुदाय के द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से भी तथ्यों का संकलन किया गया है। यहाँ तक विद्धानों का भी मार्गदर्शन प्राप्त किया गया है। जो भी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विकास के आयाम में शासन की योजनाओं का भी विशेष योगदान रहा है। इस प्रकार से शोध प्रविधि में विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

समस्या – इस शोध पत्र की मुख्य समस्याएँ प्रकार से हैं –

1. जनजातीय समुदाय में सांस्कृतिक एकता को सुदृढ़ करने की शक्ति को प्रशासनिक रूप से सहायता की समस्या।
2. जनजातीय समुदाय में बलि प्रथा की समस्या।
3. जनजातीय समुदाय में आर्थिक विपन्नता की समस्या।
4. जनजातीय समुदाय में सामाजिक एकता की समस्या।
5. जनजातीय समुदाय में शिक्षा की कमी।

उद्देश्य – इन सभी सम्बन्धों के आधार पर जनजातीय समुदाय में सांस्कृतिक एकता और अखण्ड़ता में विश्वास करने की पवित्रता और उनमें जीवन जीने की कला का विकास एक बहुआयाम प्रस्तुत करता है। इस प्रकार की प्रणाली को विशेष रूपों में एकाग्रताशील होने के परिणाम स्वरूप सामाजिक जीवन पर्यावरणीय शैली में आधारित होता है। यहाँ तक कहा जाता है कि सांस्कृतिक एकता और अखण्ड़ता की पूर्णता पाई जाती है।

1. जनजातीय समुदाय के सांस्कृतिक पक्षों का अध्ययन करना।
2. जनजातीय समुदाय की परम्पराओं का अध्ययन करना।
3. जनजातीय समुदाय की ज्ञान परम्पराओं का अध्ययन करना।
4. सामाजिक जीवन और प्राकृतिक दृश्यों का सांस्कृतिक अध्ययन करना।

समाधान – भूगोल एक प्रकार से क्षेत्र वर्णनी विज्ञान के अन्तर्गत आता है जिसके अन्तर्गत पृथ्वी के क्षेत्र विशेष रूपों में पाये जाने वाले मानव एवं पर्यावरणीय तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों के रूप में अन्तर्क्रियाओं का अध्ययन किया जाना आवश्यक है। मनुष्य भौतिक एवं जैविक तत्वों के साथ-साथ क्रिया करते हुये न केवल अपने आजीविका के श्रोतों को ढूढ़ना भी तय किया गया है। यहाँ तक अपने आर्थिक-सामाजिक विकास को भी सुनिश्चित किया है। इस तरह से मानव विकास उसके एवं पर्यावरण सम्बन्धों की परिस्थिती होती है, जो जनजातीय विकास के एक आयाम को प्रस्तुत करता है। इस समय की आधार शिला को मूल रूप से परिवर्तन शील प्रवृत्ति वाली मानी जाती है।

सांस्कृतिक विकास हेतु संचालित योजनाओं का क्रियान्वयन समुचित ढंग से न होने के कारण, इनका शोषण होता रहा है, जिससे सांस्कृतिक एकता और सोच में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाना चाहिए। इस प्रकार से देश व समाज का विकास समाज के सभी लोगों के विकास को समुन्नत करने में हैं। अन्यथा वह एक पक्षीय होगा, व भेद-भाव बढ़ाने वाला कार्य होगा। प्रशासन की समय-समय पर योजनाओं के क्रियान्वयन की समीक्षा आदि से समाज में एक क्रान्तिकारी कदम उठाया जा सकता है। इस प्रकार से जनजातियों की शिकायत पर त्वरित कार्यवाही किया जाना अधिक उचित ही प्रतीत होता है। आज समाज इस दिशा की ओर बाधित हो रहा है। जो समुन्नत करने में तनिक भी संकोच नहीं कर रहा है।

मध्य प्रदेश के जनजातीय समुदाय की विपुल सांस्कृतिक परंपराओं के आधार पर उनके धार्मिक कृत्यों, उनके नृत्यों, गानों आदि के आधार पर उनके सामुदायिक देवी-देवताओं, पौराणिक गाथाओं को मानने की परम्परा, त्वचा के गोदनों और विद्या आदि में अभिव्यक्त होती रही है। उनके घरों को सौंदर्यशास्त्रीय रूप से एक सहज बोध प्रकट होता है। किसी भी त्यौहार आदि में प्रति वर्ष दीवारों पर लेप किए जाने की परम्परा विद्यमान है। उससे यह सिद्ध होता है आज इस समुदाय में उभरी हुई नक्काशीकारी, भित्त चित्र तथा चित्रकारियों को सजाये जाने की परम्परा विद्यमान है। इनका जीवन

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

सामग्री साधारण, घर में निर्मित होती रही है। रंगों को विभिन्न पौधों की पत्तियों तथा पुष्पों से चित्रकारी की जाती है। इस प्रकार से उन्हें फटे-पुराने कपड़ों और कपास आदि के द्वारा सजाया जाता है। इससे बनने वाले ब्रशों से पुताई की जाती है। इसमें नीम की टहनियों से बंधे होने के कारण आज भी यह कार्य शैली विद्यमान है।

जनजातीय समुदाय के किसी बच्चे का जन्म होता है तो उसे जनजातीय सांस्कृतिक रीति-रिवाजों के अनुसार संस्कार किये जाते हैं। इस प्रकार से बच्चे को मक्के के ढेर पर लिटाया जाता है और चचेरी बहन उसे उठाती है। उस बच्चे को माता के पास तभी सौपा जाता है। जब तक उसे कुछ पुरस्कार या उपहार नहीं मिल जाता है। उपहार मिलने के बाद उसे तुरंत अन्न का स्पर्श करना शुभ माना जाता है। उसी तरह नवजात के कानों में हंसी की आवाज शुभ मानी जाती है। जनजातीय समुदाय में विवाह के भी अनेक प्रकार की विधियों से होता है। जो उन्हें जीवन साथी चुनने की आजादी पूर्णत: होती है। इस प्रकार से जनजातीय समुदाय में दुल्हन की कीमत लगाने की पद्धति विद्यमान है। जन्म तथा शादी-विवाह के समय बड़ों, बुजुर्गों, देवी-देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त कर और गीत गाए जाते हैं। प्रत्येक पर्व के दौरान जनजातीय गीत और गरबा नृत्य करते हैं तथा अपने गीतों के माध्यम से देवियों को अपने साथ शामिल होने के लिए आमंत्रित किया जाता है।

जनजातीय समाज में किसी भी पर्व और त्यौहार के मौके पर गीत में कभी-कभी देवी उत्तार देती है कि वह नृत्य में शामिल नहीं हो रहीं क्योंकि उसका बच्चा रो रहा है। भील के देवी-देवता दैनिक जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा माने गये हैं।

जनजातीय समुदाय में मिट्टी की चित्रकारी एक धार्मिक रीति-रिवाज पर आधारित होती है। इसका अत्यधिक सम्मान किया जाता है। उन्हें कहानी कविता और गीतों के माध्यम से प्रचार-प्रसार किया जाता है। इस प्रकार से लोग हंसना या गाना और नृत्य आदि करके अपनी सांस्कृतिक एकता को बनाये रखते हैं।

जनजातीय समुदाय में जीवन से जुड़ा प्रत्येक पहलू भी चित्रित होते रहे हैं। इस प्रकार से सूर्य, चंद्र, वृक्ष, कीट, पशु, नदियां, मैदान, पौराणिक कथाएं और व्यक्ति, देवता देव बरमथ्य जिनके बारह सिर पाये जाते हैं। सभी जनजातीय समुदाय में लोग प्रकृति के निकट रहते हैं। इनकी अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित होती है और जंगलों से प्राप्त होने वाले चारागाहों के माध्यम से अत्यधिक होता है। जब बारिश के समय में धान की रोपाई के समय गीत के माध्यम से रोपाई की जाती है। इस प्रकार से बुआई के मौसम से पूर्व हमेशा ही चिंता छा जाती है। जब मानसून नहीं आता है तो सैंकड़ों जनजातीय निर्माण-कार्य में श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं।

निष्कर्ष – जनजातीय समुदाय से बहुसंख्यक आदिवासी जन भी रहते है। इस प्रकार से जनजातीय संस्कृति सम्पन्न होती रही है। सभी जनजातियों की अपनी-अपनी जीवन पद्धति एवं परम्परा के आधार पर कार्य करने की विशालता पाई जाती है। कुछ विशिष्टताएँ है जिनके आधार पर जनजातियों की पहचान की जाती है। जनजातीयों की वन्य आधारित संस्कृति को बचाये रखने का सहयोग विशेष और स्मरणीय रहा है। जनजातिय संस्कृति मूल रूप से जीवन शैली, वन के उपयोगी और अलग पहचान रखती है। उनकी सारी कार्यपद्धति पूर्वजों के जमाने से चली आ रही है। जनजातियों की संस्कृति की अलग पहचान सामने आती है। जनजातीय संस्कृति का मुख्य अंग भी रहा होगा, जिससे पता चलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तवारी, डॉ. शिवकुमार (2005), मध्यप्रदेश की जनजातीय संस्कृति, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ 10
2. श्रीवास्तव, लोकेश (2010), जनजातीय परिदृश्य, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 25
3. श्रीवास्तव, ए.आर.एन., (2000), जनजातीय विकास के पाँच दशक, ज्ञानदीन प्रकाशन, पटना, राँची, इलाहाबाद, पृष्ठ 18
4. दुबे, डॉ. एच.एन., (2003), भारत की प्रारम्भिक संस्कृतियाँ एवं सभ्यताएँ, शारदा प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 55

****

जनजातीय वर्ग की सामाजिक विकास : एक भौगोलिक अध्ययन

संदीप कुमार सिंह *

प्रस्तावना - जनजातीय समाज में सामाजिक संगठन और उनकी अपनी परम्पराएँ है। उसी प्रकार से समाज में आने वाले वैचारिक चिन्तन का अपना महत्व है। उसके लिए उनकी परम्परा और विश्वास की भावना का जाग्रत होना भी भावी भविष्य की योजनाओं को तैयार करता है। किसी भी समाज का अपना अस्तित्व होता है। उसके अस्तितत्व के अन्तर्गत जीवन यापन करने की शक्ति भी निहित है। उसे समाज में एक स्थायुत्व का विकास सम्भव होना बताया जाता है। इस प्रकार से जनजातीय समाज की अपनी बोली भाषा और संस्कृति है। उनके नातेदारी आदि की अपनी परम्परा है। उसके अनुरूप वे कार्य करते हैं। समाज में उनका अपनी अलग पहचान और महत्व है। उसके स्वरूपों का अध्ययन करने के लिए समाज के प्रबुद्ध वर्गो का एक जीवन शैली है। उनके अनुरूप ये अपने-आप को ढ़ालने की कोशिस करते हैं। यहाँ तक समाज और समाज की विविधता को भी एक प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जा सकता है। फिर भी इनकी परम्परा और सामाजिक विकास के दिशा में आधारित माना जाता है। जो लोग किसी विकास के लिए तात्पर्य होने की विचारधारा होने के रूप में सहयोग प्रदान करने के लिए तात्पर्य होता है।

इनके सामाजिक संगठन आदि के अन्तर्गत परिवार, वंश, भ्रातृ, गोत्र आदि में युग्म आदि के संगठन आदि की परम्पराएँ विद्यमान होती है। जनजातियों की सरल और सबसे सुन्दर प्रकृति का संगठन होना भी खानाबदोश जैसा जीवन रहा है। इस प्रकार से इनके सदस्य संख्या भी कम होती गई है।

इसके सभी सदस्यों में भोजन प्राप्ति के साधनों के लिए छोटी-छोटी टोलियों में अपना जीवन जीते हैं। इस प्रकार से इनका एक निश्चित भू-भाग में ही भ्रमण करते है। उसके साथ-साथ इन लोगों का कोई निश्चित निवास स्थान नहीं होता रहा है। आज यहाँ तो कल वहाँ निवास करते थें। इस प्रकार इनका भोजन था जंगलों में शिकार करना, जंगलों से प्राप्त होने वाले फलों-सब्जी, भेड़, बकरी आदि के दूध से अपने जीवन का पालन-पोषण करते हैं।

स्वयं की आवश्यकताओं की पूर्ति में हमेशा संलग्न रहा करते थें। चादर, बिछौने पहनने के कपड़े, भोजन पकाने हेतु कम-कम से कम बर्तन और हथियार शिकार करने के लिए अपने पास रखते थें। यहाँ तक धनुष-बाड़, गुल्ला, तरकस, भाला, लाठी, चाकू आदि के द्वारा ये शिकार करते हैं। ये जहाँ भोजन आदि की सुविधा होती हैं। वहाँ ही ये ठहराव करते हैं। जहाँ इस प्रकार की सुविधा नहीं होती वहाँ ज्यादा दिन नहीं रूकते हैं। वहाँ से उठकर दूसरी जगह पलायन कर जाते हैं।

प्रकृतिक संकटों, महामारी की स्थिति में ये डटकर सामना करते हैं। यहाँ तक इनके पास जंगली जड़ी-बूटियों का ज्ञान परम्परिक ज्ञान पर आधारित है। उससे इनके जीवन में किसी भी प्रकार का जन हानि नहीं होती है। इनका चिन्तन हमेशा से आध्यात्मिक स्वयं के देवताओं के प्रति अत्यधिक प्रगाढ़ विश्वास होता है। देवताओं में बलि प्रथा विद्यमान है। इनका ऐसा मानना है कि यदि हम किसी देवता को बलि देते हैं। तो वे हमारी और हमारे परिवार की रक्षा करते हैं। ऐसी मान्यताएँ आज भी विद्यमान है।

इनके देवता, बड़ादेव, अगरिया, लोहरादेव, भैंसासुर, अग्गिमान, कालिका, वृक्ष आदि को भी देवता मानते हैं।

बलि में चढ़ाये जाने वाली सामाग्री - नारियल, बकरा, मूर्गा, अण्डा, चावल, नेबू, गेहूँ, लौग, लोहवान, नेबू आदि के द्वारा इनको चढ़ाये जाने की परम्परा विद्यमान है।

त्योंहार का देवताओं के लिए महत्व - दिवाली, होली, नवरात्रि, पर्व, उत्सव आदि में इन देवताओं का अवहान करते हैं। उनको अच्छे-अच्छे भोजन आदि से चढ़ावा चढ़ाते हैं। फिर भी उनकी इन परम्पराएँ आज भी उसी प्रकार से चल रही है।

इनके गीत - कोलदहका, दादर, लोकगीत, कजली, हिन्दुली, फाग, भगत, देवताओं की बैठकी में भगत गीत गाया जाता है। इस प्रकार से इनके गीतों में इनके जीवन के रंगों का दृश्य दिखाई देता है।

इनकी परम्परा मूल रूप से भारतीय संस्कृति की सबसे प्राचीन परम्पराओं में से एक है। जंगली देववताओं की पूजा-अर्चना आदि से अपने सामाजिक जीवन यापन करने की विधि को प्रोत्साहित करते हैं।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र में जनजातीय वर्ग की सामाजिक विकास : एक भौगोलिक अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीय शोध सामाग्री के द्वारा अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं आदि के द्वारा भी अध्ययन किया गया है। यहाँ तक ग्रामीण जनजातीय वर्ग के सदस्यों से इन परम्पराओं के सम्बन्ध में जानकारी हासिल की गई है। इस हेतु इनकी विचारधारा और परम्परा का पता चल पाया है। जो इस शोध पत्र में समाहित करते हुए विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

समस्या - जनजातीय वर्ग के विकास में आज अनेक प्रकार की समस्याएँ विद्यमान है।

1. जनजातीय विकास की सबसे बड़ी समस्या आर्थिक कमजोरी रही है।
2. जनजातीय विकास की सबसे बड़ी सामाजिक समस्या शिक्षा रही है।
3. समाज में दहेज भी एक प्रकार की कुप्रथा रही है।
4. सामाजिक रूप से महिलाओं पर हो रहे अत्याचार एक बड़ी समस्या है।
5. सरकार ने नये-नये कानून तो बना दिया है किन्तु उसे अमल में लाया नहीं जा रहा है। ऐसी स्थिति में सामाजिक वातावरण और दूषित हो रहा

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

है। आज आये दिन होने वाली हिंसा, दहेज प्रताड़ना, अन्य प्रकार की कुरीतियाँ सामाजिक विसंगति का सबसे बड़ा कारण बन रही हैं।

उद्देश्य – जनजातीय वर्ग के सामाजिक विकास के लिए सरकार द्वारा संचालित योजनाओं को उनके तक पहुँचाया जाना। जिससे उनके विकास का दिशा अधिक सार्थक साबित हो सकें। यहाँ तक समाज में अनेक प्रकार की विसंगति को सामाजिक स्तर पर निपटाने की कोशिश करना चाहिए। यहाँ तक समाज की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति आसानी से करना।

1. सामाजिक विसंगतियों को दूर करने का प्रयास करना।
2. समाज में उत्पन्न होने वाली बुराईयों न्याय प्रक्रिया के द्वारा निदान करना।
3. जनजातीय समाज में शिक्षा की ओर प्रोत्साहन करना।
4. जनजातीय समाज में विकास के आयाम को योजनाओं से सीधे जोड़ना।
5. जनजातीय विकास के लिए सरकार द्वारा संचालित योजनाओं का सहीं तरह से क्रियान्वयन करना।
6. समाज और सरकार के बीच समाज की विसंगतियों दूर करने में सहयोग की भवना पैदा करना।

समाधान – गिलिन एवं गिलिन के शब्दों में – 'स्थानीय आदिम समूहों के किसी भी संग्रह को जोकि एक सामान्य क्षेत्र में रहता हो, एक सामान्य भाषा बोलता हो और एक सामान्य संस्कृति का अनुसरण करता हो, एक जनजाति कहते हैं।'[1] डॉ. मजूमदार–'एक जनजाति परिवारों या परिवारों के समूह का संकलन होता है जिसका एक सामान्य नाम होता है, जिसके सदस्य एक निश्चित भू–भाग में रहते हैं, समान भाषा बोलते हैं और विवाह, व्यवसाय या उद्योग के विषय में निश्चित निषेधात्मक नियमों का पालन करते हैं और पारस्परिक कर्तव्यों की एक सुविकसित व्यवस्था को मानते हैं।'[2] एक जनजाति का सामाजिक विकास उसके गोत्र की अपेक्षा अधिक बड़ी होती है। यहाँ तक एक जनजाति के अनेक गोत्र पाये जाते हैं। उसकी सदस्य संख्या उसके गोत्र संख्या से अधिक मजबूत होती है। इस प्रकार से एक गोत्र दूसरों सभी जनजातीय सदस्यों के होते हैं।[3] इनका गोत्र एक पूर्वज के द्वारा निर्धारित होता हैं या उनके जन्म–जन्मांतर के लिए भी होता है। इसमें विशेष बात यह है कि एक जनजाति में उसका एक पूर्वज नहीं होता है।

गोत्र हमेशा से बहिर्विवाही होता है। उसके उपरान्त एक ही गोत्र के सदस्यों की अपनी गोत्र में वैवाहिक जीवन नहीं करते हैं।[4]

जनजातीय परम्परा में एक बात तो महत्वपूर्ण ही है कि वे दूसरे किसी जाति में विवाह नहीं करते हैं। उनकी अपनी परम्परा और सामाजिक व्यवस्था है।[5]

जनजाति एक निश्चित भू–भाग में ही निवास करते हैं। अर्थात् एक क्षेत्रीय भाषा और समूह होता है। एक गोत्र के सदस्य दूसरे गोत्र से ही विवाह करते हैं। उनका अपना क्षेत्रीय समूह होता है।

निष्कर्ष – जनजाति समाज में कुछ समानताएँ भी पाई जाती है। उन जनजातियों के के विषय में एक निश्चित क्षेत्र आदि की भी विशेषता रहती है। उनका भाषाई अनुभव एक परम्परा को जन्म देता है। इस प्रकार से जनजातीय समुदाय में विभिन्न प्रकार की विसंगतियाँ पाई जाती है और उनमें जाति मुख्यत: जन्म के आधार पर विकसित किया जाना एक निश्चित भू–भाग का आधार बनती है। एक जाति की अपनी निश्चित परम्परात्मक व्यवसाय होती है। उसी के आधार ये अपना जीवन यापन करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एम.एल. गुप्ता एवं डी.डी. शर्मा, समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृष्ठ 491
2. एम.एल. गुप्ता एवं डी.डी. शर्मा, समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृष्ठ 490–491
3. देवेन्द्र बाबू राव, शेड्यूल कास्ट एण्ड ट्राइब्स सोसियो इकानामी, नई दिल्ली, 1999, पृष्ठ 35
4. डॉ. एम.एल. लवानिया एवं के शशि जैन, भारत में जनजातियों का समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, 2007, पृष्ठ 56
5. डॉ. राजेन्द्र जैन, भीलों की संस्कृति, राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 15

****

पर्यावरण संरक्षण एवं मानवाधिकार

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना *

प्रस्तावना – मानवाधिकार से तात्पर्य मानव अधिकारो से है। ये ऐसे अधिकार है जो प्रत्येक मनुष्य को जन्मत: मिले है। ये मनुष्य की प्रकृति में ही निहित है और किसी रीति–रिवाज, परम्परा, रूढि, कानून, राज्य शासक या किसी अन्यथा की देन नही है। मानवाधिकार पहले और राज्य या कानून जैसी चीजे बाद में है। पर्यावरण के विषय में भी मानवाधिकारो के विषय की ही तरह अन्तर्राष्ट्रीय जगत की चिंता द्वितीय महायुद्ध के बाद से देखने को मिलती है। मानव समाज का वायु, जल और भूमि पर प्राकृतिक अधिकार है। परन्तु पर्यावरण अवनयन की ये परिस्थितियाँ मानव को जीने का अधिकार की सीमा में पर्यावरण संरक्षण को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। मानवाधिकार का केन्द्र बिन्दु मनुष्य है तथा जीवन उसका मूलभूत अधिकार है जो पर्यावरणीय दशाओं और तत्वों की पारिस्थितकीय प्रबंधन पर आधारित है। परिस्थितकीय संतुलन सभी जीवधारियों के लिए अनिवार्य है। अत: जीवन का अधिकार पर्यावरण के संतुलन के अधिकार का स्वरूप ग्रहण कर लेता है। पर्यावरण संरक्षण की दिशा में सुप्रीम कोर्ट के आदेश मानवाधिकार के लिए एक प्रकार की भेंट है। संविधान की धारा 21 के अनुसार जीवन के अधिकार से आशय है स्वस्थ और उपयुक्त जीवन, जिसके लिए स्वच्छ पर्यावरण अनिवार्य है।मानव के अधिकार के साथ कर्त्तव्य भी सम्बद्ध है। कर्त्तव्य निर्वहन से अधिकारों की प्रासंगिकता पल्लवित होती है। अधिकार और कर्त्तव्य में राज्य और व्यक्तियों की भूमिका सारगर्भित होती है। जहां नागरिक अधिकार का सम्बद्ध देश विशेष की नागरिकता से है और वह कानून द्वारा संरक्षित है वही मानवाधिकार संपूर्ण विश्व के प्रत्येक मानव से संबंद्ध है। मानवाधिकार के मूल में मानवतावादी मूल्य है इसलिए मानवाधिकार विश्वव्यापी है और ये इसलिए अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इनमें मानव को जन्म पूर्व से लेकर मृत्यु पश्चात अधिकार प्राप्त है।

मानवाधिकार में व्यक्ति के अधिकार और कल्याण की भावना समाहित है और अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इनमें व्यक्ति को देश की नागरिकता से बांधा नही गया है। मानवाधिकार में आकर्षक पहलू यह है कि इनमें व्यक्ति चाहे किसी भी राष्ट्र का हो यदि उसके मानवतावादी अधिकारों का हनन होता है तो उसे संरक्षण प्राप्त है। मानवाधिकार का मानवतावादी और विश्वव्यापी होने की बात को दृष्टिगत रखकर अध्ययन में ऐसे विषय को सम्मिलित करना समीचीन है जिसका विश्व के मानवों पर प्रभाव पड़ता है इस दृष्टि से पारिस्थितिकी असंतुलन अधिक महत्त्वपूर्ण है। पारिस्थितिकी असंतुलन वैश्विक समस्या है इससे संपूर्ण विश्व प्रभावित है। अध्ययन में मानव की चर्चा वैश्विक मानव को दृष्टिगत रखकर ही की गई है। प्रकृति में मानव का सम्बद्ध वन, वनस्पति और जीव–जंतुओं से भी है। पारिस्थितिकी असंतुलन और अन्य भीषण विपदाओं में मानव के संरक्षण के लिए मानवाधिकार है किंतु प्रकृति और जीव–जंतु विशेषकर वन, वनस्पति, औषधीय पौधे, वन्यजीव आदि जिनसे मानव का अस्तित्तव है। हांलाकि इनके संरक्षण के लिए सभी देश प्रयत्नशील है और इनके संरक्षण के लिए नीति और नियम बने हुए हैं किंतु इनकी महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए किये गये प्रयत्न थोड़े हैं। यही कारण है कि पृथ्वी से अनेक वन, वनस्पति, जीव–जंतु विलुप्त हो गये हैं या विलुप्त होने के कगार पर है। पारिस्थितिकी संतुलन के लिए आवश्यक है कि मानव संरक्षण के लिए बने मानवाधिकार की भांति वन, वनस्पति, जीव–जंतु ,वन्यजीव आदि के लिए भी अधिकार बने और मानव द्वारा उनकी पालना सुनिष्चित की जाए। अहिंसा के वैश्विक पुजारी महात्मा गांधी ने कहा था कि धरती मां में मानव की जरूरी आवश्यकता की पूर्ति की तो क्षमता है किंतु मानव के लालच की पूर्ति की नही। मानव ने क्षणिक स्वार्थो की पूर्ति के लिए भविष्य को भूलकर प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन करके स्वयं के पैरों पर कुल्हाड़ी मारी है, परिणामस्वरूप आज पारिस्थितिकी असंतुलन विश्व की मुखर चुनौती बन गया है।

आज विश्व की जनसंख्या 7.50 अरब है। भारत की जनसंख्या 1.33 अरब को पार कर चुकी है। भारत में विश्व की कुल जनसंख्या का 17.65 प्रतिशत भाग जीवन बसर करता है जबकि विश्व के कुल भू–भाग में भारत का क्षेत्रफल 2.42 प्रतिशत ही है। भारत की जनसंख्या अन्य देशों की तुलना में तेजी से बढ़ रही है। इसलिए भविष्य में भी यहां पर्यावरणीय खतरा अधिक है। पर्यावरण को सुधारने में वनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। भारत का 678333 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वन क्षेत्र है जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 20.64 प्रतिशत है जबकि 1952 की राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार भूमि का एक तिहाई भाग वनाच्छादित होना चाहिए। जनसंख्या वृद्धि का वनों के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। देश के वनों का बहुत बड़ा भाग बढ़ती जनसंख्या के खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए कृषि भूमि में बदल गया है। भूमि उपयोग परिवर्तन यहां भी नही थमा। यह आगे चलकर बढ़ती आबादी को बसाने के लिए कृषि भूमि भी शहरीकरण की भेंट चढ़ती जा रही है। भारत विश्व के उन देशों में है जहां वन नीति 1894 से ही लागू है। यह अलग बात है कि इसके बावजूद वनों का अपेक्षित विकास नही हुआ है। वन नीति को 1952 और 1988 में संशोधित किया गया। संशोधित वन नीति 1988 का मुख्य आधार वनों की सुरक्षा, संरक्षण और विकास है। नई वन नीति में स्थानीय समुदाय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा गया है। इसके अनुसार प्राकृतिक वन उद्योगों को उपलब्ध नही होंगे। किसी भी बड़े उद्योग को जो केवल वनों पर आश्रित होगा, प्रश्रय नही दिया जाएगा। विश्व की और भारत की इतनी बड़ी आबादी को न्यूनतम जीवन जीने की आवश्यकता मुहैया कराना मुश्किल हो गया है और मानवाधिकार चुनौतियों से घिर गये हैं। इनके पीछे बड़ा

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय ,सवाई माधोपुर (राज.) भारत

कारण एक ओर तीव्र गति से बढ़ती आबादी दूसरी ओर बिगड़ता पारिस्थितिकी संतुलन है। यदि पारिस्थितिकी संतुलन को बिगड़ने से नही रोका जाता है तो भविष्य में मानव अस्तित्व के लिए कठोर प्रयत्न करने होंगे और विश्व के लिए मानवाधिकारों की पालना जटिल होगी। विश्व आर्थिक विकास की दौड़ में पारिस्थितिकी असंतुलन की चपेट में है। आज खाद्यान्न संकट, उर्जा की कमी, आर्थिक मंदी आदि समस्याएं मुंह बाएं खड़ी है। इन सबका संबंध कमोबेष जलवायु परिवर्तन से भी है। प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन के कारण कई प्रकृतिजन्य संकट सामने खड़े हैं। पृथ्वी का तापमान बढ़ने से ग्लेषियर पिघल रहे हैं, समुद्री जलस्तर बढ़ने से कई द्वीप विलुप्त हो चुके हैं एवं गंगा नदी प्रदूषित हो गई है। ओजोन परत में छेद हो जाने के कारण इसकी सूर्य की पराबैंगनी किरणों को रोकने की क्षमता घट रही है। पृथ्वी के तापमान के बढ़ने से समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है। पृथ्वी का क्षेत्रफल घट रहा है। बढ़ते प्रदूषण से पृथ्वी अतिप्रदूषित प्लास्टिक के कचरे के ढ़ेर में तेजी से बदलती जा रही है। दुनियां में प्रदूषण विविध रूपों में फैल चुका है। इनमें जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, सागर प्रदूषण, धातु प्रदूषण आदि मुख्य है। सभी शहरों में औद्योगीकरण और जनसंख्या के बढ़ने से प्रदूषण पांव पसार चुका है। कुल मिलाकर प्रकृति के निर्मम संहार के चलते उत्पन्न जलवायु परिवर्तन आज विश्व के समक्ष ज्वलंत और मुखर चुनौती बन गई है। विश्व में आर्थिक विकास की तीव्र दौड़ ने पर्यावरण को खतरनाक स्तर तक प्रदूषित कर दिया है। मौसम चाहे गर्मी हो या सर्दी उसका चक्र बदलने के साथ प्रकोप भी चरम पर पहुंचा है। अमरीका, कनाड़ा, चीन तथा भारत के हिमालयी क्षेत्र कड़ाके की ठंड की चपेट में थे। अमरीका और कनाड़ा में तापमान माइनस 50 डिग्री सेल्सियस के कारण बड़ा हिस्सा बर्फ से ढक गया। वहां झरने, नदी और झीलें जम गई। भारत में सर्दी में आमतौर पर खुशनुमा रहने वाले तटीय शहर मुंबई, कलकत्ता में जनवरी 2017 में सर्दी असहनीय हो गई। जबकि पिछली गर्मियों में ब्रिटेन, न्यूजीलैण्ड और कनाड़ा, अमरीका में तापमान ने उंचाइयों का पचास साल का रिकॉर्ड तौड़ दिया था। मानव चाहे कितनी ही प्रगति कर लें वह प्रकृति के सामने बौना है। प्रकृति मानव के प्रहारों को सीमा तक ही सहती है। मानव जब सीमा लांघता है तो प्रकृति अपना असली रूप दिखाती है। अकाल, सूखा, बाढ़, ओलावृष्टि, आंधी, तूफान इन सबके लिए मानव जिम्मेदार है। गुजरात का भूकंप और सूनामी को लोग आज भी नही भूले हैं। प्रकृति ने म्यांमार में नरगिस से और चीन में भूकंप से मानव द्वारा प्रकृति से किये गये छेड़छाड़ का बदला लिया है। पर्यावरण की ये घटनाएं मानव के लिए खतरे का संकेत है। भारत के लिए पर्यावरणीय चुनौतियां ज्यादा है। राजस्थाान में तो अकाल कोबरा की भांति ढेने फैलाये पसरा रहता है। तापमान बढ़ता रहा तो धरती सूख जाएगी। वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर पृथ्वी के तापमान में दो डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होती है तो धरती का एक चौथाई हिस्सा काफी हद तक सूख जाएगा ऐसी स्थिति में सूखा और जंगलों में आग लगने की घटनाएं बढ़ सकती है, अगर वैश्विक उश्मन को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक रोक लिया गया तो वह धरती के कुछ हिस्सों में होने वाले ऐसे बदलावों को रोक सकेगा।

सभी देश पिछले कई वर्षो से कार्बन उत्सर्जन को घटाने के लिए प्रयत्नशील है किंतु इस दिषा में अभी अपेक्षित सफलता नही मिली है। जलवायु परिवर्तन को लेकर विश्व के देशों की चिंताएं बढ़ गई है। जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर क्योटो प्रोटोकॉल उल्लेखनीय है। विकसित देशों द्वारा 1997 में क्योटो में कार्बन उत्सर्जन में कटौती के वादे किये गये थे। चिंता की बात यह है कि अब विकसित देश क्योटो प्रोटोकॉल में बदलाव चाहते हैं। गौरतलब है क्योटो प्रोटोकॉल में संधि पर हस्ताक्षर करने वाले औद्योगिक देशों को वर्ष 2012 तक कार्बन उत्सर्जन में वर्ष 1990 की तुलना में सामूहिक रूप से औसतन 5.2 प्रतिशत कम करने का बाध्यकारी लक्ष्य दिया गया था। इस संधि में विकासशील देशों के लिए कटौती लक्ष्य निर्धारित नही किए गए थे। हालांकि स्वेच्छा से कार्बन उत्सर्जन कम करने के प्रयास करने पर वित्तीय व अन्य प्रोत्साहनों की व्यवस्था की गई थी। संभवत: भारत ने इसी बात को दृष्टिगत रखकर वर्ष 2020 तक कार्बन उत्सर्जन में 15 से 20 प्रतिशत कटौती की स्वेच्छा से घोषणा की। चीन ने भारत से पहले कार्बन उत्सर्जन कटौती की स्वैच्छिक घोषणा की। चीन को कार्बन उत्सर्जन कटौती की बाध्यता तो नही है किंतु वहां कार्बन उत्सर्जन की अधिकता के कारण इसमें कटौती आवश्यक है।जलवायु परिवर्तन पर चिंतन करने और इससे निपटने के लिए विश्व के देश 7-18 दिसंबर, 2009 में डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन में इकट्ठा हुए। इस सम्मेलन में 192 देशों के लगभग 15,000 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। कोपेनहेगन के संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में 18 दिसंबर 2009 को अमरीका और बेसिक देशों (ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका, भारत और चीन) की पहल पर गैर-बाध्यकारी राजनीतिक समझौता हुआ। इसमें कार्बन उत्सर्जन में बड़े पैमाने पर कटौती को आवश्यक बताया गया जिससे तापमान में वृद्धि को अधिकतक 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे सीमित किया जा सकें। इसमें विकसित देशों के लिए कटौती लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं तथा बड़े विकासशील देशों के लिए स्वैच्छिक प्रतिबद्धता का उल्लेख किया गया है। समझौते में कार्बन उत्सर्जन कटौती को कानूनी रूप से बाध्यकारी नही बनाया गया है, किंतु उभरती अर्थव्यवस्था वाले देश कार्बन उत्सर्जन कटौती के प्रयासों पर स्वयं नजर रखेंगे। वे प्रत्येक दो वर्ष पर इसकी सूचना संयुक्त राष्ट्र को देंगे। कुछ अंतरराष्ट्रीय समूह इसकी जांच भी कर सकते हैं। जलवायु परिवर्तन पर भविष्य में कानूनी रूप से बाध्यकारी समझौता लागू किए जाने का प्रस्ताव है। विकसित देश विकासशील देशों को वर्ष 2020 तक प्रतिवर्ष 100 अरब डॉलर की राशि मुहैया कराते रहेंगे। विश्व में हथियारों की होड़ और रासायनिक उद्योगों ने ओजोन परत को भारी क्षति पहुंचाई दी है। विकसित देशों में नम्बर एक बनने की प्रतिस्पर्धा के दुष्परिणाम विश्व को भुगतने पड़ रहे है। भारी पारिस्थितिकी असंतुलन के बीच भी अमरीका ने पेरिस पर्यावरण समझौते से अलग होने की घोषणा कर दी। पर्यावरण पर ध्यान नही दिया गया और प्रदूषण मिटाने के साथ ही परमाणु हथियारों की दौड़ पर काबू नही रखा गया तो वह दिन दूर नही जब प्रकृति ही मानवता को खत्म कर दे। पारिस्थितिकी असंतुलन के कारण जब मानवता ही खत्म हो जाएगी तो मानवाधिकार किस मानवता का संरक्षण करेंगे। इसलिए वैश्विक प्राकृतिक संसाधनों के लिए मानवाधिकार की भांति प्रकृतिधिकार की दरकार है। विकसित देशों ने विश्व के प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन के बल पर विकास की गति लंबे समय तक बनाये रखी है। वर्तमान में उभरती अर्थव्यवस्थाओं को विकास की गति तीव्र करने के लिए और विकसित अवस्था को प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के अधिक दोहन की आवश्यकता है। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में कार्बन उत्सर्जन में कटौती का प्रभाव विकास गति पर पड़ सकता है। इसलिए विकासशील देशों को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर विकसित देशों पर कार्बन उत्सर्जन कटौती का दबाव बनाना चाहिए। भारत, चीन, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका इस दिशा में प्रभावी भूमिका निभा सकते है। साथ में इन उभरती अर्थव्यवस्थाओं को आर्थिक विकास की गति को बढ़ाते समय जलवायु परिवर्तन पर सचेत रहने

की आवश्यकता है। वैश्विक उश्मन से धरती सूखने के कगार पर है। जल ही जीवन है। धरती के उत्तारोत्तार सूखने से धरती से जल घट रहा है और जल में पेयजल कम है। जल के लिए संघर्ष बढ़ने से जल जीवन के लिए संकट बनता जा रहा है। नदी जल बंटवारों को लेकर देशों में विवाद है और देश के राज्यों में भी नदी जल विवाद देखने को मिलते हैं। जल चूंकि जीवन है इसलिए मानव को जल मुहैया कराना मानव का अधिकार है। प्रकृति में जिसमें भी जीवन है उसके अस्तित्त्व के लिए जल आवश्यक है। मानव और जीव-जंतुओं के अलावा वनस्पति और वृक्षों में भी जीवन है इसलिए उन्हें भी मानव की भांति जल की आवश्यकता है, फिर वृक्ष तो मानव और जीवों को प्राण वायु (ऑक्सीजन) देते हैं और वृक्ष, वन, वनस्पति जितना गृहण करते हैं उससे कही अधिक वे वर्षा को आकर्षित करते हैं और जल संरक्षण का भी काम करते हैं। जल जीवन और वायु प्राण है। आज जल और वायु दोनों ही प्रदूषित है।मानव को पेयजल और प्राण वायु मुहैया कराना उसका अधिकार है। वर्तमान में जल जो लोगों को मुहैया है पहली बात तो वह लोगों के लिए पर्याप्त मात्रा में नही है और जितना भी जल लोगों के लिए है उसका बड़ा भाग दूषित है। राजस्थान में देश के कुल जल स्त्रोतों का लगभग एक प्रतिशत भाग है। यहां पेयजल में फ्लोराइड, नाइट्रेट, आर्सेनिक लोहा, लवण की अधिकता है। दूषित जल का लोगों के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फ्लोराइड की अधिकता से हड्डी और दांतो पर प्रभाव पड़ता है। नाइट्रेट से कैंसर की आषंका बनी रहती है। लवण की अधिक मात्रा के शरीर में जाने से किड़नी पर असर पड़ता है। राजस्थान का प्रत्येक पांचवां व्यक्ति किसी न किसी तरह का दूषित पानी पीने को मजबूर है। केन्द्रीय पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के अनुसार देश में सर्वाधिक दूषित पेयजल वाला राज्य राजस्थान को बताया गया है जबकि दूसरे नम्बर पर पश्चिम बंगाल है। उल्लेखनीय है राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम के तहत् राजस्थान को बड़ी राशि आवंटित की जाती है। औद्योगीकरण और कृषिगत जरूरतों को पूरा करने के लिए धरती से जल का अविवेकपूर्ण दोहन किया जा रहा है। इससे भू-जल स्तर काफी गिर गया है। इसलिए जलाभाव की समस्या गंभीर हुई है। सभी देशों में बड़े शहर नदी किनारे बसे हुए है। शहर औद्योगीकरण की ओर अग्रसर है। विकसित शहर औद्योगीकृत है। औद्योगिक कचरा नदियों में गिरने से नदियों का जीवन खत्म होने लगता है। फैक्ट्रियों को हानिकारक कचरा नदी में फेंकना आसान होता है। पड़ौसी देश बांग्लादेश में चमड़ा उद्योग बूरीगंगा को प्रदूषित करने के बाद सावर क्षेत्र में स्थानांतरित हो गया है और वर्तमान में धलेश्वरी नदी को प्रदूषित कर रहा है। उद्योगों की गंदगी सेंट्रल एफ्ल्युएंट ट्रीटमेंट प्लांट द्वारा पहले साफ होनी चाहिए। भारत में अनेक नदियां प्रदूषण की चपेट में है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार भारत में वर्तमान में 302 नदियां प्रदूषित है। इसमें राजस्थान की चंबल, बनास, कालीसिंध, पार्वती, घग्गर, छापी, जवाई और उजाड़ जैसी नदियां सम्मिलित है। प्रदूषण का मूल कारण औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले घातक केमिकल, अपशिष्ठ के साथ शहरों-गांवों का मलजल भी है। प्रदूषित इन नदियों के किनारे कोटा, भीलवाड़ा, टोंक, सवाईमाधोपुर, झालावाड़, सिरोही, हनुमानगढ़ समेत बीस शहर-कस्बें बसे हुए हैं। राजस्थान में सबसे अधिक प्रदूषित जल बनास नदी का है, जिसका पानी बीसलपुर बांध में जाता है। इसी जयपुर समेत कई शहरों के लाखों लोगों को पेयजल आपूर्ति होती है। नदियों में प्रदूषण के बढ़ने से लोगों को स्वच्छ पेयजल मुहैया कराना मुश्किल हो गया है। स्वच्छ पेयजल का अभाव मानवाधिकार की बड़ी चुनौती है। मानव संरक्षण के लिए मानवाधिकार है। मानवाधिकार का संबंध बाल संरक्षण, महिला सशक्तिकरण, श्रमिक कल्याण, वरिष्ठ नागरिक, आदिवासी, कारावासी, दिव्यांगजन, विस्थापित, शिक्षा आदि से हैं। मानवाधिकार की रक्षा के लिए मानवाधिकार आयोग और न्यायपालिका भूमिका निभाती है और इसमें सरकारी तंत्र की भी भूमिका होती है। मानवाधिकारों की अनुपालना में गैर सरकारी संगठनों का भी योगदान होता है।

मानव संरक्षण के लिए तो मानवाधिकार है किंतु मानव का जिस पारिस्थितिकी संतुलन से अस्तित्तव है उसके लिए मानवाधिकार जैसे अधिकार का अभाव है। मानव के लिए मानवाधिकार में मानव के जन्म पूर्व से लेकर मानव मृत्यु पश्चात तक संरक्षण है और उनकी पालना के लिए प्रयत्न भी किये जाते हैं। मानव और मानव परिस्थितियां मानवाधिकार द्वारा संरक्षित है। जिस प्रकार मानव के लिए भ्रूण से अधिकार है जो क्यों नही जीवन रूपी जल के लिए धरती पर दोहन के लिए पहली कुल्हाड़ी से ही संरक्षण किया जाए। बरसात की उपर से टपकती बूंद को भी संरक्षण की आवश्यकता है। गंगा को उद्गम गंगौत्री और यमनौत्री से तथा अन्य नदियों को उद्गम से ही प्रदूषित रहित किये जाने की आवश्यकता है। मानव की भांति गौवंश, वन्यजीव समेत सभी जीवों को भी उनके भ्रूण से लेकर उनकी मृत्यु पश्चात भी संरक्षण के लिए अधिकारों की आवश्यकता है। परिंदें प्रकृति के उपहार है, इनसे प्रकृति अप्रतिम होती है। परिंदों की भांति-भांति की बोलियां मानव मन को आह्लादित करती है। आज बढ़ते प्रदूषण से परिंदों की संख्या घटती जा रही है। परिंदों की घटती संख्या के लिए मानव उत्तरदायी हे। व्यक्ति इस दिन घर छत पर पतंग के विकल्प रूप में पक्षियों को देंखे और परिंदों से भरे आकाश को निहारे। ऐसा होने से परिंदों का संरक्षण हो सकेगा। पर्व-त्यौहार सर्वस्व कल्याण के लिए है। भारत की संस्कृति में त्यौहारों पर पशु-पक्षियों की पूजा होती है किंतु अब मकर संक्रांति पर पतंगडोर से पक्षियों की भारी क्षति नजर आने लगी है।

जलवायु परिवर्तन के भवावह परिणामों से अनेक देश कांपने लगे हैं। पारिस्थितिकी असंतुलन को लेकर विश्व चिंतित है। पृथ्वी से अनेक प्रजातियां विलुप्त हो गई है। विश्व की तो दूर की बात राजस्थान में रेगिस्तानी जहाज उँट पर संकट के बादल है। उँटों की संख्या घट रही है। गिद्ध विलुप्त के कगार पर है। गौड़ावण थोड़े ही बचे हैं। अब सभी जगह पक्षियों की चहचहाहट कम सुनाई देने लगी है। विश्व के देश सामने मंडराते पारिस्थितिकी संकट का देख कार्बन उत्सर्जन को घटाने के लिए प्रयत्नशील है। वैश्विक पर्यावरण को बचाने के लिए सभी देशों को हरित पट्टिका का निर्माण, बंजर भूमि व खाली भूमि का विकास, जनसंख्या नियंत्रण, उर्जा संरक्षण, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास का मानवपयोगी उपयोग आदि कदम उठाए जाने की आवयष्कता है। ग्रीन हाउस के प्रभाव को कम करने, तापमान में वृद्धि को रोकने और वनों के विनाश को रोकने के लिए वनीकरण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। ओजोन परत के क्षय को रोकने के लिए एंयरकंडीशनर के प्रयोग को कम किया जाना चाहिए। पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में दूसरे देशों में किए गए शोध एवं अनुसंधान का लाभ प्राप्त करने का प्रयास किया जाना चाहिए। ब्रिटेन के वैज्ञानिकों के अनुसार नरकुल या सरकंडे के पौधे अनेक प्रकार के औद्योगिक छीजन की सफाई करने में समर्थ है, जिसमें केवल तेल शोधन और तेल के लिए खोदे जा रहे कुंओं से निकला छीजन भी शामिल है। उत्तारी इग्लैण्ड की एक कंपनी ओसन्स एन्वायरमेंट लिमिटेड ने इस क्षेत्र में काम किया है। वहां समस्याग्रस्त क्षेत्रों में नरकुल के पौधे उगाने और उन तक छीजन, गंदा पानी ले जाने और साफ किये पानी से पर्यावरण के अनुकूल जलाशय बनाने का काम किया जा रहा है। भारत में भी जल प्रदूषण वाले

क्षेत्रों में नरकुल या सरकंडे के पौधे उगाकर प्रदूषण को कम करने का प्रयास किये जाने चाहिए। नरकुल का पौधा जल भराव वाली जमीनों में ही आसानी से उगता है। यह सदाबहार होता है। बढ़ते प्रदूषण को नियंत्रित करने की आवश्यकता है। यदि समय रहते प्रदूषण को नियंत्रित नही किया गया तो वर्तमान पीढ़ी पर तो संकट के बादल मंडरा रहे हैं भावी पीढ़ी के लिए भी भयंकर संकट उत्पन्न हो जाएगा। इससे बचने के लिए आवश्यक है कि विश्व का प्रत्येक व्यक्ति वृक्षारोपण में योगदान दे। पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रकृति और प्रगति में सामंजस्य बनाए रखने की आवश्यकता है। प्रकृति और प्रगति में सामंजस्य से पारिस्थितिकी संतुलन संरक्षित रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, सविन्द्र : पर्यावरण भूगोल
2. वार्षिक वैज्ञानिक पत्रिका- 'जिज्ञासा'
3. गौतम विवेक, 'मानव जीवन और प्राकृतिक आपदाएँ'- गुंजन प्रकाशन- आजाद नगर दिल्ली
4. तिवाड़ी एन. के., 'पर्यावरण अध्ययन' आर.पी.एण्ड संस, आगरा
5. शुक्ला शशि, 'जनसंख्या तथा पर्यावरण' आर.पी.एण्ड संस, भोपाल
6. बेव साइट- ग्लोबल इनवारमेन्ट मोनिटरिंग सिस्सटम
7. भंडारी व मेहता - पर्यावरण अध्ययन।
8. सैनी, रामसिंह समकालीन परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकारों के विविध आयाम, गगन दीप पब्लिकेशंस दिल्ली सं. 2007,
9. मिश्रा महेन्द्र कुमार - भारत में मानवाधिकार, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स जयपुर सं. 2008
10. जोषी मोतीलाल - मानवाधिकार और शिक्षा, माया प्रकाशन मंदिर, जयपुर सं. 2004
11. बजवा, जी0एस0 - ह्यूमन राइट्स इन इण्डियॉ चेलेंजिंग, अनमोल प्रकाशन नई दिल्ली सं. 1995
12. सुब्रमण्यन, एस. - ह्यूमन राइट्स : इण्टरनेशनल चेलेंजिंग, मानस पब्लिकेशंस नई दिल्ली प्रा. लि. सं. 1995
13. शर्मा एण्ड कोठारी - आधुनिक विश्व का इतिहास

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Sustainable Development Through Extension Education

Hemant Mandloi*

Abstract - The issue of sustainable development is urgent to meet the needs of the present without compromising the ability of the future generation to meet their own needs.In our country where about seventy percent population lives in rural areas ,for attaining sustainability, it is very important that we focus on the developmental issues pertaining to rural India for which extension of knowledge to rural population is one of the primary requirement.Thus,for stepping towards sustainable development, Extension education is an important tool.Extension education is primarily for the training of people aimed at rural development. Its main objective is to bring necessary changes in the beliefs or views of people. Extension education is an educational process by which capabilities among people are developed to understand their problems and resources. It is utilized to make scientific methods available to the rural people, so that they can raise their agricultural production and their standard of living. Hence extension personnel need to focus on development of rural areas by helping rural people to adopt indigenous and appropriate technologies suitable for their conditions to generate employment and save environment.

Key words - Sustainable Development, Rural Development, Extension Education, Appropriate Technology, Environment.

Sustainable development - The issue of sustainable development is urgent. The sustainability is to ensure that development should meet the needs of the present without compromising the ability of the future generation to meet their own needs. It lays emphasis on equal standard of living to our future generations. Therefore, sustainable development is that which not only generates economic growth but also distributes its benefits equitably; that generates the environment rather than destroying it; that empowers people rather than marginalizing them.

Sustainable development for rural India - In our country where about 70% population lives in rural areas, for attaining sustainability, it is very important that we focus on the developmental issues pertaining to rural India. There are several aspects of modern technology that become anti-environment in an effort to maximize production. Thus, future development efforts should aim at –

1. Organizing communities for community development
2. Development of self-help groups
3. Strengthening village panchayats
4. Encouraging cooperative agriculture and non-agriculture production and distribution through local market system
5. Water shade management
6. Minimizing use of water in irrigation of crops
7. Minimizing use of chemicals in agriculture
8. Environment friendly cropping pattern
9. Use of appropriate technology suitable for Indian conditions

These issues if taken care will surely help in development of rural areas without interfering with our environment. The proper training programme on production and mechanisation can uplift the development process which may be sustainable.

Extension Education – Tool for rural development - The main aim of extension education is community development, which is possible only by bringing change in the behaviour complex of rural people. Extension education place major role in desirable change in rural people.

According to websters dictionary, the term “extension means branch of a university who cannot attend the university properly”. In other words, the word extension is used in the context which signifies and out of school system of education.

The philosophy of extension education encourages a person to bring about his own development and that of society through his own leadership and motivation by following scientific approach and democratic ways. It further states that the interest of the community should not suffer because of personal interest. In other words, philosophy of extension education considers development and progress of individual as a foundation for the development and prosperity of the family, society, and the country.

The term extension education was first used in a customary way in USA. Afterword’s, it was used by many countries. Extension education as a subject is used in various fields, such as Agriculture, Animal husbandry, Dairy, Veterinary, Health and Home Science, Industry, Cooperative

*Research Scholar, Shri Atal Bihari Vajpayee Govt Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

and Forestry. Now extension education is included int the syllabus of graduate and post graduate courses related to above fields. However with its should be included in the discipline so that students studying Engineering, Management, Computer Application, Medical Science or any other professional course can learn to extend the practical knowledge related to their subject to those for whom it is useful and who are not able to enrol themselves in that subject, even if it is of their interest due to various reasons.

The need of the extension education is continuous because in reality it is seen that what was applicable in the past is obsolete in present & likewise it can be said that techniques and methods prevalent at present cannot be applied in future. The nature of problem is changing day by day, therefore, in order to scientifically tackle new problems, it is necessary that there should be such institution, which should act as a bridge between scientist and common people, it should introduce new techniques to the people and address the problem of people to the scientists .

Research Centre<->Extension personnel<->Problems of people.

Thus, an institution, which mediates between people and scientist, is called "Extension system". The people working in this institution are called Extension personnel".

There are other very important reasons also for introducing Extension education in curriculum as if a person is very knowledgeable of various methods and techniques but does not know how to explain them or express them, then his knowledge has no meaning. Therefore, The power to express knowledge and viewpoint also plays a crucial role.

Extension personnel should not only be aware of objectives and programs but should also be aware of prevalent conditions, problems, requirements, and circumstances. After analysing the situation, the Extension personal should give information and scientific techniques, so that the people according to their needs and requirements can adopt them. Therefore, the study of Extension education is necessary for students of various disciplines so that they can encourage the adoption of new techniques especially in rural area for its development.

Thus, for stepping towards Sustainable development, Extension personal need to focus on development of rural areas by helping rural people to adopt indigenous and appropriate technologies suitable for their condition to generate employment and save environment.

References :-

1. Agrawal,G.D.(2001), "An environment -Friendly development strategy in India",Chapter in the book Sustainable development:Vision and option, B.S. Sharma and brothers,Agra.
2. Singh, R.C. (2001), "Sustainable development: Agenda for 21st century", Chapter in the book Sustainable development: Vision and option, B.S. Sharma and brothers.
3. Singh,K.K.(2001), "Alternative approaches for Sustainable development", Chapter in the book Sustainable development: Vision and option, B.S. Sharma and brothers.
4. Shrivastava, Rajiv (2001), "Sustainable rural development: The role of mechanisation", Chapter in the book Sustainable development: Vision and option, B.S. Sharma and brothers.
5. Basu,Ramit (2001), "Appropriate technology and rural development", Chapter in the book Sustainable development: Vision and option, B.S. Sharma and brothers.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

इंटरनेट और हिन्दी भाषा का विकास

प्रो. रफी मोहम्मद शेख*

प्रस्तावना – एक-दूसरे से बात करने, समझने और विचारों को पहुंचाने के लिए सम्प्रेषण मानव जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। इस सम्प्रेषण का आवश्यक अंग है भाषा। इंटरनेट, मीडिया और खासकर इलेक्ट्रानिक मीडिया ने सम्प्रेषण के आधुनिक स्वरूप के विकास में अपनी महती भूमिका अदा की है। मीडिया के ग्लोबल प्रसार ने सूचना को बहुत तेजी से आगे बढ़ाया है। इसके साथ ही हमारी अपनी हिन्दी भाषा अपने विभिन्न वैविध्य विकसित कर रही है। भाषा सदा गतिशील होती है और इंटरनेट व आधुनिक जनसंचार ने उसे और अधिक गति प्रदान की है। नई-नई जरूरतों के अनुरूप शब्द वाक्य और अभिव्यक्ति चुनने तथा वाक्य की विधियों को भी विकसित किया जा रहा है। इससे हिन्दी भाषा, व्यापक जनमत का निर्माण करने वाली भाषा बन रही है क्योंकि उसकी पैठ बड़ी जनसंख्या तक है। इंटरनेट और मीडिया की मजबूरी है कि वह इतनी व्यापक पैठ वाली भाषा की उपेक्षा नहीं कर सकता है। इसलिए चाहे विकास के कार्यक्रम हों अथवा जन शिक्षण के चाहे समाचार पत्र-पत्रिकाएं विज्ञापन हों या समाचार चाहे मनोरंजन हो या इतिहास-मीडिया को सरल अर्थपूर्ण और विषयवस्तु की प्रवृत्ति के अनुकूल भाषा की तलाश रहती है। हिन्दी ने व्यवहार क्षेत्र की इस बहुविविध व्यापकता के अनुरूप अपने को ढालकर अपनी भाषिक संचार क्षमता का विकास बहुत तेजी से कर दिया है। यही कारण है कि आज अन्तर्राष्ट्रीय चौनलों, वेबसाइट और वेब पोर्टल्स में हिन्दी फैशन से लेकर विज्ञान और वाणिज्य तक सब प्रकार के आधुनिक संदर्भो को बखूबी व्यक्त कर रही है।

इंटरनेट और भाषा – पिछले कुछ वर्षो में विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र में कई बड़े परिवर्तन हमारे साक्षी बने हैं। पिछले कुछ सालों से विश्व में चारों ओर इंटरनेट क्रान्ति चल रही है, जिसका कारण इंटरनेट युग का प्रारम्भ होना है। जापान और अमेरिका जैसे देश अपनी विकासशीलता के कारण पहले से ही औद्योगिक समाज को इंटरनेट समाज में बदल चुके हैं। हिन्दी भाषा भी आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से प्रभावित हुई है। हमारी भाषा हिन्दी अब देश की सीमाओं को लांघकर विश्वस्तरीय हो गई है। मानसिक स्वतंत्रता के लिए जरूरी है कि हम हमारी बोली जाने वाली भाषा यानि हिन्दी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं को आगे बढ़ाएं। इसके लिए हमें अंग्रेजी का सहारा छोड़ना होगा। सूचना प्रौद्योगिकी में प्रसारण संचार रेडियो, टेलीविजन, दूरभाष, वीडियो, माइक्रोफोन, रिसिविंग सेन्टर, विज्ञापन, कम्प्यूटर इंटरनेट आदि आते हैं। हमारे दैनिक जीवन में पत्र – पत्रिकाओ का बड़ा महत्व है क्योंकि इन्हीं के माध्यम से हमें अनके सामाजिक-राजनीतिक आर्थिक और सांस्कृतिक आदि सभी प्रकार की सूचनाओ को प्राप्त किया जा सकता है। वही वेबसाइट और पोर्टल आज की आवश्यकता बना गए है, जो डिजिटल माध्यम से हमें अपनी समझ, विचार और पसंद वाली सामग्री तक पहुंचाने का काम कर रहे हैं।

इंटरनेट तकनीक का किसी एक विशेष धर्म जाति या देश से संबंध नहीं है। यह तकनीक विश्वव्यापी है अर्थात् विश्व का कोई भी व्यक्ति इस तकनीक का लाभ अपने संदर्भ में उठा सकता है। इंटरनेट संचार प्रणाली का सबसे दिलचस्प पहलू है। इसकी सभी देश, जाति, धर्म एवं सीमाओं के बंधन से परे होकर पूरी दुनिया में पहुंच के कारण किसी भी देश की छोटी से छोटी कंपनी अपने उत्पादों की गुणवत्ता के आधार पर पूरी दुनिया में छा सकती है। विभिन्न उत्पादों के साथ उसकी विशेषताओं को ब्यौरेवार प्रस्तुति इंटरनेट की प्रमुख विशेषता है। इन उत्पादों को अब इंटरनेट माध्यम पर हिन्दी भाषा माध्यम द्वारा भी बेचा या खरीदा जा रहा है। इससे वैश्विक स्तर पर हिन्दी भाषा माध्यम का प्रचार और प्रसार इंटरनेट के द्वारा हो रहा है।

आज सामाजिक पारिवारिक आर्थिक और परिस्थितिक जिन्दगी से जुड़े हर पहलू का व्यवसायीकरण हो रहा है। इसमें उसका साथ दे रही नवीनतम तकनीक व उसे अपनाने की होड़ की वजह से इस दौर में अनेक कार्य कम्प्यूटर द्वारा ही किये जा रहे हैं। आज हर आविष्कार कम्प्यूटर तकनीक पर आश्रित हैं। ऐसे में आम आदमी से संवाद करने की मजबूरी वास्तव में मार्केट जगत में आम आदमी को भी अपने लाभ का साधन बनाने की ललक है, जिसने व्यापार जगत में भारतीय भाषाओं के प्रयोग की आवश्यकता का आभास कराया है। हिन्दी के सर्वागीण विकास की उज्ज्वल निर्मल धारा सूचना के माध्यम से प्रवाहित की जा सकती है। हिन्दी भाषा को समस्त क्षेत्रों अद्यतन ज्ञान के पठन-पाठन को सम्भाषण-सम्प्रेषण का सशक्त माध्यम बनाया जा रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी में निर्मित तकनीकी शब्दावली का प्रचार करने के साथ ही तकनीक अनुदेशों से लेकर विधि तक की भाषा और अन्य कार्यो के रूप में हिन्दी का उपयोग कर वातावरण हिन्दीमय बनाया जा सकता है। इंटरनेट की शिक्षा भारत जैसे विकासशील देश में अत्यन्त उपयोगी है।

सूचना प्रौद्योगिकी की भागीदारी तभी फलवती हो सकती है जब इसे स्वतंत्र होकर काम करने का अवसर मिलेगा। रेल, बैंक के परिचालन, पुस्तकालय आदि में हिन्दी अनुवादों को गति देना होगी। कम्प्यूटर कई भाषाओं का एक स्थान पर संकुल समाधान है। इंटरनेट की मदद से भारत की प्रमुख भाषाओं को प्रत्येक मात्र कुछ ही दिन में सीखा जा सकता है। हिन्दी में सूचनाओं को शत-प्रतिशत लाने हेतु कम्प्यूटर का भाषिक प्रयोग जानना जरूरी है।

भारतीय जनता को आज सरकार और बाजार दोनों पर दबाव बनाना होगा कि सारे ज्ञान – विज्ञान और साहित्य को यथाशीघ्र हिन्दी में उपलब्ध कराया जाये। आज हिन्दी और भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में जो सॉफ्टवेयर उपलब्ध है, उन्हें और भी विकसित करके मुक्त रूप से इंटरनेट पर

*सहायक प्राध्यापक (कम्प्यूटर विभाग) पमब गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इससे इंटरनेट, इलेक्ट्रोनिक मीडिया और कम्प्यूटर पर हिन्दी का प्रयोग बढ़ेगा। विश्व भाषा के रूप में हिन्दी तभी जीवित रहेंगी जबकि वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की चुनौतियों का सामना कर सकेगी।

आज जरूरत हिन्दी के व्यापक उपभोग वर्ग को ध्यान में रखते हुए हिन्दी के डाटाबेस विकसित किये जाएं, हिन्दी वेबसाइट पर विभिन्न विषयों के शब्दकोष और विश्वकोष उपलब्ध हों, वैज्ञानिक चौनलों के साथ – साथ आध्यात्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चौनल भी हिन्दी में और भारतीयता को उभारने के दृष्टिकोण से स्थापित किया जाए।

इंटरनेट और हिन्दी भाषा का प्रसार – इंटरनेट इस युग का जनसंचार अस्त्र बनकर उभर रहा है। एक रूप में इस माध्यम ने सभी जनसंचार माध्यमों को भारी चुनौती दे दी है। यह माध्यम आकाशवाणी और दूरदर्शन का उन्नत संस्करण है। इसने सभी प्रकार के जनसंचार माध्यमों को अपने स्वरूप में समेटते हुए उपभोक्ता वर्ग के सामने एक ऐसा विकल्प प्रस्तुत किया है कि जो बहुत ही महत्तवपूर्ण और अद्भुत है। इस माध्यम पर सूचनाओं को हम अपनी सुविधा के अनुसार देख, पढ़ और सुन सकते हैं। इस माध्यम पर सूचना एवं जनसंचार प्रौद्योगिकी का एक ऐसा विशाल भंडार उपलब्ध है जिसका उपयोग कोई भी उपभोक्ता कहीं भी और किसी भी रूप में कर सकता है। पहले समस्त प्रकार के जनसंचार माध्यम केवल सूचना प्रदाता के रूप में सामने रहते थे लेकिन इस माध्यम ने सूचना संवाहक की सुविधा को भी संभव बना दिया है अर्थात् हम इस माध्यम से वैश्विक संदर्भ में सूचना लेने का कार्य तो कर सकते हैं साथ ही साथ सूचना प्रेषित करने का उपक्रम भी कर सकते हैं।

इंटरनेट वैश्विक पहुंच रखने वाला जनसंचार माध्यम है। इस पर प्रयुक्त होने वाली भाषा को विश्व के सभी लोगों द्वारा देखा और पढ़ा जाना संभव है। वर्तमान संदर्भ में हिन्दी न केवल इंटरनेट पर बल्कि वैश्विक समुदाय तक पहुंच चुकी है। इस दृष्टि से हिन्दी भाषा का प्रसार विश्वस्तरीय हो चुका है। आरंभ में हिन्दी प्रचार–प्रसार में इंटरनेट की भूमिका को लेकर बहुत सारे भ्रम और भ्रॉंतियां थी। हिन्दी को इस माध्यम की अनुपयोगी क्षमता के रूप में रेखाकित करने के तमाम प्रपंच भी लगातार किए जाते रहे। लेकिन यह वास्तव में पूर्ण रूप से दुष्प्रचार ही रहा है जिसका वास्तविक स्थिति से कोई लेना–देना नहीं था। इंटरनेट पर हिन्दी की वर्तमान स्थिति इस बात की पुष्टि करती है। इंटरनेट अपने आप में सूचना एवं जनसंचार का एक प्रभावी संजाल है जो संपूर्ण वैश्विक व्यवस्था को एक साथ एक रूप में उपलब्ध रहने की स्थिति में रहता है। यह इसका सबसे महत्तवपूर्ण प्रभावी पक्ष है।

इंटरनेट पर अधिकांश वेब पोर्टल और वेबसाइट अंग्रेजी माध्यम में हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि हिन्दी वेब पोर्टल या वेबसाइट हैं ही नहीं। इंटरनेट पर हिन्दी वेबसाइटों की भी कोई कमी नहीं है। दिन–प्रतिदिन हिन्दी की इन वेबसाइटों में लगातार बढ़ोतरी देखने को मिल रही है। इन हिन्दी वेबसाइटों की बढ़ोतरी यह इंगित करती है कि वैश्विक स्तर पर हिन्दी को जानने वालों की संख्या काफी है। हिन्दी वेबसाइटों की संख्या एवं इन वेबसाइटों का बढ़ता उपयोग अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की बढ़ती लोकप्रियता का बड़ा संकेत है। यह परिवर्तन भाषा को विस्तार प्रदान करने के उद्देश्य से किया जा रहा है जिससे अधिकांश लोगों के बीच हिन्दी पहुंच रही है। इंटरनेट की हिन्दी में कई प्रयोग भी किए गए हैं। इसमें अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को आकर्षित कर सकने वाली अंग्रेजी एवं अन्य भाषा के शब्दों का चयन किया गया है। इस प्रयोग को राष्ट्रीय से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार भी किया गया है। इस प्रकार हिन्दी का यह विकसित रूप हिन्दी भाषा को अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में अन्य भाषाओं के मुकाबले विशेष स्थान प्राप्त कराने में मदद कर रहा है।

आज इंटरनेट माध्यम पर हिन्दी कार्यक्रमों की विशाल श्रृंखला उपलब्ध है। इस पर हिन्दी सूचनाएं एवं मनोरंजन कार्यक्रम तो मुख्य हैं ही, साथ ही साथ हिन्दी समाचार एवं हिन्दी पत्र–पत्रिकाओं को देखा और पढ़ा जा सकता है। इसके अतिरिक्त रेडियो और दूरदर्शन के हिन्दी कार्यक्रमों को भी इंटरनेट वेब पोर्टल और वेबसाइट पर देखा और सुना जा सकता है। यदि किसी कारणवश आकाशवाणी और दूरदर्शन के सीधे प्रसारित हिन्दी कार्यक्रम हम नहीं सुन या देख पाते हैं तो अपनी अनुकूलता के अनुसार इन हिन्दी कार्यक्रमों को इंटरनेट माध्यम पर सुन या देख सकते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि इंटरनेट हमारे लिए हमारी इच्छानुसार उचित समय पर किसी भी रूप में इच्छित जानकारी प्रदान कर सकता है। ज्ञान–विज्ञान से जुड़ी संस्थाओं के कार्यक्रम भी इस माध्यम पर उपलब्ध रहते हैं। जो लोग सीधे रूप में इन संस्थाओं से नहीं जुड़ पाते वे लोग इंटरनेट की सहायता से संबंधित संस्था की वेबसाइट या ब्लॉग आदि पर जाकर वांछित कार्यक्रमों का लाभ ले सकते हैं। अतः इंटरनेट माध्यम बहुउपयोगी संदर्भों वाला सिद्ध हो रहा है। इस पर रखी गई हिन्दी वेबसाइट हिन्दी भाषा को वैश्विक परिदृश्य में प्रचारित करने का महत्तवपूर्ण कार्य कर रही हैं।

जनसंचार के इस माध्यम पर आज हिन्दी में असीमित सम्भावनाएं बन चुकी हैं। इन्हें साक्षात् हम देख भी रहे हैं। आज किसी भी विषय से संबंधित कोई भी जानकारी संबंधित व्यक्ति इंटरनेट माध्यम द्वारा प्राप्त कर सकता है। स्त्री–पुरूष, बच्चे–बूढ़े सभी के लिए यह माध्यम सूचना का भंडार साबित हो रहा है। हिन्दी की बढ़ती वेबसाइट इस ओर संकेत कर रही हैं कि वैश्विक स्तर पर इनकी कितनी मांग है। इसके अनुरूप हिन्दी भाषा वैश्विक परिदृश्य में अपना प्रसार कर रही है।

इंटरनेट पर आधुनिक संदर्भ में कई तकनीकों का विकास हुआ है। इन तकनीकों का सीधा लाभ वैश्विक प्रचार में हिन्दी को हो रहा है। ई–कॉमर्स इसकी एक प्रमुख तकनीक है। ई–कॉमर्स भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश के लिए विशेष महत्तवपूर्ण तकनीक है। आज संपूर्ण विश्व के औद्योगिक घरानों की दृष्टि से एशिया के बाजार पर है। एशिया में भी भारत विशेष रूप से उनका पसंदीदा खरीददार और लाभप्रद देश है। इस दृष्टि से उत्पादक वर्ग द्वारा एशियाई संदर्भ में अपनी व्यापारिक नीति का निर्माण करना उनकी मजबूरी बन गई है। एशिया और भारत के संदर्भ में यदि व्यापार करना है तो भाषा के रूप में उन्हें हिन्दी को ही प्राथमिकता देनी होगी तो ही उनका व्यापार वैश्विक पृष्ठभूमि वाला हो सकेगा। इसलिए ई–कॉमर्स के माध्यम से खरीदारी करने के लिए हिन्दी भाषा इंटरनेट पर विशेष महत्तव रखती है। इंटरनेट पर खरीददारी करने का अत्यन्त सुलभ माध्यम है क्रेडिट कार्ड। इंटरनेट पर उपलब्ध इन सभी सुविधाओं में हिन्दी का प्रयोग संभव है और बहुत बड़े वर्ग द्वारा यह प्रयोग किया भी जा रहा है। भारतीय भाषाओं में कम्प्यूटर तकनीक के क्षेत्र में हो रहे तीव्रगामी विकास के कारण आज जटिल से जटिल कम्प्यूटर संबंधी कार्यों में हिन्दी का व्यापक प्रयोग हो रहा है। इस प्रकार इंटरनेट की विविध तकनीकी सुविधाएं हिन्दी भाषा को वैश्विक संदर्भ में प्रचारित कर रही हैं।

इंटरनेट सूचना प्राप्ति का प्रधान माध्यम है। इस माध्यम पर हर पल कुछ न कुछ नया आता है और पुराना हटता चला जाता है। विश्व का वह हर नागरिक जो तकनीक और इंटरनेट का जानकार है वह लगातार अपनी जानकारी को नवीनता प्रदान करने का प्रयत्न करता रहता है। यह जानकारी

फिर किसी भी भाषा माध्यम द्धारा प्राप्त होती हो। पहले तो वह उपभोक्ता सूचना प्राप्ति के लिए अपनी मातृभाषा का सहारा लेता है पर यदि उसे वह सूचना अपनी मातृभाषा में प्राप्त नहीं होती तो वह अन्य भाषा का सहारा लेता है। अन्य भाषा के रूप में संपूर्ण विश्व समुदाय हिन्दी भाषा की ओर ताकता हुआ दिखाई देता है। इस प्रकार सूचना प्राप्ति के लिए मातृभाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा इंटरनेट माध्यम पर लोकप्रिय होती जा रही है। इंटरनेट के महत्व के बारे में जितना लिखा जाए उतना कम है। इस माध्यम ने सूचना प्रसार में जैसी क्रांति पैदा की है वैसा कोई दूसरा उदाहरण इतिहास में नहीं मिलता। लोगों के हिन्दी के प्रति लगाव और इंटरनेट पर इसके विकास के लिए कटिबद्ध होने को देखकर यह विश्वास से कहा जा सकता है कि हिन्दी जल्दी ही इंटरनेट पर वो ऊंचा स्थान प्राप्त कर लेगी जिसकी यह भाषा अधिकारी है। इससे वैश्विक स्तर पर हिन्दी भाषा का प्रचार होगा।

निष्कर्ष – इंटरनेट माध्यम ने हिन्दी को वैश्विक आबादी के घरों तक कम्प्यूटर के स्क्रीन पर एक पहचान बनाने में उल्लेखनीय कार्य किया है। इससे हिन्दी प्रसार के नये मार्ग निर्मित हो रहे हैं। इंटरनेट आज कम्प्यूटर स्क्रीन से होते हुए लेपटॉप, पामटॉप और मोबाइल स्क्रीन पर सिमट कर रह गया है। आज इंटरनेट के हिन्दी कार्यक्रमों का लाभ वैश्विक समुदाय निरंतर अपनी उपयोगिता के संदर्भ में ले रहा है। हिन्दी के इंटरनेट कार्यक्रमों के द्धारा राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय एक–दूसरे के निकट आ गए हैं। इन सभी संदर्भों को देखते हुए निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है कि इंटरनेट माध्यम ने हिन्दी को विश्वपटल पर भाषिक पहचान दिलाने में महत्तवपूर्ण भूमिका का निर्वाह प्रभावी रूप से किया है। मोबाइल कम्प्यूटिंग और इंटरनेट ने हिन्दी को तेज एवं प्रभावी तरीके से आगे बढ़ाने में मदद की है। जैसे–जैसे मोबाइल उपभोक्ता बढ़ते जा रहे हैं, वैसे–वैसे हिन्दी का प्रभाव भी बढ़ता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा ,वि. (2011) 'आधुनिक पत्रकारिता प्रभाव एवं कार्य' जयपुरः इशिका पब्लिकेशन हाउस।
2. जोशी, श., एवं जोशी,शि (2012), वेब पत्रकारिता नया मीडिया नए रूझान. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमटेड।
3. शक्ला , र. (2012) 'सूचना प्रौद्योगिकी और समाचार पत्र (इंटरनेट के प्रभावों पर एक अध्ययन–विशेष संदर्भ हिंदी समाचार पत्र)' नई दिल्ली , राधाकृष्ण प्रकाशन।
4. Andrew Kohul ;2010), 'Americans spending more time following the news', The Pew Research Center.
5. Allan Mazur ;2006), 'Risk Perception and News Coverage across Nations', Risk Managementt, 8: 149 174.
6. कुमार सु. (2007) इंटरनेट पत्रकारिता, नई दिल्ली तक्षशिला प्रकाशन
7. https://www.hindikunj.com/2017/08/internet-hindi-sahitya.html
8. https://www.hindikunj.com/2017/08/internet-hindi-sahitya.html

****

Concepts of Human Rights

Mr. Bijay Kumar Yadav* Dr. Gurpreet Singh**

Introduction - Human rights are those rights to which an individual is entitled by virtue of his status as a human being. While civil, political and social-economic rights are dependent on an individual's status as a citizen of a particular state; his human rights are not determined by this condition. Thus the scope of human rights is very wide. Rights give expression to how all humans participate fully in civil society, defining the idealized norms against which a society may be measured. As expressions of the civic values that operate within any society, rights derive from the marriage of religious, philosophical, and legal principles that address social justice in the context of worldwide struggles to combat oppression and inequity; they do so out of an underlying, deep-rooted respect for human life, dignity, and diversity.

Rights cannot be thought of in isolation from each other. They are part of an integrated vision of what it means to participate in diverse human experiences. These run from the most basic interaction with the environment to the ways in which people live day-to-day to catastrophic events like war, genocide, or pandemics. Rights affect local and intimate human relationships and the global relations that govern the ways human capital and energy are exchanged, manipulated, and exploited.

Human rights constitute the very source of all rights of human beings. They embody the scheme of ideal rights. They provide for moral foundation of any system of rights. In a way they are akin to the concept of justice. As the idea of justice determines the principles on which law should be based, so the idea of human rights sets the standards on which all other rights should be based. Moreover, when ordinary rights are reinterpreted in the light of human rights, they enter the ever- expanding domain of human welfare. Liberal theory of rights as expounded by John Loke (1632-1704) focuses on rights of individual against the state.

Although Locke makes a distinction between society and state and sees no serious conflict between individual and society, his theory of rights to 'life, liberty and property'. If the state fails in this duty, individuals can ral right to 'life, liberty and property'. If the state fails in this duty, individual can resist it. If it still fails, they can dissolve it. In fact Locke does not make a distinction between state and government. That is why society will not disintegrate with the dissolution of state or government. In short, liberal theory of rights treats individual as the end and state as the means.

Human being is born with certain natural rights. Those rights basic to humanity are termed as 'Human Rights'. Broadly speaking they may include right to life, liberty, property and security of an individual. Social scientists from time immemorial have argued in favour of giving these rights to human beings.

The problem of human rights emerged as a matter of serious concern for the whole world after the Second World War (1939-45). During Nuremberg Trials (1946) some German Nazis were tried for 'crimes against humanity' apart from war crimes. The most barbarous and inhuman atrocities committed by the accused on the Jews of their country were termed 'crimes against humanity'. This action was based on the assumption that 'human rights' are valid by themselves; these are above the law of any nation; violation of these rights would be treated as 'crime against humanity'.

Since the General Assembly of the United Nations proclaimed its Universal Declaration of Human Rights on 10 December 1948, the concept of human rights has become one of the most potent in contemporary politics. In historical perspective, this fact is astonishing. A concept not long ago discredited has made a remarkable revival, and a concept widely perceived as Western has become global. The period from the French Revolution to the Second World War was the dark age of the concept of human rights.

Universal Declaration of Human Rights - This declaration contains 30 articles, apart from its Preamble. Its Preamble states that the recognition of the inherent dignity and equality of all human beings and their inalienable rights is the foundation of freedom, justice and peace in the world. Disregard and contempt for human rights have resulted in barbarous acts which have outraged the conscience of mankind. The advent of a world in which human beings shall enjoy freedom of speech and belief in freedom from fear and want is the highest aspiration of the common people. If man is not to be compelled to have recourse, as

*Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

a last resort, to rebellion against tyranny and oppression, it is essential that human rights should be protected by the rule of law.

In order to promote the development of friendly relations between nations the United Nations Charter had reaffirmed the faith of the members in fundamental human rights, in the dignity and worth of the human person and in the equal rights of men and women. it had determined to promote social progress and universal respect for observance of human rights and fundamental freedoms.

The present declaration gives prominence to civil and political rights of human beings and legal protection thereof. Then it pays due importance to their social-economic rights. In order to strengthen the foundation of these rights it also highlights individual's duties toward the community.

Articles 1 and 2 focus on rational nature of all human beings and reaffirm faith in their dignity, freedom, equality and fraternity. They rule out any discrimination between them on grounds of race, colour, sex, language, religion, political or other opinion, national or social origin, property, birth or other type of status.

Articles 3 and 4 provide for everyone's right to life, liberty and security of person; prohibition of slavery, slave trade and servitude. Article 5 rules out torture, cruel, inhuman or degrading treatment or punishment to any person.

Article 6 to 11 provide for equality before the law, equal protection against any discrimination, legal remedy, freedom from arbitrary arrest, detention or exile, and adherence to fair legal procedure in case a person is accused.

Article 12 rules out arbitrary interference with an individual's privacy, family, home or correspondence, and attacks upon his honor and reputation.

Article 13 and 14 provide for the right to freedom of movement and residence and the right to seek asylum from persecution in other countries.

Article 15 provides for the right to a nationality; Article 16 for the right to marry and found a family with the free and full consent of the intending spouses; and Article 17 for the right to own property.

Article 18, 19 and 20 provide for the right to freedom of thought, conscience and religion; the right to freedom of opinion and expression; and the right to freedom of peaceful assembly and association.

Article 21 provides for the right to take part in the government of one's country through one's chosen representatives and the right of equal access to public service. It also recommends that the will of the people, expressed in periodic and genuine elections, by universal and equal suffrage, by secret voting, shall be the basis of authority of government. In this way this Article regards democratic form of government as an essential feature of human rights.

It is worth-noting that Articles 1 to 21 of the present declaration embodies an elaborate scheme to provide for civil, political and legal rights of all human beings world over.

On the other hand, Articles 22 to 26 provide for social and economic rights of the individual. These include the right to social security, right to work, to free choice of employment, to just and favorable conditions of work, equal pay for equal work, just and favourable remuneration, right to form trade unions, right to rest and leisure, adequate standard of living, special care and assistance during motherhood and childhood, and right to education.

Article 27 provides for cultural rights including the right to participate freely in the cultural life of the community, to enjoy the arts and to share in scientific advancement and its benefits, and author's right to the protection of the moral and material interests resulting from his scientific, literary or artistic production.

Article 28 focuses on everyone's entitlement to a social and international order in which all these rights and freedoms can be fully realized. This article is concerned with the sphere of application of the rights in question.

Finally, Article 29 and 30 focus on everyone's duties to the community to ensure full development of his personality. And individual would be entitled to the aforesaid rights and freedoms on the condition of recognizing similar rights and freedoms of others and of meeting the just requirements of morality, public order and the general welfare in a democratic society. No state, group or person would have any right to engage in any activity involving the destruction of any of these rights and freedoms (Gouba 2007: 30-302).

Reference:-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

An Empirical Study of Corporate Social Responsibility in India

Shraddha Udeniya* Dr. S.S. Mourya**

Abstract - Corporate Social Responsibility (CSR) is a buzzword worldwide. In today's globalized world, one of the great challenges faced by firms is integration of CSR in business. Stakeholders require a lot more from companies than merely pursuing growth and profitability. CSR has come a long way in India and other emerging markets. From responsive activities to sustainable initiatives, corporates have clearly exhibited their ability to make a significant difference in the society and improve the overall quality of life. This paper focuses on the concept of CSR, its dimensions and relevance in emerging markets with special reference to India.

The concept of Corporate Social Responsibility (CSR) is not new in India. It emerged from the 'Vedic period' when history was not recorded in India. In that period. Kings had an obligation towards society and merchants displayed their own business responsibility by building places of worship, education, inns and wells. Corporate Social Responsibility has been defined and conceptualized in several ways during the past four centuries following a process of analysis, debate and scholarly confrontation around the theme. The concept 'Corporate Social Responsibility' (CSR) refers to 'soft', voluntary self regulation adopted by firms to improve aspects of the company, this can relate to labour, environmental and human rights issues.

Introduction - Over the last few decades there has been a growing public awareness of the role of corporations in society. Is profit the only concern of corporations? Or do other social and environmental concerns play a role as well? Not only these questions became commonplace at the business table and business press, but also vast body of academic literature emerged around these questions Corporate social responsibility (CSR) refers to the concept whereby companies integrate such social and environmental concerns in their business operations and in their interaction with their stakeholders on a voluntary basis.

Figure 1 Corporate Social Responsibility

In recent years managers have increased their interest in CSR, which is shown by the increased attention and resources for responsible activities (UN Global Compact-Accenture, 2010). This increased attention is likely because of the interest different stakeholders are paying to a corporations' behaviour in today's society and to the fact that corporations want to create and maintain a good reputation by the public. A number of scandals related to global firms have indicated that irresponsible behaviour can have massive consequences for a firm's reputation. However, recent examples of responsiblebehaviourhave shown that doing well actually can in fact bring benefits for corporations as well. The attention that has been paid to the topic of CSR is mainly focused on the consequences that are associated with CSR activities. Especially the consequence on financial performance has gained much attention the last couple of years. However, despite the extensive amount of research done to this consequence, results of this work are still contradictory and ambiguous (Mellahi et al., 2016). And so we could ask ourselves, if engaging in CSR activities does not lead to improved financial performances per se, what are the antecedents of CSR that drives corporations to engage in CSR activities? Finding determinants of engaging in CSR activities will contribute towards our understanding of why firms have different attitudes towards engaging in CSR activities. This study will focus on the determinants of engaging in CSR activities.

Need of Corporate Social Responsibility (CSR) - Service

*Research Scholar (Sociology and Social Work) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** Research Guide, Govt. Art and Science College, Ratlam (M.P.) INDIA

to humanity is the best work of life. If you take from Society then you have to give back in one or the other way. The more you give, more it will add to the wealth, directly or indirectly. Manufacturing companies play a vital role in the growth and development of countries like India and the health of the company is largely dependent on the society in which it operates in the Domestic and Global economy. CSR reiterates the notion that development of the society is not exclusively the responsibility of the Government; corporate too has a legitimate and responsible role to play for the betterment of the society. If the company spends some percentage out of the profit earned towards the betterment of the society directly or indirectly, then there is a chance that society will in return support the growth of the company. Companies are serving society through the medium of corporate social responsibility and it is seen that Corporate Social Responsibility has always been taken care of by the companies in India after the Companies Act 2013.

Benefits Of CSR - Businesses have now noticed that CSR is a significant way to differentiate an organisation from its rivals. Certain advantages of CSR are:

Benefits to the Company:

1. Financial output improved
2. Lower cost of operation
3. Safety of the product and reduced responsibility
4. Diversity of employees
5. Capital access
6. Reduced supervision of regulations
7. More attracting and retaining staff
8 Increased productivity performance
9 Increased customer loyalty and revenues
10. Improved picture and notoriety of the brand

Literature Review

Priyanka Verma et al the study aims to explore the establishment of a pattern of participation of corporate social responsibility (CSR) activities amongst private sector companies as reflected in the respective company documents in the public domain, taking absolute profit as the parameter. The study showed that the most preferred CSR activities were education, health and environment. Drinking water and sanitation and urban upliftment were the least preferred activities. Significant correlation was observed with respect to various CSR activities that the companies were responsive to. Companies belonging to the manufacturing sector and the diversified sector have shown the highest responsiveness towards such activities. Companies have attached the highest importance (Level 1) to the following CSR activities: education, environment, health, rural upliftment and others.

Shubhashis Gangopadhya et al the theoretical literature and empirical studies on CSR have systematically shown that CSR plays a significant role as an important part of a company's competitive strategy. Companies can compete by lowering prices without reducing the quality of the product, or by improving the quality without any significant increases in its price. Firms use their social activities as a signal to win over consumers who stay loyal to them and employees who prefer to work for them. However, such signalling works as a competitive strategy only if participation in such activities is voluntary.

Dr. M. Ramana et al in his study on CSR (Analysis of select Indian Private and Public sector companies) tried to analyse the CSR activities carried out by Indian Private (Reliance Industries Ltd.) and public sector companies (ONGC) and also study the Indian government policies and programmes of CSR. The study revealed that though the Indian public and private firms are making efforts in the CSR areas, still there is a requirement of more emphasis on CSR. The study found that there is a significant difference in the CSR practices of RIL and ONGC as the CSR budget of ONGC is more than RIL during the year 2009-10, 2010-11, and 2011-12 and average CSR score of ONGC is more than that of RIL during 2009 to 2013.

Moon, J.et al study entitled as - Corporate Social Responsibility and institutional theory: new perspective on private governance in Social economic review depicted that CSR is not only a voluntary action but is beyond that. In this study, CSR has been defined under institutional theory. The institutional theory stated that corporate social activities are not only voluntary activities but are a part of interface between business and society. Regulation/ governance are necessary for enhancing the corporate performance of businesses through CSR. The theory also suggested the form in which companies should take its social responsibilities; whether historical, political or legal form.

Meehan, J., Meehan et al have studied the practices of corporate social responsibility (CSR) run by state owned company in Indonesia which tends to focus on strengthening economies of small and medium enterprises (SMEs) through partnership program as per regulation framework. The analysis included examining the background of program, assess it impact to stakeholder, and evaluate the effectiveness of social program done by state-owned company. Eventually, this study expected to provide information about effectiveness analysis of CSR programs for company and government to design proper rules in creating sustainability development for a better future.

Lee, E. M., Park, S. Y et al examine consumer perception towards CSR in the developing country Indonesia. This research produced mixed results, suggesting that CSR is still a concept waiting to be applied in the developing country. Consumers are often unaware and unsupportive towards CSR. This is opposite finding of consumer perception in developed countries where most consumers are willing to support CSR launched by corporations. Nevertheless, there is an interesting finding, when consumers have to buy similar products with the same price and quality, CSR could be the determining factor. They would buy from the firm that has a socially responsible reputation.

Samuel O. Idowu (2007), with his research of twenty

businesses in the United Kingdom, suggested that the United Kingdom. Companies have now become ethical in the presentation of social responsibility as businesses reveal their CSR with a perspective to public advantages, government requests and stakeholder data, because businesses believe that twenty-first-century stakeholders are superior trained in the future.

The World Business Council for Sustainable Development (1999, p. 6) described multinational personal obligation as: an organization's ethical conduct towards nature–leadership operating responsibly in its partnership with other participants with lawful company interests. In essence, corporate social responsibility is how businesses handle their company procedures to have a favourable general effect on community. What represents corporate social responsibility, however, differs from business to business, as there were competing opinions about the importance of the liability of businesses to community. For instance, Barclays Bank plc defines CSR by way of the notion of ''accountable lending'': Responsible banking implies creating educated rational and ethical choices about how we operate our company, how we serve our staff and how we act towards our customers and customers.

Vaaland, Heide (2008), a situation study-based document. The aim of the document was to manage the critical occurrences of CSR and to use this knowledge to enforce CSR operations. The research found that CSR should be handled by dealing with unpredictable occurrences, reducing the distance between stakeholders and their aspirations and business efficiency over the lengthy run, and ultimately preserving connection with community through interplay between actors, assets and operations.

Gond, Crane (2008), evaluated the distortion of the concept of corporate personal success. The study evaluated that previous studies and discovered some cause for evolving decline among academics in the favour of financial personal performance research. The document also proposed designs on the grounds of which the investigator clarified why the notion of CSP had left its significance and growth. The investigator also portrayed some model that the investigator could use in their commercial personal performance-related studies. The document asserted that the starting point for the development of the CSP idea is conflicts and contradictions. CSP has a set of operations that need to be measured separately to transfer research from a straightforward idea to growth.

Truscott, Bartlett, Trwoniak (2009)33, Australian advertising journal's article "Reputation of Corporate Social Responsibility Industry in Australia," depending on case study methodology. The word CSR was clarified based on the survey of important industry individuals in Australia. The industrialist has disclosed that CSR has become increasingly important. In financial, legal and ethical positions of company in culture, they communicated their opinions on CSR. In addition, the industrialist regarded CSR as a model of commercial prestige Shah, Bhaskar (2010), took a case study of an enterprise in the public sector, i.e. in their study job, Bharat Petroleum Corporation Ltd. The study has discussed that the organisation and community have a wide connection. Only with culture, the organization has its presence. Organization used the society's resources / inputs such as information and person, etc. On the other hand, the organisation offers the community with facilities. From the BPCL case study, it was discovered that many projects were adopted by the business to benefit the community.

Mc Guillaume & S. Seigal (2010) gave CSR's significance as a plan to enhance company credibility. The research showed that companies distributing compelling products under the auspices of CSR operations lead to customer allegiance and higher income. The research also highlighted the significance of advertising in supplying customers with data about the company's social welfare operations. In addition to this, the research also included the significance of advertising and television etc. in attempt to raise awareness among customers about the operations of the company and to increase the credibility as well. The research thus decided on the company's credibility through CSR.

Conclusion - The beginning of 21st century in India has seen the term CSR coming to the forefront of development of discussion. In recent times, the Corporate Social Responsibility is emerging as a significant feature of business philosophy, reflecting the impact of business on society in the context of sustainable development. The emerging perspective on corporate social responsibility focuses on responsibility towards all stakeholders: shareholders, employees, creditors, suppliers, government, and community rather than only on maximization of profit for shareholders. CSR not only includes corporate regulatory compliance, but also refers to the act of making business successful through balanced, voluntary approaches to environmental and social issues in a way that is helpful to the society (Moharana, 2013). There are many studies conducted on CSR and Rural development in India as well abroad and these studies may be very helpful for understanding the behaviour of rural participants in the emerging market in their rural area.

References :-

1. Singh, A., & Verma, P. (2017). How CSR Affects Brand Equity of Indian Firms? Global Business Review, 18(3_suppl), S52–S69. Doi: 10.1177/097215091 7693149
2. Sarkar, J., & Sarkar, S. (2015). Corporate Social Responsibility in India—An Effort to Bridge the Welfare Gap. Review of Market Integration, 7(1), 1–36. Doi: 10.1177/0974929215593876
3. Dr. M. Ramana Kumar (2013),Corporate Social Responsibility,(IJIRSE) International Journal of Innovative Research in Science & Engineering,ISSN

(Online) 2347-3207

4. Moon, J. (2012). Corporate Social Responsibility: An Overview in International Directory of Corporate Philanthropy, London, Europa Publications.
5. Meehan, J., Meehan, K., & Richards, A. (2006). Corporate social responsibility: the 3C-SR model. International Journal of Social Economics, 33(5/6), 386-398.
6. Mohan, A. (2001). Corporate Citizenship: Perspectives from India, Journal of Corporate Citizenship, spring, pp 107-117
7. Lee, E. M., Park, S. Y., Rapert, M. I., & Newman, C. L. (2012). Does perceived consumer fit matter in corporate social responsibility issues?. Journal of Business Research, 65(11), 1558-1564.
8. Shah, S. & Bhaskar, S. (2010). Corporate Social Responsibility in an Indian Public Sector Organisation: A case study of Bharat Petroleum Corporation Ltd. Journal of human values. Vol. 16. No. 2. 143-156
9. Bansal, H., Parida, V. & Kumar, P. (2012). Emerging trends of Corporate Social Responsibility in India. KAIM Journal of Management. Vol.4. No. 1-2

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

कामकाजी महिलाओं का यौन उत्पीड़न

डॉ. सुरेन्द्र कुमार * डॉ. अजय कुमार **

शोध सारांश – प्रारम्भ से ही पुरूषों से स्त्री को भोग्या समझा है तथा सदैव ही उसे इसी दृष्टिकोण से अवलोकित एवं अधिगृहीत किया है। सामान्यत इस भोगवादी संस्कृति के सदियों के पोषण से यौन उत्पीड़न को समाज में बाह्य रूप से नैतिकता के आधार पर बुरा समझा जाता रहा लेकिन व्यावहारिक रूप से सभी में यहाँ तक कि महिलाओं ने भी इसे स्वीकृति प्रदान कर दी। परिणामस्वरूप पुरूषों द्वारा किए गए उत्पीड़न का प्रतिरोध एवं विरोध यदा-कदा ही सार्वजनिक हुआ। समय एवं परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ-साथ यौन उत्पीड़न का स्वरूप भी बदलता रहा। प्राचीन एवं मध्य युग एवं ब्रिटिश अधीनता में यौन उत्पीड़न का स्वरूप एवं व्यापकता उतनी नहीं थी जितनी कि स्वाधीन भारत के गत पचास वर्षो में बड़ी है। स्वाधीन भारत में आए राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तन जैसे महिलाओं के अधिकारों में वृद्धि शिक्षा का प्रसार रोजगार के नए आयाम एवं अवसर सरकार की समातावादी नीति, आर्थिक उदारीकरण आदि ने यहों के पारिवारिक परिवेष को प्रभावित किया है। परिवार के लिए उच्च जीवन स्तर की आकांशा, उच्च शिक्षा एवं कभी-कभी मात्र जीवनयापन के लिए महिलाओं ने घर की चारदीवारी से निकलकर कार्यालयो, प्रतिष्ठानों, विद्यालयों एवं अन्य अनैक प्रकार के संस्थानों में पुरूषों के साथ मिलकर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। पुरूषों के एकाधिकार में महिलाओं का प्रवेश होने से पुरूष वर्ग से संस्कारगत प्रतिक्रिया हुई। स्त्री को निम्न स्तर पर भोग्या समझने वाला पुरूष अपने समान एवं अपने ऊपर या नीचे कार्य करते देख उसे सहन नहीं कर पाया जिससे स्त्री भोगवाद के संस्कार में विकृति आने लगी जिसने महिलाओं के प्रति अषोभनीय भाषा एवं व्यवहार को जन्म दिया। इस अशोभनीयत को कार्यालयों में कामकाजी महिलाओं का यौन उत्पीड़न की संज्ञा दी गई।

शब्द कुंजी – यौन उत्पीड़न, यौन सम्बंध, यौन स्वच्छदता, यौन व्यवहार, मनोवैज्ञानिक एवं अपमानजनक।

प्रस्तावना – यौन उत्पीड़न एक मनोवैज्ञानिक समस्या अधिक है। उत्पीड़न करने वाले पुरूष की मानसिकता एक विशेष प्रकार के उच्चता एवं निम्नता का भाव लिए रहती है। कुछ पुरूष धन एवं अधिकार प्राप्त करके यह मानसिकता बना लेते हैं कि वह अब धन अथवा अधिकार के बल पर जो चाहें, जिसे चाहें प्राप्त कर सकते हैं। यह भाव उन्हें यौन उत्पीड़न के लिए प्रेरित करता है और यदि कभी सफलता नहीं मिलती, तब कुंठा एवं अपमान से वह उत्पीड़न का भाव अति तीव्र एवं आक्रामक हो जाता है। कुछ पुरूष जो धन, सम्पत्ति अथवा अधिकार प्राप्त करने की लालसा रखते हैं तथा उसके माध्यम से नाना प्रकार के सुख भोग की कामना करते हैं, लेकिन जीवन में प्राप्त नहीं कर पाते उनकी मानसिकता कंठित एवं लुण्ठित हो जाती है जिससे अपनी महिला सहकर्मी, महिला बॉस, महिला नियोक्ता के प्रति अशोभनीय व्यवहार एवं टिप्पणियाँ हैं। सामान्य मानसिकता वाले पुरूष भी अल्पकाल के लिए इस प्रकार का आचरण कर सकते हैं। इसका कारण दूरदर्शन पर पश्चिमी देशो के कार्यक्रम एवं कम-से-कम वस्त्र पहनने की महिलाओं की प्रतिस्पर्धा का प्रदर्शन एवं महिला कर्मी द्वारा स्वयं ही फैशन एवं स्वच्छंदता का प्रदर्शन होता है। स्वयंसेवी संस्था 'साक्षी' द्वारा इस संबंध में किए गए एक सर्वेक्षण में कहा गया है कि पुरूषों की दृष्टि में 'उन्हीं औरतो का उत्पीड़न अधिक होता हे जो ढीठ, वाचाल और आक्रामक होती है, जो बिना शादी किए किसी पुरूष के साथ रहती हैं और जो खुले अंग वाले पश्चिमी वस्त्र पहनती है।' इसी सर्वेक्षण में पुरूषों की राय में 'केवल विदेशी कम्पनियो में जहॉ पश्चिमी कार्यशैली और उन्मुक्त तौर-तरीकें से काम होते हैं और जहॉ औरतों को कुछ भी कहने एवं करने की स्वतंत्रता होती हैं, वहीं यह सब होता है।' यह बात तो मानी जा चुकी है कि पश्चिम के प्रभाव से यौन का संबंध में भारत में भी नैतिक मूल्यों में परिवर्तन आया हैं जिसमें यौन जिसमें यौन स्वच्छता व्यापक होती जा रही हैं, जिसके कारण यौन उत्पीड़न में वृद्धि हुई है।

नैतिक रूप से भारत में यौन उत्पीड़न रोकने के लिए कभी प्रयास नहीं किया गया। उच्चतम न्यायालय ने अपने 12 अगस्त 1997 के निर्णय में एक प्रभावशाली कानूनी यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए बनाने के लिए दिषा-निर्देष किए है। इन दिशा-निर्देशें को कानून बनाने तक प्रभावी बना दिया गया है। न्यायालय द्वारा प्रभावी कानून बनाने पर इसलिए बल दिया गया हैं, क्योंकि वर्त्तमान कानून में यौन उत्पीड़न की पुष्टि केवल प्रत्यक्ष स्पष्ट और शारीरिक लक्षणों के आधार पर ही हो सकती है। अश्लील टिप्पणी या संकेत आदि दंडनीय परिधि से बाहर चले जाते है। महिलाए इस कारण चुपचाप बनी रहती है, क्योंकि इसे सिद्ध करना मुश्किल होता है तथा कानूनी प्रक्रिया, साक्ष्य अधिनियम एवं न्यायालय की कार्य प्रणाली इतनी त्रासद, अपमानजनक एवं अशोभनीय है कि साधारण भारतीय महिला को न्याय मिलना बहुत कठिन है।

उच्चतम न्यायालय ने यौन उत्पीड़न रोकने के लिए जो पहल की है उस पर बुद्धिजीवियों की मिली-जुली प्रतिक्रिया हुई है। समाज विज्ञानी, मनोवैज्ञानिक एवं धार्मिक मनीषी यौन उत्पीड़न को एक मानसिक एवं सामाजिक विकृति के रूप में देखते है अत: उसका समाधान भी उसी प्रकार करना चाहते है उनके अनुसार कानून से समस्या दब तो सकती है, लेकिन उसका निदान संभव नहीं है।

* प्रभारी प्राचार्य, भद्रकाली महाविद्यालय, इटखोरीचतरा (झारखण्ड) भारत
** विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र विभाग) आर0पी0एस0 डिग्री महाविद्यालय, मदनपुर, चन्द्रपुरा, बोकारो (झारखण्ड) भारत

स्वयंसेवी संस्थाएं जो महिलाओं के उत्थान एवं कल्याण के लिए कार्य कर रही है वह इस अपनी जाति मानती है। उनका कहना है कि समूचित एवं प्रभावी कानून न होने के कारण वह महिलाओं को यौन उत्पीड़न के मामले में न्याय दिलाने में असहाय पाती हैं। यदि इस प्रकार का कानून बन जाएगा तो वह उसका उपयोग कर सकेंगी।

उच्चतम न्यायालय ने यौन उत्पीड़न के मामले को उठाकर इस संबंध में लोगों को चिन्तन-मनन करने के लिए प्रेरित किया है। कुछ दिशा-निर्देश भी दिए हैं, लेकिन यह पहल अन्तिम नहीं है। आवश्यकता है कि इस विषय को गंभीरता एवं तार्किक दृष्टि से विश्लेषण कर इसे व्यापक बनाए। इसके अन्य विभिन्न अनछुए पहलुओं को उजागर कर एक प्रभावी कानून का निर्माण किया जाए। समस्या भले ही सामाजिक एवं मनौवैज्ञानिक है, लेकिन इसका तात्कालिक उपाय कानून ही है। कानून का भय उत्पीड़कों को नियंत्रित करेगा और महिलाओं में या उत्पीड़ितों में साहस का संचार करेगा।

कामकाजी यौन उत्पीड़न के कल्याणार्थ आर्थिक एवं सामाजिक प्रयास- यौन उत्पीड़न संबंधी समस्या की प्रकृति और उसकी व्यापकता जानने के लिए एक स्वयंसेवी संस्था 'साक्षी' द्वारा दिल्ली में औद्योगिक प्रतिष्ठानों एवं शैक्षणिक संस्थाओं में एक सर्वेक्षण कराया गया। सर्वेक्षण के प्रमुख निष्कर्ष संक्षेप में निम्नलिखित है-

1. यौन उत्पीड़न में अवांछित अशाब्दिक यौन व्यवहार, अपमानजनक, भद्दी भाषा, वस्त्रों एवं शारीरिक अंगों को लेकर अशोभनीय टिप्पणियाँ, कार्यालय या विद्यालय से बाहर मिलने के लिए सोद्देश्य निमंत्रण सम्मिलित है। परिसर में महिलाओं के लिए प्रतिकूल वातावरण विद्यमान है।
2. उत्पीड़न करने वाले अधिकांशत: वह व्यक्ति थे जो पदाधिकारी थे तथा जो उत्पीड़न को प्रभावी कर सकते थे। छात्राओं के विषय में साथी छात्र, अध्यापक एवं बाहरी व्यक्ति भी सम्मिलित थे।
3. इन मामलों में महिलाओं ने जहॉ शिकायत की वहॉ इसे ध्यान से सुना नहीं गया तथा जहॉ सुना गया वहाँ चुप रहने की सलाह दी गई।
4. यौन उत्पीड़न को सहने या नौकरी अथवा संस्थान छोड़ देने के अतिरिक्त महिलाओं के पास अन्य कोई विकल्प नहीं था।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में महिला विकास के तीन महत्पूर्ण क्षेत्रों -शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार को प्राथमिकता प्रदान की गई ताकि महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र एवं आत्मनिर्भर बनाया जा सके।

महिला यौन उत्पीड़न रोकने के उपाय - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के भावी कर्णधारों द्वारा भारत का संविधान तैयार किया गया, जो 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें प्रत्येक स्त्री-पुरूष को समान अधिकार दिए गए है। महिलाओं की स्थिति पुरूषों के समकक्ष बनाने एवं उनके विकास की दिशा में अनेक महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। प्रत्येक शिक्षण-संस्था से लेकर प्रत्येक सरकारी नौकरी तक में धर्म, जाति, वर्ग या रंगभेद के आधार पर किसी व्यक्ति में कोई अन्तर नहीं समझ जाता है। भारतीय संविधान में निम्नलिखित विभिन्न अनुच्छेदों में महिलाओं के विषय में जो प्रावधान किया गया है, वह इस प्रकार है:-

1. विधि के समक्ष समता (अनुच्छेद- 14)
2. धर्म, मूल, वंश, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध (अनुच्छेद- 15)
3. लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता (अनुच्छेद -23)
4. मनव के दुर्व्यापार और बलात् श्रम का प्रतिषेध (अनुच्छेद 23)
5. राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति-निर्देषक तत्व (अनुच्छेद-39)
6. समान न्याय और नि:शुल्क विधिक सहायता (अनुच्छेद-39 क)
7. काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायत का उपबन्ध (अनुच्छेद 42)
8. धर्म, मूल, वंश, जाति या लिंग अथवा इनमें से किसी आधार पर कोई भी व्यक्ति निर्वाचक नामावली में सम्मिलित किए जाने के अयोग्य नहीं होगा। (अनुच्छेद -325)
9. महिलाओं के प्रसाधन हेतु अलग से सुविधाजनक व्यवस्था करना।
10. महिलाओं से किसी चलती मशीन या पुर्जो पर तेल डालने या इसी प्रकार का दूसरा खतरनाक काम नहीं करवाया जा सकता।
11. राज्यों में महिलाओं द्वारा उठाए जाने वाले अधिकतम भार की मात्रा निर्धारित कर दी गयी है।
12. जिस फैक्ट्री में 30 से अधिक महिलाएॅ कार्यरत हो, वहॉ उनके छह वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए स्वच्छ वायु एवं उचित प्रकाष वाले शिशु पालन गृह बनाये जायें, जिसकी देख-रेख के लिए प्रशिक्षित महिलाओं की नियुक्ति हो।
13. किसी भी महिला से दिन में 9 घंटे से ज्यादा या सप्ताह में 48 घंटे से अधिक नहीं कराया जा सकता। काम का समय प्राय: सुबह 7 बजे से शाम 8 बजे तक रहेगा। साप्ताहिक छुट्टी के तत्काल बाद पारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा।
14. खतरनाक कार्यो में महिलाओं को नहीं लगाया जाएगा।
15. 1961 के मातृत्व अधिनियम के तहत् अवकाश कार्यशैली तथा अन्य सुविधाओं के संबंध में जानकारी दी गयी है।
16. भारतीय दंड संहिता के तहत यदि किसी अधिकारी को अधीनस्थ महिला कर्मचारी पर अपनी शक्तियों, अधिकारों का लाभ उठाते हुए बहलाने, फुसलाने, गुमराह करने, सतीत्व हरण करने या चरित्र को कलंकित करने का दोषी पाया जाएगा, तो स अपराध में पॉच साल तक का कारावास व जुर्माने की सजा भोगनी पड़ सकती है।

सर्वोच्च न्यायालय की तीन सदस्यीय खण्डपीठ जिसमें मुख्य न्यायाधीश जे.एस.वर्मा, न्यायमूर्ति सुजाता वी. मनोहर और बी.एन.कृपाल सम्मिलित थे, ने 12 अगस्त, 1997 को विशाखा और अन्य बनाम राजस्थान सरकार वाद में निर्णय देते हुए यौन उत्पीड़न के मामले में निम्नलिखित दिशा-निर्देश दिए हैं-

1. संस्था एवं कार्यस्थल के नियोक्ताओं एवं जिम्मेदार अधिकारी का यह उतरदायित्व होगा किवह यौन उत्पीड़न के मामले में इसके निदान, निष्पादन एवं दण्ड प्राकाशन के लिए आवश्यक उपाय करें।
2. यौन उत्पीड़न में ऐसे सभी अवांछित एवं अशोभनीय शब्द संकेत एवं व्यवहार आता है जो यौन भावनाओं से संबंधित है, जैसे-यौन सूचन शब्द या टिप्पणी उदद्ेश्यपूर्ण शारीरिक संकेत तथा सम्पर्क यौन कार्य की मॉग या अनुरोध अश्लील साहित्य दिखाना आदि।
3. सरकारी और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को यौन उत्पीड़न रोकने के लिए परस्पर व्यवहार एवं अनुशासन से संबंधित प्रावधानों में यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए उचित प्रावधानों का समावेश किया जाना चाहिए। निजी क्षेत्र के नियोक्ताओं को औद्योगिक रोजगार (चालू आदेश) अधिनियम 1946 के तहत इससे संबंधित प्रावधानों को सम्मिलित किया जाना चाहिए। इन नियमों को उचित प्रकार से वितरित,

सूचित एवं प्रकाशित किया जाना चाहिए। महिलाओं को उचित कार्य की दशा एवं वातावरण प्रदान करने का प्रयास करना चाहिए।

4. प्रत्येक संस्था में नियोक्ता को यौन उत्पीड़न की षिकायत सुनने एवं उसके निस्तारण के लिए समुचित प्रणाली विकसित करनी चाहिए। एक षिकायत समिति जिसकी अध्यक्ष कोई महिला हो का गठन भी किया जा सकता है। इस समिति में कम-से-कम आधी महिला सदस्य होनी चाहिए।
5. यौन उत्पीड़न के मामले में नियमानुसार भारतीय दण्ड विधान या अन्य किसी कानून के तहत दण्ड सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
6. ऐसे मामलों में उत्पीड़न महिला को स्वयं का या उत्पीड़न का स्थानान्तरण कराने का अधिकार मिलना चाहिए।
7. कर्मचारियों में विशेष रूप से महिला कर्मचारियों में जागरूकता एवं ऐसे मुद्दे उठाने की निर्भयता उत्पन्न करनी चाहिए।
8. यदि यौन उत्पीड़न कार्यालय से बाहर के व्यक्ति द्वारा किया जा रहा है तो नियोक्ता को उस महिला उस महिला को समुचित मार्ग निर्देशन एवं सहायता प्रदान करनी चाहिए।
9. केन्द्र एवं राज्य सरकारों को इस आदेश द्वारा जारी दिशा-निर्देशों एवं कानून निजी उद्योगों में भी प्रभावी कराने के लिए प्रयास चाहिए।
10. यह दिशा-निर्देश मानवाधिकार संरक्षण कानून 1993 द्वारा प्रदत्ता अधिकारों का उल्लघंन नहीं करेंगे।

यह दिशा-निर्देश कठोरता से लागू किए जाने चाहिए तथा यह तब तक बाध्यकारी होंगे तथा लागू माने जाएगे जब तक इस दिशा में उपयुक्त कानून नहीं बनाए जातें।

अंग्रेजों के शासनकाल में तथा बाद में स्वतंत्रता के उपरान्त समय-समय पर महिलाओं की उन्नति उनकी दशा से संबंधित अनेक अधिनियम बनाए गए अथवा संशोधित किए गए है। देश में लगभग 1900 केन्द्रीय कानून है, जिनमें से 39 कानून महिलाओं के हितों और उनकी गरिमा की रक्षा जैसे मुद्दों से संबंधित है।

स्त्री को अपने शील की सुरक्षा का अधिकार देते हुए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 354 में स्त्री की लज्जा भंग करने पर कारावास की सजा तथा आर्थिक दण्ड दोनों का प्रावधान है। लज्जा भंग में शमिल है - स्त्री का हाथ पकड़ लेना, उसे नीचे गिरा देना, उसके वस्त्र हटा देना तथा उसके शरीर के अंगों का स्पर्श करना। इस अपराध के लिए अपराधी को दो साल के कारावास की सजा या जुर्माना अथवा दोनों तरह की सजा दी जा सकती है। यदि कोई व्यक्ति स्त्री को अपमानित करने के उद्देश्य से अपशब्द कहता है ध्वनि करता है, किसी अंग का प्रदर्शन करता है, किसी स्त्री की एकांतता में दखल डालता है तो उसे भारतीय दण्ड संहिता की धारा 509 के अन्तर्गत एक साल की अवधि तक के कारावास आर्थिक दण्ड या दोनों प्रकार की सजा हो सकती है।

धारा 376 के तहत् बलात्कार के दोषी व्यक्ति को आजीवन कारावास या दस वर्ष तक की सजा एवं जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित किया जा सकता है। ऐसे मामले में कम-से-कम सात साल की सजा की अवधि का प्रावधान है।

कभी-कभी जब रक्षक (पुलिस वाले, लोक सेवक, कारागार का अधीक्षक, महिला संस्था का प्रबन्धक, अस्पताल के कर्मचारी) भी भक्षक बन जाए तो ऐसे मामलों में संसद ने वर्ष 1983 में इस अधिनियम में संशोधन करके धारा 376(ब), 376(स) तथा 376(द) में ऐसे दोषी व्यक्तियों के लिए सजा का प्रावधान किया है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 292 से 294 के तहत् महिलाओं को शिष्टता के विरूद्ध किए जाने वाले मामलों पर रोक लगाई गई है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 के अन्तर्गत साक्ष्य सबूत उस व्यक्ति को देना होता था, जिसके द्वारा अपराध का आरोप लगाया जाता था। ऐसी स्थिति में महिला द्वारा सबूत देने में असमर्थ होने पर अपराधी अपराध प्रमाणित न होने के कारण सजा से मुक्त रहता था और इस तरह महिलाओं के प्रति किए जाने वाले अपराधों मे बढ़ोतरी होती रही। इस समस्या को समझते हुए भारतीय संसद ने वर्ष 1986 में साक्ष्य अधिनियम में संशोधन पर दो नई धाराएँ 113(अ) तथा 114(अ) जोड़ी। अब यह प्रावधान किया गया है कि अपराधी को ही यह प्रमाणित करने के लिए कि उसने बलात्कार नहीं किया है उसे इस बात के सबूत जुटाने होगे न कि पीड़ित महिला को।

कानून के खामियों होने के कारण बलात्कारी के लिए अनेक चोर दरवाजे मौजूद है, जिस कारण सिर्फ 4 प्रतिशत बलात्कारियों को ही सजा मिल पाती है बाकी सब सन्देह का लाभ उठा कर बाईज्जत बरी हो जाते है। भारतीय दण्ड संहिता 1860 की धारा 375 के अनुसार बलात्कार के लिए लिंगच्छेदन (लिंग प्रवेश) अनिवार्य शर्त्त हैं। सोलह साल से कम उम्र की लड़की के साथ सहवास बलात्कार होगा, भले ही उसकी सहमति हो या न हो। लेकिन किसी पुरूष द्वारा 15 वर्ष की बड़ी आयु की पत्नी के सहवास को बलात्कार नहीं माना जाएगा, जबकि विवाह अधिनियम के अनुसार विवाह के समय दुल्हन की उम्र अठारह वर्ष होनी चाहिए।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1972 की धारा 155(4) में प्रावधान किया गया है कि गवाह की विश्वसनीयता खण्डित करने के लिए अगर किसी पुरूष पर बलात्कार का आरोप हो, तो उसे यह सिद्ध करना चाहिए कि पीड़ित आमतौर से अनैतिक चरित्र की महिला है। मतलब यह है कि बलात्कार की शिकार महिला को अनैतिक चरित्र की महिला (वेश्या, कोंलगर्ल, रखैल, सम्भोग की आदी, दुष्चरित्र) प्रमाणित करों और बाईज्जत रिहा हो जाओ। इसी आधार पर 1972 में प्रमिला कुमारी, जो कि गर्भवती थी, के साथ तीन व्यक्तियों ने बलात्कार किया। अदालत ने अपने निर्णय (एआईआर 1977 सुप्रीम कोर्ट 1307) में कहा कि प्रमिला रखैल थी, सम्भोग की आदी थी, उसने कोई चीख-पुकार नहीं मचाई, इन परिस्थितियों में जो कुछ हुआ, उसकी मर्जी या सहमति से हुआ या फिर उसके पति (प्रेमी) की भी मिलीभगत थी। अत: तीनों अभियुक्तों को बाईज्जत बरी किया जाता है। इस प्रकार की पुनरावृति न हों, केन्द्रीय मंत्रिमंडल में 12 नवम्बर 2002 को निर्णय लिया है कि बलात्कार के मुकदमों में महिलाओं के चरित्र हनन को रोकने के लिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 155 की उपधारा (4) को हटाने के लिए कानून में संशोधन किया जाएगा। भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 146 में संशोधन कर यह जोड़ दिया गया कि अभियोजिका के चरित्र को लेकर जिरह में कोई सवाल नहीं किया जाएगा तथा धारा 155(4) को हटा दिया गया, जिसके तहत् यह प्रावधान था कि अभियोजका को दुष्चरित्र साबित कर अभियुक्त अपना बचाव कर सकता है। इस संशोधन को संसद ने ध्वनिमत से पारित कर दिया है।

आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 327 में संशोधन लाए गए और बलात्कार संबंधित ट्रायल बन्द कमरे में चलाने का प्रावधान रखा गया है। परन्तु सवाल यह है कि आज तक कितने ट्रायल बन्द कमरे में चलाए गए है अर्थात् एक भी नहीं। जबकि धारा 327 में किए गए संशोधन द्वारा न सिर्फ खुली अदालत में मुकदमा चलाए जाने का अभियुक्त का अधिकार समाप्त कर

दिया गया, बल्कि मीडिया को भी हिदायत दी गई कि वह ट्रायल संबंधी खबर बिना संबंधित मजिस्ट्रेट की अनुमति के न छापें, जबकि न तो बन्द कमरे में ट्रॉयल चलाए जाते है और न ही अदालत में मामला जाने से पूर्व ही पीड़ितों की पहचान गुप्त रखी जाती है।

बलात्कार को लेकर महिला संगठनों द्वारा समय-समय पर सर्वेक्षण होते रहे हैं, ऐसे ही एक सर्वेक्षण के सामने निम्नलिखित तथ्य प्रकट हुए- बलात्कार के 16 प्रतिशत मामले ही पुलिस थाने में दर्ज हो पाते हैं।

बलात्कार की शिकार महिलाओं में लगभग एक-तिहाई की उम्र 16 वर्ष से कम होती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में मुश्किल से एक प्रतिशत मामले ही दर्ज हों पाते हैं।

100 में से मात्र 4 बलात्कारीयों को ही अदालत में सजा मिल पाती हैं।

10 में से 3 बलात्कारी महिला के पड़ोसी होते है।

100 में से 3 बलात्कारी परिवार के ही सदस्य होते हैं।

अब कुछ ऐसे कथनों की चर्चा करें जो कि बलात्कार होने के उपरान्त हमारे देश के कथित महापुरूषों ने बयान दिए हैं-

गुजरात में बलात्कार की घटनाओं के विषय में बोलते हुए इसमें नया क्या है?

मैं हैरान हुं, औरतों से बलात्कार किए गए।.....................फिर उन्हें जला भी दिया गया।

अगर राज्य सरकारें और महिला संगठन तैयार हों तो केन्द्र सरकार को कानून में बलात्कारियों के लिए मृत्यु दण्ड का प्रावधान करने में कोई संकोच नहीं है।

निष्कर्ष:

1. बलात्कार संबंधी मामलों का जल्दी निपटारा करने के लिए फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाए जाए। मामले की रोजाना सुनवाई हो और 60 दिनों के अन्दर फैसला सुनिश्चित हो।
2. इन अदालतों में विशेष महिला जजों की नियुक्ति हो। सारे मामलें उन्हीं को दिए जाए।
3. घरेलू हिंसा की परिभाषा नए सिरें से की जाए।
4. कानून में बलात्कार शब्द की परिभाषा नए सिरें से की जाए।
5. अस्पतालों में ट्रोमा सेंटर बनाए जाए।
6. पुलिस न्यायपालिका और स्वास्थ्य विभाग के उन सभी कर्मचारियों व अधिकारियों को यौन शोषण संबंधी मामलों में संवेदनशील व्यवहार का प्रषिक्षण दिया जाना चाहिए।
7. बलात्कार को शिकार महिला/युवती/बच्ची के पुनर्वास की व्यवस्था हो। इसके अलावा उसे अपनी मर्जी के स्थान पर पढ़ने की सुविधा मिलें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. क्राइम इन इण्डिया का रिपोर्ट, 2002
2. नेशनल क्राइम्स रिकार्डस, 2002
3. भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 155(4) के तहत् प्रावधान।
4. केन्द्रीय मंत्रिमंडल का निर्णय -12 नवम्बर 2002
5. सुप्रीम कोर्ट द्वारा 1996 में दिया गया बलात्कारियों के पक्ष में तर्क का हवाला।
6. भारत में महिला हिंसा कुछ तथ्य, हिन्दुस्तान 24 मार्च 2004, रॉची द्वारा प्रकाशित।
7. फैक्ट्री अधिनियम 1948 में महिलाओं के लिए किए गए प्रावधान।
8. वीमेन ऑफ एशिया का प्रतिवेदन -1993
9. इंटरनेशनल वीमेन्स राइट एलाइन्स का प्रतिवेदन
10. अन्तर संसदीय संघ की रिपार्ट -2000
11. ट्रॉसपेरेंसी इन्टरनेशनल का रिपोर्ट-2000
12. वीमेन ऑफ एशिया का प्रतिवेदन -1993
13. शर्मा रामनाथ 2000; भारतीय समाज, संस्थाएॅ और संस्कृति अंटलाटिक पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली
14. किशोर राज 1994; स्त्री के लिए जगह वाणी प्रकाशन नई दिल्ली।
15. अंसारी एम.ए. 2001; राष्ट्रीय महिला आयोग और भारतीय नारी, ज्योति प्रकाशन जयपुर।
16. मेहता ,चेतन - 1996; महिला और कानून, आशीष पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
17. शर्मा रामनाथ -2000; भारतीय समाज, संस्थाएॅ और संस्कृति, अटलांटिक पब्लिर्शस डिस्टीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
18. रतू कृष्णा कुमार-1998; भारतीय समाज, चिन्तन और पतन पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर।
19. शर्मा, वीरेन्द्र प्रकाश-1999; भारत में सामाजिक परिवर्तन पंचशील प्रकाशन जयपुर।
20. भारत 2000; प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

डिण्डौरी जिले के अपवाह तंत्र का भौगोलिक अध्ययन

किशोर कुमार श्याम *

प्रस्तावना – अपवाह का अभिप्राय जल धाराओ तथा नदियों द्वारा जल के धरातलीय प्रवाह एवं नदियों के उस तंत्र जाल से है जिससे धरातलीय जल प्रवाहित होता है इस तरह हम कह सकते है कि अपवाह तंत्र की सरिताओं की उत्पत्ति तथा इनके समय के साथ विकास से होता है। जबकि अपवाह प्रतिरूप का संदर्भ क्षेत्र विशेष की संहिताओं के ज्यामितिय रूप तथा स्थानिक व्यवस्था से होता है। भारत देश नदियों का देश है यहां 4 हजार से अधिक छोटी-बड़ी नदियां प्रवाहित होती है भारत जैसे उष्ण और मौसमी वर्षा वाले देश के लिये इन नदियों का विशेष महत्व है इन्ही नदियों के किनारे-किनारे भारतीय सभ्यता का विकास हुआ है और आज भी देश की संम्रद्धी में इनका विशिष्ट योगदान है क्रिस्टेशियस काल में दक्कन ट्रेप के निक्षेपण तथा नर्मदा की भ्रंस घाटी बनने से वर्तमान जल प्रवाह प्रणाली देखने को मिलती है। नर्मदा सोन की घाटी मध्यप्रदेश के मध्य सबसे निचला भाग है जो लगभग 300 मीटर की ऊँचाई के आस-पास है इन्हीं घाटियों में मेकल पर्वत माला की अमरकंटक पहाड़ियों से नर्मदा नदी निकलती है जो पश्चिम की ओर बह कर मध्यप्रदेश की सीमारेखा को पार कर गुजरात में भडोच के पास खंबात खाडी में जाकर मिल जाती है इस नदी की कुल लंबाई 1312 कि.मी है यह नदी भारत की पवित्र नदियों में से एक है जो अनेक जल ग्रतिकाओं चक्रपातों एवं गार्जो का निर्माण करती है विश्व प्रसिद्ध धुआधार प्रपात भेड़ाधाट इसी नदी पर जबलपुर से 15 कि.मी. की दूरी पर स्थित है मध्य प्रदेश के प्रमुख तीर्थ स्थल मण्डलेश्वर, महेश्वर एवं ओमकारेश्वर इसी नदी के किनारे स्थित है यह नदी अपने उद्गम स्थल से 8 किलो मीटर की दूरी पर कपिलधारा जल प्रपात का निर्माण करती है तथा कपिल धारा से 100 मीटर की दूरी पर दुग्ध धारा का निर्माण करती हुई आगे करंजिया-गोरखपुर के मैदानी भाग में प्रवेश कर जाती है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकालय में उपलब्ध सामाग्री के आधार पर भी अध्ययन किया गया।

समस्या – अपवाह तंत्र की समस्या आज के समय में बहुत महत्वपूर्ण समस्या बन गई है। यहाँ तक नदियों के द्वारा निकलने वाले पानी की प्रवाह प्रणाली किसी नदी और उसकी सहायक नदियों द्वारा जल की धाराओं के द्वारा निर्मित जल के प्रवाह की विशेष व्यवस्था की जाती है। यह एक प्रकार का जल एकत्रित करने का नेटवर्क माना जाता सकता है। आज वस्तुत: इसकी समस्या सें समाज जूझ रहा है।

उद्देश्य :

1. अपवाह तंत्र का अध्ययन करना।
2. जल के गिरते स्तर का मुख्य रूप से अध्ययन करना।
3. सामाजिक स्तर पर बढ़ते जल संकट से निपटने का प्रयास करना।
4. जल की पूर्ति हेतु विभिन्न योजनाओं के माध्यम से जल की समस्या का निदान करने का प्रशासनिक रूप से प्रयास करना।

समाधान – डिण्डौरी जिले में पाई जाने वाली नदियां छोटी हैं परन्तु द्रुतगामिनी हैं। यहां पर मुख्य बड़ी नदी नर्मदा नदी है जो पूर्व में सतपुड़ा एवं मैकल पहाड़ियों से निकलकर पश्चिम की ओर बहती है। डिण्डौरी जिले की अधिकांश भू-भाग नर्मदा नदी के अपवाह से ढका है। नर्मदा नदी की सहायक नदियों में चकरार, मचरार, सिलगी, खरमेर एवं बुढनेर आदि प्रमुख नदियां हैं। डिण्डौरी जिले के करंजिया विकासखण्ड से निकलने वाली नदियों में सिवनी चकरार, मचरार, कुतरेल आदि नदियां हैं। बजाग-चांडा के जगंलों से निकलने वाली नदियों में बुढनेर एवं खरमेर नदियां प्रमुख नदियां हैं जिसमें वर्ष भर पानी बहता रहता है। खरमेर नदी जो चांडा के जंगलों से निकलती है जिसका अपवाह क्षेत्र समनापुर विकासखण्ड से होकर अमरपुर विकासखण्ड में बहती हुई सक्का गांव से कुछ दूरी पर नर्मदा नदी में मिल जाती है। इस प्रकार अनेक छोटी-छोटी नदियां हैं जो सम्पूर्ण जिले के अलग-अलग क्षेत्रों में अपनी अपवाह क्षेत्र बनाती है।

मृदा शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के शब्द सोलम से हुइ है जिसका अर्थ फर्श होता है शैलो का विघटन तथा वियोजन से उत्पन्न ढीले एवं असंगठित भू पदार्थो को मृदा करते है।

बकमैन एवं ब्रेडी के अनुसार 'मृदा वह प्राक्रतिक पिण्ड है जो विच्छेदित एवं अपक्षयित खनिजो एवं कार्बनिक पदार्थो के विगलन से निर्मित पदार्थो के परिवर्तनशील मिश्रण से परिच्छेदिका के रूप में संश्लेषित होती है।' 'यह पृथ्वी को एक पतले आवरण के रूप में ढके रहती है।'

जे एस जोफे के अनुसार 'मिट्टियां जन्तु खनिज एवं जैविक पदार्थो से निर्मित प्राकृतिक वस्तु होती है जिनमे विभिन्न मोटाई के विभिन्न मण्डल (स्तर) होते है।'

मध्यप्रदेश का डिण्डौरी जिला प्रायदीय पठार का वह भाग है जहां पर विभिन्न प्रकार की अवशिष्ट मिट्टीयां पायी जाती है मिट्टी की संरचना एवं संगठन चट्टानों के निर्माण पर निर्भर करती है। इसके फलस्वरूप जैविक तत्वों मिट्टी में बड़े स्तर पर पाये जाते है जिले की मिट्टी का व्यवस्थित और बड़े पैमाने पर सर्वेक्षण नहीं हो सकता है अत: इसका प्रादेशिक वितरण केवल बड़े स्तर पर ही देखने को मिलता है क्षेत्र मुख्यत: निम्न प्रकार की मिट्टीयां देखने को मिलती है जैसे-

मध्यम या गहरी काली मिट्टी – यह मिट्टी नर्मदा घाटी में विस्तृत रूप में फैली है इसमें क्ले का 20.60 प्रतिशत है। इसकी गहराई 1.2 मीटर तक है यह अत्याधिक उपजाउ मिट्टी है जो गेहूँ, तिलहन, चना एवं ज्वार की फसल

*भूगोल विभाग, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

के उत्पादन के लिये सर्वश्रेष्ठ होती है इस मिट्टी में उर्वकता की स्थिति नाईट्रोजन (27 प्रतिशत) पोटेशियम (58 प्रतिशत) तथा कैल्शियम (15 प्रतिशत) पाई जाती है

मिश्रित मिट्टी – यह मिट्टी मुख्यत: लाल–पीली एवं काली मिट्टी के मिश्रण से बनी है इस मिट्टी में फास्फेट, नाईट्रोजन और कार्बन की मात्रा काफी कम पायी जाती है यह कम उपजाउ होती है इस मिट्टी में अधिकांशत: मोटे अनाज उगाये जाते है।

लाल एवं पीली मिट्टी – इस मिट्टी में अधिकांशत: लाल–पीली मिट्टी का जमाव देखने को मिलता है इसकी उर्वकता काली मिट्टी की अपेक्षा कम होती है।

जनसंख्या किसी देश का सबसे महत्वपूर्ण संसाधन होती है जिससे न केवल उसके प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग संभव हो पाता है बल्की कुशल प्रशिक्षित और मेहनती श्रम शक्ति द्वारा आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। 'जनसंख्या भूगोल की विषय वस्तु में जनसंख्या के वितरण का मुख्य स्थान है जनसंख्या के वितरण का संबंध स्थान या क्षेत्र विशेष से होता है।'

किसी भी क्षेत्र, देशा, नगर या गांव में एक निश्चित अवधि में जितनी जनसंख्या बढ़ती है उसे ही जनसंख्या वृद्धि कहते हैं। या कहे तो वास्तव में किसी क्षेत्र में रहने वाली जनसंख्या की संख्या में वृद्धि को जनसंख्या वृद्धि कहते है यह वृद्धि धनात्मक या ऋणात्मक हो सकती है भारत में जनसंख्या वृद्धि एक दशक के बाद आंकी जाती है इसे ही हम जनसंख्या की दशकीय वृद्धि कहते हैं।

प्रौद्योगिकी के अनुसार किसी प्रदेश क्षेत्र या देश में कितनी जनसंख्या की भरण पोषण की क्षमता है। इसकी जानकारी जनसंख्या घनत्व के द्वारा प्राप्त होती है किसी प्रदेश की पोषण क्षमता वहां उपलब्ध संसाधनों, आर्थिक क्रियाओं, विकास के स्तर, प्रौद्योगिकी, जीवन स्तर आदि अनेक कारकों द्वारा निर्धारित होती है। अत: भूमि पर जनसंख्या के वास्तविक भार को ज्ञात करने के लिए जनसंख्या के घनत्व की गणना निम्न प्रकार से की जा सकती है।

आर्थिक घनत्व इसके द्वारा किसी देश या प्रदेश की कुल जनसंख्या और उसके समस्त आर्थिक संसाधनों के कुल मूल्य के अनुपात को ज्ञात किया जाता है किसी देश में एक निश्चित जीवन स्तर पर कितने व्यक्तियों के भरण पोषण की क्षमता विद्यमान है जिसकी गणना आर्थिक घनत्व के द्वारा की जाती है। इसके लिए देश के समस्त प्राकृतिक या मानवीय संसाधनों का मूल्यांकन किसी एक इकाई में करना आवश्यक होता है।

जलवायु सम्बंधी विषमताएं भी यहां पर बहुत हैं जिसके कारण जनसंख्या का घनत्व एक स्थान पर सर्वाधिक नहीं है कुछ ऐसे मैदानी क्षेत्र हैं जैसे गोरखपुर का मैदान जहां पर जनसंख्या घनत्व अच्छी है जिले में जनसंख्या घनत्व 95 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

इस कारण से इस क्षेत्र से निकलने वाली नदियां उत्तार की ओर बहती हुई नर्मदा नदी में मिल जाती है। नर्मदा की इन सहायक नदियों में सिवनी, चकरार, मचरार व कुतरेल प्रमुख हैं। यहां का धरातल अन्य क्षेत्रों से कम ऊबड़–खाबड़ अर्थात् सम है। इस क्षेत्र में काली व ढोमट मिट्टी पाई जाती है। यह मिट्टी काफी उपजाऊ होती है।

यहां की जलवायु काफी विषम है। यहां पर जाए जाने वाले जंगलों का प्रभाव भी यहां की जलवायु पर पड़ता है। यही कारण है कि ग्रीष्मकाल में सामान्य ताप तथा शीतकाल में सामान्य से कम रहता है। यहां पर बारी–बारी से जाड़ा, गर्मी और बरसात तीन मौसम तथा छ: ऋतुएं होती हैं। यहां के पूर्वांचल की पर्वत की श्रेणियों और घाटियों में पूरे वर्ष ठंडक रहती है। यहां वार्षिक वर्षा का औसत 125 सेंटीमीटर है। यहां का जल स्तर सामान्यतया नीचा है। यहा काली, पीली व पहाड़ी किस्म की कंकरीली, पथरीली मिट्टी पाई जाती है। जिले के पूर्व की ओर समशीतोषण जलवायु पाई जाती है। जिले की पूर्वी सीमा अमरकंटक की पहाड़ियों के कारण शीत ऋतु में ठण्ड अधिक रहती है।

निष्कर्ष – तापमान का सम्बंध समुद्र की दूरी तथा समुद्र तल की ऊंचाई से होता है। तापमान का औसत सूर्य की ताप से निर्धारित होता है। मार्च के महीने में सूर्य उत्तरायण होता है तथा डिण्डौरी जिले का सम्पूर्ण भू–भाग का तापमान बढ़ने लगता है परन्तु विभिन्न विकासखण्डों में तापमान का वितरण समान पाया जाता है। कुछ विशेष स्थानों में ही तापमान का वितरण असमान पाया जाता है।

डिण्डोरी जिले का तापमान प्रतिवर्ष अलग–अलग तापमान उपलब्ध होता है। किसी वर्ष तापमान अधिक तो किसी वर्ष तापमान कम पाया जाता है। कुछ विशेष स्थानों में ही तापमान में विषमताएं पाई जाती है तथा जून के महीने मानसून के आते ही तापमान में विषमताएं पाई जाती हैं तथा जून के महीने मानसून के आते ही तापमान में गिरावट आने लगती है एवं दिसम्बर के माह में तापमान सबसे कम पाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सारस्वत मालती व गौतम एस. एल., 2006, भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामायिक समस्यायें, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ 55
2. सिंह, प्रमोद एवं तिवारी, अमिताभ, 1989, ग्रामीण विकास संकल्पना, उपागम एवं मूल्यांकन, पर्यावरण विज्ञान अध्ययन केन्द्र, इलाहाबाद, पृष्ठ 68
3. सेन, ललित के. : Planning rural growth centre for integration area Development. National institute of community" 1971, Pp 46
4. हुसैन, सैय्यर कामिल, 1983, जनजातीय विकास के कुछ पहलू, मानव, पृष्ठ 40–42
5. त्रिपाठी, आर.एस., 1986, आदिवासी क्षेत्रों के विकास की रणनीति : मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में, मानव, पृष्ठ 23–25
6. त्रिवेदी, वेणु, 1991, विपणन भूगोल, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, पेज नं. 48–60, वर्ष, पृष्ठ 9–13

****

जनजातीय समुदाय में उनकी सांस्कृतिक परम्परा का भौगोलिक अध्ययन

संदीप कुमार सिंह *

प्रस्तावना – जनजातीय समुदाय में सांस्कृतिक परम्परा उनकी विचारधारा और सामाजिक समरसता को जोड़ने का अथक प्रयास करती हैं। इस प्रकार से समाज में जनजातीय समुदाय में उनकी अपनी परम्परा और संस्कृति है। इनका जीवन वन्य संस्कृति पर आधारित है। इस प्रकार से इनके जीविकोपार्जन का साधन रहा है। इस प्रकार से समाज में इनका जीवन जड़ जंगल, नदी और पर्वत के समीप रहा है। इस प्रकार से इनके जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं का केन्द्र भी जंगल से प्राप्त होने वाली लकड़ी, फल-फूल रहे हैं।

इनकी अपनी सांस्कृतिक परम्परा और झाड़-फूक की परम्परा विद्यमान है। यहाँ तक सामाजिक परिवर्तन की दिशा में एक सुगम कदम होने वाला है। इस प्रकार से समाज में इनका विकास की दिशा कुछ दशक पहले बाधित जरूर हुई है। किन्तु आज इनके विकास हेतु सरकार अपनी विभिन्न योजनाओं को संचालित कर उन्हें प्रोत्साहित कर रही हैं।

आज जनजातीय समुदाय में सामाजिक परिवर्तन प्रकृत की गतिशीलता एवं विकास के आधार पर हो रहा है। इनका अर्थ तंत्र एवं आर्थिक विकास की दिशा शासन की योजनाओं पर परिलक्षित होती है। इस प्रकार से सामाजिक जागरूकता और जीवन स्तर में परिवर्तन के परिणाम स्वरूप प्राकृतिक तत्वों की अनुकूलता को सुलभता के परिणाम स्वरूप अधिकाधिक उपयोग और उनकी आत्मनिभरता के कारण उनके सभी विचारधाराओं का परिमार्जन हो रहा है।

इन्हीं आधारों पर सामाजिक सम्बन्धों में परिवहन संसाधनों आदि की सुलभता को दूरसंचार की शैक्षणिक विकास की दिशा बाधित होती है।

यहाँ तक जनजातीय विकास के सामाजिक सांस्कृतिक उन्नयन में आदिकाल से लेकर पर्यावरण की विद्यमानता के परिणाम स्वरूप ही जीव जन्तु, वनस्पति, जल, मिट्टी आदि को वायु के द्वारा उद्यम व्यवसाय को अर्थव्यवस्था के साथ ही धर्म, आवास आदि को पर्यावरण की पारिस्थितिकी पर भी निर्भर करता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यों के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं आदि के द्वारा भी अध्ययन किया गया है। यहाँ तक जनजातीय समुदाय द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से भी अध्ययन के आधार को समावेशित किया गया है।

उद्देश्य :

1. जनजातीय उद्योग का विस्तार करना।
2. जनजातीय सांस्कृतिक एकता का समृद्ध करना।
3. कृषि विस्तार और आर्थिक विकास के लिए प्रोत्साहन प्रदान करना।
4. शासकीय योजना – जंगल में प्रापत होने वाली वस्तुओं में तेन्दू पत्ता, महुआ, राइन की छात्र, पत्ता चार चिरौंजी, लकड़ी इत्यादि वस्तुओं का संग्रह करना।
5. शिक्षा जनजातीय विकास के लिए एक प्रकार का अन्य वर्गो के साथ सम्पर्क स्थापति करना उससे अर्थव्यवस्था में जनजागरण के साथ जनजातीय शिक्षा का उद्गम और विकास होगा। इस प्रकार से धन की प्राप्ति का प्रचलन शुरू हो जाता है।
6. परम्परागत संसाधनों के द्वारा उपलब्ध वस्तुओं का सहीं तरीके से दोहन करना। इससे सामाजिक जन-जीवन अधिक व्यवस्थित होगा। इस प्रकार से समाज में एक राष्ट्रीय स्तर की चेतना भी जाग्रत होगी। यहाँ तक इन्हें राजनैतिक विकास का माध्यम बनेगा। इस तरह से समाज में क्रान्तिकारी कदम होगा।
7. धर्म निरपेक्षतापूर्ण मूल्यों की ओर अग्रसर होना।
8. उससे समाज में होने वाले लाभांस का प्रतिफल शासन और ग्रामीण जनता को होगा।
9. जनजातीय विकास के लिए अर्थव्यवस्था में परिवर्तन एवं कार्य के आधार पर उसके मध्य जो भी अन्य सम्बन्ध स्थापित हो रहे हैं। वह वस्तुत: महत्वपूर्ण होता है।

समाधान – जनजातीय उद्गम में करूणा और स्थायित्व को परिलक्षित करने के लिए स्थायी कृषि, मुर्गी पालन, पशुपालन, लकड़ी काटना आदि महत्वपूर्ण आयाम को दर्शाता है।

अनुसूचति जनजाति में परिवार के प्रति बड़ी जिम्मेदार होती है। उनकी अपनी परम्पराएँ होती है। इनके अनुरूप वह कार्य करता है। इस प्रकार से सामाजिक जीवन में परिवार का आधुनिक समाज में कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण बनते जा रहें हैं। इस प्रकार से परिवार का सामाजिक जीवन का केन्द्र-बिन्दु व्यवस्थित होता जा रहा है। यह उनके आचरण के लिए वह निज स्वरूप में निश्चित करता है। यहाँ तक परिवार और उनकी सम्पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कार्य करता है। इस प्रकार से जनजाति परिवार में पति-पत्नी बच्चों आदि की शिक्षा-दीक्षा आदि को लेकर आगे बढ़ते हैं।

यहाँ तक इन्हें वनवासी परिवार के रूप में देखा जाता है। इस प्रकार से समाज में होने वाले क्रान्तिकारी कदम बड़े ही घातक हो जाते हैं। इस प्रकार से समाज में उनके लिए एक परिवार मूलक स्त्रोंतों के आधार पर स्त्री-पुरूष का मापदण्ड़ तैयार करता है। यहाँ तक मार्गन का चिन्तन था कि एक आदिवासी परिवार अपने जीवन के उद्गम और विकास के लिए कहीं भी जा सकता है।

*भूगोल विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

इनमें साम्यवादी व्यवस्था से प्रारंभ होता है। यहाँ तक इनके यौन सम्बन्ध पूर्णतया उन्मुक्त रूपों में होता है। इस प्रकार से एक परिवार की जिम्मेदारी को तैयार करने के लिए आदिवासी समाज में ऐसी अनेक प्रकार की विसंगति का मिलना अधिक उचित होता है।

इनके त्यौहार में विभिन्न प्रकार की परम्पराएँ विद्यमान है। जिनमें मांसाहारी और उनके गुणों में आज भी यह परिवार का यह रूप आदिवासी समाज में मिलता है। इस प्रकार से अनेक त्यौहारों में इसके अवसर की समानता के गुण विद्यमान होते हैं। जो मुख्य रूप से ऐसे समाज की विशेषताओं को प्रदर्शित करता है।

जनजातीय समुदाय में सांस्कृतिक परिवर्तन प्रकृति की गतिशीलता के आधार पर होता है। जो मुख्य रूप से अर्थ तंत्र से बधा हुआ हैं यहाँ तक आर्थिक तंगी को लेकर समाज में होने वाली विशेषताओं का परिणाम समाज मे सकारात्मक परिवर्तन करता है।

यह परिवर्तन प्राकृतिक तत्वों के रूप में अनुकूलता को प्रदर्शित करता है। जिनकी अनुकूलता का अधिक सुलभ बना देता है। फिर भी उनके चिन्तन को अधिकाधिक उपयोग पर निर्भर करता है।

सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर परिवहन के संसाधनों को मुख्य रूप से सुलभ संचारण के कारण दूरसंचार के साधनों और शैक्षणिक विकास की दिशा को गतिशीलता प्रदान करता है।

वैवाहिक जीवन में जनजातियों के जैविक आर्थिक संसाधनों के माध्यम से इसकों नियमन करने की कला विद्यमान होती है। फिर भी आदिवासी समाज में दीर्घकालीन रूप में वह पहले से ही अस्तित्व में रहा है।

इनकी वैवाहिक जीवन पद्धति और प्राकृतिक संरचना के कारण अनेक परिवर्तन होते जा रहे हैं। इस प्रकार से प्राकृतिक संसारधनों के रूप में विवाह एक प्रकार से पारिवारिक संस्था के रूप में सार्वदेशिक रूप में बनती जा रही है।

सभी में सांस्कृतिक गतिविधियों के कारण उनकी सांस्कृतिक एकता और अखण्डता को अनेक समाजशास्त्रियों के विवावह दो सम लिगिंम में होता है। इस प्रकार से इनकी सांस्कृतिक एकता के रूप में पारिवारिक बन्धन में बधते हैं।

वैवाहिक जीवन में प्रवेश करने की सामाजिक धार्मिक अथवा वैधानिक स्वीकृत प्रदान करता है। उसे अप्रत्यक्ष रूप से समाज में निर्धारित नियमों की अवस्था में समय और काल की दृष्टि से इस प्रकार के अनुरूप प्राकृतिक संसाधनों के नियमों को संधारित करता है। यह मुख्य रूप से पर्यावरण के सिद्धान्त पर आधारित किया गया है।

निष्कर्ष – जनजातीय समाज में एक समान रूप से अपने सगे सम्बन्धियों, एक–खून आदि में विवाह सम्पन्न नहीं होता है।

इस प्रकार से सामाजिक जीवन में देवर–भाभी की विवाह करना का भी रिवाज है। यहाँ तक समाज में ही इस बात को तैयर करता है कि यह शादी हो सकती है या नहीं। यहाँ तक समाज में उत्पन्न होने वाले सामाजिक बंधन की अनेक परम्पराएँ भी विद्यमान है। जो भी सहपालन और विवाह की विविध सुविधाएँ पंच परमेश्वर द्वारा भी निर्धारित की जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. श्रीवास्तव, ए.आर.एन., जनजातीय विकास के पाँच दशक, ज्ञानदीन प्रकाशन, पटना, राँची, इलाहाबाद, 2000, पृष्ठ 10
2. अग्रवाल, के0 एल0, विन्ध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल सतना, 1987, पृष्ठ 5
3. आभा कुमारी, धर्म का सामाजिक महत्व, दिल्ली, 2009, पृष्ठ 46

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

A Study on Selected Ratios on Reliance Industries Limited

Dr. Sanjeev Kumar Bansal* Dr. Pankaj Kukkar **

Abstract - Study is conducted purely based on secondary data. By using the selected ratios of Reliance industries limited can easily find out. The analysis of financial statements is a process of evaluation relationship between component parts of financial statements to obtain a better understanding of the firm's position and performance. In financial analysis, a ratio is compared against a benchmark for evaluating the financial position and performance of a firm. Financial ratios help to summaries large quantities of financial data. For this purpose, data from 2013 to 2017 of Reliance industries has been considered. From the analysis, it has been concluded that Reliance Industries Limited Ltd is performing better in 2016 and 2017.
Keywords - Financial Performance, Financial Analysis, Ratio.

Introduction - A ratio or financial ratio is a relationship between two accounting figures, expressed mathematically. Ratio Analysis helps to qualitative judgment about the firm's financial performance. Ratio analysis is a tool used by management and fundamental investors to determine a company's financial position in an industry or sector in comparison to its peers. It involves methods of calculating and interpreting financial ratios to assess a firm's performance and status. This Analysis is prima Reliance Industries Limited designed to meet informational needs of investors, creditors and management.

Reliance is the most profitable company in India, The company is ranked 203th on the Fortune Global 500 list of the world's biggest corporations as of 2017. Reliance owns businesses across India engaged in energy, petrochemicals, textiles, natural resources, retail, and telecommunications. Reliance continues to be India's largest exporter accounting for 8% of India's total merchandise exports with a value of Rs 147,755 cr. and access to markets in 108 countries. Reliance is responsible for almost 5% of The Government of India's total revenues from customs and excise duty and is also the highest Income tax payer in the private sector in India.

The analysis of financial statements is a process of evaluation relationship between component parts of financial statements to obtain a better understanding of the firm's position and performance In financial analysis, a ratio is compared against a benchmark for evaluating the financial position and performance of a firm. Financial ratios help to summaries large quantities of financial data.

Research Methodology - This research is based on secondary data. The financial statements of Reliance Industry have been taken. The data has been considered for the last five years starting from 2013 to 2017. The data has been analyzed by using selected ratios like Current Ratio, Debt equity ratio., Inventory turnover ratio, Fixed asset turnover ratio, Net operating profit per share, Dividend payout ratio, Earnings per share etc.

Data Analysis & Interpretation -

1. Current Ratio

Table 1 - Current Ratio

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Current Ratio	0.42	0.53	1.03	1.53	1.63

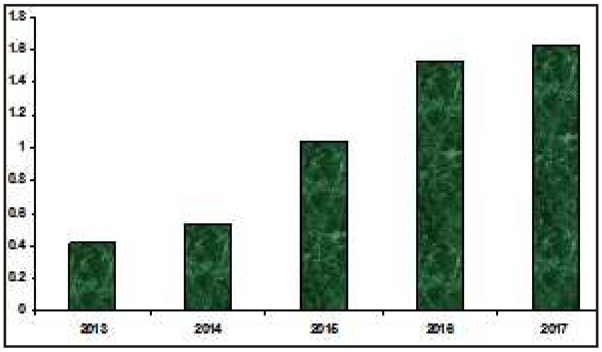

From the above table 1, it is clear that Current ratio of Reliance Industries Limited is increased every year from 2013 to 2017. It is 0.42 in 2015 and 1.63 in 2017. It indicates the company's ability to meet the short term debts is better. this ratio also known as working capital ratio.RBI recommended 2:1 current ratio but chore committee recommended satisfactory ratio is 1.33:1.So, position of Reliance Industries Limited is good.

*Sr. Lecturer, Department of A.B.S.T., S.N.D.B. Govt. P.G. College, Nohar (Raj.) INDIA
**Lecturer, Department of A.B.S.T., Shri Atam Vallabh Jain Girls PG College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

2. Debt Equity Ratio

Table 2 – Debt Equity Ratio

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Total Debt/ Equity Ratio	0.35	0.38	0.41	0.43	0.30

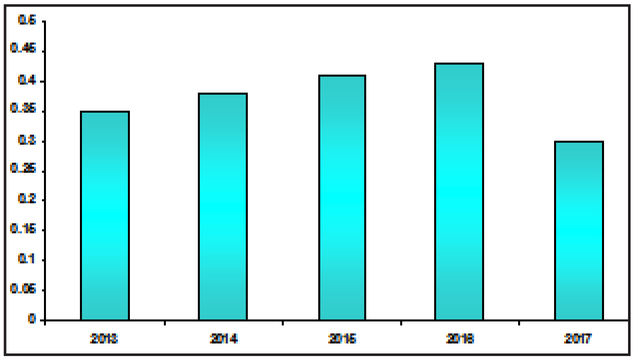

From the above table-2, it is clear that the debt equity ratio of Reliance Industries Limited is 0.35 in 2013 and 0.43 in 2016, it goes upward from 2014 to 2016, but it is decreased in 2017 and it is 0.3. The debt to equity ratio is a financial ratio indicating the relative proportion of equity and debt used to finance a company's assets which is an indicator of the financial leverage. This is a useful measure as it helps the investor see the way management has financial operations. A high debt / equity ratio generally means that a company has been aggressive in financing its growth with debt.

3. Inventory Turnover Ratio

Table 3 – Inventory Turnover Ratio

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Inventory Turnover Ratio	7.79	8.6	9.32	9.35	8.69

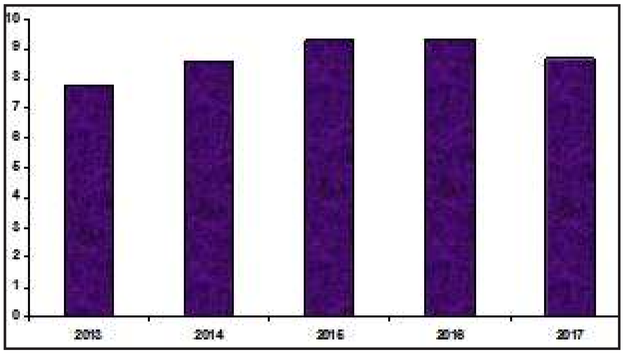

From the above table-3, it is clear that Inventory turnover ratio of Reliance Industries Limited is 7.79 in 2013 and 9.35 in 2016 it is high in 2016, but in 2017 it is 8.69. It shows the company's efficiency in turning its inventory into sales. A low turnover rate indicates poor liquidity. Higher ratio indicates more profitable business would be.

4. Fixed Asset Turnover Ratio

Table 4 – Fixed Asset Turnover Ratio

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Fixed Asset Turnover Ratio	1.01	0.87	1.12	1.51	1.57

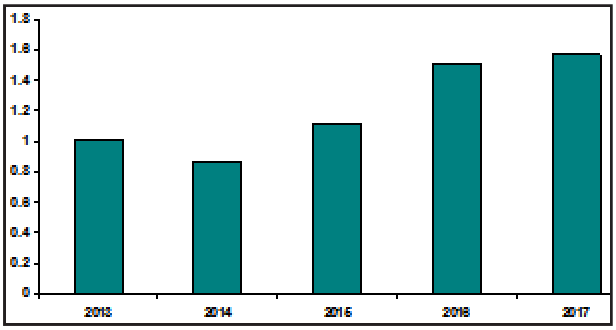

From the above table- 4, it is clear that the ratio of Reliance Industries Limited is 1.01 in 2013, but decreased in the year 2014 by 0.87. Again it is increase in 2015 by 1.12 to 2017 by 1.57 the fixed asset turnover indicates the efficiency of the enterprise in utilization on fixed assets to generate income. For all assets turnover, the more the number of times turnover, the more efficient the enterprises will be deemed to be in the utilization of assets to generate income.

5. Net Operating Profit per Share

Table 5 – Net Operating Profit per Share

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Operating Profit per Share (Rs.)	133.04	123.87	97.67	95.54	95.36

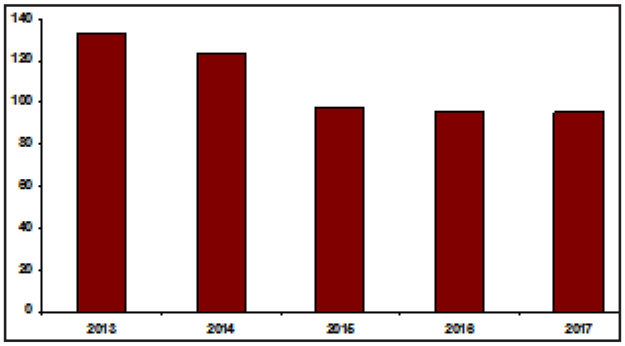

From the above table-5, it is clear that net operating profit per share of Reliance Industries Limited is highest in 2013, but after 2013 it was decreased. In 2017 it is 95.36. It shows how much profit is earned on the capital invested by ordinary shareholders.

6. Dividend Payout Ratio

Table 6 – Dividend Payout Ratio

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Dividend Payout Ratio (Net Profit)	0.00	11.28	12.95	12.70	12.51

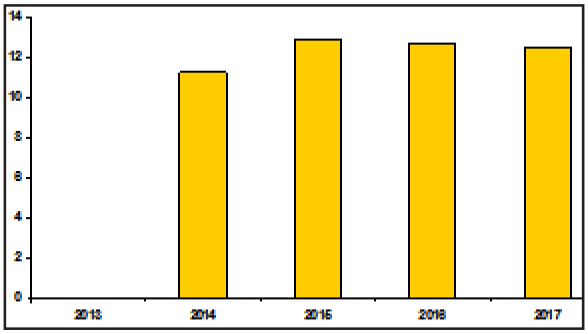

From the above table- 6, it is clear that Dividend payout ratio of Reliance Industries Limited were high in 2015 and 2016, it is 12.95 and 12.7 respectively. In 2017 it is 12.51. It indicates amount of dividend paid to shareholders per share.

7. Earnings Per Share

Table 7 – Earnings Per Share

Year	2013	2014	2015	2016	2017
Reported EPS (Rs.)	96.65	84.61	70.21	68.02	65.05

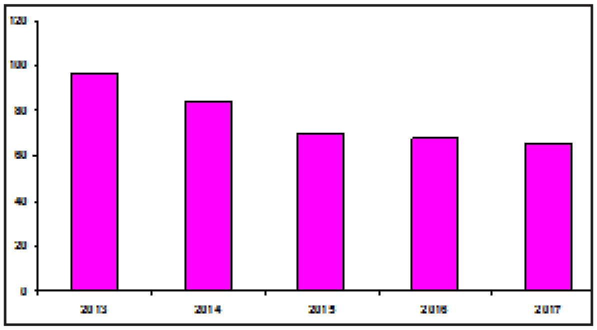

From the above table-7, it is clear that earnings per share of Reliance Industries Limited were better in 2013 is 96.65. After 2013 it is downward and in 2017 it is 65.05. This ratio shows the profitability of the firm from the owners point of view. It measures the profit available to equity shareholders on per share basis.

Conclusion - After analyzing the above ratio it is clear that the position of Reliance industries Ltd is better in 2016 and 2017. In above 7 ratios which we see through graph and table it is shown that in 6 ratios of Reliance Industries Limited Ltd is performing better in 2016 and 2017 while in other years position according to the ratios was also good.

References :-

1. Alexander D., Britton A. and Jorissen A. (2007) International Financial Reporting and Analysis, 3rd edition. London: Thomson Learning.
2. Gibson, C. H. (2011) Financial Statement Analysis, 12th Edition. Canada: South-Western, Cengage Learning.
3. Halabi A. K. Barrett R. and Dyt R. (2010) Understanding Financial Information Used to Assess Small Firm Performance. Qualitative Research in Accounting & Management, 7(2):163-179
4. Osteryoung J., Constand R. and Nast, D. (1992) Financial Ratios in Large Public and Small Private Firms. Journal of Small Business Management, 30 (3):35
5. Sever S. (2017) Uloga financijskih i nefinancijskih pokazatelja u revizorovoj ocjeni kvalitete poslovanja. Magistarski rad. Za greb: Ekonomski fakultet
6. Thomas, J., Evanson, R. V. (2005). An Empirical Investigation of Association Between Financial Ratio Use and Small Business Success. Journal of Business Finance & Accounting, 14(4):555-571.
7. www.moneycontrol.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

3-6 वर्ष में व्यक्तित्व विकास पर पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन

श्रीमती धर्मिष्ठा शेरवाल शर्मा *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध कार्य शोधकर्ता द्वारा शिशु अवस्था को लेकर किये गये कार्यो की श्रृंखला का दूसरा भाग है। इसके अन्तर्गत 3-6 वर्ष में व्यक्तित्व विकास पर पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया। इस अध्ययन में विद्यालय का वातावरण व शैक्षिक सुविधाओं का शिशुओं के व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव देखा गया। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर शिशुओं के उचित विकास के लिए शैक्षिक सुविधाएॅं व विद्यालय के भौतिक वातावरण में गुणवत्ता वृद्धि के लिए प्रयास किए जाएॅं तो अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने में सहायता प्राप्त होगी। इस हेतु प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो की उपयोगिता को सभी स्तरों पर पृथक-पृथक समझा जा सकता है।

प्रस्तावना – सीखने का प्रांरभ मानव के जन्म से होता है तथा यह प्रक्रिया व्यक्ति की उम्र के साथ-2 निरंतर चलती रहती है, इसमें प्रांरभ के कुछ वर्षो मे मानव कई सूचनाओं को ग्रहण करता है, इन वर्षो में मानव मस्तिष्क का बहुत तेजी से विकास होता है इसी विकास में उसकी सहायता प्रमुखता से दो सस्थाओ द्वारा की जाती है, परिवार व विद्यालय। कुछ अनुभवी शिक्षकों व कुछ ऐसी संस्थाओ द्वारा शिशुओं के लिए यह शिक्षण सुविधा दी जाती है जिससे प्रांरभिक शिक्षण की इस अवधि का प्रभाव उसके सम्पूर्ण जीवन पर बना रहता है, जिससे उसका सर्वागीण विकास आरंभ से ही अपेक्षित दिशा में हो सके तथा इससे उसकी अनौपचारिक शिक्षा के साथ औपचारिक शिक्षा की शुरूवात होती है। इस तरह की शिक्षा व्यवस्था का **पूर्व-प्राथमिक विद्यालय** (Pre-primary school) या **पूर्व शिशु-शिक्षण** (Early childhood Education) से संबोधित किया जाता है।

औचित्य एवं समस्या कथन – पूर्व विद्यालयीन व्यवस्था के रूप में जो संस्थाऐं संचालित हैं वहाँ कार्यरत् शिक्षकों के लिए भी आवश्यक है कि परिवार जैसा स्नेह एवं सुरक्षा का वातावरण शिशुओं को प्रदान करें। एक शिक्षक के लिए आवश्यक है कि इस अवस्था के शिशुओं की देखभाल अभिभावक की भाँति करे। शिक्षक को शिशुओं के संज्ञानात्मक, भावात्मक और कलात्मक पक्षों की जानकारी होना आवश्यक है ताकि वह शिशुओं के उचित विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सके। इस परिपेक्ष्य में शोधकार्य की योजना बनायी गयी।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व – पूर्व-बाल्यावस्था व्यक्ति के जीवन की ऐसी अवस्था इस व्यवस्था में चूंकि मानव बाल्याअवस्था से गुज़र रहा होता है जिसमें उसका व्यक्तिगत, शारीरिक, मानसिक व संवेदीगामक विकास होता है। अत: इस शिक्षा व्यवस्था के लिए शिशु की उम्र 3-6 वर्ष तक की मानी गई है।

समस्या कथन – '3-6 वर्ष में व्यक्तित्व विकास पर पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन।'

अध्ययन के उद्देश्य :

1. शिशुओं के व्यक्तित्व विकास पर विद्यालय के भौतिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. शिशुओं के व्यक्तित्व विकास पर शैक्षिक सुविधाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना :

1. शिशुओं के व्यक्तित्व विकास पर विद्यालय के भौतिक वातावरण का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाएगा।
2. शिशुओं के व्यक्तित्व विकास पर शैक्षिक सुविधाओं का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाएगा।

अध्ययन का क्षेत्र (परिसीमन) – प्रस्तुत शोध उज्जैन जिले के संदर्भ में पूर्ण किया गया है।

अध्ययन की प्रकृति – अध्ययन की प्रकृति सर्वेक्षणात्मक है।

न्यादर्श चयन – प्रदत्त संग्रह हेतु पूर्व प्राथमिक संस्थाओं से 302 शिशुओं का न्यादर्श लिया गया। शिशु 3 से 5 वर्ष की आयु समूह के थे। उज्जैन शहर के विद्यालयों का न्यादर्श हेतु चयन याद्दच्छिक रूप से किया गया।

अनुसंधान के उपकरण – भिन्न - भिन्न चरों (विद्यालय का वातावरण व शैक्षिक सुविधाएँ) के मापन के लिये शोधकर्ता द्वारा निर्मित अवलोकन सारणी का उपयोग किया गया। शिशुओं के व्यावहारिक पक्षों की जानकारी विद्यालय के अभिलेख से प्राप्त की गई।

अनुसंधान की प्रविधि – प्रदत्त संग्रह हेतु पूर्व प्राथमिक विद्यालयों की विस्तृत योजना निम्न बिन्दुओं में प्रस्तुत है।

1. सर्वप्रथम उज्जैन शहर के पूर्व प्राथमिक विद्यालयों की सूची तैयार की गई।
2. तत्पश्चात् याद्दच्छिक रूप से शहर से 14 विद्यालयों का चयन किया गया।
3. चयनित विद्यालयों का अवलोकन किया गया। अवलोकन का आधार शोधकर्ता द्वारा निर्मित उपकरण थे जिनके आधार पर विद्यालय का वातावरण एवं शैक्षिक सुविधाओं का मापन किया गया।

प्रयुक्त सांख्यिकी तकनीक – बहु कारक विश्लेषण अभिकल्प का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण – प्रस्तुत शोध में परिकल्पनाओं अनुसार विश्लेषण के आधार पर परिणाम प्रस्तुत हैं।

* शोधार्थी (शिक्षा) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सारणी क्रमांक 1.0 (निचे देखे)

परिकल्पना -1 - तालिका क्रमांक 1.0 के आधार पर विद्यालय का भौतिक वातावरण का शिशुओं के संज्ञानात्मक पक्ष के विकास पर F का मान (**4.394**) पाया गया जो कि 3/302 के स्वतंत्रता अंश (df) के लिये 0.05 स्तर पर सार्थक पाया गया, अत: इसके संदर्भ में अध्ययन की शून्य उपपरिकल्पना शिशुओं के व्यक्तित्व के संज्ञानात्मक पक्ष के विकास पर विद्यालय का भौतिक वातावरण का प्रभाव नही पाया जायेगा अस्वीकृत की जाती है। यह परिणाम दर्शाता है कि विद्यालय का भौतिक वातावरण का शिशुओं के संज्ञानात्मक पक्ष के विकास पर प्रभाव दिखाई दिया। विद्यालय के भौतिक वातावरण के संदर्भ में निर्धारित चारों स्तरों में तुलनात्मक रूप से उच्चतम स्तर के शिशुओं के संज्ञानात्मक पक्ष के विकास का स्तर उच्च श्रेणी का पाया गया।

सारणी क्रमांक 2.0 (निचे देखे)

परिकल्पना -2 - तालिका क्रमांक 2.0 के आधार पर शैक्षिक सुविधाओं का शिशुओं के शारीरिक पक्ष के विकास पर F का मान (**2.197**) पाया गया जो कि 2/302 के स्वतंत्रता अंश (df) के लिये 0.05 स्तर पर सार्थक पाया गया, अत: इसके संदर्भ में अध्ययन की शून्य उपपरिकल्पना शिशुओं के व्यक्तित्व के शारीरिक पक्ष के विकास पर शैक्षिक सुविधाओं का प्रभाव नहीं पाया जायेगा अस्वीकृत की जाती है। यह परिणाम दर्शाता है कि शिशुओं के शारीरिक पक्ष के विकास पर शैक्षिक सुविधाओं का सार्थक प्रभाव दिखाई दिया।

सुझाव :

1. प्रस्तुत अध्ययन में शैक्षिक सुविधाओं का प्रभाव शिशुओं के व्यवहारिक पक्षों पर देखा गया। इसके अतिरिक्त शैक्षिक सुविधाओं का प्रभाव शिशुओं की शैक्षिक उपलब्धि पर भी शोधकार्य किए जा सकते हैं।
2. इसके अतिरिक्त विद्यालय के वातावरण का प्रभाव शिशुओं की शैक्षिक उपलब्धि पर लेकर भी शोधकार्य किए जा सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राय, पारसनाथ (2007). *अनुसंधान परिचय.* आगरा : लक्ष्मीनारायण अग्रवाल.
2. सिंह, अरूण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार, (2006)*आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान*. दिल्ली : मोतीलाल बनारसी दास.
3. वर्मा, प्रीति एवं श्रीवास्तव, डी. एन.(2001)*आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान*. आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर .-
4. *नर्सरी शिक्षा पद्धतियां तथा सामग्री,* (1991),द्वोआबा हाउस, नई दिल्ली-
5. अग्रवाल डॉ. के के, *आधुनिक भारत में शिक्षा का विकास,* अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा -7, च 59-60
6. अग्रवाल, डॉ के. के., (2007/2008)*भारत मे शिक्षा का विकास* - अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा -7 इतिहास पी न 48

सारणी क्रमांक 1.0 : शिशुओं के व्यक्तित्व विकास के पक्षों पर विद्यालय के भौतिक वातावरण के संदर्भ में किए गए बहुकारक विश्लेषण का सारांश

Source	dependent variable	Sum of squares	df	Mean square	F
INFRSTRU	PHY	6.410	3	2.137	1.695
	FINEMO	7.662	3	2.554	2.052
	SENSO	4.732	3	1.577	1.565
	EMOTIO	6.399	3	2.133	1.559
	COGNI	15.551	3	5.184	4.394**

सारणी क्रमांक 2.0 : शिशुओं के व्यक्तित्व विकास के पक्षों पर शैक्षिक सुविधाओं के संदर्भ में किए गए बहुकारक विश्लेषण का सारांश

Source	Dependent Variable	Sum of squares	df	Mean square	F
EDUFACI	PHY	5.539	2	2.770	2.197**
	FINEMO	1.626	2	.813	.653
	SENSO	4.581	2	2.290	2.273
	EMOTIO	4.834	2	2.417	1.767
	COGNI	.501	2	.250	.212

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Role of Local Self Government in the Protection of Environment

Mohd Ashraf * Sabeen Ahmad Sofi **

Abstract - This paper deal with Role of Local self government in the protection of environment. Local Self Government is the administration of local affairs undertakings by gathering of people who have been elected by individuals. Local self government suggests the transference of the ability to lead to the most reduced rungs of the political order. It is a type of democratic decentralization where the cooperation of even the grass root level of the society is ensured during administration. In the recent year's local self government and non-government organisations has been a subject of extraordinary arrangement of social research and assessment with regards to improvement being looked through a procedure of decentralization of political power at the grass root level. The local self government organisations are relied upon to partake in every one of the exercises both organised and unorganized segments in the village setup. These nearby experts oversee, direct, control and screen an extensive variety of plans of constrained alleviation and change concerning local population especially identifying with wellbeing, local population education , welfare administrations, streets, peace and security of the local authorities and deal with a huge measure of capital, mobilized partly from local resources and partly from the governments concerned. Among different levels of environmental administration, the most effective is the local level for efficient management and utilization of natural resources. After the enactment of 73rd and 74th Amendments to the Constitution it appropriate to deliberate on the barriers and the way forward in shaping up effective environmental governance at the local level involving the Panchayat Raj Institutions.
Keywords - Industrializations, decentralization, utilization, resource level, poverty, welfare services democracy.

Introduction - Mahatma Gandhi had a version for "Gram Swaraj" and this was included as one of the directive principles of the state policy (Article 40: The state shall take steps to organize village panchayats and endow them with such powers and authority as may be necessary to enable them to function as units of self-government) by the framers of our Constitution. Ever since the Constitution became operational, various states have experimented with different models of Panchayat Raj Institutions (PRIs). The progress and success of these models varied from state to state depending on the commitment of local leadership, the space given to such institutions to function, and prevalent ethos. However, this dream of Mahatma was in true sense fulfilled in 1992 when the Indian Parliament through the 73rd Amendment provided the constitutional backing for establishment and functioning of PRIs for rural self governance in the country. The 73rd and 74th Amendments to the Constitution together would always be remembered for creating leadership opportunities for millions of men and women at the grassroots level. This scale was simply unheard of in the annals of human history of democratic governance. At present, all over the country, states have delegated powers to PRIs in terms of Article 243 and the Eleventh Schedule of the Constitution. India has not looked back ever since the enactment of these two major Amendments in terms of democratic decentralization.[1]

Meaning Of Local Self Government - The term " local government" or "local self government" means the government by freely elected local bodies which are endowed with power, discretion, and responsibility to be exercised and discharged by them, without control over their decision by any other high authority . V.venkata Rao points out that Local government is that part of the government which deals mainly with local affairs, administrated by authorities subordinate to the state government but elected independently of the state authority by qualified residents.

Role Of Panchayats - But the history of Panchayati Raj starts from the self-sufficient and self-governing village communities. In the time of the Rig veda (1700 BC), evidence suggests that self-governing village bodies called „sabhas existed. With the passage of time, these bodies became panchayats. Panchayats were functional institutions of grassroots governance in almost every village. They endured the rise and fall of empires in the past, to the current highly structured system.Later, the conceptualisation of the system of local self-government in India took place through the formation and effort of four important committees from the year 1957 to 1986. It will be helpful if

*Research Scholar (Political Science) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar (History) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

we take a look at the committee and the important recommendations put forward by them.

1. Balwant Rai Mehta Committee (1957) - Originally appointed by the Government of India to examine the working of two of its earlier programs, the committee submitted its report in November 1957, in which the term „democratic decentralization„ first appears.

The important recommendations are:

a) Establishment of a three-tier Panchayati Raj system – gram panchayat at village level (direct election), panchayat Samiti at the block level and Zila Parishad at the district level (indirect election).
b) District Collector to be the chairman of Zila Parishad.
c) Transfer of resources and power to these bodies to be ensured.

2. Ashok Mehta Committee (1977-1978) - The committee was constituted by the Janata government of the time to study Panchayati Raj institutions. Out of a total of 132 recommendations made by it, the most important ones are:

a) Three-tier system to be replaced by a two-tier system.
b) Political parties should participate at all levels in the elections.
c) Compulsory powers of taxation to be given to these institutions.
d) Zila Parishad to be made responsible for planning at the state level.
e) A minister for Panchayati Raj to be appointed by the state council of ministers.

3. G V K Rao Commitee (1985) - Appointed by the Planning Commission, the committee concluded that the developmental procedures were gradually being taken away from the local self-government institutions, resulting in a system comparable to „grass without roots .

a) Zila Parishad to be given prime importance and all developmental programs at that level to be handed to it.
b) Post of DDC (District Development Commissioner) to be created acting as the chief
c) executive officer of the Zila Parishad.
d) Regular elections to be held

Types of Urban Local Government - There are eight types of urban local governments currently existing in India:

(1) Municipal Corporations (2) Municipality (3) Notified area committee (4) Town area committee (5) Cantonment Board (6) Township (7) Port trust (8) Special purpose agency.

The elections held in the local government bodies

1. All seats of representatives of local bodies are filled by people chosen through direct elections.
2. The conduct of elections is vested in the hands of the State election commission.
3. The chairpersons at the intermediate and district levels shall be elected indirectly from among the elected representatives at the immediately lower level.
4. At the lowest level, the chairperson shall be elected in a mode defined by the state legislature.
5. Seats are reserved for SC and ST proportional to their population.
6. Out of these reserved seats, not less than one-third shall be further reserved for women.
7. There should be a blanket reservation of one-third seats for women in all the constituencies taken together too (which can include the already reserved seats for SC and ST).
8. The acts bar the interference of courts in any issue relating to the election to local bodies .

Qualifications needed to be a member of the Panchayat or Municipality - Any person who is qualified to be a member of the state legislature is eligible to be a member of the Panchayat or Municipality.This means that unlike the state legislature, a person needs to attain only 21 years of age to be a member of panchayat/municipality.

The duration of the Local Government bodies

1. The local governing bodies are elected for a term of five years.
2. Fresh elections should be conducted before the expiry of the five-year term.
3. If the panchayat/municipality is dissolved before the expiry of its term, elections shall be conducted within six months and the new panchayat/municipality will hold office for the remainder of the term if the term has more than six months duration.
4. And for another five years if the remaining term is less than six months.[2]

Polices Of Local Self Government In Protection Of Environment - Rural Local Bodies, owing to the enormous power vested in them, can be successful in conservation efforts. Rural Local Bodies came into existence in 1992, consequent to the 73rd Constitution Amendment Act 1992. Though were in existence from 1950, it is the 73rd Amendment, which gave enormous powers and responsibilities to these bodies. This process of decentralisation has strengthened the “Village Republics”.

The Panchayats have the authority to evolve a code of conduct and regulations for rearing livestock. Agriculture, also a subject to be dealt with by Panchayats, may be increased by enforcement of certain disciplines in growing crops (native crops). It is all within the jurisdiction of Panchayats.[3]

Schemes ForEnvironmental Protection By Government - The Ministry of Environment, Forest and Climate Change is implementing National River Conservation Programme, sub-schemes of Conservation of Natural Resources and Eco-Systems, National Afforestation Programme & Green India Mission, National Coastal Management Programme, National Mission on Himalayan Studies under Climate Change Program under the Central Sector & Centrally Sponsored Schemes of Government of India.[4]

These schemes act as remedial measures for conservation of environment and sustainable development of various ecosystems. The umbrella Scheme on Conservation of Natural Resources and Eco-systems through its different sub-schemes formulated for protection

of corals, mangroves, biosphere reserves, wetlands and lakes conserve the natural resources and these eco-systems of the country. The sub-scheme of National Plan for Conservation of Aquatic Ecosystems aims at conservation of all aquatic eco-systems including lakes and wetlands of the country. National Afforestation Program and Green India Mission contribute towards regeneration of degraded forests and their adjoining areas in the country. National River Conservation Program facilitates in improving water quality of polluted stretches of rivers by preventing pollution loads reaching the rivers through various pollution abatement works.[5]

National Mission on Himalayan Studies aims at focusing on conservation of Himalayan Ecosystem and sustainable development of the Indian Himalayan Region. The Ministry also monitors implementation of United Nations Convention to Combat Desertification (UNCCD) and has been carrying out enabling activities and other obligations of the Convention. The program aims at networking and forging strategic partnerships among relevant Scientific Institutions and stakeholders for enhancing knowledge data base and scientific inputs in reporting and revising desertification and land degradation.

Important Environment and Biodiversity Acts Passed by Indian Government

1. Fisheries Act 1897
2. Indian Forests Act 1927
3. Mining And Mineral Development Regulation Act 1957
4. Prevention of Cruelty to Animals 1960
5. Wildlife Protection Act 1972
6. Water (Prevention and Control of Pollution) Act 1974
7. Forest Conservation Act 1980
8. Air (Prevention and Control of Pollution) Act 1981
9. Environment Protection Act 1986
10. Biological Diversity Act 2002
11. Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Rights) Act 2006

Not only this, there are a few International schemes and projects that India has signed drafted with its neighbours, Nepal and Bangladesh related to illegal wildlife species trade and conservation of tigers and leopards. Apart from this, there are plenty of other legal, administrative and financial steps that Government of India has taken for effective wildlife conservation in the country. And apparently the success of its some projects and schemes related to Indian Rhinos, tigers and poaching have earned it immense confidence to continue working towards a prosperous and intact wildlife.[6]

Recommendations :

1. Awareness should be given to people in Rural areas about local self government
2. The lead should be taken by local bodies, encouragement by the state governments given to local bodies

Conclusion - To conclude, local self-government is one of the most innovative governance change processes our country has gone through. The noble idea of taking the government of a country into the hands of the grass root level is indeed praiseworthy. However, like any system in the world, this system is also imperfect. Problems of maladministration and misappropriation of funds are recurring. But this shall not stand in the way of efficient governance; and if these ill practices are rooted out, there would be no comparisons around the world to our system of local self-government.

In the Panchayati Raj set up, there are several mechanisms and agencies through which information regarding public good and welfare can be communicated to the villagers. These can be used to create the much-needed awareness about the conservation of the ecology and the environment. All this depends on the lead taken by local bodies, encouragement by the state governments given to local bodies, the honesty and sincerity of the non-officials who administer the local bodies, and corruption-free controlling authorities.

References :-

1. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/4262/11/11_chapter%202.pdf
2. V.venkata Rao “A hundred year of local self government in Assam, calcutta, beni Parkash,mander,(1965),p.1
3. Mohammed Nasem,Environmental law in India,kluwer law International 2011.
4. A.k Mishra,Role of the panchayat Raj in Rural development vol.7,2011
5. M.p Sharma , Local self government In India; Munshiram Manoharlal publishers pvt. limited,1978.
6. J.N . Pandye, Constitutional law, 53rd edition, central law agency, 2016

****

महिला सशक्तिकरण हेतु राज्य सरकार द्वारा संचालित योजनाओं का प्रभाव

जयश्री चड़ार*

प्रस्तावना – योजनाओं का उद्‌भव स्वतंत्र भारत में सन् 1950 के पश्चात् हुआ। लेकिन भारत के निर्माताओं ने जनसंख्या के सर्वांगीण विकास हेतु संविधान के रूप में विकास का ताना-बाना पहले (सन् 1947 से 1950) को बुन लिया था।[1] विकास के दिशा-निर्देश संविधान के नीति निर्देशक तत्वों के रूप में मौजूद थे – Artical 36, The state has the same meaning as in Part- II, Artical-37, The provisions contained in this part shall not be entorceable by any court but the principels there in laid down are nevertheless fundamental in the governance of the country and it shall be the duty of the sate to apply these principles in malcing laws.[2] इन तत्वों के परिपेक्ष्य में राज्य प्रदेशों का शासन चलायेंगे। इन तत्वों के संचालन में न्यायालय भी किसी भी प्रकार की बाधा नहीं कर सकता है। यह संविधान का आश्वासन है।

संविधान ने आर्टिकल 39 के रूप में कुछ तत्वों का उल्लेख किया है (a) That the citizens men and women equally........ (b). That the ownership and control of the material resources of the community are 80 distributed as best to subserve the common good. (c) That the operation of the economic system does not result in the concentrolion of wealth and means of production the common determent. इसके अतिरिक्त कतिपय दशाओं में संविधान हमें अधिकार देता है जो विविध अनुच्छेदों में वर्णित है यथा- 39A Equal justice and free legal aid....Artical 41- Right to work to eduction and to public assistance in certain cases......, Artical 42- Provision for just and human conditions of work and materity relife........., Artical 47- Duty of the state to raise the level of nutrition and the standard of living and to improve public health... [3]

उपरोक्त भारतीय संविधान के भाग-4 राज्य के नीति निदेशक तत्व के अंतर्गत विविध अनुच्छेदों में राज्य शासन को योजनायें, कार्यक्रम, सुविधायें, नियम, व्यवस्था आदि को बनाने के निर्देश दिये हैं। राज्य शासन योजनायें, कार्यक्रम, नियम आदि बनाता है। वास्तविकता में Plan in India derives its objectives and social premises from the public and private sectors of economy are viewed as complementry.[4] इसलिए समाज के लिए महत्वपूर्ण है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु आवश्यक एवं कारगर उपाय हैं। कई देशों ने इसके आधार पर विकास की ऊँचाईयों को स्पर्श किया है और व्यक्तियों को सामाजिक न्याय प्रदान किया है।

कामकाजी महिलाओं के प्रति व्यक्तियों, परिवार, समाज के लोगों के नजरिये में बदलाव आया है। परिवार काम-काजी पुत्री, बहिन, पत्नी, माता पर नाज महसूस करता है। आज काम-काजी लड़कियाँ विवाह योग्य लड़कों, उनके माता-पिता की पहली पसंद होती है।[5] साक्षर, शिक्षित, प्रशिक्षित महिलायें अपनी राह बनाने चल पड़ी हैं, और निरक्षरों में भी जागरूकता आ रही है। इनकी सोच और आकांक्षायें उनके सपने और लक्ष्य मुख्य धारा से जुड़ने को आतुर हैं।[6] इस कार्य में परिवार के लोग बेटी, बहिन, पुत्रवधु, पत्नी को प्रोत्साहित कर आवश्यक सहयोग, सुविधायें, प्रसन्नता, उत्साह, गर्व के साथ मुहैया करा रहे हैं। ऐसे उदाहरण व्यवहारिक जीवन, पत्र-पत्रिकाओं में सहायता से सुलभ हो जायेंगे। वर्तमान परिवेश में ऐसी महिलाओं को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। गौरव के साथ उनका नाम लेते हैं। अनेक बहिन बेटियों के लिए आर्थिक कार्यों में हाथ बटाने वाली महिलायें नजीर होती हैं।

महिलाओं की आर्थिक क्रिया-कलापों, आर्थिक उर्पाजन में उनकी भूमिका आज महत्वपूर्ण है, ऐसा सर्वविदित है। आदिकाल से पुत्री, पत्नी, माता के रूप में उनकी स्थिति अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक क्षेत्र (कृषि, पशुपालन, गृह उद्योग) में रेखांकित हो रही है, यह बात प्रमाणित है। अर्थ उर्पाजन, आर्थिक कार्यों में संलग्नता की स्थिति महिलाओं में एकाएक नहीं आ गई, इसके संदर्भ में समाज की सोच परिवर्तन में समाज सुधारकों, शासन, शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह कार्य आज से नहीं अपितु स्मृति काल से सिलसिला चालू है। स्मृतिकाल में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका थी।[7] किन्तु मध्यकाल में विदेशी आक्रांताओं की संस्कृति के कारण महिलाओं की स्थिति भोग्या की हो गई थी। मध्यकाल उनके चतुर्दिक पतन के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी है। आक्रांताओं के मय से घरों में कैद कर लिया, घर से निकलना पठन-पाठन सभी बंद हो गया। बालिकाओं से उनका बचपन छीनकर घर गृहस्थी में झोंका गया। इस काल में महिलायें पुरूषों की वासना, क्रूरता, आधिपत्य का शिकार हुई।[8]

मध्यकाल भारतीय महिलाओं के अंधकार अवनति काल कहा जा सकता है। उनकी शैक्षिक दृष्टि से गिरावट, बाल विवाह, पर्दा प्रथा, अनमेल विवाह, बे मेल विवाह का शिकार हुई हैं। सामाजिक क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए नई प्रथायें रीति-रिवाजों का आगमन हुआ। महिलायें अब अर्धांगिनी न होकर भोग विलास की वस्तु मिलकिएत समझी जाने लगीं। चूंकि यह व्यवस्था राजसी, सामंती, संभ्रांत लोग तक ही सीमित थी, लेकिन इस व्यवस्था का अनुकरण सभी जाति, वर्ग के लोगों ने किया। महिलाओं की ये स्थिति ब्रिटिश काल तक रही। लेकिन भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और पुनजार्गरण के दौर में महिलाओं को अपनी स्थिति का विश्लेषण करने का नजरिया दिया। पुनजार्गरण ने उनका मूल्यांकन हालांकि हाय-हाय के रूप में तरह खाकर किया है।[9] आज देश, प्रदेश, संभाग, जिलों, गांवों में स्वतंत्र वातावरण से

* शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

प्रेरित संविधान के अनुसार प्रजातंत्रात्मक व्यवस्था का शासन है। महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन, परिवर्धन हो रहा है, और इनकी स्थिति परिस्थिति वैदिक कालीन महिला से भी अच्छी हो गयी है, बेहतर हो रही है, आशा है कि और भी बेहतर होगी।

भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि आज आप क्या कर रहे हैं। आज पर कल का भविष्य निर्भर होता है।[10] महिलायें शारीरिक, सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक दृष्टिकोण से प्रतिष्ठा प्राप्त कर रही है। तमाम अध्ययनों एवं सर्वेक्षणों में इस बात को एक मत में स्वीकारा गया है कि आने वाला समय महिलाओं का है। आज प्रत्येक क्षेत्र में उनकी सहभागिता, सक्रियता इसका द्योतक है। ये अपनी सहभागिता एवं सक्रियता में वृद्धि ही नहीं कर रही है अपितु उसकी उपयोगिता, उपादेयता, महत्व, उपस्थिति का एहसास कराती है। ये यह भी प्रमाणित कर चुकी है कि हम किसी से कम नहीं, हम नहीं तो तुम नहीं। यह सत्य भी है, प्रमाणित भी है, वास्तविक एवं उपयुक्त है। इसे आज दबी जुबान से मान रहे हैं कि सत्य है कल खुलेआम कहेंगे कि सत्य है और मान जायेंगे कि महिलायें, मातृशक्ति, आधी जनशक्ति ही विकास में आवश्यक, अनिवार्य और सर्वोपरि है।

महिलाओं को इस मुकाम पर पहुँचाने के लिए समाज, धर्म, राजनीति, शासन, सहयोग, संघर्ष, संविधान, मीडिया, त्याग, बलिदान, पुरुषार्थ, साहस, शौर्य, प्रेम, ममता, मेहनत, प्रयास की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आज समाज, धर्म, राजनीति, शासन, प्रशासन में उनका पक्ष लेने, महत्व देने के लिए मजबूर हैं। महिलाओं के पक्ष में काम करके अपने आपको गौरवांवित महसूस करता है। शासन उनकी संख्या के अनुपात में कानूनन भागीदारी निश्चित करता है, सुविधा पहुँचाता है, सुरक्षा, सहायता देने की गारंटी देता है, विकास, सहयोग, सहायता, सुरक्षा, सहभागिता, अवसर प्रदान करने की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शारीरिक, मानसिक विकास के परिपेक्ष्य में योजना, कार्यक्रम बनातता, संचालित, कार्यान्वित करके निष्पादन एवं प्रभाव की गारंटी देता है। वास्तविकता में ये संविधान कानून, शासन, प्रशासन की महिमा है क्योंकि सरकारी कार्य का संचालन (Artical 166)- All executive action of the government of state shall be expoessed to be taken in the name of the Governor. [11]

व्यक्ति समाज का जीवित, सक्रिय, निरन्तर, अविभाज्य अंग होता है। उसके मन मस्तिष्क पर समाज में निवासरत विविध व्यक्तियों के आचार-विचार का प्रभाव होता है। समाज अनेक संस्कृतियों का सम्मिश्रण है। At least different races seen to have contributed to the traditional heritage of India civilization, culture, philosophy, religion and art.[12] इनसे समाज के महिला-पुरुष के मन-मस्तिष्क, आचार, विचार, रीति-रिवाज, धर्म-संस्कृति का सृजन होता है। इनसे ही ग्रहण क्षमता का विकास और परिलक्षण होता है। ज्ञात होता है कि समाज, जाति, धर्म विशेष के लोगों (महिला-पुरूष) पर प्रभाव की क्या स्थिति है, कितना प्रभाव है, प्रभाव कैंसा है, आदि ज्ञात किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पटैरिया, शिव अनुराग (2017), अतीत और आज, भोपाल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. 120।
2. Contitution of India, New Delhi, Govternment of India, Ministry of Law and Justice, Artical -156.
3. Contitution of India, New Delhi, Govternment of India, Ministry of Law and Justice, Artical -36-48
4. शर्मा, एल.पी. (1975), आधुनिक भारत, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, पृ. 642,662।
5. पटैरिया, शिव अनुराग (2017), अतीत और आज, भोपाल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. 114।
6. त्रिपाठी लाल, वचन एवं अन्य (1997), मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, आगरा, हर प्रसाद भार्गव, पृ. 356-385।
7. वही, पृ. 1299।
8. https://www.edyfever.com>ass.
9. दुबे, प्रकाश (1998), पारिभाषिक कोश, जयपुर, प्रतिमा प्रकाशन, पृ. 210।
10. Sharma, Dr. B.K. (1975) Planing, Bombay, Amit Publication. P. 25
11. Contitution of India, New Delhi, Govternment of India, Ministry of Law and Justice, Artical -38.
12. Contitution of India, New Delhi, Govternment of India, Ministry of Law and Justice, Artical -51

****

समाजवाद और सर्वोदय आंदोलन में जय प्रकाश नारायण की भूमिका

डॉ. अजय कुमार त्रिपाठी*

प्रस्तावना - सर्वोदय का सिद्धान्त समाज परिवर्तन की दिशा में एक गम्भीरता प्रयास के रूप में स्वीकृत हुआ। इसके द्वारा बुनियादी सामाजिक क्रांति का एक ठोस कार्यक्रम परंपरागत समाजवादी क्षेत्रों से बाहर एक नई समाज व्यवस्था को वास्तविक रूप से चित्रांकित करने की पहले-पहले कोशिश की गई। समाजवादियों को विशेषकर वैज्ञानिक समाजवादियों को जिन्हे वस्तुनिष्ठ होना है और पहले के कल्पनाग्रस्त भावनाओं के बदले यथार्थ तत्वों पर विचार करना है, उन्हें 'इस कोशिश को सहानुभूतिपूर्ण निगाह से देखना चाहिए था और एक ऐसी जमात के लोगों को समझने और उनके निकट जाने का प्रयास करना चाहिए था जिनसे अधिक निष्ठावान लोकसेवक हमें मिल नहीं सकतें।' प्राय: जो समाजवादी अन्य सिद्धांतों से बंधे है, वे वैज्ञानिक दृष्टि से इस कार्यकर्ता जमात को महत्व नहीं देते। क्योंकि जिस निष्कर्ष तथा समाजवादी दल के विचारों में आश्चर्यजनक समानता है। जो भी व्यक्ति सर्वोदय योजना को पढ़ने का प्रयत्न करेगा, उसे मालूम होगा कि इस योजना में समाजवादी दल के तात्कालिक कार्यक्रम का अस्सी प्रतिशत अंक निहित हैं इसके अलावा समाजवादी दल के वर्गहीन एवं मरणहीन समाज का आदर्श भी उसे मान्य है।

सर्वोदय योजना गाँधी जी के जीवन काल में ही देश की तेजी से बिगड़ती हुई परिस्थिति तथा सरकारी नीति में व्याप्त भ्रम को देखते हुए बनी थी। तय हुआ था कि रचनात्मक कार्यकर्ता 1948 के वर्धा में एकत्र होंगे और गाँधी निष्ठ सिद्धांतों के आधार पर एक राष्ट्रीय कार्यक्रम देश एवं सरकार के सामने रखेंगे। महात्मा जी स्वयं इस सभा का मार्गदर्शन करने वाले थे, किन्तु इतिहास को यह मंजूर नहीं था। सभा आयोजित हुई और 1949 के दिसम्बर में दो सौ रचनात्मक कार्यकर्ता वर्धा में इकट्ठे हुए। इन कार्यकर्ताओं ने उस कार्यक्रम का अनुमोदन कि जो 30 जनवरी 1950 को सर्वोदय योजना के रूप में प्रकाशित हुआ। इसका आदर्ष एक अहिंसक शोषणमुक्त सहकारी समाज का आदर्श है जो जाति और वर्ग पर आधारित नहीं होगा और जिसमें सबके लिए समान अवसर रहेंगे। वर्तमान प्रतियोगी अर्थ रचना की जगह सहयोग आधारित सामाजिक अर्थ व्यवस्था स्थापित की जाएगी कृषि भूमि का स्वामित्व समाज द्वारा निर्धारित नियमों के अन्तर्गत भूमि जोतने वाले कृषकों में निहित होगा। भूमि का पुनर्वितरण होगा और किसी के पास भी आर्थिक जोत के तिगुने से अधिक भूमि नहीं रहने दी जाएगी। अनार्थिक जोतों का सहकारी फार्मो के रूप में एकत्रीकरण होगा। कृषि के अन्दर लाई गई बंजर भूमि पर सामूहिक खेती होगी। व्यक्तिगत फार्म पर खेती करने वो किसानों को ग्रामीण बहुउद्देशीय समिति के द्वारा कार्य करना होगा। वर्तमान मूल्य स्तरों पर निम्नतम मजदूरी या आय 100 रूपये और ....अधिक कम मजदूरी उससे 20 गुना यानी दो हजार रूपया होगा।

इस योजना से उद्योग केन्द्रित और विकेन्द्रीत दो भागों में बंट जाते हैं। इसमें तय सम्भव हो तो सहकारी संस्थाओं के माध्यम से होगा। इसके साथ ही इस योजना का महत्वपूर्ण आकर्षक वक्तव्य यह है कि 'ऐसे केन्द्रित उद्योगों का सामाजिक करण किया जाना चाहिए और उसके लिए इस योजना में निर्धारित सीमा (यानी 2 हजार रूपया प्रतिमाह) के आधार पर संगणित क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिए जो मात्र पुनर्वास के लिए क्षतिपूर्ति होगी। सार्वजनिक स्वामित्व के आधार पर केन्द्रित उद्योगों के प्रबंध कार्य में कर्मचारियों को भी शामिल किया जायेगा।' विदेशी उद्योग संस्थाओं को या तो समाप्त किया जायेगा या उन्हें सार्वजनिक स्वामित्व के अन्दर लाना होगा। विकेन्द्रित उद्योगों में उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत या सहकारी स्वामित्व रहेगा। देश के विदेशी व्यापार को सार्वजनिक नियम के नियंत्रण में रखा जायेगा। बैंक व बीमा के संबंध में योजना में कहा गया है कि 'निम्नतम कार्यक्रम होगा-व्यापक पैमाने पर बचत का संगठन तथा कृषि एवं विकेन्द्रित उद्योगों के हित में विनियोगों का नियंत्रण और बड़ी पूंजी। के अनुचित एकाधिकार से राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था की रक्षा के लिए बैंक एवं बीमा कम्पनियों का अन्नत: सामाजीकरण।' कर निर्धारण के सम्बन्ध में योजना में वक्तव्य अंकित है। कि 'हमारा लक्ष्य एक ऐसी वित्तीय व्यवस्था को विकसित करना होगा, जिसके अन्तर्गत संग्रहित सार्वजनिक राजस्व का 50 प्रतिशत भाग ग्राम पंचायतों द्वारा खर्च किया जाएगा। और शेष 50 प्रतिशत उच्चतर स्तरों के प्रषासन में खर्च होगा।'

सर्वोदय की इस कार्य योजना से उसकी कल्पना का एक स्वरूप निर्मित होगा और सम्पूर्ण योजना का अध्ययन उपयोगी ही नहीं बल्कि अध्ययन मुक्त मानस के व्यक्ति को मेरे इस विचार से सहमत होना होगा कि यह योजना कार्यान्वित होने पर समाजवाद की दिशा में बहुत दूर तक ले जाएगी। श्री जय प्रकाश नारायण के कथन में गहराई और समाजवादी संरचना में सर्वोदय की भूमिका का महत्व है तथा यह योजना यदि पर्याप्त है तो समाजवादी दल की आवश्यकता पर भी प्रश्नचिन्ह उठ सकता है। लेकिन जो लोग इस योजना की गहराई का अध्ययन करेंगे, इसे पढ़ेगें।

उन्हे अपने प्रश्नों के उत्तर भी मिल जाएगा। क्योंकि इस योजना को जिन लोगों ने बनाया है वे न राजनेता है न उनका कोई राजनैतिक दल है। उन्होंने खुद टिप्पणी की है कि 'केवल देश के सामने राष्ट्रीय पुन: निर्माण की गाँधीवादी योजना उपस्थित करने का उन्होनें प्रयास किया है। योजना को क्रियान्वित करने के लिए उनके पास कोई औजार नहीं है। सचमुच उस समय जनवरी 1950 में उन्हे विश्वास हुआ था कि कांग्रेस इस योजना को

* एम.ए., पी.एचडी.(राजनीति विज्ञान) प्रतापगढ(उ.प्र.) भारत

लागू कर सकेगी। और वह इस पर राजी हो जाएगी, किन्तु ऐसा नहीं हो सका। इस रचनात्मक कार्य को समाजवादी दल-दल कार्यान्वित करने का आवष्वासन देता है और कार्यकर्ताओं और समाजवादी दल नई समाज व्यवस्था बनाने में सहयोग करता है। तो अच्छी बात है और यह कार्य समाजवादी दल के सदस्यों को बौद्धिक ईमानदारी से पूर्वग्रह से प्रभावित न होते हुए भी करना चाहिए।

जय प्रकाश जी का यह भी मानना है कि सर्वोदय योजना ही समाजवाद योजना नहीं है। वह इससे अधिक बहुत कुछ है। फिर भी समाजवाद की और सारी बाते रचनात्मक कार्यकर्ताओं को अस्वीकार होते हुए भी नई सभ्यता के निर्माण के प्रश्न पर सर्वोदय योजना ही उनके लिए अंतिम शब्द होगा। गाँधीवाद और समाजवाद दोनों की किसी भी हालत में उपेक्षा करना देश के लिए अहितकार है। देश संकट में पड़ सकता है। जब सन् 1951 में जय प्रकाश नारायण ने गुजरात में इस सम्बन्ध में वक्तव्य दिया था तो एक भ्रांति फैली थी कि जय प्रकाश नारायण गाँधीवाद और समाजवाद को एक ही मानते है। इसके उत्तर में जय प्रकाश नारायण जी का कहना है कि लेकिन पूरे जोर के साथ मैं यह कहना चाहूँगा कि इस देश में समाजवादियों का परंपरागत रूख उनकी उपेक्षा करने का रहा है-यह कहते हुए कि सनकी हैं, इस आणविक युग में पुराने पड़ चुके है, मध्ययुगीन है, प्रतिक्रियावादी है और यहाँ तक की निहित स्वार्थो के अप्रत्यक्ष रूप से पक्षधर हैं उनमें से जो अधिक घाघ है, वे और आगे बढ़कर गाँधी जी के न्यासिता के सिद्धांत का उपहास करते है और उन्हें वर्ग सहयोगी करार देते है। लेकिन गाँधी जी एक अपवाद रूपेण मौलिक ढंग के समाजिक क्रांतिकारी थे वे न प्रतिक्रियावादी थे और न मध्ययुगीन, न अन्य किसी वाद स्वार्थ आदि से प्रभावित थे वे सामाजिक चिंतन और समाज परिवर्तन के चिंतक थे। इनकी देन मानवी प्रगति और सभ्यता के क्षेत्र में अमर देन कही जाएगी। गाँधी जी की महत्वपूर्ण देन है, नैतिक आचारिक आधार और मूल्यों के प्रति गहरीनिष्ठा और आग्रह। गाँधी जी की महत्वपूर्ण देन है, नैतिक आचारिक आधार और मूल्यों के प्रति गहरीनिष्ठा और आग्रह। गाँधी जी के यहाँ साध्य और साधन का औचित्य स्वयं सिद्ध है। साधन की पवित्रता साध्य को पवित्र बनाता है। साधन बहुत दूर तक पतित हो सकता है उसकी सीमा नहीं है इसलिए अच्छे साध्य के अच्छा साधन जरूरी है। समाजवाद जिन वैयक्तिक एवं सामाजिक मूल्यों को प्राप्त करने का प्रयन्त करता है, वे नई सभ्यता के आधार है और वे मूल्य ही गाँधीवादी समाज की आधारशीलाएँ है। यह सच है कि दार्शनिक रूप से गाँधीवाद का एक अ-धर्म निरपेक्ष एवं धार्मिक या अति प्राकृतिक आधार है जबकि समाजवादी दर्शन पूर्णत: धर्म-निरपेक्ष एवं प्राकृतिक या भौतिक है।

गाँधीवाद का दूसरा पहलू भी है जिसे हर समाजवादी को पंसद होना चाहिए, वह है क्रान्तिकारी विधि विज्ञान। गाँधी जी के पहले तक दलितों और शोषितों के पास जालिमों से लड़ने का एकमात्र साधन हिंसक था। संघर्ष के शान्तिमय तरीके एवं आंदोलन करने तक और औद्योगिक श्रमिकों के मामले में हड़ताल करने तक सीमित थे। संघर्ष इन सीमाओं के बाहर नहीं जा सकता था। फलस्वरूप, सामाजिक न्याय के लिए होने वाले संघर्षो की पर्याप्त अभिव्यक्ति असंभव थी। लेकिन गाँधी के सविनय अवज्ञा एवं सत्याग्रह के तरीकों के रूप में दलितों और शोषितों को संघर्ष के लिए एक नया औजार मिला जिससे उनके आंदोलन की सीमा बढ़ी और सामाजिक न्याय तथा सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा को भरपूर अभिव्यक्ति मिली।

गाँधीवाद का तीसरा चरण है विकेन्द्रीकरण। यह विकेन्द्रीकरण वामपंथी क्षेत्र में अति पुरातन तो है लेकिन समाजवादी अपनी सत्ता को ही श्रमिक लोकतंत्र के तुल्य न समझ बैठें और न आर्थिक राजनीतिक सत्ता के केन्द्रीकरण नाश की परिणति का ज्ञान है, उन्हें गाँधीवाद के पहलू पर सावधानी एवं सहानुभूति के साथ विचार करना चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि आर्थिक विकेन्द्रीकरण का अर्थ आधुनिक विज्ञान एवं प्रविधि की अस्वीकृति हो। मतलब कि उत्पादन की आधुनिक प्रक्रियाओं का उपयोग मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण या प्रभुत्व स्थापन के साधन के रूप नहीं होना चाहिए। विचार तो यह होना चाहिए कि भारत जैसे पिछड़ी अर्थ व्यवस्था में उत्पादन पूंजी प्रधान होने के बदले श्रम प्रधान होना चाहिए। विकेन्द्रित उद्योग की आवश्यकता पर गाँधी का विचार समाजवादी पुनर्निमाण सम्बन्धी विचारों के अधिक निकट है। राजनीतिक विकेन्द्रीकरण कमजोर राज्य का निर्माण नहीं न नियोजित जीवन का अभाव हैं समाजवादी समाज की आवश्यकताओं की अनुकूल आर्थिक और राजनीतिक विकेन्द्रीकरण के वास्तविक रूपों को स्वीकार करना गाँधीनिष्ठ लोगों का कार्य हैं इसलिए समाजवादी गाँधीवाद की उपेक्षा करके संकट में पड़ सकता हैं गाँधीवाद का सामाजिक क्रांति और सामाजिक पुनर्निमाण में महत्वपूर्ण योगदान हैं। इसलिए गाँधीवाद को समझना समाजवाद की स्थापना में बहुत अधिक वांछनीय हैं। इस तरह के विचारों से समाजवाद को सर्वोदय की ओर प्रशस्त करने में बहुत बड़ी उपलब्धि हो सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

A Review on the Biomedical Waste Management in Hospitals in India: An Approach Towards Clean Environment

Dinesh Chandra Sharma* Rajesh Gupta** Romila Karnawat***

Abstract - Biomedical Waste Management is a major concern worldwide. Inadequate handling of generated solid waste causes serious hazards to environment as well as living beings. Biomedical waste management has become an important issue as it poses potential health risks and damage to the environment. Biomedical waste if not handled in a proper way, is a potent source of diseases like HIV, Hepatitis B & C and other bacterial diseases causing serious threat to human health, so prime attention needed for its safe and proper disposal.

Today biomedical waste management has become one of major issue of concern in India taking into account the rate of growth of population. In this paper an attempt is made to study the classification, legislation and management practices in relation with biomedical waste in India. The paper includes various management practices adopted for biomedical waste management by various countries. The present review article deals with the basic issues as definition, categories, problems relating to biomedical waste and procedure of handling and disposal method of Biomedical Waste Management. It also intends to create awareness amongst the personnel involved in healthcare unit. Sensitization and public awareness is important to protect environment and public health globally. Biomedical waste management is of great importance due to its infectious and hazardous nature that can cause undesirable effects on humans and the environment.

Keywords- *Biomedical waste management, Health Environment, Handling and disposal, Sensitization, public awareness.*

Introduction - The hospitals generate wide range of wastes including infectious or biomedical waste during diagnosis, treatment or immunization [1]. The biomedical wastes need to be properly segregated at source of its generation and colour coded for transportation, storage, appropriate treatment and disposal. The treatment technologies identified for the biomedical wastes include chemical treatment, autoclaving, microwaving and the incineration [2].Biomedical waste means any waste generated during diagnosis of body parts, immunization of human beings or other living beings. Management of biomedical waste is an integral part of infection control and hygiene programs in healthcare industry [3]. Biomedical waste can be categorized based on the risk of causing injury and/or infection during handling and disposal. It is a common practice that many hospitals, nursing homes, and health care centers dump all the waste at the garbage collection site from where the garbage is taken away by the vehicles for final disposal. Most of the sites are prone for rag pickers who may get infected while handling such infected items. The items picked up are often sold to the market where the concerned persons tend to recycle the used needles, syringes, gloves, discarded drugs,[4]etc, those who use these items face the risk of infection.

The Ministry of Environment and Forests Govt. of India notified the "Biomedical Waste (Management and Handling) Rules" in July 1998.[5] In accordance with these rules, it is mandatory for the producer of biomedical waste to ensure its safe disposal. Johannessen et al gave opinion that proper management of medical waste can minimize the risk both within and outside healthcare facilities. The first priority is to segregate wastes, preferable at the point of generation into reusable and non-reusable, hazardous and non-hazardous components.[6]Since majority of the health care establishments are located within the municipal area, their waste management naturally has a close linkage with the municipal system. At the same time, the civic authority is responsible for public health in the whole of the municipal area. Therefore, the health care establishments must have a clear understanding with the municipality regarding sharing of responsibilities associated with this issue.

Biomedical Waste - Biomedical waste is a waste generated during the diagnosis, treatment or immunisation of human beings or animals or research activities pertaining thereto

*Lecturer, Government College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA
** Lecturer, Government College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA
*** Lecturer, Government College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

or in the production or testing of biological or in health camps. Biomedical waste refers to all the waste generated by a health care establishment.

For describing biomedical waste, different terminologies are used[7]:

(a) Biomedical waste: It indicates waste material which is generated during diagnosis, treatment, immunizations, research, slaughtering of animals, and veterinary practices.

(b) Medical waste: It means any waste which is generated in diagnosis, treatment of human beings, immunizations, treatment of animals, research, production of biological and testing of biologicals.

(c) Hospital waste: It is the waste produced or coming out of the hospitals which may be

• Nonhazardous: 85%• Infectious: 10%• Hazardous: 5%.

(d) Critical waste: Waste generated as a result of medical care in hospitals, nursing homes, diagnostic centers, laboratories, domiciliary care.

(e) Pathological waste: This includes human tissues, human organs, and body fluids, containers which carry above-mentioned items during surgery, other medical procedures, autopsy, and anatomy dissection.

(f) Infectious waste: It means any waste which can transmit bacterial/viral/parasitic infection, even infected animal waste.

(g) Hazardous waste: This is hazardous but not infectious, and includes radioactive substances; chemicals, liquid, gaseous, vapours; pharmaceutical waste, cytotoxic drugs, outdated drugs, etc.

The Government of India (notification,1998) specifies that Hospital Waste Management is a part of hospital hygiene and maintenance activities. This involves management of range of activities, which are mainly engineering functions, such as collection, transportation, operation or treatment of processing systems, and disposal of wastes[8].

Table 1 (see in last page)

Management and Disposal of Biomedical Waste

The most important is to identify, manage and disposal of the biomedical waste. It follows the following steps:

(i) Segregation
(ii) Disinfection
(iii) Storage
(iv) Transport
(v) Final disposal

(i) Segregation - Segregation of the waste is very important[10] because general waste does not become infectious, segregation reduces chances of infection, treatment cost comes down, non-infectious waste can be recycled. Segregation is carried out at the site of waste generation, e.g., wards, operation theatres, ICUs, stores, pharmacy, autopsy room, etc.

For an easy identification of different types of waste, a specific colour code is followed:

(a) Yellow: Yellow plastic bags are used for segregating human anatomical waste; dissected parts; tissue remove dat surgery; aborted foetus; laboratory cultures/specimen; items contaminated with blood or body fluids, i.e., dressing material, cotton, bandages, etc.; animal tissue and carcasses (used in experimental laboratory).They are disposed by using incineration/deep burial.

(b) Red: Red plastic bags or disinfected containers are used for segregating laboratory waste; culture plates; items contaminated with blood; non sharp disposable items like gloves, catheter tubings, intravenous sets, etc. The method used for their disposal: Catheter tubings, etc. are shredded to prevent reuse. After shredding, they are disinfected by autoclaving, microwaving, or using chemicals. Finally,they are sent for incineration.

(c) Blue or white translucent plastic bags: Puncture-proof container-like empty cans or thick cardboard boxes to store sharp items like needles, syringes, scalpel blades, broken glass items, etc. Method of disposal: After shredding these items, either autoclaving, microwaving, or chemical treatment is carried out. The waste is then sent for deep burial or incineration.

(d) Black: Black plastic bags are used to segregate discarded medicines; cytotoxic drugs; chemicals which have been used for disinfection; insecticides; incinerated ash. Method of disposal: Disposal in secured landfills.[11]

(e) Liquid: This waste is disinfected and discarded in drains.

(f) Radioactive waste: This waste is hazardous. It isstored in lead containers in the basement of hospital buildings for a 3- to 6-week period for the radioactivity to disappear. After this period, it is discharged into the drains.

(ii) Disinfection - To render infectious tissues free from pathogenic organisms, disinfection[12] is carried out before transporting and disposing them.

Methods of disinfection

1. Thermal: Dry/wet autoclaving
2. Chemical: Formaldehyde; sodium hypochlorite; ethylene oxide; bleaching powder
3. Irradiation and exposure to ultraviolet rays
4. Use of microwave: A small microwave is used for small quantities of laboratory waste. Larger units are required for large quantities of waste. Grinding, steam spraying, microwave irradiation is used.

(iii) Storage - Until adequate quantity accumulates, the waste needs tobe stored at the site where it is generated. It is necessary to have security at this place to prevent unauthorized persons and rag pickers handling the waste material[13]. If the hospital has its own disposal site (incinerator), the waste can be sent there by proper garbage trolleys.

Treatment of waste - Treatment of waste is the process which modifies the waste in some way before it is taken for final resting place, namely, disinfection; bailing and size reduction; and shredding to make the recyclable item unusable breaking the tip of syringe, needles, etc.

(iv) Transport - The transportation of the garbage can be within the hospital (internal) and from the hospital to the final disposal site(external).

Internal transport - From different areas of the hospital, segregated waste bags are sent to the dumping place of the hospital. Trolleys/carts used for transporting the garbage should not be used for any other purpose. Persons carrying garbage should wear disposable plastic gloves. Spillage must be avoided.

External transport - From the hospital site, the waste must be carried to anappropriate place:

1. Incineration
2. Landfill
3. Vermiculture, etc.

Note that vehicles carrying hospital waste should not carrygeneral municipal garbage.

(v) Final Disposal - Final disposal of waste depends on its category. Non-infectious waste like papers can be recycled. Biodegradable waste can be used for landfill or vermiculture or can be just buried. Infectious solid waste is incinerated. Infectious liquid waste is disinfected and flushed out in the drains.

"Incineration" - Refuse can be disposed of hygienically by burning or incineration. It is the method of choice where suitable land is not available. Incineration is not a proper method in India as the refuse contains a fair proportion of fine ash which makes the burning difficult. A preliminary separation of dust or ashis needed. All this involves heavy outlay and expenditure, besides manipulative difficulties in the incinerator. Burning has a limited application in refuse disposal in India.

Environmental Concern - There is urgent need for planning, implementation of procedures and practices that are updated at various levels of plan concerning management of biomedical wastes associating it with health of the environment[14]

The following are the main environmental concerns with respect to improper disposal of bio-medical waste management:

Spread of infection and disease through vectors (fly, mosquito, insects etc.)which affect the in -house as well as surrounding population. Spread of infection through contact/ injury amongmedical/ non-medical personnel and sweepers/rag pickers, especially from the sharps (needles, blades etc.).Spread of infection through unauthorised recycling of disposable items such as hypodermic needles, tubes, blades, bottles etc.Reaction due to use of discarded medicines. Proper methods of treatment of bio medical waste needs to be developed for health and environmental safety. Safe disposal of biomedical waste is now a legal requirement in India. The Biomedical Waste Management & Handling) Rules, 1998 came into force in 1998. In accordance with these rules, it is the duty of every "occupier" i.e. a person who has the control over the institution or its premises, to take all steps to ensure that waste generated is handled without any adverse effect to human health and environment[15].

Conclusion - From the results of the study, it shows that biomedical waste management in the hospitals studied is following there quired standards and regulations. The study revealed that the system of biomedical waste management should be improved and there is lack of necessary knowledge and information regarding biomedical waste management. However, a continuous proper management of biomedical waste in the hospitals cannot be practiced as there are some deficiencies and weaknesses in the management. Controlling waste is an important part of public health where improperly managed waste can create conditions that may have severe adverse effects on public health and the environment. Proper storage, collection, transportation, and disposal are key elements to controlling biologic and infectious wastes. Based on the Guidelines, to manage biomedical wastes effectively, consideration needs to be given to the generation and minimization, source separation and segregation, identification and labelling, handling and storage, safe transportation and treatment. The occupational safety and health, public and environmental health as well as research and development into improved technologies and environmentally friendly practices should also be considered as accordance to the guideline. It is no doubt that problem in improper segregation of biomedical waste and general waste is a common problem in biomedical waste management worldwide. However, it is still important to keep the segregation process according to the standard and guidelines as to ensure the safety and health of the people and environment. Future research is encouraged to be conducted as to oversee and further assess the current status of biomedical waste management and the problems exist. Broader aspects on biomedical waste management such as risk assessment of the practices of biomedical waste in hospitals should be conducted as to analyse the risks associated at every steps of the management. It is suggested that study should be conducted at all hospitals in India.

References :-

1. Radha KV, Kalaivani K, Lavanya R. A case study of biomedical waste management in hospitals, Global J. Health Sci. 2009; 1(1):82-87.
2. UNEP. Compendium of Technologies for Treatment/ Destruction of Healthcare Waste, United Nations Environment Programme Division of Technology, Industry and Economics International Environmental Technology Centre, Osaka, Japan. 2012, 105-201.
3. Abor, P. A., Anton, B, Medical Waste Management Practices in a Southern African Hospital. International Journal of Health Care Quality Assurance, 4, 2008, 356-364.
4. Meyers GD, McLeod G, Anbarci MA. An international waste convention: Measures for achieving sustainable development. Waste Manag Res 2006;24:505-13.
5. Bio-Medical Wastes (Management and Handling) Rules: Gazette by Govt. of India (1998/2000).
6. Johannessen, 1. M., Dijkman, M., Bartone, C., Hanraban, D., Boyer, G. and Chandra, C. (2000), Healthcare Waste Management Guidance Note, Health

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX 664

Nutrition and Population discussion Paper.

7. Poonam Khanijo,Ahluwalia and Arvind K Neema. Multi-objective reverse logistics model for integrated computer waste management. Waste Manag Res 2006;24:514-26.
8. Govt. of India, Ministry of Environment and Forests Gazette notification No 460 dated July 27, New Delhi: 1998: 10-20.
9. Source- The Bio Medical Waste (Management and Handling) Rules, 1998.
10. Gupta S, Boojh R. Biomedical waste management practices in Balrampur Hospital, Lucknow, India. Waste Manag Res 2006;24:584- 91.
11. Agamuthu P Post-closure of landfill: Issues and policy. Waste Manag Res 2006;24:503-4.
12. Block SS. Disinfection, sterilization and preservation. 5th ed. Lippincott Williams and Wilkins publication; 2001.
13. Hörsted-Bindslev P. Amalgam toxicity - environmental and occupational hazards. J Dent 2004;32:359-65.
14. Gautam V, Thapar R and Sharma M (2010). Biomedical waste management: Incineration vs. environmental safety. Ind. J. Medical Microbiol. 28 (3):191 – 192
15. Gravers PD. Management of Hospital Wastes- An overview. Proceedings of National workshop on Management of Hospital Waste,(1998)

Table 1 : Categories and Components of Biomedical Waste[9]

Category	Waste Content	Components	Method of treatment and disposal
Category No. 1	Human Anatomical Waste	Human tissues, organs, body parts	Incineration /deep burial
Category No. 2	Animal Waste	Animal tissues, organs, body parts carcasses, bleeding parts, fluid, blood and experimental animals used in research, waste generated by veterinary hospitals colleges, discharge from hospitals, animal, Houses	Incineration /deep burial
Category No 3	Microbiology & Biotechnology Waste	Wastes from laboratory cultures, stocks or specimens of micro- organisms live or attenuated vaccines, human and animal cell culture used in research and infectious agents and industrial laboratories, wastes from production of biological, from research toxins, dishes and devices used for transfer of cultures	Local autoclaving/ micro waving/ incineration
Category No. 4	Waste sharps	Needles, syringes, scalpels, blades, glass, etc. that may cause puncture and cuts. This includes both used and unused sharps	Disinfections chemical treatment /autoclaving/micro waving and mutilation shredding
Category No. 5	Discarded Medicines and Cytotoxic drugs	Wastes comprising of outdated, contaminated and discarded medicines	Incineration / destruction & drugs disposal in secured landfills
Category No. 6	Solid Waste	Items contaminated with blood, and body fluids including cotton, dressings, soiled plaster casts, lines, beddings, other material contaminated with blood	Incineration, autoclaving/ micro waving
Category No. 7	Solid Waste	Wastes generated from disposable items other than the waste sharps such as tubing's, catheters, intravenous sets etc	Disinfections chemical treatment / autoclaving/ micro waving and mutilation shredding
Category No. 8	Liquid Waste	Waste generated from laboratory and washing, cleaning, house-keeping and disinfecting activities	Disinfections by chemical treatment and discharge into drains
Category No. 9	Incineration Ash	Ash from incineration of any bio-medical waste	Disposal in municipal landfill
Category No. 10	Chemical Waste	Chemicals used in production of biological, chemicals used in disinfection, as insecticides, etc	Chemical treatment and discharges into drains

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

राजस्थानी हरजसों में लोक जीवन एवं लोक संस्कृति

डॉ. विनीता कौशिक *

प्रस्तावना – जीवन का हरेक क्षण संस्कृति की दुनिया से जुड़ा होता है। जिनमे जीवन के वे सभी प्रमुख पक्ष जुड़े है जैसे – लोक धर्म, लोक विश्वास, लोक वार्ता, लोक परिवार, लोक निवास, लोक पोषाक, रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाल एवं लोक कलाएं आदि।

एक डाल दोय पंक्षी बैठया, कुण रे गुरु कुण चेला।
यो संसार माया की नगर, दो दिन को सो खेला।[1]
लकडी रे काटत हा लकडी रे बोली तू ही रे खातीड़ा म्हारो संगसाथी
अच्छी अच्छी लकड़ी काट ले रे खातीड़ा इक दिन मोहे संग जल नासी
फूलड़ा रे तोडत हॉ कलियॉ रे बोली तू ही रे मालीड़ा म्हारों संगसाथी
अच्छी अच्छी कलियॉ तोड़ ले मालीड़ा इक दिन मोहे संग कुमलासी।[2]

अन्य और भी उदाहरण इस प्रकार दृष्टव्य है –

जिस रे काया पर बंदा दूब उगेगी, जै मैं गऊ रे चरेगी मस्तानी
जिस रे काया पर वंदा महल बनेगा, जै में रे बारी रहेगी आसमानी।[3]

इसी प्रकार गुरु व संतो के प्रति जो श्रद्धा विश्वास मध्यकालीन धार्मिक आंदोलन के भक्तों व चिंतकों ने दिया उसका प्रत्यक्ष प्रभाव राजस्थानी हरजसों में निहित है :–

थौंका चरण पकड़ती जाऊँ म्हारा ग्यानी गुरुजी
इण तो संसार सागे रे बहती सी नदियॉ
पांव चूकै तो वह जाऊँ म्हारा ग्यानी गुरु जी।[4]

राजस्थानी हरजसों में यहां के लोक विश्वास, मान्यताऐं व रुढ़ियां समग्र रुप से समाहित है। लोक देवता के रुप में जिण पाबूजी की पूजा की जाती है। उनका जीवन बलिदान की प्रेरण संजोये हुए है। गाय को माँ के समान पूज्य भाव से देखना, उसकी रक्षा करना तथा पाबूजी द्वारा कहा गया कथन कि 'वीर पुरुष' स्त्री पर शस्त्र नहीं उठाते। ये सभी बातें राजस्थान की लोक संस्कृति की परिचायक है जो हमें यहां गाये जाने वाले भक्ति गीतों में स्पष्ट होती है।

उदाहरणार्थ –

थारी रो गाया में ये खींची धोग फेरिया,
कायां रे मूड़ मारियों को सुगरथ थारा स्यामेना।[5]

सोडी का कथन –

'चढ़ो जी रणबांका पाबू भल गायां री बार'[6]

इसी प्रकार स्त्री पर प्रहार नही करने के संबंध में –

'कोई मरद तो नारी पर रे डामाजी ससतर ना धरे'[7]

'लोक विश्वास' व 'शकुन–अपशकुन' लोक समाज मे प्रत्येक कदम पर उनके साथ रहते है। आंख फड़कने से संबंधित लोक मतहै कि – बायीं आंख फड़कना शुभ संकेत होता है और दायी आंख के लिपय कहा जाता है कि –

'आँख फडूके दाहिनी लात–ममूंका सहनी'।

इसी संदर्भ में एक लोक भजन में शुभ शकुन की सूचना दी जा रही है।

'आज घुराऊँ धूंधड़ो बिच बीजली चमके ए'
म्हारा सतगुरु दीखे आवता म्हारो डावी आंख फरोखे है।[8]

अन्य –

'मैं निश दिन रहूँ उदासी, म्हारो वो शुभ दिन कब आसी'
म्हारी आँख फरुखे भाई कोई संत मिलेला कांई।[9]

इसी तरह पितरो की पूजा का भी वर्णन है। चौदस व अमावस को ही पितरों का आवाहन, रातिजगा व दीया जलाया जाता है।

छोटी सह तलाई जो दुधां से भराई आयो,
पितरां की लसकर पीयेगो।
चौदस ने थे आणो जी, अमावास ने थे आवो जी,
थरी वाड़ी की बेल बघाय ज्यो।[10]

अत: देखने में आता है कि राजस्थान के हरजसों में लोक विश्वास व लोक मान्यताएं बिखरी पड़ी है। राजस्थान के हरजसों में पारिवारिक संबंधों का भी कई स्थानों पर वर्णन है।

'सास बहू ने ढूंढी मोरी मान और छैर जिठाण्यां ने ठूंठी मोरी माय,
गाणत बाल्या ने ठूठर है भवानी आप सभी जी छींक चौथ जी।।'[11]

अनेक हरजस में घरों व दीवारों को गोबर से लीपने का जिक्र है।

जैसा कि :– गोबर भरियो छाबड़ो ए बहु लेपर थे सिंध चाल्या,
माता शीतला भंढ़ विजराजिया ये सासुगढ़ नीपढ़ म्हे चाल्यां।।[12]

कुछ हरजसों ने पोशाकों का भी वर्णन देखने को मिलता है।

'ऐडी टेडी पगड़ी बांधे, गोडा सूधी धोती रे,
कांधे पर औजार बसोती, हाथ में लियो किरोती रे'।[13]
म्हाराँ बोरंग चूनड एक बाई रो वां ओंडैली
म्हाराँ दातो बावियो चुडलो एक बाई रौवा पहर लियो।[14]
चूनड़ी रंगा दे ये मेरी रातादेयी माय
आई ये सावणियारी तीज बाई ओढसी।[15]

खान–पान का भी जिक्र इन हरजसों में देखने को मिलता है।

करमा खीचडो का करल्यायी उपर घी की धार लगायी,
कुडची खाटा की भरल्यायरी बेटी जाटां री।[16]
आज चूरमों कर देसी, तडके सीरो पूडी कर देस्यूं
परसूं राबड़ी कर देस्यूं बेटी जाटा री।[17]

अत: कहा जा सकता है कि लोक–साहित्य में हरजस एक महत्वपूर्ण विधा है जिसके माध्यम से हमें राजस्थान के धार्मिक वातावरण, लोक विश्वास, खान–पान, आभूषण, वेशभूषा आदि की व्यापक जानकारी

* सह आचार्य (हिन्दी) राजकीय महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

मिलती है। अत: लोक जीवन एवं लोक संस्कृति में हरजसों का अपना विशिष्ट स्थान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शांति आश्रम बीकानेर
2. किसनलाल जी, जाति आचार्य, उम्र 88 वर्ष, निवासी बड़लो का चौक जोधपुर
3. आईदान सिंह जी भाटी, जाति राजपूत, उम्र 93 वर्ष निवासी रामगढ़- जैसलमेर
4. बिसनी देवी, जाति कुम्हार, उम्र 89 वर्ष निवासी औसिया, जोधपुर
5. पाबूजी मरु भारती, अंक फरवरी 1953, संपादक- डॉ. सहल, पृ. सं. 40
6. पाबूजी मरु भारती, अंक फरवरी 1953, संपादक- डॉ. सहल, पृ. सं. 40
7. पाबूजी मरु भारती, अंक फरवरी 1953, संपादक- डॉ. सहल, पृ. सं. 40
8. चेतावनी पद संग्रह, प्रथम भाग, प्रकाशक बजरंगलाल , सुजानगढ़
9. चेतावनी पद संग्रह, प्रथम भाग, प्रकाशक बजरंगलाल , सुजानगढ़
10. राजस्थानी लोक गीत, डॉ. स्वर्णलता अग्रवाल, पृ.सं. 10
11. रातीजगा के गीत में गाया जाने वाला भक्ति गीत, सुशीला बाई 85 वर्ष, ब्राहमण निवासी बड़लोक का चौक, जोधपुर
12. फूलीबाई, गांधी कालोनी, जैसलमेर उम्र 79 वर्ष
13. जानकीबाई जाति ब्राहमण उम्र 86 वर्ष, चौदन जैसलमेर
14. मारवाड़ी गीत संग्रह, कलकत्ता, पृ.सं. 5 व 162
15. मारवाड़ी गीत संग्रह, कलकत्ता, पृ.सं. 5 व 162
16. करमाबाई के गीत में से स्वयं द्धारा भी सुना व गया है।
17. करमाबाई के गीत में से स्वयं द्धारा भी सुना व गया है।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Protection of Human Rights : Legal Position of Indian Scenario

Firoz Ansari*

Introduction - ***"To deny people their human rights is to challenge their very humanity" — Nelson andela***

The State maintains the framework of social order by implementation of various laws without which well-ordered social life would not be possible. According to Aristotle, State came into existence out of base necessities of life and continues for the sake of good life.[1] Prof. Laski expressed that State is known by the rights it maintains.[2] Similarly Locke was of the view that end of state is to remove the obstacles that hinder the development of an individual.[3] Thus, the existence of the state is recognized with the protection of rights and liberties of individual which is the main object of state.

These rights had place in all ancient societies though referred by different names[4], it includes civil rights, liberties and social cultural and economic rights. These rights are essential for all individual as these are consonant with the freedom and dignity and ultimately contribute to social welfare.[5]

Protection of human rights is a necessity for the development and growth of an individual personality, which ultimately contributes in the development of the nation as a whole. The United Nations through its charter represents a significant advancement in the direction for the promotion as well as protection of human rights. International bill on human rights has been incorporated in the UN Charter. The UN Charter contains various provisions for the promotion of human rights and fundamental freedoms in the Preamble and in various Articles 1, 13(b), 55, 56, 62 (2), 68 and 76(c).[6] Apart from UN Charter there are four international instruments created under the auspices of the United Nations known as International Bill of Human Rights, which include the Universal Declaration of Human Rights 1948, the International Covenant on Civil and Political Rights 1966, and the International Covenant on Economic, Social, and Cultural Rights 1966, the Optional Protocol to the International Covenant on Civil and Political Rights, 1966.[7] The international human rights regime is continuously growing with the passage of time, it provides certain accepted legal standards which all the nations should accept and implement in their domestic laws. The Governments of all the nations must work to promote the welfare of people by eliminating all forms of discriminations and provide right to equality and justice to all.

Objectives Of The Study - The proposed work has been conducted to fulfill the following objectives:

1. To analyse the value of human being.
2. To study the role of judiciary in interpreting as well as protecting right to life and personal liberty and its horizons.
3. To study the role of human right commission of India.
4. To study emphasis on social, economic, political, cultural and psychological development of every member of the society.

Research Methodology - The methodology of this proposed work is descriptive and required information's are collected from different primary and secondary sources like books, journals, research articles, different government documents etc.

Human Rights In India - India is the biggest democracy in the world. Being a democratic country one of the main objectives is the protection of the basic rights of the people. The Constitution of India recognizes these rights of the people and shows deep concern towards them.

The Universal Declaration of Human Rights contains civil, political, economic, social and cultural rights. Constitution guarantees most of the human rights contained in Universal Declaration of Human Rights. Part III of the constitution contains civil and political rights, whereas economic, social and cultural rights have been included in Part IV of the Constitution.[8] All the statutes have to be in concurrence of the provisions of the Constitution.

The philosophy and objective of the Constitution of India is enshrined in the preamble which include the protection of the dignity of an individual. For the fulfillment of this objective Part III of the constitution guarantees fundamental rights to people which are essential for the development of an individual personality, these rights include right to equality, the right to freedom, the right against exploitation, the right to freedom of religion, cultural and educational rights and the right to constitutional remedies. It is the duty of the central as well as state Governments to provide adequate conditions to each individual to enjoy their human rights. The constitution through Directive Principles

***Assistant Professor, Faculty of Law, Agra College, Agra (U.P.) INDIA**

of State Policy enshrined in the Part IV of the Constitution, ascertains the duties on the government to work for the welfare of the people and protection of human rights of the people. These are guiding principles for the state to make policies regarding distributive justice, right to work, right to education, social security, just and humane conditions of work, for promotion of interest of weaker section, raise the standard of nutrition and standard of living and to improve public health, protection and improvement of environment and ecology etc. so that each individual can enjoy rights to the fullest.

In ***Gujarat Communal Riot's Case,***[9] the commission took suo-motu action on communal riots, took place in Gujarat in early 2002; based on media reports.[10] The Commission also received an e-mail communication requesting the Commission to intervene. A team of the Commission had visited Gujarat in March, 2002 and prepared a confidential report, which was later published. The Commission observed that the State has failed to discharge its primary and inescapable responsibility to protect the rights to life, liberty, equality and dignity of all of those who constitute it.

In Bonded Labourers Working in Chauna Stone Mines, District Gwalior Madhya Pradesh,[11] Bonded Labour Liberation filed a complaint that 400 bonded labourers had been working in Chauna Stone mines in District Gwalior and they were not paid their wages; besides they were tortured and harassed. Commission asked government to direct Labour Commissioner, MP to ensure the inspection of these establishments and strict enforcement of all labour laws. 44 persons were released and sent to other districts as per their wishes. In a subsequent report, Labour Department, Government of M.P. stated about the rehabilitation of released labourers and also indicated the action taken against the guilty employers. On consideration of the report, Commission closed the case.[12]

In ***Case No. 2432/4/39/2012***,[13] the Commission has taken suo-motu cognizance of a press report titled "Kids thrashed for refusing insect infested school meal" The report alleged that students of a school at Mithani Milki village of Vaishali district near Patna were allegedly thrashed by their headmaster till they fainted for refusing to eat a mid-day meal of khichdi in which they found insects. The Commission issued notice to the Chief Secretary, Government of Bihar and the District Magistrate, Vaishali to submit a report in the matter and also about the steps taken by them. The SP Vaishali, Bihar submitted report that chargesheet has been filed before the Court against the Head Master of the school. District Magistrate, Vaishali, Bihar, further directed to send a report along with proof of payment within six weeks, regarding payment of interim monetary relief to the victim students of SC community under the provision of Rule 12 (4) of SC/ST (PA) Rules 1995. Response received in the matter is under consideration of the Commission.

In ***Case No.1155/35/5/2014***[14] commission took the suo-motu cognizance of the matter on report published in Hindi Newspaper titled 'Is school main bachche helmet pehan kar karteh hain padhai'. According to the newspaper report, in a school in village Doodhli, 25 kms from Dehradun, children wear helmet while studying in the class room. It has been mentioned that building of the school in which they study is in dilapidated condition and plaster from the roof continuously falls. This fall of plaster from the roof has resulted in injuries to many students. Therefore, for protecting the heads of children from injuries, the parents have provided helmets to the children for use in the school. The contents of the press report raised a serious issue of violation of human rights of school children. Commission issued notice to the Secretary, Department of Education, and directed to submit a report in respect of the various school buildings in a dilapidated condition in the State and the corrective measures taken/ proposed to be taken by the State Government. District Magistrate, Dehradun was also directed to submit a report in respect of the number of children who have suffered injuries in the school, details of medical treatment provided to them as well as any ex gratia relief granted by the State Government. The matter is pending under consideration of the commission.

On 5 October, 2016 the National Human Rights Commission has taken suo-motu cognizance of a media report that a prisoner of the Greater Noida Jail, an accused in the lynching of Mohammed Ikhlaq of Dadri, has died in a Delhi hospital during treatment. Observing that the contents of the news report raised a serious issue of violation of human rights of the prisoner, the Commission issued notices to the Director General, Prisons and the Director General of Police, Uttar Pradesh calling for a report in the matter within four weeks. The allegations regarding beating of the prisoner by some police personnel in judicial custody are serious in nature. Even in the judicial custody, a prisoner cannot be deprived of his Right to Life ensured by the Constitution of India. The family members have all the rights to know about ill health of the prisoner. Someone, who is suffering from illness in judicial custody can not avail the medical treatment of his own. Therefore, the Commission observed, it is the duty of the authority under whose guardianship he is being detained, to protect his Right to life, which cannot be exercised, if proper medical treatment is not provided to him in time. The family members have alleged that Ravi, the deceased was being kept in a separate cell by the jail authorities and mercilessly beaten up by some police officials inside jail on the 30th September, 2016, due to which his condition deteriorated. According to the media report, the authorities did not inform the family about the deteriorating condition of the prisoner. It was only after his death on the 4th October, 2016, that his family was informed.[15] The matter is pending before the Commission.

ii) State Human Rights Commission - Power to constitute commission at state level is conferred on the state government under Section 21 (1) of the Act. The

Commission is composed of chairperson and four other members. The State Commission is empowered to perform similar functions, which have been entrusted to the National Human Rights Commission. State Commission inquiries into violations of human rights only in respect of matters related to any of the entries enumerated in List II and III in the Seventh Schedule of the Constitution. The study of treaties and other international instruments on human rights have been excluded from the purview of State Human Rights Commission.

As regards the mechanism for the redress of human rights grievances in Union Territories, the Minister of Human Affairs had taken the position that the best way of proceeding may be through the extension of the jurisdiction of the State Commissions of neighbouring States into the adjoining Union Territories, as has been done in respect of High Courts.[16]

iii) Human Rights Courts - State government set up these courts with concurrence of the Chief Justice of the High Court, by notification specifying for each district a Court of Session to be a Human Rights Court under Section 30. State Government appoints Special Public Prosecutor to conduct cases in human rights court under Section 31 of the Act.

Human Rights Courts have been set up in the States of Assam, Andhra Pradesh, Sikkim, Tamil Nadu and Uttar Pradesh.[17] Commission stays in touch with the concerned High Courts with a view to making clear the precise nature of the offences to be tried in such courts and other details regarding the conduct of their business.[18]

The National Human Rights Commission has made an inquiry into thousands of complaints it has submitted reports to the government on various matters wherein it has made a number of recommendations suggesting measures to be taken to curb the human rights violations. In August 2016 it has received 7822 fresh complaints and has disposed of 7772 fresh as well as old cases.[19]

iv) Role of NGOs - NGOs have key role to play in planning, monitoring and evaluation of the process of the protection of human rights. B.R.P. Bhasker[20] points out that "in the field of human rights, the role of NGO is particularly important as Government or their agencies often become violators of the very rights they are committed to protect and promote vast sections of the people who are illiterate and ill- informed, and that makes it easy for rights violators to act with impunity. Against this background human rights education assumes importance and this task is primarily performed by NGOs".

Even the Government has also recognized the crucial role played by the NGOs in various fields. They are playing a remarkable role in various fields such as education, health, environment protection and protection of the rights of the various classes of people. Some of the NGOs working in this field are - Saheli for women's rights, Youth of Voluntary Action for eradication of child labour, Bandhua Mukti Morcha for eradicating bonded labour, People's Union for Civil Liberties and citizens for democratic rights have also playing a crucial role as they have taken up various instances of human rights violation before the Supreme Court of India. There are several instances where NGOs were the first to report the violation of human rights to the concerned authorities. The National Human Rights Commission has taken action on several complaints, mainly reports by local NGOs from different parts of the country.[21]

The Protection of Human Rights Act under Section 12 (i) expressly provided the Commission to "encourage the efforts of non-governmental organizations and institutions working in the field of human rights". This is a responsibility which Commission readily assumes, for the cause has much to gain both from practical help and from the constructive criticism that NGOs and the Commission can bring to bear in their mutual interaction and growing relationship.[22] To this end the Commission has, from time to time, invited leading human rights activists and NGO representatives for discussions and advice and sought their help in practical ways. In addition, in every visit to a State, the Commission has made it a point to benefit from experience and knowledge of NGOs, whose contacts at the "grass-roots" level give strength and meaning to the human rights movement where it matters most.[23]

Conclusion - The Indian Constitution is a document rich in human rights jurisprudence. This is an elaborate charter on human rights ever framed by any State in the world. Part III of the Indian Constitution may be characterized as the 'Magna Carta' of India. The Judiciary in India plays a significant role in protecting human rights. The Indian Courts have now become the courts of the poor and the struggling masses and left open their portals to the poor, the ignorant, the illiterates, the downtrodden, the have-nots, the handicapped and the half-hungry, half-naked countrymen. In the end we have suggested that regarding the subject matter of the proposed work which involves various moral, socio-economic, cultural, political, human right education, dignity of the individuals, social security, social justice, clean and healthy environment and equality issues.

References :-

1. J.S. Badyal, Abc of Political Science 73 (Raj publishers (Regd.), Jalandhar, 2005).
2. Dr. S. Subramanian, Human Rights International Challenges Vol.1 3 (Manas Publication, New Delhi, 1997).
3. S.K. Kapoor, International Law & Human Rights 800(Central Law Agency, Allahabad, 17th edition 2009).
4. Supra note 6 at 886. 23
5. Shayan Javeed and Anupam Manuhaar, "Women and Wage Discrimination in India: A Critical Analysis March 19 –
6. Justice J.S. Verma, Second Justice M. Hidayatullah Memorial Lecture "Protecting Human Rights through the Judicial Process" on 21 December 2002 at Raipur, 15, available at http://nhrc.nic.in/Documents/ JHidyaMemo-II.pdf (Last visited on August 8, 2016).

29

7. These recommendations were made on the basis of the National Seminar on "Prison Reforms" held on 13 - 14 November, 2014, the National workshop on "Human Rights Defenders" held on 19 February, 2015, National Conference on "Leprosy" held on 17 April, 2015 and State Mental Health Secretaries held on 5 September, 2015 "Journal of the National Human Rights Commission", vol.14 at 335 – 355(2015).
8. Arun Ray, National Human Rights Commission of India: Formation, Functioning, and Future Prospects 518 (Khama Publisher, New Delhi, 2nd edn., 2004).
9. Case No. 1150\6\2001-2002, 6 March 2002.
10. Case No: 1351/12/2001-2002(FC).
11. Shashi Motilal and Bijayalaxmi Nanda, Human Rights, Gender and Environment 113 (Allied Publishers Pvt. Ltd., Mumbai, 2010).
12. P. Sukumar Nair, Human Rights in a Changing World 35(Gyan Publishing House, New Delhi, 2011).
13. S.N. Chaudhary, Human Rights and Poverty in India: Theoretical Issues and Empirical Evidences, Vol. 5, 216 (Concept Publishing Company, New Delhi, 1st edn., 2005).
14. State of Karnataka v. Union of India and another, (1977) 4 SCC 608. 37
15. Abdul Jabbar Hague (2019), Challenges of corruption and good governance: a human rights perspective in India, Indian Bar Review, Vol. 46(1), 77-92.
16. Kapoor Madhu (2017), Human rights and justice in the orbit or duty, Indian Human Rights Law Review, Vol. 8 (2), 174-182.
17. Das Atin Kumar and Haque Abdul Jabbar (2017), Law relating to violation of women rights in India: An analysis from the Human Rights perspective, Indian Human Rights Law Review, Vol. 8 (2), 225-237.
18. Oza Dr. Rashnii M. (2016), Secularism and human rights in India : a contextual analysis of equality under International Human Rights Law (With special reference to Religious Minorities), AIR 8-13.
19. *Singh Smita and Sharma H.K. (2014),* Human Right Of Child : Forced Eviction And Child, Manglam-Year 05 (02),Vol. IX, August 2014 ISSN-0976-8149, P-I-8
20. Shabbir Mohammad (2012), Human Right in the 21st Century, Published in India by Cyber Tech Publications, New Delhi.
21. Lakshmi K. Vijaya (2009), Women's Rights are Human Rights, AIR, 22-30.
22. *Subramanium Gopal* (2008)*,* Contribution of indian judiciary to social Justice principles underlying the universal Declaration of human rights, Journal of The Indian law Institute, Vol. 50(4): 593-605
23. Sikri A.K. (2006), *Human Rights and Indian Judiciary,* The Official Journal of NALSA, Vol. VII, Issue 4, p. 55-84

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

A Study of Achievement Motivation at Senior Secondary Students of Uttar Pradesh Madarsa Board

Mohammed Iqbal Yusuf Ansari* Dr. Naseem Ahmad**

Abstract - The present study was undertaken to investigate the achievement motivation of adolescents and its relationship with learning outcomes. The study was conduct to 431 senior secondary level students of U.P Madrsa board studying in different madrsas of Uttar Pradesh by using random sampling techniques from various government and non-government managed madrsas within the age range of 16-18 years. The finding of the study revealed significant difference in achievement motivation with regard to gender. Another finding of the study was the average achievement motivation of the students of U.P Madrsa board.
Keywords - Achievement Motivation, madrsa board, senior secondary level, gender.

Introduction - Motivation is an important factor for shaping and achieving determines the certain, predicated learning outcomes. Achievement motivation defined as "Tendency to strive for success or to attain a desirable goal". Psychologists believe that motivation is a necessary ingredient for learning (Biehler & Snowman, 1986). Achievement motivation, academic achievement was proved to be the most dominant factor. Academic achievement motivation had a high impact on the academic performance of students. Academic achievement motivation and academic performance of students were significantly correlated and interdependent. In present scenario many student is face the problem of school education. Finally high school board exam because pressure of best performance to academic achievement. Educational performances are evaluated in terms of marks obtained in an examination. On the basis of marks obtained, school children are discriminated along the lines of divisions, which are indicative of normal and low feel of performance respectively. These realities of life generate a need for high educational achievement in boys and girls which motivate them to strive hard to achieve highest educational standards. A number of factors influence children's achievement in school. Influence on school achievement may originate from the level of intelligence their motivation, attitudes and emotional reaction to school and family environment.

Objectives of the study - Every research must have some objectives to achieve. The present study aimed at achieving the following objectives:

1. To explore the level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board students.
2. To find out the achievement motivation level and gender differences.

Hypothesis-

To every problem, there may be more than one solution. As for that matter formulated following hypotheses.

H_1 The level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board students is satisfactory.

$H_{1.1}$ The level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board Male students is satisfactory.

$H_{1.2}$ The level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board Female students is satisfactory.

$H_{1.3}$ There is no significance of Male and Female Students of achievement motivation of U.P. Madarsa Board.

Research Methodology - Present study is based on survey method. A lot of students studies in various Madarsa in Uttar Pradesh. A Sample frame is a source material from which a sample is taken it is a collection of all those with in a population who can be sampled Sample will take from various Madarsa in U.P. base on simple random method. Sample and analytical frame will use in this study.

Population and Sample - The population area of present study is state of Uttar Pradesh, India. The sample was drawn from seven different Madarsas of Amroha, Bareilly, Raebareli and Sitapur Districts which are recognized with U.P. Board of Madarasa Education. Only Alim (first & second year) students were selected as participants of the study. The sample for the investigation comprises 431 boys and girls from various government funded and non-funded madarsas. Participants were 237 male and 194 female students, who were ranged in age from 16 to 18 years. The sample was obtained through multi stage random sampling. The madarsas were considered as a cluster and sample randomly selected. In each selected madarsa has several sections of Alim (Arbi & Persian) and among these, one

* Research Scholar, Department of Education, Shri Venkateshwara University, Gajraula (U.P.) INDIA
** Research Supervisor, Department of Education, Shri Venkateshwara University, Gajraula (U.P.) INDIA

section was selected randomly. All the students of randomly selected classes were considered as a cluster and formed the final sample of the study. The random sampling procedure has been adopted for the investigation.

Instrumentation - Academic Achievement Motivation Tool (AAMT) of T R Sharma (1984) used.

Data Analysis and result discussion

Mean, standard deviation and *t*-test was used for mean differences using SPSS. The results obtained thereby have been presented and interpreted. The analysis and interpretation has been presented on the basis of the following objective.

Finding: 1

	N	Range	Mini -mum	Maxi -mum	Mean	Std. Deviation
AAMT	431	23	15	38	29.97	4.542

Table shows the score distribution of the total sample. The students of the U.P Madarsa board secured minimum 15 and maximum 38 marks in academic achievement motivation test (AAMT) which having the range 23(which are distributed range 23). The mean is 29.97 of the total secured marks of the students is pointing out average motivation level according to AAMT tool norms. It also revealed that the academic achievement motivation level of U.P Madarsa board students is average.

Level	**Score Range**	**Total No.**	
		N	**%**
High Motivated	33 And Above	163	37.82
Average Motivated	26-32	197	45.71
Low Motivated	25 And Below	71	16.47
		431	100%

It is revealed from the table that the students have the highest percentage of those falling in the 'high motivated', 'average motivated' and 'low motivated' Achievement Motivation' category with the score of 37.82, 45.71 and 16.47 percentage respectively. It also observed that 45.71 students of total population is average motivated. We can say near about half of total population is average motivated. The percentage of high motivated students 37.82 is revealed which is enough good. On the behalf of it we can say academic achievement motivation level of U.P Madarsa board students is satisfactory. It also find that there is very less No. of low motivated students which are 16.47 of total population.

Finding: 2

	N	Range	Mini -mum	Maxi -mum	Mean	Std. Deviation
AAMT	237	22	16	38	30.76	4.603

Table shows the score distribution of the total Male sample. The Male students of the U.P Madarsa board secured minimum 16 and maximum 38 marks in academic achievement motivation test (AAMT) which having the range 22(which are distributed range 22). The mean is 30.76 of the total secured marks of Male students is pointing out average motivation level according to AAMT tool norms. It also revealed that the academic achievement motivation level of U.P Madarsa board Male students is average.

Level	**Score Range**	**Total No.**	
		N	**%**
High Motivated	33 And Above	119	50.21
Average Motivated	26-32	84	35.44
Low Motivated	25 And Below	34	14.35
		237	100%

It is revealed from the table that the students have the highest percentage of those falling in the 'high motivated', 'average motivated' and 'low motivated' Achievement Motivation' level with the score of 50.21, 35.44 and 14.35 percentage respectively. It also observed that 50.21 students of total Male population is high motivated .we can say half of total Male population is high motivated. The percentage of average motivated Male students 35.44 is revealed which is enough .On the behalf of it we can say academic achievement motivation level of U.P Madarsa board Male students is satisfactory. It also find that there is very less No. of low motivated Male students which are 14.35 of total Male population.

Finding: 3

	N	Range	Mini -mum	Maxi -mum	Mean	Std. Deviation
AAMT	194	23	15	38	29.00	4.283

Table shows the score distribution of the total Female sample. The Female students of the U.P Madarsa board secured minimum 15 and maximum 38 marks in academic achievement motivation test (AAMT) which having the range 23(which are distributed range 23). The mean is 29.00 of the total secured marks of Female students is pointing out average motivation level according to AAMT tool norms. It also revealed that the academic achievement motivation level of U.P Madarsa board Female students is average.

Level	**Score Range**	**Total No.**	
		N	**%**
High Motivated	33 And Above	22	11.34
Average Motivated	26-32	125	64.43
Low Motivated	25 And Below	47	24.33
		194	100%

It is revealed from the table that the students have the highest percentage of those falling in the 'high motivated', 'average motivated' and 'low motivated' Achievement Motivation' level with the score of 11.34, 64.43 and 24.23 percentage respectively. It also observed that 64.43 students of total Female population is average motivated .We can say more than half of total Female population is average motivated. The percentage of high motivated Female students 11.34 is revealed which is enough .On the behalf of data presented in table No. 4.6 near about two third (75.77) of total female population is on and above average, so level we can say academic achievement motivation level of U.P Madarsa board Female students is satisfactory. It also found that there is less No. of low motivated Female students which is 24.23% of total Female population.

Finding: 4

	GENDER	N	Mean	S.D.	t-Value
AAMT	Male	237	30.76	4.603	4.09
	Female	194	29.00	4.283	

Table shows the score of U.P. Madarsa Board Male and Female students. It shows t-Value 4.09 which represents significant level at 0.05 level hence null hypotheses is rejected. Means there is significance difference in Male and Female achievement motivation level. The obtained mean values of male and female are 30.76and 29.00 respectively. It also revealed average academic achievement motivation level for both male and female students. But Male students are more aware then Female students about their achievement motivation.

Finding and Conclusions - Findings based on Mean, standard deviation, percentage, t-value and Inter correlation In order to study the objectives namely:

1 The H_1 hypothesis, the level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board students is satisfactory. Finding the results the total secured marks of the students is pointing out average motivation level according to AAMT tool norms. Academic achievement motivation level of U.P Madarsa board students is average.

2 The $H_{1.1}$ hypothesis, the level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board male students is satisfactory. Finding the results the total secured marks of Male students is pointing out average motivation level according to AAMT tool norms. It also revealed that the academic achievement motivation level of U.P Madarsa board Male students is average.

3 The $H_{1.2}$ hypothesis, the level of achievement motivation of U.P. Madarsa Board female students is satisfactory. Finding the results the total secured marks of female students is pointing out average motivation level according to AAMT tool norms. It also revealed that the academic achievement motivation level of U.P Madarsa board female students is average.

4 The $H_{1.3}$ hypothesis, There is no significance of Male and Female Students of achievement motivation of U.P. Madarsa Board. It shows t-Value 4.09 which represents significant level at 0.05 level hence null hypotheses is rejected. Means there is significance difference in Male and Female achievement motivation level. The obtained mean values of male and female are 30.76and 29.00 respectively. It also revealed average academic achievement motivation level for both male and female students. But Male students are more aware then Female students about their achievement motivation.

Educational Implications - The present research focused on investigating the achievement motivation of senior secondary level of U.P. madarsa board students and exploring the group differences, gender variation (i.e. male and female).The findings of the study revealed important facts through which various educational implications can be drawn might be implemented in near future in the prolific as well as rigorous process of education for preparing competent and skillful human beings who are the need of this hour-

1. On behalf of findings suggested that, there is too much need to motivate the madarsa students both male and female to get their goal of lives and to produce good results & learning outcomes.
2. It is suggested that teachers should orient and refresh/ update about latest teaching learning and motivational techniques.

References :-

1. Agrawal, S.(1982). The study of causes and their remedial measures of two groups of Xth and XIIth class of relatively identical intelligence but differing in education achievements. Unpublished Ph.D. Thesis Gorakhpur University.
2. Anastasi, A. (1962). Psychological testing. (2nd ed.). New York: The Macmillan Company.
3. Best, J.W., & kahn, J.V. (2008). Research in education (10thed.). New Delhi: Pearson Prentice Hall.
4. Bipin, A. (2007). Measurements and Evaluation in psychology and education, Agra: vinod pustak mandir.
5. Buch, M.B. ‘’ A survey of educational research its survey. NCERT. N.D.
6. Kerlinger, F.N. (2007). Foundation of behavioral research (India) Delhi: Surjeet publications.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

गुणवत्तायुक्त प्राथमिक शिक्षा : चुनौतियाँ एवं वर्तमान परिदृश्य

डॉ. मोहम्मद नूर आलम अंसारी *

शोध सारांश - प्राथमिक शिक्षा प्रत्येक राष्ट्र के विकास की नींव होती है। जिसे सफलतापूर्वक पार करके ही राष्ट्र अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचता है। प्राथमिक शिक्षा के माध्यम से ही बालक में सामाजिक गुणों, चारित्रिक गुणों, राष्ट्रीय एवं नैतिक मूल्यों का बीजोरापण किया जाता है। इसके विशेष महत्व के कारण ही मनीषियों एवं शिक्षाविदों ने इसकी अनिवार्यता पर बल दिया। परिणामस्वरूप विभिन्न आयोगों ने प्राथमिक शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण, नि:शुल्क एवं अनिवार्य बनाने के लिए विशेष प्रावधान किया है। वर्तमान में सरकार के विविध प्रावधानों एवं सफलीभूत प्रयासों के बाद भी बढती हुई जनसंख्या, गरीबी, शिक्षा का बाजारीकरण एवं निजीकरण, मानवीय मूल्यों का क्षरण, शिक्षा की दोषपूर्ण नीति, प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी, शिक्षकों में जवाबदेही का अभाव, आर्थिक विपन्नता, संसाधनों का अभाव जैसी विकराल चुनौतियाँ गुणवत्तायुक्त प्रथमिक शिक्षा में बाधक सिद्ध हो रही हैं। सबसे बड़ी चुनौती शिक्षा संस्थाओं में उस वातावरण को तैयार करने की है, जहाँ अध्यापक एवं विद्यार्थी ज्ञान के सर्जन एवं समझ का साथ साथ मिलकर आदान-प्रदान करतें है। वर्तमान समय में प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति भी इन विद्यालयों में किया गया है, फिर भी सरकारी विद्यालयों में छात्रों का नामांकन दर का स्तर अत्यन्त ही गम्भीर है। अभिभावकों में सरकारी विद्यालयों के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति बढ़ती ही जा रही है। ऐसे में प्राथमिक शिक्षा का वर्तमान परिदृश्य विचारणीय है।

प्रस्तावना - प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण ही वर्तमान समय में एक चुनौती है। भारत सरकार द्वारा इसके लिए सर्वशिक्षा अभियान चलाया गया साथ ही प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति की गयी। छात्रों की उपस्थिति शत प्रतिशत करने हेतु भारत सरकार द्वारा मिड डे मिल योजना भी लागू की गयी है। इन योजनाओं के लागू किये जाने से वर्तमान में प्राथमिक विद्यालयों की तस्वीर बदली है। इन योजनाओं का प्रतिफल किस रूप में प्राप्त हो रहा है। ये योजनाएं अपने सुनिश्चित उद्देश्यों की प्राप्त कर पा रहे है अथवा नहीं। इसके लिए आनुभाविक रूप से शोध अध्ययनों का अभाव है। ऐसे में जब इन प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति सरकार द्वारा की गई, साथ ही प्रशिक्षित अध्यापकों का ही चयन किया गया है। तब भी इन प्राथमिक विद्यालयों मे शत प्रतिशत नामांकन नहीं हो पा रहा हैं। सरकारी आदेशों के अनुपालन हेतु कागजी कार्यवाही से बचने के लिए आंकिक गणना का सहारा लिया जा रहा है। प्रश्न यह उठता है कि

1. क्या प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति ही प्राथमिक शिक्षा को सफल बना सकती है?
2. क्या सरकारी योजनाओं का लाभ पूणरूपेण छात्रों तक पहुँच पा रही है?
3. क्या मिड डे मिल योजना छात्रों के नामांकन दर को बढ़ाने में अपनी भूमिका का निर्वाह कर ही है?

जो प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए प्रसंगिक बने हुए है इसके साथ में ही एक गम्भीर समस्या है कि क्या प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति से शिक्षा की गुणवत्ता में वृद्धि हुई है। ये शिक्षक छात्रों के साथ साथ अभिभावकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन ला पा रहे हैं, छात्रों मे अनियमितता का होना अभी भी बरकरार है, नामांकन के अनुरूप छात्र, प्रतिदिन विद्यालय नही पहुंच पा रहे हैं इसके पीछे अनेक कारण बताये जाते रहे है साथ ही इन कारणों को दूर करने के अनेका अनेक उपाय भी सुझाये गये है-

इस संदर्भ में अध्ययनकर्त्ता द्वारा 2017 में वाराणसी जनपद के प्राथमिक विद्यालयों की वर्तमान स्थिति क्या है इस पर अध्ययन किया गया। अध्ययन में वाराणसी जनपद के निम्न तीन प्राथमिक विद्यालयों का चयन किया गया। जिसमें कृष्ण मोहिनी विद्या मंदिर, अमलानगर, लहरतारा, सरस्वती विद्या मंदिर, चांदपुर, वाराणसी एवं प्राथमिक विद्यालय, छित्तुपुर, वाराणसी। अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि-

1. प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की वास्तविक स्थिति क्या है?
2. क्या मिड डे मिल योजना से छात्रों का नामांकन दर बढ़ा है?

प्रस्तुत उद्देश्य की प्राप्ति हुतु सर्वेक्षण शोध विधि का प्रयोग किया गया है। इसके लिए इन तीनों प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों एवं कार्यरत शिक्षकों को अध्ययन में सम्मलित किया गया। इसमें छात्रों की स्थिति एवं उनकी संख्या क्या है इसका विवरण प्राप्त किया गया। शिक्षकों की संख्या एवं उपस्थिति का भी विवरण प्राप्त किया गया। इसके साथ ही विद्यालय में उपलब्ध भौतिक संसाधनों का भी विवरण प्राप्त किया गया । सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन की स्थिति क्या है और इनकी पूर्ति किस प्रकार कि जाती है। इस संदर्भ में शिक्षकों एवं छात्रों से आवश्यकतानुसार मौखिक पूछताछ कर आकड़ें प्राप्त किये गये। प्राप्त आकड़ों के विश्लेषण से जो तथ्य सामने आये वे अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है-

1. प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए सरकार द्वारा जिस भी योजना का क्रियान्वयन किया जाता है वे पूरूपेण वास्तविकता के धरातल पर नहीं पहुंच पाती क्योंकि वास्तविक स्थिति अनुकूल नहीं होती है।
2. भौतिक संसाधनों के विकास के लिए सरकार द्वारा जो बजट पास किये जाते है वे पूर्णरूप में प्राप्त नहीं होते है।
3. एक प्रमुख तथ्य यह सामने निकल कर आया कि मिड डे मिल योजना से छात्रों के नामांकन दर में वृद्धि तो हुई परन्तु छात्रों का एक मात्र

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, बी0एड0 विभाग, स्वामी देवानन्द पी0जी0 कालेज, मठलार, देवरिया (उ.प्र.) भारत

उद्देश्य इस भोजन को प्राप्त करना ही हो गया है।

4. शिक्षकों में अध्ययापन अभिवृत्ति का लोप हो चुका है वे अध्यापन कार्य के अतिरिक्त कागजी कार्यवाही में अधिक व्यस्त होते है। जिसका परिणाम शिक्षण में अनिरन्तरता के एक रूप में मिलता है साथ ही शिक्षक नवीन शिक्षण विधियों के अपनाने में सकोच करते हैं।
5. यह तथ्य प्रमुख रूप से प्राप्त हुआ कि सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के बालक ही शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।
6. अभिवावकों में जागरूकता तो पायी गयी लेकिन उनकी जागरूकता का स्तर छात्रवृत्ति मिलने, मिड डे मिल योजना मिलने, किताबें और ड्रेस प्राप्त होने तक ही सीमित हैं। अभिवावको को इस बात से कोई सरोकार नहीं था कि उनके बालक क्या सीख रहे है और शिक्षकों द्वारा क्या पढ़ाया जा रहा है?
7. जहाँ तक प्रधानाचार्यो की स्थिति है वे शिक्षक एवं छात्रों दोनों के समस्याओं से पीड़ित पाये गये। क्योंकि दंड का अधिकार केवल प्रधानाचार्य के पास होने के कारण अन्य शिक्षक भी अपनी जिम्मेदारी छोड़कर प्रधानाचार्य पर ही कार्य छोड़ देते हैं।

निष्कर्ष – भारतीय परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण एक गम्भीर चुनौती है केवल शिक्षा प्रदान करने से ही मानव संसाधन का विकास नहीं होता अपितु इसके लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना अनिवार्य शर्त है। चूंकि प्राथमिक शिक्षा छात्रों में उत्ताम आदतों के निर्माण की आधारशिला है। अत: इस सन्दर्भ में प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों का उत्तरदायित्व बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। परिवार को भी इसका निर्वहन करना पड़ता है अत: प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लिये अभिवावकों की अभिवृत्ति में सकारात्मकता होना अनिवार्य है। इसके लिये उन्हें जागरूक किये जाने कि आवश्यकता पहली शर्त है तभी हम इन चुनौतियों से पार पा सकेंगे।

शिक्षकों को भी परम्परागत विचारों से निकल कर रचनात्मक कार्य किये जाने की आश्यकता है। इसकी पुष्टि अध्ययन में सम्मिलित कृष्ण मोहनी विद्या मंदिर प्राथमिक विद्यालय में किये गये अभिनव प्रयोग से सिद्ध होता है। जिसमें प्राथमिक स्तर के विधार्थियों के लिये सीबीएससी बोर्ड की तर्ज पर छात्रों को शिक्षित किया जाता है। इसके लिये शिक्षक रचनात्मक रूप से सहयोग करते है। जिसका परिणाम अत्यन्त ही उत्साहवर्धक पाया गया जिसमें छात्रों का नामांकन दर एवं प्रतिदिन आने वाले छात्रों की संख्या अन्य प्राथमिक विद्यालयों की तुलना में सर्वाधिक पायी गयी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Agrawal, S.(1982). The study of causes and their remedial measures of two groups of Xth and XIIth class of relatively identical intelligence but differing in education achievements. Unpublished Ph.D. Thesis Gorakhpur University.
2. Anastasi, A. (1962). Psychological testing. (2nd ed.). New York: The Macmillan Company.
3. Best, J.W., & kahn, J.V. (2008). Research in education (10thed.). New Delhi: Pearson Prentice Hall.
4. Bipin, A. (2007). Measurements and Evaluation in psychology and education, Agra: vinod pustak mandir.
5. Buch, M.B. , A survey of educational research its survey. NCERT. N.D.
6. Kerlinger, F.N. (2007). Foundation of behavioral research (India) Delhi: Surjeet publications.

****

Green Marketing: A Study of Consumers' Buying Behaviour in Relation to Green Products

Dr. Alka Awasthi* Anita Vishwakarma**

Abstract - Environmental issues are sizzling subject these days as pretty much every nation's administration and society has begun to be more mindful about these issues. This prompts a pattern of green showcasing utilized by the firm as one of the systems to pick up benefit and ensure the climate. This paper will examine the green promoting and its manageability just as the instruments and advertising blend of green showcasing. Other than that, the green purchaser and marking will be examined in further in this paper as this will pull in more buyers. In conclusion, firm will be profited once green advertising system is applied.
Keywords - marketing, green marketing, sustainability, green marketing benefits, green marketing tools, organization benefits, green consumer.

Introduction - Green Marketing is the most recent and most famous pattern market which encouraged for the climate neighbourly in individual, creature and planet (Rajeshkumar, 2012). Because of expansion in environmental change and a worldwide temperature alteration, the public worry for ecological issues is persistently expanded over the previous many years. The organizations and customers have begun to challenge eco-accommodating items as they become more worried on the climate, wellbeing and abundance to ensure the world's assets and the climate. Likewise, the organizations have gradually applied green advertising rehearses in their activities as a piece of social inner voice and they are requesting to arrive at the buyers with their green messages (Nagaraju and Thejaswini, 2014). For occurrences, the organizations stay to present various types of green bundling programs through the suggestion of recyclable and reusable bundles as the significance of green promoting to showcase achievement has been expanded. Besides, firms today are knowledgeable about customers who are earth cognizant when making a buy as green promoting is a current concentration in business endeavours. In this way, buyers are getting more cognizant towards their natural methodologies, wants and buys. Along these lines, this has prompted expanded rationale of shoppers to buy naturally neighbourly items and administrations. They are more worry on natural issues and thus will consider buying items that are all the more earth amicable, regardless of whether these items are charged in more exorbitant costs. The customers have gotten more intrigued with the significance of regular habitat and are understanding that their creation and utilization buying conduct will have direct effect on the climate. Subsequently, the expanding number of shoppers who are eager to purchase earth cordial items are building open door for organizations that are utilizing "eco-accommodating" or "naturally inviting" as a component of their offer. Organizations that give items which are produced and planned with an ecological advertising blend have a stable upper hand. A superior comprehension of buyers' purchasing conduct will uphold organizations to accomplish more market-relevant way to deal with keep up in the serious market. Besides, it likewise permits organizations to bring more shoppers and shape their items or administrations as per their requests or change customers' conduct towards their items or administrations (Agyeman, 2014).

Green Marketing And Sustainable Development - The American Marketing Association (AMA) characterizes green showcasing as promoting of items that are accepted to be climate cordial, which sorts out into different exercises, for example, item change, alteration of creation measures, bundling, naming, publicizing methodologies just as expands mindfulness on consistence advertising among ventures (Yazdanifard, 2011). As per Business Dictionary, the meaning of green showcasing is limited time practices proposed at taking advantages of forming customer conduct towards a brand. These changes are dynamically being influenced by an organization's practices and strategies that impact the trait of the climate and demonstrate the norm of its anxiety for the network. Then again, it tends to be perceived as the advancement of earth secure or beneficial products (Yazdanifard, 2011). As indicated by the World Commission on Environmental Development (1978), Sustainable Development characterizes "addressing the

*Director, NIIST - MBA, Bhopal (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Technocrats TIT Group (TIT, MBA), Bhopal (M.P.) INDIA

requirements of the present without trading off the capacity of things to come ages to address their own issues". The commonplace thought during the entire of this system of practical improvement is the craving to combine monetary and natural improvements in dynamic by building arrangements that save the norm of horticultural headway and ecological protection. The climate preservation for the current and the group of people yet to come is the thing that the result of green promoting is. (Vandhana, Karpagavalli, and Ravi, 2013).

Green Marketing Tools - Eco-name, eco-brand and natural promotion are important for the green advertising instruments which can make discernment simpler and increment familiarity with eco-accommodating items highlights and viewpoints. Subsequently, this will lead the buyers to buy the naturally agreeable items. Rehearsing these arrangement instruments assumes a significant part in changing buyer buying conduct to buy naturally agreeable items, in this manner, diminishing the unfavorable impact of counterfeit items on the climate (Delafrooz, Taleghani, and Nouri, 2014).

a. Eco-labelling - Eco-name is one of the significant green advertising apparatuses utilized on eco-accommodating items. Eco-name is portrayed as a device for customers to help the advancement of settling on a choice to pick eco-accommodating item. It additionally permits them to see how the cycle of items are made. Natural names are utilized by advertising to encourage the marking of green items. Marks comprised of a progression of little bits of paper, up to extremely confounded graphs that are included as a piece of the products bundling. Names can incorporate just the brand items or a progression of blended data. In certain conditions, the dealer may need an immediate 'Name', however law obliges them to offer more data (Delafrooz, Taleghani, and Nouri, 2014). Ecological names permit customers to handily recognize naturally agreeable items over typical standard items. Eco-mark is decidedly related with customer eagerness to purchase (Awan and Raza). The acknowledgment of eco-mark has a positive effect between the data of a green item and customer's ability to purchase. Furthermore, past explores that were finished in western countries have concurred that most buyers have positive green cognizance on eco-marked items (Cherian and Jacob, 2012). Eco-marks are engaging instruments informing shoppers about the natural effect of their purchasing assurance (Rashid, 2009). To manage purchasers to group items those are more earth supported than other indistinguishable items, eco-naming plans were proposed to encourage ecological commercialization. The absolute first eco-marking plans have been created since the late 1977 in Germany (Blue Angel eco-name). In present day, there are moderately 30 different green name plans around the world. Asian nations, for example, China, Japan, Korea, India, Thailand, Malaysia and Singapore have dispatched their own eco-naming plans. The Malaysian business area isn't a long way behind in responding to fights ascending from interest produced using the buyers for eco-accommodating items. Malaysian green mark plans were resolved to dispatch in 1996 by the Standards and Industrial Research Institute of Malaysia (SIRIM) in the hour of there were eco-naming plans associated with degradable, farming items, energy preservation, electronic gear, dangerous without metal electrical, non-harmful plastic bundling material, reused paper and biodegradable cleaning specialists (Rahbar and Wahid, 2011).

b. Eco-brand - The American Marketing Association deciphers a brand as "a name, term, sign, image, or plan, or the mix of them, drawn in to perceive the products or administrations of one merchant or gathering of venders and to recognize them from those of a contender." This portrayal can be closed for the eco-brand too. Eco-brand is a name, image or picture of items that are innocuous to the climate. Applying eco-brand viewpoints can assist purchasers with recognizing them by certain methods from other non-green items (Delafrooz, Taleghani, &Nouri, 2014). Customers will seek after to buy eco-accommodating alternatives for items that created elevated level of natural effect compare to those with low degree of ecological effect. Malaysian shoppers think about vaporizers, house hold cleaning, glass based, pesticides and plastics as non-green item arranges with elevated level of effect on conditions (Rahbar and Wahid, 2011). Hence, it very well may be foreseen that purchasers will respond emphatically to items with ecological viewpoints known as eco-marked items. The previous exploration in western nations empowers this assessment as shoppers in the Germany and USA make a move emphatically to eco-marked items, for example, efficient power energy and Body Shop (Wustenhagen and Bilharz, 2006).A purchaser's understanding on the ecological lead of brands should be decidedly dazzled by natural names. Acknowledgment of the effect of brands on buyers' buying assessment is basic for advertisers and promoting specialists. This effect is perceived as brand value. Brand value can be characterized as a specific effect that brand mindfulness has on a buyer's response to the promoting of that brand from a customer's perspective. Green brands should be utilized to bring up the circumstance that green items works equivalent to non-green ones. Additionally, green brands should be utilized to help customers recognize green brands from other indistinguishable brands with same activities. The basic angle convincing shoppers to change real buy conduct to purchase eco-accommodating items is passionate brand benefits. Henceforth, the buying conduct will change to buy ecologically amicable items as a result of worried of the benefit of green brands. The buyers who broadly perceived themselves as a natural dependable purchaser recommend to picks the green items in their real buy to meet their enthusiastic cravings (Rahbar and Wahid, 2011).

c. Environmental advertisement - To improve green developments worldwide and raise public thoughtfulness

regarding ecological issues, most associations favor natural notices through media or papers as green procedures for acquainting their items with earth dependable purchasers. Green ad is one of the approaches to impact customers' buying conduct that will firmly urge purchasers to purchase items that are eco - benevolent to our current circumstance. Furthermore, guide their focus toward the positive outcomes of their buying conduct, for themselves just as the climate (Delafrooz, Taleghani, and Nouri, 2014). Davis (1994) depicts there are three components in green ad. Initially, the organization will begin an explanation that is identified with the climate. Besides, the organization will show its anxiety and devotion to improve the climate by its changed methodology from the green notice. Thirdly, explicit natural activities in which the organization is included will be advanced by green ad (Rahbar and Wahid, 2011). At the point when the number of inhabitants in organizations utilizing ecological interest in their commercial is getting higher, despite the fact that some of them are just green washing, it will lead customers to be dubious towards natural promoting. For promoting supervisors, who attempts to be earth mindful and envisions a compensation from shoppers for their dependable conduct, the unwavering quality and impacts of green publicizing is a significant issue. Promoting administrators and publicizing experts need to dominate ecological data correspondence and introduction of natural data in the advertisements (Alniacik and Yilmaz, 2012).

Businesses And Green Marketing - There are huge adjustments for actuation in the business world comparable to the significance towards the climate and the general public. Corporate moral code of the 21st century is being green. No ifs, ands or buts, the primary target of organizations is benefit yet it is exceptionally hard for organizations with the specific goal of making benefit to accomplish manageability. Organizations should be aware of their obligations towards the climate and the network comparably as towards clients, laborers and investors. Environmental change, ecological issues and social issues will defy the heads of group of people yet to come for drawing in powerful and comprehensive conclusions. In the act of connecting with these conclusions, the main worry of business society should be set on the key of saving the climate as opposed to improving the productivity of the business (Boztepe, 2012). To improve productivity, which is an immediate bit of leeway for the business itself, green showcasing can advantage society by advancing the correspondence probably as well as the act of green business measure. The organizations really have a solid chance to improve their mentality on the off chance that they occupied with ecological business exercises. This is on the grounds that to claim that their items are eco-accommodating, they need to totally evaluate the item such that matches substantial necessities to procure ensured eco-marks. Additionally, they don't wish to lose the trust of the ecologically cognizant shoppers they center around ("Fact Sheet-Green promoting).

Marketing Mix In Green Marketing - The promoting blend is gotten from ordinary advertising (Kontic, Biljeskovic, and Brunninge, 2010). Promoting blend fundamentally are the various ways imagined by an organization to carry a decent or administration to the market. In green promoting, ecological concern is a component that showcasing blend should give on completely responsibility. Advertising blend conventionally known as 4P's involves segments, for example, item, value, spot and advancement. In the all-encompassing promoting blend as in the event of administration area, three different parts, for example, individuals, actual proof and cycle are joined to make up 7P's. As per green showcasing guideline each part in the advertising blend will have a green point of view from building up to acquainting an item with the market (Arseculeratne and Yazdanifard, 2014). At the point when an item is making under a cycle of eco-accommodating and innocuous to the climate, the item might be named as green item. During creation measure, natural contamination is an issue that business needs to decrease. Normal assets should be safeguarded during actual expulsion of crude materials from an item. Critical zone should be structure by squander the board in this association. Eco-accommodating plan item should be fabricated and bundling cycle ought to decrease tainting and contamination. Item improvements absolutely include a lot of sunk expenses however they merit the goal since advancement in the item would achieve a turnaround in deals. The way of switched coordination's whereby client's re-visitation of the business utilized wrapping, bundling and even the reused item itself would impressively assist with rationing the climate (Arseculeratne and Yazdanifard, 2014). Becoming environmentally viable is totally expensive as they include different costs, for example, showing country, contraption, foundation of current innovation, retaining outward costs, changing over waste into reused items. Without a doubt these will make the items be more costly. Hence, green cost is named as top-notch cost. These will have extra weight on advancements because of premium cost. Advertising effort should legitimize these costs and buyers should be persuaded to pay a premium, so sensible messages in adverts is required. By the by, the charge of green items might be reduction when manage bundling material. Undoubtedly, a few organizations have set up this to be an alluring plan when bundling costs build up a tremendous piece of the unit cost (Arseculeratne and Yazdanifard, 2014). Green circulation includes selecting pathway in a way to reduce ecological weakness. The greater part of the harms is instigated during delivery of products. Subsequently, wellbeing safety measures should be actualized in the delivery of merchandise (Arseculeratne and Yazdanifard, 2014). Special material of a business is vital in green promoting. The significant data of practice environmental awareness needs to communicate to the clients through direct showcasing, deals advancements, publicizing and advertising. Advertising constantly to be sure

have become the most extensively utilized stages to dispatch the green viewpoint of a business. Practicing environmental awareness infrequently form into a significant public associations practice as it frames an extension between the business and the general public. Green publicizing may be utilized to advance items, legitimize their highlights and value (Arseculeratne and Yazdanifard, 2014). Because of inadequacy of data, most clients are not actually mindful the hugeness of green item hence green special technique ought to understand this reality. To advance this void in the absence of data, a business may practice various green special techniques. Clients should be mindful of the sorts of natural issues an item would explain in any case for them to display an interest in a green item (Arseculeratne and Yazdanifard, 2014).

Green Consumer - Consumerism can be characterized as an advancement which initially began as a training which was introduced to shield purchasers against activities of exploitative business. After sometime this has boundless and develop into more extensive in nature. At the point when the present plan with respect to shopper promotion is taken into study it tends to be perceived that preservation of the climate is the main component (Dono et al., 2010). There is an effect development in the worry uncovered towards natural protection prompting "green consumerism"(Eriksson, 2002).The green purchaser is commonly known as one who uphold eco-accommodating perspectives as well as who buys green items over the standard other options (Boztepe, 2012). Practically all shoppers are possibly green customers. For example, when a buyer has choice to browse two comparable items, the shopper will decide to purchase naturally amicable item (Awan and Raza).

There has been an aggregate of different conditions which are powerful in urging green purchasers to purchase green items. Sweeping exploration throughout the long-term order that serious comprehension of green issues; increased degree of information opportunity on natural means; green promoting by organizations; raised worry for the climate; extended in acknowledgment of green items by ecological and social foundations as certain conditions. This overwhelming development in the overall natural mindfulness among different buyer history have been endeavor embraced by organizations to "practice environmental awareness" by presenting the possibility of corporate environmentalism (Cherian and Jacob, 2012).

Consumers' Environmental Concerns - Customers' natural concerns are associated with the advantage towards the biophysical climate and its issues associated with the buyer and the environmental factors. At first, gender assumes a basic part in industrialism and ecological awareness (Kaufmann, Panni, Or phanidou, 2012). It has been perceived by earlier exploration that ladies were more worried about the climate than men. Also, it has been informed that customers show ecological concerns relying upon item includes, exactness of green item asserts, data gave on the items and its points of interest (Suki, 2013).For purchaser bundled products buys, ladies are normally the essential objective crowd as they actually do the greater part of the present family unit shopping. For occurrences, Seventh Generation, a reasonable individual consideration and family unit cleaning items maker, focuses on the center alongside new moms, whom they discover to be explicitly worried in making the world a superior spot for their new-conceived. Other the other hand, bundling assumes a significant function in the item's maintainability. Buyers are aware of ecological pressing decisions continuously and are forming their conduct as an outcome. A notable illustration of this is with water bottles. Numerous customers have changed from purchasing single-utilize plastic water jugs to utilizing refillable water holders. In year of 2008, 2.5 million tons of plastic jugs and containers were discarded. The seriously moderate deterioration pace of plastic jugs leaves them to stay in litter seas for quite a long time. As an outcome of expanded purchaser mindfulness and shopper interest, deals of reusable water bottles from earth benevolent makers, for example, Sigg and Kleen Kanteen have gone onto the market. Purchasers even interest clean, separated water, and firms, for example, Brita and PÛR, makers of water channels, have seen a 22.2 percent and 15.2 percent expansion in deals during 2009, appropriately. In addition, another incredible purchaser bundling pattern is the utilization of reusable shopping sacks at markets. Americans utilize 100 billion plastic shopping packs each year and more than 500 billion are devoured internationally. In such manner, four billion become general litter. Presently it is practically stylish to bring your reusable shopping packs to market as purchasers and retailers are perceiving this new natural conduct. In the time of 2011, more than 66% of purchasers meant that they presently utilize reusable shopping sacks (Gittell, Magnusson, Merenda, 2015).

Benefits Of Green Marketing - These days customers slowly recognize the need to deal with the climate and become all the more socially dependable. Subsequently, responsibility of organizations to shoppers' tendencies for naturally innocuous or impartial items is basic (Saini, 2013). Green Marketing has a ton of significant advantages for those networks whose acknowledge these new ideas. First significant advantages are income expanded. Buyers incline toward each new and positive idea, so pioneer assumes a fundamental function in this section. A fruitful item that satisfies customer fulfilment will have an expansion in deals and income. Second significant advantages are cost decreased. In green promoting, the expense of crude materials is low along these lines it will expand the creations and set aside cash. What's more, green showcasing can assemble brand esteem. An incredible green practices organization will get a decent brand an incentive in the core of the buyers. Another significant advantage of green promoting is getting tax cuts and credits from government in light of the fact that those inventive organizations which help the country who are living in a rustic or un-business

will bear questionable dangers. Additionally, they save climate and strength of country so they get appropriations from government. Ultimately, the most essential favourable position of green promoting is world salvation. Removal and treatment of wastage, creation cycle of organizations will deliver discharges of a few ozone harming substances which add to worldwide environmental change which can causes nursery impact. By following an incredible method of green practices, the organizations could save the world in the method of saving the soundness of people groups and the climate (Rajesh Kumar, 2012).

Discussion - The fundamental target of this paper was to decide the investigation of green showcasing and its supportability on the climate and organizations just as the devices and advertising blend of green promoting. Additionally, this paper likewise centres around the conduct of customers and marking to pull in more buyers. This finding is significant in light of the fact that the world's assets are step by step exhausting and earth is getting increasingly contaminated. Green advertising is a procedure which benefits the climate and the organizations; it is a mutually beneficial methodology. The organization can diminish expenses and dazzle a positive picture on the purchasers. An organization's standing assumes a significant job in light of the fact that having a decent standing has been legitimized being advantageous to the organization. Green showcasing benefits the organization as well as goes about as a significant system in protecting our current circumstance. Subsequently, each organization, paying little heed to its industry, ought to think about coordinating supportability into their promoting technique. Those that do will look for acknowledgment of their endeavours. These organizations ought to think about green promoting, remembering that green advertising isn't a fix just for expanding deals. Organizations should remember that there is no general green advertising procedure. Organizations occupied with green promoting should structure their work to limit green washing hazards. For example, there are not many methodologies that can be utilized to rehearse green promoting. The organizations receive showcasing blend idea in green promoting, this empowers the organizations to deal with the 4Ps fittingly. Initially, the organizations need to comprehend the clients' necessities and needs, so the organizations can deliver a reasonable item for the clients. Besides, the cost of the items is a significant component. The cost must be reasonable to most of the shoppers. Finally, the spots that circulate green items must be advantageous to the shoppers. All things considered, organization that embracing green advertising as one of their system will benefits the firm.

Conclusion - As ecological issues keep on influencing human exercises, society is presently with respect to them with much concern. Most firms have begun utilizing supportable advancement structure which is known as green advertising and the greater part of the associations have recognized green items which are earth well disposed. Promoting directors can utilize green advertising to acquire benefits. Likewise, green advertising can protect the climate while fulfilling clients' requirements. Along these lines, green advertising is a device currently utilized by numerous organizations to expand their upper hand as individuals is by and by worried about natural issues. In the time applying green advertising, the organizations need to agree to the purchasers' requirements and needs. Buyers need to perceive themselves with organizations that are green agreeable and are happy to pay more for a greener way of life. Thus, green advertising isn't just a natural insurance apparatus yet in addition a promoting technique (Yazdanifard, 2011). Other than that, advertisers can give preparing to their workers, particularly salesperson. This is to give them information on the most proficient method to advance the green item adequately by obviously introducing the primary message to the customers. Green showcasing covers a wide scope of business exercises and it is like advertising blend. Hence, advertisers should receive a reasonable single green promoting blend and system relating to organization in which they lead and focus on customers' requests and character. Moreover, organizations that do green showcasing in the ideal spot and on the perfect individual may uphold the organization to accomplish their upper hand.

References :-

1. Fact sheet-Green marketing. Retrieved from the World Wide Web: http://www.unescap.org/sites/def ault/files/31.%20fs-green-marketing.pdf
2. Gittell, R., Magnusson, M., & Merenda, M. (2015). Sustainable business marketing. Retrieved from http://catalog.flatworldknowledge.com/bookhu b/reader/3157?e=gittell_1.0-ch06_s02
3. Ghosh, M. (2011).Green Marketing- A changing concept in changing time. BVIMR Management Edge, 4(1), 82-92.
4. Haytko, D., & Matulich, E. (n.d.). Green advertising and environmentally responsible consumer behaviours: linkages examined. Green Advertising and Environmentally, 1, 2-11. Retrieved from http:// www.aabri.com/manuscripts/greenadvertising.pdf
5. Kong, W., Harun, A., Sulong, R., & Lily, J. (2014).The influence of consumers' perception of green products on green purchase intention. International Journal of Asian Social Science,4 (8), 924-939. Retrieved from http://www.aessweb.com/ pdf-files/ijass-2014-4(8)-924-939.pdf
6. Kaufmann, H., Panni, M., & Orphanidou, Y. (2012). Factors affecting consumers' green purchasing behaviour: An integrated conceptual framework. Retrieved from http://www.amfiteatrueconomic.ro/temp/article_1100.pdf
7. Kontic, I., & Biljeskovic, J. (2010).Greening the marketing mix. Retrieved from http://www.diva-portal.org/smash/get/diva2:329044/fulltext01.pdf

8. Nagaraju, D. B., & Thejaswini, H. D. (2014). Consumers' perception analysis-market awareness towards eco-friendly fmcg products-a case study of Mysore district. IOSR Journal of Business and Management, 16, 64-71. Retrieved from http://iosrjournals.org/iosr-jbm/papers/vol16-issue4/version-5/i016456471.pdf
9. Rahbar, E., & Wahid, N. A. (2011).Investigation of green marketing tools' effect on consumers' purchase behaviour. Business strategy series, 12(2), 73-83.doi:10.1108/17515631111114877
10. Rajeshkumar, M. L. (2012). An overview of green marketing. Naamex International Journal of Management Research, 2, 128-136. Retrieved from http://www.namexijmr.com/pdf/archives_jan_june_212/namex%20ijmr%20%2 0abstract%20 and%20pap er %2014.pdf
11. Responsibility (n. d.). Retrieved from the Starbucks company website: http://www.starbucks.com/responsibility
12. Suki, N. M. (2013). Green Awareness effects on consumer's purchasing decision: Some insights from Malaysia. Green awareness effect, 9, 50-63. Retrieved from http://ijaps.usm.my/wp-content/uplo ads/2013/07/art3.pdf
13. Saini, B. (2013). Green marketing and its impact on consumer buying behaviour. International Journal of Engineering Science Invention, 2, 61-64. Retrieved from http://www.ijesi.org/papers/Vol%202(12)/Versi on-2/K021202061064.pdf
14. Vandhana, R., Karpagavalli, G., & Ravi, D. A. (2013).Green Marketing- A tool for sustainable development. Global research analysis, 2, 133-135. Retrieved from http://theglobaljournals.com/gra/file.php?val=december_2013_1387275869_75066_42.pdf
15. Yakup, D., & Sevil, z. (2011).A theoretical approach to concept of green marketing assist. Interdisciplinary Journal of Contemporary Research in Business, 3(2), 1808-1814.
16. Yazdanifard, R.,& Mercy, I. E. (2011).The impact of green marketing on customer satisfaction and environmental safety.2011 International Conference on Computer Communication and Management, 5, 637-641. Retrieved from file:///c:/users/se7en/downloads/0912f50e642f52da0b000000%20(5).pdf

****

Financial Inclusion: A SWOT Analysis in Context of India

Dr. Sanjeev Kumar Bansal* Bharti Bahen Bacheta Priyanka Garg*****

Abstract - Indian economy has a sound and robust banking system as this sector has shown significant improvements in all the areas relating to financial viability, profitability and competitiveness. The government is also supporting the banking industry. Inspite of all these endeavours banking services have not reached a vast section of the population, especially the vulnerable groups of the society. The reasons of financial exclusion in Indian economy are low level of financial literacy, lack of infrastructure, vast population, high transactional cost etc. Hence the purpose of this paper is to do the SWOT analysis of financial inclusion in context of India. The strengths of the financial inclusion in India are the existence of the large section of the population considered middle income group, whose spendings and savings are significant to the economy. The weaknesses are less financial literacy level, unattractive salary to the business correspondents, lack of technology and non availability of suitable financial products in remote areas etc. The opportunities include the majority of educated unemployed people who can be utilized for promoting financial inclusion in the economy, large amount of remittances which can provide a good business to the banks etc. The threats include existence of the informal sector, dormancy of Jan Dhan accounts, limited service centre for serving devices etc. The study is secondary data based. The study concluded that all the stakeholders have to join hands to accelerate the growth of financial inclusion mission in India.

Key words - Vulnerable groups, financial exclusion, financial literacy, SWOT analysis, financial inclusion, business correspondents, financial products, dormancy.

Introduction - A sound financial system brings poor people into the mainstream of the economic growth. 'Franklin.D. Roosevelt has rightly said, "the test of our progress is not whether we add more to the abundance of those who have much, It is whether we provide enough for those who have little." On account of this approach 12th five year plan (2012-2017) is envisaged with the objective of more inclusive growth and the key to inclusive growth is financial inclusion which is emerging as the new paradigm of economic growth. The process of financial inclusion is an attempt to bring the weaker and vulnerable sections of society with in the ambit of the organized financial system. It may, therefore, be defined as the process of enabling access to timely and adequate credit and other financial services for vulnerable groups such as the weaker sections and low-income groups at affordable cost (Karmakar, 2007). Financial inclusion carries several benefits for poors. First, it provides them with opportunities to build savings, make investments and access credit. It also enables them to successfully handle income shocks and tide over unforeseen emergencies such as illness or loss of employment. (Collins *et. al.* 2009) This research paper analyses the financial inclusion and its factors using SWOT. SWOT analysis provides suggestions on handling the weakness and threats, which identifies the demand and issues lying behind financial inclusion implementation.

Objective of the Study - The objective of the study is to identify the key internal (strengths & weaknesses) and external (opportunities and threats) factors, that are important to achieving the financial inclusiveness in India through SWOT analysis.

Research Methodology - The study is based on secondary sources of information available from RBI bulletins, journals, books, newspapers and internet.

Literature Review - Dr. K.C. Chakarvarthy, Deputy Governer RBI, at the financial Inclusion Conclave (2013), explained the approach of RBI towards financial inclusion. There is a need on the part of banks to develop new products and deliver models customized to the unique needs of financially excluded population both in rural and urban areas.

Damodaran A. (2013), stated that vast segment of India's population exists on the margins of India's financial system. There is a growing concern about people being 'under-banked'. Financial inclusion is an important priority of the country in terms of economic growth and development

*Sr. Lecturer, Department of A.B.S.T., S.N.D.B. Govt. P.G. College, Nohar (Raj.) INDIA
** Research Scholar, MGS University, Bikaner (Raj.) INDIA
*** Assistant Professor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

of society and poor. It helps to channelize money-flow to the economy; it ensures people who are unable to access financial system so far can access it with ease.

PMJDY Mission Document (2014), launched with sole motive to bring 100% financial inclusion in India. It has been divided into two phases. The first phase had range from 15th August, 2014, to 14th August 2015 in which universal access to banking facilities, providing basic banking accounts for saving and remittance, Rupay debit card with inbuilt accidental insurance of Rs. 1 lakh and training on financial literacy was provided. The second phase was ranged from 15th August 2015 to 15th August 2017 in which an overdraft facility of upto Rs. 5000/- after six months of satisfactory performance of saving/credit history, creation of credit guarantee fund for coverage of defaults in overdraft a/cs, micro-insurance, unorganized sector pension schemes like swavalamban etc. was taken care of.

Ramasubbian H. and Thangavelu A. (2014), attempted to analyze the people who belong to vulnerable groups and issues related to implementing of financial inclusion in two regions of Tamilnadu State. For testing of formulated Hypothesis, 100 samples were taken from each region and analyzed using SPSS. Different age groups varying among 25 to 65 the issues of utilizing financial inclusion and factors behind implementing financial inclusion were analyzed using SWOT. The results, carried out from primary data and SWOT analysis, indicated that there is a relationship exists between income level, saving habit of respondents and no-frill account.

Ms. Shalini Choithrani (2015), has made an effort to do SWOT analysis of Indian economy in term financial inclusion. In conclusion the study suggested that the government has to undertake this drive at a large level to bring the financially excluded in the scope of banking to foster the growth of the country.

Need for the Study - As the implementation of 12th five year plan of sustainable and inclusive growth is in progress. One of the best ways to achieve inclusive growth is through financial inclusion. The Indian financial system is considered to be one of the finest systems in the world. Inspite of having such a strong financial system it has been evident that financial awareness has not been able to penetrate into the rural India. This is a matter of concern. So the present study aims at doing the SWOT analysis of financial inclusion in context of India to find its strengths, weaknesses, opportunities and threats which may lead to more financial inclusiveness.

SWOT Analysis - SWOT is an acronym for strengths, weaknesses, opportunities and threats. SWOT analysis for financial inclusion highlights the strengths and opportunities of financial inclusion programme in India and provide suggestions on landling the weakness and threats lying behind financial inclusion implementation.

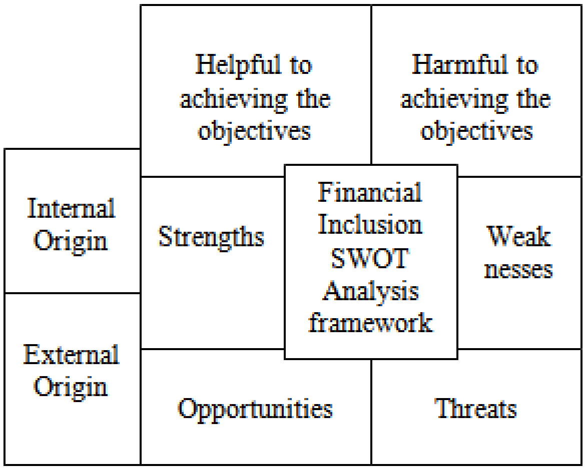

Strengths :

1. Strengths of financial inclusion include RBI's simplified norms of opening no-frill a/cs among all members of vulnerable groups.
2. Nearby 70% of Indian population inhabited in rural areas and majority of the population still do not have access to formal financial system. This situation can become a win-win situation for both public and private sector banks.
3. The root of the society is the majority of the society. If the root of the society is integrated to the financial institution then the growth of the country will be unstoppable. In India the integrating agencies are certainly rural and urban area's bank, co-operative societies, NGOs, Civic bodies, Panchayat insurance companies and government agencies, which are working effectively and give a strength of FI.
4. India has a huge banking network with over 1.3 lakh bank branches of public and private sector banks. Out of which 63% branches (as per RBI data) in rural areas. Hence the existence of these bank branches who already deal with rural people can easily increase the growth of financial inclusion.
5. The Indian middle class doubled in size over an eight year period from 300 million in 2004 to 600 million in 2012, along with Indian household saving rates have also leapt which provide a strength for the economy in form of their increased purchasing power and savings.
6. India has a strong banking sector with a wide range of financial products to meet the financial demand of various sections of the society especially for underprivileged.
7. Pradhan Mantri Jan Dhan Yojna, with the aim of universal access to banking facilities, providing basic banking accounts for saving and has remittance and financial literacy programme, has become a strength for financial inclusion.

Weaknesses :

1. A large section of the population in the country has

remained outside the formal banking channel. As a result, these people have neither been able to participate nor enjoy the fruits of economic growth.

2. Inspite of many efforts a large number of accounts opened under PMJDY are dormant and 79% of the households already had a regular bank account. Only 1.5% account holders have sanctioned loans and around half of the account holders did not even avail the loan.
3. Less financial literacy level and lack of awareness about banking services and different financial product among vulnerable people in rural and urban areas, is a weakness of the economy.
4. Digital financial inclusion, can be a game changer for un-served and underserved low income households is based on technology. Non availability of handheld devices, cards, network penetration and limited number of technology services providers are the weaknesses of financial inclusion mission.
5. The business correspondents (BCs) appointed by banks in rural areas aren't making enough money. Therefore many of them quit after a few month in the job.
6. There is no transparency in respect of commission to be paid to the Business Correspondents and they have less freedom to work because they have to work in specific terms and conditions and deal with limited products and services as per instructed by the bank.
7. The rural people are not willing to deposit huge amount of cash with the business correspondents, as for them banking services simply mean a brick and mortar branch. Hence they cannot receive trust and good response from the rural people.
8. Many of the generic financial products are unsuitable for the vulnerable groups of the society.

Opportunity :

1. India has a majority of educated unemployed people who can be helpful to promote financial inclusion in the form of business correspondents (BCs) and business facilitators (BFs). Along with, providing banking services they can spread financial literacy and advice on managing money and debt counseling.
2. The Government of India has set up Aadhar enabled payment system (AEPS) across the country to provide basic financial services at low cost. It provides opportunity to indulge a bank customer in the mainstream of financial inclusion.
3. Indian Government has taken an initiative namely Direct Benefit Transfer to route the social security payments through the banking network. It promote financial inclusion as eligible beneficiaries will have to open a bank account and will give a large business to banks.
4. A large amount of remittances take place across the country, predominantly from migrant labour and over half of this happens through non-formal channels. Hence there is the opportunity of capturing remittances for the banks of enhance their business.
5. There are large number of self help groups (men & women) formed in rural and urban areas of the country. Many opportunities are available of financial inclusion as increased activities of self help groups can create more motivation among rural people to utilize other financial services and products.
6. The Indian Post has such a big network to reach to the bottom of population (rural population) as no other financial institution has. It can provide many financial services and products to unserved and underserved rural people at an affordable cost as they have huge customer data base, and no need to incur heavy on infrastructural investments.

Threats :

1. Existence of the informal sector & such as money lenders etc. in the rural areas, is a big threat of financial inclusion.
2. People who live in under developed areas find it very difficult to reach the nearest bank due to transportation cost and wages lost in traveling to the bank.
3. There are some ground level threats of financial inclusion as non functional hand held machines, smart cards, network connectivity, non availability of power and limited service centre for serving devices which resulted in banking operation coming to halt in many villages.
4. The sub division of land and small size of rural non-form activities require the provision of small sized loans in large numbers often raising the operational costs for banks.
5. As one-fifth of Jan-Dhan accounts are domant. Hence the dormancy, zero balance. The dormancy of Jan Dhan accounts as one-fifth of accounts are dormant, zero balance accounts and Rs. 5000/- over draft issue without having credit history of borrowel may put unnecessary burden on the banks if these are not taken care of timely.
6. Spreading financial inclusion over a population of approximately 1.3 billion is a challenge and threat being faced from the demand factors and supply factors.

Conclusion - The RBI and Government have taken several initiative to encourage financial inclusion in the country. While progress has been made but that is not sufficient. To bring the country's unbanked regions and population into the fold of formal financial system, convert all threats into opportunities by improving financial literacy level, availability of the technology and network and motivating business correspondents. As financial inclusion is a win-win opportunity for the poor, for the banks and for the nation. So there is need to join all the stake holders like RBI, Commercial Banks, RRBs other financial institutions, governments, NGOs, civil societies, Indian Post Offices etc. for their active involvement in achieving the aim of fully financial inclusiveness in the country.

References :-

1. Sanjeev Kumar Gupta (2011). Financial Inclusion – IT as enabler, Reserve Bank of India occasional papers vol. 32, no. 2.
2. Dr. Satish K Mittal and Ms. Shuchi Shukla (2014). Review of Financial Inclusion practice and its success in India, IOSR Journal of Business and Management, Vol.16, Issue -8, Ver. II, pp 106-111.
3. Shivangi Bhatia and Dr. Seema Singh (2015). Financial Inclusion-A Path of sustainable growth, International Journal of Science Technology & Management, Vol. No. 4, Issue No. 01.
4. Manish Prasad Pathak (2016). Role of Financial Market in Financial Inclusion, International Journal of Management & Business Studies, Vol. 06, Issue – 03.
5. Dr. D. Subbarao, Governor, Reserve Bank of India (2009). Financial Inclusion : Challenges and opportunities, at the banker's club in Kolkata.
6. Ms. Shalini Choithrani (2015). A SWOT analysis of financial inclusion in context of India and its Banking sector, International Journal of Business Quantitative Economics and Applied Management Research, Vol. 01, Issue 10.
7. Hemavathy Ramasubbian (2014). Issues Pertaining to financial Inclusion – An Analysis using SWOT Approach, International Journal of Commerce, Business and Management Vol. 03, Issue No. 06.
8. K.C. Chakarbarthy (2013). "Financial Inclusion in India A journey so far and way forward," address delivered at financial Inclusion Conclave
9. http://www.pmjdy.gov.in/scheme_detail.aspx
10. www.rbi.org
11. http://www.business-standard.com/opinion
12. http://www.businesstoday.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Human Resource Management Defence Initiative Preparing and Development

Saurabh Dubey*

Abstract - HR advancement is a structure for the extension of human capital inside an association a region district or country Human Response Resources advancement is a mix of preparing and training in a board setting of sufficient wellbeing and work approaches that guarantees the consistent enhancement and development and of the both individual the association and the national human reaction. The association and the country relied upon their entrance to instruction. Human Resources advancement is the medium that drives the procedure among preparing and learning in an extensively encouraging condition With in a national setting it turns into a vital way to deal with entomb organization oral linkages between preparing wellbeing training and business.
Key Words - Human Resource, Structure, Preparing.

Introduction - Through instruction, to fulfill the association's long – term drugs and the and the person's vocation objectives and representative incentive to their present and future managers. HR Development can be characterized essentially as building up the most critical segment of any business, its human asset, by accomplishing ir redesigning venture adequacy, the general population inside an organization mindful its Human asset. HR Development from a business point of view isn't altogether centered around the person's development and advancement; advancement strikes upgrade the association's esteem, not exclusively for individual enhancement. Singular instruction and improvement is a device and an unfortunate obligation, not simply the bed objective ". The more extensive idea of national and increasingly key regard for the improvement of HR is starting to develop as recently free nations face solid challenge for their talented experts and the going with cerebrum – channel they experience. The expression HUMAN RESOURCE MANAGEMENT has been acknowledged by the Defense initiative and after some time has been coordinated into strategy and convention once in the past used to portray the elements of "faculty the board" and "work force organization." These last two terms may never absolutely vanish from our dictionary, however "human asset the executives" all the more precisely depicts the expansiveness of this mind boggling discipline. In the broadest sense, HRM is a progression of coordinated choices about the business relationship that impacts the adequacy of representatives and associations. Barrier administrations HRM is the real part of the Defense administrations generally HRM activities. It has advanced from a supporting job to that of a key empowering agent for the Defense administrations. The present difficulties require educated choices on power structure necessities, enlisting and maintenance programs, prosperity projects, and faculty status from both individual and unit points of view. HR pioneers must have proficient and specific abilities to address these difficulties and deal with the projects that involve the capacities and incorporating frameworks of the HR life cycle show. Business associations the world over are progressively perceiving the potential of their HR. Key human asset the board rose out of the parent order of human asset the board with the point of enhancing association targets. It stresses the key significance of planning HR targets, systems, and strategies with the end goal of building up the aptitudes and capacities for the accomplishment of upper hand, The rich hierarchical culture of the Indian Defense Forces has advanced from the generative procedure of life and authoritative learning over an extensive stretch. The Defense Services are the wellspring of demonstrated administration and the board precepts, all refined persistently via consistent, standardized individual, aggregate and authoritative learning. The Defense administrations have the convention of their officers continually 'figuring out how to lead' and 'prompting learn' with for all intents and purposes no edge for mistake. In this manner guaranteeing that the learning destinations continue getting coordinated into the Organizational, culture. Since time immemorial, Defense is accepted to be simply an order and-control structure. Circumstances are different however and we have present day armed forces with best in class weaponry. The howdy tech war pursued by the US in the freedom of Kuwait from the grasp of Iraq, which was conveyed live to the illustration rooms of millions, abundantly showed the learning engaged with changing a conventional native into a well informed, recognizing

*Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

proficient and holding him at that bleeding edge execution. Saturated with various leveled hierarchical structures, synonymous with directions, orders, discipline, do-or-bite the dust circumstances and the much-insulted court-martials, how could a direction and-control association like a military, ever meet all requirements to be a learning association? Usually to state that, 'military isn't a vocation, it is a lifestyle' and that 'troopers continue figuring out how to live and battle one more day'. What is the quantum of learning required to make it a lifestyle Is the generative procedure of life and authoritative learning particular to business associations alone Is it not the military, which is a source of demonstrated administration and the executives fundamentals that changed conventional, semi-proficient people into effective troopers who achieve a definitive purpose of self-completion that does not deflect them from making even the incomparable penance for their nation. Today, the very of Human Resource nation. Today, the very idea of Human Resource Management has changed.

Conclusion - There are new patterns and new issues too in Human Resource Management and this should be taken a gander at to land at the best HR conventions in one of the greatest Human Resource manufacturing plants on the planet the Defense administrations. The board is worried about gathering the board. More than one individual structures a gathering. This gathering must be sorted out to accomplish targets for which it is framed. We consider such a composed gathering an 'Association Management Oversee.

In present day society we can't live without the help of some sort of composed endeavors and, along these lines, associations. Therefore, Human creatures do require associations and all associations require some sort of the executives. People are constrained by their very own organs, for example, the cerebrum, mind. Be that as it may, beyond what one human must be controlled remotely. It requires some fake structure of "the board'. Along these lines the board utilizes the gathering of people to accomplish a reason through vehicle of association and its administration. In this manner the executives we talk about is as far as gathering and not a person. Business is a human created sorted out movement and hence it must be overseen.

References :-

1. Employee on boarding checklist. "Human Resource Management". Human Resource Management. Retrieved 2019-12-14.
2. Chugh, Ritesh (January 2014). "Role of Human Resource Information Systems in an Educational Organization". Journal of Advanced Management Science.
3. "HRMS Software increase efficiency". artifyhcm.com. Retrieved 2020-06-
4. "HRMS for recruitment: everything you need to know". www.hrmsworld.com. Retrieved 2018-09-12.
5. http://www.scribd.com/doc/39382840/HRM-in-Indian-Defence#scribd MohitKabra on Oct15, 2010
6. https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_Armed_Forces
7. http://www.globalsecurity.org/military/library/report/2003/htar-chapter13.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Relationship of Estimated Breeding Values of Various Traits Obtained by Both (Si And Blup) Method in White Leghorn Strain 'B' Flock

Bhagat Singh*

Introduction - Identifying the superior birds based on performance or phenotype, for breeding, has been practiced since ages. Of course, this practice was followed without the knowledge of principles of genetics . The purpose of this study was to determined relationship amon estimates of breeding values for different traits .

Materials and Methods - The data regarding this study were collected for two generation (1998-1999) hatched in three or four hatches in month of march – April each year on white leghorn strain 'B' flock maintained at poultry farm college of veterinary and animal science RAU Bikaner. The product moment correlation and rank correlation among sire's estimated breeding values for different traits were calculated according to steel and torrie (1980).

Results and Discussion - The product moment correlation was used to obtain relationship among EBV of various traits. Similarly, rank correlation was calculated among sire ranking by both the methods. The product moment correlations among the EBVs for different traits obtained by SI and BLUP are presented in Table 1. The ranges of product moment correlations were -0.8621 to 0.9566 and -0.8459 to 0.9427 by SI and BLUP, respectively.

The EBVs product moment correlation of 20 week body weight by BLUP with 34 week body weight was as expected, highly significant and positive, with age at first egg it was significantly negative in generation II. This indicates that selection of sires with high EBV for 20 week body weight will cause early sexual maturity. Insignificant and low 20 week body weight with egg production, egg weight, egg mass and rate of lay indicates independent breeding value. Estimated breeding value of 34 week body weight with age at first egg was negative in both generations but not significant, with egg weight positive, but again non significant in generation-1. However, it was highly significant with EBV of egg weight in generation II, indicating selection of sires with high breeding value for 34 week body weight will cause improvement in egg size. The relation of 20 week body weight with egg mass and rate of lay were also not significant.

Correlations of age at first egg with egg weight and rate of lay was non significant, but was highly significant negatively with egg production and egg mass. Indicating that sires selected by BLUP and having high estimated breeding value for age at first egg with bring simultaneous increase egg mass as the age at first egg declines.

Among all traits used in the study, the most important is egg production and egg weight, because of negative genetic correlations, as egg number increases the egg size gets reduced. Hence, the estimated breeding value of egg production with egg weight was negative in generation II, but insignificant in both generations. Nayee (1999) reported non-significant and positive, and negative product moment correlations in strain I and II respectively, both by BLUP and sire index. The non significant and low correlation of egg production with egg weight suggests that sires with higher breeding value for egg production will not improve egg weight. So for simultaneous improvement in both these traits either construction of an optimum selection index or selection on the basis of some composite traits should be used rather than sire selection only on the basis of egg production of their progenies. The estimated breeding value of egg production was positive and highly significant in both generations with egg mass, and significant with rate of lay in generation 1. This suggests that selection of sires with high estimated breeding value for egg production may improve egg mass, which is a product of egg number and egg weight.

Table 1 (see in next page)

Correlations of estimated breeding value of egg weight was positive with egg mass and rate of lay in both generations but significant only with egg mass in generation I. No published information was available on relationship of EW with EM and RL, therefore results could not be compared with the findings of the other workers.

On vetting Table 1, the results of EBVs for various traits by product moment correlations through BLUP, described above, correspond well with those by sire index, hence do not require separate discussions.

The rank correlations of EBVs among ranking of sires for various traits estimated by SI and BLUP are presented in Table 2.

The rank correlations for SI and BLUP ranking ranged

*Lecturer, Animal Husbandry and Dairy Science, S.C.R.S. Govt College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

from 0.8188 to 0.9514 and -0.8167 to 0.9453, respectively. Rank correlation between ranking for 20 week body weight with all other traits in both generations was of same direction, except EW, where it was negative in generation I and positive in generation II, though not significant, by both SI and BLUP methods. As expected, it had highly significant positive correlations with 34 weeks body weight by both methods. Similarly, 34 week body weight had insignificant rank correlations with all other traits, except egg weight in generation II. These insignificant rank correlation indicates that the ranking of sires for 34 week body weight is independent from that of other traits by any of the two methods. Hence, selection of highest ranking for this trait will not bring improvement in all other traits.

Table 2 (see in next page)

The rank correlation for ranking of age at first egg with egg production and egg mass was highly significant and negative. Repugnant to this Nayee (1999) observed non significant rank correlation of age at first egg with egg mass, but positive and negative in strain I and II, respectively. This suggest that the highest ranking (negatively) sire for age at first egg will increase egg production and egg mass, which is highly desirable, as egg mass includes both egg number and egg weight. Similar pattern and age at first egg was also observed by SI method.

The rank correlation, by both BLUP and SI methods for ranking for egg production had highly significant and positive relation with egg mass and rate of lay. This is easy to comprehend as both egg mass and rate of lay incorporate egg production. The rank correlation for ranking of egg production with egg weight were not significant, irrespective of the method suggestive of no relationship between ranking of these traits. These results concur well with those of Nayee (1999). Hence, need arises for developing multitrait selection index to bring simultaneous improvement in egg number and egg weight.

Unlike the above results, the rank correlation for egg weight, again by both methods, was not significant with egg mass and rate of lay. Again. proving the hypothesis of independence i.e. highest ranked sire for egg weight will not affect egg mass or rate of lay. Contrarily, the rank correlation for egg mass, by both methods, had significantly positive relation with rate of lay. This points towards the fact that the highest ranking mate for egg mass will improve rate of lay.

Since no literature reviewed was available for many traits, no comparisons were possible.

References:-

1. Nayee, N. 1999. Genetic evaluation of two strains of egg type chicken. M.V.Sc. Thesis. CCS,HAU,Hisar
2. Steel, R.G.D. and Torrie, J.H. 1980. Principles and procedures of statistics.2nd Ed. McGrow-Hill Book Co. Inc., New York,550.

Table 1 :Product mement correlations among the EBV of Different traits obtained by BLUP (above diagonal) and sire index (below diagonal) for both the generation

Trait	BW 20	BW34	AFE	EP	EW	EM	RL
BW20							
I	-	0.69382**	-0.3228	0.21882	-0.2873	0.11928	-0.1704
II	-	0.81720**	-0.4188*	0.22537	0.16637	0.27001	-0.3569
BW34							
I	0.69367**	-	-0.1278	0.02122	0.15794	0.06585	-0.1672
II	0.82015**	-	-0.1349	0.02556	0.50744**	0.19834	-0.2097
AFE							
I	-0.3311	-0.1374	-	-0.8459**	-0.01439	-0.78279*	0.0318
II	-0.41101*	-0.1375	-	-0.84199*	0.20385	-0.74971**	0.2343
EP							
I	0.24814	0.05143	-0.86219	-	0.09373	0.94279	0.4727
II	0.22347	0.10259	-0.85099	-	-0.14466	0.92348	0.306
EW							
I	-0.2843	0.16297	-0.0183	0.10651	-	0.39423*	0.2133
II	0.14809	0.48908**	0.2078	-0.1459	-	0.21915	0.1119
EM							
I	0.14805	0.0962	-0.80331	0.95661**	0.3857	-	0.50376**
II	0.26419	0.19349	-0.77266	0.94017**	0.2113	-	0.3416
RL							
I	-0.1301	-0.1124	0.0673	0.45388*	0.19247	0.47875*	-
II	-0.3679	-0.2261	0.2518	0.29405	0.10288	0.32444	-

Table 2 : Rank correlations among the EBVs of different traits obtained by BLUP (above diagonal) and sire index (below diagonal) for both the generations

Trait	BW 20	BW34	AFE	EP	EW	EM	RL
BW20							
I	-	0.68479**	-0.32308	0.27111	0.20068	0.19385	-0.21162
II	-	0.74548**	-0.38752*	0.37219	0.02627	0.37001	-0.1341
BW34							
I	0.68479**	-	-0.05231	-0.0065	0.19932	0.01675	-0.1788
II	0.74767**	-	0.01806	0.05473	0.40449	0.18172	-0.13027
AFE							
I	-0.31966	-0.05504	-	-0.81675**	-0.05231	-0.79009**	0.07145
II	-0.41544	-0.01204	-	-0.76902**	0.30159	-0.65025**	0.17679
EP							
I	0.27385	-0.01128	-0.81880**	-	0.10974	0.9453**	0.44479*
II	0.33388	0.02518	-0.77230**	-	-0.17132	0.90805**	0.42912*
EW							
I	-0.20479	0.19248	-0.04479	0.12957	-	0.34359	0.21504
II	0.03558	0.40613*	0.2879	-0.17789	-	0.16147	0.16639
EM							
I	0.19932	0.02974	-0.78940**	0.95145	0.35521	-	0.43590*
II	0.36891	0.19102	-0.68309**	0.90476	0.1653	-	0.47345*
RL							
I	-0.16786	-0.11863	0.08034	0.43248*	0.20684	0.42496*	-
II	-0.10564	-0.09633	0.104	0.42419*	0.13465	0.51122**	-

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Study of Genetic and Phenotypic Correlation Between Different Economic Traits in White Leghorn Strain 'B' Flock

Bhagat Singh*

Introduction - The Layer industry in india witnessed a Phenomenal Growth in last Three decades due the Challenging performance of white leghorn breed. The Genetic Improvement in white leghorn is paving the way for exploiting the production potential of this breed. The purpose of this study were to estimate genetic and phenotypic correlation between different economic traits viz: body weight at 20 week of age(g), body weight at 34 weeks of age(g), age at first egg(days), egg weight(g) at 40 week of age, egg production(no.)upto 250 days of age, egg mass (kg) upto 250 days of age and rate of lay(%) in strain 'B' of white leghorn.

Materials and Methods - The 'B' strain of white leghorn maintained at CVAS,RAU, Bikaner contributed the data for this study for two generation from progeny(n=990) produced by 26 sires and 196 dams in generation I and Progeny (n=1163) produced by 28 sires and 224 dams in generation II

The correlation between two characters is the ratio of covariance to the geometric mean of the variances of the characters being correlated.

The genetic correlations were calculated by sire component asfollows:

$$r_{G(s)}= \sigma_{S\,x\,y} / \sqrt{(\sigma^2_{S\,x}.\,\sigma^2_{S\,y})}$$

The standard error of genetic correlation was calculated by the approximate method proposed by Robertson (1959) as follows:

$$SE\ (r_G) = (1-r_G^2)\sqrt{[\{SE\ (h^2 X).\ SE\ (h^2 Y)\} / 2\ (h^2 X.\ h^2 Y)]}$$

The phenotypic correlation was calculated as follows:-

$$r_P=\sigma_{p\,X\,Y} / \sqrt{(\sigma^2_{P\,X})(\sigma^2_{p\,Y})}$$

The standard error of phenotypic correlation was calculated asfollows:

$$SE\ (r_P) = \sqrt{(1 - r_P^2)/(N-2)}$$

Results and Discussion - The genetic and phenotypic correlations estimated by sire component of variance and covariance among the various economic traits incorporated in this study are presented in Table 1. The association between two traits that can be directly observed is the correlation of phenotypic values (r). which may be due to genetic and/or environmental causes. The genetic correlation between the two traits is the correlation between the breeding values of the two traits. When two traits have low heritability, the phenotypic correlation is mainly due to environmental causes and when they have high heritability it is mainly due to genetic causes. From a given phenotypic correlation, no inference can be drawn about the magnitude and the direction (sign) of the genetic correlation. Genetic correlations among quantitative traits may be due to pleiotropy and/or linkage.The correlations due to pleiotropy is of permanent in nature and shall change only if there is mutation. While the correlation due to linkage is transitory in nature depending upon the strength of linkage. If genes are closely linked, correlation persists for many generations, but if genes are situated far apart, the linkage is poor and it will break due to recombination of genes. That is why the estimates vary from flock to flock or from generation to generation within the same flock.

Estimates of genetic correlations are required to predict correlated response in secondary traits when selection is practiced for a particular trait and to determine the emphasis to be given to deferent traits is a multitrait selection index. Phenotypic correlations are needed to compute optimum culling level In Independent culling level selection and to give optimum weightage for different traits in index selection.

Table 1 (see in last page)

1. Correlation of body weights with age at first egg, egg production, egg weight, egg mass and rate of lay - Phenotypically 20 week body weight had highly significant positive correlation coefficient with 34 week body weight (pooled r_G= 0.76 $\pm$ 0.066 and r_P= 0.564), both generation wise and pooled over generations. At genetic level also the genetic correlations were found to be positive and highly significant. This indicates that heavier pullets around sexual maturity will be heavier subsequently at a later age and vice versa. All earlier workers, as reviewed in literature,

*Lecturer, Animal Husbandry and Dairy Science, S.C.R.S. Govt College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

have reported similar positive association of 20 week body weight with 32/40 week body weights.

The correlations of both 20 and 34 week body weights with age at first egg were negative at phenotypic level, except 34 week body weight with AFE in generation I, which was however non significant. Genotypically also both body weights were found to be negative, indicating that heavier birds tend to mature or come into lay earlier. These results concur well with the findings of earlier workers at phenotypic level. The genetic association is strengthened by the reports of Dhankhar (2002) and Sharma et al. (2003). Conversely,Ferdoci (1992) and Sharma et al. (2003) reported positive correlation between these traits. Contrarily,Tewari (2003) and Vasu et al. (2004) reported negative genetic association between 18/20 week body weight and age at first egg, whereas positive relation between 32/40 week body weight with age at first egg. While comparing the results of genetic correlations between body weights and age at first egg with the earlier reports in the literature, a peculiar phenomenon was observed. The body weights around at sexual maturity (18, 20, 22 and 24 week) were mostly reported to be negative and significant. Whereas, the body weights at higher age (32, 34, 40 weeks or even above) were mostly reported to be positive but inconsistent due to their higher standard errors.

The correlation of 20 week body weight and egg production was found to be positive phenotypically, whereas with 34 week body weight, it was positive in generation II but negative in generation I and overall. Genetically both body weights were observed to be positive with egg number. The reviewed reports by various authors, between these two traits revealed conflicting reports, both at phenotypic and genetic level. Hence, from the literature reviewed it may be concluded that the inheritance of body weights is almost independent of egg number.

Positive phenotypic correlations was observed between both body weights and egg weight, indicating heavier birds tend to lay larger eggs and vice versa. But at genetic level 20 week body weight was negative with egg weight, except generation II. Conversely, 34 week body weight was positive in the present study, both phenotypically and genetically. Most of the authors have reported positive genetic and phenotypie correlations between 20/34 week body weight and egg weight. In contrast.Thangaraju and Ulaganathan (1990) and Nandal (1993) have reported negative phenotypic relation between body and egg weight. Likewise, Thangaraju and Ulaganathan (1990) have cited negative genetic correlation between these two traits. Alike body weight and egg number, body weight and egg weight have independent inheritance genetically.

The results of 20/34 week body weight and egg mass was found to de positive, both phenotypically and genetically. These results are in concurrence with those of Johari et al. (1987).

The correlation of body weights at 20 and 34 weeks of age with rateof lay was found to be negative phenotypically, except in generation II (34 weeks), though insignificant. In contrast, the results at genetic level were negative and significant at 20 weeks only. This result indicate that lighter birds tend to have good rate of lay as compared to heavier counterparts.

2. Correlation of age at first egg with egg production, egg weight, egg mass and rate of lay - Age at first egg and egg production, as expected, were found to be correlated negative and highly significant, both phenotypically and genetically (pooled r_P= -0.59 and r_G = -0.95. The table of review of literature for these traits revealed that all prior authors cited similar results. This indicates that selection programme aiming to increase egg number will result in early age at sexual maturity as a correlated response. In other words, birds which attain early sexual maturity gets more period to lay eggs upto any fix age (EP = 250 days of age).

The magnitude of age at first egg with egg weight were r_P = 0.076 and r_G=0.14 $\pm$ 0.175 but both were non significant. Similar results were reported by Sharma and Krishna (1998) and Tewari (2003). The association between age at first egg and egg weight can be indirectly explained on the basis of body weights. As the birds comes into lay earlier give smaller egg but as they progress in age they approach adult body size and hence lay larger eggs. The literature reviewed between correlation among body weights at different age group and egg weight endorse the above proposition.

The correlation estimates between age at first egg and egg mass were negative and highly significant, both at phenotypic and genetic levels. The pooled estimates were r_P = -0.56 and r_G = -0.84$\pm$0.144. The scanty literature available between these two traits concur well with the present findings (Johari, 1987 and Kumararaj et al. 1991). The results can be well corroborated with correlations between egg weight and egg number. When Johari et al. (1987) tried selection on the basis of egg mass, to check undesirable change in egg size there was increase in egg number. desirable decline in age at first egg with no improvement in egg weight.

The relationship between age at first egg and rate of lay was found to be positive phenotypically and genetically but significant at phenotypic level (r_P = 0.28 and r_G = -0.00 $\pm$0.301). The result indicate that inheritance of these two traits are independent of each other at genetic level.

3. Correlation of egg production with egg weight, egg mass and rate of lay - Egg production and egg weight were found to be negatively associated, as expected, phenotypically. But genetically, generation II was negatively related. Unexpectedly, generation I and pooled estimates showed positive correlation. However, their magnitude with high standard errors proved the estimates to be unreliable (in generation-II r_G = -0.25 $\pm$ 0.252 and pooled r_G = 0.01$\pm$0.183). Although it is a well established fact that selection for increased egg number leads to sharp decline in egg size. The reviewed literature also ascertains this fact that all authors have reported either negative genetic

correlations with exceptional authors who have observed positive relation of same magnitude with high standard errors which may be attributed to sampling errors.

Egg production had a highly significant association with egg mass both at phenotypic and genetic levels (r_p = 0.96 and r_G = 0.94$\pm$0.021). This again ascertains the fact that egg mass, derived from egg number and egg weight, carries maximum weightage to egg number. These results are akin to those of Kamararaj et al. (1991) and Sabri et al. (1999). The correlation between egg production and rate of lay was found to be positive both phenotypically and genotypically (r_P = 0.58 and r_G= 0.33$\pm$0.264). It was highly significant at phenotype level. This suggests that selection of either trait will bring in improvement in egg number.

4. Correlations of egg weight with egg mass and rate of lay - The association of EW and EM was positive, both phenotypically and genetically (r_P= 0.206 and r_G = 0.35 $\pm$0.161). Though the relationship was genetically (rP significant at phenotypic level only. Johari et al. (1987) and Sabri et al. (1999) also reported positive correlation both phenotypically and genetically. Contrary to it Kumararaj et al. (1991) observed negative genetic association between these two traits. Johari et al. (1987) reported that selection for egg mass increased egg number only and could not check the decline in egg size.

The relation between egg weight and rate of lay was positive (r_P= 0.001 and r_G = 0.44$\pm$0.278) at both levels but was statistically non significant. The present results are in close agreement with Ledur et al. (1993) who reported positive genetic association between these two traits in 2 lines studied.

5. Correlation between egg mass and rate of lay - The phenotypic correlation between these two traits was significantly positive, though genetically it was positive but insignificant (r_P= 0.572 and r_G= 0.46$\pm$0.238). This may be due to the fact that both derived traits incorporate egg number.

References:-

1. Dhankhar, K. 2002,*Thesis* M.Sc., G.B. Pant University of Agriculture and Technology, Pantnagar.
2. Ferdoci. A.M: Goswani. R.N: Das, *Indian general of poult. Sci*., 27: 224-227,
3. D; Laskar, S. and Shadap, O. 1992
4. Johari, D.C; Ayyagari, V; Mohanpatra, S.C; Kataria, *Indian J. Poult. Sci*. 22(3):223-230
5. M.C; Dey, B.R. and thiyagasundaram, T.S. 1987
6. Kumararaj, R.O; Kathandaraman, P. and *Indian J. Poult. Sci*. 26(1): 1 – 5.
7. Ulaganathan, V. 1991
8. Ledur, M.C; Schmidt, G.S; Figueiredo, E.A.P; Avila, *Pesquisa-Agropecuaria-Brasileira*, 28 (a) : 1031 – 1037.
9. V.S.de. and Balen, L. 1993
10. Nandal, V.S. 1993, M.Sc.*Thesis* submitted to CCS HAU, Hisar,India.
11. Robertson, A. 1959, *Biometrics*, 15 : 469-485.
12. Sabri, H.M. ; Henry, R. Wilson; Robert, H. Harms, *Genetics and molecular Biology*, 22(2): 183- 186 (1999)
13. Charles, J. Wilcox. 1999
14. Sharma, A.K. and Krishna, S.T. 1998, *Indian J. Poult*. Sci., 33: 198-201
15. Sharma, L; Singh, H; Singh, R.K. and Singh, C.V. 2003, *Indian* J. Poult. Sci. 38(2) : 145-148
16. Tewari, R. 2003, *Thesis* M.Sc., G.B. Pant University of Agriculture and Technology, Pantnagar.
17. Thangaraju, P. and Ulaganathan, V. 1990, *Indian J. Anim. Sci*. 60: 444-449
18. Vasu, Y: Narasimha Rao, G; Sharma, R.P; Hazary, *Indian J. Anim. Sci*. 74(9):994-996
19. R.C; Ramesh Gupta, B. and Satyanarayan, A. 2004

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Table 1: Pooled and generationwisegenetic(Above diagonal) and phenotypic (below diagonal) correlations obtained by sire component among various traits

Traits	BW20	BW34	AFE	EP	EW	EM	RL
BW20							
I	-	0.72± 0.105	-0.41± 0.203	0.35± 0.227	-0.27±0.206	0.23±0.234	-0.42±0.104
II	-	0.82± 0.073	-0.48± 0.191	0.23± 0.219	0.08±0.226	0.25±0.219	-0.80±0.337
Pooled	-	0.76± 0.066	-0.45± 0.138	0.29± 0.155	-0.16±0.152	0.21±0.158	-0.47±0.255
BW 34							
I	0.618**	-	-0.25± 0.228	0.18± 0.255	0.21±0.217	0.23±0.244	-0.33±0.682
II	0.548**	-	-0.17± 0.233	0.02± 0.238	0.52±0.181	0.21±0.232	-0.48±0.356
Pooled	0.564**	-	-0.22± 0.162	0.13± 0.171	0.34±0.144	0.24±0.163	-0.23±0.269
AFE							
I	-0.205*	0.019	-	-0.99± 0.201	0.40±0.248	-0.89±0.203	0.40±0.666
II	-0.188	-0.029	-	-0.95± 0.187	0.31±0.241	-0.85±0.205	0.14±0.398
Pooled	-0.195*	-0.001	-	-0.95± 0.138	0.14±0.175	-0.84±0.144	0.00±0.301
EP							
I	0.129	-0.046	-0.560**	-	0.12±0.267	0.94±0.031	0.11±0.710
II	0.127	0.035	-0.660**	-	-0.25±0.252	0.93±0.035	0.19±0.389
Pooled	0.128	-0.013	-0.599**	-	0.01±0.183	0.94±0.021	0.33±0.264
EW							
I	0.040	0.242*	0.042	-0.040	-	0.44±0.220	0.77±0.936
II	0.107	0.172	0.099	-0.094	-	0.12±0.258	0.20±0.403
Pooled	0.065	0.195*	0.076	-0.068	-	0.35±0.161	0.44±0.278
EM							
I	0.135	0.008	-0.540**	0.975**	0.180	-	0.36±0.585
II	0.160	0.091	-0.602**	0.936**	0.258**	-	0.27±0.380
Pooled	0.143	0.040	-0.564**	0.961**	0.206*	-	0.46±0.238
RL							
I	-0.036	-0.033	0.206*	0.680**	0.001	0.669**	-
II	-0.076	0.008	0.398**	0.417**	0.006	0.409**	-
Pooled	-0.049	-0.013	0.286**	0.582**	0.001	0.572**	-

Note : n = 2153, Table value of r = 0.194(P<0.05) *
=0.254 (P<0.01)**

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Analysis of the Second Question Paper of Education Subject of UGC-NET on the Basis of Certain Selected Criteria

Sandesh Acharya*

Abstract - The study aimed at an analysis of UGC-NET second question paper of Education subject on the basis of content coverage and type of question. Last five years' UGC-NET question papers (2012 to 2017) and prescribed syllabi of Education subject for second question paper were collected from the UGC website. Every question was screened on the basis of content/area/unit of prescribed syllabus and types of question also. Proformas were developed for Question Paper Analysis. These were used to find out the percentage weightage and average number of items on the basis of content coverage and types of question. Average numbers of items with percentage weightage were calculated on the basis of content coverage and level of cognitive objective it covered. The data were analyzed by weightage and Mean. The results of study were: (1) The Methodology of Educational Research has maximum weightage i.e. 28.2%, while Philosophical Foundation of Education has lowest weightage i.e. 22%. Other two areas which are related to Sociology and Psychology have 23.6% and 26.2% weightage respectively in the second question paper of subject Education. (2) The Understanding level questions weightage was 38.8% and Knowledge level question weightage was 49.2%, respectively. While Application level questions' weightage was only 12% in second question paper of subject education of UGC-NET.
Key Words - Question Paper, Measurement & Evaluation & UGC-NET.

Introduction - Examination is a process of assessing or measuring anything. The term examination is derived from a Latin word, examen, which means the point of a balance. In the field of education it means systematic test of knowledge and skill of the leaner, examination is an integral part of every educational system. It was in vogue in china three thousand years ago.

The word 'evaluation' has a different meaning for different people. It is often confused with the term 'measurement'. Therefore many times teachers who give a test to the students say that they are evaluating the achievement of the students. Gronlund (1965) defines evaluation were following manner:

Evaluation=Quantitative description of pupil (measurement) + Value Judgment

Evaluation=Qualitative description of pupil (non-measurement) + Value Judgment

U.G.C.'s Policy and Programme for Improvement of Research in the Universities Report (1984) felt the need for National Test for admission to research. According to this report it is essential to carefully select those who would be awarded Fellowships for undertaking research in the University system, through National Examination or test. In the absence of such a test, it has been found that a number of scholars, not suitably equipped for undertaking research, get admitted into the system, and there after need prolongation of the period required for research and produce work of a quality which often leaves much to be desired.

Rationale of the Study - Malhotra, Bedi & Tulsi (1990) found that the question papers did not fully cover the prescribed content and did not seem to be appropriate in terms of instruction, equal weightage, language of questions, etc. Mukherjee (1991) concluded that the difference between the boys group and the total group and for that matter, for each of the other groups with the total group were not significant at any level of confidence. Omirin (2006) found that the contribution of blind guessing to test was not directly related to the discrimination and difficulty indices. Torke, Asha & Ramnarayan (2006) concluded that the multiple true-false items are not boosting student's performance in written examinations. Chandrasekhar (2007) found that the question paper in English did not contain any unseen reading comprehension. The question paper is largely knowledge based. Only the map questions in History and Geography test the skill. Bandyopadhyay (2003) found that the role of Research Fellowships and demand of JRF/SRF. Patil (2005) focused a need of CSR/ UGC NET Examination. Mungekar (2009) recommended that NET should be retained as compulsory requirement for appointment of lecturer for both under graduate and post graduate level, irrespective of candidate possessing M.Phil. or Ph.D. degree. Inderpal, Saini and Luthra (2011)

*Assitant Professor, Arihant College, Indore (M.P.) INDIA

explore the demographic variations in basic science education across the country on the basis of the CSIR-UGC National Eligibility Test (NET). A brief resume of the studies conducted so far reveals that there has been no research on analysis of the second question paper of Education subject of UGC-NET. Thus, the area deserves research efforts.

Objectives - The objectives of study were.

1. To evaluate the second question paper of education subject of UGC-NET for last five years on the basis of content coverage.
2. To evaluate the second question paper of education subject UGC-NET for last five years on the basis of type of questions.

Methodology - The two criteria were fixed by the researcher for analysis of the UGC-NET question papers. The first criterion was content coverage and the second one was the level of questions. Mainly three levels were defined for it namely-Knowledge Level, Understanding Level and Application level. Analysis and Evaluation level questions merged in understanding level. Similarly, synthesis level questions merge into application level. Last five years' UGC-NET question papers and prescribed syllabi of question paper II were collected from the UGC website. Every question was screened on the basis of content/area/unit of prescribed syllabus and types of question also. Proformas were developed for Question Paper Analysis. It was used to find out the weightage (%) and average number of items on the basis of content coverage and types of question. Average numbers of items with percentage weightage were calculated on the basis of level of questions. The details of selected question papers analyzed are: June-2012, December-2012, June-2013, December-2013, June-2014, December-2014, June-2015, December-2015, June-2016 & January-2017. The data were analyzed by Percentage weightage and Mean.

Results and Interpretation - The first objective of the study was to evaluate the second question paper of education subject of UGC-NET for last 5 years on the basis of content coverage. The analysis of the question paper has been done by the researcher with the help of developed question paper analysis proforma.

Area and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-II

The average number of items with weightage of percentage for UGC-NET Question Paper-II: Education is given in following table.

Table:1 - Area and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-II: Education

Area / Content / Unit	Average Number of Items	Percentage Weightage
Philosophical Foundation of Education	11	22
Sociological Foundation of Education	11.8	23.6
Psychological Foundation of Education	13.1	26.2
Methodology of Educational Research	14.1	28.2
Total	50	100

It is evident from table 1 that Methodology of Educational Research has maximum weightage i.e. 28.2%, while Philosophical Foundation of Education has lowest weightage i.e. 22%. Other two areas which are related to Sociology and Psychology have 23.6% and 26.2% weightage respectively. Thus at super facial level, all four area's percentage weightage is almost equally distributed. None of the area possesses weightage less than 22% and more than about 28.2% in the second question paper of education subject of UGC-NET.

Level of Question and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-II

The second objective of the study was to evaluate the second question paper of education subject UGC-NET for last 5 years on the basis of type of questions. The analysis of question paper has been done by the researcher with the help of developed question paper analysis proforma.

Table: 2 (see in next page)

It is clear from table 2 that Understanding level questions weightage was 38.8% and Knowledge level question weightage was 49.2%, respectively. While Application level questions' weightage was only 12% in second question paper of subject education of UGC-NET.

Findings and Discussions - The findings of study were: (1) The Methodology of Educational Research has maximum weightage i.e. 28.2%, while Philosophical Foundation of Education has lowest weightage i.e. 22%. Other two areas which are related to Sociology and Psychology have 23.6% and 26.2% weightage respectively in the second question paper of subject Education. The reason behind this finding may be that NET examination has two type of output, one is JRF and another is Lectureship. For JRF, knowledge of Educational Research is the must. On the other hand it is essential for lecturer also to know about the Methodology of Educational Research, so that it may be helpful in teaching higher classes at Post Graduation level. There is not much difference between the weightage percentage of Sociological and Psychological Foundation of Education. The Philosophical Foundation of Education has lowest weightage. The reason behind this finding may be the trend of research in this area is disappointing. It is found from Educational Survey, Research Journal and Reports that less number of researches were conducted related to this Philosophical and Sociological aspects of Education. (2) The Understanding level questions weightage was 38.8% and Knowledge level question weightage was 49.2%, respectively. While Application level questions' weightage was only 12% in second question paper of subject education of UGC-NET. Application level question weightages are quite low in the paper. The reason for this finding may be

that the writing question related to Application level is difficult as compared to the other two levels. Application level questions are mostly related to the Practical & skill work which is not possible to assess in multiple choice type items easily.

References :-

1. Bandyopadhyay, M.: Quality Control of Doctoral Research: Role of Research Fellowships, University News 41 (29), JULY 21-27, 2003.
2. Buch, M.B. (ed.): Fifth Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, 1988-92.
3. Chandrasekhar, K.: A Critical Analysis of Class X English and Social Science Question Papers Indian Educational Review Volume 43, Number 2, pp 36-47, July 2007.
4. Gronlund, N.E. & Linn, R.L.: Measurement and Evaluation in Teaching (VIth Ed.), Macmillan USA, 1989
5. Inderpal, Saini, A.K., & Luthra, R.: Demographic variations in basic science education in India: A Case Study of CSIR–UGC National Eligibility Test, Current Science, Vol. 101, No. 5, 10 September 2011.
6. Mungekar, B.: Report of the Review Committee on National Eligibility Test of University Grants Commission, MHRD, Department of Higher Education, Government of India, New Delhi, 2007.
7. Patil, R. : The need for NET Exams, Current Science, Vol. 89, No. 7, 10 October 2005.
8. Omirin, M.S.: Difficulty and Discriminating Indices of Three-Multiple Choice Tests using the Confidence Scoring Procedure, Educational Research and Review, Vol. 1(2) pp. 014-017 January, 2007.
9. Torke, S., Asha, K. and Ramnarayan, K.: Impact of Multiple True–False Questions on Student Performance in Written Examinations, Indian Educational Review Vol.42, No.2,pp.71-80, 2006.
10. Tyler, R.W.: Educational Evaluation, Kluwer Academic Publishers, Boston, 1989.
11. http://www.ugc.ac.in

Table: 2-Level of Questions wise, Weightage Distribution in UGC-NET Paper-II : Education

Level of Question						Total	
Knowledge		Understanding		Application			
Average Number of Items	Percentage Weightage	Average Number of Items	Percentage Weightage	Average Number of Items	Percentage Weightage	Number of Items	Percentage Weightage
24.6	49.2	19.4	38.8	6	12	50	100

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

हिन्दी-उर्दू विवाद और परिणाम!

डॉ. रचना बिमल*

प्रस्तावना - भारत विविधताओं का देश है जहाँ प्रकृति के साथ-साथ भाषायी विविधता प्राचीनकाल से ही मिलती आई है। किसी देश या क्षेत्र के निवासियों के विकास में शिक्षा और शासन दो संस्थाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। ये दोनों ही विविधता को एक्यता में बदल अलग-अलग क्षेत्रों को 'राष्ट्र' के रूप में एकीकृत करती है। प्राचीन भारतीय शासन से लेकर विदेशी आक्रमणकारियों के शासनकाल तक 'संस्कृत' भाषा ने ज्ञान (शिक्षा) और शासन की भाषा बनकर, भारत वर्ष में यह भूमिका निभाई थी। मुस्लिम आक्रमणकारियों के साथ भारतीय जनमानस का परिचय फारसी, अरबी जैसी भाषाओं के साथ हुआ तो साम्राज्यवादी ब्रिटिश शासन ने अंग्रेजी भाषा को हिन्दुस्तानियों पर लाद दिया। विशिष्ट तथ्य यह है कि मुस्लिम शासक हिन्दुस्तान को अंग्रेजों की भाँति लूटकर अपने देश वापस नहीं गए बल्कि यहीं के बाशिंदे बन गए। धीरे-धीरे उन्होंने अरबी-फारसी और बहुसंख्यक जनमानस की भाषा के मेल से उर्दू जैसी भाषा को जन्म दिया।

मुगलों को पराजित कर अंग्रेजों ने जब शासन की बागडोर सम्भाली तो 'अंग्रेजी' राज-काज की भाषा बन गई लेकिन अदालती काम-काज की भाषा हिन्दी (जो देश में बहुसंख्यकों की भाषा थी) या उर्दू (जो सत्ताच्युत किए गए मुसलमानों की भाषा थी) में से किसे चुना जाए? यह प्रश्न उभर कर सामने आया। हिन्दी-उर्दू के इसी झगड़े से भाषायी झगड़ों के ऐसे बीज विकसित हुए जिनकी विषैली फसल आज तक लहरा रही है। इस विवाद और हिन्दी-उर्दू भाषाओं के जन्म की कहानी जानने के लिए हमें इतिहास के पृष्ठों को पढ़ना होगा। हिन्दी जिसे गाँधी और उनकी विचारधारा के लोग हिन्दुस्तानी कहते हैं, उत्तर भारत की जनता की महान परम्पराओं में से एक है।

कबीर ने 'भाषा को बहता नीर' कहा है। भाषायी नीर-धारा का उद्गम किसी 'विशेष स्थलीय ग्लेश्यिर' और 'समय' से नहीं होता। यह किसी मानव समूह की सदियों में संचित होने वाली वह पूंजी है, जिसमें देश, काल, परिस्थिति का त्रिकोण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भाषा की पहचान किसी क्षेत्र (देश), उसके काल (इतिहास और समकालीनता) और परिस्थिति (सामाजिक संरचनाओं) पर निर्भर करती है। भारतीय समाज में धर्म महत्त्वपूर्ण सामाजिक संरचना है, जिसका गहरा प्रभाव रहा है। सामंतशाही के दीर्घ कालखंड में खेती-बाड़ी और यातायात के साधनों के अपरिवर्तित रहने से आम जन के जीवन में सदियों तक विशिष्ट बदलाव नहीं आया। उसका देश के सूदुर भागों से ही नहीं निकटस्थ 100-200 किलोमीटर के दायरे मे भीं आवागमन बहुत कम था लेकिन मध्यकालीन निर्गुण सन्त, योगी, परिव्राजक, साधु पूरे देश में भ्रमण करते रहते थे। उनके धार्मिक केन्द्र समस्त उत्तर भारत में थे लेकिन रामभक्ति शाखा और कृष्ण भक्ति शाखा के भक्तों के समान उनका कोई सम्प्रदाय नहीं था। अत: वे किसी सम्प्रदाय की विशिष्ट कर्मकाण्डीय शब्दावली से भी बँधे नहीं थे। उनकी भाषा में खड़ी बोली की प्रधानता थी तो क्षेत्रीय बोलियों के शब्दों के साथ-साथ फारसी के शब्द भी घुले-मिले थे। फारस के साथ भारत के अत्यन्त प्राचीन सम्बन्ध रहे हैं। इस्वी काल के प्रारम्भ में जब शक और अन्य अप्रवासी जनजातियाँ यहाँ आईं तो वे वहाँ से शब्दावली भी लाईं। अजंता की एक गुफा में चित्रित भारतीय राजदरबार के दृष्य में एक फारसी राजदूत भी चित्रित है जो भारत और फारस के सम्बन्धों को दर्शाता है। आगे चलकर एक समय ऐसा भी आया जब अविभाजित पंजाब फारस के अधीन हो गया और फारसी शब्द, शासकीय पदाधिकारियों, व्यापारियों, सूफी संतो के द्वारा उत्तर भारत में प्रचलित होने लगे। हिन्दू संतो के समान ये सूफी संत भी घुमक्कड़ थे और इन्होंने नई भाषा 'उर्दू' के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करी। डॉ. मोहम्मद हसन के अनुसार- 'इस कार्य में सहायता करने वाले बिखरे हुए मुस्लिम फकीर थे जो दूर-दूर के चक्कर लगाते थे और प्रेम और सर्वबन्धुत्व का संदेश देते थे। ये फकीर साधारणतया विद्यमान भाषाओं के व्याकरण के ढाँचे और वाक्य-रचना को ग्रहण कर लेते थे तथा अरबी और फारसी के शब्दों का व्यवहार करते थे, जिसने आगे चलकर दूसरी भाषा और लिपि का रूप धारण कर लिया।'[1]

उर्दू का जन्म खड़ी बोली में कुछ फारसी, अरबी शब्द जुड़ जाने मात्र से नहीं हुआ बल्कि यह मुगलकाल में मुस्लिम शासकों, उनके आश्रितों, अनुयायियों की कृत्रिम भाषा के रूप में पैदा हुई थी। सुविख्यात मार्क्सवादी विचारक सैय्यद सज्जाद जहीर ने अपनी पुस्तक 'उर्दू हिन्दी और हिन्दुस्तानी' में विस्तार से स्पष्ट किया है किस प्रकार 'उर्दू' मुसलमानों के राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रभाव से जन्मी और विकसित हुई है। उर्दू भाषा के दोनों नाम 'रेखता' और 'उर्दू' महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर संकेत करते हैं। 'रेखता' का अर्थ है मिश्रित और 'उर्दू'- मुगल-दरबारों के लश्कर का नाम था। लश्कर में अनेक भाषाओं और बोलियों का प्रयोग होता था और देखते ही देखते उर्दू शासक वर्ग और जनता के बीच आदान-प्रदान की भाषा बन गई। पर अभी 'उर्दू' को अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता था। इंशाअल्ला जैसे लेखक ने अपने लेख 'दरिआए-लताफत' में इसे शाहजहानाबाद (दिल्ली) के उमराव, मुस्लिम शोहदों, खूबसूरत माशूकों, मुलाजिमों, शिविर अनुचरों और दासों की भाषा कहा है।

एक अन्य विद्वान मीर अमन ने अपनी पुस्तक 'बागो-बहार' की भूमिका में लिखा है- 'हकीकत उर्दू जबान की बुजुर्गो के मुँह से यूँ सुनी है कि दिल्ली शहर हिन्दुओं के नजदीक चौजुगी है। उनके राजा प्रजा कदीम से यहाँ रहते थे और अपनी-अपनी भाषा बोलते थे। हजार बरस से मुसलमानों का

* स. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय (दिल्ली) भारत

अमल हुआ। सुलतान महमूद ग़ज़नवी आया। फिर गोरी और लोधी बादशाह हुए। उस आमदोरफ़्त के बाअस कुछ जवानों ने हिन्दू-मुसलमानों की आमेज़श पाई। आखिर तैमूर ने जिसके घराने में अभी तक नामो-निशान-ए-सल्तनत चला आता है, हिन्दुस्तान को लिया। उसके आने और रहने से लश्कर का बाजार शहर में दाखिल हुआ। इस वास्ते शहर का बाजार उर्दू कहलाया। जब अकबर बादशाह तख्त पर बैठा तब चारों तरफ के मुगलों से सब कौम, कदरदानी और फेज़रसानीर इस खान्दान-ए-लासानी की सुनकर, हजूर में आकर जमा हुए। लेकिर हर-एक की गोयाई और बोली जुदा-जुदा थी। इक्ट्ठे होने से आपस में लेन-देन, सौदा-सुलफ, सवाल-जवाब करते-करते एक जबान उर्दू की मुकर्रर हुई। जब हजरत शाहजहाँ ने किला मुबारक और जामा मस्जिद और शहर-पनाह तामीर किया, तब बादशाह ने खुश होकर जशन फरमाया ओर शहर को अपना दारूल खलाबा बनाया, तब से शाहजहानाबाद मशहूर हुआ और वहाँ के शहर को उर्दू-ए-मुअल्ला का खिताब दिया। अमीर तैमूर के ऐहद से मुहम्मदशाह की बादशाहत तक बल्कि अहमदशाह और आलमगीर सानी के वक्त तक, पीढ़ी-ब-पीढ़ी सल्तनत यकसाँ चली आई। निदान जबान-ए-उर्दू मँजते-मँजते ऐसी मँजी कि शहर की बोली उससे टक्कर नहीं खाती।'[2] शाहजहाँ के समय में दिल्ली शहर को शाहजहनाबाद और उर्दू-ए-मुअल्ला दोनों नाम से पुकारा जाता था लेकिन शाहजहां के बाद उर्दू-ए-मुअल्ला नाम दिल्ली शहर के स्थान पर लालकिले और दरीबा के नीचे का इलाका बनकर रह गया। कुछ समय के बाद दिल्ली के इस इलाके को केवल उर्दू के नाम से पुकारा जाने लगा। सन् 1857 के विद्रोह के एक छत्ता गीत से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है।

उर्दू लूटा दरीबा लूटा, लूटा मालीवाड़ा।
गुड़वालों की कोठी लूटी, लूटा मंदिर सारा।।

उर्दू को तत्कालीन मुस्लिम बुद्धिजीवियों ने बड़े प्रेम से गले लगाया हो, ऐसा भी नहीं था। मौलवी सैयद अहमद ने 'फरहंग ए आसफिया' की भूमिका में लिखा है- हमें वह उर्दू पसंद नहीं जो नए मुसलमान, खानसामों, साहबों के अरदली, भारतीय ईसाई और छावनी के मिले-जुले लोग बोलते हैं, जिसका पुड्डू कहकर मजाक़ उड़ाया जाता है। 'नज्म ए आजाद' के लेखक शम्स-अल-उलेमा मौलवी मुहम्मद आजाद की दृष्टि में उर्दू उनके वंशजों की भाषा बनी जो फारसी बोलते थे। इसीलिए उन्होंने फारसी जुबान, फारसी छंद शास्त्र के विभिन्न रूपों और फारसी के रंगीन ख्यालों की ठीक-ठीक नकल करी। 'मुगल दरबार' की सहायता से पनपी उर्दू का वैभव भी मुगल साम्राज्य के पतन के बाद क्षीण होने लगा। दिल्ली और आगरा जैसे नगरों का महत्त्व कम हो गया और लखनऊ, फैजाबाद, बनारस, मुर्शिदाबाद जैसे शहर महत्त्वपूर्ण हो गए। फलत: दिल्ली और उसके आस-पास के नगरों के हिन्दू व्यापारी जब आजीविका की खोज में पूर्वी नगरों में गये तो दिल्ली दरबार की सायास बोली जाने वाली जबान- ए-उर्दू-ए-मुअल्ला को छोड़कर अपने अंचल की भाषा 'खड़ी बोली' को अपने साथ ले गए जो उनकी अपनी सहज बोली थी। यही खड़ी बोली आगे चलकर आधुनिक हिन्दी का आधार बनी लेकिन इस बोली में उर्दू की सहज शब्दावली समाहित थी।

आधुनिक हिन्दी का जन्म भी बहुत कुछ उर्दू की तरह कृत्रिम भाषा के रूप में हुआ है। हिन्दी के इतिहास की खोज करने वाले इतिहासकार भले ही इसके बीज नौवीं शताब्दी के आस-पास ढूँढते हैं लेकिन सत्य तो यह है कि आधुनिक हिन्दी का जन्म सन् 1857 की क्रांति की विफलता और मुगल साम्राज्य के पूर्ण पतन के उपरान्त ही हुआ है। जो आलोचक बारहवीं, तेरहवीं शताब्दी में हिन्दी का विकास खोजते हैं उनकी आधार सामग्री तत्कालीन मुस्लिम लेखकों द्वारा प्रयुक्त 'हिन्दवी' या 'हिन्दी' जैसे विशेषणों से जुड़ी है जबकि इन विशेषणों का प्रयोग मुस्लिम लोग किसी भाषा विशेष के लिए नहीं उत्तर भारत की समस्त भाषाओं हेतु करते थे। तत्कालीन हिन्दी साहित्य किसी एक भाषा में नहीं बल्कि अलग-अलग क्षेत्रों में प्रचलित भाषाओं में लिखा जा रहा था जिसमें अवधी और ब्रजभाषा प्रमुख थी। रीतिकाल (जिसकी सभी प्रमुख कृतियाँ ब्रजभाषा में है) संवत् 1700 से 1900 (1643 ई. से 1843 ई.) तक यही स्थिति बनी रही किन्तु इसके अवसान के तुरन्त बाद खड़ी बोली हिन्दी का समय शुरू होता है। यद्यपि इस काल खण्ड के उपरान्त भी ब्रजभाषा में हिन्दी साहित्य लिखा जाता रहा। काव्य के क्षेत्र मे यह प्रवृत्ति द्विवेदी युग तक स्पष्ट रूप से मिलती है लेकिन उस काल के ब्रज साहित्य को हिन्दी साहित्य में समाहित नहीं किया जाता। साथ ही विद्वानों ने यह भी स्वीकार कर लिया है कि उससे पूर्व खड़ी बोली हिन्दी में साहित्य नहीं था। खड़ी बोली हिन्दी को सायास यानि कृत्रिम तरीके से हिन्दुस्तान की भाषा अपनाने का कारण राजनैतिक था। दरअसल मुगल सल्तनत के पराभव से देश की बहुसंख्यक हिन्दू जनता को लगा उन्हें विदेशी आक्राताओं से मुक्ति मिल गई है। अंग्रेजों ने भी आरम्भ में स्वयं को राज्यों और रियासतों में बँटे हिन्दुस्तान के शासकों का हितैशी और शासन के परामर्शदाता के रूप में स्थापित किया। वह बात और है कि धीरे-धीरे अंग्रेज इस देश के शासक ही बन बैठे। अंग्रेजों से पूर्व मुस्लिम शासकों की भाषा फारसी आश्रित उर्दू थी। इस भाषा को हिन्दुओं ने आजीविका के लिए ऐसे ही सीखा जैसे आज का हिन्दुस्तानी अंग्रेजी सीख रहा है। सरकारी काम-काज से दूर रहने वाले लोगों को उर्दू सीखने की बहुत आवश्यकता नहीं थी, उनका काम-काज अपनी भाषा और बोली में आसानी से हो जाता था।

हिन्दुस्तान जैसे विशाल देश पर राज करने के लिए अंग्रेजों को सरकारी काम-काज में सहयोग करने के लिए अंग्रेजी जानने वाली हिन्दुस्तानी क्लर्कों की आवश्यकता थी तो दूसरी ओर भारत की बहुसंख्यक जनता को अंग्रेजी ना जानने पर अशिक्षित घोषित कर उनका मनोबल भी आसानी से तोड़ा जा सकता था। इतिहास साक्षी है कि साम्राज्यवादी शक्तियाँ युद्ध के उपरान्त पराजित देश की जनता का मनोबल तोड़ने के लिए, उन्हें अपने (विजेता) से हीन सिद्ध करने के लिए, हारी गई जाति की सभ्यता और संस्कृति को निम्न ठहराने के लिए 'भाषा' रूपी हथियार का सदैव प्रयोग करती आई हैं। इसीलिए सन् 1835 में अंग्रेजी सरकार ने लार्ड मैकाले के कहने पर अंग्रेजी भाषा में शिक्षा के प्रचार-प्रसार पर जोर दिया। हिन्दुस्तान में अंग्रेजी माध्यम के स्कूल खोले जाने लगे और इसी समय पर हिन्दी और उर्दू का झगड़ा उठ खड़ा हुआ। प्रश्न यह था कि क्या अदालती भाषा के अलावा स्कूलों में हिन्दी को एक अनिवार्य भाषा के रूप में पढ़ाया जाए? इसी बीच मुस्लिम बुद्धिजीवियों के दबाव में 'हिन्दी' जो एक वर्ष पूर्व ही अदालती काम-काज की भाषा बनी थी, उसकी जगह सन् 1837 में 'उर्दू' को अदालती भाषा बना दिया गया। वीरभारत तलवार लिखते हैं, 'मुगलों के समय से चली आ रही राजभाषा फारसी को हटाकर सन् 1837 में जब फारसी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दुस्तानी (उर्दू) को राजभाषा बनाया गया, तब उसमें प्रशासन सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दावली बिल्कुल नहीं थी। लिहाजा फारसी में काम करने के आदी सरकारी मुलाजिमों ने समूची अरबी-फारसी पारिभाषिक शब्दावली को उर्दू में जस की तस उतार दिया, सिर्फ सर्वनाम और कुछ क्रियाएँ ही खड़ीबोली में रह गई।'[3] अंग्रेजी सरकार 'हिन्दी' का सीधे विरोध न करके, 'उर्दू' को आगे लाकर अपना मंसूबा प्रकट कर रही थी। काफी लम्बे समय से अदालतों की भाषा फारसी थी, जिसे शुरू में अंग्रेजी सरकार ने नहीं

बदला। लेकिन बाद में उन्होंने देश की बहुसंख्यक जनता में प्रचलित भाषाओं को देखकर सन् 1836 में एक आदेश जारी किया कि अदालती काम-काज देश की प्रचलित भाषा में ही होगा। इस तरह अदालती कार्य हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में भी होने लगा। मुस्लिम कठमुल्ला शासकों के आगे अंग्रेज सरकार अपने इस फैसले पर ज्यादा दिन तक टिक नहीं पायी और एक वर्ष के पश्चात् सन् 1837 में उत्तर भारत के सभी दफ्तरों की भाषा उर्दू कर दी गई। ऐसा कर अंग्रेजी सरकार हिन्दू-मुस्लिम (अर्थात् हिन्दी-उर्दू के रूप में) झगड़ा लगाकर फूट भी डालना चाहती थी। उर्दू के अदालती भाषा होने पर आजीविका के लिए लोगों का उर्दू सीखना आवश्यक हो गया। स्कूलों में भी 'उर्दू' के रूप में वह भाषा पढ़ाई जाने लगी, जिसके पास न कोई व्याकरण था और न पूर्व की कोई विरासत। स्कूलों में धीरे-धीरे हिन्दी पढ़ने वाले छात्र कम होते गए और हिन्दी की शिक्षा को बंद कर दिया गया। हिन्दी के पास एक विरासत थी, जिसमें अमीर खुसरों से लेकर कबीर-सूर-तुलसी-जायसी-मीरा जैसे कवियों के काव्य में लोगों की रूचि थी किन्तु राजनितिक कारणों और धार्मिक भावना में कमी आने के कारण हिन्दी प्रेमियों की संख्या घटने लगी। इसी समय उर्दू को वर्नाक्यूलर भाषा के रूप में स्वीकार किया गया, जिसे देखकर हिंदी के पक्षधारों का दिमाग ठनकने लगा। अब उन्होंने सार्वजनिक रूप से अपनी राय व्यक्त की। बालमुकुन्द गुप्त ने लिखा, 'जो लोग नागरी अक्षर सीखते थे, फारसी सीखने पर विवश हुए और हिंदी भाषा हिंदी न रहकर उर्दू बन गयी।...हिंदी उस भाषा का नाम रहा जो टूटी-फूटी चाल पर देवनागरी अक्षरों में लिखी जाती थी।'[4] इसी समय राजा शिवप्रसाद सितारे 'हिन्द' का इस क्षेत्र में आगमन हुआ। यद्यपि वे इस समय तक शिक्षा विभाग में नियुक्त नहीं हुए थे। फिर भी उनका धयान हिंदी-उर्दू की ओर गया। उन्होंने सन् 1845 में 'बनारस अख़बार' निकाला जिसकी भाषा उर्दू थी और लिपि देवनागरी।

देश में सन् 1854 में चार्ल्स वुड की देशी भाषाओं के अध्ययन की योजना को स्वीकृत किया गया, उस समय भी देश के प्रबुद्ध मुस्लिमों ने इस बात पर विशेष जोर दिया कि हिंदी को शिक्षा में जगह न मिले। अंग्रेजों के सरपरस्त सर सैय्यद अहमद खान ने उर्दू का समर्थन किया और हिंदी के बहिष्कार के लिए सरकार से निवेदन किया। अंतत: सरकार ने यह सूचना निकाली, 'ऐसी भाषा का जानना सब विद्यार्थियों के लिए आवश्यक ठहराना जो मुल्क की सरकारी और दफ्तरी जबान नहीं है, हमारी राय में ठीक नहीं है। इसके सिवाय मुसलमान विद्यार्थी, जिनकी संख्या देहली कॉलेज में बड़ी है, इसे अच्छी नज़र से नहीं देखेंगे।'[5] इनका साथ हिंदी को 'बुत परस्तों की भाषा' मानने वाले फ्रेंच विद्धान गार्सा-द-तांसी दे रहे थे। राजा शिवप्रसाद सितारे 'हिन्द' जो अंग्रेजों के कृपा-पात्र भी थे और हिंदी के पक्षधार भी, उन्होंने अगस्त सन् 1868 में सरकार को एक मेमोरेंडम दिया जिसमें उन्होंने फारसी लिपि की जगह देवनागरी लिपि की वकालत की। हिंदी-उर्दू के झगड़े ने सन् 1868 में ही ज्यादा जोर पकड़ा। राजा शिवप्रसाद ने अदालती लिपि के विषय में एक ज्ञापन दिया जिसमें उन्होंने लिखा कि 'फारसी वर्णमाला अदालत से निकाल बाहर की जाए और हिंदी को उसका स्थान दिया जाए'। राजा शिवप्रसाद अदालती भाषा की कठिन अरबी-फारसी शब्दावली के घोर विरोधी थे, फिर भी उन्होंने अपने मेमोरेंडम में हिंदी और उर्दू को अलग-अलग भाषा नहीं माना जोर सिर्फ लिपि के बदलने पर दिया।

इस मेमोरेंडम ने प्रबुद्ध समाज में तीखी बहस को जन्म दिया। जिससे साँझे हिन्दी-उर्दू भाषी 'भद्रवर्ग' की एकता को एक और चोट पहुँची। इस लिपि विवाद के अगले वर्ष सन् 1869 में सैय्यद अहमद खान ने मुस्लिमों को अलग हस्ती के रूप में देखना शुरू किया और भद्रवर्गीय हिन्दू-मुसलमानों के बीच दूरी इतनी बढ़ गई जिसे आज तक नहीं पाटा जा सका। यह मेमोरेंडम फारसी लिपि के जरिए प्रशासन और नौकरी पर कब्ज़ा किए हुए मुस्लिम भद्रवर्ग के साथ हिन्दू भद्रवर्ग के शक्ति समीकरण के इतिहास को भी बतलाता है। यदि हम आंकड़ों की ओर रुख अपनाकर देखें तो हिन्दू छात्रों की अपेक्षा मुस्लिम छात्र बहुत ही सीमित मात्रा में थे। हिन्दू छात्र जहाँ आधुनिक शिक्षा हिंदी और अंग्रेजी में हासिल करते थे, उन्हें सरकारी नौकरी इसलिए नहीं मिल पाती थी कि वे उर्दू और फारसी से अनभिज्ञ थे जबकि भद्रवर्गीय मुसलमानों के लड़के बिना सरकारी स्कूलों में गए, बिना अंग्रेजी पढ़े- सिर्फ घर में थोड़ी-सी धार्मिक शिक्षा उर्दू में हासिल कर- सरकारी नौकरी पा लेते थे। यही कारण है कि मुस्लिम शिक्षा संबंधी सैय्यद अहमद खान की मांगों का विरोध करते हुए राजा शिवप्रसाद नौकरियों में उनके कब्जे के खिलाफ हिन्दू भद्रवर्ग के हितों की लड़ाई लड़ रहे थे। '18 वीं सदी के उत्तरार्द्ध से पहले उर्दू इस्लाम का प्रतीक कभी नहीं रही। उल्टे वह एक गैर इस्लामिक जुबान समझी जाती थी। ज्ञान और कविता की भाषा फारसी थी और धर्म की भाषा अरबी, जिसे समझने वाले आम मुसलमान तो क्या, पढ़े-लिखे मुसलमान भी बहुत कम थे।'[6] उर्दू तो साधारण मुसलमानों की भाषा थी!

सन् 1873 में एक अन्य पत्र में सयुंक्त प्रान्त के गवर्नर को यह बताया गया कि फारसी लिपि इस देश के लिए पराई है, साथ ही यह समझाने की कोशिश की गई कि यह सुनकर मुसलमान खुश नहीं होंगे परन्तु बहुसंख्यक होने के कारण हिन्दू, अंग्रेजी हुकूमत की ज्यादा मदद कर सकते हैं। सन् 1881 में बिहार में उर्दू की जगह हिंदी ले ली गई और अगले ही वर्ष सयुंक्त प्रान्त में 67000 लोगों ने 118 याचिकाओं द्धारा हिंदी को हिन्दुओं की भाषा ठहराया और शिक्षा आयुक्त से अवध तथा उत्तर पश्चिम प्रान्त में हिंदी को मान्यता देने की मांग की गई।

राजा शिवप्रसाद ने न केवल मेमोरेंडम दिया बल्कि हिंदी (देव नागरी लिपि) में पाठ्य पुस्तकें भी तैयार की जिनमें विद्यांकुर, भूगोलहस्तमलक, इतिहासतिमिरनासक, आदि प्रमुख हैं। इन पुस्तकों के विषय में किसी ने ठीक ही कहा है कि 'इन पुस्तकों की लिपि मात्र देवनागरी थी। भाषा उर्दू-फारसी के अत्यंत समीप कही जाएगी।' किस प्रकार धीरे-धीरे लिपि की मांग जनतांत्रिक बन गई, यह कहानी भी दिलचस्प है। यह सही है कि लिपि एक समस्या थी लेकिन इसका समाधान मुस्लिम वर्चस्व को चुनौती देने के लिए भाषा के संस्कृतकरण और देवनागरी लिपि में खोजा गया। हिन्दी के पक्षधरों का कहना था कि यदि हिंदी-उर्दू में लिपि के सिवा कोई फर्क नहीं है तो उर्दू की लिपि को देवनागरी लिपि बनाने की कोशिश क्यों नहीं की गई? आखिर सन् 1837 में फारसी की जगह अंग्रेजी और प्रांतीय भाषाओं ने क्यों ले ली? ध्यान देने वाली बात यह है कि अल्पसंख्यक होने के बावजूद सन् 1881-91 के बीच उर्दू की 4300 किताबें छपी जबकि हिंदी की 2793 मात्र। हिंदी के अखबार केवल 8002 थे जबकि उर्दू के 16256 थे। फिर एक समय ऐसा आया जब अंग्रजों ने उर्दू की जगह हिंदी को मान्यता दी। हिंदी-उर्दू का झगडा और पनपा। यह कोई अपवाद नहीं था। बहुसंख्यकों की भावनाओं और आवश्यकताओं को अनदेखा करने के कारण ही आगे चलकर हिंदी साहित्य सम्मलेन ने हिन्दी के संस्कृतीकरण पर बल दिया। गांधी जी द्धारा सन् 1942 में खोली गई जनतांत्रिक हिन्दुस्तानी प्रचार समिति भी बहुसंख्यकों की उपेक्षा के चलते कुछ वर्षों में ही बंद हो गई और हिन्दी-उर्दू विवाद सुलझ नहीं सका।

आधुनिक हिंदी के संस्थापकों का आरम्भ से ही उर्दू के प्रति दोहरा

रवैया था। भाषा के स्तर पर यह तर्क था कि उर्दू-हिंदी में कोई बुनियादी फर्क नहीं लेकिन देवनागरी लिपि को बहुसंख्यक जनसाधारण भलीभांति भांति समझ सकता था। इसलिए हिंदी को प्रोत्साहन मिलना चाहिए। साथ ही कुछ लोगों की मान्यता थी कि अरबी-फारसीकरण इस भाषा को हिन्दुओं से अलहदा करता है जबकि उर्दू के विरोधी भारतेंदु हरिश्चंद और अन्य लोगों ने भी आरम्भ में न केवल खुद उर्दू में लिखा बल्कि अरबी-फारसी शब्दों का इस्तेमाल भी किया क्योंकि वे उर्दू के शब्दों को हिंदी के शब्द ही समझते थे। इसी वजह से भारतेंदु ने उत्तेजित होकर यह कहा था-

'जहाँ विसेसर सोमनाथ माधव के मंदिर।
तहां मस्जिद बनि गयी होत अब अल्लाह अकबर।'[7]

यही स्थिति बालमुकुन्द गुप्त के साथ भी हुई लेकिन इन दोनों ने बहुसंख्यक जन साधारण को महत्त्व दिया। जनभावना से प्रेरित होकर ही देवनागरी लिपि के प्रश्न को उठाया गया और वह जनता के प्रतिनिधि बनकर बोले। वह एक तरह से यह मानते थे कि हिंदी और उर्दू में केवल संस्कृत और फारसी आदि शब्दों का भेद है लेकिन दूसरी तरफ वह यह भी मानते थे कि दोनों में केवल शब्दों का ही नहीं, लिपि भेद भी बड़ा भारी बना हुआ है। आधुनिक हिन्दी के जनक 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी' को मात्र- हिन्दी साहित्यकार समझना बड़ी भूल होगी। उनके समय में जननायक की वह अवधारणा नहीं थी जो बीसवीं सदी में लोकतंत्र की माँग के साथ उभरकर आई। यदि हम आधुनिक हिन्दुस्तान के आरम्भिक लोकतंत्र की खोज कर, तत्कालीन जननेताओं की सूची बनाए तो भारतेंदु हरिश्चन्द्र वहाँ भी अग्रिम पंक्ति में ही आयेंगे। भारतेन्दु बड़ी बारीकी से अपने समय की राजनीति, शासक वर्ग, जन समस्याओं और इतिहास की पड़ताल कर रहे थे। आरम्भ में उनके पास कुछ कुहासा सा था क्योंकि तब आज की तरह जानकारी का समुद्र खंगालने वाले जनमाध्यम नहीं थे (वह तो स्वयं पत्रकारिता को अंगुली पकड़ाकर चलना सिखा रहे थे) परिणाम स्वरूप शुरू-शुरू में भारतेंदु अंग्रेजी शासन के समर्थक भी रहे। भारतेन्दु और उनकी साहित्यिक मित्र मण्डली ने मुस्लिम शासकों द्वारा हिन्दुओं को दी गई यातनाओं को निकट से अनुभूत किया था और हिन्दू होने के नाते पूर्व मुस्लिम शासकों द्वारा हिन्दू अस्मिता के साथ किए गए खिलवाड़ को निकट से देखा था। बहुसंख्यक हिन्दु शिक्षा के अभाव और छीने गए कृषि कर्म और उससे जुड़े व्यवसायों से बेदखल होकर किस प्रकार घोर दु:ख उठा रहे थे यह भारतेन्दु से छिपा नहीं था। इसलिए उन्होनें 'वैष्णवता और भारतवर्ष' लेख में लिखा है- 'जिस भाव से हिन्दू मत अब चलता है उस भाव से आगे नहीं चलेगा। अब हम लोगों का शरीर बल न्यून हो गया। विदेशी शिक्षाओं से मनोवृत्ति बदल गई, जीविका और धन उपर्जान हेतु अब हम लोगों को पाँच-पाँच, छ: छ: पहर पसीना चुआना पड़ेगा, रेल पर इधर से उधर कलकत्ते से लाहौर और बम्बई से शिमला दौड़ना पड़ेगा, सिविल सर्विस का, बैरिस्ट्री का, इंजीनियरी का इमतहान देने का विलायत जाना होगा, बिना यह सब किए काम नहीं चलेगा, क्योंकि देखिए, क्रिस्तान, मुसलमान, पारसी यहाँ हाकिम हुए जाते हैं, हम लोगों की दशा दिन-दिन हीन हुई जाती है।'[8] लेख में उन्होंने आगे लिखा है- 'चारों ओर आग लगी हुई है। दरिद्रता के मारे देश जला जाता है। अंग्रेजों से जो नौकरी बच जाती है उन पर मुसलमान आदि विधर्मी भरती होते जाते हैं।'[9]

अत: भारतेन्दु जी के लिए हिन्दी का प्रश्न बहुसंख्यक देशवासियों के आर्थिक, सामाजिक उत्थान से जुड़ा था ना कि हिन्दु धर्म के प्रचार-प्रसार के साथ। मुस्लिम राज में फारसी के कारण हिन्दुओं की आर्थिक दुर्दशा हुई और अंग्रेजी राज में अंग्रेजी के कारण ना हो जाएँ, फलत: भारतेन्दु अवध के बाशिंदे होने पर भी अवधी और ब्रजभाषा की परिधि को लाँघते हुए 'खड़ी बोली हिन्दी' के माध्यम से बहुजन को आत्मनिर्भर बनाने की दृष्टि से 19वीं सदी के हिन्दी आंदोलन के प्रणेता बनकर उभरे लेकिन हिन्दी भाषा को वे अपने मुस्लिम विरोधी विचारों से अलग नहीं कर सके। यही विडम्बना उनके मित्र प्रतापनारायण मिश्र की थी। इसीलिए उन्होंने 'हिंदी-हिन्दू-हिंदुस्तान' जैसा नारा दिया। भारतेंदु ने इस बिडम्बना से उबरने की कोशिश की लेकिन बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुन्द गुप्त, अध्योध्या प्रसाद खत्री आदि ने कांग्रेस पार्टी के भीतर मुस्लिम विरोधी पक्ष को ज्यादा बल दिया। आगे चलकर पं. मदनमोहन मालवीय जी ने सन् 1915 में हरिद्वार के कुम्भ मेले में 'हिन्दू महासभा' की स्थापना की और उन्होंने प्रतापनारायण मिश्र के 'हिंदी-हिन्दू-हिंदुस्तान' के नारे को अपनाया।

19वीं सदी में हिंदी को लेकर यदि कोई जायज मांग उठा रहा था तो वह थे राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द। लेकिन यह उनका दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि इनकी पुस्तकों को विद्वानों ने उर्दूपरस्त होने का आरोप लगा दिया जबकि सच्चाई इसके विपरीत थी। वह उस समय किसी एक का पक्ष नहीं ले रहे थे। वह मध्यवर्ती मार्ग का अवलम्बन कर रहे थे। उनकी भाषा में दोनों रूपों का मिलना उस समय की हिंदी-उर्दू समस्या का हल करने का प्रयास था। उन्नीसवीं सदी में भाषाई साम्प्रदायिक राजनीति के शिकार राजा शिवप्रसाद सितारे 'हिन्द' और देवकीनंदन खत्री हुए जब शिवनन्दन सहाय ने भाषा के स्वरुप को लेकर खत्री के प्रसिद्ध उपन्यास 'चन्द्रकान्ता' और शिवप्रसाद की पुस्तक 'इतिहासतिमिरनासक' की भाषा को हिंदी मानने से ही इंकार कर दिया जबकि ये पुस्तकें हिंदी के काफी नजदीक थी।

दरअसल सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में जिस प्रकार हिन्दुओं ओर मुसलमानों ने मिलकर अंग्रेजों को चुनौती दी थी, उससे सबक लेते हुए अंग्रेजों ने सबसे पहले दोनों समुदाओं में फूट डालने का काम किया। सत्ता से वंचित हुए मुसलमानों को हिन्दुओं की तरक्की फूटी आँख नहीं सुहा रही थी। जाग्रति की ओर कदम बढ़ाने वाली बहुसंख्यक हिन्दू जनता को सत्ता परस्त मुसलमान अंग्रेजों की सहानुभूमि से वंचित रखना चाहते थे। सर सैयद अहमद खाँ जैसे मुस्लिम विद्वान ने सन् 1860 में एक पुस्तक लिखी- 'भारत के राजभक्त मुसलमान' उन्होंने इसमें लिखा 'गदर के दरम्यान मुसलमानों ने अंग्रेजों की सहायता और सेवा दोनों की थी।' ऐसी टिप्पणियाँ समाज को अविश्वासी बनाती है। व्यक्तिगत स्वार्थ की राजनीति जब समाज हित को बलि-चढ़ा देती है तो उसकी परिणिति सामाजिक समरसता की टूटन में ही होती है। नतीजा हिन्दी-उर्दू भाषाएँ हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक ताकतों के हाथों की तलवारों में परिणत हो गई। आगे चलकर हिन्दी-उर्दू का भाषायी विवाद इतना बढ़ गया कि 'हिन्दी'-'हिन्दुस्तान' की और 'उर्दू'-'पाकिस्तान' की भाषा बन, देश को टुकड़ों में बाँटने के काम आई। काश हिन्दी-उर्दू के झगड़े को समय रहते सामंजस्य के आधार पर सुलझा लिया गया होता तो सम्भवत: भारतीय समाज हिन्दू-मुस्लिम में ना बँटता क्योंकि- 'भाषा केवल विचार-विनिमय के लिए ही प्रयुक्त नहीं होती, वह एक ओर वक्ता और श्रोता के भावों और विचारों के उत्थान-पतन के लिए प्रयोग में लाई जाती है, वहीं दूसरी ओर दोनों के बीच आकर्षण और विकर्षण भी उत्पन्न करती है।'[10] यदि समाज में समरसता होती तो जन सामान्य भी सहजता से इस विवाद को समझकर सच्चाई जान लेता। तब हिन्दुस्तानी जनता 'इकबाल' का गीत- 'सारे जहां से अच्छा, हिन्दुस्तान हमारा... हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दुस्तान हमारा' का गीत गुनगुनाती हुई समरसता में जीती रहती। शायद तब देश का विभाजन भी नहीं होता!

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में हिंदी भाषा को आगे बढ़ने का मौका तो मिला लेकिन यहाँ भी बाज़ी अंग्रेजी भाषा ने ही मारी और वह आज तक भारतीयों के सिर पर बैठी हुई है। अब हिंदी और उर्दू का झगडा भी पहले जैसा नहीं रह गया फिर भी सन् 1967 में लखनऊ में हिंदी-उर्दू लेखकों की बैठक में यशपाल ने उर्दू को दूसरी राजभाषा का दर्जा दिलाने की मांग का विरोध करते हुए एक सुझाव रखा कि साहित्यिक और सांस्कृतिक कामों में उर्दू की फारसी लिपि भले ही जारी रहे लेकिन शासन और शिक्षा के माधयमों के रूप में एक ही भाषा हिंदी-उर्दू रहनी चहिए और उसकी लिपि देवनागरी रखी जाए। यानी उर्दू को देवनागरी लिपि में लिखा जाना चाहिए पर आज नक्कारखाने में तूती की तरह ऐसी माँग करना ही बेकार है।

हिंदी-उर्दू के झगडे ने तो आरम्भ से ही राजनितिक रूप ले लिया था। अंग्रेजी सरकार ने कभी भाषा को भाषा से लड़वाया तो कभी भाषा और लिपि को। अंग्रेज यह भलीभांति जानते थे कि यहाँ के हिन्दू और मुसलमानों को भाषा और धर्म के नाम पर ही अलग किया जा सकता है। इसलिए लिपि का मुद्दा भी धारे-धीरे धर्म में परिवर्तित होता गया। सन् 1835 से पहले भारतीयों में भाषा को लेकर झगडा नहीं था। धीरे-धीरे अंग्रेज सरकार ने अंग्रेजी भाषा को शिक्षा में थोपना शुरू किया इसका विरोध ना हो इसलिए भी हिंदी-उर्दू का झगडा खड़ा कराया गया। इस झगड़े का दु:खद अंत हुआ- 'हिन्दुस्तान' के भारत और पाकिस्तान के बँटवारे में! पर हमने सबक कहाँ सीखा? स्वतंत्र भारत में भी भाषाएँ ही राज्यों के बँटवारों (पंजाब-हरियाणा, गुजरात-महाराष्ट्र आदि......) का आधार बनी। कौन जाने इन झगड़ों की भविष्य में और क्या परणति होगी? फिलहाल तो हिन्दी को प्रादेशिक भाषाओं से भी लड़वाने की मुहीम सुलगाई जा चुकी है.....!

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम थॉट्स ऑन कल्चरल रिपोर्ट, इण्डियन लिट्रेचर, बम्बई 1953, पृ. 13 पर संकलित
2. हिन्दी की प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास- शमशेर सिंह नरूला, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.108-109
3. रस्साकशी-वीरभारत तलवार, सारांश प्रकाशन, दिल्ली, 2002, पृष्ठ-254
4. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, मलिक एंड कंपनी, जयपुर, दिल्ली, पृष्ठ-311
5. वही, पृ. 313
6. रस्साकशी-वीरभारत तलवार, सारांश प्रकाशन, दिल्ली, 2002, पृष्ठ-253
7. परम्परा का मूल्यांकन, रामविलास शर्मा, पृष्ठ-84
8. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : नए परिदृष्य - डॉ. भवदेव पाण्डेय, अनामिका प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 13
9. वही, पृ. 15
10. कबीर की आलोचना और भाषा संचेतना की उपेक्षा- डॉ. वैजनाथ प्रसाद, भाषा मई-जून 2003, पृ. 34

****

पर्यावरण संरक्षण में सामूहिक सहभागिता की भूमिका

डॉ. हरिचरण मीना*

शोध सारांश – पर्यावरण संरक्षण विश्व का सबसे अहम् एवं महत्वपूर्ण मुद्दा है। पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा हमारे लिए नवीन न होकर प्राचीन है क्योंकि यह किसी न किसी रूप में प्रत्येक युग मे विद्यमान रही है। पर्यावरण संरक्षण सामूहिक सहभागिता से ही सम्भव है क्योंकि समाज या समूह की सहभागिता के बिना पर्यावरण का संरक्षण असम्भव है। वर्तमान की सबसे प्रमुख समस्या पर्यावरण संरक्षण की है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हो या छोटी सी आम सभा प्रत्येक में पर्यावरणीय समस्या पर अवश्य ही वक्तव्य दिया जाता है।पर्यावरण एक जटिल तथ्य है जिसमें मानव जीवन से सम्बन्धित सभी पक्ष आते है पर्यावरण को मुख्य रूप से दो भागों में बाँट कर समझा जा सकता है प्रथम प्राकृतिक पर्यावरण जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से जल,जंगल, जमीन, वायु, ध्वनि इत्यादि को लिया जा सकता है दूसरा सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से जनरीति, रीति, परम्पराओं, प्रथाओं, रूढियों, धार्मिक आस्थाओं, जीवन के दृष्टिकोण इत्यादि को रखा जा सकता है। सरकार विभिन्न योजनाओं के द्वारा भी पर्यावरण समस्या का समाधान करने के लिए प्रयासरत है लेकिन सरकारी योजनाए भी तभी सफल हो पाती है जब समाज या समूह की सहभागिता एवं सहयोग मिलता है। इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे इस विषय पर शोध की आवश्यकता है।

वर्तमान मे जनसंख्या की तीव्र गति से बढ़ोतरी के कारण पर्यावरण विनाश की समस्या दिन व दिन बढ़ती जा रही है, इसके अलावा भी पर्यावरण विनाश के अनेक कारण है ऐसी परिस्थितियों में सामूहिक सहभागिता के माध्यम से पर्यावरण को संरक्षण प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। सामूहिक सहभागिता की अवधारणा भी सदियों से समाज मे प्रचलित रही है। जब भी समाज में कोई समस्या उत्पन्न होती है तो समाज के लोग मिलजुलकर उस समस्या का समाधान निकालते है। जब समाज के विकास में व्यक्ति सभी प्रकार से स्वार्थ, द्वेष, जाति, धर्म सम्प्रदाय आदि से मुक्त होकर मिलजुल कर कार्य करते है। इसी प्रकार पर्यावरण संरक्षण में भी सामूहिक सहभागिता सतत जारी है।

शब्द कुंजी – पर्यावरण, संरक्षण, सामूहिक, सहभागिता, जल, जंगल, जमीन, रीति, जनरीति, प्रथा, परम्परा, परिलक्षित प्रवसन, सामंजस्य, इमारती, खाद्यान्न, अंकगणितीय, बीजगणितीय गतिशीलता, परिवेश, मार्क्सवाद, स्वामित्व, साहचर्य, विनिमय, व्यक्तित्व, विश्वव्यापी।

प्रस्तावना – पर्यावरण प्रकृति का महत्वपूर्ण भाग है तथा इसका संरक्षण पूर्णरूपेण मानव समाज पर निर्भर करता है। मानव समाज ही पर्यावरण का संरक्षण करने मे सक्षम है। सामूहिक सहभागिता की परम्परा समाज में पुरातन काल से चली आ रही है, इसके बिना मानव समाज की कल्पना नही की जा सकती। मानव समाज मे सामूहिक सहभागिता से ही आमूल चूल परिवर्तन होता है। मानव एवं पर्यावरण एक दूसरे से जुड़े हुए है इसलिये सामूहिक सहभागिता द्वारा पर्यावरण संरक्षण का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

डॉ0 राधाकृष्णन उपाध्याय ने पर्यावरण के सम्बन्ध मे लिखा है कि प्रारम्भ में पर्यावरण का अर्थ मात्र प्राकृतिक पर्यावरण से लिया जाता था और आज से लगभग पाँच शताब्दी पूर्व तक जब जनसंख्या बहुत कम थी, प्राकृतिक पर्यावरण अपने सर्वशक्तिमान रूप में परिलक्षित होता था। इसलिएमानव कार्यो का प्राकृतिक पर्यावरण से प्रभावित होना स्वाभाविक ही था। मैनामिलन सॉर ने सर्वप्रथम मनुष्य के अध्ययन पर बल दिया क्योंकि मनुष्य एक ऐसा जीव है जिसका विकास पर्यावरण द्वारा प्रदत्त दशाओं मे होता है तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

पर्यावरण एक जटिल तथ्य है जिसमें मानव जीवन से सम्बन्धित सभी पक्ष आते है पर्यावरण को मुख्य रूप से दो भागों में बाँट कर समझा जा सकता है प्रथम प्राकृतिक पर्यावरण जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से जल,जंगल, जमीन, वायु, ध्वनि इत्यादि को लिया जा सकता है दूसरा सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण जिसके अन्तर्गत मुख्यरूप से जनरीति, रीति, परम्पराओं, प्रथाओं, रूढियों, धार्मिक आस्थाओं, जीवन के दृष्टिकोण इत्यादि को रखा जा सकता है। जब इन मे से किसी भी प्रकार के पर्यावरण का विनाश होता है तो उसे बचाने की जिम्मेदारी मानव की होती है तथा मानव इसको बचाने का यथा सम्भव प्रयास करता है एवं संरक्षण प्रदान करता है इस प्रकार पर्यावरण को बचाना पर्यावरण संरक्षण कहलाता है मानव पृथ्वी पर निवास करता है जिसे प्राकृतिक तत्वों ने चारों ओर से घेर रखा है। ये प्राकृतिक तत्व मानव के क्रियाकलापों पर प्रभाव डालते है और उनके प्रभाव से मानव के क्रियाकलापों में परिवर्तन हो जाता है। मानव के क्रियाकलापों से प्राकृतिक तत्व भी प्रभावित होते हैं। आधुनिक मानक इन प्राकृतिक तत्वों का पूर्णत: दास तो नही है, परन्तु वह इनके प्रभावों से वंचित भी नहीं रह सकता ! अत: समयानुसार और क्षमतानुसार इन तत्वों का रूपान्तरण कर देता है अर्थात् दूसरे अर्थो मे यह कहा जा सकता है कि सर्वप्रथम पर्यावरण का अर्थ प्राकृतिक तत्वों की समग्रता से था परन्तु जब मनुष्य की स्पष्ट छाप अधिवास, सड़क, खेत, उद्योग, धन्धे व्यापार आदि के रूप मे भूमिका सतह पर परिलक्षित होने लगी तो प्राकृतिक पर्यावरण के साथ सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण शब्द का प्रयोग होने लगा। दोनों ही प्रकार के पर्यावरण का संरक्षण मानव के सामूहिक प्रयासों से सम्भव हुआ है। अकेला व्यक्ति पर्यावरण का जितना तेजी से विनाश करता है उतना तेजी से संरक्षण नही करता इसलिए सभी व्यक्ति मिलजुलकर सामूहिक सहभागिता से ही पर्यावरण का संरक्षण कर सकते है। पर्यावरण संरक्षण के सैद्धान्तिक रूप से

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

विभिन्न भागो में बाँट कर देखा जा सकता है जिनमे सामूहिक सहभागिता भी भूमिका भी अहम रही है।

पर्यावरण संरक्षण का जनसंख्यात्मक सिद्धान्त – पर्यावरण संरक्षण का जनसंख्यात्मक सिद्धान्त इस सिद्धान्त का प्रतिपादन माल्थस ने किया है तथा कार सैण्डर्स, सैण्डल इत्यादि इसके प्रमुख समर्थक रहे है। इस सिद्धान्त के अनुसार खाद्यान्न उत्पादन अंकगणितीय क्रम में और जनसंख्या वृद्धि बीज गणितीय विधि से होती है। इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि बीज गणितीय विधि से होती है। इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि और आर्थिक विकास में सामंजस्य के अभाव के कारण गरीबी, भुखमरी, प्रवसन, बेरोजगारी इत्यादि सामाजिक समस्याएं उत्पन्न होती है। जिससे समाज का पर्यावरण के साथ सामंजस्य नही हो पाता है। जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि का पर्यावरण पर इस प्रकार दुष्प्रभाव पड़ता है। जंगल से अधिक वनों का काटना, कृषि कार्य हेतु वनो की कटाई, ईधन और इमारती लकड़ी प्राप्त करने के लिए वनों की कटाई, अधिक कृषि उत्पादन के लिए रासायनिक खादों का बढ़ता उपयोग, आवास हेतु पहाड़ों का काटना, उद्योग धन्धों में वृद्धि, उद्योग धन्धों के कारण शहरी आबादी मे वृद्धि इत्यादि। इन सभी दुष्प्रभावो को कम करने के लिए जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रणआवश्यक हैं। आमजन मे सामूहिक सहभागिता के द्वारा जनजागृति लाकर ही जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण किया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण का भौगोलिक सिद्धान्त– पर्यावरण संरक्षण के भौगोलिक सिद्धान्त के समर्थकों में वर्नहार्ड वारेनियस, चार्ल्स डार्विन, रेटजस इत्यादि प्रमुख है। भौगोलिक सिद्धान्त के अनुसार मानव का भौगोलिक परिस्थितियों के साथ सामंजस्य करके ही पर्यावरण का संरक्षण किया जा सकता है। वर्नहार्ड वारेनियस जो एक जर्मन विज्ञानी एवं भूगोलविद् थे, प्राकृतिक तत्वों के वर्णन से अधिक सम्बन्धित रहे है। उनके कार्यो में मनुष्य की उपेक्षा रही है। हम्बोल्ट ने भी ब्रह्मण्डमें पृथ्वी की स्थिति तथा पृथ्वी के प्राकृतिक स्वरूप पर महत्व दिया। इस प्रकार चार्ल्स डार्विन तक ने प्राकृतिक पर्यावरण पर अधिक जोर दिया जाता रहा है। सर्वप्रथम चार्ल्स डार्विन ने ऑरिजन ऑफ स्पेसीज (1859) नामक पुस्तक में पृथ्वी पर जीवो के महत्व की ओर ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने कहा है कि जो जीव भौगोलिक परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बना लेते है वही जीवित रहते है। कालान्तर में फेडरिक रेटजल ने न केवल पर्यावरण बल्कि मानव क्रिया कलापों को भी महत्वपूर्ण मानते हुए मानव के शारीरिक लक्षणों, आर्थिक सामाजिक गतिषीलता, मनोवैज्ञानिक गुण, जनसंख्या के वितरण आदि का प्राकृतिक पर्यावरण के सन्दर्भ मे वर्णन किया। रेटनल के कार्यो मे सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की संकल्पना का पहली बार वर्णन मिलता है। तत्पष्चात अल्फ्रेड हेटजर ने भूतल पर संस्कृति का प्रसार नामक अपनी पुस्तक को भूतल के अन्य तत्वो के साथ एक समष्टि मे स्वीकार किया। इससे स्पष्ट है कि भौगोलिक परिस्थितियों के साथ मानव समाज सामंजस्य करता है उसी के अनुरूप सांस्कृतिक परिवेश भी बदल जाता है।

पर्यावरण संरक्षण का मार्क्सवादी सिद्धान्त– पर्यावरण संरक्षण के मार्क्सवादी सिद्धान्त के प्रवर्तक कार्ल मार्क्स है। मार्क्स के अनुसार आर्थिक पर्यावरण समाज के जीवन एवं स्वरूप को निर्धारित करता है। इसका प्रमाण इस तथ्य को सिद्ध करता है कि औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप कानुन एवं सरकार वर्गो की संरचना, जनसंख्या के वितरण, रीति–रिवाजों एवं संस्थाओं के विचार एवं विश्वास की प्रणाली मे महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अत: यह आश्चर्य की बात नही है कि कार्ल मार्क्स ने आर्थिक पर्यावरण को सभी सामाजिक परिवर्तनों का मूल निर्धारक कहा हैं। मार्क्स ने अपनी कृति 'दास कैपिटल' में लिखा है कि उत्पादन के साधनों के स्वामियों तथा तात्कालिक उत्पादकों के बीच जो तात्कालिक सम्बन्ध होता है, उसी मे समस्त सामाजिक संरचना की नींव छिपी होती है। इस प्रकार, उसके अनुसार सभी समूदाय, परिवार, राज्य, चर्च तथा मानव संस्कृति के सभी स्वरूपों कला साहित्य विज्ञान के आकार तथा स्वरूप आर्थिक तथ्यों द्वारा निर्धारित होते है। इस प्रकार मार्क्सवाद ने इतिहास की भौतिकवादी व्यवस्था प्रस्तुत की तथा सामाजिक स्वरूप के निर्धारण में आर्थिक पर्यावरण को प्रमुख एवं कदाचित एकमात्र स्थान दिया। आर्थिक कारण पर्यावरण संरक्षण का अकेला निर्धारक तत्व नही है परन्तु मार्क्स का सिद्धान्त पूर्णतया ठीक नही है। बिल्कुल भिन्न भिन्न आर्थिक स्तरों पर रहने वाले लोगों ने ईसाई एवं मुस्लिम धर्मो का शताब्दियों तक समान रूप से पालन किया है जबकि समाज की आर्थिक संरचना मे विभिन्न प्रकार की विचारधाराओं का जन्म हुआ।

इस प्रकार मार्क्सवाद मानव व्यवहार की सही व्याख्या नही करता है। इसके अतिरिक्त आर्थिक वस्तुओं की प्राप्ति एवं उनका उपयोग ही मानव व्यवहार का एकमात्र लक्ष्य नही है। मनुष्य मात्र भौतिक संतुष्टियों के लिए उत्पादन का विनिमय नही करता, परन्तु दूसरी ओर मनुष्य स्वास्थ्य, सुख, ज्ञान अथवा कला की आकांक्षा करता है क्योंकि इनसे उसको प्रत्यक्ष सन्तुष्टि मिलती है। इस अर्थ मे निहित आर्थिक हितो से पूर्ववर्ती है और इन्हें आर्थिक व्यवस्था को संशोधित एवं निर्धारित करने वाला तत्व समझा जाना चाहिए। आर्थिक उत्पादन मे सामूहिक सहभागिता भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

पर्यावरण संरक्षण का सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त – पर्यावरण संरक्षण के सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त के अनुसार सांस्कृतिक पारिस्थितिकी सामाजिक और भौतिक वातावरण के लिए मानव के अनुकूलन का अध्ययन है। मानव सामाजिक सांस्कृतिक अनुकूलन का अध्ययन है। मानव अनुकूलन जैविक और सांस्कृतिक दोनों प्रक्रियाओं को संदर्भित करता है। जो आबादी को किसी दिए गए या बदलते परिवेश में जीवित और पुन: उत्पन्न करने मे सक्षम बनाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार समाज के परम्परागत रीति–रिवाज, परम्पराएं, कानुन दृष्टिकोण इत्यादि मनुष्य की सांस्कृतिक बपौती है। सामाजिक जीवन का प्रत्येक महत्वपूर्ण पहलू जैसे लैंगिक सम्बन्ध, स्वामित्व साहचर्य, सेवाओं और वस्तुओं का विनिमय परम्परा द्वारा व्यवस्थित एवं समर्पित होता है। ये परम्पराएं उस समूह की संस्कृति का घोतक है जिसमें इनका सम्बन्ध है। इसी प्रकार रीति रिवाज वे स्वीकृत तरीके है जिनके अनुसार समूह के सदस्य परस्पर व्यवहार करते है। इसके अतिरिक्त कुछ संस्कार एवं रीतियाँ ऐसी होती है। जो विभिन्न कार्यो को एक प्रकार की धार्मिक संतुष्टि प्रदान करती है। किसी संस्थापित अभिकरण द्वारा लागू किये गये नियमो को कानून कहा जाता है। इन सबका व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है अत: इन सबको संरक्षित करके ही पर्यावरण का संरक्षण किया जा सकता है। इन सभी प्रकार के सामाजिक सांस्कृतिक अभिकरणों का संरक्षण सामूहिक सहभागिता के माध्यम से ही सम्भव है। सामाजिक रीति रिवाज, परम्पराए, प्रथाए, रूढियां इत्यादि समाज के सभी लोगो के सामूहिक प्रयासो एवं सहयोग से ही संरक्षित रह सकती है।

पर्यावरण संरक्षण का मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त – पर्यावरण संरक्षण के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के प्रवर्तक फ्रायड है। फ्रायड के अनुसार मनोवैज्ञानिक पर्यावरण अन्य प्रकार के पर्यावरणों मे सर्वाधिक व्यापक है। मनुष्य के जीवन मे इसका स्थान इतना महत्वपूर्ण है कि कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार तो मानव जीवन की सम्पूर्ण व्याख्या इसके आधार पर ही की जा सकती है।

मनोसामाजिक पर्यावरण का महत्व कॉसपर, अन्ना एवं ईसबेला के उदाहरणों में देखा जा सकता है। जिन्हे पूर्णत: एकान्त मे रखा गया एवं जिनमें व्यक्तित्व का विकास पशु स्तर तक ही रहा। जहाँ जैसे वातावरण में बच्चों की परवरिश होती है बच्चे उसी के अनुसार ढल जाते है। जहाँ जैसा व्यवहार देखने और सीखने को मिलता है उसी के अनुसार वह व्यवहार व आचरण करना सीखता है। इससे स्पष्ट है कि सामाजिक पर्यावरण का मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास मे महत्वपूर्ण योगदान है। व्यक्ति पर्यावरण का स्वय निर्माता है। समाज के सारे लोग सामूहिक रूप से ही पर्यावरण संरक्षण का कार्य करते है। पर्यावरण का संरक्षण अकेला व्यक्ति का नही वरन सम्पूर्ण समाज का सामूहिक दायित्व है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु विश्व में अनेक सम्मेलन आयोजित हुए है विशेष रूप से पर्यावरण संरक्षण के प्रति विश्वव्यापी जागरूकता द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उत्पन्न हुई तथा इस मुद्दे पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सामूहिक सहभागिता से सहयोग मिलना प्रारम्भ हुआ। पर्यावरण संरक्षण में विश्व के विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के साथ साथ पृथ्वी के अस्तित्व को बचाये रखने मे विभिन्न उपायो को सम्मिलित किया गया है।

5 जून से 12 जून 1972 मे स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम मे संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव पर्यावरण कान्फ्रेस' आयोजित की गई।

3 जून से 13 जून 1992 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की 20वी सालगिरह पर ब्राजील की राजधानी रियो दि जेनिरो मे पृथ्वी के संरक्षण के लिए सम्मेलन हुआ।

24 जून से 27 जून 1997 तक संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यूयार्क नगर मे अर्थ प्लस फाइव सम्मेलन हुआ।

सितम्बर 1997 मे कनाड़ा के नगर मांट्रियल मे संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में मांट्रियल सहमति समझौता हुआ।

1 दिसम्बर से 10 दिसम्बर 1997 तक जापान के नगर टोकियों मे भूमण्डलीय तापमान में वृद्धि से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दो पर एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ।

सन 1968 मे फ्रांस की राजधानी पेरिस मे जीवमण्डल का आयोजन संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन (WTO) आदि के सहयोग से सम्पन्न हुआ।

सन 1977 मे कीनिया की राजधानी नैरावी में संयुक्त राष्ट्र संघ मरूस्थलीय सम्मेलन सम्पन्न हुआ।

सन 1987 मे कनाड़ा के नगर मांट्रियल में क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैसों मे उत्पादन तथा उपभोग मे कटौती करने के लिए विश्व के 48 राष्ट्रो ने एक समझौता किया।

सन 1989 मे फिनलैण्ड की राजधानी हेलिन्सकी मे विश्व के 81 देशों ने क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैसो के उत्पादन तथा उपभोग को सन 2000 तक समाप्त करने हेतु समझौता हुआ।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के कार्यकारी निदेशक ने नवम्बर 1999 मे कहा कि पर्यावरण को हानि पहुंचाने वाले रसायनों एवं गैसो के प्रयोग पर अंकुश लगा कर ओजोन परत की क्षति की दर कम हुई है। उनका मानना है कि यदि इस कार्यक्रम में विकसित राष्ट्र सक्रिय योगदान करे तो सन 2050 तक ओजोन परत 1980 से पहले वाली स्थिति मे पहुंच जायेगी इन सभी सम्मेलनो मे सामूहिक सहयोगिता के माध्यम से ही पर्यावरण संरक्षण पर जोर दिया गया है।

भारत में भी पर्यावरण संरक्षण हेतु अनेक अधिनियम जैसे जल अधिनियम 1974, वायु अधिनियम 1981, ध्वनि प्रदुषण निरोधक अधिनियम 1998 इत्यादि बनाये गये, भारत सरकार द्वारा अलग से पर्यावरण विभाग भी स्थापना की गई तथा 1985 मे पहली बार अलग मंत्रालय 'पर्यावरण एव वन मंत्रालय' की स्थापना की गई।

देश में पर्यावरण संरक्षण हेतु सामूहिक सहभागिता के माध्यम से अनेक अभियान एवं आन्दोलन चलाये गये जैसे सुन्दरलाल बहुगुणा द्वारा टिहरी गढ़वाल क्षेत्र में वन संरक्षण हेतु सामूहिक सहभागिता से चिपको आन्दोलन चलाया गया,दक्षिण भारत मे पांडुरंग हेगडे द्वारा पर्यावरण संरक्षण हेतु अपिक्को आन्दोलन चलाया गया, महाराष्ट्र की कोजेंट्रिक्स परियोजना के विरोध तथा पश्चिमी घाट के पर्यावरण की रक्षार्थ गोवा की 'पीस फुल सोसायटी' द्वारा पश्चिमी घाट बचाओ अभियान चलाया गया, मेघा पाटेकर द्वारा नर्मदा नदी पर निर्मित किये गये सरदार सरोवर बांध के विरोध मे नर्मदा बचाओ आन्दोलन चलाया गया,सुन्दरलाल बहुगुणा द्वारा गढवाल क्षेत्र मे टिहरी बांध के निमार्ण के विरोध मे टिहरी बांध विरोधी आन्दोलन इत्यादि बहुत सारे अभियान एवं आन्दोलन किये गये है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पर्यावरण संरक्षण एक बहु आयामी अवधारणा है जिसको विभिन्न सिद्धान्तों के क्रम में देखा जा सकता है। पर्यावरण प्रकृति का महत्वपूर्ण भाग है तथा इसका संरक्षण पूर्णरूपेण मानव समाज पर निर्भर करता है।वर्तमान मे जनसंख्या की तीव्र गति से बढ़ोतरी के कारण पर्यावरण विनाश की समस्या दिन व दिन बढ़ती जा रही है, इसके अलावा भी पर्यावरण विनाश के अनेक कारण है ऐसी परिस्थितियों में सामूहिक सहभागिता के माध्यम से पर्यावरण को संरक्षण प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। सामूहिक सहभागिता की अवधारणा भी सदियों से समाज मे प्रचलित रही है। जब भी समाज में कोई समस्या उत्पन्न होती है तो समाज के लोग मिलजुलकर उस समस्या का समाधान निकालते है। जब समाज के विकास में व्यक्ति सभी प्रकार से स्वार्थ, द्धेष, जाति, धर्म सम्प्रदाय आदि से मुक्त होकर मिलजुल कर कार्य करते है। इसी प्रकार पर्यावरण संरक्षण में भी सामूहिक सहभागिता सतत जारी है।मानव सामाजिक सांस्कृतिक अनुकूलन का अध्ययन है। मानव अनुकूलन जैविक और सांस्कृतिक दोनों प्रक्रियाओं को संदर्भित करता है। जो आबादी को किसी दिए गए या बदलते परिवेश में जीवित और पुन: उत्पन्न करने मे सक्षम बनाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार समाज के परम्परागत रीति–रिवाज, परम्पराएं, कानुन दृष्टिकोण इत्यादि मनुष्य की सांस्कृतिक बपौती है। सामाजिक जीवन का प्रत्येक महत्वपूर्ण पहलू जैसे लैंगिक सम्बन्ध, स्वामित्व साहचर्य, सेवाओं और वस्तुओं का विनिमय परम्परा द्वारा व्यवस्थित एवं समर्पित होता है। ये परम्पराएं उस समूह की संस्कृति का घोतक है जिसमें इनका सम्बन्ध है। इसी प्रकार रीति रिवाज वे स्वीकृत तरीके है जिनके अनुसार समूह के सदस्य परस्पर व्यवहार करते है।

मानव समाज ही पर्यावरण का संरक्षण करने में सक्षम है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा इसके लिए अथक प्रयास किये जा रहे है। विश्व पटल पर भी अनेक अभियान, सम्मेलनो, आन्दोलनो द्वारा पर्यावरण संरक्षण के विषय को गम्भीरता से लिया गया है। देश मे भी पर्यावरण संरक्षण हेतु अनेक आन्दोलन, अभियान चलाये गये है तथा सरकारों द्वारा भी अनेक अधिनियम बनाये गये सभी मे मानव समाज की सामूहिक सहभागिता की भूमिका महत्वपूर्ण बताई गई है। प्राकृतिक पर्यावरण से सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण प्रभावित होता है। इस प्रकार निश्चित रूप मे पर्यावरण संरक्षण मे सामूहिक सहभागिता की अहम भूमिका है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. अग्रवाल, अनिल, 'ग्रेजिंग लेंडस: पीपल एण्ड एनवायरनमेंट', द स्टेट ऑफ इंडियाज एनवायरमेंट 1984-85 दी सैकण्ड सिटीजन रिपोर्ट सेन्टर फॉर साइंस एण्ड एनवायरनमेंट: नई दिल्ली 1985 पृ.सं. 157-162
2. अरविल, राबर्ट, 'मेंन एण्ड एनवायरमेंट' वेनगन बुक्स कम्पनी, लन्दन 1978 पृ.सं. 25
3. आलोकनाथ, 'गांवो का निर्माण' नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, वाराणासी 1990 पृ.स. 13
4. उपाध्याय, डॉ0 राधा बल्लभ 'पर्यावरण शिक्षा' हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1992 पृ.स. 48
5. कुमारप्पा, जे.सी. 'ग्राम आन्दोलन क्यो' सर्व सेवा प्रकाशन, वाराणसी 1995 पृ.स. 26
6. गोपाल, एम.के. 'पर्यावरण शिक्षा' हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1992 पृ.स. 76
7. पवार, एस.एम. और राठी. आर.वी.- 'सोशियोलॉजी ऑफ एनवायरमेंट' रावत पब्लिकेशन, जयपुर 1988 पृ.स. 85
8. प्रसाद, डॉ. ओम- 'पर्यावरण दर्शन' के.के. पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद 1998 पृ.स. 32
9. बोटकिन, डी.वी.- 'एनवायरनमेन्टल स्टेडीज दा अर्थ एज ए लिविंग प्लान्ट' चेरिज ई-मेरिज पब्लिसिंग कम्पनी, सिडनी 1982 पृ.स. 115
10. वार्षिक प्रतिवेदन- 'पर्यावरण और वन मंत्रालय' भारत सरकार, नई दिल्ली 1987-88, 1993-94

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Study Effect on Attenuation Coefficients with Two Scatters

M. D. Sharma*

Abstract - We first studied the count rate along with the applied voltage of GM counter to find the operating voltage. At the operating voltage, the white paper and aluminum foil were used to study attenuation coefficient for beta particle. The study was extended to investigate the effect on attenuation coefficient when both white paper and aluminum foil used as scatter.

Introduction - Particles emitted in nuclear reaction of atoms are known as nuclear radiation, which also refers as ionizing radiation [1]. Alpha, beta particles, neutrons, muons, mesons, positrons and cosmic rays etc. are some examples of nuclear radiations, which emitted in nuclear reaction. Nuclear detector is used to detect nuclear radiations [2-3]. Nuclear detectors are based on ionization and excitation of atoms by charged particles. Ionization counter, proportional counter and Geiger-Müller (GM) counter are used to count nuclear radiation particles based on ionization of gas molecules.

Alpha and beta particles can be easily blocked due to less penetration power. While gamma rays, x-rays, and neutrons can travel a large distance [4]. There are so many application of radiations in various field such as weapon, power generation, medicine etc. In medical or other constructive application, the control travel of radiation is required. Therefore, the study to fine the material with high attenuation and low cost is more interest.

In this paper, the count rate with the number different scatters (white paper & aluminum foil) is study in GM with CS137 source. The attenuation coefficients are measured for these objects and combined white paper and aluminum foil using GM counter.

Material and Method - Geiger-Müller (GM) [5] counter is nuclear detector based on ionization of atom. In GM counter, the electric field between cathode and anode is still greater, which increases the ionization current due to secondary ionization of gas molecules. The amplitude of output pulse is independent to the energy of incident radiation particle, due to high secondary ionization of gas molecule. Because of the simple design, GM counters are widely used for detecting alpha and beta particles and gamma photons. CS 137 radiation source is used for the present study.

Normal white paper and aluminum foil are used for the present study of absorption of beta particles.

Result and Discussions - In this section, count rate with voltage applied between both electrode was measured. The plot between count rate and applied voltage is shown in figure 1. Figure 1 clearly reflects that the count starts from a minimum voltage known as threshold voltage of GM counter. The threshold voltage is obtained as 330V for present case. As the applied voltage increases after threshold voltage the count rate increases rapidly as attains constant count rate. The count rate is constant for a certain range of applied voltage, which is characterized as plateau region of GM counter. The central value of applied voltage of plateau region is known as operating voltage. The operating voltage (V_{op}) is obtained from plateau curve of figure 1. The initial and end points of plateau region is defined as V_1 and V_2, respectively. So, the operating voltage is obtained with $V_{op} = (V_1+V_2)/2$. Form figure 1, the starting and end voltages of plateau region V_1 and V_2 are equal to 350V and 670V, respectively. Therefore, the operating voltage (V_{op}) is obtained as 510V, which is used for the next study.

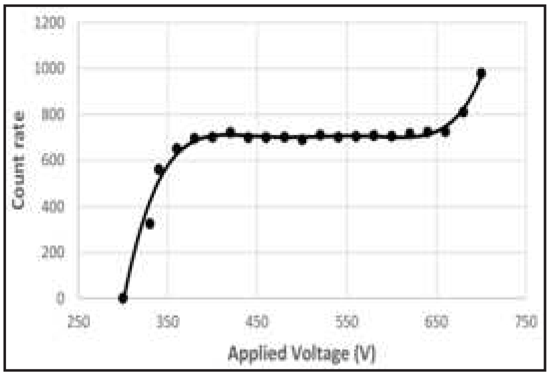

FIGURE 1. The count rate with applied voltage

Here, the count rate is measured with white paper, aluminum foil using GM counter at operating voltage 510 V. The measured count rate with thickness are plotted as shown in figure 2 (a) for white paper, 2 (b) for aluminum foil and 2 (c) for both white paper & aluminum foil.

*Department of Physics, Govt. Dungar College, Bikaner (Raj.) INDIA

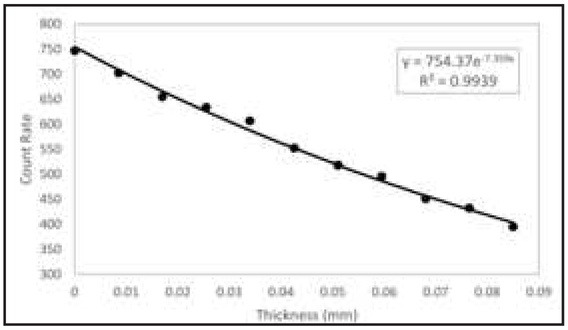

(a)

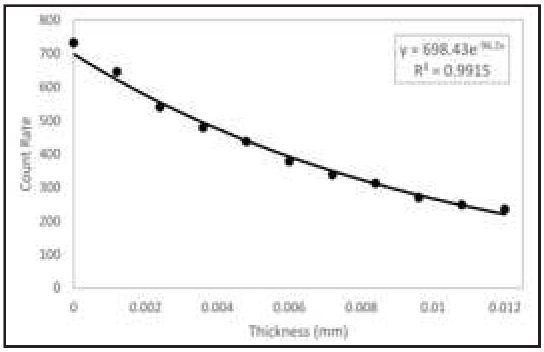

(b)

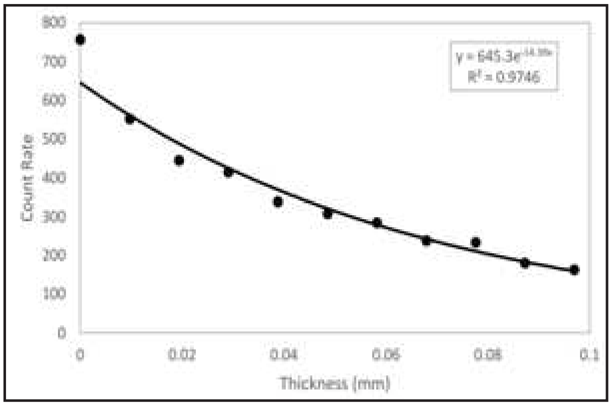

(c)

FIGURE 2. The count rate with thickness of (a) white paper, (b) aluminum foil and (c) set of white paper & aluminum foil

Figure 2 clearly reflects that the count rate decreases with the thickness of scatter (white paper or aluminum foil). It happens because of the absorption of beta particles by the scatters. The variation of count rate with the thickness of scatter is exponentionaly decreases as shown in figure 2. The linear attenuaton coefficient for white paper is observed as 7.359 mm^{-1} or 73.59 cm^{-1} for white paper from figure 2 (a). The linear atternuation coefficient for aluminum foil is observed as 96.2 mm^{-1} or 962 cm^{-1}. Next, the study is extended for the combined set of white paper and aluminum foil used as scatter. The combination of high and low attenuation coefficient's material are used together to achieve intermediate attenuation coefficient. Therefore, the count rate is measure for the cominbed set of white paper and aluminum foil as scatter. The count rate with the thickness are plotted in figure 2 (c). The count rate shows similar exponatial behaviour. The attenuation coefficient is achieved as 14.39 mm^{-1} or 143.9 cm^{-1} for the combined set of white paper and aluminum foil. In this way, the intermediate attenuation coefficient can be achieved using the combined set of low attenuation scatter (white paper) and high attenuation scatter (aluminum foil).

References :-

1. G. Woodside, Environmental, Safety, and Health Engineering. John Wiley & Sons, US (1997).
2. K.S. Krane, Introduction to Nuclear Physics, Wiley, USA (1987).
3. B. Martin, G. Shaw, Nuclear and Particle Physics, Wiley, USA (2019).
4. Jones, R. Clark, A New Classification System for Radiation Detectors, Journal of the Optical Society of America. 39(5), 327–341, (1949).
5. P. B. Moon, Recent developments in Geiger-Muller counters, J. Sci. Instr. 14, 189 (1937).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Synthesis & Characterization of some 1, 5 - Benzothiazepines Derivatives by using Mango Juice as a Green Catalyst

Mr. Dilip D. Anuse*

Introduction - Nowadays, seven and eight membered ring compounds are receiving significant consideration due to the existence of their structural units in some natural products. Thiazepines are substituted thiepines with nitrogen replacing a carbon in the seven-membered heterocyclic compound, depending on the position of nitrogen, one can distinguish 1,2, 1,3 and 1,4-thiazepine (Fig 3).

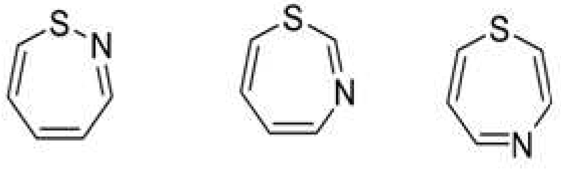

(a) (b) (c)

Fig 3 – schematic Diagram of (a) 1, 2 Thiazepine, (b) 1,3 Thiazepine and (c) 1,4 Thiazepine molecule.

Organic synthetic chemistry is now a fast-growing research field in chemistry. Among the various organic compounds, heterocyclic compounds have been associated with various biologically activities. Due to bioactivity connected with heterocycle and ease of preparation, a number of researchers are takings keen interested into the study of this. Heterocyclic compounds containing nitrogen and sulphur have received considerable attention in recent years. Benzothiazepines are important nitrogen and sulfur containing seven-member heterocyclic compounds, which are of great interest in the area of drug discovery and development due to their broad spectrum of pharmacological activity. 1,5-Benzothiazepines are bicyclic heterocyclic compounds with one nitrogen and one sulphur atom at 1 and 5 positions in a seven-membered ring fused to a benzene ring. Basically 1,5-benzothiazepines are the 2,3-benzo-annelated derivatives of 1,4-thiazepines. Benzothiazepines are numbered as shown in (Fig.4)

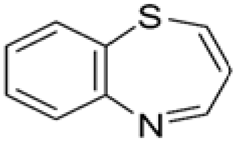

Fig 4. 1, 5 – Benzothiazepines

General synthesis:

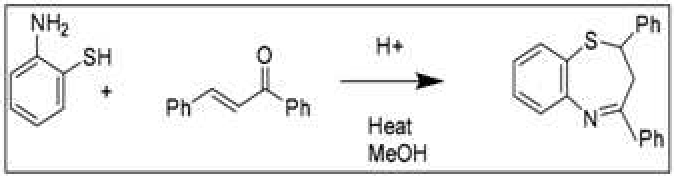

Scheme 2.

The most utilized route to 1,5-benzothiazepines is via the reaction of 2-aminothiophenols with chalcone derivatives (Scheme 2).

General Mechanism of Synthesis - The most generally accepted mechanism entails the 1,4-conjugate addition by the thiol group of 1 on chalcones 2 leading to a thia-Michael adduct 3, followed by the intramolecular nucleophilic attack of the amino group on the carbonyl to install the imino group leading to 1,5-benzothiazepine.

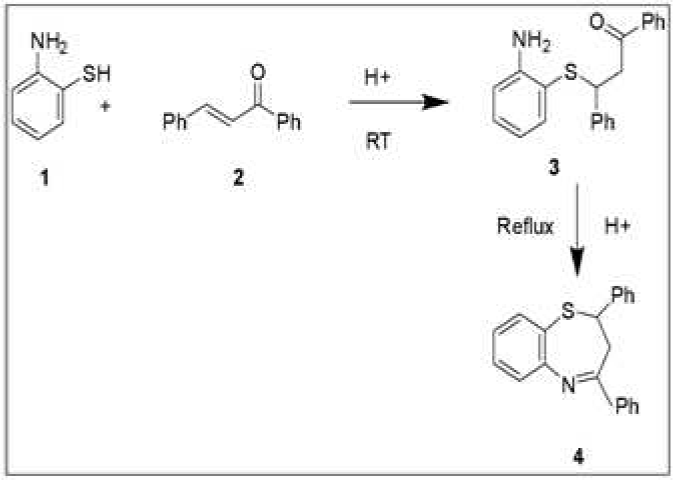

Catalysts employed for 1,5-benzothiazepine - Search in the literature revealed that there are reports on the use of various catalyst in the synthesis of the 1,5 benzothiazepine via the reaction of 2-aminothiophenols and chalcones.

*Assistant Professor (Chemistry) Veer Wajekar A.S.C.College, Phunde Navi Mumbai (Mh.) INDIA

Catalyst	Ref No	Catalyst	Ref No
Ceric ammonium nitrate	[52]	$Ga(OTf)_3$	[53]
$Mg(ClO_4)_2$	[54]	silica gel$HClO_4$	[55]
Silica gel-HBF_4	[56]	Piperidine	[57]
AcOH or TFA	[58]	HCl	[59]
$Yb(OTf)_3$	[60]	Nanocrystalline aluminum oxide	[61]
HBF_4-SiO_2	[62]	Sodium dodecyl sulfate (SDS)	[63]
$Mg(ClO_4)_2$	[64]	$HClO_4$- SiO_2	[65]
SmI_2	[66]	Ytterbium triflate	[67]
Sulfated zirconia	[68]	$Ag_3PW_{12}O_{40}$	[69]
CH_3COOH	[70]	MCM-41 zeolite	[71]
Piperidine-AcOH	[72]	Dodecylsulfonic acid in water	[73]
$La(NO_3)_3$	[74]	Sulfamic acid	[75]

Scheme: Synthesis of 1,5-Benzothiazepine derivates

Procedure - Chalcone (1mmol) was dissolved in dry Methanol and 2-aminothiophenol was added. Raw mango juice (1ml) was used as catalyst. The reaction mixture was refluxed for 4-6 hrs and allowed to cool overnight. Yellow solid was obtained which was further washed with methanol to give corresponding 1, 5-benzothiazepines.

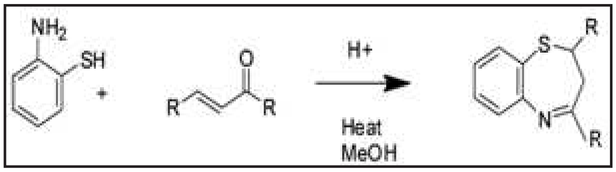

Entry	Product	Yield(%)	MP(^{0}C)
2a	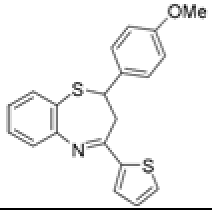	95	140
2b	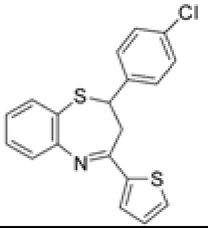	96	145
2c	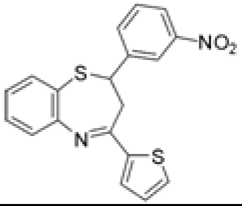	96	172
2d	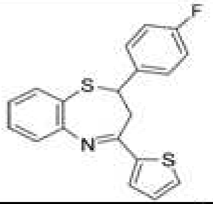	97	153
2e	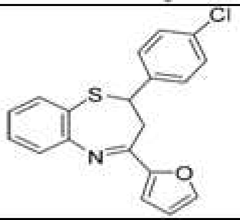	94	115
2f		96	130
2g	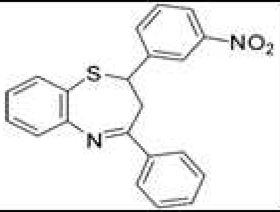	93	167
2h		94	139

Characterization:

Structure: - 2a

IUPAC Name:- 2-(4- methoxyphenyl)-4-(thiophene-2-yl)-2,3- dihydrobenzo[b][1,5]thiazepine.

Chemical Formula: - $C_{20}H_{17}NOS_2$.

IR (cm^{-1}):- 1592 (C=N), 1577 (C=C), 1242(C-O), 691(C-S).

^{1}H (ppm):- (300 MHz, $CDCl_3$) 3.023-3.106(1H, t, Hx), 3.214-3.274(1H, dd, Ha),3.820(3H, s,OCH3),5.022-5.078(1H, dd, Hb), 6.846-7.629(11H, m, ArH).

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Structure: - 2b

IUPAC Name:- 2-(4- chlorophenyl)-4-(thiophene-2-yl)- 2,3-dihydrobenzo[b] [1,5]thiazepine.
Chemical Formula: - $C_{19}H_{14}ClNS_2$.
IR (cm^{-1}):- 1597 (C=N), 1574 (C=C), 675(C-S).
^{1}H (ppm):- (300 MHz, $CDCl_3$) 2.994-3.076(1H, t, Hx), 3.205-3.264(1H, dd, Ha),(3H, s,OCH3),4.994-5.049(1H, dd, Hb), 7.120-7.171(2H, t, ArH), 7.284-7.612(9H, m, ArH).

Structure: - 2c

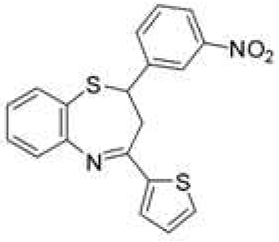

IUPAC Name:- 2-(3-nitrophenyl) -4-(thiophene-2-yl)- 2,3-dihydrobenzo[b] [1,5]thiazepine.
Chemical Formula: - $C_{19}H_{14}N_2O_2S_2$.
IR (cm^{-1}):- 1597 (C=N), 1578(C=C), 1513(N=O (asym)), 1348(N=O(sym)), 684(C-S).
^{1}H (ppm):- (300 MHz, $CDCl_3$) 3.028-3.112(1H, t, Hx), 3.273-3.332(1H, dd, Ha), 5.097-5.153(1H, dd, Hb), 7.136-7.647(8H, m, ArH), 7.700-7.726(2H, d, ArH), 8.141-8.215(3H, t, ArH).

Structure: -2d

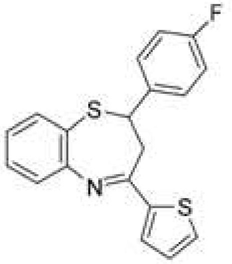

IUPAC Name:- 2-(4-fluorophenyl)-4-(thiophene-2-yl)- 2,3-dihydrobenzo[b] [1,5]thiazepine.
Chemical Formula: - $C_{19}H_{14}FNS_2$.
IR (cm^{-1}):- 1600 (C=N), 1576 (C=C), 684(C-S).
^{1}H (ppm):- (300 MHz, $CDCl_3$) 3.003-3.085(1H, t, Hx), 3.217-3.277(1H, dd, Ha), 5.031-5.088(1H, dd, Hb), 6.986-7.629(11H, m, ArH).

Structure: - 2e

IUPAC Name: 2-(4- chlorophenyl)-4-(furan-2-yl)-2,3-dihydrobenzo[b] [1,5]thiazepine.
Chemical Formula: - $C_{19}H_{14}ClNOS$.
IR (cm^{-1}):- 1602C=N), 1565 (C=C), 1251(C-O), 675(C-S).
^{1}H (ppm):- (300 MHz, $CDCl_3$) 2.898-2.980(1H, t, Hx), 3.171-3.231(1H, dd, Ha), 4.977-5.033(1H, dd, Hb), 6.602 (1H, s, ArH), 7.051-7.062(1H, d, ArH), 7.129-7.180(1H, t, ArH), 7.248-7.655(8H, m, ArH).

Structure: - 2f

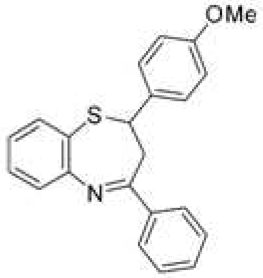

IUPAC Name: 2-(4-methoxyphenyl)-4-phenyl-2,3-dihydrobenzo[b][1,5]thiazepine.
Chemical Formula: - $C_{22}H_{19}NOS$.
IR (cm^{-1}):- 1606 (C=N), 1572 (C=C), 1240(OCH_3), 654(C-S).
^{1}H (ppm):- (300 MHz, $CDCl_3$) 3.021-3.106(1H, t, Hx), 3.277-3.335(1H, dd, Ha), 3.812(3H, s, OCH3), 4.968-5.025(1H, dd, Hb), 6.844-6.872(2H, d, ArH), 7.236-7.618(9H, m, ArH), 8.063-8.088(2H, d, ArH).

Structure: - 2g

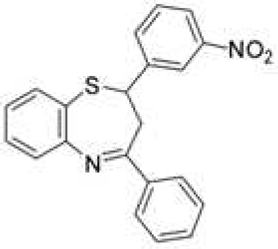

IUPAC Name: 2-(3-nitrophenyl)-4-phenyl-2,3-dihydrobenzo[b] [1,5]thiazepine.
Chemical Formula: - $C_{21}H_{16}N_2O_2S$.
IR (cm^{-1}):- 1610 (C=N), 1573 (C=C), 1513(N=O(asym)), 1350(N=O(sym)), 681(C-S).
^{1}H (ppm):- (300 MHz $CDCl_3$) 3.006-3.091(1H, t, Hx), 3.319-

3.378(1H, dd, Ha), 5.025-5.082 (1H, dd, Hb), 7.160-8.190(13H, m, ArH).

Structure: - 2h

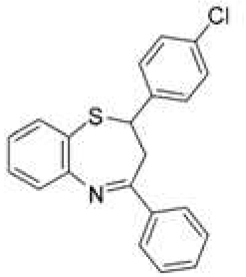

IUPAC Name: 2-(4-chlorophenyl)-4-phenyl-2,3-dihydrobenzo[b] [1,5]thiazepine.

Chemical Formula: - $C_{21}H_{16}$ClNS.

IR (cm^{-1}):- 1609 (C=N), 1572 (C=C), 688(C-S).

^{1}H (ppm):- (300 MHz $CDCl_3$) 2.991-3.076(1H, t, Hx), 3.270-3.329(1H, dd, Ha), 4.937-4.994 (1H, dd, Hb), 7.141-7.625(11H, m, ArH), 8.052-8.075(2H, d, ArH).

Conclusion - Mango juice is easily available, completely eco-friendly, bio-degradable, non-toxic and safe for the environment as well as for the human health, to the best our knowledge it has never been employed as an eco-friendly reaction medium for performing any types of chemical reaction till date.

Mango juice employed for reaction i.e. Biginelli reaction and 1,5 benzothiazepine was found to be an efficient acid catalyst. The yield of the product were in good agreement when compared with the reactions performed with authentic catalyst. It did not affect the course and yield of the reaction. Mango juice therefore could be used as a replacement of other organic acids owing to its economical availability, easy workup procedure, environmentally benign condition thereby making it a green approach.

References :-

1. Y. Ma, C. Qian. L. Wang and M. Yang, J. Org. Chem., 2000, 65, 3864.
2. J. C. Bussolari & P. A. McDonnell, J. Org. Chem., 2000, 65, 6777.
3. J. S. Yadav, K. B. Reddy, K. S. Raj and A. R .Prasad, J. Chem., Soc, Perkin Trans 2001, 1, 1939.
4. K. A. Kumar, M. Kasthuraiah, C. S. Reddy and C. D. Reddy, Tetrahedron Lett., 2001, 42, 7873.
5. J. S. Yadav, B. V. Subba Reddy, C. Venugopal and T. Ramalingam, Synthesis, 2001, 9, 1341.
6. N. Y. Fu, Y. F. Yuan, Z. Cao, J. T. Wang and C. Peppe, Tetrahedron, 2002, 58, 4801.
7. C. M. Adharvana and Syamasundar K, J. Mol. Catalysis – A, 2004, 221,137.
8. G. Maiti, P. Kundu and C. Guin, Tetrahedron Lett., 2003, 44, 2757.
9. H. Salehi and X. G. Qing, Synn Comm., 2004, 34, 171.
10. J. Peng & Y. Deng, Tetrahedron Lett., 2001, 42, 917.

****

शक्ति-संतुलन की स्थापना के विभिन्न प्रकार

डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा*

शोध सारांश – अन्तराष्ट्रीय राजनीति में शक्ति संतुलन की स्थापना करना किसी भी राष्ट्र की स्थायी सुरक्षा के लिये अनिवार्य तत्व है। शक्ति संतुलन स्थापित रखने की अवधारणा अत्यन्त ही परिवर्तन शील प्रकिया है क्योकि अन्तराष्ट्रीय स्तर पर विश्व सामरिकी में निरन्तर परिवर्तन होते रहते है।

जैसे – जैसे विज्ञान और तकनीकी का उपयोग करके सैन्य उपयोग में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से विस्मित करने वाले अविष्कार कियें जाते हैं। उसके परिणाम स्वरूप हीं विश्व शक्ति संतुलन और सुरक्षा व्यवस्था भी परिवर्तित हो जाती है। फलत: शक्ति संतुलन स्थापित करने के लिये नये उपाये अपनानें पड़ते है।

प्रस्तावना – शक्ति-संतुलन को स्थिर रखने की समस्या अत्यन्त ही जटिल है। शक्ति-संतुलन स्थिर रखने की तुलना हम एक खेल की टीम से कर सकते हैं। देखा जाये तो टीम के खिलाड़ी खेल के निश्चित नियमों से बँधे हैं, किन्तु खेल के मैदान में निरन्तर गतिमान, चलायमान और दौड़ धूप करने में वे अपनी स्थिति बराबर बदलते है।

शक्ति-संतुलन का खेल भी इतना ही गतिमान होता है परन्तु उसके भी अपने निश्चित नियम होते हैं। किसी भी काल में शक्ति-संतुलन स्थिर करने के लिये इन नियमों का उपयोग करना ही पड़ता है। शक्ति संतुलन पूर्णत: तुलनात्मक होता है जैसे – जैसे संभावित शत्रुओं की शक्ति में अथवा समूह में परिवर्तन होता है हमें भी उसका सामना करने के लिये अपनी व्यवस्था में अतिशीघ्र ही परिवर्तन करना होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के विशेषज्ञों ने शक्ति-संतुलन को अपने हित में बनाये रखने के लिये निम्न तरीके अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया है-

(1) हस्तक्षेप- हस्तक्षेप का मुख्य उद्धेश्य सदैव शक्ति सम्बन्धों में परिवर्तन लाना होता है। **क्लीचर** के विचार में एक प्रकार से प्रत्येक राज्य की पर-राष्ट्र नीति अपने मूल रूप में अन्य राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप ही है। द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त संयुक्त राज्य ने लेबनान, लाओस तथा वियतनाम में और सोवियत संघ ने हंगरी तथा चेकोस्लावकिया में समय-समय पर हस्तक्षेप किया है। ये हस्तक्षेप यथापूर्व स्थिति को ज्यों का त्यों बनाये रखने के उद्धेश्य से किये गये है। हस्तक्षेप की नीति का अन्तिम रूप युद्ध ही है।

(2) सन्धियाँ- सन्धियाँ एक बहुल राज्य व्यवस्था में प्रचलित शक्ति-संतुलन की एक आवश्यक क्रिया है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रयुक्त किये जाने वाले इस तरीके के अन्तर्गत राष्ट्र परिस्थितियों को देखते हुये अपने हितों के अनुसार सदा यह प्रयास करते हैं कि मैत्री सन्धियाँ की जाये और उन सन्धियों से ही माँग के अनुसार हमेशा बदलते रहा जाये। ऐसा देखा गया है कि मैत्री सन्धियों से ही कई शक्तिहीन राष्ट्र संगठित शक्ति बनकर एक शक्तिशाली राष्ट्र का मुकाबला कर सके है। संधियाँ आक्रामक और प्रतिरक्षात्मक दोनों ही उद्धेश्यों की पूर्ति करती है तथा इन दोनों प्रकार की सन्धियों का सम्बन्ध शक्ति-संतुलन से होता है।

(3) मुकाबला तथा बँटवारा- इसकी नीति यह है कि एक राज्य को उतना दो जितना कि उससे ले लिया गया है ताकि अन्तर्राष्ट्रीय तुल्य भारता बनी रहे। इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा हैं। उदाहरण के लिये हम पोलैण्ड का प्रमाण प्रस्तुत कर सकते हैं जिसमें 1772, 1793 तथा 1795 में तीन बार पोलैण्ड का विभाजन इस प्रकार हुआ कि सन्तुलन कायम रहे।

(4) विभाजन तथा शासन- अपने शत्रुओं में फूट डालो और फिर अपनी इच्छानुसार शासन करो-यह राजनीति का बड़ा पुराना दाँव-पेच है। ब्रिटेन ने तो इस नीति का विशेष प्रयोग किया है। भारत में अंग्रेजों ने हिन्दुओं और मुस्लिमों के बीच फूट डालकर काफी समय तक शासन किया। फ्रांस ने जर्मनी के सन्द्रर्भ में भी इसी नीति का पालन किया था।

(5) शस्त्रीकरण तथा निरस्त्रीकरण- जिस प्रकार साधनों द्धारा एक राष्ट्र अपनी शक्ति से शक्ति-संतुलन बनाये रखने अथवा पुन: स्थापित करने का प्रयास करता है, वह अस्त्र-शस्त्र हैं। यह तरीका इसलिये अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है कि युद्ध अधिकांशत: राष्ट्रों के भाग्य का फैसला करने में निर्णायक भूमिका का निर्माण करते हैं। जब कभी एक राष्ट्र अपने शस्त्रों की होड़ को बढ़ाता है तो उसका विरोधी राष्ट्र भी शस्त्रों की ढोड़ प्रारम्भ कर देता है। शस्त्रीकरण सदैव अस्थिर शक्ति सन्तुलन को जन्म देता है। अत: इसी को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रों ने निरस्त्रीकरण के प्रयोग द्धारा शक्ति-संतुलन के निकाय में लाभ प्राप्त करने का यत्न किया है जिसके मूल में यह धारणा निहित है कि विश्व शान्ति की स्थापना भले ही न हो, कम से कम शक्ति-संतुलन स्थिर व स्थायी तो बना ही रहे।

(6) मध्यवर्ती राज्य- द्विध्रुवीकरण की स्थिति में शक्ति-संतुलन की स्थापना का कार्य अत्यन्त दुरूह हो जायेगा, यदि विरोधी गुटों के शक्तिशाली राज्यों में मध्यवर्ती राज्यों का अभाव हो। यदि विरोधी शक्तियाँ आमने सामने हो जायें और उनके बीच कोई मध्यवर्ती राज्य न हो तो शक्ति-संतुलन की स्थापना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जायेगी। अत: इसके लिये आवश्यक है कि तटस्थ राज्य की स्थापना की जाये। इन तटस्थ राज्यों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व रूस और जर्मनी के बीच पोलैण्ड तथा फ्रांस और आस्ट्रिया के बीच स्विटजरलैण्ड तटस्थ राज्यों के उदाहरण हैं।

वर्तमान राजनीति में परमाणु आयुधों एवं प्रक्षेपास्त्रों के विकास न

* सहायक प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड (म.प्र.) भारत

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में शक्ति के प्रयोग की अवधारणा को गुणात्मक रूप में परिवर्तितत किया है और मूल रूप से शक्ति-संतुलन के पुराने सिद्धान्त पर कड़ा कुठाराघात किया है। यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के उपलब्ध साहित्यिक प्रमाणो में इस सत्य का अधिकांश उल्लेख है कि शक्ति-संतुलन भूतकाल में शांति कायम रखने के एक तंत्र के रूप में काफी सराहनीय रहा है।

सुप्रसिद्ध इतिहासकार **फैरी** का मत है कि उन्नीसवीं सदी में यूरोप में युद्ध तो कई बार लडे ग़ये परन्तु शक्ति-संतुलन तंत्र ने उन युद्धों को स्थानबद्ध और सीमित बनाये रखा **ई0 एच0 कार** जैसे ख्याति-प्राप्त विद्वान ने बताया है कि शक्ति-संतुलन तंत्र ने 19वीं सदी में यूरोप में शांति की स्थापना का अच्छा प्रमाण प्रस्तुत किया।

कुछ विचारक इस तर्क का खण्डन करते हुए यह दलील देते है कि शक्ति-संतुलन की जिन अवधियों को शांति की अवधियाँ समझा जाता हे वे वास्तव में शांति की नहीं वरन् युद्ध की अवधियाँ रही है।

आर्गेन्सकी का कहना है कि 'एक पक्ष के पास शक्ति की सबलता होने की स्थिति में दुर्बल पक्ष सबल पक्ष के सम्मुख समर्पण कर देता है। इस प्रकार शान्ति का संरक्षण शक्ति के असन्तुलन से होता है न कि शक्ति के सन्तुलन से।'

यह प्रश्न इतना विवादग्रस्त बन गया है कि प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व की सदी में शक्ति-संतुलन का सिद्धान्त शांति की स्थापना में समर्थ रहा है अथवा असमर्थ। विद्धानों का एक वर्ग ऐसा भी है जो भविष्य में इस सिद्धान्त के सफल होने की भविष्यवाणी करता है, वहीं दूसरा वर्ग यह तर्क प्रस्तुत करने में भी पीछे नहीं है कि शक्ति-संतुलन की सफलता के लिये अवस्थायें अब अनुपलब्ध हैं जो पहले मौजूद थीं।

19वीं शताब्दी के राजनीतिज्ञ **पं0 जवाहरलाल नेहरू** ने इस सिदान्त की कटु आलोचना करते हुये इसे बेकार तथा समयानुकूल **नहीं** बताया। चीन के **माओ-त्से-तुंग** ने कहा था कि यह सिदान्त अपनी चमक खो चुका है फिर भी क्षेत्रीय राजनीति तथा युद्धों में अब भी इसका महत्व है।

डाग हैमरशोल्ड (सं0 रा0 के भूतपूर्व सचिव) ने एक बार कहा था इस बढ़ती हुई बर्बादी का भय कल शक्ति सन्तुलन के सिद्धान्त से हटकर सच्चे सार्वभौमिक सहयोग के लिये बाध्य करेना। इस आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि शक्ति सन्तुलन की समस्या यह है कि इसके लिये या तो किसी उपयुक्त विकल्प की तलाश की जाये अथवा इसके कार्य करने की अवस्थायें नयी हों।

जो शक्ति-संतुलन को युद्ध का कारण मानते है वे यह भूल जाते हैं कि यह व्यवस्था किसी शक्ति की अवधारणा से सम्बन्धित नहीं है। इसका तात्पर्य यह है कि राज्यों को अकेले ही या संगठित रूप से अपनी शक्ति को कुचल देना चाहिये जो भविष्य में उनकी स्वयं की रक्षा को चुनौती बनकर उभड़ सके। इस पक्ष के समर्थकों ने इसके अनेकों लाभ बताये हैं-जैसे यह आक्रमणों को हतोत्साहित करके राज्यों की स्वतन्त्रता की रक्षा करता है, यथास्थिति बनाये रखता है। युद्धों को रोकने में यह भले ही पूर्णत: समर्थ न हो किन्तु शान्ति स्थापना में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

आणविक युद्ध से विश्व भयभीत है किन्तु इस भय ने भी राष्ट्रों को निरस्त्रीकरण के लिये खुले हदय से प्रेरित नहीं किया है। प्रत्येक सम्मेलन के बाद निरस्त्रीकरण किसी ठोस परिणाम पर नहीं पहुँच पाता है। सो0 रूस के विखण्डन के पूर्व तथा सं0 रा0 अमेरिका की स्थापित करना रही है जिससे विश्व में साम्यवाद का प्रसार न हो सके।

इस प्रकार शक्ति-संतुलन के राजनीतिक प्रभाव का परिणाम यह है कि यह मानव जाति के विकास में सहायक रहा है और इसी कारण कई राज्यों की स्वतन्त्रता सुरक्षित रही है। जब तक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति राष्ट्र राज्य प्रणाली पर अवलम्बित रहेगी, शक्ति-संतुलन उसका अपरिहार्य तत्व बना रहेगा, भले ही सैद्धान्तिक रूप से उसकी कितनी ही आलोचना क्यों न की जाये। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शक्ति-संतुलन की प्रकृति अवश्य बदल गयी, किन्तु इसका अस्तित्व आज भी बना हुआ है।

जब से परमाणु अस्त्रों से लैस राष्ट्रों का उदय हुआ है भारत और पाकिस्तान, अरब और इसराइल, सं. राज्य अमेरिका तथा उत्तरी वियतनाम के बीच युद्ध हुए है। इन सभी स्थानीय और क्षेत्रीय युद्धों ने शक्ति-संतुलन की स्थिति को क्षेत्रीय स्तर पर प्रभावित किया है।

अत: उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शक्ति संतुलन की स्थापना के प्रकारों को एक निश्चित सीमा में नहीं बांधा जा सकता है। यह तो निरन्तर परिवर्तनशील प्रक्रिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Leonox A. Mills : World Politics in Transition Transition
2. A. J. Toynbee : A Study of History,
3. See International Relations,
4. See inis L. Claude. Power and international Relations.
5. See Guglielmo Ferra. The Reconstruction of Europe,
6. See E.H. Carr, The Twenty Year Crisis 1919-39,
7. See Palmer and Parkins, International Relations.
8. राष्ट्रो के मध्य राजनीति

****

पर्यावरणीय अवक्रमण के बहुआयामी प्रभाव

डॉ. कौशलेन्द्र सिंह*

शोध सारांश – पर्यावरणीय अवक्रमण 21वीं सदी की सबसे बड़ी समस्या हैं। इसने वनस्पति, कृषि योग्य भूमि (मृदा), मानवीय स्वास्थ्य तथा मानव जीवन जीने के तरीकों को बहुत अधिक प्रभावित किया हैं। इस प्रभाव का ही यह सबसे बड़ा असर है कि विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ जैसे – कैंसर, अस्थमा, आदि बहुत ही अधिक तेजी के साथ मानव जीवन को प्रभावित कर रहीं है यदि यह विश्लेषण किया जाये कि पर्यावरणीय अवक्रमण के क्या–क्या बहुआयामी प्रभाव है तो इसके गंभीर परिणामों से बचा जा सकता हैं।

प्रस्तावना – पर्यावरणीय अवक्रमण के विभिन्न प्रभावों को प्रकृति के आधार पर निम्न प्रकार विभाजित किया जा सकता है।

पर्यावरणीय अवक्रमण का मृदा पर प्रभाव – जब भौतिक या मानवीय कारणों से मृदा की गुणवत्ता घटने लगती है तो उसे प्रदूषित मृदा कहा जा सकता है। यह मृदा प्रदूषण मृदा अपरदन के रूप, मृदा हास से रूप में मृदा के अनुत्पादक प्रयोग के रूप में सामान्यत: देखने को मिलता है, मृदा के अवक्रमण के मूलभूत कारणों से मृदा का कटाव, मृदा का अत्यधिक दोहन व उससे पोषक तत्वों की कमी, प्रदूषित जल द्धारा सिंचाई, रसायनिक उर्वरक और कीटनाशक के प्रयोग, जीवांश के असंतुलित अनुपात आदि को सम्मिलित किया जाता है। विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या व कृषि के व्यापारीकरण के कारण मृदा का प्रदूषण अत्यधिक हुआ है, विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रतिवर्ष विश्व में करीब 5 लाख से अधिक लोग कीटनाशकों की चपेट में आकर मर जाते है। इन कीटनाशकों का प्रयोग मृदा को अवक्रमित कर देता है, नगरीय एवं औद्योगिक प्रदूषित जल भी मृदा अवक्रमण के लिये दोषी हैं। अत: मृदा अवक्रमण को रोकना आज की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

पर्यावरण अवक्रमण का वनस्पति पर प्रभाव – वनस्पति भौगोलिक वातारण का सजीव तत्व है, पारितंत्र को सही ढंग से संचालित करने कि लिये वनस्पति का उपयुक्त मात्रा में होना अति आवश्यक है, मानव और वनस्पति का पारस्परिक जैविक संबंध सदैव से ही घनिष्ठ रहा है। जीव अपने वातावरण की उपज है उसी प्रकार वनस्पति किसी स्थान की जलवायु का प्रतिबिम्ब होती है जलवायु के अनुरूप ही विभिन्न क्षेत्रों में वानस्पतिक आवरण के स्वरूप देखने को मिलते है।

प्रदूषण सूचक पौधे व उन पर प्रदूषक का प्रभाव – पर्यावरण पौधों की वृद्धि को प्रभावित करता है, पौधे ही नहीं प्रत्येक जीव अपने पर्यावरण की उपज है। अनुकूल पर्यावरण में पौधे की अच्छी वृद्धि होती हे, और प्रतिकूल पर्यावरण में पौधों की वृद्धि रूक जाती है तथा इस प्रतिकूल पर्यावरण के कुप्रभाव भी पौधों पर दृष्टिगोचर होने लगते हैं तथा ये पौधे अवक्रमित पर्यावरण का संकेत देने लगते हैं इसलिये ऐसे पौधों को जैव संकेतक या संकेतक पादप कहा जाता है।

पादक संकेतकों को मूलत: दो भागों में बाँटा जाता है – 'स्टेनो' व 'यूरी'। स्टेनो वे जातियाँ हैं, जिनमें सीमित सहनशक्ति होती है, जबकि यूरी जातियों की सहनशक्ति पर्याप्त होती है ऐसे पौधे जो गर्मी की पर्याप्त मात्रा को सहन कर सकते हैं 'यूरी थर्मल' कहलाते हैं तथा वे पौधे जो जल की कमी को एक सीमा तक सहन कर पाते हैं उन्हें 'स्टेनो हाइडिक' कहते हैं। ऐसी पादक प्रजातियों का अवलोकन कर हमें अवक्रमण की दशाओं का ज्ञान संभव है।

विभिन्न प्रकार के पादक संकेतक :

1. **कृषि हेतु पादक संकेतक –** छोटी घास जहाँ पैदा होती है व मिटटी में जल की कमी का संकेत देती है, जबकि उँची व मोटी घास यह सिद्ध करती है कि मिटटी कृषि हेतु उर्वर है।
2. **वन भूमि के संकेतक –** नरेगा, परफीरोकोमा ऐसी घास है, जो मिट्टी के कणों को बांधकर रखती है और ऐसी मिटटी में साल का वृक्षारोपण संभव है, इसी भांति वापोजा जाति की घास देवदार वृक्षों और पाइन्स को उगाने हेतु अनुकूल दशाओं का संकेत देती है।
3. **जीवांश संकेतक –** कुकुरमुत्ता तथा मोनोट्रोपा का पैदा होना मिटटी में जीवांश का समुचित उपस्थित का सूचक है।
4. **नमी के संकेतक –** कास, (सेकरमुन्ज), बबूल (अकेशिया निलोटिका), अकउआ (केलोट्रोपिस), नागफनी (उपशिया) पीली कटेरी (आरजीमोन), आदि ऐसे पौधे हैं जो बहुत अधिक नमी के द्योतक है। उटकटेरी (एकीनाप्स एकीनेट्स) ऐसी जगहों पर पैदा होती है, जहाँ जल तल नीचा होता है। कच्छ वनस्पतियों का पैदा होना लवणयुक्त जल क्रान्त भूमि का सूचक होती है।
5. **मिटटी के प्रकार के संकेतक –** झाउ (केजूराइना), बेसरम (आइपोमिया), रेतीली मिटटी में ही पैदा होते है। कपास काली मिटटी में ही पैदा होती है, सागोन और केकटस कैल्सियम रहित मिटटी में ही पैदा होते है, जबकि शाल वृक्ष कैल्सियम युक्त मिटटी में पैदा होता है।
6. **भू–जल समृद्धता को व्यक्त करने वाले पौधे –** जामुन (दयूकोनिया जेम्बोलाना), मेंहदी (लासोनिया अलबा), खजूर (कोनेकर सिलवैसट्रिस) भूजल की समृद्रता को सूचित करते हैं।

पर्यावरणीय अवक्रमण का कृषि पर प्रभाव – मानव जाने–अनजाने में अनेक प्रकार की ऐसी क्रियायें करता है, जिनका मानवीय क्रिया–कलापों व सांस्कृतिक पर्यावरण पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। कृषि भी इस प्रभाव से अछूती नहीं रहती। जैसे–जैसे मानव ने तकनीकी उन्नति की है, वैस–वैसे उत्पादन वृद्धि के साथ–साथ कृषि पर पर्यावरणीय अवक्रमण के दुष्प्रभाव

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड (म.प्र.) भारत

देखे गये है, आज स्थिति यह है कि हमारे भोज्य पदार्थो में मौलिक गुणों का अभाव है, तथा खाद्यान्न में नैसर्गिकता समाप्त हो चुकी है। कृषि में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग कीटनाशी व शाकनाशियों के प्रयोग से जहाँ हमने अधिक उत्पादन लेना शुरू किया है, तो दूसरी ओर अनेक पर्यावरणीय समस्यायें पैदा हुयी हैं।

पर्यावरणीय अवक्रमण का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव – मानव अपने वातावरण की उपज है, वातावरण की शक्तियाँ मानव के स्वास्थ्य, कार्यक्षमता, पाचन क्षमता सभी को प्रभावित करती है। किसी स्थान की जलवायु मानवीय स्वास्थ्य एवं क्रिया–कलापों को प्रभावित करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक होती है। हंटिंगटन के अनुसार जलवायु सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारक है जो मानव के स्वास्थ्य क्रिया–कलापों को सर्वाधिक प्रभावित करता है।

मोन्टेस्क्यू ने जलवायु के प्रभावों की विवेचना करते हुये लिखा है कि ठण्डी जलवायु के व्यक्ति शरीर में मजबूत, अधिक साहसी, स्पष्ट कम, अविश्वासी और कपटी होते है जबकि इनकी तुलना में दक्षिण के व्यक्ति जो बुड्ढो की भांति भीरू, शरीर से कमजोर, उत्साहहीन और निष्क्रिय होते हैं। बोडिन के शब्दों में शीतोष्ण प्रदेशों के निवासी उत्तर की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान और दक्षिण के लोगों की अपेक्षा अधिक कर्मठ होते है।

यही नहीं जलवायु मानव के भोजन एवं वस्त्र को भी प्रभावित करती है मरूस्थलीय प्रदेशों में धूल भरी आंधियों से बचने के लिये बुर्का पहनते हैं ठण्डे प्रदेशों में ठण्ड से बचने के लिये उनी वस्त्र, खाल के वस्त्र एवं समूर के वस्त्र पहनते हैं। वस्त्र की भांति भोजन भी जलवायु से नियंत्रित होता है। शीत, शीतोष्ण प्रदेश के मानव अपने भोजन में मांस, अण्डे, मछली, मक्खन व मदिरा का प्रयोग करते है। जबकि गर्मप्रदेशों में इनका प्रयोग नहीं होता गर्म प्रदेशों में मानव दाल, चावल, गेहूं के आटे की रोटी व फलों का प्रयोग करते हैं।

पर्यावरण अवक्रमण का आवासीय क्षेत्र पर प्रभाव – किसी स्थान के आवास वहाँ की जलवायु, भवन निर्माण हेतु उपलब्ध पदार्थ व मनुष्य की आर्थिक स्थिति से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते है। जलवायु अधिवासों के आकार एवं स्वरूप को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। शुष्क मरू–प्रदेशों में अधिवास सपाट छत व खिड़कीकार बनाये जाते है, वर्षा जल के संचय हेतु इन मकानों में गढढे होते है जो कि आज की वाटर हारवेस्टिंग का पुराना स्वरूप है, ठण्डे प्रदेशों के मकान ठण्ड के प्रकोप से बचने हेतु खिड़की रहित बनाये जाते हैं। इसी प्रकार अति उष्णाद्र क्षेत्रों के मकान ढालू छत के बनाये जाते है ताकि वर्षा जल इन मकानों से शीघ्र बहकर नीचे आयें।

इस तरह उपरोक्त अध्ययन से पता चलता हे कि पर्यावरण अवक्रमण का प्रभाव विभिन्न रूपों में अनगिनत नुकसानों के रूप में सामने आता है इसके प्रभाव को जब हम विभिन्न सीमाओं में बांधने की कोशिश करते हैं तो उनमें मुख्य प्रभाव निम्न बिन्दूओं – तापीय, वर्षा, भूमिगत एवं सतही जल, वायु, मृद्रा, वनस्पति, मानव स्वास्थ्य, कृषि एवं आवासों पर दिखाई पड़ता है। इसके मूल में जो निष्कर्ष निकलता हे वह यह है कि पर्यावरण अवक्रमण के प्रभाव को जानकर ही इससे बचा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गंभीर, संजय कुमार – वायु एवं जल प्रदूषण हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 2003
2. मुखर्जीए डॉ. रवीन्द्र नाथ –पर्यावरण प्रदूषण, एवं डॉ. भरत अग्रवाल साहित्य भवन, आगरा 1987
3. नौटियाल, शिवानंद – पर्यावरण समस्या और समाधान, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली 2004
4. सुखलाल, घनश्याम – पर्यावरण प्रदूषण हिन्द बुक सेन्टर नई दिल्ली, 1999
5. प्रो. जगदीश सिंह – पर्यावरण एवं संविकास राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2001
6. Pearson, Karl - The Grammer of Science, London

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

युद्ध का अर्थ -ऐतिहासिक द्वन्द्व

डॉ. गिरीश शर्मा* डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा**

शोध सारांश – युद्ध की अवधारणा अथवा अर्थ को एक परिसीमा में सीमित करना अत्यन्त ही दुष्कर कार्य है वस्ताविकता तो यह है कि युद्ध की प्रकृति निरंतर परिवर्तनशील होने के कारण युद्ध के प्रकारो में भी निरंतर परिवर्तन होता रहता है, अत: युद्ध की स्थाई अवधारण या प्रकार निर्धारित नही किया जा सकता है कि युद्ध हिंसात्मक है अथवा अहिंसात्मक।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही युद्ध एक ऐतिहासिक एवं सामाजिक अनिवार्य तथ्य रहा है। परिवर्तित समाज धर्म अर्थ के साथ – साथ मानव सभ्यता के विकास के साथ ही उसके प्रकार एवं परिभाषाये भी निरंतर परिवर्तित होती रही है। जैसे– जैसे मानव सभ्यता का विकास हुआ है वैसे – वैसे ही युद्ध लडने के तरीके निरंतर परिवर्तित होते गये है। प्रचीन कालीन सभी युद्ध कुछ निश्चित नियम धर्मो के साथ सामने आमने – सामने खड़े होकर लडे जाते थे वही 18वीं शताब्दी में बारूद के प्रार्दुभाव के उपरांत आमने सामने खड़े होकर लडने का समरतंत्र पूर्णत: समाप्त हो गया और साथ ही एक परिवर्तन और भी आया जिसने भविष्य के युद्धो के स्वरूप को पूरी तरह से बदल कर रख दिया। सभी युद्ध समग्र युद्ध हो गये जिसमें किसी भी राष्ट्र प्रत्येक तत्व भी भाग लेने लगा और आम जनता का भी युद्ध के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित हो गया।

युद्ध के अर्थ को लेकर सभी अपने हितो के हिसाब से अर्थ निकालते है जबकि युद्ध का अर्थ अपने हितो की पूर्ति तथा स्थायी सुरक्षा व शांति की स्थापना प्रमुख होता है।

युद्ध की परिभाषाओ के बारे मे सैन्य इतिहासकारो में द्वन्द्व है।

मोल्टकी के अनुसार–''युद्ध मनुष्यो द्वारा किया जाने वाला एक बलपूर्वक कार्य है जिसका प्रयोजन राज्य के उद्देश्य को प्राप्त करना या उसे बनाये रखना होता है।''

सन्तजू के अनुसार– ''युद्ध राज्य का महान कार्य है, जीवन और मृत्यु का प्रवेश है, सुरक्षा तथा विनाश का मार्ग है इसका अध्ययन विशेष ऐतिहासिक सन्दर्भो मे करना चाहिये।''

अन्तर्राष्ट्रीय न्याय शास्त्री ओपनहीम के अनुसार– ''युद्ध दो अथवा उससे अधिक राज्यो के बीच एक दूसरे को पराजित करने तथा विजेता राज्य की इच्छा के अनुसार शांति थोपने के लिये सशस्त्र सेनाओ के माध्यम से संचालित विवाद है।''

सैन्य इतिहासकार वेतस्टेक के अनुसार–'' युद्ध सरकारों की स्थिति है जिसमें वह सेना द्वारा स्पर्धा करते है।''

पामर एण्ड पार्किंग्स के अनुसार– ''युद्ध राष्ट्रो अथवा शासको के मध्य विभिन्न दलो के माध्यम से विरोध पूर्ण विवाद है वह किसी विदेशी शक्ति के विरूद्ध अथवा राज्य के अंदर विरोधी दलो के विरूद्ध सशस्त्र सेनाओ का प्रयोग है।''

उपरोक्त इतिहासकारो मे सर्व प्रमुख विवाद इस बात को लेकर है कि 'युद्ध केवल हिंसात्मक है अथवा अहिंसात्मक भी इसके साथ ही कुछ इतिहासकारो के अनुसार युद्ध केवल विदेशी शक्तियो के विरूद्ध सैन्य उपयोग है।'

जबकि अन्य का मन्तव्य है कि युद्ध राज्य के अंदर सैन्य उपयोग को भी युद्ध कहा जा सकता है किन्तु यदि हम विश्लेषण के तौर पर कहे तो जब दो राष्ट्र की सरकारे अधिकृत रूप से सैन्य संघर्ष की घोषणा कर देती है तो ही इसे युद्ध की संज्ञा दी जा सकती है।

प्राचीन काल से प्रथम विश्व युद्ध प्रांरभ होने तक सैन्य संघर्षो को ही युद्ध कहा जाता था, किन्तु प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध में अत्याधुनिक शस्त्रो की हिंसात्मक और विनाशक क्षमताओं को देखते हुये जिसमें कि रासायनिक युद्ध जीवाणु युद्ध परमाणु युद्ध सर्वप्रमुख है, समस्त विश्व कों यह एहसास होने लगा था कि यदि भविष्य मे तृतीय विश्व युद्ध हुआ तो समस्त मावन जीवन का अस्तित्व ही खतरे मे पड सकता है।

विशेष रूप से जब अमेरिका ने 6 अगस्त और 9 अगस्त 1945 को क्रमश: हिरोशिमा और नागासाकी नामक जापानी शहरो के ऊपर परमाणु बम के द्वारा हमला कर दिया तो समस्त विश्व को भविष्य के युद्धो की भयावहता का प्रत्यक्ष दर्शन हो गया और इसके उपरांत युद्धो का एक और नवीन प्रकार अप्रत्यक्ष (शीतयुद्ध) युद्ध सामनें आ गया और समस्त विश्व हिंसात्मक युद्धो से बचने का प्रयास करने लगा।

यही वह समय था जिसमें सैन्य विज्ञान के इतिहास लेखन की दशा ही बदल दी। अब से पूर्व तक सैन्य संघर्ष को ही युद्ध का नाम दिया जाता था किन्तु अब युद्ध की एक और विधा शीत युद्ध अथवा अहिंसात्मक युद्ध ने भी जन्म ले लिया है। शीत युद्ध अहिंसा से बचने के साथ ही शक्ति संतुलन स्थापित करने कर भी एक साधन था।

फ्लेमिंग के अनुसार–'शीत युद्ध का उद्देश्य शत्रुओ अलग रखना और मित्रो को जीतना होता है। पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुसार– 'शीत युद्ध एक ऐसा युद्ध है जो युद्ध क्षेत्र मे नही बल्कि मनुष्य के मस्तिष्क मे लडा जाता हैं तथा इसके द्वारा विचारो पर नियंत्रण का प्रयत्न किया जाता है।'

निष्कर्ष –उपरोक्त समस्त विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष रूप मे यह कहा जा सकता है कि सैन्य इतिहास के अध्ययन से यह पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है कि जैसे – जैसे मानव सभ्यता एवं वैज्ञानिक युग का विकास होता जा रहा

* प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड (म.प्र.) भारत

है वैसे– वैसे ही युद्ध के नवीन प्रकार सामने आते जा रहे है। युद्ध का एक मात्र अतिम लक्ष्य विजय प्राप्त करना शेष रह गया है।

अर्थात शुत्रो को अपनी बात मनवाने के लिये बाध्य करना ही युद्ध है चाहे इसके लिये हिंसात्मक अथवा अहिंसात्मक कोई भी तरीका क्यो न अपनाना पडे जब इन उद्देश्यो की पूर्ति का इतिहास लिखा जायेगा तो उसका कोई भी स्थाई अथवा निर्धारित स्वरूप नही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. K.M. Panikkar,"Survey of indian History" Asian Publishing Delhi 1992
2. Lt. Gen P.N. Kathpalia PVSM AVSM National Security Perspectives Lancer International 1986, New Delhi
3. Col Ravi Nanda, AVSM" India in Security: Changed Perspective" Lancer Book 2005 New Delhi.
4. A.N. Agarwal Total Mobilization for national Defence : Allahabad University 1965.
5. B.N. Majomdar Study of indian Military History Army Education Store Ambala 1963
6. Panikkar K. M. Geographical Factor in indian History Bombay Bharatiya Vidya Bhavan 1959
7. K. M Panikkar Problem of indian Defence Bombay Asia Pub. House 1960:

****

जलवायु प्रदूषण की समस्या भारतीय भू-स्थिति के संदर्भ में

डॉ. कौशलेन्द्र सिंह*

शोध सारांश – समस्त विश्व में उपयोग में लाये सकने वाले जल विशेष रूप से पेय जल की अत्यधिक कमी हैं तथा भारत भी इस जल समस्या से अछूता नहीं हैं। भारत में भी जल प्रदूषण की समस्या बहुत अधिक है और ईसका सर्वप्रमुख कारण यह हैं कि भारत में स्थित बड़ी नदियों को प्रदूषण से मुक्त रखने की योजना पर मैदानी रूप से अमल नहीं हो पा रहा हैं।

प्रस्तावना – भू-जल में बढ़ता जहर – देश में भू-जल स्तर में हो रही भारी गिरावट व भू-जल में मिल रहे दूषित तत्वों के कारण जमीन के अंदर जहरीला होता जा रहा है। यह समस्या जल वैज्ञानिकों के लिये गंभीर चिंता का प्रश्न बनती जा रही है, देश भर से एकत्र किये गये आँकड़ो में मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के आंकड़े चौकानें वाले हैं।

मध्यप्रदेश के जहाँ 9 जिलों में भू-जल स्तर में चार मीटर से अधिक गिरावट आई है, वहीं महाराष्ट्र के 10 जिलो में भू-जल चार मीटर से नीचे चला गया है। इसी तरह मध्यप्रदेश के 25 और महाराष्ट्र के 29 जिलों के भू-जल में लवण, फलोराइड, नाइट्रेट व भारी धातु जैसे खतरनाक दूषित तत्व मात्रा से अधिक पाये गये हैं। मध्यप्रदेश के 10 व महाराष्ट्र के 9 जिलों में भू-जल का स्तर चार मीटर से अधिक नीचे चला गया है।

भू-जल में दूषित पदार्थो की मात्रा में बढ़ोतरी मध्यप्रदेश के 25 जिलों में पाई गई है, इसमें भिण्ड, ग्वालियर, मुरैना, झाबुआ, खरगोन, धार, शिवपुरी, शाजापुर, गुना, मंदसौर और उज्जैन जिलों के भूजल में लवणता की मात्रा अधिक पायी गयी है, इसी तरह भिण्ड, मुरैना, गुना, झाबुआ, छिन्दवाड़ा, सिवनी, मण्डला, रायपुर और विदिशा में फलोराइड व सीहोर में नाइट्रेट की मात्रा अधिक पाई गई है।

इसी तरह बस्तर, कोरबा, रतलाम ओर नागदा जिलों में भारी धातु जैसे दूषित पदार्थ आवश्यकता से अधिक पाये गये है, जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हैं, उल्लेखनीय है कि सुरक्षित पेयजल आपूर्ति करने संबंधी प्रावधानों की योजना व उनकी वित्तीय व्यवस्था राज्य सरकारों द्वारा किया जाना है, इसलिये केन्द्र सरकार का इस संदर्भ में कोई योगदान नहीं होता, केन्द्रीय भू-जल बोर्ड राज्य सरकारों को सिर्फ तकनीकी सेवा प्रदान करता है।

सतही एवं भूमिगत जल के अवक्रमित होने के सामान्य कारण :

1. आवासीय क्षेत्रों मे नहाने, कपड़े धोने में प्रयुक्त साबुन व पाउडर से सतही जल प्रदूषित होता है यही जल नदियों, झीलों व तालाबों के जल को प्रदूषित करता है।
2. वाहित जल, नगरों व कस्बों के मकानों से निकला मल-मूत्र, कूड़ा-करकट भी नालों के द्वारा नदियों तथा तालाबों और झीलों में डाल दिया जाता है, जिससे जल प्रदूषित होता है।
3. कृषि उपज अधिक लेने हेतु कीटनाशक, खरपतवारनाशक, तथा उर्वरक के वर्तमान समय में अधिकाधिक उपयोग द्वारा भी सतही जल प्रदूषण बढ़ा है, क्योंकि वर्षा जल के साथ मिलकर ये समस्त तत्व सतही जल स्त्रोतों में पहुंच जाता है।
4. विभिन्न प्रकार के ईधनों जैसे – कोयला, पेट्रोल, डीजल आदि के जलने से कई विषैली गैसे निकलती हैं, जो वर्षा जल के साथ मिलकर सतही जल स्त्रोतों को प्रदूषित करती है।
5. रेडियोधर्मी पदार्थ भी उर्जा स्त्रोत के रूप में प्रयुक्त होने लगे हैं और इस प्रक्रिया में जल का अधिक उपयोग होता है। सामुद्रिक जल में नाभिकीय विस्फोट की घातक विकरण द्वारा जल को प्रदूषित करते हैं।
6. भूमिगत जल तल के नीचे होने का मुख्य कारण वर्षा जल का भूमि में कम पहुंचना है अनुमान है कि 75 प्रतिशत वर्षा जल नदी-नालों द्वारा बहकर दूसरे स्थानों पर चला जाता है। चूंकि पहले गांवों में तालाब, पोखर, बावड़ी आदि में वर्षा जल का संग्रह होता था। परन्तु आज इनका निरंतर अभाव हो चुका है। तालाब व पोखर कृषि क्षेत्रों में बदल चुके है। आज आवश्यकता यह है कि प्रत्येक गांव में छोटे-छोटे तालाब विकसित किये जाये। खेतों से भी वर्षा जल बाहर नहीं जा पाये तो भूमिगत जल तल में बढ़ोतरी हो सकेगी।

पर्यावरणीय अवक्रमण का वायु पर प्रभाव – भारत में वायु प्रदूषण की समस्या औद्योगिक एवं सघन नगरीय क्षेत्रों में उभरी है, और भारत के औद्योगिक प्रदेश वायु प्रदूषण के शिकार हुए है। वायु प्रदूषण को अन्तराष्ट्रीय सीमाओं से आवृद्ध नहीं किया जा सकता, एक देश के आणुविक परीक्षण से फैले समस्थानिक (आइसोटोप्स) विश्व भर में फैलकर ब्लड कैंसर जैसी बीमारियों को जन्म दे सकते हैं। वायु प्रदूषण की घटनाओं में भोपाल गैस कांड, चैरनोविल रूस की घटनायें, हृदय विदारक घटनायें रही है।

प्रदूषित व अवक्रमित वायु से तात्पर्य वायु में ठोस, द्रव अथवा गैसीय प्रदूषकों के उस सीमा तक मिलने से है जो मनुष्य, जीवजन्तु वनस्पति व सम्पत्ति के लिये हानिकारक हो तथा ये प्रदूषक मानवीय स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव छोड़ते हो, इस प्रकार प्रदूषित वायु से तात्पर्य वायु की प्राकृतिक गुणवत्ता में प्रतिकूल परिवर्तन से है।

वायु के भौतिक और रसायनिक गुणों में इस प्रकार का ऋणात्मक परिवर्तन जो मनुष्य और जीव जन्तुओं के लिये हानि पहुंचाये तो उसे प्रदूषित वायु या अवक्रमित वायु कहा जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वायु प्रदूषण उन परिस्थितियों तक सीमित रहता है जहां बाहरी परिवेशी वायुमंडल में दूषित पदार्थो की सान्धता मनुष्य तथा पर्यावरण को हानि

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड (म.प्र.) भारत

पहुंचाने की सीमा तक बढ़ जाती है।

वायु के प्रदूषक – वायु के प्रदूषक दो प्रकार के होते है,

1. प्राथमिक प्रदूषक प्राकृतिक एवं कृत्रिम प्रक्रियाओं द्वारा सीधे वायुमंडल में मिल जाते हैं, उदाहरण के रूप में कार्बनडाईऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो वायुमंडल में मिलती रहती है।
2. द्वितीयक प्रदूषक वे प्रदूषक होते हैं जिनका निर्माण प्राथमिक प्रदूषकों के साथ वातावरण के अन्य तत्वों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप होता है। उदाहरण के लिये सल्फर डाई ऑक्साइड वर्षा ऋतु में वाष्प से मिलकर गंधक के अम्ल को जन्म देती है।

वायु प्रदूषण के स्त्रोत – वायु प्रदूषण के अनेक स्त्रोत होते है, ये स्त्रोत क्षेत्रीय व अन्तराष्ट्रीय किसी भी रूप में हो सकते हैं। मूल रूप से वायु पर प्रभाव डालने वाले इन स्त्रोतों को दो भागों में बांटा जाता है –

1. प्राकृतिक स्त्रोत में ज्वालामुखी गैसें, वन क्षेत्रों में लगी आग का धुआ, आंधी व तूफान से फैले धूलकण व स्थानीय हवाओं के प्रभाव सम्मिलित किये जाते हैं।
2. मानव वायु को अवक्रमित करने में एक महत्वपूर्ण कारक है, जीवाश ईधनों के दहन, औद्योगिक चिमनियों तथा अवांछित गन्दे पदार्थो आदि से वायु अवक्रमित होती रहती है। अत: इन क्रियाओं को निम्न बिंदूओं में रखा जा सकता है। 1. ईधन उद्योग, 2. औद्योगिक क्रियाकलाप, 3. परिवहन के साधनों को उत्सर्जन, 4. शक्ति उत्पादन, 5. किसी कार्य में कीटनाशी व साथ नाशियों का छिड़काव, 6. अपशिष्ट पदार्थो की सड़न, 7. ताप विधुत गृह आदि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bernard, G.- Eco-Development,
2. Pearson, Karl - The Grammer of Science, London
3. Tolba, M.K. - Sustainable Development
4. W.C.E.D. - Our Common Future Oxford University, Delhi, 1987
5. गंभीर, संजय कुमार – वायु एवं जल प्रदूषण हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 2003
6. मुखर्जीए डॉ. रवीन्द्र नाथ – पर्यावरण प्रदूषण, एवं डॉ. भरत अग्रवाल साहित्य भवन, आगरा 1987
7. नौटियाल, शिवानंद – पर्यावरण समस्या और समाधान, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली 2004
8. सुखलाल, घनश्याम – पर्यावरण प्रदूषण हिन्द बुक नई दिल्ली, 1999
9. प्रो. जगदीश सिंह –पर्यावरण एवं संविकास राधा पब्लिकेशन,नई दिल्ली, 2001

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारत में घटता लिंग अनुपात- एक समकालिक अध्ययन

डॉ. अशोक कुमार त्यागी *

प्रस्तावना – भारत के इतिहास में नारी के प्रति व्यवहार में श्रद्धा, सम्मान, विश्वास और प्रशंसा अंकित है। हमारे प्राचीन ग्रंथों एवं वैदिक साहित्य के प्रमाण बताते हैं कि नारी के साथ अच्छा व्यवहार किया जाता था और उन्हें अधिक अधिकार प्राप्त थे। अदिति, लोपमुद्रा, गार्गी, मैत्रेयी, घोषा और अपाला जैसी असाधारण प्रतिभाशाली महिलाओं की शिक्षा का स्तर उस युग के शिक्षित पुरूषों के समकक्ष था। मनीषी यज्ञवालक्य ने वयस्क महिलाओं को अपना जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्रता दी। गार्गी ने तो अपनी शर्तों पर एक मनीषी को अपने पति के रूप में वरण किया, किन्तु उसके बाद के समय में महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आने लगा तथा भारतीय समाज में भी महिलाओं की स्थिति निम्नतर होने लगी। अन्य धर्म (सम्प्रदायों) में भी महिलाओं की स्थिति सोचनीय थी।

स्वतंत्रता आन्दोलन से उत्साहित और हिन्दू धर्म के समाज सुधारकों के समर्पित प्रयासों द्वारा विगत् सौ वर्षों ने पिछले कई शताब्दियों से महिलाओं के विरूद्ध किये गये भेदभावों को समाप्त करने हेतु प्रयत्नशील भारत को देखा है। स्वतंत्रता आन्दोलन में अनेक उच्च मेधावी महिलाओं के साथ-साथ सामान्य महिलाओं ने भी भाग लिया और आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति में रहीं। बाहरी आक्रांताओं के विरूद्ध भी भारतीय महिलाओं के संघर्ष की अनेको वीरगाथाएँ भी भारत के स्वर्णिम इतिहास का अनूठा भाग है।

वर्तमान वैश्वीकरण के इस युग में देश के नियोजित विकास की नीतियाँ और कार्यक्रम बनाये जा रहे हैं, वही महिला केन्द्रित योजनाओं, जेण्डर बजटिंग, महिलाओं के विकास संबंधी मुद्दों को अधिक गंभीरतापूर्वक लिया गया है। पिछले दो दशकों में विशेषकर नौवीं और दसवीं पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत इन प्रयासों को तीव्र किया गया और राष्ट्र के विकास में महिला अधिकारिता को विशिष्ट लक्ष्य के रूप में प्रतिष्भापित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में यह विश्लेषण किया गया है कि महिलाओं की स्थिति किन कारणों से दयनीय बनी।

संयुक्त राष्ट्र ने सन् 1975 को 'अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' और 1975-85 के दशक को 'महिला दशक' घोषित किया, किन्तु भारत में सन् 1974 में ही भारतीय महिलाओं के स्थिति के अध्ययन के लिये एक समिति का गठन किया गया, जिसकी सदस्या ईला भट्ट, मृणाल पाण्डे, वीणा मजुमदार व फुल्किन गुहा थीं। इस समिति ने विभिन्न पैमानों के आधार पर देश भर में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन किया और इस समिति ने सन् 1975 में संसद में रिपोर्ट पेश की। रिपोर्ट ने निम्नलिखित तथ्यात्मक जानकारियाँ उपलब्ध कराई और महिलाओं के प्रति भेदभाव के निम्न चार मापदण्ड बताये:-

1. निरंतर घटता लिंग अनुपात (प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या)
2. जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार आदि में लैंगिक आधार पर बढ़ती विषमताएँ
3. जीवन के महत्वपूर्ण मुद्दों, विशेषकर निर्णय निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की नगण्य भागीदारी, एवं
4. महिलाओं के विरूद्ध अपराधों की निरंतर बढ़ती दर ।

भारत में लिंग अनुपात निरन्त घट रहा है।

निम्न तालिका क्रमांक-1 इस घटते लिंग अनुपात को स्पष्ट रूप से दर्शा रही है -

तालिक-1

वर्ष	लिंग अनुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या)
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	927
2001	933

स्रोत-इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, सितम्बर, 2001

तालिक-2 : वर्ष 2001 में विभिन्न राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में (900 से कम) लिंग अनुपात

राज्य का नाम	लिंग का अनुपात
उत्तर प्रदेश	898
सिक्किम	875
पंजाब	874
अंडमान निकोबार	846
दिल्ली	821
हरियाणा	816
दादर-नागर हवेली	811
चंडीगढ़	773
मध्य प्रदेश	919
राष्ट्रीय लिंग अनुपात	933

* 26, छतरपुर, नई दिल्ली-74, भारत

स्रोत- कुरूक्षेत्र, मार्च 2005

उपरोक्त तालिकाओं का अध्ययन करने से यह स्पष्ट है कि भारत में एक ओर तो निरंतर लिंग अनुपात में कमी आ रही है, वहीं दूसरी और मध्य प्रदेश का लिंग अनुपात (919) राष्ट्रीय लिंग अनुपात (933) से काफी कम है, किन्तु यह शोध का विषय है कि ज्यादा शिक्षित एवं विकसित कहे जाने वाले चंडीगढ़, पंजाब, हरियाणा और दिल्ली जैसे राज्यों का लिंग अनुपात मध्य प्रदेश से काफी कम है। उपरोक्त स्थिति से यह स्पष्ट है कि भविष्य में सामाजिक ढांचा असंतुलित होने का भय बढ़ रहा है। यहाँ यह तथ्य स्पष्ट करना जरूरी है कि शिक्षा और विकास के साथ-साथ नई तकनीक की सुविधा का ज्यादा उपलब्ध होना भी कन्या भ्रूण हत्या को बढ़ावा दे रहा है। देश में कार्यरत विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं की रिपोर्ट के अनुसार,'विकास के साथ-साथ महिला पर अत्याचार का ग्राफ बढ़ा है, इसमें भ्रूण हत्या, कम उम्र मे लड़की के साथ बलात्कार, इन्हें बेचा जाना आदि कुकृत्यों में वृद्धि हुई है।'

तालिका क्रमांक-3 : मध्य प्रदेश में 6 वर्ष में कम आयु के बालक-बालिक

वर्ष	1981	1991	2001
लिंग अनुपात	975	941	924

स्रोत- योजना अक्टूबर, 2006

तालिका क्रमांक-3 इस तथ्य को दर्शाती है कि 6 वर्ष से कम आयु के बालक-बालिकाओं के अनुपात में निरंतर भारी गिरावट आई है। यह अनुपात वर्ष 1981 में 1000 बालकों पर 975 बालिका से गिरकर वर्ष 2001 में 925 बालिका मात्र रह गया है, जो निरन्तर एक खतरनाक स्थिति की ओर बढ़ रहा है।

महिलाओं की स्थिति किसी भी समाज के विास के लिए प्रगति के निर्धारण का महत्वपूर्ण मानदण्ड होती है। इसमें महिलाओं को शैक्षणिक स्तर, राजनीतिक एवं सामाजिक निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया में सहभागिता, उसकी स्थिति का सूचक होती है, किन्तु भारतीय समाज में अभी प्रारंभिक स्तर पर महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधा और अन्य प्रकार के कल्याणकारी कार्यक्रमों का कार्यान्वयन एक चुनौती बना हुआ है। निम्न रेखाचित्र शिशु मृत्यु दर और माताओं के शैक्षणिक स्तर के संबंधों को स्पष्ट रूप से दर्शाता है:-

रेखाचित्र- माताओं का शैक्षणिक स्तर एवं शिशु मृत्यु दर

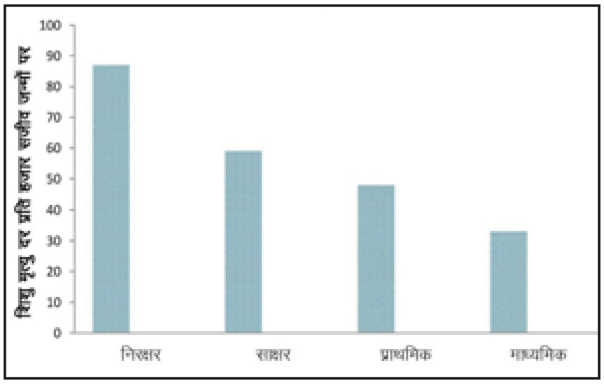

स्रोत- इंडिया विजन 2020 योजना आयोग, भारत सरकार

प्रस्तुत रेखाचित्र से यह स्पष्ट है कि जिन माताओं को शैक्षणिक स्तर अधिक है, उन महिलाओं के प्रजनन काल में शिशु मृत्यु दर कम है, किन्तु कन्या भ्रूण हत्या के मामले में यह तथ्य काम नहीं करता। चूंकि ज्यादा शिक्षित और आत्मनिर्भर महिलाओं में नवीन तकनीक के सहयोग से कन्या भ्रूण हत्या के मामले अधिक पाये जाते हैं। शिक्षित महिलाओं की शिक्षा, आत्मनिर्भरता और निर्णय लेने की क्षमता के लिए यह चुनौती है तथा यह द्वन्द्व महिला सशक्तिकरण आन्दोलन और समाज के लिए भी चुनौती बना हुआ है।

इसके अलावा भारत में शिशु मृत्यु दर, बालिका शिशु मृत्यु दर एवं मातृ दर भी विश्व के अनुपात की अपेक्षा एवं विकासशील देशों की दर से बहुत अधिक है, जिसका सीधा संबंध माताओं के शैक्षणिक स्तर, स्वास्थ्य सुविधाओं हेतु विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों से है। निम्न तालिका क्रमांक-4 में भारत में महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति स्पष्ट रूप से शोचनीय दिखलाई देती है:-

तालिका क्रमांक-4 : महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति

क्र.	जनसांख्यिकीय मातृ स्वास्थ्य तथा आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाओं संबंधी सूचक	देश			
		भारत	श्रीलंका	चीन	विश्व
1.	महिला जनसंख्या (कुल का प्रतिशत) 1988	48.4	49.1	48.4	49.6
2.	वयस्क मृत्यु दर (महिला) प्रति हजार 1998	204.0	97.00	135.0	163
3.	बाल मृत्यु दर (बालिका) प्रति हजार 1998	42.0	9.0	11.0	41.0
4.	शिशु मृत्यु दर (प्रति हजार सजीव जन्मों पर (1998)	70.0	16.0	31.0	54.0
5.	रक्ताल्पता की प्रवृत्ति 1985 -1999 गर्भवती महिलाओं का प्रतिशत	88.0	39.0	52.0	55.0
6.	प्रसव कार्य हेतु कुशल स्वास्थ्य कर्मियों की उपलब्धता (कुल का प्रतिशत)	35.0	.	.	52.0
7.	मातृ मृत्यु अनुपात (प्रति एक लाख सजीव जन्मों पर) 1990-98	410.0	60.0	65.0	.
8.	प्रति हजार व्यक्तियों पर चिकित्सकों की संख्या 1990-1998	0.4	0.02	2.0	15.

स्रोत- योजना, अक्टूबर 2006

उपरोक्त तालिका क्रमांक-4 का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि भारत में महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति चिंतनीय है एवं भारत में आज भी स्वास्थ्य सुविधाओं का नितांत अभाव है। शिशु मृत्यु दर और बाल (बालिका) मृत्यु दर श्रीलंका और चीन जैसे एशियाई एवं विकासशील देशों से भी अधिक है। मातृ मृत्यु अनुपात में तो भारी अंतर है। भारत में प्रति हजार व्यक्तियों पर चिकित्सकों की उपलब्धता (0.4) निराशाजनक है।

प्रस्तुत अध्ययन में विभिन्न प्रकार के तथ्य एवं आंकड़ों के विश्लेषण के उपरांत यह स्पष्ट है कि कन्या भ्रूण हत्या के कारण लिंग अनुपात सर्वाधिक प्रभावित हुआ है। इस क्षेत्र का सामाजिक विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि कन्या भ्रूण हत्या में योगदान करने वाले प्रमुख कारक इस प्रकार है:-

1. समाज का पितृसत्तामक (पुरूष प्रधान) होना।

2. परिवार एवं समाज में बालिकाओं की माता के प्रति भेदभाव पूर्ण व्यवहार।
3. समाज में प्रचलित अनेकों प्रकार की मान्यताएँ।
4. दहेज प्रथा का प्रचलन।
5. स्त्रियों की प्रताड़ना।
6. घर व बाहर में हो रहे महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार।
7. पुत्र प्राप्ति की इच्छा।
8. परिवार नियोजन अथवा हम दो हमारे दो की नीति।
9. भ्रूण परीक्षण अथवा नवीन तकनीक एवं उपकरणों का प्रयोग।
10. एकाकी परिवारों में बच्चों का घर में अकेला रहना भी बालिकाओं के प्रति दुष्क्रम की संभावना की असुरक्षित भावना का होना।
11. अप्रशिक्षित दाईयों की भूमिका।
12. समाज में नैतिकता का हास।
13. मीडिया की भूमिका-स्त्री को वस्तु अथवा उपभोग के रूप में प्रस्तुत करना।
14. स्त्री का स्त्री के प्रति ईर्ष्या का भाव।
15. संपत्ति में महिलाओं को व्यवहारिक रूप में अधिकार न मिलना।

भारतीय समाज में व्यक्ति के स्थान पर परिवार को इकाई माना गया, किन्तु संयुक्त परिवारों के टूटने व बिखरने के कारण एकाकी परिवार में सामाजिक सुरक्षा का अभाव पाया जाता है, जिसका प्रभाव बालिकाओं की स्थिति पर प्रतिकूल पड़ रहा है। आज महिलाओं के लिए परिवार, समाज, विद्यालयों, महाविद्यालयों, कार्यालयों, कार्यस्थलों, सड़कों, उद्यानों, बसों, ट्रेनों आदि स्थानों पर असुरक्षा का वातावरण है। मीडिया और वैश्वीकरण का पोषक, बाजारवाद भी महिलाओं को व्यक्ति नहीं, वस्तु के रूप में प्रस्तुत कर रहा है, जिससे महिला को उपभोग की वस्तु माना जाता है और सैक्स कमान पुरूषों के नियंत्रण में है।

संयुक्त राष्ट्र ने 3 सितम्बर 1981 को महिलाओं के विरूद्ध सभी भेदभावों का समाप्त करने के बारे में प्रस्ताव पारित किया था, जिससे महिला अधिकारिता को लेकर आज पूरे विश्व में जागरूकता और अनेकों प्रयासों के बाद भी महिला की स्थिति दोयम दर्जे की बनी हुई है।

भारत में संवैधानिक रूप से स्त्री-पुरूष को समान स्तर/दर्जा प्राप्त है। अनेकों प्रकार के कानून, संगठन और आयोग महिला सशक्तिकरण हेतु बनाये गये हैं, जैसे-राष्ट्रीय जनसहयोग तथा बाल विकास संस्थान, केन्द्रिय समाज कल्याण बोर्ड, राष्ट्रीय महिला आयोग, राष्ट्रीय महिला कोष आदि। तथा संविधान का 73वां-74वां संविधान संशोधन, तो महिलाओं के हितो में उठाया सर्वाधिक क्रांतिकारी कदम है, जिसके द्वारा महिलाओं के लिये पंचायतों व नगर निकायों के चुनावों में सभी पदों पर एक तिहाई (33 प्रतिशत) आरक्षण का प्रावधान किया गया है। अत: नये कानून की निर्माण की कोई आवश्यकता नहीं है, अब तो पूरी दृढ़ शक्ति व ईमानदारी से इनके पालन की है।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए श्रीमती माग्रेट अल्वा के सुझाव एवं तमिलनाडु सरकार द्वारा बनाये गये कानून आदर्श हो सकते हैं, जिसके अनुसार कन्या भ्रूण हत्या कराने वाली महिला के विरूद्ध कानूनी प्रावधान हैं। (यहाँ यह उल्लेखनीय है कि तमिलनाडु में कन्या भ्रूण हत्या कराने वाली महिलाओं को दंडित भी किया गया है।) इसके अलावा स्त्री, परिवार, समाजसेवियों, मीडिया, प्रचारद्दप्रसार के अन्य साधनों, नुक्कड़ नाटकों, स्वयंसेवी और गैरसरकारी संगठनों को मिलाकर सामूहिक प्रयास के द्वारा कन्या भ्रूण हत्या के विरूद्ध कार्य करना चाहिये, जिससे यह एक राष्ट्रीय स्तर के आन्दोलन का रूप ले सके और समाज में जागरूकता पैदा हो सके। इस आन्दोलन में भी स्त्री और समाज में नैतिकता की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण होगी, तभी महिलाओं के लिये चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं, कल्याणकारी कार्यक्रमों, जेण्डर बजटिंग आदि का लाभ इन्हें मिल सकेगा। शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण के विभिन्न कार्यक्रम सफल व प्रभावी हो सकेंगे, जिससे भविष्य में कन्या भ्रूण हत्या की समस्या और सामाजिक ढांचे के असंतुलित होने के खतरे से बचा जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जिनी लोकनीता- नारीवादी ; संघर्ष के मुद्दे, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-2001
2. वार्षिक प्रतिवेदन, महिला बाल विकास विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय
3. 'योजना' पत्रिका, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली
4. 'कुरूक्षेत्र' पत्रिका, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली
5. वार्षिक प्रतिवेदन, सामाजिक अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली-2004
6. Meera Verma, Mirnal Mehta, Rumi Basu - `Essays on Indian Government and Politics', Jawahar Publishers & Distributors, New Delhi, 2004.
7. Ashish Bose & `Fighting female foeticide growing greed and shrinking child sex ratio', EPW September, 2001
8. Two Unite Our Strength : 60 days - Six decades of the United Nations in India, by United Nations, 55, Lodhi Road, New Delhi
9. Website : www.censusofindia.org.in
10. Website : www-un-org-in.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

भारत में आंतरिक सुरक्षा समस्यायें

डॉ. रितेश सिंगारे *

प्रस्तावना – आंतरिक सुरक्षा एक वृहत अवधारणा है। इसका अर्थ केवल कानून एवं व्यवस्था के खतरों से सुरक्षा प्रदान करना ही नहीं है। बल्कि इसका अर्थ देश के अंदर उन सभी तत्वों से सुरक्षा प्रदान करना है, जिनसे हमें खतरा है। इसे आतंकवाद, नक्सलवाद, संप्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, अलगाववाद, उग्रवाद इत्यादि तत्वों से देश के अंदर खतरा है। इन सभी तत्वों से सुरक्षा प्रदान करना आंतरिक सुरक्षा है। इस प्रकार आंतरिक सुरक्षा एक छातानुमा अवधारणा है, जिसके अंतर्गत कानून एवं व्यवस्था से उत्पन्न खतरों के साथ-साथ अन्य खतरे भी शामिल है।

आंतरिक सुरक्षा स्थापित करना संघ एवं राज्य दोनों की जिम्मेदारी है। प्राथमिक रूप से यह राज्य की जिम्मेदारी है, किन्तु जब स्थिति राज्य के नियंत्रण से बाहर चली जाए, तब संघ सरकार भी हस्तक्षेप कर सकती है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 355 इसको आधार प्रदान करता है।

देश में आंतरिक सुरक्षा की स्थिति को मुख्य रूप से निम्नलिखित परिपेक्ष्य में देखा जाता है:-

(i) देश के भीतरी भाग में आंतकवाद।
(ii) जम्मू एवं कश्मीर में सीमा पार आतंकवाद।
(iii) पूर्वोत्तर राज्यों में उग्रवाद।
(iv) कतिपय क्षेत्रों में वामपंथी उग्रवाद।

भारतीय आंतरिक सुरक्षा के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों में अलगाववाद के साथ-साथ नक्सलवाद एक गंभीर समस्या का रूप लेता जा रहा है। नक्सलवाद को एक क्षेत्रीय समस्या माना जाता था किन्तु अब इस समस्या ने राष्ट्रीय समस्या का रूप धारण कर लिया है। वर्तमान समय में नक्सलवाद, वामपंथी उग्रवाद के रूप में भारत के 10 राज्यों के 106 जिलो में फैल चुका है और लगातार अपने प्रभाव का विस्तार करता जा रहा है।

नक्सलवाद साम्यवादी क्रांतिकारियों के उस आंदोलन का अनौपचारिक नाम है जो भारतीय कम्युनिष्ट आन्दोलन के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ। नक्सल शब्द की उत्पत्ति पश्चिम बंगाल के एक छोटे से गांव नक्सलवाड़ी से हुई जहाँ भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी के नेता चारू मज़ूमदार और कानू सान्याल ने 1967 में सत्ता के विरूद्ध एक सशस्त्र आंदोलन की शुरूवात की।

नक्सलवाद या नक्सलवादी आंतक का आशय है- 'माओत्से तुंग के क्रांतिकारी वामपंथ दर्शन से प्रेरित हिंसा, जिसका लक्ष्य सामाजिक, आर्थिक न्याय पर आधारित व्यवस्था की स्थापना करना।' माओं की इसी विचारधारा से प्रेरित होकर पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलवाड़ी गांव में क्रांतिकारी गतिविधियों की शुरूआत की और इसलिए इसका नाम नक्सलवाद पड़ गया। नक्सलवादियों ने लोकतांत्रिक राजनीति का पूर्ण विरोध करते हुए जनक्रांति पर बल दिया है। इसके लिए उन्होंने भूमिहीन कृषकों को संगठित कर गुरिल्ला पद्धति द्वारा जमीदारों या भूस्वामियों के विरूद्ध खूनी संघर्ष का तरीका अपनाया। किन्तु वर्तमान नक्सलवाद का कोई दार्शनिक सिद्धांत नहीं है यह एक साधन बन गया है जिसके द्वारा किसी सामाजिक या राजनैतिक आकांक्षा की पूर्ति की अपेक्षा की जा रही है।

वर्तमान समय में भारत के विभिन्न भागों में सक्रिय नक्सली संगठन अपनी कार्यवाहियों को अंजाम देने के लिए मुख्यत: निम्न तरीकों का प्रयोग करते है:-

(i) सर्वप्रथम संचार सेवाओं को नष्ट करना जिससे जनता का ध्यान आकर्षित होता है, साथ ही प्रशासनिक व्यवस्था भी दुष्प्रभावित होती है। जैसे रेलवे, विद्युत गृह, टेलीफोन लाईन आदि को ध्वस्त करना।
(ii) दूसरा, इसका कार्य अपहरण और बंधक बनाना। इसके अंतर्गत बड़े-बड़े राजनेता, अधिकारी, शिक्षाविदों और प्रबंधकों या उनके परिवार के सदस्यों का अपहरण करके सरकार से अपनी मांग को मानने के लिए बाध्य करना।
(iii) तीसरा कार्य सामुहिक नरसंहार करना, इसका उद्देश्य जनता में बड़े पैमाने पर दहशत फैलाना होता है।

वास्तव में नक्सलवाद पूर्णत: अधिनायकवादी और कट्टरवादी है। अत: यह सोचना भ्रामक है कि नक्सली दर्शन से जनकल्याण होगा। विकास से वंचित ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त गरीबी और बेरोजगारी वस्तुत: नक्सलियों के विस्तार में सहायक बनी। गरीबी व वंचितों का उत्थान नक्सलियों का लक्ष्य नहीं है। यदि ऐसा होता तो वे सरकार द्वारा जनकल्याण के लिए संचालित शिक्षा, स्वास्थ्य और अवसंरचना विकास के लिए किये जा रहे कार्यो को बाधित नहीं करते।

नक्सलवाद से निपटने के लिए एक विशेष रणनीति बनानी होगी। सुरक्षा व्यवस्था को चाक-चौबंद करना होगा और हमारे सुरक्षा बलों को अत्याधुनिक सुरक्षा उपकरणों से लैस करते हुए हर प्रकार की हिंसा का प्रतिकार करने में सक्षम बनाना होगा। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में अवसंरचना विकास पर युद्धस्तर पर प्रयास करने होंगे। साथ ही नक्सल समूहों से वार्ता एवं उन्हें मुख्य धारा में शामिल करने हेतु गैर-सरकारी संगठनों की सहायता लेनी होगी। भूमि सुधार व जंगल कानून लागू किया जाये। प्राकृतिक संसाधनों पर स्थानीय आदिवासियों के अधिकारों का संरक्षण किया जाना चाहिए। सरकारी नौकरी में स्थानीय लोगों को वरीयता दी जानी चाहिए। तब ही इस समस्या का समाधान हो सकेगा।

जम्मू और कश्मीर राज्य दो दशकों से अधिक समय से सीमा-पार से प्रायोजित और समर्थित आतंकवाद और अलगावादी हिंसा से प्रभावित रहा

* अतिथि विद्वान (सैन्य विज्ञान) शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

है। जम्मू एवं कश्मीर राज्य में जारी उग्रवाद जम्मू एवं कश्मीर में 'अंतर्राष्ट्रीय सीमा' के साथ-साथ 'नियंत्रण रेखा' दोनों से मूलरूप से सीमा-पार से आतंकवादियों की घुसपैठ से जुड़ा है।

जम्मू और कश्मीर में विद्रोह की जड़ों का पता 1940 के दशक के उत्तरार्ध से लगाया जा सकता है जब पाकिस्तान ने जम्मू और कश्मीर पर कब्जा करने की दृष्टि से भारत पर आक्रमण किया। तब से जनसंख्या का एक वर्ग रहा है, जो भारत से संबंध विच्छेद पर विश्वास करता है। सीमा-पार से सहायता प्राप्त और उकसाए जाने वाले से समूह प्राय: विद्रोही कार्यकलापों में शामिल रहे है।

वर्ष 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध के बाद संबंध विच्छेद कार्यकलापों में शांति थी। तथापि, अस्सी के दशक ने सीमा-पार से बड़े पैमाने पर घुसपैठ और विद्रोही कार्यकलापों में अचानक वृद्धि देखी। वर्ष 2006-07 के लिए गृह मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट दर्शाती है कि अप्रैल 2006 के बाद हिंसा की रूपरेखा में परिवर्तन हुआ है, जिसमें सभी निर्दोष नागरिकों, अल्पसंख्यक वर्गो, पर्यटकों और-प्रवासी श्रमिकों जैसे सरल लक्ष्यों पर हथगोलो से आक्रमणों में निरंतर वृद्धि हो रही है।

पूर्वोत्तर क्षेत्र, जिसमें आठ राज्य जिसमें असम, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड, त्रिपुरा और सिक्किम शामिल है, अलग-अलग भाषाओं बोलियों और सामाजिक-आर्थिक पहचान के साथ 200 से अधिक जातीय दलों सहित एक जटिल सांस्कृतिक और जातीय गठबंधन को प्रस्तुत करता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में देश का 8% भू-भाग और 4% राष्ट्रीय जनसंख्या शामिल है। इस क्षेत्र की 6,387 किमी. की लगभग 99% सीमा अंतर्राष्ट्रीय सीमा है जो बांग्लादेश (2700 किमी) म्यांमार (1643 किमी.) चीन (1345किमी.) और भूटान (699किमी.) के साथ लगी हुई है।

पूर्वात्तर राज्यो में सुरक्षा की स्थिति, नृजातीय समूहों और आंतकवादी संगठनों की भिन्न-भिन्न प्रकार की मांगों के कारण काफी समय से जटिल रही है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – राष्ट्रीय सुरक्षा के दो भाग है, पहला बाहरी सीमाओं की रक्षा करना, दूसरा आन्तरिक शान्ति बनाये रखना। यदि देश में आन्तरिक शांति न रहे तो बाहरी सुरक्षा भी अधिक दिनों तक बनी नहीं रह सकती। अफगानिस्तान का उदाहरण हमारे सामने है। आंतरिक सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि विरोधी तत्वों को जनता का समर्थन न मिले तो इनसे निपटा जा सकता है। आंतरिक सुरक्षा की चुनौति न केवल कानून व्यवस्था एवं विकास की गति अवरूद्ध करती है। अपितु यह राष्ट्र की एकता अखण्डता के लिए भी गंभीर चुनौती है। अत: समय रहते देश के नेतृत्व को इस दिशा में ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। गैर-सामाजिक तत्वों तथा उग्रवादियों से सख्ती से निपटना होगा। जो लोग किसी वजह से मुख्य धारा से विचलित हो गए है, उन्हें समझा-बुझाकर वापिस लाया जाये। रोजगार, शिक्षा एवं विकास के अवसर भी सभी लोगों वर्गो एवं क्षेत्रों तक फैलाने होंगे। तब ही हम भारत को प्रगति के मार्ग पर निरंतर आगे बढ़ा सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सुरेन्द्र कुमार, संघात्मक व्यवस्था में आंतरिक सुरक्षा, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान नई दिल्ली की अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका (जुलाई-दिसम्बर, 2012) पेज नं.-369
2. गृह मंत्रालय, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट 2015-16 पेज नं.-5
3. जे.सी. जौहरी, नक्सलाइट पालिटिक्स इन इण्डिया रिसर्च पब्लिकेशन द्वारा प्रकाशित, नई दिल्ली, 1972
4. www.wikiedia.org
5. दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग, आटवीं रिपोर्ट (जून 2008) पेज नं. 22-23
6. द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग, पाँचवी रिपोर्ट, सार्वजनिक व्यवस्था (जून 2007)
7. रजत कूजूर, नक्सल मूवमेन्ट इन इंण्डिया:ए प्राफाईल आईपीसीएस रिसर्च पेपर, सितम्बर 2008.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Social Value Addition and Education System : A Need of a change in Teaching Style

Dr. Sanjay Patni*

Abstract - This Research paper is all about assessing the need to change the teaching styles. All teachers have their own philosophy governing how they teach. These philosophies serve as a foundation for their individual teaching style. Some teachers use more traditional styles of teaching, while others have adopted a more progressive style. Not much research has been conducted to determine the impact of teaching styles on Academic achievement, but the little research that is available suggests progressive Teaching styles may be more effective than traditional ones. This researcher used quantitative data in an attempt to support the idea that teachers need to develop more progressive styles of teaching in order to become more effective in the classroom and produce students with higher levels of academic achievement.

Introduction - Teachers have their own philosophy guiding how they teach. Aspiring teachers in Undergraduate classes are encouraged to develop a teaching philosophy, and most colleges and universities even require a personal teaching philosophy statement to be included in all educational portfolios. This teaching philosophy serves as a foundation for one's individual teaching style. Teaching styles represent a pattern of needs, beliefs, and behaviors displayed by teachers in their classrooms. They are multidimensional and can influence one's methods of instruction, types of assessments, classroom management, and teacher-student interaction. An individual teaching style also contributes to the overall atmosphere of a classroom by creating a particular mood or emotional climate. Since schools are comprised of many teachers, each with their own philosophies and individual teaching styles, there exists a plethora of personalities blended together. Schools are a wonderful and vast mixture of individuals with unique educational styles and perspectives on how to teach. Some teachers adopt a more traditional style of teaching relying heavily on lecture, note-taking, and formal assessments. These teachers tend to be highly-structured and serious when it comes to educating their students on the subject matter. They are quite often perceived as figures of authority. On the opposite end of the teaching style spectrum are the progressive teachers. They tend to focus on class discussion, hands-on activities, and collaborative learning. As teachers, they asses student performance based on group projects, Teaching styles presentations, and participation. Progressive teachers are perceived as being entertainers, friendly, and nurturing. Of course, quite a distance separates a traditional teacher from a progressive one, and many teachers would probably categorize themselves somewhere in between as they may exhibit various aspects of both teaching styles. Very little research exists, however, examining the actual impact of teaching styles on student academic achievement. The question therefore remains: is one style more advantageous than the other? Does a student who is taught by a traditional teacher have a higher academic success rate than one taught by a progressive teacher?

Answering this question poses many difficulties and may be the subject of debate.

In this study, the researcher focused on how much of an impact individual teaching styles have on student academic achievement. Questionnaires were given to teachers of different colleges of Indore District where they reported their years of teaching experience. The subjects also read descriptions of three different teaching styles and select which one best describes them. They also answered yes or no to two additional questions, further assessing their teaching style.

Need to Evaluate the teaching Style -

It takes a certain amount of time and effort to effectively evaluate our own teaching. Is this a wise use of time? I would argue that it is, for three reasons.

1. First, consider the following diagram:

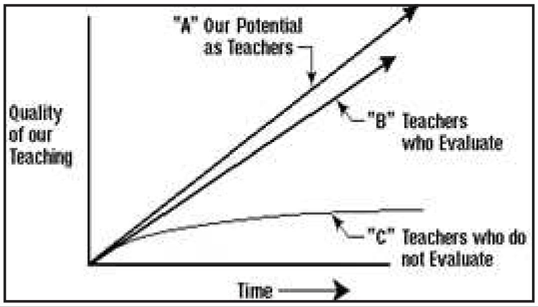

* Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

Regardless of how good or how poor we are as teachers, we all have the potential to get better over time (see the arrow in Figure 1). Yet some teachers continually improve and approach their potential (see arrow) while others experience a modest improvement early in their career and then seem to level off in quality or sometimes even decline (see arrow). Why? I would argue that the primary difference between those who do and those who do not improve, is that only the former gather information about their teaching and make an effort to improve some aspect of it — every time they teach.

2. A second reason to evaluate is to document the quality of one's teaching for others. All career professionals have other people who need to know about the quality of their teaching. It may be the person's current department or institution head, or it may be a potential employer. But once people teach, they have a track record, and others need and want to know how well they taught. The only way a teacher can provide them with that information is to gather it, and that means evaluation. Teaching portfolios are becoming a common way of communicating this information to others. As it turns out, putting a portfolio together also helps the teacher understand his or her own teaching better.

3. Third, there is a very personal and human need to evaluate. This is for our own mental and psychological satisfaction. It is one thing to do a good job and think that it went well; it is quite another, and a far more enjoyable experience, to have solid information and thereby know we did a good job. That knowledge, that certainty, is possible only if we do a thorough job of evaluation.

Definition of Terms

Teaching Style- The pattern of needs, beliefs, and behaviors displayed by teachers in their classrooms. One's teaching style influences the method of instruction, type of assessment, classroom management, teacher-student interactions, and emotional climate of the classroom.

Traditional Teaching Style- The traditional teacher is serious and primarily concerned with educating students on the subject matter. The majority of the classroom instruction consists of lecture, note-taking and reading. The majority of grades are based on tests, quizzes, and papers. In regards to discipline, the class is highly structured, and there are established rules and clear consequences.

Progressive Teaching Style- Progressive teachers aim to educate and entertain students to keep their attention and interest. The majority of classroom instruction consists of active learning procedures such as class discussion, collaborative learning, and group projects. The majority of grades are based on projects, presentations, and participation. In regards to discipline, the class is less structured and may be a bit louder as student interaction is encouraged. Progressive teachers are perceived as supportive and nurturing.

Limitations of the Study - This study was limited by a variety of factors.

1. It was conducted with some colleges running undergraduate courses in Indore. So the research in confined to Indore only.
2. Random Sampling (Only 5 colleges and 20 teachers were taken as sample size)
3. The reactions may not be as sincere as expected.

Methodology

Study Design - This study used quantitative research to explain a need of a change in teaching styles. This was accomplished by administering a survey to the participants.

Participants - Teachers of colleges of Indore city.

Instruments

1. The study was conducted by administering a survey.
2. A Questionnaire was designed in accordance with the purpose.

Data Analyses Procedures - The data was organized, reviewed, and coded. Manual tabulation was conducted by the researcher.

Preliminary Results - The researcher expected to prove that the alternative hypothesis is correct.

The alternative hypothesis states: There is a need of a change in teaching styles.

Data Analysis - The purpose of this study was to examine if a relationship existed between teaching styles and a student's academic performance. The sample was comprised of 5 colleges of Indore city. A survey was distributed to the 20 English teachers that assessed their teaching styles.

- **70% of the teachers had taught for 5-10 years and 30% have taught for 2-5 years.**

Teacher's Experience	2-5 Years	5-10 Years
Percentage	30	70

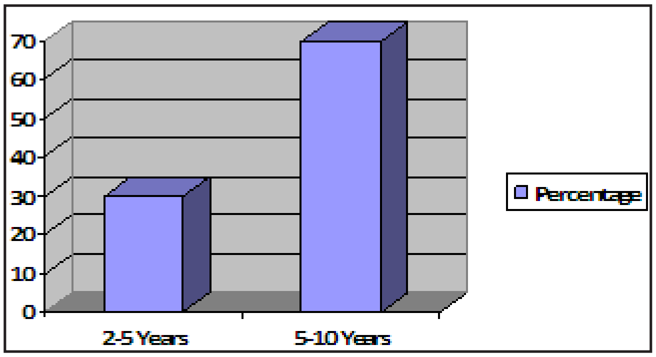

- **30% of the teachers rated themselves as having a traditional teaching style.**
- **10% of the teachers reported having a progressive teaching style.**
- **60% of the teachers reported having a combination of a traditional and progressive teaching style.**

Teaching Style	Traditional Style	Progressive Style	Combination of Traditional & Progressive
Percentage	30	10	60

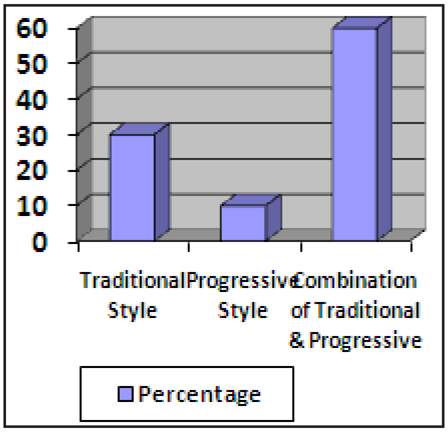

- **Teachers who followed traditional style of teaching have average of 55% result in yearly course 2019.**
- **Teachers who followed progressive style of teaching have average of 75% result yearly course 2019.**
- **Teachers who followed combination of both styles of teaching have average of 67% result yearly course 2019.**

Teaching Style	Traditional Style	Progressive Style	Combination of Traditional & Progressive
Result %	55	75	67

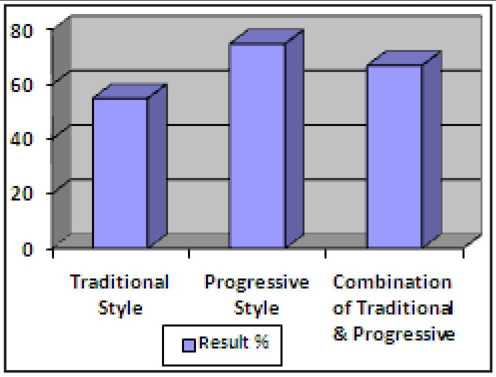

Findings :

1. Teachers who follow traditional style are on the lower side of progress.
2. Teachers who follow combination of both are more successful than those who follow traditional style.
3. Teachers who follow progressive style are the most successful.

Conclusion - Most of the existing literature on adopting a progressive teaching style focuses on how teaching style enhances student interest in the subject matter and generates a more stimulating classroom atmosphere.

Based upon the findings of this research, the alternative hypothesis can be accepted. Therefore**, there is a need of a change in teaching style**. The null hypothesis stating that there is no need of a change in teaching style can be rejected. There are several implications that can be based upon some of the findings.

This research suggests that the teachers who follow the progressive style of teaching are more successful than those using traditional and combination of both.

References :-

1. www.researchlink.com
2. www.researchtools.com
3. Abbott-Chapman, J., Hughes, P. & Williamson, J. (2001). Teacher.s perceptions of classroom competencies over a decade of change. Asia-Pacific Journal of Teacher Education 29 (2): 171-185.
4. College records.
5. Research Methodology by Ranjit Kumar.
6. Research Methodology by C.R. Kothari

****

Make In India : Analyze the Prospects for growth sectors

Dr. Nilesh Gangwal*

Abstract - Make in India is an international marketing strategy, conceptualized by the Prime Minister of India, Narendra Modi on 25 September 2014 to attract investments from businesses around the world and make India the manufacturing Hub. The aim is to take a share of manufacturing in country's gross domestic product from stagnant 16% currently to 25% by 2022, as stated in national manufacturing policy, and to create 100 million jobs by 2022. The stock market boom at the clear mandate given to BJP in the 2014 Lok Sabha elections and the current stock market scenario was a clear indicator of investor confidence in the Narendra Modi Government. Key thrust of the programme would be on cutting down in delays in manufacturing projects clearance, develop adequate infrastructure and make it easier for companies to do business in India. The 25 key sectors identified under the programme include automobiles, auto components, bio-technology, chemicals, defence manufacturing, electronic systems, food processing, leather, mining, oil & gas, ports, railways, ports and textile. The major objective behind the initiative is to focus on 25 sectors of the economy for job creation and skill enhancement. Make in India is the key to revitalization of Indian economy.
Keywords - Growth of Sectors, Skills Enhancement, Job Creation.

Introduction - The Indian economy has been witnessing positive sentiments during the past few months. The macroeconomic indicators have also displayed an encouraging trend in the recent times. However, the situation of the manufacturing sector in India is a cause of concern. At 16% value added to GDP, the sector does not seem representative of its potential which should have been 25%. However, the industrial growth scenario is improving and is estimated at 1.9% in the period April-October 2014-15. The recent measures undertaken by the new government in terms of facilitation to industrial sector, creation of conducive environment for the manufacturing activities, focus on improving industrial policies and procedures and reforming labor laws have facilitated recovery in industrial sector.

The Government recently launched the Make in India initiative which is expected to make India a manufacturing hub while eliminating the unnecessary laws and regulations, making bureaucratic processes easier, make government more transparent, responsive and accountable and to take manufacturing growth to 10% on a sustainable basis.

Apart from initiatives such as development of smart cities, skill development, National Investment and Manufacturing zones, FDI enhancement, the government is building a pentagon of corridors across the country to boost manufacturing and to project India as a Global Manufacturing destination of the world. The most important of these corridors is the DMIC which is one of the largest infrastructure projects planned in India and spans the six states of Uttar Pradesh, Haryana, Madhya Pradesh, Rajasthan, Gujarat and Maharashtra. The present study is an attempt to understand the global and domestic outlook of manufacturing sector, growth dynamics, opportunities and challenges for manufacturing firms particularly in the states under the influence of DMIC.

Major objective of this scheme focuses on 25 sectors. The sectors are Automobiles, textiles and Garments, Biotechnology, Wellness, Defence , Manufacturing, Ports, Food Processing , Mining, Media and Entertainment, IT and BPM, Pharmaceuticals, Renewable Energy, Roads and Highways, Railways, Thermal Power, Oil and Gas, Space, Leather , Construction, Aviation, automobile components, chemicals and Electronic System .

Objectives :

1. To convert India into Global Manufacturing Hub
2. To Provide Employment
3. Boost Economic Growth
4. To urge both local and foreign companies to invest in India

But at the ground level, there are a lot of challenges that the government has to overcome in order to turn the vision of achieving a sustainable 10% growth in the manufacturing sector into reality. This research paper aims to analyse the key issues facing the "Make in India" vision and recommend possible strategies to deal with the same. Below are highlighted some of the issues which the new Government has to take care of for turning the "Make in India" vision into a reality:

* PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

- **Improving the ease of doing business in India -** According to World Bank report, India ranks 142 out of 189 countries in the category for ease of doing business based on surveys conducted in the two major cities of India, Mumbai and Delhi prior to the new Government came to power. To increase investor sentiment, it is necessary that the Government works to improve the various components of Doing Business indicators like starting a business, dealing with construction permits, getting electricity, registering property, getting credit, protecting minority investors, paying taxes, trading across borders, enforcing contracts and resolving insolvency because it is these indicators that a firm looks at before going forward with an investment decision in a country.
- **Land Acquisition challenges -** One of the very important initial steps for establishment of manufacturing facilities by a firm is acquiring land. Under the new Land acquisition act, developers would require the consent of up to 80 per cent of people whose land is acquired for private projects and of 70 per cent of land owners in the case of public-private partnership projects. But the greatest concern in acquiring such land is the proper rehabilitation and resettlement of affected inhabitants of those lands. The government has to identify and devise strategies for the rehabilitation and resettlement of the displaced people failing which the result can be serious conflicts. Moreover, the rehabilitation and resettlement also becomes a costly venture.
- **Improving the employability of general and engineering graduates -** The greatest asset of any firm is its human resource. Companies will set up manufacturing facilities in India only if it is able to find requisite amount of good quality skilled labour in the country. Around 51% of the workforce is employed in the agricultural sector which contributes to only about 17% of the GDP and around 22% of the workforce is employed in the manufacturing sector which contributes to around 26% of GDP.

However, various surveys conducted on employability reveals a vast skills gap between graduate skills and market needs. According to **Higher Education in India: Vision 2030** , a report produced by international consultants Ernst and Young for the Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI), 75% of IT graduates, 55% of manufacturing, 55% of healthcare and 50% of Banking and Insurance graduates are deemed unemployable. Moreover, the National Association of Software and Services Companies (NASSCOM) maintains that of around 3 million graduates each year, less than a third of graduates of engineering colleges and only 10% to 15% of regular graduates are employable. It is therefore important to dwell upon the possible reasons which cause low employability of Indian graduates in general and engineering graduates in particular.

- **Infrastructure development of major roads and highways in the country -** It is needless to say that well developed and well maintained infrastructure, particularly, roads and highways is vital for an efficient inbound and outbound logistics of a manufacturing firm to ensure efficient movement of raw materials and finished goods across the country as roads carry 65% of its freight in the country. India has a total of 48.65 lakh kilometre of road network comprising National Highways (92,851 Km), State Highways (1,38,489 Km), Major District Roads, Rural roads and Urban roads (All together 46.34 Lakh kilometre) as per figures from website of Ministry of Road Transport and Highways as on 31st March, 2014. National Highways comprise 1.7% of India's total road network but carry 40% of road traffic. Most of these highways are two lane highways. Only 10,000 Km of highways have been widened to four lanes with two lanes in each direction as of August, 2011. Moreover, as of 2010, 19064 Km of NH were still single-laned roads. With increase in vehicular traffic and congestion in the major cities of India and for smooth movement of large container trucks, it is imperative that the Government in association with private parties through public-private partnerships convert the single-lane or double-lane national and state highways to four or six lane roads to cater to the growing congestion problem in India. However, most of these conversion projects are stuck at various stages of bureaucratic delays. With the new government at the centre, we can hope for faster execution of projects by removal of unnecessary approval stages and thereby leading faster clearances.
- **Capacity addition in the power sector to meet industrial energy demand -** Without the power industry, no other industry would survive. India has an installed capacity of 253.389 GW as of August 2014, the break-up of which is given below:

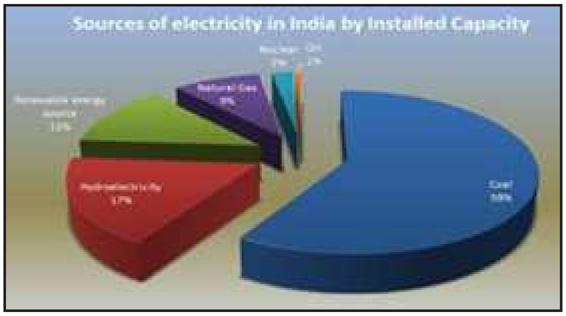

In a May 2014 report by India's Central Electricity Authority, India had an energy requirement of **1048672** Million Units (MU) of energy out of which only **995157** MU of energy were available and out of a peak demand of **147815 MW**, **144788 MW** was the supply. Also, the 17th electric power survey of India report claims that over 2010-11, India's industrial demand accounted for **35%** of electrical power requirement which will further grow significantly as more and more manufacturing facilities come up.

Advantages of Investing in Industry Sector

- Make in India scheme will create large scale employment opportunities to low skill workforce since majority of workforce in India are low skilled.
- India is hugely dependent on FDI to keep the economy

positive. Make in India scheme will attract more FDI to revitalize Indian economy.

- Any manufacturing hub needs supply of parts which is boon for SME's. Make in India will help to generate indirect employment through SME's.
- Manufacturing sector helps to reduce India's trade deficit through exports.
- India is the largest consumer market. Any company investing in India under Make in India initiative will directly get access to huge market of 125 Cr people.
- Job Creation, Enforcement to Secondary and Tertiary sector, boosting national economy.
- Converting the India to a self-reliant country and to give the Indian economy global recognition.

Moments of Change - "Make in India" boosts manufacturing trade and economy. Over 10,000 training centers open within 2 years. It Creates job market for over 10 million people. Make in India raises the share of the manufacturing sector in gross domestic product (GDP) from its current level of around 16 per cent to 25 per cent by 2022, and creating 100 million new manufacturing jobs over the same period.

Indians should need a wakeup call for consuming Indian made products. More than 30000 crore rupees of foreign exchange is being siphoned out of our country on products such as cosmetics, snacks, tea, beverages, etc. which are grown, produced and consumed here. In 1970 1$ = Rs. 4 Today 1$ = Rs. 68 .Estimated 1$ by end of the year = Rs. 72. Dollar is not getting stronger, rupee is getting weaker and nobody else is responsible for the fall, except us. A Cold Drink produced for 70-80 paisa sold at Rs. 9-10. Stop drinking them, Drink Lemon juice, Lassi, Fruit juice, butter milk etc instead of foreign drinks. Likewise start to use Indian made products in all needs. If we check most of the products we use, half of the things are foreign made. People use these foreign made products & Government has to pay in dollars for the same, thus value of rupee Decreases. Same features comes at Indian mobile Rs 17k means we waste Rs 24k and these 24k go to south Korea in dollars .None of the Indian products are inferior in quality, they might look a bit less fancy. Youngsters should start using more Indian websites for online purchases.

Challenges - India's small and medium-sized industries can play a big role in making the country take the next big leap in manufacturing. India should be more focused towards novelty and innovation for these sectors. The government has to chart out plans to give special privileges to these sectors. According to World Bank, India ranks 142 out of 189 countries in terms of ease of doing business. India has complex taxation system and poor infrastructure facilities. Rapid skill up gradation is needed because skill intensive sectors are dynamic sectors in India, otherwise these sectors would become uncompetitive. India should motivate research and development which is currently less in India and should give more room for innovation.

- **MAKE IN INDIA -** Make in India is aimed at making India a manufacturing hub and economic transformation while eliminating the unnecessary laws and regulations, making bureaucratic processes easier, make government more transparent, responsive and accountable and to take manufacturing growth to 10% on a sustainable basis.

Objectives :

- To make investing in manufacturing more attractive to domestic and foreign investors
- To give the Indian economy global recognition
- To create competitive industrial environment
- To development infrastructure
- To invite latest technologies
- To generate employment and skill formation

The Make in India focuses on new ideas and initiatives such as-

- First Develop India and then Foreign Direct Investment,
- Look-East on one side and Link-West on the other,
- Highways and 'I-ways.
- Facilitate investment
- Foster innovation
- Protect intellectual property
- Build best-in-class manufacturing infrastructure.

Conclusion - Indian has the capacity to push the GDP to 25% in next few years. The government of India has taken number of steps to further encourage investment and further improve business climate. "Make in India" mission is one such long term initiative which will realize the dream of transforming India into manufacturing Hub. Start-ups in the core manufacturing sectors are poised to play a crucial role in the success of 'Make in India' ambitions, said experts at a panel discussion at the 11th India Innovation Summit 2015. "Start-ups in the fields of telecom, defense manufacturing, automobile, Internet of Things, financial technology modules and mobile internet have immense potential to succeed in the scheme of 'Make in India'," said Siddhartha Das, general partner, Venture East addressing aspiring entrepreneurs at the discussion on "Entrepreneurship - Role of Startups towards Make in India". Make in India scheme also focuses on producing products with zero defects and zero effects on environment.

Although the ease of doing business score went down to 142 from 134 last year, the World Bank has taken care to distance this downslide from the NDA government which took charge barely a week earlier and World Bank has used data till May 2014 whereas most measures to improve doing business were undertaken subsequent to that. The various measures undertaken by the NDA Government to address issues related to economic growth, delay in Government decisions and reforms in the Labour law, Land law and taxation have kick started the manufacturing sector and shot the GDP growth by 5.7 % in the last quarter. The Modi Government has also signed a staggering USD 35 Billion investment deal with Japan for infrastructure development. If governance continues in the current manner, we can definitely hope to see significant and sustainable growth in the manufacturing sector and progress tow ards India

becoming a global manufacturing hub.

References:-

1. Article: PM Narendra Modi's US visit: Eight highlights. http://articles.economictimes.indiatimes.com/2014-10-01/news/54516929_1_prime-minister-narendra-modi-modi-and-obama-saath
2. Economy Profile of India.pdf, Doing Business 2015, World Bank Group
3. Goods and services tax: http://gstindia.com/
4. National Remote Sensing Centre website http://www.nrsc.gov.in/Publications_Atlas.html
5. Wasteland atlas of India: http://www.dolr.nic.in/wasteland_atlas.html
6. Green clean guide website : http://greenclean guide.com/2011/01/18/wastelands-types-and-status-in-india/
7. Article: Reasons for low employability of engineering graduates.
8. http://www.nitinbhatia.in/views/make-in-india/
9. http://articles.economictimes.indiatimes.com/2015-07-23/news/64772859_1_m-sipsmotherson- sumi-systems-investment-proposals.
10. http://www.livemint.com.
11. http://tech.firstpost.com/news-analysis/after-xiaomi-andothers-asus-planning-to-make-in-india-277014.html

****

A Study of Employee's Job Satisfaction and Performance: With Special Reference to Indore Sahakari Dugdh Sangh, Indore

Kuldeep Agnihotri*

Abstract - Work is one of the most retaining things men can ponder. It fills most of the waking day for the vast majority of us. For the blessed it is the wellspring of extraordinary fulfillment, for some others it is the reason for sorrow. Right now work is centered on the fulfillment level of representatives in the business, factors which influence their inspiration levels and the approaches to improve it.
Keywords - job fulfillment, resolve, inspiration.

Introduction - Regardless, representatives go through a large number of their hours grinding away. Notwithstanding taking a shot at appointed assignments, they commonly associate with different people (administrators, individual representatives) and are presented to authoritative approaches and practices. All these, thusly, impact representative emotions about their occupations and associations that utilize them.

Indore sahakari dugdh sangh is an agreeable segment association. An agreeable is characterized by the International Cooperative Alliance's Statement on the Cooperative Identity as "a self-ruling relationship of people joined to intentionally to meet their normal monetary, social and social needs and desires through a together claimed and fairly controlled endeavor." It is a business possessed and worked by a gathering of people for their shared advantage.

Dairy cooperatives are associations shaped and composed by the milk makers. Cooperatives as a type of business association are particular from the more typical financial specialist possessed firms. Both are composed as organizations, yet financial specialist possessed firms seek after benefit expansion goals, though helpful endeavor to augment the advantages they create for their individuals. Dairy cooperatives follow multi-level structure: at the base, town level essential dairy agreeable societies; at area/tehsil level, milk preparing associations; and at the state level state helpful promoting dairy leagues. SANCHI is completing its activities in M.P with its crucial get quality milk to every buyer. It could accomplish striking advancement in milk obtainment and selling with the usage of the activity flood programs. Sanchi is perhaps the best brand of the state and is known for its consistency of supply and nature of milk.

In Indore dugdh sangh, there are right around 400 representatives working in the association. Out of which just 20 % workers are on payrolls of government, rest of them are on day by day compensation, which can be viewed as prime factor for their activity fulfillment. Worker fulfillment alludes to an assortment of positive and additionally negative sentiments that an individual holds toward their activity. Employment Satisfaction is a piece of life fulfillment. It is the measure of joy or happiness related with an occupation. Occupation Satisfaction is a passionate reaction to a vocation. There are assortments of elements that can impact an individual's degree of occupation fulfillment. A portion of these components incorporate the degree of pay and advantages, the apparent decency of the advancement framework inside an organization, the nature of the working conditions, authority and social connections, the activity itself (the assortment of undertakings included, the intrigue and challenge the activity produces, and the lucidity of the expected set of responsibilities/necessities). The more joyful individuals are inside their activity, the more fulfilled they are said to be. The idea of employment fulfillment has picked up significance since the time the human relations approach has gotten famous. Occupation fulfillment includes complex number of factors, conditions, emotions and social inclinations.

Review of Literature

The investigation of occupation fulfillment is a subject of wide enthusiasm to the two individuals who work in associations and individuals who study them. Occupation fulfillment has been firmly related with numerous hierarchical wonders, for example, inspiration, execution, administration, mentality, struggle, moral and so on. Analysts have endeavored to distinguish the different parts of occupation fulfillment, measure the general significance of every segment of occupation fulfillment and look at what

*Assistant Professor (Commerce) Maa Narmada Mahavidhyalay, Dhamnod, Dhar (M.P.) INDIA

impacts these segments have on representatives' profitability. Spector (1997) alludes to work fulfillment as far as how individuals feel about their occupations and various parts of their employments.

Lower accommodation costs, higher hierarchical and social and natural prize will build work fulfillment (Mulinge and Mullier, 1998). Employment fulfillment is unpredictable wonder with multi aspects and impacted by the elements like compensation, working condition, self-rule, correspondence, and authoritative responsibility (Vidal, Valle and Aragón, 2007). Various individuals decipher remuneration in an unexpected way. Remuneration, prize, acknowledgment, and wages are terms utilized in various circumstances (Zobal, 1998). The pay is characterized by American Association as "money and non-money compensation gave by the business to administrations rendered". Compensation was seen as the prime factor for the inspiration and occupation fulfillment of salaried representatives of the vehicle business in the aftereffects of the review done by Kathawala et al. (1990). The overview attempted to survey the different activity attributes and the manner in which the workers positioned them as inspirations and satisfiers. The outcomes demonstrated that pay was positioned as the main occupation component for work fulfillment and pay raise for execution was positioned as the main employment component for inspiration. It additionally functions as communicator when it is given to worker against his administrations which shows how much a representative is significant for its association (Zobal, 1998). As indicated byChakrabarty, Oubre, and Brown (2008), "maybe the best manner by which bosses can depict himself as a good example is to by and by exhibit appropriate procedures with the goal that worker could see how occupation ought to be finished." J.D. Politis (2001) has inspected the jobs played by administration during the time spent information procurement and a study was done on 227 people who were occupied with information obtaining exercises to look at the connection between initiative styles and information securing properties. The outcomes demonstrated that the initiative styles that include human collaboration and empower participative dynamic are connected decidedly to the abilities and fundamental information procurement. As indicated by the examination led by Friedlander and Margulies (1969), it was found that administration and benevolent staff connections add to the degree of employment fulfillment. In any case, this outcome repudiates with perspective on Herzberg (1966) who upheld the view that supervision is insignificant to the degree of occupation fulfillment. Arnold and Feldman (1996), advanced factors, for example, temperature, lighting, ventilation, cleanliness, clamor, working hours, and assets as a feature of working conditions. The specialist would prefer to want working conditions that will bring about more noteworthy physical solace and comfort. The nonattendance of such working conditions, in addition to other things, can affect inadequately on the laborer's psychological and physical prosperity (Baron and Greenberg, 2003). Arnold and Feldman (1996) shows that components, for example, temperature, lighting, ventilation, cleanliness, clamor, working hours, and assets are all piece of working conditions. Representatives may feel that poor working conditions will just incite negative execution, since their employments are intellectually and genuinely requesting.

Objective Of The Study - The objective of the examination is as per the following:-

1. To distinguish the components which impact the work fulfillment of representatives?
2. To distinguish the components which improve the fulfillment level of representatives?

Factors Influencing Job Satisfaction - Employment Satisfaction assessment relies upon two parts:

- **The work itself -** The work itself is the greatest factor which impacts the activity fulfillment level among the workers. The workers must choose a vocation which they truly need to do. On the off chance that an individual is doing what he adores, will lead him to make a superior showing.
- **Organizational Policies and Practices -** The above all else factor which impact the work fulfillment level of representatives is authoritative arrangements. The approaches must be straightforward enough, with the goal that the worker knows when, where and what must be finished. To be compelling, approaches focused on improving fulfillment require right recognizable proof of those activity qualities that representatives accept need improvement.
- **Working Conditions -** Workers are exceptionally energetic with great working conditions as they give a sentiment of wellbeing, solace and inspiration. Despite what might be expected, poor working condition draws out a dread of awful wellbeing in representatives. The more agreeable the working condition is increasingly beneficial will be the representatives.

Following these focuses go under this class:

1. Feeling safe and solace in workplace.
2. Tools and hardware.
3. Working techniques.
4. Security watches and stopping office.
5. Well ventilated with great light fans and air-conditioning.
6. Neat and clean office place, rest zone and washrooms.

- **The individual's one works with, including administrators and colleagues -** The workers get fulfillment when the individuals around them or with whom they need to work with are genial and like mindedness. Each one of those individuals we met in our day , leaves a profound effect in our mind, which drives us to perform better or more regrettable. There are things like partiality and one-sided in the association, which prompts disappointment in representatives attitude. To give fulfillment the association must concentration in procuring great and meriting up-and-comers. Furthermore, work

culture must be improved.

- **Promotion and Career Development -** Advancement can be responded as a huge accomplishment in the life. It guarantees and conveys more compensation, duty, authority, freedom what's more, status. The open door for advancement decides the level of fulfillment to the representative. Following focuses go under this classification:

1. Opportunity for advancement.
2. Equal chance to develop regardless of being male or female.
3. Training program.
4. Opportunity for utilization of aptitudes and capacities.

Data Analysis On Job Satisfaction On Employee Performance In Indore Dugdh Sangh - For the information assortment essential information has been utilized.

A survey has been filled by the workers of Indore dugdh sangh; Indore. Examination is as follows:-

1. Overall how fulfilled you are with the association?

S.	Response	No. of Respondents	Percentage
1	Extremely Dissatisfied	0	0
2	Very dissatisfied	0	0
3	Somewhat dissatisfied	0	0
4	Neutral	10	8
5	Somewhat satisfied	95	76
6	Extremely satisfied	20	16
	Total	125	100

When gotten some information about the fulfillment level, 76% of the workers said that they are to some degree fulfilled. 16% of the workers said that they are much fulfilled. What's more, 8% of the workers were unbiased.

2. Are you satisfied with your branch? Yes/ no

RESPONSE	No. of Respondents	Percentage
Yes	100	80
No	25	20
Total	125	100

when asked about the satisfaction with the department almost 80%of the employees said that they are satisfied and 20% of the employees said no.

3. How fulfilled would you say you are with your conceivable outcomes with future vocation movement at the organization?

S.	Response	No. of Respondents	Percentage
1	Completely Dissatisfied	0	0
2	Very Dissatisfied	8	6.4%
3	Somewhat Dissatisfied	8	6.4%
4	Neutral	25	20%
5	Somewhat Satisfied	40	32%
6	Very Satisfied	25	20%
7	Completely Satisfied	19	15.2%
	Total	125	100

When gotten some information about the fulfillment level with the future profession movement at the organization, 6.4% of the representatives are disappointed, 6.4% of the workers are to some degree disappointed, 20% of the representatives were nonpartisan, half of the representatives are fairly fulfilled, another 32% of the workers are exceptionally fulfilled and 15.2% of the workers are totally fulfilled.

Suggestions and Conclusion - In Indore Dugdh Sangh, subsequent to doing the review, the accompanying realities were uncovered:-

1. Only 20% of the representatives are happy with the association totally, in light of the fact that they are on the administration payrolls. Rest all the representatives were not on lasting premise.
2. This prompts not so much compensation but rather more weight on the workers to perform well.
3. Job security is additionally one of the main consideration right now manage.
4. Other than that representatives are especially happy with the work culture of the association.

With the expanding joblessness in the nation, the workers however disappointed, won't leave the activity and simultaneously won't give their 100% to the association.

Along these lines some place profitability diminishes. By giving better working conditions, an association needs to finish their ethical obligation towards the representatives and right now will have the option to build the general efficiency.

References:-

1. Griffin, M.A., Patterson, M.G. and West, M.A. (2001). Occupation fulfillment and cooperation: the job of manager support. J. Organ. Behav., vol. 22: 537- 550.
2. Greenberg,J., and Baron, R. A. (1993). Behaviorin organizations (4th ed.). Needham Heights, MA: Allyn and Bacon.
3. Ellickson, M.C., and Logsdon, K. (2002). Determinants of occupation fulfillment of metropolitan government representatives [Electronic version]. Open Personnel Management, Vol.31 (3), 343-358.
4. Herzberg, F., Mausner, B, and Snyderman, B.B. (1959). The inspiration to work. New York: Wiley, pp. 157.
5. Friedlander, F. furthermore, Margulies, N. (1969). Various Impacts of Organization Climate and Individual Values System upon Job Satisfaction, Personnel Psychology. , Vol.22, pp. 177-183.
6. Greenberg,J., and Baron, R. A. (1995). Behaviorin organizations (5th ed.). Needham Heights, MA: Allyn and Bacon.

****

Service Marketing and Emerging Trends

Dr. Manoj Jain*

Introduction - Service marketing differs from product marketing because of intangibility of services and requires personal interaction between two parties. The quality of this service interaction becomes a significant part of marketing strategy. Marketers are challenged to define their services as a system to customer benefits to create a market driven culture through recruiting, educating and motivating their employees. They also design their marketing programs and strategies which regularly create new advantages and values for the customer.

Economists have divided the all industrial and economy activities into three group: primary, secondary and tertiary. Primary activities include agriculture, fishing and forestry, secondary activities include manufacturing and construction, and tertiary activities refer to the services and distribution. Today more than 70% of the western economics are service sector. The service sector dominates the Indian economy toady, contributing more than half of national income. It is also the fastest growing sector, with an annual growth rate of 9% per year. Technology advances have made it possible for India to compete on global basis in areas of software development and information services. Liberalization of private sector has also played an important role in growth of service sector.

The concept of service - The term of service is rather general in concept and it includes a wide variety of services. Services differ as to whether they meet a personal need or a business need (business services).

Source- Donald Cowell, "The Marketing of Services" Heinemann, London.

Elements of services - In fact many organizations do have service elements to the product they sell, for example.

Mc Donald's sell physical products i.e. buglers and pizzas but consumers are also connected about the quality and speed of service, cheerful workers and welcoming the do, serve with a smile on their face.

Services have mainly five characteristics that greatly affect the design of marketing mix.

1. **Intangibility -** The basic element that distinguishes services from other product is intangibility. We cannot hold, touch, seen, smelt, heard or worn unlike a product. While there is nothing tangible to show for it where a service is sold. There are only a few truly pure intangible services. Teaching is a most intangible service.
2. **Lack of Ownership -** We cannot own and store a service like product. In case of a service, one may pay for its use but never owns it. Products are bought because they provide certain intangible benefits and satisfaction
3. .**Inseparability -** Services cannot be separated from the service providers. The production, the distribution and the consumptions are taking place simultaneously. The service firm is unable to store or transport the services, only direct distribution possible.
4. **Perish ability -** Services cannot be stored and are perishable in nature. If travelling by train, coach or air the service will only last the duration of the journey. Again because of this time constraint consumers demand more.
5. **Heterogeneity -** Most services are performed by people and people are not always consistent in their performance. This variation in performance is referred to as the heterogeneity of services. Performance may vary from one customer to another within the same organization.

Service Marketing Mix - Traditional 4P's marketing mix seems inadequate in case of service marketing. These 4P's though essential and significant but are not sufficient for successful marketing of services. In case of services there are three additional elements. These are people, physical evidence and process.

1. **People:** An essential ingredient to any service provision is the use of appropriate staff and people. Recruiting the right work force and training them separately in the delivery of service is most essential if the organization wants the competitive advantage. Mostly consumer perceptions about services are based on the employees they interact with. Workface should have inter personal skills, aptitude and service knowledge to provide the service.
2. **Process:** Process means the service delivery and operating system. Service marketing not only requires the external marketing but also internal and interactive marketing. External marketing describes only the normal functions done by the organization (4P's). Internal and interactive marketing describes the employee's talent in serving the customer satisfactorily
3. **Physical Evidence:**Physical evidence is the element of service mix which allows the consumer again to make judgments on the organization. Consumer loyalty and

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

confidence in the company can be made through this ingredient of the service mix.

Emerging Trends in Service Marketing - The major trends in service marketing are:

1. Use of product marketing techniques to services: The product marketing approach can be used only when launching new services. Customers are affected in the same manner, but a company cannot use the same technique in the later stage of services. Product marketing techniques are just good marketing practices for products only. When services are marketed like products, sales people understand them better and more comfortable with them. Because of intangible aspect of services company will face and new challenge every time.

2. Manage Demand and Capacity: The company should use the strategy matching capacity and demand. It should determine the optimum level of demand of its services against its capacity. To manage demand a company can change its marketing mix element like products, price, place and promotion. To manage capacity involves the changes in workforce, facilities and its equipments and time. No doubt customer's retention to a great extent depends upon the quality of service and satisfaction. Quality of service is perceived by the customer is the result of a comparison between the expectation of the customer and his real life experiences.

3. Online sales of services Internationally: These days services are more challenging to sell, many organizations are adding both telesales group and field located services sales specialist. This extension into other nations and growing pervasiveness of this activity online role of services makes it most significant trend in marketing of services these days.

4. Branding of Services: Like products services are also branding by the companies having exciting result. Most effectively the company announces the services line by their name right along with its branded product line names. This practice gives equal weight age to services as to product. This also makes the services more tangible for sales force and customers.

Conclusion - Service marketing differs from product marketing because of intangibility of services and requires personal interaction between two parties. The quality of this service interaction becomes a significant part of marketing strategy. Marketers are challenged to define their services as a system to customer benefits to create market driven culture through recruiting, educating and motivating their employees. They also design their marketing programs and strategies which regularly create new advantages and values for the customer.

References :-

1. Marketing by David Mercer.
2. Donald Cowell, "The Marketing of Services" Heinemann, London
3. Levitt, T. (1981) "Managing Intangible products …product intangibles", Harvanl Business Review.
4. http:/www./learnmarketing.net/sevicesmarketing mix.htm
5. Ravi Shankar, "Role of services in Economy," services marketing (2008), Excel books (New Delhi).
6. Kotler, Philip, Marketing management, New Delhi.

****

Concerns and Confronts in Entrepreneurship

Dr. Sanjay Bhavsar*

Abstract - Entrepreneurship is the process of starting a business, a startup a company or other organization. Entrepreneurship operates within an entrepreneurship ecosystem. An entrepreneur is a factor in microeconomics. A business actively owned and/or managed by more than one member of the same family is family entrepreneurship. As starting and managing a small business means both social and economic risk taking, so is building a robust community a social as well as an economic endeavor. Such a community is a most vital context for entrepreneurship. The intriguing relationship between knowledge and innovation, the persistence of different patterns of innovation across sectors and the multidimensional character of innovation processes, have given rise to the proposal of new analytical frameworks for capturing the specific and differential role of knowledge in innovation processes. This is the case of the Sectoral Systems. The paper is based on an abstract definition of system of entrepreneurship. The concept of entrepreneurship was first established in the 1700s, and the meaning has evolved ever since. Many simply equate it with starting one's own business. Most economists believe it is more than that. To some economists, the entrepreneur is one who is willing to bear the risk of a new venture if there is a significant chance for profit. Other emphasizes the entrepreneur's role as an innovator who markets his innovation.
Keywords - Entrepreneurship, Family, Community, and Sect oral entrepreneurship principles, Intellectual property.

Introduction - Entrepreneurship is the professional application of knowledge, skills and competencies and/or of monetizing a new idea, by an individual or a set of people by launching an enterprise de novo or diversifying from a existing one (distinct from seeking self employment as in a profession or trade), thus to pursue growth while generating wealth employment and social good.

Who can become an entrepreneur? There is no one definitive profile. Successful entrepreneurs come in various ages, income levels, gender, and race. They differ in education and experience. But research indicates that most successful entrepreneurs share certain personal attributes, including creativity, dedication, determination, flexibility, leadership, passion, self-confidence, and smarts. Creativity is the spark that drives the development of new products or services or ways to do business. Dedication is what motivates the entrepreneur to work hard, to get the endeavor off the ground. Planning and ideas must be joined by hard work to succeed. Determination is the extremely strong desire to achieve success. It includes persistence and the ability to bounce back after rough times. Flexibility is the ability to move quickly in response to changing market needs. Leadership is the ability to create rules and to set goals. It is the capacity to follow through to see that rules are followed and goals are accomplished. Passion is what gets entrepreneurs started and keeps them there. It gives entrepreneurs the ability to convince others to believe in their vision. Self-confidence comes from thorough planning, which reduces uncertainly and the level of risk.

Entrepreneurship creates an opportunity for a person to make a contribution. Most new entrepreneur helps the local economy. A few through their innovations contribute to society as a whole. Entrepreneurship in India occurs in "for there is so much more that needs to be done". The opportunities created by today's global knowledge economy coupled with the unshackling of indigenous enterprise have contributed to making India a "fertile ground" for entrepreneurship.

Family Entrepreneurship : Family businesses in India are equally confident about their growth over the coming days. However there are a lot of issues that need to be dealt with globally, even in the short term. These include hiring the right talent and working through the challenges associated with market conditions and regulations. The global economic downturn coupled with the domestic macroeconomic situation pose significant uncertainties for entrepreneurs who run their own businesses. The entry of new players resulting in increased competition, the growing power of global megabrands supply chain challenges, the changing consumer behaviors, the introduction of new technologies etc. relating to their supply chains are some other challenges.

Family businesses in India will continue to play an integral part in the nation's growth story. However, with more and more family businesses looking to run their organizations professionally and with the corporate imbibing some of the ingredients which have helped family businesses succeed, the lines between the two categories

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

are getting blurred. It is only a matter of time before family businesses start to collaborate rather than compete, and in the process positively influence government policies and action in their favor. The government also has a crucial role to play in ensuring that fiscal policies as well as domestic systems support family firms. The ability to innovate and retain talent is likely to be a major challenge for family businesses along with adapting to the new technologies. As far as succession planning is concerned, these businesses are increasingly putting processes and procedures in place in order to ensure a smooth transition. Family-run businesses can continue to be important drivers of India's overall growth if they are given the right support at the right time.

Community Entrepreneurship : If a new model of entrepreneurship that benefits the inner city is to emerge, it must come from community-minded activists, philanthropists, and small businesspeople, and while the spread of nonprofit entrepreneurial training programs for low-income. A simple tenet of community entrepreneurship is this; Tailor your goods and services to meeting your community's basic needs like food, energy and housing first; once these are met through local production, then consider moving into exports. This approach to business creation is important for several reasons. A community that moves towards self-reliance is often rewarded with a higher economic multiplier. Community Entrepreneurship instills the foundations of successful enterprise development including strategic business planning, marketing techniques and market analysis and projections. As entrepreneurship is a vital thread in the fabric of a community, students acquire entrepreneurial skills in the context of social responsibility and healthy community development.

Sectoral Entrepreneurship : The concept of Sectoral Entrepreneurship has its roots in the broader field of entrepreneurship and draws on the definition of entrepreneurship as "the pursuit of opportunity beyond the tangible resources that you currently control". Societies worldwide are urgently seeking innovative approaches to addressing persistent social problems that afflict their communities that have not yet been satisfactorily addressed by either governments or the market place. Historically, these challenges have been the domain the nonprofit organizations, which operate in fields ranging from education, health services, social services and environmental conversation to arts and culture. Common across all these definitions is the fact that the underlying drive for social entrepreneurship is to create social value, rather than just personal and shareholder wealth. Social issues that societies face today, the social sector has grown vastly and continues to proliferate worldwide.

Concerns and Confronts : India has seen a surge in its entrepreneurial spirit in the last decade. However, the end of the decade saw the economic slowdown spoiling the euphoria and putting breaks on this growth story. The growth in entrepreneurship holds the key to turning around the slowdown. Many factors such as limited access to finance, poor infrastructure, lack of required skills etc. pose challenges to the growth of entrepreneurship. It is argued that attitudes towards entrepreneurs and entrepreneurship are important determinates for future entrepreneurial activity. Despite the presence of certain business communities, the culture of India continues to remain risk adverse. Stability and tag of a big company continue to be the middle class aspiration. This cultural attitude hinders the growth of entrepreneurial spirit among the young. The Indian economy provides a revealing contrast between how individuals react under a government-controlled environment and how they respond to a market based environment. Distribution is a major challenge that Indian entrepreneurs face towards scaling up. The difficulties of setting up the firm's own distribution network coupled with the lack of internet penetration place Indian entrepreneurs at a disadvantage when compared with counterparts in other countries, Family, Social, and Technological.

Conclusion: Entrepreneurship is the core of economic development. It is a multi-dimensional task and essentially creative activity. Entrepreneur is key factor of entrepreneurship. The emphasis should be towards sound national economic policy for agriculture including recognition of the important contribution of entrepreneurship to economic development. Policies and special programs for development and channeling of entrepreneurial talent must be envisaged. Entrepreneurial thinking about development by everyone must be cultivated. Efficient and unbiased financial markets, appropriate business environment is to be nurtured. Finally education, training and capability to compete also access to information, networking and the global market place is to be treated as a key issue.

References:-

1. Ganly, Kateand Mair, Johanna (2009),"Social Entrepreneurship in India-A small Step towards Institutional Change", IESE Business School, University of Navarra.
2. Soundarapandian M (2008) Women Entrepreneurship – Issues and Strategies, published by Kanishka Publishers Distributors, ISBN 978-81-7391-314-5
3. Mehta A. (2011) "Rural Entrepreneurship-A Conceptual Understanding with Special Reference to Small Business in Rural India," Elxir Marketing Vol.36
4. Ramalingam C. and Gayatri R. (2009) "A Frame work for Development of Rural Entrepreneurship in Tamilnadu using innovation as Strategic Tool", Faculty Column Main page, St. Peter's University, Chennai, India.
5. Sharma Swati and Vyas Divya (2011), "Entrepreneurship in Rural India- A Need Analysis", International Journals of Business Economics and Management Research, volume 2, Issue 4, April.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

पूर्व मध्ययुगीन मालवा के परमार एवं उनकी शाखायें तथा वंशावली

गुलाबराव डोंगरे* डॉ. श्रीमती विजेता चौबे**

प्रस्तावना – देश-काल के आयामों में आबद्ध प्रघटित महत्वपूर्ण-परिवर्तनकारी घटनायें इतिहास की अवधारणा का निर्माण करती है। विवेच्य युगीन ऐतिहासिक घटनायें स्थान एवं काल में अद्वितीय तो है किन्तु मानवीय इतिहास में विज्ञान रीतियों में एक नितान्त ही नवीन रीति है, जिसे सम्मानित नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह युद्ध, आक्रमण, हिंसा, बलात्कार, अग्नि विध्वंस एवं अन्य मानवीय मर्यादा का उल्लंघन वाली घटनाओं से परिपूर्ण है। छठी शताब्दी ईसवी से बारहवी शताब्दी ईसवी तक का भारतीय इतिहास विदेशी आक्रमणकारी शक्तियों के द्वन्द विश्व इतिहास का कलंकित पृष्ट है, जिसे मानवीय युद्ध की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। कोयेनराड इल्स्ट ने इस्लाम के तथ्यों को छिपाने पर एक पुस्तक निगेशनिज्म इन इण्डिया, में लिखकर यह प्रमाणित किया है कि इतिहास लेखन में विवेच्य कालीन दरबारी इतिहासकारों ने तथ्यों, घटनाओं, आक्रमणों एवं प्रतिरोधों को किस सीमा तक प्रछन्न एवं छद्म रूप में प्रस्तुत किया है, और उसी को प्रमाणित मान का विवेच्य युगीन इतिहास को प्रस्तुत किया गया है।

मालवा के परमार एवं उनकी शाखायें – परमार एक राजवंश का नाम है, जो मध्य युग के प्रारम्भिक काल में महत्वपूर्ण हुआ। सिन्धुराज के दरबारी कवि पद्मगुप्त ने अपनी पुस्तक नवसाहसांकचरित में एक कथा का वर्णन किया जिसके अनुसार ऋषि वशिष्ठ ने ऋषि विश्वामित्र के विरूद्ध युद्ध में सहायता प्राप्त करने के लिये आबू पर्वत पर यज्ञ किया। उस यज्ञ के अग्निकुण्ड से एक पुरूष प्रकट हुआ। इस पुरूष का नाम प्रमार रखा गया, जो इस वंश का संस्थापक हुआ और उसी के नाम पर वंश का नाम पड़ा। परमार के अभिलेखों में इसी कहानी को पुनउल्लेखित किया। इससे कुछ लोग यह समझने लगे कि परमारों का मूल निवास स्थान आबू पर्वत पर था, जहां से वे पड़ोस के देशों में जाकर बस गये, किन्तु इस वंश के एक प्राचीन अभिलेख से पता चलता है कि परमाण दक्षिण के राष्ट्रकूटों के उत्तराधिकारी थे।

परमार वंश की एक शाखा आबू पर्वत पर चंद्रावती को अपनी राजधानी बनाकर 10वी शताब्दी के अंत से 13वी शताब्दी के अंत तक राज्य करती है। इस वंश की दूसरी शाखा वगत अर्थात वर्तमान बाँसवाड़ा और डूंगरपुर रियासतों में वर्तमान अर्थुना पर 12वी शताब्दी के मध्यकाल तक शासन करती रहीळ इस वंश को दो शाखायें और ज्ञात है, एक ने जालोर में और दूसरी ने बिनमाल में 10वी शताब्दी के अंतिम भाग से 12वी शताब्दी के अंतिम भाग तक राज्य किया।

वर्तमान में परमार वंश की एक शाखा उज्जैन के गॉव नंदवासला, खाताखेड़ी तथा नरसिंहगढ़ एवं इन्दौर के गांव बेगन्दा में निवास करते है। धारविया भोजवंश परमार की शाखायें तलावली एवं धार जिले के सरदारपुर तहसील में रहती है। इनकी तीन शाखा और है – एक जो बूसी गाँव में, दूसरी मालपुरिया राजस्थान में और तीसरी नीमच में निवासित है। 11वी से 17वी शताब्दी तक पंवारो का प्रदेशान्तर सतपुड़ा और विदर्भ में हुआ। सतपुड़ा क्षेत्र में उन्हें भोयर पंवार कहा जाता है। धार नगर से 15सी से 17सी सदी स्थानान्तरित हुये पंवारों की करीब 72 शाखायें बैतूल, छिंदवाड़ा, वर्धा एवं अन्य जिलों में निवास करती है। पूर्व विदर्भ, मध्यप्रदेश के बालाघाट सिवनी क्षेत्र में धार नगर से सन 1700 में स्थानान्तरित हुये पंवार अथवा पोवारों की करीब 36 शाखायें निवास करती है जो कि राजा भोज को अपना पूर्वज मानती है। संस्कृत शब्द प्रमार से अपभ्रंषित होकर परमार तथा पवार अथवा पोवार एवं भोयर पंवार शब्द प्रचलित हुये।

मालवा के परमार एवं उनकी वंशावली – मालवा का इतिहास रोचक है। विवेच्य युग (600-1200 ई.) के मालव प्रदेश के प्रमुख शासकों अथवा उनके अधीनस्थ स्थानीय राजाओं का में मुख्यत: गुप्तवंशीय राजाओं से लेकर परमार वंशीय राजाओं का उल्लेख किया जा सकता हैं। इन में सर्वप्रथम छठी शताब्दी के मध्य में इस क्षेत्र में औलिकर वंश के शासकों का उल्लेख प्राप्त होता है। सातवीं शती में मालवा के पश्चिमी भाग पर मैत्रयकों का आधिपत्य हो गया था। राज्य के उत्तर में इस समय मौरवरीवंश की अधिसत्ता स्थापित थी। पश्चिमी मालवा में कलचुरियों के दमन का श्रेय मैत्रयक राजा खरग्रह प्रथम को है।

मालवा क्षेत्र में लगभग 791 ई. से परमारों का शासन प्रारम्भ हुआ। इनका प्रथम राजा 'उपेन्द्र' था। इसका उल्लेख उदयपुर प्रशस्ति में प्राप्त होता है। परमार मालवा के प्रतिनिधि शासक थे। सामान्यत: इन्हें प्रारम्भ से ही मालवा का शासक स्वीकार किया गया। परमार राजा उपेन्द्र ने ही परमार वंश की स्थायी परम्परा स्थापित की। उपेन्द्र के पश्चात 'वैरिसिंह प्रथम' तथा 'सीयक प्रथम' दो नरेश हुये। इनमें 'वैरिसिंह प्रथम' का राज्य काल 818-843 ई. तक माना जाता है। इसके पश्चात 'सीयक प्रथम' ने 843-868 ई. तक शासन किया। ईसवी सन् 868-893 तक के राजाओं के नाम नहीं प्राप्त होते है। 'नवसाहसांक चरित' के विवरण से ज्ञात होता है कि 'उपेन्द्र' पश्चात परमार राजा 'वाक्पति प्रथम' (893-918 ई.) तथा इसके पश्चात 'वाक्पति प्रथम' का उत्तराधिकारी 'वैरिसिंह द्वितीय' (919-945 ई.) तक शासक रहा। इसको 'व्रजट' नाम से भी सम्बोधित किया जाता था। इस परमार राजा ने गुर्जर प्रतिहार तथा राष्ट्रकूटों को परास्त कर धारा नगरी में राजसत्ता स्थापित की थी। इसके पश्चात 'सीयक द्वितीय' ने (945-972 ई.) ने सिंहासन ग्रहण किया। 'सीयक द्वितीय' को 'महाराजाधिराजपति' 'महामाण्डिलिक' तथा 'चूड़ामणि' उपाधि से विभूषित किया गया है। इसे

* शोधार्थी (इतिहास) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (इतिहास) ज.हा. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

'सिंहदत्त भट्ट' भी कहा गया है। इसने चालुक्यों तथा दक्षिण में मान्यखेट के राजा खोट्टिगदेव पर उल्लेखनीय विजय प्राप्त की थी। 'सीयक द्वितीय' ने अपने जीवन काल में ही अपने पुत्र वाक्पति द्वितीय अर्थात मुंजदेव (974-994 ई.) को राज्य का पूर्ण कार्य भार सौंप दिया था। इसके शासन काल में राज्य के क्षेत्र का बहुत विस्तार हुआ। उत्तर में यह बांसवाड़ा, दक्षिण में गोदावरी तथा पूर्व में विदिषा तथा पूर्व में विदिषा और पश्चिम में माही नदी तक विस्तारित था।

इसने 'पृथ्वीवल्लभ', 'श्री वल्लभ' तथा 'अमोघवर्ष' उपाधियां धारण की थी। इस प्रतापी तथा विद्धान राजा ने कर्णाट लाट अर्थात केरल और चोल देश के राजाओं को पराजित किया, चेदि के हैह्य कलचुरी नरेश युवराज द्वितीय को पराजित कर उसकी राजधानी त्रिपुरी को लूटा, मेवाड़ पर आक्रमण कर चित्तौड़गढ़ तथा उसके समीप का मालवा से मिला हुआ प्रदेश अपने राज्य में मिला लिया। इसने छह बार सोलंकी नरेश तैलय द्वितीय को पराजित किया, किन्तु सातवें युद्ध में वह गोदावरी के पास बंदी बना लिया गया। 'मुंज' के पश्चात इनका लघुभ्राता 'सिन्धुराज' (997-1010 ई.) सिंहासनासीन हुआ। इसने 'नवसाहसांक', 'कुमार नारायण', 'अवन्ती तिलक', 'अवन्तीश्वर', 'परमार महिभत', 'मालवराज' आदि उपाधियां धारण की थी। इसने हूणों को पराजित किया एवं दक्षिण कौशल, वागड़ तथा लाट पर भी विजय प्राप्त की। परमार वंश के मेरूमणि 'राजा भोज' (1011-1055 ई.) थे। इन्होनें सत्ता प्राप्ति के उपरांत धारा नगरी को अपनी राजधानी बनाया तथा 'धारेश्वर' की उपाधि स्वंय धारण की। इसके समय में परमार शक्ति का विशेष विकास हुआ। भोज ने चेदीश्वर, इन्द्ररथ, भीम, तौगरूल, कर्णाट, लाट, गुर्जर राजाओं पर तथा तुरूषकों पर विजय प्राप्त की थी। भोज की यह विजयश्री अति महत्वपूर्ण है।

तत्कालीन विद्धानों ने अपने ग्रन्थों में 'भोज' को अनेक विरूदों से अलंकृत किया है, जैसे 'त्रिविघवीर चूड़ामणि', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'पृथ्वी वल्लभ', 'श्री वल्लभ', तथा 'विक्रम' आदि। इसकी पुष्टि संस्कृत ताम्रपत्र, प्रशस्ति तथा शिलालेख करते है। अभिलेखों में भोज के लिये 'महाराजाधिराज' 'परमेश्वर' तथा 'मालव चक्रवर्ती' का उल्लेख प्राप्त होता है। विद्धानों ने भोज को 'भारतीय आगस्ट्स' की पदवी दी है। भोज के शासन के पश्चात परमार सत्ता का स्खलन प्रारम्भ हो गया था। कालान्तर में राजा निरन्तर अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु विभिन्न शक्तियों से संघर्ष करते रहे। भोज के पश्चात का सम्पूर्ण परमार इतिहास इन्हीं पारस्परिक संघर्षो का इतिहास है।

भोज के उत्तराधिकारी 'जयसिंह' (1055-1070 ई.) हुये। 'जयसिंह' ने चालुक्यों की सहायता के अपने राज्य का पुनः विस्तार कर लिया। तत्पश्चात 'उदयादित्य' (1070-1086 ई.) शासक हुये। इन्होनें उदयपुर नगर बसाया था। इस ने गुजरात के राजा कर्ण पर विजय प्राप्त की थी। 'उदयादित्य' के पश्चात इस का पुत्र 'लक्ष्मदेव' (1086-1094 ई.) शासक बना। इसे द्वारा प्राप्त गौड़-चेदि, पाण्ड्य, लंका, तुरूष्क तथा हिमालय के कीर नरेशों पर विजय के उल्लेख प्राप्त होते है, लेकिन इन विजयों की सत्यता संदिग्ध है। इसके पश्चात 'नरवर्मा' (1094-1133 ई.) ने राजसत्ता प्राप्त की। नरवर्मा के पश्चात उसका पुत्र यशोवर्मा विद्धतापूर्ण शास्तार्थ महाकाल के मन्दिर में हुआ था। 'नरवर्मा' के पश्चात उसका पुत्र 'यशोवर्मा' (1133-1142 ई.) राजा हुआ। एक उज्जैन लेख में गुजरात के जयसिंह सिद्धराज द्वारा इसके पराजित होने का उल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु चौहान नरेश की सहायता से उस ने पुनः अपने खोये हुये प्रदेशों को प्राप्त किया। 'यशोवर्मा' के पश्चात 'जयवर्मा' (1142-1143 ई.) सिंहासीन हुये। इन्होने अपने अल्पकालीन शासनकाल में धारा पर विजय प्राप्त कर ली थी। 'जयवर्मा' के पश्चात उसका पुत्र 'लक्ष्मीवर्मा' (1144-1148 ई.) सिंहासनारूढ़ हुआ। तत्पश्चात 'हरिशचन्द्रवर्मा' (1148-1174 ई.) और इसके पश्चात 'हरिशचन्द्र' के उत्तराधिकारी 'अजयवर्मा' के पृत्र 'विन्धयवर्मा' (1175-1194 ई.) राजा हुआ। इसने गुजरात नरेशों की निर्बलता के लाभ उठा कर उन के कुछ प्रदेशों पर विजय प्राप्त की। इसका सन्धिविग्रहिक मंत्री 'विल्हण' था। 'विन्धयवर्मा' के पश्चात उसका पुत्र 'सुभटवर्मा' (1194-1209 ई.) शासक बना। राजसत्ता प्राप्त करने के पश्चात ही उस ने गुजरात पर आक्रमण कर दिया, हालांकि इस युद्ध में इसे विशेष सफलता नहीं मिली। इसके पश्चात 'अर्जुनवर्मा' (1210-1215 ई.) शासक हुआ। 'अर्जुनवर्मा' के पश्चात 'देवपाल' शासक हुआ। 'देवपाल' के शासनकाल में 'शमसुद्दीन अल्तम'' ने 1235 ई. में उज्जैन पर आधिपत्य प्राप्त कर लिया। इस के बाद इस वंश के विभिन्न राजाओं का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो गया।

दिल्ली सल्तनत के समय में सन् 1401 में 'दिलावर खाँ गोरी' ने मालवा के सुल्तानों का राज्य कायम किया और उनका पुत्र राजधानी को धार से माण्डू ले गया। मुगल बादशाह 'बाबर' ने मालवा का वर्णन हिन्दुस्तान के चौथे सबसे बड़े महत्वपूर्ण राज्य के रूप में किया है। 1561 में 'बाज बहादूर' के अकबर के हाथों पराजित होने के बाद यह क्षेत्र मुगलों के अधीन एक सूबा बन गया। यह क्षेत्र अपने इतिहास के लम्बे समय तक कलह और अराजकता से घिरा रहा। दक्कन को उत्तर से जोड़ने वाले मार्ग में हांडिया, महेश्वर, माण्डू और बुरहानपुर महत्वपूर्ण शहर थे। 1724 में 'पेशवा बाजीराव' के नेतृत्व और सिंधिया, होल्कर और पुआर की मदद से मराठों ने मालवा में प्रवेश किया। तीसरे मराठा युद्ध, 1871, में सत्ता अंग्रेजों के हाथों में चली गयी। 1861 में मालवा को मध्य प्रांत का हिस्सा बनाया गया। 1948 और उसके बाद 1956 में औपचारिक रूप से मालवा का विभाजन मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र तथा राजस्थान राज्यों के बीच कर दिया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राय चौधरी, पोस्ट हिस्ट्री ऑफ एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 606-29.
2. स्मिथ, वी. ए., अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ 343
3. इण्डियन हिस्ट्री-क्वाटर्ली, भाग 24, 1948, पृष्ठ 175.
4. राय चौधरी, पोस्ट हिस्ट्री ऑफ एन्शियेन्ट इण्डिया,
5. सरकार डी. सी. एन्शियेन्ट-मा-वि-ट्रेडीशन, पृष्ठ 2, टिप्पणी 8.
6. ए. पी. इण्डिका, भाग 9 पृष्ठ 296-300.
7. इण्डियन ऐन्टीक्वेरी, भाग 6, पृष्ठ 159.
8. गांगुली डी. सी., हिस्ट्री ऑफ परमार, पृष्ठ 39.
9. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी, भाग 3, पृष्ठ 5.
10. भारत के प्राचीन राजवंश, भाग 1 पृष्ठ 99, 103.
11. इण्डियन कल्चर, भाग 11, पृष्ठ 397-401, तथा नवसाहसांक चरित, 10 पृष्ठ 161.
12. आयंगर श्री निवास, भोज राजा, पृष्ठ 27 एवं ले. ले. चिन्तामणि, विक्रम स्मृतिग्रन्थ, पृष्ठ 592
13. कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग 2, पृष्ठ 461.
14. वैद्य, सी. वी., मेडीवल हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जिल्द 2, पृष्ठ 185.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Study of physicochemical parameters of water from Ransai dam, Uran, Navi Mumbai, Dist. Raigad, Maharashtra

Aamod N. Thakkar*

Abstract - Water resource cradles life on earth. The explosive growth of population in the millennium has an urge to conserve every drop of water. It is necessary to monitor water quality of various water bodies consistently. The status of aquatic habitat depends solely on physic- chemical parameters of water. Especially study of physico chemical properties of potable water resource is very essential for their conservation. Hence present study of water quality with reference to drinking water quality of Ransai dam, Uran, Navi Mumbai, and District-Raigad was carried out for one year 2016-2017. Various physico-chemical variables were assessed and interpreted. Results revealed that all parameters are within permissible range according to WHO and IS. The water of Ransai dam is of good quality and potable.
Key words - Anthropogenic, Ransai dam, physicochemical parameters, potable

Introduction - Uran is located at 18.88°N 72.94°E on the tip of a peninsula, Uran land has been under redevelopment pressure. (1) J. N. Port is the biggest container handling port in India handling around 55% of the country's containerized cargo. (2) Other container terminals in Uran include APM Terminals (formerly GTI) and DP World Port as major projects and network of warehouses has opened nearby. The Indian Navy maintains a naval base near Mora. The Oil and Natural Gas Corporation (ONGC) and Bharat Petroleum Gas Corporation Limited (BPCL) have a plant nearby. GTPS-MSEB is Asia's first power plant run by natural gas, Container Freight Stations (CFS), Navi Mumbai SEZ, etc., the area of Uran creek became the ground for galloping development activities. Destruction of mangroves and forests and land filling allover Uran, These activities has exerted tremendous population pressure creating direct stress of clean drinking water of Uran. Water is one of the most precious gifts of the nature to mankind through clean drinking water is essential for the survival of all living organisms (3). Some observers have estimated that by 2025 more than half of world's population will be facing water scarcity. (4) The minimum quality of household water is dependent on its specific use; drinking water must be safe for consumption, whereas lower standards may be set for water for sanitation. (5)

Materials And Methods:

Study area - Ransai Dam is a destination in Uran $18^0 53' 55''$N $73^0 4' 28''$E. (3) It is located near Dighode Village. The dam was constructed in 1970.It is having 10MCM storing capacity. The dam supplies around 35MLD water to Uran Township, ONGC, defense installation, Nhava Sheva and nearly 22 villages in the Uran taluka. Till date no work has been done on water quality of Ransai dam. Hence present study has been undertaken. Water from Ransai dam was assessed for a period of one year for study of various physic-chemical parameters and was recorded during January 2016 to December 2016.

Sampling Methods - Water samples were collected every month during the year 2016-2017. The, DO, temperature and pH were determined on the spot rest of the parameters were analyzed in the laboratory by standard methods.

Results and discussion - The average values of water quality variables of Ransai dam during the year 2016- recorded are as follows:

Physical Parameters

Sr.	Water parameter	Method	Value
1	Temperature	Thermometer	24^0C
2	Total dissolved solids (TDS)	Evaporation	256
3	Conductivity	Evaporation	684uS/cm
4	Color	———	Colorless

Chemical Parameters

S.	Parameter	Method used	Values in ppm	
			Observed values	WHO standards
1	Dissolved oxygen	Winkler's method	4.92	$\geq$ 4
2	Free CO_2	Titrometry	0.72	——-
3	P^H	P^H Meter	7.2	6.5 to 8.5
4	Total hardness	EDTA Method	214	150-500
5	C.O.D.	$K_2Cr_2O_7$ method	156	250
6	B.O.D.	5 day BOD test	4.1	30
7	Salinity	Titrometry	54.7	——-
8	Total alkalinity	Acid titration	176	200

Discussion - In this study water variables were studied monthly throughout the year 2016. Earlier many researchers

*Veer Wajekar Arts, Science and Commerce College, Mahalan Vibhag, Phunde, Uran Dist. Raigad (Mh.) INDIA

have studied water parameters of various dams in Maharashtra. Bharamal et. Al. (2014)[6] extensively studied the preliminary investigation on water quality of Tillari dam, Maharashtra and found safe for drinking. Similarly Umesh Chaudhari et.al. (2016)[7] investigated four different dams in Amravati district and found all the parameters in permissible range. Rao et al (1999)[8] observed dissolved oxygen 2.1 to 4.3 mg.L-1and 1.1 to 4.7 mg.L-1and 1.1 to 4.7 western and eastern zones of Kollerulake Andhra Pradesh during 1998. The elevated levels of BOD and COD, lower the concentration of dissolved oxygen in a water body resulting in a bad water quality and stress to the resident aquatic life. The limit for COD is 8 mg.L-1 for the water to be used for industrial uses and conservation of environment [9]. Jain Pradeep kumar (1999) studied the water quality of Khnop reservoir in Chhatarpur, Madhya Pradesh and obtained pH values varied from 7.1 to 7.2 with average value of 7.1, which is safe range for drinking.

The above researches suggest there is need of monitoring the water quality of water consistently and to conserve it. The present study reveals the water variables studied are within the permissible limits as per international standards. The water quality of dam is good for drinking purpose as well as for aquatic life.

Conclusion - Anthropogenic activities are main source of pollution. Though the present studies suggest water quality of dam is good for drinking purpose. The galloping development in, around Uran and exponential increase in population of Uran thrust for continuous monitoring and investigation of water quality. The present study will form a baseline data for further investigation.

References :-

1. “Uran, India Page”. Falling Rain Genomics, Inc. 27 February 2015.
2. “The biggest ports of India”. *Rediff Business*. Rediff.com. 8 October 2010. Retrieved 29 July 2013.
3. Suthar, M. B., & Suthar, T. M., 2010. Study on drinking water quality from selected areas of Ahmedabad City, India. Life sciences Leaflets (LSIC2011), 329-335
4. Kulshreshtha, S.N., 1998. A Global Outlook for Water Resources to the Year 2025, Water Resources Management 12(3), p.p. 167-184.
5. Peter Gleick: The Human Right to Water, 1(5) W*ater Policy,* 487-503 (1999).
6. Bharamal D.L. and Korgaonkar D.S., 2014. A Preliminary investigation on water quality of Tillari dam, Dodamarg, Sindhudurg, Maharashtra, India. Int.J.Curr.Microbiol.App.Sci, 3(7), 369
7. Umesh Chaudhari , Sunil Kondulkar, Atul Wanjari, Nitin Wanjari, (2016). analysis of water quality using physico-chemical parameters from various dams of Amaravati district, Maharashtra, India, International Journal of Scientific Engineering and Applied Science (IJSEAS) 2(8), 317. ISSN NO: 1021-9056 570
8. Rao A. Sreenivasa, P. Rammohan Rao and M. Someswara Rao, 1999. Degradation of Water Quality of Kolleru Lake, Indian Journal of Environmental Health, 41 (4), p.p. 300 - 311.
9. EMECS, 2001. Water quality conservation for enclosed water bodies in Japan, International Center for the Environmental Management of Enclosed Coastal Seas.
10. Jain Pradeep Kumar, 1999. Assessment of Water Quality of Khnop Reservoir in Chhatarpur, Madhya Pradesh India, Ecology Environment and Conservation, 5 (4), p.p. 401 – 403.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Marketing Mix Needed For Indian Rural Markets

Dr. Sanjay Sharma* Dr. Vimal Sharma **

Abstract - Rural marketing is a special form of marketing as special form of marketing of products in villages. At this level as researchers, we find the difference lies only in the degree of marketing of products not in the degree of marketing of products not in the type of marketing. As a marketer, you need to adopt different approach to attract rural consumer. Hence, one needs to identify special (customized) needs of the rural consumer, as well. Almost all the Multinational corporations and corporate are responding to changing environment their best to penetrate and enhance market size through exploiting newly emerged rural markets. Interestingly, the understanding of rural consumers, dynamics of rural business environment, examining problems, challenges, constraints and exploiting the potentials is the need of the hour.

Keywords - Rural Market, FMCG, Marketing Strategies, India.

Introduction - Rural marketing is a type of marketing that focuses on promoting items in rural areas. At this level, as academics, we discover that the difference is solely in the degree of product marketing, not in the style of marketing.To attract rural consumers, you need to take a different strategy as a marketer. As a result, particular (customised) needs of the rural client must also be identified.

Rural marketing, according to Velayudhan (2002), encompasses all actions aimed at analysing, stimulating, and transforming rural purchasing power into an effective demand for specific products with the goal of enhancing the standard of living. It is a two-way marketing process in which goods and services are transported from rural to urban areas and vice versa (George & Mueller, 1955).Any marketing effort in which one of the main participants is from a rural location is known as rural marketing (Kotler, et. al., 2009).

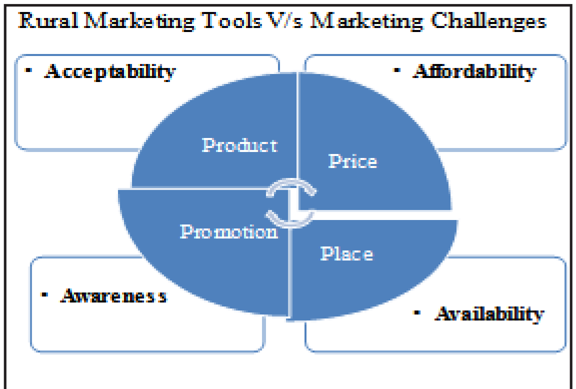

(Source: Sharma 2014)
Figure 1.1

The market climate in rural areas has shifted. The rural consumer's thinking is similar. The myths of the past are dispelled as the rural consumer becomes more aware of quality, price realization, and the benefits of services associated to product sales and customer satisfaction. Agriculture inputs and agro-products aren't the only things sold in the rural market.It is expanding and broadening to include agricultural produce, agro products, agricultural inputs, non-farm products, Fast-Moving-Consumer-Goods, durables, and services, among other things.Almost all multinational firms and corporations are adapting to the changing environment by pursuing new rural markets in order to penetrate and expand their market share. Surprisingly, knowing rural consumers, the characteristics of the rural business environment, assessing difficulties, obstacles, and constraints, and maximizing opportunities are all urgently needed.

The 4-Ps of Rural Marketing:

Product:

(a) The unit is small and inexpensive.
(a) New product designs that are durable.
(c) The brand name.
(d) Refill packs rather than using complex packaging.

Price of Reusable Packaging:

(a) Low-cost items.
(a) The use of value engineering (milk-Soya protein).
(c) Compact utility packs.

Place:

(a) Segmentation.
(b) Villages having a population of 2,000 or more are covered.
(c) Distribution to flea markets, Mandis, Shanties, and Melas
(b) Direct Retail Contact in Rural Areas

Promotion:

* Faculty, Department of Management Studies, Medicaps University, Indore (M.P.) INDIA
** Professor & HOD, PMB Gujrati Science College, Indore (M.P.) INDIA

(a) Radio.
(b) Television.
(c) Haats, Melas, Fairs.
(d) Print media.
(e) Cinema.
(f) Hoarding/ Wall Painting.
(g) Rural van.

Rural Marketing Strategies: In India's rural market, brand success is as unpredictable as rain. Many brands that should have been successful have been a colossal failure. This is because most businesses try to transfer their urban marketing strategies to rural markets. At the product planning stage, the distinctive consumption habits, tastes, and wants of rural consumers should be examined so that they may be met.

a) Product Strategy: Our country's rural market is unique in that it has diverse consumer communities in different physiographic regions, and each consumer group has varied consumer demand. As a result, when a company introduces a product to the rural market, it should pay special attention to the needs of the rural consumer, stressing difference research. As the guidance changes product structure, improves product quality, improves product function, and develops practicable; solid that are fit for the rural market, the firm must fulfil farmers' expense requirement. At the same time, product packaging and branding should be in line with farmers' consumption psychology and customs.What must be highlighted here is that the enterprise must focus on improving the product's essential function while reducing unpractical accessory functions, which will not only lower the product's cost and price but also aid in the spread of the firm's brand effect.

b) Price Strategy: Currently, it is thought that a low-cost strategy is the most important aspect in increasing the rural market. In general, the income level of our country's residents is still relatively low. The price of the goods is the most crucial consideration element for the rural consumer while acquiring it. As a result, while entering the market, the business should consider adopting a cheap price since, while the short-term gain is lower, once the market is seized, the villagers' large consumption potential will be able to deliver the business a long-term high profit. In summary, when a company expands into the rural market, setting a product pricing is critical.They must take into account the peculiarities of rural consumers and measure the company's own benefit, competitor and market demand, and so on, in order to arrive at the most acceptable product price. Product strategy and pricing strategies are inextricably intertwined. Some of these tactics are discussed in this article.

Low Cost/Cheap Products: This is a standard method used by many manufacturing and marketing executives. As a result, compact unit packing keeps prices low.

Avoid Sophisticated Packing: Simple packaging can be used to reduce costs, as is now being done in the case of biscuits. Then, for rural markets, some packaging technology innovation is necessary.

Refill Packs/Reusable Packaging: Such policies have a big impact on the rural economy. The price can also be reduced by utilizing such technology. Furthermore, the packing material used should be able to be reused in rural regions. The packaging of fertilizers is an excellent example in this direction.Now companies have started packing fertilizers in high-density*polyethylene*(*HDPE*) or*low-density polyethylene*(LDPE) sacks,which are not only tamper proof but also reusable.

Application of Value Engineering: This is a technique for developing cheaper products by substituting a less expensive raw material for a more expensive one without losing the product's quality or functional efficiency. For example, in the food business, soya protein is used instead of milk protein. Milk protein is more expensive than soy protein, although both have the same nutritional value.This approach lends itself to a wide range of technical and product design applications, allowing for a low cost of entry. Manufacturing and marketing professionals must investigate these possibilities in the context of rural markets.The pricing strategy for the rural market will be determined by the potential for lowering the product's price to suit rural incomes while maintaining the product's utility and sturdiness.

Channel Strategy: When deciding on a marketing channel, we must take into account the disparities between the rural and urban markets. The rural market spans a large geographic area, with distinct consumption patterns; its marketing method, specifically "top-down supply" relationships, is comparably unique.As a result, to some extent, the choice of dealer decides whether or not the business will be successful in developing the rural market. When selecting a dealer, the company must examine not only its financial health, but also its sales network, storage and transportation facilities, and other factors that will enable it to play a good role in the rural market.Furthermore, the firm may expand the city sales point to the village through a chain store or an alliance shop of a brand retail merchant. Aside from that, the company can extend its sales network by leveraging Supply and Marketing Cooperative Society's unique advantages, such as vast sales points and extensive distribution.

Every year, over 8,000 such melas are organised in rural India, according to the Indian Market Research Bureau. Rural markets have a tradition of designating certain days of the week as Market Days, or 'Haats,' when goods and services are exchanged. This is yet another low-cost distribution option open to advertisers.Aside from that, any region made up of multiple villages is usually supplied by a satellite town known as a "Mandis," where people like to shop for durable goods. Marketing managers can easily cover a substantial portion of the rural population if they employ these feeder towns.

c) Promotion and Service Strategy: Selling staff, advertising, and corporate promotion are all examples of classic promotion methods. The local difference is large because the rural market is considerably dispersed; the expense of traditional selling persons is too high. Further-

more, the outcome is dismal. As a result, the salespeople are unfit for the development of the rural market. Marketers must be very careful while choosing the mediums to be used for communication. Only 16% of the rural population has access to a vernacular newspaper. So, the audio visuals must be planned to convey a right message to the rural folk. The rich, traditional media forms like folk dances, puppet shows, etc., with which the rural consumers are familiar and comfortable, can be used for high impact product campaigns. Radio is also very popular source of information and Entertainment, Advertisement on radio can also be a helpful tool for marketers.

d) Advertisement Promotion: Along with the rapid development of the rural communication industry, television advertising has a significant impact on farmers. In light of this scenario, a well-known company should concentrate on the most fundamental unit, such as village and town news, and utilise it to inform, gain farmer attention, and gain confidence. Furthermore, “the wall advertisement” is a unique rural market marketing method: its form is simple, the cost is low, the point is strong and functions simply, the maintenance period is lengthy, and the distribution scope is large.For example, the firm may brush the product advertisement slogan on the peasant household’s wall, causing it to be visible everywhere, using this long-term, repeatable, and latent marketing strategy. The choice of commercial content must also blend in with the rural socio-cultural setting.The advertisement should focus on the topic that the farmer is interested in, making the rural consumer believe that this type of product is necessary in their lives.

e) Business Promotion: Although business marketing is a short-term behaviour, it has the potential to encourage consumers to make large purchases. Selling on credit is a very successful strategy to sell in the rural market. The countryside home characteristic encourages the neighbour, family, and friends to regularly drop around because the countryside consumer has comparatively thick competitive psychology and mindlessly conformable psychology. As a result, the information is extremely open, and oral broadcast is the primary mode of distribution. As a result, if someone sells anything on credit, word will spread quickly, and it will cause a big number of people to buy or tick, forming a good demonstration effect. From a marketing standpoint, this demonstrativeness is a fantastic tactic that a company can employ.

f) Building up the Service Principle: In comparison to the city, which is lacking in every way, the post-sale service is one of the weakest links in current countryside marketing, and it cannot secure the farmer’s buy advantage. However, the farmer has a psychology of his own; the characteristics of rural habitation have determined that oral traditions are the primary route of information transfer.In light of this characteristic, the company should strengthen its terminal construction, providing high-quality services such as consultation, explanation, and operation after the sale, thereby forming good oral traditions and a free advertisement dissemination network.

Conclusion: Corporations entering the rural market must do so for strategic reasons rather than tactical gains, as the rural consumer is still a closed book, and companies can only make an impact in the market via steadfast dedication.In the end, the winner will be the one that has the necessary resources, such as time and money, as well as the much-needed inventive ideas to tap into rural markets. Rural marketers should devise new promotional techniques for rural markets that may convey ideas to villagers in a simple and understandable manner while also being compatible with their level of education and knowledge.

References :-

1. Anand, Sandeep and Krishna, Rajnish (2008), “Rural brand preference determinants in India”, In Conference on Marketing to RuralConsumers – Understanding and tapping therural market potential, IIMK, pp. 1-5.
2. Arora, J.S. and Arora, J.S. (2012), “New Rural Marketing Strategies of FMCG Companies in India: a study of selected rural Markets of Punjab and Madhya Pradesh”,International Journal of Research in Commerce & Management, Vol. 3, Issue 9, pp. 85-90.
3. Bhave SW, Markale A. Definitional Issues of Rural & Rural Marketing Environment, Conference on Marketing to Rural Consumers, Indian Institute of Management, Kozhikode, 3rd, 4th, 5th April, 2008.
4. Bijapurkar, Rama (2000), “The Marketing in India, The Economic Times, September 18, pp. 6.
5. Hagargi, A. K. S. (2011). Rural Market in India: Some Opportunities and Challenges. International Journal of Exclusive Management Research, 1(1).
6. Jagdish Prakash & Akanksha Srivastava (2009) Management of rural marketing opportunities and challenges. ‘SAARANSH’ RKG Journal of Management, Vol.1, pp. 1-6.
7. Sahoo, S.K. and Panda, J.P. (1995), “The rural market and rural marketing in India: challenges and strategies”, Indian Journal of Commerce, Vol.18, pp. 185.
8. Sakkthivel,A.M.(2006), Designing integrated promotion mechanisms to influences Indian rural consumers buying behaviour. Advertising Express, pp. 36-42.
9. Venukumar.G (2012), “Growth of Indian Rural Market: with reference to FMCG Sector”,South Asian Academic Research Journals, Vol. 2, No. 2, pp. 01-10.
10. Wilson, A. M. (2003) Marketing research: an integrated approach, Financial Times Prentice Hall, Harlow. Chapters 5, 6, pp. 91-143.
11. Young, C. and Robinson, M. (1992), “Visual connectedness and persuasion”, Journal ofAdvertising Research, Vol.32 No. 2, pp. 51-59.

****

रीवा जिले के विद्यालयीन प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ के योगदान के संदर्भ में प्रधानाध्यपकों की प्रतिक्रिया का अध्ययन

डॉ. लुभवानी त्रिपाठी *

शोध सारांश – शोधार्थी का उद्देश्य रीवा जिले के विद्यालयीन प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ के योगदान के संदर्भ में प्रधानाध्यपकों की प्रतिक्रिया का अध्ययन करना था रीवा जिले के 115 प्राथमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यपकों की प्रतिकिया का अध्ययन सर्वेक्षणात्मक प्रकार का था। अध्ययन में रीवा जिले के समस्त शासकीय विद्यालयों का चयन जनशिक्षा केन्द्रवार किया गया था प्रत्येक विकासखंड से 05-05 विद्यालयीन बसाहटो का जिला इकाई के रूप में न्यादर्श में चयनित किया गया था इस प्रकार शोध में कुल 115 प्रधानाध्यपकों की प्रतिक्रिया का सम्मिलित किया गया था। न्यादर्श का चयन दैव-निदर्शन विधि द्वारा किया गया था उपरोक्त शोध में पाया गया कि विद्यालय प्रबंधन में 60.00 प्रतिशत प्रधानाध्यपकों का पूर्ण सहयोगात्मक योगदान, 20.00 प्रतिशत प्रधानाध्यपकों का आंशिक सहयोगात्मक योगदान एवं 40.00 प्रतिशत प्रधानाध्यपकों का योगदान पाया गया था।

प्रस्तावना – शिक्षा शब्द संस्कृत के शिक्षा धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से बना हैं। जिसका अर्थ होता है सीखना या सिखाना। जो भी कार्य व्यक्ति को नवीन अनुभव एवं नवीन ज्ञान प्रदान करता है वह शिक्षा है। शिक्षा को केवल विद्यालय में ही प्राप्त नहीं किया जा सकता अपितु शिक्षा हर एक वो इंसान जो हमें नवीन ज्ञान से परिचित कराता हैं वह भी शिक्षा के क्षेत्र के अंतर्गत आता है। वर्तमान समाज की मांग गुणवत्तापूर्ण शिक्षा है। प्राथमिक शिक्षा, जिसे प्रारंभिक शिक्षा भी कहा जाता है। प्राथमिक शिक्षा छात्रों को विभिन्न विषयों की एक बुनियादी समझ के साथ साथ, कौशल भी प्रदान करती है, जिसे वह अपने जीवन भर उपयोग करेंगे। प्राथमिक शिक्षा आमतौर पर औपचारिक शिक्षा का पहला चरण है, जो पूर्व विद्यालय के बाद और माध्यमिक शिक्षा से पहले आता है। प्राथमिक शिक्षा आमतौर पर एक प्राथमिक विद्यालय में होती है। मध्यप्रदेश में जन शिक्षा अधिनियम के अंतर्गत प्रदेश के प्रत्येक शासकीय प्राथमिक एवं विद्यालय में पालक शिक्षक संघ का गठन किया गया।

यह संघ विद्यालयों में बच्चों के शत-प्रतिशत प्रवेश, उनकी विद्यालयों में नियमित उपस्थिति, बच्चों के लिये विद्यालयों में मध्यान्ह भोजन व्यवस्था, बच्चों की शैक्षिक प्रगति, विद्यालयों में शिक्षकों की समुचित व्यवस्था एवं सहायता करने हेतु कार्य करता है।

संबंधित साहित्य का अध्ययन – कुल हमान फेरोन 1985 ने प्राथमिक दक्षता परीक्षण परिणामों का प्राथमिक विद्यालयों की संगठनात्मक विषेषताओं व विद्यार्थियों की विशेषताओं के साथ संबंध का अध्ययन किया। इस शोध में यह निष्कर्ष निकाला गया कि विद्यालय के संरचनात्मक संगठन व विद्यार्थियों की विशेषताओं का विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों की पठन व गणित की दक्षताओं के साथ कोई सार्थक संबंध नहीं था राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के तकनीकी निर्देशन तथा सहयोग के अंतर्गत डॉ. दबे 1988 ने प्राथमिक स्तर पर छात्र उपलब्धि का अध्ययन किया। इस परियोजना का प्रमुख उद्देश्य विद्यालयों के नामांकन ठहराव का अध्ययन करना था व्यास, जे.सी. 1992 ने अपने अध्ययन 'राजस्थान राज्य में प्राथमिक स्तर पर छात्रों का अपव्यय' विषय पर शोध किया इस शोध में निष्कर्ष निकाला गया कि, अपव्यय का मुख्य कारण पारिवारिक परिस्थितिया थी। इसके अतिरिक्त कार्य अधिकता, पैतृक व्यवसाय, अभिभावकों की स्कूल में भेजने की अनिच्छा, अभिभावक निरक्षरता, अभिभावक रोगग्रस्तता आदि कारण भी थे। भंडारी, सुधोशना 1998 ने 'बच्चों के दर्ज एवं ठहराव पर मध्यान्ह भोजन के प्रभाव का अध्ययन' किया। शोध में यह निष्कर्ष निकाला गया कि जिन विद्यालयों में मध्यान्ह भोजन योजना लागू है यहा पर बच्चों के दर्ज एवं ठहराव के परिणाम बहुत अच्छे है। याजली 2000 ने 'आदिवासी क्षेत्र में प्राथमिक स्तर पर बालिका नामांकन एवं ठहराव की स्थिति का अध्ययन' किया अध्ययन में म.प्र. के बच्चे बहुत ही ज्यादा प्रेरित पाये गये। महाराष्ट्र में कम उम्र के बच्चों की देखभाल के लिये संचालित केन्द्र अच्छा कार्य कर रहे थे। शांति, एस.एवं पी. विजपाल 2002 ने अपने शोध कार्य में 'प्राथमिक विद्यालयों में विज्ञापन अभिरूचि व सामाजिक आर्थिक स्थिति' का अध्ययन किया अध्ययन में उन्होंने पाया कि दोनों चरों के बीच सार्थक सहसंबंध नहीं था। विज्ञान अभिरूचि और छात्रों की संख्या में भी विपरित संबंध था। शिल्पी एवं सनवाल 2002 ने 'प्राथमिक शिक्षा में लिंग निर्धारिक एवं अवरोध' विषय पर अध्ययन किया अध्ययन में उन्होनें पाया कि अधिकांश अभिभावक लड़कियों की अपेक्षा लड़कों के लिए शिक्षा की आवश्यकता पर बल देते है। उपरोक्त साहित्य के सर्वेक्षण से स्पष्ट हुआ है कि प्राथमिक विद्यालयों के प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ के योगदान के संदर्भ में प्रधानाध्यापकों की प्रतिक्रिया का अध्ययन के विषय में किसी भी प्रकार का शोधकार्य नहीं हुआ है। अतएव शोधार्थी द्वारा इस शोध विषय का चयन शोध हेतु किया गया है।

शोध कार्य के उद्देश्य – शोधार्थी का उद्देश्य रीवा जिले के विद्यालयीन प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ के योगदान के संदर्भ में प्रधानाध्यपकों की प्रतिक्रिया का अध्ययन करना था।

प्रविधि – उक्त अध्ययन सर्वेक्षणात्मक प्रकार का था अध्ययन में रीवा जिले के समस्त शासकीय प्राथमिक विद्यालयों में से सर्वशिक्षा अभियान की प्रशासनिक संरचना के अनुसार विद्यालयों का चयन जनशिक्षा केन्द्रवार किया गया था। प्रत्येक विकासखंड से 05-05 विद्यालयीन बसाहटों को

* विभागाध्यक्ष (शिक्षा) आईटीएम विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

जिला इकाई के रूप में न्यादर्श में चयनित किया गया था। इस प्रकार शोध में कुल 115 प्रधानाध्यपकों की प्रतिक्रिया को सम्मिलित किया गया न्यादर्श का चयन दैव–निदर्शन विधि द्वारा किया गया था। प्रदत्तों के एकत्रीकरण हेतु साक्षात्कार पत्रक का विकास शोधार्थी द्वारा किया गया था। प्रदत्तों के विष्लेषण हेतु प्रतिशत विधि एवं विषय वस्तु विश्लेषण का उपयोग किया गया था।

तालिका क्रमांक 01 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 01 से स्पष्ट है कि रीवा जिले के 115 प्राथमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यपकों की अलग अलग प्रतिक्रियायें प्राप्त हुई आगे तालिका से स्पष्ट है कि शास.पू.मा.वि. गोडहर, शास.पू.मा.वि. अमवा, शास.पू.मा.वि. रूपौली, शास.पू.मा.वि. उमरी, शास.पू.मा.वि.शैरा, शास.पू.मा.वि. परासी, शास.पू.मा.वि.पाताई, शास.पू.मा.वि.चंदहे, शास.पू.मा.वि. माडौ, शास.पू.मा.वि. रंगौली, शास.पू.मा.वि. सदहना, शास.पू.मा.वि. ठेरा, शास.पू.मा.वि. पारहदा, शास.पू.मा.वि. जोरौट, शास.पू.मा.वि. पुरवा, शास.पू.मा.वि. गौरी, शास.पू.मा.वि. मतैगवां, शास.पू.मा.वि. टंगहा, शास.पू.मा.वि. परूआ, शास.पू.मा.वि. चांदी, शास.पू.मा.वि. पनवार विद्यालयों के प्रधानाध्यपकों का विद्यालय प्रबंधन में 60.00 प्रतिशत पूर्ण सहयोगात्मक योगदान प्राप्त हुआ।

शास.पू.मा.वि. पूर्वा एवं शास.पू.मा.वि. लौर के प्रधानाध्यपकों का 40.00 प्रतिशत पूर्ण सहयोगात्मक योगदान प्राप्त हुआ इसी प्रकार शास.पू.मा.वि. गोड़हर, शास.पू.मा.वि.अमवा, शास.पू.मा.वि.रूपौली, शास.पू.मा.वि.पूर्वा, शास.पू.मा.वि.उमरी, शास.पू.मा.वि.शैरां, शास.पू.मा.वि.परासी, शास.पू.मा.वि.पताई, शास.पू.मा.वि. चंदेह, शास.पू.मा.वि.माडो, शास.पू.मा.वि.रंगौली, शास.पू.मा.वि.सदंहना, शास.पू.मा.वि. ठेरा, शास.पू.मा.वि.लौर, शास.पू.मा.वि.फरहदा, शास.पू.मा.वि.जौरोट, शास.पू.मा.वि.पुरवा, शास.पू.मा.वि. गौरी, शास.पू.मा.वि.मलैगवा, शास.पू.मा.वि.टंगहा, शास.पू.मा.वि.बरूआ, शास.पू.मा.वि.चांदी, शास.पू.मा.वि.पनवार के प्रधानाध्यपक का 20.00 प्रतिशत आंशिक सहयोगात्मक योगदान पाया गया एवं शास.पू.मा.वि गोड़कर,शास.पू.मा.वि.अमवा, शास.पू.मा.वि.रूपौली, शास.पू.मा.वि.उमरी, शास.पू.मा.वि.शैरा, शास.पू.मा.वि.परांसी, शास.पू.मा.वि.पताई, शास.पू.मा.वि.चंदेह, शास.पू.मा.वि.मांडौ, शास.पू.मा.वि. रंगौली, शास.पू.मा.वि. सदहना, शास.पू.मा.वि. ठेरा, शास.पू.मा.वि. फरहदा, शास.पू.मा.वि.जौरोट, शास.पू.मा.वि.पुरवा, शास.पू.मा.वि.गौरी, शास.पू.मा.वि. मलैगंवा, शास.पू.मा.वि. टंगहा, शास.पू.मा.वि. बरूआ, शास.पू.मा.वि.चांदी, शास.पू.मा.वि.पनवार के प्रधानाध्यपकों का 20.00 प्रतिशत एवं शास.पू.मा.वि. पूर्वा व शास.पू.मा.वि. लौर के प्रधानाध्यपकों का 40.00 प्रतिशत सामान्य योगदान पाया गया।

निष्कर्ष एवं चर्चा – 58.26 प्रतिशत प्रधानाध्यपकों का विद्यालय प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ का पूर्व सहयोगात्मक योगदान पाया गया। 20.00 प्रतिशत प्रधानाध्यपकों का विद्यालय प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ का आंशिक सहयोगात्मक योगदान पाया गया एवं 21.74 प्रतिशत प्रधानाध्यपकों का विद्यालय प्रबंधन में 'पालक शिक्षक संघ' का सामान्य योगदान पाया गया।

चूंकि ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक संबंधों का निर्वहन अच्छे तरीके से किया जाता है एवं सामाजिक सदस्यों में अधिक सामाजिक समरसता रहती है।

अत: निष्कर्ष में स्पष्ट है कि विद्यालयीन प्रबंधन में पालक शिक्षक संघ में प्रधानाध्यपकों का योगदान सामान्यत: सहयोगात्मक ही पाया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सक्सेना, पी.के. (2001): प्रारंभिक शिक्षा के उभरते आयाम एवं शैक्षिक मूल्यांकन,विनोद पुस्तक मंदिर,आगरा।
2. सिद्दीकी, एस.ए. (2004): मध्यप्रदेश संपूर्ण अध्ययन, उपकार प्रकाशन,आगरा।
3. वशिष्ट, विजेन्द्र कुमार (2007): भारतीय शिक्षा का इतिहास, प्रथम संस्करण, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
4. श्रीवास्तव, टी.सी. (2006): प्रारंभिक शिक्षा के मूल तत्व, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण।
5. Anwenshika: Indian Journal 07
6. Teacher Education. Vol-3, No-2 December -2006 Pg-99-103

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

तालिका क्रमांक 01 : प्राथमिक विद्यालयों के प्रबंधन में 'पालक-शिक्षक संघ' के योगदान का अध्ययन (प्रधानाध्यापक साक्षात्कार पत्रक के आधार पर)

क्र.	जनशिक्षा केन्द्र का नाम	न्यादर्श में चयनित प्रधानाध्यपकों की संख्या	विद्यालय प्रबंधन में 'पालक-शिक्षक संघ' का योगदान					
			पूर्ण सहयोगात्मक		आंशिक सहयोगात्मक		सामान्य	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	शा.पू.मा.वि. गोड़हर	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
2.	शा.पू.मा.वि. अमवा	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
3.	शा.पू.मा.वि. रूपौली	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
4.	शा.पू.मा.वि. पूर्वा	05	02	60.00	01	20.00	02	20.00
5.	शा.पू.मा.वि. उमरी	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
6.	शा.पू.मा.वि. रैरा	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
7.	शा.पू.मा.वि. परासी	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
8.	शा.पू.मा.वि. पताई	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
9.	शा.पू.मा.वि. चंदेह	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
10.	शा.पू.मा.वि. माडौ	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
11.	शा.पू.मा.वि. रंगौली	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
12.	शा.पू.मा.वि. सदहना	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
13.	शा.पू.मा.वि. ढेरा	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
14.	शा.पू.मा.वि. लौर	05	02	60.00	01	20.00	02	20.00
15.	शा.पू.मा.वि. फरहदा	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
16.	शा.पू.मा.वि. जोरौट	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
17.	शा.पू.मा.वि. पुरवा	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
18.	शा.पू.मा.वि. गौरी	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
19.	शा.पू.मा.वि. मलैगवां	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
20.	शा.पू.मा.वि. टंगहा	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
21.	शा.पू.मा.वि. बरूआ	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
22.	शा.पू.मा.वि. चांदी	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
23.	शा.पू.मा.वि. पनवार	05	03	60.00	01	20.00	01	20.00
	योग	115	67	58.26	23	20.00	25	21.74

****

Effects of Green Marketing on Consumer Buying Behavior

Dr. Abhishek Raizada *

Abstract - In the field of marketing, "green marketing" refers to selling environmentally friendly goods and services. Growing environmental concerns and a desire to spend money in a way that is as eco-friendly as possible have made the practice increasingly popular. Marketing efforts that stress a product's environmental benefits can be considered green marketing, which may include producing eco-friendly products, implementing eco-friendly packaging, or using marketing messages to communicate those benefits. It is less inexpensive, but it is also more profitable due to the increased demand for the product. According to some consumers and business owners, the environmental benefit is greater than the cost difference. Additionally, to supporting the environment, green and socially responsible products are the most popular among these consumers. Other consumers can also be influenced by them. Researchers examine consumer buying behaviors in relation to green marketing. What challenges would companies face if they went green and how green strategies could boost demand. It would appear from these findings that communication is crucial between companies and their customers, and prices and quality are more crucial than "corporate social responsibility". Jaipur, served as the site of this study. Rather than relying on books, journals, and websites alone, you have to collect data from different sources to understand the importance of sustainable and green management.
Keywords- Sustainable marketing, sustainable management, consumer behavior.

Introduction - In the late 1980s and the early 1990s, the term green marketing gained popularity. An educational workshop on ecological marketing was held by the American Marketing Association (AMA) in 1975. A book about green marketing, titled "Ecological Marketing", was published as a result of this workshop. As a result of these factors, green marketing uses modifications to products, production processes, packaging, and advertising. Basically, green marketing is a marketing approach that emphasizes the sustainable effects of products or services. Eco-friendly products and services can mean that they are eco-friendly in the sense that they are eco-friendly in terms of production and packaging. By addressing human needs while maintaining environmental sustainability, environmental marketing contributes to sustainability. Services are also included in the green marketing mix. Both the manufacturing and services balances in the distribution of goods and services contribute to the ozone layer's depletion and ecological imbalance. The industrial sector, however, plays a more prominent role in this respect. Environmental sustainability is a key concern for business houses when creating and selling goods and services. Both consumers and manufacturers need to be aware of green marketing.

Environmentally friendly consumers (Green consumers): It is a customer who wants to buy products that have been produced in a way that protects the environment: A typical green consumer will only buy environmentally friendly products.

In the past, to be considered "green" you had to use recycled everything, abhor meat and dairy, and wear hemp clothing. It's a bit different today. As people embrace the green they can live with, they become green consumers in a variety of forms. It is crucial to understand these types of consumers so you can brand your product accordingly.

a) Green consumers' behavior – Consumers who buy only products with a neutral or positive impact on the environment are green to the core and will spread the word about them positively and negatively. It's great to have a consumer on your side, not so great if they're against you.

b) Think Green Consumers - Consumers in this group try to act green when they can, but if it is otherwise convenient and/or doesn't match some other criteria, such as their budget, they will buy a non-green product.

c) Green Potential Consumers– Potential green consumers who are on the fence about whether they care enough about green issues but can be encouraged if it is easy and meets their needs to buy green products.

d) True Brown Consumers - These consumers ignore environmental issues and may actually avoid companies that market their goods with a strong green focus.

Behavior of green consumers: Increasingly, consumers are becoming more environmentally conscious. As businesses enhance their marketing practices to include the promotion of the environment, a great deal of their focus

* Director, Educosm Technical Campus, Jaipur (Raj.) INDIA

is being placed on identifying and identifying the green or environmentally conscious consumers. Fundamentally, green consumer behavior is the behavior of an individual who considers environmental and social issues when making purchases or not making purchases. The following components are key areas of focus for green consumer behavior: consumer perceptions of green products, how companies' market green products, how, when, and where they purchase green products and services. Marketing is focused on raising the profile and retaining this elusive and enigmatic segment of consumers, the green consumer, which external and ethical pressures may encourage businesses to adopt greener practices.

Impacts Of Green Marketing: Environmental protection and human health are two of the positive impacts of green marketing. Currently, you can use and dispose of virgin products in a pure way. In terms of production and consumption, it provides an integrated approach toward purity.

In order of impact, green marketing can be divided into the following categories

1. People are now insisting on pure products - organic fruit and vegetables, edible items, and other green products.
2. In recent years, vegetarianism has become more popular.
3. Plastic and plastic-derived products need to be reduced.
4. There has been an increase in the consumption of herbal products. Instead of plastic pieces, we suggest you use leaves, bags made of jute, and cloth instead of plastic carry bags.
5. Utilization of biofertilizers (made from worms and agro wastes) instead of chemical fertilizers (i.e., organic farming), and minimal use of pesticides.
6. Recycling of waste from industries and consumers around the world.
7. Yoga, natural therapy, and herbal medicines are becoming popular.
8. We would like to see strict provisions protecting forests, flora, and fauna.
9. Limitations on the manufacture and use of harmful weapons and atomic tests worldwide. The ecological balance is protected by several organizations from different countries.
10. Producers should feel more responsible for the consequences of their actions.
11. Controlling pollution by imposing strict standards. Environmental conservation efforts and eco-technology consideration are taken into account in the awarding of certificates for the ISO), ISO 9000, and ISO 14000 management systems.
12. World Environment Day is celebrated on 5th June.
13. Regulations that prohibit duplications and adulterations.
14. The establishment of several national and international agencies to monitor the efforts and environmental activities of companies with regard to pollution control and the production of environmentally friendly products.

Statement of the problem: Green products have become more common in today's society due to the increasing awareness of green marketing and the usage of green products. Besides awareness, we also need to consider the health harm that is caused to mankind as well. It may cause cancer if manure, fertilizer, and pesticides are used. The use of or adoption of green products for regular consumption after understanding the impact of non-organic products. In addition to identifying the strategies adopted by green product manufacturers and the challenges they face; the researcher shows interest in the positive impact of green marketing. In this case, we carried out this study.

Scope of the study: It examines what impact green buying behaviors have on the performance of markets and consumers. Jaipur is the only city covered in this study. In this study, 100 participants were chosen by the researcher.

Objective of the study:

1. To Identify the impact of green marketing on consumer behavior from corporations.
2. To provide an overview of the challenges that green marketers face.

Methodology

a) Source of data: An organized questionnaire was used to collect the primary data for this study. In addition to primary data, secondary data were compiled from books, websites, and journals.

b) Area of study: It is one of the most industrialized and commercially vibrant cities of Jaipur, which is why Jaipur has been chosen as the subject area for this study.

c) Period of study: The study was conducted during the 2016-2017 financial year.

d) Sample size: A brief measure of the number of respondents. The study includes 120 respondents. The Convenient Sampling method was used to collect the final samples for this study from only 100 respondents after non-responses occurred.

e) Tools for analysis: Descriptive or simple percentage analysis was used to analyze the data, and chi square analysis was applied.

Review Of Literature

The Indian government participates actively in the promotion of organic agriculture, as Roy and Dhumal, (2011) cited. "Agricultural Review" 2011 vol.31 (1), pages 70-74, shows that India is among the top 10 countries to have organic farming.

The Evolution Benchmarking Practices: A Review for Research Perspective, Hong PK, Hong SW, Roh JJ and Park JS (2012). An International Journal, Vol.19, No.4. p.444-462

"A Two-phase analysis of selected variables" in Advances in Decision Science, Vol.2012, pp.1-9. Langacher, D. &Cammarate, C. (2012).

Kurien GP and Qureshi MN (2012), "Performance measure system for green supply chains using modified

balanced scores and analytical hierarchical process", science research and essay, Vol. The No.36 issue of Volume 7, page 3149-3151.

Analysis and Result - Various socio-economic factors such as age, gender, marital status, educational qualification, monthly income, and family size are being examined to analyze the influence on the socio-economic profile of sample respondents drawn from green consumers in Jaipur.

Variables	Particulars	No.of res-pondents	Perce -ntage
Age	Below-20 years	10	10
	20-30 years	45	45
	30-40 years	32	32
	40 years & above	13	13
	Total	100	100
Gender	Male	43	43
	Female	57	57
	Total	100	100
Marital Status	Married	62	62
	Unmarried	38	38
	Total	100	100
Educational Qualification	Upto school level	43	43
	Degree/Diploma	22	22
	Professional	35	35
	Total	100	100
Monthly income	Upto 10000	22	22
	10000-20000	40	40
	20000-30000	28	28
	Above 30000	10	10
	Total	100	100
Family size	One member	12	12
	Two members	14	14
	Three members	40	40
	Four members	34	34
	Total	100	100

Source: Primary Data

Analysis of the 100 respondents selected for the study, majority (45%) of the respondents are in the 20-30 year age group, majority (57%) of the respondents are females, majority (62%) of the respondents are married, and majority (50%) of the respondents are young adults. Majority (40%) of those selected for the study have degrees and/or diplomas. Most respondents (40%) raised a family of three but had an income between 10000-20000.

Table 2: Factors influencing the respondents to select the Green products

Factors	No.of Resp -ondents	Percentage
Acceptableprice	15	15
Designer/companyimage	25	25
Actualgreenproductimpact	35	35
Appearance	10	10
Packing/Promotion	8	8
Durable	7	7
Total	100	100

Source: Primary Data

Based on the above table, it was found that 35 percent of respondents are influenced by green product impact, 25 percent are influenced by designer/company image, 15 percent are influenced by acceptable price, and 10 percent are influenced by the appearance among 100 respondents., 8% of respondents are influenced by packaging/promotion, and 7% by durability. The majority (35%) are influenced by actual environmental sustainability.

Hypothesis: There is no significant relationship between gender and educational qualification

Table 3: Observed frequency on educational qualification and gender of the respondents

Educational Qualification	Male	Female	Total
Upto school level	13	30	43
Degree/Diploma	10	12	22
Professional	20	15	35
Total	43	57	100

Source: Primary Data

Table 3.1: Expected frequency on educational qualification and gender of the respondents

Educational Qualification	Male	Female	Total
Upto school level	18.49	24.51	43
Degree/Diploma	9.46	12.54	22
Professional	15.05	19.95	35
Total	43	57	100

Source: Primary Data

Table 3.2: Association between educational status and gender

O	E	O-E	$(O-E)^2$	$(O-E)^2/E$
13	18.49	-5.49	30.1401	1.63
30	24.51	5.49	30.1401	1.23
10	9.46	0.54	0.2916	0.03
12	12.24	-0.54	0.2916	0.02
20	15.05	4.95	24.5025	1.63
15	19.25	4.95	24.5025	1.23
			TotalX^2=	5.77

Chi Square(X^2)= Σ (O-E) ^{2}/E = 5.77 i.e., the calculated value is 5.77

Degree of Freedom = (c-1) (r-1) = (2-1) (3-1) = 1*2 = 2

Table value = 5.99

Degree of freedom 2 at 5% level of significance is 5.99. The calculated value is 5.77 and the table value is 5.99. Since the calculated value (5.77) is less than the Table (5.99) the hypothesis is accepted.

Therefore, there is no significant relationship between gender and educational qualification of the respondents.

The The following are some aspects of green marketing:

1. The first point is that. Internal and external marketing audit (including analysis of situation).
2. The second is a. Identify the four Ps of marketing and develop a marketing plan.
3. The third point is important. Marketing strategies are implemented.

4. The fourth point is important. The results should be reviewed properly.

Green marketing poses the following challenges:

1. The first point is that. Sustainable and recyclable materials are expensive, which makes green products more expensive.
2. The second is a. Ads that make false promises and are deceptive.
3. The third point is important. Invests heavily in research and development in order to develop a technology.
4. The fourth point is important. Despite the popularity of green products, the majority of people are unaware of them and their uses.
5. The fifth point is important. Despite the popularity of green products, most consumers are unwilling to pay a premium for them.
6. The sixth point is. Promoting green marketing by educating customers.

Conclusion: Socio-economic factors need not be overlooked when considering green marketing. Green marketing is on the minds of marketers. While marketing strategists believe their customers will not value eco-friendly products or won't demand a price increase for them, they need to find ways to improve their product's efficiency, improve customer loyalty, and charge higher prices. In order to fully examine green marketing's capability, plenty of research needs to be done on it. Green marketing is still in its Moderate stages.

References:-

1. Kotler, P. and Keller, K.l. (2008), Marketing Management, 12th revised ed
2. Moller, K. and Anttila, M. (1987), "Marketing capability – a key success factor in small business?" Journal of Marketing Management, Vol. 3
3. Bhattacharyya, Dipak Kumar,(2004). Research Methodology. New Delhi. Excel Books.
4. Pa.Navanitham. (2013). Business Mathematics and Statistics. Trichy, Jai Publishers.
5. Margaret C. Perivoliotis, (2009), "Weaving Techniques Inspire Modern Jewels", fibre2fashion.com

****

An Analysis of Monetary Policy Changes in Relation to Money Supply

Dr. Mukesh Chauhan *

Abstract - The transmission of monetary policy refers to how changes to the cash rate affect economic activity and inflation. This article outlines the stages of transmission and the channels through which it occurs. The effects of monetary policy are hard to quantify, though the economy seems particularly important to the transmission process in India. A lower cash rate stimulates household spending and housing investment, partly through increasing the wealth and cash flow of households. A lower cash rate also tends to result in a depreciation of the exchange rate, leading to higher net exports and imported inflation.
Keywords- Reserve Bank of India, Monetary Policy Committee (MPC), Indian Economy.

Introduction - Finance and banking is the life blood of trade, commerce and industry. Now-days, banking sector acts as the backbone of modern business. Development of any country mainly depends upon the banking system. A bank is a financial institution which deals with deposits and advances and other related services. It receives money from those who want to save in the form of deposits and it lends money to those who need it. The banking is one of the most essential and important parts of the human life. In current faster lifestyle peoples may not do proper transitions without developing the proper bank network. The banking System in India is dominated by nationalized banks. The performance of the banking sector is more closely linked to the economy than perhaps that of any other sector. The growth of the Indian economy is estimated to have slowed down significantly. The economic slowdown and global developments have affected the banking sectors' performance in India in FY12 resulting in moderate business growth. It has forced banks to consolidate their operations, re-adjust their focus and strive to strengthen their balance sheets. Here researcher's objective is to study the Current Monetary Policy changes to evaluate its impact on Money Supply.

The Reserve Bank of India (RBI) is India's central banking and monetary authority. RBI regulates loans offered by banks and non-banking financial institutions to government entities, businesses, and consumers and controls the availability of funds in the financial system for credit.

RBI sets the direction for interest rates and price stability and conducts fund raising activities for the central and the state governments through the auction of government securities. Reserve Bank is also responsible for monitoring the foreign exchange flows into the Indian economy, managing currency exchange rates and supervising how banks and non-banking financal institutions function. RBI was originally privately owned but is now owned wholly by the Indian government. Set up on April 1, 1935 under the Reserve Bank of India Act,1934. RBI's central office was initially in Kolkata but moved to Mumbai in 1937.

One of the basic objectives of RBI is to maintain the level of money supply in the economy and for that Monetary Policy is issued from time to time in the country by the Central bank. India's central bank used to take its monetary policy decisions based on the multiple indicator approach. Its rate decisions were expected to take into account inflation, growth, employment, banking stability and the need for a stable exchange rate.

The money supply can be directly affected through reserve ratios or open market operations and can be indirectly affected by using key interest rates to influence the cost of credit. An easy or expansionary monetary policy is implemented by reducing statutory bank reserves or lowering key interest rates and improving market liquidity to encourage economic activity. A contractionary or tight monetary policy reduces liquidity and increases interest rates which has a negative impact on both production and consumption and therefore, economic growth.

Since the time of the usage of Monetary policy as a policy to maintain money supply in the economy, it has always maintained the inflation target at near zero level. But RBI had been subject to hectic lobbying ahead of each policy review and trenchant criticism after it. The Government would clamour for lower rates while consumers bemoaned high inflation. Bank chiefs would want rate cuts, but pensioners would want high rates.

In the Recent times, there has been a drastic change

*Assistant Professor, Hada Rani Govt. College, Salumber, Udaipur (Raj.) INDIA

in the approach of RBI and Central Government in relation to Monetary Policy. It has allowed them to amend the changes in Monetary Policy format to suit the current economic scenario. Now, The primary objective of monetary policy is to maintain price stability while keeping in mind the objective of growth. Price stability is a necessary precondition for sustainable growth. The government of India sets an inflation target for every five years. RBI has an important role in the consultation process regarding inflation targeting. The current inflation targeting framework in India is flexible in nature. This led to the creation of Monetary Policy Committee (MPC) in the year 2016.

Objectives of the Study:

1. To study the role of Reserve Bank of India (RBI).
2. To evaluate the concept of Monetary Policy Committee (MPC) and its relation with Money Supply.

Research Methodology: The present study explores the said subject using a qualitative research approach. This research paper is purely based on the secondary sources of the data collected from books, journals, research article, and websites.

History of Monetary Policy Committee (MPC): The MPC is not new and traces back to 2002 when the Y. V. Reddy Committee recommended for a MPC to decide policy actions. Subsequently, suggestions were made to set up a MPC in 2006 by the Tarapore Committee, in 2007 by the Percy Mistry Committee, in 2009 by the RaghuramRajan Committeeand then in 2013, both in the report of the Financial Sector Legislative Reforms Commission (FSLRC) and the Urjit R. Patel (URP) Committee.

According to the URP Committee, "Heightened public interest and scrutiny of monetary policy decisions and outcomes has propelled a worldwide movement towards a committee based approach to decision making with a view to bringing in greater transparency and accountability in India."It suggested that RBI abandon the 'multiple indicators' approach and make inflation targeting the primary objective of its monetary policy.

The erstwhile technical advisory committee (TAC) that earlier advised the RBI on interest rates. The TAC is made up of external academicians and members from within the RBI, including the governor, and it meets ahead of every monetary policy.

The TAC has no voting rights, while the MPC have them. TAC is an advisory committee and the RBI can disregard its advice, which governors have done in several instances.The members of the TAC, which was first constituted in 2005, have had tenures of two years.

Newly Created MPC: The Reserve Bank of India Act, 1934 (RBI Act) has been amended by the Finance Act, 2016, to provide for a statutory and institutionalised framework for a Monetary Policy Committee, for maintaining price stability, while keeping in mind the objective of growth.

The Monetary Policy Committee would be entrusted with the task of fixing the benchmark policy rate (repo rate) required to contain inflation within the specified target level. A Committee-based approach for determining the Monetary Policy will add lot of value and transparency to monetary policy decisions. The meetings of the Monetary Policy Committee shall be held at least 6 times a year and it shall publish its decisions after each such meeting.

Now there is a flexible inflation targeting framework in India (after the 2016 amendment to the Reserve Bank of India (RBI) Act, 1934). The amended RBI Act provides for the inflation target to be set by the Government of India, in consultation with the Reserve Bank, once every five years. The Central Government has notified **4 percent Consumer Price Index (CPI) inflation as the target** for the period from August 5, 2016, to March 31, 2021, with the upper tolerance limit of 6 percent and the lower tolerance limit of 2 percent.

The Reserve Bank's Monetary Policy Department (MPD) assists the MPC in formulating the monetary policy. Views of key stakeholders in the economy and analytical work of the Reserve Bank contribute to the process of arriving at the decision on the **policy repo rate**.

The Financial Markets Operations Department (FMOD) operationalises the monetary policy, mainly through day-to-day liquidity management operations. **The Financial Market Committee (FMC)** meets daily to review the liquidity conditions so as to ensure that the operating target of monetary policy (weighted average lending rate) is kept close to the policy repo rate. This parameter is also known as the weighted average call money rate (WACR).

Composition:

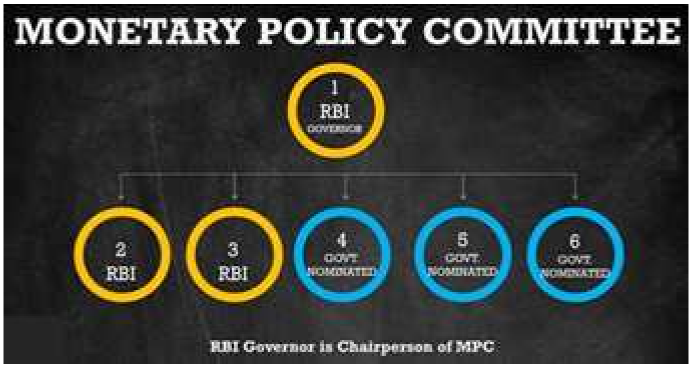

1. Altogether, the MPC will have six members – the RBI Governor (Chairperson), the RBI Deputy Governor in charge of monetary policy, one official nominated by the RBI Board and the remaining three members would represent the Government of India.
2. These Government of India nominees are appointed by the Central Government based on the recommendations of a search cum selection committee consisting of the cabinet secretary (Chairperson), the RBI Governor, the secretary of the Department of Economic Affairs, Ministry of Finance, and three experts in the field of economics or banking as nominated by the central government.
3. The three central government nominees will hold office

for a period of four years and will not be eligible for re-appointment. These three central government nominees in MPC are mandated to be persons of ability, integrity and standing, having knowledge and experience in the field of economics or banking or finance or monetary policy.

4. RBI Act prohibits appointing any Member of Parliament or Legislature or public servant, or any employee / Board / committee member of RBI or anyone with a conflict of interest with RBI or anybody above the age of 70 to the MPC.
5. The Central government also retains powers to remove any of its nominated members from MPC subject to certain conditions.

Working and Functions of MPC: The proceedings of MPC are confidential and the quorum for a meeting shall be four Members, at least one of them shall be the Governor and in his/her absence, the Deputy Governor who is the Member of the MPC.

The MPC takes decisions based on majority vote (by those who are present and voting). In case of a tie, the RBI governor will have the second or casting vote. The decision of the Committee would be binding on the RBI. As per the Act, RBI has to organise at least four meetings of the MPC in a year. (More meetings can be held if the RBI Governor is of that opinion)

The government may, if it considers necessary, convey its views, in writing, to the MPC from time to time. RBI is mandated to furnish necessary information to the MPC to facilitate their decision making and if any Member of the MPC, at any time, requests the RBI for additional information, including any data, models or analysis, the same have to be provided, not just to that member but to all members.

International Comparisons: With the introduction of the monetary policy committee, the RBI will follow a system similar to the one followed by most global central banks. The US Federal Reserve sets its benchmark fund rate through the Federal Open Market Committee (FOMC). The federal funds rate is the interest rate at which depository institutions lend balances at the Federal Reserve to other depository institutions overnight. The Board of Governors of the Federal Reserve System is responsible for the discount rate and reserve requirements, and the Federal Open Market Committee is responsible for open market operations.

Bank of England also has a MPC to decide the official interest rate in the United Kingdom . The MPC meets every month to set the interest rate and meets over three days. A representative from the Treasury also sits with the Committee at its meetings. The purpose is to ensure that the MPC is fully briefed on fiscal policy developments and other aspects of the Government's economic policies.

Conclusion: Till now RBI was having complete autonomy over monetary policy rates. But now the same will be decided by MPC, in which RBI as half member including presiding officer. Though to some extent autonomy of RBI reduced, but still RBI remains in charge of monetary policy decisions. Since the inception of MPC, the major motive is to extend the money supply in order to boost production capacity and employment opportunities. The Extended Money Supply would definitely help to provide much needed capital to an economy which is labour intensive. The Changes in the structure of Monetary Policy allowed Central Government nominee's to be included in money policy making role. But the basic idea of changes is to enhance money supply economic growth of the country.

References:-

1. https://indianexpress.com/article/india/india-others/monetary-policy-committee-will-the-reserve-bank-governor-have-the-last-say/
2. https://www.civilsdaily.com/monetary-policy-committee/
3. https://economictimes.indiatimes.com/articleshow/67296236.cms?from=mdr&utm_source=contentofinterest&utm_medium=text&utm_campaign=cppst

****

उज्जैन जिले के आर्थिक विकास में धार्मिक पर्यटन का योगदान

खुशबू परिहार *

उज्जैन जिले का परिचय – प्राचीन अवन्ती जनपद की राजधानी 'उज्जयिनी' तथा उज्जैन मध्यप्रदेश के दक्षिण क्षेत्र में मालवा के पठार पर पवित्र क्षिप्रा नदी के पूर्वी किनारे पर बसा हुआ है।

उज्जैन जिले में 6 विकासखण्ड व 7 तहसीलें है जिले के तहसीलों के नाम इस प्रकार है–बड़नगर, खाचरौद, नागदा, महिदपुर, तराना, उज्जैन, घट्टिया, उज्जैन जिला विध्यांचल गिरि के उत्तरी ढाल में एक पठार पर प्रसिद्ध क्षिप्रा नदी के किनारे बसा है। उज्जैन को महाकाल की नगरी के नाम से विश्व भर में माना जाता है उज्जैन को प्राचीन में उज्जैनी, अवन्तिका, पद्मावती, कुमुदनी, अमरावती, कुशस्थली, कनकशृंगा विशाला आदि नामों से भी जाना जाता रहा है। उज्जैन को देश के मध्य होने के कारण देश का नाभि स्थल माना जाता है। कर्क रेखा उज्जैन से होकर गुजरी है इसलिए काल गणना में उज्जैन का महत्व बहुत अधिक है।

भौगोलिक स्थिति – उज्जैन जिला मध्यप्रदेश के पश्चिम भाग में मालवा के पठार के मध्य स्थित है उज्जैन जिला 22^{0}43' उत्तरी अक्षांश से 23^{0}36' उत्तरी अक्षांश के बीच और 75^{0}00' पूर्वी देशांक्ष के बीच कर्क रेखा के समीप फैला हुआ है जिले की समुद्र से निकटतम दूरी 470 मील और समुद्र तट से औसत ऊँचाई 1698 फीट है।

जिले का कुल क्षेत्रफल 6091 वर्ग किलोमीटर है जो कि पूर्व में पश्चिम की ओर लगभग 115 किलोमीटर फैला है उज्जैन जिले की विभिन्न तहसीलों तथा विकासखण्डों की भौगोलिक स्थिति तथा समुद्र तल से ऊँचाई।

शोध प्रविधि – उज्जैन मूल्यों के संदर्भ में धार्मिक पर्यटन के प्रकार और प्रगति का निर्धारण होता है। प्राचीनकाल से ही मानव किसी न किसी रूप में देशाटन, तीर्थाटन या पर्यटन अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए करता रहा है इस कार्य में सभी लोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़कर धार्मिक पर्यटन को एक लाभाकारी विषय के रूप में देखते है चाहे वह तीर्थयात्री, सन्यासी, व्यवसायी, विद्यार्थी धर्म प्रचारक, स्वास्थ्यकर्मी, उद्योगपति कोई भी हो सभी अपने कार्यो के लिए पर्यटक के रूप में कुछ न कुछ व्यय अवश्य करते हैं। आर्थिक उदारीकरण के इस दौर में योग, अध्यात्म चिकित्सा शांति आदि को लेकर भी पर्यटन किया जाने लगा है।

शोध प्रविधि से आशय – कोई भी शोध मनगढ़त ढंग से प्रारम्भ नहीं किया जा सकता है शोध की क्रमबद्ध एवं प्रभावपूर्ण तरीके से समयकाल एवं न्यूनतम लागत एवं पूर्ण करने की कला को शोध प्रविधि कहा जाता है। अत: शोध का अर्थ ज्ञान की प्राप्ति नवीन तथ्यों को प्रकाश में लाना तथा अतिरिक्त सूचनाओं की प्राप्ति रहा है।

अध्ययन पद्धति – प्राथमिक समंक – शोध कार्य करने के लिए शोधकर्ता ने शोध स्थल पर व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहकर अवलोकन, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा समंकों को एकत्रित किया जाता है व्यक्तिगत रूप से एकत्र की गई शोध सामग्री को प्राथमिक समंक कहते है।

द्वितीयक समंक – द्वितीय समंक से आशय उन सभी सूचनाओं तथा समंकों से होता है जिन्हे शोधकर्ता स्वयं अवलोकन द्वारा एकत्रित नहीं करता अपितु वह उनसे प्रकाशित एवं अप्रकाशित प्रलेखों, अभिलेखों, डायरियों, पत्र–पत्रिकाओं आत्मकथाओं, शोधग्रन्थों तथा सहकारी प्रतिवेदनों से स्वत: प्राप्त हो जाते है जिन्हें शोधकर्ता ने निम्न विभागों से एकत्रित किये।

जिला सांख्यिकी कार्यालय मध्यप्रदेश राज्य पर्यटन विभाग, पर्यटन विभाग भोपाल से प्रकाशित साहित्य समाचार पत्र–पत्रिकाओं उज्जैन के वार्षिक प्रतिवेदन का अध्ययन कर द्वितीयक समंक एकत्रित किए गए है।

धार्मिक पर्यटन ऐसा महत्वपूर्ण उद्योग है जो केवल रोजगार के अवसर ही नहीं उपलब्ध कराता है। बल्कि मूल्यवान विदेशी मुद्रा भी अर्जित करने में मदद करता है धार्मिक पर्यटन रोजगार के अवसर और आंतरिक और सुदूर क्षेत्रों में विकास कर संतुलित और स्थायी क्षेत्रीय विकास करने में भी सहायता करता है। धार्मिक पर्यटन आर्थिक विकास में अत्यन्त सहायक होने के साथ ही विभिन्न स्थानों में बसे लोगों के मध्य परस्पर समझबूझ व सौहार्द्रता उत्पन्न करता है।

उज्जैन जिले के विकास में धार्मिक पर्यटन का योगदान – वर्तमान में पर्यटन उद्योग विश्व के प्रमुख उद्योगों में से एक है नेपाल, स्विट्रलैण्ड आदि देशों के लिए तो पर्यटन उनकी जीवन रेखा स्वरूप है। सेवा उद्योग में रोजगार के अवसर पर्यटन से जुड़े है इन सेवा उद्योगों में परिवर्तन सेवाएँ निवास स्थान और अन्य आतिथ्य उद्योग सेवाएँ सम्मिलित है। पर्यटन एक महत्वपूर्ण क्रिया है मानव अधिकार आयोग ने पर्यटन को विश्व संगठन की घोषणा में तथा विभिन्न देशों के राज्यों के संविधान के अन्तर्गत मनुष्य को अवकाश के स्वैच्छिक उपयोग का अधिकार प्रदान किया गया है जिससे वह अपनी आवश्यकता के अनुसार अवकाशकालीन आनन्द की प्राप्ति कर सकें। इसकी पूर्ति पर्यटन द्वारा होती है। इसके द्वारा पर्यटक अपने देश राज्य अथवा शहर में सामाजिक शान्ति और आर्थिक विकास की परिस्थितियों को उत्पन्न करता है जिसे वह गन्तव्य स्थल पर देखता या सीखता है। पर्यटन के माध्यम से कई क्रियाओं का विस्तार होता है, ज्ञान की नई विधाएँ खुलती है तथा राष्ट्रीयता का विकास वर्तमान परिवेश में होता है पर्यटन राष्ट्रीय आय में वृद्धि करता है क्योंकि मुद्रा पर्यटकों के माध्यम से भी देश में आती है तथा इसके द्वारा बिना व्यय के अधिक आय और रोजगार के अधिक अवसर प्रत्येक वर्ग के लिए उपलब्ध होते है।

अविकसित दर्शनीक पर्यटक स्थल, पर्यटकीय आकर्षण के कारण प्रशासन द्वारा विकसित किये जाते है तथा वहाँ के लोगों में पर्यटकों के

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सम्पर्क में आने से नई प्रेरणा और चेतना से विकास होता है। पर्यटन के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, सद्भावना एवं सहयोग में वृद्धि होती, इससे परिवहन के साधनों को प्रोत्साहन मिलता है। संचय की प्रवृत्ति जिससे जीवन स्तर घटता है पर पर्यटन प्रत्यक्ष रोक है इसमें बिना किसी कष्ट की अनुभूति के सुखद अनुभव और क्षणों के उपयोग में एक स्थान का संचित धन दूसरे स्थान पर व्यय होने से आर्थिक समरूपता बनती है।

पर्यटकों के आगमन के कारण किसी भी देश की प्राकृतिक सम्पदा का उपयोग राष्ट्रीय हित में होता है। पर्यटन से उपेक्षित पड़ी अनेक प्राचीन व ऐतिहासिक विरासतों को ना केवल संरक्षण और परिरक्षण होता है अपितु उनके महत्व के उजागर होने से वे देश के गौरव को बढ़ाती है पर्यटन रोजगार का व्यापक सृजन करता है यह एक श्रम अभिमुख सेवा है। पर्यटन में रोजगार वृद्धि की पर्याप्त सम्भावनाएँ है। आध्यात्मिक विकास के लिए पर्यटन अवसर प्रदान करता है क्योंकि अनेक धार्मिक तथा आध्यात्मिक गोष्ठियाँ बाहर तथा देश के विभिन्न भागों में आयोजित की जाती है, जिसमें भागीदार के रूप में पर्यटक अपना अपने समाज के आध्यात्मिक और नैतिक विकास का संदेश लाता है तथा आयोजक देश को अपना संदेश देता है।

इस प्रकार पर्यटन अनेक प्रकार के होते है एवं उन्हीं के अनुसार पर्यटकों तथा पर्यटन का वर्गीकरण किया जा सकता है बढ़ती रूचि और विकास के बढ़ते चरण के कारण पर्यटन के प्रकारों का सीमाबद्ध नहीं किया जा सकता।

पर्यटन प्रेरणा के मूल में व्यक्ति की प्रवृत्ति ही होती है। वह शोध एवं अनुसंधान में रूचि रखता है या फिर अपने अतीत को जानने के प्रति जिज्ञासु होता है मनुष्य की प्रेरणा पर्यटन के स्वरूप को सुनिश्चित करती है पर्यटन व्यवसाय के निरन्तर विकास के साथ ही पर्यटन के विभिन्न रूपों ने अब नवीन आकार लेना प्रारंभ कर दिया है।

पर्यटकों की रूचियों के कारण हो सकता है कि भविष्य में पर्यटन प्रवृत्तियों में कुछ और नवीन रूप उभरकर सामने आए वैसे ही आज चिकित्सा, योग, स्वास्थ्य, फोटोग्राफी, हैरिटेज, शैक्षणिक, खेलकूद इत्यादि विविध पर्यटन प्रचलन में है।

समस्याएँ :

पर्यटन स्थलों के संरक्षण की समस्या – उज्जैन जिले का प्राचीन ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्वरूप सदैव पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र रहा है किन्तु यहाँ कई प्राचीन मंदिर, किले, ऐतिहासिक स्मारक, पुरातात्विक, स्थल संरक्षण के अभाव में अपना अस्तित्व खोते जा रहे है उदाहरण के लिए बड़नगर का किला, महिदपुर का किला, रामजनार्दन मंदिर आदि प्रशासन की उपेक्षा के कारण इनका ऐतिहासिक स्वरूप नष्ट हो जा रहा है। यहाँ बढ़ते मानवीय हस्तक्षेप के फलस्वरूप जिले के कई प्राचीन महत्व के स्थलों के समीप ऊँची–ऊँची इमारतें व बस्तियाँ निर्मित हो गई है, जिससे इन स्थलों का समीपवर्ती प्राकृतिक सौन्दर्य भी समाप्त होता जा रहा है।

सुरक्षा की समस्या – उज्जैन जिले के पर्यटन केन्द्रों पर स्वदेशी एवं विदेशी धार्मिक पर्यटकों के समक्ष सबसे बड़ी समस्या सुरक्षा की है। विदेशी धार्मिक पर्यटकों के मध्य तो सदैव असुरक्षा का भय बना रहता है चोरी, लूटपाट, छेड़छाड़ आदि घटनाओं के कारण धार्मिक पर्यटकों में असुरक्षा का भाव व्याप्त हो जाता है, जिससे वे अधिकांश पर्यटक स्थलों का धार्मिक पर्यटन किए बिना ही लौट जाते है। यद्यपि पुलिस प्रशासन की त्वरित सेवा सभी मुख्य धार्मिक पर्यटन केन्द्रों पर उपलब्ध है किन्तु फिर भी धार्मिक पर्यटकों को भ्रमण के दौरान कई सुरक्षा संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है ये घटनाएँ विदेशी पर्यटकों को जिले में धार्मिक पर्यटन हेतु निरूत्साहित करती है साथ ही स्वदेशी पर्यटकों पर भी नकारात्मक प्रभाव डालती है।

परिवहन सुविधाएँ भी धार्मिक पर्यटन क्रिया को सबसे अधिक प्रभावित करती है परिवहन सुविधाओं के अभाव में कोई भी पर्यटक धार्मिक पर्यटन केन्द्रों तक पहुँचने में असमर्थ होता है परिवहन समस्याओं की पुष्टि से सड़क परिवहन के अन्तर्गत जिले के विभिन्न धार्मिक पर्यटन स्थलों तक पहुँचने हेतु पर्याप्त एवं अच्छे मार्गों का नितान्त अभाव है, साथ ही यातायात के साधनों की भी अनुपलब्धता है जिले में सड़क मार्गों की जर्जर अवस्था कम चौड़ाई आदि आवागमन को अवरूद्ध करते है सार्वजनिक वाहनों की दशा भी खराब है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. मुरलीधर सिंह: उज्जयिनी का सिंहावलोकन, मालवा ऑफसेट, उज्जैन 1995
2. डॉ. एस.एल. वरे: मध्यप्रदेश में पर्यटन, कैलाश पुस्तक सदन हमीदिया रोड़, भोपाल, 4004
3. डॉ. शिवस्वरूप सहाय: पर्यटन सिद्धान्त और प्रबंधन, 41, यूए, बंगलो रोड़ जवाहर।

****

स्त्री शिक्षा : भूमण्डलीय शोषण से सुरक्षा

डॉ. संजय सक्सेना*

प्रस्तावना – विश्व को एक ग्राम के रूप में मानना या समझना ही भूमण्डलीकरण अथवा वैश्वीकरण है। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को ब्रेटन वुड संस्थाओं याने विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन तथा संयुक्त राष्ट्र संघ ने आकार प्रदान किया है। दरअसल ''भूमण्डलीकरण एक व्यवस्था है – पूंजीवाद के एक संकट के निबटारे की व्यवस्था। पूंजीवाद का यह संकट क्या है? जिसने भूमंडलीकरण की परिघटना को जन्म दिया। यह संकट अतिरेक उत्पादन से प्राप्त अधिशेष मुनाफे को ठिकाने लगाने का संकट था। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद चूंकि तीव्र औद्योगीकीकरण से उत्पादन की गति बढ़ी और अमेरिका और यूरोप के पूंजीपतियों ने अकूत मुनाफा कमाया। लेकिन संकट इस रूप में उभरा कि इस मुनाफे को लाभकारी निवेश के रूप में कहाँ लगाया जाये। यहाँ यह ध्यान रखा जाना चाहिए की कोई भी धनराशि पूंजी उस वक्त ही कही जाती है जब वह मुनाफा कमाये। अधिशेष मुनाफा पूँजी में परिवर्तित नही हो पा रहा था अर्थात बर्बाद हो रहा था। इस संकट का तत्कालिक निबटारा भूमंडलीकरण की व्यवस्था के माध्यम से खोजा गया''[1] ब्रेटन वुड संस्थाएँ विश्व के देशों को नवउदारवादी नीतियों को अपनाने के दबाव बनाती हैं।

भूमण्डलीकरण का वर्तमान दौर सैद्धान्तिक तौर पर जॉन विलियम्सन द्वारा 1989 में प्रतिपादित वाशिंगटन आम राय पर आधारित है। इस दस सूत्री वाशिंगटन आम राय को नवउदारवाद कहे तो अधिक ठीक रहेगा।'' [2] 24 जुलाई 1991 से भारत के ग्लोबलाइजेशन यानी भूमण्डलीकरण की शुरूआत हुई। व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सर्वोत्तम उपलब्धि के रूप में लक्षित करने के कारण नवउदारवाद मुक्त बाजार और मुक्त व्यापार और निजी सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों को सर्वोपरि मानता है। नवउदारवाद में ''न केवल उत्पाद विशेष के सन्दर्भ में बल्कि जीवन शैलियों, अभिव्यक्ति के तौर तरीकों और सांस्कृतिक मामलों में भी चयन की स्वतंत्रता पर बल दिया गया। नवउदारवाद ने बाजार आधारित उपभोक्तावाद और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को आवश्यक माना। इस प्रकार उसने एक कोने में वर्षो से दुबके 'उत्तर आधुनिकतावाद' को प्रमुखता प्रदान की।'' [3] जाहिर है इसे स्वीकारने से सामाजिक आर्थिक न्याय साथ-साथ नही चल सकते। राज्य की भूमिका पूंजीपतियों के हितों की रक्षा करती है और प्रतिस्पर्धा के चलते 'समानता' जैसा मूल्य सर्वाधिक प्रभावित होता है। नागरिकों का शोषण अधिक मात्रा में होता है और उनके जनतांत्रिक अधिकारों को मिला वैधानिक संरक्षण बेमानी हो जाता है। कवि एकान्त श्रीवास्तव की यह पंक्तियां प्रासंगिक है जो वैश्वीकरण के इस दौर में मानव-मूल्यों का भारी क्षरण देखते है –

''सिक्कों का मूल्य सब जानते है
मनुष्य का मूल्य कोई नही जानता।'' [4]

स्त्री भी एक मनुष्य है – संवेदनशील मनुष्य। भूमण्डलीकरण का एक महत्वपूर्ण आयाम है – स्त्री देह का व्यावसायिक इस्तेमाल, सौन्दर्य और सेक्स का व्यापार याने स्त्री का शोषण। बाजार और तकनीक के मेल से पनप रही इस पूंजीवादी – ग्लोबल संस्कृति में शोषण के औजार बड़े महीन और अमूर्त किस्म के हैं। तकनीकी वर्चस्ववाली इस संस्कृति में मीडिया की शीर्ष-स्थानीय भूमिका है। मीडिया जिस चमकदार स्त्री की छवि को दिखा रहा है, वह अल्पसंख्यक एलीट वर्ग की छवि है। जबकि बहुसंख्यक स्त्रियां उत्पीड़न का शिकार होकर हाशिए का जीवन जी रही है। घर-बाहर उनका शारीरिक, आर्थिक और मानसिक शोषण हो रहा है।

पुनर्जागरण के समय से ही पंडिता रमाबाई ने यदि स्त्री स्वतंत्रता पर बल दिया तो सावित्रीबाई फूले ने स्त्री शिक्षा को उसके व्यक्तित्व के विकास की अनिवार्य शर्त समझा और अलग से स्कूल भी खोला। शिक्षा के अभाव में हो रहे स्त्री के शोषण को वे बहुत पहले समझ चुकी थीं। आज विज्ञानसम्मत सोच और सामाजिक चेतना ने स्त्री-शिक्षा पर बल दिया है और आज वह परम्परागत भूमिकाओं से इतर भूमिकायें भी निभा रही हैं। संविधान में लिंग के आधार पर विभेद का प्रतिषेध है। इस प्रकार स्त्री भी एक सामान्य और समान नागरिक अधिकारों को प्राप्त किये हुए है, पर यह सैद्धान्तिक व किताबी रूप में जितना अधिक दर्ज है उतना व्यवहारिक रूप में नही।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एक झटके में प्राप्त लोकतंत्र और संवैधानिक संरक्षण के बाद भी स्त्रियों को राजनैतिक न्याय नही मिल पाया क्योंकि लोकतंत्र लाने से पहले की आवश्यक सामाजिक-आर्थिक असमानता को हम नही मिटा पाये थे। हमारे समाज की स्त्रियों ने फ्रांस और इंग्लैण्ड की महिलाओं की तरह लड़कर अधिकार प्राप्त नही किये, वे उन्हें संविधान में अपने आप प्रदान कर दिये गये। यही कारण है कि भारत में ''70 प्रतिशत लड़कियां दसवी कक्षा के पहले ही पढ़ाई छोड़ देती हैं और 100 में से एक लड़की ही विश्वविद्यालय तक पहुँचती है।'' [5] यद्यपि इस स्थिति में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। आज यह प्रतिशत कुछ बदल गया है। किन्तु फिर भी लड़कियों की शिक्षा को लड़कों की तुलना में कम महत्व दिया जाता है। निश्चित रूप से इसका एक महत्वपूर्ण कारण पितृसत्तात्मक समाज है। आज भी कई महिला सरपंच ठीक से पढ़ नही पाती। उन्हें शपथ लेने में भी असहजता महसूस होती है। कई जगह उन्हें झण्डा फहराने से रोका जाता है और वह यह सब पुरूष सत्ता के चलते चुपचाप सहती हैं। इस तरह राजनैतिक अधिकारों का उपयोग भी अल्पसंख्यक शिक्षित और अगड़े तबके की महिलायें कर पा रही है। बहुसंख्यक, पिछड़ी और ग्रामीण तबके की स्त्रियां राजनैतिक अधिकारों के प्रति उतनी सचेत नही है।

विडम्बना यह है कि यदि शिक्षित ग्रामीण स्त्री अगर अपने राजनीतिक

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी) बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.) भारत

अधिकारों को लेकर सजग है और समस्त बन्धनों को धता बताकर वोट देती है तो समस्त ग्रामीण समाज स्तब्ध रह जाता है। निलय उपाध्याय की कविता इस विडम्बना को दर्शाती है –

''पढ़ी लिखी मैट्रिक पास
तब भी गऊ थी रामकली
X X X X
हाय राम!
लीप पोत दिया अपना सारा गुन
नाक कटवा दी ससुर की
पति ने मना किया – नही मानी
अकेले निकली
और सैंकड़ों मर्दो के बीच डाल आई अपना वोट''। [6]

जिस तरह एक झटके से भारत में लोकतंत्र आया, लगभग उसी तरह नवउदारवाद या भूमण्डलीकरण आया है। माना जा रहा है कि भूमण्डलीकरण वह ज्वार है जिसमें छोटी–बड़ी सभी नौकाएँ ऊपर उठेंगी, किन्तु ऐसा हुआ नही। धनी और धनी हुआ और गरीब और अधिक गरीब। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार विश्व की 98 प्रतिशत पूंजी और 99 प्रतिशत बड़े–बड़े संस्थानों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रबंधन और निर्णय लेने वाले पदों पर पुरूषों का अधिकार है। जबकि पूरी दुनिया के कुल श्रम का 2/3 हिस्सा औरत करती है और कुल मजदूरी का 1/3 हिस्सा उन्हें मिलता है।'' [7]

आज निजी कम्पनियों के विभिन्न पदों पर स्त्रियों को न्यूनतम वेतन पर रखा जाता है और कुछ उच्च शिक्षित महिलाओं को बहुत अधिक वेतन पर। लेकिन दोनों ही स्थितियों में व्यवसायियों का हित ही सर्वोपरि होता है। ''पदोन्नति के लिए महिलाओं के बीच अपने शरीर के इस्तेमाल करने की प्रवृत्ति को भूमण्डलीकृत कार्यस्थल निरन्तर प्रोत्साहित कर रहा है।'' [8] यौन शोषण और छेड़छाड़ की घटनाएँ बढ़ी है। निजीकरण के इस दौर में ग्रामीण सरकारी नौकरियॉ लड़कियों को साधनहीन, नीरस और बेरौनक प्रतीत हो रही हैं। ग्रामीण अंचलों में पदस्थ महिलाएँ वहां असुरक्षित महसूस करती हैं।

दरअसल भूमण्डलीकरण के इस दौर में महिला शिक्षा ही वह एक मात्र उपाय है जो महिलाओं को उनके अधिकारों, सुरक्षा के तरीकों, बाजार की चालाकियों, देश के संसाधनों, सामाजिक–आर्थिक–राजनैतिक व मानवीय मूल्यों से उन्हें परिचित करवाकर उनकी मानसिकता को परिपक्वता प्रदान कर सकती है। यद्यपि भूमण्डलीकृत साजिशों में एक यह भी है कि शिक्षा का निजीकरण करो, इससे उच्च शिक्षा निम्न वर्गीय महिलाओं से दूर होती जायेगी। किन्तु यही आवश्यक सरकारी हस्तक्षेप महिलाओं के हितों को ध्यान में रखते हुये आवश्यक है। सरकार को महिला शिक्षा को हर स्तर पर प्राथमिकता देनी चाहिये और उसे हर हाल में गरीबों की हद में रखने की कोशिश करना चाहिये। रश्मि रेखा ने ठीक कहा है ''पुरूषों के बराबर अधिकार पाने से ज्यादा जरूरी है, पुरूषों के समान शिक्षा का अधिकार। शिक्षा स्त्रियों का जन्मसिद्ध अधिकार होना चाहिये। तभी हम अपने शोषण की प्रक्रिया और अत्याचारियों की पहचान कर सकेंगे, अपने अधिकारों के प्रति सचेत रह पायेंगे, उनके लिए लड़ पायेंगे।'' [9] हमें यह समझने की आवश्यकता है कि स्त्री के साथ भेद–भाव सामन्ती समाज में थी और पूँजीवादी भूमण्डलीय व्यवस्था में भी है। स्त्री देह का सर्वाधिक इस्तेमाल वैश्वीकरण के दौर की प्रमुख घटना है। विज्ञापनों में पसरा उघड़ापन किसी मुक्त स्त्री का प्रदर्शन नही है यह छवि तो मीडिया निर्मित पूँजीवाद की पोषक छवि है। जिन वस्त्रों में यह स्त्री मुक्त दिखती है उन्हें वह स्वयं सार्वजनिक रूप से नही पहन सकती बल्कि इन उत्तेजक छवियों का खामियाजा ग्रामीण स्त्रियों को भुगतना पड़ता है क्योंकि वहॉ वे निस्सहाय, सुलभ और सर्वाधिक असुरक्षित होती है और पुरुष उनका शोषण आसानी से कर पाते है। बलात्कार, दहेज प्रताड़ना, घरेलू हिंसा, छेड़छाड़ की घटनायें निरंतर बढ़ रही है। स्त्री को घर के अन्दर व बाहर दोनों ओर चौकन्ना रहना होता है। आखिर उसका श्रम घर में अवैतनिक और बाहर वैतनिक जो है। अक्सर देखा जाता है कि दैहिक शोषण करनेवाले करीबी रिश्तेदार निकलते है किन्तु इस प्रकार के मूर्त शोषण का मुखर प्रतिरोध भी किया जा सकता है। समस्या वहां है जहां यह शोषण अमूर्त है।

आज स्त्री का शिक्षित होना ही जरूरी नही है। शिक्षा को भी इस प्रकार दिया जाना चाहिये जो स्त्रियों में विवेक जाग्रत करें। वह समझे दरअसल उन्हें क्या चाहिए। वह निर्णय लेने के लिए तो स्वतंत्र है किन्तु निर्णय लेने की परिपक्वता उनमें निश्चित रूप से आनी चाहिए। समय तो निश्चित रूप से बदला है। रोजगार की संभावनाएँ तो निश्चित रूप से बढ़ी है, आत्मनिर्भर होने के अवसरों में भी बढ़ोतरी हुई है। पर इन सबके बाद कार्यस्थल और सुरक्षा प्रबन्धों को भी स्त्री को ध्यान देना होगा। तकनीक ने यदि सुविधा दी है तो शत्रु को भी अमूर्त बना दिया है। उसे पहचानना होगा कि उसके श्रम तथा देह का वास्तविक शोषक कौन है? मूर्त वह स्वयं है और शत्रु अमूर्त। अत: शिक्षा से प्राप्त विवेक ही सुरक्षा का प्रमुख उपादान है। निर्णय करने में सहायक है।

मनोविश्लेषण पर लम्बा कार्य करने वाले सिगमंड फ्रायड भी इस बात को नही जान पाये कि आखिर स्त्री क्या चाहती है। अत: स्त्री को समझना होगा उसे क्या और कितना चाहिए? स्त्री को सिर्फ निर्णय लेने की स्वतंत्रता ही नही चाहिए बल्कि उसे निर्णय लेने की क्षमता और दक्षता भी हासिल करना है। निश्चित रूप से यह कार्य शिक्षित हुए बिना सभंव नही है। तभी वह यह समझ सकेगी कि उसके व्यक्तित्व के विकास की सही दिशा कहां है, तभी उसकी दशा भी परिवर्तित होगी। भूमण्डलीकृत अंधकार से बचने हेतु स्त्री को शिक्षा की ज्योति की आवश्यकता है, जिसके प्रकाश में वह अपनी छवि को बनाये–बचाये रह सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. संजीव कुमार जैन : भूमंडलीकरण और हिंदी उपन्यास : पृ0 2, पहले पहल प्रकाशन 2012
2. गिरीश मिश्र : जनसत्ता 22 दिसम्बर 07
3. गिरीश मिश्र : जनसत्ता 22 दिसम्बर 07
4. एकान्त श्रीवास्तव : बीज से फूल तक – पृ0 23
5. मेघना शर्मा – मनोरमा ईयर बुक – 2002 – पृ0 14
6. निलय उपाध्याय – अकेला घर हुसैन का – पृ0 77
7. रश्मि रेखा : स्त्री विमर्श से जुड़े कुछ सवाल – लेख – पहल –75, पृ0 222
8. अभय कुमार दुबे – पितृसत्ता के नये रूप – लेख – भारत का भूमण्डलीकरण – पृ0 240
9. रश्मि रेखा : स्त्री विमर्श से जुडे कुछ सवाल – पहल –75, पृ0 222

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Prevalence of Protein-Energy Malnutrition in Pre-School Children in Slums of Varanasi City

Parvati Singh *

Abstract - India is one of the developing countries which exhibits faster growth in every sphere of human life but ever-increasing population is causing a negative impact, hence resulting in slow growth curve of the country. Moreover, rapid industrialization and urbanization in the country leads to mass migration of unskilled people from the rural areas to the metropolitan cities in search of better livelihood, but in cities they are forced to live in underprivileged conditions with lower living standards (such as overcrowding, unhygienic conditions, poor sanitary conditions etc.) than the national standard. One of the distressing realities of urban life today is the massive proliferation of slums in most of the metropolitan cities. One estimate suggests that about half of the population of most of the Indian cities would be residing in slums by the end of next few decades. In Uttar Pradesh there are more than three thousand urban slums out of which about one tenth are found in Varanasi district. In one estimate it has been shown that in slums about 50% children were found to be affected due to poor nutrition. Taking into account, in the present study two hundred sixty pre-school children (13-60 months) were selected randomly from thirty two slums of Varanasi city to analyze protein-energy malnutrition (PEM).Data related to the nutritional status of these children were recorded by 24 hour dietary recall using questioner cum - interview method. About 77.3 % children were found to suffer from PEM. The severe degree of malnutrition was more dominant in girls, while the mild and moderate degree of malnutrition was prevalent in boys. The study points out that the prevalence of PEM among children of selected slum area was found to be correlated with the socio-economic conditions, lack of knowledge related balanced diet and poor hygienic conditions.
Key words- Pre-school children, Slums, Protein energy malnutrition.

Introduction - Children between one to five years (13-60 months) of age are the most vulnerable section of our population. They constitute about 20 % of total population. The rate of children's malnutrition in the West of Asia has been reported to be 19% (Galal, 2003) whereas in India it is quite high. Among developing countries, India exhibits faster growth in every part of human activities; however, expanding population has shown appreciable de-acceleration in the growth curve. In recent years, the urbanization and industrialization in our country is increasing with faster speed, and as a result a large number of people in metropolitan cities are forced to live in underprivileged conditions. Thus, their living standard is below the national standard (Bag et al., 2016). In some parts of the developing world, the population migrating from rural area for settlements in and around cities which are characterized by poor-quality of housing, a lack of adequate living space and public services, and accommodating large numbers of informal residents are generally referred as "slums" (Marx et al., 2013). One of the distressing realities of urban life today is the massive proliferation of slums in most metropolitan cities in our country. One estimate suggests that approximately half of the population of some Indian cities would be residing in slums by the end of this century (Marx et al., 2013). In Uttar Pradesh, about three thousand urban slums are reported and about one tenth of this are found in Varanasi city alone. In one estimate it has been shown that in slums about 50% children were found to be affected due to poor nutrition. It has been observed that during the rapid growing period i.e. early childhood, the malnutrition is most marked which leaves physical and mental scares and hence, hampers the growth of children in later stage of growth. Recently, UNICEF in one of its reports mentioned that there is the highest number of malnourished children in South Asian countries where malnutrition emerged as a silent and invisible emergency; affecting children at large in urban slum areas. The key factors involved are poverty (low income), ignorance (knowledge regarding general health), insufficient education among population, lack of knowledge regarding the nutritive value of foods, inadequate sanitary environment, large family size, etc. in the slum areas (Acharya and Samantray, 2016). The number of malnourished children of 1-5 (13-60 months) years of age may be more than 830 million, and in India alone this figure may be beyond 6,00 million and thus, about 48% of children are malnourished which is even higher than the percentage found in neighboring countries such as Pakistan (42%) and Bangladesh (43%).

*Asso. Professor (Home Science) Mahila Seva Sadan Degree College, New Bairahana, Allahabad (U.P.) INDIA

Considering the above fact, the present study was undertaken where 260 pre-school children (13-60 months) were selected randomly from thirty two slums of Varanasi district during 2013-2015 to assess protein-energy malnutrition (PEM).Data related to the nutritional status of these children were recorded by using questioner cum - interview method and anthropometric measurement i.e. weight was recorded by weighing machine. Classification as recommended by Indian Academy of Pediatrics for protein energy malnutrition (PEM) is taken into consideration for nutritional status: Weight -50th percentile of Harvard standard and classified as normal (Above 80 per cent), mild (71-80), moderate (61-70) and severe (60 per cent and below).

Methodology

Study design: This is a cross-sectional study that was conducted to investigate the prevalence of protein energy malnutrition (PEM) and associated factors among children aged 13-60 months.

Study area and period: The study was carried out in randomly selected thirty two slum area of Varanasi city, Uttar Pradesh, India. The study was undertaken during the year of 2013-2015.

Study population and method: The study was designed to include all eligible aged 13 to 60 months of preschool children. There were 260 children including both girls and boys who have been included in this study. PEM in the study was defined as Nutritional status: Weight - 50th percentile of Harvard standard as recommended by Indian Academy of Pediatrics for protein energy malnutrition (PEM) is taken into consideration. Data collection related to the nutritional status of children was recorded by 24 hour dietary recall and other demographic and socioeconomic data on the subjects were collected using questionnaire cum interview method. Anthropometric parameter such as weight was recorded by weighing machine.

Results

Distribution of sample size by age and sex: In the present study the classification of all the selected children were done according to their respective age and sex (Table 1). Out of total 260 children studied among 13-60 months of age, there were 138 (53.1%) boys and 122(46.9%) girls. The sample contains a maximum 89 (34.2%) children in age group of 25-36 months, while a minimum size of sample 49 (18.8%) children belonged to the age group of 49-60 months.

Table 1. Distribution of children according to age and sex

Age group in months	No. of children		
	Male	Female	Total
13-24	35(13.4%)	27(10.4%)	62 (23.9%)
25-36	47(18.1%)	42(16.2%)	89 (34.2%)
37-48	31(11.9%)	29(11.1%)	60 (23.1%)
49-60	25 (9.6%)	24 (9.2%)	49 (18.8%)
13-60	138(53.1%)	122(46.9%)	260 (100%)

Protein energy malnutrition (PEM): The prevalence of protein energy malnutrition varies greatly according to the host factors like age, gender, physiological causes, pathological causes, nutritional factors, environmental factors and socio-economic conditions. Though the PEM, a disease is reported to be multifactorial in origin, however, this study indicates that age, sex, family income and mother literacy status affect the PEM level in children of these slums. Here, some of the inferences are given.

Prevalence of PEM according to the age and sex: Out of the 260 children of 1-5 years of age surveyed, 201 (77.3%) were found malnourished. Prevalence of PEM in the studied area was found to be the lowest i.e.72.6% among children in 13-24 months of age group (Table 2). Thereafter, an increase in the prevalence of PEM was noticed up to 37-48 months of age group, showing about 76.4% in the age group of 25-37 months and 85% in the age group of 37-48 months and with rise in age i.e. 49-60 months, the PEM exhibited a decline trend i.e. 75.5%. Overall 77.3 % children suffered with PEM. Only 22.7% children were weighed more than 80% of standard showing normal health.

Table 2. Distribution of prevalence of PEM according to the age

Age group in months	No. of Children	Prevalence of PEM in children	
		No. of children	% of children
13-24	62 (26.3%)	45	72.6
25-36	89 (31.0%)	68	76.4
37-48	60 (21.7%)	51	85.0
49-60	49 (21.0%)	37	75.5
13-60	260 (100%)	201	77.3

It was also inferred from the results that PEM prevalence was 53 % among male children and 47% among females. Maximum 38.5% children had moderate degree malnutrition, while 31.9% and 06.9% had mild and severe degree of PEM, respectively (Table 3). Mild and moderate degree of PEM was greater among male children, while severe degree of malnutrition was comparatively more prevalent in female children than in male children.

Table 3. Distribution of prevalence of PEM by sex

Grade of Protein Energy Malnutri -tion (PEM)	No. of children suffering from PEM				
	Total	Male		Female	
	No. of children	No.	%	No.	%
Mild	83 (31.9%)	43	52	40	48
Moderate	100 (38.5%)	55	55	45	45
Severe	18 (06.9%)	08	44	10	56
Combined	201 (77.3%)	106	53	95	47

Prevalence of PEM by per capita monthly income and literacy of mother:

The relation of PEM with per capita monthly income of family was correlated with the prevalence of PEM among children (Table 4). It was noticed that the highest (85%) prevalence of PEM was among children belonging to the lowest per capita monthly income. The PEM prevalence decreased with the increasing per capita income of family and only 14 % children suffered from PEM in the highest

income group recorded in current study.

Table 4. Prevalence of PEM by per capita monthly income of family

Per capita monthly income (Rs)	No. of children	Prevalence of PEM	
		No. of children	%
1000-1500	86	73	85
1501-2000	130	104	80
2001-2500	37	23	62
2501-3000 and above	07	01	14
All groups	260	201	77

The results of current finding reveal that there was an increase in the magnitude of PEM which was found to increase with the decrease in literacy of mother. Maximum prevalence (85%) of PEM was noticed in the children whose mothers were illiterate while children of graduate mothers did not show the sign of protein- energy malnutrition (Table 5).

Table 5. Distribution of prevalence of PEM by literacy of mother

Literacy of mother income (Rs)	No. of children	Prevalence of PEM	
		No. of children	%of PEM
Illiterate	112	99	88
Primary school	90	68	76
High school	41	27	66
Intermediate	14	7	50
Graduate	03	—	—
All groups	260	201	77

Discussion: Among preschool children malnutrition is most serious problem recognized by the World Health Organization (WHO), which indirectly or directly causes an annual death of at least 5 million children worldwide (Payande et al., 2013). This study quantifies the prevalence of PEM among preschool children in the selected urban slums in Varanasi district of Uttar Pradesh, India which can serve as a baseline for assessing future patterns. It was observed that the intake of calorie was more where rice was the main source of food for them. But protein, fat, vitamin C and vitamin A intake was very less as compared to the normal diet (data not shown); hence the children are suffering from protein energy malnutrition with some deficiency diseases. It was observed that the PEM percentage among preschool children was 77.3 which are quite higher than the level (46%) of PEM in th ecountry (IIPS, 2007). A gradual increase in PEM level up to 37-48 months of age was noticed and thereafter it showed declining trend. This could be due to delayed weaning, recurrent infections and inadequate food intake. Prevalence of mild and moderate degree of PEM was slightly higher in male children whereas severe degree of PEM was comparatively prevalent in female children than in male children. The present results are incongruent with finding of Tiwari et al. (2016) where PEM was prevalent in urban slums of Mumbai, India and slums of Barielly (Srivastava et al., 2012). The possible reasons for the observed differential prevalence of PEM among male and female children were due to their behavioral patterns (Casie et al., 2013). The results of present study showed that mother's literacy was responsible to some extent for the prevalence of PEM among preschool children as lack of knowledge of the mother about dietary requirements and the nutritive value of different foods is the main contributory cause for the widespread occurrence of malnutrition among them, and similar observations were also made in the finding of Acharya and Samantray (2016). Despite of several reasons the financial status of family appears to be contributing a greater role in protein energy malnutrition in the children residing in slums area. This situation can be overcome by active participation of government and non-government organizations and that is also in time frame manner.

Conclusion: The percentage of PEM was appreciably higher among female children in the age group 49-60 months than male children and this could be due to preferential treatment and feeding of male children over female children. Thus, the study reflects the view of our male dominated society. Moreover, the prevalence of protein calorie malnutrition varies greatly according to the host factors like age, gender, physiological causes, pathological causes, nutritional factors, environmental factors and socioeconomic conditions of family. It can also inferred from the present study that the nutritional knowledge of the mother should be enhanced by organizing some awareness programs to achieve positive changes in health practices and the recognition of health needs among the preschool children.

References:-

1. Acharya S. and Samantray P. (2016). Incedence of malnutrition among pre-school children in slum area of Berhampur and Ganjam district. Journal of Food Scienceand Research, 7(1): 125-129.
2. Bag,S., Seth,S., Gupta, A. (2016).A comparative study of living conditions in slums of three metro cities in India. Working paper No. 253, Delhi school of Economics,Centre for Development Economics.
3. Casie T., Ruwan R., Mark M.(2013). Measuring local determinants of acute malnutrition in Chad: a case-control study. Lancet, 381:144.
4. Galal O. (2003). Nutrition-related health patterns in the Middle East. Asia Pacific Journal of Clinical Nutrition, 12(3), 337-43.
5. International Institute for Population Sciences (IIPS). (2007). National Family Health Survey (NFHS-3), 2005-06 India. IIPS: Mumbai.
6. Payande, A., Tabesh, H., Shakeri, M. T., Saki, A., Safarian, M. (2013). Growth Curves of Preschool Children in the Northeast of Iran: A Population Based Study Using Quantile Regression Approach. Global Journal of Health Science, 5(3), 9.http://dx.doi.org/10.5539/gjhs.v5n3p9
7. Marx B., Stoker T., and Suri T. (2013).The Economics

of Slums in the Developing World. Journal of Economic Perspectives, 27(4) 187-210.

8. Srivastava A.,Bhushan K.,Mahmood S. E., Shrotriya V.P.,Mishra S. P.,Shaifali I. (2012) Nutritional status of under five children in urban slums of Bareilly. Indian Journal of Maternal and Child Health, 14(1) www.ijmch.org

9. Tiwari S R., Bandi J R., Awasthi S R.,Sharma A. k. (2016).Assessment of prevalence of protein energy malnutritionin under 5 year children in an urban slum of Mumbai, India and to associated factors. International Journal of Community Medicine and Public Health, 3(5), http://dx.doi.org/10.18203/2394-6040.ijcmph20161371

****

Human Rights as the Natural Rights

Dr. Aditya Kumar Singh *

Abstract - The phrase "rights" in general refers to a legal or moral claim to something. According to the law, individual rights are violated. He has a legitimate claim for damages/compensation that society acknowledges and that is legally sanctioned. It might be both a Fundamental Right and a Human Right. Fundamental Rights are a person's rights that are recognised by society and maintained by the Supreme Court. Human Rights, on the other hand, are essential rights to a decent standard of living.
Keywords- Rights, Claims, Human being, natural rights, fundamental rights.

Introduction - Human rights theories today are commonly thought to be founded on a natural rights view of human rights. Human rights are usually thought to be what Locke and his successors meant by natural rightswhich are possessed merely by virtue of being a human being. 'In the sense that they are drawn from human nature, they are natural rights. Every citizen has specific rights, which the government safeguards. In general, the term "rights" refers to a legal or moral claim to anything. Individual rights are breached, according to the law. He has a plausible claim for damages/compensation that society accepts and that is sanctioned by legislation. It may be a Fundamental Right as well as a Human Right. Fundamental Rights are the rights of a person that are acknowledged by society and upheld by the Supreme Court. Human Rights, on the other hand, are the fundamental rights to a fair quality of life.They only differ in that each country has its fundamental rights, which are unique to that country. In contrast, human rights exist for all people and are thus accepted worldwide.

Many natural rights theorists use a positivist approach to rights. Aside from that, the general propensity to see natural rights as absolute is a typical source of exaggeration of the power of human rights arguments framed in terms of natural rights. There could only be one natural right, if natural human rights were absolute," unless we accept the absurd premise that rights never conflict with one other. However, even the most modest list of globally recognized human rights contains a wealth of rights. Reasoning and experience bring the premise of absolute natural rights into doubt. Human rights are not regarded as though they exist without exception in society. Anti-suicide law, libel legislation, compulsory schooling, and obligatory vaccination or treatment for certain illnesses are examples of exceptions to basic human rights; although usually controversial, exceptions are reasonable.Rights typically take precedence over other factors, and they usually take precedence over purely utilitarian reasons. This is one of the most significant aspects of rights claims.Natural rights will be similarly maintained if human nature is possessed globally, equally by everyone, and with no requirements other than that one be a human being. However, the fourth aspect that the right is held against the whole world is significantly different. It determines the bearers of the corresponding obligations of these rights rather than the nature of the right-holder and key aspects of the distribution of human rights. Natural rights are what lawyers call rights in rem, or rights to a "thing" that apply to everyone who is in a position to violate the rights, i.e., they apply to the whole universe. The fundamental human character of natural rights is primarily a moral essence, which human rights seek to defend. Human dignity is commonly used to describe this. Absolute moral equality, articulated as equality of regard, is an important component of that dignity. Human rights reflect this absolute minimum of respect, and unless they were rights in rem, only some would be obligated to render it; that is, some individuals would not be required to consider others as entirely moral beings endowed with the very minimum of human dignity.

Fundamental Rights are safeguarded in our constitution and are enforceable in a court of law; if an individual's right is violated, the concerned person may go to court to vindicate their right; this is how they are known as Fundamental Rights. In the case of Fundamental Rights, the rule of law applies, which means that it applies equally to all persons. People are not discriminated against because of their caste, religion, gender, ethnicity, or origin. It assures that the people of the nation enjoy civil liberty, allowing all individuals to live their lives as they see fit.

Meaning of Fundamental Rights and Human Rights - Fundamental rights are described as The Rights that ensures the civil liberty of the citizens of the country,

*Associate Professor (Political Science) Swami Shukdevan and College, Shahjahanpur (U.P.) INDIA

irrespective of their race, caste, gender, place of birth, or religion and allow the citizens of the country to lead their life as per their wants are known as fundamental rights.(Paper Masters)

Human rights are described as "the essential rights and freedoms of a person, from birth to death, which all Human beings are entitled to."(Key Differences)

As the name indicates, Fundamental Rights are the fundamental rights of a country's people that have been sanctioned by the Supreme Court and are acknowledged by society. These are incorporated in the constitution and are enforceable in a court of law. If there is any violation of the right, the person may go to court to protect his/her right, which is known as basic rights.Fundamental Rights are the fundamental rights of people that are defensible and enshrined in the constitution.The Universal Declaration of Human Rights is a text that outlines the many rights that all people are entitled to. According to the Universal Declaration of Human Rights, human rights are for everyone and should be enjoyed by all people regardless of their place of origin, religion, or other factors. The Universal Declaration of Human Rights includes various civil and political rights such as the right to life, the right to privacy, the right to free expression, and so on, as well as various economic, cultural, and social rights such as the right to social security, the right to education, the right to belief and religion, and so on.

Fundamental Rights apply to all individuals equally, regardless of caste, religion, gender, colour, or origin. It ensures civic liberty, allowing all people to live their lives as they see fit.

The following are the fundamental rights in India:

1. Right to constitutional remedies
2. Right to equality
3. Educational and Cultural rights
4. Right against raising voice against exploitation
5. Right to freedom
6. Right to freedom of adopting and following religion
7. Right to Privacy(Key Differences)

Human Rights are absolute as well as universal and basic moral claims because that they apply to all human beingsandare inalienably required to live a perfect life. These are necessary for all persons, irrespective of their creed and nationality, caste and birthplace, citizenship or other position. Individuals have equal human rights and are not subjected to discrimination. Human Rights are the basic rights that fight for establishment of justice, equality, freedom, and respect for everyone. These are very important for societal growth since they eliminate injustice, exploitation, discrimination, and inequality. Common human rights include nondiscrimination, equality before the law, the right to life, the right to education, liberty, and personal security, the freedom of expression, the right to free movement, and so on.Natural rights theorists claim that people have the right to be treated in particular ways just because they are people, as human beings. These entitlements are manifested as human rights, which help to safeguard or actualize core human characteristics, potentials, or possessions. What one is entitled to merely as a person is a function of a human nature theory, a philosophical anthropology that gives an explanation of what it is to be a human being or moral person.A natural rights theory defines the source of human rights, but it does not give a list of human rights; it describes the form of the rights, while the substance is supplied by the specific theory of human nature.

References :-

1. Key Differences. 12 11 2014. Web. 14 July 2016.
2. Paper Masters. 19 May 2015. Web. 12 June 1915.

****

Social and Economic Status of Textile Workers in Unorganized Powerloom Sector of Uttar Pradesh

Dr. Arvind Prakash*

Abstract - Indian powerloom industry is an export oriented cottage industry, Powerloom workers are an important section of the unorganized working class. They play a crucial role in the process of cloth production of the country through powerloom. The powerloom industry is a weaving sector and an important segment of the decentralized cotton textile industry in India. Powerloom industry weavers grey cotton by power-operated machines or looms and works into a fabric with the help of warp in the form of beam and weft directly through bobbins. Beams come from processing mills and weft directly through bobbins. Beams come from processing mills and weft yarn from spinning mills. Powerloom industries are functioning the middle level work in the cloth production. This paper highlights social and economic status of unorganized powerloom sector. This sector contributes percent of the total cloth production of the country and provides employment to about lakh persons in India. In as a whole, the powerloom sector, among others, has been producing maximum cloth till today. This industry generates a number of employment opportunities. Bur there is a lot of problems of the unorganized powerloom sector as well as of the workers engaged in the industry and unless these problems are solved, the overall Improvement of the industry as well as the worker's living condition cannot be achieved.
Keywords - Textile workers, Unorgnizedpoerloom sector of Uttar Pradesh, Social and economic status.

Introduction - Apparel has retained an important place in human life starting from historical era to today's modern world. Apparel industry in the contemporary market is a global industry. The history of clothing production can be traced back to the year 2000 BC. Apparel production become one of the large scale economic activities providing significant employment, next to agriculture. The Indian textile and clothing industry provides a valuable wealth of craftsmanship both skilled and semi-skilled work force which is the major contributor towards the development of apparel units.

Textile and apperal industries are vital parts of the world economy, providing employment to tens of millions, mostly, women workers in nearly two hundred countries. The garments industry is experiencing production and organizational changes globally, with deepening trade activity altering employer-employee relation. The world garment industry is on the threshold of far reaching institutional changes in the near future. Despite being one of the most global industries in the world, the exemplary trade practices in a globallzing world are still distorted in favour of advanced economics. Over the past 3-4 dedcade, trade restrictions, price and quality; have come to play a major role in conditioning the patterns of the sector's development.

Traditional giants in the production of textile and apparels are China, India, Pakistan and Vietnam which are competing with each other. Although the industries are geographicallydisoersed throughout the world, today, China dominates the scene with respect to textiles to textiles and apperals.(Tondan and Reddy)

Indian Textile Industry - Indian textile industry is one of the major sectors of Indian economy largely contributing towards the growth of the country's industrial sector. Textile sector contributes 14 percent of Industrial production, 4 percent of national GDP and 10.63 percent of country's export earnings. The opening up of the sector through liberalization policies set up by the Indian Government have been given the much-needed thrust to the Indian textile industry, which has now successfully become one of the largest in the world. Textile sector in India provides direct employment to over 35 million people and holds the second position after the agriculture sector in providing employment to the masses. Growing at a rapid pace, the Indian Market is being flocked by foreign investors exporing investment purposes and with an increasing trend in the demand for the textile products in the country, a number of new companies and joint ventures are being set up in the country to capure new opportunities In the market.

The Indian textiles, renowned for their fineness and captivating colours for ages beyond 5000 Years, have attracted connoisseurs, from all parts of the world. India had numerous trade links with the outside world and Indian Textiles were popular in Rome in the ancient world. Indian

*Associate Professor (Economics) Feroze Gandhi College, Raebareli (U.P.) INDIA

silk was popular in Rome in the early centuries of the Christian era. Hoards of fragments of cotton material originating from Gujarat have been found in the Egyptian tombs at Fosters, belonging to 5th century A.D. Cotton textiles were also exported to chine during the heydays of the silk route. Silk fabrics from south Indian also exported printed cotton fabrics or chin (Chintz-cotton cloth, usually printed with flowery pattenrs that slightly shiny appearance) to European countries and the Far East before the advent of the European in India (Ramaswamy, 1985).

Powerloom Industry in India - Powerloom industries one of the oldest and largest industries in India. In 1854, four cotton textile units began with the operation made by handloom and not by powerloom. The first attempt was made to start the textile mill in Calcutta any an Englishman named Bowroch in 1818, and in south India by Frank Harvey, in 1885. Aspinning unit of 10,000 spindless was put up to work at Ambasamundrum. The number of mills was increased to 261 in 1911. During the First and Second World Wars, the demand for the Indian textile increased. In India, the fibers, cotton, silk, wool and jute. Tamil Nadu, Maharastra, Gujarat account for the bulk of the productions of yarn and growth in the organized sector. In India, in 1950's the powerloom industry occupied around 5 percent, handloom was 45 per cent and mill sector was 50 percent in cloth production. At present, Powerloom industry dominates the handloom and mill sector, as 62 percent of cloth production come from the Powerloom industry and remaining from the Powerloom, hosiery and mill sector. The main reason for over the growth of sector and handloom sector is that the cost of production is higher in the mill sector than in Powerloom industry (Aryer, 1971).

The organized sector of the textile industry represents the mills. It could be a spinning mill or a composite mill. Composite mill one where the spinning, weaving, and processing facilities are carried out under one roof. On the other hand, the decentralized sector has been found to be engaged mainly in the weaving activity, which makes it heavily depend on the organized sector for their yarn requirement. This decentrailsed sector is comprised o the three major segments- powerloom, handloom and hosiery (Muthu).

Social and Economic Profile - Social and Economic status is an economic and sociological combined toal measures of a person's work and of an individual of a family is economic and social position in relation to others, based on income, education and occupation, when analyzing a family's social and economic status, Education are stressed as in important achievement both within the household as well as in the local community. But in poor areas where food shelters are priorities, education can take a backseat. So the most important factors of social and economic condition are income, Education, and Occupation. Thus powerloom industry has grown up from handloom sector traditionally with inhere technical know how passed on from forefather and is being continuing in many of the clusters. The decentralized powerloom sector plays an important role in Indian textile and Clothing Industry. The powerloom sector carters for about 62 percent of total fabric production in the country. Powerloom helped to achieve many of the social and economic goals of our planning. Thus, the growth of the powerloom sector, leads to the development in other fields of the economy, such as transportation, banking and communication etc, powerloom unit is said to be an effective way of implementing the programme of 'GaribiHatao' (Nisa).

Weavers of Early Times - India has been making cotton cloth since time immortal. The centre process of manufacture of cloth was initially done by weavers at their own homes with the help of their family members. Cotton was bought directly from farmers. The weaver and his family would gin the cotton to separate the fibre from the seeds, card it to make it fluffy and then spin it into thread or yarn on their spinning wheels. The yarn was woven into cloth a loom and then dyed to it beautiful colours. All this was done at home.

The weavers and his family would work at whatever time suited them. When it become very hot and the yarn began to snap because of the heat they would stop working. They could also take a break if they had some other work like going to the market. When the cloth was ready the weaver sold it to a merchant who came to the village of himself took it to the town or the weekly village market to sell. How would sell it wherever he got the best price and thus the family earned its living.

Most weavers used to make coarse cloth for everyday use by ordinary folk. However some weavers became skilled at making fine cloth. The rich began to buy good quality cloth of a variety of designs. Indian weavers became so export at making superior cloth that their fame spread across the seas. Indian cloth was much sought after in China, Iran, the middle East and Africa. Traders reaped huge profits by selling Indian cloth in these countries. With the increase in demand in India as well as abroad several problems emerged. Till then all cloth was being made at the homes of weavers often had to spend days carrying it all Way to the market. However hard they worked they still could not make as much cloth as the buyers were demanding.

Weaver Settlements - A large number of weavers came to live together in some villages and towns after 1200 AD. Untill then only a few weavers had lived in the towns. Now settlements of hundreds and thousands of weavers came up in certain towns Some such towns are Kanchipuram (Tamilnadu), Cambay (Gujarat), Daulatabad (Maharastra) and Varanasi (Uttar Pradesh) (history of textile industry in India Chapter-6).

Powerloom Weavers in Uttar Pradesh - Powerloom workers are an important section of the unorganized working class. They play a crucial role in the process of cloth production of the country through powerloom. These trends occurred after the closure of Mumbai textile mills 1980 on words unlike the textile workers who were entitled

to benefits by law, like salary, leave pakege and other social security. The powerloom workers, on the other hand, are low paid and employment is Insecure (Gangurde 2014).

There is no proper marketing mechanism in the powerloom industries in Uttar Pradesh. It was observed that the price of the yarn and fabric always fluctuates. Some times it goes inverse direction, means the price of the yarn increases while the price of fabric goes direction. As the majority of the weavers are job work weavers so the can not afford buying weavers who are unorganized. The main source of the powerloom industry is Self Finance in Uttar Pradesh.

Powerloom industry is one such delicate organization, which has been totally capital-staved at all the time. By and large, sound financial assistance from government alone could improve the competitive urge among powerloom co-operatives. The government of India and State government provide assistance to powerloom weavers co-operative societies for stringing the share capital, improving the management of societies and modernization of looms.

Investment in powerloom sector has thus far been limited to input supply costs. There is no investment on sectoral growth, while there have been some piece meal projects such as work shed-cum-housing and project package schemes, they merely perpetuate the existing conditions. There has been no thinking on basic requirements of the producer. Facilities such as land, water and electricity need to be provided in many places that are a harbor for powerloom manufacturing. Common facilities have not developed such as god owns, credit faculties (banks in the vicinity) roads proper sanitation, etc, have not been provided anywhere. In recent years, the investment profile in powerloom sector has also been changing. Traditional investors-Known as master weavers who have been investing for several decades in powerloom production have been moving away, or have become reluctant to invest in new designs. There is a need for new programmes that enable the inflow of fresh investments and emergence of new entrepreneurs in to the powerloom sector.

Allocation for powerloom in national and state budget are being reduced. This has to be reversed. Budget has to be increased with new schemes, which address the problems of the sector, in view of the linkage and the need to protect rural employment. The credit facilities currently available through co-operatives rarely reach the section for which it is intended.

This is because master weavers control a number of co-operatives and tend to corner a substantial proportion of institutional credit. As indicated earlier, the majority of weavers are to be found outside the co-operative fold, weaving usually for master weavers. The credit needs of this sector have remained unaddressed. The existing situation is one where the local master weaver provides consumption loans and advances, which overtime, render the weaver completely in debited to the master weaver.

The wake of new trends in fashions with man-made fiber and yarn fabrics having made in roads up to the rural areas. It is but natural that powerloom fabrics face difficulties in marketing and sales promotion. Marketing is the central problem that calls for the drawing up of a suitable strategy. Otherwise, any amount of aid given to this industry at the production level will turn out to be of no help. The industry has been pursuing the sales oriented philosophy, Inadequate marketing services and facilities have resulted in periodical accumulation of stocks, resulting in underemployment and unemployment among weavers (Sreenivas and Ismail).

Researcher conducted a study with a primary objective of the study to asses the need for HRD intervention in the garment industry in Bangalore and its contribution to women in their social and economic life. The study was conducted in six garment Units in Bangalore. It was found that issues pertaining to social changes such as late coming, leaving the work-spot, interpersonal and sexual harassment assuesetc were almost nil, since generally the garment Companies have such problems. Employees from all six Units were found to be quite satisfied with the education of their children even though they formed a small percentage. They also found that regular training programmers by internal and external faculties emphasized on social aspects lake; Role perception, Human behavior at work, present scenario of the Garments Industries, Discipline maintenance, Role and responsibilities motivation of self, Importance of positive attitude and Communication skills (Anupama 2013).

They identified the major health problems in different type of cottage industry and the factors which contribute to these problems. The study was mainly based on primary data collected from the employers employed in various cottage industries. The various industrial process and workplace environment create conditions that led to varying health problems in different industries as reflected in the physical and mental disorders affecting the population (Senthilkumar and Rajendaran).

Developmental Programmes - Inadequate marketing facilities have become major hurdles in the way of the development of the industry since a negligible portion of the powerloom products is marketed through government channels and most of the master weavers depend inevitable on private channels to get their products disposed of in the market at unreasonable prices. The fruits of the industry are actually grabbed by extortionate middlemen and as consequence, a majority of powerloom owners are not showing enthusiasm in this modern Industry. On the contrary. The marketing development programme has a vital role in the powerloom sector. So an activity for the promotion and marketing of powerloom products through different mechanisms has to be placed for the implementation and monitoring. For that the following activities can be carried out singly or jointly by the implementing agency.

Exhibitions should be held in order to provide

opportunity to the powerloom weavers to market their products at regional and cluster levels. In addition to this, different industry associations and other agencies can also organize buyer-seller meet or the promotion of powerloom specific or fibre specific or any other product of the powerloom sector in that area.

Technical seminars and workshops may be organized to discuss and disseminate the new technology and measures to reduce the cost of production.

Publicity is an inevitable part of the marketing strategy and, therefore, it will be a component of the marketing development programme. The purpose of this activity is to project and attract different consumers to the powerloom products.

In order to create awareness and understanding among the public about the powerloom sector various types of video clips and tele-films based on a particular powerloom cluster can be made. They can be telecast to highlight the modern technological advancement in this regard.

Publicity relating to powerloom can be taken up by way of printing of pamphlets. Publicity material on various schemes implemented for the benefit of the powerloom sector and opportunity of the domestic and overseas market can also be taken up.

Conclusion - Powerloom industry generates a number of employment opportunities. Further, the industry contributes a lot of revenues to the government exchequer. We found that most of the workers engaged in powerloom industries in Uttar Pradesh are illiterate in the sense that they have no idea about the various provisions of the Legislative and Welfare acts. Almost all the looms used in this sector are less productive, and consequently, the workers have become victims of meager earnings as they are paid on piece rate system i.e. on actual production. Besides, low productivity due to lack of automatic looms, shortage of finances, tax structures and poor organizational efficiencies are identified as other problems. So for the overall improvement for the industry as well as the workers'living conditions cannot be achieved. So for the overall improvement of powerloom industries it is required a whole hearted support with proper encouragement from both the state and CentralGovernment (Paul).

References:-

1. Paul Uttam (2013), "A study of socio economic status of workers in the unorganized powerloom sector of west Bengal." Global Advanced Research Journal of Agricultueal Science, Vol 2 (2):065-073
2. Muthu N (2015),"Performance of Decentralized Powerloom Sector in India", Asian journal of Mulktidisiplinary Studies, Vol (3) 3:2348-7186
3. S. Gurumurthy, S. and C Vasanthi (2012), " A study on enhancing efficiency of unorganized powerloom sector with special reference to powerloom in India." International journal of Reseach in commerce, Economics and Management, Vol (2)11:113-118
4. Senthilkumar M and Rajendaran R (2014) "Socio-economic development of Powerloom Owners in Karur district, Tamilnadu." International Journal of Recent Scientific Research, Vol(5) 12:2310-2314
5. MalagiAnupama K And A. H. Chachadi (2013), "Innovative Hr Practices to improve Socio-Economic Condition of Women Workers in Garment Industy-An Empirical Study", IOSR Journal of Business and Management, Vol 9(6):16-21.
6. MahvishAnjum and T. Ullas (2012),"Health Status of Cottage in Ambedkarnagar District." IOSR Journal of Humanities and social science (JHSS), Vol (5) 2:29-32.
7. V. Ramaswami (1985), "Textiles and Weavers Medieval South India," Oxford University Press, New Delhi, 55-71.
8. Gangurde Pradeep (2014),"Socio economic condition of the powerloom workers of the Bhiwandi, Thane." International Multidisciplinary Research Journal, Vol (1)8:2321-5488
9. SreeniwasAnkam (2016), "Socio Economic Condition of Handloom Weavers-A Study of Karimnagar District." IRACST-International journal of Commerce, Business and Management (IJCBM), Vol (5):2319-2828
10. Kumudha A and rizwana, M (2013), "Problem Faced By Handloom Industry-A Study with Handloom Weavers 'Co-operative Societies in Erode District." International Journal of Management And Development Studies, Vol (2) 3:230-0685
11. D. Anusa and R. Prema (2013), "problems and Prospects of Powerloom Units with Special References to Somanur Cluster in Coimbatore city." International Journal of Research In Commerce, Economics and Management, Vol (3) 4:69-72
12. History of Textile industy in India Chapter 6 page no. 119
13. BhowmikSharit k. (1981) Class formation in the Plantation system, people's publishing house (New Delhi) pp:41, 42 44 45
14. Breman, J and Parthiv Shah (2003), working in the mill no more, Oxford University Press New Delhi. Pp:12, 13, 16
15. http:/texmin.nic.in, Textileresurgence 2010-2011
16. Future Trends in textile and apperal industry: http[://www.business-standard.com/artivle/kit-future-trends-in-textile-and-apperal-industry
17. www.sciencepublishing.com
18. Annual Report 2016-17 Ministry of Textiles Government of India
19. Economic Survey 2016-17 part-2.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

धार जिले में स्थापित आदिम जाति सेवा सहकारी संस्था मर्यादित 'बैंक का ग्रामीण विकास में अध्ययन'

डॉ. अजय वाघे* नानुराम नर्गेश **

प्रस्तावना – स्वतंत्र भारत में देश के योजना वृद्ध आर्थिक पुन: निर्माण के लिए सहकारिता को एक सशक्त माना गया है। विभिन्न ग्रामिण क्षेत्रो के विकास ओर नवीन भारत के आर्थिक विकास में इसका महत्वपुर्ण योजना रहा है। वर्तमान में इसके द्धारा विभिन्न क्षेत्रो में लोकोपयागी कार्य किये जा रहे है प्रदेश में सरकार नें सहकारी संस्था आंदोलन इसलिए आरम्भ किया किया था। की किसान ऋण के भार से तथा साहकार के पंजे से मुक्त हो सके । सरकार ने सहकारी – साख समिति अधिनियम 1904 बनाया और ग्राम सांख समितिया स्थापित की गइ । सहकारी साख संस्था के पंजीकारो की निसुक्ति करके तथा सशक्त शिक्षात्मक प्रसार करके सरकार ने सहकारी आदोलन को ग्रामो मे लोकप्रिय बनाने का प्रयाय किया गया । लोकयाधन के रुप में पारस्परिक सहायता पर अधारित सहकारी संस्थाओ का गठन विशेष रुप सें समाज के कमजोर वग्रे के उतीान के लिए और उनके सामसजिक आर्थिक विकास को सुनिश्चिचक करने हेतु किया गया है। सहकारीता का अर्थ निर्बल अशक्त और निर्धन लोगो का परस्पर सहयोग है ताकि वे उन लाभो की प्राप्त कर सके, जो शक्तिशाली और धनी लोगो को उपलब्ध है। सहकारिता में एक सब के लिए और सब एक जिए (One for all for one) की भावना को विशेष महत्व दिया जाता है। समाज के आर्थिक विकास में एवं प्रमुख रुप ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उन्नयन में सहकारिता क्षेत्र की महत्वपुर्ण भुमिका रही है। और सहकारी संस्थाए अपनी भुमिका का निर्वहन सक्षमता के साथ कर रही है। सहकारी संस्थाऐ अपने से जुडे समाज के कमजोर वर्गो एवं महिलाओ के आर्थिक उत्थान को केन्द्र मे सखकर सामाजिक आर्थिक समानता प्रप्त करने के महत्वपुर्ण साधन के रुप में कार्य कर रही है। सहकारी क्षैत्र की बहुआयामी आवश्यकताओ एवं नवीन क्षेत्रो में सहकारी संस्थाओ के गठन की संभवनाओ को द्रष्टीगत रखते हूए दिंनाक 16-17 दिसम्बर 2016 को 'सहकारी मंथन' का आयेजन किया गया और नवीन सभावनाऐं तलाशी गई है। उक्त मंथन के परिणाम स्वरुप विभाग नवीन कार्यक्रम जथा नवीन क्षेत्रो का चिन्हनाकंन किया गया है। तथा नये क्षेत्रो में प्रवेश के लिये सहकारिता में नवाचार को एक अभियान के रुप में प्रोत्साहित किया जा रहा है। नवाचार के अंतर्गत प्रदेश में अनेक नवीन क्षेत्रो में कार्य आरम्भ किया गया है। सहकारीता में अब तक 430 नवीन सहकारी संस्थाओ का पंजीयन प्राथमिक एवं राज्य स्तर पर किया गया है।

देश में सहकारी सरंथा की स्थापना सहकारिता के कार्य कुशलता के साथ की गई है। समाज में व्यक्ति के लिए सहकारीता एक जीवन दर्शन है। इसकी अर्थव्यवस्था में सरकारी संस्था का महत्वपुर्ण स्थान रहा है। सरकारी मर्यादित मुख्य रुप से कृषि कृषित्तर ऋण प्रदान करने के साथ – साथ छोटे उधारकर्ताओ को भी आकर्षित करनी है। तथा इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामिण कृषको को साहुकारो से मुक्त कराना है। सहकारी संस्था मर्यादिक बैंको की इस महत्ता के कारण ही मध्य प्रदेश मे आदिम जाति सेंवा सहकारी संस्था स्थापित किये गए ही। तथा भारतीय कृषक इन कारणो से सदैव ऋणग्रस्त रहा है। भारतीय कृषको के सम्बन्ध मे यह धारणा रही है कि यहॉ का कृषक ऋण से जन्म लेता है , ऋण में पलता है और ऋण में ही उसकी मृत्यु हो जाती है लेकिन ग्रामिण विकास का लक्ष्य न केवल उत्पादक बढाना है, अपितु संभी वर्गो की पूर्ण रोजगार तथा उनके विकास प्रक्रिया का न्यायसंगत आबंटन करना है। भारत जैसे विकासशील देश में जहॉ मानव शाकित सर्वाधिक महत्वपूर्ण श्राकत है और जिसका एक भारी अंश समाज का कमजोर वर्ग है, ग्रामीण विकास किसी भी आथ्रिक विकास की सार्थक प्रक्रिया के लिए व्यापक महत्व का होता है।

सहकारीता की परिधि के अन्तर्गत सभी प्रकार के आर्थिक कार्यक्रम आते है, चाहे वे कृषि विपणन आपूर्ति, उद्योग, प्रक्रिया अथवा अन्य किसी भी सम्बन्धित क्रिया से जुडे हो । कहने का तात्पर्य यह है कि सहकारिता के लिए 'जहॉ न आये रवि वहा जाये कवि' वाली कल्पना साकार होता है। इतना ही नही ग्राम से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक प्रत्येक स्तर पर सहकारी संगठन कार्यरत ही नही निरंतर बढते चले जा रहे है। एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रम एक प्रकार से सहकारिता का ही एक अंग माना जा सकता है क्योकि सहकारिता के क्षंत्र ग्राम से भी आगे है। आज हम जिस समाज के सदस्य है, उसकी नीव मे आश्राशन और अविश्वास का समीक्षण है। इस सब के पीछे जिस एक स्वार्थी का अदश्य हाथ है, वह है आज की लाभ वृति जिसके कारण 'सहकारी संस्थाऍ' अपने उद्देश्य को विकास का रुप नही दे पाई। इसलिए पुन: विश्वासपूर्ण नेतृज्व के लिए दढ संकल्प सहकारी संस्थाओं को चाहिए कि उन तमाम कारणो, जिसको लेकर उनका नेतृत्व लडखडा सा गया है, लेकिन कुछ प्रयासो से इसे स्वस्थ बनाया जा सकता है। वह यह है कि एक सहकारी सतर्कता आयोग का गठन किया जाये । वह बेईमान निर्देशको को दडित करे जो संस्था के विरुद्ध कार्य करते है। एक बार यदि यह परिपार्टी शुरु हो जाये तो कोई व्यक्ति स्वार्थ या अन्य अन्य उद्देश्य से निर्देशक के रुप में चुने जाने का प्रयार नही करगा। इसलिए जरुरी है , अपनो में सें ही यानी सहकारिता मे से किसी योग्य व्यक्ति को कार्यभार सौपना और उन्हे ही सम्मानित करना।

वर्तमान समय में देंश के ग्रामीण क्षेत्रो के विकास के लिए सहकारी

* सहा. प्राध्यापक एवं प्रभारी प्राचार्य (वाणीज्य) विद्योदय महाविद्यालय, मनावर, जिला धार (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बैंक भूमि विकास बैंक औधोगिक सहकारी संस्थाऍ सहकारी कृषि समितिया, सहकारी विपणन समितिया सहकारी उपभोक्ता समितिया,ग्रामीण विद्युत सहकारिताऍ आदि अनेक संस्थऍ कार्य कर रही है, परन्तु इनके बारे में अधिक जानकारी नही है या इन संस्थाओ से उसके द्धारा कार्य कराना उसके वंश कि बात नही है। वास्तव में इन संस्थाओ का अधिकाधिक लाभ ग्रामीण क्षैत्र के कुछ समन्न वर्ग से सम्बधित व्यक्तियो को मिला है। इस कारण सामान्य ग्रामीण व्यक्ति को इन संस्थाओ के कार्यो में कोइ रुची नही है। इसी तरह कि स्थिति शहरी क्षेत्रो के उपभोक्ताओ व सहकारी समितियो आदि के सम्बन्ध में भी देखने को मिलती है। अत: अब सहकारिता सप्ताह मनाकर ग्रामीण क्षेत्रो कि संस्थाओ को हल कर सकते है। या इससे सामान्य ग्रामीण व्यक्ति के मन में इन संस्थाओ के प्रति विश्वास बढेगा।

अध्ययन का उद्देश्य – अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि धार जिले के विकास में आदिम जाति सेवा सहकारी संस्था मर्यादिक बैक की क्या भूमिका रही है इसकी पूर्ति हेतु निम्न उद्देश्य है –

1. आदिम जाति सेवा सहकारी सस्थ मर्यादिक बैक द्धारा स्थापित शाखाओ का अध्ययन।
2. धार जिले की जनसंख्या का अध्ययन।

धार जिले का परिचय – धार मध्य प्रदेश के दक्षिण – पश्चिम भाग में स्थित है, धार जिले का प्रशासनिक मुख्यालय है। यह इन्दौर संभाग का एक भाग है। धार का कुल भोगोलिक क्षेत्र 8153 वर्ग कि.मी. है। और इस प्रकार यह मध्य प्रदेश के सबसे बडे जिलो में सें एक है। जिला में आठ राजस्व ब्लॉक (तहसील) शामिल है– धार, कुक्षी , बदनावर , सरदारपुर , गधवानी, मनावर, धरमपुरी और डही, इसके अन्तर्गत 13 विकासखण्ड है, तथा जिले में 1625 राजस्व ग्राम है, जिनमे से 1326 पटवारी हल्का है। जिले में ग्राम पंचायतो की कुल संख्या 761 है। यह विध्याचल पर्वत श्रेणियो व मालवा के पठारी भाग पर अवस्थित है। ऐतिहासिक धार नगर प्राचीन काल से ही अपनी कला साहित्य व सस्कृति के लिए प्रसिद्ध रहा है। सन् 2001 की जनगणना के आधार पर इस जिले की जनसख्या 1740329 है, इसमे पुरुष 890416 तथा महिला 849913 है। और 2011की जनगणना के आधार पर कुल जनसख्या 2183793 है इनमें पुरुष 1112725 तथा महिला 1073068 है। तथा जिले में जनसंख्या प्रतिशत में वृद्धि दर 2001-2011 में 25.60 प्रतिशत है। धार जिला मुख्यालय ऐतिहासिक स्थल माण्डव से 35 कि.मी. व इन्दौर महानगर सें 60 कि.मी. दूर विध्याचल पर्वत श्रेणी में स्थित है। इस जिले की अर्थव्यवस्था कृषि तथा कृषित्तर कार्यो पर आधारित है। जिले में प्रीथमपुर क्षैत्र को मध्यप्रदेश के औधोगिक क्षेत्र के लिए विकसित किया गया है। इस औद्योगिक क्षैत्र के विकास के अतिरिक्त शेष जिले नाममात्र के उद्योग स्थापित है।

धार जिले भौगोलिक दृष्टि से झाबूआ, अलीरापुर, इन्दौर, रतलाम, बडवानी तथा खरगोन जिलो से घिरा हुआ है। तथा नर्मदा नदी धार जिले के दक्षिण छोर पर बडवानी व खरगोन जिले की सीमा का निर्धारण करती है।

धार की जनसख्या लिंगानुसार 2001-2011

जनसख्या 2001			जनसख्या 2011		
पुरूष	महिला	योग	पुरूष	महिला	योग
890416	849913	1740329	1112725	1073068	2185793

स्त्रोत– जनगणना 2001 एवं 2011 जिला साख्यिकी पुस्तिका।

आदिम जाति सेवा सहकारी संख्या मर्यादित बैंक की स्थापना एवं विकास – मध्यप्रदेश का धार जिला की श्रेणी में आता है, जहॉ सहकारी संस्था नें अपनी शाखाओं का जाल सा बिछा दिया है। धार जिला सहकारी संस्था की स्थापना एवं पंजीयन बीस सुत्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत मध्य प्रदेश सोसाइटी अधिनियम 1961 के अंतर्गत धार में 1975 में आदिम जाति सेंवा सहकारी संस्था की स्थापना की गई।

धार जिले में सर्वप्रथम सहकारी बैंक का शुभारम्भ 1926 में ग्वालियर राज के विधान के अंतर्गत अमझेरा में अमझेरा सहकारी बैंक की स्थापना के साथ हुआ इसलिए आरम्भ के साथ दी एक शाखा मनावर में प्रारम्भ की गई एवं दुसरी शाखा 1927 में बाग में प्ररम्भ की गई। ग्वालियर राज्य के अंतर्गत उस समय जिला मुख्यालय सरदारपुर होने के कारण सन 1947 में बैंक का मुयालय अमझेरा से सरदार स्थानातरित कर दिया और अमझेरा बैंक एक शाखा के रूप में रह गया।

मध्य भारत के निर्माण के साथ ही जिलो के पुर्नगठन के कारण जिला मुख्यालय धार हो गया एवं सहकारी संस्था का मुख्यालय धार कर दिया गया और सहकारी संस्था को आदिम जाति सेंवा सहकारी संस्था मर्यादित धार नाम दिया गया। सहकारी संस्था मर्यादित अपने स्थापना काल से आज तक के 46 वर्षो के अंतराल में निरंतर प्रगति कर रहा है। यही कारण है। आदिम जांति सेंवा सहकारी संस्था मर्यादित धार की शाखाओं को निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

धार जिले में आदिम जाति सेंवा सहकारी संस्था मर्यादिक बैंक की कार्यरत शाखाऍ :-

क्र	शाखाऍ	शहरी / अर्द्धशहरी	ग्रामीण	कुल
1	धार मुख्यालय	1	–	1
2	मनावर	1	–	1
3	बदनावर	1	–	1
4	सरदारपुर	1	–	1
5	धरमपुरी	1	–	1
6	कुक्षी	1	–	1
7	डही	1	–	1
8	निसरपुर	–	1	1
9	सिघाना	–	1	1
10	बाकानेर	–	1	1
11	अमझेरा	–	1	1
12	बाग	–	1	1
13	राजगढ	1	–	1
14	धमनोद	1	–	1
15	लुन्हेरा बुजुर्ग	–	1	1
16	राजोद	–	1	1
17	कानवन	–	1	1
18	नागदा	–	1	1
19	बगडी	–	1	1
20	बिडवाल	–	1	1
21	सागौर	–	1	1
22	केसूर	–	1	1
23	दसाई	–	1	1
24	तिसंगाव	–	1	1
25	सादलपुर	–	1	1
26	खडलाई	–	1	1

27	तिरला	–	1	1
28	अमझोर	–	1	1
29	पंगारा	–	1	1
30	चंढावड	–	1	1
31	डेहरी	–	1	1
32	पडियार	–	1	1
33	अवल्दामान	–	1	1
34	कालीबावडी	–	1	1
35	केशवी	–	1	1

अध्ययन की शोध प्रविधि – अध्ययन हेतु प्राथमिक संमक एवं द्वितीयक संमक का प्रयोग किया गया है। संमक प्राप्त करने के लिए आदिम जाति सेवा सहकारी संस्था मर्यादित धार एवं जिला साख्यिकी कार्यालय के कर्मचारियो से साक्षत्कार एवं सर्वेक्षण सुंची के माध्यम से तथ्यो को सग्रहित किया गया है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि धार जिला में स्थापित आदिम जाति सेंवा सहकारी संस्था मर्यादित धार ने अपने शाखा नेटवर्क में सराहनीय वृद्धि की है। अतः इसके बढतें शाखा नेटवर्क को देखते हुए यह पता चलता है कि धार जिले ग्रामीण विकास में इसका महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूंची :–

1. भारत में बैंकिंग विणि एवं व्यवहार, डॉ. यू.एस. रस्तोनी, डॉ. बी. के. अग्रवाल, रामप्रसाद एवं संस बाल विहर हमीदिया रोड भोपाल ए इमेल – resbhopal@gmail.com
2. वाणिज्य बैंक प्रंबन्ध प्रो. पी.पी. अग्रवाल साहित्य भवन पब्लिकेशन हास्पीटल रोड आगरा 282003 इमेल –salessbp1960@gmail.com
3. बैंकिग एवं वित गुप्ता स्वामी विशिष्ट रमेश बूक डिपो, जयपूर नई दिल्ली
4. शोध पत्र पत्रिकाए केन्द्रीय ग्रन्थालय इन्दौर,
5. www.google.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Problem Regarding Increasing Urbanisation (In Respect of Moradabad District)

Ankit Kumar*

Abstract - Cities often experience growth either physically, by population, or by a combination of both. Urbanisation in recent times is a subject of popular debate between policy makers and environmentalists in context of the status of urban people and the state of the human ecology. With the high pace of social and economic development resulting growth of urban population, lack of infrastructure, congested traffic, environmental degradation and shortage of housing became the major issues faced by the urban areas. The present paper is an attempt to identify and analyze problem due to urbanization in Moradabad District.

Introduction - Urbanisation in India is neither unique nor exclusive but is similar to a world-wide phenomenon. Indian urbanization has proceeded as it has elsewhere in the world as a part and product of economic change. Occupational shift from agriculture to urban-based industry and services is one part of the change. At the same time, increased agricultural performance has also promoted urbanization. New industrial investments and expansion of the services industry in new location is also another factor. As for the magnitude, in 1901, only 25 million people constituting 10.84 per cent of population lived in urban areas in India. In the 100 years since then, the urban population has grown 12 times and it is now around 285 million people constituting 28 per cent of the total population. In the following 20 years (2001-21), the urban population will nearly double itself to reach about 550 million. According to the World Urbanisation Prospects (the 1996 Revision), the urban population in the year 2025 will rise to 42.5 per cent (566 million).

Physical Setting Of Moradabad: Moradabad is a small town in Western part of the state of Uttar Pradesh, in Northern India. It was founded in c. 1600 as part of Mughal Emperor Akbar's Empire. It was named Rustam Nagar and was later changed to Moradabad after Murad, the son of Mughal Emperor Shah Jahan, also the grandson of Akbar. Today, Moradabad is also the headquarters of a district by the same name. It is located on the banks of Ram Ganga River. The district of Moradabad lies between 28°21´ to 28°16´ north latitude and 78°4´ to 79° east longitude. It lies within the great Gangetic plain and is demarcated into three subdivisions by the rivers Ramganga and Sot. The eastern tract consists of a sub-montane country, with an elevation slightly greater than the plain below, and is traversed by numerous streams descending from the Himalayas. The central portion consists of a level central plain descending at each end into the valleys of the Ramganga and Sot. The western section has a gentle slope towards the Ganges, with a rapid dip into the lowlands a few miles from the bank of the great river The City has a population of around eight lakh and thirty seven thousand in an urban area of 70 sq.m. The following image gives the locational and regional setting of the city.

Rainfall And Climate: In Moradabad, the climate is warm and temperate. There is significant rainfall throughout the year in Moradabad. Even the driest month still has a lot of rainfall. The average annual temperature in Moradabad is 24.5 °C. The average annual rainfall is 976 mm.

Population: According to the 2011 census Moradabad

***Geography Faculty of The Bodhi IAS PCS Classes & Former Guest Faculty of VAJIRAM& Ravi IAS, Rajendra Nagar, New Delhi, INDIA**

district has a population of 887,871 roughly equal to the nation of Singapore or the US state of Alabama. This gives it a ranking of 26th in India (out of a total of 640). The district has a population density of 1,284 inhabitants per square kilometer (3,330/sq mi). Its population growth rate over the decade 2001-2011 was 25.25%. In 2011 a new district named Sambhal district is formed with two sub districts of Moradabad district. The rest of Moradabad district have a population of 3126507.

Table 1: population and population growth rate of Moradabad district

Historical population Year	Pop.	±% p.a.
1901	854,603	—
1911	905,439	+0.58%
1921	859,151	"0.52%
1931	920,336	+0.69%
1941	1,055,828	+1.38%
1951	1,190,434	+1.21%
1961	1,423,487	+1.80%
1971	1,747,420	+2.07%
1981	2,257,867	+2.60%
1991	2,965,293	+2.76%
2001	3,810,983	+2.54%
2011	4,772,006	+2.27%

Level Of Urbanism:

Sex Ratio: Moradabad has a sex ratio of 903 females for every 1000 males.

Literacy Rate: Moradabad has literacy rate literacy of 58.67%, out of which male and female literacy rate is 64.8% and 47.9% respectively.

The total workers, in Moradabad district, as per the census of 2011 were 1417811. In which the ratio of male and female workers were 1193439and 224372 respectively.

Facilities: Moradabad is an Administrative, Industrial and commercial city. These facilities namely education, health, drinking water, electricity, road connectivity and telecommunication are to be made available as per the departmental norms to ensure a better quality of life and speedy development in this district.

Economic Activity: Moradabad is a major industrial city and export hub. Its handicrafts industry accounts for more than 40% of total handicraft exports from India. In October 2014, Live mint included Moradabad in its list of "25 Emerging Cities To Watch Out For In 2025".

Moradabad is popularly known as **the Brass City of the country**. Countries like Britain, the US, Middle East Asia, Germany and Canada import brassware from Moradabad. In Moradabad there are about 600 export units and 9000 industries in the district. Moradabad exports goods worth Rs. 4500 crore yearly. Many other products for example, iron sheet, metal wares, aluminum, artworks and glassware are also exported as per the need of foreign buyers**. Export of mint** is done in several crores from Moradabad. These products are quite famous in overseas market and are being exported in thousands of crores yearly. Due to upsurge of exports and popularity in foreign particularly in America, Europe, Italy and other countries, a large No. of exporters are launching their units and started their export.

Moradabad Special Economic Zone (SEZ) the only Uttar Pradesh Government Developed SEZ in northern India, headed by the Development Commissioner, Noida SEZ and locally governed by the Asststant Development Commissioner, was set up in 2003 at Pakbara – Dingarpur Road in Moradabad on a 421.565 acre plot of land. Government of UP through UPSIDC being developers to this SEZ project has so far invested a sum of ¹ 1100 million on its development. Moradabad SEZ provides excellent infrastructure, supportive services and sector specific facilities for the Handicraft Trade. Proximity to Delhi/NCR and availability of skilled and dedicated manpower makes it ideal for setting up various industries in Handicrafts & its allied filed.

Impact Of Urbanisation:

1. **Water Supply:** Urban water supply infrastructure includes surface water diversions, wells, pumps, transmission pipes and canals, treatment and storage facilities, and distribution network elements**.** Groundwater is the main principal source for drinking water and other activities in Moradabad urban water supply has a propensity to be affected by pressures on both the supply and the demand sides, which exposes vulnerabilities. On the supply side, effects are anticipated regarding the quantity, timing, and quality of source water. On the demand side, effects are expected in use patterns in response to climate impacts. For example, alterations of temperature and relative humidity, growing season duration, and precipitation patterns may lead to changes in water demand.
2. **Sanitation:** Although urban areas present major challenges for sanitation management. Public health is directly impacted by the quality of sanitation. Interactions with the urban environment and other services also make it a key sector: interdependencies with the solid waste, water, and even agricultural sectors in the context of the circular economy through waste water reuse.
3. **Solid Waste Management:** The volume of garbage in Moradabad is increasing. In industrial areas of city, the municipal solid waste is getting mixed up with hazardous waste creating a serious problem, while the accumulation of garbage has become a common site in most of the cities. Most solid wastes that are collected end up in open dumps, sanitary landfill or drainage system, threatening both surface water and ground water quality. Solid wastes create one of the most visible environmental problems in low-income areas. These problems are directly linked to inadequate planning, finances and management capacity at the local level.
4. **Land pattern Use:** Rapid urban growth has led to the problems of unregulated development, high cost for urban infrastructure, pollution due to the inadequate disposal of urban and industrial waste**.** Much of the legislation needed for land use planning already exists. The record shows that public land development and regulatory agencies have not

been able to accommodate the constantly changing needs of urban economies and populations in an orderly manner. People's participation in and commitment to land use planning and control need to be facilitated by local bodies and made more dynamic in response to changing needs.

5. Transport: Transport influences population distribution, shape of cities, and access to markets and thus directly impacts the overall socio- economic development. Since transportation has a pivotal role it is imperative to develop an eco-friendly sustainable and convenient multi modal transportation network so as to improve connectivity, safety and reduce traffic pressure and travel time.

Moradabad is well connected by roads with cities like Delhi, Lucknow, Agra, Aligarh, Ghaziabad, Noida, Hardwar and Dehradun etc. Moradabad Railway Station is one of the Major Railway Stations of Indian Railways; it comes under top hundred railway stations of India. It lies on Lucknow-Moradabad line, Delhi-Moradabad line and Moradabad- Ambala line. More than 200 trains pass through and stop at Moradabad Railway Station. It is direct connected by trains with major cities like Delhi, Lucknow, Kanpur Agra, Aligarh, Ghaziabad, Jaipur, Jodhpur Haridwar, Dehradun, Amritsar, Ludhiana, Ambala, Guwahati, Dibrugarh, Kolkata, Jamshedpur, Varansi, Ahemedabad, Patna etc. Moradabad Airport is in under construction, the nearest working domestic Airport is Pantnagar Airport which is 86 km from Moradabad and Nearest International Airport is Indira Gandhi International Airport, New Delhi which is 178 km from Moradabad.

Congestion is also the result of inadequate road network. Chaotic urban traffic causes a large number of accidents. Inadequate provision for roads in cities, increasing number of vehicles with less efficient engines, lack of mass transport systems are all adding to the serious problems of congestion and pollution.

6. Urban Environment: In recent years, the urban environment has become a major subject of concern. Among the major environmental problems faced by urban areas are air, water, and soil pollution and growing volume of wastes including hazardous waste Although the entire urban population is affected, the urban poor are the most vulnerable. It is poor performance of local governments in the delivery of basic urban services that lead to environmental degradation and lower quality of life in urban areas.

Cities are major polluters of environment. Managing the urban environment is a daunting problem. Currently, awareness of urban environmental problems continues to centre around air and water pollution. Industrial emissions are significant but vehicular pollution is the single most important source of air pollution.

Urban environmental management would have to deal with the impact of various economic activities on the environment which as per the definition of the **Environment (Protection) Act, 1986** includes the inter-relationship which exists among and between water, air, land and human beings, other species and property. There is a need for evolving a system of environmental monitoring through measurement of environmental quality levels ensuring measures for disaster prevention and in the unavoidable event of a natural disaster, having a disaster management strategy. Coping the urban environmental problems will require sharing of responsibilities and action taken by a host of actors – central, state and local governments, NGOs, communities and the private sector.

The demands for natural and socio-economic resources, such as land, housing, water, energy and other required infrastructure are often stressing their environmental settings beyond sustainable development. Planning is thus both a concept and a tool for assessment of various supportive and assimilative capacities of urban environmental resources and of decision-making based on their carrying capacities. This will help to manage the process of development as a whole in such a manner as to achieve a balance between the three basic facets of development,

a. economic viability in terms of efficiency of resources utilization
b. equity among communities and
c. environmental.

7. Urban Housing: The housing sector needs to be viewed within the perspective of the emerging macroeconomic policies. In the political rhetoric, housing is regarded as one of the basic needs. The benefits of public housing programmes have accrued disproportionately to the better-off sections of society. Despite considerable investment and efforts over successive plan periods, the housing problem continues to be daunting. The housing crisis manifests itself in many ways**:** growth of slums and haphazard development, overcrowding and deficient services, increasing homelessness, speculation and profiteering in land and houses. Given the relentless growth of urban population and the difficult economic environment, the housing problem will further worsen unless concerted measures are taken to ameliorate the living conditions of vast majority of vulnerable sections of the society, both in rural and urban areas. The Endeavour should be to accomplish the goal of *shelter for all*.

Map (see in last page)

Moradabad Development Authority has completed many development works in Moradabad city. To fulfill its role, the Authority seeks to coordinate in accordance with a comprehensive Master Plan along with the work of various other agencies involved in the creation and extension of urban infrastructure.

MDA aims at coordinated and planned development of a historical city: to enable Moradabad has played a very important role in the Freedom Struggle, to extend urban infrastructure to absorb the pressures of a rapidly changing society, and to provide an environment which would enable the utmost satisfaction level of all sections of its inhabitants.

8. Urban Violence Urban India has seen during the

recent decades a tremendous increase in crime and of incidents of communal conflicts. The increase in crime is attributed largely to two factors, i.e. loosing social control in the context of overall changing composition of the city's population, and the widening social gap between the rich and the poor. Both these factors are closely interrelated and it is often not possible to separate them.

9. Gender Issues: In 1990, the National Commission for Women Act was passed to safeguard the rights and interest of women. It reviews women-specific and women-related legislations and advises the government to bring amendments from time to time. The 73rd and 74th Amendments to the constitution were made in 1992, through which one-third of the total number of elected seats in Panchayats and Municipalities are reserved for women. Women must be involved as motivators, organizers and, managers of community development projects.

Conclusion: the future pattern of urban growth with multi-municipal entities will need a new arrangement for governance. Such arrangements should be flexible to cope with the emerging pattern and issues of urban management. City need to re-examine urban transportation demand and devise new strategies, such as land use – transport planning, demand management, cleaner fuels and technologies, integration of traffic modes and traffic management. Urban infrastructure services require huge investments. There is a need to turn to private sector or institutional financing of supplying vital skills and access to funds. The private sector may well emerge in the coming decades in India if the regulatory, legislative and tariff reforms are undertaken, removing several bottlenecks for private sector participation.

References:-

1. Static Data- Ministry of Housing and Urban Affairs (https://mohua.gov.in/)
2. Static Data-Department of Housing and Urban Planning of Uttar Pradesh (https://awas.up.nic.in/)
3. Static Data -Census of India 2011
4. Static Data- Land Use Planning Of Uttar Pradesh
5. Static Data - Departments Of land Resources Of Uttar Pradesh
6. Ahluwalia Isher Judge , 2014,Urbanization In India

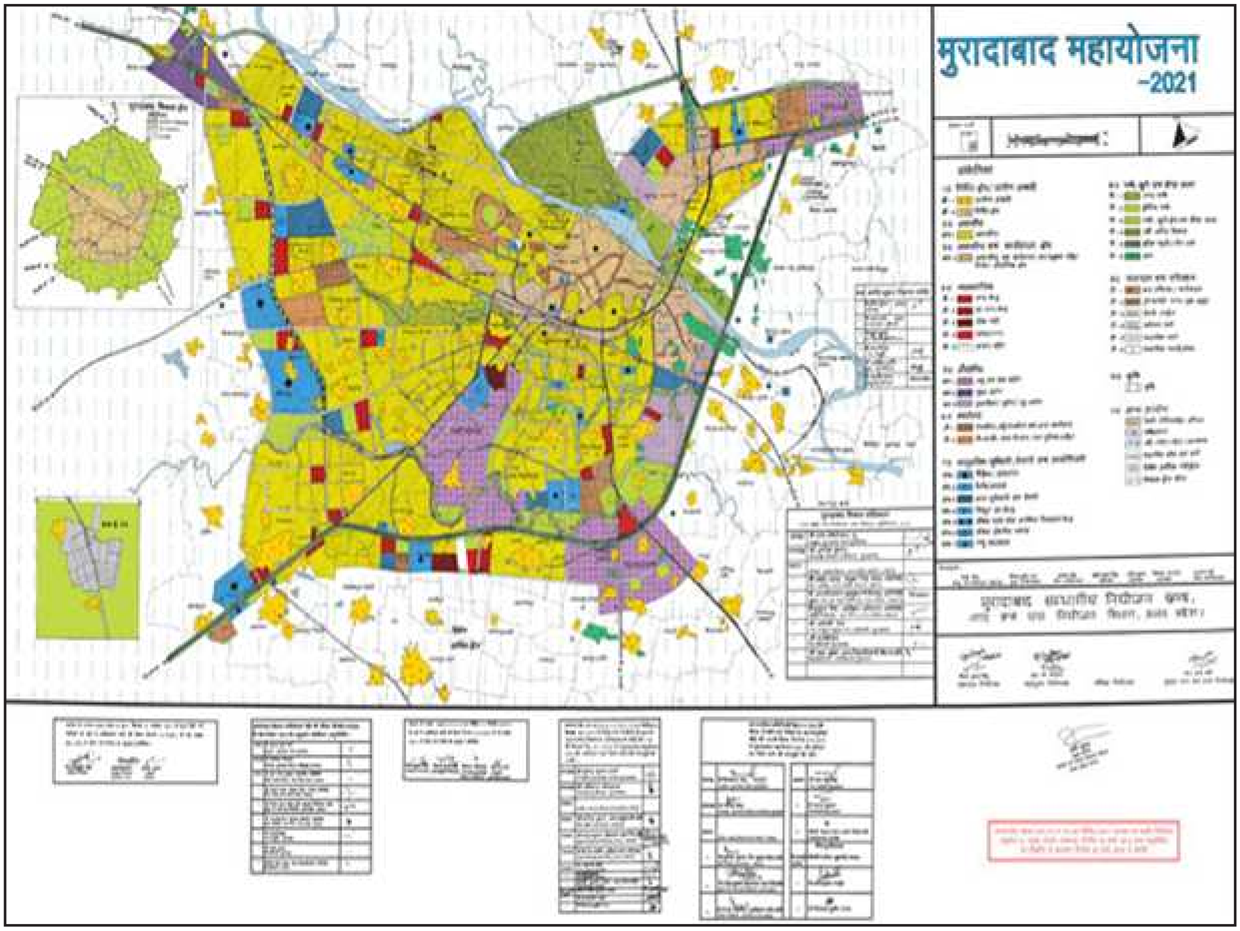

****

Birds Diversity of Panje- Funde Wetland, Uran, Navi Mumbai West Coast of India

Aamod N. Thakkar*

Abstract - Uran is under heavy process of Urbanization, Industrialization, land filling, reclamation cutting of mangroves, shipping and port related activities resulting in fragmentation of natural habitats. Birds are bio-indicators of habitat quality and are sensitive to any subtle changes taking place in habitat A survey of bird diversity of Panje –Funde wetland and nearby area was conducted. A total of 122 species of birds belonging to 15 orders and 40 families were recorded during the study period in this area. Therecordeddiversity comprised of 54% resident, 16%local migrant and 30% migrant species of birds. Presence of Black-headed Ibis, Eurassian Spoonbill, Flamingo, Painted Storks, Rosy Starlings, variety of Sandpiper and Water birds in this diversified habitat indicates its suitability for migratory birds in this area. There is urgent need for effective habitat and biodiversity conservation program in this Eco sensitive area.
Keywords- Birds, Panje, Wetland, Migratory.

Introduction - Birds create a major part of an ecosystem by showing their presence at various levels of food web. Avian diversity can also be studied by considering it as an indicator of an ecosystem and habitat (Morrison 1986). In India 1300 species of birds are recorded which form 13% of the total species of birdsfound on earth which makes India rich in avifaunal biodiversity(Grimmettet al.,1998). India ranks third in having a large number of threatened and rare species (Dandpatet. al. 2010). In thestate of Maharashtra there are 568 species belonging to 272 genera, under 83 families and 20 avian orders (Pandeet. al. 2011).Most ofthe birds have specific habitat requirement from season toseason (Colin et. al., 2000). It is being suggested that avifauna are important for theecosystem as they play various roles as a Scavenger, Pollinatorand Predators of Insect pest (Padmavati et. al. 2010). The developmental projects, Industrialization, Urbanization disturb avian fauna (Bhattacharjee and Hazarika 1985). Many researchers have contributed to record avian diversity of Maharashtra state to generate a large amount of data (Bharucha and Gogate 1990; Gole 1998;Wadatkar 2001Pande et. al. 2003; Verma et .al. 2004; Kasambe and Wadatkar 2007; Vyawahare2008; Mahabal and Patil 2009; Kurhade2010 and Pawar2011). Like Mumbai city Navi Mumbai area is also dealing withimmigration resulting into shortage of land for commercial as well as residential construction. To fulfill this need the available area is undergoing land filling for port building as well as for urbanizationwhich affects migratory as well as resident birds. This study aims to document avifaunal diversityat study area.

Study Area: The Panje- Phunde wetland is located in the coastal town of Uran, Navi Mumbai in Raigad district of Maharashtra west coast of India. It is a major bird watching site in Mumbai Metropolitan Region (MMR).The wetland is home to migratory birds in the winter. It is the last surviving wetland at Uran. The core wetland area at Panje covers 213 hectares and consists of foraging and roosting areas of several bird species. The buffer area of 157 hectares is mangroves. Panje consists of a mix of habitats including freshwater and saline marshes, reeds, mangroves, grasslands , scrub and salt pans. In 2015, The State Wildlife Board approved the creation of a bird sanctuary at Panje- Phunde near Uran.(DNA News,2015). Panje –Funde proposed bird sanctuary (Lat.18°53'52.38'' Nand Long.72°57'07.07' is positioned in between Uran city and Jawaharlal Nehru Port. Panje site is having all in one habitats like wetland, mud flats, coast, mangroves vegetation Paddy fields and human dwellings.Ever since its inception on May 26, 1989, Jawaharlal Nehru Port (JNP) is the biggest container handling port in India, handling around 44% of the country's containerized cargo, crossing the historic landmark of 4 million TEUs in container consecutively for the last five years. Shipping, shipbuilding, and port support are major economic factors in Uran.Along with JNPT, container terminals include APM Terminals (formerly GTI) and NSICT- DPWorld. The Prime Minister Shri Narendra Modi layed the foundation of a Port- Based Multi-product Special Economic Zone (SEZ) at the prestigious Jawaharlal Nehru Port Trust (JNPT) at Sheva, Navi Mumbai on Saturday, August 16, 2014. All these development and port related activities have placed tremendous pressure on the nearby ecosystems. Panje-Funde site is the bird watchers paradise as it has a large

* Veer Wajekar A. S. C. College, MahalanVibhag, Phunde, Tal. Uran, Dist. Raigad (Maharashtra) INDIA

number of resident, temporary migrants and winter migratory birds.

Materials and Method: The study area was surveyed for one year from November 2017to October 2018 tosurvey the bird's diversity. Birds were observed early in the morning and evening with the help of binocular digital camera for proper bird records. The bird's species were recorded (sighting or call) on the field. Direct observations were made by walkingalong roads, hills, forest paths, wetlands, mangroves and creek areas. Birds wereidentified following Ali & Ripley (1983), Grimmettet. al (2000) and Rasmussen & Anderton (2005). The list of birds was arranged family wise following Manakadan & Pittie 2001, 2011).

Table (see in last page)

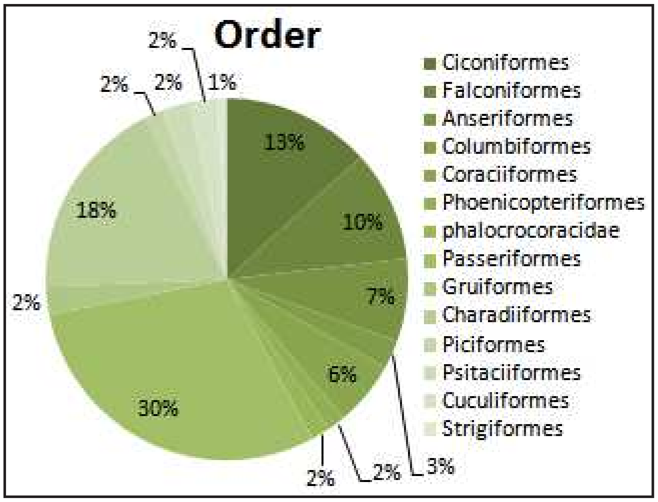

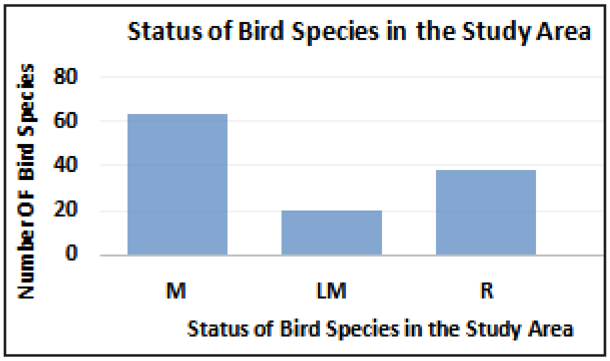

Discussion: The present study reflects a moderately healthy diversity of avifauna at Panje-Phunde wetland. During present study 122species of birds were identified from the study area belonging to 15order, 40 families' and93 genera. Avifauna dominating in Panje-Phunde wetland is of the order Passeriformes and is represented by 14 families, 25 genera and36 species, second most dominating order was Charadriiformes with 5 family 16 genra and 22 species. Similar observations with total of 86 species of birds 13 orders and 38 families in the study area with order Passeriformes dominating the count with40 species of birds belonging to 18 families and second most dominating order was Charadriiformes with 9species of birds belonging to 5 families at Thakurli dist.Thane(Singh and Ambavne, 2013). Similar results were also observed at Bordi, a coastal village situated in Palghar District of Maharashtra by (Kadam and Dhar 2017). Order Passeriformes having maximum number of 14 species.Study of avifauna of salt plants give record of 93 species from 11 orders and 36families. The order Passeriformes dominates the study area by contributing 36 species (Johnson et al., 2015). The recorded diversity comprised of 54% resident, 16% local migrant and 30% migrant species of birds. Presence of Black-headed Ibis, Eurassian Spoonbill, Flamingo, Painted Storks, Rosy Starlings, variety of Sandpiper and Water birds in this diversified habitat indicates its suitability for migratory birds in this area. Most Winter Visitors arrive by September and stay up to April.

Conclusion: The study revealed that healthy diversity of local migrants and migrant birds were recorded at Panje-Phunde wetland, continuous monitoring of this site isrequired to reveal more information regarding avian fauna. The study did reveal the importance of the habitat provided by the Panje-Phunde wetland in terms ofbird species diversity. Further studies should be conducted to understand the ecological health and diversity of this region andawareness should be created to generate help at local level in conservation activities.

There is urgent need for effective habitat and biodiversity conservation program in this Eco sensitive area.

References:-

1. Ali, S. and D. Ripley, 1989. A Pictorial guide to the Birds of Indian Subcontinent. Oxford University Press, Bombay.
2. Ali, S., 1990. The Book of Indian Birds, Oxford University Press, Bombay.
3. Bharucha, E. K. and Gogate, P.P. (1990) : Avian profile of a man- modified aquatic ecosystem in the backwaters of Ujani Dam. J. Bombay Nat. Hist. Soc., 87(1):73-90.
4. Bhattacharjee P.C. and Hazarika B.C., 1985. Roosting sites and roosting birds at Gauhati Muncipal area, Second *intenational symposium on life sciences*., NEHU Shillong,pp247-253.
5. Colin Bibby, Martin Jones and Stuart Marsden, 2000. Expedition Field Techniques Bird surveys, Published by Bird Life International.
6. Correspondent, DNA (7 December 2015). "Mumbai: Wildlife board nod to 3 bird sanctuaries around city". *DNA India*. Daily News and Analysis.
7. Dandapat, A., D. Banerjee and D. Chakraborty. 2010. Thecase study of the Disappearing House Sparrow (*Passer domesticusindicus).* Veterinary World3(2): 97-100.
8. Gole, P. (1998) :Birds of Sahyadry. Journal ofEcological Society. Vol. 11:5-28.
9. Grimmit R. et. al. Birds of Indian subcontinent, Oxford University Press, 888pp.
10. Kadam Surendra S and Avadhesh Shashi Dhar 2017. Status and diversity of avian fauna in and around Bordi region, west coast of *International Research Journal*

of Biological Sciences Vol. 6(5), 15-18,

11. Johnson Varkey, Akshay H. Pandirkar, Bruno Fernandes, KuldeepPathak, Prasad Khadye and Pritesh Ghadigaonkar 2015. Threats to the existing diversity of avifauna of Gogte salt plant, Mumbai sub-urb, Proc UGC Sponsored National Seminar on "Wet-lands-Present Status, Ecology & Conservation" ISBN : 978-81-925005-3-9 pp1-8
12. Kasambe, R. and Wadatkar, J. (2007) :Birds of Pohara Malkhed Reserve Forest, Amaravati, Maharashtra-Anupdated annotated checklist. Zoo's Print Journal, 22(7):2768-2770.
13. Kurhade, S. M.(2010) : Diversity of Avifaunain Harishchandragad, Kalasubai area, Tal. Akole, Dist. Ahmednagar, Maharashtra.Newsletter for Birdwatchers.50 (2):17-20.
14. Mahabal, A. and Patil, S.R. (2009):Aves. In: Fauna of Bhima shankar Wildlife Sanctuary, conservation AreaSeries, Publ. Director Zool. Surv. India, Kolkata, 42:65- 182.
15. Manakadan, R. & A. Pittie (2001): Standardized com-mon & scientific names of the birds of the Indian Sub-continent. Buceros (ENVIS Newsletter) 6(1): i-ix, 1-37.
16. Manakadan, R., J.C. Daniel & N. Bhopale (2011): Birds of the Indian subcontinent – a field guide. Oxford Univer-sity Press & Bombay Natural History Society. 409 pp.
17. Morrison, M.L. (1986) : Bird population as indicators of environmental change. In: Current Ornithology Vol. 3Ed. RJ. Johnston, Plenum Publishing Corporation, London.pp 492-451.
18. Padmavati A., Alexandar R. and Anbarashan M., 2010. *Our Nature,* 8, 247-253.
19. Pawar S.M Et Al, (2010) Avian Fauna Along Three Water Reservoir From Satara District (Maharashtra), India, The Bioscan, 5(4) : 609-612, 2010
20. Pande, S., Deshapande, P. and Sant ,N. (2011): Birds of Maharashtra .Publ. Ela Foundation, Pune, India. pp 1-330.
21. Prabhakar R.pawar 2011,Species diversity of birds in mangroves of Uran (Raigad), Navi Mumbai, Maharashtra, West coast of India Journal of Experi-mental Sciences 2(10): 73-77
22. Singh Ugeshkumari R., and Priyanka A. Ambavane, 2013 Avifauna of Thakurli, District Thane *National Con-ference on Biodiversity : Status and Challenges in Con-servation - 'FAVEO' 2013 pp 47-54*
23. Vyawahare, P.M. (2008): Avian Diversity of Lonar Lake, District Buldhana, Maharashtra. Newsletter for Birdwatchers, 48 (1):4-6.
24. Wadatkar, J.S. (2001): Checklist of Birds from Amaravati University Campus,Maharashtra. Zoo's Print Journal,16(5):497-49.

The list of birds documented during study period is as follows:

Sr.	Order/ Family	Scientific Name	Common Name	Status
	Ciconiiformes			
1.	Ardeidae	*Ardeacinerea*	Grey Heron	LM
2.		*Ardeolagrayii*	Indian Pond Heron	R
3.		*Ardeapurpurea*	Purple Heron	R
4.		*Butoridesstriatus*	Little Green Heron	R
5.		*Egrettagarzetta*	Little Egret	R
6.		*Mesophoyxintrmedia*	Median Egret	R
7.		*Casmerodiusalbus*	Large Egret	LM
8.		*Egrettagularis*	Western Reef Egret	R
9.	Threskiornithidae	*Platalealeucorodia*	Eurassian Spoonbill	M
10.		*Threskiomismelanocephalus*	Black headed Ibis	M
11.		*Plegadisfalcinellus*	Glossy Ibis	LM
12.		*Pseudibispapillosa*	Red-naped Ibis	LM
13.	Ciconiidae	Mycterialeucocephala	Painted Stork	R
14.		*Ciconianigra*	Black Stork	M
15.		*Ciconiaepiscopus*	Woolly-necked Stork	R
16.		*Anastomusoscitans*	Asian Openbill	R
	Anseriformes			
17.	Anatidae	*Aythyaferina*	Common Pochard	M
18.		*Anseranser*	Greylag Goose	M
19.		*Anserindicus*	Barheaded Goose	R
20.		*Anascrecca*	Eurasian Teal	M
21.		*Anasclypeatta*	Northern Shovellar	M
22.		*Anaspenelope*	Eurasian wigeon	M
23.		*Dendrocygnajavanica*	Lesser whistling-Duck	M
24.		*Anaspoecilorhyncha*	*Anaspoecilorhyncha*	M
25.		*Tadornaferruginea*	Ruddy Shelduck	M

	Falconiformes			
26.	Falconidae	*Falco Peregrinus*	Peregrine Falcon	R
27.	Accipitridae	*Milvusmigrans*	Black Kite	R
28.		*Milvusmilvus*	Black-eared Kite	M
29.		*Hiliasturindus*	Brahminy Kite	R
30.		*Elanuscaeruleus*	Black Shouldered Kite	LM
31.		*Circus aeruginosus*	Marsh Harrier	M
32.		*Circus macrourus*	Pallied Harrier	R
33.		*Gyps bengalensis*	Indian white backed Vulture	R
34.		*Accipiter badius*	Shikra	R
35.		*Aquila pennata*	Booted Eagle	R
36.		*Spilornischeela*	Crested serpent Eagle	R
37.		*Circaetusgallicus*	Short Toed Snake Eagle	R
	Apodiformes			
38.	Apodidae	*Cypsiurusbalansiensis*	Asian Palm Swift	R
39.		*Apusaffinis*	House Swift	LM
	Coraciiformes			
40.	Alcedinidae	*Halcyon smyrnensis*	White Breasted Kingfisher	R
41.		*Alcedoatthis*	Small Blue Kingfisher	R
42.	Meropidae	*Meropsorientalis*	Small Bea-eater	LM
43.		*Meropspersicus*	Blue Cheek Bea-eater	LM
44.	Coraciidae	*Coraciasbenghalensis*	Indian Roller	R
45.	Bucerotidae	*Ocycerosbirostris*	Grey Hornbill	LM
46.	Upupidae	*Upupaepops*	Common Hoopoe	LM
	Columbiformes			
47.	Columbidae	*Columbia livia*	Rock Pigeon	R
48.		*Streptopeliasenegalensis*	Little Brown Dove	R
49.		*Streptopeliachinensis*	Spotted Dove	R
	Passeriformes			
50.	Alaudidae	*Galeridacristata*	Crested Lark	R
51.		*Eremopterixgriseus*	Ashy Crowned Lark	R
52.		*Galeridamalbarica*	Malabar Lark	R
53.	Corvidae	*Corvassplendens*	House Crow	R
54.		*Corvasmacrorhynchus*	Jungle Crow	R
55.	Dicruridae	*Dicrurusmacrocercus*	Black Drango	R
56.		*Dicrurusleucophaeus*	Ashy Drango	R
57.	Estrildidae	*Amandavaamandava*	Red Avadavat	LM
58.		*Lonchurapunctulata*	Spotted Munia	LM
59.		*Lonchurastriata*	WhiteRumpedMunia	R
60.	Muscicapidae	*Saxicooidesfulicatus*	Indian Robin	LM
61.		*Copsychussaularis*	Magpie-Robin	R
62.		*Terpsiphoneparadisi*	Paradise Flycatcher	R
63.		*Saxicolacaprata*	Pied Bushchat	R
64.		*Saxicolatorquatus*	Common Stonechat	M
65.		*Sylvia curruca*	Lesser Whitethroat	M
66.	Hirundinidae	*Hirundorustica*	Barn Swallow	R
67.		*Hirundosmithii*	Wire-tailed Swallow	LM
68.	Passeridae	*Passer domesticus*	House Sparrow	R
69.		*Ploceusphillipinus*	Baya Weaver Bird	R
70.	Laniidae	*Laniusschach*	Long Tailed Shrike	R
71.		*Laniusvittatus*	Bay Backed Shrike	R
72.	Motacillidae	*Motacillacineria*	Grey Wagtail	M
73.		*Motacilla alba*	White Wagtail	M
74.		*Motacillacitreola*	Yellow-headed Wagtail	M
75.	Nectariniidae	*Cinnyrisasiatica*	Purple Sunbird	R
76.		*Leptocomazeylonica*	Purple-rumpSunbird	R

77.	Pycnonotidae	*Pycononotusleucotis*	White eared Bulbul	LM
78.		*Pycnonotuscafer*	Red Vented Bulbul	LM
79.	Cisticolidae	*Priniasocialis*	Ashy Prinia	R
80.		*Priniahodgsonii*	Grey Breasted Prinia	R
81.	Sturnidae	*Sturnusroseus*	Rosy Starlings	M
82.		*Acridotherestritis*	Common Myna	R
83.		*Temenuchuspagodarum*	Brahminy Starlings	R
84.	Zosterropidae	*Zosteropspalperbroa*	White Eye	R
	Phoenicopteriformes			
85.	Phoenicopteridae	*Phoenicopterus major*	Greater Flamingo	M
86.		*Phoeniconaias minor*	Lesser Flamingo	LM
	Pelacaniformes			
87.	Phalocrocoracidae	*Phalacrocoraxfuscicollis*	Indian Cormorant	R
88.		*Microcarboniger*	Little Cormorant	R
	Gruiformes			
89.	Rallidae	*Fulicaatra*	European Coot	M
90.		*Amourornisphoenicurus*	White-breasted Waterhen	R
91.		*Porphyrioporphyrio*	Purple –Swamp Hen	LM
	Piciformes			
92.	*Megalaimidae*	*Megalaimahaemacephala*	Coppersmith Barber	R
93.	Picidae	*Dinopiumbenghalense*	Black-ramped Woodpecker	R
	Cuculiformes			
94.	Cuculidae	*Eudynamysscolopacea*	Asian Koel	R
95.		*Centropussinensis*	Greater Coucal	R
96.		*Cuculuscanorus*	Common cuckoo	M
	Psittaciformes			
97.	Psittacidae	*Psittaculakrameri*	Rose-ringed Parakeet	R
98.		*Psittaculaeupatria*	Alexandrine Parakeet	R
99.		*Pssitacula cynocephali*	Plum-headed Parakeet	R
	Charadriiformes			
100.	Scolopaidae	*Gallinagogallinago*	Common Snipe	M
101.		*Tringahypoleucos*	Common Sandpiper	R
102.		*Xenuscinereus*	Terek Sandpiper	M
103.		*Tringaochropus*	Green Sandpiper	M
104.		*Tringastagnatilis*	Marsh Sandpiper	M
105.		*Limosalimosa*	Black-tailed Godwit	M
106.		*Tringatitanus*	Common Redshank	M
107.		*Tringaglareola*	Wood Sandpiper	M
108.		*Calidrisferruginea*	Curlew Sandpiper	M
109.		*Calidrisminuta*	Little Stint	M
110.		*Philomachuspugnax*	Ruff	M
111.	Recurvirostridae	*Recurvirostraavosetta*	Pied avocet M	
112.		*Himantopushimantopus*	Black-winged Stilt	R
113.	Charadriidae	*Vanellusindicus*	Red-wattled Lapwing R	
114.		*Charadriusmongolus*	Lesser Sand Plover	M
115.		*Charadriusdubius*	Little Ringed Plover	R
116.		*Pluvialissquatarola*	Grey Plover	M
117.	Jacanidae	*Metopidiusindicus*	Bronze ringed Jacana	LM
118.		*Hydrophasianuschirurgus*	Pheasent-tailed Jacana	LM
119.	Laridae	*Sterna repressa*	White-cheeked Tern	M
120.		*Larusbrunnicephalus*	Brown-headed Gull	M
121.		*Childoniashybrida*	Whiskered Tern	M
	Strigiformes			
122.	Tytonidae	*Tyto alba*	Barn owl	R

R- Regional M- Migrant LM- Local migrant

Biochemical Analysis of Protein and Lipid from Table Eggs

Rahul B. Patil *

Abstract - Bird eggs have been valuable foodstuffs since prehistory, in both hunting societies and more recent cultures where birds were domesticated.The opinions on the role of poultry eggs in diet have changed several times and there are many controversies regarding the role of egg yolk in health and disease. The present study is aimed to compare the nutritional status of three different poultry eggs and their potential use as a dietary supplement. The protein were estimated by using Lowry's method, lipids extracted, Cholesterol from yolk and Calcium carbonate from shell were determined. Several workers have suggested the value of comparative compositional studies on egg whites. The present investigation shows that desi hen's eggs are nutritionally superior over the other two varieties.

Introduction - Poultry eggs refer to avian eggs which are used as table eggs such as hen's egg, duck egg, emu egg etc. These eggs are consumed by human as they constitute one of the major protein sources of our diet. Though chicken eggs are most preferred table eggs, other avian eggs also have high nutritional value. Poultry eggs contain many functionally important nutrients like albumin, vitamins, minerals and lipids and fatty acids. These proteins and fatty acids are essential for normal body development and play an important role in the prevention of heart diseases, diabetes, arthritis and cancers (Simopoulos, 2000). Eggs are rich source of vitamin D, vitamin B12, selenium and choline. The antioxidants from egg yolk may help prevent macular degeneration (Ruxton et al, 2010)Eggs are one of the few foods that are used throughout the world regardless of religion and ethnic group (Stadelman and Cotterill, 2001). Poultry eggs consist of 3 main components: eggshell (9–12%), egg white (60%), and yolk (30–33%). Whole egg is composed of water (75%), proteins (12%), lipids (12%), and carbohydrates and minerals (1%) (Kovacs-Nolan et al., 2005).However, the practical use of egg proteins, lipidsand egg shells by industry is highly limited. The egg proteins are used as antimicrobial agents, immuno-modulatory in food industry (Abeyrathne et al 2013).

Material & Methods:

Material: Freshly laid eggs of three avian species are used for the present study:

i. Poultry egg (Broiler hens' egg)
ii. Desi hen's egg
iii. Duck egg.

Methods: Following biochemical parameters were performed from the samples of egg varieties

A. Total protein (Lowry et al 1951)- Egg white contains the protein albumin. It was estimated as total protein content from the egg by using bovine serum albumin as a standard.
B. Total lipid (Bligh E. G. and Dyer W. J. 1959)- Lipids were extracted and estimated from the egg yolk.
C. Yolk cholesterol (Bair C. W. and Marion W. W. 1978) - Cholesterol content from the yolk of three types of poultry eggs was estimated.
D. Calcium carbonate from egg shells- (http://science.csustan.edu/byrd/chem1002/eggshell.html.)

All sample results were calculated from four assay (n=4) and expressed as mean ± standard deviation (S.D.)

Results and Discussion: Although it is clear that eggs are a healthy food when eaten as part of a balanced diet, further clarification is needed on the level of egg consumption that is consistent with optimal health (Gilbert, 2000).

The egg as a whole is considered as a good source of protein and lipids, but egg white mainly consists of water (88%) and protein (11%) and it is lacking in lipids (Stadelman and Cotterill, 2001). In the present investigation the total weight (gm) of eggs was taken before the experiment. The egg white i.e albumin and yolk of each of the egg variety were carefully separated. The shells were also separated and weighed properly. Following tables show the respective weights of the contents of three egg varieties.

Table No. 1 (see in last page)

Differences in the amounts of the individual egg white proteins have been found to exist between different strains of chickens. These differences, however, have been small compared to the differences found between species. For example, Wilcox and Cole found only an approximately 25% difference in the lysozyme contents of "high and low

* Assistant Professor (Zoology) Veer Wajekar Arts, Science & Commerce College, Phunde, Tal. Uran, Dist. Raigad (Maharashtra) INDIA

lysozyme" strains of chickens. In the present study the total protein content in the albumin is performed by Lowry's method using bovine serum albumin as a standard. The values are expressed as mg protein /ml of the albumin.

Table No. 2: Total protein content (mg/ml) from three varieties of poultry eggs

Sr.	Type of the egg	Total protein content(mg/ml)
1	Poultry egg (n=4)	18.91±1.86
2	Desi egg (n=4)	18.0 ±1.92
3	Duck egg (n=4)	18.24±2.01

Eggshells can be utilized for various purposes that minimize their effect on environmental pollution. Eggshells present healthy, balanced calcium due to its trace amounts of other minerals and is probably the best natural source of calcium (Adeyeye, 2009). One whole medium sized eggshell makes about one teaspoon of powder, which yields about 750-800 mgs of elemental calcium plus other micro elements. Eggshell powder has been reported to increase bone mineral density in people and animals with osteoporosis (Kingori, 2011).

For calcium carbonate content, egg shells were washed with distilled water, dried in oven for 48 hrs and powdered. 1 gm of powder was used for titrimetric estimation of calcium carbonate from the egg shells. The values are expressed as % of calcium carbonate in 1 gm egg shell powder.

Table No. 3 : **Calcium carbonate ($CaCO_3$) content from three varieties of poultry eggs**

Sr.	Type of the egg	% Calcium carbonate from egg shell
1	Poultry egg (n=4)	92.2%
2	Desi egg (n=4)	85.4%
3	Duck egg (n=4)	97.3%

Studies on the proteins of different species provide information useful to the taxonomist and geneticist and also to the protein chemist who may be able to relate differences in structure to differences in properties. Several workers have suggested the value of comparative compositional studies on egg whites. McCabe and Deutsch made the following speculation from their electrophoretic studies: "It seems possible that the physiochemical character of an egg retains more of its incipient phylogeny than the more superficial aspects of the bird's adult morphology." Sibley and Johnsgard have reached essentially similar conclusions. Anfinsen has suggested that proteins with important functional properties might be expected to undergo fewer structural changes during the evolutionary process. Although no definite functions have yet been found for the egg white proteins, they possess unique antimicrobial and anti-enzymatic activities.

Total lipids were extracted from egg yolk by using chloroform: methanol mixture (2:1). Bligh and Dyer method was applied to measure the total lipid content. It is expressed as % lipid content in yolk.

Table No.4: Total lipid (%) from three varieties of poultry eggs

Sr.	Type of the egg	Total lipid content(%)
1	Poultry egg (n=4)	55.45%
2	Desi egg (n=4)	50.56%
3	Duck egg (n=4)	54.08%

Table No. 5 Cholesterol (mg/gm yolk) content from three varieties of poultry eggs

Sr.	Type of the egg	Cholesterol content(mg/gm yolk)
1	Poultry egg (n=4)	0.12±0.013
2	Desi egg (n=4)	0.10±0.01
3	Duck egg (n=4)	0.13±0.017

1. It is observed that, duck egg is more in total weight than the other two varieties of eggs studied.
2. Quantitatively, poultry egg contains highest amount of albumin which is nearly 65.76%.
3. The yolk content is highest in duck egg which is about 35% of the total weight of the egg.
4. It is observed that, if compared with each other, the protein content is more or less same in the three egg varieties.(Table No.2)
5. The Desi egg albumin though less in amount contains highest percentage of total protein concentration (74.38%).
6. Total lipids and cholesterol content is found to be highest in poultry egg.
7. Calcium carbonate in the shell of duck egg was observed to be highest as compared to the poultry and desi eggs.
8. From above results it is clear that desi egg contains high protein concentration in the albumin and high amount of calcium carbonate in the shells among three egg varieties studied. Poultry egg is high in lipid and cholesterol content. The amount of lipids and cholesterol in poultry eggs largely depends on diet of the birds (Aquino J. and da Silva A. 2010).

Conclusion: Poultry keeping has become important small scale industry due to modern demand for consumable and nutritive food.Most of the human consume unfertilized eggs from broiler hens. But as the present investigation shows that desi hen's eggs are nutritionally superior over the other two varieties.Desi egg contains significantly more amount of proteins which are necessary to boost immune system and muscle mass.The shells of duck egg contain significantly higher amount of calcium carbonate than the other two egg varieties studied. These shells can be utilised for the preparations of fish meal and poultry meals. Poultry keeping of desi hens should be promoted to provide a nutritionally superior quality eggs.It will help to enhance the economy of poultry farmers as well.

Still some research work has to be done for simple and economical separation of multiple egg components, use of superior egg proteins from different egg varieties of poultry and functional efficacy of egg components in food systems.

References:-

1. Stadelman and Cotterill, (2001):Egg Science and

Technology. 4th ed. Avi Publ. Co., Westport, CT.

2. Simopoulos A. P. (2000): Role of poultry products in enriching the human diet with n-3 PUFA. Human requirement for n-3 polyunsaturated fatty acids. Poultry Science, 79: 961-70.
3. C. H. S. Ruxton, E. Derbyshire and S. Gibson(2010): The nutritional properties and health benefits of eggs. Nutrition and Food Science, 40(3): 263-279
4. Kovacs-Nolan J. K. N. Phillips M. Mine Y.(2005): Advances in the value of eggs and egg components for human health. *J. Agric. Food Chem,* 53:8421–8431.
5. E. D. N. S. Abeyrathne, H. Y. Lee,D. U. Ahn(2013): Egg white proteins and their potential use in food processing or as neutraceutical and pharmaceutical agents—A review. *Poultry Science*. 92, (12): 3292–3299.
6. Lowry O. H., Rosenbrough N. J., Farr A. L, Randall R. J.(1951) : Protein measurement with the Folin phenol reagent. Journal of Biological Chemistry, 193(1): 265-75.
7. Bligh E. G. and Dyer W. J. (1959): A rapid method of total lipid extraction and purification. Canadian Journal of Biochemistry and Physiology. 37(8): 911-17.
8. Bair C. W. and Marion W. W. (1978): Yolk cholesterol in eggs from various avian species. Poultry Sci. 57: 1260-1265.
9. http://science.csustan.edu/byrd/chem1002/eggshell.html.
10. Gilbert, L.C. (2000), ‘‘The functional food trend: what’s next and what Americans think about eggs’’, Journal of the American College of Nutrition, Vol. 19 No. 5, pp. 507S-12S.
11. MCCABE, R. A., AND DEUTSCH, H. F., The Auk, 69, 1 (1952)
12. SIBLEY, C. G., AND JOHNSGARD, P. A., The condor, 61,85 (1959). SIBLEY, C. G., AND JOHNSGARD, P. A., Am. Naturalist, 93, 107 (1959). ANFINSEN, C. B., The molecular basis of evolution, John Wiley and Sons, Inc., New York, 1959. WILCOX, F. H., JR., AND COLE, R. K., Genetics, 42, 264 (1957).
13. Adeyeye EI. Comparative study on the characteristics of Egg Shells of some bird species. Bull. Chem. Soc. Ethiop. 2009; 23(2):159-166.
14. Kingori AM. A Review of the uses of Poultry Eggshell and Shell Membranes. International Journal of Poultry Science. 2011; 10(11):908-912
15. Jailane de Souza Aquino and Joao Andrade da Silva (2010): Total lipids, cholesterol and fatty acids composition of ostrich eggs: a methodological approach. Rev Inst Adolfo Lutz:69(4): 588-94.

Table No. 1: Total weight, albumin and yolk content from three varieties of poultry eggs

Type of the egg	Total weight of egg (gm)	Total weight of albumin (gm)	Total weight of yolk (gm)	Total weight of shell (gm)
Poultry egg (n=4)	58.01±2.76	38.15±1.71	16.19±1.98	7.27±0.59
Desi egg (n=4)	43.75± 2.82	24.24± 1.96	11.41±0.74	6.30±0.90
Duck egg (n=4)	70.78± 3.84	33.54±2.09	25.42±1.23	8.62±1.52

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

सिंचाई के लिये उज्जैन जिले में बढ़ती भू-जल एवं सतही जल पर निर्भरता का विश्लेषण

पूजा राठौर *

प्रस्तावना - देश में कृषि बेहतरी के लिये कुशल सिंचाई पद्धतियों को विकसित करने की आवश्यकता है साथ ही उचित जलप्रबंधन प्रणाली से सूखा प्रभावित क्षेत्रों में फसलों के पोषण के लिये अच्छी गुणवत्ता वाली सिंचाई प्रणालियों को सुनिश्चित किया जा सकता है प्रत्येक खेतों में उचित सिंचाई व्यवस्था सुनिश्चित करना व इस प्रकार जल का प्रबंधन करना कि कृषि जल की उपयोगिता में भी सुधार किया जा सके। उज्जैन जिले में कृषि में जलप्रबंधन इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि यहाँ भूमिगत जल का भारी दोहन हुआ है अत: जल के बेहतर प्रबंधन के लिये परम्परागत जल स्त्रोतों और भूमिगत जल पुर्नभरण संरचनाओं को पुर्नजीवित करना अतिआवश्यक है। जिले की नदियों के वर्षा जल पर आधारित होने की वजह से इनमें पानी की उपलब्धता भी उस दौरान हुई वर्षा पर ही निर्भर करती है इस तरह इनमें भारी उतार-चढ़ाव की स्थिति प्रकट होती है इनमें पानी की कमी से सिंचाई ही नहीं वरन् अन्य परियोजनाएँ भी प्रभावित होती है इसलिए जिले में जलप्रबंधन और कृषि जल वितरण के उपायों को लेकर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

भू-जल एवं सतही जल की आवश्यकता - भूजल, वह जल होता है जो चट्टानों और मिट्टी से रिस कर भूमि के नीचे जमा हो जाता है सतह में जल गहराई पर जल प्राप्त होता है वह जल स्तर (वॉटर लेवल) कहलाता है। भूजल संसाधनों का आकलन, जिलों के भीतर विभिन्न स्तरों पर किया जाता है।

भूजल का सबसे अधिक उपयोग सिंचाई के लिए होता है। जिले में सिंचाई के मुख्य साधनों में नहरें, तालाब, कुँए व ट्यूबवेल है। इन सभी जल स्त्रोंतों में भूजल की बहुत बड़ी हिस्सेदारी है खासतौर से ट्यूबवेल व कुँए सिंचाई के लिए 88.24 प्रतिशत जल उपलब्ध कराते है जबकि तालाब व नहर द्वारा 11.76 प्रतिशत जल उपलब्ध कराती है। पिछले कुछ वर्षों में सिंचाई के लिए सतही जल के उपयोग में लगातार गिरावट आई है और भू-जल का उपयोग निरंतर बढ़ा है। क्योंकि कृषको द्वारा सिंचाई के लिए वर्तमान में ट्यूबवेलों का अधिक प्रयोग किया जा रहा है।

1. हरितक्रांति की शुरुआत ने सिंचाई के लिए भूजल पर निर्भरता बढ़ाई, क्योंकि यह स्वयं कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए जल और उर्वरकों जैसे इनपुट्स के अत्यधिक उपयोग पर निर्भर थी।
2. सिंचाई उपकरणों के ऋण और बिजली आपूर्ति के लिए सब्सिडी जैसे प्रोत्साहनों ने स्थिति को बदतर किया।
3. बिजली की दरों में कमी आने से जल उपयोग तेजी से बढ़ा जिसका परिणाम यह हुआ की जल स्तर निरंतर गिरता गया।

भू-जल एवं सतही जल का उपयोग - गिरते भू -जल स्तर को राकने और कृषि के समग्र विकास के लिए सतही तथा भूमिगत जल की उपलब्धता को समृद्ध करने की आवश्यकता है। जिले में नहरों व तालाबों द्वारा कृषि सिंचाई कर सतही जल का उपयोग किया जाता है एवं कुओं, नलकूपों के माध्यम से भू-जल का उपयोग किया जाता है। उज्जैन जिले में सतही जल व भू-जल द्वारा सिंचाई क्षमता के उपयोग की स्थिति तालिका द्वारा दर्शायी गई है।

तालिका 1 : सतही जल एवं भू-जल के उपयोग की स्थिति वर्ष (2008-09 से 2014-15)

(हेक्टेयर में)

वर्ष	सतही जल (सिंचित क्षेत्र)	प्रतिशत	भू-जल (सिंचित क्षेत्र)	प्रतिशत	शुद्ध (सिंचित क्षेत्र)
2005-06	20675	14.31	123682	85.69	144339
2006-07	39711	14.24	239168	85.76	278879
2007-08	58026	17.91	266012	82.04	324069
2008-09	24269	12.15	175539	87.85	199808
2009-10	34855	13.49	223515	86.51	258370
2010-11	39665	14.48	234339	85.52	274004
2011-12	45594	15.07	255680	84.93	01054
2012-13	41982	12.20	302339	87.80	344320
2013-14	45119	11.45	348815	88.55	393934
2014-15	40883	11.76	306688	88.24	347571

स्त्रोत- जिला सांख्यिकी पुस्तिका, वर्ष 2015, पृ0- 36,37

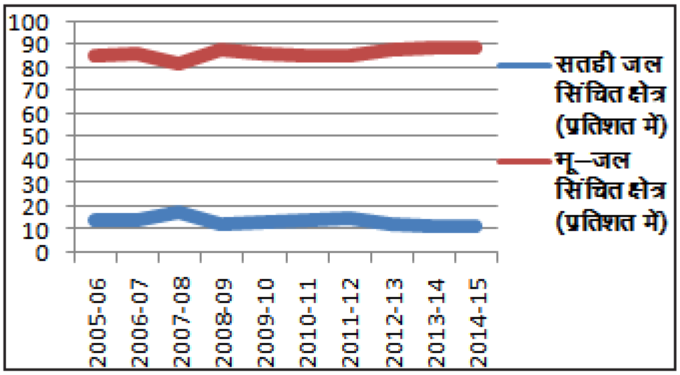

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि जिले में सतही जल का बहुत ही कम उपयोग हो पाया हैं। सतही जल का उपयोग वर्ष 2005-06 से वर्ष 2014-15 तक क्रमश: 14.31, 14.24, 17,91, 12.15, 13.49, 14.48, 15.07, 12.20, 11.45 व 11.76 प्रतिशत रहा है जो कि बहुत ही कम है, वही भूजल के योगदान की स्थिति देखी जाये तो यह प्रदर्शित होता है कि लगभग 80 से 90 प्रतिशत कृषि सिंचाई ट्यूबवेलों व कुँओं के माध्यम से की जाती है। जिले में बढ़ते ट्यूबवेलों के प्रयोग के कारण भूजल का कृषि सिंचाई मे अधिक उपयोग किया जा रहा है भूजल का उपयोग वर्ष 2005-06 से वर्ष 2014-15 तक क्रमश: 85.69, 85.76, 82.04, 87.85, 86.51, 85.52, 84.93, 87.80, 88.55 व 88.24 प्रतिशत रहा है। जिले में गिरते भूजल स्तर का प्रमुख कारण है भूजल का अत्याधिक दोहन है। कृषि सिंचाई हेतु उपलब्ध जल का लगभग 80 प्रतिशत उपयोग किया जाता है अत: यह आवश्यक है कि जिले में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली को विकसित किए जाने की आवश्यकता हैं। जिससें भूजल उपयोग में कमी होगी एवं सतही जल का अधिकाधिक उपयोग संभव होगा। इस स्थिति को देखते हुए कृषि में जलप्रबंधन की नितान्त आवश्यकता है जो सामुदायिक प्रयासों द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है अन्यथा यह स्थिति अत्यंत विकट रूप धारण कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला सांख्यिकी पुस्तिका (वर्ष 2015)
2. भारत में कृषि विकास - पी.सी.जैन
3. जल संरक्षण एवं प्रबंधन - डॉ. शेलेन्द्रसिंह तौमर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Fluoride Contamination of Water in India and its Impact on Public Health

Dr. Shobha Gupta*

Abstract - Water contamination is one of the major effect on public health in India. Fluoride pollution in water is a main difficult across the world, with health dangers such as dental and skeletal fluorosis.Drinking water sources found in nature as both surface and groundwater are polluted with abundant polluting elements Fluoride. This paper mainly focused on the effect of polluting elements on resources of water in India considering nearly a century on fluoride contamination in water. It is recommended for purpose of drinking water having lesser concentration then 1.5 mg/L fluoride to avoid additional fluorosis risks. Concerning the various reports that stated increased fluoride level in water resources, it is vital that further studies to be conducted to inspect whether there is a link of humans between fluoride and its effect on central nervous system.There is an urgent need to make people aware about the methods of rainwater harvesting and to get fluoride-free water.
Keywords- Water, Fluoride, Pollutions, Drinking, Human Health, Effect, etc.

Introduction - Water is essential for all physiological activities associated with humans, animals, and the plant kingdom. However, the nature and the quality of surface and ground water are widely variable and are determined by the local geological history, including the rocks and hidden ore deposits nearby the sites for the assembly of the water, and other issues, such as the effort of fundamental elements and contaminants by lentic and lotic waters and alternative aquifers [1].

The quality of water is poorly understood due to the variety in the interactions between water and soluble minerals, sparingly soluble minerals, and salts, both natural and anthropogenic [2]. Fluoride (F) come to be toxic once it happens in drinking water away from the extreme permissible limit of 1.5 ppm. Chronic exposure to fluoridated ground or drinking water creates a health problem not only in human beings [3,4] but also in diverse species of domestic animals [5,6] in the form of osteo-dental fluorosis.In recent times, bio-indicators of common fluorotoxicosis due to fluoridated water [5,6].

In India, several states are endemic for hydrofluorosis due to the high F content in drinking water [7,8].Various reports present conflicting data about the availability and quality of drinking water to the public in the country [9]. Weathering of these fluorine rich minerals is the most important geogenic source of fluoride enrichment in water. Anthropogenic sources also contribute fluoride in the water.

This includes activities such as mining, usage of pesticides and brick kilns [10]. Excess fluoride intake leads to dental fluorosis and at even higher intake could cause skeletal fluorosis. Hence, various national and international agencies have set standard permissible limits for fluoride in drinking water. The permissible limit set by WHO as well as Bureau of Indian Standards (BIS) for fluoride in drinking water is 1.5 mg/L [1,12].

Water Contamination: Major Sources Of Fluoride - The sources could be both gelogenic such as the presence of fluorine-bearing minerals in rocks and sediments as well as anthropogenic such as use of pesticides and industrial waste. The details of both of the sources are discussed below [13].

Anthropogenic : The major anthropogenic sources of fluoride pollution in water are instinctive use of phosphate fertilizers . This is very common in developing countries such as India.

Aluminum melting, glass, phosphate fertilizer, brick manufacturing and coal-based thermal also give fluoride into the environment [14]. Irrigation by fluoride-enriched water also contributes fluoride into groundwater. It is estimated that up to 0.34 mg/L of fluoride can be contributed by the use of superphosphate fertilizers in agricultural land [15]. Areas nearby brick oven productions also show a higher concentration of fluoride in groundwater.

Clay used in the manufacture of bricks contains several hundred ppm of fluoride [16].

Mineral Extraction: Mineral process actions can also produce significant fluoride pollution, both from direct extraction processes (which typically entail size reduction - greatly increasing the surface area for mass transfer - and generate effluents) as well as through leaching from ore and tailings stockpiles [17].

Mobilization of Fluoride : The concentration of fluoride in natural water depends on many factors. This includes

***Associate Professor (Chemistry) D.A.K. College, Moradabad (U.P.) INDIA**

temperature, pH [24], solubility of fluorine-bearing minerals, anion exchange between hydroxyl and fluoride ions, water residence time and the geological formations [18]. The process of mobilization is still unclear, but the most common mechanism for fluoride mobilization is displacement of fluoride ions (F-) by hydroxyl ions (OH-) . Temperature and residence time speed up the dissolution of fluorine bearing minerals present in the rocks [19].

Table1- Range of fluoride in groundwater in different parts of the India

State/Locality/Area/Country	Fluoride range (mg/L)	References
Chandrapur, Maharashtra	0.27–5.3	20
Yavatmal, Maharashtra	0.30–13.41	21
Karbi Anglong district, Assam	20.6	22
Guwahati, Assam	0.18–6.88	23
Rohtas district, Bihar	0.1-2.5	24
Gaya district, Bihar	0.19–14.4	25
Raigarh district, Chhattisgarh	8.8	26
Durg, Chhattisgarh	13.2	27
Ahmadabad, Gujarat	0.56–0.72	28
Hisar, Haryana	0.3-16.6	29
Damodar River basin, Jharkhand	0.1–6	30
Gulbarga, Karnataka	2.60–7.40	31
Palghat, Kerala	5,75	32
Chhindwara MP	0.06–4.74	33
Anantapur district, AP	5.80	34
Imphal, Manipur	0.21–1.78	35
Puri, Orissa	16.4	36
Agra, UP	0.2–3.2	37

Fluoride In Water & Effect On Human Health: Fluoride is highly electronegative element, has extraordinary propensity to get concerned by +Ve charged ions like calcium. Later the effect of fluoride on mineralized muscles like over sweat, urine and stool is established. The strength of fluorosis is not only dependents on the fluoride contaminated in water, but also on the fluoride from other sources, physical activity and dietary habits [38].

Dental Fluorosis : Due to excessive fluoride intake, enamel loses its luster. In its mild form, dental fluorosis is characterized by white, opaque areas on the tooth surface and in severe form, it is manifested as yellowish brown to black stains and severe pitting of the teeth. This discoloration may be in the form of spots or horizontal streaks [39]. Generally dental fluorosis depends on the quantity of fluoride exposure teen age, as fluoride marks only the emerging teeth while they are being shaped in the jawbones and are still below the gums. The major effects of dental fluorosis may not be specious if the teeth are previously fully grown prior to the fluoride over exposure. The fact that an adult displays no marks of dental fluorosis does not essentially mean that his or her fluoride taken is below permissible limit [40].

Skeletal Fluorosis : Skeletal fluorosis affects children as well as adults. It does not easily manifest until the disease attains an advanced stage. Fluoride mainly gets deposited in the joints of neck, knee, pelvic and shoulder bones and makes it difficult to move or walk. The symptoms of skeletal fluorosis are similar to spondylitis or arthritis. Early symptoms include sporadic pain, back stiffness, burning like sensation, pricking and tingling in the limbs, muscle weakness, chronic fatigue, abnormal calcium deposits in bones and ligaments. The advanced stage is osteoporosis in long bones and bony outgrowths may occur. Vertebrae may fuse together and eventually the victim may be crippled. It may even lead to a rare bone cancer, osteosarcoma and finally spine, major joints, muscles and nervous system get damaged [40].

Other Problems : This characteristic of fluorosis is frequently overlooked because of the concept prevailing that fluoride only effects on the bones and teeth [65]. Further dental fluorosis and skeletal extreme consumption of fluoride may lead to muscle fiber collapse, low levels of hemoglobin and abnormalities in RBCs, extreme thirst, headache, skin rashes, nervousness, neurological manifestations, depression, gastrointestinal problems, urinary tract malfunctioning, nausea, abdominal pain, tingling in the all body parts and mainly affected area fingers & toes, reduced immunity, repeated abortions or still births, male sterility, etc. It is also responsible for alterations in the functional mechanisms of liver, kidney, digestive system, respiratory system, excretory system, central nervous system and reproductive system, destruction of about 60 enzymes. The effects of fluoride in drinking water on animals are analogous to those on human beings.The continuous use of water having high fluoride concentration also adversely affects the crop growth [40].

Conclusion : The studies show that in India many regions ground water and river water are contaminated with the high amount of fluoride pollutants. Their quantities are far above the permissible levels according to national guidelines of drinking water and WHO, standards. The contamination of water with fluoride is going to develop a serious health problem in coming years. In Indian perspective, highly contamination fluoride in water is commonly observed in areas with high water salinity and observed that this highly concertation fluoride in water is commonly restricted to rainfall deficient areas. Possibly in such ranges, low groundwater drain facilitates discharge of fluoride in groundwater system.

The toxicologist has frequently detected the fluoride concentration in many water bodies.

Human health is directly affected by the intake of polluted fluoride water, fish, etc. High amount fluoride concentration effect and produce detrimental chemical & Biological functional modifications in the development of human brain. Exposure may originate with fluoride in the maternal blood transfer from the placenta to the fetus and continues throughout childhood from fluoride contaminated drinking water.

References :-

1. Davis SN, Deweist RJM. Hydrogeology. New York, NY, USA: John Wiley and Sons; 1966. pp. 96-128.
2. Datt., A. S., Chakrabortty, A., De Dalal, S. S., & Lahiri, S. C. (2014). Fluoride contamination of underground water in West Bengal, India. Fluoride, 47(3), 241-8.
3. Choubisa SL. Endemic fluorosis in southern Rajasthan, India. Fluoride 2001; 34(1):61-70.
4. Choubisa SL. Fluoride in drinking water and its toxicosis in tribals, Rajasthan, India. Proc Natl Acad Sci India Sect B Biol Sci 2012; 82(2):325-30.
5. Choubisa SL. Fluoride toxicosis in immature herbivorous domestic animals living in low fluoride water endemic areas of Rajasthan, India: an observational survey. Fluoride 2013; 46(1):19-24.
6. Choubisa SL. Bovine calves as ideal bio-indicators for fluoridated drinking water and endemic osteo-dental fluorosis. Environ Monit Assess 2014; 186:4493-8. doi:10.1007/s10661 -014-3713- x.Epub 2014 Mar 27.
7. Choubisa SL, Choubisa L, Choubisa DK. Endemic fluorosis in Rajasthan. Indian J Environ Health 2001; 43(4):177-89.
8. Choubisa SL. Status of fluorosis in animals. Proc Natl Acad Sci India Sect B Biol Sci 2012; 82(3): 331-9.
9. Farooq S, Hashmi I, Qazi IA, Qaiser S, Rasheed S. Monitoring of coliforms and chlorine residual in water distribution network of Rawalpindi, Pakistan. Environ Monit Assess 2008; 140:339–47.
10. Datta PS, Deb DL, Tyagi SK. Stable isotope (18O) investigations on the processes controlling fluoride contamination of groundwater. J Contam Hydrol. (1996) ; 24(1):85–96.
11. WHO (2004) Guidelines for drinking-water quality: recommendations, vol 1. World Health Organization, Geneva.
12. BIS (2012) Indian Standard Specification for drinking water. B.S.10500.
13. Ali, S., Thakur, S. K., Sarkar, A., & Shekhar, S. (2016). Worldwide contamination of water by fluoride. Environmental chemistry letters, 14(3), 291-315. -1.
14. Pickering WF (1985) The mobility of soluble fluoride in soils. Environ Pollut Ser B Chem Phys 9(4):281–308. doi:10.1016/0143-148X(8 5) 90004-7.
15. Rao NS, Rao PS, Dinakar A, Rao PVN, Marghade D (2015) Fluoride occurrence in the groundwater in a coastal region of Andhra Pradesh, India. Appl Water Sci. doi: 10.1007/s 13201-015-0338-3.
16. MacDonald HE (1969) Fluoride as air pollutant. Fluoride Quarterly Report 2(1):4–12. http://www.fluorideresearch.org/21/files/214-1 2.pdf.
17. Sankhla, M. S., Kumari, M., Nandan, M., Kumar, R., & Agrawal, P. (2016). Heavy Metals Contamination in Water and their Hazardous Effect on Human Health-A Review. Int. J. Curr. Microbiol. App. Sci, 5 (10), 759-766. doi: http://dx.doi.org/10.20546/ ijcmas. 2016.510.082.
18. Apambire WB, Boyle DR, Michel FA (1997) Geochemistry, genesis and health implications of fluoriferous ground waters in the upper regions of Ghana. Environ Geol 33(1):13–24.
19. Saxena V, Ahmed S (2003) Inferring the chemical parameters for the dissolution of fluoride in groundwater. Environ Geol 43(6): 731–736. Doi: 10.1007/s00254-002-0672-2.
20. Kodate J, Pophare A, Gajbhiye R (2013) Hydrogeolog -ical impact on fluoride distribution in groundwater of western part of Bhadravati Tehsil, district Chandrapur, Maharashtra. In: Proceeding National conference on watershed management for sustainable development—WMSD.
21. Madhnure P, Sirsikar DY, Tiwari AN, Ranjan HB, Malpe DB (2007) Occurrence of fluoride in the groundwaters of Pandharkawada area, Yavatmal district, Maharashtra, India. Curr Sci 92(5):675–679.
22. Chakraborti D, Chanda CR, Samanta G et al (2000) Fluorosis in Assam, India. Curr Sci 78(12):1421–1423.
23. Das B, Talukdar J, Sarma S, Gohain B, Dutta RK, Das HB, Das SC (2003) Fluoride and other inorganic constituents in groundwater of Guwahati, Assam, India. Curr Sci 85(5):657–660.
24. Ray D, Rao RR, Bhoi AV, Biswas AK, Ganguly AK, Sanyal PB (2000) Physico-chemical quality of drinking water in Rohtas district of Bihar. Environ Monit Assess 61(3):387–398. Doi: 10.1023/ A: 10061656150 97.
25. Yasmin S, Monterio S, Ligimol PA, D'Souza D (2011) Fluoride contamination and fluorosis in Gaya Region of Bihar, India. Curr Biot 5(2): 232–236.
26. Beg MK, Srivastav SK, Carranza EJM, de Smeth JB (2011) High fluoride incidence in groundwater and its potential health effects in parts of Raigarh District, Chhattisgarh, India. Curr Sci 100(5):750–754.
27. Giri DK, Ghosh RC, Dey S, Mondal M, Kashyap DK, Dewanagan G (2013) Incidence of hydrofluorosis and its adverse effects on animal health in Durg district, Chhattisgarh. Curr Sci 105(11):1477.
28. Barot VV (1998) Occurrence of endemic fluorosis in human population of North Gujarat, India: human health risk. Bull Environ Contam Toxicol 61(3):303–310. Doi: 10.1007/s0012899 00763.
29. Ravindra K, Garg VK (2006) Distribution of fluoride in groundwater and its suitability assessment for drinking purpose. Int J Environ Health Res 16(2):163–166. Doi: 10.1080/09603 120500538283.
30. Singh AK, Mondal GC, Kumar S, Singh TB, Tewary BK, Sinha A (2008) Major ion chemistry, weathering processes and water quality assessment in upper catchment of Damodar River basin, India. Environ Geol 54(4):745–758.Doi:10.1007/s00254-007-08 60-1.
31. Latha SS, Ambika SR, Prasad SJ (1999) Fluoride contamination status of groundwater in Karnataka. Curr Sci 76(6):730–734.
32. Shaji E, Bindu JV, Thambi DS (2007) High fluoride

in groundwater of Palghat District, Kerala. Curr Sci 92(2):240–245.

33. Thakur JK, Singh P, Singh SK, Bhaghel B (2013) Geochemical modelling of fluoride concentration in hard rock terrain of Madhya Pradesh, India. Acta Geol Sin (English Edition) 87(5):1421–1433.
34. Rao NS, Devadas DJ (2003) Fluoride incidence in groundwater in an area of Peninsular India. Environ Geol 45(2):243–251. Doi: 10.1007/s00 254-003-0873-3.
35. Oinam JD, Ramanathan AL, Singh G (2012) Geochemical and statistical evaluation of groundwater in Imphal and Thoubal district of Manipur, India. J Asian Earth Sci 48:136–149.doi:10.1016/j.jseaes.2011.11.017.
36. Das S, Mehta BC, Samanta SK, Das PK, Srivastava SK (2000) Fluoride hazards in ground water of Orissa, India. Indian J Environ Health 42(1):40–46.
37. Singh V, Narain R, Prakash C (1987) Fluoride in irrigation waters of Agra district, Uttar Pradesh. Water Res 21(8):889–890. –968. Doi: 10.1007/s10661-010-1437-0.
38. J.J. Murray, A history of water fluoridation, Br. Dent. J. 134 (1973), pp. 250–254, 299–302, 347–350.
39. S.L. Choubisa, K. Sompura, Dental fluorosis in tribal villages of Dungerpur district (Rajasthan), Poll. Res. 15 (1) (1996) 45–47.
40. Maheshwari, R. C. (2006). Fluoride in drinking water and its removal. Journal of Hazardous materials, 137(1), 456-463.

****

Ways of Value Inculcation in Education: Some Suggestions

Dr. Mani Bansal*

Introduction - Decline of values and thereby softening of the education experience is a word wide phenomenon. Despite its several thousand years old value based cultural tradition, India is also subjected to massive erosion of values. That is why political and economic exploitation, scandals, scams, antisocial and antinational activities are on the rise in the present national context. All these have posed a heavy challenge before higher education.

We advocate rationality as managerial principle to be followed in private and public life but in our inner soul we are still guided by blind rituals, superstitions, orthodoxy and egotism. Our culture guides us to live a life with the inspiration of the rule of Sacrifice, not the rule of Exploitation.

It is a well known fact that modern teaching and training have unsuccessful to produce men and leaders of character and integrity who can make India achieve its past glory. Not only in India, but also worldwide, there is a cry for going “back to basic values”, so that the strength to deal with the difficulty of modern living is developed. To achieve this goal various programs on Value Education, e.g. Human Resource Development, Self Development, Personality Development, etc. have been prepared. The main aim of Value Education programs is to help people become aware of their innate divinity and how to make its perfection and happiness evident in every movement of life. The great activist Vivekananda stressed the need for man – making, character – building education, whereby the recipient would be made a good citizen, who would possess the spirit of sacrifice and service.

Present modern edification system deals more with concepts and estimations. The age – old culture is ignored and materialism is widespread in the society. Swami Ramakrishnan Paramahansa, another campaigner has also stressed on Real Education with a view to make oneself as well as the entire world happy.

Many committees and commissions have been established over the years to underline the importance of value education. In 1938, Dr. Zakir Husain, stressed the need to change the education system in India. The Sergeant Committee, 1944, cited that without an ethical basis any curricula would be barren. In 1945, a Spiritual Education Committee of the Central Advisory Board of Education endorsed that spiritual and moral teachings, which are common to all religions, must be an integral part of syllabus. The Radhakrishnan Commission (1948 – 49) stressed the need to incorporate spiritual training in the curriculum of educational institutions. Later the Mudaliar Commission (1952-53) also suggested that the growth of character of students would depend mainly on religious and moral instructions. The Kothari Committee (1964-66); stressed on moral education and inculcation of a sense of social responsibility in students. In 1986, the National Policy on Education stated that “Today the education system in India stands at crossroad where neither normal linear expansion nor the existing pace and nature of improvement can meet the need of students”. The Ramamurthy Committee, 1990, also observed that education must nurture a set of values like love and sympathy must nurture a set of values like love and compassion, build up a new social order based on truth and non violence and prepare the ground for integration between science, spirituality and democracy, which is the link between the two.

Why need Value Education?

Our youngsters have fallen in the grip of eroding values such as dishonesty, disingenuousness, lack of punctuality, disregard for elders, disregard for work – culture and entrepreneurial activities. All these facts result in gun – culture, greed for earning money and wealth by easy and foul means, lack of concern for the rural background from which they come. The more serious alarm, the absence of sensitivity towards women as reflected in an excess of rape cases involving women of all ages. The value oriented education can minimize all above stated problems by bringing out a change in the nature, vision, thought, character and conduct of students, personalities, politicians, administrators, executives and ultimately, the society, the nation and the world. Present study suggests how the teacher of higher education can play a critical role in orienting the students towards a proper direction. Further the value model suggested for the teacher may be a useful tool for value addition and further broadcasting among students.

Suggestions for Value Orientation and Adoption- Few suggestions for value orientation and adoption are as

*Associate Professor, D.A.K. (P.G.) College, Moradabad (U.P.) INDIA

follows:

1. Study the course content carefully to find out what is applicable to other subjects and what to outside the academic life too.
2. Select instructional resources, which are best, suited to the job of making relationship ostensible.
3. Use suitable method of teaching (e.g. problem solving, discussion, leading question, etc.), which will expedite active learning of values like leadership, cooperation, group – harmony, mutual respect, and so on.
4. Provide enough room to contribute. Values like punctuality and discipline, sympathy and tolerance, democratic right and responsibilities may be trained in applied situations only.
5. Stories of great characters and their values have a constructive effect on the minds of young people.
6. Sound steps need to be invented by the Department of Education to stop political intrusion in educational institutions.
7. To convert Latent into Talent communication skills need to be advanced constructively, building confidence and curiosity, therefore leading to self – enthusiasm.
8. Where women are respected, even gods lived there. In our ancient culture and during the Vedic period, women had more' respect and status in society than man. No religious ceremony could perform by man alone, without the presence of his wife.
9. Organization of exhibitions or educational trips may also be taken up as an additional activity to inculcate the value of National Integration.
10. The teacher has to quote many instances about the importance of punctuality varieties of things like pictures, posters; quotations etc. may be made use of by the teacher. It will be still more beneficial if the proverbs and quotations regarding punctuality are shown through slides. The importance of doing all the things at a particular time to be explained to the students by the teacher.

References :-

1. Nuun. T.P., *Education: Its Data and First Principles*, London, 1923.
2. Stevenson, *The Project Method of Teaching*, pg. 43.
3. *Selection from the Coolected Works of Swami Vivekananada*. Advaita Ashram, Calcutta. VII Edition, 1989.
4. Ministry of Education, Government of India, *Report of the Education Commission,* (1964- 66) 1966, First Edition.
5. Barul J. Sangm a, Albert S. Tirkey: Value-Based Education In Garo Hills (Meghalaya): The Urgent NeedInternational Journal of Informative & Futuristic Research (IJIFR) Volume – 3(4), P.g. 1199 – 1204, 2015.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

अभिज्ञान शाकुन्तलम् में अश्रु वर्णन- एक चिन्तन

डॉ. रुचि गुप्ता*

प्रस्तावना – ईश्वर की इस सृष्टि में अश्रु का अति महत्वपूर्ण स्थान है। कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि अश्रुओं का जो गौरव है, महिमा है वह कदाचित् नेत्रों से कम नहीं। संसार में ऐसे बहुत से प्राणी हो सकते हैं जिसके पास नेत्रा न हों किन्तु ऐसा कोई भी नहीं जिसके पास अश्रु न हों। वस्तुत: अश्रु उन बहुमूल्य उपहारों में से एक है जो ईश्वर ने मनुष्य को दिये हैं। यह अकारण ही नहीं समझना चाहिये कि इस धरा पर अवतरित होते ही मानव सबसे पहले रोता है। अश्रु की एक बूँद के भीतर मानव से सम्बन्धित समस्त भाव समाहित हैं। संसार का ऐसा कोई भाव नहीं जो अश्रु से सिक्त न हो। अश्रु भागीरथी की वह पुण्य धारा है जो समस्त पापों का प्रक्षालन कर देती है। हृदय की अपूर्व शक्ति है जो नगाधिराज को भी कम्पित करने में समर्थ है। वह मधुर अमृत है जिसका जन-जन पान करता है संसार का वह प्रकाश है जिससे जगत् आलोकित है।

काव्य तथा अश्रु दोनों का अति प्राचीन सम्बन्ध है। आदि काव्य 'रामायण' की रचना का प्रणयन भी अश्रु ही है। आदि काव्य 'रामायण' के पश्चात् भी उत्तरकालीन काव्यों के प्रणयन में प्राय: अश्रु ही आधार बने हैं।

कविकुल गुरु, सरस्वती के वरद पुत्र, कविता कामिनी के हास महाकवि कालिदास ने अपनी प्रत्येक कृति को अश्रुओं से सिक्त किया है। उनकी प्राय: प्रत्येक कृति चाहे वह नाट्य कृति हो अथवा गीतिकाव्य या महाकाव्य, प्रत्येक में अश्रुओं की पुण्य स्रोतस्विनी प्रवाहित हो रही है।

महाकवि ने आँसू को भिन्न-भिन्न रूपों में देखा है। उन्होंने सर्वत्र चाहे वह पुत्री की वत्सलता हो या बहिन-सखी का प्रेम, पत्नी का प्रेम हो या माता की ममता सबका समन्वय अश्रु में ही देखा है।

विवेच्य शोध पत्र का विषय चूँकि 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' में अश्रु है। अत: वहीं मुड़ना श्रेयस्कर होगा। विवेच्य नाटक का सूक्ष्मत: अवलोकन करने पर हम पाते हैं कि कवि ने मानव से सम्बन्धित प्राय: प्रत्येक भाव को अश्रुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है। 'शाकुन्तलम्' में मुख्यत: अश्रुओं के माध्यम से जिन भावों का वर्णन किया गया है वे इस प्रकार हैं- पिता-पुत्री का प्रेम, सखियों का स्नेह, साथ रहने के कारण पशु-पक्षियों का प्रेम, प्रकृति प्रेम, पति-पत्नी का परस्पर प्रेम, विरह, मिलन, पश्चात्ताप, क्रोध, मानव की संतान लालसा आदि।

इनका कुछ विस्तृत रूप निम्नवत् देखा जा सकता है।

यदि अंकों की दृष्टि से विचार किया जाये तो हम पाते हैं कि चतुर्थ अंक एक ऐसा अंक है जो अश्रु से पूर्णत: सिक्त है। अश्रुओं में इतनी शक्ति है कि वनवासी कण्व पर भी अपना आधिपत्य जमा लेते हैं। शकुन्तला के पति गृह गमन के समय उनका कण्ठ अश्रुओं से रुंध गया है-

यास्यत्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया,
कण्ठ: स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषिश्चिन्ताजडं दर्शनम्।[1]

आगे भी गौतमी कहती है-

एष ते आनन्दपरिवाहिणा चक्षुषा परिष्वजमान: इव गुरुरुपस्थिता:।[2]

शकुन्तला अपनी सखियों के साथ गले मिलकर रोती है।[3]

चतुर्थ अंक में महाकवि इतने भावुक हो जाते हैं कि उन्हें प्रकृति भी अश्रुपात करती प्रतीत होती है।

अपसृतपाण्डुपत्रा मुन्यचन्त्यश्रुणीव लता:।[4]

शकुन्तला के हृदय में एक और पति मिलन की लालसा है तो दूसरी ओर पितृगृह को त्यागने की विकलता। उसकी इस करूणामयी स्थिति को व्यक्त करने में अश्रुओं के अतिरिक्त किसमें सामर्थ्य हो सकती है?[5]

पंचम अंक में जब दुर्वासा के शाप वश दुष्यन्त शकुन्तला को पहचानने में असमर्थ होकर उसे अस्वीकृत कर देता है तब शकुन्तला के अश्रु उसका क्रोध, उसके हृदय की वेदना दोनों को सदैव ही प्रकट करते हैं।[6] पुरोहित शकुन्तला की स्थिति इस प्रकार प्रकट करता है-

सा निन्दन्ती स्वानि भाग्यानि बाला बाहुत्क्षेप क्रन्दितुं च प्रवृता।[7]

अश्रु कभी विरही मनुष्य के नेत्रा व निद्रा के मध्य दीवार बन जाते हैं तो कभी उसके नेत्रा व प्रियतमा के चित्रादर्शन के मध्य बाधक बनते हैं। षष्ठ अंक में दुष्यन्त को जब शकुन्तला की पुन: स्मृति हो आती है तब वह उसका चित्रा-दर्शन कर अपना मनोविनोद करना चाहता है किन्तु अश्रु इसमें भी बाधा डाल देते हैं-

प्रजागरात् खिली भूतस्तस्या: स्वप्ने समागम:।
वाष्पस्तु न ददात्येडयं दष्टुं चित्रागतामपि।।[8]

अश्रु केवल विरह-वेदना को ही प्रकट नहीं करते वरन् मिलन की मधुर बेला को भी अभिसिक्त करते हैं। सप्तम अंक में दुष्यन्त का जब शकुन्तला से पुनर्मिलन होता है तब वह भी अश्रुओं की छाँव तले ही सम्पादित होता है।

वाष्पेण प्रतिषिद्धेपि जयशब्दे जितं मया।
यत्तो दृष्टमसंस्कार पाटलोष्ठपुटं मुखम।।[9]

अश्रु एक नि:सन्तान व्यक्ति की पीड़ा को व्यक्त करने में पूर्ण समर्थ है। दुष्यन्त के पूर्वज उसके नि:सन्तान होने के कारण दुष्यन्त के अश्रुओं को धोने से शेष बचे तर्पण जल को पीते हैं-

अस्मात् परं वत यथाश्रुति संभृतानि को न: कुले निवपनानि नियच्छतीति।

* एसो. प्रोफेसर (संस्कृत विभाग) दिगम्बर ज़ैन कॉलिज, बड़ौत, बागपत (उ.प्र.) भारत

नूनं प्रसूति विकलेन मया प्रसिक्तं धौताश्रुशेष मुदकं पितर: पिबन्ति।।[10]

इस प्रकार 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' में अश्रु वर्णन पर सुक्ष्मत: विचार करने पर यह स्पष्ट होता है कि अश्रु विरह से मिलन की और एक निश्चित मार्ग प्रशस्त करते हैं। नायक एवं नायिका का जो प्रेम मात्र शारीरिक आकर्षण पर आधारित था तथा जिसमें न गुरुजनों की आज्ञा थी न आशीर्वाद तथा जो प्रेम न होकर कोरी वासना सी प्रतीत होता था वही प्रेम अश्रुओं की अग्नि में तप कर निखर उठता है तथा कुन्दन बन जाता है। कवि ने नायक एवं नायिका दोनों से पश्चाताप के अश्रु गिरवाये हैं ये अश्रु उनके प्रेम को आदर्शोन्मुख बना डालते हैं। प्रस्तुत नाटक का यह अश्रु वर्णन भली-भाँति स्पष्ट कर देता है कि अश्रु मुस्कान की ओर उठाया गया प्रथम पाद है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अभिज्ञान शाकुन्तलम् चतुर्थ अंक श्लोक सं0-06
2. वही श्लोक सं0-06 से आगे गौतमी का संवाद
3. वही, चतुर्थ अंक में अनेक स्थल, अभिज्ञान शाकुन्तलम्-वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी, पृ0सं0-27, 49, 70
4. वही, श्लोक सं0-12
5. वही, श्लोक सं0-15
6. वही पंचम अंक, पृ0 सं0-128, 139
7. वही पंचम अंक, श्लोक संख्या-30
8. वही षष्ठ अंक, श्लोक सं0-22
9. वही सप्तम अंक, श्लोक सं0-23
10. वही षष्ठ अंक, श्लोक सं0-25

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

छिन्दवाड़ा जिले में जल संसाधनों की स्थिति

जिन्सा रानी मरकाम *

शोध सारांश – जल संसाधन, जल के वे स्त्रोत हैं, जो मनुष्यों के लिए उपयोगी होते हैं। अधिकांशत: लोगों को ताजे जल की आवश्यकता होती है। जल की उपस्थिति के कारण ही पृथ्वी पर जीवन संभव है। जल एक अक्षय प्राकृतिक संसाधन है। एक अक्षय संसाधन वह संसाधन होता है, जिसे बार-बार उपयोग किया जा सकता है, क्योंकि यह प्राकृतिक रूप से प्रतिस्थापित हो जाता है। तीव्र जनसंख्या वृद्धि तथा वैश्विक उष्णता से जल संसाधनों पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण जल का समुचित प्रबंधन तथा संरक्षण आवश्यक है। जल प्रकृति में विभिन्न स्थानों पर विभिन्न रूपों में पाया जाता है। पृथ्वी में जल ऐसा पदार्थ है, जो तीनों अवस्थाओं यथा-ठोस, द्रव एवं गैस में पाया जाता है। ठोस अवस्था में हिमखण्डों, बर्फ के पहाड़ों एवं नदियों, द्रव अवस्था में झरनों, तालाबों, नदियों तथा गैस अवस्था में जलवाष्प (भाप) के रूप में पाया जाता है।

शब्द कुंजी – जल संसाधन, सतही जल, भूमिगत जल, औसत वार्षिक वर्षा, सतही जल स्त्रोत, भूमिगत जल स्त्रोत, सिंचाई के साधन।

प्रस्तावना – जल पृथ्वी पर प्रचुर मात्रा में पाया जाने वाला तत्व है, जो सजीव वस्तुओं का प्रमुख संघटक एवं पृथ्वी सतह के निर्माण में प्रयुक्त एक प्रमुख संसाधन है। पृथ्वी की सतह का करीब दो-तिहाई (70 प्रतिशत) हिस्सा जल से ढका है। पृथ्वी पर विद्यमान जल का 97.3 प्रतिशत जलराशि महासागरों में है। महासागरीय जल में खनिज लवणों के घुले होने के कारण खारापन होता है, जिसकी वजह से जल पीने के अनुकूल नही है। सम्पूर्ण पृथ्वी में महज 2.7 प्रतिशत शुद्ध जल पाया जाता है, जो पीने के योग्य है, लेकिन इस जलराशि का अधिकांश हिस्सा ध्रुवों पर बर्फ के रुप में जमा है, जो हमारे उपयोग के लिए आसानी से उपलब्ध नहीं है। इस तरह जल का बहुत कम हिस्सा लगभग 1 प्रतिशत ही हमारे उपयोग के लिए सुलभ है।

मानव सभ्यता तथा संस्कृति से जल का अनन्य सम्बन्ध है। संसार की सभी सभ्यताएँ जल स्त्रोतों विशेषकर के नदियों के किनारे विकसित हुई हैं, चाहे वह सिंधु घाटी की सभ्यता हो या मिस्त्र की सभ्यता, मेसोपोटामिया की सभ्यता रही हो या चीन की सभ्यता। इसी कारण जल का हमारी सभ्यता तथा संस्कृति के सरोकारों से गहरा जुड़ाव रहा है। यह हमारे सोच तथा चिंतन की दशा और दिशा का नियामक रहा है। इसलिए जल हमारे साहित्य, संगीत, धर्म, कला तथा दर्शन में व्यापक रुप से समाहित है।

मानव अस्तित्व एवं सभ्यता के विकास तथा पृथ्वी के शीत-ताप-नियंत्रण में इसकी केन्द्रीय भूमिका है। जल के अभाव में जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। जल मानव समाज की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक एवं सर्वप्रमुख संसाधन है, इसलिए कहा गया है, कि यजल ही जीवन है।

हम सभी जल के सामान्य उपयोगों से परिचित हैं, जल वास्तव में सभी प्रयोजनों में काम आने वाला पदार्थ है-हम जल से अपनी प्यास बुझाते हैं, जल में अपना खाना पकाते हैं तथा जल से अपने कपड़े धोते हैं, जल आनंद एवं खुशियों में भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना कृषि क्षेत्रों एवं औद्योगिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है। जल का उपयोग मानव तक ही सीमित नहीं है, बल्कि जानवरों के लिए भी उतना ही उपयोगी है। जल सभी प्राणियों एवं वनस्पतियों के लिए अतिआवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र : छिन्दवाड़ा जिला भारत में मध्यप्रदेश राज्य के जिलों में से एक है। जिला जबलपुर संभाग का हिस्सा है। छिन्दवाड़ा जिला मध्यप्रदेश राज्य में क्षेत्रफल (11,815 वर्ग कि.मी.) में प्रथम स्थान पर है और राज्य के क्षेत्रफल का 3.85 प्रतिशत है। जिले में कुल 12 तहसील तथा 11 विकासखण्ड हैं, जिसमें ग्राम पंचायत 808 तथा कुल 1985 ग्राम है। जिले का गठन 1 नवम्बर 1956 को मध्यप्रदेश राज्य के गठन के साथ किया गया। यह जिला सतपुड़ा श्रेणी के दक्षिण-पश्चिम हिस्से में स्थित है। दक्षिण में जिले की सीमा महाराष्ट्र राज्य के नागपुर एवं अमरावती जिले के मैदानी भाग से लगती है। उत्तर में नर्मदा घाटी में स्थित होशंगाबाद एवं नरसिंहपुर जिले इसकी सीमा बनाते हैं। पश्चिम और पूर्व में क्रमश: बैतूल तथा सिवनी जिला स्थित है।

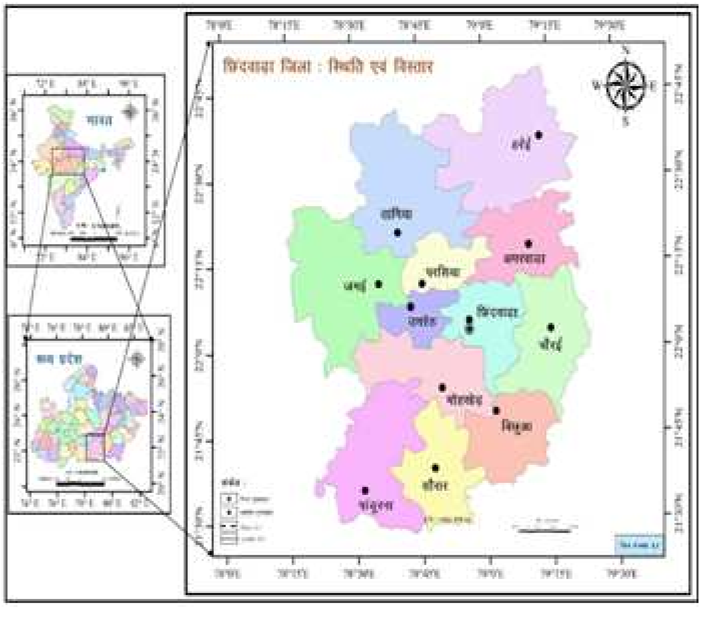

छिन्दवाड़ा जिले का विस्तार सतपुड़ा पठार के दक्षिण-पश्चिम में 21°28'00'' से 22°49'00'' उत्तरी अक्षांश तथा 78°14'30'' से

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

79°24'20'' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इस जिले की पूरब से पश्चिम की चौड़ाई 104 किलोमीटर एवं उत्तर से दक्षिण का विस्तार 136 किलोमीटर है। जो समुद्र सतह से 1164 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। छिन्दवाड़ा जिले के उत्तरी-पहाड़ी भू-भाग में ऊँची पर्वत श्रेणी बनी हुई है। जिले के कुछ क्षेत्र समुद्र सतह से काफी ऊँचे है, जैसे-पर्वतीय ग्राम कालापाठा 3979 फीट, सुरलाखापा 3825 फीट, हर्रा पठार 3852 फीट की ऊँचाई पर बसे हैं। सतपुड़ा श्रेणी का सबसे ऊँचा भाग जिले के उत्तरी भाग में पूरब से पश्चिम की ओर विस्तृत है। जहाँ अधिकांश नदियों का उद्गम स्थल है।

आँकड़ों का संकलन एवं विधितंत्र : अध्ययन क्षेत्र के जल संसाधनों के स्वरूप के अध्ययन के लिए प्राथमिक व द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक आँकड़े व्यक्तिगत पर्यवेक्षण तथा साक्षात्कार द्वारा एकत्रित किये गये हैं। द्वितीयक आंकड़े जल संसाधन विभाग छिन्दवाड़ा, जिला साँख्यिकीय पुस्तिका, जल संसाधन पुस्तिका भोपाल, छिन्दवाड़ा जिले से संबंधित वेबसाइट एवं समाचार पत्र-पत्रिकाओं आदि से प्राप्त किये गये हैं। प्राप्त आँकड़ों का सारणीयन वर्गीकरण हेतु आवश्यक साँख्यिकीय विधियों का विश्लेषण करते हुये शोध पत्र का निर्माण किया गया है।

छिन्दवाड़ा जिले में जल संसाधनों का वर्गीकरण : अध्ययन क्षेत्र के जल संसाधनों में वर्षा जल प्रवाही जल के रूप में वितरित है, जहाँ वार्षिक वर्षा औसत मिली मीटर है। अध्ययन क्षेत्र में प्रवाहित मुख्य पाँच नदियों में कन्हान, पेंच, जाम, कुलबहेरा, दुधी तथा अन्य प्रमुख नदियों में बोदरी, घटामाली, सर्पिणी, हरद, ठेल एवं सीतारेवा आदि हैं। अन्य नदियों में तवा नदी, बेल नदी तथा देनवा नदी है, जिनका उद्गम स्थल छिन्दवाड़ा जिला न होकर भी जिले के भू-भाग में प्रवाहित होती है।

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध जल की मात्रा को दो भागों में विभाजित किया गया है-अ) सतही जल ब) भूमिगत जल।

अ) सतही जल : सतही जल वर्षा की मात्रा पर आधारित होता है। छिन्दवाड़ा जिले में हर वर्ष औसत वार्षिक वर्षा में भिन्नताएँ देखने को मिलती हैं। सतही जल पृथ्वी के धरातल पर स्थिर व गतिशील दोनों रूपों में पाया जाता है। सतही जल में वर्षा जल, नदियाँ, तालाब, जलाशय, नहर आदि को शामिल किया जाता है। तालिका क्रमांक 1.1 में विभिन्न वर्षो में औसत वार्षिक वर्षा को स्पष्ट किया गया है :

तालिका क्रमांक : 1.1छिन्दवाड़ा जिला : औसत वार्षिक वर्षा मिलीमीटर में (जून से मई)

क्र.	जिला/तहसील / विकासखण्ड	1991	2001	2011	अन्तर
1	अमरवाड़ा	539.0	597.0	1562.0	965
2	बिछुआ	517.0	672.2	869.8	197.1
3	चौरई	609.5	721.6	928.4	206.8
4	छिन्दवाड़ा	591.9	682.7	1040.2	357.5
5	हर्रई	671.2	1102.1	914.1	118
6	जामई	949.1	708.2	1033.6	325.4
7	मोहखेड़	585.3	527.7	1019.2	491.5
8	पाँढुर्णा	609.8	632.0	1153.2	521.2
9	परासिया	693.6	530.9	1139.2	608.3
10	सौंसर	448.5	757.4	888.1	130.7
11	तामिया	1658.3	1031.3	1190.9	159.6
	योग	715.70	723.96	1006.71	343.14

स्रोत:- जिला सांख्यिकी पुस्तिका-(1991-2012)

ब) भूमिगत जल : भू-सतह के नीचे स्थित जल को भूमिगत जल की संज्ञा दी जाती हैं। यह जल धरातलीय अन्त:स्त्रवण द्वारा भूमिगत होता हैं। भूमिगत जल की प्राप्ति के प्रमुख स्त्रोत कुएँ, नलकूप आदि हैं। अध्ययन क्षेत्र में विद्यमान भू-जल का उपयोग मुख्यत: सिंचाई एवं पेयजल के रूप में किया जाता हैं, जो वर्षा काल के अतिरिक्त वर्ष के अधिकांश महीनों में विविध आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

वर्तमान में छिन्दवाड़ा जिले में तहसीलवार सतही जल एवं भूमिगत जल के स्त्रोतों को तालिका क्रमांक-1.2 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक : 1.2 छिन्दवाड़ा जिला : तहसीलवार सतही जल एवं भूमिगत जल के स्त्रोतों की संख्या

क्र.	जिला/ तहसील	सतही जल स्त्रोत			भूमिगत जल स्त्रोत	
		जलाशय	तलाब	नहर	कुएँ	नलकूप
1	अमरवाड़ा	9	11	10	7121	626
2	बिछुआ	3	11	4	6137	167
3	चाँद	4	26	7	6165	1628
4	छिन्दवाड़ा	9	15	18	12619	2734
5	चौरई	4	6	12	6781	903
6	हर्रई	4	1	4	3433	256
7	जुन्नारदेव	5	13	19	4702	685
8	मोहखेड़	1	11	1	15729	1056
9	पांढुर्णा	11	3	24	16733	1893
10	परासिया	3	3	3	3365	509
11	सौंसर	5	5	12	7367	98
12	तामिया	8	5	9	985	29
13	उमरेठ	0	2	0	4425	2463
	जिला	**66**	**122**	**123**	**95563**	**13047**

स्त्रोत : जिला सांख्यिकी पुस्तिका-2018-19

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के प्रमुख साधनों का सिंचित क्षेत्रफल : कृषि क्षेत्र में वृहत उत्पादन करने के लिए सिंचाई करना अनिवार्य हैं। छिन्दवाड़ा जिले में सिंचाई के साधनों में कुएं, नलकूप, तालाब, नदियों, नहरें आदि है। अध्ययन क्षेत्र का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 1181500 हेक्टेयर हैं। इनमें से 227887 हेक्टेयर भू-भाग सिंचित हैं। कुल सिंचित क्षेत्र में से 138341 हेक्टेयर (60.70 प्रतिशत) कुओं के द्वारा, 50639 हेक्टेयर (22.22 प्रतिशत) नलकूपों के द्वारा, 25086 हेक्टेयर (11.01 प्रतिशत) जलाशय की नहरों के द्वारा, 4635 हेक्टेयर (2.04 प्रतिशत) तालाबों के द्वारा तथा 9186 हेक्टेयर (4.04 प्रतिशत) नदी नाले के द्वारा की जाती है।

तालिका क्रमांक : 1.3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सिंचित फसलें : कृषक सिंचाई तथा खाद जैसे निवेशों का उपयोग करके कृषि में अधिक से अधिक लाभ लेने की कोशिश करता हैं। इसी कारण से वह ऐसी फसलों में सिंचाई करता हैं, जिनका बाजार मूल्य तथा उपज दर अधिक हो। इसीलिए श्रेष्ठ एवं बहुमूल्य फसलों की सिंचाई करता हैं। इससे इन फसलों के अंतर्गत सिंचित क्षेत्र में लगातार वृद्धि हुई हैं। छिन्दवाड़ा जिले में वर्ष 2017 में 220433 हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की गई हैं। इसमें से तीन-चौथाई शुद्ध सिंचित भूमि केवल दो फसलों - गेहूँ और चना के अंतर्गत हैं। अन्य सिंचित फसलों में कपास, मूँगफली, सरसों, दालें, फल, फूल, साग-सब्जी एवं मसालें प्रमुख हैं। छिन्दवाड़ा जिले में प्रमुख सिंचित एचं असिंचित

फसलें निम्नांकित तालिका क्रमांक-1.4 में प्रदर्शित किया गया है-

तालिका क्रमांक : 1.4 छिन्दवाड़ा जिला : प्रमुख सिंचित एवं असिंचित फसलें हेक्टेयर में (2017)

क्र.	फसलें	सिंचित क्षेत्र	प्रतिशत	असिंचित क्षेत्र	प्रतिशत
1	गेहूँ	134958	61.22	5147	1.04
2	चावल	18858	8.55	148	0.02
3	चना	21483	9.74	20855	4.22
4	कपास	5923	2.68	55973	11.32
5	मूँगफली	516	0.23	17403	3.52
6	कोदो-कुटकी	8	0.003	16689	3.37
7	सोयाबीन	0	0	58391	11.81
8	गन्ना	7933	3.59	0	0
9	मक्का	40	0.02	247709	50.12
10	फल-फूल	1062	0.48	264	0.05
11	साग-सब्जी	17767	8.06	1836	0.37
12	मसालें	4663	2.11	529	0.10
13	खरीफ फसलें	31687	14.37	456749	92.43
14	रबी फसलें	188746	85.62	37397	7.56
15	सकल क्षेत्रफल	220433	100	494146	100

स्त्रोत : जिला सांख्यिकीय पुस्तिका 2017-18

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 1.4 में वर्ष 2017 में छिन्दवाड़ा जिले में प्रमुख सिंचित एवं असिंचित प्रमुख फसलों तथा खरीफ एवं रबी की फसलों के अन्तर्गत सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रफल को हेक्टेयर एवं प्रतिशत में प्रदर्शित किया गया हैं। जिले में सर्वाधिक कुल सिंचित फसलों में गेहूँ 61.22 प्रतिशत (134958 हेक्टेयर) तथा कुल न्यूनतम सिंचित फसलों में कोदो कुटकी 0.003 प्रतिशत (8 हेक्टेयर) हैं। जिले में सर्वाधिक असिंचित फसलों में मक्का 50.12 प्रतिशत (247709 हेक्टेयर) एवं न्यूनतम असिंचित फसल चावल का 0.02 प्रतिशत (148 हेक्टेयर) है।

अत: जिले में वर्ष 2017 में खरीफ फसलों में सिंचित क्षेत्रफल 14.37 प्रतिशत (31687 हेक्टेयर) एवं असिंचित क्षेत्रफल 92.43 प्रतिशत (456749 हेक्टेयर) हैं। रबी की फसलों में सिंचित क्षेत्रफल 85.62 प्रतिशत (188746 हेक्टेयर) एवं असिंचित क्षेत्रफल 7.56 प्रतिशत (37397 हेक्टेयर) पाया गया।

जिले में वर्ष 2017 में सकल सिंचित क्षेत्रफल 220433 हेक्टेयर एवं सकल असिंचित क्षेत्रफल 494146 हेक्टेयर पाया गया।

निष्कर्ष : जल जीवन का आधार है। यह संसाधन मृदा से भी अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि बिना जल की सहायता के मृदा से कुछ भी उत्पन्न नहीं किया जा सकता है। वस्तुत: कोई भी आर्थिक कार्य ऐसा नहीं है, जो जल के बिना सम्भव हो। जल प्रकृति की अनमोल भेंट है। यह जीवन के हर क्षेत्रों में तथा हर कदम पर मानव के लिए उपयोगी हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम इसे संरक्षित रखें तथा जल स्त्रोतों को प्रदूषित होने से बचायें। साथ ही हमें यह भी सुनिश्चित करना होगा कि देश के हर नागरिक को शुद्ध पेयजल मिले तथा आने वाली पीढ़ियों के लिए भी पर्याप्त जल उपलब्ध रहें। समूची मानव सभ्यता का भविष्य पृथ्वी पर जल संसाधन की उपलब्धता तथा उसकी गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. चतुर्वेदी ए. के. जल के विलक्षण गुण और महत्व,(जुलाई 2014): इण्डिया हिन्दी वॉटर पोर्टल।
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका-2011-2016
3. जिला जनसंख्या हैण्डबुक 2011
4. जिला गजेटियर।
5. जिला जल संसाधन पुस्तिका-2013
6. जिला सांख्यिकी पुस्तिका-2017
7. माथुर, भावना एवं नारायण महेश,(1998): संसाधन भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पेज नं. 108-109

तालिका क्रमांक : 1.3 छिन्दवाड़ा जिला : तहसीलवार सिंचित क्षेत्रफल का साधनवार विवरण (प्रतिशत में)

क्र.	जिला/तहसील	कुआँ से	नलकूप से	जलाशय की नहर से	तालाब से	नदी नाला से	कुल सिंचित क्षेत्रफल
1	अमरवाड़ा	8.72	6.73	15.26	8.52	4.52	8.93
2	बिछुआ	7.02	1.31	0.35	17.90	2.13	5.04
3	चाँद	9.53	12.89	4.15	5.26	16.80	9.85
4	छिन्दवाड़ा	15.65	16.55	6.82	22.69	8.71	14.74
5	चौरई	11.10	4.36	48.49	5.97	8.15	13.50
6	हर्रई	2.41	2.52	0.59	0.00	21.75	2.97
7	जुन्नारदेव	4.01	13.89	0.93	2.93	5.93	5.90
8	मोहखेड़	15.16	7.13	6.29	21.73	0.98	11.97
9	पांढुर्णा	9.26	10.90	6.97	3.43	0.54	8.88
10	परासिया	3.81	5.43	0.53	3.37	8.87	4.01
11	तामिया	2.18	0.03	5.36	6.82	20.32	2.88
12	सौंसर	5.60	0.05	4.21	0.00	0.38	3.89
13	उमरेठ	5.53	18.06	0.00	1.36	0.90	7.43
	जिला	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**

स्त्रोत:- जिला सांख्यिकी पुस्तिका-2018-19

****

भारतीय रंगमंच की दृष्टि से संस्कृत नाट्यशास्त्रम् अभिनय एवं पटकथा

डॉ. उषा नागर *

शोध सारांश – काव्य को दृश्यत्व तथा श्रव्यत्व के भेद से दो प्रकार का माना जाता है। उनमें दृश्यकाव्य वह होता है, जिसका अभिनय किया जा सके – **'दृश्यं तत्राभिनेयम् ।'** दृश्यकाव्य को रूपक भी कहा जाता है, क्योंकि उसमें रामादि के स्वरूप का नटों पर आरोप किया जाता है। वस्तुत: रामादि के स्वरूप का जब नट स्वयं पर आरोप करता है, उस प्रक्रिया को अभिनय कहते हैं। अब प्रश्न होता है कि यह अभिनय क्या होता है? इस पर विश्वनाथ कहते हैं – **'भवेदभिनयोऽवस्थानुकार:।'** अर्थात् अवस्था के अनुकरण को अभिनय कहते हैं। अर्थात् नटों के द्वारा के द्वारा राम, युधिष्ठिर आदि की अवस्थाओं का अनुकरण अभिनय कहलाता है।

वस्तुत: अभिनय के विषय में संस्कृत नाट्य शास्त्रीय परम्परा में सम्यक् विवेचन प्राप्त होता है। सर्वप्रथम आचार्य भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र में अभिनय को व्युत्पत्ति पूर्वक परिभाषित किया है –

अभिपूर्वस्तु णीञ् धातुराभिमुख्यार्थनिर्णये ।
यस्मात्पदार्थान्नयति तस्मादभिनय: स्मृत:।।

अर्थात् 'अभि' उपसर्ग पूर्वक णीञ् प्रापणे धातु से एरच सूत्र से अच् प्रत्यय होकर अभिनय शब्द निष्पन्न होता है। यह अभिनय शब्द आभिमुख्य अर्थ में है। अर्थात् अभिनय नाट्य प्रयोग के अर्थों को प्रेक्षकों के सम्मुख ले जाता है। कहने का भाव यह है कि नाट्य प्रयोग के अर्थों को प्रेक्षकों के समक्ष प्रत्यक्षत: प्रदर्शित करना अभिनय कहलाता है। कवि के भावों को सहृदय की ओर जाने की प्रक्रिया का नाम अभिनय है।

कवि के ये 'भाव' – 'भवन्ति इति भावा:' उत्पन्न होकर अभिव्यक्ति की आकांक्षा रखते हैं तथा भावन करना उनका धर्म है। अत: वे सहृदयों को भावित करते हैं। इस प्रकार अभिनय में ये भाव सहृदयों को कवि की विवक्षा की ओर लेकर जाते हैं। इसी तथ्य को नाट्यदर्पण में कहा गया है – सामाजिकानामाभिमुख्येन साक्षात्कारेण नीयते प्राप्यते अर्थोऽनेनेत्यभिनय:। अर्थात् सामाजिकों के लिए नाट्य का प्रस्तुतिकरण ही अभिनय कहलाता है।

परन्तु अभिनय के उक्त सम्पूर्ण प्रकरण में सौन्दर्य तत्तव का उल्लेख प्राप्त नहीं हो पा रहा है। क्योंकि रूपकों का परम लक्ष्य तो सहृदयों को रसानुभूति कराना ही है। धनञ्जय इस विषय में कहते भी हैं – 'दशधैव रसाश्रयम्' वह अभिनय के माध्यम से ही सम्भव है। इसीलिए मल्लिनाथ ने किरातार्जुनीय के पद्य (10.42) की टीका में कहा है – 'अभिनयो रसभावादिव्यञ्जकचेष्टाविशेष:।' अर्थात् रस-भावादि को व्यजित करने वाली चेष्टाविशेष को अभिनय कहते हैं। इसी तथ्य को शागदेव ने अत्यन्त स्पष्टता के साथ कहा है। उनके अनुसार –

स त्वत्रभिनयो भवेत् ।
काव्यबद्धं विभावादिव्यञ्जयन्यो नटे स्थित: ।
सामाजिकानां जनयन्निर्विघ्नां रससंविदम् ।।

अर्थात जो काव्यबद्ध विभावादि को व्यजित कर सामाजिकों में निर्विघ्न रूप से रसानुभूति को उत्पन्न करता हुआ नट में स्थित है, वह अभिनय कहलाता है।

शब्द कुंजी – अभिनय, पटकथा, अङ्गादि, रसानुभूति रति, क्रोध, भय, अङ्ग, नेपथ्य, सात्तिवक, दृश्यश्रव्य, दृश्य, श्रव्य, ऊह्य, सूच्य, अङ्कास्य।

उद्देश्य – भारतीय रंगमंच की दृष्टि से अभिनय एवं पटकथा के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करना है।

अब उक्त तथ्यों को समझने के लिए तीन स्तरों को जानना आवश्यक है। अभिनय नट में स्थित होता है, विभावादि रूपकों में स्थित होते हैं तथा रस सहृदयों में स्थायिभावों के रूप में वासनारूप में सुप्तावस्था में होता है। वस्तुत: अभिनय नट के द्वारा किया जाने वाला एक सुन्दर अनुकरण है, जो नाटकीय पात्रों की विभिन्न अवस्थाओं को सूचित करता है तथा नाट्य के आनन्द विधायक तत्त्वों को प्रकट कर रसानुभूति का साधन बन जाता है।

विभावादि रूपकों में स्थित होते हैं। जैसे शाकुन्तल में दुष्यन्त और शकुन्तला एक दूसरे के लिए आलम्बन विभाव हैं। महर्षि कण्व का आश्रम तथा वहाँ की समस्त परिस्थितियाँ उद्दीपन विभाव हैं। उनके द्वारा किए गए भ्रूविक्षेप कटाक्षादि अनुभाव हैं तथा चिन्ता आदि सञ्चारी भाव हैं। ये सभी विभावाति रूपकों में रहते हैं।

सहृदयों में जन्म-जन्मान्तरों से स्थित रति, क्रोध, भय इत्यादि के संस्कार होते हैं, जो वासना के रूप में दृढ़ हो चुके होते हैं। जब हम नाटक में नटों को दुष्यन्त-शकुन्तला आदि की अवस्थाओं का अनुकरण कर अभिनय रूप में प्रेम करते हुए देखते हैं, तब वे रत्यादि जो कि हमारे मस्तिष्क में सुप्त अवस्था में स्थित होते हैं, वे नाटकगत उन विभावादि को देखकर जाग्रत हो

* व्यख्याता (संस्कृत) बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) भारत

जाते हैं तथा इन विभावादि के संयोग से ही रसरूप को प्राप्त होते हैं।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि अभिनय रामादि की अवस्थाओं का नट के द्वारा किया गया वह अनुकरण है, जो सहृदयों को रसानुभूति कराता है।

अभिनय चार प्रकार का होता है –

स चतुर्विधः।
आङ्गिको वाचिकश्चैवमाहार्यः सात्त्विकस्तथा।।

अर्थात् वह अभिनय चार प्रकार का होता है – आङ्गिक, वाचिक, आहार्य तथा सात्त्विक । अङ्गों और उपाङ्गों के द्वारा कार्यो का साक्षात्कार कराना आङ्गिक अभिनय है। यहाँ पर कार्यों से तात्पर्य अनुकार्य रामादि की चेष्टाओं से है। 'साक्षाद्भावन' से तात्पर्य है – परोक्ष को भी सामाजिकों के लिए प्रत्यक्ष बना देना। यह आङ्गिक अभिनय भी तीन प्रकार का होता है – शारीरज, मुखज तथा चेष्टाकृत । भरत मुनि के अनुसार इसी अभिनय के शाखा, नृत्ता तथा अंकुर को भी जानना चाहिए। आङ्गिक अभिनय को शाखा कहा जाता है। सूच्य अभिनय को अंकुर कहा जाता है तथा अङ्गहारों के द्वारा किया जाने वाला तथा करणों पर आश्रित अभिनय 'नृत्त' कहलाता है। इस प्रकार शाखा, अङ्ग, उपाङ्ग और प्रत्यङ्गों से प्रदर्शित अभिनय 'शारीरज' है। केवल उपाङ्गों से होने वाला अभिनय 'मुखज' है तथा स्थान, आसनादिगत चेष्टाओं स होने वाला अभिनय चेष्टाकृत कहा जाता है। वाणी से किया जाने वाला अनुकरण वाचिक अभिनय कहलाता है। भरतमुनि का कथन है कि शब्दों पर विशेष प्रयत्न करना चाहिए, क्योंकि सम्पूर्ण नाट्य का शरीर है। **अङ्ग, नेपथ्य तथा सात्त्विक अभिनय ही वाक्यार्थ को अभिव्यक्त करते हैं।** नाट्यदर्पणकार के अनुसार– **वाचिको अभिनयो वाचा यथाभावमनुक्रिया।** अर्थात् वक्ता का जैसा भाव है, उसके अनुसार उसकी वाणी का अनुकरण वाचिक अभिनय कहलाता है। यहाँ पर यथाभावमनुक्रिया पद वाचिक अभिनय का अनुवाद से भिन्नता प्रदर्शित करता है। वक्ता के द्वारा कहे गए शब्दों को बोल देना मात्र अनुवाद कहलाता है तथा वक्ता के भावों के अनुरूप शब्दों का अनुकरण वाचिक अभिनय कहलाता है। भरतमुनि ने वाचिक अभिनय के अन्तर्गत शब्द, छन्द, लक्षण, अलङ्कार, गुण, दोष, भाषा तथा पाठ्यशैली का विस्तार से तथा तात्त्विक विवेचन किया है। **'आहार्याभिनयो नाम ज्ञेयो नेपथ्यजो विधिः।'** अर्थात् नेपथ्यज विधि का नाम आहार्य अभिनय है। **बाह्य वस्तुओं के द्वारा किया जाने वाला वर्ण आदि का अनुकरण आहार्य अभिनय कहलाता है।** यहाँ पर वर्ण से तात्पर्य श्वेत आदि वर्ण से है तथा आदि बअ पद से रस, गन्ध, वेष, शस्त्र, वाहन आदि का ग्रहण होता है। भरतमुनि के अनुसार पात्र की विविध उत्तामादि प्रकृतियों तथा रत्यादि विविध अवस्थाओं को नेपथ्य में ही तदनुरूप वर्णरचना और वेशविन्यास द्वारा आहृत किया जाता है, **तब आङ्गिक आदि अभिनयों के योग से रसोदय होता है।** अतः नाट्य में नट में अनुकार्य का आहरण होता है, इसीलिए इसे आहार्य अभिनय कहते हैं। जिस प्रकार आत्मा एक शरीर को त्याग कर अन्य शरीर में प्रवेश करते समय पूर्व शरीर के सुख–दुःखात्मक स्वभाव त्याग देती है, **वैसे ही नट भी अभिनय के समय स्वयं के स्वभाव को त्याग कर अनुकार्य के स्वभाव को ग्रहण कर सामाजिक के समक्ष प्रस्तुत होता है।** आहार्य अभिनय चार प्रकार का होता है – पुस्त (वस्त्रदि का संयोजन, यान्त्रिक साधनों से रथादि में गति उत्पन्न कर मंच पर प्रस्तुत करना, वस्त्र आदि से आवेष्टित रूप को प्रदर्शित करना), अलङ्कार (मालाधारण, आभूषणधारण, वेशविन्यास), अङ्गरचना (देश, जाति, वय आदि के अनुसार देवादि के रूप में रूपपरिवर्तन) तथा संजीव (अपद, द्विपद, चतुष्पद जीवों को रंगमंच पर प्रस्तुत करना)।

स्तम्भ, स्वेद आदि सात्त्विक भावों से किया जाने वाला अभिनय सात्त्विक अभिनय कहलाता है। दूसरे के सुख–दुःखादि भावों से जो भावित होता है, उसमें अन्तःकरण की आत्यन्तिक आसक्ति 'सत्तव' कही जाती है, उन सत्तव से निष्पादित भावों से आठ सात्त्विक भाव उत्पन्न होते हैं। अथवा स्वरभेदादि अनुभावों का प्रदर्शन सात्त्विक अभिनय कहलाता है। वस्तुतः एकाग्र मन का नाम ही सत्त्व है और यह सत्त्व जिसका प्रयोजन हो, वह सात्त्विक कहलाता है। अतः एकाग्र मन से स्वरभेदादि का प्रदर्शन करना ही सात्त्विक अभिनय है। स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, स्वरभेद, वेपथु, वैवर्णय, अश्रु तथा प्रलय ये आठ सात्त्विक भाव कहलाते हैं । यद्यपि ये अनुभाव ही होते हैं, तथापि सत्त्व से उत्पन्न होने के कारण इनकी कुछ आचार्यों ने पृथक से गणना की है। पटकथा – सामान्यतया आजकल पटकथा किसी फिल्म अथवा नाटक के लिए लेखक द्वारा लिखा गया पूर्व प्रारूप होता है। यह पूर्णतया काल्पनिक भी हो सकता है और किसी उपन्यास, कहानी, महाकाव्य आदि की कथा पर आश्रित भी हो सकता है। इसमें संवाद और संवादों के बीच में होने वाली घटनाओं और दृश्यों का विस्तृत विवरण होता है । अंग्रेजी में इसे स्क्रिप्ट कहा जाता है।

जहाँ तक संस्कृत नाट्यशास्त्रीय परम्परा पर विचार करें तो रूपकों के तीन मुख्य तत्त्व माने जाते हैं–वस्तु, नेता और रस। अतः इस सन्दर्भ में यहाँ वस्तु का ग्रहण होता है। परन्तु जब अभिनय की दृष्टि से विचार किया जाय तब सम्पूर्ण वस्तु का ग्रहण नहीं करना चाहिए, अपितु उसी वस्तु का ग्रहण होता है, जो अभिनेय हो अथवा जिसमें अभिनय से सम्बन्धित दिशा निर्देश होते हैं। अतः स्पष्ट है कि पटकथा के अन्तर्गत अर्थप्रकृति, कार्यावस्था, सन्धि इत्यादि पर विचार नहीं किया जाता है।

अभिनेय कथावस्तु पाँच प्रकार की होती है – दृश्य–श्रव्य, दृश्य, श्रव्य, ऊह्य तथा सूच्य । इनमें से प्रथम चार प्रकार नाट्य के अङ्कों में होते हैं तथा अन्तिम केवल अर्थोपक्षेपक में ही होता है।

दृश्य–श्रव्य – यह कथावस्तु प्रेक्षकों के लिए दृश्य तथा श्रव्य दोनों प्रकार की होती है। इसमें पात्र जो कुछ बोलता है, उसे अभिनय के साथ भी प्रदर्शित करता है। साथ ही कथावस्तु के भी दृश्य और श्रव्य दोनों प्रकार होते हैं। जैसे शाकुन्तलम् के प्रथम अंक में –

राजा – सूत, पश्यैनं व्यापाद्यमानम् । (शरसन्धानं नाटयति)। (नेपथ्ये) भो भो राजन, आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः।

सूतः–(आकर्ष्यावलोक्य च)– आयुष्मन, अस्य खलु ते बाणपातवर्तिनः कृष्णशारस्यान्तरे तपस्विन उपस्थिताः।

यहाँ पर राजा मृग का पीछा कर रहा है। उसी समय कवि ने राजा और सूत के वार्तालाप का दृश्य उपस्थित किया है। प्रेक्षकों को मृग के पीछे रथ पर बाण का सन्धान किए हुए राजा दिखाई दे रहा है। तभी नेपथ्य से आवाज आती है कि यह आश्रम का मृग है, अतः यह मारने के योग्य नहीं है। तभी सूत कहता है कि आपके बाण के पतन और मृग के बीच तवस्वी उपस्थित हो गए हैं । अतः यहाँ पर **'आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः'** यह अंश श्रव्य है तथा शेष अंश दृश्य है।

दृश्य – यह कथावस्तु प्रेक्षकों के लिए केवल दृश्य ही होती है। इसमें पात्र कुछ नहीं बोलता है, अपितु अपने मनोभावों को अभिनय के साथ ही प्रदर्शित करता है। जैसे शाकुन्तलम् में ही द्वितीय अङ्क में राजा के आश्रम में आने के पश्चात् दोनों द्वारपाल जब राजा को फल अर्पित करते हैं, वह केवल दृश्य ही है, उसे प्रेक्षक वाणी से नहीं सुनते हैं।

उभौ – द स्वस्ति भवते। (इति फलान्युपहरत:)।

श्रव्य – यह कथावस्तु प्रेक्षकों के लिए केवल श्रव्य होती है। इसमें पात्र केवल अभिनय से अनुभावों को प्रदर्शित करते हैं। जैसे आकाशभाषित, वर एवं शाप, नेपथ्योक्ति, स्वगतम् आदि। इस प्रकार की कुछ घटनाएँ जो रंगमंच के बाहर ही घटित हो जाती हैं, उनका रंगमंच के पात्रों के द्वारा विज्ञापन कर दिया जाता है, वह प्रेक्षकों के लिए श्रव्य ही होता है।

इसके अतिरिक्त नाट्यधर्म की दृष्टि से कथावस्तु तीन प्रकार की भी होती है **– सर्वश्राव्य, नियतश्राव्य और अश्राव्य।** रंगमंच पर उपस्थित सभी पात्रों के सुनने योग्य वस्तु सर्वश्राव्य (प्रकाश) कहलाती है। कुछ पात्रों के सुनने योग्य वस्तु नियतश्राव्य कहलाती है तथा किसी भी पात्र के न सुनने योग्य वस्तु अर्थात पात्र के द्वारा अपने आप से ही बात करना अश्राव्य (स्वगत) कहलाती है। नियतश्राव्य वस्तु दो प्रकार की होती है – जनान्तिक एवं अपवारित। वार्तालाप के समय त्रिपताका (अनामिका को छोड़कर शेष अंगुलिया उठी हुई) बनाकर बहुत से पात्रों के बीच में कुछ पात्रों से बात करना जनान्तिक कहलाता है। **किसी पात्र के द्वारा मुख घुमाकर दूसरे व्यक्ति से बात करना अपवारित कहलाता है।**

ऊह्य –रूपकों में कुछ कथांश इस प्रकार के होते हैं, जिनका मञ्चन पात्रों के द्वारा नहीं किया जाता है, उनका प्रेक्षकों के द्वारा केवल सम्भावना किंवा अनुमान किया जाता है। जैसे शाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक में प्रियंवदा और अनसूया नामक सखियाँ शकुन्तला से कहती हैं – **'सखि ! यदि नाम स राजा प्रत्यभिज्ञानमन्थरो भवेत् ततस्तस्येमामात्मनामथेयाङ्कितम गुलीयक दर्शय।'** सखियों के इस कथन से प्रेक्षक यह अनुमान कर लेते हैं कि आश्रम से प्रस्थान करते समय दुष्यन्त ने शकुन्तला को अपने नामाङ्कित अंगूठी दी होगी।

सूच्य – सूच्य कथावस्तु का विधान अर्थोपक्षकों के द्वारा किया जाता है। यथा नाटक में कुछ घटनाएँ अनेक वर्ष, माह अथवा दिनों में सम्पूर्ण होने वाली होती हैं। कुछ घटनाएँ नीरस होती है अथवा मंच पर प्रदर्शन की दृष्टि से अनुचित होती है, उनका प्रतिपादन कवि के द्वारा रसनिष्पत्ति के लिए नहीं किया जाता है, अपितु कथावस्तु को अविच्छिन्न बनाए रखने के लिए किया जाता है। कहा भी गया है – **'नीरसोऽनुचितस्तत्र संसूच्यो वस्तुविस्तर:।** अर्थोपक्षेपक पाँच प्रकार के होते हैं **– विष्कम्भक, चूलिका, अङ्कास्य, अङ्कावतार एवं प्रवेशक। विष्कम्भक –** भूतकालीन तथा भविष्यकालीन कथांशों का सूचक, संक्षिप्त अर्थ वाला तथा मध्यम पात्रों (अमात्य, सेनापति, पुरोहित आदि) के द्वारा प्रयुक्त अर्थोपक्षेपक विष्कम्भक कहलाता है। यह केवल मध्यम पात्रों द्वारा प्रयुक्त होने पर शुद्ध तथा मध्यम और नीच पात्रों द्वारा प्रयुक्त होने पर संकीर्ण कहलाता है। **चूलिका –जवनिका में स्थित पात्रों के द्वारा किसी अर्थ (बात) की सूचना देना चूलिका कहलाता है।** जैसे उत्तररामचरित के द्वितीय अंक के प्रारम्भ में – (नेपथ्ये) स्वागतं तपोधनाया: (तत: प्रविशति तपोधना) इस प्रकार नेपथ्ये के पात्र वासन्तिका के द्वारा आत्रेयी के आने की सूचना देने से यह चूलिका का उदाहरण है।

अङ्कास्य – अङ्क के अन्त में आने वाले पात्रों के द्वारा पूर्व अङ्क से असम्बद्ध अर्थात् विच्छिन्न अग्रिम अङ्क के अर्थ की सूचना देने वाला **अर्थोपक्षेपक अङ्कास्य कहलाता है।** जैसे – महावीरचरित के द्वितीय अङ्क के अंत में –

(प्रविश्य)सुमन्त्र–भगवन्तौ वसिष्ठविश्वामित्रै भवत: सभार्गवानाह्वत:।

इतरे – क्व भगवन्तौ ?

सुमन्त्र: –महाराजदशरथस्यान्तिके।

इतरे – तदनुरोधात्तात्रैव गच्छाम:।

इत्यङ्कसमाप्तौ (तत: प्रविशन्त्युपविष्टा वसिष्ठविश्वामित्रपरशुरामा:)। यहाँ पूर्व अङ्क के अन्त में ही प्रविष्ट हुए सुमन्त्र नामक पात्र के द्वारा शतानन्द और जनक की कथा के समाप्त हो जाने पर अर्थ का विच्छेद होने पर अग्रिम तृतीय अङ्क के प्रारम्भिक अर्थ की सूचना दी गई है। अत: यह अङ्कास्य का उदाहरण है।

अङ्कावतार– अङ्क की समाप्ति होने पर अग्रिम अङ्क का अविच्छिन्न रूप से **अवतरण अङ्कावतार नामक अर्थोपक्षेपक कहलाता है।** जैसे मालविकाग्निमित्र के प्रथम अङ्क के अन्त में –

विदूषक– तेन हि द्वावपि देव्या: प्रेक्षागेहं गत्वा सङ्गीतकोपकरणं कृत्वा तत्रभवतो दूतं विसर्जयतम्, अथवा मृदङ्गशब्द एवैनमुत्थापयिष्यति। इस प्रकार यहाँ प्रथम अङ्क की कथा का विच्छेद हुए बिना ही द्वितीय अङ्क की कथा प्रारम्भ हो जाती है।

प्रवेशक– भूतकालीन तथा भविष्यकालीन कथांशों का सूचक, संक्षिप्त अर्थ वाला तथा नीच पात्रों (शकार, चेटी आदि) के द्वारा प्रयुक्त अनुदात्ता उक्तियों (प्राकृत भाषा) से प्रयुक्त, दो अङ्कों के बीच में स्थित तथा शेष **(प्रदर्शन न करने योग्य) अंश का सूचक अर्थोपक्षेपक प्रवेशक कहलाता है।**

अत: अभिनय एवं पटकथा के उक्त स्वरूप पर विचार करने के बाद यह स्पष्ट है कि रूपकों में सम्पूर्ण पटकथा अभिनय की दृष्टि से ही लिखी जाती है। अभिनेयता पटकथा का प्राण है। कथावस्तु तो महाकाव्य आदि श्रव्य काव्यों में भी होती है, परन्तु वह विशुद्ध रूप से श्रव्य ही होती है। रूपकों में श्रव्यता के साथ दृश्यमानता भी आवश्यक है। जहाँ कथावस्तु केवल श्रव्य होती है, वहाँ भी अभिनय की अपेक्षा होती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:–

1. साहित्यदर्पण
2. तद्रूपारोपात्तु रूपकम्।
3. नाट्यशास्त्र
4. नाट्यदर्पण,
5. आनन्दनिस्यन्दिषु रूपकेषु व्युत्पत्तिमात्रं फलमल्पबुद्धि:। योऽपीतिहा सादिवदाह साधुस्तस्मै नम: स्वादुपराङ्मुखाय।। दशरूपक
6. किरातार्जुनीय 10.42 पर मल्लिनाथ की टीका।
7. संगीतरत्नाकर
8. कर्मणोऽङ्गरुपाङ्गश्च साक्षाद्भावनमाङ्गिकम् नाट्यदर्पण
9. त्रिविधस्त्वाङ्गिको ज्ञेय: शारीरो मुखजस्तथा। तथा चेष्टाकृतश्चैव शाखाङ्गोपाङ्गसंयुत:।। नाट्यशास्त्र
10. वाचि यत्नस्तु कर्तव्यो नाट्यस्यैषा तनु:स्मृता। अङ्गनेपथ्यसत्वानि वाक्यार्थ व्यञ्जयन्ति हि।। नाट्यशास्त्र
11. आहार्याभिनयो नाम ज्ञेयो नेपथ्यजो विधि:। नाट्यशास्त्र
12. वर्णाद्यनुक्रियाऽऽहार्यो बाह्यवस्तुनिमित्तक:। नाट्यदर्पण
13. नानावस्था: प्रकृतय: पूर्वं नैपथ्यसाधिता:।। अङ्गादिभिरभिव्यक्ति–मुपगच्छन्त्ययत्नत:।। नाट्यशास्त्र
14. यथा जन्तु: स्वभावं एवं परित्यज्याल्य दैहिकम्। तत्स्वभावं हि भजते देहान्तरमुपाश्रित:।। वेषेण वर्णकैश्चैव छादित: पुरुषस्तथा। परभावं प्रकुरुते यस्य वेषं समाश्रित:।। वही
15. परस्य सुखदु:खादिभावैर्यद्भावनं भवेत् तत्रन्त:करणासक्तिरत्यन्ता सत्त्वमीष्यते।। सात्त्विकस्सत्तवनिष्पाद्यैर्भावैर्जातस्य दर्शनम्। नृत्तरत्नावली
16. सात्त्विक: स्वरभेदादेरनुभावस्य दर्शनम्। नाट्यदर्पण

17. वस्तु नेता रसस्तेषां भेदक: । दशरूपक
18. नाट्यधर्ममपेक्ष्यैतत्पुनर्वस्तु विधेष्यते।। सर्वेषां नियतस्यैव श्राव्यमश्राव्यमेव च। दशरूपक
19. सर्वश्राव्यं प्रकाशं स्यादश्राव्यं स्वगतं मतम् ।। द्विधाऽन्यन्नाट्यधर्माख्यं जनान्तमपवारितम् । त्रिपताकाकरेणान्यानपवार्यान्तरा कथाम् ।। अन्योन्यामन्त्रणं यत्स्याज्जनान्ते तज्जनान्तिकम् । रहस्यं कथ्यतेऽन्यस्य परावृत्तयापवारितम् ।।
20. अर्थोपक्षेपकै: सूच्यं पञ्चभि: प्रतिपादयेत् । विष्कम्भकचूलिका-ङ्कास्याङ्कावतारप्रवेशकै: ।।
21. वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शक:। संक्षेपार्थस्तु विष्कम्भो मध्यपात्रप्रयोजित: ।। एकानेककृत: शुद्ध: सङ्कीर्णो नीचमध्यमै: ।
22. अन्तर्जवनिकासंस्थैश्चूलिकार्थस्य सूचना ।
23. अङ्कान्तपात्रैरङ्कास्यं छिन्नाङ्कस्यार्थसूचनात् ।
24. अङ्कावतारस्त्वकान्ते पातोऽङ्कस्याविभागत:।
25. तद्वदेवानुदात्तोक्त्या नीचपात्रप्रयोजित: । प्रवेशोऽङ्कद्वयस्यान्त: शेषार्थस्योपसूचक: ।।

****

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

दलित समाज के प्रमुख मुद्दे एवं समस्याएं

डॉ. जयराम बैरवा *

शोध सारांश – अनुसूचित जातीय समाज को दलित समाज भी कहा जाता है। भारतीय समाज में यदि गैर-बराबरी के प्रतिमानों को देखें तो जहाँ कुछ लोग समृद्ध हैं, सुख सुविधाओं से सम्पन्न हैं तो वहीं अनेक लोग ऐसे भी हैं, जिनके पास आवश्यक सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं हैं। ये लोग अन्धविश्वासों, परम्पराओं और जड़ मान्यताओं के कारण शोषित, घृणित एवं वंचित जीवन व्यतीत करते हुए राष्ट्रीय जीवन की मुख्यधारा से कटे हुए हैं। भारतीय समाज में कमजोर वर्ग, दलित और अल्पसंख्यक की अवधारणा बहुत अस्पष्ट है। समाज का यह वर्ग विभिन्न प्रकार की सुविधाओं से वंचित है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा हैं, साथ ही जाति, लिंग एवं धर्म के भेदभाव के कारण शोषित हो रहा है। शताब्दियों से इस देश की समाज व्यवस्था, समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को शूद्र श्रेणी में रखती रही है। शूद्रों में एक वर्ग को अछूत घोषित कर दिया गया, जिसकी छाया में भी भ्रष्ट हो जाने की आशंका से ग्रस्त होकर अपने आपको सवर्ण मानने वाले लोग कतराने लगे। पिछले कुछ वर्षो से इस वर्ग के लोगों ने अपने लिए अछूत, अस्पृश्य, हरिजन आदि शब्दों का त्याग करके अपने आपको दलित/अनुसूचित जाति का व्यक्ति कहलाना पसन्द किया है।
शब्द कुंजी – दलित, अनुसूचित जाति, वंचित, अछूत, उपेक्षित, अस्पृश्यता, अत्याचार, हरिजन।

उद्देश्य :

1. अनुसूचित जातीय समाज/दलित समाज के प्रमुख मुद्दों की विस्तार से चर्चा की जायेगी।
2. दलित समाज की प्रमुख समस्याओं के बारे में विस्तार से चर्चा की जायेगी।

दलित वर्ग एवं समाज की अवधारणा को लेकर बौद्धिक एवं अकादमिक जगत में अन्तर्विरोध रहा है। दलित को समाजशास्त्री एक सामाजिक श्रेणी मानते है। जबकि नृतत्वशास्त्री सामाजिक-सांस्कृतिक श्रेणी स्वीकारते हैं। आज बहुसंख्यक दलित आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग का हिस्सा है। पूर्व में ये डिप्राइव्ड' (वंचित) अछूत और हरिजन के नाम से जाने जाते थे लेकिन भिन्न-भिन्न कारणों से स्वीकृति नहीं बनी। वंचित श्रेणी के बहुत व्यापक हो जाने का खतरा था तो अछूत में सीमित हो जाने का भय था। 'हरिजन' शब्द से इस श्रेणी से सम्बद्ध लोगों की वैयक्तिक गरिमा को बनाने का प्रयास था इसलिए दलित शब्द ज्यादा प्रचलन में रहा। यद्यपि संविधान में दलित शब्द कहीं भी प्रयुक्त नहीं किया गया है। समाज के निचले पायदान पर रहने वाली जातियों को कुछ तयशुदा मापदण्डों पर पहचान करके उन्हें सूचीबद्ध किया गया था। तदनन्तर सामाजिक उत्थान के लिए किए गए संवैधानिक प्रावधानों के लिए 'अनुसूचित जाति' पद प्रयुक्त किया गया है जबकि सामाजिक रूपान्तरण के लिए चले आन्दोलन ऐसे समुदायों के लिए दलित शब्द प्रयुक्त करते रहे हैं।

शाब्दिक अर्थो में 'दलित' वह है जो सामाजिक दृष्टि से पूर्णत: उपेक्षित हैं, जो वर्ण तथा जाति व्यवस्था के अन्तर्गत सबसे आखिरी सीढ़ी पर खड़ा है, जो शोषित है, पीड़ित है, जिसकी कोई पहचान नहीं बन पाई है जिसके अस्तित्व को भी स्थापित वर्ग ने नकारा है, जिसकी अस्मिता को सतत् रौंदा जाता रहा है। सामाजिक तथा आर्थिक वंचना जिसका मुख्य लक्षण है।

'दलित' कोई नया शब्द नहीं है, 1930 से हिन्दी और मराठी में इसका निरन्तर प्रयोग रहा है। ब्रिटिश काल में पीड़ित वर्ग जिन्हें आज अनुसूचित जाति भी कहा जाता है, दलित शब्द के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाते थे। सन् 1930 में दलित वर्गो की ओर से पूना में एक समाचार पत्र प्रकाशित होता था जिसका नाम 'दलित बन्धु' था यहीं से यह शब्द लोकप्रिय हुआ। महाराष्ट्र में वंचित जातियों की श्रेणी में महारों की परिस्थिति सबसे दयनीय थी। वे समस्त सार्वजनिक सुविधाओं से वंचित थे। दूसरे, उन्हें किसी भी प्रकार के सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं थे यह वर्ग, वस्तुत: सामाजिक दासता का प्रतीक था।

दलित शब्द क्षेत्रीय भाषा का शब्द है (वेबस्टर, 1999)। ज्योतिबा फूले ने सबसे पहले दलित शब्द का प्रयोग किया। लेखिका गैल आम्बेट ने अपनी पुस्तक 'दलित विजन' में दलित परिपेक्ष्यों की चर्चा की है। ये परिपेक्ष्य लोकप्रिय तथा विद्वत भाव दोनों के ही हैं। ज्योतिबा फूले, ताराबाई, डॉ. अम्बेडकर सभी इस परिपेक्ष्य में आते है। गैव आम्बेट ने विस्तार से उन ऐतिहासिक कारकों की विवेचना भी की है जिससे दलित वर्ग उत्पन्न हुआ। बहुत सारी टीकाए ऐसी भी हुई हैं जो दलित तथा उसमें जुड़े आन्दोलनों को स्वाभीमान का प्रतीक मानते हैं।

'दलित' शब्द से अभिप्राय है जिसका दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, पस्त हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि (वाल्मिकी, 1997)। इसी के आगे दलित समाज की अवधारणा पर विचार करते हुए लिखते हैं कि 'भारतीय समाज व्यवस्था (हिन्दू) में सबसे निचले स्तर पर समझी जाने वाली जातियां दलित समाज है।' दलित चिंतक शरण कुमार लिम्बाले का मत है कि 'दलित' शब्द की व्याख्या में केवल अछूत जाति का उल्लेख करने से काम नहीं चलेगा, उसमें आर्थिक दृष्टि से पिछड़े लोगों का भी समावेश होगा। लिम्बाले ने लिखा है कि 'गाँव की सीमा के बाहर रहने वाली सभी अछूत जातियाँ आदिवासी, भूमिहीन, खेत मजदूर श्रमिक, काश्तकारी जनता और यायावर जातियाँ 'दलित' शब्द से व्याख्यायित होती है।' वर्तमान समय में 'दलित' शब्द के प्रयोग से वास्तविकता में किस समूह को सम्बोधित किया जा रहा है, पता

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, राजगढ (अलवर) (राज.) भारत

नहीं चलता है (विवेक कुमार 2002)। 'दलित' का शाब्दिक अर्थ गरीब एवं शोषित है। 'दलित' शब्द की परिभाषा में समाज के अनुसूचित जाति/ जनजाति' मजदूर, भूमिहीन एवं गरीब किसान, आर्थिक व धार्मिक रूप से पीड़ित एवं शोषित सदस्यों को शामिल किया गया है। यह निर्विवाद है कि संविधान में जिन्हें अनुसूचित जाति कहा गया है वह तो अब दलित के रूप में पहचान बना ही चुके हैं।

हिन्दू समाज में वर्ण एवं जाति व्यवस्था – दलित वर्ग का संबंध हिन्दू जाति व्यवस्था से है अत: इस व्यवस्था के कुछ अंशों को समझना आवश्यक है। 'दलित' हिन्दू समाज के पदानुक्रम में निचले पायदान पर मानी जाने वाली कुछ जातियों का समूह है। दलित जातियों का हिन्दू वर्ण व्यवस्था से गहरा सम्बन्ध है। हिन्दू वर्ण व्यवस्था के उद्गम तथा शूद्रों की उत्पत्ति के लिए कई पौराणिक कथाएँ एवं मिथकीय व्याख्याएँ मौजूद हैं। एक पौराणिक मान्यता में गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए चारों वर्णो की उत्पत्ति को कर्म से जोड़कर बताया है। श्रीकृष्ण ने कहा है कि हे अर्जुन 'मैने ब्राह्मण (मुख) क्षत्रिय (भुजा) वैश्य (उदर) शूद्र (पैर) से उत्पन्न किये हैं।' आदिकाल में वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत जो किसी भी प्रकार से चार वर्णो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण में नहीं आते थे उन्हें पाँचवें और अन्तिम वर्ण 'अन्त्यज' कहा जाता था क्योंकि ये समाज के निम्न स्तर के व्यवसाय करते थे इसलिए इनका स्पर्श करना पाप माना जाता था। इन पर समाज ने सबसे अधिक प्रतिबन्ध लगा दिए थे। इनकी स्थिति सभी प्रकार से दयनीय थी इसलिए ऐसी जातियों को दलित जाति से सम्बोधित किया जाता था। सरकारी रिकार्डो में इन्हें इसी नाम से सम्बोधित किया जाता था। इनको प्रथम चार वर्षो से अलग और अपवित्र माना जाता था। धर्मशास्त्र काल में चौथे वर्ण – शूद्र को भी इनके साथ जोड़ दिया गया। जब जाति की सदस्यता जन्म के द्वारा निश्चित होने लगी तब वर्ण संकर भी इसमें सम्मिलित किए जाने लगे। दूसरी और ऐसे दर्जनों लेखक हैं जो शूद्रों को अनार्य, दस्यु, द्रविड, शक या हूणों से जोड़ते हैं, और आर्यो के प्रतिद्वन्दी ठहराते हैं। इस सिलसिले में एक मान्यता यह उभर रही है कि आर्यो के आक्रमण के बाद जो दास बना लिए गए, वे शूद्र है और जो जंगलों में भाग गए वे आदिवासी हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी पुस्तक 'शूद्रों की खोज में यह स्पष्ट किया है कि शूद्र अनार्य नहीं है, प्राचीनकाल में कई तेजस्वी और बलशाली राजा शूद्र थे।

भारतीय हिन्दू समाज में वर्ण व्यवस्था एवं जातिवाद मूलाधार रहे हैं। हिन्दू धर्मशास्त्रियों ने समाज को चार वर्गो में विभक्त कर विषमतापूर्ण समाज का निर्माण किया है, जो कालांतर में अनेकानेक जातियों में बंटकर उलझ गया। इससे मानव–मानव के बीच गहरी खाई उत्पन्न हो गई तथा निम्न समझे जाने वाले शूद्रों का जीना दूभर हो गया है। इस विषमतापूर्ण जाति–व्यवस्था का खुलासा करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा है कि 'हिन्दुस्तान देश केवल विषमता का आश्रय स्थल है, हिन्द समाज उसकी एक मीनार है और प्रत्येक जाति उसकी एक मंजिल है लेकिन ध्यान रखने की बात यह है कि इस मीनार में सीढ़ी नहीं लगी है। एक मंजिल में जो जन्मे उसी मंजिल में वह मरे, नीचे की मंजिल में जन्मा व्यक्ति चाहे कितना भी लायक क्यों न हो उसे ऊपर वाली मंजिल में प्रवेश मंजिल में ढकेलने का साहस किसी में नहीं है।' नहीं और ऊपर की मंजिल में जन्मा व्यक्ति चाहे वह कितना ही नालायक क्यों न हो उसे भी नीचे की मंजिल में ढकेलना का साहस किसी में नहीं है। '

दलित चेतना – 'दलित चेतना' से आशय उस विचार से है जिसके द्वारा अस्पृश्यता, अत्याचार एव शोषण से मक्ति का मार्ग प्रशस्त हो तथा मानव–मानव के बीच भेदभाव की दीवार को ध्वस्त कर पीडित मानवता के स्वाभिमान को जगाया जाए। समस्त रूढियों ब्रह्माचारों भाग्यवाद, अधविश्वास आदि से मक्ति के लिए संघर्ष, दलित चेतना के प्रमुख आयाम हैं, जिससे सदियो से अन्याय आर अत्याचार के गर्त में डूबी मानवता को राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ा जा सके। भारतीय समाज म सानियों से शोषण की परम्परा के विरूद्ध प्रतिरोध का स्वर मुखरित हआ है जिसे समय–समय पर धर्म व समाज सुधारको ने वाणी दी है। अम्बेडकर मार्क्सवादी विचारधारा के बहुत समीप थे। संघर्ष का प्रतिरूप उनके दिमाग में था (गैल आम्बेट, 1996)। दलित चेतना का संदर्भ वर्ग चेतना के साथ जोड़ा जा सकता है।

दलितों को सामाजिक पहचान दिलाने या उन्हे मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित करने की चेतना सम्बन्धी कोई कार्य अंग्रेजों ने नहीं किया। ब्रिटिश शासनकाल में अंग्रेजों ने शूद्र तथा अस्पृश्य वर्ण के स्तर की जातियों को हिन्दू जाति व्यवस्था से अलग करके इसाई धर्म में परिवर्तित करने के कई प्रयास किये। महात्मा गांधी ने ब्रिटिश सरकार की राजनीतिक चाल को समझ कर इसके विरोध में आमरण अनशन किया तथा ब्रिटिश सरकार को ऐसा करने से रोका। गांधीजी अस्पृश्य जाति को हिन्दू समाज में विभिन्न निर्योग्यताओं से मुक्त करवाने तथा अन्य जातियों की तरह समान विशेषाधिकार दिलवाने के लिए अनेक प्रयास किये जिसमें सबसे महत्वपूर्ण कार्य इन्हे भगवान का जन या हरि का जन अर्थात 'हरिजन' नाम देना था। तब से आज तक इनका नाम 'हरिजन' चल रहा है।

भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान महात्मा गांधी, अम्बेडकर एवं वीर सावरकर ने अछूतों के उद्धार का बीड़ा उठाया तथा हिन्दू समाज के एकीकरण में जी जान से जुट गये। सावरकर ने 1924 में हिन्दू संगठन का निर्माण किया जिसका उद्देश्य था समाज के निराश एवं दलित वर्ग को ऊपर उठाना तथा उनमें उत्साह भरना। दूसरी ओर गांधीजी ने स्वयं अछूत बस्तियों में रहकर अछूतों हेतु कई गतिविधियां आरम्भ की। डॉ. अम्बेडकर ने अछुतों को अपने अधिकारों के प्रति लड़ाई लड़ने हेतु 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' का गठन किया जिसका उद्देश्य अछूतों में जागृति लाना था। अम्बेडकर ने दलित वर्गो की पुलिस तथा भारतीय सेना में भर्ती के लिए संघर्ष किया। दलित जातियों के लिए एक अलग निर्वाचक मण्डल बनाने तथा संघीय व प्रान्तीय विद्यार्थियों में दलित प्रतिनिधियों को अलग से चुनकर भेजे जाने के लिए संघर्ष किया। डॉ. अम्बेड़कर का एक ही नारा था कि 'शिक्षित बनो, संगठित रहो तथा आन्दोलन करो'। डॉ. अम्बेडकर दलितों के शोषण एवं अन्याय को समाप्त करने के लिए हिन्दू समाज की वर्ण व्यवस्था एवं जाति प्रथा का उन्मलन आवश्यक मानते थे क्योंकि अछूत प्रथा की जड़ जाति प्रथा में ही थी एक तरफ देश जहां अंग्रेजों की गुलामी एवं दासता के विरूद्ध संघर्ष कर रहा था वहीं अम्बेडकर हिन्दू समाज द्वारा दलितों पर थोपी गई सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक निर्योग्यताओं एवं शोषण के खिलाफ संघर्ष किया। वे दलितों को भी हिन्दुओं के समान ही समाज में एक सम्मानजनक स्थान दिलाना चाहते थे। जहाँ गांधीवाद ने दलितों की ओर देखने की नई दृष्टि सवर्णो को दी, वहीं अम्बेडकरवाद ने दलितों के स्वाभिमान से उठ खड़े होने की शक्ति दी है।

दलित समाज : मुख्य समस्याएं – यदि हम दलित जातियों का इतिहास देखें तो यह स्पष्ट हो जाता हैं कि इनकी प्रमुख: समस्याएं विभिन्न प्रकार के शोषण, प्रतिबन्ध एवं निर्योग्यताएँ आदि से जुड़ी हुई हैं। हिन्दू सामाजिक व्यवस्था ने दलित समाज पर धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक निर्योग्यताएं लाग की तथा उन्हें अधिकारों से वंचित कर दिया जबकि समाज के द्विज वर्णो को विशेषाधिकार प्राप्त थे। यदि हम दलितों की धार्मिक

समस्याओं को ले तो ये लोग मन्दिरों, देवालयों में प्रवेश नहीं कर सकते थे, प्रार्थना अर्चना करना तो दूर, ये लोग भजन आदि तक को सुन नहीं सकते थे। धार्मिक पुस्तकें पढ़ना तथा सूनना, यज्ञोपवीत धारण करना निषिद्ध था। दलित लोग जन्म, विवाह एवं मृत्य सम्बन्धी संस्कार ब्राह्मण पुरोहित के द्वारा सम्पन्न करने में असमर्थ था। इनकी बस्तियां ग्राम एवं नगर के बाहर थीं। इन लोगों को स्वच्छ तथा साफ-सुथरे स्थलों पर अपनी झोपड़िया बनाकर रहने का अधिकार नहीं था।

दलित जातियों के लोग सार्वजनिक स्थानों तथा सुविधाओं का उपयोग नहीं कर सकते थे। ये लोग स्वर्ण जातियों के कुओं से पानी नहीं भर सकते थे, पक्के मकान नहीं बनवा सकते थे, इनको शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। मनोरंजन के लिए सार्वजनिक मेलों, चौपालों, रामलीला, खेलकूद प्रतियोगिता, मल्ल युद्ध, हाट बाजारों, कठपुतली का तमाशा आदि को देखना, शामिल होना, भाग लेना आदि का अधिकार नहीं था। इन लोगों के झगड़े, चोरी, बेईमानी, दंगे फसाद में गवाही देने का अधिकार नहीं था। ये लोग पंच और सरपंच नहीं बन सकते थे। इनको मतदान करने का अधिकार स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले किसी भी काल में नहीं था। सामाजिक और राजनीतिक संगठनों में इनको किसी भी सार्वजनिक या प्रशासनिक पद पर नियुक्त नहीं किया जाता था। इन्हें किसी भी राजनीतिक क्रिया तथा कार्यों में भाग लेना निषिद्ध था। साफ-सफाई करने, मलमूत्र उठाने, मरे हुए पशुओं को ढोने, चमड़े का उत्पाद बनाने से जो पारिश्रमिक मिल जाता था उसी से जीवन निर्वाह करना होता था।

दलित समाज की समस्याओं पर कबीर, रामानुजाचार्य, जगदगुरू शंकराचार्य, चौतन्य महाप्रभु, नानक, रामकृष्ण परमहंस, महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, केशवचन्द्र सेन, राजा राममोहनराय, ज्योतिबा फूले ने अपने अपने समय में प्रयास किये। आर्य समाज सत्यशोधक समाज, अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ, अखिल भारतीय दलित वर्ग फैडरेशन, हरिजन सेवक संघ, सर्वेण्ट्म आफ इण्डियन सोसायटी, रामकृष्ण मिशन आदि संस्थाओं ने दलित जातियों के सामाजिक कल्याण तथा विकास के लिए समय-समय पर अनेक कार्य किये गये। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के संविधान द्वारा इन दलित जातियों, पिछड़े वर्गो, अनुसूचित जातियों, अनसचित जनजातियों को अनेक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, शैक्षणिक अधिकार प्रदान किये। सैद्धान्तिक रूप से कानून के रूप में अनेक सुविधाएं तथा अधिकार प्राप्त हो गये लेकिन व्यवहार में अभी तक कितना मिल पाया है और कितना मिलना शेष है, इस पर विवाद एवं एकमतता का अभाव है। फिर भी अनेक क्षेत्रों में अभी भी दलित जातियां सवर्णो के डर के कारण अपनी पूर्व स्थिति में ही जीवन व्यतीत कर रही है। सवर्ण और अवर्ण के झगड़े, मारपीट, आगजनी, हत्याएं, लूटपाट आदि होती रहती है। अखबारों एवं पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से आये दिन ऐसी घटनाएं सामने आती हैं, जैसे-दलित दूल्हे को घोड़ी से उतारना, दलितों की निर्मम हत्या जैसी घटनाएं सच की तस्वीर दिखाती है। सरकार द्वारा दी गई आर्थिक सुविधाएं इन तक पूरी नहीं पहुंच पाती हैं।

निष्कर्ष- निसन्देह, दलित जीवन एक राष्ट्रीय प्रश्न है। इसे मानवीय मूल्य से तोलना चाहिए। समानता एवं बराबरी पर आधारित सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था के बिना देश समद्ध और सम्पन्न नहीं हो सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम पारम्परिक रूढ़ियों, जड़ताओं का त्याग कर समानता, स्वतंत्रता का जीवन व्यतीत करें। मानव जीवन का उद्देश्य केवल धन बटोरना ही नहीं है वरन् यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को समाज में पर्याप्त मान-सम्मान के साथ जीवन व्यतीत करने का अवसर मिले। दलित लोग जो ऐतिहासिक विकृतियों के कारण समाज में सम्मानजनक स्थान नहीं बना सके हैं, उन्हें यह स्थान दिलाने तथा उन्हें अपने अधिकार दिलाना हम सभी देशवासियों का नैतिक दायित्व है। दलित समाज के उत्थान में लगी सरकारी एवं स्वयंसेवी संस्थाएं पूर्ण निष्ठा, लगन एवं ईमानदारी के साथ कार्य करें तभी समतामूलक समाज का सपना पूर्ण हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आम्बेट, गेल (1996) दलित विजन, हैदराबाद : मैकमिलन।
2. भारती, कवल, (1998) दलित विमर्श की भूमिका एवं इतिहास, इलाहाबाद: बुद्ध प्रकाशन।
3. देसाई ए. आर. (1981) भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि. नई दिल्ली: द मेकमिलन प्रकाशन।
4. कुमार, विवेक (2002) दलित साहित्य का समाजशास्त्र, उत्तारप्रदेश: सितम्बर-अक्टूबर, नई दिल्ली, विकास प्रकाशन।
5. रणसुभे, सूर्यनारायण (1996) दलित साहित्य स्वरूप और संवेदना, नई दिल्ली: अनमोल प्रकाशन।
6. रत्तु, कृष्ण कुमार (2002), भारतीय दलित और मानवाधिकार. जयपुर: बुक एनक्लेव। सहारे, एम. एल. (1993) डा. भीमराव अम्बेडकर जीवन और कार्य, नई दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद।
7. वाल्मीकि, ओम प्रकाश (1997) दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, नई दिल्ली: आशीष प्रकाशन।
8. वेबस्टर, जॉन, सी बी (1999) हू इज दलित ? दलित्स इन मॉडर्न इण्डिया, न्यु देहली: विस्तान।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Identification and Biocontrol Strategies to Inhibit the Incidence of Leaf Spot Pathogen *Xanthomonaspisi* in Pea Seeds

Ashwani Kumar Verma* Ashok Nagar**

Abstract - Pea (*Pisumsativum* L.) seeds originated from various districts of Rajasthan were collected and tested for the presence of seed borne bacterial pathogen. The pathogen was identified as *Xanthomonoascampestris*pv.*pisi* on the basis of morphological, cultural, biochemical, pathogenicity tests followed by 16S rRNA based molecular characterization. The obtained partial 16srRNA sequences submitted in the database of Gene bank, NCBI (Acc. No. KF251039). Eco-friendly and economical control strategies were adopted to inhibit the incidence of the bacterial pathogen. Antibacterial activity of different aqueous plant extracts was evaluated. Among the eighteen plant extracts, aqueous extracts of *Terminalia bellirica (Fruit), Allium sativum*(Bulb)*,Allium cepa (Bulb), Terminalia chebula*(Fruit), *Emblicaofficinalis*(Fruit), *Menthapiperata (Leaf), Azadirachtaindica* (Leaf) and *Tamarindusindica*(Fruit) showed maximum control against the pathogen *in vitro*.
Key words -Biocontrol, Incidence, Molecular characterization, Pea seeds, *Xanthomonascampestris*pv. *pisi.*

Introduction - Pea (*Pisumsativum*L.) belongs to family fabaceae and is an important vegetable crop grown throughout the world. Like other pulse crops, diseases caused by fungi, bacteria, viruses and nematodes are among the notable risk factors of pea cultivations. Peas are mainly utilized as a vegetable. Besides, it is also consumed as pulse. Sometimes, the field pea is grown for forage and green manure and the pods are sometimes fed to farm animals. Bacterial blight disease of pea caused by *Pseudomonas syringae*pv. *pisi* is a seed-borne pathogen. (Neergard, 1977, Richardson, 1990, Garden *et al*. 1999).

The disease is characterized by chlorosis and whitening of apical shoots, including leaflets, stipules and young pods. In the present study, characterization and effects of this bacterial blight pathogen on pea crop was determined.

Materials and Methods - One hundred and twenty seven seed samples of pea collected from various districts of Rajasthan were studied. The seed samples collected were from Jhalawar, Jhunjhunu, Ajmer, Alwar, Baran, , Bundi, Churu, Chittorgarh, Dausa , Jaipur, Jodhpur, Kota, Nagaur, Pali, Pratapgarh, Rajsamand, Sawaimadhopur, Sirohi, Bikaner, Bharatpur, Bhilwara, Tonk, Dholpur, Dungarpur and Udaipur. The seeds were examined by standard blotter method (Anonymous, 1985) for the bacterial presence in seed.Identification of pea seed-borne bacteria was done according to seed health testing procedures as recommended by the International Seed Testing Association (ISTA). LOPAT (Levan formation, oxidase test, potato soft rot test, arginine dihydrolase test, tobacco hypersensitivity reaction test) and other diagnostic tests were carried out to identify the bacterial isolates (Anonymous, 1985, Bradbury, 1986, Neergard, 1986, Lelliot and Stead, 1987). On the basis of morphological and biochemical characterization identified suspected bacterial pathogens were subjected to 16s rRNA gene sequencing for the confirmation of identification of the isolated bacterial pathogens. The phytopathological effects and disease transmission of pathogen was studied using . Petri plate method, water agar test tube symptom test and pot experiment.

Results and discussion - On the basis of Biochemical and molecular characterizations using 16SrRNA gene sequence of identified bacterial pathogen was deposited to Genbank using BankItsubmission tool and has been assigned with NCBI (National Centre for Biotechnology information) accession numbers KF251036 (*P. syringae*pv.*pisi*) (Fig. 1,2). Molecular tools for the identification of bacteria were used in this study and 16S rRNA gene analysis was intensively used to understand the phylogenetic relationships (Sacchi et al. 2002). The pathogen was confirmed in one hundred and twenty five samples, out of one hundred and twenty seven seed samples studied on KmB medium with an incidence range of 3.5-91.5% from 25 districts of Rajasthan. To determine the incidence of bacterial pathogens, untreated and pre-treated seeds were subjected to standard blotter method and directly plated on NA (Fig.1). Seed assays are the most reliable methods for determining infection of seed-borne pathogens (Karavina*et*

*Deptt. of Botany, Raj Rishi Govt. College, Alwar (Raj.) INDIA
** Deptt. of Botany, Raj Rishi Govt. College, Alwar (Raj.) INDIA

al. 2008).Seed samples collected from Bikaner, Bundi, Dausa, Dungarpur, Alwar, Baran, Bharatpur, Jaipur, Nagaur, Churu and Chittorgarhdistricts of Rajasthan carried higher incidence of the pathogen. Among the eighteen plant extracts, aqueous extracts of *Terminalia bellirica (Fruit), Allium sativum*(Bulb),*Allium cepa (Bulb), Terminalia chebula*(Fruit), *Emblicaofficinalis*(Fruit), *Menthapiperata (Leaf), Azadirachtaindica* (Leaf) and *Tamarindus-indica*(Fruit) showed maximum control against the pathogen *in vitro*. In pea, the symptoms of bacterial blight on the stem were linear brownish streaks and the stem later splited open longitudinally. At advanced stages of diseased, necrosis and blightening of the leaf petiole were observed. Lesions varied in colour from dark green water-soaked to dark brown at the edge and centre on stem lesions develop as dark brown elliptical areas. Darrasse *et al*. 2010, measured bacterial transmission from ûowers to seeds and from seeds to seedlings for *Xanthomonascampestris*pv. *campestris* in incompatible interactions with bean. The infected plants parts on incubation on nutrient agar (NA) revealed the pathogen. Umesha*et al*. 2005, reported up to 45% seed transmission in chilli seeds artificially infested with *Burkholderiasolanacearum*causal agent of bacterial wilt.

Fig.1. Biochemical characterization: A,B-bacterial isolates, C-positive potato soft rot test,

D-positive Tobacco hypersensitivity, E-Positive nitrate reduction test, F-carbohydrate utilization.

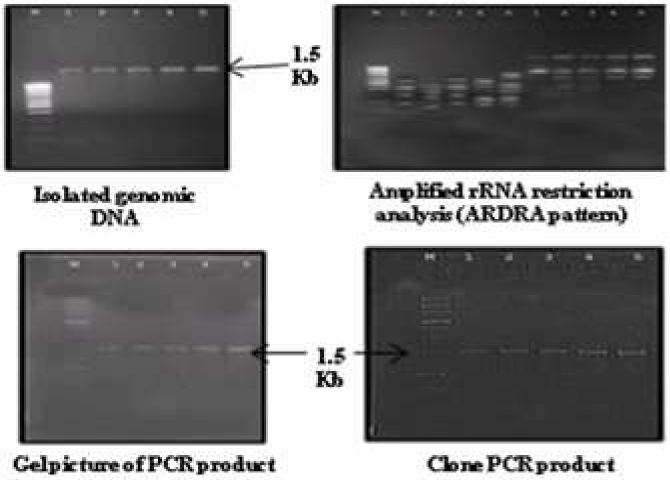

Fig. 2. The ARDRA profile revealed 4 polymorphic groups among 5 isolates.

Lane 1 and 3 had similar band patterns belonging to one group and lane 2,

4 and 5 possessed unique band pattern. These isolates different from each

other were selected for 16srRNA sequencing.

References:-

1. Anonymous, 1985. International rules for seed testing association (ISTA). *Seed Sci& Tech*. 4: 3-49, 50-177.
2. Bradbury, J. F., 1986. Guide to plant pathogenic bacteria. CAB International Mycological Institute (CMI), UK. pp. 332.
3. Darrasse, A., Darsonval, A., Boureau, T., Brisset, M. N., Durand, K. and Jacques, M. A., 2010. Transmission of Plant-Pathogenic Bacteria by Nonhost seeds without Induction of an Associated Defense Reaction at Emergence. *Appl. and Env. Microbiol*. pp 6787-6796.
4. ISTA, 1985. International rules for seed testing. Seed science and Technology. 4: 177.
5. Karavina, C., Chihiya, J. and Tigere, T. A., 2008. Detection and characterization of *Xanthomonasphaseoli* (E.F.SM) in common bean (*Phaseolus vulgaris* L) seeds collected in Zimbabwe. *J. of Sustainable Dev. in Africa.* 10(1): 105-119.
6. Lelliott, R. A. and Stead, D. E., 1987. Methods for the diagnosis of bacterial diseases of plants. In Methods in Plant Pathology, Vol. 2. Blackwell Scientific Publication, Oxford, London. pp 216.
7. Neergard, P., 1977. Seed Pathology. Vol. I & II. The Macmillan Press Ltd. London. pp 1187.
8. Richardson, M. J., 1990.An annotated list of seed-borne diseases, 4thedn. Prof. Int. Seed Testing Associaton, Zurich, Switzerland.pp376.
9. Sacchi, C. T., Whitney, A. M., Mayer, L. W., Morey, R., Steigerwalt, A., Boras, A., Weyant, R. S. and Popovic, T., 2002. Sequencing of 16S rRNA Gene: A Rapid Tool for Identification of Bacillus anthracis. *Emerging Infectious Dis*. 8(10): 1117-1123.
10. Umesha, S., Kavitha, R. and Shetty, H. S., 2005. Transmission of seed-borne infection of chilli by *Burkholderiasolanacearum* and effect of biological seed treatment on disease incidence. *Archives of Phytopathol. and Pl. Protec.* 38(4): 281- 293.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी एवं ग्रामीण शिक्षको के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सतीश पाल सिंह *

प्रस्तावना - मानसिक तनाव व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक दशा है जिसमें व्यक्ति असामान्य रूप से व्यवहार करने लगता हैं। यदि व्यक्ति की आवश्यकताएं तुरन्त और स्वत: ही पूरी हो जाएं तो जीवन इतना सरल हो जायेगा कि फिर उसके प्रति आकर्षण एवं आनन्द की अनुभूति ही समाप्त हो जायेगी इसीलिए प्रकृति में आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधाओं को उत्पन्न करते रहना मानव जीवन के सुख के लिए अनिवार्य सा प्रतीत होता है। यदि बिना बाधाओं के आवश्यकताएं पूरी हो जायेगी तो जीने के लिए कुछ नहीं रह जायेगा, ये बाधायें ही जीवन के संग्राम में समय-समय पर उत्पन्न होती रहती है जो व्यक्ति में एक विशेष प्रकार का दबाव बनाये रखती हैं यही मानसिक तनाव के रूप में जाना जाता है।

क्रो एवं क्रो के अनुसार- 'मानसिक तनाव उस समय उत्पन्न होते हैं जब एक व्यक्ति को पर्यावरण की उन शक्तियों का सामना करना पड़ता है जो उसकी स्वयं की रूचियों और इच्छाओं के विपरीत कार्य करती है।'

मानसिक तनाव की भांति कार्यदबाव भी शिक्षको में पायी जाने वाली एक सामान्य मनोदशा है। जिसके निर्धारण के कारक वातावरण में मौजूद होते है। कार्यदबाव के परिणामस्वरूप कार्यकारी व्यक्ति अपनी क्षमता को पूर्णरूप से प्रदर्शित नहीं कर पाता। किसी भी कारण से शिक्षक मानसिक तनाव एवं कार्य दबाव में है तो वह स्वयं असफल होने के साथ-साथ शिक्षण उद्देश्यों को भी प्रभावित कर सकता है। शिक्षक की सफलता उसकी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति पर निर्भर करती है। जो अध्यापक तनावग्रस्त रहते हैं उनका अध्यापन कार्य भी निम्न स्तर का होता है। प्रश्न यह उठता है कि आखिर अध्यापकों के मानसिक तनाव ग्रस्त होने के क्या कारण हैं? सामान्य तौर पर इसके एक नही अनेक कारणों को गिनाया जा सकता है यथा-छात्रों का अध्यापकों के साथ शिष्टाचारपूर्ण व्यवहार न करना, सहकर्मियों का सहयोगात्मक दृष्टिकोण न होना, सत्र अवधि अधिक होना, पाठ्यक्रम व्यापक होना, अस्पष्ट पाठ्यक्रम सुविधाओं की कमी होना, अपने व्यवसाय से सन्तुष्ट न होना, अत्यधिक कार्यभार आदि। कार्यदबाव एवं मानसिक तनाव के कारण शिक्षक के उत्साह में कमी पायी जाती है। वह ऊर्जा के ह्रास का अनुभव करता है तथा उसमें निराशा व निरर्थकता के भाव उत्पन्न होने लगते है। कार्य दबाव एवं मानसिक तनाव व्यक्ति में भावशून्यता तथा निराशावाद की और संकेत करता है। व्यक्ति में सिरदर्द, थकान, सावेंगिक प्रथकता, आशा का अभाव, निषेधात्मक भाव, आत्म विश्वास का अभाव सामाजिक अयोग्यता आदि मनो शारीरिक लक्षणों के कारण व्यक्ति में अनेक प्रकार की विकृतियॉ उत्पन्न हो जाती है। जिससे उसकी शिक्षण दक्षता व कार्य क्षमता भी प्रभावित होती है।

अध्ययन की प्रासंगिकता- प्राथमिक शिक्षा को पटरी पर लाने के लिए सरकार ने सर्व शिक्षा अभियान को वर्ष 2002 से सशक्त रूप से लागू किया जिसके तहत प्राथमिक विद्यालयों में स्थायी अध्यापकों की शिक्षण में सहायता करने हेतु, शिक्षको को रखने की व्यवस्था की गयी। प्रारम्भ में इण्टरमीडिएट पास व्यक्तियों को रुपये 1750/- के मासिक मानदेय पर 11 महीने हेतु ग्राम शिक्षा समिति की संस्तुति पर जिलाधिकारी द्वारा शिक्षको के रूप में नियुक्त किया जाता था जिन्हें प्रत्येक वर्ष नवीनीकरण की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। वर्तमान में इनका मानदेय बढ़ाकर रुपये 3000/- प्रतिमाह कर दिया गया है किन्तु इनके साथ इतनी सारी समस्याएं जुड़ी है कि ये अपना कार्य न तो पूरी क्षमता से कर सकते हैं और न ही पूरी लगन एवं निष्ठा पूर्वक। शिक्षको के साथ-साथ स्थायी अध्यापक/ अध्यापिका भी मानसिक तनाव एवं कार्यदबाव से वंचित नहीं हैं उनके सामने भी अनेकानेक समस्याएं महिषासुर की भांति मुंह बायें खड़ी है। इन स्थायी अध्यापकों का वेतनमान काफी कम है, तथा समय पर नही मिलता है, प्राथमिक विद्यालयों में प्राथमिक सुविधाये उपलब्ध नहीं है, इन्हें शिक्षण कार्य के अलावा भी अनेक सरकारी कार्यो को करना पड़ता हैं तो ऐसी परिस्थितियों में स्थायी अध्यापक/ अध्यापिकाएं मानसिक तनाव एवं कार्यदबाव से कैसे वंचित रह सकते है?

अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं में व्याप्त कार्यदबाव एवं मानसिक तनाव के संदर्भ में अनुसंधानकर्ताओं द्वारा जो प्रयास किया गया है उनके परिणाम भी इस अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट करते है।

प्रकाश जी.पी. (1990) - का अध्ययन परिणाम यह दर्शाता है कि मानसिक तनाव व कार्यदबाव के मध्य धनात्मक सह-सम्बन्ध तथा मानसिक तनाव एवं कार्यदबाव का कार्य निपटाने की प्रकृति के मध्य नकारात्मक सह-सम्बन्ध पाया गया।

जगदीश व श्रीवास्तव (1982) का अध्ययन परिणाम यह दर्शाता है कि कर्मचारियों की कार्य सन्तुष्टि कार्य करते हुए प्राप्त हुई व कार्य के पश्चात के तत्व उनके द्वारा अनुभव किये गये मानसिक तनाव से सार्थक रूप से प्रभावित पाये गये।

भट्ट डी.जी. (1997)- के अध्ययन परिणाम यह दर्शाते हैं कि प्राथमिक अध्यापकों में कार्य मानसिक तनाव उनके कार्य संलग्नता एवं कार्य संतुष्टि से सार्थक रूप से उच्च धनात्मक सह-सम्बन्धित है।

मानसिक तनाव व कार्यदबाव के सम्बन्ध में हुए एक अन्य शोध (**डॉ0 टी.सी. ज्ञानानी** 1988) के परिणाम दर्शाते हैं कि उच्च शिक्षा में संलग्न अध्यापकों के कार्य पर मानसिक तनाव व कार्यदबाव का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में कह सकते है कि मानसिक तनाव से ग्रसित कोई भी अध्यापक अपना शिक्षण सुचारू पूर्ण ढंग से नहीं कर सकता

* एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यापक प्रशिक्षण विभाग, दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

है चाहे वह स्थायी शिक्षक/शिक्षिका हो अथवा शिक्षामित्र। इसी को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी ने प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षको एवं शिक्षको के कार्यदबाव एवं मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन किया है।

यदि वर्तमान शोध अध्ययन के परिणामस्वरूप यह पाया गया कि श्शक्षको व शिक्षको के कार्यदबाव व मानसिक तनाव में अन्तर है तथा शिक्षकों की तुलना में शिक्षको में यह प्रतिशत मात्रा अधिक है तो इस वर्ग की समस्याओं के कारणों को ज्ञात कर इन्हें दूर करने का प्रयास किये जा सकते है जिससे अध्यापकों के मानसिक तनाव व कार्यदबाव का प्रभाव उनकी शिक्षण दक्षता पर न पड़े।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।
2. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।
3. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।
4. प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।
5. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।
6. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।
7. प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन की परिकल्पनाए:

1. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
2. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
3. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
4. प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
5. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
6. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
7. प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

शोध विधि– प्रस्तुत अध्ययन में समकों के संकलन हेतु वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या – प्रस्तुत अध्ययन की जनसंख्या के रूप में उ.प्र. के बागपत जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत समस्त शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों को लिया गया है।

न्यादर्श एवं न्यादर्शन– प्रस्तुत अध्ययन के सन्दर्भ में शोधार्थी ने उपलब्ध जनसंख्या में से 208 प्रतिदर्शो का चयन साधारण यादृच्छिक न्यादर्शन के आधार पर किया है।

प्रयुक्त उपकरण– प्रस्तुत अध्ययन में शोधार्थी ने स्वनिर्मित मानसिक तनाव मापनी का प्रयोग किया है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ– समंक संकलन से प्राप्त सूचनाओं को अर्थयुक्त बनाने एवं परिणामों की व्याख्या हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं **टी–अनुपात** आदि सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया है।

सीमांकन– प्रस्तुत अध्ययन केवल पश्चिमी उ0प्र0 के बागपत जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों एवं शिक्षको के मानसिक तनाव एवं कार्यदबाव तक ही सीमित है।

परिणाम एवं विवेचना– शोध समस्या से सम्बन्धित आकंडो तथ्यों एव सूचनाओं आदि के साख्यिंकीय विश्लेषण के आधार पर परिणामों को प्राप्त किया गया है। प्रस्तुत शोध समस्या के उद्देश्यों पर आधारित परिकल्पनाओं के सम्बन्ध में निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए है।

तालिका 1 – (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

1. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन

परिकल्पना विवेचना 1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों के मानसिक तनाव में सार्थक अन्तर है। जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 3.325 पाया गया। जो कि मुक्तांश 158 पर 0.01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 2.57 से अधिक है। अत: शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों के मानसिक तनाव में सार्थक अन्तर नही है निरस्त की जाती है। शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों के मानसिक तनाव सम्बन्धी प्राप्तांकों के मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षिकओ में मानसिक तनाव अधिक पाया जाता है। इसका कारण यह हो सकता है कि शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षिकओ को घर का कार्य एवं बच्चो की देखभाल एवं कार्यदबाव भी अधिक होता है।

2. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना विवेचना के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में सार्थक अन्तर नही है जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 1.562 पाया गया। जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.97 से कम है। अत: शून्य परिकल्पना की 'प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव सार्थक अन्तर नही है' स्वीकृत की जाती है। प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव सम्बन्धी प्राप्तांकों के मध्यमानों में समानता है।

3. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना विवेचना से विदित होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है। जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 0.752 पाया गया। जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.97 से कम है। अत: शून्य परिकल्पना 'प्राथमिक विद्यालयों

के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है' अस्वीकृत की जाती है। अतः हम कह सकते है कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव एक समान पाया जाता है। इसका कारण भी यह हो सकता है कि दोनो समूहों के शिक्षकों को एक जैसी समस्याओं का सामना करना पडता है।

4. प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना विवेचना में प्रदर्शित प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव प्राप्तांको के मध्यमान मूल्यों, मानक विचलन एवं ज अनुपात मान के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव कोई सार्थक अन्तर नही हैं जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 2.274 पाया गया। जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.97 से अधिक है। प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव सार्थक रूप से अधिक पाया जाता है। 'प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है' निरस्त की जाती है।

5. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना विवेचना 5 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव मे कोई सार्थक अन्तर नही है। जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 1.504 पाया गया। जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव मे कोई सार्थक अन्तर नही है स्वीकृत की जाती है।

6. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

परिकल्पना विवेचना 6 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है। अतः शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है। स्वीकृत की जाती है। जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 3.268 पाया गया। जो कि मुक्तांश 78 पर 0.01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 2.57 से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव मे कोई सार्थक अन्तर नही है अस्वीकृत की जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव एक समान पाया जाता है। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि दोनों समूहों के सामने एक जैसी परिस्थितियॉ होती है तथा दोनो को एक जैसी समस्याओं का सामना करना पडता है।

7. प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना विवेचना 7 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है। जिसमे परिगणित टी–अनुपात का मान 0.694 पाया गया। जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.97 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना कि ' प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है' स्वीकृत की जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव एक समान पाया जाता है। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि दोनों समूहों के सामने एक जैसी परिस्थितियॉ होती है तथा दोनो को एक जैसी समस्याओं का सामना करना पडता है।

निष्कर्ष– प्रस्तुत अध्ययन द्धारा निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए है।

1. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों के मानसिक तनाव में सार्थक अन्तर कोई होता है। शहरी शिक्षकों की अपेक्षा ग्रामीण शि़क्षको में मानसिक तनाव अधिक पाया जाता है।
2. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तरं नही पाया गया है।
3. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।
4. प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर होता है। शहरी पुरुष की अपेक्षा ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं मानसिक तनाव अधिक पाया जाता है।
5. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही पाया गया है।
6. प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है। शहरी पुरुष अध्यापकों अपेक्षा शहरी महिला अध्यापिकाओं मानसिक तनाव अधिक पाया जाता है।
7. प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही पाया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **श्रीवास्तव, डी0 एन0 (1982) :** 'आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ संख्या 82–92।
2. **जगदीश व श्रीवास्तव ए0के0 (1983) :** 'परसीब्ड रॉल स्ट्रैस एण्ड जॉब सटिसफेक्शन' परसपिक्टिव इन साइकोलॉजिकल रिसर्चस वाल्यूम 8, नं0–2, पृष्ठ संख्या 101–103।
3. **भट्ट, डी0 जी0 (1887) :** 'जॉब स्ट्रैस, जॉब इनवाल्वमेन्ट एण्ड सैटिसफेक्शन ऑफ टीचर्स' 'इण्डियन जनरल्स ऑफ साइकोलॉजी एण्ड एजूकेशन', वाल्यूम नं0–28 पेज 87–94।
4. **प्रकाश, जी0पी0 (1990) :** 'आक्यूपेशनल स्ट्रैस एण्ड कापिंग इन यूनिवर्सिटी फैकल्टी मैम्बर्स' जनरल आफ साइकोलॉजी, पृष्ठ संख्या 37–43।
5. **श्रीवास्तव, बीना (1996) :** 'स्ट्रैस एमांग इन सर्विस एण्ड स्टूडेन्ट

टीचर्स', पर्सपेक्टिव इन साइकोलाजी रिसर्चस, वाल्यूम 19 एवं 20।

6. **अग्रवाल, कृष्ण (1998) :** 'जॉब सैटिसफैक्शन एण्ड आक्यूपेशनल स्ट्रैस इन रिलेशन टू फैक्ट प्रोक्सिमिटी विद् टॉप मैनेजमेन्ट', इण्डियन जनरल ऑफ साइकोलॉजी एण्ड एजूकेशन, वाल्यूम नं0-29, नं0-2, पृष्ठ संख्या 113-114।

7. **आनन्द, वर्षा (1998) :** 'टीचर्स आक्यूपेशन स्ट्रैस एण्ड सेल्फ स्टीम पर्सपेक्टिव इन साइकोलॉजिकल रिसर्चस', वाल्यूम 21, पृष्ठ संख्या 105-109।

8. **ज्ञानानी, टी0सी0 (1998) :** 'स्ट्रैस एण्ड स्ट्रैन एमांग, टीचर्स वर्किंग इन हायर एजूकेशन इन्स्टीट्यूट ऑफ डिफरेन्ट ऑरगेनाइजेशनल क्लाइमेट', इण्डियन जनरल ऑफ साइकोमैट्री एण्ड एजूकेशन, वाल्यूम-29, नं0-1, पृष्ठ संख्या 53-59।

9. **कपिल, एच0के0 (1999) :** 'सांख्यिकी के मूल तत्व', पंचम संस्करण विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा पृष्ठ संख्या 627-642।

10. **सैनी अंजलि व दास, इरा (2001) :** 'इफैक्ट ऑफ स्टूडेन्टस एटीट्यूड टुवर्ड्स टीचर्स अपॉन फीमेल स्कूल टीचर्स' इन जनरल्स ऑफ साइकोलाजी एण्ड एजूकेशन, वाल्यूम 32, नं0 2, पृष्ठ संख्या 101-104

तालिका 1 - परिकल्पनानुसार प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों के मानसिक तनाव में अन्तर की सार्थकता के मध्यमान मानक विचलन T अनुपात के विवरण को दर्शाने वाली तालिका

परिकल्पना	समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	T अनुपात	सार्थकता स्तर	परिणाम
1 प्राथमिक विद्यालयों के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	शहरी अध्यापकों	80	54.47	16.52	3.325	.01 स्तर पर सार्थक	स्वीकृत
	ग्रामीण अध्यापकों	80	63.56	18.02			
2 प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	शहरी पुरुष	40	54.47	13.62	1.562	.05 स्तर पर असार्थक	अस्वीकृत
	ग्रामीण पुरुष	40	59.64	15.89			
3 प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	शहरी महिला अध्यापिकाओं	40	64.76	14.52	0.752	.05 स्तर पर असार्थक	अस्वीकृत
	ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं	40	62.15	16.45			
4 प्राथमिक विद्यालयों में शहरी पुरुष अध्यापकों एवं ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	शहरी पुरुष अध्यापकों	40	54.47	13.62	2.274	.05 स्तर पर सार्थक	स्वीकृत
	ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं	40	62.15	16.45			
5 प्राथमिक विद्यालयों के शहरी महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	शहरी महिला अध्यापिकाओं	40	64.76	14.52	1.504	.05 स्तर पर असार्थक	अस्वीकृत
	ग्रामीण पुरुष अध्यापकों	40	59.64	15.89			
6 प्राथमिक विद्यालयों के शहरी पुरुष अध्यापकों एवं शहरी महिला अध्यापिकाओं के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	शहरी पुरुष अध्यापकों	40	54.47	13.62	3.268	.05 स्तर पर असार्थक	अस्वीकृत
	शहरी महिला अध्यापिकाओं	40	64.76	14.52			
7 प्राथमिक विद्यालयों के ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं एवं ग्रामीण पुरुष अध्यापकों के मानसिक तनाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।	ग्रामीण महिला अध्यापिकाओं	40	62.15	16.45	0.694	.05 स्तर पर असार्थक	अस्वीकृत

****

भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण: सिद्धान्त और व्यवहार

डॉ. वंदना शर्मा *

शोध सारांश – भारत जैसे संघात्मक देश में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था उसकी त्रिस्तीय व्यवस्था का अविभाज्य अंग है। भारत में संघीय स्तर पर केन्द्रीय सरकार, प्रान्तीय स्तर पर राज्य सरकार और स्थानीय स्तर पर स्तर स्वशासन एवं स्थानीय शासन नागरिकों की सम्बन्धित आवश्यकताओं की पूर्ती करता है। स्थानीय स्वशासन लोकतंत्र का आधार होती है। इसी उदेश्य को ध्यान में रकते हुए प्रस्तुत शोध पत्र में 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। लोक तांत्रिक विकेन्द्रकरण को **'धरातल पर लोकतंत्र'** के नाम से भी अभिव्यक्ति किया जाता है। यही पद्धति लोकतंत्र में जनता की सहभागीता को सही अर्थो में सुनिश्चित करने का माध्यम है। जिस व्यवस्था में अपनी सरकार के संचालन में लोगों की सहभागिता जितनी अधिक,निरन्तर, सक्रिय रचनातमक और निकट की होगी, वह व्यवस्था लोकतंत्र के राजनीतिक आदर्श के उतने ही समझी जाऐगी। 'लोकतांत्रिक विकेन्दीकरण' लोगों की यह सहभागीता प्रात्त करने का एक सशक्त उपाय है। प्रस्तुत लेख में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पदो मे प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।
शब्द कुंजी – ग्राम रूट डेगोक्रेसी, तृणमूल, विकेन्द्रीकरण सामुदायिक विभास कार्यक्रम, स्वायत्तता।

प्रस्तावना – लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची बन गये हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् एशिया और अफ्रीका के नवोदित राष्ट्रों ने लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत बनाने एवं सामान्य जन को अपने नागरिक और राजनीतिक कार्यो में वास्तविक भागीदार बनाने की दृष्टि से लोकतांत्रिक संरचना का अधिकतम विकेन्द्रीकरण करने का प्रयोग आरम्भ किया। इस प्रयोग को 'ग्रास रूट से डेमोक्रेसी' अर्थात् तृणमूल स्तर पर लोकतंत्र के नाम से अभिहित किया गया।

इसे धरातल पर लोकतंत्र के नाम से भी अभिव्यक्त किया जाता है। धरातल पर लोकतंत्र से अभिप्राय यह है कि ऐसी राजनीतिक संरचना जिसमें लोकतंत्र केवल राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तरों तक ही सीमित नहीं हो अपितु उसका विस्तार वास्तविक अर्थ में स्थानीय स्तरों तक भी होता हो। इस प्रकार यह पद्धति लोकतंत्र में लोगों की सहभागिता को सही अर्थो में सुनिश्चित करने का माध्यम है। एक ऐसा लोकतंत्र जो केवल निर्वाचित प्रतिनिधियों तक सीमित नहीं है और जो केवल राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तरों तक संकुचित नहीं है, तथा जिसमें जनता की सहभागिता प्रत्येक तीसरे या पांचवे वर्ष होने वाले चुनावों के समय ही अभिव्यक्त नहीं होती अपितु उनकी सहभागिता उनके अपने दैनिक आचरण से संबंधित सार्वजनिक कार्यो और अपने क्षेत्र, गाँव और कस्बा के दैनिक प्रबन्ध में अभिव्यक्त होती है। इस प्रकार धरातल पर लोकतंत्र की अवधारणा अनिवार्यत: विकेन्द्रीकृत लोकतंत्र की धारणा है जिसमें सार्वजनिक कार्यो के प्रबन्ध का आरम्भ और अन्त केवल उच्च स्तर पर नहीं होता अपितु स्थानीय क्षेत्रों में सामान्य लोगों के विस्तृत जाल के माध्यम से होता है।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का अर्थ – लोकतंत्र उस व्यवस्था को कहते हैं जिसमें राज्य की प्रभुसत्ता लोक अर्थात् उस भू-भाग के निवासियों में निहित होती है। जिस व्यवस्था में देश के समस्त नागरिक शासन के कार्यो में किसी न किसी स्तर पर भाग लेते हों और उनकी आवाज अनिवार्यत: कुछ महत्तव रखती हो, उसे सच्चा प्रजातंत्र कहा जा सकता है। जब राज्य की सत्ता केन्द्र में निहित होती है तो उसे केन्द्रीय शासन कहते हैं और जब यही सत्ता जनता में विभिन्न स्तरों पर बांट दी जाती है तो इसे विकेन्द्रीकृत सत्ता कहते हैं।

सभी लोकतांत्रिक देशों में शासन के निर्णय यद्यपि जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा लिए जाते हैं किन्तु उनका निष्पादन लोकसेवकों द्वारा किया जाता है। शासन के कार्य संचालन का यह सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य है किन्तु आधुनिक लोकतंत्रीय देशों में नौकरशाही की शक्तियों का इतना अनियंत्रित और असीमित विस्तार हो गया है कि लोकतांत्रिक रूप से चुने हुए प्रतिनिधियों की भूमिका कभी-कभी गौण होती प्रतीत होती है। वस्तुत: लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण शासन की शक्तियों का नौकरशाही के विभिन्न स्तरों पर प्रत्यायोजन नहीं है अपितु लोकतांत्रिक सत्ता का राष्ट्रीय स्तर से नीचे राज्य, जिला, विकास खंड एवं ग्राम स्तर पर विकेन्द्रीकरण द्वारा निर्णय करने की अधिकतम शक्ति जनता में निहित हो तभी सच्चा लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण हो सकता है।

इस अवधारणा पर 1957 में, केन्द्र सरकार द्वारा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के आकलन एवं मूल्यांकन हेतु नियुक्त बलवंत राय मेहता समिति ने भी गहन चिन्तन किया। इस समिति का निष्कर्ष भी यही था कि वास्तविक प्रजातंत्र उस समय फलीभूत होगा जब प्रत्येक गाँव में ग्रामसभाएँ एवं ग्राम पंचायतें स्थापित हो जाएंगी और सामान्य जन वास्तविक स्वतंत्रता का अनुभव करेंगे।

'विकेन्द्रीकरण' के पूर्व 'लोकतांत्रिक' शब्द के उपयोग करने से इसका अर्थ प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण को पृथक् रूप से समझने में भी सहायता करता है। प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा प्रशासन में कुशलता

* सह आचार्य (लोक प्रशासन) राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

लाने के विचार से अभिप्रेरित है। प्रशासन में जब शक्तियों का विकेन्द्रीकरण किया जाता है तो उसका उद्देश्य प्रशासन के निचले स्तरों पर निष्पत्ति और प्रशासनिक कार्मिकों की गति वृद्धि के माध्यम से उनकी कुशलता बढ़ाने से होता है जबकि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य शासन के कार्यों में सरकार के प्रत्येक स्तर राष्ट्रीय, प्रान्तीय और विशेषत: स्थानीय स्तर पर जनता की अधिकतम सहभागिता प्राप्त करना होता है। प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण में प्रशासन के निचले स्तरों पर किसी योजना को अधिक स्वतन्त्रतापूर्वक कार्यान्वित करने का अधिकार निहित देखा जा सकता है। इसमें योजना उच्च स्तर के लोगों के द्वारा बनाई जाती है और उसकी क्रियान्विति की प्रक्रिया में नीचे के स्तर की स्वतंत्रता अभीष्ट होती है।

जबकि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को स्थानीय स्तर पर लोगों का अपने कल्याण की योजनाओं को बनाने व पहल करने तथा स्वायत्ततापूर्वक उन्हें कार्यान्वित करने के अधिकार के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रकार 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण, प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की तुलना में अधिक व्यापक है और दोनों में अन्तर उनके उद्देश्य को लेकर किया जा सकता है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण जहाँ लोगों की सहभागिता पर बल देता है वहीं प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य 'कुशलता' को बढ़ावा देना होता है।'

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की विशेषताएं लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण शब्द शासन के उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर तीन स्वरूपों में शक्तियों के स्वायत्ततापूर्ण हस्तांतरण का उद्घोष करता है :

1. राजनीतिक दृष्टि से यह निर्णय करना कि शासन की नीति और कार्यक्रम क्या होंगे,
2. निर्धारित दायित्वों को पूर्ण करने के लिए आर्थिक संसाधनों के प्रबन्ध का अधिकार हो, तथा.
3. प्रशासनिक दृष्टि से, बिना किसी उच्च हस्तक्षेप के, अपने कार्यों के निर्देशन, पर्यविक्षण और व्यावहारिक आयोजन का अधिकार।

इस प्रकार लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एक ऐसी राजनीतिक धारणा है जो शासन के कार्यों और निर्णयों में लोगों की भागीदारी का विस्तार करती है। यह धारणा उच्च स्तर से नीचे के स्तर के जनप्रतिनिधियों की सत्ता का, स्वायत्तता सहित, विकेन्द्रीकरण करती है। सत्ता का यह विकेन्द्रीकरण उपर्युक्त इंगित तीन दिशाओं में राजनीतिक निर्णय निर्माण, वित्तीय नियंत्रण और प्रशासकीय प्रबन्ध में होता है। प्रशासकीय विकेन्द्रीकरण की विशेषताओं को निम्नांकित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है :

1. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण लोगों को अपनी ही सरकार के प्रबन्ध में अधिकतम और व्यापक सहभागिता सुनिश्चित करता है।
2. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया शक्तियों के लम्बवत् हस्तान्तरण का आग्रह करती है।
3. इस प्रक्रिया में जो सत्ता निम्नस्तरीय इकाइयों को प्राप्त होती है उसके उपयोग में उन्हें नीति निर्माण, कार्यक्रमों के निर्धारण और उनके निष्पादन की रीति-नीति के विनिश्चय, तथा आर्थिक संसाधनों के प्रबन्ध में पर्याप्त स्वायत्तता मिलती है।
4. इस प्रक्रिया में जो सत्ता विकेन्द्रीकृत की जाती है उसका उपयोग जिस तंत्र के द्वारा किया जाना है वह निर्वाचित होना चाहिएय यदि वह तंत्र निर्वाचित नहीं है तो वहाँ विकेन्द्रीकरण तो होगा किन्तु यह विकेन्द्रीकरण लोकतांत्रिक नहीं कहा जा सकता।
5. इस प्रक्रिया में विकेन्द्रीकृत सत्ता का उपयोग निर्वाचित निकाय के सदस्यों या किसी समिति के द्वारा होना चाहिए न कि एक व्यक्ति के द्वारा। यदि सत्ता का उपयोग एक व्यक्ति में निहित कर दिया गया तो लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य नष्ट हो जाएगा।
6. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का यह राजनीतिक सिद्धांत एक सीमा तक, निम्न स्तरीय संस्थाओं के दैनन्दिन कार्यकरण में राज्य सरकार अथवा केन्द्र सरकार के हस्तक्षेप का निषेध करता है। सैद्धांतिक तौर पर तो यह माना जाता है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में निम्न स्तरीय संस्थाओं पर उच्चस्तरीय संस्थाओं का नियंत्रण नहीं होना चाहिए किन्तु यह एक अतिवादी और विशुद्ध सैद्धांतिक दृष्टिकोण है। व्यवहार में स्थानीय संस्थाओं को निश्चित क्षेत्र में स्वायत्तता प्रदान की जाती है। इस स्वायत्तता के क्षेत्र में अनावश्यक, अवांछित अथवा अतिरिक्त हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए अन्यथा यह हस्तक्षेप लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के मूल उद्देश्य पर ही आघात करता है।

भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का व्यावहारिक पक्ष – भारत के संविधान के अनुच्छेद 40 में यह निर्देश दिया गया है कि राज्य पंचायतों की स्थापना एवं उनके विकास पर ध्यान देगा। इसके पश्चात् प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि विकास कार्यों के निष्पादन में पंचायतें एक अभिकर्ता (एजेन्ट) के रूप में कार्य करेंगी। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में भी यह ब दिया गया कि पंचायतों को और अधिक अधिकार दिए जाएं। ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादन के कार्यक्रमों की योजना बनाना, बजट तैयार करना, ग्राम और सरकार के मध्य संबंध सेतु स्थापित करना तथा सामुदायिक विकास कार्यों के लिए श्रमदान संगठित करने इत्यादि की भूमिका उन्हें विशेष रूप से दी जा सकती है। 1952 में, देश में व्यापक स्तर पर सामुदायिक विकास योजना लागू की गई जिसमें सिद्धांतत: यह स्वीकार कर लिया गया था कि ग्राम की वास्तविक उन्नति तभी हो सकती है जब इस कार्यक्रम को जनता की समितियों के माध्यम से क्रियान्वित करवाया जाए। समय-समय घर किए गए मूल्यांकनों से यह स्पष्ट हो गया कि सामुदायिक विकास की यह योजना, जनता का कार्यक्रम तभी बन सकती है जब इसे जनता के प्रतिनिधियों के हाथों में सौंप दिया जाए। इसी समय अनुभव भी कर लिया गया था कि प्रजातंत्र को सफल बनाने के लिए जनता को और अधिक अधिकार दिये जाने की आवश्यकता है। देश में ऐसा वातावरण बन गया जिसमें इस प्रश्न पर गम्भीर चिन्तन किया जाने लगा कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम एवं पंचवर्षीय योजनाओं को कैसे सफल बनाया जाए? इसी क्रम में योजना आयोग की योजना कार्यक्रमों की समिति ने श्री बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में एक अध्ययन दल बनाया जिसे उक्त समस्या पर सर्वागीण दृष्टि से विचार कर अपना सुझाव प्रस्तुत करने को कहा गया।

बलवंत राय मेहता समिति (1958) ने अनुशंसा की कि राजनीतिक सत्ता का उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर विकेन्द्रीकरण कर दिया जाए जिससे विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने एवं उन्हें कार्यान्वित करने का उत्तारदायित्व स्थानीय क्षेत्र के चुने हुए प्रतिनिधियों का हो जाए। बलवंत राय मेहता ने इस अनुशंसा को प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण का नाम दिया। स्थानीय स्वशासन के विद्वानों ने मेहता प्रतिवेदन को लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा पर एक वैज्ञानिक प्रपत्र स्वीकार किया है जो इस अवधारणा के सिद्धांत और व्यवहार दोनों की समुचित अभिव्यक्ति अपने कलेवर में समाविष्ट करता है।

12 जनवरी, 1958 को राष्ट्रीय विकास परिषद् ने, बलवंत राय मेहता समिति की अभिशंसाओं को यथारूप स्वीकार कर लिया। स्थानीय स्वायत्ता शासन की केन्द्रीय समिति ने भी अपनी स्वीकृति इन अनुशंसाओं को प्रदान

कर दी है। मेहता समिति द्वारा प्रस्तुत अभिशंसाओं में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का जो प्रतिमान प्रस्तुत किया गया उसे कालांतर में पंचायती राज के नाम से जाना गया। केन्द्र सरकार ने विकेन्द्रीकरण हेतु पंचायती राज की इस योजना को एक आदर्श प्रतिमान के रूप में स्वीकार कर लिया किन्तु यह प्रत्येक राज्य की इच्छा पर छोड़ दिया गया कि वे पंचायती राज को जिस रूप में चाहें अपने यहाँ अपना लें। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि पंचायती राज की यह योजना स्थानीय स्वायत्ता शासन की योजना है और स्थानीय स्वायत्ता शासन चूंकि राज्यसूची का विषय है इसलिए केन्द्र सरकार ने अपनी शक्तियों की संवैधानिक सीमाओं को पहचानते हुए समस्त राज्यों के लिए आदर्श ढांचा सुझा दिया और उसे अपनाने के लिए राज्यों को स्वाभाविक और अपेक्षित स्वायत्तता दे दी गई। किन्तु, इस प्रतिमान के कुछ मौलिक सिद्धांत निर्धारित कर दिए गए, जिन्हें ध्यान में रखने का आग्रह राज्यों से किया गया। पंचायती राज के मौलिक सिद्धांत

1. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण हेतु प्रस्तावित पंचायती राज की योजना ग्राम से लेकर जिला स्तर तक तीन स्तरीय होनी चाहिए। ये संस्थाएं जीवंत रूप से एक दूसरे से संबंधित रहें।
2. इन संस्थाओं को, शक्ति और दायित्वों का वास्तविक हस्तांतरण होना चाहिए।
3. इन संस्थाओं को योग्य बनाने के लिए तथा उत्तारदायित्वों के निर्वाह को सरल बनाने के लिए पर्याप्त वित्तीय स्रोत हस्तान्तरित किए जाने चाहिए।
4. इन संस्थाओं को समस्त विकास कार्यक्रमों के निष्पादन का दायित्व दिया जाए।

प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की इस योजना को पंचायती राज के रूप में राजस्थान ने सबसे पहले अपनाया। इस योजना का उद्घाटन देश के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर नगर में 2 अक्टूबर, 1959 को एक विशाल जन समूह के समक्ष दीप जला कर किया। इसके उपरांत आन्ध्र प्रदेश ने 11 अक्टूबर, 1959 को इस योजना को लागू किया। कालांतर में देश के अधिकांश राज्यों ने इस योजना को अंगीकार कर लिया है।

मेहता समिति द्वारा सुझाया गया ढांचा मूल रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिकों की, सरकारी विकास कार्यों में सहभागिता को सुनिश्चित करने की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया था। बलवंत राय मेहता की उक्त योजना को पंचायती राज के त्रिस्तरीय ढांचे के रूप में जाना जाता है। ये तीन स्तर हैं :

1. ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत
2. खंड स्तर पर पंचायत समिति
3. जिला स्तर पर जिला परिषद

लोकतात्रिक विकेन्द्रीकरण का नूतन पक्ष : ग्रामसभा एवं वार्ड सभा– लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के व्यावहारिक पक्ष का यह विश्लेषण अधूरा रह जाएगा यदि 73वें संविधान संशोधन के पश्चात् संविधान में किए गए ग्रामसभा के प्रावधानों का उल्लेख न करें। इस संविधान माध्यम से को सांविधानिक स्तर प्रदान करते हुए धरातल पर लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रत्यक्षतम इकाई के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। वर्ष में न्यूनतम दो बैठकों के माध्यम से ग्रामसभा से यह अपेक्षा की गई है कि वह ग्राम स्तर पर निर्वाचित इकाई ग्राम पंचायत की वर्ष भर की कार्यसूची (एजेन्डा) का निर्धारण करें, बीच में इसकी उपलब्धियों का सामयिक आकलन करते हुए अंत में उनकी समीक्षा भी करें। इस तरह ग्रामसभा ग्राम स्तर या धरातल पर प्रत्यक्ष लोकतंत्र का ऐसा उपकरण है जिससे निर्वाचित निकाय एवं उसके क्रियाकलापों पर सीधा निगरानी रखने की अपेक्षा की जाती है। यही नहीं, राजस्थान में तो इससे भी एक कदम आगे बढ़कर वार्ड सभाओं की परिकल्पनाओं को भी साकार रूप दिया है। इन दोनों ही पक्षों का और विस्तृत विवरण पुस्तक के आगामी अध्यायों में यथास्थान दिया जा रहा है।

व्यवहार में अनुभूत विकृतियाँ – प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा पर अपना महत्तवपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय स्वयं बलवंत राय मेहता समिति इसकी अन्तर्निहित विसंगतियों, सीमाओं और सफलता के संभावित खतरों से अवगत थी। समिति की मान्यता थी कि प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रस्तावित योजना को कार्यान्वित कर दिए जाने से प्रशासन की कुशलता में ह्रास हो जाएगा। यद्यपि उनकी मान्यता यह भी थी कि प्रशासनिक कुशलता की यह अवनति, इन संस्थाओं के संस्थागत और संगठनात्मक विकृतियों को दूर कर दिए जाने से, समाप्त हो जाएगी। समिति ने इस दिशा में दूसरा मत इन संस्थाओं में भ्रष्टाचार व्याप्त हो जाने के विषय में व्यक्त किया था। समिति ने लोगों की अज्ञानता, अधिकारियों की चालाकी और समाज में विकसित होने वाले विशिष्ट अधिकार सम्पन्न समूहों इत्यादि को संभावित भ्रष्टाचार के कारकों के रूप में रेखांकित किया था। समिति ने यह संभावना भी व्यक्त की थी कि लोकतांत्रिक संस्थाओं के चुनावों से समाज और ग्रामीण क्षेत्रों में गुटबाजी को प्रोत्साहन मिलेगा।

इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि बलवंत राय मेहता समिति अपने प्रतिवेदन में प्रस्तावित लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के कार्यान्वयन के मार्ग में संभावित कठिनाइयों और उसकी सीमाओं से भली भांति अवगत थी। हमारे राज्यों ने मेहता समिति द्वारा प्रस्तावित लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की पंचायती राज की जो योजना अपने यहाँ कार्यान्वित की है उनके व्यावहारिक अनुभव से यह सिद्ध हो गया है कि मेहता समिति ने अपने प्रतिवेदन में जिन विकृतियों का अनुमान व आकलन किया था, वे सही पाई गई हैं। पंचायती राज के संव्यवहार में, देश भर में जो विकृतियाँ अनुभव की गई हैं, वे बिन्दुवार इस तरह व्यक्त की जा सकतीं हैं

1. मेहता समिति ने अपने प्रतिवेदन में यह मत व्यक्त किया था कि लोकतांत्रिक – विकेन्द्रीकरण की योजना कार्यान्वित कर दिए जाने से प्रशासन की कुशलता देश भर में पंचायती राज संस्थाएँ वास्तव में अकुशलता की प्रतीक बनकर रह गई हैं। ये संस्थाएँ जनतांत्रिक दबावों के कारण प्राय: प्रशासनिक कुशलता को तिलांजलि दे बैठी हैं लोकतांत्रिक रूप से चुने हुए प्रतिनिधि प्रशासनिक कार्यकुशलता के किसी मापदंड या मर्यादा को स्वीकार करने के लिए तैयार ही नहीं होते हैं। मैं द्वारा होगा।

2. इन संस्थाओं में व्यापक भ्रष्टाचार फैल गया है। लोकतांत्रिक रूप से चुने हुए प्रतिनिधियों ने नौकरशाही के साथ ऐसा अनुपम सामंजस्य बिठाया है कि इन संस्थाओं के ये दोनों घटक मिलकर बहुधा भ्रष्टाचार करने और उससे बचने के उपाय ढूंढते रहते हैं।

3. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की पंचायती राज की योजना कार्यान्वित होने से समय–समय पर होने वाले पंचायती राज चुनावों से ग्रामीण क्षेत्रों में सौहार्द्र का सामान्य वातावरण नष्ट हो गया है और ग्रामीण क्षेत्रों में गुटबाजी का माहौल बन गया है। इन दोनों ही विकृतियों का मेहता समिति ने अपने प्रतिवेदन में भी पूर्वानुमान कर लिया था।

4. पंचायती राज की योजना को मेहता समिति के प्रतिवेदन की अपेक्षाओं के अनुकूल यथारूप कार्यान्वित करने में राज्य सरकारों का दृष्टिकोण भी शिथिल दिखाई दिया है। उसका यह व्यवहार निम्नांकित बिन्दुओं से प्रमाणित

होता हैं :

(अ) राज्य सरकारें पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव समय पर नहीं कराती रही हैं। कहीं-कहीं तो चुनाव 3 की अपेक्षा 13 वर्ष तक नहीं कराए गए। राज्य सरकारों की यह मनोवृत्ति लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना के प्रति उनकी उदासीनता का प्रमाण मानी जा सकती है।

(ब) समस्त राज्य सरकारें इस तथ्य से भली भांति परिचित हैं कि पंचायती राज संस्थाओं की आर्थिक दशा अत्यन्त कमजोर है और स्वतंत्र रूप से उनके आर्थिक संसाधनों का अभाव है। अब 73वें संविधान संशोधन द्वारा इस दिशा में सटीक उपाय किए गए हैं।

5. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के लिए पंचायती राज की योजना प्रस्तुत करते हुए मेहता समिति ने यह भी मत व्यक्त किया था कि विकास कार्यों के साथ जनता की अधिकतम सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए यह योजना प्रस्तुत की जा रही है किन्तु व्यवहार में उनकी यह आशा फलीभूत होती प्रतीत नहीं हुई। वस्तुत: चुनाव के समय जनता राजनीतिक रूप से किंचित् अधिक सक्रिय हो जाती है किन्तु चुनावों के पश्चात् विकास कार्यक्रमों में जो भागीदारी, जागृति और सहभागिता नागरिकों से अपेक्षित हैं उसका विकास ये संस्थाएं नहीं कर पाती हैं। यहाँ यह व्यक्त करने में कोई संकोच नहीं है कि पंचायती राज मेहता समिति के मूल उद्देश्य 'विकास कार्यों में नागरिकों की सहभागिता को साकार नहीं कर पाया है।

6. पंचायती राज की संस्थाओं को ग्रामीण अंचलों में विकास का वाहक बनाना मेहता समिति के प्रतिवेदन का दूसरा लक्ष्य था किन्तु यह लक्ष्य भी पूर्ण रूप से सार्थक नहीं हो पाया है।अधिक दायित्व ही नहीं दिए हैं और यदि यत्किंचित् दायित्व दिए भी हैं तो पंचायती राज की संस्थाएँ उन्हें संतोषजनक सीमा तक पूर्ण नहीं कर सकी यहाँ उदाहरण के रूप में यह उल्लेख किया जा सकता है कि राजस्थान में पंचायत समितियों को ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा के संचालन का दायित्व सौंप दिया है। व्यवहार में ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती राज द्वारा संचालित प्राथमिक शिक्षा की जो दुर्दशा हो रही है उसे राजस्थान के ग्रामवासी ही जानते हैं।

7. पंचायती राज की संस्थाओं को उत्तारदायित्व का जो आत्मबोध होना चाहिए था, वह भी नहीं हो पाया है।

8. पंचायती राज की संस्थाएँ कितनी निष्क्रिय हैं इस बात का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि ग्रामसभा की वर्ष में नियमित बैठक बुलाने का कार्य पंचायती राज की ये संस्थाएँ व्यवहार में उदासीनता से करती हैं। व्यवहार और सिद्धांत का यह इन संस्थाओं के कार्यकरण की विसंगतियों को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है।

9. ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारिता के माध्यम से स्वावलम्बन का सपना भी इसीलिए अधूरा रह गया कि सहकारिता के आन्दोलन को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य पंचायती राज संस्थाओं को दे दिया गया।

10. पंचायती राज की संस्थाएँ संविधान में परिकल्पित सामाजिक न्याय की दिशा में अपनी भूमिका को रेखांकित कर पाने में असफल रही हैं। यही कारण है कि भारत के संविधान की प्रस्तावना में परिकल्पित आदर्श, परिकल्पना के स्तर तक ही रह गए हैं, यथार्थ में उन्हें कार्यान्वित नहीं किया जा सका है।

11. 73वें संविधान संशोधन का अनुसरण करते हुए भारतीय संघ के विभिन्न राज्यों ने अपने यहाँ पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव सम्पन्न करा लिए हैं। किन्तु, इन चुनावों के पश्चात् जो जन प्रतिनिधि चाहे वे सरपंच, प्रधान या जिला प्रमुख हों अथवा इन संस्थाओं में प्रत्यक्ष रूप से चुने हुए पंच या सदस्य हों इन सभी को निरन्तर यह बोध हो रहा है कि :

(क) निर्वाचित सदस्य या प्रतिनिधि के रूप में उनसे जनता की जो अपेक्षाएँ जाग्रत हो गई हैं, उन्हें पूर्ण करने के लिए वास्तव में उन्हें कोई अधिकार या शक्तियाँ नहीं हैं।

(ख) उनके पास निर्वाचित जन प्रतिनिधि के रूप में जन आकांक्षाओं के अनुरूप दायित्वों का निर्वाह करने के लिए न तो कोई कार्यालय है और न ही किसी अन्य प्रकार की संरचनात्मक सुविधाएं उन्हें उपलब्ध कराई गई हैं।

12. देश के सभी राज्यों में महिला पदाधिकारियों एवं प्रतिनिधियों ने भी अपने कार्यक्षेत्र में परिवार के पुरुष सदस्यों के अतिशय हस्तक्षेप के प्रति समय-समय पर चिन्ता व्यक्त की है। वस्तुत: ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभावशाली परिवारों के पुरुषों को आरक्षण जन्य विवशताओं के अधीन अपने ही परिवार की महिला को टिकट दिला कर अपनी प्रभावशाली स्थिति को बनाए रखने के उपाय करने पड़े हैं। इस तरह ग्रामीण क्षेत्रों में महिला सरपंच प्रधान व जिला प्रमुख चुने जाने पर एक नई अनौपचारिक पदसोपान की व्यवस्था स्वत: विकसित हो गई है जिसमें उन महिलाओं के प्रति अपने परिचय-पत्र पर सरपंच पति 'प्रधान पति' व 'जिला प्रमुख पति' लिखवा कर विचरण करते पाए जाते है। हमारी पारिवारिक संरचना में पारिवारिक सौहार्द्र को बनाए रखने के लिए देश भर में ये महिला प्रतिनिधिपदाधिकारी ऐसी स्थितियों से जूझती हुई कार्य कर रही हैं।

उपर्युक्त कारणों से देश भर में पंचायती राज संस्थाओं के चुने हुए पदाधिकारी एवं जन प्रतिनिधि वास्तविक शक्तियों के अभाव में अपनी निर्वाचित स्थिति के प्रति पूर्णत: निराश हैं और निरन्तर विभिन्न मंचों से सरकार के सामने यह आवाज उठाते रहते हैं कि उनकी इस 'अशक्त स्थिति' के प्रतिकार के लिए सरकार को पंचायती राज के अधिनियम में आवश्यक संशोधन करने चाहिए।

पंचायती राज की संस्थाओं को सृजित करने के मूल में प्रमुख उद्देश्य लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा को साकार रूप देना था किन्तु उपर्युक्त अनुभूत कमियों या विकृतियों के कारण यह सपना पूरी तरह मूर्तरूप नहीं ले पाया है। अत: आवश्यकता यह है कि इन विकृतियों का यथासंभव शीघ्र निराकरण किया जाए जिससे देश की जनता गाँधीजी के ग्राम स्वराज्य और लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सपने को पूर्णत: साकार होता देख सके।

पंचायती राज की अब तक की कहानी सफलता की अपेक्षा असफलता की अधिक है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के व्यवहार का यह पक्ष भविष्य के लिए सर्वाधिक चिन्तन की चेतावनी देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एस.आर.माहेश्वरी, 'भारत में स्थानीय शासन', (लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगर, 1998)
2. एम.ए.मुतालिब एवं खान, 'थ्यौरी ऑफ लॉकल गवर्नमेन्ट' (नयी दिल्ली, स्टर्लिंग, 1983)
3. भारत का संविधान, 73वाँ संशोधन अधिनियम, 1993
4. इकबाल नारायण, 'डेमोक्रेटिव डिसेंट्रेलाइपेशन : द आइड़िया, द इमेज एण्ड द रियलिटी', संकलित आर, बी.जैन।
5. राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994
6. प्रो. अशोक शर्मा, 'भारत के स्थानीय प्रशासन' जयपुर, आर.बी.एस.पब्लिशर्स, 2011
7. डॉ. बसंती बाबेल, 'पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास योजनाऐं', (जयपुर :राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 2011)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Azaphospholes : A Review

Dinesh Chandra Sharma *

Introduction - Azaphospholes constitute a relatively recent group of five-membered heterophospholes. The five-membered ring essentially consists of a dicoordinate tervalent phosphorus (2, 1) contributing one a eletron and one tricoordinate nitrogen making 2n electrons available to the 6 electrons system. Thus they provide a good example of two coordinate phosphorus participating in the cyclic delocalization[1] and are isoelectronic with pyrrole, the comman five-membered heterocyclic system, in which one CH has been substituted by phosphorus[2].

The known azaphospholes have been classified on the basis of the number of nitrogens and their relative positions in the ring. It has been shown in Table 1.1.

Although five-membered phosphorus heterocycles containing other heteroatoms like 0 or S are also known, the same will not be discussed due to limited space available here. Even the azaphospholes alone have become so numerous that not all individual representatives can be mentioned here, but attempt has been made to highlight the salient features of these compounds[3].

Some general synthetic methods have been developed for which have been briefly described in Section 1.2. The application of one or more of these methods for the prepara tion of individual azaphospholes has been given with that particular group of azaphospholes.

Table 1.1 Classification of Azaphospholes (see in last)

The characterization of various azaphospholes has done with the help of extensive NMR spectral studies, among brief them ^{31}p-NMR being the most important technique. Á compilation of the spectroscopic data has been presented in Section 1.3.

The azaphospholes have been found to show four types of reactions:

1. Addition across P=C or P=N bond.
2. Substitution at a-CH or NH.
3. Oxidation at phosphorus.
4. P or N-coordination.

Sometimes two of these reactions occur simultaneously. Various reactions given by azaphospholes are shown schematically in Fig. 1.1.

The reactions have been consequently discussed with individual azaphospholes under following headings.

(i) Addition of protic reagents.
(ii) Nucleophilic addition.
(iii) [4+2] Cycloaddition.
(iv) [2+3] Cycloaddition.
(v) Oxidative 1, 1-addition and [4+1]-cycloaddition.
(vi) Substitution.
(vii) Coordination.

The review covers the literature about 1964 through 1991.

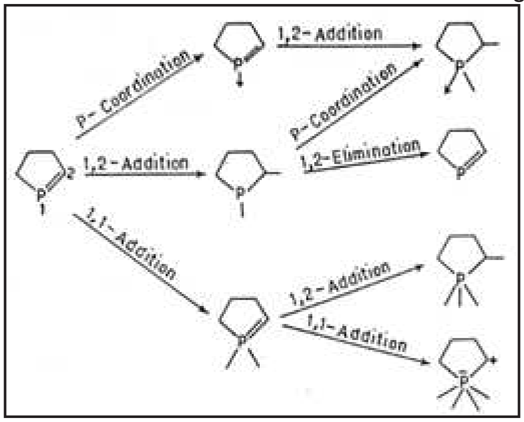

Fig. 1.1 Different modes of reactions of azaphospholes

1.2 GENERAL METHODS OF SYNTHESIS OF AZAPHOSPHOLES

Following general methods have been used for synthesis of azaphospholes. the

(i) Method A: Cyclocondensation of a with PX (X=CI, NM2! Four Membered Chain with PX3 X=CI or NMe,

This involves cyclocondensation chain containing activated terminal of a four-membered hydrogens (generally in the presence of a base. Some the examples are given below (Scheme 1.1).

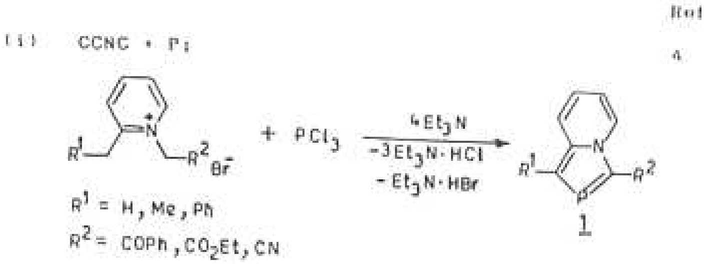

*Department of Chemistry, Govt. P.G. College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

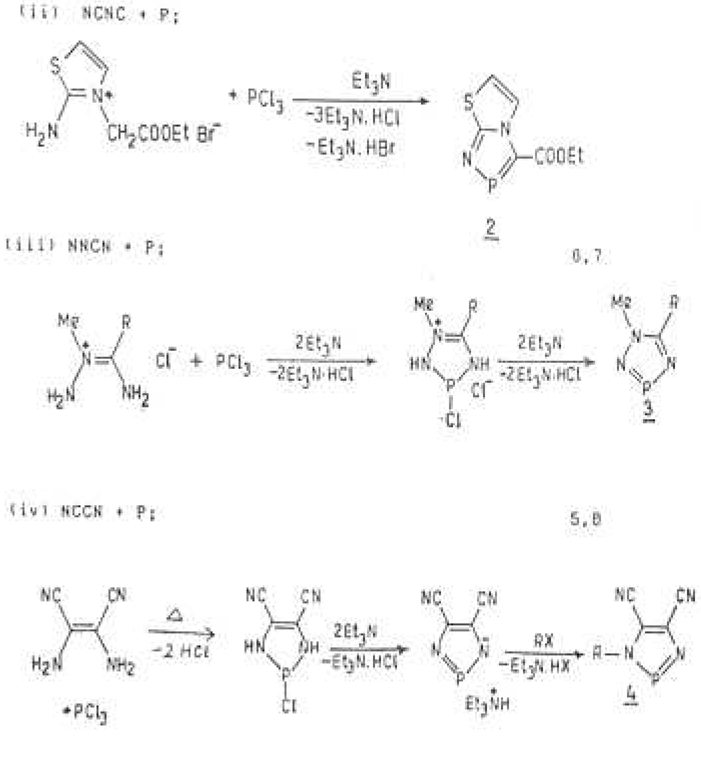

Scheme 1.1

Membered Chain with ClCH2 PCl2

Chloromethyldichlorophosphine ($ClCH_2PC1_2$) is 9 reager and it furnishes the fragment HCP a useful for azaphosphol ring. It condenses with a three-membered in presence 7, of Et N to give azaphosphole ring. examples are cited belov (Scheme 1.2).

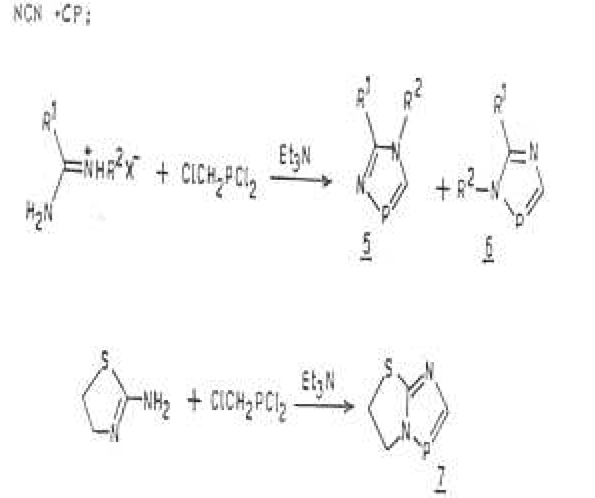

Scheme - 1.2

(iii) Method C: Cyclocondensation of Three Membered Chlo- rophosphine with Hydrazines (CNP or PCP+NN)

A three-memberd chlorophosphine furnishes CNP or PCP moiety by reacting with hydrazine in presence of a base. For example, 1,2,4,3-triaza phosphole (10) can be synthesized from imidatochlorophosphines 10 (Scheme 1.3)

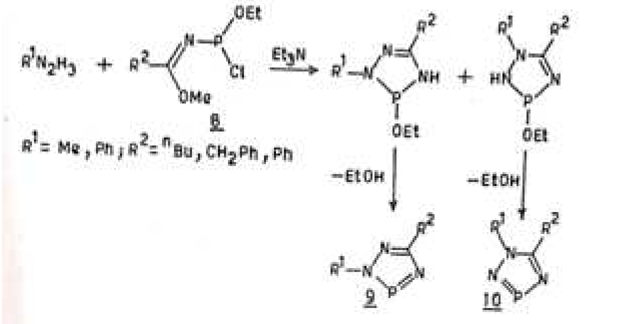

Scheme - 1.3

(iv) Method D: Cyclocondensation of Four Membered Phosp- hines with Carboxylic Acid Derivatives (PCCN+C)

A four-membered moiety is furnished by 2-alkyl- phosphines when it condenses with a carboxylic acid vative to form 1,3-azaphosphole or benzo derivatives. deri- For example, condensation of iminoesters (11) with 2-aminoethyl-phosphines (12) forms a cyclic phosphine (13) 11 which on flash pyrolysis 12 changes into 1,3-azaphosphole(14) (eq. Similarly, 2-aminophenyl phosphine (16) condenses with 1.1). imino- ester (15) to form benzo-1,3-azaphosphole(17) directly5.

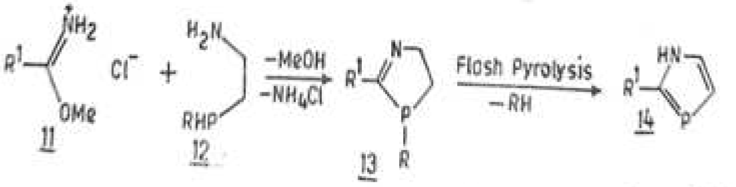

(eq. 1.1)

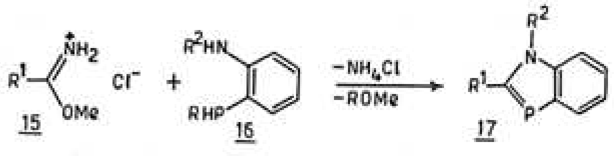

(eq. 1.2)

v) Method E: Cyclocondensation Involving Phosphaallylic Cations (CPC+MN)

The reaction of imide chloride (18) cations (19) which on tris(trimethylsilyl) phosphine affords with 1,3-diamino-2-phosphaally lic condensation diazaphospholes (20) (eg. 1.3)

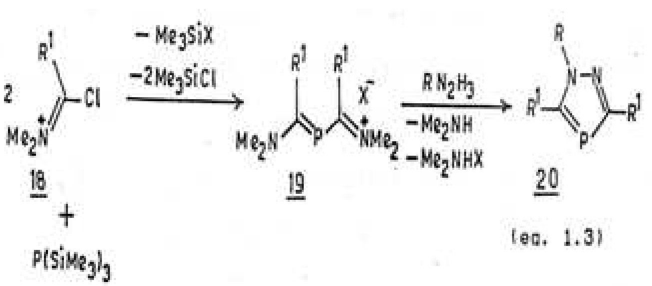

(eq. 1.3)

(vi) Method F: 0/P, S/P Exchange using Tris(trimethylsilyl) phosphine

The cationic related ring systems or zwitterionic oxolium, thiolium and related ringh systems on reaction with $P(Sime_3)_3$ or

LIP(SiMe³)² give corresponding azaphospholes as exchange of ring oxygen or sulfur with phosphorus example, oxazolium-cations (21) form under these conditions (eq. 1.4).

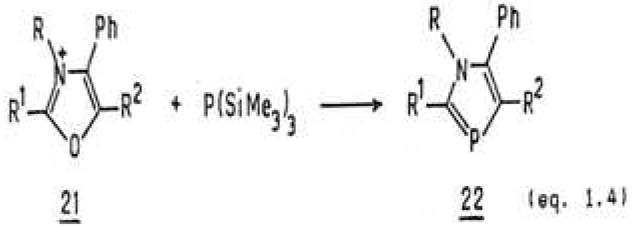

(vii) Method G [2+3] Cycloadditions of Phosphaalkynes Phosphaalkenes (CNN, NNN, CNC+PC) and

The [2+3] cycloaddition reactions (R-CEP) 19 yield a and phosphaalkenes ($R^1R2C=PR^3$) and of phosphaalkynes with wide range of azaphospholes with adjacent to phosphorus. In a modified phosphaalkyne (R CEP) is generated from R^1IMS10)C-PSIMO (25) or the 1,3-dipoles C, C method, or C, N the phosphaalkenes or R (Me Si)C-PC1 (23) by elimination of $(Me_{3S}1)_2$0 or Me, SICI respectively. examples are given below (Scheme 1.4).

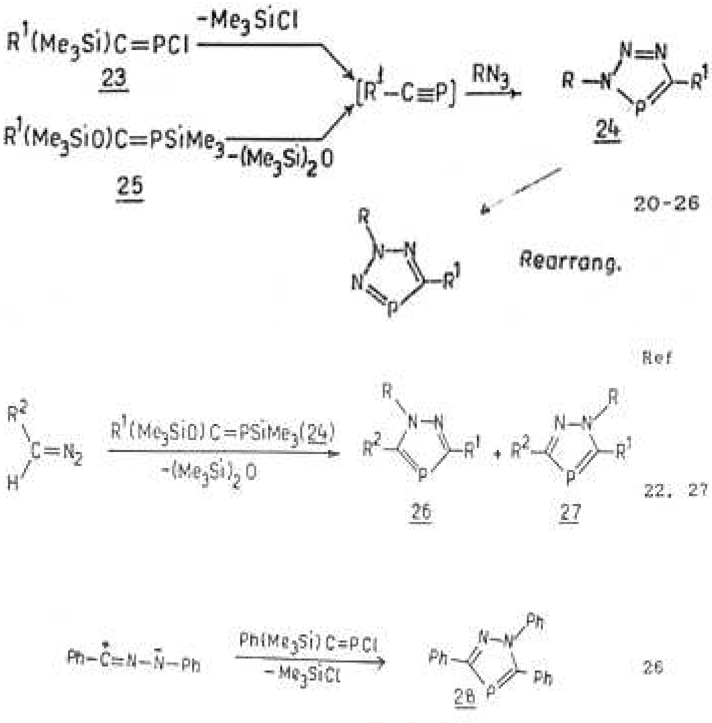

Scheme 1.4

(viii) Method H : Conversion of Azaphospholes (CC+PCN,PNN)

(4+2) Cycloaddition of an azaphosphole to an acetylene followed by elimination of nitrile from the adduct results in the formation of another azaphosphole with one nitrogen less than the former[28,29] (eq 1.5)

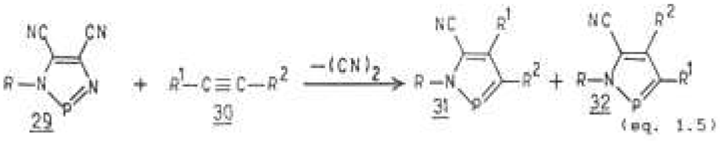

Refrences:-

1. Dimroth K., Top. Curr. Chem. 38 (1973) 1 :Chapter 1.17 in Comprehensive Hotrocyole Chemistry, (Katritzky A.R., Rees Ch. W. Eds.), Pergamon, Oxford (1984) 508.
2. Schmidpeter A., Karaghiosoff K., Nachr. Chem. Tech. Lab. 33 (1985) 793.
3. Karaghiosoff K., Schmidpeter A., Phosphorus Sulfur 38 (1988) 217.
4. Bansal R.K., Karaghiosoff K., Gupta N., Schmidpeter A., Spindler C., Chem. Ber. 124 (1991) 475.
5. Schmidpeter A., Karaghiosoff K., in Rings Clusters and Polymers of Main Group and Transition Elements (H.V. Roesky, Ed.) Elsevier, Amsterdam 11987) 307.
6. Tautz H., Ph.D. Thesis, University of Munich, Germany 1980.
7. Schmidpeter A., Phosphorus Sulfur 28 (1988) 71.
8. Karaghiosoff K., Majoral J.P., Meries A., Navech J., Schmidpeter A., Tetrahedron Lett. 24 (1983) 2137.
9. Karaghiosoff K., Cleve C., Schmidpeter A., Phosphorus Sulfur 28 (1988) 289.
10. Charbonnel Y., Barrans J., Tetrahedron 32 (1976) 2039.
11. Heinicke J., Tzschach A., Z. Chem. 26 (1988) 407.
12. Heinicke J., Tetrahedron Lett. 27 (1986) 5899.
13. Schmidpeter A., Willhalm A., Angew. Chem. 98 (1984) 901; Angew. Chem. Int. Ed. Engl. 23 (1984) 903.
14. Markl G., Dorfmeister G., Tetrahedron Lett. 27 (1986) 4419.
15. Markl G., Pflaum S., Tetrahedron Lett. 28 (1987) 1511.
16. Markl G., Dorfmeister G., Tetrahedron Lett. 28 (1987) 1089.
17. Markl G., Pflaum S., Tetrahedron Lett. 27 (1986) 4415.
18. Markl G., Pflaum S., Tetrahedron Lett. 29 (1988) 3387.
19 Regitz M., Chem. Rev. 90 (1990) 191.
20. Rosch W., Regitz M., Angew. Chem. 96 (1984) 898; Angew. Chem. Int. Ed. Engl. 23 (1984) 900.
21. Yeung Lam Ko Y.Y.C., Carrie R., Muench A., Becker G., J. Chem. Soc., Chem. Commun. (1984) 1634.
22. Allspach T., Regitz M., Becker G., Becker W., Synthesis (1986) 31.
23. Rosch W., Vogelbacher U., Allspach T., Regitz M., J. Organomet. Chem. 306 (1986) 39.
24. Rosch W., Facklam Th., Regitz M., Tetrahedron 43 (1987) 3247.
25. Yeung Lam Ko Y.Y.C., Carrie R., J. Chem. Soc., Chem. Commun (1984) 1640.
26. Markl G., Troetsch-Schaller I., Holz1 W., Tetrahedron Lett. 29 (1988) 785.
27. Zurmuhlen F., Rosch W., Regitz M., Z. Naturforsch. 40b (1985) 1077.
28. Schmidpeter A., Klehr H., Z. Naturforsch. 38b (1983) 1404.
29. Karaghiosoff K., Klehr H., Schimidpeter A., Chem. Ber. 119 (1986) 410.

Table 1.1 Classification of Azaphospholes

Section	Class	Structure
1.4	Containing one nitrogen (Azaphospholes)	
1.4.1	1,2-Azaphospholes	
1.4.2	1,3-Azaphospholes	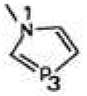
1.5	Containing two nitrogens (Diazaphospholes)	
1.5.1	1,2,3-Diazaphospholes; Two Sub-Classes	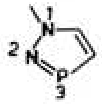 1H- 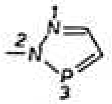 2H-
1.5.2	1,2,4-Diazaphospholes	
1.5.3	1,3,2-Diazaphospholes	
1.5.4	1,3,4-Diazaphospholes; Two Sub-Classes	1H- 3H-
1.6	Containing three nitrogens (Triazaphospholes)	
1.6.1	1,2,3,4-Triazaphospholes; Two Sub-Classes	2H- 3H-
1.6.2	1,2,4,3-Triazaphospholes; Three Sub-Classes	1H- 2H- 4H-
1.7	Containing two phosphorus atoms (diphospholes)	
1.7.1	1,2,3-Azadiphospholes	

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

प्रौद्योगिकी विकास एवं पर्यावरण प्रदूषण: समस्या और समाधान

डॉ.राजेन्द्र प्रसाद *

शोध सारांश – प्राचीन काल में मानव पर्यावरण सम्बंध मधुर रहे है। मानव अपनी सीमित आवश्यकताओं के अनुसार प्रकृति के संसाधनों का दोहन कर अपना जीवन यापन करता था जैसे–जैसे मानव की आवश्यकता बढ़ती गयी उसने संसाधनों का विदोहन तेज कर दिया। तकनीकी विकासए औद्योगिक विकास, बढ़ती जनसंख्या व नगरीयकरण के कारण आवश्यकता से अधिक संसाधनों का दोहन होने लगा जिसके कारण पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गयी। विकसित देशों में औद्योगिकीकरण व नगरीयकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण अधिक हुआ। विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे– ओजोन परत का अवनयन, सुखा, बाढ़, मरूस्थलीकरण, विभिन्न प्रकार की बीमारियों आदि उत्पन्न हो गयी। विज्ञान और तकनीकी विकास के साथ पर्यावरण का ध्यान रखकर सतत विकास को ध्यान में रखकर संसाधनों का दोहन चाहिए।
शब्द कुंजी– पर्यावरण, प्रौद्योगिकी, प्रदूषण, अपशिष्ट, यातायात के साधन, नगरीयकरण, आणविक कचरा।

प्रस्तावना – उन्नीसवीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप विकसित देशों ने उत्पादकता बढ़ाने के लिए संसाधनों का भरपूर दोहन किया। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास ने संसाधनों के दोहन और उत्पादन प्रक्रिया द्वारा उत्पादकता को तो कई गुणा बढ़ा दिया किन्तु इससे ऊर्जा संसाधन और कच्चे माल के विवेकहीन दोहन की दौड़ प्रारम्भ हो गई। वर्तमान में प्रौद्योगिक मानव ने अपनी आवश्यकताएँ लगातार बढ़ाकर, संसाधनों के बेतहाशा दोहन द्वारा पारिस्थितिकी को इस सीमा तक असंतुलित कर दिया है कि कई परितंत्रों की समस्थैतिक प्रक्रिया, क्षतिपूर्ति और पारिस्थितिक यथास्थिति स्थापित करने में सक्षम नहीं है। विकास के इस दौर में उन्नति के मद में मानव ने स्वयं अपने हाथों से पर्यावरणीय संतुलन की उपेक्षा की है और अपनी आधारभूत आवश्यकताओं की अधिकाधिक पूर्ति के लिए जीवन तत्वों–हवा, पानी व मिट्टी तक का दोहन किया, जिससे प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र कृत्रिम पारिस्थितिकी तंत्र में परिवर्तित होता गया।

पर्यावरण का प्रश्न मनुष्य के अस्तित्व से जुड़ा है। पर्यावरणीय अवनयन, वनों की कमी, रेगिस्तानों का फैलाव, पेयजल संकट, ओजोन परत में छेद, प्रदूषण प्रोविधिकी के माध्यमों का फैलाव, प्राकृतिक संवदा, वन्य जीवन एवं नैसर्गिक वातावरण की क्षति आदि मसलों ने संपूर्ण मानवता को गंभीर रूप से ग्रसित किया है पृथ्वी आज खतरों से डूबी हुई है। ये खतरे जितने अधिक पृथ्वी के लिए खतरनाक है उतने ही पृथ्वी की वनस्पति एवं उसके जीवों के लिए भी इन खतरों का जनक मनुष्य ही है। विकास की यात्रा में उसका आँख बंद करके चलना पृथ्वी के समक्ष आई चुनौतियों का सबक है। विज्ञान व प्रौद्योगिकी विकास से मानव में यह दंभ आ गया है कि वह प्रकृति के नियमों को अपनी इच्छानुसार तोड़ सकता है। अपनी आर्थिक गतिविधियों जैसे कृषि, उद्योग, यातायात आदि के द्वारा मनुष्य ने कदम–कदम पर पर्यावरण संतुलन के प्राकृतिक नियमों को चुनौती देने की कोषिष की है। मानव, प्रकृति के शाश्वत नियमों को अपनी क्षमता के बाहर जाकर चुनौती देता है और पर्यावरण के विभिन्न घटकों को प्रदूषित करता है। मानव द्वारा पैदा किया गया यह प्रदूषण अंततः पर्यावरण के अवनयन का एक अतिरिक्त कारण बन जाता है।

वर्तमान युग विज्ञान व तकनीक का युग है। प्रौद्योगिकी एक ही दिशा में आगे बढ़ती है और प्रौद्योगिकी विकास को रोक पाना संभव नहीं है किन्तु विडम्बना यह है कि विकास यात्रा की अंधी दौड़ से पर्यावरण दिन प्रतिदिन क्षत–विक्षत होता चला जा रहा है। विकास की भूख की पूर्ति हेतू मनुष्य ने पर्यावरण को जो क्षति पहुँचाई है उसके परिणामों को उसे ही भोगना पड़ रहा है प्रौद्योगिकी विकास के अवश्यम्भावी परिणाम 'प्रदूषण' के विभिन्न आयामों की चर्चा निम्नांकित बिंदुओं में की जा सकती है।

वायु प्रदूषण : वातावरण को प्रदूषित करने वाले कुछ बड़े अपराधी हैं और कुछ सामान्य मजबूर, लेकिन इसके शिकार सब बन रहे हैं (एट्जेन डी. स्टेनले, 1980)। वायु प्रदूषण का प्रमुख कारण औद्योगिक गतिविधियाँ हैं। वायु प्रदूषण को बढ़ाने में बड़ी मध्यम व छोटी कारखाना इकाइयाँ, तेल शोधक कारखाने तथा विविध औद्योगिक इकाइयाँ उत्तरदायी हैं। प्रतिवर्ष वायुमण्डल में समाहित होने वाली 1.8 अरब टन कार्बन डाई आक्साइड सिर्फ धुँआ धक्कड़ों से ही पैदा होती है जो कि उद्योगों और वाहनों में हो रही अप्रत्याशित वृद्धि का परिणाम है। अमेरिका में किए गए एक अध्ययन से यह तथ्य सामने आया कि 'प्रतिवर्ष 1400 लाख टन प्रदूषित धुँआ वातावरण में फैलता जा रहा है। इस वायु प्रदूषण से अस्थमा, ब्रान्काइटिस जैसे रोग बढ़ रहे हैं। वायु प्रदूषण का एक अन्य परिणाम घातक तेजाबी बारिश है इस तेजाबी बारिश के छीटें लंदन और न्यूयार्क के नागरिक अनुभूत कर चुके हैं।

सड़क यातायात के साधन वायु प्रदूषण का दूसरा महत्वपूर्ण स्त्रोत है। मनुष्य की दिन प्रतिदिन की भागमभाग भरी जिंदगी को सरल और सुलभ बनाने में सर्वाधिक योगदान वाहनों का है और सर्वाधिक विकास वाहन उद्योग से ही हुआ है। विगत दो दशकों में वाहनों में हुआ बदलाव प्रौद्योगिकी उन्नति की पुष्टि करता है। यह सत्य है कि इस के परिणामस्वरूप मानवीय श्रम की बचत के साथ ही साथ, रफ्तार में वृद्धि ने समय की बचत और दूरी को घटाया है लेकिन यह वाहन अपनी उपयोगिता के साथ–साथ मानवीय

* व्याख्याता (भूगोल) बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,अलवर (राज.) भारत

स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं। इसी तरह अमेरिका में होने वाले कुल वायु प्रदूषण का 60 प्रतिशत से ज्यादा प्रदूषण सिर्फ मोटर वाहनों के कारण ही होता है (रघुवंशी व अरूण व चन्द्रलेखा, 1993)। पैट्रोल-डीजल चलित वाहन दहन की प्रक्रिया में कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फरडाई ऑक्साइड और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी गैसों के कारण वायुमण्डलीय सुरक्षा कवच ओजोन परत में हो रहे नुकसान के फलस्वरूप विश्व में त्वचा कैंसर का खतरा बढ़ गया है।

जल-प्रदूषण : प्रौद्योगिकी के अनियंत्रित विकास से केवल वायु ही नहीं जल भी प्रदूषित हुआ है जल को प्रदूषित करने वाले दो महत्वपूर्ण कारक है- मानव अपशिष्ट और औद्योगिक अपशिष्ट। यद्यपि किसानों द्वारा कीटनाशकों का प्रयोग, जानवरों के मल-मूत्र, नगरों की बहायी गंदगी आदि भी जल को प्रदूषित करते हैं तथापि सर्वाधिक जल-प्रदूषण उद्योगों का परिणाम है। पृथ्वी पर 70 प्रतिशत जल है फिर भी मनुष्य और पशु पक्षी प्यास से मर जाते हैं। तीव्र औद्योगिकरण से जल प्रदूषण की समस्या और गंभीर होती जा रही है, क्योंकि औद्योगिक कारखानों के अपशिष्ट पदार्थों के नदियों में विसर्जन से ऑक्सीजन की मात्रा घटती है तथा सल्फेट, नाइट्रेट और क्लोराइड आदि की मात्रा बढ़ती है और इससे जलीय जन्तुओं और जलीय वनस्पतियों के जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जल प्रदूषण का प्रमुख स्रोत उद्योग है, जो निरन्तर झीलों, नदियों और समुद्रों में सीसा, एस्बेस्टस तेजाब और अमोनिया आदि को इनतक पहुँचा रहा है (एट्जेन डी. स्टेनले, 1980)। विश्व में धनी वर्ग विलासिता और उपभोगी आदतों से पर्यावरण में गिरावट ला रहे हैं तो गरीब वर्ग मजबूरी के कारण ऐसा कर रहा है। हिमालय में वन विनाश के कारण विगत 40 वर्षों में 45 प्रतिशत से अधिक जल स्रोत सूख गए हैं। पैसे के लालच और बढ़ती माँगों की पूर्ति के लिए वनों की अंधाधुध कटाई हो रही है जिससे जल स्तर नीचे जा रहा है। जल प्रदूषण हेतु सबसे बड़ा खतरा ठोस एवं कृत्रिम अपशिष्टों से भी उन्पन्न हुआ है जिनमें बर्तन, बोतलें, खनिज, विशेषकर प्लास्टिक एवं आणविक कचरा विशेष रूप से सम्मिलित हैं जिनसे आज विश्व के समक्ष प्लास्टिक और आणविक कचरा गंभीर चुनौती बन कर उभरे हैं। भारतीय महानगरों में निकलने वाले गंदे नालों में पानी कम और पोलिथिन, प्लास्टिक और अन्य प्रकार के ठोस अपषिष्ट का ढेर पाया जाता है।

आणविक कचरे से उत्पन्न प्रदूषण भी एक गंभीर चेतावनी का संकेत प्रस्तुत करता है। आणविक शक्ति से परिपूर्ण देशों ने अपने आणविक कचरे को फेंकने के लिए फिजी, थाईलैण्ड, फिलिस्तीन जैसे देशों के आस-पास के टापू अत्यधिक कीमतों पर किराए पर लिए हैं। इन देशों को आज चाहे उस किराए के रूप में धन संपदा की प्राप्ति हुई हो किन्तु यह कचरा उनके नागरिकों के लिए ताबूत की अंतिम कील की भाँति हैं इस स्थिति में इनके आस-पास के समुद्रों में भी कोई जीवन शेष नहीं बचेगा। प्रौद्योगिकी विकास के पर्यावरण पर दुष्प्रभावों के अन्य उदाहरण ध्वनि प्रदूषण, विकिरण प्रदूषण, ऊष्मा प्रदूषण भी हैं। प्रौद्योगिकी परिवर्तन के कारण सामाजिक विकास संभव हुआ, परन्तु इसके प्रकृति पर पड़ने वाले प्रभावों पर ध्यान नहीं दिया गया परिणामत: प्रौद्योगिकी विकास के परिणामस्वरूप पर्यावरण प्रतिघात ने मानव जीवन की गुणवत्ता में गिरावट आयी है। प्रदूषण की वृहद्ध समस्या के निराकरण हेतु प्रौद्योगिक विकास के साथ-साथ ऐसी प्रौद्योगिकी विकसित की जानी आवश्यक है जिससे उत्पादन व विकास में सतत् वृद्धि हो लेकिन पर्यावरण की सुरक्षा, संरक्षण व संतुलन अप्रभावित रहे।

उपाय: प्रौद्योगिकी विकास के कारण पर्यावरण प्रदूषण के समाधान के निम्नलिखित उपाय है:-

1. विज्ञान व तकनीकी विकास के साथ हमारी आवश्यकता के अनुसार संसाधनों का विदोहन करना जिससे पर्यावरण प्रदूषण कम हो सके।
2. विकसित देशों को अपनी आधुनिक तकनीकी को विकासशील देशों को प्रदान करनी चाहिये।
3. नगरीयकरण व औद्योगिकरण के कारण होने वाले प्रदूषणों जैसे- जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण व ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण के प्रति सभी देशों को कठोर कानून बनाने चाहिये।
4. आणविक कचरे का सही निस्तारण करना चाहिये।
5. प्लास्टिक कचरे का आधुनिक तकनीक के माध्यम से निस्तारण करना चाहिये। जिससे जल, जमीन को बचाया जा सके।
6. आमजन को पर्यावरणीय खतरों के बारे में प्रशासन द्वारा जागरूक करना चाहिये।
7. यातायात के साधनों के रूप में इलैक्ट्रीकल वाहनों के प्रचलन को बढ़ावा देना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, अनिल एवं नारायण सुनीता (1988) 'हमारा पर्यावरण', गाँधी शांति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली।
2. रघुवंशी अरूण एवं चन्द्रलेखा (1993) 'पर्यावरण तथा प्रदूषण' हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, मध्यप्रदेश।
3. सिंह सविन्द्र (1999) 'पर्यावरण भूगोल', प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद।
4. अग्रवाल प्रमोद कुमार 'पर्यावरण एवं नदी प्रदूषण', आशीष प्रकाशन नई दिल्ली।
5. हुसैन माजिद (2004) 'कृषि भूगोल', रावत पब्लिकेशन, जयपुर।

****

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, वैश्वीकरण एवं क्षेत्रीयकरण

डॉ. भरत लाल मीणा *

प्रस्तावना – 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रिय राजनीति एवं सम्बन्धों के स्वरूप एवं ढ़ांचे में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। सर्वप्रथम, यूरोप की चार बड़ी शक्तियों-ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी व इटली का अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था पर वर्चस्व समाप्त हो गया। उनका स्थान दो बड़ी महाशक्तियों- अमेरिका व सोवियत-संघ, ने ले लिया। विश्व की सम्पूर्ण राजनीति इन्हीं महाशक्तियों के इर्द-गिर्द घूमने लगी थी। द्वितीय, अमेरिका की उदारवादी लोकतांत्रिक एवं पूँजीवादी व्यवस्था और सोवियत-संघ की लोकतंत्र विरोधी विचारधारा एवं आदेश अर्थव्यवस्था के मध्य टकराव ने प्रत्यक्ष युद्ध के स्थान पर शीत युद्ध को जन्म दिया अर्थात अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध शीतयुद्ध की राजनीति में संचालित होने लगे। तृतीय, एशिया एवं अफ्रीका के अधिकांश देश उपनिवेशवाद की बेड़ियों से मुक्त हुए। स्वतंत्र राज्यों के रुप में इन एशियाई एवं अफ्रीकी देशों ने संख्यात्मक शक्ति के आधार पर अपनी एक नई पहचान बनाने की कोशिश की। अन्ततोगत्वा इसके फलस्वरुप गुटनिरपेक्ष आन्दोलन एक नैतिक शक्ति के रूप में उभर कर अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर आ गया। चतुर्थ, महाशक्तियों के पारस्परिक भय, संशय एवं घृणा ने नये सैन्य संगठनों जैसे- नाटो (1989), वार्सा (1955) आदि को जन्म दिया।[1]

पंचम, शांति एवं सुरक्षा के लिए स्थापित संयुक्त राष्ट्र स्वयं अपने आप में एक विरोधाभास बन गया। अमेरिका एवं सोवियत संघ के बीच भू-राजनीतिक हितों को लेकर खुली प्रतिद्वंद्विता ने संयुक्त राष्ट्र को पंगु बना दिया। ब्रेजेन्सकी ने 'फॉरेन अफेयर्स' में अपने लेख में युद्धोत्तर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को प्रभावित करने वाले निम्न तीन बड़े कारणों का उल्लेख किया है:

1. पश्चिमी सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था की श्रेष्ठता जिसे सोवियत नेताओं ने एक भ्रांति एवं झूठा प्रचार बताया।
2. भू-सामरिक अनिवार्यताओं ने विश्व को शीतयुद्ध के खेमों की राजनीति में विभाजित कर दिया।
3. भू-राजनीतिक दृष्टि से परिसीमन और प्रतिकार की प्रवृतियाँ साथ-साथ चलती रही।

1945 से 1990 तक उपरोक्त प्रवृतियों ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को व्यापक तौर पर प्रभावित किया। यद्यपि 1969 और 1979 के दशक के मध्य दो महाशक्तियों ने देतांत की नीति का अनुसरण कर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को एक नया आयाम दिया, परन्तु अपने-अपने इरादों, आकांक्षाओं एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने के तौर-तरीकों मे कोई मौलिक परिवर्तन नही आया। इस सम्बन्ध में विश्लेषकों का मानना है कि देतांत दो महाशक्तियों की पारस्परिक सामरिक आवश्यकताओं की आपूर्ति का एक साधन मात्र था। चार्ल्स विलियम मेन्स ने फॉरेन पॉलिसी में अपने लेख में लिखा है कि जिन शीत युद्ध प्रेणेताओं ने चालीस वर्ष से भी अधिक अवधि तक अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध एवं राजनीति को शून्य-जोड़ खेल के रूप में परिवर्तित किया, वे स्वयं अर्थात् महाशक्तियाँ इस से बात से अनभिज्ञ थी कि इनका संस्थागत परिणाम क्या होगा? दूसरे अर्थों में, उन्होनें अपनी विदेश नीतियों में गोपनीयता एवं जवाबदेही के अभाव में स्वीकार किया जिसका प्रभाव विश्व समुदाय के अन्य राष्ट्रों पर पड़ा।[2]

तीसरी दुनिया के राजनेताओं के लिए यह और भी आसान हो गया कि वे अपने सम्बन्धों को अन्य राष्ट्रों के साथ संचालित करने में गोपनीयता का सहारा ले सकते हैं एवं बाहरी सम्बन्धों में अपने देश की जनता के प्रति उत्तरदायित्व की भावना से मुक्त हो सकते हैं। मोटे तौर पर यह प्रवृति तीसरी दुनिया में आज भी मौजूद है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि बड़े एवं छोटे राष्ट्रों के समक्ष किस प्रकार की चुनौतियाँ हैं एवं किस प्रकार की घरेलू व बाहरी समस्याओं का वे सामना कर रहे हैं ?

1980-90 के दशक में विश्व के अनेक देशों में आर्थिक संकट, राजनीतिक असंतोष एवं बढ़ती हुई जनचेतना ने राष्ट्रीय नेताओं को अपनी विदेश नीतियों एवं सम्बन्धों को पुनर्भाषित करने के लिए विवश कर दिया। विशेष रुप से यह बात सोवियत संघ जैसी महाशक्ति के साथ ठीक लागू होती है। जब तक सोवियत संघ की जनता को मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति सोवियत नेता सुनिश्चित कर पाए, तब तक वहाँ जन असंतोष या आक्रोश देखने को नहीं मिला लेकिन जैसे-जैसे वहाँ की आंतरिक अर्थव्यवस्था डगमगाने लगीं, तब गोर्बाचोव ने एक नए राजनीतिक चिन्तन का प्रतिपादन किया। उन्होनें घोषणा की कि उनका उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय मामलों का वि-विचारीकरण करना है, क्योंकि वे आन्तरिक समस्याओं को समाधान साम्यवादी विचारधारा को अनुसरण करके नहीं कर सकते। अत: गोर्बाचेव ने शांति एवं सहयोग के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को संचालित करने का निर्णय लिया। अमेरिका के लिए भी 1980 का दशक बड़ी कठिनाइयों भरा था। राष्ट्रपति रीगन व जॉर्ज बुश सीनियर यह भली-भाँति जानते थे कि सोवियत संघ के साथ सहयोग का हाथ बढ़ाये बिना शस्त्र नियंत्रण की प्रक्रिया को व्यहारिक जामा नही पहनाया जा सकता। इसी प्रकार चीन भी अपनी अन्दरूनी समस्याओं से जूझ रहा था। राष्ट्रीय संसाधन एवं आर्थिक क्षमताएँ सीमित होने के कारण चीन अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में सक्रिय एवं उद्देश्यपूर्ण भूमिका नहीं निभा सकता था।[3]

शीतयुद्धोत्तर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में आई अनिश्चितता एवं नई चुनौतियों के उत्पन्न होने के फलस्वरूप नव-उदारवाद का उदय हुआ। नव-उदारवादियों में रॉबर्ट जरविस, चार्ल्स केगली मानते हैं कि अब शक्ति की राजनीति एवं नव-यथार्थवादियों की अन्तर्राष्ट्रीय संरचना में राज्यों की

* व्याख्याता (राजनीति शास्त्र) एल.बी.एस. राजकीय महाविद्यालय, कोटपूतली (राज.) भारत

भूमिका, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की प्रवृतियों को समझने में अपर्याप्त है। जैसे नवउदारवादी, ग्रीको व केगली मानते है कि अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति की राजनीति के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के वर्तमान स्वरूप को ठीक ढंग से समझा नहीं जा सकता। अत: अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण, गैर राज्य अभिनेताओं, निजी नवउदारवादी वित्तीय संस्थाओं एवं गैर-सरकारी संस्थाओं की भूमिकाओं के अध्ययन को नवउदारवादी महत्व देते हैं। इस संदर्भ में जॉसेफ एस. नाय जूनियर ने अपने लेख (राष्ट्रीय हित की पुनर्भाषा) में लिखा है कि 'अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण उप-राष्ट्रीय वाणिज्यिक हित, परराष्ट्र एवं जातीय हितों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न राष्ट्रों को अपने राष्ट्रीय हितों को पुनर्भाषित करना होगा।'[4]

हेनरी किसिंजर ने अपनी पुस्तक 'क्या अमेरिका को विदेश नीति की आवश्यकता है?' में बदलती हुई शीतयुद्धोत्तर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में अमेरिकी नीतिकारों को यह संदेश देने का प्रयास किया है कि वैश्वीकरण के फलस्वरूप आर्थिक और प्रौद्योगिकी शक्ति में हुए फैलाव के कारण अमेरिका को स्पष्ट व्यापक एवं तर्कसंगत शक्ति का निर्माण करना होगा। हेनरी किसिंजर ने अपने लेख में लिखा है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के अपरिहार्य बदलाव के फलस्वरूप लोकतांत्रीकरण, अर्थव्यवस्थाओं के वैश्वीकरण एवं संचार माध्यमों में द्रुत गतिशीलता को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय हित की अवधारणा की व्यापक एवं तर्क संगत व्याख्या करनी होगी।[5]

पिछले एक दशक से विश्व बहुत तीव्र गति से परिवर्तन की ओर उन्मुख हो रहा है। राष्ट्रीय हितों को पुनर्भाषित किया जा रहा है। शक्ति के नये आयाम स्थापित हो रहे हैं। गैर राष्ट्रीय जातीय हित विदेश नीति पर हावी होते नजर आ रहे हैं। अनेक विशेषज्ञ अब यह मानने लगे हैं कि शीतयुद्धोत्तर के बदलते परिवेश में सामाजिक हित अन्य हितों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होते जा रहे है। सूचना एंव इन्टरनेट प्रौद्योगिकी के प्रभाव ने राष्ट्रों के व्यवहार, उनकी सम्प्रभुता तथा विदेश नीति जैसे क्षेत्रों में एक नई क्रांति का सूत्रपात कर दिया है। वैश्वीकरण एक लोकप्रिय शब्द बन गया है।[6]

सूचना का वैश्वीकरण के युग मे पूँजी बाजारों का अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो रहा है। विश्व समुदाय के देश निजीकरण एवं आर्थिक सुधारों की ओर तीव्र गति से अग्रसर हो रहे है। क्या विश्व अब यखगोलीय समुदाय या 'खगोलीय सभ्य समाज' की ओर उन्मुख हो रहा है? क्या अन्तर्राष्ट्रीय व स्थानीयकरण की प्रवृत्तियाँ साथ-साथ पनप रही हैं ? क्या अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में क्षेत्रीयकरण की पनपती भावना अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के स्थायित्व को एक गम्भीर चुनौती नहीं है।[7]

वैश्वीकरण के कारण

1. विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी की भूमिका।
2. सूचना प्रौद्योगिकी का विस्फोट-कम्प्यूटर, इंटरनेट, उपग्रह व संचार तकनीकों द्वारा निर्णय-प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण।
3. उत्पाद, औद्योगिक संरचना एवं प्रबन्धन का लचीलापन।
4. वृहत् स्तर पर उत्पादन एवं उसके फलस्वरूप नये बाजारों की खोज।
5. वृहत् स्तर पर विदेशों में पूँजी निवेश एवं नवीन तकनीकी स्थानान्तरण।
6 अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय बाजारों का महत्व।
7. निजी अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा आर्थिक सहायता एवं ऋण में बढ़ोतरी।
8. व्यापक, उत्पादन एवं वितरण के फलस्वरूप, एकीकृत विश्व बाजार की ओर अग्रसर।

विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के परिणामस्वरूप निर्धन एवं विकासशील देश अपनी आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक नीतियों में भारी परिवर्तन कर रहे हैं। नीतिकार राज्य की पुनर्रचना में लगे हुए हैं ताकि वे नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में अपने देश के आर्थिक एवं व्यापारिक हितों की रक्षा कर सकें। फिलिप जो, केट्री के अनुसार, 'राज्य अब नागरिक संघ एवं व्यापार संघ का एक अस्थायी मिश्रण है जिसके फलस्वरूप राज्य अभिनेता अब स्वतंत्र नहीं रहे हैं। लोकतंत्र के वैश्वीकरण की लहर ने एक ओर राज्य संरचना एवं प्रतिक्रियाओं में एक बड़ी कड़ी का कार्य किया है तो दूसरी ओर जातीय चेतना ने जातीय एवं धार्मिक तनाव, संघर्ष एवं राजनीतिक हिंसा को जन्म दिया है। जातीयता के आधार पर उत्तरी आयरलैण्ड, श्रीलंका, बोस्निया, कोसोवा, रवांडा, बरूंडी, जाइरे एवं भारत में जातीय राजनीतिक हिंसा का दौर चल रहा है।'[8]

इस अध्याय के माध्यम से प्रमुख रूप से यह बताने का प्रयास किया गया है कि वर्तमान में वैश्वीकरण तथा क्षेत्रीयवाद जैसी बिल्कुल विपरीत किंतु साथ ही एक दूसरे की पूरक धारणाओं ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों व विदेश नीति की मौजूदा अवधारणाओं व सिद्धान्तों को बिल्कुल ही बदल दिया है। ब्रेजेन्सकी के शब्दों में, अन्तर्राष्ट्रीयवाद ने किस प्रकार वैश्विक राजनीति में स्थायित्वपूर्णता को बढ़ावा दिया है। क्या वर्तमान वैश्वीकरण की प्रक्रिया में राष्ट्रीय राजनीतिक समुदायों ने सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में अपनी चिंताओं, हितों व दावों को नये रूपों में ढ़ाला है ? क्या वैश्वीकरण ने राज्य-कन्द्रित शासनों को सीमित दायरे में धकेला है ?

इन मुश्किल सवालों का जवाब खोजने के लिए वर्तमान विश्व व्यवस्था की वास्तविक व सैद्धान्तिक अवधारणाओं को ध्यान में रखना होगा। साथ ही वर्तमान के प्रमुख राजनीतिक सिद्धान्तिक अवधारणाओं को ध्यान में रखना होगा। साथ ही वर्तमान के प्रमुख राजनीतिक सैद्धान्तिक अवधारणाओं को ध्यान में रखना होगा। साथ ही वर्तमान के प्रमुख राजनीतिक सिद्धान्तों का भी अध्ययन करना होगा। इन सिद्धान्तों के आधार पर वैश्वीकरण तथा क्षेत्रीयवाद की प्रक्रिया को नये रूप में परिभाषित करने के किसी भी प्रयास में वर्तमान अर्थशास्त्रियों द्वारा दिये गये विश्व व्यवस्था के आर्थिक पक्ष को भी नजरअंदाज नही किया जा सकता है। इस अध्याय में, व्याप्त धारणाओं की आलोचनात्मक विवेचना करने से पूर्व वैश्वीकरण तथा क्षेत्रीयवाद की प्रकृति पर संक्षेप में प्रकाश डालना उचित रहेगा।

यर्थाथवादी सिद्धान्त द्वारा शीतयुद्ध के शांतिपूर्ण ढ़ंग से अंत की भविष्यवाणी न करने की क्षमता से क्षुब्ध होकर नव-उदारवादियों ने वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था में वैश्विक अर्थव्यवस्था, व्यापार व निवेश के अतिरिक्त गैर-सरकारी संस्थाओं, अभिनेताओं व गैर अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के महत्व पर विशेष बल दिया हैं। वैश्वीकरण की प्रक्रिया से कोई राष्ट्र अछूता नही रह सकता। विश्व व्यापार संगठन की स्थापना से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में व्यापारिक एवं निवेश के मुद्दे प्राथमिक बन गये हैं। सूचना-प्रौद्योगिकी में क्रांति के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का स्वरूप बदल गया है। इंटरनेट ने सारे विश्व को जोड़ दिया हैं। आतंकवाद जैसी अन्तर्राष्ट्रीय चुनौती ने विश्व समुदाय को उसे उखाड़ फेंकने के लिये वैश्विक अभियान में सहयोग देने के लिए विवश कर दिया है। आतंकवाद वर्तमान एवं भविष्य में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं सम्बन्धों में प्राथमिक समस्या के रुप में हावी रहेगा और इससे सम्बन्धित नये वैकल्पिक प्रतिमानों के विकास की सम्भावनाएँ निश्चित रूप से बढ़ेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सैमुअल पी. हंटिंगटन, सभ्यताओं का टकराव, फॉरेन अफेयर्स।
2. सैमुअल पी. हंटिंगटन, दी लोनली सुपर पावर, फॉरेन अफेयर्स।
3. सी. बर्गिस्टन यअर्थव्यवस्था की प्राथमिकता फॉरेन पॉलिसी।
4. आई.एफ.आई. (अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ) के सुधार : आर्थिक दृष्टिकोण, इलेक्ट्रानिक जर्नल।
5. यू. आर. घई : अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति।
6. पुष्पेश पंत : 21 वीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय संबंध।
7. महेन्द्र कुमार : अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सैद्धान्तिक पक्ष।
8. बी.एम. जैन : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Functionalization of Different Metal Based Graphene Nanocomposites

Mukesh Kumar Mehta *

Abstract - Graphene derivatives (GO and RGO) occupied concentration of many researchers of material science. GO has many (hydroxyl and carboxyl functional moieties) that exhibited interesting properties that could be different from Graphene. Reduction GO by removing its functional groups and to obtain a Graphene molecule and this is known as reduced Graphene oxide (RGO). GO and RGO nanocomposite show promising applications in photocatalysis, eleminiation of organic dyes, wastewater treatment, electrochemical material sensing, gas sensing with the biological applications in dox loading and killing tumour cells, antibacterial agent. This review begins with the method of preparation of Graphene, GO, RGO then the different Nanocomposite are discussed and at the last the overview of all the nanocomposites are given with the applications.
Keywords- Graphene, GO, RGO, Nanocomposite.

Introduction - Recently graphene derivative (GO & RGO) based nanocomposite captured considerable concentration because of their unique electrical, thermal, mechanical and barrier properties. Because of their simple methods of synthesis GO have shown new possibilities for gas sensing, membrane segregation, photocatalytic activities etc. Graphene is thin 2D sheet consisting of sp^2 carbon atom in the hexagonal honeycomb like structure. It shows remarkable properties like mechanical strength, electrical conductivity, molecule barrier abilities etc. However, the use of immaculate graphene has demonstrated challenging due to bottom – up synthesis, poor solubility and agglomeration in solution due to vanderwall's interactions. If the oxidation of Graphite is done in protonated solvent, that will lead toformation of GO which consist of multiple layers of GO.

GO has hexagonal carbon-structure which consists of many oxygen containing functional groups like alcoholic(hydroxyl) (-OH), alkoxy (C-O-C), ketonic (C=O), carboxylic acid (-COOH) & other functional groups. Graphite can also be oxidised former to GO to decrease the carbon/ oxygen ratio in the final output. Numerousresearchers used to this method which firstly treat powdered Graphite in $K_2S_2O_8$ prior to use in Hummer's method.

RGO can be Synthesized by various methods from thermal processesto chemical synthesisand electro-chemical deposition. Each one of method leads to different in chemical and electrical and magnetic properties, morphology, physical and chemical properties. The key factor of GO reduction includes the graphene/oxygen ratio in the outcome final product, selectivity of diminishing a particularfunctional group of oxygen from GO and the choice of green reductant and improving the chemical, physical and biologicalapplications of GO.

Synthesis Of Graphene Oxide, RGO Andgraphene: Hummer's method found to be the vast used process for preparation of Graphite oxide in the engineering labs and most of the researchers uses this method because it is the mostauthentic method of producing good amount of graphite oxide. It is also reliable for preparation of graphene oxide which is the one molecule thick form of it.

For this process firstly take a breaker & setup ice bath then add 25ml sulphuric acid. Then add 1gm of graphite powder. The graphite powder will change the color of solution to black. Add 3gm of potassium permanganate slowly by maintaining the cooling with the temperature less than 20 degree Celsius. keep stirring the solution for 3 hours & you may remove the ice bath if you want. After three hours of stirring the most dangerous step comes in which add 50ml distilled water very slowly (drop wise) by maintaining the temperature less than 50^{o} C. Slowly the of oxidation will start and after sometimedark brown will appear indicatethe prepared graphene oxide. Now again add 100ml of distilled water abruptly to oxidise some leftover graphite. In the last step add 5ml of H_2O_2 to stop the reaction. Finally graphene oxide is synthesized.

Figure 1 Comparative Structure Of Graphite, Graphene Oxide, ReducedGrapheneoxide

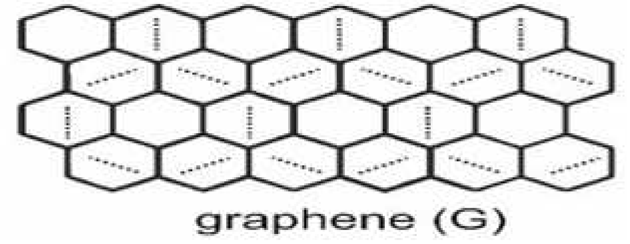

*Deptt. of Chemistry, SMB PG College, Nathwara (Raj.) INDIA

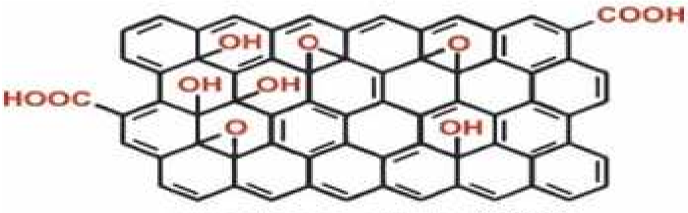

graphene oxide (GO)

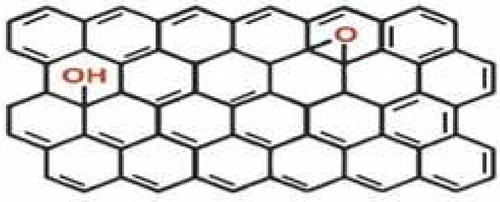

reduced graphene oxide (rGO)

Functionalization Of Go Andrgo:
By Metal Oxide

GO - $CuFe_2O_4$ nanocomposite: It can be prepared by one pot combustion synthesis method. In this nanocomposite here the combustion of $CuFe_2O_4$ with GOdeveloped continuous increment of the catalytic behaviour of $CuFe_2O_4$. Here both the $CuFe_2O_4$ and Graphene oxide work together to give remarkable results and promising point of this is the higher yield, attractive process for synthesis, generality and expensive reaction process for preparation. $CuFe_2O_4$ is Magnetically recyclable nano catalyst. This versatile GO-$CuFe_2O_4$ Nanocomposite can act as a promising catalyst for the various industrial based applications in many important reactions. For example is it is used in the synthesis of Xanthenes heterocycles with a variety of application in the pharmaceutical chemistry.

Xanthanes derivatives are antibacterial, antiviral, anti-inflammatory , anti-malarial, anti-cancer.

Fe_2O_3@RGOnanocomposite: Fe_2O_3@RGO nano - composite can be easily prepared by one step solvothermal process with the thermal reduction of GO to graphene and dispersion of Fe_2O_3 on surface. This process allows uniform quasi- quantitative distribution of MO on Graphene. The X- Ray diffraction, micro Raman spectroscopy results of it shows it can be obtained easily by using iron oxide precursors. Now when I talk about its application It has a promising application in the anode material for sodium ion batteries that is is rechargeable which states that the contact between the carbonaceous and oxide surface plays an importantrole.

Fe_2O_3@RGO nanocomposite shows better capabilities ans stability then the bare Fe_2O_3 and Fe_2O_3 + GO physical mixtures.

With this there are two more nanocomposite are there which are $CoFe_2O_4$ @ RGO and CoO@ RGO which can be prepared with the same method and their performance is same like the Fe_2O_3@RGO nanocomposite and they are also used in the sodium ionbatteries.

RGO/$MnFe_2O_4$ /polypyrrolenanocomposite: This binary composite (RGO/ $MeFe_2O_4$) where [Me= Mn, Ni] was prepared via polymerization method of pyrrole with modifications. NaOH worked as co- precipitation and GO reductant. Firstly $MnFe_2O_4$ was prepared by co precipitation method. This RGO/$MnFe_2O_4$ nanocomposite shows a gravimetric and areal capacitance of147Fg^{-1} and 232$mFcm^{-2}$ respectively.When polypyrrole was included to prepare a ternary composite(RGO/$MnFe_2O_4$ /polypyrrole). electrode. This ternary electrode shows gravimetric capacitance of 232Fg^{-1} with areal capacitance 395 $mFcm^{-2}$ which represents the impact of polypyrrole additives. This nanocomposite shows a great application to fabricate electrode materials for highly successful supercapicitors as it has much high capacitancevalues.

$BiVO_4$- RGOnanocomposite: Recently 2D Graphene gained concentration of researchers due to its attracting properties i.e. extremely high mobility , high elasticity & electrochemical modulation.

In recent years Graphene based nanocomposite utilised as photocatalyst because of its highly conductive available surface area with the supporting matrix and ($BiVO_4$) photocatalyst used asdye. The photocatalytic properties of a material depend upon the structure and morphology. The high performance and novel photocatalyst of $BiVO_4$- RGO can be prepared by facile hydrothermal process. This photocatalyst can be characteriszed by X-ray diffraction, SEM, TEM etc. This nanocomposite shows muchhigher photocatalytic activity then that of pure $BiVO_4$ and has various potential applications.

GO-IO-DOXnanocomposite: In this nanocomposite firstly GO-IO nanocomposite was synthesized viasmall emulsion method followed by solvent evaporation. Then the anti-cancer drug doxorubicin enclosed in the PEGylated GO-IO mixture by simple mixing in order to start physisorption and the multifunctional novel nanocomposite consisting of GO-IO-Doxorubicin is prepared which acts as theranostic cancer platform which is a novel concept that involves the integration of diagnosis and therapy in a single platform using nano materials. This nanocomposite was found to exhibit enhanced efficiency to destroy tumour cell along with excellent MRI (Magnetic Resonance Imaging) performance enabling a versatile theranostic platform forcancer.

Fe_3O_4/ RGO/ EBC (Enzymatic Biofuel cell) nanocomposite: To prepare this nanocomposite firstly Fe_3O_4/ RGO nanocomposite formed by dispersion and ultrasonication method. Then with the help of electrostatic interactions enzymes were included in Fe_3O_4/ RGO. With the prperties of graphene and the magnetic paricles of Fe showed a great increment in the application of enzymatic Biofuel cell with more efficient and modified Bioelectrodes. This Bioelectrode fabrication offers promising solutions for generation of new highly promising Biofuel cells.

Co_3O_4/RGOnanocomposite: This nanocomposite can be prepared microwave irradiation method. Generally cobalt oxides shows huge applications in rechargeable batteries and RGO has widely known for its applications in Li-ion

batteries. This Co_3O_4/RGO nanocomposite shows prior electrochemical performance. With the addition of RGOcapacity of Co_3O_4/RGO nanocomposite is increaseddue to the quater times surface area increment of $Co_3O_4$and due to this increased surface area lithium ions were more soaked, results in outstanding electrochemical behaviour and designed batteries shows good behaviour even at very high temperature and it shows excellent behaviour as anode in batteries and also used as rechargeable batteries in a wide temperature range.

GO- Fe_3O_4@ZrO_2nanocomposite: This nanocomposite can be prepared by ultrasonication and centrifugation method. Compared to the GO, GO- metal oxide nanocomposite shows unique photochemical behaviour due to which can widely be used for water remediation plant. Here the fabricated GO- Fe_3O_4 nanocomposite shows high efficient removal of tiny metal ions from industrial wastewater. When combined with GO ZrO_2 exhibit wide band gap ranges from 3 to 5eV due to which it shows a promising behaviour as catalyst hydrogen productiondecay of water also GO and Fe_3O_4@ZrO_2 had found to inhibit against Escherichia coli which is a gram negativebacteria.

SiO_2@ alpha- Fe_2O_3 @RGOnanocomposite: This nanocomposite can be synthesized by a simple sol- gel method[32]·Its mechanical, optical and physical properties were identified. In order to reduce CO_2 gas In-Situ drift setup was used due to which more CO_2 was reduced to form ethoxide. Also this nanocomposite shows effective photo oxidation of ethanol. The photocatalytic performance in CO_2 reduction increased after core shell on inclusion in the RGO nanosheets. This nanocomposite shows better stability and improved activity for both photochemical and photocatalytic applications then SiO_2@ alpha- Fe_2O_3will show promising photo catalytic reductions &oxidation and helpful in many chemical reactions.

Conclusion: In the recent years Graphene materials became the interesting and important topic for research because of their versatility and different applications which they performs. The Graphene derivatives based nanocomposite can be prepared easily and many of them can be prepared by environment friendly methods which is the main attraction in them. They perform variousfunctions which is possible only with their outstanding physical and chemical properties. In this paper the different nanocomposite has been discussed which shows that these nanocomposite performs versatile applications.

References:-

1. Hummers, W. S.; Offeman, R. E. *J. Am. Chem. Soc.*1958, 80 (6), 1339.
2. Zaaba, N. I.; Foo, K. L.; Hashim, U.; Tan, S. J.; Liu, W. W.; Voon, C. H. *Procedia Eng.*2017, 184, 469–477.
3. Marcano, D. C.; Kosynkin, D. V.; Berlin, J. M.; Sinitskii, A.; Sun, Z.; Slesarev, A.; Alemany, L. B.; Lu, W.; Tour, J. M. *ACS Nano*2010, 4, 4806–4814.
4. Kumar, A.; Rout, L.; Achary, L. S. K.; Dhaka, R. S.; Dash, P. *Sci. Rep.*2017, 7, 42975.
5. Hafez, H. N.; Hegab, M. I.; Ahmed-Farag, I. S.; El-Gazzar, A. B. A. *Bioorganic Med. Chem. Lett.*2008, 18 (16), 4538–4543.
6. Jin.;, T. L./ ;Yin. Z./ ;Tong Shuan. L. *Synth. Commun.*2005, 1 (44), 2329–2296.
7. Chibale, K.; Visser, M.; Van Schalkwyk, D.; Smith, P. J.; Saravanamuthu, A.; Fairlamb, A. H. *Tetrahedron*2003, 59 (13), 2289–2296.
8. Sashidhara, K. V.; Kumar, A.; Dodda, R. P.; Kumar, B. *Tetrahedron Lett.*2012, 53, 3281–3283.
9. Zhu, J.; Zhu, T.; Zhou, X.; Zhang, Y.; Lou, X. W.; Chen, X.; Zhang, H.; Hng, H. H.; Yan, Q. *Nanoscale*2011, 3, 1084–1089.
10. Zhang, Z. J.; Wang, Y. X.; Chou, S. L.; Li, H. J.; Liu, H. K.; Wang, J. Z. *J. Power Sources*2015, 280, 107–113.
11. Liu, S. Y.; Xie, J.; Pan, Q.; Wu, C. Y.; Cao, G. S.; Zhu, T. J.; Zhao, X. B. *Int. J. Electrochem. Sci.*2012, 7, 354–362.
12. Vishnuvardhan, T. K.; Kulkarni, V. R.; Basavaraja, C.; Raghavendra, S. C. 2006, 29 (1), 77–83.
13. Amighian, J.; Mozaffari, M.; Nasr, B. *Phys. Status Solidi Curr. Top. Solid State Phys.*2006, 3 (9), 3188–3192.
14. Gao, X.; Wu, H. Bin; Zheng, L.; Zhong, Y.; Hu, Y.; Lou, X. W. *Angew. Chemie - Int. Ed.*2014, 53, 5917–5921.
15. Zhou, L.; Wang, W.; Liu, S.; Zhang, L.; Xu, H.; Zhu, W. *J. Mol. Catal. A Chem.*2006, 252 (1–2), 120–124.
16. Pan, X.; Yang, M. Q.; Xu, Y. J. *Phys. Chem. Chem. Phys.* 2014, 16, 5589–5599.
17. Zhang, N.; Yang, M. Q.; Liu, S.; Sun, Y.; Xu, Y. J. *Chem. Rev.* 2015, 115, 10307–10377.
18. Han, C.; Zhang, N.; Xu, Y. J. *Nano Today* 2016, 11, 351–372.
19. Zhang, Y.; Tang, Z.-R.; Fu, X.; Xu, Y.-J. *ACS Nano* 2010, 4, 7303–7314.
20. Yang, M. Q.; Zhang, N.; Wang, Y.; Xu, Y. J. *J. Catal.* 2017, 346, 21–29.
21. Fang, D.; Li, X.; Liu, H.; Xu, W.; Jiang, M.; Li, W.; Fan, X. *Sci. Rep.*2017, 7, 1–9.
22. Wang, W. W.; Zhu, Y. J.; Yang, L. X. *Adv. Funct. Mater.*2007, 17 (1), 59–64.
23. Zhang, L.; Xu, T.; Zhao, X.; Zhu, Y. *Appl. Catal. B Environ.*2010, 98, 138–146.
24. Yang, M.; Ji, Y.; Liu, W.; Wang, Y.; Liu, X. *RSC Adv.*2014, 4, 15048–15054.
25. Ramachandra Kurup Sasikala, A.; Thomas, R. G.; Unnithan, A. R.; Saravanakumar, B.; Jeong, Y. Y.; Park, C. H.; Kim, C. S. *Sci. Rep.*2016, 6, 1–14.
26. Pakapongpan, S.; Tuantranont, A.; Poo-Arporn, R. P. *Sci. Rep.*2017, 7, 1–12.
27. Mussa, Y.; Ahmed, F.; Abuhimd, H.; Arsalan, M.; Alsharaeh, & E.

****

वर्तमान संदर्भ में नेपाल की नीतियाँ

जितेन्द्र कुमार मालवीय *

प्रस्तावना – नेपाल-भारत संबंध के परिप्रेक्ष्य में भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और उनकी सरकार की कथनी और प्रारंभिक करनी को नेपाल में बहुत ही उत्साहपूर्वक देखा जा रहा है। प्रधानमंत्री मोदी की नेपाल भ्रमण और उसकी पूर्व तैयारी स्वरूप विदेश मंत्री सुषमा स्वराज की नेपाल यात्रा को नेपाली मीडिया में जितना बड़ा कवरेज मिला और मिल रहा है वे बेवजह नहीं है। ऐसा माना जा रहा है कि नेपाल को सिर्फ सुरक्षा चुनौती की दृष्टिकोण से देखनाऔर रणनीतिक योजना का हिस्सा भर मानने जैसा गलत दृष्टिकोण अब कायम नहीं रहेगा। मोदी सरकार से उम्मीद की जा रही थी कि अब नेपाल-भारत संबंध में प्रतिमान परिवर्तन (Paradigm Shift) पैराडाइम शिफ्ट सच में होगी। प्रधानमंत्री मोदी ने काठमांडू यात्रा के दौरान उस उम्मीद को सही तरह से संबोधित भी किया है। अब प्रतीक्षा है कि नेपाल और भारत में व्यावहारिक स्तर पर सहृदयता छा जाए।

भारत-नेपाल सीमा पर दिनांक 6 फरवरी, 2016 में मध्यम तीव्रता का भूकंप आया जिसकी तीव्रता रिक्टर पैमाने पर 5.2 थी। भारत नेपाल सीमा पर मधेसी आंदोलनकारियों का भारतीयों से संघर्ष बिहार में रक्सौल के पास भारत नेपाल सीमा पर आज मधेसी आंदोलनकारियों का भारतीय नागरिकों के साथ प्रमुख व्यापार बिंदुओं पर नाकेबंदी को लेकर संघर्ष हो गया। नाकेबंदी की वजह से मालवाहक वाहनों का रास्ता बाधित है जिसके कारण हिमालयी देश में आवश्यक वस्तुओं की घोर किल्लत हो गई है। मधेसी आंदोलनकारियों और भारतीयों के बीच संघर्ष तब हुआ जब जॉइंट डेमोक्रेटिक मधेसी फ्रंट के आंदोलनकारी कैडर नए संविधान के विरोध में बीरगंज रक्सौल सीमा बिन्दु स्थित मितेरी ब्रिज पर धरने पर बैठे थे। यह संघर्ष आज हुआ जबकि कल रक्सौल के निवासियों ने मधेसी फ्रंट के कैडरों पर हमला कर दिया था।

नेपाल अपनी ऐतिहासिक और भौगोलिक स्थिति की वजह से भारत के लिए अतिमहत्वपूर्ण पड़ोसी देश का स्थान रखता है। एषिया के दो विशाल राष्ट्रों चीन और भारत के बीच में स्थित तिब्बत और नेपाल दो राष्ट्र हिमालय की गोद में बसे हुए हैं, जिनमें तिब्बत पर चीन का अधिकार है। भारत और चीन के बीच अब नेपाल ही स्वतंत्र राज्य है जिसकी भारत के बीच लम्बी सीमा है जो तीन ओर से भारत से घिरा हुआ हिन्दू राष्ट्र है, भारत का सम्मानित मित्र है लेकिन चीन इसे भी अपने प्रभाव में लेना चाहता है।

नेपाल को अपने प्रभाव में लेने के लिए चीन माउंट एवरेस्ट से रेल सेवा पहुंचाने की तैयारी कर रहा है एक बार रेल सेवा हिमालय को पार कर गई उसे नेपाल भारत की सीमा पर पहुंचने में देर नहीं लगेगी। नेपाल के साथ लम्बी मैदानी सीमा होते हुए भी हम रेल रोड दोनों का विस्तार नहीं कर पाए हैं, यह हमारी विफलता को दर्शाता है।नेपाल में राजशाही समाप्त हो गई तथा नेपाल नरेश वीरेन्द्र का परिवार सहित कत्ल कर दिया गया और राजा ज्ञानेन्द्र ने सत्ता पर कब्जा कर लिया वह भारत और नेपाल में जनतांत्रिक व्यवस्था दोनों के विरोधी थे। नेपाल में माओवाद को प्रभाव बढ़ने लगा नेपाल में माओवादियों ने भारत के बारे में भ्रमित कर भारत विरोधी प्रचार किया।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की 2014 की नेपाल यात्रा और अप्रैल 2015 में नेपाल में आए भीषण भूकंप में भारत की सक्रिय मदद के बाद दोनों देशों के संबंध कई नई ऊँचाई पर पहुंच गए थे। दोनों देशों के संबंधों में भटकाव नवम्बर 2015 में नेपाल द्वारा अपना संविधान लागू करने के बाद शुरू हुआ।

भारत को पहले से पता था कि नया संविधान नेपाल की राजनीति में पहाड़ी क्षेत्र के लोगों का प्रभुत्व कायम करेगा और तराई क्षेत्र के लोगों के प्रतिनिधित्व को कमजोर करेगा, लेकिन वह समय रहते सक्रिय नहीं हुआ।

मधेसियों ने नए संविधान का विरोध जिस तरह किया उससे भारत-नेपाल सीमा बाधित हुई। भारत ने इस अवरोध को खत्म करने में सक्रियता नहीं दिखाई, बल्कि तटस्थ बना रहा। परिणामस्वरूप नेपाल में आवश्यक वस्तुओं की किल्लत हो गई। इस मौके का फायदा चीन समर्थकों ने उठाया और नेपाल में भारत विरोधी भावनाओं को भड़काया। तराई के लोगों ने भी नई दिल्ली से खुद को उपेक्षित महसूस किया। उन्हें किसी तरह की मदद नहीं मिली।

भारत को नेपाल के साथ संबंधों में आई तल्खी को खत्म करने के लिए नई रणनीति पर काम करना होगा। भारत को किसी एक दल को तरजीह देने के बजाय सभी पार्टियों के साथ मेल जोल बढ़ाना चाहिए। नेपाल सेना और नागरिक समाज से संवाद बढ़ाना चाहिए। दोनों का हित एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। नेपाल विकास करेगा तो भारत भी विकास करेगा।भारत-नेपाल संबंधों में मजबूती चीनी खतरे को कम करेगी। यदि भारत वहां ढांचागत विकास नहीं करेगा और नेपाल को अपनी अर्थव्यवस्था का हिस्सा नहीं बनाएगा तो चीन को वहां पैर फैलाने का मौका मिल जाएगा। कम्युनिस्टों से भरी नेपाल की गठबंधन सरकार भारत विरोधी और चीन समर्थक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर ।
2. योजना पत्रिका ।
3. दैनिक जागरण ।

* शोधार्थी, शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Power System Security Event Classification Using Probabilistic Fuzzy Decision Tree

Sonali R. Nandanwar* N. P. Patidar**

Abstract - In this paper a new approach called Probabilistic Fuzzy Decision Tree (PFDT) is used for security event classification under the given contingency. Results of PFDT are compared with the classical DT on test patterns. PFDT classify whetherthe power system is operating in secure or insecure condition. The input featuresare taken as real power, reactive power loadings and the voltage magnitude of the load buses. The proposed approach is tested on IEEE-30 bus systems. The resultsreveals that, PFDT method performs better than classical DT approach.
Keywords: Voltage security assessment, Probabilistic decision tree, static security assessment.

Introduction - In power system operational planning decision makers/engineers establishes some operating rules that uses the threshold value of critical attributes for the conditions of power system, whether the post contingency system is secure or not [18]. So for such a decision, we need supportive tool which realize contingency simulation for number of wide operating conditions, for that purpose probabilistic fuzzy decision of the power system is taken into account. A new case has been prepared keeping in view the past knowledge which is extracted from the data base. Their operating limits and rules are used that is taken from database. PFDT is an extension of DT algorithm and also an effective tool for knowledge acquisition from uncertain classification problems [20]. PFDT is a method for approximating linguistic as well as the numeric data in precision and it is also capable of handling imprecise data. The learning methods are among the most popular of inductive inference algorithm. PFDT is basically a machine learning or artificial intelligence technique method [19].The main part of PFDT based studies is generating the data base. The quality of generated data base gives the better accuracy. Data base is generated considering contingency and different operating conditions. Data base is generated from well-defined sample space by accounting fuzzy and probability. These training patterns are generated offline forwell-defined sample space from projected historical data or forecasted 24 hours data. To obtain initial system state, continuation power flow is performed under each contingency. The operating conditions and contingency conditions are obtained using CPF method [17]. This paper presents PFDT approach for voltage security event classification.

Loading Margin- For ensuring voltage security of power system, it is essential to know how much to operate steady state after some perturbation has been occurred within the specified limits of safety and supply quality constraints corresponding the contingencies [10, 11, 12, 14]. After certain disturbances, power system reaches steady state operating conditions without violating system constraints, which include bus voltage limits and thermal bounds of the line [17, 19]. For this purpose, a static voltage stability index or maximum loadability margin MLM is required which in some respect, quantifies how close a particular point to the point of voltage collapse i.e. to estimate the steady state voltage stability limits of the power system. Voltage stability margin is defined as distance with respect to the bifurcation parameter, of the current operating point from voltage collapse point [7]. The system is said to be voltage secure if this margin is reasonably high. In this work this voltage stability margin is referred to as MLM. Fig 1. depicts the voltage vs. real loading variation of power system bus. In case of contingency the loadability margin is reduced to a lower value [3, 4, 5, 6, 8, 9, 21] margin is available from the voltage collapse point [1, 2]. Security is defined as the ability of the system to remain in secure equilibrium state even after contingency.

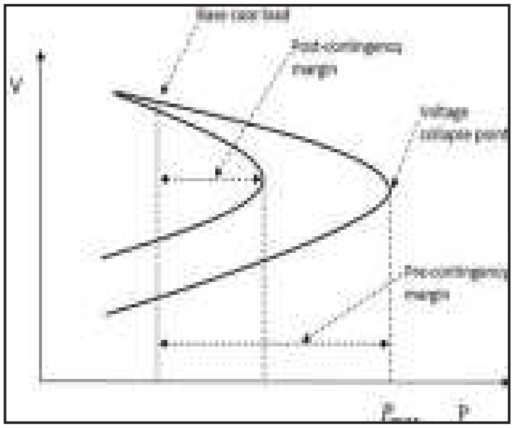

*Electrical Engineering Department, Priyadarshini College of Engg, Nagpur, Hingna Road, Nagpur (Mh.)INDIA
**Electrical Engineering Department, Maulana Azad National Institute of Technology, Bhopal (M.P.) INDIA

Fig.1. P-V Curve

PROBABLISTIC FUZZY DECISION TREE- Fuzzy theory is a result of the insufficiency of Boolean algebra to many problems of the real world. As most of the information in the real world is imprecise, and one of human greatest abilities is to effectively process imprecise and fuzzy information. Today in intelligent systems era the computers are trained to tackle the real-world problems. The fuzzy system is incorporation with the machine learning algorithm so that it can be capable of taking precise decisions. This paper deals with application of probabilistic fuzzy decision for power system security assessment [13,15,16,22]

1. Probabilistic Fuzzification: Here the continuous and discrete sampling data of power system is fuzzyfied. Basic property of probability is sum of probabilities of N events over a sample space is 1. This means, all attributes have equal weight 1. Thus the fuzzyfied sample space followed by this probabilistic property is known as well defined sample space.

$$P_r(A) = \int_{-\infty}^{\infty} \mu_A(x) f(x) dx = E(\mu_A(x))$$

Basic property of probability is, sum of probabilities of N events over a sample space is 1.

2. Trapezoidal membership function: in this work trapezoidal membership function is found to be most appropriate fuzzification technique which fulfills probability.

Trapezoidal shaped membership function is used for fuzzification of each attribute.

$$f(x;a,b,c,d) = \begin{pmatrix} 0, & x \le a \\ \frac{x-a}{b-a}, & a \le x \le b \\ \frac{d-x}{d-c}, & c \le x \le d \\ 0, & d \le x \end{pmatrix}$$

where, the parametrs a and d locate the 'feet' of the trapezoid and the parameters b and c locate the 'shoulders'.

3. Statistical Fuzzy Entropy: The statistical quantity entropy is used to define the information gain, to choose the most appropriate attribute from different attributes. Statistical fuzzy entropy for a well defined sample space is given as follows[25,26].

Where $$H_{sf} = -\sum_{c=1}^{c} E(\mu_{AC}(x)) \log_2 \mu_{AC}(x))$$

Where $$E(\mu_{AC}(x)) = \frac{\sum \mu_{AC}}{\sum \mu_A}$$

H_{sf} represents the entropy of set S of training examples in the node.

μ_{AC} is the membership value of A^{th} pattern to the c^{th} class

μ_A is the membership value of A^{th} pattern

4. Statistical Fuzzy information Gain: A statistical quantity information gain is defined to determine the cost of attribute. An information gain of an attribute is the final information contents which is result of the reduction of the sample set entropy after using this attribute to divide the sample set. The information gain of an attribute A relates to sample set S isf

Where, $$G(S,A) = H_{sf}(S) - \sum_i \frac{|S_i|}{|S|} H_{sf}(S_i)$$

Hsf (S) is the entropy of set S

|Si| is the size of subset S

|S| presents the size of set S

5. Stopping criteria: If the learning of probabilistic fuzzy decision tree stops when all the sample data belonging to a node having single class. That node has been considered as node with poor accuracy. In order to improve accuracy, learning of DT should be stopped early which is termed as pruning. The stopping criterion has been classified by following two methods:

a) Fuzziness control threshold (θr): If percentage of a class (Ck) at any node is greater than or equal to fuzziness control threshold (θr), stop expanding the tree and make that node as leaf node with corresponding class proportions.

b) Leaf decision threshold (θn): If the number of data remaining at any node is less than leaf decision threshold (θn), stop expanding the tree and make that node as a leaf node with corresponding class proportions [24].

RESULTS AND DISCUSSION

A. IEEE-30 Bus system: IEEE-30 Bus system is selected for the online security assessment. This system consists of 24 load buses and 6 generators. The total 300 instances were generated by varying the real and reactive loads under each line outage, with the load variations in the range of 50% to 150% of their case based load. Maximum loadability margin (MLM) for each of the 300 load patterns and under each line outage are calculated. After calculating MLM, secure and insecure operating conditions are defined by limiting value of MLM.

MLM classified into two classes namely secure and insecure with respect to threshold or critical value (ëcr = 0.3 P.U.) In this work, out of 300 instances for each of the line outages, 250 were used for training pattern and 50 were used for testing pattern. Here the classification of these pattern are done in terms of their accuracy.

$$Accuracy = \frac{Total\ no.of\ test\ cases - Incorrect\ classified\ cases}{Total\ no.of\ test\ cases} \times 100\%$$

Table-I gives classificationof secure/insecure operating conditions for line outages-I. Results and analysis of line outage-I is given the description of training set and testing set in Table-II and Table-III.

TABLE –I (see in last page)

Training set consists 250 OC's and 46 power system parameters along with their security status.

TABLE – II

Class	No. Of OC's	Percentage
Class 1 (Insecure)	213	84%
Class 2 (Secure)	37	16%

50 different and unseen OC's has been taken for testing set.

TABLE- III

Class	No. Of OC's	Percentage
Class 1 (Insecure)	45	87%
Class 2 (Secure)	5	13%

B. Comparison of PFDT with conventional method:

In decision tree (DT) induction classification and regression Tree (CART) is the basic algorithm which is

Prediction accuracy

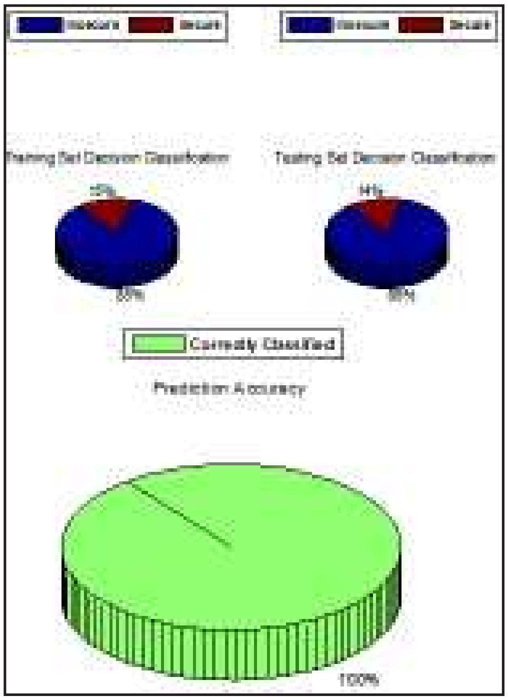

capable of producing binary classification and decision only [23,24]. The function returns a binary tree, where each branching node is splits the attribute values. This seems to be insufficient for better security prediction. As a result of literature survey on various decision tree induction methods, it is observed that voltage security prediction can be done more precisely by incorporating fuzzy logic and probabilistic reasoning in decision tree induction.

PFDT tree is an extension of DT algorithm and also an effective tool for knowledge acquisition from uncertain classification problems. By using PFDT, the result and analysis have justified the precision of proposed tool over conventional learning algorithm. Both proposed method PFDT and CART DT's trained with five different database generated for different contingency conditions. All databases were identical i.e. 250 OC's for training set and 50 OC's for testing set.After each run it was found that PFDT has performed well and shown high prediction accuracy , however the variation of tree size was not constant. Size of tree may vary with data set and stopping criteria.

These results can be concluded as PFDT has better capability to classify the power system security problems more precisely. The comparative results shown in Table IV.

TABLE- IV

Line outage number	From Bus to Bus	CART Method		PFDT Method	
		No.of nodes	% Accuracy	No.of nodes	%Accuracy
1	1-2	3	96	5	99
2	1-3	3	92	6	94
4	3-4	6	90	6	97
5	2-5	2	88	7	96
6	27-28	13	84	7	87

Conclusion - Complexity of modern power systems makes real time decision making extremely difficult. Hence, the security analysis is very challenging which itself decide the size and speed of computers in EMS. In order to overcome the above challenges, proposed tool is generic and more efficient. It can capture full system behavior, and effectively characterize the weakness of the current OC's. It is also fast enough to take control actions as soon as a vulnerable event has occurred.

This technology meets the above capabilities using decision tree learning and fuzzy logic with accountability of probabilistic reasoning for efficient and stable tree building. It will be most suitable for implementation in power systems voltage security assessment, since it can handle numeric as well as linguistic data with precision and it is also capable of handling imprecise data.

The proposed tool has better capability to classify power system security problems more precisely. The results and Performance analysis clearly shows that "PFDT is the far more efficient intelligent system based security assessment technique in comparison of conventional "CART" based technique.

References:-

1. T. Amoraee, A. M. Ranjbhar, R. Feuillet & B. Mozafari, "System Protection scheme for mitigation of cascaded voltage collapses", IET Gener. Transm Distribution, Vol.3, Iss. 3, pp.242-256,2009.
2. L. A. LI. Zarate& C. A. Castro," Fast method for computing power system security margins to voltage collapse"; IEEE Proc-Gener.Transm.Distrib, Vol 151, No. 1; pp- 19-26, January 2004.
3. K. Yabe, J. Koda, K. Yashiida, K. H. Chaing, P. S. Khedkar, D.J. Leonard, N. W. Miller;" Conceptual Designs of AI- based systems for local prediction of voltage collapse; IEEE Transction on power system, Vol. 11, No. 1;pp 137-145, Feb 1996.
4. C. I. FaustnoAgreira, S. M. Fonseca de Jesus, S. Lopes de Figeiredo, C. Machado Ferreira, J. A. Dias Pinto, F. P. Maciel Barbosa;" Probabilistic steady stste security assessment of an electric power system using a Monte Carlo approach"; Universities power Engg. Conference 2006 (UPEC 06) Proceedings of 41st International, pp. 408-411, 2006.
5. Magnus Peringe, LennartSodar;" On the validity of local

approxmations of the power system loadability surface"; IEEE Taansactions on power systems, Vol. 26, No. 4, pp. 2143-2153, Nov 2011.

6. N. C. Chang, J. F. Su, Z. B. Du, L. B. Shi, H. F. Zhou, Peter T. C.Tam, Y. X. Ni, Felix F. Wu; "Developing a voltage stability- constrained security assessment system Part-I: Determination of Power system voltage security operation limits"; IEEE/PFS Transmission and Distribution Conference & Exhibition: Asia and Pacific Dalian, China, pp 1-5; 2005.
7. Gilles Nativel, YannickJacquemart, Vincent Sermanson and Guy Nerin;" Integrated framework for voltage security assessment"; IEEE Transactions on Power Systems, Vol. 15, No. 4, pp. 1417-1422, November 2000.
8. Thomos J. Overbye, Ian Dobson and Christopher L. DeMarco;" Q. V. Curve interpretations of Energy measures for voltage security"; IEEE Transactions on Power Systems, Vol. 9, No. 1, pp. 331-340, Feb. 1994.
9. M. Suzuki, S. Wada, M. Sato, T. Asano, Y. Kudo;" Newly developed voltage security monitoring system"; IEEE Tansactions on Power systems, Vol. 7, No. 3, pp. 965-973, August 1992.
10. Hsiao- Dong Chiang, Hua Li, Jianzhong Tong, Patrick Causgrove;"On line voltage stability monitoring of large power system"; IEEE Power and Energy Society General Meeting; pp 1-6; 2011.
11. Hsiao Dong Chiang, LichengJin, Matthew Varghese, SoumenGhosh and Hua Li; " Linear and nonlinear methods for contingencey analysis in online voltage security assessments"; IEEE Power and Energy Society General Meeting; pp 1-6; 2009.
12. Mudthir F. Akorede, HashimHizam, IshakAris and MohdZainalAbKadir; "Contingency Evaluation for voltage security assessment of power systems"; IEEE student conference on Research and Development (SCOReI) 2009, UPM Serdang, Malasia, pp. 345-348; 16-18 Nov 2009.
13. K. L. Lo and Z. J. Meng;" Using adaptive fuzzy inference system for voltage ranking"; IEEE Proc-Gerne.Transm.Distrib, Vol 151, No.2, pp. 183-191, March 2004.
14. ZakirHussain, Zhe Chen & Paul Thogersen; " Fast and precise method of contingency ranking in modern power system"; IEEE Jordon conference on Applied Electrical Engg. And Computing Technologies; pp 1-7, 2011.
15. T.SN.R.K. Srinivas, Dr. K. Ramesh Reddy, Dr. V. K. D. Devi; "Composite criteria based network contingency ranking using Fuzzy Logic approach"; IEEE International Computing Conference (IACC 2009), Patiala, India;pp 654-657; 6-7 March 2009.
16. ManjareePandit, LaxmiShrivastava and Jaydev Sharma; " fast voltage contingency selection using fuzzy parallel self organisingHierarchial neural network"; IEEE Transactions on Power System, Vol.18, No.2; pp. 657-664; May2003.
17. M. Beiraghi, A. M. Rajbhar, "Online Voltage security assessment based on wide area measurements", IEEE Transactions on Power Delivery, Vol. 28, No.2 , pp. 989-997, April 2011.
18. Venkat Krishnan, James D McCalley, Sebastien Henry, Samir Issad, " Efficient database generation for decision tree based power system security assessment", IEEE Transactions on Power systems, Vol. 26, No. 4, pp. 2319-2327, Nov 2011.
19. S. Sach, A. Khairuddin, " Decision tree for state security assessment classification"; International conference on future computer and communication, pp. 681-684, 2009.
20. RuishengDiao, Vijay Vittal, Naim Logic, "Design of a real time security assessment tool for situational awareness enhancement in modern power systems", IEEE Transactions on power Systems, Vol. 25, No. 2, pp. 957-965, May 2010.
21. Claudio A, Cnizares and Sameh K.M. Kodsi, "Tools for voltage collapse assessment" IEEE MELECON 2006, pp. 939-942,May 2006.
22. A Ugedo& E. Lobato; "Generator Load profiles estimation using Artificial Intelligence"; International conference on Intelligent system applications to power systems; pp. 1-6; 2007.
23. RuishengDiao, Vijay Vittal, "Decision tree Assisted Controlled Islanding for Preventive Cascading Events",978-1-4244-3811-2 , 2009 IEEE .
24. Hsiao-Wei Hu,Yen Liang Chen,"DynamicDescretization Approach for Constructing Decision Tree With Continuous Label", IEEE Transactions on knowledge and data engineering, Vol. 21, No.11, pp. 1505-1514, Nov2009.

TABLE –I

Test case number	Class Estimated by CPF	Class predicted by CART	Class predicted by PFDT
1	S	S	S
2	I	I	I
3	I	I	I
4	I	I	I
5	I	I	I
6	I	I	I
7	I	I	I
8	I	I	I
9	I	I	I
10	I	I	I
11	I	I	I
12	S	I	S
13	I	I	I
14	I	I	I
15	I	I	I
16	I	I	I
17	I	I	I
18	I	I	I
19	S	I	S
20	I	I	I
21	I	I	I
22	I	I	I
23	I	I	I
24	I	I	I
25	I	I	I
26	I	I	I
27	I	I	I
28	I	I	I
29	I	I	I
30	I	I	I
31	I	I	I
32	I	I	I
33	I	I	I
34	I	I	I
35	I	I	I
36	I	I	I
37	I	I	I
38	I	I	I
39	S	S	S
40	I	I	I
41	I	I	I
42	I	I	I
43	I	I	I
44	I	I	I
45	I	I	I
46	I	I	I
47	S	S	S
48	S	S	S
49	I	I	I
50	S	S	S

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

प्रबंध में अवित्तीय अभिप्रेरणा की भूमिका

डॉ. इन्दु अरोडा*

शोध सारांश – प्रबंध संपूर्ण व्यावसायिक जगत की सफलता का मूल आधार है। संकीर्ण अर्थों में '**प्रबंध अन्य व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला**' है। जबकि विस्तृत अर्थ में यह औपचारिक रूप से संगठित समूहों के द्धारा एवं समूहों में कार्य करवाने की कला है। वस्तुत: अन्य व्यक्तियों से कार्य करवाना अत्यंत चुनौतीपूर्ण कार्य है। अन्य व्यक्तियों से कार्य प्राप्त करने हेतु व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पहचान करके उसकी पूर्ति करके ही कार्य करवाया जा सकता है। अन्य शब्दों में **व्यक्ति की आवश्यकता, कारण, धारणा या भावना को पहचान कर एवं उसकी पूर्ति करके ही कार्य हेतु प्रेरित किया जा सकता है और यही प्रक्रिया अभिप्रेरण कहलाती है।** व्यक्ति की आवश्यकताओं की उत्पत्ति के कुछ निश्चित क्रम होते हैं– जिन्हें आधारभूत आवश्यकताओं से प्रारंभ कर आत्म विकास की आवश्यकताओं तक वर्गीकृत किया गया है। इस लेख के द्धारा इस बिंदु पर प्रकाश डाला गया है; कि कर्मचारियों को किन अवस्थाओं में वित्तीय अभिप्रेरणा द्धारा प्रेरित किया जा सकता है तथा अवित्तीय अभिप्रेरणा की सफल प्रबंध में क्या भूमिका है।

अवित्तीय अभिप्रेरणाएं किस प्रकार प्रभावोत्पादक होती है एवं उनके स्वरूपों का रूपान्तरण किस सीमा तक हुआ है। अवित्तीय अभिप्रेरणाओं के द्धारा कर्मचारी को सर्वोच्च स्तर तक विकास के अवसर किस प्रकार प्रदान किए जा सकते हैं।

अवित्तीय अभिप्रेरणाएं सदैव कर्मचारी विकास के द्धारा संगठन विकास का मार्ग प्रशस्त करती है क्योंकि धन द्धारा प्रसन्नता, संगठन से संबंध, निष्ठा का प्रारंभ तो किया जा सकता है परंतु इनका ठहराव, सम्मान, स्वायत्तता, अपनापन, प्रशंसा, उत्तरदायित्व, चुनौतियों व निर्णय में सहभागिता इत्यादि अवित्तीय अभिप्रेरणाओं से ही संभव होता है।

अत: लेख द्धारा अवित्तीय अभिप्रेरणाओं के क्रमागत स्वरूपों व उनकी भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

शब्द कुंजी – प्रबंध, वित्तीय अभिप्रेरणाएं एवं अवित्तीय अभिप्रेरणाएं।

प्रस्तावना – प्रतिभावान, योग्य एवं उपयुक्त कर्मचारियों को प्राप्त करना किसी भी व्यावसायिक संस्था का मात्र एक प्रारंभिक कार्य होता है। जबकि इन प्रतिभावान योग्य एवं उपयुक्त व्यक्तियों को सदैव कार्य के प्रति उत्साहित एवं समर्पित बनाए रखना दूसरा चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। कुशल प्रबंधकों का यह दायित्व होता है कि वे प्राप्त मानवीय संसाधनों अर्थात कर्मचारियों को कार्य संतुष्टि प्रदान करके उनकी उत्पादकता, स्वैच्छिक सहयोग व समर्पण प्राप्ति हेतु निरंतर प्रयासरत रहे।

प्रबंधकीय प्रयासों में जहां कुशल मानव संसाधन नियोजन, भौतिक संसाधनों व व्यवस्थाओं का होना अहम है वहीं कर्मचारियों को अभिप्रेरित करना अर्थात उनकी आवश्यकताओं, भावनाओं व धारणाओं को पहचान कर उसके अनुरूप कार्य व्यवहार करना; उससे भी अधिक अहम है।

अभिप्रेरण के अभाव में कुशल व प्रतिभावान कर्मचारियों को बनाए रखना एवं निश्चित कार्य परिणाम प्राप्त करना एक कठिन कार्य होता है।

अत: अभिप्रेरण अत्यंत महत्वपूर्ण है। परंतु चूंकी प्रत्येक व्यक्ति अन्य व्यक्ति से भिन्न होता है अत: सभी व्यक्तियों को एक ही तकनीक से अभिप्रेरित नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दों में प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता, धारणा व भावना भिन्न – भिन्न होती है।

अत: इनके अनुरूप ही अभिप्रेरण तकनीकों का एक सही संयोजन बनाया जा सकता है।

यद्यपि वित्तीय अभिप्रेरण एक आधारभूत अभिप्रेरण है; जो सभी कार्मिकों को अभिप्रेरित करते हैं तथापि ये वित्तीय अभिप्रेरण; सभी को समान पैमाने पर प्रेरित कर सके यह आवश्यक नहीं है। अत: वित्तीय अभिप्रेरण के साथ अतिरेक के रूप में अवित्तीय अभिप्रेरण की विशेष भूमिका होती है। जिससे की एक पूर्णता उत्पन्न हो सके।क्योंकि यह कहा गया है कि – 'अपर्याप्त अभिप्रेरित व्यक्ति अत्यधिक सुदृढ़ संगठन का प्रभाव भी समाप्त कर देते हैं।'

अत: अवित्तीय अभिप्रेरणा; वित्तीय अभिप्रेरणाओं के प्रभाव को बढ़ाकर कर्मचारियों को पूर्ण रूप से अभिप्रेरित करती है। क्योंकि कई कर्मचारियों के लिए मान्यता, प्रशंसा, कार्य की स्वायत्तता अधिक महत्वपूर्ण होती है।

जहां वित्तीय अभिप्रेरणाओं से आशय धन द्धारा प्रेरणा देना जैसे **अच्छा वेतन, वेतन वृद्धि, बोनस, लाभांश, वित्तीय पुरस्कार प्रदान करना है, वहीं अवित्तीय अभिप्रेरणा में धन के अतिरिक्त मूलत: कार्य संवृद्धि, कार्य आवर्तन, सशक्तिकरण, विकास के अवसर, चुनौतीपूर्ण कार्यो** द्धारा अभिप्रेरित करना सम्मिलित है। स्पष्ट है कि **धन के अतिरिक्त अन्य तकनीकों से अभिप्रेरित करने को ही अवित्तीय अभिप्रेरण कहते हैं।**

अवित्तीय अभिप्रेरणाएं एवं प्रबंध में इनकी भूमिका– अवित्तीय अभिप्रेरणाओं की प्रबंध में भूमिका और यह कितनी तरह से दी जा सकती है अर्थात परंपरागत तरीकों के साथ–साथ क्रमागत रूप से विकसित नवीन तकनीकों को जानकर ही इनकी प्रभावी भूमिका के बारे में जाना जा सकता है।

अवित्तीय अभिप्रेरणाओं में निम्नलिखित अभिप्रेरणाएं सम्मिलित है :

1. **कार्य पुन: संरचना –** यह वह प्रक्रिया है जिसके द्धारा **कर्मचारी की कार्य भूमिका, लक्ष्यों व उत्तरदायित्वों को पुन: निर्धारित/संगठित**

* सहायक आचार्य (व्यावसायिक प्रशासन) राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

किया जाता है। कार्य परिणाम को बेहतर एवं गुणात्मक दृष्टि से उत्तम बनाने हेतु यह कार्य किया जाता है। इसमें कार्य - आवर्तन, कार्य संवर्धन व कार्य विस्तार सम्मिलित होता है।

इससे कार्य अधिक रुचिकर, चुनौतीपूर्ण बनता है व कर्मचारी की नीरसता दूर होती है।

भूमिका - चूंकि नवीन कार्य संरचना; व्यवसाय के उद्देश्यों एवं कर्मचारियों की रुचि व योग्यतानुरूप किया जाता है परिणामत: प्रबंध द्वारा व्यवसाय के उद्देश्यों को प्राप्त करना सरल हो जाता है। साथ ही प्रबंधकों को अधिक पर्यवेक्षण व नियंत्रण की आवश्यकता नहीं रहती।

2. **सामूहिक कार्य -** किसी परियोजना का उत्तरदायित्व एक से अधिक व्यक्तियों को सौंपा जाना सामूहिक कार्य या टीम वर्किंग कहलाता है। इससे कर्मचारी,इससे कर्मचारी **एक दूसरे की भूमिकाओं को समझते हैं, अर्न्तवैयक्तिक संबंध मजबूत होते हैं आपसी समन्वय व सहयोग भी स्थापित होता है।**

भूमिका - समूह कार्य से जहां कर्मचारियों में आपसी समझ व मजबूत संबंध विकसित होते हैं वही **प्रबंध को विविध योग्यता, कुशलता, प्रतिभा व अंतर्दृष्टि वाले व्यक्तियों के संयोजित योगदान की प्राप्ति होती है। इससे प्रबंधक व्यावसायिक परियोजनाओं को शीघ्रता व सफलतापूर्वक पूर्ण कर पाता है।** तथा संस्था में सौहार्दपूर्ण कार्य वातावरण की भी स्थापना होती है।

3. **सशक्तिकरण -** सशक्तिकरण में प्रबंधकों द्वारा कर्मचारियों को कार्य हेतु अधिक स्वायत्तता, उत्तरदायित्व एवं अधिकार तथा आवश्यक संसाधन प्रदान करना सम्मिलित है।

भूमिका - चूंकि सशक्तिकरण के परिणाम स्वरुप कर्मचारी अपने कार्य से अधिक जुड़ा रहता है। वह कार्य से जुड़े निर्णय स्वयं लेता है; फलत: अधिक उत्तरदायी भी रहता है। अत: प्रबंध को **नवीन विकास योजनाएं बनाने एवं अन्यत्र आवश्यक कार्य क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित करने का पर्याप्त समय मिलता है जिससे कि व्यवसाय का विकास होता है।**

4. **स्वायत्तता -** स्वायत्तता कर्मचारी को अपने विद्यमान कार्य पर अधिक स्वतंत्रता और समायोजनशीलता प्रदान करती है। परिणामत: कर्मचारी कार्य से संबंधित निर्णयों में भी स्वतंत्र होते हैं।

भूमिका - इसके परिणाम स्वरूप **प्रबंधकों को पर्यवेक्षण व निर्देशन पर कम समय खर्च करना होता है** साथ ही यह कर्मचारियों में कार्य के प्रति निष्ठा, प्रतिबद्धता व अपनापन उत्पन्न करती है जो कि किसी भी व्यावसायिक संस्था के लिए अत्यावश्यक होता है।

5. **कार्य आवर्तन -** इस विधि में कर्मचारियों को थोड़े-थोड़े समय के लिए विभिन्न कार्यो पर लगाया जाता है। इससे कार्य में नीरसता का अनुभव नहीं होता तथा कार्मिकों को सब कार्य करने का अवसर मिलता है। उनके ज्ञान व कुशलता में वृद्धि होती है।

भूमिका - इससे जहां **कर्मचारी के कौशल में विविधता** आती है वही प्रबंधकों को कर्मचारियों को विभिन्न कार्य पदों का अनुभव होने के कारण उनके पदोन्नति संबंधी निर्णयों में कठिनाई नहीं होती; साथ ही उच्च पदों हेतु **गतिशील योग्यता वाले कार्मिकों की सरलता से प्राप्ति होती है।** फलत: प्रबंध प्रभावशाली व सफल रहता है।

6. **कार्य संवर्धन -** इस अवित्तीय अभिप्रेरणा में प्रबंधक कर्मचारियों को अधिक कार्य देने के स्थान पर अधिक स्वायत्तता व जिम्मेदारी प्रदान करते हैं। कर्मचारियों को अपने कार्य के संबंध में अधिक लोचशीलता व अधिकार प्राप्त होते हैं। वे कार्य संबंधी निर्णय लेने में स्वतंत्र होते हैं।

भूमिका - इससे कर्मचारियों को आत्म विकास का अवसर मिलता है इससे उनकी उत्पादकता बढ़ती है। **व्यवसायिक प्रबंधकों को संतुष्ट, अभिप्रेरित, उत्साही, स्टाफ की प्राप्ति होती है जो कि व्यवसायिक सफलता का आधार होते हैं।** संतुष्ट कुशल व समर्पित कर्मचारी **व्यवसाय की संपत्ति होते हैं।**

7. **हिस्सेदारी -** संस्था के महत्वपूर्ण निर्णयों में तथा नीति निर्धारण में कर्मचारियों को हिस्सेदारी देकर उनको अभिप्रेरित किया जा सकता है।

भूमिका - हिस्सेदारी देने से कर्मचारी अधिक उत्तरदायी व सृजनशील बनते हैं तथा संस्था के प्रति अपनेपन की भावना का विकास होता है। प्रबंधक नीति निर्धारण व क्रियान्वयन में सफल होते हैं। **संयुक्त रूप से निर्णय लेने से संयुक्त उत्तरदायित्व का अनुभव होने से प्रबंधक व्यवसायिक उद्देश्यों को सरलता से प्राप्त कर सकते हैं।**

8. **लचीली कार्य व्यवस्था -** यह अवित्तीय अभिप्रेरण का **नया आयाम** है जहां कर्मचारियों को कार्य पूर्ण करने हेतु अधिक अवसर और स्वायत्तता प्रदान की जाती है।

भूमिका - कर्मचारी ऐसी सुविधा से बेहतर अनुभव करते हैं व **कार्य और निजी जीवन में बेहतर संतुलन** बनाए रख सकते हैं। व्यवसायिक संस्था में **प्रबंधकों व कर्मचारियों के बीच बेहतर संबंध रहते हैं।** जिससे विवादों के स्थान पर **मधुर कर्मचारी प्रबंध संबंधों की स्थापना** होती है।

9. **सीखने के अवसर -** प्रशिक्षण एवं विकास के अवसर प्रदान करना भी अवित्तीय अभिप्रेरण का नवीन आयाम है। नवीन कुशलताओं को सीखने का समय प्रदान करके भी कर्मचारियों को अभिप्रेरित किया जाता है।

भूमिका - इससे **कर्मचारी को जहां कुशलताओं को बढ़ाने का अवसर मिलता है** वही **प्रबंधकों को कुशल कर्मचारियों की प्राप्ति होती है** और दोनों ही पक्ष लाभान्वित होते हैं।

10. **गतिशील नेतृत्व -** यह भी अवित्तीय अभिप्रेरण का एक नवीन आयाम है। निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अन्य व्यक्तियों का मार्गदर्शन करना नेतृत्व कहलाता है। **परंतु यदि नेतृत्व असाधारण व प्रभावशाली नहीं हो तो कर्मचारी लक्ष्य हेतु अभिप्रेरित नहीं होते होंगे।**

अत: अच्छा नेतृत्व जिसमें नेता स्वयं प्रतिभावान हो, सीखने के लिए जिज्ञासु हो; वहीं कर्मचारियों को अभूतपूर्व कार्य योगदान हेतु प्रेरित कर सकता है।

भूमिका - महानता, कुशलता प्राप्त करने हेतु महानता कुशलता का वीनियोग होना आवश्यक है। एक गतिशील व प्रभावशाली नेतृत्व कर्मचारियों की अनंत प्रतिभाओं को बाहर ला सकता है।

अत: यह पुन: उपक्रम व कार्मिक दोनों के लिए उपयोगी है। प्रबंधक आदर्श प्रस्तुत करके कर्मचारियों का **स्वैच्छिक सहयोग व कार्य योगदान** प्राप्त कर सकते हैं। अन्तोगत्वा ये दोनों के लिए ही हितकारी है।

11. **नि:शुल्क कैफे -** कर्मचारियों की कार्य के प्रति ताजगी व उत्पादकता बनाए रखने के लिए नि:शुल्क पानी, चाय, कॉफी, नाश्ते आदि की उपलब्धता कर्मचारियों की उत्पादकता को बढ़ा देती है। यह भी अवित्तीय-अभिप्रेरण का एक नवीन आयाम है।

नि:शुल्क कैंटीन सुविधा कर्मचारियों पर सकारात्मक प्रभाव रखती है।

भूमिका - इस तरह की सुविधा से **कर्मचारी सतत् रूप से कार्य पर बने रहते हैं** और कार्य को पूर्ण तत्परता से करते हैं। प्रबंधक को कार्य की निरंतरता व तत्परता की ही आवश्यकता होती है। इससे **संस्थागत लक्ष्यों को यथा समय प्राप्त किया जा सकता है।**

12. **क्वालिटी सर्कल्स –** क्वालिटी सर्कल; एक कार्य इकाई के **कर्मचारियों का वह समूह** होता है जो कार्य संबंधी समस्या के समाधान के लिए अपने वरिष्ठ अधिकारी से संपर्क में रहता है। यह सर्कल कर्मचारियों के समूह को; उत्पाद की किस्म, लागत तथा उत्पादकता के संबंध में सुझाव, विचार प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करता है।

यह सर्कल **अर्न्तवैयक्तिक संप्रेषण आत्म अभिव्यक्ति** का अवसर प्रदान करता है। इस तरह यह कर्मचारियों को अभिप्रेरित करता है।

भूमिका – यह कर्मचारियों की संप्रेषण एवं तार्किक योग्यता, नेतृत्व योगयता आदि का विकास करता है। फलत: प्रबंधकों को **योग्य, विकसित व कुशल कार्मिक प्राप्त होते हैं।** परिणाम स्वरूप व्यावसायिक प्रबंध इनका **अनुकूलतम उपयोग करके संस्था के लक्ष्यों को कुशलतापूर्वक प्राप्त करता है।**

13. **सामाजिक मेलजोल –** एक अनौपचारिक सामाजिक मिलन रखना; अवित्तीय अभिप्रेरण का एक नया आयाम है। इससे मनोरंजन के साथ-साथ अनौपचारिक संबंध व मित्रता सुदृढ़ होते हैं।

भूमिका – प्रबंधक व कर्मचारियों के बीच **अनौपचारिक व मित्रतापूर्ण संबंधों का** विकास होता है। यह व्यावसायिक प्रबंध के **उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक** होता है।

14. **प्रशंसा, मान्यता व सम्मान –** यह अवित्तीय अभिप्रेरणा का एक शाश्वत् तरीका है। प्रशंसा से कर्मचारियों की कार्यक्षमता को बहुत बड़ी सीमा तक बढ़ाया जा सकता है। एक कार्मिक के जीवन काल का महत्वपूर्ण अंश कार्यस्थल पर अपने सहकर्मियों के साथ व्यतीत होता है अत: **कर्मचारी को कार्य पर मान्यता, प्रशंसा व सम्मान प्राप्त होने से कार्य पर एक संबद्धता, अपनत्व व जुड़ाव का अनुभव होता है।** प्रशंसा व मान्यता प्रदान करने से कर्मचारी की अहम संबंधी आवश्यकताओं की संतुष्टि करती है।

प्रशंसा केवल शाब्दिक नहीं बल्कि यह प्रामाणिक रूप में होनी चाहिए अर्थात प्रशंसा, कर्मचारी के कार्य कुशलता की प्रशंसा के परिणामस्वरूप उन्हें अधिक उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सौंपना तथा पदोन्नति संबंधी लाभ प्रदान करने के रूप में हो।

भूमिका – इस प्रकार कार्य स्थल पर कार्य के संबंध में प्रशंसा, मान्यता व सम्मान जहां कर्मचारी को अधिक महत्वपूर्ण होने की अनुभूति प्रदान करके उनके मनोबल को बढ़ाते है वही **प्रबंधकों को उच्च मनोबल** के परिणामस्वरूप उच्च उत्पादकता व कार्यकुशलता से परिपूर्ण सक्रिय कर्मचारियों की भी प्राप्ति होती है। **सक्रिय कर्मचारी प्रबंधकीय सफलता की पहली शर्त होती है।** इसी के द्वारा नियोजन को साकार किया जा सकता है। इस तरह प्रशंसा आदि अवित्तीय अभिप्रेरण से संस्था में नियोजन को सफल बनाया जा सकता है।

15. **सेवा सुरक्षा –** सेवा सुरक्षा अर्थात नियोक्ता द्वारा कर्मचारियों को उनके विद्यमान कार्य पर निरंतर रूप से बनाए रखना अर्थात उनको निरंतर कार्य उपलब्ध करके,परिवर्तन काल के बाद भी कर्मचारियों को कार्य पर बनाए रखकर तथा **मंदीकाल में भी सेवा की गारंटी** दिए जाकर नियोक्ता; कर्मचारी को सेवा सुरक्षा प्रदान कर सकता है।

भूमिका – नियोक्ता द्वारा कर्मचारी को **कार्य सुरक्षा प्रदान किए जाने से, कर्मचारी भी इस तथ्य से अवगत वह आश्वस्त हो जाते हैं कि उनका भावी करियर इस विद्यमान नियोक्ता के साथ ही जुड़ा हुआ है,** तब वे **कठोर परिश्रम कर अपना करियर विकास करते हैं। कर्मचारियों द्वारा करियर विकास से संगठन विकास के लक्ष्य की प्राप्ति भी सुनिश्चित होती है।**

कार्य सुरक्षा से प्रबंधक **श्रम आवर्तन के तनाव व लागतो से भी सुरक्षित रहते हैं। साथ ही कर्मचारियों के संगठन के साथ दीर्घकालीन संबंध होने से, कर्मचारी समर्पित भाव से कार्य करते हैं** जिससे प्रबंधकों का उच्च उत्पादकता के लाभ प्राप्त होते हैं। इसी के साथ संस्था में **सोहद्रपूर्ण वातावरण** की स्थापना होती है तथा औद्योगिक विवाद की संभावनाएं नगण्य हो जाती है।

इस तरह **सौहार्दपूर्ण कार्य-वातावरण व औद्योगिक शांति की स्थापना में अवित्तीय अभिप्रेरणा 'सेवा सुरक्षा' की अहम भूमिका होती है।**

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि वित्तीय अभिप्रेरणाएं न केवल कर्मचारियों को प्रेरित करने का एक उपयोगी बल्कि आधारभूत माध्यम या तकनीक भी है। परंतु एक स्तर व सीमा उपरांत इसके साथ-साथ अन्य अवित्तीय अभिप्रेरणा की भी आवश्यकता होती है। क्योंकि केवल मात्र धान के आधार पर व्यक्ति को दीर्घकाल तक अभिप्रेरित नहीं रखा जा सकता। मनोवैज्ञानिक अब्राहम एच मस्लो के अनुसार आवश्यकताओं के प्रारंभिक स्तर शारीरिक, सुरक्षात्मक आवश्यकताओं के पश्चात् व्यक्ति को अन्य आवश्यकताओं जैसे सामाजिक, अहम तथा आत्म विकास संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति की आवश्यकता अनुभव होने लगती है। जिनकी पूर्ति केवल मात्र वित्तीय तकनीकों से नहीं की जा सकती।

अत: कर्मचारी के वैयक्तिक विकास एवं उनके करियर के विकास के साथ-साथ अवित्तीय अभिप्रेरण प्रदान करना कोई विकल्प नहीं रह कर; बल्कि एक अनिवार्यता हो जाती है। अत: इनको समान रूप से महत्व दिया जाना चाहिए।

21वीं सदी जो कि शिक्षा व तकनीक के क्षेत्र में क्रांति का समय है तब मात्र वित्तीय अभिप्रेरणाएं प्रदान करना अपूर्ण और अपर्याप्त रूप से प्रेरित करने का प्रतीक है।

अत: इस समय में परंपरागत और वित्तीय अभिप्रेरणाओं के साथ अवित्तीय अभिप्रेरण के क्रमागत नवीन तकनीकों यथा कर्मचारी सशक्तिकरण, सीखने के अवसर आदि को भी अपनाया जाना चाहिए।

चूंकि मनुष्य केवल आर्थिक मनुष्य नहीं है बल्कि एक संपूर्ण मानव है अत: उसको संपूर्ण आयामों से अभिप्रेरित करना अत्यंत आवश्यक है।

वित्तीय अभिप्रेरणा के साथ-साथ अवित्तीय अभिप्रेरण को अपनाकर ही व्यवसायिक प्रतिष्ठानों का सफल प्रबंध किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर. एल. नोलखा-'प्रबन्ध के सिद्धान्त', रमेश बुक डिपो 458-461
2. मामोरिया, दशोरा –'सेविवर्ग प्रबन्ध एवं औद्योगिक सम्बन्ध', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आभार : 275-277
3. मामोरिआ, राव,'पर्सनल मैनेजमेन्ट', हिमालय पब्लिशिंग हाउस 511-512
4. चूण्डावत, जैन, शर्मा, खींचा,'मानव संसाधन प्रबन्ध', आर. बी. डी. पब्लिशिंग हाउस, 16.1 – 16.4
5. आर. एल. नौलखा,'प्रिंसिपल्ज ऑफ मैनेजमेन्ट', आर. बी. डी. पब्लिशिंग हाउस, 377-380

T.S. Eliot's Use of the Upanishad

Dr. Shiraz Ahmed*

Abstract - Inspite of the welter of books dealing with the many-sided achievement of T.S. Eliot, his use of the message of the thunder from the Brhada-ranyka-Upanisad in his The Waste land is not adequately. That the Upanisadic message forms the crux of his poem is unquestionable. The unsympathetic critics of the twenties and thirties considered Eliot's use of the Hindu scripture as an aspect of his "pretentious bungling." Some critics attributed the obscurity of the poem to the four Sanskrit words : datta, dayadhvam, damyata and santih. Even Eliot's champions like Ezra Pound referred to his use of the Sanskrit scripture with a casualness that betrays an inadequate critical attention to it. Rebutting a reviewer's acrimony, Pound said the obscurity of the poem is due to the Sanskrit word, that "one can pass them by…. without losing the general tone of the poem" and that "they are so obviously the words of some ritual or other."[1] The most deceptive of all reasons which account for the insufficient critical thought bestowed on these vital words could be Eliot's own notes on them. They give the necessary translation, enough for any one to proceed with the poem with an illusion of understanding.

Key words -Data, dayadhvam, damyata and santih, Obscurity, Brhada-ranyka-Upanisad.

Introduction - A close study of the original context in which the message is delivered in the Upanisad and its function there, and then an examination Eliot's deft adaptation of it in is poem in a new context for a total different purpose, is amply rewarding. For, besides promoting a deep understanding and hence a future response to the poem, the study reveals a new face in the range of the poet's sensibility and a new aspect of the triumph of his technique and craftsmanship.

In the Brhada-ranyka-Upanisad, the threefold message is symbolic both in its conception and execution. The triple offspring of Prajapati, gods, men and demons (deva, manushya and asura), after the completion of their education under their father, ask him what virtues they have to cultivate to lead a meaningful life.

Then Prajapati utters to each of them in turn the syllable da and asks them what they have understood from it. The gods say that for them it means damyata, "control yourself" ; the men that it means data, "give" ; and to the demons it converys dayadhvam, "be compassionate". What is significant here is that the same syllable da conveys different meanings to different beings of different beings derive different meanings from it: and that the message that each group derives is born out of an instinctive consciousness on its own part of its own main lack. To the gods it says "control yourself," because, endowed as they are with great powers, what they need to acquire is self-control. As men are by nature selfish and greedy it exhorts them to give. To the demons who are strong and cruel be nature it says "be compassionate." Symbolically, it is obvious that to live a peaceful and meaningful life leading to salvation, the gods have to cultivate self-control and overcome their inherent weakness; men have to conquer their selfishness ; and the demons must rid themselves of their inherent cruelty.

The cryptic mode of Prajapati's utterance opened new avenues and possibilities for Eliot. It offered him a new poetic technique to deliver a message of redemption to the inhabitants of the waste land without risking the usual pitfalls of explicit didacticism. The implicit notion which he wanted to convey in his poem is the need for a full consciousness of one's shortcomings. Only this kind of self-realization, proceeding from a full awareness of inherent drawbacks, can liberate the inhabitants of the waste land from their living death and spiritual miasma. From the beginning of the poem through image, metaphor, symbol and myth, The protagonist invites us to see the naked reality which is entirely different from what we think we have experienced and what we hope to find in the future.

….I will show you something different from either
Your shadow at morning standing behind you
Or your shadow at evening dying to meet you;
I will show you fear in a handful of dust.

In the section "A Game of Chess", he depicts the deplorable predicament of humanity devoid of this basic realization. What religion was at one time, sex (particularly sex without children) is to the modern world. When the vital principle of life is reduced to the level of drug addiction, and marriage, the holiest of human institutions, to a kind of licence for this addiction, life on earth is nothing more than a game of chess.

*Lecturer, Govt. Degree College,Surankote, Distt. Poonch (J&K) INDIA

For the rich and poor alike, life has lost its value. The life of the rich has become a mechanical foutine,

What shall we ever do ?
The hot water at ten.
And if it rains, a closed car at four.
And we shall play a game of chess,
Pressing lidless eyes and waiting for a knock upon the door.

To what depths of degradation the domestic life of the poorer classes has fallen is vividly conveyed through the conversation of the cockney women in the pub. The section closes with a challenging question: "What you get married for if you don't want children?"

The section "Fire sermon." a phrase borrowed from the Buddha, symbolically depicts the actual state of the vast panorama of futility and anarchy that is modern life. In his fire sermon the Buddha described all things as burning in the fire of desire. His phrase served Eliot admirably to depict the inhabitants of the waste land as burning in the fire of sterile lust. The root cause of this burning of life in the fire of lust is desire. To be free from the wheel of suffering, according to the Buddha, one must follow the path of asceticism leading to nirvana the "blowing out" of the fire of desire (this is the root meaning of the word). St. Augustine too saw humanity as burning in the unholy fire of lust and he too suggested asceticism as, the cure. As Eliot points out, the collocation of these two representatives of easterm and western asceticism is not an accident. For, both have arrived at the same track independently; and, where truth is concerned, biography and geography do not count.

The death by water in the next section is a metaphorical death into a new life: a baptismal death. It is the quenching of the fire of desire by the waters of knowledge. Syrnbolically it is the emergence of a totally new person through the extinction of the previous gross person. Only by such a thorough transformation a man render himself capable of realizing the true ideal of life, and live by it. This transformation requires an unsparing and disinterested self-scrutiny.

Eliot presents this type of self-exploration in the section, what the Thunder said. The "decay of Europe" and the fall of towers and cities represent the crumbling of false civilization and false ideals, the fall essential for a new building. The two journeys, the journey to Emmaus and the jouruey to Emmaus and the journey to the Chapel Perilous, stand for a spiritual quest. The pain and horror of the quest is wonderfully conveyed in terms of a journey through a dry rocky desert with a landscape of drought:

Amongst the rock one cannot stop or think
Sweat is dry and feet in the sand
If there were only water amongst the rock
Dead mountain mouth of carious teeth that cannot spit
Here one can neither stand nor lie nor sit
There is not even silence in the mountains

At the close of this phantasmagoria of horror and delirium comes the heart-easing "Co co fico co co rico," the call of the bird of dawn, with its spiritual association of nativity, powers to chase away all evil and darkness, heralding new light.

Then, in a short movement of evocative poetry, Eliot creates the appropriate background for the introduction of the Upanisadic messagem He takes us back to the source of the Ganga and the forests of the Himalayas, the home of all vegetation myths and fertility cults according to Miss Weston.

Ganga was sunken, and the limp leaves
Waited for rain, while the black clouds
Gathered far distant, over Himavant.
The jungle crouched, humped in silence.

Ganga, the symbol of continuous life on earth, is sunken. Starved creation is waiting for rain. The clouds beating life-giving waters have gathered over Himavant, the source of the Ganga and the home of all spiritual wisdom from time immemorial, the peak symbolizing spiritual aspiration. The world is yearning for the message. Then speaks the thunder, not Prajapati. Evidently, Eliot is adapting the idea expressed in the Upanisad itself. After the message of Prajapati, the reader's atten tion is directed to the divine voice of thunder: "The very thing the heavenly voice thunder repeats da, da, da, that is control yourself, give, be compassionate."

Eliot rearranged the triad datta, dayadhvam, damyata in a new order of natural sequence The commands are delivered separately and the original cryptic mode of delivery is retained. The different aspects of the message reveal different meanings to different types of people in the waste land, enabling each type to realize ts own major drawback. At the same time, taken together, it serves as a general message to humanity as a whole. The message is announced very aptly by the heavenly voice of thunder. Apart from the upanisadic authenticity, it is quite in harmony with the setting: the cock crowing, a flash of lightning, a damp gust bringing rain, the sunken Ganga, the limp leaves waiting for rain, the black clouds gathered far distant over Himavant and the jungle crouhed and humped in silence. Now it is more appropriate that the cosmic voice of thunder should announce the message rather than Prajapati. An introduction of Prajapati into this picture would be out of place; it would look like an external intervention by a God in the machine, not a natural revelation.

Obviously, Eliot exploited the rich poetic possibilities and the symbolic connotations of the Upanisadic setting and mode of utterance. We must notice that he did not merely repeat it. Such of the connotations as are of value and relevance are fully suggested, so that the reader might not miss the richness and many-sided impact of the message. All the three different responses to the same syllable da, as in the Upainsad, show that the particular section of people have, grasped the highest ideal expressed in each of the three commands, Eliot combined all the three commands into a single message; dropping the details of deva, asura and manushya, he gave it a fully human

significance. The, changes he made have a high philosophical basis advocated by Sankara. Sankara comments on the Upanisadic message;

Other than men, there are neither gods nor demons….. Those who are pre-dominantly selfish are men. In the same way, men who are inclined to cruelty and to inflict pain are demons. The same men, if they acquire self-control and overcome the other two defects, are eligible to be styled as gods………

Therefore when Eliot telescoped the triad into a single message retaining its triple significance and made it thoroughly human, dropping the detail of deva, rnanushya, asura, he was following a great tradition besides exercising his individual talent.

From what the thunder has said, the protagonist realizes the, true ideal of life and sets about putting his lands in order. Each ideal sets him to an unsparing introspective self-analysis. After datta he questions himself about what he has given. He realizes that he has not given him self up to any high ideal. He has yielded only to sterile lust. not to the demands of love, essential for he preservation of life and race. This is a guilt that cannot be washed away by ordinary penance :

The awful daring of a moment's surrender
Which an age of prudence can never retract?

The command dayadhvam opens his eves to the fact that he has never sympathized with anything outside himself. He has locked himself up in the prison of his own self. Hearing the third command damyata, he becomes aware of the need for self control, for submitting himself to the universal law, that is the need to control individual impulses, to steer the boat of life in accordance with the eternal laws, the tide, current and winds of the sea. In short, to lead a meaningful life, one has to cultivate self-control and live in harmony with the eternal law, "beating obedient to controlling hands," to reach shore safely. This full realization leads to "a peace which passeth understanding." So the poem The waste Land fittingly ends with:

Datta. Day dhvarn. Damyata.
Shantih shantih shantih

Conclusion - What I want to point out is not that Eliot was a Hindu at heart,but that he had a full grasp of the Upanisadic setting, its message and its spirit. He conveyed the need of the message with poetic compulsion and urgency. His aim was not to advocate the need of a particular faith, but to take us to those deeper unnamed feelings and experiences which form the substratum of all faiths. To drive home the necessity of a full awareness of this undefinable ideal through a process of poetic communication, he found the Upanisadic message indispensable. Evidently, he wanted us to understand the four words datta, dayadhvarn, damyata and santih, not merely to mean give, sympathize, control and peace, as is commonly done but by recreating the original context and repeating the actual words, he wanted us to feel them in a particular way, the Upanisadic way.

References :-

1. Hughkenner :The Invisible Poet : : T.S. Eliot,W.H. Allen, London, (1960),p.130
2. S.Radhakrishnan's (Ed.) :The Principal Upanisads, pp. 289-91
3. The Waste Land, II, 27-30
4. Ibid., II. 134-38
5. The Waste Land, II, 164
6. Ibid., See Eliot's note
7. The Waste Land, II, 336-41
8. Ibid., II. 396-400.
9. S.Radhakrishnan's : The Principal Upanishad, p.290
10. S.Radhakrishnan's (Ed.) :The Principal Upanishad, p.290

****

प्रपंच/संस्था किसे कहते हैं?

डॉ. हजारी लाल मौर्य*

प्रस्तावना – संस्कृत के इस शब्द का प्रयोग हम आम बोलचाल में खूब करते हैं। अभिधात्मक रूप से इसकी परिभाषा करने का प्रयास नहीं करते। परिभाषा तय करने लगें तो यह शब्द बड़े काम का है। हमारे जीवन में हमें दो तरह के प्रपंचों से सामना करना पड़ता है। एक प्राकृतिक प्रपंच और दूसरा मनुष्य निर्मित प्रपंच। प्राकृतिक प्रपंच जैसे बारिश, भूकम्प, सुनामी, जीवन, ज्वारभाटा आदि। मनुष्य निर्मित प्रपंच जैसे राज्य, धन, मुद्रा, राजा, विवाह, पत्नी, पुत्र, जाति, धर्म, बाजार, पवित्रता, चरित्र, कला, संस्कृति, तकनीक आदि। मनुष्य निर्मित प्रपंचों को हम संस्था (Institution) कह सकते हैं। प्रपंच की अंग्रेजी Phenomenon की जाती है। संक्षेप में प्रपंचों के निम्न गुण हैं–

1. प्रपंच मायावी होते हैं। इनसे मोह होता है या विरोध होता है। आदमी इनके साथ इच्छा या अनिच्छा से क्रिया-प्रतिकिया करने को बाध्य होता है।
2. प्रपंच या संस्थाएँ भ्रमपूर्ण होती हैं अर्थात् ये मानसिक होती हैं और दगा, फरेब, छल या धोखा इनके स्वभाव में होता है। फिर भी मनुष्य का विश्वास इनमें जमा रहता है।
3. प्रपंच अन्तर्विरोधी गुण धारण करते हैं। वे हमें सुख-सुविधा देते हैं और वे ही दुख तथा मानसिक क्लेश भी देते हैं।
4. समस्त वर्तमान बुद्धि लगा देने पर भी प्रपंचों को पूरी तरह समझा नहीं जा सकता। वे रहस्य बने रहते हैं। न इन्हें द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद से समझा जा सकता न अस्तित्ववाद से।
5. प्रपंचों/संस्थाओं के एक पक्ष को साधने पर दूसरा पक्ष अनचाहे प्रकट हो जाता है। वे मनुष्य को अपने अनुसार काम करने को बाध्य करते हैं।
6. संस्थाएँ स्वयं अभौतिक अर्थात् नाम-रूप-गुणात्मक (Virtual) होती हैं। इनकी परिघटनाएँ (Happenings) भौतिक होती हैं। जो व्यक्ति संस्थाओं के अधीन रहने से मना करता है उसे संस्थाएँ दण्ड देती हैं। दण्ड अक्सर नाम-रूप गुणात्मक ही होता है। भौतिक और प्रत्यक्ष कभी-कभी ही होता है।
7. संस्थाओं में सातत्य होता है। एक परिघटना खत्म होते ही दूसरी परिघटना आ जाती है और संस्था के विचार या कार्यो को पूरा करती है अर्थात् इनमें मरजीवड़ापन होता है।
8. संस्थाएँ आत्मपोषण करती हैं अर्थात् स्वयं नई परिघटना को जन्म देने के लिए इसी समाज में से औजार और सामग्री ग्रहण करती हैं और अपने को फिर प्रकट करती हैं।
9. संस्थाएँ तब तक अमर हैं जब तक यह मनुष्य समाज अमर है। प्रपंच तब तक अमर हैं जब तक यह पृथ्वी अमर है।
10. संस्थाएँ तर्क से इतर (तर्केत्तर) होती है अर्थात् उनका तार्किक होना आवश्यक नहीं हैं। यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा था कि क्या धर्म तर्क मैं या धर्म विचार में है? युधिष्ठिर ने कहा नहीं।

उक्त विशेषताओं को किसी भी उदाहरण पर लागू किया जा सकता है। हम इसे 'मुद्रा' पर लागू करते हैं। हम प्रत्येक उस वस्तु को मुद्रा कहेंगें जो क्रयशक्ति का हस्तान्तरण सम्भव बनाती हो। पहले कौड़ियाँ, फिर सिक्के और अब नोट मुद्रा है। भारत में रुपया और अमेरिका में डॉलर मुद्रा की परिघटनाएँ है। मुद्रा का विचार विनिमेयता है। मुद्रा का आदर्श है कि वह क्रयशक्ति को पूर्णता में वहन करे अर्थात् एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक जाने में लगे समय के दौरान 'मंहगाई' नामक चोर उसकी क्रयशक्ति का ह्रास न कर दे। यह क्रयशक्ति का ह्रास ही मुद्रा का विचलन भी है और मुद्रा के जन्मदिन से ही इसके साथ चिपका हुआ है।

एक प्रपंच के रूप में मुद्रा इतनी साधारण नहीं है जितनी दिख रही है। पहली विशेषता कि मुद्रा मायावी है। बच्चे से लेकर बूढ़ों तक मुद्रा का मोह जग जाहिर है। 60 वर्ष की उम्र के बाद जब व्यक्ति को लगता है कि अब उसके जीवन की कोई सार्थकता नहीं बची उस समय मुद्रा ही उसके जीवन में नई सार्थकता भरती है। फिर भी रुपया आपका है यह भ्रम बना रहता है। यह किसी का नहीं है। इसे खर्च करो तो भी, न खर्च करो तो भी, धरती में संग्रह करो तो भी, डाकू ले जावे तो भी वह आपके हाथ से चला जी जावेगा। मंहगाई इसे हर हालत में खत्म कर देगी। रहीम कहता है कि वह (कमला) आपकी (स्थिर) नहीं है। जो उसे अपनी समझता है (लखत अधम जे कोय) वह नीच (अधम) है। जो प्रभु की है और प्रभु की होकर नहीं रही तो उसे आपकी फजीहत करवाने में (तो क्यों न फजीहत होय) कब शर्मिन्दगी महसूस होगी। चोर, डाकू, गुण्डे जब इसे ले जाते है तो पिटाई भी करके जाते हैं। उसे न खर्च करो तो मंहगाई (10 प्रतिशत की वर्तमान दर से) हर वर्ष क्रयशक्ति की चोरी कर लेगी और एक दिन (करीब 20 वर्ष बाद) वह लगभग शून्य (पूर्ण शून्य नहीं) क्रयशक्ति की धारक रह जायेगी। यही इसकी तीसरी विशेषता (अन्तर्विरोधी गुण) है। अपनी वर्तमान समस्त बुद्धि लगा देने पर भी इसे समझना कठिन है। मार्क्स कहता है कि कोई वस्तु जैसे ही पण्य के रूप में सामने आती है वैसे ही वह मानों किसी इन्द्रियातीत वस्तु में बदल जाती है। तब वह अपने सिर के बल खड़ी हो जाती है और अपने काठ के दिमाग से ऐसे अजीबोगरीब विचार निकालती है कि उसके सामने मृतात्माओं को बुलाने वाली प्रेतविद्या भी मात खा जाती है। (पूंजी भाग 1 पृ. 89) यह है चौथी विशेषता।

प्रपंच के रूप में मुद्रा की पाँचवी विशेषता अनचाहे प्रकट होने वाले विभिन्न अन्य पक्ष हैं। क्या किसी ने सोचा था कि मुद्रा धन बन जाये और

* सह-आचार्य (हिन्दी) राजकीय लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, कोटपूतली, जिला जयपुर (राज.) भारत

मनुष्य को व्यक्तित्व प्रदान करें। माया तेरा तीन नाम परस्यो, परशु, परशुराम। जिनका वेतन ज्यादा उनके ढिठौरे ज्यादा। ज्याँ का घर मैं दाणा वाँ का बावळ भी स्याणा। वैश्या, वैश्य, सन्यासी, त्यागी, लालची, कंजूस, रुपये के लिए तड़पता गृहस्थ, रुपये से छका सेठ, आत्महत्या करता कृषक, रुपये के लिए बिकता मजदूर आदि सब मुद्रा के द्धारा निर्मित व्यक्तित्व हैं। यह भी कब सोचा गया था कि मुद्रा भाड़्य (वेश्या का पारिश्रमिक) दापा (पिता द्धारा लड़की के बदले ली जाने वाली क्षतिपूर्ति) मौताणा (मौत के बदले राशि) मेहर (कौमार्य का मुआवजा) जेवर (सतीत्व का मुआवजा) कॉपीराइट (बुद्धि का मुआवजा) भी बन जायेगी।

मुद्रा कागज, सोना, लोहा या चाँदी नहीं होती। जो होती है वह है उसे जारी करने वाले की गारन्टी। इस गारन्टी को स्वीकारना एक मानसिक क्रिया है। अर्थात् मुद्रा के नाम- गुण-रूपात्मक स्वरूप को स्वीकारना। मंहगाई की दर दस प्रतिशत रहे तो 15 या 20 वर्ष बाद मुद्रा कागज, सोना, लोहा या चांदी ही बची रह जाती है। उस पर दी गई गारन्टी लिखी होने पर भी हवा हो जाती है। इसे समय पर ना खर्च करने का यही दण्ड मनुष्य को मिलता है।

प्रपंच की साँतवीं विशेषता सातत्य है। जिसे भारत का रिजर्व बैंक नोट छाप कर पूरी करता है। मुद्रा चल रही है और चलती रहेगी। नोटों के मान, मूल्य और शासन बदलते रहेंगे।

मुद्रा अपने होने के लिए राजा को करण, रिजर्व बैंक को उपकरण तथा छपाई मशीनरी और कागज को उपादान बनाती है। खुद छपती और चलती रहती है। कब कोई राजा बदला, कब राज्य बदला, कब गारण्टी प्रदाता बदला इससे फर्क नहीं पड़ता। बहुत बार तो डाकू भी एक कागज पर हस्ताक्षर करके चला देते हैं।

इस प्रकार मुद्रा तब तक अमर है जब तक मानव समाज अमर है। यह इतनी कालजयी है कि 'समय' के सामान्य नियम का अतिक्रमण करती है। समय का नियम है कि क्रम तोड़कर पिछले समय को वर्तमान में या भावी समय को वर्तमान में नहीं जिया जा सकता। लेकिन मुद्रा यह सम्भव बनाती है कि पिता के समय (अर्थात संचित श्रम) को पुत्र भोग सके और पुत्र के समय (अर्थात पुत्र की भावी श्रमशक्ति) को पिता आज उपयोग कर सके। यदि पिता के द्धारा लिया गया कर्जा पुत्र चुकाता है तो यही है।

मुद्रा समाज में होनी चाहिये या नहीं होनी चाहिये इस पर अब कोई तर्क-वितर्क सम्भव नहीं है। क्रान्तिकारी लोग दावा करते हैं कि वे समाज को आमूल-चूल बदल देंगे लेकिन रूस, चीन, क्यूबा, जर्मनी, वियतनाम आदि सब देशों का इतिहास बताता है कि सारी क्रान्तियाँ भी 135 संस्थाओं का कुछ नहीं बिगाड़ सकी। उन्हें भी शक्ल सूरत बदल कर मुद्रा जारी करनी ही पड़ी। यही हर संस्था/प्रपन्च की दसवी विशेषता है।

इस प्रकार मुद्रा नामक प्रपंच मनुष्य की सुरता (होश) या Software में उसी प्रकार रच बस गया है जैसे शरीर में आत्मा। इसे अलग करने से वैसा ही दर्द होता है जैसे शरीर में से कलेजा निकाला जावें।

प्रपंच की इन इा विशेषताओं को जिस प्रकार मुद्रा पर लागू किया जा सका है वैसे ही इन्हें समस्त प्रपंचों पर लागू किया जा सकता है। 'विवाह' और 'राजा' पर लागू करके देखने में आसानी रहेगी। मैंने मनुष्य निर्मित 135 अवधारणाओं (वस्तुओं) पर इन्हें लागू करके देखा है और पाया है कि मनुष्य उन 135 प्रपंचों या संस्थाओं के अधीन रहकर उसी प्रकार नाटक करता हुआ जीता है जिस प्रकार किसी नाटक के पात्र। दोनों के लिए जो भूमिका नियत है वही करनी पडेग़ी। यही मनुष्य की 'नियति' है। पूरे 135 प्रपंचों की बात फिर कभी जिज्ञासा प्रबल हो तो मेरी पुस्तक 'सामाजिकता के सार्व' पढ़ें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पूँजी- कार्लमार्क्स भाग-1, पृ. 89
2. रहीम- रहीम रचनावली।

****

Globalization and the Webs of Power

Dr. Neeraja Sharma*

Abstract - Mass communication has existed for little more than the average person's lifespan, and yet in that short time we have moved from what now seems the most basic of radio communication (the crystal set) to the apparent sophistication of digital broadcasting (and the possibility of interactive television). We have yet to experience the full consequences of these latest developments, but we can be sure that 70 years from now, people will look at our system of communicaton and think of it is being as primitive as we now regard a value radio. Of course, it will not just be the technologies that change. It will be the way in which people relate to these new forms of communications, and how these relations order their sense of themselves and the others to whom they are linked. You can, after all change the amount people talk, and who they talk to just by rearranging the furniture in a room. What, them might he the effect of altering the entire system of communication? For Edward Herman and Robert McChesney (1997:138), though the effects of medial globalization may in the short term, be benign or positive in the longer terms it threatens democratic politics
Keywords- Globalization, Technology, Media.

Introduction - This article focuses on one particular process and its effects, globalization. The political importance of a globalized media can be measured in a variety of dimensions. Firstly globalization can describe the power and reach of the new media conglomerate. Secondly, it can point to changes in the ways in which national governments and nation states operate. Thirdly it can be identified in the shifts in the way citizens of those states view themselves and others. Global media have introduced viewing publics to wars and famines, audiences have become party to international negotiations and virtual participants in acts of diplomacy and peace keeping (Carruthers, 2000, 197-205, Curran 2000 136-7). Governments the UN relief agencies and others have all used the global presence of television crews and reporters to shape political agendas and polices. Whether this has created a global village or cultural imperialism is a subject of much debate, hut it is clear that perception of the word and access to it has been transformed, and in this another ways globalization affects the relationship between mass media and politics.

Sings of the global media enterprise economy are already familiar ones. They can be seen in the world wide presence of corporations like Disney and Sony. New Corporation of Reuters, organizations which appear to have a stake everywhere. This is not a new phenomenon; arguably it is the continuation of the legacy of empire, nonetheless recent changes have been rapid and far ranging. In the early 1990s. CNN transmitted its rolling news to 137 countries (The Economist 2 May 1992-26). New CNN is part of the vast Time Warner conglomerate, and as such is part of an event vaster organization following the merger with America Online, conglomerate has a stake in vast tracts of mass culture from the Hanna-Barbera cartoons to Time magazine from The Matrix to Batman, from Madonna to Metailica, from PD James to Sidney Shelton Back in 1994, the cable company Viacom paid $10 billion for the Holywood studio Paramount, adding to its ownership of MTV (Music Television), the publishers Simon & Schuster, Beavis and Butt-Head cartoons, the Blockbuster video chain, Virgin interactive Entertainment (Heman and MeChesney, 1997.77-8.1). At the time the chairman of Viacon described his company as a global media powerhouse of unparalleled proportions (Independent on Sunday, 6 April 1994). Since those days, these conglomerates been joined and sometimes dwarfed, by the other new global communications players. Companies like Vodafone-Mannesman operate vast mobile phone networks (estimated value : 000 : $261 billion), and in the next generation of their products, they promise to supply images and websites in the way they now offer voices and text messages.

Towering above these massive conglomerates is the Microsoft empire (estimated value in 0.$577 billion) created by Bill Gates, which has been the patekeeper for almost all forms of computer based communication, colonizing the internal software of computers and their capacity to communicate with each other Microsoft has bought into UK cable networks (NTL and Telewest), interactive television (NDS) and into DX3, which is involved in

*Associate Professor (Sociology) MSJ Govt. College, Bharatpur (Raj.) INDIA

encryption of music for the web. In 1998, Microsoft was investing in technologies which enable viewers to use their television to surf the web. They also forged a deal with British Telecommunications to give them access to the link between mobile phones and the internet (Golding and Murdock, 2000. 80).

All these ventures reflect and ambition to provide a complete media package Indeed, what these organizations represent is an ability to control cultural production – whether news or entertainment whenever and wherever it takes place. They are the warlords of commercial and cultural global domination, they are the new emperors OR at least this is how they seem. Here, I attempt to assess the extent of this power and the implications of globalized mass communication for the politics of media. Importantly but also to the cultural politics of identity space and place. But first we need to look at the conditions and processes that have been bracketed together in the idea of globalization. Globalization did not just appear; driven by some law of nature, it had to be made to happen.

History of the Future

It is impossible to separate the notion of globalization from the possibilities created by technological change indeed the story of mass communication is inextricably bound up with the story of technical innovation and this is as true for global media as for anything else. What is important, though, is how the tale is told. It is relatively easy to get agreement about the innovations that have mattered and what they involved. First there was radio, the capacity to transmit sound over distance, without the need for any physical connection and with the signal available to anyone with a receiver, and then there was television which added pictures to the sound. Both were a development of the technologies of the telegraphy and the telephone, themselves the inheritors of work in electromagnetism and electricity.

These technical changes were marked by more mundane, hut to less important developments in component technology the replacement of the value by the transistor opening up the possibility of portability and reliability as well as cost reduction. From here the path led to integraded circuitry and the microchip, crucial to the creation of the computer and satellite technology, which were themselves dependent on theoretical work in mathematics, philosophical logic, astronomy and so on. And later still this knowledge and technology have been hamessed to create with innovations in computer language, the worldwide web and the so-called digital revolution. The latter promises new one-stop media. As a consequerice of the digital revolution practically every product of the media including books, films, sporting events, phone calls, archives, videos and newspapers can be digitized; that is converted into the is and Os of computer code. These can then be dispatched at the speed of an encyclopedia per second – across a worldwide network of optical fibres. (The Guardian outlook, 13 May 1995). Meanwhile, the internet as already seen to herald an order in which not only the way we communicate, but the way we organize our lives will be radically overturned. Central to this transformation has been the compression of geographical distance, so that financial markets in New York, Tokyo and London are a keyboard stroke away from each other Vast areas of land and of populations are covered by a single geostationary satellite. The Asia sat satellite, for example, reaches 38 countries and 2.7 billion people as such, it has access to 40 percent of the world's TV sets. In short, new technologies appear to be creating new possibilities for communication and new forms of existence.

But while it is relatively easy to get agreement about the key technologies and what they make possible, there is much less of a consensus about why it is happening and therefore what interests and processes are implicated in the changes. Sometimes it is made to seem that we are in the grip of a process of (natural) evolution, and that we need only to adapt to this changing order, reluctanitly at first perhaps (worried by what it is doing to the world we know), but soon embracing it (and then wondering how ever we managed without it). This kind of interpretation of events is associated with writers like lthiel de Sola Pool (1990) who see each of technological invention as building progressively upon its predecessor. It makes to sense to resist. We have to accept the political, social and cultural changes that new technologies bring in their wake. For de Sola Pool, this means the acceptance that, it news ns of communication technology destroy or make redundant national borders, we need to up our quaint affection for a world of sovereign nation states.

This way of thinking about the development of communications can be labeled technological determinism. It assumes that technology is driven by an inner scientific logic, a logic of progress in which each stage adds to its predecessor, enabling people to do more than they could before. To defy this logic is to act irrationally, it is to refuse the opportunity to improve quality of life; it is to deny the inevitable. The only reasonable response is to adapt. This view that has a strong intuitive appeal. There does indeed seem to be a logic to technical change, one that takes us from the transmission of sound to the transmission of pictures. It is d to mount arguments against technologies which appear to give us more of what we already have, especially if it is cheaper, faster, more reliable. Who woula swap their digital receiver for a valve radio, their car for a horse? It is easy to succumb to the pressure to adopt, I adapt to, each new development. To be without television and radio in developed countries is to be cut off, to the marginalized. Groups, like White Dot, campaign for the abolition of television, seem from this perspective to be anachronisms, no more in touch with social or scientific reality than flat earthier or creationists.

But however attractive the idea of technological determinism, we need to be waryof its charms. Brain Winston (1998), for example, offers a quite different

perspective on these changes, they are not the product of some persistent logic, they are instead the consequence of interest and intentions, the route taken by technical development is not mapped by the logic of progress but by the allocation of resources itself the consequence of political and economic priorities.

Radio was the product of military needs, a way of coordinating the movement of vast armies. In the same way, the transistor was designed to meet the needs of submarine technology, and the integrated circuit (the microchip) was needed for space exploration and the security interest allied with it. The internet too is the product of corporate and State interests. Initially created as a failsafe system of communication to enable the US military to continue to function in the aftermath of a nucea attack, the internet was developed by scientists who wanted to use the network of computer tocommunicate with each it is other. Only with the appearance of user-friendly computer languages has the current form of the web become possible. Similar processes are at work transforming the net's anarchic chaos of information into a highly lucrative commercial market.

Domestic access to news, entertainment and sports is not simply the consequence of technological innovation. It is the product of among other things, commercial initiative. In 1993, the Bell Atlantic telephone company merged with Tele-Communications (TCI). The deal was worth $33 billion and created a gaint communications conglomerate that could reach 42 per cent of US homes. Murdoch's News Corporation made a similar deal with the second biggest telecommunications company in the USA. He tie-up allowed Murdoch to supply films, news and much more to its newly acquired subscribers. Moves like this create the material reality that allows modern communication to exist. So it goes on technology is the product of priorities established within the corporate and political system. In April 2000, Pearson announced a 12 billion merger with the CLT Ufa group, based in Luxembourg. This meant that the producer of Baywatch and Neighbors was linked to a network of 22 television channels and 18 radio stations, creating Europe's biggest broadcasting business (Te Guardian, 8 April 2000). The Pearson announcement came only three months after the Time Warner – America Online merger, which linked a company which had the potential to teach a billion viewers through its news (CNN) and entertainment (HBO) outlets to another company with 20 million members in the USA along, not to mention those in Japan, Brazil, Canada, Hong Kong and across Europe. These mergers were driven by the need to locate new markets and to have a controlling stake in new forms of media. Furthermore, they depended on the cooperation of government 'Globalization' is, after all, as much a political as an economic phenomenon, a product of New Right ideology as well as of the 'logic' of the market. The globalized media economy depended crucially on the 1997 decision of the World Trade Organization to deregulate telecommunications. Without a liberalization of trade and other harriers, the global networks could not operate.

But this version of technical change, in which intent and interest are decisive, is itself open to criticism. It may exaggerate the extent to which the key players themselves command the outcome of research and development. Neither the technologies nor their consequences can be anticipated fully. Organizations are as often coping with the effects of old technologies as they are calling new ones into being. Technologies do indeed develop some degree of independent momentum and while the various actors may be instrumental in instigating and regulating these technologies, they are never fully in command (Hughes, 1983). One factor in the equation, for example is governments which, for a variety of different reasons and in a variety of different ways, also regulate systems of communication. The extent to which they succeed may be debated, but they cannot be ignored. In the same way the use made of the new technologies is not controlled absolutely by the corporations. The music industry, for instance, became concermed by the ways in which MP3 technology (the downloading of CD quality music from the web) threatened its source of income, just as the flood to so called dot.com companies unsettled financial markets and established a new breed of corporate actor.

The degree to which the use of technology can be controlled and predicted varies from case to case. Marshal McLuhan (1994) represented this difference in terms of 'hot' and 'cool' technologies. Ivan Illich (1975) in terms of 'hard' and 'soft'. What both were trying to capture was the extent to which some forms of communications technology (the telephone, for example) allowed for considerable control by the user, while other forms (television) allowed for very little. We decide what is said on the phone, broadcasters decide what we see. In other words, the technology itself is one element in the way the story of technical and social change is told. In contemplating the future of mass communications, therefore, we should not think in terms either of technology automatically dictating the shape of the world, or of that world being determined by political will and or commercial interest. Rather, the future is a product of complex interactions between the technical the commercial and political reaims. It is this third approach to technical change that is used here in exploring the political consequences of a globalized media. Technological change is made possible by the new conglomerates, but it is these conglomerates that give impetus of the technology, and both and dependent upon the mediating effects of political regimes and other participants in the process.

Globalization: Globalization has many different meanings, but one of the most straightforward definitions is that offered by John Tomlinson, who writes (1999: 165): Globalization… refers to the rapidly developing process of complex interconnections between societies, cultures, institutions and individuals world wide. It is a social process which involves a compression of time and space, shrinking

distances through a dramatic reduction in the time taken either physically or representationally to cross them, so making the world seem smaller and in a certain sense bringing human beings 'loser' to one another (Tomlinson, 1999: 165). Globalization represents the idea that traditional borders are being superseded by a system which operates at a supranational level.

The expression of this new order may be found in the content of communication the same images and icons wherever you go. This is most typically illustrated by the ubiquity of Coca-Cola or of film and pop stars (Tom Cruise, Julia Roberts, Madonna, icky Martin, Celine Dion), but it can be represented also in the same photos of the same event appearing anywhere: the burnt Iraqi soldier in his tank on the Basra road; Princes Diana's funeral cortege; Cathy Freeman winning an Olympic gold medal. Or globalization may be identified in the system of distribution, with everyone inhabiting the same networks of communication: the same corporations supplying televisionprogrammes and news to every one. Finally, globalization may refer to a system of production by which the control of means of communication lies with organizations that exist above and beyond individual nation states.

To draw attention to these three dimensions of globalization is not to be committed to the view that they all accurately describe changes in the world or that they necessarily run harmoniously with each other. While the same records may be distributed across the world by the same transnational corporations, those corporations are also involved in marketing particular performers to district markets, and even the global acts are packaged differently for different contexts. Cultural contents is not standardized, rather it is customized. This is one aspect of what Roland Robertson (1995) calls globalization. Globalization is not necessanity about creating homogeneity and uniformity, although it may indeed to this; about the redistribution of power and about the technologies and interests that are linked to the new order.

The point of drawing attention to these three dimensions of globalization is not to suggest that they represent the complete picture, but to enable us to separate the different ways in which globalization may tie media and politics. The driving dynamic of globalization may stem from the same set of technological developments and the commercial interests that organize them, but the political consequences cannot be simply read off these facts. To assess the implications of globalization for the link between media and politics, we need to focus on two issues. The first is the effect of globalized media on the powers of national governments, the format sites of legitimate political power, to regulate media in the name of whatever political interests those governments claim to represent. The second, and related, effect is on the cultural politics of identity on the way in which the people are constituted and reconstituted in global networks.

These two aspects of globalization are nicely captured in two stories about Rupert Murdoch's attempt to bring India within his media empire. The first is an account of a trip he paid to India in the mid 1990s. Alan Rusbridger (Guardian Weekend, 9 April 1994) wrote: 'He(Murdoch) kept all his appointments, attended all his lunches, gave numerous interviews and made a big impression all round. 'He had India eating out of his hand,' said Tavleen Singh a leading columnist with the Indian Express. "It was like the visit of a head of state." This story speaks both of the way in which Murdoch's global power commanded respect, and of how he needed to win people over to his ambitions. The other story takes place four years later, when it was announced that a New Delhi lawyer had convinced an Indian court to issue a warrant for Murdoch's arrest, on the grounds that the movies transmitted on his Star channel (Dance of the Damned. The Jigsaw Murders), were vulgar obscene and unfit for Indian audiences (The Guardian, 9 August 1998). In this case, cultural content, rather than cultural control was theissue. But both stories tell of the complex politics of a globalized media.

Conglomerates, Governments and Identities: Rupert Murdoch's trip to India is typical of the way he has sought to build up a global media business. He has deliberately courted those in power. Commercial success is not just a product of commercial resources; it depends on constant negotiations with governments who both need his corporations and have the capacity to set the terms under which they operate.

Murdoch's Star channel is a classic example of this Star TV; delivered via the Asiasat satellite and has a potential reach of 45 million views. It gives access to seven out of the ten fastest growing economics and to markets that are worth a fortune in advertising revenue. Star's existence depends on government support or at least acquiescence. Murdoch has been assiduous in his cultivation of political ideaders, without whose cooperation he could not be succeed. He dropped the BBC's world service from his satellite portfolio, out of deterrence to the political sensitivities of the Chinese authorities, just as one of News Corporation's subsidiaries, the publishers Harper Collins, dropped their book contract with Chris Patten, and just as Andrew Neil's tenure at the Sunday Times ended in the aftermath of his paper's claims about corruption in Malaysia. These are taken by critics as examples of Murdoch's reluctance to antagonize political leadership with whom he needs to do business.

The journalist John Pilger, one of Rupert Murdoch's most persistent critics, argues that the media entrepreneur goes to considerable lengths to secure the support of the Chinese regima; his Star TV broadcast a documentary series made by the Bejing regime, eulogizing the life and times of Deng Xianoping (A) hagiography of Deng written by his daughter was published by Basic Books, a division of Harpet Collins, Mrs. Deng was flown to Murdoch's US ranch and feted with lavish parties (The Guardian, 16 March 1998). Similar claims are made for the ways in which

Murdoch cultivated his links with Margaret Thatcher and then Tony Blair (inviting the later, when he was still in opposition, to address a meeting of News Corporation executives in Australia). Not that such hospitality always delivers results. His bid to buy Manchester United FC was rejected. States have reached against the trend towards a globalized media.

References:-

1. Al-Rodhan, Nayef R.F. and Gerard Stoudmann. (2006, 19 June) "Definitions of Globalization. A Comprehensive Overview and a Proposed Definition."
2. Albrow, Martin and Elizabeth King (eds.) (1990) Globalization, Knowledge and Society London: Stage… all those processes by which the peoples of the world are incorporated into a single world society."
3. Carpenter, John B., 1999, 'Puntan Missions as Globalization," Fides at Historia, 31.2.p. 103.
4. Stever, H. Guyford (1972). "Science, Systems, and Society." Journal of Cybemetics. 2(3):1-3
5. Frank, Andre Gunder. (1998). ReOrient: Global economy in the Asian age. Berkeley: University of Califormia Press. Ritzer, George (2011). Globalization: The Essentials. NY: John Wiley & Sons.
6. Google Books Ngram Viewer: Globalization
7. International Monetary Fund (2000). "Globalization: Threats or Opportunity." 12th April 2000: IMF Publications. Bridges, G. (2002). "Grounding Globalization: The Prospects and perils of Linking Economic Processes of Globalization to Environmental Outcomes" Economic Geography 78(3): 361-386.
8. O' Rourke, Kevin H. and Jeffrey G. Williamson. (2000). "When Did Globalization Begin?"
9. "Globalization". Online Etymology Dictionary. Retrieved 7 July 2012.
10. "Globalization". Oxford English Dictionary Online. September 2009. Retrieved 5 November 2010.
11. "The Battle of Armageddon". October 1897 pages 365-370. Pastor-russel.com. Retrieved 31 July 2010.
12. Hopkins, A.G. (ed.) (2004). Globalization in World History. London: Norton, pp. 4-8.
13. Robertson, Roland (1992) Globalization : social theory and global culture (Reprint ed.). London
14. Giddens, Anthony. (1991). The Consequences of Modemity Cambridge: Polity Press. P. 64.

****

नारी- अस्मिता : कुछ पहलू

डॉ. अनुपमा सक्सेना*

प्रस्तावना – ऋषि वशिष्ठ ने नारी के मातृ रूप के संबंध में लिखा है– आचार्य द्वारा उपाचार्य से दस गुणा अधिक शिक्षा मिलती है, पिता द्वारा आचार्य से सौ गुणा अधिक शिक्षा मिलती है तथा माता द्वारा पिता से हजार गुणा अधिक मिलती है। अर्थात भारतीय संस्कृति में विडम्बनाओं के बावजूद भी नारी के मातृरूप को सर्वाधिक सम्मान देने की परम्परा है। नि:संदेह मध्यकालीन हिन्दुत्व के कठोर संस्कारों में जकड़कर नारी की सामाजिक स्थिति खराब होने लगी थी। मुगलकाल में नारी संपत्ति और सम्मान का प्रतीक बनी और विवाह एक प्रकार का विनिमय बन गया। एकाधिकारवादी परिवार व्यवस्था में नारी स्वतंत्रता और आत्मविश्वास की प्राकृतिक क्षमता ही खोने लगी। सच तो यह है कि नारी ने यह जीवन बहुत लंबी अवधि तक जिया ।

उन्नीसवीं सदी में उन्नीसवी सदी में सामाजिक सुधार आंदोलन के केन्द्र में नारी को स्थान मिला। रवीन्द्रनाथ टैगोर, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, भारतेन्दु, दयानंद सरस्वती, केशव सैन, महादेव, गोविन्द रानाडे एवं सर्वोपरि राजा रायमोहनराय आदि ने नारी के प्रेम, त्याग, शालीनता जैसे गुणों की सराहना करते हुए, परम्परांगत महान आदर्शो के परिप्रेक्ष्य में उसे पुरूष की सहचरी का दर्जा देने पर बल दिया। नारी को मनुष्यता की महान नैतिक शक्ति के रूप में रेखांकित भी किया। संदर्भवश भारतेन्दु की चर्चा यहां अपरिहार्य है। उन्होंने नाही की निरंतर हीन होती अवस्था की दो स्तरों पर चिंता व्यक्त की थी। प्रथम कतिपय भारतीय नारियों में अंग्रेज हमारा रमणियों (पाश्चात्य संस्कृति) के अनुसरण की प्रवृत्ति तथा द्वितीय नारियों की परम्परागत पिछड़ी अवस्था। आज हम उनकी दोनों चिंताओं की प्रासंगिकता की प्रबलता को स्पष्टत: अनुभव कर रहे हैं। आज जहां पराई संस्कृति की ओर अंधी दौड़ नारी से उसकी जमीन छीनती जा रही है वहीं उसकी प्रतिरोधक एवं परिष्कारक प्रतिभा भी या वो कुंठित होती जा रही है अथवा गलत दिशा में जा रही है। नारी अस्मिता पर मलिनता की जो छाया है उसे उसके अपने प्रयास ही धो सकते हैं जिसके लिए उसे आज पुन: आत्मावलोकन की आवश्यकता है। वैदिक काल में नारी की दशा और दिशा को अपाला, मैत्रेयी, गार्गी आदि विदूषी नारियां निर्धारित करती थी जिन्होंने वेदों में मंत्रों को लिखा, गुरूकुल भी चलाए और पति को दार्शनिक भी बनाया। महाभारत काल में सत्यवती, कुंती, गांधारी, द्रौपदी की राजनीतिक व सामाजिक सक्रियता स्वयंसिद्ध है। वैदिल काल से मुगलकाल तक नारी को शिक्षा का अधिकार मिलने के कारण समाज में भी सम्मान मिलता रहा। नार्यस्तु: पूज्यन्ते को अक्षरश: सत्य न भी माना जाए तो यह तो मानना ही होगा कि उसे पद दलित समझने का सिद्धांत भारतीय संस्कृति में कभी नहीं रहा। विदेशी आक्रांताओं के अत्याचार से त्रस्त होकर नारी को पर्दे के पीछे भेजने के मूल में तो उसकी सुरक्षा की ही चिंता रही होगी। ग्रह लक्ष्मी और गृह स्वामिनि के रूप में वह सदैव सम्मान की अधिकारिणी भी रही है। फिर क्या बदला कि आज नारी अपने आंचल में न जाने कितने काटे सजाए मूक बधिर की तरह अपने ही सरोकारों से सरोकार नहीं रख पा रही है ? चूक कहां हो गई और अब क्या अभिष्ट होना चाहिए? वस्तुत: मानव संस्कृति एक सतत प्रक्रिया है जो निरंतर गतिमान है। यहां बहुत सारे जाने अनजाने कारण रह हैं जिन्होंने नारी के मूलभूत स्वाभाविक गुणों की प्राय: उचित व्याख्या नहीं होने दी अथवा उन्हें उपेक्षित छोड दिया। जहां से उसकी स्थिति में नकारात्मक परिवर्तन आने लगा हो। आज नारी का मलिन पक्ष अधिक उजागर किया रहा है, उसकी अंक्षमता को भी रेखांकित किया जा रहा है, उसका आत्मबल तोड़ा जा रहा है और उसे अश्लीलता के चरम पर स्थापित किया जा रहा है किन्तु इसका दूसरा पहलू भी है कि यह मलिनता क्या उसकी अपनी व्यवहारगत शैली से आई है? क्या अवयव की कोमलता के चलते वह हर तरह से अक्षम हो जाती है ? क्या तमाम प्रतिकूलताएं उसी के हिस्से में आनी निश्चित है? क्या अश्लीलता की चादर नारी ने स्वयं अपनी इच्छा से ओढी है? यह सत्य है कि नारी के प्रयास नींव में रह जाते हैं जो किन्ही अर्थो में उचित भी है क्योंकि जो मजबूत होता है वहीं आधार बनता है। हम साधारण मानव की तो बात ही क्या करें स्वयं विधाता ने उसे प्रसव का कष्ट देकर जननी का गौरव प्रदान किया है। नारी से जो भी अपेक्षित है वह उसे कर गुजरने की अद्भुत क्षमता रखती है। बस सावधानी, शक्ति, प्रतिभा और सौंदर्य को व्यर्थ न होने दे। अपने अस्तित्व को गरिमा देने, पुरूष की ऊर्जा को कल्याणकारी पंथ पर प्रेरित करने तथा सृष्टि के प्रति अपने दायित्व को पूर्ण निष्ठा, गरिमा एवं सौम्यता से संपादित करने के लिए उसे अपनी आत्मशक्ति का शोध करना होगा। नारी पुरूष से कभी एक कदम आगे नहीं चलना चाहती, वह कुछ छीनना भी नहीं चाहती और देना तो उसकी मूल प्रकृति है। किन्तु पुरूष से अपेक्षित है कि वह उसे पूरी ईमानदारी से है हम कदम बनाये, उसका अधिकार उसे मिलने दे तो नि:संदेह कोई प्रतिरोध और रोष शेष नहीं रहेगा। हमारा पुरूष समाज सराहनीय गति से इस ओर प्रवृत्त हो भी रहा हैं, उसे हमें अनदेखा नहीं करना चाहिए। नारी और पुरूष सहयोगात्मक एवं सकारात्मक दृष्टिकोण लेकर ही उद्देश्यगत सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* व्याख्याता (हिन्दी) राज कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

The Representation Of Race And Ethnicity In Contemporary English Literature

Dr. Panchali Sharma*

Abstract -The representation of race and ethnicity in literature holds significant importance in contemporary English literature. This abstract explores the relevance of theoretical approaches such as postcolonial theory, critical race theory, and intersectionality to the study of race and ethnicity in literature. These theories provide frameworks for understanding power dynamics, challenging stereotypes, and examining the complexities of identity and representation. Additionally, this abstract highlights the themes and patterns commonly found in the representation of race and ethnicity, including identity exploration, racism and discrimination, cultural heritage, intersectionality, diaspora experiences, and empowerment. Critical analysis and discussion of race and ethnicity in literature contribute to a more inclusive and nuanced understanding, fostering empathy, promoting social justice, and advancing a more equitable society. By engaging with these theories and themes, scholars and readers can deepen their appreciation for the diverse perspectives and experiences reflected in literature, ultimately promoting a more inclusive and diverse literary landscape.
Keywords- Ethnicity, Postcolonial Theory, Diaspora Experiences, Stereotypes.

Introduction - The introduction of race and ethnicity in literature has been a significant and evolving aspect of literary works throughout history. It involves the exploration and representation of different racial and ethnic identities, experiences, and perspectives within the realm of storytelling. The inclusion of race and ethnicity in literature has played a crucial role in challenging dominant narratives, promoting diversity, and giving voice to marginalized communities.In earlier periods of literature, racial and ethnic representation was often limited and influenced by stereotypes and biases. Non-white characters were frequently portrayed through narrow lenses, perpetuating harmful stereotypes and reinforcing dominant power structures. However, as society progressed and awareness of social justice issues grew, authors began to challenge these limitations and explore more nuanced and authentic representations of race and ethnicity.

The Harlem Renaissance of the 1920s and 1930s marked a pivotal moment in the introduction of race and ethnicity in literature. African American writers, poets, and intellectuals emerged as prominent figures, using their works to celebrate black culture, address racial inequalities, and assert their identities. Notable figures like Langston Hughes, Zora Neale Hurston, and Countee Cullen showcased the diversity and richness of African American experiences, paving the way for future generations of writers.

In the latter half of the 20th century, the introduction of race and ethnicity in literature became increasingly prominent. The Civil Rights Movement and the rise of multiculturalism fueled a demand for more inclusive narratives, challenging the predominantly white canon. Writers such as Toni Morrison, James Baldwin, Maxine Hong Kingston, and Sandra Cisneros emerged as influential voices, depicting the complexities of racial and ethnic identities, the impact of racism, and the intersections of race, gender, and class.Since then, the literary landscape has continued to diversify and expand. Authors from various racial and ethnic backgrounds have gained recognition and acclaim for their works, offering readers a broader range of perspectives and experiences. Contemporary writers such as Chimamanda Ngozi Adichie, Junot Díaz, Jhumpa Lahiri, and Tommy Orange have contributed to the ongoing introduction of race and ethnicity in literature by exploring themes of cultural identity, immigration, assimilation, and the effects of systemic discrimination.

Overall, the introduction of race and ethnicity in literature has evolved from limited and stereotypical portrayals to more authentic and inclusive representations. It has become an essential tool for challenging social norms, fostering empathy and understanding, and amplifying the voices of marginalized communities. As the literary landscape continues to evolve, the exploration of race and ethnicity will undoubtedly remain a vital aspect of storytelling, promoting diversity and reflecting the complex realities of our world.

Significance Of Examining Representation In Contemporary English Literature:

Examining representation in contemporary English literature holds significant importance for several reasons:

1. Diversity and Inclusivity: Contemporary English literature has the power to reflect the diverse realities of

*Lecturer (English) Govt. P.G College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

society and promote inclusivity. By representing a wide range of racial, ethnic, and cultural identities, literature can challenge the dominance of the majority narrative and provide a platform for marginalized voices. It allows readers to encounter different perspectives, experiences, and struggles, fostering empathy, understanding, and appreciation for the richness of human diversity.

2. Social Justice and Equity: Literature has the potential to address social justice issues and highlight the systemic inequalities and injustices prevalent in society. By exploring themes of race, ethnicity, gender, sexuality, and other intersecting identities, contemporary English literature can shed light on discrimination, prejudice, and power imbalances. It can serve as a catalyst for critical discussions, raising awareness about social issues, and advocating for change.

3. Empowerment and Representation: Representation in literature is empowering, especially for individuals from underrepresented communities. Seeing characters who share their identities and experiences can validate their existence, provide a sense of belonging, and inspire them to embrace their own stories. Moreover, representation allows individuals from different backgrounds to see themselves reflected in literature, fostering a sense of connection and broadening their understanding of the world.

4. Cultural Exchange and Global Perspective: Contemporary English literature is not confined to a particular geographic location but is often read and appreciated globally. By representing diverse cultures, languages, and traditions, it facilitates cultural exchange and promotes a broader understanding of different societies and perspectives. It encourages readers to embrace multiculturalism, challenge stereotypes, and engage in cross-cultural dialogue.

5. Literary Excellence and Innovation: Examining representation in contemporary English literature expands the horizons of literary excellence and innovation. By embracing diverse voices and narratives, literature becomes more dynamic, vibrant, and relevant. It pushes the boundaries of storytelling, language, and form, enriching the literary canon and ensuring its continued evolution.

In conclusion, examining representation in contemporary English literature is crucial for promoting diversity, inclusivity, social justice, empowerment, cultural exchange, and literary excellence. By actively engaging with diverse narratives and perspectives, readers can broaden their horizons, challenge their assumptions, and contribute to a more equitable and inclusive society.

Overview Of Theoretical Approaches:

1. Postcolonial Theory: Postcolonial theory is a theoretical framework that examines the social, cultural, and political consequences of colonialism and its legacies. It explores the representation of colonized peoples and cultures in literature and emphasizes the ways in which power imbalances, cultural hybridity, identity formation, and resistance are depicted. Postcolonial theorists analyze how colonial discourses and stereotypes shape representations and advocate for decolonization, cultural authenticity, and the amplification of marginalized voices.

2. Critical Race Theory: Critical race theory (CRT) is a framework that examines the intersections of race, power, and social structures. It emphasizes the role of racism and systemic discrimination in shaping social hierarchies. In analyzing representations, CRT focuses on how racial identities are constructed, challenged, and perpetuated in literature. It examines the ways in which racial stereotypes, colorism, racialization, and racial hierarchies are portrayed and interrogates the power dynamics embedded in these representations.

3. Intersectionality: Intersectionality is a theoretical approach that recognizes the interconnectedness of multiple social identities, such as race, gender, class, sexuality, and ability, and their simultaneous impact on individuals' experiences of privilege and oppression. In the analysis of representation, intersectionality examines how these intersecting identities shape characters' experiences, challenges dominant narratives, and highlights the complex ways in which various forms of discrimination and privilege intersect. It seeks to understand the nuanced and multidimensional nature of identity and representation.

Relevance Of These Theories To The Study Of Race And Ethnicity In Literature: The theories of postcolonialism, critical race theory, and intersectionality are highly relevant and valuable in the study of race and ethnicity in literature. These theoretical frameworks provide a deeper understanding of the complex dynamics surrounding representation and offer critical tools for analysis.

Postcolonial theory is essential for examining the lasting impacts of colonialism and imperialism on the representation of race and ethnicity in literature. It helps scholars unpack the power dynamics, cultural hybridity, and resistance within literary works. By employing postcolonial theory, researchers can critically analyze how colonial legacies shape representations, challenge stereotypes, and give voice to marginalized communities.

Critical race theory allows for a focused exploration of racism, racial hierarchies, and systemic discrimination in literature. It provides a lens through which scholars can interrogate how race is constructed, reinforced, and challenged within narratives. Critical race theorists analyze racial stereotypes, colorism, racialization processes, and the intersections of race with other forms of oppression, uncovering the ways in which literature both perpetuates and challenges social inequalities.

Intersectionality is highly relevant in the study of race and ethnicity in literature because it acknowledges the interconnected nature of social identities. It enables scholars to examine the ways in which race intersects with other factors like gender, class, sexuality, and ability. This approach uncovers the complexities of characters' experiences, unveils the multiplicity of their identities, and

highlights the unique ways in which various forms of privilege and oppression intersect.

By utilizing these theories, researchers can move beyond surface-level analysis and engage in nuanced examinations of representation in literature. They provide tools for understanding the historical, social, and political contexts that shape the portrayal of race and ethnicity. Moreover, these frameworks promote social justice, challenge dominant narratives, and amplify the voices of marginalized communities. The relevance of these theories lies in their ability to foster critical thinking, promote inclusivity, and contribute to a more comprehensive understanding of race and ethnicity in literature.

Themes And Patterns In The Representation Of Race And Ethnicity: The representation of race and ethnicity in literature encompasses a wide range of themes and patterns that reflect the complexities of human experiences and identities. While the specific themes and patterns can vary across different literary works and periods, some common themes and patterns include:

1. Identity and Self-Exploration: Literature often explores the formation and negotiation of racial and ethnic identities. Characters grapple with questions of belonging, cultural heritage, assimilation, and the impact of societal expectations on their sense of self. Themes of self-discovery, identity crisis, and the search for authenticity frequently arise, allowing readers to witness characters navigating the complexities of their racial and ethnic backgrounds.
2. Racism and Discrimination: The representation of race and ethnicity in literature frequently addresses the impact of racism and discrimination. It delves into the experiences of characters who face prejudice, stereotyping, and systemic oppression based on their race or ethnicity. These narratives shed light on the emotional, psychological, and social consequences of racism and the ways in which characters navigate, challenge, or internalize these experiences.
3. Cultural Heritage and Tradition: Literature often celebrates and explores the richness of different cultural heritages and traditions. It highlights the customs, rituals, folklore, and values that are significant to specific racial and ethnic communities. These representations not only preserve cultural legacies but also foster an appreciation for diverse cultural expressions and challenge the homogeneity of dominant cultural narratives.
4. Intersectionality and Multiple Identities: The intersection of race and ethnicity with other aspects of identity, such as gender, class, sexuality, and ability, is a recurring theme in the representation of race and ethnicity in literature. These narratives emphasize the interconnectedness of various forms of oppression and privilege, illustrating how multiple identities shape characters' experiences and interactions with society.
5. Diaspora and Transnational Experiences: Literature often explores the experiences of individuals and communities who have migrated or been displaced, examining the complexities of diasporic and transnational identities. These narratives delve into themes of cultural assimilation, nostalgia for the homeland, the challenges of living between cultures, and the negotiation of dual identities.
6. Empowerment and Resistance: Many works of literature depict characters who resist oppression, challenge stereotypes, and assert their agency. These narratives highlight acts of resilience, solidarity, and activism, offering a counter-narrative to dominant power structures. They inspire readers to question and challenge societal norms, fostering a sense of empowerment and social change.

Critical Analysis And Discussion: Critical analysis and discussion of race and ethnicity in literature are essential for unpacking the complexities of representation, challenging stereotypes, and fostering a more inclusive and nuanced understanding of these themes. Through critical analysis, scholars and readers can examine how racial and ethnic identities are constructed, portrayed, and interrogated within literary works.

It involves closely examining the language, imagery, plot, and character development in literature to uncover underlying messages, biases, and power dynamics. It entails questioning the choices made by authors and the ways in which race and ethnicity are depicted. Scholars engage in discussions that explore the cultural, historical, and social contexts that shape these representations, as well as their impact on readers' perceptions and understanding of race and ethnicity.These critical discussions provide opportunities to challenge and dismantle stereotypes, highlight marginalized perspectives, and promote a more diverse and inclusive literary canon. They encourage readers to question their own assumptions, biases, and preconceived notions about race and ethnicity. Through critical analysis and discussion, readers can gain a deeper appreciation for the complexities of identity, the effects of racism and discrimination, and the significance of representation in shaping societal narratives.

Moreover, critical analysis and discussion of race and ethnicity in literature foster an ongoing dialogue about social justice and equity. It allows for the exploration of themes such as power, privilege, intersectionality, and resistance. By engaging in these discussions, readers can gain insights into the experiences of marginalized communities, develop empathy, and contribute to a more equitable society.

It also provides an opportunity for multiple perspectives and interpretations. Readers from diverse backgrounds can share their insights, bringing a variety of lived experiences and cultural knowledge to the table. This exchange of ideas fosters a deeper understanding of the complexities of race and ethnicity and encourages a more nuanced and inclusive approach to the study of literature.

Conclusion: In conclusion, the study of race and ethnicity in literature is a vital and multifaceted endeavor. The theories of postcolonialism, critical race theory, and intersectionality

provide valuable frameworks for analyzing and understanding the representation of race and ethnicity in literary works. These theories enable scholars to uncover power dynamics, challenge stereotypes, and explore the complexities of identity and representation.By critically analyzing and discussing race and ethnicity in literature, readers and scholars can gain deeper insights into the experiences of marginalized communities, challenge prevailing narratives, and promote social justice and equity. Through this process, they can foster empathy, understanding, and appreciation for diverse perspectives and cultural identities.

Ultimately, the study of race and ethnicity in literature serves as a powerful tool for promoting diversity, inclusivity, and social change. It provides a platform for marginalized voices, challenges oppressive systems, and contributes to a more equitable and empathetic society.By embracing these theories and engaging in critical analysis and discussion, readers and scholars can contribute to a more comprehensive understanding of race and ethnicity in literature, fostering a more inclusive literary landscape and paving the way for meaningful social transformations.

References :-

1. Adichie, C. N. (2006). “Half of a Yellow Sun.” Alfred A. Knopf.
2. Adichie, C. N. (2013). “Americanah.” Alfred A. Knopf.
3. Alexie, S. (2007). “The Absolutely True Diary of a Part-Time Indian.” Little, Brown and Company.
4. Ali, M. H. (2002). “Brick Lane.” Doubleday.
5. Anzaldúa, G. (1987). “Borderlands/La Frontera: The New Mestiza.” Aunt Lute Books.
6. Baldwin, J. (1953). “Go Tell It on the Mountain.” Knopf.
7. Butler, O. (1995). “Parable of the Sower.” Four Walls Eight Windows.
8. Crenshaw, K. (1989). “Demarginalizing the Intersection of Race and Sex: A Black Feminist Critique of Antidiscrimination Doctrine, Feminist Theory, and Antiracist Politics.” University of Chicago Legal Forum, 1989(1), Article 8.
9. Dangarembga, T. (1988). “Nervous Conditions.” Seal Press.
10. Diaz, J. (2007). “The Brief Wondrous Life of Oscar Wao.” Riverhead Books.
11. Fanon, F. (1952). “Black Skin, White Masks.” Grove Press.
12. Hooks, B. (1990). “Yearning: Race, Gender, and Cultural Politics.” South End Press.
13. Lahiri, J. (1999). “Interpreter of Maladies.” Houghton Mifflin.
14. Morrison, T. (1987). “Beloved.” Alfred A. Knopf.
15. Morrison, T. (1992). “Playing in the Dark: Whiteness and the Literary Imagination.” Harvard University Press.
16. Ng, C. (2017). “Little Fires Everywhere.” Penguin Press.
17. Roy, A. (1997). “The God of Small Things.” Random House.
18. Said, E. W. (1978). “Orientalism.” Vintage Books.
19. Smith, Z. (2000). “White Teeth.” Vintage Books.
20. Spivak, G. C. (1988). “Can the Subaltern Speak?.” In Nelson, C., and Grossberg, L. (Eds.), “Marxism and the Interpretation of Culture.” University of Illinois Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

गोदान से पूर्व एवं पश्चात्वर्ती भारतीय समाज का व्यापक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. कविता आचार्य*

प्रस्तावना - गोदान से पूर्व भारतीय समाज - गोदान का प्रकाशन सन 1936 में हुआ इसका मतलब यह है कि गोदान में जो कुछ भी कहा या बतलाया गया हैं सारा का सारा 1936 से पूर्व का है। कहते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य में अपने समय का समाज रिफलेक्ट होता है। साहित्य इतिहास तो नहीं होता किन्तु अपने में अलिखित इतिहास को भी समेटे हुए होता है। इस धारणा और विश्वास के अनुसार प्रेमचंद की कृति गोदान में जिस भी रूप और प्रकार से कथानक को स्थापित किया गया वह प्रेमचन्द की कोई कोरी कल्पना नहीं है। अपितु प्रेमचन्द ने अपने समकालीन समाज को अपनी खुली आँखों से देखा और उन्होंने साक्षात् महसूस किया कि किसान (जो कि गोदान का वर्ण्य विषय है) का जीवन कृन्दन ओर भयावयता से भरपुर हैं, करूणास्पद है। प्रेम चंद ने देखा कि वेलारी और सेमरी के किसान के रूप में होरी इन दोनों ही गाँवों का प्रतिनिधित्व ही नही करता अपितु सम्पूर्ण भारतीय किसान के दयनीयता का जीवन्त प्रतिनिधि है। बस प्रेमचन्द ने एक-एक करके होरी के जीवन और उसके परिवार में जो कुछभी अच्छा-बुरा घटा उसे भारत के किसान की नियती बनाकर प्रस्तुत कर दिया। उपन्यास का कथानक अपनी अनेक कथाओं, उपकथाओं, का सहयोग, साहचर्य बनाकर निरन्तर विकासमान बना रहा और सम्पूर्ण समाज को हमारे सामने साक्षात् लाकर उपस्थित करने में सफल रहा। उपन्यास अपने कलेवर में, आकर में विस्तृत नहीं है किन्तु जो कुछ सीमित कलेवर में पाठकों के सामने रखा गया है वह इतना विस्तृत सरोकार हैं कि गोदान विश्व स्तरीय कृति बनाने के लिए पर्याप्त है। जरा देखिए तो सही कि गोदान में क्या कुछ नहीं है। मनुष्य जीवन के तमाम प्रकार के भाव-अभाव, सुख:दुख, हँसना-रोना, सरलता-कठिनता, हास-परिहास, जय-पराजय, सवाल-जबाव, अमीर-गरीब, किसान-जमींदार, राजनतिक दावपेज, धार्मिक उत्सव, रीति-रिवाज, धार्मिक आयोजन, नर-नारी सम्बन्ध, मेल बेमेल विवाह, प्रेम विवाह, विवाह की अर्थहीनता, नव धनाड्य वर्ग के चौंचले उनकी कुटिलता, छल-छन्द, एक-दूसरे को परास्त करने की चाले-कुचाले, अत्यधिक धन संचय करने की प्रवृत्ति, स्त्री का भोग्या स्वरूप, आदर्शवादी चेहरे, आतंक, स्त्री-पुरूष जीवन का सहयोग-साहचर्य आदि-आदि इस कृति को न केवल अपने गुग की प्रतिनिधि कृति ठहराने के प्रमाण , अपितु आने वाली नयी दुनिया की धमक को भी पाठक को महसूस कराने में सफल रहे है। कहना अतियुक्ति न होगी कि प्रेमचन्द की इस कृति ने ही सम्भवतया: जल टूटता हुआ (रामदरशमिश्र) आधागांव, (राही मासूम रजा), परती पर कथा और मैला आंचल (फनीश्वर नाथ रेणु) आदि अनेक कृतियों को लिखने की प्रेरणा दे दी। एवं इन जैसी अन्य कृतियों में भी किसान जीवन की बिडम्बनाएँ, स्त्री जीवन की बिडम्बनाएँ और शोषण की वैष्णवी मुस्कान औढे हुए चेहरे अपने नानारूपों में प्रकट हुए है जो मेरी मान्यता या समझ के अनुसार प्रेमचन्द की कृति गोदान का प्रभाव है पिछला युग आने वाले युग को निर्देशित और प्रभावित करता है। इस बात का प्रमाण गोदाम और पश्चात्वर्ती वर्षो में लिखी गई 'जल टुटता हुआ', 'आधागांव', 'परती परकथा', 'मैला ऑचल', राग दरबारी आदि-आदि कृतियॉ है। गोदान की ही तरह इन कृतियों में भी वह सब कुछ समाया हुआ है जो किसान जीवन से संबंधित है। होरी गोबर, धनिया, झुनिया, सिलिया, भोला आदि के भाई-बन्धु नयें नामों के साथ उन कृतियों में दर्शनीय बन पड़े है, तो मिस्टर मेहता, मालती, रायसाहब, खन्ना, गोबिन्दी, सरोज आदि गोदान के प्रमुख पात्रों के सगौत्र अपने नवीन नामों के साथ पश्चात्वर्ती वर्षो में लिखी गई कृतियों में अपने होने को प्रमाणित कर रहे है। अब मैं क्रमपूर्वक गोदान के रचनाकाल के समाज को सबसे समझाते हुए प्रस्तुत करना चाहूंगी।

प्रेमचन्द युगीन सामाजिक संरचना:

1. गोदान एवं गोदान पूर्व में सामंत कृषक मजदूर के अन्तर्सम्बन्ध:-

सन् 1936 के पूर्ववर्ती वर्षो से सन 1947 तक भारतीय समाज दोहरी गुलामी से पीड़ित रहा है एक और अंग्रेज राज सत्ता के हम गुलाम थें तो दूसरी ओर देशी-राजाओं, सामंतो और जमींदारों ने भी हम पर आंतक कायम किया हुआ था। अधिकांश जनता कृषि पर आधारित होकर कृषक रूप में जीवन यापन कर रही थी तो जमींदार उनके शोषण में रत थे। सामंत तो कि बड़ा जमींदार भी है उसकी गिरफ्त में किसान का जीवन इस कदर उलझा हुआ है कि होरी अपनी पत्नी धनिया को समझता हुआ जमींदार या सामंत के आतंक को प्रस्तुत करता हुआ कह रहा है-

'तुझे रस पान की पड़ी है, मुझे यह चिन्ता हैं कि अबेर हो गयी तो मालिक से भेंट न होगी। असनान पूजा करने लगेगे तो घन्टों बैठे बीत जाएगा।'

'तू जो बात नही समझती उस में टाँग क्यों अडाती है भाई! मेरी लाठी दे दे और अपना काम देख यह इसी मिलते-जुलते रहने का परसाद हैं कि अब तक जान बची हुई है, नही कहीं पता न लगता कि किधर गये। गांव में इतने आदमी तो है, किस पर बेदखली नहीं आयी, किस पर कुड़की नहीं आयी? जब दूसरे के पांव तले अपनी गर्दन दबी हुई हैं तो उन पाँवों को सहलाने में ही कुशल हैं।'

उक्त इस उद्धरण में किसान जीवन की विवशता और जमींदारी और सामंत के आतंक की पराकाष्ठा दोनों के एक साथ दर्शन होते है। सामंत या जमींदार एक युग में अपने क्षेत्र में रहनेवाले किसानों से अपनी जमीनों पर नाम मात्र का खाद्यान्न देकर रात-दिन काम करवाया करते थे इसकी बानगी के रूप में इस कथन को लिया जा सकता है-

* सह आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, भरतपुर (राज.) भारत

'सरकार बेगारों ने काम करने से इंकार कर दिया है-कहते है-जब तक हमें खाने को न मिलेगा हम काम न करेगे। हमने धमकाया तो सब काम छोड़कर अलग हो गये।'

रायसाहब (सामंत और जमींदार) के माथे पर बल पड़ गये ऑखे निकालकर बोले'चलो, मैं इन दुष्टों को ठीक करता हूँ। जब कभी खाने को नहीं दिया तो आज यह नयी बात क्यों? एक आने रोज के हिसाब से मजूरी मिलेगी तो हमेशा मिलती रही है, और इस मजूरी पर काम करना होगा, सीधे करें या टेढ़े।'

किसान और जमींदारी आंतक या शोषण का क्या अन्तर्सम्बन्ध है, इसकी बानगी देखिए 'सलामी करने न जाये तो रहे कहाँ? भगवान ने जब गुलाम बना दिया हैं तो अपना क्या वश? यह इसी सलामी की बरकत है कि द्वार पर मँडैया डाल ली और किसी ने कुछ नही कहा। भूरे ने द्वार पर खूंटा गाड़ा था, जिस पर कारिन्दों ने दो रूपये ले लिये थे। तलैया से कितनी हमने खोदी कारिन्दा ने कुछ नही कहा। दूसरा खोदे तो नजर देनी पडे। अपने मतलब के लिए सलामी करने में कोई बड़ा सुख मिलता है। घन्टों खडे रहो तब जाके मालिक को खबर होती है, कभी कहला देते हैं कि फुरसत नहीं है।'

उपर्युक्त उद्धकरण में किसान जीवन की विवशता और शोषण के नित नये तरीके दृष्टव्य है। किसान की भी विवशता देखिए कि अन्याय का प्रतिकार और प्रतिरोध करती हुई नयी पीढ़ी को वह नयी विवशता किस कातर तरीके से समझा रहा है यथा-

'जब सिर पर पड़ेगी तब मालूम होगा बेटा अभी जो चाहो कह लों। पहले मैं भी यही सब बातें सोचा करता था। पर अब मालूम हुआ कि हमारी गर्दन दूसरे के पैरों के नीचे दबी हुई हैं अकडकर निबाह नहीं हो सकता।'

उपर्युक्त उद्धकरण में हम भारतीय किसान जीवन की कातर विवशता को न केवल देख रह है, अपितु आने वाली पीढ़ी को दी जा रही नसीहत को भी देख रहे हैं जो पीढी पर पीढी विवशता पूर्वक दी जायेगी। यह जीना भी कोई जीना हैं लेकिन किया क्या जाए? यहाँ हम किसान जीवन के ऐसे यथार्थ के दर्शन कर रहे है जिसकी कोई काट नजर नही आ रही।

किसान और जमींदार जो कि सामंत और बडा भू-स्वामी भी है उन दोनों की जीवन स्थितियों का अंतर देखिए-

'हम लोग दाने-दाने को मोहताज है, देह पर साबित कपडे नही है, चोटी का पसीना ऐडी तक आता है, तब भीगुजर नहीं अता। उन्हें क्या मजे से गद्दी-मसनद लगाये बैठे है, सैकड़ो नौकर-चाकर है, हजारों आदमियों पर हुकूमत है, रूपैये न जमा होते है, पर सुख तो सभी तरह का भोगते है धन लेकर आदमी और क्या करता है।'

धर्म ने भी किसान को बदहाल बनाये रखने में अपनी कुटिल भूमिका का निर्वाह किया है कि किसान अपनी बदहाल स्थितियों का कारण शोषण को न मानकर ईश्वर को मान रहा है। नयी और पुरानी पीढी का विचारगत अंतर भी अलग-अलग है। ऐसी ही बात निम्नांकित उद्धकरण के द्वारा प्रकट हो रही है-

'तुम्हारी समझ में हम और वह बराबर है। भगवान ने तो सबको बराबर ही बनाया है। यह बात नहीं है बेटा, छोटे बडे भगवान के घर से बनकर आते है, सम्पत्ति बडी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्व जन्म में जैसे कर्म किये है, उनका आनन्द भोग रहे है। हमने कुछ नहीं संचा, तो भोगें क्या?'

'यह सब मन को समझाने की बाते है। भगवान सबको बराबर बनाते है। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचल कर बड़ा आदमी बन सकता हैं।'

'यह तुम्हारा भरम हैं, मालिक आज भी चार घन्टे रोज भगवान का भजन करते है।' ' किसके बल पर यह भजन-भाव और दान-धर्म होता है?'

'नहीं, किसानों के बल पर और मजदूरों के बल पर। यह पाप का धन पचे कैसे? इसलिए दान-धर्म करना पड़ता है, भगवान का भजन भी इसलिए होता है। भूखे-नंगे रहकर भगवान का भजन करें तो हम भी देखे। हमें कोई दोनों जून खाने को दे, तो हम आठों पहर भगवान काक जाप ही करते रहे एक-दिन खेत में अख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जाये।'

होरी ने हार कर कहा, 'अब तुम्हारे मुँह कौन लगे भाई, तुम तो भगवान की लीला में भी टांग अड़ाते हो।।'

उपर्युक्त लम्बे उदाहरण में हमने एक साथ ही कई बातों को किसान जीवन में अपनी भूमिका का निर्वाह करते देखा है इस उद्धकरण में सामान्य जन में बैठा लोक विश्वास दृष्टव्य हैं और साथ ही धर्म या ईश्वर की भूमिका सामान्य किसान के हृदय में किस हद तक अपना प्रभाव जमाये बैठी है इसको भी देख जा सकता है। भाग्यवादी दर्शन किसान को किस कदर जकड़े हुए हैं कि वह अपनी तमामतर बदहाल स्थितियाँ का कारण ईश्वरीय सत्ता या प्रसाद को माने बैठा है। उसे अपनी बदहाली का कारण ईश्वरीय सत्ता या प्रसाद को माने बैठा है। उसे अपनी बदहाली का कारण अन्याय और शोषण नहीं लग रहा अपितु वह वैभवशाली शोषणकर्ता सामंत और बड़े भू-स्वामी को नहीं मान रहा वरन् नियती का खेल मानकर तर्क को जो कि शोषण के अन्याय के विरोध में युवा पीढी के द्वारा दिया जा रहा है को अस्वीकार करता हुआ अपने को प्रत्येक असहज स्थिति के लिए सहजता से तैयार करता चला आया है। अमीर और गरीब, सुख और दु:ख वैभव और विपन्नता इन सबका कारण ईश्वरीय देन को मानकर जो कुछ हो रहा है उसे चुपचाप देखता और सहता चला जा रहा है। गोबर ओर होरी के बीच सम्पन्न हुए उपर्युक्त संवादों में यही ध्वनित हो रहा है कि भगवान जिसको देता है वह आनन्द भोगता है और भगवान जिसे दु:ख देता है वह सारी की सारी उम्र मेहनत करता हुआ भी विपन्नता में अपना जीवन यापन करता चला जाता है। इसी उद्धरण में दो पीढ़ियों का मान्यतागत अंतराल भी प्रकट हुआ है। जहाँ नयी पीढ़ी का प्रतीक होरी पुत्र गोबर गतिशील बन पड़ा है। तो यथास्थितिवादी चरित्र के रूप में होरी का चित्रण हुआ है ईश्वर भाग्य और ईश्वरीय देन ही गरीबी का कारण मात्र समझ में आ रहा है। इस उद्धकरण को देखने के बाद एक बात को साफ तौर पर उजागर हो रही है कि होरी के पीढी के किसान को समझाना या किसी भी तर्क से शोषण या अन्याय के विरोध में खड़ा कर देना असम्भव प्रतीत हो रहा है। अब भला कोई होरी को समझाये भी तो कैसे। ईश्वर उसके हृदय में, उसकी आस्था में, उसके विश्वास में इस कदर घुला हुआ बैठा है कि अपनी बदहाली के वास्तविक कारणों को वह समझना ही नहीं चाहता। किसान की नियती और वास्तविक स्वरूप की बानगी देखिए

'उसी की चिन्ताओं मारे डालती है दादा। अनाज तो सब का सब खलिहान में तुल गया। जमींदार ने अपना हिस्सा लिया, महाजन ने अपना लिया, मेरे लिए पांच सेर बच रहा। यह भूसा तो मैंने रातों-रात ढोकर छिपा-दिया था नहीं तिनका भी नहीं बचता। जमींदार तो एक ही है मगर महाजन तीन-तीन सहुआइन अलग और मगरू अलग और दातादीन पण्डित अलग किसी का ब्याज भी पूरा न चुका। जमींदार के भी आधे रूपैये बाकी पडे रहे। सहुआइन से रूपैये उधार लिये तो काम चला। सब तरह किफायत करके देख लिया भैया कुछ नही होता। हमारा जन्म इसलिए हुआ हैं कि अपना रक्त बहायें और बड़ो का घर भरें। मूल का दुगना सूद भर चुका पर मूल ज्यों का त्यों सिर पर सवार है। लोग कहते है सर्दी गर्मी से तीरथ वरत में हाथ-बांध

कर खरच करों, मुदा रास्ता कोई नहीं दिखता। रायसाहब ने बेटे के ब्याह में बीस हजार लूटा दिये उनसे कोई कुछ नही कहता। मंगरू ने अपने बाप के क्रियाकरम में पांच हजार लगाए उनसे कोई कुछ नही पूछता, वैसी ही मरजाद तो सबकी है।'

वर्तमान समय में ही नहीं गोदान एवं गोदान के पूर्ववर्ती वर्षो में भी आदमी का मूल्यांकन धन-सम्पदा से ही किया जाता रहा है। जिसके पास धन नहीं हैं समाज में उसका कोई स्थान नही है। वह केवल अपना नामालूम-सा अस्तित्व लेकर इस दुनिया में जीता-मरता चला आया है। यथा-'कौन कहता हैं हम तुम आदमी है। हममें आदमियत कहाँ? आदमी वह हैं जिसके पास धन हैं, अख्तियार हैं, इलम है। हम लोग तो बैल है और जुतने के लिए पैदा हुए हैं उस पर एक-दूसरे को देख नहीं सकता। एक का नाम नहीं, एक किसान दूसरे के खेत पर न चढ़े तो कोई जाफा कैसे करें, प्रेम तो संसार से उठ गया हैं।'

उपर्युकत उद्धरण में मनुष्य और मनुष्य के अन्तर का आधार धन रह गया हैं, हैसियत रह गयी हैं, इल्म रह गया हैं, इसके अलावा जिसके पास यह सब नहीं है उसका जीवन भी कोई जीवन है। धनवान और सम्पन्न लोगों के लिए तो अनेक प्रकार की आकांक्षाएँ और इच्छाएँ हो सकती हैं किन्तु भारतीय किसान के लिए तो अपने आँगन में गाय बांध लेने का सपना ही सबसे बड़ा सपना है, सबसे बडी इच्छा है। गाय आँगन में बंधी हो तो उसे मानों पंख लग जाते है पवित्र माने जाने वाली गाय की उपस्थिति से वह अपने को धन्य समझे बैठा है कृत-कृत्य हुआ बैठा हैं आखिर होता भी क्यों न क्योंकि आँगन में गाय ने खूंटे पर बंधकर उसके जीवन की सबसे बडी साध जो पूरी की है यथा-

'होरी श्रृद्धा विव्हल नेत्रों से गाय को देख रहा था मानों साक्षात देवी जी ने घर में पदार्पर्ण किया हों। आज भगवान ने यह दिन दिखाया कि उसका घर गौ के चरणों से पवित्र हो गया। यह सौभाग्य/न जाने किसके पुन्य प्रताप से।'

गाय को अपने आंगन में बांध पाकर किसान कितना आल्हाद का अनुभव करता होगा, किस गौरव की प्रतीती उसे होती होगी किस अभिमान का भाव अपने मन में महसूस करता होगा। इन सबस बातों का सटीक उदाहरण देखिये-

'होरी सचमुच आपे में ने था। गौ उसके लिए द्वार की शोभा और अपने घर का गौरव बढ़ाना चाहता था। वह चाहता था लोग गाय को द्वार पर बंधे देखकर पूछे-यह किसका घर है? लोग कहे-होरी मेहतो का।'

किसान और जमींदार के अर्न्तसम्बन्धों की बानगी का प्रतीक हैं यह उद्धरण-

'सहसा एक दिन बादल उठे और आसाढ़ का पहला दौंगड़ा गिरा, किसान खरीफ बोने के लिए हल लेकर निकले कि रायसाहब के कारकनों ने कहला भेजा-जब तक बाकी न चुक जाएगी किसी को खेत में हल न ले जाने दिया जाएगा। किसानों पर जैसे वज्रपात हो गया और कभी तो इतनी कड़ाई न होती थी अबकी यह कैसा हुक्म। कोई गांव छोड़कर भागा थोडी जाता है अगर खेतों में हल न चले तो रूपैये कहाँ से आ जायेगें, निकलेगे तो खेत ही से। सब मिलकर कारकून के पास जाकर रोयें। कारकून का नाम था पण्डित नोखेराम, आदमी बुरे न थे मगर मालिक का हुक्म था उसे कैसे टालें? अभी उस दिन रायसाहब ने होरी से कैसी दया और धर्म की बातें की थी और आज आसामियों पर यह जुल्म। होरी मालिक के पास जाने को तैयार हुआ लेकिन फिर सोचा उन्होंने कारकून को एकबार जो हुक्म दे दिया उसे क्यों टालने लगे? वह अगुवा बनकर क्यों बुरा बने। जब और कोई कुछ नही बोलता तो वही आग में क्यों कूदें जो सबके सिर पड़ेगी वह भी झेल लेगा।'

गाँ का एक छोटा भू-स्वामी संयोग दुर्योग से जो सूदखोर महाजन भी है। उसके और किसान के सम्बन्ध किस तरह के हैं इसकी कुछेक बानगी देखियें-

'वह (झिंगुरी सिंह) पक्का कागज लिखवाते थे, नजराना अलग लेते थे, दस्तूरी अलग, स्टाम्प की लिखाई अलग। उस पर एक साल का ब्याज पेशगी कांटकर रूपैया देते थे। पच्चीस रूपैय का कागज लिखा तो मुश्किल से सत्तरह रूपैये हाथ लगते थे, मगर इस गाढ़े समय में और क्या किया जाए? रायसाहब की जबरदस्ती है, नहीं इस समय किसी के सामने क्यों हाथ फैलाना पड़ता।'

उपर्युक्त उद्धरण में दो व्यक्तियों झिंगुरी सिंह एवं रायसाहब का किसानों के साथ का सम्बन्ध ही व्यक्त हो रहा है। उद्धरण अपने आप में इस बात का प्रमाण है कि इन लोगों के मन में किसान के प्रति लेशमात्र. भी सहानुभूति नहीं है। किसान तो उनके लिए शोषण का ओवजेक्ट मात्र है। और पीढ़ी दर पीढ़ी ये लोग किसान का येन-केन प्रकारेन शोषण करके अपने को वैभवशाली बनाये जा रहे है। किसान, जमींदार और भू-स्वामी के मध्य अगर कोई रिश्ता है तो वह रिश्ता है-शोषण और शोषित का। एक अन्य उदाहरण देखिए जिसमें झिंगुरी सिंह होरी से कह रहे हैं।

'अच्छा भाई तुम्हारे पास कुछ नहीं है, अब राजी हुए, जितने रूपैये चाहों ले जाओं लेकिन तुम्हारे भले के लिए कहते है कुछ गहने गाढ़े हो तो गिरवी रखकर रूपैये ले लो। स्टाम्प लिखो तो सूद बढ़ेगा, और झमेले में पड़ जाओंगे।'

होरी सम्पूर्ण जीवन की साथ को पूरा करते हुए अपने घर में गाय लाया है। किन्तु झिंगुरी सिंह को उसका गाय लाना बेचैन कर गया है और उन्होंने येन-केन'प्रकारेन होरी की दुधारू गाय को हथियाने के मनसूबे बनाना शुरू कर दिया है जो किस इस उद्धरण में प्रकट हो रही है-

'तो एक बात पर यह नई गाय जो लाये हो इसे हमारे हाथ बेच दो। सूद, स्टाम्प सब झगडों से बच जाओं। चार आदमी जो दाम कहे वह हमसे ले लो। हम जानते है, तुम उसे अपने शौक से लाये हो हो और बेचना नहीं चाहते लेकिन यह संकट तो टालना ही पड़ेगा।'

इस उद्धरण में मददगार की खोल में छिपा हुआ चालाक झिंगुरी सिंह बोल रहा है जो किसान और लगभग सामंती आतंक का प्रतीक सा लग रहा है। ग्रामीण जीवन में प्रेमचन्द की रचना गोदान के पूर्ववर्ती समाज में झिंगुरी सिंह जैसे सामंती और सूदखोर कोई एक नहीं अपितु अनेक है। जिसे उपन्यास के पात्र झिंगुरी सिंह के चरित्र को पढ़कर समझा जा सकता है। एक अन्य उदाहरण देखिए जहाँ सीधा-साधा लग रहा किसान जमींदार और महाजनी आतंक को उसकी सारी कुटिलताओं के साथ समझ रहा है-

'तुम तो दादा बूढ़ों की सी बाते कर रहे हो। कटघरे में फंसे बैठे रहना तो कायरता है। फंदा और जकड़ जाये बला से गला छुडाने के लिए जोड-तोड़ लगाना पड़ेगा यही तो होगा झिंगुरी घर द्वारा नीलाम करा लेगे। करा ले नीलाम मैं तो चाहता हूँ कि हमें कोई रूपैये न दे, हमें भूखों मरने दे, लाते खाने दे, एक पैसा भी न दे पर पैसे वाले उधार न दे तो सूद कहाँ से लाये? एक हमारे ऊपर दावा करता हैं तो दूसरा हमें कुछ कम सूद पर रूपैये देकर अपने जाल में फंसा लेता है। मैं तो उसी दिन रूपैये लेने जाऊंगा जिस दिन झिंगुरी कही चला गया होगा।'

गोदान का किसान सामंत से उसके आतंक से, उसके भय से उसके

अन्यास से उसके षडयंत्रकारी और कुटिल चालों से, उसकी वैष्णवी, मुस्कानों की मारक क्षमता से अछूता नहीं है जमींदार की खुशी ही उसकी खुशी हैं और उसकी आज्ञा ही उसका कर्म गोदान का प्रमुख होरी का पुत्र गोबर सी अन्यास का विरोध करते हुए अपने पिता से कहता हैं कि..

'तुम रोज-रोज मालिकों की खुशामद करने क्यों जाते हो, बाकि न चुके तो प्यादा आकर गालियां सुनाता है, बेगार देनी ही पड़ती है, नजर-नजराना तो तुम से धराया ही जाता हैं फिर किसी को गुलामी क्यों करों।'

'पिछले सत्याग्रह संग्राम में रायसाहब ने बड़ा यश कमाय था, कौन्सिल की मेम्बरी छोड़कर जेल चले गये थे तब से उनके इलाके के आसामियों को उनमें बड़ी श्रृद्धा हो गयी थी। यह नहीं कि उनके इलाक में आसामियों के साथ कोई खास रियायत की जाती हो या बेगार की कडाई कुछ कम हो। जावते का काम तो जैसे होता आया है- वैसे ही होगा आसामियों से रह हँसकर बोल लेते थे यही क्या कम है। सिंह का काम तो शिकार करना है।'

उपर्युक्त उद्धरण में मीठी मुस्कान लिये हुए क्रूर जमींदार का चेहरा तमाम असलियत के साथ उजागर हो रहा है जिसमें जमींदार और किसान का सम्बन्ध शिकार और शिकार का हैं।

वैष्णवी मुस्काने ओढ़े हुए जमींदार की वास्तविक को बेनकाब करता है उसका स्वयं का यह कथन

' चलों में इस दुष्टों को ठीक करता हूँ, जब कभी खाने को न दिया तो आज यह नयी बात क्यों? एक आने रोज के हिसाब से मजूरी मिलेगी जो हमेशा मिलती रही है और इस मजूरी पर काम करना होगा। सीधे करो या टेढ़े।'

इस कथन में भी जमींदार और उसके खेतों पर काम करने वाले मजदूरों के आपसी संबंध व्यक्त हो रहे है। जिन्हें बेहतर तो कदापि नहीं का जा सकता ये संबंध शोषक और शोषित के संबंध है जो कि शोषण पर आधारित हैं।

जमींदारों ने अपने शोषण के लिए किसानों की धार्मिक आस्थाओं को भी भुनाना शुरू कर दिया है। धार्मिक आयोजनों के बहाने ये लोग अपने आसामियों को बुलाते है और शगुन के रूपैये चढ़ाने का निर्देश देते है। पिछले से ही त्रस्त किसान फिर उधार लेता है। और शगुन के रूपैये भेट करता है। य

'आज सारे इलाके के आसामी आयेगे और शुगुन के रूपैये भेट करेगें।'

आदर्शवाद की खोल में छिपे बैठे जमींदार की स्वीकृति देखिए-

'मैं उस वातावरण में पला हूँ जहाँ राजा ईश्वर हैं और जमींदार ईश्वर का मंत्री। मेरे स्वर्गवासी पिता आसामियों पर इतनी दया करते थे कि आले या सूखे में कभी आधा और कभी पूरा लगान माँफ कर देते थे। अपने बखार से अनाज निकालकर आसामियों को खिला देते थे। घर के गहने बेचकर कन्याओं के विवाह में मदद करते थे। मगर उसी वक्त तक जब तक प्रजा उनको सरकार और धर्मावतार कहती रहें, उन्हें अपना देवता समझकर उनकी पूजा करती रहें। प्रजा का पालन उनका सनातन धर्म था लेकिन अधिकार के नाम पर वह कौडी का एक दांत भी तोड़कर देना न चाहते थे। मैं उसी वातावरण में पला हूँ और गर्व है कि मैं व्यवहार में चाहे जो कुछ करू विचारों में उनसे आगे बढ़ गया हूँ और यह मानने लग गया हूँ कि जब तक किसानों को यह रियायतें अधिकार के रूप में न मिलेगी केवल सद्भावना के आधार पर उनकी दशा सुधर नहीं करती। स्वेच्छा अगर स्वार्थ छोड़ दे तो अपवाद है। मैं खुद सद्भावना करते हुए भी स्वार्थ नही छोड़ सकता और चाहता हूँ कि हमारे वर्ग को शासन और नीति के बल से अपना स्वार्थ छोड़ने को मजबूर कर दिया जाये। इसे आप कायरता कहेगें। मैं इसे विवशता कहता हूँ। मैं इसे स्वीकार करता हूँ कि सी को भी दूसरे के श्रम पर मोटे होने का अधिकार नही है। उपजीवी होना घोर लज्जा की बात है। कर्म करना प्राणी मात्र का धर्म है। समाज की ऐसी व्यवस्था जिसमें कुछ लोग मजा करें और अधिक लोग पिसे और खपें, कभी सुखद नहीं हो सकाती। पूंजी और शिक्षा जिसे मैं पूंजी ही का एक रूप समझता हूँ इनका किला जितनी जल्दी टूट जाये उतना ही अच्छा है। जिन्हें पेट की रोटी मयस्सर नहीं, उनके उफसर और नियाजक दस-दस, पाँच-पाँच हजार फटकारें यह हास्याप्रद हैं और लज्जास्पद भी। इस व्यवस्था में हम जमींदारों में कितनी विलासिता कितना दुराचार, कितनी पराधीनता और कितनी निर्लज्जता भर दी है, यह मैं खूब जानता हूँ। लेकिन मैं इस कारणों से इस व्यवस्था का विरोध नहीं करतां मेरा तो कहना है कि अपनी स्वार्थ की दृष्टि से इसका अनुमोदन नहीं किया जा सकता। इस शान को निभाने के लिए हमें अपनी आत्मा की इतनी हत्या करनी पड़ती है कि हममें स्वाभिमान का नाम भी न रहा। हम अपने आसामियों को लूटने का मजबूर है। बस हमारी दशा उन बच्चों की-सी है जिन्हें चम्मच से दूध पिलाकर पाला जाता है। बाहर से मोटे अंदर से दुर्बल, सत्वहीन और मोहताज।।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

याज्ञवल्क्य स्मृति में प्रशासनिक व्यवस्था

डॉ. कुलकिरण गढ़वाल*

प्रस्तावना –

1. **राज्य का उद्देश्य व शासन का कार्यक्षेत्र–**याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य के उद्देश्यों पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला गया है। राज्य के लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए राजा से यह अपेक्षा की गयी है कि वह आप्राप्त की प्राप्ति के लिए धर्मानुसार प्रयत्न करे, प्राप्त वस्तु धन भूमि आदि की रक्षा करे रक्षित वस्तु की नीतिपूर्वक वाणिज्य आदि से वृद्धि करे तथा अभिवृद्ध धनादि को धर्म, अर्थ और काम आदि हेतु सतपात्रों प्रजाजनों में वितरित करें।

शासन में उपर्युक्त कार्य सम्पन्न किये जाने की अपेक्षा इस मंतव्य पर आधारित है कि राज्य में निवास करने वाले सत्पात्र निरपराध प्रजाजन, सुखमय, शान्तिमय एवं सार्थक जीवन बीता सकें। वे भौतिक उन्नति अथवा कोष संचय हेतु ही सक्रिय नहीं रहें, अपितु उनके अध्यव्यवसाय में धर्म, अर्थ व काम के लौकिक उद्देश्यों की संतुलित रूप में पूर्ति हो।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य का प्रमुख उद्देश्य जनता का हित माना गया है।

इस प्रमुख उद्देश्य की पूर्ति के लिए राजा से अनेक प्रकार के कृत्यों के संव्यवहार की अपेक्षा की जाती है। यथा पीड़ित प्रजा की रक्षा बाह्य आक्रमणों एवं आन्तरिक अशान्ति से, प्रजा–पालनत्व, धर्मानुसार कोष संचय, शास्त्रानुसार परराष्ट्र विजय, शास्त्रानुकूल दण्ड व्यवस्था का संचालन एवं न्याय की समाज में स्थापना।

याज्ञवल्क्य स्मृति में उल्लेख मिलता है कि पीड़ित प्रजा की रक्षा के लिए राजा को चाहिए कि वह राजा, उसकी प्रजा की लुटेरों, चोरों, ऐन्द्रजालिक आदि धूर्तों एवं दुस्साहसी डाकुओं आदि से रक्षा करे और विशेषत: कायस्थों लेखकों एवं कण्टकों से पीड़ित व्यक्तियों की रक्षा करे।

इसी प्रकार याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि न्यायपूर्वक प्रजा का पालन करने पर राजा प्रजा के पुण्य का छटवां भाग प्राप्त करता है, भूमि आदि सभी प्रकार के दान से उत्पन्न पुण्यफल से प्रजापालनत्व का फल अधिक होता है।

याज्ञवल्क्य ने राजा को चेतना दी है कि आरक्षित प्रजा की रक्षा चारों आदि से यदि राजा रक्षा नहीं करता है तो चोरी आदि का 1/2 वां भाग राजा को प्राप्त होगा। क्योंकि राजा इसके बदले प्रजा से कर वसूल करता है।

इसी प्रकार कर्मचारी वर्ग के अत्याचारों से जनता की रक्षा की आवष्यकता प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि जो व्यक्ति राज्यकार्य में अधिकारयुक्त पदों पर नियुक्त हो उनका आचरण भलीभांति गुप्तचरों द्वारा जानकर राजा उत्ताम चरित्र वालों का दान से सम्मान करें और विपरीत आचरण वालों को अपराधानुसार दण्ड दे। जो घूस लेकर जीविका चलाते हैं, राजा उनका धन छीनकर देश से बाहर निकाल दे। श्रोत्रिय वेदपाठी ब्राह्मण को दान सम्मान के साथ राज्य में बसाना चाहिए।

जनता से अन्यायपूर्ण साधनों द्वारा कर वसूल करने के विरुद्ध राजा को चेतावनी देते हुए याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि जो राजा अन्यायपूर्वक अपनी प्रजा से धन लेकर अपने कोष की वृद्धि करता है वह शीघ्र ही श्रीहीन होकर बान्धवों सहित नष्ट हो जाता है।

इसी सम्बन्ध में आगे और कहा गया है कि प्रजापीड़न के सन्ताप की अग्नि राजा के कुल शोभा और प्राणों को नष्ट किए बिना शान्त नहीं होती है।

ग्रन्थ में राजा को धर्मपूर्वक परराष्ट्र विजय का परामर्श देते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार राजा अपने राज्य में न्यायपूर्वक प्रजा पालन है, उसी प्रकार उसे न्याय पूर्वक शास्त्रानुसार परराष्ट्र पर विजय करना उचित होता है।

ग्रन्थ में राजा को परामर्श दिया गया है कि सत्पात्रों की जीवन रक्षा सुख–शान्ति एवं बहुमुखी प्रयोजनों की सम्प्राप्ति हेतु राजा को चाहिए कि वह धर्मानुसार राज्य की ओर निष्पक्ष न्याय की स्थापना करे। इस सम्बन्ध में उल्लेख है कि राजा का अस्तित्व ही इसलिए है कि वह शास्त्रानुसार दण्ड को स्थापित करे, इसीलिए ही ब्रह्मा द्वारा राजा की पृथ्वी पर सृष्टि की गई है। राजा को परामर्श दिया गया है कि वह अपने जनकोष और शरीर की रक्षा के लिए ऐसे स्थल पर दुर्ग बनवाये जो रमणीय हो, पशुओं को बढ़ाने वाले और जंगल युक्त हो।

याज्ञवल्क्य स्मृति इस बात का उल्लेख करती है कि राजा को चाहिए किवह धर्म अर्थ आदि कार्यों में उनके करने योग्य कार्य करने वाले अपने कार्य में चतुर और कार्य में रुचि रखने वाले, आय–व्यय आदि कार्यों में डयत व्यक्तियों को ही अधिकारी नियुक्त करें।

याज्ञवल्क्य स्मृति में युद्ध भूमि में वीरतापूर्वक युद्ध करने की राजा के आवश्यक कर्त्तव्यों के रूप में प्रतिपादित किया गया है तथा कहा गया है कि जो राजा युद्ध में लड़ते मर जाते हैं, उन्हें योगियों के समान स्वर्ग की प्राप्ति होती है अत: राजा को युद्ध भूमि में पीछे नहीं हटना चाहिए।

याज्ञवल्क्य स्मृति में प्रजा के परिपालन को सब प्रकार के दान से बढ़कर बतलाया गया है तथा कहा गया है कि राजा को धर्मशास्त्र की विधि से प्रजा का पालन करना चाहिए। याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि ऐसा राजा प्रजा के पुण्य का छठवां भाग प्राप्त करता है।

प्रजा के पालन के सम्बन्ध में राजा के कर्त्तव्यों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि वह प्रजा की लुटेरों, चोरों, ऐन्द्रजालिक आदि धूर्तों एवं दुस्साहसी डाकुओं आदि से रक्षा करें और विशेषत: कायस्थों लेखकों व कएण्टकों से पीड़ित की रक्षा करें। याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि राजा

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

यदि अपने इन दायित्वों की पूर्ति में असफल रहे तो उसे पाप का भागीदार बनना पड़ता है। राजा द्वारा अरक्षित प्रजा जो कुछ चोरी आदि पाप करती है उसमें से आधा पाप उसको राजा को जाता है, क्योंकि रक्षा के लिए प्रजाजनों से कर लेता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि राजा को चाहिए कि जो व्यक्ति राज काल में नियुक्त हो, उनके आचरण के विषय में गुप्तदूतों से पता लगावे और भले कर्मचारियों का सम्मान करें तथा दुष्टों को दण्ड दें।

इसी संदर्भ में यह चित्रित किया गया है कि जो घूस लेकर जीविका चलाते हैं उन कर्मचारियों का गुप्तचरों द्वारा पता लगाकर सत्य साबित होने पर उन्हें धन रहित करके देश से बाहर निकाल दे, तथा श्रोत्रिय ब्राह्मण आदि को दान सम्मान के साथ अपने राज्य में बसाये।

ग्रन्थ में मत व्यक्त किया गया है कि जो राजा अपने राज्य में अन्याय करके धन संग्रह करता है, वह थोड़े ही काल में अपने बन्धुओं सहित निर्धन होकर नष्ट हो जाता है। प्रजा की पीड़ा के सन्ताप से उत्पन्न हुई अग्नि, धन, शोभा और कुल तथा राजा के प्राण जलाये बिना ठण्डी नहीं होती।

2. शासन के कार्यक्षेत्र का प्रशासनिक व्यवस्था पर प्रभाव – याज्ञवल्क्य स्मृति में शासन के प्रयोजनों व कार्य क्षेत्र के सम्बन्ध में हुए विवेचन से यह स्पष्ट है कि ग्रन्थ में राज्य के लोकल्याणकारी स्वरूप को प्रस्थापित किया गया है। राज्य के लोकल्याणकारी स्वरूप के कारण ग्रन्थ में शासकीय गतिविधियों का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक माना गया है। ग्रन्थ में चित्रित शासकीय गतिविधियों की परिधि में नागरिकों के जीवन के समस्त पक्ष – नैतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि सम्मिलित किये गये हैं। प्रजा की सुरक्षा से लेकर, प्रजा के पारलौकिक कल्याण के लिए सुदृढ़ लौकिक पृष्ठभूमि के निर्माण के दायित्व तक विस्तृत शासन के कार्यक्षेत्र की व्यापक परिधि में सम्मिलित कर्त्तव्यों का व्यवहारत: निष्पादन सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था के माध्यम से ही सम्भव है।इस दृष्टि से ग्रन्थ में एक सुसंगठित प्रशासनिक व्यवस्था के महत्तव को स्वीकार किया गया है। यद्यपि याज्ञवल्क्य स्मृति में प्रशासनिक व्यवस्था के संगठनात्मक व प्रक्रियात्मक विषयों का विवेचन वह विस्तार प्राप्त नहीं कर सकता है, तथापि प्रशासनिक व्यवस्था के सुसंगठित स्वरूप व जनहित के प्रति प्रशासनिक अभिकर्ताओं की उत्तारदेयता को ग्रन्थ में भलीभांति प्रस्थापित किया गया है।

यह टिप्पणी प्रासंगिक है कि ग्रन्थ में राज्य के लोक–कल्याणकारी स्वरूप का प्रभाव, राजा सहित शासन के सम्पूर्ण प्रशासनिक तन्त्र को जनता की सुरक्षा व कल्याण के लिए समप्रित करने की आवष्यकता के सैद्धाब्तिक निरूपण में तो परिलक्षित होता है किन्तु इस विशद दायित्व के अनुरूप अपेक्षित प्रशासनिक व्यवस्था के संस्थागत पक्षों की ग्रन्थ में प्राय: उपेक्षा की गई है।

3. प्रशासनिक संगठन–राज्य के अंगों और उसके कार्य क्षेत्र के निर्धारण के विषय में याज्ञवल्क्य–स्मृति अपने पूर्ववर्ती ग्रन्थों का अनुसरण करती है। मनुस्मृति की भांति याज्ञवल्क्य स्मृति में भी राजा को सप्तांग माना गया है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य के निम्नलिखित अंग माने गए हैं :-

1. स्वामी उत्साह आदि गुणों से युक्त राजा
2. अमात्य मंत्री
3. जन प्रजा
4. दुर्ग किला
5. दण्ड सेना
6. मित्र।

इन अंगों को याज्ञवल्क्यस्मृति में राज्य के मूल या आधारस्तम्भ माना गया है। आगे इसी संदर्भ में कहा गया है कि मित्र की प्रगति अन्य ध्नादि से श्रेष्ठकर है। अत: राजा को एक अच्छे मित्र की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते रहना चाहिए।

इस सम्बन्ध में याज्ञवल्क्य स्मृति में आगे कहा गया है कि राजा को उपरोक्त अंगों को ठोस आधार प्रदान कर राज्य कार्य करना चाहिए।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य के कार्य क्षेत्र के विषय में हुआ विवेचन, राज्य के लोक कल्याणकारी स्वरूप को स्पष्ट करता है। राज्य के कार्यक्षेत्र के विषय में अन्य पूर्व आचार्यो के समान याज्ञवल्क्य स्मृति में भी शासन के कार्यो का क्षेत्र सम्पूर्ण मानव जीवन तक विस्तृत माना गया है। राज्य के व्यापक कार्यक्षेत्र की परिभाषा करते हुए, याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य से यह अपेक्षा की गयी है कि वह सभी परिवारों, श्रेणियों गणों, संघ व जनपदों को अनुशासित रखें, जिससे कि वे सभी अपने अपने कर्त्तव्यों का समुचित रूप से पालन करें।सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखें, दुष्टों तथा अपराधियों को यथोचित दण्ड दें, दण्ड में निष्पक्षता बरतें, यहाँ तक कि राजा अपने परिजनों को भी अपराधी ठहराये जाने पर यथा योग्य दण्ड दें।

डॉ. बेनी प्रसाद ने व्यक्त किया है कि याज्ञवल्क्य स्मृति में भी उसके पूर्ववर्ती ग्रन्थों की भांति राज्य के कार्यो का विस्तार सम्पूर्ण मानव जीवन तक फैला हुआ माना है।

क शासन–संगठन

शासन के सिद्धान्त– याज्ञवल्क्य स्मृति में भी मनु की भांति यह स्वीकार किया गया है कि शासन का ध्येय मनुष्यों के धर्म, अर्थ और काम के त्रिवर्ग की प्राप्ति में साधक होता है। साथ ही पारलोकिक लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति भी इस बात पर निर्भर है कि राज्य द्वारा मनुष्यों के त्रिवर्ग धर्म, अर्थ व काम की सिद्धि के प्रयत्नों को किस प्रकार नियमित किया जाता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य के उद्देश्य के विषय में उपलब्ध विवेचन के अनुसार – राज्य को अप्राप्त भूमि और धनादि को प्राप्त करना चाहिए रक्षा: करनी चाहिए : रक्षित धनादि में विभिन्न प्रकार से वृद्धि करनी चाहिए और जो वृद्धि हो उसे सपात्रों प्रजाजनों में दान कर देना चाहिए।

याज्ञवल्क्य भी अपने पूर्ववर्ती विचारक मनु की भांति यह स्वीकार करते हैं कि राजा को पिता – तुल्य, प्रजा का पालन करना चाहिए। याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार राजा को आवश्यकतानुसार कठोर और मृदु होना चाहिए। राजा को चाहिए कि वह अपने राज्य की रक्षा करे, और शत्रुओं को नष्ट करें। राजा न्यायी हो और दुष्टों का दमन करें तथा उन्हें कठोर दण्ड दें।

याज्ञवल्क्य स्मृति का मत है कि कर भी लेने चाहिए परन्तु आपत्ति काल में याज्ञवल्क्य स्मृति में करों में अस्थाई वृद्धि को उचित मानती है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राजा को शासन का अध्यक्ष बताया है तथा उससे यह अपेक्षा की गयी है कि वह अपने राज्य सम्बन्धी सभी कार्यो को मंत्रीयों, तथा अन्य पुरोहित आदि उच्च अधिकारियों से विचार विमर्श व परामर्श करके करे तथा सभी अधिकारियों के कार्यो का निरीक्षण भी स्वयं करे। क्योंकि निरीक्षण प्रशासन तंत्र की आधारशिला होता है।

याज्ञवल्क्य का परामर्श है कि राजा को, प्रशासन से भ्रष्टाचार का मूलोच्छेद कर दे क्योंकि भ्रष्टाचार प्रशासन रूपी शरीर का असाध्य रोग बनकर अन्दर से उसे खोखला कर डालता है।

मनु की भांति याज्ञवल्क्य का भी यह कहना है कि उसके उपाय हेतु राजा को चाहिए कि वह भ्रष्ट अधिकारियों की सम्पत्ति जब्त करके उन्हें

राज्य से निकाल दें, तथा जो अधिकारी अपने कर्त्तव्यों का ठीक से पालन न करें उन्हें जुर्माने के दण्ड या यथानुकूल अन्य दण्ड द्वारा दण्डित करें। इस प्रकार राजा द्वारा नियन्त्रित सरकारी कर्मचारी प्रजा की लूट खसोट नहीं कर सकते।

ख प्रमुख प्रशासनिक अभिकर्ता

अ मन्त्री–याज्ञवल्क्य, मंत्रीयों को प्रशासन के एक सहायक अंग के रूप में स्वीकार करते हैं तथा मंत्रीयों की नियुक्ति करना राजा का एक आवश्यक कर्त्तव्य स्वीकार करते हैं।

मंत्रीयों की योग्यता के विषय में याज्ञवल्क्य स्मृति में उपलब्ध विवेचन के अनुसार उन्हें ज्ञानी विवेकी वंष परम्परागत एवं पवित्र हृदय का होना चाहिए।

याज्ञवल्क्य स्मृति में मन्त्रणा को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। याज्ञवल्क्य ने राजा से यह अपेक्षा की है कि यह निर्णय प्रक्रिया में समुचित मन्त्रणा के पश्चात् ही अपने स्वविवेक का संव्यवहार करें।

मन्त्रणा की गोपनीयता को याज्ञवल्क्य ने अत्यन्त महत्तवपूर्ण माना है तथा कहा है कि राज्य कार्य का मुख्य आधार मन्त्रणा है, अत: मन्त्र को उस प्रकार गुप्त रखें कि राज्य के कार्यो संधि विग्रह आदि के फली भूत होने के पूर्व उसकी जानकारी किसी को न मिले।

ब पुरोहित– याज्ञवल्क्य स्मृति में शासन के संगठन में पुरोहित का महत्तवपूर्ण स्थान स्वीकार करते हुए उसकी भूमिका का महत्तव प्रतिपादित करती है। याज्ञवल्क्य के अनुसार राजा को ऐसे अधिकारी नियुक्त करने चाहिए जो धर्म और अर्थ आदि कार्यो को सम्पन्न करने के लिए सर्वथा योग्य हों। जो दूसरा कार्य न करें, अपने कार्यो में चतुर और रुचि रखने वाले हों।

पुरोहित की योग्यता के बारे में याज्ञवल्क्य स्मृति में यह उल्लेख है कि वह देवक्ष ग्रहों के उत्पात एवं शासन का ज्ञान रखने वाले सभी शास्त्रों के ज्ञान एवं अनुष्ठान से समृद्ध दण्ड और नीति में कुशल तथा अर्थर्वाउिगरस शान्त और घोर कर्म में प्रविष्ट ब्राह्मण होना चाहिए।

पुरोहित को याज्ञवल्क्य स्मृति में धार्मिक कृत्यों के निष्पादन के अतिरिक्त शासन के कार्यो में भी महत्तवपूर्ण भूमिका प्रदान की है। राजकीय निर्णय में याज्ञवल्क्य ने पुरोहित से मन्त्रणा लेने को आवश्यक माना है तथा उसके परामर्श को महत्तवपूर्ण व बहुमूल्य बताया है।

स अन्य अधिकारी एवं विभाग–याज्ञवल्क्य स्मृति शासन के संगठन में महत्तवपूर्ण अधिकारियों का भी विवेचन करती है। ये अधिकारीगण राजा द्वारा नियुक्त किए जाते हैं और उसी के अनुसार अपने क्षेत्र में प्रत्यायोजित अधिकारों के आधार पर कार्यरत रहते हैं। याज्ञवल्क्य ने इन्हें विभागाध्यक्ष की संज्ञा दी है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में शासन के विभिन्न अधिकारियों की योग्यताओं को स्पष्ट करते हुए राजा को परामर्श दिया गया है कि वह तत्वत: धर्म, अर्थ, कामादि कर्मों में आय–व्यय के कार्यो में कुशल पवित्र हृदय एवं कर्त्तव्य निष्ट व्यक्तियों को अध्यक्ष नियुक्त करें।

याज्ञवल्क्य स्मृति में एक स्थान पर उल्लेख किया गया है कि राजा सभी अधिकारियों, विभागाध्यक्षों के कार्यो का स्वयं निरीक्षण करें।

याज्ञवल्क्य स्मृति में चित्रित अन्य अधिकारियों में सेनापति, गुप्तचर विभाग का अध्यक्ष, गृह विभाग का अध्यक्ष, आय व्यय लेखा विभाग का अध्यक्ष आदि प्रमुख कहे जा सकते हैं।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राजदूतों को व गुप्तचरों को प्रशासन का एक अभिन्न अंग स्वीकार किया गया है, तथा उन्हें प्रशासन रूपी शरीर की नशों व नाड़ियों की संज्ञा दी गयी है। राजा की दिनचर्या में यह चित्रित किया गया है कि राजा गुप्तचरों एवं दूतों को आदर के साथ अपने मंत्रीयों आदि के निकट अथवा दूसरे राजाओं के समीप भेजे।

इसी प्रकार राजा की पूर्वाद्ध की दिनचर्या में यह चित्रित किया गया है कि वह सबसे पहले स्वर्ण आदि लाने के लिए नियुक्त व्यक्तियों द्वारा लाये गये स्वर्ण को देखकर भण्डार में रखाये। इसके पश्चात् गुप्तचरों से बातें करे और फिर मन्त्री के साथ बैठकर दूतों को निर्दिष्ट कार्य करने के लिए भेजे। उपरोक्त प्रसंगों से राजकीय प्रशासन में दूतों व गुप्तचरों के महत्तवपूर्ण स्थान का संकेत स्वत: मिल जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. याज्ञवल्क्य स्मृति, आचाराध्याय, राजधर्म पृष्ठ
2. पूर्वोक्त 336
3. पूर्वोक्त 337
4. पूर्वोक्त 338 – 339
5. पूर्वोक्त 341
6. पूर्वोक्त 354
7. याज्ञवल्क्य समृति आचाराध्याय, राजधर्म प्रकरण, श्लोक – 321
8. पूर्वोक्त 322
9. पूर्वोक्त 325
10. पूर्वोक्त 354
11. पूर्वोक्त 341
12. याज्ञवल्क्य स्मृति, आचाराध्याय, श्लोक 353
13. पूर्वोक्त 31
14. पूर्वोक्त 312
15. पूर्वोक्त 9

****

Sustainable Agriculture: Cultivating A Resilient and Regenerative Food System

Dr. Anjul Singh*

Introduction - Sustainable agriculture is an approach to farming and food production that focuses on cultivating a resilient and regenerative food system. It involves practices that are environmentally responsible, economically viable, and socially equitable. This approach aims to meet the present needs of food production without compromising the ability of future generations to meet their own needs.

1.1 Definition of Sustainable Agriculture: Sustainable agriculture can be defined as a method of food production that integrates three main principles: environmental stewardship, economic profitability, and social responsibility. It involves adopting practices that conserve natural resources, protect biodiversity, minimize pollution, and promote the well-being of farmers and rural communities. At its core, sustainable agriculture seeks to find a balance between meeting the growing demand for food and preserving the natural environment. It emphasizes the use of renewable resources, such as organic fertilizers and natural pest control methods, while minimizing the use of synthetic inputs and chemicals. Additionally, sustainable agriculture promotes the use of techniques that enhance soil health, such as crop rotation, cover cropping, and agroforestry.

1.2 Importance of Sustainable Agriculture: Sustainable agriculture is of paramount importance for several reasons. Firstly, it addresses the environmental challenges associated with conventional agricultural practices. Conventional farming often relies heavily on synthetic fertilizers, pesticides, and herbicides, which can lead to soil degradation, water pollution, and the loss of biodiversity. In contrast, sustainable agriculture promotes the use of organic and regenerative practices that minimize environmental harm and foster ecological balance.

Secondly, sustainable agriculture contributes to food security by promoting long-term productivity and resilience. By conserving soil fertility, optimizing water use, and diversifying crops, sustainable farming systems are better equipped to withstand climate change impacts, such as droughts, floods, and extreme weather events. This resilience ensures a stable and consistent food supply, even in the face of environmental uncertainties.

Furthermore, sustainable agriculture has economic benefits. By reducing input costs and reliance on external inputs, such as synthetic fertilizers and pesticides, farmers can achieve greater financial stability. Additionally, sustainable farming practices often create new market opportunities for organic and sustainably produced food, responding to the growing consumer demand for environmentally friendly and healthy products.

Objective: Promoting sustainable agriculture to establish a resilient and regenerative food system for a thriving future

2. Historical Background

2.1 Evolution of Agricultural Practices: The evolution of agricultural practices can be traced back thousands of years to the advent of settled farming communities. Initially, humans practiced subsistence agriculture, relying on simple techniques such as slash-and-burn and shifting cultivation to cultivate small plots of land for their survival. Over time, they developed more advanced methods, including irrigation systems and crop rotation, to improve agricultural productivity.

With the rise of civilizations, such as ancient Egypt, Mesopotamia, and China, agriculture became more organized and intensive. These early civilizations developed techniques for water management, constructed terraced fields, and implemented animal husbandry practices. The use of draft animals, such as oxen, further enhanced agricultural productivity.

During the Middle Ages, the feudal system shaped agricultural practices in Europe. Large estates owned by nobles were worked by peasant farmers who followed traditional farming methods. The introduction of the three-field system, which involved dividing arable land into three parts to rotate crops, helped improve soil fertility and increase yields.

The Industrial Revolution in the 18th and 19th centuries brought significant changes to agriculture. Mechanization, such as the invention of the seed drill and the introduction of steam-powered machinery, revolutionized farming practices. These technological advancements led to increased productivity, but also resulted in the intensification of agriculture and the displacement of many rural communities.

2.2 Emergence of Sustainability Concepts in Agriculture: The concept of sustainability in agriculture began to emerge in response to the negative environmental

*Associate Professor (Chemistry) Govt. PG College, Dholpur (Raj.) INDIA

and social impacts of conventional farming practices. In the mid-20th century, the Green Revolution introduced high-yielding crop varieties, synthetic fertilizers, and pesticides, which greatly increased agricultural productivity. However, these practices also raised concerns about environmental degradation and health risks.

In the 1960s and 1970s, ecological and environmental movements highlighted the need for more sustainable agricultural practices. Influential books like "Silent Spring" by Rachel Carson brought attention to the harmful effects of pesticides on ecosystems and human health. This led to the development of alternative approaches, such as organic farming and integrated pest management, which aimed to minimize the use of chemicals and promote ecological balance.

In the 1980s, sustainable agriculture gained further recognition as the negative impacts of industrial agriculture became more evident. The term "sustainable agriculture" was coined to describe farming systems that were environmentally sound, economically viable, and socially just. Organizations like the Rodale Institute and the Sustainable Agriculture Research and Education (SARE) program played key roles in promoting sustainable farming practices and conducting research in this field.

Since then, the concept of sustainable agriculture has evolved and expanded to encompass a broader range of practices and principles. Agroecology, permaculture, regenerative agriculture, and other approaches have gained prominence, emphasizing the importance of ecological resilience, biodiversity conservation, and community participation in food production.

Today, sustainable agriculture is recognized as a critical approach to address the challenges of food security, climate change, and environmental degradation. It continues to evolve as farmers, researchers, policymakers, and consumers work together to develop and implement innovative and sustainable farming practices.

3. Principles Of Sustainable Agriculture

3.1 Environmental Stewardship: Environmental stewardship is a fundamental principle of sustainable agriculture. It emphasizes the responsible management of natural resources and the protection of the environment. The key practices associated with environmental stewardship include:

a) Conservation and enhancement of soil health: Sustainable agriculture focuses on maintaining and improving soil fertility, structure, and organic matter content. This can be achieved through practices such as crop rotation, cover cropping, composting, and reduced tillage. These techniques promote soil conservation, reduce erosion, enhance water holding capacity, and support beneficial soil organisms.

b) Water conservation and efficient use: Sustainable agriculture aims to optimize water use by employing techniques like drip irrigation, rainwater harvesting, and precision irrigation. Water management practices help minimize water waste, prevent water pollution from agricultural runoff, and ensure the availability of water for future generations.

c) Biodiversity conservation: Sustainable agriculture recognizes the importance of biodiversity for ecosystem resilience and food production. It promotes practices that protect and enhance biodiversity, such as the preservation of natural habitats, the use of diverse crop varieties, and the promotion of beneficial insects and wildlife on farms. These practices contribute to pest control, pollination, and overall ecosystem health.

3.2 Social Equity: Social equity is another important principle of sustainable agriculture. It recognizes the rights and well-being of farmers, workers, and rural communities involved in the food system. Key aspects of social equity in sustainable agriculture include:

a) Fair treatment and livelihoods for farmers: Sustainable agriculture supports fair and just working conditions for farmers, ensuring they receive a fair share of the profits from their labor. This includes access to land, resources, credit, and markets, as well as protection against unfair trade practices.

b) Preservation of rural communities: Sustainable agriculture values the social fabric and cultural heritage of rural communities. It seeks to maintain vibrant rural communities by supporting local food systems, promoting diversified farming enterprises, and encouraging community participation in decision-making processes related to agriculture and food production.

c) Education and empowerment: Sustainable agriculture promotes knowledge sharing, education, and capacity building for farmers and agricultural stakeholders. It empowers farmers with the necessary skills and information to adopt sustainable practices and make informed decisions about their farming operations.

3.3 Economic Viability: Economic viability is a crucial principle of sustainable agriculture, ensuring that farming practices are economically sound and provide livelihood opportunities. Key elements of economic viability in sustainable agriculture include:

a) Profitability and resilience: Sustainable agriculture aims to create economically viable farming systems that generate sufficient profits for farmers. It emphasizes diversification, value-added products, and direct marketing channels to enhance farm income and reduce reliance on volatile commodity markets. Additionally, sustainable farming practices contribute to long-term resilience by minimizing input costs and improving resource efficiency.

4. Practices For Sustainable Agriculture

4.1 Conservation Agriculture: Conservation agriculture is a set of practices that focus on maintaining soil health, reducing erosion, and optimizing water use. Key elements of conservation agriculture include:

a) Minimum tillage: Conservation agriculture promotes reduced or no-till farming, minimizing soil disturbance and preserving soil structure. This practice helps prevent

erosion, improves water infiltration, and preserves soil organic matter.

b) Crop residue management: Leaving crop residues on the soil surface acts as a protective cover, reducing soil erosion, retaining moisture, and enhancing soil fertility. Crop residues also contribute to the build-up of organic matter, improving soil health over time.

c) Crop diversification: Diversifying crop rotations helps break pest and disease cycles, improves soil nutrient balance, and reduces reliance on synthetic fertilizers and pesticides. Rotating cash crops with cover crops enhances soil health, weed suppression, and nutrient cycling.

4.2 Organic Farming: Organic farming is a production system that avoids synthetic fertilizers, pesticides, and genetically modified organisms (GMOs). Key practices in organic farming include:

a) Soil fertility management: Organic farming relies on organic matter inputs such as compost, animal manure, and cover crops to improve soil fertility. These practices enhance soil structure, nutrient availability, and water-holding capacity.

b) Pest and disease management: Organic farming employs methods like crop rotation, biological control, habitat manipulation, and the use of resistant crop varieties to manage pests and diseases. Integrated pest management (IPM) principles are followed to minimize chemical inputs.

c) Prohibition of synthetic inputs: Organic farming prohibits the use of synthetic fertilizers, pesticides, herbicides, and GMOs. Instead, natural and approved organic inputs are used to enhance plant health and manage pests and diseases.

4.3 Agroforestry: Agroforestry involves integrating trees, crops, and/or livestock on the same piece of land. It **offers multiple benefits, including:**

a) Biodiversity conservation: Agroforestry systems provide habitat for diverse plant and animal species, enhancing biodiversity and promoting ecological balance.

b) Soil conservation: Tree cover in agroforestry systems helps prevent soil erosion, reduces runoff, and improves soil structure and fertility.

4.4 Permaculture: Permaculture is a design system that integrates ecological principles to create sustainable and self-sufficient systems. Key practices in permaculture include:

a) Designing for efficiency: Permaculture emphasizes designing systems that minimize waste, energy use, and inputs. It promotes efficient use of resources and encourages closed-loop systems, such as composting and rainwater harvesting.

b) Diversity and polyculture: Permaculture encourages diverse plantings and polyculture systems, mimicking natural ecosystems. This approach enhances resilience, pest control, and overall system productivity.

c) Use of perennial plants: Permaculture emphasizes the use of perennial plants, such as fruit trees and perennial vegetables, which have longer lifespans, deeper root systems, and provide ongoing yields.

4.5 Crop Rotation and Diversification: Crop rotation and diversification involve the practice of growing different crops in a specific sequence over time. Benefits of crop rotation and diversification include:

a) Pest and disease management: Crop rotation disrupts pest and disease cycles, reducing the buildup of pathogens and pests associated with specific crops. It helps control weeds and minimizes the need for chemical inputs.

b) Nutrient management: Different crops have varying nutrient requirements. Crop rotation allows for better nutrient cycling, reduces soil nutrient imbalances, and minimizes the need for synthetic fertilizers.

4.6 Water Management Techniques: Water management techniques aim to optimize water use and reduce water waste. Some common practices include:

a) Drip irrigation: Drip irrigation delivers water directly to the plant root zone, minimizing water loss through evaporation and reducing water use.

b) Rainwater harvesting: Capturing and storing rainwater for irrigation purposes helps reduce reliance on freshwater sources and ensures water availability during dry periods.

c) Mulching: Applying organic mulch to the soil surface helps conserve moisture by reducing evaporation, maintaining soil temperature, and suppressing weed growth.

d) Water-efficient cropping systems: Selecting drought-tolerant crop varieties and employing water-saving techniques like deficit irrigation can help optimize water use in agriculture.

5. Benefits Of Sustainable Agriculture

5.1 Environmental Benefits

Sustainable agriculture offers numerous environmental benefits, including:

a) Soil conservation and improvement: Sustainable farming practices, such as conservation agriculture and organic farming, promote soil health and fertility. This leads to reduced soil erosion, enhanced water retention, and increased carbon sequestration in the soil, contributing to climate change mitigation.

b) Biodiversity conservation: Sustainable agriculture practices prioritize the preservation and enhancement of biodiversity. By avoiding the use of synthetic pesticides and promoting habitat diversity, sustainable farming systems provide a favorable environment for beneficial insects, birds, and other wildlife, contributing to ecosystem balance and resilience.

c) Water resource management: Sustainable agriculture employs water management techniques that optimize water use and reduce water pollution. By minimizing runoff and leaching of agrochemicals, sustainable practices help protect water quality and preserve freshwater ecosystems.

5.2 Social and Community Benefits

Sustainable agriculture brings several social and community benefits, including:

a) Improved food quality and safety: Sustainable farming practices often prioritize the use of organic and agroecological methods, resulting in food that is free from synthetic pesticides and genetically modified organisms (GMOs). This promotes healthier food options and reduces the potential risks associated with chemical residues in food.

b) Enhanced food security: By promoting diverse cropping systems, sustainable agriculture reduces the vulnerability of food production to climate change and pest outbreaks. Additionally, sustainable practices often focus on local and regional food production, strengthening local food systems and reducing dependence on distant sources.

c) Rural livelihoods and community development: Sustainable agriculture supports the economic viability of small-scale farmers and rural communities. By promoting fair trade, direct marketing, and local food networks, sustainable practices contribute to the economic well-being of farmers and create opportunities for rural employment.

5.3 Economic Benefits

Sustainable agriculture offers various economic benefits, including:

a) Cost savings and resilience: Sustainable farming practices, such as organic farming and conservation agriculture, can reduce input costs by minimizing the need for synthetic fertilizers and pesticides. By improving resource efficiency and resilience, sustainable practices help farmers mitigate risks and adapt to changing market conditions.

b) Market opportunities: There is a growing consumer demand for sustainably produced food. Sustainable agriculture opens up new market opportunities for farmers who adopt environmentally friendly and socially responsible practices. Organic produce, fair-trade products, and locally sourced food often command higher prices in the market.

c) Long-term viability: Sustainable agriculture promotes the long-term viability of farming operations by prioritizing soil health, water resource management, and biodiversity conservation. By focusing on sustainable practices, farmers can maintain productivity, reduce environmental risks, and ensure the longevity of their farming enterprises.

6. Challenges And Barriers To Sustainable Agriculture

6.1 Policy and Institutional Challenges

a) Lack of supportive policies: The absence of comprehensive policies and regulations that prioritize sustainable agriculture can hinder its widespread adoption. Inadequate policy frameworks, subsidies, and incentives may fail to encourage farmers to transition to sustainable practices.

b) Fragmented institutional support: Sustainable agriculture often requires coordination among multiple institutions, including government agencies, research institutions, and farmer organizations. The lack of coordination and collaboration among these entities can hinder the dissemination of knowledge, access to resources, and the implementation of sustainable farming practices.

6.2 Knowledge and Technology Gaps

a) Limited access to information and training: Farmers may lack access to up-to-date information, technical knowledge, and training on sustainable farming practices. Limited extension services and educational programs can impede the adoption of sustainable agriculture techniques.

b) Research and development gaps: There may be a lack of research and development efforts focused on sustainable agriculture, including the adaptation of sustainable practices to different agroecological contexts. More research is needed to develop and refine sustainable farming techniques, crop varieties, and pest management strategies.

c) Technology affordability and suitability: Access to sustainable agriculture technologies, such as precision irrigation systems or organic inputs, can be limited due to their high costs or incompatibility with local farming systems. Making sustainable technologies more affordable and adaptable to diverse farming contexts is crucial for their widespread adoption.

6.3 Economic and Market Factors

a) Market demand and price premiums: While there is a growing demand for sustainably produced food, the market may not always provide adequate price premiums for farmers practicing sustainable agriculture. Limited market incentives and price differentials can discourage farmers from transitioning to sustainable practices.

b) Access to markets and distribution channels: Small-scale farmers, particularly in remote or marginalized areas, may face challenges in accessing markets and distribution channels for their sustainably produced goods. Limited infrastructure and logistical support can hinder their ability to reach consumers effectively.

c) Economic viability and financial resources: Transitioning to sustainable agriculture practices often requires upfront investments and changes in farm management systems. Limited access to capital, credit, and financial resources can be a barrier for farmers, especially smallholders, who may struggle to finance the initial costs of adopting sustainable practices.

7. Sustainable Agriculture Initiatives And Programs

7.1 Certification and Labeling Systems: Certification and labeling systems play a crucial role in promoting and verifying sustainable agricultural practices. These systems provide consumers with information about the sustainability attributes of agricultural products. Some notable initiatives include:

a) Organic certification: Organic certification ensures that agricultural products are produced using organic farming practices, avoiding synthetic fertilizers, pesticides, and GMOs. Certifications such as USDA Organic (United States), EU Organic (European Union), and JAS Organic (Japan) provide consumers with assurance that the products meet specific organic standards.

b) Fair-trade certification: Fair-trade certification focuses on promoting social equity and fair treatment of farmers

and workers. It ensures that farmers receive fair prices for their products and provides support for community development initiatives. Fairtrade International and various national fair-trade organizations provide certification and labeling for fair-trade products.

7.2 Government Policies and Support: Government policies and support are essential for promoting and incentivizing sustainable agriculture. These initiatives can include:

a) Subsidies and incentives: Governments can provide financial support, subsidies, and incentives for farmers who adopt sustainable practices. This can include funding for organic farming, conservation agriculture, and agroecological research and development. Incentives can also be provided for sustainable water management and soil conservation practices.

b) Regulatory frameworks: Governments can establish regulations and standards that require or encourage sustainable agricultural practices. This can include restrictions on the use of synthetic pesticides and fertilizers, guidelines for soil and water conservation, and regulations promoting organic farming.

7.3 Non-Governmental Organizations (NGOs) and Initiatives: Non-governmental organizations (NGOs) and initiatives play a significant role in promoting and implementing sustainable agriculture practices. These organizations often work in collaboration with farmers, communities, and other stakeholders. Some prominent examples include:

a) Sustainable agriculture networks: Organizations like the Sustainable Agriculture Network (SAN) and the Sustainable Food Lab work with farmers, businesses, and NGOs to promote sustainable farming practices, certification systems, and market access for sustainably produced goods.

b) Farmer organizations and cooperatives: Farmer organizations and cooperatives play a vital role in supporting sustainable agriculture. They provide training, knowledge sharing, and market access opportunities for small-scale farmers practicing sustainable farming methods.

c) Conservation organizations: Environmental conservation organizations, such as The Nature Conservancy and World Wildlife Fund (WWF), engage in sustainable agriculture initiatives. They work to protect natural resources, promote sustainable land use practices, and collaborate with farmers to implement conservation-oriented farming systems.

8. Case Studies

8.1 Successful Sustainable Agriculture Projects

a) The SRI (System of Rice Intensification) in India: The SRI project in India has demonstrated significant success in promoting sustainable rice cultivation. By modifying traditional rice farming techniques, such as reducing water usage and transplanting younger seedlings, farmers have achieved higher yields, reduced input costs, and improved soil health. This project has benefited thousands of small-scale farmers and has been widely adopted across India and other countries.

b) Organic Farming in Denmark: Denmark has made remarkable progress in promoting organic farming practices. Through a combination of government support, farmer training programs, and consumer demand, Denmark has increased its organic agricultural land significantly. The country has implemented policies that provide financial incentives and support for farmers transitioning to organic practices, resulting in a thriving organic farming sector.

8.2 Lessons Learned and Best Practices

a) Farmer-centered approaches: Successful sustainable agriculture projects often involve active participation and engagement of farmers. Including farmers in the decision-making process, providing training and technical support tailored to their needs, and incorporating their traditional knowledge can enhance the adoption and success of sustainable practices.

b) Knowledge sharing and capacity building: Sharing knowledge, best practices, and success stories among farmers, researchers, and extension services is crucial. Training programs, workshops, and farmer field schools can facilitate the dissemination of information and the exchange of experiences, enabling farmers to adopt sustainable practices effectively.

c) Collaboration and partnerships: Building collaborations and partnerships among stakeholders,

9. Future Directions And Opportunities

9.1 Climate Change and Sustainable Agriculture: Climate change presents significant challenges to agriculture, but it also offers opportunities for innovation and adaptation. Future directions in sustainable agriculture include:

a) Climate-smart agriculture: Climate-smart agriculture integrates climate change adaptation and mitigation strategies into farming practices. It involves the use of resilient crop varieties, water management techniques, agroforestry, and precision agriculture to minimize the environmental impact of agriculture while increasing productivity and resilience.

b) Carbon farming and payments for ecosystem services: Carbon farming involves implementing practices that sequester carbon dioxide from the atmosphere into agricultural soils and vegetation. It provides an opportunity for farmers to earn carbon credits or receive payments for providing ecosystem services like carbon sequestration, water quality improvement, and biodiversity conservation.

c) Climate-resilient crop breeding: Developing crop varieties that are more resilient to climate change, such as drought-tolerant, heat-tolerant, and disease-resistant varieties, is a crucial area of research and breeding. These climate-resilient crops can help farmers adapt to changing climatic conditions and maintain agricultural productivity.

9.2 Digital Technologies in Sustainable Agriculture: Digital technologies offer immense potential to enhance sustainable agriculture practices. Some future directions

and opportunities include:

a) Precision agriculture: Precision agriculture utilizes technologies such as remote sensing, drones, and GPS mapping to optimize the use of inputs, such as fertilizers and water, based on site-specific conditions. This improves resource efficiency, reduces environmental impact, and increases productivity.

b) Data-driven decision making: Collecting and analyzing data from farms, weather stations, and other sources can provide valuable insights for farmers. Predictive analytics, machine learning, and artificial intelligence can help optimize crop management, pest control, and irrigation scheduling, leading to more sustainable and precise farming practices.

c) Blockchain and traceability systems: Blockchain technology can enhance transparency and traceability in the agricultural supply chain. By providing immutable records of transactions, it can help ensure the authenticity of sustainable agriculture claims, fair-trade practices, and product certifications, fostering trust among consumers.

9.3 Sustainable Agriculture in Developing Countries: Promoting sustainable agriculture in developing countries is essential for achieving food security, poverty reduction, and environmental sustainability. Future directions and opportunities include:

a) Small-scale farmer empowerment: Providing access to training, knowledge, financial resources, and market linkages can empower small-scale farmers to adopt sustainable practices. Supporting farmer organizations and cooperatives can enhance their bargaining power, increase income opportunities, and promote sustainable agricultural practices.

b) Climate-smart agriculture for resilience: Developing and promoting climate-smart agriculture practices tailored to the specific challenges of developing countries is crucial. This includes promoting drought-tolerant crop varieties, agroforestry systems, water-efficient irrigation, and sustainable soil management practices that enhance resilience to climate **change impacts.**

c) Sustainable intensification: Balancing the need for increased agricultural production with environmental sustainability is a key challenge in developing countries. Sustainable intensification approaches focus on maximizing productivity while minimizing environmental impact, through improved crop management, integrated pest management, and efficient use of resources.

By embracing these future directions and opportunities, sustainable agriculture can contribute to food security, poverty reduction, environmental conservation, and the overall well-being of communities in both developed and developing countries.

10. Conclusion: In conclusion, sustainable agriculture is crucial for cultivating a resilient and regenerative food system that can meet the needs of the present generation without compromising the ability of future generations to meet their own needs. It encompasses practices that prioritize environmental stewardship, social equity, and economic viability.

Throughout history, agricultural practices have evolved, and the concept of sustainability in agriculture has emerged in response to the environmental and social challenges posed by conventional farming methods. Today, there are various principles and practices that define sustainable agriculture, including conservation agriculture, organic farming, agroforestry, permaculture, and water management techniques.

Sustainable agriculture offers numerous benefits. Environmentally, it promotes soil health, biodiversity conservation, water conservation, and reduced chemical inputs. Socially, it fosters community resilience, supports rural livelihoods, and ensures fair treatment of farmers and workers. Economically, sustainable agriculture can enhance farm profitability, promote market diversification, and contribute to local economic development.

However, sustainable agriculture also faces challenges and barriers that need to be addressed. These include policy and institutional challenges, knowledge and technology gaps, and economic and market factors. Overcoming these challenges requires collaborative efforts from policymakers, institutions, researchers, and the private sector to create supportive policies, improve knowledge dissemination, invest in research and development, and strengthen market linkages.

There are various initiatives and programs that support sustainable agriculture, such as certification and labeling systems, government policies and support, and the involvement of non-governmental organizations. These initiatives provide frameworks, incentives, and resources to promote and verify sustainable agricultural practices.

Looking ahead, the future of sustainable agriculture lies in addressing climate change impacts, harnessing the potential of digital technologies, and promoting sustainable agriculture in developing countries. Climate-smart agriculture, digital technologies, and empowering small-scale farmers in developing countries are important future directions and opportunities for sustainable agriculture.

By embracing these future directions, addressing challenges, and capitalizing on opportunities, sustainable agriculture can play a significant role in building a resilient and regenerative food system that ensures food security, supports communities, and preserves the planet's resources for future generations.

Refefrences:-

1. Amede, T.; Desta, L.T.; Harris, D.; Kizito, F.; Cai, X. *The Chinyanja Triangle in the Zambezi River Basin, Southern Africa: Status of, and Prospects for, Agriculture, Natural Resources Management and Rural Development*; CGIAR Research Program on Water, Land and Ecosystems (WLE); (WLE Research for Development (R4D) Learning Series 1); International Water Management Institute (IWMI): Colombo, Sri Lanka, 2014; p. 32.

2. German, L.; Mowo, J.; Amede, T.; Masuki, K. (Eds.) *Integrated Natural Resources Management in the Highlands of Eastern Africa: From Concept to Practice*; World Agroforsetry Centre (ICRAF), Nairobi and International Development Research Centre (IDRC): Ottawa, ON, Canada; Earthscan: London, UK; New York, NY, USA, 2012; p. 350.
3. Nkonya, E.; Mirzabaev, A.; von Braun, J. (Eds.) Economics of Land Degradation and Improvement—A Global Assessment for Sustainable Development. 2016. Available online: https://www.springer.com/gp/book/9783319191676
4. Pretty, J.; Bharucha, Z.P. Sustainable intensification in agricultural systems. *Ann. Bot.* 2014, *114*, 1571–1596.
5. Gliessman, S.R. *Agroecology: The Ecology of Sustainable Food Systems*; CRC Press, Taylor & Francis: New York, NY, USA, 2007; p. 384.
6. Francis, C.; Lieblein, G.; Gliessman, S.; Breland, T.A.; Creamer, N.; Harwood, R.; Salomonsson, L.; Helenius, J.; Rickerl, D.; Salvador, R.; et al. Agroecology: The ecology of food systems. *J. Sustain. Agric.* 2003, *22*, 99–118
7. Wezel, A.; Casagrande, M.; Celette, F.; Vian, J.F.; Ferrer, A.; Peigné, J. Agroecological practices for sustainable agriculture. A review. *Agron. Sustain. Dev.* 2014, *34*, 1–20. Denison, F.; McGuire, A.M. What should agriculture copy from natural ecosystems? *Glob. Food Secur.* 2015, *4*, 30–36.

****

High Tech Agrotechniques For Early Fruiting In Aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*)

Rajendra Singh*

Abstract -Aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*), commonly called Indian gooseberry, belonging to family Euphorbiaceae, is one of the oldest known indigenous fruit tree species with wide distribution, reflecting its adaptation to wide range of edaphoclimatic conditions.

It finds mention in the Vedas, Ramayan, Charak Samhita, Sushrut Samhita, literature of Kalidas, Kadambri and other ancient texts. Aonla fruit is rich in vitamin C and pectin. It is therefore, regarded important for medicine particularly in Ayurvedics, Undoubtedly. It is the richest natural source of vitamin C known to mankind. It is a great health and vitality restorer.

An attempt has been made to use high tech agrotechniques to achieve early bearing in Aonla.
Keywords: Indian gooseberry, *Emblica officinalis,* Pollinizer.

Introduction - Aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*), also known as Indian gooseberry, is an important fruit crop of Indian origin in all parts of country in diverse agro-climatic conditions. It has been regarded as a sacred tree and known as **Amrit phal** in ancient literature. Besides India, Aonla trees are also found in the natural forests of Cuba, USA, Pakistan, Sri Lanka, Malaysia, China, Java and West Indies. It is used in Ayurvedic medicine for making Triphala and Chyavanprash. Owing to its hardy nature, high productivity, nutritive and therapeutic values, and its suitability for various kinds of value added products, Aonla has now become an important fruit of 21st century (Pathak, 2003). The fruit is useful against several ailments, and can be made into various value added products. Fruit is also used to prepare Aonla powder, which is superior to synthetic vitamin 'C' in treating deficiencies. It is grown at an estimated area of 50,000 ha with an annual production of 1.5 lakh tonnes (Pathak *et al*. 2003).

Materials And Methods: The investigation was carried out at Dayanand College, Ajmer, the semi-arid region of Rajasthan, During 2002 to 2004. Geographically the area is located at a latitude of 26°25' to 26°30' N and longitude 74°35' to 74°42' E and about 498 asl. The average annual rainfall during the experimental period was more then 500 mm. the soil reaction was alkaline in nature (pH 8.2). For better establishment of orchard,the pits of lm^3 size were dug out a spacing of 8x8 m. and pit profiles had good soil. The pits were filled with 50 percent top soil mixed with different dosages of gypsum, goat manure, confidor and fertilizer levels (Table 1). The patch budded Aonla cultivar 'NA7' was planted as a main variety and 50per cent pollinizer (NA6) in September, 2002 followed by light irrigation. For avoiding problem of self incompatibility, planting NA6 plants to effect proper fruit setting (Singh, H.K. et al. 2001). Bajpai (1968), Ram (1983) and Mohammad and Ram (1990) reported that poor fruit set and retention in Aonla are due to lack of pollinators or pollinizers or both. The various dosages of fertilizers were given twice in a year. Irrigation was given uniformly as and when desired through ring system. The experiment was laid out in randomized block design having four replications. The data on plant growth and yield were recorded and analyzed statistically.

Table 1 (see in next page)

Result And Discussion: After establishment of plants in the field, the following data on growth parameters were recorded after fruit setting i.e. plant height crown spread and collar diameter as well as yield of plant in November, 2004. (Table 2) :

1. The maximum plant height was recorded in T_2 (2.03m) followed by T_1 (1.73m), T_4 (1.50m), T_5 (1.35m), T_3(1.21m) and minimum in control i.e. T_6(0.82m).
2. The maximum crown spread was recorded in T_1 (0.77m) followed by T_2 (0.76m), T_4 (0.67m), T_5(0.53m), T_3(0.50m) and minimum in control i.e. T_6(0.24m).
3. The maximum collar diameter was recorded in T_2 (14.40cm) followed by T_1 (11.53cm), T_3 (10.40cm), T_4 (9.17cm), T_5(7.34cm) and minimum in control i.e. T_6 (5.77cm).
4. The maximum yield was recorded in T_3 (900g) followed by T_2 (173.75g), T_4 (81.25g), T_5 (45.5g), T_1 (41.75g) and minimum in control i.e. T_6.

The Table 2 showed that maximum growth of the plants was recorded in T_2 whereas minimum in control i.e. T_6 where nothing was incorporated in the pits. The maximum yield

*Department of Horticulture, Government College, Uniara, Tonk (Raj.) INDIA

was recorded in T_3.

Table 2 (see below)

Conclusion: The experiment was fairly successful but it is suggested that the main objective should be to get early fruiting in Aonla by mainly manipulating the agrotechniques.

References:-

1. Bajpai P N. 1968. Studies on flowering and fruit development in aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*). *Horticulture Advances* 7 (3) : 38-67.
2. Singh H.K. et al. 2001 Effect of pollinizer on fruit set and fruit quality of 'Narendra Aonla 7' Aonla(*Emblica officinalis Gaertn.*).*Indian Journal of Agricultural Sciences* 71 (1) ; 65-66, January 2001
3. Mohammad A and Ram S. 1990. Cause of low fruit set and heavy fruit drop in Indian gooseberry (*Emblica officinalis Gaertn.*).*Indian Journal of Horticulture* 47 (3) : 270-7.
4. Pathak R K. 2003. Status Report on Genetic Resources of Indian Gooseberry-Aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*) in South and Southeast Asia. IPGRI Office for South Asia National Agriculture Science Centre (NASC) DPS Marg, Pusa Campus, New Delhi, India, pp 1–96.
5. Pathak R K, Srivastava A K, Dwivedi R and Singh H K. 2003. Aonla Descriptor. Department of Horticulture, Narendra Dev University of Agriculture &Technology, Faizabad (U P).
6. Ram S. 1983. Aonla (*Emblica officinalis Gaertn.*) - Uses, botany and cultivation. Research Bulletin 11 D. Directorate of Experiment Station, G B Pant University of Agriculture and Technology, Pantnagar, pp 1-26

Table 1 : Pit mixture under different treatments.

Treatments	Gypsum (Kg)	Goat manure (Kg)	Confidor (Ml.)	MOP (g)	DAP (g)	Urea (g)
T_1	10	25	07	50	50	50
T_2	8	20	6	40	40	40
T_3	6	15	5	30	30	30
T_4	4	10	4	20	20	20
T_5	2	5	3	10	10	10
T_6	0	0	0	0	0	0

Table 2 : Growth and yield parameters of Aonla under different treatments recorded in year 2004.

Treatments	Plant height (m)	Crown spread (m)	Collar diameter (cm)	Yield (g)
T_1	1.73	0.77	11.53	41.75
T_2	2.03	0.76	14.40	173.75
T_3	1.21	0.50	10.40	900
T_4	1.50	0.67	9.17	81.25
T_5	1.35	0.53	7.34	45.5
T_6	0.82	0.24	5.77	-
CD(5%)	0.18	0.06	2.2	-

****

The Influence of Culture and Traditions on Indian Society

Dr. Sandhya Jaipal*

Abstract - This research paper explores the profound influence of culture and traditions on Indian society. India, known for its rich cultural heritage and diverse traditions, has a long history of shaping societal norms, values, and behaviors. India is a country known for its rich cultural heritage and diverse traditions, which have significantly shaped the fabric of its society. With a history spanning thousands of years, Indian culture encompasses a wide range of practices, beliefs, customs, and artistic expressions. These cultural elements are deeply ingrained in the lives of its people and have a profound influence on their social interactions, values, and identity. The paper discusses the various dimensions of Indian culture and traditions, including religion, languages, festivals, art forms, social structures, and family dynamics. Additionally, it examines the dynamic nature of culture and traditions and their impact on different aspects of Indian society, such as social interactions, gender roles, education, and the economy. By analyzing the influence of culture and traditions, this paper aims to provide a comprehensive understanding of the deep-rooted connection between Indian society and its cultural fabric.

Indian Culture: An Overview

Definition and Components of Culture: Culture can be defined as the shared patterns of beliefs, values, customs, behaviors, and artifacts that characterize a particular group or society. Indian culture is marked by its diversity and pluralism, stemming from the coexistence of various religious, regional, linguistic, and ethnic groups. It encompasses a wide range of elements, including religious practices, languages, literature, music, dance, visual arts, cuisine, clothing, and social customs.

Cultural Diversity in India: India is a melting pot of cultures, with its vast geographical expanse housing numerous regional cultures and traditions. Each region has its own distinct customs, languages, and art forms, contributing to the diverse cultural tapestry of the nation. The cultural diversity in India is a result of centuries of intermingling, migration, and historical influences from different civilizations.

Indian Cultural Values and Beliefs: Indian culture is deeply rooted in its spiritual and philosophical traditions. Concepts such as dharma (duty/righteousness), karma (action and consequences), and moksha (liberation) shape the moral and ethical framework of Indian society. Values such as respect for elders, hospitality, tolerance, and harmony are highly cherished in Indian culture.

Role of Religion in Indian Culture: Religion plays a pivotal role in Indian culture, with Hinduism, Islam, Christianity, Sikhism, Buddhism, and Jainism being the major religions practiced in the country. Religious beliefs and practices permeate various aspects of Indian society, influencing rituals, festivals, social customs, and even dietary preferences. The interplay of religion and culture contributes to the vibrant tapestry of Indian society.

Traditions: A Living Legacy

Significance of Traditions in Indian Society: Indian society places great significance on traditions, considering them an integral part of daily life. Traditions are passed down from generation to generation and encompass a wide range of practices, rituals, customs, and beliefs. These traditions provide a sense of identity and belonging to individuals and communities, reinforcing cultural values and strengthening social bonds.

Rituals and Ceremonies: Rituals and ceremonies form a major component of Indian traditions. These encompass religious rituals, such as prayers, worship, and pilgrimages, as well as life cycle ceremonies like birth ceremonies, weddings, and funerals. Each ritual and ceremony holds symbolic meaning and serves to connect individuals to their cultural and religious roots. They often involve intricate rituals, vibrant attire, music, dance, and feasts, fostering a sense of communal celebration and unity.

Folklore and Oral Traditions: Indian folklore and oral traditions are rich in mythology, legends, folk tales, and epic narratives. Passed down through generations, these stories reflect the collective wisdom, values, and moral teachings of Indian society. They serve as a means of transmitting cultural knowledge, preserving history, and instilling moral values in younger generations. Oral traditions also encompass traditional forms of storytelling, music, and performing arts, which continue to be cherished and

***Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA**

performed today.

Traditional Art Forms: Indian traditional art forms, such as classical music, dance, painting, sculpture, and handicrafts, are deeply rooted in cultural traditions. These art forms often have historical and religious significance and serve as expressions of creativity, spirituality, and cultural pride. They have been refined and preserved over centuries, maintaining their authenticity and cultural essence. Traditional art forms not only entertain but also contribute to the economic and cultural development of communities.

Cultural Influence on Social Structures

Caste System and Social Hierarchy: The caste system has had a significant influence on the social structure of Indian society. It is a complex hierarchical system that categorizes individuals into different castes, each with its own prescribed social roles, occupations, and privileges. The caste system has influenced marriage practices, social interactions, and access to resources and opportunities. Although efforts have been made to address the inequalities associated with the caste system, its influence can still be observed in various aspects of Indian society.

Family Structure and Dynamics: Family holds a central position in Indian society, and the influence of culture and traditions on family structure and dynamics is profound. Traditionally, Indian families have been joint families, where multiple generations live together and share resources and responsibilities. Respect for elders, strong familial bonds, and the concept of filial piety are deeply ingrained cultural values. However, with urbanization and changing lifestyles, nuclear families are becoming more prevalent, although the influence of traditional family values continues to shape relationships and societal expectations.

Role of Elders and Respect for Authority: In Indian culture, respect for elders and authority figures is highly valued. Elders are considered a source of wisdom, guidance, and experience, and their opinions and decisions are given great importance. This respect for authority extends beyond the family to other spheres of life, such as educational institutions, workplaces, and community settings. Cultural traditions emphasize the importance of seeking advice and approval from elders, fostering a hierarchical social structure based on age and authority.

Community and Social Cohesion: Culture and traditions play a vital role in fostering community and social cohesion in Indian society. Community gatherings, religious festivals, and social events provide opportunities for individuals to come together, share experiences, and strengthen social bonds. These communal activities promote a sense of belonging, mutual support, and collective identity. Cultural traditions, such as community service, philanthropy, and cooperative activities, further contribute to the social fabric by encouraging cooperation, empathy, and social responsibility.

Cultural Influence on Social Structures

Caste System and Social Hierarchy: One of the most significant aspects of Indian society is the caste system, which is a hierarchical social structure deeply rooted in cultural and traditional beliefs. The caste system divides society into distinct social groups based on occupation, birth, and inherited social status. Each caste has its own set of customs, rules, and responsibilities, creating a complex social hierarchy. The influence of the caste system can be seen in various aspects of Indian society, including marriage practices, occupation choices, social interactions, and access to resources and opportunities.

Family Structure and Dynamics: Indian culture places great emphasis on family values and the concept of joint families. The family is considered the cornerstone of Indian society, and it plays a crucial role in shaping individuals' identities and behaviors. Traditional Indian families often consist of multiple generations living together under one roof, with a strong sense of kinship and interdependence. The hierarchical structure within the family, with elders holding authority and respect, influences decision-making, roles, and responsibilities within the household.

Role of Elders and Respect for Authority: Indian culture values the wisdom and experience of elders, and there is a strong emphasis on showing respect and obedience to authority figures. Elders are regarded as repositories of knowledge and moral guidance, and their opinions hold significant weight in family and community matters. The influence of this cultural value can be observed in various spheres of Indian society, such as the education system, workplace dynamics, and even political and governance structures.

Community and Social Cohesion: Indian society places great importance on community and social cohesion. Communities are often formed based on geographical location, language, religion, or caste, and they act as a support system for individuals. Communities in India provide a sense of belonging, social support, and collective identity. Cultural and traditional practices, such as religious festivals, community celebrations, and social gatherings, strengthen the bonds within the community and foster social cohesion.

Impact on Gender Roles

Gender Stereotypes and Expectations: Indian culture has traditionally prescribed distinct gender roles and expectations for men and women. Gender stereotypes, such as the perception of men as breadwinners and women as caregivers and homemakers, have influenced societal attitudes, behaviors, and opportunities. These stereotypes can limit women's access to education, employment, and decision-making positions, while reinforcing male dominance and privilege.

Marriage and the Institution of Dowry: Marriage is considered a significant event in Indian society, and cultural and traditional practices surrounding marriage play a crucial role. The practice of dowry, although illegal, continues to persist in certain parts of Indian society. Dowry is a cultural practice in which the bride's family provides financial or material gifts to the groom's family. This practice reflects

deep-rooted gender inequalities, as it places a financial burden on the bride's family and can lead to exploitation and abuse.

Women's Empowerment and Changing Gender Dynamics: Over the years, there has been a gradual shift in gender dynamics in India. Women's empowerment movements, legal reforms, and increased access to education have challenged traditional gender roles and stereotypes. Women are increasingly participating in various spheres of society, including politics, education, entrepreneurship, and the workforce. However, despite progress, gender inequality and discrimination persist in certain contexts, highlighting the complex interplay between culture, traditions, and women's empowerment.

Intersectionality: Caste, Class, and Gender: It is important to recognize that the influence of culture and traditions on gender roles is not uniform across all sections of Indian society. Intersectionality, which considers the overlapping and intersecting identities of individuals, adds complexity to the understanding of gender dynamics. Factors such as caste, class, religion, and regional differences intersect with gender, resulting in diverse experiences and challenges for individuals. For example, gender-based discrimination may be compounded by caste-based discrimination or economic disparities, further shaping the social structures and roles within different communities.

Education and Cultural Transmission

Traditional Systems of Education: Indian culture and traditions have played a significant role in shaping traditional systems of education in the country. Historically, education in India was imparted through ancient centers of learning such as gurukuls, where students lived with their teachers and imbibed not only knowledge but also values and ethics. These systems emphasized holistic development and the transmission of cultural and moral values from one generation to another.

The Influence of Culture on Education: Indian culture has a profound influence on the content, methods, and values incorporated in the education system. Cultural values such as respect for elders, discipline, and perseverance are often integrated into the curriculum. Moreover, Indian education emphasizes the study of ancient texts, scriptures, and classical languages, which provide a deeper understanding of the cultural heritage.

Challenges and Reforms in the Education Sector: While traditional systems of education have their merits, they also face challenges in a rapidly changing society. The education sector in India has witnessed reforms to align with modern demands and global standards. Efforts have been made to strike a balance between preserving cultural values and incorporating contemporary knowledge and skills. Additionally, there is an increased focus on inclusive education, gender equality, and the promotion of critical thinking and creativity.

Language and Cultural Identity: Language is a crucial aspect of culture and plays a significant role in preserving cultural identity. In India, there are numerous languages spoken across different regions, each with its own cultural nuances. Efforts have been made to promote and preserve regional languages, recognizing their role in maintaining cultural diversity. However, the dominance of certain languages in education and administration poses challenges to the preservation of linguistic and cultural diversity.

Economic Impact of Culture and Traditions

Art and Handicrafts Industry: India's diverse cultural traditions have given rise to a vibrant art and handicrafts industry. Traditional crafts such as pottery, weaving, embroidery, and woodwork have been passed down through generations. These crafts not only provide livelihoods to artisans but also contribute to the country's cultural heritage and serve as a source of attraction for tourists and collectors.

Tourism and Cultural Heritage Sites: India's rich cultural heritage, including historical monuments, temples, and UNESCO World Heritage Sites, attracts millions of tourists every year. Cultural tourism plays a significant role in the country's economy, generating employment opportunities and promoting economic growth. The preservation and promotion of cultural heritage sites are crucial for sustaining tourism and its associated economic benefits.

Cultural Entrepreneurship and Cultural Diplomacy: Culture and traditions have given rise to cultural entrepreneurship, where individuals and communities leverage their cultural assets to create sustainable businesses. This includes activities such as organizing cultural events, heritage walks, traditional cuisine, and promoting indigenous art forms. Furthermore, cultural diplomacy, which involves showcasing Indian culture and traditions on international platforms, contributes to strengthening bilateral relations, promoting trade, and fostering global understanding.

Contemporary Changes and Challenges

Globalization and Cultural Homogenization: Globalization has led to the exchange of ideas, values, and lifestyles, influencing Indian society. While globalization offers opportunities for cultural exchange, it also poses challenges to preserving unique cultural traditions. There is a risk of cultural homogenization, where indigenous practices and traditions are overshadowed by dominant global cultures.

Urbanization and Changing Lifestyles: Urbanization and the migration of people from rural to urban areas have led to shifts in lifestyles and social structures. The influence of Western cultures and urban lifestyles has resulted in changes in clothing, food habits, family structures, and social norms. These changes often lead to tensions between traditional values and modern aspirations.

Interplay of Traditional and Modern Values: Indian society experiences a constant interplay between traditional and modern values. While traditional values continue to hold importance in many aspects of life, modern values

such as individualism, gender equality, and technological advancements are gaining prominence. This interplay often creates a complex tapestry of societal norms and expectations.

Revival and Preservation of Cultural Heritage: Recognizing the importance of preserving cultural heritage, there are ongoing efforts to revive and promote traditional art forms, languages, and practices. Various government initiatives, cultural organizations, and community-led movements aim to ensure the continuity of cultural traditions and their relevance in contemporary times. These efforts focus on education, documentation, skill development, and creating awareness among the younger generations about their cultural heritage.

By understanding the challenges and changes resulting from globalization, urbanization, and the interplay of traditional and modern values, it becomes possible to navigate the complexities and ensure the preservation of Indian culture and traditions in a rapidly evolving society.

Conclusion: Throughout this research paper, we have explored the profound influence of culture and traditions on Indian society. The findings reveal that culture and traditions play a crucial role in shaping societal norms, values, and behaviors. Indian culture, with its diverse components such as religion, languages, festivals, art forms, and social structures, serves as a powerful force in defining the identity and social fabric of the country. The study highlighted the significance of traditions as a living legacy in India. Rituals, ceremonies, folklore, and traditional art forms act as a bridge between generations, transmitting values and knowledge from one era to the next. Moreover, the research shed light on the impact of culture and traditions on various aspects of Indian society, including social structures, gender roles, education, and the economy. In conclusion, the influence of culture and traditions on Indian society is profound and far-reaching. By recognizing and embracing this influence, India can navigate the challenges of a rapidly changing world while preserving its rich cultural heritage.

References:-

1. Ashish Gupta, and Shweta S. Bajpai. “Impact of western culture and English language on Indian culture and society”. New man international journal of multidisciplinary studies, vol. 3, no. 3, Mar. 2016, pp. 38–43.
2. Rochana Bajpai (2015). “Multiculturalism in India: An Exception?” SOAS, University of London, February 13, 2015. https://www.bu.edu/cura/files/2015/06/bajpai-paper-formatted.pdf
3. Kaur, Amritpal. “The impact of western culture on Indian women” Indian Streams Research Journal Impact Factor: 3.1560(UIF) ISSN 2230-7850 Volume - 5 | Issue - 10 | Nov – 2015
4. Beteille, Andre. 2003. ‘Sociology and Social Anthropology’, in Veena Das (ed.), Oxford Companion to Sociology and Social Anthropology, Vol. 1. New Delhi: Oxford University Press.
5. Ambedkar, B.R. 2014/1936. “Annihilation of Caste - The Annotated Critical Edition”. New Delhi: Navayana

****

Mirza Galib: A Poet of All Times

Dr. Arshad Siraj*

Abstract - MirzaAsadullah Khan Ghalib was a famous Indian poet and writer who is widely regarded as one of the greatest poets in the Urdu language. He was born in 1797 in Agra, India and spent most of his life in Delhi. Ghalib was a prolific poet who wrote many ghazals (lyric poems) and other forms of poetry, and his works are known for their depth and complexity.

Ghalib is known for his contributions to Urdu literature and poetry, and his works have been widely translated and are widely read and studied in South Asia and beyond. He was a pioneer of the ghazal form and is credited with popularizing it in India. Ghalib's poems are known for their wit, depth, and beauty, and they continue to be popular and influential in contemporary Urdu literature. In addition to his poetry, Ghalib was also a talented letter-writer, and his letters are considered to be some of the finest examples of Urdu prose.

Ghalib's works have been translated into many languages, and he is considered to be a major figure in the literary and cultural history of India. His legacy continues to be celebrated in India and around the world, and his poetry is widely read and admired by people of all ages.To write about his poetry is a generation long process but his wit (hazirjawaabi), humour , normal conversations and his life style is itself poetic. He was poetry in motion himself.The epitome of Ganga Jamunatehzeeb, the symbol of pluralism this was Ghalib for me. Mirza may not be the Auliya or the reviver of faith but his poetry and philosophies were the soul healers, "Main koshishkartahoonke koi aisibaatlikhoonjopadhekhush ho jaaye';he wrote in one of his famous letters.Ghalib's poetic creations reveal his romanticism and his rich sense of imagination.

Ghalib has had only one love affair of his early youth about which he has talked about in some of his letter. He was in love with a dancing girl who died in her youth. Ghalib was so distraught that he locked himself up in dark room for 40 days and mourned her. No other lover affair has ever been recorded.

The present study encompasses the content that is enough to prove that MirzaGhalib occupies the highest seat and crown in the entire range of Urdu poetry.

Keywords- Poet, Expressions, Shayaris, Ghazals, Shayaris.

Introduction - The world of the Urdu poetry is constituted of the matchless poetry of several great poets that include- Ameer 'Khusro', Allama Muhammad Iqbal, Mirza Asadullah Begh Khan 'Ghalib', Meer Taqi 'Meer', Khawaja Meer 'Dard', Momin Khan 'Momin', QateelShifai, 'Insha' Allah Khan, Bahadur Shah 'Zafar', Ahmed Nadeem Qasmi, Faiz Ahmad 'Faiz', 'Mohsin' Naqwi, Khalil urRehman 'Qamar', 'John' Elia, 'Parveen' Shakir, NoshiGillani, Ahmed 'Faraz', Anwar Masood etc. The poetic works of each of the mentioned poets in the list are important in themselves, and pave a path for the readers to peep into their personal life and their varied tastes for poetry.

It is indeed difficult for a person to decide which of the Urdu poets is best. However, setting aside the whole controversy over the issue of the greatest Urdu poet, let us concentrate on Ghalib, his poetry, his shayaris and his romanticism.

Ghalib, whose full name was Mirza Ghalib, was an Urdu and Persian poet from the Mughal Empire. Ghalib was known for his romantic poetry, and he is considered one of the greatest poets of the Urdu language. Ghalib did have several romantic relationships throughout his life, including a long-term relationship with a courtesan named Umrao Begum. Ghalib also wrote many letters to and about his lover, who is known as "Nigar" in his poetry. It is said that Nigar was his muse and inspiration for many of his poems. "Shayri" was his passion ever since he was a teenager. The word "Ghalib" means winner and there is an interesting story behind why he decided to write under this pen name. He earlier wrote using his actual name "Asad" but when he was still a teenager, he learnt that there was already a poet who was using "Asad" as his pen name.

"Asad is jafa par, buton se wafa ki,
Mere sher shabash, rehmat khuda ki …."

Ghalib read this sher somewhere and absolutely hated it. It got him to worry that if he continued to write as Asad, all these bad couplets will be accredited in his name and someone else will take credit for his couplets. Hence he

*Head of Deptt. (Urdu) Govt. Arts College, Sikar (Raj.) INDIA

decided to change his pen-name and started writing as "Ghalib".Perhaps the most talked about aspect of life apart from "Shayri" is his marriage to UmraoJaan. Some people believe that he was absolutely in love with his wife and adored her all his life. The following lines are believed to have been written by him for Umrao.

Instances of Ghalib'sShayaris

- "Unke dekhe se joaa jaati hai munh par raunak,
  Vo samajhte hai ke beemar ka haal achha hai"
- "Dekha na qismat ki aap apane perash ka ajaaye hai
  main use dek hun bhalaak ab mujhse dekha jaaye hai
- hoke aashiq vo parii rukhaur naazuk ban gaya
  rang khilta jaaye hai jitna ki udta jaaye hai"

He had great difficulty getting his earlier works published. Because of the difficulty people faced in understanding the meaning of his couplets, even all major publishers refused to publish his Ghazals.

- "Zindagi Apni Jab Is Shaki Se Guzri Ghalib
  Ham Bhi Kya Yaad Karenge Ke Khuda Rakhte The"
- "Runj se khugar hua insaan to mit jaata hai runj
  Mushkile in mujh par padi itni ke aasaan ho gayi"

Because he used to drink, his wife stopped eating with him in the same plate. He didn't believe much in god which his wife always questioned because she was highly religious.. Even in his final days, when forced by his wife, he would walk to the gates of the mosque and return without going in.

He had an acute sense of humor. Someone once asked him if "Qalam" or the word "Pen" whether is male of female? Should it be called "Mera Qalam" or "Meri Qalam" to which he replied that if a man writes its "mera qalam" and if a woman writes than its "meri qalam". Similarly, someone asked him if Joota is correct or Jooti to which he replied, "Agar zor se pade toh joota aur agar halki pade toh jooti". He was very fond of Mangoes. On this habit of his, someone remarked that "Aam toh gadhe bhi nahi khaate" to which he replied saying, "Isi liye toh gadhe hain kyunki aam nahi khaate"His rivalry with Zauq is very well known. Once Zauq was passing throught when he remarked,

"Banahai Shah ka Musahib,phir ehaiitrata"

Mirza Ghalib was a renowned Urdu and Persian poet who lived in the 19th century in India. He is considered one of the greatest poets in the Urdu language and his poetry continues to be widely read and celebrated today.The significance of Ghalib's poetry lies in his unique style and the depth of his expression. He was known for his use of language, which was both simple and profound, and his poems often touched on themes such as love, spirituality, and social and political issues.Ghalib's poetry is also significant for its ability to evoke strong emotions in the reader. His use of language and imagery creates a powerful atmosphere that engages the reader and allows them to connect with the feelings and thoughts expressed in his poetry.

Furthermore, Ghalib's poetry has been influential in shaping the Urdu language, and his works are considered classics in the genre. His style has been imitated by many poets and writers, and his poems are still widely studied and recited today.Overall, Ghalib's poetry remains significant today because of its timeless appeal and its ability to evoke strong emotions and connect with readers across time and cultures.

Mirza Assadullah Baig Khan 'Ghalib' is undoubtedly one of the greates Urdu poets of all times who cannot be described in any language of the world.Indeed, words fail to describe him, but a few things that can be mentioned about his poetry including his style of writing which touches the most sensitive subjects of day to day life in a manner that the reader becomes immediately able to relate himself. His is a unique style which allows his cleverness to use metaphors to be mentioned specially.It will not be injudicious to say that it is his style that differentiates his work from all others before or after him.

Mostly he has written about the tough and bitter reality of human life and about human predicament unlike other writers of that time who mostly wrote on romance, love and women.His writings if you read about his life you will get to know are nothing but an account of his own life very beautifully woven using the silk of Urdu and Persian into poetry that inspires us till date.Another characteristic of his immortal work is his use of Persian origin words you will find a lot of Persian origin words in almost every work of him. Reading his shayri enables one to look at the world with a different vision (may often lead to depression and frustration sometimes) but yes his poetry is so powerful that once you dive in you will never be the you, you were earlier.He was great; he is great, and he will be the greatest of all.

Objectives of the Study:

1. Capturing the spirit of Urdu literature and Urdu poetry
2. Peeping into the making of Ghalib a poet and shayar
3. Exploring the specific features from his poetry

Hypothesis:

1. Urdu world of poetry is full of several remarkable poems
2. Urdu poetry is full of romanticism
3. Urdu poetry reflects several genres
4. Ghazals and shayaris were written by most of the Urdu poets.

Methodology: It being subjective, the study was carried out on the basis of the original works and poetic creations of Ghalib, research papers published during the last two decades in the various national and international journals, reports on Ghalib in newspapers etc. The claim of the study as a scientific work lies in the fact that scientific method was used in order to arrive at the conclusion.

Review of Literature

'One of the greatest masters of muse, MirzaAsadullah Khan surnamed Ghalib was a born poet who not only wrote thoughtful poetry but also thought poetically. Known for its exceptional tenderness and sensibility, Ghalib rose above the poets of his age and thought ahead of his times. Ghalib believed that the ideals of culture did not lie in the isolation

of freedom, but on the inter-dependence of individuals and societies in all spheres of thought and action. 'My creed is oneness, my belief renunciation of rituals'. He stood for a learning society where the mind is free and the head is held high. His poetry reflects a deep philosophy based on beauty and truth and has been universally accepted as great poetry.

Ghalib considered poetry as an accomplishment necessary for the nobility of which he was always proud. He wrote his first Urdu Ghazal at 9 and his first Persian 'Masnavi', at 11. Among his early influences were Shaikh Muuzzam, an eminent teacher of Agra in those days, a Persian scholar named Hurmuz who named himself as Abdul Samad on conversion from Parsi religion to Islam. The poet who had defied all Gods in his youth and challenged the angels, realized in old age, that Ghazal was a narrow genre for him, he wanted wider vistas to express himself.

In his youth, Ghalib was a very handsome man. 'When I met him for the first time', wrote Altaf Hussain Haali, his best biographer in 'Yaadgar-e-Ghalib', 'One could easily see what a handsome man he must have been; tall, broadly built, powerful limbs, of charming disposition and ready wit, he appeared even then a fresher from Turan'. A pagan to the core, he stood for the life of pleasure.

Commenting on the poet's hedonistic nature, Prof. Muhammad Sadiq, in his 'History of Urdu Literture' says : 'Ghalib had no conscious theory of life to offer, he was more intent on living his life than theorizing about it; but there is one thing more than another that his life and poetry substantiate, and to which ample testimony is borne by those who knew him personally, it is that he yearned to have more and more of it and explore its possibilities for personal enjoyment. His attitude about the hereafter, as is well known, was skeptical, and even if, occasionally he was led to think of rewards promised to the righteous, a class to which he emphatically did not belong, he decided to have the cash and let the credit go'.'[1]

'Poetry has always been soothing to one's content and when one talks about the language of Urdu and itspoetry then it's a thought of glowing and rich forms of poetry that to this day is read with love andpassion. There has been generous contribution by the Urdu poets, without whom the poetry would nothave been so inspiring and versatile.Writers' are many but only few are most prominent and have immensely touchedone's heart with feelings of pain, pleasure, romance, hatred, aggression, welfare, securityand everything happening around us. Urdu Literature is an ocean of beautiful expressions– this art has been bestowed to the famous Urdu poet of all time Mirza Asadullah Khan Ghalib. His times are of the mughals era, which then forced out by the Brits and then theIndian rebels in 1857(British Colonial rule).[2]

'During the eighteenth century Urdu flourished well but it was in the nineteenth century that Urdu came to its perfection in the works of Mir, Sauda, Zauq, Momin and Ghalib. Among these poets it was Ghalib in particular whose work had a huge impact and led a drastic revolution in Urdu poetry. Ghalib is a classical Urdu and Persian poet from India during British colonial rule. He is considered, in South Asia, to be one of the most popular and influential poets of the Urdu language. Ghalib today remains popular not only in India but also amongst various communities across the globe. Many of his well-known 'Ghazals' have been sung and recorded by numerous performers in India and Pakistan. Poetry was his passion and his work revolves around wanting to create the perfect form and structure. He is one of the founders of the modern Urdu short lyric known as the "Ghazal".'[3]

'The ongoing debate on post Modernism made us realise that truth is not an absolute concept; it is what we construct through language to fulfil our cultural needs. Similarly, the world in which we live in is essentially incongruous where everything is shaped by its otherness, hence it is unreal and indicates banality and voidness. Curiously, it is something that was realised, almost more than two centuries ago, by the most in focus Urdu poet MirzaGhalib. He suspects and turns attention to hypocrisy and embarrassing contradictions in our social mores and it impels him to upturn all accepted theories and norms of social behaviour.'[4]

'On a personal level, he suffered the loss of all his children. He seems to have retained his gusto through good wine, a great sense of humor, and his beloved pen that helped him undermine cherished conventions of his time and hence avenge his own suffering. His popularity hinges not only on his poetry but also on the images projected by his readers/audiences after his death. His influence permeates South Asian literature but also music, religion, and politics. The significance of Ghalib's extraordinary impact on South Asia is suggested by a frequently quoted remark of Abdul RahmanBijnauri, a prominent literary critic of South Asia: "India is home to two divinely inspired works: the Holy Vedas and the corpus of Ghalib's Verse." Such an attitude toward Ghalib testifies to the almost unearthly beauty of his verses. In spite of his seemingly playful attitude toward religion, he has provided inspiration for many generations of Muslim poets. Ironically, he has even been canonized in a popular Saudi Arabian journal, where he is listed as one of the forty-two most notable Muslims in human history; he is in the company of the first four caliphs who succeeded the prophet Muhammad, AbulQasimFirdawsi, Abu Hamid al-Ghazali, MuhyideenIbn al-'Arabi, Jalaluddin Rumi, Muhammad Iqbal, Naguib Mahfouz, and Malcolm X.'[5]

Summing Up: Urdu shayri is a world that is full of shayars. From "Momin" to "Faiz", some of these shayars were quite famous and equally talented but none could match the persona of Ghalib. What makes Ghalib stand above all others is definitely the truth and the pain that rang in his ghazals and couplets. Unlike other noted poets, he never tried to revolve his writings around great philosophy or ideas

of an ideal world but wrote what he saw, what he felt. His mastery however is in his selection of words and the way he presented them. He died in Delhi on 15 February 1869. The house where he lived in Gali Qasim Jaan, Ballimaran, Chandni Chowk, in Old Delhi known as the Ghalib ki Haweli has now been turned into 'Ghalib Memorial' and houses a permanent Ghalib exhibition. After Ghalib, ghazal was never the same. So was the ability of Ghalib, his work is relevant even today.

And these words are true. His lifelong struggle over sorrow and financial matters reflects in almost all his works.

- "Ghalib-e-khasta ke bagair kaun se kaam band hain
  Roiye zaar-zaar kya, kijiye haaye-haaye kyun"
- "Qaid-e-hayat, band-e-gham, asal mein dono ek hain,
  Maut se pehle aadmi gham se nijaat paaye kyun…."
- "yemasaail-e-tasawwuf, ye terabayaan 'Ghalib' !
  tujhe ham walee samajhate, jona baada khwaar hota
- hue mar ke ham joruswa, hue kyo na Garq-e-dariya
  naka bhee jana azau Tha ta, nakaheen mazaar hota".

Mirza Asadullah Khan Ghalib is still considered one of the greatest poets in the Urdu language today because of the timeless quality of his poetry and its continued relevance to modern audiences. Ghalib's poetry is characterized by its depth of emotion, intricate language, and philosophical insights, which have made it popular among scholars, lovers of literature, and everyday readers alike.The significance of Ghalib's poetry lies in its ability to address universal human experiences and emotions, such as love, loss, grief, and longing, in a way that is both poignant and relatable. His poems are also notable for their use of language, which is often complex and sophisticated, yet also accessible and engaging.

In addition, Ghalib's poetry reflects a deep understanding of the human condition and provides insightful commentary on the world around him. His works often address social, political, and religious issues, making them relevant to audiences both then and now.Overall, Ghalib's poetry continues to be widely read and celebrated for its timeless beauty and its ability to resonate with audiences across generations and cultures. He is considered a pioneer of Urdu poetry and continues to be an important figure in the literary world today.

References:-

1. Ministry of Home Affairs-The mind and Art of MIRZA GHALIB, 29-December, 2006 18:4 IST
2. Muhammad Imtiaz Subhani, Syed Akif Hasan, Asadullah Larik, Alam Raza and Amber Osman-Contribution of Ghalib in Urdu Literature, European Journal of Social Sciences (EJSS), Vol. 31, No. 2, pp. 219 – 222, (2012)
3. Bilal Ahmad Dar-Mirza Ghalib's Poetry, Art and Philosophy, Indian Streams Research Journal, Volume : III, Issue : IV, May – 2013
4. Dr. Gopichand Narang-Ghalib revisited, The Hindu, August 01, 2013 07:53 pm
5. Syed Akbar Hyder-Ghalib and His Interlocutors, Comparative Studies of South Asia Africa and the Middle East 26(3), December 2006

****

Deep Learning in Action: A Comprehensive Study of Convolutional Neural Networks for Facial Emotion Recognition

Dr. Sachin S Agrawal* Prof. Sohel Bhura Prof. Pravin R. Satav*****

Abstract - Facial emotion recognition is a critical task in the field of computer vision with applications ranging from human-computer interaction to emotion-driven marketing strategies. (CNNs) Convolutional Neural Networks have established amazing achievement in various image analysis tasks, including facial emotion recognition. This paper presents a comprehensive study on the application of CNNs for facial emotion recognition. The proposed approach leverages the hierarchical feature learning capabilities of CNNs to automatically extract discriminative features from facial images, enabling accurate emotion classification. We experiment with different CNN architectures, data preprocessing techniques, and training strategies to achieve state-of-the-art performance on benchmark emotion recognition datasets. Additionally, we explore the challenges and limitations of CNN-based facial emotion recognition systems and discuss potential avenues for future research. This study contributes to the advancement of emotion recognition technology, highlighting the potential impact of deep learning techniques in understanding and interpreting human emotions from facial expressions.
Keywords: Facial emotion recognition, Convolutional Neural Networks, Deep learning, Image analysis, Emotion classification, Human-computer interaction.

Introduction - Emotions are fundamental to human communication and play a crucial role in shaping interpersonal interactions, decision-making, and overall well-being. The ability to accurately recognize and interpret emotions from facial expressions is a key aspect of human perception. In recent years, there has been a growing interest in developing automated systems that can mimic this capability, leading to the emergence of facial emotion recognition technology.

Traditional approaches to facial emotion recognition relied on handcrafted feature extraction methods, which often struggled to capture the complex and subtle nuances of human expressions. With the advent of deep learning, Convolutional Neural Networks (CNNs) have shown exceptional performance in image analysis tasks, revolutionizing the field of computer vision. CNNs excel at learning hierarchical representations from raw data, making them particularly suitable for tasks involving complex visual patterns, such as facial emotion recognition.

In this paper, we delve into the application of CNNs for facial emotion recognition. We aim to exploit the strengths of CNNs in learning relevant features from raw image data, allowing us to bypass the need for manual feature engineering. By employing various CNN architectures, including state-of-the-art models, we investigate their efficacy in accurately classifying emotions from facial expressions. We also explore preprocessing techniques that enhance the network's ability to focus on relevant facial regions and mitigate variations in lighting, pose, and facial attributes.

Related Work: Through this study, we aim to demonstrate the potential of CNNs in accurately recognizing emotions from facial expressions, contributing to the development of more sophisticated and reliable emotion-aware systems with applications in human-computer interaction, psychology, and beyond.

Facial emotion recognition has garnered substantial attention from researchers due to its broad spectrum of applications. Early approaches primarily relied on handcrafted feature extraction techniques, such as Local Binary Patterns (LBP) and Histogram of Oriented Gradients (HOG), to capture distinctive facial patterns associated with different emotions. While these methods achieved some success, they often struggled with variations in illumination,

***Assistant Professor (Computer Science and Engineering) College of Engineering and Technology, Akola (Maharashtra) INDIA**
**** Assistant Professor (Computer Science and Engineering) Babasaheb Naik College of Engineering, Pusad, (Maharashtra) INDIA**
****** Lecturer (Computer Engineering) Government Polytechnic, Arvi (Maharashtra) INDIA**

pose, and expression.

The introduction of Convolutional Neural Networks (CNNs) revolutionized the landscape of facial emotion recognition. CNNs are inspired by the visual processing mechanisms of the human brain and consist of multiple layers, including convolutional and pooling layers, that automatically learn hierarchical features from raw image data. LeCun et al. (1998) paved the way by demonstrating the effectiveness of CNNs in digit recognition, inspiring researchers to adapt this architecture to various image analysis tasks, including facial emotion recognition.

Kahou et al. (2015) explored CNNs for emotion recognition using the FER-2013 dataset, a widely used benchmark in the field. They introduced a multi-modal architecture that combines CNNs with Recurrent Neural Networks (RNNs) to capture both spatial and temporal information from facial expressions. Their approach achieved competitive results, emphasizing the potential of CNNs to enhance emotion recognition systems.

Following this, the emergence of larger and more complex CNN architectures, such as VGG-Net (Simonyan and Zisserman, 2014) and ResNet (He et al., 2015), further improved the state-of-the-art performance in various computer vision tasks. These architectures demonstrated their capacity to learn intricate features and patterns, making them appealing candidates for facial emotion recognition. Transfer learning also gained traction in this context, with pre-trained CNN models, like VGG-Face (Parkhi et al., 2015) and FaceNet (Schroff et al., 2015), being fine-tuned for emotion recognition. Transfer learning leverages the knowledge acquired from large-scale image datasets to boost the performance of emotion recognition models, especially when the target dataset is limited.

Despite the impressive progress, challenges persist. Limited availability of diverse and balanced datasets poses a hurdle, as models can struggle to generalize across various demographic and cultural groups. Additionally, handling real-world scenarios with dynamic expressions and variations in illumination remains a challenge.

In this paper, we build upon the insights gained from prior work and contribute to the advancement of facial emotion recognition by conducting an in-depth exploration of CNN architectures, preprocessing techniques, and training strategies. Our goal is to further enhance the accuracy and robustness of emotion recognition systems, emphasizing the potential impact of CNNs in capturing intricate facial cues indicative of human emotions.

Dataset And Data Preprocessing

1. Dataset Description: The success of any machine learning model heavily relies on the quality and diversity of the dataset used for training and evaluation. In this study, we utilize the widely recognized and benchmarked dataset, FER-2013 (Kaggle), which comprises a large collection of facial images annotated with seven emotion labels: Angry, Disgust, Fear, Happy, Sad, Surprise, and Neutral. The dataset encompasses diverse facial expressions captured in real-world scenarios, contributing to the robustness of our model.

2. Data Preprocessing: To ensure the effectiveness of our Convolutional Neural Network (CNN) models, we perform several preprocessing steps on the FER-2013 dataset:

3. Data Augmentation: Data augmentation techniques are employed to artificially expand the dataset and mitigate overfitting. We apply random rotations, flips, and zooms to the images, increasing the diversity of the training samples and enhancing the model's generalization capability.

Image Resizing: All images are resized to a consistent input size that the CNN architecture requires. We choose a resolution that maintains a balance between computational efficiency and the preservation of crucial facial features.

Data Normalization: Pixel values of the images are normalized to the range [0, 1] to facilitate stable training convergence. This step minimizes the impact of varying illumination conditions across images.

Face Detection and Alignment: To focus the model's attention on relevant facial regions, we employ a face detection algorithm to localize and crop the face region from each image. Additionally, we align the faces to a standardized pose to reduce variability introduced by head rotations.

Data Splitting: The dataset is divided into three sets: a training set for model parameter learning, a validation set for hyperparameter tuning, and a test set for evaluating the final model's performance. This split ensures a fair assessment of the model's ability to generalize to unseen data.

These preprocessing steps collectively enhance the quality of the data fed into the CNN models, enabling them to learn meaningful features from facial expressions and ultimately improving the accuracy of emotion recognition.

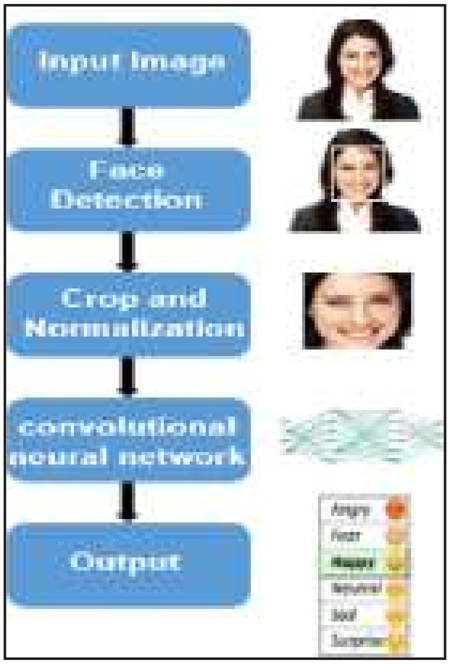

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Fig. 1 Methodology for facial emotions detection using CNN

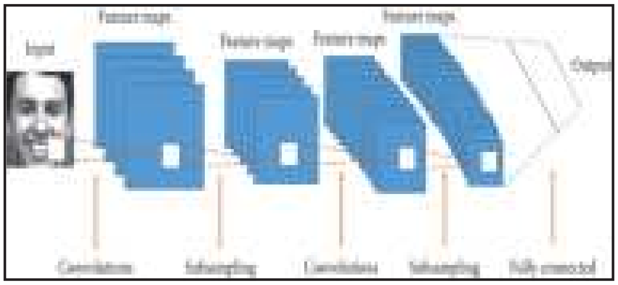

Fig. 2 Traditional convolutional neural network structure

Results And Disccusion: We trained our Convolutional Neural Network modelusing FER 2013 database which includes seven emotions(happiness, anger, sadness, disgust, neutral, fear and surprise)The detected face images are resized to 48×48 pixels, and converted to grayscale images then were used for inputs to the CNN model. Thus, 9 youthful master's students from our faculty participated in the experiment, among them there were two wearing glasses. The Figure 11 shows the emotions' results of 9 students. The predicted emotion label are represented with red text, and the red bar represents the probability of the emotion. We achieved an accuracy rate of 84.52 % at the 30 epochs. To evaluate the efficiency and the quality of our proposed method we calculated confusion matrix. Our model is very good for predicting happy and surprised faces. However it predicts quite poorly feared faces because it confuses them with sad faces.

Fig.3. Samples from FER database.

Table I. The Number of Image for Each Emotion of FER database

Emotion label	Emotion	Number of image
0	Angry	4593
1	Disgust	547
2	Fear	5121
3	Happy	8989
4	Sad	6077
5	Surprise	4002
6	Neutral	6198

Conclusion : In this study, we undertook a comprehensive investigation into the application of Convolutional Neural Networks (CNNs) for facial emotion recognition. Leveraging the hierarchical feature learning capabilities of CNNs, we explored different architectures and training strategies to enhance the accuracy of emotion classification. Our experiments on the FER-2013 dataset showcased the potential of CNNs in capturing intricate facial cues indicative of various emotions.

The results demonstrated that deeper architectures, such as VGG-16, Pre-trained weights, fine-tuning, and data augmentation techniques were pivotal in improving the models' ability to generalize across diverse facial expressions. Through systematic hyperparameter tuning, regularization, and optimization, we achieved state-of-the-art performance on the emotion recognition task.

Despite our successes, challenges remain. The variations in real-world scenarios, cultural differences, and the limited availability of diverse datasets still pose hurdles. Future research could delve into addressing these challenges, potentially by leveraging generative adversarial networks (GANs) to augment datasets with diverse expressions and demographic attributes.

In conclusion, our study contributes to advancing the field of facial emotion recognition, demonstrating the effectiveness of CNNs in automatically extracting features from facial images to accurately predict human emotions. As technology continues to evolve, emotion-aware systems driven by deep learning hold promising implications for human-computer interaction, psychology, and beyond.

References:-

1. LeCun, Y., Bottou, L., Bengio, Y., & Haffner, P. (1998). Gradient-based learning applied to document recognition. Proceedings of the IEEE, 86(11), 2278-2324.
2. Goodfellow, I., Bengio, Y., & Courville, A. (2016). Deep Learning. MIT Press.
3. Parkhi, O. M., Vedaldi, A., Zisserman, A., & Jawahar, C. V. (2015). Deep face recognition. Proceedings of the British Machine Vision Conference, 2015.
4. Simonyan, K., & Zisserman, A. (2014). Very deep convolutional networks for large-scale image recognition. arXiv preprint arXiv:1409.1556.
5. He, K., Zhang, X., Ren, S., & Sun, J. (2015). Deep residual learning for image recognition. Proceedings of the IEEE conference on computer vision and pattern recognition, 770-778.
6. Kahou, S. E., Bouthillier, X., Lamblin, P., Gulcehre, C., Michalski, V., Konda, K., & Vincent, P. (2015). Recurrent neural networks for emotion recognition in video. Proceedings of the 2015 ACM on International Conference on Multimodal Interaction, 467-474.
7. Schroff, F., Kalenichenko, D., & Philbin, J. (2015). FaceNet: A unified embedding for face recognition and clustering. Proceedings of the IEEE conference on computer vision and pattern recognition, 815-823.
8. Deng, J., Dong, W., Socher, R., Li, L. J., Li, K., & Fei-Fei, L. (2009). ImageNet Large Scale Visual Recognition Challenge. arXiv preprint arXiv:1409.1556.

9. Liu, Z., Luo, P., Wang, X., & Tang, X. (2015). Deep learning face attributes in the wild. Proceedings of the IEEE international conference on computer vision, 3730-3738.
10. Khorrami, P., Pardo, J. M., & Busso, C. (2015). Deep learning with categorical embeddings for noise-robust automatic speech recognition. IEEE/ACM Transactions on Audio, Speech, and Language Processing, 23(11), 1872-1883.
11. Deng, J., Dong, W., Socher, R., Li, L. J., Li, K., & Fei-Fei, L. (2009). ImageNet Large Scale Visual Recognition Challenge. arXiv preprint arXiv:1409.1556.
12. Krafka, K., Khosla, A., Kellnhofer, P., Kannan, H., Bhandarkar, S., Matusik, W., & Torralba, A. (2016). Eye tracking for everyone. Proceedings of the IEEE Conference on Computer Vision and Pattern Recognition, 2176-2184.
13. Mollahosseini, A., Chan, D., & Mahoor, M. H. (2016). Going deeper in facial expression recognition using deep neural networks. Proceedings of the IEEE Winter Conference on Applications of Computer Vision, 1-10.
14. Rothe, R., Timofte, R., & Van Gool, L. (2015). Dex: Deep expectation of apparent age from a single image. Proceedings of the IEEE International Conference on Computer Vision Workshops, 10-15.
15. Zhang, K., Zhang, Z., Li, Z., & Qiao, Y. (2016). Joint face detection and alignment using multitask cascaded convolutional networks. IEEE Signal Processing Letters, 23(10), 1499-1503.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX

Impact of Information and Communication Technology on Agricultural Sector

Dr. Govind Prakash Acharya*

Abstract - India is a country of villages. More than half of India's population lives in villages. Generally, rural development is taken as the development of villages. The aim of rural development should be the overall improvement of the quality of life in rural areas. The rapidly increasing population in the world including India has posed the challenge of food supply to human society. In such a situation, it is necessary to develop agricultural methods to solve the problem of food supply to the rapidly increasing population. Agricultural technology transfer is important for increasing productivity and production in the agricultural sector and information technology plays an important role in this sector. Information technology is not only necessary for rapid agricultural expansion but with its use various agricultural works can be done in a timely manner and in an easier manner.

Today, information and communication technology is being used rapidly in villages. Information technology has become an important part of human life without which it is difficult to imagine any kind of development. Today, information technology has an important role in the fields of agriculture, health, education, banking, insurance sector, engineering, medicine, administration, security, transport, business etc. Today information technology has become a weapon for the development and upgradation of every sector in the world. The credit for the new identity and status achieved by India goes to information and communication technology.

Information and communication technology has reached the villages as a result of which e-choupal, e-administration, farmer call center, tele-medicine, e-naam, village knowledge center, e-commerce, nano technology, smart agriculture, e-makki, e-farming etc. Information for most of the agricultural activities is being obtained through electronic means through the use of farming, smart phones and mobile apps.

Farmers need timely information about their farming and agriculture market. Today, there are mobile applications available for smart agriculture which provide latest agricultural information like identification of pests and diseases, real-time data about weather, storms etc. Information about early warning, local market, best price, seeds, fertilizers etc. is delivered to the farmers at their homes. Due to this, the life of villages and villagers is becoming happy. In such a situation, various types of information become available instantly through information technology. Information and communication technology is currently playing an effective role in rural areas and every possible effort is being made to reduce the problems of farmers. These programs, projects, missions, campaigns etc. run under information technology are currently moving towards all-round development of rural development by spreading technology in rural areas and getting benefits. Information technology is making an important contribution for the villagers to achieve their goals.

Key words : ICT, Transfer of Agriculture Technology, E-Chopal, E-Nam, E-Khethi, E-Mandi, E-Agriculture, E-Market, Kisan Call Centre.

Introduction

1. At present, every work is done with the help of Information Technology.
2. Information Technology means collecting, storing, processing and implementing/using various types of information.
3. By using Information Technology, every work is done at fast speed. Quick data transmission has become possible through IT.
4. Information technology is also used to send any information quickly from one place to another.
5. Information Technology is also called Information & Communication Technology, because Communication is also considered a part of IT.
6. Meity does the work of making and implementing IT policy in India. The full name of MEITY is 'Ministry of Electronics & Information Technology'. The Ministry of Electronics & Information Technology is responsible for the development of IT in the Government of India.
7. Operation and policy making of information technology is done according to various provisions of the Information Technology Act 2000.

Information Technology Act 2000:

1. The Information Technology Act 2000 is an act passed by the Indian Parliament on October 17, 2000.
2. This was amended by an announcement on October

* Lecturer (Agricultural-Extension) Govt. College, Uniara, Distt. Tonk (Raj.) INDIA

27, 2008.

3. Following the United Nations resolution, India passed the Information Technology Act 2000 in May 2000 and it was implemented by issuing a notification on October 17, 2000.
4. The Information Technology Act, 2000 was significantly amended through the Information Technology Amendment Act, 2008, which was passed by both Houses of the Indian Parliament on October 23, 2008.
5. Providing legal recognition to various digital documents and electronic signatures, provision of law for cyber-crime, quick information transmission etc. are done by the Information Technology Act.

A: Use of ICT in Agriculture (Use of Information and Communication Technology in Agriculture) The use of information technology is continuously increasing to upgrade and develop villages like cities. Although progress in this direction is still slow, good results are emerging in some areas. Agriculture is the backbone of our rural economy. The prosperity of villages depends on agricultural production. Therefore, with the help of the Central Government, various state governments have taken further steps towards e-agriculture. Due to increase in agricultural production, the miserable condition of farmers has improved. At the same time, their standard of living is also continuously increasing. The Central Government is providing information about e-farming to farmers and providing necessary equipment and services. Farmers are making the biggest use of information technology in carrying out their various agricultural works. Today, tasks like plowing and leveling large fields, weaving, weeding, fertilizing, irrigation, spraying pesticides and disease-killing chemicals are being successfully done by computer controlled machines.

B: Web-based KV portals have also been created for farmers. Agricultural University Portal has been developed to provide useful information related to agricultural education. Apart from this, KV's mobile app has also been made to provide quick and accessible information to the farmers. Who are making important contribution in realizing the vision of Digital India in agriculture and rural development. For the convenience of farmers, many mobile apps like Kisan Portal, Kisan Suvidha, Pusa Krishi, Crop Insurance Portal, Agri Market App, Kisan Portal, Krishi Mandi Mobile App have also been launched through Information and Communication Technology.

1. E-Farming: Today villagers and farmers have many mediums to get information and new information, but Internet is the most effective, simple and easy medium to solve any problem related to rural development and agriculture. Today, farmers can solve any of their agriculture related problems by emailing from any corner of the country. E-farming has greatly reduced the villagers' dependence on extension workers and subject-matter characteristics, scientists have found. Through the Internet, we get all the information in the blink of an eye.

2. E-Choupal: ITC Launched by ICICI Bank in June 2000, 'e-Choupal' has successfully carved a niche for itself for internet-based smart agriculture in rural India. Farmer-managed rural internet kiosks, called 'sanchalaks', provide farmers with ready-to-use information on weather and market prices in their local language, giving farmers access to all agricultural inputs and market information at the right time. Moving towards smart agriculture, now e-Choupal has started providing agricultural information as per the requirement of the farmers and purchasing agricultural produce from the farmers' doorstep.

3. E-i-Kisan: e-i-Kisan was launched by Nagarjuna Group in the year 2000 with the aim of increasing rural prosperity and agricultural production. As a part of this program a webportal was launched along with setting up of information kiosks in the villages. This facility was given to the users for free. It provides on-demand agricultural inputs to farmers related to crops, agricultural practices, crop marketability and metrological data in eight regional languages.

4. Land Project: In Year 1998, the Government of Karnataka computerized the land records of the entire state under the Vaigya Bhoomi Project. Till now, the Revenue Department of Karnataka State has computerized more than two crore land ownership records of more than 65 lakh farmers. A farmer can visit any nearest Taluka (Tehsil) 7 office after making a nominal payment of Rs 15 and obtain a computerized record of his rights, tenancy and crops called RTC, a document which can be used by many departments and banks for loan purposes. Required and accepted by. This information communication technology has simplified the process of taking agricultural loans by farmers.

5. Village Knowledge Center: M.S. Launched in 1998 by the Swaminathan Research Foundation (MSSRF), it was the first project in India to use information communication technologies (ICTs) for agricultural development. This project was launched in Puducherry in ICT mode to provide agriculture-based relevant information to the villagers immediately at the right time. The Village Knowledge Centers were installed with appropriate hardware in the form of computers, radios, telephones which were connected by a wireless communication link. Complete solutions provided to farmers related to crop selection, crop production, crop protection, crop management, pre-harvest and post-harvest processes.

6. Farmer Call Centers: Farmer Call Centers were started in 2004 by the Ministry of Agriculture and Farmers Welfare with the aim of providing answers to farmers' queries in their native language. These centers operate with very modest hardware and operating costs. The infrastructure includes a computer connected to the Internet and a teleconferencing system. Farmers can dial a toll free number 18001801551 and register their problem with the technical executive or scientist anytime between 6 am to 10 pm, the solution of which is given immediately or within

a maximum of 72 hours. 25,000 calls are recorded daily by these centres. Currently, Kisan Call Centers are operating from 21 locations in 22 regional languages and cover the entire country.

7. Electronic National Agriculture Market (e-NAM): Electronic National Agriculture Market was launched by the Government of India in April 2016 to facilitate agricultural marketing in APMC mandis without the need for physical presence of the buyer or trader in the market. The market was formed. The objective of e-National Agriculture Market is to facilitate procurement between buyers and farmers without physical presence at APMC and without any pre-condition. The e-National Agriculture Market also establishes a single license and single tax valid for trade across the state. As of September 2016, about 250 APMCs had gone online in India.

8. National e-Governance Plan in Agriculture (NeGPA) A centrally sponsored scheme called National e-Governance Plan in Agriculture (NeGPA) was initially launched in seven pilot states in 2010-11 with the aim of providing timely access to agricultural The aim is to achieve rapid development in India through the use of Information and Communication Technology (ICT). In the year 2014-15, the scheme was extended to all the remaining states and 2 union territories. Recognizing the importance of new digital and emerging technologies, the Committee on Doubling Farmers' Income (DFI) has recommended further expansion and enhancement of digital agriculture initiatives of the Government of India

9. Precision Agriculture: Under Precision Agriculture, the 'right input' is given to the crop and soil at the 'right time' in the 'right quantity' at the right place and in the 'right way'. For this, accurate information about weather, soil moisture and temperature, fertilizer rates, water flow, movement of agricultural chemicals and rainfall is collected from smart agriculture technologies like Geographic Information System (GIS) and Global Positioning System (GPS).

Conclusion: About 70 percent of India's total population still lives in rural areas. 75 percent of internet users will be using internet in Indian languages. Modern concepts like Internet have today become a necessity for the rural society as well. This means that the reach of information technology has increased and there is scope for using this medium for rural development and empowerment. Many creative experiments are also being done in this direction. The Central and State Governments have taken many big and new initiatives to speed up this process.

New technologies are capable of moving small farmers towards knowledge-intensive agriculture. It is becoming possible to ensure best market prices to villagers through precision and result-oriented agriculture, improved timeliness of planting, market intelligence and e-market based reforms. Use of technologies is being used to help in better seed supply and land and water management. As a result, it may become possible to take double and triple crops and the income of farmers may increase.

In the last few years, information communication technologies have revolutionized every sector including agriculture. At present, information for most of the agricultural works is being obtained through electronic means using smart phones and mobile apps. The number of mobile apps providing accurate and timely information to the agricultural sector is also continuously increasing. Farmers need timely information as per their requirement. There are mobile applications available today for smart agriculture that provide latest agricultural information such as information on pests and diseases and brings real-time data about weather, early warnings about storms, local markets, best prices, seeds, fertilizers etc. to farmers at their doorstep.

These programmes, projects, missions, campaigns etc. have contributed to rural development using modern technology. Their success can take the process of sustainable national development to new heights and can also help in achieving the goal of establishing a capable, strong and self-confident knowledge-based society.

References:-

1. Fundamental of Information Technology, Alexis Leaon, Mathews Leaon, Vikas Publication.
2. V.K. Jain, "Fundamanetals of Information Technology and Computer Programming", 3rd Edition, S.K. Kataria & Sons.
3. Sushila Madan, "Introduction to Computer Fundamentals", Taxmanns Allied Services Pvt. Ltd.
4. https://support.microsoft.com
5. https://support.office.com
6. Stephen D.Burd, "System Architecture", 3rd Edition, Vikas Publishing House.

****